भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक
राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४
६ अक्तूबर '६७ अंक : १

इस अंक में

अगले अंक का आकर्षण
जे० पी०
व्यक्तित्व और विचार

वार्षिक शुल्क १० रु०,
एक प्रति २० पैसे
विदेश में
१८ रु०, १८ शि० या २॥ डालर
सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१
फोन नं० ४२८५

भारत और विश्व

जब भारत स्वावलम्बी और स्वाश्रयी बन जायगा और इस तरह न तो खुद किसीकी सम्पत्ति का लोभ करेगा और न अपनी सम्पत्ति का शोषण होने देगा, तब वह पश्चिम या पूर्व के किसी भी देश के लिए—फिर उसकी शक्ति कितनी भी प्रबल क्यों न हो—लोभमय आकर्षण का विषय नहीं रह जायगा, और तब वह खर्चीले शस्त्रास्त्रों का बोझ उठाये बिना ही अपने को सुरक्षित अनुभव करेगा। उसकी यह भीतरी स्वाश्रयी अर्थ-व्यवस्था बाहरी आक्रमण के खिलाफ सुदृढ़ सुरक्षा सिद्ध होगी।

पूर्ण स्वराज्य की मेरी कल्पना दूसरे देशों से कोई नाता न रखनेवाली स्वतंत्रता की नहीं, बल्कि स्वस्थ और प्रतिष्ठित स्वतंत्रता की है। मेरा राष्ट्रप्रेम उग्र तो है, पर वह वर्जनशील नहीं है, उसमें किसी दूसरे राष्ट्र या व्यक्ति को हानि पहुँचाने की भावना नहीं है। कानूनी सिद्धान्त उतने कानूनी नहीं हैं, जितने कि वे नैतिक हैं। 'अपनी सम्पत्ति का उपयोग इस तरह करो कि पड़ोसी की सम्पत्ति को कोई हानि न पहुँचे।'—यह कानूनी सिद्धान्त एक सनातन सत्य को प्रकट करता है और उसमें मेरा पूरा विश्वास है।

स्वतंत्र प्रजातांत्रिक भारत आक्रमण के खिलाफ पारस्परिक रक्षण और आर्थिक सहकार के लिए दूसरे स्वतंत्र देशों के साथ खुशी से सहयोग करेगा। वह आजादी और जनतंत्र पर आधारित ऐसी विश्व-व्यवस्था की स्थापना के लिए काम करेगा, जो मानव जाति की प्रगति और विकास के लिए दुनिया के समूचे ज्ञान और उसकी समूची आध्यात्मिक सम्पत्ति का उपयोग करेगी।

पश्चिमी राष्ट्रों को अपनी कुशलता का लाभ दूसरों को देना चाहिए। यदि वे अपनी कुशलता का उपयोग विदेशों में परमार्थ बुद्धि से करना चाहते हों, तो अमेरिका कहेगा : 'अच्छा देखिये, हम पुल बनाना जानते हैं। इस कला को हम गुप्त नहीं रखना चाहते। हम तो समूची दुनिया से कहेंगे कि हम आपको पुल बनाना सिखायेंगे और उसके लिए आपसे कुछ भी कीमत नहीं लेंगे।' अमेरिका आगे कहेगा : 'जब अन्य राष्ट्र गेहूँ का एक ही दाना पैदा कर पाते हैं, तब हम दो हजार दाने पैदा कर सकते हैं।' पर अमेरिका सीखनेवालों को यह कला मुफ्त सिखायेगा और समूची दुनिया के लिए गेहूँ पैदा करने की महत्त्वाकांक्षा न रखेगा, नहीं तो सचमुच दुनिया के लिए वह एक दुःखद दिन होगा।

—गांधीजी

'यंग इंडिया'—२७-११-'३१, पृ० ३६१। २६-३-'३१, पृ० ५१। २१-९-'२१, पृ० २०८। २११ '२७ पृ० ३०२।

समाचार-डायरी

देश :

२७-९-६७ : नयी दिल्ली में मुख्य मन्त्रियों से चर्चा करते हुए गृहमंत्री श्री चह्वाण ने कहा कि देश में साम्प्रदायिक तत्त्वों के खतरे का सामना करने के लिए प्रशासकीय कार्यवाही के अतिरिक्त गैरसरकारी ढंग के सार्वजनिक प्रयत्नों की जरूरत है।

२९-९-६७ : बिहार के मुख्य मंत्री ने पत्र-प्रतिनिधियों के सम्मेलन में बताया कि बिहार के ३२ कांग्रेसी विधायक संयुक्त मोर्चे में शामिल होंगे।

३०-९-६७ : कांग्रेस-अध्यक्ष श्री कामराज ने पं० बंगाल कांग्रेस कमेटी को भंग कर उसकी जगह तदर्थ समिति की स्थापना के प्रस्ताव से सहमत हो गये।

१-१०-६७ : बिहार सरकार ने घेराव आन्दोलन को गैरकानूनी और असांविधानिक घोषित किया।

२-१०-६७ : उत्तर प्रदेश में न्यायपालिका और कार्यपालिका आज से अलग-अलग काम करने लगी हैं।

देश भर में सर्वत्र गांधी-जयंती मनायी गयी, इस अवसर पर राष्ट्रपति और प्रधान मंत्री ने आकाशवाणी द्वारा देश के नाम संदेश प्रसारित किया।

पार्डी (गुजरात) में प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी ने कहा कि गांधीजी की आर्थिक समानता की विचारधारा के अनुसार आचार्य विनोबा भावे देश में विषमता-निराकरण का काम कर रहे हैं।

डा० लोहिया अस्वस्थ, हालत चिंताजनक।

विदेश :

२६-९-६७ : पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खाँ ने मास्को में आयोजित स्वागत समारोह में कहा कि वे जनवरी १९६६ की ताशकंद-घोषणा की भावना से भारत के साथ सभी समस्याओं की वार्ता के लिए सहमत हैं।

२८-९-६७ : संयुक्त अरब गणराज्य ने राष्ट्र संघ के महामंत्री श्री उथाँ को सूचना दी कि वह स्वेज नहर को इजरायल के जहाजों के लिए खोल सकता है।

सुझाव और सम्मतियाँ

● 'भूदान यज्ञ' में कार्टून और फोटो होने चाहिए।

● 'दैनन्दिनी' में पर्व, त्योहार तथा संस्मरण दिवस की सूची दी गयी है। प्रत्येक पर कुछ लिखना चाहिए।

● शंका-समाधान कालम भी शुरू किया जाय।

● प्रत्येक प्रान्त की रुचि बढ़ाने के लिए 'नम्र' की टिप्पणी होनी चाहिए।

● विद्यार्थियों की रुचि की सामग्री भी छपनी चाहिए।

● 'गाँव की बात' की भाँति प्रथम पृष्ठ पर लाइन ब्लाक या कार्टून होना चाहिए।

—सुखीराम 'क्षय रोगी', जिला सर्वोदय मण्डल, रेवाड़ी (गुड़गाँव), हरियाणा।

● 'भूदान यज्ञ' से मुझे काफी प्रेरणा मिलती है, इसलिए मैं इसका नियमित ग्राहक और पाठक हूँ। सर्व सेवा संघ का यह प्रकाशन महान् गुरुत्वपूर्ण वस्तु है।

—पद्मनाभ राय, छत्रपड़ा (उड़ीसा)

'भूदान यज्ञ' का ८ सितम्बर का अंक पढ़कर एवं नवीनता पाकर खुशी हुई। खासकर रेखाचित्र पाठक का ध्यान अवश्य आकर्षित करता है।

मैं निम्नलिखित सुझावों को पत्र में प्रवेश दिलाने की अपेक्षा रखता हूँ :

● 'भूदान यज्ञ' में भूदान की प्रगति, आलोचना, समालोचना एवं सही आँकड़े प्रकाशित हों, जिससे सामान्य जनता एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं को भी सही मार्ग दर्शन मिले।

● ग्रामीण जनता के लिए सरल, कम खर्चवाले उद्योगों की जानकारी एवं उद्योगों के विकास का सही रूप प्रस्तुत किया जाय।

● विश्व समाज-सेवी संस्थानों के व्यावहारिक कार्यों का विवरण एवं विद्वानों के विचार प्रकाशित हों।

● इन सब सुझावों के साथ विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय हो। पत्र को आकर्षक बनाने के लिए रेखाचित्र देकर जो कदम उठाया गया है, वह सही कदम है। इसके अलावा भूदान की जमीन के विकास कार्यों के दृश्य, कृषि-कार्यों के दृश्य, चरखा केन्द्र, लघु उद्योग केन्द्र इत्यादि के चित्र भी प्रकाशित किये जायँ। इसके साथ-साथ सप्ताह के प्रमुख समाचारों का चित्र प्रकाशित करके पत्र को आकर्षक बनाया जा सकता है।

सुरेन्द्रप्रसाद मण्डल, राजघाट, वाराणसी १

● 'भूदान यज्ञ' में पुराने पैमाने का नक्शा ग्रामदान सहित देखने को मिलना चाहिए।

● नये लेखकों के चित्र, रेखाचित्र आदि समय समय पर प्रकाशित हों।

● सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष के पास जो अन्य चित्र हैं। बीच बीच में उन्हें प्रकाशित करते रहें।

● पटना में कार्यकर्ताओं की बैठक में लोक शिक्षण की जो योजना बनी है, वह किस प्रकार कार्यान्वित हो रही है, यह बराबर प्रकाशित करते रहना चाहिए।

● ग्रामदान-प्राप्ति के जिलावार आँकड़े देने चाहिए।

—विट्ठल पांडुरंग भोंगले-मुरली, वाया रहिमतपुर, जिला सातारा (महाराष्ट्र)

आवश्यक सूचनाएँ :

भूदान यज्ञ के शुल्क में परिवर्तन

"भूदान यज्ञ" का वार्षिक चंदा नये वर्ष से ८ रु० के बदले १० रु० किया जा रहा है। इसका कारण है छपाई, कंपोजिंग, कागज आदि के बढ़े हुए भाव। ८ रु० चन्दे में यह पत्रिका घाटे में ही चल रही थी। इसलिए भी यह वृद्धि अनिवार्य हो गयी। हमारे पाठकगण और हितैषी इस विवशता को महसूस करके उदारतापूर्वक पत्रिका को पूर्ववत् अपना हार्दिक सहयोग देकर अपने मित्रों को भी इसका ग्राहक बनायेंगे ऐसी हम आशा करते हैं। —व्यवस्थापक

× × ×

२ और ३ अक्तूबर को प्रेस बंद रहने के कारण प्रस्तुत अंक एक दिन विलंब से प्रकाशित हो रहा है। पाठक क्षमा करें।—सं०

गांधी : परम्परापोषक या......?

"गांधीवाद जीवन सम्बन्धी मौलिक प्रश्नों का उत्तर देता ही नहीं। उसका कोई अपना दार्शनिक मत नहीं, इसलिए उसमें जीवन के सब अंगों के एकीकरण की, समन्वय की, शक्ति नहीं है। वह कुछ बातों को गायब करके समस्या को सरल करना चाहता है। यह जान छुड़ाने का उपाय हो सकता है, परन्तु इससे काम नहीं चलता। हमारे बहुतसे प्रश्न इसलिए खड़े हो गये हैं कि आज मशीनें चल रही हैं। यदि गांधीवाद का बोलबाला हो तो मशीनें उठा दी जायेंगी, विश्वविद्यालय भी प्रायः बन्द हो जायेंगे। रेल, तार, कल कारखाने होंगे ही नहीं, प्रश्न स्वतः खत्म हो जायेंगे, पुराना ग्राम्य जीवन आ जायेगा। पिछले तीन चार सौ वर्षों में मनुष्य की बुद्धि ने जो नभ स्पर्श का प्रयास किया था, दुःस्वप्न के समान उसकी क्षीण स्मृति रह जायेगी। यह समस्या का सुलझाव नहीं है, समस्या से पलायन है।"

ये उद्गार प्रगट किये हैं, अपने देश के एक विद्वान लेखक और सुप्रसिद्ध व्यक्ति ने, एक दूसरे हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य लेखक—अब स्वर्गीय, की एक मख्यात पुस्तक की प्रस्तावना में। पुस्तक के कई संस्करण हो चुके हैं। हमने उस पुस्तक के सन् १९५१ के संस्करण में उक्त उद्गार को पढ़ा था। गांधी विचार का अध्ययन तथा शोधन करनेवाले ऐसे और भी विद्वानों की संख्या काफी है, जो गांधी को परम्परा पोषक के रूप में देखते हैं। उनकी आर्थिक, राजनीतिक विचार धारा को अव्यावहारिक मानते हैं, और मानते हैं कि इस विज्ञान के युग में गांधी की बात 'आउट डेटेड' है।

बात सही है। अगर गांधी विचार उन परम्पराओं को ही पोषण देता है जो परम्पराएँ आज हमारे खुद के और समाज के विकास में बाधक सिद्ध हो रही हैं, तो इस विज्ञान के युग में कोई प्रगतिशील मनुष्य परम्परापोषक गांधी की बातों को क्यों मानेगा?

यहीं यह सवाल पैदा होता है कि क्या इस वैज्ञानिक युग में गांधी का कोई स्थान है? चाँद पर मानव की पहुँच के युग में? हमें इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए, और अगर इस युग में गांधी सचमुच अनावश्यक सिद्ध होता हो, तो आज की जागरूक और आकांक्षाओं से भरी नयी पीढ़ी को चाहिए कि साहसपूर्वक गांधी की याद को भी राजघाट की समाधि के काले खूबसूरत पत्थरों के नीचे दबा दे, ताकि देश की हवा में, देशवासियों की जुबान पर फिर कभी गांधी लौटकर न आने पाये।

गांधी ने इस देश के अन्तिम व्यक्ति को राष्ट्रीय विकास की कसौटी और आधार माना, उस अन्तिम व्यक्ति के तत्कालीन स्तर से आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक पुनर्निर्माण की परियोजनाएँ प्रस्तुत किया, उस अन्तिम व्यक्ति की शक्ति को जगाने के लिए उसकी समझ में आ सकनेवाली अत्यन्त सीधी और सरल भाषा में, उसकी पकड़ में आ सकने लायक जीवन दर्शन और मूल्यों की कल्पना किया, यहाँ तक कि उस अन्तिम व्यक्ति से एकात्म साधने के लिए उसने लंगोटी धारण कर लिया। मजदूर, भंगी, सूतकार, बुनकर, परिचारक क्या क्या नहीं बना?

विज्ञान का वैभव जिसे स्पर्श नहीं करता, समाज में जिसका कोई स्थान नहीं, जो आज इस 'चाँद पर मानव की पहुँच' के युग में भी सदियों पुराने परिवेश और परिस्थिति में रहता है, उस अन्तिम व्यक्ति को नयी समाज रचना का आधार माननेवाला, 'हम पहुँचवालों' की निगाहों में सदियों पीछे का परम्परा पोषक मनुष्य मालूम पड़े, तो इसमें आश्चर्य की भी बात क्या है?

लेकिन सुप्रसिद्ध अमेरिकी समाजशास्त्री मि० रोलो बारबोदी कहता है—

'आमतौर से जहाँ तक दुनिया की परियोजनाओं के इतिहास का पहलू सामने आया है—योजनाकारों ने हमेशा अपने आयोजित समाज के नेतृत्व के लिए ऐसे शासकों की अनिवार्यता को महत्वपूर्ण माना है, जो सत्ता हथियाने और उसका शोषणयुक्त उपयोग करने में सक्षम हों।'*

अगर मि० बारबोदी की बात में सत्य का तत्व है—और इतिहास उस तत्व को इनकार नहीं करता, तो क्या यह माना जाय कि अन्तिम व्यक्ति की बात कहना मानव विकास की ऐतिहासिक परम्परा में अभिनव कड़ी है, वह सदियों पुरानी बात हो ही नहीं सकती? शायद सदियों पुरानी बात तो यह है कि समाज 'एक' या 'कुछ' सत्ताधारी और सत्ताकांक्षी विशिष्ट जनों के नियंत्रण में रहे, चले, और आम मनुष्य की भारी तादाद इनकी खिदमत में लगी रहे।

दुनिया के वर्तमान कालीन इतिहास के पृष्ठों पर साम्यवादी विप्लवों की जो कहानियाँ अंकित होती जा रही हैं, उस कड़ी में 'नक्सालबाड़ी' की घटना ने झुककर यह चेतावनी दी है कि 'एक' या 'कुछ' की जगह 'सर्व' का समन्वित समाज नहीं बना, तो मानव विकास की प्रक्रिया संघर्षों की आग में जलकर राख हो जायेगी। इसलिए सदियों से चलती आ रही 'एक' या 'कुछ' विशिष्ट जनों द्वारा संचालित समाज की परम्परा पोषक बातें करना छोड़कर, हमें आज अपने देश का अन्तिम व्यक्ति जहाँ है, वहाँ से सोचना शुरू करना होगा।

गांधी की सीधी सादी बातों को समझने के लिए वैज्ञानिक और शास्त्रीय शोध हो रहे हैं, बड़े-बड़े और महान् ग्रन्थों की रचना हो रही है, और इन ग्रन्थों का गांधी 'अन्तिम व्यक्ति' की पहुँच से परे हटता जा रहा है। लेकिन क्या उन अन्तिम व्यक्तियों की पुकार, घिनौनी और दर्द भरी बस्तियों से खींचकर हम गांधी की आत्मा को विशाल ग्रन्थालयों में कैद कर सकेंगे? ●

* 'एजूकेशन आव दी होलमैन' पृष्ठ १९४-९५।

सत्ता किसकी : एक की, कुछ की, या सर्व की ?

● जब विदेशी राज्य था तो प्रश्न था अपने देश में अपने राज्य का। जब अपना राज्य हो गया तो प्रश्न हुआ, 'स्वराज्य' का। राज्य जनता के नाम में चलता है, चाहे कोई डिक्टेटर चलाये या जनता के चुने हुए प्रतिनिधि, लेकिन स्वराज्य तो स्वयं प्रत्यक्ष जनता द्वारा ही चल सकता है। राज्य के लिए सरकार की शक्ति यानी नेताओं और अधिकारियों की शक्ति चाहिए। स्वराज्य के लिए जनता की शक्ति यानी लोकशक्ति—संगठित लोकशक्ति—चाहिए।

● दलों की प्रचलित विरोधवादी राजनीति से सरकार की ही शक्ति बनती है, चाहे वह एक दल की हो, या कई दलों को मिलाकर। विरोधवादी राजनीति से 'सर्व' की शक्ति यानी 'लोकशक्ति' नहीं बन सकती।

● १९ वीं शताब्दी से मार्क्स की प्रेरणा के कारण क्रान्ति का यही लक्ष्य रहा है कि राजनैतिक तथा आर्थिक, दोनों शक्तियाँ क्रान्तिकारी दल के हाथ में आयें। और यह शासन-मुक्ति की दिशा में कदम समझा गया। २० वीं शताब्दी के मध्य में गांधीजी ने यह विचार दिया कि क्रान्तिकारी पार्टी सत्ता से अलग रहे, और लोकशक्ति को संगठित करे। *समाज-दर्शन* में यह विचार बिलकुल नया है।

● संगठित लोकशक्ति से स्वराज्य का संचालन हो, और *राज्य की शक्ति पूरक के* रूप में रहे, यह इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लोक-तंत्र के विकास में सर्वोदय आन्दोलन की देन है। अब दुनिया की परिस्थिति ऐसी है कि संसदीय लोकतंत्र चाहे डिक्टेटरी का रूप लेगा, या लोकतंत्र सरकार की शक्ति को क्रमशः छोड़ता जायगा और अधिक संगठित लोकशक्ति से चलेगा। लोकतंत्र के सामने ये दो ही विकल्प हैं।

लोकशक्ति ही लोक-स्वराज्य की बुनियादी शक्ति है। विनोबाजी ने अपने *'स्वराज्य-शास्त्र' में लोकशक्ति के तात्त्विक और व्यावहारिक* पहलुओं पर विचार किया है।

● 'स्वराज्य-शास्त्र' के अनुसार 'राजनैतिक विचार' के अन्तर्गत दो प्रश्न हैं: एक, प्रकृति के साधनों का उपयोग तथा, दो, समाज में रहनेवाले मनुष्य की आपसी व्यवस्था। व्यवस्था में दो चीजें हैं : भूमि आदि साधनों की मालिकी तथा मनुष्यों के परस्पर सम्बन्ध।

● 'स्वराज्य-शास्त्र' मनुष्य-समूह को कृत्रिम मार्गों में नहीं बाँटता—न उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग, निम्न वर्ग, न वर्ण, न सम्पन्न-विपन्न। समाज के विकास में ये भेद दूसरे कारणों से पैदा हो गये हैं। वास्तव में भेद एक ही हो सकता है—समर्थ और असमर्थ का। "वर्ग-जैसी कोई चीज ही नहीं है, केवल कम या अधिक सामर्थ्यवान् व्यक्ति हैं।" बुद्धि, बल, धन, संख्या, साधन, *संगठन आदि सभी सामर्थ्य में शामिल हैं।* सामर्थ्य की विषमता में से दमन और शोषण आदि का विकास हुआ है। ये सब कम या अधिक सामर्थ्यवान व्यक्ति मिलकर अपनी व्यवस्था कैसे करें, यही मूल राजनैतिक प्रश्न है।

● व्यवस्था तीन प्रकार से हो सकती है : १. कोई एक समर्थ व्यक्ति सबके लिए व्यवस्था करे। २. एक से अधिक समर्थ व्यक्ति इकट्ठा होकर सबके लिए व्यवस्था करें। ३. सब मिलकर समाज की जिम्मेदारी से *अपनी व्यवस्था करें।*

● दूसरे प्रकार में, यानी एक से अधिक की व्यवस्था में, शस्त्र, शास्त्र या धन की सत्ता हो सकती है, *अथवा किन्हीं दो या* तीनों की मिलीजुली सत्ता हो सकती है। और, इन सत्ताओं के अनेक रूप हो सकते हैं। एक वर्ण, वंश, राष्ट्र-समुदाय की दूसरे के ऊपर चलनेवाली सारी सत्ताएँ इन्हींके अन्तर्गत आ जाती हैं।

● आज की दुनिया में तीसरे प्रकार की, यानी 'सर्व' की सत्ता, कहीं नहीं है। *जिसे हम लोकतंत्र कहते हैं* वह अधिक-से-अधिक दूसरे प्रकार की, यानी एक से अधिक समर्थ व्यक्तियों की सत्ता है, भले ही वे चुने हुए हों। जब तक 'सर्व' पर एक या कुछ का शासन होगा, तब तक वह शासन चाहे जैसा हो, और चाहे जिस नाम से चले, हिंसा की ही शक्ति पर आधारित होगा। अहिंसा 'सर्व' की शक्ति है, इसलिए सर्व की ही *सत्ता अहिंसात्मक* हो सकती है।

● नाजीवाद, फासिस्टवाद, साम्राज्यवाद, साम्यवाद, आदि सब थोड़े समर्थ व्यक्तियों द्वारा चलनेवाली शासन-पद्धति के विभिन्न रूप हैं। सेना, बड़े यंत्र, बड़ी पूँजी, केन्द्रित योजना, आदि सब उस शासन के हथियार हैं। "आम जनता हमारी व्यवस्था के बिना *कभी व्यवस्थित नहीं रह सकती!"*—इस शासन-पद्धति की सारी इमारत इसी नींव पर खड़ी है।

● साम्यवाद इस पद्धति का विशेष प्रयोग है। उसमें शस्त्र, शास्त्र, धन का असाधारण मेल है। इस तरह का प्रयोग पहले कभी नहीं हुआ है। ईमानदारी से किया गया यह प्रयोग है, लेकिन इसमें भी है उन्हीं *कुछ का शासन,* जो शस्त्र, *शास्त्र और धन* की शक्ति का प्रयोग करने में निपुण हैं।

● इस तरह सर्व की सत्ता, यानी लोकशक्ति से चलनेवाला लोकतंत्र और संगठित अहिंसा अभिन्न हैं। इस अभिन्नता को व्यवहार में प्रकट करना सर्वोदय का लक्ष्य है। सर्वोदय के समाज-दर्शन का आधार है लोकशक्ति। (क्रमशः) —रा० मू०

...सम्पादक की ओर से

'भूदान यज्ञ' के २२ सितम्बर '६७ के अंक में हमने यह परिचर्चा आमंत्रित की थी। विषय था—'क्या आज पूरे देश के लिए कोई ऐसा एक सर्वमान्य सत्य है, जिसके आग्रह का अभियान पूरा देश एक साथ चला सके?' विषय की स्पष्टता के लिए बतौर भूमिका के, इस मुख्य प्रश्न के इर्दगिर्द भी कुछ दृष्टिकोण जोड़ दिये गये थे। हमें खुशी है कि अल्पावधि में ही अच्छी संख्या में पाठकों के विचार हमें प्राप्त हुए। परिचर्चा के लिए आये हुए विचार अधिकतर ग्रन्थों के अध्ययन पर आधारित न होकर अनुभूतियों, धारणाओं और अपने दृष्टिकोण से समाज की प्रत्यक्ष परिस्थितियों के विश्लेषण के आधार पर हैं। कुछ तर्कसंगति-विचारप्रधान; कुछ परिस्थितिजन्य परेशानी के कारण पल रहे अन्तर के आक्रोशप्रधान, लेकिन अधिकांश विचार—ग्रामदान, सर्वोदय और व्यक्ति—विनोबा के प्रति निष्ठा और भावप्रधान हैं, जैसा कि पाठक स्वयं देखेंगे, भाव कहीं भक्ति का रूप लिये हैं, तो कहीं सरस विनोद का।

एक दूसरी महत्त्वपूर्ण बात कि सत्याग्रह की चर्चा का प्रसंग आते ही हमें स्वराज्य का आन्दोलन याद आता है, स्वराज्य के बाद का बीस साल का अनुभव ताजा हो जाता है, और हमारी जुबान पर अक्सर कड़वा कसैला और जाने कैसा कैसा, स्वाद उमड़ने लगता है।

लेकिन इतना स्पष्ट है कि स्वराज्य आन्दोलन के जमाने की और आज की परिस्थिति में अच्छे या बुरे, बहुत बड़े-बड़े परिवर्तन हो गये हैं। बीस वर्ष जो बीत गये, वे लौटकर आ नहीं सकते। इसलिए इस वर्तमान काल की जिस सीढ़ी पर हम पाँव रखे हुए हैं या रख रहे हैं, उस या उससे आगे की परिस्थिति का मूल्यांकन हमें क्षोभरहित मन-स्थिति में ही करना होगा।

२२ सितम्बर '६७ से ६ अक्तूबर '६७ के बीच का समय इस परिचर्चा के लिए निश्चय ही अपर्याप्त है। इस अल्पावधि के कारण बहुत सारे पाठक इस परिचर्चा में भाग नहीं ले पाये, इसलिए हमने यह परिचर्चा जारी रखने का निश्चय किया है। कृपया याद रखें, अगली किश्त, २० अक्तूबर '६७ के 'भूदान-यज्ञ' के अंक में प्रकाशित होगी।—सं०

सर्वमान्य सत्य बनाम स्वात्मानुभूत सत्य

मानव-प्रगतिपरक इतिहास बताता है कि प्राकृतिक प्रकट सत्य के सिवाय संसार में किसी एक सत्य को सर्वमान्यता प्राप्त नहीं हुई है। 'सत्य ही ईश्वर है।' अथवा 'ईश्वर ही सत्य है।' इस पर भी आज तक सारे वेदान्त व दर्शन में मतैक्यता दिखाई नहीं पड़ती। हमारे प्राचीन व अर्वाचीन महापुरुषों ने पूर्ण एवं सर्वमान्य सत्य की खोज में जिस प्रकार विचार-मन्थन किया और सत्य-प्राप्ति के लिए सत्य, तपस्या व बलिदान की जो प्रक्रिया अपनायी, वह भी कल्पना की उच्चतर उड़ान पर आधारित है। यदि किसी एक सत्य को सर्वमान्यता प्राप्त हो गयी होती तो नीति व धर्मशास्त्र की जरूरत नहीं पड़ती। ईश्वर व अनीश्वरवाद की चर्चा व खण्डन-मण्डन से हमारे प्राचीन ग्रन्थ भरे पड़े हैं। अपने-अपने विश्वास के अनुसार मनुष्य ने सत्य को स्वीकार किया है। मानव-मानव की प्रकृति में जो भिन्नता पायी जाती है, वह प्राकृतिक गुणों के कारण होती है। अतः सर्वमान्य सत्य के आधार पर ही सत्याग्रह किया जा सकता है, यह सिद्धान्त-रूप में स्वीकार करना उचित नहीं जान पड़ता। इसलिए कि सर्वस्वीकृत सत्य हो तो सत्याग्रह की आवश्यकता ही नहीं रह जाती है।

पूज्य बापू के पहले भी सत्याग्रह किये गये हैं। प्रायः सभी सत्याग्रहियों ने जिस सत्य का आग्रह किया, उसका विरोध भी सदैव होता आया है। पूज्य बापू ने अपने समय में जितने भी सत्याग्रह किये वे सर्वमान्य आधार पर ही किये, ऐसा कहना कठिन है। 'स्व' को जिस सत्य की प्रतीति हो, वह बहुजनों द्वारा समर्थित हो तो सत्याग्रह के लिए पर्याप्त आधार मिला समझना चाहिए। स्वराज्य हेतु सत्याग्रह और नमक-सत्याग्रह ही ऐसे सत्याग्रह थे, जिसमें बापू की अन्तरात्मा और देश की आत्मा का योग था। दूसरे सत्याग्रह यद्यपि लक्ष्य की दृष्टि से शृंखलाबद्ध थे, किन्तु सम्पूर्ण भारतवासियों का योग उसमें नहीं था। अतः हम उन्हें खण्ड सत्य के आधार पर किये गये सत्याग्रह भले ही कह लें, किन्तु यह ध्यान रहे कि सत्य के खण्ड नहीं होते और न किये ही जा सकते हैं।

आज हम उस सत्य की खोज में हैं, जिसकी अवहेलना के कारण वर्तमान संकट पैदा हुआ है। यद्यपि बापू ने इसकी खोज पहले ही कर ली थी। बावजूद उनके बार-बार चेतावनी देने पर भी हमारे देश ने अपनी क्षमता व स्थिति, धर्म व संस्कृति की परवाह किये बिना पाश्चात्य अर्थशास्त्र का अन्धानुकरण किया। परिणामस्वरूप पूँजीवादी संग्रहवृत्ति और यंत्रवादी केन्द्रित उद्योगवृत्ति को शोषण, के आधार पर पलने-फूलने का मुक्त अवसर मिला। इसी कारण असमानता की खाई दिन-प्रतिदिन अत्यधिक चौड़ी होती गयी। इस खाई को पाटने में आज दण्डशक्ति भी कारगर साबित नहीं हो पा रही है। यह इसलिए कि पूँजीवादी संग्रहवृत्ति समता लाने में बाधा उपस्थित करती है। हमारे देश में न उत्पादन की कमी है और न साधनों की।

कमी केवल उत्पादन के साधन और जीवन की आवश्यक सामग्री के समता के आधार पर वितरण की है। अत आज की समस्याओं का हल न्यायानुकूल वितरण में ही है। असमानता सर्वमान्य सत्य है।

पूज्य बापू का 'ट्रस्टीशिप' सिद्धान्त और पूज्य विनोबा का मालकियत विसर्जन सिद्धान्त का मूल प्रवाह एक ही है। दोनों एक ही लक्ष्य की ओर हमें ले जाते हैं। किन्तु विनोबा के ग्रामदान आन्दोलन को सौम्यतम सत्याग्रह मानने पर भी उसमें तात्कालिक समस्याओं के त्वरित हल करने की प्रक्रिया नहीं है। अत हमें तात्कालिक समस्याओं के हल के लिए बापू का असहयोग और सत्याग्रह की कला को साहस के साथ अपनाना चाहिए। सर्व-प्रथम हमारा आग्रह संग्रहीत धन (पैसा) के वितरण का भले ही न रहे, किन्तु समस्त उत्पादन के साधनों को समाज को सौंप देने का आग्रह तो हम कर ही सकते हैं।

आज साधारण-से-साधारण व्यक्ति भी अपने को आर्थिक संकट में फँसा पाता है। यद्यपि अधिकांश इस संकट के मूल कारण को नहीं जानते हैं। शायद अब तक हम जन मानस को यह भासित नहीं करा पाये हैं कि यह संकट मानव द्वारा मानव पर बलात् लादा हुआ संकट है। दैवी संकट नहीं है। यह संकट तब तक नहीं टल सकता, जब तक उत्पादन के साधनों पर समाज का अधिकार नहीं होता। आज का सर्वमान्य सत्य यही है। हमें विश्वास है कि इस माँग पर जो सत्याग्रह करेंगे उसे सर्वमान्यता ही नहीं, बल्कि संकट ग्रस्त जन समाज द्वारा योगदान व आशीर्वाद भी मिलेगा।

—नर्मदाप्रसाद अवस्थी
१५।२१९, सिविल लाइन्स, कानपुर

सत्याग्रह या राजनीतिक 'स्टण्ट'

महात्मा गांधी द्वारा चुने गये 'प्रथम सत्याग्रही विनोबा' लगातार १८ अप्रैल '५१ से देश के कोने कोने में भूदान ग्रामदान का अलख जगा रहे हैं। क्या यह अपने आप में सत्याग्रह की सौम्यतम प्रक्रिया नहीं है?

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, ६ अक्तूबर, '६७

अगर विनोबाजी का ग्रामदान आन्दोलन "सत्याग्रह" नहीं है, तो इस युग में सत्याग्रह का दूसरा कोई और तरीका है ही नहीं। अगर है तो वह हिंसा की प्रक्रिया है। सत्याग्रह की प्रक्रिया होती है किसी सत्य को अधिक से अधिक लोगों द्वारा मान्य कराने की।

आज देश की जो स्थिति है, उसमें आज जो देश में सत्याग्रह का स्वरूप बना है, उसकी बात कहनेवाले लोग या तो देशद्रोही हो सकते हैं या फिर भारत की अखण्डता को खण्डित करनेवाले विदेशी लोग, क्योंकि आज देश में विनाश की ही सम्भावनाएँ नित्य नये रूप में प्रकट हो रही हैं। राजनीति के कारण देश में विरोध और असन्तोष का वातावरण होने से हर छोटी सी छोटी बात के लिए भी आन्दोलन, प्रदर्शन, तोड़फोड़, आगजनी के साथ ही सत्याग्रह का भी सहारा लेकर अपनी बात मनवाने का एक ढंग चल रहा है। अगर ग्रामदान के लोग भी उन्हीं उपायों का सहारा एक मानवीय और सर्वथा उचित काम के लिए लेंगे तो राजनीति या असामाजिक तत्वों में और सर्वोदयवालों में क्या अन्तर रह जायगा!

२२ वर्षों के अनुभव के आधार पर मैं आज सोचता हूँ तो सत्याग्रह भी एक प्रकार का 'कोअर्शन' ही लगता है। गांधीजी ने किसी भी प्रकार के दबाव अथवा बल प्रयोग को उचित नहीं कहा था। उन्होंने तो सारे देश की भावनाओं को व्यक्त करने के लिए सत्याग्रह अस्त्र का प्रयोग किया था, न कि अपनी इच्छा को सारे देश पर लादने के लिए। कम-से कम इस देश का पढ़ा लिखा समाज ग्रामदान के लिए तीव्र और उग्र सत्याग्रह करने की सलाह नहीं देगा। फिर आज जो ग्रामदान आन्दोलन देश में चल रहा है, वह सूक्ष्म सत्याग्रह का ही तो एक प्रकार है। दो चार, दस, आदमी अगर दिल्ली में प्रधानमंत्री के दरवाजे जाकर, चाहे जितनी भी सही, उनकी माँग क्यों न हो, अगर सत्याग्रह करेंगे तो निश्चित रूप से उनको शान्तिभंग करने के आरोप में जेल में डाल दिया जायगा और यह उचित माँग भी राजनीति का "स्टण्ट" करार दी जायगी! उससे यह लाख गुना अच्छा है कि गाँव गाँव के लोगों के मन में सामूहिक इच्छा शक्ति पैदा हो रही है और यह आवाज उठ रही है कि हम ग्रामस्वराज्य के लिए ग्रामदान कर रहे हैं, इसमें हमारा भला है और इससे हमें कोई रोक नहीं सकता। इससे अच्छा सत्याग्रह अपने आप में और क्या हो सकता है!

सत्याग्रह तो उस चीज के लिए होना चाहिए, जो अधिकांश लोगों को मान्य हो। दो चार किसी कारणवश न मान रहे हों तो उनको मनवाने के लिए सत्याग्रह का सहारा कारगर हो सकता है। अभी यह ग्रामदान आन्दोलन सर्वमान्य तो हुआ नहीं। अगर सर्वमान्य हो जाता तो सत्याग्रह की आवश्यकता ही नहीं रहती, कायदे कानून सब अपने आप बन जाते और फिर ग्रामदान अभियान जन आन्दोलन के रूप में संचरित होता। कहने का तात्पर्य यह है कि ग्रामदान का विचार अभी पूरी तरह से लोगों को समझाया नहीं गया है, अथवा किन्हीं कारणों से लोगों की समझ में नहीं आया है, इसलिए इसके "प्रचार और शिक्षण' की आवश्यकता है। ग्रामदान जैसे लोककल्याणकारी कार्यक्रम के लिए किसी भी प्रकार का आग्रह नहीं होना चाहिए। फिर आग्रह करने के अधिकारी हम हैं ही कहाँ!

—कपिलदत्त अवस्थी
कान्यकुब्ज वोकेशनल डिग्री कालेज,
चारबाग, लखनऊ

सबसे बड़ी चुनौती

आज देश में एकमात्र बड़ी चुनौती भारत की राजनीति ही है। हम सब भारतवासी राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न दलों के साथ मिलकर राष्ट्र के अहम् सवाल पर विचार विनिमय नहीं कर रहे हैं। अगर सभी दल एकसाथ बैठकर राष्ट्रीय समस्या पर विचार करना शुरू कर दें, तो सभी मसले अवश्य हल हो सकते हैं।

—संग्राम सिंह, कदावा

स्वेच्छया स्वामित्व-विसर्जन : सत्याग्रह का अभिनव स्वरूप

सुलभ या अभिनव ग्रामदान की प्रक्रिया ही सत्याग्रह का उदात्त स्वरूप है, जिसमें श्रम व्यक्ति का, साधन समाज का स्वीकार्य है; जिसे आध्यात्मिक भाषा में सेवा मानव की, स्वामित्व ईश्वर का ही कहा जाता है। वर्तमान विज्ञान युग में भी मनुष्य अपनी समस्याओं को व्यक्तिगत और भिन्न समझ रहा है, जब कि पूरे समाज की मूल समस्याएँ सामूहिक हैं, जैसे भूख-प्यास की तृप्ति आदि शरीर-रक्षा के लिए सारे साधन भी चाहते हैं; शिक्षा की, आरोग्य की तथा उत्पादन के साधनों की अपेक्षा सभी को रहती है। फिर भी मनुष्य दूसरों के हित की उपेक्षा करके अपने ही हित को सर्वोपरि मानता है, यही सबसे बड़ी मानसिक गुलामी है, जिसमें मानव उलझ गया है।

ग्रामदान एक स्वयंपूर्ण तथ्य है, और उसका दृष्टिकोण व्यापक तथा जागतिक है। *सत्य, प्रेम, करुणा ही इसके आधारस्तम्भ हैं।* जिस विचार की दिशा इतनी व्यापक हो, जो समस्त विश्व को ही एक दिन आत्मसात कर ले, इस प्रकार के सत्य का अन्य विकल्प असम्भव ही है। *मानव हृदय पर जहाँ तक* विश्वास है, इसका औचित्य स्वीकार करना ही पड़ेगा। इस प्रकार की क्रान्ति ही भारतीय चेतना की द्योतक है। *अन्य पाश्चात्य विचार* अहिंसानिष्ठ नहीं, परिस्थिति परिवर्तक मात्र हैं। पू० विनोबाजी तथा उनके अनुयायियों की इस सम्बन्ध में तीव्रता है कि ग्रामदान-विचार एक राष्ट्रीय विचार बनकर उसकी पुष्टि एवं विकास की ओर बढ़े तथा इसी भूमिका पर व्यक्ति तथा समाज का नव निर्माण हो।

समाज-प्रवाह के साथ-साथ सत्याग्रह का स्वरूप भी प्रायः बदलता रहता है। गांधीजी ने स्वराज्य-प्राप्ति को सत्याग्रह का लक्ष्य माना था। वह लक्ष्य आज साधन मात्र ही दिखाई देता है। उसके आगे *ग्राम-स्वराज्य* ही अब साध्य की भूमिका में है, जिसके बिना आज का स्वराज्य भी खतरे में है। गतिमान प्रवाह में उत्तरोत्तर लक्ष्य आगे ही बढ़ता जायगा। अहिंसक साधनों से व्यक्तिगत स्वामित्व विसर्जन ही सत्याग्रह का अनिवर्चनीय स्वरूप है, जो *सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक* सभी दृष्टियों से स्वयंपूर्ण है।

—शिवनारायण शास्त्री, संयोजक
जिला सर्वोदय मण्डल, मथुरा

वास्तविकता देखें, तर्क नहीं

देश की आज की स्थिति में काफी कार्यकर्ता सत्याग्रह की आवश्यकता महसूस करते हैं। अगर वे ग्रामदान को सत्याग्रह-कार्य *मानते तो फिर ऐसा क्यों महसूस करते ?*

जब तक देश में विभिन्न मत वर्ग व स्वार्थ मौजूद हैं, तब तक सबको मान्य के लिए मान्य कोई स्थिति या सत्य आयेगा, इसमें शक ही है। *वह अस्थायी हो ही सकता* है। ग्रामदान को ही लें। पूँजीवादी इसे राज्यवाद से बचाव के रूप में देखता है। समाजवादी इसे समाजीकरण के रूप में। लेकिन यह स्थिति अस्थायी है। समाजवादी इसमें व्यक्तिवाद देखेगा और पूँजीवादी इसमें सामूहिकीकरण। फिर उनमें मतभेद होना *स्वाभाविक है। सर्वमान्य की भूमिका अदृष्ट या* भाव को ही मिल सकती है, वास्तविक स्थिति को नहीं ऐसा मेरा खयाल है।

इसलिए आज की स्थिति में सत्याग्रह *की आवश्यकता को खण्ड सत्य या सर्वमान्य* सत्य के अभाव में असत्य मानकर टालना यह प्रकट करता है कि ऐसा विचार प्रकट करनेवाले नूतन (माडर्न) सत्याग्रह के लिए *आवश्यक त्याग नहीं करना चाहते* अथवा उनका अन्तर्मन सत्याग्रह से प्रभावित होनेवालों का हित-साधक है।

आवश्यकता इस बात की है कि हम जिसे निरपेक्ष सत्य मानते हों, उसकी रक्षा के लिए एकदम जुट जायँ। ऐसे न्यूनतम कार्यों में विशाल उद्योगों के स्थान में ग्रामोद्योगों की *स्थापना, मद्यनिषेध,* जमीन के मार्फत शोषण-समाप्ति एवं लोकतान्त्रिक संस्थाओं को पूरे अधिकार दिलाना, जैसे मजदूर संघों को प्रबन्धक बनाना, कारपोरेशनों, *नगरपालिकाओं* और जिला परिषदों को मन्त्रियों से मुक्त कराना आदि आदि। दुनिया में मानसिक कसरत ही करते रह गये तो जो थोड़ा भी सत्य हम हासिल कर सके हैं, उसका भी *हनन करेंगे।*

—*प्रह्लोचन दुबे,*
शिवकुटी, इलाहाबाद-४

ग्रामदान : सारी समस्याओं का हल

संत विनोबा का यह कहना अक्षरशः सत्य है कि ग्रामदान सत्याग्रह की सतत प्रवाहमान *प्रक्रिया है, तथा इसमें सारी समस्याओं का* हल निहित है। देश की समस्याएँ अवश्य बढ़ रही हैं, पर सत्याग्रह की तीव्रता महसूस करना उचित नहीं। सत्याग्रह ठोस, सर्वतोमुखी तथा जय जगत् के सिद्धान्त से प्रेरणास्पद हो। साथी सामूहिक स्वाध्याय से बल लें तथा त्रिविध कार्यक्रम को क्षण के लिए भी न भूलें।

—*हरीशंकर लाल,*
४२३, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद

ग्रामदान ही देश को बचा सकता है

रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा गांधीजी के सपनों को मूर्त रूप देने के लिए बिखरे हुए *साधनहीन तथा संख्या में अल्प लोगों* को विनोबा जैसे सूक्ष्मदृष्टा तथा सक्षम व्यक्ति का नेतृत्व प्राप्त हुआ। गांधीजी के निधन के बाद अगले कदम की खोज में उन्होंने समस्त देश की चालीस हजार मील की पदयात्रा की, जिसकी मिसाल भारत के इतिहास में ही नहीं, विश्व के इतिहास में भी मिलना कठिन है। इनकी पदयात्रा के दौरान आन्ध्र प्रदेश में, तेलंगाना स्थित पोचमपल्ली ग्राम में भूदान आन्दोलन का जन्म हुआ। *आज तक देश के लगभग ८ प्रतिशत गाँव* इस आन्दोलन के अन्तर्गत आ गये हैं।

आजकल राजनीति तथा व्यापार में एक अस्वस्थ प्रतियोगिता चल रही है। *प्रत्येक* मनुष्य अधिक-से-अधिक धन-संग्रह के पीछे

पागल है। देश की चिन्ता करने की किसीको फुरसत नहीं है। प्रेम तथा विश्वास का स्थान स्वार्थपरता तथा लेमग्गूपन ने ले लिया है, ऐसी दशा में ग्रामदान आन्दोलन ही देश को बचा सकता है। देश से अधिक-से-अधिक प्राप्त करने के बजाय देश को अधिक-से अधिक देने की प्रेरणा पैदा कर सकता है। यदि इस आन्दोलन को पर्याप्त संख्या में कार्यकर्ता नहीं मिल रहे हैं, तो इसका कारण यह नहीं है कि नवयुवकों में इसके प्रति आकर्षण नहीं है, बल्कि आर्थिक परिस्थितियों ने उनको जकड़ रखा है, भूदान आन्दोलन खंड सत्य नहीं, पूर्ण सत्य है।

—चांदमल अग्रवाल, हैदराबाद

शत प्रतिशत सहमत

विनोबाजी १८ अप्रैल '५१ से सर्व के लिए सर्वमान्य धर्म की भूमिका बनाने का काम कर रहे हैं। भूमि न तो व्यक्ति के अधिकार में रहे, न तो राज्य के, वह ग्रामसमाज के अधिकार में रहे, देश का हर नागरिक का भूमि के साथ सम्बन्ध जुड़े, इस प्रस्ताव को मानता हूँ।

—दयानन्द सिंह,
मु० पो० पारत, पटना

प्रदर्शन योग्य कार्यक्रम चाहिए

गांधीजी ने अठारहविध कार्यक्रम देश के सामने रखा। इनके पूर्ण करने से पूर्ण स्वराज्य हासिल हो जायगा ऐसा भी कहा, तो भी बीच बीच में सामूहिक सत्याग्रह, व्यक्तिगत सत्याग्रह को उन्होंने पूरा अवकाश दिया—झंडा सत्याग्रह, नमक सत्याग्रह, चारकम सत्याग्रह, और आखिर में 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव। गांधीजी के सत्याग्रह की प्रक्रिया सीधी थी, अहिंसात्मक थी, पर वह क्रियाशील अहिंसा विरोधी को सोचने विचारने को मजबूर करती थी।

विनोबाजी भी सत्याग्रह ही कर रहे हैं, लेकिन सारा जन-समाज उसमें हिस्सा नहीं ले रहा है, यह भी हकीकत है। जन समाज इसमें रस ले, ऐसी हमारी प्रक्रिया होनी चाहिए। इसके लिए अभी के हमारे कार्यक्रम पर्याप्त नहीं मालूम होते। जन शक्ति को जगाने के लिए, उसको आन्दोलनात्मक मोड़ देने के लिए सत्याग्रह का कोई न कोई प्रदर्शनयोग्य कार्यक्रम आवश्यक है। आज हमारी सरकार के कई काम ऐसे हैं, जिन्हें सारी जनता और हम सही नहीं समझते, फिर भी हम सब खामोश हैं। सरकार को मनमाना करने का मौका मिला है। विधायक, संसद सदस्य आदि ज्यादातर अपना स्वार्थ या अपनी पार्टी का स्वार्थ देखते हैं। ऐसी दशा में जनता सच्चा मार्गदर्शन नहीं पा रही है। राष्ट्र के प्रश्नों का राष्ट्रीय स्तर पर विचार करें और लोगों का मार्गदर्शन करें। इतने पर भी, पूरा अवसर देने के बाद भी मामले न सुधरें तो सत्याग्रह का रास्ता याने कानून भंग का रास्ता भी अपनायें। इसमें हमें पहले विधायकों, संसद सदस्यों आदि के सामने सत्याग्रह करना होगा, बाद में सरकार के सामने।

बीच बीच में सत्याग्रह के ऐसे कार्यक्रम जनता को जागृत रखेंगे और सरकार भी गलत कदम नहीं उठायेगी। हम जैसा स्वराज्य लाना चाह रहे हैं भारत के लिए, वही सर्वथा अनुकूल है, इसका प्रचार हमें करना होगा और लोगों का मन उस दिशा में मोड़ना होगा। अगर यह देशव्यापी कार्यक्रम न भी बने तो भी अमुक क्षेत्र चुनकर यह काम करना होगा। यह हमारे सारे कार्यक्रम को आगे बढ़ाने का कार्यक्रम होगा। मैं चाहता हूँ कि ऐसे कार्यक्रमों के बारे में सोचा जाय और उनको अमल में भी लाया जाय।

—सुखलाल गो० शाह, वर्धा

दृष्टिकोण : सुधारवादी या क्रांतिकारी ?

भूदान ग्रामदान आन्दोलन निस्सन्देह एक सत्याग्रह आन्दोलन है, किन्तु उसी हद तक यहाँ तक कि वह सुधारवादी दृष्टिकोण से न किया जाकर क्रान्तिकारी दृष्टिकोण अपना कर किया जा रहा है। किसी भी सत्याग्रह आन्दोलन के लिए हमें इन दोनों दृष्टियों के अन्तर को समझना परम आवश्यक है।

सुधारवादी ट्रेड यूनियनिस्ट अथवा राहत का काम करने के दृष्टिकोण के अनुसार—'भूदान ग्रामदान आन्दोलन एक ऐसा आन्दोलन है, जिससे बेजमीनों को जमीन मिलती है। उनकी दशा में सुधार होता है। उन्हें आधा पेट रोटी का आश्वासन मिलता है। किन्तु यह सब उसी व्यवस्था के अन्तर्गत कि जिसने उन्हें इस दशा में लाकर रख दिया है, और इसके लिए हम अधिक से अधिक उन्हें राहत देने का प्रयत्न करते हैं। यह माँग करते हैं कि ग्रामदान के गाँवों के बेजमीनों को व अन्य लोगों को सहायता मिले, जिससे यह दिखाया जा सके कि यह प्रणाली सरकारी प्रणाली से उत्तम है और इस तरह नमूना दिखाकर लोगों को भूदान ग्रामदान की ओर प्रेरित किया जा सके।' कहना न होगा कि आज यही दृष्टिकोण क्रान्तिकारी कही जानेवाली सोशलिस्ट पार्टियों तक ने अपना रखा है और उनका प्रयत्न यह रहता है कि वह किसानों व जनता को यह दिखा सके कि उनकी पार्टी किसानों व जनता का अधिक से अधिक भला कर रही है।

इस दृष्टिकोण के फलस्वरूप जिन लोगों को जमीन दी जाती है, वे दाताओं व प्रयत्नकर्ताओं को परमात्मा की जगह समझने लगते हैं। कार्यकर्ता अपने प्रयत्न में सफलता अनुभव नहीं करता है और इसे व उसे दोष देने लग जाता है, क्योंकि इस भाग दौड़ में वह सबकी दृष्टि में धूमिल हो जाता है कि सब खराबी की जड़ उत्पादन के साधनों का व्यक्तिगत स्वामित्व, अभी पूर्ववत् बना हुआ है और हमारा प्रयत्न क्रान्तिकारी भावना को कुण्ठित करने का एक यन्त्र बन जाता है।

इसके विपरीत, क्रान्तिकारी दृष्टिकोण में भूदान ग्रामदान सत्याग्रह अर्थात् क्रान्ति के सतत प्रवाह की एक प्रक्रिया है। यह समाजवादी समाज कायम करने का तरीका है। इन बातों के द्वारा यह प्रदर्शित होता है कि जनता की रोजाना की समस्याएँ समाजवादी हल से जुड़ी हुई हैं। ग्रामदान से इस तरह की कोई गलतफहमी नहीं होती कि पूँजीवाद के रहते

ग्रामदान के द्वारा जनता की समस्याएँ हल हो सकती हैं। अतः हम इसके प्रति बिलकुल उदासीन रहते हैं कि सरकार ग्रामदानी गाँवों की सहायता करती है कि नहीं, बल्कि हमारा जोर क्रान्ति अथवा सत्याग्रह को फैलाने (एक्स्टेन्सिव) अर्थात् ज्यादा से ज्यादा ग्रामदान कराने और 'इन्टेन्सिव' अर्थात् गाँव में सामाजिक न्याय पाने के लिए लोगों को प्रेरित करने या आन्दोलित करने पर केन्द्रित रहता है। मिसाल के तौर पर, बेजमीनों या कम जमीनवालों को संगठित करके उन मालिकों से जमीन प्राप्त करने की कोशिश करना, जो कि स्वयं काम नहीं करते और उसके लिए आवश्यकतानुसार अहिंसक सत्याग्रह आदि करना।

इस काम में गाँव की, राहत के कामों द्वारा, सेवा करना वर्जित नहीं है। जो लोग क्रान्ति का काम नहीं कर सकते या नहीं करना चाहते, वे इस काम को करें, किन्तु दोनों का अन्तर समझ लेना अति आवश्यक है। दूसरी बात यह है कि जमाना बड़ी तेजी से बीत रहा है। जिस सामाजिक न्याय की हम बात करते हैं, *उसकी झलक हमारे कार्य में मिलनी* चाहिए, तभी लोगों की आस्था हमारे तरीके में होगी। अपनी थोड़ी जानकारी के आधार पर मेरा विचार है कि ग्रामदानी गाँव भी अभी असली जोतनेवालों को जमीन मिलने की गारन्टी नहीं दे पाये हैं। नक्सलवाड़ी आदि का कम्युनिस्ट-आन्दोलन इस दिशा में अधिक स्पष्ट है और इसी कारण वह जनता को आन्दोलित करता व अपनी ओर खींचता है।

क्या ही अच्छा हो कि हम यह साबित कर सकें कि सामाजिक न्याय के लिए सबसे अच्छा व कारगर हमारा तरीका है। केवल अच्छा तरीका होना काफी नहीं है, उसका कारगर होना भी आवश्यक है। यह समझना भूल है कि यदि हम अहिंसा के मार्ग पर चलेंगे तो ध्येय की प्राप्ति स्वयमेव हो जायगी। हमें पहले अपने उद्देश्य को *देखना है और फिर* उसकी प्राप्ति के लिए उचित व कारगर साधनों को। —ओमप्रकाश,

सिविल लाइन्स, मुरादाबाद

कागज-कलम 'खुशाल' की

देश के हर नागरिक की भूमिका नागर, भूमि और गौ से ही बनी है। उन्हें दूसरे शब्दों में 'हल', 'धरा' और धेनु' भी गोपनीय संकेतों में कहा जाता है। हम किसीसे भी *भाषा का*, धर्म का, राज और नीति का टंटा नहीं चाहते, हमें उन शब्दों और संकेतों के "गो—रख, धन दे" से प्रयोजन है कि *जिससे हमारी भूख का मसला हल हो।* मानव मात्र बेकार न रहकर सेतुबंध के पुल बाँधने में लगें।

राष्ट्र की धुरी या धर्म की धुरी भारत वसुधरा में—"धरा" "धेनु" हैं। गिरा, भारती, वाणी के वरदानी पूज्य भावेजी ने अनेक शास्त्रों के मन्थन से अमृततुल्य पद+अर्थ (पदार्थ) सर्वोदय घट में भर दिया है। महाव्रतों के पर्वतों को ऊँचे उठानेवाले "गिरि धारी" के हाथों के सहयोग के लिए हर नागरिक की सम्मति की लकुटी लगनी ही चाहिए।

सबै भूमि गो-पाल की,
राजनीति भू-पाल की,
हाथी घोड़ा पालकी,
मिथ्या माया मालकी,
संत विनोबा ख्याल की,
कागज-कलम 'खुशाल' की॥

—छोटेलाल नेमा 'खुशाल',

११९।११, रामनगर, जबलपुर

सत्याग्रह केवल निष्क्रिय प्रतिरोध (पॅसिव रेसिस्टेन्स) का रूप न ले। निष्क्रिय प्रतिरोध नकारात्मक (निगेटिव) होता है, जब कि सत्याग्रह भावात्मक (पाजिटिव)। निष्क्रिय प्रतिरोध में हिंसा के कुल दोष मौजूद रहते हैं और भावात्मक दुर्बलता का भान। दोनों मिलकर वह वीर्यहीन बन जाता है। *पर रचनात्मक कार्य के आधार पर खड़ा सत्याग्रह* सामनेवाले की विचार-शक्ति को जाग्रत करता है, कुंठित नहीं। सत्याग्रह एक आत्म-शुद्धि का प्रयत्न है, जिसका अनिवार्य परिणाम सामनेवाले की हृदय-शुद्धि होना है। सत्याग्रह में परिमाण का महत्व कम है, गुण का अधिक है। —विनोबा

लोक-यात्रा

स्त्री शक्ति भारत की सेवा में आगे आये और लोक प्रेरणा और लोक-जागृति का निमित्त बने, इसके लिए विनोबा ने बारह साल की भारत-यात्रा का विचार असम की बहनों के सामने रखा। उन्होंने उत्साह से स्वीकार *किया। मित्र-मंडल की राय और विनोबाजी* की सलाह से यात्रा सम्बन्धी निम्न बातें तय हुईं :—

- **नाम**—'लोकयात्रा' रहेगा।
- **उद्देश्य**—'लोकर हितक चिन्तिमिन' हमेशा लोकहित का चिंतन करना; सत्य, प्रेम, करुणा की त्रिमूर्ति को समाज में व्यक्त करना तथा गाईड *लाईन* के लिए एकादश व्रतों का संदेश फैलाना।
- **तत्त्वावधान**—यह लोक-यात्री टोली विनोबाजी की ओर से घूमेगी।
- **सदस्य**—(१) श्री हेमप्रभा भाराली
(२) श्री लक्ष्मीवदन फुकन
(३) श्री निर्मला वेद
- **संचार क्षेत्र**—जहाँ ग्रामदान जिलादान प्राप्ति का अभियान हो, वहाँ लोक-यात्रा टोली घूमेगी। इस दृष्टि से पहले तीन *माह की यात्रा इन्दौर जिले से शुरू हो।*
- **समय**—यथासंभव *लोक यात्रा* का आरंभ २५ अक्टूबर '६७ से हो और करीब २५ जनवरी '६८ तक चले।
- **संयोजन**—प्रान्तीय या स्थानीय संस्था या मित्र-मण्डल लोक-यात्रा का हर दिन का कार्यक्रम बनाये। उसकी पूर्वतैयारी *करे और यात्रा का पूरा प्रबन्ध करे।* साथ में साहित्य बिक्री आदि की व्यवस्था भी करे।
- **पड़ाव**—पड़ावों का फासला ३ से ५ मील तक रखना अच्छा होगा। सुबह स्पष्ट प्रकाश होने के बाद निकलना और बहुत कड़ी धूप होने के पहले पहुँचना।
- **स्वरूप**—लोक-यात्रा का स्वरूप पूरा सांस्कृतिक रहेगा।

तीन माह के अनुभव के बाद लोक यात्री टोली विनोबाजी के पास या किसी आश्रम में पहुँचे। अध्ययन, परीक्षण, निरीक्षण, अनुभवों का आदान प्रदान करे, फिर आगे के कार्यक्रम का तय हो। —कृष्णराज मेहता

हत्या एक आकार की

इस बार २ से ८ अक्तूबर का सप्ताह गांधी जन्म शताब्दी के लिए पूर्वतैयारी का सप्ताह है। अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रमों के अलावा इस सप्ताह का एक और विशेष आकर्षण है—गांधी हत्या के पूर्व हत्यारे के अंतर्द्वंद्व पर आधारित नाटक—'हत्या एक आकार की'। इसका प्रदर्शन ६, ७-८ अक्तूबर को 'फाइन आर्ट्स थियेटर' में हो रहा है।

इस नाटक के लेखक ललित सहगल को गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति ने इस नाटक के लेखन पर पुरस्कार भी दिया है। रेडियो, टेलीविजन तथा रंगमंच की अन्य गतिविधियों से परिचितों के लिए ललित सहगल का नाम नया नहीं है। श्री सहगल ने गांधी की तारीफ में ढोल पीटने की घिसी पिटी पद्धति से अलग हटकर गांधी विचार को विरोध में से उभारने की सफल चेष्टा की है। जो विचार तीव्र विरोध में टिक सके, वही सक्षम होता है।

इस नाटक में गांधी का हत्यारा जब हत्या के लिए चलता है, तो सहसा शंकाग्रस्त हो जाता है। उसके मन में अनेक अन्तर्द्वंद्व उठते हैं। इन्हीं अंतर्द्वंद्वों को प्रस्तुत करने के लिए नाटककार ने शंकित युवक नाम का एक पात्र खड़ा किया है। यह शंकित युवक वास्तव में शंकित हत्यारे की अपनी अंतश्चेतना ही है। हत्यारा एक एक करके आरोप लगाता है, उसे कटघरे में खड़ा करता है और बार बार हार जाता है। अपने पूर्वाग्रहों से ग्रस्त होने के कारण वह करता वही है, जो उसे करना होता है, पर हत्यारे की दलीलों का खोखलापन प्रकट हो जाता है। अंत में हत्यारा यह भी महसूस करता है कि वह मात्र एक आकार की हत्या कर सका है।

गांधी के विचारों पर आधारित लिखा जानेवाला अपने ढंग का यह पहला ही नाटक है, जो दिल्ली के रंगमंच पर प्रस्तुत हो रहा है।

—सतीश कुमार

पुस्तक परिचय

ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य विवेचन (हिन्दी)

विवेचनकार बाल्कोबा भावे

उक्त ग्रंथ का मुद्रण अगस्त १९६५ में शुरू हुआ था। पहला भाग सन् १९६६ के अप्रैल में, दूसरा भाग सन् '६६ के अगस्त में प्रकाशित हुआ है।

ग्रन्थ की प्रस्तावना में विनोबाजी लिखते हैं " विवेचन में बाल्कोबा की दृष्टि एक नम्र साधक की है। अपने साधना काल में शंकाकुल चित्त को निःशंक बनाने में शांकरभाष्य से बाल्कोबा को बड़ी मदद मिली है। समानधर्मी साधकों के लाभ के लिए यह 'विवेचन' लिखने का साहस किया गया है।

"नम्र साधक नम्रता के कारण हिम्मत भी कर सकते हैं। वैसी एक हिम्मत इस विवेचन में बाल्कोबा ने की है, ब्रह्मसूत्र में से अनेक सूत्र छोड़ देने की हिम्मत। जिन सूत्रों को साधकोपयोगी उन्होंने माना, उतने ही सूत्रों का इसमें समावेश किया है। ऐसे चुनाव से ग्रंथ की उपयोगिता सुस्पष्ट होती है। साधक की दृष्टि और जमाने की दृष्टि, दोनों मिलाकर ब्रह्मसूत्र में काटछाँट की गुंजाइश हो जाती है।"

ग्रंथ डबल डिमाई आकार का है। बढ़िया, चिकने कागज पर मुद्रित, कपड़े की सुन्दर और मजबूत जिल्द में ग्रंथ आकर्षक बना है। तीनों भाग मिलकर कुल पृष्ठ संख्या १०२६, मूल्य पूरे ग्रंथ का पच्चीस रुपये।

प्रकाशक परंधाम प्रकाशन
पवनार, जि० वर्धा (महाराष्ट्र)

याद रहेगी

अभियान की सीधी चढ़ाई

२ सितम्बर को वरुण देव शिथिल पड़े और कई दिनों बाद सूर्य भगवान के दर्शन हुए। ग्रामदान अभियान के लिए यात्रियों की टोलियाँ निकल पड़ीं। गाँवों में लोग रात को ही मिल पाते थे। दिन में किसी स्कूल में कार्यक्रम चलाते थे।

एक दिन एक गाँव में कोई आदमी नहीं मिला, दूसरे में भी नहीं मिला, तीसरे की ओर बढ़े। पहाड़ की सीधी दो मील की चढ़ाई, पेट में चूहे कूद रहे थे। आसपास कहीं कुछ नहीं मिला। एक खेत में मडुवा की बालें मिलीं। झोले कंधे से उतारकर एक ओर रख दिये और मडुवा चबाने लगे। ७० वर्ष के बूढ़े हरिदत्तजी के दाँत ही नहीं थे। मडुवा भी नहीं चबा सके। फिर भी गाते हुए मंजिल की ओर चल पड़े—

'जिसको लगी सेवा की लगन,
कुर्बानी का निष पर रंग चढ़ा।'

—गुरुप्रसाद जोशी
ठक्करबापा छात्रावास, टिहरी

आज की पीढ़ी के प्रतिनिधियों का शिविर

आक्रोश और खिन्नता से ग्रस्त आज की पीढ़ी का नये समाज की स्थापना का मार्ग ढूँढ़ना है। यह काम एक चुनौती के रूप में हमारे सामने है। गांधी जन्म शताब्दी समिति की रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति देशभर के ऐसे तरुणों और विद्यार्थियों को आपस में मिल बैठकर बात करने का आमंत्रण दे रही है। सवाल, संकमण और घुटन में से गुजरती हुई आज की धारा को मानवीय-क्रान्ति का प्रवाह देना है। इसी प्रयास में २० से २८ अक्तूबर तक आचार्य राममूर्ति के कुलपतित्व में सिमुलतला में यह शिविर हो रहा है। लगभग सभी विश्वविद्यालयों के छात्र नेता और विभिन्न क्षेत्रों में काम करनेवाले युवक नेता इस शिविर में भाग लेंगे, ऐसी आशा है।

सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, प्रो० मुजीब, सच्चिदानंद वात्स्यायन, त्रिगुण सेन, मधु लिमये आदि विभिन्न क्षेत्रों के शीर्षस्थ व्यक्तियों को भी शिविर में विचार विमर्श के लिए आमंत्रित किया गया है।

—सतीश कुमार

टीकमगढ़ जिले में ग्रामदान की स्थिति

स्थिति का विवरण				ग्रामदान में शामिल					
विकास खण्ड	पंचायत संख्या	ग्राम संख्या	जनसंख्या	पंचायत संख्या	ग्रामदान संख्या	जनसंख्या	शेष ग्राम, जिनका ग्रामदान अभी बाकी है	प्रखण्डदान में प्राप्त ग्रामों का प्रतिशत	विशेष
टीकमगढ़	३३	१७७	६६८३०	२६	१६६	६३७५२	११	९४	तहसील टीकमगढ़ के कुल ३४३ ग्रामों में ३०४ यानी ८९ प्रतिशत ग्राम ग्रामदान में शामिल, इसलिए टीकमगढ़ तहसीलदान घोषित।
बलदेवगढ़	४०	१६६	८०६४५	२५	१३८	६५६१६	२८	८३	
	७३	३४३	१४७४७५	५१	३०४	१२९३६८	३९		
जावरा	४४	२०३	७८७२२	१३	५३	३५८९९	१५०		
पृथ्वीपुर	३३	१११	५४१७४	२	२	५२०९	१०९		
कुल :	७७	३१४	१३२८९६	१५	५५	४११०८	२५९		

—दामोदर प्रसाद पुरोहित, संयोजक
जिला ग्रामदान तूफान अभियान, टीकमगढ़

आन्दोलन के समाचार

ग्रामदान अभियान

बलिया (उ० प्र०) : २० कार्यकर्ताओं की टोलियाँ बेरुआरबाड़ी प्रखण्डदान अभियान की पूर्वतैयारी के लिए निकल पड़ीं। इस प्रखण्ड में कुल ७ पंचायतें और ३५ ग्राम-सभाएँ हैं। १०० से अधिक आबादीवाले ६४ गाँव हैं। जिले का ही नहीं, प्रदेश का यह एक प्रमुख सम्पन्न और सजग प्रखण्ड है। अब तक इस प्रखण्ड में २० ग्रामदान हो चुके हैं। प्रखण्ड के प्रमुख गाँव और पंचायतें ग्रामदान में आ चुकी हैं। —रामवृक्ष शास्त्री

उत्तराखण्ड : गत २२ अगस्त को टोलियाँ ग्रामदान-यात्रा पर निकलीं। बरसात भी जोरों पर थी। ३१ अगस्त तक २१ ग्रामदान हुए।

मधुबन, आजमगढ़ : २४ सितम्बर '६७ से २ अक्तूबर '६७ तक चलाये गये ग्रामदान-अभियान में २८ ग्रामदान घोषित हुए। स्मरणीय है कि आजमगढ़ में ७३ ग्रामदानों की घोषणा 'विनोबा-जयंती' के अवसर पर हुई थी। इस प्रकार अब आजमगढ़ में १०१ ग्रामदान हो गये। —मेवालाल गोस्वामी

महाराष्ट्र के चन्द्रपुर जिले में ग्रामदान-यात्रा चल रही है। इसमें महाराष्ट्र के प्रमुख कार्यकर्ता भाग ले रहे हैं। जिला परिषद और पंचायतों के सरपंच, ग्रामसेवक और शिक्षक आदि पूरा सहयोग दे रहे हैं। राजूरा तथा भद्रावती प्रखण्डों में ३६ ग्रामदान हुए हैं। ३९७ रुपयों की साहित्य बिक्री और 'साम्ययोग' मराठी के ५० ग्राहक भी बने हैं। भद्रावती के बाद अभियान का क्रम आरमोरी प्रखण्ड में तथा उसके बाद यह सिलसिला गोंदिया में चलेगा। —बाबूराव चन्दावार

गुजरात : बलसाड़ जिले के उत्तर वांसदा भाग में १३ से १७ सितम्बर '६७ तक हुई पदयात्रा के दौरान ७ ग्रामदान घोषित हुए। अब पदयात्रा का क्रम वांसदा के दक्षिणी भाग में चल रहा है। ३ ग्रामदान घोषित हुए हैं।

रतलाम : ग्रामदान से ग्राम स्वराज्य की गाँव गाँव में बुनियाद पड़े, इस दृष्टि से म० प्र० सर्वोदय मण्डल के तत्वावधान में सामूहिक ग्रामदान अभियान आलोट और रतलाम तहसील में किया गया। ६५ ग्रामदान प्राप्त हुए। स्थानीय शिक्षकों, पंचायतों के सरपंचों, मंत्रियों, ग्राम-सेवकों आदि ने सक्रिय सहयोग दिया। —मानव मुनि

नशाबन्दी

आगरा : यहाँ महिलाओं की हुई गोष्ठी में उत्तर प्रदेश नशाबन्दी समिति-महिला विभाग का गठन किया गया। श्रीमती विद्याधरी जौहरी अध्यक्ष तथा कु० सन्तोष निगम मन्त्री एवं ११ सदस्याएँ चुनी गयीं।

राजस्थान नशाबंदी समिति ने २ अक्तूबर '६७ से शराबबन्दी-सत्याग्रह की घोषणा की है।

संगठन

मुजफ्फरपुर : बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के नये अध्यक्ष श्री राजकिशोर प्रसाद और मंत्री श्री रमापति चौधरी चुने गये हैं।

बैकुण्ठपुर (सारण) प्रखण्डदान	
क्षेत्रफल	६७,३३३·०६ एकड़
जोत की जमीन	३१,७३२·०९ ,,
,, ,, ग्रामदान में	१९,०६६·०० ,,
जनसंख्या	१,०८,४८१
,, ,, ग्रामदान में	८८,६०३
जनसंख्या का प्रतिशत	७८
चिरागी गाँव	१२२
,, ,, ग्रामदान में	९१

भूदान-यज्ञ रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की अनुमति प्राप्त लाइन्सेस नं० ए. ३४]

'मालिक नहीं, दोस्त' और शेख अब्दुल्ला का खत

गत १० अगस्त को पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खाँ की आत्मकथा 'फ्रेण्डस, नाट मास्टर्स' पुस्तक के रूप में आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कराची से प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में श्री अयूब खाँ ने एक जगह लिखा है कि जब श्री शेख अब्दुल्ला और मिर्जा मोहम्मद अफजल बेग सन् १९६४ में पाकिस्तान आये थे तो भारत, पाकिस्तान और कश्मीर का एक महासंघ बनाने का मूर्खतापूर्ण प्रस्ताव भी लाये थे। उन्होंने आगे लिखा है कि जिस समय हम कश्मीरियों की मुक्ति का मार्ग ढूँढ़ रहे थे, उस समय वे एक ऐसा विचार प्रस्तुत करने के लिए स्व० जवाहरलाल नेहरू द्वारा मजबूर किये गये थे, जिसके अनुसरण से हमें दासता की ओर जाना पड़ता। उन्होंने यह भी लिखा है कि शेख अब्दुल्ला और मिर्जा अफजल बेग ने सन् १९६४ में उन्हें पक्का विश्वास दिला दिया था कि कश्मीर का भविष्य पाकिस्तान के साथ ही सुरक्षित है।

शेख अब्दुल्ला ने अयूब खाँ के उपर्युक्त उद्धरणों को संशोधित कर बड़ी सतर्कता से उनके वक्तव्यों की प्रामाणिकता को चुनौती दी है।" श्री शेख अब्दुल्ला ने श्री अयूब खाँ को एक पत्र लिखा है और कहा है कि वे एक बार फिर से अपनी याददाश्त को ताजा करें। शेख अब्दुल्ला ने अपने पत्र में लिखा है कि जब वे मिर्जा अफजल बेग के साथ १९६४ में अयूब खाँ से मिले थे तो भारत-पाकिस्तान और कश्मीर का महासंघ बनाने का कोई पूर्वनियोजित प्रस्ताव लेकर नहीं गये थे और न तो स्व० जवाहरलाल नेहरू ने ऐसे प्रस्ताव के लिए कोई दबाव दिया था।

शेख अब्दुल्ला ने पत्र में आगे लिखा है, "मेरा पाकिस्तान आने और आपसे मिलने का मुख्य उद्देश्य आपको स्व० जवाहरलाल नेहरू के साथ एक शिखर वार्ता के लिए तैयार करना था, ताकि उस गोष्ठी से कोई सर्वमान्य हल निकल सके। जब मुझसे कोई हल पूछा गया तो मैंने साफ तौर पर बताया था कि राष्ट्रसंघ द्वारा निकाले हुए हल के अतिरिक्त मेरे पास कोई दूसरा रास्ता नहीं दीखता। प्रासंगिक रूप में मैंने कई अन्य संभव हल भी, जिन्हें समय समय पर अनेक लोगों तथा मित्र देशों ने सुझाये थे, बताये थे। इसी प्रसंग में भारत-पाकिस्तान और कश्मीर का एक महासंघ बनाने की बात मैंने कही थी। लेकिन आपने उस प्रस्ताव की तीव्रता से भर्त्सना की थी।"

शेख अब्दुल्ला ने आगे लिखा है, "मैंने आपको राय दी थी कि इस समस्या के हल के लिए कोई गोष्ठी होनी चाहिए, और जिस तरह से भारत और पाकिस्तान इस झगड़े में उलझे हुए हैं, उसे देखते हुए कोई व्यावहारिक, प्रतिष्ठा तथा न्यायपूर्ण हल किसी गोष्ठी द्वारा ही ढूँढ़ा जा सकता है।"

शेख अब्दुल्ला ने आगे लिखा है, "आप भारत आने और स्व० पण्डित जवाहरलालजी से मिलने के लिए तैयार हो गये थे, लेकिन हमारे दुर्भाग्य और पण्डितजी की दुःखपूर्ण असामयिक के मृत्यु ने यह मौका ही नहीं आने दिया।"

शेख अब्दुल्ला का यह पत्र १ सितंबर को लिखा गया था, जिसे उनके ही अनुरोध पर १० दिन बाद प्रकाशित किया गया।—नम्र

समस्याओं का समाधान दिल्ली की शक्ति से असम्भव

—जयप्रकाश नारायण

वाराणसी : २ अक्टूबर। गांधी-जयन्ती के अवसर पर वाराणसी नागरिक परिषद द्वारा आयोजित वाराणसी की सार्वजनिक सभा में भाषण देते हुए श्री जयप्रकाश नारायणजी ने कहा, 'अपने देश की समस्याओं का मूल कारण देश के जीवन का गिरता हुआ नैतिक स्तर है। गांधीजी का सबसे ज्यादा जोर सत्य के आग्रह पर था।

'गांधीजी ने राजनीति को सत्य की कसौटी पर कसा। परन्तु आज राजनीति में असत्य का ही बोलबाला है। सब पार्टियों का अपना-अपना सत्य है। पार्टियाँ अपने-अपने चश्मे से सत्य को देखने की कोशिश करती हैं और इसी कारण सत्य क्या है, वे नहीं देख पाती हैं। राजनीति में पवित्रता होती, तो मैं नहीं समझता कि समाज के दूसरे हिस्से में इतनी शीघ्रता से नैतिक पतन होता। पार्टी परिवर्तन भी उसी प्रकार का भ्रष्टाचार है, जिस प्रकार अन्य कोई भ्रष्टाचार।

'राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक समस्याओं का समाधान जनशक्ति से ही हो सकता है; दिल्ली की शक्ति से नहीं।

'अगर कोई यह मानता हो कि भ्रष्टाचार किसी तानाशाह के आने से मिट जायगा, तो उसका यह भ्रम है। भ्रष्टाचार तब मिटेगा जब जनशक्ति संगठित होकर भ्रष्टाचार का मुकाबिला करेगी।

'आज जो सरकारी तंत्र है, उसे बिना बदले चाहे कोई भी पार्टी शासन में क्यों न आये, कुछ भी काम नहीं कर सकती है। अंग्रेजी जमाने का यह तंत्र आज स्वराज्य के लायक नहीं है।' ●

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व सेवा संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ : ४,८०० इस अंक की छपी प्रतियाँ : ३,८००

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

२० अक्तूबर '६७ अंक : ३

आज मेरे पास कुछ नहीं है, सिवाय इसके कि हिन्दुस्तान के साधारण लोग और गरीब सोचते हैं कि मैं शायद उनका आदमी हूँ।

—स्व० लोहिया

इस अंक में

अगले अंक का आकर्षण

कितनी सेनाएँ!

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

समत्व के तीन पहलू

बराबरी या समत्व के तीन पहलू हैं—भौतिक, सहानुभूतिगत, और आध्यात्मिक समत्व। भौतिक बराबरी देश के अन्दर और देशों के बीच आपसी रिश्ते के सिलसिले में समझी जा सकती है। इस तरह इसके दो रूप मिलते हैं देश के भीतर अन्दरूनी बराबरी और दुनिया के देशों के बीच आपसी बराबरी।

जब मैं देश की अन्दरूनी बराबरी की बात करता हूँ, तो उसका एक मुख्य पहलू होता है, लोगों की आय और दूसरी आर्थिक सुख सुविधाओं की प्राप्ति के बीच समानता।

दुनिया के देशों की आपसी गैर-बराबरी शायद अधिक नाजुक है। दुनिया दो हिस्सों में बँटी हुई है। कुछ ऐसे देश हैं, जो बहुत अधिक धन पैदा करते हैं। लेकिन बराबरी का तात्पर्य एक राष्ट्र की सीमा में मनुष्य और मनुष्य के बीच की बराबरी ही नहीं, बल्कि एक राष्ट्र और दूसरे राष्ट्र के बीच मनुष्यों की बराबरी या समत्व भी है।

समत्व का दूसरा पहलू सहानुभूतिगत है। सहानुभूति तो मन की सहज वृत्ति है। आधुनिक सभ्यता के चक्कर में पड़कर यह कुछ मंद पड़ गयी है, लेकिन है यह सहज वृत्ति ही। मन की निखरी स्थिति में सहानुभूति या क्रोध की सहज प्रवृत्तियाँ भरपूर काम करती हैं। लेकिन जब मन कुंठित हो जाता है, तो ये प्रवृत्तियाँ दब जाती हैं।

जब सहज सहानुभूति की वृत्तियाँ दब जायँ, और उसके स्थान पर असंवेदनशीलता या घृणा घर कर ले, तो समझो कि पतन की शुरुआत हो गयी है।

सहानुभूति के प्रकाशन से मन को आनन्द भी मिलता है। हजारों करोड़ों के साथ उनके सुख दुःख में सहानुभूति या समत्व का अपना अलग ही आनन्द है।

पश्चिमी देशों में समत्व भौतिक बराबरी तथा सहानुभूतिवाली बराबरी का अर्थ रखता है। भारत में समत्व का इन दो के अलावा एक तीसरा पहलू भी है। वह है, मन की बराबरी। मन के अन्दरवाली बराबरी हिन्दुस्तान में अधिक महत्व की है। सुख दुःख, हार जीत, सर्दी-गर्मी, इन सभी स्थितियों में एक-सा बराबर मन या स्थिर मन और आध्यात्मिक समत्व भारत की विशिष्टता है।

सुख दुःख, हार जीत, सर्द गर्म में समान स्थिति रखना कुछ आसान नहीं। शरीर से बर्दाश्त करने की बात उतनी महत्त्व की नहीं, लेकिन मन की एक-सी स्थिति रखना जरूर मुश्किल है। लेकिन एक दूसरा मन होता है, जो शायद इनसे अलग रहकर या इनके ऊपर सब देखता है और हँसता है। क्यों, ठंढ लग रही है न! या बस हार गये न! या तो बराबरी या समत्व का तीसरा पहलू मन की बराबरी—सुख दुःख, हार जीत, सर्द गर्म में हुआ।

इस तरह हम समत्व को एक राष्ट्र की सीमा के अन्दर मनुष्य मनुष्य की बराबरी, और एक राष्ट्र और दूसरे राष्ट्र के बीच मनुष्यों की बराबरी, मनुष्य के प्रति सहज सहानुभूति, सुख दुःख, हार-जीत, सर्द-गर्म में मन की एक-सी स्थिति कह सकते हैं।

अन्तिम समाजवाद शायद दो-तीन सौ वर्षों में भी न कायम हो। लेकिन संसार तो एक प्रक्रिया है। यह लीला चलती रहेगी। परन्तु यह तो साफ है कि समाजवाद की राजनीति का आधार समत्व ही होगा। भविष्य का हिन्दुस्तान ऐसे ही लोगों को पैदा करे।

—राममनोहर लोहिया

[काशी विश्वविद्यालय में १० सितम्बर '५६ को दिये गये भाषण से]

लोक-जीवन पर गहरा आघात

डा० लोहिया का शरीर नहीं रहा, इसलिए हम दुःखी हैं। आज सबेरे तक उनका शरीर बचाने की कोशिश की गयी। उनका शरीर बचाने की कोशिश रही, इतना ही हमें ध्यान है। उस शरीर के लिए हमारे मन में लोभ था और आज भी है। उनके जो मित्र शरीर को बचाने के लिए अपना रक्त दे सकते थे, वे देने के लिए प्रस्तुत हुए। मैं तो यह भी मानता हूँ कि ऐसे कई लोग होंगे, जो डा० लोहिया को अपनी आयु भी दे सकते, तो देते। इतना महत्त्व उनके शरीर का था। जो चीज मेरे चित्त पर प्रभाव कर गयी वह यह थी कि उनके शरीर के संरक्षण के लिए विचार भेद, पक्ष भेद, संप्रदाय भेद, किसी प्रकार के भेद का कोई भान किसीको नहीं रहा। कुछ प्रसंग ऐसे आते हैं, जब मनुष्य मनुष्यता के आधार पर एक हो जाते हैं।

हमारे बीच अखिल भारत के आकार के जो कुछ इने गिने व्यक्ति शेष रह गये हैं, उनमें से लोहिया एक थे, और आज भी उनकी टक्कर के व्यक्ति बहुत ही कम होंगे। उनकी विशेषता यह थी कि उनकी लोकप्रियता सत्ता अधिकार या पद पर निर्भर नहीं थी। वे सत्ता से बाहर रहकर लोकतंत्र में लोकपक्ष का प्रभावशाली प्रतिनिधित्व निरंतर करते रहे। डा० लोहिया के तौर-तरीके के बारे में चाहे जितने मतभेद रहे हों, लेकिन एक बात के बारे में कोई मतभेद नहीं है कि वे बहुत ईमानदार थे। जो कुछ वे कहते थे, वह उनके दिल में होता था। मैंने आपसे कहा कि वे अखिल भारत की नाप के व्यक्ति थे, लेकिन मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि उनका कद मानवता के बहुत नजदीक पहुँच गया था। वह पार्टी में तो रहे, लेकिन पार्टी के कभी नहीं रहे। वे किसी संस्था में, संगठन में, किसी पक्ष में समा नहीं सके। ऐसा विशाल व्यक्तित्व उनका था। उनका व्यक्तित्व कुछ ऐसा था, जो संस्थाओं, सम्प्रदायों, आदि को चीरकर बाहर निकल आता था। हिम्मत तो इतनी थी कि कभी-कभी दुःसाहस जैसी मालूम होती थी।

राज्य सत्ता की प्रतिष्ठा कम करने में डा० राममनोहर लोहिया का बहुत बड़ा हाथ था। आज हम देखते हैं कि हमारी संस्थाओं में, चाहे वे विधायक हों, आध्यात्मिक हों, धार्मिक हों, राज्य सत्ता का बहुत प्रभाव है। इस अर्थ में कि हम लोगों की कई बार यह हिम्मत नहीं हुई कि राज्य सत्ता का कोप अपने ऊपर ओढ़ ले। सत्ता के प्रकोप से हमारी संस्थाओं की सुरक्षितता खतरे में आ जायगी, इस प्रकार की आशंका हमारे मन में बहुत दूर के कोने में दबी हुई है।

डा० लोहिया की प्रतिभा अकुंठित थी। जो प्रतिभाशाली व्यक्ति इस जमाने में हो गये हैं, उनकी पहली कतार में डा० लोहिया का स्थान होगा। हमारे देश में बड़े बड़े विद्वान हैं, पंडित हैं, लेकिन जिन्हें आप मौलिक प्रतिभावान कह सकते हैं, उन बहुत थोड़े लोगों में डा० लोहिया थे। मेरी राय में उनकी तुलना प्रतिभा

के विषय में मानवेन्द्रनाथ राय के साथ हो सकती है। जिस प्रकार इस देश में एक नया विचार देने की कोशिश लोहिया ने की, उसी प्रकार समस्याओं की तरफ देखने की भी उनकी अपनी एक दृष्टि रही। कुछ ऐसे अवसर भी होते थे, जब उनकी प्रतिभा प्रकट नहीं होती थी। उस समय उनके व्यक्तित्व का जो पहलू सामने आता था, उसके विषय में मैं यह नहीं कह रहा हूँ। वे गांधी को बहुत मानते थे पितृतुल्य और गुरु के समान मानते थे। लेकिन फिर भी उनकी अपनी एक स्वतंत्र और मौलिक दृष्टि थी।

वे बहुत कम उम्र के थे। करीब करीब सभी से छोटे थे। अच्युत पटवर्धन, एस० एम० जोशी, एन० जी० गोरे से भी छोटे थे। ऐसा छोटा व्यक्ति जब अपने सामने मर जाता है तो एक हूक-सी मन से निकलती है। मन में ऐसा होता है कि अपने सामने कोई न मरे तो क्या ही अच्छा! राजाजी ने एक दफा लिखा था कि ऐसे अवसरों पर मन में ऐसा होता है कि जो दीर्घायु हमें मिली है वह लज्जास्पद और दुर्भाग्य का विषय है। ऐसी भावना मनुष्य के चित्त में पैदा हो सकती है, ऐसा ही यह प्रसंग है।

लोहिया ने अखिल भारतीय भूमिका से, लोकनिष्ठ भूमिका से और अधिक-से-अधिक सभ्यता और शांतिप्रियता की भूमिका से लोगों में आत्मप्रत्यय और प्रतिकार की शक्ति जाग्रत करने का प्रयत्न किया। राममनोहर लोहिया ने राजाजी को इधर जो पत्र लिखा था, उसमें कहा था कि लोगों में हम चेतना नहीं पैदा कर पाते हैं, उसके उत्तर में राजाजी ने लिखा था कि 'गांधी ने इसी अहद जनता में चेतना पैदा की थी। इसका अर्थ यह हुआ कि लोगों में चेतना पैदा करने के लिए एक नये आयाम की जरूरत है। इस आयाम का नाम है विभूतित्व। वह गांधी में था, हममें नहीं है। इसलिए हमारा इतना ही अधिकार है कि हम लोक-जागृति का निरंतर प्रयास करते रहें और उसमें जो असफलता मिले, उसे सफलता का कदम मानते रहें। यह जो हमारी असफलता है, उसके पीछे अगर सम्यक् प्रयास हो तो उसीमें अपने जीवन की परिपूर्णता माननी होगी।' इस तरह देश में जो व्यक्ति सामाजिक जागरण में लगे हुए हैं, उनमें से एक राममनोहर लोहिया थे। मैं ऐसा मानता हूँ कि जवाहरलालजी की मृत्यु के बाद इतना बड़ा आघात लोक जीवन पर यदि किसीकी मृत्यु से पहुँचा हो तो वह डा० लोहिया की मृत्यु का। मैं आप सब लोगों के साथ उनकी मृत्यु पर अपना शोक प्रकट करता हूँ।●

[श्री दादा धर्माधिकारी द्वारा डा० राममनोहर लोहिया के निधन पर वाराणसी की १२.१०.'६७ को आयोजित शोक-सभा में प्रकट किये गये उद्गार।]

...सम्पादक की ओर से

हमने दो अंकों में सत्याग्रह के प्रश्न पर मित्रों के विचार छापे हैं। अभी भी लोगों के लेख आ रहे हैं, लेकिन इस सिलसिले को फिलहाल आगे बढ़ाना संभव नहीं है। हमारी कोशिश रहेगी कि भविष्य में किसी उपयुक्त अवसर पर इस प्रश्न को फिर प्रस्तुत करें।

सत्याग्रह को लेकर मुख्यतः दो पहलू सामने आये हैं। एक ओर कई मित्रों ने यह महसूस किया है कि प्रशासन के कुप्रबन्ध, बाजार के शोषण और समाज की विषमता के कारण होनेवाले दुःख और अन्याय का प्रतिकार होना चाहिए। इस संदर्भ में सत्याग्रह का यह अर्थ समझा गया है कि कोई उग्र, विरोधात्मक कारवाई की जानी चाहिए, ताकि जल्द-से-जल्द *मुक्ति मिले। दूसरी ओर कुछ मित्र यह सोचते हैं कि ग्रामदान के रूप में एक व्यापक सत्याग्रह* चल रहा है, भले ही उसके स्पष्ट परिणाम अभी न दिखायी देते हों। जो लोग ग्रामदान में सत्याग्रह देख रहे हैं उन्हें सत्याग्रह के नाम से चलनेवाली प्रचलित कारवाइयों में दुराग्रह *दिखायी देता है; कभी कभी उपद्रव के सिवाय दूसरा कुछ नहीं दिखायी देता।*

उग्र कारवाई के समर्थक कहते हैं कि सर्वस्वीकृत सत्य सत्याग्रह के लिए आवश्यक क्यों माना जाय? अधिक लोगों का समर्थन काफी होना चाहिए। क्या असमानता सर्वमान्य सत्य नहीं है? उसके निराकरण के लिए हम उत्पादन के साधनों के समाजीकरण की बात क्यों नहीं कह सकते? आखिर, विनोबा के 'सत्याग्रह' में तात्कालिक समस्याओं को तुरत हल करने *की क्या प्रक्रिया है?*

इसके विपरीत कुछ लोग सत्याग्रह के दुरुपयोग से सशंकित हैं, और उसे दूसरों से अपनी बात मनवाने के कुचक्र के रूप में देखते हैं। उनकी दृष्टि में सत्याग्रह की वास्तविक *शक्ति विचार-परिवर्तन में है।*

दोनों विचार एक-दूसरे से बहुत अलग हैं, लेकिन इतना सब मानते हैं कि राजनैतिक *दलों के जो विरोधात्मक कार्यक्रम चलते रहे हैं* उनसे अपेक्षित परिणाम नहीं निकला है। और यह भी कि ग्रामदान बुनियादी तौर पर कोई नयी बात कह रहा है, भले ही वह बात किसीको सही न लगे।

स्वराज्य के बाद 'सत्याग्रहों' की कमी नहीं रही है। इतना ही नहीं, सरकारें भी बदली हैं, और महीनों से चल रही हैं, लेकिन क्या कारण है कि लोगों का दुःख दूर होता नहीं दिखायी दे रहा है? अपने इतने राजनैतिक दल हैं, जिनमें से हर एक हमेशा किसी-न-*किसी प्रकार का प्रदर्शन या विरोध की रचना* करता ही रहता है, लेकिन कुल मिलाकर रोजमर्रा के जीवन के लिए कोई चीज हाथ नहीं आ रही है, और जनता की निराशा दिनों दिन बढ़ती जा रही है। आखिर, कारण *क्या है? कमजोरी कहाँ है?*

आज जिन लोगों के हाथ में प्रशासन है, क्या उनमें भले और बुद्धिमान लोग हैं ही नहीं? *क्या इतने वर्षों के अनुभव के बाद* हम अब भी नहीं मानेंगे कि मूल दोष व्यवस्था में है, और उसको बदले बिना कल्याण नहीं है? गांधीजी का सत्याग्रह अंग्रेजों के विरुद्ध नहीं था, साम्राज्यवादी ढाँचे के विरुद्ध था। *अंग्रेजों को तो वह मित्र मानते थे। स्वराज्य* के बाद हमने पुराना ढाँचा कायम रखा, जिसका दुष्परिणाम हम आज तक भोग रहे हैं। क्या इस ढाँचे के रहते हुए हमारा कोई भी प्रश्न हल हो सकता है?

कई बार सरकार का निकम्मापन हमें *खलता है। उसकी निरंकुशता से हमें क्षोभ* होता है। इस क्षोभ के परिणामस्वरूप पिछले चुनाव के बाद बड़े पैमाने पर सरकार-परिवर्तन *हुआ। लेकिन क्या हम मानते हैं* कि सरकार के बदलने से काम बन जायगा? क्या रोज-रोज होनेवाली राजनैतिक उलट-फेर अपने में एक गम्भीर समस्या नहीं है?

सरकार कोई भी हो, उसे सही रास्ते पर रखने के लिए गैर-सरकारी शक्ति चाहिए। यह काम ईंट-पत्थर से नहीं होगा। वह गैर-सरकारी शक्ति जनता के सहकार और संगठन *की होती है। वह लोकशक्ति आज कहाँ है? न* लोक का सत्य है, और न लोक की शक्ति है। जो सत्य है, दल का है। हर दल का अपना-अपना सत्य है, और आग्रह का अपना अपना ढंग है। जब देश में स्वराज्य के एक सत्य में से मुस्लिम लीग ने अपना सत्य अलग कर लिया तो सदा से एक रहनेवाला देश दो हो गया। आज जब देश में धर्म, भाषा, जाति, *दल आदि के सत्य ही सत्य हैं तो एक का* आग्रह दूसरे के आग्रह से टकरायेगा और निश्चित है कि यह टकराव देश के टुकड़े-टुकड़े कर देगा।

देश में आज एक जबरदस्त गैर सरकारी *शक्ति दिखायी देती, अगर गांधीजी की सलाह* मानकर कांग्रेस सत्ता से अलग रहती। तब समाज के पास सत्य और सज्जन, दोनों की शक्ति होती। लेकिन आज तो हमारी शक्ति जुलूस और भाषण, पथराव और घेराव में ही *खत्म हो रही है। उससे समाज या सरकार की* शोषण और दमन की व्यवस्था पर क्या असर होता है? लोकतन्त्र के प्रचलित ढाँचे में *'विरोध'* के लिए गुंजाइश है, और कई अवसरों पर जरूरत भी है। यह काम राजनैतिक दलों या नागरिकों की समितियों के द्वारा हो सकता है। लेकिन विरोधवाद को क्रान्तिकारी राजनीति मान लेंगे तो आज का *अधूरा लोकतन्त्र भी समाप्त हो जायगा।*

व्यवस्था के परिवर्तन के लिए दो काम अनिवार्य हैं : (१) जनता अपने सहकार और संगठन द्वारा अपने रोजमर्रा के जीवन को क्रमशः सरकार के हाथ से निकाले; (२) भूमि और दूसरे साधनों का स्वामित्व

बदले—न परिवार का रहे, न सरकार का हो। अगर यह 'क्रान्ति' जरूरी हो तो इसके लिए कैसा सत्याग्रह होगा? क्या गाँव-गाँव में मालिक और मजदूर, जाति और जाति, दल और दल एक दूसरे की अनीति के खिलाफ लड़े हो जायँ तो इन दोनों शर्तों की पूर्ति की शक्ति बनेगी? ऐसे 'विरोध' से तो हर गाँव में गृहयुद्ध छिड़ जायगा। फिर कहाँ रहेगा सत्य और और कहाँ होगा आग्रह?

ग्रामदान को मात्र विरोध से संतोष नहीं है। उसे आज की सम्पूर्ण परिस्थिति बदलनी है, नयी बुनियाद का नया समाज बनाना है। इस काम के लिए 'विरोध' नहीं, 'विद्रोह' चाहिए। ग्रामदान की ग्रामसभा गाँव की सामूहिक शक्ति का प्रतीक है, और ग्राम-स्वामित्व शोषण-मुक्ति की दिशा में पहला कदम। हम इस 'सत्य' को क्यों नहीं पहचानते, और हम 'आग्रह' को क्यों नहीं देखते?

स्वराज्य के बाद सत्याग्रह बहुत हुए, लेकिन वे सब वास्तव में सत्ताग्रह थे। जरूरत इस बात की है कि परिस्थिति में तथा देश में, प्रचलित विचारों में जो 'सत्य' है, उसे ग्रहण करें और उसे एक जन आन्दोलन का आधार बनायें, ताकि आज के समाज के स्थान पर एक नया समाज बनता, बढ़ता दिखायी दे। ●

क्रांति की पकी फसल और अहिंसक हाथ

इस समय सत्याग्रह के लिए बिल्कुल स्पष्ट एक सर्वमान्य सत्य यह है कि देश के आर्थिक ढाँचे में आमूल परिवर्तन किया जाय, जिससे व्यक्ति के लिए ईमानदारी से रोजी कमाना आसान हो जाय और आर्थिक क्षेत्र की अनैतिकता समाप्त हो। इसके लिए आवश्यक है कि पैदावार के साधनों, वितरण के माध्यमों, रहने के स्थानों और एक मर्यादित सीमा से ऊपर संचित धन, जिनसे दूसरों का शोषण होता है, की व्यक्तिगत मालकियत कानून द्वारा भी समाप्त कर दी जाय। इसके स्थान पर मालकियत ग्राम समाज या नगर समाज की हो और व्यवस्था की दृष्टि से खेती स्वयं जोतनेवालों की हो, कारखाने व दुकानें उनमें काम करनेवालों के हों, मकान कुछ प्रतिबन्धों के साथ उनमें रहनेवालों के हों। आय का अन्तर भी १ : १० से अधिक न हो।

यह आज के लिए सर्वमान्य सत्य है। पूर्ण सत्य है सो नहीं। इस सर्वमान्य सत्य के आधार पर आन्दोलन चलाया जा सकता है। उसके दो अंग होंगे। पहला अंग यह होगा कि हम ग्रामदान की यात्राओं के साथ साथ ग्रामों से व नगरों से इस मसविदे के प्रस्ताव पारित (पास) करवा करके लोकसभा व विधानसभा को भेजें व भिजवायें, जिसमें सुझाव दिया गया हो कि वह संविधान में इस तरह का परिवर्तन करें या इस आधार पर नया संविधान बनायें। सर्वोदय कार्यकर्ता अपने-अपने जिले में लोकसभा व विधान सभा के सदस्यों को मिलकर इस प्रस्ताव को लोकसभा में रखने और स्वीकार करवाने के लिए कहें।

सत्याग्रह का दूसरा अंग यह होगा कि देश में जगह जगह कई अन्याय हो रहे हैं, इनमें से किसी सर्वमान्य सामाजिक अन्याय को लेकर उस स्थान पर सम्भव न्याय (समाधान) की स्थापना का प्रयत्न करना और जरूरत पड़ने पर प्रकट सत्याग्रह करना।

ऐसे अहिंसक सत्याग्रह को चलाने की शक्ति सर्वोदय-कार्यकर्ता और सर्व सेवा संघ में पूरी तरह है। देश पर विनोबाजी और ग्रामदान रूप चल रहे सत्याग्रह का एक बहुत बड़ा उपकार यह भी है कि उन्होंने देश के हजारों सजग लोगों की शक्ति को राजनैतिक दलदल और चुनाव में नष्ट नहीं होने दिया, उनके चिन्तन को स्वस्थ रखा, क्रान्ति के अहिंसक मार्ग को प्रकाशित किया। इस प्रकार ग्रामदान आरोहण द्वारा संजोयी गयी शक्ति प्रकट सत्याग्रह करके अहिंसक क्रांति करने में पूरी तरह समर्थ है और लगता भी है कि भारत में क्रान्ति की पकी फसल को अहिंसक हाथ ही समेटेंगे।

—कृष्णकुमार
रूबा स्पोर्ट्स इण्डस्ट्रीज, मेरठ

गुड़ कहीं गोबर न हो

अभाव में खण्ड सत्य के लिए आग्रह भी सत्याग्रह कहलायेगा। देश के सामने जो चुनौतियाँ हैं, उनका उसमें अवश्य जवाब मिलेगा, ऐसी मेरी धारणा है, बशर्ते कि वह सत्याग्रह पूज्य बापू के निर्देशानुसार विनोबाजी के जैसे सत्याग्रहियों द्वारा हो। खुलासा यह कि उत्तम निर्देशन में उच्चतम सत्याग्रही सत्याग्रह करें। अच्छे सत्याग्रहियों के अभाव में सत्याग्रह के द्वारा अवश्य पेचीदगी बढ़ जायगी तथा और एक चुनौती अवश्य खड़ी हो जायगी।

पूज्य विनोबाजी की मान्यता—सत्याग्रह की प्रक्रिया ग्रामदान अवश्य है—ऐसी मेरी भी मान्यता है। पूज्य विनोबाजी की मान्यता—सारी समस्या का हल इसीमें निहित है, बहुत अंश में सही है।

जिस ढंग तथा प्रक्रिया से ग्रामदान का ढोंग तथा कार्य सम्पन्न हुआ है, तथा सत्य को किनारे या पाकेट में बन्द कर ग्रामदान कराया गया है, उसको मान्यता मैं नहीं देना चाहता और न मेरी श्रद्धा उस पर है, और यही प्रक्रिया अगर रही तो मुझे लगता है कि सारा गुड़ कहीं गोबर न हो जाय! भूदान, ग्रामदान तथा रिलीफ कार्य आदि बहुत कामों में उन दुर्गुणों का सुन्दर आभास मिल रहा है, जिससे कांग्रेस की मिट्टी पलीद हो रही है। अत समय रहते यदि कार्यकर्ताओं में सुधार आ जाय तो शुभ, अन्यथा देश का, विश्व का दुर्भाग्य!

—राघव प्रसाद सिंह
शिवनार (मोकामा), पटना

समस्याओं का केन्द्र-बिन्दु : गरीबी

भारत को ग्रामों का देश कहा जाता है। यहाँ की लगभग तीन-चौथाई, अर्थात् सत्तर प्रतिशत जनता ग्रामों में बसती है। अतः इन विशाल ग्रामवासियों का विकास ही इस देश का सच्चा विकास कहा जायगा। यदि इनका विकास नहीं हुआ तो भारत का विकास नहीं हुआ।

गाँव की अनेक समस्याओं में गरीबी, बेकारी और अज्ञानता मुख्य हैं। इन सारी समस्याओं की जड़ गरीबी है। गरीबी से लोग पीढ़ी-दर-पीढ़ी तक सताये जाते हैं। गरीबी भविष्य का विकास रोक देती है। गरीबी दूर हो जाय तो अशिक्षा, अन्धविश्वास, बेकारी, यहाँ तक कि चोरी-डकैती आदि कितने ही अनैतिक कार्य बहुत हद तक स्वयं समाप्त हो जायेंगे। इस देश की जनता गरीबी से आकुल है। राष्ट्रपिता बापू ने कहा है—"भूखों मरता आदमी अन्य सब बातों से पहले अपनी भूख बुझाने का ही विचार करता है। वह रोटी का एक टुकड़ा पाने के लिए अपनी स्वतन्त्रता और अपना सब कुछ बेच डालेगा। भारत में लाखों आदमियों की आज ऐसी ही स्थिति है।"

गाँव की गरीबी या अन्य समस्याओं का मूल कारण है भूमि की वर्तमान गलत व्यवस्था। लेकिन इस गलत व्यवस्था का समुचित समाधान अभी तक नहीं हो पाया है। भूमि अर्थात् कृषि गाँव अथवा देश की आर्थिक रीढ़ है। इसके लिए भूमि-सुधार के बहुत-से नियम बने, भूमि-सीमा (लैण्ड सीलिंग) ऐक्ट पास हुआ, जो अभी तक लागू नहीं हो पाया। समस्या ज्यों की त्यों है। भूदान-यज्ञ के कार्यक्रम से कुछ भूमि भूमिहीनों को प्राप्त हुई, लेकिन उससे ग्राम की सभी समस्याओं का समाधान नहीं हुआ। उसके अनुभव से आचार्य विनोबा ने 'ग्रामदान' आन्दोलन चलाया। वास्तव में यह आन्दोलन गाँव के इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय है। कुछ लोग पुरानी परम्परा को कायम रखकर, जमीन पर या तो व्यक्तिगत अधिकार रखना चाहते हैं या कुछ लोग इसका राष्ट्रीयकरण कर इसे सरकार के अधिकार में देना चाहते हैं। ग्रामदान में यह कोशिश होती है कि भूमि गाँव की हो, इस पर सारे ग्रामीण समाज का अधिकार हो, सभी मिलजुलकर इसकी व्यवस्था करें और सभी बाँटकर खायें। यह मार्ग बीच का मार्ग है, अर्थात् उत्तम है। इससे भूमि की समस्या का समाधान हो जाता है। गाँव की गरीबी, बेकारी और गाँव का शोषण ग्रामदान से बन्द हो सकता है। इस प्रकार गाँव आर्थिक मामले में स्वावलम्बी होकर विकास के मार्ग में अग्रसर हो सकता है। —बैजनाथ लाभ

रोड नं० ६ईं, गर्दनी बाग, पटना

युवा संशोधनकर्ताओं को चुनौती

वर्तमान समय में जिन समस्याओं को ताबड़तोब हल करने की जरूरत दिखायी देती है, उन्हें अहिंसक प्रतिकार द्वारा सत्याग्रह के जरिये मिटाने की तमन्ना बहुतेरे जवान कार्यकर्ताओं के दिमाग में हलचल मचा रही है। आखिर ऐसी तालावेली क्यों उठती है!

राष्ट्र की छोटी-बड़ी, तरह-तरह की उलझती समस्याओं का हल सूझता नहीं और दिमाग में एक प्रकार की उथल-पुथल मचती है।

क्या विनोबाजी के दिल में तात्कालिक समस्याएँ हल करने की उत्कण्ठा दूसरों की तुलना में कम है, ऐसा माना जाय? या यह कहा जाय कि विनोबाजी वास्तविकता और नतीजों की उपेक्षा करते हैं? हम देखते हैं कि समस्याओं का वास्तविक और तात्कालिक हल ढूँढ़ने में ही 'भूदान-गंगा' प्रकट हुई, और वही धारा आगे चलकर ग्रामदान और अब जिलादान के रूप में विकसित हुई।

आज विनोबाजी हमें 'आरोहण' और 'अक्षोभ चिन्तन' जैसे मन्त्रों की दीक्षा दे रहे हैं। हम यह भी कैसे भूल जायँ कि आजादी प्राप्त करने के बाद एक स्वतंत्र, प्रजातंत्र प्रणाली जिस देश में अपनायी गयी है, उस देश में सत्याग्रह का सन्दर्भ ही बदल चुका है! इसलिए तो विनोबाजी 'सौम्य, सौम्यतर-सौम्यतम' सत्याग्रह की प्रक्रिया हमें समझा रहे हैं। हमें यह भी सोचना पड़ेगा कि अणुयुग की देहलीज पर बैठे हुए मानव को सर्वनाश की राह से हटाकर सर्वोदय की ओर ले जानेवाली अहिंसा की प्रक्रिया कितनी सूक्ष्म चाहिए। वर्तमान विश्वभूमिका के सन्दर्भ में 'अहिंसा' कितनी और कैसे फैलेगी, इस बारे में सोच-विचार करके आगे कदम बढ़ाने का तय करना होगा।

विनोबा से सूक्ष्म सत्याग्रह का एक नया दृष्टिकोण हमें प्राप्त हुआ है: (१) भमन्य की उपेक्षा-वृत्ति, (२) गुणदर्शन-वृत्ति, (३) नम्रता से शून्यता की ओर जाने की वृत्ति। इस बारे में हमने कितनी लगन दिखाई है? और कितनी गहराई में जाकर इसमें संशोधन करने की वृत्ति हमने विकसित की है? आज की ताबड़तोड़ हल का तकाजा करनेवाली समस्याओं के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष कार्यक्षेत्र में जाग्रत रहकर पूर्ण श्रद्धा से क्या हमने इस शस्त्र को आजमाया है?

लोकनीति की मजबूत बुनियाद पर सही जनशासन की स्थापना अब भी बाकी है। सर्वसम्मति और प्रेम से समस्याएँ हल करने की तस्वीरें अब तक चित्रित नहीं हुई हैं। ग्रामतंत्र और विश्वतंत्र—दो ही तंत्र आखिर में टिकेंगे। ये बातें युवा संशोधनकर्ताओं को चुनौती दे रही हैं। जीवन-समर्पण का तकाजा लेकर समस्याएँ सामने खड़ी हैं। ऐसे मौके पर पीछे हटने का अवकाश ही नहीं दिखायी पड़ता। सारे संसार में हिंसा का ही बोलबाला है। इसमें अहिंसा की शक्ति प्रकट करने के लिए नयी-पद्धति (न्यू-टेक्निक) की खोज हमें करनी ही होगी।

—कांतिभाई चन्द्राराणा

धरमपुर, बलसाड, गुजरात

ग्रामदान : सत्याग्रह नहीं

देश में जो समस्याएँ चुनौती बनकर सामने खड़ी हैं, उनका कोई हल होना चाहिए, इससे कौन इन्कार कर सकता है! तत्काल होना चाहिए, यह भी सभी चाहते हैं, पर क्या यह सम्भव है? जो समस्याएँ हैं, वे क्या केवल हमारे ही देश की हैं? आज तो किसी भी अच्छे बुरे काम के लिए किसी भी देश को बिल्कुल अलग मानकर सोचा ही नहीं जा सकता है। यदि यह कहा जाय कि आज सभी समस्याएँ विश्वव्यापी हैं तो अधिक उपयुक्त और अधिक सत्य होगा। साथ ही उसका हल भी उसी पैमाने पर सम्भव होगा।

गांधीजी ने सदा अपने सत्याग्रहित, कार्यक्रम में रजोगुण की पुट दी और तमोगुण को गहरा उतारकर उसका आवश्यक सूक्ष्म अंश सदा काम में लिया।

आज पूरे देश के लिए नहीं, अपितु विश्व के लिए सर्वमान्य हल एक नहीं अनेक हैं, जो

विश्व के लिए सर्वमान्य, सत्य है। यह देश के लिए अपने आप सर्वमान्य है ही। वास्तव में सर्वमान्य सत्य के लिए उचित स्वरूप में आग्रह करनेवाले कहाँ है? है। ग्रामदान को सत्याग्रह तो नहीं माना ही जा सकता है, फिर चाहे और कुछ भी उसे कहें, सत्याग्रह का बड़ा भाई, पिता या पुरखा! कदाचित सौम्यतर व सौम्यतम शब्द इसके साथ पूज्य विनोबाजी ने इसीलिए लगाये हैं, क्योंकि यह सत्याग्रह नहीं है।

यदि विनोबाजी का कहना है कि ग्रामदान सत्याग्रह है और ग्रामदान सत्याग्रह की सतत प्रवाहमान प्रक्रिया है, इसमें सारी समस्याओं का हल निहित है, तो क्या सारे विश्व में ग्रामदान प्रक्रिया से समस्याएँ समाप्त हो जायेंगी? आज इस दुनिया की समस्याओं को हल करने के लिए सत्वगुण साधक और रजोगुण पालक प्रक्रियायुक्त सत्याग्रह की आवश्यकता है।

—सत्यप्रिय
श्री गांधी आश्रम
मुजफ्फरनगर

सत्याग्रह जन-चेतना के लिए

जिसे हम जन आन्दोलन कहते हैं, वह बने ऐसी मानसिक अवस्था हमारी यानी भूदान का काम करनेवालों की नहीं है। सत्याग्रह आदि आत्मक्लेश के कार्यक्रम पुराने पड़ गये, ऐसा मानकर एक तरह की छुआछूत की भावना सत्याग्रह के प्रति हममें पैदा हुई है। 'परसुएशन' का सत्याग्रह हमने मान लिया है। पदयात्रा और उसका संगठन सत्याग्रह का ही एक रूप है। लेकिन इससे जन आन्दोलन नहीं बन सका, कभी बनेगा, ऐसी उम्मीद भी नहीं कर सकते। तब यह सवाल आता है कि जब आन्दोलन की गति से भूदान ग्रामदान का कार्य करना हो तो क्या करना चाहिए?

सत्याग्रह के बारे में हमारे मन में जो है वह यह कि सत्याग्रह के द्वारा जो जन आन्दोलन होगा, उससे जो जन भावना पैदा होगी, वह सत्याग्रह के अनुकूल रहेगी या प्रतिकूल? कुछ असहकारी भावनाएँ सत्याग्रह के जन आन्दोलन में घुस आयेंगी और नतीजा सत्याग्रह के अनुकूल निकलेगा नहीं। ऐसे समय पर सत्याग्रह का क्या होगा? लेकिन जन आन्दोलन में सत्याग्रह रहेगा ही नहीं, ऐसा सोचना जनता के सद्भावों का अनादर करने जैसा ही है। यह मान लिया जाय कि सत्याग्रह के जन आन्दोलन में अनुचित भावनाओं का समावेश होगा ही, तो भी इसके बिना जन आन्दोलन का कोई दूसरा अहिंसक तरीका भी आज मौजूद नहीं है। जो है ऐसा हम मानते या कहते हैं, वह परिणामों की दृष्टि से प्रभावहीन है। नये मूल्य बनाते समय, उनकी प्रतिष्ठा बने, ऐसे प्रयास करते हुए कुछ तो हिम्मत करनी ही चाहिए। सत्याग्रह के मूल्यों की स्थापना जन मानस में हो, इसलिए जनता को सत्याग्रह की प्रक्रिया में सम्मिलित करना होगा। सत्याग्रह के नेतृत्व में उसके मूल्यों को समझनेवाले, जाननेवाले, जीवन निष्ठा रखनेवाले ही तो होंगे। महात्मा गांधी ने सत्याग्रह का नेतृत्व किया, कई बार असफलता आयी, सत्याग्रह वापिस लिया गया, लेकिन सत्याग्रह करना छोड़ नहीं दिया गया। बार-बार के सत्याग्रह से जनता में एक चेतना आयी। जनता में चेतना आये, ऐसा कोई उपाय है तो वह सत्याग्रह ही। लेकिन आज जो हर रोज कहीं न कहीं सत्याग्रह होते रहते हैं, उसे सत्याग्रह नहीं कहा जायगा। आत्मक्लेश द्वारा प्रेम की शक्ति बनानेवाले कार्यक्रम को ही सत्याग्रह कहा जायगा, लेकिन इसका सामाजिक स्वरूप होना चाहिए।

सत्याग्रह द्वारा जन आन्दोलन होना ही चाहिए। लेकिन हम यह नहीं करते। सवालों से कोसों दूर भागते हैं। चुनौतियों को स्वीकार नहीं करते हैं। शक्ति, बुद्धि, योग्यता, तपश्चर्या व ज्ञान के होते हुए भी अलिप्त रहते हैं, इसलिए सत्याग्रह का शान्त रूप सामने आता है। उधर हिंसा को बढ़ावा मिलता है। गुण्डागर्दी का साम्राज्य बनता है, बना है।

सत्याग्रह के कार्यक्रम को सुयोग्य नेतृत्व दिया जाय तो उससे एक नयी चेतना देशभर में आयेगी। आज चेतना की बहुत ही आवश्यकता है। हिंसा का मुकाबला इस चेतना से ही होगा। हिंसा के बदले आत्मक्लेश सहने की हिम्मत जनता में आयेगी तभी हिंसा का अवमूल्यन होगा। नहीं तो हिंसा बढ़ेगी, उसका मूल्य बना रहेगा।

—बापूराव चन्दावार,
म० गांधी सेवा मन्दिर, विवेकानन्द शाला,
बम्बई ७ पूम -५०

अहिंसक शक्ति का जागरण

ग्रामदान के विचार को विकसित करते हुए उसके द्वारा समाज की आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक समस्याओं का हल खोजा जा रहा है। इस प्रकार बिहार में साम्यवाद का एक पूर्ण रूप से विकसित विकल्प की तलाश करने में सब लोग लगे हुए हैं। ऐसा लगता है कि भारत क्रांति के कगार पर खड़ा है। अब गाँवों के श्रीमानों का कर्तव्य है कि वे अपने पड़ोसी, गरीब, कमजोर और शोषित ग्रामीण मजदूर को तन मन व धन से सहायता करते हुए उसके सुख दुःख में साझीदार हों, नहीं तो हिंसक क्रांति का खतरा है।

देश में अहिंसक शक्ति ग्रामदान के कार्यक्रम द्वारा जाग्रत हो रही है। यदि प्रशासन द्वारा देश की समस्याओं को विवेकपूर्वक न सुलझाया गया तो जनता को अपनी अहिंसक शक्ति का उपयोग भी उसके विरोध में करना ही पड़ेगा।

—भोलानाथ पाण्डे,
शांति-केन्द्र, घोरगाहाद बाद, आगरा

अधिक उत्पादन की मृगमरीचिका

नयी दिल्ली में गत सितम्बर के पहले सप्ताह में खेती और उद्योग में लगे गिने-चुने लोगों की एक मिलीजुली बैठक हुई थी। उस बैठक का उद्घाटन केन्द्रीय कृषि तथा खाद्य-मंत्री श्री जगजीवन राम ने किया था। बैठक की व्यवस्था भारत के उद्योगपतियों की संस्था "भारतीय वाणिज्य उद्योग मण्डल" ने की थी। बैठक में कहा गया कि हमारे देश में खेती और खेती में लगे मजदूर—दोनों की उत्पादकता बहुत कम है। इसीका नतीजा है कि खेती भारत की अर्थ-व्यवस्था का सबसे दरिद्र क्षेत्र है। भारत में खेती में प्रति मजदूर पीछे बहुत कम उत्पादन होता है। प्रति मजदूर पीछे कम उत्पादन होने के साथ-साथ प्रति एकड़ उत्पादन भी बहुत कम होता है।

फसल	भारत में प्रति एकड़ उत्पादन	विश्व का औसत
गेहूँ	३१९ किलोग्राम	५१० किलोग्राम
चावल	५५८ ,,	८०५ ,,
कपास	४८ ,,	१३३ ,,

अर्थशास्त्रियों ने वहाँ बताया कि देश के १०० पीछे ७० आदमी खेती के धंधे में लगे हैं, लेकिन वे भारत की कुल राष्ट्रीय आय का आधा ही पैदा करते हैं!

भारत में कृषि की क्या स्थिति है, इसका परिचय नीचे की तालिकाओं में मिलेगा।

श्रमिकों का विभाजन (प्रतिशत)

धन्धे	१९५१	१९६१
खेती	५०.०	५२.८
कृषि श्रमिक	१९.७	१६.७
खान, निर्माण उद्योग और घरेलू उद्योग	१२.०	१३.४
अन्य श्रमिक	१८.३	१७.१
कुल	१००.०	१००.०

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय आय में कृषि का योग कितना बड़ा होता है, इसकी झाँकी इस तालिका में मिल सकती है—

राष्ट्रीय आय के स्रोत

	१९५०-५१	५५-५६	६०-६१
कृषि	५१.३	४५.३	४८.७
लघु उद्योग	९.६	९.७	७.९
बड़े उद्योग	६.५	८.८	१०.५
अन्य स्रोत	३२.६	३६.२	३२.९
	१००.०	१००.०	१००.०

उद्योगपतियों के प्रतिनिधियों ने कहा कि खेती भी एक रोजगार है, एक उद्योग है, इसलिए उसे भी एक रोजगार की ही तरह चलाना चाहिए।

भारत के कृषि और खाद्यमंत्री श्री जगजीवन राम ने देश के उद्योगपतियों से अपील की कि वे खेती की दशा सुधारने के लिए किसानों की मदद करें। वाणिज्य मण्डल के अध्यक्ष श्री लक्ष्मीनिवास बिरला ने सुझाव पेश किया कि पैदावार बढ़ाने के लिए सरकार खेती का काम करनेवाली कंपनियाँ चलाने की सुविधा दे, तो देश अनाज के मामले में जल्दी ही स्वावलम्बी हो जायेगा। श्री बिरला ने बताया कि बड़ी-बड़ी कंपनियाँ अपने अनुभवों, मशीनों, औजारों, और रोजगारी कुशलताओं के बल पर खेती की उपज बढ़ाने में बहुत उपयोगी, साबित होंगी। अपने सुझाव का खुलासा करते हुए उन्होंने कहा कि छोटे-छोटे खेतवाले किसान की सहायता लेकर अपनी उपज बढ़ाने में सफल नहीं हो सकते, क्योंकि अन्य उद्योगों की तरह खेती के वैज्ञानिक विकास के लिए भी भारी मात्रा में पूँजी की जरूरत पड़ती है। इसकी व्यवस्था करना छोटे-छोटे किसानों के बूते के बाहर की बात है और सरकारी खेती की सम्भावनाओं की जहाँ तक बात है वह तो हमारे देश में अब तक असफल ही रही है। श्री बिरला ने बताया कि कंपनी-व्यवस्था में किसान को कोई नुकसान नहीं होगा। वह आज जितनी आमदनी कर लेता है, उतना तो उसे निश्चित रूप से देने की व्यवस्था की जायेगी।

देश की परती जमीन का उल्लेख करते हुए बैठक में कहा गया कि इस समय भारत में लगभग २० करोड़ एकड़ भूमि ऐसी है, जो परती है। पर वह ऐसी है, जिस पर खेती की जा सकती है। इसमें से कम-से-कम आधी यानी १ करोड़ एकड़ भूमि तो निश्चय ही कृषि-योग्य बनायी जा सकती है। किन्तु इतनी अधिक भूमि तो खेती के लायक बनाने और उस पर खेती करने के लिए बहुत अधिक पूँजी की जरूरत होगी। यदि ऐसी जमीन उद्योगपतियों को दी जाय, तो वे उसके लिए धन का भी प्रबन्ध कर सकेंगे और उस पर व्यापारिक तरीके से खेती भी करा सकेंगे। पटसन, सूती कपड़ा, खाद्यतेल, वनस्पति और चीनी के ऐसे उद्योग हैं, जिनका कच्चा माल खेती से ही मिलता है। यदि इन उद्योगों को बड़े-बड़े फार्म बनाकर कच्चे माल की खेती करने की सुविधा दी जाय तो इन उद्योगों के लिए कच्चे माल की कमी नहीं रह जायेगी।

खाद्य और कृषि-मंत्री श्री जगजीवन राम ने उद्योगपतियों के इन सुझावों को स्वीकार करने में कठिनाई बतायी।

उद्योगपतियों ने इतने दिनों तक खेती को व्यावसायिक आधार पर चलाने की बात नहीं की थी। सहज ही प्रश्न उठता है कि अचानक उनके भीतर खेती के प्रति इतने लगाव का विचार कैसे जग गया?

पिछले २० वर्षों से यह देश आर्थिक विकास के रास्ते पर आगे बढ़ने की कोशिश में लगा रहा है। अब तक के आर्थिक विकास का लाभ प्रायः नगरों और औद्योगिक क्षेत्रों में दिखाई पड़ा। खेती के क्षेत्र की लगभग उपेक्षा ही होती रही। एक ओर आर्थिक विकास की योजनाओं में उद्योगों और व्यवसायों के विकास पर ही ताकत लगायी गयी, दूसरी तरफ योजनाकारों ने इस बात की भी कोशिश की, कि खेती व्यावसायिक ढंग से न चलने पाये, यानी खेती करनेवालों को खेती की उपज में मुनाफा की गुंजाइश न रहे। अपनी इस इच्छा को सफल बनाने के लिए सरकार प्रति वर्ष विदेशों से भारी मात्रा में गल्ला मँगाकर उसे शहरी इलाके में रहनेवाले नागरिकों को कम कीमत में बाँटती रही। इस बनावटी इन्तजाम के कारण बाजार में गल्ले का भाव तो उतना नहीं बढ़ा, लेकिन उद्योगों द्वारा तैयार होनेवाली चीजों के दाम बढ़ते गये। इसी बीच पिछले तीन वर्षों से लगातार वर्षा की कमी के कारण देश में अनाज का उत्पादन बहुत कम हुआ। सरकार चाहते हुए भी विदेशों से मनचाही मात्रा में गल्ला नहीं प्राप्त कर सकी; क्योंकि विदेशों में भी गल्ले का स्टाक अधिक नहीं था। बाहर से भरपूर गल्ला न मिल पाने से पिछले ३ वर्षों में गल्ले का बाजार का भाव बहुत ऊपर चला गया।

कुछ वस्तुओं के मूल्य सूचक अंक

	१९६४	१९६५	१९६६ जनवरी अक्तूबर
अनाज	१३४	१४५	१६३
औद्योगिक कच्चा माल	१५४.२	१८०.७	२१७.९
तिलहन	१८८	२२१	२८४
सब किस्में	१४८.३	१६१.३	१८१.०

कुल मिलाकर अनाज का भाव इतना ऊँचा हो गया कि शहर में रहनेवाले लोगों की आमदनी का बहुत बड़ा हिस्सा गल्ला खरीदने में ही खर्च होता रहा। इससे जिंदगी की दूसरी जरूरी चीजों को खरीदने की गुंजाइश घटती गयी। लोगों ने अन्य सामान खरीदना कम कर दिया। इस परिस्थिति से सन् १९६६-६७ में भारत के उद्योगों को भारी धक्का लगा, कारखानों में सामान तो खूब तैयार हो रहा था, लेकिन बाजार में खरीददार कम थे, अतः गोदाम माल से भरने लगे। जो उद्योगपति बीस वर्षों से दिन दूना और रात चौगुना मुनाफा कमाते आ रहे थे, उनकी तिजोरियाँ खाली रहने लगीं। यह परिस्थिति उद्योगपतियों के सामने एक चुनौती बनकर आयी।

भारतीय अर्थव्यवस्था में आज तक औद्योगिक क्षेत्र का बोलबाला रहा है। औद्योगिक उत्पादन में जो चीजें तैयार होती हैं, उनकी कीमतें व्यावसायिक आधार पर तय होती हैं। व्यावसायिक आधार का सीधा सादा अर्थ यह होता है कि माल तैयार करने में जो लागत खर्च आता है, उस पर मुनाफा रखकर उसकी बाजार की कीमत तय की जाती है। व्यावसायिक आधार का मतलब ही है मुनाफे का रोजगार।

आज तक खेती से पैदा होनेवाले गल्ले की कीमत या तो बाजार के व्यापारियों से तय होती रही है या सरकारी अधिकारियों द्वारा। दोनों ही जब गल्ले का भाव तय करते हैं तो वे पैदावार की लागत का हिसाब नहीं लगाते। पैदावार की लागत का हिसाब लगाने पर गल्ला इतना महँगा साबित होता है कि कोई उसकी सिफारिश नहीं करना चाहता। जाहिर है कि इतने वर्षों तक भारत के खेती करनेवालों को अपनी उपज घाटा उठाकर बेचने के लिए विवश किया गया। इस तरह बीस वर्षों में भारत के किसानों को कुल मिलाकर कितना धाटा उठाना पड़ा है, इसका हिसाब शायद ही अभी तक किसीने लगाया हो।

एक तरफ भारत की खेती को इस बुरी तरह चूस लिया गया, दूसरी तरफ उससे फायदा उठानेवाले ही यह भी कहते हैं कि भारत की अर्थ-व्यवस्था का सबसे दरिद्र क्षेत्र कृषि है। उद्योगपतियों ने अपना एक अलग ही अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र गढ़ लिया है। अपनी पूँजी के बल पर उन्होंने वैज्ञानिकों और वैज्ञानिक साधनों पर कब्जा जमा लिया है। व्यापारिक कुशलता और उत्पादन की वृद्धि का छलावा दिखाकर उद्योगपतियों ने भारतीय अर्थव्यवस्था में पशु शक्ति से होनेवाले कामों को अपने चंगुल में ले लिया। बैलगाड़ी, कोल्हू और हल की जगह मोटर, हलर और ट्रैक्टर ने ली। इसके बाद मेहनत का काम करनेवालों का धंधा भी मशीनों के दायरे में चला गया। तेली, बढ़ई, लुहार, कुम्हार और जुलाहे बेकार होते गये।

जिस औद्योगिक व्यापारिक आधार पर मशीनें हमारे देश में कारीगरों का स्थान लेती जा रही हैं, उसी आधार पर दुनिया के औद्योगिक दृष्टि से आगे बढ़े हुए देशों में अब 'कम्प्यूटर' (यांत्रिक दिमाग) दिमागी काम करनेवालों की जगह ले रहे हैं। 'कम्प्यूटर' एक ऐसी मशीन है, जो सोचने का काम करती है। जितनी देर में एक वाक्य पढ़ा जा सकता है, उतनी देर में एक 'कम्प्यूटर' तीस लाख गणनाएँ कर सकता है। जितनी देर एक पन्ना पढ़ने में लगती है, उतनी देर में अनुवाद यन्त्र ९ विदेशी भाषाओं में उसका अनुवाद कर सकता है। सिर्फ हिसाब करनेवाले और अनुवाद करनेवाले ही नहीं, कहानी, कविता लिखनेवाले लोग भी धीरे धीरे बेकारों की जमात में शामिल होने को विवश हो रहे हैं, क्योंकि 'कम्प्यूटर' की कार्य क्षमता की तुलना में वे बहुत कमजोर साबित होते हैं। 'कम्प्यूटर' हाड़ मांस के कर्मचारी से कई माने में अधिक सक्षम होता है। उसके थकने, सोने या टाल-मटोल करने की गुंजाइश नहीं होती। वह अपनी मजदूरी बढ़ाने या हकों की माँग पूरी कराने के लिए हड़ताल की धमकी नहीं देता।

वस्तुतः पश्चिमी देशों का उद्योगवाद स्वचालित कारखानों के युग में प्रवेश कर रहा है। जिन कारखानों में पहले हजारों लोग काम करते थे, वहाँ अब स्वचालित मशीनें सारा काम करती हैं।

घनी आबादीवाले गरीब देश की अर्थव्यवस्था ऐसी होनी चाहिए, जिसमें देश की दौलत बढ़ने के साथ साथ करोड़ों लोगों को रोजगार भी मिले। केवल बड़े कारखानों और मशीनों के जरिये पैदावार बढ़ायी जायेगी तो मुल्क में धनी लोग और ज्यादा धनी होंगे और गरीबों की गरीबी और ज्यादा बढ़ेगी। उत्पादन बढ़ाने के साथ साथ सबको काम देना यह भारतीय अर्थ-व्यवस्था की पहली शर्त है। उत्पादन का जो ढंग लाखों करोड़ों को बेरोजगार बनाता है, वह वस्तुतः हमारे लिए कंचन मृग जैसा ही है। उसके पीछे पागल होकर हम अपने आप को खतरे में डालेंगे।

भारत की खेती और उद्योग एक दूसरे पर निर्भर रहकर देश की आर्थिक तरक्की कैसे कर सकते हैं, यदि इसका ठीक ठीक विचार किया जाय तो दीखेगा कि खेती की व्यावसायिक सफलता के लिए खेती करनेवाली कंपनियों की जगह खेती के सुधरे हुए औजारों और गाँवों में चलनेवाले छोटे पैमाने के ग्रामोद्योगों का महत्त्व मानना पड़ेगा। इस कार्य में जो उद्योगपति आगे आना चाहें, उनके लिए ग्रामदानी क्षेत्रों की ग्राम-सभाएँ एक भरोसे लायक साझीदार बन सकती हैं। —रुद्रभान

→त्याग करने की कल्पना मोहचक्र में फँसे आरामतलब चित्त को नहीं जँचती।"

साम्यवाद दुनिया के शोषितों को एक सूत्र में बाँधने की बात करता रहा है, लेकिन अपने 'वाद' के विस्तार के लिए हिंसा को वर्जित नहीं करता। चीन तो खुलकर कह रहा है कि नये समाज का जन्म बन्दूक की नली से होता है। और चीन भक्त यह कहते हैं कि चीन की सेना हमेशा मुक्ति के लिए ही हथियार उठायेगी। यह उस स्तर की बात हुई जैसे राम के भक्त कहते हैं कि रामजी के बाण से जो जो मरे सबको मुक्ति ही मिली!

• मुक्त ज्ञान प्रचार की छूट न फासिस्टवाद में है, न साम्यवाद में। फासिस्टवाद से अलग साम्यवाद ने समाज के हित की जो बात कही है वह सर्वोदय के प्रतिकूल नहीं है। साम्यवाद ने समाज के हित में सबका हित देखा, लेकिन क्रान्ति को हित विरोध के आधार पर संगठित किया। नतीजा यह हुआ कि क्रान्ति के तत्त्व ढीले और कम टिकाऊ हो गये। "जहाँ (नाजीवाद में) जर्मन नेताओं को यह मोह रहा कि वंश का अभिमान जगाये बिना शायद राष्ट्र का संगठन शीघ्र नहीं होगा, वहाँ रूसी नेताओं को यह भ्रम था कि वर्ग-विरोध की भूमिका के बिना क्रान्ति तेजी से नहीं होगी!"

• "भारत में इस समय सभी 'वादों' को स्थान मिल सकता है। गरीबी तो हमारी बेमिसाल है और हमारे परम्पराप्रिय समाज को जाति का अभिमान भी रुचिकर प्रतीत हो सकता है। इसलिए गरीबों से हमदर्दी रखनेवाले साम्यवाद को चाहनेवाला और जाति-अभिमान का संगठन करने की इच्छा रखनेवाला, इस तरह ये दोनों वर्ग इस समय यहाँ पैदा हो गये हैं।" यह सही है कि भारत के लिए इन दोनों में से एक भी अनुकूल नहीं है, फिर भी साम्यवाद ज्यादा आकर्षक हो सकता है, और इसमें सुधार भी हो सकते हैं, लेकिन फासिस्टवाद में नहीं। (क्रमशः)

—रा० मू०

साम्ययोग का त्रिकोण

हमारी विचारधारा के चार अंग हैं :

एक है हमारा उद्देश्य, जिसको हमने नाम दिया है—साम्ययोग,

दूसरा है तत्त्वज्ञान। तत्त्वज्ञान में हम चाहते हैं—समन्वय,

तीसरा है सामाजिक और आर्थिक लक्ष्य। वह है—सर्वोदय,

चौथा है उसको अमल में लाने की पद्धति, वह है—सत्याग्रह,

× × ×

सत्याग्रह जीवन-पद्धति है।

उसीके आधार पर जो समाजरचना बनेगी, वह सर्वोदय होगा।

उसके लिए भिन्न भिन्न चिंतन और तत्त्वज्ञान आज दुनिया में चलते हैं, उन सबका आपसी विरोध मिटाकर समन्वय करना होगा। यह हमारा सब प्रकार के वादों और विचारों को खतम करनेवाला समन्वय का सिद्धान्त है।

इन तीनों के परिणामस्वरूप व्यक्तिगत और सामाजिक चित्त की समता हासिल होगी। उसको हमने नाम दिया है साम्ययोग।

× × ×

'साम्ययोग' शब्द भगवद्गीता का है।

'समन्वय' शब्द वेदान्त का है।

'सर्वोदय' शब्द आधुनिक विज्ञान का है, जो हमको पश्चिम से मिला, जिसका आरम्भ ईसा मसीह ने किया था। विज्ञान की यह कोशिश है कि दुनिया में सर्वोदय स्थापित हो। इसका मूल आधार बाइबल में मिलता है।

सत्याग्रह एक जीवन पद्धति है, जो अनेक सन्तों ने दुनिया में चलायी। उन सबके जीवन के परिणामस्वरूप एक व्यवस्थित पद्धति हमारे हाथ में आ गयी है। वह पूर्णता को पहुँची है, ऐसा नहीं है। उसका विकास हो रहा है। तो यह सब सन्तों के अनुभव के परिणाम हैं। सत्याग्रह सब सन्तों के जीवन का निचोड़ है।

× × ×

यह एक त्रिकोणात्मक विचार है, जिसकी एक रेखा है सत्याग्रह, दूसरी रेखा है सर्वोदय, और इनका बेसिस है समन्वय।

यह त्रिकोण है। ये तीनों मिलकर जो आकार होता है, वह किसी एक रेखा से नहीं बनता, तीनों सम्मिलित होती हैं, तब बनता है। उसका नाम है साम्ययोग।

—विनोबा

दैनंदिनी १९६८

• प्लास्टिक का चित्ताकर्षक कवर,

• पहले की भाँति डिमाई अठपेजी (९"×५½") और क्राउन अठपेजी (७½"×५") दो आकारों में, • पृष्ठ रूलदार, • डिमाई साइज का मूल्य ३ रु० २५ पैसे, क्राउन साइज का मूल्य २ रु० ७५ पैसे प्रति।

• दैनन्दिनी छपकर आ गयी है। आपसे अनुरोध है कि अपनी आवश्यकता हमें सूचित करें।

• विक्रेताओं को कुल २५ प्रतिशत कमीशन। • एकमुश्त ५० प्रतियाँ या उससे अधिक प्रतियाँ मँगाने पर स्टेशन पहुँच फ्री डिलीवरी। इससे कम प्रतियों पर पैकिंग, पोस्टेज और रेलभाड़ा खरीददार को देना होगा। • बचने पर वापस नहीं ली जाती, उतनी ही प्रतियाँ मँगायें, जितने की आवश्यकता हो।

• अपना पता साफ-साफ लिखें तथा नजदीकी रेलवे स्टेशन का नाम दें।

• मूल्य अग्रिम भेजें, दैनन्दिनी उधार नहीं भेजी जाती है। बैंक या वी० पी० से मँगाने के लिए चौथाई मूल्य पेशगी के रूप में अग्रिम भेजिये।

• भेजी जानेवाली रकम का मनिआर्डर या बैंक ड्राफ्ट सर्व सेवा संघ प्रकाशन के ही नाम से भेजें।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी–१

शान्तिसेना

पत्राचार द्वारा स्वाध्याय योजना

उपनिषद के ऋषि स्वाध्याय का महत्त्व समझाते अघाते नहीं। हजारों वर्ष के बाद आज स्वाध्याय का महत्त्व उस काल की अपेक्षा बढ़ा ही है, घटा नहीं। आज विज्ञान ने अनेक दिशाओं में अनेकविध प्रगति की है। ज्ञान, योग की साधना के लिए आज अनेकानेक क्षेत्र खुल गये हैं और विज्ञान की प्रगति ने मनुष्य को अध्यात्म के द्वार पर लाकर खड़ा कर दिया है। स्वाध्याय, विज्ञान और अध्यात्म, दोनों के लिए अनिवार्य है। स्वाध्याय आज के युग की अनिवार्य साधना है।

जीवन का कोई काल स्वाध्याय के लिए प्रतिकूल नहीं होता। बाल्यावस्था नूतन ज्ञान ग्रहण करने के लिए उत्तम अवस्था है ही, यौवन के कर्मयोग को मनुष्य यदि स्वाध्याय से ताजा न बनाता रहे तो उसका कर्मयोग दकियानूसी और जड़ बन जायगा। प्रौढ़ावस्था और वार्धक्य में चिंतन-मनन और स्वाध्याय के द्वारा ही मनुष्य जीवन की नयी दिशाएँ खोजता है। गांधीजी ने नोआखाली की यात्रा के समय बंगाली भाषा सीखना शुरू किया था। विनोबा ७२ साल की उम्र में भी नित्य-प्रति अनेक घंटे स्वाध्याय में बिताते हैं।

स्वाध्याय की इस आवश्यकता के संदर्भ में देखें तो आज की हमारी स्वाध्याय-प्रवृत्ति सचमुच शोचनीय है। अपने पाठ्यपुस्तकों का अध्ययन यदि मार्गदर्शिकाएँ रटने से टल जाता हो तो हमारे तरुण उसीसे काम निभाने को तैयार होते हैं। हमारे जवान कार्यकर्ता आज अखबारों के अलावा और बहुत कम अभ्यास करते हुए पाये जाते हैं। यहाँ तक कि राजनैतिक पक्ष, जो पहले अपनी अध्ययनशीलता के लिए मशहूर थे, उनके कार्यकर्ता भी आज कुछ नारों को रटने के अलावा अधिक अध्ययन करते नहीं पाये जाते और हमारे वृद्ध-जन पुराने जमाने में अपने आप कही हुई बातों को बार-बार कहते रहने में ही मानो अपने सारे चिन्तन-मनन और स्वाध्याय की सार्थकता मानते हैं।

कोई भी व्यक्ति बिना स्वाध्याय के ताजा नहीं रहता, कोई भी आन्दोलन बिना स्वाध्याय के जिन्दा नहीं रहता है। लेकिन हमारा देश, हमारा आंदोलन और हममें से अधिकांश लोग मानो स्वाध्याय के विषय में ऊँघ-से रहे हैं। जरूरत है इस अवस्था में से झकझोरने की।

इस दृष्टि से एक नम्र प्रयास के रूप में शान्ति-सेना ने पत्र-पाठ द्वारा स्वाध्याय बढ़ाने की एक योजना बनायी है।

योजना की रूपरेखा

उद्देश्य : लोगों को घर बैठे पत्र-व्यवहार द्वारा पुस्तकों के अध्ययन द्वारा स्वाध्याय करने का मौका देना।

प्रशिक्षार्थी : आम तौर पर इस योजना का लाभ दो प्रकार के लोग लेंगे—(अ) सर्वोदय-कार्यकर्ता, (आ) इस आन्दोलन के संपर्क में आनेवाले तरुण विद्यार्थी।

मार्गदर्शक : पत्र-पाठ योजना में दिये हुए विभिन्न विषयों के जानकार लोग एक-एक विषय के विद्यार्थियों के मार्गदर्शन का काम करेंगे। हमें इस बात की खुशी है कि सर्वश्री नवकृष्ण चौधरी, मनमोहन चौधरी, मार्जरी साइक्स, प्रेमाबहन कंटक, रामरूप पाण्डेय इत्यादि ने हमें सहायता देने का वचन दिया है।

प्रशिक्षण-पद्धति : कुछ निश्चित की हुई किताबें निश्चित क्रम के अनुसार विद्यार्थी को पढ़ने के लिए दी जायेंगी। उन्हें पढ़ लेने की सूचना पाने के बाद मार्गदर्शक विद्यार्थियों के लिए कुछ प्रश्न भेजेंगे। प्रश्न के उत्तर आने के बाद मार्गदर्शक उनको उस विषय के बारे में और स्पष्टीकरण करा सकते हैं, या आगे पढ़ने के लिए साहित्य सुझा सकते हैं। आम तौर पर हर कोर्स में चार पुस्तकें होंगी। लेकिन विद्यार्थी की योग्यता को देखते हुए उसमें कमोबेश भी हो सकता है। हर कोर्स के पूरे होने पर प्रश्नपत्र भेजा जायगा, जिसमें उत्तीर्ण होने पर कोर्स पूरा किया माना जायगा।

अवधि : प्रत्येक कोर्स पूरा करने का समय विद्यार्थी की अपनी योग्यता और उसकी अनुकूलता पर निर्भर रहेगा। लेकिन आम तौर पर प्रत्येक कोर्स की कालावधि छः मास की मानी जायगी।

पत्र-व्यवहार का माध्यम : हिन्दी या अंग्रेजी रहेगा।

शुल्क : प्रत्येक कोर्स का शुल्क दो रुपया होगा। मंडल की ओर से होनेवाला पत्र-व्यवहार का खर्च इसीमें शामिल माना जायगा।

पुस्तक-प्राप्ति : विद्यार्थी अपनी पुस्तकें आप मँगा लें तो अच्छा है। किन्तु यदि मंडल से किताबें मँगवाना चाहें तो किताबों की कीमत की रकम पेशगी के तौर पर देकर मँगवा सकते हैं। ये किताबें लौटाने पर पेशगी के ७५ प्रतिशत रकम लौटायी जायगी और २५ प्रतिशत रकम काट ली जायगी।

पाठ्य-विषय : फिलहाल निम्न विषयों का पत्र-पाठ के द्वारा अध्ययन किया जा सकेगा—(१) अहिंसा शास्त्र, (२) सत्याग्रह, (३) विदेशों में शान्ति-आन्दोलन, (४) भारत और अणुबम, (५) सांप्रदायिक समस्या, (६) राष्ट्रवाद, अन्तर्राष्ट्रवाद और शान्ति, (७) सर्वधर्म समन्वय, (८) शान्ति और प्रतिरक्षा, (९) भूमि-क्रान्ति, (१०) खादी-मीमांसा, (११) लोक-नीति।

प्रत्येक विषय में 'पढ़ने लायक पुस्तकों की सूची विद्यार्थी का आवेदन पत्र आने पर भेजी जायेगी। आवेदन-पत्र में निम्न जानकारी भेजी जाय —

(१) पूरा नाम, (२) पता, (३) शैक्षणिक योग्यता, (४) किस विषय का पत्र-पाठ आरम्भ करना चाहते हैं।

आवेदन-पत्र के साथ पाठ शुल्क रुपये दो अवश्य भेजे जायँ। —नारायण देसाई, मंत्री

अ० भा० शान्ति-सेना मण्डल

पुनश्च : स्वाध्याय की सुविधा की दृष्टि से ही उपरोक्त योजना की रूपरेखा तैयार की→

विदेशों में शांति-आन्दोलन

वियतनाम-युद्ध बन्द हो

अमरीका में ग्रीष्मकालीन आयोजन के निमित्त वियतनाम युद्ध को समाप्त करने के लिए कार्यक्रम के रूप में निम्नलिखित प्रस्ताव प्रेषित हैं :

● ट्रेफल्गर स्क्वेअर (लंदन का एक प्रसिद्ध सार्वजनिक पार्क) तथा व्हाइट हाल में वृहद् आयोजन हों, इतने वृहद् कि वे स्थान आयोजन में भाग लेनेवालों से बिलकुल भर जायँ।

● इसके पूर्व स्थानीय आम सभाओं, सूचना पट्टों तथा इश्तहारों व नोटिसों का प्रबन्ध कर लिया जाय।

● यह आयोजन कार्यक्रम एक लम्बे उग्र आंदोलन का प्रारंभ होगा, जिसके द्वारा वियतनाम युद्ध की भीषणता, निरर्थकता, अनैतिकता और उसके द्वारा सभ्यता को उत्पन्न खतरे को जनता के सम्मुख स्पष्ट किया जायगा।

● अंत स्काटलैंड से लंदन तक एक बड़ी यात्रा निकाली जाय। साथ साथ अन्य सभी स्थानों से छोटी छोटी यात्राएँ निश्चित दिन लंदन नगरी में आकर समाप्त हों।

→गयी है। लेकिन यह योजना इतने ही विषयों तक और इतनी ही पुस्तकों तक मर्यादित नहीं रहेगी। पत्र पाठ योजना में सम्मिलित होनेवाले विद्यार्थियों की शैक्षणिक योग्यता के अनुसार पाठ्यक्रम में परिवर्तन भी हो सकते हैं, अगर विद्यार्थियों की कोई ऐसा विषय चुनने की इच्छा हो, जो इस रूपरेखा में न आता हो, तो उस विषय के मार्गदर्शकों की सहायता भी उपलब्ध कर सकेंगे, ऐसी आशा है।

हमारी यह अपेक्षा है कि सर्वोदय कार्यकर्ता, शांति सेवक तथा तरुण विद्यार्थी इस योजना का अधिक से-अधिक लाभ उठायेंगे।

इस सम्बन्ध में सारा पत्राचार संचालक, पत्र-पाठ योजना, शान्ति सेना मंडल, राजघाट, वाराणसी-१ के पते पर करें। —ना० दे०

● उस दिन एक कार्यक्रम 'शांति के लिए सम्मेलन' के रूप में हो, जिसमें आंदोलन को आगे बढ़ाने के विषय पर चर्चा की जाय।

—जान पापवर्थ

● ट्रेफल्गर पर विभिन्न प्रकार के सूचना फलक, जिनमें शांति संदेश व युद्ध विरोधी वाक्य लिखे गये थे, लेकर लोग निकले। पीछे पीछे अन्य पुरुष व महिलाएँ जुलूस में सम्मिलित थीं। 'विश्व के देशों को एक होने दो', 'तलवारों को हल के रूप में परिणत करो', 'युद्ध बंद करो', 'अपने भाइयों को मारकर हम किनके लिए जीयेंगे !'—इस प्रकार के वाक्य इन फलकों पर लिखे हुए थे। इस यात्रा का विशेष नारा था—'अब बैठे रहने का समय नहीं है।'

● २८ अप्रैल को 'कमेटी आफ हण्ड्रेड' की ओर से एक जुलूस 'मार्च आफ शेम' के नाम से निकाला गया, जिसमें 'पीस प्लेज यूनियन' के सदस्य भी सम्मिलित हुए। इस यात्रा का उद्देश्य वियतनाम में हो रहे लज्जापूर्ण कृतियों की ओर ध्यान आकर्षित करने का था।

● एक विद्यालय में विद्यार्थियों की एक वादविवाद सभा में 'आज युद्ध की कोई उपयोगिता नहीं', इस विषय पर चर्चा की गयी।

● कैंब्रिज के एक शांति संगठन के द्वारा वैज्ञानिकों की एक गोष्ठी आयोजित हुई, जिसमें 'रासायनिक और कीटाणु युद्ध' विषय पर चर्चा हुई।

● २१ मई को लंदन के ट्रेफल्गर स्क्वेअर में शांति प्रेमी युवकों द्वारा एक रैली निकाली गयी, जिसका संदेश था कि वियतनाम में शीघ्र शांति की स्थापना हो।

(पैसीफिस्ट, मई जून '६७ से)

चीनी अणुबम का विरोध

इंग्लैण्ड के अणु निःशस्त्रीकरण समिति के कुछ कार्यकर्ताओं ने चीनी अणुबमों के परीक्षण पर अपना विरोध प्रकट किया है। उनकी ओर से प्रथम प्रदर्शन जून के अंत में हुआ था।

४ जुलाई को ३१ कार्यकर्ताओं ने चीन द्वारा परीक्षण के विरोध में प्रदर्शन किया।

एक प्रदर्शन ८ जुलाई को भी संगठित किया गया। इस प्रदर्शन के बारे में टानी हेदरिंगटन द्वारा किये गये विवरण का कुछ अंश यहाँ दिया जा रहा है

● 'पिछले शनिवार को चीनी दूतावास में हुए प्रदर्शन में लगभग ३० व्यक्तियों ने भाग लिया। दो घंटे तक लोग प्रदर्शन करते रहे। 'वाई० सी० एन० डी०' संस्था के मंत्री लेस्लीवेल्स फेयर ने शांति और मित्रता के प्रतीक स्वरूप चीनियों को फूल भेंट किये। पहले तो वहाँ के एक अधिकारी ने उन फूलों को पहले दिये गये पत्र की तरह ही अस्वीकार करना चाहा, परंतु जब उसे समझाया गया कि ऐसा करना गम्भीर अपमान होगा, तो उसने फूलों को रख लिया। इसके पहले उत्तर पश्चिम से आये कुछ व्यक्तियों ने वहाँ के प्रधान अधिकारी को पत्र देने का प्रयत्न किया था। अंदर तक पहुँचनेवालों में केवल मैं ही था। वहाँ के ७८ कर्मचारियों ने बारी बारी से मुझसे कहा कि तुम पश्चिमी पूँजीवाद के एजेंट हो। चीन के अणुबम के बारे में सुनकर संसार के क्रांतिकारी लोग प्रसन्न हुए हैं। राष्ट्रपति माओ ने कहा है कि चीन के अणुशस्त्र शांति के लिए हैं और वे केवल पूँजीवादियों के विरुद्ध प्रयोग में लाये जायेंगे। मुझसे किसीने यह नहीं बतलाया कि अणु परमाणु बम विस्फोट के समय किस प्रकार पूँजीवादियों और अन्य लोगों में अन्तर करेगा।

'दूतावास के एक सचिव ने आकर अन्य कार्यकर्ताओं को मुझसे बातचीत करने से मना किया। मैंने कहा कि मैं बिना यहाँ के मुख्य अधिकारी से मिले नहीं जाऊँगा। इस पर मुझे उत्तर दिया गया कि तुम इस समय चीन के अधिकार क्षेत्र में हो और तुम पर दूतावास में मुकदमा चलाया जा→

अमेरिका की वियतनाम-नीति : बढ़ता हुआ विरोध

गिरजाघरों के एक विश्व-संगठन (डब्ल्यू० सी० सी०) के मंत्री डा० ब्लेक ने २६ अप्रैल '६७ को एक सम्मेलन में भाग लेते हुए कहा : 'हमारी (अमेरिका की) स्थिति इसीसे स्पष्ट है कि राष्ट्रपति केनेडी की हत्या पर सारे संसार ने हमारे साथ शोक मनाया और आज हमारे राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति संसार के *किसी भाग में बिना* अधिकतम सुरक्षा व्यवस्था के बाहर नहीं निकल सकते हैं। वे देश भी, जो कम्युनिस्टों द्वारा हमला किये जाने के भय से सहमे हुए हैं, आज हमारा खुल्लम खुल्ला साथ देने का साहस इसलिए नहीं कर रहे हैं, क्योंकि उनकी जनता को इस बात का बहुत अधिक भय है कि पता नहीं आगे, अमेरिका क्या कदम उठायेगा।

'संसार के प्रमुख स्वतंत्र देशों (जिनमें अमेरिका भी सम्मिलित है) के अखबारों के सम्पादकीय लेखों में अमेरिका की नीति के प्रति विरोध प्रकट होता रहता है, वे सावधान करते हैं कि प्रति माह संसार के देश हमसे अलग होते जा रहे हैं और हम अकेले पड़ते जा रहे हैं। यह ठीक है कि हम इतनी शक्ति रखते हैं कि कुल *वियतनाम—उत्तरी व* दक्षिणी—को बरबाद कर सकते हैं, परन्तु जब हम देखते हैं कि मीकांग नदी के डेल्टा के दलदल वियतनामियों की लाशों से भरे हुए हैं और उनमें हमारे राष्ट्र के होनहार युवकों की लाशें भी पड़ी हुई हैं, तो लगता है कि इस प्रकार हमें कैसी फतह हासिल *होगी! जितनी ही अधिक संख्या में हम* वहाँ अपनी फौज भेजते हैं, उतना ही अधिक हम अपने आदर्शों को कमजोर बनाते हैं। प्रत्येक अमेरिकी योद्धा, जो आहत होता है अथवा घायल होता है, वस्तुतः एक व्यर्थ की आहुति है।

'वियतनाम के युद्ध का बहाना लेकर हम अपने साधनों के द्वारा गरीबी के विरुद्ध युद्ध करने, जातिगत समानता लाने, अफ्रीका, लेटिन अमेरिका तथा एशिया के अन्य स्थानों में न्याय स्थापित करने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं। इसलिए हम ईसा के अनु*यायी के नाते न* केवल युद्ध को समाप्त करें, वरन् न्याय और स्वतंत्रता पर आधारित शांति भी *स्थापित करें। नये नये हथियारों* के आविष्कारों की संभावना मानव के लिए शांति की स्थापना को अधिक अनिवार्य बना देती है। मानव के लिए युद्ध अब किसी प्रकार वांछनीय नहीं रहा।'

मार्टिन लूथर किंग ने अमेरिकनों से अनुरोध किया कि वे वियतनाम के युद्ध का 'बायकाट' करें। ४ अप्रैल को अमेरिका में भाषण देते समय नीग्रो लोगों से उन्होंने कहा कि वे विवेकशील नागरिक की हैसियत से फौजी नौकरी का विरोध सैद्धान्तिक आधार पर करें। वे न्यूयार्क में रिवरसाइड चर्च में वियतनाम के संबंध में भाषण दे रहे थे। वहीं प्रातःकाल प्रेस क्लब में अखबार-वालों से चर्चा करते समय उन्होंने कहा कि वियतनाम में नीग्रो मृतकों की संख्या अपेक्षाकृत *कहीं अधिक है।* वहाँ युद्ध के सैनिकों में गोरे सिपाहियों की अपेक्षा नीग्रो सिपाहियों की *संख्या दुगुनी है। ऐसी स्थिति* नीग्रो लोगों की अमेरिका में है। उन्होंने *उन सभी गिरजाघरों के धर्मगुरुओं से अपील* की, जिनकी आयु फौज में भर्ती होने योग्य है और जिन्हें अधिकारियों के नाते फौज में भर्ती होने में अपवाद माना गया है कि वे भी अपने को फौज में भर्ती का सैद्धान्तिक विरोधी घोषित करें। उन्होंने वियतनाम में संघर्ष के फलस्वरूप हो रही हानियों के प्रति जनता को सचेत करने का एक वृहद आन्दोलन चलाने, सामूहिक प्रशिक्षण तथा सामूहिक उपदेश दिये जाने के कार्यक्रम प्रारम्भ करने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि अमेरिकनों को यह स्वीकार कर *लेना चाहिए कि उन्होंने (अमेरिकनों ने)* वियतनाम के युद्ध में भाग लेकर एक भूल की है, और इस प्रकार वे *विश्वव्यापी क्रांति* के गलत पक्ष में पड़ गये हैं। अमेरिकी सैनिक-नीति की निन्दा करते हुए उन्होंने स्पष्ट किया कि उसकी नीति वियतनाम के कृषकों के लिए अहितकर है। अमेरिकनों की गोलाबारी के फलस्वरूप जहाँ एक वियत-कोंग आहत होता है, तो उसके कारण पानी के *विषयुक्त हो जाने से फसल बरबाद होती है* और उससे कम से कम २० कृषक प्रभावित होते हैं, जिन्हें अस्पतालों की शरण लेनी पड़ती है। अभी तक इस प्रकार लगभग एक लाख लोग मर चुके हैं, जिनमें अधिकांश संख्या बच्चों की है। सड़कों पर जानवरों की तरह झुंड के झुंड घरबहीन, बेघरबार हुए बच्चे इधर उधर फिरते देखे जा सकते हैं। *इन बच्चों को भीख माँगने* तथा परिवार के भरण-पोषण के लिए अपनी बहनों को सैनिकों के हाथ बेच देने को मजबूर होना पड़ रहा है।

डा० किंग स्वयं विक्षुब्ध, तिरस्कृत और क्रोधित युवकों के बीच घूम चुके हैं। उनकी स्पष्ट धारणा है कि बन्दूक के द्वारा नहीं, वरन् अहिंसक प्रक्रिया के माध्यम से ही अर्थपूर्ण सामाजिक परिवर्तन लाया जा सकता है।

('न्यूजलेटर इन्टरनेशनल : एफ० ओ० आर०': मई '६७ में प्रकाशित लेख के आधार पर) ●

→सकता है। परंतु सचिव ने कहा कि मैं तुमको इस अवसर पर गिरफ्तार नहीं करूँगा। यह कहकर वह वापस चला गया।

'थोड़ी ही देर बाद कुछ *सिपाहियों की* एक टुकड़ी को लेकर वह सचिव पुनः आया और कहा कि यदि तुम यहाँ से वापस नहीं जाओगे तो तुम्हारे विरुद्ध बल-प्रयोग किया जायगा। इतने में ही सड़क की ओर वाला दरवाजा खुला, कुछ और पुलिस के सिपाही अन्दर घुस आये, जिनके सुपुर्द मैं कर दिया गया। एक अधिकारी ने मेरा फोटो लिया। एक पुलिस-अधिकारी ने मेरा नाम सचिव को बतलाया।

'पुलिस ने मुझसे कुछ प्रश्न करने के पश्चात् छोड़ दिया, क्योंकि मैंने *किसी* कानून का उल्लंघन नहीं किया है, ऐसा उन्होंने अनुभव किया।'

('गांधी पीस फाउन्डेशन' न्यूजलेटर, १-८-६७)

आन्दोलन के समाचार

ग्रामदान अभियान : सहारनपुर जिले में चल रहे ग्रामदान अभियान में १ अगस्त से ८ अगस्त के बीच १२१ ग्रामदान प्राप्त हुए।

पिथौरागढ़ के धारचूला प्रखण्डदान अभियान में कुल चार पट्टियों में से दो पट्टियों—व्यास और दरमा के कुल ४० गाँव ग्रामदान में आ गये हैं। व्यास पट्टी का कुटी गाँव १४ हजार फुट की ऊँचाई पर तिब्बती सीमा से लगा भारत का आखिरी गाँव है। इस प्रकार अब उत्तराखण्ड सीमान्त के तीन जिले—उत्तर काशी, चमोली और पिथौरागढ़ के तीनों आखिरी गाँव—महुआ, माना और कुटी ग्रामदान में आ चुके।

गाजीपुर के सैदपुर प्रखण्ड में ११-१२ अक्तूबर को शिक्षकों तथा अन्य स्थानीय ५० लोगों का शिविर हुआ। उसके बाद शिविरार्थियों ने ९ दिनों का अभियान चलाया। इसी प्रकार गोंडा जिले के नवाबगंज में भी शिक्षकों का शिविर हुआ और उसके बाद दो टोलियाँ अभियान के लिए निकलीं।

ग्रामदान मध्यप्रदेश की महू तथा देपालपुर तहसीलों में आयोजित सामूहिक पदयात्रा अभियान में २५ ग्रामदान मिले, जिसमें बेटमा और मानपुर जैसे लगभग ४ हजार की आबादीवाले गाँव भी हैं।

पदयात्रा : सितम्बर महीने में हरियाना के बूलिया भगत ने १५८ मील की पदयात्रा करके सेनीवल राई प्रखण्ड में भूदान अभियान का कार्यक्रम चलाया।

भूमि वितरण : माह सितम्बर में मुरैना जिले की विजयपुर तहसील में ३ गाँवों के २७ भूमिहीन परिवारों में १९१ एकड़ भूमि का वितरण हुआ। अशोकनगर तहसील के १ गाँव में ३ हरिजन परिवारों को १९ एकड़ तथा ८ अन्य भूमिहीनों को ४२ एकड़ भूमि वितरित की गयी।

सत्याग्रह : राजस्थान के मुख्य मंत्री ने आश्वासन दिया है कि सरकार शीघ्र ही शराबबन्दी के प्रश्न पर विचार करेगी। मुख्य मंत्री के आश्वासन पर नशाबन्दी सत्याग्रह समिति ने अपना सत्याग्रह ११ नवम्बर तक के लिए स्थगित कर दिया है।

शान्ति-स्थापन : गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, जोधपुर केन्द्र के तत्वावधान में एक सर्वदलीय सभा का आयोजन हुआ। सभा ने एक अपील द्वारा नगर के छात्रों को सलाह दी कि वे हिन्दी समर्थन के लिए चलाये जानेवाले आन्दोलन में तोड़फोड़, मारपीट, पत्थर बाजी और जोर जबरदस्ती का तरीका न अपनायें। अपील पर कांग्रेस, प्रजा समाजवादी जनसंघ, स्वतंत्र पार्टी तथा प्रमुख नागरिकों के हस्ताक्षर थे।

पारम्परिक चरखे में सुधार श्री ना० रा० सोवनी, मंत्री, खादी ग्रामोद्योग प्रयोग समिति, अहमदाबाद ने सूचना दी है कि समिति ने सरल और सादे, चूड़ी पद्धति के कताई के तीन चार प्रकार के पुर्जे तैयार किये हैं, जिनकी कीमत २० से २५ रुपये तक होगी। ये पुर्जे खड़े तथा आड़े दोनों प्रकार के चरखों में लगाये जा सकते हैं। इन पुर्जों के लगाने पर पारम्परिक चरखे से २० २२ प्रतिशत सस्ती खादी तैयार की जा सकेगी। अम्बर में कताई के लिए जिस प्रकार की गुणित पट्टी की व्यवस्था है, वह पारम्परिक चरखे के लिए भी करनी होगी।

गांधी-शताब्दी प्रशिक्षण मध्यप्रदेश गांधी स्मारक निधि ने शताब्दी कार्यकर्ता प्रशिक्षण चलाने का निश्चय किया है। सत्र ३ महीने का होगा, जिसमें २१ से ४० वर्ष तक के मैट्रिक की योग्यता के लोग शरीक हो सकेंगे। रचनात्मक कार्यों में लगे अनुभवी लोगों की योग्यता इससे कम भी रह सकेगी। प्रशिक्षणार्थी के अध्ययन, प्रवास आदि पर होनेवाला व्यय गांधी स्मारक निधि उठायेगी। ५० रु० छात्रवृत्ति की भी व्यवस्था है।

शराबबन्दी दिवस इन्दौर नगर तथा जिले में ९ अक्तूबर को शराबबन्दी दिवस मनाया गया। ६० मदिरालयों तथा शराबकी गोदामों पर शान्त धरना दिया गया। इस कार्यक्रम में लगभग ३०० कार्यकर्ता तथा नागरिक शामिल थे।

नशाबन्दी महिला सम्मेलन : अ० भा० नशाबन्दी परिषद् की ओर से आगरा में २ से ३ दिसम्बर को एक महिला सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। सम्मेलन में शरीक होनेवाली बहनों के तीसरे दर्जे के किराये तथा भोजन की व्यवस्था परिषद् करेगी। प्रतिनिधि शुल्क ५ रु० अग्रिम भेजना अनिवार्य है।

सम्पर्क के लिए लिखें—मन्त्री, उत्तर प्रदेश नशाबन्दी समिति (महिला विभाग), ४५, गांधी मार्ग, आगरा।

सूचना :

साहित्य पर विशेष छूट की अवधि बढ़ी

सर्वोदय पर्व के दौरान बिक्री के लिए भिजवाये गये साहित्य पर सर्व सेवा संघ प्रकाशन की ओर से १० प्रतिशत विशेष छूट की घोषणा की गयी थी, जिसके अनुसार कुल मिलाकर साहित्य प्रेमियों एवं प्रचारकों को थोक साहित्य की खरीद पर ३५ प्रतिशत छूट दी गयी, एक सौ रुपयों के ऊपर का साहित्य उनके निकटतम स्टेशन तक भी फ्रीडिलीवरी भिजवाया गया।

इस बीच सर्वोदय साहित्य के विक्रेताओं और संस्था के कार्यकर्ताओं की ओर से यह सुझाव आया है कि सर्वोदय पर्व में साहित्य प्रचार के काम को गति प्राप्त होने में कुछ देर हुई है, अतः साहित्य प्रचार पर दी गयी विशेष कमीशन की व्यवस्था १४ नवम्बर 'बाल दिवस' तक चालू रखी जाय।

अतः चालू वर्ष में सर्वोदय पर्व के दौरान आप लोगों से प्राप्त सक्रिय सहयोग एवं स्नेह को ध्यान में रखते हुए उक्त विशेष कमीशन की अवधि सभी लोगों के लिए १४ नवम्बर तक बढ़ायी जा रही है।

जिन साथियों ने सर्वोदय-पर्व के निमित्त साहित्य मँगाया है, उनसे अनुरोध है कि वे २० नवम्बर तक बचे हुए साहित्य, जिसे वे वापस करना चाहते हैं उसकी सूची, बिक्री की रकम के साथ सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी को भेज दें और सूचना प्राप्त होने के बाद ही साहित्य वापस भेजें।

इस बीच यदि आपको साहित्य की और आवश्यकता हो, तो कृपया तुरंत लिखें।

ध्यान रहे कि उधार भेजे गये साहित्य पर १० प्रतिशत विशेष कमीशन का हिसाब रकम प्राप्ति के समय किया जायगा।

—दत्तोबा दास्ताने, संचालक

'घेराव' का घेराव

गत १९ सितम्बर को कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक विशेष बेंच ने एक फैसले के अनुसार 'घेराव' को गैरकानूनी और असांविधानिक घोषित कर दिया। घेराव का आविष्कार प० बंगाल के श्रममन्त्री और वामपंथी साम्यवादी नेता श्री सुबोध बनर्जी की प्रेरणा से हुआ था। आन्दोलन के इस तरीके में कर्मचारी अपने अधिकारियों या मालिकों को घेर लेते हैं और तब तक घेरे रहते हैं, जब तक कि उनकी माँग न पूरी हो जाय अथवा जब तक वे घेरना चाहें। कारखानों से शुरू हो धीरे-धीरे यह आन्दोलन शिक्षालयों, अन्य संस्थाओं तथा विधान-सभाओं और संसद तक फैल गया। पिछले ६ महीनों में—सिर्फ बंगाल में १९५ से अधिक घेराव हुए। घेराव के इस फैलाव से पश्चिम बंगाल के औद्योगिक संस्थान परेशान हो गये। जब इन संस्थानों के मालिकों, अधिकारियों ने पुलिस की मदद चाही तो वहाँ की सरकार ने गत २७ मार्च और १२ जून के दो परिपत्रों में पुलिस को घेराव में हस्तक्षेप न करने का आदेश दे दिया।

पिछले महीने कलकत्ता की एक संस्था के अधिकारियों ने कलकत्ता उच्च न्यायालय को एक अर्जी दी, जिसमें शिकायत की गयी थी कि संस्थान के मजदूरों ने उनका गैर-घेराव किया और पुलिस ने कोई मदद नहीं की। मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक विशेष शाखा ने इस मामले की पूरी छानबीन करने के बाद अपने फैसले में घेराव को गैर-कानूनी और असांविधानिक बताते हुए प० बंगाल सरकार के उक्त दोनों परिपत्रों को रद्द कर दिया और कहा कि घेराव करनेवालों को भारतीय दंड-कानून की धारा २६९ या ३४७ के अन्तर्गत बिना वारंट के गिरफ्तार किया जा सकता है और कैद की सजा या अर्थ-दंड दिया जा सकता है।

न्यायाधीशों के अनुसार घेराव 'लक्ष्य' को शारीरिक तौर पर बाधा देना है, यह चाहे 'लक्ष्य' को घेरकर या जबरदस्ती उस पर अधिकार करके दिया जाय। यह 'लक्ष्य' कोई व्यक्ति, व्यक्तियों का समूह, कोई स्थान या साधारण तौर पर औद्योगिक संस्थान का संचालन या निरीक्षण विभाग हो सकता है।

न्यायाधीशों ने प० बंगाल के श्रममंत्री श्री सुबोध बनर्जी की आलोचना करते हुए कहा है कि उन्होंने पुलिस को 'घेराव' में हस्तक्षेप न करने का आदेश देकर अपने अधिकारों का उल्लंघन किया है।

पुलिस-विभाग की निष्क्रियता की आलोचना करते हुए न्यायाधीशों ने कहा है कि पुलिस को असांविधानिक आचरणों से सम्बद्ध शिकायतों पर तत्काल कदम उठाना चाहिए और ऐसे अपराधों को घटित होने से रोकना चाहिए।

हिन्दी साप्ताहिक 'दिनमान' ने इसे ऐतिहासिक निर्णय बताकर इसकी प्रशंसा की है। अंग्रेजी दैनिक 'स्टेट्समैन' ने इस निर्णय को एक नमूना बताया है। हिन्दी दैनिक 'हिन्दुस्तान' ने अपने संपादकीय में लिखा है कि 'इस घेराव की काली छाया से पश्चिम बंगाल मुक्त होता है, यह हर्ष का विषय है।' हिन्दी दैनिक 'आज' ने अपने संपादकीय में लिखा है कि इस निर्णय ने उच्च न्यायालय की प्रतिष्ठा बढ़ाई है और देश के शासकों, व्यवस्थापकों तथा भ्रान्त श्रमिकों को भी एक नवीन दिशा दी है। अंग्रेजी दैनिक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' ने अपने संपादकीय में लिखा है कि हम लोगों का यह सौभाग्य है, कि हमारे संविधान में न्यायपालिका स्वतंत्र है और उसका कार्यपालिका से स्पष्ट अलगाव है। इससे हमारे मौलिक अधिकारों की रक्षा होगी, जो हमें भारतीय संविधान में मिले हैं। अंग्रेजी दैनिक 'इण्डियन एक्सप्रेस' ने अपने संपादकीय में लिखा है कि इस निर्णय में आदर्श की एक झलक दिखायी पड़ती है। संपादकीय में आगे लिखा है कि इस फैसले को ध्यान में रखते हुए परिस्थिति का तकाजा है कि कथित परिपत्रों को जारी करनेवाले उक्त प्रदेश के श्रममंत्री श्री सुबोध बनर्जी त्यागपत्र दे दें। अंग्रेजी दैनिक 'अमृत बाजार पत्रिका' ने अपने संपादकीय में यह आशा की है कि इस फैसले से 'घेराव' सही सन्दर्भ में मजदूरों, प्रशासकों तथा जनता के सामने आयेगा।

इस निर्णय के बाद प० बंगाल सरकार ने कथित परिपत्रों को वापस लेने का फैसला किया है। वहाँ के कृषिमंत्री डा० पी० सी० घोष ने इस निर्णय को व्यवस्था की दिशा में सही कदम बताया है। इस निर्णय के दूसरे दिन ही बिहार-सरकार ने भी 'घेराव' को गैरकानूनी घोषित कर 'घेराव' करनेवालों के विरुद्ध कड़ी कारवाई करने की चेतावनी दी है। —मग्र

"भूदान-यज्ञ" के शुल्क में परिवर्तन

"भूदान-यज्ञ" का वार्षिक चंदा नये वर्ष से ८ रु० के बदले १० रु० किया जा रहा है। इसका कारण है छपाई, कम्पोजिंग, कागज आदि के बढ़े हुए भाव। ८ रु० चन्दे में यह पत्रिका घाटे में ही चल रही थी। इसलिए भी यह वृद्धि अनिवार्य हो गयी। हमारे पाठकगण और हितैषी इस विवशता को महसूस करके उदारतापूर्वक पत्रिका को पूर्ववत् अपना हार्दिक सहयोग देकर अपने मित्रों को भी इसका ग्राहक बनायेंगे, ऐसी हम आशा करते हैं। —व्यवस्थापक

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व सेवा संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१
वार्षिक शुल्क : १० रु०, विदेश में : १८ शि०, या १८ रु०, या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ : ३९,०० इस अंक की छपी प्रतियाँ : ४,८००

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

२७ अक्तूबर '६७ अंक : ४

इस अंक में

अगले अंक का आकर्षण

गांधीजी की विशेष देन

चिर शान्ति

अन्याय का प्रतिकार

वार्षिक शुल्क : १० रु०,

एक प्रति : २० पैसे

विदेश में :

१८ रु० या १८ शि० या २॥ डालर

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४२८५

सत्याग्रह : शक्ति और दिशा

सत्याग्रह सौम्य से सौम्यतर और सौम्यतर से सौम्यतम होता जायगा, बजाय इसके कि वह सौम्य से उग्र और उग्र से उग्रतर होगा। उग्र से उग्रतर और उग्रतम होता जायगा तो हम हिंसा-अहिंसा की भेद रेखा पर आकर खड़े रहेंगे और एक कदम आगे बढ़ने से हिंसा में ही आ पहुँचेंगे। इसलिए तीव्रतावाली दिशा हिंसा की है, अहिंसा की नहीं।

हिंसा में एक प्रयोग होने पर सफलता नहीं मिली, तो उससे अधिक तीव्र प्रयोग किया जाता है, और उसमें भी सफल नहीं हुए तो तीव्रतम प्रयोग किया जाता है। यह हिंसा की दिशा है। अहिंसा में एक प्रयोग किया और परिणाम नहीं आया तो और सौम्य प्रयोग करना चाहिए। होमियोपैथी का यह विश्वास है कि औषध में उत्तरोत्तर शर्करा मिश्रण अधिक किया जाय और उसे घोंटा जाय। उत्तरोत्तर दवा की मात्रा कम की जाय और शर्करा की मात्रा बढ़ायी जाय। उसमें दवा कम-से-कम होती है और उसकी शक्ति बढ़ती है। यह होमियोपैथी की एक प्रक्रिया है। यह मिसाल अहिंसा को लागू होती है। अहिंसा की लड़ाई बाहर नहीं होती है। वह सामनेवाले के हृदय में होती है और हमारे भी हृदय में होती है।

मैंने कहा था कि शब्द शक्ति कुंठित होने पर शस्त्र शक्ति आयेगी। शब्द-शक्ति शुद्ध चिन्तन से बनती है उसके लिए स्थूल क्रिया बढ़ाने की जरूरत नहीं। वह भाव शुद्धि से बनती है। गांधीजी ने कहा था कि एक ही पूर्ण सत्याग्रही कुल दुनिया को दुःख मुक्त कर सकेगा। यह उनकी प्रतिभा थी कि उसका दर्शन उनको हुआ। यह प्रतिभा भाव शुद्धि से आती है। अगर शब्दों का प्रयोग भाव शुद्धि से होता है, तो शब्द में ताकत आती है। इसलिए हमें संशोधन करना चाहिए। शब्दों की खोज और शब्द शक्ति बढ़ानी चाहिए।

एक बार मैंने यह भी कहा था कि वात्सल्य का चित्र तब प्रकट होता है, जब एक माता अपने बच्चे को प्यार से दूध पिलाती है। उसे देखकर हरएक को आनन्द होता है और हरएक के मन में प्रसन्नता होती है। किसी एक दुखित, पीड़ित रोगी की कोई सेवा करता है और वह दुरुस्त होता है तो सुनकर चित्त प्रसन्न होता है। करुणा, वात्सल्य और प्रेम के कार्य जब कभी होते हैं, उसके प्रथम श्रवण से ही सबको वे मधुर लगते हैं। वैसे ही फलानी जगह सत्याग्रह हो रहा है, यह सुनने पर दुनिया में सर्वसामान्य प्रतिक्रिया यह होनी चाहिए कि सत्याग्रह के प्रथम श्रवण से ही माधुर्य का अनुभव हो। बंगाली में कहते हैं—'कोतो सुन्दर, कोतो सुन्दर'। सत्याग्रह हो रहा है—कितना सुन्दर, कितना अच्छा, कितना मधुर।

—विनोबा

समाचार डायरी

देश :

१७-१०-'६७ : भारतीय खाद्यान्न व्यवसायियों के अखिल भारतीय संगठन ने देश के खाद्य क्षेत्र की समाप्ति के लिए आन्दोलन शुरू करने का निर्णय किया।

२०-१०-'६७ : केन्द्रीय खाद्यमंत्री श्री जगजीवन राम ने घोषणा की कि दिसम्बर महीने से चीनी खुले बाजार में बिकने लगेगी। उन्होंने यह भी बताया कि किसानों को गन्ने का उचित मूल्य दिया जाय।

२१-१०-'६७ : प्रशासन-सुधार आयोग ने हर बड़े उद्योग के लिए पृथक 'निगम' स्थापित करने का सुझाव दिया।

२२-१०-'६७ : उत्तर प्रदेश के राज्यपाल ने एक अध्यादेश लागू किया, जिसके अनुसार १ हजार रुपया जमाकर कोई भी व्यक्ति ५ वर्ष के भीतर किसी मंत्री या राजनीतिज्ञ के विरुद्ध जाँच-व्यवस्था जारी करा सकता है।

विदेश :

१९-१०-'६७ : रूस का 'वीनस-४' अन्तरिक्षयान निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार शुक्र ग्रह पर बिना झटके के उतर गया और संकेत भेजना शुरू किया।

काहिरा में राष्ट्रपति नासिर की भेंटवार्ता में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा कि वे अरब-इसराइल समस्या को हल करने के लिए बड़े राष्ट्रों से राजनयिक स्तर पर प्रयास तेज करें।

२०-१०-'६७ : प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी पूर्वी यूरोप की यात्रा पूरी करके भारत लौट आयीं।

२२-१०-'६७ : अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन में वियतनाम युद्ध के विरोध में विशाल नागरिक-प्रदर्शन हुआ।

किसी युद्धपोत ने प्रक्षेपणास्त्र का प्रयोग करके दो इजरायली विध्वंसक जहाजों को डुबो दिया।

दीवाने निकल पड़ें

गाँव आज अनाथ हैं। गांधी के बाद विनोबा की क्रान्तिकारी वाणी से उनके भाग्य जगने की कुछ आशा हुई थी। अनेक कार्यकर्ता जिनमें से मैं भी एक हूँ, दीवाने बन निकल पड़े थे; गाँव-गाँव में अलख जगाने। *'कोई नंगा न रहेगा', 'भूखा न रहेगा', 'न रहेंगे अमीर', 'न रहेंगे गरीब', 'सबै भूमि गोपाल की, सम्पत्ति सब भगवान की'*—कहते-कहते हमारा गला भर आया था। एक *तड़पन थी, जोश था दिल में, उमंगें थीं;* लेकिन न जाने क्यों शान्त हो गयीं! *न गरीबी मिटी और न अमीरी ही।*

ग्रामदान तूफान शान्त हो गया। समुद्र में जैसे कभी-कभी तूफान आते हैं, वैसे ही पदयात्रा, सम्मेलन, सेमिनार, गोष्ठी करके अपने मन की तड़पन शान्त करने से क्या भूमि समस्या हल होगी? उत्तर है—नहीं। इसका एकमात्र उपाय है पदयात्राएँ। क्यों नहीं सर्वोदय समाज के सभी छोटे-बड़े नेता एक बार पुनः पदयात्राओं के अखण्ड प्रचार से सोये हुए इन्सान को जगा दें? और भूमिवानों को विवश कर दें कि वे भूमि को तुरन्त कैद से मुक्त करें, भूमिहीनों को सर्प तिलक लगाकर भूमि बाँट दें और आनेवाली खूनी क्रान्ति से—जिसकी सम्भावनाओं को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता, बच जायँ, और समाज में स्थायी शान्ति का वातावरण निर्मित करें।

हम सब, मन्त्रियों, कर्मचारियों और समाज को दोष देते हैं, पर उसके सुधार के लिए हम क्या सभा-सम्मेलन गोष्ठी ही करते रहेंगे और पर्दे में बन्द बीबी की तरह दुआ या पश्चात्ताप के आँसू बहाते रहेंगे?

मेरी तो कामना है कि जयप्रकाश बाबू चीन के तानाशाह माओ की तरह निकल पड़ें लम्बी यात्रा पर हजारों शान्ति के सिपाही लेकर, और गुंजा दें एक बार फिर ग्रामदान, जय जगत् के मन्त्र। जिस प्रकार हमारे देश को आजादी मिलने के बाद अन्य कई देश आजाद हुए, वैसे ही हमारी भूमि-समस्या के शान्तिपूर्ण समाधान के बाद नेपाल, पाकिस्तान, लंका, बर्मा, आदि पड़ोसी देशों की समस्याएँ भी शान्ति से हल हो जायेंगी। फिर इन देशों को न साम्यवाद का भय रहेगा और न आपस में भय, अविश्वास और सत्ता की कुर्सी के लिए लड़ने की भावना रहेगी। सभी एक सूत्र में आबद्ध होकर नये एशिया का निर्माण करेंगे।

माओ की विचारधारा पराजित होगी, उनकी साम्यवादी सेना फिर हमला करने नहीं आयेगी, और यदि सर्वोदय के कार्यकर्ता भी समाजवादी समाज की रचना किये बिना ही शहरी-स्वार्थों की लड़ाई में शान्ति स्थापना करके शहीद कहलाते रहे, तो देश के लाखों ग्रामों में भयंकर खूनखराबी होगी, जिसकी चपेट में आने से कोई बच नहीं पायेगा।

एक बार फिर से दीवाने बन निकल पड़ें। बाबा को बैठे बैठे 'कमाण्ड' करने दें। कोई भी सैनिक आश्रम में न बैठे, घर पर न रहे। *सब कर्मक्षेत्र में उतरें और गांधी शताब्दी* तक खादी-ग्रामोद्योग पर आधारित *अहिंसक व्यसन और शोषण शासन से मुक्त* समाज-रचना का स्वप्न साकार करने में *लग जायँ, इसीमें कल्याण है।*

—जगन्नाथ सेठिया, इन्दौर

आवश्यक सूचना :

"भूदान-यज्ञ" के शुल्क में परिवर्तन

"भूदान यज्ञ" का वार्षिक शुल्क ८ रु० के बदले १० रु० किया गया है। इसका कारण है छपाई, कंपोजिंग, कागज आदि के बढ़े हुए भाव। ८ रु० चन्दे में यह पत्रिका घाटे में चल रही थी। इसलिए भी यह वृद्धि अनिवार्य हो गयी। हमारे पाठक-गण और हितैषी इस विवशता को महसूस करके उदारतापूर्वक पत्रिका को पूर्ववत् अपना हार्दिक सहयोग देकर अपने मित्रों को भी इसका ग्राहक बनायेंगे, ऐसी हम आशा करते हैं।

—सम्पादक

कितनी सेनाएँ ?

भारत को कितनी सेनाएँ चाहिए ?

यह मान लिया जा सकता है कि प्रतिरक्षा के लिए सेना चाहिए, यह भी मान लिया जायगा कि शान्ति और सुव्यवस्था के लिए पुलिस का उपयोग है, यद्यपि उसकी उपयोगिता दिनोंदिन घटती जा रही है।

हिटलर और मुसोलिनी के अर्द्धसैनिक संगठन थे। हम जानते हैं, उन्होंने क्या किया। अपने ही देश में मुस्लिम लीग के जमाने में खाकसार थे। हैदराबाद में तो रजाकारों के खिलाफ पूरी सेना भेजनी पड़ी थी। इस वक्त राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में हजारों युवक इसलिए संगठित किये जा रहे हैं कि उन्हें हिन्दुत्व और हिन्दू राष्ट्र की रक्षा करनी है। राजनैतिक दलों में प्रायः सभी अपने स्वयंसेवक दल संगठित करते हैं, ताकि उनके विचार का प्रचार हो और चुनाव में उन्हें वोट मिले।

इन सबसे हम परिचित हैं, लेकिन शिवसेना, नागसेना, लाचितसेना, बसवसेना, तमिल सेना आदि के नाम से बननेवाले ये संगठन किसलिए हैं ? शिव-सेना की घोषणा है कि उसे महाराष्ट्र में महाराष्ट्र के नागरिकों की बाहर के लोगों, मुख्यतः दक्षिण भारतीय लोगों से रक्षा करनी है। बम्बई में 'भैया' और 'दक्षिण भारतीय', बंगाल में 'हिन्दुस्तानी', असम में 'बंगाली', दक्षिण भारत में 'उत्तर भारतीय' आदि बाहरी हैं। आज हिन्दुस्तान में हिन्दुस्तानी कहाँ है ?

गुलामी के दिनों में भारत की सत्ता से लड़ाई थी, लेकिन आज तो भारत में भारतीय को धक्का दिया जा रहा है, क्योंकि ये जितने लोग किसी न किसी क्षेत्र में बाहरी माने जा रहे हैं, वे सब भारतीय नागरिक हैं, जिन्हें संविधान की ओर से भारत की सीमा के अन्दर कहीं भी रहने और जीविका कमाने का अधिकार मिला हुआ है। लेकिन उससे क्या ? अधिकार तो हरिजनों को भी मिला हुआ है, जिन्हें समाज गाँव के बाहर बसाता है और अछूत मानता है।

महाराष्ट्र के दफ्तरों में, कारखानों में, नौकरियों में जगह महाराष्ट्र के लोगों को मिलनी चाहिए, या असम की जमीन पर पहला हक असम के ही लोगों का है—ये माँगें सुनने में गलत नहीं मालूम होतीं। लेकिन जरूर कोई कारण है कि हमारे देश में सही बातें भी संगठित होकर गलत बन जाती हैं। सरकार की सारी प्रशासन-व्यवस्था उचित माँगों का भी मेल नहीं मिला पा रही है।

मूलतः ये सारे नारे, अपने और पराये की ये सारी बातें आर्थिक हैं। सबके लिए पर्याप्त रोटी नहीं है, इसीलिए छीना झपटी है। अभाव में स्वभाव नष्ट हो रहा है, मनुष्य के सहज गुण समाप्त हो रहे हैं। हर एक का मानस क्षोभ और चिन्ता से भर गया है। इन क्षोभों और चिन्ताओं को दलबन्दी की राजनीति बढ़ावा दे रही है, संगठित कर रही है और अपना उल्लू सीधा कर रही है। बम्बई के चुनाव में शिवसेना ने खुलकर हिस्सा लिया था।

इसमें शक नहीं है कि इन 'सेनाओं' का बनना देश की एकता के लिए एक जबरदस्त खतरा है। जहाँ इतनी सेनाएँ हों, वहाँ गृहयुद्ध भी हो तो आश्चर्य क्या होगा !

इस खतरे का उपाय क्या है ? क्या इतना ही कि सेना बनाने वालों को कोसा जाय और देश की अखण्डता की दुहाई दी जाय ? इस दुहाई को कौन सुनेगा ?

पहली बात यह है कि हर व्यक्ति को सबसे पहले अपने घर में, गाँव में, पड़ोस में, जीविका मिलनी चाहिए। आर्थिक विकास की ऐसी योजना होनी चाहिए कि सामान्यतः किसीको बाहर जाने के लिए विवश न होना पड़े। इस स्वदेशी में ही स्वदेश की रक्षा है। अगर उत्तर प्रदेश का मजदूर रांची के कारखाने में काम करने जाने के लिए मजबूर होगा तो जब दंगे का अवसर मिलेगा तो वह अपने प्रतिद्वंद्वी मजदूर को धर्म या जाति के नारे के अन्तर्गत खत्म करेगा, ताकि खाली जगह उसे मिले। स्पर्द्धा की अर्थनीति में सहकार वृत्ति का विकास सम्भव नहीं है। ऐसी व्यवस्था में जो सहकार दिखाई देता है, वह दूसरों पर प्रहार करने के लिए होता है।

भारतीय विकास के दो पहलू एक दूसरे से जुड़े हैं—आर्थिक और सांस्कृतिक। अगर आर्थिक विकास में हर इकाई को स्वावलम्बी बनाया जाय तो स्वाश्रयिता की प्रक्रिया में एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से जुड़ेगा, अपनी रोटी में वह पड़ोसी की देन देखेगा, और जब इतना होगा तो एक का दिल दूसरे के करीब आयेगा।

लेकिन पिछले वर्षों में अनुभव आया है कि सांस्कृतिक विकास के बिना आर्थिक विकास विकार का कारण बनता है। जमशेदपुर का आर्थिक विकास हिन्दू मुस्लिम दंगों को नहीं रोक सका। एक बड़े गाँव में जब गाँववालों ने यह बताया कि फलों की बिक्री से वे ५ सौ रुपये रोज कमाते हैं तो मैंने पूछा 'इतने रुपये का आप करते क्या हैं ?' उत्तर मिला 'शाम को दीखेगा।' शाम को यह देखा कि शायद ही कोई रहा हो, जो शराब से धुत नहीं था, और गाँव में आधे दर्जन घरों में कम में जुआ नहीं हो रहा था। जेब में पैसा हो, और बुद्धि परिष्कृत न हो तो सिवाय इसके और क्या होगा ?

आर्थिक विकास और सांस्कृतिक विकास, ये दोनों अलग प्रवृत्तियाँ नहीं हैं। दोनों समग्र शिक्षण के दो पहलू हैं। इसीलिए नयी तालीम की माँग है कि गाँव विकास और शिक्षण दोनों की इकाई माना जाय। जब ऐसा होगा तो एक एक गाँव समन्वित भारतीय समाज की इकाई बनेगा, और भीतरी बाहरी, अपने-पराये के उन्माद से गाँव का मन मुक्त हो जायगा।

आज की अर्थनीति, राजनीति और शिक्षानीति मिलकर 'भारतीय चित्त' का विकास नहीं होने दे रही हैं। विघटन की इन सेनाओं के मुकाबिले हमारी भूमि सेना, सेवासेना और शान्ति सेना को खड़ा होना पड़ेगा। अच्छी नीयतवालों को हिम्मत के साथ अपनी हिकमत अमल में लानी चाहिए।●

अन्न-समस्या : समाधान के संकेत

हजारों वर्ष पहिले जब देश की जन-संख्या अधिक न थी, हमारे ऋषियों ने अन्न के अधिक उत्पादन पर बहुत जोर दिया था। तैत्तिरीयोपनिषद् के द्वितीय अनुवाक के प्रारम्भ में ही लिखा गया है : "अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्"—अर्थात् अन्न ही ब्रह्म है, इस प्रकार जान। इसके आगे ऋषि इसका कारण भी समझाते हैं। अन्न को ब्रह्म-स्वरूप माना गया है, क्योंकि अन्न से ही सब प्राणी उत्पन्न होते हैं, अन्न से ही जीते हैं और अन्त में प्रयाण करते हुए अन्न में ही प्रविष्ट होते हैं। इसी उपनिषद् के सप्तम अनुवाक में कहा गया है : "अन्नं न निंद्यात्"—अर्थात् अन्न की निन्दा न करो। और फिर अष्टम अनुवाक में : "अन्नं न परिचक्षीत" याने अन्न की अवहेलना न करो। अन्त में ऋषि बड़ी श्रद्धा व दृढ़ संकल्प से प्रतिज्ञा करते हैं : "अन्नं बहु कुर्वीत। तद् व्रतम्"—अर्थात् अन्न को खूब बढ़ाओ, यह व्रत है।

जब भारत आजाद हुआ और सन् १९५१ में हमारी पहली राष्ट्रीय पंचवर्षीय योजना बनायी गयी तब पंडित जवाहरलालजी ने देश के प्रथम प्रधान मंत्री की हैसियत से प्रण किया था कि पाँच वर्ष के बाद राष्ट्र बाहर से अन्न नहीं मँगायेगा और इस दिशा में स्वयंपूर्ण बन जायेगा। किन्तु दूसरी और तीसरी पंचवर्षीय योजनाएँ पूरी हो जाने के बाद भी भारत को विदेशों से अन्न के लिए भीख माँगनी पड़ रही है। यह दशा सचमुच दयनीय व शर्मनाक है।

तीन महत्त्वपूर्ण प्रश्न

जब मैं योजना-कमीशन का सदस्य था, तब एक दिन सुबह की प्रार्थना में महाभारत का यह भाग सुनकर बड़ा आश्चर्यचकित हुआ, जहाँ युधिष्ठिर के दरबार में नारद मुनि गये और राजा से सौ प्रश्न पूछे। कुशल-क्षेम के बाद नारद ने पूछा : "राजन्! आपके राज्य में कृषि कहीं वर्षा पर तो निर्भर नहीं रहती?" मैं तो यह प्रश्न सुनकर ही दंग रह गया। इतने वर्षों तक देश का आर्थिक संयोजन होने के पश्चात् भी हमारे नेता यह दावा नहीं कर सकते कि खेती वर्षा पर निर्भर नहीं है। फिर हजारों वर्ष पहिले मुनि नारद ने राजा से यह सवाल करने की हिम्मत की। इस प्रश्न का रहस्य आगे के दो और सवालों से स्पष्ट हो गया। "क्या आपके राज्य के प्रत्येक गाँव में कुएँ व तालाब हैं?" और अन्त में : "क्या इन कुओं व तालाबों की हर साल मरम्मत होती है?" इन तीनों प्रश्नों में हमारे प्राचीन कृषि-सम्बन्धी आर्थिक संयोजन का सारा निचोड़ आ गया है।

कुछ समय पहले जब हम आचार्य विनोबा से मिले तो भारत के वर्तमान आर्थिक संकट का जिक्र करते हुए उन्होंने बड़े दुःख से कहा :

> "आजादी मिलने के बाद जब मैंने अपने पवनार आश्रम में कांचन-मुक्ति का प्रयोग किया था, तो सबसे पहिले मुझे सहज एक कुआँ खोदने की ही सूझी। उसके जल से हमने खेती व बागवानी शुरू कर दी। बाद में भूदान आदोलन के साथ मैंने 'कूपदान' कार्यक्रम भी देश को आग्रहपूर्वक सुझाया। किन्तु आज हम जहाँ के तहाँ हैं। मैं तो चाहता हूँ कि संभवतः हरेक खेत में एक कुआँ हो। पाताल-गंगा को जमीन पर लाकर ही हम अन्न की समस्या पर विजय पा सकते हैं।"

कुछ समय पहिले जब मैं पदवीदान भाषण देने के लिए गोरखपुर गया था, तो सड़क के दोनों ओर सैकड़ों-हजारों कच्चे कुएँ खुदे हुए देखकर बहुत संतोष हुआ। शिक्षकों, विद्यार्थियों व सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भी इस कूप-आन्दोलन में उत्साह से भाग लिया था। लेकिन मुझे नारदजी के तीसरे प्रश्न का स्मरण हो आया : "राजन्, क्या इन कुओं व तालाबों की हर साल मरम्मत होती है?" पूछने पर मालूम हुआ कि गोरखपुर जिले में कुएँ तो हजारों खुद गये हैं, लेकिन वे बरसात आने पर मिट्टी से फिर भर जायेंगे, सिर्फ दस फीसदी कुओं को पक्का बनाने की स्कीम है।

यही हाल अन्य क्षेत्रों व राज्यों का है। दक्षिण भारत में भी हमारे पूर्वजों ने हजारों तालाबों द्वारा सिंचाई का प्रबन्ध किया था। नदियों में भी छोटे-छोटे बाँधों के जरिये कृषि का उत्पादन बढ़ाने का प्रयत्न किया गया था। किन्तु इन तालाबों व बाँधों की सालाना मरम्मत न होने के कारण उनमें से बहुत बड़ी संख्या सिंचाई के लिए बेकार हो गयी है। इसीलिए हमने योजना-आयोग की ओर से बार-बार सभी राज्यों को हिदायतें भेजी थीं कि लघु-सिंचाई योजनाओं में मरम्मत (मेन्टीनेन्स) पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। लेकिन अफसोस है कि इस ओर अभी भी हमारी राज्य सरकारों का बहुत कम ध्यान जाता है।

हमारा एकांगीपन

इन दिनों रासायनिक खाद का बड़ा बोलबाला है। सभी जगह कृत्रिम खाद बाँटने के 'टारगेट' (लक्ष्य) बने हुए हैं। यह जाहिर है कि 'केमीकल' खाद उन्हीं खेतों में लाभकारी सिद्ध होगी, जहाँ सिंचाई का इन्तजाम है। पानी के बिना इस तेज खाद के डालने से तो फसल बढ़ने के बजाय जल ही जायगी! यह भी जरूरी है कि रासायनिक खाद के साथ 'कम्पोस्ट व हरी खाद' मिश्रित की जाय। गोबर व हरे पत्तों के मिलाने से जमीन की उर्वरा शक्ति बढ़ती है और कृत्रिम खाद की गरमी भी कुछ कम होती है।

हम जानते हैं कि जापान की फी एकड़ उपज भारत से तिगुनी-चौगुनी है। इस चमत्कार का प्रत्यक्ष दर्शन करने और उसके कारण समझने के लिए मैं कुछ साल पहले योजना-कमीशन की ओर से जापान गया था। वहाँ मैंने ग्रामीण क्षेत्रों का काफी अन्दर जाकर भ्रमण किया। जापानी किसानों ने मुझसे कहा : "साहब, हमारे यहाँ एक कहावत है कि केवल रासायनिक खाद का प्रयोग पिता के लिए तो अच्छा है, लेकिन बच्चों के लिए बहुत बुरा!"

"मैंने इसका ठीक अर्थ नहीं समझा!"

इस अंक में पढ़ें—

२७ अक्तूबर, '६७
वर्ष २, अंक ६] [१८ पैसे

'लड़के बिगड़ उठे हैं !'

जिस बड़े आश्रम में बच्चों का मुफ्त भोजनालय चलता था उसके बड़े फाटक पर एक सूरदास रहते थे। बच्चों के साथ रिलीफ की खिचड़ी खाते थे और जबतक जगते थे भजन गाया करते थे। कभी-कभी दो-चार लोग पास बैठते तो सगुण निर्गुण का भेद समझाते या देश-दुनिया की बात बताते। आँखें जाने पर बुद्धि न जाने कैसे इतनी तेज हो जाती है।

एक दिन शाम को सूरदास को घेरकर गाव के तीन चार आदमी बैठे हुए थे। उनमें इसी साल बदरीनाथ की यात्रा से लौटे हुए मुखियाजी भी थे। चर्चा के दौरान मुखियाजी ने कहा 'सूरदास, आपने भी स्वराज्य में काम किया है। कई बार जेल गये हैं और मार भी खायी है। आपको याद है जब स्वयंसेवकों की जरूरत पड़ती थी तो हाईस्कूल के लड़के हमलोगों की कितनी मदद करते थे। लेकिन आज तो यह हाल है कि लगता है लड़के देश में आग लगायेंगे। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या हो गया है। लड़कों पर तो जैसे नशा छा गया है।'

'हाँ उस दिन मास्टर साहब आये थे तो यह भी कह रहे थे कि स्कूल में एक दिन कुशल से बीत जाने के लिए भगवान से बार-बार प्रार्थना करनी पड़ती है' सूरदास ने कहा।

मुखियाजी— इतना ही नहीं, इस समय उपद्रव करने में विद्यार्थी सबसे आगे हैं। बात-बात में तोड़ फोड़ करना आग लगा देना मारपीट करना आदि जैसे उनके रोज के काम हो गये हैं। सरकार के लिए विद्यार्थी सबसे बड़े सिरदर्द हैं।

सूरदास— यह सब क्या हो रहा है? विद्यार्थी पढ़ने लिखने कब हैं?

मुखिया— जब कोई दूसरा काम नहीं रहता होगा तो पढ़ भी लेते होंगे। विद्यार्थी बिगड़ उठे हैं।'

सूरदास— आखिर विद्यार्थी यह सब क्या करते हैं? माँगते क्या हैं?

विद्यार्थी तोप के गोले
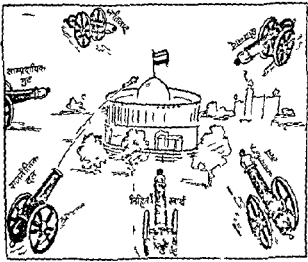
मुखियाजी—"कौन शिक्षक रहे, इम्तहान में कैसा पर्चा दिया जाय, अधिक होस्टल बनें, फीस घटायी जाय, आदि तरह-तरह की माँगें उनकी ओर से होती हैं। अभी-अभी बंगाल के कुछ विद्यार्थियों ने सरकार के सामने अपना एक पूरा माँग-पत्र पेश किया है।"

सूरदास—"बताइए कि सरकार ने क्या जवाब दिया ?"

मुखियाजी—"शिक्षामंत्रीजी ने विद्यार्थियों से यह कहा कि बंगाल की नयी सविद सरकार को विरोधियों से बचाना तुम्हारा काम है। बंगाल तुम्हारे हाथ में है। तुम लोग तैयार रहो।"

सूरदास—"बस, समझ में बात आ गयी। जब नेता लोग अपनी गद्दी बचाने के लिए विद्यार्थियों के सामने हाथ फैलाने लगे, तो मानी हुई बात है कि विद्यार्थी अपनी मदद की पूरी कीमत वसूल करेंगे।"

सुक्खू—"ठीक कहते हो, सूरदास। और अब तो सुनते है, पटना के बड़े-बड़े प्रोफेसर लोग भी हड़ताल और आन्दोलन की धमकी देने लगे हैं।"

सूरदास—"ठीक ही है। जो काम शिक्षक करें उसे विद्यार्थी क्यों न करें ? बल्कि मैंने तो यह देखा है कि स्कूल में जो भी अच्छा-बुरा होता है वह सब शिक्षकों के कहने से होता है।"

मुखियाजी—"सही बात है। रामबदल का लड़का पिछले साल धनबाद में प्रोफेसर हुआ है। दुर्गापूजा में घर आया था। गुटबन्दी, जातिवाद, इम्तहान में नकल, हिसाब में गोलमाल आदि का जो हाल बताता था उसे सुनकर ऐसा लगता था कि हमलोगों की पंचायतों से ये स्कूल और कालेज कहीं आगे निकल गये हैं !"

सूरदास—"क्या कहें किसीको ? कौन किससे अच्छा और कौन किससे बुरा ? रात अंधेरी हो, आसमान में बदली हो, जंगली रास्ता हो तो सोचो, राही का जो हाल होगा वही इस समय देश का हो रहा है।"

मुखियाजी—"लेकिन यह बताइए कि यही हाल रहा तो काम कैसे चलेगा ? क्या किया जाय कि हवा कुछ बदले ?"

सूरदास—"मुखियाजी, और कुछ नहीं, बस एक सपना चाहिए। गांधीजी ने एक सपना दिया स्वराज्य का। हम लोग उस सपने के पीछे चल पड़ें। प्रेमी की तरह जवान को भी एक सपना चाहिए, जिसके पीछे वह पागल हो उठे। पागल तो वह कुछ-न-कुछ रहेगा ही। यह देश के अगुआ लोगों का काम है कि जवान को देश के लिए पागल बनायें, गद्दी और गुट के चक्कर में न फँसायें।"

मुखियाजी—जवान बारूद है, जिसे हर एक अपनी बन्दूक में भरना चाहता है।"

सूरदास—"तो एक ही बन्दूक दूसरे के ऊपर छूटेगी, और देश चौपट हो जायगा !"

सुक्खू—"बात तो सही है, लेकिन लोग सोचें तब तो !" •

गाँवों की समस्या

आज भारत के सामने गाँवों की समस्या है, उन्हें उठाना है। इस मामले में बहुधा पश्चिम की नकल की जाती है, मगर यह गलत है। हमारे पास इतने साधन नहीं कि हम पश्चिम की नकल कर सकें। अमेरिका का मजदूर तो ५०० रु० प्रतिमास बेकारी का भत्ता पाता है !......हमारे गाँवों में और समस्याएँ तो हैं ही, दो समस्याएँ ऐसी हैं, जिनकी ओर तुरत ध्यान जाना चाहिए : पहली तो है पानी की समस्या, और दूसरी है, पाखानों की समस्या।

देहातों में पानी के कल नहीं हैं। कुएँ से पानी प्रायः औरतें खींचती हैं। शारीरिक कष्ट तो होता ही है, बहुत-सी बीमारियों के फैलने का कारण भी कुएँ का पानी है। "गोरी सर पर पानी से भरे मटके रखकर, कमर लचकाती हुई चलती है।"—काव्यगत सौन्दर्य की चीज हो सकती है, मगर है बहुत ही क्रूर। और फिर यदि यही सौन्दर्य है तो इसमें भी 'बराबरी' कायम होनी चाहिए। केवल अद्विज या गाँव की स्त्रियाँ ही क्यों इस सौन्दर्य की हकदार बनें ?

दूसरी समस्या पाखाने की है। किसी भी सभ्यता का पता लगाना हो, तो उसके पाखानों की ओर देखो। कुछ बरस पहले जब मैं जापान गया था, तो वहाँ के पाखाने देखने को मिले। सफाई तो थी ही, हर पाखाने में गुलदस्ते सजे थे। सुरुचिपूर्ण वातावरण था। अपना देश इस मामले में क्रूर और राक्षस है। औरतें गाँवों में लुक-छिपकर पाखाना जाने का मौका निकालती हैं। देश में कई महिला-संस्थाएँ भी हैं। उनका उद्देश्य सम्पत्ति-विभाजन या तलाक तक ही सीमित है।

—स्व० डा० राममनोहर लोहिया

कानून और ग्रामदान

मैं ग्रामदान के सिलसिले में गाँव-गाँव घूम रहा था। एक गाँव की छोटी सभा में लोगों को समझा रहा था कि खेत की उपज बढ़ाने के लिए खेती के नये तरीके, नये साधन, अच्छे बीजों तथा खादों का उपयोग करना चाहिए। पुरानी पद्धति से ही खेती होती रहेगी, हमारे वे ही वर्षों पुराने हल, पुरानी खुरपी और कुदाली हमारे खेती के औजार रहेंगे तो अनाज का उत्पादन कैसे बढ़ेगा? फिर तो हमें अनाज के लिए दूसरे देशों का ही मुँह ताकना पड़ेगा।

मैं खेती की कुछ और भी बातें बताना चाहता था कि एक बूढ़ा आदमी बोल पड़ा, "बाबूजी, आप तो बहुत ही अच्छी बात बता रहे हैं, लेकिन आपकी यह अच्छी बात हमारे किस काम आयगी?" मैंने पूछा, "क्यों? अपनी-अपनी खेती में सुधार करो। देखो, उत्पादन बढ़ता है या नहीं! इसके लिए सरकार भी बीज, खाद, पानी का इन्तजाम करनेवाली है।"

वह बोला, "यही तो मैं कह रहा हूँ कि आपकी यह सलाह और सरकार की वे सारी मदद हमारे काम की नहीं। हमको तो मजूरी करनी है और जो मजूरी मिलेगी उसीसे अपना पेट भरना है। जिसके पास जमीन है उसे ही न लाभ मिलेगा! हम तो मजूर हैं। हमारे लिए आप क्या सोचते हैं? हम थोड़ी-बहुत जमीन बँटाई पर लेकर जोतते थे। अब वह भी सरकार की कृपा से नहीं मिलती। सरकार ने जब से कानून बना दिया है कि बँटाईदार बेदखल नहीं किये जा सकते और बँटाई पर खेत देनेवाले मालिक को ४० सेर में १४ सेर ही अनाज मिलेगा बाकी बँटाईदार को, तब से तो हमें बँटाई पर जमीन ही नहीं मिलती। अब सिवाय मजदूरी के हम कर ही क्या सकते हैं? नकद रुपया देकर खेत पाना हमारे वश का है नहीं। इसीलिए बाबूजी हमारी छोटी बुद्धि में तो यही समझ में आ रहा है कि हमारे लिए कुछ न सोचा जाय तभी अच्छा है। हमारे बारे में जितना सोचा जाता है या किया जाता है, उससे हमारी हालत बिगड़ती जाती है।"

मैंने कहा, "आप जो कुछ भी कह रहे हैं, वह सब सही है। अबतक खेती के सुधार की जो भी कोशिश की गयी है उससे जिसके पास कुछ खेत है उसीको लाभ हुआ है। जिसके पास खेत नहीं है वह और गरीब होता गया है। उसका कष्ट बढ़ता गया है। फिर भी कुछ तो उपाय करना ही चाहिए। आज जैसा है वैसा तो चलने नहीं देना है। वह तो बदलना ही होगा। यही सोचकर विनोबाजी ने कहा कि अपने लिए तुम स्वयं ही सोचो, जबतक तुम्हारे लिए दूसरा सोचनेवाला होगा तबतक तुम्हारी तकलीफ दूर नहीं होगी। विनोबाजी ने कहा है कि गाँव की समस्याओं को दूर करने के लिए गाँव के लोग साथ बैठकर सोचें और एक-एक कर सब समस्याओं को दूर करने का उपाय सोचें। गाँव की सबसे बड़ी समस्या जमीन है। उसको सबसे पहले हल किया जाना चाहिए। उसके लिए विनोबाजी ने ग्रामदान की बात कही। ग्रामदान में गाँव के लोगों को ही इन्तजाम करना पड़ता है। बाहरी आदमी की जरूरत नहीं पड़ती।

अपने राज्य (बिहार) को ही लीजिए। सरकार ने कानून बनाये। लेकिन सरकार ने अबतक साहस नहीं किया कि उस कानून का अमल हो। अभी पटना में श्री महामाया बाबू की अध्यक्षता में सभी पार्टियों का सम्मेलन हुआ। सब इस बात के लिए राजी हुए कि जमीन के जो भी कानून बने हैं उन्हें अमल में लाने के लिए शान्तिपूर्ण तरीका ढूँढ़ा जाय और जल्द कानून को अमल में लाया जाय। यह एक प्रयत्न सरकार और पार्टी के स्तर पर भूमि-सुधार के लिए हो रहा है। और इसी राज्य में विनोबाजी प्रेम की पद्धति से जमीन की समस्या के हल में लगे हैं। क्या अब भी आप निराश हैं?

"मगर ऐसा होगा कब? हम कब तक राह देखेंगे? विनोबाजी से कुछ आशा बँधी थी कि हमलोगों को भी जमीन मिलेगी। लेकिन इतने वर्ष बीत गये, पर जमीन का कहीं कोई पता नहीं! हमारी तकलीफ बढ़ती ही गयी। हमें तो जमीन चाहिए। चाहे वह भूदान से मिले, चाहे कानून से मिले, चाहे नोच-खसोट से।"—एक नवयुवक ने कहा।

एक दूसरा नवयुवक जो पढ़ा लिखा मालूम पड़ रहा था, बड़े शान्त भाव से खड़ा हुआ और बोला, "भाईजी, हमें जमीन

चाहिए और जरूर चाहिए। हमारे पास जितनी जमीन है उससे कुछ भी नहीं होता। सर्वोदय के एक कार्यकर्ता से बातचीत हुई थी। उनकी बातें बड़ी अच्छी लगी थी। यह ठीक बात है कि हमारे पास जमीन होती तो हम रुचि के साथ खेत में काम करते और उत्पादन बढ़ता। आज खेती में हमारी रुचि नहीं है। जब हमारा पेट ही नहीं भरता तो हम ज्यादा मेहनत ही क्यों करें? कानून से हमें जमीन मिलेगी, इसका भरोसा हमें नहीं होता। ग्रामदान में हमें जमीन भी मिलेगी और हमारा सामाजिक सम्बन्ध भी बनेगा। कानून में जमीन तो मिलेगी, लेकिन हमारा सम्बन्ध खराब होगा ऐसा अन्देशा है। अभी से ही हमारे यहाँ मालिकों की तरफ से धमकी दी जा रही है कि चाहे जो हो जमीन हम नहीं देंगे, हम खुद जोतेंगे।"

मैंने कहा, "आप ग्रामदान के विचार को अच्छी तरह समझते हैं। यह सही बात है कि ग्रामदान में भूमिहीन को भूमि तो मिलती ही है। परन्तु इसमें सबसे बड़ी बात यह है कि गाँव के धनी, गरीब, ऊँच-नीच, सब मिलकर सभी के लिए सोचेंगे। गाँव में सबका सम्बन्ध विश्वास का होगा। आपस का अविश्वास दूर होगा। मिलकर काम करने की भावना पैदा होगी। आप गाँव के लोगों को समझाइये और ग्रामदान के लिए कुछ काम करिये।"

उसने कहा, "हम प्रयत्न कर सकते है। आप आइये तो हम मिलकर काम करेंगे।" ●

अपना गाँव बनायें

सुनो सुनो गँवई के भाई, क्या कह रहा जमाना?
राजनीति के लम्बे-चौड़े, वादों पर मत जाना!
राजनीति बनकर सुर्पनखा, छलने को आती है,
तरह-तरह के रूप बदलकर, जन को भरमाती है।
लोभ दिखाती है दिल्ली का, पर तुम मत पतियाना,
है हमको अब नन्दन-कानन, अपना गाँव सजाना।
ग्रामदान की गंगा आयी, इसमें चलो नहायें।
सत्य, अहिंसा, करुणा, श्रम से, अपना गाँव बनायें।

—प्रो० सलिल

दुनिया क्या जानेगी?

बहुत दिनों बाद यशोदा मिलीं। इस बीच इनके घर कई नये काम हुए। बड़े लड़के की शादी और पाँचवें लड़के का जन्म। लड़के की शादी हो गयी, इसलिए बहुत प्रसन्न थीं।

"इतने छोटे लड़के की शादी क्यों कर दी? बहू कैसी है?" मेरे यह पूछने पर उत्तर दिया—"देखिये, यह शादी मैंने अपने लिए की है, लड़के के लिए नहीं। यह तो मैं भी जानती थी कि बहू सयानी है, लड़का छोटा है। लेकिन सयानी बहू है तो घर का सब काम करेगी, नहीं तो मेरी जिन्दगी भर यह चूल्हा-चौका न छूटता!"

मैंने कहा, "आपने केवल अपने आराम की बात सोची, लड़के और लड़की पर ध्यान नहीं दिया।" इस पर यशोदा ने उत्तर दिया, "ऐसी बात नहीं है, बहिनजी! शादी के बाद मैंने लड़के को उसके चाचा के पास कानपुर भेज दिया है। अब वह वहीं ही रहेगा। लड़के की तरफ से तो मन निश्चिन्त हो गया है। रह गयी बहू। इसके रहने से शरीर को तो बहुत आराम है, लेकिन मन को नहीं है। सच कहती हूँ रात भर नींद नहीं आती। रात को उठकर बार-बार घर और बाहर देखती हूँ। इसी पहरेदारी में दिन-रात रहना पड़ता है। बाहर अपने पति, घर में लड़के की पत्नी, दोनों पर ध्यान रखना पड़ता है!"

"इस तरह आप कितने दिनों तक रखवाली करेंगी?"

उत्तर दिया—"जब तक लड़का छोटा है तभी तक, फिर तो जो कुछ होगा उसे अपना मन जानेगा, दुनिया क्या जानेगी? घर के आदमी की रखवाली करना बहुत मुश्किल है।

—विद्या

गेहूँ की खेती—२

पिछले अंक में गेहूँ की दो नयी बौनी किस्मों की जानकारी दी गयी है। यहाँ हम उनकी खेती की विधि बताने जा रहे हैं।

भूमि की तैयारी भूमि की अच्छी जुताई की जाय। दो-तीन जुताइयाँ मिट्टी पलटनेवाले भारी हल से करने के बाद दस-बारह जुताइयाँ देशी हल से करनी चाहिए। हर जुताई के बाद पाटा दिया जाय। पाटा सुबह चलाना अच्छा होगा। इससे मिट्टी भुरभुरी होगी और खेत में नमी बनी रहेगी। खेत से खरपतवार निकालने के लिए तीन चार बार हैरो या सिंह पटेला चलाया जाय।

भूमि समतल होनी चाहिए ताकि आसानी से सिंचाई की जा सके। अगर भूमि में नमी की कमी हो तो बोने के पहले एक हल्की सिंचाई की जानी चाहिए। बोने समय जितनी नमी की जरूरत है उतनी नमी नहीं होगी तो अंकुरण ठीक नहीं होगा।

बुआई का समय बुआई का सही समय गेहूँ की किस्म और तापक्रम पर निर्भर करता है। यदि सोनोरा-६४ की शीघ्र बुआई कर दी जाय तो बालें कम फूटेंगी तथा ... समय से पहले ही आ जायगा। इसी प्रकार यदि लरमारोजो को शीघ्र बोया जाय तो पौधे अधिक बढ़ जायेंगे और फसल गिर जायगी। ये किस्में दिसम्बर के पहले सप्ताह तक भी बोयी जा सकती हैं। ३ दिसम्बर तक की बुआई में ज्यादा उत्पादन पाया गया है। देर से बुआई के लिए यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि प्रति एकड़ बीज की मात्रा अधिक डाली जाय।

बीज की मात्रा साधारणतः एक एकड़ के लिए ४० किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है परन्तु यदि देर से बुआई की जाय तो बीज की मात्रा बढ़ा दी जाय। यानी ४० किलो० के बजाय ६० किलो० बीज लगेगा।

बुआई की गहराई बौनी किस्मों की जड़ अधिक गहराई तक भूमि में नहीं जाती है। यदि बौनी किस्में ३ इंच से अधिक गहराई पर बोयी जाती हैं तो ये देर से अंकुरित होती हैं तथा इन कोपलों की संख्या कम होती है। इन कारणों को देखते हुए बौनी किस्मों को ३ इंच से गहरा कभी न बोयें। ढाई इंच की गहराई पर बुआई करने से संतोषजनक अंकुरण होता है।

बौनी किस्में और उर्वरक लम्बी किस्मों से अधिक उत्पादन न होने का मुख्य कारण यह रहा है कि ये किस्में अधिक उर्वरक विशेष रूप से नाइट्रोजनवाले उर्वरकों को सहन नहीं कर सकती थीं क्योंकि अधिक मात्रा में नाइट्रोजन देनेवाले उर्वरक डालने से इनका तना अधिक बढ़ जाता था और वायु के वेग से वह भूमि पर गिर जाता था। बौनी किस्में कद में बौनी हैं तथा इनका तना मजबूत होता है जिस कारण वह गिर नहीं पाता। सोनोरा-६४ तथा लरमा रोजो किस्में ८० किलो० नाइट्रोजन प्रति एकड़ तक अपनी उपज लगातार अधिक देती चली जाती हैं। परन्तु ऊँची किस्में लगभग २१ किलो० नाइट्रोजन प्रति एकड़ से आगे बहुत धीरे उपज में वृद्धि करती हैं।

उर्वरक कितनी दी जाय इसकी जानकारी पिछले अंक में दी गयी है।

उर्वरक भूमि में डालने की विधि नाइट्रोजन देनेवाले उर्वरकों को बीज के साथ मिलाकर कभी भी नहीं देना चाहिए। उर्वरकों को भूमि में मिलाये जाने पर उनका उपयोग उस समय तक नहीं हो पाता जबतक कि सिंचाई न की जाय। नाइट्रोजन की दो तिहाई तथा फास्फोरस और पोटाशवाली सभी उर्वरक बुआई से पहले भूमि में मिला देनी चाहिए तथा बची हुई तिहाई नाइट्रोजन पहली सिंचाई से पहले डाल देनी चाहिए।

सिंचाई का प्रबन्ध बुआई के लगभग २०-२५ दिन बाद गेहूँ की बौनी किस्मों में सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि इस समय शीर्षमूल तथा कोपल निकलती है। यदि इस सिंचाई में देर की जाती है तो कोपल कम निकलती है। बालें फूटते समय तथा दाना बनते समय भी सिंचाई का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके साथ अन्य परिस्थितियाँ जैसे भूमि की किस्म तथा जलवायु को ध्यान में रखते हुए सिंचाई की जाय। सामान्यतया ४ से ८ बार सिंचाई पर्याप्त रहती है। बौनी किस्में सिंचाई के जल का सही उपभोग करती हैं। उन्हें सिंचाई की कमी न होने दी जाय।

—भोपाल सिंह

कृषि, किसान और कानून

बिहार के मुंगेर जिले में जमालपुर-कारखाने से कुछ ही दूरी पर एक गांव है भलार। इस गांव के एक साधारण दर्जे के पढ़े-लिखे किसान हैं हेमनाथ बाबू। पहले एक हाईस्कूल के हेडमास्टर थे। कई साल हुए नौकरी छोड़ दी। वे सामाजिक कामों में रुचि रखते हैं, बल्कि यों कहें कि अधिक समय उनका सामाजिक कामों में बीतता है। बिहार के कृषि, किसान और कानून की स्थिति का अध्ययन करने के सिलसिले में मैंने श्री हेमनाथ बाबू से मुलाकात की। अपने गांव का परिचय देते हुए उन्होंने कहा, "हमारे इस छोटे से गांव में थोड़ी-थोड़ी जमीनवाले किसान हैं। कुछ बिना जमीनवाले लोग भी हैं। वे बँटाई पर खेती करते हैं। लेकिन उनकी हालत बड़ी खराब है।"

मैंने उनसे सवाल किया कि बिहार में तो बँटाईदारी का बहुत अच्छा कानून बना है, क्या उससे बँटाईदारों की पुरानी परम्परा पर कुछ असर नहीं पड़ा है? हेमनाथ बाबू ने जवाब दिया, "बिलकुल नहीं। जैसा पहले चलता था, आज भी वैसा ही चलता है। कानून अपनी जगह है, परम्परा अपनी जगह है। और बँटाईदारी का ही क्या, सभी कानूनों का यही हाल है।"

सिर के आधे सफेद, आधे काले बालों में हाथ की उंगलियां फिराते हुए फिर उन्होंने पुरानी बात याद की, "सन् १९३६-३७ में जब कांग्रेसी सरकार बनी थी तो उस समय कुछ काम हुआ था। उन दिनों मजिस्ट्रेट रैयत और जमींदार को बुलाता था, दोनों की बात सुनता था, जमींदार को मालगुजारी घटाने के लिए राजी करने की कोशिश करता था। और दोनों की बात सामने रखकर मालगुजारी की नयी दर चालू करता था। नयी दर निश्चित रूप से पुरानी दर से कम होती थी। उस समय मालगुजारी अनाज में भी दी जाती थी। उसे 'भावली' कहा जाता था।

"भावली पर जमीन जोतनेवालों को एक लाभ यह मिलता था कि रैयत और जमींदार को बुलाकर मजिस्ट्रेट भावली को पैसे में बदलता था। उदाहरण के लिए रैयत को यदि १ मन अनाज देना है, तो मजिस्ट्रेट उसकी दर तय कर देता था। रैयत मालगुजारी में अनाज देने की जगह एक मन अनाज की कीमत (जो मजिस्ट्रेट के सामने तय होती थी) दे देता था। अगर अनाज बेचते समय अनाज का बाजार-भाव बढ़ जाता था, तो उसका लाभ रैयत को मिलता था।"

इतना कहते-कहते हेमनाथ बाबू के चेहरे पर कुछ तनाव-सा आ गया। उन्होंने कहा, "सन् १९३७ से '६७ तक पूरे तीस सालों में मुझे याद नहीं कि इन दो के अलावा कोई तीसरा कानून बनकर लागू हुआ हो, जिससे रैयत को लाभ पहुँचा हो।"

मैंने हेमनाथ बाबू को जमींदारी-उन्मूलन-कानून की याद दिलायी और जोर देकर कहा कि इसका लाभ तो किसानों को मिला ही होगा? क्या इसे आप इनकार कर सकते हैं? मेरे प्रश्न का उत्तर देते समय अपनी बात पर मुझसे अधिक जोर डालते हुए उन्होंने जवाब दिया, "बड़े जमींदारों के अमला रैयत को तंग करते थे। छोटे-छोटे जमींदार रैयतों के गांव के आस-पास के होते थे। वे खुद हर छोटी-बड़ी बात के लिए रैयत को तंग करते थे। जमींदारी-उन्मूलन से रैयत को राहत मिलेगी, ऐसी आशा बनी थी, लेकिन हुआ कुछ दूसरा ही। वे कड़ाही से निकलकर जैसे चूल्हे में जा गिरे! छोटे-छोटे जमींदारों और बड़े-बड़े जमींदारों के कारिन्दों से तो रैयत का सीधा दिन-रात का सम्पर्क रहता था। उनकी धाक थी। वे रैयत से लड़-झगड़कर अपना काम निकाल लेते थे। लेकिन आज तो सरकारी कर्मचारियों (पटवारियों) और कागज की पेचीदगियों से हर किसान परेशान है। हर कर्मचारी (पटवारी) तहसीलदार कहलाता है। किसान जिस नम्बर के खेत का लगान दे रहा है, उसी नम्बर के खाते में उसका लगान कर्मचारी जमा करेगा, इसकी कोई गारंटी नहीं है। बड़े किसान जो पढ़े-लिखे और चलता-पुर्जा होते हैं, वे तो अपना काम बना लिया करते हैं, लेकिन छोटे-छोटे किसान हमेशा परेशानी भुगतते हैं।"

"लेकिन मैंने पढ़ा है कि स्वराज्य के बाद बिहार में भूमि-सुधार के बहुत अच्छे-अच्छे कानून बने हैं। क्या आपको कुछ जानकारी है?"—मैंने यह सोचकर पूछा कि शायद ये महाशय बिना जानकारी के ही अपनी राय बनाये हुए हैं।

"हां, मैंने भी सुना है। अखबारों में भी समय-समय पर पढ़ा है। कानून बना है कि भूमिहीनों के बास की जमीन उनकी अपनी हो जायगी। बास की जमीन से कोई उनको हटा नहीं सकेगा। कानून बना है कि बँटाईदारों को उपज का २६ वां और मालिक को १४ वां हिस्सा ही मिलना चाहिए। लेकिन भूमिहीन मजदूरों की झोपड़ियां आज भी पहले की

तरह ही उजाड़ दी जाया करती हैं। वे बेदखल कर दिये जाते हैं। बँटाईदारों का यह हाल है कि अनाज की कुल उपज तो मालिकों के घर चली जाती है; बँटाईदारों को मिलता है सिर्फ घास-भूसा। अनाज कुछ चोरी करके भले मिल जाता हो, हिस्से के रूप नहीं के बराबर ही मिलता है।

"कहीं-कहीं तो 'जोत' का अधिकार बिकता है। अमुक खेत में पिछले साल कितनी फसल हुई, अनाज का भाव क्या रहा, आगे कितनी फसल होगी, भाव क्या रहेगा, इन बातों का निश्चय मालिक अपनी मर्जी के मुताबिक कर लेते हैं, फिर फसल बोने के डेढ़-दो महीने पहले ही कई बँटाईदारों को जोतने लिए जमीन देने को लालच दे देते हैं। बँटाईदारों में जब जमीन लेने के लिए होड़ लग जाती है, तो जो सबसे अधिक पैसा या अनाज देना कबूलता है, उसे ही जमीन जोतने के लिए दी जाती है। इस तरह मालिकों की आमदनी बढ़ती रहती है, सुरक्षित रहती है, जब कि जमीन जोतनेवालों की आमदनी घटती रहती है, अरक्षित रहती है। और, कानून कुछ नहीं कर पाता।

"लेवी का कानून बना था, फिर रोक दिया गया। 'सीलींग' का कानून भी बना। उससे किसीको जमीन मिली हो, ऐसी कोई मिसाल अभी तक मेरी जानकारी में नहीं आयी।

"एक और कानून है कि रेलवे लाइन के किनारे की जमीन हरिजनों को ही जोतने लिए दी जायगी। किस रेट पर जमीन दी जायगी, यह सरकार तय करती है। सरकार के कागज में जमीन दी जाती है मालिकों के हरिजन हलवाहों को, लेकिन उस पर कब्जा रहता है, मालिकों का ही। हरिजनों को पैसा देकर, डरा धमकाकर या घूस देकर यह सिलसिला वर्षों से चला आ रहा है।'

मैंने सोचा था कि हेमनाथ बाबू को कानूनों की जानकारी नहीं होगी। लेकिन, बात कुछ भिन्न निकली। और उनके बताये तथ्यों के आधार पर मुझे यह मानना पड़ा कि जनता की सम्मति और जागरण के बिना इस देश में सरकारी कानूनों से शायद बहुत काम नहीं हो सकता। एक के बाद दूसरी सरकार आयगी, नित नये कानून बनायगी, और लोग उन कानूनों से बचने के नित नये उपाय खोज लेंगे! इसलिए शायद इस देश में कोई भी सुधार लाने का एक ही रास्ता है—जनता को समझाना, बार-बार समझाना, और एक-दूसरे के हित विरोध को कमकर परस्पर के सहकार को बढ़ाना। ●

भूमिसुधार-कानून का अमल

लोकतांत्रिक पद्धति से भूमि-सुधार में रुचि रखनेवाले राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों, संगठनों तथा कुछ व्यक्तियों का एक सम्मेलन पटना में १७ और १८ अक्तूबर को हुआ। इस सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि इस राज्य में किसानों की दशा को सुधारने के लिए स्पष्ट और कारगर उपाय सोचे जाने चाहिए। अबतक कृषि-सुधार के जितने भी कानून बने हैं, उन्हें शीघ्र ही अमल में लाने की जरूरत है। इसके साथ ही इस बात का भी ध्यान होना चाहिए कि हिंसा का सहारा न लिया जाय। हिंसा से सिर्फ अव्यवस्था, उलझन और अराजकता ही फैलेगी। सभी विवादों को मैत्री भाव से हल करना चाहिए।

बँटाईदारों को, जो हिस्सा कानून में तय किया गया है, वह मिलना चाहिए। परन्तु इसके लिए न हिंसा का मार्ग अपनाना चाहिए और न अराजकता ही फैलानी चाहिए। प्रशासन के तन्त्र को कोई उपयुक्त रास्ता निकालना चाहिए, जिससे बँटाईदारों को बँटाईदारी-कानून में दी गयी सुविधाओं का लाभ मिल सके। किसानों को महाजन के चंगुल से बचाव के लिए कारगर कदम उठाना चाहिए। परन्तु जबतक राजनीतिक दल ईमानदारीपूर्वक परस्पर के सहयोग से काम नहीं करते, तबतक कृषि की समस्याओं को दूर नहीं किया जा सकता है।

राजस्वमंत्री श्री इन्द्रदीप सिन्हा ने कहा कि किसानों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति में सुधार लाने के लिए क्रान्तिकारी कदम उठाना जरूरी है। इन्द्रदीप सिंह को छोड़कर सभी वक्ताओं ने बताया कि कृषि-समस्याओं का सामना करने के लिए वर्तमान कानून काफी हैं। उन्होंने सुझाव दिया कि प्रखण्ड-स्तर पर, जिला-स्तर पर तथा राज्य-स्तर पर सभी दलों की मिली-जुली सलाहकार समिति बननी चाहिए। वह सरकारी अधिकारियों को भूमि-सुधार के कानून के परिपालन में सलाह देगी तथा मदद करेगी।

इस सम्मेलन की अध्यक्षता मुख्य मंत्री श्री महामाया प्रसाद सिन्हा ने की। ●

अमेरिका में सामूहिक जीवन के प्रयोग—२

दुखोबोर

दुखोबोर लोग शाकाहारी हैं। वे ईश्वर के नियम के अनुसार जीने की कोशिश करते हैं। उन्होंने अपने को मनुष्यों के संरक्षण और शासन से इसलिए दूर रखा, क्योंकि वे मानते हैं *कि मनुष्य एक साथ दो मालिकों की सेवा नहीं कर सकता है।* श्रम और शान्तिमय जीवन बिताते हुए वे वह सब कुछ मानने और करने को तैयार होते हैं, जो ईश्वर के नियमों के विरुद्ध न हो। वे भय से किसी बात को नहीं मानते, बल्कि अपनी अन्तरात्मा की बात को ही मानते हैं।

इनकी धार्मिक सभा के समय आये हुए लोगों के बीच में मेज पर डबल रोटी, नमक, पानी की सुराही और गिलास रखा रहता है। यदि किसीको प्यास लगती है, तो वह सहज ही पानी पीता है। सभा में सामूहिक भजन और छोटे उपदेश होते हैं।

सन् १६६६ से दुखोबोर लोग अपने देश, रूस के सनातन धर्म से बहिष्कृत रहे हैं। तभी से वे एक विश्वव्यापी भाई-चारेवाला ईसाई-समाज बनाने के प्रयत्न में हैं। उनका यह "आध्यात्मिक संघर्ष" अब भी जारी है। कुछ मित्रों के प्रयत्न से सन् १८९९ में ८००० दुखोबोर कैनेडा पहुँचे। सरकार ने उन्हें जमीन भी दी, और उन्हें अनिवार्य फौजी भरती से मुक्त कर दिया। कैनेडा में उनका सामूहिक जीवन प्रारंभ हुआ। वहाँ वे काफी सफल हो रहे थे। लेकिन इसी बीच उनके प्रथम मार्गदर्शक के लड़के ने उन्हें गलत मार्ग दिखाया। उन पर पाँच लाख डालर का ऋण था। कर्ज की वसूली के लिए सरकार ने उनकी जमीन जब्त कर ली। इससे उन्हें अपने मकान तथा कृषि-भूमि को त्यागना पड़ा। अब वे किसी प्रकार से कहीं-न-कहीं जमीन प्राप्त कर लेते हैं।

उनके बीच के कुछ अल्पसंख्यक लोग ब्रेम्नोवा नाम के गाँव में रहते हैं। वे समझते हैं कि हवा और पानी की तरह भूमि भी परमेश्वर की देन है, इसलिए जमीन की व्यक्तिगत मिलकियत समाप्त होनी चाहिए। वे मानते हैं कि साधारण पाठशालाओं की शिक्षा से निर्दोष बच्चे बरबाद हो जाते हैं। वे बुराई करनेवाले साथियों के विरुद्ध हिंसक कारवाई करने में विश्वास करते हैं। पिछले चालीस वर्षों में उन पर ४०० बार लोगों की जायदाद में आग लगाने का आरोप लगाया गया है। सन् १९६२ में उनमें से १०० आदमी गिरफ्तार हुए थे। उनकी माताओं और पत्नियों ने सारे गाँव को जलाकर ५०० मील की पदयात्रा उनके जेल तक की थी। जब अधिकारियों ने उन्हें जेल के सामने से भगा दिया, तो वे एक सार्वजनिक बगीचे में बैठ गयी थीं। उनका संघर्ष जारी है।

वास्तव में उनके लिए अपना सही मार्ग खोजना बड़ा कठिन हो गया है। उन्होंने एक बहुत औपचारिक धर्म के विरुद्ध, अत्याचारी शासन के विरुद्ध आध्यात्मिक बगावत की। वे प्रायः दास की स्थिति में रह रहे थे और पूरी तरह अशिक्षित थे। उन्हें प्रजातान्त्रिक व्यवस्था का कोई अनुभव नहीं था। मगर भी अपने विश्वास के अनुसार काम करने की पद्धति के द्वारा उन्हें पुरानी किसानी संस्कृति को आज की यान्त्रिक सभ्यता में परिवर्तित करने का प्रयत्न करना पड़ा। उन्होंने विचित्र धर्म, तथा परायी भाषा से अपने को अलग रखने का प्रयत्न किया। ●

—सरला बहन

गाँव-गाँव "गाँव की बात" पहुँचाने का निश्चय

दरभंगा जिले की नवगठित ग्रामस्वराज्य समिति की पहली बैठक १९ अक्तूबर को पूसा रोड में हुई। समिति ने पुष्टि कार्य की योजना बनाते हुए यह निश्चय किया कि गाँव-गाँव में ग्राम स्वराज्य का संदेश पहुँचाने के लिए "गाँव की बात" पाक्षिक पत्रिका दरभंगा जिले के हर गाँव में पहुँचायी जाय। समिति जिले के कुल ४८ प्रखण्डों के लिए पाँच-पाँच कार्यकर्ताओं की पुष्टि टोलियाँ संगठित करेगी। ये टोलियाँ ३१ मार्च तक हर गाँव में ग्रामसभा संगठित करने, दानपत्र पूरे करके पुष्टि-अधिकारी के पास पहुँचाने तथा "गाँव की बात" सहित ग्राम-स्वराज्य का विचार प्रस्तुत करनेवाली कुछ पुस्तकों (१० रुपये की कीमत के अन्दर) का सेट हर गाँव तक पहुँचाने का काम करेंगी। पुस्तकों के सेट का चुनाव भी समिति ही करेगी।

'गाँव की बात'। वार्षिक चन्दा : चार रुपये] श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए [इस अंक की छपी प्रतियाँ ४,७००
संसार प्रेस, काशीपुरा, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित।

मैंने धीरे से पूछा। एक बूढ़े किसान ने बड़ी शान्ति से उत्तर दिया : "इसका मतलब तो साफ जाहिर है। सिर्फ कृत्रिम खाद के इस्तेमाल करने से दो-तीन फसलें तो बहुत अच्छी हो जाती हैं। लेकिन बाद में जमीन की उत्पादन शक्ति तेजी से घटने लगती है।"

जापानियों की गाय भक्ति

मुझे यह जानकर भी बड़ा ताज्जुब हुआ कि अब जापानी किसान भी गाय का भक्त बनता जा रहा है। जब मैं पन्द्रह वर्ष पहिले जापान गया था तब वहाँ गायें नहीं के बराबर थीं और दूध पीने का रिवाज भी बहुत कम था। किंतु इस बार गाँवों में काफी गायें देखकर मैंने किसानों से इसकी वजह पूछी। उत्तर मिला : "कृत्रिम खाद में कम्पोस्ट मिलाने के लिए गाय से गोबर मिल जाता है और बच्चों के पीने के लिए अच्छा दूध भी।" एक और किसान बोला "साहब, पहिले हम छोटे ट्रैक्टरों का अधिक उपयोग करते थे। लेकिन मशीन न तो दूध देती है और न खाद। इसलिए हमें गायों से बहुत फायदा है।" तीसरा किसान कहने लगा "हम तो गायों से खेत जोतने का काम भी ले लेते हैं। गाय को हल में जोतने से उसका स्वास्थ्य अच्छा रहता है और उसकी सन्तान भी अधिक मजबूत होती है।"

हमारे देश में "गोभक्त" तो बहुत हैं, लेकिन वे गाय माता की रचनात्मक सेवा करना नहीं जानते। जापानी किसान जिस तरह अपनी गायों की देखभाल व सेवा करता है, वह सचमुच अनुकरणीय है।

भारत में गाय का स्थान धार्मिक दृष्टि से भी इतना ऊँचा इसलिए माना गया है कि वह हमारी कृषि की उन्नति के लिए बहुत आवश्यक है। वह हमें बैल देती है हल जोतने के लिए, गोबर देती है खाद के लिए और स्वास्थ्यकर दूध देती है बच्चों के लिए। अत गोसंवर्धन की ओर हमारा अधिक ध्यान जाना नितांत आवश्यक है। गोहत्या विरोधी आन्दोलन के पीछे मूल भावना यही है और हमारे संविधान के अनुसार गोवंश की रक्षा करना हमारा पवित्र कर्तव्य हो जाता है।

एक और मुसीबत

लेकिन एक और पहलू की तरफ भी हमारा ध्यान जाना जरूरी है। जब मैं गोरखपुर जिले में हजारों की संख्या में खुदे कुएँ देखने गया तो बड़ी प्रसन्नता हुई। सड़क के दोनों ओर हरे भरे खेत थे। अन्न के अलावा केले व पपीते के बगीचे भी लहलहा रहे थे। मैंने कुछ किसानों से पूछा, "क्यों भाई, आप अब तो खुश हैं न? कोई दिक्कत तो नहीं है?" "बाबूजी, कुओं से तो बड़ा फायदा हुआ है।" एक बूढ़े किसान ने कहा। और फिर वह आँखों में आँसू भरकर बोला 'लेकिन हम दिन भर खेतों में परिश्रम करते हैं और रात में जंगली गायों के झुंड के झुंड आकर हमारी खेती बर्बाद कर जाते हैं। इसलिए हम बहुत परेशान हैं। हमारी मदद कीजिए।"

यह सुनकर मुझे बड़ा दुःख हुआ। लेकिन इसका क्या इलाज? किसान कहने लगे—हम कंटीला तार दिलवा दीजिए, ताकि हम अपने खेतों की हदबन्दी कर लें। लेकिन सारे देश में कितने किसानों को यह तार दिलवाया जा सकता है? और फिर जंगली गायें तो इन तारों के खम्भों को भी तोड़कर खेतों में घुस जायेंगी।

इसका असली व स्थायी इलाज तो बहुत गहराई से सोचना होगा। खेती के साथ साथ हमें पंचायती चरागाहों की व्यवस्था करनी होगी। गांधीजी ने 'गोसदन' की स्कीम का सुझाव दिया था, जहाँ दुर्बल व निकम्मी गायें रखी जायँ और मरने पर उनकी हड्डी, चमड़े, सींग आदि के उपयोग के लिए ग्रामोद्योगों की व्यवस्था की जाय। कुछ गोसदनों को सरकार की ओर से सफलता पूर्वक चलाया भी जा रहा है। लेकिन इस योजना की ओर अधिक ध्यान देने की जरूरत है। ग्राम पंचायतों को भी ऐसा प्रयत्न करना होगा कि सामूहिक ढंग से जंगली व आवारा पशुओं से खेती की रक्षा हो सके। हमें गांधीजी की रचनात्मक 'गोसेवा' को व्यापक तौर से अपनाना होगा। नहीं तो गोरक्षा भी न हो सकेगी और हमारी खेती भी बर्बाद होती रहेगी। अन्न का उत्पादन बढ़ाने के बजाय हमारी गोमाता किसान के लिए एक अभिशाप बन जायगी।

हमारा अजीब शिष्टाचार

हमारे ऋषियों ने 'अन्न को ब्रह्म' कहा है। उसका अपमान या निन्दा करना महापाप बताया है। किन्तु बड़े रंज की बात तो यह है कि हम आज भी अन्न की बरबादी करते ही रहते हैं। थाली में कुछ जूठन छोड़ने की हमारी आदत पड़ गयी है। विदेशों में प्लेट में झूठा छोड़ना अशिष्ट माना जाता है। लेकिन हमारे देश में जूठन छोड़ना मानो एक शिष्टाचार ही बन गया है। जब देश के कई हिस्सों में भयंकर अकाल पड़ रहा है और करोड़ों गरीब लोग भूख से त्रस्त हैं, उस समय भी हमारे शादी विवाहों की दावतों में जूठा अन्न या तो फेंका जा रहा है या मेहतरों को दिया जाता है। और सबसे बड़े दुःख का विषय तो यह है कि हमारी रचनात्मक संस्थाओं के सम्मेलनों में भी इस ओर आवश्यक ध्यान नहीं दिया जाता। मैंने कई समारोहों में थालियों व पत्तलों में जूठा अन्न फेंकते देखा है। शायद इसी राष्ट्रीय पाप का अभिशाप हम आज भोग रहे हैं। जो समाज या देश अन्न का अपमान करेगा, वह कभी सुखी व समृद्ध न हो सकेगा, यह हमारे ऋषियों की भविष्यवाणी है।

अन्त में एक बात और। अन्न का ब्रह्म के रूप में तभी दर्शन किया जा सकता है, जब हम ईशावास्योपनिषद् का "तेन त्यक्तेन भुंजीथा" आदर्श का पालन अपने दिन प्रति दिन के जीवन में करते रहें। अगर हम त्याग भावना के बजाय केवल भोग के लिए पवित्र अन्न का उपयोग करेंगे तो जीवन में आनन्द के बजाय यातना ही भोगनी पड़ेगी और अन्न ब्रह्म के स्थान पर असुर का रूप धारण कर लेगा। भगवान् ने गीता में स्वयं स्पष्ट शब्दों में घोषित कर दिया है कि जो अपने ही लिए अन्न पकाते हैं वे पाप खाते हैं :

'भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्'

और जहाँ तक मैं समझता हूँ, विनोबाजी के भूदान व ग्रामदान आन्दोलन का मूलमंत्र भी यही है : 'मिलकर भूमाता की सेवा करो और अन्न बाँटकर खाओ।'"

—श्रीमन्नारायण

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, २७ अक्तूबर, '६७

लोकतंत्र का अवमूल्यन

समाजवाद के दो प्रकार हैं। एक, डाकुओं का समाजवाद, जिसमें लूट के माल का उनकी सुनहरी टोली (गोल्डन गैंग) के आतंरिक उद्देश्यों के अनुसार बँटवारा होता है। दूसरा समाजवाद, सर्वसाधारण जनता के लिए होता है, जिसमें परिश्रम (लूट से नहीं) से उत्पादन बढ़ाया जाता है, और श्रम का फल श्रमिकों द्वारा उनके ही बनाये नियमों के अंतर्गत वितरित किया जाता है। लोकप्रधान समाजवाद के नियमों का आधार होता है—"शक्ति-अनुसार कार्य करना और आवश्यकतानुसार लेना।"

बिना कलई के बर्तन में स्वास्थ्यवर्धक दही बाहर फेंकने योग्य विष हो जाता है, उसी प्रकार लोकतंत्र, समाजवाद, पंचायत राज, सहकारिता व राष्ट्रीयकरण आदि आज बिना कलई के (अर्थात् कुसंस्कारोंवाले) कुपात्रों मे पड़ जाने से विष बनते जा रहे हैं। बिजली, पानी, बस सर्विस, रेल, डाक-तार, टेलीफोन, हवाई सेवा, दुग्ध योजना, जीवन बीमा आदि राज्य द्वारा संचालित एक भी धंधा ऐसा नहीं है, जिससे जनता को पुराने गुलामी के दिनों की अपेक्षा कम कीमत पर अधिक सुविधा व सही स्तर की सेवा मिलती है। राजकीय धंधों व संस्थानों में घाटा है, लूटमार है, बेईमानी है, मजदूरों पर अत्याचार है, उनकी हड़तालें तथा घेराव हैं। राजनैतिक नेता व उनके दल ऐसी हालत में भी अन्य व्यवसायों के भी राष्ट्रीयकरण की बातें न मालूम किस ध्येय से करते रहते हैं, और पता नहीं कि इस सबकी पृष्ठभूमि में उनकी वास्तविक इच्छा क्या है?

देश की कितनी बर्बादी हुई और हो रही है? घाटे में चलनेवाले सरकारी व्यवसायों तथा संस्थानों में करोड़ों की पूँजी लगी है, व लगती जा रही है। अनेक देशों से भारत ने असीम ऋण और दान माँग माँगकर प्राप्त किये हैं। उन सब देशों में से अकेले अमेरिका के ये आँकड़े हैं:

"भारत को आर्थिक सहायता का अमरीकी कार्यक्रम जून १९५५ में प्रारम्भ हुआ था, तब से ७ अगस्त १९६७ तक भारत को इस प्रकार रकमें प्राप्त हुई हैं:

कुल प्राप्ति ७,८७,१८,००,००० डालर (५९,०३,८५,००,००० रुपये) विवरण इस प्रकार है:

दान (अदायगी से मुक्त) ७६,८९,००,००० डालर (५,७६,६९,००,००० रुपये)

ऋण (लौटाना होगा) ७,१०,२९,००,००० डालर (५३,२७,१६,००,००० रु०)

इसका विवरण इस प्रकार है:

डालर		रुपये		अदायगी निम्नानुसार
१५,४२,००,०००	=	१,१५,६५,००,०००	:	रुपयों या डालरों में
४,४२,७४,००,०००	=	३३,२०,५६,००,०००	:	रुपयों में
२,४२,१३,००,०००	=	१८,१०,९५,००,०००	:	डालरों में
कुल : ७,००,२९,००,०००	=	५३,२७,१६,००,०००		

अमेरिका से प्राप्त इन उनसठ अरब तीन करोड़ पचासी लाख की रकम में अन्य सभी दाता देशों से प्राप्त राशियों को जोड़ने पर पता चलता है कि भारत पर इतना भयकर ऋण चढ़ गया है कि सैकड़ों वर्षों तक ऋण-मुक्त होना संभव नहीं।

बीस वर्षों तक हमारे भाग्य-निर्माण का अधिकार हमारे पास होते हुए भी हमारा देश दिवालिया बनता जा रहा है और दिवालिये की जो गति होती है, वही दुर्गति हमारे राष्ट्र की हो रही है। क्या इसीको योजनाबद्ध विकास या प्रगति कहते हैं? पहले हम विदेशी बंदूक के गुलाम थे और अब हम उनकी संदूक के गुलाम हो गये हैं!

मानवीय मूल्यों का रूप समझाने हेतु यह उदाहरण अनुकूल पड़ेगा। एकनाथजी महाराज थे। उनकी वेषभूषा देखकर एक विदेशी सेनापति ने दुभाषिये की सहायता से उनसे इस प्रकार बातचीत की:

सेनापति : आप कौन हैं?

नाथजी : नाथ।

सेनापति : नाथ अर्थात् मालिक, तो आपकी प्रजा कहाँ है?

नाथजी : हमारा पराया कौन है?

सेनापति : मालिक की सेना कहाँ है?

नाथजी : हमको भय कहाँ है?

सेनापति : नाथ का खजाना कहाँ है?

नाथजी : हमको खर्च कहाँ है?

तीन प्रश्नों के तीन उत्तरों ने सेनापति को नाथजी का भक्त बना दिया। वे ये मानवीय मूल्यों के उत्तर। आवश्यकता से अधिक संग्रह मानवता के विरुद्ध है और यही सर्वत्र और सब संकटों की जड़ है। संकीर्ण राष्ट्रीयता से मुक्त होकर संपन्न देश भी यदि अपनी आवश्यकताएँ (अर्थात् अपने ऐशोआराम) कम करके दूसरे देशों की निःस्वार्थ सहायता नहीं करेंगे और एक देश धनवान और दूसरा देश गरीब बना रहा, तो युद्ध अवश्य होंगे। विश्वशांति नहीं हो सकेगी। मनुष्य का स्वभाव क्रोधी नहीं, क्योंकि क्रोध में सुख नहीं होता है, क्रोध उतरने पर ही सुख होता है। जीवन संघर्ष नहीं है। मनुष्य का प्राकृतिक स्वभाव प्रेम है, अर्थात् मानवता है। स्वभाव वह है, जिसे हम रखना चाहते हैं। क्रान्ति की प्रक्रिया भी स्वभाव के अनुकूल हो। सिद्धिपूजक राजनीतिक हो सकता है, पर क्रान्तिकारी नहीं हो सकता। कल जो नहीं हुआ वह आज हो, यह इतिहास है। हमेशा से होता आया है वही होता रहे, यह टाइमटेबुल है।

करोड़ों की योजनाएँ बनीं, परन्तु मानव-निर्माण की कोई योजना हमारी व्यवस्था ने नहीं बनायी। करोड़ों की संख्या में शून्य बहुत होते हैं, परन्तु उन शून्यों का मूल्य तभी है, जब कि शून्यों के प्रारम्भ में एक का अंक हो। बिना एक के अंक के सभी शून्य निरर्थक हैं।

देश में शराबबंदी व नशाबंदी कैसे हो, गाँवों, गरीबों व महिलाओं को गुलामी से कैसे मुक्त किया जाय, रोटी, कपड़े, आवास, शिक्षा, उपचार, न्याय व सुरक्षा अर्थात् सात प्रारंभिक आवश्यकताओं की उपलब्धि मानव मात्र को कैसे हो, उनके अस्तित्व का भरोसा उन्हें कैसे दिया जाय? भाषावाद, प्रान्तवाद, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, दलवाद, सत्तावाद आदि के कारण होनेवाली सिरफुटौवल से कैसे छुटकारा मिले? गांधीजी इन्हीं समस्याओं का हल चाहते थे, ताकि स्वराज्य सुराज्य में परिणत हो जाय।

स्वर्ग में बैठा गांधी देश की हालत देख कर क्या सोचता होगा? यही न कि उसके बेटे कपूत साबित हुए, जो जो राष्ट्रपिता चाहता था, उस सबके विपरीत कार्य व आचरण उसके नाम का शोषण करनेवाले कर रहे हैं और कोई इस सबको रोक नहीं पा रहे हैं। जिन्दा रहना है तो जिन्दा रहने की कला सीखनी ही होगी। खड्डों या ईंटों के भवन निर्माण करते समय एक एक खड्डे या ईंट को गढ़ना पड़ता है तभी अच्छा, सुदृढ़ व टिकाऊ निर्माण हो सकता है। इसी प्रकार गांधी के स्वप्न को साकार करने हेतु स्वराज्य को सुराज्य बनाने के लिए आज मानव निर्माण के आन्दोलन की पूरी आवश्यकता है।

विज्ञान और आत्मज्ञान का सम्बन्ध अब अनिवार्य है। जमाना इस बात को समझा देगा कि मानवता या सर्वनाश में से कौनसा मार्ग चुनना है।

सबको सन्मति दे भगवान्।

—फूलचन्द बाफणा, विधायक
२२, विधायक पुरी, जयपुर

विनोबा और अद्वैतवादी दर्शन

विनोबाजी पर औपनिषद वेदान्त दर्शन का व्यापक प्रभाव है। विनोबाजी पर गीता एवं उपनिषदों का प्रभाव उनके निम्नोद्धृत कथन से ही स्पष्ट है

"मेरे जीवन में गीता ने माँ का स्थान लिया है। वह स्थान तो उसीका है, लेकिन मैं जानता हूँ कि उपनिषद् मेरी माँ की माँ है।"[1]

उपर्युक्त कथन के अनुरूप विनोबाजी पर वेदान्त विद्या के आधार, ग्रन्थ गीता एवं उपनिषदों का प्रभाव स्पष्ट है।

उपनिषदों के ब्रह्म एवं मुक्ति आदि सिद्धान्तों का प्रतिपादन विनोबाजी ने अपने स्वतंत्र एवं नवीन दृष्टिकोण के आधार पर किया है।

कहना न होगा कि विनोबाजी ने अद्वैत दर्शन को पूर्ण रूप से व्यावहारिक दर्शन का रूप प्रदान किया है। शांकर अद्वैतवादी की तरह विनोबाजी भी ब्रह्म को सर्वोच्च तत्त्व मानते हैं। विनोबाजी ने 'ब्रह्म' शब्द का अर्थ—विशाल एवं व्यापक किया है।[2]

विनोबाजी का कथन है कि संकुचित जीवन को छोड़कर ब्रह्मरूप होना ही मनुष्य का ध्येय है। इस प्रकार विनोबाजी के अनुसार व्यापकतम स्थिति प्राप्त होने का नाम ही ब्रह्म निर्वाण है। गीता दर्शन के आधार पर विनोबाजी का मत है कि वस्तुतः जीव ब्रह्मरूप है, परन्तु देह के पर्दे के कारण वह अपने ब्रह्म स्वरूप का अनुभव नहीं करता। विनोबाजी के मतानुसार देह साधन तो है, परन्तु साध्य नहीं।[3] विनोबाजी जीवन मुक्ति के पक्षपाती हैं।

उन्होंने जीवन मुक्ति के विचार को स्पष्ट करते हुए कहा है : "मेरा तो खयाल है कि मनुष्य इसी जीवन में ब्रह्मज्ञान या आत्म साक्षात्कार कर सकता है।" परन्तु दूसरे एक स्थल पर विनोबाजी ने यह भी कहा है कि इस जीवन में जीवन मुक्ति की अवस्था प्राप्त करना शक्य तो है, किन्तु शरीर रहते हुए उसकी पूर्णता होना कठिन है। विनोबाजी का विचार है कि ब्राह्मी स्थिति प्राप्त होते ही शरीर छूट जाना चाहिए।[4]

ब्रह्मलोक से विनोबाजी का आशय साम्यावस्था से है। समत्व की स्थिति प्राप्त करना ही ब्रह्मलोक की प्राप्ति है। इस साम्य दर्शन को विनोबाजी ने अपने साम्यसूत्र के अन्तर्गत विशद रूप से स्पष्ट किया है।[5] साम्ययोग सिद्धान्त के अन्तर्गत विनोबाजी का विचार है कि सभी मनुष्यों में एक ही आत्मा स्थित है। अतः मनुष्य मनुष्य में भेद नहीं है। यही तक नहीं, विनोबाजी का कथन है कि मनुष्य और दूसरे पशुओं में भी आत्मिक दृष्टि से भेद नहीं। विनोबाजी का उक्त विचार ही उनका अद्वैतवादी विचार कहा जा सकता है। साम्ययोग के अन्तर्गत विनोबाजी ने आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक, सभी क्षेत्रों में साम्य सिद्धान्त की प्रतिष्ठा की है। इसी साम्ययोग के आधार पर विनोबाजी ने समस्त संसार को अद्वैत रूप बनाने का संकल्प किया है।[6]

विनोबाजी का सर्वोदय-दर्शन भी उनकी अद्वैत निष्ठा का ही परिणाम है। सर्वोदय दर्शन का मूलाधार 'सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु' का भाव है। ●

—डा० राममूर्ति शर्मा

१-विनोबा-"उपनिषदों का अध्ययन", प्रस्तावना। प्रकाशक सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली

२-विनोबा-"स्थितप्रज्ञ दर्शन", पृष्ठ १६५, सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली

३-विनोबा-"गीता प्रवचन" पृष्ठ—१०३ (अनु० हरिभाऊ उपाध्याय), सर्व सेवा संघ प्रकाशन वाराणसी

४-व्योहार राजेन्द्र सिंह—"विनोबा संवाद", पृष्ठ-१५, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी

५-व्योहार राजेन्द्र सिंह—"विनोबा संवाद," पृष्ठ-३२

६-विनोबा—"साम्यसूत्र"

७-विनोबा—"हमारा मिशन—" ('भूदान यज्ञ,' साप्ताहिक, ११ मार्च '६५)

भूदान-यज्ञ रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए. ३४

सामयिक चर्चा
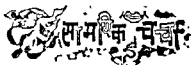
शिवसेना

शिवसेना की स्थापना 'मार्मिक' साप्ताहिक के सम्पादक श्री बाल ठाकरे ने शिवाजी के नाम पर पिछले वर्ष की थी। पहले यह केवल बाल-संगठन के रूप में था, लेकिन बाद में यह उग्र और शक्तिशाली संगठन हो गया। इसकी गतिविधियों का आभास लोगों को उस समय मिला, जब उत्तर बम्बई में फरवरी '६७ के चुनाव में श्री मेनन के खिलाफ इसे प्रयोग में लाया गया। श्री बाल ठाकरे के अनुसार शिवसेना की स्थापना महाराष्ट्रीयों को अपने ही प्रदेश में सम्मानजनक स्थान दिलाने के लिए हुई है। शिवसेना के संगठकों की मुख्य शिकायत है कि दक्षिण भारतीयों को बम्बई में आते ही नौकरियाँ मिल जाती हैं और महाराष्ट्रीय पिछड़ जाते हैं।

इस संस्था ने महाराष्ट्रीयों को अपनी तरफ खूब आकर्षित किया है। इस समय इसमें १ लाख से अधिक सदस्य हैं। इसकी सदस्यता के लिए प्रतिज्ञा-पत्र में जो शर्तें भरवायी जाती हैं, उनके अनुसार शिवसेना का सदस्य महाराष्ट्रीयों द्वारा ही बनाया गया सामान खरीदेगा, गैरमहाराष्ट्रीयों को कोई मकान या प्लाट नहीं बेचेगा, अपने संस्थान में महाराष्ट्रीयों को ही नौकरी देगा तथा अमहाराष्ट्रीयों के साथ असहयोग करेगा।

अब यह संगठन राजनीति में भी प्रवेश कर गया है। गत अगस्त में बम्बई के ठाणा नगरपालिका में शिवसेना ने चुनाव लड़कर ४० में से २२ सीटें प्राप्त कर ली हैं। अब शिवसेना ने बम्बई नगरनिगम के चुनाव भी लड़ने का निश्चय किया है।

महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री वी. पी. नायक ने कहा है कि शिवसेना की कुछ शिकायतें जायज हैं, किन्तु उन्हें दूर करने का इसका तरीका तनाव पैदा करनेवाला है। केन्द्रीय गृहमंत्री श्री य. ब. चह्वाण ने भी शिवसेना की गतिविधियों की निन्दा की है और जनता को आश्वासन दिया है कि केन्द्र सरकार ऐसी विध्वंसक प्रवृत्तियों का दृढ़तापूर्वक सामना करेगी। संयुक्त समाजवादी दल के नेता और संसदसदस्य श्री मधु लिमये ने कहा है कि शिवसेना की गतिविधियाँ क्षेत्रीय भावनाओं पर आधारित हैं। उन्होंने इसके संगठकों को चेतावनी दी है कि इन कार्रवाइयों का असर उन महाराष्ट्रीयों पर भी पड़ सकता है, जो पिछले २० वर्षों से अन्य प्रान्तों में रह रहे हैं। वामपंथी साम्यवादी पार्टी की केन्द्रीय समिति ने अपने प्रस्ताव में शिवसेना की गतिविधियों की निन्दा की है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नेताओं ने भी इसकी कार्यविधियों की निन्दा की है।

मैसूर के मुख्यमंत्री श्री निजलिंगप्पा ने कहा है कि बम्बई में शिवसेना से त्रस्त नागरिकों को एकजुट होकर इस गुण्डागर्दी का सामना करना चाहिए। मद्रास के मुख्यमंत्री श्री अन्नादुरै ने शिवसेना की कार्रवाइयों को दुष्टता और क्रूरतापूर्ण बताया है। द्रमुक-नेता और संसदसदस्य श्री वी. कृष्णामूर्ति और वामपंथी साम्यवादी संसदसदस्य श्री आर० उमानाथ ने बम्बई जाकर शिवसेना की गतिविधियों का अध्ययन किया और मद्रास वापस लौटने पर उन्होंने शिवसेना की कार्रवाइयों के लिए पुलिस को दोषी ठहराया।

शिवसेना की प्रतिक्रियास्वरूप तमिलनाड में कषगम के नेता नायकर ने एक 'तमिलसेना' की घोषणा की है। यह सेना भी तमिल लोगों के हितों की रक्षा के लिए गैरतमिलों को तमिलनाड छोड़ने के लिए बाध्य करेगी।

—'नम्र'

आन्दोलन के समाचार

ग्रामदान : गाजीपुर जिले के सैदपुर ब्लाक में ११-१२ अक्तूबर को एक शिविर हुआ था। शिविरार्थियों ने ७ टोलियों में विभक्त होकर इन ७ न्याय पंचायतों में ग्राम-स्वराज्य ग्रामदान का सन्देश पहुँचाया—रामपुर, खानपुर, आरखा, मोधा, लायकडीह, बिलहरी और सिधौना।

१८ अक्तूबर तक के इस अभियान में सात न्याय-पंचायतों में ५९ ग्रामदान प्राप्त हुए। अभी ८ न्यायपंचायतों में ग्रामदान-अभियान चलाना बाकी है। आशा है, आगामी नवम्बर-दिसम्बर में यह अभियान व्यापक रूप से आरम्भ किया जायगा।

—कपिलभाई

आजमगढ़ जिले के मधुबन क्षेत्र में १०१ और दूसरे क्षेत्र में ४, इस तरह २ अक्तूबर तक कुल १०५ ग्रामदान हुए।

प्रखण्डदान : गया जिले के कोआकोल प्रखंड में संस्थापित सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा के कार्यकर्ताओं के प्रयास से कोआकोल प्रखंडदान की घोषणा १६ अक्तूबर को हुई। अब तक गया जिले में कुल ११५० ग्रामदान और १ प्रखंडदान हुआ है। शेष प्रखंडों को भी प्रखण्डदान कराने का प्रयास जारी है।

शान्ति-स्थापन : पिछले दिनों रतलाम में साम्प्रदायिक उपद्रव के कारण शासन ने कर्फ्यू लागू कर दिया था। नगर के शान्ति-सैनिकों ने हिम्मत व धीरज के साथ पीड़ितों को भय से मुक्ति दिलाने, घायलों को सैनिकों के सहयोग से अस्पताल पहुँचाने और उत्तेजना को आगे न बढ़ने देने का प्रयास करने का साहसिक कार्य किया। घटना के बाद सुश्री निर्मला देशपाण्डे, संचालिका शान्ति सेना विद्यालय कस्तूरबाग्राम, ने भयभीत परिवारों से सम्पर्क स्थापित किया। उनके साथ नगर की महिला शान्ति सैनिक विशेष रूप से सक्रिय हैं।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व सेवा संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ : ४८,०० इस अंक की छपी प्रतियाँ : २,८००

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

३ नवंबर '६७ अंक : ५

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति २० पैसे

विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—

१८ रु० या १८ शि० या ३॥ डालर

(हवाई डाक-शुल्क देशों के अनुसार)

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४२८५

सार्वराष्ट्रीय आन्दोलन

मैं अपने इस काम को राष्ट्रीय आन्दोलन मानता ही नहीं, जागतिक आन्दोलन मानता हूँ। जागतिक पृष्ठभूमि पर ही विचार करता हूँ कि कौन कौनसे कदम उठाये जायँ। इसके लिए हमें सही तरीके ढूँढ़ने होंगे और यह हम तभी कर सकते हैं, जब हम जागतिक परिस्थिति में आने को रख सकें। इसीलिए हम 'जय जगत्' का उद्घोष करते हैं। यह दर्शन हमें कर्नाटक में भी हुआ, जो संयुक्त विश्व बनाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। हमारा वह विचार वहाँ के लोगों को बहुत पसन्द आया। तभी हमें 'जय जगत्' का नारा सूझा। फिर तो वहाँ के कच्चे बच्चे 'जय जगत्' बोलने लगे। यह कोई छोटी बात नहीं है। आजादी के बाद हम इन ग्यारह वर्षों में जय हिन्द से जय जगत् तक पहुँच गये हैं। कुल दुनिया में आज को एक विचार, एक संकल्प काम कर रहा है, वह सारी दुनिया को एक करके ही रहेगा। अब राष्ट्र राष्ट्र के भेद दूर जायेंगे, नहीं रहेंगे। विज्ञान का बल हमारे विचारों के पीछे पीछे है।

इन दिनों मैं जितना विज्ञान का बल महसूस करता हूँ, उतना इसके पहले कभी नहीं किया था। हमारे पीछे आत्मज्ञान का जितना बल है, उतना ही विज्ञान का भी बल है। विज्ञान संकुचित मनोवृत्ति को नहीं रहने देगा। वह इसके खिलाफ है। वह आवाहन कर रहा है कि मानव ! तुम एक हो जाओ या मिट जाओ। मैं दोनों के लिए तुम्हारी मदद करना चाहता हूँ। अगर तुम मिटना चाहते हो, तो तुम्हें मिटा देने की शक्ति भी मेरे पास है। अगर तुम व्यापक बनना चाहते हो, तो उसके लिए भी मैं मदद दे सकता हूँ। इस दृष्टि से हम देखेंगे, तो हमें कुछ सूझेगा और हम एक बनने तथा व्यापक बनने के लिए भूदान, ग्रामदान के असाधारण विचार को समझेंगे।

आस्ट्रेलिया से एक भाई हमसे मिलने के लिए आये थे। उन्होंने पूछा कि 'आस्ट्रेलिया के लिए भूदान का क्या सन्देश है ?' मैंने कहा कि 'चीन और जापान के लोगों को यह आवाहन करो कि भाइयो, आप लोग हमारे देश में आइये, हम आपका स्वागत करते हैं। यह भूमि आपका स्वागत करती है। यहाँ ज्यादा भूमि पड़ी है, इसलिए आप यहाँ खुशी से आइये। यही भूदान का, विश्व मानवता का सन्देश है।' भूदान विश्व-मानव बनाना चाहता है। अब वे दिन लद गये, जब हम अपने अपने देश के बारे में अभिमान रखते थे और कहते थे कि 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा।' क्यों ? क्योंकि हमारा है। यह हमारा नहीं होता, तो हम इसे 'सारे जहाँ से अच्छा' न कहते। यही हम जगह जगह सुनते हैं। फ्रेंच का हमने एक राष्ट्रीय गीत पढ़ा। फ्रेंच लोग अपने देश का गौरव गाते हैं, तो इस गीत में इंग्लैंड, हिन्दुस्तान आदि दूसरे देशों की न्यूनता बतलाते हैं। वे कहते हैं कि हमारे देश में ऐसी-ऐसी कमियाँ नहीं हैं, जैसी इंग्लैंड में या हिन्दुस्तान में हैं। खैर, इस तरह पहले अपने देश का गौरव तथा दूसरे देशों की कुछ न्यूनताएँ प्रदर्शित करने में लज्जत और शायद इज्जत भी मालूम होती थी, लेकिन आज वह नहीं मालूम होती। यह अपना एक सार्वराष्ट्रीय आन्दोलन है। इसी पृष्ठभूमि पर हमें काम करना है। ●

२७-२-५७

—विनोबा

समाचार डायरी

देश

२२-१०-६७ केन्द्रीय सरकार ने मणिपुर का प्रशासन अपने हाथ में लेने का निर्णय किया।

२५-१०-६७ उत्तर प्रदेश सरकार ने दो रुपये सालाना तक की लगानवाली छोटी जोतों का पूरा लगान माफ कर देने का निश्चय किया।

२६-१०-६७ स्तालिन की पुत्री स्वेतलाना ने कालाकांकर में एक अस्पताल बनाने व उसकी व्यवस्था के लिए १९ लाख रुपये देने की घोषणा की।

२७-१०-६७ कांग्रेस कार्य-कारिणी समिति ने अपनी जबलपुर की बैठक में बैंकों के सामाजिक नियंत्रण का प्रस्ताव पास किया।

२८-१०-६७ बिहार के खाद्य और आपूर्ति मंत्री ने मुंगेर की सभा में कहा कि मिली-जुली सरकार चलाना मेंढ़क तौलने जैसा काम है।

२९-१०-६७ जबलपुर के कांग्रेस अधिवेशन में दो प्रस्ताव पास हुए। एक में कहा गया है कि राष्ट्रीय एकता की शक्ति को सबल बनाया जाय। दूसरे में कृषि-उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया गया है।

विदेश

२३-१०-६७ सुरक्षा परिषद में मिस्र और इसराइल की ओर से शिकायतें पेश की गयीं। राष्ट्रसंघीय प्रेक्षकों ने रिपोर्ट दी कि इसराइल ने आक्रमण आरम्भ किया जिसने बाद में दोनों ओर से जबरदस्त गोलाबारी का रूप ले लिया।

२५-१०-६७ इसराइल ने मिस्र के तेल शोधक कारखाने पर आक्रमण करके कारखाने में आग भड़का दी।

२६-१०-६७ सोवियत नौसेना के दस्ते पोर्ट सईद की ओर बढ़े।

२८-१०-६७ चीन ने आज घोषणा की कि वह इण्डोनेशिया स्थित अपना दूतावास तथा वाणिज्य कार्यालय अस्थाई तौर पर बन्द कर रहा है।

२९-१०-६७ कीनिया और सोमालिया ने अपने ४ वर्ष पुराने सीमा संघर्ष को समाप्त कर लेने का फैसला कर लिया है।

स्त्री-शक्ति के जागरण का एक अभियान

बारह वर्ष की लोकयात्रा

भारत के इतिहास में बौद्धयुग के अस्त के पश्चात् स्त्रियों का सामाजिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्र में स्थान नहीं रहा। कोई एक मीरा या लल्ला निकलती थी, जो समाज के खिलाफ बगावत कर अध्यात्म के क्षेत्र में अपना स्थान पा लेती थी। लेकिन आम स्त्रियों को घर की चहारदीवारी के अन्दर ही बन्द रखा गया। जैन साध्वियों की अटूट परम्परा इस देश में अवश्य चली है, जो आत्मविकास के लक्ष्य को लेकर भ्रमण करती है।

विनोबाजी चाहते हैं कि लोकयात्रा के द्वारा स्त्रियों को ब्रह्मविद्या की प्रेरणा मिले और आत्मविकास के साथ साथ लोकहित का चिन्तन करनेवाली स्त्रियाँ समाज पर असर डालें और समाज-परिवर्तन का काम करें।

इसी लोकहित और समाज परिवर्तन के लक्ष्य को लेकर तीन बहनों की एक टोली ने बारह वर्ष की यात्रा का संकल्प लेकर २५ अक्तूबर '६७ को कस्तूरबाग्राम, इन्दौर से यात्रा का शुभारम्भ किया है। इस लोकयात्रा का उद्घाटन असम की वरिष्ठ समाज सेविका श्री अमलप्रभा दास ने किया। यह लोकयात्रा टोली विनोबाजी की ओर से देश भर में घूमेगी।

लोकयात्रा का उद्देश्य है—लोकहित का नित्य चिन्तन करना, सत्य, प्रेम, करुणा की त्रिमूर्ति को समाज में व्यक्त करना तथा अहिंसा, सत्य आदि एकादश व्रतों का सन्देश समाज में पहुँचाना।

यात्रा का स्वरूप सांस्कृतिक या आध्यात्मिक रहेगा। सर्वधर्म-समन्वय तथा पांथिकता छोड़कर शुद्ध आध्यात्मिकता की दृष्टि रहेगी। सब धर्मों के धर्मग्रन्थों के चुने हुए अंशों का अध्ययन चलेगा। लोक-जीवन में प्रचलित ग्रन्थों का पठन-पाठन होगा। उत्तर भारत में तुलसी रामायण, महाराष्ट्र में ज्ञानेश्वरी, असम में माधवदेव का नामघोषा तथा मद्रास में तिरुकुरल जैसे ग्रन्थों का पाठ लोकयात्रा का एक स्थायी हिस्सा रहेगा।

इस लोकयात्रा का ग्रामदान, ग्रामस्वराज्य के क्रान्तिकार्य में भी योगदान रहेगा। लोकयात्रा की कार्य-रेखा के दो बिन्दु होंगे, गाँव को एक परिवार बनाना और विश्व को एक देश, एक राज्य बनाना।

भारत की सेवा में स्त्री-शक्ति आगे आये, इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए लोकयात्रा के कार्यक्रम में महिला सभाओं का विशेष स्थान रहेगा।

कार्यक्रम : यात्रा प्रातः ६ बजे शुरू होगी। ३-४ मील की दूरी पर पड़ाव होगा। गाँव की आम सभा, कार्यकर्ताओं की गोष्ठी के अलावा महिलाओं की सभा होगी। घर-गृहस्थी का कार्य संभालते हुए समाज का कुछ कार्य करनेवाली बहनों से सम्पर्क कर उन्हें कार्यप्रवृत्त किया जायगा।

यात्रा करनेवाली बहनें :

श्री हेम भराली (असम)—वर्षों से समाज-सेवा का कार्य कर रही हैं। वह गोहाटी विश्वविद्यालय की स्नातिका हैं। वह खादी-कार्य, कस्तूरबा ट्रस्ट कार्य, ग्रामदान कार्य, आदि विभिन्न रचनात्मक कार्यों में निरन्तर लगी रही हैं।

श्री लक्ष्मी बहन (असम)—विनोबाजी द्वारा चीन-भारत सीमा पर स्थापित "मैत्री आश्रम" की सदस्या हैं। वह हिन्दी, संस्कृत और मराठी भाषा की अच्छी जानकार हैं। उन्होंने विनोबाजी की मराठी पुस्तक "ज्ञानदेव चिन्तनिका" का असमिया में अनुवाद किया है।

श्री निर्मला बहन वैद (पंजाब)—दिल्ली विश्वविद्यालय से समाज कार्य में एम॰ ए॰ तथा एल॰एल॰ बी॰ करने के पश्चात् कस्तूरबाग्राम में मुख्य सेविका प्रशिक्षण विद्यालय में प्राध्यापिका का काम किया और अब गत दो साल से ग्रामदान आन्दोलन के कार्य करती रही हैं। ●

भूदान-यज्ञ
... अहिंसक क्रान्ति का संदेशवाहक साप्ताहिक

इस दोस्ती को क्या समझें ?

कितनी उम्मीदें बँधी थीं उस दिन जब इस देश के राजनैतिक जीवन में एक नया सम्बन्ध नजर आया था! सचमुच एक कौतुक था कि कल तक जो साथ बैठ नहीं सकते थे, वे अचानक एक-दूसरे से गले मिलते दिखाई पड़े। ज्यादा नहीं, सिर्फ आठ महीने पहले यह सब हुआ।

पिछले चुनाव के बाद देश की राजनीति कई सीढ़ियाँ नीचे उतरी। नये नेता पहले के नेताओं के मुकाबिले जनता के ज्यादा निकट थे। कई तो ऐसे थे जो धूल और पसीने के घरों से आये थे, जो स्वराज्य के बाद भी जेल गये थे, जिन्होंने जनता की किसी माँग को लेकर नारे लगाये थे, भ्रष्टाचार की नस फाड़कर निन्दा की थी, और अपने भाषणों में 'सुराज्य' का एक नया चित्र खींचा था। ये लोग निम्न मध्यम वर्ग के थे। जनता ने बड़े हौसले से इन्हें सरकार में भेजा था।

हम चाहते थे कि सरकार और बाजार के बीच इतने वर्षों से लगातार जो लड़ाई छिड़ी हुई है उसमें 'दोस्तों की सरकारें' जीतें, क्योंकि उनकी जीत पर करोड़ों का पेट निर्भर था। लेकिन हम आज तक नहीं देख रहे हैं कि नयी सरकारें बाजार के मुकाबिले मजबूत साबित हो रही हों। जीत पाने की आगे कोई उम्मीद भी नहीं है, क्योंकि उनके हाथ में कोई नयी हिकमत नहीं है, शक्ति नहीं है। उल्टे दिखाई यह दे रहा है कि जिस बाजार ने किसान और ग्राहक को पहले से अपने नागपाश में बाँध रखा था, वह अपने मजन मक की फूँक दोनों के मुँह पर भी मार रहा है। समाज ने किसी वक्त समाजवाद के नारे को यही मानकर अपनाया था कि समाजवाद की शक्ति पूँजीवाद के बाजार से नागरिक की रक्षा करेगी। कौन जाने, मौजूदा दौरे में कांग्रेस विरोध का नारा परिणाम की दृष्टि से कांग्रेस की भक्ति का कार्यक्रम साबित हो!

उस दिन बनारस में अपने एक पुराने मुलाकाती मिल गये। उनकी राशन की दुकान है। कुशल मंगल के बाद मैंने पूछा "कितना कमा लेते हो? काम भर को मिल जाता है?" बोले, "ईमानदारी बरतूँ तो ४५-५० से ज्यादा न मिले, लेकिन जरा होशियारी से काम करता हूँ तो महीने में साढ़े तीन चार हजार का रोजगार हो जाता है।" "यह कैसे?"—मैंने फिर पूछा। मित्र ने उत्तर दिया, "पहले एक पार्टी को चन्दा देता था तो बाकी सब गाली देते थे, अब सबका समान ध्यान रखता हूँ सो सब खुश हैं, और मैं भी खुश हूँ।" बिजिनेस जानता है कि पॉलिटिक्स का मर्मस्थल कहाँ है, खासकर वोट और पार्टी की पॉलिटिक्स का। सेठ शासक और नेता के मर्मस्थल पर चोट कर रहा है।

राजनीति का वही पुराना रंग है, वही पुराना राग है। कांग्रेस की दुश्मनी (ऐन्टी कांग्रेसिज्म) से जो दोस्ती पैदा हुई थी वह कच्चा धागा साबित हो रही है। एक दुश्मन के जितने दुश्मन हों, वे सब इसीलिए आपस में भी दोस्त हैं, यह गणित थोथा है। अगर नयी राजनीति में सचमुच कुछ नये गुण आते दिखाई देते तो उम्मीद होती कि कुछ नयी ताकत बन रही है, लेकिन दिखाई तो यह दे रहा है कि जनता की राजनैतिक चेतना तेजी के साथ 'राइट' और 'लेफ्ट' में बँट रही है, और लगता है कि ये दोनों शक्तियाँ देश को—एक-एक गाँव को—अखाड़ा बना डालने के कुचक्र में साझेदार बनी हुई हैं। पुरानी राजनीति जितनी जनता विमुख थी, दोस्ती की नयी राजनीति भी उतनी ही दिशाच्युत सिद्ध हो रही है।

लोकतन्त्र की जान है वोट की पवित्रता। लेकिन क्या वोट को भ्रष्ट करने के क्रम को रोकने की कहीं हल्की भी कोशिश दिखाई देती है? राजनीति अवसरवादी तो पहले ही हो चुकी थी, नये दोस्तों ने तो उसे बिल्कुल बाजारू बना डाला। मिनिस्ट्री विश्वासघात का पुरस्कार बन गयी है। वफादारी, नेकनीयती, ऊँचे मूल्य, लोकनिष्ठा, आदि शब्द शायद कुछ दिनों के बाद राजनीति के कोष में भी नहीं मिलेंगे। पद के शोषण के लिए एक बाजार तो था ही, विश्वास के शोषण के लिए नयी राजनीति ने दूसरा बाजार भी खोल दिया।

हम जिस सरकार परिवर्तन को समाज परिवर्तन का पहला कदम मान बैठे थे, वह कहाँ है? कहाँ है नयी चेतना, कहाँ है नयी चेष्टा? मन्त्रियों के चारों ओर, और दफ्तरों के दरवाजों पर, वही खुशामदी और वही मुँहताज लोग, जो पहले दिखाई देते थे आज भी दिखाई देते हैं। क्या क्रान्ति, और क्या लोकतन्त्र और समाजवाद, इन सबका स्रोत जनता है, लेकिन वह कहाँ है? उन्मादग्रस्त और प्रमादग्रस्त भारतीय जनता को जगा देनेवाली, उठा देनेवाली, चला देनेवाली वाणी कहाँ है? जो लोग कल विरोध में थे वे आज कुर्सियों पर पहुँच गये हैं। जब जनता में ताण्डव करनेवाला कोई 'शिव' नहीं रह गया तो नक्सलबाड़ी में उपद्रव साक्षात् विद्रोह का रूप धारण कर सामने आ गया। ...

ने मिल्ब ...

सम्बन्ध ... नाम में कितनी ही अधिक उत्कट दूर होती है वहाँ क्रान्ति शायद उतनी ही कम होती है। भारत जैसे देश के लिए 'राजनीति' कुछ दूसरी ही किस्म की चाहिए।

राजनीति का नहीं, देश का ही भविष्य प्रश्न चिह्न बनता जा रहा है। इस प्रश्न का उत्तर सत्ता का प्रतिनिधित्व करनेवाले नहीं दे सकते, चाहे वे किसी मंच या रंग के हों, इसका उत्तर उनसे मिलेगा जो इस संकट के समय लोकप्रियता का मोह छोड़कर सही नेतृत्व कर सकें। राजनैतिक प्रतिद्वन्द्विता से सरकार परिवर्तन हो सकता है, लेकिन समाज परिवर्तन के लिए जरूरी नहीं है कि सत्ता प्राप्त करने के लिए शुरू से ही विरोध और संघर्ष की कैंची पर लोभली बातें कही जायँ।

उनको भी देखा, इनको भी देखा, अब अपने को देखने की जरूरत है। यह बात की बात नहीं है। समय बहुत कम है। देश के किसी कोने में जनता की सौम्य, किन्तु स्पष्ट और सुसंगठित शक्ति प्रकट होनी चाहिए। वही शक्ति देश को नया रास्ता दिखायेगी। इस सरकारी 'दोस्ती' में बहुत दम नहीं रहा। जिस दोस्ती में दम न हो उसे क्या समझें? ●

हमारा आद्य कर्तव्य

● दादा धर्माधिकारी

गांधीजी ने भाषा को दो शब्द दिये—एक 'सर्वोदय' और दूसरा 'सत्याग्रह'। इनमें से 'सत्याग्रह' तो अब वेबस्टर की अंग्रेजी डिक्शनरी में भी स्थान पा चुका है। इसमें 'सत्याग्रह' शब्द की इज्जत नहीं है। वह उसकी अपूर्वता का द्योतक है। किसी भाषा में इस शब्द के सहचारी भाव व्यक्त नहीं किये जा सकते। इसलिए वह शब्द ज्यों का त्यों रखा गया। 'सत्याग्रह' शब्द किसी शब्द का अनुवाद भी नहीं है। उसका अनुवाद अब तक किसी और भाषा में नहीं हो सका है। 'सर्वोदय' शब्द भी अनुवाद तो नहीं है, लेकिन दूसरे एक शब्द-प्रयोग से गांधीजी ने इसको गढ़ा। अंग्रेजी में रस्किन की 'अन्टू दिस लास्ट' किताब है। उस पुस्तक का गांधीजी ने सारांश लिखा गुजराती में, और उस गुजराती पुस्तक का नाम रखा 'सर्वोदय'।

सर्वोदय

यों 'सर्व' शब्द भी पुराना है, 'उदय' शब्द भी पुराना है। लेकिन 'सर्वोदय' शब्द का—सर्व और उदय, दोनों शब्दों का जब समास हुआ, तब उस शब्द का अर्थ कुछ सांकेतिक होता है। अपना स्वतंत्र अर्थ है उसका। उदाहरण के लिए 'पीतांबर' शब्द ले लीजिये। पीत=पीला, अंबर=कपड़ा। पीला कपड़ा पीतांबर है। लेकिन जब हम पीतांबर कहते हैं, तो हमारा मतलब पीला कपड़ा नहीं होता है। विष्णु भगवान जो वस्त्र पहनते हैं, उसीको हम पीतांबर कहते हैं। इस तरह से जो नये सामासिक शब्द होते हैं, उनमें कुछ संकेत होते हैं। उनका जो शब्दार्थ होता है, उस शब्दार्थ से कुछ अलग संकेत करनेवाला अर्थ शब्दों में गर्भित होता है। उस तरह का अर्थ 'सर्वोदय' शब्द में है।

'सर्व' सर्वनाम है। सर्वनाम से मतलब ही यह है कि जो सबके लिए प्रयुक्त हो सके। संज्ञा में और सर्वनाम में यह अन्तर है। जिसका सबके लिए उपयोग होता है, वह सर्वनाम है। संस्कृत में 'सर्व' शब्द के लिए एक दूसरा शब्द भी है—'विश्व'। 'विश्व' और 'सर्व' का एक ही अर्थ है। 'सर्वोदय' कह लें या 'विश्वोदय' कह लें। अर्थ एक ही है। 'अन्टू दिस लास्ट' में जो भावना थी, उस भावना का थोड़ा-सा विकास किया, उसको और विस्तृत कर दिया, और फिर उसको 'सर्वोदय' संज्ञा से गांधी ने व्यक्त किया। इसमें गांधी का मुख्य ध्यान मनुष्य-समाज की ओर था।

सामाजिकता

यह सामाजिकता मनुष्य को लेकर ही है। और सब प्राणियों के लिए तो हम 'समूह' कहते हैं, 'झुंड' कहते हैं; लेकिन 'समाज' हमने मनुष्यों का ही माना है। यों चींटियों का भी समाज माना गया, मधुमक्खियों का भी समाज माना गया। लेकिन जब हम समाज का विचार करते हैं तो मनुष्यों के समाज का करते हैं, और मनुष्यों के समाज में भी सामाजिकता का आधार है समानता। 'समाज' शब्द तो समानता से निकला भी है। मनुष्य जब एक साथ आते हैं, एक-दूसरे के साथ रहने के लिए एकत्रित होते हैं तो समाज बनता है। लेकिन जिनमें समानता होती है, वे ही एकत्रित होते हैं। 'मृगाः मृगैः सह अनुव्रजन्ति। गावश्च गोभिस्तुरगास्तु रंगैः।'—घोड़े घोड़ों के साथ जाते हैं, गाय बैल गाय-बैलों के साथ जाते हैं और मृग पशु-पशुओं के साथ जाते हैं। यह तो सुभाषित है। आगे उसने यह भी कह दिया है कि 'मूर्खाश्च मूर्खैः'—मूर्ख लोग मूर्खों के साथ जाते हैं। जो समान-शक्ति होते हैं, उनमें सख्य होता है। हमने यह माना है कि इस प्रकार की समानता मनुष्यों में है। और इसलिए मनुष्यों का समाज बनता है। अरस्तू के जमाने से यह माना गया कि मनुष्य सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी से मतलब क्या है? यह अकेला नहीं रह सकता। विविक्त जीवन, जिसे हम 'Isolation' कहते हैं, असम्भव है। यही मनुष्य की सामाजिकता का मुख्य लक्षण है।

मनुष्य अकेला नहीं रह सकता है। इसके साथ-साथ मनुष्य में एक दूसरी वृत्ति भी है कि उसे दूसरे से डर लगता है। माँ बेटे से कहती है, 'पड़ोस में जाकर दियासलाई ले आ।' बेटा कहता है, 'अँधेरा है!' अँधेरे में कोई होगा। दूसरा कोई होगा, इस कल्पना से डरता है। छोटे भाई को साथ ले जाता है तो डर नहीं लगता। वह भी तो दूसरा ही है। फिर उससे क्यों डर नहीं लगता? यह दूसरा अपना है। जो दूसरा अपना लगता है, उससे डर नहीं लगता।

पराये को अपनाने का नाम सामाजिकता है। जितना समाजशास्त्र है, उस सारे समाजशास्त्र का आरम्भ इस आकांक्षा से हुआ है, कि जो दूसरा है वह अपना हो जाय, जो पराया है वह आत्मीय बन जाय, जो दूर का है वह नजदीक का हो जाय। यह सामाजिकता है और इसलिए जब हम कहते हैं कि सर्वोदय एक सामाजिक दर्शन है तो उसका अर्थ यह है कि सारे विश्व को वह अपनाना चाहता है। रोज चन्द्रमा पर जाने की कोशिशें होती हैं, दूसरे ग्रहों पर जाने की कोशिशें होती हैं। इसका मतलब है कि यह सारी सृष्टि ही हमारा पड़ोस है। और जब सारी सृष्टि ही हमारा पड़ोस है, तब सर्वोदय में और विश्वोदय में अन्तर नहीं रह जाता।

अधिष्ठाता कौन ?

गांधी के सामने सवाल यह था कि यह सर्वोदय करेगा कौन? मनुष्य ही करेगा, लेकिन किस नाप का मनुष्य? अब इस पृथ्वी के नाप का मनुष्य काम नहीं देगा। केवल पृथ्वी के नाप का मनुष्य अगर होगा तो वह विश्वोदय नहीं कर सकेगा। अब तो विश्व के नाप का मनुष्य चाहिए। और विश्व के नाप का मनुष्य वह होगा, जिसका मन विश्व के नाप का होगा। विश्व के नाप के मनुष्य के मन से मतलब है जिसका मन किसी एक मत से, किसी एक सम्प्रदाय से मर्यादित नहीं होगा। किसी एक दर्शन, तत्त्वज्ञान, विचार से जिसका मन मर्यादित नहीं है

उसका चित्त निरपवादी होता है। कभी किसी विचार में उलझा हुआ नहीं, किसी तत्त्वज्ञान में कैद नहीं। इस प्रकार के चित्त का नाम है तटस्थ चित्त। ज्ञान के लिए तटस्थ चित्त चाहिए, इसलिए अपने चित्त पर किसी दर्शन की पकड़ हो, किसी विचार में आपका चित्त कैद हो, किसी तत्त्वज्ञान से सीमित हो गया हो, तो कृपया उसको उतार कर रख दीजिये।

सत्यनिष्ठा : वस्तुनिष्ठा

जो विश्व के आकार का मनुष्य होगा उसमें दो गुण होंगे, एक, वैज्ञानिकता और दो, आध्यात्मिकता। वैज्ञानिकता से मतलब है वस्तुनिष्ठा। विज्ञान वस्तुनिष्ठ होता है, विचारनिष्ठ नहीं होता। यह पृथ्वी सूर्य के चारों तरफ घूमती है। यह विचार नहीं, वस्तु है, ज्ञान है। विज्ञान विचारनिष्ठ होगा तो क्या हो जायेगा? मेरी पोती है सात आठ साल की। स्कूल में जाती है। परीक्षा में प्रश्न आया, पृथ्वी का आकार कैसा है? तो उसने लिख दिया, पृथ्वी का आकार नारंगी जैसा गोल है। परीक्षा हो जाने के बाद इसने अपनी सहेली से पूछा कि तूने क्या लिखा? उसने लिखा था कि पृथ्वी का आकार आम के जैसा है। सिखाया तो था कि पृथ्वी का आकार नारंगी जैसा है, फिर तूने आम जैसा कैसे लिखा? तो कहा, नारंगी मुझे भाती नहीं है। आपने देखा? विचार वस्तुनिष्ठा को और सत्यनिष्ठा को दूषित कर देता है। विचार और दर्शन (Phylosophy) मनुष्य की वस्तुनिष्ठा को और सत्यनिष्ठा को दूषित कर देता है। इसलिए गांधी ने हमेशा यह कहा कि मैं सत्य की खोज कर रहा हूं, किसी तत्त्वज्ञान की नहीं। मुझे किसी विचार की स्थापना नहीं करनी है, किसी दर्शन की या नये तत्त्वज्ञान की स्थापना नहीं करनी है। फिलॉसोफी की एक बहुत प्रसिद्ध व्याख्या है। एक अंधा आदमी काली रात में अंधेरे कमरे में काली बिल्ली की खोज में निकला, और ऐसी बिल्ली की खोज में जो है ही नहीं। फिलॉसोफी की ऐसी व्याख्या इसलिए की कि विचार में जब मनुष्य उलझ जाता है तब वस्तुविमुख हो जाता है, सत्यविमुख हो जाता है। तो, गांधी के बारे में सबसे पहली बात यह कहनी है कि गांधी का अपना कोई विचार नहीं था। जो सत्यनिष्ठ होगा वह विचारनिष्ठ नहीं होगा। विचार अपनी नाप की दुनिया बनाना चाहता है। दर्शन और तत्त्वज्ञान अपनी नाप की पृथ्वी बनाना चाहते हैं। लेकिन जो सत्यनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ होगा वह सत्य को और वस्तु को अपने आकार का बनाना नहीं चाहेगा। इसलिए यह आपने सुना होगा कि गांधी ने पहले कहा कि ईश्वर ही सत्य है। लेकिन उसने देखा कि ईश्वर तो एक है ही नहीं। मसजिद में एक बैठा है, मन्दिर में अलग बैठा हुआ है, और इनमें टकराव भी हो जाता है। दो मन्दिरों में बैठे हुए ईश्वर—एक नदी पर पर बैठा हुआ, दूसरा गरुड़ पर बैठा हुआ—उनमें भी युद्ध हो जाता है। अगर इतने ईश्वर हैं तो सारे के सारे तो सत्य हो नहीं सकते। और, सारे-के सारे अगर सत्य हों तो इनमें टकराव नहीं होना चाहिए। फिर वह इस नतीजे पर पहुंचे कि सत्य ही ईश्वर है। तो आत्मज्ञान या अध्यात्म सत्यनिष्ठ होगा और विज्ञान वस्तुनिष्ठ होगा। सत्यनिष्ठा में और वस्तुनिष्ठा में जितना सामंजस्य होगा, उतना समाज उन्नति करेगा।

अब प्रश्न उठता है कि विज्ञान युग का अधिष्ठाता कौन होगा? एक औसत मनुष्य होता है। यह औसत क्या है? परीक्षा का 'रिजल्ट' निकला। ८०.६ प्रतिशत विद्यार्थी पास हो गये। ८० तो हम समझ सकते हैं, लेकिन ०.६ समझ में नहीं आता। ०.६ कोई विद्यार्थी नहीं हो सकता। यह तो कल्पना है। तो औसत कोई वास्तविकता नहीं है, सचाई नहीं है। दूसरे होते हैं आदर्श (Archetypes)। आदर्श का नमूना हम अपने सामने रखते हैं। यह आदर्श भी प्रत्यक्ष नहीं है, कल्पना है। और जीवन कल्पनानिष्ठ नहीं हो सकता। जीवन सत्यनिष्ठ होगा। तो बाकी रहता है साधारण। अब साधारण क्या है? साधारण यानी निरुपाधिक, शुद्ध, स्वस्थ मानव। ऐसा मनुष्य जिसके पीछे किसी प्रकार का विशेषण नहीं है, खालिस इनसान। यही साधारण मनुष्य सर्वोदय का अधिष्ठाता है। इस देश में सदियों बाद ऐसा आदमी पैदा हुआ, जिसका नाम था मोहनदास करमचन्द गांधी। उसने कहा, जीवन ही सत्य है। अंतिम मूल्य जीवन ही है। इस सत्य में से जीवननिष्ठा और जीवनिष्ठा, ये दो चीजें आयीं।

निरुपाधिक सम्बन्ध

यह जीवन क्या है? मनुष्य का मनुष्य के साथ का जो सम्बन्ध है उसका नाम 'जीवन' है। जीवन विविक्त नहीं हो सकता। हमारा जन्म ही अकेलेपन में नहीं होता। जीवन अकेलेपन में सिद्ध नहीं होता। हमेशा संबंधों में ही जीवन सिद्ध होता है। इसलिए संबंधों में ही सामाजिकता है। सामाजिकता का उपादान क्या है? संबंध, मनुष्यों के बीच के संबंध। अब कौनसा संबंध सामाजिक है और कौनसा असामाजिक? मनुष्यों को जोड़नेवाला, नजदीक लानेवाला जो संबंध है वह सामाजिक संबंध है। मनुष्यों के संबंधों में विघ्नरूप होनेवाला, मनुष्यों को तोड़नेवाला संबंध असामाजिक है। मनुष्यों के संबंधों को पक्का करनेवाला जो तत्त्व है, उसीका नाम भगवान है, उसीका नाम प्रेम है। प्रेम कोई विशिष्ट भावना नहीं है, विकार नहीं है। प्रेम मनुष्य का स्थायी भाव है। मनुष्यों के बीच के संबंध समाज के लिए पोषक बनें, इसके लिए क्या किया जाय? गांधी ने सोचा, मनुष्यों के सम्बन्ध एक-दूसरे के लिए सहायक होने चाहिए। सिर्फ व्यक्तियों के जोड़ का नाम समाज नहीं है। समाज में हर व्यक्ति सबके लिए होगा और सब प्रत्येक के लिए होंगे।

इस प्रकार के संबंध जिसके हैं वह सामान्य मनुष्य होता है। वह 'fraction' अपूर्णांक नहीं है, 'integer' है, पूर्णांक है, समग्र मनुष्य है, इसलिए उस पर कोई लेबुल नहीं है। लेबुल जिस पर लग गया, उसमें समग्रता नहीं है। गांधी को हम मानते हैं, क्योंकि वह 'unlabled' था, पूर्णांक था।

जो मनुष्य 'unlabled' होगा, उसका संबंध किसके साथ? एक शब्द है 'पड़ोसि-

यत'। पड़ोसी का असली मतलब है सखा। आज का प्रचलित अर्थ है पड़ोसी, पास रहनेवाला। अक्सर यह देखा जाता है कि पड़ोसी कभी मित्र नहीं होता। "अपने दोस्त और दुश्मन हम खुद बनाते हैं, लेकिन हमारी बगल में रहनेवाला पड़ोसी किस्मत का दिया हुआ होता है। वह हर कोई हो सकता है। इसलिए वह सब कुछ होता है। मानो हमारे लिए वह ईश्वर का दिया हुआ मानवता का नमूना ही है।" पड़ोसी का यह मार्मिक वर्णन चेस्टरटन ने किया है।

दरिद्रनारायण की सेवा

गांधी ने कहा, सर्वोदय का आरंभ अंत्योदय से होगा। समाज में जिनका स्थान अंतिम है, असल में उनका उदय ही सर्व के उदय का प्रथम चरण है। जो अंत्य है वही हमारा *वास्तविक पड़ोसी है। हजरत ईसा ने जब कहा* कि अपने पड़ोसी को अपने जैसा प्यार करो तो उससे पूछा गया कि मेरा पड़ोसी कौन है? जवाब में ईसा ने गुड समरिटन का किस्सा सुनाया। किस्से से उसका तात्पर्य यह है कि जो दुःखी है, संकट में है, पीड़ित और दलित है वह हमारा पड़ोसी है। उसका दुःख बाँट लेना असली पड़ोसियत है। इसलिए गांधी ने मानवता की सेवा का मुख्य माध्यम *दरिद्रनारायण की सेवा को माना।* 'दरिद्रनारायण' शब्द विवेकानन्द का है। गांधी ने उसे अपना लिया, आत्मसात कर लिया। गुरुदेव रवि ठाकुर ने अपने एक प्रार्थना-गीत में इस प्रश्न का उत्तर दिया है कि भगवान का सिंहासन कहाँ है? वे कहते हैं कि जहाँ वे लोग रहते हैं जो सबसे पीछे हैं, सबके नीचे हैं, जिन्होंने सब कुछ खो दिया है और जो स्वयं खो गये हैं, उनके बीच तेरा सिंहासन है।

सारांश यह कि दरिद्रनारायण ही हमारा वास्तविक प्रतिवेशी है। वही मानवता की सगुण मूर्ति है। इसलिए उसकी सेवा हमारा आद्य कर्तव्य है। प्रतिवेशी धर्म को ही गांधी ने स्वदेशी का नाम दिया है। इस व्यापक अर्थ में गांधी का 'स्वदेशी व्रत' सामाजिक-जीवन के लिए उनकी विशेष देन है।●

सम्पत्ति और स्वावलम्बन : सरकार और समाज

● समय और परिस्थिति के अनुसार *व्यवस्था बदलती है, और बदलनी चाहिए।* आज के युग में सुनियोजित परिवर्तन सम्भव है। *निर्दोष व्यवस्था की पहचान बाहरी स्वरूप* से अधिक भीतरी गुणों में है जो हर स्थिति में मौजूद रहने चाहिए। वे गुण ये हैं :

(अ) समाज में जो धन, बुद्धि या बल आदि से समर्थ हैं उनकी सामर्थ्य समाज की सेवा में लगनी चाहिए।

(ब) जनता में स्वावलम्बन और परस्पर-सहयोग दोनों हों। छोटी स्वायत्त इकाइयों में, संगठित समाज में यह सम्भव है।

(स) नित्य के जीवन में सहयोग हो, और प्रसंग आने पर प्रतिकार की शक्ति प्रकट हो, लेकिन सहकार और प्रतिकार, दोनों का आधार अहिंसा ही हो।

(द) बौद्धिक या शारीरिक श्रम—*प्रामाणिक श्रम—का सामाजिक और आर्थिक* मूल्य समान हो।

● *समाज में बुद्धि और शक्ति की दृष्टि* से समर्थ और असमर्थ व्यक्ति रहेंगे ही। यह सामर्थ्य स्वाभाविक है। सम्पत्ति से बनी हुई सामर्थ्य अस्वाभाविक है, जो बहुत हद तक दूर की जा सकती है। लेकिन जिसमें जो सामर्थ्य है वह सेवा के लिए है, यह मनोवृत्ति पैदा की जानी चाहिए। और राज्य-व्यवस्था भी ऐसी होनी चाहिए कि समर्थ की सामर्थ्य जनता की सेवा के लिए अवश्य अर्पित हो। लोकमत ऐसा प्रबल होना चाहिए कि जो ऐसा न करें वे अपराधी ठहराये जायँ। ऐसे लोकमत के आधार पर कानून भी बनाया जा सकता है।

● समाज दंड के भय से सही रास्ते पर रहेगा, यह अनुभव से गलत सिद्ध हो चुका है, *कहीं अधिक उपयोगी लोकमत का भय या* लोकमत का आदर सिद्ध हुआ है। कुछ ऊँचे *उठे हुए या गिरे हुए लोगों को छोड़कर* सामान्य जनता लोकमत का आदर करती ही है, और वही *लोकमत कानून या अनुशासन* का आधार होता है।

● आज का समाज चोर को तो चोर *मानता ही है, पर कृपण को अपराधी नहीं* मानता। ऐसा क्यों? कंजूस चोर का बाप, और चोर कंजूस का बेटा, *यह मान्यता कानून* में होनी चाहिए।

● सम्पत्तिवान् सम्पत्ति क्यों रखता है? क्या केवल रखने के संतोष के लिए, या प्रतिष्ठा, सुख, भावी जीवन का आश्वासन, *संतान का पालन-पोषण और दानी बनने का* यश—इन्हींमें से कुछ या सबकी अभिलाषा होती है? *अगर सम्पत्ति रखे बिना ये दूसरी* चीजें मिल जायँ तो किसीको क्या आपत्ति होगी?

● पुराने जमाने में शिक्षक कांचनमुक्त रहता था। वह आनन्दमुक्त नहीं था, चिन्तामुक्त था। ऐसे गुरु को शिष्य की श्रद्धा और सेवा मिलती थी, और सम्राट् भी उसका लोहा मानता था। आज का शिक्षक पुस्तकों का शिक्षक होता है, न कि शिष्यों का। उसके जीवन में न शिष्यों को स्थान है, और न शिष्यों के जीवन में उसे। इस कमी की पूर्ति वह पैसे से करता है, *जैसे बीमारी* आदि के बहाने डाक्टर, वैद्य, आदि उससे ऐंठ लेते हैं। *नतीजा यह होता है कि उसे कोई लाभ नहीं* होता, और वह आम जनता के लिए व्यर्थ महँगा सिद्ध होकर उसकी सेवा से वंचित रह जाता है। राज्य पद्धति यानी लोकसत्ता की रचना ही ऐसी होनी चाहिए कि हर एक व्यक्ति सहज ही यह अनुभव करने लगे कि लोगों का विरोध सहकर सम्पत्ति बटोरने में क्या सुख है?

● विद्या की तरह सम्पत्ति भी देने से दूनी बढ़ती है। आजकल इसीको अर्थशास्त्र में 'जनता की क्रयशक्ति का बढ़ना' कहते हैं। साहूकार कर्जदार को भरपूर धन देता है, और उसमें वह अपनी सम्पत्ति की वृद्धि देखता है। उससे भी अधिक वृद्धि सम्पत्ति के विभाजन से होती है। लेकिन उसके अनुरूप *समाज-रचना होनी चाहिए। ऐसी समाज-रचना* आदर्श राज्य-पद्धति में सम्भव है। ऐसा होना

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, ३ नवंबर, '६७

तो समाज व्यक्ति का बैंक बनेगा, और व्यक्ति सुरक्षित रहेगा।

● मनुष्य मूलतः समाजप्रिय है। उसे अकेले उपभोग करने में, दूसरों को अपने भोग में हिस्सेदार बनाये बिना, कभी सन्तोष नहीं होता। फिर भी हम देखते हैं कि आज मनुष्य दूसरों के दुःख के प्रति लापरवाह दिखायी देता है। ऐसा क्यों है? क्या इस लिए नहीं कि आज समाज में यह धारणा प्रचलित है कि हर व्यक्ति अपनी कमाई का जिम्मेदार और हकदार है? सबको यथाशक्ति कमाई जरूर करनी चाहिए, जो शक्ति होते हुए भी कमाई नहीं करता वह हकदार नहीं हो सकता। लेकिन यह भी सही है कि यथाशक्ति कमाई करनेवाला कोई व्यक्ति सम्मिलित कमाई का समान हकदार है।

● राज्य-व्यवस्था इसीलिए है कि परिवार में जो आर्थिक व्यवस्था थोड़े-बहुत अंश में सर्वत्र पायी जाती है, उसे सारे समाज पर लागू करे। ऐसा करने के बजाय अगर राज्य-व्यवस्था विषमता का ही निर्माण करे तो उससे अच्छी अराजकता है। लेकिन अराज्य का भय दिखाकर शासक अपना कुराज्य चलाते रहते हैं।

समर्थ समर्थ अवश्य है, लेकिन जिन्हें हम असमर्थ मानते हैं उनकी सहायता के बिना समर्थ का काम नहीं चल सकता। इस अर्थ में समर्थ भी असमर्थ हैं। और जो असमर्थ हैं उनकी भी अपनी विशेष सामर्थ्य होती है। उसके बिना भी राज्य-सत्ता नहीं चल सकती। समर्थ और असमर्थ दोनों एक दूसरे की मदद के बिना असमर्थ, और एक दूसरे की मदद से समर्थ सिद्ध होते हैं। इसलिए दोनों के मिलने से दोनों का हित है—एक का हित दूसरे के हित का विरोधी नहीं है। सही राज्य व्यवस्था में यह भान सबको होना चाहिए। अगर ऐसा हो तो राज्य-व्यवस्था का अधिकार समर्थों के सुपुर्द तो अवश्य किया जाय, पर वह जनता की केवल सेवा के लिए हो।

● अगर हम चाहते हैं कि समर्थों के हाथ में सेवा के अलावा दूसरी सत्ता न जाने पाये तो यह आवश्यक है कि जनता निरी असहाय और दुर्बल न रहे। इसलिए उसे इतना स्वावलम्बी होना चाहिए कि उसे अपनी स्वतन्त्र शक्ति का भान रहे। इस शक्ति के लिए स्वायत्त उद्योग जरूरी है। हर एक गाँव को आर्थिक दृष्टि से, जहाँ तक सम्भव हो, एक स्वयंपूर्ण इकाई बन जाना चाहिए। ऐसी स्थिति बननी चाहिए कि समर्थ अपनी इच्छा से जनता के साथ सहयोग करें। और जनता स्वतन्त्रतापूर्वक समर्थों को सहयोग दे। यह तभी सम्भव है जब कि जनता अपने पैरों पर खड़ी रहे। जीवन की प्राथमिक आवश्यकताएँ गाँव में पूरी होनी चाहिए, गौण आवश्यकताओं म से भी अधिक से अधिक उसी गाँव में पूरी हों, जो आवश्यकताएँ बच रहें उनकी पूर्ति राज्य सत्ता समर्थों द्वारा कराये।

किसान के खेत की पैदावार से जो पक्का माल बन सके वह, जहाँ तक हो सके, उसीके घर में, और शेष गाँव में बनना चाहिए। आज हाल बिलकुल उल्टा है। किसान कच्चा माल पैदा करता है, और उसे बेचकर जरूरत की हर चीज खरीदता है। हर तरह से उसे घाटा ही घाटा होता है।

यह स्थिति न जनता के लिए अच्छी है, न समर्थों के लिए, न समाज के लिए। इसलिए आदर्श समाज-व्यवस्था का यह सहज स्वरूप होगा कि खेती के पूरक ग्रामोद्योगों का जाल सारे राष्ट्र में फैला हो, तथा उनके संरक्षण का प्रबन्ध राज्य-व्यवस्था करे। वर्षा की बूँदों की तरह धन को घर घर में बाँटने के लिए इससे अच्छी दूसरी कोई योजना नहीं।

● साम्यवाद की इससे उल्टी प्रक्रिया है। वह पहले सम्पत्ति एक जगह इकट्ठा करता है, और बाद में उसे बराबर बाँटने की कोशिश करता है। यह प्रक्रिया आर्थिक दृष्टि से ज्यादा महँगी है। इसमें विदेशी आक्रमण का ज्यादा खतरा है, क्योंकि सम्पत्ति केन्द्रित रहती है। तीसरे, इस प्रक्रिया के कारण समाज की व्यवस्था इतनी जटिल हो जाती है कि कब वह बैठ जाय इसका ठिकाना नहीं। सबसे अच्छा यह है कि उत्पादन के द्वारा ही सम्पत्ति का समान बँटवारा हो।

● परस्परावलम्बन बहुत अच्छी चीज है, लेकिन वह स्वावलम्बी इकाइयों के बीच होना चाहिए। तिपाई तीन पैरों पर खड़ी होती है। तीनों पैरों में पारस्परिक सहयोग होता है, लेकिन तीनों पैर अपने अपने बल पर खड़े हैं। यह सीधी सादी यन्त्र रचना है।

● सम्पत्ति इकट्ठा कर बाँटने की सारी योजनाएँ राज्य-व्यवस्था पर बहुत दबाव डालती हैं, और अतत वे हिंसा पर आधारित हो जाती हैं। अगर हिंसा को टालना हो तो हर देहाती किसान को अपना बादशाह होना चाहिए, और ग्रामीणों का सहयोग बनी हुई रस्सी की नाईं पक्का होना चाहिए। तब वह किसान और उसका गाँव मिलाकर एक सहज और करीब करीब स्वयंपूर्ण राज्य सत्ता हो जायगी।

जो इस प्रकार स्वायत्त ग्रामों का संगठन करती है वह है निमित्तमात्र प्रान्तीय सत्ता। ऐसे प्रान्तों का जो संगठन करती है वह निमित्तमात्र राष्ट्रीय सत्ता। ऐसे स्वायत्त राष्ट्रों के परस्पर-सहकार का जो संगठन करती है, वह है निमित्त मात्र अखिल मानव सत्ता। इस सत्ता में रागद्वेषरहित प्रातिनिधिक व्यक्तियों की परिषद होगी। इस परिषद के पास दंड शक्ति शून्य और नैतिक नियमन शक्ति पूरी-पूरी होगी। ऐसी कल्पना अब साकार करनी है। अब केन्द्रीय सत्ता शस्त्रों या जर जवाहिरात की न हो, बल्कि नैतिकता की हो। स्पष्ट है कि जबतक जनता स्वावलम्बी और सहकारी न होगी, तबतक इस तरह की मानवता की रचना नहीं बन सकती।

—रा० मू०

शान्तिसेना

प्रिय मित्र,

३० जनवरी १९६८ को (जो कि राष्ट्रपिता का मृत्यु-दिवस है) अन्तर्राष्ट्रीय-शान्ति-दिवस के रूप में मनाने के सम्बन्ध में यह पत्र है।

यद्यपि विभिन्न नगरों व गाँवों में अपने-अपने प्रकार से कार्यक्रम होंगे, फिर भी निम्नलिखित ३ कार्यक्रम सामान्य रूप से लिये जा सकते हैं :

१—शान्ति-जुलूस
२—प्रार्थना-सभाएँ
३—शान्ति-बिल्लों की बिक्री

पहले हम इस दिन शान्ति-सेना रैली का भी आयोजन करते थे। इस वर्ष हम इस कार्यक्रम को परिवर्तित करके शान्ति-जुलूस के रूप में और अधिक व्यापक कर रहे हैं। जितना अधिक व्यापक हो सके उतना व्यापक इस शान्ति जुलूस को बनाने का प्रयत्न किया जाय। सभी नागरिक संस्थाएँ, शिक्षण संस्थाएँ ट्रेड यूनियन, क्लब तथा अन्य संगठनों से सम्पर्क किया जाय। साथ-साथ यह भी प्रयत्न किया जाय कि नगर के प्रमुख नेतागण भी इस जुलूस में सम्मिलित हों।

इस जुलूस को अन्त में प्रार्थना-सभा के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। प्रार्थना मौन हो सकती है अथवा विभिन्न धर्मों के कुछ उद्धरण बोले जा सकते हैं। अच्छे भजनीकों के द्वारा भजन गाये जा सकते हैं। चुने हुए गांधीजी के वचनों को भी प्रार्थना-सभा में पढ़ा जा सकता है। प्रार्थना के पश्चात् सभा में व्याख्यान दिये जाने में भी कोई हर्ज नहीं है। परन्तु इस बात का ध्यान रखा जाय कि यह कार्यक्रम अधिक लम्बा न हो।

शान्ति-बिल्लों की माँग प्रारम्भ हो गयी है। हम दुगुनी मात्रा में शान्ति-बिल्ले छपाने जा रहे हैं। लेकिन आप लोगों में से अभी बहुत से भाई जनवरी मास के आने की प्रतीक्षा में हैं। कृपया अपना आर्डर भेजने में विलम्ब न करें। शान्ति-बिल्ले बम्बई में छपाये जा रहे हैं। आप लोगों को बिल्ले भेजने में कुछ समय लग सकता है, जिनके आर्डर पहले आयेंगे उनको हम पहले बिल्ले भेजने की व्यवस्था करेंगे। अतः कृपया अपने अर्डर शीघ्र ही भेजें। सस्नेह

नारायण देसाई
अ. भा. शान्ति-सेना मण्डल

शान्ति-केन्द्रों के संयोजकों एवं समस्त शान्ति-सैनिकों की सेवा में

प्रिय मित्र,

शान्ति-सेना की मूल कल्पना पूज्य बापू ने हमें दी और एक कर्मठ शान्ति-सैनिक की हैसियत से कैसे सेवा करते-करते देह-त्याग कर सकते हैं, उसका दिग्दर्शन भी किया। उनकी कल्पना को साकार और व्यापक बनाने के लिए पूज्य विनोबाजी ने इसके संगठन का प्रारम्भ सन् १९५७ में केरल प्रान्त से किया। तब से अब तक लगातार उसमें प्रगति हो रही है। परन्तु, उसमें अपेक्षाकृत जो सक्रियता आनी चाहिए थी, वह नहीं आ पायी। सक्रियता के बिना प्रगति सम्भव नहीं है। सक्रियता के लिए आवश्यक है कि केन्द्रों की रिपोर्टें बराबर शान्ति-सेना मण्डल को प्राप्त होती रहें और मण्डल का केन्द्र के साथ सम्पर्क बराबर बना रहे। आपस में मिलना-जुलना भी आवश्यक अंग माना जाय, यह आवश्यक है। इससे संगठन भी मजबूत होगा और कुछ कार्य भी दिखेगा। परन्तु ऐसा नहीं हो सका। इसका कारण संगठन की कमी ही मैं मानता हूँ। अतः इस संगठन में जो कमी है, उसको दूर करने के लिए हम सब मिलकर प्रयास करें और अपनी कमियों को दूर करें। इसके लिए यह आवश्यक है कि आज की व्यवस्था से कुछ अधिक परिष्कृत व्यवस्था की स्थापना हो। इस दृष्टि से मंडल ने ३०-३१ मार्च को हुई अपनी बैठक में कुछ निर्णय लिये हैं। उसके अनुसार अगर हर साल कार्यक्रम चलता रहेगा तो हमारी शक्ति का भान हो जायेगा और संगठन को ठोस रूप भी मिल सकेगा। मैं मानता हूँ कि अधिक संख्या में आवृत्त अनुपयोगी संगठन की अपेक्षा कम संख्यावाला ठोस संगठन कहीं ज्यादा बलवान होता है। इसको आप भी मानते होंगे। हाँ, इससे एक बात जरूर होगी कि आज की वृहत संख्या कम हो जाय। पर उससे हमें घबराना नहीं चाहिए। अतः आशा है, आप लोग नीचे लिखे निर्णयों पर ध्यान देंगे, उसके अनुसार कार्य करेंगे और संगठन को मजबूत बनाने में सक्रिय सहयोग देंगे। निर्णय निम्न हैं :—

१. सभी शांति-सैनिक साल में एक बार अपनी प्रतिज्ञा दोहरायें, यह काम 'सर्वोदय पक्ष'—३० जनवरी से १२ फरवरी—के बीच एक बार प्रधान कार्यालय को पत्र लिखकर किया जा सकता है। शांति-केन्द्रों पर या रैलियों में एकत्र होकर एक साथ भी प्रतिज्ञा दोहरायी जा सकती है। इस प्रकार लिखकर या समूह में पढ़कर जो शांति-सैनिक अपनी प्रतिज्ञा दोहरा न पायें, उनका नाम शांति सेना के रजिस्टर से काट दिया जाय।

२. हर शांति केंद्र को अपनी रिपोर्ट नियमित रूप से भेजनी चाहिए। जनवरी महीने में जिन शांति-केंद्रों की रिपोर्टें न आयें उनके नाम शांति-सेना के रजिस्टर से काट दिये जायें।

३. सारे भारत में कुल करीब १३००० शांति सैनिक हैं और करीब १००० शांति-केंद्र हैं। शांति केंद्रों के साथ करीब ६-७ मास से लगातार हम यहाँ से 'भूदान-यज्ञ' द्वारा संपर्क रखने का प्रयास करते आ रहे हैं। परंतु खेद है कि बहुत ही कम शांति-केंद्र अपनी सूचना एवं रिपोर्ट कार्यालय को भेज पाये हैं। अब आशा रखता हूँ कि जनवरी में उक्त कार्यक्रमानुसार सभी केन्द्र, रिपोर्ट तथा प्रतिज्ञा दुहराने की विधि पूरी करके हमें अवगत कराने की कृपा करेंगे। देश भर में इस संगठन को मजबूत, लोकोपयोगी और जनप्रिय बनाने के—

हिंसा का उन्मूलन सम्भव है

इसमें कोई संदेह नहीं कि हम हिंसा के युग में रहते हैं। जो कोई इस बात को स्वीकार नहीं करता वह या तो सचाई नहीं जानता अथवा उसका इस हिंसा से अवश्य ही कुछ-न-कुछ लाभ होता होगा।

यह हिंसा हमारे सामाजिक जीवन पर जगह जगह आघात किये जा रही है। विशेष कर इससे हमारे नन्हे-मुन्ने बालकों में खून खराबे की आदत बढ़ रही है।

न्यूयार्क शहर में ८-९ वर्ष के बालक भी खून करने लगे हैं। ऐसे बालकों को हम बाल अपराधी कहते हैं। इन बच्चों का सुधार करने में भी हम अब तक असफल रहे हैं। इसके अतिरिक्त साधारण हत्या के अपराधों की संख्या पहले से कुछ अधिक हुई है। अपराधों के आँकड़े बताते समय हमें सतर्क रहना चाहिए, साथ ही इन अपराधों से समाज के रुख का भी पता चलता है।

हिंसा का प्रचार करनेवाले साहित्य तथा चलचित्र की तादाद भी बराबर बढ़ रही है। हाल ही में न्यूयार्क शहर में 'द डर्टी डजन' नाम के एक चलचित्र की समीक्षा करते समय समीक्षक ने उस चलचित्र के लिए हिंसक, नृशंस, क्रूर सम्भोगी, पागल तथा समाज विद्रोही जैसे शब्दों का बार बार प्रयोग किया। इससे चलचित्र में क्या दिखाया गया था, इसकी कल्पना की जा सकती है। इसी चित्र के बारे में एक दूसरे पत्र में लिखा था कि 'बालकों ने तालियों से इस चित्र का ऐसा भव्य स्वागत किया, जैसा कि आज तक किसी चित्र का नहीं हुआ है।' इससे बालकों की मनोदशा का पता चलता है।

युद्ध हमेशा हिंसा सिखाता है। और वियतनाम युद्ध इसका अपवाद नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त इस युद्ध में हम इतनी निर्दयता दिखा रहे हैं कि अमरीका की नैतिक रूपरेखा ही विकृत हो गयी है। इस युद्ध के कारण हमारे सुसंस्कृत लोग भी यमराजी बन गये हैं। जिस जोर शोर से इस युद्ध को टेलिविजन पर दिन-रात दिखाया जाता है, उससे हमने हिंसा को स्वाभाविक मानकर स्वीकार किया है। किसी खेल अथवा शिकार की भाँति हमें यह युद्ध दिखाया जाता है। जिस प्रकार खेलों में खिलाड़ियों के अंक बताये जाते हैं, उसी प्रकार इस युद्ध में मरने वालों की संख्या बतायी जाती है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि हमें केवल सतही बातें बतायी जाती हैं। इस युद्ध के कारण किसीको बताये नहीं जाते। इस युद्ध में हमारी क्या जिम्मेदारियाँ हैं, यह भी नहीं बताया जाता। वियतनाम-युद्ध को जैसा कि मैंने समझा है तथा इसका जो चित्र लोगों के मन में है, वह कुछ कुछ इस प्रकार है, 'हमने अपना पैर वियतनाम की गरदन पर रखा है और उससे कहते हैं कि वह उठ जाय।' वियतनाम कहता है, 'मैं उठ तो जाऊँगा, किन्तु जब तुम अपना पैर हटाओगे, तब तो उठ सकूँगा।' हमारा कहना है, 'पहले तुम हटो, फिर मैं अपना पैर हटाऊँगा।'

आज की इस हिंसा की प्रवृत्ति का कारण क्या हो सकता है? क्या पहले भी इसी तरह की हिंसा थी? बात ऐसी नहीं है। आज की ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण आज इतनी हिंसा अधिक हो रही है। इसके आर्थिक और सामाजिक कारण कुछ भी क्यों न हो, हमें यह मानना पड़ेगा कि हम बल के प्रयोग में ही विश्वास करने लगे हैं। यही कारण है कि आज मानव-जीवन का कोई मूल्य नहीं रहा है। मनुष्य के खून की अपेक्षा तेल की कीमत अधिक हुई है। जो विमान युद्ध के काम आये, उसीकी आज कीमत है। जो भी नये आविष्कार हो रहे हैं, उनमें अधिक लोगों को मारने की क्षमता है। इन्हीं आविष्कारों को महत्त्व दिया जा रहा है। हिंसा के बारे में मैंने आज तक जो जाँच की है, उससे मैं इन परिणामों पर पहुँचा हूँ।

● मानव हिंसा को समझने के लिए उसकी तीन अवस्थाओं को समझना आवश्यक है— हिंसा के पूर्व की अवस्था, हिंसात्मक कार्यवाई तथा हिंसा के बाद की अवस्था। अन्तिम अवस्था में यदि इस पर नियंत्रण न किया जाय तो इसकी किसी-न-किसी प्रकार भविष्य में पुनरावृत्ति अवश्य होगी। यह एक वैज्ञानिक नियम है।

व्यक्तिगत हिंसा सामूहिक हिंसा से अलग होते हुए भी इसके सिद्धान्त एक से ही होते हैं। उदाहरणार्थ—सामूहिक हिंसा की भी तीन अवस्थाएँ होती हैं। व्यक्तिविशेष की हिंसा तथा किसी देश की हिंसक विदेश नीति में भी कोई अन्तर नहीं होता। मैं तो यहाँ तक मानता हूँ कि हम यदि किसी देश की हिंसक विदेश-नीति को समझना चाहते हैं तो वहाँ के लोगों में जो हिंसा है, उसे समझना आवश्यक है।

मनुष्य में हिंसा की भावना सहज ही पायी जाती है, यह मानना गलत है। वह हिंसा कर सकता है, यह बात अलग है। राबर्ट आरड्रे तथा कोनराड लारेंज के जैसे महान लेखकों ने भी अपनी पुस्तकों में यही सिद्ध किया है कि मनुष्य में हिंसा की भावना इतनी नैसर्गिक होती है कि उसे मिटाया नहीं जा सकता। यह सही नहीं है, फिर भी आज की बढ़ती हुई हिंसा को देखकर हम धीरे धीरे इस बात में विश्वास करने लगे हैं कि हिंसा का उन्मूलन नहीं किया जा सकता।

व्यक्तिगत तथा सामूहिक हिंसा कम की जा सकती है, इतना ही नहीं, इसे पूर्णतया खत्म भी किया जा सकता है। यह केवल कल्पना न होकर एक वैज्ञानिक सत्य है। इससे कुछ प्रतिष्ठित पत्रों का कथन गलत साबित होता होगा कि मनुष्य तथा समाज हिंसा का त्याग नहीं कर सकता। मेरा इस बात में पूर्ण विश्वास है, क्योंकि यह केवल नियम न होकर एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है कि हिंसा का उन्मूलन हो सकता है। यदि हम यह मान लेते हैं कि हिंसा मिटायी नहीं जा सकती तो हम अपने सामाजिक उत्तरदायित्व से मुँह मोड़ लेते हैं।—डा० फ्रेडरिक वर्थेम

['गांधी शान्ति प्रतिष्ठान' के सौजन्य से।]

→लिए हम दोनों की संयुक्त शक्ति की अत्यन्त आवश्यकता है। आज की देश की परिस्थिति को देखते हुए इस संगठन को ठोस बनाना हम सबका कर्तव्य है। —सत्यनारायण

अ. भा. शांति-सेना मंडल

नोट— प्रांतीय भूदानवाहक पत्रिकाओं में इस पत्र को अपनी भाषा में अनुवाद करके छापने की कृपा करें। ●

नेफा

शान्ति केंद्र, पांगो : श्री हरि सिंह लिखते हैं कि प्रौढ़ शिक्षा में लोगों के बीच की गैरहाजिरी के बावजूद अच्छी प्रगति है। आनेवालों को हिंदी तथा अंग्रेजी का ज्ञान दिया जाता है। ३२० रोगियों को दवा दी गयी। पशुओं की भी चिकित्सा की गयी। 'किचन गार्डनिंग' के खेती में गोभी, भिंडी आदि अच्छी तरह हो रही है। इसके बीज गाँव के लोगों भी में बाँटे गये। लोगों के मानस पर सफाई के बारे में श्रद्धा पैदा हो, इसके लिए केंद्र पर कुछ आयोजन किया जाता है। इसमें लोग काफी दिलचस्पी ले रहे हैं।

शान्ति-केंद्र, सेन्सु : श्री मुक्तेश्वर कौंच लिखते हैं कि मुख्य रूप से लोग खेती में लगे रहे। बीच बीच में महिलाएँ कपड़ा-सिलाई के लिए आती रहीं। बच्चों का स्कूल चलता रहा। सफाई आदि सार्वजनिक काम की भी योजना रही। आसपास के गाँवों का सम्पर्क किया जाता है और उनके मनोरंजन में भी भाग लिया करते हैं।

शान्ति-केंद्र, माल्गों (मालिनी) : सर्वश्री गोपीनाथन् नायर और इंद्र सिंह : यह केंद्र सीमाक्षेत्र से सिर्फ २१ मील की दूरी पर है। यहाँ के लोगों के रहन-सहन, खानपान सब भिन्न हैं। यहाँ पर शिक्षा में प्रौढ़ एवं बच्चों के शिक्षण, खेती में मदद, साग-सब्जी उगाना और बीज-वितरण किया गया। रोगियों को दवा बाँटी गयी। अब तक करीब १६०० लोग इससे लाभान्वित हुए। आवागमन के कारण खादी का काम शुरू नहीं हो सका, किंतु बच्चों द्वारा ऊनी-उद्योग चलाया जाता है।

शान्ति-केंद्र, जेदुया : खादी का काम सूत-कताई से लेकर असमिया करघे से गमछा आदि बुना गया। बागवानी में केले तथा तरकारी के बीज बोये गये हैं। करीब ५० मरीजों को दवा दी गयी। बच्चों में खेल-कूद कराया जाता है तथा लोगों के मनोरंजन-कार्यक्रम में भी भाग लिया जाता है।

बिहार

शान्ति केंद्र, करहरवा : श्री ब्रजबल्लाल सिंह : रिलीफ के काम के सिलसिले में लोगों में ढाढ़स बंधाया गया। अन्य सार्वजनिक सेवाएँ भी की गयीं।

शान्ति-केंद्र, कल्याणपुर : श्री सीताराम लाल सरस्वती : लोगों को आध्यात्मिक शिक्षण मिले, श्रम, स्वाध्याय और सेवा का कार्य सुचारू रूप से हो सके। इसके लिए केंद्र में प्रयास किया जा रहा है।

शान्ति केंद्र, जयप्रकाशनगर : श्री नारायण प्रसाद : अकाल-पीड़ितों की सेवा में समय अधिक गया। पुस्तकालय की समुचित व्यवस्था की गयी है। सामूहिक बैठक भी की जाती है। ग्रामदान-अभियान में मदद और केंद्र के आसपास करीब १०० चरखे चलाये जा रहे हैं। यह क्षेत्र बस और रेल की सुविधा से काफी दूर होने से यहाँ के झगड़े यहीं पर निपट जाने में आसानी होती है।

शान्ति-केंद्र, विनोबानगर : श्री सुंदर-दास : केंद्र में १३ सदस्य हैं। सब अपनी-अपनी काश्त करते हैं। हर सप्ताह मिलते रहते हैं। सामूहिक निर्णय के आधार पर कोई भी सेवा कार्य समय समय पर उठाया जाता है।

शान्ति-केंद्र, गांधीग्राम, बेनीबाड़ी : श्री बुद्धिनाथ सिंह : केंद्र में १५ सदस्य हैं। रोगियों की चिकित्सा, स्वाध्याय, ग्रामदान-अभियान, खादी का काम, साहित्य प्रचार एवं बिक्री, सर्वोदय-पात्र का काम केंद्र के द्वारा किया जा रहा है। गाँव के झगड़े आपस में ही मिटाने में संतोषजनक सफलता मिली है।

शान्ति-केंद्र, बरसाहा हाट : श्री अनवर आलम अंसारी : केंद्र में शान्ति-सैनिकों की मीटिंग हुआ करती है। १५-१६ साथी इकट्ठे हो जाया करते हैं। गाँवों में घूमकर ग्रामदान एवं सर्वोदय विचार प्रचार में सह-योग देते रहते हैं।

शान्ति केंद्र, केशवपुर : श्री जितेंद्र कुमार : अस्पताल में रोगियों की सेवा मुख्य रूप से की गयी। बाढ़-पीड़ितों को सस्ती रोटी पहुँचाने का तथा केंद्र द्वारा छोटी-मोटी सेवा भी की गयी।

शान्ति-केंद्र, चकचामू : श्री सोनूदास : सदस्य-संख्या १३। केंद्र द्वारा श्रम, सेवा, स्वाध्याय, ग्रामदान-अभियान, खादी, साहित्य-प्रचार, सर्वोदय पात्र सुचारु रूप से चलते हैं। गाँवों के झगड़े आपसी समझौते पर निपटाने में सहयोग दिया जाता है।

शान्ति केंद्र, आम्बाबुजुर्ग : श्री रामदर्शन : केंद्र द्वारा आसपास के गाँवों में सेवा-कार्य तथा विशेष पर्व आदि में भाग लेकर लोगों का उत्साह बढ़ाने के साथ-साथ अपना विचार प्रचार भी करते रहते हैं।

क्षेत्रीय शांति-सेना समिति, लोहरदगा : श्री कृष्णानंद गिरि : गांधी जयन्ती के अवसर पर ५ सेवा शिविरों का आयोजन किया गया। सेवा शिविरों में कार्यक्रम व्यस्त रहा। हरि-जन-बस्ती के बच्चों को नहलाने-धुलाने में शिविरार्थी लोगों ने काफी दिलचस्पी से भाग लिया। शिविरों में स्कूल-कालेजों के ३०० शिक्षक एवं विद्यार्थियों ने भाग लिया। इसी दरम्यान ५५० कपड़े बाँटे गये। यह सब स्कूल के विद्यार्थियों ने ही लोगों से माँगकर इकट्ठे किये थे। अन्य खाद्य-पदार्थों को भी अकाल-पीड़ितों में बाँटा गया। गांधी-जयंती के उपलक्ष्य में विचार-गोष्ठी का भी आयोजन किया गया था।

उत्तर प्रदेश

शांति-केंद्र, तिवारीपुर : श्री विजय शंकर तिवारी : केंद्र में नियमित रूप से स्वाध्याय, धार्मिक ग्रंथों का नित्य पठन, अखबार, पत्र-पत्रिकाओं का अवलोकन चल रहा है। प्रौढ़-शिक्षा का कार्य भी प्रारंभ किया है। सार्वजनिक गंदे स्थानों को साफ किया गया, संभावित सेवा-कार्य भी हुआ।

शांति-केंद्र, भाजमगढ़ : श्री मेवालाल गोस्वामी : सदस्य संख्या ७ है। पदयात्रा, सफाई, कुष्ठ सेवा आदि कार्य किये गये। स्वाध्याय का कार्यक्रम साधारणतया चलता है। ग्रामदान-अभियान से २ ग्रामदान प्राप्त हुए। ५०० रुपये की खादी हुडी बेची गयी। साहित्य बिक्री हुई। रामपुर तथा फतहपुर ग्रामदानी गाँवों में झगड़े निपटाने में योग दिया।

शांति-केंद्र, सिमलेपुर : श्री अमरसिंह वर्मा : प्रभात फेरी के साथ गांधी जयंती मनायी गयी। केंद्र में अन्य सेवा कार्य भी समय समय पर किये जाते हैं। सर्वोदय साहित्य प्रचार हुआ। एक पुस्तकालय खोलने की योजना है। एक प्रौढ़ शाला भी खोलने का इरादा रखते हैं। अत्यधिक वर्षा के कारण विशेष काम नहीं हो सका। विचार-प्रचार का काम कुछ मात्रा में किया गया। केंद्र की बैठकें होती रहीं।

शांति-केंद्र, भुमकल : श्री सदाशा सिंह : सदस्य संख्या १०। स्वाध्याय, सेवा-कार्य हो रहा है। श्रमदान में भुमकल से इन्वार तक एक सार्वजनिक सड़क बनायी गयी। ७ सभाएँ हुईं, ६० पैसे की साहित्य बिक्री की। किशोर शांति दल संगठन, अहिंसात्मक प्रतिरोध तथा लोक क्रांति के उद्देश्य से किया गया है।

गांधी विचार केंद्र, कानपुर : श्री विनय अवस्थी : विचार शिक्षण के संबंध से शाहजहाँपुर, हरदोई, इटावा, मैनपुरी और फर्रुखाबाद जिलों का दौरा कर शांति केंद्रों तथा शांति सैनिकों से भेंट की। संगठन की रूपरेखा उन्हें समझायी।

सर्व १०५ रु० १० पैसे की तथा केंद्र द्वारा १६२२ रु० १९ पैसे की साहित्य बिक्री की गयी। गांधी शताब्दी समिति उ० प्र० शाखा को सहयोग दिया।

महाराष्ट्र

महाराष्ट्र शांति-सेना समिति : श्री गोपाल राव् आपटे : शिविरों का सिलसिला बराबर चलता रहा। कुल ८ किशोर शांति केंद्र बने हैं। महाराष्ट्र के तीन शहरों में अशांति का वातावरण बना रहा। इसमें शांति के लिए शक्ति भर प्रयास किया। संगठन शक्ति की कमी अत्यधिक महसूस हुई।

लगातार इन शिविरों के कारण युवकों में एक नयी चेतना का संचार हुआ है। अब तक किशोर ३५६, युवक ७८, प्रौढ़ ४९, शांति-सेवकों की भर्ती की गयी है। कुल मिलाकर ४८३ शांति सेवक हुए हैं।

शांति-केंद्र, बीड : श्री मोतीलाल मणी : कालेज के विद्यार्थियों के बीच विचार प्रचार का काम हुआ। किशोरों का एक शिविर लिया गया। ग्रामदान पदयात्रा करीब ८० मील की हुई। १० किशोर शांति-सेवकों की भर्ती हुई। २ शांति सेवक बनाये गये।

पंजाब

शांति केंद्र डीठ मझोपुर : श्री कुलिया भगत : कुल २२ गाँवों में सर्वोदय विचार प्रचार, १५८ मील की पदयात्रा, १३ रु० ७५ पैसे की साहित्य बिक्री हुई। अब सोनीपत तथा साई प्रखंड में ग्रामदान अभियान में योग दिया जा रहा है।

गांधी शांति शिक्षा केंद्र मधुबनगर : श्री महेश्वर प्रसाद : १०० परिवारों से ९० रु० की रकम शांति पात्र से मिली। साहित्य पढ़ने को घरों में दिया गया। बिहार रिलीफ में ७४ रु० की सहायता भेजी गयी। श्रीमती सरस्वती बहन तथा श्रीमती निर्मल कुमारीजी के प्रयास से कुछ कपड़े इकट्ठे करके भेजे गये। १४ दिन ग्रामदान अभियान में योग दिया। १० ग्रामदान प्राप्त हुए। 'भूदान यज्ञ' साप्ताहिक का ग्राहक बनाया गया।

मैसूर

शांति केंद्र, हामनेट : श्री रंगोदय मात राव राव, श्री नारायण भट्ट : 'सर्वोदय पर्व' मनाया गया। इस अवसर पर स्कूल-कालेजों में निबंध, स्पर्धा, खेल-कूद आदि कार्यक्रम रखा गया था। ६० लोगों को पुरस्कार बाँटा गया। सार्वजनिक सभा का भी आयोजन किया गया था। ●

अमेरिका की शांति-संस्था द्वारा शांति-प्रदर्शन

अमेरिका भवियान यूनियन (अमेरिकन यूनियन फॉर ऐक्शन) संस्था ने, जिसका संगठन हाल ही में स्थानीय शांति कार्यों में लगे कार्यकर्ताओं के विभिन्न समूहों के एकीकरण करने के उद्देश्य से हुआ है, डेनवोगो स्थान पर स्थित 'यू० एन० नेरन ट्रेनिंग सेंटर' पर 'मेमोरियल डे' के दिन स्थानीय नागरिकों का एक प्रदर्शन करना निश्चय किया है। लगभग तीन हजार से चार हजार व्यक्तियों के सम्मिलित होने की आशा है।

'डब्लू० आर० एल०' संस्था की ओर से मार्टिन आयांटो हाईस्कूल तथा कालेजों के विद्यार्थियों से मिलकर युद्ध के लिए चल रही अनिवार्य भर्ती का विकल्प क्या हो, इसकी चर्चा उनसे कर रहे हैं। उन्होंने एक स्थानीय बड़े दैनिक पत्र में तथा अधिकांश कालेजों के पत्रों में इस संबंध में शांतिवादियों के दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है। वे जनता में साहित्य को बाँटकर उनके द्वारा शांति विचारों का प्रचार भी कर रहे हैं। ●

('डब्लू० आर० एल० न्यूज़' मई जून १९६७)

शांति-सेना परिचय

लेखक : नारायण देसाई

प्रस्तुत पुस्तक में चार खंडों के अन्तर्गत शांति सेना का संक्षिप्त परिचय कराया गया है। विचार, संगठन, अनुभव और साधन, ये चार खंड हैं।

शांति सेना क्या है, उसका स्वरूप क्या होगा, उसके सैनिकों का दायित्व क्या होगा, उनकी पोशाक कैसी होगी, उनकी वृत्ति क्या होगी, इन सब बातों का इस पुस्तक में सांगोपांग वर्णन है।

प्रचार की दृष्टि से इस पुस्तक का मूल्य लागत से भी कम, केवल ०-७५ पैसे रखा गया है।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी १

अन्याय का प्रतिकार

"मैं तुम्हें यह पत्थर फेंकने नहीं दूँगी। डाल दो उसे नीचे।" मैंने थोड़ी ऊँची आवाज में कहा।

"नहीं बहनजी, आप छोड़ दीजिये मेरा हाथ, और आप अन्दर चली जाइये। मुझे यह पत्थर फेंकना ही है। आपको लग जायगा। कृपया आप अन्दर चली जाइये।" दस बारह साल के उस किशोर ने दृढ़तापूर्वक मुझसे कहा।

मैंने उस लड़के का हाथ और जोर से पकड़कर कहा, "तुम किस देश के निवासी हो, जानते हो?"

"हाँ, मैं भारत का हूँ।"

"भारत किसका देश है?"

"गांधीजी का, नेहरू चाचा का।"

"तो फिर उन्होंने क्या सिखाया है?" मैंने प्रश्न किया।

"यही कि, अन्याय का प्रतिकार करो।" उसने उत्तेजनापूर्ण आवेश से कहा, "वे अंग्रेजों की गलत बात सहन नहीं करते थे।"

"बात तो तुम्हारी सही है, परन्तु इसके साथ-साथ उन्होंने और भी एक बात सिखायी थी। उन्होंने कहा था कि अन्याय का प्रतिकार करो, परन्तु शान्ति से, अहिंसा से करो। तुमने उनके आदेश का पूर्वार्ध याद रखा, उत्तरार्ध भूल गये?"

इतने में पुलिस की गाड़ी आकर खड़ी हुई और सारी भीड़ हल्ला मचाते हुए आगे चली गयी।

यूनिवर्सिटी भावनगर में हो या राजकोट में, छोटा-सा सवाल, बातचीत से, चर्चा से, थोड़ी सी समझ से और थोड़ा-सा दिल बड़ा कर देने से हल हो जाय, ऐसा नाचीज प्रश्न!......परन्तु हल्ला मच गया है। हिंसा के बीज बोये जा रहे हैं। प्रतिहिंसा के आगमन की राह देखी जा रही है। नयी पीढ़ी के लिए नयी फसल! जय जवान!! जय किसान!!!

बहुत वेदना होती है। दस-बारह फुट चौड़ी छोटी-सी सड़क, दोनों ओर ऊँचे-ऊँचे मकानों की कतार। रास्ते पर आफिस में से फेंकी हुई कुर्सी, टेबल, बड़े-बड़े गोदरेज के कपाट......। आग जल रही है। चारों ओर भीड़ खड़ी है। सिविल एयर लाइन्स की आफिस की खिड़की में से एक-एक चीज आग में फेंकी जा रही है। और चारों ओर हर्षनाद के साथ-साथ तालियाँ बजायी जा रही हैं। अग्नि-शिखा और प्रज्वलित होकर भभक उठती है। मानों कोई होली का त्यौहार मनाया जा रहा हो! इतनी खुशी है, इतनी बेफिक्री है।

मैं आगे बढ़ती हूँ। कांग्रेस आफिस आता है। सामने हैं जली हुई कीमती चीजों के भग्नावशेष! आधी जली हुई, आधी टूटी हुई गोदरेज की आलमारी का एक भाग अधमुई मानवता का प्रतीक बनकर खड़ा है। कह रहा था, 'मुझे किसने जलाया, मालूम है? किसी अमीर के लाड़लों ने नहीं, जिनके घरों में पाँच पीढ़ी तक ऐसे कपाट लगाये नहीं जा सकते ऐसे गरीब दीन हीन लोगों ने मुझे जलाया है।' कहीं कपाट है तो कहीं रेफ्रिजरेटर है, तो किसी बैंक के सामने जले हुए नोटों के उड़ते हुए टुकड़े हैं!

और आगे बढ़ती हूँ, चारों ओर बिखरे हुए टेलीफोन के तारों को पार करती, गिरे हुए लम्बे-लम्बे खम्भों से मार्ग निकालती हुई। आध फर्लांग की दूरी पर बहुत बड़ी भीड़ है। आकाश में कुछ धुआँ-सा भी दिखता है। इतने में चार-पाँच बहनों से घिरी हुई एक कोई स्त्री छाती पीटती हुई जा रही है, "मेरे बच्चे का मुँह कोई मुझे दिखाओ, कहाँ है मेरा मुन्ना! मेरा मुन्ना!!..." कुछ समझ में नहीं आता है। आगे बढ़ती हूँ। रास्ते पर पानी-पानी है। एकदम आँखें जलने लगती हैं, उनसे आँसू बहने लगता है। किसीके घर के चबूतरे पर चढ़ जाती हूँ। सुनने को मिलता है, "दस साल का बच्चा है, उधर गिरा है, टीयर गेस का गोला उसके सिर में लग गया।"...और आगे बढ़ती हूँ। "बच्चे का क्या हाल है?"

"बहुत सीरियस है।"

और आगे बढ़ती हूँ। "बच्चे को लगा, वही बात है?"

"अरे, वह तो मर गया! उधर गिरा है।..."

दो-चार कदम से आगे अब नहीं बढ़ सकती। सुनसान रास्ता है। रास्ते के दोनों ओर के मकानों की खिड़कियाँ मानव-चेहरों से भरी हुई हैं। रास्ते में फेंके गये पत्थरों के ढेर के ढेर पड़े हैं। एकाध फर्लांग पर दिखायी देते हैं—चार-पाँच पुलिस के सिपाही। और इधर लोगों की भीड़।....हाँ, सुना कि बच्चा तो मर गया, परन्तु इधर कोई मृत्यु का सन्नाटा नजर नहीं आता, न वेदना है, न रोष है। यहाँ तो खेल चल रहा है। गले में रूमाल डाले हुए चार-पाँच अगुआ नौजवान हैं। कोई विद्यार्थी नजर नहीं आता। किसी मकान का चबूतरा, या बस-स्टेण्ड का चबूतरा तोड़ा जा रहा है। उसके छोटे-छोटे टुकड़े कर रहे हैं। दो-चार टुकड़े नीचे गिरे। भीड़ में से आवाज आयी, "उठाओ उसे अब। फेंको, फेंको, वह दिख रहा है।" और एकदम पत्थर की वर्षा शुरू होती है! खिड़कियों में से तालियाँ बजने की आवाज आने लगती हैं। सामने से प्रतिरक्षात्मक पत्थर भी आते हुए दिखते हैं। भीड़ को और उत्साह दिया जाता है, "फेंको, फेंको, उनका ध्यान इधर नहीं है, चारों सामने हैं।....अरे, लेकिन ठहरो, बेचारी कोई बहन आ रही है, अभी कोई पत्थर मत फेंकना। उस बुड्ढे को भी जाने दो।" वह बहन और वह बुड्ढा आगे गया और फिर पत्थरबाजी शुरू हुई।..."आप लोग क्यों पत्थर फेंकते हैं? पागल हो गये हैं क्या? यह सब बन्द कर दीजिये।" स्त्री की आवाज को सुनते ही चिल्ला उमड़ उठती है, "अरे बहन, आप यहाँ खड़ी हैं? अन्दर चली जाइये, चली जाइये। आप हमारी मुसीबत बढ़ा देंगी, चली जाइये कृपया अन्दर।"...और फिर पत्थर चले...तब तक चले...जब तक पुलिस के हाथ में उठायी हुई रिवाल्वर न दिखी।...और टीयर-गेस

का दौरा आया... फूटा। धुआँ फैल गया। आँखों में अपार करुणा उमड़ी।

सवाल है मुनिसिपैलिटी का, मरते हैं बच्चे! जलते हैं मकान!! रोती है मानवता!!!

"इसका क्या उपाय? क्या निराकरण?" रात को सोने जाती हूँ तो दिन भर में देखी हुई घटनाएँ सिनेमा जैसी नजर के सामने आ जाती हैं। अखबार खोलती हूँ तो घायल हुआ बच्चा, मरा हुआ नौजवान, सताये गये पुलिस के सिपाही, जले हुए मकान बड़े बड़े अक्षरों में आकर खड़े होते हैं। बहुत वेदना होती है। कल वियतनाम के शिशुओं की अपार वेदना दायक कहानी पढ़कर दिल उठी थी, आज भावनगर की करुण कहानी देखकर सहम गयी।

शान्ति-सेना! कहाँ है वह? हम दो चार इने गिने, टूटे फूटे लोग क्या कर सकेंगे सेना नहीं है, सैनिक हैं। कुछ सूझता नहीं। इतने में आवाज सुनायी देती है, कुछ अलग प्रकार की, कुछ आशास्पद! "हम यह अन्याय क्यों सहन करें? हमें, स्कूल बन्द नहीं रखना है, स्कूल जबरदस्ती क्यों बन्द रखाया जाता है? उनको हड़ताल मनाने का अधिकार है, स्वातन्त्र्य है तो हमें, जो न चाहते हों उन्हें हड़ताल 'न मनाने' का भी अधिकार और स्वातन्त्र्य तो है ही न! यह तो हमारा नागरिक स्वातन्त्र्य छीना जा रहा है। यह रुकना चाहिए।"

एक आवाज, दस आवाज, पचास आवाज! अच्छा हुआ। कुछ हिम्मत! किसीने सिखाया नहीं, अपने आप! स्वयं अभिक्रम से, स्वयंप्रेरणा से।

नागरिकों की, स्वतन्त्रता की, सम्पत्ति की, शान्ति की सुरक्षा हो कैसे हो? कुछ संगठन हो! कौन संगठित हो? ऐसे ही दंगा करनेवाले, हड़ताल करनेवाले, अशान्ति खड़ी करनेवाले लोग? नहीं-नहीं 'सज्जन शक्ति' सुसंगठित हो, सक्रिय हो। सरकार नहीं होती है—और लोगों के अभिक्रम से, लोगों की इच्छा से, लोगों की शक्ति से मर्यादित एक 'शान्ति मण्डल' का काम होता है। सवाल तो बहुत खड़े होते हैं। वेडछी शान्ति सेना शिविर में प्रश्नों का कैसा गलहार बरसा था! अच्छा लगता है। प्रश्न होता है, मंथन चलता है, कुछ करने की, किये जाने की उतावली नजर आती है। अब सन्नाटा नहीं है, चुप्पी नहीं है।

लेकिन सामने से जो प्रवाह दौड़ता आ रहा है, वह बड़ा जोरदार है, गति उसकी नापी नहीं जा सकती, इतनी अधिक है। और यह तो कछुए की चाल है।

"भाई, यह सब जल्दी होना चाहिए। क्यों न हम, अभी जो दंगे गाँव में चल रहे हैं, उसीमें शरीक हो जायँ!"

"अरे भाई, थोड़ा धीरज रखो। निराशा का 'कर्मयोग' क्यों करते हो? हमें तो प्रथम प्रयास में सफल होना चाहिए। अभी हम कितने हैं, हमें कौन जानता है? थोड़ी संख्या बढ़ने दो।"

संख्या बढ़ाने के लिए फिर होती हैं सभाएँ—'स्ट्रीट मीटिंग्स', शिक्षक-सभा, विद्यार्थी सभा।

भाषण पूरा होता है। प्रश्नोत्तर चलते हैं। पहला सवाल आता है, "लेकिन आप हम यह बताइये कि अब अन्याय हुआ है तो उस अन्याय के प्रतिकार के लिए हम क्या करें? शान्ति सभा, जुलूस, प्रतीक उपवास क्या इन सब चीजों से वे माननेवाले हैं? नहीं मानेंगे। हमारी २० साल की आजादी का इतिहास यही बताता है। जब तक दंगे नहीं होते, मकान नहीं जलते, पत्थरबाजी नहीं चलती, गोलीबारी नहीं होती तब तक काम नहीं बनता। हम क्या करें? अन्याय का प्रतिकार कैसे करें?

गांधीजी के आदेश का उत्तरार्ध अभी देश को सीखना बाकी है। बीस साल पूर्वार्ध सीखने में चले गये। वह सीख लिया, लेकिन अधूरा ज्ञान हमें गड्ढे में डाल रहा है।

उत्तरार्ध क्या है? सत्याग्रह का विषय है, आत्मशुद्धि का विषय है। बहुत गहराई तक जाना चाहिए। कुछ न कुछ रास्ता निकलना चाहिए। एक बाजू अन्याय का हिंसक प्रतिकार देश में चल रहा है, दूसरी बाजू उपवास जैसे सौम्यतम अस्त्र का उपयोग भी प्रतिकार के लिए होता रहता है। दोनों रास्तों पर हम भटके हुए हैं। सही रास्ता क्या है?

विनोबा कहते हैं, अन्याय का प्रतिकार पाँच प्रकार से हो सकता है

१ रेजिस्ट ईविल विथ ग्रेटर ईविल (बुराई का बलवती हिंसा से प्रतिकार करो।)

२ रेजिस्ट ईविल विथ इक्वल ईविल (बुराई का उसके तुल्य बल हिंसा से प्रतिकार करो।)

३ रेजिस्ट ईविल विथ गुड (बुराई का अहिंसा से प्रतिकार करो।)

४ रेजिस्ट नाट ईविल (बुराई का प्रतिकार न करो।)

५ असिस्ट अपोजिट मेन इन राइट थिंकिंग (निर्दोष चिन्तन में विरोधी की मदद करो।)

चिन्तन का क्षितिज बहुत दूर तक फैल गया है। पैर हमारे उससे बहुत दूर हैं। प्रत्यक्ष आचरण में देश को अभी बहुत कुछ सीखना बाकी है। ग्राम स्वराज्य, शान्ति सेना आदि की एक मनोहर सृष्टि उस पार खड़ी है, उसकी देहरी पर पाँव रखते ही पूरा रास्ता कैसे तय कर लेना यह सब मालूम हो गया है। परन्तु उधर पहुँचने के पहले बीच में यह जो गहरी खाई पड़ी है उसको कैसे लाँघना, यही मुश्किल है। बड़ी दुस्तर, दुर्गम खाई दिखती है। यह आज की परिस्थिति है।

स्वस्थ सामूहिक चित्त, समत्व युक्त चिन्तन और सुलझे हुए विचारों की दिशा में दृढ़तापूर्वक आरोहण करना इसके बिना चारा नहीं दिखता। हमारे पाँवों को सही दिशा में बढ़ने की सामर्थ्य प्रभु भर दें, यही प्रार्थना है।

—मीरा

ग्रामदान : जय जगत् : विश्व-शान्ति

आज दुनिया में गरीब मुल्कों के सामने समस्या है कि वे कैसे अमीर मुल्कों की बराबरी में आयें। अमीर मुल्क कुछ भिक्षा या सहायता देने को राजी भले हो जायँ, पर वे अपनी कमाई में गरीब मुल्कों को शामिल मानने या उन्हें अपनी बराबरी में लाने के लिए अपना स्वार्थ त्यागने को तैयार नहीं दीखते। अमीर मुल्कों की आबादी दुनिया की कुल आबादी की तिहाई है, पर उनके पास प्राकृतिक साधन, जैसे–जमीन, खनिज सम्पत्ति–तेल, कोयला, लोहा वगैरह—गरीब देशों के प्राकृतिक साधनों से कई गुना अधिक हैं। उनके पास जमीन प्रति व्यक्ति दो गुनी और खनिज सम्पत्ति के भंडार दस गुना अधिक हैं। ये अमीर मुल्क गरीब मुल्कों को सिर्फ कुछ पूँजी या मशीन की सहूलियत देकर यह मान लेते हैं कि गरीब मुल्क उनकी बराबरी में आ जायेंगे। इस कारण विश्व में गरीब और अमीर राष्ट्रों के बीच की दूरी कम होने के बजाय बढ़ती ही जा रही है। इस विषमता का बढ़ना अशान्ति का कारण बनता है और नयी-नयी अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को जन्म देता है।

विनोबा ने इस समस्या को बुनियाद से ही हल करने के लिए 'जय जगत्' का नारा बुलन्द किया है। आज सारे विश्व को एक होकर सबके सुख-दुःख में शिरकत करना लाजमी है। वे कहते हैं कि जो हम विश्व में होते देखना चाहते हैं उसे पहले अपने घर से शुरू करें। इसी तरीके का नाम है ग्रामदान। ग्रामदान के मानी यह है कि *छोटे पैमाने पर जहाँ भी हम* रहते हैं, चाहे वह शहर का मुहल्ला हो, अपना कारखाना *या साथ मिलकर काम करनेवालों* की और कोई इकाई या गाँव हो, उसमें रहनेवाले सभी लोग अपने को सारे समुदाय (कम्युनिटी) के लिए जिम्मेदार मानें।

विश्वराष्ट्रों में ग्रामदान सिद्धान्त

ग्रामदान के जो सिद्धान्त हैं वे ही जय जगत् के भी हैं। अगर ये सिद्धान्त अमीर-गरीब राष्ट्रों की आपसी विषमता मिटाने में *लागू करने हों तो राष्ट्रों से कहना* होगा कि जो भगवान की देनें हैं—धरती, तेल, पेट्रोल, लोहा-कोयले की खानें आदि—उनके मालिक वे लोग ही नहीं हो सकते, जो उस राजनैतिक इकाई में रहते हैं जहाँ ये वस्तुएँ उपस्थित हैं। ये देनें तो संसार के सभी लोगों के लिए काम आनी चाहिए। उनके स्वामित्व का विसर्जन सारे विश्व के हित की दृष्टि से यदि राष्ट्र आज नहीं कर सकता तो भी इस सिद्धान्त को मान्य करे और प्रतीक के रूप में बीसवाँ या जो भी हिस्सा ठीक समझे, राष्ट्रीय सम्पत्ति के बजाय विश्व-सम्पत्ति मानकर उसका लाभ गरीब राष्ट्रों को दें। प्राकृतिक (ईश्वर प्रदत्त) साधनों में सब अल्लाह के बंदों का बराबरी का हक हासिल है, यह माना जाना चाहिए और इस तरफ बढ़ने के लिए यह पहला कदम उठाना चाहिए। बाकी भी जो *प्राकृतिक साधन—खेती, जंगल, चरागाह की* भूमि या बंजर तथा खनिज पदार्थों के स्रोत जिस जिस देश में हैं, वे उनका जैसा चाहें उपयोग करें, यह छूट नहीं दी जानी चाहिए। उनका उपयोग आज हर देश अपने लाभ के *लिए चाहे करता भी रहे,* पर उस सम्पत्ति को बरबाद करने का हक उसको नहीं हो। अर्थात् विश्व का कंट्रोल सभी प्राकृतिक साधनों पर माना जाय। यह तभी मुमकिन है, जब हर मुल्क 'खेत गाँव का, खेती किसान की' वाली बात अपने प्राकृतिक साधनों के बारे में भी मानें और विश्व की किसी वैज्ञानिक संस्था के नियन्त्रण में उनका उपयोग करने को राजी हो।

ग्रामदान का यह सिद्धान्त अमल में लाने के लिए ईश्वरीय देन के अलावा अपनी मेहनत का भी फल गरीब के साथ बाँटकर खाया जाय, खाये; हर राष्ट्र अपनी राष्ट्रीय आय का कुछ अनुपात, चाहे वह १ प्रतिशत हो या २ प्रतिशत, विश्व के गरीब देशों की तरक्की के लिए लगाये।

गांधीजी के जमाने में *विश्व को भारत ने* अनमोल देन दी, सत्याग्रह के विचार की। अब विनोबा के जमाने में वही भारत विश्व को ग्रामदान-विचार की अनमोल देन दे रहा है।

—देवेन्द्रकुमार गुप्त

चौदहवें राजस्थान सर्वोदय सम्मेलन का निवेदन

राजस्थान नशाबंदी समिति ने २ अक्तूबर, '६९ गांधी जन्म शताब्दि तक राज्य में पूर्ण शराबबंदी लागू करने के लिए २ अक्तूबर, '६७ से सत्याग्रह का कदम उठाया है, राजस्थान समग्र सेवा संघ की कार्य समिति उसका हार्दिक स्वागत और समर्थन करती है। हम लोग हाथल सर्वोदय सम्मेलन एवं जोधपुर में हुई समग्र सेवा संघ की सभा के समय से ही राज्य में २ अक्तूबर, '६९ तक पूर्ण शराबबंदी लागू करने के लिए अपनी आवाज बुलन्द करते आये हैं। जुलाई '६७ को दुर्गापुर की बैठक में इस संकल्प-पूर्ति की दिशा में सत्याग्रह करने संबंधी नशाबंदी समिति के निश्चय को हमने पूर्ण समर्थन दिया था। २७ सितम्बर को जयपुर की कार्य समिति की सभा में २ अक्तूबर, '६७ से सत्याग्रह को अपना ही कार्यक्रम मानकर उठाने का निश्चय किया।

हमारा यह सौभाग्य है कि पू० विनोबाजी ने शराबबंदी सत्याग्रह के कार्यक्रम को आशीर्वाद प्रदान किया है, तथा यह आशा प्रकट की है कि इससे राजस्थान के कार्यकर्ताओं में प्राण-संचार होगा। पू० बाबा और श्री जयप्रकाश बाबू ने इसे समर्थन देकर हमारी जिम्मेदारी बढ़ा दी है।

गांधी जन्म शताब्दि तक राज्य में पूर्ण शराबबंदी लागू हो, इस संकल्प से हमारा इस समय का कार्यक्रम और कर्तव्य हमारे *सामने स्पष्ट है। हम सबको चाहिए कि इस* कार्यक्रम को यशस्वी बनाने में हम अपनी पूरी शक्ति लगा दें। इस काम में श्री गोकुलभाई भट्ट तथा नशाबंदी आंदोलन समिति को मदद पहुँचाने के लिए मान सदस्यों की एक समिति मनोनीत की गयी है।

प्रदेश के समस्त सर्वोदय सेवकों, सार्वजनिक कार्यकर्ताओं, राजनीतिज्ञों, रचनात्मक संस्थाओं तथा शराबबंदी में विश्वास रखनेवाले भाई-बहिनों से अपील है कि वे सत्याग्रह को सफल बनायें तथा जो भी कार्यक्रम सत्याग्रह समिति की ओर से समय-समय पर घोषित हो, उसे पूरा करने में प्राण-पण से जुट जायें।

भूदान यज्ञ रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं. ३४

सचेतकों की चेतावनी

दल-बदल के कारण अबतक हरियाना, पांडिचेरी, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश और मणिपुर में कांग्रेसी सरकारों का पतन हो चुका है। बिहार और बंगाल की गैर-कांग्रेसी सरकारों को उलटने के लिए प्रयत्न हो रहे हैं। भारत में दल-बदल पहले भी हुए हैं, किन्तु यह रोग जिस तीव्रता के साथ गत आमचुनाव के बाद फैला है, उससे ऐसी राजनैतिक अस्थिरता पैदा हो गयी है। किस प्रान्त की सरकार कब बदल जाय, इसका कोई भरोसा नहीं रह गया है।

अक्तूबर के प्रारंभ में शिमला में दल-बदल की समस्या पर विचार करने के लिए सचेतकों का एक सम्मेलन हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए हिमाचल प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री परमार ने कहा कि दल-बदलुओं को फिर से चुनाव लड़कर जनता की सहमति लेनी चाहिए। सम्मेलन के अध्यक्ष श्री रामसुभग सिंह ने कहा कि इस प्रवृत्ति से जनता का विश्वास लोकतांत्रिक प्रणाली पर से उठ जायगा। इस सम्मेलन में राजनैतिक दलों से यह अनुरोध किया गया कि इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए वे मिलकर एक आचार-संहिता बनायें।

गत १४ अक्तूबर को विधान-मंडलों के अध्यक्षों के सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए लोकसभा के अध्यक्ष श्री नीलम संजीव रेड्डी ने कहा कि इस प्रवृत्ति से जनता लोकतंत्र का विश्वास खो देगी। उन्होंने भी राजनैतिक दलों के नेताओं और लोकतंत्र में आस्था रखनेवाले लोगों से अनुरोध किया कि वे मिलकर एक आचार-संहिता बनायें, जिसे ईमानदारी से अमली रूप दिया जा सके।

बम्बई विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री गजेन्द्रगडकर ने आचार-संहिता द्वारा इस प्रवृत्ति को रोकने में आशंका प्रकट की है और इसे रोकने के लिए कानून बनाने पर जोर दिया है।

श्री जयप्रकाश नारायण ने विधायकों के दल-परिवर्तन को राजनैतिक भ्रष्टाचार बताया है। उन्होंने जनता से अनुरोध किया है कि वे ऐसे विधायकों को घेराव करके उन्हें पुनः चुनाव लड़ने को बाध्य करें।

श्री रं० रा० दिवाकर ने दल-बदल को मतदाताओं के साथ अन्याय बताते हुए कहा है कि निर्वाचन-आयुक्त को दल-बदलू विधायकों का स्थान रिक्त घोषित कर पुनः चुनाव कराने का अधिकार देना चाहिए।

श्री राजगोपालाचारी ने दल-बदल का स्वागत किया है। आचार्य कृपालानी ने सामूहिक दल-बदल के पक्ष में तर्क देते हुए कहा है कि कुछ सदस्य अपने दल की नीतियों से असहमत होते हुए भी अपने राजनैतिक जीवन को खतरे में डालने के भय से दल नहीं बदलते। लेकिन अब कोई पहल करता है तो वे सामूहिक रूप से उसके पीछे हो जाते हैं।

दैनिक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' द्वारा दल-बदल पर विभिन्न राजनैतिक दलों के नेताओं से राय माँगने पर स्वतंत्र पार्टी के अध्यक्ष प्रो० रंगा, स्व० डा० राममनोहर लोहिया, वामपंथी साम्यवादी श्री राममूर्ति और दक्षिण-पंथी साम्यवादी श्री भूपेश गुप्त ने दल बदल का पक्ष लिया है और इस प्रवृत्ति को प्रजातंत्र के लिए पोषक भी माना है। लेकिन जनसंघ के श्री बलराज मधोक ने सामूहिक दल बदल को एक अस्वस्थ प्रवृत्ति माना है। श्री मधोक ने इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए सभी राजनैतिक दल के प्रतिनिधियों से अनुरोध किया है कि वे मिलकर एक आचार-संहिता बनायें। प्रजा समाजवादी पार्टी के श्री नाथ-पाई ने दल-बदल को प्रजातंत्र के लिए खतरा माना है और इसे रोकने के लिए कानून बनाने पर बल दिया है।

पंजाब के मुख्यमंत्री श्री गुरनाम सिंह और उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री चरण सिंह ने भी इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए आचार-संहिता बनाने पर जोर दिया है।—'नम्र'

आन्दोलन के समाचार

प्रखण्डदान : उत्तर प्रदेश का सीमान्त जिला पिथौरागढ़ के अन्तिम प्रखण्ड तथा अनुमंडल धारचूला का प्रखण्ड तथा अनुमंडलदान १५ अक्तूबर को घोषित हुआ। इसको शामिल करके इस प्रदेश में अब तक ९ प्रखण्डदान हो चुके। इस प्रखण्ड में ९१ गाँव हैं जिनमें से ८१ गाँव प्रखण्डदान में शामिल हैं। प्रखण्डदान में सम्मिलित गाँवों में भारतीय सीमा पर के १४ हजार फीट की ऊँचाई पर बसे हुए गाँव भी हैं।

—धेमाजी (असम) ब्लाक के सुवर्णश्री अंचल के सर्वोदय, ग्रामदान तथा सरकारी कर्मचारियों का एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में लखीमपुर जिला के उत्तरखंड प्रखण्ड में प्रखण्डदान-विचारक प्रसार की चर्चा हुई।

ग्रामदान : देहरादून जिले में दो और ग्रामदान मिले। प्रदेश में अब तक कुल ग्रामदानों की संख्या १५५४ की हुई है।

बलिया जिले के प्रखण्ड पन्दह में २२-२३ अक्तूबर के दो विशाल जनसभाओं से प्रखण्ड-दान का अभियान शुरू हुआ। इस ब्लाक के कई गाँवों के प्रधानों तथा संभ्रान्त लोगों ने घोषणापत्र पर अपने हस्ताक्षर कर दिये हैं।

भू-वितरण : मध्य प्रदेश भूदान यज्ञ पर्षद द्वारा प्रदत्त एक जानकारी के अनुसार गत माह मुरैना जिले की विजयपुर तहसील में ३ गाँवों के २७ भूमिहीन परिवारों में ११३ एकड़ भूमि का वितरण किया गया।

गुना जिले की अशोकनगर तहसील के एक गाँव में ११ भूमिहीन परिवारों में ६१ एकड़ भूमि बाँटी गयी। इसी जिले के मुंगावली तहसील के ४ गाँवों में २४ भूमिहीन परिवारों के बीच १०४ एकड़ भूमि का वितरण हुआ।

साहित्य-प्रचार : भू-वितरण के सिलसिले में १६९.२८ पैसे के सर्वोदय साहित्य की बिक्री हुई।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व सेवा संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ : १८,०० इस अंक की छपी प्रतियाँ : ४,७००

भूदान-यज्ञ मूलक, ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार — वर्ष : १४

१० नवंबर, '६७ — अंक : ६

प्रस्तुत अंक में

१४ नवम्बर नेहरू जयन्ती के अवसर पर हमने अपने देश में तेजी से फैल रही साम्प्रदायिकता की जड़ों को उभारने की कोशिश की है, फलश्रुति को प्रस्तुत किया है, सुझाव की दिशाओं का संकेत करने का भी प्रयास किया है। कल के बच्चे : आज के जवान, आज के बच्चे : कल के जवान, राष्ट्र और विश्व की किस भूमिका में रह रहे हैं, रहेंगे, इसीको स्पष्ट करने की चेष्टा की गयी है।—सं०

इस अंक में

वार्षिक शुल्क १० रु०
एक प्रति : २० पैसे
विदेश में : साधारण डाक शुल्क—
१८ रु० या १४ शि० या ४ डालर
(हवाई डाक शुल्क देशों के अनुसार)
सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन
राजघाट वाराणसी-१
फोन नं० ४२८५

साम्प्रदायिकता और राष्ट्र

इसीकी तौर पर धर्मनिरपेक्ष राज्य के ये मानी नहीं होते कि उस राज्य के लोग धर्म या मजहब से अपना नाता न रखें। धर्म निरपेक्ष राज्य का मतलब उस राज्य से है जो सभी मजहबों की हिफाजत करता है, एक को नजरअन्दाज करके दूसरे की तरफदारी नहीं करता और खुद किसी मजहब या धर्म को नहीं अपनाता।

अगर आप धर्मनिरपेक्ष के बजाय किसी और ढंग के राज्य की बात सोचें तो आप सैकड़ों साल पीछे सोचनेवाले बन जायेंगे। हिन्दुस्तान में किसी और आदर्श के बारे में सोचने का मतलब एक ही होगा कि हम एक दूसरे से अलग अलग होने का रास्ता पकड़ें और यह हमारी खतरनाक कमजोरी होगी।

साम्प्रदायिकता का वही जहर दूसरे ढंग से कुछ और लोगों में भी घर कर गया और इस तरह हमारे बीच में हिन्दू, सिख तथा अन्य सम्प्रदायवादी संगठन खड़े हो गये, जो अपने आप में उतने ही साम्प्रदायिक हैं जितनी मुस्लिम लीग थी। अलबत्ता वे अपने आपको राष्ट्रीय कहते हैं। वे अपने को राष्ट्रीय कह सकते हैं क्योंकि आखिरकार वे राष्ट्र के भीतर ही रहते हैं। लेकिन इनकी राष्ट्रीयता के बाने के भीतर भी अगर आप इनको परखकर देखने की तकलीफ उठायें तो आप देखेंगे कि साम्प्रदायवाद एक निहायत खतरनाक चीज है क्योंकि यह हमारे देश की बुनियादी एकता को ही जड़ से काटने की कोशिश करता है।

यह सम्प्रदायवाद कैसा भी हो इससे खतरे में कमी नहीं आती। चाहे वह ब्राह्मण, अब्राह्मण की शक्ल में, चाहे इस जाति या उस जाति के रूप में या और किसी भी बहाने सामने आये, हमें इससे सावधान रहना चाहिए।

सम्प्रदायवाद एक नया और फूट पैदा करनेवाली चीज है। आज की नयी दुनिया में इसके लिए कोई जगह नहीं है। अगर हम अपने चारों ओर सम्प्रदायवादी घेरे बना लें तो हमारी तरक्की नहीं हो सकती। यह सिर्फ हिन्दू और मुसलमान के बीच की समस्या नहीं है बल्कि दूसरे धर्मों, पंथों और जातीय जमातों की समस्या भी है। एक बार अगर हमारे भीतर यह खतरनाक रवैया फैल जाता है, तो हम नहीं जानते कि वह कहाँ जाकर खत्म होगा। और तब अपनी तरक्की के किसी भी सपने के पूरे होने की उम्मीद को हमें छोड़ ही देना होगा।

दुनिया के दूसरे देशों में फासिस्टवाद की अलग अलग किस्में जैसे पैदा हुईं उनमें और सम्प्रदायवाद में बहुत सी मिलती जुलती बातें दिखाई देती हैं। सम्प्रदायवाद दरअसल फासिस्टवाद का हिन्दुस्तानी रूप है। फासिस्टवाद के क्या नतीजे सामने आये, यह हम देख चुके हैं। साम्प्रदायिक झगड़ों ने भारत में क्या मुसीबतें ढाई हैं, यह भी हम देख ही चुके हैं। इन दोनों बुराइयों का गठबन्धन अपने साथ न जाने कितनी तकलीफें और मसले लायेगा। कुल मिलाकर यह एक भद्दी और नीचे ले जानेवाली बात है जो आदमी की पशुत्व की भावना को उभाड़ती है।

अगर भारत के लोगों ने सम्प्रदायवाद के खतरनाक नारे को कबूल कर लिया, तो भारत के भीतर न सिर्फ आपसी खुराफात की शुरुआत हो जायेगी, बल्कि यह बाहरी दुनिया से बिल्कुल अलग पड़ जायगा। तब दुनिया की नजरों में भारत नीचे गिर जायगा।

—जवाहरलाल नेहरू

नेहरू ऑन कम्युनलिज्म—पृ० २, १०, ११३, २१४, २६१

देश

१०-१०-'६७ : उत्तर प्रदेश के राजस्व मन्त्री ने प्रयाग में पत्रकारों को बताया कि सरकार ग्रामसभाओं की जमीनों पर भूमिहीनों को बसायेगी।

११-१०-'६७ : विद्रोही नागाओं ने युद्ध विराम की अवधि ३१ जनवरी '६८ तक के लिए बढ़ा दी।

१-११-'६७ : आज से आकाशवाणी पर विज्ञापन का प्रसारण शुरू हुआ। नित्य ७५ मिनट के प्रसारण से सलाना ४५ लाख रुपये की आय होगी।

२-११-'६७ : भारत के शिक्षामंत्री ने कहा कि भारत में मंत्री बनने के लिए किसी राजनीतिक दल का समर्थन लेकर चुनाव जीतना जरूरी है, शिक्षित होना नहीं।

३-११-'६७ : मैसूर के मुख्यमंत्री ने कहा कि भाषायी राज्य अगर देश की एकता के लिए खतरनाक साबित हों तो उन्हें खत्म कर देना चाहिए।

४-११-'६७ : पश्चिम बंगाल की संयुक्त सरकार के खाद्यमंत्री के त्यागपत्र देने से सरकार संकट में पड़ गयी।

५-११-'६७ : प्रधान मंत्री रूस की अक्तूबर-क्रांति की ५० वीं वर्षगाँठ-समारोह में भाग लेने मास्को रवाना हुईं।

विदेश

३०-१०-'६७ : मास्को (रूस) की घोषणा के अनुसार मानव-रहित दो अन्तरिक्ष उपग्रहों में स्वचालित सम्पर्क और विच्छेद का प्रयोग सफल रहा।

३१-१०-'६७ : रूस द्वारा छोड़े गये दो उपग्रहों ने आपस में मिलने के बाद विदाई ली, और धरती पर सकुशल उतर आये।

२-११-'६७ : अमेरिकी राष्ट्रपति ने वियतनाम युद्ध जारी रखने की घोषणा की।

३-११-'६७ : ब्रिटेन ने ६ सितम्बर '६८ को *'स्वाजी लैण्ड'* को स्वाधीन करने की घोषणा की। 'स्वाजी लैण्ड' दक्षिण अफ्रीका के गणतंत्र से घिरा एक छोटा देश है।

सुझाव और आख्यातियाँ

जिस उद्देश्य से 'भूदान-यज्ञ' के सम्पादक का परिवर्तन किया गया है, वह पूरा होता दिखाई दे रहा है। कुछ नयापन लेकर यह पत्र सामने आया तो है, परन्तु कुछ रूढ़ियों से मुक्त होना अभी बाकी है।

प्रथम तो इसे सर्व-सेवा-संघ के मुखपत्र की सीमाओं में आबद्ध नहीं करना चाहिए। कितनी भी व्यापक क्यों न हो, फिर भी संघ एक संस्था ही है। संस्था का मुखपत्र जनक्रान्ति का 'मेन आर्गन' नहीं बन सकेगा। क्रान्तिकारियों की जमात सर्व-सेवा-संघ रजिस्टर्ड संस्था से बाहर ही अधिकतर है, अतः *मुखपृष्ठ का यह वाक्य खटकने जैसा है।*

द्वितीय, जब से मैंने 'भूदान-यज्ञ' का *नियमित रूप से अध्ययन करना प्रारम्भ किया*—पिछले आठ सालों से—तब से मैं देख *रहा हूँ कि उसमें छपनेवाले लेखों के लेखकों* का एक सीमित 'ग्रुप' है। उन्हींके चेहरे प्रायः *दिखाई देते हैं। खेल भी क्या, सर्वोदय*-नेताओं के भाषण ही होते हैं वे। परन्तु *समाज-परिवर्तन के सन्दर्भ में सोचनेवाले* सैकड़ों लोग होंगे इस देश में, भले ही उन पर सर्वोदय का लेबुल न लगा हो। उनके विचारों को भी आमंत्रित किया जाय तो उससे व्यापकता ही आयेगी और मुक्त-चिन्तन के क्षितिज दिखाई देंगे। अन्यथा सर्वोदय-चिन्तन का अर्थ विभिन्न विचारों का मंथन न होकर एक खास प्रकार के *'वेल्यू सिस्टम'* को *लादना ही* होगा। फिर पत्रकारिता का लक्ष्य प्रचारात्मक न होकर प्रकाशमूलक हो। वह तभी हो सकेगा, जब विभिन्न विचारों के 'शेड्स' एक केन्द्र पर पड़ेंगे। —योगेशचन्द्रबहुगुणा

जिला सर्वोदय मण्डल

पोस्ट चम्बा, जि० टिहरी गढ़वाल

१३ अक्तूबर के 'भूदान-यज्ञ' के बीसवें पृष्ठ पर श्री जयप्रकाश नारायण को सन् १९४६ में प्रजा समाजवादी दिखाया गया है। वास्तव में प्रजा समाजवादी पार्टी १९४६ तक नहीं बनी थी बल्कि १९४७-४८ में तो कांग्रेस से अलग होकर सोशलिस्ट पार्टी बनी थी और उसके कई वर्ष बाद १९५० के लगभग सोशलिस्ट पार्टी व किसान मजदूर प्रजा पार्टी (जिसके बहुत से सदस्यों को वर्तमान दल बदल करनेवालों के जनक कहना अधिक उपयुक्त होगा) का एकीकरण होकर *प्रजा* समाजवादी पार्टी बनी।

यद्यपि कम्युनिस्ट अधिनायकवाद की प्रतिक्रिया से प्रेरित होकर मार्क्सवाद के पंडित श्री *जयप्रकाश नारायण का १९४६ में हिंसक* क्रान्ति के केवल उसी विकल्प की ओर ध्यान *गया जो मार्क्सने जर्मनी, इंगलैण्ड आदि* औद्योगिक देशों के लिए विधानवादी तरीके *द्वारा बताया थी। अहिंसक सीधी कार्यवाही* द्वारा क्रांति करने की सम्भावनाओं की तरफ उनका ध्यान *नहीं गया, किन्तु फिर भी १९४६* में जयप्रकाश बाबू को प्रजा समाजवादी कहना सही नहीं है। —सीताराम

सिविल लाइन्स, मुरादाबाद

सन् १९४६ में श्री जयप्रकाश नारायण को प्रजा समाजवादी दिखाने की हमारी दृष्टि पक्ष के चौखटे में फिट नहीं बैठेगी। हमने विचार-आरोहण की दृष्टि से उन्हें तरुण समाजवादी, प्रजा : समाजवादी और नव समाजवादी माना था। ये तीनों वर्गीकरण वैचारिक हैं न कि पार्टी-आधारित। —सं०

४-११-'६७ : संयुक्त राष्ट्र महासभा ने ब्रिटेन से द० रोडेशिया के विरुद्ध शक्ति-प्रयोग की जोरदार माँग की।

५-११-'६७ : अदन के राष्ट्रपति को क्रांतिकारियों ने अपदस्थ कर दिया।

हिन्दुस्तान की हालत ही यही थी। होना तो यह चाहिए कि छोटी-छोटी जातिवालों को सब प्रकार की मदद करने के लिए बड़ों को दौड़ना चाहिए। बड़े लोग पारमार्थिक नहीं रहते हैं, वे बड़े लोग भी बड़े स्वार्थी होते हैं। इसलिए उनका द्वेष करते हैं। इसका उपाय यही है कि बड़ी जातिवाले छोटी जातिवालों के साथ रहें, प्रेम करें, उन्हें तालीम दें, प्रेम से उन्हें अपनी जमीन का हिस्सा दें।

ऊँची जाति के लोग यह समझेंगे और उसके अनुसार बरतेंगे तो उनके लिए आदर भाव फिर से बढ़ेगा। फिर वे बचेंगे और उससे समाज भी बचेगा।

इस भेद के कारण समाज का विकास आगे नहीं हो सकता। सारा समाज एक शरीर के समान होना चाहिए। शरीर में अवयव होते हैं उनके अलग-अलग काम होते हैं। 'हाथ, पाँव, आँख, कान' इत्यादि का काम अलग-अलग होता है। उसमें हम ऊँच-नीच नहीं मानते, भेद नहीं करते। सबकी समान चिन्ता करते हैं। पाँव में काँटा लग गया तो हाथ उसकी सेवा में दौड़ते हैं। कान में दुख होने से आँखें रोती हैं। एक लड़का कान दुखने के कारण रो रहा था। मैंने उससे पूछा कि कान दुखने से आँख क्यों रोती है? वह बेचारा क्या जवाब देता? कान के साथ आँख की तीव्र सहानुभूति होती है। ये सारे अवयव एक-शरीर-में एक रस होकर रहते हैं। अपना अपना अलग-अलग काम करते हैं। सब एक देह के अवयव हैं, यह बात वे भूलते नहीं। इसलिए यह शरीर चल रहा है। यही दृष्टान्त समाज पर लागू होना चाहिए। समाज के सुखी अवयव दुखी अवयव की सेवा में दौड़ने चाहिए। जिस समाज में दुखी के लिए सहानुभूति होती है वह समाज जिन्दा समाज है, जहाँ ऐसा नहीं है वह समाज जिन्दा नहीं है। *

तुलसीदास ने कहा था कि सारा त्रिभुवन मेरा है। परन्तु उन्होंने लिखा तो हिन्दी भाषा में; क्योंकि मानव की शक्ति मर्यादित रहती है। मानव का शरीर मर्यादित शक्तिवाला होने के कारण सेवा मर्यादित ही की जा सकती है। परन्तु वृत्ति मर्यादित नहीं रखनी चाहिए। कोई मेरे कर्तव्य क्षेत्र से बाहर भले ही हो, परन्तु अगर वह मेरी सहानुभूति के और विचार के क्षेत्र से बाहर हो जाता है, तो मैं अपार शक्ति खोता हूँ। मेरी शक्ति मर्यादित हो जाती है। चाहे सेवा का क्षेत्र मर्यादित हो परन्तु भावना का और सहानुभूति का क्षेत्र अमर्यादित होना चाहिए। मनुष्य को मनुष्य के नाते ही देखो। नहीं तो हिन्दू धर्म की जो आत्मा है, उसे हम खोयेंगे। हिन्दू धर्म कहता है कि सब में एक ही आत्मा वास करती है। हिन्दू धर्म एक ऐसा विशाल धर्म है कि वह किसी भी तरह का संकुचित भाव नहीं रखता है। यदि हम इस बात को ध्यान में नहीं रखते हैं तो हिन्दू धर्म की बुनियाद को ही खोते हैं। हमारे शास्त्रों में कहा है कि 'एकं सद् विप्राः बहुधा वदन्ति' हिन्दू धर्म कहता है कि सत्य एक है, परन्तु उपासना के लिए अलग-अलग हो सकता है। उन्होंने 'मूर्खाः बहुधा वदन्ति' ऐसा नहीं कहा। इसलिए ऐसी व्यापक वृत्ति हो तो आप हिन्दुओं की सेवा कर सकते हैं।

प्रश्न : अगर किसी एक धर्म का दूसरे धर्म पर आक्रमण होता हो तो क्या उसको संगठित नहीं होना चाहिए?

उत्तर : यह सवाल हवा में नहीं पूछा गया है, जमीन पर पूछा गया है। आज हमें डर है कि यद्यपि हमारी संख्या बड़ी है, फिर भी मुसलमान हमें खत्म करेंगे, और मुसलमानों को भी हमसे वैसा ही डर है। इसलिए पाकिस्तान की आमदनी का ७० प्रतिशत और हमारी आमदनी का ६० प्रतिशत सेना पर खर्च होता है। यह सौदा दोनों को बहुत महँगा पड़ रहा है। हम दोनों एक दूसरे के खिलाफ मजबूत रहना चाहते हैं। वैसे भौतिक दृष्टि से तो बलवान् नहीं हैं, लेकिन अमरीका और रूस जैसे भौतिक दृष्टि से बलवान् देश भी एक-दूसरे से डरते रहते हैं। एक दूसरे के डर से दोनों शस्त्रास्त्र बढ़ाते हैं। डर से डर पैदा होता है। जो गुण हम अपने हृदय में रखते हैं वह दूसरे में पैदा होता है। यदि किसी जानवर के सामने भी हम बिना डरे हुए जायँ तो हमारी आँखों में निर्भयता देखकर वह हम पर हमला नहीं करता। इसलिए आज हमारा डर ही हमें डरा रहा है।

अमेरिकावाले समझते हैं कि रूस के सब लोग बदमाश हैं और रूसवाले समझते हैं कि अमेरिकावाले सब बदमाश हैं। इसी तरह पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के लोग एक-दूसरे के लिए ऐसा ही खयाल रखते हैं, लेकिन यह गलत विचार धारा है। †

—विनोबा

* २४-७-५६, सेलम, मद्रास

† लखनऊ : ९-५-५३

मानवता का भविष्य : भविष्य की मानवता !

आज अपने देश में एक अजीब परिस्थिति बनी है, और जो घटना जगह जगह साम्प्रदायिक उपद्रवों के रूप में घटी है, वह इस परिस्थिति का हिस्सा है। मैं चाहता हूँ कि आप इन घटनाओं से जरा पीछे हटकर नजर डालें और जो परिस्थिति पैदा हुई है, जिस खतरे से आज हमारा देश गुजर रहा है, उसको समझने की कोशिश करें। यह खतरा हमारे अन्दर से पैदा हुआ है, यह खतरा हमारे दिमागों में है। भारत का हजारों वर्षों का इतिहास बताता है कि भारत के दुश्मन भारत के बाहर से नहीं आये, अन्दर से पैदा हुए। जब हम एक थे, तो सिकन्दर के सेनापति सेल्यूकस को भी पराजित करके यहाँ से लौटाया गया, और जब हमारे आपस में झगड़े हुए, हमारे अन्दर फूट हुई, तो जो आया हमें लात मारकर गया, लूट-पाटकर गया। उसी तरह आज हमारे घरों में, अपने देश में हम खुद ही अपने दुश्मन बन रहे हैं। जैसा कि मैंने ऊपर कहा, दुश्मन हमारे दिमागों में बैठा हुआ है। हमारे दिमागों में आज ऐसी एक हास्य

इस अंक में पढ़ें—

इस गाँव में स्वस्थ और परिपुष्ट चित्र का दर्शन हो।

१० नवंबर, '६७
वर्ष २, अंक ७] [१८ पैसे

मन हल्का कर रहा हूँ

प्रिय सम्पादकजी,

'गाँव की बात' चाव से पढ़ता हूँ और कभी-कभी मन में आता है कि अपनी बात भी आपको लिखूँ, लेकिन खेती-बारी की झंझटों में इस तरह फँसा रहता हूँ कि चाहते हुए भी लिख नहीं पाता। आज किसी तरह थोड़ा समय निकालकर लिख रहा हूँ। आप कहेंगे कि क्या अपना रोना रोता है, पर क्या करूँ? अपने पर जो बीतेगी उसीको तो आदमी लिखेगा! सोचा था कि पिछले साल के सूखे के बाद इस साल दम भर अनाज घर में आ जायगा, लेकिन सोचना किसी काम नहीं आया। खेती भगवान् की कृपा की मुहताज तो थी ही, अब भगवान् से बढ़कर ब्लाक की मुहताजी हो गयी। आपको विश्वास नहीं होगा, बड़ी मुश्किल से ग्रामसेवकजी की खुशामद करके ताइचुंग का थोड़ा बीज लाया था। सुना था इस धान में धान ही धान होता है, और हथिया के पानी का गुलाम भी नहीं रहता। लालच लगी, ले आया। कुएँ के पासवाले खेत में बोया। सोचा, जरूरत पड़ेगी तो थोड़ा-बहुत पानी भी दे दूँगा। बोने को बो तो दिया पर न पूरी खाद दे सका, न दवा छिड़क सका। आप शायद मानेंगे नहीं, लेकिन मैं सच कह रहा हूँ कि खाद और दवा के लिए कुल मिलाकर मैं तेरह बार ब्लाक दौड़ा हूँ। पत्नी के बार-बार मना करने पर भी पड़ोस के मास्टर साहब से रुपये उधार लिये। सोचा खूब धान होगा तो खाद और दवा का दाम निकल आयेगा, और रुपये चुका दूँगा। लेकिन नहीं मिली खाद और नहीं मिली दवा छिड़कने की मशीन। ग्रामसेवकजी और ब्लाक के बाबू लोग कहते रहे कि मिलेगी, मिलेगी, पर नहीं मिली, नहीं मिली। घर का कूड़ा-कचरा जो डाल सका डाल दिया। सफेदवाली खाद गाँव में केवल दो लोगों को मिली—सभापतिजी को, और वकील साहब को, जिन्होंने इसी सालसे खेती शुरू की है। पहले खेत बँटाई पर देते थे, इस बार बँटाईदारों को बेदखल-

परेशान हूँ
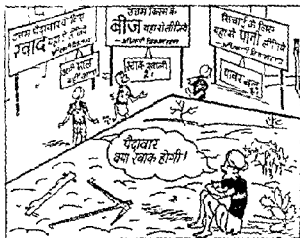
कर दिया और ५-६ बीघे में अपना धान रोपवाया। हम कई छोटे खेतिहर इन लोगों से भी मिले, लेकिन काम नहीं बना। ये लोग मशीन वगैरह कहीं से मँगवा लेते थे, और अपना काम करके लौटा देते थे। मांगने पर कुछ-न-कुछ कह देते थे। हम लोग सिवाय कहने के और करते क्या? इसी तरह कहते-कलपते दिन बीत गये। एक दिन एक अंग्रेज साहब और एक देशी बाबू मेरा कुआं देखने आये। सड़क से थोड़ी ही दूर पर है। सीमेन्ट की रिंग देकर नया कुआं गर्मी में बनाया था। मेरे बूढ़े पिताजी कुएँ पर मौजूद थे। आते ही बाबू ने पूछा: "यह खेत किसका है?" पिताजी ने कहा: "हमारा।" तब अंग्रेज साहब ने सवाल किया: "ऐसा क्यों हो गया?" पिताजी ने जबाब दिया: "सरकार, ब्लाक का बीज था। न खाद मिली, न दवा। इसमें रोग लग गया। पूरा सफेद हो गया है। पुराना धान तो कुछ-न-कुछ हो भी जाता था।" कुछ देर खड़े-खड़े देशी बाबू और अंग्रेज अंग्रेजी में बातें करते रहे, उसके बाद चले गये। पिताजी ने घर चलकर कुछ खा-पी लेने को कहा, लेकिन रुके नहीं।

मेरे ही नहीं, कई लोगों के धानका यही हाल हुआ। २२ घर के गाँव में कुल ८ घर के पास खेत है। बाकी मजदूर हैं। आठ में सिर्फ सभापतिजी और वकील साहब की खेती अच्छी है, और हम ६ लोग अपनी किस्मत को रो रहे हैं। गाँववाले कहते हैं, "कुछ पढ़े-लिखे तो तुम भी हो।" मैं सोचता हूँ कि पढ़ाई-लिखाई भी तभी काम आती है जब पैसा होता है, और पहुँच होती है।

अब करना भी क्या है? आपको लिखकर मन हल्का कर रहा हूँ। क्या कभी इस मुसीबत का उपाय भी निकलेगा?

आपका—रामगुलाम

प्रिय श्री रामगुलामजी,

आपका पत्र मिला। पढ़कर बहुत दुख हुआ। आपने लिखा, बहुत अच्छा किया। आपका ही हाल न जाने और कितने छोटे खेतिहरों का हुआ होगा! आपने हाल में यह भी जरूर सुना होगा कि उत्तर-प्रदेश में इस बार जितने लोगों ने सकर बाजरा बोया था वह सब जहरीला निकल गया। खा लेने पर पशु और आदमी दोनों के मर जाने का खतरा है, इसलिए सरकार कह रही है कि खड़ी फसल खेत में ही जला दी जाय। कह देने में सरकार का क्या जाता है, लेकिन सोचिये हजारों किसानों के मन पर क्या बीतती होगी। यही क्या, अनेक बातें हैं जो किसान का दिल और खेती की कमर तोड़ देती हैं।

रामगुलामजी, इसका एक ही उपाय है, और वह है गाँव-गाँव का सगठन। गाँव में ही बीज का गोदाम रहे, खाद रहे, दवा रहे। ग्रामसभा की अपनी पूँजी हो, और ग्रामसभा गाँव के विकास की पूरी जिम्मेदारी ले। विनोबाजी ग्रामदान में ये ही बातें तो कह रहे हैं। इसके सिवाय दूसरा उपाय दिखायी नहीं देता। गाँव की रक्षा इसीमें है कि वह एक होकर अपने पैरों पर खड़ा हो।

इसी तरह समय-समय पर अपनी और गाँव की बात लिखा कीजिये।

आपका

जय जगत्।

सम्पादक

भरोसे की घात

अभी उस दिन की बात है। हम लोग बस से सफर कर रहे थे। बगल में बैठे हुए एक महाशय ने अपने क्षेत्र के विधायक से, जो उनके पड़ोस में ही बैठे हुए थे, पूछा "ये ग्रामदानवाले रोज हमारे गाँव में चक्कर लगा रहे हैं, भूमि का बीसवाँ हिस्सा माँग रहे हैं। गाँव-स्वराज्य तथा गाँव-सरकार की बातें करते हैं। मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता कि ये क्या कहना और करना चाहते हैं?" विधायक महाशय ने उन्हें समझाया, "भाई, यह तो अपने देश की संस्कृति है कि दान और धर्म द्वारा लोगों की मोह-वृत्ति पर अंकुश लगाया जाय। आप लोग तो जानते ही हैं कि मृत्यु के समय तक मोह-मुक्त होने के लिए गो-दान आदि कराने की प्रथा है। आज देश में जो भ्रष्टाचार तथा तबाही फैली हुई है उसकी जड़ में स्वार्थपरता है। उसे ही दूर करने के लिए विनोबा ग्रामदान द्वारा दान की सतत धारा चलाते रहने का प्रयास कर रहे हैं। इसके द्वारा देश ही नहीं बल्कि दुनिया की समस्याओं का समाधान निकल सकता है।" —[illegible]

एक दूसरी नक्सालबाड़ी

[बिहार में पूर्णिया जिले के नवाबगंज डुमरिया एवं सिमड़ा पंचायत में नक्सालबाड़ी की तरह ही लूट-पाट की कार्रवाईयां हुईं। उनके पीछे शोषण और दमन की एक लम्बी कहानी है। हमारे एक स्थानीय मित्र श्री श्यामसुंदर प्रसाद गुप्त ने उन स्थानों पर जाकर जाँच की। लोगों से मिलकर दुर्घटनाओं की पूरी जानकारी प्राप्त की। 'गांव की बात' के पाठकों की सेवा में पूरी की पूरी जानकारी हम पेश कर रहे हैं। दो अंकों में पूरी होनेवाली इस दूसरी नक्सालबाड़ी की रिपोर्ट में जो सवाल सामने आयेगा उसका जवाब क्या है? क्या ग्रामदान से इसके सुलझाव का रास्ता निकल सकता है? निकलना चाहिए जरूर निकलना चाहिए। लेकिन अभी तो हम रिपोर्ट पढ़ें, स्थिति के पूरी जानकारी हो जाने के बाद इसका जवाब ढूंढने की कोशिश करेंगे। —सं०]

नवाबगंज में सूर्यनाथ सिंह का कामत• है। उस कामत से करीब एक फर्लांग की दूरी पर रामनगीना सिंह का कामत और नदी के पार भदैया टोला के करीब रायबहादुर रघुवंश नारायण सिंह एवं रामपवित्तर सिंह का कामत है। सिमड़ा में शेखा सिंह का कामत है। कामतवालों के पास खास की जमीन है। सिमड़ा को छोड़कर वहाँ के गरीब मजदूर किसान उनके खेतों में काम करते हैं। कामतवाले परम्परागत नियमों के अनुसार मजदूरों एवं किसानों का दमन एवं शोषण करते हैं। कुछ उदाहरण :

पिछले साल की बातें :

• नवाबगंज निवासी श्री मुसहरन मंडल गत साल मछली मार रहे थे। भुवेश्वर सिंहजी ने मछली मांगा। नहीं देने पर श्री सिंहजी ने मंडलजी को बुरी तरह पीटा।

• श्री सूखू मंडल की पत्नी सिंहजी के खेत में घास काट रही थी। खेत रामनिहोरा सिंहजी का था। उन्होंने घास काटने से मना किया और गाली-गलौज किया। इसपर थोड़ी बात बढ़ी और निहोरा सिंहजी ने उसकी साड़ी खींचकर बेरहमी के साथ पीटा। वह औरत गर्भवती थी उसका गर्भ नष्ट हो गया।

• श्री योगेन्द्र सिंहजी बुधूमंडल से दूध लेते थे। संयोग से एक दिन गाय नहीं लगी और सिंहजी को दूध प्राप्त नहीं हुआ, इसपर सिंहजी ने मंडलजी की पीटाई की।

• जागुन भगत दुकानदार हैं। सिंहजी उनके यहाँ उधार सौदा लाते थे। एक उधार का तकादा करने पर सिंहजी ने भगतजी को अपमानित किया, मारा।

• चाँदो ठाकुर सिंहजी के यहाँ नौकरी करते थे। किसी कारण चाँदो ठाकुर ने नौकरी छोड़ दी तो उनको सिंहजी ने पीटा।

• मजदूरों को कम मजदूरी दी जाती थी। जनानी जन को आठ आना रोज और मर्द को आठ आना रोज एवं तीन पाव सत्तू। नवाबगंज के मजदूरों ने मजदूरी बढ़ाने की मांग की। मालिकों ने मजदूरी बढ़ाने से इनकार किया, तो लोगों ने काम करना छोड़ दिया। तब मालिकों ने भदैया टोला से मजदूर लाना शुरू किया और उन लोगों का काम चलने लगा। नवाबगंजवालों के मना करने पर भी भदैया टोलावालों ने काम करना नहीं छोड़ा। इसके बाद भदैया टोला में कई काण्ड हुए

—मिसरी मण्डल बेचन मण्डल के लड़के को खेत के किनारे से भैंस लेकर जाते समय उसे श्री रामजनम सिंह ने मारा।

—श्यामदेव राय की लड़की को भदैया टोला के बासा•वाले श्री रामउदगार सिंह ने मारा।

—लाला की जमीन को बासावाले ने खरीदा, जिसपर भदैया टोलावाले ने सिकमी लिखाया था। उस जमीन को कबाला खरीद के बाद भी बँटाईदार से छीन लिया।

—भदैया टोला के बासावाले कुलदीप सिंह ने पिछले साल श्यामदेव राय को पचीस रुपये का चावल दिया और उससे एक सौ रुपया वसूल किया।

—हालो मिस्त्री से रामजनम सिंह ने जमीन का क्वाला चार सौ रुपये में किया। रुपया ले लिया लेकिन जमीन कवाला नहीं किया न रुपया ही लौटाकर दिया।

—भूजगी मिस्त्री सालाना बोझा पर उदगार सिंह एवं कुलदीप सिंह के यहाँ काम करता था, साढ़े तीन मन अनाज सिंहजी ने दबा लिया।

• 'कामत' यानी खुद खेती करानेवाले।

• 'बासा' यानी जिन लोगों के खेत घर से काफी दूर हैं, उनकी खेत पर रहने की छावनी।

—त्रिमूल सिंह ने महेन्द्र मंडल के हाथ ११४ रुपये में जमीन को बिक्री किया। रुपया लेकर खेत जोतने के लिए दे दिया लेकिन कबाला आज तक नहीं किया।

—इस वासा पर भी मजदूरी जनानी को आठ आना रोज, सूखा तथा मर्द को आठ आना एवं तीन पाव सत्तू दिया जाता था इसलिए इन लोगों ने भी मजदूरी बढ़ाने की माँग की। मजदूरी नहीं बढ़ाने पर काम बन्द करने का प्रस्ताव वैसाख मास में रखा। लेकिन संगठित रूप से यह काम नहीं हो सका, छिटपुट रूप में हुआ। एक दिन श्यामदेव राय के मारफत श्री पवित्तर सिंह ने बारह आना रोज पर जनानी जन को चलवाया लेकिन शाम को आठ आना ही दिया।

—नया टोला के पास भी, जमीन वासावाले की है। उस जमीन से मिट्टी लेकर घर में डालने पर वासावालों ने *गालियाँ सुनायीं।*

'इस प्रकार शोषण और दमन का कार्य वासावालो की ओर से अनेक तरीकों से चलता रहा। और हमलोग मूक होकर सहते रहे।' ऐसा ग्रामीणों ने बतलाया। राय बहादुर रघुवंश बाबू का कामत पास में ही पड़ता है। उनके यहाँ मजदूरी जनानी को आठ आना और दिन का भोजन देते हैं, मर्द को आठ आना तथा दिन-रात दोनों समय का भोजन भी देते है। वासावाले अपने नौकरों को आठ रुपया महीना, ग्यारह पसेरी अनाज—जिसमें चार माह के लिए शकरकन्द भी नापकर दे देते है। कभी-कभी सस्ते गल्ले की दूकान में मिलनेवाले बाजरे की दर से जितना अनाज देना होता है, उसकी कीमत जोड़कर दे देते हैं और कहते हैं कि सस्ते गल्ले की दुकान से अनाज ले लो। रायबहादुर के कामत पर ऐसी बात नहीं है। वहाँ दस रुपया महीना, ग्यारह पसेरी अनाज एक माह में दलहन और एक माह में अनाज तथा एक सेर नमक दिया जाता है। वासावाले शकरकन्द, जौ, खेड़ी ही मुख्य रूप से देते हैं। इस पर लोगों ने काम करना बन्द कर दिया। कुछ मजदूर औरतों के साथ वासावालों का रिश्ता गलत ढंग का बना हुआ है। इसलिए भी ग्रामीण क्षुब्ध हैं।

इस साल की वारदातें :

● बकरी के झगड़े में दहोगी मंडल की माँ को इस बेरहमी के साथ मारा कि उसके दाँत टूट गये। इस पर भदैया टोला, नवाबगंज, मिलकी, डुमरिया एवं सिमड़ा आदि के लोगों की पंचायत हुई जिसमें वासावाले मिश्रजी ने गलती स्वीकार की और इलाज के लिए कुछ पैसा देने का वादा किया। लेकिन मिश्रजी ने रुपया नहीं दिया और आपसी मतभेद बढ़ा।

● चाँदपुर दीरा के एक लड़के को घास काटने पर मारा-पीटा गया। मोहन मंडल का बकरा एवं कबूतर लोग मारकर खा गये। डुमरिया वाले बलदेव मंडल को नाजायज ढंग से पीटा गया। सिधु ठाकुर के साथ जमीन सम्बन्धी झंझट वासावालो से हुआ। निपटारा पंचायत के जरिये करना चाहा, लेकिन लोग विफल रहे। सिधु ठाकुर तथा सभी परेशान लोगों ने कम्युनिस्ट नेता बजरंग सराफ को इसका न्याय करने का आग्रह किया। मजदूरी बढाने की माँग इस जमाने के अनुसार ठीक ही थी। सराफजी ने इस माँग को उभाड़ा। बीती बातें दुहराई गयी, उचित न्याय के लिए हिंसा के रास्ते पर चलने की जरूरत *समझायी गयी, लोगों को उत्तेजित किया गया, विश्वास दिलाया* गया कि तुम लोगों को शोषण और दमन से मुक्ति तभी मिल सकेगी, जब उसके लिए संघर्ष करोगे।

गाँवों में बैठकें शुरू हुईं। लोगों को संगठन बनाकर संघर्ष की ओर बढने का विचार समझाया गया। 'लोग आतंकित तो थे ही, सिर्फ नेतृत्व का अभाव था वह मिल गया। बजरंग सराफ ने लोगों को समझाया कि वासावालों ने आपके बाप-दादों की ही जमीन हड़प ली है, आपके बाप-दादों तथा आप लोगों का शोषण और दमन करके उनसे बेगार कमवाया है। अब वह जमाना चला गया। आप लोग संगठन बनाकर उचित मजदूरी की माँग करें। आपको सरकार भी सहायता करेगी। इस *विचार से लोग प्रभावित हुए और लोगों ने संगठन बनाने* प्रारंभ किये। लोग जब संगठित होने लगे तो उनको हिंसा का मन्त्र दिया। कुछ लोगों ने विरोध किया तो उनको भी धमका-कर इस ओर लाया गया।

जब पूरी तरह हवा अनुकूल बन गयी तो उन लोगों को लाठी-भाला लेकर जुलूस के साथ नारे लगाते हुए एक सभा में आने के लिए कहा गया। निश्चय के मुताबिक दिनांक ५-९-६७ को भदैया टोला, चाँदपुर दीरा, नवाबगंज, मिलकी आदि के लोग 'माओत्से तुंग : जिन्दाबाद', 'चाउ एन लाई : जिन्दाबाद', 'कम्युनिस्ट पार्टी : जिन्दाबाद', 'बजरंग सराफ : जिन्दाबाद' के नारे लगाते हुए नवाबगंज पहुँचे। महिलाएँ भी इस जुलूस में काफी संख्या में थीं। वासावालों के वाम ठप हो गये।

(क्रमशः)

हृदय-परिवर्तन का दस्तावेज

विनोबाजी के समक्ष आत्म-समर्पण करनेवाले २० बागियो (डाकुओं) मे से १६ छूट गये, ४ को आजन्म कारावास की सजा मिली, वे केन्द्रीय कारागार ग्वालियर के बन्दी हैं। उनमे एक श्री लोकमनजी के अवकाश के कुछ दिन :

२७-९-६७ . आज श्री लोकमनजी को ग्वालियर जेल पर लेने गया। साढ़े आठ बजे जेल के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने मुझ से कहा कि अभी ९ बजे मैं श्री लोकमनजी को आपके सुपुर्द कर दूंगा। ९ बजे जेल के गेट बाहर वारन्ट ऑफिसर उन्हें लेकर आया और मुझ से कहा, "मैं श्री लोकमनजी को आपके सुपुर्द करता हूं, आप इन्हे १० अक्तूबर को पुन १२ बजे दिन में जेल पहुँचा देंगे।" वारन्ट ऑफिसर ज्योंहि लोकमनजी को छोड़कर गये तो लोकमनजी ने मुझसे कहा—"दद्दा, मैं आप की आज्ञा में हूं, जैसा आप कहेंगे वैसा मैं करूँगा। जनरल साहब (मेजर जनरल श्री यदुनाथ सिंह) से भी मैंने यही कहा था और पूज्य बाबा (विनोबा) से भी यही कहा था और जीवन में उसका पालन करूँगा।"

मैंने लोकमनजी से पूछा, "आपकी क्या इच्छा है।" उन्होंने कहा, "पहले मैं अपनी बहन से मिलना चाहता हूं, उसके बाद अपनी माँ से मिलूंगा।" हम दोनों पहले ग्वालियर गये, जहाँ उनकी बहन रहती है। उनके निवास पर पहुँचा तो बहन, भांजी-भांजे आदि देखते ही दौड़ आये। बहन बड़ प्यार से मिली और द्रवित हो गयी। हम दोनो ने वही भोजन किया। भाई-बहन का यह मिलाप बहन के घर २० साल बाद, १३ वर्ष बागी वेष में जगलो में और ७ वर्ष जेल में रहने के बाद हुआ।

कुछ घंटो के बाद ग्वालियर में ही भाई और वृद्धा माँ से मिलने हम दोनो गये। उनका निवास हममें से किसीको मालूम नही था। बहन के यहाँ भांजा बीमार था, इसलिए वे हम लोगो के साथ मकान तक नहीं आ सके। हम लोग मकान ढूंढ रहे थे। इतने में कुछ विद्यार्थी लोकमनजी को देखकर दौड़ आये, और चिपट गये। पूछने लगे, गुरुजी ! पुजारीजी ! आप कब छूटे ? कब आये ? ये विद्यार्थी ग्वालियर जेल में विद्यार्थी-आदोलन के समय लोकमनजी के साथ वालीबाल खेला करते थे, तथा ज्ञान-चर्चाएँ किया करते थे। इनसे विद्यार्थी बड़े ही प्रभावित थे। उन्हीं में से एक विद्यार्थी ने हमें लोकमनजी की माँ के घर पर पहुँचा दिया।

माँ देखते ही रो पड़ी। कहने लगी, मेरा 'निकसे' आ गया। और अपने हृदय से लगा लिया। माँ-बेटे बैठकर चर्चा करने लगे। बड़े आदर से लोकमनजी अपनी माँ को सान्त्वना दे रहे थे। माँ रो-रोकर, विनोबा को याद कर रही थी; उनके लिए आभार प्रकट कर रही थी, और समिति के लोगो को आशीष दे रही थी। कह रही थी, "मेरा निकसे मेरी सेवा करेगा, और अतिम सस्कार करेगा। यह विनोबा की ही कृपा है।"

माँ से मिलने के बाद हम लोग बस स्टेशन पर आये और लश्कर से बस द्वारा ४ बजे भिण्ड आ पहुँचे, रास्ते में लोकमनजी रामायण की चौपाइयाँ आदि सुनाते और भगवत् चर्चा करते रहे। बस के ड्राइवर ने कहा, "जब मैं ट्रक चलाता था तो आपने मेरा ट्रक रोका था और जगल में ही भोजन कराया था। उस दिन आपसे बहुत डर लगता था। आज नही लगता।"

पुजारीजी ने बताया "माँ का दिया हुआ मेरा नाम निकसे है, स्कूल का नाम विद्याशकर दीक्षित है, और लोकमन हमारे ठाकुर गैंग के लीडर मानसिहजी का रखा हुआ नाम है। हमारे जगल के साथी और उस क्षेत्र की जनता हमें पुजारीजी कहती है।"

२-१०-६७ आज गाधी जयन्ती पर चम्बल घाटी शान्ति समिति की ओर से आयोजित गोष्ठी में कालेज के शिक्षक वर्ग के लोगो के बीच श्री लोकमनजी ने रामायण पर चर्चा की, लोग उनसे प्रभावित हुए। उनमें से एक शिक्षक ने बागी बनने के कारणों तथा तत्कालीन दुर्घटनाओं पर चर्चा करनी चाही। लोकमनजी ने कहा, "वह किताब मैंने विनोबाजी से मिलने के बाद जला दी है। वह चर्चाएँ अब हम नही करना चाहते।"

५-१०-६७ दिल्ली के गाधी शान्ति प्रतिष्ठान के साथियो से बातचीत हुई—

प्रश्न : आप ४ साथी आजन्म कारावास में है, आपसे कहा जाय कि एक को जेल भुगतनी पड़ेगी, शेष ३ छोड़ दिये जायेंगे, तो दो में से आप किसे पसन्द करेंगे ?

उत्तर : जेल भुगतना।

प्रश्न : अगर आपको जीवन भर जेल में ही रहना पड़े, तो क्या चम्बल घाटी शान्ति समिति के बारे में आप अच्छा सोचेंगे ?

उत्तर : मेरा भाई ही यदि समिति के स्थान पर होता, तो क्या मैं उसे भाई न मानता ?

प्रश्न : विनोवाजी ने आत्मसमर्पण के बाद आपको जेल में जाने का आदेश दिया और आप सभी छूट नहीं पाये, इससे आपके मन पर क्या प्रभाव पड़ा ?

उत्तर : यह तो एक अच्छा 'बिजनेस' रहा। २० ने समर्पण किया उसमें १६ छूट गये तो लाभ ही लाभ रहा।

श्री लोकमनजी की जन्मभूमि वाह से ७ मील की दूरी पर है। उनके गाँव के तथा सम्बन्धी लोग बड़े प्यार से शाम तक मिलते रहे। समिति की बैठक में लोकमनजी ने अपने बच्चों के शिक्षण के सम्बन्ध में चर्चा की, उस समय बैठक में उपस्थित श्री पूरनचन्द्रजी जैन ने आश्वासन दिया कि मैं राजस्थान समग्र सेवा संघ की ओर से संचालित शिवदासपुरा आश्रम में उनके बच्चों को प्रविष्ट कराने का प्रयास करूँगा।

६-१०-६७ : ७ बजे की बस से हम लोग वाह से भिण्ड के लिए रवाना हुए। *बस स्टेशन पर उनके गाँव के बिरादरी* लोग एवं हरिजन तथा बनिये लोग मिलने को आ गये।

भिण्ड के रास्ते में चम्बल नदी पार करनी पड़ती है। चम्बल पर आते ही श्री लोकमनजी ने कहा, "यह हमारी संगिनी है। १३ वर्ष इसी चम्बल घाटी में चम्बल मैया की गोद में रहा हूँ। आज स्नान-पूजा यहीं पर करने दीजिये।" हम दोनों उतरे। वहीं स्नान किया। उन्होंने यज्ञोपवीत-जो उनके परिवार के भाई ने दिया था, पहना और ईशु का ध्यान किया। जलपान किया। चम्बल को प्रणाम करके चल दिये। २ बजे भिण्ड पहुँच गये।

७ व ८-१०-६७ : आज अपने परिवार में रहे। दोनों दिन २ घंटे का कार्यक्रम हमारे छात्रावास में रहता था। उस समय *नगर के लोग आया करते थे।* प्रश्न का उत्तर सूत्र में दे देते थे। ८ की शाम को कालेज के एक शिक्षक व प्राचार्य आये। एक शिक्षक ने प्रश्न किया—"आपने क्यों बंदूकें डाल दीं ? देश में इस समय भ्रष्टाचार है, उन्हें गोली से उड़ाना चाहिए था। हम भी आपके साथ होते।" लोकमनजी ने कहा, "दुःख है मास्टर साहब ! आप क्या कह रहे हैं ? क्या गोली से भ्रष्टाचार दूर होगा ? कितने अच्छे लोग भी तो गोली से मरेंगे। क्या उसका प्रायश्चित कर पाओगे ? विनोबा का विचार अच्छा है, पढ़ो और मानो।"

९-१०-६७ : आज प्रातः ८ बजे एस० पी० भिण्ड से मिले। लोकमनजी ने कहा कि मैं आपको धन्यवाद के साथ यह सूचना देने आया हूँ कि मैं कल प्रातः ग्वालियर जेल चला जाऊँगा। एस० पी० साहब ने पूछा, "वापिस जाने में कैसा लग रहा है ?" लोकमनजी ने जवाब दिया, "प्रसन्नता से जा रहा हूँ, आप सबका दर्शन मिला, वहाँ मेरे ३ मोहरे (साथी) हमारी वापसी की प्रतीक्षा कर रहे होंगे। उन्हें भी आजन्म कारावास है।" *हम तीनों घर आये। परिवार की अनेक समस्याओं* पर विचार करते रहे। लोकमनजी ने कहा, "दद्दा सब ईश्वर पर छोड़ो। अब तो वापस जाने की तैयारी करनी है।"

१०-१०-६७ : प्रातः ६ बजे बस से भिण्ड से ग्वालियर के लिए रवाना हुए। *उनकी पत्नी व बड़ा लड़का भी साथ था।* लश्कर में कुछ लोगों से मिलने के बाद पत्नी व लड़का भिण्ड के लिए वापस हुए। हम दोनों एक बजे जेल पहुँचे। लोकमनजी तुरन्त जेल के फाटक पर गये। अंदर से उत्तर आया *अभी आप ४ बजे तक बाहर रह सकते हैं। लोकमनजी ने कहा,* "मुझसे दस्तखत एक बजे के लिए कराया गया है, *इसलिए* अंदर ही बैठूँगा। मेरे कहने पर भी वह नहीं रुके और जेल के अंदर चले गये।"

—प्रस्तुत कर्ता : सल्लूदद्दा

कृषि समाचार

शरबती सोनोरा

गेहूँ की एक और बौनी किस्म

बौने गेहूँ की एक और किस्म निकाली गयी है। यह सोनोरा-६४ और लर्मारोह जैसी प्रचलित बौनी किस्मों से भी अधिक पैदावार देती है।

इस नयी किस्म का दाना प्रचलित देसी शरबती गेहूँ से मिलता-जुलता है। इसलिए इसका नाम 'शरबती सोनोरा' *रखा गया है। पिछले साल जिन किसानों ने इसे अपने खेतों में उगाया था उन्हें प्रति एकड़ २० क्विंटल या इससे भी ज्यादा पैदावार मिली थी।*

शरबती सोनोरा गेहूँ में प्रोटीन की मात्रा सोनोरा-६४ के मुकाबले १५ से २५ प्रतिशत ज्यादा होती है। किसान तथा अन्य गेहूँ खानेवाले लोग शरबती सोनोरा को इसलिए भी पसन्द करते हैं क्योंकि सोनोरा-६४ के विपरीत इसका दाना बड़ा, शरबती रंग का, चमकदार और थोड़ा सख्त होता है।

शरबती सोनोरा किस्म भारतीय कृषि अनुसंधानशाला, नयी दिल्ली में निकाली गयी है। ●

चोरबाजारी की नयी आदत

गाँव की चौपाल में एक एक करके लोग इकट्ठा हो रहे थे। जिस दिन शहर से गाँव का कोई भी आदमी अपना कोई काम निपटाकर लौटता है तो वह शाम का अखबार जरूर लेता आता है। इस तरह महीने में ४-५ दिन का ताजा अखबार गुरनामपुरा के लोगों को मिल जाता है। जिस दिन अखबार आने की बात मालूम हो जाती है उस दिन गाँव के खास-खास किसान अपने पशुओं को जल्दी खिला-पिलाकर चौपाल में इकट्ठा हो जाते हैं।

गाँव के चौधरी श्री सतपाल सिंह पेंशनयाफ्ता फौजी आदमी हैं। उन्होंने अंग्रेजों का जमाना देखा है। फिर पंजाब के बँटवारे के बाद की मुल्क की सियासी कशमकश भी वे अपनी आँखों से देख चुके हैं। चौपाल के लोग अक्सर चौधरी सतपाल सिंह के आने की राह देखा करते हैं। उनके चौपाल में आते ही एक अजीब-सी दिलचस्प रौनक छा जाती है।

३० अक्तूबर का अखबार गुरुबचन सिंह चौपाल में ले गये थे। गाँव के कुछ नौजवान उसे उलट-पलटकर देख रहे थे। इतने में चौधरीजी भी चौपाल में आ गये। "आओ चौधरी काका, तुम्हारा ही इन्तजार था।" एक युवक ने सहज भाव से कहा। सतपाल चौधरी ने हँसते हुए कहा—"मैं खुद भी आने की जल्दी में था पर भैंस लगी नहीं थी इसलिए आने में थोड़ी देर हो गयी।"

चौधरीजी अपनी जगह पर बैठ गये। युवक ने अखबार पढ़कर सुनाना शुरू किया—

"हरियाणा के उप-खाद्यमंत्री राव मन्त्रिमण्डल से इस्तीफा देकर फिर से कांग्रेस में शामिल हो गये। अखबारवालों को अपना बयान देते हुए मंत्री ने बताया कि अब विधान सभा में संयुक्त सरकार का बहुमत नहीं रहा। उन्होंने यह भी बताया कि संयुक्त दल के कुछ और भी सदस्य जल्दी ही कांग्रेस में शामिल होनेवाले हैं।" युवक ने फिर सुनाया—

"हरियाणा के मुख्यमंत्री ने स्वीकार किया कि खाद्य उपमंत्री के त्यागपत्र से वास्तव में संयुक्तदल अल्पमत में रह गया है लेकिन दूसरे ही क्षण उन्होंने कहा, "यह स्थिति क्षणिक है। मैं शीघ्र ही विपक्षीदल का कोई न कोई सदस्य अपनी ओर फोड़ लूँगा।"

चौधरी सतपाल सिंह के भतीजा श्री महिपाल सिंह ने कहा—

"आज के विधायक विचित्र जीव हैं, जिनके पास न कोई आदर्श है न कोई सिद्धान्त। ऐसे लोगों से जनता की क्या भलाई होगी?"

चौधरी सतपाल सिंह ने कहा— 'जनता की भलाई खुद जनता ही कर सकती है। नेता कहे जानेवाले लोग जनता की भलाई के नाम पर इतनी बुराई फैला रहे हैं कि उससे जनता ही नहीं वे खुद भी चक्कर में हैं। भ्रष्टाचार, काला बाजार और गैर कानूनी कारनामों की जड़ें समाज में दिनों-दिन मजबूत होती जा रही हैं। आज के राजनीतिक नेता इन बुराइयों को दूर कहाँ तक करेंगे– वे खुद इन बुराइयों के अगुवा बन गये हैं। पिछले २० सालों के दौरान जीवन में सदाचार, बाजार से सद्व्यवहार और सरकार से एतबार बराबर उठता जा रहा है।" गुरनामपुरा के दूसरे बुजुर्ग किसान हरदयाल राम ने कहा— विधायकों का मनमाने ढंग से दल बदलना भी तो भ्रष्टाचार ही है।'

"अजी यह सिर्फ भ्रष्टाचार ही नहीं—सरासर चोरबाजारी है। केन्द्र और प्रदेशों की राजधानियाँ इस चोरबाजारी की नयी आदत बन गयी हैं।' गुरुबचन सिंह ने कहा—"एक दल दूसरे दल के विधायक को फुसलाकर अपने में मिलाने के लिए क्या-क्या उपाय काम में लाता है यह आम लोग कहाँ जान पाते हैं। उन्हें तो बस इतनी ही खबर मिलती है कि फलाने इस दल से उस दल में चले गये।"

'किसीको मंत्री बनाने के वादे किये जाते हैं, किसीको लाखों रुपये की रिश्वत दी जाती है। राजनीति का यह महारोग धीरे धीरे हर प्रदेश में फैलता जा रहा है। कब कहाँ की सरकार गिरेगी और कहाँ नयी सरकार बन जायेगी, इसका कोई ठिकाना नहीं है। एक तरफ दल-बदलनेवालों का बाजार भाव बढ़ता जा रहा है, दूसरी तरफ देश रसातल को ओर धँसता चला जा रहा है।" •

अमेरिका में सामूहिक जीवन के प्रयोग–२

शेकर्ज

शेकर लोग समझते हैं कि सच्चा सामूहिक जीवन व्यक्तिगत परिवार की सीमा में असंभव है।

१८वीं सदी में एन ली के पिता ने उसकी इच्छा के विरुद्ध उसकी शादी करायी। जब एक के बाद एक उसके चार बच्चे मरे, तो उसने समझा कि ईश्वर उसे शादी करने के पाप की सजा दे रहा है। उसके दिमाग में विभिन्न प्रकार के दार्शनिक विचार आने लगे। कुछ दुःखी लोग भी उसके पास एकत्रित होने लगे। ये लोग अपने को "नया गिरिजा" कहने लगे थे। स्वभावतः पादरी-महन्त उन्हें सताने लगे। वर्षों के सख्त परिश्रम के बाद उन्हें "दिव्य-शान्ति" मिली। ये ब्रह्मचर्य तथा ईसाई साम्यवाद का खुलासा करने और दुनिया से अलग रहने पर विश्वास करने लगे। यदि विवाहित लोग उनमें शामिल होते थे, तो उन्हें एक दूसरे से अलग रहना पड़ता था। ये अपने सब सामान का उपयोग सामूहिक तरीके से करते थे। यदि पत्नी शामिल नहीं होना चाहती थी, तो ये उसके लिए "दुनिया" में रहने की व्यवस्था करते थे, यदि कोई समाज को छोड़कर जाने लगता था तो उसे अपनी जायदाद वापस मिलती थी।

धीरे-धीरे उनकी संख्या बढ़ती गयी। सन् १८५० के दरमियान ६००० शेकर्ज ५८ परिवारों और १८ संघों में रहते थे। ये कृषि और उद्योग में बहुत दक्ष होते थे। उनके सदस्यों को संपूर्ण सामाजिक संरक्षण मिलता था। उन्होंने अनेक महत्त्वपूर्ण यांत्रिक आविष्कार किये थे। ये बढ़ईगिरी का काम बहुत अच्छी तरह किया करते थे।

ब्रूदरहोफ

प्रथम विश्वयुद्ध के अन्त में जर्मनी में एक युवक ने सामूहिक चेतना का पुनर्विकास करने की आवश्यकता महसूस की। इससे इस समाज का जन्म हुआ। हिटलर के जमाने में उन सब को विलायत भागना पड़ा। लेकिन द्वितीय विश्वयुद्ध के दरमियान ये "शत्रु" माने गये थे। उन्होंने अमेरिका जाने का प्रयत्न किया। ये गृहस्थ जीवन बिताते थे, इसलिए शेकर्ज ने उन्हें अपने समाज में शामिल करने से इनकार किया। आखिर में ये दक्षिण अमेरिका के परेग्वे के घने जंगलों के बीच में बड़ी कठिन परिस्थिति में तीन गांवों में बस गये थे। बाद में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में उनकी एक शाखा खुली, जो अपने प्रसिद्ध "सामूहिक खिलौनों" को बनाने के जरिये अपना गुजारा कर पाती है।

वहाँ ये लोग अपने परिवारों के साथ एक बड़े आनन्ददायी वातावरण में रहते हैं।

शायद उन्होंने सामूहिक जीवन की आवश्यकता महसूस करके इस जीवन को अपनाया।

ये लोग अपने सारे जीवन को ईश्वर की इच्छा के अनुसार बिताने का प्रयत्न करते हैं। उनका धर्म उनके संपूर्ण जीवन में व्याप्त है। उपासना के लिए उनका कोई विशेष स्थान नहीं होता है। ये पूर्णतः साम्ययोगी जीवन बिताते हैं, और आपस में बहुत खुले दिल से रहते हैं। ये एक दूसरे के लिए किसी प्रकार की ईर्ष्या या द्वेष नहीं रखते हैं। यदि दिल में कुछ हो, तो ये फौरन उसकी सफाई करते हैं। सामूहिक श्रद्धा, सामूहिक मिलकियत, सामूहिक श्रम, परिवार अपने अलग-अलग मकानों में रहते हैं। लेकिन ये दिन में दो बार सामूहिक भोजन करते हैं। छोटे बच्चों के पालन की व्यवस्था बालवाड़ी में होती है। आठवीं कक्षा तक ये अपने बच्चों के लिए अपनी पाठशाला चलाते हैं। बाद को इनके बच्चे साधारण पाठशालाओं में पढ़कर, अपने भविष्य के जीवन के ढाँचे का निर्णय अपने आप कर लेते हैं। ये लोग कहते हैं कि जब दुनिया एक ऐसे भविष्य का सामना कर रही है जहाँ भयंकरता और सर्वनाश सिर्फ भय की वजह से ही नियंत्रित हो रहा है, तो हम सबको ऐसे जीवन की सुगंध फैलाने का प्रयत्न करना चाहिए, जिसमें प्रेम और भाईचारा सिर्फ जीवन का एक पहलू न रहकर, हमारे जीवन का केन्द्र-बिन्दु बन जाता है, जीवन-पद्धति का आधार बन जाता है।●

—सरला बहन

'गांव की बात'। वार्षिक चंदा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए संसार प्रेस, काशीपुरा, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित

पैदा हुई है कि हम अपने ऊपर काबू नहीं रख पा रहे हैं। एक मानसिक अराजकता सी फैली हुई है और तरह तरह से यह अराजकता प्रकट हो रही है।

हमलोगों ने, जिन्होंने भारत की आजादी की लड़ाई लड़ी, अपनी आँखों के सामने जो सपना देखा था, जो नया भारत, स्वतंत्र भारत का चित्र देखा था, वह कुछ और ही था। अपने देश में गरीबी है, महँगाई है, ऊँच-नीच का, गरीब अमीर का भेद है। यह सब दुख की बातें हैं। इन सवालों का भी हल होना चाहिए और तेजी से होना चाहिए। मेरे जैसे लोगों की अधिक से अधिक शक्ति इन सवालों को हल करने में लगी है। लेकिन ये बातें, किसी कदर कुछ बर्दाश्त कर ली जा सकती हैं। परन्तु कुछ और जो बातें, जो घटनाएँ अभी हो रही हैं, उन्हें सहन करना मेरे जैसे लोगों के लिए बड़ा कठिन हो जाता है। हम ऐसे देश के नागरिक हैं जिसका हजारों वर्ष का गौरवपूर्ण इतिहास है, जिसमें मानवता ऊँचे से-ऊँचे शिखर पर पहुँची थी, जिसमें राम और कृष्ण पैदा हुए थे, बुद्ध और महावीर पैदा हुए थे। गुलामी के जमाने में रामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द पैदा हुए थे, महात्मा गांधी और लोकमान्य तिलक पैदा हुए थे। ऐसे देश में जहाँ गुरुदेव (रवीन्द्रनाथ ठाकुर) ने सारी दुनिया को विश्वबन्धुत्व का और मानवता का संदेश दिया, यूरोप और अमेरिका में जाकर उनके संकीर्ण राष्ट्रवाद का खंडन किया और उनसे कहा कि आपका संकीर्ण राष्ट्रवाद, आधुनिक 'नेशन स्टेट' का विचार आपको और दुनिया को खतरे में डाल देगा। उनकी मंगलमय वाणी और वह सारा गौरवमय इतिहास जब हमारे सामने आता है और दूसरी तरफ स्वतंत्र भारत के नागरिकों के वर्तमान कृत्य सामने आते हैं, तो दुख से जी भर उठता है। क्या इसीके लिए आजादी की सारी लड़ाइयाँ लड़ी गयी थीं और वह सारा त्याग बलिदान किया गया था?

इसलिए आपको सोचना चाहिए। अगर हमारे राष्ट्रीय जीवन में, हमारे नागरिक जीवन में, सामाजिक और पारिवारिक जीवन में अनुशासन नहीं होगा, संयम नहीं होगा, जीवन का कोई मूल्य नहीं होगा, तो चाहे आप इंजीनियर हों, मैनेजर हों, कुशल कारीगर हों अथवा साधारण मजदूर हों, उसकी कोई कीमत नहीं है। आपके जीवन का अगर कोई दृष्टिकोण नहीं है, आपके जीवन का दिशासूचक करनेवाला कोई ध्रुवतारा नहीं है, तो गंगा के पानी में बहते हुए काठ के टुकड़े की तरह हवा के झोंके से इधर-उधर डोलते रहेंगे, आपके जीवन की कोई दिशा नहीं होगी। और, आपका यह हाल रहेगा तो भारत की नैया कहीं किसी किनारे लगनेवाली नहीं है।

भारत एक 'कंपोजिट नेशन' है, 'इन्टीग्रेटेड नेशन' है, सम्मिलित राष्ट्र है। इस देश की एक विशेषता है, सर्वविदित है और वह है इसकी 'यूनिटी इन डाइवर्सिटी'— विविधता में एकता। इस देश में कितनी विविधताएँ हैं। लेकिन इन विविधताओं के बीच एक भारतीयता रही है। कितने सम्प्रदाय, कितनी भाषाएँ, कितनी संस्कृतियाँ और कितने राज्य यहाँ रहे हैं। लेकिन इन सबके बावजूद सबको यह एहसास होता रहा है कि हम एक हैं। गांधार से कन्याकुमारी तक एक हैं। उत्तर में हिमालय है और दक्षिण में समुद्र है और बीच में हमारा देश भारत है। ऐसा भारतीयों को भान होता रहा है। चाहे हमारी विभिन्नताएँ कुछ भी हों, हम एक हैं।

भारत में और दुनिया में एक अहिंसक समाज बने, "नान वायलेंट सोसाइटी" बने। यह हमारा उद्देश्य है। लेकिन वह दूर की बात है। आज तो हम चाहते हैं कि कम से कम एक सभ्य समाज तो बने, जिसको अंग्रेजी में 'सिविल सोसाइटी' कहते हैं। आपस में हमारा एक दूसरे के साथ सभ्यता का बर्ताव 'सिविल बिहेवियर' हो। किसी सभ्य समाज में जितने नागरिक रहते हैं, उन्होंने समाज के साथ एक 'अनरिटेन कांट्रैक्ट" अलिखित समझौता किया है, ऐसा मानना चाहिए। उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि मैं शान्ति रखूँगा। इसलिए समाज में जितने झगड़े होंगे, उनका हल शान्ति से होना चाहिए।

मानव जाति का भविष्य एकता में है। विज्ञान और आत्मज्ञान, दोनों उस दिशा की ओर संकेत करते हैं। जो कुछ भी इसके रास्ते में बाधक रूप में खड़े होंगे—राष्ट्र, जाति, यहाँ तक कि धर्म—यदि वह बाँटनेवाला है जैसा कि सच्चा धर्म हो नहीं सकता—उनको खत्म करना होगा। यह आशा थी कि भारत अपनी लम्बी विश्वबन्धुत्व तथा मानवता की महान् परम्परा के कारण इतिहास की इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योग देगा। पर ये हाल की घटनाएँ, ऐसे अनर्थ की सूचना देती हैं, कि मानो वे हमारी संस्कृति के उस मूल्यवान पौधे को दबोच देना चाहती हैं जिसने हम पतन के युग में भी रवीन्द्रनाथ ठाकुर और गांधी जैसे पुष्प दिये।

इसलिए हमारे सब गुमराह देशवासी इसको अच्छी तरह समझ लें कि अपने इन हृदयहीन कामों से राष्ट्र, ईश्वर और मानव को एक साथ ही वे अस्वीकार करते हैं।

इस प्रकार की वृत्ति का निर्माण बुनियादी मानव शिक्षा की प्रक्रिया है जिसको हमें गंभीरतापूर्वक हाथ में लेना चाहिए, तभी यह दुश्चक्र टूटेगा।

—जयप्रकाश नारायण

[५ व १२ अप्रैल '६७ को जमशेदपुर में दिये गये भाषणों से।]

दृष्टि की समग्रता और समन्वय का कोण

हमारे सामने यह समस्या है कि मनुष्यों के पारस्परिक व्यवहार में जितनी निकटता है, उतना सौहार्द क्यों नहीं है? मनुष्यों की निकटता बढ़ रही है, मनुष्य एक-दूसरे के निकट आ रहा है। दुनिया छोटी हो रही है। एक जगह से दूसरी जगह जाना आसान हो गया है। समाचार एक जगह से दूसरी जगह अब प्रकाश की गति से जाते हैं। हम प्रवास करते हैं शब्द की गति से। और हमारे अस्त्र शब्द और प्रकाश की गति से भी अधिक वेगवान् बन गये हैं।

जब मनुष्यों में इतना सान्निध्य यानी

संनिकर्ष, एक दूसरे के साथ इतनी निकटता बढ़ रही है, तो फिर सौहार्द क्यों नहीं बढ़ रहा है ? यह प्रश्न है। अगर कोई कहे कि हमारे घर में चिराग भी जल रहा है और अंधेरा भी बढ़ रहा है, तो क्या कहा जायगा ? मनुष्यों में निकटता बढ़ रही है और अदालतें भी बढ़ रही हैं। मनुष्यों में सम्पर्क बढ़ रहा है और अविश्वास भी बढ़ रहा है ! यह क्यों ?

अबतक विज्ञान इसका उत्तर नहीं दे सका। इसका उत्तर देना विज्ञान के लिए संभव नहीं हुआ है। हमने मान लिया है कि विज्ञान उत्तर दे सकेगा, लेकिन वह नहीं दे सका है, तो इसका उत्तर कौन देगा ? इसका उत्तर मनुष्य देगा। इतने अंश में, और इस अर्थ में विज्ञान से मनुष्य बड़ा है। विज्ञान यदि मनुष्य से बड़ा हो जायगा तो विज्ञान मनुष्य को चलायेगा; मनुष्य विज्ञान को नहीं चलायगा। विज्ञान का नियंत्रण मनुष्य करेगा या मनुष्य का नियंत्रण विज्ञान करेगा ? इस समस्या का उत्तर आज हम और आप जैसे साधारण मनुष्यों को देना है। कोई विशेष मनुष्य इसका उत्तर नहीं दे सकेगा। साधारण मनुष्य को ही इसका उत्तर देना है, जो दूसरे मनुष्यों के साथ रहना चाहता है। विज्ञान ने हमें यहाँ तक पहुँचा दिया है कि या तो यह दुनिया एक होकर रहेगी या बिलकुल नहीं रहेगी।

मनुष्य ने अब तक मनुष्य के पूरे-पूरे स्नेह को नहीं समझा। क्या मनुष्य में स्नेह की आकांक्षा नहीं है ? मनुष्य में स्नेह की आकांक्षा है। यह स्वाभाविक है। इसे कमाना या उपार्जन नहीं करना है। 'एक्वायर' नहीं करना है। बुरे-से-बुरे और अदना-से-अदना मनुष्य का स्नेह हमारे लिए उपादेय है। दुष्ट-से-दुष्ट मनुष्य का सद्भाव और, स्तुति जिस प्रकार हमें प्रिय लगती है, उसी प्रकार दुष्ट-से-दुष्ट और निकृष्ट-से-निकृष्ट मनुष्य का स्नेह और सौहार्द हमारे लिए उपादेय है, संग्राह्य है। इसको हमें प्राप्त करना चाहिए और उसका संरक्षण करना चाहिए।

मनुष्यता की प्रतिष्ठा का यह अर्थ है कि वह आपके विषय में अच्छी राय बनाता है, तो उसका भी मूल्य है और बुरी राय बनाता है, तो उसका भी मूल्य है। उसकी अच्छी या बुरी राय से आप अपना सन्मार्ग तो नहीं छोड़ेंगे, लेकिन उसकी राय को अच्छी तरह समझाने की कोशिश करेंगे। यह आवश्यक है।

मनुष्य और मनुष्य के बीच जो अन्तराय की वस्तु होती है, वह चाहे कितनी भी बड़ी हो, त्याज्य है। वह हमारे लिए कितनी भी पूज्य हो, त्याज्य है। यह गाँधी ने पहचान लिया था। उन्होंने कहा कि 'मेरा धर्म सार्वभौम है, भौगोलिक सीमाओं का बंधन मेरे धर्म में नहीं है। वह सार्वत्रिक है।'

विज्ञान का यह स्वभाव है कि वह सार्वभौमिक है और इस अणुशक्ति की वजह से यह आवश्यकता पैदा हुई कि यह आविष्कार सारे देशों के सहयोग के लिए हो। सारे देशों के वैज्ञानिकों के सहयोग से यह हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के बिना वैज्ञानिक आविष्कार अगर असम्भव है तो इस विज्ञानयुग में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के बिना वैज्ञानिक जीवन भी असम्भव है। यह अनिवार्यता विज्ञान से पैदा हुई है। इसलिए अब हमारे मन में पूर्व और पश्चिम का भेद नहीं होना चाहिए। आज ऐसा एक भेद पैदा हुआ है कि गोरे मनुष्य की एक संस्कृति है, एक प्रकृति है, काले और भूरे आदमियों की दूसरी संस्कृति है, दूसरी प्रकृति है। यह मानवद्रोही सिद्धान्त है। गोरे की उत्कृष्टता गोरे लोग हमेशा मानते रहे हैं। आज का रंगभेद भी यही है, भारत की छुआछूत भी यही है। उत्कृष्टता और निकृष्टता एक जगह देश-काल से आयी और दूसरी जगह जन्म से आयी। एक वर्ण-वाद कहलाता है, दूसरा जातिवाद है जिसका आरम्भ जन्म से हुआ है। दोनों में एक समानता है कि वर्ण का सम्बन्ध भी वंश से है और जन्म का सम्बन्ध भी वंश से है। दोनों का सम्बन्ध विवाह से है। इसलिए काले और गोरे का अगर विवाह होता है, तो सारे समाज में उसकी प्रतिक्रिया विरुद्ध हो जाती है। जो सबसे निकृष्ट है— जैसे नीग्रो, उनके विषय में आज भी प्रतिकूलता है। रक्तशुद्धि की भावना मनुष्य को मनुष्य से दूर करती है। अशुद्ध रक्त किसका ? जिसका रक्त हमारा रक्त नहीं है। इसके अलावा तो कोई मतलब ही नहीं है।

मनुष्य साम्प्रदायिक अभिमानों में खो जाता है। मनुष्य का विकास नहीं होता। ये दोनों अलग-अलग हैं। मनुष्य का समुदाय में लीन हो जाना एक बात है और समुदाय में मनुष्य का खो जाना दूसरी बात है। गांधी समुदाय में लीन हो गया था, खो नहीं गया था। उसने अपने जीवन में दूसरों को शामिल कर लिया था। अपने जीवन में दूसरों को शामिल करना सद्गुण कहलाता है, चारित्र्य कहलाता है। अपने जीवन के लिए और अपने साथ रहनेवालों के जीवन के लिए यह जो जिम्मेदारी की भावना है, जो दायित्व की भावना है, यह मानवता कहलाती है।

यह जिम्मेदारी की भावना ही 'वर्च्यू' है, 'कैरेक्टर' है, चारित्र्य है। इसे ही सदाचार, नीति कहते हैं। यह मूल मानव-धर्म है। प्राणिमात्र की जिम्मेदारी ले सकता हूँ तो बहुत अच्छा है। नहीं ले सकता, तो कम-से-कम मनुष्यमात्र के लिए संकल्प हो। मनुष्यमात्र के लिए संकल्प हो सकता है, तो विज्ञान मनुष्य के लिए गौरव, आनन्द और जीवन के विकास का कारण बन सकता है। विज्ञान को गौरव, आनन्द और जीवन के विकास का साधन अगर बनाना हो, तो मनुष्य में इस भावना का विकास करना होगा।

इसीलिए गांधी ने जीवन के सारे पहलुओं को कमल की पंखुड़ियों की तरह एक मान लिया। इसीको समग्रता की दृष्टि कहते हैं। एक दृष्टि का नाम है पृथक्करण की दृष्टि, 'फ्रैगमेंटेशन' की दृष्टि, जीवन के टुकड़े-टुकड़े करने की दृष्टि। दूसरी का नाम है समन्वयात्मक दृष्टि, समग्रता की दृष्टि। इस समग्रता में व्यक्ति भी पूर्ण है, समुदाय भी पूर्ण है। व्यक्ति भी पूर्ण है, समष्टि भी पूर्ण है। हर मनुष्य की विभूति भी पूर्ण है। और सब मनुष्यों की विभूतियों का जहाँ संनिकर्ष होता है, वह समाज भी अपने में पूर्ण है।*

—दादा धर्माधिकारी

* मानवीय निष्ठा : पृ० १६, १५, १०, २१, २२, २५, २०, २९।

सम्प्रदायवाद : मुखौटे, नकाब और चेहरे

इतिहास में जिसकी जड़ राजनीति ने जिसे पानी से ही नहीं खून से भी सींचा, जिसने पिछले साठ सत्तर वर्षों में इस देश को बुरे से-बुरे दिन दिखाये, जिसके कारण हमने गांधी को खोया, और, जो आज भी हमारी एकता और राष्ट्रीयता को खंडित और कलुषित करती जा रही हो, वह सम्प्रदाय निष्ठा ऊँचे नारों और आदर्शों का 'वाद' बनकर अनेक लोगों के मन में इस तरह समा गयी है कि वे इसे अलग रखकर किसी प्रश्न पर सोच नहीं सकते, कुछ कर नहीं सकते। उनके लिए सम्प्रदायवाद दूसरे सारे विचारों और सिद्धान्तों से ऊपर है—इतना ऊपर कि इसके कारण उनके अपने ही सम्प्रदाय को कितनी क्षति पहुँच रही है, इसे भी वे सोचते नहीं, समझते नहीं। यह 'वाद' उन्माद की स्थिति में पहुँच गया है।

लेकिन कुछ अजीब सा है कि भारत के आधुनिक इतिहास में जन्म और विकास की दृष्टि से राष्ट्रीयता और साम्प्रदायिकता बहुत कुछ जुड़वाँ बहनें जैसी हैं। साम्प्रदायिकता राष्ट्रीयता के साथ-साथ बढ़ी है। और, जब राष्ट्रीय आन्दोलन स्वराज्य तक पहुँचा तो साम्प्रदायिकता ने देश विभाजन के रूप में अपनी बलि भेंट ली। राष्ट्रीयता के साथ साम्प्रदायिकता आयी, और स्वतन्त्रता के साथ तरह तरह के तनाव और टकराव। यह भी है कि साम्प्रदायिकता मुख्यतः शहरों की चाज रही है। पैसा, पद, शिक्षा और प्रतिष्ठावालों की, भले ही आग भड़क जाने पर सामान्य लोगों ने आगे बढ़कर भेंट चढ़ायी हो। जरूर, समय समय पर देहातों को भी उभारा गया है, और उभड़कर उन्होंने भरपूर खून भी बहाया है पर गाँवों की सामान्य हवा जातिवाद की ही है।

आज भी इस 'वाद' का लाभ कौन उठा रहा है ? इस आग को कौन भड़काता रहता है ? भीतर घुसकर देखने पर साफ मालूम होगा कि साम्प्रदायिक नारों की गूँज सत्ता और सम्पत्ति के ही चारों ओर होती रहती है—सत्ता कुर्सी की, सत्ता पैसे की, सत्ता मठों, मन्दिरों या मस्जिदों की। दलबन्दी की राजनीति तो शायद जातिवाद और सम्प्रदायवाद के पोषण के बिना जिन्दा ही नहीं रह सकती। इसने इन 'वादों' को लोकतन्त्र की प्रतिष्ठा प्रदान की है, और अब वह इन्हें विकास और सुरक्षा की प्रक्रिया का अंग बनाकर पुष्ट कर रही है। सम्प्रदायवाद विभिन्न सम्प्रदायों के ऐतिहासिक भेदों और तनावों से अधिक अब विशिष्ट वर्गों के स्वार्थों से जुड़कर जीवित है। सम्प्रदायवाद की आड़ लेकर प्रतिक्रियावाद फैल रहा है। फासिस्टवाद और पूँजीवाद, दोनों सम्प्रदाय निष्ठा का कवच बनाकर संगठित होना चाहते हैं। चाहते ही नहीं हैं, तेजी के साथ हो रहे हैं।

था कोई समय जब सम्प्रदायवाद धर्म का आधार लेकर हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य तक सीमित था, लेकिन अब उसका क्षेत्र व्यापक हो गया है। सम्प्रदायवाद की बारूद का इस्तेमाल विदेशी साम्राज्यवादी तत्व, शासक और विरोधी दल, सामाजिक और आर्थिक निहित स्वार्थ, मजदूरों का संगठन तोड़ने के लिए मालिक, टैक्स चोर व्यापारी, घूसखोर अधिकारी, ठग और डाकू, उकसाने भड़काने वाले प्रदर्शनकारी और नेता, सभी कर रहे हैं। भाषावाद सम्प्रदायवाद के साथ इस शताब्दी के प्रारम्भ से ही जुड़ा हुआ है, यद्यपि भाषावाद सम्प्रदायवाद से अलग भी चल सकता है। हिन्दुओं में ही हरिजनों और सवर्णों के आपसी विरोध, मूलवंश (रेस) को लेकर दक्षिण के द्रविड़ और उत्तर के आर्य के विरोध सम्प्रदायवाद के अन्तर्गत हैं, फिर भी सम्प्रदायवाद अभी धर्म के ही साथ जुड़ा हुआ माना जा रहा है, और उसका नाम लेते ही हिन्दू-मुस्लिम झगड़े की तस्वीर सामने खिच जाती है।

स्वतन्त्रता के पहले मुस्लिम सम्प्रदायवाद की प्रधानता थी, और उसे विदेशी साम्राज्यवाद का बल प्राप्त था। स्वतन्त्रता के बाद हिन्दू सम्प्रदायवाद जोर मार रहा है, और उसे देशी प्रतिक्रियावाद का समर्थन प्राप्त है। मुसलमान—हर मुसलमान, सिर्फ इसलिए कि वह मुसलमान है—देशद्रोही है, यह आवाज हिन्दू सम्प्रदायवाद की है, और यही कहकर वह विशुद्ध राष्ट्रवाद की उदात्त वाणी बन रहा है। समाज परिवर्तन की क्रान्ति और लोकनिष्ठ राष्ट्रप्रेम को पीछे करने की नीयत से उसने 'देशद्रोही मुसलमान' का हौवा खड़ा किया है। इतना ही नहीं, राष्ट्रवाद के नाम में लोकतन्त्र तथा शान्ति के मूल्यों को खत्म करके सैनिकवाद लाने की उसकी पूरी तैयारी है। 'हिन्दू राष्ट्र' ऊँची आदर्शवादिता और प्रतिक्रियावादिता का मिलाजुला एक विचित्र प्रतीक है। बात यह है कि ये 'वाद' उन्माद बनते ही तब हैं जब वे वास्तविक से अधिक काल्पनिक, लेकिन व्यापक भयों और पूर्वग्रहों को हथकंडा बना लेते हैं। अगर यह बात न होती तो देश में आज इतनी 'सेनाएँ' कैसे बनतीं, और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के लाखों जुझारू और मुस्तैद सदस्य कैसे होते, जब कि किसी निर्माण के कार्य के लिए दो चार दर्जन युवकों का मिलना कठिन हो जाता है ! यह समझने की बात है कि सम्प्रदायवाद पूरा—चाहे वह हिन्दू हो, मुस्लिम या ईसाई, सिक्ख या पारसी हो—लोकतन्त्र विरोधी है, सत्ता और सम्पत्ति-परस्त है।

अपने देश में मध्ययुग में हिन्दू और मुसलमान के सहअस्तित्व में से कबीर और अकबर के द्वारा हिन्दू मुस्लिम धार्मिक और सांस्कृतिक समन्वय की जिस धारा का विकास हुआ उसे हिन्दुओं की जातिप्रथा (पंडितवाद) और मुसलमानों की कट्टरता (मुल्लावाद) ने बढ़ने नहीं दिया। पृथकता बनी रही। उस वक्त भी हिन्दू और मुस्लिम सामन्तवाद ने मिलकर प्रगतिशीलता का गला घोंटा—ठीक उसी तरह जैसे आज दोनों सम्प्रदायवाद क्रान्तिकारी प्रगतिशीलता के खिलाफ हाथ धोकर पड़े हुए हैं।

अनेकों साम्प्रदायवाद ने भारतीयता को

इस कमजोरी को पहचाना और पृथक् निर्वाचन आदि अनेक तरह के राजनैतिक हथकंडों से यह राष्ट्रीयता को तोड़ता ही रहा। सन् १८५७ से १९४७ तक का इतिहास राष्ट्रीयता और साम्प्रदायिकता का परस्पर-विरोधी धाराओं का इतिहास है। यह गांधीजी की विलक्षण देन थी कि उन्होंने सामंतवाद-साम्राज्यवाद-सम्प्रदायवाद की सम्मिलित शक्ति के मुकाबिले एकता और राष्ट्रीयता के मूल्यों को जिलाये रखा, और कांग्रेस के रूप में देश में एक ऐसी शक्ति बना दी जिसके कारण हम सन् १९४७ में धर्म-सम्प्रदाय-निरपेक्ष संसदीय लोकतंत्र की स्थापना कर सके। कुछ भी हो, आज सारी एशिया और अफ्रीका में भारत अकेला देश है, जहाँ 'वोट' इस तरह मौजूद है, और सर्वोदय-जैसा मनुष्य को मनुष्य के नाते आदर देनेवाला व्यापक आन्दोलन चल रहा है, और जोर पकड़ रहा है।

किसी समय धर्म और जाति के संगठन ने मनुष्य को सुरक्षा और समाज को सुव्यवस्था दी थी। भारत जैसे विविध तत्त्वों और विश्वासों के देश में, इस तरह के संगठन सामाजिक विकास-क्रम में स्वाभाविक भी थे, लेकिन राजनैतिक और आर्थिक स्वार्थों के साथ जुड़कर ये संकुचित निष्ठाएँ देश को विनाश की ओर ले जा रही हैं। अगर ये न रुकीं तो गृहयुद्ध, अराजकता, फासिज्म, स्वतन्त्रता का अपहरण, आदि कुछ भी सम्भव है। जनता पागल बनकर क्या नहीं कर डालेगी, और फिर पछताने बैठेगी।

प्रश्न है कि क्या इस खतरे के टालने की शक्ति देश में है? क्या पैदा की जा सकती है? क्या वह शक्ति सरकार में है? नेताओं में है? जनता में है?

सत्ता की राजनीति, अभाव की अर्थनीति और नौकरी की शिक्षानीति में विघटन की शक्तियों को रोकने की शक्ति नहीं होती। उस शक्ति के दो ही स्रोत हैं—एक, सत्ता से अलग रहनेवाले लोकनेता, मात्र लोकप्रतिनिधि नहीं, दो, सामान्य जनता के सामान्य गुण। आज एक जन-आन्दोलन द्वारा गाँव-गाँव में, शहर-शहर में, इन्हीं सामान्य गुणों को संगठित करने की जरूरत है ताकि जीवन की समस्याओं को सुलझाने के लिए पड़ोसीपन की शक्ति प्रकट हो, और वह अपने छोटे दायरे में विघटन के मुकाबिले में खड़ी हो सके। जरूरत है स्वार्थ का पर्दा फाड़कर सत्य की प्रतीति जगाने की। जो सत्य है उसका सीधा सम्बन्ध जनता की समस्याओं से है। जनता में अपनी समस्याएँ पहचानने की सहज सूझ होती है।

यह नयी चेतना, नयी स्फूर्ति और चेष्टा कैसे पैदा होगी? प्रश्न देश के भविष्य का है, लोकतंत्र के मूल्यों का है।●

'प्रबन्ध-समिति का प्रस्ताव'

"त्रिविध कार्यक्रम के द्वारा देश और दुनिया के सामने अहिंसक समाज-रचना का जो चित्र प्रस्तुत हुआ उसकी क्रमिक सिद्धि की दृष्टि से हमने बलिया सम्मेलन में पचास हजार ग्रामदान प्राप्त करने का संकल्प किया। यद्यपि आँकड़ों में यह लक्ष्यांक अभी पूरा नहीं हुआ है, फिर भी ऊँचे लक्ष्य ने आंदोलन के आयाम को बहुत ऊँचा उठाया, और उससे प्रेरणा पाकर पिछले अठारह महीनों में हमने जो पुरुषार्थ किया उसके फलस्वरूप आज देश भर में ग्रामदान के कई सघन क्षेत्र निकल आये हैं, जिनमें ग्रामस्वामित्व के आधार पर नयी समाज-रचना का विचार मान्य हुआ है, और ग्रामस्वराज्य के लिए प्रारंभिक लोकसम्मति के रूप में अनुकूल भूमिका प्रस्तुत हुई है। स्पष्ट है कि ग्रामस्वराज्य के आरोहण में अगला अनिवार्य कदम यह है कि हम समर्थन को संगठन और शक्ति का रूप दें, और इस दृष्टि से गाँव-गाँव में बननेवाली ग्राम-सभाओं को सामूहिक ग्रामहित का विकास एवं प्रतिनिधित्व करनेवाली सशक्त, स्वायत्त इकाइयों के रूप में विकसित करें। इसलिए अब यह आवश्यक है कि जहाँ एक ओर प्राप्ति का प्रवाह अखण्ड चलता रहे, वहाँ पुष्टि का काम तत्परतापूर्वक हाथ में लिया जाय ताकि ग्रामदानी गाँवों और क्षेत्रों की समस्याओं के समाधान के लिए जनता के सामने ग्रामदान-पद्धति तत्काल प्रस्तुत की जा सके, साथ ही मचवित्र पंचायती तथा प्रशासकीय व्यवस्था पर स्पष्ट प्रभाव दिखाई दे।

अलग-अलग राज्यों में साथियों ने अपने लक्ष्यांक की पूर्ति के लिए योजनाएँ बनायी हैं। १९६९ तक हमें देश के सभी गाँवों को ग्राम-स्वराज्य की क्रांति का प्रभावकारी स्पर्श कराना है। हम कुछ ही महीनों के बाद सर्वोदय सम्मेलन में मिलेंगे और मिलकर आगे के काम के बारे में निर्णय करेंगे। इसलिए जरूरी है कि पिछले संकल्प की बची हुई संख्या जल्द-से जल्द पूरी की जाय ताकि सम्मेलन में नया निर्णय नयी भूमिका और नये स्तर पर लिया जा सके।"

(१२, १३ अक्तूबर '६७ को वाराणसी में सर्व-सेवा-संघ की बैठक में स्वीकृत)

दृष्टिकोण...

विशेषांक

●

भूदान-यज्ञ का गांधी-निर्वाण-दिवस के अवसर पर

सत्याग्रह अंक

'सत्य' और 'आग्रह' के बदलते स्वरूप

पठनीय मननीय।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१.

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

१७ नवम्बर, '६७ अंक : ७

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति : २० पैसे

विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—
१८ रु० या १८ शि० या ३॥ डालर
(हवाई डाक-शुल्क देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१
फोन नं० ४२८५

आर्थिक समानता का मार्ग

आर्थिक समानता का अर्थ है सबके पास समान सम्पत्ति का होना, यानी सबके पास इतनी सम्पत्ति का होना, जिससे वे अपनी कुदरती आवश्यकताएँ पूरी कर सकें। कुदरत ने ही एक आदमी का हाजमा अगर नाजुक बनाया हो और वह केवल पाँच ही तोला अन्न खा सके तथा दूसरे को बीस तोला अन्न खाने की आवश्यकता हो, तो दोनों को अपनी पाचन शक्ति के अनुसार अन्न मिलना चाहिए। सारे समाज की रचना इसी आदर्श के आधार पर होनी चाहिए। अहिंसक समाज का दूसरा कोई आदर्श हो ही नहीं सकता। पूर्ण आदर्श तक हम शायद न भी पहुँच सकें। मगर उसे नजर में रखकर हम विधान बनायें और व्यवस्था करें। जिस हद तक हम इस आदर्श को हम पहुँच सकेंगे, उसी हद तक हम सुख और संतोष प्राप्त कर सकेंगे और उसी हद तक सामाजिक अहिंसा सिद्ध हुई कही जा सकेगी।

अब अहिंसा के द्वारा आर्थिक समानता कैसे लायी जा सकती है इसका हम विचार करें। इस दिशा में उठाया जानेवाला पहला कदम यह है कि जिसने इस आदर्श को अपनाया हो, वह अपने जीवन में आवश्यक परिवर्तन करे। वह हिन्दुस्तान की गरीब प्रजा के साथ अपनी तुलना करके अपनी आवश्यकताएँ कम करे। अपनी धन कमाने की शक्ति को वह नियंत्रण में रखे, जो धन कमाये उसे ईमानदारी से कमाने का निश्चय करे। सट्टे की वृत्ति हो तो उसका त्याग करे। घर भी अपनी सामान्य आवश्यकताएँ पूरी करने लायक ही रखे और जीवन को हर तरह से संयमी बनाये। अपने जीवन में सभी सम्भव सुधार कर लेने के बाद ही वह अपने मिलने जुलनेवालों और अपने पड़ोसियों में समानता के आदर्श का प्रचार करे।

आर्थिक समानता की जड़ में धनिकों का ट्रस्टीपन है। इस आदर्श के अनुसार धनिक को अपने पड़ोसी से एक कौड़ी ज्यादा रखने का अधिकार नहीं है। तब उसके पास जो ज्यादा है, वह क्या उससे छीन लिया जाये? ऐसा करने के लिए हिंसा का आश्रय लेना पड़ेगा। और हिंसा के द्वारा ऐसा करना सम्भव हो तो भी समाज को उससे कुछ फायदा होनेवाला नहीं है। क्योंकि इससे द्रव्य इकट्ठा करने की शक्ति रखनेवाले एक आदमी की शक्ति को समाज खो बैठेगा। इसलिए अहिंसक मार्ग यह हुआ कि जितनी मान्य हो सकें उतनी अपनी आवश्यकताएँ पूरी करने के बाद जो पैसा बाकी बचे, उसका वह प्रजा की ओर से ट्रस्टी बन जाय। अगर वह प्रामाणिकता से संरक्षक बनेगा तो जो पैसा वह पैदा करेगा उसका सद्व्यय भी करेगा।

किन्तु यदि प्रयत्न करने पर भी धनिक सच्चे अर्थ में संरक्षक न बनें और भूखों मरते हुए करोड़ों को अहिंसा के नाम से वे और अधिक कुचलते जायँ तब क्या किया जाय? इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ने में ही अहिंसक असहयोग और सविनय कानून भंग मुझे प्राप्त हुआ। कोई धनवान गरीबों के सहयोग के बिना धन नहीं कमा सकता। अगर यह ज्ञान गरीबों में प्रसार पा जाय, तो वे बलवान बनें और आर्थिक समानता को, जिसके वे शिकार बने हुए हैं, अहिंसक तरीके से दूर करना सीख लें।

—गांधीजी

'हम सब एक पिता के बालक' : पृ० १४०-१४२.

समाचार डायरी

देश :

६-११-'६७ : उपप्रधान मंत्री श्री मोरारजी देसाई ने घोषणा की है कि वे देश में कहीं भी ऐसे समारोहों में भाग नहीं लेंगे, जहाँ मद्यवितरण होगा।

७-११-'६७ : सर्वोच्च न्यायालय ने आज घोषणा की कि राष्ट्रपति पद पर डा० जाकिर हुसेन का चुनाव सर्वथा वैध है।

८-११-'६७ : एक सरकारी प्रवक्ता ने कहा कि शेख अब्दुल्ला की रिहाई के मामले में सरकार ने अभी कोई निर्णय नहीं लिया है।

९-११-'६७ : स्व० जवाहर लाल नेहरू की बहन श्रीमती कृष्णा हथी सिंह का आज लन्दन में देहावसान हो गया।

१०-११-'६७ : इन्दौर में हुए भारतीय क्रांतिदल के सम्मेलन में दल ने गांधीजी की राह पर चलने की घोषणा की है।

११-११-'६७ : उप प्रधान तथा वित्त मंत्री मोरारजी देसाई ने कहा कि अब घाटे की अर्थव्यवस्था की गुंजाइश नहीं है।

१२-११-'६७ : कल से लोकसभा का अधिवेशन शुरू हो रहा है।

विदेश :

६-११-'६७ : सोवियत संघ में हुई अक्तूबर क्रांति की ५० वीं वर्षगाँठ के अवसर पर पेकिंग में आयोजित विशाल रैली में अध्यक्ष माओ अनुपस्थित रहे।

९-११-'६७ : अमेरिका ने आज अपना विशाल सेटर्न राकेट चन्द्रमा की मानवरहित परीक्षणउड़ान के लिए छोड़ा। यह राकेट १९७० तक चन्द्रमा पर मानवसहित यात्रा के लिए तैयार किया गया है।

१०-११-'६७ : संयुक्त अरब गणराज्य के राष्ट्रपति ने कहा है कि मिस्र तब तक स्वेजनहर नहीं खोलेगा जब तक इजराइल सिनाई के रेगिस्तान से हट नहीं जाता।

११-११-'६७ : अमेरिका में हिन्दूधर्म के प्रति आमलोगों की दिलचस्पी बढ़ रही है।

१२-११-'६७ : जापान के प्रधान मंत्री की अमेरिका की यात्रा के विरोध में छात्रों ने जबरदस्त प्रदर्शन किये।●

"श्री भाई धोत्रे के देहावसान के बाद सारे प्रदेशों के उनके-मित्र परिवारों से जो पत्र प्राप्त हुए उनको देखकर श्री धोत्रेजी की स्मृति-सुमनांजलि के रूप में एक चरित्र ग्रंथ प्रकाशित करने की कल्पना मन में आ रही है। १६ मई १९६८ को उनका प्रथम वर्ष श्राद्ध-दिन है। उस अवसर पर यह ग्रन्थ प्रकाशित हो जाय, ऐसी इच्छा है।

श्री भाई धोत्रे का मित्र परिवार हर प्रदेश में बिखरा हुआ है। उनकी ओर से यदि स्मरणांजलियाँ प्राप्त होंगी, तो एक सुन्दर ग्रन्थ तैयार हो सकेगा। आप भी इस कल्पना का स्वागत करेंगे, ऐसा विश्वास है। श्री भाई के सम्पर्क में आने के कारण अनेक प्रकार के प्रसंगों और स्मरणों के माध्यम से उनके स्वभाव-विशेष का और कार्य-पद्धति का दर्शन आपको नजदीक से हुआ होगा। उन्हींको लिपिबद्ध करके भेजने का आग्रह अनुरोध करने के लिए यह पत्र लिख रहे हैं। आप जिस भाषा में सहजरूप से लिख सकेंगे उस भाषा में लिख कर भेज सकते हैं।

आशा ही नहीं बल्कि विश्वास है कि आप अपने संस्मरण हमारे पास दिसम्बर '६७ तक जरूर भेज देंगे। विनीत

अण्णा सहस्रबुद्धे — भक्त धोत्रे
अध्यक्ष — ट्रस्टी

गांधी सेवा संघ, सेवाग्राम, वर्धा, महाराष्ट्र।

[उक्त आशय के पत्र जिनके पास भेजे गये हैं, कृपया वे अपने संस्मरणादि शीघ्र ही गांधी सेवा संघ के पते पर भेजने की कृपा करें।—सं०]

श्री संपादकजी,
"भूदान-यज्ञ", वाराणसी।

आपके जनप्रिय "भूदान-यज्ञ" के द्वारा बहुचर्चित विषय भूमि सुधार कानूनों को लागू करने के संदर्भ में कतिपय सुझाव जनता-जनार्दन के समक्ष प्रस्तुत करता हूँ।

(१) भूमि सुधार की आवश्यकता आज नहीं बल्कि स्वातंत्र्य युग की जबरदस्त प्राथमिक माँग है। जिसे कांग्रेस जैसी संस्था भी दरकिनार नहीं कर सकी और कांग्रेसी सरकार ने भी उपरोक्त भूमि विषयक कानून को अपने ढंग से बनाया।

(२) अधिकोत्पादन के सन्दर्भ में भी भूमि-सुधार की अनिवार्यता स्वयं सिद्ध है, क्योंकि पर्याप्त समुचत बीज, सुधरे नये औजार, पानी और खाद के साथ ही खेती करनेवालों की दिलचस्पी भी आवश्यक है।

(३) भूमि-सुधार-योजना के कार्यान्वयन को अव्यावहारिक बतानेवाला तर्क खोखला है क्योंकि खेती करनेवाले अपढ़-नासमझ, पिछलग्गू, डरपोक और गँवार कहलानेवाले लोगों ने आजादी प्राप्त कर यह बता दिया है कि उन्हें सिर्फ सुझाव और दिल जीतनेवाला नेतृत्व चाहिए।

(४) युग-पुरुष संत विनोबा ने भी अपने आन्दोलनों से साबित कर दिया है कि भूमि-सुधार तो आवश्यक है ही।

अतः भूमि-सुधार-योजना को शान्तिपूर्ण तरीके से लागू करने के लिए निम्नांकित पद्धति सहज और समाजग्राही हो सकती है :

(क) सर्वदलीय प्रखण्ड, अनुमण्डल, जिला एवं राज्य सलाहकार समिति का शीघ्रातिशीघ्र गठन एवं प्रशिक्षण तथा इसका व्यापक प्रचार सही-सही दिशा में हो और कोई गलत कार्य बहकावे में आकर न करे।

(ख) निराधार भ्रामक प्रचारों का खण्डन करें।

नोट—मैंने प्रशिक्षणवाली बात नयी जोड़ दी है। इसका कारण यह है कि एक ही बात को लोग कई ढंग से समझाते हैं। एक तो यह ऐसी बात है कि इसकी खिलाफत करने वाले लोग संगठित होकर भ्रामक और उत्तेजक प्रचार करके जनमानस को गलत दिशा में ले जाने की कोशिश करेंगे। यदि दूसरी तरफ से इसका संगठित और सही-सही जवाब नहीं दिया गया, तो बहुत सम्भव है कि ये सारे निहित स्वार्थवर्गीय लोग उसका नाजायज फायदा उठायेंगे। आपका

—हरिनारायण साह 'माधव'
जिला सर्वोदय मण्डल,
रेशमघर, भागलपुर-२

इतने से भी इनकार !

संयोग था कि जिस डिब्बे में ये दोनों सिपाही बैठे थे उसीमें मैं भी बैठा। दोनों पंजाबी युवक थे—फौजी। हृष्ट-पुष्ट बदन, लम्बा कद, बड़ी काली आँखें, गोरा चेहरा, मुस्काते होंठ—दोनों खूब घुल-मिलकर बातें कर रहे थे। एक पहले से बिहार की किसी फौजी छावनी में था, दूसरा पहली बार बिहार आ रहा था। गाड़ी मोकामा से आगे बढ़ी तो दूसरा बोला "देखो, यह मिट्टी तो हमारे पंजाब की जैसी है। कहीं-कहीं तो उससे भी अच्छी है। लेकिन फसल ....।" पहले ने कहा . "फसल क्या अच्छी होगी ? यहाँ किसान तो खेती करता नहीं !' दूसरे ने पूछा "फिर कौन करता है"? "बँटाईदार" उत्तर मिला। "बँटाईदार क्या ?" उसने फिर पूछा। "बँटाईदार जिस जमीन पर खेती करता है वह उसकी अपनी नहीं होती। वह किसी दूसरे मालिक की होती है। बँटाईदार पूँजी लगाता है, मेहनत करता है, और फसल होनेपर आधा अनाज, या इससे ज्यादा जो तय हो, बाँटकर मालिक को दे देता है।" पहले ने समझाते हुए कहा। उसके साथी को यह बात समझ में नहीं आयी। उसने कुछ झुँझलाकर कहा "क्या बात करते हो ! कौन ऐसा मूरख होगा जो पूँजी लगाये, मेहनत करे, और फसल होने पर आधा बाँटकर दे दे !" जोर देते हुए पहले ने कहा "अरे भाई, मैं ढाई साल से यहाँ हूँ। मैंने खुद जाकर देखा है, पूछा है। मेरी बात मानो, यहाँ आमतौर पर खेती इसी तरह होती है।" "तुम कह रहे हो तो मान लेता हूँ, लेकिन बात गले के नीचे नहीं उतरती। इस तरह भी खेती होती है !' यह कहकर दूसरे ने लम्बी साँस ली। सिगरेट निकाली। जलायी, दोनों ने कश ली, और धुँआ खिड़की से बाहर फूँक दिया। मैं अखबार देख रहा था, लेकिन बातें अच्छी तरह सुन रहा था। अब मैंने सिर उठाया, दूसरे सिपाही की तरफ देखा और कहा "यह आपके दोस्त जो कह रहे थे, बिल्कुल सही कह रहे थे। यहाँ खेती इसी तरह होती है। यहाँ ही नहीं, बंगाल में भी।' वह बोल उठा "आज के जमाने में भी !"

अब उसने यहाँ रहकर देख लिया होगा कि हाँ, आज के जमाने में भी। यहाँ खेती का पैटर्न ही यही है। बँटाईदार खेत जोतता है, मालिक को अनाज देता है, लेकिन उसके पास कोई कानूनी, कागजी सबूत नहीं रहता। मालिक जब चाहे उसे बेदखल कर सकता है। किसान खेत का मालिक है, बँटाईदार और मजदूर असली खेतिहर। इस खेती में मालिक को लगाना कुछ नहीं है, जो मिलता है सब मुनाफा ही मुनाफा है। जमींदारी टूटने के बाद बँटाईदार और मजदूर को कुछ अधिकार देने के कानून भी बने। बँटाईदार मनमाने ढंग से बेदखल न किया जाय, हरिजन का अपने बसने की जमीन पर अधिकार हो, भूमिहीन को भूमि मिले, खेतिहर मजदूर की कम-से-कम मजदूरी निश्चित हो, आदि अनेक उदार कानून कांग्रेस के राज में बने। लेकिन बराक कायदे की तरह सरकार की पेटी में बन्द कर दिये गये। सरकार को हिम्मत नहीं हुई कि अपने ही बनाये हुए कानूनों को लागू कर सके। बिहार में कांग्रेस किसानों की थी, सरकार उनके हाथ में थी। अंग्रेजी राज गया, नेताओं को गद्दी मिली। जमाने की हवा बदली, लेकिन खेती और खेतिहर के लिए जैसे कुछ हुआ ही नहीं।

पिछले चुनाव के बाद बिहार में संविद सरकार बनी, जिसमें संसोपा की प्रधानता है। कई मिनिस्टर झोपड़ी और खपरैल के घरों से आये हैं। आशा हुई थी कि शायद जमाना कुछ आगे खिसके और गरीब को उसके बोझ का कुछ कम मिले। जे० पी० ने पहल की। उनका दिल ऐसा है कि उनकी नेकनीयती आशावादिता को मरने नहीं देती। उन्होंने कुछ मंत्रियों से चर्चा चलायी और कांग्रेस सरकार के बनाये हुए कानूनों की याद दिलायी। माँग सिर्फ इतनी थी कि जो कानून पहले से बने रखे हैं वे लागू हों, क्योंकि उन्हें लेकर आज के विरोधी दल, यानी कांग्रेस को भी क्या एतराज होगा ? चर्चा बढ़ी। पिछले महीने एक दिन सभी दलों की बैठक हुई। भाषणों में गरीबों के दुःख से भरे नेताओं के दिल पिघलकर जबान पर उतर आये। एक सलाहकार समिति बनी। आशा बनी कि कुछ होगा।

लेकिन कुछ ऐसा हुआ कि दो ही चार दिन बाद से हवा बदलने लगी। संविद सरकार में शरीक एक दल के मंत्रियों ने तो खुलेआम कहना शुरू कर दिया कि अगर बँटाईदारी कानून लागू किया गया तो बिहार में गृहयुद्ध हो जायगा। तब से बराबर इस तरह की बातें कही जा रही हैं, और अखबारों में मोटे शीर्षकों में छप रही हैं। मालिक महाजन मजदूर बँटाईदार के बाप दादों के समय से चले आये हुए सुखद सम्बन्धों की दुहाई दी जा रही है, और कहा जा रहा है कि पुराने सम्बन्धों को पुराने ढंग से ही चलने देना समाज के कल्याण के लिए परम आवश्यक है। धर्म खतरे में है, देश खतरे में है।

इस बीच माल-मंत्रीजी ने (जो कम्युनिस्ट हैं) बार बार कहा कि बँटाईदार को बेदखली से बचाना सरकार का कर्तव्य है। उन्होंने आश्वासन दिया कि नये सुधारों में छोटे किसान (यानी मालिक) को अपनी निजी काश्त के लिए बँटाईदार से भूमि वापस लेने का हक रहेगा। किसान और बँटाईदार के झगड़ों को तय करने के लिए ब्लाक, और उससे भी नीचे गाँव के स्तर तक कमेटियाँ बनेंगी। गाँव की कमेटी में एक प्रतिनिधि बँटाईदारों का होगा, और एक किसानों का, और दोनों मिलकर एक अध्यक्ष चुनेंगे। सारे मामले समझौते से तय कराये जायँगे या पंच फैसले से। जे० पी० भी कहते थे कि जब कानून कांग्रेस सरकार के बनाये हुए हैं, और संविद सरकार अपने को कांग्रेस से कहीं अधिक प्रगतिशील मानती है, तो कोई कारण नहीं कि सब दल, सरकारी और विरोधी मिलकर और सर्वोदय के कार्यकर्ताओं को भी लेकर, गाँव गाँव में झगड़ों के सर्वमान्य हल न निकाले जायँ। वह न्याय में देश की सुरक्षा देखते हैं।

अभी ९ नवम्बर को पटना में पिछली बैठक में बनी 'भूमि-सुधार

सलाहकार समिति' की पहली बैठक हुई। आश्चर्य, कि सिवाय कम्युनिस्टों तथा एक कांग्रेस सदस्य के दूसरा कोई सदस्य आया तक नहीं। मिलकर रास्ता निकालने की बात तो दूर, समस्या को स्वीकार करने और चर्चा करने से भी साफ इनकार!

जे० पी० का पावन प्रक्षोभ जगा, जिसे उन्होंने बैठक में यह कहकर प्रकट किया कि नक्सालबाड़ी बँटाईदार को न्याय देने से रुकेगी, न देने से भड़केगी, भड़क कर रहेगी।

काश, जे० पी० की यह चेतावनी राजनीति की नाव में बैठकर जमाने की लहरों पर तैरनेवाले नेता समझ लेते! उन्हें क्या मालूम कि उनकी नाव में नीचे छेद है!

भारत-जैसे पिछड़े हुए देश में विरोधवाद की राजनीति से समाज-परिवर्तन की शक्ति कभी निकल सकती है, यह मानना समझदारी का लक्षण नहीं है। लोकतंत्र के प्रचलित चक्कर में सरकारें बदलेंगी, बदलती जायेंगी, लेकिन अन्त में आयेगी तानाशाही। विरोधवाद 'स्टेटस्को' को पालता है, उसे बदलता नहीं। विरोधवाद के गर्भ से जन्मी हुई, सत्ता के पीछे पागल राजनीति न्याय के रास्ते पर नहीं चल सकती। वह 'लेफ्ट' और 'राइट' प्रतिक्रियावाद के भँवर में फँस गयी है। काश यह बात जनता समझ जाती।

यह काम अगर हो सकता है तो केवल ग्रामदान से—ग्रामदान की क्रिया के बाद ग्रामदान की प्रक्रिया से। क्योंकि वह वोट और कानून, दोनों की मुँहताजी से मुक्त है। ग्रामदान मालिक, महाजन, मजदूर, बँटाईदार को अलग-अलग नहीं जानता। वह केवल गाँव को जानता है 'एक' मानता है। ग्रामसभा में बैठकर चारों को चारों के कल्याण का सर्वमान्य रास्ता निकालना ही है। सब नहीं तो कुछ ग्रामसभाएँ तो वह रास्ता निकालेंगी ही। जो ग्रामसभाएँ रास्ता निकालेंगी वे आज की हवा बदलेंगी।

संविद सरकार के लोग यह कहने लगे हैं कि क्या किया जाय, 'संयुक्त सरकार की मजबूरियाँ' बहुत हैं। हाँ हैं, लेकिन जमाने की मजबूरियाँ भी तो हैं। नक्सालबाड़ी के नारे लगानेवालों की निगाहें कहीं और हैं, उनके सपने कुछ दूसरे हैं। अकेला ग्रामदान है जिसे सामान्य लोगों के सामान्य गुणों में अब भी भरोसा है। लेकिन समय भाग रहा है। कब ग्रामसभाएँ बनेंगी, और कब हम उनसे कहेंगे—केवल कहेंगे नहीं, पूरा मंथन पैदा करा देंगे—कि सबसे पहले यह सवाल हल करना है। हम सवालों को प्रस्तुत करके तो देखें!

क्रान्ति में चमत्कार का कुछ तत्त्व होता ही है। ●

---

३० जनवरी १९६८ के अवसर पर

भूदान-यज्ञ का सत्याग्रह विशेषांक

● गांधीजी ने देश और दुनिया को एक महामंत्र दिया—'सत्याग्रह'।

● सत्याग्रह जहाँ एक जीवन-पद्धति है, वहाँ एक कार्य-पद्धति भी है और विशेष प्रसंगों पर एक उपाय-पद्धति भी है।

● लेकिन गांधीजी के कार्यकाल में देश परतंत्र था, और स्वराज्य-प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील था। आज देश स्वतंत्र है और हमारी राज्य-व्यवस्था लोकतांत्रिक है।

● गांधीजी के समय विज्ञान जहाँ तक पहुँचा था, आज वह उससे बहुत आगे बढ़ चला है। उस समय का युद्ध मात्र जय-पराजयवाला युद्ध था, आज का युद्ध विध्वंसक संहार-क्रिया है।

● तब सत्याग्रह का क्षेत्र प्रमुख रूप से देश के आन्तरिक दायरों तक सीमित था, आज वह अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज तक फैला है।

● आज के अणुयुग की समस्याओं का आकार भिन्न है, प्रकार भिन्न है और स्वरूप भी भिन्न है।

● विनोबाजी की विचार-सरणि और कार्यशैली के कारण सत्याग्रह की धारा 'अहिंसक प्रतीकार' से 'अहिंसक सहकार' तक बहती आयी, दूसरी ओर देश के कुछ राजनैतिक व्यक्तियों और प्रवृत्तियों के द्वारा उपद्रवी जुलूस, हिंसक प्रदर्शन, आतंकमय बंद, घेराव और पथराव तक को सत्याग्रह कहा जाने लगा।

● आज भी यह एक बड़ा प्रश्न है कि लोकतंत्र में सत्याग्रह का सचमुच स्थान है भी या नहीं।

● फिर यह भी विवादास्पद ही है कि अन्तर्राष्ट्रीय विवादों में सत्याग्रह कहाँ तक उपयोगी है और उपयोगी है तो उसका स्वरूप क्या होगा।

● गांधी के देश के सामने यह चुनौती है कि वह सत्याग्रह के सिलसिले में आँख मूंद कर नहीं चल सकता, उसे अपना उत्तर देना होगा।

इस दृष्टि से गांधी-निर्वाण-दिवस—३० जनवरी १९६८—पर भूदानयज्ञ का 'सत्याग्रह अंक' प्रस्तुत किया जायेगा, जिसमें गांधीजी से लेकर आज तक के सत्याग्रह के विकास और इतिहास का परीक्षण होगा 'सत्य' और 'आग्रह' के स्वरूप और बदलते विभिन्न पहलुओं का विवेचन होगा, और विदेशों के तथा अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ के सत्याग्रहों का सिंहावलोकन भी होगा।

विशेषांक ६४ पृष्ठ का होगा। —संपादक

भारत में ग्रामदान, प्रखण्डदान, अनुमण्डलदान, जिलादान

दरभंगा में कुल ग्रामदान ३,७२०	प्रखंडदान ४४	अनुमंडल ३	जिलादान १
बिहार में कुल ग्रामदान १६,१०२	प्रखंडदान १००	अनुमंडल ५	जिलादान १
भारत में कुल ग्रामदान ४४,७५२	प्रखंडदान २०२	(१ नवम्बर '६७ तक)	

परिवर्तन की परिस्थिति : संयोजन का सन्दर्भ

एक कार्यकर्ता : गांधीजी ने कहा था "कायरता से हिंसा बेहतर है" इसको लेकर कई गांधी विचार को माननेवाले लोग आज की यथास्थिति को बदलने के लिए हिंसा का समर्थन करते हैं। लोकतंत्र में निष्ठा रखनेवाले हिंसा का समर्थन तो नहीं करते परंतु इसका विरोध भी नहीं करते, यानी हिंसक प्रवृत्ति के तटस्थ दर्शक रहते हैं। अहिंसा को माननेवाले और तदनुसार ग्रामदान प्रक्रिया से समाज परिवर्तन का प्रयास करनेवाले लोगों के लिए पहली स्थिति खतरनाक और दूसरी स्थिति अपनी अहिंसक निष्ठा और कार्यक्रम को कमजोर करनेवाली मालूम होती है। आज हम भूदान ग्रामदान से जिलादान तक पहुँचे हैं। वहाँ पर पूरे उत्साह से सामूहिक शक्ति लगाकर आगे बढ़ने का छोर प्राप्त हुआ है। ऐसे समय में इस प्रकार का 'डिवीजन' आंदोलन के लिए घातक मालूम होता है। इस पहलू पर आपकी प्रतिक्रिया क्या है? कृपया इसका स्पष्टीकरण करें।

धीरेन्द्र मजूमदार : अहिंसा के सन्दर्भ में यह एक बुनियादी सवाल है। गांधी विचार को माननेवालों के लिए हिंसा के रास्ते से यथास्थिति को बदलने की बात सोचने का अर्थ उसी तरह गांधी-विचार को छोड़ना है, जिस तरह राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए 'क्रिप्स मिशन' की शर्त मानने के लिए कांग्रेस की 'वर्किंग कमेटी' ने गांधीजी को छोड़ा था। गांधीजी की उक्ति का सहारा लेना कि 'कायरता से हिंसा बेहतर है,' इस सन्दर्भ में उचित नहीं है।

गांधी विचार को माननेवाले वे सज्जन जो यह बात कहते हैं, वे कायर नहीं हैं। अगर वे अहिंसक मार्ग को छोड़कर हिंसक मार्ग द्वारा क्रांति के सम्पादन का विचार करते हैं तो स्पष्ट है कि वे यह मानते हैं कि 'अहिंसक मार्ग' से 'हिंसक मार्ग' बेहतर है, न कि 'कायरता से हिंसा बेहतर है'। अगर वे गांधीजी के शब्द का सहारा लेते हैं तो समझना होगा कि उनको अपने मन का परिचय नहीं है और अपने को धोखा दे रहे हैं।

सैनिक शक्ति आधारित पश्चिमात्य लोकतंत्र में निष्ठा रखनेवाले अगर हिंसात्मक संघर्ष का विरोध नहीं करते हैं तो वे अपने विचार की मर्यादा में सही हैं। दण्ड शक्ति आधारित लोकतंत्र के माननेवाले अहिंसावादी नहीं होते हैं, उन्हें आप शान्तिवादी कह सकते हैं। दण्डशक्ति अहिंसा नहीं है। यह तो शान्तिमय हिंसा है, करीब करीब वही चीज है जिसे अंग्रेजी में 'कोल्ड वायलेन्स' कहते हैं। दोनों में फर्क इतना ही है कि एक समाज द्वारा प्रमाणित है, दूसरी अप्रमाणित। यही कारण है कि पू० विनोबाजी ने अहिंसा शक्ति की परिभाषा में कहा था, 'वह दण्ड शक्ति से भिन्न और हिंसा शक्ति की विरोधी स्वतंत्र लोकशक्ति है।' अहिंसक विचार को माननेवाले लोगों के लिए इससे अधिक स्पष्टीकरण और क्या हो सकता है? अगर उन्हें अहिंसक आन्दोलन चलाना है तो दृढ़ता के साथ तथा सार्वजनिक तौर पर हिंसक मार्ग का विरोध करना होगा, अत्यन्त स्पष्टता के साथ दण्डशक्ति के सहारे को अस्वीकार करना होगा, तीव्रता और एकाग्रता के साथ स्वतंत्र लोकशक्ति का अधिष्ठान करना होगा, तथा उसके सहारे अहिंसक मार्ग द्वारा यथास्थिति को बदलने का प्रयास करना होगा।

आज जब ग्रामदान प्रक्रिया से स्वतंत्र लोक-संकल्प के आधार पर अहिंसक शक्ति प्रकट होने का छोर मिल रहा है, तो उस छोर को मजबूती के साथ आगे बढ़ाना ही वर्तमान संकट से मुक्ति पाने का एक मात्र निदान है।

नक्सलबाड़ी, पूर्णिया तथा दूसरे स्थानों में जो विस्फोट मूलक कार्रवाइयाँ हो रही हैं उसे देखकर हमारे साथियों में से बहुतों की निष्ठा डोल रही है। यह सही है। उन्हें समझना चाहिए कि यह जो जगह जगह विस्फोट का दर्शन हो रहा है वह स्थिति परिवर्तन का प्रयास नहीं है, बल्कि स्थिति ध्वंस का प्रयास है। ध्वंस एक चीज है और परिवर्तन दूसरी चीज है। ध्वंस निषेधात्मक तत्त्व है और परिवर्तन विधायक तत्त्व। ध्वंस करनेवाला यथास्थिति के स्थान पर कौन सी स्थिति होगी उसकी फिक्र नहीं करता। परिवर्तन करनेवाला परिवर्तन के बाद क्या होगा उसका विचार करता है। हिंसात्मक तरीके से ध्वंस ही हो सकता है, परिवर्तन नहीं। ध्वंस के रास्ते से नयी स्थिति का निर्माण नहीं होता है, बल्कि पुरानी स्थिति का नये रूप में पुनरारंभ होता है। आप देख भी रहे हैं कि जहाँ जहाँ विस्फोटक कार्रवाइयाँ हो रही हैं, वहाँ वहाँ कोई विधायक निष्पत्ति नहीं हो रही है, बल्कि हिंसा, प्रतिहिंसा के घात प्रतिघात का सिलसिला चल रहा है।

अतएव अहिंसा में आस्था रखनेवाले लोगों को तीव्रता के साथ ग्रामदान आन्दोलन में जुट जाना चाहिए, और आन्दोलन की प्रक्रिया में समाज की भिन्न भिन्न समस्याओं के ग्रामदान-मूलक मार्ग के अन्वेषण तथा स्पष्टीकरण के काम में लगना चाहिए। इसके लिए हमें तीन 'फ्रंट' में शक्ति लगानी होगी।

१. वैज्ञानिक बुद्धि, २. सामाजिक और आर्थिक निर्माण, ३. लोक शिक्षण द्वारा सांस्कृतिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक शक्ति का निर्माण।

जब हम अहिंसक आन्दोलन में लगे रहते हैं तो हम प्रायः एक चीज को छोड़ देते हैं, वह है शस्त्र उत्पादन का काम। हिंसात्मक मार्ग अपनानेवाले केवल हिंसा के विचार का उद्बोधन और संगठन ही नहीं करते हैं, बल्कि हिंसात्मक कार्रवाई के लिए आवश्यक सरंजाम का संग्रह और उत्पादन भी करते हैं। वे युद्ध करते हैं, हमला करते हैं और साथ साथ शस्त्र उत्पादन

के मजबूत और स्थायी केन्द्र भी चलाते हैं। वे संविधान में हेरफेर करके, तथा मजबूत कानून बनाकर अपने मार्ग को प्रशस्त करते हैं। लेकिन हम अहिंसावाले अहिंसा के विचार का उद्‌बोधन तो करते हैं मगर उसके अनुसार संगठन का प्रयास नहीं करते हैं। संगठन के लिए सौम्य हिंसा यानी शान्तिमय हिंसा के मार्ग को अपनाने की कोशिश करते हैं। उस सन्दर्भ में हमारा चिंतन लोकमूलक नहीं है; बल्कि परंपरागत केन्द्रीय तंत्र मूलक है। इसलिए इस समय आवश्यकता इस बात की है कि हम अहिंसक समाज-रचना के लिए लोकमूलक शिक्षण आधारित संगठन का मार्ग खोजें।

अहिंसक समाज के लिए सरंजाम संग्रह और निर्माण के प्रश्न पर तो हम संपूर्ण उदासीन रहते हैं। स्पष्ट रूप से समझना होगा कि केवल वैधानिक प्रक्रिया से शान्तिमय समाज की स्थापना हो सकती है, अहिंसक समाज की नहीं। इस प्रश्न पर हमारा दिमाग पूरा-पूरा साफ होना चाहिए। हमने कहा है कि *अहिंसक शक्ति दंडशक्ति से भिन्न* स्वतंत्र लोकशक्ति है। दण्ड की शक्ति सैनिक शक्ति है, जिसके लिए बंदूक, तोप, बम आदि शस्त्रों का संग्रह और निर्माण आवश्यक है। जिस प्रकार हिंसक कारवाई के लिए सैनिक के हाथ में भिन्न-भिन्न शस्त्रों की आवश्यकता होती है, उसी तरह अहिंसक कार्यक्रम के लिए *लोक के जीवन में भिन्न भिन्न गुणों की* आवश्यकता होती है। लेकिन हम *अहिंसक क्रान्ति के सिपाही के, तथा जनता के गुण-*विकास के कार्य का किसी भी प्रकार का संयोजन नहीं करते हैं। अहिंसा में पहले और पीछे का कोई स्थान नहीं है। अहिंसा में समग्रता होती है। उसमें हथियार का *संग्रह और निर्माण*, क्रांति का अभिशान और उद्‌बोधन, तथा क्रान्ति की निष्पत्तिका संगठन साथ-साथ करना होता है। इसको गांधीजी ने एक शब्द में "समग्र-सेवा" की संज्ञा दी थी।

अतएव आन्दोलन के वर्तमान स्टेज में कार्यकर्ता तथा जनता के गुण-विकास के लिए कार्यक्रमों के संगठन की अनिवार्य आवश्यकता है। सामूहिक *पदयात्रा, लोकशिक्षक-समाज का संगठन तथा लोकशिक्षण केन्द्रों के अधिष्ठान की* ओर हमें विशेष रूप से ध्यान देना होगा।

इस प्रकार के संयोजन द्वारा कार्यकर्ता तथा ग्रामदानी गाँव की जनता के जीवन में सत्य, प्रेम, करुणा, संयम, शील, शान्ति, सहकार और समवेदना आदि हथियारों का समावेश हो, उसका संयोजित प्रयास करना *होगा। अपने हथियारों के अभाव में ही* हमारा साथी जब यह देखता है कि हिंसा के माननेवाले सक्रिय हो रहे हैं तो वह घबड़ा जाता है। घबड़ाहट इसीलिए होती है कि वे अपने हथियारों के साथ होते हैं और हम निहत्ये होते हैं।

हथियार संग्रह और उत्पादन के लिए हमें तीन मोर्चों पर *काम करना होगा*— (१) देश भर में *गुण-विकास के लिए* उसी प्रकार की *लोकयात्राओं का संयोजन* करना होगा जिस प्रकार सन् १९५७ में किया गया था। इस मोर्चे को मुख्यतः बहनों को सम्भालना होगा। (२) पूरे देश में *स्थायी रूप से लोकशिक्षक-समाज का संगठन* करना होगा, तथा (३) जगह जगह लोक-भारती, लोक-शिक्षा-केन्द्र आदि की स्थापना करनी होगी।

ग्रामदान प्राप्ति तथा उसकी पुष्टि का काम तो चलाते ही रहना होगा। लेकिन साथ साथ उपरोक्त त्रिविध कार्यक्रम पर *विशेष ध्यान देने का समय आ गया है* ऐसा मानना चाहिए। इस प्रश्न पर अगर हम गम्भीरता से विचार नहीं करेंगे और इसके लिए सक्रिय कदम नहीं उठायेंगे तो ग्रामदान की प्राप्ति बढ़ती जायेगी, पुष्टि भी हो जायेगी, लेकिन ग्रामस्वराज्य की स्थापना नहीं हो सकेगी। ग्रामदान को टिकाने के *लिए भी अहिंसक शक्ति यानी स्वतंत्र लोक-*शक्ति के स्थान पर सैनिक आधारित दण्ड-शक्ति का *सहारा ही लेना पड़ेगा। अगर* ऐसा हुआ तो परम्परागत वैधानिक लोकतंत्र की कुछ बेहतर इकाई के सिवाय आन्दोलन की दूसरी निष्पत्ति नहीं निकलेगी। ●

मुलाकातें :

निराशा की कोई बात नहीं

स्वराज्य के बाद भी गांधीजी की रचनात्मक *कार्ययोजनाएँ अल्पांश ही सही, जिन प्रदेशों में* चलती रहीं, बढ़ती रहीं, उनमें बिहार प्रदेश का स्थान महत्त्वपूर्ण है। विनोबा तो बिहार को बाप की स्टेट ('बाप' का आशय 'बापू' से है) कहते हैं। उसी बिहार ने ग्रामदान-तूफान की चुनौती स्वीकार की, और चुनौती ही नहीं स्वीकार की, बल्कि आगे बढ़कर ग्रामदान-आन्दोलन को एक नया आयाम दे दिया : बिहार-दान की गूँज पैदा करके, जिलानाद का शंखनाद करके।

उसी बिहार का क्षेत्रफल और जन-संख्या में काफी बड़ा, एक जिला है मुंगेर नाम का। स्वराज्य के पहले का, और स्वराज्य के बाद का भी मुंगेर जिले का इतिहास विविध आन्दोलनों की छोटी-बड़ी तमाम घटनाओं से भरा हुआ है। ग्रामदान-तूफान में भी मुंगेर महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है।

जब भूदान-आन्दोलन शुरू हुआ तो इसी मुंगेर जिले में श्री धीरेन्द्रभाई ने अहिंसक क्रान्ति की प्रशिक्षण-कम युद्धशाला—'श्रमभारती' की नींव डाली। भूदान से ग्राम-दान-तूफान तक के व्यापक अभियानों में इस संस्था ने 'बार बेस' का *काम किया।* सन् १९६१ में जब इस जिले के खादी कार्य *को प्रदेशीय संगठन से विकेन्द्रीकरण योजना के* अनुसार अलग किया गया तो जिला ग्राम-स्वराज्य संघ का संगठन हुआ। और तब से यह संस्था भी ग्रामदान अभियान में अपनी शक्ति लगाती रही है।

ग्रामस्वराज्य संघ तथा जिला सर्वोदय मण्डल दोनों संगठनों के प्रमुख कार्यकर्ताओं की एक बैठक में जाने का मुझे मौका मिला। उस मौके का लाभ उठाकर मैंने जिले के पाँच प्रमुख कार्यकर्ताओं से मुलाकातें कीं। आप भी इनसे मिलें :

श्री रामनारायण बाबू : स्वराज्य आन्दो-*लन के पुराने सैनिक, बिहार केसरी बाबू*

श्रीकृष्णसिंह के निकट तम सहयोगी, लेकिन सत्ता से अधिक सेवा की ओर आकर्षित! सन् '५१ तक नहीं सूझा कि अब सत्ता की गद्दी में सिमटती कांग्रेस के दायरे में रहकर क्या रामनारायण बाबू करूँ, क्या न करूँ। द्वन्द्व के बीच आशा का एक आधार दिखाई पड़ा 'भूदान आन्दोलन'। आकर्षित हुए, होते गये और एक दिन ग्राम स्वराज्य के आन्दोलन में पूरी तरह लग ही गये। स्वराज्य आन्दोलन के समय जवानी का जोश था तो इस समय प्रौढ़ता का होश था। अनवरत और अथक आन्दोलनकारी रामनारायण बाबू जिले के ही नहीं प्रदेश के गिने चुने लोगों में हैं।

आन्दोलन की रूखी, अनिश्चित और अस्थिर जिन्दगी की सारी असुविधाओं को बिना किसी तनाव के सहज स्वीकारते जाना, वह भी ढलती उम्र में, मामूली बात नहीं थी। स्वास्थ्य भी आपका बुलन्द रहता था, लेकिन पिछले दो-तीन सालों से अब वह स्थिति नहीं रही। तन ने मन का साथ नहीं दिया, स्वास्थ्य बिगड़ा तो कई बार मौत की दहलीज से सकुशल लौट आये। स्वास्थ्य की इस स्थिति के बावजूद आप ग्राम स्वराज्य संघ तथा सर्वोदय मण्डल दोनों संगठनों के प्रमुख की जिम्मेवारी निभा रहे हैं।

बातचीत के लिए जब मैं पहुँचा तो कमरे में लेटे थे, उठकर दिवाल के सहारे बैठ गये। स्वास्थ्य समाचार जानने के बाद हमारी मुख्य चर्चा शुरू हुई

मैं : देश भर में फैली खादी संस्थाओं में आज खादी पर संकट की चिन्ता व्याप्त है। जहाँ भी कार्यकर्ता जुटते हैं, चर्चा का मुख्य विषय होता है 'खादी को संकटमुक्त कैसे किया जाय?'

अधिकांश नयी राज्य सरकारें और काफी हदतक केन्द्रीय सरकार भी खादी-सहायता के समर्थन में हो, ऐसा नहीं लगता। आप इस संकट को किस रूप में देख रहे हैं?

रामनारायण बाबू : यों तो जब से स्वराज्य के आन्दोलन में लगा, तभी से खादी की बात सुनता आया हूँ, चरखा भी चलाता रहा हूँ, लेकिन प्रत्यक्ष रूप से खादी कार्य की जिम्मेदारी लेकर खादी कार्य करने का अनुभव कुछ ही वर्षों का है। (कुछ रुककर) लेकिन अपने अनुभव के आधार पर मैं कह सकता हूँ (चेहरे पर कुछ दृढ़ता के भाव) कि खादी पर कोई संकट नहीं है। भला खादी पर क्या संकट होगा? संकट है खादी संस्थाओं पर। क्योंकि उन्होंने खादी का काम सही ढंग से किया ही नहीं। गांधीजी ने कहा था, 'कातो, समझबूझकर कातो, जो काते सो पहने, जो पहने वह काते।' गांधीजी की इस बात को किसने स्वीकारा? लगे खादी का व्यापार करने।

मैं : (साश्चर्य) इतने दिनों से चला आ रहा खादी का काम आपके विचार से गांधीजी के विचारानुसार नहीं चला, यह बात हैरत में डालनेवाली है। लेकिन क्या आप खादी की सही दिशा की ओर कुछ संकेत कर सकेंगे?

रामनारायण बाबू : खादी के लिए जितनी तपस्या विनोबाने की, उतनी किसीने नहीं की। खादी की प्रक्रियाओं का पूरा अभ्यास और प्रयोग उन्होंने किया। लेकिन उसके लिए धन्धा चलाने नहीं बैठे। गाँव बनाने निकल पड़े। खादी तो गाँव की अर्थरचना का आधार है, उसके लिए गाँव चाहिए, आज साबूत गाँव कहीं है ही नहीं, तो खादी टिकेगी कहाँ? किस आधार पर? खादी चलेगी तो ग्राम स्वराज्य के आन्दोलन के साथ जुड़कर ही। इसीलिए विनोबाजी ने त्रिविध कार्यक्रम सुझाया है।

मैं : (जिज्ञासा से) दरभंगा के पूरे जिले का दान हो गया है। वहाँ खादी का काम भी बहुत अधिक हुआ है। तो क्या यह आशा की जाय कि सही खादी कार्य का सन्दर्भ, जैसा कि आप सोचते हैं, वहाँ बनेगा? और अब तो लोग पूछने भी लगे हैं कि दरभंगा का जिलादान हो गया तो अब क्या क्या परिवर्तन हुए?

रामनारायण बाबू : प्रश्न स्वाभाविक है और उसमें अपेक्षा है वह भी। जबतक फुटकर गाँव या प्रखण्ड इस आन्दोलन में शरीक हुए थे, तब तक कोई चित्र खड़ा करना सम्भव नहीं लगता था। लेकिन अब जब पूरे जिले का दान हो गया है, तब तो अवश्य ही वहाँ ऐसा काम होना चाहिए, जिसका समाज पर कुछ 'इम्पैक्ट' (प्रभाव) दिखाई दे।

मैं : इसके लिए आपके सुझाव क्या हैं?

रामनारायण बाबू : विचार को मान्य कर लेना एक बात है, और उसकी तीव्रता महसूस कर उसके लिए सब कुछ कर डालने की तैयारी का हो जाना दूसरी बात है। लोगों ने ग्रामदान के विचार को अच्छी चीज माना है, लेकिन उसकी रचना के लिए तूफान की गति से आगे बढ़ने की तीव्रता अभी समाज में पैदा नहीं हुई है।

कांग्रेस से जनता असन्तुष्ट थी बहुत पहले से, किंतु वोट उसीको देती थी, लेकिन आखिर पिछले चुनाव में वह लिहाज टूटा और कांग्रेस को भारी पराजय मिली। जनता का असन्तोष अपनी सीमा पार कर गया तो उसने कांग्रेस को छोड़ा और चाहे जिसको पकड़ा। अभी ग्रामदान के लिए यह परिस्थिति नहीं बनी है कि सभी पार्टियों को छोड़ो और ग्रामदान को ही पकड़ो।

यह स्थिति आये इसके लिए हमको प्रयत्नपूर्वक समर्पण की भावना से जुटना होगा। आन्दोलन में लगे सर्वोत्तम प्रतिभा के लोगों को प्रखण्डदानी क्षेत्रों में ग्राम-स्वराज्य की भूमिका बनाने के लिए जिम्मेदारी-पूर्वक लगना होगा। और दरभंगा में इसीके लिए विनोबाजी जोर लगा रहे हैं।

हमारी चर्चा बढ़ती जा रही थी। दिलचस्प थी, लेकिन हम विषय लेकर चले थे खादी का, चले नये ग्रामदान के विस्तार में। इसलिए चर्चा को मैंने कुछ संक्षेप में समेटने की कोशिश की।

श्री रामनारायण बाबू ने आन्दोलन को थोड़ी देर के लिए तटस्थ होकर देखते हुए कुछ महत्त्वपूर्ण बातें बतायीं

● भूदान आन्दोलन का तेज प्रगट हुआ था सन् '५५ में। जमीन के मालिक मान चुके थे कि जमीन अब उनके पास रहनेवाली नहीं है। भूमिहीनों को आशा बनी थी।

● खादी और भूदान को कम्युनिस्ट अपने मार्ग का जबरदस्त रोड़ा समझने लगे थे।

● लेकिन बोयी फसल हम काट नहीं सके। दाता अदाता किसानों के सम्बन्ध में परिवर्तन नहीं हुआ।

पहला सप्ताह

२५ अक्टूबर को प्रभात की मंगलवेला में कस्तूरबा ग्राम की 'भूरी टेकरी' पर एक समारोह के साथ लोकयात्रा टोली की भावभीनी विदाई हुई। कस्तूरबाग्राम परिवार, सर्वोदय मण्डल, विसर्जन आश्रम, इन्दौर महिला मंडल, स्वागत समिति की ओर से आशीर्वाद और शुभकामनाएँ टोली को प्राप्त हुई। शहर के अनेक सज्जन इस आयोजन में शामिल हुए थे। सर्वधर्म समन्वय की प्रार्थना के बाद श्रीमती अमलप्रभा बहन ने इस यात्रा का उद्घाटन किया। उन्होंने कहा, "आज देश भाषा, जाति, पंथ, प्रान्त और धर्म आदि के भेदों से जर्जर होता जा रहा है। स्थिति भयानक हो रही है। देश में सत्य, प्रेम, करुणा, संयम और शीलरक्षा के लिए प्रयत्नशील होना अत्यावश्यक हो गया है। इस संदर्भ में लोकहित का चिन्तन करती हुई यह लोकयात्रियों की टोली घूमेगी, हमें आशा है कि भारत की बहनों में इससे जागृति आयेगी।"
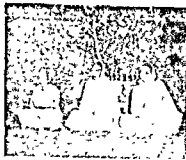
उद्घाटन

यात्री बहनें

अरुणोदय के साथ ही यात्रा शुरू हुई। एक साथ सैकड़ों भाई-बहनों के चरण आगे बढ़े। यात्रा का पहला पड़ाव इन्दौर तहसील में हुआ। उसके बाद यात्रा महू तहसील में आयी। दतोदा, जोशी गुराडिया, मिरोल, मेमदी, अम्बाचंदन, मगोरा और हरसोला गाँवों में पड़ाव हुए। मार्ग में केलोद तथा शिवनगर भी पड़े थे। कुल २८ मील का मार्ग लोकयात्रियों ने पूरा किया। ऊँची-नीची पगडंडी, ज्वार बाजरे के खेत, नवांकुरित हरी-हरी गेहूँ की लहरें यात्रा के आनन्द को द्विगुणित करती रहीं।

सब जगह पूर्व-तैयारी की गयी थी। पूर्व-तैयारी में इस टोली के सम्बन्ध में परचे हर गाँव में पहुँचा दिये गये थे। उसमें यह टोली विनोबाजी की ओर से निकली है यह बात लिखी हुई थी।

टोली की व्यवस्था में आगे पीछे ग्रामदानी कार्यकर्ता लगे हुए हैं। इससे गाँव के लोगों को शका हुई कि ये नये रूप में नये ढग से ग्रामदान लेने आयी हैं। टोली के पहुँचने पर गाँव में इसी विषय का मंथन ज्यादा चलता है। जब शंका दूर होती है तब लोग विश्वास और प्रेम से नजदीक आ जा जाते हैं। लेकिन जोशी गुराडिया में लोगों की शका नहीं ही दूर हुई। इस 'लोकयात्रा' टोली का स्वरूप यद्यपि बहुत सौम्य है, फिर भी जनमानस को यह यात्रा बहुत प्रभावशाली लग रही है। जोशी गुराडिया के एक भाई ने कहा—'राजघराने की तथा शिक्षित अनुभवी बहनें एक कठिन यात्रा पर निकली हैं। वे उसे अच्छा ध्येय मानकर निकली हैं तो मैं नहीं चाहता कि उनके पास जाकर मेरे मुँह से कुछ गलत शब्द निकलें। मैं उनका दिल दुखाना नहीं चाहता।'

सिमरोल गाँव में यात्रा टोली पहुँची, तो वहाँ भी लोगों का शका हुई। इसलिए शुरूआत में गाँव का कोई भी आदमी मिलने नहीं आया। फिर धीरे-धीरे हमारे साथ की बहनें गाँव में गयीं। उन्होंने लोगों से चर्चा की और तब धीरे-धीरे लोगों के मन की शका दूर हुई। शका जितनी दूर हुई, लोगों का प्यार उतना ही बढ़ा। अबाचन्दन गाँव में बहनों की अच्छी सभा हुई। परन्तु भाइयों से मिलना नहीं हुआ। मगोरा गाँव में भी ऐसा ही हुआ। ग्रामदान प्रचार की गलतफहमी के कारण काफी रूखी सूखी बातें कीं। गाँव से सपर्क होने के बाद वातावरण बदला। लोकयात्री टोली द्वारा सभाओं में कथा-कीर्तन रामायण और नामघोषा का पाठ हुआ।

विदाई

● आन्दोलन की प्रभावशाली शक्ति प्रगट करने के लिए हम कोई सघन-क्षेत्र अभी तक नहीं बना पाये।

● अकेले बिहार में ३ लाख ११ हजार एकड़ से अधिक भूमि का वितरण हुआ, लेकिन इतने बड़े काम को दाताओं के कुछ झूठे दान-पत्रों ने ढँक दिया।

● भूमि के मामले में सन् १९५७ तक परिवर्तन की मनोभूमिका भूमिहीनों और भूमिवानों दोनों की बन गयी थी। हम उसके लिए अनुकूल कानून बनाने का दबाव सरकार पर डाल सकते थे। वह नहीं किया।

आशा निराशा की बहुत-सी बातें सुनते-सुनते अन्त में रामनारायण बाबू ने पुनः एक क्रान्तिकारी मनोभूमिका में आकर कहा, "अब भी निराशा की कोई बात नहीं है। ग्रामदानी गाँवों में ग्रामसभाएँ संगठित हो जायँ और भूमि का वितरण हो जाय तो एक नयी शक्ति बनेगी, फिर आगे की तीसरी, चौथी मंजिलें पूरी होंगी। तब नया गाँव बनेगा, नया समाज बनेगा, जरूर बनेगा और तब न तो खादी पर संकट रह जायगा और न समाज पर।" (क्रमशः)

—प्रस्तुतकर्ता : रामचन्द्र राही

प्रस्थान

ग्रामदान नाम को छोड़कर अलग ढंग से जनता के सामने बातें रखी गयीं।

मगोरा गाँव को छोड़कर अन्य गाँवों में भाई-बहन स्वागतार्थ तैयार मिले। उन लोगों ने फूल भेंटकर, तिलक लगाकर और भजन गाकर टोली का स्वागत किया। गाँव के किसान भाई बहनों का खेती के काम में अत्यन्त व्यस्त रहने के कारण दिनभर दर्शन होता नहीं। शाम को सब वापस आते हैं और भोजन वगैरह से निवृत्त होकर बातें सुनने के लिए इकट्ठा होते हैं। दिनभर के श्रम से थके हुए होने के बावजूद भी काफी उत्सुकता से और शान्ति से लोग हमारी बातें सुनते हैं।

रोज सुबह ६ बजे यात्रा शुरू होती है। यात्रा से पहले सुबह की प्रार्थना होती है। रास्ते में कहीं शान्त एकान्त खेत की जगह देखकर हम सामूहिक अध्ययन के लिए बैठती हैं। १५ २० मिनिट का वह अध्ययन सचमुच गहरा होता है। चलते-चलते कभी धुन, कभी भजन, कभी गुरुबोध के श्लोक गाते जाते हैं। पड़ाव पर पहुँचने के बाद स्नान, भोजन और विश्राम के बाद जन-सम्पर्क का कार्यक्रम चलता है। पड़ाव पर भी सामूहिक अध्ययन होता है, विष्णु सहस्रनाम पाठ और साथ प्रार्थना होती है।

ग्रामसभा में कहीं कहीं बहनों की उपस्थिति कम रहती है और कभी ज्यादा रहता है। जहाँ बहनों में सत्संग वगैरह चलता है, वहाँ की बहनें कुछ जागत दीखती हैं। सभा में श्री हेमप्रभा बहन अपना भाषण असमिया में देती हैं और उसका अनुवाद लक्ष्मीबहन करती हैं। शायद लोगों के कान में इस भाषा की ध्वनि पहली बार पड़ी है। लोक यात्रा का उद्देश्य, देश और दुनिया की परिस्थिति आदि समझाकर गाँव को परिवार बनाने में और विश्व को देश बनाने में क्या लाभ है वह बताते हैं। असम में स्त्रियों का स्थान, असम की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, नामघर, नामघोषा भौगोलिक परिस्थिति, नाम घोष के तीन घोषा की व्याख्या, रामायण के उत्तर-कांड में वर्णित रामराज्य के प्रसंग आदि को लेकर श्री निर्मला बहन चर्चा करती हैं। उसके साथ साथ ही ग्रामहित तथा स्त्री-शक्ति के जागरण की आवश्यकता और कैसे वह शक्ति जाग्रत हो सकती है, इन विषयों पर भी लोगों के साथ चर्चाएँ होती हैं।

अब तक लोकयात्रा टोली में रूरल इन्स्टीट्यूट की एक विद्यार्थिनी है। बारह साल की यात्रा का निर्णय लेकर गत २१ ता० से रूरल इन्स्टीट्यूट की अध्यापिका श्री देवी रिझवानी इस यात्रा में शामिल हुई हैं। पूर्व तैयारी में दो बहनें रहती हैं। सामान के लिए एक बैलगाड़ी माचला पंचायतीराज प्रशिक्षण संस्था से मिली है, पथ प्रदर्शन के लिए गांधी स्मारक निधि के एक भाई भी हमारे साथ हैं।

अनेक सज्जनों के सम्पर्क में हमें आनन्द ही आनन्द का अनुभव हो रहा है। बस और अब क्या लिखें!

सबको प्रणाम।

—लोकयात्री टोली

(दिनांक २५ १० ६७ से २ ११ ६७ तक)

पुस्तक परिचय

नव भारत

"दुनिया बदल गयी, राजतन्त्रों का स्थान लोकतन्त्रों ने ले लिया, लेते जा रहे हैं, परन्तु हमारे विधि विधान अब भी वही पुरानी राजनीति के हैं। हमारे पठन पाठन, अध्ययन अध्यापन में लोकनीति नहीं, अब भी उसी राजनीति की प्रतिष्ठा है। अर्थशास्त्र, समाज शास्त्र, सबकी वही दुर्दशा है।"

"इसीलिए अब ऐसे बिल्कुल नये शास्त्र की अपेक्षा है जो शास्त्रों की घेराबन्दी और शास्त्रियों की दकियानूसी, दोनों से मुक्त होकर मानवमात्र के अभ्युदय का मार्ग प्रशस्त कर सके।"

"इस पुण्यकार्य में 'नवभारत' सहायक होगा" ऐसा लेखक का विश्वास है।

५०२ पृष्ठोंवाले इस बृहद् ग्रंथ 'नव भारत' के लेखक हैं—रामकृष्ण शर्मा। ग्रन्थ प्रकाशित है—शारदा प्रकाशन, वाराणसी की ओर से। मूल्य है—मात्र पन्द्रह रुपये।

इस ग्रन्थ में लेखक ने 'गांधी विचार धारा का सर्वांगीण एवं शास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत करने का दावा किया है। लेखक महोदय की नजर में यह रचना ४० वर्षों के उनके निरन्तर अध्ययन और अनुभवों का प्रतिफल है।

वस्तुतः लेखक ने स्नातक एवं स्नातकोत्तर कक्षाओं में गांधीदर्शन, समाजशास्त्र, एवं अर्थशास्त्र के समन्वित अध्ययन की आवश्यकता को ध्यान में रखकर अपना यह गुरु ग्रन्थ प्रस्तुत किया है।

लेखक महोदय ने विषयों के वर्गीकरण और विवेचन में अपनी क्षमता और पकड़ के अनुसार खूब परिश्रम किया है किन्तु विषय के सही और बारीक विवेचन के लिए भाषा के जिस सुथरेपन और अभिव्यंजना की माँग थी वह लेखक के पास नहीं है। इस कमी के कारण पुस्तक का विवेचन प्राय सतही और भूदान ग्रामदान के विवेचन में कहीं कहीं स्पष्टरूप से अप्रामाणिक हो गया है। उदाहरणार्थ :

"जब विनोबाजी ने भूदान यज्ञ की घोषणा की, तो उन्होंने जमीनवालों को स्वयं प्रेम पूर्वक अपनी फाजिल जमीनें बेजमीनवालों को देकर सामाजिक सुरक्षा और अभ्युत्थान का कारण बनने की सलाह दी।" (पृष्ठ-२४२)

"सम्पत्ति पर व्यक्ति और समाज दोनों का समान अधिकार है। एक की मर्यादा दूसरे से कायम होती है। कोई किसी की सीमा का अतिक्रमण न करे, हित इसी में है, सुख और समृद्धि का रास्ता यही है।" (पृष्ठ-२५२)

—रविन्स

खादी : चुनौती ही चुनौती

गांधीजी ने चरखे को अहिंसक क्रान्ति का प्रतीक माना था, नयी समाज रचना के लिए सुझाये गये अपने रचनात्मक कार्यक्रमों के सौरमण्डल का सूर्य माना था; लेकिन चरखा हमारी भावनाओं के पोषण की प्रतिमा बनकर रह गया। राष्ट्र के क्षितिज में सौरमण्डल का सूर्य 'सत्ता' की कुर्सी बन गया और चरखा एक छोटा उधारी चमक लिये हुए सितारा मात्र बनकर रह गया।

जिस समाज में अहिंसक क्रान्ति चाहिए थी, जिस नयी समाज की रचना के लिए चरखामूलक अर्थनीति का संकेत मिला था, वह समाज हमसे अलग छूट गया और हम अपनी-अपनी संस्थाओं की चहारदीवारी में सिमटकर अब निस्तेज हो रहे हैं।

यद्यपि यह कहना कि इसकी सारी जिम्मेदारी खादी ग्रामोद्योग के काम में लगे हम थोड़े से लोगों की ही है, हमारे साथ अन्याय होगा। लेकिन यह भी सही है कि इसकी जिम्मेदारी के बहुत बड़े भाग से हम अपने को बरी नहीं कर सकते। हमें मानना ही पड़ेगा कि हमने प्रतिमा की उपासना भले की हो, चरखे को अहिंसक क्रान्ति का प्रतीक मानकर हम सही दिशा में आगे नहीं बढ़ पाये हैं।

और अब हम इस स्थिति में पहुँच गये हैं कि एक बार पिछले सारे अनुभवों के प्रकाश में हमें अहिंसक क्रान्ति के इस प्रतीक का सही स्वरूप देखना है, इसके संकेत को समझना है, और समझकर आगे बढ़ना है।

रायपुर सर्वोदय-सम्मेलन में हमने कुछ इसी प्रकार की घोषणा की थी, लेकिन हमारे अबतक के प्रयत्न से हमें संतोष नहीं हो पाया।

यहाँ हम कुछ साथियों के विचार प्रस्तुत करते हुए 'विचार-मंथन' का प्रारंभ कर रहे हैं, इस आशा के साथ कि रायपुर की घोषणा और वर्तमान परिस्थिति की चुनौती के संदर्भ में हम अधिकाधिक सक्रिय होंगे।

—संपादक

तीन चरण : तीन रूप

सन् १९२७ में जब मैं छठवीं कक्षा में पढ़ता था, तभी से खादी पहनना शुरू किया। खादी पहनते मुझे अब चालीस साल हो चुके हैं।

सन् १९२७ में जब मैंने खादी पहनने की शुरुआत की, तब उस समय एक मित्र ने जो हाई स्कूल में पढ़ता था, मुझे खादी की बात समझायी थी, 'गांधीजी का कहना है कि भारत के गरीब लोगों को जिन्दा रखना और उनके मुँह में अन्न देना है तो खादी अवश्य पहननी चाहिए।' उस समय खादी को निष्ठा के साथ समझ-बूझकर पहनना कुछ अच्छी तरह समझा था। खादी द्वारा देश की गरीब जनता का उद्धार होगा, यह विश्वास मन में स्पष्ट हुआ था। धीरे-धीरे खादी के दूसरे स्वरूप का भी दर्शन हुआ, 'अंग्रेज सरकार एक वणिक सरकार है। शोषण के लिए, और शोषण के जरिये, वह भारत में अपनी सत्ता जमा रही है। खादी को अपनाने से भारत शोषणमुक्त और शासनमुक्त हो सकेगा।' यह बात सन् १९३७-३८ की है। सन् १९४७ में जब भारत स्वतंत्र हुआ, तब दूसरे अन्य लोगों की तरह मैं भी यही सोचता था कि अब इस स्वतंत्र भारत में खादी की कोई जरूरत नहीं है। स्वतंत्रता के बाद खादी खतम हो जायेगी, हो जानी चाहिए। लेकिन उसी बीच मुझे सेवाग्राम बुनियादी शिक्षा की तालीम लेने का सुअवसर मिला। वहाँ मुझे खादी का तीसरा स्वरूप दिखायी दिया और अहिंसक समाज-रचना के लिए खादी की जरूरत समझ में आयी।

इस प्रकार खादी के स्वरूपों के दर्शन करने में २० साल लगे। तबसे बुनियादी शिक्षा, भूदान-ग्रामदान आदि रचनात्मक कार्यों तथा प्रयोगों में लगा हूँ। नया मोड़, ग्राम इकाई, प्रखंड-दान के बाद प्रखंड-इकाई आदि काम अभी चल रहा है, फिर भी आज खादी संकट में है। इस संकट की स्थिति से खादी का उद्धार करने के लिए हम सबको खादी के उक्त तीनों स्वरूपों के स्पष्ट दर्शन होने चाहिए। अब तक जो खादी चली आ रही है, वह व्यापारिक रूप में। ग्रामाभिमुख खादी के विचार में उक्त तीनों स्वरूप समाये हुए हैं। उस विचार को छोड़कर खादी टिक नहीं सकेगी।

—मदनमोहन साहु, आचार्य
उत्कल ग्रामस्वराज्य विद्यालय,
गोपालवाड़ी, कोरापुट

संकट : बाहरी और भीतरी

खादी और सूत के स्टाक का बढ़ना खादी-काम के लिए आज एक कठिन समस्या उपस्थित करता है, क्योंकि उसका कुप्रभाव उत्पादन और संस्थाओं की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। पर इतना मात्र कहने सुनने और मान लेने से खादी की समस्या का असली स्वरूप सबके सामने नहीं आने पाता। बल्कि अन्य व्यवसाय के संकट के समान ही खादी की स्थिति मानने से उसका वास्तविक संकट आँखों से ओझल होने की आशंका रहती है। यह बात ठीक है कि खादी का स्टाक बढ़ा है और सूत का स्टाक भी बढ़ा है किन्तु यह भी सही है कि बिक्री भी पिछले वर्षों की अपेक्षा बढ़ी है। बिक्री बढ़ने के बावजूद स्टाक बढ़ा है तो उसके विशेष कारण रहे हैं।

इसमें सबसे बड़ा और पहला कारण यह रहा है कि सूत-कताई दूनी की गयी। इसके फलस्वरूप कत्तिनों की संख्या और उनका

उत्पादन बढ़ना और खादी का 'लागत मूल्य' बढ़ना निश्चित था। इस बढ़ते हुए सूत की बुनाई व्यवस्था में विलम्ब होना भी अस्वाभाविक नहीं था क्योंकि कताई बढ़ाना जितना आसान है उतना जल्दी बुनाई बढ़ाना संभव नहीं है। कताई और बुनाई के बीच के सन्तुलन को बिगाड़ने में बड़ी मदद करनेवाली दूसरी बात इसी अवधि में उल्टे चरखे का निर्णय रहा है। कत्तिनों ने तो कताई बढ़ने के कारण उल्टा चरखा अपना लिया, उनके लिए यह थोड़ा सरल भी था। पर बुनकरों के लिए इस नयी प्रक्रिया को अपनाने में अपनी जीवन भर की आदत को बदलने का सवाल था। उन्हें इस सबंध में कोई आर्थिक प्रोत्साहन भी नहीं मिला। बल्कि बुनाई की दरों में वृद्धि न करना उनके प्रति एक अन्याय है। फलस्वरूप खादी क्षेत्र से बुनकरों का विलग होना उनकी एक प्रकार की मजबूरी को जाहिर करता है तो इन सब परिस्थितियों के बावजूद कुछ बुनकरों का अभी खादी की बुनाई में लगे रहना उनकी दूसरी प्रकार की मजबूरी का द्योतक है। किन्तु इसका परिणाम हर हालत में कताई और बुनाई के बीच असन्तुलन और सूत के स्टाक को बढ़ाने में होना अनिवार्य है।

यद्यपि बुनाई उद्योग की जिम्मेदारी सरकार ने अपनी मान रखी है पर बुनकरों को मजदूरी देने की तैयारी नहीं है। कत्तिनों को दूना रेट देने में सरकार की सहमति रही है पर उसके फलस्वरूप उत्पादन बढ़ाने के लिए अधिक पूँजी देना वह अपना फर्ज नहीं मानती।

गत वर्ष खादी कमीशन के मार्फत सरकारी आर्डरों की विशेष खादी बनाने के लिए संस्थाओं पर जोर डाला गया था तो जनता के उपयोग की खादी के स्थान पर अधिक शक्ति उस दिशा में लगी। सरकारी लड़ाई के माल का स्टाक एकत्रित हो गया तो सरकार ने माल लेने से इनकार कर दिया। सरकार के इस निर्णय के कारण संस्थाएँ मुसीबत में फँस गयीं। इनके पास एक ओर सरकारी लड़ाई के माल के गोदाम भरे हैं और दूसरी ओर जनता की माँग की आवश्यक किस्म की खादी बनाना कठिन हो चला है। खरीद किये हुए माल का भुगतान करने में भी सरकार की ओर से बड़ी ढिलाई की जाने लगी है। नतीजा यह हो रहा है कि कत्तिन बुनकर बेकार हो रहे हैं और संस्थाएँ घाटे में जा रही हैं। और ऊपर से उन पर माल न बेच पाने का इल्जाम भी लगाया जा रहा है, जिसकी जिम्मेदारी बहुत कुछ सरकार की मानी जा सकती है।

कत्तिन और बुनकरों को रोजगार दिलाने के लिए सरकार खादी में पूँजी लगाने का दावा करती है पर उनके द्वारा उत्पादित माल की खपत के लिए अनुकूल नीति बनाने और उस पर अमल करने की उसकी तैयारी नहीं है। स्पष्ट है कि नैतिक और सामाजिक न्याय की दृष्टि से खादी के प्रति सरकार की जो जिम्मेदारी है अब वह उसे निभाने को तैयार नहीं है। खादी के समक्ष उपस्थित अनेक समस्याओं के लिए जिम्मेदार सरकार की यह उपेक्षावृत्ति है। दरअसल आज खादी के संकट का असली स्वरूप यही है। यदि लाखों लोगों के आंशिक रोजगार से सम्बन्ध रखनेवाले इस वास्तविक एवं विशाल सम्भावनायुक्त खादी ग्रामोद्योग के कार्यक्रम के महत्त्व को देश के वास्तविक हित की दृष्टि से सरकार स्वीकार करे और उसके प्रति अपनी सही नीति बनाये तो उसके लिए आवश्यक पूँजी जुटाना कठिन नहीं हो सकता। यह बात किसीके गले नहीं उतर सकती कि जो सरकार केवल कुछ हजार लोगों के रोजगार के लिए अरबों रुपया बाहर से कर्ज लाकर लगा सकती है वही सरकार कुछ करोड़ रुपया अतिरिक्त पूँजी के रूप में लगाकर लाखों लोगों को घर बैठे उनकी न्यूनतम आय में इजाफा देने में असमर्थ है।

सामान्यतया किसी भी उद्योग में विशेष स्टाक बढ़ने या अन्य संकट उपस्थित होने पर सरकार मदद करने के लिए दौड़ती है और वैसा करना उसका फर्ज भी माना जाता है। किन्तु उसी प्रकार की विशेष मदद कताई बुनाई व उत्पादन बिक्री का संतुलन सम्भालने तक खादी को देने में सरकार झिझकती है। सरकार की यह उपेक्षा राष्ट्रीय दृष्टि से और भी घाटे की सिद्ध होनेवाली है क्योंकि उसका करोड़ों रुपया आज खादी में लगा हुआ है। इसलिए यदि शुद्ध आर्थिक दृष्टि से भी देखा जाय तो खादी को संकट पार कराने के लिए विशेष मदद देकर सरकार को अपनी पूँजी की सुरक्षा करनी ही चाहिए। इसके अलावा यदि सामाजिक दृष्टिकोण से इस प्रश्न को तौलने की उदारता हो तो इस प्रकार की मदद सबसे सस्ती और असरकारक मानी जा सकती है। लेकिन सरकार यह सब सुनने और इस पर विचार करने को तैयार नहीं है। खादी क्षेत्र के बड़े से बड़े व्यक्तियों के प्रति उसका पूरा भरोसा नहीं दीख पड़ता। वास्तव में आज खादी के सर पर सबसे बड़ा नैतिक संकट यही है कि उसके नेताओं की बात का यथेष्ट असर सरकारी नीति एवं योजनाओं पर नहीं पड़ता।

अब सवाल यह है कि इस संकट से मुक्ति कैसे मिले? अनिच्छुक सरकार से गिड़गिड़ाकर मदद लेते रहने में तो सम्मान की हानि स्वाभाविक ही है। उसका विकल्प अस्पष्ट नहीं है। खादीवाले यदि सरकारी धन से मदद लेना अपना कर्तव्य मानते हैं तो प्रचार, संगठन, शक्ति, आन्तरिक नैतिक बल एवं तपस्या के साथ साथ कार्यकुशलता एवं जन बल के आधार ही प्राप्त करना सम्भव है।

खादी जगत् अपनी बीमारी के इन उपचारों की श्रेष्ठता को स्वीकार करके भी यथावत उस दिशा में गतिमान नहीं हो पाता, पर उसका आन्तरिक और बुनियादी संकट है। स्पष्ट है कि इस परिस्थिति का शीघ्र निराकरण हुए बिना निस्तार नहीं।

—जीतमल लोढ़ा, जयपुर

बहिष्कार···परिवर्तन···योजना

जिस खादी को भारतीय जनता आजादी के पूर्व सादगी, संयम व स्वतन्त्रता का बाना मानती थी तथा खादीधारी को त्यागी तपस्वी मानकर सम्मान की नजर से देखती थी, वही जनता आज उसी खादी को शोषण का जरिया तथा उन्हीं खादीधारियों को शोषक वर्ग का मान कर नफरत की नजर से देखती है।

● सर्वप्रथम हमें इस समस्या के मनोवैज्ञानिक कारण को समझना चाहिए। आजादी के पूर्व खादी का मूलाधार जनभावना

● मूल्य में खादी से मिल की स्पर्धा तो सदा रहेगी ही। इसलिए उसे किसी न किसी प्रकार का सरक्षण मिलना चाहिए। सरक्षण देने का सबसे अच्छा रास्ता होगा, मिलों पर अधिकतम् टैक्स लगाना, ताकि गरीब लोगों से स्पर्धा न हो।

— सेठ लाल गोविंदजी

चुनौती स्वीकार करें

खादी परस्परावलम्बन के द्वारा देश को समृद्ध और शक्तिशाली बनाने का मार्ग प्रशस्त करती है। आज यह दुनिया में फैली घोर हिंसा और निराशा के अंधकार को दूर करने में दिव्य प्रकाश की झलक दे रही है। इसके द्वारा लोकतंत्र को सबल और पुष्ट बनाकर शांति और अहिंसा को साकार करने में मदद मिल सकती है।

जहाँ उत्पादन का केन्द्रीकरण होता है, वहाँ व्यक्ति के विचार-स्वातंत्र्य, कार्य स्वातंत्र्य, विकास स्वातंत्र्य का हनन होता है। इसका एक मात्र इलाज उत्पादन का विकेन्द्रीकरण ही हो सकता है। खादी और ग्रामोद्योगों का विकास परस्परावलम्बन द्वारा समाजवादी ढंग का समाज बनाने की दिशा में एक ठोस कदम है।

जब हम अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए चीजें पास-पड़ोस की बनी खरीदते हैं तो पैसा घूम फिर कर गाँवों में रह जाता है। जिससे गाँव खुशहाल बनता है। हाथ की बनी चीजें प्रत्यक्ष महँगी दिखाई देने पर भी वास्तव में सस्ती होती हैं। क्योंकि गाँव के जीवन की आवश्यकताएँ गाँव में पूरी हो जाती हैं। हम अगर महँगी चीजें खरीदते हैं तो हमारी भी महँगी चीजें दूसरे खरीदते हैं। इस प्रकार परस्परावलम्बन से हम गाँव को समृद्ध बनाते हैं। पर मिल की बनी चीजों के लिए अपनी मिहनत से पैदा किया हुआ अन्न बेच कर हम पैसा सुदूर के पूँजीपतियों की जेब में डालते हैं जो फिर कर अपने पास नहीं आता। गांधीवादी अर्थ-व्यवस्था का आधार गाँव है। उसका निर्माण गाँव की ठोस नींव पर ही खड़ा हो सकता है, यानी वह नीचे से ऊपर की ओर बढ़ेगा, उसे ऊपर से लादा नहीं जा सकता है। स्वाभाविक गति से जनमानस को शिक्षित कर उसकी ग्रामीण भावना का विकास करना जन-सेवकों का मुख्य कर्तव्य होगा। इसके लिए बापू ने समग्र विकास की दृष्टि से खादी की भावना को गाँवों में प्रतिष्ठित करने के लिए कार्यकर्ताओं को गाँवों में बैठने और उसमें अपने को आत्मसात करने की बातें कही थीं। आज वह समय आ गया है कि हम रचनात्मक कार्यकर्ता अपने को गाँवों में बिखेर दें और जनता में ग्रामीण भावना पैदा कर परस्परावलम्बन से स्वदेशी की भावना समग्र विकास दृष्टि से करें।

—बनारसी प्रसाद शर्मा
बि० खा० ग्रा० सघ,
सर्वोदय ग्राम, मुजफ्फरपुर

<u>पत्र परिपत्र</u>

प्रिय बन्धु,

शोषित और लांछित अन्नोत्पादक मजदूरों का पशुवत जीवन, अन्नदाता किसानों का कर्ज से बोझिल तथा दुख दैन्य भरा जीवन, श्रीमानों की भयभरी तथा उदासीन और अनुदार जिन्दगी, सरकारी क्षेत्रों में फैला हुआ भ्रष्टाचार तथा घूसखोरी का वातावरण, बड़े और छोटे अधिकारियों की अकर्मण्यता, सरकार की लाचारी, हम कार्यकर्ताओं की दयनीय और नेतृत्वहीन अवस्था, आदि आदि तथ्यों से उत्पन्न परिस्थिति ने बाध्य किया है कि हम निम्नांकित विषयों पर गम्भीरतापूर्वक चिंतन मनन करें। हमारी समझ में सम्प्रति एक ऐसा समय उपस्थित हो गया है कि यदि नीचे दी गयी विचारणीय समस्याओं का समाधान अहिंसा और सत्य के आधार पर नहीं किया

परिस्थिति के दबाव

गया तो देश में हिंसा अपने भयानक रूप में फूट पड़ेगी। बिहार के पड़ोस दार्जिलिंग जिले के नक्सलवाड़ी आदि प्रखंडों में उत्पन्न परिस्थिति अधिक भयकर रूप धारण करेगी और समाज भयकर रक्तपात का शिकार हो जायगा। हमारी कल्पना में जहाँ प्रेम की गंगा बहनी चाहिए वहाँ शोणित की वैतरणी बहेगी। अतएव हमारा साग्रह अनुरोध है कि रक्तपात की भयकरता से पवित्र बिहार को बचाने और गरीबों तथा असहायों को न्याय दिलाने के उपायों के बारे में सोचें और कदम उठायें। हम कुछ मित्र मुजफ्फरपुर जिला अन्तर्गत जमालाबाद आश्रम में इस परिस्थिति पर विचार करने हेतु विगत १ सितम्बर से ३ सितम्बर के बीच में मिले थे जहाँ हम लोगों ने निम्नांकित समस्याओं पर विचार किया और अपनी रायें स्थिर कीं, जिसे आपकी जानकारी तथा विचार के लिए सेवा में प्रेषित किया जा रहा है। आपसे निवेदन है कि आप

मन के उलझाव

इन समस्याओं पर गम्भीरतापूर्वक सोचें विचारें और अपनी राय यथाशीघ्र श्री बद्री नारायण सिंह, जमालाबाद आश्रम, मुजफ्फरपुर के पते पर भेजें। विचारणीय मुद्दे नीचे लिखे हैं —

● भूमिसुधार विषयक प्रगतिशील कानूनों का कार्यान्वयन कैसे कराया जाय?

● अन्नोत्पादक श्रमजीवियों को अपनी मिहनत का आनुपातिक फल कैसे मिले।

● अन्नदाता किसानों के कर्ज का बोझ कैसे हटे तथा उनका जीवन कैसे खुशहाल हो!

● श्रीमानों और बड़े जमीनवालों को अपने प्रभपाश में बाँधकर समता के आन्दोलन में कैसे लाया जाय!

● सरकारी तंत्र को प्रजा के दुःख दूर करने के अनुकूल कैसे बनाया जाय!

● पूँजीवादी शोषण से प्रजा की रक्षा कैसे की जाय!

● नशाखोरी का अभिशाप राज्य भर से कैसे दूर हो!

उक्त विषयों पर आपको धीरता और गम्भीरता के साथ विचार करना है।

विनीत

मोतीलाल केजरीवाल, बद्रीनारायण सिंह
सत्यनारायण सिंह रामसेवक शुक्ल,
हरिदेव पाण्डेय, लक्ष्मण वेन्द्र,
रामसेवक ठाकुर।

× × ×

प्रिय बद्री बाबू,

प्रणाम,

ता० २५।९।'६७ का भेजा हुआ आपका परिपत्र (पत्रांक–१२४) मिला। समाज के

जिस पिछड़े एवं उपेक्षित वर्ग की कठिनाइयों की आपने चर्चा की है उस ओर समाज के जीवन्त लोगों का ध्यान जाय, यह आवश्यक है। उन कठिनाइयों के निराकरण के लिए जिन मुद्दों पर राय स्थिर करने को आपने कहा, वे मुद्दे भी विचारणीय हैं। मुख्य बात यह है कि इन समस्याओं के समाधान के लिए हम कार्यकर्तागण अपनी शक्ति किस तरह लगायें। कार्यकर्ता के नाते हमारी संख्या और शक्ति दोनों ही सीमित हैं। संख्या यदि अधिक भी हो तो भी हमारा काम एक सीमित दायरे में ही हो सकता है। हमारा (कार्यकर्ताओं का) रोल हर समय 'एजुकेटर' का ही हो सकता है, 'एजिटेटर' का कतई नहीं। हमारी समझ में इन समस्याओं का शीघ्रतम हल है ग्रामदानी गाँवों में ग्रामसभा का गठन एवं उनकी बैठकें।

समाधान के सुझाव

ग्रामसभाओं को जो कठिनाइयाँ जिस रूप में दीख पड़ें, उनके हल के लिए अहिंसक और कारगर उपाय सुझाना ही हमारा काम हो सकता है। उन उपायों को कार्यान्वित करने में ग्रामसभा आगे रहेगी, हम उनके साथ रहेंगे। इससे अधिक करने की चेष्टा यदि हम करेंगे तो अपनी व्यग्रता पर आत्मतुष्टि तो हमें होगी, पर उसमें 'लोक' पीछे छूट जायगा और हम मात्र उत्तेजना फैलानेवाले (एजीटेटर) रह जायेंगे। 'लोक' को आगे रखे बगैर हम शिक्षक (एजुकेटर) हो नहीं सकते। जाहिर है कि ग्रामसभा हमारी वही बात मानेगी जो उसे कारगर जँचेगी और उसे कार्यान्वित करने को जब वह आगे आयेगी तब लोक-शक्ति प्रकट होगी।

ग्रामसभा में किसान, मजदूर, बँटाईदार और महाजन चारों का स्थान रहेगा। गाँव के कुछ व्यक्ति उपरोक्त चार में से एक से अधिक हैसियत के होंगे। ये चारों जब एक साथ बैठेंगे तब उन्हें सर्वसम्मत निर्णय लेने और गाँव के सबसे कमजोर व्यक्ति का हित सबसे पहले सामने का ध्यान रखने को प्रेरित करना हम कार्यकर्ताओं का मुख्य काम होगा। इस प्रक्रिया में नये-नये ग्रामदान तथा प्रखंडदान प्राप्त करना भी निहित है, तब तक, जब तक प्रत्येक गाँव का ग्रामदान न हो जाय। इस तरह, मेरी समझ में, हम कार्यकर्ताओं का पहला काम है समाज की समस्याओं को अविचलित मन से समझना; दूसरा काम है गाँव के लोगों को इनके समाधान का मार्ग ग्रामदान में किस तरह है यह समझना, तथा तीसरा काम है ग्रामसभाओं को इन समस्याओं के निराकरण की राह दिखलाना तथा उनकी चेष्टा में साथ देना। इससे भिन्न कोई दूसरा रास्ता मुझे जँचता नहीं।

ग्रामसभा की जो शक्ति प्रकट होगी उसका असर सरकार, अफसर, कर्मचारी तथा सम्पन्न लोग, सभी पर पड़ेगा। ग्रामसभा के बिना हम कार्यकर्ता संख्या का यह बल पैदा कर ही नहीं सकते जो इन समस्याओं के सुलझाव के लिए आवश्यक है। समाज में संख्या-शक्ति के दबाव का निर्माण हो जाने पर हमारा काम होगा उसे आपस में टकराने से बचाना और समाज रचना की दिशा में मोड़ते रहना। यह अपने-आप में इतना बड़ा काम होगा कि उस शक्ति को सही रास्ते पर बनाये रखने के लिए कहीं-कहीं हमें जान की बाजी भी लगानी होगी। हम अभी जिनकी समस्याओं को अपना सिर-दर्द मानते हैं वे उनके प्रति बेहोश हैं। समाज में जिनके कारण वे समस्याएँ पैदा हो रही हैं वे परम्परागत शोषण करने की लकीर को छोड़ नया रास्ता देख ही नहीं पा रहे हैं। अतः हम कार्यकर्ताओं का काम है ग्रामदान के बाद ग्रामसभा बनाकर बेहोश लोगों को होश में लाना; मालिक, मजदूर, महाजन और बँटाईदार को यह बतलाते रहना कि उनके सामने जो विचारणीय समस्या है उसको वे एक दूसरे के सहयोग से कैसे सुलझा सकते हैं और अधिक सुखी तथा सम्पन्न किस तरह हो सकते हैं। इसी प्रक्रिया से समाज में चल रही गलत मान्यताओं (श्राद्ध, शादि आदि में फिजूलखर्ची) का निराकरण किया जा सकता है एवं नये मूल्य प्रतिष्ठित किये जा सकते हैं। जिस मापदंड को सामने रखकर ग्रामदान का विचार सामने आया है उसी मापदंड को सामने रख हम साथी-गण समस्याओं के समाधान पर चिन्तन करें तथा साथ बैठकर एक राय हो उन समाधानों को समाज के सामने रखें। जब तक हम लोगों की स्थिति 'मुंडे मुंडे मतिर्भिन्ना' होगी तब तक करुणा से द्रवित होकर समस्याओं से हम चाहे कितना भी विचलित क्यों न हो उठें, कोई समाधान नहीं खोज पायेंगे। अतः मुझे शीघ्रतम ग्रामदान और ग्रामसभा निर्माण तथा उनकी बैठकों में समस्याओं के समाधान खोजने के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं सूझता।

आशा है, आप प्रसन्न होंगे।

आपका विश्वासी
—देवनाथ सिंह

राजस्थान का मकराना विकास-खण्ड

भूमि सम्बन्धी कुछ तथ्य

कुल गाँव	१०१	आबादी, रास्ता, आदि	९,१७० एकड़
नगर	१	गोचर	१०,०९१ ,,
,, पंचायतें	३१	राज० कोत-रहित कृषि भूमि	१,१८५ ,,
,, परिवार	१५,०००	खातेदारी खेत	१५,३११ ,,
,, आबादी	७२,१२२	सिंचित खेत	१,१५१ ,,
,, पशुधन	१,०२,०८०	कुल कृषियोग्य जमीन	१,८५,२१४ ,,
,, किसान-परिवार	१२,५००	सिंचाई के कुएँ कच्चे	४०२
,, उद्योगकार-परिवार	२,५००	सिंचाई के कुएँ १ वर्ष पहले	१८५
,, भूमिहीन-परिवार	२,०००	सिंचाई के कुएँ वर्तमान पक्के	७१२
क्षेत्रफल	४३५ वर्गमील	भूदान भूमिधारी	१००
कुल जमीन	२,७५,३४१ एकड़	ग्रामदान संख्या	१७
पहाड़	६१२ ,,		

तूफान अभियान

धर्मशाला ८ नवम्बर—कांगड़ा जिले के नागरोटा तथा रैत विकासखंडों में आयोजित दो पदयात्राओं के दौरान क्रमश २६० तथा १०४ ग्रामदान प्राप्त हुए। कांगड़ा जिले में कुल मिलाकर ८७१ ग्रामदान घोषित हो चुके हैं।

इन्दौर ९ नवम्बर—इन्दौर जिलादान अभियान के फलस्वरूप जिले की चारों तहसीलों में कुल मिलाकर अबतक २४३ ग्रामदान प्राप्त हो चुके हैं। और कई गाँवों में ग्रामदान घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर हो रहे हैं जिनका प्रतिशत पूरा होते ही वे भी ग्रामदान घोषित किये जायेंगे। जिले में कुल ६४० गाँव हैं।

बलिया ९ नवम्बर—बलिया में चौथे प्रखण्ड पन्दह में प्रखण्डदान-अभियान जोरों से चलाया जा रहा है। अबतक १३ ग्रामदान प्राप्त हुए हैं। बलिया में इसके पूर्व जिले के कुल १८ प्रखण्डों में से ३ प्रमुख प्रखण्डों का दान घोषित हो चुका है।

मुजफ्फरपुर : ४ नवम्बर — जिला सर्वोदय मंडल मुजफ्फरपुर की कार्य समिति की बैठक में सभी लोगों ने श्री जयप्रकाश नारायणजी को दिसम्बर, '६७ में तीस हजार रुपये की थैली एवं तीन प्रखंडदान से स्वागत करने का संकल्प किया है। प्रखंडदान प्राप्ति एवं थैली संग्रह के लिए प्रयास भी प्रारम्भ हो गया है।

वाराणसी ७ नवम्बर—चकिया तहसील के नौगढ़ प्रखण्ड में ५ ग्रामदान हुए। ग्रामस्वानी कार्यकर्ताओं का एक शिविर हुआ। आगामी दो दिसम्बर से चालापुर और चिरई प्रखण्ड में अभियान चलाने की योजना बनी है, जो प्रमुख स्थानीय समाज सेवी लोगों और रचनात्मक संस्थाओं के सहयोग से चलायी जायगी।

नशाबन्दी

जयपुर ९ नवम्बर—राजस्थान समग्र सेवा संघ ने राजस्थान सरकार द्वारा १३ नवम्बर ६७ तक राज्य में पूर्ण शराबबन्दी की माँग स्वीकार न करने पर १४ नवम्बर से पुनः २०७ गयी शराबबन्दी सत्याग्रह प्रारंभ करने का निश्चय किया है।

इस सिलसिले में कोई हल न निकलने पर सब सत्याग्रह के तीन कदम आयोजित करने जा रहा है।

(१) १४ नवम्बर से सचिवालय, जयपुर के मुख्य द्वार पर १२ घंटे का सत्याग्रह होगा। उसी दिन १०० सत्याग्रही शामिल होंगे। १५ नवम्बर से कम से कम ५ सत्याग्रही उसी प्रकार सचिवालय पर सत्याग्रह करेंगे।

(२) १४ नवम्बर से ही राजस्थान के कुछ जिलों में शराब के ठीके की कुछ दुकानों पर पिकेटिंग शुरू होगी।

(३) ३० नवम्बर '६७ को राजस्थान के प्रत्येक तहसील केन्द्र पर १२ घंटे ५ या उससे अधिक लोगों द्वारा सत्याग्रह होगा।

राजस्थान प्रदेश नशाबन्दी समिति के वर्तमान कार्यालय का पता डा० बीगोद, जि० भीलवाड़ा, राजस्थान।

शिविर

मिमुल्तला २१ से २५ अक्तूबर तक युवकों का एक अखिल भारतीय शिविर हुआ। शिविर में 'ग्रामित्र का सवाल', 'मूल्यों का प्रश्न' 'युवक और राष्ट्र' इन तीन विषयों पर तथ्यपूर्ण विचार चर्चा हुई। शिविर में दग धर्माधिकारी आचार्य राममूर्ति, श्री मनमोहन चौधरी श्री पूर्णचन्द जैन ने भी भाग लिया।

खगड़िया का अनुमंडल दान

२१ अगस्त १९६७ को खगड़िया का अनुमंडल दान श्री जयप्रकाश बाबू को समर्पित किया गया। अनुमंडल दान-समर्पण समारोह का आयोजन परबत्ता प्रखंड कार्यालय के प्रांगण में किया गया था।

इस अनुमंडल के पूरब भागलपुर जिले का बिहपुर प्रखंड, बेगूसराय अनुमंडल का साहेबपुर कमाल प्रखंड, उत्तरी सीमा पर दरभंगा जिला तथा दक्षिणी सीमा पर गंगा नदी है।

क्रमांक	प्रखण्ड	कुल राजस्व गाँव	प्राप्त राजस्व गाँव	जनसंख्या	ग्रामदान में शामिल जनसंख्या	कुल रकबा	ग्रामदान में शामिल रकबा	प्रखण्डदान घोषणा की तिथियाँ
१	गोगरी	४०	२१	८९,८५४	७२,४७६	७८,७५७	४७,२७८	१५ ७ ६६
२	चौथम	३८	३२	७४,८८५	६३,९७१	१०,७३६	६९,९८५	११ ११ ६६
३	अलौली	४५	३१	९६,२४०	७० १३५	१,०६ ९९३	८६,८१५	२२ ३ ६७
४	बेलदौर	३४	३१	६७,११७	५० ८१५	८६ ८६३	४९,५२२	१८ ४ ६७
५	खगड़िया	४१	३७	१,०१,७४१	७७,१८२	१,०४ १८२	७१,६८२	११ ६-६७
६	परबत्ता	५०	४१	१ ०२,१४६	८५,४३२	१,११ ९९२	६७ ११८	२१ ८ ६७
	योग—	२४८	२०१	५,२७ ०६३	४,२०,८११	५ ७८ ७५९	३,९२,६८०	

प्रेषक सरयुग प्रसाद शोषित
जिला सर्वोदय मंडल, मुंगेर

सामयिक चर्चा

कानून और सरकार की सीमाएँ

बिहार में बँटाईदारी की एक पुरानी प्रथा चली आ रही है, जिसके अनुसार जमीन का मालिक किसी अन्य व्यक्ति (बँटाईदार) को खेती करने के लिए जमीन देता है और फसल तथा भूसा-पुआल आधा-आधा बाँट लेता है। जमीन का मालिक जब चाहता है बँटाईदारों से जमीन छीन लेता है।

बिहार में भूतपूर्व कांग्रेसी सरकार ने हदबंदी, बँटाईदारी, महाजनी कृषि मजदूरी और बासगीत की जमीन से संबंधित कुछ कानून बनाये थे।

कानून को अमलीरूप देने के उद्देश्य से हाल में राज्य सरकार के मुख्य सचिव ने प्रखण्डस्तर तक के अधिकारियों के नाम परिपत्र भेजकर बँटाईदारी कानून का स्पष्टीकरण किया है और उसे अमलीरूप देने के तरीके बताये हैं। इसके साथ साथ बिहार-सरकार भूमि-समस्या को लेकर एक अध्यादेश जारी कर रही है जिसमें इस बात की व्यवस्था होगी कि छोटे भूमिपति यदि कभी स्वयं खेती करना चाहें तो वे अपनी जमीन बँटाईदार से वापस ले सकते हैं।

भूमि-संबंधी कानूनों को सफलतापूर्वक कैसे लागू किया जाय, इसपर विचार करने के लिए श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा प्रेरित विभिन्न राजनैतिक दलों और अन्य सामाजिक संस्थाओं के नेताओं की बैठक गत १७ अक्टूबर को पटना सचिवालय में हुई।

इस बैठक में श्री जयप्रकाशजी ने राजनैतिक दलों और सामाजिक संस्थाओं से निवेदन किया कि वे उक्त कानूनों को संयुक्त रूप से पूर्ण अमलीरूप देने का प्रयास करें। उन्होंने कहा कि यह कार्य बिना हिंसात्मक रास्ता अपनाये मेल-मिलाप से होना चाहिए।

राज्य के मुख्य मंत्री श्री महामाया प्रसाद सिन्हा ने कहा कि इस बैठक का निर्णय सरकार के मानने योग्य होना चाहिए। राज्य के राजस्व मंत्री श्री इन्द्रदीप सिन्हा ने कहा कि सरकार बैठक के सुझाओं पर विचार करेगी। उन्होंने कहा कि बँटाईदारी कानून में छोटे और बड़े भूमिपतियों में भेद करना होगा। छोटे किसानों को अपनी जमीन बँटाईदारों से वापस लेने की छूट होनी चाहिए, लेकिन बड़े भूमिपतियों को यह सुविधा नहीं मिलनी चाहिए। उन्होंने कहा कि हदबंदी कानून में आवश्यक सुधार किये जायेंगे और इस कानून का पूरी शक्ति से अमल कराया जायगा। न्यूनतम-मजदूरी-सलाहकार-समितियों में कृषक मजदूरों के प्रतिनिधियों को स्थान देकर न्यूनतम मजदूरी में सुधार किया जायगा।

पुलिस मंत्री श्री रामानंद तिवारी ने कहा कि महाजन कृषकों को जितना सूद देता है उसके चौगुने पर दस्तखत करवाता है। श्री जयप्रकाशजी ने कहा कि इस बुराई से बचने के लिए महाजन को रुपये मनीआर्डर या चेक के माध्यम से उधार देने के लिए कहना चाहिए।

बिहार प्रदेश कांग्रेस-कमेटी के अध्यक्ष श्री राजेन्द्र मिश्रा ने कहा कि भूमिहीन कृषक मजदूरों की आवासीय (बासगीत की) भूमि की रक्षा के लिए सरकार को शीघ्र कदम उठाना चाहिए। जनसंघ के श्री ठाकुर प्रसाद ने कहा कि आवासीय भूमि से संबंधित भूमिहीन कृषक मजदूरों के नामों के पंजीकरण के लिए विशेष अधिकारियों की नियुक्ति होनी चाहिए। श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने कहा कि बँटाईदारी कानून लागू करने की शक्ति सरकार में नहीं है। बँटाईदारों के नाम पंजीकृत करते समय भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलेगा। उन्होंने हदबंदी कानून में सुधार करने की माँग की। उपमुख्य मंत्री श्री कर्पूरी ठाकुर ने कहा कि इस बैठक के निर्णय और कानूनों के अमल के लिए संगठन बनने चाहिए।

बिहार जनसंघ के मंत्री ने कहा कि इन कानूनों का अमल मैत्रीपूर्ण वातावरण में होना चाहिए। राज्य के श्रम मंत्री श्री रामानन्द सिंह ने आश्वासन दिया कि नहर और नलकूप क्षेत्रों में न्यूनतम मजदूरी-कानून का पूरी शक्ति से अमलीकरण किया जायगा।

बिहार साम्यवादी पार्टी के मंत्री और राज्य परिषद के सदस्य श्री जगन्नाथ सरकार ने इस संबंध में जनमत जागृत करने की आवश्यकता पर जोर दिया।

प्रसोपा के मंत्री श्री प्रेम मसीह ने कहा कि अन्नोत्पादन की वृद्धि के लिए इन कानूनों को लागू करना बहुत जरूरी है।

लेकिन इस सम्मेलन के बाद मुख्य रूप से जनसंघ के नेताओं ने खिलाफत का उग्र रवैया अपनाया है। परिस्थिति में भारी परिवर्तन आ गया है। गत ३ नवम्बर ६७ को पटना में इस सिलसिले की दूसरी बैठक में केवल साम्यवादी दल के नेताओं और १ कांग्रेसी नेता ने भाग लिया। कुल मिलाकर इस प्रयास की निष्पत्ति निराशाजनक ही दिखायी दे रही है। सरकार की शक्ति और क्षमता की सीमा का इससे स्पष्ट उदाहरण और दूसरा क्या हो सकता है!—नन्न।

दृष्टिकोण...

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार | वर्ष : १४
२४ नवम्बर, '६७ | अंक : ८

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०
एक प्रति : २० पैसे
विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—
१८ रु० या १ पौण्ड या ३॥ डालर
(हवाई डाक-शुल्क देशों के अनुसार)
सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी–१
फोन नं० ४२८५

आखिरी वसीयतनामा

राजनीतिक स्वाधीनता प्राप्त हो जाने पर, कांग्रेस अपने वर्तमान स्वरूप और ढाँचे में अर्थात् प्रचार के साधन और संसदीय यन्त्र के रूप में अपनी उपयोगिता खो बैठी है। भारत को अब भी नगरों और कस्बों के अलावा ७ लाख गाँवों के लिए सामाजिक, नैतिक और आर्थिक स्वाधीनता प्राप्त करनी है। भारत को अपने लोकतन्त्रात्मक ध्येय की ओर प्रगति करने में, सैनिक-शक्ति पर नागरिक शक्ति की श्रेष्ठता के लिए संघर्ष करना अनिवार्य है। इसे राजनीतिक दलों और साम्प्रदायिक संस्थाओं की अस्वस्थ प्रतियोगिता से अलग रखना होगा। इन तथा अन्य कारणों से अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी वर्तमान कांग्रेस संगठन को विघटित करने तथा निम्नलिखित नियमों के अन्तर्गत उनमें परिस्थितिवश संशोधन करने के अधिकार के साथ लोक-सेवक संघ के रूप में विकसित होने का निश्चय करती है।

पाँच वयस्क व्यक्तियों (स्त्रियों या पुरुषों) की, जो ग्रामवासी या ग्राम प्रवृत्त (विलेज माइण्डेड) हों, प्रत्येक पंचायत एक इकाई बनेगी।

दो निकटवर्ती पंचायतें आपस में एक नेता निर्वाचित कर उसके अधीन एक कार्यकारी दल संघटित करेंगी।

जब इस प्रकार एक सौ पंचायतें हो जायेंगी, तो पचास प्रथम श्रेणी के नेता आपस में द्वितीय श्रेणी का एक नेता चुनेंगे तथा प्रथम श्रेणी के नेता निम्नाङ्कित द्वितीय श्रेणी के नेता के अधीन कार्य करेंगे। इसी प्रकार दो सौ पंचायतों का संगठन ऊपर की ओर यहाँ तक होगा कि वे समस्त भारत में फैल जायेंगे तथा पंचायतों का प्रत्येक दल प्रथम श्रेणी के नेता के चुनाव की भाँति क्रमशः द्वितीय श्रेणी का एक नेता निर्वाचित करेगा। द्वितीय श्रेणी के सभी नेता सम्मिलित रूप से संपूर्ण देश तथा व्यक्तिगत रूप से अपने-अपने क्षेत्र की सेवा करेंगे। द्वितीय श्रेणी के नेता आवश्यकता पड़ने पर आपने में से एक को प्रमुख नेता चुनेंगे, जो अपनी इच्छानुसार सभी दलों का नियमन और संचालन करेगा।

सेवकों के इस दल को प्रान्तीय या जिला परिषदों में बाँटने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया है। तथा समस्त भारत में कार्य करने का अधिकार उस दल या दलों में निहित है, जो किसी समय संघटित किये गये हों। यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि सेवकों को यह सत्ता अपने स्वामी, अर्थात् समस्त भारत की स्वेच्छापूर्वक और बुद्धिमत्तापूर्वक की जानेवाली सेवा से अपना अधिकार अथवा शक्ति प्राप्त करती है।

प्रत्येक कार्यकर्ता आदतन, अपने हाथ से कते सूत की अथवा अखिल भारत चरखा संघ द्वारा प्रमाणित खादी पहनेगा तथा मदिरा का कतई सेवन न करेगा। यदि वह हिन्दू होगा तो वह व्यक्तिगत रूप से या परिवार में किसी भी रूप में अस्पृश्यता का भाव त्याग चुका होगा तथा वह साम्प्रदायिक ऐक्य, सभी धर्मों के प्रति समान आदर और प्रतिष्ठा और बिना किसी जाति, धर्म या स्त्री पुरुष के भेदभाव के सभी के लिए समान अवसर और स्थिति के आदर्श में विश्वास करेगा।

—मो० क० गांधी
२९।१।४८

समाचार डायरी

देश :

१२-११-'६७ : उपप्रधानमन्त्री मोरारजी देसाई ने अपना सुझाव दुहराया कि नागालैण्ड के सवाल पर देश में जनमत-संग्रह किया जाय।

१४-११-'६७ : श्री एस. के. पाटिल और श्री गुलजारीलाल नन्दा ने कांग्रेस-अध्यक्ष को सूचित किया कि यदि अध्यक्ष-पद के लिए चुनाव हुआ तो वे इस चुनाव में खड़े होंगे।

१५-११-'६७ : प्रधानमन्त्री ने लोक-सभा में कहा कि मंगला बाँध के बन जाने पर उन्होंने राष्ट्रपति अयूब को बधाई दी, इसका यह मतलब नहीं कि भारत ने पाक-अधिकृत कश्मीर पर अपना दावा छोड़ दिया है।

१६-११-'६७ : डा० हजारी ने योजना-आयोग को दी गयी अपनी रिपोर्ट में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के प्रस्ताव की पुष्टि की।

१७-११-'६७ : पश्चिम बंगाल के मंत्रि-मण्डल ने १८ दिसम्बर को विधान सभा की बैठक बुलाने के अपने पूर्वनिर्णय की पुष्टि की।

१९-११-'६७ : चाँदनी चौक, दिल्ली में कपड़े की लगभग ७० दूकानें जलकर भस्म हो गयीं, जिनमें कई करोड़ रुपयों का कपड़े का स्टाक था।

२०-११-'६७ : भारत सरकार ने घोषणा की कि ब्रिटिश पौण्ड के अवमूल्यन के बावजूद भारतीय रुपये के मूल्य में कोई हेरफेर नहीं होगा।

विदेश :

१६-११-'६७ : अमेरिका के राष्ट्रपति जॉनसन ने जापान को बोनिन टापू वापस लौटाने की बात की।

१७-११-'६७ : ब्रिटेन ने संयुक्त राष्ट्रसंघ में पश्चिम एशिया में समझौते के लिए एक प्रस्ताव पेश करके इसराइल और अरब राष्ट्रों से उसे स्वीकार कर लेने का अनुरोध किया।

१९-११-'६७ : ब्रिटेन तथा संयुक्त अरब गणराज्य ने आज परस्पर दूत-सम्बन्ध पुनः स्थापित करने की घोषणा की।

२०-११-'६७ : ब्रिटेन ने देश की अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए पौण्ड स्टर्लिंग में १४.३ प्रतिशत अवमूल्यन करने की घोषणा की।—

भारतीय प्रधानमंत्री रूसी क्रान्ति के वर्षगाँठ-समारोह में

मास्को में बोलशेविक क्रान्ति के पचासवीं वर्षगाँठ-समारोह में भारत की प्रधानमन्त्री उपस्थित रहीं। रूस की शक्ति का प्रदर्शन इस समारोह में किया गया। रूसी प्रधानमन्त्री कोसीजिन तथा युगोस्लाव के अध्यक्ष मार्शल टीटो के साथ रूसी शक्ति के प्रदर्शन को भारतीय प्रधानमन्त्री ने देखा और प्रभावित हुईं। भारत लौटने के बाद हवाई अड्डे पर संवाददाताओं को उन्होंने मास्को के शक्ति-संचालन का महत्त्व समझाया। उन्होंने कहा कि प्रदर्शन में क्रान्ति का भाव व्यक्त होता था।

रूस के साथ मैत्री के सम्बन्ध बढ़ाना और बोलशेविक क्रान्ति के पचासवीं वर्षगाँठ-समारोह में भारतीय प्रधानमन्त्री का उपस्थित रहना, ये दोनों दो बातें हैं, जिनका एक-दूसरे से कोई मेल है। साम्यवादी शक्ति का महत्त्व तथा उसके परिणाम दुनिया के सामने रखने के लिए, तथा शक्ति और उसके परिणामों के प्रति दुनिया के मुल्कों का आकर्षण बढ़ाने के लिए मास्को में शक्ति-प्रदर्शन-समारोह किया गया था। साम्यवाद, चीन तथा रूस, इन दो गुटों में बँटा है। रूस चीन से ताकतवर है, और उसके पक्ष में सभी साम्यवादी मुल्क हैं, यह दिखाने का प्रयास रूस द्वारा बराबर किया जा रहा है। इस पचासवें वर्षगाँठ-समारोह में 'रूस में ही साम्यवादी शक्ति का प्राण है, वह चीन में नहीं है', यह दिखाने का प्रयास रूस ने किया। समारोह में शक्ति प्रदर्शन का महत्त्व भारत की प्रधानमन्त्री की उपस्थिति से और भी बढ़ा है। चीन और दुनिया के मुल्कों को रूस ने बताना चाहा है कि लोकतान्त्रिक मुल्कों को भी रूस का आकर्षण है, और लोकतान्त्रिक मुल्कों को भी वह अपने गुट में लाने की शक्ति रखता है।

रूस की शक्ति बढ़ती है या घटती है, यह एक अलग अध्ययन का विषय है। लेकिन भारतीय प्रधानमन्त्री का रूसी क्रान्ति की पचासवें वर्षगाँठ-समारोह में उपस्थित रहना, भारतीय लोकतन्त्र की दृष्टि से सोचने का तथा अध्ययन करने का विषय अवश्य है।

बोलशेविक क्रान्ति का महत्त्व दुनिया मानती है। लेकिन इस क्रान्ति ने जो आदर्श प्रस्तुत किये, वे मानवता के आदर्शों से बिलकुल अलग हैं, विपर्यस्त हैं। लोकतन्त्र तथा स्वतन्त्रता का मूल्य रूसी क्रान्ति में है, ऐसा कोई भी लोकतन्त्रवादी नहीं मानता। मार्शल टीटो के साथी (एक जमाने के युगोस्लाव के उपाध्यक्ष, अभी टीटो के हुक्म से जेल काटकर बाहर आये) साम्यवाद को चुनौती देनेवाले विचारक मिलोवान जिलास ने 'द न्यू क्लास' नामक अपने ग्रन्थ में रूसी शासन तथा आदर्शों का जो मूल्यांकन किया है, उससे पता चलता है कि व्यक्तिगत स्वातंत्र्य की रक्षा रूसी क्रान्ति में सम्भव नहीं है। मनुष्य की स्वतन्त्रता को जिस साम्यवाद ने रोक रखा है, उसका लोकतन्त्र में विश्वास नहीं रहेगा, यह बिलकुल स्वाभाविक है। लेकिन भारत जैसे लोकतान्त्रिक राष्ट्र के प्रधान मन्त्री ने रूसी क्रान्ति के समारोह के अवसर पर उपस्थित रहकर साम्यवाद तथा रूसी क्रान्ति का महत्त्व तथा उसकी उपयोगिता को स्वीकार किया है। क्या जागतिक शान्ति और सहअस्तित्व का अर्थ लोकतन्त्र को नीचा दिखाना माना जायगा?

स्वतन्त्र पार्टी के श्री मसानी ने प्रधानमन्त्री को रूस जाने से मना किया था, लेकिन उस बारे में प्रधानमन्त्री ने कोई भी स्पष्टीकरण नहीं दिया। कम-से-कम मैंने नहीं पढ़ा। क्या मतलब मानना चाहिए इसका? ऐसे कई सवाल सामने आते हैं, जो प्रधानमन्त्री के उक्त समारोह में शामिल होने से पैदा हुए हैं। कुछ भी हो, प्रधानमन्त्री मास्को में क्रान्ति की वर्षगाँठ पर शक्ति-प्रदर्शन में शामिल हुईं, यह बात लोकतन्त्रवादियों को भारतीय लोकतन्त्र की दृष्टि से आघात देने योग्य है।

—बापूराव चन्दावार
महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल,
बान्द्रा, बम्बई-५०

आपके पत्र

पूँजी चाहिए, पूँजीवाद नहीं

श्री अशोक मेहता ने व्यापारियों को सलाह दी है कि और चीजों के साथ साथ वे गाँव के विकास में भी पूँजी लगायें।

बहुत नेक सलाह है यह! अर्थशास्त्रियों और योजनाकारों ने बार-बार कहा है कि इस 'पूँजी विपन्न' (कैपिटल हंग्री) देश के विकास में पूँजी का अभाव सबसे बड़ी बाधा है। श्री मेहता की राय में गाँव के विकास के किस क्षेत्र में व्यापारियों को पूँजी लगानी चाहिए? क्या वह चाहते हैं कि पूँजीपति सड़क, नहरें, और ट्यूबवेल बनवायें? बीज-गोदाम, खाद डीपो, कोल्ड स्टोरेज और अन्न भण्डार खोलें? या, बड़े-बड़े फार्म बनाकर वैज्ञानिक यंत्रों के सहारे खेती करें और मुनाफे की खेती का नमूना प्रस्तुत करें? या, गाँव के खेतिहरों के लिए आसान सूद पर कर्ज की व्यवस्था करें? आखिर, श्री मेहता चाहते क्या हैं?

ऐसी बात नहीं है कि पिछले वर्षों में पूँजीपतियों का ध्यान गाँवों की ओर गया नहीं है। हाल के जमाने में अंगूर की खेती जिस तेजी के साथ बढ़ी है उसमें किसने पैसा लगाया है? बड़े शहरों के आस पास सब्जी और फल आदि की बड़े पैमाने पर जो खेती हो रही है वह किसके पैसे से हो रही है? इस तरह की व्यापारिक खेती में व्यापारियों तथा सरकार के रिटायर्ड अधिकारियों का बहुत अधिक पैसा लगा है, और लग रहा है। जाँच करने पर यह बात भी निकलेगी कि इस तरह की खेती में बहुत काफी पैसा मुनाफाखोरी और चोरबाजारी का लगा हुआ है।

'हिन्दुस्तान लीवर' जैसी व्यापारिक कम्पनी ने मटर की खेती को जबरदस्त बढ़ावा दिया है। आजकल बड़े शहरों में कौन बड़ा रईस होगा जिसके घर में 'हिमा मटर' (हिमा पीज) का पैकेट न मिले? पंजाब में तो शादी में ट्रैक्टर उसी तरह प्रतिष्ठा का चिह्न (स्टेटस सिम्बल) माना जाने लगा है, जिस तरह पहले घोड़ा, हाथी या मोटर माना जाता था। जाहिर है कि नयी पूँजी देश में पूँजीवादी खेती (कैपिटलिस्ट एग्रीकल्चर) का नमूना पेश कर चुकी है, और हर जगह पूँजीपतियों की रुझान उस ओर बराबर बढ़ रही है, यहाँ तक कि कम्पनियाँ बनाकर खेती करने की बात भी कही जाने लगी है। सरकार के 'पैकेज प्रोग्राम' के क्षेत्रों में भी पूँजीवादी खेती का चित्र साफ दिखायी देता है।

सोचने की बात है कि क्या हम गाँव में पूँजी इसी रूप में ले जाना चाहते हैं? पूँजी आज तक अनीति और अन्याय, शोषण और मुनाफाखोरी, का माध्यम रही है: क्या अब भी हम पूँजी का जीवन में वही स्थान देखना चाहते हैं? क्या यह माना जाय कि भारत के ग्रामीण विकास में पूँजीवादी दौर अनिवार्य है? क्या उत्पादन वृद्धि जीवन के मूल्यों की कीमत चुकाये बिना सम्भव नहीं है?

भूदान यज्ञ : शुक्रवार, २४ नवम्बर, '६७

भारत को पूँजी-विपन्न नहीं, श्रम सम्पन्न (लेबर रिच) मानकर श्रम और साम्य के आधार पर गांधीजी ने समाज के लिए जिस ऊँची जीवन कला (मैण्ड हिआइन फार लिविंग) की योजना प्रस्तुत की है, उसमें जिस तरह पूँजी का मालिक है, और श्रम का भी मालिक है। तीनों 'मालिकों' के मेल से उत्पादन की वृद्धि और जीवन की सुन्दर सार्थकता बनती है। उनकी योजना में 'मजदूर' है ही नहीं। और, आज का जमाना भी ऐसा है कि अब मजदूर कृपा की कचौड़ी से सन्तुष्ट नहीं होगा, वह समता का सतोष चाहता है। नये जमाने की समस्या गरीबी नहीं, विषमता है।

अब गांधी की योजना विनोबा की साधना में प्रकट हुई है। उस साधना का नाम है ग्रामदान। ग्रामदान ने 'गाँव की पूँजी' (ग्रामकोष) के प्रश्न को नयी दृष्टि से देखा है। जिस पूँजी को गाँव के किसान, मजदूर, व्यापारी और नौकरी करनेवाले अपनी कमाई का एक अंश देकर बनायेंगे वह सबकी होगी, सबके लिए होगी। सरकार, व्यापारी या संस्थाएँ ग्रामसभा के ग्रामकोष को मदद दे सकती हैं। हिसाब लगाने पर मालूम होता है कि डेढ़ हजार की जन संख्या के गाँव में, जिसमें सात सौ बीघे की धान-खेती हो, और प्रति बीघा अधिक नहीं, दस मन की भी उपज हो तो एक फसल में गाँव के पास दस हजार की अपनी पूँजी हो जायगी, जो खेती की उन्नत सुविधा होने पर हर फसल में बढ़ेगी और हर साल बढ़ती जायगी। अन्न और नकद रुपये के अलावा गाँवों में पशु और मनुष्य शक्ति का अक्षय भण्डार पड़ा हुआ है, लेकिन दुःख है कि हमारे योजनाकारों, विद्वानों और विशेषज्ञों ने अभी तक श्रम को पूँजी के रूप में देखना शुरू ही नहीं किया है। उनके लिए श्रम केवल श्रम है, और पूँजी कुछ और है।

विज्ञान और विकास का छलिया-रूप धारण कर सरकार के ऋण और प्रोत्साहन से ग्रामीण क्षेत्र में फैलनेवाले नये 'पूँजीवाद' से आगाह हो जाने की जरूरत है। हमारा देश सचमुच छोटे खेतिहरों, छोटे कारीगरों, और गरीब मजदूरों का देश है। इन करोड़ों को छोड़कर विकास की गाड़ी दौड़ानेवाली योजना राष्ट्रीय नहीं कही जा सकती। ग्रामदान पूँजी, श्रम और बुद्धि को पूरक शक्तियों के रूप में देखता है। अगर केवल पूँजी को बढ़ावा देकर हमने इन तीनों शक्तियों को एक दूसरे के मुकाबिले में खड़ा कर दिया तो समता और सामाजिक न्याय के लिए वर्ग संघर्ष के सिवाय दूसरा रास्ता नहीं रह जायगा।

श्री मेहता की सलाह देश को उसी रास्ते पर ले जायगी। इसलिए हमें पूँजी तो चाहिए, भरपूर चाहिए, लेकिन पूँजीवाद नहीं चाहिए।

आप भी हाथ लगाइये!

कांग्रेस के नेता गम्भीरता से सोचें !

इतिहास में शायद ही ऐसी दूसरी मिसाल मिले जिसमें भारतीय कांग्रेस जैसी विशाल, पुरानी, और लोकप्रिय संस्था, जिसका संगठन इतना व्यापक और गहरा रहा हो, जिसके प्रति एक कृतज्ञ राष्ट्र के मानस में इतना आदर और सम्मान हो, बीस बरस में ही लोकप्रियता के बिल्कुल दूसरे सिरे पर पहुँच गयी हो। कांग्रेस की जो मौजूदा स्थिति-उसकी अन्दरूनी हालत तथा बाहरी प्रतिष्ठा दोनों-जैसी है उसके बारे में जितना कम कहा जाय उतना ही अच्छा है। आजादी के दिनों में जिन्होंने वर्षों तक उसके नेतृत्व में काम किया, उनके लिए यह परिस्थिति खास तौर से वेदना पहुँचानेवाली है। पर जो वस्तुस्थिति है उससे इन्कार नहीं किया जा सकता।

कांग्रेस अन्य राजनैतिक पार्टियों की तरह एक पार्टी होती तो बात दूसरी थी। वैसी हालत में उसके बारे में ज्यादा चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं थी। वह अपनी मौत आप मर जाती। पर कांग्रेस का एक इतिहास रहा है। उसके नाम के साथ एक परम्परा जुड़ी हुई है। जिस तरह हजार मतभेद होने पर भी वर्षों से विवाहित दम्पति सामान्यतया एक-दूसरे से अलग नहीं होते उसी तरह आज भी सैकड़ों-हजारों अच्छे लोगों और राष्ट्र के सेवकों की भावनाएँ तथा उनका मोह कांग्रेस के साथ जुड़ा हुआ है। यह जानते हुए भी कि अब कांग्रेस का सुधार हो सकेगा या वह फिर से जन-मानस का आदर और प्यार प्राप्त कर सकेगी, यह संभव नहीं है, और उसके जरिये राष्ट्र की सेवा हो सकने की गुंजाइश नहीं है; ऐसे लोगों की शक्ति उस संगठन के साथ जुड़ी होकर बेकार जा रही है। इस माने में राष्ट्र का बड़ा नुकसान हो रहा है।

देश की राजनैतिक परिस्थिति दिनोंदिन अत्यन्त चिंताजनक होती जा रही है, यह हर कोई महसूस करता है। जो लोग यह समझते हुए भी अपने स्वार्थवश शुतुरमुर्ग बने रहना और जमीन में मुँह छिपाये रखना चाहते हैं, या जो लोग सोचने-समझने की शक्ति ही नहीं रखते, उनकी बात अलग है, वरना हर विचारशील व्यक्ति आज की परिस्थिति से चिन्तित है। एक तरफ ऐसी पार्टियाँ हैं जिनका दर्शन और मान्यताएँ ही उन्हें इस बात के लिए प्रेरित करती हैं कि मुल्क में हिंसा और अराजकता का वातावरण पैदा किया जाय। दूसरी ओर ऐसे लोग और पार्टी हैं जो अत्यन्त संकुचित और साम्प्रदायिक मनोवृत्तिवाले होने के नाते उतने ही विघटनकारी तथा खतरनाक हैं और सामाजिक, आर्थिक मामलों में प्रतिक्रियावादी भी।

पहली श्रेणीवाले लोग या पार्टियाँ भी (चाहे दावा वे जो कुछ भी करें) लोकहित की दृष्टि से प्रतिक्रियावादी ही हैं। हमारे जैसे लोगों की, जो राजनीति की व्यर्थता जानते हैं और जो समझते हैं कि आज के युग में अब राजनीति के जरिये लोकहित की संभावना नहीं रह गयी है, उनकी बात अलग है, क्योंकि ऐसे लोग तो सारी राजनीति को ही तोड़ने और उसकी जगह लोकनीति की स्थापना करने में लगे हुए हैं। पर संक्रमण-काल में, लोकनीति की प्रतिष्ठा होने तक, राजनीति चलनेवाली है,

सिद्धराज ढड्ढा

यह ध्यान में रखते हुए राजनैतिक क्षेत्र में उपरोक्त दोनों प्रकार की प्रतिक्रियावादी ताकतों के अलावा ऐसी तीसरी शक्ति का होना बहुत आवश्यक है, जिसका विश्वास लोकतंत्र में हो, यानी जो येनकेनप्रकारेण -हिंसा से भी- सत्ता हथियाने की इच्छा रखने के बजाय भिन्न-भिन्न विचारों का आदर करनेवाली, सब धर्मों, विचारों आदि की एकता और समन्वय में विश्वास रखनेवाली, सामाजिक और आर्थिक अन्याय को दूर करने के लिए तत्पर और अपने निजी या दलगत स्वार्थ के ऊपर समाजहित को प्राथमिकता देनेवाली हो।

इस प्रकार की मान्यता रखनेवाले लोग आज विभिन्न दलों में बँटे हुए हैं। कांग्रेस में भी वे काफी संख्या में हैं, लेकिन उनकी शक्ति एकत्र और संगठित नहीं हो पा रही है। कांग्रेस जब तक नहीं टूटती है तब तक उस तीसरी शक्ति का मजबूत बनना संभव नहीं है। बहुत से अच्छे लोग जो गांधीजी के विचारों से प्रभावित हैं, उदार हैं, सहिष्णु हैं, सामाजिक दृष्टि से प्रगतिशील हैं वे पुराने मोहवश कांग्रेस के पाश में बँधे हुए होने के कारण उसके दलदल में फँस गये हैं, पर (चाहे कुछ लोगों को यह बात कड़वी लगे) कांग्रेस का नाम इतना बदनाम हो चुका है कि कोई भी प्रगतिशील या आगे की ओर देखनेवाला व्यक्ति या दल उनके कांग्रेस में रहते हुए उनसे अपना संबंध नहीं जोड़ना चाहता। स्वर्गीय डा० लोहिया या आदरणीय राजगोपालचारी जैसों के मन में जो यह भावना बनी कि कांग्रेस को तोड़ना ही चाहिए उसके पीछे केवल राजनैतिक द्वेष, ईर्ष्या या बदले की भावना देखना राजनैतिक बचपन की निशानी है। उसके पीछे वस्तुस्थिति का दर्शन तथा देशहित की दृष्टि है, चाहे अन्य लोग उससे सहमत न हों। बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, मध्यप्रदेश आदि सभी प्रान्तों में आज हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि बीच की उदार शक्तियाँ दाहिने-बाँये दोनों ओर के प्रतिक्रियावादी लोगों के साथ मिलकर शासन चलाने का खतरा उठाने को तैयार हैं, उठा रही हैं, लेकिन कांग्रेस के साथ मिलने को तैयार नहीं हैं, जब कि कांग्रेस में भी उदार तत्त्व काफी संख्या में मौजूद हैं।

इस सारी परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए आज यह राष्ट्र के हित में आवश्यक मालूम होता है कि राजनैतिक पार्टी के रूप में कांग्रेस समाप्त हो। वैसे तो वह खतम हो ही रही है, पर आज की तरह बाहरी प्रत्याघातों से और आन्तरिक झगड़ों से उसका धीरे-धीरे टूटना मुल्क की दृष्टि से अच्छा नहीं है। इस प्रक्रिया से उसके अन्दर के अच्छे तत्त्वों की शक्ति भी नष्ट हो जायगी, वे निकम्मे बन जायँगे और फायदा केवल दक्षिण और वामपंथी प्रतिक्रियावादी दलों को होगा, क्योंकि इस बीच उनकी शक्ति बढ़ती रहेगी।

अतः अब कांग्रेस को बनाये रखना राष्ट्र के हित में बाधक है, यह स्वयं कांग्रेस के कर्णधारों को समझना चाहिए और यह समझकर कांग्रेस को धीरे-धीरे टूटने देने के बजाय उन्हें स्वयं हिम्मत करके उसका विसर्जन करना चाहिए। गांधीजी से बढ़कर कांग्रेस का समर्थक
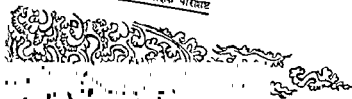
'भूदान-यज्ञ' २४ नवंबर '६७ का पाक्षिक परिशिष्ट

२४ नवंबर, '६७
वर्ष २, अंक ८]
[१८ पैसे

लगान क्यो ? क्यो नहीं ??

गांव के कई मित्र कहते हैं कि लगान उनके लिए कोई बडा सकट नही रह गयी है फिर सरकार के लिए क्यो बन गयी है ? बात भी सही है कि जब अनाज का इस तरह बढा हुआ भाव है तो थोडी लगान दे देना कोई मुश्किल बात नही है। और अगर थोडी कठिनाई हो भी तो क्या ? जो लोग चाहते हैं कि भूमि रखनेवाला हर खेतिहर कुछ-न-कुछ लगान जरूर दे वे कहते है कि देश की भूमि को मुफ्त जोतने का किसीको अधिकार क्यो हो ? कागज की मालिकी भले ही अलग अलग किसानो की हो, लेकिन अंतिम मालिक तो देश की सरकार ही हो सकती है, सरकार चाहे जो हो। वही देश की भूमि की रक्षा करती है विकास के साधन जुटाती है, और जनता के प्रतिनिधियो के निर्णय से जिस तरह का कानून चाहे बना सकती है। जब किसान की किसानी सरकार पर निर्भर है तो सरकार को किसान से लगान पाने का हक है, और होना भी चाहिए।

इससे भिन्न तर्क है उनका जो लगान का दस्तूर हमेशा के लिए खत्म कर देना चाहते है। उनका कहना है कि छोटे खेतिहर की खेती में बचत क्या है कि वह लगान दे ? हमारे देश में खेती घाटे का सौदा है। इसके कई कारण हैं, लेकिन घाटे पर घाटा बर्दाश्त करनेवाले किसान से लगान की मांग करना अन्याय है। इसके अलावा सरकार को मिलता भी कितना है ? कुल मिलाकर यह मांग अनुचित भी है, और बेकार भी।

इस सिलसिले में बुनियादी महत्त्व का सवाल है कि जमीन का मालिक सचमुच है कौन ? धरती मनुष्य की बनायी हुई तो है नही। भूदान-यज्ञ आंदोलन का नारा है 'सर्व भूमि गोपाल की नही किसीकी मालिकी। जब मालिक गोपाल है तो सरकार या किसी दूसरे 'मालिक' को लगान देकर उसकी मालिकी क्यो मानी जाय ?

गोपाल की मालिकी का अर्थ क्या है ? गोपाल यानी समाज समाज ही ईश्वर है। इसीलिए ग्रामदान में गाँव के लोग अपनी भूमि की मालिकी ग्रामसभा को समर्पित करते है, और अपनी कमाई का एक अंश देकर ग्रामकोष बनाते हैं। भूमि पर सरकार-स्वामित्व के स्थान पर ग्राम-स्वामित्व ग्रामदान की बुनियादी बात है।

तो, क्या ग्रामदान हो जाने पर ग्रामसभा को पूरे गाँव की ओर से सरकार को लगान देनी चाहिए ? आज हर किसान अलग-अलग सरकार को लगान देता है, उससे कहीं अच्छा है कि ग्रामसभा इकट्ठा सबकी ओर से दे।

लेकिन जब सरकार समाज की सुविधा और सुव्यवस्था के लिए है तो ग्रामसभा सरकार को लगान दे या उससे खर्च के लिए निश्चित अनुदान ले ? सचमुच ग्रामसभा से लगान की नहीं, अनुदान की मांग होनी चाहिए। कोई कारण नहीं कि →

अच्छी खेती—सबकी खेती—नयी खेती

खेती के इतने पहलू है कि अच्छी खेती के बारे में सोचना शुरू कीजिए, और समाज के बारे में सोचिए, तो थोड़ी ही देर में साफ समझ में आने लगता है कि वही खेती अच्छी होगी जो सबकी होगी, यानी जिसमें गांव के मालिक, महाजन, मजदूर, सबकी रुचि होगी और सबकी सम्मिलित शक्ति लगेगी। इसका अर्थ यह है कि 'सबकी खेती' को 'नयी खेती' होना पड़ेगा और नयी खेती नये समाज में ही संभव है। इस तरह हमारे देश में खेती का प्रश्न सचमुच समाज-परिवर्तन के साथ जुड़ा हुआ है।

आज के समाज में अच्छी खेती का सीधा अर्थ है 'पूंजीवादी खेती'। 'जिसके पास पूंजी है वही साधन जुटा सकता है। मजदूर की मेहनत खरीद सकता है, और बाजार में खड़ा रह सकता है।'

खेती में पूंजी लगाने के बाद भी प्रकृति क्या करेगी इसका ठिकाना नहीं रहता। फसल होने पर बाजार में क्या भाव रहेगा, इसका तो और भी कोई ठिकाना नहीं रहता। खेती जूआ है। एक बड़ा जोखिम है। खेती और विवाह का एक ही हाल है। दोनों में भरोसा भाग्य का रहता है, जिसका पता नहीं रहता। खैर, खेती अच्छी तभी होगी जब दो चीजों का प्रबन्ध हो—मूल्य की गारंटी (उत्पादन का इतना दाम तो मिलेगा ही) और फसल का बीमा। चकबन्दी, सिंचाई, अनुकूल भूमि-व्यवस्था, मजदूर को अतिरिक्त उत्पादन में मजदूरी के अलावा हिस्सा आदि सब बातें जरूरी हैं, लेकिन आज की व्यवस्था में मूल्य और बीमे का महत्त्व किसीसे कम नहीं है। •

→ ग्रामदानी ग्रामसभाएँ उचित अनुदान न दें।

इसी तरह अगर नीचे की इकाइयों के अनुदान से ऊपर की इकाइयां चलें तो सरकार दमन और शोषण करनेवाली संस्था न रहकर जनता की सेवा और सहायता करनेवाली संस्था बन जाय। लेकिन अभी वह दिन दूर है। दूर है सही, पर उसे नजदीक लाना है। जनता की मुक्ति उसके नजदीक आने में ही है। पर तबतक सरकार यह कर सकती है कि लगान ग्रामसभा को ही वसूल करने दे, ताकि वह उसे गांव के विकास में खर्च कर सके। गांव की भूमि की आमदनी गांव में खर्च हो तो बहुत अच्छा होगा। सरकार एक बार लगान ले और फिर विकास के लिए दे, यह दुहरा काम क्यों हो? •

'इस बार भी सोनोरा-६४ बोऊँगा'

दिल्ली के किसानों में सोनोरा-६४ को लोकप्रिय बनाने के लिए पिछले साल भारतीय कृषि-अनुसंधान शाला की तरफ से इन्द्र सिंह के एक एकड़ के फार्म पर सोनोरा-६४ का प्रदर्शन किया गया था।

चौधरी के प्रदर्शन-प्लाट को आसपास के किसानों ने देखा। उर्वरकों की पूरी मात्रा डालने पर भी फसल ढही नहीं थी। मोल्हडबद गांव में इन्द्र सिंह ने पहली बार सोनोरा गेहूँ बोया हो, ऐसी बात नहीं है। इससे पहले उनके पड़ोसी किसान रामपाल ने सोनोरा से फी एकड़ ५० मन पैदावार की थी। चौधरी इन्द्र सिंह ने साढ़े चार एकड में सोनोरा-६४ बोया था।

सोनोरा-६४ के राष्ट्रीय प्रदर्शनवाला प्लाट खरीफ में परती नहीं छोड़ा गया था। इससे पहले उसमें ज्वार की फसल ली गयी थी। सोनोरा-६४ की यह खूबी है कि इसके लिए जमीन को परती छोड़ने की जरूरत नहीं है।

इन्द्र सिंह ने अपने एक एकड़ के खेत में १० गाड़ी गोबर-कूड़े की खाद डालने के बाद कुल ८ जोताई की। इस प्लाट में उन्होंने १२० पौंड नाइट्रोजन और ६० पौंड फास्फोरिक एसिड डाला था।

सोनोरा-६४ में देशी के मुकाबले बीज कम लगता है। एक एकड़ के प्लाट में ३२ किलोग्राम बीज ही लगा, जब कि देशी में ५० किलो बीज लग जाता है।

वर्षा नहीं हुई तो क्या, चौ० इन्द्र सिंह ने फसल को प्यासा नहीं रखा। उन्होंने पिछले-से-पिछले साल ही अपने फार्म पर नलकूप लगाया था। इसलिए सलाह के मुताबिक उन्होंने पूरी ६ सिंचाई की।

प्रदर्शन के प्लाट में फसल को कोई रोग और कीड़ा नहीं लगा, इसलिए कीटनाशक दवाएँ इस्तेमाल करने की जरूरत नहीं पड़ी। हाँ, जोताई करते समय एक एकड़ के प्लाट में १० किलो बी० एच० सी० ऐनिहिलान भुरक दिया था। आखिरी जोताई से पहले उन्होंने फी एकड़ १० प्रतिशत बी० एच० सी० की १० किलो दवा बिखेरकर खेत में डाल दी, जिससे फसल को दीमक और गुझिया कीड़ा न लग सके।

फसल २२ नवम्बर १९६६ को बोयी गयी थी और उसकी कटाई ६ अप्रैल १९६७ को की गयी। पैदावार १९ क्विंटल १५ किलो मिली। भूसा २८ क्विंटल निकला।

चौ० इन्द्र सिंह का विश्वास है कि सोनोरा-६४ से वह और भी ज्यादा पैदावार लेंगे। उन्होंने कहा, 'इस बार भी मैं सोनोरा-६४ ही बोऊँगा।' •

धरती बेचने के लिए नहीं है

चन्दह प्रखण्ड के हरिपुर गाँव में हमलोग पाँचवीं बार पहुँचे। कुल १० या १२ लोगों के बीच ग्रामदान के सभी पहलुओं पर चर्चा हुई। वैसे गाँव भी छोटा लगभग ३० घरों का है। बात समझने के बाद कुछ लोगों के हस्ताक्षर हुए पर बीच में एक नवयुवक ने शंका उठायी, 'हमलोगों की यह सारी सम्पत्ति ही दान हो जायगी।" इस शंका के साथ ही काम रुक गया। ग्रामदान संकल्प का फार्म पुनः पढ़ा जाने लगा। उसकी व्याख्या करने के लिए उसी गाँव के एक सज्जन को जो होमगार्ड में थे बुलाया गया। उन्होंने पूरा फार्म फिर से पढ़कर सुनाया तथा अपने ढंग से उसे समझाया।

हमलोगों ने और स्पष्ट किया 'आप मात्र अपनी भूमि के संरक्षण का अधिकार ग्रामसभा को देने जा रहे हैं। आज वह अधिकार आपने प्रदेशीय सरकार को दे रखा है। यही कारण है कि उसके एवज में प्रदेशीय सरकार का कानून भी आपको मानना पड़ता है। बीच में एक आदमी ने पूछा तो क्या ग्रामदान में शामिल होने के बाद सरकारी कानून से छुटकारा मिल जायगा?' हमने बताया वास्तव में यह आन्दोलन ग्राम-स्वराज्य के लिए है। आज से बीस वर्ष पहले जो स्वराज्य हमें मिला था, वह केवल अंग्रेजी राज की जगह स्वदेशी राज साबित हुआ। स्वदेशी लोगों ने उसी शासन के ढाँचे को चलाना शुरू कर दिया, जिसे अंग्रेजों ने अपने शासन और शोषण के लिए बनाया था। ग्राम-स्वराज्य का आशय ही यह है कि गाँव के दायरे में सरकारी हस्तक्षेप न हो। शासन और व्यवस्था का जितना काम गाँव के लोग स्वयं कर सकते हैं, उसकी उन्हें भरपूर स्वतंत्रता हो। ग्राम-स्वराज्य आन्दोलन के सफल होने पर आज का प्रशासकीय ढाँचा नहीं रह जायेगा। जो काम गाँव के लोग स्वयं नहीं कर सकेंगे, उसे वे अपने ऊपर की इकाई को सौंप देंगे। ग्रामसभा को भूमि की मालिकी का अधिकार देने का मतलब ही यही है कि भारतीय सरकार के कागज में आपके गाँव का खाता एक तथा ग्रामसभा के खाते में आज जिस प्रकार अलग-अलग है, उसी प्रकार रहेगा। ग्रामदान के फार्म में साफ लिखा है कि बीसवाँ भाग देने पर जो भूमि बचेगी उसमें मालिक की मर्जी के बिना फेरबदल नहीं हो सकेगा।"

आज की सरकारी ग्रामसभा का स्वरूप देखकर लोगों के मन में सन्देह होता है कि यदि इसी प्रकार ग्रामदानी ग्रामसभा भी काम करेगी तो हमलोग अपना अधिकार उसे सौंपकर और भी बुरे फँसेंगे। हमने उन्हें बताया कि "आज की सरकारी ग्रामसभा से ग्रामदानी ग्रामसभा बिलकुल अलग प्रकार की होगी। उसमें बहुमत नहीं, बल्कि सर्वानुमति से चुनाव और निर्णय होंगे। गाँव का हर बालिग उसका सदस्य होगा और उसको अपनी राय देने का अधिकार रहेगा। जो भी निर्णय होंगे, उसकी जानकारी सबको होगी। चुनाव को लेकर होनेवाली दलबंदी और फूट से गाँव की रक्षा होगी। किसी एक की मनमानी नहीं चलेगी।'

उस नवयुवक सज्जन ने दूसरी शंका प्रगट की—"साहब, आपके ग्रामदान के फार्म में तो लिखा है कि ग्रामसभा की अनुमति से ही अपनी जमीन बेच सकेंगे। इससे तो हमारा हाथ ही कट जायेगा।"

हमलोग इसका उत्तर देना ही चाहते थे कि बीच में गाँव के प्रधान बोल पड़े—"आप लोग चुप रहिये। इनको जवाब मैं दूँगा। प्रधानजी गाँव के वृद्ध व्यक्ति हैं। गाँव में सबसे अधिक भूमि भी उनके पास है तथा वक्त जरूरत पर लोगों को कर्ज भी दिया करते हैं। उन्होंने कहा, धरती बेचने के लिए नहीं है। उस पर खेती करो और पैदा करके खाओ-पीओ। यह बड़ा अच्छा है कि अब लोग ऊल-जलूल कामों में जमीन नहीं बेच सकेंगे। मुसीबत या और किसी जरूरत के लिए तो हमारी ग्रामसभा मदद के लिए रहेगी ही। फिर क्या जरूरत है कि जमीन बेची ही जाय?" इसी बीच किसी ने धीरे से कहा बीसवाँ हिस्सा देना भी पड़ेगा?" प्रधानजी ने उसी जोश के साथ कहा, 'ठीक है, अपने गाँव के भूमिहीन भाइयों के लिए हम जमीन नहीं देंगे तो कौन देगा? गाँव के गरीबों का खयाल और कौन करेगा? लाइये साहब, कहाँ है फार्म? मैं दस्तखत करता हूँ।' और उन्होंने दस्तखत बनाये। इतना ही नहीं। रात को हमलोगों के निवास-स्थान पर पहुँचकर उन्होंने कहा, अपने गाँव का काम मैं पूरा कराऊँगा। मुझे फार्म दीजिये। आप लोग तब-तक अन्य गाँव का काम कीजिये।"

—कमलापति

एक दूसरी नक्सालवाड़ी

(पिछले अंक से आगे)

बासा पर काम करने जाना लोगों ने बिलकुल बन्द कर दिया। पड़ोस के गाँव मिल्की में मजदूरी साधारणतः जनानी को एक रुपया रोज और मर्द को एक रुपया तथा दिन का भोजन देते हैं। इस माँग पर भी बहस हुई। जब काम बन्द हो गया और बासावालों ने भी काम करने के लिए नहीं बुलाया तो पुनः ता० ७-९-६७ को लाठी-भाला के साथ नवाबगंज में बैठक हुई। और पहले दिनवाले नारे—'माओत्सेतुंग : जिन्दाबाद', 'कम्युनिस्ट पार्टी : जिन्दाबाद', आदि दुहराये गये। इस बैठक में भी चाँदपुर दीरा, भदैया टोला, बघुवा मिल्की, नवाबगंज के लोग शामिल हुए थे।

बैठक में कम्युनिस्ट पार्टी के प्रमुख कार्यकर्ता रुपौली, नवगछिया आदि बड़ी जगहों से आये थे। जब बैठक हो रही थी, उसी समय कुछ गुण्डों ने, जिनके बारे में अभी तक पता नहीं चल सका है, दोनों पक्षों को भड़काने का काम किया। बैठक हो रही थी उसी समय उन गुण्डों ने बासावालों के पास जाकर कहा कि आप लोग निश्चिंत होकर बैठे हैं, और उधर सभा में इकट्ठा हुए लोग कुछ क्षणों में आपका बासा लूटने आ रहे हैं। यह सुनकर इस बासा के लोगों ने अपनी सहायता के लिए दूसरे बासावालों को बुलवाया। खबर सुनकर नवाबगंज एवं भदैया टोला के बासावाले सूर्यनाथ सिंह के बासा पर जुट गये। लोगों का कहना है कि दूसरे बासावाले बन्दूक लेकर आये थे, लेकिन बासावालों का कहना है कि बन्दूक लेकर कोई नहीं आया था।

जिन गुण्डों ने बासावालों को बताया था कि सभा करनेवाले बासा लूटने आ रहे हैं, उन्हीं गुण्डों ने सभा करनेवालों को बताया कि आप लोग यहाँ बैठकर मीटिंग कर रहे हैं उधर बासावाले आप लोगों का मुकाबिला करने के लिए लाठी-भाला एवं बन्दूक आदि लेकर तैयार हैं। इस पर बैठक करनेवाले लोगों में उत्तेजना फैली और सभी लोग बासा की ओर बढ़े। वहाँ उन लोगों ने रोड़े-पत्थर फेंके। बासावालों ने इन लोगों की भीड़ पर पटाखे फेंके, जिसके कारण धुँआ छा गया। कुछ लोगों का कहना है कि हैण्ड-बम फेंका गया था, कुछ का कहना है कि बन्दूक की आवाज हुई थी, लेकिन इसका सही पता नहीं चल सका। कुछ लोग कहते हैं कि कम्युनिस्ट नेता—बजरंग सराफ, जयनारायण सिंह, नरथन पंडित, सच्चिदानन्द ठाकुर आदि ने बासा लूटने का आदेश दिया था। कुछ लोग कहते हैं कि इन लोगों ने बचाव का काम किया था! बासावाले कहते हैं कि इन नेताओं के अलावा नवाबगंज पंचायत के मुखिया ने भी लूटने का आदेश दिया था। कुछ लोग कहते हैं कि मुखिया ने बचाव का काम किया था। इन दोनों की बातों की सत्यता क्या है, इसका कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता।

दूसरे दिन नवाबगंज के लोगों ने सिघू ठाकुरवाली जमीन में, जिसमें झंझट थी, खड़ी मक्के की फसल को लूट लिया। उसका रकबा २.५० एकड़ था। वह जमीन रामनिहोरा सिंह के कब्जे में थी। उसके बाद दूसरे दिन रामपरीक्षण सिंह की १.५० एकड़ फसल लूट ली गयी। ये घटनाएँ ता० ८-९-६७ एवं ९-९-६७ की हैं। लूट की इस घटना में भदैया टोला के लोग शामिल नहीं थे। इसमें मिल्की, भाजीरगंज, काहू मंडल टोला एवं नवाबगंज के लोग थे। महिलाओं का भी समूह था। भदैया टोला के पास लगभग ३ एकड़ की फसल की रात में चोरी हुई। इस प्रकार की घटनाएँ प्रति साल उस क्षेत्र में मक्के की फसल के समय हुआ करती हैं। दिन-दहाड़े लूट की घटना भदैया टोला के पास नहीं हुई है। भदैया टोला के पास रात को फसल की जो चोरी हुई उसकी जमीन रामउद्गार सिंह की थी। नवाबगंज की घटना के साथ-साथ उस चोरी की घटना को भी दिन-दहाड़े लूट की संज्ञा दे दी गयी और रामउद्गार सिंह ने थाने में रिपोर्ट देकर लगभग ३३ आदमियों का नाम केस में दर्ज करा दिया। बाद में और लोगों के नाम भी जोड़े गये।

उसी जगह राय बहादुर का भी कामत है। अन्य सालों की अपेक्षा इस साल उनकी फसल की बर्बादी कम हुई है, ऐसी जानकारी उनके यहाँ से मिली। उनका काम भी इस क्षेत्र के जन-मजदूर लोगों ने बन्द नहीं किया है।

दो-चार दिन के अन्दर ही सिमरा में बोधाय मंडल की पतोहू को घास काटते समय भुट्टा तोड़ लेने पर उसे बासावालों ने पीटा। उसी दिन बासावालों ने बादर कँवरथ की भतीजी को घास काटते समय भुट्टा तोड़ने के अपराध में चार बजे शाम को पकड़ा और नौ बजे रात तक बासा पर रखा, २१ रुपया जुर्माना भी किया। उसके पास रुपया नहीं था। केशो चौधरी ने रुपया चुकाने का वादा किया, तब उसको छोड़ा गया। बादर कँवरथ ने बजरंग सराफ के पास जाकर अपनी विपदा सुनायी। बजरंग सराफ के साथी जयनारायण सिंह ने ता० ९-९-६७ को उस गाँव में आकर सभा की और अगले दिन १० तारीख को बासावालों की अठारह एकड़ की फसल लूट ली गयी। पड़ोस में

कुरसेलावाले देवी चौधरी की जमीन पड़ती थी, उनकी भी २ ५० एकड़ में लगभग फसल लूटी गयी। उस लूट में भदैया टोलावाला को भी बुलाया गया था। वे लोग भी उस लूट में शामिल थे।

कामयवालो ने पुलिस की शरण ली। पुलिस आयी और उनका दमन चक्र चलने लगा। नेता लोग गिरफ्तार किये गये। बजरंग सराफ जयनारायण सिंह लखन पंडित तथा सच्चिदानन्द ठाकुर के अलावा अन्य लगभग चालीस ग्रामीण पकड़ गये जिन्हें जेल भेज दिया गया।

इस घटना की खबर वैद्यनाथ बाबू को क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं ने दी। वैद्यनाथ बाबू ता० १८ ९ ६७ को नवाब गंज आये। वहाँ के ग्रामीणों को बुलाया गया। लेकिन वारंट था इसलिए वे लोग मिलने से कतराये। कुछ लोग सामने आये उनकी बात सुनी गयी और आपसी समझौता कर लेने का परामर्श दिया गया। उस बासा के लोगों से और स्थानीय डीपुटेशन में आये मजिस्टेट रामप्रसाद पाड़े से मिले। उन लोगों ने भी समझौता करने की बात को मान्य किया। शाम को चार बजे सिल्की में छेदी पागल के यहाँ जाकर उन लोगों की स्थिति की भी जानकारी ली गयी। समझौता करने की बात को सबने मुक्त कंठ से स्वीकार किया। धनघोर वर्षा हो रही थी। उसी वर्षा में नाव पर चढ़कर वैद्यनाथ बाबू तथा सर्वोदय मण्डल के मंत्री अनिरुद्ध प्रसाद सिंह सिमरा गये। वहाँ एक विशाल बैठक ग्रामीणों की ओर से आयोजित की गयी। उसमें उनकी बात सुनी गयी और उसके बाद फिर बासावालों से बातचीत हुई। दोनों पार्टी के लोगों ने आपस में समझौता कर लेने का निर्णय किया। वहाँ समझौता करने के लिए पूरी तरह अनुकूलता दिखाई पड़ी। रात के करीब आठ बजे नाव से सिल्की होकर वापस चले गये। दूसरी जगह का कार्यक्रम था, इसलिए वैद्यनाथ बाबू भदैया टोला नहीं जा सके। क्षेत्रीय संयोजक श्याम सुन्दर प्रसाद गुप्त एवं क्षेत्रीय कार्यकर्ता महादेव प्रसाद गुप्त भदैया टोला गये और दोनों पार्टी की बात सुनकर उन लोगों से भी समझौता कर लेने का आग्रह किया। वे लोग भी उस आग्रह को मान गये।

लूट-पाट की यह आग अत्याचार के कारण फैली है। बासावालों की पुरानी शान—हम राजपूत हैं और ये संथाल हैं—मुख्य रूप से यह भावना इसके पीछे रही है। लोगों को पूरी मजदूरी नहीं मिलती थी, इसलिए उन लोगों ने मजदूरी बढ़ाने की माँग की उसके लिए हड़ताल की। फिर पेट का सवाल सामने आया। बासावालों ने बाहर से मजदूर बुला-बुलाकर काम कराया। समस्या जटिल हुई। कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं ने हिंसा के बल पर न्याय दिलाने का भरोसा दिया। इसलिए आग उभड़ी।

अभी बासावाले पुलिस के साथ भदैया टोला जाते हैं और पुलिस जब उन्हें गिरफ्तार कर लेती है तो उनको थाना पर लाया जाता है। बासावाले उनको पीटते हैं। इससे इलाके में काफी क्षोभ बढ़ा है। भदैया टोला के बासावाले अन्दर से समझौता करने की रजामन्दी दिखाते हैं लेकिन बाहर से ऐसा रुख रखते हैं कि इन्हें पुलिस की मदद से कुचलकर ही दम लेंगे।●

भरोसे की बात

एक दिन सबेरे ही हमलोग ग्रामदान के फार्म पर दस्तखत कराने एक गाँव में पहुँचे। लोग सबेरे ही मिल पाते हैं। गाँव में पहुँचते ही एक पुराने रईस मिले। उन्होंने आग्रहपूर्वक अपने यहाँ नाश्ता व भोजन कराया। बातचीत के सिलसिले में उन्होंने कहा ग्रामदान में मुझसे प्रतिवर्ष कुछ रुपया न लिया जाय पर भूमि के लिए मजबूर न किया जाय। कारण पूछने पर उन्होंने बताया कि पहले हम लोगों के पास काफी भूमि थी। नये कानून के अनुसार जमीन काश्तकारों की हो गयी। बाद में उन्हीं लोगों ने हमलोगों के साथ असहयोग कर दिया। नाई धोबी कहार आदि सबने काम बन्द कर दिया। आप लोगों के कहने से यदि हम भूमिहीनों को बीसवाँ भाग दे दें तो वे लोग भी हमलोगों का काम बन्द कर देंगे फिर हमारी खेतीबारी भी बन्द हो जायेगी।

मैंने समझाया काश्तकारों ने जिस कानून द्वारा आपकी जमीन पर हक पाया उसके मूल में ही जमींदार व असामी के वर्गभेद की भावना काम कर रही थी। पर ग्रामदान का बुनियाद सहयोग की भावना पर खड़ी है। जिसके पास जो कुछ है उसको वह एक-दूसरे के सहयोग के लिए दान दे रहा है। इस प्रकार इसमें से असहयोग नहीं निकलेगा। दूसरी बात यह कि जब एक ही कागज पर भूमिवान भूमि देने का हस्ताक्षर करता है और श्रमवान श्रम देने का तो उसका मतलब ही यह हो जाता है कि दोनों एक-दूसरे की मदद के लिए राजी हैं। इसलिए अब पुरानी बात नहीं दुहरायी जायगी।

उन सज्जन ने इसे महसूस किया और कहा कि यदि ऐसी बात है तब तो ग्रामदान में शामिल होने में कोई हर्ज नहीं है।●

कुछ सास की, कुछ बहू की

मैं जानती थी कि चौबेजी के घर में सास-बहू के बीच अनबन है, लेकिन यह सोचकर मैं निश्चिन्त थी कि आखिर सास-बहू का झगड़ा किस घर में नहीं है।

लेकिन आज की ताजा खबर सुनकर मैं सोच में पड गयी। बात यहाँ तक बढ गयी थी कि बहू अब उस घर में एक बूँद पानी पीना पाप समझती है और कहती है कि इससे तो अच्छा है कि सामनेवाले पोखर में डूबकर जान दे दे। बहू ने दो दिन से एक दाना भी नहीं खाया, बल्कि अपने अबोध बेटे को भी परोसी हुई थाली से उठाकर, थाली को ठोकर मार दी। विधवा है तो क्या हुआ? अपने इकलौते भैया और भाभी से भी मिलने शहर नहीं जा सकती? माना, पहले कम जाती थी; इधर महीने में एक-आध चक्कर हो जाता है। लेकिन इसका मतलब यह थोडे ही है कि शहर जाना ही गंदी बात है? जो ऐसी बात सोचते हैं उनके ही दिल में पाप है, खोट है। ऐसों के बीच जीने से जिन्दगी ही खत्म कर देना बेहतर है।

सास बहुत चिन्तित तो नहीं है, फिर भी वे सोच रही हैं कि आवेश में आकर बहू पोखर की ओर भाग न जाय और ख्वाहमख्वाह जगहँसाई न हो जाय। बहू के कमरे को बाहर से ताला लगा रखा है। लल्लन को मरे सात साल हो गये! विधवा कमसिन है, बदनसीब है। देख के जिया फट पड़ता है। लेकिन इसका मतलब यह थोडे ही है कि वह मनमानी पर उतर आये! भैया से मिलने शहर जाना वैसे कोई दोष नहीं है। लेकिन क्या बात है, भैया तो एक बार भी इधर फटकता नहीं, और यही बार-बार दौड़ती रहती है? और वह भी जब मर्जी आ जाय तभी? जैसे कोई घर में पूछने-पाछनेवाला है ही नहीं? खैर। आखिर सास है। दो खरी-खोटी सुना दी तो ऐसा कौनसा आसमान टूट पड़ा जो इसने 'लक्ष्मी' को ठुकरा के सारे आँगन में दाना-दाना बिखेर दिया? हद हो गयी। इस कम्बख्त ने लल्लन के बिटवा तक को खाने न दिया। बहू क्या हुई, आफत हो गयी।

मैं चौबेजी के द्वार पर गयी। मेरे सामने ही बहू का बंद कमरा खुला। बहू बाहर आयी। मैंने दोनों से अलग-अलग बात की। दोनों ने अपने-अपने मन के गुबार निकाले। आवाज की तेजी और कुढ़न का पारा जरा नीचे आया। लेकिन बहू इसी जिद पर अड़ी रही कि पल भर भी वह अब इस घर में नहीं रहेगी। और सास इसी टेक पर अडी रही कि बहू यह न भूले कि वह इस घर की बहू है। स्थिति देखकर मेरी निराशा बढ रही थी।

आखिरी प्रयत्न करने के इरादे से सास के साथ बात कर रही थी। उनके बोलने में आवेश नहीं था। उन्हींके कमरे में बैठी थी। इतने में दरवाजे पर बहू को खड़ी देखकर मैं घबरायी। मुझे डर लगा कि अब दोनों का सामना होगा, दो बाघिनों की भिडंत होगी। सास अपनी सफाई दे रही थी। बीच में बहू ने सीधे सवाल दाग ही दिया—"क्या तुमने यह नहीं कहा कि मैं शहर में चकले पर जाती हूँ?"

अब मैं बिलकुल ही डर गयी। क्योंकि नंगी असलियत खुलकर सामने आ गयी। डेढ-दो घण्टे की मेरी मेहनत अकारथ गयी। मैं हार गयी। अब तक आशा बिधे रही कि सुलह-सान्त्वना का कोई तो छोर हाथ लगेगा। सुलह की क्या कहूँ, यह तो सीधे संघर्ष की ललकार थी। मैं अन्दर ही अन्दर काँप रही थी कि जाने अब क्या होगा!

सास पल भर चुप हो गयी। पता नहीं कि उनका मुँह खुलेगा तो क्या शब्द निकलेंगे। आरोप के समर्थन में कोई ऐसी-वैसी बात न कह दे कि बहू की जिंदगी ही उजड़ जाय। कुछ डर, कुछ खीझ, कुछ अधीरता, और कुछ उत्सुकता से साथ मैं सास का मुँह देखती रही।

सीधे बहू को संबोधन कर सास ने कहा—"बहू, इनसान गुस्से में आकर जो न करे वही थोडा है। मर्द हो तो गुस्से में बल्लम मार दे और लाश गिरा दे। लेकिन औरत के पास तीखी जबान के सिवाय है ही क्या?"

बडी संजीदगी और शान्ति के साथ सास के तौल-तौल कर कहे गये ये शब्द सुनकर मैं बाग-बाग हो गयी। अब बहू को समझाने में देर नहीं लगी कि बेमानी बातों का बुरा नहीं मानना चाहिए और सास की गुस्से भरी बातें कोरी उबाल थी, उनके मन में कुछ नहीं है! फिर सास को भी समझाने में दिक्कत नहीं हुई कि बहू पर इस प्रकार का लाछन नहीं लगाना चाहिए।

फिर दोनों को भोजन के लिए बैठाकर, हलका मन लिये मैं वापस लौट आयी। •

कानून की जकड़, हाकिम की अकड़, गाँव की पकड़

इन दिनों अपने यहाँ देर से पकनेवाले धान की कटाई हो रही है। पास-पड़ोस के गाँवों के मजदूर बड़ी संख्या में धान काटने के लिए आ रहे हैं, क्योंकि पड़ोसी गाँवों में अभी धान के पकने में ८-१० दिन की देर है।

सूरज डूबते-डूबते खेतों में काटा गया धान खलिहान में पहुँच जाता है। पूरे गाँव का खलिहान एक ही जगह पर लगता है, इसलिए इन दिनों गाँव की चौपाल चौधरी की बैठक के बदले खलिहान में बैठती है।

गाँव में १५ परिवार हैं, जिनमें से २ परिवारों के पास ट्रांजिस्टर रेडियो है। चौपाल में प्राय किसी-न-किसी का ट्रांजिस्टर आ जाता है। मुखियाजी के लड़के ने चौपाल में आते ही ताजा समाचार सुनाया कि धान की लेवी आ रही है। यह खबर सुनते ही खलिहान में उपस्थित सब लोग मुखियाजी के लड़के के इर्द-गिर्द इकट्ठा हो गये। लोगों के बैठने के लिए धान के बोरे बिछा दिये गये। एक लालटेन लाकर रख दी गयी। मुखियाजी के लड़के ने बताया कि उत्तर प्रदेश मंत्रि मंडल ने अब तय कर लिया है कि देर से पकनेवाली धान की फसल पर लेवी सीधे किसानों से ही वसूल की जायगी। वसूली के धान का भाव साढ़े सैंतालीस से लेकर बहत्तर रुपये क्विंटल तक तय किया गया है।

भोला ने हड़बड़ाकर पूछा—"भैया, क्या धान की लेवी सभी किसानों से वसूल होगी ?"

मुखिया के बेटे ने कहा—"लेवी की वसूली सिर्फ उन किसानों से की जायगी, जिनके पास ५ पक्के बीघे से ज्यादा जमीन है।"

मुखियाजी अपने गाँव के सबसे बड़े काश्तकार हैं। इस लिए उनसे कुछ छोटे काश्तकारों में से एक ने पूछा—'बेटा, तुमको किस हिसाब से लेवी देनी होगी ?"

'काकाजी ! मेरे पास १० एकड़ से ऊपर धान के खेत हैं। मुझे फी एकड़ २ क्विंटल लेवी देनी पड़ेगी। जिनके पास पाँच एकड़ खेत हैं उन्हें ५ क्विंटल, और जिनके पास पाँच एकड़ से साढ़े सात एकड़ तक खेत हैं उन्हें डेढ़ क्विंटल प्रति एकड़ के हिसाब से लेवी देनी पड़ेगी।"

इतनी बातचीत होते-होते चौपाल में गाँव के सभी छोटे-बड़े किसान इकट्ठा हो गये। मुखियाजी भी आ चुके थे। उन्होंने कहा - सरकार की बड़े किसानों पर ज्यादा कड़ी नजर होती जा रही है। सरकार ने मान लिया है कि जिनके पास ज्यादा खेत हैं उनकी पैदावार भी उसी हिसाब से ज्यादा होती है, जब कि असलियत यह है कि छोटे काश्तकार ज्यादा अनाज पैदा कर लेते हैं।"

नेऊर राम गाँव का एक छोटा किसान है। उसने कहा—"मुखियाजी यह सही है कि अपनी मेहनत के भरोसे छोटा काश्तकार छोटे खेत से भी अच्छी फसल ले लेता है पर उसके पास खेती की वे सुविधाएँ नहीं होतीं जो बड़े काश्तकारों के पास हैं। आपके पास अपना कुआँ और रहट है। धान की सिंचाई के लिए आपका अपना बाँध है। आपको अपनी जमीन की जमानत पर खेती में लगाने के लिए पूँजी की बड़ी रकम भी मिल जाती है। हमारे पास तो सिर्फ अपनी मेहनत का भरोसा है।"

"बात तुम्हारी ठीक है जी"—मुखियाजी ने सिर हिलाते हुए कहा हम लेवी की वसूली की परवाह नहीं करते अगर सरकार हमारे साथ ठीक सलूक करती। अच्छी खेती करने के लिए जिन जिन चीजों की जरूरत पड़ती है उनके जुटाने की पूरी जिम्मेदारी अगर सरकार उठाये तो उसे लेवी वसूल करने का जायज हक होता है। पर ऐसा होता कहाँ है ? सरकारी अधिकारियों ने देखा कि इस साल वर्षा कुछ ठीक से हुई है तो मान लिया कि सबके धान पैदावार हो गयी। किसको बीज की कमी पड़ी किसे खाद नहीं मिली, किसे सिंचाई की सुविधा नहीं है और किसकी फसल में बीमारी की रोकथाम का इंतजाम नहीं हो सका इसका कोई ख्याल सरकारी निर्णय में नहीं है। और तो और सरकार ने धान का रेट साढ़े सैंतालीस रुपये क्विंटल से लेकर बहत्तर रुपये क्विंटल तक मुकर्रर किया है। अब किसका धान किस रेट से लिया जाय यह सरकारी अधिकारी ही तय करेगा न ? बस, बेईमानी और घूसखोरी के लिए एक और चोर-दरवाजा तैयार हो गया। जो इन्स्पेक्टर साहब को खुश करेगा, उसका धान घटिया दर्जे का होगा तो भी उसे ऊँची दर से खरीदा जायगा, और अगर किसी ने उन्हें खुश नहीं किया तो अच्छे धान का भी कम दाम मिलेगा। व्यापारी हमसे बाजार-भाव से गल्ला खरीदता है। हमारी मर्जी होती है तो हम बेचते हैं, नहीं तो नहीं बेचते, पर सरकारी कानून की अंधेर के आगे हम मजबूर हो जाते हैं।" →

अमेरिका में सामूहिक जीवन के प्रयोग–४

मोन्टी वर्दे

यह मित्र-मण्डल (क्वेकरों) का एक समाज है, जो मध्य अमेरिका के कास्टोरिका के जंगलों-पहाड़ों में ४-५००० फुट की ऊँचाई पर बसा है। कास्टोरिका एक ऐसा छोटा और शान्तिमय देश है, जिसमें वर्षों से मृत्युदण्ड की सजा बन्द है। उस देश के पास फौज नहीं है, एक छोटा-सा नागरिक सुरक्षा-दल है। वहाँ कोई बहुत धनी नहीं है, न कोई भूखों ही मरता है। शासन का जोर बहुत कम है। शायद क्वेकरों ने उस स्थान को इसीलिए पसन्द किया कि वहाँ पर उन्हें शहर-केन्द्रित समाज से छुट्टी मिल सकती है और सुरक्षा का कर देना नहीं पड़ता है। वहाँ बहुत-से ऐसे लोग रहते हैं, जो फौजी औद्योगिक संगठन और सरकारी व्यवस्था के मुकाबले में अपनी आन्तरिक आवाज को मानने के कारण लगातार वर्षो तक जेल में रह चुके हैं। उन्होंने नम्रता से शायद यह भी सोचा कि वे वहाँ के निवासियों की थोड़ी-बहुत सेवा कर सकेंगे, और उनसे कुछ सीख भी सकेंगे।

वहाँ पर उन्होंने मुख्य तौर पर गोपालन का काम उठाया है। वहाँ पहुँचने का मार्ग बहुत कठिन है। सबसे पहले वे तम्बुओं में रहते थे। बाद में उन्होंने अच्छे मकान बनाये। अब उन्होंने चिढान के कारखाने, बढ़ईगिरी के लिए मकान, पानी से बिजली बनाने के यंत्र, टेलीफोन आदि की व्यवस्था की है। वे सड़कें भी बनाने लगे हैं। उन्होंने विलायत से अच्छी नस्ल की गायें मँगवायी हैं। उनके कृषि के औजार देशी ढंग के है। वे बहुत अच्छा पनीर बनाकर बेचते हैं। उनके फल के बगीचे भी बहुत सुन्दर हैं।

उपसंहार

अब तक के किये गये प्रयोगों में हमने देखा कि किस प्रकार अमेरिका के कुछ लोग दुनिया की वर्तमान स्थिति के विरुद्ध विद्रोह करने की हालत तक पहुँच गये थे। समाज का प्रचलित ढाँचा उनके लिए बेकार-सा हो चुका था। वे हर प्रकार का त्याग करके, हर प्रकार का कष्ट सहन करके एक नया आदर्श जीवन बिताना चाह रहे थे। यानी, उनकी एकता एक तीव्र अतःप्रेरणा पर कायम थी। लगता है कि ऐसे प्रयोगों में सफलता पाने के लिए यह एक आवश्यक शर्त है। क्षणिक जोश के बदले स्थायी लगन, यही मुख्य बात है।

नेतृत्व का भी सवाल सामने आता है। इस सिलसिले में दुखोबोरों ने धोखा खाया। उन्हें दुःख सहन करना पड़ा, और गलत मार्ग में फँसना पड़ा। फिर भी, उनकी श्रद्धा अब तक नहीं डिग पायी है।

अब तक के वर्णन में आये समाजों में दुनिया के वर्तमान ढाँचे का विरोध करने की शक्ति रही। कुछ ने अपने दैनिक जीवन में शिक्षा इत्यादि में अपनी विशेषता दिखायी, यानी उनके आन्तरिक योग का कुछ बाह्य प्रतीक रहा। हमारी सफेद खादी इसी प्रकार हमारा बाह्य प्रतीक बन सकती है।

सब प्रयोगों में लोग कृषिप्रधान और उद्योगप्रधान रहे। उसके द्वारा वे स्वावलम्बन साध सके हैं, और उन्होंने विकास-शील वैज्ञानिक प्रयोग करने का दृष्टिकोण भी अपनाया।

शिक्षा में भी उन्होंने अपना स्वतंत्र दृष्टिकोण रखा, क्योंकि उन्होंने समझा कि बच्चों के भविष्य का जीवन मुख्य तौर पर उनकी शिक्षा की दृष्टि पर निर्भर है।

इन प्रयोगों का अध्ययन करने से हमें अपने देश में चलने-वाले ग्रामदान के महान प्रयोग को आगे बढ़ाने का भारी प्रोत्साहन मिलता है। [समाप्त]

—सरला बहन

→ "ठीक कहते हो मुखियाजी, पर हम अलग-अलग कुछ नहीं कर सकते, सिर्फ हाय-हाय कर सकते है।" रामबदन ने कहा।

मुखियाजी के लड़के ने कहा—" सरकारी कानूनों की नामुनासिब जकड़ और सरकारी अधिकारियों की बेरहम अकड़ का एक ही इलाज दिखायी देता है कि हम अपने गाँव का ग्रामदान करके अपनी ग्रामसभा को मजबूत बनायें। पूरे गाँव के लोग मिलकर पूरे गाँव की विकास-योजना बनायें। तब हम सरकार से यह कह सकेंगे कि हमारे गाँव की जरूरत भर गल्ला रखने के बाद जो बचेगा उसे ही हम बाहर जाने देंगे। गाँव की खेती के साधनों के लिए भी तब हम ज्यादा संगठित ढंग से कोशिश कर सकेंगे। हम सबको इस बात पर मिलकर सोचना चाहिए।

गाँव की शक्ति बनेगी तभी हम हाकिम, नेता और पुलिस कचहरी के प्रहार से गाँव को बचा सकेंगे।" ●

'गाँव की बात'। वार्षिक चंदा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए संसार प्रेस, काशीपुरा, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित

और कौन था ! पर आजादी मिलने के तुरन्त बाद उन्होंने ही यह प्रस्ताव रखा था कि कांग्रेस राजनैतिक पार्टी के रूप में काम न करे, वह अपने को विघटित या रूपान्तरित कर दे। वे कितने दूरदर्शी थे यह आज साबित हो गया है। पर उस समय कांग्रेस के नेताओं की दृष्टि उतनी दूर तक नहीं जा सकी। शायद यह भी कहा जा सकता है कि इसमें उनकी स्वार्थभावना भी अप्रत्यक्ष रूप से काम कर रही थी। क्या अब आज भी, जब कि परिस्थिति प्रत्यक्ष इशारा कर रही है, कांग्रेस के मौजूदा नेता अपने देशप्रेम और हिम्मत का परिचय देंगे ! अब सवाल कांग्रेस को गांधीजी की कल्पना के लोक सेवक संघ या और किसी रूप में परिवर्तित करने का नहीं रहा। वह समय तो निकल गया। उस समय कांग्रेस के पीछे वर्षों की तपस्या और कुर्बानी से कमाया हुआ पुण्य था। वह सारी पूँजी कांग्रेसवालों ने अपने ही हाथों नष्ट कर दी। अब तो एक ही विकल्प है कि उसे विघटित कर दिया जाय, और उसमें के लोग, जो जिधर जाना चाहें चले जायँ। इस विघटन से हिंसावादी, प्रतिक्रियावादी या रूढ़िग्रस्त तत्त्वों को भी फायदा ही होगा, क्योंकि कांग्रेस में ऐसे तत्त्वों की कमी नहीं है, जो इसके टूटने पर उनमें जा मिलेंगे। पर साथ ही ऐसे प्रगतिशील, उदार और लोकतंत्र में आस्था रखनेवाले तत्त्व जिनकी शक्ति आज वहाँ कुंठित हो गयी है, और जो आज कांग्रेस में कैद हैं, आजाद हो जायँगे और कांग्रेस के बाहर समानधर्मी तत्त्वों से मिलकर एक तीसरी नयी शक्ति देश में खड़ी कर सकेंगे।

कहा जा सकता है कि कांग्रेस के विघटन से देश में राजनैतिक रिक्तता पैदा हो जायगी। यह डर वैसा ही बेबुनियादी है जैसा नेहरूजी के जमाने में लोगों का यह डर कि उनके न रहने पर क्या होगा ? यह केवल भीरुता और अपने स्वार्थ को कायम रखने का बहाना है। सारी परिस्थिति को देखते हुए देशहित का तकाजा है कि कांग्रेस के नेता हिम्मत से काम लें और कांग्रेस को धीरे धीरे बिखरने देने और इस प्रक्रिया में साथ ही साथ राष्ट्र को भी बिखरने देने के बजाय समझ-बूझकर अपने हाथों से उसका विसर्जन कर दें। ●

परमाणु-युद्ध के परिणाम

जहाँ लोगों ने युद्ध के भयानक परिणामों को प्रत्यक्ष नहीं देखा है, वहाँ के लोग इसका अनुमान नहीं कर सकते। जब अमेरिका ने हिरोशिमा पर एटम बम गिराया तो उसके कारण लगभग एक लाख जापानी मारे गये थे। जब आर० ए० एफ० ने ड्रेसडन पर बमबारी की, तो १,३५,००० जर्मन मरे थे। नाजियों ने ६,००,००० यहूदियों को मौत के घाट उतारा था। अब यह कहा जाता है कि अणुयुद्ध में २,५०,००,००,००० इन्सान मर सकते हैं। आज के विज्ञान युग में युद्ध के क्या क्या भयानक परिणाम हो सकते हैं, कुछ इसका भान होता है। पूरी बात सामने आये तो दिल भय से काँप उठता है।

अगर कल अणु युद्ध और हाईड्रोजन युद्ध छिड़ जाय, तो चन्द ही क्षणों में हममें से अधिक लोग जीवित नहीं रहेंगे। जो जीवित रहेंगे वे संभवतः यही चाहेंगे कि 'मर जाते तो अच्छा होता।' ऐसी हालत में हमारा

ओम् प्रकाश गिरा

कर्तव्य हो जाता है कि उसके नाम पर जो कुछ हो रहा है उसका विरोध करें।

कुछ तथ्य साधारण विस्फोट में टी० एन० टी० गर्म गैस में तबदील हो जाता है, जिससे इतनी शक्ति पैदा हो सकती है कि उससे हजारों मकान गिरकर राख की ढेर हो जायँ। अणु विस्फोट से आग और धमाका पैदा होता है। यह विस्फोट इतना भयंकर होता है कि एटम शक्ति के केवल एक पाउण्ड मसाले से १००० से १०००० टी० एन० टी० की ताकत का प्रदर्शन होता है। इस प्रकार की भयंकर विस्फोट शक्ति के कारण अणु शक्ति का माप तौल किलोटन से होता है। १ किलोटन = १००० टी० एन० टी० और १ मेगाटन = १०,००,००० टन टी० एन० टी०। सन् १९६१ में रूस ने ५७ मेगाटन के प्रयोग किये। सन् १९६२ में यह विस्फोट शक्ति ढाई गुना बढ़ गयी। सुना जा रहा है कि असीम शक्ति के अणु-बम भी तैयार हो चुके हैं। जब अणु-बम का विस्फोट होता है तो पहले बारूद हर चीज को उड़ा देती है या झुलस देती है। परन्तु इसका मात्र इतना ही प्रभाव नहीं होता, एक और भी विनाशकारी प्रभाव रहता है। एक प्रकार की घातक किरण दूर दूर तक फैल जाती है। इससे न तो आदमी झुलस कर मरता है, न अंगविहीन होता है। इस घातक किरण का प्रभाव मानव शरीर के सूक्ष्म भाग पर होता है, जिससे मनुष्य धीरे धीरे विनाश की स्थिति में पहुँचता है। लाखों और करोड़ों मनुष्य इस घातक प्रहार की लपेट में आ सकते हैं।

हाईड्रोजन बम एटम बम के मुकाबले में बहुत ही अधिक विनाशकारी सिद्ध होगा। इसकी तैयारी में खर्च भी कम होता है। एटम बम की बारूद यूरेनियम २३५, प्लूटोनियम २३९ से बनती है, जो बहुत महँगी पड़ती है। हाईड्रोजन बम में लिथियम डीउटराईड (Lithium deuteride) का उपयोग होता है। उसकी कीमत प्लूटोनियम (Plutonium) की अपेक्षा १/२०० पड़ती है।

अणु-बम स्वयं ही अत्यन्त घातक और विनाशकारी सिद्ध होते हैं, परन्तु उनकी शक्ति और बढ़ जाती है, जब उनको ठीक निशाने पर फेंकने के लिए आज के नवीन वैज्ञानिक साधनों का उपयोग किया जाता है। जिस मानव-सभ्यता के निर्माण में हजारों वर्ष लगे हैं उसे ढहाने में कुछ ही क्षण लगेंगे। आवाज से भी तेज हवाई जहाजों द्वारा इन अणु शस्त्रों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाया जा सकेगा। राकेट मिजाईल द्वारा इन्हें छोड़ा जा सकेगा। इनको शत्रुओं की नजर बचाकर समुद्री पनडुब्बियों द्वारा भी ले जाया जा सकेगा और पानी के नीचे से ही अपने निशाने पर छोड़ा जा सकेगा। यह अपने निशाने से कभी चूकेंगे नहीं। रूस और अमेरिका के पास जहाँ अणु-शक्ति के भयानक शस्त्र हैं, वहाँ इन शस्त्रों को अधिक शक्तिशाली बनाने के लिए मिजाईल की भी कमी नहीं है।

यह अनुमान लगाया गया है कि इनमें से अधिक राकेट ऐसे हैं, जो १० लाख टी० एन० टी० के बराबर हैं और उनको १८

हजार मील प्रति घण्टा की रफ्तार से ले जाया जा सकता है।

रूस को अमरीका के अणु शस्त्रों का भय है और अमरीका को रूस का! न मालूम किस समय युद्ध छिड़ जाय! इसलिए

विस्फोट

कोई-न-कोई हवाई जहाज जिसमें अणु-शस्त्र रहते हैं, हमेशा आकाश में घूमता रहता है, क्योंकि अचानक युद्ध शुरू होने पर दूसरी पार्टी के लिए नीचे से अणु शस्त्र ऊपर ले जाने के लिए समय नहीं रहेगा।

अगर अमरीका और रूस की अणु-शस्त्रों की होड़ जारी रही तो दुनिया के विनाश का समय दूर नहीं। आज चीन भी इस होड़ में शामिल होने की कोशिश कर रहा है। हो सकता है कि दो छोटे-से छोटे देशों का आपसी युद्ध विशाल अणु-युद्ध में परिवर्तित हो जाय! जब अणु-बम की जाँच की जाती है तो हजारों वर्गमील भूमि क्षेत्र में कोई मनुष्य नहीं रहने दिया जाता। परन्तु युद्ध-काल में अणु शस्त्रों का उपयोग फौजी छावनियों, सैनिक-शस्त्र-उत्पादन-क्षेत्रों, यातायात के साधनों, अन्न-वस्त्र के गोदामों और बड़े-बड़े नगरों पर किया जायेगा। अणु-बम के आक्रमण के पश्चात् रेडियो-किरणों का प्रभाव इतना भयंकर होगा कि उसकी बराबरी किसी दूसरी दैवी आपत्ति से नहीं की जा सकती। केवल इतना ही नहीं कि यह आपत्ति स्वयं भयंकर होगी, बल्कि दूसरी अनेक आपत्तियों को भी साथ लानेवाली होगी।

रेडियो-किरणों के प्रभाव के कारण मानव इतना बेबस और लाचार होगा कि वह इन आपत्तियों का मुकाबला नहीं कर सकेगा। उदाहरणार्थ : स्ट्रोन्शियम (Strontium) एक काले रंग की धातु; जब तक मानव-शरीर में प्रवेश नहीं करती, तब तक मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं होती; परन्तु जब इसके दिखाई न देनेवाले अणु रेडियो-किरणों में प्रवेश करते हैं, तब वह अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होते हैं। ये किरणें ईंटों, पत्थरों में से निकलकर बहुत दूर से मानव-*शरीर में प्रवेश करके उसे रोगी बना देती हैं।* अणु-बम के पहले धमाके में ये किरणें अधिक मात्रा में पायी जाती हैं। अणु-बम परीक्षण में इन किरणों से बचाव का उपाय सम्भव हो सकता है, परन्तु युद्ध-काल में यह सम्भव नहीं। अणु बम के धमाके से बचे हुए लोग कुछ ही दिनों के मेहमान होंगे और वे अपने आप को एक प्रकार के आग से तपे हुए तन्दूर में पायेंगे। इन किरणों से न तो किसी विशेष प्रकार के वस्त्र बचा सकते हैं और न ही कोई औषधि बचा सकती है। इन किरणों से प्रभावित वस्तुओं को जला देने से भी लाभ नहीं होगा; क्योंकि जली हुई वस्तुओं की राख में भी इनका असर मौजूद रहेगा। मानव के उपयोग में आनेवाली प्रत्येक वस्तु में इनका प्रवेश रहेगा। मनुष्य इन सब वस्तुओं को फेंक भी नहीं सकेगा।

दूसरे महायुद्ध में गैसों से बचने के लिए गैस नकाब (Gas mask) काम में लाये जा सकते थे। अणु-युद्ध में किरणों की जाँच करनेवाले यन्त्र तो रहेंगे, जिनसे यह अनुमान लगाया जा सके कि मानव-शरीर पर इनका कितना असर पड़ा है; परन्तु अब तक ऐसा कोई यन्त्र नहीं बन सका, जिससे बचाव हो सके। जिन लोगों पर इन किरणों का प्रभाव आरम्भ में कम होगा, अन्त में यह प्रभाव बढ़कर उनके लिए भी मृत्यु का कारण बन जायेगा। किरण का प्रभाव कम हो या अधिक, इसका कुछ फर्क नहीं पड़ेगा। किसके भाग में रेडियो किरण का कितना भाग बदा है, यह अणु-बम के धमाके पर निर्भर करता है। अणु-युद्ध में लोगों को सँभलने का अवसर नहीं रहेगा। यह भी नहीं कहा जा सकता कि युद्ध की पद्धति क्या होगी। केवल सेना पर, या नगरों पर, या आम जनता पर अचानक आक्रमण होगा। कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि विशाल क्षेत्र को ध्वस्त करने के लिए अणु-बम बहुत ऊँचाई से फेंके जायेंगे। दूसरों का कहना है कि आक्रमण काफी निचाई से होगा, ताकि रेडियो किरणों का अधिक से अधिक घातक प्रभाव हो सके।

कुछ भी हो, अणु-युद्ध में लाखों और करोड़ों लोगों की सुरक्षा का प्रश्न एक गम्भीर प्रश्न रहेगा। बचाव की कोई सूरत नहीं होगी। खतरे की सूचना देना कोई आसान काम नहीं होगा। सैनिक छावनियों, नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों को एकसाथ सावधान करना सम्भव न होगा।

लन्दन की सिटी कौंसिल ने ३ अक्तूबर, १९६१ को जाहिर किया था कि अणु-युद्ध में लन्दन की जनता को किसी उचित उपाय से बचाना एक समस्या रहेगी।

अमेरिका के सरकारी अन्दाज के मुताबिक १० मेगाटन के २ बमों से न्यूयार्क में ६०,९८,००० आदमी मरेंगे, २२,७८,००० आदमी घायल होंगे। न्यूयार्क की जनसंख्या लन्दन के बराबर है। यह आशा की जाती है कि तीसरे विश्व-युद्ध में मुख्य निशाना नगर नहीं होंगे। हवाई अड्डों, राकेट, गोदामों और सैनिक छावनियों पर ही बम गिरायेंगे। नगर सम्भवतः बच जायेंगे। परन्तु इन निशानों से नगर और बस्तियाँ अक्सर जुड़ी रहती हैं। उनको एक-दूसरे से अलग करना सम्भव न होगा।

एक अमेरिकी वैज्ञानिक का कहना है कि

संचार

१० मील की ऊँचाई से फटनेवाले १० मेगाटन बम से भूमि के ५००० वर्गमील को जला डालनेवाली लहर फैल जायेगी।

हमारे आकाश-प्रदेश में १० मेगाटन का बम फट जाने पर क्या होगा?

ध्वस्त नगर

● आँख की झपक से भी अधिक वेगवाली चमक होगी जो हमें थोड़े समय के लिए अंधा बना देगी। दो-तीन सौ मील दूरी से भी यह चमक हमारी आँखों को जलानेवाली होगी।

● तीन मील के क्षेत्रफल में ४० सेकेण्ड में आँखों को अंधा कर देनेवाला और दूर काला गर्म आग का गोला दिखाई देगा। फिर कितनी ऊँचाई से वह फटा है, इस पर निर्भर करेगा।

● २४० फुट गहरी, आधे मील से एक मील लम्बी ज्वालामुखी फूट निकलेगी। धमाके की लहर जमीन के अन्दर तहखानों में भी घूम जायेगी और जो लोग अपने आप को सुरक्षित समझ रहे होंगे, उनको भी खत्म कर देगी।

● २२ मील की दूरी तक रहनेवाले बिना बचाव के लोगों को झुलसकर खत्म कर देगी।

● २० मील तक भयंकर आग लग जायेगी और २८ मील तक हल्की आग दिखाई देगी।

● साढ़े तीन मील के अन्दर प्रत्येक वस्तु भस्म हो जायेगी। साढ़े सात मील तक मकान ढह जायेंगे और १५ मील तक मकान निवास के योग्य नहीं रहेंगे। १० मील के क्षेत्रफल में तहखानों में छुपे हुए लोगों को इस बात का भय रहेगा कि कहीं मकान ऊपर ही न गिरें।

● चार मील तक बड़े बड़े लोहे के मजबूत पुल गिर जायेंगे। चार मील की ऊँचाई तक उड़ रहे लोग भी उड़ते हुए मकानों के शीशे ईंटों से घायल हो जायेंगे। अमरीका के सिविल डिफेन्स विशेषज्ञों का कहना है कि बड़े-बड़े पहाड़ भी अणु बम की तबाही से लोगों को बहुत कम बचा सकेंगे।

● दस लाख की आबादीवाले नगर के लोगों में से चार लाख से सात लाख लोग या तो मर जायेंगे या बुरी तरह घायल हो जायेंगे।

● यह सब विनाशकारी कार्य केवल कुछ ही पलों में हो जायेगा। अनुमान यह है कि छोटे बमों की अपेक्षा बड़े बड़े बमों का उपयोग किया जायेगा। यदि १०० मेगाटन शक्ति के बम उपयोग में लाये गये तो दुनिया की कितनी तबाही होगी, यह एक सोचने की बात है।

● आग का गोला आठ मील तक फैलेगा।

● ३५ मील के क्षेत्र में पक्के मकान गिर जायेंगे।

● चारों ओर आग ही आग लग जायेगी।

● १४ मील तक रेडियो किरणों से मौत या भयंकर रोग फैल जायगा।

● १००० वर्गमील में धमाका इतना जोरदार होगा कि एक घण्टे में करोड़ों आदमी रेडियो किरण से मर जायेंगे।

● जो लोग अणु विस्फोट के कारण धमाके और आग से बच जायेंगे उनको तीसरी

ग्रस्त लोग

अमन-गीत

शमा बुझने न पायेगी
अभी इनसान जिन्दा है!

शिशिर की मार पर उस रोज
बुलबुल खूब घबरायी।
भुवन ही फूँक देगा क्या
गगन की शोख अरुणाई।
कहा धुएके से तब आकर
पवन के एक झोंके ने
लता झुकने न पायेगी
अभी इनसान जिन्दा है!
अभी इनसान जिन्दा है!

कहा ललकार जलनिधि ने
मचा दो ग्रीष्म से आकर।
धुरा के साथ यह मन की
गरम तूफान भड़का कर।
मगर फट जायेगा पल में
पुराना पट का पर्दा।
कली झड़ने न पायेगी
अभी अरमान जिन्दा है!
अभी इनसान जिन्दा है!

उन्हें अपने बमों पर
घमण्ड है उस दानव का।
धरा मासूम को वीरान कर
खंडहर बनाने का।
मगर इनसान के दिल में
भरा जो आग हम उसी।
न बुझा राग भायगा
अमन का गान जिन्दा है!
अभी इनसान जिन्दा है!

अकेला मानकर हमको
उन्हें अणु-बम बनाने का।
धुआँ से धार डालेंगे
हमें भी मात जान दो।
बना इनसान के बच्चों की सेना
हम लिखा देंगे।
धरा जलने न पायेगी
अभी बलिदान जिन्दा है!
अभी इनसान जिन्दा है!

—रघुराज सिंह राठौर

भूदान-यज्ञ रजिस्टर्ड नम्बर एल. १५४ : लाइसेन्स नं० ए. २४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] २४-११-'६७

विनाशकारी शक्ति रेडियो किरणों का सामना करना पड़ेगा। हजारों और लाखों टन रेडियम धूल चारों ओर बिखर जायगी। रेडियम की खोज उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में हुई थी। यह रेडियम-शक्ति छोटे-छोटे अणुओं में बँटती चली जाती है। जब रेडियम अणु टूटते हैं तो वह न दिखाई देनेवाले दो प्रकार के अल्फा और बेटा विभागों में बँट जाते हैं। इसी प्रकार रेडियम न दिखाई देनेवाली गामा किरणों में बदल जाती है। प्रकृति ने अणु-शक्ति का ऐसा निर्माण नहीं किया है। मनुष्य ने प्राकृतिक अणुओं को अनुसंधान करके अलग किया है।

अणु-विस्फोट केवल बड़े पैमाने पर अणु टूटने का दूसरा नाम है। रेडियो-शक्ति की धूल के २०० प्रकार हैं। इनमें से स्ट्रोनशियम और केसियम दो प्रकार अत्यन्त विनाशकारी हैं। धूल के ये कण तभी हानिकारक होते हैं, जब मनुष्य उनके नजदीक होता है या जब साँस द्वारा हमारे शरीर में पहुँचते हैं या हम भोजन के साथ उनको खाते हैं। गामा किरण दूर से हानि पहुँचाती है। अल्फा किरण हवा में केवल कुछ ही इंच और बेटा किरण २० से ३० फुट तक चल पाती है, आगे नहीं बढ़ पाती। गामा किरणों की मार बहुत दूर से होती है। पक्की दीवारों, वस्त्रों आदि में से भी निकलकर मनुष्य के शरीर में पहुँच जाती है। शरीर में पहुँचकर इनका आक्रमण हड्डियों पर होता है। लहू का प्रभाव रुक जाता है और नया लहू बनना बन्द हो जाता है। रोग का मुकाबला करने की शक्ति कम हो जाती है। लहू का कैन्सर हो जाता है। इसी प्रकार हड्डियों की निर्माण-शक्ति कम होकर हड्डी का कैन्सर हो जाता है। अनुसंधान में इनसे बचने का उपाय हो सकता है, बाहर नहीं। अणुविस्फोट के बाद कई वर्ष तक यह खतरा बना रहता है।

कहा जाता है कि अगर अणु शस्त्रों के जखीरे का सन्तुलन रहेगा तो युद्ध की रोकथाम हो सकेगी। अणु-शस्त्र किसके पास अधिक हैं, यह पता लगाना संभव नहीं। इसलिए अणु-शस्त्र निर्माण की होड़ चलती है ●

आन्दोलन के समाचार

तूफान अभियान :

कर्नाटक : १० नवम्बर। श्री गुण्डाचार की सूचनानुसार अब तक ३२० ग्रामदान हो चुके हैं। ग्रामदान यात्रा चल रही है। अब तक ४ टोलियाँ घूम रही थीं, अब ८ टोलियाँ घूमनेवाली हैं।

उत्तर प्रदेश : बलिया का चौथा प्रखण्डदान १६ नवम्बर '६७ को गांधी आश्रम के श्री राजारामभाई को समर्पित किया गया। ९०% गाँव ग्रामदान में आये हैं। अब तक बलिया की २४% जनसंख्या ग्रामदान में शामिल हो चुकी। अब तक प्रदेश में ग्रामदानों की संख्या १६२२ हुई। इसके बाद पाँचवें प्रखण्ड नवानगर में अभियान शुरू हो रहा है। बांसडीह तहसील में अब दो ही प्रखण्ड बचे हैं। आजमगढ़, वाराणसी, आगरा, खैरागढ़, बगनेर, मथुरा, अलीगढ़ में अभियान की योजनाएँ बनी हैं। कई जगह यात्राएँ चल रही हैं। उत्तरकाशी जिले के कार्यकर्ताओं ने जिलादान-प्राप्ति का संकल्प किया है। —श्री कपिल भाई के पत्र से।

मथुरा : श्री जयन्तीप्रसाद के पत्रानुसार १४ नवम्बर को एक विचार-गोष्ठी हुई। त्रिविध कार्यक्रम की दृष्टि से प्रशिक्षण-अभियान चलाने की योजना बनी।

भारत में ग्रामदान-प्रखण्डदान (१ नवम्बर, '६७ तक)

प्रान्त का नाम	ग्रामदान	प्रखण्डदान	प्रान्त का नाम	ग्रामदान	प्रखण्डदान
बिहार	१६,१०२	१००	राजस्थान	१,०२१	—
उत्कल	६,५५८	३१	गुजरात	७५८	३
आन्ध्र	४,२००	१०	प० बंगाल	६२७	—
तमिलनाड	३,३१६	२५	केरल	४०९	—
महाराष्ट्र	२,८९९	११	कर्नाटक	२२४	—
संयुक्त पंजाब	२,९००	७	दिल्ली	७४	—
मध्यप्रदेश	२,५५०	५	हिमाचल प्रदेश	१७	—
उत्तर प्रदेश	१,५५४	९			
आसाम	१,४६३	१	कुल :	४४,७५२	२०२

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

१ दिसम्बर, '६७ अंक : ९

इस अंक में

आगामी आकर्षण

ब्रह्मचर्य : एक सामाजिक मूल्य

जीने की डिजाइन, न कि विकास की योजना

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति : २० पैसे

विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—

१८ रु० या १ पौण्ड या ३॥ डालर

(हवाई डाक-शुल्क देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी—१

फोन नं० ४२८५

स्वतन्त्र देश में शक्ति का अधिष्ठान

जब देश विदेशियों के हाथ में रहता है और आजादी हासिल करने का सवाल आता है, तब शक्ति का अधिष्ठान राजनीति में रहता है। जब देश स्वतन्त्र हो जाता है, तब शक्ति का अधिष्ठान बदल जाता है। तब शक्ति राजनीति में नहीं, समाज सेवा में रहती है, क्योंकि फिर समाज का ढाँचा बदलना होता है, आर्थिक विषमता मिटानी होती है। ये सारे काम सामाजिक क्षेत्र में करने पड़ते हैं। उसमें त्याग के प्रसंग आते हैं, कष्ट सहन करने पड़ते हैं, भोग-लालसा को संयम में रखना पड़ता है, वैराग्य की जरूरत पड़ती है। इसीलिए शक्ति इसी क्षेत्र में रहती है। लेकिन जिन्हें इसका भान नहीं होता, वे गलतफहमी में रहते हैं कि शायद शक्ति का अधिष्ठान अब भी राजनीति में ही है और वे उसी क्षेत्र की ओर दौड़ जाते हैं। वहाँ सत्ता तो रहती है, लेकिन शक्ति नहीं।

सत्ता और शक्ति में बहुत अन्तर है। सत्ता में एक पद प्राप्त होता है। सत्ता का क्षेत्र एक सीमित क्षेत्र होता है, उसमें संविधान और कानून की सीमा होती है, उसके भीतर रहकर मालिक जिस तरह की सेवा चाहता है, उस तरह की सेवा उसे करनी पड़ती है। चन्द लोग ही वहाँ जा सकते हैं। बाकी अधिक लोग जो रह जाते हैं, उन्हें सामाजिक क्षेत्र में काम करना चाहिए और देश को आगे ले जाने की शक्ति निर्माण करनी चाहिए।

आज समाज की जो स्थिति है, उसे स्वीकार कर सेवा करना सत्ताधारी के लिए भी सरल नहीं है। मिसाल के तौर पर कोई भी सत्ताधारी सत्ता के आधार पर हिन्दुस्तान में बीड़ी बन्द नहीं कर सकता, क्योंकि आज का समाज उस बुरी आदत को छोड़ नहीं सकता। अमेरिका में आज शराबबन्दी नहीं हो सकती, क्योंकि वहाँ का समाज शराबबन्दी के लिए अनुकूल नहीं है। हिन्दुस्तान में शराबबन्दी हो सकती है, क्योंकि यहाँ की भूमि में उसके अनुकूल वातावरण मौजूद है।

मेरे जो मित्र आज कांग्रेस में हैं या समाजवादी पार्टी में हैं, उन सबसे मेरा कहना है कि जो लोग राजनीति में जाना चाहते हैं, उन्हें मैं 'ना' नहीं कहता, परन्तु बाकी सबको समाज सेवा में लग जाना चाहिए, वरना समाज की प्रगति कुंठित हो जायगी। इतना ही नहीं, समाज नीचे भी गिर जायेगा। इसीलिए एक बड़ी जमात समाज में ऐसी होनी चाहिए, जो निरन्तर सेवा में लगी रहे, जागरूकता के साथ सेवा करती रहे। उसे राजकाज का भी अनुभव रहे, लेकिन सत्ता से अलग रहकर निर्भयता के साथ तटस्थ बुद्धि से अपने विचार जाहिर कर सके, जिसका नैतिक असर सरकार और लोगों पर पड़ सके। वही ऐसी जमात हो सकती है जो सत्ता में न पड़े—सत्ता को मर्यादा समझकर—घृणा से नहीं, बल्कि यह समझकर कि शक्ति का अधिष्ठान सत्ता में नहीं समाज-सेवा में है।

—विनोबा

['लोकनीति' से, पृष्ठ : १४२-१४५]

समाचार डायरी

देश :

२०-११-'६७ : राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन ने पश्चिमी बंगाल के मन्त्रि-मण्डल के इस अनुरोध को अस्वीकार कर दिया कि वे राज्यपालों के ऐच्छिक अधिकारों पर सर्वोच्च न्यायालय की राय माँगें।

२१-११-'६७ : बंगाल के राज्यपाल श्री धर्मवीर ने पश्चिम बंगाल का संविद मन्त्रि-मण्डल बर्खास्त कर दिया।

२२-११-'६७ : पंजाब की सांझा मोर्चा सरकार ने राज्यपाल को अपना इस्तीफा दे दिया।

२३-११-'६७ : केन्द्रीय मन्त्रि-मण्डल ने यह निर्णय किया कि कम्पनियों द्वारा राजनीतिक दलों को चन्दा देने पर रोक लगायी जाय।

२४-११-'६७ : कलकत्ता तथा निकटवर्ती क्षेत्रों में पिछले तीन दिनों में हुए दंगे में ८ लाख ६० से अधिक की सम्पत्ति क्षतिग्रस्त हुई।

२५-११-'६७ : राजभाषा-संशोधन विधेयक को लेकर कांग्रेस संसदीय दल में गतिरोध पैदा हो गया है।

२६-११-'६७ : उपप्रधानमन्त्री श्री मोरारजी देसाई ने स्वीकार किया कि कांग्रेस-पार्टी अब गत वर्षों की भाँति उतनी लोकप्रिय नहीं रही।

विदेश :

२२-११-'६७ : श्रीलंका ने अपने रुपये के मूल्य में २० प्रतिशत के अवमूल्यन की घोषणा की।

२३-११-'६७ : पश्चिम एशिया की स्थिति पर सुरक्षा परिषद ने ब्रिटेन का समझौता-प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, जिसमें इसराइल से कहा गया है कि वह अरब क्षेत्रों से हट जाय और पश्चिम एशिया में स्थायी शान्ति के लिए आक्रामक नीति को खत्म करे।

राष्ट्रपति नासिर ने घोषणा की कि संयुक्त अरब गणराज्य न तो इसराइल को मान्यता देगा, न उससे समझौता-वार्ता करेगा।

२४-११-'६७ : हंगेरियन पत्रकार की सूचना के अनुसार उत्तर वियतनाम के राष्ट्रपति हो-ची-मिह्न बहुत अस्वस्थ हैं और रोगशैया से ही शासन-सूत्र का संचालन कर रहे हैं।

सुझाव और सम्मतियाँ

"भूदान-यज्ञ" के १० नवम्बर '६७ के अंक में "सुझाव और सम्मतियाँ" के स्तम्भ में श्री योगेशचन्द्र बहुगुणा का प्रकाशित पत्र पढ़ा। उनका कहना है कि "भूदान-यज्ञ" को सर्व सेवा संघ की सीमाओं में आबद्ध नहीं करना चाहिए, मुखपत्र का यह वाक्य खटकने जैसा है। मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि "भूदान-यज्ञ" कोई समाचार-पत्र नहीं है। यह एक वैचारिक पत्र है और देश में एक विचारधारा-विशेष का प्रतिनिधित्व करता है।

सर्व सेवा संघ के माध्यम से सर्वोदय-आन्दोलन का संचालन होता है। ऐसी स्थिति में "भूदान-यज्ञ" को सर्व सेवा संघ का मुखपत्र कहा जाय तो उसकी व्यापकता में कोई कमी नहीं आती और न ही जनक्रान्ति का 'मेन आर्गन' बनने में बाधा पड़ती है।

बहुगुणाजी की दूसरी बात से मैं सहमत हूँ। "भूदान-यज्ञ" में छपनेवाले लेखों के लेखकों का एक सीमित 'ग्रुप' है। यह स्थिति निश्चित ही विचारणीय है।

जब हजारों कार्यकर्ता सर्वोदय के कार्य में जुटे हैं, तो लिखनेवालों का सीमित 'ग्रुप' क्यों है, इसके बारे में सोचना ही चाहिए। यहाँ एक प्रश्न का उठना स्वाभाविक है कि "भूदान-यज्ञ" में हर सामग्री को तो स्थान नहीं दिया जा सकता है। मैं इसी बात को यहाँ साफ कर देना चाहता हूँ कि "भूदान यज्ञ" के लिए सर्वोदय परिवार का जो भी व्यक्ति आपको लेख भेजेगा, उसका सर्वोदय के मौलिक सिद्धान्तों से मतभेद नहीं हो सकता। अच्छा हो कि आलोचनात्मक लेखों को भी स्थान दिया जाय।

मैंने स्वयं भी एक बार शराबबन्दी के बारे में एक लेख "भूदान-यज्ञ" को प्रकाशनार्थ भेजा था। लेख में सरकार की नीतियों की सीधी आलोचना की गयी थी। मगर उसे प्रकाशित नहीं किया गया और तब से आज तक मैंने कभी "भूदान-यज्ञ" को लेख नहीं भेजा।

किसी प्रसंग में एक हद तक आलोचनाओं की भी कीमत होती है। संभव है, सर्वोदय-परिवार के बाहरी क्षेत्रों के लेखकों को आमंत्रित करते समय हमें निश्चित ही अपनी मर्यादा और विचारधारा की दिशा का ध्यान रखना होगा। और कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि समन्वयात्मक दृष्टिकोण के बावजूद लेख अस्वीकृत कर देने पड़ें। अपने वैचारिक दृष्टिकोण की मर्यादा के लिए ऐसा करना कुछ बेजा नहीं है।

प्रसन्नता की बात है कि अब "भूदान-यज्ञ" में नवीनता आती जा रही है। आशा है, भविष्य में वह सब रूढ़ियाँ, जिनके कारण साथियों को आपत्ति है, समाप्त होंगी।

—लखीचन्द
जिला सर्वोदय मण्डल
अमरोहा गेट, मुरादाबाद

\+ \+ \+

१० नवम्बर का "भूदान यज्ञ" का अंक देखा। पढ़कर बड़ी प्रसन्नता हुई। आज जो साम्प्रदायिक भावना बुरी तरह से उभरी हुई दीखती है, इसके मूल में हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच का तनाव है। अगर दोनों देशों के बीच सौहार्द कायम हो जाय तो ऐसी साम्प्रदायिक कटुता नहीं दिखे। आज की शिक्षण पद्धति में सहिष्णुता का समावेश है ही नहीं। धनी वर्ग के साथ ही साथ सरकार भी समय-समय पर साम्प्रदायिक भावना को उभाड़ती है। देश के समाचार-पत्र भी या तो ऐसी भावनाओं को उभाड़ते हैं या तटस्थ रहते हैं। इसलिए शिक्षित-वर्ग भी एकांगी होता जा रहा है। देश में स्वस्थ वातावरण बनाये रखने के लिए अगर दूसरे विचार-पत्र भी आपको सहयोग करें तो देश का कल्याण हो।

—रामखेलावन शास्त्री
मँझौल, मुंगेर (बिहार)

\+ \+ \+

"भूदान-यज्ञ" का नया आकार-प्रकार चित्ताकर्षक है। विभिन्न प्रकार की पाठ्य-सामग्री से यह और ज्यादा रोचक हो गया है। यह सूत्र अच्छा है।

—बी. एन. शर्मा
मालदयरी, इंग्लैण्ड

भूदान-यज्ञ

भूदानमूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

राह लम्बी, मंजिलें बहुत

मध्य प्रदेश में तीन बहनें घूम रही हैं। अभी इन्दौर में हैं, फिर दूसरी जगहों में घूमेंगी। दरभंगा में सरला बहन कुछ और बहनों के साथ घूम रही हैं। ये लोकयात्री बहनें गाँव गाँव में लोगों को, विशेष रूप से स्त्रियों को, त्रिविध कार्यक्रम समझायेंगी, अहिंसा के जीवन मूल्य बतायेंगी।

विनोबा ने इसे 'लोकयात्रा' कहा है। सन् १९५१ से आज तक जितनी पदयात्राएँ हुई हैं, और हो रही हैं, वे सब एक तरह की लोकयात्राएँ ही रही हैं। पैदल गाँव-गाँव जाकर जनता को क्रान्ति की प्रतीति कराना सबका लक्ष्य रहा है। तो क्या यह यात्रा किसी विशेष अर्थ में 'लोकयात्रा' है?

हमारे देश ने स्त्री के विविध रूप देखे हैं। हमने उसका देवी का स्वरूप देखा है। उसने विद्वता में बड़े-बड़े शास्त्रियों को पछाड़ा है, सती साध्वी बनकर उसने साधना की मिसाल पेश की है, माता के रूप में वह पूजित हुई है। इसके विपरीत उसका राक्षसी स्वरूप भी प्रकट हुआ है। इस नये जमाने में हमने उसे अपना दूत और प्रधान मंत्री तक बनाया है। यह सब तो हुआ है, लेकिन नित्य के जीवन में कभी भी उसकी हैसियत ऊँची नहीं रही है। और, लोकशिक्षिका पदयात्री का यह रूप तो बिल्कुल ही नया है इसलिए इसे सही सही समझने में समाज को समय लगेगा और इस बीच सम्भवत कई तरह की गलतफहमियाँ भी हो सकती हैं।

लेकिन यह लोकयात्रा निरुद्देश, निराकार लोकशिक्षण के लिए नहीं है। वास्तव में यह नव जागरण और स्त्री शक्ति के निर्माण का अभियान है।

हर ओर है माँग मुक्ति की। श्रम और साधनों की मुक्ति स्वामित्व से, युवक की मुक्ति अधिनायकत्व (अथारिटी) से, और स्त्री की मुक्ति उसके स्त्रीत्व की परिसीमाओं और विवशताओं से। श्रमिक, युवक, और स्त्री, ये तीन समाज की शक्ति के स्रोत हैं। आज के समाज में ये तीनों स्रोत सूख रहे हैं। उस सूखने का ही लक्षण है उनका व्यापक रूप से उच्छृंखल होना। अगर इन जीवन निर्माणकारी शक्तियों का रचनात्मक स्वरूप न प्रकट हो तो समाज की नयी रचना कैसे होगी?

साम्यवाद की और बातें अपनी जगह हैं, लेकिन उसकी एक बहुत बड़ी देन यह है कि उसने इन तीन शक्तियों को मुक्त करने का बहुत बड़ा काम किया है, और इन्हें समाज की नयी रचना में लगाया है। साम्यवाद की 'हिंसा' में जो रचनात्मक तत्व दिखायी देता है वह इन्हीं तीन शक्तियों के सक्रिय होने के कारण है।

ग्रामदानमूलक क्रान्ति में तीनों की मुक्ति के तत्व स्पष्ट दिखायी देते हैं। हमारे इस पुरुष प्रधान समाज में ये तीनों अपना व्यक्तित्व खो बैठे थे, लेकिन ग्रामदान ने हर एक को नया क्रान्तिकारी व्यक्तित्व प्रदान किया है। स्वामित्व और अधिकार, दोनों पुरुष प्रधान समाज के मुख्य लक्षण हैं। इनके कारण स्वभावत समाज मुट्ठी भर पुरुषों के हाथ में है। उसमें स्त्री का क्या स्थान है?

पुरुष सदा से जीवन के संघर्ष और कर्कशता के क्षेत्र में आगे रहा है। उस क्षेत्र में उसने स्वामित्व और अधिकार का पूरा विकास किया है। कोमलता स्त्री के जिम्मे रही है, इसलिए कोमलता के साथ अधीनता ठीक मानी गयी है। कर्कशता और कोमलता, संघर्ष और सृजन के आधार पर बनी और विकसित यह अधीनता अब स्त्री को स्वीकार नहीं है। हो भी क्यों? श्रमिक का शोषण, युवक का दमन, और स्त्री की अधीनता इन सबका सिलसिला इकट्ठा समाप्त होना चाहिए। क्या हम कभी सोचते हैं कि अगर हम मिथ्या-मूल्यों और परम्पराओं की परतें हटा दें तो हमें साफ दिखायी देगा कि हमारी उत्पादन व्यवस्था, श्रमिक की विवशता और परिवार-व्यवस्था स्त्री की अधीनता पर टिकी हुई है? क्या इस जमाने की समता की आँधी में विवशता और अधीनता टिकनेवाली है? पत्नी या माता होने में जो गौरव कभी था, वह किसी-न किसी रूप में अपनी जगह मौजूद है, लेकिन अब स्त्री 'व्यक्ति' की हैसियत से समाज की समान इकाई बनकर रहना चाहती है।

पत्नी और माता बनकर स्त्री ने सदियों में सेवा और त्याग के जो 'गुण' अर्जित किये हैं, वे अगर गुण हैं तो समाज में व्यापक तौर पर मान्य क्यों न हों? यह काम आसान नहीं है, लेकिन इसके बिना गुजर भी नहीं है। यह तब होगा जब स्त्री सामने आयेगी और पुरुष प्रधान समाज को हिंसा और कर्कशता से मुक्त करने के क्रान्तिकारी अभियान में आगे आगे चलेगी। इन बहनों ने कुछ उसी तरह का कदम उठाया है। राह लम्बी है, मंजिलें भी बहुत होंगी, और कठिनाइयों की तो बात ही क्या? जिस स्त्री ने छोटा परिवार बनाया, उसीको अब ग्राम-परिवार, और किसी दिन विश्व-परिवार बनाना है। उस परिवार में पुरुष-स्त्री नहीं, वृद्ध-युवक नहीं, मालिक मजदूर नहीं, बल्कि मनुष्योचित सम्बन्ध से मनुष्य रहेगा। ●

ऐ स्वतन्त्रता! हमारी ओर ध्यान दो! हम झोपड़ों के कोनों में, दरिद्रता के अन्धकार की छाया में खड़े हैं, अविद्या और अज्ञान के अंधेरे में घिरे हैं, अपना हृदय तुम्हारे सामने रखते हैं, और उन मकानों से, जो अत्याचार के गुबार में छिपे हुए हैं, हम अपनी आत्माओं को तुम तक पहुँचाते हैं। देखो ऐ स्वतन्त्रता! हम पर कृपा करो, हम तुम्हें विद्यालयों और शिक्षागृहों में ढूँढते हैं, परन्तु नहीं पाते। गिरजों और उपासनालयों में तुम्हारा चिह्न नहीं मिलता। अदालतों, न्यायालयों में तुम्हारा नाम नहीं। हम पर दया करो, ऐ स्वतन्त्रता! और हमें भक्ति सिखाओ।

—खलील जिब्रान

सहयात्री को पहचानिये

सन् १९५४ में, जब मैं राजनीति से अलग हुआ, उस समय मेरे मानस में तो विचार चल रहा था, लेकिन मैं यह नहीं कहूँगा कि जो कुछ मैंने निर्णय लिया, यह केवल वैचारिक निर्णय लिया। मेरे दिल पर उस समय जो चोट पहुँची थी, उसका भी असर था। लेकिन उतना ही नहीं था। एक वैचारिक भूमिका बनी और उस विचार के साथ बड़े पैमाने पर भूदान आन्दोलन में काम करने का मौका मिला, यह बात भी उसमें शामिल है।

वैचारिक भूमिका में कई मुख्य बातें हैं, जिनमें एक मुख्य बात यह है कि केवल एक आर्थिक और राजनितिक तंत्र का ही नाम समाजवाद नहीं है। समाजवाद का अर्थ समाजवादी सभ्यता और समाजवादी मनुष्य से है। मेरे मन में यह बात है कि अगर समाजवादी संस्कृति का निर्माण करना है, समाजवादी मानव का निर्माण करना है तो यह काम कानून के जरिये नहीं हो सकता। समाजवादी पक्ष न हो, समाजवादी पक्ष का राज्य न हो, यह मैं नहीं कह रहा हूँ। आज अपने देश में सामन्तवादी-मनुष्य (फ्यूडल-मैन) और सामन्तवादी विचार है, जातिवाद है, ऐसी स्थिति में अगर हमें सामाजिक और मानवीय मूल्य परिवर्तन का काम करना है तो केवल सत्ता को लेकर कानून तथा प्रशासन के जरिये समाजवादी रचना की कोशिश करने से नहीं होगा। यह न हुआ है, न हो सकता है। लेकिन दुःख की बात है कि आज जहाँ 'इथिकल-सोशलिज्म' (नैतिक-समाजवाद) की चर्चा होती है, वहाँ कोई आन्दोलन नहीं है, कोई संगठित कार्यक्रम नहीं है। समाजवादियों की तरफ से जितने भी संगठित कार्यक्रम हैं, सब सत्ता प्राप्त करने के लिए हैं।

आज जो लोग विचारनेवाले हैं, वे विचारते हैं, लिखते हैं, बोलते हैं। लेकिन इसके लिए एक व्यापक शैक्षणिक कार्यक्रम की आवश्यकता है। शिक्षण सिर्फ स्कूल-कालेज का नहीं, मानस परिवर्तन का।

डा० राम मनोहर लोहिया से पटना में हमारी मुलाकात हुई थी, और काफी चर्चा भी हुई थी। हम क्या कर रहे हैं, मैं खुद क्या कर रहा हूँ, उसके पीछे क्या विचार है, क्या दृष्टि है, इसकी भी हम लोगों ने कुछ चर्चा की थी। हमें यह लगा कि डा० साहब ने इसको न सिर्फ ध्यान से सुना, बल्कि उन्होंने अपने हृदय में लिया। इसलिए जब वे दिल्ली गये तो उन्होंने पत्रकारों की मुलाकात में कहा कि हम लोगों की जो बात हुई, वह अच्छी हुई।

तो अब बात ही बात नहीं करनी है, काम करना है। कई प्रदेशों में सोशलिस्ट लोग शासन में हैं। इसीलिए मैं उनसे दो बातें कहना चाहता हूँ। एक बात तो यह कि आप चाहते हैं कि जयप्रकाश नारायण आपका नेता बने। लेकिन नेता बनकर करे क्या? करे और कहे वह, जो आप चाहते हों!

जयप्रकाश नारायण

यानी जयप्रकाश नारायण अपना दिमाग कहीं रखकर आये, उसे कहीं ताले में बन्द कर दे। आप उसके दिमाग को, कार्यकलाप को, विचार को समझना चाहते हैं? वह क्या कर रहा है, वह क्या बोल रहा है, उसका समाजवाद से या जनता के भविष्य से क्या सम्बन्ध है? समाजवाद तो एक साधन ही है न! साध्य तो एक अमुक प्रकार की समाज-रचना है। आपको कोई ऐसा नेता मिलेगा, जो आपकी शर्तों पर आपका नेता बनने को तैयार होगा! मैं तो अपनी शर्तों पर नेता बनने को तैयार हूँ। मानिये मेरी शर्तें और चलिये गाँव में मेरे साथ। मैं जंगल में नहीं गया हूँ, हिमालय की गुफाओं में नहीं गया हूँ। पहले जितना काम करता था उससे ज्यादा ही काम करता हूँ और जनता के बीच ही काम करता हूँ। गांधीयन इन्स्टीट्यूट में किताब नहीं पढ़ता हूँ, या शोध नहीं करता हूँ। मेरी आपसे यही प्रार्थना है कि जो कुछ मैं सोचता हूँ, जो विचार रखता हूँ, जिस कार्यक्रम में लगा हूँ, उसे समझने की कोशिश कीजिये। और अगर आप समाजवाद को भारत की परिस्थिति में समझते हों, तो आप सोचिये कि उसका और इसका कोई मेल होता है कि नहीं। लोकतान्त्रिक समाजवाद और सर्वोदय का आन्दोलन, दोनों एक-दूसरे की मदद करनेवाले हैं, एक-दूसरे को पुष्ट करनेवाले हैं।

हिन्दू-मुसलिम का सवाल हो, उत्तर-दक्षिण का सवाल हो, आर्य-अनार्य का सवाल हो, बंगला-असमिया का सवाल हो, बंगाली-बिहारी का सवाल हो, महाराष्ट्रीय-गैरमहाराष्ट्रीय का सवाल हो, जो हो, जितने हद तक राजनीति इसमें घुसती है, उतनी हद तक ये सवाल उलझते हैं। भाषा के प्रश्न को ही लीजिये। मेरा अपना निश्चित मत है कि जब तक इस भाषा के प्रश्न से राजनीति अपनी टाँग नहीं निकाल लेती, तब तक यह भाषा का सवाल हल नहीं होगा। और यह हल नहीं होता तो इस भाषा के सवाल पर इस देश के टुकड़े होकर रहेंगे। राजनीति का अपना क्षेत्र है, उसका महत्त्व है, इससे मेरा इनकार नहीं है। लेकिन केवल वही एकमात्र क्षेत्र है, वहीं जाकर सबको काम करना है, और तभी देश का उद्धार होगा, देश की समस्याएँ हल होंगी, यह गलत बात है।

समाजवाद, लोकतंत्र, धर्म-निरपेक्षता, ये तीन और सर्वोदय का आन्दोलन 'फेलो-ट्रैवलर्स' (सहयात्री) हैं। अच्छे मानी में 'फेलो-ट्रैवलर्स' (सहयात्री) हैं। आज अपने 'फेलो-ट्रैवलर्स' (सहयात्री) को पहचानने का प्रयास नहीं करते, तो ठीक है, मत पहचानिये। आप समझते हों कि जयप्रकाश नारायण ने आपको छोड़ दिया तो मैं कहता हूँ कि हरगिज नहीं छोड़ दिया। जो मैं कर रहा हूँ, उससे आपको लाभ होगा—अगर आप सही ढंग से काम करना चाहें।

[आचार्य नरेन्द्र देव जयंती के अवसर पर ३१-१०-'६७ को वाराणसी में समाजवादी साथियों के बीच दिये गये भाषण से।]

लोक-यात्रा : आरोहण की नयी प्रक्रिया

आज का एक मंगल दिन है, क्योंकि एक मंगल कार्य की आज शुरुआत हो रही है। बहनों की एक लोक-यात्रा दरभंगा जिले में घूमेगी, भाइयों को जगायेगी, उसमें भी खास करके बहनों को। ऐसी ही एक भारतीय लोक-यात्रा को चंद दिन पहले हमने विदा की थी, वह यात्रा भी इन्दौर जिले में आज से शुरू होगी। इसलिए मैंने कहा कि आज का मंगल दिन है।

जो बहनें इस लोक-यात्रा में जा रही हैं, उनमें दो बहनें यहाँ की हैं। उनके जत्थे का नेतृत्व कर रही हैं, वह सरला देवी हैं। आप लोग शायद उन्हें जानते नहीं होंगे। वे इंग्लैण्ड की बहन हैं। ३० साल पहले भारत में आयी हैं और भारत की सतत सेवा करती हैं। वैसे तो उन लोगों के लिए हिन्दुस्तान की गरमी सहन करना कठिन होता है, लेकिन फिर भी यहाँ घूमेंगी। जाड़े के दिन हैं। हमें आशा करनी चाहिए कि इनसे बिहार की बहनों में जागृति आयेगी।

अभी महादेवी ने आशीर्वाद के तौर पर कुछ शब्द कहे। सन् १९३० में यह घर से निकल पड़ी है। अब ३७ साल की थी, जेल में भी जा चुकी है, तब से आज तक ३७ साल भारत की सेवा में ही उनका समय बीता है। उनको अधिकार है कि वे यहाँ आशीर्वाद दें। बहनों का काम यहाँ सफल होगा, लेकिन काम जरा कठिन है। क्योंकि यहाँ की बहनें बिलकुल जेल में हैं, यह मैंने देखा। इस प्रदेश में स्त्री-शक्ति है ही नहीं। करीबन शून्य है। अगरचे भारत की प्रधानमंत्री स्त्री है, फिर भी ग्रामीण स्त्रियों की हालत बहुत ही दयनीय है, ऐसा कहना चाहिए। उनसे समाज-सेवा का कोई खास कार्य बनता नहीं। इसका मतलब यह नहीं कि वे बेकार हैं। घर में वे उतना काम करती रहती हैं, उसका विचार भी बाबा जब करता है तब उसको डर लगता है। ऐसा निरंतर सेवा-कार्य करने को अगर बाबा को कहा जाय, तो बाबा से वह बनेगा नहीं। परंतु उन बहनों की सामाजिक शक्ति कुछ नहीं है। सामाजिक ज्ञान कुछ नहीं है। पाँच-सात दिन पहले कुछ स्त्रियाँ हमारे पास आयीं। हमने पूछा कि वे कहाँ से आयी हैं, तो वे कोई दूर से नहीं आयी थीं, यहीं लक्ष्मीनारायणपुरी से आयी थीं। सालभर से बाबा यहाँ है, फिर भी उन बहनों को बाबा के दर्शन नहीं हुए थे। उस दिन कुछ मंगल दिन था, इसलिए बाबा के दर्शन के लिए आयी थीं। इसलिए मैं कहता हूँ कि इनका काम कठिन है, लेकिन आशा करता हूँ कि जब कि गाँव-गाँव में बहनें जाने के लिए निकली हैं तो भगवत्-कृपा से बहनों की शक्ति यहाँ जगेगी।

—विनोबा

• • •

यह जो लोक-यात्रा की शुरुआत हो रही है, वह क्रांति के आरोहण में कुछ नयी प्रक्रिया है। आरोहण की जिस मंजिल तक हम पहुँचे हैं, उस मंजिल तक पहुँचकर लोक-शिक्षण के लिए लोक-यात्रा की क्या आवश्यकता है, इसी पर कुछ विचार करना चाहता हूँ।

सर्वोदय की क्रांति किसी विशिष्ट वर्ग को लेकर नहीं होगी, न ही नेताओं की आकांक्षाओं को अपनी आकांक्षा माननेवालों की होगी। सर्व की, तथा सर्व के द्वारा क्रांति के मार्ग में एक बहुत बड़ी कठिनाई यह है कि इस सर्व की क्रांति में सबकी अपनी-अपनी आकांक्षाएँ, अपनी-अपनी समस्याएँ सामने होती हैं और आप अगर चाहें कि आपकी क्रांति में सब शामिल हों तो भिन्न-भिन्न आकांक्षाओं, समस्याओं का समाधान और पूर्ति दे सकें, ऐसी क्रांति होनी चाहिए। बड़ा कठिन मामला है। यह भी हो सकता है कि उनमें परस्पर विरोधी आकांक्षाएँ भी हों। इसलिए सर्वोदय की क्रांति में विचार की सफाई बहुत जरूरी है और वह विचार ऐसा है जो सबके चित्त में है, यह बात लोगों के सामने स्पष्ट होती रहनी चाहिए। इसलिए सबसे बड़ी व्यूह-रचना इस क्रांति में विचार की सफाई ही है। उस विचार की सफाई के लिए समग्र लोक-शिक्षण की आवश्यकता है। यह लोकशिक्षण कैसे होगा?

क्या इसके लिए स्कूल और आश्रम खोलें? उससे होगा? क्या छोटी-छोटी गोष्ठियों से होगा? साहित्य से होगा? इन सबसे कुछ-कुछ असर होगा। लेकिन सबसे जरूरी है सर्व के पास सर्व की क्रांति का विचार लेकर पहुँचना। यह लोक-शिक्षण की प्रक्रिया से सम्भव है। लोक-शिक्षण के द्वारा सर्व की समस्याओं के साथ यह अध्ययन करना होगा। लोक-शिक्षकों को खुद को भी सीखना पड़ेगा। सर्व के साथ शामिल होकर वह सीखेगा और सिखाता जायेगा।

जो बहनें अभी निकल रही हैं, वे मुझसे कह रही थीं कि हमारी योग्यता यह काम करने की नहीं है। तब मैंने कहा, "योग्यता नहीं है यह ठीक है, लेकिन योग्यता हासिल करने के लिए भी लोक-यात्रा में निकलना होगा, योग्यता तभी हासिल होगी।" सर्वोदय की क्रांति का मार्ग सर्व की अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को समझकर निकालना होगा। विनोबाजी, जयप्रकाशजी या मैं, कोई भी जो जितना समझते हैं, उतने से काम नहीं चलेगा, सर्व की बात को सर्व से समझनी होगी। इसलिए मैंने इस यात्रा को 'वास्कोडिगामा की यात्रा' कहा था। इस लोक-यात्रा से आपकी योग्यता बढ़ेगी, साथ-साथ सर्व की भी योग्यता बढ़ेगी।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हमारे देश में लोक-यात्राएँ हजारों की तादाद में चलें। जिस तादाद में सन् १९५७ में भूदान-यात्राएँ चली थीं, उससे अधिक तादाद में लोक-यात्राएँ चलाने की जरूरत है, अन्यथा जैसा कि मैंने विनोबाजी से कहा था—'हम जीती हुई लड़ाई भी हार जायेंगे।' निर्माण-कार्य चाहे कुछ न हो, लेकिन क्रांति का स्पष्ट लक्ष्य लोक-मानस में स्पष्ट होना जरूरी है।

अगर इस क्रांति का लक्ष्य है सहकारी समाज बनाना, ग्राम-परिवार बनाना, तो वह स्त्री-शक्ति के बिना बन ही नहीं सकता। इसलिए लाजिमी तौर पर स्त्रियों की लोक-यात्राएँ अधिक-से-अधिक संख्या में चलनी चाहिए। मैं मानता हूँ कि स्त्रियाँ 'एक्स्ट्रीमिस्ट' होती हैं, करुणा में भी, प्रेम में भी, और क्रूरता →

विकास : आर्थिक या सांस्कृतिक ?

"भूदान-यज्ञ" के अंक ९ (२० अक्तूबर, सन् १९६७) में "अधिक उत्पादन की मृग-मरीचिका" शीर्षक लेख में "भारतीय वाणिज्य उद्योग-मण्डल" के अध्यक्ष श्री लक्ष्मीनिवास बिरला के कृषि-उत्पादन के सम्बन्धी सुझावों का उल्लेख है कि छोटे-छोटे किसान मेहनत, खर्च नहीं कर सकते। इनके खेतों की व्यवस्था कम्पनियों के माध्यम से बड़े-बड़े उद्योगपतियों द्वारा करायी जाय। कम्पनियों के प्रबन्ध में हर हालत में आज जो किसानों को मिल रहा है, उससे कम मिलने की व्यवस्था नहीं रहेगी। इसका अर्थ यह हुआ कि आज जिस स्थिति में छोटे किसान हैं, रहेंगे ही। छोटे किसानों की स्थिति आज सर्वविदित है। कर्ज से टँका किसान केवल अस्थिपंजर मात्र रह गया है। जैसा कि श्री रुद्रभानजी लिखते हैं, और सही भी है कि किसान अपनी उपज का भाव निर्धारित नहीं करता, करता है व्यापारी और सरकार। गरीब किसान अपनी लागत-खर्च का हिसाब लगा भी नहीं पाता। इसका नतीजा यह होता है कि किसान मुश्किल से *७-८ माह का अनाज रख पाता है*, बाकी व्यापारियों के यहाँ पहुँचा देता है, और पुनः कर्ज पर जिन्दा रहता है।

और जब हमारे उद्योगपति, पूँजीपति खेती करने लगेंगे, उस समय उपज का भाव व्यापारी या सरकार तय नहीं करेंगे, करेंगी खुद खेती करनेवाली कंपनियाँ और सरकार अनुमोदन का सील लगायेगी। आज कल-कारखानों से उत्पादित वस्तुओं का दाम खरीदार तय करता है या उत्पादक? फिर भी बाजारों में इनके दाम को दाम कहा जायगा या लूट? एक ओर अपने उत्पादन को मनमाने दाम पर बेचते हैं, दूसरी ओर कृषि-उपज को कम-से-कम दाम देकर खरीदते हैं, और पुनः इस उपज को मनमाना दाम लेकर बेचते हैं। और जब इनके हाथ में कृषि-उत्पादन करने का काम दे दिया जायेगा, तब अनाज का दर्शन भी दुर्लभ हो जायेगा। और कहा यह जायेगा कि भारत अन्न के विषय में स्वावलम्बी हो गया है।

हम नम्रतापूर्वक सरकार और भारतीय *वाणिज्य उद्योग-मण्डल से कहना चाहते हैं* कि खेत गाँवों में हैं, खेती करनेवाले भी *गाँव में हैं। गाँव से ही अन्न और श्रमिक* नगरों को जाता है। गाँव के आदमियों से ही कल-कारखाने भी चलते हैं। हर आदमी की भूख भोजन से पूरी होती है, और भोजन खेतों से मिलता है। हमारा दावा है कि आज जो पैदा हो रहा है, उससे पाँच गुना तक सही प्रयास से किया जा सकता है। पर यह तब होगा जब हमारे महाजन यह समझने की कोशिश करेंगे कि राष्ट्र की उन्नति महाजनों के हाथ है। यह बात सदियों से चली आ रही है। इतिहास को देखें, रामायणकालीन भारत और महाभारतकालीन भारत को देखें और अभी के कुछ वर्षों पीछे महाराणा प्रताप सिंह और भामाशाह को देखें, जिन्होंने राष्ट्र के हित के लिए सब कुछ निछावर किया।

महाजनों को सादर नम्रतापूर्वक हम अपने गाँवों में आमंत्रित करते हैं। उनकी पूँजी की सुरक्षा का ग्रामदानी गाँवों में भरपूर स्थान है। हमें साधन दें, हम उन्हें कच्चा माल देंगे, और हमारे ही श्रम से पक्का माल तैयार होगा। उचित मजूरी और बिक्री की व्यवस्था वे करें।

कृषि और उद्योग श्रम पर आधारित है और श्रम गाँवों में मौजूद है। खेती का स्थान अब उत्तम ही रहनेवाला है। और व्यापार मध्यम है, जो उत्तम की बराबरी कभी भी नहीं कर सकता। केवल सांस्कृतिक विकास ही हमें सफलता प्राप्त करा सकेगा और तब हम अन्न-समस्या सुलझा ही नहीं सकेंगे, बल्कि भारत को अन्न से परिपूर्ण कर देंगे। अन्यथा मध्यम विचार लेकर महाजन खेती भी अपने हाथ में ले लें। वे, यंत्रों के धड़ाहट से पशु किसान और श्रमिक को बेकार कर दें, और आर्थिक विकास करते रहें।

यहाँ अभी इस वर्ष सरगुजा जिले में भारी अकाल रहा, विदेशी या स्वदेशी अनाज नगरवासियों को सस्ते दाम पर दिया गया, जिसमें दो अनाज का यहाँ जिक्र करना आवश्यक है : पहला—चना, दूसरा—गेहूँ। चना ०–७२ पैसे, गेहूँ ०–८५ पैसे प्रति किलो पर खाने को दिया गया तथा इन्हीं दोनों अनाज को बीज के नाम पर किसानों को चना १)२५, गेहूँ १)३० प्रति किलो दिया गया! वह भी भरपूर मात्रा में नहीं मिला। मिलते मिलते ऊँची जमीन सूख गयी, जब कि अनाज यहीं के *गोदामों में सड़ रहा है! यह सरकारी* व्यवस्था है और इधर लक्ष्मीपुत्र खेती भी अपने हाथ में लेने की बात कर रहे हैं। रावण ने सोने की नगरी बनायी थी, जहाँ इच्छानुसार सारा वैभव मौजूद था; फिर भी वह स्वर्ग तक रास्ता बनवाने का विचार रखता ही रह गया।

हम उस देश की सन्तान हैं, जहाँ से विश्व को मार्ग मिलता रहा है और यह केवल शुद्ध चिन्तन से बनता है। पैसे या शक्ति से नहीं। समय आ गया है, करुणा का। करुणा के सहारे ही हम अपनी सारी *समस्या सुलझा* सकते हैं। —विश्वनाथ प्रसाद जायसवाल
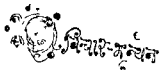
→ में भी। क्रांति में 'एक्स्ट्रीमिस्ट' ही चाहिए। इसलिए यह लोक यात्रा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मैं आशा करता हूँ कि ऐसी हजार-दो-हजार टोलियाँ भारत में निकलेंगी, अहिंसक क्रांति की शक्ति बनाने के लिए, समाज के गुण-विकास के लिए। —धीरेन्द्र मजूमदार

* * *

इतनी बहनें विदा देने आयी हैं, इसलिए हृदय गद्गद होता है। *यह हमारे गाँव के* सृजन का काम है, उसमें बहनें अपनी दिलचस्पी बढ़ा रही हैं, *ऐसा लगता है।* जब तक बहनें नये आन्दोलन में भाग नहीं लेंगी, ग्रामसभा को मदद नहीं करेंगी, भाइयों के बीच अपना विचार बतलाना नहीं सीखेंगी, *तब तक ग्राम-स्वराज्य सफल नहीं होगा।* इसलिए वे घर में चाहे जितना अच्छा काम करें, उससे काम पूरा नहीं होता है। अब उनमें सामाजिक शक्ति प्रकट होनी चाहिए। —सरला देवी

सुहर्तो की नयी शैली
जनता की माँग
सत्ता का संकट

अभी दो बरस भी नहीं हुए जब इण्डोनेशिया में साम्यवादी षड्यन्त्र की विफलता के बाद जनरल सुहर्तो ने वहाँ का शासन अपने हाथ में लिया था। हिन्दुस्तान में इस समय जिस स्थिति का हम अनुभव कर रहे हैं वही स्थिति वहाँ थी। करीब पन्द्रह बरस से राष्ट्रपति सुकर्ण की निरंकुश सत्ता के संरक्षण में भ्रष्टाचारी अफसर तथा भ्रष्ट राजनेता मिलकर आम जनता का मनमाना शोषण कर रहे थे, लोगों को खाने के लिए चावल मिलना भी दुर्लभ था, जब कि ऊपर के लोग विलास की जिन्दगी बसर करते थे, कीमतें आकाश को छू रही थीं।

बेचारे लोगों ने समझा कि शासनकर्ताओं के बदल जाने से परिस्थिति सुधरेगी और इसलिए उन्होंने दिल खोलकर सुहर्तो का समर्थन किया। इण्डोनेशिया के छात्र छात्राओं ने उस परिवर्तन काल में जब सुकर्ण और सुहर्तो के बीच सत्ता का विकट संघर्ष चल रहा था, सुहर्तो की पूरी मदद की। अपनी जान की परवाह न कर हजारों की संख्या में छात्र सड़कों पर निकल आये और खुले आम सुकर्ण के खिलाफ उन्होंने आवाज उठायी। उस समय उनका नारा यही था कि चीजों की कीमतें कम होनी चाहिए, भ्रष्ट अफसरों और राजकर्ताओं को, जिन्होंने यह परिस्थिति पैदा की है, दण्ड मिलना चाहिए।

समझदार सुहर्तो ने भोले छात्रों की पीठ ठोंकी और सुकर्ण विरोधी भावनाओं की उमड़ती हुई तरंगों पर सवार होकर अन्ततोगत्वा सुकर्ण को अपदस्थ किया और खुद शासनारूढ़ हुआ। पर लोगों ने देखा कि दिन, महीने और बरस बीत रहे हैं, लेकिन कीमतें तो घटने के बजाय बढ़ती ही जा रही हैं। भ्रष्टाचार भी ज्यों का त्यों जारी है। अभी आठ नवम्बर की घटना है कि भोले छात्रों ने फिर सुहर्तो के मन्त्रिमण्डल की बैठक के समय चावल की बढ़ती हुई कीमतों और भ्रष्टाचार के खिलाफ प्रदर्शन किया। ये भोले छात्र समझते होंगे कि इस बार भी सुहर्तो उनकी पीठ ठोंकेंगे। पर इस बार कुछ और ही हुआ। सुहर्तो ने छात्रों को उपदेश दिया कि "चीखने चिल्लाने और माँगें पेश करने से मसले हल नहीं हो सकते, इस तरह प्रदर्शन करने के बजाय आप लोग टोलियाँ बनाकर काम कीजिये, जिससे उत्पादन बढ़े।"

इस जवाब से सन्तुष्ट न होकर एक ढीठ नौजवान छात्रा ने कहा—"लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि अफसर लोग—सिवीलियन भी और सैनिक भी—अपने स्वार्थ के लिए निरन्तर भ्रष्टाचार, बेईमानी और अधिकारों का दुरुपयोग कर रहे हैं, ये लोग धनी हो रहे हैं, राग रंग कर रहे हैं, और दूसरी ओर भूखे लोग चावल के लिए तरस रहे हैं," तब सुहर्तो ने विद्यार्थियों की भीड़ को भाषण देते हुए बताया कि चावल का अभाव तो चीनी व्यापारियों की जमाखोरी के कारण हुआ है।

• • •

सुहर्तो ने वही किया जो हर राजनीतिज्ञ करता है, दो बरस पहले महँगाई और भ्रष्टाचार की जिम्मेदारी सुकर्ण की थी, अब जब शासन खुद के हाथ में है तो उसका दोष चीनी व्यापारी का है। तब प्रदर्शन का, चीखने चिल्लाने का, नारों का और माँगों का औचित्य था, आज वे गैर जिम्मेदारी की निशानी है, आज तो मेहनत की आवश्यकता है। समझना तो हमको, आपको, छात्र छात्राओं को, और भोली बेखबर जनता को है कि समस्या का हल सत्ता के परिवर्तन में नहीं है, बल्कि सत्ता के अस्तित्व को ही खत्म करने में है। समस्या की जड़ आज की केन्द्रित रचना है। उसको समाप्त करने और लोगों की अपनी शक्ति जाग्रत करने में ही समस्या का हल है। जो यह कहते हैं कि आज अमुक व्यक्ति या पार्टी शासन में है, उसकी बजाय हमें वहाँ बैठने का मौका मिले तो सब ठीक हो जायगा, वे सिर्फ अपने स्वार्थ के लिए—सत्ता अपने हाथ में लेकर उन दूसरों के बजाय खुद उसका उपभोग करने के लिए—लोगों को धोखा देते हैं।

• • •

जब तक समाज की सारी व्यवस्था और सत्ता केन्द्रित है तब तक जिसे हम जनतन्त्र कहते हैं वह भी एक धोखा ही है, चार-पाँच बरस में एक बार मतदान करा लेने मात्र से जनतन्त्र नहीं हो जाता। वह तो उसी तरह से जनता को बहलाने की चीज है, जिस तरह बच्चों के हाथ में खिलौना देकर हम उन्हें बहलाते हैं। लोगों पर यह छाप डाली जाती है कि वे मतदान के जरिये व्यवस्था में परिवर्तन कर सकते हैं, पर चुनाव में होनेवाले भ्रष्टाचार आदि की बात छोड़ दें तब भी पार्टी-पद्धति के कारण चुनाव की वास्तविकता बहुत कुछ खतम हो जाती है और चुनाव के बाद तो जनता का अपने प्रतिनिधि पर कोई काबू ही नहीं रहता। हिन्दुस्तान में पिछले आम चुनाव और उसके बाद देश में जो कुछ हुआ है तथा हो रहा है, उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है।

इसके अलावा जब तक सत्ता सरकार के हाथ में है तब तक जनतन्त्र का या मतदान का बहुत अर्थ नहीं है। कहने को राज्य जनता के प्रतिनिधियों का होता है, पर जैसा अभी उस दिन नवाब अली यावर जंग ने, जो भारत के राजदूत होकर अमेरिका जा रहे हैं, अपने एक भाषण में बताया था, जब कि जनतन्त्र के ठीक से संचालन के लिए जनता को विभिन्न प्रश्नों और समस्याओं की सही और पर्याप्त जानकारी मिलना बहुत जरूरी है, राष्ट्र की सुरक्षा और गुप्तता के नाम पर बहुत सी बातें जनता से छिपायी जाती हैं, जिसके कारण जनता उन बातों पर न अपनी राय दे सकती है, न उन्हें प्रभावित कर सकती है। वास्तव में जनतन्त्र और केन्द्रित व्यवस्था दोनों परस्पर विरोधी चीजें हैं। अगर सरकार पर ही हम सब कुछ सौंपते जायेंगे या जनहित के नाम पर सरकार जीवन के अधिकाधिक क्षेत्रों पर दखल करती जायगी तो नाम और योजना चाहे जनतन्त्र की हो,→

स्मृति की परतें :

आत्महत्या चल रही है

विशेष छूट के दिन बीत रहे थे। जल्दी-जल्दी 'एम्पोरियम' गया। घुसते ही व्यवस्थापक मिल गये। परिचित थे, मन में मेरे लिए आदर भी रखते हैं। 'जय जगत्' के साथ ही मैंने पूछा, "कहिये, कैसा चल रहा है?" बोले, "आत्महत्या चल रही है!" मैं भौंचक्का रह गया। समझ नहीं सका, उनका मतलब क्या था। फिर पूछा, "बिक्री कैसी है?" जवाब मिला, "कहा तो। बिक्री नहीं, आत्म-हत्या हो रही है!" पूछा, "कैसे?" कहा, "जो भी अच्छा ग्राहक आता है, यही पूछता है कि मद्रास की यह चीज है, पंजाब की है, राजस्थान की है? जौनपुर का तेल है? हम लोग कहते हैं कि अपने राज्य की चीजें लीजिये। देखिये यहाँ की धोती है, यहाँ का थान है, यहाँ का त्रिफला का तेल है, आदि। अपनी चीजें लीजियेगा तो कत्तिन को, कारीगर को पैसा मिलेगा। जवाब मिलता है, 'रहने दीजिये, अर्थशास्त्र मत समझाइये!' सोचिये, दूसरी जगहों की चीजों पर कमीशन खाकर हम लोग कब तक जिन्दा रहेंगे? इसीलिए मैंने कहा कि यह जीने का नहीं, मरने का सौदा चल रहा है।"

बात समझ में आ गयी। खादी का अर्थशास्त्र ग्राहक को अनर्थशास्त्र लगता है। लगे क्यों नहीं? हमने 'एम्पोरियम' खोला ही इसलिए कि लोगों को रुचि (टेस्ट) और पसंद (च्वायस) की चीजें मिलें। कहाँ खादी और कहाँ शौकीन की पसंद? अगर खादी का सम्बन्ध जरूरत से रहता तो जहाँ बनती वहाँ *बिकती। न बिकती तो बन्द हो जाती।* मरती भी तो शान के साथ मरती, गाँव के अर्थशास्त्र को बाजार के शोषण से बचाने में शहीद होती। आज की खादी तो मारी जा रही है—शत्रुओं द्वारा नहीं, मित्रों द्वारा।

शकुन्तला कण्व की झोपड़ी से निकलकर महल में पहुँचायी गयी, पर दुष्यंत इतना लम्पट निकला कि उसे भूल गया।

कीमत कौन चुकाये?

हथिया नहीं बरसी, लेकिन किसी तरह धान हो गया। उतना नहीं जितना सोचा था, फिर *भी पास-पड़ोस के मुकाबिले में अच्छा ही हुआ।* साथियों में प्रश्न उठा कि हाथ-कुटाई करायी जाय, या 'हलर' में भेजा जाय। संकट का प्रश्न था। मैंने कहा कि दोनों तरह की कुटाई कराकर देखा जाय कि खर्च में कितना अन्तर पड़ता है। देखा गया। दूने का फर्क आया। हाथ कुटाई कराने में सौ मन पीछे लगभग ढाई सौ का नुकसान! हाथ-कुटाई महँगी, हाथ-कुटे चावल का बाजार में भाव कम, रखने में कीड़ों का प्रकोप, भूसी बिक्री लायक नहीं। और स्वास्थ्य का भी क्या सवाल रहा? 'हलर' में *चाहे जैसी कुटाई करा लीजिये।* खेतिहर यह नुकसान कैसे पूरा करे, और क्यों करे?

हम लोगों ने अपनी खेती के लिए माना है कि जैसे खादी वह चाहिए जो शोषणमुक्त हो, उसी तरह खेती भी वही चाहिए जो शोषणमुक्त हो। शुरू में शोषणमुक्ति में हमने ये बातें मानी हैं: (१) स्थायी मजदूर को जहाँ *सवा और डेढ़ रुपया रोज मिल रहा है,* वहाँ दो और ढाई रुपये रोज तो मिले। आगे चलकर यानी दो तीन साल में, सौ से डेढ़ सौ रु० महीना मिलने लगे। (२) मजदूर की उत्पादकता और व्यवस्था-शक्ति में निरन्तर विकास हो। (३) सामान्य उत्पादन से अधिक उत्पादन होने पर अतिरिक्त उत्पादन में मजदूर को मजदूरी के अलावा हिस्सा (शेयर) *भी मिले, ताकि क्रमशः उसकी* हैसियत बदले और श्रम का हिस्सेदार बन जाय। इस दृष्टि से अगर खेती करनी हो तो खेती की अर्थनीति पर नये सिरे से *विचार करना पड़ेगा,* और खेती के सन्दर्भ में ग्रामोद्योग पर भी। खेती से अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह ढेंकी-चक्की को 'सब्सिडी' दे। अगर खेती अपना खर्च निकालकर कुछ बचा ले, जो आसान नहीं है, तो उसे सबसे पहले अपने मजदूरों और पशुओं के साथ होनेवाले अन्याय पर ध्यान देना चाहिए।

सघन-खेती, अधिक-से-अधिक उत्पादन, श्रमिकों को आवश्यक सुरक्षा और उचित पारिश्रमिक, गाँव की योजना और ग्रामसभा के द्वारा साधनों का संग्रह, तथा गाँव में सबको काम और दाम की गारंटी आदि ऐसी चीजें हैं, *जिनको साथ मिलाकर ही ग्रामोद्योगों पर* विचार हो सकता है। गाँव की योजना में कौन जाने आज की ढेंकी और आज की चक्की छूट भी जाय! छूट जाय तो अफसोस क्या?

—रा० मू०

→जनता उत्तरोत्तर सत्ताधारियों की गुलाम बनती जायगी। ज्यों-ज्यों सरकार की शक्ति बढ़ेगी, जनता की ताकत घटेगी। इसलिए सरकार की केन्द्रित सत्ता को पग पग पर हमें चुनौती देनी चाहिए और उसे तोड़ना चाहिए। अगर हम वास्तव में जनतंत्र चाहते हैं तो हमें आर्थिक और राजनैतिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण करना होगा।

—सिद्धराज ढड्ढा

बिहार में ग्रामदान-प्रखण्डदान

[१ नवम्बर '६७ तक]

जिलों का नाम	ग्रामदान	प्रखण्डदान
दरभंगा	३,७२०	४४
पूर्णिया	३,८८८	१७
मुंगेर	१,५५८	९
मुजफ्फरपुर	१,२२२	१२
गया	१,१५०	१
हजारीबाग	८८५	२
संथाल परगना	८३५	१
पलामू	६१८	४
सारन	५९९	१
भागलपुर	४९४	१
सहर्षा	३११	२
चम्पारण	२४०	—
धनबाद	२४८	१
सिंहभूम	१६२	—
शाहाबाद	१०३	१
राँची	४४	—
पटना	३५	—
कुल :	१६,१०९	१००

कम्प्यूटर (गणक-यन्त्र) की कार्य-प्रणाली

भारत के विभिन्न संस्थानों में आज एक सौ से ऊपर कम्प्यूटरों का उपयोग किया जा रहा है। नवम्बर के पहले सप्ताह में रामकृष्णपुरम् में राजकीय कम्प्यूटर केन्द्र का उद्घाटन हुआ। रामकृष्णपुरम् में अमेरिका निर्मित तीन कम्प्यूटर बिठाये गये हैं, जो राजकीय तथा अराजकीय संस्थाओं के गणना सम्बन्धी कार्य सम्पन्न करेंगे।

कम्प्यूटर कोई सोचने या विचार करने वाली मशीन नहीं है, यद्यपि कई वैज्ञानिक उपन्यासकारों ने कल्पना की है कि आगे चलकर कम्प्यूटर्स आदमी के दिमाग का स्थान ले लेंगे। आजकल का कम्प्यूटर मूलतः एक गणना करनेवाली मशीन है, जो साधारण गणित की गणना और कुछ तार्किक निष्कर्ष बहुत जल्दी और बिल्कुल सही रूप में प्रस्तुत कर देती है।

टाटा इन्स्टीट्यूट में जो कम्प्यूटर लगा है वह एक सेकेंड में बिना भूल किये ६ लाख जोड़ और २ लाख गुणा या भाग कर सकता है। एक औसत गणितज्ञ को यही काम करने के लिए ४० दिनों तक दिन रात गणना का काम करते रहना होगा।

भीतरी रचना कम्प्यूटर की मुख्य रूप से ४ इकाइयाँ होती हैं। पहली इकाई में, जो सूचना प्राप्त करती है उसके स्मरण की व्यवस्था होती है। दूसरी इकाई में निर्देशनों का संचय रहता है। तीसरी इकाई निर्देशनों के अनुसार गणना करने और निष्कर्ष निकालने का काम करती है। चौथी इकाई निष्कर्ष प्रकट करने का काम करती है।

आम तौर से एक कम्प्यूटर में १० हजार शब्दों के संचय की गुंजाइश रहती है। यदि और ज्यादा शब्दों के संचय की आवश्यकता हो तो उसे कई लाख शब्दों तक बढ़ाया जा सकता है।

प्रत्येक कम्प्यूटर में इसके लिए निर्धारित ढंग से सूचनाएँ भर दी जाती हैं। यह काम कम्प्यूटर का आपरेटर (चालक) करता है। इन सूचनाओं के आधार पर ही कम्प्यूटर पूछे गये प्रश्नों का उत्तर या समाधान विद्युत गति से प्रस्तुत कर देता है। इस सम्बन्ध में एक विशेष बात ध्यान में रखने की है कि कम्प्यूटर से वही गणनाएँ या निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं, जिनके बारे में उसमें पहले से ही गणना या निर्देशन भरा गया हो। जो निर्देशन कम्प्यूटर को नहीं दिया गया है, उसके बारे में कम्प्यूटर कोई उत्तर नहीं दे सकता।

निर्देशन इकाई कम्प्यूटर की सबसे मुख्य इकाई मानी जाती है। यह निर्देशन इकाई पहले से निर्धारित प्रोग्राम को अचूक कुशलता और तीव्र गति से पूरा करती है।

प्रत्येक निर्देशन कम्प्यूटर की अपनी भाषा के एक शब्द में समाहित हो जाता है। इस प्रकार के शब्दों से वाक्य बनाकर कम्प्यूटर का प्रोग्राम बनाया जाता है। ऐसे प्रत्येक वाक्य द्वारा एक निश्चित गणना करने या निष्कर्ष प्राप्त करने का आदेश निहित माना जाता है। इस तरह की गणना करने के लिए निर्देशन इकाई वाक्यों के शब्दों की एक-एक करके व्याख्या करती है और इसके बाद प्रत्येक शब्द के साथ जो गणना करनी हो वह करती जाती है। कम्प्यूटर की निर्देशन इकाई १ सेकेण्ड के पचास लाखवें भाग में एक निर्देशन पूरा कर लेती है, जब कि तेज-से-तेज कार्ड का पता पढ़नेवाले को एक कार्ड पढ़ने में एक सेकण्ड का तीन सौवाँ समय लगता है।

कम्प्यूटर की कीमत १९ लाख रुपये से लेकर ३ करोड़ रुपये तक है। कुछ विकसित कम्प्यूटरों की कीमत इससे कई गुना अधिक भी है।

हमारे देश में अभी तक कम्प्यूटरों का उपयोग सीमित क्षेत्र में ही हो रहा था। पर अब इनके उपयोग का दायरा फैलता जा रहा है।

कई सूती मिलें, टेक्निकल ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट्स, हिन्दुस्तान मशीन टूल्स (बंगलौर), डीजल लोकोमोटिव वर्कशॉप (वाराणसी), कलकत्ता इलेक्ट्रिक सप्लाई कम्पनी, टेल्को (जमशेदपुर), इन्टेगरल कोच फैक्ट्री (पेराम्बुर) तथा अणुशक्ति आयोग में कम्प्यूटरों का विधिवत उपयोग हो रहा है। शीघ्र ही दिल्ली, पूना, कलकत्ता और देहरादून जैसे स्थानों में अमेरिका के बने १० आधुनिक कम्प्यूटर बिठाये जायेंगे। इन सूचनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारा देश वस्तुतः कम्प्यूटर युग में प्रवेश कर चुका है।

अभी तक कम्प्यूटर प्रायः अमेरिका से मँगाये जाते थे। हाल ही में अमेरिका और भारत की दो कम्पनियों ने मिलकर भारत में कम्प्यूटर बनाने का समझौता पूरा किया है। इसके परिणामस्वरूप आनेवाले वर्षों में कम्प्यूटर का उपयोग अधिकाधिक बड़े पैमाने पर होगा, यह निश्चित है। —स्वभान

यन्त्र सलाह देता है

इलोनिशाई जनतन्त्र में तार्तू विश्वविद्यालय का गणक-यन्त्र बहुत अच्छे गणक-यन्त्रों में से एक है। यह विश्वविद्यालय के ६९ विभागों के काम में आता है—यह सलाह देता है, इसके करने के लिए पाठ्यक्रम तैयार करता है, वैज्ञानिक विषयों से सम्बन्धित सामग्री लिखने में सहायता देता है। केवल १९६६ में इस गणक-यन्त्र ने सौ से अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न हल किये। यदि गणना के परम्परागत तरीकों का प्रयोग किया जाता तो इस काम में दसियों वर्ष लगते। हाल ही में इसने तार्तू के समाचार पत्र इदासी के बारे के सम्बन्ध में आये हुए पाठकों के पत्रों का लेखा और समाचार-पत्र के सम्पादक मण्डल को बहुत उपयोगी सलाह दी। अब पत्र को इस बात का पता चल गया है कि पाठकों को कैसी सामग्री में दिलचस्पी है और उसे किस तरह प्रस्तुत करना चाहिए। सोवियत गणक यन्त्र यूराल-४ की सहायता से किये गये इस अध्ययन ने पत्रकारों में इतनी दिलचस्पी पैदा की कि मास्को, लेनिनग्राद, आदेस्सा, गोर्की, तगानरोग तथा अन्य सोवियत शहरों से बहुत सारे पत्रकार तार्तू आ रहे हैं।

('युवक दर्पण' से साभार)

शान्तिसेना

शान्ति-केन्द्र के संयोजकों तथा शान्ति-सैनिकों की सेवा में :

प्रिय मित्रो,

आपको ३ नवम्बर का "भूदान-यज्ञ" एवं अलग से भेजा गया पत्र भी मिला होगा। आशा है, उसे पढ़कर हम लोगों को आपस में जुड़ने की आवश्यकता महसूस हुई होगी। संगठन में शक्ति अपने आप उत्पन्न हो जाती है। उसके लिए अलग से कोई प्रयास करना नहीं पड़ता। अलग-अलग कच्चे धागे में अपनी कोई शक्ति नहीं रहती है। अगर वही कच्चे धागे एकत्र हो जाते हैं तो मजबूत रस्सी बन जाती है। पानी की बूँदें अलग-अलग अपने में कोई शक्ति नहीं रखतीं, परन्तु एकत्रित होकर प्रचण्ड-शक्ति का स्रोत बन जाती हैं। हम लोग आज बिखरे पड़े हैं। सब लोग एकसाथ जुड़ जायँ, तो देश की अशान्ति, अव्यवस्था और भ्रष्टाचार पनपने का साहस न करें। उसके स्थान पर समाज में हम लोग शान्तिमय तरीके और प्रेम की शक्ति से मानव-समुदाय को सुरक्षा का अभय-दान दे सकते हैं। सेवा के द्वारा धरती पर स्वर्ग ला सकते हैं।

कुछ लोगों से खबर मिली है कि अभी तो शान्ति-सेना का कार्य प्रारम्भ भी नहीं हुआ है, कुछ कार्य चलने दो, लोगों में इसके प्रति आस्था और दिलचस्पी जगने दो, तब उनके नाम काटने या अ० भा० शान्ति-सेना मण्डल के रजिस्टर में नाम दर्ज न करने के बारे में सोचा जाय, तो उचित होगा। इस बात को मैं भी मानता हूँ, परन्तु यह आप भी मानते होंगे कि आस्था और दिलचस्पी पैदा करनी है, तो संगठित शक्ति तथा सुनियोजित कार्य की आवश्यकता है। अगर हम अलग-अलग काम करते हैं तो बड़े काम को उठा नहीं सकते, और अपनी शक्ति के अनुसार काम भी लेते हैं, तो अन्य लोगों का सहयोग प्राप्त न होने से काम में सफलता नहीं प्राप्त होती। इसके परिणामस्वरूप हमारे अन्दर असन्तोष तथा निराशा घर कर जाती है और हमारी जीवन की इच्छाएँ, आकांक्षाएँ समाप्त होने लग जाती हैं।

क्या इतने तक ही आप सीमित रहना चाहते हैं? मैं मानता हूँ कि आप इसके लिए तैयार नहीं होंगे, *इसलिए हम सबको एक* सूत्र में बँध जाना आवश्यक ही नहीं, अपितु अनिवार्य भी है। इसके लिए हर साल हम अपनी प्रतिज्ञा एक निश्चित अवधि में दुहराकर ताजी कर लें और हर शान्ति-केन्द्र अपना कार्य-विवरण भेजकर सम्बन्ध बनाये रखें, यह आवश्यक है। आज हम लोग इससे भी दूर हैं। कहने के लिए हमारे संगठन में १००० शान्ति-केन्द्र हैं, परन्तु कार्य-विवरण १५-२० केन्द्रों का भी प्राप्त नहीं होता। जो नहीं भेज पा रहे हैं, उनकी क्या दिक्कतें हैं, और वे किस तरह की मुसीबत में फँसे हैं, इसका पता नहीं चल पाता। इससे हमारी संगठन-शक्ति का अन्दाज भी नहीं लग पाता। परिणामस्वरूप कोई ठोस कार्यक्रम हाथ में उठा नहीं सकते। इसलिए *यह भी यह आवश्यक हो गया है कि* हम एक सूत्र में बँधें। अच्छा होगा कि हर शान्ति-केन्द्र सक्रिय होकर अपने केन्द्र के साथ जुड़े शान्ति-सैनिकों को ३० जनवरी के दिन एकत्रित करके शान्ति-सैनिक प्रतिज्ञा दुहरायें और एक प्रतिज्ञा-पत्र पर उनके हस्ताक्षर कराकर हमारे पास एक प्रति भिजवाने की व्यवस्था करें। जो शान्ति सैनिक अभी तक किसी शान्ति-केन्द्र के साथ जुड़े नहीं हैं वे किसी शान्ति-केन्द्र के साथ जुड़ें तथा उसके साथ सम्बन्ध बनाये रखें। अगर किसी शान्ति-सैनिक को किसी शान्ति-केन्द्र के साथ सम्बन्ध बनाये रखने में दिक्कत हो तो वे सीधे प्रतिज्ञा-पत्र भरकर हमारे पास भेजने की कृपा करें।

आशा है, आप लोग प्रतिज्ञा दुहराने की तिथि को याद रखेंगे, और इस शक्तिशाली संगठन को एक ठोस रूप देने में सक्रिय सहयोग देंगे। असीम आशाओं के साथ, आप सबका

सस्नेह

सत्यनारायण

अ० भा० शांति-सेना मंडल, राजघाट, वाराणसी-१

अहिंसा : एक नये और कुछ भिन्न दृष्टिकोण से

[स्पष्ट चिंतन हेतु एक योगदान]

[श्री टी० के० महादेवन् गांधी शांति प्रतिष्ठान, नयी दिल्ली के एक प्राणवान् कार्यकर्ता हैं। प्रस्तुत निबन्ध में आपने अहिंसा को परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में परखने का प्रयत्न किया है। उनका विचार हम "भूदान-यज्ञ" के पाठकों और ग्रामदान-आन्दोलन में लगे कार्यकर्ता साथियों के समक्ष खुली चर्चा के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं। —सं०]

मैं ये थोड़े विचार इस आशा से रख रहा हूँ कि गम्भीर दृष्टि रखनेवाले सभी गांधी-विचारसंपन्न लोग इस पर आवश्यक ध्यान देंगे। *एक सनकी की दिमागी कसरत* कहकर नहीं टालेंगे।

● सही काम के पीछे विचार की स्पष्टता होती है और स्पष्ट विचार सही शब्दों के प्रयोग से पैदा होता है। इस लड़ी का कोई हिस्सा *छोड़ना कठिन है, क्योंकि कोई भी हिस्सा* छूटेगा, तो हमारे असर में कमी होगी। गीता के 'योगः कर्मसु कौशलम्' का मैं यही अर्थ करता हूँ।

● आदर्श के प्रति श्रद्धा अच्छी व जरूरी चीज है। लेकिन उस श्रद्धा के साथ विचार का मेल जरूर होना चाहिए। जिज्ञासा की यही भारतीय परंपरा है। हमें अपने आदर्शों का निरंतर विश्लेषण और परीक्षण करते रहना चाहिए। अगर सभी यह काम न कर सकें तो थोड़े से लोगों को यह जिम्मेदारी लेनी चाहिए और अपने हासिल नतीजों में दूसरों को भी शामिल करना चाहिए।

● अच्छाई कोई स्थिर चीज नहीं है। एकदम अच्छी जैसी कोई चीज है भी नहीं। जो एक हालत में अच्छी चीज है, यह जरूरी नहीं कि दूसरे में भी हो। आदमी के जितने विचार हैं, सभी की सीमा है। वे भी परिवर्तन

से वैसे ही प्रभावित होते हैं, जैसे आदमी का शरीर। हम विनम्रता से यह मान लें कि हमारे विचार भगवान् के दिये नहीं हैं।

● आदमी के अन्य दूसरे विचारों की तरह ही अहिंसा भी कोई स्थिर या पूर्ण चीज नहीं है। अहिंसा का मतलब ही है वास्तविकता से हमेशा समझौता रखना। यह एक सापेक्ष, गतिशील परिकल्पना है। विशुद्ध एवं सम्पूर्ण अहिंसा, जैसा कि कहते हुए गांधी कभी थकते नहीं थे, एक असम्भव आदर्श है। अहिंसा से समझौता किये बिना कोई व्यक्ति एक सेकण्ड भी जीवित नहीं रह सकता।

● यह सब तो प्रारम्भिक बातें हुईं। हमारे सोचने-समझने में गल्ती तो तब आती है, जब जिंदगी के हर मिनट समझौते की तैयारी रखते हुए भी हम दूसरे मौकों पर एकदम स्थिर व कठोर रुख अपना लेते हैं। अगर स्वयं आदमी का ही जीवन विशुद्ध अहिंसा की खुराक पर नहीं चल सकता, तो हम क्यों यह सोचते हैं कि आदमी की बनायी संस्थाएँ, संगठन वगैरह चल सकते हैं?

● हमारी बोलचाल की भाषा में अहिंसा शब्द ही इस बात की स्वीकृति है कि 'हिंसा' जीवन का साधारण नियम है। अहिंसा इस नियम से अलग पड़ती है। लेकिन यह नियम अपने इस रूप में जब तक रहता है, तब तक उसके इस रूप से हटकर की जानेवाली कोई भी चीज एक हद तक ही असर करेगी। यानी असामान्य चीज कभी भी सामान्य चीज को पूरी तौर से हटा नहीं सकती।

● इसलिए हमारी दूसरी गल्ती जो हमारे बीच जड़ पकड़ रही है, वह है कि हिंसा एक निरर्थक और भ्रामक चीज है। धीरे धीरे उसे पूरी तौर से निकाला जा सकता है। यह चीज मेरे गले नहीं उतरती। हमारे सबसे करीब तो चन्द्र ही पड़ता है, जहाँ कहा जा सकता है कि कोई हिंसा नहीं है। जरा सोचिये, इसका मतलब क्या निकलता है? कालक्रम में जब हमारी पृथ्वी चाहे प्राकृतिक या मानवीय कारणों से चांद की तरह बेजान बन जायगी तभी, और केवल तभी ही हिंसा खतम होगी।

● क्या यह निराशापूर्ण नजर है? कदापि नहीं। गांधी ने जो शिक्षा दी है, उसका मर्म यह नहीं है कि हम हिंसा का एकदम सफाया कर दें, बल्कि जहाँ तक सम्भव हो उसे कम करें, क्योंकि सभी नहीं, लेकिन साधारणतः विनाश अनावश्यक है और उससे बचा जा सकता है। लेकिन कम करने की यह प्रक्रिया न तो सीमित है, न ही केवल एक दिशा में जानेवाली। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो जब तक इस दुनिया में आदमी और उसकी बनायी संस्थाएँ रहेंगी, चलती ही रहेगी।

● लेकिन भौतिक रूप में हिंसा में कमी करना हमारा एकमात्र लक्ष्य नहीं है। दूसरी ज्यादा जरूरी चीजें हैं, जिन पर ध्यान देना बहुत आवश्यक है। और यहीं हमारी तीसरी गल्ती को जगह मिल जाती है और वह है लोगों का यह बढ़ता हुआ विश्वास कि 'क्या' से 'कैसे' ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। साध्य की परवाह किये बिना, जिसके प्रति गांधी की सजगता प्रसिद्ध थी, साधन के प्रति हमारी जड़ता हमें उन सामाजिक लक्ष्यों से दूर करती जा रही है, जिनकी प्राप्ति इस देश में अत्यन्त जरूरी है।

● हिंदुस्तान में हमें केवल शारीरिक चोट या कष्ट के रूप में की जानेवाली हिंसा से ही नहीं लड़ना है। आजादी के बीस साल बाद भी हिंदुस्तान के गरीबों की मुसीबतों का प्याला लबालब भरा हुआ है। हर कदम पर उन पर शारीरिक चोट से भी बड़ी हिंसा का हमला होता रहता है। ऐसी हालत में साधन की बात कहना क्या एक तरह की नास्तिकता नहीं है?

● मैं जो कुछ कह रहा हूँ, उसे गलत ढंग से कहना आसान है। मेरा मतलब यही है कि साधनों से चिपटे रह जाना उतना ही खतरनाक और शायद ज्यादा निरर्थक है, जितना कि साध्य से चिपक जाना। साध्य और साधन में उचित तालमेल बैठाना चाहिए। केवल अहिंसा के लिए अहिंसा एक निरर्थक सामाजिक लक्ष्य है, जो हमें केवल कब्रिस्तान की शांति की ओर ले जायगा। अहिंसा का यदि कोई सामाजिक अर्थ रखना है, तो उसे लक्ष्य के अनुरूप होना होगा। भूखे की भूख बड़े-बड़े सिद्धान्तों से नहीं जायगी। जैसा कि गांधी कहा करते थे, ईश्वर को भी ऐसे भूखों के सामने रोटी की शक्ल में ही आना होगा।

● मैं यह नहीं कहता कि हम हिंसा से समझौता कर लें या अहिंसा को हलका बना लें। मैं केवल यही दिखाने की कोशिश कर रहा हूँ कि हमारी अहिंसा में उसके उद्गम-स्थान में तो मिलावट हो ही गयी है। हमारा सारा जीवन हिंसा के साथ ताल-मेल पर निर्भर है। जैसा कि विनोबा ने साफ साफ कहा है कि अगर हम सौ फीसदी अहिंसा तक नहीं पहुँच पाते तो जो बीस फीसदी अहिंसा मिले उसे छोटा न समझें। थोड़ा विकास बढ़ना है तो अच्छा ही है।

● एक चौथी गल्ती जो हम लोग करते हैं, वह हमारा यह समझना है कि हिंसा अहिंसा एक दूसरे के खिलाफ चीजें हैं, एक-दूसरे को काटनेवाली हैं। बात ऐसी नहीं है। ये दोनों ही सामाजिक परिवर्तन की माध्यम हैं। हिंसा ने काफी जमाना देखा है और उसकी वजह से आदमी को काफी चीजें मिली भी हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से यह सोचना गलत है कि हिंसा से कोई चीज मिलती नहीं। गांधीजी का जोर केवल इस बात पर था कि विकासक्रम में अहिंसा हिंसा से कहीं ज्यादा उपादेय हो सकती है।

● आज दुनिया में आदमी के सामने जो समस्याएँ हैं उनके हल के लिए हिंसा अहिंसा, दोनों को साथ साथ चलना होगा। वैसे यह अजीब लग सकता है, लेकिन बात वैसी नहीं है। काफी लम्बे अर्से तक हम यह मानते रहे कि हिंसा और अहिंसा साथ नहीं चल सकती। यह विश्वास इस बात पर भी आधारित है कि मौका पाते ही हिंसा अहिंसा पर हावी हो जायगी। वास्तव में यह गलतफहमी ही है, जिसमें हम भूल जाते हैं कि कंदराओं-गुफाओं में रहनेवाला जंगली मानव विकसित होते होते कैसे आज का सभ्य सुसंगठित सामाजिक मनुष्य बन गया। हिंसा अहिंसा, दोनों ने ही बीते जमानों में अपना पार्ट अदा किया है और आगे भी ऐसा ही होगा। हमारे सोचने-समझने में इस सवाल से ही गलतफहमी पैदा होती है कि हिंसा अब पुरानी पड़ गयी या इसके लिए कोई ऐतिहासिक आधार है नहीं।

● सचाई व वास्तविकता किसी भी सिद्धांत से अधिक महत्त्वपूर्ण है। सचाई को

भूदान यज्ञ : शुक्रवार, १ दिसम्बर, '६७

अपने मतलब के अनुसार तोड़ने-मरोड़ने से कोई छोटी-मोटी विजय भले मिल जाय, लेकिन उससे कोई रास्ता निकलता नहीं। क्यूबा की क्रांति, अल्जीरियाई विद्रोह, वियतनामी युद्ध—इन तीन तथ्यों पर हमें गौर करना चाहिए, यदि हमारी सत्यनिष्ठा का कोई अर्थ है। बम का ही उदाहरण लीजिये। हमें वह चाहे जितना खराब लगे, लेकिन असलियत यही है कि बिना उसके तीसरा महायुद्ध कब का हो गया होता, जिसका नतीजा इतना भयंकर होता कि उस पर सोचना मुश्किल है।

● हमारे सोचने-समझने में पाँचवीं गल्ती तब होती है, जब हम कुछ खास चीजों के बारे में अपनी राय को सार्वजनिक मान लेते हैं। भारतीय चिन्तन में यह एक पुरानी कमजोरी है। अगर कोई एक तरकीब एक स्थिति में या दूसरी में सफल हो जाती है तो हम तुरन्त नतीजा निकाल लेते हैं कि वह दूसरी या सभी दशाओं में सफल होगी। और जब हम पाते हैं कि ऐसा नहीं होता तो हम उस तरकीब को नहीं, बल्कि उसे इस्तेमाल करनेवाले लोगों को कोसते हैं।

● अहिंसा में उन सभी आश्चर्यजनक विशेषताओं का अधिष्ठान मानकर, जो उनमें होती नहीं, हम उसके प्रति कोई न्याय नहीं करते। इस तरह हमारी निराशा और अवसाद बढ़ता ही जाता है, जिससे हमारा सामाजिक असर और भी कम होता है।

● मैं ऐसी गलतफहमी की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा, जो आजकल बहुत दिखायी पड़ने लगी है। यह गलतफहमी शान्ति व अहिंसा के बीच की है। इस विषम दुनिया में शान्ति पहला लक्ष्य हो ही नहीं सकती, वह आखिरी हो सकती है। गांधी शान्ति के आदमी नहीं थे। तीस सालों तक उन्होंने इस देश में तूफान मचाये रखा, जब तक कि अंग्रेज चले नहीं गये और अगर वे जिंदा रहते तो और बीस वर्षों तक वह तूफान मचाये ही रखते। हम लोगों में से कुछ जो एक नयी तरह की शान्ति चाहते हैं वह गैर-गांधीवादी चीज है, जिसका उस अहिंसा से कोई सम्बन्ध नहीं है, जिसकी शिक्षा गांधी दिया करते थे। —टी० के० महादेवन्

शान्ति-केन्द्रों की गतिविधि

अक्तूबर '६७

नेफा :

कॅंगलु : गाँव में बीमारी फैलने से ५ व्यक्तियों की मृत्यु हुई। शांति सैनिकों की सेवा और प्रयत्नों से अन्य अस्वस्थ लोगों को राहत मिली। इस सेवा का प्रभाव अच्छा पड़ा। प्रार्थना, स्कूल आदि में गाँववालों की दिलचस्पी बढ़ी है। केन्द्र के साथ लोगों का संपर्क और सहकार भी बढ़ा है।

लुत : केन्द्र पर गांधी-जयंती तथा जय-प्रकाश-जयंती मनायी गयी। गांधी-जयंती के अवसर पर बहनों के लिए दो दिन का शिविर आयोजित किया गया था, जिसमें १० बहनें उपस्थित थीं। सिलाई-वर्ग तथा बालवाड़ी ठीक चल रही है। बालवाड़ी में २० से ३५ बच्चे आते हैं। मुरी गाँव में बहनों के लिए एक वर्ग चलाया जा रहा है, जिसमें ५ बहनें आती हैं। अब ५-६ भाई भी आने लगे हैं। उन लोगों को असमिया भाषा सिखायी जाती है। उद्योग में बुनाई का काम चालू किया है। विद्यार्थियों ने अलग से सब्जी-खेती भी शुरू की है।

—देशपांडे

उत्तर प्रदेश :

डीडीहाट : यह केन्द्र अगस्त १९६७ से प्रारम्भ हुआ है, ६ सदस्य हैं। स्कूल-कालेजों से संपर्क किया गया, शांति-सेना का विचार समझाया गया। शराब-बंदी अभियान में अधिक समय लगाया गया। सरकारी कर्मचारियों तथा अधिकारियों से भी संपर्क किया है। —माधोसिंह

भुवानी (महिला आश्रम) : केन्द्र के कार्यकर्ताओं के प्रयास से घारखुला प्रखंडदान हुआ। ४१ सर्वोदय-पात्र रखे गये। ग्रामदान-पदयात्रा की गयी। शांति-केन्द्र की एक गांधी-शताब्दी समिति बनायी गयी है। उसमें ७ कार्यक्रम रखे गये हैं : नशाबंदी, ग्रामदान, हरिजन-उत्थान, स्वच्छता, कृषि की उपज बढ़ाना, शांति-केन्द्रों की स्थापना तथा नव-जागरण। शराब की दूकानों पर धरना देने की तैयारी अभी से कर रहे हैं। १० जनवरी १९६८ को धरना देने की योजना है। —शांता बहन

हमीरपुर : सदस्य-संख्या १६ है। केन्द्र पर स्वाध्याय, श्रम, सेवा-कार्य यथासंभव हो रहा है। बीच-बीच में ग्रामदान-पदयात्रा तथा साहित्य-बिक्री का भी काम चलता है। साहित्य-बिक्री से लोगों तक पहुँचने का अवसर मिलता है। —ओमप्रकाश पालीवाल

औरंगाबाद : २१ नवम्बर से १ दिसंबर तक शांति-केन्द्र पर एक शिविर का आयोजन किया गया है, जिसमें शांति-सेना के संगठन, प्रशिक्षण, डाकू-समस्या, ग्रामदान, खादी-ग्रामोद्योग आदि विषयों पर विचार-विनिमय किया जायगा। —भोलानाथ पांडे

मुसवल : पुराने-नये मिलाकर कुल ३६ सदस्य हैं। सार्वजनिक सड़क के निर्माण में मदद की गयी। स्वाध्याय, विचार-गोष्ठी आदि कार्यक्रम चल रहे हैं। सर्वोदय पात्र एवं साहित्य बिक्री का भी काम शक्ति एवं श्रद्धा के अनुसार किया जा रहा है।

—बेचन सिंह, गदाधर सिंह

कानपुर : प्रदेश के संगठन को मजबूत करने तथा शांति-केन्द्रों और जिला-स्तर के संगठनों में गति लाने की दृष्टि से पत्र-व्यवहार तथा प्रत्यक्ष संपर्क का प्रयास चल रहा है। बरेली में सर्वोदय-सहजीवन-शिविर में भाग लिया। कानपुर के डी० ए० वी० कालेज में काफी तनावपूर्ण वातावरण था। उसको शांति के रास्ते से सुलझाने के प्रयास में संतोषजनक सफलता प्राप्त हुई। १९०० रु० की साहित्य-बिक्री हुई।

उत्तराखंड में योगेशचन्द्र बहुगुणा के मार्गदर्शन में शिक्षण-शिविरों का आयोजन

होता रहता है। दिल्ली शहर में बुद्धिजीवियों की एक गोष्ठी तथा शांति-सेना रैली का आयोजन किया गया। —विनय अवस्थी

बिहार :

करगहउआ सदस्यों की संख्या १७ है। गांधी जयन्ती के अवसर पर सारे शांति-सैनिक एकत्रित हुए थे। हर पंचायत में एक-एक शांति-केन्द्र खोलने के बारे में निर्णय लिया गया। रिलीफ के काम में लोगों को कपड़ा बाँटा गया। इस बार बारिश में एक सड़क टूट गयी थी, उसको शांति-सैनिक श्री राम वृक्ष सिंह के सक्रिय प्रयास से दुरुस्त किया गया। दो गाँवों में अशांति का वातावरण बन गया था, उसको शांति सैनिकों ने बीच में पड़कर शांत किया। —ब्रजबल्लाल सिंह

अमरकातानगर (कोकनवला) केन्द्र में १२ सदस्य हैं। सड़क की मरम्मत की गयी। केन्द्र द्वारा रोगियों की सेवा की जाती है। स्वाध्याय साधारणतः चलता है। पचरुखी तथा हनुमाननगर में छठमेला के अवसर पर हिन्दू-मुस्लिम भाइयों के बीच कुछ तनाव की परिस्थिति बनी थी, उसको दूर करने का प्रयास किया जा रहा है। —नारायण प्रसाद

गोविन्दपुर ग्रामदान के अभियान में ज्यादा समय दिया जा रहा है। केन्द्र के द्वारा गाँवों में होमियोपैथी दवाएँ मुफ्त बाँटने का काम शुरू किया है। एक पुस्तकालय भी खोल रहे हैं। लेन-देन का भी सामान एकत्रित किया जा रहा है, ताकि हर तरह के लोग केन्द्र पर आ सकें, और संपर्क बढ़ सके। गाँव के मुकदमों को गाँव में ही निपटाने का प्रयास चालू है। कई मुकदमे कोर्ट से वापिस भी कर लिये गये हैं। —श्यामसुन्दर

पंजाब

अमृतसर (गांधी शिक्षा केन्द्र) सर्वोदय पाठ के सिलसिले में २४० परिवारों से संपर्क हुआ और १७१ रु० २४ पैसे का संग्रह हुआ। विनोबा और गांधी जयन्ती के अवसर पर बच्चों के बीच कार्यक्रम रखे गये थे। बच्चों ने दिलचस्पी के साथ भाग लिया। ७१५ रुपये की साहित्य बिक्री हुई। शहरों में सर्वोदय अभियान चलाने के बारे में ज्यादा जोर देना चाहिए, ऐसा निश्चय हुआ। ग्रामदान अभियान में भाग लिया। करीब २० गाँवों से सम्पर्क हुआ। सभी गाँवों का ग्रामदान हो गया। —महावीर प्रसाद

महाराष्ट्र

वार्धा इस शान्ति-केन्द्र में अधिकांशतः कालेज के विद्यार्थी हैं, अनेक सम्प्रदाय के लोग इसमें शामिल हैं। हर सप्ताह नियमित रूप से बैठकें हुआ करती हैं। बड़े और पढ़े-लिखे लोगों के कारण चर्चा में अनेक गंभीर चर्चाएँ होती हैं। सर्वोदय विचार का साहित्य पढ़ने के लिए दिया जाता है। इससे विचार समझने में लोगों की दिलचस्पी बढ़ रही है। आस-पास के गाँवों में भी शांति केन्द्रों के संगठन की योजना बनी है। आठ शांति सैनिकों के आवेदन पत्र भरकर भेजे हैं। —टी० गो० पाराशे

मैसूर

चमराजोह्न 'हिरोशिमा दिन' मनाया गया। उस दिन एक चर्चा गोष्ठी का आयोजन किया गया था। विषय था—भारत को अणुअस्त्र से सम्पन्न राष्ट्र बनना चाहिए या नहीं। कई विद्वानों ने भाग लिया। काफी चर्चाएँ हुईं। अन्त में सबका मत लिया गया तो भारत अणुअस्त्र सम्पन्न बनना चाहिए, इसी पर बहुमत पाया गया। शांति सेना मण्डल की ओर से भेजे गये "नो मोर हिरोशिमा" किताब का पठन भी किया गया। इसका लोगों पर अच्छा असर पड़ा। —ए० एम० शिवलिंगप्पा

संघर्ष नहीं, समर्पण

एक दिन विचार करते करते मैं यह सोचने लगा कि एक बीमार अस्पताल में पड़ा है। उस बीमार से उसका लड़का मिलने को आता है। लड़के को देखकर उसकी आँख में आँसू आ जाते हैं। उस समय कितनी मूल्यवान चीज वह अपने लड़के को देता है। उसके पास और कुछ नहीं होते हुए भी यह बहुत बड़ी चीज है। यह मूल्यवान चीज—प्रेम वह अपनों तक सीमित नहीं रखे, सबके लिए, समाज के लिए उसे खोल दे। अगर ग्रामदान का विचार उसे जँचा हो तो वह यह कर सकता है। इस उदाहरण से मुझे स्पष्ट प्रकाश मिला। पहले करुणा का भास मात्र था, अब करुणा का साक्षात्कार हुआ। कुछ लोग ऐसे हैं, जिनके पास देने को कुछ नहीं है यह एक विचार था। कम से कम मेरा इससे छुटकारा हो गया।

इतना शुरू में नहीं सूझा था। यह तो दीखता था कि वर्ग संघर्ष नहीं, वर्ग निराकरण होना चाहिए। पर श्रीमानों से लेकर भूमिहीनों को देना है यह भेद तो था ही। यह भेद, यह विचार तकलीफ देता था। पर अब ध्यान में आया कि एक से लेकर दूसरे को देने की बात नहीं, बल्कि सब लोगों को समाज के प्रति समर्पण ही करना है—तब से करुणा का साक्षात् दर्शन हुआ। उसके चिन्तन से शांति मिली, शान्ति मिली। पहले तक जो विचार था वह भी गलत तो नहीं था, पर एकांगी था।

सबके पास कोई-न-कोई चीज है जो वे दे सकते हैं। आज मनुष्य के पास देने को जो है उसे वह परिवार तक रोके रखता है। यह दोष है। उसे वह चीज—पड़ोसी धर्म और शरीर मर्यादा को ध्यान रखते हुए—सारे समाज के लिए खोल देना चाहिए। —विनोबा

आन्दोलन के समाचार

प्रखण्डदान अभियान :

चण्डीगढ़ : कांगड़ा जिले के नगरोटा बगवाँ तथा रैत विकास खण्डों में २३ अक्तूबर से ७ नवम्बर तक गांधी स्मारक निधि के ३५, ग्रामदान समिति के ७, श्री गांधी आश्रम उत्तर प्रदेश के ९ तथा नगरोटा विकास खण्ड के २५ कर्मचारियों द्वारा ग्रामदान-अभियान चलाया गया। डा० दयानिधि पटनायक, श्री ओंकारचन्द तथा श्री सत्यप्रकाश शर्मा के मार्गदर्शन में चले इस अभियान में नगरोटा बगवाँ में ३४३ किलो अनाज तथा १०६ रुपये ५० पैसे, और रैत में ३१३ किलो अनाज तथा ५२ रुपये २८ पैसे स्थानीय सहयोग के रूप में प्राप्त हुए। फलश्रुति इस प्रकार है :

विकास खण्ड	कुल ग्राम	ग्राम संपर्क	प्राप्त ग्रामदान
नगरोटा	३२३	२८३	२६२
रैत	३२५	१३५	१०४
कुल :	६४८	४१८	३६६

समालखा (तार से) : हिसार जिले के *भीवानी प्रखण्ड में २९ ग्रामदान प्राप्त हुए।*

—ओमप्रकाश त्रिखा

खजुरीहाट (*पूर्णिया*), १६ नवम्बर : भरगामा प्रखण्ड में प्रखण्डदान अभियान काफी उत्साहपूर्वक चल रहा है। कुल ७८ हजार आबादी में से लगभग ३५ हजार लोगों ने ग्रामदान के घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये हैं।

धुलिया : जिले के दहिवेल विकास खंड में महाराष्ट्र के कार्यकर्ता प्रचार-दौरा कर रहे हैं। पूर्वतैयारी के समय नरणकुली गाँव ने ग्रामदान का संकल्प किया।

ठाणा : ठाणा जिले की शहापुर तहसील में श्री एकनाथ भगत के मार्गदर्शन में ग्रामदान-पदयात्रा चल रही है। कन्हार तहसील में सर्वश्री डा० बापट, देवराम अंभूरे, लोंढाचे, गोविंदराव आदि कार्यकर्ताओं द्वारा पदयात्राएँ हो रही हैं। *जिले की ये पदयात्राएँ* दिसम्बर माह के अंत तक चलती रहेंगी।

बिहार के १०० प्रखंडदान [१ नवम्बर '६७ तक]

दरभंगा

अंधराठाढ़ी	राजनगर	उजियारपुर
हमगाँव	*लदनियाँ*	कल्याणपुर
खजौली	लोकही	कुशेश्वर स्थान
खुटौना (लोकही)	दरभंगा	दलसिंगसराय
घोघरडीहा	बहादुरपुर	पटोरी
जयनगर	बहेरी	पूसा
झंझारपुर	बिरौल	विभूतपुर
पण्डौल	बेनीपुर	मोरवा
बाबूबरही	मनीगाछी	मोहउद्दीनगर
बासोपट्टी	सिंघवाड़ा	रोसड़ा
बिस्फी	हायाघाट	वारिसनगर
बेनीपट्टी	केवटी	*समस्तीपुर*
मधवापुर	घनश्यामपुर	सरायरंजन
मधुबनी	जाले	*सिंघिया*
मधेपुर	...	*हसनपुर*

जिले में कुल : ४४ प्रखण्ड

पलामू	सारन	भागलपुर
गारू	मांझी	बीहपुर
मनिका	मांझा	नौगछिया
बरवाडीह	बैकुंठपुर	गोपालपुर
रंका	...	...
कुल : ४	कुल : ३	कुल : ३

धनबाद	गया	संथाल परगना
टुण्डी	कौआकोल	सुन्दर पहाड़ी

पूर्णिया

पूर्णिया सदर	कृत्यानन्दनगर	फलका
रूपौली	कसबा	अमदाबाद
भवानीपुर	अमौर	कटिहार
धमदाहा	बायसा	प्राणपुर
बहादुरा	बायसी	कदवा
बनमनखी	...	मनिहारी

जिले में कुल : १७ प्रखण्ड

सहर्षा	हजारीबाग	शाहाबाद
निर्मली	प्रतापपुर	अधौरा
मरौना	पीरटांड	...
कुल : २	कुल : २	कुल : १

मुंगेर

गोगरी	खगड़िया	बेल्दौर
साहेबपुर कमाल	अलौली	बलिया
परबत्ता	चौथम	खुदाबंदपुर

जिले में कुल : ९ प्रखण्ड

मुजफ्फरपुर

पारू	सकरा	बैरगनिया
मुशहरी (मु० पुर)	ढोली	पुपरी
बोचाहा	औराय	नानपुर
कुढ़नी	वैशाली	बाजपट्टी

जिले में कुल : १२ प्रखण्ड

आजमगढ़ : २७ नवम्बर '६७—दोहरीघाट में १९ से २६ नवम्बर '६७ तक चलाये गये प्रखण्डदान अभियान में ८१ ग्रामदान प्राप्त हुए। अभियान का पूरा आयोजन दोहरीघाट के प्रखण्ड-विकास अधिकारी की ओर से हुआ था। *प्रखण्ड-विकास और सर्वोदय* के कार्यकर्ताओं के सामूहिक प्रयास का यह एक उत्तम *उदाहरण है।*

अब तक उत्तर प्रदेश में कुल ११ प्रखण्डदान और १०९८ ग्रामदान हुए।

—ब्रजबिहारी
मंत्री, सर्वोदय मण्डल,
आजमगढ़

शिविर-सम्मेलन :

धुलिया : धुलिया जिले के ४० छात्रों ने धुलिया में गत ७ नवम्बर से ११ नवम्बर तक हुए किशोर शान्ति-सेना शिविर में भाग लिया। उद्घाटन श्री अच्युत देशपांडे ने किया। ११ नवम्बर को जिला नशाबन्दी परिषद हुई। पूना के श्री पोपटलालजी शाह और वर्धा के श्री ठाकुरदासजी बंग आदि ने महाराष्ट्र सरकार की नशाबन्दी कानून में *ढिलाई करने की नीति की निन्दा की।*

धुलिया शहर में ७ से ११ नवम्बर तक सर्वोदय के अनेक कार्यक्रम हुए और १२ नवम्बर से १० दिन की पदयात्रा सभी

तालुका में हुई, जिसमें सर्वश्री गोविन्दराव शिन्दे, ठाकुरदास बंग, दामोदरदास मूंदड़ा के मार्गदर्शन में सतपुड़ा सर्वोदय मण्डल के कार्यकर्ता और ग्रामदानी गाँवों के आदिवासी भाइयों ने भी भाग लिया।

अहमदाबाद : २१ से २७ अक्तूबर तक साबरमती नदी के तट पर सर्वोदय संस्कार शिविर चला, जिसमें १०० भाई बहनों ने भाग लिया।

इन्दौर : १ से ५ नवम्बर तक जिलादान अभियान में लगी विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं के ४० कार्यकर्ताओं का शिविर हुआ, जिसमें प्रदेश के प्रमुख कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया।

भुवनेश्वर : राष्ट्रीय गांधी-शताब्दी समिति की रचनात्मक उपसमिति द्वारा उत्कल में गत ७ नवम्बर से १८ नवम्बर तक ग्रामस्वराज्य शिविर हुआ, जिसमें करीब १०० ग्रामदानी कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

कुमारीकाटा (असम), ११-११-'६७ १२-१३-१४ नवम्बर को तामुलपुर आंचलिक ग्रामदान संघ की जयन्ती मनायी गयी। प्रतिदिन लगभग ५००० की संख्या में स्थानीय जनता ने इसमें भाग लिया। इस अवसर पर खादी प्रदर्शनी, ग्रामदान, खादी एवं शान्ति सेना गोष्ठी आदि कार्यक्रम आयोजित हुए। सम्मेलन का उद्घाटन खादी मंत्री श्री महेन्द्रनाथ हजारिका ने किया। खादी बोर्ड के मन्त्री, खादी कमीशन के क्षेत्रीय निर्देशक एवं अन्य अधिकारियों ने भी आयोजन में भाग लिया। इस छोटी सी जगह में इतना बड़ा आयोजन और ऐसी व्यवस्था पहले कभी नहीं हुई थी। सैकड़ों ग्रामीणों ने श्रमदान करके प्रदर्शनी तथा शिविर की व्यवस्था की। शान्ति सेना की रैली में ५०० से अधिक लोगों ने भाग लिया। 'बाल दिवस' के दिन बालवाड़ी के बच्चों तथा स्थानीय स्कूल के बच्चों का सांस्कृतिक कार्यक्रम बहुत ही आकर्षक रहा।

विकास खण्ड अधिकारी तथा जिलाधीश आदि की उपस्थिति तथा हर प्रकार के सहकार ने आयोजन की व्यवस्था में योगदान किया।

आयोजन का पूरा खर्च स्थानीय चन्दे से हुआ। कुल १५९ किलो ११५ ग्राम चावल तथा १५८८ रुपये ९१ पैसे खर्च हुए।

—रवीन्द्रनाथ

पुस्तक परिचय

'सन्त-सुरभि'

• 'विनोबा-चिन्तन' में प्रस्तुत •

'विनोबा चिन्तन' पिछले डेढ़-दो वर्षों से मासिक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित हो रहा है। इसका २०-२१ संख्या का संयुक्त प्रवाह हमारे सम्मुख है, जिसमें 'सन्त सुरभि' शीर्षक से नये वाङ्मय का श्रीगणेश किया गया है, जो आचार्य विनोबा की मनन गंगा की धार से सुरभित हो पाया है। सन्तों की भीनी भीनी सुगन्ध से हमारा देश आज तक परिवासित होता और हमें शान्ति देता आ रहा है। सन्त रूपी कामधेनु से ज्ञान की अजस्र धाराएँ धरती पर प्रवाहित होती रही हैं।

इस प्रवाह में सन्त सुरभि के दो सुमन, ज्ञानदेव और एकनाथ के व्यक्तित्व, वाङ्मय एवं कार्य पर आचार्य विनोबा ने अपने मनन प्रस्तुत किये हैं—ज्ञानदेव के सम्बन्ध में पाँच और एकनाथ सम्बन्धी छह। इनके पढ़ने से भारत-वसुन्धरा से निकले इन दोनों रत्नों का पूरा चित्र साधक के चित्त पटल पर अंकित हो सकता है। सीमित शब्दों में उसका समग्र दर्शन संभव नहीं, पढ़कर ही अनुभव देय है।

इस चिन्तन से एक बात सर्वथा स्पष्ट हो जाती है कि सन्तों के समाज में मनसा, वाचा, कर्मणा अहिंसा का आदर्श निभानेवाले उज्ज्वल नररत्न ज्ञानदेव मिलते हैं, तो सत्याग्रह के बहुमुखी प्रयोगवादी के रूप में एकनाथ। आचार्य विनोबा ने दोनों के जीवन के ये दो पहलू इस चिन्तन में बड़े विस्तार के साथ चित्रित किये हैं। अंक मननीय और संग्रहणीय है। इस अंक का मूल्य : एक रुपया, पृष्ठ संख्या ८० है।

—संगम

'विनोबा चिन्तन' पुस्तिका के रूप में मासिक आकार २०"×३०" १६ पेजी, पृष्ठ ५० (प्राय) प्रकाशक सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी। मूल्य : प्रत्येक प्रवाह का पचास पैसे मात्र। इस अंक का १ रु० मात्र।

शराबबन्दी :

जयपुर शराबबन्दी सत्याग्रह आन्दोलन समिति के संयोजक श्री गोकुलभाई भट्ट ने १६ नवम्बर '६७ को अपने एक वक्तव्य में बताया : "सत्याग्रह १४ नवम्बर से चालू होना था। ११ नवम्बर को राजस्थान मंत्रि-मण्डल ने पूर्ण नशाबन्दी की हमारी माँग के विषय में सोच-विचार किया। सिद्धान्त रूप में राजस्थान सरकार पूर्ण नशाबन्दी में मानती है तथा उसे लागू करना चाहती है, यह मंत्रि-मण्डल ने मान्य किया है। परन्तु सरकार राज्य में पूर्ण नशाबन्दी सन् '६९ के २ अक्टूबर तक वित्तीय कारणों से लागू नहीं कर सकेगी, पर समय समय पर अपनाती रहेगी। अगर ३१ मार्च '६८ के पहले सरकार की ओर से गांधी जन्म शताब्दी तक पूर्ण शराबबन्दी करने की घोषणा न की गयी और उसकी पूर्ति में सरकार ने गुजरात की सीमा से लगे हुए जिलों में नये वित्तीय वर्ष में संपूर्ण नशाबन्दी न की, तो ६ अप्रैल '६८ से सत्याग्रह का स्थगित कार्यक्रम प्रारम्भ होगा।"

भूमि प्राप्ति और वितरण :

ग्वालियर : गत अक्तूबर माह में मुरैना जिले की श्योपुर और विजयपुर तहसील, शिवपुरी जिले की शिवपुरी और पोहरी तहसील और गुना जिले की गुना तहसील में कुल १८ ग्रामों के ३८ हरिजन, १२१ आदिवासी तथा ७७ अन्य परिवारों में क्रमशः ९६, ५६६ और ३२२ एकड़ भूमि वितरित की गयी।

इन्दौर जिला ग्रामदान अभियान में पिछले महीने में ३९ ग्रामदान हुए।

विविध :

इन्दौर : ज्ञात हुआ है कि राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने सर्वोदय दर्शन के सुप्रसिद्ध व्याख्याकार आचार्य दादा धर्माधिकारी को हिन्दी साहित्य में मौलिक ग्रंथ-लेखन के उपलक्ष्य में "महात्मा गांधी पुरस्कार" प्रदान करने का निश्चय किया है। इस पुरस्कार में लेखक को १५०१ रुपये नगद और प्रमाण पत्र दिया जायेगा। यह पुरस्कार गैर-हिन्दी भाषी को दिया जाता है तथा यह दसवाँ पुरस्कार है। (संप्रेस)

सामयिक चर्चा

पश्चिम बंगाल : अस्थिरता की राजनीति

गत २१ नवम्बर को पश्चिम बंगाल की मंत्रि सरकार राज्यपाल द्वारा बरखास्त कर दी गयी और साथ ही कांग्रेस-समर्थित १८ सदस्यीय प्रगतिशील जनतांत्रिक मोर्चा के नेता डा० प्रफुल्लचन्द्र घोष के नेतृत्व में नये मंत्रिमंडल ने शपथ ली।

गत आम चुनाव के बाद पश्चिम बंगाल में गैर-कांग्रेसी सरकार बनी थी। इसमें वाम-पंथी साम्यवादियों का बहुमत था। इस सरकार ने पश्चिम बंगाल में कुल ८ महीने १९ दिन शासन किया। इस शासन काल में पश्चिम बंगाल भारत की राजनीति का एक आकर्षण-केन्द्र बना रहा। नक्सलबाड़ी के कृषक-आन्दोलन में जो हिंसक घटनाएँ हुईं, उसमें इस सरकार का परोक्ष समर्थन प्राप्त था। 'घेराव' आन्दोलन को इस सरकार ने प्रत्यक्ष समर्थन दिया। *बंगाल के श्रममन्त्री श्री सुबोध बनर्जी ने घेराव की घटनाओं में* पुलिस को हस्तक्षेप न करने के लिए आदेश भी दिये थे। कलकत्ता उच्च न्यायालय की विशेष बेंच द्वारा घेराव को गैर-कानूनी तथा असंवैधानिक करार देने पर तथा श्रममन्त्री के संविधान की सीमा लांघने के बारे में निर्देश देने पर सरकार ने घेराव का समर्थन बन्द किया। *राज्य के संयुक्त मोर्चे की सरकार के* तत्कालीन *खाद्यमन्त्री श्री प्रफुल्लचन्द्र घोष ने* २ नवम्बर को इस्तीफा दिया, जिसे राज्यपाल ने ६ नवम्बर को स्वीकार कर लिया। इस्तीफे का कारण बताते हुए डा० घोष ने बताया कि वर्तमान सरकार को एक दिन के लिए भी चलाना बंगाल ही नहीं, देश के लिए तथा जनतन्त्र के लिए खतरनाक है।

डा० घोष के इस्तीफे के बाद १७ अन्य विधायकों ने भी लिखित सूचना दी थी कि उन्होंने श्री अजय मुखर्जी की सरकार को समर्थन देना बन्द कर दिया है। इनमें से १५ ने *यह भी इच्छा व्यक्त की थी, कि यदि डा० पी० सी० घोष के नेतृत्व में एक नये* मन्त्रिमण्डल का निर्माण होगा, तो वे उसका समर्थन करेंगे। १३० सदस्यीय कांग्रेस विधायक दल के नेता श्री के० एन० दास ने भी राज्यपाल को यह लिखा कि डा० घोष के मन्त्रिमण्डल बनाने पर कांग्रेस दल उनका समर्थन करेगा।

राज्यपाल ने मुख्यमन्त्री को इस स्थिति से अवगत कराया और उन्हें यह आवश्यकता बतायी कि विश्वास का मत प्राप्त किये जाने के *लिए विधान-सभा की बैठक शीघ्र बुलाना* बहुत जरूरी है। किन्तु मुख्यमन्त्री ने ६ हफ्ते के बाद, १८ दिसम्बर को विधानसभा का अधिवेशन बुलाने का निर्णय किया। इस स्थिति को देखते हुए राज्यपाल ने मन्त्रिमण्डल को बरखास्त करके कांग्रेस विधायक दल के नेता श्री दास को मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित किया। परन्तु श्री दास ने असमर्थता प्रकट की, और प्रफुल्लचन्द्र घोष के मन्त्रिमण्डल को समर्थन देने का आश्वासन दिया, जिसके आधार पर नया मन्त्रिमण्डल बना।

पश्चिम बंगाल में राज्यपाल द्वारा उठाये गये इस कदम को समाजवादी, संयुक्त समाजवादी, दक्षिण और वामपंथी साम्यवादी दलों के नेताओं ने अलोकतान्त्रिक और संविधान की उपेक्षा करनेवाला तथा तानाशाही को बढ़ावा देनेवाला बताया है; जब कि कांग्रेस, जनसंघ और स्वतन्त्र पार्टी के नेताओं *ने राज्यपाल के निर्णय का स्वागत करते हुए* इसे बुद्धिमत्तापूर्ण, साहसिक कदम बताया है।

साप्ताहिक 'दिनमान' ने पश्चिम बंगाल में जो कुछ हुआ, उसकी बहुत कुछ जिम्मेदारी वामपंथी मोर्चे के नेताओं और सबसे अधिक श्री अजय मुखर्जी पर थोपी है। अंग्रेजी दैनिक *'अमृत बाजार पत्रिका' ने इसे केन्द्रीय सरकार का साहसिक निर्णय बताया है। 'हिन्दुस्तान टाइम्स' ने लिखा है कि अगर श्री अजय मुखर्जी* ने राज्यपाल की सलाह मान ली होती तो समस्या का सुझाव सहजता से निकल आता। 'स्टेट्समैन' ने भूतपूर्व सरकार के शक्ति-परीक्षा के लिए शीघ्र विधानसभा को न बुलाने के निर्णय से राज्यपाल के निर्णय को अधिक *अलोकतांत्रिक बताया है।*

प० बंगाल और हरियाना में हुए एक दिन में दो-दो राजनीतिक परिवर्तनों की जागरूक नागरिकों के मानस में तीव्र प्रतिक्रिया हुई है, जो स्वाभाविक है। राजनीति में बढ़ती हुई हिंसा और लोकतंत्र में बढ़ती हुई सैनिक-शक्ति की महत्ता मौजूदा *लोकतांत्रिक शासन-पद्धति में 'लोक' की क्षीण शक्ति का इजहार* करती है। आज देश के सामान्य नागरिक की जुबान से उसकी विवश आत्मा की आवाज अक्सर सुनायी पड़ती है—'अच्छा हो कि सैनिक-शासन हो जाय'। *खतरे की घण्टी* लगातार बज रही है, जरूरत है कि *लोकतंत्र में आस्थावान व्यक्ति अपनी पूरी क्षमता से* लोक की शक्ति को संगठित करने में लग जायँ।

—'मन्त्र'

दृष्टिकोण...

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

८ दिसम्बर, '६७ अंक : १०

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति : २० पैसे

विदेश में : साधारण डाक-शुल्क-

१४ रु० या १ पौण्ड या २१ डालर

(हवाई डाक-शुल्क देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४१८५

यान्त्रिक उत्पादन और सांस्कृतिक जीवन

यंत्र के कारण जो अन्तर्विरोध आते हैं, उन पर विचार करते हुए हम इस मुकाम पर पहुँचे हैं कि हमारे जीवन में कुछ श्रम ऐसा है, जिसे हम अवांछनीय समझते हैं, परन्तु वह आवश्यक है। कुछ श्रम ऐसा है, जो अरुचिकर है, फिर भी आवश्यक है। कुछ श्रम ऐसा है, जो जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तो आवश्यक नहीं, पर जीवन निर्वाह याने स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। ऐसा तीन प्रकार का श्रम है।

कुछ अरुचिकर श्रम ऐसा है, जिसे हम मशीन से करा सकते हैं, लेकिन शारीरिक स्वास्थ्य के लिए अरुचिकर श्रम की आवश्यकता रहेगी। व्यायाम रखेंगे, पर उसमें प्रेरणा नहीं आयगी। इसलिए उत्पादन के साथ अरुचिकर परिश्रम जोड़ना चाहिए। सारा-का सारा अरुचिकर काम निकाल देंगे, तो व्यायाम का अलग आयोजन करना होगा, कृत्रिम प्रेरणा खोजनी पड़ेगी।

आवश्यक श्रम को मनुष्य धीरे धीरे यंत्र को सौंप देना चाहता है। इसका नतीजा यह होगा कि परिश्रम और उत्पादन अलग अलग हो जायँगे। परिश्रम में से सांस्कृतिक अंश निकल जायगा। हम यंत्र को जितना परिश्रम सौंपते चलेंगे और अपने लिए जितना परिश्रम रखते चलेंगे, उसमें कोई सामाजिक आशय नहीं रह जायगा।

मैं कहता हूँ कि जितना अकुशल परिश्रम आवश्यक है, उसे उत्पादन के साथ मिलना चाहिए। इसके बाद भी व्यायाम और खेल रहेगा। इसका मतलब यह नहीं है कि व्यायाम और खेल के लिए कोई स्थान नहीं होगा, लेकिन क्या स्थान होगा, इस पर थोड़ी और गहराई से सोचिये।

मनुष्य स्वभाव से आलस्य प्रिय नहीं है, इतना कहने से काम नहीं चलेगा। सारा का सारा यंत्र करेगा, तो क्या होगा? तो मनुष्य को समय मिलेगा। वह उस समय में प्रार्थना करेगा, नाचेगा, दौड़ेगा, जो इच्छा होगी, करेगा।

इसमें दिक्कत क्या है? दिक्कत यह है कि वह नाचेगा, तो कौनसा नाच नाचेगा? नाच के लिए 'थीम' (विषय) की जरूरत होती है। असमवाले 'बिहुनृत्य' नाचेंगे। गुजरात वाले 'गरबा' नाचेंगे। तो यह 'थीम' कहाँ से आती है? शून्य में से आयगी या समाज में से आयगी? नाच के लिए जिस 'थीम' की, विषय की जरूरत रहती है, वह विषय जीवन में से आता है।

दो हलों का अन्तर देखिये। किसानों का नृत्य देखिये। कौनसी 'थीम' होती है उसमें? उनका नाच फसल, खेती से सम्बन्ध रखता है, उनके जीवन में से 'थीम' आती है। जीवन में से नृत्य का विषय निष्पन्न होता है, इसलिए कला उत्पादन से भिन्न नहीं होती। कला का उत्पादन से सम्बन्ध विच्छेद होगा, तो कला श्रमनिरपेक्ष हो जायगी, वह असांस्कृतिक हो जायगी। सोचना यह है कि आप जिसे सांस्कृतिक कार्यक्रम कहते हैं, उसका विषय कहाँ से आता है? मान लीजिये कि आपने चित्र बनाया। उस चित्र में आप क्या बतायेंगे? संकेत क्या होगा? चित्र में जो विषय आता है, वह हमारे जीवन में से आता है। कला का भी जीवन के साथ सम्बन्ध है, यह हम भूल जाते हैं, इसलिए विरोध पैदा होता है।

('अहिंसक क्रान्ति की प्रक्रिया' से) —दादा धर्माधिकारी

समाचार डायरी

देश :

२७-११-'६७ : चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने कहा कि भारतीय साम्यवादी दल पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाना चाहिए।

२८-११-'६७ : वाराणसी के छात्रों ने राजभाषा-संशोधन विधेयक के विरोध में अंग्रेजी-विरोधी प्रदर्शन किया।

२९-११-'६७ : संसद में कांग्रेस व गैर-कांग्रेस सदस्यों ने माँग की कि सारे देश को एक खाद्य-इकाई माना जाय।

३०-११-'६७ : गृहमंत्री श्री चह्वाण ने स्पष्ट किया कि प० बंगाल का घोष-मंत्रिमंडल संविधान के अनुसार स्थापित है।

१-१२-'६७ : राष्ट्रीय विकास परिषद ने योजना आयोग के उपाध्यक्ष श्री गाडगिल का कृषि-आयकर सम्बन्धी सुझाव अस्वीकार कर दिया।

२-१२-'६७ : राष्ट्रीय विकास परिषद ने चौथी योजना अप्रैल १९६९ से आरम्भ करने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

१-१२-'६७ : पश्चिम बंगाल के संयुक्त मोर्चे ने १८ दिसम्बर से व्यापक सत्याग्रह करने का निश्चय किया है।

विदेश :

२९-११-'६७ : १२९ वर्ष की ब्रिटेन की दासता समाप्त होकर दक्षिण यमन गणतंत्र का जन्म हुआ।

३०-११-'६७ : प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने आज घोषणा की कि भारत सरकार ने दक्षिण यमन गणराज्य को मान्यता दे दी है।

१-१२-'६७ : ब्रिटेन के प्रधानमंत्री श्री विल्सन ने घोषित किया कि पौंड के अवमूल्यन के प्रश्न को लेकर उनकी सरकार इस्तीफा नहीं देगी।

२-१२-'६७ : अमेरिका ने घोषणा की कि वह आगामी वर्ष में भारत को ३५ लाख टन अनाज बेचेगा।

१-१२-'६७ : साइप्रस के प्रश्न पर ग्रीस और तुर्की में समझौता हो गया।

कार्यकर्ता की डायरी से

ता० १०-११-'६७ : लदनिया प्रखण्ड के पश्चिमी भाग के ग्रामदानी गाँव पदमा की एक सभा में ग्रामदान की घोषणा के बाद ग्रामदान को पक्का करने और गाँव के विकास के लिए नये नये कदम उठाने की चर्चा हुई। इस अवसर पर आचार्य राममूर्तिजी ने बताया कि ग्रामदान के बाद गाँव की जो ग्रामसभा बनेगी, वह गाँव के सब व्यक्तियों के विकास का ध्यान उसी तरह रखेगी, जिस तरह एक परिवार में प्रत्येक सदस्य के विकास का ध्यान रखा जाता है। गाँव का सबसे बड़ा उद्योग खेती है। गाँव के जिन लोगों का जीवन खेती से जुड़ा है, उन्हें हम चार तरह के लोगों के रूप में देख सकते हैं। वे हैं : जमीन के मालिक, मेहनत करनेवाले मजदूर, खेती में समय पर पूँजी का सहारा देनेवाले महाजन तथा गाँव के उन लोगों की जमीन को आबाद करनेवाले बँटाईदार, जो खुद अपनी जमीन नहीं जोतते। इस तरह ग्रामसभा इन सभी लोगों के हित का ध्यान रखकर यह व्यवस्था करेगी कि समाज के हर व्यक्ति को ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी मिले।

सभा में निर्णय हुआ कि लदनिया प्रखण्ड के सभी गाँवों में ग्रामसभाएँ संगठित की जायँ, जो गाँव-गाँव में ग्रामदान में प्राप्त बीघा-कट्ठा जमीन बँटवायें। वर्तमान फसल से ही ग्रामकोष संग्रह करने का भी निर्णय हुआ।

लदनिया की आम सभा : लगभग २ हजार लोग उपस्थित थे। श्री राममूर्तिजी ने कहा कि सर्वसम्मति से गाँव-गाँव में ग्रामसभा का गठन होना चाहिए, तथा गाँव के हर व्यक्ति को भोजन, वस्त्र, काम, बच्चों की पढ़ाई तथा बीमारों की दवाई आदि का प्रबन्ध करने का आश्वासन मिलना चाहिए। उन्होंने कहा कि यह काम जमीनवाले, पूँजीवाले, मेहनत और बुद्धिवालों के मिलकर सोचने और तमाम लोगों के सहयोग से ही हो सकेगा।

११-११-'६७ : पदमा से लदनिया आते हुए रास्ते में श्री राममूर्तिजी से लाजेडीह ग्रामसभा के सदस्यों ने भेंट की। ग्रामसभा के उत्तरदायित्व की याद दिलाते हुए श्री राममूर्तिजी ने ग्रामवासियों से कहा कि गाँव के सभी लोगों को काम मिले, तथा सबके पेट भरने लायक अन्न गाँव में उपजाया जा सके, इसकी व्यवस्था करनी है। सर्वोदय का मूलमंत्र है कि गाँव की आन्तरिक व्यवस्था में गाँववालों का सहकार चले और बाहरी व्यवस्था सरकार करे। ग्रामसभा गाँव के लिए जो कुछ करेगी, उसमें उससे भूलें भी हो सकती हैं, पर इसकी चिन्ता नहीं करनी है। ग्रामसभा अपने काम के सिलसिले में यदि निम्नलिखित मापदण्ड रखे, तो वह ९०-९५ प्रतिशत आपत्तियों से बच सकती है। वे माप दण्ड हैं :

- ग्रामसभा सर्वसम्मति से कोई भी निर्णय ले।
- वह जो भी योजना बनाये, उसे गाँव के सबसे कमजोर व्यक्ति का हित सबसे पहले ध्यान में रखकर कार्यान्वित करे।

—उदित नारायण,
लदनिया, दरभंगा

सूचना :

सफाई तथा भंगी-मुक्ति का प्रशिक्षण

ता० १-१-६८ से १५-३-६८ तक आश्रम पट्टीकल्याणा, जिला करनाल में केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि की ओर से ग्राम-सफाई तथा भंगी-मुक्ति का प्रशिक्षण चालू हो रहा है। प्रशिक्षार्थी की योग्यताएँ नीचे लिखे अनुसार हों : (१) हिन्दी बोलना, पढ़ना तथा लिखना अच्छी तरह आता हो। (२) अंग्रेजी का भी थोड़ा ज्ञान होना आवश्यक है। (३) आयु १९ और ३५ वर्ष के बीच हो। (४) गांधी विचार में निष्ठा हो।

विद्यालय की ओर से प्रशिक्षार्थियों को नीचे लिखे अनुसार आश्वासन दिये जाते हैं :-

(१) ६० रु० मासिक छात्रवृत्ति मिलेगी।

(२) आने-जाने का तीसरे दर्जे का मार्ग व्यय दिया जायेगा।

(३) प्रशिक्षण के बाद विद्यालय किसी भी प्रशिक्षार्थी को कार्य देने के लिए जिम्मेदार नहीं होगा।

अधिक जानकारी के लिए आचार्य, सफाई विद्यालय, आश्रम पट्टीकल्याणा, जिला-करनाल (हरियाणा) से पत्र व्यवहार करें।

समाचार डायरी

देश :

२७-११-'६७ : चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने कहा कि भारतीय साम्यवादी दल पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाना चाहिए।

२८-११-'६७ : वाराणसी के छात्रों ने राजभाषा-संशोधन विधेयक के विरोध में अंग्रेजी विरोधी प्रदर्शन किया।

२९-११-'६७ : संसद में कांग्रेस व गैर-कांग्रेस सदस्यों ने माँग की कि सारे देश को एक खाद्य-इकाई माना जाय।

३०-११-'६७ : गृहमंत्री श्री चह्वाण ने स्पष्ट किया कि प० बंगाल का घोष-मंत्रिमंडल संविधान के अनुसार स्थापित है।

१-१२-'६७ : राष्ट्रीय विकास परिषद ने योजना आयोग के उपाध्यक्ष श्री गाडगिल का कृषि आयकर सम्बन्धी सुझाव अस्वीकार कर दिया।

२-१२-'६७ : राष्ट्रीय विकास परिषद ने चौथी योजना अप्रैल १९६९ से आरम्भ करने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

३-१२-'६७ पश्चिम बंगाल के संयुक्त मोर्चे ने १८ दिसम्बर से व्यापक सत्याग्रह करने का निश्चय किया है।

विदेश :

२९-११-'६७ : १२९ वर्ष की ब्रिटेन की दासता समाप्त होकर दक्षिण यमन गणतंत्र का जन्म हुआ।

३०-११-'६७ : प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने आज घोषणा की कि भारत सरकार ने दक्षिण यमन गणराज्य को मान्यता दे दी है।

१-१२-'६७ . ब्रिटेन के प्रधानमंत्री श्री विल्सन ने घोषित किया कि पौंड के अवमूल्यन के प्रश्न को लेकर उनकी सरकार इस्तीफा नहीं देगी।

२-१२-'६७ . अमेरिका ने घोषणा की कि वह आगामी वर्ष में भारत को ३५ लाख टन अनाज बेचेगा।

३-१२-'६७ : साइप्रस के प्रश्न पर ग्रीस और तुर्की में समझौता हो गया।

कार्यकर्ता की डायरी से

ता० १०-११-'६७ : रुदनिया प्रखण्ड के पश्चिमी भाग के ग्रामदानी गाँव पदमा की एक सभा में ग्रामदान की घोषणा के बाद ग्रामदान को पक्का करने और गाँव के विकास के लिए नये नये कदम उठाने की चर्चा हुई। इस अवसर पर आचार्य राममूर्तिजी ने बताया कि ग्रामदान के बाद गाँव की जो ग्रामसभा बनेगी, वह गाँव के सब व्यक्तियों के विकास का ध्यान उसी तरह रखेगी, जिस तरह एक परिवार में प्रत्येक सदस्य के विकास का ध्यान रखा जाता है। गाँव का सबसे बड़ा उद्योग खेती है। गाँव के जिन लोगों का जीवन खेती से जुड़ा है, उन्हें हम चार तरह के लोगों के रूप में देख सकते हैं। वे हैं : जमीन के मालिक, मेहनत करनेवाले मजदूर, खेती में समय पर पूँजी का सहारा देनेवाले महाजन तथा गाँव के उन लोगों की जमीन को आबाद करनेवाले बँटाईदार, जो खुद अपनी जमीन नहीं जोतते। इस तरह ग्रामसभा इन सभी लोगों के हित का ध्यान रखकर यह व्यवस्था करेगी कि समाज के हर व्यक्ति को ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी मिले।

सभा में निर्णय हुआ कि रुदनिया प्रखण्ड के सभी गाँवों में ग्रामसभाएँ संगठित की जायँ, जो गाँव गाँव में ग्रामदान में प्राप्त बीघा कट्ठा जमीन बँटवायें। वर्तमान फसल से ही ग्रामकोष संग्रह करने का भी निर्णय हुआ।

रुदनिया की आम सभा : लगभग ३ हजार लोग उपस्थित थे। श्री राममूर्तिजी ने कहा कि सर्वसम्मति से गाँव गाँव में ग्रामसभा का गठन होना चाहिए तथा गाँव के हर व्यक्ति को भोजन, वस्त्र, काम, बच्चों की पढ़ाई तथा बीमारों की दवाई आदि का प्रबन्ध करने का आश्वासन मिलना चाहिए। उन्होंने कहा कि यह काम जमीनवाले, पूँजीवाले, मेहनत और बुद्धिवालों के मिलकर सोचने और तमाम लोगों के सहयोग से ही हो सकेगा।

११-११-'६७ : पदमा से रुदनिया जाते हुए रास्ते में श्री राममूर्तिजी से खाजेडीह ग्रामसभा के सदस्यों ने भेंट की। ग्रामसभा के उत्तरदायित्व की याद दिलाते हुए श्री राममूर्तिजी ने ग्रामवासियों से कहा कि गाँव के सभी लोगों को काम मिले, तथा सबके पेट भरने लायक अन्न गाँव में उपजाया जा सके, इसकी व्यवस्था करनी है। सर्वोदय का मूलमंत्र है कि गाँव की आन्तरिक व्यवस्था में गाँववालों का सहकार चले और बाहरी व्यवस्था सरकार करे। ग्रामसभा गाँव के लिए जो कुछ करेगी, उसमें उससे भूलें भी हो सकती हैं, पर इसकी चिन्ता नहीं करनी है। ग्रामसभा अपने काम के सिलसिले में यदि निम्नलिखित मापदण्ड रखे, तो वह ९०-९५ प्रतिशत आपत्तियों से बच सकती है। वे माप दण्ड हैं :

- ग्रामसभा सर्वसम्मति से कोई भी निर्णय ले।
- वह जो भी योजना बनाये, उसे गाँव के सबसे कमजोर व्यक्ति का हित सबसे पहले ध्यान में रखकर कार्यान्वित करे।

—उदित नारायण,
रुदनिया, दरभंगा

सूचना .

सफाई तथा भंगी मुक्ति का प्रशिक्षण

ता० १ १ ६८ से १५ ३ ६८ तक आश्रम पट्टीकल्याणा, जिला करनाल में केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि की ओर से ग्राम-सफाई तथा भंगी मुक्ति का प्रशिक्षण चालू हो रहा है। प्रशिक्षार्थी की योग्यताएँ नीचे लिखे अनुसार हों : (१) हिन्दी बोलना, पढ़ना तथा लिखना अच्छी तरह आता हो। (२) अंग्रेजी का भी थोड़ा ज्ञान होना आवश्यक है। (३) आयु १९ और ३५ वर्ष के बीच हो। (४) गांधी विचार में निष्ठा हो।

विद्यालय की ओर से प्रशिक्षार्थियों को नीचे लिखे अनुसार आश्वासन दिये जाते हैं –

(१) ६० रु० मासिक छात्रवृत्ति मिलेगी।

(२) आने जाने का तीसरे दर्जे का मार्ग व्यय दिया जायेगा।

(३) प्रशिक्षण के बाद विद्यालय किसी भी प्रशिक्षार्थी को कार्य देने के लिए जिम्मेदार नहीं होगा।

अधिक जानकारी के लिए आचार्य, सफाई विद्यालय, आश्रम पट्टीकल्याणा, जिला-करनाल (हरियाणा) से पत्र व्यवहार करें।

एक नयी यांत्रिकी (टेक्नालाजी) का अग्रदूत

भारत में कम्प्यूटर के अधिकाधिक उपयोग का कुछ लोग हार्दिक स्वागत करना चाहते हैं और कुछ लोग इसका नियन्त्रित उपयोग करने के पक्ष में हैं।

कम्प्यूटर के नियन्त्रित उपयोग चाहनेवालों का कहना है कि कम्प्यूटर सिर्फ मिहनत और समय की बचत करनेवाली मशीन ही नहीं है, परन्तु कम्प्यूटर एक नयी यांत्रिकी (टेक्नॉलॉजी) का अग्रदूत है, जो देश के तमाम उद्योगों के ढाँचे को बुनियाद से बदलने की परिस्थिति पैदा करेगा। इस परिस्थिति के कुछ अनिवार्य सामाजिक और राजनीतिक परिणाम सामने आयेंगे। भारत में कम्प्यूटर का व्यापक उपयोग किये जाने के पहले हमें आनेवाली परिस्थिति को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। कम्प्यूटर द्वारा प्राप्त सुविधाओं और उससे उत्पन्न होनेवाली समस्याओं, दोनों का ही हमें ज्ञान और भान होना चाहिए तभी हम उसके उपयोग की उचित सीमाएँ निर्धारित कर पायेंगे।

कम्प्यूटर का हार्दिक स्वागत करनेवाले कहते हैं कि *जिस तरह मशीन ने* आदमी को अप्रिय शारीरिक श्रम करने की लाचारी से मुक्ति दिला दी, उसी तरह कम्प्यूटर मनुष्य को नीरस और जटिल बौद्धिक कामों से छुटकारा दिलायेगा। अब जब कि दुनिया में मशीन और कम्प्यूटर के आपसी मेल से स्वचालित उद्योगों (ऑटोमेशन) का फैलाव हो चुका है तो पूरे मानव समाज को फुरसत और आराम की जिन्दगी बिताने की सुविधा पाना सिर्फ कल्पना की बात नहीं रह गयी है। मनुष्य के इस सपने को व्यावहारिक रूप देने की परिस्थिति कम्प्यूटर ने पैदा कर दी है। स्वचालित उद्योगों के प्रचलन से मनुष्यों का कहीं अधिक मानवीय उपयोग हो सकेगा। समाज में स्वचालित उद्योगों की स्थापना का एक यह भी परिणाम होगा कि जैसे अभी स्वतंत्रता पर मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है, उसी प्रकार, जीवन के उपभोग की आवश्यक सामग्रियों पर भी पर इसी प्रकार के जन्मसिद्ध अधिकार का दावा कर सकेगा। तब आज की तरह परिश्रम करने और पसीना बहाने की जरूरत ही नहीं रह जायेगी।

कम्प्यूटर के समर्थकों का यह आशावाद कहाँ तक सही है, इसको जाँचना अभी सम्भव नहीं है। इसे फिलहाल हम एक मोहक और आकर्षक सपना मान सकते हैं। दुनिया के पूँजीवादी देशों में कम्प्यूटरों का उपयोग इसलिए किया गया कि यद्यपि शुरू में इसमें अधिक *पूँजी के विनियोग की आवश्यकता पड़ती है,* पर चूँकि कम्प्यूटर के कारण भारी संख्या में मजदूरों और अन्य कर्मचारियों के काम में लगने की आवश्यकता समाप्त हो जाती है, इसलिए कारखानेदारों को अपने उद्योगों से भारी मुनाफा होने लगता है। पूँजीवादी देशों में बेकारी की समस्या हमारे देश के जैसी भीषण नहीं हो पायी है, क्योंकि एक तो उन देशों की जनसंख्या हमारे देश के जैसी विशाल नहीं है, दूसरे औद्योगिक विकास में पिछड़े देशों से आगे होने के कारण उन्हें दुनिया के *अविकसित देशों के बाजारों में अपना* औद्योगिक सामान खपाने का सुअवसर प्राप्त है।

वस्तुतः दुनिया के व्यावसायिक लोग कम्प्यूटर के लिए अत्यन्त लालायित हैं, क्योंकि कम्प्यूटर उन्हें भारी मुनाफे की सम्भावना प्रदान करता है। इसके विपरीत मजदूर वर्ग के लोग कम्प्यूटर से भयभीत हैं, क्योंकि वह उन्हें बेकार बनाता है। अमेरिका में स्वचालित उद्योगों के प्रसार के कारण प्रति सप्ताह लगभग ३५ हजार के हिसाब से मजदूर बेकार होते जा रहे हैं।*

बढ़ती बेकारी हमारे देश की सबसे तात्कालिक और कठिन समस्या है। यह देश लगातार तीन पंचवर्षीय योजनाओं के दौर से गुजर चुका। अब चौथी योजना का दौर चल रहा है। प्रत्येक योजना में भारी मात्रा में देशी और विदेशी पूँजी का विनियोग हुआ है, फिर भी प्रत्येक योजना के अन्त में न केवल बेकार श्रमिकों की संख्या बढ़ती गयी है, बल्कि पढ़े लिखे बेकारों की भी तादाद बढ़ती ही गयी है। इस अवधि में देश में जितने तकनीशियन और इंजीनियर तैयार हुए, उनमें से भी अधिकांश बेकारी के शिकार हैं।

* 'न्यूज वीक'—२५ जनवरी, १९६५
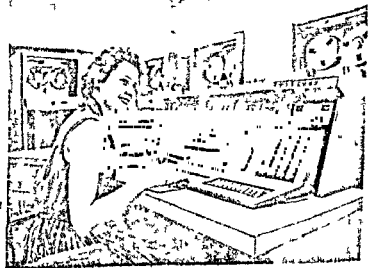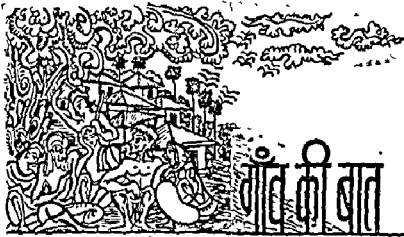
कम्प्यूटर : कम्प्यूटर चालिका

इस अंक में पढ़ें—

अगले अंक का आकर्षण—

८ दिसंबर, '६७
वर्ष २, अंक ९] [१८ पैसे

सवाल जिसका, जवाब उसका

"मेरे बाबा ने कांग्रेस में काम किया। उनके बाद मेरे पिताजी इस क्षेत्र के नेता रहे। मैं जब से कालेज की पढ़ाई खत्म करके आया हूँ, मेरे ऊपर भी बराबर पार्टियों का जोर पड़ रहा है कि उनकी ओर से काम करूँ। लेकिन मैं अपने चारों ओर जो कुछ देख रहा हूँ, उससे मेरा जी घबड़ा उठता है।"

नेपाल की सीमा पर एक गाँव में रहनेवाला वह युवक था। २२-२३ साल की उमर, पढ़ा-लिखा, अच्छे परिवार का, देश-दुनिया को जानने-समझनेवाला। उसकी बातों से लगता था कि खून में बाबा और पिता का असर है, मन में कुछ करने की उमंग है। लेकिन घुटन महसूस कर रहा है, सोच नहीं पा रहा है कि क्या करे! उसकी बातें सुनकर मैंने कहा, "क्या हर्ज है? अपनी पसन्द की पार्टी चुन लीजिये, और डटकर काम कीजिये। पंडों की कमी नहीं है, यजमान को अपनी पसंद का पंडा चुन लेना चाहिए।" उसने फौरन उत्तर दिया, "यही करना हो तो किया जा सकता है। लेकिन जब से घर आया हूँ, मैं यह देखकर हैरान हूँ कि पार्टियों का यही धंधा रह गया है कि गाँव-गाँव में झगड़ा लगायें। मेरे गाँव में पहली बार ब्राह्मणों और हरिजनों में झगड़ा हुआ है। अब अदालत में मुकदमा चल रहा है। यही हाल उस कटेसर गाँव का है। वहाँ किसानों और बँटाईदारों में किसी दिन छिड़ सकती है। उधर एक महीने से युगल बाबू वहाँ बराबर आते-जाते हैं। उन्होंने कहा कि एक महीने में यह नौबत आ जाय तो अच्छा काम ही माना जायगा।"

"लेकिन, गाँववाले इस आसानी से धोखे में आ कैसे पाते हैं?" मैंने पूछा।

"यह तो मानना ही पड़ेगा कि गाँव में जो बड़े हैं, धनी हैं, मालिक हैं, उनमें और छोटों में, गरीबों में सम्बन्ध अच्छे नहीं हैं। अन्याय भी बहुत है। और, अब गाँव में कोई ऐसा

नेता गद्दी की होड़ में : जनता समस्याओं की जकड़ में

नहीं रह गया है, जिस तक जमाने की हवा न पहुँची हो। बड़ा आसान हो गया है कुछ खिलाफ भड़का देना, जब कि होना यह चाहिए था कि नेता गाँव में जाते, सुलगती हुई आग को बुझाते, और वहाँ जो सवाल हैं उनके सही हल गाँववालों को बताते।"

"गाँव के सवालों के जवाब बाहर के लोग क्या सुझायेंगे? जिनका सवाल है उन्हींको जवाब ढूँढना पड़ेगा। अब बुद्धि अपनी लगाना सीखिये।" मैंने कुछ अधीरता के साथ जवाब दिया।

"कोई रास्ता सूझता नहीं। मेरे ही गाँव को लीजिये। नक्सालवाड़ी की हवा पूर्णिया होती हुई मेरे इलाके में भी पहुँच रही है, और उसके असर में मालिकों और बँटाईदारों के तनाव दिनोदिन बढ़ते जा रहे हैं। कुछ दिनों में क्या होगा, कहा नहीं जा सकता।" चिंता और भय-भरे शब्दों में उस युवक ने कहा।

"अगर आपके गाँव में ग्रामसभा बन गयी हो तो तैयारी के साथ उसकी बैठक बुलाइये। वहाँ लोगों के सामने यह बात रखिये कि गाँव में कोई मालिक हो, मजदूर हो, महाजन हो, बँटाईदार है, सब गाँव के रहनेवाले हैं, पड़ोसी हैं। सबको ईमान की रोटी और इज्जत की जिन्दगी मिलनी चाहिए। यह कैसे होगा, सब लोग मिलकर सोचें।"

"बात तो अच्छी लगती है, लेकिन कोई अपना स्वार्थ छोड़ने को राजी नहीं है, और एक को दूसरे की नेकनीयती में भरोसा नहीं है। आपस में बात होना ही मुश्किल है। रास्ता तो तब निकले जब बात हो।"

"गाँव के जीवन में हरएक के लिए जगह निकालनी ही है, यह बात मजबूती के साथ सामने रखनी चाहिए। गरीबों की ओर से रोटी और इज्जत की माँग होती है तो उसे यह कहकर नहीं टाला जा सकता कि किसीके भड़काने से वे ऐसा कर रहे हैं। अगर दूसरों में उनकी बात सुनने की तैयारी हो तो उनसे भी कहा जा सकता है कि जैसे उनकी माँगें हैं, उसी तरह जमीनवालों और पैसेवालों की भी माँगें हैं। हरएक की उचित माँगों को सुनने और मानने की तैयारी होगी तभी कोई रास्ता निकल सकता है। जब किसीका दूसरे के बिना काम नहीं चल सकता, तो मिलकर रहने और काम करने का उपाय हो ही सकता है। मुख्य बात यह है कि गाँव में सबके सवालों को एकसाथ सामने रखकर सोचना चाहिए। मालिक-मजदूर आदि के सवालों पर अलग-अलग सोचियेगा तो कदापि कोई रास्ता नहीं निकलेगा।"

"क्या कहूँ, गाँव का जीवन एक भयंकर जाल है। एक जगह छूइये तो सब तार एकसाथ झनझना उठते हैं।"

"यह कैसे?"

"बात यह है कि लोगों ने नाजायज तरीके से जमीनें लिखायी हैं, कर्ज में सूद-दर-सूद जोड़कर उसे बढ़ाया है, अपने स्वार्थ के सामने किसी दूसरे की बात मानने की कोई तैयारी नहीं रह गयी है। कानून तक को नहीं मानते। ऐसी हालत में क्या किया जाय?"

"एक बार कानून को अलग रखकर और गाँव को सामने रखकर सोचने को कहिये। गाँव में कुछ लोग तो होंगे, और इतने गाँवों में कुछ गाँव तो होंगे, जो आपसी रास्ते की अच्छाई को महसूस करेंगे! फिर उनकी मिसाल फैलेगी।"

"और जहाँ दूसरे गाँव के लोगों से हुज्जत हो वहाँ?"

"वहाँ आपकी ग्रामसभा दूसरे गाँव की ग्रामसभा से बात करेगी। लेकिन आपकी ग्रामसभा में बात करने की शक्ति तभी आयेगी जब वह अपने यहाँ आपसी निर्णय से सही दिशा में कदम उठा चुकेगी। शान्ति के तरीकों में यह शर्त रहेगी ही।"

"मुझे सन्देह होता है कि ऐसा करने से गाँव के दबे हुए झगड़े भी उभड़ जायेंगे।"

"इसकी चिन्ता मत कीजिये। गाँव से बराबर कहते जाइये कि सवाल तुम्हारे हैं तो जवाब तुम्हींको ढूँढना होगा। पार्टियों को छोड़कर पड़ोसियों की ओर देखने की नयी हिम्मत दिखानी होगी। जवाब नहीं निकलेगा तो विस्फोट को रोकने का क्या उपाय है?"

वह युवक उठने लगा तो मैंने देखा कि उसकी आँखों में कुछ चमक और चेहरे पर भरोसे की झलक थी। ●

गाँव को तोड़नेवाले बाहरी प्रहारों से गाँव की रक्षा का एक ही उपाय है: ग्रामसभा: सबकी, सबके लिए, सम्मिलित शक्ति।

जनता की शक्ति ही प्रबल हो

बहनों की लोकयात्रा-टोली लगभग ४ बजे गगोली पहुँची। दिन के काम से फुरसत पाकर मुखियाजी श्री रामप्रसाद मिश्र हमारे साथ गपशप करने आये। वे बहुत समझदार, सेवाभावी और अनुभवी छोटे किसान हैं। वे बड़े चाव और श्रद्धा से अपनी देहाती बोली में अपने अनुभव सुनाते रहे।

"बहिनजी! इस गाँव में पुराने जमाने में हम लोगों ने मिलकर 'मुट्ठिया' के द्वारा कितने ही काम किये हैं। आसपास के पाँच-छः गाँवों ने मिलकर 'मुट्ठिया' के द्वारा समस्तीपुर में बैंक का मकान बनाने में बहुत मदद की। हमने स्कूल बनाया, हरिजनों के लिए कुएँ खोदे, कई छोटे-मोटे काम किये।" फिर उनके चेहरे पर कुछ निराशा दिखाई दी। "...लेकिन बहिनजी, स्वराज्य मिलने के बाद ये सब काम ठप हो गये। अब कोई कुछ नहीं करना चाहता है।"

इस गाँव में एक बड़ी कोठी है। नील वाले साहब यहाँ पर रहते थे। मैंने उसके बारे में पूछा कि इसे किसने खरीदा? और क्या हालत है? श्री रामप्रसादजी ने उत्तर दिया कि यह कोठी बालेश्वर बाबू ने सात सौ बीघे जमीन के साथ सात लाख रुपये में खरीदी थी। अब जमीन बेचते-बेचते तीन सौ एकड़ उनके पास रह गयी है। लगभग एक सौ एकड़ बाहरवाले जोतते हैं। बाकी छोटे किसान हैं, आध, एक-दो बीघे जोतनेवाले। बालेश्वर बाबू ने इस गाँव में एक कट्ठा जमीन भी भूदान में नहीं दी। वे कुदंटी प्रखण्ड में एक दूसरे बड़े स्टेट पर रहते हैं। यहाँ कभी नहीं आते हैं। वे मजदूरों के द्वारा कृषि का काम कराते हैं। इस वर्ष छोटे किसानों के खेतों में औसत एक कट्ठे में तीन मन मक्का हुआ, और बालेश्वर बाबू के खेतों में एक एकड़ में चार मन।

यहाँ मैं छोटे किसानों की पैदावार और बालेश्वर बाबू की पैदावार के तुलनात्मक आँकड़े दे रही हूँ—

किसान के खेत में एक कट्ठे में पैदावार ३ मन
" " बीघे में " ६० मन
" " ३०० बीघे में " १८,००० मन
बालेश्वर बाबू के ३०० बीघे में " १,२०० मन
देश के उत्पादन में क्षति १६,८०० मन

बालेश्वर बाबू यदि उस जमीन को भूदान में देते तो वास्तव में वह एक सिरदर्द से छुट्टी पाते। यदि बँटाईदारों को दे देते, तो देश का उत्पादन बढ़ जाता, और बँटाईदार तथा बालेश्वर बाबू, दोनों को फायदा होता।

हाल ही में मध्यप्रदेश में घूमते समय हमें जनता की शक्ति का एक ऐसा ही अच्छा उदाहरण मिला था। वहाँ के एक गाँव के लोगों ने सर्वसम्मति से अपना-अपना प्रतिनिधि चुनकर एक अनौपचारिक ग्राम-पंचायत बनायी।

उस गाँव में कुओं पर पम्प लगाने के लिए चालीस किसानों ने बिजली के कनेक्शन के लिए दरखास्त दी थी। इंजीनियर साहब आये। जल्दी कनेक्शन देने के लिए एक किसान से ५०० रुपये पर सौदा तय हुआ। एक दूसरे किसान ने सोचा कि मुझे पीछे नहीं पड़ना चाहिए, तो उसके १००० रु० हस्तान्तरित हुए। गाँव में यह खबर मालूम हुई तो ग्राम-पंचायत की बैठक बुलायी गयी। सख्ती से उस अन्याय की निन्दा हुई और तय हुआ कि या तो सबको एक साथ ठीक ढंग से बिजली मिलेगी या तो किसीको नहीं मिलेगी। दरखास्त लेकर शिष्टमण्डली जिला मजिस्ट्रेट साहब के पास पहुँची। जिला मजिस्ट्रेट साहब ने मामला समझकर इंजीनियर साहब को हुक्म दिया कि उस गाँव में चालीस कुओं पर बिजली फौरन लगेगी, और कोई लेन-देन की बात नहीं होगी।

इंजीनियर साहब ने फिर गाँव में जाकर कहा कि ठीक है, लेकिन फिर भी १०० रु० फी व्यक्ति तो लगेगा ही। ग्रामपंचायत की बैठक फिर हुई। सख्त इनकार हुआ। इंजीनियर साहब को एक पैसा नहीं मिला, लेकिन चालीस किसानों को बिजली मिल गयी।

उसके बाद पंचायत की बैठक में एक और बात तय हुई कि सब किसान मिलकर एक ही कंपनी को पम्प का आर्डर भेजेंगे, ताकि इससे दाम में कुछ कमी हो, और बाद की मरम्मत और देखरेख में सहूलियत हो।

—सरला देवी

गाँव को संघर्ष से कैसे बचायें ?

श्री सम्पादकजी,

"गांव की बात"

महोदय,

पिछले दो अंकों में प्रकाशित एक दूसरी नक्सलबाड़ी (पूर्णिया) की विस्तार में प्रकाशित जानकारी पढ़ी। मालिक-मजदूरों के सम्बन्धों में अत्याचार, आतंक और शोषण के फलस्वरूप जो तनाव आया, और उसका साम्यवादी लोगों ने जो फायदा उठाया, वह भी पढ़ा। कुल मिलाकर गांवों में संघर्ष की आग भड़की। कहने की जरूरत नहीं कि उस आग में पूरा गांव जल सकता है।.... शायद जल भी रहा है। यह सिलसिला बढ़ता गया तो किसी दिन भारत भी इस आग में जलता दिखाई देगा।

लेकिन इस स्थिति में आप सर्वोदयवालों के इस समस्या के समाधान के क्या सुझाव हैं, प्रयास हैं ? कृपया इस पर कुछ प्रकाश डालें, क्योंकि संघर्ष की आग से गांव और देश को बचाने की एक हल्की-सी आशा की किरण सर्वोदय और विनोबा में दिखाई दे रही है। —एक पाठक

× × ×

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। खुशी है कि आपने इस प्रश्न पर विचार किया। हर एक को करना चाहिए। इस प्रश्न के उत्तर पर हमारे देश का भविष्य निर्भर है। आज साफ दिखाई दे रहा है कि अगर हमने सद्बुद्धि और सद्भावना का रास्ता छोड़कर संघर्ष का रास्ता पकड़ा तो देश गृहयुद्ध की आग में जलेगा, और वियतनाम की तरह बाहरी शक्तियों के संघर्ष के लिए अखाड़ा बन जायगा। तब हम न स्वतंत्र रह सकेंगे, और न सभ्य ही बन सकेंगे। इस सन्दर्भ में मैं चाहूँगा कि आप निम्नलिखित बातों पर ध्यान दें, और सोचें कि आपने 'मालिक-मजदूरों के सम्बन्धों में अत्याचार, आतंक और शोषण के फलस्वरूप' आये हुए जिस तनाव की चर्चा की है उसका कोई रास्ता इन बातों से निकलता है या नहीं। यह भी सोचिये कि क्या कोई दूसरा रास्ता भी है।

(१) सर्वोदय सबका उदय चाहता है। वह मानता ही नहीं कि शोषक और शोषित जैसे कोई दो वर्ग हैं। जरूर, समाज में कुछ लोग समर्थ हैं, और कुछ असमर्थ हैं। यह भेद है, जो साफ दिखाई देता है। यह भेद समाज की गलत व्यवस्था के कारण पैदा हुआ है। शोषण व्यवस्था में है। मनुष्य तो मनुष्य है, वह न शोषक है, न शोषित। इसलिए मनुष्य और मनुष्य के बीच संघर्ष का सवाल ही नहीं उठता।

(२) सर्वोदय के लिए सब मालिक हैं। कोई पूँजी का मालिक है, कोई भूमि का मालिक है, तो कोई मेहनत का मालिक है। आप यह भी कह सकते हैं कि तब तो कोई भी मालिक नहीं है। सब धरती-माता और समाज के सेवक हैं।

(३) मनुष्य और मनुष्य के बीच इस मूल एकता और समानता के कारण एक और दूसरे की कमाई में अधिक अन्तर नहीं होना चाहिए। खाना, कपड़ा, तथा जीवन की सामान्य आवश्यकताएँ प्रायः सबकी समान होती हैं।

(४) अगर हम वर्ग-संघर्ष की बात दिमाग से निकाल दें तो गांव में रहनेवाले सब पड़ोसी दिखाई देने लगेंगे, और गांव परस्पर-विरोधी स्वार्थों का अखाड़ा नहीं रह जायगा। तब हम समझेंगे कि गांव का एक हित है—ग्रामहित।

(५) ग्रामहित के नाते हमारी कोशिश होनी चाहिए कि गांव में जितने सवाल पैदा हों वे सब गांव के भीतर, गांववालों की आपसी सम्मति से, हल हों। बाहर के नेता आयेंगे तो मालिक-मजदूर का झगड़ा लगायेंगे या पहले से लगे हुए झगड़े का बेजा फायदा उठायेंगे। उनसे झगड़ा घटेगा नहीं।

(६) गांव में मालिक, मजदूर, महाजन सबके अलग-अलग सवाल हैं। सबके सवालों पर ग्रामसभा में साथ विचार करना चाहिए, ताकि किसीको ऐसा न लगे कि वह छोड़ दिया गया।

(७) पूर्णिया में जो घटनाएँ हुई हैं, उनका मुख्य कारण यही है कि गांव के सवालों के बारे में गांव के लोगों ने अपन

पूरे गाँव को सामने रखकर कभी सोचा ही नहीं। नतीजा यह हुआ कि गरीब एक दिशा में गया, और धनी दूसरी दिशा में। जब कि दोनों की कठिनाइयाँ हैं, और दोनों के पास ऐसी चीजें हैं—भूमि, पूँजी और मेहनत—जिनकी गाँव को जरूरत है।

(८) ऐसा नहीं हुआ तो झगड़ा हुआ। झगड़ा भी हुआ तो होकर खत्म नहीं हो गया, बल्कि झगड़े की बुनियाद पड़ गयी। ऐसा होना गाँव के लिए बहुत बुरा है। इसलिए अब होना यह चाहिए कि ग्रामसभा की तुरन्त बैठक हो और उसके सामने दोनों के सवाल पेश हों। यह मानकर सवालों पर विचार किया जाय कि ग्रामसभा ग्राममाता है। और इस नाते उसे गाँव में रहनेवाले एक-एक व्यक्ति की रोटी और इज्जत की गारंटी लेनी होगी। और योजना बनानी पड़ेगी।

सद्भावना न्याय के ही आधार पर टिक सकती है। अन्याय और भाईचारे में विरोध है, लेकिन संघर्ष से न्याय नहीं प्राप्त किया जा सकता। मात्र इतना हो सकता है कि एक अन्याय की जगह दूसरा अन्याय होने लगे और एक करने-वाले की जगह दूसरा करने लगे।

(९) कोई खास झगड़ा हो तो उसके फैसले के लिए चों का सहारा भी लिया जा सकता है। अदालत में ने से झगड़ा बढ़ेगा और हमेशा के लिए दुश्मनी के बीज जायेंगे।

(१०) इस तरीके से तुरन्त शान्ति हो जाय, तो गाँव गरीबी और आपसी दुश्मनी का स्थायी हल निकाले। भूमिहीन को भूमि मिले। सबकी कमाई से ग्रामकोष इकट्ठा हो, सब बालिगों को मिलाकर ग्रामसभा बने जो गाँव की व्यवस्था और विकास की जिम्मेदारी ले। विकास के फल में भूमि, पूँजी और मेहनतवाले को उचित भाग मिले।

(११) इस तरह गाँव के संगठन के आधार पर ब्लाक और जिले का भी संगठन हो। इसी तरह होता चले। आप देखेंगे कि आज के सवालों का जवाब संघर्ष में नहीं है, बल्कि समता और समृद्धि की क्रान्ति में है। उत्तर है: क्रान्ति, शान्ति, शान्ति। ग्रामदान यही करने की कोशिश कर रहा है।

आशा है, आप गाँववाले भाइयों के साथ इन बातों पर विचार करेंगे, और फिर लिखेंगे।

आपका
संपादक

८ दिसम्बर, '६७

पूजा और नमाज

प्रात:काल का समय था। अभी पूरा उजाला नहीं हुआ था, लेकिन पूरब की कोख में लाली-मिश्रित आभा प्रकट हो चुकी थी। पहलेजा घाट पर खड़े जहाज के प्रथम श्रेणी के 'डेक' पर एक-एक करके यात्री आने लगे। अभी सरदी पूरी तेजी पर नहीं थी, इसलिए ऐसे समय यात्रियों का बंद कमरे की अपेक्षा बाहर खुले डेक की ओर झुकाव होना स्वाभाविक था।

एक सेठसाहब आये, खुले बदन पर कीमती शाल ओढ़े हुए। मालूम होता था कि नीचे गंगा में स्नान करके आये थे। कुली से सामान वहीं रखवाकर और सदा की तरह पैसे देने-लेने की हुज्जत के बाद, खुले डेक पर आसन बिछाकर जिधर पूरब था उस ओर मुँह करके वे बैठ गये। उन्होंने पूजा का सामान निकालकर सामने सजाया—अर्घ्य के लिए तांबे का कलश, चंदन घिसने के लिए छोटा-सा पत्थर का 'चकला', एक-दो छोटी तस्वीरें—और पूजा के लिए बैठ गये। उसी समय एक सफेद दाढ़ीवाले मुसलमान भाई आये। सेठसाहब के पीछे की तरफ जहाँ खाली जगह थी वहाँ 'जा-नमाज' बिछाकर पश्चिम की ओर मुँह करके उन्होंने नमाज पढ़ना शुरू कर दिया। जहाज के खुले डेक पर, एक ही जगह, एक ओर पूरब की तरफ मुँह किये पूजा करनेवाले सेठसाहब, और दूसरी तरफ पश्चिम की ओर मुँह करके नमाज पढ़नेवाले 'मौलवीसाहब' का अपने-अपने विश्वास, तरीके और ढंग से उपासना करना मानो हमारे देश की संस्कृति, उदारता और स्वातंत्र्य का प्रतीक ही था!

थोड़ी देर में उस पार पटना जाने के लिए जहाज खुला और मुड़कर गंगा की धार की ओर बढ़ने लगा। हमारी ओर-वाला डेक का हिस्सा जो पहले उत्तर की ओर था, वह घूम-कर अब दक्षिण की ओर हो गया और जहाज मझधार में आकर तेजी से बहने लगा। सेठसाहब की पूजा और मौलवी-साहब की नमाज चल रही थी। अचानक मेरा ध्यान इस बात की ओर गया कि सेठसाहब जो पूरब की ओर मुँह करके बैठे थे, उनका मुँह अब पश्चिम की ओर था और मौलवीसाहब का पूरब की ओर! इस लीला के द्वारा मानो भगवान् मनुष्य को सबक दे रहा था कि मुझ सर्वव्यापी की उपासन के लिए पूरब और पश्चिम, पूजा और नमाज सब एक ही है।

—सिद्धराज ढड्ढा

सबसे बड़ा अन्याय

राम अपने पिता का इकलौता पुत्र था। गांधीजी के सत्याग्रह-आन्दोलन में जेल गया। जो भी पैत्रिक उपार्जित सपत्ति थी उससे भी हाथ धोना पडा। आखिर सत्याग्रही राम की आजादी की आकाक्षा पूरी हुई। १५ अगस्त, १९४७ को राम फूला न समाया। वह खुशी में कहता, गरीब भारत का उदय होगा, भारत में गरीब अब नही रहेंगे। कभी-कभी भावनावश कहता—भारत माता की जय, गाधीजी की जय! स्वराज्य के बाद अपने पिता के दर्शनो के लिए गांव को प्रस्थान किया। किन्तु रास्ते में सुना कि पिताजी परिवार में अब नही रहे! वह सहम गया। राम का अपना व्यापक दायरा बनता जा रहा था! गाँव के लोगो को एकत्रित करके उसने समझाया कि भारत में आजादी के बाद कैसा परिवर्तन होगा। उसने इस पर विस्तृत योजना बनायी।

दिन बीतते गये, रातें कटती गयी। रामू देखता क्या है, कि गाधीजी चुपचाप एक क्षेत्र में लोकप्रिय थे। उसी क्षेत्र के बद्रीसिंह काफी धनवान व्यक्ति थे। जिन दिनो रामू सत्याग्रह में पकडा गया था, उन्हीं दिनो बद्रीसिंह शोषण-कार्यों में लगा रहा। चुनाव आया। अच्छा पैसा खर्च कर बद्रीसिंह ने उम्मीदवारी का टिकट पा लिया और एम० पी० बन गये। बेचारे रामू ने देखा कि अग्रेज की कुर्सी पर भारतीय साहब बैठ गये!

देश की विकास-योजना बनी, ब्लाक बने, सडकें बनी, अस्पताल बने, इन्टर से लेकर डिग्री कालेज और नये विश्व-विद्यालय खुले। सहकारी समिति के द्वारा कर्ज वितरित किया गया। इस प्रकार की अनेक योजनाएँ चलने लगीं। रामू की दृष्टि सदैव योजना पर थी कि कैसे गांव के गरीब इस योजना से लाभान्वित होंगे। लेकिन गाँव में गरीबो को न कर्ज मिल रहा है, न तो अनुदान ही। रामू ने गरीबो के बीच जाकर उनको समझाया। पास बैठा दीनू लुहार बोला—महाराज! सरकार तो अमीरो की है, गरीबो की सुनता कौन है? गांव में ब्लाकवाले आते हैं। कहते हैं-बाग लगाओ, अनुदान लो, कर्ज लो, शेयरपूंजी जमा करो। किन्तु महाराज! हमारे पास तो धन है नहीं, कैसे काम चलेगा? साहूकार कर्ज का डर दबाकर मनमानी करते हैं, देखते नही बद्रीसिंह के पिता को!

इस समस्या को सुलझाने हेतु रामू एम० पी० के पास जाने की तैयारी करने लगा। चलते-चलते रामू क्या देखता है कि बद्रीसिंह भाषण दे रहा है। रामू एक कोने में बैठकर सुनता रहा। बद्रीसिंह कह रहा था—इतनी लम्बी सडकें बनी, इतने रुपये कर्ज व अनुदान के लिए वितरित हुए, बांध बने, डिग्री कालेज बने, बिजली से कैसी चमकदमक है!

रामू सोच रहा था—आखिर ये सहूलियतें किसको? जिस गरीब के पास पैसा नही है, जिसके पास पूँजी नहीं है, उसे कर्ज व अनुदान कैसे मिलेगा? जिसका बच्चा प्राइमरी में नही पढ सकता है, वह डिग्री कालेज का क्या करेगा? जिसके पास लैम्प के लिए तेल नहीं, वह बिजली क्या करेगा? इसी प्रकार रामू सोचता जा रहा था। यही आजादी है? इसीके लिए मैं जेल गया? क्या इसीके लिए गांधीजी ने सत्याग्रह किया था? रामू ने सोचा, क्या किया जाय कि गरीब गरीब न रह जाय। वह उठा, लोगो से इन गरीबों के लिए चदा इकट्ठा किया। जब काफी पूँजी एकत्रित हो गयी तो लोगों को साहूकारो के कर्ज से मुक्त किया। तब साहूकारो ने देखा कि रामू उनका सबसे बडा शत्रु है। तो जब तक रामू नही बदलेगा, तब तक ये बदमाश (मजदूर) हमारे काम में रोड़े अटकायेंगे।

उन्होंने रामू को बुलाकर उसकी आवश्यकतानुसार रुपये-पैसे की मदद देने की लालच दी, ताकि वह उनका सहयोगी बन जाय। रामू ने साहूकारो के प्रस्ताव को स्वीकार करने से यह कहकर इनकार कर दिया कि गरीबो की गरीबी बढ़ाने में भागीदार बनना सबसे बडा अन्याय है।

—गुरुप्रसाद जोशी

"गाँव की बात" का विशेषांक

३० जनवरी '६८ गाधीजी के पुण्य-दिवस के अवसर पर 'सर्वसम्मति—गाँव का सत्य' विषय पर एक विशेषांक निकालने की योजना है। यह विशेषांक १६ पृष्ठ का होगा।

—व्यवस्थापक

गोबर : जलावन या खाद ?

"अन्धेरा होने लगा है। आकाश धुएं से भरा हुआ है। दम घुट रहा है। कोडा (आवाल) के चारों ओर बैठे कुछ लोग गपशप कर रहे हैं। ऐसे गप का न कोई सिलसिला होता है और न कोई विषय। मैं एक सम्बन्धी के यहाँ आया हूँ। मैं इन लोगों की बातें सुन रहा हूँ। सुन इसलिए रहा हूँ कि एक उत्सुकता है कि गाँव के लोग कैसी बातें करते हैं ? मन ही मन मैं सोचता हूँ कि कैसी वाहियात बातें की जा रही हैं। इतने में एक ग्रामसेवकजी आ जाते हैं। वह सरकार से नियुक्त हुए हैं। उन्होंने वहाँ बैठे हुए लोगों से कहा कि ब्लाक में खाद आ गयी है। जिन्हें खाद की जरूरत हो, वे चलकर खाद ले सकते हैं।

अब खाद की चर्चा चल पड़ी। खाद के आने की सूचना से लोगों में बड़ी खुशी हुई। श्री टियल महतो ने कहा कि हमें ५० किलो चाहिए। रामसेवक सिंह ने कहा कि हमें एक क्विंटल चाहिए। कुछ और लोगों ने भी अपना-अपना कोटा तय किया।

श्री चतुरी यादव ने कहा कि हमें तो कुछ खाद की जरूरत ही नहीं है। हमारे पास गोबर ही इतना अधिक होता है कि उसकी खाद हमारे लिए पूरी पड़ जाती है। उन्होंने आगे कहा कि मैंने घर में औरतों को मना कर दिया है कि गोबर नहीं जलाना चाहिए। गोबर से सिर्फ खाद ही बनायेंगे। मेरी ओर देखते हुए उन्होंने कहा—मैं एक शिविर में गया था, और वहाँ से गोबर की खाद बनाने का तरीका सीख आया हूँ। जब से खाद बनाने लगा हूँ, खाद की कमी नहीं पड़ती।

इतनी बात सुनकर मैं बोल पड़ा—आप बहुत अच्छा करते हैं। गोबर से बढ़िया दूसरी कोई खाद हो ही नहीं सकती है। अगर गोबर जलाया न जाय और उसकी खाद बनायी जाय तो रासायनिक खाद की इतनी जरूरत नहीं रह जायगी। कुछ दिन पहले ही मैंने एक पत्रिका में पढ़ा था कि पूरे देश में गोबर को जलाकर जितना नत्रजन (नाइट्रोजन) नष्ट कर दिया जाता है उतना सिन्दरी जैसे १२ कारखाने साल भर में बना पायेंगे! इतना सुनते ही कुछ लोगों ने बड़ी गहरी साँस ली और बोल पड़े, अच्छा ऐसी बात है! फिर बोले, लेकिन लकड़ी की भी तो कमी है, हमारा भोजन बनेगा कैसे ? कहाँ से आयगी लकड़ी ? और, लकड़ी मिल भी जाय तो कहाँ से आयगा पैसा ?

मैंने कहा—"हाँ, आप ठीक कह रहे हैं। जलावन की समस्या बहुत कठिन है। लेकिन इतनी कठिन नहीं है जितना आप सोचते हैं। अपने देश में हर साल दो हजार लाख टन सूखा गोबर जलावन के रूप में जला दिया जाता है। जितना गोबर जलाया जाता है, उससे करीब १५३० हजार टन नत्रजन, ८५० हजार टन फास्फोरिक एसिड, और १८७० टन पोटाश नष्ट कर दिया जाता है। इन तत्त्वों की कीमत रुपयों में आँकी जाय तो लगभग ३८२ करोड़ ५ लाख होती है। इन तत्त्वों के अलावा जमीन को गोबर से जैविक पदार्थ भी मिलता है। अब सोचिये की इतनी कीमती चीज अपनी मजदूरी बढ़ाकर जला देना क्या उचित है ?"

एक बूढ़ा—"उचित तो नहीं है, लेकिन आप ही बताइये कि गोबर के बदले क्या जलाया जाय ?"

मैं—"गोबर गैस बहुत अच्छी चीज है। गोबर गैस से खाद में कोई कमी नहीं आती है और जलावन भी मिल जाता है। गाँव-गाँव में गोबर गैस योजना चालू की जा सकती है। परन्तु वह घर-घर में सम्भव नहीं है। इस योजना में लगभग १००० रु० लग जाता है। यह हर परिवार के वश की बात नहीं है। हाँ, अगर सब मिलजुलकर बना लें तो बन सकता है और, ऐसा करना चाहिए। इसके अलावा कोयला और लकड़ी जला सकते हैं। जलावन की दृष्टि से लकड़ी के लिए कुछ पेड़ लगा सकते हैं, परन्तु पूरे गाँव की एक योजना बने तभी यह सम्भव है।" ●

हमवतन से मुलाकात – गैरमुल्क में

हिन्दुस्तान में जब कही गोरी चमडी का कोई यूरोपीय आ जाता है, तो अलग से पहचानने में आता है, उसी तरह यूरोप में गैर-यूरोपीय पर बहुत जल्द नजर चली जाती है।

एक दिन मैं ओस्लो (नार्वे की राजधानी) के वेस्ट स्टेशन के बाहर एक बेंच पर किसी दोस्त की इन्तजारी में बैठा था। मैंने दूर से देखा कि एक काली चमडीवाला स्टेशन की ओर चला आ रहा है। वह ज्यो-ज्यो आगे बढ रहा है, बार-बार घूर-घूरकर मुझे ही ताक रहा है। जब वह शख्स बिलकुल करीब आ गया, तो मुझसे न रहा गया सोचा कोई हिन्दुस्तानी होगा, जरूर उसके ताकने का जवाब मिलना चाहिए। आखिर मैं उठ खडा हुआ और दो कदम आगे बढकर 'नमस्ते' कहा।

"नमस्तेजी, कहिये क्या हालचाल है ?" जवाब मिला।

'बस जी, सब मेहरबानी है", मैंने कहा।

"इधर किसी व्यापार के सिलसिले में आये ?" सवाल था।

"नही जी, मैं इधर तालीमी तजुर्बे के वास्ते आया था, वह पूरा हो गया है, अब थोड ही अरसे में वापस वतन को लौटनेवाला हूँ।" मेरा जवाब था।

"मैं तो तिजारत के सिलसिले में यहाँ आया था। यहाँ से मैक्सिको जा रहा हूँ। आप मुल्क में किधर से आते है ?"

मैंने कहा, "उत्तर के पहाडी इलाके में मेरा घर है, पिथौरागढ जिला कहते हैं।" मैंने पूछा, "आपका दौलत-खाना ?" तो बोले, 'कराची।" मैंने आगे पूछा—"शुरू से ही कराची रहते हैं, या बँटवारे के पहले कही और थे ?" तो जवाब मिला, 'दरअसल मैं कराची नही, लाहौर से आया हूँ। बँटवारे से पहले मेरा धन्धा दिल्ली वगैरह में भी चलता था। तिजारत तो थोडे साल पहले तक हिन्दुस्तान के साथ चल ही रही थी, मगर " कहते-कहते वे थोडी देर के लिए रुक गये। आगे फिर बोले, "क्या कहे, (राजनीति) सियासत की वजह से मुल्क तबाह हो गया! एक बहुत बड मुल्क के टुकडे हो गये, हमारे कुछ पुराने लोगो की बेवकूफी की वजह से हम सब बरबाद हो गये! वरना आज आपस में तिजारत चलती, उम्दा धन्धा चलता, देश तरक्की करता। जहाँ पहले काश्त होती थी, वहाँ अब लश्कर का अड्डा जमा है, "

मैं उनका पूरा कहना सुनने से पहले ही बोल बैठा, 'क्या बात है, जमीन तो अब भी एक ही है! हम लोगो की चमडी एक है, खान-पान एक है, दुनियावाले भी हमको एक जैसा ही देखते हैं! सरकारें दो हो गयीं, तो क्या हुआ ?"

मैं कुछ और कहनेवाला था, परन्तु वे फिर बोल पड, "क्या नही हुआ जी! बहुत हुआ। जहाँ पहले एक पालियामेण्ट थी, अब दो हुई! जहाँ पहले एक दफ्तर से काम चलता था, अब दो-दो है। यही देखो न, दुनिया के हर मुल्क में दो-दो अम्बेसेडर है, दो-दो झण्डे लगे हैं। मुल्क में अवाम तो वही है। सियासत की वजह से दो फौजें हैं। लश्कर बढ रहा है, खर्चा बढ रहा है। लश्कर भी क्या करे, उनको भी अपनी अपनी सरकार और लीडरो का हुक्म मानना पडता है। फौजी चाहे वे पाकिस्तान के हो, या हिन्दुस्तान के, वे लोग हैं तो आदमी ही, सियासत की वजह से दुश्मनी हो गयी है। यह सब अंग्रेजो की बदौलत हुआ है। वे हमसे कहते हैं, तुम पिछड़े हुए हो! सब तो खुद चूस-चूसकर ले गये, मुल्क को गरीब छोडकर गये! इनकी तो पौलीसी ही ऐसी है, कभी गुलाम बनाकर हमारे माल को बर्मिंघम, मान्चेस्टर को भेजकर लूटा, तो अब हमको लडवाकर अपने हथियार बेचकर लूट रहे हैं!'

मैंने बात का दौर बदलकर पूछा, "और भी कोई भाई लोग मिले क्या ?" इस पर वे बोले—"वैसे तो मैं हर साल एकाध चक्कर अपनी तिजारत के सिलसिले में गैर मुल्को का दौरा करता हूँ, मगर इस मरतबा तो आप ही पहले हमवतन मिले हो।'

"आप ही पहले हमवतन", ये शब्द और इनकी भावना मेरे दिल को भीजती रही। अब क्या बोलूँ, यह सूझ नही रहा था। गले से आवाज का निकलना मुश्किल हो रहा था। जब कुछ भी न कह पाया तो मैंने हाथ जोड दिये।

"खुदा हाफिज!" फिर कुछ रुककर, "आपका आगे सफर खुशी से बीते", यह कहकर उन्होंने भी हाथ जोड दिये। इस पर मैं इतना ही कह पाया, "अल्ला हो अकबर"।

काश! दूर स्केण्डीनेविया के छोटे ओस्लो शहर के दक्षिणी बन्दरगाह पर का तीसरे पहर का दो हमवतनों का यह मिलन स्वदेश में करोडो बिछुडे हमवतनो के प्रभाव मिलन के रूप में होता!

—देवी पुरस्कार

'गांव की बात'। वार्षिक चदा चार रुपये, एक प्रति अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए संसार प्रेस, काशीपुरा, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित

कम्प्यूटर-कार्ड

औद्योगिक विकास के मार्गों का विवेचन करते हुए प्रसिद्ध अर्थशास्त्री गुनरमिरडल ने निम्नलिखित विचार प्रकट किये हैं, जो ध्यान में रखने योग्य हैं—
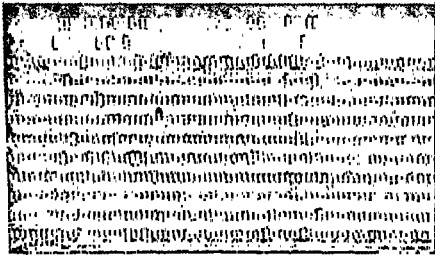
"भारत जैसा देश, जिसकी जनसंख्या इस शताब्दी के अन्त तक लगभग दूनी हो चुकेगी, अपनी जनता के उदासी भरे निम्न जीवन-स्तर को बहुत लम्बी अवधि तक ऊँचा नहीं उठा सकता, जब तक कि उसके श्रमिकों का एक बड़ा भाग उद्योग धन्धों में नहीं लगाया जाता। भारतीय कृषि के क्षेत्र में चाहे जितनी उन्नति हो, फिर भी यह बात सत्य ही रहेगी।"[1]

गुनरमिरडल ने यह भी कहा है कि अर्द्ध-विकसित देश चाहे जितनी तीव्र गति से अपना औद्योगीकरण का कार्यक्रम आगे बढ़ायें, आनेवाली कई पीढ़ियों तक वे अपनी अर्द्धबेकार जनता को पूरा-पूरा काम नहीं दे पायेंगे। अगर दुनिया के विकसित देश अर्द्धविकसित देशों को आज से अधिक मात्रा में आर्थिक सहायता दें, तब भी स्थिति में कोई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हो पायेगा; क्योंकि आज के आधुनिक बड़े पैमाने के उद्योगों में श्रमिकों की बड़ी संख्या की आवश्यकता नहीं रह गयी है। जैसे-जैसे विदेश की पूँजी अधिक उपलब्ध होती जाती है, वैसे वैसे देश में स्थित मजदूर केन्द्रित उद्योगों में ऐसी नयी मशीनें बिठायी जाने लगती हैं, जिनमें इन उद्योगों में पहले से बहुत कम मजदूरों की जरूरत पड़ती है। इस प्रक्रिया के कारण कुल मिलाकर कारखानों में मजदूरी की रोज-गारी की सीमा सिकुड़ती चली जा रही है।

हमारे देश में कुछ जूट तथा कपड़े की मिलों का सन् १९५७ तथा उसके बाद नवीनीकरण हुआ है। भारत सरकार के श्रम-मन्त्रालय की सन् १९६४ की रिपोर्ट में नवीनीकरण सम्बन्धी जो आँकड़े प्रकाशित हुए हैं, उसमें से उपरोक्त विचार की पुष्टि करते हैं :—

सूती मिलें	सन् १९५७	सन् १९६२
रोजाना काम करनेवाले मजदूर की संख्या	८,४१,०००	८,२३,०००
औद्योगिक उत्पादन	१००.८	१०९.६
जूट उद्योग	२,५७,०००	२,५०,०००
औद्योगिक उत्पादन	९४.७	१०९.८

ऊपर के आँकड़ों से यह साबित हो जाता है कि नवीनीकरण के बाद सूती मिलों के उत्पादन में यद्यपि ९ प्रतिशत की वृद्धि हुई, किन्तु उनमें काम करनेवाले मजदूरों की संख्या १८ हजार घट गयी। इसी प्रकार जूट के उद्योग में भी १५ प्रतिशत उत्पादन बढ़ा, किन्तु मजदूरों की संख्या ७ हजार घट गयी।

जाहिर है कि हमारे देश के व्यवसायियों और उद्योगपतियों को पूँजीवादी देशों का इतिहास दुहराने का अवसर नहीं मिलना चाहिए। इस सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार को अपनी नीति स्पष्ट रूप से निश्चित कर देनी चाहिए कि वह उन्हीं क्षेत्रों में कम्प्यूटर के उपयोग की अनुमति देगी, जहाँ उनके कारण बेकारी की समस्या और कठिन नहीं होगी।

शोध संस्थानों तथा नयी योजना बनाने के कामों में शीघ्र से शीघ्र गणना करने की आवश्यकता अपरिहार्य होती है। इन क्षेत्रों में समय का बड़ा महत्त्व होता है, अतः ऐसे कामों में कम्प्यूटर के उपयोग का अनुमोदन किया जा सकता है। इसी प्रकार बजट तैयार करने या जनगणना-सम्बन्धी आँकड़े शीघ्र से शीघ्र प्रस्तुत करने जैसे कार्यों में भी कम्प्यूटर का लाभकारी उपयोग हो सकता है। —यदुनाथ

[1] एशियन ड्रामा—'न्यू स्टेट्समैन' ... '[illegible]', मार्च-अप्रैल १९६६

ब्रह्मचर्य : एक सामाजिक मूल्य

प्रश्न : गाय का बड़ा सवाल देश में है। इसका हल कैसे होगा ?

विनोबा : वेदकाल में जमीन काफी थी। जंगल थे। गाय के घी से ही दीया जलता था। तेल या कोल्हू नहीं था। नेहरूजी एक बार मिले तो कहते थे कि अकबर के जमाने में मुस्लिम १ प्रतिशत थे, गो-वध बंदी तब आसान थी। आज की बात तो मेरी समझ में स्पष्ट है कि संयम की साधना के बिना गाय तो कटेगी ही। इन्सान इन्सान को खायेगा। अभी एक अखबार में निकला है कि चीन के सिपाहियों ने मनुष्य को मारकर खा लिया। मुझे कान में हमारे सिपाहियों ने भी बताया कि जब सप्लाई से भोजन नहीं आता तो दुश्मन के मारे हुए लोगों को खाते भी हैं। मैंने 'स्थितप्रज्ञ दर्शन' में इसका वर्णन किया है कि भ्रूणहत्या, भ्रूण बनने के पहले हत्या, बाद में लड़ाई में मारना, अकाल, अतिवृष्टि से मौत, ये सब मनुष्य के असंयम से ही पैदा हुई हिंसा है।

प्रश्न : आज आबादी की बढ़त से सब परेशान हैं, पर क्या संयम की बात लागू करना संभव है ?

विनोबा : विषयासक्ति के कारण आबादी बढ़ेगी तो अहिंसा पनप नहीं सकती। एक जमाना था जब ब्रह्मचर्य का उपदेश ऋषियों ने किया था। उस समय उसका आध्यात्मिक मूल्य था, पर आज उसे सामाजिक मूल्य आ गया है। संयम के रास्ते आबादी की रोकथाम के संबंध में ये बातें मुझे सूझती हैं :

(१) तय करो कि ४ बच्चों में से २ ही शादी करेंगे। बाकी २ ब्रह्मचारी रहेंगे। पर वे बाकी परिवार को अपना मानकर उनके पोषण में सहायता करते हुए गृहस्थ-जीवन बितायेंगे।

(२) २० से ४० वर्ष की आयु को विवाहकाल मानकर बाद में सहमारोह वानप्रस्थी बनें। आज जो १६ से ५६ का समय है, उसे २० से ४० का कर लिया जाय। रामायण-वालों को समझाओ कि मर्यादापुरुषोत्तम ने दो ही बच्चे पैदा किये, इस प्रकार वे भी मर्यादा में रहे। संयम और करुणा, ये दोनों गुण लोगों के दिलों में कितना बढ़े, यह मैं जानना चाहता हूँ। विज्ञान और अध्यात्म, दोनों की माँग है कि विषयासक्ति कम हो।

प्रश्न : सिनेमा और दूसरे साधनों को बदला न जाय तो यह संयम कैसे बढ़ेगा ?

विनोबा : साहित्य में कामवासना को उत्तेजना देनेवाला अंश पढ़ाया जाय तो वह संयम के लिए सहायक कैसे होगा ? आज भी संस्कृत में शृङ्गार और दरबारी साहित्य पढ़ाया जा रहा है। इसलिए हमें यह करना होगा :

(क) शिक्षणशास्त्र बनाना

(ख) अश्लीलता मिटाना

(ग) साहित्य सुधारना

बिना संयम के केवल करुणा नहीं चलती। ग्रामदान के बाद संयम की दिशा में हमें समाज को बढ़ाना आवश्यक है।●

जीने की डिजाइन, न कि विकास की योजना

यू० एन० ओ० के यूनेस्को ने 'डिजाइन फार लिविंग' का विचार प्रस्तुत किया है। यह विचार पहले पहल यूनेस्को की १४ वीं आम सभा में भारतीय प्रतिनिधि-मंडल ने दिल्ली में हुए 'नेहरू राउंडटेबुल' की सिफारिशों के आधार पर पेश किया था। विकास के सन्दर्भ में इस जमाने का नवीनतम विचार है यह। जब विज्ञान ने उत्पादन की समस्या हल कर दी है, तब दुनिया दिनोंदिन नजदीक होती चली जा रही है, जब मनुष्य पृथ्वी का ही न रहकर नक्षत्रों का भी प्राणी बन रहा है, तो कोई कारण नहीं कि वह अपने में इतना संकीर्ण और संकुचित क्यों बना रहे, और जो विश्वास और मूल्य पुराने पड़ गये और संस्थाएँ निकम्मी सिद्ध हो गयीं, उनका गुलाम क्यों बना रहे ? क्यों न वह अपने भविष्य को अपने हाथ में कर ले, ठीक उसी तरह जैसे प्रकृति को हाथ में करता जा रहा है !

नये जमाने में पहले 'स्टैण्डर्ड आफ लिविंग' का नारा लगा। अभावग्रस्त मानव को लगा कि उसकी किस्मत में भी भरपेट खाना और भरपेट पहनना लिखा है। गांधीजी ने कहा, स्टैण्डर्ड काफी नहीं है, उसमें 'क्वालिटी आफ लिविंग' होनी चाहिए। जीवन की क्वालिटी समग्रता से आती है। स्वतंत्रता के बाद 'विकास' की धूम मची— आर्थिक विकास, सांस्कृतिक विकास। पंचवर्षीय योजनाएँ बनीं। अर्थशास्त्रियों, अधिकारियों, इंजीनियरों ने बनायीं। निर्माण की सूचियाँ बनीं, उन सूचियों में जीवन की क्या डिजाइन थी ? डिजाइन थी ईंट-पत्थर की, सड़क और पुल की। यह मान लिया गया कि आर्थिक विकास के क्रम में अतिरेक और असंतुलन के अभिशाप भोगने ही पड़ते हैं। विज्ञान के जमाने के लिए अजीब विचार था यह, लेकिन था इसलिए कि विशेषज्ञों की ओर से आया था। बीस वर्षों के बाद, अब मालूम पड़ रहा है कि 'जीने की डिजाइन' पहले बननी चाहिए थी, उसके बाद उसमें खेती, उद्योग, व्यापार, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि को उचित स्थान पर बिठाया जाना चाहिए था। आखिर ये सब साधन हैं, साध्य नहीं। अगर यह होता तो आज मूल्यों और सम्बन्धों का जो संकट दिखायी दे रहा है वह न होता। अगर यह मानना सही हो तो डिजाइन बनाना विशेषज्ञों और अधिकारियों के बस की बात नहीं है। यह काम उनका है, जो जीवन में मूल्यों का महत्त्व समझते हैं। जिनकी खोपड़ी में केवल फाइल नहीं, बल्कि 'विजन' भी है।

जीने की डिजाइन हमारे पास मौजूद है। मुक्त जीवन की कल्पना मार्क्स ने दी थी, उसकी योजना गांधी ने दी, और साधना अब विनोबा प्रस्तुत कर रहे हैं। जीने की डिजाइन परंपरा, परिवेश और युग की परिस्थिति पर निर्भर है। निश्चित है कि भारत को अपनी ही डिजाइन विकसित करनी पड़ेगी। दूसरे देश की डिजाइन जैसी की तैसी उसके→

→काम नहीं आयेगी। और, अब टेक्नालाजी का प्रश्न भी आसान हो गया है। डिजाइन तय हो जाय तो उसके अनुरूप टेक्नालाजी विशेषज्ञों से तैयार करायी जा सकती है। कोई जरूरत नहीं कि मशीन एक दिशा में जाय और मनुष्य की माँगें दूसरी दिशा में।

टेक्नालाजी मनचाही बनायी जा सकती है, इसीलिए तो आशा हुई है कि अब हर गाँव, जो जीवन की स्वाभाविक इकाई है, जीवन के ऊँचे मूल्यों को सामने रखकर अपने निर्णय से अपने लिए डिजाइन बना सकता है। इसे नये विज्ञान ने ग्राम स्वराज्य को सम्भव बना दिया है। ग्राम-स्वराज्य के बिना विज्ञान की नवीनतम देनें एक-एक मनुष्य के पास पहुँच ही नहीं सकेंगी, और मानव सदा भूखा ही बना रहेगा—कभी शरीर से, कभी मन से, कभी आत्मा से।

क्या यह उचित नहीं होगा कि ग्रामदान के बाद हम मात्र विकास के स्थान पर जीने की पूरी कला की बात सोचें ? यह पर्सपेक्टिव ज्यादा सटीक होगी और विकास का मानवीय और गुणात्मक पहलू ज्यादा स्पष्टता के साथ सामने आयेगा। 'डिजाइन फार लिविंग' का सर्वोदय से मेल है। 'डिजाइन फार बाजार' का पूँजीवाद से और 'डिजाइन फार सरकार' का साम्यवाद से।

—रा० मू०

आदिवासियों द्वारा मद्य-निषेध

निवाली : गत २८ नवम्बर को आदिवासियों का एक बहुत बड़ा सम्मेलन वनवासी कन्या आश्रम, निवाली (जिला पश्चिम निमाड, म० प्र०) में किया गया, जिसमें करीब दो हजार आदिवासी भाई-बहनों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में यह निर्णय किया गया कि आगामी गांधी-जन्म शताब्दी तक सेंधवा तहसील की शराब की सब दुकानें अहिंसा के द्वारा समाप्त करने का प्रयत्न होगा। पूरे क्षेत्र में कार्य करने के लिए नशाबन्दी समिति का संगठन किया गया। यह सब कार्य कस्तूरबा ट्रस्ट निवाली के अंतर्गत चलनेवाले गिरीजन संघ की तरफ से चल रहा है।

आन्दोलन के समाचार

ग्रामदान-अभियान :

वाराणसी, ४ दिसम्बर : वाराणसी जनपद के चिरईगाँव और चोलापुर ब्लाकों में 'ग्राम-स्वराज्य अभियान' सम्बन्धी कार्यकर्ता-शिविर का शुभारम्भ शनिवार २ दिसम्बर को चौबेपुर इण्टर कालेज के प्रांगण में नागरिक परिषद के प्रधान मंत्री श्री वंशीधर श्रीवास्तव ने किया। शिविर-संचालक श्री रामजी भाई ने बड़ी कुशलता से 'अभियान' के कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण किया। शिविर का समापन करते हुए काशी विद्यापीठ के उपकुलपति श्री राजाराम शास्त्री ने 'अभियान' को अपना आशीर्वाद दिया। यह अभियान ४ दिसम्बर से शुरू हुआ है। कुल १५ टोलियाँ पूरे चिरईगाँव ब्लाक में ग्रामदान ग्रामस्वराज्य अभियान का सन्देश पहुँचा रही हैं।

थाना, २६ नवम्बर : महाराष्ट्र के ५० और गुजरात के २५ कार्यकर्ताओं का शिविर थाना जिले में हुआ। दोनों राज्यों के सीमा प्रदेश में एकसाथ पदयात्रा का कार्यक्रम बना। उसके अनुसार २४ नवम्बर से थाना जिले की पालघर तहसील में और गुजरात के उमरगाँव तहसील में ग्रामदान-पदयात्रा शुरू हुई। इसका समारोप उमरगाँव में १ दिसम्बर को होगा। अब तक थाना जिले में ६६० ग्रामदान और ७ प्रखण्डदान हुए हैं। थाना जिलादान का संकल्प महाराष्ट्र के कार्यकर्ताओं ने किया है।

रत्नागिरी, २६ नवंबर : राजापुर तहसील के पाचल क्षेत्र के १० गाँव-प्रमुखों का एक शिविर १८ नवंबर को श्री गोविंदराव शिंदे की अध्यक्षता में हुआ। पदयात्राएँ भी चल रही हैं। ७ दिसंबर से जैतापुर क्षेत्र में पदयात्रा चलाने के लिए महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष श्री ठाकुरदास बंग आ रहे हैं।

सम्मेलन-शिविर :

जयपुर, २८ नवम्बर : खादी ग्रामोद्योग संस्था संघ के प्रांगण में त्रिदिवसीय राजस्थान गोसेवा सम्मेलन का शुभारंभ श्री उ० न० ढेबर की अध्यक्षता में हुआ। सम्मेलन में गोवर्धन मठाधीश जगद्गुरु शंकराचार्य श्री निरंजन देवतीर्थ, राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री मोहनलाल सुखाड़िया, भूतपूर्व केन्द्रीय स्वास्थ्यमंत्री डा० सुशीला नायर आदि के भाषण हुए। संघ के अध्यक्ष श्री गोकुलभाई भट्ट ने सबका स्वागत किया। स्वागतमंत्री श्री रामेश्वर अग्रवाल ने पिछले कामों की रिपोर्ट पढ़कर सुनायी।

सेवापुरी : यहाँ गांधी जन्म शताब्दी के सन्दर्भ में विभिन्न संस्थाओं के कार्यकर्ताओं को सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक प्रशिक्षण देने के लिए उ. प्र. गांधी-जन्म शताब्दी समिति की ओर से ५ से ११ दिसम्बर तक प्रान्तीय शिविर का आयोजन हो रहा है।

वाराणसी : सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति की आगामी बैठक दिनांक २१ २२ जनवरी, १९६८ को वाराणसी में करने का निश्चय किया गया है।

साहित्य-सेवा :

हरियाणा में रोहतक जिले के डीघ सफीपुर शान्ति-केन्द्र के श्री फूलिया भगत ने गत अक्तूबर माह में १२७ मील की पदयात्रा द्वारा ४५ रुपये ६० पैसे की साहित्य-बिक्री की। आसपास के गाँवों में सर्वोदय पुस्तकालय की पुस्तकें भी पढ़ने के लिए दीं।

भूमि-सेना विद्यालय, खादीग्राम, मुंगेर के श्री हेमनाथ सिंह ने अक्तूबर '६६ से सितम्बर '६७ तक की अवधि में अपने जिले में, "गाँव की बात", "नयी तालीम" और "भूदान-यज्ञ" पत्रिकाओं के ७१ ग्राहक बनाये।

श्री गांधी आश्रम क्षेत्रीय कार्यालय फेफना, बलिया के कार्यकर्ता श्री त्रिवेणी सहाय ने अतिरिक्त समय में गाँव में सम्पर्क और साहित्य-प्रचार का काम गत सितम्बर माह से शुरू किया है। रेलवे स्टेशन, बस स्टेशन पर हाकरों की तरह लोगों के बीच पहुँचकर १०-१२ दिन में भूदान सम्बन्धी १०० फोल्डर बेच डाले। शुरू में "भूदान-यज्ञ" पत्रिका फुटकर बेचने में दिक्कत होती थी, इसलिए १५ स्थायी ग्राहक ही बना लिये। फिर पास में चितबड़ा गाँव में भी १५ अंक देने लगे। ■

सामयिक चर्चा

राजभाषा-संशोधन विधेयक

गत २७ नवम्बर को राजभाषा-संशोधन विधेयक अनेक विरोधों के बावजूद २५ के विरुद्ध १८१ मतों से लोकसभा में पेश हो गया। यह विधेयक भूतपूर्व प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा अहिन्दी-भाषी प्रान्तों को दिये आश्वासन को कानूनी रूप देने के लिए पेश किया गया है। संविधान के अनुसार २६ जनवरी १९६५ के बाद हिन्दी को राजभाषा बन जाना चाहिए था, किन्तु जवाहरलाल नेहरू ने अहिन्दी-भाषी प्रान्तों को आश्वासन दिया था कि वे जब तक हिन्दी को स्वेच्छा से स्वीकार नहीं कर लेंगे, हिन्दी उन पर राजभाषा के रूप में जबरदस्ती लादी नहीं जायगी।

हिन्दी भाषियों को इस विधेयक की उस धारा से अधिक एतराज है, जिसमें हिन्दी-भाषी प्रान्तों को अहिन्दी-भाषी प्रान्तों के साथ पत्र-व्यवहार में हिन्दी के साथ अंग्रेजी का अनुवाद भेजना अनिवार्य कर दिया गया है।

विधेयक पेश होनेवाले दिन सदन की बैठक शुरू होने के पहले कांग्रेस पार्टी की बैठक में कई कांग्रेसी सदस्यों ने इसका तीव्र विरोध किया था। इन सदस्यों ने कहा कि अंग्रेजी जारी रहने की तिथि अस्पष्ट रखकर उसे अनन्त काल तक बनाये रखने की साजिश हो रही है।

ज्यों ही स्वराष्ट्रमंत्री श्री चह्वाण ने यह विधेयक लोकसभा में पेश करना चाहा, कांग्रेस संसद-सदस्य सेठ गोविन्ददास ने इसका तीव्र विरोध करते हुए कहा कि जो राज्य हिन्दी नहीं चाहते, उन पर हिन्दी न लादी जाय, लेकिन इसके साथ-साथ जो राज्य अंग्रेजी नहीं चाहते, उन पर अंग्रेजी भी नहीं लादी जानी चाहिए। उन्होंने इस प्रश्न पर राज्यों के मुख्यमंत्रियों से सलाह लेने का सुझाव भी दिया। श्री मधु लिमये ने सेठ गोविन्ददास का समर्थन करते हुए कहा कि किसी नेता को आनेवाली पीढ़ी को किसी आश्वासन से नहीं बाँधना चाहिए। जनसंघ के श्री कँवरलाल गुप्त ने कहा कि यह व्यवस्था गलत है कि जब तक एक भी अहिन्दी भाषी राज्य चाहे अंग्रेजी चलती रहे। द्रमुक-नेता मनोहरन् को भी इस विधेयक से संतोष नहीं रहा, उन्होंने संविधान में परिवर्तन करने की माँग करते हुए कहा कि हम केवल हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार नहीं करेंगे।

विधेयक पेश होने के दूसरे दिन ५० से अधिक कांग्रेसी संसद-सदस्यों ने प्रधानमंत्री से अपील की कि उन्हें इस विधेयक पर मतदान करने की छूट दी जाय। दूसरे दिन ४० अन्य कांग्रेसी संसद-सदस्यों ने इस अपील पर हस्ताक्षर किये। १२ सदस्यों का एक शिष्टमंडल भी प्रधानमंत्री से मिला। शिष्ट-मंडल ने माँग की कि किसी भी प्रदेश पर हिन्दी या अंग्रेजी जबर्दस्ती न लादी जाय। सदस्यों ने कहा कि उनके निर्वाचकों का उन पर दबाव पड़ने लगा है और ऐसी स्थिति आ सकती है कि उन्हें अपनी पार्टी और निर्वाचकों में किसी एक को चुनना पड़ सकता है।

ज्ञात हुआ है कि प्रधानमंत्री ने शिष्टमंडल के कुछ सुझावों पर गृहमंत्री से बात करना स्वीकार कर लिया है और स्वयं गृहमंत्री भी संसद-सदस्यों से बात करेंगे।

जिस समय इस विधेयक पर बहस चल रही थी, दिल्ली में श्री राजगोपालाचारी ने इसे सरासर धोखा बताते हुए अंग्रेजी को राजभाषा बनाने पर जोर दिया था।

इस विधेयक को लेकर जगह-जगह तीव्र आन्दोलन और सभाएँ हो रही हैं। २७ नवम्बर को ही दिल्ली में हिन्दी के पत्रकारों, संपादकों और साहित्यकारों की सभा में उन हिन्दीभाषी संसद-सदस्यों की तीव्र भर्त्सना की गयी, जिन्होंने इस विधेयक का समर्थन किया था।

संसद-सदस्य श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने वाराणसी और इलाहाबाद में होनेवाली उग्र प्रतिक्रियाओं का जिक्र करते हुए प्रधानमंत्री को एक पत्र में आशंका प्रकट की है कि हिन्दी-भाषी राज्यों पर अंग्रेजी के अनिश्चित काल तक लादने से व्यापक रोष फैल गया तो स्थिति सँभालनी मुश्किल हो जायेगी।

साप्ताहिक 'दिनमान' ने लिखा है कि यह बात अब स्पष्ट हो चली है कि यह विधेयक किसीको भी संतुष्ट नहीं कर पायगा। दैनिक 'हिन्दुस्तान' और 'आज' ने इसे अलोकतांत्रिक बताया है। दैनिक 'नवभारत टाइम्स' ने इस प्रश्न पर जनमत की राय लेने का सुझाव दिया है। अंग्रेजी साप्ताहिक 'मेनस्ट्रीम' ने हिन्दी को राजभाषा बनाने के लिए दक्षिणवालों को थोड़ा और समय देने को कहा है।

—'मग्न'

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक — साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

१५ दिसम्बर, '६७ अंक : ११

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति : २० पैसे

विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—
१८ रु० या १ पौण्ड या ३६ डालर

(हवाई डाक-शुल्क : देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४२८५

हिन्दी और हिन्दुस्तान

विदेशी भाषा के माध्यम ने बच्चों के दिमाग को शिथिल कर दिया है, उनके स्नायुओं पर अनावश्यक जोर डाला है, उन्हें रट्टू और नकलची बना दिया है तथा मौलिक कार्यों और विचारों के लिए सर्वथा अयोग्य बना दिया है। इसकी वजह से वे अपनी शिक्षा का सार अपने परिवार के लोगों तथा आम जनता तक पहुँचाने में असमर्थ हो गये हैं। विदेशी माध्यम ने हमारे बालकों को अपने ही घर में पूरा विदेशी बना दिया है। यह वर्तमान शिक्षा प्रणाली का सबसे करुण पहलू है। विदेशी माध्यम ने हमारी देशी भाषाओं की प्रगति और विकास को रोक दिया है।[1]

अंग्रेजी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की भाषा है, वह कूटनीति की भाषा है। उसका साहित्यिक भण्डार बहुत समृद्ध है और वह पश्चिमी विचार और संस्कृति से हमारा परिचय कराती है। इसलिए हममें से कुछ लोगों के लिए अंग्रेजी भाषा का ज्ञान आवश्यक है। ये लोग राष्ट्रीय व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति के विभाग तथा हमारे राष्ट्र को पश्चिमी साहित्य, विचार और विज्ञान की उत्तम वस्तुएँ देनेवाला विभाग चला सकते हैं। वह अंग्रेजी का उचित उपयोग होगा, जब कि आज अंग्रेजी ने हमारे हृदयों में प्रिय से प्रिय स्थान हड़प लिया है और मातृभाषाओं को अपने अधिकार के स्थान से हटा दिया है। अंग्रेजी को यह जो अस्वाभाविक स्थान मिल गया है, उसका कारण है अंग्रेजों के साथ हमारे असमान सम्बन्ध। अंग्रेजी के ज्ञान के बिना भी भारतीयों के दिमाग का ऊँचे से ऊँचा विकास होना चाहिए। हमारे लड़के और लड़कियों को यह सोचने के लिए प्रोत्साहित करना कि अंग्रेजी के ज्ञान के बिना उत्तम समाज में प्रवेश नहीं मिल सकता, भारत के पुरुषत्व और खास करके स्त्रीत्व की हिंसा करना है। यह इतना अपमानजनक विचार है, जो सहन नहीं किया जा सकता। अंग्रेजी के मोह से छूटना स्वराज्य का एक आवश्यक और अनिवार्य तत्त्व है।[2]

हिन्दुस्तान की सभी प्रसिद्ध लिपियों की जगह रोमन लिपि के हिमायतियों का एक दल तो जरूर बन सकता है, लेकिन जनता में यह आन्दोलन नहीं फैल सकता। उसे फैलना भी नहीं चाहिए। करोड़ों लोगों को इतना आलसी नहीं बनाना चाहिए कि अपनी-अपनी लिपि भी न सीखें। हिन्दुस्तान में प्रचलित वर्णमालाओं को बदलने के लिए नहीं, बल्कि इस आशा से अपनी-अपनी लिपि के साथ नागरी लिपि सिखाने का प्रशंसनीय प्रयत्न किया जा रहा है कि किसी समय करोड़ों लोग हिन्दुस्तान की भाषाओं को नागरी अक्षरों में सीख सकें। और, जैसा कि स्पष्ट है, उर्दू अक्षरों की जगह नागरी अक्षर नहीं रखे जा सकते, इसलिए उन देशभक्तों को उर्दू वर्णमाला सीख लेनी चाहिए, जो अपने देश-प्रेम के सामने उसे सीखना बोझ नहीं समझते।[3] —गांधीजी

---

[1] हिन्दी 'नवजीवन', २-९-२१; [2] 'यंग इंडिया', २-४-२१; [3] 'हरिजन सेवक', २१-३-३९

हिन्दी के हिमायती अधीर न हों

—जयप्रकाश नारायण का वक्तव्य—

अभी तक भाषा के प्रश्न पर मैंने जान-बूझकर मौन साध रखा था, क्योंकि मैं महसूस करता था, और आज भी करता हूँ, कि हम इस विषय के बारे में जितना अधिक कुछ कहेंगे, उतना अधिक यह विषय उलझनपूर्ण बनेगा। और जब इस विषय की चर्चा में राजनीति का प्रवेश हो जाता है तो उलझनों का अंत नहीं रहता। फिर भी संसद में राजभाषा विधेयक के पेश होने के बाद एक ऐसा क्षण उपस्थित हुआ है, जब मैं महसूस करता हूँ कि मुझे अपनी आवाज उठानी चाहिए, किसी विवाद में सम्मिलित होने के लिए नहीं, बल्कि एक उत्कट निवेदन करने के लिए। मैं किसी दल की ओर से नहीं बोलता हूँ, और राष्ट्र के स्वार्थ के अलावा मेरा अपना कोई स्वार्थ नहीं है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि सभी दलों के नेता मेरी बातों को सुनेंगे।

विविधता में एकता, भारतीय इतिहास और समाज का प्रमुख लक्षण है, यह सब लोगों ने माना है। लेकिन यह भूल जाना खतरनाक होगा कि यह एकता हजारों वर्षों के दौरान इस देश की विभिन्न प्रकार की जातियों में पारस्परिक सहिष्णुता एवं सामंजस्य की भावना भरने से विकसित हुई है। जब भी बलपूर्वक एकता कायम करने की कोशिश की गयी, उसका परिणाम हमेशा फूट और विघटन ही हुआ है। आज अगर राष्ट्रीय एकता के नाम पर जनता के अनिच्छुक वर्गों पर कोई राजभाषा बलपूर्वक लादने की कोशिश की गयी तो उसी अनुभव की पुनरावृत्ति होगी।

एक हिन्दी भाषी राज्य का होने के नाते मुझे यह कहने में कोई हिचक नहीं है कि अगर हिन्दी के उत्साही समर्थक इतने अधीर नहीं हुए होते और अगर उन्होंने समझाने बुझाने की प्रक्रिया पर भरोसा किया होता, तथा ऐसे क्षेत्रों में जहाँ के लोग हिन्दी सीखना चाहते हैं, चुपचाप हिन्दी का प्रसार करने की कोशिश की होती, तो दक्षिण में हिन्दी का विरोध इतना उग्र कभी नहीं होता, जितना कि आज है। संभवतः यह प्रक्रिया अनिश्चित रूप से लम्बी जान पड़े, लेकिन थोड़ी गहराई से विचार करने पर वह अल्पतम दीख पड़ेगी।

साथ ही अगर हिन्दी के समर्थकों ने अपने उत्साह और जोश को यथासंभव अधिकाधिक तेजी से हिन्दी को विकसित करने और प्रभावशाली ढंग से तथा पर्याप्त रूप से उसे हिन्दी राज्यों की राजकीय एवं बौद्धिक भाषा बनाने में लगाया होता, तो हिन्दी को राष्ट्रीय स्वीकृति मिलने की संभावनाएँ बहुत, बढ़ गयी होतीं। इन मामलों में काफी प्रगति हुई है, फिर भी वह बहुत ही अपर्याप्त एवं प्रभावहीन है। राष्ट्रीय एकता एवं हिन्दी के हितों की प्रगति के लिए हिन्दी राज्यों को, प्रत्येक विद्यार्थी को, समुचित समय पर कोई, दूसरी भारतीय भाषा, बेहतर तो यह है कोई दक्षिण भारत की भाषा, सिखाने का प्रयास गम्भीरतापूर्वक करना चाहिए था। अब तक इस दिशा में जो प्रगति हुई है, वह उल्लेखनीय नहीं है।

इन बातों को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार द्वारा संसद में प्रस्तुत राजभाषा-विधेयक का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। जैसा कि गृहमंत्री ने और बाद में प्रधानमंत्री ने बताया है, यह विधेयक स्वभावतः दो आत्यंतिक विचारों के बीच समझौता है। वर्तमान परिस्थितियों में, कोई दूसरी चीज संभव नहीं थी। प्रसंगवश, यह विधेयक स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री नेहरूजी और श्री शास्त्रीजी के आश्वासनों को रूपायित करने के साथ साथ दक्षिण भारत के लोगों के मानस में, केवल केन्द्रीय सरकार के प्रति नहीं, बल्कि उत्तर भारत के लोगों के प्रति भी जो अविश्वास बढ़ रहा है, उसे मिटाने में बहुत दूर तक सहायक भी होगा। श्री चह्वाण के विधेयक की यह अतिरिक्त विशेषता उसके पक्ष में एक जोरदार सिफारिश है।

यह बड़े दुःख की बात है कि कुछ हिन्दी राज्यों में इस विधेयक के विरुद्ध इतना अधिक आंदोलन खड़ा हुआ है। इसे मैं हिंदी की एक कुसेवा मानता हूँ। राष्ट्रीय एकता के हितों को भी इससे क्षति हुई है। अतः मैं अत्यन्त नम्रतापूर्वक हिन्दी और अहिन्दी राज्यों से अपील करता हूँ कि वे राजभाषा-विधेयक को सम्मिलित रूप से समर्थन प्रदान करें। मैं राजाजी से भी प्रार्थना करता हूँ कि वे अपना विरोध वापस लें और इस विधेयक को अपने आशीर्वाद प्रदान करें।

पटना, ७-१२-६७

समाचार डायरी

देश :

४-१२-'६७ : संसद् के दोनों सदनों ने स्वीकार कर लिया कि पश्चिम बंगाल में घोष मंत्रि मण्डल का गठन संवैधानिक है।

५-१२-'६७ : केन्द्रीय कृषि तथा खाद्य मंत्री श्री जगजीवनराम ने कहा कि चीनी के भाव फरवरी तक सामान्य हो जायेंगे।

६-१२-'६७ : प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा कि भाषायी आन्दोलन से देश की एकता की रक्षा करना जरूरी है।

७-१२-'६७ : श्री जयप्रकाश नारायण ने अहिंदी तथा हिंदी भाषा-भाषी राज्यों से राजभाषा संशोधन विधेयक का समर्थन करने की अपील की।

८-१२-'६७ : शेख अब्दुल्ला को दिल्ली में स्वच्छन्द घूमने की छूट दी गयी।

९-१२-'६७ : प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा कि देश के सामने प्रमुख कार्य उत्पादन बढ़ाना तथा आर्थिक विकास की गति में पुनः तेजी लाना है।

विदेश :

५-१२-'६७ : श्री लंका की सरकार ने एक विधेयक स्वीकार किया, जिसके अनुसार केवल सिंहली और तमिल भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में माना गया है, अंग्रेजी को नहीं।

८-१२-'६७ : नेपाल ने भारतीय मुद्रा के अनुपात में अपनी मुद्रा का २६ प्रतिशत अवमूल्यन कर दिया।

हिंसा से हिन्दी का अहित

–विनोबा का वक्तव्य–

अक्सर मैं प्रेस के लिए नहीं बोलता हूँ, लेकिन आज का मेरा कथन खास प्रेस के लिए पहुँचाया जाय, ऐसा मैं चाहता हूँ।

राजभाषा में अंग्रेजी के स्थान के विषय में जो विधेयक पार्लियामेण्ट के सामने पेश हुआ है, उसके सम्बन्ध में एक वक्तव्य जयप्रकाशजी ने दिया था। जयप्रकाशजी यहाँ मुझे मिले, तो उन्होंने वह मुझे पढ़ने के लिए दिया। विषय इतना विवादास्पद होते हुए भी उन्होंने उस वक्तव्य में जो कहा, उसके साथ मैं पूरा सहमत हुआ, यह कहने में मुझे खुशी होती है। उस वक्तव्य का एक शब्द भी बदलने की आवश्यकता मुझे महसूस नहीं हुई। जयप्रकाशजी के वक्तव्य को लेकर पटना में कुछ नासमझ लोगों ने जुलूस निकाले। जयप्रकाशजी गद्दार हैं, देश द्रोही हैं, हिन्दी के शत्रु हैं, इत्यादि नारे लगाये गये–जैसा कि उनका हमेशा का 'फैशन' होता है। यह भी कहा कि पटने में जयप्रकाशजी की कोई सभा नहीं होने देंगे। जयप्रकाशजी के रहने के स्थान पर भी वे पहुँचे थे, दंगा करने के खयाल से। लेकिन जयप्रकाशजी वहाँ नहीं थे। मैं जाहिर करना चाहता हूँ कि जयप्रकाशजी के वक्तव्य के साथ मैं पूरी तरह सहमत हूँ। मुझे आशा है कि यह कहने के कारण हिन्दीवाले मुझे हिन्दी का दुश्मन नहीं समझेंगे।

विधेयक बिलकुल सादा था। पंडित नेहरू और लालबहादुर शास्त्री ने जो वचन दिये थे, उनकी पूर्ति करने के लिए विधेयक था। इस प्रश्न के साथ मेरा भी सम्बन्ध आया है, इसलिए कुछ बातें कहना चाहता हूँ। हिन्दी के विरोध में तामिल्नाड में जब दंगे हुए, तब उसकी भयंकरता देखकर मुझे अनशन करने की प्रेरणा हुई, क्योंकि गलतफहमी के आधार पर हिंसा फूट निकली है, ऐसा मैंने देखा। यद्यपि अनशन के विचार को मेरी बहुत ज्यादा मानसिक अनुकूलता नहीं है, फिर भी अन्दर से अनशन लादा गया, जो पाँच दिन तक चला। नन्दाजी उस समय मेरे पास आये और उन्होंने सब प्रदेशों के मुख्य मंत्रियों के साथ फोन से बात की और मेरा विचार उनके सामने रखा। मैंने तीन बातें सामने रखी थी : (१) इस प्रश्न को लेकर हिंसा का आश्रय न लिया जाय। (२) अंग्रेजी न चाहनेवालों पर अंग्रेजी लादी न जाय। (३) हिन्दी न चाहनेवालों पर हिन्दी लादी न जाय। ये तीन शर्तें सब प्रदेशों के मुख्य मंत्रियों ने मान्य की और मेरा अनशन छूटा।

भारत की जो विशेष परिस्थिति है, उसको न समझने के कारण यह सब होता है। योरोप में हर भाषा का एक अलग राष्ट्र बनाया गया है। रशिया एक बड़ा देश है, उसको छोड़ा जाय तो सारा योरोप मिलकर जितना क्षेत्र है उतना भारत का है। यहाँ १८-२० भाषाएँ चलती हैं। योरप में तो एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र में जाने के लिए 'वीसा' और 'पासपोर्ट' लगता है। सारे योरप का साझा बाजार (कामन मार्केट) बनाने की कोशिश हो रही है, लेकिन वह बना नहीं। विज्ञान में योरप जरूर आगे है, लेकिन वहाँ समाज शास्त्र का विकास उतना नहीं हुआ। भारत ने यह जिम्मा उठाया है कि १५-१६ विभिन्न विकसित भाषाओं को लेकर एक खंडप्राय देश बनाया है। ऐसी स्थिति में सहिष्णुता (टोलरेन्स) नहीं रखेंगे तो देश के टुकड़े होंगे और बाहर से भी आक्रमण हो सकता है। यह सामान्य सूझबूझ (कामन सेन्स) की बात है। उन दिनों में तामिल्नाड में हिन्दी विरोधी झगड़े हुए, अब हिन्दीवालों ने ऐसे ही झगड़े अंग्रेजी के विरोध में शुरू किये। अंग्रेजी को 'सहभाषा (एसोसिएटेड लैंग्वेज) का दर्जा (स्टेटस) न दिया जाय, और दिया जाय तो निश्चित मियाद रखी जाय, ऐसा कुछ हिन्दीवालों का कहना है। अहिन्दी लोगों के मत का बहुत ज्यादा विचार नहीं करना चाहिए, यह भी उन्होंने कहा। लेकिन जिस तरीके से हिन्दीवाले हिन्दी का आग्रह कर रहे हैं, उससे अहिन्दी लोगों को हिन्दी कभी भी स्वीकार्य (ऐक्सेप्टेबल) नहीं होगी। यह काम प्रेम से ही होगा।

मैं दक्षिण भारत में घूमा हूँ। पदयात्रा में मेरे व्याख्यान हिन्दी में होते थे और उसका तर्जुमा किया जाता था। एक स्थान पर मुझे कहा गया कि यहाँ लोग हिन्दी के खिलाफ हैं, तो मैंने उसी विषय पर व्याख्यान दिया और समझाया कि "क्रिकेट में जैसी पारी (इनिंग) होती है, वैसे उत्तर और दक्षिण भारत में विचारों के आदान-प्रदान की पारी होती आयी है। उत्तर से दक्षिण में भगवान् बुद्ध और महावीर गये और उन्होंने करुणा का सन्देश दिया। बाद में दक्षिण से उत्तर की ओर पारी शुरू हुई और आचार्य रामानुज, शंकराचार्य, वल्लभाचार्य, माधवाचार्य, आदि उत्तर भारत में आये और भक्ति के द्वारा उन्होंने प्रचार किया। अपने प्रचार के लिए उन्होंने संस्कृत भाषा का आधार लिया, क्योंकि भारत में वह भाषा सब प्रदेशों में चलती थी। अगर वे अपनी मातृभाषा पर अड़े रहते तो प्रचार नहीं कर सकते। उसके बाद उत्तर से दूसरी पारी शुरू हुई और राममनोहर राय, गोखले, रानडे, विवेकानन्द आदि लोग दक्षिण में गये। अब दक्षिणवालों की पारी है कि वे अपनी पारी उत्तर में चलायें। दक्षिण भारत में हर गाँव में मंदिरों के आसपास पवित्रता का वातावरण है। उनके सिनेमा में भी हिन्दी सिनेमा की अपेक्षा अधिक पवित्रता दिखायी देती है। आप लोग अंग्रेजी में प्रवीण हैं तो हिन्दी में प्रवीण बनने में आपको कम तकलीफ होगी। अगर हिन्दी नहीं सीखोगे तो आपकी पारी रुकेगी।" और मैंने देखा कि काफी शांति से लोगों ने मेरी बातें सुनी। वे लोग अयुक्तिसंगत (अनरिजनेबल) नहीं हैं, लेकिन हिन्दीवाले आग्रह रखेंगे तो वे मानेंगे नहीं। यह अंग्रेजी-विरोधी प्रदर्शन करके हिन्दीवाले नाहक मेरी सहानुभूति खो रहे हैं। अपनी पदयात्रा में सारे भारत में घूमकर मैंने हिन्दी का जो प्रचार किया है, उतना शायद ही किसी दूसरे ने किया होगा।

पूसा रोड (दरभंगा), ८-१२-'६७

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, १५ दिसम्बर, '६७

अब बस !

भारत में अंग्रेजी राज की समाप्ति में लगे हुए लोगों में दो ऐसे थे जिनके मन में स्वतन्त्र भारत के निर्माण और विकास की ऊँची कल्पना और योजना (ग्रैंड डिजाइन) थी। वे थे गांधीजी और नेहरूजी। गांधीजी तो स्वतन्त्रता देखकर ही चले गये, लेकिन नेहरूजी को सत्रह वर्ष का मौका मिला। उन्हें असाधारण लोकप्रियता, ऊँची आदर्शवादिता, और सुसंगठित सत्ता की त्रिविध शक्ति उपलब्ध थी, जिससे उन्होंने अपने लम्बे शासन-काल में नये भारत की नींव डाली। उनका नया भारत गांधीजी के नये भारत से मूलतः भिन्न था।

गांधीजी की 'डिजाइन' के तीन पहलू मुख्य थे। एक था राष्ट्र की भाषा और राष्ट्र के शिक्षण का प्रश्न, दूसरा था विकास के रास्ते पर चलने को तैयार देश के अनुरूप प्रशासन, और तीसरा था नये मूल्यों का नया समाज। गुलामी में इन तीनों प्रश्नों का हल रुका हुआ था। स्वतन्त्र होते ही इनका हल आवश्यक था, ताकि देश का विकास सहज और स्वाभाविक हो। और, हल करने में कोई कठिनाई भी नहीं थी। ऐसा कोई प्रश्न नहीं था, जिसकी विस्तृत रूपरेखा कांग्रेस के प्रस्तावों में मौजूद न रही हो, या गांधीजी ने लिखकर छोड़ी न हो।

राष्ट्र बना, लेकिन उसकी भाषा नहीं तय हुई। हाँ, भाषावार राज्य बन गये। नतीजा यह हुआ कि भाषा राजनीति बन गयी, और दलों ने उसे अपनी सत्ता साधना का विषय बना लिया। शिक्षण का प्रश्न बुलन्द इरादों और मोटी फाइलों में पड़ा रह गया। प्रशासन का सुधार उस वक्त हाथ में लिया गया जब नौकरशाही देश की व्यवस्था अपनी मुट्ठी में कर चुकी थी। और समाज-परिवर्तन की बात तो कभी गंभीरता के साथ की ही नहीं गयी, जैसे उसका कोई महत्त्व ही न हो।

शिक्षण-परिवर्तन, व्यवस्था-परिवर्तन और स्वामित्व परिवर्तन: ये तीन राष्ट्रीय जीवन के ऐसे बुनियादी आधार हैं, जिनके बिना राष्ट्र के विकास के लिए जनता को न प्रेरणा मिल सकती है, न दिशा, और न शक्ति। संविधान ने स्वायत्त राज्य तो बना दिये, लेकिन उन्हें एक अखण्ड, सबल और रचनात्मक राष्ट्रीयता के धागे में पिरोनेवाला धागा नहीं बन पाया। जहाँ स्वतंत्रता की लड़ाई में हजारों-लाखों 'राष्ट्रीय सैनिक' तैयार हुए थे, वहाँ स्वतंत्रता के बाद 'राष्ट्रीय नागरिक' का उदय तक नहीं हो सका। हम सब अपनी-अपनी जाति, धर्म, भाषा, दल और राज्य के होकर रह गये, 'भारतीय' नहीं हो सके।

इसके सिवाय दूसरा क्या कारण है कि हिन्दीवालों को, गांधी की 'हिन्दुस्तानी', जिसमें अस्सी फीसदी हिन्दी तथा केवल बीस फीसदी उर्दू और अन्य देशी भाषाओं के शब्द थे, एक मिली-जुली राष्ट्र-भाषा के रूप में मान्य नहीं हुई! और, क्या कारण है कि कुछ अहिन्दीवालों को आज हिन्दी में एक नये 'साम्राज्यवाद' की गंध आ रही है, और कहा जा रहा है कि अगर अंग्रेजी न रही तो देश टुकड़ों में टूट जायगा! टुकड़ों की जड़ दिमाग में है, और जब देश का दिमाग एक नहीं है, तो टुकड़ों की बात क्यों न की जाय!

हिन्दी किसलिए? एकता और राष्ट्रीयता के लिए। अंग्रेजी किसलिए? आधुनिकता और अखण्डता के लिए। नियति का कितना क्रूर व्यंग्य है कि जब देश के लिए चिन्ता इतनी व्यापक है तो देश की स्थिति इतनी चिन्ताजनक हो गयी हो!

शिक्षण आयोग के बाद शिक्षण के क्षेत्र में और संसद के सामने जो विधेयक पेश हैं, उसके कारण जो स्थिति पैदा हो रही है वह कुछ इस प्रकार की है। पूरा शिक्षण, नीचे से ऊपर तक, मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषा में होगा। सरकारी व्यवहार हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में होगा। गैर-सरकारी व्यवहार सामान्य जनता के स्तर पर हिन्दी में होगा, तथा विशिष्ट लोगों के स्तर पर अंग्रेजी में। इनमें शिक्षण तथा सरकारी व्यवहार सरकार के निर्णय से चलेंगे, लेकिन जनता का गैर-सरकारी व्यवहार अपने ढंग से चलता रहेगा। धर्म और व्यापार आदि के लिए लोग आवश्यकता के अनुसार भाषा बना लेते हैं। कठिनाई शिक्षण, धर्म, व्यापार आदि के लिए उतनी नहीं है, जितनी कानून, नौकरी और बड़े अखबारों के लिए है। संसद के सामने प्रस्तुत विधेयक हिन्दी राज्यों की हिन्दी में हस्तक्षेप नहीं करता। हाँ, कानून द्वारा अहिन्दी राज्यों से हिन्दी नहीं मनवाता। जब तक एक राज्य भी अंग्रेजी चाहेगा तब तक अंग्रेजी रहेगी। हिन्दीवाले चाहते हैं कि अभी ही तय किया जाय कि अंग्रेजी को दूसरी राजभाषा के रूप में कब तक रखा जायगा!

आखिर, कानून द्वारा हिन्दी को मनवाने और अंग्रेजी को हटाने का आग्रह क्यों है? हिन्दीवालों की संख्या अधिक है, इसलिए? या इसलिए कि अंग्रेजी विदेशी भाषा है? ये दोनों बातें चलनेवाली नहीं हैं। अगर संख्या अपने में कोई शक्ति है तो उसे कानून और सरकारी बन्दूक की जरूरत क्यों होनी चाहिए? और अगर अंग्रेजी विदेशी भाषा है तो उसका मुकाबिला 'स्वदेशी' की शक्ति से क्यों नहीं होता?

इतना साफ है कि अगर एक बार शिक्षण में क्षेत्रीय भाषाएँ आ जायँ, और राज्य सरकारें राज काज अपनी-अपनी भाषा में चलाने लग जायँ तो अंग्रेजी के लिए बहुत जगह नहीं रह जायेगी। अंग्रेजी के स्थान पर क्षेत्रीय भाषाओं के लिए रास्ता साफ हो रहा है। फिर यह आग्रह क्यों हो कि अंग्रेजी जाये तो हिन्दी आये? हिन्दी के लिए आग्रह अंग्रेजी के लिए आग्रह पैदा कर रहा है। राजनीति ने दोनों को लेकर दुराग्रह पैदा कर दिया है। अब हिन्द की खातिर हिन्दी को चाहिए कि अंग्रेजी का विरोध बन्द कर दे। हिन्दी कानून की दीवाल खड़ी करना छोड़ देगी तो उसके लिए लाखों के दिलों के दरवाजे यों ही खुल जायेंगे।

हिन्दी विचार का प्रश्न नहीं रह गयी है। विवाद ही नहीं, वह उससे कहीं आगे बढ़कर ईंट-पत्थर का विषय बन गयी है। हिन्दी के नाम में चलाया गया पत्थर हिन्द की आत्मा को आहत कर रहा है। बहुत हो चुका—अब बस! ●

ग्रामोद्योगों का नियोजन

• विनोबा

बेकारी और सरकारी जिम्मेदारी ⋯ चालक शक्ति का सवाल ⋯ विज्ञान की दिशा ⋯ गाँव और विश्व ⋯ विकसित चिंतन, किन्तु नकल नहीं ⋯ खादी : अकाली और ग्रामस्वराजी ⋯ प्रतिरक्षा-कदम ⋯ जीवन-स्तर में घटाव-बढ़ाव ⋯ उद्योग का सिद्धान्त और सीमांकन।

नीचे के तबके को न्यूनतम (Minimum) कब मिलेगा, इसकी मुझे अधिक चिन्ता है। आज उसको दिलाने के लिए सन् १९८५ की तारीख बतायी जाती है। यह नहीं चलेगा। "उद्धाराची काय, उधाराचे काम"—तुकाराम का पद है, अर्थात् डूबनेवाले को तो फौरन ही मदद मिलनी चाहिए, उसमें उधार नहीं चलेगा। राष्ट्रीय न्यूनतम (National minimum) की बात डूबनेवाले को बचाने की बात है, उसमें देर लगाना निष्ठुरता है। यह हमारी इस सवाल को देखने की दृष्टि है।

सरकार के कर्तव्यों में लोगों को काम देना और खिलाना, दोनों आता है। काम नहीं दे सकते तो खाना तो खिलाना चाहिए। पर हमें मालूम है कि उसमें खिलाने का सवाल इतना विकट है, कि इस हालत में काम देना ही एकमात्र रास्ता है। खादी ग्रामोद्योगों को उसी कोटि में रखना चाहिए। यदि खिलाने-वाली बात में जो खर्चा होता, उसके मुकाबले में खादी-ग्रामोद्योग पर सरकार का खर्चा कम होता है, तो खादी ग्रामोद्योग को ठीक मानना चाहिए।

खादी ग्रामोद्योग के काम में अक्षमता हो तो उसे समाप्त करना चाहिए। सूत जो कते वह मजबूत होना चाहिए। एक मालिक के हाथ में दूसरा मालिक, तीसरा मालिक, ऐसी मध्यस्थों की सीढ़ी न चले। नहीं तो पानी का अधिक भाग खेत के बजाय बीच की नाली में ही चला जाता है। बेकारों को काम देने में खादी-ग्रामोद्योग को छोड़कर और भी जो दूसरे साधन सरकार के पास हों, वे सभी काम में लाये जायँ। यहाँ तक कि बीड़ी बनाने से काम मिले तो उसका भी विरोध नहीं है। इस प्रकार सोचने में यदि अवशिष्ट (Residuary) माना जाय तो भी खादी का स्थान माना जायगा। चाहे हमने सिंचाई की व्यवस्था बढ़ायी हो तो भी देश की हालत में आज जमीन का रकबा कम ही पड़ेगा। दस हजार साल से जोती हुई भारत की जमीन में कृत्रिम खाद डालकर ज्यादा फसल लेने का लोभ करेंगे तो जमीन की कस क्षीण होती जायगी। इसलिए अन्ततः जमीन घटेगी ही, इसका अर्थ होगा कि खेती के अतिरिक्त दूसरे उद्योगों के आधार बढ़ाने होंगे। जो भी चालक-शक्ति उपयोग में लायी जाये उसका स्वागत है, पर गाँव में ही धंधे चलें। गाँववालों को गाँव छोड़कर जाना न पड़े, ऐसे उद्योगों को बढ़ावा मिलना चाहिए। मैं तो अणुशक्ति के विस्तार की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

मुझे बताया गया कि अणुशक्ति विकेन्द्रित हो सकती है। इससे मुझे बड़ी आशा है। एक गाँव द्वारा दूसरे गाँवों का शोषण न होने पाये तो किसी भी चालक-शक्ति का ग्रामोद्योग में स्वागत है। मैं विज्ञान को बढ़ाना चाहता हूँ। पर उसे बढ़ाने में विज्ञान को जो दिशा आज राजनीतिज्ञ दे रहे हैं, वही दिशा विज्ञान की रहेगी तो सर्वनाश आ सकता है। यह गलत है। दिशा देने का काम तो आध्यात्मिकता को करना होगा। विज्ञान में मुझे बहुत विश्वास है। मैं तो बहुत विस्तार से सोचनेवाला हूँ। मंगल, चन्द्र पर जाने की तैयारी में मानव जो लगा है, उसमें मेरी बड़ी आशा है। परमात्मा की सृष्टि में अन्त नहीं आता, पर हमारी इन्द्रियों का अन्त है। हमारे यहाँ प्राणी को ५ इन्द्रियाँ ही हैं, पर अलग-अलग लोकों में ६, ७ इन्द्रियों-वाले प्राणी अगर हों तो उनके ज्ञान से हमारी सीमाएँ बढ़ेंगी।

मैं जब ग्रामदान की बात करता हूँ तो भी शब्द 'जय जगत्' का बोलता हूँ। संकुचित विचार को हमारे यहाँ गुंजाइश ही नहीं है। इसलिए मैं कहता हूँ कि कोई भी चालक-शक्ति गाँव में आ सकती है। उसका हमें विरोध नहीं है। पर यह बात समझ लेनी चाहिए कि जैसी स्थिति आज है, उसमें सरकार का खर्च खादी-ग्रामोद्योग के क्षेत्र में घटेगा नहीं, बढ़ेगा ही। गाँव में खेतीवाले सभी लोग थोड़ा और कुछ लोग पूरा समय उद्योगों में लगायेंगे, यह मैं मानता हूँ। इनको जो भी मदद जरूरी हो वह दिलायी जानी चाहिए।

चाँडिल में सन् १९५३ में पंडित नेहरू मुझसे मिलने आये, तो ग्रामोद्योग की बात उन्होंने पूछी। मैंने उनसे कहा कि अर्थशास्त्र के विकसित चिन्तन में मुझे कोई उज्र नहीं है, पर जब तक वह विकासशील स्थिति हमारे देश में लागू नहीं की जा पाती, इस बीच की अवस्था में गाँववालों की मदद करने के लिए ग्रामोद्योगों की जरूरत से इन्कार नहीं किया जा सकता। इस बीच के काल की अवधि ५० साल से कम नहीं है। मेरी यह बात नेहरूजी समझ गये। पर यह बात मानने पर भी उनका रुख यह रहा कि जल्द-से-जल्द उन्नत करना है। बड़े राष्ट्रों के मुकाबले में भारत आये, यह प्रयत्न रहा। १०-१२ साल यही उन्होंने किया। पर बाद में उनके ध्यान में यह बात आयी कि यद्यपि बड़े उद्योगों को आगे लाया गया, पर नीचे-वालों को न्याय देना हो तो गांधीजी की बात ही माननी होगी। मृत्यु के ६ माह पूर्व, ११ दिसम्बर को उन्होंने ऐसा ऐलान लोक-सभा के अपने भाषण में किया था।

अर्द्धरोजगारी और बेरोजगारी के बारे में जब विचार करते हैं तो मेरा मानना है कि सरकार के पास जो भी साधन हों, वे सब काम में लेने पर भी बेकारी बढ़ी है और बढ़ रही है। ऐसी स्थिति में सरकार खादी को छोड़ नहीं सकती। हमने इस राहत की खादी को "अकाली खादी" का नाम दिया है। यह मेरी अपनी खादी की दृष्टि यह नहीं है, पर सरकार की दृष्टि से इस प्रकार की राहत की खादी की जिम्मेदारी उसे उठानी होगी। जब लोगों को काम नहीं दिलाये जा सकते, तो कुछ-न-कुछ साधन दिलाये जाने अत्यन्त आवश्यक हैं। बाबा की खादी की

दृष्टि यह नहीं है। वह तो चाहता है ग्राम स्वराज्य की खादी में भी सरकार को मदद देनी होगी। गाँव पैर पर खड़ा हो, इसके लिए सरकार से ग्रामसभा को निम्न बातों में मदद मिलनी चाहिए: (१) विकास, (२) प्रतिरक्षा, (३) राहत कार्य।

(अ) कताई सिखाना
(आ) चरखा देना (किस्त)
(इ) पूँजी की व्यवस्था
(ई) बुनाई मुफ्त देना

औजारों के बारे में मैंने कहा कि अम्बर छह तकुए का गाँव के लिए उपयोगी नहीं है। एक तकुएवाला अम्बर बनाने को मैं कहता हूँ। उसमें मामूली चरखे से पौने दुगना सूत होगा और बहुत मजबूत होगा। इससे पुराने चरखे को बदलना चाहिए। पुरानों को जाना है, उसमें तीन चार साल लगेंगे। कुछ साधन घरेलू होंगे, कुछ गाँव के। घर घर में एक तकुएवाला चरखा पहुँचना चाहिए और गाँव-गाँव में छह तकुएवाला। पूनी गाँव का उद्योग हो, वहाँ से वह गाँव में हर घर को दी जाय। जल्दी ही यह परिवर्तन हो। श्री ढेबर भाई ने कहा कि इस काम के लिए दस साल का समय लगेगा। उसमें शीघ्रता बरतनी चाहिए, यही मेरा अनुरोध है। दूसरे भी धंधे इस खादी उद्योग के साथ हैं—धोबी, रंगरेज, बुनकर, बढ़ई, सभी उद्योग इसके साथ आते हैं।

जो भी मशीनें आप गाँवों में दाखिल करें, उसकी मरम्मत वहीं गाँव में हो सकना चाहिए। बुनकर अधिक स्थानों में पैदा किये जायँ। बुनाई के लिए दूर सूत ले जाना पड़े, ऐसी स्थिति नहीं होनी चाहिए। मेरी दृष्टि से मुफ्त बुनाई की बात कायम की बात है, यह आरिजी बात नहीं है, बल्कि एक स्वाभाविक सुरक्षा के तौर पर स्थायी कदम है। इस धन्धे को इतनी सहायता आपको देनी ही होगी। जैसे तालीम में आप बहुत सी बातें सिखाते हैं, उनमें सब बातें आगे चलकर विद्यार्थी के काम में नहीं आतीं, पर वे होती हैं ऐसी जो उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। इंग्लैण्ड में सबको तैरना, नाव चलाना सिखाते हैं, क्योंकि चारों ओर समुद्र होने से उसकी आवश्यकता पड़ सकती है। उसी तरह भारत के लिए सबको कताई आनी चाहिए और इसे शिक्षण में दाखिल करना चाहिए। अगर भारत में लड़ाई शुरू हो जाय तो बम गिरेंगे अहमदाबाद आदि बड़े बड़े शहरों में, जहाँ उद्योगों का केन्द्रीयकरण है, वहाँ उद्योगों को क्षति पहुँचेगी। उससे बचाव रहे और हमें नंगे रहने की नौबत न आये, उसके लिए अनाज और कपड़ा गाँव गाँव में मिले, यह होना चाहिए। मुझे नेहरूजी बताते थे कि चीन के अन्दरूनी भाग में जो ग्रामोद्योग चलते रहे, इसीसे वह इतने दिनों तक लड़ सका। इसलिए प्रतिरक्षा काम के रूप में खादी ग्रामोद्योग जरूरी है, यह समझ में आ सकना चाहिए। इसलिए मेरा स्पष्ट मत है कि हमारे देश में जो स्थिति है उसमें कताई शिक्षा में दाखिल की जाय, जिससे मौका आने पर नंगा न रहना पड़े।

स्वराज्य की खादी का काम आप हर भाग जिले में कर सकते हैं। आपने जाना होगा कि यहाँ ५१ प्रतिशत जमीन के मालिकों और ७५ प्रतिशत से ज्यादा लोगों के हस्ताक्षर ग्रामदान के पक्ष में आ गये हैं। अब इस क्षेत्र के विकास में क्या करना हो, इसके लिए मेरी प्राथमिकताएँ निम्न हैं

(१) अनाज, (२) वस्त्र, (३) घर, (४) काम करने के औजार, (५) आरोग्य, (६) तालीम, (७) मनोरंजन के साधन।

मुझसे सवाल पूछा जाता है कि आप स्तर बढ़ाने के पक्ष में हैं कि घटाने के। जीवन-स्तर को बढ़ाने में यह विवेक करना होगा कि किस चीज का स्तर बढ़ना उचित है, किसका घटना उचित होगा। सिगरेट का स्तर घटना चाहिए, दूध का बढ़ना चाहिए। बँटवारे के पहले भारत में दूध का औसत ७ औंस प्रति व्यक्ति था, पर आज हमारा औसत ५ औंस है। कुछ प्रान्तों में तो यह मात्रा २ औंस ही है, जैसे बंगाल आदि में। इसलिए सिर्फ जीवन स्तर बढ़ाने से काम न चलेगा, विवेक करना होगा कि किन चीजों को बढ़ाया जाय और किनको प्राथमिकता दी जाय।

उद्योगों के बारे में मेरा सिद्धान्त है कि जो उद्योग बुनियादी आवश्यकताएँ पूरी करते हैं, जिनका कच्चा माल गाँव में उपलब्ध है, उनका पक्का माल गाँव में गाँववालों द्वारा बनना चाहिए। ऐसा सीमांकन ठीक होना चाहिए। अपनी आवश्यकता की पूर्ति के बाद बचा माल वे बाहर बेचेंगे। पर अभी तक जो उद्योग बढ़े हैं उन्होंने गाँव के ऐसे उद्योगों को धक्का दिया है—जैसे चावल-मिल, चीनी मिलें। इनसे गाँव के कच्चे माल से पक्का माल बनाने का काम उनसे छीना गया। नतीजा यह होता है कि शहरों पर दो आक्रमण आये—एक परदेश के माल का, दूसरा गाँव के बेरोजगार लोगों का। इसलिए गाँव को उनके कच्चे माल के पक्के दाम के लिए सुरक्षित करें और शहर में वे धंधे चलें, जिनसे परदेश का माल आना रुक जाय। बड़े उद्योग विदेश से आनेवाले निर्यात के माल को रोकें। ([illegible])

कैसा अर्थशास्त्र ?

मात्र अर्थशास्त्र नामक कौनसा शास्त्र है, यह मैं समझ नहीं पाया। गणित की तरह देश काल निरपेक्ष सनातन सत्य (पूर्ण विज्ञान अर्थशास्त्र) है, ऐसा मैं नहीं समझता हूँ।

भ्रांति में सोचते हैं, जो मानते हैं कि अमरीका का चित्र भारत में लाया जा सकता है। जब आपको स्पष्ट है कि अमरीका में ४०० साल की जुताई भी नहीं है और भारत के मुकाबले वहाँ जमीन १२ गुनी है। दुनिया का आधा सोना उनके पास है। उस में अनेक सिद्धान्त हम पर लागू किये जायँ यह गलत होगा। बढ़ता अर्थव्यवस्था में कीमतों में बढ़ती होती है, पर होना तो चाहिए यह कि अनाज बढ़े, मकान बढ़े। यह हो नहीं रहा, इसलिए मेरी समझ में यह (खंडित अर्थ व्यवस्था) है। इस बारे में विचार किया जाना चाहिए। —विनोबा

उलझी राजनीति : खतरे का संकेत

हरियाना और प० बंगाल की हाल की घटनाओं से जो संवैधानिक संकट देश के सामने उपस्थित हुआ है, उसके मूल में दो गहरी कमियाँ दिखाई दे रही हैं एक, संविधान के सम्बंधित मामलों की स्पष्टता का अभाव, और दूसरी, राजनैतिक आचार मर्यादा का अभाव। यह सही है कि प्रत्येक घटना के बारे में काफी चर्चा हुई, काफी लिखा गया, लेकिन उन घटनाओं के सही गलत का विचार शायद ही किया गया—न केवल नैतिकता की दृष्टि से, बल्कि प्रजातन्त्र के मौलिक सिद्धान्तों की दृष्टि से भी। जैसे, राज्यपाल की, या मुख्यमंत्री की, या विधान सभा के अध्यक्ष की कार्रवाइयों को लेकर इस बारे में गरमागरम चर्चा तो बहुत की गयी कि वे वैधानिक थीं या नहीं, लेकिन किसीको इस बात की चिंता नहीं हुई कि बहुमत से अर्थात् प्रजातन्त्र के बुनियादी तत्त्व के आधार पर इस विषय में निर्णय लिया जाय। इसमें कोई शक नहीं कि संविधान के तकनिकी मुद्दों का महत्त्व जरूर है, लेकिन उससे भी अधिक महत्त्व इस बात का है कि समय रहते, बहुमत रखनेवाले प्रतिनिधियों को काम करने का अवसर दिया जाय, इसके लिए शासन पर उनके अधिकार को मान्यता दी जाय। ऐसा न करके, संविधान की धारा के बाल की खाल उतारते बैठना और निर्णय के मार्ग में बाधा उपस्थित करना लोकतन्त्र के लिए घातक है और जनता की अवहेलना है। प० बंगाल में, लोकतन्त्र की हामी भरनेवालों का यह त्वरित दायित्व है कि विधान सभा को इस मामले पर निर्णय देने दें। इस दायित्व को, राज्यपाल की, या विधान सभा के अध्यक्ष की या पिछले या वर्तमान मुख्यमंत्री की वैधानिकता सिद्ध करने, आदि प्रश्नों से बढ़कर प्रधानता दी जानी चाहिए।

जहाँ तक प० बंगाल और हरियाना के राज्यपालों की कार्रवाई का प्रश्न है, चूँकि संविधान की तत्सम्बन्धी धारा अस्पष्ट है, इसलिए स्पष्ट ही है कि उस धारा की कई तरह से व्याख्याएँ की जायेंगी और उन व्याख्याओं में परस्पर विरोध होगा। प्रत्येक व्यक्ति अपने दलहित की दृष्टि से उसका भाष्य करेगा।

पूर्णतया तटस्थ दृष्टि से किये गये भाष्यों में भी फर्क की गुंजाइश है, जब कि मूल अधिकारों के प्रश्न को लेकर सुप्रीम कोर्ट ने हाल में ही अपने ही एक फैसले को उलट दिया है। ऐसी स्थिति में मेरे जैसे एक पक्षातीत दर्शक के लिए किसी घटना पर अपना निर्णय दे देना हिचकिचाहट की ही बात होगी। फिर भी दो बातें मेरी दृष्टि में साफ हैं। एक, हाल के मतविरोधों को लेकर संविधान की जो अस्पष्टता और उलझाव सामने आया है, उसे संसद को दूर करना चाहिए। दूसरी, संविधान में ऐसी कोई व्यवस्था होनी चाहिए, जिससे जन प्रतिनिधियों

जयप्रकाश नारायण

को अपने शासन करने के अधिकारों का दावा करने में आज की लाचारी दूर हो।

पहली बात के लिए मेरे दो सुझाव हैं: एक, राज्य के प्रशासन को राष्ट्रपति अपने हाथ में लें, यह धारा कायम अवश्य रहे, लेकिन यह अधिक स्पष्ट कर दिया जाय कि किन परिस्थितियों में वे उसे अपने हाथ में लें। दूसरा, संविधान में इतना सुधार करना चाहिए कि जब राज्यपाल को यह विश्वास हो जाय कि वर्तमान मुख्यमंत्री बहुमत खो चुके हैं, तब उन्हें राज्यपाल परामर्श दें कि वे विधान सभा को अपने बहुमत का विश्वास दिला दें, और यदि मुख्यमंत्री इस बात से इनकार करते हैं, तो स्वयं राज्यपाल को यह अधिकार और दायित्व रहे कि वे बलाबल का निर्णय विधान-सभा में कर सकें। इससे बहुमत को खोये हुए मन्त्रिमण्डल के बने रहने का भय दूर होने के अलावा राज्यपाल द्वारा मन्त्रि मण्डल को ही बरखास्त कर देने की यह अवांछित और असत्य परम्परा की सम्भावना भी टल सकेगी।

दूसरी बात के बारे में, मुझे यह उचित मालूम पड़ता है कि विधान सभा के बहुमत वाले प्रतिनिधियों को यह वैधानिक अधिकार दिया जाय कि वे आवश्यकता समझने पर विधान सभा के अध्यक्ष को स्थिति स्पष्ट करने के लिए कह सकें और अपनी इस माँग पर ध्यान देने के लिए अध्यक्ष पर दबाव डाल सकें।

पिछले चुनाव के बाद यह अपेक्षा निर्माण हुई थी कि लोक-व्यवहार का स्तर ऊँचा उठेगा। इस अपेक्षा के दो कारण थे एक, कांग्रेस की जो करारी हार हुई, उससे आशा थी कि कांग्रेस सबक सीखेगी, और दूसरा, गैर कांग्रेसी पक्षों से आशा थी कि वे कांग्रेस की गलतियों से सावधान होंगे, और अपने व्यवहार का उन्नत स्तर कायम करेंगे। लेकिन दुर्दैव की बात है कि ये अपेक्षाएँ व्यर्थ सिद्ध हुईं। ऐसा मालूम होता है कि इन पक्षों को, जिनमें कांग्रेस भी है, सत्ता हस्तगत करने के लिए खुलकर अंधाधुंध संघर्ष करने के अलावा कोई दूसरा महत्त्वपूर्ण काम है नहीं। क्या कांग्रेस और क्या गैर कांग्रेसी पक्ष, उनका प्रमुख काम एक ही रह गया है कि विरोधी पक्ष को हर तरीके से गिराया जाय, चाहे उसके लिए राजनैतिक दृष्टि से अनीतिपूर्ण भ्रष्ट तरीकों और गैरजिम्मेदाराना व्यवहारों को ही क्यों न अपनाना पड़े। अब समय आ गया है कि देश में अच्छे प्रशासन और लोकतन्त्र के कल्याण के लिए सभी पक्षों को साथ बैठना चाहिए और इस दिन-ब-दिन बढ़ते हुए संक्रामक रोग को रोकने के उपाय सोचने ही चाहिए। इस सन्दर्भ में मुख्य चुनाव आयुक्त (चीफ इलेक्शन कमिश्नर) ने हाल में जो बातें कही हैं, उन पर फौरन और गहराई से विचार किया जाना चाहिए।

दूसरा महत्त्वपूर्ण विषय जो आज के संकट में सामने आया है, वह है कि कांग्रेस पक्ष जगह-जगह अल्पमतीय सरकारें स्थापित करने का प्रयत्न करने लगा है। यह बिलकुल गैरजिम्मेदारी का काम है, क्योंकि यद्यपि गद्दी के पीछे कांग्रेस की ही ताकत काम कर रही है, फिर भी वह उसका कुछ भी दायित्व स्वीकार नहीं करती। यह मान्यताओं को

औपचारिक लोकतंत्र और हिंसा की राजनीति

प० बंगाल के राज्यपाल द्वारा संयुक्त मोर्चे की सरकार बरखास्त किये जाने और डा० प्रफुल्लचन्द्र घोष के नेतृत्व में नयी सरकार को सत्तारूढ़ बनाने के कारण एक बहुत ही नाजुक हालत पैदा कर दी गयी है। जब संयुक्त मोर्चा-मंत्रिमण्डल के समर्थकों का एक खासा बड़ा हिस्सा उससे अलग हो गया और इस स्थिति में विधान-सभा की बैठक शीघ्र बुलाने की जरूरत सामने आयी तो संयुक्त मोर्चा-मंत्रिमण्डल ने इस लोकतांत्रिक परम्परा के प्रति नहीं के बराबर आदरभाव दिखाया। लेकिन, अचानक संयुक्त मोर्चा-मंत्रिमण्डल को बरखास्त कर देना जल्दबाजी और अदूरदर्शिता का काम था। खास तौर से ऐसी हालत में, जब कि यह बात मालूम थी कि उसे उलटने की कोशिशें हुई थीं और हर ढंग के ऐसे नागवार तरीके अपनाये गये थे, जिससे आम लोगों की उत्तेजना बहुत बढ़ गयी थी।

राज्यपाल के कार्य यों तो बड़े स्वाभाविक-से लगे, लेकिन उनके पीछे राजनैतिक मन्तव्य थे और इसीलिए उसका विरोध होना ही था। दल परिवर्तन आज के राजनैतिक जीवन की एक आम बात हो गयी है और हरेक राजनीतिक दल ने इस अनैतिक व्यवहार को उस हद तक बढ़ावा दिया है, जब तक कि इसका नतीजा उनके ही खिलाफ न गया। इस व्यवहार का सबसे निन्दनीय पहलू यह है कि जिन लोगों ने विधायक को चुनकर भेजा, उनके प्रति वह थोड़ा भी आदर नहीं रखता। अपने वोटरों को दिये गये वादों को वह तोड़ता है और वे बेचारा बनकर इस अशोभनीय दाँवघात के दर्शक बने रहते हैं!

इसमें कोई शक नहीं है कि लोग इस

मनमोहन चौधरी, अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

तरह की बातों से ऊबते जा रहे हैं और यह आशा करना कि पश्चिम बंगाल की अत्यन्त चैतन्य, और सशक्त जनता इसको झुककर कबूल कर लेगी, एक निरर्थक बात है। हाँ, यह सही है कि हमारे मुल्क में एक ऐसा तबका है, जिसका औपचारिक लोकतंत्र में नाम भर का विश्वास है। और वह इस लोकतंत्र का इस्तेमाल इसीको तोड़ने का काम में करना चाहता है। लेकिन लोकतंत्र के दम भरनेवाले हिमायतियों के गलत कार्यों ने ऐसे तबके के लोगों के हाथ और मजबूत कर दिये हैं।

डा० घोष ने अपने आपको संयुक्त मोर्चे से अलग होने के कारणों को स्पष्ट करते हुए गांधीवाद और अहिंसा का प्रश्न उठाया है। यह कहीं अच्छा हुआ होता कि उन्होंने एक राजनीति के समर्थन में एक दूसरे ही स्तर पर इस सिद्धान्तों को न घसीटा होता।

जो लोग शान्तिपूर्ण उपायों में विश्वास रखते हैं, उनके लिए यह गहरी छानबीन का समय है। आम लोग अपनी तकलीफों, तंगियों और धोखा खाने के गुस्से के चलते निरर्थक हिंसा की तरफ ढकेले जा रहे हैं। इस स्थिति से बाहर निकलने का रास्ता यह है कि सामाजिक रद्दोबदल का कोई शान्तिपूर्ण तरीका ढूँढ़ा जाय। इस देश में कानून और व्यवस्था लागू करने की कोशिश के साथ शान्ति को जोड़ना, शान्ति का रास्ता नहीं है, क्योंकि कानून और व्यवस्था के नाम पर यहाँ सबसे घटिया दर्जे की असमानता और गैर इन्साफ बरकरार रखा जाता है। इस बात की सावधानी रखनी होगी कि अधिकारी कानून और व्यवस्था लागू करने के वाजिब तरीकों के बाहर अपना कदम न ले जायँ।

आज की परिस्थिति में शान्ति में विश्वास रखनेवालों का सबसे पहला कर्तव्य यह है कि वे मुल्क के लोगों को हिंसा की खराबी और निरर्थकता की बात समझायें। हाल ही में की गयी ४८ घंटे की आम हड़ताल का नैतिक प्रभाव कहीं अधिक हुआ होता, अगर उसके दौरान हिंसा की छिटफुट घटनाएँ न हुई होतीं। आनेवाले दिनों के लिए और ज्यादा बड़े प्रदर्शनों की तैयारियाँ की जा रही हैं, और चूँकि ये लोकतंत्र के समर्थन के लिए हैं, न कि उसे उलटने के लिए, इसलिए यह और भी ज्यादा जरूरी है कि हर कीमत पर आम लोगों की तरफ से शान्ति कायम रखी जाय। विधान सभा को आम तरीके से काम करने का मौका देना ही जाय और जो उलझनें पैदा हैं, उनका हल शान्तिपूर्ण और संवैधानिक तरीके से ढूँढ़ा जाय।

कलकत्ता

२७-११-'६७

अदूरदर्शिता का काम....निन्दनीय पहलू...लोकतंत्र का इस्तेमाल: लोकतंत्र को तोड़ने के लिए....गहरी छानबीन का समय...हिंसा की निरर्थकता....पहला कर्तव्य

—और मुख्यमन्त्री तक को नहीं छोड़ा। हर कोई जानता है कि जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में इस राज्य की कैसी निराशापूर्ण स्थिति है, इसकी आवश्यकताएँ कितनी तीव्र हैं और जिन समस्याओं का सामना करना अभी बाकी है, वे कितनी भयानक हैं! फिर भी बड़े खेद की बात है कि सरकार के सदस्य फँसे हुए पहिये को उठाने के लिए कन्धे-से-कन्धा मिलाने के बजाय, एक दूसरे का विरोध करने और उठा-पटक करने में अपनी शक्ति का अपव्यय कर रहे हैं। अन्य बातों के साथ इस स्थिति का भी प्रशासन पर भीषण दुष्प्रभाव पड़ रहा है। इसलिए मुख्यमन्त्री तथा उनके साथियों को मैं पूरी हार्दिकता के साथ यह सलाह देना चाहता हूँ कि वे राज्य तथा अच्छी सरकार के हित में तुरन्त अपने आपको व्यवस्थित कर लें, और प्रस्तुत समस्याओं का सामना करने के लिए मिल-जुलकर प्रयत्न करें। अगर वे असफल होते हैं तो पिछली सरकार का भाग्य ही इनकी किस्मत में भी लिखा है।

सिताबदियारा, ३-१२-'६७

'अहिंसा और सत्य'

आधुनिक भारतीय इतिहास में गांधीजी की देन अपूर्व और अप्रतिम है। उन्होंने भारतीय जीवन के प्रत्येक अंग को स्पर्श किया है। धर्म, शिक्षा, राजनीति, अर्थनीति, सार्वजनिक सदाचरण—प्रत्येक विषय में उनके अपने मौलिक विचार हैं। उन्होंने हमें अपने पैरों पर खड़ा किया, आजादी के दरवाजे तक पहुँचाया। एक राष्ट्र की जिन्दगी में यह बहुत बड़ी बात है, परन्तु गांधीजी ने इससे भी बड़ी जो बात हमें सिखायी वह थी इन्सान का इन्सान बनना। उन्होंने हमें बताया कि मानवता के मौलिक मूल्यों और गुणों से रहित होकर जीना जीना नहीं है, वही मृत्यु है। उन्होंने हमें बताया कि मानव-संस्कृति हिंसा, द्वेष, असत्य, अनीति और विलासिता पर नहीं टिक सकती, वह केवल प्रेम पर, एक दूसरे के मंगल पर, समाज में सबके उदय पर ही टिक सकती है। हिंसा नहीं, अहिंसा मनुष्य की मूल प्रकृति है और असत्य नहीं, सत्य ही उसका धर्म है, गंतव्य है।

इस समय हमें अहिंसा छोड़कर हिंसा का उपयोग करना पड़ रहा है।* परिस्थिति ऐसी विषम थी, जिसमें हथियारों का उठाना आवश्यक हो गया। दो देशों के बीच में यदि तनाव हो और एक देश दूसरे पर आक्रमण करे तो अभी तक कोई अहिंसात्मक साधन ऐसा नहीं बना है, जिसका उपयोग किया जा सके। गांधीजी इस पर विचार कर रहे थे और सम्भव है, वे इसका कोई उपाय निकालते। फिर भी युद्ध करते हुए भी हमारी अहिंसात्मक वृत्ति जाग्रत रहनी चाहिए। हमारे अन्दर घृणा की भावना जाग्रत नहीं होनी चाहिए और हमें सुलह और शान्ति के लिए तत्पर रहना चाहिए। अपने देश के अन्दर तो हमें सदा प्रयास अपनी समस्याओं को शान्ति द्वारा सुलझाने का ही करना चाहिए। यदि हम इसे कर सकें तो अहिंसा की बड़ी विजय होगी और उससे देश में सदा सुन्दर वातावरण बना रहेगा।

गांधीजी ने भारतीय जीवन और मानवीय आचरण, तथा संस्कार सम्बन्धी प्रत्येक विषय पर इतना लिखा है कि आश्चर्य होता है। एक विषय पर प्रकट किये गये उनके सम्पूर्ण विचारों को न सामने के कारण, या उनकी पूरी शक्ल सामने न होने के कारण लोग अक्सर उनकी बातों को लेकर भ्रम में पड़ जाते हैं, या उनके सम्बन्ध में अपनी अधूरी या आंशिक धारणा बना लेते हैं। चूँकि भारतीय जीवन के प्रत्येक स्तर पर उनका गहरा असर पड़ा है, यह उचित होगा कि हम उनके विचारों का उनकी समग्रता में अध्ययन करें।

नयी दिल्ली
१२ नवम्बर '६५

—स्व० लाल बहादुर

* भारत-पाकिस्तान युद्ध, सन् '६५।

स्व० चिमनलालजी मालोत

सार्वजनिक क्षेत्र में काम करनेवाले लोगों में से कुछ होते हैं, जिनको काफी प्रसिद्धि मिल जाती है। बहुत-से ऐसे होते हैं, जिनका नाम लोगों के सामने ज्यादा नहीं आता, लेकिन उनका व्यक्तित्व और उनका काम पहलेवाली श्रेणी के लोगों से बहुत कम दर्जे का नहीं होता। बाँसवाड़ा के श्री चिमनलालजी मालोत ऐसे ही लोगों में से थे।

मेरा परिचय उनसे करीब २० साल पुराना था। सन् १९४६ में स्वर्गीय ठक्कर बापा की अध्यक्षता में जब राजस्थान सेवक संघ की स्थापना हुई तब वे भी उसमें लिये गये। बाँसवाड़ा आज भी रेल से मीलों दूर है, उस समय और भी दुर्गम था। चिमनलालजी इसी क्षेत्र में सेवा कार्य करते थे।

चिमनलालजी के स्वभाव में थोड़ा आग्रह था। यह कहना मुश्किल है कि हममें से किसमें वह नहीं है। इतना ही है कि कुछ लोग अपने आग्रह का आग्रह बहुत आग्रह के साथ प्रकट करते रहते हैं, कुछ ऐसे होते हैं जो आग्रह तो रखते हैं, लेकिन उसको ज्यादा प्रकट नहीं करते। चिमनलालजी के स्वभाव के कारण तथा काम करने के उनके तरीके के कारण अक्सर लोग उनसे सहमत नहीं होते थे, लेकिन आदर्श के प्रति निष्ठा और काम की धुन जैसी चिमनलालजी में थी वैसी कम लोगों में देखने को मिलती है। वे उन लोगों में से थे जो रूढ़ि और परम्परा के खिलाफ हमेशा विद्रोह करते रहते हैं। वैश्यकुल में जन्मे थे, लेकिन सारी उम्र उन्होंने हरिजनों और आदिवासियों में काम किया। हरिजनों में भी उनका कार्य मुख्य तौर पर भंगियों के बीच रहा। बाँसवाड़े के भंगी परिवारों के साथ उनका निकट सम्पर्क था। उनके पढ़ाये हुए कई भंगी नौजवानों से मेरा परिचय हुआ था।

पिछड़े हुए वर्गों की सेवा भी चिमनलालजी ने कोई ऊपर-ऊपर से नहीं की। वे उनमें घुल-मिल गये थे। शादी भी उन्होंने एक आदिवासी महिला से की थी। (शायद यह उनकी दूसरी शादी थी।) और भंगियों के प्रति समाज की उपेक्षा तथा उनके प्रति होनेवाले व्यवहार से वे इतने क्षुब्ध हुए कि पिछले कुछ समय से उन्होंने खुद ही बाकायदा भंगी काम अंगीकार किया था। उन्होंने जब भंगी की नौकरी के लिए बाँसवाड़ा की नगरपालिका के अधिकारियों को अपनी अर्जी दी तो वे समझे कि यह चिमनलालजी का कोई 'स्टंट' या तरंग है। उनकी अर्जी स्वीकार नहीं की गयी, पर चिमनलालजी ने आग्रह किया और आखिरकार बाँसवाड़ा की नगरपालिका के भंगियों में उनको नौकरी दी गयी।

चिमनलालजी के बीमार होने की सूचना अभी १९ नवम्बर को अचानक उदयपुर में डा० मोहनसिंहजी मेहता से मुझे मिली, बाँसवाड़ा के मित्रों को लिखकर उनके समाचार मँगवाये, लेकिन १० दिन बाद ही बाँसवाड़ा में उनकी मृत्यु होने के समाचार मिले।

चिमनलालजी की मृत्यु से राजस्थान का निष्ठावान, ईमानदार, मूक और क्रान्तिकारी सेवक उठ गया।

—सिद्धराज ढड्ढा

मानव ही भगवान है

सर्वोदय का एक अर्थ तो, गीता और कुरान है।
और दूसरा, मार्क्सवाद से आगे का तूफान है॥
नये जमाने की गंगा यह, लहर-लहर में ज्ञान है।
घर-आँगन जैसा ही इसमें, प्यारा सकल जहान है।
एक अर्थ तो, नयी क्रान्ति की मधुर-मधुर मुस्कान है।
और दूसरा महा प्रलय, उसके आगे तूफान है॥
वाद, पथ, मजहब से ऊपर, नूतन नव-अभियान है।
नयी क्रान्ति का नया बीज, यह नया-नया बलिदान है।
एक अर्थ है उदय मुनाफा, जनता सभी समान है।
और दूसरा सम-वितरण का, नया-नया आह्वान है॥
देवलोक में जानेवाला, धरती से अनजान है।
मगर पता है, उसे कहाँ, यह मानव ही भगवान है।
अगर प्रेम से जिये मनुज तो, धरती स्वर्ग-समान है।
सर्वोदय इस धरा-धाम पर, जीवन भरा विहान है॥

—लक्ष्मी निधि

दैनन्दिनी सन् १९६८

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन द्वारा प्रकाशित की गयी सन् १९६८ की दैनन्दिनी, जो क्राउन और डिमाई, दो साइजों में प्लास्टिक के चित्ताकर्षक आवरणों के साथ प्रकाशित की गयी है, उसका स्टाक अब समाप्ति की ओर आ रहा है। अतः साथियों एवं सर्वोदय-साहित्य-प्रचारकों से निवेदन है कि वे अपनी आवश्यकतानुसार दैनन्दिनी की कीमत अग्रिम भिजवाकर मँगा लें, अन्यथा स्टाक की समाप्ति के बाद प्राप्त आर्डरों की आपूर्ति करने में हम गत वर्ष की भाँति असमर्थ होंगे।

डिमाई साइजः ९"×५॥" रु० ३-२५ प्रति

क्राउन साइजः ७॥"×५" रु० २-७५ प्रति

संचालक

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी-१

"भूदान-यज्ञ"

द्वारा प्रस्तुत हो रहा है

गांधी-निर्वाण दिवस : ३० जनवरी, '६८

के अवसर पर

सत्याग्रह विशेषांक

शिक्षकों, प्रशिक्षकों, चिन्तकों, शोधकर्ताओं, नेताओं, वक्ताओं, सुधारकों, सेवकों, तेजी से बदल रहे भारत के सचेत नागरिकों की सेवा में

'उपवास' से 'उपद्रव' तक

'प्रतिकार' से 'सहकार' तक

सत्याग्रह की क्रान्तिकारी विचारधारा के विकास का विश्लेषण, 'सत्य' और 'सत्याग्रह' के बदलते स्वरूप का विवेचन,

आज की राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय संकटग्रस्त परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में,

प्रखर चिंतक आचार्य राममूर्तिजी के सम्पादकत्व में

पठनीय, मननीय, संग्रहणीय

६४ पृष्ठों के इस अंक का मूल्यः मात्र एक रुपया।

वार्षिक मूल्य—१० रुपये

हमारा सहयोग कीजिये, हमको सहयोग दीजिये, विज्ञापन देकर, अपनी प्रतियाँ सुरक्षित कराकर।

व्यवस्थापक, पत्रिका-विभाग

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१

नया प्रकाशन :

ख्रिस्त धर्म सार

(दी एसेन्स आफ क्रिश्चियन्स टीचिंग्स)

—विनोबा—

'मधुकर सरिस संत गुनग्राही।' कहीं भी कोई भी अच्छी बात मिलती है तो तुरत उसे ग्रहण करना और अपने जीवन में उसे उतारना विनोबा की अपनी विशेषता है। इसी भावना से प्रेरित होकर उन्होंने विविध धर्मों का, विभिन्न धर्मग्रन्थों का अधिकांशतः उनकी मूलभाषाओं में अध्ययन किया और वे इसी परिणाम पर पहुँचे कि सत्य, प्रेम और करुणा का ही सूत्र सभी धर्मों में पिरोया हुआ है। विभिन्न धर्मग्रन्थों के अध्ययन का उन्होंने सर्वसाधारण के लिए नवनीत भी प्रस्तुत किया है। ईशावास्योपनिषद्, गीता प्रवचन, धम्मपद, जपुजी, कुरानसार आदि की ही कड़ी में उन्होंने ख्रिस्त धर्म का सार इस अनोखे संकलन में उपस्थित किया है।

प्रस्तुत पुस्तक में विनोबा ने 'ख्रिस्त धर्म सार' नाम से बाइबिल का नवनीत संस्कृत सूत्रों में रखकर संस्कृत जाननेवालों पर एक और उपकार किया है। इन सूत्रों को याद कर लेने से ख्रिस्त धर्म का हार्द सहज ही कण्ठस्थ हो जाता है। दो-एक उदाहरण लीजिये :

'यत्र वित्तं तत्र चित्तं।' इसमें लोभी धनिक की कथा है, जिसे प्रभु ईसा कहते हैं—'यदि तू पूर्ण होना चाहता है तो तेरे पास जो कुछ है, उसे बेच डाल और सारा पैसा गरीबों में बाँट दे।' उसके चले जाने पर उन्होंने अपने शिष्यों से कहा—'सुई के छेद से ऊँट भले ही निकल जाय, पर किसी धनी मनुष्य का स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं हो सकता।'

'सर्वोदय समाख्यम्'—में बाइबिल की वह प्रसिद्ध कहानी है, जिसमें बगीचे का मालिक अन्त्योदय से शुरू करता है। सबसे अन्त में आनेवाले मजदूर को वह उतनी ही मजदूरी देता है, जितनी सबसे पहले आनेवाले को।

ऐसी अनेक मार्मिक कथाओं और उपदेशों से ओत-प्रोत मानव को ऊपर उठानेवाला अनुपम संकलन २५ दिसम्बर, '६७ को ईसा की पुण्यतिथि पर प्रकाशित हो रहा है।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

आन्दोलन के समाचार

विभिन्न प्रदेशों के प्रखण्डदान

[१५ नवम्बर '६७ तक]

उत्कल : कुल ३१

कोरापुट : १९
नारायनपटना
बन्धुगाँव
लक्ष्मीपुर
कोरापुट
दशमन्तपुर
उमरकोट
कारिंगा
दाबूगाँव
रायगडा
पापादहाडी
बोरीगुमा (१)
वायपारीगुडा
गुडारी
सिमुलिगुडा
नानडपुर
तेन्तुलीखूँटी
नन्दाहांडी
पोटगी
कल्याणसिंगीपुर

मयूरभंज : ७
खुलियापाडा
मुरोडा
रासगोविन्दपुर
बांगिरीपोशी (१)
बांगिरीपोशी (२)
बारीपदा
शमाखुण्टा

ढेंकानाल : २
कनकादहद
हिन्डोल

बालासोर : २
बलियापाल
मोगराई

गंजाम : १
नुआगड

तामिलनाड : कुल २५

तिरुनेलवेली : १३
राधापुरम्
वल्लियूर
नांगुनेरी
कलकड
पलायनकोट्टाई
कदम्बुरम्
विलयकुलम्
कयाथार
ओटापिटरम्
कोयलपट्टी
तुतिकोरिन
थीवाईकुलम्
पुदूर

मदुराई : ७
नाथम्
उत्तर मेलूर
दक्षिण मेलूर
अलनारपट्टी
वदमदुराई
युसिलमपट्टी
सेदापट्टी

तिरुचि : ३
मारुन्गापुरी
सेन्दुराई
मानिकान्दम्

रामनाथपुरम्
परमाकुडी

कोयंबटूर
कुडीमंगलम्

महाराष्ट्र : कुल ११

ठाणा : ७
कोसा
सायवान
तलासरी
मोखाडा
जवाहर
मनोर
विक्रमगढ

धुलिया : २
मोलगी
अकाणी महाल

चाँदा : १
सिरोंचा

अमरावती : १
धाणी

आन्ध्र : कुल १०

कडप्पा : ७
लक्कीरेड्डीपल्ली
कमलापुरम्
जमालामांडुगू
पुल्लीमेण्डुला
मइइानूर
रामचोटी
सिद्दावत्तम्

महबूबनगर : ३
अचमपेट
कलुआकुर्थी
नगरकर्नूल

उत्तर प्रदेश : कुल ११

बलिया : ४
बाँसडीह
मनियर
बेरुआरबारी
पन्दह

उत्तरकाशी : २
भटवाडी
डुण्डा

आगरा : २
शमसाबाद
सैंया ब्लाक

चमोली : १
जोशीमठ

मिर्जापुर : १
बभनी

पिथौरागढ़ : १
धारचुला

संयुक्त पंजाब : कुल ७

रोहतक : २
मुंडलाना
कथूर

गुरुदासपुर : २
गुरुदासपुर
धारीवाल

जालंधर : १
शाहकोट

करनाल : १
शाहबाद

होशियारपुर : १
मुगा

गुजरात : कुल ३

बड़ौदा : १
बोरियाद

बलसाड़ : २
अबाबागक
नसवाड़ी

महा-अभियान का आह्वान

२ अक्तूबर '६८ तक बिहार-दान का संकल्प

पूसा रोड : ९ दिसम्बर—बिहार ग्रामदान प्राप्ति संयोजन समिति ने विनोबाजी के आह्वान पर आज यहाँ बिहार दान का संकल्प किया। इस महा-अभियान को गति देने के लिए विनोबाजी हर जिले में एक-एक महीने का समय देंगे। इस महीने के अन्त में विनोबाजी मुजफ्फरपुर आ रहे हैं। उसके बाद पटना जायेंगे।

पंजाब में ग्रामदान

(१ दिसम्बर '६७ तक)

जिला	ग्रामदान संख्या
कांगड़ा	८७३
हिसार	१९३
रोहतक	१३०
करनाल	४०७
जींद	२२
अम्बाला	३४९
फिरोजपुर	१३७
जलन्धर	१७५
कपूरथला	५४
लुधियाना	१८
होशियारपुर	२६२
गुरदासपुर	४२३
कुल :	३०४३

मध्य प्रदेश : कुल ५

पश्चिम निमाड : २
निवाली
सेंधवा

सिवनी : १
कुरई

टीकमगढ़ : १
टीकमगढ

सरगुजा : १
रामचन्द्रपुर

असम : १

नार्थ लखीमपुर : ढकुआखाना

[बिहार के १०० प्रखण्डों के नाम गत १ दिसम्बर के अंक में दिये गये हैं।]

ग्रामदान अभियान

चिरई ग्राम प्रखण्डदान-अभियान

वाराणसी, १२ दिसम्बर। ४ से १० दिसम्बर तक वाराणसी जिले के चिरई ग्राम प्रखण्ड में ग्रामदान-अभियान के प्रसंग में ११ टोलियाँ घूमीं। प्रखण्ड के कुल १८ ग्रामों में से १२ गाँवों की जनता ने ग्रामदान की घोषणा की। टोली के सदस्यों को अनुभव आया कि गाँव की आम जनता ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार को ग्रहण करने के लिए तैयार है। देर सिर्फ विचार को उन तक पहुँचानेवालों की ही है।

चिरई ग्राम के ब्लाक-प्रमुख श्री उदय नारायण, मान्य जनसेवी श्री रामसूरत मिश्र तथा सुभाष इण्टर कालेज चौनेपुर के प्राचार्य श्री रामदेव दुबे का अभियान में उल्लेखनीय सहयोग प्राप्त हुआ। इन लोगों ने चिरई ग्राम प्रखण्ड के बाकी गाँवों में भी ग्रामदान का सन्देश पहुँचाने की तीव्र इच्छा प्रकट करते हुए अपने भरपूर सहयोग का आश्वासन दिया। १० दिसम्बर को अभियान-समारोह का समापन करते हुए वाराणसी नागरिक परिषद के अध्यक्ष श्री रोहित मेहता ने अभियान टोलियों के सफल मार्गदर्शन के लिए श्री रामजी भाई तथा साथ के अन्य कार्यकर्ताओं की सराहना की।

रुदनिया : ३० नवम्बर। दरभंगा जिले के मधुबनी अनुमण्डल के सीमा क्षेत्रीय लद-निया प्रखण्ड के अन्तर्गत लाजेडीह गाँववालों द्वारा ग्रामसभा का गठन किया गया। ग्राम सभा ने ग्रामदान के बाद अब ग्रामकोष-संग्रह का कार्य शुरू कर दिया है। २५ नवम्बर को सर्वोदय आश्रम, लाजेडीह के प्रांगण में इस प्रखण्ड के अधिकांश प्रमुख व्यक्ति, राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि, सर्वोदय के कार्यकर्ता, विकास-अधिकारी आदि के साथ ग्रामीणों की सभा हुई।

—सुमकुन झा 'आजाद'

धुलिया : २५ नवम्बर। साक्री तहसील की ११ दिन की पदयात्रा में ११ ग्रामदान प्राप्त हुए। इसकी प्रचार-यात्रा में महाराष्ट्र के प्रमुख कार्यकर्ताओं और कल्याणी महाल के हजारों आदिवासी गिरिजनों ने हिस्सा लिया।

सबको ग्राम स्वराज्य संस्थापना करने के लिए क्रियात्मक कदम उठाने की प्रेरणा मिली। औरंगाबाद में १० दिसम्बर को ग्राम स्वराज्य परिषद के अधिवेशन का आयोजन किया गया है।

झाँसी : २२ नवम्बर। गत 'विनोबा-जयंती, ११ सितम्बर को झाँसी जिले में ग्राम सिलौरी का ग्रामदान हुआ था, जिसकी जन-संख्या ६०० और आराजी १०० एकड़ है। अब २० नवम्बर को ग्राम सकरार का उत्तर टोला 'पुरा'—जिसकी जन-संख्या ५०० और आराजी ८०० एकड़ है—का भी ग्रामदान हुआ है। आसपास के ५ गाँवों में भी हस्ता-क्षर लेने का कार्य चालू है। यहाँ अब तक ६ ग्रामदान हुए हैं।

—लोकेन्द्र

आगरा : १ दिसम्बर। जगनेर और खैरागढ़ प्रखण्ड ग्रामदान-अभियान के लिए चुना गया है। इसमें पंजाब, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के १२५ कार्यकर्ता भाग लेंगे। अभियान का संचालन डाक्टर दयानिधि पटनायक करेंगे।

—चन्द्रदत्त पाण्डेय

भ्रष्टाचार विरोध :

चाकसू : १ दिसम्बर। चाकसू तहसील में भूमि-बन्दोबस्त के मसलों तथा नियंत्रण की वस्तुओं को लेकर कई तरह के भ्रष्टाचार हो रहे हैं। इस सबके खिलाफ गाँवों के किसानों ने तथा चाकसू के नागरिकों ने तह-सील के सामने प्रदर्शन किया। राजस्थान समग्र सेवा संघ के मंत्री श्री त्रिलोकचन्द, तहसील सर्वोदय मण्डल के संयोजक श्री महेन्द्र-कुमार आदि कार्यकर्ताओं ने सबको भ्रष्टा-चार का विरोध करने और शराबबन्दी के लिए जनता को संगठित होने के लिए आह्वान किया।

—लोकभारती समाचार

बागी-समस्या :

शाह : २२ नवम्बर। चम्बल घाटी शान्ति-समिति की अध्यक्षा श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम्, सुश्री निर्मला देशपाण्डे, श्री लल्लू सिंह और श्री महावीर भाई आत्म-समर्पणकारी बागी भाइयों की मुक्ति के सम्बन्ध में राजमाता सिंधिया से भोपाल में मिले। उन्होंने सब जानकारी सुन ली और मुक्ति के सम्बन्ध में विचार करने का आश्वासन दिया।

पीस-मार्च : नेपल्स से रोम

इटली में एक "शान्ति-अहिंसा संघ" नाम की संस्था है, जिसके अध्यक्ष हैं आल्दो कापितीनी। इन्होंने मुझे लिखा था कि मैं महीने भर के लिए इटली आऊँ और यहाँ पर गांधी शताब्दी समिति का निर्माण करने में मदद करूँ। इसी तरह से यहाँ के एक और प्रसिद्ध शांतिवादी नेता हैं—डेनिलो डोल्ची। उन्होंने नेपल्स से रोम तक एक 'पीस मार्च' (शांति यात्रा) का आयोजन किया था—गत २२ से २९ नवम्बर तक। उन्होंने भी मुझे इस 'पीस मार्च' में शामिल होने के लिए आग्रह किया था। इसलिए मैं यहाँ आया। 'पीस-मार्च' में चार दिन रहा। बहुत ही व्यवस्थित मार्च था। इस 'मार्च' का मुख्य लक्ष्य था—वियतनाम युद्ध का विरोध। हम कल जब रोम पहुँचे तो दस हजार लोग इस 'मार्च' में शामिल थे। वियतनाम युद्ध के खिलाफ कितना तीव्र जनमत है, इसका नमूना देखने को मिला। इटली में रूस के बाद यूरोप की सबसे बड़ी कम्युनिस्ट पार्टी है। एक तरफ रोमन कैथोलिक चर्च और दूसरे छोर पर एक मजबूत कम्युनिस्ट पार्टी। हमारे यहाँ केरल में भी रोमन कैथोलिक बड़ी मात्रा में हैं और वहाँ कम्युनिस्ट पार्टी भी बहुत मजबूत है। यह एक दिलचस्प अध्ययन का विषय है।

रोम,
१०-११-'६७

—सतीश कुमार के पत्र से

हमारी पत्र-पत्रिकाएँ

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार
१३ अक्तूबर '६७

वर्ष : १४
अंक : २

जे० पी०

११ अक्तूबर, '६७ को आपने जीवन के ६५ साल पूरे किये
अहिंसक क्रान्ति के आरोहण में आपके विचारों का प्रकाश
और नेतृत्व का सम्बल
वर्षों वर्षों तक देश और दुनिया को मिलता रहे
इस शुभकामना के साथ
प्रस्तुत अंक सादर भेंट।

इस अंक में

अगले अंक का आकर्षण

'बागी' का स्वार, साम्ययोग का विरोध
अधिक उत्पादन की मृग मरीचिका

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

नयी समाज-रचना का नया आयाम

उस समाज का रूप क्या होगा, जिसमें जनता के लिए अपने सामाजिक जीवन का स्व-
संचालन करना और जीवन के उन समस्त मूल्यों का विकास करना सम्भव होगा, जो सहकार,
आत्मानुशासन, उत्तरदायित्व की भावना आदि के रूप में समाजवादी समाज की विशेषताएँ हैं!
मानव-समाज इस तरह विकसित हुआ है कि उससे आज की पेचीदा औद्योगिक सभ्यताएँ ही
निकलती हैं। इसमें शहर कहलानेवाले मनुष्यों के बड़े बड़े जंगल हैं, आर्थिक और सामाजिक
सम्बन्ध सर्वथा अवैयक्तिक और निष्प्राण हैं, कार्य प्रणाली कष्टसाध्य और आनन्द एवं सृजन-
शक्ति की अभिव्यक्ति के अवसरों से वंचित है और केवल उत्पादन शक्ति और कार्यक्षमता के
आधार पर ही मान्यता मिलती है। विज्ञान ने अखिल विश्व को सिकोड़कर एक पड़ोस बना
दिया है। किन्तु मनुष्य ने एक ऐसी सभ्यता का निर्माण कर लिया है कि पड़ोसी भी अपरिचित
बन गये हैं। इस प्रकार का पेचीदा और ऊपर से बोझिल समाज अफसरशाहों, व्यवस्थापकों,
यंत्रज्ञों और अंकशास्त्रियों के लिए स्वर्ग बन जाता है। इस प्रकार का समाज एक घर नहीं बन
सकता, जहाँ भाई भी भाई भाई की तरह एक साथ रह सकें।

समाजवादियों ने विज्ञान, उत्पादन, कार्यक्षमता, जीवन स्तर तथा ऊँचे-ऊँचे आदर्शोंवाले
दल के नारों के नाम पर समाज के इस भस्मासुर को बिल्कुल ज्यों का त्यों ले लिया है और अब
वे आशा करते हैं कि इसमें सार्वजनिक स्वामित्व या जनता की मालिकी जोड़कर इसे समाजवादी
बनायेंगे। मैं नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि इस प्रकार के समाज में समाजवाद साँस भी नहीं
ले सकता। यदि मनुष्य छोटे छोटे समुदायों में रहे, तो स्व शासन, स्व व्यवस्था, पारस्परिक
सहकार और समानता, स्वतन्त्रता, बन्धुत्व, इन सबका प्रयोग और विकास बेहतरी के लिए हो
सकता है। पश्चिम में भी दूरदृष्टिवाले विचारकों को अब ऐसा लगने लगा है।

इसके अतिरिक्त मनुष्य प्रकृति और संस्कृति दोनों की उपज है। इसलिए उसके सन्तुलित
विकास के लिए यह आवश्यक है कि दोनों के बीच मधुर समरसता पैदा की जाय। लेकिन पार्कों
और हरेभरे मार्गों के होते हुए भी लन्दन, पेरिस, न्यूयार्क, मास्को जैसे आधुनिक सभ्यता के
केन्द्रों में इस प्रकार की समरसता कायम करना संभव नहीं। इसीका परिणाम है कि आधुनिक
मनुष्य का विकास विकृत और एकांगी हो गया है। प्रकृति और संस्कृति का सरस सम्मिश्रण
अपेक्षाकृत छोटे-छोटे समुदायों में ही सम्भव हो सकता है। एल्डुअस हक्सले की 'साइन्स लिबर्टी
एण्ड पीस' में आता है : "अब यह काफी स्पष्ट हो गया है कि मनुष्य की मनोवैज्ञानिक
आवश्यकताएँ, उसकी आध्यात्मिक आवश्यकताओं की कौन कहे, तब तक पूरी नहीं हो सकतीं,
जब तक, १. उसको काफी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और एक स्वशासित दल के रूप में एक-दूसरे के
प्रति और पूरे दल के प्रति व्यक्तिगत उत्तरदायित्व न हो, २. उसके कार्य में एक खास सौन्दर्य
की भावना और मानवीय गौरव न हो और जब तक ३. अपने प्राकृतिक वातावरण के साथ
उसका केन्द्रीय और गहरा अन्योन्याश्रय सम्बन्ध न हो।"

इन्हीं कारणों से गांधीजी इतना जोर देकर कहते थे कि भारतीय ग्राम और ग्राम-स्वराज्य
ही उनके भावी समाज की बुनियाद है। भाइयों की तरह शान्तिपूर्वक रहनेवाले स्वतन्त्र और
समान व्यक्तियों के समाज से ही यहाँ गांधीजी का अभिप्राय है।

—जयप्रकाश नारायण

देश :

१-१०-६७ : संसद सदस्य सेठ गोविन्ददास ने संसद के आगामी अधिवेशन में लाये जानेवाले भाषा विधेयक के सम्बन्ध में संसद सदस्यों से अपील की कि उक्त विधेयक के विरोध में अपना मत दें।

५-१०-६७ : संसद कार्यमन्त्री श्री राम सुभग सिंह ने कहा कि अगर दल बदलने के सिद्धान्त को राजनीति का एक अंग मान लिया गया तो उससे सदैव सत्तारूढ़ दल में फूट पड़ने का भय बना रहेगा।

७-१०-६७ : घेराव के बारे में पश्चिमी बंगाल की सरकार ने अपने अधिकारियों को निर्देश दिया कि वे कानून की व्यवस्था के अनुसार कार्य करें।

८-१०-६७ . राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसेन ने कहा कि अंग्रेजी भारत की राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती है। हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रूप में इसलिए तरजीह दी जा रही है कि हिन्दी को समझनेवाले देश में बहुत हैं।

प्राप्त सूचनाओं के अनुसार अभी तक डा० लोहिया का स्वास्थ्य खतरे से बाहर नहीं हो पाया है।

विदेश :

२-१०-६७ : सोवियत प्रधान मन्त्री श्री कोसीगिन ने कहा कि सोवियत रूस के सामने मुख्यतः दो ही अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएँ हैं. वियतनाम की लड़ाई बन्द कराने की और यूरोपीय देशों की तनातनी घटाने की।

६-१०-६७ . पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खाँ ने रूस से लौटने पर कहा कि जब तक शेख अब्दुल्ला को जेल से रिहा नहीं किया जाता तबतक कश्मीर में शान्ति नहीं हो सकती।

७-१०-६७ : सन् १९३३ के नोबेल-पुरस्कार विजेता और प्रसिद्ध लेखक सर नार्मन एंजल का लन्दन में देहान्त हो गया।

८-१०-६७ . ब्रिटिश मजदूर दल के नेता लार्ड एटली की लन्दन के एक अस्पताल में ८४ वर्ष की अवस्था में मृत्यु हो गयी।

सुझाव और सम्मतियाँ

● 'भूदान यज्ञ' के अवलोकन से संतोष होता है। इसमें समस्यामूलक मौलिक विचार एक ओर बहुत बड़ा बल देते हैं और दूसरी ओर उन समस्याओं के समाधान के सहज उपकरण भी पूर्ण विश्वास के साथ प्राप्त होते हैं। एक नया विचार नये समाज को नया जीवन देता है।

चिन्तन के लिए बहुत ही पौष्टिक खुराक 'भूदान यज्ञ' से मिलती है। सर्वोदय दर्शन सारी समस्याओं का समाधान देने में समर्थ है, ऐसा भाव 'भूदान-यज्ञ' हमें देता है। सोने में सुगन्ध का काम इसका सम्पादकीय भाग करता है। इसमें अद्यतन ज्वलन्त समस्याओं का एक नवीन विचार प्रवाहित होता है, जो सभी के मन को स्पर्श करता है और एक शक्ति तथा प्रकाश देता है।

आँखों देखा अनुभव और वर्णन वास्तविकता और तथ्य से संकुचित, मन को विस्तृत संभावनाओं का संबल देता है।

आपके 'भूदान यज्ञ' के इन विविध पहलुओं का विश्लेषण मैं नहीं कर सकता, क्योंकि इससे जो बल प्राप्त होता है, इससे पूर्ण तुष्टि प्राप्त होती है। इसीलिए यह मेरे मोह का कारण भी हो सकता है।

मेरी यही अभिलाषा है कि भगवान इस 'यज्ञ' के पुजारी को ऐसी शक्ति देता रहे, ताकि 'भूदान यज्ञ' में प्रति सप्ताह कम से कम तीन-चार मनीषियों-विनोबा, दादा धर्माधिकारी, धीरेन्द्रभाई आदि के मौलिक लेख, सम्पादकीय विचार, ज्वलन्त समस्याओं का समाधान तथा आँखों देखी घटनाओं का विवरण प्राप्त होता रहे।

—प्रो० वृन्दनाथ चतुर्वेदी, आचार्य समाज-विज्ञान संकाय, काशी विद्यापीठ

● ८ सितंबर का अंक सुपाठ्य है।

—नवल टी शाह, बम्बई

● 'भूदान यज्ञ' में प्रश्नों के उत्तर देने से वह रुचिवर्धक भी बनेगा और समस्यापूर्ति का साधन भी होगा। चौपाई कालम से ही क्यों न प्रारम्भ किया जाय, पर यह आरम्भ शुरू होना चाहिए। मेरे एक कम्युनिस्ट मित्र कहते हैं कि सर्वोदय आन्दोलन नहीं करता। इसका उत्तर मैं नहीं दे सका।

—बाबूराम गुप्ता, पेहर

● 'भूदान-यज्ञ' मैं पिछले दस वर्षों से पढ़ता रहा हूँ। ८ सितम्बर '६७ के अंक में एक लेख में सर थामस मोर की यूटोपिया का जिक्र है। यह बात सन् १५१६ की है। भारत में अब भी वैसी विचारधारा चल रही है। इस पत्रिका द्वारा जनता की कल्पना और संकल्प शक्ति दृढ़ करने की कोशिश होनी चाहिए। मैंने पत्रिका को गाँव-गाँव में तथा स्थानीय शिक्षण संस्थाओं में पहुँचाने का निश्चय किया है। गाँवों में लोग पत्रिकाएँ पढ़ें सुनें, इसकी भी कोशिश करूँगा।

—लाखन सुखाऊ सिंह, सिरपुर, आगरी, बालाघाट (म० प्र०)

आवश्यक सूचना :

नये ग्राहकों को विशेष उपहार

श्री जयप्रकाश नारायण के जन्मदिन ११ अक्तूबर '६७ से 'क्रिसमस डे' २५ दिसम्बर '६७ के बीच की अवधि में कम से कम एक साल के लिए ग्राहक बनने पर

● 'नयी तालीम' मासिक के साथ 'गाँव की बात' पाक्षिक के दो सचित्र, स्मरणीय विशेषांक,

● 'भूदान यज्ञ' साप्ताहिक तथा 'गाँव की बात' पाक्षिक के साथ 'नयी तालीम' का भाषा विषयक विशिष्ट अंक,

● 'सर्व सेवा संघ न्यूज लेटर' अंग्रेजी मासिक के साथ गांधी जयन्ती (२ अक्तूबर '६७) से नेहरू जयन्ती (१४ नवम्बर '६७) तक की अवधि में, 'फ्रीडम फार दी मासेस' और 'पीस आन अर्थ' नामक दो महत्त्वपूर्ण अंग्रेजी की पुस्तकें,

सर्व सेवा संघ प्रकाशन की ओर से ग्राहकों को उपहार में दी जायेंगी। —सचालक

नयी तालीम	वा० शु० ६.००
गाँव की बात	,, ,, ४.००
भूदान यज्ञ	,, ,, १०.००
सर्व सेवा संघ न्यूज लेटर	,, ,, १०.००

तरुण समाजवादी

१९३६ : समाजवाद आर्थिक असमानता के कारणों का अनुसन्धान करता है। राजाओं, जमींदारों, पूँजीपतियों और भिखारियों की उत्पत्ति के मूलाधारों की खोज-ढूँढ़ करता है और खोज ढूँढ़ करता है मानवी शोषणों के रहस्यों की। इस खोज-ढूँढ़ और जाँच पड़ताल के बाद जब समाजवादी उसकी जड़ का पता लगा लेता है, तो उसे उखाड़ फेंकता है, वह सामाजिक बुराइयों के मूल पर ही कुठाराघात करता है।

लेकिन गांधीवाद इन प्रश्नों पर विचार करना भी जरूरी नहीं समझता। उसके मन में तो यह सवाल भी नहीं उठता कि क्या बात है कि मुट्ठीभर लोग राजा, जमींदार

नयी पौद

और पूँजीवादी बनकर गुलछर्रे उड़ा रहे हैं और बाकी पूरा समाज या तो भिखारी बन चुका या बनने की तैयारी में है! वह समाज की नीची और ऊँची सतह को स्थायी मान लेता है और फकत यही चाहता है कि ऊपर की सतह के लोग नीची सतह के लोगों से जरा रहम का बर्ताव रखें।

एक समाजवादी के लिए यह फिलासफी धोखेबाजी है—धोखेबाजी अपने प्रति और शोषित जनता के प्रति। हम समाजवादी डंके की चोट यह कहते हैं कि जमींदारों और पूँजीपतियों का यह धन किसानों और मजदूरों की मेहनत से ही पैदा हुआ है। इस चोरी को छिपाना, इसे बेरोक-टोक चलने देना, इस पर पवित्रता का पुट देना निःसन्देह धोखेबाजी है, भले ही यह धोखेबाजी आप अनजाने ही क्यों न कर रहे हों।

ये ऊँची सतह के लोग हिंसा के भी अपराधी हैं, क्योंकि इस चोरी के माल को वे हिंसा के बल पर ही अपने कब्जे में लिये हुए हैं। अगर संगठित हिंसा का और उसको सही साबित करनेवाले वर्गगत कानून का भय न हो, तो किसान और मजदूर कल ही जमीन और कारखानों पर कब्जा कर लें।

क्या किसानों और मजदूरों का धन पर उतना ही अधिकार है, जितना कि उनके मालिकों का? गांधीजी के पास इसको मान लेने का कौनसा प्रमाण है? यदि यह कहा जाय कि किसानों और मजदूरों का बराबर हिस्सा इसलिए है कि वे ही धन पैदा करने वाले हैं, तब वे अपनी पैदा की गयी चीज को दूसरों के हाथ में क्यों सौंप दें? क्यों उनसे कहा जाय कि इन्हें दूसरों के हाथ में सौंप दो, जो तुम्हारे लिए ट्रस्टी का काम करेंगे?

हम इस सवाल को दूसरे छोर से ही लें। ये धनी लोग ट्रस्टी का काम क्यों करें? वे ऐसा क्यों न कहें कि यह धन हमारा है, इसे हमने अपने दिमाग और अपनी पूँजी से पैदा किया है और किसीको इस पर दावा करने का दम नहीं है?

यदि धनिकों का धन उनका अपना नहीं है, तो वह कौनसा न्याय है कि उन्हें उसे रखने और उसके बल पर उदारता दिखलाने के लिए उत्साहित किया जाय? और अगर यह उनका सही तरीके से अर्जित धन है, तो फिर किसीको क्या हक है कि कहे कि इसे तुम दूसरे को दे दो? अगर गरीब भूखों मरते हैं, तो मरने दीजिये। इसमें धनी बेचारों का क्या कसूर है?

इस तरह यदि हम ब्यौरेवार देखते हैं, तो गांधीवाद कायरतापूर्ण आर्थिक विश्लेषण, शुभ और महान् सदिच्छाओं और प्रभावशून्य नैतिकता की एक खिचड़ी मात्र है।

सवाल नैतिकता या सदाचार का नहीं है, यह समस्या तो धन और उसके उत्पादन के वैज्ञानिक विश्लेषण की है। इस समस्या का हमें साहस से सामना करना चाहिए; न कि भावुकता के बुर्के में उसे ढँक देना चाहिए। कार्ल मार्क्स ने पूँजीवादी धन का विश्लेषण करके, और यह साबित करके कि धन कमाने के लिए मजदूरों का शोषण आवश्यक हो जाता है, मानवता का महान् उपकार किया है।

ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त को आखिर अमल में किस तरह लाया जायगा? गांधीजी धनियों को गरीबों के ट्रस्टी बनने के लिए किस तरह प्रभावित करेंगे? क्या उनकी नैतिकता को अपील करेंगे, उनके दिलों के अन्दर पहुँचकर? उन्होंने जमींदारों से कहा कि मैं चाहता हूँ कि मैं आपके दिलोंमें समाऊँ और उन्हें परिवर्तित करूँ, जिससे आप यह अनुभव कर सकें कि वास्तव में यह धन आपकी व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं, वरन् किसानों का ट्रस्ट है और आप उन्हींकी भलाई में इसको खर्च करेंगे।

हमें शक है, हमारे कुछ भाई इसे भी भारतीय संस्कृति की देन समझेंगे। लेकिन सचाई यह है कि दुनिया के सभी बड़े धार्मिक उपदेशकों ने इसी तरीके का इस्तेमाल किया था। उन उपदेशकों को इसमें कितनी सफलता मिली, इसका साक्षी इतिहास है। अब गांधीजी अपनी जादू की छड़ी लेकर आये हैं और एक नया इन्द्रजाल हमें दिखलाना चाह रहे हैं।* —जे० पी०

प्रजा-समाजवादी

१९५६ : हमें कहाँ जाना है यह जानने पर ही हम अपने रास्ते का चुनाव कर सकते हैं। तो वह गन्तव्य स्थान हमारे सामने है, और चलने की शुरुआत करने की जगह भी, यानी देश की तात्कालिक परिस्थिति।

* सन् १९३६ में प्रकाशित : 'गांधीवाद : समाजवाद' नामक पुस्तक के एक निबन्ध से।

कलाली का धंधा नहीं पकड़ता, और जिन्दगी यों बरबाद न होती। क्या पता कसेरु मरते-मरते इसे समझा हो, और जीविका छीननेवाले 'कल' के दरवाजे पर ही प्राण छोड़ने की बात उसके मन में आयी हो।

कसेरु की लाश को एक बार फिर कन्हाई ने उलट-पलट कर देखा, और अपने लाल साफे की कोर से आँखें पोंछते हुए लावारिस लाश की रपट लिखाने थाने की ओर चल पड़ा। कन्हाई पगडंडी पर आगे बढ़ता जा रहा था, लेकिन उसका मन कसेरु की लाश के पास ही भटक रहा था। न जाने क्यों आज उसे गाँव के मरे हुए कई लोगों की याद आयी। उसे याद आयी भुम्मन जुलाहे की, बेचारे को ढलती उमिर में गाँव छोड़कर शहर के किसी कारखाने में नौकरी करनी पड़ी थी, क्योंकि सब लोग मिल के कपड़े पहनने लगे थे, उसका बुना कपड़ा कोई खरीदता ही नहीं था। उसे याद आयी गाँव के बुद्धन बढ़ई और सुखरू लुहार की, दोनों अपने-अपने धन्धे छोड़कर स्टेशन पर कुलीगीरी करते-करते खतम हुए, क्योंकि उनकी बनायी चीजें बिकती नहीं थीं, गाँव में सब चीजें शहर से आने लगी थीं। लेकिन कन्हाई इन बातों की तह में नहीं जा सका।

वह नहीं सोच पाया कि विज्ञान के जमाने में पैसेवाले ऐसे-ऐसे कल-कारखाने बनाये हैं कि सबकी कमाई, सबकी मिहनत इन कल-कारखानों के मालिकों की जेब में आ जाय और किसीको पता भी न चले।

● कन्हाई नहीं सोच पाया कि ये कल-कारखाने पैसेवालों के हाथ के ऐसे साधन हैं, जिनके सहारे मेहनत करनेवाला बुद्धि रखनेवाला अनपढ़ या पढ़ा-लिखा, हर कोई इनका गुलाम-मजदूर कैसे बन जाता है।

● कन्हाई नहीं सोच पाया कि किस तरह कल-कारखानों के मार्फत इनके थोड़े से मालिक हजारों-लाखों गाँवों के मालिक लोगों को लुभाते हैं कि अधिक पैसे इस तरह कमाओ, उस तरह कमाओ, और फिर लोभ में पड़कर ये लोग शहरों में आकर मजदूर बन जाते हैं और शहर इन भोले-भाले लोगों की दिन भर की कमाई तरह-तरह की लुभावनी चीजों के बदले में हड़प कर जाते हैं।

● और कन्हाई को यह भी कहाँ मालूम है कि साल भर खून पसीना एककर, जीजागर लगाकर जो कुछ किसान पैदा करते हैं, बड़े-बड़े शहरों में बैठे ये कुछ सेठ उसका मनमाना भाव तय करते हैं, और उसी भाव में गाँवों की पैदावार उनकी कोठियों में जाकर बन्द हो जाती है। उसी चीज को बाद में वही उपजानेवाला किसान खरीदने जाता है तो दुगुनी-चौगुनी कीमत चुकानी पड़ती है और बावजूद सरकार की रोकथाम के यह सिलसिला बढ़ता ही रहा है।

अभी सितम्बर महीने के पहले हफ्ते में दिल्ली में बड़े-बड़े और भारी कल-कारखानों के मालिकों ने सरकार को यह राय दी है कि देश का उत्पादन छोटे-छोटे किसानों से नहीं बढ़ेगा। देशभर की खेती का काम बड़ी-बड़ी कम्पनियों को दे दिया जाय, उनका यह दावा था कि किसानों से आज जितना मिलता है, उतना तो मिलता ही रहेगा। बाकी अधिक पैदावार से देश की ऋद्धि-सिद्धि बढ़ेगी। देश की ऋद्धि-सिद्धि इससे क्या बढ़ेगी, यह भगवान जाने, लेकिन अगर यह योजना देश में लागू हुई तो दो बातें जरूर हो जायेंगी—एक तो खेती की सारी उपज देश के कुछ थोड़े-से सम्पत्तिवानों के कब्जे में चली जायगी, और दूसरे भारत के गाँव—जिन्होंने देश के हजारों वर्षों के इतिहास में तमाम आँधी और तूफान के झोंके सहन कर भारत की संस्कृति को कायम रखा है, मनुष्यता को जिलाये रखा है, वे गाँव नष्ट हो जायेंगे और उनकी जगह खेतों की बड़ी-बड़ी दानवी कोठियाँ, उनके कारिन्दों व कुछ क्लर्कों और बाकी मजदूरों की, मजदूरों की बस्तियाँ शोषण और दमन की धाक पर चलती और चक्की में पिसती दिखायी देंगी। क्या गाँव के लोग इन बातों को समझ लें, तो यह सब हो न पायेगा?

तब तो पूरे गाँव के सब लोग मिलकर कहेंगे कि हम यह नहीं होने देंगे। आयें बड़े-बड़े औजार और उपज बढ़ाने के साधन, लेकिन गाँव सब लोगों की भलाई को सामने रखकर फैसला करेगा कि कौन औजार गाँव में रहे, कौनसी फसल उगाई जाय, कितनी फसल गाँव में रहे और कितनी गाँव से बाहर जाय। गाँव में न तो सरकार की मालिकी चलेगी न तो बाजार के सेठों या कम्पनीवालों की मालिकी चलेगी गाँव में तो मालिकी चलेगी सिर्फ गाँव की, गाँव के छोटे-बड़े सब लोगों की।

आज नहीं तो कल, भारत के गाँव इस बात को समझेंगे ही, और तब कसेरु खून थूक कर नहीं मरेगा, भुम्मन मियाँ को गाँव नहीं छोड़ना पड़ेगा, बुद्धन और सुखरू को कुलीगीरी नहीं करनी पड़ेगी। सब ईमान की रोटी खायेंगे, और इज्जत की जिन्दगी जीयेंगे। ●

गाँव का [illegible]

कहानियाँ : सज्जनता की

• तीन-चार महीने पहले की कहानी सुनिये। टीकमगढ़ की बात है।

मध्य प्रदेश में प्रखण्ड विकास अधिकारी का पद समाप्त कर दिया गया है। विकास अधिकारियों को दूसरी-दूसरी नौकरियों में लगाया गया है। किसी-किसीको पहले की तुलना में बहुत छोटी नौकरी मिली है। एक व्यक्ति से मुलाकात हुई। वह अपने नये जीवन में मस्त थे। कह रहे थे, "शुरू-शुरू में मुझे बहुत फिक्र हुई कि अब परिवार का काम कैसे चलेगा? भ्रष्टाचार में तो फँसना नहीं था। परिवार बड़ा है। हमने एक गाय और एक बकरी खरीदी। बच्चे उनकी सेवा करते है। मैं उनके दूध दुहता हूँ। दूध से साठ रुपये की माहवारी बचत हो जाती है। बगीचा बनाकर तरकारी लगायी है। परिवार के सब लोग मिलकर मेहनत करते है। साग-भाजी बिलकुल ही नहीं खरीदनी पड़ती। जाड़े के दिनों में तालाब में पानी कम था। किनारे-किनारे काफी जमीन खाली थी। उसमें साल भर के लायक गेहूँ पैदा कर लिया। मैं चरखा लाने का विचार कर रहा हूँ। फिर हम सब लोग मिलकर वस्त्र-स्वावलम्बन का भी प्रयास करेंगे। बड़ी नौकरी छूट गयी तो क्या हुआ, पसीना बहाकर पेट तो भर ही सकते है!"

• उत्तर प्रदेश की बात है। एक व्यक्ति आबकारी निरीक्षक (इक्साइज इन्सपेक्टर) थे। इस विभाग के लोगों को खासी अच्छी कमाई होती है। सरकारी वेतन से बहुत ज्यादा उन्हें शराब के ठीकेदारों और दूकानदारों से मिलता है। लेकिन यह भाई अपना काम ईमानदारी से करते थे, कानूनी मर्यादाओं को मनवाते थे। इसलिए उनके सहयोगी कर्मचारी और ठीकेदार उनसे चिढ़े रहते थे। आखिर उनका "नशाबन्दी विभाग" में तबादला हो गया। पहले जितना वेतन मिलता था, अब उसका आधा मिलने लगा। वह भाई शाम को, तथा छुट्टी के दिनों में, अच्छे-अच्छे विचारों का साहित्य बेचकर उसके कमीशन से कमी पूरी करने लगे। मन में समाधान भी हुआ कि इस तरह थोड़ी समाज-सेवा भी हो रही है।

• हैदराबाद में एक मित्र ने स्वावलम्बी कृषि का प्रयोग प्रारंभ किया है। उनका दूध एक हलवाई के पास जाता है। हैदराबाद में दूध का दाम एक रुपये पच्चीस पैसे लीटर है। वह मित्र भी हलवाई को उसी भाव से दूध दे रहे थे। गाय का दूध था, फिर भी हलवाई ने भैंस के दूध का दाम देना शुरू ही स्वीकार किया था।

एक दिन उन हलवाई महोदय का फोन आया, "भाई, आपका दूध इतना अच्छा है कि उसे एक रुपया पच्चीस पैसे में लेना अन्याय है, मैं आपकी गोशाला के दूध का दाम एक रुपया पचास पैसे प्रति लीटर दूंगा।"

आपको भी कुछ ऐसे अनुभव आते होंगे। क्यों नहीं हम एक-दूसरे को ऐसे अच्छे अनुभव सुनें-सुनायें? —सरला बहन

मेरे गाँव का पुरुषार्थ यूँ जगा!

यहाँ पिछले साल तालाब सूख जाने के कारण १०० रुपये पौसरा चलाने में खर्च हो गये, क्योंकि तालाब पूरा भरा नहीं था। भूमि की मेड़बन्दी होने के कारण तालाब में पानी आने के स्रोत बंद हो गये थे। इस वर्ष हमारे मन में आया कि किसी तरह तालाब को पानी से लबालब भरना चाहिए।

एक दिन मैंने ग्राम के प्रधानजी तथा दूसरे प्रमुख लोगों से इस विषय में चर्चा की। एक सरकारी बाँध का अधिक पानी सलूक से निकल जाता था। उस बाँध के अधिक पानी को एक नहर निकालकर तालाब को भरने के लिए प्रस्ताव किया। सबने इस सुझाव को पसन्द किया और मौका देखने के लिए लगभग १०-१२ आदमी चल पड़े। हमको जाते देखकर और १५-२० आदमी तथा बच्चे साथ चल पड़े। जाकर मुआइना किया और हमारा प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुआ और तय हुआ कि ९ अगस्त को गाँव के सब लोग आयें और नहर निकाली जाय।

लेकिन ९ अगस्त को वर्षा शुरू हो गयी और गाँववालों की हिम्मत टूट गयी। उनको प्रेरणा देने के लिए भूमिसेना में शामिल होने की इच्छा रखनेवाले १० श्रमिकों को साथ लेकर हम बरसात में ही नहर खोदने लगे। हमें काम करते हुए देखकर एक भूतपूर्व जमींदार श्री बल्लू नम्बरदार ने भी मिट्टी खोदने में हमारा साथ दिया। इस तरह देखा-देखी ३ साथी और आ गये। कुल १४ आदमियों ने लगभग १० फुट लम्बी नहर खोद डाली। बाँध का पानी तालाब की तरफ बहने लगा। हमारे सबके हृदय में उत्साह की लहर दौड़ गयी। शाम को सब गाँववालों का ध्यान इस तरफ गया। दूसरे दिन वहाँ के पुराने मुखियाजी ५० जवानों को लेकर नहर को गहरी और चौड़ी करने में भिड़ गये। पानी तेजी से बहने लगा। दिनभर में आधा तालाब भर गया। दूसरे दिन देखा कि तालाब लबालब भर गया है। —ओमप्रकाश पालीवाल

गेहूँ की खेती—१

भारत की रबी की फसलों में गेहूँ का मुख्य स्थान है। खाद्य की फसलों में इसका तीसरा स्थान है तथा पैदावार में चावल के बाद इसका दूसरा स्थान है। गेहूँ की खेती जितनी ज्यादा की जाती है, उस हिसाब से उसका उत्पादन बहुत ही कम होता है। भारत में गेहूँ की औसत पैदावार १०–१२ मन प्रति एकड़ है। आज गेहूँ की खेती पर जितनी खोज हुई है, अगर उसका ठीक से अमल हो तो उत्पादन चार-पाँच गुना बढ़ाया जा सकता है यानी जितनी भूमि हमारे पास है उतनी ही में पैदावार बढ़ाकर हम अन्न में स्वावलम्बी हो सकते हैं।

हम यहाँ गेहूँ की नयी किस्मों के बारे में जानकारी दे रहे हैं। भारतीय कृषि अनुसंधानशाला ने सन् १९६५ में देश के अनेक भागों में जाँच की और मेक्सिको के गेहूँ की दो किस्में लेरमारोओ और सोनोरा–६४ बुआई के लिए स्वीकृत की।

लेरमारोओ : *यह ज्यादा उपज देनेवाली पिछेती किस्म है। इसे मौसम के शुरू में बोना चाहिए। इसका पौधा चार फूट ऊँचा होता है। इसकी बालें ज्यादा लम्बी और टूडवाली होती है। इसका दाना कम लाल रंग का होता है। यह किस्म गेरुआरोधी और पीला गेरुआरोधी है। पंजाब और उत्तर प्रदेश में पीले के गेरुआ का प्रकोप होता है, इसलिए इन इलाकों के लिए यह किस्म बहुत अच्छी है।*

सोनोरा–६४ वह अगेती और ज्यादा उपज देनेवाली किस्म है। मौसम के आरम्भ में बोने के लिए अच्छी है। जहाँ बुआई अक्तूबर के आखिरी के प्रथम सप्ताह में की जाती है, वहाँ सोनोरा–६४ को मध्य नवम्बर के पहले ही बोना चाहिए। जहाँ मौसम लम्बा हो वहाँ इसे देर से भी बो सकते है। यह बौने कद की किस्म है। इसकी ऊँचाई केवल ३ फूट होती है। इस किस्म के पौधे खूब खाद और पानी देने पर भी गिरते नहीं हैं। यह किस्म लगभग १२० किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टर (ढाई एकड़) सह सकती है, जबकि ५० किलोग्राम नाइट्रोजन से अधिक देने पर पौधे गिर जाते हैं या रोगी हो जाते हैं। मार्च के बाद जब गरमी बढ़ती है और पौधों को पानी की बहुत जरूरत होती है तब गेहूँ की ऊँची कदवाली किस्मों को पानी देने में कठिनाई होती है। इसलिए उर्वरक और पानी से अधिकतम फायदे के लिए बौनी किस्म ज्यादा अच्छी है। ऐसी बौनी किस्में जापान में दूसरे महायुद्ध के बाद तैयार की गयी। सोनोरा –६४ किस्म सन् १९६३ में मेक्सिको से भारत में आयी। यह बहुत जल्द पकनेवाली किस्म है। देर से बुआई करने के लिए भी यह बड़ी उपयुक्त है। *इसकी बालें लम्बी कम और चौड़ी, संख्या में ज्यादा होती हैं। इसका दाना लाल रंग का आयताकार होता है। यह किस्म गेरुआरोधी है, फिर भी पीला गेरुआ इसको हानि पहुँचाता है। इसलिए जिन स्थानों में पीले गेरुआ का प्रकोप होता हो वहाँ इसे नहीं बोना चाहिए। यह किस्म पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र और उड़ीसा के लिए अच्छी है।* इस किस्म को उर्वरक की ज्यादा जरूरत होती है। इसके प्रयोग से पता चला है कि इस किस्म से आज के मुकाबले चार-पाँच गुने ज्यादा पैदावार ली जा सकती है।

सोनोरा –६४ को उपजाने के लिए नीचे लिखी कुछ खास बातों पर ध्यान देना चाहिए।

१ नवम्बर के पहले सप्ताह में बुआई पूरी कर लेनी चाहिए। बुआई के समय भूमि की नमी का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

२ भूमि की नमी १४–१५ प्रतिशत से कम न हो।

३ बीज थोड़ी गहराई में बोना चाहिए। लेकिन ४ सेंटीमीटर से अधिक गहराई नहीं होनी चाहिए।

४ एक एकड़ में ४५ से ५० किलो० बीज बोना चाहिए।

५. कतारों का फासला १५ से १८ सेंटीमीटर हो।

६. सिंचाई से पहले निराई-गुड़ाई और खरपतवार निकालना जरूरी है।

७. बोने के बाद पहली सिंचाई २५ दिन बाद कर देनी चाहिए। फिर आवश्यकतानुसार २५ दिन अन्तर पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

८. प्रति एकड़ ३०० किलोग्राम कैलशियम अमोनियम नाइट्रेट अथवा २५० किलो० अमोनियम सल्फेट की जरूरत होती है। १७५ किलो० सुपर फास्फेट की जरूरत पड़ती है तथा १५–२० किलो० म्यूरिएट आफ पोटाश की।

९. फसल के पकने पर चूँकि बालियाँ फूट जाती हैं, इसलिए इनकी कटाई फसल के सूखने के कुछ पहले कर लें।

इन किस्मों के बीज के लिए फार्म मैनेजर, बॉटनी डिवीजन, पूसा इन्स्टिट्यूट, नयी दिल्ली–१२ से जानकारी प्राप्त की जा सकती है। ●

दिल्ली और बच्चा

दिल्ली काल की गति की तरह हर समय भागती रहती है। पता नहीं वह क्या चीज है, जिसे सड़कों पर भागती गाड़ियां, गाड़ियों पर भागती सवारियां पकड़ लेना चाहती है। हर दीवाल, हर मोड़, हर गली दिल्ली की भागदौड़ में हर वक्त बेचैन मालूम पड़ती है। दिल्ली हर देशवासी के दिल को अपनी ओर रिझाती है, और रीझकर निकट आये हुए आदमी को, आदमियों की ऐसी भीड़ में ठेल देती है, जहां से कोई निकल नहीं सकता। उसके बस की बात सिर्फ इतनी ही होती है कि भीड़ का दबाव उसे ठेलकर जिधर ले जाय, उधर अपने को जाने दे।

मैं भी ऐसे ही खिंचाव में दिल्ली आया था, लेकिन दिल ने यहां आदमी को जिन्दगी की दुर्दशा देखकर रुकना कबूल नहीं किया। अब लौटकर वापस जा रहा हूं गांव को।

गाड़ी छुटने में अभी देर है। भूख लगी है, इसलिए प्लेटफार्म पर बिक रही रोटी-दाल खरीदकर अभी सामने रखा ही हूं खाने के लिए कि तभी किसीका हाथ अलमुनियम का चिचकचरा टेढ़ा-मेढ़ा कटोरा थामे सामने हाजिर हो जाता है। देखते ही चिढ़ पैदा होती है, झल्लाकर डांटने के लिए सामने देखता हूं, तो मुंह खुला का खुला रह जाता है, आवाज नहीं निकलती।

"बाबू, बच्चे के लिए...!" वह पूरी बात नहीं कर पाती।

"यह बच्चा है या बच्चे की लाश है उसके कंधों पर ?"

"शायद अभी लाश नहीं बन पाया है, नहीं तो उसके लिए खाना क्यों मांगती ?" अपना मन अपने ही मन से सवाल-जवाब करता है।

"बच्चा तो बहुत बीमार मालूम होता है, इसे रोटी नहीं खानी चाहिए।" उस औरत को समझाना है।

"बच्चा अभी खाना नहीं, पीता है। लेकिन दूध ही नहीं मिलता, अभागे को। एक रोटी दीजिये बाबू।" वह कहती है।

"कितने दिन का हुआ ?"

"दस महीने का।"

"दस महीने का बच्चा लेकर दिल्ली में भीख मांगने निकल पड़ी ?"

"नहीं तो बैठे-बैठे कौन खिलायेगा ?"

"क्यों, बच्चे का बाप ?"

" !" वह चुप रही। निगाहें थोड़ी झुक गयीं। मैं समझ गया कि यह दिल्ली की किसी सड़क का बच्चा है। बाप इसका एक ही है भगवान, जो इसे दोनों वक्त रोटी का इन्तजाम तो आकर करेगा नहीं, इसलिए भीख मांग रही है।

दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता जैसे महानगरों में न जाने कितने सड़कों के बच्चे हैं, जिनको राजधानी दिल्ली भारत का नागरिक मानने से तो इन्कार नहीं करती, लेकिन उन्हें नागरिक-जीवन का ढांचा भी नहीं दे पाती। शायद कभी दे भी नहीं पायेगी। —अ०

नेता और जनता

हमारे आश्रम में एक लड़का था। और था एक बिल्ली का बच्चा। वह लड़का उसी बिल्ली के बच्चे को अक्सर गोद में लेकर घूमता-फिरता था और हमेशा सबको यह बताता था कि इस बिल्ली के बच्चे से आप कोई भी सवाल पूछिये, तो वह तुरन्त जवाब देगा। सचमुच ही हम जब कभी उससे कोई भी सवाल पूछते तो वह बच्चा 'म्याऊँ' करके जवाब देता था। जाहिर है कि वह लड़का ऐसा कुछ करता था, जिससे बिल्ली का बच्चा मजबूर होकर 'म्याऊँ' बोलता था। एक दिन हमने जांच किया तो पता चला कि वह लड़का बिल्ली के बच्चे को कपड़े से ढंक देता था, कपड़े के नीचे अपना हाथ उसके पेट पर रखता था, और जब कोई सवाल पूछता था तो वह तुरन्त उसका पेट दबा देता था। बिल्ली का बच्चा मजबूर होकर 'म्याऊँ' बोलता था। तब वह लड़का सबको समझाता था कि यह बिल्ली का बच्चा आपके प्रश्नों का अमुक जवाब दे रहा है।

ठीक उसी तरह आज हमारे नेता जनता के पेट में ऊँगली गड़ा-गड़ाकर अपनी मनमानी का समर्थन करा रहे हैं। यह खेल देखते-देखते हम ऊब गये, लेकिन जिन्होंने यह खेल रचाया है, उनको हमारी ऊब की परवाह कहां है ? —रासलालचन्द्र दे

अमेरिका में सामूहिक जीवन के प्रयोग

ग्रामदान आन्दोलन द्वारा भारत में एक लोकतांत्रिक समाज सग ठित करने का प्रयास हो रहा है। सवाल उठता है कि क्या दुनिया में कभी ऐसा और कोई प्रयास हुआ है? और क्या कहीं उस प्रयास को सफलता भी मिल सकी है?

नीचे हम ऐसे ही कुछ प्रयत्नों का विवरण दे रहे हैं। विवरण हमें सुश्री सरला चड्ढा से प्राप्त हुआ है। उनका कहना है कि अमेरिका में इस प्रकार के सैकड़ों प्रयोग स्वेच्छा से हो चुके हैं।—सं०

इफ्राता

लगभग सत्रह सौ साल पहले जर्मनी में एक सम्प्रदाय था, जो ईश्वर की प्रेरणा और साक्षात दर्शन पर जोर देता था। उस सम्प्रदाय के लोग अपने दैनिक जीवन में ऐसा अनुभव करने का प्रयत्न करते थे—जैसे उनके सामने ईश्वर उपस्थित है। उन लोगो ने जर्मनी से अमेरिका जाकर वहाँ पर एक समाज की स्थापना की थी। शुरू में उनका समाज ब्रह्मचारी भाई-बहनों का समाज था, लेकिन बाद में उन्होंने अपने समाज में विवाहित दम्पतियों को भी दाखिल किया। उन्होने अपने लिए लकडी के मकान बना लिये। सिर्फ अतिथि गृह और उससे सटी हुई डबल रोटी बनाने की भट्ठी पक्की थी।

ये लोग नम्रता, ब्रह्मचर्य, नशा-निषेध, सहनशक्ति और करुणा को जीवन के प्रमुख मूल्य मानते थे। उन्होने अपने दैनिक कार्यक्रम में शरीरश्रम, ध्यान और उपासना को स्थान दिया था। स्त्रियाँ कताई, सिलाई, चित्रकला, संगीत, कढ़ाई, फल-संरक्षण, लेखन, दियासलाई, और मोमबत्ती आदि बनाने का काम किया करती थी। वे तरकारी के बगीचे में काम भी करती थी। पुरुष बाहर का भारी काम तो करते ही थे, इसके साथ ही अपने गृहस्थी की व्यवस्था भी अपने ही हाथों से किया करते थे। वे बुनकर, दर्जी और मोची का भी काम करते थे।

उन लोगो ने ऐसे कल-कारखाने भी खोले थे, जिससे आसपास के देहातों का विकास भी हो। विशेषकर उनके चमडा पकाने तथा कागज बनाने के कारखाने काफी बडे। वे सिर्फ अपने आप में स्वावलम्बी नही थे। वे आसपास के लोगो को भी मदद देते थे। बहनें मरीजों की सेवा किया करती थी, जिससे ये बहुत लोकप्रिय थी। उनका संगीत बहुत प्रसिद्ध था। उनकी किताबों की चित्रकला भी बहुत ऊँचे दर्जे की थी।

इफ्राता के समाज का मुख्य लक्ष्य ईश्वर से योग साधना था। बारह बजे रात को उनकी मीटिंग होती थी। उनका आतिथ्य और सभ्यता का बरताव प्रसिद्ध था।

उसकी स्थापना सन् १७२० में हुई, और १९२४ में उसका विसर्जन हुआ। याने वे दो सौ से ज्यादा वर्ष तक अपना यह प्रयोग करते रहे।

अमीश

इनकी स्थापना भी सत्रहवी सदी के अन्त में हुई। ये समझते थे कि धर्म एक व्यक्तिगत मामला है, इसमें गिरिजा (ईसाइयो का मंदिर) या सरकार का दखल होना गलत है। ये शस्त्र उठाने तथा कसम खाने से इनकार करते थे। इसीलिए उन लोगो को पहाडो में छिपना पडा। सन् १७२७ में ये लोग अमेरिका चले गये। आजकल उनकी संख्या लगभग ५७,००० है। एक ऐसे इलाके में जहाँ चारो ओर औद्योगिक समाज का विलासितापूर्ण जीवन चलता है, ये लोग अपनी विशेषता कायम रखे हुए हैं। यह इसलिए संभव हुआ, क्योंकि ये कृषि पर ही निर्भर हैं, और उनकी व्यवस्था पूर्ण तथा स्वावलम्बी और देहाती है। उनके वस्त्र, धर्म और भाषा भिन्न हैं, इसलिए ये आसपास के समाज से बिल्कुल अछूते रह पाये है।

उनकी शिक्षा लिखने-पढने तथा साधारण गणित तक सीमित हैं। ये सब कृषक है, और उनकी कृषि से यह सारा इलाका काफी समृद्ध हो गया है। वे ऐसे औजारो का उपयोग करते है, जो मनुष्य से या पशु से चलने वाले हो। उनके पास न ट्रैक्टर है, न कार है, न दूध निकालनेका यंत्र है, न बिजली या टेलीफोन है, न रेडियो है। इधर-उधर, जाने में भी वे घोडा-गाडी का उपयोग करते है। हाँ, दूर जाने के लिए ये मोटर या रेलगाडी का उपयोग कर लेते है।

जबतक सरकार उन्हे धर्म-स्वातंत्र्य देती है, तबतक उन्हे कर चुकाने में कोई एतराज नही होता है। ये अपने बच्चो को सरकारी पाठशालाओ में भेजने से इनकार करते हैं। झण्डे को सलामी देने से इनकार करते हैं। फौज में भरती होने से इनकार करते हैं, तथा सरकारी मदद या इमदाद लेने से भी इनकार करते हैं। ●

'गाँव की बात'। वार्षिक चन्दा : तीन रुपये] श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए [इस अंक की छपी प्रतियाँ ४,२००
संसार प्रेस, काशीपुरा, वाराणसी मे मुद्रित और प्रकाशित।

तीन मंजिलें

यह कौनसा रास्ता है, जो आज की परिस्थिति से हमें हमारी आखिरी मंजिल तक ले जायेगा ?

सबसे पहले, हमारे लिए शायद यह पता लगाना अच्छा होगा कि अपने रास्ते का चुनाव करते समय हमें मार्क्स से क्या मदद मिल सकती है। हेग में सन् १८७२ में, पहली 'इंटरनेशनल' की बैठक के समय व्यूह-रचना (टेक्टिक्स) पर बोलते हुए मार्क्स ने कहा था :

"एक न एक दिन कार्यकर्ता को राजनैतिक सत्ता पर जरूर काबिज होना पड़ेगा, ताकि मजदूरों का नया संगठन स्थापित हो सके,...लेकिन हम जोर देकर यह नहीं कहते कि इस लक्ष्य तक पहुँचने का हर जगह एक ही रास्ता है। हम जानते हैं कि इसका विचार करते समय अलग-अलग देशों की संस्थाओं, रीति रिवाजों और तर्ज तरीकों का ख्याल रखना होगा। और हम इनकार नहीं करते कि दुनिया में इंग्लैण्ड, अमेरिका और, यदि मैंने ठीक समझा है तो, हालैण्ड आदि ऐसे मुल्क हैं, जहाँ के कार्यकर्ता इस लक्ष्य तक शान्तिपूर्ण तरीके से भी पहुँच सकते हैं। लेकिन सभी देशों में ऐसी बात नहीं है।"

मार्क्स ने यहाँ समाजवाद के लिए साफ-साफ दो रास्ते सुझाये हैं—एक शान्तिपूर्ण, दूसरा हिंसापूर्ण। इन दोनों रास्तों में से कौनसा चुना जाय, यह देश की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। रूस में लोकतन्त्र नहीं था, इसलिए लेनिन को हिंसक क्रान्ति का रास्ता अपनाना पड़ा। इंग्लैण्ड में लोकतन्त्र है और मार्क्स के जमाने की तुलना में उसका दायरा बहुत बढ़ गया है। इसीसे हम देखते हैं कि वहाँ मजदूर दल की सरकार है, जो लोकतान्त्रिक उपायों से समाजवादी कार्यक्रमों को व्यावहारिक रूप दे रही है। वहाँ का कोई मतान्ध व्यक्ति भी आज यह सपना नहीं देख सकता कि वहाँ किसी हिंसक क्रान्ति की आवश्यकता या सम्भावना है।

पिछले कई वर्षों से भारत एक स्वतन्त्र लोकतन्त्र के लिए संघर्ष करता आ रहा है। सब लोग जानते हैं कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस इस संघर्ष की मुख्य शक्ति रही है। कांग्रेस के प्रयत्नों ने इस देश को सफलता के बहुत समीप पहुँचा दिया है। हमारे इन प्रयासों से जो नतीजे सामने आयेंगे, उन्हीं के आधार पर हमारे समाजवाद का रास्ता तय होगा। यह साफ नहीं हो सका है कि इसका नतीजा क्या सामने आनेवाला है। कुछ भी हो, इस प्रक्रिया में हम सिर्फ तमाशबीन नहीं हैं, बल्कि सक्रिय रूप से अपना काम करते रहनेवाले लोग हैं और अपने कामों के जरिये आनेवाले नतीजे पर अपना ज्यादा से ज्यादा असर डालकर उसे मनचाही शकल देने में लगे हैं।

समाजवाद तक पहुँचने के सक्रमण काल की समस्या आज दो हिस्सों में दिखायी देती है। उसका पहला हिस्सा मुक्त लोकतन्त्र की स्थापना से सम्बंधित और दूसरा हिस्सा उस लोकतन्त्र को समाजवाद में रूपान्तरित करने से सम्बन्ध रखता है।

मैं समस्या के दूसरे हिस्से को पहले ले रहा हूँ। हम थोड़ी देर के लिए मान लें कि भारत में एक पूर्ण लोकतान्त्रिक राज्य की स्थापना हो गयी है। यदि हम इतिहास की घटनाओं को ध्यान में रखकर देखें या मार्क्स और लेनिन की भविष्यवाणियों के अनुसार चलें तो मानना होगा कि यहाँ बुर्जुआ श्रेणी के लोग ऊपर आ जायेंगे। ऐसी हालत में मजदूर और शहर तथा गाँवों के गरीब लोग बुर्जुआ वर्ग के लोगों को हटाकर समाजवाद की स्थापना कैसे करेंगे ? वे यह काम लोकतान्त्रिक ढंग से करेंगे या हिंसात्मक क्रान्ति के जरिये ?

यदि अपने लिए कहना हो तो मैं कहूँगा कि मैं लोकतान्त्रिक तरीका चुनूँगा। याद इसलिये कि मैंने जो लक्ष्य चुना है, वह लोकतान्त्रिक समाजवाद का है। हिंसक क्रान्ति और मजदूरों के अधिनायकवाद का रास्ता समाजवादी लोकतन्त्र की ओर ले जा सकता है; लेकिन जिस एक देश (सोवियत रूस) में यह तरीका काम में लाया गया है, उससे वहाँ कुछ और ही चीज सामने आयी है—एक नौकरशाही राज्य जिसमें लोकतन्त्र का अस्तित्व नहीं है। मैंने इतिहास की इस घटना से कुछ सबक लिया है। यदि भारत में समाजवादी आन्दोलन को लोकतान्त्रिक उपायों का उपयोग करने की स्वतन्त्रता नहीं रही तो बुर्जुआ समाज को नष्ट करने का सिर्फ एक रास्ता रह जायेगा—हिंसक क्रान्ति और अधिनायकवाद का रास्ता। लेकिन मैंने यह माना है कि भारत में एक पूर्ण लोकतान्त्रिक राज्य का अस्तित्व सामने आयेगा।

ये बातें मुझे जिस निष्कर्ष तक पहुँचाती हैं, वे ये हैं कि पूर्ण लोकतान्त्रिक भारत में समाजवाद तक पहुँचने की सक्रमण-कालीन प्रक्रिया शान्तिपूर्ण हो सकती है और होनी भी चाहिए। कहने का मतलब यह है कि भारत की आनेवाली समाजवादी पार्टी—

नयी पीढ़ी के लिए

जिसमें वर्तमान कांग्रेस समाजवादी दल को अवश्य ही रूपान्तरित होना है—चुनाव में विजयी होकर विधान-सभाओं और राज्यों पर अपना कब्जा जमायेगी और उनका कानूनी ढंग से उपयोग करके पूँजीवाद का विनाश करेगी और समाजवाद लायेगी।* —जे० पी०

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, १३ अक्तूबर, '६७

नव समाजवादी

१९५७ : विनोबाजी के आन्दोलन ने बहुत दिनों से जो प्रश्न मैं पूछ रहा था, उसका जवाब मुझे पेश कर दिया। प्रश्न था, क्या गांधीजी के तत्त्वज्ञान में सामाजिक क्रान्ति

* सन् १९४६ में "जनता" में प्रकाशित एक लेख का अंश : मूल अंग्रेजी से।

को पूरा करने के लिए कोई व्यावहारिक तरीका उपलब्ध है ?

यह एक दूसरा तरीका है। इसका एक पहलू बड़े पैमाने पर प्रचार-कार्य है, जिसे गांधीजी परिवर्तन कहते थे। दूसरे शब्दों में लोगों को, धर्म, पन्थ तथा अन्य मतमतान्तरों का लिहाज न रखते हुए यह समझाने के लिए एक अति व्यापक प्रचार आन्दोलन शुरू करना है कि उन विचारों, जीवन के मार्गों और मूल्यों का परित्याग करके, जो गलत और हानिकर सिद्ध हुए हैं, उनके स्थान में कुछ दूसरे विचारों और जीवन मार्गों तथा मूल्यों को स्वीकार करें। इस प्रकार विचार और मूल्यों में क्रान्ति शुरू हो जाती है। इसके साथ ही नये मूल्यों और विचारों का चुनाव इस तरह होता है कि उनका किसी बड़ी सामाजिक समस्या से प्रत्यक्ष सम्बन्ध हो और उनके स्वीकार करने और उन पर अमल करने से उस समस्या के हल हो जाने और साथ ही-साथ समाज में एक मौलिक परिवर्तन हो जाने की आशा हो। यह परिवर्तन भी सम्भव है, जब लोग व्यक्तिगत रूप से भावी समाज के मूल्यों के अनुसार अभी से जीवन बिताना शुरू कर दें। दूसरी क्रान्तियाँ इसीलिए असफल हुईं कि उनके कर्णधारों ने ऐसे साधनों का उपयोग किया, जो उनके साध्यों के अनुकूल नहीं थे। उदाहरण के लिए, यदि लक्ष्य एक *सत्ताविहीन समाज था*, तो उसकी प्राप्ति के साधन स्वयं राज्य की प्रतिरोधी शक्तियाँ थीं, *यदि लक्ष्य बन्धुत्व था*, तो भाइयों के आपसी संघर्ष को साधन बनाया गया था फिर यदि *लक्ष्य जीवन का संचालन करनेवाली स्वार्थपरता* से मुक्त होना था, तो समाज के कुछ वर्गों की *स्वार्थपरता को सामाजिक क्रांति का संचालन* करनेवाली शक्ति की तरह इस्तेमाल किया गया। *लेकिन क्रान्ति की सर्वोदय प्रणाली में* साधन और साध्य एक हो जाते हैं।

इस प्रक्रिया की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि यद्यपि नये विचार और नये मूल्यों पर अमल करना कठिन दीख पड़ता है तो भी इस प्रकार से कार्यक्रम बनाया गया है कि साधारण से साधारण व्यक्ति भी आसानी से एक सीढ़ी से दूसरी सीढ़ी पर चढ़ते हुए अन्त *में लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं*। उदाहरण के लिए, विनोबाजी अपने आन्दोलन के द्वारा इस विचार का प्रचार कर रहे हैं कि हम अपनी सम्पत्ति के ट्रस्टी मात्र हैं और इसलिए समाज हमारे हिस्से के रूप में हमें जो कुछ देता है, उससे कुछ भी अधिक पाने के हकदार हम नहीं हैं। इसीलिए वे हमें ट्रस्टियों की तरह रहने और हमारे पास जो कुछ है, उसे सबमें बाँट लेने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। वर्तमान परिस्थितियों में यह एक अति दुर्गम मार्ग दिखाई देता है। विनोबाजी ने इसलिए इस यात्रा को और अधिक सुगम बनाने के लिए पहले पूरी सम्पत्ति के छोटे-से छोटे अंश का बँटवारा करने की माँग की है। किसी एक व्यक्ति से यदि अकेले ही ऐसा करने को कहा *जाता, तो इतना भी करना कठिन हो जाता।* अनैतिकता के बीच नैतिक जीवन बिताना *कठिन होता है। इसके लिए अधिक सबल* प्रयत्नों और उच्च नैतिक साधनों की आवश्यकता *होती है। किन्तु जब किसी व्यक्ति के* चारों ओर अन्य सब लोग उसी काम में लगे *हों, तो दुर्बल से दुर्बल व्यक्ति के लिए भी ऊँचा* उठना सरल हो जाता है। इसलिए परिवर्तन *का यह कार्यक्रम, यद्यपि लक्ष्य तो इसका व्यक्ति* ही रहता है, जनव्यापी होता है।

इस तरीके का दूसरा पहलू स्वावलम्बन और स्व शासन का एक ऐसा कार्यक्रम तैयार करना है, जिसके द्वारा लोग—पहले वे, जो छोटी बस्तियों में रहते हैं—अपनी व्यवस्था स्वयं करना सीखें और नये विचारों और मूल्यों से प्रभावित होकर सामाजिक जीवन के नये स्वरूप और नयी संस्थाएँ खड़ी करने में एक दूसरे के साथ सहकार करें। उदाहरण के लिए, ग्रामदान का कार्यक्रम है, जो एक नवीन तृतीय अर्थ-व्यवस्था है, ग्राम स्वराज्य यानी गाँव में गाँव का राज्य कायम करने का कार्यक्रम है। लोक शिक्षण द्वारा वैचारिक क्रान्ति और भूमि के ग्रामीकरण तथा ग्राम-स्वराज्य के द्वारा स्थापित गाँव के बाह्य संगठन में क्रान्ति, दोनों मिलकर एक सम्पूर्ण क्रांति का कार्यक्रम बन जाता है।

यह एक नयी प्रक्रिया है, जिसका दुनिया को अभी कोई अनुभव नहीं है। नये विचारों के सम्बन्ध में सन्देह और संकोच होना स्वाभाविक है। किन्तु हम भारतवासियों के लिए, जिन्हें सर्वथा नये विचारों और नये तरीकों से—शुरू-शुरू में जिनको इसी प्रकार सन्देह की दृष्टि से देखा गया था और जिनका मज़ाक बनाया गया था—राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त होते हुए देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, विनोबाजी के नये विचारों और नये तरीकों को समझने और मानने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। वे आखिरकार राष्ट्रपिता के द्वारा प्रयुक्त पहले विचारों और तरीकों के विकास और विस्तार के ही द्योतक हैं।

गत दस-बीस वर्षों में, सत्ता के द्वारा सेवा की अयोग्यता और असारता का काफी अनुभव इकट्ठा हो गया है, इसलिए सेवा के लिए उत्सुक देशभक्त व्यक्तियों को बड़ी-से बड़ी संख्या में अब सर्वोदय के क्षेत्र में आ जाना चाहिए। सैकड़ों सत्याग्रही लोक-सेवक सर्वोदय के क्षेत्र में पहले से आ चुके हैं। ऐसे सैकड़ों, हजारों लोक-सेवकों की और आवश्यकता है।•

—जे० पी०

•"समाजवाद से सर्वोदय की ओर" पुस्तक से

सर्वोदय-संस्कार-शिविर

वात्रक के तट पर उत्कंठेश्वर (वाया दहेगाम, जिला अहमदाबाद) में हाईस्कूल कालेज के छात्र-छात्राओं के लिए ता० २१ अक्तूबर से २५ अक्तूबर तक शिविर *हो रहा* है। इस शिविर में श्रमयज्ञ, सफाई, खेलकूद प्राथमिक चिकित्सा, योगासन, सर्वोदय विचार अध्ययन, मनोरंजन, समाज सेवा, शान्ति सेना तालीम आदि का अभ्यास *कराया जायगा।*

स्कूल-कालेज के जो भाई-बहन इस शिविर में शरीक होना चाहते हैं, वे श्रीमती सावित्री व्यास, ७ प्रज्ञा सोसायटी, नवरंगपुरा, अहमदाबाद ९ (गुजरात) इस पते पर सम्पर्क स्थापित करें। शिविर शुल्क पाँच रुपये है। पत्र लिखते समय नाम, पता, उम्र, अभ्यास, प्रिय विषय लिखें। —सावित्री व्यास

शिविर-संचालिका

लुई फिशर की डायरी से

सन् १९४६ : बम्बई में गांधीजी ने मुझे सुझाया था कि मैं उनसे महाराष्ट्र की एक स्वास्थ्यप्रद पहाड़ी-नगरी पंचगनी में मिलूँ। भारत के समाजवादी नेता श्री जयप्रकाश नारायण और उनकी पत्नी प्रभावती भी गांधीजी से वहीं मिलनेवाले थे, इसलिए हम लोगों ने 'डेकन क्वीन एक्सप्रेस' में बम्बई से पूना तक साथ-साथ यात्रा की। पूना से आगे की यात्रा भी जयप्रकाश के लिए ठीक की गयी मोटर कार में शुरू हुई। कुछ ही देर बाद गाड़ी खराब हो गयी। हमने देहाती इलाके में चलनेवाली एक मोटर-गाड़ी पकड़ी। समाजवादी पार्टी ने रास्ते के किनारे पर पड़नेवाले गाँवों में, कुछ कुछ दूरी पर छोटी-छोटी स्वागत सभाओं का आयोजन किया था। जहाँ-जहाँ ऐसी सभाएँ तय की गयी थीं, वहाँ वहाँ वह बस ठहर जाती थी। मैं, जयप्रकाश और उनकी पत्नी नीचे उतरते और हम लोग मराठी भाषा में उनके प्रति कहे गये स्वागत-उद्‌गारों को सुनते। जयप्रकाश मराठी भाषा नहीं बोल पाते थे। वे थोड़े में हिन्दी बोलते थे, मराठी में उसका भाषांतर सुना दिया जाता था। सभा में हम तीनों को खुशबूदार फूलों की भारी भरकम माला पहना दी जाती थी, जो हमारे घुटनों तक पहुँचती थी। इस तरह सुगन्धित फूल-मालाओं से लदकर, और अपने हाथों में भेंट के फल-फूल लेकर हम बस में वापस आ जाते थे। बस के चालक तथा अन्य यात्रीगण जब तक स्वागत कार्यक्रम चलता था तब तक प्रतीक्षा करते रहते थे। दो घण्टे के भीतर हमें ६ बार बस से उतरना पड़ा। कोई भी शिकायत के लिए नहीं भुनभुनाया। मैं मानता हूँ कि हमारे सहयात्री इस होनेवाली देर को अपनी निरपेक्ष भावना और जयप्रकाश के प्रति आदरभाव के मिले जुले कारणों से झेल लेते थे। उन लोगों ने पहले शायद जयप्रकाश के बारे में कुछ नहीं सुना था। लेकिन जब जयप्रकाश का ऐसा स्वागत हो रहा था, तो उनके लिए भी सम्मान का भाव प्रदर्शित करना स्वाभाविक ही था।
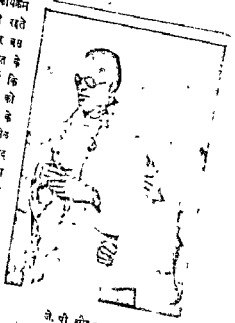
सन् १९४८ : 'जे० पी०' जैसे कि आमतौर पर उन्हें पुकारा जाता है, एक मनोहारी व्यक्तित्व है, ऐसे जो सिर्फ भारत में ही होते हैं। वे पढ़ने के लिए सन् १९२२ में भारत से अमेरिका गये। उन्होंने केलिफोर्निया में जाकर फल तोड़ने का काम किया, फिर लोवा तथा विस्कनसिन विश्वविद्यालयों में दाखिल हुए। अमेरिका में वे एक साम्यवादी बन गये। लेकिन, जब वे १९२९ में भारत लौटे, तो उन्होंने कम्युनिस्टों की अनैतिक विचार शैली और निरकुंश तरीकों को देखा। उन्होंने साम्यवाद को छोड़ दिया और लोकतान्त्रिक समाजवादी बन गये।

जे० पी० धीमी आवाज में बोलते हैं। शिष्ट हैं। वे सकोची, विनम्र और संयमी हैं, लिहाज रखनेवाले हैं; समन्वयात्मक दयापूर्ण और आदरणीय भी हैं। जे० पी० में आन्तरिक शान्ति और दृढ़ता विद्यमान है। जे० पी० की शान्ति के पीछे उनकी शक्ति छिपी हुई है। वे गहरे सत्य की खोज में लगे रहते हैं। पश्चिमी शिक्षा और विचारधारा ग्रहण करने पर भी वे ठेठ भारतीय हैं। जे० पी० एक गाँव में रह रहे हैं, यह कल्पना की जा सकती है। जे० पी० लोगों के नजदीक से नजदीक पहुँचना चाहते हैं।

जे. पी. और प्रभावतीजी

सन् १९५२ : जयप्रकाश नारायण ने २१ दिन का उपवास किया और जब उपवास समाप्त हुआ तो उन्होंने एक लेख में कहा—"द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद" की देवी के मन्दिर में मैंने बहुत वर्षों तक उपासना की। मुझे यह स्पष्ट हो गया है कि भौतिकवाद चाहे वह किसी भी प्रकार का हो, आदमी से सच्चा इन्सान बनने का जरिया ही छीन लेता है।" इसीलिए उन्होंने अच्छाई को चुन लिया। उन्होंने भौतिकवाद के मुकाबले मानववाद को ग्रहण किया।●

• 'रिस एन्ड ग्वार बर्ल्ड'—ले० लुई फिशर पृष्ठ ११-१३, १२८-१२९, २०१-२०२।

जयप्रकाशजी के निवेदन में उनके वैचारिक परिवर्तन की एक सुव्यवस्थित प्रक्रिया हमें देखने को मिलती है। उसकी प्रतिध्वनि बहुतों के हृदय में उठनेवाली है। मेरा तो निश्चित मानना है कि अनेकविध प्रकाशी सद्‌विचारधाराएँ, परिपूर्णता की तलाश करती हुई, आखिर सर्वोदय-समुद्र में विलीन होनेवाली हैं।

—विनोबा

दृष्टिकोण...

आन्दोलन के समाचार

ग्रामदान प्रखण्डदान

बलिया : ४ अक्तूबर। बाँसडीह और मनियर प्रखण्डदान के बाद अब तीसरे प्रखण्ड 'बेरुआरवाड़ी' का दान आज प्रखण्ड प्रमुख श्री रामबहादुर सिंह ने उ० प्र० ग्रामदान प्राप्ति समिति के अध्यक्ष श्री कपिल भाई को समर्पित किया।

बेरुआरबाड़ी प्रखण्डदान का विवरण

१०० से ऊपर की जन संख्या के	
ग्रामदान योग्य गाँव	६४
ग्रामदान में शामिल ग्राम	५४
ग्रामदानी गाँवों का प्रतिशत	८५%
कुल जन संख्या	४६,४६४
ग्रामदान में शामिल	
जन संख्या	...३९,३२५
शामिल जन संख्या का प्रतिशत	८१%
कुल कृषियोग्य भूमि	एकड़ १७,६६४
ग्रामदान में शामिल भूमि	,, ११,२१०
,, में शामिल भूमि का प्रतिशत	६४%

किये गये। अब जिले में प्रखण्डदान की संख्या १७ हो गयी है।

विवरण	प्रखण्ड पटागी	प्रखण्ड कल्याण नरसिंहपुर
कुल गाँव संख्या	९९	२१५
ग्रामदान में शामिल	८७	१८४
प्रतिशत	८७%	८६%
कुल जन संख्या	२८,४२५	३२,५७४
ग्रामदान में शामिल	२१,४००	२४,७६०
प्रतिशत	७५%	७६%

मथुरा सादाबाद तहसील में सर्वोदय आश्रम के तत्वावधान में 'सर्वोदय पर्व' मनाया गया। १२ सितम्बर से १ अक्तूबर तक कार्यकर्ताओं ने अपने क्षेत्र में ४० ग्रामों में पदयात्रा की। ३०० रु० की साहित्य बिक्री की। भूदान पत्रिकाओं के ग्राहक बनाये।

पूर्णिया २ अक्तूबर। गांधी जयंती के अवसर पर कसबा का दान १ सप्ताह के अन्दर प्राप्त करने का संकल्प कार्यकर्ताओं ने किया। २० पंचायतों में २० टोलियाँ संकल्प पूर्ति के लिए घूम रही हैं।

४ अक्तूबर '६७ तक

दरभंगा में कुल ग्रामदान ३,७२०, प्रखण्डदान ४४ अनुमण्डलदान २ जिलादान १
बिहार में कुल ग्रामदान १६,०६६, प्रखण्डदान ९७, अनुमण्डलदान ५, जिलादान १
बिहार में पुष्टि हेतु समर्पणपत्र तैयार ८२३ ग्रामदानी गाँवों के।
भारत में कुल ग्रामदान ४४,११५, प्रखण्डदान १९६।

देहरादून ४ अक्तूबर। सहसपुर प्रखण्ड के १६३ गाँवों में से १२६ गाँवों का ग्रामदान घोषित हुआ। प्रखण्डदान का अभियान २५ सितम्बर से २ अक्तूबर तक डा० दयानिधि पटनायक के नेतृत्व में चला, जिसमें प्रदेश की संस्थाओं के ९० अनुभवी कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया।

कोरापुट २ अक्तूबर। आज यहाँ एक एक जनसभा में दो प्रखण्डदान घोषित

गांधी जयंती

२ अक्तूबर को देश भर की रचनात्मक संस्थाओं में गांधी जयंती 'चरखा जयंती' के रूप में मनायी गयी।

गांधी आश्रम के हरदुआ केन्द्र पर तथा धर्म समाज संस्कृत डिग्री कालेज, अलीगढ़ में सर्वोदय साहित्य प्रदर्शनी लगायी गयी। तमकुही रोड, देवरिया में विचार गोष्ठी हुई, गांधी आश्रम के बिक्री केन्द्र का उद्घाटन हुआ। श्री गांधी आश्रम दलीपपुर, पीलीभीत में सभा हुई। बुलन्दशहर में खादी प्रदर्शनी लगायी गयी। मथुरा में मुहल्लों में बारी बारी से अखण्ड सूत्रयज्ञ का कार्यक्रम ८ नवम्बर तक चलाया जायगा। मथुरा खादी भवन में उत्तर प्रदेश के श्रममन्त्री ने अपने भाषण में विकेन्द्रीकरण पर जोर दिया। हरिजन गुरुकुल, आजमगढ़ के संस्थापक की स्मृति में मुख्य मंत्री द्वारा लखनऊ में खादी भवन का उद्घाटन किया गया। सासनी स्थित गांधी आश्रम में आयोजन धूमधाम से मनाया गया। बरेली में स्वावलंबन शिविर का कार्यक्रम चलाया गया। उत्तर काशी में सभी राजनीतिक दलों की सम्मिलित सभा हुई।

बिहार के मुंगेर जिले में ग्राम स्वराज्य संघ ने घर घर खादी बिक्री के लिए फेरी लगाने का कार्यक्रम रखा। दरभंगा के लौकही प्रखण्ड में सर्वोदय पात्र रखे गये। सारन में प्रखण्डदान पुष्टि की योजना बनायी गयी। जमशेदपुर और नगर के दस स्थानों में विभिन्न संस्थाओं द्वारा गांधी जयती मनायी गयी, जिसमें शांति-सेना समिति के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। नरसिंहपुर, जिला मुजफ्फरपुर में २४ घंटे का सूत्र यज्ञ हुआ। उड़, राँची व स्थानीय शिक्षण संस्थाओं ने श्रमदान का कार्यक्रम रखा। मोतिहारी में ५० लोगों ने २४ घण्टे का अखण्ड सूत्र-यज्ञ चलाया।

राजस्थान में राजसमन्द नामक स्थान पर आयोजित कार्यक्रम में अणुव्रत आन्दोलन के कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया। भरतपुर में शराबबन्दी के लिए सभा में प्रस्ताव पास हुए।

म० प्र० के गरोठ और डबरा में भी आयोजन उत्साहवर्द्धक था। गरोठ में ग्रामदान यात्रा शुरू हुई।

हिसार (पंजाब) में १४ नवम्बर '६७ तक डेढ़ लाख रुपये की खादी बिक्री करने का कार्यक्रम बना। सेवाग्राम स्थित 'महादेव भाई भवन' में गांधी सेवा संघ पुस्तकालय के बाल विभाग का उद्घाटन हुआ।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व सेवा संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता राजघाट, वाराणसी-१
वार्षिक शुल्क १० रु०, विदेश में १८ शि०, या १८ रु०, या २॥ डालर। एक प्रति २० पैसे
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ३,८०० इस अंक की छपी प्रतियाँ ३९,००

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक — साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

२२ दिसम्बर, '६७ अंक : १२

इस अंक में

आगामी आकर्षण

पूसा रोड में उपकुलपतियों का सम्मेलन

अध्यक्ष की चिट्ठी

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति : २० पैसे

विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—

१६ रु० या १ पौण्ड या ३॥ डालर

(हवाई डाक-शुल्क : देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४२८५

हिन्दी लादी नहीं जायेगी

हिन्दी के जरिये सारे भारत की आत्मिक एकता बढ़ाने का सुझाव महात्मा गांधी ने पहले दिया था। महात्मा गांधी की मातृभाषा हिन्दी नहीं, गुजराती थी। लेकिन लोगों के सामने उन्होंने हिन्दी भाषा रखी और मद्रास में हिन्दी भाषा के प्रचार के लिए अपने बेटे को भेजा। लोग प्रेम से हिन्दी सीखने लगे। हम देखते हैं कि दक्षिण में लोग प्रेम से हिन्दी सीख रहे हैं। लेकिन अब वे लोग घबड़ाये हुए हैं, क्योंकि उन्हें भास हुआ कि कानून के जरिये हिन्दी भाषा हम पर लादी जायेगी। स्वाभाविक है कि लोगों में घबराहट आये। मैं अपनी तरफ से, भारत की तरफ से और सर्वोदय की तरफ से उन्हें निर्भय करना चाहता हूँ। हिन्दी भाषा दक्षिण प्रदेश पर जबरदस्ती नहीं लादी जायेगी और अगर वह लादी जायेगी, तो सर्वोदय उसके विरोध में खड़ा होगा। हिन्दी सीखना अच्छी बात है। लोग भी यह समझते हैं। पर जबरदस्ती से लादने की बात हो, तो लोग घबड़ाते हैं। इसलिए हिन्दी कुशलता से, धीरे-धीरे आनी चाहिए।

शंकराचार्य की मातृभाषा मलयालम थी। रामानुज की मातृभाषा तमिल थी। लेकिन उनके विचार सारे भारत में खूब फैले, क्योंकि उन्होंने संस्कृत भाषा का आश्रय लिया, जो उस जमाने की राष्ट्र भाषा थी। उन्होंने संस्कृत भाषा में ऐसे अद्भुत ग्रंथ लिखे कि काशी के विद्वानों को वे मान्य करने पड़े। इस तरह सारे भारत में विचार फैलाने के लिए अब हिन्दी का ही उपयोग होनेवाला है। किसीको विचार फैलाना हो, तो हिन्दी से उत्तम दूसरा साधन नहीं है। पर वह धीरे-धीरे, प्रेम से समझा-बुझाकर होना चाहिए, तभी वह एक ताकत का साधन होगा।

बाबा ने दक्षिण की चारों भाषाओं का अध्ययन बहुत प्रेम से किया है। लेकिन बाबा पर जबरदस्ती की जाती, तो क्या बाबा ऐसा करता? चार अलग-अलग लिपियाँ सीखने से बाबा की आँखें तक खराब हुई हैं, फिर भी प्रेम से बाबा ने सीख लिया। तो हिन्दी भाषा राष्ट्रमान्य होकर रहेगी, इसमें मुझे संशय नहीं।

माना, हिन्दी मान्य होकर रहेगी, पर कौनसी हिन्दी मान्य होकर रहेगी? वही हिन्दी, जिसमें आसान संस्कृत शब्द होंगे और विभक्ति प्रत्यय, क्रियापद के प्रत्यय हिन्दी के रहेंगे। यह धारा पुराने जमाने में संस्कृत की थी, प्राकृत की, अब हिन्दी की। किन्तु यह धीरे-धीरे ही होनेवाला है। जबरदस्ती से करेंगे, तो नुकसान होनेवाला है।

हम एक-दूसरे पर विश्वास रखें, हर बात प्रेम से तय करें। सत्य का ही आग्रह करने में हम न डरें। सत्य को ही अपना आग्रह करने दें। सत्य है, तो वह होकर रहेगा। हिन्दी भाषा का राष्ट्रभाषा होना सत्य है, तो वह काम सत्य ही करेगा, मैं आग्रह नहीं करूँगा। मैं सिर्फ प्रेम से समझाऊँगा। वैसा हो भी रहा है। लाखों से जितने व्याख्यान हमारे हुए, वे सब हिन्दी में हो रहे हैं। इसके कारण हिन्दी का प्रचार हो रहा है। वह तो भूदान का उपफल है। लेकिन वह सहज भाव से हो रहा है, प्रेम से हो रहा है। मैं जानता हूँ कि बाबा के प्रेम के स्वरूप कितने ही लोग हिन्दी भाषा सीखने लगे हैं। इतना ही नहीं, बल्कि केरल में हमारे साथ जो भूदान कार्यकर्ता थे, वे मराठी भी सीखे थे। यह प्रेम की ही बात है।

—विनोबा

देश :

१०-१२-६७ : श्री मोरारजी देसाई ने कहा कि देश की आम सम्पर्क की भाषा हिन्दी ही हो सकती है।

११-१२-६७ : सातारा जिले के कोयना-नगर में भूकम्प के कारण १०० से अधिक व्यक्ति मरे, १२०० घायल हुए और क्षेत्र के ८० प्रतिशत मकान गिर गये।

१२-१२-६७ : कांग्रेस संसदीय दल की कार्यकारिणी ने राजभाषा-संशोधन विधेयक के संशोधनों को अन्तिम रूप दिया।

१३-१२-६७ : बिहार की संयुक्त मोर्चे की सरकार के प्रजा-समाजवादी मंत्रियों ने मंत्रिपद से इस्तीफा दे दिया।

१४-१२-६७ : उपप्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने बैंकों के सामाजीकरण की रूपरेखा पेश की।

१५-१२-६७ : बंगला उपन्यास 'गणदेवता' के लेखक श्री ताराशंकर बन्दोपाध्याय को १ लाख रुपये का भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार दिया गया।

१६-१२-६७ : लोकसभा में राजभाषा-संशोधन विधेयक भारी बहुमत से पास हो गया।

१७-१२-६७ : उत्तर प्रदेश में सत्तारूढ़ संयुक्त विधायक दल की साधारण समिति ने मुख्यमंत्री चरण सिंह का इस्तीफा नामंजूर किया।

विदेश :

१४-१२-६७ : यूनान के सम्राट ने अपने प्रधानमंत्री के साथ अपने देश से भागकर रोम में शरण ली।

१५-१२-६७ : ब्रिटेन ने भारत को २१ करोड़ ६० लाख का एक ऋण दिया। इस पर ब्याज नहीं देना होगा।

१६-१२-६७ : अमेरिका ने भारत को २ लाख टन लाल गेहूँ खरीदने की अनुमति दी।

१७-१२-६७ : आस्ट्रेलिया के प्रधान मंत्री श्री हेराल्ड होल्ट समुद्र में तैरते समय डूब गये।

श्रद्धांजलि

वल्लभस्वामी की तीसरी पुण्यतिथि

हर महीने में यह जो मिलन-मिलन होता है, वह मुझे बहुत उत्साहदायी मालूम होता है। वल्लभस्वामी के प्रयाण को आज दो या तीन साल पूरे हुए, लेकिन मुझे तो भास ही नहीं होता कि वे गये! बिल्कुल मेरे पास बैठे हैं, ऐसा अनुभव होता है। मैंने किसीसे पूछा कि गीता के श्लोक कितने हैं, जानते हो? तो वे बोले ७००। फिर मैंने पूछा कि वल्लभस्वामी कितना जीये? उस भाई के लिए यह समझना मुश्किल था कि गीता के श्लोकों का वल्लभस्वामी कितना जीये, इस प्रश्न से क्या सम्बन्ध है। उस प्रश्न का मेरे मन में यह उत्तर था कि वल्लभस्वामी ७०० महीने जीये। वल्लभ का जीवन गीतामय था ही। अनेक बड़े-बड़े लोग दुनिया में से चले गये। कौन कहाँ गये? आज वे कहां हैं? कुछ परमात्मा में विलीन हुए, कुछ सूक्ष्म देह में घूम रहे हैं, कुछ ऐसे हैं, जिन्होंने नये जन्म लिये। इस तरह अनेक प्रकार की गति जो जीव जीवन समाप्त करके जाते हैं, उनकी होती है। मैं सोचता था कि वल्लभ की क्या गति हुई होगी। तो अंदर से उत्तर मिला कि वह मेरे पास है और मैं जब चला जाऊँगा तब मैं जहाँ जाऊँगा वहाँ वह भी आयेगा, इतनी आंतरिक एकरसता मुझे महसूस हो रही है। इसलिए मुझे भास ही नहीं होता है कि वे गये।

पूछा जाता है कि बड़े लोग किनको कहा जाय, तो कहा जाता है कि जिनकी सेवा बड़ी, वे बड़े लोग। मैंने इस संबंध में एक सूत्र बनाया है, सेवा का मूल्य जानने का। जो सेवा की गयी हो, उसको अहंकार की मात्रा से छेद होता है। सेवा बहुत की और अहंकार की मात्रा भी बड़ी रही तो सेवा का मूल्य कम हो जाता है। लेकिन सेवा कम होगी और अहंकार शून्य होगा, तो उस सेवा का मूल्य अनन्त हो जाता है। आज जो पुस्तक* प्रकाशित हुई, उसमें कुंदर दिवाण ने अपने लेख में इस सूत्र के संबंध में लिखा है। इस सूत्र के अनुसार वल्लभ की सेवा अनन्त राशि के मूल्य की है।

मैं अपने में देखता हूँ कि वल्लभ ने मुझ पर जो श्रद्धा रखी, वही मुझे उन्नत बनाती है। मेरी अपनी खुद की जो भी स्थिति हो, लेकिन इस प्रकार की श्रद्धा उस स्थिति को ऊँचा उठाती है। वल्लभ मेरे पास रहा, सीखा, मैंने उसे पढ़ाया, उसकी सेवा की, इसके कारण उसकी जितनी उन्नति हुई होगी, उस तुलना में उसने मुझ पर जो श्रद्धा रखी और उसके कारण मेरी जो उन्नति हुई, वह कम नहीं हुई।

इस प्रकार हम एक-दूसरे पर श्रद्धा रखेंगे तो उससे हमारी अपनी उन्नति तो होती ही है, लेकिन दूसरे की भी उन्नति होती है। मैं आशा करता हूँ कि हम जितने लोग विचार-वश, कार्यवश, स्नेहवश एकत्र हैं, वे एक दूसरे के प्रति आदर और श्रद्धा बढ़ायेंगे, तो उन्नति का मार्ग हासिल करेंगे।

पूना रोड, ८-१२-'६७ : —विनोबा
शाम साढ़े छह बजे

*"विशुद्धात्मा वल्लभस्वामी" मूल्य : दो रु० प्रकाशक : 'वल्लभ-निकेतन', कुमारकृपा, बंगलोर-१

राजभाषा-संशोधन विधेयक आन्दोलन स्पष्ट चिन्तन में एक योगदान

भाषा-आन्दोलन के सम्बन्ध में दिये गये श्री जयप्रकाशजी, विनोबाजी तथा सम्पादक 'भूदान यज्ञ' के वक्तव्यों की १० हजार प्रतियाँ वाराणसी नगर में गत १६-१७ दिसम्बर को वितरित की गयीं। ज्ञातव्य है कि इधर के अखबारों ने उन वक्तव्यों को पूरा पूरा न प्रकाशित करके भ्रामक टिप्पणियाँ की थीं। नागरिकों के सामने वक्तव्य सही रूप में आयें, इस दिशा का यह प्रयास पूर्ण सफल रहा। यद्यपि वर्तमान उलझे हुए आवेशपूर्ण वातावरण में यह कार्य खतरे से खाली नहीं था, फिर भी वितरण करनेवाले साथियों को दो-चार गालियाँ कहीं कहीं सुननी पड़ीं, लेकिन प्रायः नागरिकों ने उत्सुकता, समर्थन और सराहना का ही भाव प्रगट किया।

विजय या वीरगति

पण्डित की छोटी-सी दूकान है। दो साल हुए गाँव से आया, और शहर में दूध-दही, रबड़ी-मलाई की एक छोटी-सी दूकान खोल ली। इक्कीस-बाईस साल से ज्यादा उम्र नहीं है, और बोली-बानी से नहीं लगता कि अभी शहर की हवा लगी है।

"पण्डित, डेढ़ पाव दूध दे दो। मिट्टी के कुल्हड़ में देना", रोज की तरह मैंने उस दिन भी कहा।

"बैठ जाइये, देता हूँ," कहकर वह तराजू उठाने लगा।

अभी दूध निकाल भी नहीं सका था कि जोर का शोर हुआ। सड़क पर लोग स्टेशन की ओर से भागते हुए दीख पड़े। कई बार आवाज आयी : 'चल गयी, चल गयी'।

पण्डित ने झट बिजली बुझा दी। देखते-देखते सभी दूकानों की बत्तियाँ बुझ गयीं। किसीने कहा कि विद्यार्थियों का एक झुण्ड स्टेशन में घुसना चाहता था। पुलिस ने रोका, और न मानने पर आँसू-गैस के गोले छोड़ दिये गये।

दूकान पर मुझे खड़ा देखकर कई पड़ोसी दूकानवाले आ गये। विषय तो ढूँढ़ना था नहीं, फौरन चर्चा छिड़ गयी।

"आज जुलूस, कल हड़ताल, परसों गोली, और चौथे दिन दनादन गिरफ्तारी। कहीं साईनबोर्ड पर कोल्तार पोता जा रहा है, कहीं दूकान लूटी जा रही है, तो कहीं रेल रोकी जा रही है। आज कितने दिनों से यही चल रहा है," एक ने कहा।

"तुमने नहीं सुना, अभी परसों बहादुरपुर का डाकखाना जला दिया गया, और कल शाम को महादेवजी के मन्दिर के पास पुलिस और विद्यार्थियों में पूरी भिड़न्त हो गयी!" यह दूसरे ने कहा।

थोड़ी देर तक मैं चुपचाप सुनता रहा। फिर पूछा, "यह तो बताओ कि जानते हो, यह सब किसलिए हो रहा है?"

"क्या बतायें, बाबूजी! सुनते हैं विद्यार्थी लोग अंग्रेजी नहीं पढ़ना चाहते। सरकार शायद पढ़ाना चाहती है। इसीको लेकर झगड़ा है। हम लोग न अंग्रेजी जानें, और न अच्छी तरह हिन्दी ही जानें। हम सिवाय पेट के दूसरा कुछ जानते ही नहीं। अभी किसी तरह दिन भर में तीन-चार रुपये कमा लेते हैं, लेकिन यही हाल रहा तो उसके भी लाले पड़ जायेंगे। हल्ला-गुल्ला सुनते हैं तो ऐसा जरूर लगता है कि अपनी भाषा परायी भाषा से अच्छी ही होती है।" ये बातें तीस-पैंतीस साल की उमरवाले दर्जी ने कहीं। बाकी सबने कहा, "ठीक कहता है। यही हाल हम सबका है।"

मैंने फिर पूछा, "अगर सबको ऐसी परेशानी है तो सब लोग मिलकर कुछ करते क्यों नहीं?"

"क्या करने को कहते हैं?" सबने पूछा।

मैंने कहा, "मुहल्ले के सब लोग मिलकर संगठन करो, और किसीकी इधर-उधर की कोई बात मत सुनो। जो कुछ करना हो सब लोग मिलकर सोचो और तय करके करो।"

"बात सही है, लेकिन हर आदमी इतना परेशान और डरा हुआ है कि समझ में नहीं आता, क्या किया जाय। कोई आगे चलने-वाला हो तो लोग पीछे चलने को तैयार हो सकते हैं।" पण्डित ने सोचकर कहा।

मैंने देखा कि ये सब निरक्षर, लेकिन समझ की बातें कर रहे थे। साफ जाहिर था कि हरएक के मन में वही आतंक, वही आफत की आशंका, अभाव से वही असंतोष, और अनीति से वही अधीरता थी। पण्डित और उसके साथियों की ही बात नहीं है, आज जिसे देखिये उस पर एक भय सा छाया हुआ है। हरएक की जुबान पर यही सवाल है : क्या होगा? आखिर, इसका कभी अन्त भी होगा?

स्वतन्त्रता के बीस वर्ष और इस तरह के प्रश्न! लोग किससे पूछ रहे हैं? कौन उत्तर देगा? और, उत्तर है भी किसके पास?

बात यह है कि एक एक करके जन-जीवन के सारे तार टूट रहे हैं। सरकार और कानून का ढाँचा टूट रहा है। राजनीति का महल ढह रहा है। अर्थनीति, शिक्षण, धर्म, और समाज की परम्पराएँ, सभी ध्वस्त हो रही हैं। वस्तुतः पूरी मध्यमवर्गीय जीवन नीति ही टूट रही है। जब चारों ओर ढहने और टूटने का ही दृश्य हो, तो मनुष्य क्या देखकर ढाढ़स रखे, और कैसे आशा करे कि आज की बिगड़ी कल बननेवाली है?

कहाँ हैं देश के नेता? कहाँ है उनकी राजनीति? और, कहाँ है कानूनवालों का बनाया हुआ लम्बा-चौड़ा संविधान? जब यह हालत हो गयी हो कि देश के दल अपने को देश के ऊपर मानने लग गये हों, जब चुनाव पूँजीपतियों और दलपतियों का मिलाजुला खेलवाड़ बन गया हो, जब पार्टियाँ सचमुच पार्टियाँ न रहकर अलग-अलग जातियों और व्यक्तियों के गुट बन गयी हों, जब राजनैतिक जमादारी बहुरूपिये का शृङ्गार बनती जा रही हो, जब मिनिस्ट्री के मोल नेता खरीदे और बेचे जाते हों, जब सरकार में रहते हुए भी सड़क पर जनता को उभाड़नेवाले नाटकों द्वारा मन्त्री और प्रतिनिधि अपनी योग्यता का परिचय देते हों, जब जनता का ध्यान जिन्दगी के बुनियादी सवालों से अलग रखने के लिए लोकतन्त्र के नाम से तरह-तरह के 'स्टंट' रचे जाते हों, जब केन्द्र और राज्य में कुछ-से-कुछ पट्टीदारी चलती हो, और जब लोकतन्त्र नेताशाही और नौकरशाही के हाथों में गिरवी रखा जा चुका हो, तब राजनीति में कोई नीति रह जाती है! फटी बाँसुरी की तरह क्या इस राजनीति में से कोई स्वर और राग निकल सकता है!

कई लोग कहते हैं कि भाषा के प्रश्न पर युवकों का जो आन्दोलन चला है वह भारत की 'अभिनव सांस्कृतिक क्रान्ति' का प्रथम निश्चित चरण है। कितना अच्छा होता अगर सचमुच ऐसा होता! चीन की 'सांस्कृतिक क्रान्ति' में उन्माद और हिंसा भरपूर है, पर उसमें कुछ जीवन दर्शन भी है। कुछ लक्ष्य है, दिशा है। लेकिन हमारे युवकों,

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, २२ दिसम्बर, '६७

और उनके मार्गदर्शक, नामधारी नेताओं के उन्माद के पीछे क्या है! थोथे नारे, बाजारू मूल्य, और अभद्र प्रदर्शनों के सिवाय और क्या है! कहाँ है वह रचनात्मक चित्त, रचनात्मक सम्बन्ध, और रचनात्मक कार्य जो विज्ञान और लोकतन्त्र की भूमिका में सांस्कृतिक नव जागरण के तीन अनिवार्य तत्व हैं!

सोचने की बात है कि देश की यह हालत क्यों हुई! अगर स्वतन्त्रता के बाद योग्य नेतृत्व मिला होता तो भी क्या ऐसा होना अनिवार्य था! निस्सन्देह कल का इतिहासकार पुकार पुकारकर कहेगा कि स्वतंत्र भारत को सही नेतृत्व नहीं मिला। मिले दल जो स्वार्थी सिद्ध हुए। मिले सेवक जो संकुचित सिद्ध हुए। राजनीति ने सरकार से बाहर समाज को नहीं देखा, और रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने सत्ता से बाहर समाज को नहीं देखा। परिणाम वही हुआ जो आज हम अपनी आँखों के सामने देख रहे हैं। जनता ने गुलामी छोड़ी तो मुहताजी स्वीकार कर ली।

सबसे अधिक चिंता की बात यह है कि देश का नागरिक देश के जीवन से अपने को अलग करता चला जा रहा है। विवश होकर वह देश को और अपने भाग्य को उपद्रवियों के हाथ सौंप रहा है। उचित अनुचित का विचार छोड़कर सामने जो है वह उसे स्वीकार कर रहा है। यह 'स्वीकृति' राष्ट्र का सबसे बड़ा संकट है, क्योंकि जब सजग, सक्रिय लोक चेतना और लोकशक्ति सामने नहीं होती तो लोक विरोधी शक्तियों के लिए मैदान साफ हो जाता है। तब विशुद्ध अराजकता, या नंगा फासिस्टवाद, इन दोनों में से कोई मैदान मार सकता है। कौन जाने इन उपद्रवों के बहाने अथवा भाषा या अन्य किसी मोहक नारे की आड़ में संगठित और आकस्मिक उपद्रव द्वारा सरकारी तंत्र को हथिया लेने का 'रिहर्सल' चल रहा हो! अब क्या बचा है जिसे सत्ता लिप्सा नहीं कर सकती!

गांधीजी ने अपने वसीयतनामे में जिस टक्कर की चेतावनी दी है उसके लिए मैदान सज रहा है। देश में 'सर्व' की और 'सर्व की विरोधी' शक्तियों में टक्कर अनिवार्य मालूम होती है। पटना में उस दिन जयप्रकाशजी के प्रति भाषा के प्रश्न को लेकर कुछ नामधारी विद्यार्थियों का जो क्रोध प्रकट हुआ उससे कम से कम सर्वोदय की आँखें अगर अभी खुलना बाकी हों तो अब खुल जानी चाहिए। सर्वोदय को सर्व की बात कहनी है, और सर्व की ही लड़ाई लड़नी है। नागरिक-शक्ति की इस लड़ाई में सर्वोदय या तो विजयी होगा या लड़ते लड़ते वीरगति प्राप्त करेगा। यही उसकी नियति है।

सर्वोदय की अजेय सेना गाँव गाँव में बिखरी हुई है। उसे संगठित करना उसका संकल्प है। अगर कहीं एक भी सघन क्षेत्र में नागरिक की संगठित शक्ति दिखायी दे जाय, तथा दलों की पुकार से अलग उसकी हल्की भी ललकार सुनायी दे जाय, तो देशव्यापी छल और प्रपंच का, स्वार्थ और षड्यंत्र का, जिसे हमने भूलकर लोकतंत्र की राजनीति मान रखा है, पर्दा फटते देर नहीं लगेगी। यही काम करना है। समय इसके लिए बहुत कम है, लेकिन अभी है। पंडित और उसके साथी प्रतीक्षा कर रहे हैं। ●

इस अंक में पढ़ें—

अगले अंक का आकर्षण—

२२ दिसंबर, '६७
वर्ष २, अंक १०]
[१८ पैसे

सब हमारे ही नाम में

पंडित परशुराम ने जिस जगह नौकरी शुरू की उसी जगह बूढ़े हो गये। गर्मी में मिले थे तो कह रहे थे कि एक दिन वह भी था जब वह बरगद के नीचे बोरा बिछाकर बैठते थे, और बहुत कोशिश करने पर मुश्किल से दो-चार बच्चे थोड़ी देर के लिए आ जाते थे। कभी-कभी पंडितजी ३४ वर्षों की अपनी रामकहानी बड़े प्रेम से सुनाते हैं। आज भी गाँव के दस-बीस लोग शाम को उनके स्कूल पर—अब वह मिडिल स्कूल है, और पंडितजी उसके हेडमास्टर हैं—आ जाते हैं। पंडितजी खेती-बारी, गाँव के रगड़े-झगड़े, और तिलक-विवाह से लेकर देश-दुनिया की भरपूर चर्चा करते हैं, और एक-एक बात खूब समझाकर कहते हैं। जब से रामधनी कलकत्ता से छुट्टी पर घर आया है, वह अक्सर वहाँ की बातें सुनाता है। इन दिनों हिन्दी की चर्चा में सबसे ज्यादा मजा कालेज में पढ़नेवाले विद्यार्थियों को आता है जो कालेज बन्द होने के कारण घर आये हुए हैं। घर पर कोई काम है नहीं, इसलिए शाम होते ही सब स्कूल पर इकट्ठा हो जाते हैं। पंडितजी लकड़ी का एक बड़ा-सा कुंदा जला देते हैं और उसके चारों ओर उनका 'ग्राम महाविद्यालय' शुरू हो जाता है।

रामधनी ने कहा, "पंडितजी, आसमान का हाल जाना जा सकता है, लेकिन कलकत्ता में कल क्या होगा, कोई नहीं कह सकता! हम लोग सुबह सोकर उठते हैं तो समझते हैं कि एक नया दिन सकुशल से बीता।"

पंडितजी—"धीरे-धीरे पूरा देश कलकत्ता बनता जा रहा है। इतना बड़ा देश है तो हर दिन कोई-न-कोई सवाल पैदा होता ही रहेगा, लेकिन आश्चर्य तो यह है कि कोई ऐसा सवाल नहीं है जो आसानी से हल हो जाय। हर फोड़ा नासूर बन जाता है। राजनीति तो हर जगह घुसी हुई है।"

रामधनी—"लेकिन, पंडितजी, बंगाल के छोटे लोगों पर—विशेष रूप से आफिस के बाबुओं और कारखाने के मजदूरों पर—कम्यूनिस्ट लोगों का असर है। वे सोचते हैं कि यह पार्टी गरीबों की बात कहती है, उनके लिए लड़ती है।"

जनता का प्रतिनिधित्व

सोहन—"यह तो बताओ कि कौन पार्टी गरीबों की बात नहीं करती ? सब यही कहते हैं कि देश का भला करने, गरीबों का भला करने के ही लिए उनकी पार्टी बनी हुई है। क्या कोई यह भी कहता है कि उसने गद्दी पर बैठने के लिए पार्टी बनायी है ?"

पंडितजी—"रामधनी, सोहन ने पते की बात कही है। गरीब की गरीबी और जवान की जवानी, बारूद है जो आँच पाते ही भड़क उठती है। बस, इतना जानने की जरूरत है कि कब कितनी आँच दिखायी जाय। अच्छा विनोद, तुम बताओ, तुम्हारे विश्वविद्यालय के यूनियन में आग किसने लगायी ?"

विनोद—"विद्यार्थियों ने।"

सोहन—"विद्यार्थियों ने ? तो, यूनियन किसका है ?"

विनोद—चाचा, हमारे यूनियन पर कांग्रेसी विचार के विद्यार्थियों का कब्जा है। जब विश्वविद्यालय में हिन्दी का आन्दोलन छिड़ा तो संयुक्त समाजवादी, जनसंघी विचार के विद्यार्थी सामने आये, और दो ही चार दिनों में उनकी ताकत बढ़ गयी। नतीजा यह हुआ कि सबसे पहले उन्होंने यूनियन के दफ्तर, कैन्टीन और डाकखाने में आग लगायी। इसमें तो पूरी-पूरी राजनीति थी, और कुछ नहीं।"

रामधनी—"कुछ भी हो, हिन्दी का सवाल तो अपनी जगह है ही।"

पंडितजी—"रामधनी, सरकार कोई हो, बंगाल में गरीब का सवाल, जैसा था, वैसा है ; बल्कि शायद पहले से भी खराब है ; क्योंकि बहुत-से मजदूर बेकार हो गये हैं, और चावल पाँच रुपये किलो तक बिक रहा है। उसी तरह अगर दूसरी भाषाओं के लोगों ने अपनी इच्छा से हिन्दी को स्वीकार न किया तो हिन्दी का सवाल आज जहाँ है वहाँ रह जायगा। कहीं इस तरह भी कोई सवाल हल होता है ?"

विनोद—"तो क्या इसका यह अर्थ है कि कुछ लोगों की जिद की खातिर एक विदेशी भाषा को बर्दाश्त किया जाय ?"

पंडितजी—"नहीं। पढ़ाई पढ़नेवालों की भाषा में हो, और सरकार का राजकाज जनता की भाषा में हो। अगर इतना हो जाय तो अंग्रेजी का उसी जगह इस्तेमाल होगा, जहाँ उसके बिना काम नहीं चलेगा। इस सवाल को हल करना मुश्किल नहीं है—अगर हल करने की नीयत हो तो—लेकिन असली सवाल दूसरा है। वह है कि अब हमें यह मानकर चलना चाहिए कि भारत एक मिला-जुला देश है। इसमें हिन्दीवाले हैं, अंग्रेजीवाले है, और दूसरी भाषाओं वाले हैं। अनेक भाषाएँ, अनेक धर्म, अनेक जातियाँ, अनेक विश्वास, अनेक विचार, और अनेक हित हैं। इनमें कौन किससे दबकर रहने को तैयार है ? क्या ऐसी हालत में देश की भलाई इसमें नहीं है कि वही बात सही मानी जाय जो सबको मान्य हो।'

विनोद—"बात ठीक तो लगती है, लेकिन जब जनता के नाम में नारा लगता है तो रहा नहीं जाता। हम लोग तो पहले ही दिन निकल पड़े।"

पंडितजी—"यही तो बात है। दंगा हो, रेल जलायी जाय, दुकान लूटी जाय, आदि जो कुछ होता है सब हम जनता और देश के ही नाम में होता है। आप अंग्रेजी पर अलकतरा पोतते हैं, मद्रासवाले हिन्दी पर पोतते हैं, और दोनों मिलकर दुनिया में भारत का मुँह काला करते हैं। क्यों, है ऐसी बात या नहीं ?"

मोहन—"ठीक कहते हैं, पंडितजी ! जनता, जनता, बस हर जगह जनता का ही जप होता है, लेकिन जनता के जो दुःख हैं उन्हें सुनने और दूर करने की फुर्सत किसे है ? नये-नये झगड़े जनता के नाम में खड़े होते रहते हैं। कई बार तो जनता जानती भी नहीं कि झगड़ा है किसलिए ?" •

सूचना : "गाँव की बात" 'भूदान-यज्ञ' के परिशिष्ट के रूप में हर महीने दो बार प्रकाशित होती है। आगे यह स्वतंत्र पत्रिका में प्रकाशित हो, इसकी कोशिश हो रही है। चूँकि इस नाम से दूसरी पत्रिका कहीं से प्रकाशित होती है, इसलिए इसका नाम शीघ्र ही बदलनेवाला है। पाठक हमें क्षमा करेंगे। —सम्पादक

आप सब ठग हैं

बड़े व्यापारियों की एक टोली व्यापार के लिए एकसाथ घर से निकल पड़ी। बहुत दूर का रास्ता तय करना था उनको। रास्ते में डकैतों का भी डर था, इसीलिए उन्होंने बड़े तड़के निकलकर शाम होने के पहले ही लौटने का कार्यक्रम बनाया। उसी मुताबिक लोग व्यापार का काम खतम करके सबेरे लौटनेवाले थे। बीच में उनको एक छोटे राज्य से गुजरना था और उसी राज्य में उस समय बड़ा अकाल पड़ा था।

सूरज डूबने में अभी काफी देर थी, इसलिए वे आराम करने के लिए उसी राज्य के सुन्दर तालाब के तीर पर एक बड़े पेड़ के नीचे बैठे। बैठे, तो गप करने लगे। गप तो व्यापारियों की ही थी, तो वह सहज ही व्यापार के बारे में ही थी। किसको कितना नफा हुआ, यह हिसाब होने लगा। अपने को दूसरों से काबिल प्रमाणित करने के लिए मुनाफे के आंकड़े बढ़ते जा रहे थे। जो व्यक्ति पलड़े में नीचे पड़ जाता था उसके मन में ईर्ष्या पैदा होने लगी और आखिर में जीतनेवालों पर ठगने का इलजाम लगाया गया। इससे झगड़ा पैदा हुआ और जोर का हल्ला मचा। इतने में ही उस राज्य का राजा अपनी अकाल से पीड़ित प्रजा की हालत देखते हुए उसी रास्ते से निकल पड़ा और शोर सुनकर व्यापारियों के पास गया। राजा को ताज्जुब हुआ कि वे लोग क्यों झगड़ रहे थे। पूछने पर राजा को पता लगा कि वे लोग एक-दूसरे पर ठगी का इलजाम लगाने में तत्पर हैं। इन लोगों में कौन वादी और कौन प्रतिवादी, यह भी पता नहीं चलता था। राजा सोचने लगा कि इन लोगों का झगड़ा कैसे मिटाया जाय। आखिर उसको एक तरकीब सूझी और बोला—आप सब शान्त हो जाइये। मैं अभी पांच मिनट में इसका फैसला कर देता हूं। आप सब शान्त रहें। सब शान्त हो गये। तब राजा बोला—आप सब लोग अपनी अपनी फरियाद कागज पर लिखकर मुझे दे दीजिये। हर एक व्यक्ति ने अपने बयान में दूसरे को ठग या चोर प्रमाणित करके लिखकर अपना-अपना कागज राजा के हाथ में दे दिया। राजा ने सब कागज एक-एक करके पढ़ा और आखिर में बोला—देखिये, आप सब लोग चोर या ठग हैं। राजा की राय सुनकर सबको गुस्सा आ गया और कहा—क्या आपकी राय में वादी भी चोर और प्रतिवादी भी चोर है? तब राजा बोला—आप लोगों में कौन वादी है और कौन प्रतिवादी? अगर आप वादी हैं तो दूसरे आपको प्रतिवादी कहते हैं। आप दूसरे को चोर कहते हैं तो दूसरे भी आपको चोर कहते हैं। आपकी बात सच है तो दूसरे की बात क्यों झूठ मानी जाय? इस पर सब चुप रहे। राजा बोला—अच्छी बात है। आप अभी अपनी निर्दोषता प्रमाणित करके बयान लिखें। इस पर फिर सब राजी हो गये और अपनी-अपनी सिफतों का बयान विस्तार से लिखकर राजा को दे दिये। राजा पढ़कर बहुत खुश हुआ और बोला—धन्यवाद। आप सबके सब महात्मा हैं। ऐसे ही साधु-महात्मा आप सब बने रहें। अभी आप घर जाइये और मिल-जुलकर रहिये। राजा की इस बात पर सबका मुंह उतर गया और उनके चेहरे पर नाराजगी झलकने लगी। एक व्यक्ति अपनी नाराजगी जाहिर करते हुए बोला—अजी, मैं साधु हूं इसलिए क्या सबके सब साधु हो गये? राजा ने तुरत जवाब दिया—क्यों नहीं? अगर आप अपने बयान में ही सबको चोर प्रमाणित करना चाहेंगे तो दूसरे भी चोर या साधु नहीं होते, यह सबक आप पहले सीख लें। अपनी कृति से ही सब प्रमाणित होगा। अगर आप सब साधु हैं तो मेरे इस राज्य की भूखी प्रजा को थोड़ी मदद दें। आप सब तो धनवान हैं और काफी कमाये भी हैं। दो-चार रुपये इन गरीबों के लिए दान दें। राजा की यह बात सुनते ही सब व्यक्ति छलांग मारकर उठ पड़े और चौतरफा भागकर गायब हो गये!

राजा हंसकर अपने आप कहने लगा—बयान से तो अपने को साधु प्रमाणित करने के लिए इन लोगों ने कुछ भी बाकी नहीं रखा, लेकिन कृति में अपने को कंजूस प्रमाणित करने में थोड़ा भी नहीं हिचकिचाये।

—राखालचन्द्र दे

धरती की प्यास , पानी का प्रवाह

"यह कुआँ मेरा है। इसमें पानी की कमी नहीं है। हम कुँड से पानी निकालते हैं। लेकिन कितना निकालेंगे ? कुएँ के ऊपर से बिजली की लाइन गुजरी है, अगर मोटर मिल जाय और बिजली लग जाय तो हमारे लिए पानी की कमी नहीं पड़ेगी।" मुझसे एक किसान ने कहा।

"यह नदी है। इसमें सालभर पानी रहता है। इसके दोनों तरफ हमारे गाँव की जमीन परती पड़ी है। पिछले सूखे में नदी के दोनों तरफ की फसल सूख गयी थी। हम चाहते हैं कि हमारे लिए नदी से पानी उठाने के लिए मोटर का इन्तजाम हो जाय।" दूसरे गाँव के एक किसान ने कहा है।

"हम लोग तो यह चाहते हैं कि हमारे खेतों में जगह-जगह कुओं का इंतजाम हो जाय तो हम पानी निकाल लेंगे।" तीसरे गाँव में सुनने को मिला।

"यह बाँध हम लोगों ने अपने सामूहिक श्रमदान से बनाया है। यह नदी पहाड़ से निकली है। सालभर पानी बहता रहता है। जब से यह बाँध बना है तब से हम २५० एकड़ जमीन की सिंचाई कर लेते हैं।" चौथे गाँव में सुना।

"इस कुएँ को बनाये दो वर्ष हुए। जब से यह कुआँ बनाया है पैदावार दूनी हो गयी है। खादीग्राम से कुआँ बनाने में मदद मिली थी। कुएँ में लगाने के लिए रिंग मिल गया था। इसका पैसा नकद नहीं दिया था। थोड़ा-थोड़ा करके दो फसल में वापस कर दूँगा।" पाँचवें गाँव में सुना।

"खादीग्राम के एक कार्यकर्ता ने हमें बताया था कि गाँवभर के लोग मिलकर सिंचाई के लिए पानी का इंतजाम करना चाहें तो उन्हें खादीग्राम की मदद मिल सकती है। हम गाँवभर के लोग तैयार हो गये। खादीग्राम से रिंग मिल गया। हम लोगों ने नदी के किनारे यह कुआँ बनाया है। इससे हमें सालभर पानी मिलेगा। यह जो बाँध आप देखते हैं, उसे हम लोगों ने श्रमदान से बनाया है। रिंग का पैसा खादीग्राम को वापस कर देंगे। बस अब मोटर आ जाय तो हमारी कंगाली, गरीबी दूर हो जाय।" छठे गाँव में सुना।

खादीग्राम के एक कार्यकर्ता ने बताया, जो इस प्रकार है—

"खादीग्राम के पास के दो प्रखण्डों—झाझा और लक्ष्मीपुर—में पैदावार बढ़ाने की दृष्टि से हमने एक योजना बनायी है। ग्रामदानी गाँवों की प्रमुखता होगी। उपज बढ़ाने के लिए सात काम हमने जरूरी माने हैं—पानी, बीज, खाद, दवा, औजार, प्रशिक्षण और सेवा (सर्विसिंग)।

पानी—पुराने कुओं को गहरा करने, ताकि उसमें पानी पर्याप्त हो सके। पहाड़ों में से जो झरने निकले हैं, उनके पानी का उपयोग। अभी तक वह पानी नदियों में बह जाता है। आगे उस पानी का उपयोग सिंचाई में हो।

गाँववालों को हम सिमेंट रिंग देंगे, वाटररहेंट या मोटर (बिजली या डीजल का) उपलब्ध कराने की योजना है। आहर और तालाब भी सिंचाई के काम आयगे।

एक कुएँ में लगभग २० से २५ रिंग लगते हैं। एक रिंग की कीमत ४० रुपये आती है। इस प्रकार एक कुएँ पर ४०×२०=८०० रुपयों के रिंग लग जाते हैं। रिंग का पैसा नकद न लेकर किस्तों में लिया जायगा। इसका आधा पैसा तो सरकार से मिल जायगा और गाँववाले को आधा ही देना पड़ेगा।

बना-बनाया रिंग मिल जाने से गाँव के लोगों को कुआँ बनाने की परेशानी बिलकुल खत्म हो जाती है। गाँववाले कुआँ खोद लेते हैं और रिंग ले जाकर कुएँ में डाल देते हैं।

बीज—गाँव के लोगों को अच्छा बीज नहीं मिल पाता है। इसलिए वे अपने खेत का ही बीज बराबर बोते चले जाते हैं। इसके कारण पैदावार में काफी कमी आ जाती है। हमने तय किया है कि अच्छा बीज इस क्षेत्र में दिया जाय। इसके लिए इस साल हम लगभग ५० हजार रुपये का बीज-गोदाम बनायेंगे। अभी धान का बीज खरीदना शुरू कर दिया है। किसान बीज का दाम किस्तों में चुकायेंगे। गरीबों को आधे दाम में ही बीज मिल जाय, इसकी सहूलियत दी जा सकती है। खादीग्राम की खेती मुख्य रूप से बीज की तैयारी के लिए करेंगे।

औजार—गांव में वही पुराने ढंग से, पुराने औजारों से खेती हो रही है। उन्हें नये और सुगम औजार नहीं मिल पाते हैं। हमारा जो सरंजाम है, उसमें खेती के औजार बनें, इस दृष्टि से उसमें काम का संयोजन कर रहे हैं। कुछ औजार तो यहीं बन जायेंगे, और बाकी औजार बाहर से भी मँगाने का प्रयास होगा।

हमने आपको सात कामों में तीन कामों का जिक्र किया। बाकी चार काम बाद में शुरू करेंगे। पहले प्रशिक्षण का कार्य होगा। ग्रामसभाओं की कार्य-समितियों के सदस्यों के शिविर एक सप्ताह से तीन सप्ताह तक के होते रहेंगे। उन शिविरों में उन्हें अन्य कामों के अलावा खेती के नये तरीकों, नये औजारों, वैज्ञानिक खेती की जानकारी दी जायगी। गांव के युवकों का प्रशिक्षण कुछ ज्यादा समय का होगा। ये युवक गांव के विकास में मुख्य भाग लेंगे।

हां, हमने यह तय किया है कि जो गांव हमारी इस योजना में शामिल होंगे उन्हें सदस्यता-शुल्क देना पड़ेगा। यह सदस्यता शुल्क ५ रुपये से १०० रुपये तक हो सकता है।"

"आपने कहा कि इन सब कामों में ग्रामदानी गांवों को प्राथमिकता दी जायगी, ऐसा भेद आप क्यों मानते हैं?" मैंने पूछा।

वे बोले, "हम आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन चाहते हैं। हमारी रुचि सिर्फ आर्थिक विकास में नहीं है। आर्थिक विकास का काम तो सरकार कर ही रही है। ग्रामदानी गांवों ने चूंकि अपनी जमीन की मालिकी ग्रामसभा को सौंपी है, २० कट्ठे में एक कट्ठा जमीन भूमिहीन को दी है और सब मिलकर गांव के विकास का काम करते हैं, इसलिए हम मानते हैं कि गांव के लोग अपने सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन लाने के लिए तैयार हैं। मनुष्य के सम्बन्ध न बदलें और विकास हो जाय तो उस विकास का भोग सब लोग नहीं कर सकेंगे। विकास का लाभ कुछ को मिलेगा और कुछ उससे वंचित हो जायेंगे।

इसीलिए हमारी योजना के तीन मुख्य अंग हैं—उत्पादन बढ़े, श्रमिकों को अतिरिक्त उत्पादन में मजदूरी के अलावा हिस्सा मिले और किसान की बिरादरी कायम हो।"

मैंने कहा—"आपसे बातचीत करके मुझे भरोसा हुआ। हर जगह इसी प्रकार की योजना बनायी जाय तो कितना अच्छा हो।" मैंने उन्हें नमस्कार किया और यहीं हमारी बातचीत समाप्त हुई। ●

२२ सितम्बर, '६७

धारणा···धारणा···धारणा

दिल्ली जा रहा था। प्रथम दर्जे का टिकट लिया। गाड़ी आयी। अपने डिब्बे में पहुँचा। बैठने की जगह नहीं थी। एक सीट पर एक सज्जन लेटे हुए थे। मैंने उन्हें उठाना अशिष्टता माना। मैंने यह मान लिया कि वह सज्जन स्वयं ही मुझे खड़े देखकर बैठने के लिए कहेंगे। मैं खड़ा रहा। गाड़ी एक स्टेशन, दो स्टेशन, तीन स्टेशन पार करती चली गयी और मैं शिष्टाचारवश खड़ा रहा।

जब काफी देर हुई तो मुझे खीझ होने लगी। मन ही मन मैं उस आदमी को बुरा-भला कहने लगा—कितना असभ्य है, अशिष्ट है, गँवार है, जरा भी तमीज नहीं रखता, प्रथम दर्जे में यात्रा करने चला आया!

वह आदमी उठा, सीट के नीचे से पानी लिया औ पीया। कुछ पानी उसके बिस्तर पर गिरा और कुछ नीचे। पानी पीकर फिर वह लेट गया। मैंने कहा, क्या गँवारपन है! मेरी नाराजगी बढ़ती जा रही थी। लेकिन बावजूद नाराजगी के अपनी नाराजगी प्रकट होने देना नहीं चाहता था। सोचा, जब सामनेवाले को इतनी भी तमीज नहीं है कि बैठने की जगह दे दे तो उससे क्या बात की जाय!

इतने में वह आदमी धीरे से उठा। लड़खड़ाता हुआ बाथरूम की ओर बढ़ा। दरवाजे पर पहुँचते-पहुँचते वह गिर पड़ा। हम दो-तीन आदमियों ने उसे उठाया और उसको सीट पर लिटा दिया। मैंने सोचा कि वह शायद अस्वस्थ हो गया है। किन्तु दूसरे यात्रियों ने बताया कि वह अस्वस्थ नहीं है, 'बल्कि अन्धा आदमी है।

अब मैं सोचने लगा कि उस व्यक्ति के बारे में मैं कैसी गलत धारणा बनाये हुए था।

इसी प्रकार आदमी अनजान में कैसी-कैसी धारणाएँ बनाता रहता है। अगर स्थिति का भान हो जाय तो आदमी गलत धारणाओं से बचता रहे। इसीलिए जरूरी है कि परिस्थिति की स्पष्टता होती रहे।

गाँव की योजना में गाय

[सर्व सेवा संघ की कृषि गो-सेवा समिति के तत्वावधान में गत २८ से ३० अक्तूबर तक बम्बई में एक अखिल भारतीय गो-संवर्द्धन सम्मेलन हुआ था। उस सम्मेलन में पूरे भारत के ३०० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने सम्मेलन के खुले अधिवेशन का उद्घाटन किया। अधिवेशन ने सर्वसम्मति से जो प्रस्ताव स्वीकार किया, उसका सारांश हम नीचे प्रकाशित कर रहे हैं। —सं०]

हमारे देश की अर्थ-व्यवस्था ग्राम-प्रधान है। ग्राम-प्रधान अर्थ-व्यवस्था में गाँव के पशुओं का, और पशुओं में भी गाय और बैल का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

गाँव की खेती में गाय और बैल की जो उपयोगिता है, उसको ध्यान में रखते हुए हमारे देश के सांस्कृतिक नेताओं ने गाय को एक पवित्र और न मारने लायक पशु माना। यह सही है कि गाय के प्रति कुछ लोगों की धार्मिक भावना जुड़ी हुई है। गाय और बैल द्वारा समाज को जो लाभ पहुँचता है, उसको ध्यान में रखने से ही गाय के प्रति धार्मिक भावना बनी है। ऐसे समाजोपयोगी पशु का पूरे देश में वध बन्द कराया जाय, यह भारत की आत्मा की अपेक्षा है।

भारत का संविधान बनानेवालों ने गाय की आर्थिक और सामाजिक उपयोगिता को देखते हुए संविधान की ४८ वीं धारा के अनुसार गाय को संरक्षण देने की व्यवस्था की है।

ऊपर की बातों को ध्यान में रखते हुए अखिल भारतीय गो-संवर्द्धन सम्मेलन ने संपूर्ण गोवध-बन्दी की माँग रखी है। सम्मेलन की यह भी माँग है कि यदि इसके लिए संविधान में संशोधन करना आवश्यक हो तो वह भी किया जाय।

सम्मेलन ने यह भी जाहिर किया है कि सिर्फ कानूनी संरक्षण मिलने से ही गाय की रक्षा नहीं हो सकती है। गाय की रक्षा सचमुच तभी हो सकती है, जब कि देश गाय की रक्षा के लिए हर प्रकार की जिम्मेदारी उठाने को तैयार हो।

गाँव के किसानों को भी यह बात समझ लेनी है कि आनेवाली कई पीढ़ियों तक उन्हें अपने कामकाज में पशुओं का उपयोग करते रहना है।

किसान के लिए गाय पालना एक घाटे का काम न हो, इसके लिए जरूरी है कि उसे परतेवाली गाय पालने में मदद मिले। परतेवाली गाय की प्राप्ति के लिए नीचे लिखे उपाय करने होंगे —

किसान की उन्नति होती चले इसके लिए यह जरूरी है कि वह ऐसी ही गाय पाले, जिससे उसे ज्यादा दूध मिले और ऐसा बछड़ा प्राप्त हो, जो हल जोतने और गाड़ी खींचने के भी काम आ सके। जो किसान मिली-जुली खेती करते हैं, उन्हींको ऐसी गाय पालने में परता पड़ेगा।

बम्बई के बाद जयपुर में नवम्बर में राजस्थान गो-सेवा सम्मेलन हुआ। सम्मेलन में नीचे लिखे सुझाव स्वीकार हुए —

१—हर पंचायत में पंचायतों द्वारा गो-संवर्द्धन के लिए सामूहिक कार्य हो।

२—गाँवों में गोचर-भूमि की व्यवस्था हो।

३—ग्राम-पंचायतें गोचर-भूमि का प्रबन्ध करें और उसके लिए गोपालकों से कर भी लें।

४—यदि गाँव में गोचर-भूमि न हो तो गाँव के लोग मिलकर अपनी-अपनी भूमि में से कुछ हिस्सा देकर गोचर-भूमि का निर्माण करें।

५—बेकार साँडों को बधिया कराया जाय।

६—गाँवों में हरा चारा और दाना मिलने का प्रबन्ध हो।

बिहार-दान हो

विनोबाजी पूसा रोड में हैं। वे यद्यपि कुछ बोलते नहीं, तथापि दो शब्दों की याद दिलाते हैं : 'तूफान' और 'छः महीने।' छः महीने (उनके आने के बाद) तो कब के बीत गये। आज दुनिया में जो उथल-पुथल चल रही है, उसका असर हमारे देश पर कैसा पड़ रहा है, यह देखने-समझने की चीज है। भारत में स्वराज्य हुए बीस साल हुए। आजादी-प्राप्ति के दिनों के त्याग और लगन की याद आज भी आती है। आज की स्थिति देखकर मन दुःखी होता है। कुछ दिन पहले पश्चिम बंगाल के नक्सालबाड़ी आदि तीन प्रखण्डों में भूमि-समस्या के समाधान को लेकर काफी खून-खराबा हुआ। यद्यपि मैं अहिंसा के मार्ग पर चलने का प्रयत्न करता हूँ, तथापि आज देश में हो रहे शोषण, अन्याय, गरीबी को मिटाने में होनेवाले खूनी क्रान्ति का विरोध नहीं करूँगा (यदि आज का अन्याय नहीं मिटा तो)। अन्याय के निवारण के लिए प्रेम, शान्ति के अस्त्र अमोघ हैं।

महात्मा गांधी ने कहा था कि भारत का स्वराज्य गाँव-गाँव के राज्य के आधार पर होगा। पर आज तो गाँव टूटे-फूटे हुए हैं। आज उनमें संगठन नहीं है। ग्रामदान गाँव की शक्ति को संगठित करता है, बिखरने से बचाता है। आज देश में भ्रष्टाचार व्याप्त है। गाँव का संगठन बनेगा तो यह भ्रष्टाचार मिटेगा। विधायक रचनात्मक काम करनेवाली जनशक्ति ग्रामदान से निकलती है। राज्य पर निर्भर रहने-वाली, घेराव, प्रदर्शन करने, नारे लगानेवाली जनशक्ति अन्ततोगत्वा जनता की शक्ति को सरकार के आश्रित करती है। जब लोग मिलकर काम करेंगे अपना स्वार्थ थोड़ा छोड़ेंगे तो लोकशक्ति बनेगी। यह लोकशक्ति कानून के जोर से पैदा नहीं की जा सकती है। यह शक्ति विचार से बन सकती है।

ग्रामदान में व्यापक स्वार्थ और लोकशक्ति दोनों हैं। गांधीजी ने स्वराज्य की लड़ाई के समय हमें त्याग का पाठ पढ़ाया था। उस त्याग से जो शक्ति पैदा हुई, उसके आगे झुककर अंग्रेज भारत छोड़कर गये। विकेन्द्रित लोकतान्त्रिक 'समाजवाद' और 'सर्वोदय' दोनों एक-दूसरे के नजदीक हैं। फर्क है कि सर्वोदय राज्यसत्ता हाथ में नहीं लेता, वरन् लोकहृदय में प्रवेश कर समाज की समस्याओं को सुलझाता है। जनता जो कुछ करती है कानून उसे मान्यता देता है, यह है सर्वोदय का रास्ता। ग्रामदान व्यक्तिगत मालकियत के स्थान पर ग्रामसभा की मालकियत निर्माण करता है। ग्राम-सभा गाँव की शक्ति का प्रतीक है। जमीन का एक हिस्सा दूसरे को देने से समाज को जोड़नेवाली शक्ति बनती है। छीनने से समाज की शक्ति टूटती है। दान की महिमा संसार के सभी धर्मों में है। दान-धर्म इस अर्थ में है कि इसमें समाज को धारण करने की शक्ति है। आज विज्ञान ने उन्नत बीज, खाद आदि के रूप में जो वरदान समाज को दिया है, ग्रामसभा उसका उपयोग करे। ग्रामकोष ग्रामसभा की पूँजी है, किसी दूसरे की नहीं। गाँव में फूट न पड़े, इसलिए सर्वसम्मत निर्णय का विधान है।

२ अक्तूबर '६८ तक बिहार-दान करने का संकल्प लिया गया है। बिहार-दान के बाद भी तीन-चार वर्षों में लोक-शिक्षण के द्वारा नयी राजनीति, समाजनीति, अर्थनीति, शिक्षानीति का निर्माण करना है। जनसंख्या के हिसाब से बिहार भारत का दूसरा प्रदेश है, पहला है उत्तर प्रदेश। बिहार को ऐतिहासिक गौरव प्राप्त है। उस बिहार के संकल्प की पूर्ति यदि अगले दस महीनों में हो जाय तो नव-निर्माण के लिए एक अपूर्व शक्ति प्रकट होगी।

क्रान्ति का बिगुल लेकर आप गाँव-गाँव में जायें और गाँव की शक्ति जगायें। इससे भारत की सोयी हुई शक्ति जागेगी। भारत में विविधता में एकता का जो गुण है उसे ग्राम-दान द्वारा प्रकट कीजिये।

बेगूसराय, मुंगेर, बिहार
१०-१२-'६७ [श्री जयप्रकाश नारायण के भाषण से]

बिहार-दान का प्रयत्न

२ अक्तूबर १९६८ तक बिहार-दान हो जाय, इसकी कोशिश बिहार में चल रही है। कई जिलों में सघन प्रयत्न शुरू है। इस समय श्री जयप्रकाश नारायणजी पूरे प्रदेश का दौरा कर रहे हैं।

सभी जिलों में जिला-दान की योजना बन रही है। २३ और २४ जनवरी को पटना में सभी राजनीतिक पार्टियों, रचनात्मक संस्थाओं तथा जिला सर्वोदय-मंडलों की एक बैठक बुलायी गयी है, जिसमें बिहार-दान की चर्चा होगी।

कोई मेरा शत्रु नहीं

[श्री पैन किलसडांक अपने को अमेरिका के औसत नागरिक बताते हैं। राष्ट्रपति जानसन के नाम लिखे अपने पत्र में वियतनाम में अमेरिका द्वारा किये जा रहे हिंसक और अमानवीय कार्य की निन्दा की है। उस पत्र की कुछ बातें हम यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं।—सं०]

मनुष्य जीवन में सभी काम अपनी अंतरात्मा के अनुसार करता है। अंतरात्मा ही हमारी स्वतंत्रता की निशानी है। मेरी अंतरात्मा मुझे चुप नहीं रहने देती। मेरी सरकार वियतनाम में जो कुछ कर रही है, उसके कारण मैं लज्जित हूँ।

मैं उन बहुत-से अमेरिकी नागरिकों में से हूँ, जो यह मानते हैं कि अमेरिका का वियतनाम में युद्ध करना गलत है। मैं सरकार की किसी भी धमकी से विवश हो, इस मारकाट में अपना सहयोग नहीं दे सकता। मुझे अपनी अंतरात्मा के साथ जीना है। जिसे मैं अपने बंधु की हत्या मानता हूँ उसमें अपनी सरकार से सहयोग करना मेरे लिए आध्यात्मिक हनन के समान है।

मैं यह मानता हूँ कि अमेरिका की वियतनाम में मध्यस्थी अन्यायपूर्ण है। अब मुझे क्या करना चाहिए? मैंने चुनाव में अपना मत ऐसे व्यक्ति को दिया था, जो यह कहता था कि एशिया के मामले एशिया स्वयं ही सुलझाये। किन्तु अब वह प्रतिनिधि, जिसे मैंने चुना था, ऐसी नीति अपना रहा है जिसे अंतरात्मा अवैध तथा अनैतिक कहती है। क्या इसके बाद भी मैं किसी दूसरे नेता का विश्वास कर सकूँगा?

मैं यह मानता हूँ कि अमेरिकी सेना अवैध रूप से वियतनाम में घुसी है। वह वहाँ जो अत्याचार कर रही है, उससे अनगिनत लोग चिल्ला रहे हैं। संसार का एक धनाढ्य तथा शक्तिशाली राष्ट्र एक छोटे-से अविकसित राष्ट्र को बड़ी निष्ठुरता तथा हिंसा से मिटा रहा है। जिन लोगों को हम अपना सकते थे, उन्हींको हम मार रहे हैं, विकलांग कर रहे हैं। एक एक गाँव का ध्वंस कर रहे हैं। मेरी तरह कई अमेरिकी नागरिक इस युद्ध के विरुद्ध हैं। इस संहार को रोकने के लिए मैं क्या कर सकता हूँ?

हमारी अवैध बमबारी से जो वियतनामी बालक घायल होता है, उसके लिए मैं दवाई भेजने में असमर्थ हूँ। इसका कारण यह है कि लड़का उत्तर वियतनाम में रहता है, उसके माँ-बाप राष्ट्रीय मुक्ति-दल के सदस्य हैं। मेरा धार्मिक विश्वास यह कहता है कि हम सब भाई हैं। एक पिता की संतान हैं। मेरी अंतरात्मा कहती है कि वह तड़पता हुआ घायल बालक अथवा विकलांग वियतनामी औरत मेरी शत्रु नहीं है। अपनी जन्मभूमि का अमेरिका से बचाव करने के लिए लड़नेवाला वियतकांग सैनिक भी मेरा शत्रु नहीं है। मैं यह मानता हूँ कि हम सब एक मानव-परिवार के सदस्य हैं।

मुझसे जो कर वसूल किया जाता है उसका अस्सी प्रतिशत पैसा इस युद्ध पर खर्च हो रहा है। एक ओर तो अनगिनत राशि इस मारकाट पर खर्च हो रही है, दूसरी ओर कई भूख से तड़प रहे हैं। कई परिवार बेघर हैं। यदि मैं कर देने से इनकार करता हूँ तो मुझसे बिना पूछे ही बलपूर्वक लिया जाता है। इसके लिए मैं क्या कर सकता हूँ?

यदि अमेरिकी नागरिक को अपनी सरकार की निंदा करने का अधिकार है तो वह केवल बातों तक ही सीमित है। यदि कोई व्यक्ति सरकार की इस खूँखार योजना से असहयोग करता है तो सरकार तुरत ही उस पर सामाजिक तथा आर्थिक दबाव डालती है। अमेरिकी नागरिक आज इसलिए जेल जाता है कि वह अपनी सरकार की गलत नीति का विरोध करता है। आज जिस प्रकार अमेरिका अपनी सारी शक्ति से इस मारकाट में जुटा हुआ है वैसे किसी राष्ट्र ने नहीं किया होगा।

प्रत्येक अमेरिकी नागरिक जिसकी अंतरात्मा इस पाप के विरुद्ध रो उठती है, इस हिंसा की शृंखलाबद्धता से बाहर निकलना चाहता है। वह अपने मानवबंधु के साथ प्रेम से रहने के अधिकारों की माँग करता है। किन्तु इस माँग के कारण आज उसको सरकार द्वारा अवहेलना होती है। उसे जेल जाना पड़ता है। यहाँ तक कि उसे मृत्युदण्ड भी भुगतना पड़ता है। दूसरी ओर सरकार से सहयोग करने का मतलब होता है पाप से समझौता करना। और यदि वह सरकार का विरोध करने में असमर्थ है तो उसके सामने एक यही रास्ता है। क्या हमारी स्वतंत्रता यही मतलब रखती है? क्या हमें अपनी अंतरात्मा के विरुद्ध भी सरकार की आज्ञा का पालन करना होगा? (गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के सौजन्य से)

—आर डी० पैन किलसडांक

'गांव की बात'। वार्षिक चंदा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए संसार प्रेस, काशीपुरा, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित

लोकशिक्षण-कार्य : दृष्टि और दिशा

● धीरेन्द्र मजूमदार

जिलादान : कालपुरुष की अदृश्य प्रेरणा ''' निषेधात्मक पृष्ठभूमि ''' मुक्ति की काल्पनिक आशा ''' सेवा का प्रभाव ''' लेकिन समग्र-क्रांति का एहसास ?''' अखिल भारतीय मोर्चेबन्दी ''' प्रखण्ड सेवक और लोक शिक्षण के पहलू

पिछले अप्रैल और मार्च के महीने में दरभंगा जिले का दौरा करने के बाद मैं विनोबाजी से मिला था और जिलादान की मुख्य समस्या पर चर्चा की थी। यह पूछने पर कि दरभंगा जिलादान की घोषणा के बाद पुष्टि का काम तथा ग्रामस्वराज्य के विचार को लोकमानस में अधिष्ठित करने का काम कैसे होगा, विनोबाजी ने कहा था कि देशभर की सर्वोत्तम प्रतिभाओं (बेस्ट टैलेंट्स) को अपनी-अपनी गठरी फेंककर दरभंगा जिले में आ जाना चाहिए। उन्होंने खादी-ग्रामोद्योग, गोपालन आदि विशेषज्ञों का जिक्र किया था और कहा था कि उन्हें अपने-अपने प्रयोग इसी जिले में करने चाहिए। मेरा प्रश्न इस प्रकार के प्रयोग के सन्दर्भ में नहीं था। मेरे मन में ग्रामदान और ग्राम-स्वराज्य के अन्दर जो क्रान्ति-तत्त्व छिपा हुआ है, उसके हर पहलू को जनता के सामने रखने का सवाल था। इसलिए उसी समय मैंने इस प्रश्न पर विशेष जोर देकर कहा था। विनोबाजी ने उसके लिए भी सर्वोत्तम प्रतिभाओं (बेस्ट टैलेंट्स) की बात कही थी।

जिले के कोने-कोने में घूमने तथा हर तबके के लोगों के साथ चर्चा करने से मुझको ऐसा लगा कि बहुत थोड़े इने गिने लोग ऐसे हैं, जो आन्दोलन के क्रान्ति-तत्त्व को समझे हैं या समझने की कोशिश में हैं। घोषणा-पत्र पर जो दस्तखत हुए हैं, वे तूफान के झोंके में ही हो गये हैं। लोगों के मानस, भावना तथा दृष्टिकोण को देखने पर मुझको लगा कि यह कालचक्र का एक चमत्कार है, और मैंने उसी समय कहा भी था। वस्तुतः क्रान्ति की गति भी इसी प्रकार की होती है। जिलादान के लिए जनता की जो प्रतिक्रिया (रिस्पान्स) हुई, मैं उसका मैं अपने मन में विश्लेषण करता रहा। मुझको ऐसा लगा कि जिलादान की मुख्य शक्ति और प्रेरणा कालचक्र की गति रही है। लोगों ने कालपुरुष की एक अदृश्य प्रेरणा के प्रभाव में, मानो अनजाने में ही दस्तखत कर दिये हैं।

दूसरा एक कारण है निषेधात्मक (निगेटिव)। हिन्दुस्तान आजाद हुआ। लोगों को आशा थी कि आजाद भारत में नेताओं द्वारा परिकल्पित आशाएँ फलीभूत होंगी और वे सुख और आराम की जिन्दगी बितायेंगे। वह हुआ नहीं। आज लोगों में दो प्रकार की निराशा है। पहले प्रकार की निराशा गांधी के उन चेलों से है, जो हिन्द स्वराज्य का संचालन कर रहे हैं। दूसरे प्रकार की निराशा विकास के हर प्रकार के प्रयोगों के नतीजों से है। राज्य द्वारा विकास की बड़ी-बड़ी योजनाएँ चलायी गयीं। लेकिन वे योजनाएँ सरकारी महल से निकलकर अनेक प्रकार के दरमियानी चक्रव्यूह में फँसकर बीच में ही अटकती गयीं। जनता तक नहीं पहुँच पायीं। जेतन-वर्ग अपनी सहज बुद्धि से यह समझ रहा है कि इस चक्रव्यूह की मुख्य रचना दलगत राजनीति, नौकरशाही और पूँजीवाद के द्वारा हुई है। कुछ लोगों के मन में ऐसी भी प्रतिक्रिया हुई है कि इसका मूल कारण गांधी को भूल जाना ही है। उनको विनोबा में गांधी का दर्शन मिला है और उनके मन में वर्तमान संकटकालीन परिस्थिति में मुक्ति की एक काल्पनिक आशा भी बनी है।

तीसरा बड़ा कारण यह है कि इस जिले में व्यापक पैमाने पर खादी और चरखे का काम हो रहा है। लोगों ने देखा है कि यह खादीवाले पिछले तीस चालीस साल से बिना किसी पद या सत्ता की आकांक्षा के गरीबों की सहायता करते हैं, तो सहज रूप से मन में कुछ आशा बनी कि यह लोग जो काम कर रहे हैं, वह सार्वजनिक भलाई का काम है। जिले के कोने कोने में खादी-केन्द्र और कार्यकर्ता मौजूद हैं, जो वर्षों से खादी का काम करते हैं, और स्थानीय जनता से परिचित हैं। जब इतनी बड़ी फौज जिले भर में फैल गयी तो लोगों के सामने तूफान का दर्शन खड़ा हुआ।

यह हुआ, लेकिन यह बात नहीं हुई कि लोगों ने महसूस किया हो कि वे क्रान्ति के लिए कमर कसकर तैयार हो रहे हैं। विनोबा जिसे समग्र-क्रांति (टोटल रिवोल्यूशन) कहते हैं, उसका एहसास नहीं हुआ है।

इसीलिए जब मैं दरभंगा में आगे की व्यूह-रचना के बारे में विनोबाजी से बातें कर रहा था, तब यही कहा था कि दरभंगा जिले में ऐसे लोगों को आना चाहिए, जो जिले की जनता को ग्रामस्वराज्य के राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक पहलुओं को अच्छी तरह समझा सकें।

विनोबाजी की प्रेरणा से अब सर्व सेवा संघ ने दरभंगा जिले को सर्वोदय-क्रान्ति के एक अखिल भारतीय-प्रयोग क्षेत्र के रूप में स्वीकार कर लिया है और जिले के काम को अखिल-भारतीय स्तर पर मार्गदर्शन देने के लिए श्री जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में दरभंगा जिला ग्राम-स्वराज्य समिति का गठन किया है। ग्राम-स्वराज्य समिति के अध्यक्ष श्री जयप्रकाश बाबू तथा सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी ने देशभर के समर्थ कार्यकर्ताओं को निमन्त्रित किया है कि वे अपने अपने स्थानीय आन्दोलन को सँभालते हुए दरभंगा जिले के ४४ प्रखण्ड तथा तीन नगरों को अपना विशिष्ट कार्यक्षेत्र मानें और ४७ व्यक्ति इन ४७ हिस्सों को 'एडाप्ट' करें और कम-से-कम साल में तीन महीने का समय इस काम के लिए अलग रखें। खुशी की बात है कि देशभर के कार्यकर्ताओं ने भी जयप्रकाशजी के इस आमंत्रण को स्वीकार किया है और जिला ग्राम-स्वराज्य समिति के पास अपनी स्वीकृति भेज रहे हैं।

जो लोग इस प्रकार से अपना समय दे रहे हैं, उनके *लिए लोक शिक्षण का काम ही* मुख्य काम है ऐसा माना गया है। उनके कार्य का क्षेत्र तथा क्रम ग्राम-स्वराज्य समिति, प्रखंड के स्थानीय कार्यकर्ता और बाहर के आये हुए 'प्रखंड-सेवक' से चर्चा करके निश्चित करेगी, और उन्हें समय समय पर सलाह देती रहेगी।

दरभंगा में ग्राम-स्वराज्य के लिए लोक-शिक्षण के बारे में मेरी दृष्टि और सुझाव निम्न प्रकार हैं :

● प्रखण्ड-सेवकों को पहला ध्यान इस बात का रखना है कि हर प्रखण्ड में कार्यक्रम चलानेवाले कार्यकर्ता मौजूद हैं और काम की मुख्य जिम्मेदारी उन्हींकी है। उनका काम होगा कार्यकर्ताओं को सलाह देना तथा जनमानस में विचार की सफाई करना। इसके लिए उन्हें प्रखण्ड भर में निरन्तर पद-यात्रा करनी चाहिए, और पंचायत स्तर पर विचार के प्रति जागरूक तथा जिज्ञासु लोगों की विचार गोष्ठी करनी चाहिए।

● जनता के शिक्षण के प्रश्न पर मुख्य रूप से चार बातें ध्यान में रखनी जरूरी हैं :

(क) राजनैतिक पहलू : विनोबाजी ने 'स्वराज्य-शास्त्र' नामक पुस्तिका में राज्य और स्वराज्य का स्पष्ट विवेचन किया है। जनता को यह भेद उनकी ही भाषा में अच्छी तरह समझाये बिना लोगों को ग्राम-स्वराज्य समझ में नहीं आयेगा। राजनीति के भिन्न-भिन्न पहलुओं का विवेचन करके उनको समझाना होगा कि किस तरह वर्तमान दलगत राज-नीति अपने अन्तर विरोधों के कारण लोकतंत्र के 'लोक' को ही *समाप्त कर रही है।* इसलिए 'लोक' को अपने आप पर भरोसा करना और अपना स्वराज्य स्थापित करके पूँजीवादी और राज्यवादी दबाव से मुक्त होना है।

(ख) आर्थिक पहलू : हमने अपनी अहिंसक क्रांति को ग्रामोद्योगप्रधान क्रांति की संज्ञा दी है। लेकिन लोकमानस में, और अपने अधिकांश कार्यकर्ताओं *की कल्पना में* इतना ही है कि खादी से बेकार जनों को कुछ काम दिलाना है, थोड़ी राहत दिलानी है, देश की जनता को ग्रामोद्योग की कोई कल्पना का भान नहीं है। उनको समझाना होगा कि किस तरह केन्द्रित उद्योगवाद में यंत्रों की स्थिति सामान्य सुधार से बढ़कर आज 'ओटो-मेशन' और 'साइबरनेशन' तक पहुँच गयी है, और उसी कारण किस प्रकार मुट्ठी भर मनुष्य और उनके दलालों के हाथ में जन-जीवन का अंग प्रत्यंग फँस गया है, किस तरह कच्चा माल पैदा करनेवाले किसान बड़े-बड़े औद्योगिक *नगरों के विराट शोषण* जाल में फँस गये हैं। लोगों को यह समझाना होगा कि ग्रामोद्योग जनता को उक्त शोषण के जाल से मुक्ति पाने का जरिया है। आज अगर यह देश के बेकार लोगों को राहत दे रहा है तो वह मुक्ति आन्दोलन के साथ साथ एक छोटी सी प्रारम्भिक निष्पत्ति मात्र है, इसी सिलसिले में ग्राम-मूलक खादी और ग्रामोद्योग का महत्त्व समझाना चाहिए।

(ग) सामाजिक पहलू : राज्यवाद और पूँजीवाद के कारण समाज व्यवस्थापक-वर्ग, उत्पादक वर्ग, मालिक वर्ग और मजदूर-*वर्ग के रूप में उत्कट वर्गभेद का शिकार* बन गया है। इस बात की विवेचना करके जनता को समझाना होगा कि इस वर्गभेद के कारण देश में किस प्रकार विस्फोट की परि-स्थिति पैदा हो गयी है, जिसका उभार जगह-जगह हो रहा है। *उन्हें समझना होगा कि* वर्ग भेद की समस्या को मिटाये बिना त्राण नहीं है। यह भी समझना होगा कि वर्ग भेद मिटाने के लिए किस तरह वर्ग संघर्ष आज की परिस्थिति में अव्यवहार्य हो गया है, अन्तिम निष्पत्ति के रूप में यह असफल भी सिद्ध हो रहा है और शान्तिमय समाज के *सन्दर्भ में वह अवांछनीय है।*

पहले के जमाने में वर्ग-संघर्ष हुए, और सफल भी हुए, ऐसा लगता है, फिर भी वह जमाना आज नहीं है। पुराने दिनों में रूस में वर्ग संघर्ष को माननेवाली *एक पार्टी थी, एक ही नेता (लेनिन) था।* चीन में एक ही पार्टी और एक ही नेता (माओ) था। और इसी तरह भिन्न-भिन्न मुल्कों में इसका प्रयोग हुआ, वहाँ संघर्ष के लिए एक पार्टी और एक नेता रहे हैं। लेकिन आज परिस्थिति बदल गयी है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चीन और रूस की दो पार्टियाँ हैं और भारत में तो वर्ग-संघर्ष को माननेवाली पार्टियों का षट्कोण बन गया है : कम्युनिस्ट (दक्षिण), कम्युनिस्ट (वाम), कम्युनिस्ट (उग्र), संयुक्त समाजवादी, प्रजा-समाज-वादी, क्रान्तिकारी समाजवादी और फारवर्ड ब्लाक। ये सब बड़ी बड़ी पार्टियाँ हैं। इसके अलावा बहुत सी छोटी-छोटी पार्टियाँ भी बन गयी हैं। मजदूर-वर्ग की पार्टियों में भी आपसी-प्रतिद्वन्द्विता मौजूद है। जब कभी, जहाँ कहीं इस प्रकार के संघर्ष का उभाड़ होता है तो उसमें हर पार्टी कूद पड़ती है। चाहे इस उभाड़ का पहल किसी एक पार्टी द्वारा होता हो। *फिर वर्ग निराकरण के लिए* वर्ग संघर्ष पीछे पड़ जाता है और दल संघर्ष फूट पड़ता है। समाज में हित विस्फोट की व्यापक आग फैल जाती है। अतएव आज के जमाने में वर्ग निराकरण के लिए संघर्ष-मुक्त तथा सहकारमूलक क्रान्ति की आव-श्यकता है। ग्रामदान और ग्राम स्वराज्य का *विचार इस माँग को पूरी करता है।*

(घ) नैतिक और आध्यात्मिक पहलू : *आज दुनिया भौतिकवाद के असर में आकर* नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को भूली जा रही है। उसीके कारण समाज में क्षुद्र स्वार्थ और उसकी सिद्धि के लिए शोषण, अन्याय और अत्याचार का साम्राज्य बना है। आज लोकजीवन में *भ्रष्टाचार, अनीति* आदि दुर्गुणों का भरमार हो रही है, आदि बातों का विवेचन करके लोकशिक्षण की प्रक्रिया से समाज में नैतिक और आध्यात्मिक गुणों का विकास हो, इसके लिए समुचित परिस्थिति बनानी होगी। ●

ग्रामदान-अभियान :

गोरखपुर, ११ दिसम्बर। उत्तर प्रदेश का ग्रामदान-आन्दोलन व्यापक बनता जा रहा है। पश्चिमी क्षेत्र के आगरा जिले में शिविर तथा अभियान १ दिसम्बर से १० दिसम्बर तक खैरागढ़ तथा जगनेर प्रखंड में १० कार्यकर्ताओं की ३० टोलियों द्वारा सर्वश्री डा० पटनायक, राजाराम भाई और कपिल भाई के मार्गदर्शन में चला। इसमें ५ भाई राजस्थान के, १ भाई-बहनें पंजाब के और बाकी उ० प्र० के गांधी आश्रम तथा सर्वोदय-कार्यकर्ता रहे। कुल १४३ ग्रामदान प्राप्त हुए। बलिया जिले में पाँचवें प्रखण्ड, नवानगर में १० टोलियों द्वारा ग्रामदान प्राप्ति कार्य तथा २ टोलियों द्वारा पुष्टि-कार्य चल रहा है। १० दिसम्बर तक १२ प्रभावशाली राजस्व गाँवों के ग्रामदान प्राप्त हुए। दिसम्बर माह के अंत तक यह नवानगर प्रखंड-दान होने की उम्मीद है। मैनपुरी जिले के एका तथा खैरगढ़, इन दो प्रखंडों में २४ दिसम्बर से ३१ दिसम्बर तक और वाराणसी जिले के चकिया तहसील में १० दिसम्बर से ७ जनवरी तक ग्रामदान-अभियान चलेगा।

उत्तर प्रदेश में अब तक प्राप्त ग्रामदानों की संख्या २०१८ तक पहुँच गयी है।

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी की अध्यक्षता में सेवापुरी में ११ दिसम्बर को उ० प्र० ग्रामदान-प्राप्ति समिति की बैठक हुई, जिसमें आगामी जनवरी से अप्रैल के प्रथम सप्ताह तक १० अभियान चलाने का निश्चय हुआ।

—कपिलभाई

इंदौर, ११ दिसम्बर। मध्यप्रदेश सर्वोदय मंडल द्वारा इंदौर जिले में चलाये जा रहे जिलादान-अभियान के अन्तर्गत साँवेर तहसील में आयोजित पदयात्राओं के प्रथम दौर में ७ नये ग्रामदान मिले हैं, जिनके नाम हैं—चिखोड़ा, धुराणियापंथ, रामाखेड़ी, मावला-खेड़ी, सामोद, कमल्याखेड़ा तथा नाहर-खेड़ा। इसके अलावा धरमपुरी और शिवपुरा के दो मजरे भी ग्रामदान में शामिल हुए हैं। पदयात्राओं का दूसरा दौर फिलहाल चल रहा है। तत्पश्चात इंदौर तहसील में पदयात्राएँ होंगी। (सप्रेस)

नागपुर, ११ दिसम्बर। महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल द्वारा प्रसारित एक जानकारी के अनुसार हाल में ही थाना जिले की वाडा तथा पालघर तहसील में आयोजित पदयात्राओं के दौरान क्रमशः २२ और २५ ग्रामदान मिले हैं। वैसे ही धुलिया तथा रत्नागिरी जिले में भी पदयात्राओं के फलस्वरूप क्रमशः १२ एवं ६ ग्रामदान मिलने की जानकारी मिली है। यह उल्लेखनीय है कि पालघर एवं सीमावर्ती गुजरात के उमरगाँव तहसील में महाराष्ट्र गुजरात के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की संयुक्त पदयात्राएँ हुई थीं। (सप्रेस)

बंबई, ११ दिसम्बर। चन्द्रपुर जिले में कुर-खेड़ा पंचायत समिति क्षेत्र के शिक्षक, सरपंच, ग्रामसेवक आदि कार्यकर्ताओं का एक शिविर गत २० नवम्बर को हुआ। महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल के श्री बाबूराव चन्दावार के मार्गदर्शन में ग्रामदानी गाँवों के पुष्टिकरण के बारे में चर्चा होकर तय हुआ कि जनवरी में यह कार्य पूर्ण किया जायेगा। धानोरा पंचायत समिति क्षेत्र में २७ नवम्बर से ३३ आदिवासी गाँवों में पदयात्रा हुई। १७ दिसम्बर तक यह पद-यात्रा चलेगी। ६ दिसम्बर को धानोरा में शिविर हुआ। चन्द्रपुर जिले में अभी तक कुल १०० ग्रामदान हुए हैं। जिला कलेक्टर, तहसीलदार, रेवेन्यू आफीसरों की बैठक में महाराष्ट्र ग्रामदान बोर्ड के अध्यक्ष श्री रा० कृ० पाटिल ने पुष्टिकरण का कार्य जनवरी से शुरू करने की दृष्टि से मार्गदर्शन किया।

—बाबूराव चंदावार
महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल, बंबई-५०

रतलाम, ६ दिसम्बर। विकास खंड रतलाम के अंतर्गत ग्रामदानी ग्राम सोलरा के ग्रामवासियों से चर्चा कर श्री मानव मुनी ने उन्हें ग्राम-स्वराज्य की दिशा में मोड़ने का प्रयास किया। ग्रामवासियों ने ग्रामसभा के गठन के साथ शांति-सेना बनाने का संकल्प किया। समग्र विकास कार्य के लिए संचालन समिति भी गठित की गयी।

—संयोजक, समग्र विकास कार्यक्रम, रतलाम

भूमिहीन किसान-समस्या :

जयपुर, ११ दिसम्बर। समग्र सेवा संघ के मंत्री श्री त्रिलोकचंद जैन ने एक प्रेस-विज्ञप्ति में कहा है कि राजस्थान का कानून भूमिहीन किसानों के पक्ष में होते हुए भी राज्य की फाजिल जमीन का आवंटन भूमिहीन किसानों को नहीं हो रहा है। भूमिहीन किसान गरीब होने के कारण राज्य की नौकर-शाही उसकी परवाह नहीं कर रही है और भूमि का अलाटमेन्ट जमीनवाले प्रभावशाली किसानों, व्यापारियों, कर्मचारियों, शिक्षकों अर्थात् गैरकाश्तकारों को हो रहा है और भूमिहीन अपनी अर्जियाँ लिये दर-दर घूमता रहता है, जिसकी कहीं सुनवाई नहीं होती। आजादी के बीस वर्ष बाद भी आज समाजवादी राज्य में किसानों के साथ इस प्रकार का अन्याय हो रहा है। खेद है कि जन-प्रतिनिधियों को यह सब मालूम होते हुए भी वे निरुपाय हैं। भूमिहीन किसानों का राज्यव्यापी आंदोलन अवश्यम्भावी हो गया है। अतः भूमिहीन किसानों को जमीन मिले, इसके लिए समग्र-सेवा-संघ ने आन्दोलन खड़ा किया है। (सप्रेस)

शिविर : सम्मेलन

बंबई के उपनगर मुलुंड के सर्वोदय मंडल की ओर से २३ दिसम्बर से २७ दिसम्बर तक वाणी विद्यालय, नेहरू रोड, मुलुंड पश्चिम में युवक विद्यार्थियों के एक शिविर का आयोजन किया गया है। विद्यार्थियों की समस्याओं पर विचार विमर्श और अध्ययन करके हल खोजने की कोशिश की जायेगी।

सूचना :

पिछले अंक में प्रकाशित सूचना के अनुसार आगामी आकर्षण : 'पूना रोड में उप-कुलपतियों का सम्मेलन' हम स्थानाभाव के कारण इस अंक में नहीं दे पाये हैं। वह आगामी २१ दिसम्बर '६७ के अंक में देंगे। पाठकगण क्षमा करें। —सं०

विहारदान की व्यूह-रचना

विहार ग्रामदान-प्राप्ति सयोजन समिति की बैठक के निर्णय

लक्ष्मीनारायणपुरी : ९ दिसम्बर। विनोबाजी की उपस्थिति में हुई बैठक में मुख्य रूप से जो निर्णय लिये गये, वे निम्न प्रकार हैं

(१) (क) २ अक्तूबर '६८ तक विहार दान कराने की दृष्टि से जिले जिले में सभी राजनैतिक पक्षों के प्रतिनिधियों, सस्थाओं के प्रतिनिधियों एव अन्य सहयोगी मित्रों की बैठक बुलाकर जिले की अलग अलग स्वात लम्बी योजना बनायी जायगी।

(ख) जिलों के कार्यकर्ताओं की बैठक हर जिले में की जाय, जिसमें जिलादान की व्यूह रचना तैयार की जायगी। इस बैठक में मार्गदर्शन के लिए सर्वोदय-जगत् के वरिष्ठ कार्यकर्ता भाग लेंगे। जिलेवार बैठक की तिथियाँ भी निश्चित हुईं।

(२) २३ जनवरी को पटना में राज्य के सभी रचनात्मक सस्थाओं के प्रतिनिधियों एव जिला सर्वोदय मण्डल के प्रतिनिधियों की बैठक बुलायी जायगी।

(३) राज्य के सभी राजनीतिक पक्षों के प्रतिनिधियों की बैठक २४ जनवरी को पटने में बुलायी जायगी और उसी दिन अन्तिम बैठक में, जो रचनात्मक कार्यकर्ताओं एव राजनैतिक प्रतिनिधियों की सम्मिलित बैठक होगी, जिलों की योजना के आधार पर २ अक्तूबर '६८ तक विहारदान का सकल्प किया जाय। २४ तारीख की बैठक में बाबा और जे० पी० भी उपस्थित रहेंगे।

(४) बाबा २९ दिसम्बर को पूसा से मुजफ्फरपुर चले आयेंगे और वहाँ २० जनवरी तक रहेंगे, फिर २१ जनवरी को पटना आ जायेंगे। तीन सप्ताह तक पटना में रहने के बाद दूसरे जिलों में जैसे—मुगेर, सथाल परगना और पूर्णिया जायेंगे। फिर जब जे० पी० विदेश से लौटेंगे, तब बाबा बोधगया जायेंगे।

(५) ७ ८ दिसम्बर को पूसा रोड में विहार के विश्वविद्यालय के सभी उपकुलपतियों, सभी कालेज के प्राचार्यों की एक गोष्ठी हुई थी, जिसमें बाबा के दो भाषण हुए। इससे शिक्षा जगत् में ग्रामदान के प्रति अनुकूलता की आशा बँधी है। मुजफ्फरपुर, पटना आदि स्थानों में बाबा विश्वविद्यालयों के अहातों में ही रहना पसन्द करेंगे, ऐसा सकेत मिला है।

—कमल नारायण

वि० ग्रा० प्रा० सयोजन समिति, पटना-३

(३ दिसम्बर '६७ तक)	कुल ग्रामदान	प्रखण्डदान	अनुमंडलदान	जिलादान
दरभगा में	३,७२०	४४	३	१
विहार में	१६,१०२	१०३	५	१
भारत में	४६,४१०	२०८	५	१

प्रखण्डदान अभियान

मुगेर, ११ दिसम्बर। १० दिसम्बर को बेगुसराय की सभा में श्री जयप्रकाश नारायणजी को बखरी और खुदाबन्दपुर का प्रखड दान क्रमश: श्री रमाकान्त चौधरी, मत्री ग्राम स्वराज्य सघ और श्री अखिलेश्वर प्र० सिंह द्वारा समर्पित किया गया। बखरी प्रखड में प्रखड-दान का अभियान गत ३० नवम्बर से आरम्भ हुआ। श्री रमाकान्त चौधरी के नेतृत्व में ग्राम स्वराज्य सघ के २७ कार्यकर्ताओं ने १० दिन तक काम किया। बखरी प्रखंड की जनसख्या १,१२,५५१ है, जिसमें से ९२,८२१ लोग ग्रामदान में शामिल हुए। १४,२४१ एकड़ भूमि में से ९१ प्रतिशत भूमि का रकबा ग्रामदान में घोषित किया गया। खुदाबन्दपुर का प्रखंड दान पहले ही घोषित हो चुका था। बेगुसराय अनुमंडल में अब तक ४ और मुगेर जिले में १० प्रखड दान हो चुके हैं। —रामनारायण प्रसाद,

जिला सर्वोदय मंडल, मुगेर

जमशेदपुर, ८ दिसम्बर। चाडिल प्रखड में ३० गाँवों का ग्रामदान पहले ही हो चुका था। गत १० नवम्बर को जिला शांति-सेना और ग्रामदान प्राप्ति समिति के ८ कार्यकर्ताओं ने पुन कार्य आरम्भ किया। फलस्वरूप २ दिसम्बर को चाडिल का प्रखण्ड-दान घोषित हुआ।

निम्नलिखित आँकड़ों से प्रखण्डदान की स्थिति स्पष्ट होगी—

	कुल सख्या	ग्रामदान में शामिल	शामिल प्रतिशत
गाँव	१०६	८३	७६
जनसख्या	४५,३४८	३५,०११	७७
परिवार	१,०४३	७७१	७७

चूँकि इस प्रखण्ड के अधिक क्षेत्र में जगल एव पहाड़ है, फिर भी जोत की जमीन की ६० प्रतिशत भूमि ग्रामदान में शामिल हुई है। —मु० मयूब खाँ

जिला शांति सेना समिति, जमशेदपुर

विहार में ग्रामदान-प्रखण्डदान

(३ दिसम्बर '६७ तक)

जिला	ग्रामदान	प्रखण्डदान
पूर्णिया	३,८८८	१९
दरभंगा	३,७२०	४४
मुगेर	१,५५८	९
मुजफ्फरपुर	१,२२२	१२
गया	१,१५०	१
हजारीबाग	८८५	२
सथाल परगना	८३५	१
पलामू	६१८	४
सारन	५५१	३
भागलपुर	४१४	१
सहर्षा	३११	२
धनबाद	२४८	१
चपारण	२४०	—
सिंहभूम	१६२	१
शाहाबाद	१०१	१
राँची	६४	—
पटना	२५	—
कुल	१६,१०२	१०३

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व सेवा सघ द्वारा ससार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

समाचार डॉयरी :

देश :

१८-१२-'६७ : पश्चिम बंगाल में संयुक्त मोर्चे द्वारा शुरू किये गये सविनय अवज्ञा आन्दोलन के सिलसिले में श्री अजय मुखर्जी गिरफ्तार करके फिर रिहा कर दिये गये।

१९-१२-'६७ : घोष-सरकार के विरुद्ध कलकत्ता में १०० से अधिक महिला स्वयं सेविकाओं ने सत्याग्रह किया और वे गिरफ्तार की गयीं।

२०-१२-'६७ : श्रीमती इन्दिरा गांधी ने देश के राज्यों और राजनीतिक दलों से त्रिभाषा फार्मूला लागू करने में सहयोग देने की अपील की।

२१-१२-'६७ : पश्चिम बंगाल में संयुक्त मोर्चे के समर्थकों ने आज बमों का खुलकर प्रयोग किया।

२२-१२-'६७ : तमिलनाड में हिन्दी-विरोधी आन्दोलन ने आज हिंसक रूप ले लिया। दो रेलगाड़ियाँ जला दी गयीं। राज्य सभा ने राजभाषा-संशोधन विधेयक को १४ मतों के विरुद्ध ११४ मतों से आज पारित कर दिया।

२३-१२-'६७ : हैदराबाद में १ दर्जन किताब की दूकानों से तमिल पत्र-पत्रिकाएँ हिन्दी समर्थकों द्वारा फूँक दी गयीं।

विदेश :

१९-१२-'६७ : राष्ट्रसंघ की मुख्य राजनीतिक समिति ने अगले अगस्त सितम्बर में गैर परमाणु राष्ट्रों का एक सम्मेलन बुलाने का प्रस्ताव किया।

२०-१२-'६७ : राष्ट्रपति जानसन ने वियतनाम में शान्ति के लिए वियतकांग और सैगोन शासन के बीच सीधी किन्तु अनौपचारिक बातचीत का सुझाव दिया है।

२१-१२-'६७ : संयुक्त अरब गणराज्य के सरकारी प्रवक्ता ने यह घोषणा की कि मिस्र कभी भी ऐसी वार्ता या शान्ति सन्धि के लिए तैयार नहीं होगा, जो उस पर थोपी जायगी।

२२-१२-'६७ : चीन की सशस्त्र सेनाएँ वियतनामियों के हितों की रक्षा के लिए आवश्यक कार्रवाई करने को तैयार हैं।

कम्प्यूटरों का विरोध !

साम्यवादी नहीं, किन्तु जीवन बीमा निगम में कार्य करने के कारण अनचाहे अधकचरे साम्यवादी बने एक मित्र से चर्चा चल पड़ी. "कम्प्यूटर से बेकारी फैलेगी। पहले ही पढ़े लिखे बेकारों की फौज इस देश में है। कम्प्यूटरों के लगने से लाखों लोग बेकार हो जायँगे—सरकार अमेरिकी दबाव में आ गयी है।" पचास रुपये मीटर का टेरीलिन पहनकर चार सौ रुपया लेकर तीन घण्टे भी मुश्किल से काम करनेवाले, कृत्रिम यन्त्र-विरोधी भावना व्यक्त करनेवाले एक व्यक्ति की आवाज को भला मेरा नैतिक समर्थन कैसे मिल सकता था! मैंने कहा, "आपसे मैं सहमत हूँ एक बात पर। यन्त्र बेकारी फैलाते हैं। यहाँ तक अक्षरशः सत्य है, पर ऐसी बात कहने का आपको नैतिक अधिकार नहीं है। जब घानी की जगह आयल (तेल) मिल लगे। चरखे और करघे के स्थान पर स्पिनिंग, वीविंग (कताई और बुनाई) मिल खुले, तब आपने विरोध नहीं किया; और न अब भी कर रहे हैं। इतना ही नहीं, आपके व्यवहार में आनेवाली कोई भी वस्तु ऐसी नहीं, जो कि हाथ से बनी हुई हो।" कम्प्यूटर विरोधी चुप हो गये!

मैंने कहा, "अभी समय है, जब हम अपने जीवन में यन्त्रों का उपयोग कम करने की आदत डालें। अन्यथा ये यन्त्र चाहे वे कम्प्यूटर हों या मिल, देवतुल्य भारतवासियों को इतनी यन्त्रणा देंगे कि वे कराह उठेंगे। आवश्यकता है हरेक के राम को जगाने की, ताकि यन्त्र रूपी राक्षस को अपने उदात्त त्याग और संयम से दूर भगायें, अन्यथा इस देश में भेड़ बकरियों की तरह बेकारों के पुंज लग जायेंगे, जिन्हें राजनीतिक गड़रिये चारा बताकर जगत में चराते रहेंगे।"

—जगन्नाथ सेठिया

जय हिन्दी ! जय भारती !!

दक्षिण भारत का अहिन्दी भाषी मन
मैं सोच रहा—
हिन्दी की यह भाषा कैसी है !
डाकघरों में आग लगाओ
हिन्दी है !
स्टेशनों को तोड़ो फोड़ो
हिन्दी है !
अंग्रेजी दिखे जहाँ भी
अलकतरा पोतो, मिट्टी लीपो
हिन्दी है !
स्कूल बन्द, कालेज बन्द
नगर बन्द, डगर बन्द
हिन्दी है !
अरे, हिन्दी क्या ऐसी ही है !
गुलामी, दमन, विघटन—
यह भी भाषा अंग्रेजी
आग लगाओ, तोड़ो फोड़ो,
बन्द करो,
इसे कहोगे हिन्दी !
मेरे जैसे कितने ही भाई बहिन हैं,
जो नहीं जानते हिन्दी
उन पर कृपया लादो मत
सीखो, उन्हें सिखाओ हिन्दी
अपनी ही चीजों को
नष्ट-भ्रष्ट, स्वाहा करने से
क्या हिन्दी आयेगी !
खिसियानी बिल्ली
मुँह नोचे अपना
मत करो चरितार्थ
कहावत ऐसी !

—मनु

उड़ीसा प्रान्तदान की ओर

दो साल पहले प्रखण्ड-दान एक नयी चीज थी। अब प्रखण्डदान आमफहम चीज हो चुकी है और पूरे देश में दो सौ से ऊपर प्रखण्डदान हो चुके हैं। अब तक हमारी यह चिट्ठी छपकर लोगों के पास पहुँचेगी तब तक दरभंगा जिला-दान शायद भारत का एकमात्र जिलादान नहीं रह जायेगा। बिहार के पूर्णिया जिले और तामिलनाड के तिरुनेलवेली जिले के बीच जिलादान में दूसरा स्थान पाने के लिए गहरी स्पर्धा हो रही है। महाराष्ट्र प्रदेश के थाना, मध्यप्रदेश के इन्दौर और आन्ध्र प्रदेश के कड़प्पा जिले जिलादान की दौड़ में अगली कतारों में हैं।

ग्रामदान की गणना तालिका में उड़ीसा के कोरापुट जिले का हमेशा अगला स्थान रहा है, और लोगों ने उम्मीद रखी थी कि वह आसानी से दूसरा या तीसरा स्थान पायेगा, किन्तु कुछ ऐसे कारणों से जिनकी चर्चा में हम नहीं पड़ना चाहते, कोरापुट पीछे रह गया। फिर भी कोरापुट जिलादान की दौड़ से बाहर नहीं है। इसी बीच उड़ीसा का एक और जिला जिलादान के प्रत्याशी के रूप में सामने आया है—वह है मयूरभंज, जो प्रदेश के उत्तर पूर्वी छोर पर है।

पिछले महीने उड़ीसा के पूर्वी तथा अन्य-अन्य क्षेत्रों के ११५ कार्यकर्ताओं ने इकट्ठे होकर भविष्य की योजना बनायी। उड़ीसा के उपरोक्त दोनों जिलों का जिलादान व्यूह चातुर्य की दृष्टि से कुछ बाद में होगा।

पिछले अक्तूबर तक उड़ीसा के कुल ग्रामदानों की संख्या ७८७० तथा प्रखण्ड दानों की संख्या २१ थी। ४ वर्ष पहले, प्रादेशिक सर्वोदय सम्मेलन ने विनोबाजी की मौजूदगी में प्रस्ताव किया था कि २ अक्तूबर १९६८ तक उड़ीसा के आधे यानी लगभग २४ हजार ग्रामदान कराये जायेंगे। २ साल बाद दूसरे सम्मेलन ने उस प्रस्ताव की पुष्टि की। उसके बाद से उस राज्य में ग्रामदान आन्दोलन ने बड़ी तरक्की की और ग्रामदान की संख्या तिगुनी हो चुकी। फिर भी मंजिल अभी दूर है। ठीक समय तक मुकाम पर पहुँचने के लिए कहीं ज्यादा कोशिश करनी होगी। अब तो उससे भी आगे बढ़कर और आकर्षक मंजिल प्रदेश दान तक पहुँचने की बात क्षितिज पर दिखायी दे रही है। इसीलिए प्रदेश सर्वोदय मंडल ने अपनी ताकत बढ़ाने पर ज्यादा जोर दिया है। अब तक जितने ग्रामदान प्राप्त हो चुके हैं वे सम्भावित शक्ति के सबसे बड़े भण्डार हैं। उड़ीसा में कार्यकर्ताओं में तादाद बहुत कम है, जो संस्थाओं से जुड़े हुए हों। आन्दोलन को प्राय: ग्राम दानी गाँवों के स्वयं सेवकों के भरोसे ही आगे बढ़ना पड़ा है। कोरापुट में कुल १ हजार के लगभग नियमित शान्ति सैनिक हैं।

विद्यार्थियों को मिलाकर करीब ४०० स्वयंसेवियों ने मयूरभंज के ३ प्रखण्डदान प्राप्त करने में सहायता दी थी। इसलिए सर्वोदय मण्डल ने सबसे पहले ग्रामदानी गाँवों से १० हजार शान्ति सेवक और सैनिक भर्ती करने का काम हाथ में लिया है और उ है

मनमोहन चौधरी

कुछ प्रारम्भिक प्रशिक्षण देने की कार्य-योजना बनायी है। यह काम जनवरी ६८ तक पूरा होने को है। इसी दौरान पूरे प्रदेश में तीन दिन के प्रशिक्षण शिविर भी आयोजित होंगे। ऐसे शिविरों की तादाद १५० होगी। ये शिविर ज्यादातर ५ जिलों—कोरापुट, गंजाम, बालासोर, मयूरभंज तथा ढेंकानाल में होंगे, जहाँ ग्रामदानों की संख्या ज्यादा है और आन्दोलन भी मजबूत है। सिर्फ कोरापुट में ही एक सौ शिविर संयोजित होंगे। ऐसी उम्मीद की गयी है कि शिविर के बाद ग्राम दान प्राप्त करने की भी नयी कोशिश की जायेगी, उसके नतीजे से और २ हजार ग्राम दान मिलेंगे और इस तरह प्रदेश के कुल ग्रामदानों की तादाद १० हजार हो जायेगी।

३० जनवरी को जिलों के केन्द्रीय मुकाम तथा दूसरी जगहों पर शान्ति रैलियाँ होंगी और भुवनेश्वर के लिए खास तौर से एक शानदार रैली की तैयारी हो रही है।

पहली फरवरी से कोरापुट तथा मयूरभंज के जिलादान की पुरजोर कोशिश शुरू होने वाली है। कोरापुट जिले की आबादी १५ लाख है, क्षेत्रफल ९९१९ मील है, गाँवों की संख्या ५८०० है और प्रखण्डों की संख्या ४३ है। जिसमें ग्रामदानी गाँवों की संख्या ४२०० तथा प्रखण्ड दान की संख्या १९ है। ७८ प्रखण्डों में ग्रामदानी गाँवों की खासी अच्छी तादाद है। बाकी प्रखण्डों में भी १२ को छोड़कर बाकी सबमें कुछ न-कुछ ग्रामदान हुए हैं।

मयूरभंज जिले की जनसंख्या १२ लाख, क्षेत्रफल ४०२१ वर्गमील, गाँवों की संख्या ३९०० और प्रखण्डों की संख्या २१ है। यहाँ कुल १२ सौ ग्रामदान और ८ प्रखण्ड-दान हुए हैं। कुछ और प्रखण्डों में भी ग्राम दान हुए हैं। लेकिन जिले का लगभग दो तिहाई भाग आन्दोलन से अछूता है। फिर भी जिले में ग्रामदान का इतना माकूल असर है कि कोई भी मयूरभंज का जिलादान होने में कोई बड़ी रुकावट नहीं देखता, बशर्ते वहाँ जरूरी कोशिशें की जायें। नवजवान कार्यकर्ताओं की एक टोली ने लोगों के दिलों में जगह बना ली है और अपनी श्रद्धा तथा उत्साह के भरोसे उसने जिलादान की मंजिल पर अपने अरमान केन्द्रित कर लिये हैं।

ऐसी योजना की गयी है कि पास पड़ोस के कुछ जिलों के कार्यकर्ता इन दो जिलों में आकर स्थानीय कार्यकर्ताओं को जिलादान अभियान में मदद करेंगे। आम तौर से शिक्षक आन्दोलन के लिए मददगार रहते आये हैं और कोशिश की जा रही है कि उनसे इस काम में और ज्यादा मदद मिले। इसी तरह पंचायती राज के कार्यकर्ताओं से भी मदद ली जा रही है। इनमें से बहुत से लोग ३ दिन के शिविर में भाग लेंगे।

इन दोनों जिलों में जिलादान पूरा करने के लिए अभी तक समय की सीमा नहीं तय की गयी है, लेकिन इसमें ३ महीने से ज्यादा समय नहीं लगेगा। फरवरी में जिस समय प्रदेश सर्वोदय मण्डल की बैठक होगी, इसी समय आखिरी फैसला होगा।

प्रदेश मण्डल ने १० हजार शान्ति सैनिकों की भर्ती पूरी होने, और १० हजार—

शिक्षण : अहिंसक क्रांति के लिए

[गत ८-९ दिसम्बर '६७ को बिहार के शिक्षा-मन्त्री श्री कर्पूरी ठाकुर को सदुद्देश से राज्य के शिक्षा-विशारदों का एक सम्मेलन पूसा रोड में आचार्य विनोबा भावे की उपस्थिति में हुआ। सम्मेलन में शिक्षा की वर्तमान स्थिति पर गहरा चिन्तन हुआ, और बुनियादी परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की गयी। सम्मेलन में उपस्थित सर्वोदय के तीन प्रमुख विचारकों–सर्वश्री विनोबा, जयप्रकाश नारायण और धीरेन्द्र मजूमदार, ने शिक्षा के प्रश्न पर अपने विचार प्रगट किये, जिन्हे हम पाठकों की सेवा में सहचिंतन के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं।—सं०]

शक्ति का स्रोत

हमें यह परिषद् बहुत गम्भीर मालूम हो रही है। इसमें कुछ ईश्वरी योजना दीखती है। मैं याद कर रहा था कि हमारी भूदान-यात्रा की १४ साल की पदयात्रा में क्या कभी इस तरह की परिषद् हुई, या गांधीजी के जमाने में भी क्या इस तरह की कोई परिषद् हुई थी? मैसूर स्टेट में मेरी पदयात्रा के समय एक कान्फरेन्स सन् १९५७ में हुई थी, लेकिन वह शिक्षा-विशारदों की नहीं, बल्कि शिक्षाधिकारियों की परिषद् थी। उसमें डी० पी० आई० थे। यह तो विद्वत्‌परिषद् है। भारत का पुराना इतिहास देखते हैं, तो उस जमाने में संगतियाँ होती थीं। भारत में दो-तीन जगह इस तरह की संगतियाँ–परिषद्–हुई थीं। लेकिन उनका खास रेकार्ड उपलब्ध नहीं है। इसलिए यह एक विशेष प्रसंग मैं मानता हूँ। इसका सारा आयोजन कर्पूरी ठाकुर (शिक्षामन्त्री, बिहार) ने किया और उन्होंने यह भी जानकारी दी कि इस आयोजन में सरकार का एक भी पैसा खर्च नहीं हुआ है। इसलिए यह एक विशेष ही परिषद् मानी जायगी।

इसमें हमें एक ईश्वरी आदेश दिखायी देता है। मुझे लगा कि इस कार्यक्रम को हम उठा लेते हैं, तो शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति हम ला सकते हैं। बिहार की सभी युनिवर्सिटियों के प्रमुख लोग यहाँ इकट्ठे हुए और उन्होंने शिक्षा के विषय में और विद्यार्थियों तथा शिक्षकों की समस्याओं के विषय में सोचा, तो मैंने माना कि मेरे लिए यह ईश्वरी आदेश है। मुझे प्रेरणा हुई कि इस काम में मुझे पूरी मदद देनी चाहिए। मैंने जिस ईश्वरीय संकेत से भूदान-ग्रामदान का कार्य उठाया उसी संकेत से शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति का कार्य मुझे उठाना चाहिए, यह आभास अन्दर से हुआ। इसलिए इसे मैं बहुत गम्भीर मौका समझता हूँ।

इस (शिक्षा) कार्य को मैं बुनियादी मानता हूँ और अपने बारे में जब सोचता हूँ, तो ग्रामदान के कार्य के लिए मैं अपने को जितना लायक पाता हूँ, उससे अधिक लायक इस काम के लिए पाता हूँ, क्योंकि अपने जीवन में मैं निरन्तर अध्ययनशील रहा हूँ। आज भी तरह-तरह के काम हुए, मुलाकातें आदि हुईं, लेकिन आपके सामने अध्ययन करके ही उपस्थित हुआ हूँ। मेरा एक दिन भी बिना अध्ययन के नहीं जाता। मुझे अन्दर से जितने भी संकल्प, आदेश, निर्देश, संदेश, उपदेश प्राप्त हुए, वे सब इस अध्ययन के कारण हुए। मनुष्य के क्या कर्तव्य हैं, इसको शास्त्रकार एक के बाद एक करके समझा रहे हैं। "सत्यं च स्वाध्यायप्रवचने च", "शमश्च स्वाध्यायप्रवचने च", "दमश्च स्वाध्यायप्रवचने च", "अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवचने च" सत्य की साधना, मन शान्ति की साधना, इन्द्रियदमन की साधना, अतिथि-सत्कार की साधना इत्यादि हर साधना के साथ कहा कि स्वाध्याय और प्रवचन होना चाहिए। हर कर्तव्य के साथ स्वाध्याय प्रवचन का संपुट दिया। तो मैंने अपने लिए मन्त्र बनाया—"भूदानश्च स्वाध्यायप्रवचने च" "ग्रामदान च स्वाध्यायप्रवचने च" "शान्तिसेनाश्च स्वाध्यायप्रवचने च" "ग्रामाभिमुख-खादीकार्यं च स्वाध्यायप्रवचने च" हर काम के साथ स्वाध्याय प्रवचन। शास्त्रकारों के इस आदेश का मुझ पर महान उपकार है।

स्वराज्य के आन्दोलन में जिन नेताओं से लोगों को स्फूर्ति मिली, वे राजनीतिक नेता थे। लेकिन मैंने देखा कि मुख्य मुख्य जो भी राजनीतिक नेता हो गये, वे अध्ययनशील थे। इन दिनों जो राजनीतिक नेता हैं, उनको अध्ययन के लिए फुरसत ही नहीं है! नाम मन्त्री है। मन्त्री यानी मनन करनेवाला। लेकिन मनन के लिए ही फुरसत नहीं। पुराने नेताओं में श्री अरविन्द महान राजनीतिक क्रान्तिकारी नेता थे, लेकिन अध्ययन-सम्पन्न थे। करीब २५-३० किताबें उन्होंने

→ग्रामदान प्राप्त कर लेने के उपलक्ष्य में ३० जनवरी, '६८ को विनोबाजी को उड़ीसा में आमन्त्रित करने का निर्णय लिया है। मण्डल के प्रमुख कार्यकर्ताओं की लगभग सर्वसम्मत राय थी कि २ अक्तूबर, १९६९, यानी गांधी-शताब्दी दिवस तक उड़ीसा का प्रदेश-दान होना शक्य है, यदि विनोबाजी प्रदेश में कुछ समय देना कबूल करें। सुश्री रमादेवी के मार्गदर्शन में उड़ीसा के बाढ़ तथा तूफान-पीड़ित क्षेत्र में जो राहत सेवा का काम किया गया, उसके कारण लोगों का सर्वोदय की ओर झुकाव बढ़ा है और अब कटक जिले में ग्रामदान की सारी अड़चनें दूर होनेवाली हैं, जो अब तक ग्रामदान से प्राय. अछूता रहा है। आन्दोलन को श्री नवकृष्ण चौधरी का भरपूर समर्थन प्राप्त है और राजनैतिक पक्षों के कारण जो आम निराशा फैली है, उससे भी इसमें मदद मिली है।

हाल ही में बिहार के हमारे साथियों ने बिहारदान का जो निर्णय लिया है उसे विनोबाजी की प्रथम वरीयता मिली है। इस निर्णय ने विनोबाजी को अगले कुछ महीने, बिहार की यात्रा में ही बिताने के लिए प्रेरित किया है। कोई नहीं जानता कि उन्हें कब समय मिलेगा और वे उड़ीसा आने के लिए राजी होंगे। जो भी हो, उड़ीसा के सर्वोदय कार्यकर्ता ग्रामदान क्रान्ति को आगे बढ़ाने का पक्का इरादा कर चुके हैं और बिहारदान का संकल्प उन्हें अपने अभियान में और ज्यादा होड़ के साथ जुटने की प्रेरणा देनेवाला है। ●

लिखी हैं। लोकमान्य तिलक दिन भर राजनीति की चर्चा करते थे, लेकिन रात को सोने से पहले वेदाध्ययन करते थे। जेल में गये तो वेदकाल के संशोधन पर ग्रन्थ लिखा। दूसरी बार जेल में 'गीता रहस्य' लिखा। राजनीतिक आन्दोलन में पड़े थे, लेकिन हृदय स्वाध्याय-प्रवचन में था। महर्षि रानडे, एनी बेसंट, अबुल कलाम आजाद आदि लोग जितने राजनीति के क्षेत्र में मँजे हुए थे, उससे कहीं ज्यादा विद्या के क्षेत्र में मँजे हुए थे। ये सब ठोस नेता थे, पोल नहीं थे। ढोल पोल होता है, इसलिए जोरदार आवाज होती है। ठोस चीज में से वैसी आवाज नहीं होती। तो, वे नेता केवल राजनीतिक नहीं थे। उनका जीवन विद्या प्रधान था। इन सबके संस्कार मेरे चित्त पर हुए हैं। मुझे प्रेरणा हुई कि शिक्षा के काम में आपको मदद दूँ। बिहार में शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति के लिए क्या करना होगा, इस पर सोचना चाहिए। मेरे हृदय में जो स्फूर्ति हुई वह मैंने आपके सामने रखी। मैंने कहा कि मैं इस काम के लिए अपने को ज्यादा लायक मानता हूँ। आप पूछ सकते हैं कि फिर यही काम मैंने क्यों नहीं उठाया? इसका उत्तर देना चाहता हूँ। उत्तर यह है कि *इस काम में विद्वानों का सहयोग मुझे मिलेगा, इसका मुझे भरोसा नहीं था।* दो विद्वान् एक जगह आ जायँ और उनमें मतैक्य हो जाय तो बहुत बड़ी घटना हुई, ऐसा कहना चाहिए। "नेको मुनिर्यस्य वच प्रमाणम्" कहा ही है। तुलसीदासजी भी कहते हैं कि "बहुमत मुनि बहु पथ पुराननि, जहाँ तहाँ *झगरो सो गुरु कह्यो* राम-भजन नीको, मोहि *लगत* राजडगरो सो" विद्वानों में कहीं मेल नहीं, अनेक पथ हैं, जहाँ-तहाँ झगड़ा ही-झगड़ा है। गुरु ने तुलसीदास को आदेश दिया कि तुम रामभजन करो और तुलसीदास कहते हैं कि मुझे वह *राजमार्ग लगा।* फिर आगे जाकर लिखते हैं कि "मैं रामचरित मानस लिख रहा हूँ, लेकिन विद्वान् लोग मेरी इस कृति पर हँसेंगे, क्योंकि मैं तो कोई विद्वान् नहीं हूँ। लेकिन अगर मेरी कृति पर उनको हँसी आयी तो मैंने उन्हें हास्यरस *प्रदान किया यह लाभ होगा।*" इतने नम्र थे तुलसीदास। जहाँ विद्वानों से इतना डर तुलसीदास को लगा, वहाँ बाबा की क्या दाल गलनेवाली है! तो, शिक्षा का काम क्यों नहीं उठाया, उसका यह एक कारण हुआ।

दूसरा कारण यह है कि बाबा के हृदय में करुणा काम कर रही है। शंकराचार्य से बढ़कर तत्त्वज्ञानी शायद ही कोई होगा, लेकिन उन्होंने प्रार्थना की है—"अविनयमपनय विष्णो दमय मनः शमय विषय-मृगतृष्णाम् भूतदयां विस्तारय..." शंकराचार्य इतने ज्ञाननिष्ठ, लेकिन उन्होंने भगवान् से प्रार्थना की कि मेरे मन में भूतदया का विस्तार हो। मनुष्य का प्रधान कर्तव्य क्या है इसको समझाते हुए एक जगह उन्होंने कहा, *"वाग्वैखरी शब्दझरी शास्त्र-व्याख्यान कौशल"* ऐसे विद्वानों की *विद्वत्ता किस काम की! ऐसे लोगों की विद्या* "मुक्तये न तु मुक्तये" होती है। तनख्वाह पाने *की विद्या है, वह मुक्ति के काम नहीं आती। ऐसी प्रखर टीका* आचार्य करते हैं। मनुष्य में करुणा होनी चाहिए। शंकराचार्य का वर्णन किया गया है—"श्रुतिस्मृतिपुराणानां आलय" और आगे कहा—"करुणालय"। उन्होंने १६ साल भारत की यात्रा की, *जगह-जगह लोगों से चर्चा की, विचार प्रचार किया,* यह सब करुणा की प्रेरणा के कारण हो सका। भगवान् बुद्ध अनेक विद्यापारंगत राजपुत्र थे। लेकिन करुणा का नाम लेकर निकल पड़े। वे कारुण्यावतार थे। इसीलिए उनका भारत पर असर रहा है। *जितने भी महाज्ञानी विद्वान् पुरुष हो गये,* उन्होंने करुणा को महत्त्व दिया। बाबा बहुत विद्वान् तो नहीं है। उसके पास कुछ विचार जरूर है, लेकिन उसकी स्थिति "एरंडोऽपि द्रुमायते" जैसी है। *लोगों में अविद्या है, तो थोड़ी विद्या के कारण बाबा विद्वान् समझा जाता है।* लेकिन करुणा का कार्य छोड़कर बाबा विद्वानों के पीछे जायगा तो विद्वान् ध्यान नहीं देंगे यह बाबा ने माना। मैं भारत भर पैदल घूमा हूँ। कितनी हीन-दीन दशा भारत की है, वह सब आँखों से देखा। बाबा ने भारत भर में बहुत दुःख देखा—खाने को अन्न नहीं, ओढ़ने को वस्त्र नहीं, घर पर छप्पर नहीं, बच्चों को दूध नहीं, जिस जमीन पर झोपड़ी बनी है, वह जमीन भी उसकी नहीं, दवा का प्रबन्ध नहीं, तालीम का सवाल ही नहीं!

पंचवर्षीय योजना के सिलसिले में योजना वालों के साथ बात करने का मौका मिला। बाबा की यात्रा में अनेक पार्टियों के लोगों के साथ बात करने का मौका मिला। हर पार्टी में बाबा के मित्र हैं। कांग्रेस, जनकांग्रेस, स्वतंत्र, एस० एस० पी०, पी० एस० पी०, राइट-लेफ्ट कम्युनिस्ट, और भी अनेक पार्टियाँ हैं, एक जे० पी० भी हैं—सबके साथ मैत्री है। मैंने योजनावालों से पूछा कि सबसे गरीब जो हैं, *उनके लिए योजना में खास क्या प्रबन्ध है?* योजना से सारे देश का जीवन मान कुछ बढ़ेगा यह ठीक है, लेकिन गरीब के जीवनमान में क्या फर्क होगा? उन्होंने समझाया कि सबका स्तर बढ़ेगा तो नीचेवालों का भी कुछ बढ़ेगा। मैंने इसे "*श्रीमो आर परकोलेशन*", ऐसा नाम दिया। ऊपर बहुत बारिश होगी तो जमीन के अन्दर कुछ पानी जायगा। लेकिन कुछ जमीन में अन्दर चट्टान होती है, तो नीचे एक बूँद भी *पानी नहीं जाता।* भारत में जातिभेद, आर्थिक विषमता, आदि अनेक चट्टानें हैं। तो भारत का एवरेज बढ़ने पर भी गरीब को कुछ नहीं मिलेगा। लेकिन योजनावालों को दुनिया के प्रगतिशील देशों की कतार में भारत को जल्द-से-जल्द लाने की हवस थी। *नासिक के* छापखाने में नोट छापकर बड़ी-बड़ी दीर्घकालीन योजनाओं को हाथ में लिया। अतः

ईश्वरी आदेश · शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति · शिक्षक निरन्तर अध्ययनशील हों · मुख्य राजनीतिक नेता अध्ययनशील थे · आज राजनीतिक नेता को फुर्सत नहीं · ग्रामदान के कार्य के पीछे करुणा · विद्वानों का भ्रम · ग्रामदान के कार्य के साथ शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति के लिए मदद · आत्मसन्तोष से बढ़कर कोई चीज नहीं · शिक्षकों द्वारा शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति ·

कालीन योजना नहीं बनायी। भारत में नेशनल मिनिमम एवरेज या आप्टिमम (अनुकूलतम) की बात नहीं, बल्कि मिनिमम (कम-से-कम) कब मिलेगा, ऐसा पूछने पर कहते हैं कि शायद सन् १९८५ में मिलेगा। डूबनेवाला पानी से बाहर खींचने के लिए पुकार रहा है। उसको यदि कहेंगे कि परसों तुमसे निकालेंगे, तो कितना हास्यास्पद होगा। इसीलिए तुकाराम ने कहा है कि "उदारासी काय उधारीचे काम"—उदार के काम में उधारी नहीं चलती। सन् १९८५ में भारत की क्या दशा होगी, कौन कह सकता है! बाबा के हृदय में दर्द है। भारत की जनता ने बहुत सहन किया है। इसलिए योग्यता कम होते हुए भी बाबा निकल पड़ा। शरीर मजदूर का नहीं है। इसलिए कुदाली चलाकर गरीबों को प्रेरणा नहीं दे सकता है, यद्यपि कुछ कुदाली चलायी है। फिर भी ग्रामदान का काम छोड़ नहीं सकता। अब उस काम के साथ शिक्षा में अहिंसक क्रांति का काम भी बिहार में होगा, ऐसा दृश्य दीख रहा है।

लेकिन मेरी एक शर्त है। बाबा ५० साल काम कर चुका है। जीवन के अन्तिम काल में आत्मचिन्तन में समय जाना चाहिए। अन्दर के सूक्ष्म में प्रवेश करना चाहिए, ऐसा शास्त्रकार कहते हैं। अतः बाबा सूक्ष्म में गया है। फिर भी मदद करूँगा कहता हूँ, उसका मतलब आप समझ लीजिये। बाबा का आपके ऊपर आक्रमण नहीं होगा। बाबा रेफरन्स-बुक (सन्दर्भ-पुस्तक) जैसा रहेगा। रेफरन्स-बुक आलमारी में पड़ी है। आप उपयोग करना नहीं चाहेंगे तो पुस्तक उठकर आपके पास नहीं आयेगी।

सरकार भी मेरा उपयोग कर सकती है। सरकार को ३२ दाँत हैं। ३३ थे, लेकिन एक ढीला पड़ गया। इसलिए सरकार की स्थिति बड़ी कठिन है। उसको अनेक लोगों को साथ लेकर चलना पड़ता है। मेरे शरीर के जैसी उसकी हालत है। मेरे पेट को दही अनुकूल है, लेकिन गले को अनुकूल नहीं। गले को दूध अनुकूल है, लेकिन पेट को वह अनुकूल नहीं। माथी मलद्वार के लिए अनुकूल है, लेकिन पेट को अनुकूल नहीं है। इसबगोल पेट को अनुकूल है, लेकिन मलद्वार को अनुकूल नहीं; तो पेट, गला, मलद्वार इन सबकी अलग-अलग स्थिति होते हुए भी बाबा कुशलता से शरीर से काम लेता है। वैसे सरकार की कठिन दशा होते हुए भी कर्पूरीजी प्रिय बनकर आपसे काम लेंगे। 'राम ही केवल प्रेमपियारा' जनता पर प्रेम करना ही राम पर प्रेम करना है।

बाबा की दूसरी शर्त यह है कि करुणा के बगैर किया कोई काम की नहीं। इसलिए बाबा के करुणा-कार्य में आपका सहयोग मिलना चाहिए। बिहार में हर २-३ गाँवों के पीछे स्कूल हैं, शिक्षक सब जगह हैं। गाँव-गाँव में ग्रामसभा बनाने के काम में वे मदद करेंगे। वे यदि मार्गदर्शन का और नेतृत्व का जिम्मा उठायेंगे तो शिक्षकों के द्वारा बहुत काम होगा। आचार्यों ने ही भारत को बनाया है। आधुनिक जर्मनी को शिक्षकों ने बनाया, ऐसा कहा जाता है। आप यदि ग्रामदान-आन्दोलन में अपना छुट्टी का समय देंगे तो आपके दिल को भी सन्तोष होगा। दुनिया में आत्मसन्तोष से बढ़कर कोई चीज नहीं है। दीन-दुखियों की सेवा से जो आत्मसन्तोष प्राप्त होता है, वही मनुष्य-जन्म में सबसे श्रेष्ठ प्राप्ति है। अब बिहार-दान की बात हो रही है, इसलिए बाबा के साथ आपका पूरा सहयोग मिलना चाहिए। आप अध्यापन का काम करते हैं। उसके साथ ग्रामदान का काम करेंगे तो अध्यापन का बायप्राडक्ट (उपजात) यह होगा। पदयात्रा में बाबा ने जो अध्ययन किया, उसमें से कुछ ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं, वह बाबा की पदयात्रा का बायप्राडक्ट है। और, कई दफा कारखाने को बायप्राडक्टस से ही अधिक लाभ होता है। तो, आप बाय प्राडक्ट के तौर पर इस काम को उठा लें।

अब तीसरी बात, आपको अपने को राजनीति से ऊँचा रखना चाहिए। राजनीति का अध्ययन जरूर करना चाहिए; चिन्तन-मनन होना चाहिए, लेकिन पार्टी-पालिटिक्स (दलगत राजनीति) या पावर-पालिटिक्स (सत्तागत राजनीति) जिसको कहते हैं, उससे अपने को ऊपर रखना चाहिए। इसीमें शिक्षक का गौरव है। वैसा आप करेंगे तो चन्द दिनों में आपकी ताकत बढ़ेगी। आज आपकी हैसियत नौकर की है, वह गुरु की बननी चाहिए। जीवन में व्यक्तिगत समस्या उपस्थित होती है, तब गुरु की सलाह ली जाती है। गुरु तटस्थ होते हैं, इसलिए श्रेष्ठ सलाह गुरु की मानी जाती है। आज कितने विद्यार्थी अपनी निजी समस्या लेकर शिक्षक के पास जाते हैं? मीराबाई के जीवन में निर्णय करने का कठिन प्रसंग आया, तब वह तुलसीदास के पास सलाह माँगने गयी। तुलसीदास ने लिख दिया—"जा के प्रिय न राम वैदेही, सो छाँड़िये कोटि वैरी सम, यद्यपि परम सनेही।" फिर लिखा—"तज्यो पिता प्रह्लाद, विभीषण बंधु, भरत महतारी।" अन्त में लिखा—"तू तो मतो हमारो"—हमारा मत यह है। आपको जो करना हो करो। तो, ऐसी गुरु की हैसियत शिक्षकों की होनी चाहिए। वह राजनीति से ऊपर उठने से और लोकशिक्षण के कार्य से होगी।

पूसा रोड, १-१२-'६७ —विनोबा

क्रान्ति का माध्यम

आज की हमारी शिक्षा पद्धति और समाज की स्थिति में बहुत विसंगति है। हमारा देश अल्प-विकसित (अंडर डेवलप्ड) है। हमारी शिक्षा-प्रणाली ऐसी होनी चाहिए कि उस प्रणाली की परिणति ही राष्ट्रीय विकास में हो। गांधीजी ने बहुत पहले इस बात को रखा। फिर दूसरे शिक्षा-शास्त्रियों ने भी इस चीज को दोहराया। अभी जो कोठारी-कमिशन की रिपोर्ट प्रकाशित हुई है, उसमें उसकी ओर इशारा है।

लेकिन आज की शिक्षा-पद्धति नौकरी का पासपोर्ट देनेवाली है। पढ़कर हम विद्वान् या सुसंस्कृत बने, इसके लिए कोई नहीं पढ़ता है। इस शिक्षा पद्धति में से स्वतंत्र नागरिक का निर्माण ही नहीं होता।

मैं हमेशा कहता हूँ कि 'जनरल एजुकेशन' (सामान्य शिक्षण) होना चाहिए। आज की शिक्षा व्होकेशनल (व्यावसायिक) है। एक केडर (ढाँचा) बनाने के लिए यह शिक्षण है। नतीजा यह हुआ है कि शिक्षा का स्तर गिर गया है और अनुशासन हीनता

परिस्थिति का सामना करना पड़ेगा, उसकी तैयारी कर देनी होगी। इसलिए शिक्षकों को अपनी भूमिका (रोल) और अपनी जिम्मेवारी ठीक-ठीक समझनी होगी। समाज को काल-प्रवाह के साथ ले जाने की जिम्मेवारी शिक्षकों की है। समाज का नेतृत्व करने की जिम्मेवारी शिक्षक की है। शिक्षण और प्रशासन, यह परस्पर-विरोधी चीज है।

पूसा रोड, ८-१२-'६७ —धीरेन्द्र मजूमदार

निर्माण का आधार

शिक्षा-प्रणाली बदले ......शिक्षा का सम्बन्ध नौकरी से नहीं......डिग्रियाँ समाप्त की जायँ......युवकों की स्थिति चिन्तनीय......हम सब जिम्मेदार......विधायक मोड़ दें......शर्म की बात......राष्ट्रीय एकात्म का बोध......कालेजों में तरुण शान्ति-सेना......दुहरा फायदा

एक घंटा पहले ही मुझे कहा गया कि मुझे इस परिषद् की अध्यक्षता आज करनी है। अभी आपने धीरेन्द्रभाई का भाषण सुना। वे अच्छे शिक्षा-शास्त्री हैं, यद्यपि वे खुद अपने को शिक्षा-शास्त्री नहीं मानते हैं। लेकिन यह उनकी नम्रता है। मैं उस नम्रता के खयाल से नहीं, बल्कि वस्तुस्थिति के खयाल से कहता हूँ कि मैं कोई शिक्षा-शास्त्री नहीं हूँ। फिर भी एक दो बातें आपके सामने रखना चाहता हूँ।

प्रारंभ में मैं कर्पूरी ठाकुर को मुबारकबाद देना चाहता हूँ कि उन्होंने बिहार के सारे प्रिंसिपलों (प्राचार्यों) की गोष्ठी का यह आयोजन किया। आप लोग अनौपचारिक तौर पर यहाँ इकट्ठे हुए हैं, फिर भी आप लोगों ने आपस में चर्चा की, चार गोष्ठियों में गहरा चिन्तन किया और कुछ सर्वसम्मत सुझाव पेश किये। यह उपक्रम बहुत ही प्रशंसनीय है।

बिहार प्रदेश के शिक्षा-क्षेत्र की क्या हालत है, यह हम सब जानते हैं। यह सम्मेलन इसीलिए बुलाया गया है कि उस हालत में सुधार का कोई मार्ग निकले। बिहार सरकार ने जो अध्यादेश जारी किया है, उस सम्बन्ध में इस समय मैं नहीं कहूँगा। लेकिन आपके सम्मेलन में त्रिगुण सेन आये, अन्य शिक्षा-विशारद भी आये तो मैं आशा करता हूँ कि बिहार के शिक्षा जगत् का नक्शा कुछ सुधरेगा।

अभी धीरेन्द्रभाई ने जो बात कही उसीको मैं थोड़ा आगे ले जाकर कहना चाहता हूँ। यह मेरे अकेले का विचार है ऐसी बात नहीं है। शिक्षा शास्त्रियों ने भी इस विषय पर सोचा है। आज जो शिक्षा-प्रणाली चल रही है वह अंग्रेजों की कायम की हुई है। यह नौकर पैदा करने की प्रणाली है। शिक्षण किसलिए? तो नौकरी के लिए। यह शिक्षण और नौकरी का सम्बन्ध तोड़ना चाहिए, तभी शिक्षा का उद्धार होगा। सरकार की तरफ से यह घोषणा की जानी चाहिए कि "नौकरी के लिए डिग्री का कोई मूल्य नहीं है। जिस पद के लिए हमें लोग चाहिए, उसका विज्ञापन हम निकालेंगे और उसके लिए क्या योग्यता चाहिए, इसका ऐलान करेंगे। उम्मीदवारों की हम अलग से परीक्षा लेंगे और उसमें जो सफल होंगे उनमें से लोगों का चुनाव करेंगे।" यह चीज जब तक नहीं होती तब तक चाहे जितनी बार शिक्षा-सुधार की बात दोहराते रहिये, शिक्षा का उद्धार नहीं होगा।

इसका दूसरा पहलू यह होगा कि डिग्रियाँ और परीक्षाएँ समाप्त की जानी चाहिए। प्रायमरी से हाईस्कूल तक जो भी आठ या दस साल रखने हों और उनमें प्रायमरी, सेकेंडरी, मिडिल इत्यादि जो विभाग करने हों वे किये जायँ, लेकिन सर्टिफिकेट (प्रमाण पत्र) इतना ही दिया जाय कि अमुक लड़का इतने साल अमुक विद्यालय में अमुक विषय लेकर पढ़ा। इसके बाद उसको विश्वविद्यालय में जाना हो तो जैसे आज का ३ या ४ साल का अभ्यासक्रम है, उसमें वह पढ़ेगा। वहाँ से भी उसको इतना ही प्रमाण पत्र दिया जाय कि अमुक विषय लेकर वह अमुक कालेज में अमुक साल पढ़ा। इतने प्रमाण-पत्र पर उस विद्यार्थी को नौकरी नहीं मिलेगी। उसको जहाँ नौकरी के लिए जाना होगा वहाँ उसको उस विभाग की परीक्षा देनी पड़ेगी।

इस दिशा में अन्य राष्ट्रों के अनुभव भी जाने जायँ। आज भी डिग्री क्लास के अलावा अलग-अलग डिपार्टमेंट (विभाग) की अपनी ट्रेनिंग (प्रशिक्षण) है ही। सरकार ऐसी विशिष्ट ट्रेनिंग रखे। तब विद्यार्थी को भी यह निश्चित रूप से मालूम होगा कि वह क्या बनने के लिए प्रशिक्षण ले रहा है।

चीन ने परीक्षाएँ रद्द कर दी हैं। यह रेडिकल (बुनियादी) बात लगती है। लेकिन शायद यह अधिक व्यावहारिक है। मैं अपने देश के युवकों की हालत से बहुत चिंतित हूँ। इसमें युवकों का दोष नहीं है। युवक हमारे पास शिक्षण के लिए आते हैं। वे मिट्टी हैं और शिक्षक कुम्हार हैं। घड़ा अगर ठीक नहीं बना तो कुम्हार का दोष है। आज युवकों की जो चिंताजनक हालत है उसके लिए अपना समाज, माता पिता, शिक्षक, युनिवर्सिटियाँ, सरकार, सब जिम्मेवार हैं। अन्य प्रदेशों की तुलना में बिहार शिक्षा के मामले में और भी कमजोर है। शायद बिहार का नम्बर सबसे नीचे का होगा। यह प्रदेश वैसे ही पिछड़ा है। शिक्षा की यही हालत रही तो और भी पिछड़ेगा। इसीलिए मेरा सुझाव है कि विद्यार्थियों को विधायक कार्य की दिशा में मोड़ना चाहिए। राज्य की ओर से वह अनिवार्य न किया जाय, बल्कि ऐच्छिक रखा जाय। यदि अच्छा और ठोस आयोजन बनाकर विद्यार्थियों के सामने रखा जाय तो कुछ चुने हुए विद्यार्थी इसमें आकर्षित हो जायेंगे और धीरे-धीरे आगे राह खुल जायगी। शुरू में भले वह छोटी धारा दिखे, लेकिन आगे चलकर वह गंगा का रूप लेगी।

अभी कुछ दिन पहले बिहार के अकाल-ग्रस्त क्षेत्र में विद्यार्थियों का एक शिविर अखिल भारत शांति-सेना मण्डल ने किया था। उसमें बिहार से और बिहार के बाहर से भी विद्यार्थी आये थे। रामजी भाई (रामजी सिंह, प्राध्यापक, भागलपुर विश्वविद्यालय) के मार्गदर्शन में भागलपुर क्षेत्र में एक टोली ने जो काम किया, उसमें विद्यार्थियों को अच्छा

शिक्षण मिला। शिविर के कार्यक्रम के साथ-साथ उन्होंने राहत और सेवा का काम किया। आश्चर्य होता है कि बिहार में कहाँ-कहाँ से लोग सेवा-कार्य के लिए आये थे। अमेरिका, इंग्लैंड, प० जर्मनी, आस्ट्रेलिया इत्यादि कई देशों के युवक यहाँ आये, तो हमारे देश के युवक क्यों न आये! एक जगह पर गया में 'पीस कोर' का एक युवक मई की कड़ी धूप में चापाकल (हैंडपप) लगा रहा था। मैंने उसे कहा, "तुमको इतनी कड़ी धूप की आदत नहीं, सनस्ट्रोक (लू) हो जायगा। तुम जून के बाद आओ।" उसने कहा, "मैं सुबह ४ से १० बजे तक और शाम को ४ से ८ बजे तक काम करूँगा तो सनस्ट्रोक नहीं होगा।" गाँव के लोग देखकर ताज्जुब में पड़ गये। गाँव के किसान कहते थे, यह आदमी तो भूत है! हम छः आदमी जितना काम करेंगे उतना वह अकेला कर देता है। तो मैंने बिहार के विद्यार्थियों के सामने बात रखी कि अमेरिका, इङ्गलैंड जैसे दूर-दूर के देशों के विद्यार्थी हमारे यहाँ आकर काम करते हैं और हमारे विद्यार्थी आगे नहीं आते हैं, यह शरम की बात है। तब विद्यार्थियों ने कहा कि इस तरह शिक्षण की कोई व्यवस्था तो करें। उनका कहना ठीक था।

शांति-सेना की स्थापना गांधीजी ने सन् १९२० में की। फिर आजादी की लड़ाई के कार्यक्रमों में वे व्यस्त रहे। आजादी के बाद उनका जो बलिदान हुआ वह आदर्श शांति-सैनिक का हुआ। इसी विचार को विनोबा ने आगे बढ़ाकर अखिल भारत शांति सेना मंडल का गठन किया। किशोर शांति दल का कार्यक्रम गुजरात में चलाया। गरमी की छुट्टियों के दिनों में एक महीने का शिविर किया। बहुत सफल रहा। इसके बाद शांति-सेना मंडल ने अखिल भारतीय स्तर का किशोर शांति सेना का शिविर हर साल चलाया। देश के विभिन्न प्रदेशों से विद्यार्थी आते हैं, एक-साथ रहते हैं, मिल जुलकर काम करते हैं, राष्ट्रीय एकात्मा का उनको बोध होता है, शांति की तरफ झुकाव बढ़ता है। यह शिविर केवल आंतरप्रांतीय ही नहीं, बल्कि आंतरदेशीय भी हुआ। अगले वर्ष नागालैंड में ऐसा शिविर करने का सोच रहे हैं। मैंने 'स्टूडेंट्स नेशनल रीकन्स्ट्रक्शन कोर' का विचार रखा उसीको सुव्यवस्थित रूप देने के लिए तरुण शांति सेना का यह प्रारूप बनाया है। अंग्रेजी में इसे 'यूथ पीस कोर' नाम दिया है।

इस तरुण शांति-सेना की पृष्ठभूमि आप लोगों के सामने रखूँ और इस काम में आपसे मदद माँगूँ ऐसा मैंने सोचा। हर कालेज में तरुण शांति सेना का केन्द्र बने ऐसा मैं चाहता हूँ। मैं इसको अनिवार्य बनाने के पक्ष में नहीं हूँ। जो चीज अनिवार्य की जाती है, उसमें आगे चलकर ढोंग बढ़ता है। इसलिए इसको ऐच्छिक रखा जाय। मैं नहीं चाहता कि यह सरकार की चीज बने। बड़ी अजीब बात है अपने देश में कि अच्छी चीज को भी जब सरकार छूती है तो वह बिगड़ जाती है। जवाहरलालजी ने यही बात कम्युनिटी डेवलपमेंट के बारे में कही थी। इसलिए इस काम में मैं आपका व्यक्तिगत सहयोग चाहता हूँ। जिन लोगों को स्फूर्ति हो वे मुझे मदद करें। इससे मैं एक पत्थर में दो चिड़ियाँ मारना चाहता हूँ। एक चिड़िया है विद्यार्थियों का चरित्र-निर्माण और दूसरी चिड़िया है बिहार का उत्थान। अपने देश में लाखों विद्यार्थी और हजारों शिक्षकगण हैं। आपके हृदय से प्रेरणा निकलेगी तब इस काम में बल आयगा। इसमें विद्यार्थियों को किसी तरह का प्रलोभन न दिखाया जाय। इसमें शरीक हो आगे तो सरकारी नौकरी में अग्रिमता दी जायगी, इत्यादि बातें न कही जायँ।

पूसा रोड —जयप्रकाश नारायण

९-१२-'६७

जागतिक संत्रास
और
आत्मा की घुटन

मानव मन : आतंक की कारा में

सम्प्रदायवादी
सत्तावादी
साम्यवादी
समृद्धिवादी

मुक्ति की तड़प और टूटते डैने

नेगो
डिजिलस
पेस्टरनाक
फ्रंटियर गांधी
साने गुरुजी

अस्तित्ववाद :

निराश आत्मा की आवाज

सार्त्र
कामू

हिप्पीवाद : विद्रोह की भटकन

दलों के दलदल
भविष्यहीन नयी पीढ़ी
आक्रोश का उभाड़
प्रक्षोभ का विस्फोट

सत्याग्रह : आरोहण का नया आयाम

सर्व का सत्य
सर्व की शक्ति
सर्व की मुक्ति

३० जनवरी '६८ को प्रकाशित हो रहे

'भूदान यज्ञ' के आगामी सत्याग्रह विशेषांक में प्रस्तुत होनेवाले एक निबन्ध का संक्षिप्त परिचय

★ कथनी और करनी

★ विकास बनाम पिछड़ापन

संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी के श्री मधु लिमये ने भाषा-विवाद के सम्बन्ध में बोलते हुए एक बहुत दिलचस्प बात कही थी। आम तौर पर यह समझा जाता है कि हिन्दी का विरोध दक्षिणवाले या गैरहिन्दी प्रान्तों के लोग करते हैं। पर श्री मधु लिमये के अनुसार हिन्दी के वास्तविक विरोधी हिन्दी-भाषी प्रान्तों के ही "कौल", "झा", और "सिंह" लोग हैं जो सरकारी नौकरियों में ऊँचे पदों पर हैं और जिन्हें यह डर है कि अगर अंग्रेजी की जगह हिन्दी ने ले ली तो सरकारी नौकरियों में आज जो उनका एकाधिपत्य-सा है वह खतम हो जायगा।

वास्तव में अंग्रेजी और हिन्दी का आज जो झगड़ा चल रहा है उसके मूल में बहुत कुछ यह नौकरियाँ जाने का डर या नौकरियाँ पाने का लालच ही काम कर रहा है। जहाँ हिन्दी के विरोध के पीछे अहिन्दी-भाषियों का यह डर है कि वे लोग फिर केन्द्रीय नौकरियों में घाटे में रहेंगे, वहाँ देश के संविधान में हिन्दी को राजभाषा मान लिये जाने के बावजूद पिछले १७ वर्ष में राज्य की ओर से—और राज्य का मतलब ऊँचे अफसरों और राजनीतिक नेताओं का होता है—हिन्दी को आगे बढ़ाने के मामले में जो अक्षम्य, बल्कि दयनीय, दिखाई हुई है उसके मूल में भी इन ऊँचे तबके के लोगों के अपने निहित स्वार्थ रहे हैं।

यों तो सामान्य तौर पर आदमी की कथनी और करनी में अन्तर रहता ही है, लेकिन जब तक वह अन्तर समान दिशा की ओर बढ़नेवाली रेखाओं का अन्तर होता है तब तक वह इतना आश्चर्यजनक या आपत्तिजनक नहीं माना जाएगा। पर आज के सार्वजनिक जीवन में मानों यह मान ही लिया गया है कि करनी का कथनी से मेल हो यह कतई जरूरी नहीं—बल्कि करनी कथनी से बिलकुल उल्टी दिशा में भी हो सकती है। तभी तो जो लोग जुलूसों और सभाओं में या लोकसभा के मंच या शासन की कुर्सी पर से, हिन्दी का जोरदार समर्थन करते हैं वे ही अपने बाल बच्चों को अंग्रेजी-माध्यम के स्कूलों में पढ़ाने के लिए अत्यधिक लालायित रहते हैं। अभी दैनिक 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के एक संवाददाता ने दिल्ली शहर की अंग्रेजी माध्यम की स्कूलों का भ्रमण करके जो तथ्य प्रकाशित किये हैं, वे जहाँ एक ओर दिलचस्प हैं वहाँ दूसरी ओर अत्यन्त आश्चर्यजनक और खेदजनक भी। इस संवाददाता ने बतलाया है कि राजधानी के ऊँचे तबके के लोग—चाहे वे मंत्री हों, राजनीतिक नेता हों, अखबारनवीस हों, हिन्दी के लेखक हों या सरकारी अफसर—सब अपने बच्चों की पढ़ाई के लिए अंग्रेजी-माध्यम के स्कूल पसंद करते हैं। संवाददाता का कहना है कि "नेता लोग अपने बच्चों को इन विशिष्ट स्कूलों में भर्ती कराने के लिए हर प्रकार के प्रभाव और दबाव को काम में लेते हैं। एक "कन्वेन्ट" या पादरी स्कूल में जिसमें केवल १० स्थान हैं उसमें जनवरी से शुरू होनेवाले सत्र के लिए बड़े-बड़े लोगों के बच्चों की डेढ़ सौ अर्जियाँ आ चुकी हैं। एक अन्य अंग्रेजी माध्यम के स्कूल में हर स्थान के पीछे १० अर्जियाँ आयी हैं। अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम से पढ़ानेवालों में दिल्ली जनसंघ के अध्यक्ष श्री हरदयाल देवगुण और जनसंघ के तीन लोकसभा-सदस्य भी हैं, जब कि जनसंघ हिन्दी के पक्षपात और अंग्रेजी के विरोध में हमेशा आगे रहता है। इसी प्रकार कांग्रेस के कई मन्त्री और लोकसभा के सदस्य भी, जिनमें डा० रामसुभग सिंह, श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा, श्री विद्याचरण शुक्ल, श्री जगजीवनराम, श्री के० सी० पंत, श्री भगवत झा आजाद, श्री सत्यप्रकाश, श्री के० एल० श्रीमाली, श्री नाथ पाई और श्री के० के० शाह आदि हैं, अपने बच्चों को अंग्रेजी-माध्यम के स्कूलों में पढ़ा रहे हैं!"

साधारण आदमी इन सब बातों से किंकर्तव्यमूढ़ न हो तो क्या हो!

•

आजकल किसी भी विषय के आँकड़े देकर उसके मनपसन्द नतीजा निकालने की कला ऐसी विकसित हुई है कि उससे भोले लोगों को आसानी से भ्रम में डाला जा सकता है। दूसरे शब्दों में और बिना लाग-लपेट के कहें तो, उन्हें आसानी से बेवकूफ बनाया जा सकता है। अखबार, रेडियो, टेलीवीजन, प्रकाशन व्यापार आदि प्रचार के साधनों का संचालन पढ़े लिखे वर्ग के हाथ में होने से यह वर्ग स्याह को सफेद और सफेद को स्याह बनाकर जनसाधारण के शोषण के कैसे कैसे प्रच्छन्न तरीके इजाद करता रहता है, यह अध्ययन का एक बड़ा दिलचस्प विषय है।

दिल्ली के अंग्रेजी दैनिक 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' के ता० १ दिसम्बर के अंक में दन्त-चिकित्सा के बारे में एक सम्पादकीय नोट है। भिन्न भिन्न मुल्कों में वहाँ की जन-संख्या के अनुपात में दाँत के डाक्टर कितने हैं, इसके आँकड़े इस तरह से पेश किये गये हैं, जिससे पढ़नेवाले पर ऐसा असर होता है कि हिन्दुस्तान और अफ्रीकी मुल्क इस मामले में कितने पिछड़े हुए हैं। "अमेरिका में हर २,६२० व्यक्तियों के पीछे एक दाँत का डाक्टर है, जब कि एशिया में यह अनुपात १ : १७००० और अफ्रीका में १ : ८१००० है; इस मामले में हिन्दुस्तान की स्थिति कुल एशिया की अपेक्षा भी बदतर है। यहाँ ७५ हजार के पीछे एक दाँत का डाक्टर है।" टिप्पणी लिखनेवाले इस 'शिक्षित' भाई की समझ में यह नहीं आता कि किसी देश में डाक्टरों की या रोगियों की संख्या कम हो-- पिछड़ेपन की नहीं, बल्कि अच्छाई की निशा[ni] हो सकती है। हर बात के बारे में यह न[hi] कहा जा सकता कि उसमें 'पीछे' होना दु.ख या चिंता की ही बात है। बल्कि बुरी बातों में पीछे होना संतोष की और गौरव की बात भी हो सकती है।

अमेरिका में अगर हर ढाई हजार व्यक्तियों के पीछे एक दाँत का डाक्टर है तो उसका कारण अमेरिका की प्रगतिशीलता नहीं, बल्कि यह है कि दाँत के रोग वहाँ बहुत फैले हुए हैं। ता० २७ नवम्बर के अमेरिकन साप्ताहिक 'न्यूजवीक' में, (पृष्ठ ४०) इस विषय की कुछ चौंकानेवाली जानकारी दी→

→है। 'न्यूजवीक' ने लिखा है—"दाँत के रोग अमेरिका के रोगों में पहले नम्बर पर हैं, तीन चौथाई अमेरिकन एक या दूसरे प्रकार के मसूड़ों के रोग से पीड़ित हैं। हर औसत बालिग अमेरिकन के दाँतों म से २० ऐसे हैं जो गल चुके हैं, या तो कृत्रिम तौर पर लगाये हुए हैं या बिल्कुल लापता हैं।

यह सामान्य ज्ञान और अनुभव की बात है कि शहरी जीवन इतना अस्वाभाविक, कृत्रिम और प्रकृति से दूर होता है कि वहाँ रोगों की भरमार होती है। सच तो यह है कि हिन्दुस्तान में व्यक्तिगत सफाई की परपराओं के कारण और शहरी सभ्यता अभी ज्यादा न फैली होने के कारण यहाँ दाँत के रोग, तथा अन्य रोग भी, अमेरिका जैसे सभ्य कहे जानेवाले देशों की अपेक्षा कम हैं। हिन्दुस्तान में आज भी सबेरे गाँव-गाँव में *लोग नीम या बबूल या बाँस आदि के* दातुन करते दिखाई देंगे। यूरोप और अमेरिका में इस तरह दाँत साफ करने की परपरा ही नहीं *रही है। कुछ वर्षों के लोग ब्रश के जरिये* करने लगे हैं, पर जिससे मसूड़े कटते हैं, रोगों उल्टी वृद्धि होती है और दाँत जल्दी ढीले पड़ते हैं। अफ्रीका के निवासियों का जीवन भी अभी तक प्रकृति के इतना नजदीक है कि उनकी दंतावली दुनिया की अन्य जातियों की अपेक्षा ज्यादा समान और मजबूत मानी जाती हैं। और डाक्टरों की संख्या ज्यादा होने *का मतलब यह कदापि नहीं है कि उसके* कारण सामान्य जनता को अच्छी और आवश्यक सेवा मिलती है। बल्कि आज के *अर्थ और भोगप्रधान* युग में जिस तरह शिक्षित (!) और होशियार लोगों के हाथ में हर चीज भोली जनता के शोषण का साधन बन गयी है, उसी तरह डाक्टरी का पेशा भी।

जिस अमेरिका का 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के सम्पादकीय टिप्पणी के लेखक *जैसे लोग* उदाहरण पेश करते हैं, वहाँ सामान्य लोगों का किस प्रकार शोषण होता है इसकी भी थोड़ी जानकारी वे *साथ साथ लोगों को देते* रहें तो अच्छा हो। 'न्यूजवीक' के अनुसार अमेरिका में बच्चों के दाँत सीधे करने की *फीस करीब दस हजार रुपये* लग जाती है, जब कि रोगी का जबड़ा ठीक करने और दाँतों को दुरुस्त करने के लिए ५ हजार डालर यानी ३७ हजार रुपये तक! दाँत के डाक्टर लोगों को रोगों से डराकर कैसे ठगते हैं उसका एक उदाहरण भी 'न्यूजवीक' *ने दिया है। न्यूयार्क* के एक गृहस्थ को एक डाक्टर ने बताया कि उसकी दोनों लड़कियों को दन्त चिकित्सा की *आवश्यकता है* और उसका खर्च प्रति बच्ची ढाई हजार डालर यानी करीब १८ हजार रुपया होगा। वह गृहस्थ बड़ी परेशानी में पड़ गया, एक ओर लड़कियों की चिकित्सा कराने का कर्तव्य और दूसरी ओर इतना भारी खर्च! सौभाग्य से उसने दूसरे एक डाक्टर से सलाह ली तो मालूम हुआ कि एक बच्ची को तो किसी प्रकार की खास चिकित्सा की जरूरत ही *नहीं है* और दूसरी के *लिए भी* मामूली खर्च होगा।

जाहिर है कि सभ्यता पर भी कीमत चुकानी पड़ती है!

पटना —सिद्धराज ढड्ढा
१८.१२.६७

ग्रामदान प्रखण्डदान अभियान

आगरा में अनुमण्डलदान आगरा *जिले के खैरागढ़ तहसील में सैंया* प्रखण्ड का प्रखण्डदान गत ११ सितम्बर को हो चुका था। इसके बाद इसी तहसील के दो अन्य *प्रखण्ड—जगनेर और खैरागढ़ में ३ दिसम्बर* से १० दिसम्बर तक डा० पटनायक के नेतृत्व में ग्रामदान अभियान चला। फलश्रुति का विवरण यहाँ दिया जा रहा है।

विवरण	प्रखण्ड जगनेर	खैरागढ़	सैंया
कुल ग्राम .	८९	७०	१०९
ग्रामदान में शामिल	८३	५८	९७
प्रतिशत	९४	८२	८९
कुल जनसंख्या	४१७२५	५३१७५	
ग्रामदान में शामिल .	३९५७५	४२१८५	...
प्रतिशत	८१	७९.३३	
कुल भूमि (एकड़ में)	४७०७२	४५८७५	..
ग्रामदान में *शामिल* .	३२९९८	३०४३५	
प्रतिशत .	७०	६६	...

पूरी तहसील में कुल ग्राम २६८
ग्रामदान में शामिल २३८
प्रतिशत ८८.७५

इस तरह खैरागढ़ तहसील के तीनों प्रखण्डों में ८८ प्रतिशत से अधिक गाँव ग्रामदान में सम्मिलित हो चुके हैं। श्री कपिल भाई की सूचनानुसार अब तक उत्तर प्रदेश म कुल १३ प्रखण्ड दान और ३ *अनुमण्डलदान* हो चुके हैं। बलिया का नवानगर प्रखण्ड भी प्रखण्डदान के करीब पहुँच गया है।

—चन्द्रदत्त पांडे, आगरा

जमशेदपुर : १७ दिसम्बर। आज *बिहार के भूतपूर्व मुख्यमंत्री तथा राज्य पंचायत* परिषद् के वर्तमान अध्यक्ष प० विनोदानंद झा की अध्यक्षता में सिंहभूम जिले के राजनीतिक, सामाजिक, संस्थाओं के प्रतिनिधियों की बैठक जिला शान्ति-सेना समिति के कार्यालय में हुई। बैठक में सर्वसम्मति से तय किया गया कि २ अक्तूबर '६९ तक सिंहभूमि का जिलादान हो जाना चाहिए। इस संकल्प को दृष्टि में रखकर आगे की योजना बनायी जा रही है ताकि २ अक्तूबर ६८ तक विनोबाजी के विचारानुसार बिहार दान के संकल्प के निकट हम पहुँच सकें।

—लखनलाल सिंह, जमशेदपुर

मिरजापुर, १८ दिसम्बर। मिरजापुर जिले की दुद्धी तहसील के म्योरपुर प्रखण्ड में वनवासी आश्रम के संयोजकत्व में गत १ से १५ दिसम्बर तक ९ टोलियाँ *ग्रामदान-पद*यात्रा पर निकलीं। इनका शिविर १६-१७ दिसम्बर को गोविन्दपुर में हुआ। तीन टोलियों को चार ग्रामदान प्राप्त हुए—*कोटी* (नवडीहा) अघोरा, लोहवा और बीसहरा (सुबरा)। अब तीसरी बार १२ *टोलियाँ* पदयात्रा पर निकली हैं। इनका अगला

शिविर १-२ जनवरी को कनवाही सेवा आश्रम गोविन्दपुर में होगा।

—देवनारायण मिश्र, मिरजापुर

अक्कलकोट : १० दिसम्बर। सोलापुर जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री विट्ठलराव मडके की प्रेरणा से अक्कलकोट तहसील में करजगपुर गाँव से ग्रामदान-अभियान की हलचल शुरू हुई है। —शाम्भा नवले

बोर्डी : १४ दिसम्बर। थाना जिले के पालघर तहसील में जिलादान की दृष्टि से ३ से ११ दिसम्बर तक पदयात्राएँ चलीं। फलस्वरूप १२ ग्रामदान प्राप्त हुए। अब तक थाना जिले में ७१९ गाँव ग्रामदान में प्राप्त हुए हैं। —मुरलीधर घाटे, बोर्डी

भारत में ग्रामदान-प्रखण्डदान

(३ दिसम्बर '६७ तक)

प्रान्त	ग्रामदान	प्रखण्डदान
बिहार	१६,१०२	१०१
उत्कल	७,१७०	३२
आन्ध्र	४,२००	१०
तमिलनाड	३,३१६	२५
संयुक्त पंजाब	३,०४३	७
महाराष्ट्र	२,८११	११
मध्यप्रदेश	२,५५०	५
उत्तर प्रदेश	१,६५७	११
आसाम	१,४६३	१
राजस्थान	१,०२१	–
गुजरात	७५८	३
प० बंगाल	६२७	–
केरल	४०१	–
कर्नाटक	२२४	–
दिल्ली	७४	–
हिमालय प्रदेश	१७	–
	कुल : ४६,४१०	२०८

संगठन :

सिकन्दराबाद : २५ नवम्बर। चायबासा तहसील के ग्रामदानी गाँवों के संघ की सभा संघ के कार्यालय चायबासा में हुई, जिसमें ग्रामदानी गाँवों के अध्यक्ष सम्मिलित हुए। सभा में निम्नलिखित निर्णय लिये गये :

● हर ग्राम में कोष संग्रह किया जाय।

● गाँवों में खेती-विकास के लिए साधनों की आवश्यकता है। पिछले ९ वर्षों में लगातार अकाल पड़ने से किसानों के पास बैल-जोड़ियाँ नहीं हैं। बैल-जोड़ियों के लिए व कुओं के लिए राज्य सरकार व भारत सरकार से कर्ज के लिए प्रार्थना की जाय।

● ग्रामदानी गाँवों के विकास के लिए तथा ग्रामसभाओं के अध्यक्षों के पारस्परिक सहयोग के लिए हर अमावस्या को ग्रामदान-सभाएँ आयोजित की जायगी।

सभा की अध्यक्षता क्षेत्रीय संगठक श्री हनुमान प्रसाद शर्मा ने की। संयोजन क्षेत्रीय के ग्रामसहायक श्री कल्याण सहाय शर्मा कर रहे थे। —लोकभारती समाचार

शांति-केन्द्र से :

हरिणमार (मुंगेर) : २३ नवम्बर। सौवा बहियार गाँव में दस बीघे जमीन को लेकर दो दलों—श्री भोला कुँवर अहीर, ग्राम गाँव परबत्ता, मुंगेर एवं श्री भुवनेश्वर सिंह अहीर, महेशखूंट टोला रामपान, गोगरी, मुंगेर के बीच तनावपूर्ण स्थिति ने उग्र रूप धारण कर लिया। दोनों दलों के तरफ से घातक अस्त्र-शस्त्र से लैस लोग एक दूसरे पक्ष पर प्रहार के लिए उन्मत्त थे। उन्होंने से एक शुभेच्छु सज्जन ने शांति केन्द्र में आकर इस नर-संहार की सूचना दी। सूचना पाते ही अखिल भारतीय शांति-सेना के सदस्य श्री भुवनेश्वर प्रसाद सिंह अपने शान्तिप्रिय सहयोगियों—श्री कमलधारी सिंह, भोला दास, नारायण प्रसाद सिंह—के साथ घटनास्थल पर पहुँचे। वहाँ जाने पर स्थिति की वास्तविक जानकारी मिली। दोनों तरफ से लगभग ढाई हजार व्यक्ति इकट्ठे थे। लेकिन शांति-प्रिय लोगों ने अपनी निर्भयता का परिचय दिया और समाम-मैदान में जा डटे तथा लोगों को लड़ाई न करने के लिए बाध्य किया। दोनों पक्षों के लोगों को उसी मैदान में प्रेमपूर्वक बैठाया और झगड़े का निपटारा सामाजिक पंचायत द्वारा हो, इसके लिए दोनों पक्षों को राजी किया। इस तरह उस दिन सैकड़ों लोगों को हताहत होने से बचा लिया गया। —भुवनेश्वर प्र० सिंह, संयोजक

चम्बल घाटी से :

बाह (आगरा), ७ दिसम्बर। गत ५ और ६ दिसम्बर को चम्बल-घाटी क्षेत्र, जिला आगरा और इटावा में विनोबाजी द्वारा गठित चम्बल घाटी शान्ति-समिति के तत्वावधान में उत्तर प्रदेश के राजस्व मंत्री श्री उदित नारायण शर्मा का व्यापक कार्यक्रम रहा है। राजस्व-मंत्री ने विनोबाजी के समक्ष आत्मसमर्पण करनेवाले बागी भाइयों से, जो कि इस समय मुकदमों से मुक्त होकर शान्तिमय नागरिक जीवन व्यतीत कर रहे हैं, पुरागुमान सिंह तथा लेढा राठौर से भेंट की। उनके बदले हुए विचारों और जीवन से राजस्व-मंत्रीजी को बहुत प्रसन्नता हुई। चम्बल घाटी शान्ति समिति द्वारा चलाये जा रहे खादी-ग्रामोद्योग के कार्यों को भी मंत्रीजी ने देखा। चम्बल घाटी शान्ति समिति के शान्ति एवं विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों एवं जनता में कार्यकर्ताओं के प्रति श्रद्धा और विश्वास को देखकर मंत्रीजी ने कार्यकर्ताओं का अभिनन्दन किया।

साहित्य सेवा :

इन्दौर : नगर में सर्वोदय साहित्य भण्डार द्वारा गत ६ वर्षों में आज तक कुल ३,३६,२०९ रु० की साहित्य-बिक्री हुई। नगर में साहित्य भण्डार के तीन केन्द्र—विसर्जन आश्रम में जुलाई '६१ से, हेमिल्टन रोड पर मई '६२ से, महात्मा गांधी रोड पर नवम्बर '६४ से चल रहे हैं। इन्दौर रेलवे स्टेशन पर भी अप्रैल १९६४ से साहित्य बिक्री का रेलवे स्टाल खुला है। भण्डार द्वारा अभी तक १४० विचार गोष्ठियाँ भी हुईं। पिछले ६ वर्षों में अभी तक मुख्यतः सर्व सेवा संघ-प्रकाशन का १,०१,८२० रु० का, सस्ता साहित्य मण्डल का १५,५७५ रु० का और नवजीवन ट्रस्ट का १६,४०० रु० का साहित्य बेचा गया। मई '६७ से अक्तूबर '६७ तक भण्डारों पर कुल १३,००० रु० की और रेलवे स्टाल पर ६,८४६ रुपये की साहित्य-बिक्री हुई। यहाँ की बिक्री में ७० प्रतिशत गांधी-साहित्य और सर्वोदय-साहित्य तथा २५ प्रतिशत आध्यात्मिक साहित्य रहा। पिछले ६ महीनों की साहित्य बिक्री में सर्व सेवा संघ-प्रकाशन का साहित्य ४२ प्रतिशत रहा। —संवाददाता

आखिरी डाक से

ग्रामदान-अभियान :

सारन : १५ दिसम्बर। श्री जयप्रकाश नारायणजी को दाउदपुर के लोगों ने १३२२ रु० ४१ पैसे की थैली भेंट की। रास्ते इकमा में श्री रामाश्रय सिंह ने १३१ रु० की थैली अर्पित की। रघुनाथपुर की एक बड़ी आमसभा में, जिसकी अध्यक्षता श्री रामदेव सिंहजी (स्थानीय विधायक) ने की, श्री जयप्रकाशजी ने देश की समस्याओं के अनुबन्ध में ग्रामदान का विवेचन किया। स्वागताध्यक्ष श्री नागेन्द्र सिंहजी ने ५००१ रु० की थैली अर्पित की। ८ बजे शाम को बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ-सीवान के प्रांगण में खादी एवं सर्वोदय के कार्यकर्ताओं के बीच उनका भाषण हुआ। उसी अवसर पर बरौली प्रखण्ड का प्रखण्डवासियों की ओर से दान श्री शुकदेव सिंह ने अर्पित किया। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ की तरफ से श्री रामशरण सिंहजी ने १००१ रु० की थैली अर्पित की। साथ ही सीवान शहर की ओर से ७५१ रु० की थैली समर्पित की गयी। इस प्रकार जिले में कुल ८,२०६ रु० ४१ पैसे की थैली श्री जयप्रकाशजी को भेंट की गयी।

प्रखण्डदान बरौली का विवरण

क्षेत्रफल, एकड़ :	६०१२५
जोत की जमीन :	३६६२५·१०
ग्रामदान में शामिल जमीन :	२०५५७·०१
शामिल जमीन का प्रतिशत :	५६·१२
कुल जनसंख्या :	१२०३३६
ग्रामदान में शामिल जनसंख्या :	९३८८१
शामिल जनसंख्या का प्रतिशत :	७८
रेवेन्यू गाँवों की संख्या :	११०
बेचिरागी गाँव :	१७
चिरागी गाँव :	९३
ग्रामदान में शामिल रेवेन्यू गाँव :	८५
कुल पंचायतों की संख्या :	२४
शामिल पंचायतों की संख्या :	२०
आंशिक ग्रामदान में शामिल पंचायतों की संख्या :	४

—विश्वनाथ शर्मा, मंत्री
सारण जिला सर्वोदय मण्डल

करनाल : २१ दिसम्बर '६७। लोक सेवा आश्रम, समालखा के तत्त्वावधान में गत १४ दिसम्बर '६७ से २० दिसम्बर '६७ तक एक अभियान डा० दयानिधि पटनायक के नेतृत्व में चलाया गया, जिसमें उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाना के कार्यकर्ताओं के अलावा १९ स्थानीय कार्यकर्ता, इस प्रकार कुल ७५ भाई-बहनों ने भाग लिया। ३० गाँवों ने ग्रामदान के विचार को समझ बूझकर ग्रामदान ग्राम स्वराज्य के घोषणा-पत्रों पर हस्ताक्षर किये।

कदम चूम लेती है खुद आके मंजिल
मुसाफिर अगर आप हिम्मत न हारे।

—गजराज सिंह तोमर

भिवण्डी : २२ दिसम्बर। चंद्रपुर जिले के आरमोरी तथा धानोरा प्रखंडों में गत २७ नवम्बर से १७ दिसम्बर तक ग्रामदान-पदयात्रा हुई। बारिश के कारण पदयात्रियों को तकलीफ हुई। आदिवासी क्षेत्र तो है ही। लेकिन रास्ते नहीं होने के कारण आवागमन में बहुत ही तकलीफ होता है। पदयात्रा में कुल २२ गाँवों ने ग्रामदान का संकल्प किया। सर्वश्री बाबाजी वैष्णव, विट्ठलराव टेकुलवार, कृ० ना० गोविन्दवार, कु० ना० गुप्ता, शंकर बेलसरे, गजाननराव अक्केवार, पाटील, भाडारवार, बाबूराव चन्दावार आदि कार्यकर्ताओं ने पदयात्रा की। पदयात्रा का संयोजन महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल की ओर से श्री बाबूराव चन्दावार ने किया।

पदयात्रा में युवक सभा के सभापति, जिला परिषद तथा प्रखंड के कर्मचारियों का अच्छा सहयोग मिला। —बाबूराव चंदावार

हमारी पत्र-पत्रिकाएँ

भूदान-यज्ञ : हिन्दी (साप्ताहिक)	१० रु०
गाँव की बात : हिन्दी (पाक्षिक)	४ रु०
भूदान तहरीक : उर्दू (पाक्षिक)	४ रु०
सर्वोदय : अंग्रेजी (मासिक)	६ रु०
नयी तालीम : हिन्दी (मासिक)	६ रु०
न्यूज लेटर : अंग्रेजी (मासिक)	१० रु०

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

DAY-TO-DAY WITH GANDHI

"डे-टु-डे विथ गांधी" भाग १

लेखक—महादेवभाई देसाई

पृष्ठ संख्या : लगभग ४००

साधारण संस्करण : रु० १५-००

लाइब्रेरी संस्करण : रु० २०-००

'महादेव भाई की डायरी', जिसके हिन्दी में अब तक ५ खण्ड हमारे यहाँ से प्रकाशित हो चुके हैं, उसके पहले खण्ड का अंग्रेजी संस्करण 'डे-टु डे विथ गांधी' जनवरी १९६८ तक प्रकाशित हो जायगा। इस डायरी के अग्रिम ग्राहकों का शुल्क निम्न प्रकार है :

शुल्क • रुपये	संस्करण	खण्ड
१२०-००	साधारण	१०
१६०-००	लाइब्रेरी	१०
२२५-००	साधारण	२०
३००-००	लाइब्रेरी	२०

पुस्तक में साधारण संस्करण के पहले खण्ड की कीमत १५-०० और लाइब्रेरी संस्करण की कीमत २०-०० प्रति है। एक साथ १० या २० खण्डों के ग्राहक बनने पर उपर्युक्त छूट दी जायगी और डायरी के खण्ड ज्यों ज्यों प्रकाशित होते चलेंगे, ग्राहक को घर बैठे वे रजिस्ट्री द्वारा प्राप्त होते चलेंगे।

कृपया रकम अग्रिम भेजकर ग्राहक बन जायँ।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

आवश्यक सूचना :

३० जनवरी '६८ को 'भूदान-यज्ञ' का विशेषांक प्रकाशित होने जा रहा है। इसलिए आगामी १९ जनवरी '६८ का अंक नहीं प्रकाशित होगा। ३० जनवरी '६८ के सर्वोदय-विशेषांक में ही १९ और २६ जनवरी तथा २ फरवरी '६८ के अंक शामिल रहेंगे। इस प्रकार विशेषांक के प्रकाशित होने के बाद का पहला अंक ९ फरवरी '६८ को प्रकाशित होगा। —सं०

भूदान-यज्ञ २९-१२-'६७ रजिस्टर्ड नम्बर एल १३५ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए ११

सामयिक चर्चा

क्या इतिहास पीछे मुड़ना चाहता है?

हमारा उद्देश्य सीमित था। गत १५ दिसम्बर '६७ को हम सर्वश्री जयप्रकाशजी, विनोबाजी और राममूर्तिजी (सम्पादक 'भूदान-यज्ञ') के राजभाषा (संशोधन) विधेयक आन्दोलन सम्बन्धी वक्तव्यों के सर्व सेवा संघ द्वारा प्रसारित १० हजार पर्चे लेकर वाराणसी के आतंकमय वातावरण में निकले थे। हम चाहते थे कि उक्त वक्तव्यों को नगर निवासियों के समक्ष मूल रूप में पेश करना।

वाराणसी इस आन्दोलन का उद्गमस्थल था, और उसका सबसे अधिक उग्र रूप भी यहीं प्रकट हुआ था। शायद प्रदेश के और खासकर इस नगर के दो प्रमुख राजनीतिक दलों—जनसंघ, संसपा—ने इस प्रसंग का खुलकर अपनी शक्ति भर खेलने का अवसर बनाया था। इसीलिए अपनी उच्चतम आवाज में लोकतंत्र का उद्घोष करनेवाले नेताओं ने ऐसी स्थिति पैदा कर दी थी, जिसमें लोकतांत्रिकता का अनुभव उन्होंने तो भरपूर किया, लेकिन किसी नागरिक की क्या मजाल जो अपनी जुबान से कोई भिन्न आवाज निकाल सके! 'लोक-चेतना', और 'लोकशक्ति' से हीन 'विरोधवादी लोकतंत्र' किस तरह 'तंत्रलोक' में बदल जाता है, और ऐसी अराजक परिस्थितियों में 'ताना शाही' किस तरह हावी हो जाती है, हमने इसका प्रत्यक्ष दर्शन वाराणसी में पिछले दिनों किया था। लेकिन अपनी बात कहने की मूलभूत आजादी और लोकतंत्र के बुनियादी सिद्धान्त को अपना सम्बल मानकर, तथा वाराणसी के 'लोक' के प्रति आस्थावान होकर, हम इस काम के लिए निकले थे।

करीब ५ व्यक्तियों ने लगभग साढ़े आठ घंटे पैदल घूमकर नगर के हर मुख्य क्षेत्र में उक्त १० हजार पर्चे बाँटे। सिर्फ दो चार जगहों पर गालियाँ सुनने को मिलीं, लेकिन ऐसे नागरिकों की बहुत बड़ी संख्या थी, जिन्होंने इस प्रयास का हार्दिक स्वागत किया।

लेकिन जब संसपा नेता श्री राजनारायणजी द्वारा १८ दिसम्बर '६७ को दिल्ली में पत्रकारों के समक्ष और उसके बाद राज्यसभा में प्रकट किये गये उद्गारों को अखबारों में पढ़ा—"वाराणसी स्थित गांधी स्वाध्याय संस्थान की ओर से अच्छे कागज पर २ लाख इश्तहार अंग्रेजी के समर्थन में छपवाकर वाराणसी की गलियों में बँटवाया गया है। संस्थान को इसके लिए विदेशों से मदद मिली है।"—तो दंग रह जाना पड़ा। गांधी स्वाध्याय संस्थान (गांधी विद्या संस्थान) की तरफ से कोई पर्चा नहीं छपा था, इसलिए विदेशी धन और २ लाख इश्तहार की बात भी राजनारायणजी तथा उनके साथियों की कल्पनाएँ थीं! शायद एक और अखबारी सनसनाहट पैदा करने के लिए!

यह कितने दुःख की बात है कि महान् विभूतियोंवाले इस महान् देश के महान् राजनीतिक नेता अपने आपको क्षेत्रीयता, जातीयता आदि की अत्यन्त क्षुद्र सीमाओं में आबद्ध करते जा रहे हैं, राष्ट्रीयता की ऊँचाई से भी ऊँचा उठने की तमन्ना रखनेवाले देश में आज बौने ही बौने नजर आ रहे हैं।

संसद में राजभाषा (संशोधन) विधेयक पारित हो जाने के बाद कांग्रेस-नेता श्री कामराज ने इसके विरोध में अपना जो वक्तव्य दिया है, शायद उससे प्रेरित होकर तथा उत्तर के उपद्रवों की प्रतिक्रिया-स्वरूप अब दक्षिण में हिन्दी-विरोधी नारे लग रहे हैं, इधर की सारी घटनाएँ उधर नया जन्म ले रही हैं। २२ दिसम्बर '६७ को मद्रास में रेलगाड़ियाँ जला दी गयीं! अब किससे क्या कहें!

अब तो हम देश की जनता से, चाहे वह उत्तर की हो, या दक्षिण की, एक ही निवेदन करना चाहते हैं कि आज नेताओं द्वारा निर्देशित राह पर चलकर भारत माँ के दिल के टुकड़े टुकड़े होने की जो संभावनाएँ दिखाई दे रही हैं, उन्हें समाप्त करने का एक ही उपाय है 'नेतृत्वमुक्ति'। इतिहास साक्षी है कि जाति, धर्म, क्षेत्र आदि के नारे लगाकर राजनेताओं ने हमेशा अपनी सत्ताकांक्षा के हथौड़े से भारत के हृदय पर गहरे प्रहार किये हैं, और उसे टुकड़ों में बिखेरा है, जिसके परिणामस्वरूप क्षीण भारत की असहाय आत्मा गुलामी की जंजीरों में वर्षों-वर्षों के लिए जकड़ी गयी है। समय आ गया है, जब देश का 'सर्व' संगठित होकर 'सर्व' की बात सोचे और 'सर्व' के हित में लग जाय। तभी राजनीति की क्षुद्रता और नेताओं की लघुता से समाज मुक्त होगा।

—राही

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा संघ द्वारा संसार प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

५ जनवरी, '६८ अंक : १४

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति : २० पैसे

विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—

१८ रु० या १ पौण्ड या ३॥ डालर

(हवाई डाक-शुल्क : देशों के अनुसार)

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४२८५

स्वराज्य की राजनीति

जब हम लोग अंग्रेजी साम्राज्यवाद से लड़ाई लड़ रहे थे, उस समय हमने अपनी एक युद्ध-व्यूहरचना की थी। उस लड़ाई में नगर में रहनेवालों को कुछ सहूलियत हासिल थी। वकील, डाक्टर, कालेज के प्राध्यापक और छात्रों ने मिलकर नगरों में ऐसा मोर्चा बना लिया था, जो अभेद्य-सा लगता था। सभा के मंच पर तकरीरों की लड़ाई शुरू कर देने में उन लोगों को थोड़ा या नहीं के बराबर वक्त लगता था। इसी तरह अंग्रेजी सरमायेदारी की खराबियों पर हमला बोलने या अन्याय के होनेवाले शोषण की निन्दा करने में उन्हें देर नहीं लगती थी। इसीलिए उस जमाने की लड़ाई में ऐसे लोग बड़ी तादाद में भरती किये जाते थे और उन्हें सामूहिक अनुशासन की तालीम देने के लिए चरखा चलाने का प्रशिक्षण दिया जाता था। इन सब कामों को किस हद तक कामयाबी मिली इसे इतिहास ने भारतीय गणतंत्र के उद्घाटन में प्रमाणित कर दिखाया है।

हमने उस अध्याय को पार कर लिया है और अब एक नयी परिस्थिति हमारे सामने है। अब हमारी समस्या एक विदेशी हुकूमत को बाहर भगाने की नहीं रही। अब तो हमें सैकड़ों साल की गुलामी में रही हुई सांस्कृतिक दृष्टि से छिन्न-भिन्न आबादी को एक आत्म-सम्मानवाले राष्ट्र में बदलना है, जो दुनिया के देशों की बिरादरी में अगुवा बन सके और इनसानियत की तरक्की करते हुए सभ्यता को और आगे बढ़ाये।

ऐसे काम को पूरा करने के लिए जिन लोगों की जरूरत है, वे अपने काम के लिहाज से कुछ दूसरे ही ढंग के लोग होंगे। आज सब बालिगों को वोट देने का हक हासिल है। हरेक आदमी की वोट में गिनती होती है और ऐसे लोगों की ज्यादा तादाद गाँवों में है। इसीलिए आज हमारी राजनीति का कर्म-क्षेत्र गाँवों में स्थानान्तरित हो गया है। आज हमारी समस्या अंग्रेजी सरमायेदारी न होकर गाँवों में रहनेवालों को परेशान करनेवाले सवालात हैं। इसीलिए आज के राजनीतिज्ञ अगर असरदार बनना चाहते हैं तो उन्हें देहाती जिन्दगी का खासा अच्छा तजुरबा होना चाहिए। उनमें ऐसी काबिलियत होनी चाहिए कि वे गाँव की तरक्की की ऐसी स्कीम पेश कर सकें, जो गाँववालों को सन्तोष दे सके और उसके जरिये ग्रामवासियों की सामाजिक और आर्थिक तरक्की हो। इस उद्देश्य के लिए गाँववालों को छोड़कर और कौन उनसे ज्यादा काबिल होगा ?

यह बदनसीबी की बात है कि इस फर्क को आजादी के पहले और उसके बाद भी राजनीतिक क्षेत्र के लोगों ने नहीं समझा। जिन लोगों ने अंग्रेजी साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ाई लड़ी, वे ही शासन की गद्दी पर बैठे। इसका नतीजा यह है कि उनके सवालात आज की समस्याएँ सुलझाने में मददगार नहीं हो पाते हैं।

['खादी-ग्रामोद्योग पत्रिका', जुलाई, '५१, मूल अंग्रेजी से] —जे० सी० कुमारप्पा

डायरी

देश :

२४-१२-'६७ : विदर्भ के दौरान एर्नाकुलम में पटाखे का विस्फोट हुआ। समारोह में श्रीमती इन्दिरा गांधी उपस्थित थीं।

२५-१२-'६७ : हिन्दी-विरोधी आन्दोलनकारियों ने रामेश्वरम् मन्दिर में घुसकर हिन्दी के बोर्डों को मिटाया और मराठा के श्लोकों पर तारकोल पोत दिया।

२६-१२-'६७ : प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने श्री राजगोपालाचारी को उत्तर भेजा कि राजभाषा-संशोधन विधेयक स्थगित करने से गैरहिन्दी राज्यों में उत्तेजना को बढ़ावा मिलेगा।

२७-१२-'६७ : भारतीय कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने भाषा क्षेत्रों को समाप्त करने का सुझाव दिया।

२८-१२-'६७ : उप प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने बताया कि पश्चिम बंगाल में राष्ट्रपति-शासन लागू होने की कोई सम्भावना नहीं है।

२९-१२-'६७ : अखिल भारतीय जन-संघ के दीनदयालनगर के अधिवेशन में पंजाब व प० बंगाल में राष्ट्रपति-शासन की माँग की गयी।

३०-१२-'६७ : प्रजा-समाजवादी पार्टी के अध्यक्ष श्री एन. जी. गोरे ने चेतावनी दी कि यदि राजनीतिज्ञों ने हिंसा को बढ़ावा दिया तो देश की एकता छिन्न-भिन्न होगी।

३१-१२-'६७ : दिल्ली में सरकार की ओर से घोषणा की गयी कि १० जनवरी से देश में आपात स्थिति समाप्त होगी।

विदेश :

२५-१२-'६७ : अमेरिका के परमाणु-शक्ति आयोग ने खबर दी कि चीन ने अपना सातवाँ परमाणु-परीक्षण किया।

२६-१२-'६७ : भारत और रूस ने ३०० करोड़ रुपये के व्यापारिक समझौते पर हस्ताक्षर किये।

२८-१२-'६७ : अमेरिका के निर्दलीय शिक्षा संगठन ने आजादी के वार्षिक लेखा-जोखा में बताया है कि सरकार व नेताओं के कार्यों से अमरीकी जनता में असन्तोष है।

'भूदान-यज्ञ' से अपेक्षा

मुझे यह लग रहा है कि 'भूदान-यज्ञ' अपने पुराने संकीर्ण दायरे से बाहर आकर अपना व्यापक स्थान बनाता जा रहा है। 'भूदान-यज्ञ' की सफलता उसकी व्यापकता में ही है, क्योंकि वह सर्व सेवा संघ का एकमात्र मुख्य पत्र है। सर्व सेवा संघ का मुख्य उद्देश्य सर्वोदय समाज की स्थापना है—सर्वोदय "सर्व" के भीतर जगी चेतना से ही सम्भव है। "सर्व" की कुछ समस्याएं हैं, उनकी कुछ रूढ़ियाँ और मान्यताएं हैं, कुछ अपेक्षाएं हैं—उन तक पहुँचना और उनको अहिंसक क्रान्ति के लिए प्रेरित करना, यह दायित्व 'भूदान-यज्ञ' का आता है।

मेरा विश्वास है कि अहिंसक क्रान्ति कुछ गिनी चुनी संस्थाओं तथा उनके कार्यकर्ताओं से ही सम्भव नहीं है, वह तो सम्पूर्ण समाज को बदलने और इसके स्थान पर नयी समाज-व्यवस्था लाने का उपक्रम है।

'भूदान-यज्ञ' की जबरदस्त सफलता मैं तब मानूँगा, जब वह सर्व की समस्याओं का एक रचनात्मक समाधान ढूँढ़ सके। यह तभी सम्भव है, जब 'भूदान-यज्ञ' "सर्व" तक पहुँच सके। इसके पाठक और लेखक, सुझाव-कर्ता "सर्व" के बीच के रहनेवाले हों और "सर्व" की समस्याओं, वेदनाओं से व्यथित हो रहे हों।

आज सम्पूर्ण समाज एक ऐसे चौराहे पर किंकर्तव्यविमूढ़ता की अवस्था में खड़ा है, जिसे सही मार्गदर्शन की आवश्यकता है। अगर मार्गदर्शन न मिला तो वह पतन की ओर भी मुखरित हो सकता है, और हिंसा की तरफ मुखरित होना "पतन" की ओर तो मुखरित होना है न?

'भूदान-यज्ञ' को अपनी, अपने परिवार की स्वस्थ आलोचनाओं को सुनने के लिए भी तैयार रहना है, क्योंकि यह उसकी व्यापकता और "सर्व" के मुखपत्र की गंभीरता को बढ़ाता है।

—पारसनाथ त्रिपाठी, अध्यक्ष
जिला सर्वोदय मंडल, जौनपुर

खादी का स्वरूप

ग्रामदानी गाँवों में खादी का क्या स्वरूप हो, इस सम्बन्ध में बिहार ग्रामनिर्माण समिति, पटना के द्वारा जनवरी '६८ के अंत में आयोजित होनेवाली चर्चा-गोष्ठी तथा समस्त खादीप्रेमियों के समक्ष कुछ विचार प्रस्तुत कर रहा हूँ।

खादी का सम्बन्ध हमें केवल ग्रामदानी गाँवों से ही नहीं, समस्त ग्रामीण जनता से हो। खादी को अंशतः पूर्ण रोजगारी और विशेषतः (पूरक) रोजगारी के रूप में गाँवों में प्रविष्ट कराने की बात सोचनी चाहिए। खादी का उत्पादन व्यापार के नहीं, आवश्यकता के दृष्टिकोण से हो। प्रतियोगिता से खादी को अलग रखने के बारे में सोचा जाय। खादी आडम्बरपूर्ण होने से महँगी होगी। अतः ग्रामदानी गाँवों में खादी का स्वरूप आडम्बरहीन, सादा, जनग्राही यानी दूसरे शब्दों में स्वावलम्बी होना चाहिए।

—हरिनारायण साहु, 'माधव'
जिला सर्वोदय मंडल, भागलपुर-२

नवानगर प्रखण्डदान

सुश्री निर्मला बहन को समर्पित

बलिया में पाँचवाँ प्रखण्डदान घोषित

विवरण निम्न प्रकार है —

प्रखण्ड के कुल रेवेन्यू ग्राम :	११३
बेचिरागी गाँव	२२
चिरागी गाँव :	९१
ग्रामदान में शामिल गाँव :	७६
शामिल गाँवों का प्रतिशत :	८८%
कुल जनसंख्या :	४६,८०८
ग्रामदान में शामिल जनसंख्या	४७,४५०
जनसंख्या का प्रतिशत :	६६%
प्रखण्ड का कुल रकबा :	४०,८१७
ग्रामदान में शामिल रकबा :	२४,३४०
शामिल रकबे का प्रतिशत :	६०%

बलिया में २-१-६८ तक
कुल प्रखण्डदान—५, कुल ग्रामदान—४२९

कम्प्यूटर : सर्वोदय के लिए

• प्रबोध चोकसी

['भूदान यज्ञ' के ८ दिसम्बर '६७ के अंक मे 'कम्प्यूटर—एक नयी यात्रिकी का अग्रदूत' शीर्षक श्री रुद्रभान का लेख प्रकाशित हुआ था। उस लेख की पाठको पर अलग-अलग प्रतिक्रियाएँ हुई। २९ दिसम्बर के अंक मे श्री जगन्नाथ सेठिया का पत्र हम प्रकाशित कर चुके हैं। हमारे एक अन्य प्रबुद्ध पाठक की कम्प्यूटर के सम्बन्ध मे विशिष्ट राय है, जिसे हम नीचे प्रकाशित कर रहे है। —सं०]

१—कम्प्यूटर का स्वागत करनेवालो में तरह-तरह के लोग है। उनमें से किसीकी दृष्टि के प्रति उसमें कतई न्याय नही हुआ।

२—कम्प्यूटर का उपयोग असेम्बली (assembly) लाइनवाली तकनीक के बाद स्वाभाविक और मानवीय है। असेम्बली लाइन पर एक ही ढग का कार्य अनवरत यत्र की गति से करते जाना अमानुपी है, जिसे और अधिक स्वचालित (आटोमेटाइज) किया जा सकता है, किया जा रहा है।

३—कम्प्यूटर के प्रवेश में पूंजीवादी मुनाफे की ही प्रेरणा है यह कहना गलत है, क्योंकि साम्यवादी देशो एव समाजवादी देशो ने भी इसे अपनाने का आयोजन किया है।

४—बेकारी की समस्या मूलत: यत्र की नही, तत्र की समस्या है, यह न देख सकने के कारण प्रतिरक्षात्मक मानववाद या सर्वोदय के पैदा होता है। यत्र तब मनुष्य का शोषण दी करता है, जब मनुष्य को अर्थतत्र दाम का दास दियकरार देना है, काम और दाम का समीकरण
स्वेशन) जबरदस्ती मनवा लेता है। यह
ओर सेवाद की आधारशिला है—काम दान
से देश समीकरण। इसे सारे समाजवादियों ने
निदेश : नवतावादियों ने ललकारा है। मार्क्स
२५-१ को उसकी आवश्यकतानुसार (टु ईच
शक्ति आयाग टु हिज नीड) कहा। रस्किन ने
सातवाँ परमाणु काम के लिए समान दाम का
२६ १२-' जिसे गाधीजी ने सर्वोदय की
३०० करोड रुपये दिया। कम्प्यूटरयुक्त स्वचालन
हस्ताक्षर किये। शन (स्वयभरण) पूंजीवाद
२८-१२-'६७ : पर पहुँचा दे रहा है कि
शिक्षा सगठन ने आज ण अब रह ही नही सकता।
जोखा में बताया है कि द भी वही दकियानूस
कार्यों से अमरीकी जनता प्रेरणावाला) तभी
चल सकता है जब वियतनाम जैसा कोई युद्ध लगातार चलता रहे और समस्त परिवर्द्धित उत्पादकता को स्वाहा करता रहे। तिसपर भी ज्यो-ज्यो सायबरनेशन के फैलाव के साथ-साथ उत्पादकता बढेगी, युद्ध की विनाशकता की मात्रा भी बढाते चले जाना पड़ेगा, जो पूंजीवादी देश की जनता के लिए भी स्वीकार नही होता। राष्ट्रपति जान्सन इस बार शान्तिवार्ता के कारण चुनाव म डर महसूस कर रहे हैं। क्योंकि युद्ध में सिर्फ अतिरिक्त संपत्ति का निकाल ही नही होता, जवानो की बलि भी देनी पडती है। यदि युद्ध समाप्त करना पड़ा, तो अमेरिका में पुराना पूंजीवादी तत्र रुक जायगा। आज अमरिका पिछले देशो में निकासी करके उसका लाभ कमाकर अपना जीवन-मान बनाये रख रहा है, यह कहना तथ्यो के विषय मे अज्ञान माना जायगा। कोई भी देश विज्ञान से चाहे जितना उत्पादन बढ़ाकर, बिना निर्यात-लाभ के, अपना जीवन-मान ऊपर उठाये जा सकता है, यदि वह आन्तरिक उत्पादन-वितरण-उपभोग की माला अनिरुद्ध रूप से चलती रख पाये। इसके लिए प्रति व्यक्ति भूमि की मात्रा भी उतनी अन्तिम रूप से निर्णायक नही है, कि जितनी कि अक्सर हम मान लेते हैं। यत्र-निर्णायक दरअसल एक ही बात है. यत्र-तकनीकों से वर्द्धमान उत्पादकता के साथ जनता की क्रयशक्ति उसी मात्रा में बढ़े और सुवितरित हो। नयी नौकरियाँ, नयी सेवाएँ, नये पेशे, पुरानी दस्तकारियो क नये बढ़े हुए या सहायता प्राप्त (सपार्टेड) दाम, आदि तरीको से जनता की आय में वृद्धि करने की (कइनसियन) युक्ति सारी सरकारो को अब मालूम है। इसका अतिरेक होना है, अर्थात् प्राप्त अन्न तथा वस्तुओ के अनुपात में आय में वृद्धि अत्यधिक हो जाती है अथवा जब व्यतिरेक होता है, अर्थात् आय वृद्धि का विषम वितरण होता है (जैसा भारत में तीन योजनाओ के बीच हुआ है) तब मुद्रास्फीति, महँगी और अकाल पैदा हो जाते हैं। अत सारे समाज मे नयी आय का जितना सम-वितरण होगा, बेकारी जितनी ही नये रोजगार में सोख ली जायेगी, उतना यात्रिक विकास सरल होगा, मानवीय भी होगा। यह 'आदर्शवाद' नही है, बल्कि एकदम यथार्थवादी मानवीय अर्थशास्त्र है। सर्वोदय को अब अंग्रेजी सल्तनत के दिनावाला प्रतिरक्षात्मक अर्थ विचार छोडकर इस दिशा में, हिम्मत से सोचना होगा। सिर्फ बचाव की ही बात सोचनेवाला अवश्य हारता है। इस प्रागतिक वैज्ञानिक सर्वोदय के अर्थशास्त्र में काम-दाम के पूंजीवादी समीकरण का अस्वीकार होगा। 'काम दो, समतायुक्त दाम दो, और काम न दे सको तब भी दाम दो।'—यह नया सूत्र होगा। पूंजीवाद यह कर ही नही सकता। अत लोकतान्त्रिक समाजवाद मे सर्वोदय का सख्य होगा। हरेक नये यत्र का, नयी यात्रिकी का, नयी व्यवस्था का, नये विज्ञान का विरोध करते रहना, क्योंकि उसमे मनुष्य को डर है, यह निर्बल बुढियो के बच्चो की चिन्ता से चिल्लाते रहने जैसा व्यर्थ प्रयास है।

५—सर्वोदय मनुष्य का 'आर्थिक प्राणी' नही मानता, न मानव जीवन को उत्पादन-उपभोग में सीमित रखना चाहता है। सर्वोदय चाहता है कि मनुष्य आर्थिकता को, कामुकता को पार करके सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक लक्ष्यों की ओर बढ़े, मानव जीवन की सार्थकता अन्न-वस्त्रादि या स्त्री पुत्रादि के लिए ही खटते रहने में नहीं है। इसकी सुचारु व्यवस्था होते ही मन, बुद्धिमत, विज्ञान और आनंद के कार्यों (अवस्थाओं) में मनुष्य को बढना है। और जब तक अर्थ एव काम के क्षेत्रों में सभी मनुष्यों का सुर्क्षित प्रबंध न हो पाये, तब तक करुण भूरक साम्ययोगी क्रान्तियों में जूझना है। जब तक समाज मे कुल सदर्भ दुर्भिक्ष का है, तगी एव अपर्याप्तता का है, तब तक मानव-चित्त के लिए सार्वत्रिक भाव न अधिकता को

'भूदान यज्ञ' ५ जनवरी '६८ के अंक का परिशिष्ट

इस अंक में पढ़ें—
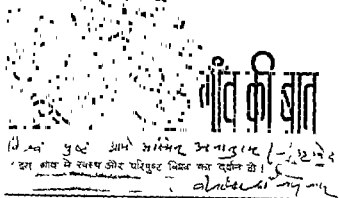
५ जनवरी, '६८

वर्ष २, अंक ११] [१८ पैसे

सड़क या सदन

रामबदन कचहरी में मुकदमा हार गया। जज ने अपने फैसले में वास्तव में इन्साफ किया है, यह उसके गाँववाले भी कहते हैं। लेकिन रामबदन को कचहरी के फैसले से सन्तोष कहाँ ? इतनी अच्छी जमीन का लोभ वह जज के फैसले से छोड़ दे ? हरगिज नहीं। कचहरी में उसके हक में फैसला नहीं हुआ तो उसने कचहरी के बाहर खुद फैसला करने की ठान ली, और अपने 'मुद्दई' की एक दिन कुछ गुण्डे लगवाकर बाजार के चौराहे पर पिटाई करवा दी। गुण्डों ने रामबदन के मुद्दई खेलावन की इतनी पिटाई की कि वह मरते-मरते बचा।

आज रामबदन और खेलावन की यही कहानी देश भर में दुहरायी जा रही है। समाज ने सभ्यता के विकास में और समुदाय के हित में शासन, कानून, दण्ड-विधान आदि बनाये। संविधान, सरकार, पुलिस-कचहरी आदि उसीके अंग हैं। राजाओं-महाराजाओं का जमाना गया और लोकतंत्र आया, यानी जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों की सरकार बनी, तो दुनिया ने माना कि मानव-समाज अब कुछ और अधिक सभ्य हुआ है। अब लोकसभा में जनता के प्रतिनिधि आपस में बहस करके अधिकांश उलझनों का निपटारा कर लिया करेंगे। उनकी लोकसभा में तय की हुई बात जनता की ही बात होगी, जनता उसे मानेगी।

सभ्यता की एक मोटी-सी पहचान यह मानी जाती है कि जिस समाज में डण्डे की जरूरत जितनी ही कम पड़ती है, वह समाज उतना ही अधिक सभ्य माना जाता है। लोकतंत्र की शासन-व्यवस्था, लोकसभा में बहस करके जो बातें तय होंगी, उस निर्णय की शक्ति से चलेगी, डण्डे की जरूरत बहुत कम हो जायगी।

लेकिन ऐसा होता दिखाई नहीं देता। लोकसभा की बहस
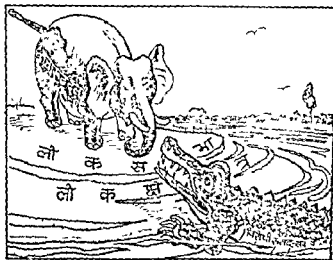
अपना-अपना मैदान

के अलावा भी एक बहुत बडी शक्ति आज देश को नचा रही है, वह है विरोध और उपद्रव की शक्ति।

राजा की मनमानी से छुटकारा पाने के लिए जनता के प्रतिनिधियोवाली व्यवस्था कायम हुई। लेकिन सभी प्रतिनिधि एक राय होकर ही कोई बात तय करते हों, ऐसी बात नही है। १०० मे ५१ ने बात मान ली, तो वह निर्णय पक्का माना जाता है। परिणाम यह होता है कि बाकी ४९ लोग, जो उस निर्णय से सहमत नही होते है, वे उस बात का विरोध करते हैं, लोकसभा में भी, और जनसभा (यानी जनता के बीच) मे भी। इसलिए उसको सम्मति की शक्ति नही बन पाती। परिणाम यह होता है कि लोकसभा की बात को जनता के जीवन मे लागू करने के लिए डण्डे की शक्ति का सहारा लेना पडता है। इस प्रकार सम्मति की शक्तिवाली कमी डण्डे की शक्ति से पूरी की जाती है।

तब यह विरोधवाली व्यवस्था क्यों बनायी गयी है ? क्यों न सब मिल्जुलकर जो बातें तय करें, वही बातें मानी जायँ, जिस बात मे मतभेद हो उसे तबतक मुल्तवी रखा जाय जबतक कि एक राय न हो जायँ ? तबतक समर्थक और विरोधी दोनों एक-दूसरे की बात समझने की कोशिश करें।

असल मे यही आज के लोकतन्त्र की सबसे बडी कमजोरी है। यह तो माना गया है कि राजा की मनमानी न चले, उसी तरह किसी दल की भी मनमानी न चले। लेकिन शासन उसी दल का होगा, जिसकी संख्या १०० मे ५१ की होगी। और शासक दल को ठीक रखने के लिए दूसरे विरोधी दल होंगे, जो शासक दल को हमेशा ललकारते रहेंगे, उसका विरोध करते रहेंगे, चुनाव लडते रहेंगे।

सोचने की बात है कि लोकसभा मे सभी जनता के प्रतिनिधि होते हैं, चाहे वे किसी भी दल के क्यों न हों। वे प्रतिनिधि जनता के हितों की रक्षा और भलाई के काम के लिए योजना बनाने तथा चलाने के लिए होते है। तो क्या जनता के हितों मे इतना अधिक विरोध है कि उसके लिए ये हितचिन्तक और संरक्षक एक हो ही नही सकते ?

बात यह है कि जनता खुद अपनी समस्याओं पर आपस मे मिल बैठकर विचार करती नही। जिनको यह काम सौंपा जाता है, वे देश के पढे लिखे समझदार लोग होते हैं। इन समझदारों लोगो की अपनी-अपनी कल्पनाएँ होती हैं जनता की भलाई की। उसके लिए कुछ विचार होते हैं। वे कल्पनाएँ या विचार जनता के बीच मिल-बैठकर—उसकी समस्याओं, कठिनाइयों, जरूरतों को समझकर उनकी राय से, उनकी पकड मे आ सकने लायक नही बनायी जाती, बल्कि किताबों, विद्वानों और विशेषज्ञों की रायों से बनायी जाती है। इसलिए जनता वही, उसकी जरूरतें वही समस्याएँ वही, लेकिन उसे हल करने मे बराबर मतभेद कायम रहता है। क्योंकि जनता की वास्तविक समस्याएँ एक ओर रह जाती हैं, और दलों के नेता अपने विचारों का वाद लेकर आपस मे झगडते रहते हैं।

विरोध की यह राजनीति अब इतनी भयंकर हो गयी है कि लोकसभा की बहस का तो जैसे कोई महत्व ही नही रह गया। कुल की-कुल राजनीति गलियों, सडकों बाजारों, चौराहों पर और कार्यालयों के सामने के प्रदर्शन उपद्रव तोड फोड, आगजनी लूटपाट आदि के भद्दे और हिंसक तरीकों मे सिमट गयी है। अभी कुछ दिन पहले गृहमन्त्री श्री चव्हाण ने कहा कि सारे मामले विधान-सभाओं मे तय होने चाहिए, और ससपा नेता श्री राजनारायण ने कहा कि हम जनता मे इसे देख लेंगे। देश मे यह नये प्रकार की गज और ग्राह की लडाई चल रही है।

आज की राजनीति मे शासन से सम्बन्धित एक दूसरी दिलचस्प बात उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री श्री चरण सिंह ने कही कि सरकार की कुल आमदनी का सौ मे सत्तावन रुपये केवल राज्य के कर्मचारियों के खर्चे मे निकल जाते हैं, और जिस पर भी सबसे अधिक सुविधाओं की माँग यही लोग करते हैं। यह तो हुई केवल कर्मचारियों की बात। मन्त्रियों, विधायकों तथा अन्य सरकारी खर्चों की बात अलग ही है।

श्री चरण सिंह की बात जानकर रामबदन और भगवन के झगडे की बात याद आ जाती है। कानूनी और संवैधानिक तरीकों से फैसला हमारे पक्ष मे नहीं हुआ तो क्या हुआ, गली, सडक, बाजार और चौराहे पर निपट लेंगे। क्या इसी रास्ते पर चलकर लोकतन्त्र का विकास होगा ? समस्याएँ सुलझेंगी ? जनता की भलाई होगी ? ●

गेहूँ के पौधों का गिरना और रोकथाम

खेत में जब नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ जाती है तब पौधे अधिक बढ़ जाते हैं और गिरने लगते हैं। नाइट्रोजनवाली खाद या उवरक फसल में डालने से पौधे की बाढ़ अधिक होती है और जड़ का विकास उतनी तेजी से नहीं हो पाता है। इसका कारण यह होता है कि पौधे की लम्बाई बढ़ जाती है और पौधे का वजन बढ़ जाता है। वर्षा के बाद जब जोर की हवा चलती है आंधी आती है तब फसल भूमि पर लोट जाती है। गिरी हुई बालों के दानों में फफूंद से पैदा होनेवाले रोग आसानी से लग जाते हैं। बालियों के गिरने से ५ से ८० प्रतिशत तक हानि होती है।

पौधों को गिरने से बचाने के लिए जरूरी है कि उवरकों को खेत में डालते समय सावधानी रखी जाय। नाइट्रोजनधारी उवरक अधिक मात्रा में देने से पौधे रसाले हो जाते हैं जिसका कारण तने के ऊतकों के विकास में रुकावट आती है और तना कमजोर रह जाता है। इसलिए नाइट्रोजनधारी उवरकों का अधिक मात्रा में उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। किसी भी खेत में गेहूँ की फसल में कितना उवरक दिया जाय इस बात का पता पहले ही परीक्षणों से लगा लेना चाहिए। अनुसंधानों से पता चला है कि बुआई के पहले नाइट्रोजनधारी उवरकों की पूरी मात्रा एकसाथ ही नहीं देनी चाहिए। गेहूँ की फसल में नाइट्रोजनधारी उवरक तीन बार में दिया जाना चाहिए। इससे फसल को ज्यादा फायदा पहुंचता है। यदि फूल आने के समय यह उवरक दिया जाय तो पौधों के गिरने की सम्भावना कम रहती है।

नाइट्रोजनधारी उवरक के साथ फास्फेट और पोटाशधारी उवरक भी दिया जाय तो पौधा का विकास सन्तुलित ढंग से हो सकता है। इसके प्रयोग से जड़ और तना भी मजबूत होते हैं और, पौधे के विभिन्न अंगों में सन्तुलन बना रहता है।

गेहूँ की फसल को अणुपोषक तत्व मैंगनीज, मैग्नेशियम और तांबा देकर भी गिरने से बचाया जा सकता है। भूमि के अन्दर या खड़ी फसल पर मैग्नेशियम छिड़कने से फसल का गिरना कुछ हद तक रोका जा सकता है। पर सबसे अधिक उपयोगी मैंगनीज सिद्ध हुआ है। इससे जहाँ पौधे का विकास होता है और जड़ मजबूत होती है वहाँ पौधों की लम्बाई भी अधिक नहीं बढ़ पाती।

बहुत मात्रा में बीज देने से पौधों की संख्या बढ़ जाती है। ऐसे पौधे लम्बे भले ही हों पर कमजोर हो जाते हैं और आसानी से गिर जाते हैं। अतः ज्यादा बीज नहीं बोना चाहिए। फसल ठीक समय पर बोयी जाय। देर से बुआई करने से जड़ें कमजोर रह जाती हैं।

सिंचाई से भूमि ढीली पड़ जाती है और पौधों के गिरने का भय बना रहता है। इसलिए सिंचाई तब करनी चाहिए जब तेज हवा चलने की सम्भावना न हो।

फसल को गिरने से रोकने या कीट-व्याधियों से बचाने के कृत्रिम साधनों में खर्च अधिक पड़ जाता है। अतः किस्म ऐसी मजबूत हो और अधिक पैदावार दे, ऐसी किस्म बोनी चाहिए, ताकि इस प्रकार के खर्च से बचा जा सके। हाल में भारतीय कृषि-अनुसंधान संस्थान, नयी दिल्ली ने कुछ गेहूँ की किस्में ऐसी तैयार की हैं। [illegible] की बालियां [illegible] हैं। यह गिरती नहीं है और उपज ज्यादा देती है।

—[illegible]

[illegible] उतनी [illegible] महान-महान।
और उतना [illegible] जो [illegible] विद्वान॥

जो बराबर [illegible] है।
जो सिर [illegible] है [illegible]?

[illegible] मिलना [illegible]।
[illegible] मानुष [illegible]॥

[illegible] और [illegible] की [illegible] नहीं रह सकता।

बना में गरदा [illegible] उखाड़।
[illegible]॥

जब चने के खेत में अधिक [illegible] चाहिए कि [illegible]।

— [illegible]

[illegible]

अंग्रेजी हैबिट

दिसम्बर में वर्षा हो जाने के कारण गाँव के किसानों को सिंचाई के काम से छुट्टी मिल गयी है। इन दिनों लोगों को फुरसत ही फुरसत है। साँझ होते ही कोल्हार में चहल-पहल बढ़ जाती है, क्योंकि वहाँ गन्ना चूसनेवालों के लिए गन्ने का ढेर लगा रहता है और तापनेवालों के लिए आग का प्रबन्ध।

यमुना सिंह के पुत्र रामासीष वाराणसी से आये हैं। वह कालेज के छात्र हैं। कोल्हार में इनके आ जाने से सबकी दिलचस्पी बढ़ गयी है। रामासीष के कन्धे से ट्रांजिस्टर रेडियो लटक रहा था। जब रामासीष कोल्हार में पहुँचे उस समय रेडियो पर 'विविध भारती' का कोई कार्यक्रम चल रहा था। थोड़ी देर बाद ही ताजा समाचार में बताया गया कि मध्यप्रदेश के विक्रम विश्वविद्यालय ने निश्चय किया है कि स्नातकों के उपाधि-वितरण के अवसर पर काले गाउन के बदले दुपट्टा उपयोग में लाया जायगा।

समाचार सुनते ही रामासीष का चेहरा गुस्से से तमतमा उठा। वह भुनभुनाये, "दीज़ ईडियट हिन्दियाइट्स आर आउट टु स्पॉयल आवर फ्यूचर।"

अखियार का लड़का रामू स्थानीय जूनियर हाईस्कूल में सातवीं कक्षा का विद्यार्थी है। उसे रामासीष के शब्दों में से सिर्फ दो शब्द समझ में आये—ईडियट और हिन्दियाइट्स। रामू के अंग्रेजी के शिक्षक गौतम श्रीवास्तव कभी-कभी कक्षा में पिछड़े छात्रों को 'ईडियट' कह दिया करते हैं, इसलिए इस शब्द का आशय रामू की समझ में आ गया। 'हिन्दियाइट्स' शब्द की ध्वनि के कारण कुछ-कुछ उसकी समझ में आ गया। उसने दबते-दबते पूछा—"रामासीष भैया, फीचर का क्या अर्थ होता है?" रामासीष ने हँसते हुए कहा—"फीचर और फ्यूचर, दो अलग-अलग शब्द हैं। फ्यूचर का मतलब है भविष्य। मैं मानता हूँ कि हिन्दी के दुराग्रही भारत की नयी पीढ़ी का भविष्य चौपट करना चाहते हैं।"

रामासीष की दो टूक बात सुनकर कोल्हार के सभी लोग चौकन्ने हो गये। श्री रामकृपाल प्राइमरी पाठशाला के सेवामुक्त अध्यापक हैं। उनसे रहा न गया। वे बोले—"जीते रहो बेटा!" अंग्रेजों के दो सौ साल के शासन में हम अंग्रेजीपन के उतने गुलाम नहीं हुए थे, जितने स्वतंत्रता के बाद के २० वर्षों में हुए। तुम अपने कालेज में अंग्रेजी पढ़ो और बोलो यह तो ठीक है, लेकिन यहाँ गाँव में उसकी बू क्यों लिये फिरते हो?"

रामू ने कहा—"काका, ई अंग्रेजी में ए मारे बोलऽ लऽन कि हम लोगन कऽ करियावल इहाँ केहू न बूझ पावें।"

रामासीष ने कहा—"अंग्रेजी पढ़ने और बोलने की हमारी ऐसी हैबिट हो गयी है कि चाहे या न चाहे अंग्रेजी जबान से निकल ही पड़ती है। इसमें हर्ज भी क्या है? हम अंग्रेजी दवा का उपयोग करते हैं। अंग्रेजी घड़ी लगाते हैं, अंग्रेजी मोटरों का उपयोग करते हैं। अंग्रेजी अब सिर्फ अंग्रेजों की ही नहीं सारी दुनिया के समझदारों और वैज्ञानिकों की भाषा है।"

गाँव के निवासी और सी० ए० डी० के दारोगा श्री रामनन्दन सिंह ने कहा—"मैं अंग्रेजी जमाने में सिपाही था और आजकल दारोगा हूँ। मैं सरकार और जनता दोनों की असलियत देखता आया हूँ। हमारे देश ने अंग्रेजों को हटाया और उनके साथ-साथ उनके गुणों का भी देशनिकाला हो गया। रह गयी अंग्रेजों की चलायी हुई शिक्षा-प्रणाली और नौकरशाही, जिसे अंग्रेजों ने इस देश को अपनी मुट्ठी में बनाये रखने के लिए गढ़ा था। आज की शिक्षा-प्रणाली और नौकरशाही पर अंग्रेजी जाननेवाले पूरी तरह काबिज हैं। उन्हें वहाँ से कोई टस से मस नहीं कर सकता।"

श्री रामकृपाल ने कहा—"दारोगाजी! असली बात यही है। लेकिन क्या इसका कोई उपाय नहीं है?"

श्री रामनन्दन सिंह—"है क्यों नहीं। लेकिन वह उपाय इतना आसान नहीं है जितना हिन्दी के लिए आन्दोलन करनेवाले मान बैठे हैं। हिंसा और उपद्रव का रास्ता अपनाने से हिन्दी-समर्थकों की संख्या बढ़ने के बजाय घट रही है और आगे और घट सकती है। हिन्दी से प्रेम रखनेवालों को हिन्दी की उन्नति करके उसकी शक्ति का परिचय देना चाहिए। सिर्फ अंग्रेजी-विरोधी नारा लगाने से क्या होगा?●

पड़ोसी की चिन्ता

ईसामसीह ने पडोसियो पर प्यार करने की सीख दी है। यह बात सभी जानते हैं, पर उस पर अमल प्राय नही होता। हम खादी पहनने को कहते हैं, भूदान की बात करते हैं। यह सब क्या है ? यह सब वही बात है, जो ईसामसीह ने कही थी कि पडोसी की चिन्ता करो। पडोसी के पास जमीन नही है, हम उसे थोडी-सी दे देते हैं, तो उससे उसके बाल-बच्चे पलेंगे और हम सब सुखी होंगे। पडोसी की चिन्ता करेंगे और एक-दूसरे की मदद करेंगे, तो पूरे देश की ताकत बढेगी। इससे बढकर कोई और ताकत नही हो सकती। भारत में छोटे-छोटे गाँव हैं। यदि वे एक-दूसरे की मदद के लिए आगे आते हैं, एक परिवार के समान रहने लगते हैं, तो वे सब गाँव छोटे-छोटे किले के समान मजबूत बनेंगे, उन पर किसी प्रकार का हमला नहीं हो सकेगा।

आज ईसामसीह के नाम पर दुनिया भर में उत्सव मनाया जाता है, लेकिन वे ही लोग अपने-अपने देश में हिंसक शस्त्रास्त्र बढ़ाते जा रहे हैं और एक-दूसरे से भयभीत हैं। अमरिका रूस से डरता है और रूस अमेरिका से, हिन्दुस्तान पाकिस्तान से डरता है और पाकिस्तान हिन्दुस्तान से। अगर इस तरह हम एक-दूसरे से डरते ही रहेंगे और शस्त्रास्त्र बढ़ाते जायेंगे, तो निश्चित समझिये, गरीब का भला नही हो सकता। कोई भी देश गरीब की बलि देकर ही शस्त्रास्त्र से पूर्ण बनेगा। लेकिन हम उम्मीद करते हैं कि एक दिन ऐसा जरूर आयेगा, जब कि ईसामसीह की सिखा-वन काम करेगी। उसका असर होगा।

ईसामसीह ने हमें इतनी देन दी, लेकिन हमने उन्हें सूली पर चढाया। गाधीजी ने हमें इतना प्यार दिया, उन्हें भी हमने गोली मार दी। महात्माओं के साथ हमारा बर्ताव ऐसा ही रहा है। फिर भी उन महात्माओं ने प्यार किया। जब ईसामसीह को सूली पर लटकाया गया, उन्हें बहुत तकलीफ हुई। एकदम उनकी मृत्यु नही हुई। तीन चार दिनों तक तडपते रहे। उस तकलीफ मे भी उन्होंने प्रभु से यही प्रार्थना की कि 'वे अज्ञानी हैं, उन्हें क्षमा करना।' ईसा का प्यार ऐसा था। इसमें शक नही कि उन्होंने जो प्यार किया है वह बेकार नही जायगा। आज जो अणु-युग आया है और बड़े पैमाने पर हिंसक शस्त्रास्त्रों का आयोजन हो रहा है इससे मुझे बहुत खुशी होती है। मैं समझता हूँ कि अब छोटी-छोटी लड़ाइयों के दिन लद गये। बड़ी लड़ाइयों के दिन आये हैं। यानी अब अहिंसा के दिन आये हैं, क्योंकि अब खात्मा ही होगा। इसलिए लोगों को अहिंसा की तरफ लौटना ही होगा। आज तक हिंसा के पीछे जितने जोरों से दौड़े रहे हैं, अब उतने ही जोर से अहिंसा की तरफ दौड़े आयेंगे, ऐसा हमारा विश्वास है। इसलिए हम महायुद्ध से डरते नहीं हैं।

इस भूदान-यज्ञ-आन्दोलन में अहिंसा से, शान्तिपूर्ण उपायों से समाज को बदलने की बात है। इस यज्ञ की खूबी केवल यह नहीं है कि समाज का बँटवारा हो रहा है, बल्कि खूबी यह है कि बँटवारा प्रेम से हो रहा है। दुनिया बड़ी आशा से इस आन्दोलन की ओर देख रही है कि हिन्दुस्तान प्रेम से, अहिंसा से, शान्तिपूर्ण उपायों से अपना आर्थिक मसला हल कर रहा है। एक माँगता है और दूसरा देता है। हमारे पास दूसरी कोई सत्ता नहीं है। [illegible] है। हमारा [illegible] पर विश्वास नहीं है। हमारी शक्ति तो प्रेम की ही है। हिन्दुस्तान को अहिंसा से आजादी मिली, इस बात में बहुत [illegible] है। मैं कहता हूँ, ठीक है। परन्तु भूदान-यज्ञ का यह काम तो अहिंसा से हो रहा है, इसमें कौन-सा [illegible] है? महात्मा गांधी ने और ईसामसीह ने जो कहा था, वही हम कर रहे हैं। उन्होंने कहा, 'पड़ोसी को प्यार करो।' हम घर-घर जाते हैं और प्रेम से माँगते हैं और लोग देते हैं, कोई भी इनकार नहीं करता।

हमारी मान्यता है कि ईसामसीह का [illegible] 'प्रेम का राज्य' धरती पर आयेगा।

—विनोबा

'गाँव की बात'। वार्षिक चंदा : चार रुपये, एक प्रति [illegible] पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा-संघ के लिए [illegible] प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित

सोचना दुष्कर है। कुछ विरले कबीर बनकर गरीबी में गुजरान करते हुए फकीरी में मन लगा सकते हैं। किन्तु पारमार्थिक की सदवृत्ति को सर्वव्यापी बनाने के लिए अभाव, दुर्भिक्ष और अपर्याप्तता को एकबारगी भगाना होगा। 'आटोमेशन' इसकी आशा मानव इतिहास में पहली बार मनुष्य को दिला रहा है, और साथ ही मुनाफे की प्रेरणावाले परम्परागत कृपण अर्थशास्त्र की नींव को ही काट रहा है। अतः यह सर्वोदय के लिए स्वागत-योग्य है। जैसे अणुशक्ति के आगमन ने विश्वयुद्ध को अव्यवहार्य (मूर्खता) बना दिया है, शान्ति को सार्वभौम सर्वस्वीकृत मूल्य मनवा दिया है, वैसे ही आटोमेशन (स्वचलन) पूंजीवाद-साम्यवाद, समाजवाद आदि दुर्भिक्ष-युग की समस्त विचारधाराओं एवं अर्थतन्त्रों को भी अव्यवहार्य बनाने जा रहा है।

इस युगान्तरकारी वस्तु को न समझते हुए पुरानी भावनाओं से ही चिपके रहना, पुराना रोना ही रोते रहना, दीर्घ दृष्टि का अभाव सिद्ध होगा, अपनी बुद्धि का, अन अस्तित्व का अस्त उसमें निहित है।

कम्प्यूटर सरकार लाना चाहती है। सर्वोदय सरकार से कहे कि अवश्य लाइये, मनुष्य के कंधों से सारा अमानुषी बेगार उठा लीजिये, उन्हें केवल मानवीय कार्य दीजिये। करुणा के काम तो कम्प्यूटर नहीं न कर सकता। बच्चों की, अपाहिजों की, माताओं की, बूढ़े, बीमार बच्चों-बहनों की सेवा तो कम्प्यूटर नहीं कर सकता। आज हम उन पहाड़-से कामों में से कितना कम कर पा रहे हैं? और फिर घर-घर में नयी दुनिया के तरह-तरह के नये ज्ञान को पहुँचाने का कार्य तो आगामी १०० साल में एक करोड़ लोगों को करते रहना पड़ेगा या नहीं? सरकार से हम कहें कि दीजिये ये सारे काम लोगों को। उन्हें हर तरह की हस्तकलाओं, ललित कलाओं एवं व्यायाम-खेल आदि सीखने-सिखाने का काम दीजिये। कम्प्यूटर लाइये, लेकिन खबरदार, एक भी मनुष्य भूखा, बेकार, हताश न होने पाये। एक खाने से बीमार हो, दूसरा न खाने से बीमार हो, ऐसी विषमता जल्द-से-जल्द दूर कीजिये। बेचारे के बीबी-बच्चों को करिये प्रतिष्ठा और तब कम्प्यूटर को सर्वोदय का आशीर्वाद है। सारी दस्तकारियों को उनके कलारूप में विकसित करिये और सारे छोटे कारीगरों को उचित आय देने का ठेका लीजिये, तब लाइये कम्प्यूटर। हम भी नहीं चाहते कि बम्बई, अहमदाबाद, कानपुर की गंदी मिलों में मशीनों के साथ मजदूर खटते रहें और गन्दी बस्तियों में अपना जीवन जैसे-तैसे बितायें। हम चाहते हैं कि वे वैज्ञानिक किसान बनें, साफ-सुथरे गांवों में खुले जलवायु का सेवन करते हुए कुशल कशीदाकारियोंवाले उत्तम वस्त्रादि निर्माण करें, ब्रह्मविद्या की सगुणोपासना करें। आप हरेक के लिए एक निश्चित आय का इन्तजाम करें और फिर चाहे सारी अनिवार्य उपभोग्य वस्तुओं को आटोमेशन से पैदा करें।

भारत में इतना विपुल नैसर्गिक एवं शारीरिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक कर्म-वैभव हमारे पुरखों ने सँजोकर रखा है कि यहाँ किसी भी मनुष्य के बेकार रहने का सवाल ही नहीं उठता। अपनी-अपनी पसंद का कार्यक्षेत्र, सेवा-क्षेत्र, अथवा सन्यासादि सबको मिल ही सकता है। किन्तु उन कार्यों के एवज में खाना मिलेगा? कपड़ा, घर आदि मिलेंगे? आज नहीं मिलते, क्योंकि हमने मान रखा है कि अमुक-अमुक मजदूरी, नौकरी या बेगार जब तक मनुष्य नहीं करेगा, उसे पैसा नहीं मिलेगा और जब तक पैसा नहीं, अन्न-वस्त्र कुछ नहीं। तो सब बेगार कर रहे हैं। जिन्हें बेगारी करने का मौका नहीं वह बेकार है, मर रहा है। तो सारी बेगारी सौंपिये यन्त्रों को और मनुष्य को अपनी-अपनी रुचि-मति के अनुसार काम करते रहने के लिए पूरी जीविका मुहैया करिये।

पूंजी का प्रश्न काल्पनिक है। यदि उपभोक्ता है तो उद्योग के लिए पूंजी की कमी वस्तुतः है नहीं, क्योंकि पूंजीरूप मुद्रा उपभोग-क्षमता का संकेत भर है। जो माल खप सकता है उसको पैदा करने के लिए क्रेडिट सदा को ही आ सकती है। ●

एक क्रान्तिकारी प्रस्ताव

बिहार राज्य पंचायत परिषद् की कार्य-समिति का बिहारदान के सम्बन्ध में

पंचायती राज का मुख्य उद्देश्य जनता की शक्ति और कार्यक्रम को विकसित करने का है। ग्रामदान का आन्दोलन जनता की शक्ति को जगाने का और संगठित करने का बुनियादी कार्यक्रम है। अतः वह पंचायती राज की नींव को मजबूत करनेवाला कार्यक्रम है।

बिहार राज्य पंचायत परिषद् ने शुरू से ही ग्रामदान आंदोलन का स्वागत और समर्थन किया है। अब पूज्य विनोबाजी की प्रेरणा से २ अक्तूबर, १९६८ तक बिहार-दान अर्थात् बिहार के सारे गाँवों का ग्रामदान का कार्यक्रम हमारे सामने आया है। बिहार राज्य पंचायत परिषद् इस कार्यक्रम का हर्ष के साथ स्वागत करती है और इसे अपने मुख्य कार्यक्रम के रूप में स्वीकार करती है।

यह कार्य समिति अपने अंगभूत सभी स्तर की संस्थाओं से और कार्यकर्ताओं से अनुरोध करती है कि अपने इस संकल्प को सफल बनाने में अपनी पूरी शक्ति लगायें और इसके लिए प्रांत-व्यापी अभियान चलायें।

पटना, २६-१२-६७

बाल जगत

बच्चों की मासिक पत्रिका

मानस-साधना-मण्डल, डी १२/४ राजेन्द्रनगर, लखनऊ-४। वार्षिक मूल्य : ६ रुपये

अब तक 'बाल जगत' के ६ अंक प्रकाशित हो चुके हैं। बच्चों की रुचि के अनुसार रंगीन मुखपृष्ठ, बड़ा टाइप और अधिक से अधिक चित्र 'बाल जगत' की अपनी विशेषताएँ हैं। 'बाल जगत' के संरक्षक श्री हृदयनारायण 'योगीजी' तथा अवैतनिक सम्पादक श्री कुबेर-प्रसाद गुप्त का यह सद्प्रयास स्वागतयोग्य है।

सर्वदलीय सम्मेलन

मुंगेर, २६ दिसम्बर। जिला सर्वोदय मंडल, मुंगेर के तत्वावधान में मुंगेर जिले के सभी राजनीतिक दलों, रचनात्मक संस्थाओं एवं स्वयंसेवी संस्थाओं के प्रमुख कार्यकर्ताओं की बैठक २४ दिसम्बर को श्रीकृष्ण सेवासदन मुंगेर में श्री राममूर्तिजी के सभापतित्व में हुई। सर्वप्रथम बैठक में उपस्थित कार्यकर्ताओं को सम्बोधित करते हुए बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी के मंत्री एवं जिले के प्रमुख कार्यकर्ता श्री निर्मलचन्द्र सिंह ने बिहारदान की भूमिका में जिलादान कराने की योजना प्रस्तुत की। उपस्थित कार्यकर्ताओं एवं राजनीतिक दल के प्रतिनिधियों ने १५ अगस्त १९६८ तक जिलादान कराने का संकल्प किया। जिले के कुल ३९ प्रखंडों में से १० प्रखंडदान की घोषणा हो चुकी है। शेष २९ प्रखंडों को १५ अगस्त १९६८ तक प्रखंडदान कराने की योजना स्वीकार की गयी है। इस बैठक में श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने कहा कि वर्षों पहले लोगों को जब असमाधान होता था, तो धर्म और देवता पर विश्वास टिकता था। अब समाज की गति के साथ देवता और धर्म से विश्वास हटकर नेता और राजनीतिक दल पर गया। अब जनता का विश्वास नेता और राजनीतिक दल पर जाकर टिका, क्योंकि विज्ञान के विकास ने देवता और धर्म से लोगों की श्रद्धा मिटा दी। दलगत राजनीति ने नेता और दल से भी अश्रद्धा पैदा कर दी है। इसका विकल्प ग्रामदान और जनता का संगठन ही है। बैठक में जिला सर्वोदय मंडल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह, श्री ब्रजमोहन शर्मा, श्री कृष्णराज मेहता एवं अन्य लोगों ने भी जिलादान कराने की दिशा में कार्यक्रम बनाने में योगदान किया। बैठक ने फरवरी के अन्तिम सप्ताह तक जिलादान कराने के लिए एक हजार मन धान चंदा के रूप में संग्रह करने का निश्चय किया है।

—रामनन्दन सिंह

बिहार ग्रामदान प्राप्ति समिति, पटना-३

साहित्य प्रसार :

मधुबनी, १९ दिसम्बर। स्थानीय सूरतगंज मुहल्ले में श्री बिपिन बिहारीलाल अनुमंडलाधिकारी द्वारा सर्वोदय साहित्य सदन का उद्घाटन-समारोह हुआ। इस अवसर पर सर्वोदय विचारक श्री धीरेन्द्र भाई ने कहा कि दरभंगा जिले के ग्रामदान में समर्पित हो जाने के पश्चात् आप लोगों पर सर्वोदय विचार को क्रियान्वित कर धरातल पर उतारने का दायित्व आया है। इस सर्वोदय-साहित्य सदन के निर्माण से यह दायित्व निभाने में आपको अनुकूलता होगी।

दरभंगा जिले के कृषि कृषक संघ के अध्यक्ष श्री प्रतापभानु वर्मा ने अपने विचार प्रकट करते हुए कृषकों की समस्या तथा उनके बीच सर्वोदय विचार के प्रचार की आवश्यकता पर बल दिया। उद्घाटक श्री अनुमंडलाधिकारी ने अपने उद्घाटन भाषण में सर्वोदय के कार्यों में अपनी पूर्ण सहमति तथा आस्था प्रकट करते हुए सतत सहयोग कार्य में तत्पर रहने का आश्वासन दिया।

—केदारनाथ झा

पूर्णिया की चिट्ठी

भूदान आन्दोलन में यह जिला बिहार के सब जिलों में अग्रणी था और इस जिले ने अब तक भूदान में ६८,०५४ एकड़ ८८ डि. जमीन विनोबाजी को समर्पित की। भूदान में प्राप्त जमीन में से १५,८०२ परिवारों में २६,४०७ एकड़ ५१ डि. जमीन का वितरण भी हो चुका है। लेकिन भूदान तो करुणामूलक प्रेरणा है और उससे व्यक्ति से व्यक्ति का सम्बन्ध जुड़ता है। समष्टि की आकांक्षा समाज में परिवर्तन की होती है। उसकी पूर्ति हेतु ग्रामदान का संकल्प अनिवार्य था। समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में यह संगठन अपना मुख्य हिस्सा अदा करता रहा है, जिसका संक्षिप्त प्रतिवेदन निम्न प्रकार है।

ग्रामदान-प्रखण्डदान :

अब तक इस जिले में कुल ४,७२१ ग्रामदान प्राप्त हो चुके हैं। जुलाई १९६६ को ही विनोबाजी की उपस्थिति में पूर्णिया सदर पूर्व प्रखण्ड का प्रखण्डदान घोषित हुआ। उसके बाद अब तक कुल २२ प्रखण्डों का प्रखण्डदान घोषित हो चुका है। इस वर्ष इस संगठन ने जिलादान का संकल्प लिया है और २६ जनवरी, '६८ तक जिलादान घोषित हो जाय इस ओर सब प्रयत्नशील हैं। इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु ५ प्रखण्डों में एकसाथ अभियान चालू है।

प्रखण्डदानधारा से अनुमण्डलदान की घोषणा सितम्बर, '६७ में इस जिले में हुई। सदर अनुमण्डल के सारे, ११ प्रखण्डों ने अपने दान की घोषणा की। कटिहार अनुमण्डल का एक प्रखण्ड बरारी को छोड़कर नवम्बर माह के पूर्व ही सारे प्रखण्डों का दान घोषित हो चुका है। और श्री जयप्रकाश बाबू का स्वागत भी कटिहार अनुमण्डलदान के साथ हम करनेवाले हैं। शेष किसनगंज और अररिया का अनुमण्डलदान २६ जनवरी '६८ तक घोषित हो जायगा।

सम्पुष्टि-कार्य :

कुल ३७० गांवों के कागज सम्पुष्टि के लायक बनाकर भूदान-यज्ञ कार्यालय में दाखिल किये जा सके हैं। अभी तक सत्यानन्द प्रखण्ड के कुल प्राप्त २२२ ग्रामदानी गांवों में से १८७ गांवों के कागज तैयार हो चुके हैं और सदर पूर्व प्रखण्ड के कुल ग्रामदानी ३६२ गांवों में से १८७ गांवों के कागज सम्पुष्टि के लिए तैयार किये जा सके हैं। अब सम्पुष्टि काम के हेतु ८ प्रखण्डों में बनमनखी, बड़हरा, भवानीपुर, राजधाम और रूपौली में कार्यकर्ता कार्यरत हैं। इन प्रखण्डों में से प्रत्येक में ४-५ ग्राम समिति द्वारा नियुक्त कार्यकर्ता तथा समग्र विकास योजना के कार्यकर्ता कार्य कर रहे हैं। बिना आपत्ति के १० गांवों की, जिनमें ३०६ परिवार शामिल हैं, कानून द्वारा सम्पुष्टि हो चुकी है। इसके अलावा ३६ गांवों के ११३५ परिवारों को सम्पुष्टि हेतु नोटिस दी जा चुकी है।

संगठन :

जिले के स्तर पर आन्दोलन को वेग देने हेतु मण्डल का हर वर्ष नवीनीकरण किया जाता रहा है।

(क) समन्वय समिति—जिले के ३८ प्रखण्डों में यह समिति संगठित है और कार्यरत भी है।

(ख) ग्रामसभा—अभी तक कुल ६०९ ग्रामदानी गांवों में ग्रामसभा का संगठन हो चुका है।

(ग) प्रखंड-सभा—ग्राम-निर्माण समिति के सद्प्रयास से अब तक बनमनखी, बड़हरा, भवानीपुर और रूपौली में ग्रामदानी गांवों के प्रतिनिधियों की द्विदिवसीय गोष्ठी का आयोजन कर प्रखंडसभा का संगठन किया गया है।

सर्वोदय आश्रम, रानीपतरा के विभिन्न विभागों में लगे कार्यकर्ताओं से इस वर्ष लगभग ५,००० रुपये सम्पत्तिदान प्राप्त होगा।

शान्ति-कार्य :

पूर्णिया जिला नेपाल, सिक्किम और बंगाल की सीमा से सटा रहने के कारण अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। बंगाल के नक्सालबाड़ी काण्ड ने जहाँ दुनिया का ध्यान अपनी ओर खींचा, वहाँ यह जिला उससे पूरा प्रभावित हुआ। मंडल ने वहाँ की स्थिति से अवगत होने के लिए जिला शान्ति-सेना के संयोजक श्री रामशरण सिंह तथा श्री दीनानाथ प्रबोध को उक्त क्षेत्र में भेजा और उससे सटे प्रखंडों में वैसी स्थिति पैदा न होने की दृष्टि से अपने कार्यकर्ताओं को सक्रिय बनाया।

तिरुनेलवेली
भारत में दूसरा जिलादान

तमिलनाड राज्य के तिरुनेलवेली जिले के जिलादान की घोषणा ईसामसीह-जयन्ती के अवसर पर, २५ दिसम्बर को की गयी।

इस जिले का क्षेत्रफल ४८०७ वर्गमील है और लगभग २४ लाख की जनसंख्या है। इस जिले में ३१ प्रखण्ड हैं और ८७० पंचायतें हैं। कुल ३१७७ गांवों में से २५८२ गांवों का ग्रामदान हुआ है।

यह हिन्दुस्तान का दूसरा जिलादान है। बिहार में दरभंगा जिले का जिलादान १९ फरवरी '६७ को ही हुआ था। एक भारत के उत्तरी छोर पर नेपाल की सीमा से लगा है तो दूसरा दक्षिणी छोर पर समुद्र से सटा हुआ है।

खादी-ग्रामोद्योग :

इस वर्ष खादी-बिक्री का विशेष लक्ष्य-निर्धारित किया गया है, जिसके परिणामस्वरूप अब तक कुल खादी बिक्री ७ लाख ५० हजार रुपये की हुई है।

सर्वोदय साहित्य-प्रचार :

सर्वोदय विचार-प्रचार की दृष्टि से सर्व सेवा संघ की ओर से सर्वोदय साहित्य भंडार चालू किया गया है। कुल २०४१ रुपये ८५ पैसे का साहित्य-प्रचार हुआ।

—दामोदर प्रसाद 'काम', कार्यालय मंत्री
जिला सर्वोदय मंडल, आश्रम, रानीपतरा, पूर्णिया

महातूफान अभियान प्रारम्भ

विनोबा पूसा रोड से रवाना

मुजफ्फरपुर में स्वागत

मुजफ्फरपुर : २६-१२-६७। बिहार ग्रामदान का महान संकल्प पूरा करने के लिए आज विनोबा महातूफान अभियान का शुभारम्भ कर रहे हैं। पूसा रोड से बाबा को विदा करते समय श्री रामयत्न राय अपने उद्‌गार प्रगट करते हुए कहते हैं, "काफी समय तक हमें बाबा का साहचर्य मिला, उनसे हमारा हार्दिक सम्बन्ध बना, हम उसे अपनी शक्ति मानते हैं। उसी शक्ति से हम आगे की मंजिलें पार करेंगे।" श्री राय एक साल पुरानी बातें याद करते हैं, "बाबा के आने से पूर्व हम ग्रामदान भी कराने की शक्ति अपने अन्दर नहीं महसूस करते थे, लेकिन आपके आने के बाद हमने हनुमान बनकर काम किया, और अधिक करने का उत्साह अपने अन्दर अनुभव कर रहे हैं। हमने मार्च '६८ तक समस्तीपुर अनुमण्डल के सभी ग्रामदानी गाँवों की पुष्टि कराने का संकल्प किया है।

"बाबा जब यहाँ १८ जुलाई १९६६ को आये थे, तो उन्होंने कहा था अब चिड़ियाँ भी ग्रामदान की बात बोल रही हैं। उस समय हमने इसका अर्थ नहीं समझा था, आज जिलादान होने पर हमें उसका अर्थ समझ में आया।"

श्री राय की आखिरी बात, "विनोबा-निवास को 'स्मृति भवन' के रूप में बनाये रखने का हमने निश्चय किया है। जब भी हम थकान, शिथिलता या कमजोरी का अनुभव करेंगे तो विनोबा-निवास में सुरक्षित आप (बाबा) की याद हमें स्फूर्ति, गति और शक्ति देगी।"

विदाई-समारोह के अवसर पर आयोजित इस सभा में श्री कृष्णराज मेहता कहते हैं, "हमें यहाँ की सामूहिक इच्छा-शक्ति और संगठन-शक्ति ने प्रभावित किया है और प्रेरणा दी है। समस्तीपुर ने 'सम्पूर्ण' काम किया है और उसका प्रभाव जिलादान के रूप में प्रगट हुआ है। जिलादान अब प्रान्तदान के की प्रेरणा का आधार बन गया है। यह आन्दोलन को समस्तीपुर की विशिष्ट देन मानी जायगी।"

श्री महादेवी ताई स्त्री-शक्ति को सजग करने की आवश्यकता पर जोर देती हैं। और अब बाबा—"इस संस्था का उद्‌घाटन मेरे द्वारा हुआ था। उस समय मेरा व्याख्यान ५ मिनट का हुआ था। अब यहाँ हम साल भर रह चुके, इसलिए पाँच मिनट भी बोलने की जरूरत नहीं रही।

"मुझे यह कहने में खुशी है कि भगवान शंकर ने ताण्डव नृत्य शुरू कर दिया है। दक्षिण में नटराजन् का नृत्य शुरू हो गया। २४ लाख की जनसंख्या और ३१ प्रखण्डोंवाले जिले (तिरुनेलवेली) का दान हो गया है।

"जहाँ बैठा हूँ वहाँ से १८ सौ मील दूर की अनुपस्थिति में जिलादान हो सकता है, तो जहाँ मैं २॥ साल से हूँ वहाँ प्रान्तदान और पुष्टि के काम वेग से होने चाहिए।"

इसके बाद फिर आगे कदम बढ़ रहे हैं। महातूफान अभियान शुरू! शब्द, भाव, अर्थ और प्रेरणा में विराट, लेकिन स्वरूप में लघु! थोड़े-से लोगों द्वारा भावपूर्ण विदाई! बाबा की गाड़ी के साथ दो-तीन गाड़ियाँ रवाना होती हैं मुजफ्फरपुर की ओर।

१२ बजे के लगभग! सर्वोदयग्राम, मुजफ्फरपुर! थोड़े-से जाने-पहचाने लोग स्वागत में प्रस्तुत। बीच-बीच में कुछ उद्‌घोष भी। बाबा एक छोटे-से शामियाने से मंच पर पहुँचते हैं! सामने बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के कुछ वरिष्ठ लोग दो तखुवे के अम्बर पर कताई कर रहे हैं!

श्री ध्वजा बाबू डुमरा प्रखण्डदान से बाबा का स्वागत करते हैं। कहते हैं, "बाबा एक ही मकान की एक कोठरी से दूसरी कोठरी में आये हैं। हम बाबा की प्रान्तदान की फरमाइश पूरी करने में लगे हैं। हमारा तो विश्वास है कि केवल खादी के सभी कार्यकर्ता ही ग्रामदान कराने में लग जायें तो आधा प्रान्त दान में आ जायगा।"

बाबा कहते हैं, "हम रास्ते से आ रहे थे तो मोटर से बैठे-बैठे पदयात्रा के दिन याद आ रहे थे। यात्रा शुरू किये करीब १८ साल हो गये। पहले कुछ भूदान मिलता था, फिर ग्रामदान से स्वागत होता था, अब तो प्रखण्ड-दान से कम की कोई बात भी नहीं सोचता।

"पहले एक वस्तु मन में आती है, उसका मनन होता है, तब वह शब्द में आती है, उसकी गूंज होती है, फिर कृति में आती है।"

सच है, प्रान्त-दान का मनन शब्द बनकर हवा में गूंज रहा है, पेड़ों पर परिन्दे चहक रहे हैं—"बिहारदान हो जायगा।" ग्रामदानी गाँव से आये लोग नगाड़े की आवाज और शहनाई की धुन के साथ गा रहे हैं, "बिहारदान हो जायगा।"

—राही

डुमरा प्रखण्डदान का विवरण

कुल जनसंख्या :	१,२६,७४८
प्रखण्डदान में शामिल जनसंख्या :	६५,०६१
शामिल जनसंख्या का प्रतिशत :	७५%
कुल भूमि :	४०,६२१.३५
शामिल भूमि :	३१,०३४.५१
शामिल भूमि का प्रतिशत :	४२%
कुल गाँवों की संख्या :	७५
प्रखण्डदान में शामिल :	६०

—मंत्री, जिला सर्वोदय मंडल, मुजफ्फरपुर

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र
सम्पादक : राममूर्ति
शुक्रवार
१२ जनवरी, '६८ वर्ष : १४
अंक : १५

इस अंक में

आगामी आकर्षण
३० जनवरी के अवसर पर . सत्याग्रह विशेषांक

वार्षिक शुल्क : १० रु०
एक प्रति · २० पैसे
विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—
१८ रु० या १ पौण्ड या २॥ डालर
(हवाई डाक-शुल्क : देशों के अनुसार)
सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१
फोन नं० ४२८५

प्रेम : जीवन का उपादान

बाइबिल की पुरानी संहिता में एक आख्यायिका है कि आदम और ईव के दो लड़के, केन और आबेल थे। भगवान् ने उनमें से एक को अपना लिया और दूसरे की जरा उपेक्षा-सी कर दी, तो उसमें ईर्ष्या पैदा हो गयी। बाद में केन ने अपने भाई की गर्दन ही काट दी। भगवान् ने उससे पूछा कि तुम्हारा भाई कहाँ है, तो उसने कहा, मैंने उसे मार डाला। भगवान् ने कहा, ऐसा क्यों किया, तो उसने उलटे उनसे ही पूछा कि ऐसा क्यों न करूँ? क्या मैं उसका रखवाला हूँ? इस पर भगवान् का जवाब था कि तुम अपने भाई के रखवाले नहीं हो, परन्तु दोनों एक-दूसरे के हो, वह तुम्हारा है और तुम उसके। तुम दोनों में अभेद है। गीता में भगवान् ने कहा है, 'परस्पर भावयन्त'—'परस्पर-अभिभावन।' अभिभावक शब्द का अर्थ है, हिमायती या प्रतिपालक या रक्षक। बाइबिल की पुरानी संहिता में ऐसी ही भावना प्रकट की गयी है कि तुम परस्पर के रखवाले हो। बाइबिल की नयी संहिता में सेंट पाल ने इसे और भी स्पष्ट शब्दों में प्रस्तुत किया है।

जीवन का उपादान प्रेम है और उसकी अभिव्यक्ति पारस्परिक सम्बन्धों में होती है। सामाजिकता याने मानव मानव के बीच के सम्बन्ध—रिलेशनशिप। प्रश्न उपस्थित होते हैं कि जनतंत्र कैसा हो, उसका औपचारिक स्वरूप क्या हो, जनता का राज और जनतंत्र की मर्यादा एवं व्याप्ति कितनी हो, लोकसत्ता और लोकराज्य के पारस्परिक सम्बन्ध कैसे हों इत्यादि। ये सारे औपचारिक या वैधानिक राजनीति-शास्त्र के विषय हैं। लोकनीति की बुनियादी बात यही है कि मानव-मानव के बीच के सम्बन्ध कैसे हों।

राज्य-निरपेक्ष और तंत्र-निरपेक्ष मानवीय सम्बन्धों और पारस्परिक व्यवहार की चर्चा हम कर रहे हैं। जाहिर है कि अभी तक इसमें से नागरिकता जरा भी विकसित नहीं हुई है। सारे विश्व का एक राज्य बने, एक विश्व-लोकराज्य स्थापित हो एवं लोग विश्व-नागरिक बनें, यह बात अलग है और सारी दुनिया का, सभी लोगों का एक परिवार बने एवं ऐसा समाज कौटुम्बिक अर्थात् 'फेमिलिस्टिक सोसाइटी' बने, यह बात अलग है। आजकल दो-चार शब्द काफी प्रचार में हैं, जैसे कि कम्युनिस्टों के 'कम्यून'। इन कम्यूनों में परस्पर के साथ रहकर उत्पादन और उपभोग किया जाता है और सहयोग करके ही समूह जीवन बिताते हैं। इस प्रणाली में अन्य जो भी दोष हों, एक बड़ा दोष यह है कि उसमें कौटुम्बिकता या पारिवारिकता नाममात्र के लिए भी नहीं होती है। इसका कारण यह है कि वे मानते हैं कि कुटुम्ब-संस्था मनुष्य की स्वयंप्रेरणा पर आधारित नहीं है। उसका आधार रक्त एवं विवाह-सम्बन्ध है। फलतः वह स्वायत्त-संस्था भी नहीं है। इसलिए पारिवारिक सम्बन्ध मनुष्य की इच्छा पर आधारित नहीं है और यही इसका मुख्य दोष है। कम्युनिज्म ने इसी कारण प्रारंभ में परिवार-संस्था का तीव्र विरोध किया। उसकी मान्यता थी कि परिवार-संस्था प्रतिगामी और अप्रगतिशील है, अतः उसकी जरूरत ही नहीं है। आज कम्युनिस्ट नेता ऐसा नहीं मानते हैं, पर शुरू में यही वे कहा करते थे।

["लोकनीति विचार" : पृष्ठ १७-१८]

—दादा धर्माधिकारी

समाचार डायरी

देश :

१-१-'६८ : यूरोपीयन रस्म की नकल करके नयी दिल्ली के युवकों ने राजधानी के फैशनेबुल इलाके में गुण्डागर्दी और हुड़दंग किया।

२-१-'६८ : सरकार ने शेख अब्दुल्ला पर से सारे प्रतिबन्ध हटा लिये।

३-१-'६८ : बनारस हिन्दू विश्व-विद्यालय के मुख्य द्वार पर अंग्रेजी-विरोधी प्रदर्शनकारियों और सशस्त्र पुलिस के बीच जमकर लड़ाई हुई।

४-१-'६८ : ससोपा-नेता श्री मधु लिमये ने भाषा-समस्या के स्थायी हल के लिए एक गोलमेज सम्मेलन बुलाने की अपील की।

५-१-'६८ : प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने घोषणा की कि कश्मीर के मामले में भारत की नीति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, लेकिन इसके अन्तर्गत अनेक सम्भावनाएँ हैं।

६-१-'६८ : भारत सरकार ने पाक-राजनयिक को २४ घण्टे के अन्दर भारत छोड़ने का आदेश दिया।

७-१-'६८ : कांग्रेस के मनोनीत अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा का हैदराबाद में शानदार जुलूस निकाला गया।

विदेश :

२-१-'६८ : दक्षिण अफ्रिका के अस्पताल में प्रो० बर्नार्ड ने दिल-बदल का एक और सफल आपरेशन किया।

५-१-'६८ : तुर्की के परराष्ट्र-मंत्री ने आशा व्यक्त की कि भारत व पाकिस्तान अपने मतभेद दूर करके मेल से रहेंगे।

७-१-'६८ : यूगोस्लाविया के राष्ट्रपति तटस्थ गुट के शक्तिवर्धन के लिए भारत, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, कम्बोडिया, इथियोपिया तथा मिस्र की यात्रा करेंगे।

८-१-'६८ : जार्डन नदी के दोनों किनारों से इसराइल और जार्डन के तोपखानों का द्वन्द्व ३॥ घण्टे बाद भी समाप्त नहीं हुआ, तब इसराइली युद्धक विमान लड़ाई में भेजे गये।

अ० भा० पंचायत परिषद् का एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव

- पंचायती राज की वर्तमान स्थिति
- गांधी-शताब्दी तक सारे देश में त्रिस्तरीय व्यवस्था लागू हो

● सम्पूर्ण देश में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में जो निष्क्रियता आ गयी है, उस पर अखिल भारतीय पंचायत परिषद की यह बैठक गहरी चिन्ता प्रगट करती है। 'बलवन्तराय मेहता कमेटी' ने त्रिस्तरीय प्रणाली के लिए सिफारिश की थी, जिसका राष्ट्रीय विकास परिषद ने भी सन् १९५८ में अनुमोदन किया था, लेकिन आज भी बिहार, मध्य प्रदेश, मैसूर, तामिलनाड, केरल, हिमाचल प्रदेश, जम्मू व कश्मीर और संघीय प्रदेशों में कार्यान्वित नहीं किया जा सका है। पंचायती राज में शासक दलों के विश्वास की कमी का इससे बड़ा खेदजनक उदाहरण और क्या हो सकता है?

● केवल निष्क्रियता ही नहीं, बल्कि सारी प्रक्रिया को ही प्रतिकूल किया जा रहा है, जो गहरी चिन्ता का विषय है। उड़ीसा में जिला परिषदों को भंग कर दिया गया है, उत्तर प्रदेश में जिला परिषदों के कुछ महत्त्व-पूर्ण अधिकारों को उनसे वापस लिया गया है, बहुत-से राज्यों में पंचायती राज के प्रशिक्षण केन्द्रों को बन्द कर दिया है, दिल्ली प्रदेश में कई पंचायतों को तोड़ दिया गया है, केरल व मैसूर में पंचायती राज कानूनों को पास करने को ही उठा रखा है, जम्मू व कश्मीर की सरकार ने त्रिस्तरीय प्रणाली को स्वीकार करने से ही इनकार कर दिया है। ये कुछ बुरे लक्षण हैं, जो संकेत दे रहे हैं कि शासक दलों का जनता व उसकी शासन करने की क्षमता में विश्वास घटता जा रहा है।

● परिषद का यह दृढ़ मत है कि अब इस विपरीत मनोवृत्ति को रोकना और स्वायत्त शासन के लिए लोकेच्छा का प्रभावपूर्ण प्रदर्शन आवश्यक हो गया है। इसलिए परिषद अपनी सम्बन्धित परिषदों से अनुरोध करती है कि वे राज्यों में सम्मेलनों का आयोजन करें और खण्ड, जिला व राज्य-स्तर पर प्रदर्शन करें, ताकि राजनीतिक व आर्थिक विकेन्द्रीकरण के लिए एक दृढ़ जनमत तैयार किया जा सके।

● परिषद की राय है कि २ अक्तूबर १९६९ को गांधी-शताब्दी का मनाना तभी अर्थपूर्ण होगा, यदि उस समय तक विकेन्द्रित राज-नीतिक, आर्थिक व सामाजिक व्यवस्था के दृढ़ आधार को रख दिया जाय।

इसलिए सभी राज्यों से अनुरोध किया जाता है कि गाँव, प्रखण्ड व जिला-स्तर पर स्वशासन की इकाइयों को स्थापित करने के लिए उचित कानून पारित करें और उनके कार्यान्वियन की दिशा में कदम उठायें।

परिषद इस अवसर पर विकेन्द्रित लोक-तंत्र के सभी प्रेमियों से अपील करती है कि वे इस आन्दोलन को अपना समर्थन व सह-योग प्रदान करें।

[नयी दिल्ली में श्री जयप्रकाश नारायण की अध्यक्षता में अ० भा० पंचायत परिषद की बैठक हाल में ही हुई थी। यह प्रस्ताव उसी बैठक में पारित हुआ था।] ●

वल्लभस्वामी की पुण्यतिथि :

बंगलोर, ११ दिसम्बर। वल्लभ-निकेतन में स्व० वल्लभस्वामीजी की तृतीय पुण्यतिथि ८, ९-१० दिसम्बर को मनायी। १० दिसम्बर को समापन समारोह हुआ। ८ दिसम्बर को वल्लभ-निकेतन की ओर से 'विशुद्धात्मा वल्लभस्वामी' तथा श्रीमती शान्ता ए० दिवाकर द्वारा संगृहित एवं महिला अध्यात्म-परिवार की ओर से 'ईशावास्योपनिषद' पुस्तक का विधिवत् प्रकाशन श्री मुनिश्री बुद्धमल्लजी के करकमलों द्वारा हुआ। भारत के प्रधानमंत्री, उपराष्ट्रपति के साथ ही अन्य शुभचिंतकों के संदेश भी पढ़कर सुनाये गये।

—सीताशरण शर्मा

कश्मीर के शेर और सीमा के गांधी

शेख अब्दुल्ला स्वतंत्र कर दिये गये हैं। खान अब्दुल गफ्फार खाँ भी स्वतंत्र हैं, लेकिन अपने देश में नहीं, अफगानिस्तान में। किसी वक्त के 'शेरे कश्मीर' को स्वतंत्र-भारत में कुल मिलाकर ग्यारह वर्ष नजरबन्द रहना पड़ा है। उसी तरह जो एक समय 'सीमा का गांधी' था उसने स्वतंत्र पाकिस्तान के जेल में सत्रह साल बिताये हैं। 'शेरे कश्मीर' को भारत में गद्दार कहा गया है, सीमा के गांधी को पाकिस्तान में। एक के मन में भारत के साथ-साथ अपने कश्मीरी भाइयों के लिए विशेष प्रेम है, और दूसरे के मन में पाकिस्तान के साथ-साथ अपने भाई वीर पठानों के लिए। दोनों धर्म से मुसलमान हैं, लेकिन नारा इस्लाम का नहीं लगाते, निष्ठा मानव में रखते हैं। शेख नेहरू के मित्र थे, और वर्षों तक कश्मीर के शासक, खान गांधी के साथी थे, और अहिंसा के उपासक। एक पहले से भारत का नागरिक है, दूसरा भारत आने को तैयार है।

भारत के पास ये दो व्यक्ति हैं जो अपने प्रेम और प्रभाव से हिन्दू और मुसलमान के बीच, भारत और पाकिस्तान के बीच, भारत और कश्मीर के बीच, भारत-पाकिस्तान-कश्मीर के बीच पुल बनने का काम कर सकते हैं। उनके पास दिल है जो देश की सीमाओं से बड़ा है, मनुष्य का प्रेम है जो राजनीति से ऊँचा है।

समस्या कोई भी हो, उसका तात्कालिक स्वरूप कुछ भी हो, आज के जमाने में हर समस्या मूलतः मानवीय है, इसलिए राजनीति और कानून की सीमाओं से आगे बढ़कर ही मानवीय हल ढूँढने की कोशिश होनी चाहिए। सफलता भी उसीसे मिलेगी।

भारत में हिन्दू हैं, मुसलमान हैं, और दोनों कानून की दृष्टि में समान हैं, फिर भी हिन्दू-मुस्लिम समस्या हल हो गयी है, ऐसा कौन कह सकता है? शंका, अविश्वास, कट्टरपन की कठोर दीवालें दोनों के बीच आज भी उतनी ही ऊँची हैं जितनी कभी थी। हिन्दू मुसलमान को बर्दाश्त भले ही करते, लेकिन उसका दिल मुसलमान को स्वीकार नहीं करता, मुसलमान भले ही देश का नागरिक हो, लेकिन अपने तंग घरौंदे से निकलकर इस देश के सुख-दुख के साथ अपने को जोड़ नहीं पाता। इस अलगाव में ही टकराव के बीज पड़े हुए हैं। उन बीजों को निकाल फेंकने में शेख साहब बहुत बड़ा रोल अदा कर सकते हैं। हिन्दू-मुसलमान एकता आज भी हमारी राष्ट्रीय एकता की मुख्य समस्या है, समस्या ही नहीं, कसौटी भी है। अगर यह एक एकता सध जाय तो भाषा, क्षेत्र आदि की एकता के लिए रास्ता खुल जायगा। इतना ही नहीं, भारत पाक मैत्री के लिए भी दरवाजा खुलेगा, जो शेख साहब का जीवन-लक्ष्य है। ऐसी एकता के लिए कश्मीर से बढ़कर दूसरा कोई क्षेत्र नहीं है, और वहाँ शेख अब्दुल्ला का जबरदस्त प्रभाव है।

कश्मीर भारत में है, भारतीय संघ का अंग है, लेकिन कौन मानेगा कि कश्मीर का सवाल हल होगा? कश्मीर का सवाल भारत-पाकिस्तान की शत्रुता-मित्रता का सवाल है, पड़ोसी मुसलमान देशों से सम्बन्ध का सवाल है, दोनों देशों के बढ़ते हुए सैनिक-खर्च, और उसके कारण बढ़ती हुई गरीबी का सवाल है, भारत के विरुद्ध चीन-पाकिस्तान के गठबंधन का सवाल है, और है एक हथकंडा जिससे अमेरिका, इंगलैंड, और रूस को बारी-बारी भारत और पाकिस्तान को उभाड़ने के मौके मिलते रहते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि एक-तिहाई कश्मीर पाकिस्तान के हाथ में है। क्या उस एक-तिहाई को छोड़कर और बाहरी राजनीति के इन पहलुओं से आँख मूँदकर, हम मान लेना चाहते हैं कि कश्मीर का सवाल हल हो गया? हम भले ही कहें कि हल हो गया, लेकिन वह, जो उस कश्मीर को दो कश्मीरी टुकड़ों में देख रहा है, जिसके सगे-सम्बन्धी उस पार हैं कैसे, मानेगा? शेख अब्दुल्ला कहते हैं कि कश्मीर का सवाल हल होना चाहिए। वह नहीं चाहते कि कश्मीर भारत-पाकिस्तान की लड़ाई का अखाड़ा बने। वह भारत के साथ सम्मानपूर्ण, और प्रेमपूर्ण सम्बन्ध चाहते हैं। यह भारत के अहित की बात नहीं है, अहं को कुछ थोड़ी ठेस लगती भले ही दिखायी दे। अगर दुनिया में रहना है तो हमें अहं से आगे बढ़कर देखने की आदत डालनी पड़ेगी। दुनिया हमारी मर्जी और हमारे इशारे से नहीं चलेगी।

कश्मीर पर आक्रमण करके पाकिस्तान के मौजूदा शासकों ने अपनी साख खो दी है, अपनी संकीर्णता से हम उन्हें मुसलमानों का अकेला मित्र कहलाने का मौका न दें। हमें इस सारे प्रश्न को सहानुभूति के साथ देखना चाहिए, और उदारतापूर्वक उसका हल निकालना चाहिए। अफगानिस्तान, पख्तूनिस्तान, तिब्बत, सिक्किम, भूटान, नेपाल, और शायद पूर्वी पाकिस्तान ये सब हमारी सीमा पर बिखरे हुए हैं, लेकिन अभी तक इन्हें हम अपना नहीं बना सके हैं। भारत अकेला नहीं है, और न उसे अकेला रहना है। पूरी दक्षिणी एशिया की एक बड़ी बिरादरी में हमारा भविष्य है। पाकिस्तान भी उसी बिरादरी में है। वह अलग कहाँ जायगा?

शेख अब्दुल्ला और खान अब्दुल गफ्फार खाँ, हमारे पास ये दो जबरदस्त हस्तियाँ हैं जिनकी शक्ति से बहुत बड़ा काम हो सकता है। लेकिन ओछी राजनीति से ऊपर उठकर हम सोचें तब तो।

शेख साहब के सामने ऐतिहासिक अवसर है। लेकिन बड़े अवसरों के लिए बड़े संयम, तथा परिस्थिति और लोक-मानस की परख की जरूरत होती है। इन गुणों का अभाव छोटों में ही नहीं होता; कई बार बड़े भी चूक जाते हैं। करोड़ों के भाग्य को नया मोड़ देने का यह अवसर, आशा है, शेख साहब को साहस और संयम दोनों की प्रेरणा देगा।●

बिहारदान के संदर्भ में :

जयप्रकाश नारायण की बिहार-यात्रा

ग्रामदान-प्राप्ति के कार्य में तीव्रता लाने और ग्रामदान-कोष इकट्ठा करने के लिए श्री जयप्रकाश नारायण के दौरे का कार्यक्रम गत ९ दिसम्बर से १९ दिसम्बर तक बिहार में निश्चित किया गया था।

यात्रा प्रारम्भ होने के दो दिन पहले यानी ७ दिसम्बर को श्री जयप्रकाश नारायण ने लोकसभा में प्रस्तुत राजभाषा (संशोधन) विधेयक एवं तत्सम्बन्धी आन्दोलनों पर एक वक्तव्य प्रकाशनार्थ समाचार-पत्रों में भेजा। वक्तव्य भेजने के बाद पूसा रोड के लिए प्रस्थान किया। ८ दिसम्बर को उनका वक्तव्य समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुआ। विवेकशील एवं अध्ययनशील बिहारवासियों को तो वह वक्तव्य उचित, सामयिक एवं आवश्यक प्रतीत हुआ, लेकिन कुछ तथाकथित हिन्दी-प्रेमियों को उक्त वक्तव्य में हिन्दी-विरोध की गंध मिली, और वे भावावेश में आ गये। ८ दिसम्बर को ही पटना में बिहार-हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष श्री रामदयालुजी पाण्डेय के नेतृत्व में तथाकथित हिन्दी-समर्थकों का एक जुलूस—"जयप्रकाश गद्दार है, जयप्रकाश मुर्दाबाद, जयप्रकाश भारत छोड़ो, जयप्रकाश चोर है" आदि नारे लगाते हुए उनके निवास-स्थान पर गया। प्रदर्शनकारियों ने निवास-स्थान के दरवाजों पर, दीवालों पर नारों को लिख भी दिया।

बाबा को इन घटनाओं की जानकारी हुई, तो उन्होंने श्री जयप्रकाश नारायण के उक्त वक्तव्य के समर्थन में एक वक्तव्य दिया। प्रदर्शनकारियों की भावना एवं पटना की घटना जब समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुई तो हम लोगों को सन्देह हुआ कि अब श्री जयप्रकाश नारायण के दौरे के अवसर पर जगह-जगह काले झण्डों का प्रदर्शन होगा। लेकिन कहीं भी प्रकट रूप से विरोध नहीं हुआ। केवल पूर्णिया जिले के फलका प्रखण्ड के रूपौली गाँव की सभा में दो सज्जनों ने पाँच वर्ष से नौ वर्ष तक के लगभग आधे दर्जन बच्चों के साथ पोस्टर दिखाकर विरोध जाहिर किया।

यह विरोध ऐसा नगण्य था कि रूपौली से चलने के बाद जब मैंने श्री जयप्रकाशजी को बताया, तब उन्हें इसकी जानकारी मिली।

९ दिसम्बर से श्री जयप्रकाश नारायण का दौरा समस्तीपुर अनुमंडल के सरायरंजन से प्रारम्भ हुआ और १९ दिसम्बर को शाहाबाद जिले के बक्सर अनुमण्डल के चौसा में अन्त हुआ। इस यात्रा में उनको पाँच प्रखण्डदान एवं लगभग डेढ़ लाख रुपये का कोष समर्पित किया गया। आमसभाओं में सवा दो घंटे तक वे बिहारदान की योजना, वर्तमान परिस्थिति में ग्रामदान की आवश्यकता, बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत भूमि-सुधार कानून, भाषा विवाद एवं अन्य प्रश्नों पर विस्तार पूर्वक चर्चा करते थे। क्रोध से तमतमाते हुए विरोधी लोग भी उनके भाषण सुनकर प्रसन्न एवं विचारपूर्ण गम्भीर मुद्रा में घर लौटते थे।

समस्तीपुर अनुमंडल के सरायरंजन प्रखण्ड में ६२ हजार रुपये की थैली समर्पित की गयी। उसी दिन संध्या समय समस्तीपुर की आमसभा में अपार जनसमूह उमड़ पड़ा था। दो घण्टे तक श्री जयप्रकाश बाबू बोलते रहे।

दूसरे दिन १० दिसम्बर को पूसा रोड से कार द्वारा बेगूसराय जाते समय मुंगेर जिला के प्रथम गाँव पतुहा में लगभग साढ़े दस बजे एक आमसभा का आयोजन किया गया। उस गाँव के डाक्टर श्री देवनारायण चौधरी के प्रयास से १००८ रु० का कोष समर्पित किया गया।

संध्या समय बेगूसराय के कचहरी-मैदान में एक आमसभा का आयोजन किया गया, जिसमें बखरी प्रखण्ड का दान श्री जयप्रकाश बाबू को समर्पित किया गया व १०,००१ रु० की थैली भी दी गयी।

११ दिसम्बर से पूर्णिया जिले का कार्यक्रम शुरू हुआ। पूर्णिया जिले के सर्वोदय-कार्यकर्ता जिलादान के लिए तीव्रता से लगे थे। अतः धनसंग्रह एवं सभा आयोजन की जिम्मेवारी स्थानीय स्वागत-समिति को सौंप दी गयी थी। जिले की ओर से दो प्रखण्डदान एवं ५,५३४ रुपये थैली समर्पित की गयी।

१३ दिसम्बर को हमलोग सहर्षा जिले में मुरलीगंज एवं बिहारीगंज गये। इन दोनों स्थानों में बड़ी-बड़ी आमसभाएँ हुईं। २,७८६ रुपये की थैली समर्पित की गयी।

१४ दिसम्बर को हाजीपुर एवं मुजफ्फरपुर में आयोजित विराट आमसभाओं में श्री जयप्रकाश नारायण ने भाषण किया। ३०,४०५ रुपये की थैली तथा हाजीपुर अनुमंडल का सरैया प्रखण्डदान मिला।

१५ दिसम्बर को सारन जिले में दो आमसभाएँ हुईं। ८,२०६ रु० ४१ पैसे की थैली तथा बरौली का प्रखण्डदान समर्पित किया गया।

१७ दिसम्बर को हमलोग ट्रेन से धनबाद आये। धनबाद की आमसभा बड़ी शानदार रही। दो घंटे, बीस मिनट तक जयप्रकाशजी बोलते रहे और सभा में उपस्थित एक-एक व्यक्ति एकाग्रता से सुनता रहा। धनबाद में १५,७३२ रु० की थैली समर्पित की गयी।

१८ दिसम्बर को धनबाद से कार द्वारा हजारीबाग के लिए प्रस्थान किया। उसी दिन हजारीबाग जिले के प्रसिद्ध विस्फोटक कारखाना गोमियो के मैदान में संध्या साढ़े पाँच बजे से एक आमसभा का आयोजन किया गया। गोमिया में ४,५५६ रु० की थैली समर्पित की गयी।

१९ दिसम्बर को शाहाबाद जिले के धीरो एवं चौसा में दो आमसभाओं का आयोजन किया गया। जिले की ओर से उन्हें १,००० रुपये की थैली समर्पित की गयी।

—रामनन्दन सिंह

अध्ययन + आनन्द = लोकयात्रा

[पाठकगण जानते होंगे कि महिला-जागरण के उद्देश्य से चार बहनों की एक टोली गत दो माह से इंदौर जिले में पदयात्रा कर रही है। उन्हींकी डायरी के कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत हैं। आशा है, पाठकों को बोधप्रद लगेंगे।—सं०]

"अन्तरत एक ईश्वरक देखियोक नाना वाहिरत
अन्तरत बोध बाहिरत जड़ प्राय।
बुद्धित समस्ते तेजियोक, बाहिरत सग देखायोक
एहिभावे राम लोक फुरा बेड़ाई॥"

श्री रामचन्द्रजी को वशिष्ठ ने यह उपदेश दिया था कि "अन्तर में एक ही परमात्मा को देखो, यद्यपि बाहर नाना दिखाई देते हैं। अन्तर में बोध रखो और बाहर जड़ प्राय समझो। बुद्धि से सबका त्याग करो, लेकिन बाहर से आसक्ति दिखाओ, इस तरह लोगों में विचरण करो।" देखा जाय तो यह उपदेश इस दुनिया में विचरण करनेवाले सबके लिए है। लोकयात्रा करनेवालों को तो साधते हुए ही चलना है।

यात्रा महू और देपालपुर तहसील घूम-कर इन्दौर शहर होकर अब सांवेर तहसील में घूम रही है। रोज नये-नये गाँव में जाते हैं, और रोज नये-नये लोगों के दर्शन होते हैं, परन्तु लगता नहीं कि हम नये लोगों के बीच आयी हैं। चेहरे अलग-अलग जरूर हैं, लेकिन वही प्रेम, वही भक्ति और श्रद्धा। जो असम में है, वही मालवा में, जो पूरब में है, वही पश्चिम में है, और वही शहर में, वही गाँव में।

● कुछ दिन पहले हमारा पड़ाव एक गाँव में था। शाम को सभा हुई। कम संख्या में पुरुष-स्त्रियाँ इकट्ठे हुए थे। विचार लोगों के सामने रखा गया। रामायण की कुछ चौपा-इयों का अर्थ भी सविस्तार समझाया गया। सभा समाप्त हुई। हम सोने के लिए चली गयीं। थोड़ी देर के बाद गाँव के चार-पाँच प्रमुख लोग पड़ाव पर पहुँचे और कहने लगे—"आप लोगों का यह कार्यक्रम एक दिन का नहीं होना चाहिए। कम-से-कम दो-तीन दिन एक ही गाँव में आप लोगों को रहना चाहिए। तब ज्यादा लोगों को इसका फायदा होगा।" वे आग्रह कर रहे थे एक दिन और रहने के लिए। हमारा कार्यक्रम तय हो चुका था और हमको आगे बढ़ना ही था। हमने उनसे कहा कि इस प्रकार सद्विचारों के जरिये गाँव में प्रेम, एकता लाना चाहते हैं, तो उसकी व्यवस्था जरूर होनी चाहिए।

● और उस दिन इन्दौर शहर में गीता-जयन्ती के अवसर पर गीता-भवन में महि-लाओं की विराट सभा रखी थी। समय कम था, अतः थोड़े समय में ही हमने बहनों के सामने अपना विचार रखा। कार्यक्रम समाप्त होने पर जब हम भवन के बाहर आयीं तो कुछ महिलाओं ने और कालेज की छात्राओं ने हमें घेर लिया, बोलीं—'हम आपसे बहुत कुछ सुनना चाहती थीं, परन्तु आपने थोड़े में ही अपना प्रवचन समाप्त कर दिया।' बाद में जब परिवारों में भोजन के लिए गयीं तो बातचीत में एक गृहिणी ने कहा—"आपका विचार और सुनना चाहते थे। आप लोगों को बोलने के लिए बहुत कम समय मिला।" कुछ बहनें तो हमें ज्यादा दिन शहर में रहने का आग्रह कर रही थीं। यह सब देखकर लगता है कि देश आज सद्विचारों का भूखा है, देश की नाजुक स्थिति का भान सबको हो रहा है, लोग नये मार्ग की खोज में हैं। ऐसे समय केवल विचारों के डाकिये का काम करनेवाले लोगों की जरूरत है।

● यात्रा के मार्ग में आदिवासियों के दो-चार गाँव मिले। एक गाँव में ईसाइयों का एक आश्रम था। वहाँ ईसाई-धर्म-प्रचारकों का प्रशिक्षण होता है। उन लोगों से मिलने का हमें मौका मिला। व्यक्तिगत सुख-स्वार्थ को त्यागकर लोगों तक ईसा का प्रेम-संदेश पहुँचाने का संकल्प लेकर आये हुए दक्षिण के नवयुवकों के दल को देखकर हमें लगा कि देश में शान्तिमय क्रान्ति अगर लाना है तो ऐसे ही लाखों स्वार्थ-त्यागी, सेवाभावी, निरहंकारी सेवकों की जरूरत है। इस दुनिया में कोने-कोने में सेवा में रत ईसा के भक्तगणों से हमें त्याग और कष्ट-सहन जरूर सीखना चाहिए।

● देश की दरिद्रता की जानकारी न शहर के उच्च वर्ग के लोगों को है, न गाँव के श्रीमन्तों को है। एक गाँव में हमारा पड़ाव एक श्रीमन्त (धनी) परिवार में था। गाँव में क्या, सारे जिले में वह पहले नम्बर का किसान था। उसकी जमीन पर उस गाँव के ७०–८० मजदूर काम करते हैं, लेकिन उनकी हालत क्या है, उस तरफ उसका ध्यान नहीं। सुबह-शाम भोग-विलास में, नशे में रहता है। अभी तक उसकी आँखें नहीं खुली हैं। इस तरह बेफिक्र होकर भोग-विलास में, नशे में जो लोग रहे, उनकी क्या दशा हुई ?

● शहर की उच्च वर्ग की बहनें सामने बैठी हुई थीं। गाँव की दरिद्रता का आँखों देखा हाल निर्मलबहन वर्णन कर रही थीं। खून को पानी करके परिश्रम करने के बाद भी गाँव के मजदूरों को जब पूरा-पूरा खाना नहीं मिलता है, तब उनके दिल के दुःख को किस भाषा में वे व्यक्त करते थे। वे कहते थे—"जब मजदूरी करके शाम को घर लौटते हैं और घर में पकाकर खाने के लिए पूरा अनाज नहीं रहता है, तब ऐसा लगता है कि इस तरह जीने से मरना ही अच्छा है।"

विचरण करो भिन्न चेहरे अभिन्न दर्शन कम-से-कम दो-तीन दिन…सद्-विचारों की भूख प्रेम के संदेशवाहक प्रेरणा के स्रोत "दरिद्रता और विलास… दुःख की भाषा पराक्रम के क्षेत्र 'श्रम श्रमिक का, भोग धनिक का "पूर्ण जागृति के लिए ग्रामस्वामित्व "सृष्टि की स्वच्छता समूह की अस्वच्छता संक्रमण-वेला और तारिणी शक्ति…

यह हमारा कार्यक्रम देश भर में स्वेच्छा-पूर्वक ही उठाया जा रहा है। जगत् के अन्य देशों में भी इस कार्यक्रम के मनाये जाने की आशा है। इसलिए इस कार्यक्रम के लिए जो खर्च हो, वह स्थानिक सूत्रों से ही करें। शान्ति-सेना मण्डल से आर्थिक सहायता की अपेक्षा कृपया न की जाय। मण्डल तो आप ही से आर्थिक सहायता की अपेक्षा रखता है।

एक और प्रार्थना। कृपा कर ३१ जनवरी को एक पोस्टकार्ड द्वारा हमें इस बात की सूचना दीजिये कि आपके नगर में शांति-दिवस किस प्रकार मनाया गया। इस प्रकार का पत्र हम आपके नगर के कुछ अन्य मित्रों को भी भेज रहे हैं। आप कृपया अपने नगर के सभी मुख्य लोगों का सहयोग प्राप्त कीजियेगा।

सस्नेह,
नारायण देसाई, मंत्री
अ० भा० शांति-सेना मंडल,
राजघाट, वाराणसी–१

५ जनवरी '६८

घोष-फलक (प्ले-कार्ड) पर
लिखने के लिए कुछ सूत्र-वाक्य

- विश्व शांति-दिवस
- सत्य अहिंसा
- जय गांधी जय शांति
- शांति अमर रहे
- हमें शांति चाहिए
- सत्य, प्रेम, करुणा
- हिंसा से कोई मसला हल नहीं होता।
- शांति से स्वराज्य पाया, शांति से उसे टिकायेंगे।

शांति-दिवस के पुण्य अवसर पर

शांति-बिल्ले का प्रचार कीजिये

पिछले कुछ वर्षों से ३० जनवरी का दिन 'शांति-दिवस' के रूप में मनाया जा रहा है। आप स्वीकार करेंगे कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के निर्वाण-दिन की इससे अच्छी संज्ञा नहीं दी जा सकती थी। शांति के लिए ही वे जिये और शांति के लिए ही वे मरे। आज के युद्धोन्मुख जगत् के लिए भी उनका जीवन शांति की दिशा में इशारा करता है।

'शांति दिवस' के कार्यक्रमों में से एक मुख्य कार्यक्रम शांति-दिवस बिल्ले बेचने का है। वैसे यह कार्यक्रम देखने में छोटा है, लेकिन उसमें व्यापक विचार-प्रचार की शक्यता है। छोटे-से बिल्ले को लेकर स्वयं-सेवक घर-घर तक पहुँच सकते हैं, और उनकी बिक्री के माध्यम से गांधीजी के नाम तथा काम की बातें भी लोगों तक पहुँचा सकते हैं। आज तो देश के करोड़ों लोगों को यह मालूम तक नहीं रहता कि ३० जनवरी गांधीजी का निर्वाण दिवस है। अ० भा० शांति-सेना मण्डल ने इस कार्यक्रम की व्यापकता को देखते हुए पिछले कुछ वर्षों से इसे उठाया है। इस वर्ष गांधी-शताब्दि-समिति की जन-संपर्क उप-समिति ने भी इसे पूरे जोर से उठा लेने का निश्चय किया है। गांधी-शताब्दी तक अगर इन बिल्लों की बिक्री को हम लोग एक करोड़ तक ले जा सकें तो अपने में वह एक बहुत बड़ा काम होगा। इस कार्यक्रम को सफल करने में आपका सहयोग मांगने के लिए यह यह पत्र लिखा जा रहा है।

वैसे यह बिल्ला १० पैसे प्रति बिल्ले के हिसाब से बेचा जाता है, लेकिन आपको हम उसे ७ पैसे प्रति बिल्ले के हिसाब से देंगे, ताकि उसकी बिक्री से प्रति बिल्ले ३ पैसे आपको अपने काम के लिए मिल सकें।

३० जनवरी में अब देर नहीं है, इसलिए बिक्री का संगठन अभी से करना उचित होगा। बिल्ला-बिक्री का अभियान अभी से ही शुरू करके १२ फरवरी तक चलाया जा सकता है।

शांति-बिल्ले की बिक्री के सम्बन्ध में कुछ सुझाव प्रत्यक्ष कार्यक्षेत्र में उतरे हुए कुछ अनुभवी साथियों ने दिये हैं, उनको नीचे दे रहे हैं। इससे बिल्ले की बिक्री में सहायता मिल सकती है।

- स्थानीय अखबारों और रेडियो द्वारा शांति-दिवस का महत्व और बिल्ले-बिक्री के बारे में व्यापक प्रचार किया जाय।
- पंचायत विभाग तथा शिक्षा विभाग से संपर्क करके उनके सहयोग से गाँव-गाँव में शांति-दिवस मनाने का आयोजन करते हुए बिल्ला-बिक्री की व्यवस्था की जा सकती है।
- प्रत्येक व्यक्ति जो इसमें रुचि रखता हो तथा रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता, १००-१०० बिल्ले बेचने का निर्णय कर लें, तो बिक्री व्यापक हो सकती है।
- प्रांतों में विभागीय स्तर पर इस काम को उठाया जा सकता है। हर प्रांत अपना लक्ष्य तय करें। उसको क्षेत्रीय स्तर पर शिक्षा-संस्थाओं से सम्पर्क करके बिल्ला-बिक्री का व्यापक रूप दे सकते हैं। हर एक घर में संपर्क करके व्यापक बिक्री करने का तरीका अपने को विदित ही है।

शांति-दिवस के कार्यक्रम में सिर्फ बिल्लों की बिक्री का ही महत्त्व नहीं है, बल्कि उसके पीछे की भावना का महत्त्व है। सत्य, प्रेम और करुणा के माध्यम से विश्व-शांति की कल्पना पूज्य बापू करते थे। उस विचार की व्यापकता और गहराई इस बिल्ले द्वारा घर-घर और जन जन में प्रवेश करेगी और लोगों में अपने प्रति तथा देश के प्रति कर्तव्य-भावना को जगाने का एक महत्त्वपूर्ण कार्य करेगी।

आशा है, आप इस कार्यक्रम को उत्साह-पूर्वक अपना लेंगे और देश के गाँव-गाँव में इस बिल्ले को पहुँचाने में हमें सहयोग देंगे।

—सत्यनारायण

नोट—हिसाब की झंझट से मुक्त रहने लिए बिल्ले का सारा व्यवहार नकद किया जाता है। बिल्लों का आर्डर आप मनीआर्डर या चेक द्वारा पैसे भेजकर दे सकते हैं, या वी० पी० पी० से मँगवा सकते हैं। ●

शांति-सैनिक याद रखें

- कि ३० जनवरी को विशाल शांति-रैली का आयोजन करना है,
- शांति-बिल्लों का व्यापक प्रचार एवं बिक्री करनी है,
- कम-से-कम १०० बिल्ले तो अपने-अपने क्षेत्र में बिक्री करें ही, साथ ही
- नये शांति-सैनिक बनायें और अपना प्रतिज्ञा-पत्र फिर से भर कर शांति-सेना मण्डल के दफ्तर को भेजें।

वियतनाम : अमेरिका का सिरदर्द

ऊँचे सिद्धान्तों की आड़ में भीषण नरसंहार स्वयं अमेरिका अपने सिद्धान्तों का शत्रु सामूहिक सुरक्षा ? बाहरी शक्ति सुरक्षा में विफल विश्व में गुरिल्ला युद्ध की बढ़ती प्रतिष्ठा चीनी विस्तारवाद साम्यवाद आकर्षण के आधार जनमत का विरोध प्रतिष्ठा पर ठेस विपरीत परिणाम शक्ति-क्षय का भ्रम अमेरिका पर संकट ।

अमेरिका वियतनाम में कुछ सिद्धान्तों की रक्षा का बोझ उठाकर आया था। वह इस सिद्धान्त की रक्षा करना चाहता था कि प्रत्येक देश को अपने ढंग से जीवन बिताने का अधिकार है। वह यह दिखाना चाहता था कि युद्ध के द्वारा किसी राज्य की स्वतन्त्रता नहीं हड़पी जा सकती है। वह यह सिद्ध करना चाहता था कि सामूहिक सुरक्षा का सिद्धान्त व्यावहारिक है। इन तथाकथित सिद्धान्तों की रक्षा का समस्त भार अपने कंधों पर लेकर पाँच लाख से भी अधिक सैनिक उसने वियतनाम में उतार दिये। अरबों डालर का सैनिक-साज-सामान वहाँ भर दिया और लाखों इन्सानों को नारकीय जीवन बिताने को बाध्य कर दिया।

और अब अमेरिका अड़ा हुआ है कि वह उत्तरी वियतनाम पर तब तक बमबारी नहीं रोकेगा, जब तक या तो वह घुटने नहीं टेक देता या शान्ति-वार्ता के लिए तैयार नहीं हो जाता। उत्तरी वियतनाम के लोगों और दक्षिणी वियतनाम के विद्रोही वियतकांगों ने तय कर रखा है कि वे अपने खून की अन्तिम बूँद तक लड़ते रहेंगे, लेकिन अमेरिका के सामने घुटने नहीं टेकेंगे। दोनों ओर की इस हठधर्मी का परिणाम यह है कि आज वियतनाम में भीषण नरसंहार हो रहा है, रात दिन हो रहा है और पिछले दो वर्षों से लगातार हो रहा है। इस नरसंहार का दृष्टान्त संसार के इतिहास में कहीं नहीं मिलता, द्वितीय विश्व-युद्ध में भी नहीं।

आज परिणाम सामने है। निष्पक्ष दृष्टि से देखने पर हर कोई यही कहेगा कि आज

डा० जयनारायण लाल

अध्यक्ष, राजनीति विभाग, एम० एल० के० कालेज, बलरामपुर (गोण्डा)

स्वयं अमेरिका अपने इन सिद्धान्तों के सबसे बड़े शत्रु के रूप में दुनिया के आगे खड़ा है। अमेरिका के लाखों सैनिक क्या दक्षिणी वियतनामी लोगों को अपने ढंग का जीवन जीने दे रहे हैं ? लाखों के प्राण लेकर और उससे भी कई गुने अधिक इन्सानों को पंगु, लूला, लँगड़ा अंधा, बहरा बनाकर वह किस शान्ति का पाठ पढ़ा रहा है ? सामूहिक सुरक्षा के सिद्धान्त की व्यावहारिकता पर कितना बड़ा प्रश्नचिह्न लगा हुआ है ? स्पष्ट है कि अमेरिका अपने इन सिद्धान्तों में बुरी तरह असफल रहा है।

अमेरिका अप्रत्यक्ष रूप से अपनी अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा की भी रक्षा करना चाहता था और अपने मित्रों पर यह प्रकट करना चाहता था कि वह एक सच्चा और अच्छा मित्र है। विपत्ति के समय अपने मित्रों की मदद में बड़ा से बड़ा त्याग कर सकता है। क्या अमेरिका इसमें भी सफल रहा है ? नहीं। वास्तविकता यह है कि वियतनाम-युद्ध ने लोगों पर यह स्पष्ट कर दिया है कि कोई भी बाहरी शक्ति किसी भी देश की रक्षा नहीं कर सकती। अपनी इस प्रतिष्ठा की रक्षा तो अमेरिका कर ही नहीं सका अब वह अपनी सेनाओं की प्रतिष्ठा भी खोता जा रहा है। वियतनाम में गुरिल्ला सैनिकों ने जिस प्रकार से अमेरिका की समर्थ और सुसज्जित सेनाओं के छक्के छुड़ा रखे हैं उससे विश्व में गुरिल्ला युद्ध की प्रतिष्ठा बढ़ती जा रही है। चीन के पड़ोसी देश आज गुरिल्ला युद्ध से सशंकित हैं। वे अमेरिकी सहायता से अपने को आश्वस्त नहीं कर पाते।

अमेरिका की विदेश-नीति—विशेषकर एशिया सम्बन्धी सारी नीतियों—का आधार माना जाता है, चीन की विस्तारवादी नीति को रोकना तथा साम्यवाद का प्रसार रोकना। जहाँ तक चीन की विस्तारवादी नीति को रोकने का प्रश्न है, अमेरिका ने उत्तरी वियतनाम को चीन के साथ अधिकाधिक चिपके रहने को विवश कर दिया है। उसके सामने और कोई रास्ता ही नहीं छोड़ा। चीन की विस्तारवादी नीति को जो भी ठेस दक्षिणी पूर्व एशिया के पूरे क्षेत्र (बर्मा, मलेशिया इण्डोनेशिया आदि) में लगी है, वह चीन की अपनी नीतियों के कारण। जहाँ तक साम्यवाद को रोकने का सवाल है समस्त एशिया और अफ्रीका के देश एक-दो को छोड़कर, इस बात पर सहमत हैं कि उनकी मुख्य समस्या गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा और बेकारी जैसी समस्याओं को दूर करना है और ये समस्याएँ साम्यवाद को अधिक आकर्षक बनाती हैं। साम्यवाद को रोकना हो तो अमेरिका को चाहिए कि वह इन समस्याओं के समाधान में मदद पहुँचाये। ऐसे देशों को खाना चाहिए, पुस्तकें चाहिए दवाइयाँ चाहिए सैनिक सामान नहीं। लेकिन अमेरिका इसे नहीं समझ पा रहा है।

इन असफलताओं तक ही बात नहीं रुकती अमेरिका को निश्चित रूप से और भी हानियाँ उठानी पड़ी हैं। आज विश्व जनमत अमेरिका के विरुद्ध हो चला है और यह विरोध एशिया और अफ्रीका के देशों तक ही सीमित नहीं है यूरोप और दक्षिणी अमेरिका के देशों में भी बड़े-बड़े प्रदर्शन अमेरिका की वियतनाम-नीति के विरुद्ध हो चुके हैं। अमेरिका के मित्र देश—ब्रिटेन और कनाडा—भी इसके अपवाद नहीं।

स्वयं अमेरिका का जनमत अमेरिकी सरकार के साथ नहीं। बुद्धिजीवी वर्ग तो कभी का इस नीति के प्रति अपना विरोध प्रगट कर चुका है। अब तो सामान्य जनता भी लाखों संख्या में प्रदर्शन कर रही है। अमेरिका के सामान्य नागरिकों का प्रश्न है कि अपने सपूतों को वियतनाम में क्या करवा रहे हैं ? अरबों डालर की धनराशि और सैन्य-सामग्री क्या स्वाहा कर रहे हैं ? वियतनाम-युद्ध में इतना क्यों नष्ट कर रहे हैं ?

स्वयं राष्ट्रपति जानसन की पार्टी में इस नीति का खुलेआम विरोध हो रहा है। विरोध उनके मंत्रिमण्डल तक पहुँच चुका है और सुरक्षा मंत्री रावर्ट मैकनमारा को अपने पद से हाथ धोने तक की नौबत आ गयी है! राष्ट्रपति जानसन की अपनी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को जो ठेस लगी है, उसकी तो कल्पना नहीं की जा सकती है। समस्त विश्व में स्वयं अपनी जनता की इच्छा की उपेक्षा करनेवाले जानसन, आज थोड़े-से सैनिक अधिकारियों के हाथ की कठपुतली बनकर रह गये हैं।

लाखों वियतनामियों के प्राण लेने, वियतनाम में अपनी और वियतनामियों की अरबों की सम्पत्ति नष्ट करने, लाखों मासूमों को अनाथ बनाने, स्त्रियों को विधवा बनाने का परिणाम क्या निकला है? वियतनाम में प्रजातन्त्र सुरक्षित हुआ या प्रजातन्त्र और प्रजातन्त्र के समर्थक अमेरिका के प्रति घृणा की लहर उत्पन्न हुई? इसका निर्णय कौन करेगा? वाशिंगटन में बैठे विदेश विभाग के अधिकारी या असंख्य वियतनामियों की आहें और आँसू? अपार जन-धन, प्रतिष्ठा की हानि और विनाश तथा मित्र देशों की सहानुभूति खोकर अमेरिका को क्या मिला? क्या उत्तरी वियतनाम वह करने को तैयार है, जो अमेरिका चाहता है? क्या वियतकांग की शक्ति घट रही है? उत्तर है नहीं, नहीं। गुरिल्ला युद्ध की सफलता के पीछे सदैव जनता का सहयोग होता है। वियतकांग की शक्ति घट रही है, इस भ्रम में केवल अमेरिका के सैनिक-अधिकारी ही रह सकते हैं, दूसरा कोई नहीं। अमेरिकी सरकार के इस मानसिक और नैतिक दीवालियेपन का परिणाम बहुत भयंकर हो सकता है। वह एक प्रकार से अपने देश, अपनी जनता, अपनी प्रतिष्ठा और उन सिद्धान्तों का भविष्य अन्धकारमय कर रही है, जिनकी दुहाई देते हुए वह नहीं थकती। वह उनके लिए बड़ा संकट मोल ले रही है। वह संकट क्या है? इस उत्तर में निहित है कि यदि अमेरिका की दो करोड़ जनसंख्या वाले देश उत्तरी वियतनाम से, जिसके पास अपने अस्त्र-शस्त्र तक नहीं है, मोर्चा लेने में यह दशा हो रही है कि विश्व-जनमत उसके विरुद्ध हो गया, मित्र उसका साथ छोड़ चले, उसकी जनता तथा सरकार की मान्यताओं में दरारें पड़ गयीं और उसकी अर्थ-व्यवस्था काँपने लगी, तो उस समय क्या होगा, जब उसे सत्तर करोड़ की जनसंख्यावाले देश चीन से भिड़ना पड़ेगा, जिसके पास अपने एटम बम, हाइड्रोजन बम हैं या होते जा रहे हैं, तमाम सैनिक साज और सामान हैं; जिसने अपनी सारी शक्ति और अर्थ-व्यवस्था इसी दिशा में लगा दी है? ●

सूताञ्जलि

गांधी-विचार के सक्रिय समर्थन की प्रतीक

३० जनवरी १९६८ को देशपिता महात्मा गांधी को हमसे अलग हुए पूरे २० वर्ष हो रहे हैं। १२ फरवरी को उनकी याद में उन सभी स्थानों पर, जहाँ उनकी अस्थियाँ जल में प्रवाहित की गयी थीं, सर्वोदय-मेले लगेंगे और लोग उन स्थानों पर गांधीजी के नाम से श्रद्धांजलि के रूप में हाथकते सूत की एक-एक गुण्डी भेंट करेंगे। इस एक गुण्डी सूत की कीमत बहुत मामूली है, परन्तु इसके पीछे जो भावना तथा सिद्धान्त छिपा हुआ है, वह महान है।

गांधीजी सत्य और अहिंसा के आधार पर एक शोषणमुक्त समाज का निर्माण करना चाहते थे। वे चाहते थे कि श्रम की प्रतिष्ठा बढ़े, उत्पादन के साधन उत्पादक के हाथ में रहें, समाज में समता, नैतिकता की शक्ति बढ़े। रुपये-पैसे का जितना पैलाव आज हुआ है, उससे मनुष्य की श्रम-शक्ति की प्रतिष्ठा घटी है। चाहे किसी भी उचित या अनुचित उपायों से पैसा इकट्ठा किया जा जा सके, आज वही समाज में विकास का साधन बन गया है। आज देश के ऊपर आर्थिक संकट भी बढ़ गया है। पूँजी की ऐसी व्यवस्था गांधीजी नहीं चाहते थे। वे चाहते थे कि हर एक मनुष्य को अपने साधनों तथा बुद्धि से जीवन-निर्वाह करने का तथा आगे बढ़ने का मौका मिले। उसका जीवन स्वावलम्बी हो, केन्द्रित सरकारी शक्ति पर आधारित न हो।

गांधीजी ने ग्राम-स्वराज्य की जो कल्पना गुलाम हिन्दुस्तान में रखी थी, उसको पूरा करने की जिम्मेवारी आजाद भारत की है। कोई रुकावट आज के लोकतन्त्र में नहीं, जिससे गाँव की शक्ति पूरी गाँव में न लग सके। जिन लोगों ने ग्रामदान करके अपनी जमीन की मिलकियत ग्रामसभा के हवाले कर दी, वे ग्राम-स्वराज्य में प्रवेश पा गये। विनोबा ने यह आन्दोलन उठाकर इसका रास्ता बिलकुल स्पष्ट कर दिया है। इसमें आज के बुद्धिमानों का पूरा योग मिलना चाहिए। जनता सियासी पार्टियों से निराश हो चुकी है। खुद सियासी पार्टियों के नेता भी इस बात को मानते हैं कि जो कुछ आज तक उन्होंने किया, उससे जनता को अपनी तरफ नहीं खींच सके। गांधीजी को समझना और उसके अनुसार काम करना किसी भी भारतवासी के लिए कठिन नहीं होना चाहिए। इस देश के मानस को गांधीजी ने समझ लिया था। यह देश जिस तरह बन सकता है, वह तरीका हमें वह बता गये। इसलिए ३० जनवरी के अवसर पर हम आत्म-निरीक्षण करें और सोच-समझकर गांधीजी का समर्थन अपनी हाथकते सूत की एक गुण्डी देकर करें।

—उदयचन्द
मन्त्री, पंजाब-खादी-ग्रामोद्योग संघ
आदमपुर दोआबा, जालन्धर

इंदौर जिलादान अभियान : २७ दिसबर। म० प्र० सर्वोदय मंडल द्वारा चलाये जा रहे इंदौर जिलादान अभियान के अन्तर्गत १६ से २५ जनवरी तक इन्दौर तहसील में आयोजित ग्रामस्वराज्य-पदयात्राओं के दौरान १३ नये ग्रामदान मिले हैं। पदयात्राओं में १४ टोलियों में ३४ कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। ५३ गाँवों में यात्रा हुई। ४७ रुपये ८५ पैसे का सर्वोदय-साहित्य बिका। जिले के एक-तिहाई से कुछ अधिक गाँव अब तक ग्रामदान में शामिल हो चुके हैं। इन्दौर जिले में कुल ६४० गाँव हैं। ■

ग्राम-स्वराज्य के अग्रिम मोर्चे से :

दरभंगा में शिविरों की श्रृङ्खला

"आप शिविरार्थी हैं, 'क्राउड'–भीड़–नहीं हैं। भीड़ के बाह्य आकृति का चित्र खींचते हुए कोई सीधी रेखा नहीं खींची जा सकेगी। भूमिति की जितनी आकृतियाँ हो सकती हैं, उन सबका उपयोग करते हुए भी भीड़ का चित्र नहीं खींचा जा सकता। गीली मिट्टी का एक ढेला दिवाल पर फेंक मारो तो जिस प्रकार की आकृति दिवाल पर उठेगी, शायद, वैसे ही भीड़ की आकृति होगी। और भीड़ के अन्तरंग का तो पता ही नहीं चलता। क्योंकि 'ए क्राउड हैज नो सोल'–समुदाय की कोई आत्मा नहीं होती, 'एण्ड ए मॉब हैज नो ब्रेन्स'–भीड़ को कोई दिमाग नहीं होता। किसीने कहा है।" वाक्य पूरे ही होने थे कि कोई सत्तर-पचहत्तर व्यक्ति सिपाहियों की-सी कतार बनाकर बैठ गये।

वक्ता आगे बोल रहा है, 'ए मॉब इज ए मैन विदाउट रीजन', भीड़ यानी अक्लहीन मनुष्य। क्रांतिकारक अक्लहीन होगा तो क्रांति नहीं ला सकेगा, यह स्पष्ट है। इस शिविर में हम लोग कुछ विचार करने इकट्ठे हो रहे हैं।'

इशारा शायद शिविरार्थी समझ गये। हरेक ने कागज कलम सम्भाल ली।

शिविर के संचालक समझा रहे थे—"भाइयो ! शिविर में सारे काम अनुशासन के साथ निश्चित समय पर बगैर ऊधम मचाये, व्यवस्थित ढंग से होने चाहिए।"

काफी चुस्त कार्यक्रम शिविर में रखा गया था। सुबह ४-३० बजे उठना, तब से १२ बजे तक का कार्यक्रम, अत्यन्त व्यस्त ! एक घण्टा विश्राम, और फिर कार्यक्रम। फिर एक घण्टा विश्राम और फिर रात के १० बजे तक कार्यक्रम।

एक घण्टे के विश्राम में भला काम चलता है ? लेकिन आश्चर्य ! सुबह और दोपहर के वर्गों की उपस्थिति में कोई अन्तर नहीं था। बड़ी लगन के साथ सूत्रयज्ञ चल रहा था, शिविरार्थी कतारों में बैठे कात रहे थे। वक्ता समझा रहा था, "आम जनता की अपनी एक संस्कृति होती है—सामान्य मानवों की संस्कृति। तो जनता का सेवक कैसा होगा ? कुशल, वक्तृत्ववान, फुर्तीला और चुस्त। फुर्तीलापन बनाये रखने के लिए खेल और कवायद के कार्यक्रम रखे गये हैं।" और कवायद के समय देखा गया कि सारे शिविरार्थी कतारों में खड़े हैं। सभी दिल से हिस्सा ले रहे हैं।

भोजन के बाद क्या हो ? टहलना ? नहीं। पढ़ना ? नहीं। काम करना ? नहीं। एक भाई थोड़ी नाराजगी के स्वर में कह रहे हैं, 'प्रश्न ही व्यर्थ है, भोजन के बाद एक ही कार्यक्रम होता है और उसका नाम है शयन।' लेकिन शिविर-संचालकों ने बड़ी निष्ठुरता का व्यवहार किया, तुरत घण्टी बजा दी। एक दो-तीन बार सिटी बजा दी। अवाक् होकर मैं देख रहा था, अब क्या होगा ? किसीने बताया, अब होगी प्रार्थना।' सभी भाई प्रार्थना में शामिल हो गये। एक शिक्षक भाई ने पूछा, 'तो क्या प्रार्थना भी क्रांति के लिए जरूरी है ? धर्म-निरपेक्षता के जमाने में आप प्रार्थना का आडम्बर क्यों खड़ा कर रहे हैं ? इसका क्रांति के साथ क्या मेल ?'

वक्ता समझा रहा था—"शरीर, बल तथा अनुशासन के लिए कसरत-कवायद, मनोरंजन के लिए खेल, आत्मबल के लिए प्रार्थना। हम मानवीय क्रांति की परिभाषा करने निकले हैं। इसमें इन तीन प्रवृत्तियों का समान स्थान है। क्रांति का एक त्रिकोण होता है। उसकी तीन भुजाएँ होती हैं। तो क्या क्रांतिकारी के जीवन में कम-से-कम तीन गुणों की जरूरत नहीं होगी ? मन, बुद्धि और आत्मा इनमें सामंजस्य की कोई जरूरत नहीं होगी ?"

यह था हाजीपुर अनुमंडल का शिविर।

❀ ❀ ❀

समस्तीपुर अनुमंडल का शिविर पूसा रोड में हुआ। निधि संग्रह करना था। जयप्रकाशजी को थैली भेंट करनी थी। एक लाख रुपया इकट्ठा करना आवश्यक माना गया। प्रमुख कार्यकर्ता इस शिविर में उपस्थित नहीं रह सके। शिविरार्थियों की औसतन आयु पचीस से कम ही होगी। यह शिविर पाँच दिन चला। 'सर्वोदय' शब्द तो सबने सुना था, लेकिन उसका पूरा अर्थ और व्यापकता थोड़ों को मालूम थी। इसलिए तो ग्रामदान क्रांति का अर्थ समझने के लिए ये नवजवान इकट्ठे हुए थे। जमाना था—जब क्रांतिविचार शहरी वृद्ध नेताओं तक सीमित था, फिर शहरी कार्यकर्ताओं तक आया और अब ग्रामीण नवजवानों तक पहुँच रहा है।

❀ ❀ ❀

एक भाई कह रहे थे, 'यह कर्णनिया का शिविर बड़ा ठोस है। इसमें के कई कार्यकर्ता बड़े कर्मठ और अनुभवी हैं। मधुबनी अनुमंडल के सार्वजनिक जीवन के 'भीम' ही समझिये।' ध्वजाप्रसाद साहू शिविरार्थियों से कह रहे थे–'शीश दिया तो रोना क्या रे !' इस क्रांति में सर्वस्व झोंक दो, क्योंकि अब यह आखिरी चट्टान है, शायद हम लोगों के लिए आखिरी लड़ाई है—'दि लास्ट एण्ड ग्रेट'।

शिविरार्थियों ने कहा, 'शिविर पाँच दिन का नहीं, सात दिन का होना चाहिए। सर्वोदय विचारों को सुनकर हम लोगों का उत्साह बढ़ा है। लेकिन और कुछ सुनना चाहते हैं, और कुछ। विज्ञान के अनुकूल समयोचित और एक कदम आगेवाली क्रांति की परिभाषा से हम और गहरा परिचय पाना चाहते हैं। पाँच दिन काफी नहीं, दस दिन चाहिए।"

शिविरों के साथ एक प्रदर्शनी चलती थी—वेदान्त से लेकर विज्ञान तक क्रांति के प्रयास चित्रित करनेवाली। कानों से क्रांति के विचार सुनना और आँखों से क्रांति के चित्र देखना, जिह्वा से क्रांति के गीत गाना। श्रवण, कीर्तन और दर्शन तीनों द्वारा एक अभ्यास था—क्रांति का।

—गोविन्दराव देशपाण्डे

महातूफान-अभियान : दरभंगा से मुजफ्फरपुर

पूसा रोड मे विदाई

कार मे सवार
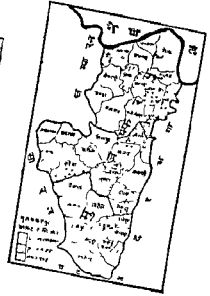
मुजफ्फरपुर की ओर

बिहार-दान संकल्प-समारोह का आयोजन

आगामी २३-२४ जनवरी '६८ को पटना मे राज्य के राजनीतिक दलो, पचायत परिषदो, विविध स्वायत्त तथा रचनात्मक सस्थाओ तथा ग्रामदानी नेताओ की सभाएँ आयोजित की जा रही है। बिहारदान के आह्वान पर उक्त सगठनो के प्रमुख लोगो ने महातूफान अभियान मे सक्रिय होने के लिए यह कदम उठाया है। २४ जनवरी की शाम को पटना की आम सभा मे बिहारदान का सकल्प दुहराया जायगा। स्मरणीय है कि श्री जयप्रकाश नारायण विदेश-यात्रा पर निकल रहे है और बिहार-दान सकल्प की भेंट के साथ उनको विदेश-यात्रा के लिए विदाई दी जायगी।

प्रतीक्षा - सर्वोदयग्राम के द्वार पर

ग्रामदानी गाँव का जुलूस

स्वागत-सभा मे (सर्वोदयग्राम)
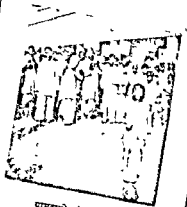
शांति-केंद्रों की गतिविधि

आजमगढ़ : संयोजक—श्री मेवालाल गोस्वामी। दोहरीघाट ब्लाक में ग्रामदान-अभियान में ६१ ग्रामदान हुए। राजभाषा-विधेयक विरोधी आन्दोलन के समय शांति-सैनिकों द्वारा आजमगढ़ में शांति के प्रयास किये गये।

महाराष्ट्र शांति-सेना मण्डल, बम्बई। गत माह में पाँच शिविर हुए—एक नागरिकों का और चार विद्यार्थियों के। अकोला में दो और परभणी में एक किशोर शान्ति-दल केंद्र खोला गया। नासिक जिले के मालेगाँव में कुछ दिन पहले हिन्दू मुस्लिम दंगा हुआ था, वहाँ स्थायी शान्ति-सेना का संगठन करने का सोचा गया है। अकोला जिले के स्कूलों में १३ सभाएँ आयोजित की गयीं, जिनमें विद्यार्थियों ने काफी रस लिया और ५६ किशोर शान्ति-सेवक बने। अकोला जिले का एक जिला सम्मेलन करने का विचार है।

पिथौरागढ़ : संयोजक—श्री रामलाल। केन्द्र के शान्ति सैनिकों के प्रयत्न से एक प्रखण्डदान प्राप्त हुआ। डीडीहाट क्षेत्र में नशाबन्दी अभियान चलाया गया। सर्वोदय-सम्मेलन तथा गोष्ठियों का कार्यक्रम रखा गया। स्थानीय प्रमुख समाचार-पत्रों ने भूदान-ग्रामदान और वर्तमान भूमि-समस्या और उसके उपाय के बारे में लेख प्रकाशित करने में सहयोग दिया।

जेदुआ : संयोजक—श्री अशोक मकवाणा। केन्द्र के आसपास के गाँवों में जहाँ पहले बिलकुल कपड़े का प्रचार नहीं था, वहाँ प्रचार किया जा रहा है। लोग कपड़े खरीदते हैं। इन दो माह में ५५ रु० ३७ पैसे के कपड़े बिके। शांति-केन्द्र की प्रवृत्तियों में लोगों की रुचि अब दिखाई देती है।

गांधीग्राम : संयोजक—बुद्धिनाथ साहू। गाँव में सर्वोदय-पात्र रखे गये हैं। कताई और बुनाई का काम चलता है। ग्रामीण पुस्तकालय का उपयोग होता है। रोगियों की सेवा, उत्सव वगैरह के जरिये लोक-संपर्क आदि के कार्यक्रम चलते हैं।

पोआरी : संयोजक—नागेश्वरी शर्मा। बिहार के सूखाग्रस्त क्षेत्र में रिलीफ कमेटी की ओर से प्रखंड प्रभारी के रूप में संयोजक ने कार्य किया।

खिमस्तीपुर संयोजक—अमर सिंह वर्मा। शांति-सैनिकों ने जनता में ग्रामदान का विचार फैलाने का, काम किया, सर्वोदय मित्र भी बनाये गये। गाँव में एक पुस्तकालय खोला गया।

नदौरा : संयोजक—कपिलदेव सिंह। नदौरा ग्राम में सर्वोदय विचार साहित्य के प्रचार का कार्य हाथ में लिया गया। कुछ ग्रामजन शांति-सैनिक बने। एक और शांति-केन्द्र की स्थापना की गयी।

ऊँचागाँव : संयोजक—निर्भय सिंह। शांति-सैनिकों के प्रयत्नों से गाँव में झगड़ों की संख्या कम होती जा रही है और कचहरी का आश्रय लेना भी कम हो रहा है। खादी, सफाई, सेवा, लोकसंपर्क के कार्य होते रहते हैं।

तेलहाडा : शांति-सैनिकों की देखभाल में भारत सेवक समाज द्वारा संचालित एक मुफ्त भोजनालय चलाया गया। हर मंगलवार को रामायण पाठ, संकीर्तन इत्यादि किया जाता है।

लोकयात्रा

इंदौर १ जनवरी। देश में स्त्री-शक्ति जागरण का मिशन लेकर श्री विनोबाजी की ओर से १२ वर्ष तक भारत में घूमनेवाली महिला लोक-यात्रा को इंदौर जिले की महू, देपालपुर और सांवेर तहसील के गाँवों में पदयात्रा करते हुए दो माह से अधिक हो गये। इस अवधि में लोकयात्रा-टोली के ५० पड़ाव और लगभग २२० मील की पदयात्रा हुई। लोकयात्रियों ने करीब १५० सभाओं और व्यक्तिगत संपर्क द्वारा महिला-जागरण का अपना संदेश पहुँचाया। ५ जनवरी को लोकयात्रा इंदौर तहसील में प्रवेश करेगी।

हम आपको याद दिलाते हैं

··कि "भूदान-यज्ञ" का अगला अंक 'सत्याग्रह' विशेषांक होगा और ३० जनवरी '६८ के अवसर पर प्रकाशित होगा। इसके साथ ही "गाँव की बात" परिशिष्ट का भी विशेषांक प्रकाशित होगा। दोनों अंक सचित्र एवं अभिव्यक्ति की अन्य विधाओं से युक्त होंगे। नोट कर लें १९ जनवरी का अंक नहीं निकलेगा। विशेषांक के बाद का पहला अंक ६ फरवरी को प्रकाशित होगा।

अपनी प्रति सुरक्षित करायें।
कहीं ऐसा न हो कि जब आप विशेषांक प्राप्त करना चाहें, तो 'अप्राप्य' की सूचना आपको देनी पड़े।

दुरंगा आकर्षक मुखपृष्ठ पृष्ठ-संख्या ६४ : मूल्य सिर्फ १ रु०।

आन्दोलन के समाचार

ग्रामदान-अभियान :

मैनपुरी में ३ प्रखण्डदान

श्री राजाराम भाई के पत्रानुसार—उत्तर प्रदेश के मैनपुरी जिले की जसराना तहसील में ३ प्रखण्डदान घोषित हुए हैं।

गोविन्दपुर : ३ जनवरी। उत्तर प्रदेश गांधी स्मारक निधि के तत्वावधान में मीरजापुर जिले के म्योरपुर प्रखण्ड में बारह टोलियाँ गत १८ दिसम्बर से ३१ दिसम्बर तक की पदयात्रा पर निकली थी। इस तीसरे चक्र में चार टोलियों को नौ ग्रामदान प्राप्त हुए।

—देवतादीन

कालीकट ३० दिसम्बर। आज यहाँ दो नये ग्रामदान की घोषणा हुई। ग्रामदान-तूफान अभियान में अब तक १४ ग्रामदान मिले। केरल में अब तक कुल ४१७ ग्रामदान मिले हैं।

पूर्णिया, २५ दिसम्बर। २२ दिसम्बर को पूर्णिया के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं एवं अन्य सहयोगी मित्रों की एक बैठक पूर्णिया जिला परिषद् भवन में हुई। बैठक ने २६ जनवरी तक जिलादान करने के संकल्प को दुहराया। अब तक जिले के ३८ में से २४ प्रखण्डदान हो गये हैं। शेष १४ प्रखण्डदान २६ जनवरी, '६८ तक हो जाय, इस दृष्टि से सभी प्रखण्डों में एकसाथ आन्दोलन चलाने का निर्णय किया। २६ दिसम्बर से १४० कार्यकर्ताओं की शक्ति इस कार्य में लग रही है। इसके बाद पुष्टि का काम उठा लिया जायगा, जिसे २ अक्तूबर, '६८ तक सम्पन्न करने की कोशिश की जायगी। ३० जनवरी से १२ फरवरी तक प्रत्येक प्रखण्ड में कोष-संग्रह अभियान चलेगा। इस मौके पर जिले के सर्वोदय मंडल के प्रमुख लोगों की ११ लोक-यात्राएँ कोष-संग्रह एवं व्यापक विचार-प्रचार की दृष्टि से चलेंगी।

कसबा, २१ दिसम्बर। पूर्णिया के श्यामानन्दनगर प्रखण्ड के सभी गाँवों की ग्राम-सभाएँ गठित हो गयीं। इनके अध्यक्ष एवं मंत्रियों का दो दिवसीय शिविर कसबा में श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरीजी के मार्ग-दर्शन में हुआ। करीब १०० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। ग्रामदानी गाँवों का प्रखण्ड-संगठन का सर्वसम्मत चुनाव हुआ। शिविर का संयोजन श्री रामावतार भाई ने और समापन श्री निर्मल भाई, मंत्री, बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी के व्याख्यान से हुआ।

उत्तरकाशी. ग्रामदान-तूफान टोली उत्तरकाशी में डुण्डा विकासखण्ड के प्रखण्ड-दान का कार्यक्रम पूरा कर अब दूसरा विकास खण्ड नौगाँव में कार्य कर रही है। गत १५ नवम्बर को नौगाँव विकास खण्ड में स्थानीय जनता का एक शिविर किया गया। बाद में दस व्यक्ति तूफान-टोली के साथ ग्रामदान के लिए निकल पड़े। पहाड़ के दुर्गम रास्तों को पार कर गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य का संदेश पहुँचा रहे हैं। विकास क्षेत्र में ६ टोलियाँ घूम रही हैं, अभियान का संचालन श्री मानसिंहजी रावत व श्री दयालदासजी कर रहे हैं। अब तक २८ ग्रामदान प्राप्त हुए हैं। बीच में वर्षा व हिमपात होने के कारण काफी ठण्ड हो जाने के बावजूद भी टोलियाँ उत्साहपूर्वक जुटी हुई हैं। ३० जनवरी '६८ तक जिलादान का संकल्प किया गया है।

—घनश्याम रतूड़ी, मंत्री
जिला गांधी-शताब्दी समिति, उत्तरकाशी

शिविर-सम्मेलन :

सेवापुरी, ३१ दिसंबर। उ० प्र० गांधी-शताब्दी समिति की ओर से ५ से ११ दिसम्बर तक कार्यकर्ताओं का एक शिविर सम्पन्न हुआ। गांधी-शताब्दी के कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने के लिए कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने, सर्वोदय आन्दोलन के तत्त्वों एवं कार्यक्रमों की जानकारी देने तथा विविध कार्यक्रम को गति प्रदान करने के उद्देश्य से इस शिविर का आयोजन किया गया था। प्रान्त की सभी जिला समितियों के मंत्रियों अथवा प्रतिनिधियों, जिला सर्वोदय मण्डलों व शांति-सेना के प्रतिनिधि, खादी-संस्थाओं व अन्य रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधियों को इस शिविर में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया गया था। प्रदेश के ५४ में से ४१ जिलों से लगभग १२५ शिविरार्थियों ने भाग लिया, जिनमें १७ महिलाएँ थीं।

विभिन्न विषयों पर व्याख्यान देने के लिए पूरे समय के लिए श्री नारायण देसाई उपलब्ध रहे तथा विभिन्न विषयों के लिए सर्वश्री विचित्र नारायण शर्मा, आ० गो० खेर, रामस्वरूप गुप्त, राधाकृष्ण, कपिल भाई, करण भाई, सुरेशराम भाई, सरला बहन एवं अमरनाथ भाई का सहयोग प्राप्त हुआ। शिविरार्थियों ने अपने श्रमदान से स्थानीय पुलिया तथा कच्चे रास्ते को दुरुस्त किया। अन्तिम दिन शिविरार्थियों की शांति-सैनिक रैली निकटवर्ती गाँवों में निकली।

अपने-अपने जिलों में आयोजित करने के लिए गांधी-शताब्दी कार्यक्रमों की योजनाएँ भी शिविरार्थियों ने बनायीं, जिन्हें वे अपने जिलों की समिति एवं अन्य सहयोगियों के द्वारा कार्यान्वित करेंगे।

शिविरार्थियों की १२ टोलियाँ सत्य, प्रेम, मंगल, प्रकाश, मैत्री, सर्वहारा, करुणा, शील, सत्याग्रह, अभय और विजय नाम से बनी थी, जो शिविर के सामूहिक सेवा के कार्यों में हाथ बँटाती थी।

शोक-समाचार

श्री गांधी आश्रम, मगहर क्षेत्र के सहमंत्री श्री रामयश सिंह का ४ जनवरी को रात्रि में एकाएक हृदयगति रुक जाने से देहावसान हो गया। उनकी आयु ६० वर्ष की थी। उन्होंने काशी विद्यापीठ से 'विशारद' की परीक्षा पास करने के बाद सन् '२६ में आश्रम में प्रवेश किया, तब से निरन्तर आश्रम के भिन्न-भिन्न प्रमुख पदों पर कार्य करते रहे। बहुत ही सरल हृदय के और खादी-जगत् के निष्ठावान कार्यकर्ता रहे। उनका जन्म चम्पारन जिले में हुआ था और वह प्रसिद्ध पत्रकार श्री देवव्रत शास्त्रीजी के कनिष्ठ भ्राता थे। वे अपने पीछे अपनी पत्नी और भाई का परिवार छोड़ गये हैं। इनके देहावसान से गांधी आश्रम की, विशेषकर खादी-जगत् की, अपूरणीय क्षति हुई है।
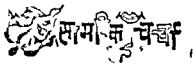
गोरखपुर : ५-१-'६८ —कपिल भाई

नये वर्ष की भेंट : दिल्ली की दिल्लगी

प्रकृति की रचना भी अजीब है हर साँझ नयी सुबह को जन्म देती है और हर सुबह साँझ बुला लाती है ! दिन चाहे जो भी हो, महीना कोई भी रहे, साल-पर-साल गुजर जाते हैं, कभी इस क्रम में कोई अवरोध प्रकट नहीं होता।

लेकिन मनुष्य शायद इस क्रम को अपनी सीमाओं में बाँधना चाहता है। इसे अपने अनुकूल बनाने के लिए उसने समय चक्रों में काल की अबाध गति का विभाजित कर दिया है। इसी तरह न एक बँटवारे के अनुसार पुराना साल जाता है, नया साल आता है।

सम्भवतः काल का हर नया क्षण हमारी पकड़ में नहीं आ पाता, इसीलिए हम उसे एक साल की अवधि में पकड़ने की कोशिश करते हैं, या आगत के नयेपन के साथ अपने अन्तर में प्रेरणाओं और अनुभूतियों में नयापन भरना चाहते हैं।

किन्तु गत ३१ दिसम्बर '६७ की रात को नयी दिल्ली के कनाट-प्लेस में जिस नयेपन का दर्शन हुआ, वह निहायत शर्मनाक और मानव की बहुत ही पुरानी अवस्था—जंगल-युग का परिचय देनेवाला है।

भारत में मानव-अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के माध्यम-स्वरूप कला की विभिन्न विधाएँ विकसित हुईं। केवल भारत में ही नहीं, दुनिया के कई प्राचीन स्थानों पर इन विधाओं का विशेष रूप से विकास हुआ था। कला की ये विधाएँ कला-साधकों द्वारा सामान्य मानव की अनुभूतियों को उच्चतर-शिखर पर ले जाने और सुसंस्कृत बनाने का माध्यम थीं।

आज समाज में पूँजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत जिस यंत्रीकरण का विकास हुआ है, उसने कला की इन विधाओं पर भी अपनी कृपा बरसायी है, और इसीलिए आज की यांत्रिक-कला उन्माद बढ़ाने का काम कर रही है, संस्कार-परिष्कार का नहीं। मानव-मन कुण्ठाओं के बोझ से दबता जा रहा है। शराब की मदहोशी से यह बोझ हलका करने की सीख तथाकथित आधुनिकतम सभ्यता दे रही है।

नयी दिल्ली में ३१ दिसम्बर की रात को एक डेढ़ हजार मदहोश लोगों ने कनाट प्लेस की सड़कों पर युवतियों के साथ छेड़खानी करने, उनके कपड़े फाड़ने, निलज्ज व्यवहार करने का जो नया प्रदर्शन किया है वह भारत की राजधानी नयी दिल्ली में नये वर्ष की नयी भेंट तो है ही, साथ ही दिल्ली के 'नाइट क्लबों' में चहारदिवारी के अन्दर सभ्यता के नाम पर जो कुछ होता है उसकी एक भोंडी अनुकृति भी है, लेकिन उससे अधिक देश के सजग नागरिकों के लिए एक जबरदस्त चेतावनी भी है, कि जिस सभ्यता में अभिव्यक्ति और अनुभूति की अवस्था में मनुष्य मनुष्य न रह जाय, वह सभ्यता नकल के काबिल है क्या ?

—राही

सर्व सेवा संघ न्यूज लेटर (अंग्रेजी मासिक)

द्वारा गांधी निर्वाण दिवस के अवसर पर प्रस्तुत हो रहा है,

'शांति अंक'

हिंसा की ज्वालामुखी पर टिकी हुई भयग्रस्त दुनिया

और देश-विदेश में शांति की आकुल चेष्टाएँ

वार्षिक शुल्क दस रुपया — एक प्रति एक रुपया

सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१

आखिरी डाक से

● चकिया, वाराणसी में आयोजित अभियान में कुल १०० ग्रामदान हुए हैं।

● महाराष्ट्र के रत्नागिरी, चाँदा और ठाणा जिले में हाल में हुई यात्राओं में क्रमशः ६, २३ और ८८ ग्रामदान प्राप्त हुए हैं। महाराष्ट्र में अब तक कुल ३,०५५ ग्रामदान हो चुके हैं।

● पलामू में जिलादान के संदर्भ में आयोजित सर्वदलीय गोष्ठी में १८ अप्रैल तक जिलादान कराने का फैसला किया गया है। इसमें सहयोग देने के लिए सर्वश्री ठाकुरदास बंग और चन्द्रप्रकाशजी को आमंत्रित किया गया है।

● पटना शांति-दल द्वारा आयोजित इद मुबारक कार्यक्रम में श्री जयप्रकाश नारायण ने शांति और अहिंसा के आधार पर नयी समाज रचना की अनिवार्यता बतायी।

● मुंगेर के तारेपुर नामक स्थान पर आयोजित सर्वदलीय बैठक ने २६ जनवरी ६८ तक बड़वारा और भगवान प्रखण्डदान कराने का फैसला किया है।

● श्री कपिल भाई की सूचनानुसार उत्तर प्रदेश में जनवरी के प्रथम सप्ताह तक कुल २४४१ ग्रामदान हुए। मैनपुरी के जसराना तहसील में अभियान का सिलसिला जारी है। १० १२ ग्रामदान और हो जाने पर तहसील-दान घोषित हो जायगा। तब कुल मिलाकर उत्तर प्रदेश में ५ अनुमण्डल तथा १७ प्रखण्डदान हो जायँगे।

● ओयल, शिवालिक हिल्स (हि० प्र०) में ५ जनवरी को श्री गांधी सेवा आश्रम में सुप्रसिद्ध गांधीवादी अर्थशास्त्री स्व० डा० जे० सी० कुमारप्पा का जन्म-दिन मनाया गया। स्मरणीय है कि श्री गांधी सेवा आश्रम, ओयल की स्थापना डा० जे० सी० कुमारप्पा की सलाह तथा योजना से हुई थी। आपको इस काम के लिए गांधीजी ने सन् १९३१ में ओयल ग्राम में भेजा था।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

भूदान-यज्ञ

जीवन जखन शुकाये जाय
करुणा धाराय एसो।
सकल माधुरी लुकाये जाय
गीत सुधा रसे एसो।

कर्म जखन प्रबल आकार,
गरजि उठिया ढाके चारिधार
हृदय प्रान्ते, हे जीवन नाथ!
शान्त चरणे एसो।

आपनारे जबे करिया कृपण,
कोणे पड़े थाके दीन हीन मन
दुवार खुलिया, हे उदारनाथ
राज - समारोहे एसो।

वासना जखन विपुल धूलाय
अन्ध करिया अबोधे भुलाय,
ओहे पवित्र! ओहे अनिद्र
रुद्र आलोके एसो।

जीवन रस जब सूख जाय
तब करुणा की धारा बन आओ।
सकल मधुरता लुप्त होय तब
गीत सुधा रस बन कर आओ।

कर्म, प्रबल आकार धरे जब
घिर आये चहुओर गरजता।
तब हे जीवन नाथ हृदय के
अन्दर शान्त चरण आ जाओ।

दीन हीन मन निज को कृपण
बना, कोने में कहीं पड़ा हो,
खोल हृदय पट समारोह के
साथ उदारनाथ आ जाओ।

विपुल वासना धूल उड़ा जब
मुझ अबोध को अन्धा कर दे भरमा,
दे तब हे पवित्र! ओहे अनिद्र!
तुम रुद्र प्रभा बनकर आ जाओ।

[अपनी इस कविता का अनुवाद
के निमित्त
अहमदाबाद में २४ से ३० नवम्बर १९४७ तक
बापू ने
उपवास किया था। उस अवसर पर
(थी) बापू ने
... को यह गीत सुनाया था]

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र
सम्पादक : राममूर्ति
शुक्रवार वर्ष : १४
३० जनवरी '६८ अंक : १६-१७-१८

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०
विदेश : २० पैसे । इस अंक का : १ रु०
साधारण डाक-शुल्क—
१ पौण्ड या ३॥ डालर
(डाक-शुल्क : देशों के अनुसार)
सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१
फोन नं० ४२८५

विधायक सत्याग्रह

कुछ लोग कहते हैं कि सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम प्रक्रिया निकालकर सत्याग्रह का विचार ही बाबा ने हवा में उड़ा दिया। लेकिन सोचना चाहिए कि लोकशाही में, जहाँ मतप्रचार का पूरा स्वातन्त्र्य है, पूरा अधिकार है, वहाँ विचार-प्रचार की स्वतन्त्रता नं० १ में इंग्लैण्ड में है और नं० २ में भारत में है—इतनी विचार-प्रचार की जहाँ स्वतन्त्रता है उस वातावरण में हमें सत्याग्रह-प्रक्रिया पर जरूर सोचना चाहिए और उसकी छानबीन करनी चाहिए।

दूसरी बात। विज्ञान के जमाने और अणुविज्ञान के जमाने में शस्त्रास्त्र बदलते जाते हैं, वैसे ही सत्याग्रह का भी रूप बदलेगा या नहीं? गांधीजी बड़े संवेदनशील थे, परिस्थिति को देखकर झट बदल जाते थे, इतने लचीले थे। तो हमें सोचना होगा कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हम क्या कर सकते हैं?

मैं यह कहना नहीं चाहता कि इस विषय का कुछ निर्णायक सूत्र हमारे हाथ में आ गया है। कहना यह चाहता हूँ कि तटस्थ भाव से चिन्तन होना चाहिए। यह नहीं मानना चाहिए कि विनोबा ने सत्याग्रह का विचार ही उड़ा दिया। उद्देश्य यह है कि सत्याग्रह का ठीक संशोधन हो और उसकी शक्ति अकुण्ठित रहे, इसके लिए विचारों का संशोधन करना होगा। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में जब झगड़े उठते हैं या अशान्ति होती है, उस वक्त हमें क्या करना चाहिए, इसकी कोई मिसाल गांधीजी के जीवन में नहीं मिलेगी। वह आपको ही सोचना होगा। और ऐसे ऊपर-ऊपर से सोचकर नहीं होगा, नये ढंग से सोचना होगा। मैं उसकी तफसील में नहीं जा सकता। वह तो चर्चा का विषय होगा। लेकिन आक्रमणकारी आयें तो मैं उनको कहूँगा कि तुम प्रेम से आओ। बातचीत के लिए आओ, आ सकते हो। हमारे बच्चे उनसे मिलने के लिए आयेंगे, डरेंगे नहीं। हमारी बहनें उनसे मिलने के लिए आयेंगी, डरेंगी नहीं। हम उनको प्रेम से बुलायेंगे, पर वे कोई गलत काम हमसे करवाना चाहेंगे तो हम कहेंगे कि हम इसे नहीं मान सकते, चाहे हमको समाप्त कर दो।

यह एक सोचने की बात है। यह कोई 'निगेटिव' सत्याग्रह नहीं, 'पॉजिटिव' सत्याग्रह है। बुरे काम में भाग न लेना, इसको 'रेजिस्टेन्स' (विरोध) नाम देना गलत है। वह तो 'एसिस्टेन्स' है, पूरी मदद है सामनेवाले को सोचने में। अगर सामनेवाला कहे कि पेट्रोल लाकर सामने के घर को आग लगाओ तो मैं उसमें भाग नहीं लूँगा। उसको समझाऊँगा कि इसमें तुम्हारा भी नुकसान है, मेरा भी नुकसान है, घरवाले का भी नुकसान है। यह विरोध नहीं है। मैं समझा रहा हूँ कि इसमें तुम्हारा भी नुकसान है, ऐसा करना नहीं चाहिए, तो वह काम 'रेजिस्टेन्स' के लायक नहीं है। मुझे तो ईसा का वाक्य याद आता है—'रेजिस्ट नाट ईविल'—बुराई का विरोध मत करो। कुछ लोगों ने इस वाक्य का यों खुलासा कर दिया कि 'रेजिस्ट नाट ईविल विथ ईविल' यानी बुराई का बुराई से विरोध मत करो। लेकिन मुझे वह जैसा का तैसा पसन्द है, क्योंकि जहाँ 'ईविल' का विरोध करने की प्रवृत्ति होती है, वहाँ वह 'ईविल' ही मेरे में दाखिल होता है। तो मैंने जो मिसाल ऊपर दी है, वह 'रेजिस्टेन्स' भी नहीं है। लेकिन लोगों में वृत्ति होती है इसको 'रेजिस्टेन्स' कहने की, तो ठीक है। लेकिन यह शब्द का सवाल नहीं है, इसमें वृत्ति का सवाल है।

(पोचुरी, वर्धा, ८-५-'६५)

—विनोबा

सत्याग्रह की उत्पत्ति

'सत्याग्रह' शब्द का निर्माण मेरे द्वारा दक्षिण अफ्रीका मे उस शक्ति के लिए किया गया था, जिसका पूरे आठ वर्षों तक वहाँ के भारतीय प्रयोग करते थे। उस समय इंग्लैण्ड और दक्षिण अफ्रीका में 'पैसिव रेजिस्टेन्स' नाम से जो आन्दोलन चल रहा था, उससे भेद दिखाने के लिए यह शब्द बनाया गया था।

इसका मूल अर्थ है सत्य को पकडे रहना यानी सत्यबल। मैंने इसे प्रेमबल या आत्मबल भी कहा है। सत्याग्रह का प्रयोग करते समय मैंने बहुत प्रारम्भ मे ही देख लिया था कि सत्य के अनुसरण मे अपने विरोधी के प्रति हिंसा करने को कोई स्थान नही है, बल्कि धैर्य एवं सहानुभूति के साथ उसे उसकी गलती से मुक्त करना चाहिए; क्योंकि जो एक को सत्य प्रतीत होता है वही दूसरे को गलती के रूप मे दिखाई दे सकता है। धैर्य का तात्पर्य स्वयं कष्ट-सहन है। इसलिए इस सिद्धान्त का अर्थ हो गया—विरोधी को कष्ट या पीडा देकर नही, बल्कि स्वयं कष्ट उठाकर सत्य का रक्षण।

सत्याग्रह और निष्क्रिय प्रतिरोध में उतना ही अन्तर है जितना उत्तर और दक्षिण ध्रुव में है। निष्क्रिय प्रतिरोध की कल्पना तो एक निर्बल के अस्त्र के रूप मे की गयी है और उसमे अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए शरीरबल या हिंसा का उपयोग वर्जित नही है, जब कि सत्याग्रह की कल्पना परम शूर के अस्त्र के रूप मे की गयी है। और इसमे किसी भी प्रकार या रूप मे हिंसा के प्रयोग के लिए स्थान नही है।

२५-३-१९२० —महात्मा गाधी

सत्य + प्रेम = सत्याग्रह

लोग पूछते हैं कि आपको सहयोगी समाज बनाना है या सत्याग्रही? बाबा कहता है कि भूदान-यज्ञ सत्याग्रह का सर्वश्रेष्ठ उपाय है। बाबा गाँव-गाँव जाता है, भूमि की मालकियत गलत है, ऐसा जप करता है। व्यापक प्रचार करता जा रहा है। चाहे धूप हो, बारिश हो, वह घूमता रहता है, घूमता ही जा रहा है। यही तो सत्याग्रह है।

सत्याग्रह के मानी यही है कि सामनेवाले के प्रति प्रेम होना चाहिए। उसका द्वेष करना गलत है। अगर चित्त मे द्वेष है तो शस्त्र से लडना बेहतर है। इसलिए यह जरूरी है कि हम पहले अपने चित्त से द्वेष हटाये। तभी हमारे सत्याग्रह मे बल आयगा। इसलिए महात्मा गाधी ने कहा था कि सत्याग्रह मे एक पद अध्याहृत है। सत्याग्रह मध्यमपदलोपी समास है। सत्याग्रह यानी सत्य के लिए प्रेम द्वारा आग्रह। अगर हम सत्य और प्रेम, दोनो को इकट्ठा करेंगे तो समाज आगे बढ़ेगा, उत्पादन भी बढ़ेगा और समस्या भी हल होगी।

१९-१२-१९५५ —विनोबा

सत्याग्रह : प्रतिकार से सहकार तक

'सत्याग्रह' शब्द संसार को गांधीजी ने दिया। 'सत्य' और 'आग्रह', दोनों शब्द प्राचीन हैं, सत्य का अपना अर्थ है और आग्रह का अपना अर्थ है, और इन दोनों शब्दों के मेल से बने 'सत्याग्रह' का अपना विशेष अर्थ है।

गांधीजी जीवन की ओर जिस दृष्टि से देखते थे, जिस प्रकार का जीवन जीने की कल्पना करते थे, और सामाजिक सम्बन्धों में जिस प्रकार की व्यवहार-नीति का पुरस्कार करते थे—इन सबको उन्होंने 'सत्याग्रह' नाम दिया।

सत्य एक आध्यात्मिक निष्ठा का विषय है। और पिछले दिनों अध्यात्म का सम्बन्ध प्राय, गलती से, परलोक से अधिक रहा है। लेकिन गांधीजी का सत्याग्रह विचार अहिंसक समाज रचना के लिए आया है, उसकी दृष्टि पारलौकिक नहीं, ऐहिक ही है।

जीवन पद्धति

मानव के इतिहास में सत्यनिष्ठा नयी बात नहीं है। उपनिषदों में सत्य की खोज करते हुए यम के द्वार पर तीन दिन तक भूखे-प्यासे रहनेवाले नचिकेता को सत्यधृति कहा गया है और इस सत्यधृति शब्द का अर्थ सत्यनिष्ठ या सत्याग्रही ही है।

सत्यनिष्ठा की खातिर सारे सांसारिक सुखों का और शरीर तक का त्याग करनेवाले सत्यवीरों की कमी नहीं है।

जीवन व्यवहार का आधार प्रेम है। गांधीजी कहते थे कि अहिंसा का भावरूप या विधायक रूप प्रेम है। मनुष्य को जीने के लिए थोड़ी-बहुत हिंसा करनी ही पड़ती है। यह हिंसा स्वभावगत है, अपरिहार्य है। परन्तु मनुष्य के पुरुषार्थ का विषय वह नहीं है। उस अपरिहार्य हिंसा की मात्रा को सतत कम करते जाना मनुष्य के प्रयत्नों का लक्ष्य है। मनुष्य को हिंसा से प्रेम की ओर कदम बढ़ाना है। यही सांस्कृतिक प्रगति या सभ्यता है। इसीको गांधीजी अहिंसा कहते थे और इसी प्रवृत्ति का विधायक पहलू प्रेम है।

मानव-जीवन के विकास की परिणति उसके आध्यात्मिक विकास की प्रगति में होनी चाहिए। केवल भौतिक सुख से उसका विकास पूर्ण नहीं होता, उसका नैतिक विकास भी अवश्य होना चाहिए। नैतिक विकास का अर्थ है—हृदयस्थ प्रेम भावना का विकास। इस नैतिक विकास को आध्यात्मिक विकास भी कहते हैं।

इस प्रेम-भावना के विकास के लिए युगों-युगों से महापुरुषों ने अनेकविध साधनाएँ की हैं और उनके जीवन में यह आग्रह स्पष्ट उभरकर दिखाई देता है कि व्यक्तिगत सुख की खातिर दूसरों के सुख की हानि कदापि न की जाय। सत्याग्रही जीवन-पद्धति का यह मर्म है।

कार्य पद्धति

भौतिक सुख की प्राप्ति हमेशा भौतिक ज्ञान की मर्यादा में ही होती है। इसलिए समाज में जब इतनी संपत्ति निर्माण नहीं हो पाती कि सबको भरपूर सुख मिल सके, उस स्थिति में उस समय के महापुरुष स्वयं सन्यास स्वीकार करते हैं और समाज को वैराग्य और संयम की शिक्षा देते हैं। सन्यासियों के इस प्रयत्न के फलस्वरूप समाज में विषमता की धार थोड़ी-बहुत भोथरी जरूर होती है, परन्तु सामाजिक जीवन की समस्याएँ ऐसे वैयक्तिक सन्यास से हल नहीं होती हैं। उसके लिए समाज की आवश्यकताभर साधन-सम्पत्ति का उत्पादन बढ़ाने का प्रयत्न करना होता है। इसलिए आध्यात्मिक विचारधारा का 'केवल सन्यास'-मार्ग सामाजिक विकास के लिए पर्याप्त नहीं है। इसके लिए कर्मनिष्ठ अध्यात्म चाहिए। और, गांधी के सत्याग्रह-विचार में यही कर्म और अध्यात्म का समन्वय है, जो उसकी महत्त्वपूर्ण विशेषता है।

सत्याग्रह सन्यास मार्ग नहीं है, प्रखर सामाजिक कर्मयोग है। मानवमात्र के एकत्व को माननेवाला और तदर्थ सामाजिक जीवन के समस्त क्षेत्रों में समता स्थापित करना चाहनेवाला मानवतावादी विचार है। इसीलिए वह मानव-मानव के बीच भेद निर्माण करनेवाले सभी संस्कारों का निरसन करने को उद्यत है। राजनैतिक परतन्त्रता, आर्थिक विषमता, सांस्कृतिक उचनीचता आदि भेदभाव को समाजजीवन से दूर किये बिना अहिंसक समाज की निर्मिति सम्भव नहीं है यह सत्याग्रही निष्ठा है।

इस प्रकार 'सत्याग्रह' शब्द एक विशिष्ट जीवन-पद्धति का और एक विशिष्ट कार्य पद्धति का द्योतक है।

सत्याग्रह प्रसंग-विशेष पर एक प्रतिकार पद्धति भी है।

अहिंसा की अनिवार्यता

सत्याग्रह की मूलभित्ति अहिंसा है, प्रेम है। प्रेम का अर्थ है दूसरों को आत्मवत् देखना। सामान्य मनुष्य अपने प्रिय व्यक्ति के सुख से सुखी होता है और उसके दुःख से दुःखी होता है। इससे आगे, जो व्यक्ति दूसरों के सुख में अपना सुख देखता है और दूसरों के दुःख में अपना दुःख देखता है, वह परमयोगी या विश्वबन्धु कहलाता है। सत्याग्रही आत्मौपम्य की इस वृत्ति को एक कदम और आगे ले जाता है। वह दूसरों के दोषों को अपना दोष और दूसरों के अपराधों को अपना अपराध मानता है।

इसीलिए सत्याग्रही परम सहृदयी होता है। गांधीजी कहते थे कि सत्याग्रही का कोई वैरी नहीं है। सत्याग्रही की दृष्टि में हर एक अपराधी या अन्यायी व्यक्ति एक भटका, बहका, गुमराह भाई है। इसलिए प्रत्येक की निःस्वार्थ सेवा करना, प्रतिप्रेम की अपेक्षा रखे बिना प्रत्येक से प्रेम का व्यवहार करना प्रेमधर्म का अर्थात् सत्याग्रह का लक्षण है। अपकार करनेवाले का भी उपकार करना सत्याग्रही जीवन का नियम है।

गांधीजी की अहिंसा व्यापक थी। 'वह अभेद प्रवर्तक और अद्वैतमूलक थी। हिंसा भेदप्रवर्तक और स्वार्थमूलक होती है। भेद से अभेद की ओर अग्रसर होना ही मानवीय प्रगति है। इसलिए सत्य का आग्रह या अनुरोध का विरोध करते वक्त किसी भी व्यक्ति का शारीरिक या मानसिक हानि नहीं पहुँचाना है। क्योंकि अन्याय या असत्य का मूल स्वार्थ और द्वेष है और स्वार्थ और द्वेष से ही हिंसा

उत्पन्न होती है। इसलिए अन्याय और असत्य का विरोध हिंसा से हो ही नहीं सकता।'

इस नियम का विनियोग गांधीजी ने दुर्जनता के प्रतिकार के क्षेत्र में किया।

सत्याग्रही निष्ठा

गांधीजी की प्रतिकार-नीति में दुर्जन का हृदय-परिवर्तन प्रमुख लक्ष्य रहा है, सत्याग्रह में अपकार का बदला लेना या अपकारकर्ता को दण्ड देना नहीं है। सत्याग्रही बुराई का, दुर्गुण का या दोष का अन्त करना चाहता है, किन्तु दुर्जन का, दुर्गुणी का या अपराधी का नाश नहीं करना चाहता। वह तो उसे दुर्गुणों से या अपराधों से मुक्त करना चाहता है। इसलिए सत्याग्रही बुराई का प्रतिकार करेगा और बुरे की सेवा करेगा। इस प्रकार सत्याग्रह में प्रेम और प्रतिकार दोनों का सुन्दर समन्वय है।

बच्चा बीमार पड़ता है तो माता अपने लाडले का रोग दूर करने में, रोग का प्रतिकार करने में कुछ भी कसर नहीं रखती। रोग का तीव्र-से-तीव्र और घोर-से-घोर प्रतिकार करती है, परन्तु प्रयत्न यह करती है कि रोगी को, अपने प्रिय पुत्र को कम-से-कम कष्ट हो। उसके लिए वह स्वयं अधिक-से-अधिक कष्ट उठाकर भी पुत्र का कष्ट कम करना चाहती है। यहाँ अधिक-से-अधिक प्रेम और तीव्र-से-तीव्र प्रतिकार एकत्र पाये जाते हैं। सत्याग्रह का आधार यही वृत्ति है।

गांधीजी अक्सर कहा करते थे कि सत्याग्रही का इस संसार में कोई वैरी नहीं है। इसी प्रकार का उद्गार भारतीय संत परम्परा में बहुत प्रकट होता रहा है। जिस प्रकार सूर्य के लिए अन्धकार का अस्तित्व ही नहीं है, उसी प्रकार सत्य के सामने असत्य का, हिंसा का, बुराई का, अस्तित्व ही नहीं है। यह सत्य-निष्ठा की पराकाष्ठा है।

वेदों में इन्द्र की स्तुति में यही कहा गया है कि 'यह जो कहा जाता है कि तेरा युद्ध हुआ वह तो माया है। तेरा न कोई शत्रु रहा है, न अब है।' योगसूत्रकार पतंजलि कहते हैं कि 'जहाँ अहिंसा प्रतिष्ठित होती है वहाँ वैर रह ही नहीं सकता।' अहिंसा को वैर मालूम ही नहीं है। भक्तों ने यही निष्ठा इन शब्दों में प्रकट की है कि 'भक्त तो पारस पत्थर है और उसके सामने दुर्जन कौन है? क्या चन्दन अपने वातावरण को सुगंधित किये बिना रहता है?'

इन सबका अर्थ एक ही है और वही सत्याग्रही निष्ठा है।

प्रतिकार की समस्या

लेकिन यह तो पूर्णपुरुष की बात हुई। तत्त्वतः विचार करने पर कोई भी देहधारी मनुष्य पूर्ण नहीं हो सकता। उन्नत-से-उन्नत महात्मा भी अपूर्ण ही रहनेवाला है, क्योंकि उसकी देह ही उसकी उपाधि है और उतने अंश में वह अपूर्ण है ही। फिर वह जिस अनुपात में अपूर्ण होगा, उस अनुपात में दुर्जनों से उसका कम-ज्यादा संपर्क भी आयगा ही। और तब दुर्जनों के प्रतिकार की समस्या उस के सामने भी आयगी ही।

हिंसा के बदले अधिक हिंसा

दुर्जनों के प्रतिकार का यह प्रश्न सनातन है। मनुष्य समाज बनाकर रहने लगा तभी से उसके सामने यह प्रश्न रहा है और इसका समाधान भी वह तभी से खोजता रहा है।

पहला प्रकार : बुराई के बदले अधिक बुराई

एक प्रयोग यह हुआ है कि दुर्जनों को नियन्त्रण में रखने के लिए उन्हें दण्डभय दिखाया जाय। कम दण्ड से काम न बनता हो तो अधिक और विशेष दण्ड दिया जाय। इस नीति का आश्रय व्यक्ति-व्यक्ति को ही नहीं, समाज-समाज की समस्याओं में भी लिया गया और इसमें युद्ध-संस्था का भी उपयोग किया गया। हम देखते हैं कि नगण्य बातों को निमित्त बनाकर बड़े-से-बड़े युद्ध हो गये हैं।

बुराई का प्रतिकार अधिक बुराई से करने का यह उपाय जब समाज-मान्य हुआ तो राजा या किसी व्यक्ति-विशेष तक ही सीमित न रहकर यह जन-सामान्य के हाथ में भी पहुँचा और व्यक्तिगत तथा कौटुम्बिक द्वेषों और अपराधों के क्षेत्र में भी काम आने लगा। समाज में आतंक और विद्वेष बढ़ा।

आज भी राष्ट्रीयताप्रधान राजनीति में काफी हद तक यही नीति चलती है। जब साम्राज्यवाद का, उपनिवेशवाद का और सैन्यशक्ति से एक-दूसरे को अधीन बनाने का युग था तब तो थी ही, आज के इस वैज्ञानिक प्रभावयुग में भी हिंसक साधनों को बढ़ाकर दूसरे की अपेक्षा अधिक अपनी शक्ति जताकर प्रतिष्ठा पाने की नीति कायम है। सामनेवाले के मुकाबिले में सफलता पाने के हेतु से अधिक हिंसा (ग्रेटर वायलेन्स) का सहारा आज भी लिया ही जाता है।

दूसरा प्रकार : बुराई के बदले समान बुराई

इस परिस्थिति से समाज को उबारने

के लिए महापुरुषों ने और समाज-सुधारकों ने यह धर्म स्थापित करने का प्रयत्न किया कि किसी भी दोष या अपराध का उचित ही दण्ड दिया जाय, अधिक नहीं। इसी से पहले मूसा आदि दार्शनिक धर्मगुरुओं के ये उपदेश प्रसिद्ध हैं—'आई फार आइ, टूथ फार टूथ' (आँख के बदले आँख, दाँत के बदले दाँत)। यानी कोई एक आँख फोड़ता है तो उसके बदले में एक (ही) आँख फोड़ी जाय, एक दाँत तोड़ता है तो उसके बदले में एक (ही) दाँत तोड़ा जाय। इसमें बदले में एक दाँत तोड़ने का विधान नहीं, अनेक दाँत तोड़ने की मनाही है। भारत में प्रचलित धर्मयुद्ध के पीछे भी यही विवेक रहा है, अमर्याद प्रतिकार को मर्यादा में सीमित करने का प्रयत्न रहा है।

राजनीति के उपाय चतुष्टय सर्वविदित हैं साम, दाम, भेद और दण्ड। इसमें देने से उसकी शत्रुता दूर हो सकती है। इस उपाय को 'साम' कहा।

अगर इससे काम न चला तो युद्ध करके दोनों पक्षों की अपार हानि—मनुष्य की और धन की भी—करने की अपेक्षा शत्रु को कुछ देकर संतुष्ट किया जा सके, तो क्या हानि है? युद्ध को टालने के लिए कुछ ले-देकर मामला निपटा देने का यह उपाय 'दान' कहा गया। सामोपाय से काम न चले तो दानोपाय से काम लेना चाहिए।

अगर इससे भी काम न बना तो युद्ध का रास्ता है ही, लेकिन युद्ध करते समय अपनी शक्ति और शत्रु की शक्ति का हिसाब करना पड़ता है। शत्रु के बलाबल का विचार किये बिना युद्ध छेड़ने में खतरा ही है। इसलिए दण्ड से पहले भेदनीति का विचार करना होता है।

भेद में मुख्य बात शत्रु की शक्ति तोड़ने

हिंसा के बदले हिंसा

की होती है। इसमें शत्रु के पक्ष में फूट डालना, नाना प्रकार के मतभेद पैदा करना, भ्रामक सिद्धान्तों का प्रचार करना, ताकि उसका सामाजिक संगठन ढीला हो जाय, विभिन्न वर्ग विग्रह निर्माण करना ये सब बातें आती हैं। यह 'भेदोपाय' है।

यह भी काम न दे तो ही 'युद्ध' करना जो प्रत्यक्ष हिंसात्मक है।

इस प्रकार युद्ध को एक अनिवार्य बुराई के रूप में मान्य करना बुराई का प्रतिकार

यद्यपि दण्ड को अन्तिम यानी सबसे अधिक कारगर उपाय माना है फिर भी उसको अंतिम मानने का यह भी आशय है कि और किसी दण्डभिन्न उपाय से काम न चले तो ही उसका सहारा लिया जाय।

जो व्यक्ति सज्जन है, न्यायनिष्ठ है, समझदार है उससे शत्रुता बहुधा गलतफहमी के कारण होती है। इसलिए उसके साथ चर्चा करने से, उसे अपनी बात समझा देने से और उसके साथ मित्रता के प्रसंग निर्माण कर

तुल्यबल से करने के प्रयोग का एक स्वरूप है।

बुराई या हिंसा का तुल्यबल से प्रतिकार करने में यह निश्चय नहीं है कि हमें विजय मिलेगी ही। वही प्रतिकार जब अधिक बुराई से करते हैं, तो विजय की संभावना तो है ही। विजय पाने के हेतु से ही, अधिक बुराई का सहारा लिया जाता है, इसलिए वह परिणामसापेक्ष है।

लेकिन तुल्यबल से प्रतिकार करने में परिणाम की निश्चिति नहीं है, यह परिणाम निरपेक्ष है। इसके पीछे यही विचार है कि विजय मिले या न मिले हम तो अधिक बुराई का सहारा नहीं लेंगे। इस अर्थ में यह धार्मिक उपाय है जब कि अधिक बुराई अधार्मिक है।

तीसरा प्रकार बुराई के बदले भलाई

इसके बाद तीसरा प्रयोग सामने आया—बुद्ध, मध्यकालीन सन्त और गांधी के युग में। इन्होंने स्पष्ट कहा कि बुराई का प्रतिकार भलाई से करो, बुराई से नहीं। सन्तों के सामने यह प्रश्न था कि स्वयं हिंसा नहीं करनी है, तो दुर्जनों का प्रतिकार कैसे हो। सत्यनिष्ठा का तो यह तकाजा है कि उसके सामने कोई दुर्जन है ही नहीं। लेकिन वह अपूर्ण मानव की पहुँच के बाहर की चीज है। मानव तो अपूर्ण ही रहनेवाला है समाज में दुर्जन भी रहेंगे ही, इसलिए प्रतिकार का क्या उपाय हो सकता है?

भगवान् बुद्ध और मध्यकालीन सन्तों के जीवन में हम देखते हैं कि उन्होंने अपनी सत्याग्रही जीवन निष्ठा का प्रयोग इस दिशा में किया, उसका विनियोग दौर्जन्य के प्रतिकार के क्षेत्र में किया। चूँकि अपकार कर्ता से भी प्रेम करना है और सबको आत्मवत् देखते हुए, हर प्रकार का कष्ट सहन करते हुए सबकी सेवा करना सत्याग्रही निष्ठा का प्रमुख लक्षण है, इसलिए सन्तों के जीवन-व्यवहार से यह समीकरण सिद्ध हुआ कि दुर्जनों के प्रतिकार का अर्थ है, दुर्जनता का प्रतिकार, और इसीका अर्थ है बाहर दिखाई देनेवाली दुर्जनता को अपने हृदय में खोजना। इस प्रकार दुर्जनता के प्रतिकार का सज्जन का मार्ग बनता है क्षमादान

रहना, क्लेश सहन करना, उदारभाव और निरहंकार-वृत्ति रखना, नम्र रहना, अक्षोम्य शान्ति, मुक्त हृदय और प्रयत्न-सातत्य रखना तथा फल-त्याग करना।"

हिंसा के बदले हिंसा नहीं

ध्यान देने की बात यह है कि यही सन्तों की जीवन-पद्धति रही है और यही उनकी प्रतिकार-पद्धति भी रही है। मूल जीवन-पद्धति ही प्रसंगवशात् प्रतिकार-पद्धति के रूप में भासित होती है, दोनों भिन्न नहीं हैं।

भगवान् बुद्ध ने कहा—'अक्रोध से क्रोध को जीतो, साधुता से असाधुता को जीतो।' इसी प्रकार 'न पापे प्रतिपापः स्यात्' (पाप के बदले प्रतिपाप न हो) आदि व्यवहार-सूत्र बने।

इस बीच दो हजार साल पहले ईसा ने कहा—'बुराई का प्रतिकार न करो।' उसका प्रसिद्ध वाक्य है—'रेजिस्ट नाट ईविल।' प्रतिकारप्रिय लोगों ने उस वाक्य का अर्थ यह किया कि बुराई का प्रतिकार बुराई से न किया जाय। लेकिन ईसा का वाक्य तो यही है कि बुराई का प्रतिकार न करो। ईसा ने उपदेश दिया कि 'यदि कोई एक गाल पर थप्पड़ मारे तो उसके सामने दूसरा गाल कर दो, कोई तुमसे कोट माँगे तो तुम उसको अपना कुर्ता भी उतारकर दे दो।'

भूदान-यज्ञ : सत्याग्रह अंक : ३० जनवरी, '६८

इसके बाद गांधी का युग आता है। गांधीजी बुद्ध के समान बुराई का प्रतिकार भलाई से और हिंसा का प्रतिकार अहिंसा से करने के पक्षपाती दिखाई पड़ते हैं।

इस प्रसंग का मार्मिक विश्लेषण विनोबाजी ने इन शब्दों में किया है —

"प्रायः लोग यह एक श्लेषार्थ किया करते हैं कि ईसा का यह उपदेश कि 'कोई एक गाल पर थप्पड़ लगाये तो दूसरा गाल आगे करो' अथवा एकनाथ का शरीर पर दुर्जनों के थूकने पर बार-बार नहाना, अप्रतिकार-सूचक है, गांधीजी का उपदेश अहिंसात्मक है, लेकिन प्रतिकारसूचक है। किन्तु मुझे इस श्लेषार्थ (विचार) में भूल मालूम होती है। शाब्दिक श्लेष ही देखें, तो ईसा के वचन में भी प्रतिकार दिखाई देगा। ईसा का वचन यह नहीं कि 'कोई तेरे गाल पर थप्पड़ लगाये तो तू उस ओर ध्यान न दे' या 'चुप रह।' बल्कि यह है कि 'दूसरा गाल आगे कर।' जिन्हें 'प्रतिकार' शब्द के प्रति प्रेम है उन्हें इससे समाधान हो सकेगा।

"लेकिन मेरे खयाल से यह समाधान और यह श्लेष, दोनों सर्वथा निरुपयोगी हैं। परिपूर्ण निर्भय और निर्वैर पुरुष का सहज व्यवहार

हिंसा के बदले अहिंसा

चाहे चतुरा स्वरूप सक्रियता का हो, निष्क्रियता का या प्रतिक्रिया का, एकरूप ही होता है। दुर्जन शरीर पर थूकता है, तो कोई निर्वैर पुरुष स्वयं भी अपने शरीर पर थूक लेगा। दूसरा निर्वैर पुरुष कुछ न करते हुए मुसकराता आगे बढ़ जायगा। तीसरा निर्वैर पुरुष एकनाथ महाराज के समान स्नान करेगा; तो चौथा निर्वैर पुरुष प्रसन्न मुख से और आत्मीय भावना से सामनेवाले का कान पकड़ेगा, ऐसी भी कल्पना की जा सकती है।"

इसलिए व्यक्ति-विशेष के आचरण को आधार मानकर विश्लेषण करने में विशेष सार नहीं है। इतना विचार ध्यान में रख लेना पर्याप्त है कि दुर्जनता के प्रतिकार की खोज करते-करते विचार का किस रूप में विकास होता गया है।

प्रतिकार की तीन अवस्थाएं देखीं। अधिक बुराई से प्रतिकार, समान बुराई से प्रतिकार, और भलाई से प्रतिकार।

चौथा प्रकार : बुराई की उपेक्षा

प्रतिकार का चौथा प्रकार ईसा के वचन के अधिक निकट का है। वह है बुराई का किसी रूप में प्रतिकार ही न करना। जिस प्रकार अन्धकार मिथ्या है उसी प्रकार बुराई भी मिथ्या है। अन्धकार को मिटाने का कोई स्वतन्त्र प्रतिकारात्मक कर्म नहीं होता। बत्ती जलाना ही काफी है, उसी प्रकार बुराई की सर्वथा उपेक्षा कर दी जाय और अपनी ओर से भलाई का प्रेममय [illegible] री रखा जाय तो आज जो बुराई का आभास है, वह अपने आप समाप्त हो जायगा।

इसका सुन्दर उदाहरण पौराणिक संत प्रह्लाद में मिलता है। वह अपने सत्य पर अडिग रहा, हर प्रकार का कष्ट सहन करता

बदलते 'सत्य' और बदलते 'आग्रह'

(कुछ पहलू)

१ स्वराज्य के पहले और बाद का 'सत्य'

स्वर्गीय डा० राम मनोहर लोहिया को *सर्वोदय* से एक शिकायत यह थी कि उसने गांधी को छोड़ दिया है। वह कहते थे कि गांधी के बाद सर्वोदय सत्य पर कम, प्रेम पर अधिक जोर देने *लगा है*, और आग्रह को तो सर्वोदय जैसे भूल ही गया है। कहाँ वह किसी अन्याय का प्रतिकार करता है? यह शिकायत डा० लोहिया की ही नहीं थी, कुछ दूसरे लोगों की भी है।

डा० लोहिया उन लोगों में थे जिनका यह विश्वास है कि समाज-परिवर्तन केवल सरकार से नहीं होगा, उसके लिए जनता की शक्ति आवश्यक है। *ऐसे लोग व्यापक* क्षोभ के किसी प्रश्न को लेकर चलाये गये जन-आन्दोलन को जन शक्ति संगठित करने का बहुत कारगर उपाय मानते हैं। वे चुनाव लड़ते हैं, संसद में भाषण देते हैं, लेख लिखते हैं, लेकिन *क्रान्ति की असली* शक्ति के लिए संसद से दूर समाज की ओर देखते हैं। कई लोग समाज की ओर देखते देखते 'सड़क की राजनीति' में उतर जाते हैं।

डा० लोहिया ही नहीं, अब तो प्रायः सभी पार्टियों का यही मानना है कि प्रतिकार का आन्दोलन सचमुच बाहर होना चाहिए, असेम्बली और पार्लियामेण्ट तो उस आन्दोलन को गर्मी पहुँचाने के लिए है। 'सत्य' दल का हो, और 'आग्रह' के दो मोर्चे हों, संसद और सड़क, यह है सत्याग्रह की *नयी व्यूह रचना* जो आज देश में देखने को मिल रही है।

डा० लोहिया 'गांधीवादी समाजवादी' कहे जाते थे। उन्होंने गांधीजी के प्रभाव को देखा था, और उनके नेतृत्व में उनके तरीकों से काम किया था। डा० लोहिया का हृदय गांधीजी के साथ था। सोचने की बात है कि जिस व्यक्ति की यह भूमिका रही हो, उसके *मन में कौनसा* 'सत्य' था जिसका 'आग्रह' वह चाहते थे, और 'आग्रह' का कौनसा स्वरूप था जिसे वह ठीक समझते थे, और जिसे सर्वोदय ने अभी तक ग्रहण नहीं किया है।

गांधीजी ने 'सत्य के प्रयोग' करके जितने 'सत्य' निकाले थे उनमें से देश ने 'अंग्रेजो भारत छोड़ो', के ही सत्य को सबसे अधिक उत्साह के साथ स्वीकार किया था, और इस सत्य की सिद्धि के लिए असहयोग और अवज्ञा आदि का विदेशी सत्ता से टक्कर लेने का जितना *कार्यक्रम था उसे उत्साह के* साथ अपनाया था। इस एक सत्य और उसके आग्रह के सिवाय गांधीजी के दूसरे सत्यों को देश ने क्यों नहीं अपनाया, यह सोचने की बात है। जनता को जाने दें, राजनैतिक दलों ने गांधीजी के *अन्तिम* राजनैतिक सत्य को क्यों नहीं स्वीकार किया? कांग्रेस ने स्वतंत्रता के लिए त्याग और तपस्या की थी, और इस बल पर अपनी एक नैतिक शक्ति बनायी थी, इसलिए गांधीजी चाहते थे कि अनेक वर्षों के त्याग और तपस्या से जो नैतिक शक्ति बनी थी वह नागरिक-शक्ति के साथ रहे, राजनीति दूसरों के लिए छोड़ दी जाय। जो शक्ति स्वतंत्रता प्राप्त करे, वह उसका उपभोग न करे, बल्कि राजसत्ता के मुकाबिले लोकसत्ता को मजबूत करने में लग जाय, यह 'सत्य' क्रान्ति-दर्शन के सारे इतिहास में गांधीजी की विलक्षण और अभिनव देन थी। यह एक सत्य था जिसने गांधीजी को इतिहास के दूसरे सब क्रान्तिकारियों से अलग कर दिया है। और, इतने दिनों बाद, अब लोग महसूस करने लगे हैं कि यह 'सत्य' लोकतन्त्र के विकास में एक नये अध्याय का प्रारम्भ-बिन्दु था। सन् १९४८ की उनकी यह बात उन तमाम लोगों पर लागू है जो जन-शक्ति बनाम राजशक्ति में विश्वास करते हैं।

डा० लोहिया की शिकायत सड़क की राजनीति नयी व्यूह रचना
कौनसा सत्य किसका आग्रह असहयोग और अवज्ञा राज्य शक्ति व
मुकाबिल लोक-सत्ता नया क्रांति दर्शन विरोधवाद का जन्म

आखिर, गांधी के बाद गांधी का दूसरा कौनसा 'सत्य' है जिसके 'आग्रह' की बात कही जाती है? क्या सन् १९२१, १९३०, १९३२, १९४२ के 'सत्य' दोहराने की बात है? या २९ जनवरी १९४८ के सत्य को अमल में लाने की है?

२९ जनवरी, '४८ का यह 'सत्य' स्वराज्य के निर्माण और संगठन के लिए था, जब कि उसके पहले के 'सत्य' स्वराज्य की प्राप्ति के लिए थे। दोनों की पृष्ठभूमि तथा प्रयोजन में अन्तर था। गांधीजी की कल्पना थी कि लोकतन्त्र के विकास के लिए जनता की संगठित नैतिक शक्ति को सरकार की सैनिक-शक्ति के ऊपर रहना चाहिए। यह तभी होता जब 'नेता' समाज में रहते, और 'प्रतिनिधि' सरकार में जाते।

लेकिन क्या कांग्रेस, और क्या दूसरे दल, स्वराज्य के बाद सब नेताओं ने गांधीजी के रास्ते से भिन्न रास्ता पकड़ा। सत्ता में पहुँचकर कांग्रेस ने तो लोक-शक्ति की बात ही छोड़ दी। उसने राजशक्ति द्वारा लोक-कल्याण की नीति और योजना बनायी, और उसीकी रीति-नीति का प्रचार करना शुरू किया। उसकी पंचवर्षीय योजनाओं के मूल तत्त्वों का स्वीकार कर 'विरोधी' दल भी उसी 'लोक-कल्याणवाद' में शरीक हो गये। इस तरह कांग्रेस और उसके विरोधी दल सत्तावाद और कल्याणवाद के समान धर्म में

'...शहरों से भिन्न अपने लाखों गांवों के लिए भारत को अभी सामाजिक, नैतिक और आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करना बाकी है। लोकतन्त्र की सिद्धि में भारत जैसे-जैसे आगे बढ़ेगा उसकी सैनिक (मिलिटरी) सत्ता पर नागरिक (सिविल) शक्ति की प्रमुखता के लिए टक्कर अनिवार्य है। उस टक्कर को राजनैतिक दलों और साम्प्रदायिक संस्थाओं की होड़ से अवश्य अलग रखना चाहिए।'
[गांधीजी का वसीयतनामा, २९ जनवरी, '४८]
('दी लास्ट फेज', पृष्ठ ८१९)—प्यारेलाल

भूदान-यज्ञ : सत्याग्रह अंक : ३० जनवरी, '६८

जनता की उत्तेजना · सत्ता-प्राप्ति का नया हथकण्डा सर्वोदय की नयी धारा अंग्रेजी राज के बाद तनाव–टकराव–पथराव–घेराव · नागरिक का इस्तेमाल तानाशाही या खुली अराजकता को आमंत्रण

एक बन गये। परिस्थिति तब बदली जब विरोधी दलों ने देखा कि कांग्रेस गद्दी से हटती नहीं, और उन्हें गद्दी पर बैठने का मौका मिलता नहीं। इस मनःस्थिति में उग्र विरोधवाद का जन्म हुआ। विरोधवाद को मजबूत करने और चुनाव जीतने की दृष्टि से जनता के प्रक्षोभों का इस्तेमाल किया जाने लगा। नये प्रक्षोभ उभाड़े गये और पुराने बढ़ाये गये, और थोड़े दिनों में विरोधवादी राजनीति उग्र प्रदर्शन से हिंसक तोड़-फोड़ तक पहुँचा दी गयी। इस सारी कार्रवाई को जन-आन्दोलन का नाम दिया गया। गरीब की गरीबी और जवान की जवानी, क्षोभ और उत्तेजना के इन दो स्रोतों का भरपूर फायदा उठाया गया। लेकिन जनता की उत्तेजनाओं और जनता की चेष्टाओं को दल के लिए सत्ता प्राप्त करने का हथकण्डा बनाया गया, न कि सत्ता की तुलना में जनता को मजबूत बनाने के लिए।

बेशक, इस 'सत्य' और इस 'आग्रह' का रास्ता सर्वोदय ने नहीं पकड़ा है। विनोबा ने भारत की परिस्थिति में सर्वोदय की एक नयी धारा बहायी है। क्या उसका मेल गांधीजी के ३० जनवरीवाले सत्य से नहीं है? और, क्या दलों के 'सत्य' का गांधीजी अथवा देश की परिस्थिति के साथ मेल है?

गांधीजी के जमाने में विदेशी साम्राज्यवाद की जड़ें भारत के बाहर थीं। उसे भारतीय जनता की सम्मति या शक्ति नहीं प्राप्त थी, कुछ सामन्तवादी तत्त्वों का सहयोग भले ही प्राप्त रहा हो। लेकिन स्वतन्त्रता के बाद जो सरकार बनी वह लोकप्रिय सरकार थी, और लोकतन्त्र के प्रचलित और मान्य नियमों के अनुसार बनी थी। उस लोकप्रिय सरकार को जनता के नाम में बोलने का उतना ही अधिकार था जितना उसके विरोधियों को। सन् १९४७ के पहले जनता के नाम में बोलने का अधिकार केवल कांग्रेस को था, क्योंकि वह साम्राज्यवादी सरकार की विरोधी शक्ति थी। यह अधिकार उस समय की सरकार को नहीं था, वह सरकार हमारी नहीं थी।

अंग्रेजी राज के अन्त के बाद देश की जो सम्पूर्ण परिस्थिति (टोटल सिचुएशन) थी उसीका एक अंग थी नयी देसी सरकार। वह विजातीय द्रव्य नहीं थी। इसलिए उसे हम उस तरह अलग करके नहीं सोच सकते जिस तरह हम विदेशी सरकार को अलग कर लेते थे। जाहिर है कि कोरा विरोधवाद न हमारा 'सत्य' हो सकता था, और न तनाव-टकराव-पथराव-घेराव हमारा नया 'आग्रह'। तो, हम क्या करते? सिवाय इस तरह के 'आग्रह' के? देश के किसी दल की राजनीति के पास जन-आन्दोलन का दूसरा क्या तरीका था? पिछले बीस वर्षों की राजनीति ने—कांग्रेस और संविद दोनों की राजनीति ने—यह सिद्ध कर दिया है कि दल की राजनीति और नागरिक की शक्ति परस्पर-विरोधी तत्त्व हैं। राजनीति ने तो नागरिक का बिल्कुल अलग कर दिया है, ठीक उसी तरह जैसे पंचवर्षीय योजनाओं ने उसे अलग कर रखा है। दोनों नागरिक को इस्तेमाल करती हैं, उसकी स्वतन्त्र सत्ता को नहीं स्वीकार करती। सत्तावाद, कल्याणवाद, और विरोधवाद के अभ्यास का सम्मिलित रूप से यह स्पष्ट परिणाम हुआ है कि सरकार की सत्ता और जनता की समस्या का कोई सम्बन्ध ही नहीं रह गया है। सत्ता और समस्या एक-दूसरे से अलग हो गये हैं। भारत-जैसे बड़े, विविध, अविकसित देश में सत्तावाद, विरोधवाद और कल्याणवाद का सीधा अर्थ है यथास्थिति (स्टेटसको) का समर्थन तथा तानाशाही या खुली अराजकता को खुला आमन्त्रण। आज कौन कहेगा कि गृहयुद्ध के किनारे पर पहुँचा हुआ हमारा यह देश अब इन संकटों से अलग रह गया है? आखिर, ऐसा हुआ क्यों? सीधी बात है कि देश के नेताओं ने स्वतन्त्रता के बाद के भारत का 'सत्य' नहीं पहचाना। वे अलग-अलग अपने-अपने दल के 'सत्य' को ही 'देश' का सत्य मानते रहे, और उसीको अपने-अपने ढंग से 'आग्रह' करते रहे। उनकी सारी शक्ति सरकार-परिवर्तन में ही लगी रही। उन्होंने समाज-परिवर्तन पर ध्यान ही नहीं दिया। समाज-परिवर्तन के लिए आवश्यक था नेतृत्व (लीडरशिप) और स्वामित्व (ओनरशिप) में परिवर्तन। हमारे नेता आज भी इसके लिए नहीं तैयार हैं। उनमें मध्यमवर्गीय राजनीति, मध्यमवर्गीय अर्थनीति, और मध्यमवर्गीय शिक्षानीति से आगे जाने की शक्ति नहीं दिखायी देती। स्वभावतः इस सबका यह परिणाम हुआ कि सरकार बदलने के नाम में एक के 'सत्य' की दूसरे के 'सत्य' के साथ टक्कर हुई, और 'आग्रह' ने खुले आपसी संघर्ष का रूप ले लिया। और, यह सारा व्यापार जनता के नाम में हुआ, और होता चला जा रहा है। जनता शतरंज का खेल देख रही है। घर के चिराग से घर में आग लग रही है। विघटन चरम सीमा पर पहुँच रहा है।

प्रश्न है कि क्या नागरिक शक्ति के संगठन और विकास का कोई दूसरा रास्ता था? क्या सत्ता की राजनीति (पावर पालिटिक्स) के सिवाय और कुछ नहीं था? निश्चित रूप से वह उपाय यह था कि आज की सम्पूर्ण परिस्थिति (टोटल सिचुएशन) को अस्वीकार किया जाय, प्रचलित राजनीति, प्रचलित अर्थनीति, और शिक्षानीति को एक-साथ अस्वीकार किया जाय। यह अस्वीकृति ही स्वराज्य के बाद का पहला 'सत्य' थी। एक परिचित घेरे के अन्दर राजनैतिक विरोधवाद, या प्रतिकारवाद, या टकरावबाद के रास्ते पर चलना एक बात थी, और गांधी के बताये हुए, परिस्थिति के अनुरूप, नये रास्ते पर चलना दूसरी बात। दोनों बिलकुल भिन्न चीजें हैं। विरोधवाद का काम भीड़ के उन्माद (मॉब पैशन) से चल सकता है, लेकिन अस्वीकृति, और अस्वीकृति के आधार पर नयी कृति, का काम लोक-आन्दोलन (मास-मूवमेंट) के बिना नहीं चल सकता।

भूदान-यज्ञ : सत्याग्रह अंक : ३० जनवरी, '६८

मिले, लेकिन मान्यता 'सर्व' की ही होनी चाहिए।

एक समय था जब 'सत्य' के लिए युद्ध (वार) करना पड़ता था। युद्ध टला तो संघर्ष (कान्फ्लिक्ट) करना पड़ा। संघर्ष कम हुआ तो दबाव (प्रेशर) की कार्रवाई से काम लिया गया। अब लोकतन्त्र में दबाव की जगह मनाव की सम्भावना प्रकट हुई है। और, जब ग्रामस्वराज्य की सहकारी, स्वाश्रयी, व्यवस्था में शिक्षण की शक्ति प्रकट होगी तो मनाव की जगह विचार काम करेगा। ग्रामदान-आन्दोलन में हजारों-लाखों लोगों का स्वामित्व-विसर्जन के कागज पर हस्ताक्षर करना इस बात का प्रमाण है कि 'सर्व' की बात कहनेवाले 'सत्य' का सहज प्रवेश लोकहृदय में होता है, जब कि एकांगी और आंशिक (सेक्शनल) सत्य उत्तेजना और उन्माद पैदा करके रह जाता है। इस तरह के एकांगी सत्य से, चाहे वह साधक और शहीद का ही क्यों न हो, नये समाज का निर्माण नहीं हो सकता।

एक बार जब हमने लोकतन्त्र की यह बात मान ली कि 'सत्य' का कुछ अंश सबके पास है, और 'सर्व' की सम्मति से ही सत्य सर्वमान्य हो सकता है, तो सत्य के लिए 'आग्रह' का आग्रह छोड़ना ही होगा। जो सत्य ५१ के पास है उसे ४९ के ऊपर लादा जा सकता है, इस अन्यायपूर्ण और अव्यावहारिक पद्धति के लिए नये लोकतन्त्र में कतई गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। आज हम सामाजिक विकास की जिस मंजिल पर हैं उस पर समाज द्वारा मान्य हो चुके सत्य के लिए प्रसंगवश 'आग्रह' के नाम से प्रत्यक्ष कार्रवाई (डाइरेक्ट ऐक्शन) भले ही आवश्यक हो, लेकिन किसी नये सत्य को मनवाने के लिए आग्रह कदापि नहीं किया जा सकता। विज्ञान और लोकतन्त्र दोनों की 'स्पिरिट' सत्य को ग्रहण करने की है, न कि अपने 'सत्य' के लिए आग्रह करने की। इतिहास में आज तक सत्य को सामान्यतः 'आग्रह' की ही शक्ति से मनवाया गया है। आग्रह में प्रयोग भय की शक्ति का है—भय नर्क का, मृत्यु का, यातना का, आर्थिक क्षति का, सामाजिक अप्रतिष्ठा

लोकहृदय में सत्य का सहज प्रवेश ''भय की मुक्ति ''लोक की शक्ति : हृदय की, विचार की ''सर्व' अणुयुग का सबसे बड़ा 'सत्य' · 'सही विचार'—सबसे बड़ा आग्रह' समाज-परिवर्तन की नयी डाइनेमिक्स ''

का, सुविधाओं के अपहरण का, आदि। अब नये जमाने में सत्य को इसलिए मान्य होना चाहिए कि वह सत्य है। सत्य इस तरह मान्य होगा भी, बशर्ते सत्य सत्य के रूप में प्रस्तुत किया जाय, और उसे जाति के द्वेषों, वर्ग के स्वार्थों, और दल के आग्रहों के साथ न जोड़ा जाय।

आज के जमाने का सबसे बड़ा सत्य 'सर्व' है। विज्ञान और लोकतन्त्र के युग में 'सर्व' का नाश, या 'सर्व' का उदय, इन दो के सिवाय कोई तीसरा विकल्प नहीं है। इस सर्व को 'राइट-लेफ्ट-सेन्टर' की राजनीति में, मालिक मजदूर की अर्थनीति में, या जाति की समाजनीति में बाँटना, और मनुष्य के ऊपर तरह-तरह के 'लेबुल' चिपकाकर उसे दुराव या संहार का शिकार बनाना घोर 'असत्य' नहीं तो और क्या है? बात यह है कि हमारे दिमाग अब भी उस बीते युग से चिपके हुए हैं जब राजा से अधिकार छीनने और पूँजीपति से मुनाफे के बँटवारे के लिए लड़ाई करनी पड़ती थी। हमारे देश में साम्राज्यवाद से सत्ता छीनने की अनेक वर्षों तक जो लड़ाई चली उसे बीत अभी थोड़े ही दिन हुए हैं। उसी संस्कार और उसी दिमाग से हम 'सर्व' की समस्याओं को सत्ता की छीना-झपटी के साथ जोड़कर हल करने का मिथ्या प्रयत्न कर रहे हैं। नीयत हमारी जरूर यह है कि सत्ता जनता की मुक्ति का साधन बने, लेकिन हम स्वयं सत्ता के मद और मोह से मुक्त नहीं होना चाहते। हम नाम लेते हैं 'लोक' का, लेकिन उसकी शक्ति में हमें भरोसा नहीं है। लोक की शक्ति बन्दूक या कानून की नहीं हो सकती, उसकी शक्ति तो हृदय की, विचार की, ही होगी।

हम कब मानेंगे कि 'सर्व' इस अणुयुग का सबसे बड़ा 'सत्य' और 'सही विचार' सबसे बड़ा 'आग्रह' है? 'सर्व' के साथ जुड़े हुए 'सही विचार' में मनुष्य के अन्दर घुसने की अद्भुत शक्ति है। इसीलिए बावजूद व्यवसायवाद, सम्प्रदायवाद, और सत्तावाद के कुप्रभावों के, विचार की शक्ति, यानी हृदय परिवर्तन, समाज-परिवर्तन की नयी 'डाइनेमिक्स' बनकर सामने आ रही है। 'सर्व' के साथ जुड़े हुए विचार में जो शक्ति और आश्वासन है वह न सेठ की पूँजी में है, न योद्धा के शस्त्र में। आज हर देश में सामान्य मनुष्य उसी आश्वासन का भूखा है। उसीकी तलाश में वह कभी सेठ के पास, कभी सैनिक के पास, कभी नेता के पास, कभी शासक के पास, तो कभी सन्त और साधक के पास, भटक रहा है।

आज की राजनीति और आज की अर्थनीति 'सत्य' को 'सर्व' के साथ नहीं जुड़ने दे रही है। इन्हीं के कारण विज्ञान समाज के साथ नहीं जुड़ने पा रहा है। इन्होंने ही लोकतन्त्र को 'लोक' से अलग कर दिया है। इनको जोड़ने का काम 'सर्व' का सत्य ही कर सकता है।

'सर्व' के सामने आते ही 'सत्य' का और उसके 'आग्रह' का स्वरूप बदल जाता है। अब प्रश्न केवल 'सर्व' के कल्याण का नहीं, 'सर्व' की मुक्ति का है। इस भूमिका में हम एक बार बदलते 'सत्य' और बदलते 'आग्रह' को समझने की कोशिश करें।

—राममूर्ति

मूल्य—१ रुपया
सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

जागतिक संत्रास और आत्मा की घुटन

"...बंधन और कस जाते हैं। भीतर का 'मैं' और छटपटाता है।...बेड़ियों की खनक और तेज होती है,...'मुक्ति' की आवाज पुनः ऊंची होती है। युगों-युगों से 'मैं' मुक्त होना चाहता है, लेकिन परवशता की दीवालें निरन्तर अभेद्य होती जाती हैं।

पास में रूसो का 'मैं' चीखता है: "Man is born free, yet he is every where in chains—यद्यपि मनुष्य स्वतन्त्र जन्मा है, तो भी वह हर जगह जंजीरों में जकड़ा हुआ है।"

लेकिन क्या मनुष्य का पैदा होना ही 'मैं' के अस्तित्व को सीमाओं में जकड़ने की मजबूर स्थिति नहीं है? एक दूसरी चुनौती सामने आती है। मार्सल कहता है—"मैं इसी ढंग से रह सकता हूं कि मैं अनुभव करूं कि मैं अपने शरीर का हूं, उसके साथ स्वयं को पहचानूं, या कि मैं अपने शरीर को उपकरण के रूप में इस ढंग से मानूं कि मैं उसके द्वारा दास बना लिया गया हूं। उदाहरण के रूप में आत्महत्या के मामले में मैं स्वतन्त्रतापूर्वक अपने शरीर को समाप्त करता हुआ देखा जा सकता हूं। किन्तु इस स्थिति में मैं दुःखात्मक भ्रम का शिकार बनता हूं, और अपनी स्वतन्त्रता के सकारात्मक अर्थ में इस बुलावे को स्वीकारात्मक प्रतिवचन देने की सम्भावना है।" ('सिक्स एक्जिस्टेंशियलिस्ट थिंकर्स' पृ० १६)

'मैं' के अस्तित्व के समक्ष खड़ी है दूसरी 'चुनौती' 'मृत्यु' की। हीगर के अनुसार—"मैं अपनी सारी सम्भावनाओं को मृत्यु में नष्ट होते देखता हूं, जैसी कि दूसरों की सम्भावनाएं उनकी बारी में नष्ट हुई थीं। इस प्रमुख सम्भावना के समक्ष दो रास्ते हैं—स्वीकृति या विभ्रान्ति।

जीवन और मृत्यु की अनिवार्य विवशता के बीच—"त्रास संसार में मुझे अपने जीवन के लगावों और बंधों से अलग करता है। वह मेरे सम्बन्धों और पूर्वाधिकारों में अन्तर्निहित होकर मुझे इस मान्यता से अलग कर देता है कि मैं इस निर्वैयक्तिकतात्मक दृढ़ निश्चय, अप्रामाणिक अस्तित्व को जारी रख सकता हूं, या महान प्रयत्नों से 'मेरे स्वयं' अस्तित्व का वैयक्तिक भार ले सकता हूं, और वह (मेरा स्वयं) मैं किसी भी रूप में नहीं हूं, किन्तु हमेशा 'होऊंगा' हूं, क्योंकि मैं बनने की आशा करता हूं।"—हीगर की अनुभूति व्यक्त होती है।

मानव-मन तड़पता है, 'जन्म', 'जीवन' और 'मृत्यु' के साथ 'मैं' का अस्तित्व क्या है, कहां है, किस रूप में है, यह समझना चाहता है, अपने होने की सार्थकता का अनुभव करना चाहता है, लेकिन आतंक की कारा में अन्धकार और घना होता है, बन्दी मन रोशनी की एक-एक किरण के लिए अकुलाता है।

× × ×

• बंधनों का कसाव मुक्ति की आवाज अस्तित्व की जकड़ मृत्यु की चुनौती स्वीकृति या विभ्रांति अनिवार्य विवशता तिराहे पर भागती भीड़ भूख भूख भूख घंटाघर की चेतावनी

शहर के एक प्रमुख तिराहे पर भागती हुई भीड़। गाढ़ा कुहरा वातावरण पर एक बोझ-सा बनकर लद गया है। ठिठुरती हथेलियों को ओवरकोट की जेब में गरम करने की चेष्टा करते हुए मैं ड्यूटी पर जा रहा हूं। शीत की लहरों से बचाने के लिए कान को मफलर से अच्छी तरह ढक लिया है—इतनी अच्छी तरह कि शहर का सामान्य कोलाहल सुनाई नहीं पड़ रहा है। पैदल जा रहा हूं, इसलिए मुख्य सड़क पर नहीं, दायीं पटरी पर चल रहा हूं। विलम्ब तो हो ही गया है, इसलिए पहुंचने की जल्दी है। ध्यान आफिस की फाइलों की ओर है। 'बास' की कल की बातों की अनुगूंज दिमाग में अभी भी बाकी है।

अचानक पांव में ठोकर-सी लगती है, गिरते-गिरते टेलीफोन के खम्भे का सहारा लेकर किसी तरह बच जाता हूं। और जब निगाहें झुकती हैं, तो कुछ क्षणों तक झुकी ही रह जाती हैं! यह एक मानव की ठठरी है, जो शायद लाश बन चुकी है, या तो बननेवाली है। प्रायः नंगी टाट के चिथड़ों में अधलिपटी। मानव-अस्तित्व पर एक क्रूर व्यंग्य! पास का घंटाघर ...टन...टन... की गूंज दस बार जनवरी की इस सर्द हवा में दुहराकर चुप हो जाता है, सिर्फ उसकी प्रतिध्वनि मुझे आगे बढ़ने को बाध्य करती है। मेरा एक पग उठता है, एक कदम फासला तय करने के लिए दूसरा आगे बढ़ना चाहता है कि तभी उस ठठरी का सूखा हुआ एक हाथ प्रयत्नपूर्वक मेरा दायां पांव जकड़ लेता है। जिसे मैंने लाश मान लिया था, उसकी हरकत मुझे जड़ बना देती है। मरियल-सी पलकों से आधी ढकी पीली आंखों के बीच टिकी हुई पुतलियां मेरी ओर स्थिर हैं, नाक-मुंह से भयंकर बदबू आ रही है, उसके होठों पर हल्की-सी हरकत होती है। शायद वह कुछ कहना चाहता है। मैं यह नहीं समझ पाता कि वह क्या चाहता है। घंटाघर की चेतावनी याद आती है, लेकिन मेरे अन्दर व्याप्त जड़ता मुझे आगे बढ़ने नहीं दे रही है। मृतप्राय हाथ मेरे पांव में सख्त बेड़ी बन गये हैं। मैं इधर-उधर ताकता हूं। थोड़ी दूर पर बैठा एक भिखमंगा कोढ़ी, जो कई सालों से इसी जगह भगवान की दुहाई देकर भीख मांगता रहा है, और जिसके टूटे अलम्युनियम के कटोरे में वेतन मिलने के दिन प्राय हर महीने मैं पांच पैसे डालता रहा हूं, मेरी ओर देखकर कहता है, 'जाइये बाबूजी, जाइये अपनी राह।...अब क्या?...अब तो खेल खतम है। 'साले को भूख ने, शीत लहरों ने सुरधाम के चौखट तक पहुंचा दिया है!...(उसकी आवाज कुछ और ऊंची होती है।) खेल खतम है बाबूजी...अब भूख का सवाल उसके सामने न रहा...अब सब कुछ उसके लिए बेकार...!' एक क्षण के लिए उस कोढ़ी के विकृत चेहरे पर हास्य का एक

क्रूर भाव भड़रता है, और दूसरे ही क्षण वह गुदड़ी में अपने को छिपा लेता है। मेरा अन्तर काँप जाता है। घंटाघर का टन एक बार फिर गूँजता है। लेकिन उस कर्णभेदी आवाज को लगता है—'भूख भूख भूख' की चीत्कार तत्काल निगल गयी। मेरी निगाहें पुन झुकती हैं। उसकी नंगी छाती पर उभरी हुई पसलियों के बीच एक शिथिल-सी धौंकनी जो कुछ क्षण पहले चल रही थी, अब बन्द हो चुकी है। मेरे पाँव की पकड़ ढीली हो गयी है। उसके एक हाथ की मुट्ठी रीढ़ की हड्डियों से चिपकी आँतों से जुड़ गयी है। उसका विवर्ण चेहरा एक ओर लुढ़क गया है। और आँखों की पुतलियाँ वैसी की वैसी ही टिकी हुई हैं। मेरा रोम रोम सिहर उठता है। कदमों के पास पड़ी रूह मेरे अन्तर को ऐंठ रही है। 'भूख' घंटाघर तिबारा गूँजता है। मुझे मेरे बच्चे याद आते हैं, मेरी बीवी याद आती है, बूढ़ी माँ की झुर्रियाँ याद आती हैं और याद आता है 'बास' का तमतमाया चेहरा आफिस की टेबुल पर पड़ी फाइलों का ढेर। भूख घंटे की गूंज के साथ अब भी प्रतिध्वनित हो रहा है। मैं आफिस की ओर प्राय दौड़ता हुआ चल पड़ता हूँ।

× × ×

आत्मा की घुटन मन की तड़प और भूख भूख भूख। क्या जीवन यानी यह संत्रास, यह यातना। व्याकुल मन मानव अभियान के पदचिह्नों के सहारे पीछे लौटता है, सदियों पीछे।

गुरु और ग्रन्थ कहते हैं—"तू नश्वर है, जगत् मिथ्या है। जो 'अमर' है, जो शाश्वत है, वह तो कुछ और है। वह 'है' और होकर भी 'नहीं' है। 'तू' उस एकमात्र शक्ति का कठपुतला है, जिसकी क्रीडा रचना है यह 'जगत्'। गुरु और 'ग्रन्थ' की मान्यताएँ विभिन्न शब्दों में मानव मन की ग्रन्थियाँ बनती हैं, ग्रन्थियाँ जितनी ही दृढ़ होती हैं, मान्यताएँ उतनी ही ठोस होती हैं, और 'मानव' के अस्तित्व को नकारनेवाली मान्यताएँ जितनी ही ठोस होती हैं, जीवन उतना ही अधिक खण्डित होता है, 'मानव' 'मानव से उतनी ही दूर होता है। ये मान्यताएँ एक के बाद एक नये-नये रंगों में प्रगट होती हैं, गुरु और ग्रन्थ की ये मान्यताएँ ही सम्प्रदाय का रूप लेती हैं, और दिखाई देता है कि सूरत शक्ल और भीतर की इच्छाओं-आकांक्षाओं की समानुरूपता के बावजूद सम्पूर्ण मानव-जाति एक नहीं है, अनेक है।

× × ×

लेकिन अपने अस्तित्व का बहुतेरी चुनौतियाँ, भीतरी-बाहरी प्रहारों से संरक्षण प्राप्त करने के लिए मानव उस एक आदि और अदृश्य शक्ति की 'सत्ता' के सहारे बैठा नहीं रहता, वह अपनी 'सत्ता' स्थापित करता है। अपने हित, न्याय और सुरक्षा के लिए मानव निर्मित इस 'सत्ता' का आधिपत्य करनेवाला उस आदि ईश्वरीय शक्ति का प्रतिनिधि माना जाता है। उसकी शक्ति को समर्थन देने और उसके निर्णयों को मानव-समाज में आरोपित करने के लिए हिंसा की एक ऐसी शक्ति संगठित होती है जो मानव अस्तित्व को हर क्षण चुनौती दे सके, उसे नियन्त्रित कर सके। कैसी विडम्बना है, मानव-अस्तित्व के संरक्षण के लिए, मानव-अस्तित्व को ही मिटा देनेवाली शक्ति। गुरु और ग्रन्थ की मान्यताओं के आधार पर निर्मित सम्प्रदाय की दीवालें मानव को टुकड़ों में बाँटती हैं, सुरक्षा और न्याय के नाम पर निर्मित सत्ता की रेखाएँ धरती को टुकड़ों में बिखेरती हैं।

मानव अपने अस्तित्व को सार्थकता प्रदान करने की अनवरत चेष्टा करता है। वह सुनता है कि जगत् मिथ्या है, शरीर नश्वर है। अपनी निगाहों के सामने शरीरों की नश्वरता और जगत् के साथ के टूटते सम्बन्धों को वह देखता है, और देखकर शायद यह मानने को विवश भी होता है, लेकिन तब भी वह रुकता नहीं। पाताल तोड़कर, समुद्र की अतल गहराइयों में पैठकर और उसकी उत्ताल तरंगों पर तैरकर, हवा के साथ होड़ कर, और अब चाँद पर पहुँचकर वह अपना जीवन, उसका 'अस्तित्व' सार्थक करना चाहता है, बार-बार पराजित होती हुई भी उसकी शक्ति कभी कभी अपराजेय मालूम होती है।

लेकिन यह क्या है कि वह भूख से लड़ता है। उसे तृप्त करने के लिए समृद्धि का ढेर लगा लेता है। पूँजी की एक नयी सत्ता खड़ी कर लेता है, लेकिन रक्त-बीज की तरह यह भूख पुन-पुन नये जन्म धारण करती ही जाती है।

क्यों वह अभावग्रस्त है? क्यों वह तृषित है, बुभुक्षित है चिरकाल से?

विफल है 'ईश्वर' और 'राजा' की 'सत्ताएँ' मानव को इस चिरकालिक अतृप्ति से मुक्ति दिलाने में, और 'पूँजी' की यह नयी 'सत्ता' भी।

मानव की एक लम्बी तड़पन के बाद १९ वीं सदी में क्षितिज पर मुक्ति का एक लाल सूर्य उदित होता है साम्यवाद का। नया मसीहा मार्क्स कहता है 'मनुष्य का इतिहास वर्ग-संघर्ष का इतिहास है।' जगत् के मंच पर प्रगट होती है सर्वहारा की क्रान्ति समता और बन्धुता की बुनियाद पर एक नयी रचना का उद्घोष लेकर, 'ईश्वर' और 'राजा' की सत्ता को चुनौती देकर, सुख के साधन उपलब्ध करने की माध्यम 'पूँजी' की नयी 'सत्ता' की शत्रु बनकर।

अपने अस्तित्व को सार्थक करने की खोज में मानव मानव से दूर हट गया था। सर्वहारा की क्रान्ति विभाजक-रेखाओं को मिटा देने के लिए दृढ़संकल्प होती है। वह मानव मानव के बीच कोई व्यवधान बर्दाश्त नहीं करना चाहती। इसलिए वह ईश्वर की 'सत्ता' राजा की 'सत्ता' और पूँजी की 'सत्ता' को मिटा देना चाहती है। दुनिया के बहुत बड़े भूभाग में वह ऐसा करने में सफल भी हो जाती है, लेकिन अस्थायी!

कदमों को जकड़ रही रूह आत्मा की घुटन गुरु और ग्रन्थ का संदेश इच्छाओं आकांक्षाओं की समानुरूपता के बावजूद अनेकता सम्प्रदाय की दीवालें सत्ता की रेखाएँ चिरकालिक अतृप्ति और सत्ता' की विफलता मुक्ति का लाल सूर्य 'ईश्वर', 'राजा' और पूँजी' की सत्ता को नयी चुनौती एक नयी 'ट्रैजडी'

मानवता के लिए एक नयी 'ट्रेजडी' को जन्म देकर।

'जीवन' मुक्त होना चाहता है हर प्रकार के बन्धनों से। पिंजड़े का पंछी मुक्त आकाश में विहगम उड़ानें भरना चाहता है। और मुक्ति के इस प्रयास में बंधन और अधिक कसते जाते हैं, डैने टूटते जाते हैं। क्यों? क्यों?? क्यों???

प्रश्न-चिह्न कुहरा बनकर मुझे घेर लेते हैं। कुछ कठिनाई के साथ पहचान पाता हूँ—प्रश्नों के इस कुहरे में एक शक्ल दीखती है हंगेरियन क्रान्ति के नायक एमरी नेगी की। एमरी नेगी कहता है

"......मेरी ओर देखो, कभी मैं हंगरी का 'हीरो' था। हंगरी की जनता की मुक्ति के लिए मैंने संघर्ष किया। हंगरी की जनता संघर्ष में सफल हुई। मैं नये हंगरी का प्रधान मंत्री बना। मैंने हंगरी के विकास-क्रम को नयी दिशा देने की बात कही। मैंने जून १९५३ में कहा, "हमें अपने 'जन-तन्त्र' (पीपुल्स डेमोक्रेसी) में विकास की दिशा सुधारनी होगी।"

('एमरी नेगी ऑन कम्यूनिज्म' पृष्ठ ११)

क्योंकि जनता के सामने हमने वादे किये थे कि आर्थिक, राजनीतिक और हर तरह के अन्य विकास-कार्यक्रम जनता के लिए होंगे, प्राथमिकता उसकी होगी। लेकिन अपने इस आशय के वक्तव्य के बाद मेरे सामने स्पष्ट हुआ कि जनता और क्रान्ति के 'नायकों' के वादों के बीच 'दल' और 'सत्ता' की प्रभुसत्ता है। मैंने जब 'लोक' को 'दल' से ऊपर मानने की चेष्टा की तब मैं 'गद्दार' घोषित हुआ। दुनिया जानती है कि मुझे अपनी 'मुक्ति' गँवानी पड़ी, और 'लोक' 'दल' के नीचे दब गया, अब तक दबा हुआ है।

"...यह युगोस्लाविया सरकार का कभी का उपाध्यक्ष है मिलोवन डिजिलस! वह 'दल' की छत्रछाया में पल रहे एक नये वर्ग (दी न्यू क्लास) की नकाब उतारने का दण्ड यूगोस्लाविया के कारागृह में भुगत रहा है।

डिजिलस कहता है :

"साम्यवादी निरंकुश अधिनायकवाद, जो विनाश के नाम पर विचार का शत्रु है, और जनतंत्र के नाम पर स्वातंत्र्य का शत्रु है, लोकमानस को दबाने के सिवाय कुछ नहीं करता है। बड़े-बड़े पूँजीपति और सामन्त लोग कलाकारों और वैज्ञानिकों को मुँहमाँगा धन देते थे और अपनी मर्जी से उनसे काम लेते थे, उनको भ्रष्ट करते थे, साम्यवादी शासन में तो भ्रष्टाचार उसकी प्रशासन-नीति का ही एक अविभाज्य अंग है।

"साम्यवादी नीति, कानूनन ऐसी सब प्रवृत्तियों को दबा देती है, और मिट्टी में मिला देती है, जो उसके अनुकूल न हों, यानी जो स्वतन्त्र और मौलिक हों, दूसरी तरफ जिन्हें वह 'समाजवाद' के लिए लाभप्रद मानती है, यानी खुद अपनी 'नीति' के लिए अनुकूल मानती है ऐसी प्रवृत्तियों को पुरस्कृत करती है, प्रोत्साहित करती है, अर्थात् वास्तव में भ्रष्ट करती है।

"बुद्धिजीवी का इस सत्ता के आगे, चाहे विचार के लिए हो, चाहे लाभ के लिए, घुटने टेकने के सिवाय दूसरा चारा नहीं है। यद्यपि यह जरूरी नहीं कि यह सत्ता सरकार की ही हो, फिर भी वही सारी समाज-रचना में और संगठनों में हावी होती है। एक शब्द में कहना हो, तो सभी अन्तिम निर्णय उसीके हाथ में है।"

('दि न्यू क्लास' पृष्ठ १४२-१४३)

वर्षों से जेल की कोठरी में बन्द रहने पर भी डिजिलस की आशा-लता मुरझाती नहीं। वह कहता है

"हर हालत में संसार अवश्य बदलेगा, अपनी वास्तविक दिशा में आगे बढ़ेगा, जिधर वह जा रहा था, और जाना चाहिए—वह है प्रगाढ़ एकता, प्रगति और स्वतंत्रता की दिशा। हर तरह के क्रूर और जघन्य शक्तियों की अपेक्षा सत्य की, और जीवन की शक्ति सदा ही बलवान् रही है, किसी भी सिद्धान्त से अधिक वास्तविक रही है।"

(दि न्यू क्लास, पृष्ठ २१४)

साम्यवाद की इस अभिनव क्रान्ति को नेतृत्व देनेवाले सोवियत रूस की महान् क्रान्ति के तीसरे महानायक स्टालिन की सुपुत्री स्वेतलाना 'दल' और 'वाद' से त्रस्त अमर रूसी कवि और उपन्यासकार बोरिस पेस्टरनाक के विश्वप्रसिद्ध उपन्यास 'डाक्टर जिवागो' में अपने जीवन का दर्द अनुभव करती हुई कहती है

"ऐ, रूसी साहित्यिक शहीदो! रेडियचेव और हिर्सेन्रिस्ट्म के बाद भी कुछ भी नहीं बदला है। पहले की ही तरह अब भी कोई लेखक कुछ लिखता है, तो उसकी आलोचना का काम सबसे पहले सिपाही और पुलिस के हाथ में जाता है। आज से पहले जारशाही में भी गोगल या ऐसे ही लेखकों को उनके तीखे और पैशाचिक चित्रणों के लिए तथा रूसी जीवन की जघन्यता पर किये गये अट्टहासों के लिए कभी फाँसी नहीं दी गयी थी, परन्तु अब आप साधारण सी अतिशयोक्ति के लिए गोली के निशाने बनाये जा सकते हैं, मामूली मुहावरे के लिए सीखचों में बन्द किये जा सकते हैं।

"प्यारे डाक्टर, प्यारे बोरिस लियो निडोविच, यह शारीरिक यातना से कई गुना अधिक पीड़ादायक है। यह सब असहनीय है डाक्टर, संसार का कोई मानव सहन नहीं कर सकता, और इसीलिए मैं आज यहाँ हूँ, यहाँ रूस में नहीं। यह कब तक चलेगा, डाक्टर, यह अभी और कब तक चलेगा?"

(स्वीटजरलैंड में लिखे गये 'रीडर्स डाइजेस्ट' (?) रिव्यू' के नवम्बर '६७ के अंक में पुन. प्रकाशित लेख से)

स्वेतलाना की दर्दभरी आवाज मानव-हृदय को झकझोरती है, और सम्प्रदायवादी, साम्यवादी टुकड़ीकरण के शिकार सीमान्त गांधी की पुकार अन्तर को बेंधा देती है—"आपने हमें भेड़ियों के सामने डाल दिया।" उन्होंने भारत-विभाजन के समय कहा था। परतन्त्रता

पिंजड़े का पंछी · टूटते डैने · प्रश्नों का कुहरा · 'हंगरी का हीरो' · एक नये वर्ग की नकाब · साम्यवादी निरंकुशता · संसार अवश्य बदलेगा · स्वेतलाना का दर्द

की बेड़ियों को चुनौती देनेवाले खुदाई खिदमतगार पाकिस्तान की कैद में वर्षों तक सड़ाये गये, आज अपने वतन से दूर है, उनकी आस्था

"मेरी अहिंसा लगभग मेरी श्रद्धा बन गयी है। मैं कभी सोच नहीं सकता कि मेरा प्रदेश कभी हिंसा पर उतर आयगा। हो सकता है, मैं चूक जाऊँ और हिंसा मेरे प्रदेश को तबाह कर दे, तब मैं यही सोचकर सन्तोष करूँगा कि *यह मेरे भाग्य का चक्कर है। लेकिन उसका यह अर्थ नहीं है कि मैं* अहिंसा पर अपनी श्रद्धा छोड़ दूँगा, जिसकी मेरे लोगों को सबसे अधिक आवश्यकता है।"

सीमान्त गांधी की आस्था आज सीमा के पार मुक्ति के लिए संघर्षरत है। लेकिन सत्ता की शक्ति आज उस आस्था के संघर्ष को दबाये हुए है, *मुक्ति और शान्ति की* मानवीय आस्था को।

प्रश्नों के कुहासे में जान-अनजानी मृत और जीवित इतिहास की कितनी ही आकुल आत्माओं के दमन हो रहे हैं, मुक्ति के लिए *आकुल आत्माओं के। इन्हींमें से आकुलता* की असह्य स्थिति में पहुँचकर अपने को समाप्त कर देनेवाली एक विभूति—साने गुरुजी, के अंतिम भाव सजीव बनकर सामने आते हैं "मेरा अन्तिम भक्ति, प्रेम तथा कृतज्ञता का सन्देश लोकशाही *समाजवादी पक्ष में है। अजातीय और अहिंसक* लोकशाही तथा सत्याग्रही दृष्टि को *सब अपना लें। भारत में रक्तपात के बिना* समाजवाद आना चाहिए। व्यक्ति-स्वातंत्र्य के साथ समाजवाद फूलना-फलना चाहिए। आखिर भगवान् की इच्छा।" (*साने गुरुजी के अन्तिम पत्रों से।*)

क्या पूरी मानवता का इतिहास मुक्ति की तड़प का इतिहास है? आकुलता और विवशता की कहानी है? 'सम्प्रदायों', 'राज्यों', 'वादों' से त्रस्त मानवता का दस्तावेज है?

ज्यां पॉल सार्त्र—बीसवीं सदी का सर्वाधिक विवादास्पद व्यक्ति-किन्तु मान्य ही नहीं, पूरे जगत् के बुद्धिजीवियों को चौंका देनेवाली अपनी स्थापनाओं के कारण बहुचर्चित—कहता है "जब कोई व्यक्ति मेरे पार्थिव-अस्तित्वमय का बोध करता है- यह मेरे लिए असह्य आनुषंगिकता है, और दूसरे द्वारा 'मेरे स्वयं' का विशुद्ध स्वामित्व है। दूसरे *आशय में वह अस्तित्व*मय एक क्रम में 'मेरे स्वयं' की नींव खोजता है, और पाता है। यह गर्भित साम्य तभी है, जब मैं दूसरे के स्वातंत्र्य का अंतभूत कर लूँ। अतः 'मेरे स्व' को खोजने की मेरी योजना बुनियादी रूप में *दूसरे को आत्मसात करने की योजना है।* (बीइंग ऐण्ड नथिंगनेस' पृष्ठ ३६४) सार्त्र और उसकी दिशा के अस्तित्ववादी दार्शनिकों के कोण से इन चेष्टाओं को देखा जाय, तो वास्तव में वे दूसरे के स्वातंत्र्य को अन्तभूत करने की विफल चेष्टाएँ मात्र दिखाई देंगी।

लेकिन इस तरह की प्रतिक्रियावादी स्थापनाओं में मुक्ति की चेष्टा का इतिहास दब नहीं सकता। अपने अस्तित्व-बोध के लिए मानव नयी दिशाएँ ढूँढकर मानेगा। उसने ईश्वर की सत्ता को चुनौती दी, *राज्य की सत्ता को चुनौती दी, पूँजीवाद और* साम्यवाद की सत्ताओं को भी चुनौती दी है।

आज मुक्ति की चेतना को दबानेवाले प्रहारों की प्रतिक्रिया में मानव-विद्रोह अनास्था की चोटी पर पहुँच गया है। वर्तमान बीटल्स *और हिप्पी उसीके प्रतीक हैं। हिप्पी सांस्कृतिक* आन्दोलन की मुख्य मान्यताएँ हैं, जिस समाज बिगड़ना कहता है, उसे सँवरना कहो, लोग जिसे बुरा कहें, उसे अच्छा कहो पसन्द छोड़ दो, नौकरी छोड़ दो, घरबार छोड़ दो, *और हो सके तो अपने आपको भी छोड़* दो।" बुनियादी तौर पर हिप्पी-आन्दोलन मनुष्य को महान बनानेवाली अवनति, उपकरण बनानेवाली यांत्रिकी, कुंठा करनेवाले हर प्रकार के 'वादों' और मानवता *को ध्वस्त करनेवाले युद्धों के विरुद्ध एक* जेहाद है। उनकी मान्यता है कि राजनीति एक अंधी गली (डेड एण्ड स्ट्रीट) है। हिप्पीज का भरोसा है 'प्रेम' की शक्ति पर। वे प्रेम करना चाहते हैं, प्रेम पाना चाहते हैं, उसकी शक्ति और क्षेत्र को अधिक-से-अधिक गहराई और विस्तार देना चाहते हैं।

आज 'वादों' और दलों के दलदल में *वर्तमान पीढ़ी का भविष्य बुरी तरह फँस गया* है। युद्धों की काली छाया युवा पीढ़ी के भविष्य को ढँकती जा रही है। भविष्य *हीनता के शिकार नये खून में अगर आक्रोश* का उभाड़ होता है, प्रभाव का विस्फोट होता है, तो उसमें आश्चर्य क्या है? भारत में उपद्रव का जो नंगा नाच हो रहा है, वह स्वाभाविक है। दिशाहीन विद्रोह भटक रहा है, नयी मंजिल तलाश रहा है एक जबरदस्त *चुनौती है युग की।*

क्या सत्याग्रह इस चुनौती का जवाब दे सकता है? आत्मा की घुटन और भूख की आग से जीवन को मुक्त कर सकता है?

सीमान्त गांधी की पुकार : आकुल आत्मा की असह्य वेदना : सम्प्रदायों, राज्यों, वादों से त्रस्त मानवता : सार्त्र की भावनाएँ और मन की हार : मानव विद्रोह और अनास्था के प्रतीक : बिटल्स और हिप्पीज : मुक्ति का अभियान और चेतना का संघर्ष

भारत के स्वराज्य आन्दोलन में उपनिवेशवाद की चुनौतियों का जवाब *सत्याग्रह ने दिया। लेकिन उपनिवेशवाद से भारत ही नहीं, पूरे अफ्रेशिया की मुक्ति के बाद जो चुनौतियाँ आयी हैं, उनका जवाब भी सत्याग्रह* दे सकता?

आज की समस्याएँ जागतिक हैं। *सबंध जागतिक हैं।* मुक्ति की चेष्टाएँ भी जागतिक होंगी। तो, क्या सत्याग्रह का कोई जागतिक स्वरूप भी है, हो सकता है?

मानव 'मुक्ति' के अभियान का इतिहास 'सत्ता' और 'चेतना' के संघर्षों का इतिहास है। यद्यपि 'सत्ता' के विभिन्न रूप रहे हैं, और चेतना के भी, लेकिन समान बुनियादों पर हुए इन संघर्षों में एक या एक से अधिक व्यक्तियों के विरोध 'दम का अभियान' रहा है। विभाजित समूह या खण्डित चेष्टाओं के आधार भी आखिर रहे हैं, संघर्ष नहीं।

राजनैतिक दल अपनी सेना सजा रहा है। ये सेनाएँ अन्दर-अन्दर क्या कर रही हैं, मालूम नहीं, लेकिन उनकी सबकी निगाह सत्ता की ओर है, यह निश्चित है। स्थिति ऐसी है कि 'तोड़-फोड़' हमारी राजनीति की मान्य पद्धति बन गयी है।

● अगर हम बारीकी से देखें तो हमें इस वक्त देश में हिंसा की ये धाराएँ दिखायी देंगी। (१) राजनैतिक हिंसा। यह दो रूपों में प्रकट होती है—शहर में सरकार से टकराव और देहात में धनियों से दुराव। इसका उद्देश्य यह होता है कि सरकार कमजोर हो, समाज आतंकित हो, प्रचलित लोकतन्त्र और उसके तरीकों पर से विश्वास उठे, तथा प्रत्यक्ष कार्रवाई द्वारा आगे सत्ता प्राप्त कर लेने का पूर्व-अभ्यास हो। (२) तात्कालिक हिंसा। इसमें सरकार माँगें स्वीकार कर लेने के लिए विवश की जाती है। यह चीज इतनी आगे बढ़ गयी है कि दूसरे को और अपने को जला डालने तक की कार्रवाई की गयी है। गोवध-बन्दी के लिए, या विद्यार्थियों द्वारा की गयी हिंसाएँ, कुछ विशेष ढंग की होते हुए भी, इसी तरह की मानी जा सकती हैं। (३) सामाजिक हिंसा। मालिक द्वारा मजदूर पर, पुरुष द्वारा स्त्री पर, प्रौढ़ द्वारा बच्चे पर, जाति द्वारा जाति पर, ऊँच द्वारा नीच पर, और पड़ोसी द्वारा पड़ोसी पर, होनेवाली हिंसा हमारे जीवन का ताना-बाना बन गयी है। वह परम्परा द्वारा मान्य है, हमारी जीवन पद्धति का अंग है, इसलिए चलती चली आ रही है। जरूर इसके अन्दर क्षोभ की जो आग छिपी हुई है वह भयंकर है। इन सारी हिंसाओं को मिलाकर ऐसा लगता है जैसे हमारे जीवन की ऊपरी सतह के नीचे जमी हुई हिंसा (फ्रोजेन वायलेंस) फैली पड़ी है जो हल्की भी गर्मी पाकर पिघल जाती है।

● यह ठीक है कि सदियों से अधमरी हालत में पड़े समाज में जब नयी चेतना की हलचल पैदा होती है, और खासकर जब हलचलें आन्दोलन का रूप ले लेती हैं, तो कितनी भी कोशिश की जाय समाज के जीवन की भीतरी परतों में दबे-पड़े क्षोभ हिंसा में फूट पड़ते हैं। और, जब देश के संविधान या लोकतन्त्र की प्रक्रियाओं में ऐसे रास्ते नहीं होते, या होते हुए भी कारगर नहीं होते, कि जनता को 'न्याय' मिल सके, तो हिंसा के फाड़ होना अनिवार्य हो जाता है। गांधीजी ने आन्दोलन की नयी पद्धति निकालकर तथा कई बार अपने प्राणों की बाजी लगाकर उन्होंने जनता के 'क्षोभों' की अभिव्यक्ति के नये रास्ते निकाले जिनके कारण हिंसा पर अंकुश लगा, और सीधे प्रहार नहीं के बराबर हुए। स्थायी उपाय के रूप में उन्होंने 'आन्दोलनात्मक' कार्यों से अलग 'रचनात्मक कार्यों' द्वारा लोकशक्ति को शान्तिपूर्ण, विधायक आधारों पर संगठित करने की कोशिश की। वे कहते भी थे कि रचनात्मक कार्य की परिणति ही सच्चा स्वराज्य है। लेकिन ये रचनात्मक आधार व्यापक और मजबूत नहीं बन सके। सन् १९४२ में जो तोड़फोड़ हुई उसमें इन रचनात्मक आधारों का अभाव साफ-साफ प्रकट हुआ, और स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए तोड़फोड़ उचित मानी गयी। वही हाल स्वतन्त्रता मिल जाने के बाद भी रहा, और आज तक है। स्वतन्त्रता के बाद तो सरकार-शक्ति से अलग लोकशक्ति को रचनात्मक आधार और दिशा देने का काम हुआ ही नहीं। जो कुछ हुआ वह भूदान-ग्रामदान आन्दोलन से हुआ। आज हम देख रहे हैं कि सत्ता के साथ तोड़फोड़ उसी तरह जुड़ गयी है जैसे १९४२ में स्वतन्त्रता के साथ जुड़ गयी थी। हम यह भी देख रहे हैं कि लोक-मानव पर विशुद्ध राजनैतिक नारों की प्रतिक्रिया शान्तिपूर्ण नहीं रह पाती। ऐसा लगता है कि क्षोभ का शास्त्र लोक-मानस के अनुकूल नहीं पड़ता। जनता चोरी सुधर्ष की राजनीति का नहीं समझ पाती। नतीजा यह होता है कि जिस आन्दोलन या राजनीति में क्षोभ ही क्षोभ है, दूसरा कुछ नहीं, वह जनता के लिए उन्माद का विषय बन जाती है, और जब वह उन्मत्त होती है तो विध्वंस की लीला में जुट जाती है। कई राजनैतिक लोग उसकी इस विध्वंस-लीला को 'राष्ट्रीय तूफान' या 'आनेवाली क्रान्ति की पूर्व-तैयारी' का नाम देते हैं, और खुश होते हैं।

● कुल मिलकर उपद्रव हमारे जीवन में इस तरह स्वीकृत हो रहा है जैसे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक पथ्य हो, जैसे नयी चेतना की नयी भाषा हो। इसकी जिम्मेदारी साफ-साफ शोषण की अर्थनीति और विघटन की राजनीति पर है। राजनीति ने 'पेशेवर उपद्रवकारी' तक पैदा कर दिये हैं, और अर्थनीति में प्रतिष्ठा-प्राप्त शोषक तो हैं ही! जब आर्थिक संकट, शहरों में लाखों बेघरबार लोग, भ्रष्टाचार, निकम्मा प्रशासन, और बढ़ती हुई विषमता के कारण सामान्य व्यक्ति का जीवन दूभर हो जाता है, और बड़े लोग अपने छोटे स्वार्थों में ही लिप्त दिखाई देने लगते हैं, तो जनता अच्छा-बुरा नहीं सोच पाती। समाज का ज्वालामुखी निराशा, गरीबी, और बाढ़ की त्रयी से बनता है। कौन कहेगा कि हमारा समाज तेजी के साथ ज्वालामुखी नहीं बन रहा है?

● बने भी क्यों न? विज्ञान ने बनने में मदद की है, और लोकतन्त्र ने अवसर दिये हैं। विज्ञान ने जहाँ उत्पादन तथा सुख सुविधा के साधन दिये हैं वहाँ युद्ध के लिए नये अस्त्र-शस्त्र, यातना (टारचर) के अत्यन्त सूक्ष्म उपाय, तथा जनता के लिए सुलभ हथियार भी दिये हैं, जिनके कारण आन्दोलन और उपद्रव का मेल उपद्रव में आसानी हुई है, और भीड़ भी आसानी के साथ 'लड़ाई' कर रही है। विज्ञान की इन देन के साथ 'दल का लोकतन्त्र' जुड़ गया है। कहा जाता है कि राजनीति युद्ध का ही दूसरा नाम है, सिर्फ रास्ते कुछ दूसरे हैं।

बेचारी रेलगाड़ी · प्रहार और पूजा के प्रतीक · जनता और सरकार के बीच की दूरी · निर्मम उपेक्षा · पराश्रयी सरकार · पथराव में कितनी देर? · 'तोड़ फोड़': राजनीति की मान्य पद्धति · हमारे जीवन का ताना बाना

राजनीति 'युद्ध' बन जायें तो समाज के जीवन में हिंसा निर्णय की शक्ति के रूप में क्यों न दिखाई दे, और उसका सामाजिक परिवर्तन में स्थान क्यों न माना जाय? हम देखते हैं कि हिंसा की शक्ति से एक नया समुदाय समाज में अपने लिए स्थान बना लेता है, क्योंकि जब तक वह 'कुछ' करता नहीं, उसकी बात ही नहीं सुनी जाती, और ज्यों ही कर लेता है, सुन ली जाती है। हिंसा वह सूत्र है, जो 'नेता' को जनता के साथ जोड़ता है। अन्तर इतना होता है कि 'नेता' अपने शब्दों द्वारा प्रेरणा देता है, सिद्धान्त का जामा पहनाता है, और जनता पत्थर उठाकर कुछ कर दिखाती है। हमारे देश में एक राजनैतिक विचार ऐसा है जो हिंसा को भारतीय संस्कृति की रक्षक-शक्ति मानता है, और दूसरा है जिसके लिए भीड़ का हर उपद्रव जनता की मुक्ति का अभियान बन जाता है। उसके लिए जनता सदा जनता (मैस, पीपुल) है, वह मानता ही नहीं कि भीड़ (माब) जैसी भी कोई चीज होती है। जो हिंसा कभी आपद्धर्म मानी जाती थी, वह स्वयं के नाम में जीवन और विकास का शाश्वत धर्म, एक स्थायी दर्शन, बन गयी है। हमारी राजनीति उसीमें ढाली जा रही है।

● यह सही है कि हमारे जैसे सामन्तवादी, पूंजीवादी समाज में मुक्ति के लिए 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' (डाइरेक्ट ऐक्शन) जरूरी है। जनता की मुक्ति का अभियान पाँच साल में एक बार होनेवाले वोट से नहीं चलाया जा सकता। लेकिन मुक्ति के लिए जिस संगठित शक्ति की आवश्यकता होती है वह जनता की बिखरी हुई हिंसक कार्रवाइयों से नहीं बनती। अगर स्वयं जनता में 'विद्रोह-शक्ति' भरनी हो तो 'दल के षड्यन्त्र' का रास्ता छोड़ना पड़ेगा। अपनी हिंसा से हिंसक दल सत्ता में भले ही पहुँच जाय, वह जनता में शक्ति नहीं भर सकता। तानाशाही व्यवस्था कल्याण के काम बहुत कर सकती है, लेकिन जनता को स्वयं सत्ता के दमन से नहीं मुक्त कर सकती। सत्ता सदा जनता से ऊपर रहती है, इसीलिए वह जनता की हिंसा नहीं बर्दाश्त कर सकती। तो, आज के लोकतन्त्र में जनता 'जनता बनाम सत्ता' का प्रश्न कैसे हल करेगी? सत्ता पर मुँहताज जनता स्वतन्त्र कैसे होगी? और आपस में संघर्ष करनेवाले दल, तथा गरीबी और लड़ाई से टूटी हुई जनता, सत्ता द्वारा होनेवाले अधिकार के दुरुपयोग का मुकाबिला नहीं कर सकती। उसके लिए यही रास्ता है कि वह लोकतन्त्र के अवसर का लाभ उठाकर अपनी सहकार-शक्ति संगठित करे। जनता की सहकार-शक्ति रचनात्मक शक्ति है।

● पिछले बीस वर्षों में हमने अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए पूरे तौर पर सत्ता पर ही भरोसा किया। हिंसा भी की तो उस भरोसे के कारण ही की। हिंसा, भ्रष्टाचार, विरोध, जो कुछ किया भरोसे के कारण किया। वह भरोसा पूरा नहीं हुआ। अब यह प्रश्न पूछा जाने लगा है कि हमें सरकार चाहिए, तो कितनी चाहिए? यह प्रश्न लोक-चेतना में नये मोड़ का संकेत है। जनता समझने लगी है कि समस्याएँ न उपवास से हल होंगी, न उपद्रव से। तलाश करनी है किसी विकल्प की। वह विकल्प जनता के बाहर नहीं है, उसके भीतर है।

रचनात्मक कार्य की परिणति ''सच्चा स्वराज्य'' राष्ट्रीय तूफान : विध्वंस-लीला '' निराशा, गरीबी और वोट की त्रयी · विज्ञान की सुविधा और दल-तन्त्र · जनता बनाम सत्ता · विकल्प की तलाश · लोकनिष्ठ लोकतंत्र

संविधान के प्रचलित ढाँचे को अन्तिम मान लेने से काम नहीं चलेगा। उसे सीझ में तोड़ डालने से भी काम नहीं चलेगा। हमें विरोधों और संघर्षों को हल करने के शान्तिपूर्ण उपाय ढूँढने पड़ेंगे। शान्ति की शक्ति संविधान की शक्ति से बड़ी है। बड़ी शक्ति विकसित होगी तो छोटी शक्ति उसके पीछे चलेगी।

उपवास से लेकर उपद्रव तक जितने काम हुए हैं, उनमें से कोई भी उस बड़ी शक्ति का विकसित करने में सहायक नहीं हुए हैं। नये जमाने की चुनौतियों को स्वीकार करके सभ्यता को आगे बढ़ाने में हिंसा की शक्ति, और सारे संविधान की शक्ति कितनी अपूर्ण सिद्ध हो रही है, इसका प्रमाण पिछले बीस वर्षों का हमारा इतिहास है। हिंसा का अन्तिम स्वरूप साम्यवाद है। अगर साम्यवाद से आगे जाना है तो हिंसा से आगे जाना ही पड़ेगा। और अगर संविधान से आगे जाकर समाज की शक्ति विकसित करनी है तो लोकतन्त्र का लोकनिष्ठ स्वरूप विकसित करना पड़ेगा।

—सादिम

सत्याग्रही का जीवन-चक्र

यह जीवन चक्र सत्याग्रह दर्शन के अनुभवी प्रवक्ता श्री विनोबा का बनाया हुआ है। पहली बार सजा होने के बाद श्री विनोबा ने नागपुर जेल में इसे बनाया और बाहर आने पर गांधीजी को दिखाया था जिसे पाठकों के लिए यहां दिया गया है।

इस चक्र की व्याख्या करने की जरूरत नहीं है। श्री विनोबा ने उसे बनाया ही इस ढंग से है कि वह सबके लिए सुबोध हो।

जीवन का केंद्र सत्य और अहिंसा है। सत्य और अहिंसा दो तत्त्व नहीं हैं एक ही तत्त्व के दो पहलू हैं। ये जीवन के आधारभूत तत्त्व हैं और उनको चरितार्थ करने में ही जीवन की पूर्णता या सफलता है।

बल प्रेम ज्ञान और अन्न जीवन की चार विभूतियाँ हैं। इन चार विभूतियों की प्राप्ति द्वारा जीवन में सत्य और अहिंसा सिद्ध करनी है। इसलिए इन विभूतियों की प्राप्ति के साधन भी तदनुरूप होने चाहिए। इस दृष्टि से श्री विनोबा ने यह चक्र बनाया है।

बल—ऐसा हो जो सत्य और अहिंसा के विकास के अनुकूल हो। इसी दृष्टि से शरीर शास्त्र के तीन विभाग किये गये हैं (१) ग्राम-सफाई (२) ग्राम-आरोग्य, (३) निर्व्यसनता। प्रकट है कि शरीर-पुष्टि या नागरिक-वैभव की अपेक्षा शारीरिक और नागरिक शौच का महत्व अधिक है।
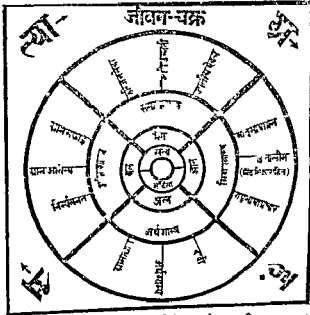
प्रेम—भेदों में से अभेद की ओर प्रगति करना और अन्त में अद्वैत सिद्ध करना प्रेम का ध्येय है। इसलिए प्रेम मूलक समाज शास्त्र में जाति भावना वर्ग भावना और स्त्री-पुरुषवाद का स्थान नहीं है। समभावना के विकास के लिए हरिजन-सेवा पुरुष जाति के प्रभुत्व के निवारण के लिए नारी उन्नति और जात्यभिमान के नाश के लिए जातीय ऐक्य है।

ज्ञान—शिक्षा शास्त्र के अंगों की योजना भी इसी प्रकार की है। इस चक्र में आदर्श और व्यवहार में हमारे उद्देश्य और परिस्थिति में सामंजस्य करने की चेष्टा है। क्योंकि हमें अपनी परिस्थिति पर ही तो अपने सिद्धान्तों का विनियोग करना है। भारतवर्ष में सांस्कृतिक पुनर्जीवन सांस्कृतिक समन्वय और सार्वत्रिक शिक्षण के लिए सत्य और अहिंसा की मूलभूत नीति के अनुकूल मातृभाषा प्रेम नयी तालीम और राष्ट्रभाषा प्रचार ये ही साधन उपयुक्त और व्यवहार्य हैं।

अन्न—यहाँ भी वही न्याय लागू है। अर्थशास्त्र दरअसल संग्रह का सम्पत्ति के अर्जन का शास्त्र नहीं होना चाहिए। वह शरीर धारण का या अन्न का ही शास्त्र है। अपनी वर्तमान परिस्थिति में भारत जिन प्रवृत्तियों के द्वारा अपने जीवन में सत्य और अहिंसा के अर्थ-धारण को कार्यान्वित कर सकता है उन प्रवृत्तियों का यहाँ उल्लेख है।

सारांश हम अपनी प्राप्त परिस्थिति में अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक (राष्ट्रीय जीवन) में सत्य और अहिंसा का विकास करना है। यों तो जीवन एक और अखण्ड है। परन्तु उसके जो भिन्न भिन्न पहलू हैं उनमें हमारे मुख्य साधन याने सिद्धान्त और साक्षात् साधन याने कार्यक्रम कौनसे होने चाहिए इसका दिग्दर्शन इस चक्र में कराया गया है।

—दादा धर्माधिकारी

विश्व में सत्याग्रह के प्रयोग

सत्याग्रह केवल गांधी की देन नहीं है। न सत्याग्रह का विचार थोरो की देन है। जब-जब सत्ता, सामान्य जन पर अनैतिक एवं अमानवीय कानून लादती रही है, तब-तब सामान्य जन के असामान्य प्रतिनिधियों ने विरोध का स्वर तीव्र किया है। हाँ, थोरो और गांधी ने सत्याग्रह को 'टेकनीक' का रूप दिया तथा उसे व्यापक पैमाने पर आजमाया, इसमें सन्देह नहीं। आज भी दुनिया के विभिन्न कोनों में सत्याग्रह, असहयोग एवं

लेखक : जॉन पापवर्थ

अहिंसक प्रतिकार के प्रयोग चल रहे हैं। हिटलर जैसे खूंखार डिक्टेटर के आदेश को भी ठुकराने का साहस डेन्मार्क के लोगों ने दिखाया था और डेनिश लोगों के अहिंसक प्रतिकार को उलटने या दबाने का निर्णय हिटलर ने स्थगित कर दिया था।

प्रथम महायुद्ध और दूसरे महायुद्ध में लड़नेवाले देशों ने जब अपनी जनता के लिए सेना में भर्ती होना अनिवार्य कर दिया, तब हजारों युद्ध-विरोधी, 'पेसिफिस्ट' सेना में शामिल होने के बजाय जेल में गये, पर अपने अन्तर की पुकार को दबाकर युद्ध की खूरेजी को स्वीकार नहीं किया। यह 'पेसिफिस्ट' परम्परा बन चुकी है। बर्ट्रेण्ड रसेल जैसे गणितशास्त्री और दार्शनिक अपने युद्ध-विरोधी एवं अणुअस्त्र-विरोधी सत्याग्रहों के कारण जेलों के सींखचों के पीछे बन्द कर दिये जाते हैं।

जब बर्ट्रेण्ड रसेल के नेतृत्व में हजारों अंग्रेज लन्दन के सुप्रसिद्ध ट्रफ़ल्गार स्क्वायर

बर्ट्रेण्ड रसेल

में धरना दिये बैठे हों और पुलिस अपने बल-प्रयोग से उन्हें हटाने का प्रयत्न कर रही हो, तब लोग हिंसा और अहिंसा का प्रत्यक्ष मुकाबिला देखते हैं। क्योंकि हिंसा अधिक संगठित है, पुलिस, जेल और फौज उसकी रक्षा करती है तथा धन और सरकार का समर्थन उसे प्राप्त है, वह विजयी होती दिखायी देती है, पर बर्ट्रेण्ड रसेल कहते हैं कि 'एक दिन हम अहिंसा का भी संगठन कर सकेंगे और तब हिंसा का संगठन उसके सामने बौना लगेगा।' जब ब्रिटेन में मजदूर-दल की सरकार होने के बावजूद पूंजीपति को फायदा पहुँचानेवाली शस्त्र-प्रतियोगिता जारी रहती है, तब बर्ट्रेण्ड मजदूर-दल की सदस्यता का प्रमाण-पत्र किसी रद्दी कागज के टुकड़े की तरह फाड़ फेंकते हैं। अणुअस्त्रों के कारखाने, आल्डर मास्टन से लन्दन तक प्रतिवर्ष ६० मील

डेनिलो डोलची

की पदयात्रा करके हजारों शांतिवादी अणुअस्त्रों के प्रति अपना विरोध प्रकट करते हैं।

केवल युद्ध के विरोध में नहीं, बल्कि गरीबी, विषमता और बीमारी के विरुद्ध अहिंसक-संघर्ष का इतिहास कोई कम दिलचस्प नहीं है। अफ्रीका के जंगल में अपना जीवन होम देनेवाले अलबर्ट स्वाइत्सर को बिना किसी हिचकिचाहट के महान सत्याग्रही कहा जा सकता है। सिसली (इटली) के दबे हुए लोगों को संगठित करके अन्याय, शोषण और विषमता के विरुद्ध आन्दोलन संगठित करनेवाले डेनिलो डोलची के सत्याग्रह की कहानी पढ़ते हुए किसीको भी रोमांच हो आना स्वाभाविक है। फ्रांस के लाजादेल वास्तो और आबे पियरे का भी सत्याग्रह

लाजादेल वास्तो

के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान है। गाँव-गाँव में घूमकर जमीन की समस्या को सुलझानेवाले विनोबा और मन्दिर के स्वामित्व की भूमि बेजमीनों को दिलाने के लिए सत्याग्रह करनेवाले जगन्नाथन् जैसे सत्याग्रही भी हमारे सामने हैं।

सत्याग्रह के प्रयोग अनगिनत क्षेत्रों में हुए हैं और हो रहे हैं। गांधी ने भारत को स्वतन्त्र करने के लिए जिस स्तर और पैमाने पर सत्याग्रह का प्रयोग किया, लगभग उसी स्तर और पैमाने पर अमेरिका के नीग्रो अपनी स्वतन्त्रता के लिए सत्याग्रह का मार्ग अपना रहे हैं। मोंटगोमरी नगर का बस-

बहिष्कार-आन्दोलन सत्याग्रह के इतिहास का एक अद्भुत अध्याय है। मार्टिन लूथर किंग ने अपनी छोटी-सी उम्र में बीसों बार जेल की यातना सह करके रंग-भेद को मिटाने के आन्दोलन को नया मोड़ दिया है। अमेरिका में यात्रा करते हुए इन सत्याग्रहियों के साथ सत्याग्रह करने तथा जेल जाने का मुझे भी अवसर मिला है और मैं जानता हूँ कि अमेरिका का नीग्रो थोरो और गाधी के सिद्धात को और अधिक विकसित करने मे लगा हुआ है। मैंने ऐसे अनेक सत्याग्रह-स्कूल देखे हैं, जहाँ-जहाँ नीग्रो-आन्दोलन के कार्यकर्ताओं को महीनों तक अहिंसा, सत्याग्रह

आबे पियरे

तथा अहिंसक प्रतिकार के सिद्धान्त एव व्यवहार का प्रशिक्षण दिया जाता है। सुप्रसिद्ध अमेरिकी गायिका, जॉन बायज जो अभी जेल मे है, ऐसा ही एक 'अहिंसा-विद्यालय' केलिफोर्निया में चला रही हैं। इतिहास में ऐसे कम उदाहरण हैं, जैसा कि आज हम अमेरिका में देख रहे हैं। कभी-कभी तो मुझे लगता है, मानो गाधी के बाद सत्याग्रह का स्रोत भारत से उठकर अमेरिका चला गया है। आश्चर्य नहीं कि भयकर केन्द्रीकरण से पीड़ित अमेरिकी समाज गाधी के विकेन्द्रीकरण का भी अनुगामी बनता हुआ, थोड़े ही दिन में दिखाई दे।

मार्टिन लूथर किंग

अहिंसक प्रतिकार के तरीके भी अलग-अलग देशों की परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग होते हैं। भारत और अमेरिका में जहाँ सविनय कानून-भग का तरीका सफल हुआ, वहाँ वियतनाम के बौद्ध-भिक्षुओं ने अपना देह-भस्म करके अन्याय के प्रति न केवल विरोध प्रकट किया, बल्कि जन-चेतना को भी जगाया। पिछले २५ वर्षों से वियतनाम-युद्ध विश्व के शातिवादियों एव सत्याग्रहियों के लिए एक चुनौती रहा है। अमेरिकी शातिवादी मोरसन ने अपने आपको अग्नि-समर्पित करके अमेरिकी नीतियों के प्रति विरोध प्रकट किया। विश्व-प्रसिद्ध अमेरिकी शातिवादी ए० जे० मस्ते ने वियतनाम जाकर वहाँ अमेरिकी सैनिकों के

जॉन बायज

अमानवीय कार्यों की निन्दा की। पर वियतनाम-युद्ध जिस पैमाने पर लड़ा जा रहा है, उसी पैमाने पर शाति-प्रयत्नों की आवश्यकता है। लगभग २५ ब्रिटिश शातिवादियों का एक जत्था वियतनाम और कम्बोडिया की सरहद पर काम कर रहा है, पर कहाँ हजारों-हजार हिंसक सैनिक और कहाँ ये २५ शाति-सैनिक! काश! भारत के शाति-सैनिक वियतनाम-युद्ध की ओर ध्यान देते और कुछ स्वयसेवक अहिंसक प्रतिकार के प्रयोग की दृष्टि से वहाँ पहुँचते!

भारत में शान्ति-सेना की कल्पना एव स्थापना निश्चय ही एक नयी सम्भावना का द्वार खोलती है। पर हम पश्चिम के शान्ति-

ए० जे० मस्ते

वादियों को भारतीय शान्ति-सेना के काम की बहुत ही कम जानकारी है। हमें मालूम नहीं कि गोवा में जब सैनिक-कार्रवाई हुई तथा पाकिस्तान और चीन के साथ जब युद्ध हुए तब भारतीय शान्ति-सेना ने क्या किया? शान्ति-सेना के विचार में असीम सम्भावनाएँ छिपी हैं। उन्हें प्रकट कर दिखाने की जरूरत है।

अमेरिका के हिप्पी-आन्दोलन को भी मैं अहिंसा, शान्ति और सत्याग्रह के व्यापक आन्दोलन का ही एक अग मानता हूँ। शहरीकरण, केन्द्रीकरण और मशीनीकरण से सवस्त, ऊबे, थके मानव की निराशा हिप्पी-

आन्दोलन के रूप में प्रकट हो रही है। मशीन की दासता के परिणामस्वरूप पनपी हुई सभ्यता और परम्परा का अस्वीकार करके 'वक्रमं', अनासक्ति एवं निर्वाण की खोज में निकले हुए 'हिप्पी' अपने आपको न केवल अहिंसावादी घोषित करते हैं, बल्कि शासन और स्थापित स्वार्थ की घोर उपेक्षा करते हैं।

अमेरिका २० करोड़ लोगों का देश है। भारत ५० करोड़ लोगों का और चीन ७० करोड़ लोगों का। इतने करोड़ों लोगों पर वाशिंगटन, दिल्ली या पेकिंग से शासन करना वस्तुतः असम्भव हो जाता है। सत्ता और पूंजी का इतना व्यापक केन्द्रीकरण अन्ततः व्यापक असन्तोष को जन्म देता है। एक पूंजीवादी संसार है, दूसरा साम्यवादी संसार है और तीसरा अवादी संसार है, जिसे तटस्थ या 'नॉनएलाइण्ड' संसार कहते हैं। पर वस्तुतः ये तीनों संसार एक ही ढाँचे पर चलनेवाले संसार हैं—केन्द्रीकरण ही इनका बुनियादी आधार है। हम चाहते हैं एक चौथे संसार की रचना करना। इस चौथे संसार का आधार होगा, विकेन्द्रीकरण। मशीनों के दबाव, शहरों के तनाव और सत्ता के कुप्रभाव से दूर, एक मानवीय संसार। ब्रिटेन में इस तरह की समाज-व्यवस्था चाहनेवालों का एक दल काफी तेजी से उभर रहा है, और इस 'चतुर्थ जागतिक' आन्दोलन में सत्याग्रह की टेकनिक का और अधिक विकास होने की सम्भावना है।

वैचारिक स्वतन्त्रता मानव मात्र की थाती है। इस थाती की रक्षा के लिए रूस के बुद्धिजीवियों ने पिछले दिनों जो साहसिक काम किये हैं, उनको भी हम सत्याग्रह के इस व्यापक आन्दोलन के साथ जोड़ना चाहते हैं। डेनियल और सिन्योस्की नाम के दो प्रतिभा के धनियों को इसीलिए जेल भुगतनी पड़ रही है कि उन्होंने सत्ता-सम्पन्न राजनेताओं की उपेक्षा करके भी वह सब कुछ लिखा, जो उन्हें सत्य प्रतीत हुआ। इन दोनों बुद्धिजीवी लेखकों को जब से जेल की सजा मिली, तभी से सोवियत-संघ के युवा लेखक-वर्ग में चेतना की एक लहर-सी पैदा हो गयी है। अभी-अभी हमारे सामने ऐसे कुछ तथ्य प्रकट हुए हैं, जिनसे साफ जाहिर है कि रूस में लेखकों एवं शान्तिवादियों का एक 'अंडर-ग्राउण्ड' आन्दोलन है, उनके समाचार-बुलेटिन निकलते हैं और अन्दर-ही-अन्दर विद्रोह संगठित हो रहा है। भले ही गांधी और थोरो की कसौटी पर ये सब आन्दोलन सत्याग्रह न माने जायें, पर जब सत्याग्रह के विकास का इतिहास लिखा जायगा, तब इन सारी घटनाओं को भुलाया नहीं जा सकता।

बावजूद इसके कि मानवीय चेतना ने न्याय, सत्य और अन्तरात्मा की पुकार की रक्षा के लिए अनेक अहिंसक प्रतिकार किये, पर इस तथ्य को हम नजरन्दाज नहीं कर सकते कि सत्याग्रह की टेकनिक के विकास के लिए अभी भी हमें एक लम्बी यात्रा करनी है।

(मूल अंग्रेजी से अनुवादक—सतीशकुमार)
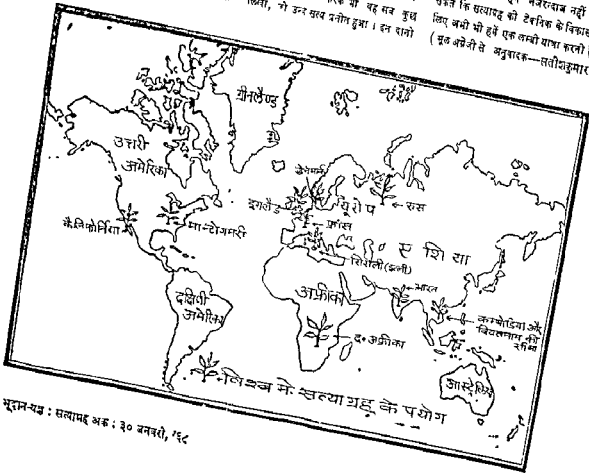
विनोबा की क्रान्ति यात्रा और सत्याग्रह के प्रयोग

स्वराज्य प्राप्ति के लिए गांधीजी ने देश में जागृति पैदा की और कहा कि आजादी के लिए हिंसक उपायों को अमल में ले आने की जरूरत नहीं है, बल्कि अहिंसक पद्धति का सहारा लिया जाना चाहिए। सरकारी कानूनों का भंग तो हो, लेकिन सविनय हो। और, इसके लिए गांधीजी ने मौके-मौके पर सत्याग्रह का सहारा लिया तथा उसका शुद्ध मार्गदर्शन किया।

गांधीजी के सत्याग्रहों का अंग्रेजों पर असर हुआ और आखिरकार देश आजाद हुआ। अंग्रेज सरकार देश के नेताओं को राज्य सौंपकर चली गयी। अंग्रेजों के जाने पर गांधीजी ने स्वयं सरकार की गद्दी पर बैठना कबूल नहीं किया और कांग्रेस से भी कहा कि उसे सत्ता में न जाकर लोकसेवक संघ के रूप में देश में संगठित होना चाहिए। भारत विभाजन के बाद देश में साम्प्रदायिक विद्वेष की जो आग लगी थी, उसे बुझाने में गांधीजी जुट गये। गांधीजी के सत्याग्रह का यह दूसरा चरण था। परन्तु वे ज्यादा समय तक जिन्दा न रह सके। गांधीजी के चले जाने पर सरकार ने संसदीय लोकतान्त्रिक प्रणाली अपनायी और विकास की पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा देश के विकास का कार्य शुरू किया। पंचवर्षीय योजनाओं के नतीजे से देश का औद्योगिक उत्पादन जरूर बढ़ा, लेकिन देश की मूल समस्याएँ नहीं सुलझ सकीं। बढ़ती बेकारी की समस्या विकराल रूप पकड़ती गयी। इससे देश में गरीबी और निराशा बढ़ी। खेती की पैदावार भी आबादी के अनुपात में कम पड़ती गयी। ऐसी परिस्थिति में कहीं कहीं हिंसक आन्दोलन की आग भी भड़क उठी।

इसी बीच एक ईश्वरीय घटना हुई। सन् १९५१ में विनोबाजी तेलंगाना में पद-यात्रा कर रहे थे उस समय उन्हें भूमिहीनों की समस्या का दर्शन हुआ और वह निकल पड़े उस दर्शन के सहारे एक सत्याग्रही के रूप में उस समस्या का समाधान ढूँढने। उन्होंने लोगों को समझाया कि गरीब और अमीर का भेद मिटाना चाहिए, पर वह हिंसा से नहीं प्रेम से होना चाहिए, समझा-बुझाकर होना चाहिए। गरीबी-अमीरी के भेद के मूल में सम्पत्ति की मालिकी है, इसीलिए वही समाप्त होनी चाहिए। इसके लिए मालिकों को समझाया जाय कि उनके धन में गरीबों का भी हक है जो उन्हें मिलना चाहिए। जब तक यह गरीबी नहीं मिटती है एक आदमी भी जीविका के साधनों से वंचित रहता है तब तक उनको समझाने की यह प्रक्रिया बन्द नहीं होगी। तब से विनोबाजी अपने संकल्प के अनुसार सतत इस कार्य में लगे हुए हैं। वह मानते ही हैं कि उनकी यह यात्रा सत्याग्रह है।

विनोबाजी ने जब (१९५१) से भूदान यज्ञ-आन्दोलन शुरू किया तब से अब तक उनकी सत्याग्रह की वह धारा बराबर प्रवाहित रही है। बीच बीच में उन्होंने कुछ अन्य प्रकार के सत्याग्रह की भी पहल की।

मन्दिर-प्रवेश

वैद्यनाथ धाम में 'बड़े पण्डा' ने १९ सितम्बर '५३ को विनोबाजी को निमन्त्रण भेजा कि वे मन्दिर में आवें। जब विनोबाजी हरिजनों के साथ वहाँ गये तो पण्डों ने अचानक उन पर तथा उनके साथियों पर लाठियों से प्रहार किया। उस समय पण्डों ने नारा लगाया कि अधर्म का नाश हो और धर्म की जय हो। इस घटना का उल्लेख करते हुए विनोबाजी ने कहा— "शुरू में ही मैं यह कह देना चाहता हूँ कि जिन लोगों ने हम पर हमला किया, उन्होंने अज्ञानवश ही ऐसा किया। इसलिए मैं नहीं चाहता कि इसके लिए उन्हें कोई सजा दी जाय।" इस उक्ति में यह स्पष्ट झलकता है कि उन्हें उस घटना से लेशमात्र भी क्लेश नहीं हुआ।

इसके बाद सन् '५५ में जब जगन्नाथपुरी में जगन्नाथजी के दर्शन के लिए विनोबाजी ईसाई बहन के साथ गये तो वहाँ भी उन्हें प्रवेश नहीं मिला। वे बिना किसी रंज के वापस लौट आये और बोले कि किसी भी भक्त को भगवान के दर्शन से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। इसके बाद उन्हें केरल के प्रसिद्ध गुरुवायुर मन्दिर में भी प्रवेश नहीं मिला। विनोबाजी अपने भूदान मिशन पर चलते रहे। उन्होंने मन्दिर प्रवेश का न आन्दोलन शुरू किया और न मन्दिरों के पण्डों के विरोध में मन्दिर के आगे धरना ही दिया। लेकिन २९ मई '५८ को पंढरपुर के विट्ठल मन्दिर का दरवाजा सबके लिए खुल गया। यह सत्याग्रह की सौम्यतम पद्धति थी। इसका आभास नहीं होता था, परन्तु जिस रोज पंढरपुर के मन्दिर में प्रवेश मिला उस दिन सबकी आँखें खुल गयीं।

डाकुओं का आत्मसमर्पण

सन् १९६० में विनोबाजी के सामने चम्बल क्षेत्र के डाकुओं ने आत्मसमर्पण किया। विनोबा ने उस समय डाकुओं को डाकू नहीं कहा, उन्हें सज्जन कहा, बागी कहा। उन्होंने कहा कि किसीसे कोई गलती हो गयी हो तो वह निधड़क बाबा के पास आ सकता है। विनोबा की बात का असर बागियों के चित्त पर पड़ा। उन्होंने समझा कि वे उनका कुछ बिगाड़नेवाले नहीं हैं। जहाँ सरकार के कानून और बन्दूक नाकामयाब रहे, वहाँ विनोबा के प्रेम की वाणी कामयाब हुई।

अशोभनीय पोस्टर आन्दोलन

सन् '६१ में विनोबाजी इन्दौर गये। वहाँ उन्होंने शहर में सिनेमा के अशोभनीय और भद्दे पोस्टर दीवालों पर देखे। वहाँ के नागरिकों से वे बोले— 'आपके नगर में जो गन्दे इश्तहार हैं, उन्हें हटाओ। इश्तहारों की जगह अच्छे-अच्छे सुन्दर सन्त वचन लिख रखो। इस सभा से जाते ही आप लोग यह गन्दे इश्तहार हटाने का, ढँकने का काम करो।' उन्होंने फिल्म के प्रदर्शन कर्ताओं तथा फिल्म के वितरकों से कहा—

"मैं तो इस सम्बन्ध में प्रधानमंत्री से लेकर आप तक, सबको नोटिस देना चाहता हूँ। इस कार्य में यदि आप लोगों की तरफ से ढील-पोल देखूँगा तो इस पर अखिल भारत सत्याग्रह भी शुरू हो सकता है। १० वर्ष तक गलत सत्याग्रहों को रोकने की कोशिश मैंने की है। मगर यह सत्याग्रह मैं खुद चलाऊँगा।"

विनोबाजी ने कहा कि अशोभनीय पोस्टर हमारी माँओं पर आक्रमण है। जब उनसे पूछा गया कि इसके लिए इतना आग्रह क्यों किया, तो बोले—"मुख्य बात यह है कि मैंने जिन सत्याग्रहों को अब तक रोका है, उनमें से कोई भी गृहस्थाश्रम की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए नहीं था। सत्याग्रह के लिए इससे अच्छा निमित्त और क्या हो सकता है?"

विनोबा का अनशन

सन् '६५ में भाषा-विवाद को लेकर देश में व्यापक हिंसक उपद्रव शुरू हुए, यहाँ तक कि मद्रास में आत्मदाह की घटना भी हुई। विनोबाजी उस समय पवनार में थे। उन्हें उपद्रव के इन घटनाओं से अत्यन्त खेद हुआ। १२ फरवरी '६५ को पवनार के सर्वोदय-मेले में बोलते हुए उन्होंने कहा—"मैंने यह तय किया है कि आज के मंगल दिन की स्मृति में मैं अनशन करूँ। यह मेरा अनशन बेमुद्दत रहेगा। जब तक चित्त को शान्ति नहीं मिलती तब तक रहेगा और भगवान की इच्छा रहेगी तब तक रहेगा।...मैं आज दुःख से बोल रहा हूँ। मुझे लगा, जो मन में संकल्प हुआ है उसे आज के दिन आपके सामने प्रकट करूँ। उसके लिए गांधी साक्षी है और भगवान साक्षी है। मैंने अत्यन्त प्रेम-भाव से इसको स्वीकार किया है। यह मैंने अपनी ओर से नहीं किया। मेरे पास के लोग जानते हैं कि मैं उपवास के खिलाफ हूँ और इन सत्रह वर्षों में किसी भी हिंसा से और अहंकार से मैं उपवास करूँ, यह शक्य नहीं हो सकता।"

पाँच दिन का यह उपवास १७ फरवरी '६५ को समाप्त हुआ। उन्होंने भाषा-विवाद को दूर करने के लिए तीन फार्मूले देश के सामने रखे। सभी राज्यों के मुख्य-मन्त्रियों ने फार्मूले को स्वीकार किया और देश में हो रहे हिंसक उपद्रव खत्म हुए। १७ वर्षों में यह पहला मौका था जब कि देशहित में उन्होंने उपवास किया। विनोबाजी के स्वभाव को देखते हुए किसीको इस अनुष्ठान की उम्मीद नहीं थी। लेकिन उन्होंने बेमुद्दत अनशन की घोषणा कर दी तो पूरे देश में तहलका मच गया। सब लोग परेशान हो गये। शीघ्र उपद्रव खत्म हो और शान्ति की स्थापना हो, इसका प्रयत्न होने लगा। विनोबाजी को लगा कि अब उपवास की आवश्यकता नहीं रही तो उन्होंने उपवास-समाप्ति की घोषणा की। उपवास के बाद वे बोले—"अनशन तो ५ दिन का ही चला। परन्तु उसमें परम शान्ति का अनुभव आया, आकाशवत्। उसका कुछ परिणाम भी बाह्य काम का निकला। लेकिन उस परिणाम को भगवान के चरणों में समर्पित करके उसमें से मैं मुक्त हो गया। अनशन-समाप्ति के बाद कुछ चिन्तन चला, वह ज्यादातर ब्रह्म-विद्या का चला।"

भूदान-यज्ञ : सत्याग्रह अंक : ३० जनवरी, '६८

सर्वोदय-आन्दोलन के अन्य सत्याग्रह

विनोबाजी के द्वारा किये इन सत्याग्रहों के अलावा सर्वोदय-आन्दोलन में और भी अनेक सत्याग्रह हुए हैं जिनमें से कुछ को विनोबा की सम्मति प्राप्त हुई और कुछ को उनका आशीर्वाद प्राप्त हुआ और कुछ को न सम्मति ही प्राप्त हुई और न आशीर्वाद ही मिला।

बेदखली-आन्दोलन

जिस भूमि पर भूमिहीन वर्षों से खेती करते आ रहे हैं या मकान बनाकर रहते आ रहे हैं, उन्हें उस जमीन पर से हटाने का प्रयत्न जमीन के मालिकों की ओर से बिहार में जगह-जगह होने लगा था। पूरे बिहार में बेदखली की अनेक घटनाएँ हुईं। सर्वोदय आन्दोलन के कुछ कार्यकर्ताओं का ध्यान इस ओर गया। यह अन्याय है, इसके विरोध में आवाज उठायी जानी चाहिए, इस आशय की अपील निकाली गयी।

गादीग्राम (बिहार) में सन् १९५५ में बेदखली-आन्दोलन शुरू हुआ। बेदखल किये जा रहे भूमिहीनों के साथ कुछ कार्यकर्ताओं ने खेत पर जाकर धरना दिया। भूमिहीनों के साथ जेल गये।

तमिलनाड में भी बेदखली के विरोध में १९ अगस्त '६७ को मदुराई से १५ मील दूर एक गाँव में भूदान-यज्ञ के कार्यकर्ताओं ने सत्याग्रह किया। इस सत्याग्रह में उन्हें सफलता भी मिली। इस प्रकार बेदखली के खिलाफ अनेक छिटपुट प्रयत्न किये गये।

सतीश-मेनन की अन्तर्राष्ट्रीय यात्रा

आज आणविक अस्त्रों के कारण दुनिया त्रस्त है और मानवता का भविष्य अन्धकार-मय है। एक देश दूसरे देश के मुकाबिले शस्त्रास्त्र बढ़ाते चले जा रहे हैं। मनुष्य इस प्रयत्न से डर रहा है, लेकिन कुछ मनुष्य हैं जो मनुष्य को ही सुरक्षा के नाम पर भयभीत बनाते चले जा रहे हैं। श्री सतीशकुमार और श्री प्रभाकर मेनन के मन में यह सवाल पैदा हुआ कि क्या आणविक निःशस्त्रीकरण के लिए हमें कुछ नहीं करना चाहिए? उन्होंने निश्चय किया कि क्यों न दुनिया भर में पैदल घूम-घूमकर आणविक-विस्फोट के खिलाफ जन-चेतना पैदा करने का काम किया जाय? इन लोगों ने विनोबाजी के सामने अपनी बात रखी तो विनोबाजी ने उन्हें अपना आशीर्वाद दिया। फिर दोनों यात्री पैदल अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति-मिशन पर निकल पड़े थे।

मैत्री-यात्रा

इसी प्रकार एक दूसरी अन्तर्राष्ट्रीय मैत्री-यात्रा सन् १९६३ में निकली। उस समय चीन ने भारत पर आक्रमण किया था। अपने देश में शान्ति और अहिंसा में पूर्ण विश्वास रखने-वाले लोग युद्ध के कारण चिन्तित थे। वे सोच रहे थे कि इस परिस्थिति में क्या करना चाहिए। उनका मन अत्यन्त क्षुब्ध था और इस वातावरण में कुछ न कर सकने का मलाल भी था। कुछ लोग तो यहाँ तक मानने लगे थे कि जहाँ युद्ध हो रहा है वहाँ शान्ति-सैनिक जायँ और शान्ति का प्रयत्न

करें तथा इस प्रयत्न में उन्हें होम भी होना पड़े तो हों। परन्तु इसकी व्यावहारिकता पर खूब चर्चा हुई और उस प्रकार के कार्यक्रम को कार्यरूप में सन्देह होने के कारण उस चिन्तन का कोई व्यावहारिक स्वरूप नहीं तैयार हो सका। तभी भारतीय शान्ति-सेना मण्डल तथा विश्व शान्ति-परिषद् ने यह तय किया कि दिल्ली से पेकिंग को एक मैत्री-यात्रा की जाय। यह निर्णय अपने आप में बड़े महत्व का ऐतिहासिक निर्णय था, क्योंकि जिस समस्या का हल राष्ट्रों के राजपुरुष नहीं कर पा रहे थे, उसका हल राज्य की जनता के स्तर पर करने का यह प्रयत्न था। दोनों देशों की जनता के सामने मैत्री का विचार रखना था, उन्हें समझाना था।

१ मार्च १९६३ को इस यात्रा का शुभारम्भ गांधीजी की समाधि से हुआ। इस यात्रा का नेतृत्व श्री शंकरराव देव ने किया। उन्होंने मैत्री-यात्रा के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए कहा, "हमारा यह दावा नहीं है कि प्रस्तुत मैत्री-यात्रा आज के संघर्ष-समस्या का कुछ निराकरण करेगी। यह प्रसिद्ध वचन है कि शान्ति और युद्ध मानव के मन की उत्पत्ति है। इस मन को, सामुदायिक चित्त को शान्ति-अभिमुख करना, स्नेह-अभिमुख करना, मैत्री-अभिमुख करना हमारी इस मैत्री-यात्रा का उद्देश्य है।··· चीन-भारत के संघर्ष के सन्दर्भ में हमारा झुकाव 'वार-रेजिस्टर्स'—युद्ध-विरोध—नहीं, अर्थात् जो युद्ध-प्रयत्न चल रहा है, उसका विरोध करनेवालों का नहीं है, बल्कि आज के संघर्ष का जैसे हो वैसे जल्दी अन्त हो और दोनों राष्ट्रों के शासकों के बीच स्थायी समाधान पैदा हो, यह हम चाहते हैं। दोनों प्रजाओं के बीच जितनी कटुता कम होगी और मैत्रीभाव की मात्रा अधिक होगी, उतनी दोनों के बीच समाधान की शक्यता बढ़ेगी और उतना दोनों के बीच सुखद और स्थायी समाधान होगा।"

शान्ति, स्नेह और मैत्री के द्वारा विश्व-परिवार के निर्माण की भावना से अभिभूत होकर यह यात्रा दिल्ली से चली थी। युद्ध के वातावरण में मैत्री का यह अभियान एक प्रयोगमात्र ही था। इतिहास में कभी भी ऐसा हुआ नहीं था। मैत्री-यात्री विजय और पराजय की भूमिका से ऊपर की भूमिका में निकले थे—न किसीकी विजय और न किसीकी पराजय। युद्ध का अन्त होना चाहिए और जो विवाद है उसे परस्पर के विचार-विमर्श से मिटाने का प्रयत्न होना चाहिए।

यह दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि पाकिस्तान और बर्मा सरकारों ने मैत्री-यात्रियों को अपनी जमीन से होकर चीन जाने की अनुमति नहीं दी, न चीन सरकार ने। यह यात्रा ३० जनवरी '६४ को समाप्त हुई।

प्रो० गोराजी का सत्याग्रह

विनोबाजी की राय से भिन्न राय रखते हुए प्रो० गोराजी सत्याग्रह में बराबर रत रहे। कभी सभी पक्षों के झण्डों को मिलाने का प्रयत्न किया, तो कभी मन्त्रियों की शान-शौकत के खिलाफ प्रदर्शन किया। एक के बाद एक प्रदर्शन उनका होता रहा। विनोबाजी ने उन्हें सिर्फ इतना ही कहा—"आप विनय और नम्रता की मूर्ति हैं। इसलिए मेरा विश्वास है कि आप जो भी कदम उठायेंगे वह अहिंसा की ही मर्यादा में नहीं होगा, बल्कि अहिंसा के लिए पोषक होगा।"

गुड़-खांडसारी के लिए सत्याग्रह

जब उत्तर प्रदेश सरकार ने गुड़-खाडसारी पर प्रतिबन्ध लगाया तो यह स्वाभाविक था कि जो लोग ग्रामोद्योग के हिमायती थे उन्हें चिन्ता हो और उस प्रतिबन्ध को हटाने का भरसक प्रयत्न करें। उस अवसर पर विनोबाजी ने कहा—"जो लोग गुड़ खाना चाहते है और गुड़ पैदा करना भी चाहते हैं, उन पर रोक लगायी जाय तो वहाँ वह चीज ग्रामदान-विचार के और ग्रामोद्योग-विचार के खिलाफ जाती है। हमारी ओर से यह विचार सरकार-वालों के पास पहुँचायी जाय कि इससे सबसे नीचे के तबके की रोजी छीनी जाती है तो शान्ति कैसे रहेगी?" उन्होंने इस प्रतिबन्ध को नागरिक के व्यक्तिगत आजादी पर प्रहार कहा।

सरकार के इस कानून की सविनय अवज्ञा में श्री त्रिवेणी सहाय तथा श्री ओमप्रकाश गौड़ गिरफ्तार हुए। उन लोगों के इस प्रयत्न का सर्व सेवा संघ ने स्वागत किया तथा इसके समर्थन में उसने एक प्रस्ताव भी निकाला।

शराबबन्दी

कोई शराब न पीये, क्योंकि इससे नैतिक पतन होता है तथा देश का सांस्कृतिक ह्रास होता है। परन्तु बावजूद समझाने के और कानून के भी लोगों ने शराब पीना नहीं छोड़ा। वर्षों से इसके लिए प्रयत्न हो रहे हैं। सर्वोदय-जमात में इस विषय पर अनेक मत हैं। किसीका कहना है कि शराब की दूकानों पर धरना दिया जाय, कोई कहता है सरकार पर कानून बनवाने के लिए दबाव डाला जाय तो कुछ यह मानते हैं कि इसे ग्रामदान से अलग का कार्यक्रम न माना जाय। अनेक स्थानों पर शराब-बन्दी के लिए शराब की दूकानों पर धरना दिया गया और सरकार पर दबाव डालने के लिए अनशन भी किये गये। अनेक ऐसे प्रयत्नों में सफलता भी मिली। परन्तु कुल मिलाकर आज भी शराब-बन्दी न हो सकी, बल्कि कुछ राज्यों ने तो शराब के कानून में कुछ ढील दे दी। शराब-बन्दी के लिए जो प्रयत्न हुए उनमें मलयपुर (बिहार), पौड़ी-गढ़वाल (उत्तर प्रदेश) आगरा, आदि क्षेत्र हैं। गुजरात के प्रसिद्ध कार्यकर्ता श्री आत्माराम भट्ट ने सम्पूर्ण देश मे शराब-बन्दी के लिए १ जून '६३ से २१ जून '६३ तक अनशन किया। इस पर विनोबाजी ने लिखा—

"शराबबन्दी का विषय केन्द्र के क्षेत्र में नहीं आता है। इस पर सोचने के लिए जो अखिल भारतीय सम्मेलन हुआ था, उसमें जहाँ तक मैं समझता हूँ, शराब-बन्दी न करने की राय नहीं ली गयी है। अब प्रान्तों को सोचना है। कुछ प्रान्तों ने शराब-बन्दी की है, कुछ ने नहीं की है। ऐसी हालत में शराब-बन्दी करने का काम उस-उस प्रान्त में रहेगा। जवाहरलालजी (तत्कालीन प्रधानमंत्री) को नोटिस देने का कोई मतलब नहीं।"

अभी राजस्थान में 'राज्य में पूर्ण शराबबन्दी' हो इसका प्रयत्न चल रहा है। २ अक्तूबर '६७ को मुख्यमन्त्री के निवास-स्थान पर उपवास, भजन, प्रार्थना द्वारा

सत्याग्रह हुआ। जगह-जगह शराब की दुकानों पर धरना दिया गया। २ अक्तूबर १९६९ तक पूर्ण शराब-बन्दी अगर नहीं हुई तो सत्याग्रह करने का संकल्प भी है। राज्य में सत्याग्रह समिति का संयोजन हुआ है, जिसके संयोजक श्री गोकुलभाई भट्ट हैं। राज्य में नशाबन्दी होनी ही चाहिए, न हो तो सत्याग्रह किया जाय इसके लिए राजस्थान समग्र सेवा संघ, सर्व सेवा संघ, श्री जयप्रकाश नारायण तथा विनोबाजी का समर्थन और आशीर्वाद प्राप्त है। विनोबाजी ने कहा है, "हमने राजस्थान में ग्रामदान 'राइट आफ' किया है, इसलिए 'होलाहार्टली' शराब-बन्दी को सहमति दी है। राजस्थान निष्प्राण पड़ा है, कुछ तो जान आयगी। एक जगह जोर लगेगा तो सब में प्राण-संचार होगा। आशा है, अब राजस्थान जाग जायगा।"

विनोबाजी ने इस आन्दोलन को अपना आशीर्वाद देते हुए यह कहकर कि राजस्थान में जान तो आयगी, इतना स्पष्ट कह दिया कि अगर ग्रामदान का काम वहाँ हुआ होता या होता रहता तो नशाबन्दी के लिए सत्याग्रह की इजाजत उन्हें शायद ही मिलती। लेकिन ग्रामदान भी नहीं और शराबबन्दी भी नहीं, यह ठीक नहीं। अगर ग्रामदान नहीं तो शराबबन्दी ही सही।

राजस्थान में शराबबन्दी के सत्याग्रहों में अहिंसा और साथ-साथ लोकशिक्षण का आग्रह है, इससे यह साफ जाहिर है कि वह सत्याग्रह गलत दिशा में नहीं जायगा।

तमिलनाड का सत्याग्रह

तमिलनाड में मठों के पास अधिक जमीन है। उस जमीन की बन्दोबस्ती ठेकेदार करते हैं। इसके कारण किसानों का ज्यादा शोषण होता है। श्री जगन्नाथनजी का कहना था कि जिन गाँवों ने ग्रामदान किया है उन्हें सीधे मठों की ओर से जमीन जोतने के लिए मिलनी चाहिए। इस पर मठाधिपति राजी नहीं होते थे। श्री जगन्नाथनजी ने विनोबाजी से चर्चा की और उनकी सम्मति माँगी। विनोबाजी ने उन्हें सत्याग्रह करने की इजाजत दे दी। उन्होंने कहा, "मैंने इसके लिए सत्याग्रह करने की अनुमति दी है। कुछ लोग समझते हैं कि बाबा सत्याग्रह करने के लिए अनुमति नहीं देता। मैंने पहले ही सूचना दी है कि जिस विषय को सब समझते हैं उस पर सत्याग्रह करना और जिस विषय को लोग नहीं समझते हैं उसका विचार प्रचार करना।"

१६ जुलाई '६५ को श्री जगन्नाथनजी ने अनिश्चित काल तक का अनशन शुरू किया। २२ जुलाई को सातवें दिन उपवास समाप्त हुआ। इनसे पहले किसानों ने भी अनशनव्रत किया था। बड़े पैमाने पर गिरफ्तारी हुई थी। मुख्यमन्त्री के आश्वासन पर श्री जगन्नाथनजी का अनशन समाप्त हुआ था। श्री कामराज ने इस मामले को अपने प्रयत्न से निपटाया। इस सत्याग्रह को सफलता प्राप्त हुई। इस सफलता पर विनोबाजी ने लिखा—"सत्याग्रह की सफलता तो निश्चित ही थी, क्योंकि मीनाक्षी देवी का आशीर्वाद निःसंशय ही उसके पीछे था। सब साथियों का धन्यवाद।"

भूदान-यज्ञ के समय से लेकर आज ग्रामदान तक आन्दोलन कभी वेगवान रहा, तो कभी शिथिल पड़ा। कभी कार्यकर्ताओं में निराशा भी आयी, और कितने ही प्रतिक्रिया के शिकार भी हुए, परन्तु इस आन्दोलन के प्रवर्तक और क्रान्ति के द्रष्टा विनोबा बराबर सत्य की खोज में लगे रहे। कभी प्रकट हुए तो कभी सूक्ष्म में प्रवेश किया। कभी तूफान के वेग से आगे बढ़े तो कभी महातूफान का बिगुल बजाया। उन्होंने कई दफा अपने को अकेला भी महसूस किया, पर अपनी राह पर आगे बढ़ते गये। लाखों एकड़ भूदान मिला तो कहा—भूदान से काम नहीं चलेगा, ग्रामदान हो। ग्रामदान हुआ तो कहा—प्रखण्डदान होना चाहिए। और जब प्रखण्डदान हुए तो जिलादान का मन्त्र फूँका। और जब जिलादान हो गया तो बिहारदान का संकल्प लिया और निकल पड़े महा-तूफान अभियान पर। इस प्रकार गांधीजी के बाद सत्याग्रह की अखण्डधारा प्रवाहित है—आगे भी प्रवाहित रहेगी।

—कृष्णकुमार

[भूदान-यज्ञ : सत्याग्रह अंक : ३० जनवरी, '६८

एक उपवास और उसकी प्रतिक्रियाएँ

भावनगर—भारत का एक कोना। पश्चिम दिशा के छोर पर बसा हुआ एक छोटा सा नगर। उसमें समस्त देश को स्पर्श करनेवाले तीन प्रश्नों को लेकर एक सत्याग्रह चल रहा है। सत्याग्रह का माध्यम है उपवास। आनेवाला प्रत्येक क्षण वृद्धकाया को अधिक क्षीण करता चला जा रहा है।

समस्या है भारत व्यापी, इसलिए मांग भी है भारत-व्यापी निराकरण की। परन्तु व्यक्ति है भावनगर व्यापी, सौराष्ट्र व्यापी, अधिक-से अधिक गुजरात-व्यापी। इस ओर विश्व व्यापी विनोबा इशारा भी करते हैं आप सारी दुनिया की शराब बन्दी क्यों नहीं सोचते? इसलिए कि सारी दुनिया में आपकी पहुँच नहीं और उतना आपका अधिकार नहीं ऐसा आप समझे हैं। तो मैं आपको सुझाना चाहता हूँ कि सारे भारत के लिए भी आपका अधिकार नहीं है। वह अधिक-से-अधिक हो सकता है, गुजरात के लिए क्योंकि वहाँ की आपने कुछ सेवा की है।

सत्याग्रह कौन कर सकता है और सत्याग्रह का क्षेत्र कितना हो सकता है, उसका स्पष्ट संकेत एक आदर्श सत्याग्रही के उपरोक्त शब्दों में से मिलता है। सत्याग्रह के विचार क्षेत्र के अधिकारी व्यक्ति श्री मगनभाई देसाई ने भी यही लिखा कि गुजरात उनकी सेवा का क्षेत्र है। उपवास के प्रश्न-क्षेत्र को गुजरात के बाहर मर्यादा आ जाती है।'

परन्तु यह सत्याग्रही आत्माराम भाई भट्ट अपने निर्णय में अविचल हैं। उनके हृदय में एक आग है। अन्याय को वे कदापि सहन नहीं करेंगे। अन्याय का प्रतिकार करने की क्षात्र-शक्ति तथा वृत्ति उनको प्राप्त है। साथ साथ शान्ति और बलिदान द्वारा अन्याय का प्रतिकार करने की गांधी-शिक्षा भी उनको प्राप्त हुई है। इसलिए— (१) सारे भारत में शराब बन्दी, (२) जनहित-विरोधी विज्ञापन पैसे के मोह वश न लिये जाय और (३) समस्त स्त्री-समाज के लिए एक समान कानून लागू हो। इन प्रश्नों पर ध्यान नहीं दिया जायगा तो मैं मान लूँगा कि ये प्रश्न बलिदान माँग रहे हैं और इन प्रश्नों की माँग मैं पूर्ण करूँगा। यह थी उनकी भूमिका। लोकतांत्रिक राष्ट्र में लोकहित विरोधी कोई भी चीज चले क्यों? किसी भी व्यक्ति को उसका प्रतिकार करने का अधिकार है।

आखिर पूर्वनिश्चित समय पर परमेश्वर का नाम लेकर उपवास आरम्भ हुआ।

आत्माराम भट्ट

स्नेहमूर्ति दादा धर्माधिकारी ने लिखा मेरे शब्दों में जितनी सामर्थ्य है उसका बटोरकर मैं उनसे अनुरोध करता हूँ कि वे बिना किसी शर्त के उपवास का अन्त कर दें। हमें अपनी बात दूसरों को समझाने से ही संतोष मानना चाहिए। दूसरों से भी मेरी यही अपेक्षा रहती है कि वे मुझे अपनी बात समझाकर संतोष करें। मुझसे मनवाने के लिए किसी भी प्रकार के दबाव का प्रयोग—आध्यात्मिक, नैतिक या भौतिक—न करें। इसलिए मैं स्वयं किसी भी प्रकार के दबाव का प्रयोग नहीं करता।

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिराजी ने कहा लिखा अपनी माँगों को मनवाने के लिए उपवास का तरीका उन दिनों ठीक था, जब हम एक विदेशी राज्य के साथ संघर्ष कर रहे थे जो जनता की इच्छा के प्रति लापरवाह और बेपरवाह था। लेकिन पूर्ण तरीके से अपनी माँगें पेश करने के सभी रास्ते अब प्रत्येक नागरिक के लिए खुले हुए हैं। हमारे जैसे लोकतांत्रिक समाज में सामाजिक सुधार का काम जनमत को शिक्षित और उसे अपने पक्ष में करने के कष्टसाध्य कार्य द्वारा ही पूरा हो सकता है। ऐसी हालत में माँगों को मंजूर कराने के लिए क्या उपवास का रास्ता अपनाना उचित है?

उप प्रधान मंत्री श्री मोरारजी भाई भी यही संकेत करते हैं लोकशाही में किसी भी कानून में फर्क करने का काम संसद का है। इसलिए संसद-सदस्यों को आग्रह करना चाहिए। लोकशाही में अनशन से कोई भी कानून नहीं हो सकता, ऐसा मैं मानता हूँ।"

यही बात संपूर्ण व्यावहारिक भूमिका पर हमारे तत्त्वविद आचार्य धीरेन्द्रभाई बहुत अच्छी तरह से समझाते हैं— लोकराज में सरकार की तीन जिम्मेदारियाँ होती हैं (क) शासन (ख) जन-कल्याण, (ग) सामाजिक सुधार।

(क) शासन के लिए जनता ने प्रतिनिधियों को चुनकर भेजा है उतना अधिकार उनको है। अमन और चैन कायम रखने में, अत्याचार निवारण में या किसी प्रकार जनता की सुरक्षा के लिए राज्य द्वारा एकतरफा निर्णय उसका लोकसम्मत अधिकार है।

(ख) जन-कल्याण के लिए राज्य पूर्ण रूप से एकतरफा निर्णय नहीं कर सकता। उसे जनता की अनुकूल आवश्यकता का ध्यान रखना पड़ता है। लोकतंत्र में इस पहलू पर भी सरकार के लिए इतनी मर्यादा जरूरी है।

(ग) सामाजिक सुधार के लिए किसी भी हालत में सरकार एकतरफा निर्णय नहीं कर सकती है। उसके लिए जिस समाज या समुदाय का प्रश्न है, सुधार का है उस समाज और समुदाय के सुधारक द्वारा उसकी पहल अनिवार्य है। जब तक समाज के सुधारकों की तरफ से पहल नहीं होती है तब तक सरकार अपनी तरफ से निर्णय से सुधार लाद देती है तो वह [illegible] का गलत कार्य होगा, सरकार के [illegible] अधिकार की मर्यादा के बाहर का काम होगा। इस दृष्टि से उपवास का निर्णय समाज के अन्तर्गत [illegible] के आग्रह करने के लिए उपयोग किया जा सकता है। लेकिन सरकार का समाज की ओर से [illegible]

किसी भी सुधार के निमित्त दण्ड-शक्ति का इस्तेमाल करने के लिए विवश करने हेतु उपवास नहीं किया जा सकता है, ऐसा मैं मानता हूँ।"

उपवास एक साधन हो तो भी वह अपने क्रम में आता है। सौम्य, सौम्यतर और सौम्यतम भूमिकाओं में उपवास का स्थान आखिर का है। 'मुझसे अब खाया नहीं जाता, इसलिए मैं उपवासी हूँ,' यह इस अन्तिम कदम की भूमिका हो सकती है। सत्याग्रह के इस माध्यम को अपनाने में यह क्रम-विवेक भग हो रहा है, इस ओर भी अनेक जागृतों ने संकेत किया। बापू के साथी आचार्य कृपालानीजी उपवास के अन्तिम शस्त्र को अपनाने के पहले करने के कार्यों के बारे में जिक्र करते हुए लिखते हैं कि "हमें अपने लक्ष्य की सिद्धि के लिए हमेशा मरना नहीं है, बल्कि अक्सर लक्ष्य की सिद्धि के लिए आमरण में जिन्दा रहना है।"

अन्याय के प्रतिकार के बारे में प्रचण्ड प्रयोगक स्व० लोहियाजी ने लिखा "मैंने गांधीजी को तीन दिन तक लगातार अपनी यह राय बताने की कोशिश की थी कि वे बार-बार उपवास करके देश को आत्मप्रवंचना सिखा रहे हैं। 'अपनी बात उदाहरण से, अथवा उदाहरण और प्रचार के संगम से अथवा उदाहरण, प्रचार और कानून के त्रिवेणी संगम से सिद्ध की जाय।' राजनीति के और जितने रास्ते हैं जिनमें से कुछ हम लोगों के कार्यों से भी आप देख चुके हैं, अपनायें, लेकिन अपना उपवास जरूर छोड़ दें।" अपने को सत्याग्रह के विचार-क्षेत्र में अनाधिकारी बताते हुए नम्रतापूर्वक जय-प्रकाशजी एक महत्त्व की चीज की ओर ध्यान दिलाते हैं "मुझे लगता है कि हम सर्वोदयवाले लोग लोकशिक्षण के कठिन कार्य को इस प्रकार के आत्म-बलिदान के संकेतों द्वारा दरकिनार कर देना चाहते हैं।"

पत्रों की वर्षा हुई थी। लिये हुए तीन सवाल और सत्याग्रह के विभिन्न पहलुओं को अनेक दृष्टिकोणों से देखा गया था। राज्य-धुरंधरों, विरोध-पक्षों के अग्रगण्य विचारकों तथा विभिन्न सामाजिक कार्य-क्षेत्रों के अग्रिम सेवकों

भूदान-यज्ञ : सत्याग्रह अंक : ३० जनवरी, '६८

ने सत्याग्रह के विषय में तलस्पर्शी छानबीन की थी। जिसपर भी जो कुछ छूट गया था, उसे लेकर और जो कुछ रखा गया था, उसका विस्तृत अर्थ करके सौराष्ट्र के प्रमुख नेता तथा गुजरात के भूतपूर्व पंचायत-मन्त्री श्री वजुभाई शाह ने इतने सुन्दर ढंग से सांगोपांग विवेचन किया कि सत्याग्रह के विद्यार्थी के लिए तो वह एक उत्तम वर्ग ही बन गया। उपवास के बहुत सारे दिनों में अपनी नादुरुस्त तबीयत लेकर भी वे उपस्थित रहे थे और श्वासोच्छ्वास की तकलीफ होते हुए भी आत्माराम भाई को समझाने के लिए घण्टा बोलते रहते थे। परन्तु वह उपवासी तो अडिग ही थे। 'जब तक मेरी बुद्धि को बात जँचती नहीं तब तक मैं उसे स्वीकार नहीं कर सकता', यह उनकी दलील थी। और उपवास के दिन बढ़ते गये। इसके पूर्व दूसरे प्रश्नों को लेकर आत्माराम भाई ने करीबन दस-बारह दफा उपवास किये थे। परन्तु कभी चौबीस उपवास से आगे बढ़ना नहीं हुआ था। कुछ-न-कुछ समाधान हो जाता था। परन्तु इस बार तपस्या कठिन थी। चौबीस दिन से आगे दिन बढ़ने लगे। सिविल सर्जन, कलेक्टर तथा डी० एस० पी० साहब चिंतित थे। सभी उन्हें समझाने का अपने-अपने ढंग से प्रयत्न करते थे। परिवारवाले तो उन्हें समझाने की कोशिश छोड़कर सिर्फ सेवा और प्रभु-प्रार्थना के अधिकारी रह गये थे। जैसे-जैसे दिन बढ़ते जा रहे थे, आशा के आसार भी छूटते जा रहे थे। शायद ईश्वर की योजना में कुछ और ही है, यह मान बैठे थे।

उपवास का ३९वाँ दिन था। संकट-काल के सदा साथी वजुभाई तो सन्निधि में थे ही। उस दिन आत्माराम भाई के घनिष्ठ मित्र और सौराष्ट्र राज्य के भूतपूर्व शिक्षा-मन्त्री श्री जादवजी भाई मोदी आये और एक अधिकारयुक्त स्वर में उन्होंने कहा, "मुझे और कुछ समझ में आता नहीं। मैं तो ईश्वर के नाम से आपको कहता हूँ कि यह उपवास छोड़ दीजिये और चलें, हम दोनों साथ में काम करेंगे।" न मालूम क्या चीज थी, जादू था या चमत्कार, परन्तु चीज थी कोई बुद्धि से परे। उस बात पर आत्माराम भाई ने मुश्किल से दो मिनट विचार किया होगा और मान गये। जिस परमात्मा का नाम लेकर उपवास आरम्भ हुए थे, उसी परमात्मा के नाम पर उपवास टूटा। खुद उन्होंने बाद में श्री सन्तबालजी को लिखा कि "उन्होंने परमात्मा के नाम पर उपवास छोड़ने की मेरे पास बात की और मैंने अगम्य रीति से वह स्वीकार कर ली। और उसे स्वीकार करते हुए मैं बिलकुल हलका बन गया। शायद मेरा बलिदान परमात्मा को मंजूर नहीं था।"

इस तरह से ३९ दिन की तपस्या से देश के सामने मौजूद प्रश्नों को लेकर देश के एक कोने में एक सत्याग्रह हुआ। सत्याग्रह का तरीका अनुचित होते हुए भी उसका उद्देश्य इतना निःस्वार्थी और लोकहितकारक था कि उस सत्याग्रह के बहुत सारे साथियों ने पावनत्व का अनुभव किया। जिसपर भी जब उपवास न टूटा तब सबके चित्त का एक बोझ हलका हो गया। 'आनन्द' का अनुभव हुआ।

बाबा की बात याद आती रही कि "सत्याग्रह हो रहा है, ऐसा सुनकर ही मन में शांति का, शीतलता का और कुछ अच्छा हो रहा है ऐसा भाव उठना चाहिए, तभी वह सत्याग्रह कहा जायगा।" यही उपवास टूटने पर ऐसे भाव उठे। सचमुच में सत्याग्रह के तरीके के तौर पर उपवास का साधन आमलोगों के लिए मानना ही नहीं चाहिए।

कहा जाता है कि स्थितप्रज्ञ हाथ में तलवार लेकर भी अहिंसक रह सकता है, वैसे ही यह साधन भी स्थितप्रज्ञ के लिए ही सुरक्षित रखना चाहिए। अन्यथा यह साधन साध्य को नुकसान करेगा। तरुण पीढ़ी के मन में उपवास के साथ-साथ सत्याग्रह के खिलाफ भी भावना उठेगी। सत्याग्रह में असत्य में से सत्य, अंधेरे में से प्रकाश और मृत्यु में से अमरता की ओर ले जानेवाले सुगन्ध की सुगन्ध-सौरभ से वातावरण भर जाना चाहिए।

—मीरा

"और हिंसा की धार कुंठित हो गयी

कलकत्ता से एम० बी० बी० एस० करने के बाद जब डा० एस० के० माइती ने प० बंगाल के मेदिनापुर जिले के एक छोटे-से गाँव में अपनी प्रेक्टिस शुरू की तो घरवालों को बड़ी निराशा हुई। लेकिन कुछ दिनों बाद उसकी सेवाभावना के कारण पैसा तो कम, किन्तु उस इलाके के लोगों का स्नेह-सत्कार भरपूर मिलने लगा तो निराशा घटी, असन्तोष कम हुआ। डा० माइती का व्यक्तित्व वैसे कोई खास आकर्षक नहीं था, लेकिन उसके अन्दर के भावों को उसकी आँखों में झाँककर जो भी देखता था, कुछ क्षणों के लिए ही सही, उसे अपना मान लेता था।

लगभग छह साल पहले की एक घटना है। गाँव की एक विधवा वृद्धा ने अपनी ७५ बीघे जमीन को गाँव के लिए दान कर दिया, वह चाहती थी कि उससे बच्चों का एक स्कूल और गरीबों के लिए एक मुफ्त दवा-खाना चलाया जाय। गाँव की एक कमेटी बनी और सबने एक राय होकर इसकी जिम्मेदारी डा० माइती को सौंप दी। डाक्टर चाहता था कि इस बार की दुर्गापूजा के समय स्कूल और अस्पताल दोनों शुरू हो जायें, इसलिए वह जी-जान से मिहनत कर रहा था।

"आइये, घोष बाबू! आपको कष्ट करने की क्या जरूरत थी, मैं खुद हाजिर हो जाता, आप सूचना भेज देते। कहिये, क्या सेवा करूँ?"

"मैं जानता हूँ डाक्टर। तुम एक विनय-शील, सेवाभावी होनहार युवक हो। मुझे उम्मीद है कि तुम इस इलाके की ही नहीं, इस देश की बड़ी-बड़ी अपेक्षाएँ पूरी करोगे।" खिचड़ी मूछों से ढके होंठों पर मुस्कराहट का भाव लाते हुए घोष बाबू ने अपनी बात जारी रखी—"तुम्हारे जैसे युवक को देखकर हमें गर्व होता है।" अपनी अभिव्यक्ति की प्रतिक्रिया देखने के लिए शायद उन्होंने माइती के चेहरे को गौर से देखा। डाक्टर नहीं समझ सका कि घोष बाबू इस भूमिका की बुनियाद पर क्या चीज प्रस्तुत करना चाहते हैं।

"मैंने सुना है कि तुम मेरे तालाब की पश्चिमवाली जमीन में स्कूल और अस्पताल बनाना चाहते हो।"

"जी हाँ। स्वर्गीय आशु बाबू की वृद्धा धर्मपत्नी ने पूरी ७५ बीघे जमीन का दान कर दिया है, वे मरने से पहले अपनी आँखों से देखना चाहती हैं वहाँ बच्चों को पढ़ते, गरीबों को दवा लेते।" माइती ने उत्साह से कहा।

"हाँ तो ठीक है डाक्टर। लेकिन, शायद तुम नहीं जानते कि और तुम जानो भी कैसे? तुम तो बचपन से इस गाँव में रहे नहीं, आशुदा और मेरा सम्बन्ध ऐसा था, जो सहोदरों में भी ढूँढने पर कहीं मुश्किल से मिलता है। इलाके भर में हमारी राम-लक्ष्मण की जोड़ी मशहूर थी। अनेक बार मैंने आशुदा के साथ रामलीला में लक्ष्मण का पार्ट किया था।"

"जी हाँ!" डाक्टर ने इस रहस्यपूर्ण भूमिका को सुनकर घोष बाबू के चेहरे से कुछ अन्दाज लगाने की कोशिश की। "अब तुमसे क्या छिपाना, अपने ही लड़के हो। मरते समय आशुदा बड़ी तंगी में थे, दवा-दारू का प्रबन्ध मैंने भरपूर किया, पानी की तरह पैसा बहाया, लेकिन मेरी तकदीर ने साथ नहीं दिया, आशुदा हमें छोड़ कर चले गये।" घोष बाबू ने रेशमी चादर की कोर से अपनी आँखें पोंछीं और बोलते गये—"लोक-व्यवहार और लेन-देन का मामला। लड़कों ने भाभी से कागज बनवा लिये। कुछ श्राद्धकर्म में भी तो खर्च करना पड़ा था…। लेकिन उस बेचारी वृद्धा को शायद याद भी न रही! हम रुपये का तकाजा करें और उसका दिल दुखे, यह तो मुझसे न हो सकेगा डाक्टर! लेकिन तुम्हीं बताओ, उस रकम की वसूली का अब एक ही साधन है वह जमीन, जिसे उस वृद्धा ने दयाधर्म की भावना से प्रेरित होकर दान कर दिया है। मेरी भी इच्छा है कि गाँव में बच्चों के लिए स्कूल खुले, गरीब-बेचारों के इलाज का प्रबन्ध हो। मैं भी अब कितने दिन का मेहमान हूँ? आखिर कुछ परलोक के लिए भी तो करना ही चाहिए। तो, मैं उसके लिए दो-चार बीघे जरूर छोड़ दूँगा। कुछ नकद भी दे दूँगा। काम आगे बढ़ेगा तो सरकार भी मदद देगी, और फिर…।"

"लेकिन…।"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं डाक्टर! यह बात पक्की रही। तुम अपने लड़के हो, कुछ जरूरत पड़े तो संकोच न करना, आखिर हम लोग तुम जैसे होनहार युवक की सहायता नहीं करेंगे तो 'हाँ, जरा गाँववालों को समझा देना और उस वृद्धा को भी।" घोष बाबू मुस्कराये, छड़ी सँभाली और चल दिये। डाक्टर की निगाहें ठगी-सी देखती रहीं।

× × ×

घोष बाबू की बातें जिसने सुनीं, उनकी बदनीयती का उग्र विरोध किया। घोष बाबू ने साम, दाम, दण्ड, भेद से काम निकालने की कोशिश की, लेकिन बात न बनी।

स्कूल और अस्पताल के छोटे-छोटे दो कमरे उस जमीन पर बना लिये गये। कच्ची ईंट की दीवालें, गुम्बज से फूस के छप्पर, केले के छोटे-छोटे पौदों से घिरा आँगन, बस, तैयार हो गया गाँव का आश्रम। दुर्गापूजा के दिन उद्घाटन की तैयारियाँ होने लगीं।

× × ×

दुर्गापूजा की तैयारियाँ चल ही रही थीं, सिर्फ एक दिन बाकी था। डाक्टर माइती अपने दवाखाने में बैठा था कि एक लड़का दौड़ता हुआ आया। वह बुरी तरह हाँफ रहा था। बड़ी मुश्किल से अपने को सँभालते हुए उसने कहा, "डाक्टर दा, वे लोग आ रहे हैं…बापरे चार सौ-पाँच सौ होंगे। अब क्या होगा डाक्टर दा… ?"

"कौन आ रहे हैं? क्यों आ रहे हैं? कहाँ आ रहे हैं? तुम इतने परेशान क्यों

भूदान-यज्ञ : सत्याग्रह अंक : ३० जनवरी, '६८

हो रहा है ?" डाक्टर भी घबड़ाया ।

"घोष बाबू के लठैत हमारे इस नये स्कूल और अस्पताल में आग लगाने, हमें लूटने…मैंने अपनी आँखों देखा है ' बापरे ! बन्दूकवाले भी हैं !" लड़के ने जवाब दिया ।

डाक्टर को समझते देर न लगी कि यह घोष बाबू की बदनीयती का अन्तिम वार है । वह सोचने लगा—'क्या करें ?' 'मुकाबिला •?' 'कैसे' •?' 'किनके साथ •?' कुछ क्षणों के लिए जैसे वह जड़ बन गया, फिर कुछ सूझा, बोला, "अनिल तू जल्दी जा ! प्रवीण को साथ लेकर गाँव के युवक, बूढ़े, बच्चे, स्त्रियाँ जो भी मिलें, सबको आश्रम पर इकट्ठा करो । मैं अभी वहाँ पहुँचता हूँ जल्दी करो अनिल ! आज हमारी तुम्हारी, सबकी अग्नि परीक्षा है ! चूक हुई तो गये ।" अनिल दौड़ गया ।

डाक्टर आश्रम पहुँचा । गाँव में यह खबर बिजली की तरह फैल गयी । नव जवानों का खून उबल रहा था, कुल्हाड़ी, गँडासा, बाँस, फावड़ा, जिसको जो मिला वही लेकर दौड़ा ।

"ठहरो !" रास्ता रोकते हुए डाक्टर ने कहा ।

"दादा ! बेफिकर रहो ! आज हम घोष के बच्चे को मजा चखाकर दम लेंगे ।" जोश में सबकी भुजाएँ फड़क रही थीं । आँखें अंगार हो रही थीं । "लेकिन एक भी आदमी हथियार लेकर आगे न बढ़े । अगर किसीने भी हथियार चलाया तो सबसे पहले तुम लोग अपनी आँखों के सामने अपने डाक्टर की लाश देखोगे ।"

"यह क्या कहते हो दादा ! हम लुट जायें ? अपमानित हो जायें, चुपचाप कायर बनकर !" नवीन की आँखें भर आयीं ।

"यह मैंने कब कहा ? हम न लुटेंगे और न अपमानित होंगे, हम उनका मुकाबिला करेंगे । गोद के बच्चे, घर की बहुएँ, बड़ी बूढ़ी माताएँ, लाठी टेककर चलनेवाले बूढ़े, और भय की आग में जल रहे तुम सब लोग एक साथ मिलकर, डटकर ! और जब तक हममें से एक भी जिन्दा रहेगा, घोष बाबू की उन्मत्त सेना विजयी नहीं होगी !" डाक्टर ने भावावेश में कहा ।

लगभग पूरा गाँव जुट गया था । सब लोग निर्वाक् खड़े थे ! डाक्टर कह रहा था, "हम मुकाबिला करेंगे, लेकिन खुद भी उनकी तरह जंगली पशु बनकर नहीं, बल्कि इन्सान बनकर ! हमें मौत का भय नहीं करना होगा वह तो अपने निश्चित समय से ही आयगी ! कौन जाने, हमारी सबकी जिन्दगी दुनिया को एक नयी शक्ति की प्रतीति प्रदान करने के लिए ही बनी हो ?"

लोग सन्न रह गये ! गांधी की कहानी लोगों ने सुनी थी । दो चार ने वह दृश्य भी देखा था कि जवान लड़की-लड़के हाथ में तिरंगा झण्डा लिये 'जय हिन्द' का नारा लगाते आगे बढ़ रहे हैं, सिपाहियों की गोलियाँ उन्हें भून रही हैं, लेकिन जब तक साँस रहती है झण्डा झुकने नहीं पाता ! क्या पुन वे ही दृश्य लौटनेवाले हैं ? किसको पता था कि अंग्रेजी स्कूल में पढ़े लिखे इस डाक्टर के दिल में भी गांधी की बात जमी हुई है !

आश्रम के चारों तरफ लोग कतार में खड़े हो गये । डाक्टर ने कीर्तन गाना शुरू किया ! गाँववालों ने साथ दिया ।

× × ×

"जय बजरंग बली की !"

"अल्ला हो अकबर !"

घोष बाबू की सेना ललकारती हुई चली आ रही थी । डेढ़ सौ शराब की बोतलें और साढ़े सात सौ नकद खर्च किया था उन्होंने । आखिर ७५ बीघे का मामला था । थानेदार को भी अच्छी रकम भेंट कर चुके थे । वह संघर्ष का साम्प्रदायिक दंगे के रूप में रिपोर्ट करने के लिए तैयार था । इसीलिए घोष बाबू ने कुछ मुसलमान भी इकट्ठे किये थे, उन पर दूनी रकम खर्च की थी ! और इतनी तैयारी कर चुकने के बाद इतमीनान से अपनी कोठी की ऊपरी छत पर बैठे थानेदार साहब के साथ हुक्का गुड़गुड़ाते हुए यह दृश्य देख रहे थे ।

उत्तेजित भीड़ आगे बढ़ी, किन्तु सामने देखा तो सब स्तब्ध रह गये ! "क्या इन्हीं पर वार किया जाय ? गाँव के प्रतिष्ठित स्वर्गीय आशु बाबू की पच्चासी वर्षीया धर्म पत्नी पर ? मुसीबत के वक्त बुलाने पर आधी रात को भी हमारे घर दौड़कर जाने वाले उस डाक्टर पर ? उसकी बगल में खड़ी उसकी पत्नी पर ? गोद के नन्हे शिशु पर ? आखिर हथियार किन पर चलायें ? '

क्रोध क्रोध की आग को भड़काता है, लाठी लाठी को उत्तेजित करती है, किन्तु किन्तु खाली हाथ ? नंगे सिर ? आक्रमक की अन्तरात्मा को पुकारते हैं उसके दिल की संवेदना को जगाते हैं उसकी बेहोश इंसानियत को झकझोरते हैं ।

' क्या देखते हो ? आग लगा दो खून कर दो लूट लो !" दल का नायक चिल्लाया और अपना मोटा-सा सोटा घुमाता हुआ आगे बढ़ा । भीड़ कुछ खिसकी गाँव वालों की कतार खड़ी रही ज्यों की त्यों भजन चलता रहा । "हट जा सामने से कायर कमीने !" लेकिन भजन चलता रहा, लोग अपनी जगह अड़े रहे ।

आक्रमणकारियों के पाँव थम गये ! लगा, जैसे इन्होंने आगे बढ़ने से इन्कार कर दिया ! गरदनें झुक गयीं ।

"वापस लौटो !" मरी हुई आवाज में नायक ने कहा ।

× × ×

" गांधी का देश है !" थानेदार के मुँह से बरबस निकल पड़ा ।

× × ×

और डाक्टर भाइनी गाँववालों के साथ आश्रम में लगे गांधीजी के चित्र के सामने खड़ा था । उसकी आँखों से आँसू की धारा बह रही थी । गाँववालों का दिल एक अजीब अनुभूति से भरा हुआ था ! दिन ढल गया था, पक्षियों का कलरव गूँज रहा था !

—अनिकेत

सत्याग्रह : हिंसक प्रतिकार का एक विकल्प

पिछले कुछ वर्षों में भारत के विभिन्न भागों में उपद्रव, हड़ताल और हिंसक प्रदर्शनों की इतनी अधिक घटनाएँ घटी हैं कि वे जैसे नागरिक जीवन की रोजमर्रा की बातें हों। उन घटनाओं से देश की सम्पत्ति की भारी बर्बादी तो हुई ही, इसके साथ-साथ उनके कारण देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था की नींव भी हिल उठी है।

उपद्रवों और हिंसक प्रदर्शनों के पीछे कुछ ऐसी संगठित शक्तियाँ कार्यरत रही हैं, जो इनके द्वारा राजनैतिक सत्ता की प्राप्ति में विश्वास रखती हैं। उन शक्तियों ने इन प्रदर्शनों से कुछ तात्कालिक लाभ भी उठाया, पर कुल मिलाकर इस परिस्थिति ने भारतीय लोकतंत्र के सामने एक प्रश्नचिह्न खड़ा कर दिया है कि क्या इनके चलते देश में किसी भी प्रकार की लोकतांत्रिक व्यवस्था कायम रह सकेगी?

वर्तमान शासन के पास हिंसक उपद्रव के निराकरण का एक ही संवैधानिक मार्ग है—१४४ धारा लागू करके टकराव को टालना और अगर इतने से परिस्थिति पर काबू न हो पाये तो सेना की सहायता से कर्फ्यू लादना। इस संवैधानिक कदम से उपद्रव की स्थिति कुछ समय के लिए भले ही दब जाती हो, लेकिन उसका निराकरण नहीं हो पाता। यह परिस्थिति मौजूदा शासन के सामने एक खतरा और चुनौती बनकर उपस्थित है। संवैधानिक लोकतंत्र के सभी शुभचिन्तकों को इस खतरे की चिन्ता है। शान्तिप्रेमी नागरिक ऐसे उपद्रवों में स्वयं शरीक न हों, सिर्फ इतने से इस चुनौती का सामना नहीं किया जा सकता। और संवैधानिक उपाय तो लगभग नाकाम ही साबित हो रहे हैं। इस प्रसंग में एक बुनियादी सवाल उठता है कि टकराव और उपद्रव की स्थिति उत्पन्न होने का मूल कारण क्या है?

जब किन्हीं परिस्थितियों के कारण समाज की रीति-नीति और संस्थाओं की कार्य-प्रणाली में व्यक्ति की बुनियादी इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो पाती तो उस परिस्थिति में एक प्रकार की टकराहट (कान्फ्लिक्ट) की सम्भावना पैदा हो जाती है। यदि इस तरह की टकराहट को दूर करने का नागरिकों को कोई शान्तिपूर्ण रास्ता नहीं मिलता तो वह परिस्थिति जन मानस में असंतोष और आक्रोश को जन्म देने का कारण बनती है। व्यक्ति के आवेगों को उभाड़कर अपना उद्देश्य साधनेवाली संगठित शक्तियों के लिए ऐसी परिस्थिति सुनहला अवसर बन जाती है। स्वभावतः वे इसका तात्कालिक लाभ उठाकर अपनी सत्ता-प्राप्ति की कामना पूरी करती हैं। अब परिस्थिति का यह प्रश्न उपस्थित होता है कि समाज में दैनंदिन उपस्थित होनेवाली टकराव की परिस्थितियों के निराकरण का क्या कोई शान्तिपूर्ण मार्ग नहीं है? क्या सत्याग्रह इस प्रकार की परिस्थिति का सामना करने का कोई विकल्प दे सकता है?

बुराइयों से टक्कर लेना गांधीजी के सत्याग्रह दर्शन का अविभाज्य (इंटेग्रल) अंग है। गांधीजी ने सत्य के अपने प्रयोगों द्वारा सत्याग्रह के इसी स्वरूप का विकास किया था। इसके द्वारा उन्होंने सामाजिक बुराइयों से जूझने और नयी समाज-व्यवस्था स्थापित करने का सर्वसुलभ उपाय ढूँढ़ा। वस्तुतः सत्याग्रह के रूप में गांधीजी ने विश्व को अहिंसात्मक युद्ध की एक प्रयोग-सिद्ध प्रणाली भेंट की।

गांधीजी की परिकल्पना का सत्याग्रही सच्चाई के प्रकाश को अपने भीतर लेकर अपने जीवन के अँधेरे कोनों को जगमग कर लेता है। सच्चाई के प्रकाश में वह अपना आचरण शुद्ध करता है, ताकि उसके द्वारा किसीका अहित न हो। ऐसा सत्याग्रही दुनिया की बुराइयों का मुकाबिला अपनी जिन्दगी की प्रामाणिक शुद्धता से करता है। समाज में जो कार्य बुराई रूप में माने जाते हैं, उनके खिलाफ वह प्रतिकार या सीधी कार्रवाई का आयोजन करता है। सत्याग्रही अपनी सच्चाई के रास्ते पर चलकर तकलीफ झेलते हुए अपने धीरज और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार द्वारा अपने विरोधी को अपने मत के अनुकूल बना लेने में विश्वास रखता है। सत्याग्रही मानता है कि उसकी सच्चाई, निर्भीकता, और गहरी समझ उसे बुराई का मुकाबला करने की क्षमता और शक्ति देती है, भले ही शुरू में कितनी ही कठिनाइयाँ उसके सामने आयें।

युद्ध का विकल्प

गांधीजी मानते थे कि जब सामाजिक बुराइयाँ प्रत्यक्ष चुनौती बनकर सामने आयें, उस समय अहिंसा-आधारित सीधी कार्रवाई या शान्तिपूर्ण प्रतिकार के विभिन्न तरीके उपद्रव, हिंसक क्रान्ति या युद्ध का विकल्प बन सकते हैं। उन्होंने अहिंसा को एक सिद्धान्त के रूप में स्वीकार करते हुए उसे सामाजिक प्रतिकार के साथ इस तरह मिलाया कि वह टक्कर लेने की एक मौलिक प्रणाली बन गयी—एक ऐसी प्रणाली, जो उनके पहले सामाजिक रूप में किसीको नहीं उपलब्ध हुई थी। उन्होंने सत्याग्रह का कोई सुव्यवस्थित तात्त्विक दर्शन नहीं तैयार किया था। उनके सामने जो व्यावहारिक समस्याएँ उपस्थित होती गयीं उनका उन्होंने सत्य, अहिंसा और समता के बुनियादी सिद्धान्तों के सन्दर्भ में समाधान ढूँढ़ने की कोशिश की। सत्याग्रह उनकी दृष्टि में एक ऐसा साधन था, जिसका आकार या विस्तार से उतना सम्बन्ध नहीं था जितना गुणात्मकता से। वे मानते थे कि सामाजिक टकराव का सामना करने में सत्याग्रही की आन्तरिक शक्ति बाहरी परिस्थिति से कहीं अधिक महत्व रखती है। गांधीजी यह भी मानते थे कि एक नयी सामाजिक और आर्थिक समाज-व्यवस्था की रचना करने के लिए प्रतिकारात्मक या सीधी लड़ाई द्वारा पुराने ढाँचे को ढाहने का काम करना होगा, क्योंकि उसके कारण नये ढाँचे की रचना में बाधा पहुँचती है। इसके साथ-साथ उन्होंने माना था कि अपनी इच्छा से प्रेरित होकर समाज में सतत रचनात्मक कार्य करते रहना सत्याग्रह का बुनियादी अंग

है, क्योंकि ऐसे रचनात्मक कामों से सत्याग्रही की सामाजिक शक्ति बढ़ती है।

सत्याग्रह की व्याख्या

गांधीजी के प्रथम राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह आन्दोलन की सरकारी जाँच करते हुए जब लार्ड हंटर ने गांधीजी से कहा कि वे सत्याग्रह की संक्षिप्त व्याख्या करें तो गांधीजी ने कहा था—"यह ऐसा आन्दोलन है, जो पूरी तरह सच्चाई पर कायम है और हिंसा के उपायों के एवज में चलाया जा रहा है।"[1]

राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्रों में अनेक प्रयोग करके गांधीजी ने सत्याग्रह के दार्शनिक आधारों की खोज की और उस आधार पर सत्याग्रह की कार्यविधि और उसके बुनियादी मूल्यों का निर्धारण किया।

व्यक्तिगत आचरण सम्बन्धी कुछ बुनियादी मुद्दों को गांधीजी ने सत्याग्रह के लिए आवश्यक पाया। कोई सत्याग्रही अपने लक्ष्य में कहाँ तक सफल होगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि वह सत्याग्रह सम्बन्धी उन मुद्दों में कहाँ तक कुशल हो सका है। गांधीजी ने सत्याग्रह के उन बुनियादी मुद्दों को प्रयोग द्वारा प्राप्त किया और बताया कि सत्याग्रही जिस हद तक उन मुद्दों को समझकर कुशलता के साथ उनका सत्याग्रह की कार्यविधि में उपयोग करेगा उसी हद तक उसका सफलता निश्चित होगी। सत्याग्रह के उन आवश्यक मुद्दों को ठीक ठीक न समझ पाने, और यह न पहचान पाने पर कि वे मुद्दे किस प्रकार सत्याग्रही प्रक्रिया के अविभाज्य अंग बन जाते हैं, गांधीजी का सत्याग्रह बाहर से सत्याग्रह जैसा प्रतीत होने पर भी भीतर से पुराने प्रकार के धरने, प्रदर्शन, उपवास या हड़ताल से भिन्न वस्तु नहीं रह जाता।

सत्याग्रह के बुनियादी मुद्दे

गांधीजी का सत्याग्रह-दर्शन यह स्वीकार करता है कि 'हरेक परिस्थिति पर दो परस्पर विरोधी रुखों से विचार किया जा सकता है। प्रत्येक रुख अपने पक्ष को अपने और दूसरे पक्ष को पराये रूप में देखने का आदी होता है। इस प्रकार परिस्थिति में एक प्रकार का दृष्टिभेद उपस्थित हो जाता है। यह दृष्टिभेद उस समय ही मिट पाता है, जब उस परिस्थिति को एक ऐसे नये परिप्रेक्ष में देखने की कोशिश की जाती है, जिसमे देखनेवाले को दोनों रुखों का दर्शन हो सके। इस प्रकार परिस्थिति का विरोध एक ऊँचो वैयम्य स्थिति में पहुँचकर सुलझ जाता है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत गांधीजी ने एक ऐसी विधि ढूंढ निकाली, जिसके द्वारा किसी टकराव की स्थिति में पक्ष और विपक्ष के लोग स्वयं ही नये परिप्रेक्ष का अनुभव कर सकते हैं। गांधीजी की इस विधि में दोनों को अहिंसा के सक्रिय अभ्यास से गुजरना पड़ता है।"[2]

अब तक जो कुछ कहा जा चुका है, उससे यह तथ्य प्रकाशित होता है कि गांधीजी का सत्याग्रह व्यक्ति की सचेतनता का स्थान ले लेता है। इसका यह मतलब नहीं होता कि सत्याग्रही व्यक्ति का अचेतनता से उत्पन्न व्यवहार या धारणाओं के अस्तित्व का अस्वीकार करता है। वस्तुत सत्याग्रही सिर्फ इतना ही मानता है कि आदमी के पास विवेक है, और यह कि वह अपने कामों के कार्यान्वयन में अपने विवेक का उपयोग कर सकता है, इसलिए यदि बुराई मिटाने की किसी अहिंसक पद्धति का विकल्प उसके सामने पेश किया जाय तो उसकी चेतना पर उसका असर हो सकता है।

टकराव की स्थिति सामने आने पर किसी भी सत्याग्रही का पहला काम यह हो जाता है कि वह उस स्थिति की सम्पूर्णता का विश्लेषण करे। वह उस टकराव में अपनी स्थिति की सही भूमिका अवश्य स्पष्ट करे और सम्पूर्ण परिस्थिति के सन्दर्भ में अपना तात्कालिक लक्ष्य भी स्पष्ट रूप से समझ ले। किसी टकराव का सम्बन्ध चाहे जिस स्थिति से हो, उसके समाधान के लिए टकराव की आन्तरिक भूमिका और सत्याग्रही के निर्धारित लक्ष्य का सत्याग्रही को अत्यन्त स्पष्ट बोध होना चाहिए। प्रत्येक सत्याग्रह में टकराव की परिस्थिति को द्वंद्वात्मक परिप्रेक्ष में देखना आवश्यक होता है। टकराव का तात्कालिक लक्ष्य यह होता है कि पक्ष और विपक्ष के परस्पर-विरोधी तत्त्वों को एक ऐसे नये रूप में पुनर्गठित करना कि उनकी नयी स्थिति दोनों के लिए संतोषजनक हो और साथ ही सत्याग्रह का दावा है कि अहिंसा को इस कार्य प्रणाली से मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति करनेवाले ऐसे सत्य का प्रादुर्भाव होता है, जो दो विपक्षियों के बीच परस्पर सन्तोषजनक समाधान के रूप में उपलब्ध होता है।

किसी टकराव में विजयी होना सत्याग्रही प्रणाली का लक्ष्य नहीं है, इस प्राथमिक तथ्य को सत्याग्रही को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। किसी भी टकराव की परिस्थिति में सत्याग्रही का लक्ष्य परस्पर विरोधी दो पक्षों में सामंजस्य स्थापित करना होता है। अत सत्याग्रही की सबसे अधिक चेष्टा यह होती है कि विपक्षी उसकी विचार-सरणी की सच्चाई को समझे। सत्याग्रही जिस समय यह प्रयास करता है, उसी समय वह विपक्षी को इस बात का पूरा-पूरा अवसर देता है कि वह भी अपने विचार की सच्चाई को प्रमाणित करे और सत्याग्रही के दृष्टिकोण को गलत सिद्ध करे। सत्याग्रही हर समय इस बात के लिए तैयार रहता है कि यदि विपक्षी उसे उसकी भूल या भ्रान्ति का बोध करा दे तो वह विपक्षी के मत को अंगीकार कर लेगा। यह स्थिति सर्वांश में या आंशिक रूप में सामने आ सकती है और इसके अनुसार सत्याग्रही अपनी धारणाओं में रद्दोबदल कर सकता है। वह विपक्षी के सामने इस स्थिति को बड़ी ईमानदारी से पेश करता है कि वह एकतरफा हार या जीत का आकांक्षी न होकर दोनों पक्षों के सत्य के सामंजस्य का इच्छुक है। सत्याग्रही का मुख्य उद्देश्य परिस्थिति की नव रचना का होता है। दरअसल वह विपक्षी पर विजय प्राप्त करने के बदले टकराव की परिस्थिति पर विजय पाना चाहता है।

गांधीजी के सत्याग्रह-दर्शन की यह खास विशेषता है कि वह सामाजिक टकराव

[1] "महात्मा" प्रथम खण्ड, ले० डी० जी० तेंडुलकर पृष्ठ : ३४०-३४१

[2] कॉन्फ्लिक्ट रिजाल्यूशन : पृष्ठ १६४

की स्थिति को विकास की एक ऐसी अगली मंजिल पर पहुँचा देता है, जहाँ पहुँचकर विपक्षी को एक नये सत्य का दर्शन होता है कि सत्याग्रह की प्रक्रिया से दोनों पक्षों में से किसीकी हार या जीत नहीं होती।

सत्याग्रही का एक मुख्य गुण यह होता है कि वह विपक्षी के साथ समझौता करने के लिए हमेशा तैयार रहता है, लेकिन वह बुनियादी मुद्दों के मामले में कोई सुलह नहीं करता। हाँ, गैरबुनियादी मुद्दों पर वह समझौता कर लेता है।

सत्याग्रह-प्रणाली में समझौते का स्थान

समझौता सत्याग्रह का आवश्यक तत्त्व है। टकराव की स्थिति पैदा होने पर अहिंसात्मक मनाव की प्रक्रिया द्वारा और कभी प्रतिकारात्मक कार्यक्रम द्वारा यह समझौता सम्पन्न होता है। यह समझौता किसी विवशता का परिणाम न होकर विवेकपूर्ण सामंजस्य का पुरस्कार होता है, क्योंकि कोई भी सत्याग्रही जिस तथ्य को सत्य के रूप में देखता है उसे वह किसी भी परिस्थिति में नहीं छोड़ता। वह विपक्षी के सत्य को भी स्वीकार करने के लिए खुले दिल-दिमाग से तैयार रहता है। इस प्रक्रिया में हो इस बात की सम्भावना समाई हुई है कि कोई पक्ष अपनी मान्यता में स्वयं संशोधन कर ले। लेकिन सत्याग्रही का अहिंसक प्रतिकार उस समय तक जारी रहता है, जब तक टकराव की परिस्थिति सामंजस्यपूर्ण नयी स्थिति में रूपांतरित नहीं हो जाती। इस प्रक्रिया में न तो किसी पक्ष को समझौते के नाम पर झुकना पड़ता है और न अपने सत्य को छोड़ना ही पड़ता है। दोनों को अपने-अपने सत्य के बदले परिस्थितिसापेक्ष सत्य का दर्शन होता है।

सत्याग्रह का द्वन्द्वात्मक रूप

गांधीजी का सत्याग्रह-दर्शन किसी अन्तिम सत्य पर आधारित नहीं है, क्योंकि अन्तिम सत्य नश्वर मनुष्य की पकड़ के बाहर की वस्तु है। अतः गांधीजी का सत्य का आशय वस्तुतः सापेक्ष सत्य से है।

गांधीजी के सामने सत्य एक व्यावहारिक समस्या के रूप में प्रस्तुत था कि वह मानव-जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति किस रूप में कर सकता है। गांधीजी ने देखा कि मानव-समुदाय के लिए ऐसे दल और ऐसे तरीके की जरूरत है, जिससे उसकी सामाजिक माँगों की पूर्ति हो सके और किसी भी परिस्थिति में सत्य (सामाजिक सन्दर्भ में सापेक्ष सत्य) की प्राप्ति सम्भव हो सके।

अहिंसा के द्वारा ही सत्य का साक्षात्कार हो सकता है, यह गांधीजी के सत्याग्रह-दर्शन का सबसे महत्त्वपूर्ण मुद्दा है। सत्य को अहिंसा से अलग नहीं किया जा सकता और सत्य तक पहुँचने और उस पर मजबूती से टिके रहने का उपाय अहिंसा है।

सत्याग्रह का अर्थ ही होता है—सत्य का आग्रह, अतः एक प्रकार से सत्याग्रह को 'सत्य की शक्ति' कहा जा सकता है। यह 'सत्य' क्या है, जिसे गांधीजी ने अपनी प्रमुख कार्य-विधि का मुख्य आधार माना? यह 'सत्य' एक सामाजिक शक्ति कैसे बन जाता है? और मनुष्यों में हित टकराव की परिस्थिति होने पर इसका सत्याग्रही के साथ क्या सम्बन्ध आता है? गांधीजी ने जोर देकर बताया कि टकराव की परिस्थिति में विपक्षी के खिलाफ हिंसा का उपयोग वर्जित है, क्योंकि व्यक्ति पूर्ण सत्य तक पहुँचने में असमर्थ है, इसलिए उसे किसीको सजा देने की पात्रता नहीं हासिल है।[1]

गांधीजी ने यह मान लिया था कि पूर्ण सत्य का दर्शन व्यक्ति को नहीं हो सकता, अतः वे औरों को बार-बार याद दिलाते थे कि चूँकि मनुष्य पूर्ण सत्य का दर्शन करने में असमर्थ है, अतः उसे चाहिए कि जो उससे भिन्न राय या मतभेद रखते हैं उनकी राय को जानने के लिए वह हमेशा अपना दिमाग खुला रखे। क्योंकि यह सम्भव है कि एक व्यक्ति को जो चीज सत्य प्रतीत होती हो वही दूसरे को गलत दिखाई दे।[2] इसीलिए गांधीजी ने कहा कि विपक्षी को धीरज और सहानुभूति के साथ उसकी भूल से अलग करने की कोशिश की जाय, न कि उसके खिलाफ हिंसा का उपयोग हो।

सत्य का साक्षात्कार प्राप्त करने के लिए गांधीजी ने अपने जीवन को सत्य के विभिन्न प्रयोगों की प्रयोगशाला बनाया। अपने इस प्रयास में उन्हें उस साधन की तलाश करनी पड़ी, जिसके जरिये वे पूर्ण सत्य का साक्षात्कार कर सकें। जैसे-जैसे गांधीजी के सत्य के प्रयोग आगे बढ़े, उनके सामने यह तथ्य स्पष्ट होता गया कि सत्य व्यक्ति के लिए सापेक्ष वस्तु है—पूर्ण सत्य का साक्षात्कार मनुष्य को नहीं प्राप्त हो सकता।

अपने सत्य के प्रयोगों के दौरान गांधीजी ने अनुभव किया कि सत्य ही ईश्वर है और सत्य को प्राप्त करने का अहिंसा के सिवा कोई दूसरा साधन नहीं है।

अपने सत्य के प्रयोगों को और आगे ले जाने पर गांधीजी के लिए ईश्वर की धारणा भी स्पष्ट हुई। सन् १९२४ में गांधीजी ने 'यंग इण्डिया' में लिखा—"मैं ईश्वर को आमने-सामने देखना चाहता हूँ। मैं जानता हूँ कि सत्य ही ईश्वर है। मेरे लिए ईश्वर को जानने का एक ही निश्चित साधन है और वह अहिंसा है।"

अब गांधीजी के सामने समस्या आयी कि अगर सत्य ही ईश्वर है और ईश्वर को कुछ लोग एक ढंग का समझते हैं और दूसरे अन्य ढंग का, तब ऐसी स्थिति में कोई व्यक्ति सत्य का साक्षात्कार कैसे करे? परस्पर विरोधी ढंग के कारण जो भ्रम फैलता है, उससे बचकर सत्य को कैसे पहचाना जाय? अपनी सत्य की खोज के इस मुकाम पर पहुँचने पर गांधीजी को दीखा कि सत्य को अहिंसा से अलग नहीं किया जा सकता।

अहिंसा

हिंसा का शाब्दिक अर्थ मारना या चोट पहुँचाना है, अतः अहिंसा का सीधा-सादा शाब्दिक अर्थ है—चोट न पहुँचाना। लेकिन अहिंसा का आशय मात्र चोट न पहुँचाना ही नहीं है। अहिंसा का पूरा आशय है—किसी को चोट पहुँचाने से इनकार करते हुए किया

[1]. "स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑफ म० गांधी"—नटेसन मद्रास, पृष्ठ ५०६

[2]. "टीचिंग्स ऑफ म० गांधी"—जग प्रवेश चन्दर, पृष्ठ ६६४

गया कार्य। गांधीजी ने अहिंसा की इस व्याख्या को और स्पष्ट करते हुए कहा—"जैसा समझा जाता है, अहिंसा वैसी जड़ व्यवहार नहीं है। किसीको चोट न पहुँचाना निश्चित रूप से अहिंसा का एक अंग है। लेकिन यह अहिंसा का छोटा-से-छोटा हिस्सा है। कोई भी बुरा विचार, उतावलापन, झूठ, घृणा और दूसरे का अहित चाहने की इच्छा से अहिंसा को आघात पहुँचता है।"[1] गांधीजी ने कहा—"मैं अहिंसा की जो व्याख्या स्वीकार करता हूँ, वह किसीको चोट न पहुँचाने की नकारात्मक वृत्ति मात्र नहीं है, बल्कि वह सक्रिय प्रेम की एक विधायक वृत्ति है, जो बुराई करनेवाले की भी भलाई करना चाहती है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि मेरी व्याख्या की अहिंसा बुराई करनेवाले को बुराई करने देगी या उसे चुपचाप बरदाश्त कर लेगी। इसके बदले, प्रेम यानी सक्रिय अहिंसा बुराई करनेवाले से अपने को अलग करके उसकी बुराई का प्रतिरोध करेगी, भले ही इसके कारण बुराई करनेवाला चिढ़ जाय या उसे शारीरिक क्षति भी पहुँचे।"[2]

सत्य की खोज के अपने अनुभव का जिक्र करते हुए अहिंसा के सम्बन्ध में गांधीजी ने कहा है—

"बिना अहिंसा के सत्य का ढूँढना और पाना मुमकिन नहीं है। अहिंसा और सत्य एक-दूसरे से इस तरह मिले-जुले हैं कि उन्हें एक-दूसरे से अलग करना लगभग असम्भव है। वे एक सिक्के के दो पहलू जैसे हैं या कहना चाहिए कि वे बिना कुछ अंकित किये हुए धातु के ऐसे सिक्के हैं, जिन्हें देखकर यह पहचानना मुश्किल है कि कौनसा सीधा हिस्सा है और कौनसा उलटा। फिर भी इतना कहा जा सकता है कि अहिंसा साधन है और सत्य साध्य। साधन ऐसा ही होना चाहिए, जो हमारी पहुँच के भीतर हो, इस नाते अहिंसा हमारा मुख्य कर्तव्य है। यदि साधन की फिक्र रखते हैं तो यह तय है कि अपने साध्य तक देर या सबेर पहुँच ही जायेंगे। जब यह बात हमारी समझ में आ जाती है तो आखिरी विजय के बारे में कोई शक नहीं रह जाता।"[3]

यदि मनुष्य को पूर्ण सत्य का साक्षात्कार करना है तो उसका रास्ता विभिन्न लोगों के सत्य दर्शन की जाँच करते हुए ही प्राप्त होगा। विभिन्न लोगों के सत्य-दर्शन की जाँच उस अहिंसा के कड़ाई से पालन करने पर ही हो सकती है, जो किसीको नुकसान पहुँचाने पर आधारित न होकर प्रेम पर आधारित है। क्योंकि अगर सत्य दर्शन के लिए हिंसा का सहारा लिया जायगा तो वह हिंसा विपक्षी के सत्य को ही समाप्त कर देगी। इसलिए अहिंसा ही असली मूल्य है, असली कसौटी है, जिससे किसी सही कार्य-विधि की जाँच हो सकती है। गांधीजी की अहिंसा की इस व्याख्या ने सिर्फ शारीरिक चोट न पहुँचानेवाली अहिंसा का स्तर बहुत ऊँचा उठा दिया।

स्वयं कष्ट-सहन

गतिशील रूप में अहिंसा का अर्थ है—स्वयं कष्ट-सहन। इसका मतलब बुराई करनेवाले की इच्छा के आगे आत्म समर्पण करना नहीं है, बल्कि इसका मतलब होता है कि अन्याय करनेवाले के खिलाफ अपनी पूरी आत्मशक्ति लगा दी जाय। अपनी इस जीवन-निष्ठा के अन्तर्गत काम करते हुए अकेले आदमी के लिए भी यह मुमकिन है कि वह बेइन्साफी के पूरे साम्राज्य को चुनौती दे सके।[4] इस सन्दर्भ में गांधीजी ने प्रेम की एक नयी व्याख्या की। उन्होंने कहा—तपस्या प्रेम की कसौटी है और तपस्या का अर्थ है स्वयं कष्ट-सहन।

योग-विधियों में तपस्या का एक विशेष स्थान है। उसके अन्तर्गत तपस्या किसी विशेष लक्ष्य की प्राप्ति के लिए की जाती है। गांधीजी के सत्याग्रह में स्वयं कष्ट-सहन विपक्षी के नैतिक मनाव के लिए किया जाता है—"स्वयं कष्ट झेलना अहिंसा का निचोड़ और दूसरे के प्रति हिंसा का व्यवहार करने का विकल्प भी है। ऐसा नहीं है कि मैं जिन्दगी की कीमत नहीं समझता। इसलिए सत्याग्रह में खुशी-खुशी हजारों स्वयंसेवकों को अपनी जिन्दगी की कुर्बानी करने देता हूँ, बल्कि मैं ऐसा इसलिए होने देता हूँ क्योंकि मैं जानता हूँ कि कुल मिलाकर इसके नतीजे से कम लोगों की ही जिन्दगियाँ बर्बाद होंगी। और ऊपर से यह भी है कि इससे वे लोग ऊँचे उठते हैं, जो अपनी जिन्दगी निछावर करके दुनिया को नैतिक दृष्टि से आगे ले जाते हैं।"[5]

निर्भयता

गांधीजी के सत्याग्रह में कायरता का स्थान नहीं है। उन्होंने लिखा है—"मैं मानता हूँ कि जहाँ हिंसा और कायरता के बीच एक को चुनना हो, वहाँ मैं हिंसा का चुनाव करने की सलाह दूँगा।"[6] फिर गांधीजी ने जोर देते हुए लिखा है—"अहिंसक आचरण कभी भी व्यक्ति का मानसिक पतन नहीं करता जब कि कायरता से हमेशा यही होता है।"[7]

"जो आदमी मरने से डरता है और प्रतिकार के लिए ताकत नहीं रखता उसे अहिंसा की तालीम नहीं दी जा सकती। एक निरीह चूहे को बिल्ली हमेशा मारकर खा जाती है, इसलिए वह अहिंसक नहीं है। अगर चूहा बिल्ली को खा सकता तो वह जरूर ऐसी कोशिश करता, लेकिन वह हमेशा बिल्ली के सामने से भाग खड़ा होता है। हम चूहे को कायर भी नहीं कहते, क्योंकि कुदरत द्वारा उसे जैसा बनाया गया है वैसी हालत में वह दूसरे ढंग का व्यवहार कर भी नहीं सकता। लेकिन खतरे का सामना होने पर अगर आदमी भी चूहे की तरह भाग खड़ा हो तो उसे कायर कहना ही ठीक है। वह अपने दिल में हिंसा और नफरत रखता

१. "फ्राम यरवदामन्दिर"—म० गांधी पृ० ७
२. "टीचिंग्स ऑफ म० गांधी"
—जगप्रवेश चन्दर, पृष्ठ ४१२
३. "फ्राम यरवदा मन्दिर"—म० गांधी पृष्ठ ८
४. "यंग इंडिया"—११ अगस्त १९२०
५. 'नानवायलेंस इन पीस एण्ड वार', पृष्ठ ४६
६. "यंग इंडिया"—११ अगस्त १९२०
७. "यंग इंडिया"—२१ अक्तूबर १९२९

है और अपने दुश्मन को अगर मार सके तो मारने की भी इच्छा रखता है, बशर्ते खुद उसे चोट न पहुँचे। ऐसा आदमी अहिंसा के लिए अजनबी है।[1]

जिस तरह गांधीजी की अहिंसा में प्रेम और सद्भावना का समावेश है, उसी तरह स्वयं कष्ट-सहन में साहस और निर्भयता का समावेश निहित है। गांधीजी ने कहा है—"हिंसा के प्रशिक्षण में जैसे व्यक्ति को मारने की कला सीखनी पड़ती है उसी तरह अहिंसा के प्रशिक्षण में व्यक्ति को मरने की कला हासिल करनी पड़ती है। अहिंसा के अनुयायी को भय से मुक्ति पाने के लिए ऊँचे-से-ऊँचे दर्जे का बलिदान करने की योग्यता प्राप्त करनी पड़ती है। जिसने हर तरह के भय से छुटकारा नहीं पाया वह अहिंसा की पूर्णता का आचरण नहीं कर सकता।"[2]

सत्याग्रह में व्यक्ति की भूमिका

सत्याग्रह में व्यक्ति की भूमिका का जिक्र करते समय गांधीजी ने कहा कि दुनिया की कोई शक्ति किसी आदमी को उसकी मर्जी के खिलाफ काम करने के लिए मजबूर नहीं कर सकती। सत्याग्रह के जरिये उन्होंने लोगों को वह अनुशासन और तरीका सिखाया, जिससे प्रतिकार एक सक्रिय शक्ति बन सके। स्वयं कष्ट-सहना या अपने को बलिदान के लिए निछावर कर देना सत्याग्रही को ऐसी ही शक्ति प्रदान करता है। गांधीजी के लिए स्वतन्त्रता और अपनी विशिष्टता ऊँचे मूल्य थे। इस प्रसंग में उन्होंने कहा—"किसी गुलाम के बन्धन उसी समय खुल जाते हैं जब वह अपने को एक मुक्त प्राणी समझने लगता है। वह अपने मालिक से सीधे शब्दों में कहेगा—मैं इस क्षण तक आपका गुलाम था, लेकिन अब मैं गुलाम नहीं हूँ। यदि आप चाहते हैं तो मुझे फौरन मार दे सकते हैं।"[3]

सत्याग्रह के रूप में गांधीजी ने हमें अहिंसक प्रतिकार का एक बेजोड़ अस्त्र प्रदान किया और अपने मनन परीक्षण और जीवन से इसे वैज्ञानिक रूप दिया। सत्याग्रह जीवन के प्रत्येक अंग और स्तर को छूता है। यह समस्त जीवन का समाज-विज्ञान है। यह सामाजिक बुराइयों और समस्याओं के निराकरण की ऐसी विधि है, जो उपद्रव, तनाव और संघर्ष की परिस्थितियों में भरोसे के साथ इस्तेमाल हो सकती है।

जब तक समाज में चारों ओर अनीति है, अत्याचार है, दलन है, उत्पीड़न है, घुटन है, दबाव है और समाज नानाविध विषमताओं से ग्रस्त है, तब तक गांधीजी की परिकल्पना का सत्याग्रह और सत्याग्रही मानव की मुक्ति का एक अमोघ सबल है। गांधीजी ने कहा भी है कि यह हथियार अन्यायजनित सभी दुखों को दूर करने में काम आयगा।"[1]

—रुद्रभान

[1] "हरिजन"—२० जुलाई १९३५
[2] "हरिजन"—१ सितम्बर १९४०
[3] "दी महात्मा" भाग ४ तेंदुलकर, पृष्ठ १९९

लक्ष्य और साधन की नैतिकता

सत्याग्रह मूल रूप में मानवीय बन्धुत्व, अहिंसा और पड़ोसी के प्रेम पर आधारित है। अगर मनुष्य गलती करते हैं, तो वह उनकी अनियन्त्रित इच्छाओं, वासनाओं और अदूरदर्शितापूर्ण स्वार्थ के कारण है। विषमतापूर्ण समाज-व्यवस्था के कारण ये बुराइयाँ तीव्र हो जाती हैं। व्यक्ति और समाज दोनों की पारस्परिक क्रिया-प्रतिक्रियाएँ होती हैं। इसलिए दोनों का एक साथ ही इलाज करना चाहिए।

सत्याग्रह की मान्यता है कि कोई भी व्यक्ति या वर्ग ऐसा पतित नहीं है, जिसे ठीक-ठीक व्यक्तिगत और सामाजिक प्रयत्न से न सुधारा जा सके।

सही प्रयत्न घृणा और हिंसा के जरिये नहीं, बल्कि बुद्धि के जरिये, मनोवैज्ञानिक, नैतिक और आध्यात्मिक पुनर्शिक्षण के जरिये होता है।

व्यक्तियों तथा सामाजिक पद्धतियों के प्रति अपनाये गये इस दृष्टिकोण में घृणा और हिंसा को स्थान नहीं है। जहाँ तक सामाजिक पद्धतियों का प्रश्न है, प्राय वे लोग, जो इन्हें चलाते हैं या उनकी मजबूरियों में काम करते हैं, स्वयं आवश्यक रूप से अन्यायी और निर्दयी नहीं होते। वे उन पद्धतियों के उतने ही शिकार होते हैं, जितने वे जो उनके अन्तर्गत कष्ट भोगते हैं।

गांधीजी चाहते थे कि सामाजिक पद्धति के सुधार के लिए काम करने की प्रक्रिया में लोग स्वयं को सुधार लें। इसे करने का सबसे अच्छा तरीका अहिंसक विरोध और रचनात्मक तथा शैक्षणिक काम के जरिये सामाजिक अन्याय से लड़ना और सामाजिक बुराइयों को ठीक करना है।

सत्याग्रह में व्यक्ति और समूह के आचरण में कोई विरोध नहीं होता। दोनों का सजीव रूप से पारस्परिक सम्बन्ध है। एक-दूसरे पर उनकी क्रिया-प्रतिक्रिया होती है, इसलिए सामूहिक क्रियाशीलता ऐसी होनी चाहिए, जो व्यक्ति का नैतिक पतन न करे। अगर ऐसा होना हो, तो व्यक्तिगत जीवन और सामूहिक जीवन, दोनों में लक्ष्य और साधन नैतिक होने चाहिए। अनैतिक साधन व्यक्ति और समूह, दोनों के लिए बुरे कर्मों की रचना करते हैं।

इसका यह अर्थ नहीं है कि सत्याग्रही बुराई का विरोध नहीं करता। वह बुराई का विरोध तो करता है और बहुत जोरों से करता है, लेकिन अनैतिक साधनों को काम में लेकर हिंसा और घृणा की सृष्टि नहीं करता। किन्तु समाज इस प्रकार सम्बद्ध तथा जुड़ा हुआ है कि बुराई का शोधन चाहे कितने ही अहिंसक तरीके और विरोधी के प्रति कितनी ही सद्भावना से किया जाय, उससे कुछ-न-कुछ हानि तो उन व्यक्तियों और वर्गों को होगी ही, जिन्हें उस अन्यायपूर्ण व्यवस्था से लाभ पहुँचा है।

प्रासंगिक कष्टों और ऊपर से दिखाई देनेवाली विरोधी के प्रति जबरदस्ती के लिए सत्याग्रही जिम्मेदार नहीं है। यही नहीं, वह

[1] "इंडियन ओपिनियन" २६ मई १९०६

तो अपने ऊपर कष्ट और पीड़ा को आमंत्रित करता है। उसका मानना है कि अच्छे उद्देश्य के लिए पायी हुई पीड़ा उसे पवित्र बनाती है और तटस्थ व्यक्तियों और अक्सर विरोधियों के दिलों पर भी अनुकूल असर डालकर मनोवैज्ञानिक रूप से प्रभावित करती है। वह एक हद तक विरोधियों के सुधार का भी काम करती है। वास्तव में सत्याग्रही का असहयोग स्वतन्त्र तथा पूर्ण सहयोग के लिए है।

बहुत-से लोगों ने, जो भारतीय स्वाधीनता के आन्दोलन में शामिल हुए, इस भावना से सत्याग्रह नहीं किया। यह सच है, लेकिन इससे सत्याग्रह के प्रेम और अहिंसा के मूलभूत दर्शन शास्त्र में परिवर्तन नहीं होता। अगर हम इसमें अन्य दूसरे विचार घुसेड़ लेते हैं, तो हम गांधीजी के प्रति अन्याय करते हैं, क्योंकि गांधीजी ने ही व्यक्तिगत और समूह के अन्यायों को रोकने के लिए इस हथियार का आविष्कार किया था।

('वगमपथ' पृष्ठ ३७४०)

—आचार्य कृपालानी

बलिदान, हिंसा और अहिंसा

दक्षिण अफ्रिका में सत्याग्रह के द्वारा विजय पाकर जब गांधीजी स्वदेश लौटे तब उन्होंने अहिंसक प्रतिकार की बात देश के सामने रखी। प्रारम्भ में उन्होंने कहा कि करोड़ों भारतीयों के संख्याबल के सामने मुट्ठीभर अंग्रेज हैं। इन्हें हटाने के लिए युद्ध की बात करना हास्यास्पद है। हम ही लोगों ने अपनी कमजोरी के कारण अंग्रेजों को यहाँ रखा है। अगर हमारा निश्चय हो जाय कि अंग्रेजों का राज्य यहाँ नहीं रखना है, तो युद्ध तो क्या, सत्याग्रह की भी जरूरत नहीं रहेगी। सिर्फ एक नोटिस देकर उनको हम हटा सकते हैं।

× × ×

दक्षिण अफ्रिका के जैसे प्रतिकूल देश में, मुट्ठीभर पिछड़े हुए भारतीय मजदूरों को संगठित करके गांधीजी ने गोरों की सरकार के सामने विजय पायी थी। वहाँ के करोड़ों देशवासी बिलकुल पिछड़े हुए थे। अफ्रिका हमारे लिए स्वदेश नहीं था। अफ्रिकावासी लोगों पर जिनका राज्य था वह डच और अंग्रेज पूरे समर्थ और राज्य करने में कुशल थे। तो भी वहाँ पर केवल सत्याग्रह के द्वारा अर्थात् सामूहिक बलिदान के द्वारा—गांधीजी ने ऐसी विजय पायी कि सारी दुनिया चकित हो गयी और देश-देशान्तर की दलित, पीड़ित जनता को आशा के किरण दीख पड़े।

इसीलिए जब गांधीजी भारत में आये तब शस्त्रबल से क्रान्ति करने की इच्छा रखनेवाले भारतीयों ने गांधीजी का कहीं भी विरोध नहीं किया। राष्ट्रीय वृत्ति के लोग उनके झंडे के नीचे आ गये। नरमदल के लोगों ने भी उन्हें आशीर्वाद दे दिया।

और सबसे बड़ी बात तो यह कि हजारों वर्षों तक जो भारत में नहीं थी इतनी राष्ट्रीय एकता गांधीजी ने अपनी सर्वसंग्राहक नीति से खड़ी करके दिखायी।

सैकड़ों वर्षों से जो हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य भारत में था उसे काफी नरम करके भेदनीति कुशल अंग्रेजों की प्रकट और छुपी करतूतों के बावजूद गांधीजी ने सारे राष्ट्र के मुँह से स्वराज्य की माँग पेश की। और सन् १८५७ को सौ साल भी नहीं हुए थे, भारत को आजाद करके दिखाया।

यह चमत्कार कैसे हुआ? गांधीजी ने राष्ट्र की तेजस्विता जाग्रत की। क्षात्रतेज को परिष्कृत किया (चातुर्वर्ण्य के कारण एक ही वर्ण को जिस क्षात्रतेज की जिम्मेदारी थी, उसे समस्त प्रजा के हृदय में जाग्रत किया) और एक-दूसरे की निन्दा करके पक्ष और गुट बनाकर एक-दूसरे को कमजोर करने की भारतीयों की सनातन आदत का अपनी उदारता और कुशलता से मुलझाकर गांधीजी ने पहली दफा भारत में राष्ट्र हृदय की एकता कारगर बनायी।

ऐसा करते गांधीजी ने अपने तत्त्वज्ञान के चार सिद्धान्त भारतीय संस्कृति की बुनियाद में से निकालकर लोक-हृदय के सामने रखे। (१) कूट-कपट, चालबाजी और दगाबाजी का पूरा त्याग करनेवाला सत्य। (२) एक-दूसरे का द्वेष करनेवाली, निन्दा करके प्रसन्न होनेवाली, और परस्पर शक्ति की हत्या करनेवाली, हिंसा का निषेध करनेवाली सात्त्विक तेजस्विता को जाग्रत कर बलिदान का उत्कर्ष बतानेवाली अहिंसा। (३) मानवता, राष्ट्रप्रेम, सेवा और उदारता को हमेशा क्षीण करनेवाली और तमाम शक्ति को निर्वीर्य करनेवाली तथा विलासिता का निषेध करके तपस्या की, बहादुरी की और त्याग की शक्ति बढ़ानेवाला संयम। (४) दलादली चलाकर और क्षुद्र स्वार्थ को सिद्ध करने के लिए राष्ट्रद्रोह करनेवाली चारित्र्य-हीनता को दफना कर त्याग, बलिदान और उदारता को आगे बढ़ानेवाला समन्वयमूलक सहयोग। इन चार राष्ट्रीय सद्गुणों का स्वदेशी के द्वारा परिपोष करके गांधीजी ने सर्व-धर्म-सम भाव को शुरू से मान्य करनेवाली छोटी-सी कांग्रेस को राष्ट्रव्यापी शक्ति बना दिया।

× × ×

गांधीजी के जीवन की तो समाप्ति हुई, किन्तु उनका अवतार-कार्य समाप्त नहीं हुआ। वह तो शुरू ही हुआ। इस नये पौधे को पिछले बीस वर्षों में हम पूरा पोषण नहीं दे सके, यही बात सही है। (१) स्वराज्य के साथ गांधीजी के सर्व-धर्म-समभाव को हमने सम्भाला सही, लेकिन उसे परिपुष्ट करने के लिए हमने आज तक कुछ नहीं किया। (२) स्वराज्य पाने के लिए जो सत्याग्रही बलिदान की शक्ति गांधीजी ने खड़ी की थी, उसीको आगे बढ़ाने के लिए हम लोगों ने कुछ नहीं किया। नाम लेने के लिए शान्ति-सेना का अवश्य प्रारम्भ तो किया, किन्तु उसके पीछे स्वराज्य सरकार या स्वराज्य का आनन्द चखनेवाली जनता ने अधिक भी उत्साह नहीं बताया।

—काका कालेलकर

भूकम्प के बीच ज्वालामुखी

आज समाज की जो रचना है, उसीमें अन्याय निहित है और उसीके खिलाफ यह ग्रामदान-आन्दोलन है। जब तक समाज की रचना नहीं बदलेगी, तब तक उसमें दोष जो 'इन्हेरेण्ट' (स्वभावगत) हैं, उनको 'टालरेट' (सहन) करना होगा। समझना होगा कि समाज की रचना ही दोषपूर्ण है। वह रचना ही बदले, इसके लिए जोरदार आन्दोलन करने की जरूरत है। हमने तूफान की बात उठायी। हमारे दुखायल ने गाया है न :

"धरती पर तूफान मचेगा, दीप अमन का बुझ जायगा,
छायेगा अन्धकार, छोड़ो अब भूमि-अधिकार!"

भूमि-अधिकार छोड़ो, वरना अमन का दीप बुझ जायगा और धरती पर तूफान मचेगा। तो हमने 'तूफान' शब्द ले लिया। हम कहते हैं

"धरती पर तूफान जगाओ, दीप अमन का उज्ज्वल होगा,
फैलेगा उजियार, दे दो अब भूमि अधिकार।"

तो तूफान खड़ा करना है। हम चाहते हैं कि चारों तरफ भूकम्प हो और हम बीच में ज्वालामुखी की तरह हों, श्मशान के शिव की तरह नहीं।

—विनोबा

बिहारदान-अभियान : राष्ट्रीय पुरुषार्थ का विषय

सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति के लिए बड़े संतोष का विषय है कि बलिया-सम्मेलन में घोषित ग्रामदान प्राप्ति का लक्ष्यांक पूरा हुआ। इतना ही नहीं, बल्कि आन्दोलन ग्रामदान और प्रखण्डदान से भी आगे बढ़कर जिलादान तक पहुँच गया है। दरभंगा और तिरुनेलवेल्ली के दो जिलों का दान तो पूरा हो ही चुका है। इस दिशा में जो प्रयत्न हो रहा है, उससे विश्वास होता है कि अगले कुछ महीनों में यह संख्या काफी बढ़ेगी। इस बीच विनोबाजी ने 'बिहारदान' का आवाहन किया है, वह सर्वोदय आन्दोलन का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और उत्साहप्रद कदम है। प्रबन्ध-समिति मानती है कि जिलादान के बाद राज्यदान अहिंसक क्रान्ति के आरोहण में स्वाभाविक अगला कदम है, जहाँ पहुँचकर राज्य पर लोकनीति का निर्णायक प्रभाव पड़ेगा तथा क्रान्ति के अन्य आयाम स्पष्ट रूप से प्रकट हो जायेंगे। बिहार के कार्यकर्ताओं ने बिहारदान का कार्यक्रम उठा लिया है, यह संतोष का विषय है। समिति बिहार के साथियों को विश्वास दिलाती है कि उनका निर्णय पूरे आन्दोलन का निर्णय है, जिसकी पूर्ति के लिए हर सम्भव सेवा और सहायता उपलब्ध कराने में समिति तत्पर रहेगी। समिति को आशा है कि देश के सभी भागों और विभिन्न प्रवृत्तियों में लगे हुए सभी रचनात्मक कार्यकर्ता साथी क्रान्ति के इस अभियान में बिहार के निर्णय द्वारा प्रस्तुत होनेवाले ऐतिहासिक अवसर का महत्व महसूस करेंगे, तथा इस अभियान को राष्ट्रीय पुरुषार्थ का विषय मानकर अपना योगदान देंगे।

बुनियादी जीवन-मूल्यों के संरक्षणार्थ : शान्ति-सेना

देश में लोकशक्ति की अभिव्यक्ति की दृष्टि से सुलभ ग्रामदान, ग्रामाभिमुख खादी तथा शान्ति-सेना के त्रिविध कार्यक्रम का ऐतिहासिक महत्व है। ग्रामदान-तूफान के फलस्वरूप प्रखण्डदान तथा जिलादान की उपलब्धि एवं बिहार के प्रेरणाप्रद संकल्प ने अहिंसक क्रान्ति की व्यूह-रचना में एक नया आयाम जोड़ दिया है। प्रान्तदान जैसा ऊँचा लक्ष्य प्राप्त करने के लिए व्यापक जन-आन्दोलन की आवश्यकता है। और स्पष्ट है कि सुदृढ़, व्यापक और संगठित शान्ति-सेना इस आन्दोलन को जन-आन्दोलन का स्वरूप दे सकती है।

यद्यपि आन्दोलन को वर्तमान ऊँचाई तक पहुँचाने का मुख्य श्रेय रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं का शान्ति-सैनिक की भूमिका को है, तथापि शान्ति-सेना के विधिवत् संगठन पर जितना ध्यान दिया जाना चाहिए था, नहीं दिया गया है। आज देश में बढ़ती हुई हिंसा, अशान्ति तथा स्थिति-स्थापकता की समस्या को सुलझाने, तरुणों तथा नगर-जीवन में सर्वोदय-विचार के प्रवेश के लिए तथा लोकतन्त्र, स्वातन्त्र्य और सर्वधर्म-समभाव के बुनियादी जीवन-मूल्यों के संरक्षण के लिए शान्ति-सेना के संगठन पर विशेष जोर देने की आवश्यकता है और इस ओर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए।

सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति समस्त रचनात्मक संस्थाओं, शिक्षण-संस्थाओं एवं विश्व-विद्यालयों, समाजसेवी संगठनों तथा प्रान्तीय सर्वोदय मंडलों से आग्रहपूर्वक निवेदन करती है कि वे देश में शान्ति-सेना के व्यापक संगठन के लिए देश के नगरों में तरुण-शान्ति सेना तथा ग्रामों में ग्राम शान्ति-सेना के संगठन पर जोर दें तथा शान्ति की शक्ति को संगठित करने के लिए एकाग्रता तथा सातत्यपूर्वक प्रयास करें।

इसके साथ ही प्रबन्ध समिति यह भी अपेक्षा करती है कि प्रदेशों में धाम्य कार्यकर्ता शान्ति-सेना के काम में पूरा समय दें तथा हर प्रदेश कम-से-कम एक जिले में ग्राम शान्ति-सेना के व्यापक संगठन का प्रयास करें।

(दिनांक २१-२२ जनवरी, १९६८ को वाराणसी में सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक में स्वीकृत)

ग्राम-स्वराज्य का पंचशील

- गाँव एक स्वायत्त इकाई
- ग्रामसभा द्वारा आयात-निर्यात का निर्णय
- दल-मुक्त प्रतिनिधित्व
- 'न्याय' की तरह स्वतन्त्र 'शिक्षा'
- पुलिस-अदालत-मुक्त समाज

गांधी-शताब्दी तक प्रान्त-दान की तैयारी

गांधी-जन्म शताब्दी के सन्दर्भ में उत्तर-प्रदेश का नेतृवर्ग इस कार्यक्रम पर विचार कर रहा है कि किस प्रकार सन १९६९ तक ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का सन्देश उत्तर प्रदेश के ११० हजार ग्रामों तक पहुँचाया जाय।

इसी दृष्टि से आगरा, मैनपुरी, मथुरा, अलीगढ़, एटा की अभियान-शृंखला में एटा जिले की जलेसर तहसील में एवं निधौली ब्लाक में राजस्थान, पंजाब, हरियाना, हिमाचल तथा उत्तर-प्रदेश के १७० कार्यकर्ताओं ने जनवरी १६ से २१ तक गाँव-गाँव और व्यक्ति-व्यक्ति तक पहुँचकर ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का सन्देश सुनाया। फलस्वरूप क्षेत्र के २५६ ग्रामों का ग्रामदान घोषित हुआ। क्षेत्र में जनमानस पर अभियान का उत्साहवर्धक प्रभाव पड़ा है। उल्लेखनीय है कि प्रान्त के सभी रचनात्मक संस्थाएँ इस कार्यक्रम के महत्व को समझकर इसमें जुट रही हैं। अभियानों का खर्च स्थानीय जनता के सहयोग से पूरा होता है।

शीघ्र ही बुन्देलखण्ड के चारों जिलों में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य अभियान-शृंखला आरम्भ कराने की योजना बनायी जा रही है।

—लक्ष्मीन्द्र प्रकाश, संयोजक
मेरठ व आगरा मण्डलीय ग्रामदान प्राप्ति समिति,
श्री गांधी-आश्रम, मुजफ्फरनगर (उ० प्र०)

बिहार-दान की व्यूह-रचना

११ सितम्बर १९६५ को बाबा बिहार आये और उसके बाद १९ दिसम्बर तक बिहार के विभिन्न भागों की तूफान-यात्रा का एक दौर समाप्त हुआ। आगे का कार्यक्रम बनाने के लिए ३, ४ एवं ५ जून १९६६ को बिहार के ग्रामदान-कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन विनोबाजी के सान्निध्य में सर्वोदय आश्रम रानीपतरा में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। चर्चा के निष्कर्ष के रूप में प्रो० रामजी सिंह द्वारा एक निवेदन सम्मेलन के समक्ष उपस्थित किया गया, जिसमें प्रखण्ड-दान एवं अखण्ड ग्रामदान-प्राप्ति पर बल दिया गया और यह घोषणा की गयी कि जब तक बिहार का हर गाँव ग्रामदान में शामिल नहीं हो जाता है, तब तक इस कार्य में पूर्ण सातत्य और निष्ठा के साथ लगे रहेंगे। अप्रत्यक्ष रूप से वह 'बिहार-दान' का प्रथम संकल्प था, जब कि उस समय तक एक ही प्रखण्डदान हुआ था। उस सम्मेलन के बाद दरभंगा जिले की यात्रा का कार्यक्रम बना। बाबा को यह मंजूर हुआ और बाबा ने यह स्पष्ट किया कि बिहपुर या पूसा का प्रयास वस्तुतः बिहार-यात्रा का ही अभिन्न अंग है, जिसका एकमात्र लक्ष्य है—बिहारदान।

२० दिसम्बर '६६ को इन्दिरा गांधी पूसा रोड पहुँची। विनोबा से बातचीत के बाद इन्दिराजी आम सभा के लिए पूसा गयी। वहाँ उनका स्वागत करते हुए तत्कालीन मुख्य मन्त्री श्री कृष्ण बल्लभ सहाय ने कहा कि अब बाबा बिहारदान की बात कहते हैं। इसके लिए प्रयास किया जा रहा है, और यह होकर रहेगा। बाबा को मुख्य मन्त्री के इस भाषण का जब पता चला तो बाबा ने कहा, "श्री कृष्ण बल्लभ सहाय हवा में उड़नेवाले व्यक्ति नहीं हैं, जमीन पर चलनेवाले व्यावहारिक व्यक्ति हैं। अतः जब वे बिहारदान की बात करते हैं तो समझना चाहिए कि यह असम्भव नहीं है।" बिहारदान के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष रूप से यह प्रथम घोषणा थी।

सन् १९६६ की बरसात बिहार को धोखा दे गयी। फलतः सारा बिहार एक अभूतपूर्व सूखा के चपेट में आ गया। सर्वप्रथम श्री जयप्रकाश नारायण ने बिहार के सिर पर आनेवाली भयंकर विपत्ति को महसूस किया और समर्पण कर दिया अपने को सूखा से लड़ने के लिए। बिहार-रिलीफ-कमेटी का गठन किया गया। देश-विदेश की संस्थाओं तथा कार्यकर्ताओं का आह्वान किया गया। बिहार के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं तथा संगठनों ने भी अपना प्रथम कर्तव्य इस विपत्ति का मुकाबिला करना ही माना, फलतः एक साल के लिए ग्रामदान का काम रुका, किन्तु इस बीच भी दरभंगा जिले में, तथा उत्तर बिहार के कुछ जिलों में, जहाँ सूखे की भयंकरता दक्षिण बिहार के मुकाबिले कम थी, प्रखण्डदान का काम होता रहा और दरभंगा का जिलादान तथा दरभंगा के अलावा अन्य जिलों में दिसम्बर १९६८ तक कुल ६६ प्रखण्डदान हुए।

९ दिसम्बर '६७ को बिहार-ग्रामदान-प्राप्ति-समिति की बैठक बाबा के सान्निध्य में श्री जयप्रकाश नारायण की अध्यक्षता में लक्ष्मीनारायणपुरी पूसा रोड में हुई। उस बैठक में बाबा ने आज की परिस्थिति का दिग्दर्शन कराते हुए २ अक्तूबर '६८ तक बिहार-दान करने के संकल्प की आवश्यकता की ओर संकेत किया। श्री जयप्रकाश नारायण ने बाबा से हुई उनकी बातों का हवाला देते हुए उपस्थित मित्रों को बताया कि यद्यपि वे बाबा के एक साल में बिहार-दान की राय से सहमत हैं, किन्तु विदेश-यात्रा के कारण वे साढ़े तीन महीने अनुपस्थित रहनेवाले हैं, इसलिए अपनी ओर से साथियों को संकल्प लेने के लिए कहने में संकोच अनुभव करते हैं, फिर भी सारी बातों को ध्यान में रखते हुए उन्होंने प्राप्ति-समिति से २ अक्तूबर तक बिहार-दान करने का निर्णय लेने की अपील की। उक्त बैठक में बिहार के अन्य नेताओं के अलावा राज्य के भूतपूर्व मुख्य मन्त्री श्री विनोदानन्द झा एवं तत्कालीन उप-मुख्यमंत्री श्री कर्पूरी ठाकुर भी उपस्थित थे। उन्होंने भी श्री जयप्रकाश नारायण की राय से अपनी सम्मति प्रकट की। उसी बैठक में प्रो० रामजी सिंह ने बिहार-दान की एक व्यूह-रचना प्रस्तुत की। उस पर से उस दिन की बैठक में, और पुनः ११ जनवरी '६८ को हुई बिहार-ग्रामदान-प्राप्ति-संयोजन-समिति की बैठक में विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया गया। तय हुआ कि हर जिले में राजनैतिक पक्षों, संस्थाओं के प्रतिनिधियों, अन्य सहयोगी मित्रों की बैठक बुलायी जाय तथा उक्त बैठक में २ अक्तूबर '६८ तक जिला-दान करने की एक ऐसी योजना तैयार की जाय, जिसमें कार्यकर्ता एवं अभियान-खर्च के लिए अर्थ जिले में प्राप्त करने की बात हो। इस प्रस्ताव के अनुसार अधिकांश जिलों में योजनाएँ बन चुकी हैं। पूर्णिया जिलादान के करीब है। मुंगेर में १५ अगस्त तक जिला-दान का निर्णय लिया गया है। मुजफ्फरपुर में भी काफी काम हो चुका है।

२३ जनवरी को सभी जिलों की प्राप्ति-समिति एवं सर्वोदय-मण्डल के प्रतिनिधियों, रचनात्मक एवं अन्य स्वयंसेवी संस्थाओं के प्रतिनिधियों की बैठक पटना में बुलायी गयी, जिसमें बिहारदान का संकल्प घोषित हुआ।

विनोबाजी के सान्निध्य में सभी राजनैतिक पक्षों के प्रतिनिधियों की बैठक बिहार-दान में उनकी सहायता में वेग देने के उद्देश्य से राजगृह में ३-४ फरवरी को की जा रही है।

बिहार के सभी विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों, शिक्षा-निदेशकों, जिला शिक्षा-पदाधिकारियों की बैठक राजगृह में विनोबाजी के सान्निध्य में बुलायी जानेवाली है। कुछ दिनों के बाद, जब जिलों में काम प्रारम्भ हो जायगा, तब सभी जिलों के जिलाधिकारियों एवं सरकार के सभी विभागों के सचिवों की बैठक भी बुलायी जायगी।

जिलों में जिलादान-अभियान के सिलसिले में कार्यकर्ता तैयार करने एवं उन्हें प्रशिक्षण देने के हेतु जिला-स्तर की गोष्ठियाँ बुलायी जायेंगी।

ग्रामदान, प्रखण्डदान, जिलादान एवं→

भूदान-यज्ञ : सत्याग्रह अंक। ३० जनवरी, '६८

बिहार में

माह दिसम्बर, '६७ तक का

जिला	ग्रामदान			प्रखण्ड-दान			गठित ग्राम-सभा		
	गत माह तक	चालू माह में	कुल	गत माह तक	चालू माह में	कुल	गत माह तक	चालू माह में	कुल
पूर्णिया	४,१७१	—	४,१७१	२२	२	२४	६६२	—	६६२
सहरसा	४६७	—	४६७	१	१	२	४२	—	४२
भागलपुर	४४८	—	४४८	३	—	३	२७	—	२७
संथाल परगना	८३५	—	८३५	१	—	१	—	—	—
मुंगेर	१,५५८	६०	१,६१८	९	१	१०	१८	—	१८
दरभंगा सदर	—	—	—	—	—	—	१९०	४९	२३९
मधुबनी	३,७२०	—	३,७२०	४४	—	४४	१२०	—	१२०
समस्तीपुर	—	—	—	—	—	—	१८७	—	१८७
मुजफ्फरपुर	१,२६८	१६१	१,४२९	१२	२	१४	९०	—	९०
सारण	५८५	—	५८५	३	१	४	६८	—	६८
चंपारण	२४०	—	२४०	—	—	—	५७	—	५७
पटना	२५	—	२५	—	—	—	२३	—	२१
गया	१,१२९	—	१,१२९	—	१	१	१७	—	१७
शाहाबाद	१०३	—	१०३	१	—	१	—	—	—
पलामू	६१८	—	६१८	४	—	४	४५	६	५१
हजारीबाग	८८५	२७	९१२	२	१	३	४	१६	२०
रांची	४४	—	४४	—	—	—	—	—	—
धनबाद	२७३	—	२७३	१	—	१	३०	—	३०
सिंहभूमि	१९९	२३	२२२	१	—	१	२१	—	२१
कुल :	१६,५६८	२ १	१६,८३९	१०४	९	११३	१,६३१	७१	१,७०२

→बिहारदान सम्बन्धी 'फोल्डर' एवं 'पोस्टर' छपवाये जायेंगे। ग्रामदान के विचार प्रचार की दृष्टि से मैजिक लालटेन से गांव-गांव में चित्र दिखाये जायेंगे।

जिला-स्तर पर जिला ग्रामदान-प्राप्ति-समितियों को पुनर्गठित किया जायगा।

जिलों को बाबा की उपस्थिति से प्रेरणा और गति मिले, इसलिए निर्णय किया गया है कि बाबा सभी जिलों में करीब तीन सप्ताह रहें।

२ अक्तूबर तक बिहार-दान के लक्ष्य को पूरा करने के लिए करीब-करीब १५ लाख रुपये की आवश्यकता होगी। इसका संयोजन करने के लिए एक उपसमिति गठित की गयी है।

—वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी

बिहार-दान : जनक्रांति का मौलिक मार्ग

विनोबाजी की उपस्थिति में बिहारदान का संकल्प

विनोबाजी मुजफ्फरपुर से गत २२ जनवरी को पटना पहुंचे और २३ व २४ तारीख को पटना में बहुत व्यस्त कार्यक्रम रहा। वे ३० तारीख तक पटना रहेंगे, ३१ को राजगृह के लिए रवाना होंगे।

२३ तारीख को सुबह बिहार राज्य पंचायत-परिषद् और सहकारिता संघ की सम्मिलित बैठक श्री बिनोदानन्द झा की अध्यक्षता में हुई। 'बिहार-दान' २ अक्तूबर, '६८ तक करने के काम में पूरी सहायता देने का संकल्प इस बैठक में किया गया।

दोपहर में बिहार प्रदेश की रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं की वृहद् बैठक हुई, जिसमें सभी संस्थाओं ने 'बिहारदान' के संदर्भ में पूरी सहायता देने का निश्चय किया। दोनों सभाओं में विनोबाजी थोड़े समय के लिए उपस्थित रहे, और इन निश्चयों का स्वागत किया।

अपने भाषण में विनोबाजी ने कहा, "यह गंगा-यमुना का संगम है। पंचायत परिषद् गंगा है और सहकारिता-संघ यमुना। लोग बार-बार कहते हैं कि ग्रामदान हो जाने के तुरन्त बाद निर्माण का भी काम शुरू हो जाना चाहिए, जिससे उस गांव का तथा आसपास के गांवों के लोगों पर अच्छा असर पड़े और काम में गति आये। लेकिन

ग्रामदान-प्राप्ति

प्रगति-प्रतिवेदन

पुष्टि हेतु गाँवों के तैयार कागजात			पुष्टि-पदाधिकारी के पास दाखिल कागजात			अभिपुष्टि गाँवों की संख्या			
गत माह तक	चालू माह में	कुल	गत माह तक	चालू माह में	कुल	गत माह तक	चालू माह में	कुल	अन्य
१४२	—	१४२	३७०	—	३७०	१०	—	१०	नवम्बर
९	—	९	—	—	—	—	—	—	नवम्बर
४	—	४	—	—	—	—	—	—	अक्तूबर
१३२	१२	१४४	१३२	—	१३२	१०	१०	२०	दिसम्बर
४२	३	४५	—	—	—	—	—	—	"
३५	२९	६४	६	३	९	—	—	—	"
३०	—	३०	२१	—	२१	—	—	—	अक्तूबर
१८७	—	१८७	१६७	—	१६७	५३	—	५३	"
३८	३	४१	१८	३	२१	—	—	—	दिसम्बर
१४	—	१४	—	—	—	—	—	—	नवम्बर
४५	४	४९	—	—	—	—	—	—	दिसम्बर
१३	—	१३	—	—	—	—	—	—	अक्तूबर
७	—	७	—	—	—	—	—	—	दिसम्बर
१७	—	१७	—	—	—	—	—	—	अक्तूबर
४	४	८	—	—	—	—	—	—	दिसम्बर
—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
—	—	—	—	—	—	—	—	—	अगस्त
१०	—	१०	—	—	—	—	—	—	नवम्बर
१४	—	१४	—	—	—	—	—	—	दिसम्बर
११७३	५५	१२२८	७१४	६	७२०	७३	१०	८३	

—कैलाश प्रसाद शर्मा, सहमन्त्री, बिहार ग्रामदान-प्राप्ति संयोजन समिति

यह 'न्यूक्लीयर-एज' (आणविक-युग) है। जमाने की माँग है कि जल्द-से-जल्द काम हो इसलिए दो साल-तीन साल नहीं, बल्कि २ अक्तूबर,'६८ तक पूरे राज्य को ग्रामदान में लाने का जो निश्चय किया गया है उसका विशेष महत्व है। सन् १९७२ में आगामी चुनाव आनेवाला है। सन् '६८ तक एक पूरा प्रदेश ग्रामदान में आ जाता है, तो आगे के ३ साल में ग्रामदान-विचार का प्रभाव आनेवाले चुनाव पर, और शासन पर दिखाई देगा।"

"हमने स्वराज्य का नारा लगाया तब गांधीजी ने उसकी व्याख्या की—स्वराज्य यानी गलतियाँ करने का अधिकार। वैसे ग्रामदान यानी ग्राम स्वराज्य है, और गाँववालों को गलती करके सुधरने का और अपने बल पर आगे बढ़ने का शिक्षण ग्रामदान के कारण मिलनेवाला है।"

शाम को साढ़े चार बजे गांधी-मैदान में एक विराट सभा हुई। इस सभा में विनोबाजी ने दो-तीन मिनट में आशीर्वादात्मक भाषण देकर विदा ली। मुख्य मन्त्री श्री महामाया बाबू ने बड़े जोश के साथ ऐलान किया कि—"राज्य के मुख्य मन्त्री की हैसियत से ही नहीं, बल्कि राज्य के एक नम्र सेवक की हैसियत से मैं घोषणा करता हूँ कि जब तक शरीर में प्राण है तब तक ग्रामदान के काम के लिए विनोबाजी के चरणों में अपनी सेवा अर्पित करता रहूँगा।"

शेख साहब ने देश की गिरती हालत का जिक्र करते हुए आह्वान किया कि समझाने और मुहब्बत के रास्ते से ही सारे मसले हल करने चाहिए।

जयप्रकाशजी ने काफी देर तक ग्रामदान की आवश्यकता और प्राथमिकता पर प्रकाश डालते हुए अन्त में कहा, "हम लोग न मैदान से भागे हैं, न क्रान्ति के काम से मुड़े हैं, बल्कि जन-शक्ति जागृति करने के क्रान्ति-कार्य में पूरी शक्ति के साथ लगे हैं। सरकार कानून से कोई मौलिक परिवर्तन इस देश में करने की हिम्मत नहीं रखती है, चाहे वह कम्युनिस्ट सरकार हो, चाहे संयुक्त-दल की सरकार हो, क्योंकि उनका अपना तख्ता पलट जाने का डर है। देश को बनाने में सरकार का हिस्सा जरूर है, लेकिन वह छोटा है, जनता की ताकत ही बड़ा हिस्सा है।"

(विशेष प्रतिनिधि द्वारा)

मुजफ्फरपुर में ४ नये प्रखण्डदान

● जिला सर्वोदय मण्डल के मन्त्री श्री बद्रीनारायण सिंह की सूचनानुसार मुजफ्फरपुर से विनोबा की विदाई के समय दिनांक २१ जनवरी '६८ को कांटी, गायघाट, रीगा और रुन्नीसैदपुर प्रखण्डों का दान घोषित किया गया। इन प्रखण्डों का अभियान क्रमशः सर्वश्री गया प्रसाद चौधरी, कमवीर सिंह, सत्यनारायण सिंह और राजकिशोर प्रसाद के अभिक्रम से सफल हुआ। प्रखण्डदान-प्राप्ति का विवरण निम्न प्रकार है :

प्रखण्ड	कुल जनसंख्या	ग्रामदान में शामिल	कुल ग्राम	ग्रामदान में शामिल
कांटी	१,३७,२५४	१,१६,२५०	१७६	१७६
गायघाट	६६,७७८	७४,६७५	८६	८१
रीगा	—	—	—	अप्राप्त
रुन्नीसैदपुर	१,४३,०६२	१,११,६२४	१०२	१०२

● श्री निर्मलचन्द्र, मन्त्री, बिहार भूदान-यज्ञ कमेटी के अभिक्रम से, और संयोजन में बोधगया के पास भूदान-अदाता किसानों का एक भूमि-सेना शिविर आयोजित हो रहा है, जो १२ फरवरी तक चलेगा। शिविर में प्रदेश के हर जिले से अदाता-किसान जुलूस बनाकर अपने जिला की सीमा तक पदयात्रा करते हुए आयेंगे, उसके बाद वाहन से बोधगया पहुँचेंगे। उनके साथ 'भूमि-सेना' 'बिहारदान' आदि के घोष-फलक होंगे। शिविर में दाता किसानों को भी समय-समय पर आमन्त्रित करने की योजना है। दाता-अदाता किसानों में मधुर सम्बन्ध बनाने और भूदान किसानों को संगठित तथा जागृत कर उन्हें 'भूमि-सैनिक' बनाने का यह एक बड़ा प्रयोग होगा।

उत्तर प्रदेश में तूफान अभियान

● बलिया जिले का एक-तिहाई भाग ग्रामदान में शामिल हो गया है। १३ जनवरी '६८ को बांसडीह तहसील का दान पूरा हुआ। अब बलिया सदर तहसील में अभियान चालू है। पूरी उम्मीद है कि २ अक्तूबर '६८ तक बलिया का जिलादान हो जायगा।

● एटा जिले में १४ से २१ जनवरी '६८ तक चलाये गये ग्रामदान अभियान में कुल २०५ ग्रामदान प्राप्त हुए। अभियान ३ प्रखण्डों में चला। ५५ टोलियों में बँटकर १६६ कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

● वाराणसी जिले का पहला प्रखण्ड दान 'चहनिया' २५-१६८ को घोषित हुआ। कुल १३५ गाँवों में से १२१ ग्रामदान हुए। अब उत्तर प्रदेश में कुल १८ प्रखण्डदान ३०४६ ग्रामदान हो गये।

(श्री कपिल भाई के पत्रों से)

● मीरजापुर में ३ से १८ जनवरी '६८ तक हुई ग्रामदान-यात्रा में कुल १६ ग्रामदान प्राप्त हुए। यात्रा का क्रम म्योरपुर प्रखण्ड में २१ से २६ जनवरी तक चला।

—दत्तादीन

एक अत्यावश्यक सूचना

'भूदान-यज्ञ' के इस सत्याग्रह अंक के बाद पूर्व सूचनानुसार अगला अंक ६ फरवरी '६८ को प्रकाशित होगा। चूंकि विशेषांक 'गाँव की बात' परिशिष्टांक सहित ६४ पृष्ठ का है, इसलिए अगले दो अंक ६ तथा १६ फरवरी '६८ के ८-८ पृष्ठों के ही होंगे।

—सम्पादक

सूतांजलि से श्रद्धांजलि

खादी और चरखा गांधीजी के लिए वस्त्र और संगठन मात्र नहीं था। वह सभी भारतीय हृदयों को प्रेम और सहानुभूति के धागे में बाँधने के सूत्र की खोज थी। उसके द्वारा अकिंचन भी श्रीमन्तों की बराबरी में निःसंकोच बैठ सकता था। मानव मानव की एकता के प्रतीक का सूक्ष्म विचार का दर्शन उसमें था। सूत्रयज्ञ के बिना वह किसी भी दिन रात्रि में विश्राम नहीं करते थे। कताई की क्रिया में ही व्यक्त रूप से ही उनका राम-स्मरण चलता था। इसी व्यापक कल्पना और विचार को ध्यान में रखकर विनोबाजी ने उनके प्रति श्रद्धा प्रदर्शित करने के लिए भारत के सभी नर-नारियों से अपेक्षा की कि १२ फरवरी को जब गांधीजी की श्राद्ध तिथि प्रति वर्ष आया करे, उस समय सब लोग अपने हाथ से काता हुआ एक गुण्डी सूत अर्पित किया करें अतएव उनकी पवित्र स्मृति में उल्लास और श्रद्धापूर्वक हरेक व्यक्ति को अपने हाथकते सूत की १ गुण्डी १२ फरवरी को अपने-अपने जिले के निर्दिष्ट स्थानों पर समर्पित कर, राष्ट्रपिता के प्रति अपनी सही श्रद्धांजलि अर्पित करनी चाहिए।

—कपिल भाई
संयोजक, सूतांजलि-संग्रह
खादी ग्रामोद्योग समिति, सर्व सेवा संघ

हमारे कुछ विविध प्रकाशन

जीवन-साधना

(महर्षि पतञ्जलि के योगसूत्रों का सरल विवेचन)

लेखक : बालकोबा भावे

महर्षि पतञ्जलि के योग-सूत्रों के रूप में भारतीय विचारधारा को जो स्वरूप प्रदान किया है, उसे अपने आपमें अद्वितीय माना जा सकता है। मानव जीवन का सारा खेल चित्त-वृत्तियों का है। उनका निरोध ही जीवन की सच्ची साधना है।

विनोबाजी के अनुज श्री बालकोबाजी भावे ने प्राथमिक साधकों की दृष्टि से अपने अनुभव के आधार पर योगसूत्र के आवश्यक अंशों की इस पुस्तक में सरल व्याख्या की है। बालकोबाजी ने अपनी दृष्टि स्पष्ट करते हुए लिखा है "प्राचीन काल से यह धारणा चली आयी है कि योगशास्त्र या ब्रह्मसूत्र साधकों और मुमुक्षुओं के लिए ही है। मुझे लगता है, यह ग्रन्थ उन सबके लिए उपयोगी है, जो सन्मार्ग से चलने के अभिलाषी और प्रयत्नशील हैं। प्रस्तुत पुस्तक के पाठक अनुभव करेंगे कि प्रत्येक सूत्र का अर्थ और विवेचन यहाँ इसी दृष्टि से किया गया है कि सन्मार्ग-प्रवण व्यक्ति के नित्य जीवन में काम आ सके। पुस्तक का 'जीवन-साधना' नाम भी इसी दृष्टि से रखा गया है।"

पृष्ठ १६५, मूल्य दो रुपया

स्थितप्रज्ञ-लक्षण
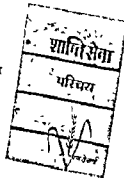
(सान्वय विवेचन) लेखक : बालकोबा भावे

गीता के दूसरे अध्याय के अन्त के १८ श्लोकों में स्थितप्रज्ञ का वर्णन आया है। गीता के इस अंश पर अनेक व्याख्याएँ, भाष्य और टीकाएँ लिखी गयी हैं। बालकोबाजी ने इस पुस्तक में सबकी समझ में आये, ऐसी सरल भाषा में स्थितप्रज्ञ के लक्षणों की विवेचना की है।

पृष्ठ ६९, मूल्य . १.५०

सुनो कहानी मनफर की

लेखक प्रेमभाई

मनफर को बिहार का पहला ग्रामदानी गाँव होने का गौरव मिला है। ग्रामदान के बाद मनफर की हवा कितनी बदली, सरकार कैसे बने, वहाँ के लोगों के रहन-सहन, रीति-रिवाज, काम-धन्धे, खान-पान आदि पर कैसा प्रभाव पड़ा इसका श्री प्रेमभाई ने सारग्राही विवरण दिया है। इस पिछले १३-१४ वर्षों में मनफर के आदिवासी ग्रामीणों ने जो मंजिल तय की वह बहुत ऊँची भले ही न हो लेकिन देखने समझने लायक चीज अवश्य है। गाँव के निर्माण, विकास और प्रगति की एक यथार्थ-वादी भेंट।

पृष्ठ : ५४, मूल्य १.००

शान्ति-सेना परिचय

लेखक : नारायण देसाई

प्रस्तुत पुस्तक में शांति-सेना का संक्षिप्त परिचय चार खण्डों के अन्तर्गत कराया गया है। विचार, संगठन, अनुभव और साधन, ये चार खण्ड हैं।

प्रचार की दृष्टि से इस पुस्तक का मूल्य लागत से भी कम रखा गया है।

मूल्य : ०-३५ पैसे।

उपवास से जीवन-रक्षा

लेखक हर्बर्ट एम० शेल्टन

अमेरिका के एक सुप्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक द्वारा लिखी गयी इस पुस्तक में उपवास की महत्ता और जटिल रोगों में उपवास के चमत्कार का अनुभवपूर्ण विवरण प्रस्तुत किया गया है। अनुवादक महोदय ने, जो प्राकृतिक चिकित्सा के मर्मज्ञ हैं, इस बात का ध्यान रखा है कि पुस्तक भारतीय जनता के लिए उपयोगी बने। अतः भारत की परिस्थिति की दृष्टि से पाठ्य-सामग्री में आवश्यक संशोधन कर दिया गया है।

पृष्ठ : २०८, मूल्य : ३.००

खादी-विचार

लेखक : विनोबा

खादी-विचार की पृष्ठभूमि अपने अनेक रूप-रंग में उभर कर इस ग्रन्थ में सामने आयी है। खादी का अर्थशास्त्र, नव-युग और खादी, खादी-चिन्तन को नयी दिशा, खादी का इतिहास, पारम्परिक और अम्बर चरखा, ग्रामाभिमुख खादी, खादी की अन्तिम और श्रेष्ठ लड़ाई आदि खादी के विभिन्न पहलुओं का विनोबाजी के शब्दों में बुद्धिग्राही समग्र विवेचन प्रस्तुत करने-वाला यह नवीन प्रकाशन खादी-जगत का खजाना है। खादी-प्रेमियों तथा कार्यकर्ताओं के लिए एक उपादेय कृति।

पृष्ठ : २५४, मूल्य : ४ रु०

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१

काशी युगों-युगों से विद्या की नगरी रही है।

और

यह प्राचीन परम्परा आज भी कायम है॥

वर्तमान

विचार-क्रान्ति के दौर से गुजर रहे भारत में सर्वोदय-आन्दोलन
सत्याग्रह की नयी भूमिका प्रस्तुत कर रहा है

•

विद्या की नगरी काशी में इस विचार के प्रकाशन का केन्द्र है,
इस प्रकाशन को अपना हार्दिक सहयोग देते हुए बहुविध एवं
बहुरंगी दुरुस्त छपाई और चुस्त सेवा के लिए प्रस्तुत

•

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा प्रकाशित एवं खण्डेलवाल प्रेस, मानमंदिर वाराणसी में मुद्रित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

विश्व-साहित्य की अनमोल निधि

ऐतिहासिक आलेख और साहित्यिक प्रतिभा से समन्वित

महादेव भाई
की
डायरी
(हिन्दी)

DAY-TO-DAY
WITH
GANDHI
(अंग्रेजी)

मन् १९१७ से १९४८ तक

महादेव भाई
द्वारा अंकित
गांधीजी के जीवन का हर पल [illegible] दिन

- राष्ट्रीय आन्दोलन [illegible]
- विचारों के [illegible]
- राष्ट्र-मानस का सजीव चित्र
- अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ और हलचलें
- अहिंसा के अमर पथिक [illegible]

की

जीती जागती कहानी

विशेष जानकारी के लिए लिखें -

ऐसा नही है कि गाँव मे पहले अनीति नही थी, अन्याय नही था। था सही, फिर भी गाँव के लोगो मे एक आपसदारी थी, जिसके कारण रस्म रिवाज के अनुसार लोग अपने गाँव का ख्याल रखते थे, और एक-दूसरे के सुख-दुख मे शरीक होते थे। अब ऐसी बात नही रह गयी है।

जब स्वराज की लडाई चलती थी तो गाधीजी बराबर याद दिलाते रहते थे कि भारत गाँवो का देश है, इसलिए भारत की स्वतन्त्रता तभी सुफल होगी जब एक-एक गाँव स्वतन्त्रता का सुख भोगने लगेगा, और उसे स्वतन्त्र इकाई के रूप मे विकसित होने का मौका मिलेगा। दुख की बात है कि देश के स्वतन्त्र होने पर भी ऐसा हुआ नही। न होने का कारण क्या है? सबसे बडा कारण है आज की राजनीति। इस राजनीति मे जो जहर है उसके कारण जनता की शक्ति इस तरह टूट जाती है जैसे ऊपर से गिरकर बताशा टूट जाता है। आपस मे लडना सिद्धान्त बन जाता है।

खुशी की बात है कि गाँव के लोग राजनीति के उस विष को पहचानने लगे हैं, और उससे बचने के लिए अधीर हो रहे हैं। लेकिन उनकी इस बेचैनी को सही दिशा मिलनी चाहिए। कोई समय था, जब धनी होने मे सुख था। और बडी जाति का होने मे बडप्पन था। लेकिन अब समय इतना बदल गया है कि गरीब धनी को धनी रहने देने के लिए, या जो नीच समझा जाता था वह ऊँच को ऊँच समझने के लिए, तैयार नही है। और, जमाना खुद भी धन या जाति के बडप्पन को मानने के लिए तैयार नही है।

नया जमाना समता का जमाना है। समता तभी होगी जब हर एक का ध्यान रखा जायगा। जो भी काम हो सबकी राय से हो, और सबकी भलाई का ख्याल करके हो। पुरोहित की बात चले, राजा, नेता, विद्वान या साधु की बात चले, यह अब होनेवाला नही है। जब लोकतन्त्र मे सबको वोट का अधिकार मिल गया, तो अब किसीको क्या कहकर अलग किया जा सकता है? मेल मे लोकतन्त्र की शक्ति है, और मिलकर रहने मे ही सुख है। संघर्ष मे दुख ही दुख है। संघर्ष भी न हो, और अन्याय भी मिटे, यह इस युग की माँग है।

गाँव के लोग बहुत भूले, बहुत भटके। अब जगह जगह उनकी एक सगठित पुकार सुनाई देने लगी है। आवाजें अनेक हो सकती हैं, लेकिन पुकार एक हो, जैसे पत्ते अनेक होते हैं, पर फूल एक होता है।

'गाँव की पुकार' नाम के इस छोटे नाटक मे गाँव के 'सर्व' की आवाज है। वह आवाज हर जबान पर उतरे, हर कान मे गूँजे, हर दिल को छूये, तो गाँव का सपना पूरा होने मे देर नही लगेगी।

—राममूर्ति

बहुमत-अल्पमत नहीं, सर्वमत

अपने देश की जो पुरानी रीति थी, वही मैं ला रहा हूँ। पुरानी रीति 'पाँच बोले परमेश्वर!' अभी तो तीन बोले परमेश्वर हो गया है। यह नया परमेश्वर परदेश से आया है। बडा खतरनाक है यह! जहाँ-तहाँ टुकडे करना ही जानता है।

मैं यह कहना चाहता हूँ कि बहुमत के सिद्धान्त के कारण हम अपना मूल स्वभाव ही छोड रहे हैं। हमारे मूल स्वभाव में यही है कि हम सर्वानुमति से काम करें। असल मे न्याय तो परमेश्वर देता है। मनुष्य तो समाधान कर सकता है। न्याय अन्दर का उद्देश्य देखकर देना पडता है, जिसे एक परमेश्वर के सिवा कोई नही जानता। इसीलिए मनुष्य का धर्म न्याय देना नही, समाधान देना है। ईसा ने कहा है कि 'तुम न्याय दोगे तो तुम्हारा न्याय परमात्मा करेगा।"

ग्रामदान मे सब मिलकर जो फैसला करेंगे, वही होगा। अगर गाँववाले सब मिलकर सर्वसम्मति से तय करते हैं कि होली के दिन पूरे गाँव को आग लगायेंगे तो आग लगा देंगे। फिर सोचने का सवाल कहाँ? सवाल एक मनुष्य का नहीं, सबकी सम्मति का है।

—विनोबा

गाँव की बात [illegible]

गाँव की पुकार

(नाटक)

पात्र-परिचय

हरिनारायण सिंह . गाँव के प्रतिष्ठित और समृद्ध व्यक्ति
मनोहर प्रसाद — पहले वकील, फिर कांग्रेसी, फिर गैरकांग्रेसी नेता
दौलत राम — गाँव के सेठ
उग्रसेन झा .
दशरथ मण्डल .
अलीउद्दीन खाँ .
खेदू पासवान
} सभी स्वराज्य-आन्दोलन के सेनानी, बाद में— { कांग्रेसी, जनसंघी, मुस्लिम लीगी, कम्युनिस्ट
बमभोलानाथ . गाँव का गायक कवि, एक पाँव से कुछ लँगड़ा

कोदईराम
नेकराम
} गाँव के गरीब किसान-मजदूर

विकास अधिकारी — नवरंगपुर विकास प्रखण्ड के
गंदलू यादव — यादव टोले का मुखिया
पंचानन — गंदलू यादव का लड़का
लालसीराम . हरिनारायण सिंह का नौकर
छात्रों का एक दल — बैण्ड-बाजे के साथ

तथा

अलग-अलग राजनीतिक दलों

और

गाँव के अन्य लोग

पूर्वकथा

बिहार राज्य में नवरंगपुर करीब एक हजार की आबादी का एक बड़ा गाँव है। गाँव में प्रायः छोटे-बड़े सभी वर्णों और वर्गों के लोग रहते हैं। कोसी के किनारे पर बसा हुआ, रेलवे स्टेशन से करीब सात मील दूर शीशम के ऊँचे-ऊँचे पेड़ों और बाँसों के घने झुरमुटों से घिरा हुआ नवरंगपुर दूर से बहुत लुभावना लगता है। शाम को जब मवेशी बाहर से चरकर लौटते हुए रंभाते हैं, बछिया-बछड़े उछल-कूद-कूदकर धूल उड़ाते हैं तो नवरंगपुर कन्हैया का गोकुल बन जाता है, कमी रह जाती है तो सिर्फ ब्रजवासियों को नचानेवाली वंशी की धुन की। गाँव के उत्तर तरफ बना हुआ है एक हाईस्कूल। कहते हैं कि सन् १९४२ के स्वराज्य-आन्दोलन में शहीद हुए गाँव के रईस बाबू हरिनारायण सिंह के इकलौते बेटे कुँवरनारायण सिंह ने इसी जगह एक झोपड़ी डालकर 'जवाहर-आश्रम' की स्थापना की थी, और यहीं अपने साथियों सहित रेलवे स्टेशन पर धावा बोलने की योजना बनायी थी। स्टेशन पर स्वराज का झण्डा फहराते समय ही कमसीन कुँवरनारायण पुलिस की गोली का शिकार हुआ था।

बेटे के शोक में बाबू हरिनारायण सिंह की जिन्दगी असमय ही मुरझा गयी थी। लेकिन चार साल बाद जब कुँवरनारायण के साथी उग्रसेन झा, दशरथ मंडल, अलीउद्दीन खाँ और खेदू पासवान जेल से छूटकर वापस आये, और बाबू हरिनारायण सिंह को यह सुझाया कि अमर शहीद कुँवरजी की याद में हम एक हाईस्कूल खोलना चाहते हैं, तो बाबू हरिनारायण सिंह के जीवन को जैसे एक सहारा ही मिल गया। कुँवरनारायण के ये चारों साथी इस इलाके के अलग-अलग गाँवों के युवक जिला-कालेज में साथ ही पढ़ते थे। गांधीजी के प्रभाव में आकर इन्होंने आपसी जाति-पाँति का भेद-भाव तो भुला ही दिया था, स्वराज के लिए अपनी जान की बाजी भी एकसाथ ही लगा चुके थे।

नवरंगपुर गाँव में हाईस्कूल खोलने का निश्चय हुआ तो इलाके भर में उत्साह की लहर दौड़ गयी। गाँव के अपने मजदूर भाइयों को कोदईराम और नेकराम ने संगठित किया कि सब लोग हफ्ते में एक दिन श्रमदान करें। वकील मनोहर प्रसाद और सेठ दौलतराम ने चन्दा जुटाने का जिम्मा लिया। बमभोलानाथ

ने तो अपनी कुल पांच बीघे जमीन मे से ढाई बीघे स्कूल के लिए दान कर दी। मादव टोले के गदेलू ने भी खूब सहयोग दिया।

स्कूल बन गया। गाँव के युवकों ने फैसला किया कि हमारे स्कूल का उद्घाटन गुलाम भारत मे नही, स्वराज के सुनहले प्रभात मे १५ अगस्त १९४७ को होगा। बडी धूमधाम से तैयारियाँ होने लगी।

अंक : १
दृश्य : १

१५ अगस्त सन् १९४७ के दिन

(हाईस्कूल की नयी इमारत पर सफेदी हो चुकी है। कागज की भण्डियों और आम के पल्लवों से पूरे हाते मे भरपूर सजावट की गयी है। स्कूल के सामनेवाले बरामदे के ऊपर एक बोर्ड टँगा है, जो खून के धब्बे लगे एक तिरंगे भण्डे से ढका है। बरामदे से करीब दस ही हाथ की दूरी पर एक गोल-सा चबूतरा है, जिसे फूलो से सजाया गया है। चबूतरे पर गडे खम्भे मे ऊपर भण्डा लहरा रहा है। जमीन पर इधर-उधर कुछ फूल भी बिखरे है। एक तरफ कुछ छात्रो का एक जत्था बैण्ड-बाजे के साथ खड़ा है। दूसरी तरफ कुर्सी पर बैठे खादी की सफेद पोशाक पहने, सिर पर गाधी टोपी लगाये बाबू हरिहर-नारायण सिंह दिखाई दे रहे हैं। उनके पास ही खडे हैं वकील मनोहर प्रसाद, और उनके साथ युवक नेता उग्रसेन भा, दशरथ मंडल, अलीउद्दीन खाँ और खेदू पासवान। सबके सिर पर गाधी टोपी है। सामने नवरंगपुर तथा आसपास के ग्रामीण श्रोता बैठे हैं। पर्दा उठने के साथ ही बैण्ड पर राष्ट्र-गीत 'जनगण मन' ·····' की धुन बजनी शुरू होती है। और धुन पूरी होते ही वकील मनोहर प्रसादजी का भाषण शुरू होता है। युवक नेतागण बैठ जाते हैं।)

मनोहर प्रसाद :—बाबू हरिनारायण सिंहजी और प्यारे भाइयो ! सैकड़ों वर्षों की गुलामी के अंधकार मे भटकते-भटकते आज हमने आजादी का उजाला पहली बार देखा है, फिरगियो ने हमको बेडियो मे जकड रखा था, हमने उन बेड़ियो को सदा-सदा के लिए तोडकर फेक दिया, अब हम स्वतन्त्र भारत के स्वतन्त्र नागरिक हैं, हम आजादी की हवा म साँस ले रहे हैं। (दर्शक तालियाँ बजाते हैं, एक युवक नारा लगाता है—'स्वतन्त्र भारत की' . 'जय' सब बोलते हैं। वकील मनोहर प्रसाद उत्साहित होकर कुछ और जोर से बोलते हैं।) लेकिन भाइयो, हमे यह नही भूलना चाहिए कि इस आजादी को हासिल करने के लिए लाखो-लाख भारत माँ के जिगर के टुकडो ने आजादी की वेदी पर हँसते-हँसते अपनी कुर्बानी दी है। वह इसलिए कि भारत में रहनेवाला हर आदमी आदमी की तरह सुख-शान्ति की जिन्दगी जी सके। हमे ऐसा

भारत बनाना है, जिसमे कोई भूखा न मरे, नंगा न रहे। अंग्रेज हमारी नस-नस का खून चूसकर विलायत ले गये।
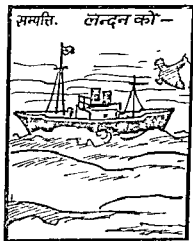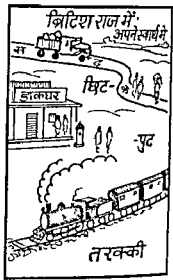
आज हम कंगाल हैं। लेकिन दुनिया को हमे यह दिखा देना है कि भारत जाग उठा है, और अब वह दुनिया के किसी भी देश से पीछे नहीं रहेगा। (तालियो की गडगडाहट होती है। एक युवक नारा लगाता है, 'भारत माता की' : 'जय' सब दुहराते हैं। वकील मनोहर प्रसाद रूमाल से आँखें पोछते हुए कहते हैं—) आज नवरंगपुर मे नये भारत के नये केन्द्र की नीव डाली जा रही है, जहाँ से पढ़े-लिखे अच्छे नागरिक पैदा होंगे, और भारत का भविष्य उज्ज्वल बनायेंगे। इस अवसर पर हमारे प्राणो से प्यारे अमर शहीद बाबू कुँवरजी की याद आँखों मे आँसू बनकर उमड आती है, इस हाईस्कूल के साथ उस अमर आत्मा की याद जुडी हुई है। ऐसी वीर सन्तान के पिता बाबू हरिनारायण सिंहजी धन्य हैं। हम आप सबकी ओर से बाबू हरिनारायणजी से प्रार्थना करते हैं कि वे इस हाईस्कूल का उद्घाटन करें।

(बैण्ड फिर बजने लगता है। वकील मनोहर प्रसाद के साथ बाबू हरिनारायण सिंह उठकर जाते हैं और बरामदे पर टँग रहे

बोर्ड से तिरंगा झण्डा हटा लेते हैं। बोर्ड पर लिखा है—'अमर शहीद कुँवर हाईस्कूल नवरंगपुर'।

बोर्ड पढ़ते ही लोग तालियाँ पीटते हैं। नारे लगाते हैं, 'अमर शहीद कुँवर सिंह' : 'जिन्दाबाद', 'अमर शहीद कुँवर सिंह' : 'जिन्दाबाद।' बाबू हरिनारायण सिंह वापस आकर कुर्सी पर बैठते हैं। खून के धब्बोंवाला वह झण्डा उनके हाथ में है। सामने आते ही उनकी आँखों से आँसू की धारा बहने लगती है। वे झण्डे-सहित अपनी हथेलियों से एक बार मुँह ढक लेते हैं। फिर आँसू पोंछते हुए खड़े होते हैं।)

हरिनारायण सिंह :—मेरे प्यारे भाइयो, मुझे माफ करें, बाप का दिल ठहरा, कभी-कभी कमजोर हो जाता है। (झण्डे को दिखाते हुए) आप देख रहे हैं, इस झण्डे पर खून के धब्बे हैं। ये धब्बे सिर्फ मेरे इकलौते बेटे कुँवर के खून के ही नहीं हैं, मेरे अपने अरमानों के खून के भी हैं, इतना ही नहीं, ये भारत माँ के दिल पर हुए गहरे घावों के निशान भी हैं। (बोलते-बोलते रुलाई आ जाती है) मैं इस वक्त कुछ अधिक बोल ''नहीं सकूँगा। सिर्फ इतना ही कहूँगा कि भारत माँ के'''दिल के घाव 'तभी भरेंगे' जब हम एक बनेंगे '' नेक बनेंगे''बोलिये, 'भारत माता की'!

'जय'! (सब लोग दुहराते हैं, इसी समय बमभोलानाथ एक ओर से आते हुए दिखाई देते हैं, बमभोलानाथ की दाढ़ी बढ़ी हुई है। बाल बिखरे हैं। फटी धोती, फटी कमीज पहने, सिर पर पगड़ी बाँधे एक लाठी के सहारे लँगड़ाते हुए चलते हैं। बमभोलानाथ गीत गा रहे हैं। दूर से उनकी आवाज धीमी सुनाई पड़ रही थी, जैसे-जैसे मंच के करीब आते हैं, आवाज साफ सुनाई देती है)

बमभोलानाथ :—मुक्त किरण-सी,
दीप शिखा-सी,
दीवानों की आत्मा,
परवानों की आत्मा।
जलना-बुझना
फिर-फिर जलना,
जिसका यह इतिहास है
बाँध नहीं सकती जंजीरें,
वह ऊँचा आकाश है,

है इस चमन की जिन्दगी,
दीवानों की आत्मा!
परवानों की आत्मा!!
मुक्त किरण-सी'''दीप शिखा-सी''।
(गीत पूरा होता है और पर्दा गिरता है)

दृश्य : २

१२ साल बाद, सन् १९५९ में

(सेठ दौलतराम की गद्दी। मसनद के सहारे सेठजी बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। पास ही बैठे हैं—दशरथ मंडल, खेदू पासवान और अलीउद्दीन खाँ। दशरथ मंडल के सिर पर काली, खेदू पासवान के सिर पर लाल और अलीउद्दीन खाँ के सिर पर हरी टोपी है। सबके चेहरे पर उम्र की प्रौढ़ता दिखाई दे रही है। बहस का दौर चल रहा है।)

दशरथ मंडल :—आप चाहे जो कुछ कहें सेठजी, अगर सन् बासठ के अगले चुनाव में भी इन सफेद टोपीवालों का ही राज बना रहा तो देश और धर्म, दोनों रसातल को चले जायेंगे। न तो हिन्दू धर्म का नाम लेनेवाला कोई रह जायगा और न हिन्दुस्तान का। मैं दावे के साथ कहता हूँ कि देश की आजादी खतरे में है। इसलिए हमारी पार्टी को· ·

खेदू पासवान :—(बीच में ही बात काटते हुए) मैं कहता हूँ दशरथ बाबू! यह बुर्जुवापन छोड़िये, अगर देश को बचाना है। मैं भी मानता हूँ कि देश बड़े नाजुक दौर से गुजर रहा है, लेकिन इस हालत में देश की डूबती नौका को बचाने का एक ही उपाय है—सर्वहारा की क्रान्ति। आज नये उपनिवेशवादी देश अमेरिका के गुर्गे हमें आर्थिक गुलामी की जंजीरों में फिर से जकड़ देना चाहते हैं। अगर देश को बचाना है तो सबलोग लाल झण्डे के नीचे संगठित होकर इन्कलाब का बिगुल बजा दें।

अलीउद्दीन खाँ :—जनाब आप दोनों हिन्द की हालातों के बारे में अपनी-अपनी मर्जी का बयान पेश कर गये। अब जरा इधर भी गौर फरमाइये :

हमें भी दुख है अपने वतन के वास्ते कुर्बान जायें,
मगर दिल है फँसा दलदल में, जायें तो किधर जायें?
(सब लोग हँसते हैं, वाह-वाह की दाद देते हैं।)

दौलतराम :—मगर, खाँ साहब, आखिर दिल को फँसाने-वाले दलदल के पास आप कैसे पहुँच गये?

३० जनवरी, '६८

अलीउद्दीन खाँ —सेठ साहब, मैं नाचीज भला ऐसी हिम्मत कैसे करता! बात यह है कि दलदल खुद ही दिल के करीब आ गया। सिर्फ मेरे ही नहीं, सबके दिल के करीब! मुलाहजा फरमाइये (सबके सिर की टोपियों की ओर इशारा करके)

कभी हम एक थे ये ताज सर के एक थे
वतन था एक सबका, और थे सब हमवतन,
मगर हम फँस गये हैं दल के दलदल में अभी,
कि सब बहुरूपिये बहुटोपिये रंगीन हैं।

(एक ओर से उग्रसेन झा का प्रवेश होता है, उनके सिर पर सफेद टोपी है।)

उग्रसेन झा —वाह वाह मियाँ! जवाब नहीं आपका! (आकर बैठते हुए) एक बार फिर दुहराइये मेरे दोस्त! क्या फरमा रहे थे बहुरूपिये बहुटोपिये रंगीन।

अलीउद्दीन खाँ —पंडितजी महाराज! राजधानी की हवा खाते-खाते आपकी नजरों पर रंगीनियों का नशा छा गया है। लेकिन कभी यह भी सोचते हैं कि आपकी हुकूमत जो कुछ भी कर रही है उसका अंजाम क्या होगा?

खेदू पासवान —अंजाम इनसे नहीं, मुझसे पूछिये खाँ साहब मुझसे! शीघ्र ही इंकलाब की तेज आँधी आयगी और इनका बुर्जुवा सरकार की जड़ उखड़ जायेगी। भारत के माथे पर सर्वहारा क्रान्ति का लाल सूरज चमकेगा, और इनकी मिट्टी पलीद हो जायगी!

उग्रसेन झा —चुप रह चीनी कुत्ता के दलाल! आँखों से गद्दारी का चश्मा हटाकर देख कि हमारी सरकार ने जनता की भलाई के लिए ही भाखरा नांगल के बड़े-बड़े बाँध और बोकारो भिलाई के भारी भारी कारखाने बनवाये हैं। प्रखण्ड प्रखण्ड में विकास के लिए हर तरह की योजनाएँ चलाकर खेती, उद्योग, पशुपालन आदि के कितने अधिक काम कराये हैं। पूरे इलाके में कहीं एक दो पढ़े लिखे लोग मिलते थे, आज गाँव-गाँव में बी ए एम ए पास लोग मिलते हैं। गाँवों की तरक्की देखना चाहते हो तो देखो, आज हर गाँव में शाम को लोग पटना रेडियो का चौपाल कार्यक्रम सुनते हैं। देश बदल रहा है, जमाना बदल रहा है कामरेड खेदूराम! तुम भी बदलो अपने आपको!

दशरथ मंडल —जी हाँ, क्या कहने! चोरबाजारी और भ्रष्टाचार का बोलबाला है, महँगाई जनता की कमर तोड़ रही है। एमे बी ए पास करके लोग मक्खी मार रहे हैं, दुनिया से भीख माँगकर भारत अपना पेट भर रहा है! तरक्की का क्या पूछना! अरे एमेले महाराज, शुतुरमुर्ग की तरह रेत में चोंच गाड़कर कब तक चैन की वंशी बजाओगे?

उग्रसेन झा —(क्रोधित होकर) खबरदार, अब जो ज्यादा बढ़-बढ़कर बातें की, तो अभी होश ठिकाने लगा दूँगा। चलो अपनी काली टोपी की तरह मुँह काला करो और भागो यहाँ से।

दशरथ मंडल —(कुर्ते की बाँह ऊपर चढ़ाते हुए) अबे पंडित के बच्चे, तू बहुत बहक रहा है, हद से बाहर जा रहा है ठहर तुझे (उग्रसेन पर झपट पड़ता है। दोनों एक-दूसरे से भिड़ जाते हैं। खेदू पासवान भी उसमें शामिल हो जाते हैं। सेठ दौलतराम और अलीउद्दीन खाँ किसी तरह बीच-बचाव करके सबको अलग करते हैं। तीनों तीन ओर चले जाते हैं।)

अलीउद्दीन खाँ —(सेठ की ओर रुख करके) देखा सेठजी इसे कहते हैं, दलों का दलदल। स्वराज के पहले सब एक थे स्वराज होने पर देश को मजबूत और एक बनाये रखने की कसम सबने एकसाथ खायी, आज भी देश वही समस्याएँ वही लेकिन

दौलतराम —लेकिन सत्ता की कुर्सी ने सबके दिलों में दरारें पैदा कर दी यही न?

अलीउद्दीन खाँ —अच्छा सेठजी, अब चलूँ।

सेठ दौलतराम —अजी, आपस के झगड़ों में नेताजी लोग अपना चंदा माँगना भूल गये, अपनी तो कुछ बचत हो गई लेकिन अब आप कम-से-कम पान का शौक तो करते जाइये (पान की तश्तरी सेठजी खाँ साहब की ओर बढ़ाते हैं और खाँ साहब पान मुँह में रखते हैं। पर्दा गिरता है।)

दृश्य ३

सब देश की भलाई के नाम पर

(प्रखण्ड विकास का कार्यालय। बीच की कुर्सी पर विकास अधिकारीजी कोट-पैंट पहने बैठे हैं, सिर पर अंग्रेजी टोप है। दायीं ओर सेठ दौलतराम सिर पर पगड़ी बाँधे, मिरजई पहने सिल्क का दुपट्टा कन्धे पर डाले बैठे हैं। उनके दायें हाथ में, जो विकास अधिकारी की मेज पर टिका है रुपये का एक लाल थैली है, बायीं ओर बगल में एक बही दबाये हैं। विकास अधिकारी

की बायी ओर उग्रसेन आ बैठे हैं। वे सफेद कुर्ता-धोती पहने हैं, कुर्ते पर एक काली जवाहर जैकेट भी उन्होने पहन रखी है, सिर पर गाधी टोपी लगाये हैं, हाथ मे चमडे का एक बैग भी है। पर्दा उठता है तो एक चपरासी चाय की ट्रे मे तीनो व्यक्तियो के लिए चाय मेज पर रख जाता है।)

विकास अधिकारी :—लीजिये एमेले साहब, पहले चाय पीजिये, बाकी बाते बाद को।

(सब चाय पीना शुरू करते हैं, बातचीत भी चल रही है।)

दौलतराम :—बाद को नही साहब, साथ ही साथ। वर्ना चाय मेरे गले के ऊपर ही अटक जायगी।

उग्रसेन झा :—(हँसते हुए) भई मान गये, सेठ दौलतराम का लोहा। पहले खाने की बात, फिर पीने की बात। क्यो सेठजी कैसे हजम करोगे इतनी दौलत ? कोई आगे-पीछे भोगनेवाला भी तो नही है ?

दौलतराम :—हे · हे हे·· हे क्या कहते हैं नेताजी आप भी! कानी-कौड़ी जोड-जोडकर किसी तरह गरीब की गुजर हो जाती है। हाँ, बस कभी-कभी आप नेताजी लोगो की खातिरदारी करने का सौभाग्य अपनेराम को मिल जाता है, वही बहुत है। (कुछ रुककर) 'उसका कुछ-न-कुछ जुगाड तो होते रहना चाहिए न।

विकास अधिकारी :—हाँ, हाँ · क्यो नही! आखिर नेता तो जन-सेवक है, उनकी खातिरदारी सेठ दौलतराम जैसे लोग नही करेंगे, तो और कौन करेगा ? कहिये मेरे लिए क्या हुक्म है ?

दौलतराम :—हे हें हे · हे बी०डी०ओ० साहब, सुना है कि राजपुर के पास बरसाती नाले पर जो पुलिया बनेगी, उसका ठीका दो लाख का होनेवाला है।

विकास अधिकारी :—बिलकुल गलत।

दौलतराम :—मजाक न कीजिये बी०डी०ओ० साहब, आज-कल मन्दी जा रही है।

विकास अधिकारी :—कहा न, बिलकुल गलत सुना है आपने। दो नही, तीन लाख का ठीका है उसका।

दौलतराम :—(आँखे फाडकर, भौंहे चढ़ाकर) ऐं· सच ? तब तो हम सबका सुनहला मौका बी०डी०ओ० साहब मुझ खिदमतगार को ही सौंपिये। लक्ष्मी माई की कसम। दौलतराम वह कमाल दिखायगा कि तबीयत हरी हो जायगी सरकार की।

२० जनवरी, ६८

विकास अधिकारी :—(उग्रसेन की ओर रुख करके) कहिये नेताजी, क्या हुक्म है ?

उग्रसेन :—भई, इस मामले मे मैं क्या कहूँ ? व्यवहार की बात है, जिस तरह मामला तय हो जाय, कर डालिये। (आँखो मे विकास अधिकारी की ओर कुछ इशारा करता है।) हमें सब काम देश की रक्षा और जनता की भलाई के लिए ही करने हैं। हमारे कन्धो पर गम्भीर जिम्मेदारियाँ हैं।

दौलतराम :—भलाई के काम मे कुछ मलाई भी मिल जाय तो आपको कोई एतराज तो नही होगा न ?

विकास अधिकारी :—मलाई किसे अच्छी नही लगती सेठजी ? बताइये हमे कितनी मिलेगी ?

दौलतराम :—हजूर जितनी हुक्म करे। (थैली को मेज पर हल्के से ठोकते हुए) कहिये तो पाँच-पाँच हजार अभी (उग्रसेन आँखो से विकास अधिकारी को कुछ इशारा करते हैं।)

विकास अधिकारी :—सेठजी, बातें मत बनाइये, सीधे एक लाख की बचत है। तीन हिस्से करने होंगे। मंजूर है ?

दौलतराम :—(गिडगिडाकर) कडी मिहनत करनी होगी सरकार, कुछ कम मे काम नही चलेगा ?

विकास अधिकारी :—यही सवाल मैं आप से करूँ तो ?

(बीच मे ही एक फटेहाल किसान-मजदूर नेकराम का प्रवेश)

नेकराम :—परनाम सरकार' ! बड़ा सौभाग कि तीनो देवता का दर्शन एके साथ हो गया, हमारी एक अर्जी सुनी जाय।

विकास अधिकारी :—अभी हमारे पास फुरसत नही है, जो कुछ कहना हो, अपने यहाँ के ग्रामसेवक से लिखवाकर आफिस मे किरानी बाबू को दे जाना। समझे ? अभी जाओ यहाँ से, हमारा समय न बरबाद करो।

नेकराम :—सरकार, सुना जाय, बस पाँच मिनिट।

विकास अधिकारी :—कह दिया न ! अब सिर न खाओ· जाओ 'भागो (नेकराम मन मारकर चल देता है।)

दौलतराम :—न जाने कहाँ से चले आते हैं हरामखोर, अर्ज है अर्ज है करते!

विकास अधिकारी :—सेठजी, पक्की बात बताइये झटपट, समय बहुत कम है।

उग्रसेन :—हाँ भाई, जल्दी करो। (घडी देखते हैं) मुझे बारह बजे की बस पकडनी है।

दौलतराम :—जब आपलोगो की यही मर्जी है तो दौलतराम को वहाँ इन्कार हो सकता है ? (सब जाते हैं। बमभोलानाथ गाते हुए मंच पर एक ओर से आकर दूसरी ओर को जाते हैं।)

बमभोलानाथ :—

बदल रहा भारत का नक्शा।
त्याग-तपस्या मिली धूल में,
धर्म हुआ नाले का पानी।
बेबस जनता भूखी-प्यासी
कुछ लोगो की कटती चांदी।
कुर्सी टोपी की खातिर मे
जुटा हुआ है धन का बकसा।
बदल रहा भारत का नक्शा।

(गीत गाते-गाते प्रस्थान पर्दा गिरता है।)

अंक - २

दृश्य १

सत्ता और समाज सन् १९६८

(बाबू हरिनारायण सिंह का बैठकखाना। पर्दा उठता है तो वकील मनोहर प्रसाद और बाबू हरिनारायण अखबार पढते दिखाई पडते हैं। वकील मनोहर प्रसाद लाल-हरी दुरंगी टोपी पहने हैं।)

हरिनारायण सिंह :—(अखबार रखते हुए) वकील साहब, आपकी सरकार भी बडी मायावी है। कानून तो बनाती जाती है नित्य नये-नये, अच्छे-अच्छे, लेकिन अमल किसी एक पर नही होता है।

मनोहर प्रसाद :—बाबू साहब, सफेद टोपीवालो की सरकार कानून और नारो के मायाजाल फैलाकर ही तो इतने सालो से जनता का वोट बटोरती रही है। लेकिन (अचानक कोदई राम का प्रवेश। कोदई राम गांव का एक मजदूर है। फटी धोती पहने, नगे बदन, सिर्फ कन्धे पर तार-तार हो रहा गमछा डाले है। उसकी खिचडी दाढ़ी बढी हुई है। आखें धँसी हुई है, छाती की पसलियां साफ-साफ दिखाई दे रही हैं। मंच पर आते ही कोदई राम अपने कधे का गमछा उतारकर बाबू हरिनारायण के पाँव पर रख देता है, और हाथ जोडकर कहता है।)

कोदईराम :—सरकार, भूखो मर रहा हूँ, इस ढलती उमिर मे पापी पेट के खातिर गांव छोडकर जाऊँ भी तो कहाँ जाऊँ? बाल-बच्चे भूखो मर रहे हैं, रहने का कोई ठिकाना नही रहा। जीने का कोई जुगत बताओ महाराज ..

हरिनारायण सिंह :—क्यो कोदईराम, तुमने तो पाँच बीघे जमीन बटाई पर लेकर खेती की थी, फसल भी इस साल अच्छी थी तुम्हारी, कौनसा नया सकट आ गया तुम्हारे ऊपर ?

कोदईराम :—कुछ न पूछें सरकार। सब तरफ से विपदा का पहाड एकसाथ ही टूट पडा। जयनारायण महतो की जमीन दस-पन्द्रह साल से जोतता आ रहा था, सो उन्होने जमीन वापस ले ली। कहते हैं कानून बन गया है, वही तुम्हारी नीयत खराब हो गयी तो जमाने को आग लगी है, किसीका क्या भरोसा ?' इतना ही नही सरकार, उन्होंने हमारा घर भी उजाड दिया। २५ साल से जिस जगह झोपडी डाले रह रहा था, वहाँ से खदेड दिया, फसल का जो हिस्सा मिला था, वह सेठ दौलतराम ने कर्जे की सूद मे खलिहान से ही उठवा लिया। सडक के किनारे बाल-बच्चो सहित तीन दिनो से भूखा-प्यासा पडा था। सोचा था इस गांव की इतनी खिदमत की है, किसीको तो दया आयगी ? (आंखो से आंसू बहते हैं, अपनी हथेलियों से आंखें पोछते हुए कहता है।) मालिक दया-माया नवरंगपुर से उठ गया। शायद जमाने से उठ गया (गिडगिडाते हुए फिर हरिनारायण सिंह के पाँव पकड लेता है) अब आखिरी भरोसा आपका ही है माई-बाप ! रच्छा करो नही तो हम मर जायेंगे।

हरिनारायण सिंह : (व्यंग्य के स्वर से) सुन लिया वकील आपने ? सरकारी कानून है कि घरवास की जमीन से किसान बेदखल नही किया जा सकता, सूद की दर निश्चित की गयी है, लेकिन कोई मानता है सरकार के कानून को ? सरकार को भी इसकी परवाह है ?

मनोहर प्रसाद :—अजी साहब, इसीलिए तो मैं कहता हूँ कि 'कांग्रेस हटाओ देश बचाओ'। अभी क्या देखते हैं! अगर सन् १९६७ के चुनाव मे भी ये सफेद टोपीवाले जीत गये तो समझ लीजिये कि सत्यानाश निश्चित है, देश का भी और जनता का भी।

हरिनारायण सिंह :—हाँ वकीलजी महाराज ! सन् '६२ के चुनाव के पहले तक, जबतक आपको कांग्रेस का टिकट मिलता रहा, और आप चुनाव जीतते रहे, सरकार ठीक थी, देश और

देश की जनता उन्नति की राह पर दौड़ती हुई आगे बढ़ रही थी। '६२ के चुनाव में आपको कांग्रेस का टिकट नहीं मिला तो उन्नति की वही दौड़ अवनति की ओर मुड़ गयी! अरे नेताजी, छोड़िये सत्ता की कुर्सी का मोह, जनता के दुखदर्द को समझने और दूर करने का कोई और उपाय सोचिये। अब सरकार से कुछ नहीं होने का।

कोदईराम :—सरकार, मेरे लिए कुछ ···

हरिनारायण सिंह :—कोदईराम, तुम्हें गाँव छोड़ने की जरूरत नहीं, मेरी भीठावाली ऊँची जमीन पर आकर अपना डेरा डाल लो। (घर की ओर रुख करके) अरे लाखीराम··· लाखीराम···!

(भीतर से आवाज आती है—'जो मालिक, अभी आया')

लाखीराम :—(मंच पर आकर) कहा जाय मालिक।

हरिनारायण सिंह :—(कोदईराम की ओर संकेत करके) देखो, कोदईराम बड़ी तकलीफ में है, इसे दो पसेरी अनाज दे दो। (कोदईराम की ओर देखते हुए) तब तक काम चलाओ, फिर कुछ इन्तजाम सोचा जायगा।

कोदईराम :—(हरिनारायण सिंह के पाँव छूकर) हुजूर का एकबाल बना रहे। धन्न हो मालिक, धन्न हो!

(लाखीराम के पीछे-पीछे कोदईराम भी जाता है।)

मनोहर प्रसाद :—इस तरह से समस्या तो हल हुई नहीं हरी बाबू! इस देश में सरकार बदले बिना कुछ नहीं हो सकेगा। आप कब तक, और कहाँ तक भूखों का पेट भरते रहेंगे?

हरिनारायण सिंह :—भूख आपके नारों से नहीं मिटती नेताजी, उसके लिए अनाज चाहिए। मान लीजिए कि सरकार बदल भी गयी तो क्या नयी सरकार अनाज पैदा कर घर-घर बाँट जायगी? समस्याएँ तो फिर भी बनी ही रहेंगी?

मनोहर प्रसाद :—तो क्या आप मानते हैं, कि आज जैसा है वैसा ही चलता रहे?

हरिनारायण सिंह :—नहीं वैसा नहीं चले, बल्कि मैं तो चाहता हूँ कि पूरा समाज का ढाँचा बदले; सिर्फ सरकार बदलने से समाज का ढाँचा नहीं बदलेगा। हाँ, हो सकता है कि आपका ढाँचा बदल जाय, और आप नेता से मन्त्री हो जायें।

मनोहर प्रसाद :—हरी बाबू, आप मेरा मजाक उड़ाते हैं, लेकिन देख लीजियेगा, सन् १९६७ के चुनाव में क्या-क्या गुल खिलते हैं। (तमतमाये हुए जाते हैं।)

हरिनारायण :—देखेंगे, जरूर देखेंगे। साहब, अगर भगवान ने मौका दिया तो···

(पर्दा गिरता है)

दृश्य : २

सन् १९६७ का चुनाव

(चुनाव की सरगर्मी जोरों पर है। मंच पर एक दल के लोग आते हैं, नारे लगाते जाते हैं, दूसरे दल के लोग आते हैं, नारे लगाते आते हैं। बीच-बीच में कुछ भिड़न्त भी हो जाती है।)

(पर्दा उठता है)

(एक ओर से कम्युनिस्ट पार्टी का झण्डा लिये एक दल आता है, जिसका नेतृत्व कर रहे हैं कामरेड खेदू पासवान। दूसरी ओर से जनसंघ का दल आता है, जिसका नेतृत्व कर रहे हैं दशरथ मंडल। कम्युनिस्ट पार्टी के जुलूस में लोग हँसिया हथौड़ा लिये हैं, और जनसंघवाले बड़े-बड़े दीये लिये हुए हैं।)

खेदू पासवान —(बायीं ओर से प्रवेश करते हुए) 'हँसिया हथौड़ा'

दल के सब साथी —'जिन्दाबाद!'

खेदू पासवान :—'लाल झण्डा'

दल के सब साथी —'जिन्दाबाद!'

(सभी आगे बढ़ते हैं।)

खेदू पासवान —'जीतेगा भाई जीतेगा'

दल के सब साथी :—'हँसिया-हथौड़ा जीतेगा'

दशरथ मण्डल —(जनसंघ दल सहित दाहिनी ओर से प्रवेश करते हुए रुककर) 'गद्दारों से होशियार!'

दल के सब साथी :—'चीनी टट्टू होशियार!'

दशरथ मण्डल —(आगे बढ़कर) 'जीतेगा भाई जीतेगा'

दल के सब साथी —'दीपकवाला जीतेगा!'

खेदू पासवान —(और आगे बढ़कर) 'अमेरिकी मुर्गे'

दल के सब साथी :—'मुर्दाबाद!'

खेदू पासवान :—'लक्ष्मी-वाहक'

दल के सब साथी —'मुर्दाबाद'

जनसंघवाले :—(आगे बढ़कर) मारो साले के गधों को!

कम्युनिस्ट दल :—(और आगे बढ़कर) मसल दो शोषक गद्दारों को।

(अचानक धड़ाके की आवाज होती है, और मंच पर धुआँ

छा जाता है, सब भागते हैं। कुछ क्षणो मे धूँआ साफ होता है तो एक ओर से संयुक्त समाजवादी दल और दूसरी ओर से काग्रेस दल के लोग आते हैं। काग्रेस दल का नेतृत्व कर रहे हैं उग्रसेन और संयुक्त समाजवादी दल का नेतृत्व कर रहे हैं वकील मनोहर प्रसाद। दोनो दलो के हाथो म अपने-अपने दल का झण्डा है। संयुक्त समाजवादी दल का बायी ओर से प्रवेश होता है।)

मनोहर प्रसाद :—'काग्रेस ने क्या किया'

दल के सब साथी :—'सारे देश को लूट लिया।'

मनोहर प्रसाद :—'बैलो की जोडी बिदक गयी'

दल के सब साथी :—'इंदिरा की गद्दी खिसक गयी।'

सब एक साथ :—'जीतेगा भाई जीतेगा'

'झोपडीवाला जीतेगा।'

(काग्रेस दल का दायी ओर से प्रवेश होता है।)

उग्रसेन :—'कौन खीचता देश को गाडी'

दल के सब साथी :—'केवल दो बैलो की जोडी।'

उग्रसेन :—'बहुरुपियो की कौन सुनेगा'

दल के सब साथी :—'गीदड, कौवे, तीतर, बटेर।'

सब एक साथ —'जीतेगी भाई जीतेगी

बैलो की जोडी जीतेगी।'

(सयुक्त समाजवादी दल आगे बढकर)

मनोहर प्रसाद :—'किये-कराये पर फिर गया पानी

सब एक साथ —'काग्रेस की मर गयी नानी।'

उग्रसेन —(दल की ओर रुख करके) मारो दोगली औलादो को

मनोहर प्रसाद :—मजा चखा दो गद्दारो को।

(सभी झण्डो के डण्डे से एक-दूसरे पर प्रहार करते हैं। दो-चार गिरते हैं, बाकी भागते हैं। पर्दा गिरता है)

दृश्य ३

चुनाव का तिकडम

(गाँव के एक अहीर गदेलू यादव का मकान। हट्टा-कट्टा गदेलू बैठे रस्सी बँट रहा है। एक ओर से मनोहर प्रसादजी का प्रवेश होता है। मनोहर प्रसाद के सिर पर लाल टोपी है। कुर्ते की जेब पर उनके दल का चुनाव चिह्न झोपडी का बिल्ला लगा है। उनके साथ दल के तीन और कार्यकर्ता भी हैं। एक के हाथ मे पोस्टर है, जिस पर लिखा है—'काग्रेस हराओ : देश बचाओ!' दूसरे के हाथ म सयुक्त समाजवादी दल का झण्डा है। तीसरा चुनाव के बहुत से पर्चे लिये है।)

मनोहर प्रसाद —(मुस्कराते हुए) कहो गदेलू बाबू, समाचार तो ठीक है।

गदेलू —(चौंककर) ऐ! कौन अवतार प्रकट हुआ भाइ, गदेलू को 'बाबू' कहनेवाला? (सिर उठाकर देखता है) अरे आप मनोहर बाबू! (कन्धे पर पडा गमछा उतारकर जमीन जमीन साफ करते हुए) बैठिये-बैठिये, धन्न भाग, जो आप जैसे नेता मुझ गरीब और छोटे आदमी की कुटिया पर पधारे। कहिये, क्या सेवा करूँ?

मनोहर प्रसाद —अरे गदेलू बाबू! आज के जमाने म कोई छोटा और कोई बडा नही है। सब बराबर हैं। बल्कि कहा जाय तो सच बात यह है कि अब छोटे लोग ही इस देश के भाग्य विधाता हैं। इस देश को बनाने बिगाडने की सारी जिम्मेदारी आप ही लोगो पर है।

गदेलू —बाबूजी बात तो मजे की कह रहे हैं आप, वोट के जमाने म तो हम ही देश के सबसे बडे आदमी बन जाते हैं, इसम क्या शक! लेकिन हमारे ही वोट से जो सरकार बनती है, और हमारे ही टैक्स से जो सरकार पलती है, वह हमारी ओर कभी ध्यान नही देती। मैंने तो सोच लिया है कि अब वोट किसी को दूँगा ही नही।

मनोहर प्रसाद —हरे हरे! कैसी बात करते हैं, गदेलू बाबू, वोट देना तो आपका पैदाइशी हक है। अपना हक कभी नही छोडना चाहिए। यह तो बहुत बुरी बात है।

गदेलू —हाँ हाँ पैदाइशी हक है, लेकिन क्या हक लेकर चाटेंगे? पेट भरेगा उससे? हमारा दुख दूर होगा? वोट के बाद हमारी कौन सुनेगा?

मनोहर प्रसाद —याद रखिये, जनता की मांगें पूरी करने के लिए, सही मानो म जनता का राज बनाने के लिए, हमने काग्रेस को छोड दिया है, और अब जनता के लिए सुख-सुविधा जुटाने और समता लानेवाली पार्टी म शामिल हो गये हैं। इसलिए, इसीलिए हमारी पार्टी ने अपना चुनाव-चिह्न झोपडा रखा है। झोपडी, जिसम भारत की गरीब जनता निवास करती है।

गदेलू :—सब बहलाने की बातें हैं नेताजी, कांग्रेसवाले भी ठीक ऐसे ही कहते हैं कि किसानों की भलाई के लिए हमने अपना चुनाव-चिह्न रखा है बैलों की जोड़ी। लेकिन इतने दिन हो गये, कांग्रेसी लोगों को राज करते, बताइये न हमारे लिए उन्होंने क्या किया ?

मनोहर प्रसाद :—बिलकुल ठीक गदेलू बाबू, कांग्रेस ने आपके लिए, देश के लिए कुछ भी नहीं किया। कांग्रेसी राज ने जनता को धोखा दिया। लेकिन हम जनता के आदमी हैं, हम ऐसा नहीं होने देंगे। हम तो जनता के लिए ही जियेंगे और जनता के लिए ही मरेंगे। बस एक बार मौका दीजिये गदेलू बाबू, एक बार हमारी पार्टी की सरकार बन जाय, तो फिर देखिये हम क्या-क्या कमाल दिखाते हैं !

गदेलू —बहुत वादे किये थे कांग्रेसी नेता लोग भी, लेकिन पटना-दिल्ली पहुँचते ही सबकी आँखें बदल जाती हैं।

मनोहर प्रसाद —लेकिन हमने सिर्फ वादा ही नहीं किया है गदेलू बाबू, काम भी किया है। यह देखिये (हाथ से लिखी वोटर लिस्ट दिखाते हुए) हमारी पार्टी ने वोट देनेवालों की सूची तैयार की है तो आप लोगों के नाम के आगे यादव नहीं 'सिंह' लिखा है, और आप कांग्रेसवालों का कागज देख लीजिये, उसमें सबके नाम के आगे यादव, कुर्मी, मंडल यही सब लिखा है।

गदेलू —(आश्चर्य से) ऐं ! ऐसी बात।

मनोहर प्रसाद :—इसीलिए तो कहता हूँ गदेलू बाबू, कांग्रेस-वाले कभी जनता को, छोटे लोगों को इज्जत नहीं देना चाहते। सबको जहाँ का तहाँ रखना चाहते हैं, ताकि उनका उल्लू सीधा होता रहे। मेरी सलाह मानिये और कांग्रेस को हराइये, देश बचाइये।

गदेलू —तब तो आप निसखातिर रहिये बाबूजी, यादव और कुर्मी टोले का वोट तो आप···(बीच में ही गदेलू का १२ बरस का लड़का पंचानन स्कूल से पढ़कर लौटता दिखाई देता है। उसके कपड़ों पर स्याही के धब्बे हैं, उसके दाहिने हाथ में किताबों का बण्डल और बायें हाथ में स्याही की दावात है। उसे देखते ही गदेलू पास पुकारता है।)

गदेलू :—अरे बेटा पंचानन, यहाँ आ तो जरा, देख इस कागज में क्या लिखा है ? (लड़का पास आकर बैठ जाता है। गदेलू मनोहर प्रसाद के हाथ से कागज लेकर उसे पढ़ने को देता है।)

पंचानन :—(कागज पढ़ते हुए) मान सिंह, लाल सिंह, बंसलोचन सिंह, गदेलू सिंह···(आश्चर्य से) यहाँ 'सिंह' कैसे लिखा है बाबू ! हम तो यादव हैं।

गदेलू :—'यादव' थे अंग्रेजी राज में, कांग्रेसी राज में, अब मनोहर बाबूवाली समता पार्टी का राज होनेवाला है। जो काम कांग्रेसी इतने दिनों में नहीं किये, मनोहर बाबू ने उसे चुटकी बजाते कर दिया, अब हम यादव नहीं, 'सिंह' हैं 'सिंह' !

पंचानन —लेकिन यह कागज है कैसा ?

गदेलू—वोट देनेवालों की सूची है, वोटर-लिस्ट !

पंचानन —लेकिन यह हाथ से लिखा है। हमारे मास्टर साहब कहते थे कि वोटर-लिस्ट सरकार तैयार कराती है, और छपवाती है।

मनोहर प्रसाद —अरे जा-जा बेटा, तू क्या जाने ये राजनीति की बातें। तू स्कूल से थका-माँदा आया है, जा माँ से कुछ माँग कर खा-पी, खेल-कूद।

मंगल —(पंचानन की पीठ ठोकते हुए) हाँ-हाँ जा, घर जा, तू अभी बच्चा है, बड़ों की बात कैसे समझेगा ?

(पंचानन जाता है)

मनोहर प्रसाद—लड़का बड़ा होनहार मालूम पड़ता है। किस दर्जे में है ?

गदेलू —आठवीं में है बाबूजी, एक ही बेटा है, सोचता हूँ इसे ओमें सब पढ़ा डालूँ। भले कुछ जमीन ही बेचनी पड़े।

मनोहर प्रसाद —अरे, हम किस दिन के लिए हैं भाई ! हाईस्कूल तक पढ़ ले तो लड़के को मेरे हवाले कर दीजियगा, आगे जहाँ तक पढ़ सकेगा, वहाँ तक पढ़ाने की जिम्मेदारी मेरी···

गदेलू —धन्य हो मनोहर बाबू ! थोड़ा जलखै मँगाऊँ, काफी देर हो गयी ?

मनोहर प्रसाद —नहीं ''नहीं'' अभी और भी कई जगह जाना है, फिर कभी इतमीनान से आयेंगे तो खायेंगे-पीयेंगे···बस जरा अपनी 'झोपड़ी' का ध्यान रखियगा।

(उठकर साथियों सहित जाने लगते हैं।)

गदेलू :—(उठकर) एक बार कह दिया तो कह दिया, आप निसखातिर रहिये बाबू, यादव और कुर्मी टोले का वोट आपकी 'झोपड़ी' में ही गिरेगा। ''अच्छा परनाम''

मनोहर प्रसाद :—(हाथ जोड़कर कुछ झुककर) अच्छा परनाम !

(उधर मनोहर प्रसाद अपने साथियो सहित जाते हैं, इधर गदेलू भी घर जाते हैं, और तभी बमभोलानाथ पहले जैसे लिवास मे ही एक ओर से गाते हुए आते हैं।)

बमभोलानाथ :—(एक हाथ में डण्डा है, दूसरा हाथ बायी कनपटी पर।)

देखो, आया है फिर मौसम यह चुनाव का,
जुलूस का, पथराव का ना !
घर घर घूमे नेता लोग
माँगें भोट दिखा के लोभ
ऊब गये वादों से सब लोग,
बढ़ा दिल मे जन-जन के क्षोभ
जमाना फिर आया फरियाद का, बहकाव का,
जुलूस का पथराव का ना !

(गाते-गाते दूसरी ओर चले जाते हैं। चुनाव के नारो की आवाज सुनायी पड़ती है, पर्दा गिरता है।)

अंक : ३
दृश्य : १

वादे, कोरे वादे, और मिली-जुली सरकार

(नवरंगपुर हाईस्कूल के मैदान मे रंगीन झण्डियाँ लगी हैं। चारों तरफ चहल-पहल है। मैदान मे एक सभा बैठी है, जिसमे मनोहर प्रसाद, दशरथ मण्डल, खेदू पासवान, अलीउद्दीन खाँ सजधजकर बैठे हैं। मनोहर प्रसाद के सिर पर लाल-हरी दुरंगी टोपी है। दशरथ मण्डल के सिर पर काली और खेदू पासवान के सिर पर लाल टोपी है। दर्शको मे एक ओर कुछ मायूस से उग्रसेन भी बैठे हैं; उनके सिर पर सफेद टोपी है। सबके साथ हरिनारायण सिंह बैठे हैं। पर्दा उठता है, तो वही भाषण करते हुए दिखाई पड़ते हैं।)

हरिनारायण सिंह :—भाइयो, भारत के इतिहास मे एक नया मोड़ आया है। लगातार उन्नीस-बीस वर्षों के कांग्रेसी शासन के बाद अब राज्य मे गैरकांग्रेसी सरकार बनी है। खुशी की बात है कि यह सरकार कांग्रेस को छोड़कर बाकी सभी दलो की मिली-जुली सरकार है, और उससे भी खुशी की बात यह है कि कांग्रेस ने जो नही किया, यह सरकार उसे पूरा करेगी और भी जनता की भलाई के लिए कुछ नये-नये काम करेगी, यह हमारी आशा है, और यह नयी सरकार का दावा भी है। लेकिन यह सभा बुलाने का मेरा मकसद बहुत छोटा है। कांग्रेस ने भूमि-सुधार के कुछ अच्छे कानून बनाये थे, लेकिन वे केवल कानून बनाये थे, जो फाइलों मे पड़े रहे। मैं इस नयी सरकार से प्रार्थना करता हूँ कि वह इन कानूनों को लागू करने के बारे मे ठोस कदम उठाये, ताकि राज्य के किसान-मजदूरों की दयनीय हालत में सुधार हो। मैं खास तौर पर पाँच बातो पर तुरन्त सरकार से अमल करने का निवेदन करता हूँ : १—बास-भूमि सम्बन्धी कानून, २—भूमि-हदबन्दी कानून, ३—बँटाईदारी कानून, जमीन मे अधिक उपज के बँटवारे के सम्बन्ध मे भी, ४—महाजनी कानून, ५—खेतिहर मजदूर सम्बन्धी कानून। अगर ये कानून कारगर ढंग से और तेजी से अमल मे लाये गये तो गाँव की बुनियादी हालत सुधर जायगी।

मनोहर प्रसाद :—हमारी सरकार सभा को यह विश्वास दिलाती है कि इस मसले पर सबकी जो राय होगी, उसे अमल मे लायगी।

उग्रसेन :—इस काम मे कांग्रेस पार्टी का पूरा सहयोग मिलेगा।

दशरथ मण्डल :—हमारी पार्टी का निश्चित मत है कि भूमि के मामले मे कुछ रद्दो-बदल नही होनी चाहिए।

खेदू पासवान :—यानी कि आपके विचार से ये कानून नही लागू होने चाहिए ?

दशरथ मण्डल :—हर्गिज नही। अगर ये कानून लागू हुए तो गृहयुद्ध छिड जायगा।

खेदू पासवान : लेकिन मैं कहता हूँ कि ये कानून लागू किये जायँगे, और जरूर किये जायँगे। हमने गरीब जनता के सामने वादा किया है।

दशरथ मण्डल :—और मैं कहता हूँ कि ये कानून हम किसी भी कीमत पर लागू नही होने देंगे। हमने भी जनता के हितों की रक्षा का वचन दिया है, और हम अपना फर्ज निभायँगे।

खेदू पासवान :—तुम पूँजीपतियो के पिट्ठू हो।

दशरथ मण्डल :—तुम गद्दार हो, चीन के दलाल हो !

मनोहर प्रसाद :—(खड़े होकर हाथ जोडकर) साथियो, यह जनता की सभा है, विधान-सभा नहीं है। हमें संयम से काम लेना चाहिए। आप लोग शान्तिपूर्वक हरी बाबू के सुझाव पर विचार करें।

हरिनारायण सिंह :—(उदास होकर) भाइयो, हमने जिस लिए यह सभा बुलायी थी वह उद्देश्य पूरा होता दिखाई नहीं देता। और हम यह नहीं चाहते कि इस सवाल को लेकर यह नयी बहुरंगी सरकार टूट जाय। इसलिए हम अपना सुझाव वापस लेते है। और अब सभा की कार्रवाई समाप्त की जाती है।

(तभी दर्शकों में से बमभोलानाथ खड़ा होकर गाने लगते हैं। सभी नेता उठकर जाते हैं।)

बमभोलानाथ :—

बदल गयी सरकार जमाना ना बदला।
गद्दी खातिर जमी टोपियाँ बहुरंगी,
उजली हरी, काली, लाल, हरी जोनो,
नेताओं की चाल मगर है दोरंगी,
स्वारथ में मशगूल प्रजा मारी फिरती।
बदल गयी है तान, गीत पर ना बदला,
बदल गयी सरकार जमाना ना बदला।

एक वृद्ध श्रोता :—जीयो बमभोला। सच्ची बात कहते हो, सुर बदला, गीत नहीं।

(पर्दा गिरता है।)

दृश्य : २

सुकारु चल बसी

(पर्दा उठता है तो मंच पर एक बुढ़िया की लाश पड़ी दिखाई देती है। बमभोला एक ओर से लंगड़ाता हुआ आता है, 'बदल गयी सरकार जमाना ना बदला' का गीत गाते हुए। तभी उसकी निगाह लाश पर पड़ती है।)

बमभोलानाथ :—अरे, यह तो सुकारु भिखारिन है, बाह्मन टोले की विधवा बुढ़िया। (हिला-डुलाकर देखता है) ''चली गयी ' सारा दुख दूर हो गया'' जिनिगी भर दुख का बोझा ढोते-ढोते थक गयी थी बेचारी'' आखिर कब तक ढोती ?'' रामनाम सत्त हो गया आखिर। (दूसरी ओर से हरिनारायण सिंह का प्रवेश)

हरिनारायण सिंह :—क्या हुआ भोलेनाथ ?

बमभोलानाथ :—हुआ क्या'' राम नाम सत्त हो गया।

हरिनारायण सिंह :—(चौंककर) ऐं किसका ?

बमभोलानाथ :—सुकारु भिखारिन का।

हरिनारायण सिंह :—बेचारी चल बसी। (बैठ जाते हैं) अरे तो अब देख क्या रहे हो, जाओ बुला लाओ''

बमभोलानाथ :—किसको बुला लाऊँ ? कौन है इसके रिश्ते में ?

हरिनारायण सिंह :—अरे भाई और कोई नहीं तो गाँव के लोग हैं न ? क्या गाँव में लावारिस लाश पड़ी-पड़ी सड़ती रहेगी ? जाओ जल्दी करो, मैं जाकर कुछ कफन वगैरह का इन्तजाम करता हूँ। (दोनों भिन्न दिशाओं में जाते हैं। नेपथ्य से 'रघुपति राघव राजाराम' का पाठ सुनाई पड़ता है। कुछ ही पल में बमभोला कुछ लोगों के साथ और हरिनारायण सिंह कफन आदि सामान के साथ लौटते हैं। 'रघुपति राघव राजाराम' का भजन अभी धीरे-धीरे चल ही रहा है। सब लोग मिलकर लाश श्मशान ले जाने की व्यवस्था करते हैं।)

एक ग्रामीण :—लेकिन इसको आग कौन देगा ?

बमभोलानाथ :—जिसका दुनिया में कोई नहीं, उसका सहारा बमभोलेनाथ। (सब मिलकर लाश उठाते हैं, और 'राम नाम सत्त है' बोलते चले जाते हैं। पर्दा गिरता।)

दृश्य ३

गाँव बदल गया

(बमभोलानाथ का मकान। बमभोलानाथ सिर मुड़ाये हैं, दाढ़ी-मूँछ भी साफ है। एक साफ धोती आधी पहने आधा ओढ़े बैठे हैं। गाँव के और लोग हरिनारायण सिंह, गदेलू यादव, दौलत राम, नेकराम, बोदई वगैरह बैठे हैं। आज सुकारु भिखारिन का श्राद्ध-दिन है। गाँववालों की आपस में बात चल रही है। धीरे-धीरे काफी लोग इकट्ठा हो गये हैं।)

दौलतराम :—अन्त समय में किसीके साथ कुछ जाता नहीं। जीवनभर हाय-हाय करके मरो, लेकिन 'मुट्ठी बाँधे आया जग में, हाथ पसारे जायगा।'

हरिनारायण सिंह :—ज्ञान की बात है दौलतरामजी, लेकिन जीवनभर टिका रहे तब न।

बमभोलानाथ :—कैसे टिका रहेगा, दुनिया का प्रपंच माथे पर पड़ा हुआ रहता है तो।

हरिनारायण सिंह :—बमभोलानाथ, दुनिया में दुख जरूर है, लेकिन वह बेहद बढ़ जाता है, जब आदमी आदमी को

सोचने की कोशिश करने लगता है, वर्ना भगवान् ने क्या नहीं दिया है, काम करने को हाथ, सोचने को दिमाग, विशाल धरती'' जिस पर आदमी चाहे तो दूध की नदी बहा दे !

नेकराम :—लेकिन वह खून की नदी बहाने पर ही तुला हुआ है भैयाजी।

गदेलू :—अब तो नवरंगपुर मे यही होता दिखाई दे रहा है।

हरिनारायण सिंह —भाई, आपलोग हमारी एक नेक सलाह मानो तो गाँव का उद्धार हो जाय। सबके दुख दूर हो; जाना तो एक दिन सबको है ही भगवान के पास, लेकिन जब तक जिन्दगी है कुछ ऐसा इंतजाम करें कि प्रेम से मिलकर रह सकें, सुख से जी सके।

गदेलू —यह सपना अब पूरा नहीं होगा बाबूजी, अब तो नयी सरकार को भी देख लिया। सब आपस मे ही लड़कर मर रहे हैं, जनता के दुखदर्द को कौन सुनेगा ?

हरिनारायण सिंह—एक ही उपाय है 'कर बहियाँ बल आपनो, छाड बिरानी आस !'

नेकराम :—यह तो कहावत हुई, कुछ उपाय भी है ?

हरिनारायण सिंह —उपाय है, अगर सब लोग उसे अमल मे लायें !

गदेलू :—बताइये न क्या उपाय है ?

हरिनारायण सिंह :—तो सुनिये, गाधी बाबा के एक चेला हैं विनोबा बाबा, विनोबा बाबा कहते हैं कि गाँव की रक्षा के लिए ग्रामदान करो।

सब :—(एक साथ चौंककर) ग्रामदान ? गाँव किसको दान कर दें ? खुद कहाँ जायँ ?

हरिनारायण सिंह :—कही जाना नही है, किसीको देना नहीं है। खुद ही देना है, खुद ही लेना है। देखिये तोर-मोर की बुनियाद है 'खेत' की मेड़, यानी निजी मालिकी। इस अपनी-अपनी मालिकी को पूरे गाँव की कर दीजिये। सारे गाँव की एक ग्रामसभा बना लीजिये, और बीघे मे कट्ठा के हिसाब से अपनी-अपनी जोत की जमीन से खेती लायक जमीन निकालकर बेजमीनो को दे दीजिये। आखिर गाँव मे रहनेवाले बेसहारा लोगो को गाँव मे सहारा नही मिलेगा तो कहाँ मिलेगा ? कौन देगा ?

बमभोलानाथ —बात तो आपकी ठीक लगती है, लेकिन इसे क्या सब लोग मानेंगे ?

दौलतराम —गाँव में जीना है, और गाँव मे ही मरना है तो सबके दुख-सुख मे शरीक होना ही आदमीयत की निशानी है बमभोलानाथ। अगर गाँव के सबलोग यह बात मान लें तो गाँव की कायापलट हो जाय।

हरिनारायण सिंह —हाँ सेठजी, आप ठीक कहते हैं। एक जमाना था जब राजा और पुरोहित मिलकर जनता को सताते थे। अंग्रेजी राज हुआ तो देश की दौलत लन्दन जाने लगी। जनता के कन्धो पर अंग्रेजी राज चढ़ बैठा था। वह कुछ बोल नही सकती थी। पूँजी, बुद्धि और मेहनतवालो की नकेल अंग्रेजी शासन के कब्जे मे थी। बेचारी प्रजा निर्बल और असहाय थी। गाधी बाबा ने और दूसरे देश के नेताओ ने जनता को झकझोरा, जगाया। और जब जनता जागी, तो अंग्रेजी हुकूमत भागी।

गाँव की बात : चित्रांक

बमभोलानाथ :—यह तो ठीक है हरी बाबू, कुछ मेरी भी तो सुनिये :

गोरा बाबू उतर गये हैं
जनता के कंधे से,
काला बाबू लेकिन चढ़
बैठे हैं अब ऊपर से !

दौलत सब दौड़ी जाती है
गाँव छोड़कर नगरों में,
भूखे-प्यासे मेहनतकश हैं
मारे-फिरते डगरों में ।

महँगाई आकाश छू रही,
नेता उलझे वादों में,
है विकास की माया ऐसी,
नोट बहे परनाला में,
'दायें' 'बायें' 'आगे' 'पीछे'
दल की गहरी खाई है,
जाये जनता किधर सब तरफ
अँधियारी घिर आयी है ।

हरिनारायण सिंह :—भोलानाथ की बात बिलकुल ठीक है। इसीलिए विनोबा बाबा का कहना है कि अब नेताओं का भरोसा छोड़ो, सरकार का सहारा छोड़ो और गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य का नया आधार बनाओ। गाँव की मेहनत, गाँव की पूँजी, गाँव की बुद्धि, सबका सहकार गाँव के विकास के लिए हो। गाँव ही

गाँव की योजना बनाये। न जरूरत है नेता की, और न गाँव का धन चूसकर शहर ले जानेवालों की, झगड़ा-फसाद की नींव खोद डालो, गाँव के विकास में गाँव की सामूहिक शक्ति लगे, सबके हित के लिए काम हो। गाँव के लोगों का निर्णय ही गाँव में गाँव का राज लायगा। इसलिए हमारी तो सबसे प्रार्थना है कि आइये, हम सब इस मौके पर संकल्प करें और घोषणा करें कि 'हम अपने गाँव में ज्ञान, भक्ति और कर्म का संगम प्रकट करेंगे, ग्रामस्वराज्य लायेंगे।'

दौलतराम :—मैं तैयार हूँ।
बमभोलानाथ :—बमभोला भी पीछे नहीं हटेगा।

गदेलू —यादव टोले की ओर से मेरा वादा है कि हम सबके साथ हैं।

नेकराम —और दुसाध टोले की ओर से मेरा भी

हरिनारायण सिंह —तो भाइयो, अबतक हम बोलते रहे अपनी-अपनी जय, फिर बोलते रहे राजनीतिक दलो की जय, अब हम बोलेंगे 'नवरग पुर की'

सब एक साथ —'जय'

बमभोलानाथ —'भारत माता की'

सब एक साथ —'जय'

(अचानक मनोहर प्रसाद का प्रवेश होता है। उनके माथे पर टोपी नही है, कुछ थके से हैं। उनको देखकर गाँववाले खामोश हो जाते हैं।)

हरिनारायण सिंह —कहिये मनोहर बाबू, एकाएक कैसे पधारे ?

मनोहर प्रसाद —हरीबाबू, हमारी सरकार पर सकट आ गया है। हम अपनी सरकार के समर्थन म जगह-जगह प्रदर्शन करना चाहते हैं, हमारा निवेदन है कि आप सब उसमे शामिल होइये।

गदलू —माफ कीजिये मनोहर बाबू बहुत कर चुके परदशन, बहुत बहक चुके हम लोग आप लोगो के साथ अब हम आपके साथ नही जायँगे, हम सब एक दूसरे के साथ रहेगे अब अपनी टोपियो का रग बदल-बदल कर आप हमे नही ठग सकते।

हरिनारायण सिंह —चुप रहो गदेलू, गाव मे आये किसी आदमी का अपमान नही करते। हा, लेकिन मनोहर बाबू, आज नवरगपुर फिर जाग गया है। हमने एक बनने और नेक बनने का सकल्प कर लिया है। छोडिये न इस दल के दलदल को, गाँव के लोगो ने दिला को बाटनेवाले खेत की मेडो को तोडने का फैसला कर लिया है, आप भी दरार पैदा करनेवाली सत्ता की कुर्सी का मोह छोडिये आइये, इस ग्रामस्वराज्य की नयी यात्रा मे शरीक हो जाइये, स्वागत है आपका !

बमभोलानाथ —हा मनोहर बाबू, अब तक आप नेता लोग हमे अपने साथ इस-उस दल के दलदल मे फँसाते रहे अब हमारी और हमारे गाँव की पुकार है, सुनिये, मानिये और साथ दीजिये।

मनोहर प्रसाद —(दोनो हाथो से माथा पकडकर बैठ जाते हैं) आप लोगो की ही बात सही मालूम पडती है, भाइयो, लेकिन मुझे कुछ वक्त दीजिये सोचने का ! मैं बहुत परीशान हूँ !

बमभोलानाथ —वक्त नहीं इंतजार करता है
जो चले साथ उन्ह लेके बढ़ा करता है।

(पर्दा गिरता है)

समाप्त

इस अंक का मूल्य : चालीस पैसे

'गाँव की बात'। वार्षिक चदा चार रुपय, एक प्रति अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

९ फरवरी '६८ अंक : १९

इस अंक में

सूचना

भूदान-यज्ञ का अगला अंक भी ८ पृष्ठों का ही होगा। —सं०

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति : २० पैसे

विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—

१८ रु० या १ पौण्ड या ३।। डालर

(हवाई डाक-शुल्क : देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४२८५

बिहारदान : दलमुक्त प्रजातंत्र के लिए

बिहार के ७१ हजार गाँवों में से १६,५०० ग्रामों ने ग्रामदान के सिद्धान्त को मान्य किया है। अर्थात् करीब चौथाई गाँव हैं, जिन्होंने पिछले कुछ वर्षों में इस विचार को मंजूर किया है।

उत्पादक साधनों की सम्पत्ति व्यक्तिगत न होकर सामाजिक होनी चाहिए। यह इसलिए कि इससे हिंसा पैदा होती है। हम चाहते हैं कि जमीन की सम्पत्ति का अधिकार व्यक्ति के बजाय समाज का हो। उसके लिए गाँववालों को ग्रामदान-विचार के लिए राजी करते हैं। अर्थात् :

(१) व्यक्तिगत मालिकी के स्थान पर जमीन की सामाजिक मालिकी मान्य की जाय। यद्यपि व्यक्ति के, सिवाय जमीन बेचने के, और सभी पुराने अधिकार कायम रहें।

(२) अपनी खेती लायक भूमि का बीसवाँ हिस्सा ग्रामसभा को भूमिहीन के या ग्रामकार्य के लिए अर्पण करें।

(३) जो बाकी १९/२० जमीन उसके पास बचे, उसमें से मनमें सेर उपज तथा जो बेजमीन हैं, वे माह में एक दिन की मजदूरी गाँव के लिए दें। इस प्रकार सभी गाँववाले अपने पास जो है, उसमें से न्यायपूर्ण हिसाब से गाँव को दें। इससे ग्रामीण जीवन पर एक आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक राजनैतिक प्रभाव पड़ेगा।

(४) हर गाँव में ग्रामसभाएँ संगठित हों, और उनके सर्वानुमति से निर्णय और कार्य हों।

१६,५०० बिहार के गाँवों ने यह बात मान ली है। हमारा उद्देश्य है कि सम्पूर्ण बिहार-ग्रामदान-विचार से व्याप्त हो जाय। इसके लिए हम २ अक्तूबर, '६८ तक पूरी ताकत लगानेवाले हैं, इसका अर्थ है कि बिहार की ७५ प्रतिशत आबादी, ५१ प्रतिशत कृषि योग्य भूमि इसमें आ जानी चाहिए। तब हम उसे बिहार-दान का नाम देंगे।

सन् '७२ तक हम चाहते हैं कि गाँवों में ग्रामसभाएँ बन जायँ। इनमें जो आबादी है, वह 'कान्सेन्सस' (सर्वानुमति) के आधार पर यदि राजनैतिक प्रजातंत्र की बुनियाद बन जाय, तो दलमुक्त प्रजातंत्र का स्वरूप खड़ा हो सकता है।

आज जो स्थिति है, उसमें साम्यवादी भी कानून से जमीन का बँटवारा नहीं करा सकते। लेकिन ग्रामदान आन्दोलन के द्वारा यह काम और उसका वातावरण तैयार किया जा सकता है।

'गांधी-शांति-आन्दोलन की कमजोरी है कि यह केवल ग्रामीण क्षेत्र को ही प्रभावित करता है और उसका कोई असर औद्योगिक नागरिक क्षेत्रों पर नहीं है'—यह मानने का कोई कारण नहीं है, क्योंकि जो काम बिहार तथा दूसरे प्रान्तों में हुआ है, वह शहरों पर भी असर कर सकता है, करेगा ही।

वाराणसी, २०-१-६८

—जयप्रकाश नारायण

समाचार डायरी देश :

२९-१-'६८ : रूस और भारत के प्रधान मन्त्रियो ने दोनो देशो के बीच आर्थिक सहयोग बढ़ाने पर बल दिया ।

३०-१-'६८ : हिन्दी-साहित्यकार श्री माखनलाल चतुर्वेदी का खण्डवा में देहान्त ।

३१-१-'६८ : काशी में हिन्दी के मूर्धन्य विद्वान श्री पद्मनारायण आचार्य का देहान्त ।

१-२-'६८ : राष्ट्रपति ने नयी दिल्ली में आयोजित संयुक्त राष्ट्रीय व्यापार सम्मेलन में कहा, 'सम्मेलन के विचार-विमर्श से एक ऐसे विश्व-समाज के निर्माण में मदद मिलेगी जिसमें जनसाधारण को अपनी मेहनत का उचित हिस्सा मिल सके, तथा कमी व अभाव से मुक्ति मिले ।'

२-२-'६८ : विश्व व्यापार व विकास-सम्मेलन के महासचिव ने विकसित और विकासशील देशो के मध्य व्याप्त विषमता दूर करने की जिम्मेदारी समृद्ध देशो की बतायी ।

४-२-'६८ : प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का अण्डमान द्वीपवासियो ने हार्दिक स्वागत किया । भारत के प्रधान मंत्री की यह पहली अण्डमान-यात्रा है ।

विदेश :

२९-१-'६८ : *अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा* जून '६८ में समाप्त होनेवाले वित्तवर्ष के लिए १६ अरब ८० करोड डालर घाटे का बजट पेश ।

३०-१-'६८ : इसराइली सेना ने स्वेज नहर के पूर्वी तट पर मिस्री जहाजो पर गोलाबारी की ।

३१-१-'६८ : वियतकाग छापामारो के जबर्दस्त हमलों के कारण आज सैगोन सहित सारे दक्षिण वियतनाम में युद्ध भड़क उठा ।

१-२-'६८ : साम्यवादी वियतकाग छापामारों ने दक्षिण वियतनाम के प्रमुख नगरो पर अधिकार कर लिया ।

२-२-'६८ : दक्षिण वियतनाम में अनेक प्रान्तो और २४ *हवाई अड्डो पर वियतकाग ने* अधिकार कर लिया ।

३-२-'६८ : अमरीकी कमान के ब्रि० जनरल ने कहा है कि इस समय द० वियतनाम के उत्तर में भीषण युद्ध हो रहा है ।

आखिरी डाक से

● म० प्र० के पश्चिम निमाड़ की पूरी सेंधवा तहसील ३० जनवरी को ग्रामदान में आ गयी । इस में ३ प्रखड हैं । तहसील के लगभग ९०% गाँव ग्रामदान में शामिल हैं ।

● बिहार के—सारन जिले का उचका गाँव प्रखडदान २२ जनवरी '६८ को विनोबा को सोनपुर में समर्पित किया गया ।

—पूर्णिया जिले का रानीगज प्रखडदान २६ जनवरी '६८ को घोषित हुआ ।

● पजाब में १०४ कार्यकर्ताओ ने सोनीपत और राई प्रखण्ड के ११७ गाँवो से सम्पर्क किया, ८३ ग्रामदान मिले । पजाब में ग्रामदान की कुल सख्या अब ३२४३ है ।

● जनवरी '६८ में महाराष्ट्र के थाना जिले में ७१ ग्रामदान प्राप्त हुए ।

● जनवरी '६८ अब तक भारत मे कुल—ग्रामदान : ५०,३७५, प्रखण्डदान : २५३, जिलादान : २; और बिहार में—कुल ग्रामदान : १६,८३९, प्रखण्डदान : ११९, जिलादान : १ ।

● राजगीर : ४ फरवरी '६८ । बिहार-दान के सदर्भ में आयोजित बिहार राजनीतिक सर्वदलीय परिषद् में भाग लेनेवाले काग्रेस, जनसघ, प्रसोपा और ससोपा के नेताओ ने अपना-अपना सहयोग देने की घोषणा की । इन्हीं दिनों पटना हो रहे साम्यवादी दल के अधिवेशन के कारण साम्यवादी नेता इस परिषद् में भाग नही ले सके, इसके लिए दल के नेता ने पत्र द्वारा खेद प्रकट किया । अध्यक्षता श्री जयप्रकाश नारायण ने की, आचार्य *विनोबा ने परिषद्* को सम्बोधित करते हुए कहा कि भारत की वर्तमान परिस्थिति आखिरी तपस्या की माँग कर रही है ।

विनोवाजी का कार्यक्रम . फरवरी '६८

८ तक राजगीर में, ९—बिहार शरीफ, १०—बाढ, ११—बड़हिया, १२ से २२ मुगेर, २३—निर्णयाधीन, २४ से २९ बेगूसराय ।

पता: विनोबा-निवास
द्वारा : जिला सर्वोदय मण्डल,
तिलक-मैदान, मुगेर (बिहार)
फो० न० २६४

अध्यापकों का संकल्प-पत्र

आज जब कि हमारे देश का वातावरण भाँति-भाँति प्रकार की हिंसात्मक घटनाओ से विषाक्त और आतंकित हो रहा है और जिनका दमन करने के लिए पुलिस द्वारा विश्वविद्यालय के अहातो तक का अतिक्रमण होने लगा है, हम शिक्षको का यह प्राथमिक कर्तव्य हो गया है कि हम स्वय अपनी शक्ति से उन सारे उपद्रवों का शमन करें और अपने परिवेश में शान्ति को स्थायी रूप मे सुप्रतिष्ठित करें ।

इससे भी अधिक हम अपने विश्वविद्यालय के अहातो में ही अपनी समग्र शक्ति को न नि शेष समझकर सारे देश को विश्वविद्यालय का ही प्रशस्त और विराट प्रागण समझें और उसमें किसी भी प्रकार का हिंसात्मक विस्फोट हो और पुलिस उसका दमन करने आये, इसका कभी अवसर ही न आने दें । हमारी शमन-शक्ति सर्वोपरि हो ।

यों तो न्याय-विभाग की भाँति शिक्षा-विभाग की स्वायत्तता भी सर्वमान्य है, किन्तु उसे सच्चे अर्थ में उपलब्ध एव कार्यान्वित करने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा सत्ता के पीछे न भागकर स्वय अपनी स्वतन्त्र शक्ति का वि स करे ।

उपरिनिर्दिष्ट प्राक्कथन से मैं सहमत हूँ और सकल्प करता हूँ कि —

(क) मैं किसी भी राजनीतिक पक्ष का सदस्य न बनूँगा और न चुनावो में किसी पक्ष विशेष का प्रचार ही करूँगा ।

(ख) सारे राज्य को शिक्षा का कार्य-क्षेत्र *मानकर विचार द्वारा अशान्ति* के शमन का प्रयास करूँगा, जिससे अशान्ति के दमन के लिए दण्ड-शक्ति का उपयोग न करना पड़े ।

नाम ....
पता ....
....
हस्ताक्षर ....
तारीख ....

[विनोबा की उपस्थिति में मुजफ्फरपुर में आयोजित शिक्षाविदों की गोष्ठी में तैयार किया गया सकल्प-पत्र, जिसे बिहार के शिक्षक त्वरा के साथ भरना रहे हैं ।]

शतरंज : बाजी किसकी, मात किसकी ?

तब की बात है जब बर्नर्ड शा जीवित थे। एक बार वह अमेरिका गये। वहाँ से लौटकर उन्होंने एक किताब प्रकाशित की जिसका शीर्षक रखा 'एक राजनैतिक पागलखाना' (ए पोलिटिकल मैड हाउस)। शा चोट की भाषा में लिखने में अद्वितीय थे। अगर वह आज दोबारा जीवित हो उठते, हमारी राजधानियों में घूम जाते, और एक दूसरी किताब लिखते तो उसका क्या नाम रखते ?

अभी कुछ ही दिन हुए संसोपा के नेता श्री मधु लिमये बिहार का हाल देखकर कह उठे कि एम० एल० ए० उसी तरह बिक रहे हैं जिस तरह सोनपुर के मेले में गाय, बैल बिकते हैं। इस पर बिहार के एक पत्र ने लिखा कि भाषा कड़ी है। हाँ, भाषा कड़ी है, पर तथ्य क्या है ? गाय एक नहीं दस बार बिके, वह दूध देती रहती है, और बैल बार-बार बिककर भी हल जोतना नहीं छोड़ता। लेकिन एम० एल० ए० तो बिककर दो कौड़ी का हो जाता है। प्रश्न बिकने का उतना नहीं है जितना इस बात का है कि क्या इस राजनैतिक खरीद-बिक्री को देखते हुए भी श्री मधु लिमये मानते हैं कि राजनीति में कोई विधायक शक्ति रह गयी है ? कोई समय था जब राजनीति का विकास एक जबरदस्त सामाजिक शक्ति के रूप में हुआ था, लेकिन आज उसकी वह शक्ति कहाँ है ? क्या उसमें किसी भी समस्या को हल करने की शक्ति रह गयी है ? उस दिन सरकार के एक बड़े अधिकारी ने आपसी चर्चा में बिलकुल ठीक कहा कि पहले काम कम होता था या ज्यादा, कम-से-कम फाइल तो चलती थी, लेकिन अब तो फाइल भी नहीं चलती। चलने की जरूरत क्या है ? चलाने की फुरसत किसे है ? राजनीति सत्ता के पीछे इतनी पागल हो गयी है कि सही काम अब उससे हो नहीं सकता। खाद्य-समस्या, शिक्षा, भ्रष्टाचार, देश की प्रतिरक्षा, राष्ट्र की भाषा, आदि कोई भी बड़ा प्रश्न जब सामने आता है तो यह कहा जाता है कि इसे राजनीति से अलग रखा जाय, और राष्ट्रीय स्तर पर हल किया जाय। इसका साफ अर्थ यह है कि राजनीति में पड़कर समस्याएँ सुलझने के बजाय उलझती अधिक हैं, तथा राष्ट्र की शक्ति को जगाने में राजनीति सर्वथा असमर्थ है। राजनीति कुछ कर ही नहीं सकती तो है किसलिए ?

२५ ता० को बिहार की संविद सरकार गिर गयी। सरकार क्या गिरी, एक तमाशा था जो खत्म हो गया। 'कांग्रेस हटाओ' के नारे में कितना दम है, और उसकी आड़ में कितनी अवसरवादिता छिपी हुई है यह मालूम हो गया। दस महीनों में कोई बुनियादी काम नहीं हो सका। केवल तोड़-जोड़ हुआ। तारीफ यह है कि बिहार सरकार दूसरी संविद सरकारों से अच्छी मानी जाती थी। पहले के जमाने में जो उलट-फेर होता था महल के अन्दर हो जाता था और प्रजा को बाद में मालूम होता था। हमारी राजनीति ने महल की क्रान्ति के सामन्तवादी दिन फिर ला दिए। कुछ थोड़े-से राजनैतिक प्रभु राजधानी में बैठकर जो चाहे करते रहे, जनता के लिए तो दूर से तमाशा देखने के सिवाय और कुछ नहीं है। कहाँ है लोकतन्त्र, कहाँ है संविधान, कहाँ है प्रशासन, और देश का विकास ? कहा जाता था कि अंग्रेज 'लड़ाओ और शासन करो' (डिवाइड ऐण्ड रूल) की कूटनीति चलाते थे। हमारी नयी राजनीति ने उसे बदल दिया है। अब 'भ्रष्ट करो और गद्दी लो' (डिमारलाइज एण्ड रूल) की नीति चलायी जा रही है। साध्य की सिद्धि के लिए हर साधन सही माना जा रहा है—पैसे से खरीदो, डंडे से डराओ, भगाकर बन्द कर दो, बात से मुकर जाओ, और स्वार्थ के लिए देश के हित को तिलांजलि दे दो, आदि। यह सब चुनाव के पहले की सरकार में होता था, चुनाव के बाद की सरकार में हुआ, और आगे भी होगा। भारत की राजनीति में 'पैसे की शक्ति' को स्थान मिल चुका है। भ्रष्टाचार लोकतन्त्र का शिष्टाचार बन चुका है। राजनीति का यह नया 'पूँजीवाद' परिचित पूँजीवाद से कहीं अधिक भयंकर सिद्ध होगा। पूँजीवाद जब राजनीति में पहुँच जाता है तो लोकतन्त्र की हत्या दूर नहीं रह जाती।

कांग्रेस गयी, संविद सरकार आयी, और गयी। दूसरी संविद भी नहीं, अब तो एक व्यक्ति से बँधा हुआ एक गुट सामने आया है। जब एक बड़े दल का सहारा लेकर एक छोटे गुट की सरकार बनने लगी तो 'बहुमत की सरकार' का सिद्धान्त, जो लोकतन्त्र का आधार रहा है, कहाँ रह गया ? कहा जा रहा है कि अब 'एक दिलवाले दलों का भाईचारा' बनना चाहिए, यानी राजनीति को साफ-साफ 'राइट' और 'लेफ्ट' में बँटना चाहिए। लेकिन सोचने की बात है कि जब राजनीति संसद से निकल कर सड़क पर आ चुकी हो, बात-बात पर राष्ट्रीयता के लिए चुनौतियाँ खड़ी होती हों, तो राइट-लेफ्ट का अर्थ गृहयुद्ध के सिवाय दूसरा क्या होगा ?

राजनीति को यह सोचने और समझने की फुरसत नहीं है कि इस देश के करोड़ो-करोड़ लोग राइट और लेफ्ट के बीच में हैं। वे सीधे रास्ते पर चलना चाहते हैं, और अपनी मर्यादाओं में रहते हुए सुख और शान्ति का जीवन बिताना चाहते हैं। उनके लिए राइट और लेफ्ट की राजनीति के पास क्या है ? संविद से कांग्रेस हारी, लेकिन संविद में समाजवाद खो गया। लोकतान्त्रिक समाजवाद की आवाज कहाँ है ? सत्ता की राजनीति में—सत्ता से अलग राजनीति अब कुछ रह नहीं गयी है—समाजवादियों ने राइट-लेफ्ट के सघर्षवादियों की संगति अपनायी, लेकिन संघर्ष की कला में उनके साथी, उनसे ज्यादा माहिर निकले। सत्ता-लिप्सा में समाजवादियों ने समाजवाद को 'गरीब रिश्तेदार' बनाकर छोड़ा।

राजनीति क्या, शतरंज का खेल चल रहा है। मोहरे बदल हैं, बदलते रहेंगे। बाजियाँ जारी रहेंगी, लेकिन यह खेल चलता रहा तो आखिरी मात जनता की होगी। उसे तय कर लेना है कि यह खेल नहीं चलेगा, और जनता की मात नहीं होगी। ●

कोई हमारा विरोधी नहीं

अभी हम मंजिल मकसूद के नजदीक है, जहाँ हम पहुँचना चाहते हैं। लेकिन आखिरी मुकाम पर तो इस जिन्दगी में पहुँच भी नहीं सकते है। 'चरैवेति, चरैवेति'—सोलह साल तक चलते रहे। कुछ बात सोची भी थी और कुछ बिना सोची हुई। अब ऐसी जगह आये हैं, जहाँ सीधी चट्टान चढ़ने की जरूरत है। थोड़ा साहस करने की जरूरत है, तो हम पहुँच जायँगे। औषध तो खिला ही रहे है। ग्रामदान औषध है, जिससे जनता और हमारा स्वास्थ्य सुधरेगा। लेकिन पथ्य की भी जरूरत है। शहद के साथ ही दवा ली जाती है, जिसे अनुपान कहते हैं। इस समय हमसे कोई कटु शब्द नहीं निकलना चाहिए। कोई भले ही अपने को हमारा विरोधी माने, परन्तु कोई हमारा विरोधी नहीं है। सब हमारे भाई हैं। हम उन पर प्रेम ही कर सकते हैं। इसलिए किसीने विरोध किया, तो शांतिपूर्वक समझाना चाहिए कि हम आपके विरोधी नहीं है, हम आपका पूरा भला चाहते है।

मनु महाराज ने कहा है कि बात ठीक लगे तो कहना चाहिए—'ठीक है'– भद्र वेद'। लेकिन कोई बात ठीक न लगे तो कहना चाहिए 'ठीक है, ठीक है'—'भद्र भद्र इति ब्रूयात्'—'ठीक है, ठीक है' दो बार कहना चाहिए। अनेक पहलू मिलकर सत्य हाथ लगता है। सत्याग्रही को प्रथम सत्य का ग्राही होना चाहिए। मेरा ही सब सत्य, ऐसा सत्य का ठेका नहीं लेना चाहिए। ऐसी स्थिति में ठीक नहीं भी लगे, तो कहना—'ठीक है, ठीक है' —'भद्र भद्र', नहीं तो कहना 'भद्रम्'। 'टू निगेटिव मेक्स पाजिटिव', यह गणित सिखाता है, परन्तु यहाँ 'टू पाजिटिव मेक्स निगेटिव'। आपकी बात ठीक नहीं लग रही है तो भी कहना 'ठीक है, ठीक है'। मनु महाराज की बात इसलिए कह रहा हूँ कि सब जगह कटुता का वातावरण है। वहाँ मधुर व्यक्ति मिल जाय तो सारी कटुता को जीतकर दुनिया को भी जीत लेगा।

दूसरी बात अपने मन में से भी वर्ग भेद निकाल देना चाहिए। भगवान ने हर मनुष्य को नंगा पैदा किया है और नंगा ही जाना है। इसलिए हर मनुष्य एक ही वर्ग का है। वर्ग बनायेंगे तो एक छोटा भाई और दूसरा बड़ा भाई होगा। वेदों को कहना पड़ा—'अज्येष्ठास अकनिष्ठास' यानी न कोई बड़ा भाई, न छोटा भाई। हमको समझना चाहिए कि हम एक ही नौका में बैठे हुए है। यदि नौका डूबेगी तो सब डूबेंगे। साथ डूबने और साथ तैरनेवाले है, ऐसा पक्का विश्वास होना चाहिए। इसलिए नयी गलत धारणाएं वैचारिक क्षेत्र में फैली हुई हैं–हितों का विरोध, जो काल्पनिक है। यदि एक मनुष्य मजबूत हुआ तो दुनिया का अहित नहीं, एक मनुष्य कमजोर हुआ तो दुनिया का कोई लाभ नहीं, इसलिए हितों का विरोध नहीं है। शिक्षकों

विनोवा

और विद्यार्थियों का अलग-अलग संघ बना है–एक-दूसरे से बचने के लिए। शिक्षक और विद्यार्थी मिलकर विद्या बनती है, लेकिन दोनों के 'इण्टरेस्ट' बचाने के लिए दो संघ बने। इसी प्रकार मालिक मजदूर, किसान-भूमिहीन आदि का विरोध चलता है। यह कल्पना पुरानी पड़ गयी। अब चीन में कम्युनिस्टों के अन्दर-अन्दर कत्लेआम चल रहा है। मतभेद में लड़ने के सिवाय उनके पास दूसरा चारा नहीं है, इस वास्ते वर्गभेद की कल्पना करके कोई योजना बनती है तो आखिर तक तोड़ती-फाड़ती ही जाती है। लेकिन हमको तो जोड़ना है, इस ख्याल से काम करना है।

तीसरी बात यह है कि अपने हिन्दुस्तान में हमारी कोशिश के बावजूद आर्थिक विषमता मिटनेवाली नहीं। चीन रूस और दुनिया में कहीं भी विषमता मिटी नहीं। बाबा पर १॥ से २ सौ रुपये तक का खर्च आता है। तीन तोले अग्रेंज माह में आम का रस लिया था, तो आठ आने हुए थे। और तीन तोले में ३० कैलरीज शक्ति मिलती है। बाबा रोज १२ सौ कैलरीज लेता है, जिसे आप लोग बरदाश्त करते है, लेकिन आप लोगों में से भी ऐसे सेवक होंगे, जिन्हें १ १। सौ माहवार ही वेतन मिलता है और उसमें ५ व्यक्ति के परिवार का खर्च चलाना पड़ता है। इस तरह विषमता रह ही जाती है। थोड़ी विषमता जायगी। लेकिन आर्थिक विषमता आप लोगों में भी होगी, इसे सहन करना चाहिए। उस दिन वेद का वर्णन सुनाया। उसमें जो शब्द आये हैं—'नृग्राम', उसका वर्णन दो शब्दों में 'सर्ववीर सहावान्'—ये दो विशेषण उन्होंने दे दिये। जो वीर होते हैं, वे सहन नहीं करते और सहन करते है, वे वीर नहीं होते है। एक सिंह दूसरे सिंह को सहन नहीं करता। इसलिए सिंह जाति दुनिया से खत्म हो रही है। मात्र मनुष्य के नाम में 'सिंह' बच गया है। काठियावाड में अब केवल ५ सौ सिंह बचा रखे है, जो ५ मिनट में मारे जा सकते है। तब वे भारत से समाप्त हो जायँगे। केवल अफ्रीका में बच जायँगे। सिंह जैसी वीरता और चींटी जैसी सहनशीलता होगी, तभी हमारा काम चलेगा। ऐसी मिश्रता हो कि सभी 'पूल' (इकट्ठा) करें। तो थोड़ी-बहुत समता हो सकती है। फिर भी विषमता तो रह ही जायगी। लेकिन किसी प्रकार का मत्सर नहीं होना चाहिए। ऐसा होगा तो बल टूटेगा। तो हमें ऐसी हालत में विषमता को सहन करना चाहिए।

मुझे लगा कि दो-तीन बातें आपके सामने रखूँ और आपका मार्ग सुगम हो। इन लोगों ने ८८ महीने के काम का कार्यक्रम बनाया है। उसमें पहली बात—'एक बनो और नेक बनो'। दूसरी बात—'डिपेन्टो' ग्रामदान बन जाय। 'मंजूरी' बनने में जल्दी ही दर लगे। इतना हो गया तो बुनियाद बन जायगा।

(दिनांक १६-६-'६७ पूसा रोड)

मूल्यों की स्थापना अर्थात् क्रांति

एकनाथजी महाराज थे। उनकी वेश-भूषा देखकर एक विदेशी ने दुभाषिये की सहायता से उनसे पूछा, "आप कौन हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "नाथ।" विदेशी सज्जन ने पूछा, "नाथ, अर्थात् मालिक, तो आपकी प्रजा कहाँ है?" नाथजी ने उत्तर दिया, "हमारा परमात्मा कौन है?" विदेशी महाशय ने पूछा, "मालिक की सेना कहाँ है?" नाथजी ने फरमाया, "हमको भय कहाँ है?" अन्त में विदेशी जिज्ञासु ने पूछा, "आप मालिक का खजाना कहाँ है?" नाथजी महाराज ने कहा, "हमको खर्च कहाँ है?" तीन प्रश्नों के तीन उत्तरों ने उस विदेशी को नाथजी महाराज का भक्त बना दिया। ये हैं मानवीय मूल्यों के उत्तर।

जिन्दा रहना है तो जिन्दा रहने की कला, अर्थात् मानवता सीखनी होगी। जीवन के मूल्य व मान्यताएँ हमें मानवता के अनुकूल बदलनी ही होंगी। मानव निर्माण के अभियान की आज कितनी आवश्यकता है! आज तक का समस्त इतिहास त्याग और भोग के संघर्ष का ही तो विवरण मात्र है। त्याग के कारण ब्राह्मणों का वर्चस्व था, तब उन्हींके निर्देशों से राज्य चलते थे। और राजा-महाराजा सिंहासन पाते थे, बदला लेते थे। ब्राह्मण जब सत्ता के नशे में भोगी बन गया तो ब्रह्म से (वस्तुतः मानवता से, क्योंकि मानवता ही ब्रह्म-शक्ति का पर्याय है) पृथक् पड़ गया। ब्रह्म से नाता टूटते ही ब्राह्मण गिर गया। तब बाहुबल से क्षत्रिय वर्ग ने अद्वितीय त्याग का मार्ग पकड़ा। क्षत्रिय के त्याग-तेज से भोग में पस्त ब्राह्मण फीका पड़ गया। त्यागी क्षत्रिय वर्ग और भोगी ब्राह्मण वर्ग का अन्तिम संघर्ष राम और परशुराम के युद्ध रूप में हुआ। परशुराम ने राम के सामने आत्मसमर्पण किया, परन्तु राम ने परशुराम को बेइज्जत नहीं करके आत्मसमर्पण के उल्लास में उन्हें बहुत इज्जत दी और उनके साथ आदर-सम्मान का आदर्श व्यवहार किया। धीरे-धीरे राजा वर्ग (क्षत्रिय वर्ग का नेता) भी सत्ता के घमण्ड में भोगी बना और भोग-पूर्ति के लिए सत्ता का दुरुपयोग करने लगा। राजा के प्रशंसक आचार्यों से घोषणा करवायी गयी कि राजा ही ईश्वर है और लोग सूर्य या राजा के दर्शन करके ही भोजन करने की प्रतिज्ञाएँ या सौगंध लेने लगे। एक दिन भोगी राजा का भी पतन हुआ और उसका स्थान अपना अथाह खजाना जनहित में लुटा देनेवाले त्यागी वैश्य ने लिया। बादशाह से 'शाह' बड़ा कहलाया और कहा जाने लगा, "पहले शाह और बाद में बादशाह।" बादशाह में 'बाद' शब्द का समावेश इसीलिए हुआ।

इसलिए लोकतन्त्र के संविधान में मूलभूत अधिकारों में यह गारण्टी दी गयी है कि किसीकी सम्पत्ति बिना मुआवजा चुकाये नहीं ली जायगी। अब शाह, अर्थात् जनता का पेट भरनेवाले (खेती, उद्योग, व्यापार से) त्यागी लक्ष्मीपति का भी भोग में डूबना प्रारम्भ हो गया है। आम लोगों का पेट खाली होते हुए भी अपनी धन-दौलत का प्रदर्शन करने में गौरव माननेवाले वैश्य वर्ग की सत्ता का भी दिन जाना उपर्युक्त क्रमानुसार निश्चित है। तब सत्ता भोग के हाथ से निकल कर सेवा करनेवाले त्याग के हाथ में चली जायगी। वर्तमान राजनैतिक पार्टियों के झण्डों में इसीलिए चरखा, हँसिया, हथौड़ा, चक्र, गेहूँ की बाली, झोपड़ी, वटवृक्ष आदि श्रम या श्रम-जीवियों के चिह्नों को स्थान देना पड़ा है। त्याग ने ही सदा नये मूल्यों की स्थापना की है, यह स्पष्ट है। केवल चिह्न नहीं, अब उनके अनुरूप मूल्य-स्थापन की माँग है।

मूल्यों की स्थापना सत्ता व विज्ञान नहीं कर सकते। यह तो पुरुषार्थ ही कर सकता है। खोटा रुपया भी कभी-कभी असली के धोखे में चल सकता है, परन्तु वह नकली मूल्य है। मानवता ही सही मूल्य है। सफलता के पूजक क्रांतिकारी नहीं हो सकते। रावण सफलता का पुजारी था, परन्तु उसका क्या हुआ? सिद्धिपूजक (युद्ध या चुनाव आदि में) राजनैतिक हो सकता है, लेकिन क्रांतिकारी नहीं हो सकता। कल जो नहीं हुआ, वह आज हो—यह इतिहास है। हमेशा हुआ, वही होता रहे—वह 'टाइम-टेबल' है। आज के युग की माँग है—मानवीय मूल्यों की स्थापना अर्थात् क्रांति।

—फूलचन्द बाफणा, विधायक
७७, विद्याधरपुरी जयपुर (राजस्थान)

बिहार राज्य पंचायत परिषद् और सहकारिता संघ के संकल्प

इन समाज-सेवी संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य गाँव तक स्वराज्य को पहुँचाना तथा जनता की शक्ति को विकसित करना है। ग्रामदान आन्दोलन जनता के अभिक्रम को जगाने तथा संगठित करने का बुनियादी कार्यक्रम है। अतः यह कार्यक्रम गाँव को स्वावलम्बी बनानेवाला तथा ग्राम-स्वराज्य की नींव को मजबूत करनेवाला है।

समाज-सेवी तथा रचनात्मक संस्थाओं ने हमेशा ग्रामदान आन्दोलन का समर्थन किया है। अब पूज्य विनोबाजी की प्रेरणा से २ अक्टूबर, '६८ तक बिहारदान अर्थात् बिहार के सभी गाँवों का ग्रामदान का कार्यक्रम हमारे सामने आया है। बिहार राज्य पंचायत परिषद्, बिहार राज्य सहकारिता संघ, इस कार्यक्रम का हर्ष के साथ स्वागत करते हैं और इसे अपने मुख्य कार्यक्रम के रूप में स्वीकार करते हैं।

बिहार राज्य पंचायत परिषद्, बिहार राज्य सहकारिता संघ की यह संयुक्त बैठक अपने अन्तर्भुक्त सभी स्तर की शाखाओं से और कार्यकर्ताओं से अनुरोध करती है कि इस संकल्प को साकार बनाने में अपनी पूरी शक्ति लगायें और इसके लिए निष्ठापूर्वक प्रभावशाली अभियान चलायें।

यह बैठक यह भी निश्चय करती है कि

बिहारदान अभियान को सफल करने के लिए नीचे लिखे कार्यक्रम अपनाये जायें .—

(१) सभी समाज-सेवी और रचनात्मक संस्थाओं द्वारा आगामी २ अक्तूबर तक बिहारदान सम्पन्न करने की एक संयुक्त अपील प्रकाशित हो।

(२) बिहारदान के लिए उपयुक्त वातावरण तथा जन-मानस तैयार करने के लिए लोक-शिक्षण के निमित्त .

(क) ग्रामदान के सिद्धान्तों का व्यापक प्रचार किया जाय,

(ख) पोस्टर छपें और उन्हें गाँव-गाँव तक पहुँचाया जाय,

(ग) बिहारदान क्यों, इसे स्पष्ट करते हुए फोल्डर छपें और उनको कार्यकर्ताओं तक पहुँचाया जाय,

(घ) प्रखण्ड-स्तर पर जन-सभाओं का आयोजन हो,

(च) प्रखण्ड-स्तरीय कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए प्रमण्डल स्तर, अनुमण्डल एवं प्रखण्ड स्तर पर शिविर के आयोजन हों,

(छ) ग्रामदान तथा प्रखण्डदान के लिए नेता-वर्ग का विशेष दौरा हो,

(ज) पदयात्राओं के आयोजन किये जायें और जहाँ ग्रामदान या प्रखण्डदान हो चुके हैं, वहाँ निर्माण कार्य जल्द-से-जल्द प्रारम्भ हो।

(३) बिहारदान के लिए साधन जुटाने के निमित्त प्रत्येक पंचायत क्षेत्र से कम-से-कम दो सौ रुपये कूपन के जरिये संकलित किये जायें।—संयुक्त बैठक में स्वीकृत संकल्प (पटना : २३-१-'६८)

बिहार की रचनात्मक संस्थाओं की सभा में स्वीकृत महत्वपूर्ण प्रस्ताव

● १० प्रतिशत कार्यकर्ता निकालें।

● हर कार्यकर्ता ५ मित्र बनायें, यानी कुल ५००० कार्यकर्ता २५००० मित्र बनायें।

● ५ गाँवों के लिए १ साहित्य-सेट और १ पत्रिका पहुँचायें तथा सामूहिक वाचन की व्यवस्था करायें।

● हर कार्यकर्ता १०० से २०० रुपये तक अर्थ-संग्रह करे। (पटना : २३-१-'६८।)

आन्दोलन के समाचार

गया में जिलादान की योजना

गया : १७ जनवरी। गत १६ जनवरी को गया जिले के सामाजिक और राजनीतिक कार्यकर्ताओं की सम्मिलित बैठक हुई। सभा की अध्यक्षता खादी-ग्रामोद्योग समिति, गया के मन्त्री श्री गीता प्रसाद सिंह ने की। बिहारदान के निश्चित कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए 'गांधी जयन्ती' तक गया जिले के गाँवों का ग्रामदान किये जाने के लिए *कतिपय निर्णय सर्वसम्मति से लिये गये।* सभा में श्री जयप्रकाश नारायण तथा बिहार भूदान कमिटी के अध्यक्ष श्री गौरी शंकर शरण सिंह उपस्थित थे। मुख्य निर्णय निम्न प्रकार है —

● राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि, भारत-सेवक समाज, शिक्षक संघ, पंचायत परिषद *तथा अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं को लेकर* २१ सदस्यीय जिलादान समिति का निर्माण किया गया। श्री दिवाकरजी तथा श्री द्वारको भाई समिति के संयोजक चुने गये।

● जिलादान को सफल बनाने के लिए दो लाख रुपये के कोष संग्रह का निश्चय किया।

● *प्रथम चरण के रूप में ३१ मार्च* तक निम्नलिखित १२ प्रखण्डदान प्राप्त किये *जायें* —रजौली, *सिरदला, गोविन्दपुर,* पकरीबरावाँ, वारसलीगंज, अकबरपुर, बाराचट्टी, मोहनपुर, शेरघाटी, मखदुमपुर, नवीनगर और कुटुम्बा।

● बिहार रिलीफ कमिटी के प्रधानमंत्री श्री सिद्धराज ढड्ढा ने गया, पलामू और हजारीबाग जिले में जिलादान कार्यक्रम में *संचालक की हैसियत से प्रान्तीय ग्रामदान* समिति के निवेदन पर काम करने की स्वीकृति दी है, तदनुसार एक-तिहाई समय श्री ढड्ढाजी का जिलादान समिति को मिलेगा।

● जिलादान के कार्यक्रम में सहायता प्रदान करने के लिए जिलादान समिति की ओर से गया जिले के सभी शिक्षक, विद्यार्थी, अधिकारी, व्यापारी, भूमिवान, भूमिहीन, मजदूर, डाक्टर, वकील आदि से एक अपील प्रसारित की गयी है।●

मुंगेर की हलचल

खादीग्राम : २५ जनवरी। मुंगेर में विनोबाजी १२ फरवरी को आ रहे हैं। इस बीच विभिन्न प्रखंडों में जिलादान की दृष्टि से चहल-पहल शुरू हो गयी है। इस सम्बन्ध में सबसे आकर्षक बात यह है कि खड़गपुर के मित्रों ने यह निश्चय किया है कि प्रखण्डदान-प्राप्ति कार्य वे यथासंभव क्षेत्र के साधन और क्षेत्रीय कार्यकर्ता की सहायता से ही सम्पन्न कर लेंगे।

भूमिसेना विद्यालय, खादीग्राम के साथियों ने यह निश्चय किया है कि सन् १९६९ तक वे एक लाख रुपये का साहित्य बेचेंगे। स्मरणीय है कि अभी हाल में ही उन लोगों ने यह निश्चय प्रगट किया है कि *अगले मार्च '६८ तक इस प्रखंड में वे* 'भूदान-यज्ञ' के एक सौ ग्राहक बनायेंगे।

मुंगेर जिला सर्वोदय मंडल ने यह आयोजन किया था कि ३० जनवरी को जिले के हर प्रखंड में जिलादान प्राप्ति और पुष्टि का संकल्प आम सभा में दुहराया जाय। जिन प्रखंडों का प्रखण्डदान अभी नहीं हुआ है, *उनमें साधीरण ग्रामदान-प्राप्ति में जुट जायें।* जिन-जिन प्रखंडों का प्रखण्डदान हो चुका है, उनमें ग्रामदान की पुष्टि, ग्रामसभा संगठन, ग्रामकोष संग्रह आदि काम शुरू करने का *आयोजन किया जा रहा है।*

ग्राम-स्वराज्य-संघ के कार्यकर्तागण बेगूसराय अनुमंडल-दान प्राप्ति-कार्य में श्री रमाकान्त चौधरी, मंत्री, संघ के नेतृत्व में लगे हुए हैं। स्मरणीय है कि मुंगेर जिले के चार अनुमंडलों में खगड़िया अनुमंडल का दान गत अगस्त में ही घोषित हो चुका। बेगूसराय अनुमंडल के ग्यारह प्रखंडों में दिसम्बर '६७ तक चार प्रखण्डदान हो चुके। आशा की जाती है कि विनोबाजी के मुंगेर आने-आते बेगूसराय के शेष प्रखंडों का भी प्रखण्डदान हो चुकेगा और विनोबाजी के आगमन के समय बेगूसराय अनुमंडलदान घोषित किया जा सकेगा। —हेमनाथ सिंह

सरगुजा जिलादान की तैयारी

४ जनवरी को सर्वोदय समिति की प्रबन्ध समिति की बैठक हुई। प्रबन्ध समिति के उपस्थित सदस्यों तथा समिति के प्रमुख कार्यकर्ताओं ने सर्वसम्मति से निर्णय लिया है कि आज के सन्दर्भ में जिलादान के महत्व को विस्तार से समझाने का प्रयास किया जाय। सरगुजा जिले की कुल जनसंख्या १२ लाख है, गाँव-संख्या २३६७ और २४ विकास-खण्ड; ७ तहसीलें, ५ अनुमण्डल हैं। माह दिसम्बर सन् १९६७ तक सरगुजा जिले में ५७४ गाँव ग्रामदान में शामिल हो चुके हैं।

पिछले वर्ष बाबा ने सरगुजा के साथियों को एक पत्र भेजकर लिखा है कि पूरा सरगुजा जिला ग्रामदानी बने। यह बात जिले के उत्साही कार्यकर्ताओं के मन में हमेशा चलती रहती है। ८ जनवरी को ग्रामीण कुशल कृषक और सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री विश्वनाथ प्रसादजी जायसवाल को पता चला कि समिति ने जिला-दान के लिए निश्चय किया है। यह समाचार पाकर श्री जायसवाल ने अम्बिकापुर अनुमण्डल की पूर्वतैयारी की जिम्मेदारी ले ली है। आप मझौली में ग्रामदानी गाँवों के प्रमुखों को दो दिवसीय शिविर में भाग लेने हेतु प्रोत्साहित करने में प्रयत्नशील हैं।

श्री सत्यपाल पवार ने सोनपुर क्षेत्र में १५ दिसम्बर से ३० दिसम्बर तक १२ ग्रामदानी गाँवों में दौरा किया। वहाँ पुन. ग्रामदान का विचार समझाकर ८ गाँवों में ग्रामसभा का गठन किया और उन गाँववालों ने तत्काल ग्रामकोष के लिए अनाज इकट्ठा करना शुरू कर दिया है।

श्री शंकर पटेल, श्री मुनेश्वर भाई ने अम्बिकापुर क्षेत्र के ५ गाँवों में १५ दिसम्बर से २५ दिसम्बर तक यात्रा करके ग्रामदान का विचार समझाया। —हनुमान गौड़

पूर्णिया की चिट्ठी

पूर्णिया जिले की कुल जनसंख्या ३०,८८,१२८ है। जिले का क्षेत्रफल ८,२२४ वर्गमील है। जिले में कुल ४ अनुमण्डल, ३८ प्रखण्ड, ६३० पंचायत तथा ४३१४ रेवेन्यू गाँव हैं, जिनमें ३६४७ गाँवों में आबादी है। अब तक सदर अनुमण्डल के सभी ११ प्रखण्ड, कटिहार अनुमण्डल के ११ में से १० प्रखण्ड, किशनगंज के ७ प्रखण्डों में ३ प्रखण्ड, अररिया के ९ प्रखण्डों में १ प्रखण्ड, इस तरह कुल ३८ प्रखण्डों में से २५ प्रखण्डों का प्रखण्डदान घोषित हो चुका है। शेष १३ प्रखण्डों में से १२ प्रखण्डों में प्रखण्डदान-अभियान का कार्य चालू है। लगभग २०० कार्यकर्ता अभियान में कार्यरत हैं। सभी प्रखण्डों में कुछ-न-कुछ ग्रामदान प्राप्त हो चुके हैं और नित्य नये ग्रामदान प्राप्त किये जा रहे हैं। अक्सर प्रखण्ड में कार्य करनेवाले कार्यकर्ताओं के लिए साप्ताहिक मीटिंग प्रखण्ड के अन्तर्गत किसी गाँव में हुआ करती है। लगभग महीना-डेढ़ महीना एक प्रखण्ड का प्रखण्डदान पूरा करने में लगता है। जिस प्रखण्ड में अभियान प्रारम्भ किया जाता है, वहाँ का प्रखण्डदान पूरा होने तक कार्य चालू रखा जाता है। टोलियों का नेतृत्व मुख्य रूप से जिला सर्वोदय मण्डल के कार्यकर्ता और सर्वोदय आश्रम रानीपतरा के समग्र विकास-योजना के कार्यकर्तागण करते हैं। इनके अतिरिक्त अधिकांश स्थानीय नये लोग अथवा जिन प्रखण्डों में प्रखण्डदान हो चुका है, उन प्रखण्डों में काम किये हुए कार्यकर्ताओं को टोलियों में सम्मिलित किया गया है। किसी प्रखण्ड में अभियान प्रारम्भ करने के लिए प्रखण्ड-स्तर पर सभा करके प्रखण्ड के विद्यालयों के शिक्षकों, पंचायत के पदाधिकारियों, रचनात्मक कार्यकर्ताओं, राजनैतिक पार्टी के कार्यकर्ताओं आदि की सभा करके सबसे सहयोग की अपील की जाती है। साधारणतः वहाँ कोई संगठित विरोध नहीं है। कहीं छिटपुट कोई धनी व्यक्ति कभी थोड़ा भ्रम फैलाने का कार्य करते हैं, अथवा स्वयं सम्मिलित नहीं होकर सन्तोष मान लेते हैं। ऐसे लोग भी कार्यकर्ताओं को गाँवों में भोजन-निवास आदि की सहूलियत देने का सहयोग देते ही हैं। कई दूसरों को हस्ताक्षर देने की सलाह देते हैं, अपील करते हैं, मात्र अपना हस्ताक्षर टालते हैं।

गत दिसम्बर '६७ तक प्रखण्डदान-अभियान का कार्य स्थानीय सहयोग तथा गांधी-निधि की सहायता से चला। धन-संग्रह की भी जयप्रकाश बाबू की यात्रा में पूर्णिया जिले में मात्र ५,५३४ रु० की थैली मिल सकी है। अभी सर्वोदय पक्ष में धन-संग्रह की योजना की गयी है, पर जिलादान जब तक पूरा नहीं होने से इस पक्ष में धन-संग्रह में पूरी शक्ति लगाने की योजना थी, वह नहीं हो सकेगी।

ग्रामदान-प्राप्ति के साथ ग्रामदान-पुष्टि की दिशा में भी प्रयत्न जारी था। कुल ४५९ गाँवों के कागजात तैयार किये जा चुके हैं, जिनमें से कृत्यानन्दनगर एवं सदरपूर्व प्रखण्ड में ३७० गाँवों के कागजात जिला भूदान-यज्ञ कार्यालय में दाखिल किये जा चुके हैं, जिनमें से गाँवों के ३०६ परिवारों की पुष्टि हो चुकी है एवं ३६ गाँवों के ११३५ परिवारों को नोटिसें दी जा चुकी हैं।

—वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी

शोक-समाचार

एक भारतीय आत्मा श्री माखनलाल चतुर्वेदी और समालोचक विद्वान् श्री पद्मनारायण आचार्य के निधन पर भूदान-यज्ञ परिवार की ओर से श्रद्धाञ्जलि।

× × ×

हमें बड़े दुःख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि गत २७ जनवरी को प्रातःकाल श्रीमती सुमित्रा देवी अवस्थी का स्वर्गवास हो गया। उनकी आयु ६७ वर्ष की थी। वे अपने पुत्र श्री विनय अवस्थी के साथ कानपुर में खादी-तत्त्व-प्रचार केन्द्र में रह रही थीं। हम श्री विनय भाई और उनके परिवार के प्रति अपनी संवेदनाएँ प्रकट करते हैं, और दिवंगत आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करते हैं।

× × ×

२८ जनवरी को श्री रणवीर सिंह, मंत्री, जिला सर्वोदय मण्डल, बुलन्दशहर का हृदय गति रुक जाने से देहान्त हो गया। आप स्वतन्त्रता-संग्राम के एक वीर सेनानी, जागरूक समाज-सेवक और भूदान-यज्ञ आन्दोलन के कर्मठ कार्यकर्ता थे।

कोयना की विपद्गाथा और आपसे निवेदन

प्रिय बंधु,

आप जानते ही है कि महाराष्ट्र में भू-चाल के कारण बहुत बडी हानि हुई है। कोई छह सौ गाँवो में हजारो मकानो को क्षति पहुँची है। करीब २,००,००० लोग बेघर हुए है। सरकारी आँकडो के अनुसार ५० से लेकर ६०,००० मकान गिरे है। अभी भी भू-चाल के धक्के होते ही रहते है, और मकान भी गिरते है। दूसरा नुकसान खेतों के बाँधो को पहुँचा है। कई बडे-बड़े बाँध भी टूट गये है। बहुत बड-बडे पत्थर नदियों में गिर पडे है। नदियो का प्रवाह बदल गया है। नदियों के पानी का गाँवो में आने का खतरा उपस्थित हुआ है। खेती के बाँध तुरन्त दुरुस्त न किये जा सके तो इस क्षेत्र की कृषि नष्ट हो जायगी, और परिणामस्वरूप अकाल का सकट उपस्थित हो सकता है।

यह सारा क्षेत्र जगली और पहाडी है। कई गाँव घने जगल के बीच बसे हुए हैं। डेढ सौ से लेकर दो सौ इंच तक वर्षा होती है। मुख्य फसल धान की होती है। ग्रामीण उद्योगो का प्रमाण नगण्य है। लोगो में शिक्षा का प्रसार अल्प है। बरसात के दिनो में अति-वृष्टि के कारण जमीन में से पानी के झरने ऊपर आने लगते हैं। कुल इलाका गरीब लोगो का है।

मकान गिर जाने से लोग खुली जगह में रहने लगे है। ऐसी हालत मे वे कृषि के श्रम-कार्य में ध्यान नही दे सकते हैं। सारा जीवन उजड गया है।

सरकार की ओर से राहत-श्रम का भरपूर प्रयत्न हो रहा है। कई सामाजिक सस्थाओ द्वारा राहत पहुँचाने का काफी बडा प्रयास हुआ है। राहत का एक पर्व करीब-करीब पूरा हुआ है, दूसरा पर्व शुरू होने जा रहा है। इसमें लबे अरसे के राहत-कार्य की योजना करनी पड़ेगी।

गत २५ दिसम्बर से महाराष्ट्र सर्वोदय मडल के तत्वावधान में एक 'सेवा-पथक' सगठित किया गया है। इस पथक में अन्य सामाजिक सस्थाओ के कार्यकर्ता भी शामिल हुए है। कुल ७५ लोगो के 'पथक' द्वारा भूचाल-पीडित पाँच क्षेत्रो में काम चल रहा है। कई गाँवों में सर्वप्रथम सर्वोदय-कार्यकर्ता ही पहुँचे है। मुख्य रास्ते से दूर बसे हुए गाँवो में जाने का कठिन कार्य इन कार्यकर्ताओ द्वारा हो रहा है। हाल ही में इस क्षेत्र का तीन दिनो का दौरा करके मैं लौटा हूँ। जगलो में दूर-दूर बसे हुए गाँवो में जाकर वहाँ की स्थिति का प्रत्यक्ष देखने के बाद यह पत्र आपकी सेवा में भेज रहा हूँ।

सरकार तथा अन्य सस्थाओ के प्रयत्नो के बावजूद जन-शक्ति के सगठन के सिवा लोगो का पुनर्वसन असम्भव है। क्षतिग्रस्त-क्षेत्र का विस्तार इतना व्यापक है, और क्षति का प्रमाण इतना अधिक है कि लोगों की पूरी शक्ति इस काम मे न लगी तो हजारो लोगो को भयकर कष्टो का सामना करना पड़ेगा। खासकर गाँवो मे रहनेवाले अस्पृश्य और गरीब लोगों को भय नये सकट से गुजरना पड़ेगा। यह ध्यान में रखकर सर्वोदय मडल की ओर स होनेवाले कार्य में—(१) गरीब-से-गरीब पारिवार की तरफ ध्यान देना, (२) लोक-शक्ति जागृत तथा सगठित करना, (३) गाँव के नौजवानो के दस्ते बनाना, (४) सरकार तथा अन्य सस्थाओ के राहत-कार्य में सामजस्य लाना, आदि बातो पर विशेष ध्यान देने का सोचा गया है। हो सके तो गाँवो में भू-सेना का सगठन खडा करने का भी विचार है। राहत-कार्य का प्रथम पर्व समाप्त होते ही, गाँव के नौजवानो के शिविर सगठित करने का भी विचार किया गया है। ग्राम-नेताओ की सभाएँ करके पुनर्वसन की योजना में गाँववालो को आगे लाने का प्रयास करना है। कुल मिलाकर आज की स्थिति में से एक नया सगठित जागृत ग्राम-जीवन निर्माण हो, ऐसा प्रयास करना है। पूरा प्रयत्न हो सका, तो इस सकट में से ही नवजीवन खडा हो सकता है। कृषि, उद्योग, गोपालन, शिक्षा आदि पर ध्यान देना पड़ेगा। कृषि में सुधरे हुए यत्रो को दाखिल करते हुए नयी वृत्ति का विकास हो, इस तरफ ध्यान देना होगा। नयी वृत्ति का अर्थ ग्राम-भावना हो, और वह ग्राम-स्वराज्य में विकसित हो।

आपको मालूम हुआ होगा कि श्री जयप्रकाशजी ने बिहार रिलीफ कमिटी की ओर से महाराष्ट्र सर्वोदय मडल को ५०,००० रुपये और कपडा, दूध-पाउडर तथा सोयाबिन तेल भेजा है। बरतन, कम्बल, लालटेन खरीदे गये है, और गाँव-गाँव में आवश्यकतानुसार बाँटे जा रहे हैं। इसके लिए सगठन खडा किया गया है। उसका खर्च चलाने के लिए निधि की अत्यन्त आवश्यकता है। आपके प्रदेश में आप इस कार्य-हेतु कुछ निधि इकट्ठा कर सकते हैं। मैं आपका ध्यान इस बात की तरफ आकर्षित करना चाहता हूँ, और आपसे प्रार्थना करता हूँ कि जल्द-से-जल्द आप कुछ निधि जमा कर–महाराष्ट्र सर्वोदय मडल, ७२७, सदाशिव पेठ, पूना-२ के पते पर रवाना करने की कृपा करें। आपकी सहायता से सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को बल मिलेगा, और पीड़ितों को राहत पहुँचेगी।

ग्रामदान-प्राप्ति के कार्य में बाधा न पहुँचाते हुए यह राहत-कार्य चल सके, ऐसी कोशिश महाराष्ट्र के साथी कर रहे हैं।

आशा है, आप मेरी प्रार्थना पर ध्यान देंगे।

सविनय वदन के साथ उत्तर की प्रतीक्षा में,

आपका,
गोविन्द राव देशपांडे
सहमंत्री, सर्व सेवा संघ, वाराणसी

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित। पता : राजघाट, वाराणसी–१

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

१६ फरवरी '६८ अंक : २०

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति : २० पैसे :

विदेश में : साधारण डाक-शुल्क—

१८ रु० या १ पौण्ड या २॥ डालर

(हवाई डाक-शुल्क : देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४२८५

लोकतन्त्र में प्रतिनिधित्व और दायित्व का प्रश्न

आज कुछ लोग मानते हैं कि तानाशाही या अधिनायकतन्त्र आवश्यक है। ६८ परसेंट लोक उदासीन हैं, मूर्ख नहीं हैं। दुनिया में सब जगह यही हाल है। कहते हैं कि अमेरिका का आदमी राज्य करने के लिए सात समुद्रों के पार जायगा लेकिन वोट देने के लिए रास्ता नहीं पार (क्रास) करेगा।

यह उदासीनता क्यों आयी ?

लोकतन्त्र में मतदाता अपने को जिम्मेदार नहीं मानता है। प्रतिनिधि ने भी अपने को जिम्मेदार नहीं माना है। प्रातिनिधिक शासन में प्रतिनिधित्व है, दायित्व नहीं है।

प्रतिनिधि सद्विवेक का जिम्मेदार हो या अपने चुनाव क्षेत्र का, या अपनी पार्टी का, इसका जवाब लोकतन्त्र ने अबतक नहीं दिया है। उम्मीदवार पक्ष का और प्रतिनिधित्व क्षेत्र का। प्रतिनिधित्व पक्ष का नहीं। यह अन्तर्विरोध है। पक्ष जब बीच में आता है तब मतदाता के वोट (मत) और 'ओपीनियन' (विचार) में अन्तराय पैदा होता है। प्रतिनिधि सोचता है, "मैं किसका प्रतिनिधि हूँ—अपनी अन्तरात्मा का या क्षेत्र का ?" क्षेत्र के प्रतिनिधित्व में भी बहुसंख्य और अल्पसंख्य के प्रतिनिधित्व का सवाल आता है। वह दोनों का प्रतिनिधि बनता है।

बहुसंख्य लोगों का राज हो, यह तो लोकतन्त्र का आवश्यक अंग नहीं है। बहुसंख्य का राज एक व्यावहारिक तरकीब है, व्यवस्था है, सिद्धान्त नहीं। बहुसंख्या की सत्ता असल में लोकसत्ता नहीं है।

अब दुनिया में लोकतन्त्र जीवित रह सकता है या नहीं, इस मुकाम पर लोकतन्त्र आ पहुँचा है। पूर्व में लोकतन्त्र के जीवन-मरण का प्रश्न आया है। लोकतन्त्र का मुकाबिला अब चीन के अधिनायकवाद से है। सन् १९४८ का अफीमची, सुस्त और निकम्मा चीन आज दुनिया के दो प्रबल अधिराज्यों से बराबरी करता है। परिस्थिति में यह चुनौती है कि क्या लोकतन्त्रवाला देश प्रगति कर सकता है ? भारत अगर यह नहीं कर सकता तो लोकतन्त्र का मरण है। कलकत्ता में माओ का जयघोष करनेवालों ने यह समझ लिया है कि लोकतन्त्र से समस्या हल नहीं होती है। यह परिस्थिति देखकर दुःख करने से परिस्थिति नहीं सँभलेगी, सिर्फ क्षीणता आयगी।

लोकतन्त्र में व्यक्ति का महत्त्व है। सामुदायिक—'वोटिंग' (मतदान) नहीं है। तानाशाही या कल्याणकारी राज्य में व्यक्ति का स्थान नहीं है। संख्या की आड़ में मनुष्य मनुष्य नहीं रहता है। लोकतन्त्र में हरेक वोट का, पुरुषार्थ का महत्त्व है। पुरुषार्थ के लिए 'ओपीनियन' (विचार) और वोट (मत) में अनुरूप चाहिए। प्रतिनिधित्व के साथ दायित्व चाहिए। दायित्व—मतदाता और प्रतिनिधि—दोनों का होना चाहिए।

बम्बई : २९-१-'६८।

—दादा धर्माधिकारी

समाचार डायरी

देश :

६-२-'६८ : श्रीमती इंदिरा गाधी ने पोर्ट ब्लेयर में कहा कि अण्डमान की समस्याओ पर भारत सरकार सहानुभूति पूर्वक विचार कर रही है।

७-२-'६८ : आचार्य विनोबाभावे ने राजनीतिक नेताओ से अपील की कि वे आगामी २ अक्तूबर तक 'बिहारदान' के सकल्प की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील हो।

८-२-'६८ : केन्द्रीय गृहमत्री श्री यशवन्त-राव चह्वाण ने जालन्धर मे कहा कि कश्मीर भारत का अटूट अग है।

९-२-'६८ : उत्तर प्रदेश सयुक्त विधायक दल का जो सकट पिछले काफी दिनो से चल रहा था वह आज समाप्त हो गया।

१०-२-'६८ : श्रीमती इंदिरा गाधी ने वैज्ञानिको से अपील की कि वे ग्रामीण आबादी के उत्थान के लिए अपने को उत्सर्ग करें।

११-२-'६८ : भारतीय जनसघ के अध्यक्ष श्री दीनदयाल उपाध्याय का शव प्रातः मुगलसराय स्टेशन के पश्चिम केबिन के पास पड़ा मिला।

विदेश :

६-२-'६८ : सैगान तथा ह्यु में मित्र-राष्ट्रो की बेहतर सहारक शक्ति के बावजूद साम्यवादी लड़ाई जारी रखे है।

७-२-'६८ : वियतनाम-युद्ध मे आज साम्यवादियो ने पहली बार टैको का इस्तेमाल किया।

८-२-'६८ : सयुक्तराष्ट्र के महासचिव श्री ऊथाट तथा इंदिरा गाधी ने सहमति व्यक्त की कि वियतनाम के प्रश्न को युद्ध के बजाय वार्ता से हल किया जाय।

९-२-'६८ : राष्ट्रपति जॉनसन ने अमरीका द्वारा खाद्यान्न सहायता देते रहने का वचन दिया है।

१०-२-'६८ : अमरीकी कमान ने घोषणा की कि ह्यूफोग के निकटवर्ती हवाई अड्डे पर हवाई हमले शुरू कर दिये गये है।

११-२-'६८ : वियतनाम-युद्ध का शीघ्र अन्त हो इसके लिए रूस चिन्तित है।

एक कट्ठा भूमि भी नहीं···

'भूदान-यज्ञ' के सत्याग्रह विशेषाक को देखकर पाठक के मन में एक सवाल पैदा होगा। वह यह कि अगर सत्याग्रह केवल वही है जिसका इस अक में प्रतिपादन किया गया है और जिसे सर्वोदय कार्यकर्ताओ ने पिछले पन्द्रह-सोलह बरसो से साकार रूप देने की सतत कोशिश की है, तब उसका तेज प्रकट क्यो नही हुआ और इसका क्या कारण है कि न तो जनता की निगाह में सर्वोदयवाले गरीबो के हमदर्द माने गये और न अपनी स्वतन्त्र शक्ति ही खडी कर सके? उलटे, देश के अधिकाश भाग में वे सत्ता की सुरक्षित छाया में रहे और गाधी और विनोबा की आड में जनता से समरस होने तक की परवाह नही की। अगर यही ढर्रा चलता रहा तो कौन-सा 'सत्य' इस देश मे प्रतिष्ठित होगा?

मुझे याद आ रहा है पण्डित गोविन्द वल्लभ पन्त द्वारा सन् १९५० मे कहा गया एक वाक्य—'स्वराज्य में सत्याग्रह के लिए गुजाइश नहीं है।' इस वाक्य से मुझे बहुत तकलीफ पहुँची है। लेकिन सोचता हूँ कि क्या, दूसरे मानो में ही सही, इसे हम लोगो ने अपना तो नही लिया है? विनोबा की व्यक्तिगत सत्याग्रही हस्ती को छोड़कर सारे सर्वोदय आन्दोलन ने क्या एक काम्प्रोमाइज की शक्ल नही ले ली है? हजारो ग्रामदान पत्रो पर हम दस्तखत करा रहे हैं लेकिन स्वामित्व-विसर्जन की बात तो जाने दीजिये भूमिहीन को कट्ठाभर जमीन भी नही मिल रही है। मुझे याद है कि प्रबन्ध समिति की मीटिंग में या अन्य किसी मीटिंग में आपने प्राप्ति के साथ-साथ वितरण का, अगर 'आग्रह' शब्द पर आपत्ति हो तो कहूँगा कि 'अनुरोध' किया था। वह नहीं होता है तो 'सत्य' का दर्शन कब नसीब होगा और कैसे 'सर्व' को मुक्ति मिलेगी?

अक्सर लोगो को 'आग्रह' अखरता है शायद इसलिए कि वह दूसरे को मिटाने पर तुला है। लेकिन अगर खुद को मिटानेवाले आग्रह के लिए भी जगह आप नही देंगे तो डडे का आकर्षण कैसे रोक सकेंगे? लोक-शिक्षण जितना प्रचार से होता है उससे कही ज्यादा 'सफरिंग' (कष्ट-सहन) से होता है जो मिटने की कला में निहित है।

ध्यान जाता है रोम के चर्च के इतिहास पर। ईश्वर-प्राप्ति और जीवन-मुक्ति के उसके भी बड़े-बडे दावे रहे है। लेकिन रोम की सरकार से सदा उसने काम्प्रोमाइज ही किया है। स्पष्ट है कि अगर सन् १९३९-४५ की लड़ाई मे हिटलर और मुसोलिनी जीत गये होते तो चर्च ने फैसिजम से भी काम्प्रोमाइज कर लिया होता और मजे से चलता रहता। सवाल है कि अगर भारत में कोई तानाशाह गद्दी पर आ जाता तो क्या हम उसको बर्दाश्त न करते और खादी, ग्रामोद्योग आदि प्रवृत्तियो को उससे सहायता लेते हुए न चलाते रहते? काम्प्रोमाइज के इस तत्व ने हमारे सारे आन्दोलन को एक अजीब-सा रग दे दिया है। जिसकी वजह से जन-जीवन पर हमारी पकड नही आ रही है। मेरी कामना यही है कि कम-से-कम बिहारदान पर वह रग न चढे और अहिंसक क्रान्ति द्वारा हम नये मूल्यो की दाग-बेल डाल सकें।

—सुरेश राम

आवश्यकता

पचास प्रवेशिकोत्तीर्ण १८ वर्ष से ३० वर्ष के स्वस्थ युवको की, ग्राम सहायक वर्ग के आगामी सत्र के लिए आवश्यकता है। खादी, ग्रामोद्योग, सर्वोदय, ग्रामदानी गाँवो के उम्मीदवारो तथा महिलाओ को प्राथमिकता दी जायगी। प्रशिक्षणार्थियो को मासिक छात्रवृत्ति ५० रुपया मिलेगी। प्रशिक्षण की अवधि ग्राम सहायक के लिए एक वर्ष, तथा क्षेत्रीय सगठन हेतु दो वर्ष। निम्नलिखित पते पर २५ फरवरी '६८ तक योग्यता के अभिप्रमाणित प्रमाण पत्र सहित आवेदन पत्र पहुँच जाना चाहिए। प्राचार्य

बिहार खादी ग्रामोद्योग विद्यालय (खादी)

सर्वोदय आश्रम, पो० रानीपतरा—पूर्णिया

साथी की चिन्ता और चेतावनी

श्री सुरेश राम भाई का पत्र इसी अंक में पृष्ठ २४२ पर छपा है—पूरा पत्र नहीं, उसके वे अंश जिनमें उनकी चिन्ता प्रकट हुई है, और उन्होंने हमें चेतावनी दी है।

श्री सुरेश राम भाई हमारे आन्दोलन के सैनिक ही नहीं, सजग प्रहरी भी है। इसलिए उनकी चिन्ता हमारी चिन्ता होनी चाहिए, और उनकी चेतावनी तो हमें हर वक्त याद रखनी ही चाहिए।

यह बात सही है कि ग्रामदान (प्रखण्डदान, जिलादान, राज्यदान आदि) आन्दोलन को हम 'सत्याग्रह' मानते हैं। हमारी दृष्टि में 'सर्व' नये भारत का सबसे बड़ा सत्य, और 'दान' उसका सबसे बड़ा 'आग्रह' है। हमने इस नये सत्य और इस नये आग्रह में 'विद्रोह' की शक्ति और सम्भावना देखी है। इसके विपरीत सत्याग्रह के नाम में जो सारा विरोधवाद इस वक्त देश में चल रहा है वह यथास्थिति (स्टेटसको) को दिनोंदिन मजबूत बनाता जा रहा है। ग्रामदान में अगर विद्रोह की शक्ति और मुक्ति की सम्भावना न दिखाई देती तो हममें से बहुत-से या तो इसमें शरीक ही न होते, या कब के अलग हो गये होते। फिर भी धैर्य और प्रतीक्षा की सीमा तो है ही।

भाई सुरेश राम का खयाल है कि क्रान्ति की इस सारी व्यूह-रचना में कहीं कोई बुनियादी कमी रह गयी है जिसके कारण जो परिणाम प्रकट होने चाहिए थे वे नहीं प्रकट हुए है। उनकी राय में जिस आन्दोलन को हमने इतने वर्ष दिये, उसका तेज हम नहीं प्रकट कर सके, हम गरीबों के हमदर्द नहीं बन सके, हम अपनी स्वतन्त्र शक्ति नहीं बना सके, हम बराबर सत्ता की सुरक्षित छाया ढूँढ़ते रहे, हम देश को कोई नया क्रान्तिकारी 'सत्य' नहीं दे सके। इतना ही नहीं, हमने भी सत्ताधारियों की यह बात मान ली कि स्वराज में सत्याग्रह के लिए गुंजाइश नहीं है, हमने अपने सारे आन्दोलन को एक 'समझौते' की शक्ल दे दी, हम स्वामित्व-विसर्जन की बात करते रहे, लेकिन भूमिहीन को एक कट्ठा जमीन तक नहीं दिला सके। जब इतना भी नहीं हो सका तो 'सर्व' की मुक्ति की बात क्या की जाय? वास्तव में अपने या अपनी संस्थाओं के स्वार्थ में हम इतने दबे रहे कि जन-जीवन पर हमारा प्रभाव नहीं हो सका।

इतनी बातें भाई सुरेश राम ने कही है। अन्त में उन्होंने यह कामना प्रकट की है कि 'कम से कम बिहारदान पर वह रंग न चढ़े और अहिंसक क्रान्ति द्वारा हम नये मूल्यों की दाग-बेल डाल सकें।' मेरी समझ में भाई सुरेश राम की यह चिन्ता है कि अनीति और अन्याय के विरुद्ध हमें जो कार्रवाई करनी चाहिए थी वह हमने नहीं की, और विनोबा जैसे सत्याग्रही का नेतृत्व प्राप्त होने पर भी हम अपने अन्दर क्रान्ति की तत्परता नहीं ला सके।

हम कैसे कहें कि ग्रामदान-आन्दोलन ने वह सब कर लिया जो उसे करना चाहिए था, या उसमें वे कमजोरियाँ नहीं हैं जिनका उल्लेख सुरेश राम भाई ने किया है? इससे भी इनकार कैसे हो कि आन्दोलन को तेजस्वी बनाने का हर संभव उपाय हुआ जो होना चाहिए था? सच बात तो यह है कि आन्दोलन में लगे ऐसे लोगों की संख्या बढ़ रही है जो इसे सच्चे अर्थ में लोकशक्ति की दिशा में ले जाना चाहते हैं। पिछले महीनों में देश के राजनैतिक मंच पर जो घटनाएँ घटी हैं उनसे जनता को तेजी के साथ विश्वास होता जा रहा है कि उसकी समस्याओं का समाधान राजनीति के पास नहीं बल्कि उससे हटकर है। ग्रामदान के सन्देश को लेकर गाँवों में जाने-वाला कोई भी व्यक्ति देख सकता है कि अब ग्रामदान प्रचलित राज-नीति के विकल्प के रूप में स्वीकार किया जा रहा है। ग्रामदान के सघन क्षेत्रों में लोगों को ऐसा दिखाई देने लगा है कि ग्रामदान के अलावा दूसरा कोई विचार ही नहीं है जिसमें प्रकाश की धुंधली भी रेखा दिखाई दे। अब तक हमारा आन्दोलन 'स्वामित्व-विसर्जन' की बात कहता रहा है। इस विचार के लिए हमें ग्रामीण क्षेत्रों में जो लोकमत प्राप्त हुआ है वह स्वतन्त्र भारत की एक विलक्षण घटना है। बेशक हम अब तक स्वामित्व-ग्रस्त समाज से टकराते रहे हैं, लेकिन हम टूटे नहीं हैं। और जब से, 'बिहारदान' के नारे के द्वारा हमने 'नेतृत्व-विसर्जन' (यानी दलमुक्त प्रतिनिधित्व) की बात कहना शुरू किया है तब से जनता को लगने लगा है कि सम्भवतः मुक्ति का नया रास्ता खुल रहा है। हमें लगता है कि एक बार ग्रामसभाएँ बन जायँ तो वे बीघा-कट्ठा भी बाँट लेंगी और दलों से अलग हटकर विधान मंडल के लिए अपने प्रतिनिधि भी चुन लेंगी।

स्वामित्व-विसर्जन ने समाज की चेतना को जितना प्रभावित किया है उससे कहीं अधिक गहराई से नेतृत्व-विसर्जन प्रभावित कर रहा है। स्वामित्व-विसर्जन और नेतृत्व-विसर्जन को मिलाकर एक व्यापक जन-आन्दोलन की भूमिका बनती दिखाई दे रही है। हम आन्दोलन को सम्पूर्णता में देखें, टुकड़ों में नहीं। इस क्रान्ति की शक्ति टुकड़ों से अधिक उसकी मुख्य धारा में है। संस्थाओं की सीमा है—स्वधर्म और स्वभाव दोनों की—फिर भी उन्होंने जो कुछ किया वह मामूली नहीं है। यशोदा की गोद की यही महिमा थी कि उसने कृष्ण को दूध पिलाकर बड़ा कर दिया। कंस-वध तो कृष्ण को अपनी ही शक्ति से करना पड़ा।

पिछले वर्षों में जो कुछ नहीं हो सका वह हमारे सामने है, लेकिन जो कुछ हुआ है वह बहुत बड़ी पूँजी है। हमारे लिए अगले तीन वर्ष निर्णायक होनेवाले है। अगर हमारे पैर बढ़ते रहे तो तीन वर्षों में हम 'बिहारदान' के बाद के दिन भी देखेंगे। इस अवधि में हर वक्त भाई सुरेश राम की चेतावनी हमें भटकने से बचायगी। ●

मध्यप्रदेश

अर्द्धवार्षिक कार्य-विवरण

(१ जुलाई से ३० दिसम्बर '६७)

सन् १९६७ का उत्तरार्द्ध मध्यप्रदेश में *सर्वोदय आन्दोलन की दृष्टि से महत्वपूर्ण* रहा। यद्यपि ग्रामदान-तूफान में अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं हुई, तथापि प्रखण्डदान, तहसीलदान, इन्दौर जिलादान-अभियान, महिला लोकयात्रा, ग्रामदानमूलक राहत-कार्य तथा प्रशिक्षण आदि के कारण आन्दोलन में गहराई और व्यापकता, दोनों ही आयी है।

ग्रामदान : प्रखण्डदान, तहसीलदान और जिलादान के विचार ने सर्वोदय आन्दोलन में गुणात्मक परिवर्तन किया है। इसमें एक ओर कार्यकर्ताओं की दृष्टि व्यापक बनी है, तो दूसरी ओर जनसहयोग और जन-आन्दोलन की सम्भावनाएँ बढ़ गयी हैं। सर्वोदय मण्डल के निर्णयानुसार गत छः माहों में टीकमगढ़, सरगुजा तथा इंदौर में सामूहिक शक्ति से अभियान चलाये गये। रतलाम, रायपुर तथा सीधी में स्थानीय मित्रों तथा खादी-संस्था के कार्यकर्ताओं ने अभियानों का सयोजन किया। टीकमगढ का दूसरा प्रखण्ड "बल्देवगढ़" प्रखण्डदान हो जाने से टीकमगढ़ का तहसीलदान हो गया है। सरगुजा में यद्यपि अकाल-राहत-कार्य चल रहा था, लेकिन साथियों ने ग्रामदान के साथ राहत-कार्य को जोड़ा, जिसके फलस्वरूप रामचन्द्रपुर प्रखण्डदान भी प्राप्त हुआ।

इन्दौर जिले में विशेष शक्ति लगाकर जिलादान करने का प्रयास किया गया। प्रदेश के ५० कार्यकर्ता तीन माह तक सतत यहाँ लगे रहे। १५-२० गाँवों के क्षेत्र में केन्द्र स्थापित किये गये। व्यापक पैमाने पर सम्पर्क किया गया। पदयात्राएँ हुईं, जिसके फलस्वरूप महू तहसील में २०, देपालपुर तहसील में २४, सांवेर तहसील में १० तथा इन्दौर तहसील में १३, इस प्रकार कुल ६७ ग्रामदान हुए। इस प्रकार अब इन्दौर जिले के ६४३ गाँवों में से २२७ गाँव ग्रामदान में आ गये हैं।

इस प्रकार प्रदेश में गत छ. माहों में प्राप्त जानकारी के अनुसार '—टीकमगढ़ में ८१, सरगुजा में १९, इन्दौर में ६८, सीधी में ५, रायपुर में ४ तथा रतलाम में १ ग्रामदान हुए। बल्देवगढ (जिला-टीकमगढ) *तथा रामचन्द्रपुर (जिला-सरगुजा) के* प्रखण्डदान और टीकमगढ का एक तहसीलदान घोषित हुआ।

अब प्रदेश में प्राप्त ग्रामदानों की संख्या २६३१ हो गयी है, जिसमें ६ प्रखण्डदान और १ तहसीलदान शामिल है।

प्रदेश में ग्रामदान : ३० दिसम्बर, '६७ तक

जिला	ग्रामदान	जिला	ग्रामदान
पश्चिम निमाड	७००	छतरपुर	१४
सरगुजा	५२३	बेतूल	१४
टीकमगढ	३५९	सतना	१२
इन्दौर	२२७	रीवा	१०
मुरैना	२०१	रायपुर	१४
जबलपुर	१६४	दुर्ग	१०
सिवनी	६४	सीधी	१३
रतलाम	६२	बिलासपुर	७
मन्दसौर	५१	छिंदवाड़ा	७
मण्डला	३५	होशगाबाद	७
धार	२७	देवास	३
बालाघाट	२७	दमोह	३
नरसिंहपुर	१४	गुना	१
सागर	२४		
		कुल	२६३१

ग्रामाभिमुख खादी : प्रदेश में लगभग ५० खादी-संस्थाएँ हैं। लेकिन प्रदेश-स्तर की कोई बड़ी एक भी संस्था नहीं है। मध्य-भारत खादी संघ, ग्वालियर तथा ग्राम-सेवा-समिति, रायपुर ये दो बड़ी संस्थाएँ हैं। गत छ. माहों में बढ़ते हुए सूत और खादी के *स्टाक, घटती हुई बिक्री, बढ़ती हुई कत्तिनों* और बुनकरों की बेकारी तथा घटती हुई कार्य-क्षमता, संगठनात्मक कमजोरियों तथा खादी पर्षद व आयोग द्वारा समय पर सहायता न मिलने के कारण अनेक संस्थाएँ परिसमापन की स्थिति में पहुँच गयी हैं। इस परिस्थिति का पूर्वाभास तो था और इसी स्थिति का सामना करने के लिए "समग्र विकास योजना" भी ग्रामदानी गाँवों को ध्यान में रखकर लागू की गयी थी। प्रदेश सर्वोदय मण्डल की सिफारिश पर २६ प्रखण्डों में इसे शुरू किया गया।

शान्ति-सेना : *गत माहों में वैसे तो* सारे देश में अशांति और उपद्रव बढ़े हैं, लेकिन मध्यप्रदेश में साम्प्रदायिक उपद्रव, मजदूर तथा विद्यार्थी-असन्तोष, हिन्दी-आन्दोलन आदि का विस्फोट हुआ। रतलाम के साम्प्रदायिक दंगों में स्थानीय शांति-सैनिकों ने शांति-रक्षा और शांति-स्थापना का बहुमूल्य कार्य किया। इन्दौर में विद्यार्थियों के दो दलों अथवा दो कालेजों के छात्रों में संघर्ष की स्थिति में व्यक्तिगत रूप से शान्ति-स्थापना *का प्रयास किया गया। नगर के गणमान्य* सज्जनों ने बीच में पड़कर स्थिति सम्भालने का सराहनीय प्रयास किया।

श्री नन्दकुमारजी दानी के सुप्रयासों से रायपुर जिले के एक जनपद में शिक्षकों का तथा गांधी-स्मारक-निधि के तत्वावधान में माचला (इन्दौर) में कार्यकर्ताओं के "शांति-सेना-शिविर" का सफल आयोजन किया गया।

चम्बल घाटी शांति समिति ने *आत्मसमर्पणकारी बागी भाइयों की* मुक्ति का प्रयास किया तथा श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम् के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मण्डल संविद की नेता राजमाता श्रीमती विजयाराजे सिन्धिया से भी भोपाल में मिला। समिति चम्बल घाटी क्षेत्र में खादी ग्रामोद्योग की प्रवृत्तियाँ भी चला रही है। उधर प्रदेश के *ग्रामदान-अभियान में कार्यकर्ता लेकर* सहयोग दे रही है, साहित्य प्रचार करती है और समय-समय पर शांति-शिविरों का आयोजन करती है।

साहित्य-प्रचार : सर्व सेवा संघ के विशेष प्रयास से तथा प्रदेश सर्वोदय मण्डल की साहित्य-

प्रचार समिति के संयोजक श्री सत्यनारायण शर्मा के सहयोग से सिवनी, बालाघाट, छिंदवाड़ा, जबलपुर, सागर, भोपाल, मण्डला, बिलासपुर, रायगढ़, नरसिंहपुर, रतलाम, मंदसौर, धार, उज्जैन, रायपुर, होशंगाबाद आदि जिलों की शिक्षण संस्थाओं, पुस्तकालयों तथा शासकीय विभागों में विशेष संपर्क किया गया। इसके अलावा फुटकर साहित्य-बिक्री भी की गयी। श्री सत्यनारायण शर्मा द्वारा प्रेषित जानकारी के अनुसार १ जनवरी से ३० दिसम्बर '६७ तक साहित्य बिक्री का विवरण इस प्रकार है

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन :	१६,३३२-१५
नवजीवन प्रकाशन	३,१०५-०२
सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन	३,५१२-२२
परधाम प्रकाशन	९१-६८
कुल रुपये .	२३,०४१-०७

इसके अलावा "भूदान-यज्ञ" के १६, "गाँव की बात" के ८८, "विनोबा-विचार" के १३, और "महादेवभाई की डायरी" के ५२ ग्राहक बनाये गये।

श्री जयवन्तराव भार्दजी की सूचनानुसार सर्वोदय साहित्य भण्डार, इन्दौर (रेल्वे स्टाल की बिक्री सहित) द्वारा कुल रुपये २७,५५५-०५ की साहित्य-बिक्री हुई। ग्वालियर तथा रायपुर के रेल्वे सर्वोदय साहित्य स्टाल से साहित्य-बिक्री के आँकड़े उपलब्ध नहीं हो सके। प्रदेश में खादी-भण्डारों को साहित्य-बिक्री के लिए प्रोत्साहित किया गया, जिसका अच्छा परिणाम आया है।

प्रांतीय कार्यालय ने ग्रामदान-अभियान के लिए दो प्रकार के पर्चे छपवाये हैं तथा गांधी-शताब्दी समारोह रचनात्मक कार्यक्रम उप-समिति द्वारा भेजे गये "ग्रामदान, खादी तथा शांति-सेना" के पोस्टर्स का वितरण भी किया गया।

लोक-यात्रा : मध्यप्रदेश का यह सौभाग्य है कि पूज्य विनोबाजी की प्रेरणा से देश में महिला-जागरण, भावनात्मक एकता तथा लोकसेवा के उद्देश्य से १२ वर्षीय महिला-लोकयात्रा का शुभारम्भ २५ अक्तूबर '६७ को कस्तूरबाग्राम (इंदौर) से ही किया गया। हमारे लिए यह गौरव की बात है कि मण्डल की सदस्या सुश्री निर्मलबहन वैद इस टोली की एक सदस्या हैं। क्षेत्र पर लोकयात्रा का अनुकूल प्रभाव पड़ा है तथा ग्रामीण महिलाओं में उत्साह का संचार हो रहा है। इस यात्रा के फलस्वरूप इन्दौर नगर में महिला-संगठन का प्रारम्भ हो रहा है। जिले में लोकयात्रा का संयोजन म०प्र० गांधी स्मारक निधि, कस्तूरबा ट्रस्ट तथा प्रदेश सर्वोदय मण्डल के संयुक्त प्रयास से हो रहा है।

अकाल-राहत : इस वर्ष प्रदेश के अकालग्रस्त क्षेत्र सरगुजा तथा झाबुआ में राहत-कार्य का संगठित प्रयास किया गया। जैसा कि सम्भावना थी, वर्षा में अभाव तथा यातायात के अभाव में खाद्यान्न की स्थिति काफी कठिन हो गयी। सरगुजा में पाल तहसील में ग्रामदानमूलक राहत-कार्य के अन्तर्गत ग्रामसभाओं का गठन किया गया। ग्रामीण राहत समितियाँ संगठित की गयी तथा ग्रामकोष की स्थापना की गयी। बाहर से प्राप्त सहायता, अनाज, बीज तथा नकद रूप में ग्रामसभाओं को दी गयी, जिसकी व्यवस्था तथा वितरण ग्रामसभाओं ने ही किया। इसी प्रकार झाबुआ जिले की अलीराजपुर तहसील में गांधी-निधि के विशेष प्रयास से राहत-कार्य का प्रभावशाली संयोजन किया जा सका।

राहत-कार्य में बिहार रिलीफ कमेटी, बम्बई सर्वोदय मण्डल, गोविन्दराम सेकसरिया ट्रस्ट तथा अनेक संस्थाओं व महानुभावों ने उदारतापूर्वक सहायता की। प्रदेश गांधी-निधि, सर्वोदय समिति सरगुजा, रामपुरी, राजेन्द्र आश्रम, कम्पोटाडा (झाबुआ) ने विशेष रूप से इसका संयोजन किया। यह उल्लेखनीय है कि हाल ही में बिहार रिलीफ कमेटी ने २५,००० रु० तथा १५०० क्विंटल खाद्यान्न सामग्री मध्यप्रदेश में राहत-कार्य के लिए और भेजी है।

मण्डल की ओर से स्थानीय सर्वोदय संस्थाओं द्वारा मावला, गरोठ, टवलाई तथा सरगुजा में पंचायतराज प्रशिक्षण केन्द्र चलाये जा रहे हैं, जिनका कुल मिलाकर ११ जिलों के पंच-सरपंच और पंचायत-मंत्रियों से सम्पर्क आया है। इन विद्यालयों का ग्रामदान तूफान के लिए सहकार उल्लेखनीय है।

भूदान-वितरण . प्रदेश शासन की ओर से मध्यभारत भूदान यज्ञ पर्षद, विन्ध्य-प्रदेश भूदान यज्ञ बोर्ड तथा मध्यप्रदेश भूदान यज्ञ मंडल (महाकोशल शाखा) के पुनर्गठन सम्बन्धी विज्ञप्ति जारी की जा चुकी है। प्राप्त जानकारी के अनुसार गत छमाही में म० भा० भूदान यज्ञ पर्षद द्वारा ३२७० एकड़ भूदान ६९२ भूमिहीनों में वितरित किया जा चुका है। वितरणकाल में पर्षद को १७ एकड़ का नया भूदान भी मिला। इसके अतिरिक्त पर्षद द्वारा रु० २३८ ८८ की साहित्य-बिक्री भी हुई। इसी प्रकार महाकोशल शाखा द्वारा ५५३ ७० एकड़ भूदान २०६ भूमिहीन परिवारों में वितरित किया गया। वितरणकाल में मण्डल को ६२ ६३ एकड़ का नया भूदान भी मिला। विन्ध्य भूदान बोर्ड से कोई जानकारी उपलब्ध नहीं हो सकी।

संस्था-समन्वय : सर्वोदय मण्डल की शक्ति समन्वय की ही शक्ति है। कार्यकर्ताओं में तथा संस्थाओं में समन्वय की आज अत्यधिक आवश्यकता है। गत छमाही में समय-समय पर यह प्रयास अवश्य किया गया कि संस्थाओं तथा साथियों को ऐसे अवसर उपलब्ध कराये जायँ, जिससे वे एक-दूसरे के ज्यादा निकट आयें तथा एक-दूसरे को समझें। इस दृष्टि से प्रदेश में "मध्यप्रदेश सेवक संघ" की स्थापना का विशेष महत्व है। अब इस संस्था का पंजीकरण हो गया है तथा इसने अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया है।

संगठन : प्रदेश के केवल १८ जिलों में ही सर्वोदय मण्डल हैं। संगठनात्मक कार्य करने की दृष्टि से प्रांतीय सर्वोदय मण्डल को ज्यादा प्रभावशाली तथा शक्तिशाली बनाने की आवश्यकता है।

—नरेन्द्र कुमार दुबे, मन्त्री
मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल

शान्ति दिवस

३० जनवरी गांधीजी के पुण्य तिथि के अवसर पर देश के विभिन्न स्थानों पर बापू को श्रद्धांजलि-अर्पण के लिए तथा उनकी याद में अनेक कार्यक्रमों का आयोजन हुआ। जिन मित्रों ने अपने यहाँ के कार्यक्रमों की सूचना दी उन स्थानों का नाम तथा सम्पन्न हुए कार्यों का उल्लेख संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत है :

उत्तर प्रदेश में : टिहरी, उत्तरकाशी, आगरा, मथुरा, मुरादाबाद, बरेली और वाराणसी; *मध्यप्रदेश में :* छतरपुर, इंदौर, अम्बिकापुर, रतलाम; *पंजाब में :* अमृतसर; *बिहार में :* मुजफ्फरपुर, झाझा (मुंगेर); *आंध्र में :* विजयवाड़ा; *राजस्थान में :* मकराना, बाँसवाड़ा; *असम में :* कुमारीकटा तथा *हरियाणा में :* हिसार आदि स्थानों में जिला सर्वोदय मंडलों, तथा अन्य रचनात्मक संस्थाओं द्वारा प्रभातफेरी, शान्ति-जुलूस, सामूहिक प्रार्थना, सामूहिक सूत्रयज्ञ, शान्ति बिल्लों की बिक्री आदि का आयोजन हुआ। बाँसवाड़ा और इंदौर में सर्वोदय-पर्व भर पदयात्रा का भी कार्यक्रम रहा। इंदौर में गांधी-चित्र की प्रदर्शनी लगायी गयी। झाझा (मुंगेर) में सर्वदलीय सभा हुई जिसमें प्रखण्डदान के कार्यक्रम में शामिल होने का आश्वासन उपस्थित लोगों ने दिया।

फौजी कम्बल : बीस रुपये में

ये फौजी कम्बल खास तौर से गर्म व मजबूत बनाये गये हैं। जिन्हें हम जवानों के लिए प्रतिरक्षा-विभाग को ३७ रु० में दे रहे थे। मगर इसके शीघ्र निकास हेतु, ताकि कारीगरों को काम दे सकें, ये कम्बल केवल २० रु० में बेचे जा रहे हैं। अविलम्ब इस अवसर का लाभ उठायें।

एक कम्बल का वजन ४ पौंड से ५ पौंड तक, लम्बाई ९० इंच तथा चौड़ाई ६० इंच है।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें . मन्त्री, खादी सेवा संघ, काजी कोठी, जालंधर (पंजाब)। फोन नं० २३१३ प्रधान कार्यालय, जालन्धर।

कमीशन एजेंटों की आवश्यकता

सर्व सेवा संघ की हिन्दी, अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं के लिए कमीशन पर विज्ञापन प्राप्त करने के लिए एजेंटों की आवश्यकता है।

इस काम में दिलचस्पी रखनेवाले व्यक्ति या एजेंसियाँ सम्पर्क स्थापित करें—

संचालक
सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी
फोन ४२८५

सेवापुरी में :

चर्मोद्योग प्रशिक्षण

श्रीगांधी आश्रम सेवापुरी, वाराणसी में खादी-ग्रामोद्योग आयोग की ओर से चर्मशोधन का एक वर्ष का प्रशिक्षण मार्च '६८ से शुरू होनेवाला है। प्रार्थना-पत्र २१ फरवरी '६८ तक व्यवस्थापक श्रीगांधी आश्रम, सेवापुरी, वाराणसी के पास आ जाना चाहिए। प्रशिक्षार्थियों को प्रशिक्षण-काल में ५० रु० मासिक छात्रवृत्ति दी जायगी। प्रार्थना-पत्र में नाम व पूरा पता, जाति और अनुभव यदि कोई हो तो प्रमाणपत्रों की सच्ची प्रतिलिपि के साथ भेजना चाहिए। प्रार्थी को प्रत्यक्ष चर्चा के लिए कोई मार्ग व्यय नहीं दिया जायगा। योग्यता हाईस्कूल अथवा उसके समकक्ष और आयु २० से ३० वर्ष होनी चाहिए। हरिजन तथा संस्था से आनेवाले उम्मीदवारों को प्राथमिकता दी जायगी।

—हनुमान प्रसाद वर्मा
व्यवस्थापक

खादी-ग्रामोद्योग संगठक एवं ग्राम-सहायक प्रशिक्षण

अखिल भारतीय खादी-ग्रामोद्योग आयोग द्वारा संचालित, श्रीगांधी आश्रम खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय (खादी) श्रीगांधी आश्रम सेवापुरी का ११ वाँ सत्र आगामी १५ मार्च '६८ से शुरू होगा। आवेदक की शैक्षणिक योग्यता हाईस्कूल, उत्तर बुनियादी अथवा उसके समकक्ष तथा उम्र १८ से २५ वर्ष तक की होनी चाहिए। कताई एवं बुनाई का ज्ञान रखनेवालों को प्राथमिकता दी जायगी। खादी-ग्रामोद्योग में रुचि रखनेवाले ही आवेदन पत्र दें। शिक्षण-अवधि दो वर्ष की होगी। शिक्षण-काल में ५० रु० मासिक छात्रवृत्ति मिलेगी। आवेदन-पत्र संचालक खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय (खादी), श्रीगांधी आश्रम, सेवापुरी, वाराणसी के पते से २१ फरवरी '६८ तक भेजें। —संचालक

श्रद्धाञ्जलि

● भारतीय जनसंघ के अध्यक्ष पं० दीनदयाल उपाध्याय के असामयिक निधन पर हम गहरा शोक प्रकट करते हैं। हम गहरे दुःख के साथ भारतीय राजनीति के क्षेत्र में (अगर उनकी निर्मम हत्या के पीछे कोई राजनीतिक कुचक्र है तो) शुरू हुए इस खतरनाक और कुत्सित दौर के प्रति चिन्ता व्यक्त करते हैं।

ईश्वर दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करे।

● इसराइल-निवासी श्री हलेवी ५ जनवरी '६८ को अपने बगीचे में फल तोड़ते समय सीढ़ी से गिर पड़े और उनका निधन हो गया। श्री हलेवी सन् १९६२ के मध्य से १९६३ के अन्त तक सेवाग्राम में कृषि-कार्य के प्रयोग किये। उन्हें इस बात की चिन्ता थी कि भारत की कृषि में उत्पादन कैसे बढ़े।

हम उनके प्रति सर्वोदय परिवार और पूरे भारत की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। —सम्पादक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष १४

२३ फरवरी '६८ अंक : २१

इस अंक में

आगामी आकर्षण
समाज-परिवर्तन की भूमिका और
मानस का दृष्टिकोण

वार्षिक शुल्क १० रु०
एक प्रति २० पैसे
विदेश में साधारण डाक शुल्क—
१८ रु० या १ पौंड या ३।। डालर
(हवाई डाक शुल्क देशों के अनुसार)
सर्व-सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट वाराणसी १
फोन नं० ४२८५

दो मार्ग : सत्याग्रह या दुराग्रह

अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति के लिए दो मार्ग हैं—सत्याग्रह और दुराग्रह। हमारे शास्त्रों में इन्हें दैवी और आसुरी प्रवृत्ति कहा है। सत्याग्रह के मार्ग में सदैव सत्य का आग्रह रहता है। किसी भी कारण से सत्य का त्याग नहीं किया जाता। इसमें देश के लिए भी झूठ का प्रयोग नहीं हो सकता। सत्याग्रह की मान्यता है कि सत्य की सदैव ही जय होती है। कभी-कभी मार्ग में टेढ़ जान पड़ता है, परिणाम भयंकर मालूम होता है और ऐसा लगता है कि सत्य का थोड़ा त्याग करें तो सफलता मिल जायगी। किन्तु सत्याग्रही सत्य का त्याग नहीं करता। उसकी श्रद्धा ऐसे समय भी सूर्य के समान चमकती रहती है। सत्याग्रही निराश तो होता ही नहीं। उसके पास सत्य की तलवार होती ही है इसलिए उसे लोहे की तलवार या गोली-बारूद की आवश्यकता नहीं होती। वह आत्मबल या प्रेम से शत्रु को भी अपने वश में कर लेता है। मित्र-मंडली में प्रेम की कसौटी नहीं होती। यदि मित्र मित्र पर प्रेम करे तो इसमें कोई नवीनता नहीं है। वह गुण नहीं है उसमें श्रम नहीं है परन्तु शत्रु के प्रति मित्रता रखने में प्रेम की कसौटी है। इसमें गुण है, श्रम है, इसमें पुरुषार्थ है और इसीमें सच्ची बहादुरी है। शासनकर्ताओं के प्रति भी हम ऐसी दृष्टि रख सकते हैं। ऐसी दृष्टि रखने से हम उनके अच्छे कार्यों का मूल्य आँक सकेंगे और उनकी भूलों के लिए द्वेष करने के बजाय प्रेमभाव से वे भूलें बताकर उन्हें तुरन्त दूर करने में समर्थ होंगे। इस प्रेम भाव में भय को कोई स्थान नहीं है। निर्बलता तो उसमें हो ही नहीं सकती। निर्बल मनुष्य प्रेम नहीं कर सकता, प्रेम तो शूर ही किया करते हैं। प्रेम की दृष्टि से विचार करें तो हम अपने शासनकर्ताओं को सन्देह की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। और न यह मानना चाहिए कि वे सब काम बुरी नीयत से ही करते हैं। हमारे द्वारा प्रेमपूर्वक की हुई उनके कार्यों की परीक्षा इतनी शुद्ध होगी कि उनके ऊपर उसकी छाप पड़े बिना न रहेगी।

प्रेम लड़ सकता है। प्रेम को कितनी ही बार लड़ना पड़ता है। सत्ता के मद में मनुष्य अपनी भूलों को नहीं देखता। उस समय सत्याग्रही बैठा नहीं रहता। वह स्वयं दुःख सहन करता है। सत्ताधीश की आज्ञा—उसके कानून—का शान्त निरादर करता है और उस निरादर के परिणामस्वरूप होनेवाले कष्ट—जेल, फाँसी इत्यादि सहन करता है, इस प्रकार आत्मा उन्नत होती है, इसमें जो समय जाता है वह व्यर्थ नहीं जाता।

सत्याग्रह पृष्ठ १४।१५ —मो० क० गांधी

महातूफान-अभियान

नया दौर : नयी भूमिका

विनोबा का मुंगेर-प्रवेश

शांति-गीत की समवेत ध्वनि से आकाश प्रतिध्वनित हो उठा है। लगभग दो हजार युवा छात्र-छात्राओं को दीक्षितजी ललकार रहे हैं, जोश के साथ होश के लिए।

आर० डी० ऐण्ड डी० जे० कालेज के प्रांगण में विशेष रौनक है, चहल-पहल है। दो हजार जोड़ी निगाहें विद्यालय-द्वार की ओर उत्सुकता से निहार रही हैं। महाविद्यालय के कुल ६५ प्राचार्य सहित प्राध्यापक दो कतारों में खड़े होकर बेसब्री से इंतजार कर रहे हैं। व्यवस्था सँभालनेवाले छात्र व्यस्त हैं।

'…भाई साहब बैठ जाइये…बैठो न ऐ महाशयजी…ओ पैंटवाले…सब लोग बैठ जायें, कालेज की इज्जत का प्रश्न है।' मैं सुनता हूँ, सोचता हूँ, 'जो छात्र कालेज-प्रतिष्ठा के प्रति इतने संवेदनशील हैं कि मैदान में कहीं कोई खड़ा न रहे, सभी अनुशासित ढंग से बैठ जायें, उन्हीं छात्रों में उपद्रव, पथराव और आगजनी तक पहुँच जाने का उन्माद कहाँ से आ जाता है?' '…और तब दीक्षितजी के द्वारा गवाये जा रहे शांति-गीतों की महत्ता और जोश के साथ होश सँभाले रखने के निमित्त किये गये उद्घोषों के प्रभाव की ओर मेरा ध्यान जाता है।

लेकिन 'संत विनोबा : जिन्दाबाद' के उद्घोष की गगन-भेदी गूँज मेरा ध्यान खण्डित करती है। और, मैं कैमरा सँभालते हुए गेट की ओर भागता हूँ !…विनोबा आ गये। एक लहर सी दौड़ जाती है। फिल्म-डिवीजनवाले आन्दोलन के इस अभिनव दौर को छायांकित कर रहे हैं।

विनोबा मंच पर आते हैं। महाविद्यालय के प्राचार्य स्वागत करते हुए कहते हैं, 'ज्ञान-गंगा की निर्मल धारा हमारे आँगन में प्रकट हुई है, हमें इसमें अवगाहन के सुअवसर प्राप्त होंगे…यह हमारा सबका सौभाग्य!'

मुंगेर जिला सर्वोदय मण्डल के संयोजक जिला की ओर से चेरिया बरियारपुर का प्रखण्डदान समर्पित करते हैं।…'चेरिया बरियारपुर—जिले का सबसे उद्बुद्ध… सबसे समृद्ध प्रखण्ड! ''और अब विनोबा कहते हैं, 'दुहरी खुशी हो रही है। प्रखण्डदान की घोषणा नकद धर्म हुआ। …आपके बीच १० दिन रहना है, हृदय के बन्द दरवाजे खुलेंगे, हृदय से हृदय जुड़ेंगे!…और अब गुणमौन व्याख्यान होगा…जिसमें सारी शंकाएँ छिन्न होती हैं!—विनोबा का जगत!' मुश्किल से दो-तीन मिनट…मुझे याद आती है दो-ढाई साल पहले राजीपरा की बात, 'अब हम सूक्ष्म में प्रवेश कर रहे हैं, लेकिन ग्रामदानाभिमुख रहेंगे!' और आज साफ दिखाई दे रहा है कि विनोबा का सूक्ष्म-प्रवेश जन-आन्दोलन को व्यापक और विराट भूमिका प्रस्तुत कर रहा है!

× × ×

विनोबा-निवास की व्यवस्था का निरीक्षण करते हुए रामनारायण बाबू मेरे सवालों का उत्तर देते हैं, 'मुंगेर जिलादान के निकटतर होता जा रहा है। उम्मीद है कि विनोबा के रहते-रहते (२६ फरवरी '६८ तक) बेगूसराय अनुमण्डल पूरा हो जायगा। खगड़िया हो ही चुका है। इस तरह उत्तर मुंगेर संपूर्ण हो जायगा। दक्षिण मुंगेर के खड़गपुर, धरहरा और जमालपुर में अभियान चालू है। …अभी १३, १४ फरवरी को यहाँ जिले के काम को और गति देने के लिए अभियान में १०-१५ या अधिक दिन का समय देनेवाले २०० मित्रों तथा कार्यकर्ताओं का एक शिविर होने जा रहा है। इससे काम की गति तीव्रतर होगी।' भोजन करते समय ग्रामस्वराज्य संघ के मंत्री रमाकांत बाबू से बातचीत होती है। कहते हैं, 'बिहार की राजनीतिक अस्थिरता आंदोलन के प्रति आकर्षण बढ़ा रही है। सिर्फ हमको गाँव-गाँव पहुँचना भर है। काम पूरा होने में कोई संशय नहीं रहा।'

मुंगेर दि० १२-२-६८ —राही

काल की पुकार

"इस वक्त फुटकर और छोटी-छोटी बातों को सोचने का वक्त नहीं है, फुटकर कामों में हमें समय बरबाद नहीं करना है। बस केवल एक बात 'बिहारदान'। छिटपुट सवालों के प्रति उपेक्षा की सीमा तक उदासीन होकर खुद की सुख-सुविधा और सुरक्षा की चिन्ता छोड़कर हमें इस अन्तिम लड़ाई में प्राणपण से जुटना है।" बिहार-भूदान-यज्ञ कमेटी के अध्यक्ष श्री गौरी बाबू ने ६ फरवरी '६८ को दोखवारा से गया जाते समय हमारे प्रतिनिधि के सवालों का जवाब देते हुए कहा।

"विनोबा द्रष्टा हैं, बहुत दूर तक देख पाना उनके लिए सहज है। हमारी निगाहें उतनी दूर तक नहीं पहुँच पातीं। ११ सितम्बर '६७ को जब उन्होंने बिहारदान की बात कही, तो हमें असम्भव कल्पना लगी, लेकिन अब उसकी स्पष्ट सम्भावना हमें दिखाई दे रही है। …और समय है, जो हमें पुकार-पुकार कर इस 'बेस्ट ऐण्ड लास्ट फाइट' में जुट जाने के लिए आगाह कर रहा है, बल्कि बाध्य कर रहा है ऐसा कहना भी उचित ही होगा।"

"क्या बिहारदान के संदर्भ में केवल विकास की ही नहीं, पूरे सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन की बात सोचना भी लाजिमी नहीं हो गया है? …क्या बिहारदान से देश के संविधान के भी प्रभावित होने की सम्भावना है?" गया पहुँचते-पहुँचते हमारे प्रतिनिधि के इस आखिरी सवाल का जवाब देते हुए श्री गौरी बाबू ने दृढ़तापूर्वक कहा, "निःसन्देह! बिहारदान के अनिवार्य परिणाम के रूप में ये दोनों बातें प्रकट होनी चाहिए…प्रकट होंगी।"

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

२३ फरवरी '६८ अंक : २१

इस अंक में

वार्षिक शुल्क . १० रु०

एक प्रति २० पैसे

विदेश में • साधारण डाक-शुल्क—

१८ रु० या १ पौण्ड या २॥ डालर

(हवाई डाक-शुल्क • देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

राजघाट वाराणसी-१

फोन नं० ४२८५

दो मार्ग : सत्याग्रह या दुराग्रह

अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति के लिए दो मार्ग हैं—सत्याग्रह और दुराग्रह। हमारे ग्रन्थों में इन्हींको दैवी और आसुरी प्रवृत्ति कहा है। सत्याग्रह के मार्ग में सदैव सत्य का आग्रह रहता है। किसी भी कारण से सत्य का त्याग नहीं किया जाता। इसमें देश के लिए भी झूठ का प्रयोग नहीं हो सकता। सत्याग्रह की मान्यता है कि सत्य की सदैव ही जय होती है। कभी-कभी मार्ग कठिन जान पड़ता है, परिणाम भयंकर मालूम होता है, और ऐसा लगता है कि सत्य का साथ छोड़ दें तो सफलता मिल जायगी। किन्तु सत्याग्रही सत्य का त्याग नहीं करता। उसकी श्रद्धा ऐसे समय भी सूर्य के समान चमकती रहती है। सत्याग्रही निराश तो होता ही नहीं। उसके पास सत्य की तलवार होती ही है इसलिए उसे लोहे की तलवार या गोली-बारूद की आवश्यकता नहीं होती। वह आत्मबल या प्रेम से शत्रु को भी अपने वश में कर लेता है। मित्र-मंडली में प्रेम की कसौटी नहीं होती। यदि मित्र मित्र पर प्रेम करे तो इसमें कोई नवीनता नहीं है। वह गुण नहीं है, उसमें श्रम नहीं है, परन्तु शत्रु के प्रति मित्रता रखने में प्रेम की कसौटी है। इसमें गुण है, श्रम है, इसीमें पुरुषार्थ है और इसीमें सच्ची बहादुरी है। शासनकर्ताओं के प्रति भी हम ऐसी दृष्टि रख सकते हैं। ऐसी दृष्टि रखने से हम उनके अच्छे कार्यों का मूल्य आँक सकेंगे और उनकी भूलों के लिए द्वेष करने के बजाय प्रेम भाव से वे भूलें बताकर उन्हें तुरत दूर करने में समर्थ होंगे। इस प्रेम भाव में भय को कोई स्थान नहीं है। निर्बलता तो उसमें हो ही नहीं सकती। निर्बल मनुष्य प्रेम नहीं कर सकता, प्रेम तो शूर ही दिखा सकते हैं। प्रेम की दृष्टि से विचार करें तो हमें अपने शासनकर्ताओं को सन्देह की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। और न यह मानना चाहिए कि वे सब काम बुरी नीयत से ही करते हैं। हमारे द्वारा प्रेमपूर्वक की हुई उनके कार्यों की परीक्षा इतनी शुद्ध होगी कि उनके ऊपर उसकी छाप पड़े बिना न रहेगी।

प्रेम लड़ सकता है। प्रेम को कितनी ही बार लड़ना पड़ता है। सत्ता के मद में मनुष्य अपनी भूलों को नहीं देखता। उस समय सत्याग्रही बैठा नहीं रहता। वह स्वयं दुःख सहन करता है। सत्ताधीश की आज्ञा—उसके कानूनों—का आदर निरादर करता है और उस निरादर के परिणामस्वरूप होनेवाले कष्ट—जेल, फाँसी इत्यादि सहन करता है, इस प्रकार आत्मा उन्नत होती है, इसमें जो समय जाता है वह व्यर्थ नहीं जाता।

सत्याग्रह पृष्ठ १४-१५ —मो० क० गांधी

समाचार डायरी

देश :

१२-२-'६८ : राष्ट्रपति डाक्टर जाकिर हुसेन के अभिभाषण के पूर्व संयुक्त समाजवादी, कम्युनिस्ट और कुछ निर्दलीय सदस्यों ने वाक-आउट किया।

१३-२-'६८ : श्री अटलबिहारी वाजपेयी जनसंघ के नये अध्यक्ष निर्वाचित हुए हैं।

१४-२-'६८ : भारत का मत है कि अमेरिका शान्ति-वार्ता के लिए बिना शर्त उत्तरी वियतनाम पर बमबारी बन्द करे।

१५-२-'६८ : अलीगराय स्टेशन पर लाइन पार करनेवाले १७ यात्री दिल्ली से कलकत्ता जानेवाली गाड़ी से कुचलकर मर गये।

१६-२-'६८ : स्वराष्ट्रमंत्री श्री चव्हाण ने कहा कि भूतपूर्व राजाओं के प्रिवीपर्स और उनके विशेषाधिकार समाप्त होंगे।

१७-२-'६८ : डा० कैलाशनाथ काटजू की मृत्यु हो गयी।

विदेश :

१२-२-'६८ : पेकिंग रेडियो के अनुसार चीन ने कश्मीर के सवाल पर पाकिस्तान का पूर्ण समर्थन किया है।

१३-२-'६८ : कनाडा के प्रधानमंत्री लेस्टर पियरसन ने कहा कि वियतनाम में परमाणु अस्त्रों का प्रयोग करना पागलपन होगा।

१४-२-'६८ : सैगान में आपत्कालीन शिविरों में १,५८,००० शरणार्थी भर गये हैं।

१५-२-'६८ : दक्षिण वियतनाम की राजधानी सैगान में कम्युनिस्टों का कुछ और क्षेत्रों पर नियंत्रण हो गया है।

१६-२-'६८ : राष्ट्रपति नासिर ने कहा है कि संयुक्त अरब गणराज्य, फिलस्तीन तथा इसराइल अधिकृत क्षेत्रों की समस्या युद्ध के बिना हल करना चाहता है।

१७-२-'६८ : अमरीकी प्रवक्ता के अनुसार दो सप्ताह की लड़ाई में ३७५६६ वियतनामी नागरिक मारे गये और २०५६६ घायल हुए।

आन्दोलन के समाचार

रेनूकूट, १६ फरवरी। मिर्जापुर जिले की दुद्धी तहसील का म्योरपुर का प्रखण्डदान घोषित हुआ। —देवतादीन मिश्र

मथुरा जिले में ग्रामदान ग्रामस्वराज्य-अभियान—सादाबाद तहसील में डा० दयानिधि पटनायक के मार्गदर्शन में ३ से १० फरवरी तक ग्रामदान-अभियान चला। ३-४ फरवरी को ग्रामदान-अभियान में भाग लेनेवाले कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण-शिविर हुआ। इस शिविर में उत्तरप्रदेश के अतिरिक्त पंजाब, हरियाणा, राजस्थान तथा मध्यप्रदेश के लगभग २५० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। ५ फरवरी को २०८ कार्यकर्ताओं की ६६ टोलियाँ तहसील के पूरे क्षेत्र में फैल गयी और ४०३ गाँवों में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का सन्देश पहुँचाया। ३३२ गाँवों ने ग्रामदान के संकल्प-पत्र पर हस्ताक्षर किये। अभियान का समापन १० फरवरी को हुआ।

थाना जिले में ७१ नये ग्रामदान : महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल द्वारा प्रसारित जानकारी के अनुसार थाना जिलादान अभियान के अन्तर्गत हाल ही में ७१ नये ग्रामदान मिले हैं।

इंदौर, १४ फरवरी। मध्यप्रदेश सर्वोदय मंडल द्वारा प्रसारित जानकारी के अनुसार ३० जनवरी से १२ फरवरी तक सर्वोदय-पखवाड़े के निमित्त महू तथा सांवेर तहसील में आयोजित पदयात्राओं के फलस्वरूप ५ ग्रामदान घोषित हुए। पदयात्राओं में सर्वोदय-सेवक श्री शंकरलाल मडलोई के नेतृत्व में गांधी-निधि के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

अखिल भारत खादी-कार्यकर्ता सम्मेलन : आगामी ३ व ४ मार्च को खादी आश्रम, पानीपत (पंजाब) में अखिल भारत खादी-कार्यकर्ता सम्मेलन होने जा रहा है। सम्मेलन में मुख्यतया खादी के संबंध में सरकार की नयी नीति तथा खादी के आगे के काम की दिशा पर विचार-विमर्श किया जायगा।

प्रबन्ध समिति की बैठक : आगामी २८-२९ फरवरी को पानीपत में सर्व सेवा संघ की प्रबंध-समिति की एक आवश्यक बैठक होने जा रही है।

ग्वालियर में प्रान्तीय सर्वोदय-सम्मेलन : आगामी ९-१० मार्च को ग्वालियर (मध्यप्रदेश) में प्रादेशिक सर्वोदय-सम्मेलन होनेवाला है। सम्मेलन की तैयारियाँ पूरे जोरशोर के साथ की जा रही हैं। मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल की ओर से सम्मेलन की व्यवस्था की जिम्मेदारी स्थानीय जिला सर्वोदय मण्डल को सौंपी गयी है। सम्मेलन के लिए मध्यभारत खादी संघ के खादी-सदन का प्रांगण चुना गया है। सम्मेलन में लगभग दो सौ प्रतिनिधियों के भाग लेने की आशा है। उक्त सम्मेलन की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध सर्वोदय विचारक प्रो० राममूर्तिजी करेंगे।

इन्दौर : १ फरवरी। देश में स्त्री-शक्ति जागरण के उद्देश्य से १२ वर्ष तक भारत यात्रा का संकल्प लेकर विनोबाजी के तत्वावधान में निकली महिला लोक-यात्रा दल ने इन्दौर जिले की तीन माह की पदयात्रा गत २६ जनवरी '६८, गणतन्त्र-दिवस पर यहाँ पूरी की। ९१ दिन की अवधि में लोकयात्री दल ने जिले की चारों तहसीलों में ३०७ मील की पदयात्रा की। ७६ गाँवों में पड़ाव हुए। ६२ पंचायत क्षेत्रों में यात्रा हुई। ३० शिक्षण-संस्थाओं, ५० महिला-सभाओं तथा ९२ आम-सभाओं को सम्बोधित किया। इस प्रकार जिले की लगभग साठ हजार जनता तक अपने मिशन का सन्देश पहुँचाया। लोकयात्रा से जिले के ग्रामीण अंचल में अनुकूल वातावरण बना है।

विनोबाजी का कार्यक्रम

२२ फरवरी तक—मुंगेर, २३ फरवरी से ७ मार्च—बेगूसराय, ३ मार्च—लखीसराय (मुंगेर), ४ मार्च—खादीग्राम (मुंगेर), ५ मार्च—तारापुर (मुंगेर), ६ और ७ मार्च तक—भागलपुर, ८ और ९ मार्च—साहेबगंज (संथाल परगना), १० मार्च—मनिहारी (पूर्णिया), ११ मार्च—रानीपतरा (पूर्णिया)।

भूदान-यज्ञ

अभी और क्या-क्या ?

एक दल देखा, दलों का बाजार देखा, दल बदल देखा, खरीद बिक्री देखी। अभी और क्या-क्या देखना बाकी है ? गालों की राजनीति देख ली, गोली की देखना बाकी है। लेकिन बाकी क्यों है, शुरुआत तो गांधी से हो चुकी है।

साम्प्रदायिकता हमेशा हिंसक रही है। स्वतन्त्रता के लिए भी आतंकवादी देश-प्रेमियों ने गोली का सहारा लिया, किन्तु उसकी विफलता का अनुभव देश को हो गया और वह रास्ता छूट गया। साम्प्रदायिकता ने हिंसा कभी नहीं छोड़ी। गांधीजी की अहिंसा को अपनी बार तीन हिंसाओं से निबटना पड़ा था—एक, विदेशी सत्ता की हिंसा, दो, साम्प्रदायिकता की हिंसा, तीन, स्वतन्त्रता के अभियान की हिंसा। इस त्रिविध हिंसा का मुकाबिला अकेले एक गांधीजी को करना पड़ा। स्वतन्त्रता की लड़ाई पर वह काफी दूर तक अहिंसा का रंग चढ़ा सके। विदेशी सत्ता भी कुछ कम मुलायम नहीं हुई। लेकिन साम्प्रदायिकता ने अपना रंग नहीं छोड़ा। उलटे उसने गांधीजी को अपना शिकार बना लिया। लेकिन एक बहुत बड़ी बात यह हुई कि राष्ट्रीय जीवन में एक प्रबल विचारधारा ऐसी बह चली जिसने अहिंसा की क्रान्तिकारी शक्ति को पहचाना, और उसमें राष्ट्र की समस्याओं के समाधान की सम्भावना देखी। अहिंसा में भले ही सबको श्रद्धा न रही हो, लेकिन हिंसा में उसका विश्वास नहीं था, इसीलिए वह हमें एकता और लोकतन्त्र की देन दे सकी, जो इस वक्त भी हमारी सबसे बड़ी पूँजी है।

स्वतन्त्रता के बाद यह आशा थी कि राष्ट्रीय जीवन की सभी धाराएँ लोकतन्त्र की मर्यादाओं में बँधकर बहेंगी। लेकिन यह नहीं हुआ। देश के जीवन पर राजनीति हावी हुई। नेतृत्व दलों में बँट गया। राजनीति सत्ता की भूख से पागल होकर बेलगाम बन गयी। सेवा और समर्पण की सारी प्रेरणाएँ देखते-देखते हवा हो गयीं। जहाँ देखिए, तनाव, प्रतिद्वन्द्विता, नफरत की ही चर्चा चल पड़ी। बड़े-बड़ों के मुँह से गंदी भाषा निकलने लगी। लगता जैसे सहिष्णुता और सद्भाव हममें कभी आया हो न हो ! इसका सीधा अर्थ यह निकला कि जो सामने है वह 'दुश्मन' है, और जो पीछे है वही 'दोस्त' है। 'दुश्मन' को समझाने और उसे दोस्त बनाने का काम कौन करे ? आसान यह लगा कि उसे खत्म किया जाय—पद या पैसे से खरीदकर, मिटाकर, डराकर, जेल में डालकर। कितना आसान है बर्बरता में उतर आना !

उस दिन जब अचानक श्री दीनदयालजी की मृत्यु का रेडियो पर समाचार आया तो जितने लोग बैठे सुन रहे थे सब एक साथ बोल पड़े—'राजनीति जो न करे !' यद्यपि यह मालूम नहीं हुआ है कि श्री दीनदयालजी की हत्या किसने की, क्यों की, फिर भी सुनते ही लोगों ने उसे राजनीति के साथ जोड़ लिया। क्यों ? इसलिए कि इस वक्त राजनीति जिस तरह लोकतन्त्र के साथ खिलवाड़ कर रही है उसे देखते हुए यह मान लेना मुश्किल नहीं है कि वह हत्या को भी अपना मान्य साधन बना लेगी। धर्म ने बनाया, साम्प्रदायिकता ने बनाया, भाषा ने बनाया, मुल्क ने बनाया, तो राजनीति ही क्यों पीछे रहे ? जो राजनीति ऊँची प्रेरणाएँ छोड़ चुकी हो, वह बनी-बुनी सभ्यता भी छोड़ दे और नंगा नाच नाचने लगे, तो इसमें आश्चर्य क्या है ? सत्ता का मद खून का स्वाद पसन्द रहा है।

इतना ही नहीं है कि एक दल दूसरे दल को दुश्मन मानता है। उससे कम दुश्मनी अपने ही दल के भीतर एक नेता और दूसरे नेता में नहीं होती। घरेलू प्रतिद्वन्द्विता कम भयंकर नहीं होती। शताब्दियों के इतिहास में लगभग हमेशा यह हुआ है कि जो साथी सिर पर कफन बाँधकर साथ लड़ते थे, वे सत्ता मिल जाने पर एक दूसरे के खून के प्यासे हो गये। सत्ता के आगे हिंसा, सत्ता के पीछे हिंसा, सत्ता का स्वधर्म ही है हिंसा।

देश में नेताओं के साथ हिंसा बढ़ रही है। इसकी पूरी जिम्मेदारी राजनीति पर है। क्या राजनीति ने तय कर लिया है कि वह लोकतन्त्र के उस घर को जलाकर छोड़ेगी जिसमें वह पैदा हुई, पली, और बढ़ी ! नेता जरा रुककर पीछे देखें, जनता जरा आगे बढ़कर भविष्य को देखे।

मैं भी देखूँगा

'हे मदान्ध की महाशक्तियो, मत करो मद में उद्धार।
देखूँगा इस मैं भी, कितना सत्ता में है कितना अत्याचार।।'

किसी कवि ने ये पंक्तियाँ उन दिनों गायी थीं जब भारत अंग्रेजी साम्राज्यवाद से अपनी स्वतन्त्रता के लिए लड़ रहा था। इन पंक्तियों में कवि ने अपनी ही नहीं, भारत की आत्मा की ललकार प्रकट की थी। लेकिन अंग्रेजी साम्राज्यवाद न अन्तिम 'मैं' की सत्ता था और न भारत स्वतन्त्रता के लिए अपना सब निछावर करनेवाला अन्तिम देश।

अमरीकी साम्राज्यवाद अंग्रेजी साम्राज्यवाद से शायद कहीं अधिक कठोर है, और वियतनाम में भारत से कहीं अधिक जान की बाजी लगाने की शक्ति। वियतनाम के युवकों और युवतियों के हाथ में हथियार तो हैं ही, लेकिन सबसे अधिक उनके कलेजे में जोश है। उनके हथियार हाथ की शक्ति से अधिक आत्मा की शक्ति से चल रहे हैं। इस युग में अंगोला, अल्जीरिया और वियतनाम की वीरगाथाएँ इतिहास में अमर रहेंगी। वियतनाम के किशोरों और किशोरियों ने तो मौत को भी जैसे खेल बना रखा है।

अमेरिका को अपने विज्ञान पर नाज है। लेकिन वह विज्ञान अफ्रीका और एशिया के आदमी को इनसान मानने को तैयार नहीं है। तो, हम भी कब तक ऐसे विनाशकारी विज्ञान का विनाश चाहेंगे।

(शेष पृष्ठ २२४ पर)

आज की व्यापक गुलामी

बीते हुए जमाने की अपेक्षा आज के युग को अक्सर लोग स्वतंत्रता और जनतंत्र का युग कहते हैं। हम लोग यह कहते, सुनते और पढ़ते नहीं थकते कि पुराने जमाने में जनता गुलाम थी, पुराना जमाना सामन्तशाही का था, उस जमाने में लोग खरीदे और बेचे जाते थे, लोग राजाओं, नवाबों और बादशाहों के शासन में रहते थे, आज की तरह आजाद नहीं थे, इत्यादि। यह सही है कि *आज का जमाना कई अर्थों में पुराने जमाने* की अपेक्षा ज्यादा अच्छा है, ज्ञान-विज्ञान का दायरा बढ़ा है, पुरानी जंजीरें टूटी हैं, और लोग अपने अधिकारों को ज्यादा समझने लगे हैं। पर थोड़ी गहराई से सोचें तो यह भी स्पष्ट हो जायगा कि मनुष्य शायद आज के जितना गुलाम कभी नहीं था, इतना ही है कि उसकी गुलामी का स्वरूप आज प्रच्छन्न है।

आज की गुलामी का एक स्वरूप देशों के बीच आवागमन और यात्रा पर सरकारों द्वारा लगाये जा रहे नियन्त्रण है। साधारण व्यक्ति तत्कालीन कायदे, कानून, नियन्त्रण, व्यवस्था आदि को मानकर चलता है, उनके बारे में प्रश्न या शंका खड़ी नहीं करता। पर आज की सरकारों ने अन्तर्राष्ट्रीय यात्रा पर 'पासपोर्ट-वीसा' आदि के जो प्रतिबन्ध लगा रखे हैं, उनके बारे में हमें कभी यह ध्यान नहीं आता कि इस प्रकार के प्रतिबन्ध आज के इस नये और आजाद कहे जानेवाले जमाने की ही देन है। सौ दो-सौ वर्ष पहले *इस प्रकार के नियन्त्रण नहीं थे।* मारकोपोलो जब योरोप से चीन आदि देशों की यात्रा पर आया, या भारत से जब संघमित्रा आदि विदेश गये, या चीन से ह्यूनसांग फाहियान आदि *यात्री भारत आये तो उन्हें पासपोर्ट*-वीसा आदि नहीं लेने पड़े थे।

मुल्कों के बीच आवागमन पर आज जो प्रतिबन्ध लगाये जाते हैं उनके औचित्य और कारणों के बारे में जो भी दलीलें दी जायँ, तथ्य यह है कि इन नियन्त्रणों ने मानवजाति को टुकड़ों में बाँट दिया है और पृथ्वी पर घूमने-फिरने का तथा अपने भाई से मिलने का जो मनुष्य का नैसर्गिक और आध्यात्मिक अधिकार है वह सरकारों ने छीन लिया है।

आज की सरकारों का परस्पर डर और अविश्वास ही इस प्रकार के अधिकांश नियन्त्रण और रोक-थाम की जड़ में है। एक तरह से आज दुनिया में युद्ध या युद्ध की आशंका हर देश के लिए एक कायमी स्थिति हो गयी है। वास्तविक शान्ति या सुलह कहीं भी दीख नहीं पड़ती। कई दफा तो सत्ताधारी लोग जान-बूझकर युद्ध या युद्ध की आशंका खड़ी करते हैं ताकि वे अपनी सत्ता कायम रख सकें और अपने देश के अन्दर असन्तोष और विरोध को दबाये हुए रख सकें।

अमेरिका के राष्ट्रपति श्री जाहन्सन ने अभी हाल ही में जाहिर किया है कि वे अमेरिकन नागरिकों की विदेशयात्रा पर शीघ्र ही टैक्स आदि के जरिये कुछ नियन्त्रण लगाने जा रहे हैं। इसका कारण यह बताया जाता है कि अमेरिकन यात्री हर साल अपनी यात्राओं के दरमियान विदेशों में करीब दो अरब डालर (पन्द्रह सौ करोड़ रुपया) खर्च करते हैं, जिसका नतीजा यह होता है कि उतनी कीमत का सोना हर साल अमेरिका को अपने स्वर्ण-भण्डार से निकालकर देना पड़ता है और फलस्वरूप उसकी आर्थिक स्थिति दिन-ब-दिन कमजोर होती जा रही है।

पर एक तरफ जहाँ जोहन्सन सालाना दो अरब डालर बचाने के लिए अमेरिकन नागरिकों की स्वतंत्रता और आवागमन पर रोक लगाने जा रहे हैं, वहाँ वे ही *तीस अरब* डालर, यानी उससे पन्द्रह गुना खर्च, सालाना *वियतनाम की उस लड़ाई पर कर रहे हैं,* जिसके औचित्य और उपयोगिता के बारे में दुनिया के अन्य लोगों की राय तो छोड़ दीजिये, स्वयं अमेरिका के अधिकांश विचारशील लोग शंकित हैं। इतना ही नहीं, अमेरिका की सरकार हर साल हथियारों और सेना पर ८० अरब डालर खर्च करती है, जिसका कारण रूस का या दूसरे राष्ट्रों के हमले का डर है। इस तरह परराष्ट्र के भय के कारण दुनिया के छोटे-बड़े सब राष्ट्र मिलकर दुनिया की कुल सालाना उत्पादित सम्पत्ति का आधे से ज्यादा अंश आज हथियारों और फौज पर खर्च कर रहे हैं। इस आर्थिक बरबादी के अलावा परस्पर के अविश्वास, जासूस-गीरी और अपने-अपने नागरिकों पर लगायी जानेवाली तरह-तरह की पाबन्दियों के कारण होनेवाली मानवीय और सांस्कृतिक क्षति अलग है। दुनिया के लाखों-करोड़ों सामान्य लोग लड़ाई हरगिज नहीं *चाहते, वे एक-दूसरे के साथ मिलकर* रहना चाहते हैं। जो थोड़ी-बहुत लड़ाई की भावना *आज के नागरिक में पैदा हुई है* वह भी सरकारों और निहित-स्वार्थवालों के प्रचार *के कारण है। परस्पर के अविश्वास और* डर के कारण सदा के लिए अभाव की *जिन्दगी, अनर्गल महँगाई और अपनी स्वतंत्रता* पर तरह-तरह की पाबन्दियों से वे मुक्ति चाहते हैं। पर चूँकि आज हर देश में राजनीतिक, आर्थिक आदि सारी सत्ता सत्ताधारियों के हाथों में केन्द्रित हो गयी है और जनता का सारा जीवन उनकी मुट्ठी में चला गया है इसलिए सामान्य जनता इस मामले में निःसहाय है। यह आज की व्यापक गुलामी का दूसरा और सबसे भयंकर पहलू है।

—सिद्धराज ढड्ढा

जिन पाठकों को 'भूदान यज्ञ' का 'गन्यात्मक विशेषांक' चाहिए, वे एक प्रति के लिए एक रुपया भेजकर मँगा सकते हैं।

—व्यवस्थापक

---

२३ फरवरी, '६८

वर्ष २ अंक १४] [१८ पैसे

सन् ४६ के बाद पहली बार

सन् ४६ के बाद पहली बार—पहली बार गाँव के वृद्ध सज्जन ने लम्बी साँस लेकर कहा।

क्या बात पहली बार ? मैंने पूछा।

'यहाँ जो लोग इस वक्त आपके सामने बैठे हैं वे ४६ के बाद कभी एक जगह इकट्ठा नहीं हुए थे। इतना दुश्मनी पार्टीबन्दी मुकदमेबाजी थी कि कोई किसी का दरवाजा नहीं चाहता था।

कैसे बदल गया लोगों का दिल ?

'यह बात ग्रामदान के इन कार्यकर्ता साथियों ने किया है। इन्होंने ही दुश्मनी को खत्म बनाया है।

सुखपुरा बलिया जिले का एक प्रमुख गाँव है। सात हजार से अधिक आबादी है। ऐसा गाँव है जिसमें एक से अधिक उम्मीदवार चुनाव में खड़े हुए थे। कौनसा झगड़ा है जो गाँव में नहीं पहुँचता !

कोई यह नहीं सकता था कि कभी सुखपुरा में भी इस तरह के तोड़े हुए दिल फिर एक होंगे ? हमारे साथी घर घर घूमे एक एक से मिले। मिलते ही रहे समझाते ही रहे ग्रामभावना जगाते ही रहे। समय लगा लेकिन लोगों ने महसूस किया कि गाँव बर्बाद हो रहा है।

लोग मिलने लगे—कभी एक के दरवाजे पर, कभी दूसरे के दरवाजे पर। जिसके दरवाजे पर बैठक होती वह चाय पिलाता, नाश्ता कराता। दिल नजदीक आये। एक मुकदमे में सुलह हुई। गाँव का वातावरण बदला। संगठन की बुनियाद पड़ रही है। सोचा जा रहा है कि आगे क्या काम किये जायें। सबसे पहले शायद आपसी ढंग से चकबन्दी करने का विचार किया जाय।

बहुत हुआ है लेकिन अभी उससे भी अधिक करना बाकी है। मन बढ़ रहा है लेकिन शंका और अविश्वास के संस्कार उमड़ आते हैं। बात बनते-बनते रह जाती है। पड़ोसी से अधिक पार्टी और पार्टी का झंडा याद आ जाता है। गाँव ही हमारी पार्टी गाँव ही हमारा झंडा यह भावना बन रही है लेकिन अभी पक्की नहीं हुई है। कदम बढ़ रहे हैं दिल साफ हो रहे हैं। वृद्धों का आशीर्वाद मिल रहा है। कुछ युवक ऐसे तैयार हो गये हैं जो कहते हैं 'हम पद से दूर रहेंगे बिना भेद भाव के गाँव की सेवा करेंगे। वृद्ध का आशीर्वाद और युवक का पुरुषार्थ बस ये दो चीजें मिल जायें तो क्या कमी ?

ग्रामदान की लड़ाई दो मोर्चे पर होती है—विश्वास और विज्ञान। हम एक-दूसरे पर विश्वास करें, और जीवन में विज्ञान लायें तो कौनसा ऐसा सवाल है जो विश्वास और विज्ञान की सम्मिलित शक्ति से हल न हो ? ●

बापू की नजर में बा

[२२ फरवरी बा की पुण्यतिथि है। इस अवसर पर बा के जीवन की कुछ खास बातें गांधीजी के ही शब्दों में दे रहे हैं।—सं०]

"बा निरक्षर थी। स्वभाव से वह सीधी, स्वतंत्र और मेहनती थी। और मेरे साथ तो बहुत कम बोलती थी। उसे अपने अज्ञान से असन्तोष नहीं था। मैं पढ़ता हूँ इसलिए वह भी पढ़े तो अच्छा हो, ऐसी बा की इच्छा अपने बचपन में मैंने कभी अनुभव नहीं की।"

"बा को पढ़ाने का मुझे बड़ा उत्साह था। लेकिन उसमें दो कठिनाइयाँ थीं। एक तो यह कि बा की अपनी पढ़ने की भूख जागी नहीं थी। दूसरी कठिनाई यह थी कि बा पढ़ने के लिए तैयार हो जाती, तो भी उस जमाने में हमारे भरे-पूरे परिवार में इस इच्छा को पूरा करना आसान नहीं था।"

"एक तो मुझे जबरदस्ती बा को पढ़ाना था, वह भी रातें को एकान्त में ही हो सकता था। घर के बड़े-बूढ़ों के देखते कभी पत्नी की ओर देखा भी नहीं जा सकता था। तब फिर उसके साथ बातें तो हो ही कैसे सकती थीं? उस समय काठियावाड़ में घूँघट निकालने का निकम्मा और जंगली रिवाज था। आज भी बहुत हद तक वह मौजूद है। इसलिए पढ़ाने की परिस्थितियाँ भी मेरे विरुद्ध थीं। इस कारण से मुझे स्वीकार करना चाहिए कि जवानी में मैंने बा को पढ़ाने के जितने भी प्रयत्न किये वे सब लगभग असफल रहे।"

"जब मैं विषय-भोग की नींद से जागा तब तो मैं सार्वजनिक जीवन में, जनसेवा के जीवन में कूद चुका था। इसलिए मैं बा को पढ़ाने में बहुत समय देने की स्थिति में नहीं था। शिक्षक के द्वारा बा को पढ़ाने के मेरे प्रयत्न भी सफल नहीं हुए। इसके फलस्वरूप आज कस्तूरबाई मुश्किल से पत्र लिख सकती है और मामूली गुजराती समझ सकती है। मैं मानता हूँ कि यदि मेरा प्रेम विषय-वासना से दूषित न होता तो आज वह विदुषी स्त्री बन गयी होती। उसके पढ़ने के आलस्य को मैं जीत सका होता। मैं जानता हूँ कि शुद्ध प्रेम के लिए इस जगत में कुछ भी असम्भव नहीं है।"

"मैं यह मानता था कि पत्नी को अक्षर-ज्ञान तो होना ही चाहिए और यह ज्ञान मैं उसे दूँगा। परन्तु मेरे भोग-विलास के मोह ने मुझे यह काम कभी करने ही नहीं दिया और मैंने अपनी इस कमजोरी का गुस्सा पत्नी पर उतारा। एक समय तो ऐसा आया कि मैंने उसे उसके पीहर ही भेज दिया और बहुत अधिक कष्ट देने के बाद ही फिर से अपने साथ रहने देना स्वीकार किया। आगे चलकर मेरी समझ में यह आ गया कि ऐसा करने में मेरी मूर्खता ही थी।"

"बा का सबसे बड़ा गुण मुझमें स्वेच्छा से समा जाने का था। यह कोई मेरी खींच-तान से नहीं हुआ था। लेकिन बा में ही धीरे-धीरे यह गुण खिल उठा था। मैं जानता नहीं था कि बा में यह गुण छिपा हुआ है।

मुझे आरम्भ में जो अनुभव हुआ, उसके आधार पर कहूँ तो बा बहुत हठीली थी। मैं दबाव डालता तो भी वह अपना सोचा ही करती थी। इससे हमारे बीच थोड़े या लम्बे समय की कड़वाहट भी बनी रहती थी। लेकिन मेरा जन-सेवा का जीवन जैसे-जैसे उज्ज्वल बनता गया वैसे-वैसे बा का मुझमें समा जाने का गुण खिलता गया और गहरे विचार के बाद वह धीरे-धीरे मुझमें अर्थात् मेरे काम में समाती गयी। समय जाने पर ऐसा लगा कि बा के मन मुझमें और मेरे काम में, सेवा में कोई भेद नहीं रह गया। और ज्यों-ज्यों यह भेद मिटता गया त्यों-त्यों बा उसमें एकरस होती गयी। यह गुण हिन्दुस्तान की धरती को शायद सबसे ज्यादा प्रिय है। जो भी हो, बा की ऊपर बतायी भावना का मुझे तो यही सबसे बड़ा कारण मालूम होता है।

बा में यह गुण ऊँची-से-ऊँची सीमा तक पहुँचा। इसका कारण हम दोनों का ब्रह्मचर्य था। मेरी अपेक्षा बा के लिए वह बहुत ज्यादा स्वाभाविक सिद्ध हुआ। शुरू में बा को इसकी समझ भी नहीं थी। मैंने ब्रह्मचर्य के पालन का विचार किया और बा ने उसे पकड़कर अपना बना लिया।

इसका फल यह हुआ कि हम दोनों का सम्बन्ध सच्चे मित्रों का हो गया। मेरे साथ रहने में बा के लिए सन् १९०६ से, सच पूछा जाय तो सन् १९०७ से, मेरे काम के साथ घुल-मिल जाने के सिवा या उसके बाहर कुछ रह ही नहीं गया था। वह मेरे काम से अलग रह सकती थी, अलग रहने में उसे कोई कठिनाई न होती, लेकिन मित्र होते हुए भी उसने स्त्री के नाते और पत्नी के नाते मेरे काम में समा जाने में ही अपना धर्म माना। इसमें मेरी निजी सेवा को बा ने अनिवार्य—अटल—स्थान दिया। यही कारण है कि मरते दम तक मेरी सुख-सुविधा का उसने हमेशा ध्यान रखा।" ●

रोटी पहले, भाषा बाद में

सब जगह हिन्दी-समर्थक और अंग्रेजी विरोधी-आन्दोलन की चर्चा होती रहती है। जो लोग अंग्रेजी लादे जाने के विरोधी हैं प्राय पूछ बैठते हैं, क्यों साहब आपके जयप्रकाशजी ने तो भाषा विधेयक का समर्थन कर दिया, क्या यह न्याय की बात है? कोई कहता है, जयप्रकाशजी तो जो मन मे आता है बोलते ही रहते हैं, पर विनोबाजी जैसे गम्भीर व्यक्ति से ऐसी उम्मीद नही थी। उन्होंने जयप्रकाशजी के वक्तव्य का आँख मूँदकर समर्थन क्यो कर दिया?

लोग हमलोगो के सामने ऐसी बाते करके, उन सभी बातो का स्पष्टीकरण चाहते हैं, जो हमारे नेता कहते रहते हैं।

सपई गाँव में हरिजन लोग रहते हैं। अपनी थोडी-सी खेती के बाद मजदूरी ही मुख्य रूप से उनके जीवन का आधार है। नयी पीढीवालो मे एक-दो इण्टर-हाईस्कूल में पढ रहे हैं। शेष निरक्षर ही हैं। ग्रामदान मे शरीक हैं। उस दिन इस गाँव मे सगठन के लिए हम लोग गये तो वहाँ भी लोगो ने भाषा का ही प्रश्न छेड दिया। गाँव का एक आदमी बलिया गया था। वहाँ जुलूस तथा नम्बर साईनबोर्डो पर लीपा पोती देख आया था। उसने पूछा, "भाईजी, यह कैसा आन्दोलन चल रहा है?'

मैंने कहा, 'लोग यह चाहते हैं कि अब राज-काज अंग्रेजी की जगह हिन्दी मे चले।

उसने पूछा, 'अंग्रेज तो चले गये, पर अंग्रेजी अभी तक क्यो चल रही है? क्या यह भी अंग्रेजो की तरह फौज-फाटा रखती है, जिसके खिलाफ इतना बडा आन्दोलन करना पडता है?'

मैंने कहा, 'नही भाई, अपना देश बहुत बडा है। हर जगह के लोग अलग-अलग भाषा बोलते हैं। अपने देश में १४ भाषाएँ मुख्य हैं। इनके अलावा और भी कई भाषाएँ हैं। कोई एक भाषा ऐसी नही, जिसे सब लोग समझ सके।

उसने पूछा, "क्या, अंग्रेजी भाषा देश के सभी लोग समझते हैं?'

मैंने कहा, "ऐसी बात नही है। उसे भी जाननेवाले कम लोग हैं। अंग्रेजी पढनी पडती है।

महँगू ने कहा, "जो हल्ला मचा रहे हैं वे सभी-तो पढे लिखे हैं। फिर इन लोगो को क्या दिक्कत है, जो आन्दोलन कर रहे है?"

मैंने कहा, 'ये पढे लिखे लोग चाहते हैं कि पूरे देश के सब काम अंग्रेजी मे न होकर हिन्दी मे हो। अंग्रेजी भाषा सीखने मे ज्यादा समय लगता है। हिन्दी म काम होने लगे तो सबके लिए अंग्रेजी जानना जरूरी नही होगा।

बीच मे ही विश्वनाथ बोल उठा भैया यह बात तो ठीक है। हिन्दी मे सब काम होने लगे तो हम भी देश के बहुत कुछ काम समझने लगेगे। इसे सब क्यो नही मान लेते?

मैंने कहा बात यह है कि देश के अन्य लोग जो हिन्दी नही जानते और पहले से अंग्रेजी पढते आये हैं वे यह सोचते हैं कि वे अंग्रेजी अधिक जानते हैं। यदि अंग्रेजी के बदले मे हिन्दी हो गयी तो वे नौकरियो मे पिछड जायेंगे और हिन्दीवाले बाजी मार ले जायेंगे। दूसरे ये जो अंग्रेजी की जगह काले साहब लोग हैं वे भी यह सोचते हैं कि हमारे बाल-बच्चे तो बचपन से ही अंग्रेजी पढते आये हैं यदि वह चली रहेगी तो हमारे बच्चे ही नौकरी म आगे रहेंगे।'

महँगू ने पूछा, 'ये जो लोग हिन्दी नही पढे हैं उन्हे अंग्रेजी नही पढनी पडती?

मैंने कहा 'पढनी पडती है।'

महँगू 'जब दोनो सीखनी ही पडती है तो उनके लिए दोनो बराबर है, फिर अंग्रेजी के लिए आग्रह क्या? सिर्फ इसीलिए कि अपने स्वार्थ मे देश की जनता पर विदेशी भाषा का बोझ लादे रहना चाहते हैं।'

मैं, "यही बात तो हमलोग कहते हैं कि देश की ही एक भाषा पूरे देश की भाषा हो। गाधीजी ने कहा था कि हिन्दी ही देश की भाषा हो सकती है। परन्तु जो लोग चाहते है कि हिन्दी नही पढेगे उन पर हिन्दी जबरदस्ती न लादी जाय। और साथ ही, जो अंग्रेजी नही चाहते उन पर अंग्रेजी न लादी जाय।"

सपई, "क्या भाईजी, हमारी बात झगडा करनेवालो तक पहुँचा देगे कि हमे अभी रोटी चाहिए भाषा को बाद म समझ लेगे।'

काश, राजनीति के नेता इस असलियत को पहचान लेते!

—कमलापति

ग्रामदान-डायरी

ग्रामदान : प्रेमदान

जयनगर से चौदह मील पैदल चलकर आ पहुँचा हूँ लदनिया। दरभंगा जिले का नेपाल-सीमा मे सटा हुआ आखिरी गाँव। रास्ते मे घंटा भर राजकीय-अस्पताल के कम्पाउण्डर के घर ठहरा। उन्होंने पैर धुलवाकर खड़ाऊ पहनाये। स्वच्छ लीपे हुए फर्श पर हाथ से बुने हुए आसन पर बैठाया। जी-भर दही-चूड़ा-गुड़ खाकर, सीधा हाईस्कूल पहुँचा। "विनोबा आयल छि", विद्यार्थी पहचान लेते हैं कि विनोबा का सेवक हैं।

छब्बीस जनवरी का पर्व है। जाड़े की प्यारी धूप मे, राष्ट्रीय ध्वज सामने, छात्र मेरे शांति-गीत सुनते हैं और साथ-साथ गाते हैं। भाषण से वे उब चुके हैं। प्रधानाध्यापक का ग्रामदान मे अच्छा सहयोग मिला है। संगठक श्री पलटन आजाद आचार्य राममूर्तिजी के साथ खादीग्राम में पत्थर तोड़ते थे। आजादजी की ओर बरबस कम्युनिस्ट और सोशलिस्ट पार्टी के नौजवान खिंचकर आते हैं। इस कम्युनिस्ट क्षेत्र में आजादजी सर्वोदय का नमूना खड़ा कर रहे हैं, जिसे देखकर धीरेन भाई और सुश्री निर्मल वेद, दोनों प्रभावित हुए। पचा गाँव के बंकरदास ने अपने त्याग और सेवा से सहदेव ठाकुर जैसे कार्यकर्ता तैयार किये हैं। उसी तरह, जैसे कोइलख के दामोदर बाबू ने मोहन और शत्रुघ्न जैसे नवयुवक ग्रामदान-आन्दोलन को दिये हैं।

खाजेडीह इस प्रखण्ड का आदर्श ग्रामदान माना जा सकता है। ग्रामकोष मे 'मनसेरा' धान सब किसानों ने दान किया है। जयकृष्ण झा की अध्यक्षता मे ग्रामसभा गठित हो चुकी है, जिसकी बैठक मे मैं शरीक होता हूँ। सर्वसम्मति से वस्त्रस्वावलंबन और रेशा-उद्योग शुरू करने का निर्णय लिया जाता है। वर्ष मे चार माह की आंशिक बेकारी अम्बर चरखे द्वारा दूर की जा सकती है। पूरब में त्रिशूला नदी है, पश्चिम मे कमला नदी। उस पानी का सिंचाई के लिए कैसे उपयोग हो, इस पर चर्चा होती है मोहम्मद सलीम, जो कि ग्रामसभा के जागरूक सदस्य हैं, श्रमदान का सुझाव रखते हैं। यहाँ के हरिजन कार्यकर्ता सूरज पासवान, जो कि भूदान किसान भी हैं, पुष्टि का विवरण सुनाते हैं। गाँव की शान्ति-सेना की ओर से, रात को पहरा दिया जाता है, सुबह भजन गाये जाते हैं। दो व्यक्तियों में एक बरस से झगड़ा चल रहा है, जिनसे दिन-भर मेरी खूब चर्चा होती है। दोनों पक्ष मुकदमा वापिस लेने के लिए तैयार हो जाते हैं। ग्रामसभा का निर्णय दोनों को मान्य होगा। यहाँ यादव अधिक हैं, ब्राह्मण इने-गिने हैं। दोनों के दिल एक-दूसरे से दूर रहते थे। ग्रामदान के बाद स्थिति में परिवर्तन हुआ है। दोनों एक जगह बैठते हैं, बात करते हैं। ग्रामदान हुआ, मानो प्रेमदान हुआ।

—जगदीश थवानी

भूमिसेना का समूह गान

लाख लाख गाँववाला है हिंदुस्तान किसानों का।
करने को निर्माण चला है जत्था वीर जवानों का॥
भूमिसेना जिंदाबाद, भूमिसेना जिंदाबाद, भूमिसेना जिंदाबाद…

सींच पसीने की बूँदों से धरती हरी बनायेंगे।
ऊसर बंजर, परती में भी फसलें नयी उगायेंगे॥
भाग्य बनाने चले आज हम खेतों का खलिहानों का।
करने को निर्माण…
भूमिसेना जिंदाबाद…

खाने को मुँह एक किन्तु हैं दो-दो हाथ कमाने को।
भिक्षुक बनकर फिर क्यों जायें हम झोली फैलाने को॥
रूप बदल देंगे हम श्रम से उजड़े रेगिस्तानों का।
करने को निर्माण…
भूमिसेना जिंदाबाद…

एक बनेंगे, नेक बनेंगे होगा जो करना चाहें।
एक बनें तो चट्टानों को तोड़ सकेंगी ये बाहें॥
कदम हमारे रोक सकें क्या साहस है तूफानों का।
करने को निर्माण…
भूमिसेना जिंदाबाद…

गूँज रही यों आज हमारे कण्ठों में यह वाणी है।
गाँव-गाँव हमको लाना अब ग्रामराज्य कल्याणी है॥
देश के नक्शे में रंग भर दें बापू के अरमानों का।
करने को निर्माण चला है जत्था वीर जवानों का॥
भूमिसेना जिंदाबाद, भूमिसेना जिंदाबाद, भूमिसेना जिंदाबाद…

—रामगोपाल दीक्षित

'भीख ही माँगती रह गयी !'

बीस साल बाद वही परिचित आवाज फिर सुनायी पड़ी 'दो दाना भीख'। मैंने जल्दी से उठकर देखा तो टुटिया थी। इतने दिनों में इसमें कितना परिवर्तन हो गया था ! मैं गौर से उसे देखती रह गयी। सहज ही मुँह से निकल गया—'तुम अब भी भीख माँगती हो ?' उत्तर दिया—'हाँ बहिनी मैं अभी भी भीख ही माँगती हूँ और न जाने कब तक माँगती रहूँगी।' मैं कुछ कहते ही जा रही थी कि टुटिया ने फिर कहना शुरू कर दिया 'बहिनी आप जानती हैं बाबू के घर गोबर उठाने जाती थी। बाबू मुझे बहुत मानते थे। मैं नहीं समझी कि आखिर मेरा इतना ध्यान क्यों रखते हैं। यह तो उस दिन समझी जब बाबू ने एक हाथ से मेरा मुँह बन्द कर दिया और दूसरे हाथ से मुझे खींचते हुए अपने कमरे में ले गये। उस दिन से मुझ पर उनकी विशेष कृपा रहने लगी। चार-पाँच महीने बाद मैं समझ गयी कि अब मैं माँ बननेवाली हूँ। मैंने बाबू से कहा। बाबू ने मुझे अपने काम से ही अलग कर दिया। बूढ़ी माँ थी और मुझे देख ही रही हो कि एक हाथ और एक पैर की हूँ। बचपन से भीख माँगती थी, लेकिन फिर तो भीख माँगने भी नहीं जाते बनता था। जहाँ जाती, वहाँ कोई कुछ न कुछ कहता। अन्त में मेरे लड़का हुआ। गाँव के लोगों ने बाबू से कह-सुनकर अनाज आदि दिलवाया। बाबू अब बहुत दूर-दूर रहने लगे। अचानक लड़का बीमार हो गया। दवा दारू भी न कर सकी। एक दिन बाबू चुपके से देखने आये। बाबू तो तुरत चले गये लेकिन वह एक दवा बच्चे को दे गये। खाने के कुछ ही देर बाद बच्चा मर गया। बच्चा उन्हीं के जैसा था।

"तुमने अपनी जाति में शादी क्यों नहीं कर ली ? कुछ काम धंधा कर ही लेती हो, रूप रंग में तो तुम अच्छी भी हो", मैंने कहा। टुटिया रूखी हँसी हँसते हुए बोली 'बहिनी, सुन्दर होने से क्या ? लोग शरीर की इज्जत करते हैं। मुझसे कौन शादी करता। इसीसे बचपन में शादी नहीं हो सकी। बच्चे के मर जाने के बाद माँ ने अपनी जाति के ही एक आदमी से शादी कर दी थी। उससे एक लड़की हुई। बहिनजी, वह भी छोड़कर चला गया। तब से कभी लौटा नहीं। लड़की सयानी हो गयी, शादी कर दी, अपने घर आती जाती है। माँ मर गयी। मैं अकेली माँगती-खाती हूँ। अभी मैं न जाने कितने दिनों तक जीती रहूँगी। जब से होश सँभाला तब से भीख ही माँगती हूँ। माँगते-माँगते मर भी जाऊँगी। जीवन में कुछ समय के लिए अच्छे दिन भी पाये, लेकिन मेरा भीख माँगना न छूटा। मैं माँगती ही रह गयी।"

खिचड़ी रो पड़ी

जमुना बाबू के घर गयी। देखा कि आँगन में कुछ सामान इस तरह रखा हुआ है जैसे अभी तुरन्त कहीं भेजा जायगा। सामान के पास ही जमुना बाबू की पत्नी उदास बैठी है।

जमुना बाबू को मरे कई साल हो गये। उनको एक लड़का और एक लड़की है। दोनों की शादी हो चुकी है।

'यह सामान कहीं से आया है, या कहीं जायेगा ?' मैंने जमुना बाबू की पत्नी से पूछा। उन्होंने धीरे-से कहा— इसीके लिए तो आज घर में महाभारत हो गया। कभी-कभी ये त्यौहार भी एक आफत जैसे लगते हैं। आप जानती हैं खिचड़ी कितनी करीब है। अभी तक मिथिलेश को खिचड़ी नहीं भेजी जा सकी।" यह कहकर वह रोने लगी। कुछ देर बाद फिर कहना शुरू किया—'देखिये इतना थोड़ा-सा सामान लड़का और बहू दोनों भेजना चाहते हैं। इस पर मैंने कह दिया कि मेरे जीते जी इस तरह खिचड़ी नहीं जायगी। आखिर, इतना सब घर में मौजूद है तो क्या उस पर मेरा अधिकार नहीं है ? बस इसी बात पर बहू झगड़ा करने लगी। तब तक अशोक ने उठकर दो चाँटे मुझे मार दिये। मैं चुपचाप उन दोनों का मुँह देखती रह गयी। दोनों चल दिये।

'जितना कहते हैं उतना ही भेजिये जाने दीजिये। आखिर आप करेंगी क्या ?" मेरे यह कहने पर जमुना बाबू की पत्नी बोली कि सुनिये, मैं सब कुछ कर सकती हूँ। मेरा हाथ खाली नहीं है। सोचा था कि अपने पास कुछ रहना चाहिए, ताकि बुढ़ापे में अपनी इज्जत रहे, लेकिन सब रहने के बाद भी आज मेरी यही इज्जत है। मैंने कभी सोचा नहीं था कि मेरा लड़का भी ऐसा करेगा।' कहते-कहते वह अपने हाथों अपना मुँह दबाकर रोने लगी, ताकि पड़ोस में कोई जान न जाय।

—विद्या

लौकी की खेती

लौकी गर्मी की एक महत्त्वपूर्ण सब्जी है। सर्दियों में भी जब सब सब्जियाँ समाप्त हो जाती हैं, तब भी यह मिलती रहती है। *बेलवाली सब्जियों मे इसका विशेष स्थान है।* इसकी खेती करने के लिए उन्नतिशील विधि नीचे दी गयी है:—

जलवायु व भूमि—लौकी के लिए गर्म व नम जलवायु की आवश्यकता होती है। यह अधिक सर्दी सहन नही कर पाती, इस कारण सर्दी की ऋतु में जहां अधिक सर्दी पड़ती हो, नही वोना चाहिए। इसकी खेती के लिए बलुई दोमट भूमि उत्तम रहती है।

उन्नत जातियाँ—भारतीय कृषि अनुसंधान शाला, नई दिल्ली ने लौकी की दो उन्नत किस्मे निकाली हैं:

१. पूसा समर प्रोलिफिक लौंग—इस जाति की लौकी के फल ४० से ५० सेंटीमीटर लम्बे तथा २० से २५ सेंटीमीटर मोटे होते हैं। फल मुलायम आकर्षक व हरे रंग के होते हैं। खाने मे स्वादिष्ट लगते हैं। एक बेल पर १० से १५ तक फल लगते हैं। *इस जाति को गर्मी और वर्षा मे बोया जाता है।*

२. पूसा समर प्रोलिफिक राउंड—इस जाति के फल गोल, इनकी मोटाई १५ से लेकर १८ सेंटीमीटर तक होती है। रंग हरा और सुभावना होता है। इसकी उपज लौंग से अधिक होती है। एक बेल से २०-२५ फल प्राप्त हो जाते हैं।

भूमि की तैयारी, खाद व उर्वरक—अच्छी खेती के लिए ५-६ गहरी जुताइयां काफी रहती हैं। लौकी की बुआई समतल खेत मे नालियाँ बनाकर, गड्ढे बनाकर की जाती है। कभी-कभी बीज को नर्सरी मे बोकर भी रोपा जाता है। विभिन्न प्रकार से खेती करने मे खाद व उर्वरक की मात्रा तथा उनके देने की विधि अलग-अलग होती है। समतल खेत मे बुआई का ढंग अवैज्ञानिक है। इसमें पानी बहुत बर्बाद हो जाता है तथा खरपतवारो को नष्ट करने मे अधिक व्यय करना पड़ता है। नालियों मे बुआई करने के लिए डेढ़ मीटर की दूरी पर नालियां बनायी जाती हैं। नाली की चौड़ाई आधा मीटर रखनी चाहिए। इस तरह से दो मीटर के फासले पर बीज बोये जाते हैं। गर्मियों की फसल मे यह दूरी डेढ़ मीटर रखनी चाहिए। नालियों मे मेड़ों की ऊँचाई बीस सेंटीमीटर रखी जाय। इन नालियो मे ही गोबर की खाद और उर्वरक डालकर मिला देना चाहिए।

गड्ढों में बुआई करने के लिए तीस सेंटीमीटर गहरे तथा ४५ *से०मी० व्यास के गड्ढे बना लिये जाते हैं।* प्रत्येक गड्ढे में दो-तीन टोकरी गोबर की खाद डालते हैं। इन गड्ढों के बीच सिंचाई *की नालियाँ बना ली जाती हैं।*

एक हेक्टेयर (लगभग ढाई एकड) मे १५ से २० गाडी गोबर की खाद, १७५ से २०० कि० ग्रा० किसान खाद या चीनीवाली खाद डालनी चाहिए तथा २२० से २५० कि० ग्रा० काली खाद डालनी चाहिए।

बीज की मात्रा और बुआई—बीज की मात्रा बुआई के समय पर निर्भर करती है। *गर्मियों मे बीज की मात्रा अधिक* रखते हैं। क्योकि गर्मियो मे बेलें कम फैलती हैं तथा पूरे बीज भी *अंकुरित नही हो पाते। गर्मियो मे प्रति* हेक्टेयर २.५ से ३ कि० ग्रा० बीज तथा वर्षाकालीन फसल मे २ से २.५ कि० ग्रा० बीज पर्याप्त रहता है। बीज को बोने से पहले २४ घंटे तक गुनगुने पानी मे भिगोना चाहिए तथा इसके बाद १२ घंटे मोटे कपड़े में लपेटकर ऐसे स्थान पर रख देना चाहिए, जहाँ काफी मात्रा मे गर्मी मिल सके।

नर्सरी मे बीजों को ८ सें० मी० की दूरी पर बनी लाइनो में बोया जाता है। जब पौधे ३ या ४ पत्तियोवाले हो जायें तो खेत में रोप दिये जाते हैं। इस विधि से बुआई करने मे खेत अधिक समय तक नही घिरा रहता, खेत मे खाली स्थान नही रह पाता और उपज भी अधिक होती है।

एक गड्ढे मे ४ बीज बोने चाहिए या ४ पौध लगानी चाहिए। बाद मे २ स्वस्थ पौधों को छोड़कर औरो को नष्ट कर देते हैं।

बुआई का समय—मुख्य रूप से दो फसलें बोयी जाती हैं—पहली फसल मध्य फरवरी से मध्य मार्च तक बोयी जाती है। इसमे अप्रैल मई मे फल मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं। दूसरी *फसल*, जून से जुलाई तक बोयी जाती है। इससे अगस्त या सितम्बर में फल मिलने लगते हैं।

जहाँ पर पाला पड़ने की सम्भावना नही होती वहाँ अक्तूबर

बापू का बड़प्पन

बापू के जीवन को नजदीक से देखते हैं तो सामान्य मनुष्य से वे महात्मा किस तरह बन गये, इसकी कुंजी हमें मिल जाती है। वाणी, विचार और व्यवहार, तीनों का उनके जीवन में समन्वय था। वे जो सोचते थे, वही कहते थे और वही करते थे। जो नहीं करते थे, वह नहीं कहते थे। यही उनकी असली ताकत थी, यही उनका सत्य था।

हम लोग अच्छे-अच्छे विचार सोचते हैं। अच्छी-अच्छी बातें कहते हैं, लेकिन उसी मुताबिक व्यवहार नहीं करते इसीलिए हम पिछड़ जाते हैं। सद्‌विचार की बहुत कीमत है, लेकिन सदाचार की कीमत तो उससे भी बढ़कर है।

चोरी करना बुरा है, झूठ बोलना बुरा है व्यसन करना बुरा है, निंदा करना बुरा है, ये सब बातें हम जानते हैं। मगर जब व्यवहार में लाने की बात आती है, तब हम उससे उल्टा ही व्यवहार करते हैं। इसीलिए समाज बुरा दिखता है। आखिर समाज बना है व्यक्तियों से ही, व्यक्ति सदाचारी बनेंगे तो समाज सदाचारी बनेगा।

शिक्षा का काम है व्यक्तियों को सुधारने का। लेकिन व्यक्ति कब सुधरता है? जब वह शिक्षक में सदाचार देखता है तो उसके जीवन पर भी उसका अच्छा असर पड़ता है। कन्या आश्रम, मढ़ी में मैंने देखा है कि आँगन में लगे आम के फल की सुगंध वहाँ से गुजरनेवाले के मुँह और नाक तक पहुँच जाती है। उसकी सुगंध तो नाक में भर जाती है, फिर भी वहाँ के सात सालों तक के छोटे बच्चे एक भी आम तोड़कर खाते नहीं हैं, क्योंकि शिक्षक ने उनके दिमाग में एक बात जोरों से बैठा दी है कि हम मनुष्य हैं पशु नहीं हैं। पशु जो देखता है, वह बिना सोचे खाता है। मनुष्य देखता है पर वह सब नहीं खाता है।

कन्या आश्रम, मढ़ी की बुनियादी शाला की बालिकाएँ 'राम-दुकान' चलाती हैं। उस दुकान में जो माल रहता है उस पर भाव लिखा रहता है, लेकिन बाँटनेवाला कोई नहीं रहता। नौ साल से यह दुकान चलती है, लेकिन न तो कभी माल गुम होता है, न एक पैसा तक कम आता है। सब कुछ भरोसे पर चलता है। विश्वास से विश्वास बढ़ता है, इसको मैं सच्ची बुनियादी तालीम कहूँगा। बच्चों के दिमाग में यह बात बैठ गयी है कि दो चार पैसे से हमारी इज्जत-आबरू बढ़कर है।

लेकिन शिक्षक के जीवन में ऐसे मूल्य होंगे तभी बच्चे उस रास्ते पर चलते हैं। उनके प्रेम और चारित्र्य से कई विद्यार्थियों का जीवन प्रेम से भर जाता है। —बबलभाई मेहता

में भी फसल बोयी जाती है। पर्वतीय-क्षेत्र में बुआई अप्रैल से मई तक करते हैं।

सिंचाई तथा निराई गुड़ाई—गर्मीवाली फसल में सिंचाई चौथे या पाँचवे दिन करना होती है। वर्षाकालीन फसल में प्रारम्भ में अधिक वर्षा होने के बाद प्रायः सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। यदि अधिक सर्दी पड़ने की सम्भावना हो तो सिंचाई कर देनी चाहिए, इससे फसल पर सर्दी का प्रभाव नहीं होता। फसल जब छोटी हो तो निराई-गुड़ाई द्वारा खेत खरपतवाररहित रखना चाहिए। बाद में यदि आवश्यक हो तो निराई की जा सकती है।

फल तोड़ना—जिस समय फल मुलायम तथा पूरे बढ़े हों, उस समय तोड़ लेना चाहिए। क्योंकि बीज बड़े हो जाने पर उसका स्वाद अच्छा नहीं रह पाता।

विनाशकारी कीट और उनका दमन—मुख्य रूप से दो कीड़े बहुत हानि पहुँचाते हैं

१ *लौकी का लाल कीड़ा*—यह कीड़ा पत्तियों को खाकर उनमें छेद बना देता है। इस कीड़े की सूड़ियाँ (ग्रब) फलों में छेद करके घुस जाती हैं। इस कीड़े को नष्ट करने के लिए एक प्रतिशत लिण्डेन की धूलि को बुरकना चाहिए या १ प्रतिशत लिण्डेन का घोल छिड़कना चाहिए। एक हेक्टेयर के लिए २० से २५ कि० ग्राम धूलि या ८५० लीटर घोल काफी रहता है।

२ *फल की मक्खी*—यह कीट के मैगट्स फल के गूदे को खाते हैं। इससे फल अन्दर से गल जाता है। इस कीट को नष्ट करने के लिए बेट्स बना लेना चाहिए। इसके लिए डेढ़ कि० ग्राम प्रोटीन हाइड्रोलीजेट तथा २.२५ किलो ग्राम मैलाथियन ५० प्रतिशत, डब्ल्यू० पी० की आवश्यकता होती है। —भोपाल सिंह

पटने का मेला

हरिनामपुर मे दरभंगा राज की एक पुरानी कचहरी है। कुसेसर महतो ने उठती जवानी के दिनों से ही वहाँ के बाराहिल का काम किया है। राज खतम हो गया तो भी वह अपने गाँव नही लौटे। गाँव का मुखिया तो कोई और है, लेकिन गाँव के लोग शाम को अकसर महतो के दरवाजे पर ही जुटते हैं।

उस दिन जब बिहार की मिलीजुली महामाया बाबू वाली सरकार गिर गयी तो शाम को महतो की कचहरी में लगभग पूरा गाँव ही जुट गया, पटना का तमाशा सुनने के लिए। महतो 'आर्यावर्त' नामक बिहार का प्रमुख दैनिक अखबार डाक से मँगवाते हैं।

"स्वामी…भगाये गये !…को २० हजार रुपये देकर दल ने खरीद लिया।…पुलिस मंत्री और…मे धक्कम धुक्की।…को जान से मारने की धमकी…महामाया बाबू की सरकार उलटने के लिए…लाखो रुपये खर्च…!" महतो अखबार से खबरें पढ़कर सुनाते जा रहे थे। और लोग उत्सुकता और अचरज से सुनते जा रहे थे। तभी गाँव के रघू अहीर ने ऊबकर कहा, "रहने दो महतो जी, कुछ अच्छी बातें अखबार मे हों तो पढ़कर सुनाओ। यही तमाशा देखना हो तो अगले साल सोनपुर के मेले में चले जाना।"

"रघू हमेशा टेढ़ी बात ही बोलता है। सीधी बात तो जैसे इसको बोलने आती ही नही।" किसी ने खीभकर कहा।

"हाँ हाँ…मेरी बात टेढ़ी तो लगेगी ही, सच्ची बात टेढ़ी लगती ही है।" रघू ने जवाब दिया।

"लेकिन सोनपुर के मेले और पटना के राजनीतिक तमाशे का क्या मेल है रघू ?" महतो ने पूछा।

"अरे महतो जी, यह पूछिये कि फर्क क्या है! सोनपुर मेले मे मवेशियों की खरीद-बिक्री होती है कि नही ?" रघू ने पूछा।

"होती है।" किसी ने उत्तर दिया।

"पटने मे विधायकों की खरीद-बिक्री होती है कि नही ?" रघू ने पूछा।

"होती है ?" महतो ने जवाब दिया।

"भाई, मानना पड़ेगा कि रघू की बात टेढ़ी भले हो, लेकिन है सच्ची !" किसीने कहा।

"ठीक बात है। विधायकों और सोनपुर मेले के जानवरो मे कोई फर्क नही है, यही बात देश के एक बड़े नेता ने भी कही है।" महतो ने कहा।

"लेकिन नेता लोग अपनी गोशाला में जानवरों की संख्या बढ़ाने के लिए दूसरी गोशालाओं से जानवर खरीदने या चुराने से नही चूकते।" रघू ने कहा।

"लेकिन यह बताओ कि गोशाला का क्या मतलब ?" किसीने पूछा।

"रह गये भोला भोंदू ही। अरे ये नेताओं के दल क्या हैं ? गोशालाएँ ही तो हैं !" रघू ने कहा।

"बात ठीक कहते हो रघू। लेकिन हमें यह नही भूलना चाहिए कि इन विधायकों को हमने ही 'भोट' देकर चुना है।" महतो ने कहा।

"सो ठीक है। इन्होंने हमारी भलाई के वादे किये, और हमने इन्हे 'भोट' देकर चुन दिया। कोई दिल्ली गया, कोई पटना। लेकिन चुन जाने के बाद अब 'भोट' देनेवालों को कौन पूछता है ?" रघू ने कहा।

"बेचारे किस-किसको पूछें। अपने 'दल' को, 'भोट' देनेवालों को, अपने 'कुटुम्बवालों' को, या 'अपने आपको ?' जरा सोचो तो सही। तीन-तीन, चार-चार पूछनेवाले तो गरदन पर सवार हैं इनके।" महतो ने जरा समझदारी दिखाते हुए कहा।

"हाँ महतो, लेकिन भोट माँगते समय तो वादा होता है 'भोट' देनेवालों की भलाई करने का ही। सबलोग अपने को त्यागी और जनता का सेवक ही बताते हैं।" रघू ने कहा।

"ये सब हाथी के दाँत वाली बातें हैं रघू। अपने और अपने दल के स्वार्थ मे चिपके लोग क्या जनता की सेवा करेंगे! अब तो कोई ऐसा उपाय सोचो कि 'स्वार्थी' और 'दलवाले' लोग चुने ही न जायँ। जनता का प्रतिनिधि हो, जनता ही उसे उम्मीदवार बनाये और एक राय होकर उसे चुने।" गाँव के एक वृद्ध सज्जन ने कहा।

"बात पते की कही है चौधरी ने। लेकिन होगा कैसे ?" किसी ने सवाल उठाया।●

'गाँव की बात'। वार्षिक चंदा: चार रुपये, एक प्रति: अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा-संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित

बिहार-भूमिसेना शिविर : शेरघाटी

दिनांक ३० जनवरी, १९६८ दिन में २ बजे पटना की ओर से आकर गया जंक्शन पर गाड़ी रुकी। २५० किसानों का एक दल उतरा और 'सन्त विनोबा की जय' इस उद्घोष से प्लेटफार्म गूंज उठा। यात्रियों की आँखें उस ओर लग गयीं। भाँति भाँति के नारे लगाता हुआ, यह दल स्टेशन के बाहर आया, जहाँ गया नगर के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की एक टोली उनका स्वागत करने के लिए खड़ी थी। यहाँ से सुव्यवस्थित जुलूस के रूप में यह दल बापू-मंडप की ओर चला जहाँ संध्या समय सूतयज्ञ, प्रार्थना व सार्वजनिक सभा का आयोजन था।

सिर पर केसरी रूमाल परिनिबद्ध मग्न थाल, ढोलक, मृदंग, मजीरे झाल गीतों की लय ताल, कमाल का दृश्य था। घनाच्छादित गगन, पंकिल अवनि, नन्हीं-नन्हीं बूंदों की बार-बार बौछार, पल-पल पानी की पड़ती फुहार, सन-सन सर्दीली पुरवैया पवन फिर भी घरबार छोड़कर बिहार राज्य के १५ जिलों से आये हुए १५ टोलियों में अपने-अपने रंग बिरंगे परिचय-पट्ट लिये हुए जिनमें ग्रामदान ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन सम्बन्धी उद्घोष वाक्य सुन्दरतम अक्षरों में लिखे थे। ऐसी कड़ी ठंड, सर्दी में गहरी निद्रा लिये श्रम के सजग प्रहरी, ये भूमिपुत्र लगन में मगन, गाते-बजाते, नारे लगाते चल रहे थे।

ये लोग कौन हैं ? कहाँ से आये हैं और कहाँ जा रहे हैं ? यह जानने के लिए लोगों के मन में हर्ष विस्मय के बीच उत्सुकता तथा जिज्ञासा के भाव जगे और लगे देखने जुलूस को। देखते-देखते दर्शकों की अपार भीड़, जुलूस के आस-पास एकत्र होकर साथ साथ चलने लगी। जुलूस गया की गलियों से गुजर रहा था।

लोगों को पहले से ज्ञात था कि बिहार के वर्तमान मंत्रिमंडल द्वारा आयोजित कार्यक्रम के अनुसार पूर्वघोषित बहुश्रुत एवं बहुचर्चित आज 'बिहार बंद' का दिन है। जुलूस निकालने, सभा करने आदि की मनाही का एलान हो चुका है। जगह जगह पुलिस तैनात है।

दूर के लोगों को विश्वास हो रहा था कि यह जुलूस "बिहार बंद" को गया शहर में सफल बनाने हेतु राजनीतिक दलों द्वारा ग्रामीण क्षेत्र से लाये गये किसानों और मजदूरों का है। चर्चा हो रही थी— ये राजनीतिवाले स्वार्थ की घात में दिन रात सुराफात को रातकर उत्पात मचाते हैं। सीधे-साधे किसानों की ये टोलियाँ जो सिखायी-पढ़ायी बोलियाँ बोल रही हैं, गालियाँ खायेंगी पुलिस की। बंद करो दूकान, समेटो सामान ये शैतान बिना परेशान किये मानेंगे नहीं, इनसे निबटना आसान नहीं, बावले हैं, बावले, कहकर लोग उतावले हो रहे थे दुकानें बंद करने को।

लेकिन देखा, जुलूस अबाध गति में शान्त बढ़ता आ रहा है। कोई धर पकड़ नहीं तोड़ फोड़ नहीं पुलिस का पता नहीं। जुलूस के परिचय-पट्टों को पढ़ने लगे। 'सन्त विनोबा की जय, एक बनेंगे नेक बनेंगे भूमिसेना जिंदाबाद, 'जयप्रकाश का जीवनदान, सफल करेगा बिहारदान' '२ अक्तूबर सन् ६८ तक बिहारदान'। तो लोग चिल्ला उठे। डरो नहीं। बाबा विनोबा की जमात है। फिर क्या था, आतंक आनंद में बदल गया।

घर और दरवाजे, छतें और छज्जे, सड़कें और चौराहे, आबाल-वृद्ध नर-नारियों से खचाखच भर गये। धोखे से भी कभी झरोखे से बाहर न झाँकनेवाले अवगुंठन, अनावृत, लज्जालु, लोल लोचनों के अतृप्त अरमान भी पारदर्शी परिधान की म्यान से बाहर निकल-कर ध्यान से ताकने लगे और अपलक झलक झाँकने लगे। अनोखी बाँकी झाँकी की। वे भूल गये कि उनके सम्मोहक दृष्टि निक्षेप पर भी कोई सापेक्ष आपेक्ष कर रहा होगा। चित्रकारों ने अपनी कलम और छविकारों ने अपने कैमरे सँभाले और जुलूस की विविध रूपा छविछटा को छायाचित्रों में अमर कर लिया। जुलूस बढ़ता जा रहा था।

जुलूस के आगे चलती हुई गीत गाने वाली टोली जब चौराहों पर थिरक थिरककर नाच उठती थी और नारों की उच्च ध्वनि से वातावरण गूंज जाता था, तो वारिद बालाएं गगन-अंग पर घूंघट पटा हटा-हटा-कर छबीली छटा को देखने हेतु छटपटाकर रह जाती थीं और घनश्याम बूंदें उलीच उलीचकर सड़कों को इस प्रकार सींच देती थीं कि न कीच ही होती थी और न धूल ही रहती थी। लगभग ॥ बजे शाम यह जुलूस बापू मंडप में पहुँचकर सभा के रूप में परिवर्तित हो गया। —रामगोपाल दीक्षित

कर्मशील हलेवीजी

सन् १९५९ में सेवाग्राम में खेती का एक क्रान्तिकारी प्रयोग शुरू हुआ। काफी सफलता मिली। दो-ढाई साल के भीतर दो-ढाई गुनी पैदावार होने लगी। इसी बीच सन् १९६२ के मध्य में इसराइल से एक अति अनुभवी किसान "श्री हलेवी" हमारे बीच आये। हलेवीजी ने हमको बताया कि इसराइल में उनके पास २२ एकड़ जमीन है। इस जमीन से उनको प्रति वर्ष डेढ़ लाख रुपये की आय होती है। लगभग पन्द्रह हजार रुपया वे प्रति वर्ष सरकार को कर के रूप में देते है। उनके पास ३२ गायें है और उनमें से कई गायें ४० लीटर तक रोजाना दूध देती हैं। धान, गेहूँ, मक्का आदि फसलों के अतिरिक्त उनके पास सेव, संतरा, अंगूर आदि फलों के वृक्ष है। खेती व गोशाला के अतिरिक्त एक मुर्गीशाला भी है, जिसमें लगभग डेढ़ हजार मुर्गियाँ पलती हैं। और यह सारा काम वे, उनकी पत्नी और दो लड़के मिलकर करते है। उनके खेत में कोई मजदूर काम नहीं करता।

अंगूर के बाग में
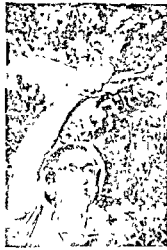
हलेवीजी सेवाग्राम में हमारे साथ काम करने लगे और उनकी मदद। हमने बहुत सुन्दर टमाटर और बैंगन की फसल उपजायी, एक केले का बगीचा लगाया और अंगूर की उपज भी लेने लगे। हमारा विश्वास उन पर अधिक-से-अधिक जमने लगा। हलेवीजी उस समय लगभग ६० वर्ष के थे। लेकिन उनकी विशेषता थी कि वे सुबह से शाम तक अथक परिश्रम कर सकते थे। जब कभी मैं काम करते-करते थक जाता था तो उनका कार्य-कौशल मुझे और काम करने की प्रेरणा देता रहता था।

भारत में आने के एक माह के अन्दर ही वे यह सोचने लगे कि इसराइल के किसान भारत की कृषि को क्या देन दे सकते है? उन्होंने हमको हाइब्रीड ज्वार के बीज के बारे में बताया। उस समय भारत में हाइब्रीड ज्वार नहीं था। वे हाइब्रीड ज्वार का बीज इसराइल से लाये थे और उसकी आशातीत सफलता को देखकर हम लोग मुग्ध हो गये। छोटे-छोटे किसानों के उपयोग के और उनकी कार्य-क्षमता को बढ़ानेवाले कई अत्यन्त सादे लेकिन बहुत ही महत्त्वपूर्ण औजार वे इसराइल से लाये। उनका बताया हुआ एक

(पृष्ठ २५१ का शेषांश)

→विएतनाम में अमेरिका इतनी संहार-लीला क्यों कर रहा है? क्या सिर्फ इसलिए कि विएतनाम को साम्यवाद से बचाना है? एशिया को साम्यवाद से बचाने की ठीकेदारी अमेरिका को किसने सौंपी? क्या एशियावालों के पास बुद्धि और विवेक नहीं है? और अमेरिका के पास साम्यवाद का विकल्प भी क्या है? क्या पूँजीवाद? कल्याणकारी पूँजीवाद? डालर के मद में चूर पूँजीवाद? अगर एशिया के नव-स्वतंत्र देशों को अपने पूँजीवाद और साम्यवाद में से ही किसी एक को चुनना हो तो निश्चित रूप से जनता पूँजीवाद को नहीं चुननेवाली है। उसे अपने घर में जिस सामंतवाद और पूँजीवाद का अनुभव हो रहा है, और अमेरिका की जिन छिपी और खुली कुचालों और कुचक्रों को वह देख और सुन रही है, उससे उसके मन में पूँजीवाद के लिए जगह नहीं रह गयी है। रहनी भी नहीं चाहिए। साम्यवाद विष है, तो पूँजीवाद अमृत नहीं है। साम्यवाद कम-से-कम नया विष तो है, जिसके नयेपन में आकर्षण है। उसमें पुराने विष का मुकाबिला करने और मर-मिटने, की शक्ति तो है! अमेरिका किसे बचाना चाहता है—विएतनाम को, या अपने पूँजीवाद को?

हर देश को आत्म-निर्णय का अधिकार है। उसे कैसी व्यवस्था पसन्द है, इसका निर्णय उसके सिवाय दूसरा कौन करेगा? साम्यवाद का होवा दिखाकर अमेरिका छोटे देशों की इस स्वतंत्रता का भी अपहरण कर रहा है। होना यह चाहिए कि विएतनाम का आत्म-निर्णय का अधिकार मान्य किया जाय, और चीन या किसी देश द्वारा हस्तक्षेप न हो, इसकी व्यवस्था हो। लेकिन जब अमेरिका खुद अपने 'प्यार' से विएतनाम का खात्मा कर देने पर उतारू है तो कोई निष्पक्ष व्यवस्था कैसे हो सकती है?

अहिंसा की शक्तियों को आगे दें विश्व की शक्तियाँ कहाँ हैं? कहाँ है विश्व की नागरिक चेतना जो विएतनाम की संहार-लीला देख रही है, देखती जा रही है। एक द्रौपदी के चीर-हरण के कारण होनेवाला महाभारत इस नंगी, नृशंस संहार-लीला के सामने कितना हल्का और सात्त्विक था?

कितना जरूरी है कि एशिया की प्रतिभा इस समय साम्यवाद और पूँजीवाद दोनों का विकल्प ढूँढ़े, और विनाशकारी विज्ञान पर मानवता का अंकुश लगाये।

क्या भारत पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों का विकल्प ढूँढ़ने का काम कर सकता है? कर तो सकता है, पर उसकी राजनीति, निष्फल होते हुए भी, उसकी भूखी-नंगी जनता को प्रच्छन्न 'अमेरिकावाद' और प्रच्छन्न 'चीनवाद' के नागपाश में बाँधती चली जा रही है। जो असंख्य लोग अभी भी इन दोनों से अलग हैं वे निर्बल हैं, निष्क्रिय है।

लेकिन दूर क्षितिज पर कहीं सर्वोदय दिखायी दे रहा है। जनता में उसकी माँग है। परिस्थिति में अवसर है। राष्ट्र की चेतना 'सर्व' के साथ जुड़ जाय तो विकल्प निकल आये।●

बहुउद्देशीय हल आज अमरावती और नागपुर के कारखाने में बनता है और इस औजार को हिन्दुस्तान ही नहीं, नेपाल और सिक्किम के किसानों ने भी हमारे द्वारा मँगवाया और उपयोग किया।

सन् १९६३ के आखिर में जब वे इस-राइल जाने लगे तो मैंने उनसे सहज ही कहा, 'मैं कुछ ऐसी भेंट आपको देना चाहता हूँ, जिससे भारत की यादगार आपको इसराइल में रह सके।' उन्होंने मुस्कराते हुए कहा, 'गंगा नदी हमको दे दो।' मुझे आश्चर्य हुआ। उन्हें देखने लगा। वे बोले, 'तुम लोग इसका कोई उपयोग नहीं कर रहे हो। यह व्यर्थ में ही बहकर समुद्र में चली जाती है। यदि इसराइल में हमारे पास गंगा नदी रहती तो हम निगेव रेगिस्तान को एक हरे भरे प्रदेश में बदल

धर्मशाला में

देते।' ऐसा था उनका विश्वास। वे कहते थे कि हिन्दुस्तान की जमीन इतनी अच्छी है और यहाँ पर पानी के स्रोत इतने अधिक हैं कि यह देश सारी दुनिया को खिला सके।

यहाँ से जाने के बाद वे इथोपिया चले गये और वहाँ एक बहुत बड़ी कृषि-योजना का संचालन करने लगे। लेकिन अक्सर उनको हिन्दुस्तान की याद आती थी। उन्होंने मुझे लिखा कि यहाँ साधन तो काफी हैं, लेकिन अण्णासाहब जैसे और अन्य सर्वोदय कार्यकर्ताओं जैसे ध्येयवादी व्यक्तियों की बहुत कमी है। उसके बाद वे दो बार हिन्दुस्तान आये और यह सोचने लगे कि क्या इसराइल सरकार और ग्रामदान आन्दोलन के लोग मिलकर इस देश में कृषि-सुधार की कोई योजना बना सकते हैं? इस प्रकार की एक योजना का प्रारूप लेकर वे इसराइल गये। बम्बई में इसराइल कौंसिल की मदद से हमने इस चर्चा को आगे बढ़ाया, परन्तु इसी बीच इसराइल का अरब देशों के साथ युद्ध छिड़ गया।

हलेवीजी ने इसी बीच अपने विदेश विभाग से चर्चा की और अपने एक आखिरी पत्र में मुझे लिखा कि इसराइल का विदेश विभाग यह मानता है कि ग्रामदान आन्दोलन के साथ मिलकर इसराइल की सरकार एक कृषि विकास-योजना चलाने में मदद कर सकती है।

इस प्रकार का पत्र-व्यवहार उनके साथ चल रहा था। इसी बीच इसराइल के कौंसिल का एक तार मिला कि हलेवीजी अपने बगीचे में फल तोड़ते समय सीढ़ी से गिरकर मर गये। यह घटना ५ जनवरी '६८ को थी और उनका तार मुझे कई दिन बाद मिर्जापुर के सुदूर आदिवासी क्षेत्र में घूमते घूमते मिला। उस तार के कुछ ही दिन पहले मुझे एक पत्र मिला था, जिसमें हलेवीजी ने लिखा था कि इसराइल देश से कुछ किसानों की एक टीम हमारी मदद के लिए शीघ्र ही भारत आ सकेगी।

इसराइल कौंसिल का उपरोक्त तार पाकर मैं स्तब्ध रह गया। हलेवी इस दुनिया में नहीं रहे, इस बात पर विश्वास ही न हो होता था। क्या हलेवीजी के साथ जो सपना हमने संजोया था, वह अधूरा ही रह जायेगा? क्या भारत में काम करने की हलेवीजी की इच्छा अधूरी रहेगी? क्या भारतीय किसानों को इसराइली किसानों का जो उपहार वे देना चाहते थे, वह नहीं मिल सकेगा?

हमारे चारों तरफ उनकी दी हुई अनेक चीजें हैं—किताबें, पेड़-पौधे, कृषि-औजार, व्यक्तिगत उपहार आदि। ये सब चीजें हलेवीजी की याद को कभी मिटने नहीं देतीं। हलेवीजी निरन्तर कार्यशील व्यक्ति थे और वे अन्त समय में भी काम करते-करते ही गये। उनके जीवन के लायक ही उनकी गौरवपूर्ण मृत्यु है।

हलेवीजी इसराइल के किसानों की एक भेंट भारत के किसानों को देना चाहते थे। आशा है, उनका यह सपना पूरा होगा।

—प्रेम भाई

पंडित दीनदयाल उपाध्याय

जन्म

पंडित दीनदयाल उपाध्याय का जन्म मथुरा जिले के फरह गाँव के एक साधारण ब्राह्मण परिवार में सन् १९१७ में हुआ था। बचपन में ही उनके माता पिता का देहान्त हो गया था। उनके मामा ने उनका पालन-पोषण किया। उन्होंने कानपुर में शिक्षा पायी। अध्ययन काल से ही उनका आकर्षण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की ओर था।

रुचि

श्री उपाध्यायजी की रुचि प्रारम्भ से ही साहित्य एवं पत्रकारिता में थी। लखनऊ से

प्रकाशित 'स्वदेश', 'राष्ट्रधर्म' एवं 'पांचजन्य' जैसे पत्रों से उनका निकट का सम्बन्ध था। 'राष्ट्रधर्म' के वे वर्षों सम्पादक भी रहे।

प्रवृत्ति

सन् १९५१ में उन्होंने जनसंघ को अपना जीवन समर्पित किया। जनसंघ के विधान-निर्माण का श्रेय उपाध्यायजी को ही है। जनसंघ की नयी आर्थिक नीति के निर्माण में उनका सर्वप्रमुख स्थान था। कई प्रश्नों पर जनसंघ की नीति को उन्होंने सामयिक मोड़ देकर उसे जनता में लोकप्रिय बनाया था।

गुण

क्रोध करना तो उन्होंने सीखा ही नहीं था। बात-बात में शिष्ट व्यंग्य उनका स्वभाव था। जीवन में सादगी, कार्य के प्रति अटूट निष्ठा, ध्येय के प्रति एकाग्रता और सफलता के प्रति निरभिमानिता उनके असाधारण गुण थे। ●

प्रशान्त महासागर का स्वामी कौन ?......

अमरीका के राजनीतिक नेता बार-बार यही कहते जाते है कि वे केवल अपनी ही सेना को वियतनाम से क्यों हटायें ? इस प्रकार की एकपक्षीय कार्यवाही वे किसी हालत में कर नहीं सकते। उनकी इस प्रकार की बातें न केवल वियतनाम की समस्या टाल देती है, वरन् लोगों को भ्रम में भी डालती है। यह तो हम सभी जानते हैं कि हटना तो केवल अमरीकी सेना को ही है। भला वियतनामी हटकर कहाँ जायेंगे ? वे तो अपने ही देश में है। यदि उनकी ओर से कोई विदेशी सेना लड़ने आयी होती तो वह अवश्य लौट जाती। इस प्रकार की सब बातें निरर्थक लगती हैं। इसमें वियतनाम-युद्ध का गलत इतिहास हमारे सामने आता है।

वियतनामी जनता अमरीका पर किसी प्रकार का आक्रमण करना नहीं चाहती। आज जो संघर्ष वहाँ के लोग चला रहे है, वह केवल अपनी राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए है।

यदि कोई यह दलील हमें देता है कि वर्तमान परिस्थिति में किसी भी अमरीकी राष्ट्रपति के लिए वियतनाम से अपनी सेना हटाना सम्भव नहीं हो सकता, उन्हें मैं यह उत्तर देना चाहता हूँ। आज संसार का प्रत्येक देश इस युद्ध को बंद करने के पक्ष में है। इन देशों में कुछ तो अमरीका के अच्छे मित्र देश भी है। वे सब यही कहते है कि यह युद्ध समाप्त होना चाहिए। इतना ही नहीं, किन्तु अमरीकी लोग भी अब इस युद्ध को समाप्त करना चाहते हैं। अमरीका के राष्ट्रपति को वियतनाम से अपनी सेना हटाने की घोषणा पहले ही से करने की कोई आवश्यकता नहीं। उन्हें केवल इस प्रकार का आश्वासन वियतनामी जनता को रूस अथवा इंग्लैण्ड द्वारा देना होगा। इस प्रकार का आश्वासन मिलते ही वियतनामी बातचीत करने के लिए तैयार हो जायेंगे। रूस तथा ब्रिटेन जिनेवा-समझौते के संयुक्त अध्यक्ष होने के नाते उनको मध्यस्थी वियतनामी अवश्य स्वीकार करेंगे। जब अमरीका तथा वियतनामी लोगों के बीच इस प्रश्न पर बातचीत कुछ प्रगति कर ले तब अमरीका सेना हटाने के निश्चय के बारे में घोषणा करे।

इस चर्चा के साथ ही यदि हम इस बात पर भी विचार करें कि अमरीकी सेना वियतनाम में क्यों है तो गलत न होगा। अमरीकी सेना की वियतनाम में उपस्थिति के कारणों के दो प्रमाण मेरे पास हैं, जो मैं पाठकों के सामने रख रहा हूँ। अमरीका संसार में अपनी सार्वभौम शक्ति बनाये रखने के लिए इस देश पर अपना आधिपत्य बनाये रखना चाहता है। सुदूर पूर्वी देशों पर अधिकार रखने के लिए यह महत्त्वपूर्ण देश है। यही कारण है कि फ्रांसीसी सेना की हार होने तक अमरीकी सरकार उनका अस्सी प्रतिशत खर्च दे रही थी।

११ जनवरी १९६७ के 'न्यूयार्क टाइम्स' में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण लेख छपा था। इसके लेखक श्री सी. एल. सात्सबर्गर की वाल्टर राबर्टसन से जो उन दिनों बातचीत हुई थी वह उन्होंने इसमें प्रकाशित की है। वाल्टर राबर्टसन सुदूर पूर्वी मामलों के उप-मंत्री थे। यह बातचीत २२ अप्रैल १९५४ में हुई थी। इसी दिन फ्रांसीसी सेना की वियतनाम में हार हुई थी। राबर्टसन ने उस अभागे दिन कहा था

"आज का दिन अमरीका के इतिहास का सबसे अशुभ दिन है। हमें यह स्वीकार करना ही होगा कि हम किसी भी कीमत पर दक्षिण-पूर्व एशिया को अपने हाथों से निकल जाने नहीं देंगे। यदि फ्रांस की इस युद्ध में हार हुई तो हमें हस्तक्षेप करना ही होगा। दक्षिण-पूर्व एशिया हमारे हाथ से निकल जाने से हमारी प्रतिष्ठा पर आँच आयगी। यदि यह देश कम्युनिस्टवादी हुआ तो चीन की सबसे बड़ी विजय होगी। सैनिक दृष्टि से यह जगह जितनी महत्त्वपूर्ण है उतनी ही कच्चे माल की दृष्टि से भी है।"

उपरोक्त स्पष्टवादी कथन से हमें यह समझते देर नहीं लगती कि अमरीकी सेना वियतनाम में क्यों है। अमरीकी नेता डीन रस्क तथा जानसन लोगों के सामने जो कहते है उसके अनुसार करते कुछ नहीं। उनकी दुतर्फी बातों का दूसरा प्रमाण ३० मई १९६७ के 'लुक' पत्रिका में छपे एक लेख में मिलता है। इसे 'लुक' के विदेशी सम्पादक राबर्ट मोस्कोन ने लिखा था : "सुदूर पूर्व अब हमारा सुदूर पश्चिम है। अमरीका की पश्चिमी सीमा अब प्रशान्त महासागर के दूरस्थ तट पर है जो सानफ्रांसिस्को से ८००० मील दूर है। एशिया महाद्वीप से कुछ दूर के छोटे द्वीपों को हमें अपने अधिकार में रखना है। इनमें कोरिया, वियतनाम तथा थायलैण्ड प्रमुख है। वहाँ पर हमारे पाँच लाख से अधिक सैनिक है, हजारों वायुयान है तथा शक्तिशाली नौसेना की टुकड़ियाँ है। हम—केवल हम ही प्रशान्त महासागर के स्वामी है और हम वहाँ से हटेंगे नहीं।"

उत्तर वियतनाम के राष्ट्रपति हो चि मिन्ह अमरीका की यह अधिकार-लोलुपता जानते हैं और यह भी जानते हैं कि अमरीका कितना शक्तिशाली देश है। किन्तु फिर भी वे तथा उनके देशवासी अपनी स्वतंत्रता की अभिलाषा कभी भी छोड़ नहीं सकते। जब तक अमरीका वियतनाम पर अपना अधिकार रखना चाहेगा तब तक यह युद्ध जारी रहेगा। यदि यह युद्ध जारी रहा तो उनके अनगिनत लोग मारे जायेंगे और वे यह भी जानते है कि यह युद्ध बन्द नहीं होगा। उन्होंने एक बार मुझसे कहा था कि युद्ध में हार मानने की बजाय वे १५-२० वर्ष तक लड़ते रहेंगे और अन्त में जंगलों में चले जायेंगे। अब तक उन्होंने अपनी बात रखी है।

—रसल जानसन

(गांधी शांति प्रतिष्ठान के सौजन्य से)

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

१ मार्च '६८ अंक : २२

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०

एक प्रति : २० पैसे

विदेश में साधारण डाक-शुल्क— १८ रु० या १ पौंड या ३॥ डालर

(हवाई डाक शुल्क देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४१८५

खादी का आधार : समझदार नागरिक

मैं एक हिसाब रखूं। मान लीजिये, १२ लोग खादी का कपड़ा खरीद कर लेते हैं। एक मनुष्य के लिए १२ गज खादी, यानी १२ मनुष्यों को १४४ गज खादी हुई। तो एक कत्तिन को १२ महीना कपड़ा-खाना मिलेगा। पूरी 'इम्प्लायमेंट' (रोजी) मिलेगी। गरीबी में ही गुजारा होगा अमीरी से नहीं, लेकिन गुजारा हो जायगा। १२ मनुष्य अगर खादी इस्तेमाल करेंगे तो एक मनुष्य का गुजारा होगा। हिन्दुस्तान की तो बात ही क्या, यह मुंगेर जिला है, यहाँ खादी प्रतिष्ठान है, खादी के लिए यहाँ आदर है, अगर यहाँ के ३० लाख लोग खादी इस्तेमाल करते हैं तो ढाई हजार लोगों को 'इम्प्लायमेंट' मिलेगी। और आप जानते होंगे डा० लोहिया ने बार-बार कहा और पं० नेहरू को यह मानना पड़ा कि हिन्दुस्तान के सबसे नीचे के स्तर के मनुष्य की आमदनी १० रु० है। ऐसी हालत में १२ मनुष्य मिलकर एक मनुष्य को 'इम्प्लायमेंट' दे रहे हैं, ऐसा हो तो बहुत बड़ा काम होगा। हमें मानना होगा कि खादी में बड़ा 'इम्प्लायमेन्ट पोटेन्शियल' है।

फिर अगर कोई खादी इस्तेमाल करता है तो उसका खर्च कितना अधिक पड़ेगा? मिल के कपड़े के बदले खादी पहनेगा तो १२ या १४ रुपये अधिक खर्च करना पड़ेगा। एक मनुष्य ने १४ रु० अधिक खर्च किया और उस आधार से एक मनुष्य को सालभर खाना मिला, 'इम्प्लायमेंट' मिली, तो कितना सुन्दर, पवित्र दान-कार्य माना जायगा। ये लोग कुछ-न-कुछ दान तो बेचारे करते ही हैं, गंगा किनारे दान करेंगे, त्रिवेणी-संगम पर दान करेंगे, श्राद्ध दिन पर दान करेंगे, पिता की मृत्यु पर दान करेंगे। हम आप लोगों को समझाते हैं कि बाकी सब दान बंद करें और यह दान दें तो चलेगा। कैसे दान देना? एक बात बताता हूँ। आप रोज जमाखर्च लिखते होंगे, तो सालभर के कपड़े का खर्च उसमें लिखेंगे। मान लीजिये, आपने ३४ रु० की खादी खरीदी, तो कपड़ा खाते २० रु० लिखिये और १४ रु० गुप्त-दान लीखिये। उसकी दान के तौर पर तो प्रसिद्धि नहीं हुई लेकिन वह दान ही है, गुप्त-दान। हमारे शास्त्रकारों ने लिख दिया है कि 'स्थापनेन नश्यति'।

सर्वोत्तम दान कौनसा? जो दाता को उन्मत्त बनाता नहीं और जो लेनेवाले को दीन बनाता नहीं। कत्तिनें समझेंगी कि हम श्रम करते हैं इसकी मजदूरी हमको मिलती है। और आप समझेंगे कि राष्ट्र के लिए मैं अपनी थोड़ी सेवा दे रहा हूँ नम्रता से।

यह सारा मैं इसलिए कहता हूँ कि जनता खादी जैसे महान उद्योग को मदद देगी नहीं, तो खाली सरकार के आधार से खादी टिकेगी, ऐसे भ्रम में रहना नहीं चाहिए। खादी जनशक्ति से टिकेगी। इसलिए आनन्द होना चाहिए कि मैं खादी खरीदता हूँ यानी गरीबों को आजीविका दे रहा हूँ। खादी का आधार समझदार नागरिक है और प्रचारक आचार्य, आचार्य आदि लोग हैं। इनका काम है समाज में ऐसे उद्योगों की प्रतिष्ठा बढ़ाना। शिक्षा के द्वारा समाज को 'राइट ओरियेन्टेशन' देना।

(मुंगेर, १२-२-'६८) —विनोबा

कच्छ का सवाल और राजनीतिक अखाड़ेबाजी

कच्छ के प्रश्न पर अन्तर्राष्ट्रीय पच-मंडल ने जो फैसला दिया है उसके सबंध में देश की कुछ राजनीतिक पार्टियों और नेताओं ने एक आश्चर्यजनक विवाद खड़ा किया है। कच्छ की खाड़ी में हिन्दुस्तान-पाकिस्तान दोनों देशों के बीच की सीमा कहाँ मानी जाय, इस प्रश्न पर मतभेद चला आ रहा था। इस विषय को लेकर दोनों देशों के बीच एक से अधिक बार काफी गंभीर तनाव और संघर्ष भी हो चुका था। आखिरकार दो वर्ष पहले दोनों देशों ने मिलकर इस विवाद को पच-फैसले के लिए सुपुर्द करने का स्वीकार किया और उसके अनुसार एक अंतर्राष्ट्रीय पच-मंडल दोनों देशों की स्वीकृति से नियुक्त हुआ। कच्छ की खाड़ी का करीब ३५०० वर्गमील क्षेत्र विवादास्पद था। पाकिस्तान का इस क्षेत्र पर जो दावा था वह पच-मंडल ने स्वीकार नहीं किया, लेकिन दोनों देशों के बीच की सीमा का अधिक व्यावहारिक निर्धारण करते हुए जो फैसला दिया उसके अनुसार इस ३५०० वर्गमील में से करीब ३०० वर्गमील क्षेत्र पाकिस्तान को जायगा।

किसी भी झगड़े को एक बार पच-फैसले के लिए सुपुर्द कर देने के बाद कोई भी सम्बन्धित पक्ष उसके निर्णय को सिर्फ इसलिए मानने से इन्कार करे कि वह पूरा या कुछ अंशों में उसके खिलाफ गया है तो वह अत्यन्त गैर-जिम्मेदारी की और अनुचित बात होगी। आखिर राजनीति में भी कोई नैतिकता हम बाकी छोड़ेंगे या नहीं, या जब जैसा हमको अनुकूल हो वैसा रुख अख्तियार करेंगे? अगर फैसला पाकिस्तान के विरुद्ध हुआ होता और उसने उसे मानने से इन्कार किया होता तो?

कुछ लोग यह दलील दे रहे हैं कि इस प्रकार के झगड़े को पंच के सुपुर्द करना ही गलत बात थी। किसी भी राजनीतिक निर्णय के बारे में दो रायें हो सकती हैं, लेकिन देश की ओर से जिम्मेदार लोगों ने एक फैसला किया और उसके अनुसार दो बरस तक अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस विवाद की सुनवायी भी होती रही। अब जब फैसला सुना दिया गया तब इस बात में कोई सार नहीं है कि मामला पच के सुपुर्द करना ही गलत था। जनसंघ और संयुक्त-सोशलिस्ट पार्टी के जिम्मेदार लोगों की ओर से यह कहा जा रहा है कि वे इस फैसले को हरगिज नहीं मानेंगे और न केवल संसद में बल्कि 'सड़कों पर भी' उसका विरोध करेंगे। अगर वे सच-मुच यह मानते थे कि मामला इतना गम्भीर है और उसको पच-फैसले के सुपुर्द करना गलत था तो शुरू से ही उन्हें उसके अमल का विरोध जारी रखना चाहिए था, बराबर कोशिश करनी चाहिए थी कि भारत पैरवी में न जाय। अब फैसला कुछ अंशों में हमारे विरुद्ध होने पर इस तरह की दलील उठाना क्या एक बहाना मात्र नहीं माना जायगा?

कुछ लोग यह दलील देते हैं कि चूंकि फैसले में न्यायाधीश ने दोनों मुल्कों के बीच शांति बनी रहने की भावना का भी उल्लेख कर दिया है, इसलिए फैसला शुद्ध कानूनी या या न्यायिक न रहकर राजनीतिक हो गया है और इसलिए हमें उसे अमान्य करने का अधिकार है। यह सिर्फ बाल की खाल निकालने जैसी बात है। पच-फैसले में अगर किसीने शांति की बात पर जोर दिया है तो उसे फैसले का दोष नहीं बल्कि गुण ही मानना चाहिए। एक-दूसरे से ज्यादा देशप्रेम और बहादुरी की होड़ लगानेवाले लोग इस तरह की दलीलें दें यह आश्चर्यजनक तो नहीं, पर दकियानूसी मनोवृत्ति का सूचक जरूर है।

फैसले का विरोध करनेवाले राजनीतिक नेताओं ने ऐसा वातावरण बनाना शुरू किया है जैसे कि इस फैसले को मानना बहुत बड़ा देशद्रोह होगा। इनका कहना है कि एक इंच भी जमीन पाकिस्तान को देनी पड़े ऐसा फैसला हरगिज देश को नहीं मानना चाहिए। इस तरह हर बात पर ताल ठोकना और तलवार की धमकी दिखाना पुराने जमाने की राजनीति है, आज के उद्बुद्ध और वैज्ञानिक युग के अनुरूप तो हरगिज नहीं है। अणुयुग में हम पुराने जमाने की मनोवृत्ति और तरीके काम में नहीं ला सकते। आज के युग का यह तकाजा है कि राष्ट्रों के बीच के विवाद जहाँ तक संभव हो, शांति से ही हल किये जायँ। हर छोटे-बड़े सवाल को देश की सार्वभौमता (सावरेन्टी) का या उसकी इज्जत का सवाल बना देना उचित नहीं है। लोगों की भावना उभाड़ना आसान है, पर फिर उनको काबू में रखना मुश्किल है। देश की इज्जत तो इस बात में है कि जो वचन दिया गया है उसका पालन किया जाय। भारत के सामने इसके सिवा दूसरा कोई सम्मानजनक रास्ता नहीं है कि वह पच-फैसले को स्वीकार करे और उस पर अमल करे। इसके विपरीत कुछ भी करना अशोभनीय ही नहीं होगा, बल्कि गैरजिम्मेदारी और अनैतिकता का काम भी होगा।

अब समय आया है जब कि देश के राजनीतिक लोगों की अखाड़ेबाजी से लोगों को सावधान हो जाना चाहिए और जो नैतिक और सही बात है उसका समर्थन करना चाहिए। वचन का पालन, नैतिकता और शांति की इच्छा किसी भी माने में गलत या कमजोरी की द्योतक नहीं है, बल्कि मुल्क को और ज्यादा मजबूत करनेवाली चीजें है, यह लोगों को साफ समझ लेना चाहिए। कच्छ के मामले को पंच-फैसले के सुपुर्द का निर्णय करके स्व० लालबहादुर शास्त्री ने अत्यंत बुद्धिमानी और राजनीतिक प्रौढ़ता का परिचय दिया था। उनके दिए हुए आश्वासन से पीछे हटना न सिर्फ उनके प्रति विश्वासघात होगा, बल्कि भारत को दुनिया की नजरों में भी नीचा गिरायेगा। अन्तर्राष्ट्रीय शांति का भी तकाजा है कि भारत और पाकिस्तान दोनों इस पच-फैसले को मंजूर करें, इसीमें दोनों देशों और उनकी करोड़ों प्रजा का हित है।

—सिद्धराज ढड्ढा

देश

१९-२-६८ चालू वित्तीय वर्ष में रेलमंत्री ने रेल के किराये तथा माल के भाड़े में वृद्धि की घोषणा की।

२८-२-६८ पश्चिम बंगाल में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया।

२१-२-६८ श्री मधु लिमये ने सरकार से यह पता लगाने की मांग की कि क्या नगाओं को भारत से अलग करने के प्रचार में नगालैंड के बड़े नेताओं का हाथ है।

२७-२-६८ केन्द्रीय खाद्यमंत्री ने किसानों को आश्वासन दिया कि अनाज का भाव वसूली मूल्य से नीचे नहीं गिरेगा।

२२-२-६८ श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा कि कच्छ फैसले पर भारत अपने वचन को पूरा करेगा।

२५-२-६८ उत्तर प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू किया गया।

विदेश

१८-२-६८ सोवियत प्रधान मंत्री ने स्वीकार किया कि सोवियत संघ दक्षिण वियतनाम में विद्रोहियों की सहायता कर रहा है।

१९-२-६८ एक अन्तर्राष्ट्रीय ट्रिब्युनल ने यह निर्णय किया कि कच्छ के रन के विवादग्रस्त क्षेत्र का ९० प्रतिशत भाग भारतीय क्षेत्र है।

२१-२-६८ अमरिकी जेट विमानों ने ह्यू के शाही महल के मकान पर जोर से बमबारी की।

२२-२-६८ ऊथांट ने कहा कि उत्तरी वियतनाम पर बमबारी के बन्द होने पर ही शान्तिवार्ता शुरू होगी।

२३-२-६८ वियतकांग ने अंगोला ढेल्टा की राजधानी कानथी पर हमला बोल दिया।

२४-२-६८ ह्यू के किले पर कम्युनिस्टों का २५ दिन का कब्जा खत्म हो गया।

सम्पादकीय

'उत्तर प्रदेश दान'

गत १५, १६, १७ फरवरी को गांधी आश्रम मेरठ में एक कार्यकर्ता गोष्ठी हुई। उसमें स्पष्ट दिखाई दिया कि बिहारदान के बाद से जिस तरह दूसरी जगह के साथियों के भी सोचने का धरातल बदल गया है। सोचने की ऊंचाई, हौसले की बुलंदी, पैरों की स्थिरता, साथी का भरोसा—यह सब मेरठ की बैठक में देखने को मिला। तय हो गया कि उ० प्र० दान का काम २ अक्तूबर १९६९ तक पूरा करना है। विनोबाजी का सन्देश था... दान के संकल्प के विचार से ही आनन्द हो रहा है। उ० प्र० के १२ पश्चिमी जिलों में काम शुरू हो चुका है और जोर पकड़ रहा है। पूर्वी जिलों में बलिया तेजी के साथ जिलादान की ओर बढ़ रहा है। लगभग आधा जिला ग्रामदान का क्षेत्र बन चुका है, शेष आधे में पहुंचने की देर है। वाराणसी, मिर्जापुर, आजमगढ़ तथा गाजीपुर में अभियान चलाये गये हैं। सैकड़ा ग्रामदान हो चुके हैं। इन जिलों के अलावा दूसरे जिलों में भी चिनगारी सुलगाने की कोशिश है। श्री कपिल भाई और श्री राजाराम भाई अपने अनेक साथियों के साथ चिनगारी सुलगाने के काम में दिन रात लगे हुए हैं। ये लोग न खुद चैन ले रहे हैं और न राज्य भर में फैले हुए ६ हजार रचनात्मक कार्यकर्ताओं को सन् १९६९ तक चैन लेने देंगे। और जब इधर बिहार, उ० प्र० और पंजाब में और उधर तमिलनाड और उड़ीसा में एक साथ दान का घोष होगा तो पूरे देश में जैसे भूकम्प आ जायगा। उस भूकम्प की ही तो जरूरत है। हर दिन उसकी राह देखी जा रही है।

काम बहुत बड़ा है। लड़ाई कड़ी है। सवाल ग्रामस्वराज्य से कम का नहीं है। यह अंतिम और सर्वश्रेष्ठ लड़ाई भारत के ही लिए नहीं, बल्कि पूरे एशिया और अफ्रीका के लिए निर्णायक सिद्ध होनेवाली है। भटकनेवाला हमारा अपना अकेला देश नहीं है, लेकिन नया रास्ता निकालने की संभावना भारत के सिवाय कहीं और दिखायी नहीं देती। भारत के पास बालिग मताधिकार है, और है एक सत्ता-निरपेक्ष स्वतंत्र नैतिक नेतृत्व। भारत ने देख लिया है कि अब उसकी राजनीति न राष्ट्रीय रह गयी है और न रचनात्मक। भारत की जनता को एक विकल्प की बेचैनी से तलाश है। दान के रूप में हमारे पास वह विकल्प मौजूद है, जिसे हम नम्रता किन्तु दृढ़ता के साथ देश के सामने प्रस्तुत कर रहे हैं।

दान साधन है, साध्य है स्वराज्य—ग्राम-स्वराज्य। ग्राम-स्वराज्य की रूपरेखा स्पष्ट रूप से जनता के सामने प्रस्तुत होनी चाहिए, ताकि वह दान के हस्ताक्षर के साथ स्वराज्य के लिए तत्परता जोड़ सके। हमें राजनीति, अर्थनीति और शिक्षानीति तीनों को एक साथ ग्राम-स्वराज्य के ढांचे में ढालना है। इसलिए दान के अभियान में प्रचार, प्राप्ति और पुष्टि को मिलाकर एक समन्वित प्रक्रिया बनानी है। पुष्टि के अन्तर्गत साधनों और अधिक संयोजन का प्रश्न उठने का अवसर बाद को आयेगा, लेकिन ग्रामसभाओं के संगठन और न्याय के प्रश्न को टालने का कोई कारण नहीं है। क्रान्ति का विचार गांव की प्रेरणा बने और गांव के मन में हम क्रान्ति के सबल माध्यम तैयार करते चलें, इतना तो हम तुरन्त सोचना है। इस सन्दर्भ में एक को छोड़कर दूसरे को करने का प्रश्न नहीं उठता। प्रश्न है केवल संतुलित सम्मिलित व्यूह रचना का। गांव की चेतना को जगाना जितना जरूरी है उतना ही जरूरी है उस चेतना को चेष्टा का रूप देना, देते जाना, देते रहना। चेतना किसी भी बिन्दु पर पहुंचकर शिथिल हो सकती है या सही रास्ता छोड़कर भटक सकती है। राष्ट्र की परिस्थिति में हम के लिए अवसर है, लेकिन उस परिस्थिति में कठिनाइयों की कमी नहीं है। इसलिए कदम बढ़े तेजी से, कदम पड़ें मजबूती के साथ, बढ़ें इसका ध्यान रखना है। उ० प्र० के साथियों को उनके निर्णय पर बार-बार बधाई!

हम साथ हैं, साथ चलेंगे।

युग-परिस्थिति और रचनात्मक कार्यकर्ता

श्री शंकररावजी ने कहा है कि प्रतीकात्मक कार्यों और निष्ठाओं के दिन अब बीत चुके हैं। बहुत समय से इस बात को कहने की आवश्यकता चली आ रही थी। मैं मानता हूँ कि आज के रचनात्मक कार्यकर्ता के मानसिक अवरोध का एक बड़ा कारण यह प्रतीकबद्धता ही है। इसके कारण कार्यकर्ता बीते युग के साथ इस तरह बंध जाता है कि वह वर्तमान युग की वस्तुस्थिति को सही-सही समझ ही नहीं पाता। वस्तुस्थिति और प्रतीकबद्धता की इस खींचतान के कारण कार्यकर्ता क्रान्ति का समुचित मूल्यांकन नहीं कर पाता। श्री शंकररावजी के वचन से उत्प्रेरित होकर मैं नीचे की पंक्तियों में रचनात्मक कार्यकर्ताओं के लिए अपना चिन्तन प्रस्तुत कर रहा हूँ। मुझे आशा है कि इससे आज के रचनात्मक कार्यकर्ताओं के इर्दगिर्द का अन्धेरा कुछ हद तक कम होने में मदद मिलेगी।

रचनात्मक कार्यकर्ताओं को यह ध्यान रखना चाहिए कि जब गांधीजी अफ्रीका से *भारत आये थे, उस समय उनका दिमाग* विचारों से ओतप्रोत था और उनके हाथ कुछ करने के लिए उत्सुक हो रहे थे। उस समय गुरुजनों ने गांधीजी को सलाह दी कि वे कुछ शुरू करने के पहले वे भारत की वस्तुस्थिति का सही ज्ञान प्राप्त करें। यदि गांधीजी एक व्यावहारिक और वस्तुनिष्ठ व्यक्ति न रहे होते तो उस परिस्थिति में उनका राजनैतिक प्रभाव उतना न हो पाता जितना हुआ और देश का नेतृत्व दूसरे लोगों को मिला होता।

जरूरत से कुछ अधिक वस्तुनिष्ठ होना सार्वजनिक जीवन के लिए हानिकारक वृत्ति नहीं है। गांधीजी की अहिंसा, कांग्रेस और उसके माध्यम से भारत की जनता को अपनी आदर्शवादिता के कारण नहीं जँच गयी थी; वह जँची थी अपनी वास्तविक उपयोगिता *के ही कारण। गांधीजी के* रचनात्मक कार्यक्रम में कुछ आदर्शवादी प्रेरणा रही हो, लेकिन उसकी असली विशेषता यह थी कि वह लोगों की वस्तुस्थिति से जुड़ा हुआ था। गांधीजी के करिश्मे का यही रहस्य है। यदि आज भी हम लोगों की वस्तुस्थिति को छूनेवाली भाषा में बोल सकें जैसे गांधीजी बोलते थे तो इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि लोग उसी उत्साह से हमारी बात सुनेंगे। रचनात्मक कार्यकर्ताओं को यह समझ लेना चाहिए कि परिवर्तन की गति हर पीढ़ी के साथ बदलती रहती है। आज तक प्रायः हम मानते थे कि प्रायोगिक परिवर्तन के बारे में ही यह बात लागू होती है, किन्तु यह बात हर प्रकार के परिवर्तन के बारे में भी लागू होती है। आज की दुनिया बहुत तेजी से बदल रही है आज के प्रवाह से रचनात्मक कार्यकर्ताओं के किनारे पड़ जाने का एक कारण यह भी है कि अतीत का बोझ उन्हें बहुत दबाये हुए है।

इतिहास से हमने एक शिक्षा पायी है कि मनुष्य के विचारों का निरन्तर विकास हो रहा है। मनुष्य का विकसित होना अब *भी जारी है;* उसके बारे में अभी कोई आखिरी बात नहीं कही जा सकती। यह बात वैदिक युग के ऋषियों और गांधीजी के बारे में समान रूप से कही जा सकती है। ऐसी स्थिति में किसी भी व्यक्ति की विचार-सरणि को विचार की अन्तिम स्थिति मानना इतिहास-विरुद्ध होगा।

ऐतिहासिक विकास-क्रम को स्वीकार करना इतिहास-बोध की पहली शर्त है। ऐतिहासिक कालक्रम में कोई विचार कभी स्वीकृत और कभी अस्वीकृत होता रहता है। वह कभी भी पूर्ण रूप से स्वीकार या अस्वीकार नहीं होता।

विचार की लोक-स्वीकृति में भी उतार-चढ़ाव की स्थितियाँ आती रहती हैं। यह एक वस्तुस्थिति है कि समाज के अधिकांश लोग भेड़ जैसे होते हैं, जिन्हें परिस्थिति के *अनुसार उतार या* चढ़ाव की ओर ले जाया जा सकता है। हिटलर जैसे व्यक्ति ने लोगों को एक ओर प्रेरित किया तो गांधी जैसे व्यक्ति ने दूसरी ओर। और अब चीन के माओ उसे तीसरी ओर प्रेरित कर रहे हैं। इसका साफ अर्थ यह है कि सामान्य जनता कभी स्वयं ही नेतृत्व नहीं ग्रहण करती, उसे नेतृत्व प्रदान करना पड़ता है। यही कारण है कि जिसके चलते जनमत को शिक्षित करने की जरूरत पड़ती है। जनमत को शिक्षित करके *अपनी ओर मोड़ना ही वह तरीका है, जिससे* कोई विचार समाज में सत्तारूढ़ होता है।

वह कौनसी चीज है, जिसने हिटलर या गांधीजी जैसे व्यक्ति को अपने जमाने में स्वीकार्य बनाया ? अनुकूल ऐतिहासिक परिस्थितियों और अपनी विलक्षण सम्मोहन शक्तियों के कारण ये व्यक्ति लोकदिग्दर्शक बन सके। यदि ऐतिहासिक दृष्टि से परिस्थिति अनुकूल हो और नेता लोगों को अपनी ओर सम्मोहित करने में समर्थ हो तो वह गतिरुद्ध जनसमूह को इच्छित दिशा में मोड़ लेता है। यदि इन दोनों में से कोई भी मौजूद न हो तो हमारी सारी कोशिशें पत्थर पर सिर टकराने जैसी साबित होती हैं।

रचनात्मक कार्यकर्ताओं की स्थिति आज महाभारत के मोहग्रस्त अर्जुन जैसी हो गयी है। वे *दो नावों पर सवार होनेवाले यात्री* की मुसीबत झेल रहे हैं। एक नाव है उनके प्रिय आदर्शों की, दूसरी नाव है वास्तविक परिस्थितियों की। यह उलझन इतिहास की कोई नयी चीज नहीं है। जब से आदमी में चेतना आयी तब से ही यह उलझन किसी-न-किसी रूप में उसके साथ रहती आयी है। सफल लोक-नेता की यह विशेषता होती है कि वह इस उलझन की धारा को मोड़कर उसे एक नये समाधान का रूप दे देता है, जैसा कि गांधीजी ने किया था।

—टी० के० महादेवन्

पंजाब में ३२९६ ग्रामदान

फाजिल्का और मुर्दीसरवर प्रखण्डों में ७६ कार्यकर्ताओं ने अभियान में भाग लिया। ७८ गाँवों से सम्पर्क किया। ५३ ग्रामदान हुए। पंजाब में अब कुल ग्रामदान ३२९६।

—श्री ओमप्रकाश त्रिखा की २४ तारीख की सूचनानुसार (तार से)।

सु-राज्य नहीं, स्व-राज्य

लोग कहते हैं कि ग्रामदान का जितना भी काम हो, पक्का हो, चाहे समय थोड़ा अधिक लगे। ठीक है, बाबा को धीरज बहुत है। परमेश्वर पर भी उसका गहरा विश्वास है, इसलिए काम पक्का और धीरे हो, उसमें बाबा को कोई एतराज नहीं है। लेकिन जमाने का तकाजा है कि जल्द-से जल्द काम हो। गोरी बाबू परसों बात कर रहे थे और कह रहे थे कि देश में जो चल रहा है, यह देखकर जीने की इच्छा नहीं होती। मैंने उनको इतना ही कहा, 'ये भी दिन जायेंगे।' सार यह है कि यह जमाना 'न्यूक्लियर एज' का है, बैलगाड़ीवाला नहीं। दुनिया कहाँ-से कहाँ चली गयी है। एक शेर को मारने के लिए एक बन्दूक काफी होती है। लेकिन मनुष्य को मारने के लिए यहाँ प्रति व्यक्ति हजारों एटम बम का ढेर लगा है या तो उसका विस्फोट होगा या अन्त होगा। बिहार दान कितने दिन में होना चाहिए, इस पर विचार करके बिहारवालों ने तय किया कि २ अक्तूबर, १९६८ तक पूरा हो। लेकिन बाबा को पूछा जाय, तो वह कहेगा 'एक दिन में होना चाहिए।' और हो सकता है। एक निश्चित दिन पर सारे देश में दीवाली मनायी जाती है, एक निश्चित दिन पर दुनिया भर में क्रिसमस मनाया जाता है, तो ग्रामदान भी एक निश्चित दिन पर क्यों नहीं हो सकता है?

इस काम के लिए गुरु, शनि, मंगल सब ग्रह अनुकूल हैं। कम्युनिस्ट, पी० एस० पी० एस० एस० पी०, कांग्रेस, जनक्रांति दल, स्वतंत्र और जनसंघ, ये हैं वे ग्रह। इन सब पार्टियों के नेताओं से मेरी बात हुई। मैंने उनसे पूछा कि क्या ग्रामदान से बेहतर और आसान तरीका भारत के मसले हल करने का आप बता सकते हैं? यदि कोई बेहतर तरीका हो तो बाबा ग्रामदान की बात छोड़ने को राजी है। यह बाबा का एक 'फैड' है, ऐसा आप समझते हों, तो इसको मत कीजिये। तो सब पार्टीवालों ने कहा कि आपकी बात ठीक है। ग्रामदान से बेहतर और आसान दूसरा तरीका नहीं है। फिर मैंने दूसरा प्रश्न पूछा कि हिंदुस्तान के पचास मसले हैं, उनमें यह भी एक छोटा-सा मसला है, ऐसा आप मानते हैं या इसको बुनियादी मसला मानते हैं। तो सब लोगों ने कहा कि यह बुनियादी मसला है।

विनोदा बाबू मेरे पास आये थे और कह रहे थे कि इतना भ्रष्टाचार, महँगाई और लोगों की कठिनाई बढ़ गयी है, तो इसको पहले दूर करना चाहिए। मैंने उनको कहा कि सारी बुराइयों को मैं शाखा समझता हूँ इसलिए एक-एक शाखा तोड़ने के बदले मूल पर ही प्रहार करना चाहता हूँ। ग्रामदान से उस मूल पर प्रहार होता है। ग्रामदान होने से इन सारी बुराइयों का अगर परिहार होता है तो सब मिलकर उस

विनोबा

मूल पर एकसाथ प्रहार करें। जब बड़ा पत्थर उठाना होता है तो 'एक-दो-तीन,' ऐसा कहकर एकसाथ सबका जोर लगाना पड़ता है, तब पत्थर हिलता है। इसलिए ग्राम दान में सबका एकसाथ जोर लगाना चाहिए।

बहुत लोग मुझे कहते हैं, जहाँ ग्रामदान हुआ वहाँ तुरन्त निर्माण का काम शुरू होना चाहिए। आप जानते हैं कि शादी के पहले वाङ्निश्चय होता है, बाद में शादी होती है और उसके बाद संसार शुरू होता है। वैसे

थे, लेकिन वहाँ भी भूकम्प शुरू हुआ। जहाँ भूकम्प होता है, वहाँ निर्माण ही निर्माण करना होता है। इसलिए निर्माण के लिए मौके बहुत आनेवाले हैं। कभी बाढ़ के कारण, कभी सूखे के कारण या कभी राजनीतिक पार्टियों के कारण, निर्माण के अनेक मौके आयेंगे। इन मसलों का तो अन्त कभी होनेवाला नहीं है। एक दिन हमारा ही मसला हल होगा। रामचन्द्रजी, भगवान कृष्ण, गौतम बुद्ध, महात्मा गांधी आदि अनेक लोग हो गये, फिर भी मसले कायम ही हैं। एक तरफ जनता और दूसरी तरफ सरकार, दोनों का सहकार कैसे हो, हमारा काम इतना ही देखना है। फिर निर्माण-कार्य जनता और सरकार मिलकर करेगी। बाबा का रोल शादी में आशीर्वाद देनेवाले ब्राह्मण जैसा है। शादी के बाद संसार चलाने में ब्राह्मण की मदद माँगी जाय, तो वह उसका काम नहीं है। इसलिए ग्रामदान आप लोगों को करना है। बाबा का काम आशीर्वाद देने का है।

सारे भारत में ७ दिन में 'इलेक्शन' हो गया। अब 'इलेक्शन कमिश्नर' कहता है कि चुनाव एक दिन में हो जाय, ऐसी हम कोशिश कर रहे हैं। तो इतने बड़े चुनाव का काम यदि एक दिन में हो जाता हो तो ग्रामदान भी एक दिन में क्यों नहीं हो सकेगा? जरूरत है सबकी इच्छा-शक्ति इस काम में लगने की।

जमीन की मिल्कियत की बातें तीन होती हैं—एक काश्त करने का हक, दो विरासत का हक, और तीन बेचने का हक।

ये दिन भी जायेंगे · बिहारदान एक दिन में · यहाँ की अनुकूलता · ग्रामदान एकमात्र मार्ग · बाद का प्रश्न। · जमीन गाँव के हाथ · मिल्कियत ग्रामसभा के हाथ

ग्रामदान में प्राप्ति का अर्थ है वाङ्निश्चय, जब पुष्टि का काम पूरा होगा तब शादी पूरी होगी। उसके बाद ही निर्माण-काम का आरम्भ होनेवाला है। लेकिन निर्माण का आप केवल आरम्भ ही कर सकेंगे, उसका अन्त कभी आनेवाला नहीं है। यह काम अनादि-अनन्त चलनेवाला है। महाराष्ट्र के लोग सह्याद्री पहाड़ को बहुत मजबूत समझते

अपने जमीन में से बीसवाँ हिस्सा यानी बीघे में कट्ठा देने के लिए अब बिहार में सबका मानस अनुकूल है। ग्रामदान में किसान का काश्त का हक कायम है विरासत का हक कायम है। बेचने का हक सीमित है, याने ग्रामसभा की स्वीकृति से गाँव में ही जमीन बेच सकते हैं। जमीन खोने का हक समाप्त हो गया है। जमीन गाँव में और मालिक

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, १ मार्च, '६८

शहर में, यह जो आज की हालत है, वह ग्रामदान से समाप्त होगी। मैं हमेशा समझाता हूँ कि जमीन गाँव के हाथ से और मिल्कियत ग्रामसभा के हाथ से पकड़ना यह ग्रामदान की खूबी है।

पूरे बिहार का ग्रामदान जल्द-से-जल्द हो जाय तो आगे के तीन साल में बिहार राज्य में ऐसी जन-शक्ति खड़ी हो सकती है कि जिसके कहे में बिहार राज्य का शासन रहेगा। मैं हमेशा कहता हूँ कि सत्ता हमारे हाथ में लेने की आवश्यकता नहीं है। वह हमारे कहे में रहे, तो बस है। आज भी कुछ लोगों ने कहा कि ग्रामदान के बाद तुरन्त निर्माण-कार्य होगा तो लोगों पर असर होगा। लेकिन इसमें केवल दो आना तथ्य है। स्वराज्य-प्राप्ति के लिए हम कोशिश करते थे, तब लोकमान्य ने एक बात कही थी कि स्व-राज्य की प्यास सु-राज्य से बुझ नहीं सकेगी। अंग्रेजों के रहते हुए अच्छा राज्य चलेगा और स्वराज्य खराब ढंग से चलेगा तब भी अंग्रेजों के राज्य की अपेक्षा हम स्वराज्य को ही पसन्द करेंगे, क्योंकि वह बुनियादी चीज है। आज अंग्रेज आकर यदि पूछेंगे कि स्वराज्य के बाद आपके यहाँ क्या अच्छा काम हुआ, तो हम उनको यही कहेंगे कि अच्छा या बुरा जो भी बनेगा वह हम बनायेंगे। स्वराज्य में बुद्धि का विकास होता है। इसीलिए हमको स्वराज्य चाहिए। गांधीजी को डा० भगवानदास ने पूछा था कि आपके स्वराज्य की व्याख्या स्पष्ट करो। बार-बार पूछा गया। एक दिन गांधीजी की प्रतिभा जागृत हुई और उन्होंने कहा कि स्वराज्य याने गलती करने का अधिकार। तो ग्राम-स्वराज्य में लोगों को गलती करने का अधिकार है। एक की गलती देखकर दूसरा सुधर जायगा। अंग्रेज अगर हमसे यह कहते कि एक प्रान्त में स्वराज्य का नमूना करके बताओ, तो हम उनको यही कहते कि आप पहले चले जाइये, हम अपना नसीब देखेंगे। इसलिए ग्रामदान का नमूना पेश करके बतायेंगे तो ग्रामदान बढ़ेगा, यह मानना गलत होगा।

दरअसल ग्रामदान की कसौटी क्या है? उत्पादन कितना बढ़ा—यह उसकी टेस्ट नहीं है। बल्कि जिस प्रेम और करुणा की भावना से ग्रामदान किया, वह भावना बढ़ रही है या नहीं, इस पर ग्रामदान की कसौटी होगी। यदि वह भावना बढ़ी तो ग्रामदान सफल हुआ, वह नहीं बढ़ी तो निष्फल हुआ, ऐसा कहना होगा।

आप लाख कोशिश करेंगे तब भी अमेरिका की बराबरी नहीं कर सकते। उनके पास दुनिया का आधा 'गोल्ड' (स्वर्ण) है। हिन्दुस्तान में प्रति व्यक्ति एक एकड़ जमीन है, अमेरिका में दस एकड़ है। दूसरी बात यह कि अमेरिका की जमीन चार सौ साल की जोती हुई है, तो भारत की जमीन दस हजार साल की जोती हुई है। इसलिए उत्पादन प्रमाण में कम होगा। और तीसरी बात यह कि उनके पास विज्ञान अधिक है, उतना विज्ञान प्राप्त करने के लिए हमको पचास साल लगेंगे। इसके अलावा और एक बात विज्ञान के कारण हुई है। विज्ञान के बढ़ने के कारण बच्चे जल्दी मरते नहीं, यह एक बड़ी आपत्ति निर्माण हुई है। हमारे यहाँ बच्चे का नामकरण-विधि बारहवें दिन होता है। मतलब यह कि बारह दिन के अन्दर-अन्दर शायद बच्चा मर जायगा। नहीं मरा तो फिर नाम रखा जाय। पहले की अपेक्षा भारत में संतति अधिक हो रही है, ऐसा आँकड़ों से नहीं दीखता है। मृत्यु-संख्या घटने के कारण जन-संख्या बढ़ रही है।

सत्तर लाख श्रीमान मारे गये। कम्युनिस्टों ने जमीन सबको बाँट दी। लेकिन अब कम्युनिस्टों में ही दो पक्ष हो गये। एक पक्ष कहता है कि थोड़ी जमीन व्यक्ति के पास होनी चाहिए, तो उत्पादन बढ़ेगा। पूरा-का-पूरा 'कलेक्टिव फार्मिंग' न हो। इसको लेकर दोनों पक्षों में लड़ाई हो रही है। दोनों कम्युनिस्ट हैं, दोनों चीनी हैं, फिर भी एक-दूसरे का गला काट रहे हैं। एक खबर यह भी प्रकाशित हुई है कि एक पार्टी के लोगों ने दूसरी पार्टी के व्यक्ति को मारा इतना ही नहीं, बल्कि उसका मांस पकाकर बड़े आनंद से समारोह के साथ खाया! यह सुनकर मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। मैंने 'स्थितप्रज्ञ दर्शन' पुस्तक में लिख रखा है १९४१ में ही, कि लड़ाई में लोग मारे जाते हैं तो मारने को अगर हम पाप कहें, तो वह हो चुका। अब मरे हुए लोगों को खाया जाय तो क्या हर्ज है? लेकिन नहीं खाते, क्योंकि एक भावना का प्रश्न है। "नास्ति, बुद्धिर् अयुक्तस्य", इस श्लोक पर वह व्याख्यान था।

ग्रामदान के साथ-साथ हमको चार बातें समझानी होंगी। १. काम-वासना कम करो, २. पुरुषार्थ बढ़ाओ, ३. बाँटकर खाओ, ४. सबकी राय से काम करो। इसमें से जो आनंद उपलब्ध होगा, वही सुख है। लेकिन पक्की बात समझ लो कि "कर गुजरान गरीबी में, साहिब मिले सबूरी में", यही ग्रामदान के बाद की स्थिति रहेगी।

बहुत खुशी की बात है कि गंगा-यमुना का संगम हो रहा है। पंचायत परिषद् गंगा है और सहकारिता संघ यमुना है। दोनों मिलकर प्रांत-दान का संकल्प कर रहे हैं तो बिहार में तुरन्त काम होगा, ऐसी हम आशा करें।

[बिहार राज्य पंचायत परिषद् और बिहार राज्य सहकारिता संघ की संयुक्त बैठक में पटना में २१-२-'६८ को दिये गये भाषण से।]

केवल दो आना तथ्य···सु-राज नहीं, स्व-राज्य···गांधी की प्रतिभा···स्वराज्य का अर्थ···कसौटी क्या?···भारत और अमेरिका···चीन का द्वन्द्व···गंगा-यमुना का संगम

ग्रामदान के बाद आप भौतिक दृष्टि से खूब सुखी होंगे, ऐसा मानते हों तो बड़े भ्रम में रहेंगे। ग्रामदान के बाद लड्डू, जलेबी नहीं मिलनेवाली है। जन-संख्या बढ़ रही है, इसलिए जो भी रूखा-सूखा टुकड़ा मिलेगा, वह राम का है ऐसा मानकर बाँटकर खायेंगे, वही ग्रामदान में होगा।

चीन में खूनी क्रांति हुई। एक करोड़

समाज परिवर्तन की भूमिका और मार्क्स का दृष्टिकोण

[तीन अंकों में समाप्य समाज-परिवर्तन-सम्बन्धी मार्क्स के विचार और उस भूमिका से रूस और चीन में हुए परिवर्तन का मूल्यांकन]

समाज-परिवर्तन का लक्ष्य

मनुष्य आज प्रकृति का स्वरूप थोड़ा बहुत समझने लगा है। वैसे ही अपने चित्त का स्वरूप भी कुछ समझा है। उसे आज का ज्ञान सदियों के प्रयत्न के बाद प्राप्त हुआ है। इस प्रयत्न में विशेष पुरुषार्थ करनेवाले लोग—प्राचीन युग में तथा मध्ययुग में भी—संसार के सभी देशों में हुए हैं। आधुनिक युग में बेकन और न्यूटन उसके बाद स्पिनोजा हेगेल डार्विन फ्रायड कार्ल मार्क्स और आईन्स्टीन जैसों के नाम गिनाये जा सकते हैं। इन सबने मिलकर मनुष्य को प्रकृति के सम्बन्ध में तथा मानवीय जीवन के सम्बन्ध में एक दृष्टि प्रदान की है। इस दृष्टि को माननेवाले लोग किसी व्यक्ति विशेष के शिष्य नहीं सभी के अनुयायी हैं। कम-से-कम मेरी भूमिका यही है।

मानव का उसके शरीर मन और अन्य के सम्बन्ध में वैज्ञानिक विचार देनेवाले आधुनिक विचारकों के नाते मार्क्स डार्विन और फ्रायड इन तीन व्यक्तियों का नाम लिया जा सकता है—लेकिन हम देखते हैं कि इन तीनों व्यक्तियों के सिद्धान्त और विचारों का आज कितना विलक्षण विपर्यास हुआ है। डार्विन ने कभी नहीं कहा कि जिसकी लाठी उसकी भैंस वाला सिद्धान्त पकड़कर समाज में व्यवहार करना चाहिए। मार्क्स ने कभी हिंसा और मायावाद का समर्थन नहीं किया है। फ्रायड ने कामवासना को स्वच्छन्द छोड़ने की बात नहीं कही है। लेकिन इन पर प्रायः ये ही बेसिद्धान्त थोपे जाते हैं। यह विपर्यास उनके विपरीत अवश्य है पर अस्वाभाविक नहीं है। हुआ यह कि डार्विन मार्क्स और फ्रायड ने कहा कुछ और लोगों ने समझा कुछ। यह भी स्वाभाविक ही था। मनुष्य अपना चश्मा पहनकर देखने का आदी होता है सृजन की क्षमता रखनेवाले मानवीय मन के लिए तो यह मर्यादा है ही।

मार्क्स के सिद्धांत और दृष्टिकोण के बारे में हुआ यह है कि उसके विरोधियों की तरह ही उसके समर्थकों ने भी अपने अपने चश्मे से ही उसकी तरफ देखा है। माओत्सेतुंग का मार्क्सवाद रूसी नेताओं का मार्क्सवाद अन्य देशों का मार्क्सवाद ये सब मार्क्स के विचारों के सापेक्ष प्रतिबिम्ब हैं। मार्क्स के विरोधियों को मार्क्सवाद में हिंसा और भोगवाद जो दीखता है वह भी इसी तरह का एक प्रतिबिम्ब ही है।

प्रा० दि० के० बेडेकर

इस उलझन से बाहर निकलना भी कठिन है। परन्तु वैसा प्रयत्न तो करना ही होगा। यह तभी संभव होगा जब हम यह मान लें कि रूस चीन या किसी राष्ट्रविशेष में होनेवाली किसी घटना की ओर अंगुली दिखाकर कहें कि यह देखो मार्क्सवाद का प्रत्यक्ष अवतार। हिरोशिमा का संहारलीला दिखाकर हम अणुशक्ति का तत्त्व समझानेवाले आईन्स्टीन के मन को नहीं समझ सकते। लैंगिक स्वेच्छाचार देखकर फ्रायड का सिद्धांत समझ लेने की हम अपेक्षा नहीं रखते। यही बात मार्क्स के सिद्धांतों के लिए माननी होगी।

मार्क्स समाज परिवर्तन आवश्यक मानता है लेकिन उसकी दृष्टि में समाज-परिवर्तन मात्र एक साधन है। साध्य तो उसका था मानव का परिवर्तन। इस परिवर्तन का स्वरूप क्या है और मार्क्स ने उसके लिए कौनसा मार्ग सुझाया इसका विचार हमें करना है।

यह तो कोई भी मानेगा कि मानव के बाह्य आचरण में या वेषभूषा में परिवर्तन होने से ही कुछ नहीं होता और उसी प्रकार संस्थाएं रहन-सहन और संकेतों को बदल देने से ही वास्तविक परिवर्तन नहीं हो जाता। परिवर्तन होना है तो मूल में ही होना चाहिए। यानी मनुष्य के मन में दृष्टि में और भावनाओं में होना चाहिए। लेकिन क्या मनुष्य के मन में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है? अगर है तो वह आवश्यकता क्यों पैदा हुई? यह असली प्रश्न है। इसीको पहले समझ लेना चाहिए। फिर इसका उत्तर देखा जाय।

यह प्रश्न यूरोप के दार्शनिकों ने खोज निकाला यानी इस प्रश्न की दिशा में मानवीय मन का उन लोगों ने शोध किया। मार्क्स से पहले हेगेल ने इस प्रश्न को अपने ढंग से प्रस्तुत किया और मानव मन के परात्मभाव का सिद्धान्त सामने रखा। मार्क्स ने वह सिद्धान्त मानकर उस प्रश्न को अपनी पद्धति से नये सिरे से प्रस्तुत किया। हेगेल का प्रस्तुतीकरण चिद्वादी था तो मार्क्स का प्रस्तुतीकरण जड़वादी था। ऐसा भेद होते हुए भी परात्मभाव का तत्त्व दोनों ने एक ही अर्थ में स्वीकार किया है।

परात्मभाव शब्द का प्रयोग अंग्रेजी के एलीनेशन (Alienation) शब्द के लिए किया है। मानव का मन अपनापन भूल गया है और दूसरी बाहरी और परकीय बातों की शरण इस हद तक गया है कि परत्व ने ही उस के मन को पूरा-पूरा ग्रसित कर रखा है। मन की यह जो आगन्तुक वृत्ति है परत्व का ही वर्चस्व माननेवाला भाव है वही परात्मभाव है। भारतीय अध्यात्म की परिभाषा में ऐसा कहा

सृजन की क्षमता और बहुरंगी चश्मे — प्रतिबिम्ब—मात्र प्रतिबिम्ब — उलझन — मुक्ति के लिए मोह मुक्ति — समाज परिवर्तन—मानव परिवर्तन का माध्यम — परिवर्तन बनाम बुनियादी तौर पर — परात्मभाव

जाता है कि देह के सुख-दुःखों को ही सर्वस्व माननेवाला मनुष्य 'देहात्मबुद्धि' से ग्रसित है। इस मिथ्या कल्पना से मुक्त होकर आत्मा का स्वरूप पहचानने में ही मनुष्य का आध्यात्मिक श्रेय माना जाता है। 'परात्मभाव' का विचार मूलतः भिन्न है। यहाँ आत्मा के स्वरूप का प्रश्न नहीं है, मनुष्यत्व का यानी मनुष्य के स्वरूप का प्रश्न है। मनुष्य जब मनुष्यत्व को भूल जाता है, और इस प्रकार *की मिथ्या परात्मता की शरण जाता है तब* अर्थ का अनर्थ होता है, मनुष्य स्वयं अपने जीवन के लिए पराया हो जाता है। 'परात्मता' भ्रान्ति है, परन्तु यह सही है कि वह मानव-मन को ग्रसित करती है। इस भ्रम का निरसन ज्ञान से हो सकता है। मार्क्स *की राय में उसका 'दर्शन'* इस भ्रम-निरसन के लिए ही है।

'परात्मता' को स्पष्ट करने के लिए दो साधारण दृष्टान्त लें। जंगल में पीपल, बबूल, बड़, नीम वगैरह कई वृक्ष होते हैं। प्रकृति की दृष्टि से सभी वृक्ष समान ही हैं। लेकिन मनुष्य वहाँ जाता है तो अपनी कल्पना लेकर जाता है। चूंकि मनुष्य ने अपने मन में पवित्रता की एक कल्पना कर रखी है, इसलिए उसकी दृष्टि में सभी वृक्ष समान नहीं होते। वह मानता है कि पीपल और बड़ का पेड़ पवित्र है। इसलिए अन्य वृक्षों से वह इन्हें पृथक् मानता है और इर्द-गिर्द के पत्थर इकट्ठा करके, उन पेड़ों के नीचे चबूतरा बनाता है। बीच में एक पत्थर रखकर उसे भगवान मानता है। पीपल की परिक्रमा करने से, उस पत्थर को नमस्कार करने से स्वयं पवित्र और पुण्यवान् बन जायगा ऐसी श्रद्धा रखता है और वैसा ही करता भी है।

मनुष्य ने अपने अंतःकरणस्थ पवित्रता की भावना को बाहर साकार किया और उसे 'पर' कहना शुरू किया। कहते हैं कि मनुष्य को अपनी बुद्धि रेहन नहीं रखनी चाहिए; *क्योंकि अपना स्वत्व, मन, बुद्धि और कल्पनाओं को रेहन रख देना मनुष्य के मन की एक साधारण प्रवृत्ति है।* यह अनजाने ही हो जाता है, क्योंकि यह स्वाभाविक है। 'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः.' इस वचन में यही बताया गया है। जो मनुष्य है उसे ही अ-मानुष और बाह्य मान लेता है, इसीलिए मनुष्य 'परत्व' के वश होता है। 'परात्मता' ही उसके मन को ग्रस लेती है, व्याप्त कर लेती है।

दूसरा एक व्यावहारिक उदाहरण देखें। घर में माता-पिता, भाई-बहन आदि में पारिवारिक स्नेहयुक्त व्यवहार ही होता है। वैसे श्रम-विभाजन भी होता है, विषमता भी रहती है, परन्तु *प्रतिस्पर्धा और लोभ नहीं* होते। थोड़ा-बहुत हो तो भी प्रेम की छाया में, स्नेह की मर्यादा में ही होते हैं। रुपये-पैसे का व्यवहार बाहर होता है, कौटुम्बिक नाते-रिश्ते में उसका प्रवेश नहीं है। परन्तु परिवार की लक्ष्मण-रेखा लांघकर बाहर पड़े *कि मनुष्य पर पैसे का भूत सवार हो जाता* है। सनातन काल से संपत्ति की लालसा से मानव ग्रसित रहा है। पुराने जमाने में सोना, हीरा, मोती, माणिक, पशु, स्त्रियाँ, गुलाम आदि की लालसा थी और राज्य की

भ्रम निरसन का दर्शन ··दृष्टिगत पृथक्ता · स्वत्व की विवशता · फर्क, लेकिन सतही···जड़वादी, गूंगा अध्यात्म···स्वनिर्मित अमानुष और सृजन-सामर्थ्य

लालसा का अर्थ भी संपत्ति की लालसा ही था। कुरुक्षेत्र ने रक्तस्नान किया तो वह भी राज्य-लोभ से ही किया। आज गुलामों की खरीदी-बिक्री नहीं होती है, राज्य-सिंहासन के लिए युद्ध नहीं होते, इतना अन्तर अवश्य है। परन्तु यह ऊपरी अन्तर है। उस समय संपत्ति का संचय वस्तु के रूप में किया जाता था, तो अब कागज के रूप में होता है। निर्गुण रूप में बैंकों के अप्रत्यक्ष व्यवहार में संचय किया जाता है। युद्ध होते हैं, परन्तु शांति के लिए होते हैं, क्षत्रियों द्वारा प्राप्य स्वर्ग के लिए नहीं।

सम्पत्ति निर्माण करता है मनुष्य। परन्तु वह बाहर से *अमानुषी शक्ति का रूप* धारण कर मनुष्य पर ही हावी हो जाता है। *इसका अर्थ यह कि मनुष्य सम्पत्ति की* परात्मता की शरण जाता है। धनी मनुष्य भी इस परात्मता का गुलाम बना है। उसका मन सम्पत्ति के लोभ से भरा होता है। कभी किसी धनी के मन में लोभ के प्रति तुच्छता जगी तो वह अपनी सारी सम्पत्ति दान कर देता है और किसी भजन-कीर्तन में लगता है। परन्तु इससे मनुष्य सम्पत्ति की उस अमानुषी शक्ति के शिकंजे से छूट नहीं जाता। शुरू से अब तक ज्ञात संस्कृति के भव्य निर्दय इतिहास में, राजवंशों के और राष्ट्रों के उत्थान-पतन में हम देखते हैं कि यही सम्पत्ति का भूत भाग्यशाली, पुरुषार्थी और पराक्रमी लोगों की मुट्ठी में रहा है। *और भाग्यहीन, गरीब आम जनता* को सम्पत्ति नसीब न होने से गरीबी, गुलामी और रोटी की चिन्ता करने का *'जड़वादी'* अध्यात्म अपनाना पड़ा है। लेकिन इनका यह *गूंगा* अध्यात्म और धनियों का *वाचाल* अध्यात्म, दोनों आखिर एक ही हैं।

कौटुम्बिक जीवन में मनुष्य, मनुष्य के नाते, मानवी वृत्ति से हार्दिक व्यवहार कर *सकता है। परन्तु वह अपने ही मन में* सम्पत्ति की देवता का, सर्वग्रासी परात्मता का निर्माण करता है। देव और दानवों का *निर्माण करके उनकी शरण जानेवाला यह* मनुष्य अपनी उसी शक्ति से सम्पत्ति की स्वनिर्मित अमानुष बाह्य शक्ति की शरण जाता है। एक बार उसकी शरण जाने पर उसकी सारी सृजन-सामर्थ्य इसी शक्ति की सहायक होती है। वह मनुष्य के ही पुरुषार्थ पर जीती है, परन्तु मनुष्य को अधिकाधिक क्षुद्र बनाती जाती है। आज सम्पन्न देशों में भी लोग भयभीत हैं। मनुष्य को तुच्छ मानने की वृत्ति उनमें प्रबल होती जा रही है। वे किसी-न-किसी धर्म की आड़ खोज रहे हैं। *इसका प्रतिबिम्ब और वेदना* अर्वाचीन यूरोपीय साहित्य में बड़ी उत्कटता के साथ स्पष्ट हो रही है। वहाँ के तत्त्वचिन्तन में भी यह व्यथा मुखरित हो रहा है, स्वत्व से वंचित भक्ति का आक्रन्दन सुनाई दे रहा है। परन्तु गहराई से देखें तो मालूम होगा कि व्यक्ति-व्यक्ति से बनी सम्पूर्ण मानव जाति ही आज 'मैं पन' को, स्वत्व को, मानवता को खो बैठी है, दिङ्मूढ़ हो बैठी है। यह आज की ही

'एक भारतीय आत्मा' की याद

"मुझे तोड़ लेना वनमाली उस पथ पर तुम देना फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक"!

—स्व० माखनलाल चतुर्वेदी

दादा श्री माखनलालजी चतुर्वेदी को राष्ट्रकवि तथा महान साहित्यकार के रूप में तो सारा भारत जानता है, किन्तु ऐसे भी लोग संख्या में कम नहीं, जिन्होंने उनके प्रेमपूरित हृदय तथा स्नेहमयी मनमानस की निकटता का अनुभव किया है। उनके कोमल स्वभाव, स्नेहिल व्यवहार, उदात्त भावनाएँ, और सखावत् मिलन ने उन्हें हजारों लोगों के प्रिय 'दादा' बना दिया था। वे अपनी सुनाने के पहले दूसरों की सुनना चाहते थे। वे बच्चों के मित्र, बड़ों के मार्ग-दर्शक, गुरुजनों के हमसाथी, वृद्धों के समकालीन तथा गुरुजनों में पूज्यपाद थे। मानव-हृदय में गोते लगाकर मोती चुन लाने का इल्म उन्होंने खूब हासिल किया था।

वे नित्य ५ बजे सुबह घूमने जाते थे। एक तांगा सुबह आता तथा उन्हें शहर के बाहर छोड़ देता। शहर समाप्त होते ही जहाँ खेत दिखाई पड़ें, वहीं दादा उतरकर खेतों में घूमने लगते। खेत के बड़े-बड़े ढेले उनको लगते तथा कभी-कभी वे उनसे लड़खड़ा जाते थे। मैंने एक दिन पूछा, "दादा आप खेत चलने के बजाय सड़क पर से क्यों नहीं चलते?"

यह सुनकर दादा कहने लगे, "शहर के रास्ते शोषणकर्ताओं के अत्याचार तथा शोषितों की चीत्कारों से भरे हैं। वहाँ चारों ओर गन्दगी है। उन पर चलकर कौन स्वास्थ्य लाभ कर सकता है? पर देखो, यह खेत की मिट्टी कितनी निर्दोष है! इसमें हल-वाहों की पसीने की बूँदें पड़ी हैं। इसमें उग आये अनाज से हम सबका पोषण होता है। इसलिए मैं इसीकी सुगन्ध में घूमना चाहता हूँ।" मैंने कहा, "अगर आप इस प्रकार चलने में कहीं गिर गये तो?" वे कहने लगे, "अगर गिर गया तो क्या होगा? माँ धरती की गोद में ही तो गिरूँगा। क्या अपनी माँ की गोद में जाने से कोई डरता है? हमारे सफेद वस्त्रों में प्रेम का रंग चढ़ने दो न।"

सन् १९५० में ग्रामीण विश्वविद्यालय की पढ़ाई के लिए मैं श्री जे० सी० कुमारप्पाजी की संस्था मगनवाड़ी, वर्धा जाते समय दादा से मिला। मेरी बातें सुनकर उन्होंने अत्यन्त दुखी होकर कहा, "बेटा, गांधी की राह पर चलनेवालों के लिए आज के भारत में कष्ट, अपमान तथा भुखमरी के सिवाय क्या मिलनेवाला है? अंग्रेज गांधी की शक्ति को जानता था। गुलाम भारत में उसने गांधी को न मारकर इतिहास में अपनी जाति को आनेवाले वर्षों में कलंकित होने से बचा लिया, किन्तु स्वतन्त्र भारत ने वह कलंक अपने माथे ले लिया। अब तो गांधी को मारकर उसके सैद्धान्तिक कलेवर का 'पोस्ट-मार्टम' किया जा रहा है। आगे आनेवाला भारत गांधी को सामान्य मनुष्यों की श्रेणी में बिठायेगा तथा उसके सिद्धान्तों को उसके अनुयायी ही मिटाने में लगेंगे। उस समय तुम्हें एक घुटन तथा पीड़ा का अनुभव होगा। तुम जाना चाहो तो जाओ, परन्तु गांधी का युग तो बहुत बड़ी-बड़ी ठोकरें खाने के बाद ही आने की सम्भावना है।" और आज 'दादा' की वह बात कितनी सही सिद्ध हो रही है!

जनवरी सन् १९६७ में मैं उनसे खण्डवा के अस्पताल में मिला। वे बहुत बीमार थे। बोलने में उन्हें तकलीफ होती थी। रुक-रुककर कुछ सांकेतिक शब्द बोलते थे। मुझे देखते ही उन्होंने अपने हाथ में मेरा हाथ लिया तथा हालचाल पूछा। मैंने कहा, "१४ वर्ष गांवों में काम करने के बाद अब मैं एम० ए० कर रहा हूँ।" कहने लगे, "ठीक है।" फिर उन्होंने मुझसे कहा, "सेवा करो।" मैंने कहा, "ठीक है, करता हूँ।" थोड़ी देर बाद उन्होंने फिर कहा, "जनता-सेवा।" आज भी मुझे उनके वे शब्द याद हैं। और उनके उपदेशों पर चलकर जीने में मैं सन्तोष तथा शान्ति का अनुभव करता हूँ।

दादा केवल एक भारतीय आत्मा ही नहीं थे, वे एक विश्व-मानव-आत्मा भी थे। उनका जीवन आदर्श एवं व्यवहार का सुन्दर समन्वय था। एक ओर गहन गम्भीर चिन्तन, तो दूसरी ओर बालसुलभ हँसी देखते ही बनती थी।

वे नवयुग के द्रष्टा तथा नव-साहित्य के स्रष्टा थे। वे एक ऐसे पुजारी थे, जिन्होंने अपने इष्टदेव की प्रतिमा स्वयं बनायी थी। उन्होंने उसमें प्राण-प्रतिष्ठा की थी। उसकी अर्चना में उन्होंने अपने काव्य-कुसुमों को समर्पित किया था। वे एक ऐसे भक्त थे, जिन्होंने साहित्य देवता को अनुप्राणित किया तथा उसकी साधना में अपने प्राणों को भी न्योछावर कर दिया। कैसा संयोग, कि गांधी के विचारों को अपनी भावना के साथ जोड़कर जनहृदय तक पहुँचानेवाले 'दादा' को मौत ने पुकारा तो ३० जनवरी को ही, बापू-निर्वाण-दिवस पर! ठीक २० साल बाद!! मानो, बापू २० साल के भारत की दास्तान सुनना चाहते हों, इस कवि हृदय से!

—प्रभाकर जोशी

—मानवीय मन में है, उसके पुरुषार्थ में है। इसीलिए प्रस्तरयुग का मानव आज तक का इतिहास बना सका। यह इतिहास ही मानव की सामर्थ्य का एकमात्र प्रमाण है और यही उसके भविष्य का आश्वासन है। इसमें रहस्य कुछ नहीं है। इसमें मनुष्यता को किसी भी 'परात्पर' शक्ति का आशीर्वाद पाने का भुलावा नहीं है। मार्क्स का मानवतावाद मनुष्यता के इस प्रत्यक्ष आधार पर ही खड़ा है। उसका संदेश 'परात्मता' से मुक्ति पाने के लिए है, मनुष्यता की पुनः प्राप्ति के लिए है। [क्रमशः]

खाई पाटने का सपना

प्रसिद्ध अंग्रेजी दैनिक 'स्टेट्समैन' ने अपने 'अंकटेड' विशेषांक में 'अंकटेड' का परिचय कराते हुए शुरू में ही कहा है—"विकसित देशों की सरकारों ने अपने-अपने देश में से अत्यन्त गरीब और अत्यन्त धनियों के बीच खाई को पाटने का जो कार्य सफलतापूर्वक किया है, अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में (धनी और गरीब राष्ट्रों के बीच की खाई को पाटने का) वैसे ही काम की अपेक्षा 'अंकटेड' से रखी जाती है।"

संयुक्त राष्ट्र संस्था (यूनो) ने यह माना है कि दुनिया में कायमी शांति प्रतिष्ठित करने के लिए प्रत्येक देश को राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिए और आंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सामाजिक तथा आर्थिक समानता की तरफ कदम उठाना चाहिए। राजनैतिक अर्थ नैतिक और सामाजिक क्षेत्र में मानव समुदाय के हित को सामने रखकर काम करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संस्था ने सदस्य राष्ट्रों के चुने हुए प्रतिनिधियों की विभिन्न समितियाँ बनायी हैं। विकासशील देशों के हित में आन्तर्राष्ट्रीय सहयोग से विश्व व्यापार की समस्याओं को सुलझाने के लिए १९६४ में 'यूनो' (संयुक्त राष्ट्र संघ) ने इस 'संयुक्त राष्ट्र व्यापार विकास सम्मेलन' की स्थापना की। 'अंकटेड' (UNCTAD) इसी सम्मेलन का नाम है। यह शब्द 'यूनाइटेड नेशन्स कान्फ्रेंस ऑन ट्रेड एण्ड डेवलपमेंट', इन अंग्रेजी शब्दों के आद्य अक्षरों के जोड़ से बना है। इसकी स्थापना में भारत का भी काफी अच्छा हाथ रहा।

यूनो ने सन् १९६० से ७० तक के दस वर्षों की अवधि में गरीब देशों के विकास के लिए प्रयत्न करने का निश्चय किया और स्वर्गीय श्री नेहरूजी के सुझाव से इस दशक का नाम 'विकास दशक' (डेवलपमेंट डिकेड) रखा गया। इस 'विकास दशक' में धनी और गरीब देशों के बीच की खाई को ज्यादा से ज्यादा पाटने का विचार किया गया और विकासशील राष्ट्रों की आय में ५ प्रतिशत औसत वृद्धि करने का लक्ष्य रखा गया। इस योजना को आगे बढ़ाने के लिए और कार्य रूप में लाने के लिए ही यूनो ने 'अंकटेड' की स्थापना की और उसका पहला अधिवेशन जेनेवा में करीब तीन महीने तक चला जिसमें दुनिया के लगभग १२० देशों ने भाग लिया था।

इस सम्मेलन में जो देश शामिल हुए वे तीन हिस्सों में बाँटे जा सकते हैं—(१) विकसित, (२) विकासशील और (३) समाजवादी।

विकसित देशों में अमेरिका, कनेडा, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी इत्यादि पश्चिमी यूरोप के देश और दक्षिण अफ्रीका और जापान मुख्य हैं।

विकासशील देशों में एशिया और अफ्रीका के नव-स्वतन्त्र देश और लैटिन अमेरिका यानी दक्षिण अमेरिका के देश और मेक्सिको गिने जाते हैं।

समाजवादी देशों में रूस और युगोस्लाविया, रूमानिया, हंगेरी, चेकोस्लावाकिया आदि पूर्वी यूरोपीय देश हैं।

'विकास दशक' के चार साल बीत गये फिर भी विकासशील देशों की स्थिति नहीं सुधरी। उनकी आर्थिक उन्नति नहीं हुई और व्यापार का विकास नहीं हुआ। इसके कारणों का विचार जेनेवा-सम्मेलन में गहराई से किया गया और उसको निम्न बातें प्रगति में बाधक प्रतीत हुईं।

● उन्नति और विकास के लिए जब बाहर से मशीनरी और तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता है, तब अपना सामान बाहर भेजकर उसके बदले में यह सब मँगा सकने की स्थिति इन देशों की नहीं रही है अर्थात् आयात के अनुपात में निर्यात से कमाई नहीं हो सकी है।

● व्यापार की इस खाई को पाटने में स्टाक से और विदेशी मुद्रा की छोटी-मोटी जमा पूँजी से पाटा नहीं जा सकता था। इसलिए ऐसी कुछ महत्त्व की चीजों का भी निर्यात करना पड़ा है, जो खुद के ही लिए आवश्यक है। इसीलिए समस्या का समाधान नहीं हो रहा है और विकासशील देशों का बोझा उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। इसके अलावा इसी बीच बाहर भेजे जानेवाली मुख्य वस्तुओं का भाव घटा और बाहर से आयात की जाने वाली मशीनरी इत्यादि का भाव बढ़ता गया। इस कारण बहुत सारे विकासशील देशों की बाहर से मशीनरी आदि मँगाने की क्षमता बिलकुल घट गयी। इन सब मुद्दों को जब तक ध्यान में न लिया जाय और इनमें परिवर्तन न किया जाय, तब तक विकासशील देशों के विकास में और उनकी अर्थनीति को औद्योगिक मोड़ देने में बहुत सी दिक्कतें आयेंगी।

जेनेवा के इस सम्मेलन में १५ बुनियादी नीतियाँ मान्य की गयीं, जिनके कुछ मुख्य मुद्दे नीचे दिये जा रहे हैं —

● व्यापार के संबंध में प्रत्येक सदस्य राष्ट्र का समान सार्वभौम अधिकार माना जायगा। प्रत्येक देश में जनता का आत्म-नियंत्रण का अधिकार माना जायगा। किसी भी दूसरे देश के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं किया जायगा।

● प्रत्येक देश की अलग-अलग आर्थिक और सामाजिक मान्यताएँ हैं और अपने-अपने देश में उन्होंने जो खास पद्धतियाँ अपनायी हैं उनके कारण व्यापारिक संबंधों में कोई भेद न किया जाय।

● खास विकासशील देशों की और पूरी दुनिया की माँग तथा हित को ध्यान में रखते हुए आन्तर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन की नीति अपनायी जाय।

● विकासशील देशों का निर्यात-मूलक आय और व्यापार की विविधता बढ़ायी जाय। विकसित देश विकासशील देशों के बने हुए सामान पर से प्रतिबंध उठा लें या कम कर दें, ताकि आसानी से वे वहाँ व्यापार कर सकें। विकासशील देशों का निर्यात बढ़े और

उन्हें अच्छा बाजार मिले, इसका भी प्रयत्न विकसित देशों को करना चाहिए। विश्व-बाजार-भाव में संतुलन टिका रहे, इसकी भी वे कोशिश करें।

● जो सुविधाएं विकसित देशों को आपस में उपलब्ध हैं, उनमें विकासशील देशों को भी शामिल किया जाय और कुछ विशेष सुविधाएँ भी उन्हें दी जायें और इसके बदले में वे किसी विशेष सुविधा की माँग विकासशील देशों से न करें।

● आपसी करारों से बंधे हुए विकसित देश इस बात का ध्यान रखें कि अपने औद्योगिक सहयोग में तीसरे किसी विकासशील देश के व्यापार में क्षति न पहुँचे।

● विकासशील देश आपस में व्यापार, *निर्यात और खेती वगैरह में एक-दूसरे को* उत्साहित करें और आपस के एकीकरण (इंटीग्रेशन) से लाभ उठायें।

● *सामान्य और संपूर्ण निरस्त्रीकरण* की दिशा में प्रयत्न करते हुए आय की जो बचत हो, वह विकासशील देशों की मदद में दी जाय।

यूनो की नीति के अनुसार सम्मेलन ने औपनिवेशिकता की संपूर्ण समाप्ति को आर्थिक विकास के लिए अनिवार्य माना है और साथ ही यह भी माना है कि हर एक देश की *प्राकृतिक संपत्ति पर पूर्ण अधिकार उसका* ही होना चाहिए।

भिन्न-भिन्न विकासशील देश विकास के विभिन्न सोपानों पर पहुँचे हैं। उनमें से जिन्होंने कम प्रगति की है, उन पर विशेष ध्यान दिया जाय। समुद्र-तट के साथ जो देश जुड़े हुए नहीं हैं, उनके लिए भी कुछ विशेष सुविधाओं के बारे में निर्णय लिया गया है, ताकि वे माल-मत्ते (सामान) का आयात-निर्यात आसानी से कर सकें।

जेनेवा-सम्मेलन के समय ७७ विकासशील देश *अलग से मिले थे और संयुक्त* कार्यक्रम बनाया था। जेनेवा-सम्मेलन के तीन-साढ़े तीन साल के बाद यह देखा गया कि धनी और गरीब देशों की खाई कम होने के बजाय क्रमशः बढ़ रही है। कुछ महीनों के बाद दिल्ली में 'अंकटैड' का दूसरा सम्मेलन होनेवाला था। उसमें चर्चा के मुद्दे तय करने के लिए और परिस्थिति का सिंहावलोकन करने के लिए उत्तर अफ्रीका के अलजीयर्स शहर में सन् १९६७ के अक्तूबर महीने में इन ७७ विकासशील देशों की खास बैठक हुई और उन्होंने कुछ मुद्दों की घोषणा की, जो 'अलजीयर्स का घोषणापत्र' (चार्टर आफ अलजीयर्स) के नाम से प्रसिद्ध हुई है।

इन ७७ देशों का कहना है कि आर्थिक *और सामाजिक विकास के द्वारा शांति और* समृद्धि प्राप्त करने में सह-प्रयास करने के लिए वे इकट्ठे हुए हैं। अलजीयर्स के घोषणा-पत्र द्वारा उन्होंने कुछ तथ्यों पर दुनिया के नागरिकों का ध्यान खींचा है, जिसमें से कुछ मुख्य *मुद्दे नीचे दिये जा रहे हैं।*

● आज आंतर्राष्ट्रीय व्यापार का जो प्रवाह चल रहा है, उसके परिणामस्वरूप *विकासशील देशों के दो करोड़ से ज्यादा* लोगों की स्थिति दिन-ब-दिन बिगड़ती जा रही है।

● विकासशील देशों की आर्थिक प्रगति का मान क्रमशः घट रहा है। धनी देशों के और उनके बीच की खाई बढ़ रही है। धनी देशों की प्रति व्यक्ति औसत आमदनी की वृद्धि ६० डालर हुई है, जब कि इनकी केवल २ डालर। (इन दिनों जो मूल्यवृद्धि हुई है उस हिसाब से देखा जाय तो प्रगति के बदले में अवनति ही हुई है।)

● सन् १९५३ में दुनिया के सारे निर्यात में विकासशील देशों का हिस्सा २५ प्रतिशत था और सन् १९६६ में वह घटकर १९.३० प्रतिशत हुआ है। सन् १९५५-५६ की और १९६५-६६ के बीच विकासशील देशों से निर्यात किये जानेवाली सामग्री के मूल्यों की तुलना की जाय तो पता चलता है कि विकसित देशों के सामान में ६५ *बिलियन डालर की, समाजवादी* देशों के मूल्य में १० बिलियन डालर की, तथा विकासशील देशों के मूल्य में केवल ३ बिलियन डालर की वृद्धि हुई है।

● इधर आयातित वस्तु खरीदने की इनकी शक्ति घट रही है, इसलिए इनका कर्जा क्रमशः इस ढंग से बढ़ता जा रहा है कि, अगर यही परिस्थिति चालू रही, तो उनकी अदायगी में विकासशील देशों की सारी संपत्ति बाहर चली जायगी। आज भी इस कर्जे का प्रमाण सारे दान और अनुदान की रकम के बराबर हो गया है।

● विकासशील देशों में खाद्यान्न के उत्पादन में खास वृद्धि नहीं हो रही है, जब कि आबादी तेजी से बढ़ रही है। इससे परिस्थिति और बिगड़ रही है।

इस आर्थिक और सामाजिक परिस्थिति से विकासशील देश चिंतित हैं और इसको सुधारने के प्रयास में लगे हैं। 'अंकटैड'–१ में कुछ सिद्धांत मान लिये गये थे, लेकिन उसके बावजूद कुछ खास काम बन नहीं पाया है। *जिन शर्तों पर विकास के लिए धन की* सहायता दी जा रही है, वे शर्तें क्रमशः भारी बनती जा रही हैं। अनुदानों का मान घट *रहा है, कर्जे के ब्याज की दर बढ़ रही है।* कर्जा वापस करने के समय की अवधि घट रही है। जहाजरानी में भी भेदभाव पैदा हो रहा है और जहाजों में माल ले जाने के भाड़े में भी वृद्धि हुई है, जिससे परिस्थिति और विकट बन रही है।

जेनेवा-सम्मेलन में यह बात सिद्धान्त के रूप में मान ली गयी थी कि विकसित देश अपने राष्ट्र के कुल आवक का एक प्रतिशत विकासशील देशों की मदद में दें। (कुल राष्ट्रीय आवक को जी० एन० पी० कहते हैं। *ग्रास नेशनल प्रोडक्शन के आद्य अक्षरों से बना* है।) लेकिन चार साल के अन्त में देखा गया कि फ्रांस और पोर्तुगाल के सिवाय और किसी *देश ने इस प्रस्ताव पर पूरी तरह अमल नहीं* किया है। फ्रांस और पोर्तुगाल ने भी उन अफ्रीकी देशों को मदद दी है, जो उनके उपनिवेश हैं या थे। फ्रांस ने यूरोपीय साम्य बाजार में भी इन देशों को खास सुविधाएं दे रखी हैं। वस्तुतः दूसरे देशों ने इस मदद को ०.८७ प्रतिशत से घटाकर ०.६२ प्रतिशत तक कर दिया है। अलजीयर्स के सम्मेलन में कुछ *देशों ने जी० एन० पी० के १ प्रतिशत* से बढ़ाकर डेढ़ प्रतिशत तक मदद देने की माँग की है। खास माँग तो यह है कि→

बिहार भूमिसेना शिविर : शेखवारा

"पटना में बाबा ने भूदान-किसानों के जत्थे का अभिवादन करते हुए कहा था, 'सत्य के राही अपने मार्ग से डिगते नहीं, बाधाओं के बावजूद अपना कर्तव्य नहीं छोड़ते। देखिये, प्रकृति आपका अभिवादन कर रही है।' प्रकृति का यह अभिवादन ३० जनवरी '६८ को दिनभर चलता ही रहा। और जब गया से ३१ को रवाना हुए तो भी आकाश थमा नहीं, बरसता ही रहा।

"मैं अनिश्चय के हिंडोले पर झूलता रहा। शेखवारा एक छोटा-सा गाँव है। लोगों ने ताड़ की चटाई और पुआल से जिस निवास की रचना की थी, वह पानी से सराबोर हो चुका था। निवास और सभा भवन में कीचड़-ही-कीचड़ पानी-ही-पानी। २५० स्थानीय भूदान किसान वहाँ पहले से ही पहुँच चुके हैं, अब यह १५० का जत्था कहाँ जाकर टिकेगा? मौसम के इस अभिवादन कार्यक्रम ने हमें हैरान कर दिया था, लेकिन बाबा की बात कानों में गूँज रही थी—बाधाओं के बावजूद सत्य के राही अपने मार्ग से डिगते नहीं। शिविर संयोजक और बिहार भूदान-यज्ञ कमेटी के मंत्री श्री निर्मलचन्द्र ने आपबीती सुनायी।

और ३१ जनवरी को गाजेबाजे के साथ जुलूस बोधगया के लिए रवाना हुआ। 'शांति के सिपाही चले चलो ।' ७ मील लम्बा मार्ग गूँज उठा, ढाई सौ भूमिपुत्रों की शांति-पुकार से।

८॥ बजे सुबह गया से चले थे ११॥ बजे बोधगया पहुँचे। भयंकर शीतलहरी, किसीके तन पर पर्याप्त कपड़े नहीं। कल रात भी भोजन की कोई ठीक व्यवस्था नहीं हो पायी थी और इस वक्त दिन के

निर्मल चन्द्र

बारह बजे २५० व्यक्तियों के भोजन के लिए बोधगया में उपलब्ध हो सका ६ किलो सत्तू और १० किलो अमरूद। भूख से कुलबुलाती आँतों को बातों से सान्त्वना देकर बोधगया से जत्था फिर चला शेखवारा, पुनः ५ मील की पदयात्रा पर।

शेखवारा एक छोटा-सा गाँव। बिहार में सबसे पहले यहीं भूदान की जमीन का वितरण हुआ था। इसकी महत्ता को बिहार के भूदान किसान महसूस कर सकें, इसीलिए इनका पहला शिविर आयोजित किया गया था शेखवारा में। सहकारिता भवन और पंचायत घर की दीवालें खड़ी थीं नंगी, बिना छप्पर की। पुआल, चटाई कितना बरदाश्त करते बरसात की ज्यादती को? खुले आँगन में बना भोजनालय भी ठण्डा पड़ गया था।

कहते हैं कि दिल में जगह हो तो दिवालें फैल जाती हैं। शेखवारा के गरीब किसानों ने कहा 'बिहार के जिले जिले से आये हमारे भाई, हमारे घर के अतिथि होंगे। बेचारों ने अपने मवेशियों को पेड़ के नीचे बाँध दिया, और उसे साफ करके अतिथि घर बना दिया। दूसरी जगह भी कहाँ थी?

× × ×

और १ तारीख से शिविर शुरू हो गया। सबने मिलकर गाया "लाल-लाल गाँवोंवाला है हिंदुस्तान किसानों का।" श्रम और उसकी शक्ति की उपासना का क्रम शुरू हो गया। दोपहर तक काम, तीसरे पहर चर्चा, शाम को मनोरंजन। तीनों कार्यक्रम एक-दूसरे के पूरक। श्रम के साथ संगीत, चर्चा में—गाँव और गाँववालों की स्थिति, पटना की राजधानी और राजनीति के दाँवपेंच, विनोबा का ग्रामदान और बिहार-दान का नारा।

विकसित देश विकासशील देशों से पर्याप्त माल खरीदें, चुंगी बिलकुल न लगायें या बहुत ही कम लगायें। इस तरह माल की बिक्री में जो फायदा होगा उसे मदद के रूप में मान्य किया जाय। माल खरीदने में खुली प्रतियोगिता ही हो, कोई साझा बाजार या पुराने उपनिवेशों के लिए खास पसंदगी न हो। पिछड़े हुए देशों का निर्यात काफी मात्रा में गिर जाने के कारण उन्हें विशेष मदद देने का भी प्रस्ताव है।

इन सब बातों की चर्चा करने के लिए दिल्ली में लगभग १३२ देशों के १८०० प्रतिनिधियों का सम्मेलन हो रहा है। हमें इस सम्मेलन में आये हुए सारी दुनिया के (चीन, उत्तर कोरिया और उत्तर वियतनाम को छोड़कर) राजनयिक व अर्थनीतिविदों के चिंतन और प्रवचनों से फायदा उठाना है। विश्व के प्रतिनिधि श्री हेरमान एबांजुफ ने कहा है कि 'विकास के काम में प्रगति नहीं हो रही है, इसके लिए दोनों जवाबदार हैं। विकासशील देशों का यह दावा जरूर है कि दुनिया के धनी और गरीब देशों के बीच की खाई घटती जाय। फिर भी वे अपने-अपने देश के अन्दर धनी और गरीबों के बीच की खाई को घटाने का बहुत कम प्रयत्न कर रहे हैं।"

बहुत मार्के की बात कही है उन्होंने। एक छोर पर विश्व के समस्त नागरिक मिलकर संयुक्त राष्ट्र के नेतृत्व में समस्या का हल खोज रहे हैं और इधर, दूसरे छोर पर बिहार, तमिलनाड और उड़ीसा की जनता काफी तादाद में ग्रामदान से जिलादान की ओर बढ़ते हुए धनी और गरीब के बीच की खाई को कम करने और धीरे धीरे मिटाने का संकल्प कर रहे हैं। गाँव के स्तर पर, ब्लाक के स्तर पर और जिला के स्तर पर अगर इसी तरह के छोटे-छोटे व्यापार और विकास-सम्मेलन हों और गाँव, ब्लाक और जिला-स्तर पर खेती, उद्योग, व्यापार, तकनीकी ज्ञान की वृद्धि और आयात निर्यात की योजनाएँ बनायी जायँ और जिस प्रकार अन्य विकसित और धनी देशों से, कुछ शर्तें अदल करके भी विकासशील देशों का माल खरीदने का आग्रह किया जाता है, उसी प्रकार अगर गाँव में बनी चीजें और ग्रामोद्योग की वस्तुएँ शहर के लोग खरीदें, तो इस 'विश्व व्यापार विकास-सम्मेलन' से हमें कुछ फायदा होगा।

—उषा देसाई

सभाभवन में लगी हुई थी अनिल सेन गुप्ता के चित्रों की प्रदर्शनी। गाँव के अशिक्षित और गँवार कहे जानेवाले किसानों ने कहा, "हमारी दशा, गाँव की दुर्दशा और नयी जिन्दगी की आशा इन चित्रों से झाँक रही है।"

जे० पी० ने इस ग्रामीण-शिविर की व्यवस्था देखी

६ फरवरी को जे० पी० आये, सिर्फ पाँच मिनट के लिए। २५० शिविरार्थियों तथा आसपास के २ हजार भूमिपुत्रों ने माटी के कलात्मक मंच पर खड़े जे० पी० को गैता, कुदाल और टोकरी उठाकर अभिवादन किया।

आयोजन की ओर से श्री दीक्षितजी ने जे० पी० का स्वागत करते हुए कहा :

"बिहार राज्य के १७ जिलों में से १५ जिलों से आये हुए २५० भूमि-सैनिकों और भिन्न-भिन्न रहन-सहन में पले, रीति-रिवाजों में ढले, संस्कारों में बुरे-भले, भौगोलिक विषमताओं में अभ्यस्त, प्रकृति की सहज-सुलभ उपलब्धियों में आश्वस्त, दरिद्रता से सन्त्रस्त, कुरीतियों तथा कुटेवों में अस्त-व्यस्त, एवं शांति की बृहद्रूपी आधारशिलाओं पर आधारित छोटी-छोटी बस्तियों के निवासी भाई-बहनों की ओर से आपका हार्दिक स्वागत है।" जे० पी० ने कहा, "आपको देखकर मेरा दिल भर आया है। अभी आप जो कर रहे हैं, वह बुनियादी काम है। पटना-दिल्ली में राजनीति तोड़ने का काम कर रही है, और आप गाँव में यहाँ जोड़ने का काम कर रहे हैं।" आये थे सिर्फ पाँच मिनट के लिए, लेकिन रुक गये २० मिनट तक।

अमन के फरिश्ते को भूसैनिकों की सलामी

शिविरार्थियों के सामने समस्याएँ पेश की गयीं, उसके उलभाव प्रस्तुत किये गये। और

श्रम की सफलता : आहर का निर्माण

कठिन श्रमसाध्य जीवन में गहरी निष्ठा लिये श्रम के सजग प्रहरी, गरीबी के घेरे में हँसती, अभावों में मुस्कराती, श्रम-सन्तोष मंथन बराबर चलता रहा। रात के मनोरंजन-कार्यक्रम में मंथन गीत बनकर प्रगट होता था। एक ने होली गाया :

"गति होगा बिहारदान करने से
शोषण शासन गाँव से हटा के
छूआछूत के भेद मिटा के
समता के राज बनाने से,
प्रेम के नाता जोड़े से,
गति होगा···।"

दूसरे ने गाया :

"जिला-जिला के भूमि-सैनिक,
लिये उठाय नारा,
बिहारदान का।
भई भारी भीड़ सभा जिला
रिमझिम रिमझिम बूँद बरसिहै
घेर घटा घनघोर,
अहो गया जिला!"

लिख नहीं सकते, अक्षरों से अपरिचित हैं, लेकिन हृदय की अनुभूति ज्ञान पानों में गीत बनकर प्रगट होती रही। इस अनुभूति का केन्द्र था 'बिहारदान'। लोगों ने अपनी कठिनाई पेश की, अपनी शक्ति की सीमाओं को महसूस किया, लेकिन बिहारदान के नारे के साथ अपने को जोड़ते हुए अतिरिक्त शक्ति भी महसूस की।

शिविर की समाप्ति हुई ७ फरवरी को। प्रदेशीय भूदान कमिटी के कार्यकर्ता दो दिन के लिए और रुक गये, आगे की योजना के लिए।

शिविर-संयोजक श्री निर्मलचन्द्र और व्यवस्थापक श्री यशोदनार बाबू ने बातचीत में बताया, "भूदान-किसान इस आन्दोलन की शुरुआत से ही जुड़े हैं। उनके दिल में इसके प्रति एक अपनापन का भाव है। हम ऐसा संयोजन करने जा रहे हैं, ताकि बिहारदान के महातूफान अभियान में इनका पूर्ण सहयोग मिल सके। बिहार भर में फैले दे हजारों भूदान-किसान हमारे आन्दोलन की बानगी हैं→

उत्तर प्रदेश

प्रदेशदान की पूर्वतैयारी

● मेरठ : १७-२-६८। उत्तर प्रदेश ग्रामदान-प्राप्ति संयोजन समिति के संयोजक श्री कपिल भाई ने उत्तर प्रदेश में प्रदेश-दान की पूर्वतैयारी का जिक्र करते हुए हमारे प्रतिनिधि को बताया कि सोलहवें सर्वोदय-सम्मेलन के समय बलिया में ग्रामदान की हलचल पैदा हुई थी। अब आशा और अपेक्षा की सीमा से आगे जाकर आन्दोलन सफलता और व्यापकता की मंजिलें पूरी करता जा रहा है। आज प्रदेश में हर जगह कार्यकर्ताओं में प्रदेशदान की चर्चा है। अभियानों का सिलसिला जारी है। अब तक प्रदेश में कुल ३८०२ ग्रामदान, और २२ प्रखण्डदान हो चुके हैं। बलिया में तो १०-१० हजार की आबादीवाले गाँव भी ग्रामदान में शामिल हैं। हाल में चलाये गये कुछ अभियानों के परिणाम :

● बलिया : बेरिया और बेलहरी प्रखण्डदान १२ फरवरी को हुए। अब बलिया के १८ प्रखण्डों में ८ प्रखण्डों का दान हो चुका। मुरलीछपरा प्रखण्ड में अभियान चल रहा है।

● आजमगढ़ : ठेकमा और, लालगंज की १२ न्याय-पंचायतों में कुल २३३ ग्रामदान हुए।

● मीरजापुर : म्योरपुर प्रखण्डदान हुआ। जिले का दूसरा प्रखण्डदान है। विवरण :

कुल न्याय-पंचायतें : ६
कुल ग्रामसभाएँ : ४५
कुल राजस्व गाँव : १०७
ग्रामदान में शामिल गाँव : ८८
कुल जनसंख्या : ६८,६७८
ग्रामदान में शामिल ज०सं० : ४४,६४३
ग्रामदान में शामिल भूमि : ६२%

● मथुरा : तीन प्रखण्डों में ६६ टोलियों की यात्रा हुई। ४६८ गाँवों में से २३२ गाँव ग्रामदान में प्राप्त हुए।

● एटा : तीन प्रखण्डों के अभियान में २५६ ग्रामदान प्राप्त हुए।

अभी सैदपुर (गाजीपुर), अलीगढ़, मीरजापुर, उत्तराखण्ड, बलिया में अभियान चल रहे हैं।

श्री कपिल भाई ने बताया कि उत्तराखण्ड की बर्फीली पहाड़ों की चोटियों पर बसे गाँवों में प्राकृतिक प्रतिकूलताओं को सहन करते हुए कार्यकर्ता ग्रामदान का अलख जगा रहे हैं। मथुरा के अभियान में ६० शिक्षकों ने भाग लिया। अभियान का उद्घाटन श्री विचित्र भाई ने तथा समावर्तन ठाकुर फूल सिंह (भू०पू० उपमंत्री, उ० प्र०) ने किया। एटा अभियान में केन्द्रीय रेल उपमंत्री श्री रोहनलाल चतुर्वेदी ने पूरा सहयोग दिया तथा मथुरा-अभियान में भी दो दिन शामिल हुए।

मेरठ में १५-१६ फरवरी को आयोजित पश्चिमी जिलों के कार्यकर्ताओं की गोष्ठी तथा १७ फरवरी को प्रदेश के प्रमुख कार्यकर्ताओं की सभा में प्रदेशदान की महत्ता महसूस करते हुए क्षेत्रवार अभियानों की योजनाएँ बनीं।

बिहारदान की दिशा में

बिहार ग्रामदान-प्राप्ति समिति पटना स्थित कार्यालय से प्राप्त जनवरी के अनुसार जनवरी '६८ तक बिहार में :

कुल ग्रामदान–२७४३६; प्रखण्डदान–१२१; कुल गठित ग्रामसभाएँ–१८७६; पुष्टि हेतु ग्रामदानी गाँवों के तैयार कागजात–१३२१ गाँवों के; पुष्टि-अधिकारी के पास दाखिल कागजात–७२६ गाँवों के तथा अभिपुष्ट गाँव–१११।

● पलामू : १० फरवरी से १६ फरवरी तक श्री चन्द्रप्रकाशजी एवं श्री परमेश्वरी दत्त झा, अध्यक्ष जिला ग्रामदान प्राप्ति समिति, ने पाटन प्रखण्ड में जिलादान की दृष्टि से पदयात्रा की।

● मुंगेर : १३-१४ फरवरी को विनोबाजी के सान्निध्य में मुंगेर जिलादान प्राप्ति कार्यकर्ता-शिविर का आयोजन हुआ। शिविरार्थियों के बीच विनोबाजी के तीन प्रेरक भाषण हुए। शिविरार्थियों में से लगभग १७५ कार्यकर्ताओं ने लगातार १५ दिनों तक जिलादान-प्राप्ति के लिए पूरा समय देने का निश्चय लिखकर घोषित किया। उपर्युक्त १७५ कार्यकर्ताओं में १४४ कार्यकर्ता ग्राम-स्वराज्य संघ से [illegible] आन्दोलन के लिए १५ दिन के अन्दर पचीस हजार रु० जमा करने का भार [illegible] वरिष्ठ कार्यकर्ताओं ने लिया। १० फरवरी को [illegible] बड़हिया पड़ाव पर बड़हिया प्रखण्ड के प्रमुख लोगों ने बाबा के समक्ष [illegible] में शामिल होने का संकल्प घोषित किया। श्री वैद्यनाथ चौधरी, मंत्री बिहार ग्रामदान-प्राप्ति समिति, के सुझाव के अनुसार लखीसराय, लक्ष्मीपुर, खड़गपुर तथा तारापुर में प्रखण्डदान के लिए तैयारी का काम आरम्भ किया गया है।

● रायपुर : १६ फरवरी। रायपुर जिले की महासमुन्द तहसील के बागना प्रखण्ड में ७ फरवरी से १२ फरवरी तक के अभियान में ११ ग्रामदान प्राप्त हुए।

श्री जयप्रकाश नारायण की विदेश-यात्रा

दिनांक १६-२-'६८ को श्री जयप्रकाश नारायण श्रीमती प्रभावती सहित लगभग दो माह की विदेश-यात्रा पर रवाना हुए। अपनी यात्रा के दौरान श्री जयप्रकाश नारायण बैंकाक, सिंगापुर, मलेशिया, हिन्देशिया और जापान होते हुए १ मार्च '६८ को सैनफ्रांसिस्को पहुँचेंगे। दिनांक ४-४-'६८ तक आप संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में दौरा करेंगे। और ५-४-'६८ को लन्दन पहुँचेंगे। वहाँ से मास्को, ताशकन्द, काबुल होते हुए आप दिनांक २५-४-'६८ को दिल्ली वापस पहुँचेंगे।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक रामपूर्ति

शुक्रवार वर्ष १४

८ मार्च '६८ अंक २३

इस अंक में

श्रम विरोधी-अविरोधी

गांधीजी ने हमको एक बात समझायी कि हर कोई हर किसी काम में एक बात का खयाल रखे कि हम जो भी कर रहे हैं उससे गरीबों के काम में क्या मदद मिलती है? हर व्यक्ति सोचे कि मेरे अपने काम से मैं गरीबों की क्या मदद कर रहा हूँ? कालेज का प्रोफेसर है और वह कालेज में सिखाता है तो उसको सोचना चाहिए कि उससे गरीबों को क्या मदद मिल रही है? कालेज में तो वह विद्यार्थियों को सिखायेगा और वे विद्यार्थी बाद में नौकरी पर जायेंगे। ऐसे विद्यार्थियों को वह सिखायेगा तो विद्यार्थियों को विद्या देने में गरीबों का भला होता है क्या ऐसा प्रोफेसर को सोचना चाहिए इसलिए उसे क्या करना चाहिए? वह अपने विद्यार्थियों को ऐसी विद्या दे ऐसे विद्यार्थी तैयार करे और अपने फुरसत के समय में खुद भी प्रयत्न करे ऐसे काम में मदद देने का जिससे गरीबों की गरीबी मिटाने में सहयोग हो इस तरह हर मनुष्य को सोचना चाहिए कि हम जो भी काम कर रहे हैं उसके द्वारा मेरे जीवन में मैं गरीबों की क्या मदद कर रहा हूँ और किस तरह उनकी मदद पहुँचा सकता हूँ? गांधीजी ने हमारे सामने यह दृष्टि रखी।

आज दुनिया भर में जो भी झगड़े खड़े हैं वे इसलिए खड़े हैं कि बहुत से लोग शारीरिक श्रम टालते हैं। अन्न को आप नहीं टालते क्योंकि खाने को चाहिए। लेकिन जिस परिश्रम से अन्न पैदा होता है उसको टालते हैं। उसकी प्रतिष्ठा कम है और उसको मजदूरी भी कम मिलती है। श्रम की मजदूरी कम श्रम की प्रतिष्ठा भी कम और जो पण्डित का काम है उसकी प्रतिष्ठा भी ज्यादा और उसकी मजदूरी भी ज्यादा। इस तरह दुनिया में श्रम की अप्रतिष्ठा हो रही है। लेकिन हर कोई जानता है कि बिना शरीरश्रम के अन्न पैदा होता नहीं। इसलिए शरीरश्रम की महिमा सबको मान्य करना चाहिए।

अपने यहाँ लड़के २५ साल तक माता-पिता का भार उठाने के बदले उन पर भार डालते रहते हैं। २५ साल के बाद कमाना शुरू करते हैं और ४० साल में बाद बूढ़े बनते हैं उत्पादन करते नहीं। ऐसी स्थिति अगर देश में रही कि विद्यार्थी उत्पादन न करें शिक्षक उत्पादन न करें डाक्टर वकील बच्चे-बूढ़े उत्पादन न करें सरकारी आफिसर न करें मंत्री न करें भक्त लोग न करें फकीर न करें तो उत्पादन करेगा कौन? भक्त समझते हैं कि हम काम करेंगे तो वह भक्ति काहे की! खायेंगे तो भक्ति काहे की ऐसा नहीं कहते। इस प्रकार सभी काम करने से मुक्त हो गये तो काम करने का भार थोड़े लोगों पर आयेगा। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने गाया है कि हम सब लोग डिवाइडिंग जानते हैं मल्टीप्लाई करना नहीं जानते। भाजन जानते हैं गुणन करना नहीं जानते।

श्रम के दो प्रकार हैं। एक वह जो दूसरे के श्रम का विरोध करता है। एक को मिलेगा तो दूसरे को मिलेगा नहीं। एक को मिला तो दूसरे का छीन लिया यह हुआ विरोधी श्रम। लेकिन यह जो सूत कातने का श्रम है वह किसी का विरोध नहीं करता सर्वथा अविरोधी है। किसीसे विरोध न हो इस प्रकार से श्रम होना चाहिए।

(मुंगेर १२.२.६८)

वार्षिक शुल्क १० रु०

एक प्रति २० पैसे

विदेश में साधारण डाक शुल्क—

१८ रु० या १ पौण्ड या ३ डालर

(हवाई डाक शुल्क देशों के अनुसार)

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट वाराणसी १

फोन नं० ४२८५

समाचार डायरी

देश :

२६-२-'६८ : तमिलनाड हिन्दी-विरोधी आन्दोलन परिषद् के छात्रो ने तीन दिन के बाद पुनः 'स्वतन्त्र तमिलनाड' का आन्दोलन आज छेड़ दिया।

२७-२-'६८ : कच्छ के मामले पर जनसंघ और संसपा ने लोकसभा में सरकार के इस्तीफे की माँग की।

२८-२-'६८ : श्री चह्वाण ने आज राज्यसभा में कहा कि सरकार देश में विभिन्न सेनाओ की गतिविधियों के प्रति सतर्क है।

२९-२-'६८ : श्री मोरारजी देसाई ने १९६८-६९ का घाटे का बजट पेश किया।

१-३-'६८ : पश्चिम बगाल के राज्यपाल ने सम्वाददाता-सम्मेलन में कहा कि मुख्य चुनाव-आयुक्त पश्चिम बगाल में मध्यावधि चुनाव के प्रश्न पर विचार कर रहा है।

२-३-'६८ : रिजर्व बैंक ने आज से बैंक दर ६ प्रतिशत से घटाकर ५ प्रतिशत कर देने की घोषणा की।

विदेश :

२६-२-'६८ : सैगान से ६ मील दूर वियतकाग और सरकारी सेनाओ के बीच भयकर लड़ाई होती रही।

२८-२-'६८ : पूर्वी अफ्रीका के एशियाई आव्रजको पर रोक लगाने के प्रश्न पर कल ब्रिटिश लोकसभा में विलसन-सरकार की विजय हुई।

२९-२-'६८ : कनाडा ने भारत की विभिन्न परियोजनाओं के लिए ७।। करोड़ डालर कोष के उपयोग की अनुमति दी है।

१-३-'६८ : अमेरिका और रूस, दोनों ही इस बात के लिए सहमत हैं कि यदि भारत के समक्ष परमाणु हमले का खतरा हो तो वे हमारी सहायता ले सकता है।

२-३-'६८ : अमेरिका में गत वर्ष हुए जातीय झगड़ो व दगो के लिए श्वेत लोगो की जातिवादी भावना जिम्मेदार थी।

कच्छ-का पंच-फैसला

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का निवेदन

कच्छ के प्रश्न पर अन्तर्राष्ट्रीय पंच-समिति ने जो फैसला दिया, उसके कारण देश में एक आक्रोश की लहर उठी है। उसमे लोग और कई पक्ष उत्तेजित हो उठे है और आवाज उठा रहे है कि उस फैसले को मान्य न किया जाय। लेकिन एक बार उदारतापूर्वक कोई अन्तर्राष्ट्रीय वचन देकर फिर उससे इनकार कर देने से बढ़कर राष्ट्र के नाम और प्रतिष्ठा के लिए हानिकर दूसरा कुछ नही हो सकता। हर कोई राष्ट्र थोड़ा-बहुत त्याग न कर सकने के कारण यदि इस प्रकार वचन-भग करता जाय तो अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो को उत्तरोत्तर मधुर बनाना असम्भव ही जाय। हमारी प्रधानमंत्री ने यह घोषित करके अच्छा ही किया कि भारत-सरकार का विचार अपने वचनो का आदर करने का ही है। लेकिन इससे पहले यदि उन्होंने तथा सरकार के अन्य कुछ प्रवक्ताओ ने अपने अस्पष्ट और उलझन में डालनेवाले वक्तव्य न दिये होते, जिनके कारण फैसले को अमान्य करने की माँग को प्रोत्साहन मिला, तो अधिक अच्छा होता। लेकिन आशा है, जिन लोगो ने उस फैसले के प्रति अपनी असम्मति प्रकट की थी, वे अब सही और उत्तम निर्णय पर पहुँचेंगे, और फैसले को ठुकराने की माँग अब बन्द होगी।

नयी दिल्ली, २४-२-'६८

—मनमोहन चौधरी

आवाहन पत्र

प्रिय साथी,

हर विचार और उसकी बुनियाद पर सयोजित आन्दोलन समाज के जीवन में कुछ नयी स्थापनाएँ करना चाहता है। उन नयी स्थापनाओ का सदर्भ यदि मूल्य-परिवर्तन होता है, तो उसकी पृष्ठभूमि में अतीत का अवलोकन, वर्तमान का विश्लेषण और भविष्य का अन्वेषण भी भिन्नता और नवीनता के साथ प्रकट होता है। इस प्रकटीकरण का माध्यम बनते हैं 'शब्द'। कुछ तो पुराने शब्दो के परिवेश में नया भाव भरा जाता है, और कुछ नये शब्दो की सृष्टि होती है, वैसे भावों-विचारो को प्रस्तुत करने के लिए, जो पुराने ढाँचे में अटते नही।

सर्वोदय-आन्दोलन मानव-विकास का अभिनव आरोहण है, और हम यह भी मानते हैं, कि बुनियादी तौर पर मूल्यो के परिवर्तन का क्रान्तिकारी आन्दोलन है। सहज ही इसमें सन्निहित भाव और विचार को प्रस्तुत करने में कुछ पुराने शब्दों के साथ नये अर्थ जुड़े है, साथ ही नये शब्दो की रचना भी हुई है।

हम चाहते हैं कि 'भूदान-यज्ञ' में वैसे शब्दो की व्याख्या प्रस्तुत करें, ताकि एक सीमित क्षेत्र से बाहर के लोग भी उन शब्दो को सम्पूर्ण अर्थ के साथ ग्रहण कर सकें।

आप सर्वोदय कार्य करते है, या सिर्फ सर्वोदय साहित्य पढ़ते है; आप सबके सामने ऐसे शब्द आते होगे। आपसे निवेदन है कि अपने सामने आये ऐसे शब्दो की सूची बनाकर हमें भेजें। आपके इस सहयोग के लिए हम आभारी होंगे। पर्याप्त शब्दों का संग्रह हो जाने के बाद हम हर अक में उसकी व्याख्या प्रस्तुत करने में समर्थ होंगे।

आपका यह सहयोग सर्वोदय-विचार को व्यापकता प्रदान करेगा।

सस्नेह जय जगत्,
आप सबका,
सम्पादक

काशी : ८-३-'६८

स्वत्व और सम्मान का सवाल

पंचों ने कच्छ के ३२० वर्गमील पर पाकिस्तान का हक मान लिया है। पाकिस्तान ने ३५०० वर्गमील पर अपना दावा बताया था। इस पूरे ३५०० वर्गमील पर कब्जा करने की नीयत से ही उसने हमला किया था। भारत ने बन्दूक का जवाब बन्दूक से दिया, और अन्तिम फैसला बन्दूक से ही होता, लेकिन ब्रिटेन के बीच-बचाव से चर्चा शुरू हुई और पंच फैसले की नौबत आयी।

पंचों ने जो फैसला दिया है वह भारत के पक्ष में है या पाकिस्तान के, या निष्पक्ष है, इसके बारे में मतभेद है, और हमेशा हो सकते हैं। पंचों ने पाकिस्तान का पूरा दावा नहीं माना। उसने भारत के भी पूरे दावे को नहीं माना। इस पर यह कहा जा सकता है कि उसने निष्पक्ष होकर सोचा और निर्णय किया। और, कोई यह भी कह सकता है कि स्वतन्त्र निर्णय से अधिक उसने कुछ-कुछ दोनों को देकर खुश करने की कोशिश की है। कानून ऐसी चीज ही है कि उसमें हमेशा ही कुछ कहने और करने की गुंजाइश रह जाती है। भारत के लिए गुंजाइश इसलिए भी है कि एक पंच ने, जो उनकी ओर से था, उसके ही दावे को माना है, पाकिस्तान के दावे को नहीं।

बात यह है कि भारत और पाक के बीच का झगड़ा कच्छ का ही नहीं है। जन्म से ही दोनों देशों में दुश्मनी चली आ रही है, और उसके दूर होने के लक्षण भी दिखाई नहीं दे रहे हैं। पाकिस्तान से तो दुश्मनी है ही, कश्मीर तथा कुछ और मामलों को लेकर ब्रिटेन के रवैये से भी भारत खुश नहीं रहा है। जिस तरह भारत को चीन के सामने झुकना पड़ा है, और लद्दाख में हजारों वर्गमील भूमि चीन के कब्जे में चली गयी है, उसके कारण भारत की जनता की राष्ट्र-भावना को गहरी ठेस लगी है। ठेस ही नहीं लगी है बल्कि उसके मन में यह संदेह घुस गया है कि हमारी सरकार हमारी भूमि की रक्षा नहीं कर पा रही है, और समय-समय पर उसकी युद्धनीति और कूटनीति की कमजोरी के कारण भारत को क्षति उठानी पड़ती है और अपमान के घूंट पीने पड़ते हैं। यहाँ तक कि भारत-पाकिस्तान का पिछली लड़ाई जिस तरह खत्म हुई, और उसके बाद जिस तरह ताशकंद का समझौता हुआ, उससे भारत के मन में भरोसा नहीं जगा, जब कि दुनिया ने माना कि आक्रमण का अपराधी पाकिस्तान था। ताशकंद भारत-पाकिस्तान में दोस्ती के लिए था, लेकिन दोस्ती भी कहाँ हो सकी? झगड़े-रगड़े जैसे थे, वैसे ही आज भी हैं, और बराबर ऐसे काम होते आ रहे हैं, जो किसी भी समय खुली लड़ाई का कारण बन सकते हैं।

दिखाई यह देता है कि बार-बार लड़ाई छेड़कर पाकिस्तान आगे बढ़ रहा है, और ऐसी स्थिति पैदा करता है कि भारत को उसकी पूरी नहीं तो कुछ बात माननी ही पड़ती है। इस भूमिका में कच्छ के पंच फैसले के पीछे भारत के अनेक लोगों को भारत सरकार की सैनिक और राजनैतिक विफलता दिखाई देती है। जिस पाकिस्तान ने भारत के राष्ट्रीय हित को बार-बार चोट पहुँचाने की कोशिश की है, उसको उस भूमि का कोई भी भाग मिले जिसे आज तक हम अपनी मानते थे और जो हमारे कब्जे में थी यह बात लोगों के मन को सालती है। कोई भी राष्ट्र हो, वह उचित-अनुचित से अधिक अपने सम्मान को सामने रखता है। इसलिए इस सवाल को लेकर आज देश में जो खिसियाहट है वह अपनी जगह बहुत गलत है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। अभी उस दिन एक समाजवादी युवक मित्र कहने लगे कि कच्छ का निर्णय राष्ट्र का अपमान है। मैंने कहा, "अगर पंचों ने पूरे ३५०० वर्गमील पर भारत का ही दावा मान लिया होता तो?" "तो ठीक होता" उन्होंने उत्तर दिया। मैंने फिर पूछा "क्या किसी पंचायत का फैसला तभी माना जायगा, जब वह पूरा-पूरा हमारे पक्ष में होगा?" वह मित्र जरा धीमी आवाज में बोले "मन तो यही कहता है, लेकिन ऐसा कहा कैसे जाय?"

बस यही तो बात है कि पंच-फैसले को बात न मानने की बात कही कैसे जाय? बात एक बार हो चुकी वह हो चुकी। इस वक्त पाकिस्तान की बात मानने का सवाल उतना नहीं है जितना इस बात का है कि जिस पंचायत को भारत एक बार मान चुका है, अब क्या कहकर उसके फैसले को मानने से इनकार किया जाय? भारत के हाथ से निकलनेवाला क्षेत्र काम का है, या बेकार है, पाकिस्तान दोस्त बनेगा या दुश्मन रहेगा, ब्रिटेन की नीयत नेक थी या बद, पंचायत मानकर हमने सही किया या गलत, हमारी सरकार ने सचमुच कमजोरी दिखाई या सही काम किया, इन सवालों को उठाने का मौका इस वक्त नहीं है। सवाल इतना ही है कि हमने बिना शर्त जिन पंचों को माना, उनके फैसले को मानने से इनकार कैसे किया जा सकता है? यह भी कोई भारतीयता है, जो भारत को दुनिया की नजरों में बेएतबार और झूठा साबित होने दे? क्या ऐसा देश भी कभी इज्जत पा सकता है, जो अपने वादों की कद्र न कर सके? किसी देश के लिए विरोधी के मुकाबिले जीत जितनी जरूरी है उससे कहीं अधिक जरूरी है दुनिया में उसकी स्वतन्त्र नैतिक शक्ति। कच्छ-फैसले को न मानने की बात कहकर हम हल्के तो हो ही रहे हैं, अपनी बची-खुची नैतिक शक्ति भी गँवा रहे हैं। कम-से-कम यह तो न करें। स्वत्व रक्षा का प्रयत्न जरूर हो, लेकिन सम्मान गँवाने की बात हर्गिज न हो। ●

मननात् मौनं

• विनोबा

गीता में भक्त-लक्षण में 'मौनी' कहा है। उसका अर्थ मौनव्रत लेनेवाला, ऐसा नहीं। निन्दा-स्तुति के बारे में चुप रहेगा, दोनों से अलग रहेगा—वह मौनी।

मननशील वृत्ति

'मननात् मौन'—मौन मनन से होता है। चित्त में मनन हो और उसके परिणाम-स्वरूप मौन हो। उसको मुनि-वृत्ति कहते हैं। मौन का अर्थ मुनि-वृत्ति। मुनि शब्द पर से मौन शब्द निकला। उसका तर्जुमा चुप बैठना, या अंग्रेजी में 'सायलेन्स' करेंगे, तो अर्थ निकलेगा नहीं।

मुनि-वृत्ति यानी मननशील वृत्ति। हर बात में मननपूर्वक बोलना, क्योंकि वह सत्य की रक्षा करेगा, तो सोचकर बोलेगा। ज्यादा शब्द नहीं बोलेगा। कालिदास ने वर्णन किया है—रघुवंश के राजा कैसे व्यवहार करते थे? तो कहा कि सत्यपालन के लिए मौन रखते थे। 'सत्याय मितभाषिणाम्'। क्योंकि जो अमितभाषी है, बेहिसाब बोलता है, वह सत्य की फिक्र करता होगा, ऐसा मान नहीं सकते। इसलिए सत्य-रक्षा के लिए नपे-तुले शब्द बोलने चाहिए।

अमृत-लहरी-सम शब्द

ज्ञानदेव महाराज ने वाणी का वर्णन किया है। वाणी कैसी होनी चाहिए? 'साच आणि मवाळ'—साच यानी सत्य, मवाळ यानी मृदु। 'मितले आणि रसाळ' मितले यानी नपा तुला और फिर भी रसाळ यानी रसमय। अन्यथा रसमय बोलनेवाला कम नहीं बोलेगा। रस में बह जायगा। और जो नपा तुला बोलेगा, उसके बोलने में रस नहीं होगा। वैसे ही सत्य बोलनेवाला कर्कश, कठोर बोल देता है और मृदु बोलनेवाला सत्य को जेब में भी रख सकता है। तो 'साच' और 'मवाळ' विरोधी हैं। 'मितले' और 'रसाळ' विरोधी हैं। इसलिए सत्य के साथ मृदुता होनी चाहिए और रसमय होते हुए भी बोलना नपा तुला चाहिए। 'शब्द जैसे कल्लोळ अमृताचे'—अमृत की लहरियों के समान शब्द, तब शब्द-शक्ति पैदा होती है।

शब्द-शक्ति एक साधना

मनुष्य के पास शब्द-शक्ति है। वह शक्ति दूसरों को हासिल नहीं। वाणी लिखित-रूपेण होती है तो उसको लेखन-शक्ति कहते हैं। बोलने में होती है, तब वाक्-शक्ति कहते हैं। लेकिन दुनियाभर के काम बनते हैं और बिगड़ते हैं वाणी से। बनाने की और बिगाड़ने की, दोनों शक्ति वाणी में हैं। इसलिए राष्ट्रों के बीच बातचीत के लिए सर्वोत्तम कुशल, योगपूर्वक ठीक बात रखनेवाले व्यक्ति को रखा जाता है।

जो अक्लवाले होते हैं, वे दूसरे देश के साथ बातचीत करते समय अपनी भाषा छोड़ते नहीं, लेकिन हिन्दुस्तानवाले 'यूनो' में अंग्रेजी में बोलते हैं। सादी बात है समझने की, कि हमारा अभिप्राय हम अंग्रेजी में ठीक प्रकट कर ही नहीं सकेंगे। तो वहाँ हमारी 'सेकेण्डरी पोजीशन' होगी। वे शेर होंगे और हम बिल्ली। चीनी भाषा को 'यूनो' में मानना पड़ा। परन्तु हिन्दुस्तान के लिए अंग्रेजी ही है। इतनी लज्जास्पद बात है। लज्जास्पद के अलावा मूर्खता है, क्योंकि उसके लिए उत्तम अंग्रेजी बोलनेवाला ढूँढ़ना पड़ता है। अब उत्तम अंग्रेजी बोलनेवाला अक्लवाला होगा ही, ऐसा नहीं। यानी श्रेष्ठ अक्लवाला वहाँ जा नहीं सकता।

परब्रह्म और शब्दब्रह्म

उपनिषद् में गुरु-लक्षण दिये हैं, उनमें शब्द-शक्ति की आवश्यकता मानी है। ज्ञानी को शब्द न भी हो, अनुभव हो। जिसको आत्मा का अनुभव आता है, वह आत्मज्ञानी। गुरु वह, जिसमें ब्रह्म-शक्ति और शब्द-शक्ति इकट्ठी हुई हो। 'तस्मात् गुरुं प्रपद्येत जिज्ञासुः श्रेय उत्तमम्'—जो उत्तम ज्ञान चाहते हैं, उनको गुरु की शरण में जाना चाहिए। और गुरु कैसे हों? 'शाब्दे परे च निष्णातं ब्रह्मण्युपशमाश्रयम्' परब्रह्म में और शब्दब्रह्म में निष्णात और शान्ति का आश्रय-स्थान। शब्द-पण्डित होगा वह, गुरु नहीं बन सकता। क्योंकि उसको अनुभव नहीं। केवल अनुभव हो तो उसके आचरण से और जीवन से आपको काफी लाभ हो सकता है, लेकिन वह गुरु नहीं बन सकता, क्योंकि समझाने के लिए शब्द-शक्ति चाहिए, वह उसके पास नहीं।

महान् स्वामी को खलल न पहुँचे

मुख्य वस्तु, मैं यह समझा रहा था कि मुनि-वृत्ति क्या होती है और वह अपना खास शब्द है। जैसे ब्रह्मचर्य शब्द है। उसका तर्जुमा हो ही नहीं सकता। 'सिलेबसी' वगैरह तर्जुमे में अर्थ नहीं। मौनी का सारा जीवन मनन पर खड़ा है। हरेक कदम मनन के साथ होगा। 'राम म्हणे वाट चाली'—रास्ता चलते-चलते जो रामजी का नाम लेता है। 'यज्ञ पाऊला पाऊलीं'—उसके कदम-कदम पर यज्ञ हो रहे हैं। वह विचारपूर्वक चलता है।

ऐसा चलने लगा और बीच में एक महान् स्वामी दीख पड़े, ज्ञानदेव महाराज लिख रहे हैं, ज्ञानेश्वरी में, तो—'हळूं हळूं मागुता। हळूचि निघे'—धीरे से पाँव पीछे लेता है। क्योंकि 'स्वामीची निद्रा मोडेल'—स्वामी का निद्रा-भंग होगा। कौन स्वामी सो रहा है? एक कीड़ा। पाँव उस पर पड़ेगा तो हिंसा ही होगी। लेकिन 'हळूचि मागुता निघे', क्योंकि आवाज हुई तो उसकी नींद में खलल पहुँचेगी। और 'रचनेचा पडैल ठावोनी हंस'—उस स्वामी का रचित मन है, सुव्यवस्थित चित्त में पड़ा है, उसमें खलल पहुँचेगी।

इस प्रकार से यानी हर कृति—चलना, बोलना, काम करना, मननपूर्वक हो, तो मौनी लक्षण है। ●

मौन शब्द की उत्पत्ति • मौन मनन • 'न निन्दा, न स्तुति' • नपी तुली वाणी • चलना, बोलना, काम करना मननपूर्वक •

'भूदान-यज्ञ' ८ मार्च, '६८ के अंक का परिशिष्ट

इस अक में पढ़ें—

अगले अंक का आकर्षण

गाँव का एक मतदाता राजधानी दिल्ली में

८ मार्च, '६८

वर्ष २, अंक १५] [१८ पैसे

तुम्हारी हो-ली !

जगह जगह लकड़ी के ढेर इकट्ठा किये गये हैं। होली तक ये ढेर और बड़े हो जायँगे। कुछ लकड़ी माँगी जायगी, कुछ चुरायी जायगी, और अंतिम दिन सब जलायी जायगी। अगर कोई हिसाब जोड़े तो एक दिन में जलनेवाली लकड़ी का टोटल लाखों मन हो जायगा। कितना बड़ा नुकसान है यह, लेकिन पर्व और परम्परा के नाम में हम न जाने क्या-क्या करते रहते हैं, और सबको ठीक समझकर करते हैं।

घर की स्त्रियाँ बच्चों को, और बड़ों को, उबटन लगाती हैं, और जो मैल निकलता है उसे होली की जलती आग में डाल देती हैं। यही मैल निकालने का काम पुरुष शायद कुछ दूसरे ढंग से करते हैं। होली गाकर, कबीर-जोगीड़ा कहकर, गाली देकर पुरुष अपने मन में इकट्ठा मैल को बाहर करते हैं। अन्दर-अन्दर जो रहता है उसे प्रकट करते हैं। हो सकता है कि पुरुष के मन की तहों में घुसकर बैठा हुआ जो पशु रहता है उसे साल में एक बार भी निकलने का मौका न मिले तो वह न जाने क्या करे? जब मन अपनी खाली कर लेता है तो बुद्धि के लिए कुछ जगह निकल आती है, नहीं तो शायद बुद्धि को जगह ही न मिले।

मन की होली साल में एक बार होती है, लेकिन राजनीति की होली तो नित दिन हो रही है, और बीस साल से लगातार हो रही है। हमारी-आपकी होली में लकड़ी जलती है मैल जलता है, लेकिन राजनीति क्या जलाती है?

जनता की होली नेताओं की होली

फाग

सब द्वेष मिटायें होली में।
आनन्द मनायें होली मे॥

कोई ढोल मृदंग बजाये,
कोई अबीर गुलाल उडाये,
कोई नाचे ठुमुक हमजोली मे।
आनन्द मनायें होली में॥

गले मिले भाई से भाई,
मिलजुलकर पीयें ठंढाई,
फिर गायें-बजायें टोली में।
आनन्द मनायें होली में॥

भर-भर रुचिर रंग पिचकारी,
फाग मनायें पुर नर नारी,
सब अमरित घोलें बोली में।
आनन्द मनायें होली में॥

—रुद्रभान

अब तक अपनी होली मे राजनीति ने क्या-क्या जलाया है ?

देश की एकता, आपस का प्रेम, जनता का विश्वास—ये सब चीजें जैसे जलकर राख हो रही हैं। इतने पर भी राजनीति की होली की आग बुझती नही दिखाई देती, बल्कि उसकी चिन-गारियाँ शहर-शहर और गाँव-गाँव मे तेजी के साथ फैलती जा रही हैं। दक्षिण के हमारे कुछ देशवासियो ने राष्ट्रीय झंडा, और देश का संविधान तक जला डाला है। उनकी यही होली है। जब झंडा और संविधान ही जल जायगा, तथा एकता और प्रेम ही नहीं रह जायगा, तो बचेगा क्या ? क्या हम ऐसी ही होली जलाना चाहते हैं ?

अब इस आग पर पानी डालने की जरूरत है। कम-से-कम हम अब तो कहें "राजनीति, तुम्हारी हो—ली!" जब राजनीति की होली जल चुकेगी तो जनता की रंगीन अबीर उड़ेगी, और देश की जनता एक कंठ से खुशी के गीत गायगी।●

प्रतिनिधि 'दल' का नहीं, 'जन' का

कुसेसर महतो के दरवाजे पर उस दिन शाम को महामाया बाबू की मिली-जुली सरकार के गिरने की चर्चा चल रही थी तो रग्घू अहीर ने कहा कि सोनपुर मेले मे जिस तरह जानवरों की खरीद-बिक्री और ठगी-चोरी का तमाशा होता है, उसी तरह पटने के मेले में विधायकों की खरीद-बिक्री और चोरी-ठगी का कारोबार जमकर हुआ। उसी गाँव के बूढ़े चौधरी ने यह बात कही थी कि 'दल' के प्रतिनिधियो की सरकार से दूसरी कोई उम्मीद नही की जा सकती। वे तो यही करेंगे, जो आज कर रहे हैं, इसलिए कुछ ऐसा उपाय करो, ताकि सरकार 'दल' के प्रतिनिधियों की नही, 'जन' के प्रतिनिधियों की बने, तभी कुछ भलाई की उम्मीद हम कर सकते हैं। सवाल उठा कि बात तो अच्छी है, लेकिन यह हो कैसे ?

इस पर भोला ने कहा, "भाई, बहुत से दलों के उम्मीदवार चुनाव मे खड़े होते हैं, किसको 'भोट' देना है, और किसको नही देना है, यह तो हम ही तय करते हैं न ? फिर हमारे 'भोट' से चुना हुआ प्रतिनिधि क्या हमारा नही हुआ ?"

"जब बात समझ मे न आये, तो आगे-आगे 'फटर्-फटर्' बोलने से क्या फायदा भोला ? जितने उम्मीदवार खड़े होते हैं वे क्या हमारी मर्जी से खड़े होते हैं या 'दल' के नेताओं की मर्जी से खड़े होते हैं ? और फिर चुन जाने के बाद वे हमारे कहे अनुसार काम करते हैं या 'दल' के कहे अनुसार। 'दीया' वाला 'झोपड़ी' वाले के दल में चला गया, 'झोपड़ी' वाला 'बरगद' वाले दल मे चला गया, 'बरगद' वाला 'हँसिया-हथौड़ा' वाले के दल में चल गया, 'बैल' वाला 'शेर' वाले के दल मे चला गया, कुछ ने मिलकर कोई और निशान ढूँढ़ लिया, तो क्या यह सब अपने 'भोटर' से पूछकर हुआ या केवल 'सत्ता की गद्दी' खातिर यह सब पैंतरेबाजी हुई ?" रग्घू अहीर ने रोष के साथ कहा।

"पटने के 'दल-बदल' और रगड़े-झगड़े की बात तो ठीक है रग्घू, लेकिन क्या इस हरिनामपुर गाँव में ही एकता है ? यहाँ

क्या दलों की अखाड़ेबाजी नहीं चलती है?" महतो ने प्रश्न किया। "यहां तो रोना है महतोजी। असल बात यही है कि 'घर-फूटे, गंवार लूटे।' जब अपने में ही एकता नहीं है तो कैसे कोई नयी बात हो सकती है? जो दिल्ली में, वही पटना में, वही गांव में।" रघू ने कहा।

"बात ठीक है तुम्हारी रघू। लेकिन, दिल्ली और पटना का 'पहुंच वाले' बाबू बड़े लोग हैं, वे आपस में लड़ भिड़कर भी सुख में रह ले सकते हैं। लेकिन इस हरिनामपुर में हम गरीब और छोटे लोग तो तबाह हो ही जायेंगे, अगर उसकी नकल हुई तो।" बूढ़े चौधरी ने चिन्ता के साथ अपने दिल की बात कही।

"तबाह हो जायेंगे क्या, हो नहीं रहे हैं? जिस हरिनामपुर में एक भी मुकदमा नहीं चलता था, वहीं आज ६७ मुकदमे चलते हैं। और इनमें से पांच तो निश्चित ही पिछले चुनाव में हुए मनमुटाव के कारण शुरू हुए हैं।" रघू ने कहा।

"भाई, एक बात हमने सुनी है, अगर आप कहें तो उस बात को आपके सामने रखूं।" महतो के २८ साल के लड़के रामखेलावन ने कहा। रामखेलावन समस्तीपुर के एक स्कूल में चपरासी है।

"कहो न रामखेलावन, तुम पढ़े लिखे लोगों की संगति में रहते हो। कुछ ज्ञान की बातें सुनते होगे।" बूढ़े चौधरी ने कहा।

'जयपरगास बाबू' एक दिन समस्तीपुर आये थे। उनका बहुत देर तक भाषण हुआ। हमारे स्कूल के सब लोग सुनने गये थे, तो हम भी चले गये। वह तो यही समझाते रहे कि गांव को एक बनाओ। जब गांव एक बनेगा तभी नेक बनेगा। और जब गांव एक और नेक बनेगा तो बाहर की बुराई गांव का नुकसान नहीं कर सकेगी। इसके लिए उन्होंने उपाय बताया कि सब लोग एक राय होकर गांव की सभा बनायें, उसको ही अपनी जमीन की मिल्कियत सौंप दें, जोतने-बोने का हक आज जैसा है, वैसा ही रहे, लेकिन मिल्कियत अलग-अलग न रहे, तो आपसी झगड़े का कारण मिट जायगा। फिर सब लोग अपनी-अपनी खेती लायक जमीन में से बीघे में कट्ठा निकालकर बेजमीनवालों को दे दें। अपनी-अपनी कमाई का तीसवां हिस्सा देकर गांव की सार्वजनिक पूंजी बनायें, हर महीने, हो सके तो पन्द्रह दिन पर गांव की सभा करें, और सब लोग मिलकर सबके हित की बात सोचें। भाई, बात मुझे बहुत अच्छी लगी। सुना है कि अपने दरभंगा जिला में बहुत सारे गांववालों ने यह बात मान भी ली है।" रामखेलावन ने कहा।

"अरे महतोजी, यही बात तो विनोबा बाबा के जो ग्रामदानी, आदमी आये थे वे भी कहते थे। लेकिन उस समय चुनाव की अखाड़ेबाजी गांव में चल रही थी, उनकी बात पर ध्यान ही नहीं दिया किसीने।" रघू ने कहा।

"अभी खास बात तो बाकी ही है। जयपरगास बाबू ने कहा कि सबकी राय से जो गांव-सभा बनेगी, उनके प्रतिनिधियों की एक सभा क्षेत्रीय बनेगी, और वह क्षेत्रीय सभा गांव के ही किसी भले आदमी को—जिसके लिए सबके मन में विश्वास होगा—एक राय से चुनकर पटना सरकार चलाने के लिए भेजेगी। जब ऐसा आदमी चुनकर आयगा तो उस पर क्षेत्र की सभा का पूरा असर रहेगा। अगर वह कोई गलती करेगा तो क्षेत्रीय सभा और जनता उससे जवाब तलब कर सकेगी। इसके अलावा वह आदमी 'दल' के हित की नहीं, 'जन' के हित की बात सोचेगा। जयपरगास बाबू ने कहा कि विनोबा बाबा चाहते हैं कि बिहार के हर गांव यह बात मान ले, और अपने-अपने गांव को ठोस बनाने में लग जाय ताकि अगले चुनाव तक 'दल' की नहीं, 'जन' के प्रतिनिधियों की सरकार बन सके।" रामखेलावन ने कहा।

"लेकिन बाबा विनोबा कौनसी बात गांववालों से मानने को कहते हैं?" रघू ने पूछा।

"यही ग्रामदान की। और सुना है कि बिहार के १६-१७ हजार गांवों ने यह बात मान ली है।" रामखेलावन ने कहा।

"मेरी बात मानो तो घर घर जाकर यह बात समझाओ रामखेलावन। अब मैं तो नदी के किनारे का दरख्त हूं। न जाने कब गिर पड़ूं, लेकिन मेरा दिल कहता है कि सन्त-महात्मा बाबा विनोबा की बात ही अब गांव को, देश को बचा सकती है। इसीलिए जयपरगास बाबू पटना दिल्ली का मोह छोड़कर इस काम में लगे हैं कि गांव बने, देश बचे।" बूढ़े चौधरी ने कहा।

"ठीक है अब हरिनामपुर इसमें पीछे नहीं रहेगा।" सबके मुंह से आवाज निकली।●

पण्डित कौन, पामर कौन ?

पहला दृश्य

"ब्याज लेना ही है, तो फिर ग्रामदान क्यों किया ?"

यह किसी नेता का प्रश्न नहीं था, एक ग्रामदानी गाँव के एक साधारण अपढ़ किसान का उत्तर था। वह पूसा-क्षेत्र का एक छोटा-सा गाँव था, लगभग ८०० आबादीवाला। वहाँ ग्रामदान की पुष्टि का काम चल रहा है। ग्रामसभा बन चुकी है। मैले कपड़े पहने, अधनंगे, बिहारी नमूने का चेहरा बनाये उन ग्रामवासियों को देखकर मुझे जरा भी शंका नहीं रही कि श्री रायजी (रामश्रेष्ठ राय) के कहे में आकर इन लोगों ने ग्रामदान-घोषणापत्र पर हस्ताक्षर कर दिया है, वरना ये क्या समझे होंगे ग्रामदान को ! इसी शंका से—नहीं, इसी निश्चय से मैंने उन्हें टटोलने की कोशिश की। उस ग्रामसभा की छोटी-मोटी जानकारी एक बूढ़े से लेने लगा। बातचीत के सिलसिले में मैंने पूछा कि ग्रामसभा की ओर से नये किसान को जब कर्जा देंगे, ब्याज का दर क्या रखेंगे ? इसी प्रश्न के उत्तर में उस किसान ने ऊपर लिखा वाक्य कहा था। सुनकर मैं दंग रह गया। दीखने को फूहड़ दीखते हैं, लेकिन विचार की इनकी पकड़ पते की है। मुझे लगा कि ग्रामदान में ये लोग और कुछ भी न करें, तो भी ब्याजमुक्ति ही क्या कम है ?

मेरे साथ एक भाई थे। वे सरकार के किसी ब्लाक में अधिकारी हैं। उनका भी पक्का विश्वास था कि देहाती लोगों में ग्रामदान के तत्व को समझने की क्षमता नहीं है। लेकिन दूसरे एक गाँव में उनकी शंका भी निर्मूल हो गयी।

पूसा-क्षेत्र का ही गाँव है। बड़ा गाँव है। दो-ढाई हजार की आबादी है। पढ़े-लिखे लोग भी हैं। वहाँ भी ग्रामसभा बन चुकी है। ८-१० लोग इकट्ठा बैठे थे। मेरे साथी ने उनसे पूछा कि ग्रामसभा का कोई सदस्य बीघा-कट्ठा जमीन न निकाले या कोष में हिस्सा न दे, तो वे क्या करेंगे ? हमने स्पष्ट ही पूछा था कि वे किस कोर्ट में जायेंगे ?

हमें जवाब दिया एक अधेड़ उम्र के भाई ने। कपड़े जरा उजले थे। छोटी-सी दुकान है। बड़े पैसेवाले नहीं हैं, फिर भी निपट गरीब भी नहीं हैं। बाद में हमें मालूम हुआ कि इसी सेठ (?) ने पिछले दिनों दुकान की बाकी-वसूली के लिए रिश्वत के बल पर पुलिस से कइयों की मरम्मत करवायी थी ! लेकिन इस समय उसी सेठ ने हमसे कहा—"भाईजी, हमने ग्रामदान किया है। कोर्ट क्यों जायेंगे ? सब मिलकर समझायेंगे। इस साल नहीं देगा तो दूसरे साल तो देगा ही !"

दूसरा दृश्य

दरभंगा जिले के ही ......पुर में ट्रेनिंग कालेज में सभा थी। श्री शंकररावजी का भाषण था। वे ग्रामदान और सर्वोदय-विचार समझा रहे थे। शिक्षकों की जिम्मेदारी बता रहे थे।

सभा-भवन भरा हुआ था। सारे शिक्षक थे। देखकर खुशी हो रही थी। सर्वोदय-विचार को शिक्षक-वर्ग समझ ले और गाँव-गाँव में फैलाने लग जाय तो कितनी बड़ी ताकत बन जाय ? आजकल विनोबाजी ने भी शिक्षकों को इधर खींचने की विशेष कोशिश शुरू की है। यह सब देखकर मैं सोच रहा था कि ये पढ़े-लिखे लोग भी अब चेतने लगे हैं।

इतने में एक प्रशिक्षक महोदय प्रश्न करने के लिए खड़े हुए। मुझे प्रसन्नता हो रही थी कि अब कोई गम्भीर प्रश्न सुलझने को है। लेकिन ? लेकिन प्रश्न सुनकर मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था कि एक विद्वान प्रशिक्षक ऐसा प्रश्न पूछ सकता है, और वह भी तब, जब कि ग्रामदान-भूदान आन्दोलन के चलते एक युग बीतने को आया हो। उस विद्वान की शंका यह थी कि "इनसान समझाने से कहीं मानता है ? जब कि कंस और दुर्योधन ने कृष्ण और भीष्म जैसे महापुरुषों के समझाने पर भी माना नहीं था ?"

मेरा जी रोने को हुआ। मेरी सारी आशा धूल में मिल गयी। *तत्काल मेरा ध्यान उस बूढ़े किसान और अधेड़ सेठ (?)* की ओर गया जो विद्वान नहीं थे, नयी पीढ़ी को शिक्षा देने के ठेकेदार नहीं थे।

आगे सभा की कार्रवाई में कोई रस नहीं रहा। लेकिन *मन में अब भी यही बात घूम रही है कि पढ़ाई-लिखाई का* यह कैसा फल है, जिससे हवा का रुख समझ में न आये, इनसानियत पर से भरोसा न रह जाय, भले-बुरे की परख तक करने की शक्ति न रह जाय ?

—कादम्ब

निराशा की भूमि : आशा के अंकुर

पिपड़ाइच में आमसभा चल रही थी। बहनें काफी मात्रा में आयी हुई थीं। मैंने उनसे सर्वोदय-पात्र रखने की बात कही और समझायी। काफी बहनों ने सर्वोदय-पात्र रखने की इच्छा प्रकट की। मैंने पूछा कि उसकी व्यवस्था की जिम्मेवारी कौन लेगी? मेरे बगल में बैठी हुई शिक्षिका बड़ी सौम्य आवाज में बोली, "मैं लूँगी।" उनके मुँह पर शांति और सौम्यता की झलक देखते हुए हृदय में आनन्द हुआ। ऐसा लगा कि यह बिहार की बहनों की करुणा और प्रेम की प्रतीक है।

सभा के बाहर वह मुझे पहुँचाने के लिए मुहम्मदपुर तक साथ आयी। रास्ते में बातें चलती रहीं। साधारण पढ़ाई के बाद बचपन में ही शादी हुई। लेकिन उसके बाद पतिदेव ने चार पाँच और शादियाँ कीं। यह विन्ध्यवासिनी बहन को पसन्द नहीं आया तो उन्होंने पति-त्याग किया। स्पष्ट था कि गहनों के बारे में झगड़ा होगा। मुकदमेबाजी उन्हें जँची नहीं। गहनों की लालच भी नहीं थी। तो उन्होंने भतीजे को बुलाकर उससे कहा कि यह सब तुम अपने चाचा को वापस दे दो।

कुछ दिनों के बाद 'इन्स्पेक्ट्रेस' उनके दरवाजे पर आयी। उन्होंने समझाया कि आप मेरे पास आकर ट्रेनिंग कीजिये। विन्ध्यवासिनी बहन हिचकिचायी। ससुरालवाले क्या सोचेंगे? लेकिन इन्स्पेक्ट्रेस ने कहा कि अब नहीं तो अंत में आपको आना ही होगा। इसलिए अभी आना अच्छा होगा। और उन्होंने जाने का निर्णय किया।

ट्रेनिंग के बाद जिस गाँव में वह काम कर रही थी, उस गाँव में एक अनाथ परिवार था। माँ-बाप नहीं, बच्चों को सँभालनेवाला कोई नहीं। तो अपनी जिम्मेवारी मानकर उन्हें पाला-पोसा। वह कह रही थी, इससे मेरी लाज बची। अब दुनिया में मेरे अपने जन हैं।

उस परिवार को स्वावलम्बी बनाने के बाद गाँव की एक बहन के मुँह में लकवा लग गया। डाक्टर ने मना किया कि उसे खाने दें; माह वाले बच्चे को अपना दूध नहीं पिलाना चाहिए। विन्ध्यवासिनी बहन ने उस बच्चे को पाला। अब वह लगभग छह-सात साल का है। वह कह रही थी कि वह बड़ा सभ्य और अच्छा लड़का है। अपने अन्य भाई-बहनों की तरह झगड़ालू और उद्दण्ड नहीं है। इसके सिवाय पाठशाला में पढ़नेवाले गरीब बच्चों को आवश्यकता होने पर पेंसिल, किताब तथा शुल्क की व्यवस्था, जहाँ तक हो सकता है, अपनी तरफ से करती है।

बिहार में ऐसी हजारों बहनें एक संकुचित जीवन बीता रही होंगी, जिनकी शक्तियों का सदुपयोग इस प्रकार समाज में सही शिक्षा और मानवीय गुणों की शिक्षा देकर निर्माण के काम में हो सकता है।

वर्तमान शिक्षा प्राप्त हुई बहनों की 'फैशनपरस्ती' और 'कठोर हृदय' को देखकर जहाँ एक ओर निराशा पैदा होती है, दूसरी ओर वहीं कम पढ़ी लिखी ग्रामीण बहनों के गुणों को देखकर भविष्य के लिए आशा भी उपजती है। —सरला देवी

दिल का दर्द

किसीके पास भिखमंगों की तरह हाथ क्यों फैलाया जाय? मैं मंत्री होता तो कहता कि अपनी रोटी आप ही पैदा कर लो। कपड़े भी आप ही पैदा कर सकते हैं। मेरा अर्थशास्त्र यह है कि यज्ञ करो और यज्ञ करके ही खाओ। यज्ञ का अर्थ सिर्फ हवन-होम नहीं है। यज्ञ का अर्थ है पूरी मेहनत-मजदूरी करके ही रोटी कमाना। सब लोग अगर पुरजोश से एक-सी मजदूरी करने लगें, तो हिन्दुस्तान की सूरत ही बदल जाय। जहाँ-जहाँ तम्बाकू पैदा होती है वहाँ से उसे हटाकर अनाज की फसल पैदा की जाय। नोआखाली सोने का टुकड़ा है। वहाँ नारियल, मछली और चावल की कितनी भरमार है! करांची से चावल आये और नोआखाली खाये, यह कैसी शर्म की बात है! और सब लोग कातें तथा अपने-अपने कपड़े तैयार कर लें, तो मिल अपने आप खतम हो जायगी। हमारे यहाँ रुई भी बहुत पैदा होती है। मगर मेरी बात मानता कौन है? हमारे पास करोड़ों हाथ हैं। मिल में तो करीब एक ही लाख आदमियों को मजदूरी मिलती है। दूसरे लाखों-करोड़ों बेकार बैठे रहते हैं। लेकिन यह हिसाब आज कोई समझना ही नहीं चाहता।

[बेलियाघाटा, १०-८-'४७] —गांधीजी

भिंडी की खेती

भिंडी एक ऐसी फसल है, जिसे सभी लोग खाना पसन्द करते हैं। यह एक अच्छी सब्जी तो है ही, इसका डण्ठल गन्ने के रस को साफ करने मे भी काम आता है।

भिंडी में विटामिन 'ए' और 'बी' काफी मात्रा मे पाये जाते हैं तथा विटामिन 'सी' भी थोड़ी मात्रा मे पाया जाता है। इसमे प्रोटीन तथा खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। अत. यह स्वास्थ्य के लिए भी गुणकारी है।

उत्तम जाति : भिंडी की कुछ जातियाँ अलग-अलग प्रान्तों के कृषि-विभाग ने चुनी हैं। यह सभी जातियाँ अपने गुणों के कारण बहुत अच्छी समझी जाती हैं। कुछ खास किस्मे—लखनऊ ड्वार्फ, लांग ग्रीन, लांग ह्वाइट, वैलवेट, पंजाब संकर १३, पूसा मखमली आदि हैं।

"पूसा सावनी" एक खूब उपजनेवाली किस्म है। इसको खतरनाक रोग नही लग सकते। इसके फल १५ से २० सें० मी० तक लम्बे, पाँच कोनोंवाले तथा सुन्दर हरे रंग के होते हैं। इसकी उपज २५० मन प्रति एकड़ तक हो जाती है।

भूमि की तैयारी : भिंडी प्राय: उन सभी खेतों मे हो जाती है, जिसमे कि जल-निकास हो जाता है। खेत को तैयार करते समय पहली जुताई मिट्टी पलटनेवाले मझले हल से करनी चाहिए। बाद की दो जुताई गहरी जुताई करनेवाले हल से करके फिर देशी हल से तीन जुताई करनी चाहिए। भूमि को भुरभुरा करने के लिए पटेला चलाना जरूरी है।

बुवाई कब और कैसे ? : बुवाई करने के समय का बीज की मात्रा तथा उत्पादन पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है तथा पौधों की आपसी दूरी समय के मुताबिक ही करनी होती है। नीचे बुवाई के समय के मुताबिक ही बीज की मात्रा और पौधों की दूरी दी गयी है :

बुवाई का समय	बीज की मात्रा	पौधे से पौधे की दूरी	पंक्ति से पंक्ति की दूरी
फरवरी-मार्च (गर्मी की फसल)	१०-१२ कि० ग्रा० प्रति एकड़	१५ सें० मी०	३० सें० मी०
जून-जुलाई (बरसाती फसल)	४-५ कि० ग्रा० प्रति एकड़	३० सें० मी०	६० सें० मी०

बुवाई करते समय एक बात विशेष रूप से ध्यान रखने की है कि गर्मी ऋतु की फसल का बीज बुवाई से पहले २४ घंटे तक और बरसाती फसल का बीज १२ घंटे तक अवश्य भिगोयें, क्योंकि इस बीज का छिलका अत्यन्त कठोर होता है और पानी को जल्द नही सोख पाता, जिसका नतीजा यह होता है कि बीज समान रूप से नही जमता।

बुवाई 'डिबलिंग विधि' से करनी चाहिए और बीज लगभग २.५० सें० मी० गहरा बोया जाना चाहिए।

सिंचाई और निकाई-गुड़ाई : पहली सिंचाई बुवाई के तुरन्त बाद कर देनी चाहिए। गर्मी की फसल मे सप्ताह में दो बार सिंचाई की जाय। यह ध्यान मे रखा जाय कि जल खेत मे न रुक पाये, नही तो पौधों के सूख जाने का डर रहता है। बरसाती फसल मे मिट्टी चढ़ाना चाहिए। मिट्टी चढ़ाने के लिए दोनों ओर को मिट्टी पलटनेवाला लोहे का देशी हल इस्तेमाल किया जाय तो काम तेजी से और कम खर्च से हो जाता है। निकाई-गुड़ाई 'कल्टीवेटर' (गुड़ाई मशीन) से करनी चाहिए। गर्मी की फसल मे पंक्ति से पंक्ति की दूरी कम रहती है, इसलिए फावड़े से गुड़ाई करना ही अच्छा रहता है। गुड़ाई अधिक गहरी न हो।

फल तोड़ना : भिंडी रात्रि मे तेजी से बढ़ती है। इसलिए प्रात:काल ही फल तोड़ना चाहिए। साधारणतया देखा जाता है कि पहले ४-५ दिनो मे भिंडी की बढ़वार साधारण रहती है, लेकिन ६ ठे और ७ वें दिन उसकी बढ़वार तेजी से होती है और उसके रंग व कोमलता पर कोई असर नही पड़ता।

कीड़ों से बचाव : जैसिडस् नामक कीड़े छोटे-छोटे हरे रंग के होते हैं तथा पत्तियों से रस चूसते रहते हैं, जिससे पत्तियाँ मुड़ जाती हैं। ये अप्रैल से नवम्बर तक हानि पहुँचाते हैं। इनसे बचाव के लिए .०२% एन्ड्रीन (१०० मिलिमीटर २०% एण्ड्रीन का घोल १०० लीटर पानी मे घोलकर) का छिड़काव ३५० से ४५० लीटर प्रति एकड़ की दर से कर देना चाहिए।

—भोपाल सिंह

नैसर्गिक और रासायनिक खाद का मुकाबिला

बिहार प्रदेश के एक नामवर किसान श्री शत्रुघ्न प्रसाद का दावा है कि नैसर्गिक खाद (कम्पोस्ट, हरी खाद, हड्डी, टट्टी पेशाब आदि की खाद) से खेती मे अच्छे नतीजे आते हैं और वह रासायनिक खाद से अधिक अच्छी भी होती है। बिहार के भूमि-सरक्षण विभाग के उपनिदेशक ने श्री शत्रुघ्न प्रसाद की इस बात की कई तरह से जाँच की। और उनकी जाँच मे श्री शत्रुघ्न प्रसाद का दावा सही निकला। यह जाँच श्री शत्रुघ्न प्रसाद के हजारीबाग के १ एकड खेत मे किया गया। उपनिदेशक ने पहला परीक्षण 'ताईचुग नेटिव' नामक धान की फसल मे किया। धान की फसल १२० दिन मे पककर तैयार हुई। उपनिदेशक की उपस्थिति मे फसल तैयार की गयी। प्रति एकड मे ९१ मन के हिसाब से उपज हुई। उसी खेत म धान की स्थानीय किस्म की पैदावार ४१ मन प्रति एकड तक हुई जबकि वही फसल आस-पास के खेतो मे १४ मन प्रति एकड से भी कम हुई। उपनिदेशक ने श्री शत्रुघ्न प्रसाद के खेती करने के तरीके की प्रशसा की है। इस तरीके से लगातार तीन वर्षों तक एक ही खेत मे सालभर मे ६ फसले उपजायी गयी।

दोनो खादो का मुकाबिला करने के लिए ताइचुग नेटिव धान मे नैसर्गिक खाद और रासायनिक खाद का उपयोग किया गया। रासायनिक खाद डालने म एकड मे १५० रु० का खर्च आया। जाँच के लिए तय किये गये खेत की वर्षा के अलावा ४ बार सीचा गया था और उसमे कीडे मारनेवाली दवा का छिडकाव भी किया गया था। प्रति एकड में १८ किलोग्राम बीज डाला गया था। खेत में साधारण खेती के खर्च के अलावा और कोई खर्च नही किया गया। जाँच मे जो नतीजे सामने आये, उनसे यह बात साफ हुई कि नैसर्गिक खाद के मुकाबिले में रासायनिक खाद डालने से उपज में कोई खास फर्क नहा आया। श्री शत्रुघ्न प्रसाद ने जो खेती का तरीका अपनाया था उसमें मैले की खाद का पानी नालियो के जरिये खेत तक पहुँचाया जाता है। इस तरीके से सिंचाई और खाद देने का काम एक ही साथ होता है।

(दैनिक 'स्टेट्समैन' के १६ जनवरी '६८ के अक में प्रकाशित लेख के आधार पर)●

विचार करना ही होगा

विनोबा निवास से दो मील दूर है, ग्रामदानी गाँव कल्याणपुर। पूसारोड स्टेशन से उत्तर की ओर पक्की सडक जाती है। बाँस, आम ताड, केले और शीशम के घने पेड और धान के खेत मन हरा भरा कर देते हैं। गुजरात के भाई लीलाधर और मैं सूर्योदय के पूर्व टहलने निकल पडते हैं। आग पर हाथ सेंकते हुए ग्रामीण भाइयो से मालूम हुआ कि गाँव मे लगभग सौ घर हैं। कोइरी भूमिहार और चार पाँच भूमिहीन दुसाध। एक चौथाई भूमिवान ग्रामदान मे शामिल नही हुए हैं जिनके पास गाँव की लगभग एक तिहाई जमीन है। ऐसे एक भूमिवान से जब हमने पूछा कि 'आपको मालूम है न कि आपका गाँव ग्रामदान हुआ है ?' तो उनका उत्तर मिला 'हुआ तो है। मगर उसका माने हम समझे नही।'

हमने उन्हे समझाया कि माने है सारे गाँव का एक परिवार की तरह मिलजुलकर भाईचारे से रहना। ग्रामदान होने से काम हुआ नही बल्कि आगे के काम के लिए एक बुनियाद बन गयी।

वह भूमिवान भाई पूछ बैठा 'हम बीसवाँ हिस्सा भूमि निकालकर देना होगा न ?'

हमने उसका डर मिटाते हुए कहा 'केवल आपको ही नही, छोटे जमीनवालो को भी बीघे मे एक कट्ठा जमीन भूमिहीनो को देना होगा। मन पीछे एक सेर अनाज ग्रामसभा को दान होगा। नौकरीवाले या कारीगर महीने में से एक दिन की कमाई ग्रामकोष के लिए दान देंगे। इस रकम का उपयोग गाँव के भले के लिए होगा जिसे ग्रामसभा सर्व-सम्मति से तय करेगी। जमीन देना बडी बात नही है। प्रेम बडी बात है। अगर आप पाँच भाई हैं और एक भाई बीमार पडता है तो क्या आप उसे खाना नहीं देते हैं ? उसी तरह ग्रामसभा द्वारा सबकी सेवा होगी। दवाई, खाने पढने लिखने कामकाज दिलवाने आदि का इन्तजाम होगा। काम सबकी एकराय से होगा। अगर ६० लोग पक्ष म हैं और ४० विपक्ष मे, तो यह काम होने पर वे ४० उसे तोडने लगते हैं, या सहकार नही देते। जब तक सबकी सम्मति न हो, तब तक उस काम को छोड देना ही अच्छा है। जितना नुकसान उस काम को छोड देने से होगा, उससे अधिक प्रेम क टूटने से होगा।

—जगदीश मवानी

मकटेड–६

मदद की माँग : गुलामी के ख़तरे

दुनिया के प्रायः सभी देशों का एक मिलाजुला संगठन है—*'संयुक्त राष्ट्रसंघ'*। यह संगठन दुनिया के देशों की स्वतंत्रता, सुरक्षा, विकास और शान्ति के लिए काम करता है। दुनिया से अभाव, अज्ञान, और अन्याय दूर हों, और छोटे-बड़े सभी देशों के लोग सुख-शान्ति के साथ जी सकें, इसके लिए 'संयुक्त राष्ट्रसंघ' की ओर से बहुत सारे काम होते हैं।

अभी दिल्ली में *'संयुक्त राष्ट्रसंघ'* की ओर से दुनिया के लगभग सभी देशों का एक *'व्यापार विकास सम्मेलन'* हो रहा है। इस सम्मेलन में दुनिया के देशों को उनकी स्थिति के अनुसार दो भागों में बाँटा गया है : (१) विकसित देश और (२) विकासशील देश।

विकासशील देशों में मुख्य रूप से एशिया और अफ्रीका महाद्वीप के देश आते हैं। जो विकसित नहीं हैं, लेकिन विकास चाहते हैं, और उस दिशा में कुछ कोशिश कर रहे हैं, ऐसे विकासशील लगभग सभी देश, विकसित यानी पश्चिमी देशों के वर्षों तक गुलाम रहे हैं, और पिछले करीब २० वर्षों के अन्दर उन्होंने राजनीतिक आजादी हासिल की है।

इन विकासशील देशों की माँग है कि—विकसित देश अपनी आमदनी में से एक प्रतिशत यानी सौ में एक रुपया विकासशील देशों के लिए मदद के रूप में दें। आज दुनिया एक-दूसरे के बहुत करीब आ गयी है। जिस तरह गाँव में जरूरतमन्द परिवार अपने पड़ोसी परिवार की मदद चाहता है, ठीक उसी तरह गरीब देश दुनिया के दूसरे अमीर देशों से अपने विकास के लिए मदद की माँग कर रहे हैं। माँग उचित है। दुनिया की सारी सम्पत्ति भगवान की ही देन है, और दुनिया के सभी मनुष्य उसी भगवान के बन्दे हैं। इसलिए दुनिया की दौलत पर सभी का हक समान है। लेकिन दुनिया की धरती को मनुष्यों ने टुकड़ों में बाँट रखा है, देश के नाम पर, और अपने दिलों को बंद कर रखा है धर्म, सम्प्रदाय, रंग, राजनीति आदि के बहुत-से छोटे-छोटे घरौंदे में।

विकासशील देशों की माँग तो पूरी की ही जानी चाहिए, और शायद की भी जायगी। लेकिन धरती के टुकड़ीकरण और दिलों के घरौंदों के कारण इस मदद में से कुछ बहुत ही खतरनाक बातों के होने का भय है।

हर विकसित देश, जो विकासशील देशों की मदद करने की शक्ति रखता है, साधन रखता है, वह विकास की कोई-न-कोई योजना, पद्धति और विचार भी रखता है। और जब विकास के लिए जरूरतमन्द देश को साधनों की मदद देता है तो उसके साथ अपनी योजना, पद्धति और विचार भी भेजता है।

मुख्य रूप से दुनिया आज दो विचारों के गुटों में बँटी है। एक विचार के गुट में अमेरिका, इंग्लैंड, फ्रांस आदि देश हैं, और दूसरे विचार के गुट में रूस, चीन आदि देश हैं। पहला गुट सुखी लोगों को सहारा देने की बात कहता है, तो दूसरा दुखी लोगों को सहारा देने की। जब भी और जहाँ भी इन देशों की मदद पहुँचती है, उस मदद के साथ ही उनके गुट की बात भी पहुँचती है और मदद हासिल करनेवाले देश भी गुटों में बँटते हैं।

चूँकि हर देश में सुखी और दुखी लोग हैं, और दोनों की वकालत करनेवाले गुट के देश मदद करनेवाले हैं, करते हैं, इसलिए विकासशील देश मदद हासिल करने के साथ ही गुटों में बँटते हैं, और दोनों गुटों के साँड़ों का अखाड़ा बन जाता है वह देश। वियतनाम इसका जीता-जागता उदाहरण है। भारत में भी वह खतरा साफ-साफ दिखाई दे रहा है। इसीलिए हमें सोचना है कि विकास के लिए हमको मदद लेनी है तो लें, लेकिन अपने देश को चीन और अमेरिका के साँड़ों की लड़ाई का अखाड़ा न बनायें।

हाँ, हम गरीब हैं, हमारे पास साधनों का अभाव है, लेकिन एक शक्ति तो है हमारे पास, जो बहुत है और जिसको संगठित किया जाय तो देश का नक्शा ही बदल जाय। वह शक्ति है श्रम की। यह अपनी शक्ति संगठित और सक्रिय हो जाय, तो विकसित देशों की मदद लेकर भी हम अमेरिकी और चीनी गुटों की लगायी जानेवाली आग में जलने से बचेंगे और उनकी गुलामी में जकड़े जाने के खतरे से भी मुक्त होंगे।●

'गाँव की बात'। वार्षिक चंदा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा-संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित

गतांक से आगे

समाज-परिवर्तन की भूमिका और मार्क्स का दृष्टिकोण

प्रा० दि० के० बेडेकर

परिवर्तन का मार्ग

यहाँ तक इस बात की चर्चा हुई कि समाज का परिवर्तन किसलिए, किस साध्य की प्राप्ति के लिए करना है। मार्क्स का दृष्टिकोण परात्मता का निरसन तथा मानवता की पुनःप्राप्ति का है। केवल सत्ता प्राप्त करके कोई भी एक वर्ग अथवा व्यक्तिसमूह मानव-मन का आमूल परिवर्तन नहीं कर सकता। बल्कि परिवर्तन का यह लक्ष्य सामने न रखकर जो भी क्रान्ति होगी, वह केवल राज्यक्रान्ति सिद्ध होगी, समाज-क्रान्ति नहीं। इसलिए मार्क्स ने यह कभी नहीं माना था कि राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने के लिए गुप्त षड्यंत्र करके अथवा सशस्त्र विप्लव करने से अपना लक्ष्य सिद्ध होगा। उलटे, गुप्त सशस्त्र आतंकमय पद्धति अपनाकर समाज क्रान्ति करना चाहनेवालों को उसने भ्रांत, विक्षिप्त आदि खिताब दे रखा है। मार्क्स के पहले का समय फ्रेंच समाज क्रान्ति के बाद का सशस्त्र विद्रोह और रक्तपात के विचारों से भरा हुआ समय था। मार्क्स के समकालीनों में अनेक व्यक्ति सशस्त्र विद्रोह के संगठन में लगे हुए थे। परन्तु मार्क्स ने माना था कि समाज परिवर्तन तो समूचे समाज के करने की प्रक्रिया है। यह परिवर्तन सभी व्यक्तियों को करना है। उसके लिए धैर्य, नेतृत्व, त्याग, चारित्र्य और संगठन की आवश्यकता है। इसी प्रकार जिस मनुष्यता की प्राप्ति के लिए क्रान्ति करनी है, उस मनुष्यता को सम्मुख रखकर, उसको सँभालते हुए ही यह क्रान्ति करनी है।

मनुष्य को अपना पूर्व-संचित परात्मता का संस्कार हटाकर मनुष्यता के लिए नया जीवन गढ़ना है तो उसके लिए अमानुष मार्ग उपयोगी नहीं है। इसके दो कारण हैं—(१) मनुष्यों का पारस्परिक प्रेम सहृद भावना की अवहेलना करके अमानुष शौर्य और साहस से क्रान्ति नहीं की जा सकती और (२) अपाय का प्रतिकार करने, स्वतन्त्रता और श्रेय प्राप्त के लिए शस्त्र उठाना यदि आवश्यक हो तो उसे उठाने की इच्छा मानवमात्र में स्वाभाविक हो सकती है। सभी लोग मानते हैं कि निर्भयता गुण है और भीरुता दोष है। पूर्ण और शुद्ध अहिंसा सन्तों के लिए गौरवास्पद है और आदर्श के नाते मानवमात्र के लिए आदरणीय है। परन्तु समाज क्रान्ति में उसे मनुष्य के आचरण-योग्य तत्त्व नहीं कह सकते।

एक छोर पर साहसी हिंसाचारी मार्ग और दूसरे छोर पर सन्तों का अहिंसा मार्ग—ये दो मार्ग मार्क्स के समय और आज भी लोगों के सामने प्रस्तुत हैं। परिवर्तन का वाय व्यक्ति तक ही सीमित रखना है, तो दोनों मार्ग अपनाये जा सकते हैं। हमारे यहाँ के इतिहास में चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने नन्दवंश के नाश के लिए पहला मार्ग अपनाया था। अहिल्याबाई ने राघोबा को दूसरे मार्ग से पराजित किया। परन्तु समाज परिवर्तन की प्रक्रिया ऐसी नहीं है, कम-से-कम मार्क्स ने तो ऐसा माना नहीं।

मार्क्स ने न अहिंसा को सृजनशील माना, न हिंसा को। मार्क्स ने यह सत्य स्पष्ट किया कि आज तक के सभी परिवर्तन शस्त्रबल से हुए हैं। परन्तु उसने यह भी कहा है कि हिंसा या शक्ति से नव निर्माण नहीं होता। 'नवता' पहले समाज के गर्भ में पलती है, और उसके जन्म के समय हिंसा का केवल दाई के रूप में आगमन होता है। यह भी केवल आज तक का इतिहास है, त्रिकालाबाधित अटल नियम नहीं है। मार्क्स की सारी भूमिकाओं को हिंसा-कृत्य मानकर फटकारनेवाले इसके विरोधियों ने ऐसा आभास पैदा कर दिया है कि मार्क्स मानता ही यह था कि दाई ही (हिंसाकृत्य ही) गर्भ धारण करती है और वही सृजन करती है। यह अवास्तविक है। बल्कि इसके विपरीत, मार्क्स का विचार यह दिखाई देता है कि ब्रिटेन, अमरीका आदि संसदीय लोकतान्त्रिक देशों में शान्ति से, विधान और कानूनों के द्वारा समाज-क्रान्ति हो सकती है।

मार्क्स के विरोधियों की यह विपर्यस्त धारणा कि मार्क्स केवल हिंसा को ही मानता था समझ में आ सकता है, परन्तु दुर्भाग्य की बात है कि मार्क्स के अनेक अनुयायी भी इसी मत के हैं। वे भी मार्क्स के मनुष्यत्वरूप ध्येय को समझे नहीं हैं। उनकी दृष्टि सत्ता प्राप्ति के आगे पहुँची नहीं है। इसलिए मार्क्स के विचारों का इस प्रकार द्विविध और बहुत ही विपर्यस्त अर्थ किया जाता रहा है। इसीलिए इसके पीछे इतना सारा प्रपंच रचना पड़ा है। परन्तु आज हमें 'हिंसा कि अहिंसा' इस वितण्डावाद से परे जाना चाहिए तभी समाज-क्रान्ति का, मार्क्स प्रणीत मार्ग का स्वरूप स्पष्ट होगा।

हमने देखा कि समाज-क्रान्ति का मार्क्स का क्या ध्येय था। वह समस्त मानव-जाति को परमात्मा के अभिशाप से मुक्त होने का मार्ग बताना चाहता था। नर का सिंहासन हथियाने का मार्ग उसे अग्राह्य था और वैसे ही सन्तों का निरपवाद अहिंसा का मार्ग भी त्याज्य लगा। तीसरा मार्ग उसने बताया। संसार का मानवीय इतिहास प्रत्यक्ष देखकर उसने वह मार्ग निर्धारित किया। उसका प्रमुख सिद्धान्त यह कि समाज-क्रान्ति के पीछे सामाजिक आचार-विचारों में मूलभूत परिवर्तन करने

समाज परिवर्तन समाज के द्वारा • हिंसा और शक्ति से नवनिर्माण नहीं •
सन्ताप और आक्रोश समाज परिवर्तन के काम का नहीं • समूह के द्वारा की गयी क्रान्ति सफल होगी?

की भावना, ध्येय-दृष्टि और धैर्य चाहिए। केवल अन्याय के विरुद्ध संताप और गरीबी के कारण उत्पन्न होनेवाला विध्वंसक आक्रोश समाज-परिवर्तन के काम का नहीं। उलटे, वह क्रान्ति का बाधक हो सकता है। अब सामाजिक परिवर्तन का ध्येय साकार करने का धैर्य किनमें होगा? वह धैर्य तो व्यक्ति में ही हो सकता है और ऐसे धैर्यशील व्यक्तियों के समूह को समाज-क्रान्ति संपन्न करनी होगी। यह तो ठीक है, परन्तु प्रश्न उठता है कि जो क्रान्ति समूह को करनी है, वह क्या सफल हो सकती है? कुछ समय तक सफलतापूर्वक वह बनी रहे, तो भी क्या वह स्थायी हो सकेगी? सिंहासन से दुष्ट राजा को हटाकर उसके बदले कोई धर्मात्मा बैठता है तो प्रजा को आनंद होता है। परन्तु राजसत्ता तो बनी ही रहती है। ऐसी राज्य-क्रान्ति समाज-क्रान्ति नहीं है। यह सब मार्क्स ने देखा कि आज के समाज में शहरी श्रमिक वर्ग ही एक ऐसा वर्ग है, जो न केवल शोषण का शिकार है, परन्तु उसमें समाज-परिवर्तन का सिद्धान्त समझने की क्षमता भी है। और उसके मुक्त होने का स्वप्न देख सका।

संपत्ति और सत्ता की अमानुष प्रतिस्पर्धा में आज सभी मनुष्य आँखों पर पट्टी बाँधकर पशुओं के समान दौड़ रहे हैं। वर्ग, वर्ण, समूह और राष्ट्रों के मामले में भी यही स्पर्धा जारी है। इस स्पर्धा में श्रमिक वर्ग शामिल ही है, सुशिक्षित वर्ग भी शामिल है। जो इस स्पर्धा में शामिल नहीं हैं, वे मार्क्स की तरह दुःख और कष्टमय जीवन अपनाते हैं। कलाकार या कला की, ज्ञान या सदाचार की जिनको धुन लगी हो, वे तो अपवादस्वरूप होते हैं, भूखों पड़े रहते हैं। इस प्रकार का वनवास वे स्वेच्छा से, ध्येय की मस्ती में स्वयं स्वीकार करते हैं। परन्तु दूसरा को यह गरीबी पसंद नहीं होती। वे स्पर्धा में मग्न रहते हैं। मग्न रहते हैं, इसीका अर्थ है कि आज की परतंत्रता का, अमानुषता का उन्हें भान नहीं रहता, भान होने का मार्ग भी कुण्ठित होता है।

तो भजन-मंडली, सत्यनारायण की पूजा, गणेशोत्सव, नाटक मण्डली वगैरह 'सांस्कृतिक' मनोरंजन में मग्न होता है; सुशिक्षित वर्ग के मनोरंजन में, व्यसनों में रस लेने का प्रयत्न करता है।

इस हारे-थके, सर्वहारा, श्रमिक वर्ग के लिए पाने जैसा कुछ भी बचा नहीं है। वह सर्वस्व ही खो चुका है। जो भी है सब कल्पित, आरोपित, अमानुष ही है। परन्तु वह भी नहीं जानता। मार्क्स ने इस वर्ग का कोई पूजा-विधान नहीं बनाया। उनमें का तो यह कहना है कि इस वर्ग को सर्वांगीण अपना परिवर्तन करना चाहिए। यह होता है तभी वह समाज-परिवर्तन का अग्रदूत होगा। परन्तु चूँकि यह सर्वस्व खो चुका है, इसलिए 'नव' का स्वागत कर सकता है, चूँकि परिवर्तन के मार्ग के लिए इसके पास कुछ बचा नहीं है, इसलिए परिवर्तन के लिए जी-जान से वह लड़ सकेगा। प्रतिस्पर्धा में

संपत्ति और सत्ता की अमानुष प्रतिस्पर्धा ··श्रमिक वर्ग से दूर—ज्यादा काम और कम दाम का शिकार सर्वांगीण अपना परिवर्तन ··सामाजिक से मानव की मुक्ति

शान्ति-केन्द्र : 'शान्ति-दिवस' के आयोजन

देश भर में विभिन्न स्थानों पर ३० जनवरी का दिन 'शान्ति-दिवस' के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर प्रभातफेरी, सामूहिक सफाई, प्रार्थना-सभाएँ, सूत्रयज्ञ, श्रद्धांजलि, सर्वोदय-साहित्य का पठन-पाठन, लोक-सम्पर्क, शान्ति बिल्लो और सर्वोदय साहित्य की बिक्री आदि के कार्यक्रमों के अतिरिक्त चित्र प्रदर्शनी, विचार-गोष्ठी, शान्ति-सेना रैली, मौन जुलूस, नशाबन्दी आदि के विशिष्ट आयोजन भी किये गये।

उत्तर प्रदेश

कानपुर : क्षेत्रीय गांधी-शताब्दी समिति के ८२ कार्यकर्ताओं का एक सफल शिविर जनवरी में फैजाबाद में हुआ। 'शान्ति दिवस' के उपलक्ष में कार्यकर्ता और शान्ति-सैनिक सर्वोदय-साहित्य लेकर घर घर पहुँचे, १०१६ रुपये की साहित्य-बिक्री हुई।—विनय अवस्थी

आगरा शान्ति-यात्रा जुलूस में सशस्त्र पुलिस, होमगार्ड, एन सी सी और सिविल डिफेन्स के स्वयंसेवकों ने भी भाग लिया। पुलिस अपना हथियार नीचे किये हुए चल रही थी। प्रार्थना सभा में ईसाई, सिख, इस्लाम, पारसी और हिन्दू धर्म की प्रार्थनाएँ की गयी। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के निदेशक डा० ब्रजेश्वर वर्मा ने सभा के प्रमुख वक्ता के रूप में और भूतपूर्व संसद-सदस्य तथा सर्वोदय कार्यकर्ता श्री शम्भुनाथ चतुर्वेदी ने अध्यक्ष पद से बापू के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। जिले के अन्य नगरों तथा ग्रामों में भी शान्ति-जुलूस निकाले गये।

आजमगढ़ ६ जनवरी के गोलीकांड के समय शान्ति का आह्वान करने के लिए परचे छपवाकर वितरित किये गये। दो ग्राम दान प्राप्त हुए। —भैरालाल गोस्वामी

देहरादून अलग-अलग संस्थाओं में सर्वोदय-पक्ष के कार्यक्रम आयोजित किये गये। ३० ता० को स्कूल-कालेज के छात्रों की एक शान्ति-सेना रैली हुई। —प्रेमलता बहुगुणा

टिहरी . कड़ाके की शीतलहरी होने पर भी कन्या विद्यालय की शान्ति-सैनिकाओं, छात्राओं और अध्यापिकाओं ने शान्ति बिल्लों के माध्यम से घर-घर जाकर शान्ति का सन्देश पहुँचाया। —भगवान दत्त

डीडीहाट, पिथौरागढ़ 'शांति-दिवस' पर जिले के सभी शांति-सैनिकों ने पिथौरागढ़ में एक देशी शराब की दुकान पर धरना दिया।

सुल्तानपुर अक्तूबर में ७ दिन के ग्रामदान-अभियान से ६२ ग्रामदान प्राप्त हुए। दिसम्बर में इलाहाबाद, वाराणसी और आजमगढ़ के सर्वोदय कार्यकर्ताओं का एक शिविर हुआ। —सीताराम सिंह

कौड़ीराम 'तहसील किसान शान्ति सम्मेलन' करने का निश्चय किया गया। हाईस्कूल के छात्रों ने किशोर शान्तिदल केन्द्र की स्थापना की। —गदाधर सिंह

मन्धना : प्रार्थना, गोष्ठी और 'गीता प्रवचन' का अध्ययन जारी है। दस चरखे चलने लगे हैं। —सतोषचन्द्र त्रिपाठी

जयन्ती : चरखे का प्रसार, शान्ति दिवस का आयोजन और लोक-सम्पर्क किया गया। —गोविन्दलाल शर्मा

बिहार

पटना : 'शान्ति दिवस' पर विनोबाजी के निवास-स्थान से एक विशाल जुलूस निकाला गया, जिसमें विभिन्न संस्थाओं और राज-नीतिक दलों ने भाग लिया।—नवलकिशोर सिंह

मुजफ्फरपुर . गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र के तत्वावधान में शान्ति दिवस मनाया गया। शहर में १४४ धारा के कारण जुलूस नहीं निकल सका। —डा० भोलानारायण शास्त्री

कुरसेला सर्वोदय आश्रम सर्वोदय-मेले में १२ फरवरी को आम सभा में, भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री विनोदानन्द झा ने ग्रामदान के महत्व पर प्रकाश डाला। —भगवान स्वामी

हकमा भूमिदान में दी गयी भूमि का पुनर्वितरण करके लोगों ने उत्साहपूर्वक सामूहिक खेती का श्रीगणेश किया। —भरत प्रसाद

पमौरा . मधुबनी अनुमण्डल के दो गांवों में अशान्ति और हिंसा भड़क उठने की सम्भावना का शान्ति-सैनिकों और पंचायत के प्रमुख लोगों ने सगठित रूप से निराकरण किया। —चतुर्भुज सिंह

पोआरी : जनसहयोग से खिचाई, दो पुलों का निर्माण एव मरम्मत की गयी। ग्रामदान अभियान चलाया गया। —नागेश्वर शर्मा

दिल्ली . दो सौ शान्ति-यात्रियों को लेकर एक शान्ति-यात्रा दिल्ली-नगरपति के निर्देशन में लाल किले से शुरू होकर राजघाट, शहीदों की समाधि पर समाप्त हुई। इस अवसर पर जयप्रकाशजी ने बताया कि स्कूल और कालेज के १४ से २२ वर्ष की आयु के छात्रों के लिए भारतीय तरुण शान्ति-सेना का आयोजन किया गया है। बिहार में तरुण शान्ति-सैनिक परती जमीन को आबाद करके उत्पादन में से स्कूल के बच्चों को मुफ्त भोजन देंगे। जयप्रकाशजी ने शान्ति-सेना का प्रतिज्ञापत्र पढ़ा, जिसको सभी ने दुहराया।

श्रीनगर, गांधी सेवा केन्द्र (कश्मीर) : भारी हिमपात के बावजूद शान्ति-दिवस पर नागरिकों ने उत्साह से कार्यक्रमों में भाग लिया। —ज. रा. साहनी

(शेष अगले अंक में)

—अ० भा० शान्ति सेना मंडल कार्यालय से

→थी। विज्ञान की प्राप्त शक्ति से एक ओर विश्व-कुटुम्ब का उज्ज्वल चित्र, और दूसरी ओर विश्व-संहार का भीषण चित्र, ये दो चित्र आज हम देख रहे हैं, इसका आभास बीज के रूप में मार्क्स के सामने था।

परात्मना से मानव की मुक्ति का भविष्य भी यह बीज-रूप में ही देख पाया था और मार्ग सुझाने का भी बीज रूप में ही प्रयत्न किया। क्रान्त-दर्शन एक बात है, गणित के हिसाब से भविष्य बताने की कुशलता बिलकुल दूसरी बात है। मार्क्स क्रान्तदर्शी था, भविष्यवक्ता नहीं। इसलिए 'परात्मना' के निरसन का उसका ध्येय, और समाज-परिवर्तन के काम में प्रत्यक्ष समाज को ध्यान में रखकर प्रयत्नशील होने का उसका मार्ग—दोनों बातों का विचार करके आधुनिक इतिहास में उसका मूल्यांकन करना चाहिए।

(अगले अंक में समाप्य)

भूदान यज्ञ ८-३-'६८ : रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए. ३४

आन्दोलन के समाचार

बिहारदान की दिशा में

● **धनबाद :** इस जिले में दुम्मी का प्रखंडदान हो चुका है। अब गोविन्दपुर और *निरसा इन दो प्रखंडों में काम करने के लिए* प्राप्ति उपसमिति और संयोजक नियुक्त किये गये हैं। तय हुआ कि पहले एक प्रखंड में काम करनेवाले सब कार्यकर्ता एक ही केन्द्र में रहें और टोलियाँ बनाकर जाते जायें। गाँव के मुखिया और शिक्षकों की सभाओं द्वारा सहयोग लिया जा रहा है। गोविन्दपुर प्रखंड में ३० ग्रामदान हो चुके हैं, कुल २२४ गाँव हैं, जिनमें ११ बेचिरागी हैं।

● **गया :** जिलादान-प्राप्ति समिति ने सघन रूप से कार्य आरम्भ कर दिया है। प्रखंडों में पंचायतों, कर्मचारियों तथा शिक्षकों की सभाएँ की जा रही हैं। प्रथम चरण में *बुदुम्बा प्रखंड को प्रखंडदान घोषणा के लिए* निश्चित किया है। श्री सिद्धराज ढड्ढा ने फरवरी २१ को मखदूमपुर अंचल और बोधगया के; २२ को बुदुम्बा और देव प्रखंड के, २३ को वाराचट्टी और मोहनपुर अंचल के *शिक्षकों की बैठकों में ग्रामदान का महत्व* समझाते हुए प्रखंडदान के लिए आवाहन किया। जिलादान समिति के संयोजक श्री दिवाकरजी ने जिले की योजना बताते हुए *सर्व-संग्रह-कार्य को करने की अपील की।* सबका सहयोग मिल रहा है।

गया जिले के अरवल गाँव की लगभग एक हजार एकड़ जमीन कृषि के अयोग्य थी। भूमि-मालिक द्वारा भूदान में जमीन देने के बाद किसानों ने परिश्रम द्वारा उसे उपजाऊ बनाया। बिहार भूदान यज्ञ कमिटी द्वारा वितरित भूमि में लहलहाती फसल के उपलक्ष्य में प्रतिवर्ष की तरह इस वर्ष भी २६ फरवरी को एक विशेष समारोह का आयोजन अरवल *गाँव में किया गया।*

● **राँची :** जिले के लेहरदगा एवं मंडरा प्रखंड के ग्रामपंचायतों के मुखिया, सरपंच, शिक्षक, सहयोगी संस्था के प्रतिनिधि एवं अन्य समाज-सेवियों की बैठक २२ फरवरी को लेहरदगा में हुई। बिहार ग्रामदान-प्राप्ति समिति के सचिव श्री रामनन्दन सिंह ने मार्गदर्शन किया। प्रखंडदान-समिति का गठन किया गया।

ग्रामदान-अभियान

● **दुर्ग, २३ फरवरी।** *जिला सर्वोदय-*मंडल के तत्वावधान में १५-१६ फरवरी को ग्रामदानी गाँव लाटाबोड में एक शिविर सम्पन्न हुआ। बाद में ३५ गाँवों में ५ दिन की पदयात्रा हुई। फलस्वरूप बालोद तहसील में तीन गाँवों का ग्रामदान हुआ। शिविर का मार्गदर्शन सर्वश्री नरेन्द्र दुबे और रामानन्द दुबे ने किया। ५ मार्च से *उन्हीं गाँवों में पुनः* यात्रा चलेगी।

● **फर्रुखाबाद, २२ फरवरी।** कन्नौज में २० फरवरी को हुई बैठक में तय किया गया कि फर्रुखाबाद तहसील में ६ अप्रैल से *१३ अप्रैल तक अभियान चलाया जाय, जिसमें* लगभग ३०० कार्यकर्ता भाग लेंगे। संचालन श्री रामजी भाई करेंगे।

● **अलीगढ़ :** अलीगढ़ जिले का प्रथम ग्रामदान अभियान खैर तहसील में फरवरी २२ से २६ तक चलाया गया। फलस्वरूप २३७ ग्रामदान हुए। अनेक ग्रामीणों ने *अपना ग्रामदान कराकर दूसरे गाँवों में जाकर* ग्रामदान कराया। समीपस्थ जिले के *ग्रामदानी क्षेत्रों से कई ग्रामीण आकर अभियान* में शामिल हुए।

सरगुजा में महिला-लोकयात्रा स्त्री-शक्ति जागरण के उद्देश्य से बारह वर्ष की भारत-यात्रा का संकल्प लेकर आरम्भ *महिला लोक-यात्रा का इंदौर जिले के* बाद दूसरा दौर २६ फरवरी महाशिवरात्रि पर्व से सरगुजा जिले में शुरू हुआ। यह यात्रा इस जिले में पूरे तीन माह चलेगी। लोक-यात्री दल में चार बहनें हैं। सरगुजा में लोक-यात्रा की पूर्वतैयारी एवं व्यवस्था वहाँ की सर्वोदय समिति कर रही है।

सर्वोदय-पक्ष : सूतांजलि

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के श्राद्ध-दिवस १२ फरवरी के दिन देश में विभिन्न स्थानों पर सर्वोदय-मेले आयोजित किये गये। इस अवसर पर जुलूस, सर्वधर्म-प्रार्थना, सामूहिक कताई, *ग्राम सभाएँ, पदयात्रा, साहित्य-प्रचार* आदि कार्यक्रमों के साथ मुख्यतः हाथकते सूत की गुंडियाँ श्रद्धांजलि के रूप में *समर्पित* की गयीं। आयोजनों का संक्षिप्त विवरण :

मध्य प्रदेश में : सरगुजा जिले के *मेंड्रा, देवगढ़ व मरमना ग्राम में* ३० जनवरी को सूतांजलि-समर्पण-समारोह हुए। राजघाट (बड़वानी) पर सर्वोदय-मेले में ४२१ सूत-गुंडियाँ समर्पित हुईं। सर्वोदय-पखवाड़े के निमित्त श्री काशिनाथ त्रिवेदी के नेतृत्व में १३ पड़ावों पर पदयात्रा हुई। ३०० शांति-बिल्लों की बिक्री हुई। *रतलाम तहसील में पदयात्रा हुई।* विसर्जन आश्रम, इन्दौर द्वारा श्री दादाभाई नाइक के नेतृत्व में सघन नगर-यात्रा की पूर्णाहुति हुई। १५१ गुंडियाँ सूतांजलि में समर्पित हुईं।

बिहार में : सारन जिले में मैरवा धाम के सर्वोदय-मेले में जिले के विभिन्न भागों से दो हजार गुंडियाँ सूतांजलि समर्पित हुईं।

उत्तर प्रदेश में : टिहरी नगर और उत्तर काशी में गांधी-चित्र प्रदर्शन और जिले के गाँवों में ग्रामदान-अभियान की सभाएँ हुईं। चम्बल घाटी क्षेत्र के बाह, पिनाहट, जैनपुरकलाँ, बड़पुरा तथा चकरनगर विकास खंडों में शांति-दिवस तथा सर्वोदय-पखवाड़ा मनाया गया। इस सिलसिले में पदयात्रा-टोलियों ने लोकसम्पर्क किया तथा ६५० शान्ति-बिल्ले और ७५ रुपये के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री की। बाद में श्रद्धांजलि-स्वरूप *आयोजित सूतांजलि-समर्पण कार्यक्रम* में १२३ गुंडियाँ एकत्र हुईं।

राजस्थान में : सैराड ग्रामोदय संघ, सावर की ओर से बेरड़ी ब्लाक में पदयात्रा का आयोजन किया गया था। सर्वोदय आश्रम, चंदेरिया में ५१ गुंडियाँ सूतांजलि समर्पित हुईं। ●

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, सर्व-सेवा-संघ द्वारा प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित। पता : राजघाट, वाराणसी-१

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

१५ मार्च '६८ अंक : २५

इस अंक में

वार्षिक शुल्क १० रु०

एक प्रति २० पैसे

विदेशों में साधारण डाक शुल्क—

१८ रु० या १ पौण्ड या ३॥ डालर

(हवाई डाक शुल्क : देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

फोन नं० ४२८५

धूलिवंदन : समता का इजहार

होली के त्योहार में अस्त्र-वंदन, उपकरण-वंदन या लक्ष्मी-वंदन की जगह धूलिवंदन का महत्त्व है। शस्त्र और लक्ष्मी के कारण मनुष्य को जो कृत्रिम प्रतिष्ठा मिलती है, तलवार और तिजोरी की बदौलत समाज में उसे जो इज्जत मिलती है, उसे भुलाकर मनुष्य को धूलि के समान नम्र होना है। अपनी कारीगरी, कला-कौशल और उद्योग धंधे के सारे अभिमान को ताक पर रखकर उसे छोटे-से-छोटे और हीन से-हीन मनुष्य के साथ घुलमिलकर आमोद प्रमोद करना है। एक दिन सारे भेदों को भुलाकर निम्नतम श्रेणी के मनुष्य के साथ घड़ी भर मौज करनी है। अपने-अपने सिंहासनों, तख्तों, मचलों और तख्तपोशों से उतरकर हीन-दीन मानव के साथ बराबरी के नाते धूल में आकर बैठना है। दूसरे सारे त्योहारों में अछूत जातियों को शामिल नहीं किया जाता था। वे तो समाज के कँटीले तारों से बाहर ही रह जाते थे। उनके साथ मिलने-जुलने या बैठने-उठने का कोई सवाल ही नहीं था। धूलिवंदन का दिन अछूतों के साथ, मैला साफ करनेवालों के साथ, गंदा रोजगार करनेवालों के साथ मिलने-जुलने का दिन था, इसलिए उस दिन गधा भी सवारी के लायक समझा गया।

आमोद प्रमोद और मनोविनोद के जो साधन ऊपर की श्रेणी के लोगों को मयस्सर होते हैं, वे नीचेवालों को नसीब नहीं होते। वे तो धूल और कीचड़ में ही काम करते हैं। मोरियाँ और नालियाँ, पेशाबघर और पाखाने उनके कार्यालय और कार्यक्षेत्र हैं। उन्हें गुलाल और रंग कहाँ से नसीब हो? जो लोग खुशहाल हैं वे गरीबों को ये सारी चीजें एक दिन के लिए मुहैया करा दें, तो भी ऊपरवालों को अपना-अपना आसन छोड़कर नीचेवालों की जगह तक आने की जरूरत नहीं होगी। इसलिए नीचेवालों की सतह पर आकर उन्हीं के साधनों से होली खेलना मुनासिब समझा गया और धूलि-वंदन ही होली का उपलक्षण माना गया। उपलक्षण से मतलब है, किसी प्रथा या व्यवहार के इरादे को समझानेवाली कोई निशानी। धूलिवंदन होली के मतलब को समझानेवाला चिह्न या उपलक्षण है। होली का मतलब यह है कि मनुष्य अपने सारे सामाजिक भेद भावों को भुलाकर समान भूमिका पर बराबरी के नाते एक-दूसरे के साथ हँसी मजाक करें, खेलें-कूदें खुशियाँ मनायें।

होली के त्योहार का इरादा समाज के सभी फिरकों को एक-दूसरे से मिलाने का था। अछूत जातियाँ समाज-बाह्य थीं। सवर्ण जातियों के दायरे से उन्हें बाहर रखा जाता था। ब्राह्मण का भंगी के साथ कभी कोई अप्रत्यक्ष भी सम्पर्क नहीं आता था। यहाँ तक कि ब्राह्मण भंगी का शब्द भी सुनना अपनी मर्यादा के प्रतिकूल समझता था। ऐसे ब्राह्मण भंगी के साथ स्पर्श और सम्पर्क जिस अवसर पर हो सकता था, उसे धूलिवंदन का उत्सव कहा गया।

धूलिवंदन का मतलब यह है कि इन्सान अपने सारे भेदों को भूलकर दूसरे इन्सानों के साथ मिलें।

— दादा धर्माधिकारी

शेख साहब की रिहाई पर

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का निवेदन

देश :

३ मार्च : पानीपत में अ. भा. खादी और ग्रामोद्योग कार्यकर्ता सम्मेलन में राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन ने कहा कि समस्याओं के समाधान के लिए गांधीजी का तरीका अपनाया जाना चाहिए।

४ मार्च : लोकसभा में माँग की गयी कि कच्छ-फैसले को लागू करने के लिए संसद की स्वीकृति लेना जरूरी है।

५ मार्च : रेलमंत्री श्री पुनाचा ने लोकसभा में घोषणा की कि रेलवे यात्रिका-शुल्क में प्रति रात्रि चार रुपये की वृद्धि को घटाया जायगा।

६ मार्च : ब्रिटेन द्वारा केन्या के भारत-वंशियों के ब्रिटेन जाने पर रोक लगाने के कारण भारत ने जवाबी कार्रवाई की।

७ मार्च : पंजाब विधान सभा के अध्यक्ष द्वारा विधान सभा की बैठक दो मास के लिए स्थगित हुई।

८ मार्च : हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक तथा सूर स्मारक मंडल के अध्यक्ष डा. हरिशंकर शर्मा का देहान्त हो गया।

९ मार्च : हिन्दी गगन के एक और नक्षत्र विख्यात हास्य लेखक श्री कृष्णदेव प्रसाद गौड़ 'बेढब बनारसी' का प्रातः देहावसान हो गया।

विदेश :

३ मार्च : रूस ने अपना चौथा स्वयंचालित अन्तरिक्ष-केन्द्र जोनड-४ अन्तरिक्ष में छोड़ा।

४ मार्च : कम्युनिस्टों ने दक्षिण वियतनाम के विभिन्न स्थानों में तीन अमरीकी हवाई अड्डों तथा छह अन्य संस्थानों पर राकेटों, मार्टरों और रिकायललेस राइफलों से भीषण आक्रमण किया।

५ मार्च : पाकिस्तान के भूतपूर्व प्रधान मंत्री चौधरी मुहम्मद अली ने कहा कि श्री जिन्ना का आन्दोलन विदेशी शासन के विरुद्ध था जब कि मेरी पार्टी का व्यक्ति की तानाशाही के खिलाफ है।

६ मार्च : इसरायली और जोर्डनी सैनिकों के बीच जोर्डन नदी के आर-पार गोलियाँ चलीं।

७ मार्च : सीरिया ने अरब देशों से वार्ता करने से इनकार कर दिया।

८ मार्च : अमरीकी बमवर्षकों ने उत्तर वियतनामी कम्पनी पर राकेटों और तोपों से हमला किया।

९ मार्च : लंका के प्रधान मंत्री श्री सेनानायक ने कच्चातिवु द्वीप पर दावे के सम्बन्ध में कहा कि वह ऐतिहासिक दस्तावेजों पर आधारित है।

शेख साहब की रिहाई, यद्यपि काफी विलम्ब से हुई, तथापि वह एक न्यायोचित और सद्भावपूर्ण कार्य था। इससे आशा बँधी थी कि देश में सद्भावना का वातावरण बनेगा और कश्मीर की समस्या का हल खोजने की दिशा में आगे बातचीत करने का अवसर मिलेगा। परन्तु खेद की बात है कि इसके बाद वैसे ही दूसरे सद्भावनापूर्ण कदम नहीं उठाये गये। सरकार ने कड़ा रुख अपनाया। यद्यपि यह बताया गया था कि प्रधानमंत्री ने पत्रकारों से हुई पहली भेंट में कहा था कि भारत में कश्मीर के विलयन के चौखटे के भीतर हर सम्भव वैधानिक हल खोजा जायगा। लेकिन पीछे वह दृष्टिकोण भी छोड़ दिया गया है और नये प्रयास की सम्भावनाएँ समाप्त-सी हो गयी हैं—जैसा हाल में लोकसभा में दिये गये गृहमंत्री के कथन से स्पष्ट होता है।

इससे शेख साहब की स्थिति अस्पृहणीय हो जाती है। जब से वे जेल से छूटे हैं, वे अपने अनेक भाषणों में देश की अन्यान्य बड़ी समस्याओं के प्रति—जिनमें कश्मीर-समस्या भी एक है, बराबर अपनी सजगता व्यक्त करते आये हैं। निश्चित ही उनको इस बात का भी ध्यान है कि गुत्थी को सुलझाने में काफी समय लगनेवाला है और इसके लिए वे काफी लम्बे समय से धीरज के साथ प्रयत्न करते आये हैं और इसके लिए उनकी तैयारी है। लेकिन इस प्रकार बातचीत का दरवाजा एकदम बन्द कर देने का अर्थ उनके विवेक और धीरज की परीक्षा है।

शेख अब्दुल्ला हाल में कश्मीर जानेवाले हैं और वहाँ उत्सुक जनता जिज्ञासा भरी आँखों से उनकी ओर देखेगी। तब वे उन्हें क्या देंगे? भारत-सरकार के हाल के रवैये से आशा की कोई किरण शेष नहीं रह गयी है। तब भी शेख साहब उस जनता को धीरज और विवेक तो दे ही सकते हैं, जिसका पालन वे स्वयं अब तक करते आये हैं। कहीं ऐसा न हो कि सरकार के कड़े रुख के कारण किसी व्यक्ति या समूह की वाणी या कृति उग्र हो जाय, जिससे सुलझने और पिघलने की गुंजाइश ही खतम हो जाय! मेरठ तथा उत्तर प्रदेश सरकार के कुछ विरोध-प्रदर्शन के बावजूद देश की जनता ने शेख साहब के प्रति तथा उस जन-समूह के प्रति जिसका प्रतिनिधित्व शेख कर रहे हैं, अत्यन्त सद्भावना व्यक्त की है। उस सद्भावना का अप्रत्यक्ष, फिर भी शक्तिशाली प्रभाव प्रस्तुत परिस्थिति पर पड़ना चाहिए और उस सद्भाव को सुदृढ़ करने और प्रसार के उपाय सोचे जाने चाहिए। यह तभी सम्भव है जब कि पटना में शेख ने जो नेतृत्व दिया था, उसी दिशा में उनका चिन्तन चले और वे जनमत को मोड़ें।

हम भारत सरकार से भी निवेदन करते हैं कि वह अपने कड़े रुख के कारण सम्भावित खतरों पर भी गौर करे। इस रुख का परिणाम यह हो सकता है कि कश्मीर में रहनेवाले उग्रवादी लोगों को पहल का मौका मिल जाय और जिसमें वे सारी सद्भावना और धैर्य व्यर्थ हो जाय, जिसका प्रतिनिधित्व शेख साहब करते हैं। हमें आशा है कि भारत सरकार अपना रुख बदलेगी और वहीं से सूत्र को आरम्भ करेगी जहाँ स्व० श्री जवाहरलाल नेहरू और शास्त्रीजी ने छोड़ा था।

—मनमोहन चौधरी

होली का पर्व : प्रतिकार-शक्ति का प्रतीक

जनशक्ति के दो पहलू हैं—सहकार-शक्ति और प्रतिकार-शक्ति। भलाई से सहकार और बुराई से प्रतिकार, इन दोनों से मानव वास्तविक मानव बनता है।

हिरण्यकशिपु को घोर तपस्या के फलस्वरूप भगवान से वरदान मिला कि उसे न कोई मनुष्य मार सकेगा और न कोई जानवर; उसे न शस्त्र से मारा जा सकेगा और न अस्त्र से; उसे न दिन में कोई मार सकेगा, न रात्रि में; उसे कोई न धरती पर मार पायगा और न आकाश में। असंभव मृत्यु जैसे ऐसे भारी वरदान-प्राप्ति के पश्चात् हिरण्यकशिपु ने घोषणा की कि उसके स्वयं के अलावा कोई दूसरा भगवान नहीं है। उसका पुत्र प्रह्लाद भगवद्भक्त था। हिरण्यकशिपु के मना करने पर भी प्रह्लाद ने राम-रटन नहीं छोड़ी। फलस्वरूप उसने प्रह्लाद को नदी में बहाया, पर्वत से गिराया और भाँति-भाँति की यातनाओं से सताया। अंत में प्रह्लाद को आग से तप्त लाल सुर्ख स्तंभ के आलिंगन की आज्ञा दी और गर्व से चूर होकर हिरण्यकशिपु चिल्लाया, "बोल! अब तेरा राम कहाँ है? बुला तेरे भगवान को!" स्तंभ फटा और नृसिंहावतार के रूप में भगवान प्रकट हुए। नृसिंहावतार (न मानव, न जानवर) ने अपने घुटने पर (न धरती, न आकाश) हिरण्यकशिपु को रखा और सध्या समय (न दिन, न रात) अपने नाखूनों से (न शस्त्र, न अस्त्र) से चीर डाला और उसकी इहलीला समाप्त की। हो सकता है, इसे कोई घटित घटना न भी माने, परन्तु अत्याचार के विरुद्ध सत्याग्रह—संघर्ष-प्रतिकार-शक्ति—की एक कथा अवश्य है। कहीं भी हिरण्यकशिपु का चित्र देखेंगे तो एक राक्षस रूप में उसे चित्रित किया पायेंगे, परन्तु राक्षस के बेटे प्रह्लाद को आज तक न किसीने राक्षस माना और न किसी चित्र में उसे राक्षस-रूप में चित्रित किया गया। स्पष्ट है कि अत्याचार अर्थात् राक्षस-वृत्ति के विरुद्ध प्रतिकार का यह एक उदाहरण है। इसी घटना की स्मृति में होली का त्योहार मनाया जाता है ऐसी एक लोकमान्यता है।

गांधीजी ने कहा था कि अधिकार के दुरुपयोग के विरुद्ध जनता की प्रतिकार की शक्ति लोकतंत्र की कसौटी है, परन्तु हमारे लोकतंत्र में लोक की वही शक्ति समाप्त हो रही है; क्योंकि आज 'लोक' को आये दिन केवल स्वागत व चापलूसी करने का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। 'लोक' नेता के मुँह की ओर एक भिखारी की भाँति ताकता रहता है। भारत का नागरिक अपने स्वत्व व सम्मान की रक्षा करने की शक्ति खो रहा है। अगर इसी क्रम से 'जनता' कमजोर व 'नेता' शक्तिशाली हिरण्यकशिपु बनता रहा तो जनता में से प्रह्लाद की सत्याग्रह-शक्ति नेस्तनाबूद हो जायगी।

हिरण्यकशिपु ने समझा था कि उसे असम्भव मृत्यु का वरदान मिल गया, परन्तु कर्मयोगी प्रह्लाद की प्रतिकार-शक्ति से असम्भव लगती मृत्यु भी सम्भव हो गयी। होली के इस पुनीत अवसर पर हमें प्रह्लाद की शक्ति प्राप्त हो। —फूलचन्द बाफणा

नयो कन्हैया प्रगट भयो!

वृन्दावन की गली न भायो,
दिल्ली पहुँच गयो!
तजि करील कुञ्जन के डगरो,
रस्तो सदन लियो!
मुनि धुन नयो फिल्मि गीतों को,
मुरली पटक दियो!
स्याम सलोनो देह न भायो,
वाको झटक दियो!
ग्वारिन भटक रही जंगल माँ,
ताको सुधि न कियो!
लगे 'आउट आव डेट' यशोदा,
वाको भूलि गयो!
कृष्ण नहीं कुर्सी वहावर्गं,
'रेडियो टाक' दियो!
चहुँदिस से नेतागण धाये,
गोपिन 'भेष' कियो!
बीस बरस से ऊपर बीतो,
बहु बिध नाच कियो!
अजहुँ न मुख दिखलाय बेदरदी,
राधा 'केस' कियो!
—राही

समाज-परिवर्तन की भूमिका और मार्क्स का दृष्टिकोण

समाज-क्रान्ति के अनुभव

मार्क्स द्वारा प्रतिपादित ध्येय और मार्ग का उपर्युक्त विवेचन ध्यान में रखकर हम अब रूस और चीन में हुए समाज-परिवर्तन की संक्षेप में चर्चा करें। रूस और चीन की क्रान्ति जिस परिस्थिति में हुई वह विलक्षण थी : शहरी श्रमिक अल्पसंख्यक थे, एक प्राचीन सुदृढ़ सत्ता थी, परंपरागत ग्रामीण जीवन और संस्कृति विराजमान थी, समाज-परिवर्तन के लिए देश के तथा देश के बाहर के भी अंतर्राष्ट्रीय पूँजीवादी सत्ताधारियों का हिंस्र विरोध था। इस क्रान्ति की पार्श्वभूमि में दो-दो महायुद्धों के अनुभव थे। रूस की क्रान्ति को पचास वर्ष हुए हैं और चीनी क्रान्ति को १७ वर्ष पूरे होने को हैं। यह भी हम देख रहे हैं कि क्रान्ति के बाद दोनों देशों के सत्ताधारियों में परस्पर भयानक प्रतिस्पर्धा होती रही है। और दोनों में से किसी भी राष्ट्र के नागरिक को व्यक्तिगत स्वतंत्रता मिली नहीं है।

पूर्वी यूरोप, क्यूबा आदि प्रदेशों की भी स्थिति रूस-चीन के ही समान है। इसलिए समकालीन मानव को कम्युनिस्ट समाज-क्रान्ति का चित्र हिंसामय और आतंकपूर्ण दीखता है, तो आश्चर्य नहीं है। तिसपर रूस और चीन का आपसी संघर्ष, तथा भारत पर चीन का आक्रमण देखकर उसका और अधिक हिंसक रूप स्पष्ट होता है, यह भी स्वाभाविक ही है। इसमें रही-सही कसर पूरी करने को भारतीय राजनीति में कम्युनिस्ट पक्ष का व्यवहार पर्याप्त है। नक्सलबाड़ी में जो घटनाएँ घटीं, वही सारे साम्यवादी तत्त्वज्ञान की परिणति है, ऐसा यदि सुशिक्षित लोगों को लगे, तो कोई आश्चर्य नहीं है।

जहाँ तक मार्क्स के ध्येय और मार्ग का प्रश्न है, उनका विवेचन ऊपर हमने देखा है, उतनी बात ध्यान में रखकर, आज हम यह कह सकते हैं कि जिन देशों में साम्यवादी क्रान्ति हुई है वे देश, वहाँ के नेता और लोग पारस्परिक प्रतिस्पर्धा-युक्त विश्व के गुण-दोषों से अभी तक अभी मुक्त नहीं हुए हैं। सत्ता की स्पर्धा में केनेडी की अमानुष हत्या की गयी। इसका कारण यही है कि सत्ता के सम्बन्ध में मनुष्य के अन्दर अभी अमानुषता है। यह दुर्गुण जिस प्रकार अन्य देशों में है, उसी प्रकार साम्यवादी देशों में भी है और कम्युनिस्ट-संगठन में भी है। इस दुर्गुण का अत्यंत निर्घृण और भयानक स्वरूप वहाँ देखने को मिलेगा, क्योंकि क्रान्ति के आतंक और प्रक्रिया के कारण वहाँ की प्रतिस्पर्धा अधिक तीक्ष्ण है।

यहाँ हमें स्मरण रखना चाहिए कि स्पर्धा और हिंसा का वातावरण सदियों से मनुष्य को, उसके पुरुषार्थ को कुण्ठित कर रहा है। इसमें स्पर्धा और हिंसा का समर्थन

प्रा० दि० के० बेडेकर

करने की, या साम्यवादी देशों की घटनाओं की भयानकता को सौम्य बनाकर दिखाने की बात नहीं है। केवल यही सूचित करता है कि जागतिक पार्श्वभूमि को नजरअंदाज करके जागतिक हिंसा-प्रधान संस्कृति का भान भूलकर साम्यवादी हिंसा को अलग करके देखना गलत है। मार्क्स की दृष्टि में, मनुष्य ने जब 'परात्मता' स्वीकार की, तभी हिंसा

> रूस और चीन का समाज-परिवर्तन···साम्यवादी देशों में प्रतिस्पर्धा···परात्मता के साथ हिंसा···सत्ताधारी वर्ग हिंसक और लुटेरा···मार्क्स द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त···

स्वीकार की। मनुष्य को एक-दूसरे से सहयोग करने की, प्रेम करने की इच्छा होती है। परन्तु मनुष्य अपना यह स्वभाव ही भूल गया। संपत्ति और सत्ता के पीछे लग गया। इस परात्मता का निराकरण शीघ्र होनेवाला नहीं है और सोवियत पद्धति में हुआ नहीं है। स्टालिन ने बड़े गर्व के साथ कहा था कि 'हम नयी रचना के मानव हैं।' लेकिन सत्य यह था कि खुद उसकी रचना में ही, पुराने दोष अत्यधिक मात्रा में थे।

लेकिन इसका अर्थ क्या है ? क्या समाज-परिवर्तन भ्रम ही है ? समाज की घड़ी की सूई चाहे जब बदल लीजिये, लेकिन आप देखेंगे कि एक सत्ताधारी वर्ग रहेगा जो महाहिंसक और लुटेरा होगा, और उनकी छैनी से चीरे हुए, मुर्दा मन लिये जीनेवाले लोग रहेंगे। मानो यह कोई अटल अभिशाप-वचन हो, जो सनातन काल से मनुष्य-जीवन से चिपका हुआ है। सम्पत्ति का स्वामित्व सार्वजनिक बना देने पर भी सत्ता के केन्द्र को हाथ में रखनेवाला नया शासकवर्ग आता है। इसमें कुछ तो अटल है और परिवर्तन की यह शोकान्तिका अटल है! ये सारे विचार हमारे मन में सहज ही उठते हैं। अनुभवी, ध्येयनिष्ठ समाजवादी और मार्क्सवादी भी इन विचारों से परेशान हैं।

यहाँ मार्क्स के ध्येय का मर्म एक बार और जाँच लें। हम आज भी देख रहे हैं कि पूँजीवादी व्यवस्था में जो संपत्ति का लोभ नंगा नाच करने लगा था, और जो हिंसा महायुद्ध में मानव-जीवन की बलि देने पर तुली थी, वह आज भी उसी रूप में हम देखते हैं। लेकिन जब पूँजीवाद नहीं था, तब क्या यह लोभ और यह हिंसा नहीं थी ? क्या ये ही प्रेरणाएँ समाज को चालना नहीं देती रही हैं ? तब फिर ऐसा क्यों न मानें कि ये प्रेरणाएँ ही मानव-स्वभाव का आधार हैं ? फिर 'परात्मता' का सवाल ही कहाँ रहा ? उलटे, यह मानने को जी करता है कि चूँकि ये प्रेरणाएँ ही मूलभूत हैं, इसलिए वर्तमान मानवीय संस्कृति ही मानवता के आदर्श चित्र हैं। परन्तु मार्क्स ऐसा नहीं मानता है। वह संपत्ति, सत्ता, स्पर्धा और

वियतनाम का युद्ध और ग्रामदान का विकल्प

मित्रो,

मैं समझता हूँ कि आप लोगों ने वियतनाम के भयंकर युद्ध के बारे में सुना ही होगा, जो गत १४ वर्षों से चल रहा है। वियतनाम एक छोटा-सा राष्ट्र है; यहाँ की आबादी लगभग तीन करोड़ की है। पहले वियतनाम पर, और उसके साथ लाओस और कंबोडिया पर फ्रेंच लोगों की हुकूमत थी। लाओस और कम्बोडिया वियतनाम से ही लगे हुए दो छोटे राष्ट्र हैं। इन तीनों को मिलाकर 'फ्रेंच इण्डोचायना' कहा जाता था। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद, भारत जब स्वतंत्र हुआ, उन्हीं दिनों हिन्द-चीन के लोगों ने अपनी आजादी के लिए फ्रेंच लोगों से संघर्ष किया। उनके उस स्वतंत्रता-संग्राम के सर्वोच्च नेता डा० हो ची मिन्ह थे। वे साम्यवादी हैं और उस स्वतंत्रता के आन्दोलन में साम्यवादी पक्ष ने प्रमुख हिस्सा लिया था। इन विद्रोहियों का दमन करने के लिए फ्रेंच सरकार को अमरीका ने बहुत मदद दी थी। साम्यवादी शक्ति कहीं जीत न जाय, इस भय से अमरीका ने सैनिक सहायता भी दी थी। लेकिन ये सारी सहायताएँ बेकार हो गयीं और सन् १९५४ में हिन्द-चीन की जनता ने सनसनी पैदा करनेवाली विजय प्राप्त की।

जिनीवा में बड़े राष्ट्रों का एक सम्मेलन हुआ, जिसमें लाओस, कम्बोडिया और वियतनाम की स्वतन्त्रता को मान्यता दी गयी। लेकिन उस समय वियतनाम दो टुकड़ों में बँटा हुआ था। उत्तर वियतनाम में डा० हो ची मिन्ह के नेतृत्व में 'लोकतान्त्रिक संघ-राज्य' स्थापित हुआ था और दक्षिण पर राजकुमार बाओ दाई का शासन चलता था, जिनको फ्रान्स सरकार का समर्थन मिला था। दोनों के बीच युद्ध-विराम की स्थिति बनाये रखने के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रण-आयोग (इण्टरनेशनल कण्ट्रोल कमिशन) नियुक्त हुआ था। यह भी तय हुआ था कि दो वर्ष बाद, जुलाई १९५६ में एक आम चुनाव हो, जिसमें उत्तर-दक्षिण दोनों भागों के एकीकरण के सम्बन्ध में निर्णय किया जाय।

दक्षिण वियतनाम की पहली सरकार में जो लोग थे, वे सब साम्यवाद के विरोधी थे, अपने को लोकतंत्र और स्वतंत्रता के हिमायती कहते थे, लेकिन वास्तव में वे अत्यंत निम्न कोटि के तानाशाह थे। वे साम्यवाद का विरोध केवल इसलिए करते थे कि बड़े लोगों को फ्रेंच हुकूमत के समय जो सुख-सुविधाएँ और मान-सम्मान मिलते थे, वे वैसे के वैसे बने रह सकें। उनमें कई तो ऐसे भी थे, जिन्होंने अपने ही देशवासियों के खिलाफ फ्रान्स के लोगों का समर्थन किया था।

अमरीकी सरकार ने दक्षिण वियतनाम में इन लोगों का समर्थन किया, इन्हें ही प्रोत्साहन दिया। उसे भय था कि यदि आम-चुनाव होते हैं, तो डा० हो ची मिन्ह के पक्ष के

→स्पर्धा मिटी, यही नहीं, बल्कि वहाँ के साधारण मनुष्य में भी विज्ञान-निष्ठा भरी हुई है ऐसा दीखता है। यह भविष्य की प्रगति का सूचक है।

एक और बात है, वह है समाजवादी देश के सामान्य मनुष्य का मानव-बन्धुत्व सम्बन्धी भान। यह सही है कि गोरे लोगों की उत्कृष्टता, बड़प्पन की भावना और उन्माद आज समूचे संसार में ही घटा है। नार्डिक वंश के अभिमान के आधार पर नाज़ी पक्ष खड़ा करनेवाला हिटलर जिस दिन खत्म हुआ, उसी दिन वंशभेद के अभियान का आधार खिसक गया। फिर भी अन्य देशों में वंशभेद का अभिमान आज भी है। भारत में जाति-भेद का अभिमान जिस प्रकार गहरा जमा हुआ है, उसी प्रकार यह वंशाभिमान भी है। यह अभिमान सोवियत रूस में नहीं है। वहाँ सभी वंश के लोग परस्पर बहुत सहजता से और समानता से व्यवहार करते पाये जाते हैं। यह सभी प्रेक्षक देखते हैं। जार के जमाने में यहूदियों से अत्यन्त क्रूरता के साथ बरताव किया जाता था और उसी द्वेष का कुछ अवशेष स्टालिन के जमाने में देखने को मिला। लेकिन इस अपवाद को छोड़ दें, तो वहाँ आज वंश, वर्ण आदि भेद-भाव रहा नहीं है।

मार्क्स का ध्येय कि सारी मानवजाति परस्पर प्रेम से रहने लगेगी, संपत्ति और सत्ता के असानुष पाश से अपने को मुक्त कर नया इतिहास रचेगी, वह आज प्रत्यक्ष कार्यान्वित नहीं हुआ है, न थोड़े समय में होता दीखता है। मनुष्यों को ही वह करना है। हो सकता है कि इसमें मानव सफल हो, या विफल भी हो। परन्तु आज प्रत्यक्ष इतना तो दिखाई दे रहा है कि समाजवादी परिवर्तनवाले देशों में संपत्ति की प्रतिस्पर्धा और वंश-भेद जैसी द्वेष-भावना नष्ट हो गयी है। केवल एक सत्ता की स्पर्धा नृशंसता के साथ चल रही है। उन देशों के नेताओं का व्यवहार इस प्रकार का होता है कि मानो उन्हें मार्क्स का ध्येय याद ही न हो! इसलिए समाजवादी परिवर्तन की ओर देखते समय हमें यह देखना चाहिए कि जो परिवर्तन हुआ है वह क्या वास्तविक है, मूलभूत है, मार्क्स के ध्येय की ओर ले जानेवाला है? साथ ही सत्ता की स्पर्धा में और राजनीति में रूसी या चीनी नेता कहीं भूल कर रहे हों, तो उसके बारे में स्पष्ट बोलना चाहिए। आज यह नहीं होता है। समाजवादी देशों की ओर देखते समय केवल नेताओं को ही देखा जाता है और उनके काम की निन्दा या गौरव किया जाता है। वास्तव में जो परिवर्तन हुआ होगा वह परा रह जाता है और मार्क्स के ध्येय का विचार भी दूर ही रह जाता है।

क्या हम वास्तव में मानवजाति के मूल ध्येय का और भविष्य का विचार करते हैं? हम तो अपना, अपने समूह का, प्रदेश और राष्ट्र का ही विचार करते हैं। यह ठीक ही है, परन्तु मानवजाति का विचार करना भी आवश्यक है, उचित है। उसीमें व्यक्ति भी अपना स्वरूप समझ सकेगा। मार्क्स के ध्येय में समझ को ही सर्वाधिक महत्व है।

[मूल मराठी 'समाज प्रबोधन पत्रिका' से साभार।]

किसी प्रकार भिन्न नहीं होते, केवल फर्क इतना ही है कि वे यथास्थिति को उखाड़ने के लिए वैसा करते हैं तो ये उसे बनाये रखने के लिए करते हैं।

इस खतरनाक परिस्थिति को रोकने का एक ही मार्ग हो सकता है कि सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति का कोई अहिंसक तरीका व्यापक प्रमाण में अपनाया जाय, जो अन्य सभी तरीकों को निरर्थक करार दे सके। ऐसा एक मार्ग ग्रामदान है; लेकिन राजनीति पर उसका असर तभी पड़ सकता है, जब कम-से-कम पूरे एक प्रदेश में सफलतापूर्वक वह चले। इस पृष्ठभूमि में, बिहार के कार्यकर्ताओं ने आगामी २ अक्तूबर तक बिहारदान का जो संकल्प किया है, वह निश्चित ही बड़ा ऐतिहासिक महत्व रखता है। सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध-समिति ने उस संकल्प का स्वागत किया है और देश के समस्त सर्वोदय-कार्यकर्ताओं से बिहार के काम के लिए समय देने की प्रार्थना की, यह सर्वथा उचित ही था। आज देश जिस अमर्याद हिंसा से आक्रान्त है, उसे रोकने का काम यह बिहारदान कर सकता है। इसलिए हम सबका यह कर्तव्य है कि ठीक समय से संकल्प की पूर्ति की दिशा में प्रयत्न करें।

लेकिन हाँ, बिहारदान का अर्थ जहाँ तक ग्रामवासियों की अधिकांश संख्या का ग्रामदान-घोषणापत्र पर हस्ताक्षर प्राप्त करना ही है, यह एक प्राथमिक कदम है, तथापि बहुत बड़ा काम है। वास्तव में अहिंसक शक्ति संगठित हो और हिंसक शक्तियों का ठीक से मुकाबिला किया जा सके, इसके लिए तो और भी कई कदम उठाने होंगे। करोड़ों लोगों में यह चेतना जगानी होगी कि अपना भाग्य-निर्णय करने की शक्ति खुद उनमें है, और उनकी उस शक्ति को कार्यान्वित कराना होगा। उनमें से लाखों लोगों को शान्ति-सेना में भर्ती करना होगा और अहिंसक सिपाही के रूप में काम करने का प्रशिक्षण देना होगा। नयी युवक पीढ़ी की क्रान्तिकारी भावना और जोश को देश की इस क्रान्ति के काम के योग्य मोड़ देना होगा।

ग्रामदान-आन्दोलन को यदि हिंसक क्रांति का इलाज और विकल्प बनना है, और अन्तत वियतनाम की घटनाओं पर प्रभाव डालने की शक्ति प्राप्त करनी है, तो हमें उतने ही उमंग और उत्साह से काम करना होगा, जिस उमंग और उत्साह से वियतनाम की विद्रोही जनता लड़ रही है। हमें अपने अन्दर अधिक प्रतिभा, समर्पण, समझदारी, दक्षता और संगठन-शक्ति का परिचय देना होगा।

फिर, हम केवल बिहार-दान की कल्पना तक ही सीमित न रह जायँ। उसके आगे, अपने मन में अपनी शक्ति के एक ऐसे प्रचण्ड तूफान की कल्पना रखें। जो समूचे देश में फैल जाय। सर्वोदय-आन्दोलन के अब तक के इतिहास में गत दो-ढाई वर्षों का समय बड़ा उज्ज्वल रहा है। इस अवधि में ग्रामदान-आन्दोलन ने ऐसी ऊँची उड़ान भरी है और महान् संभावनाएँ प्रस्तुत की हैं, जिनकी हम कल्पना नहीं कर सकते थे।

पिछले दो महीनों में यह स्पष्ट हो गया है कि यदि हम सही दृष्टि और संकल्प-बल लेकर चलते हैं तो काम में बहुत बड़ी सफलता प्राप्त की जा सकती है। अकेले बिहार में नहीं, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और तमिलनाड में भी सैकड़ों कार्यकर्ता निकल पड़े हैं, उन्हें अपनी शक्ति का भान हो गया है और इनमें से कुछ प्रदेशों का गांधी-जन्म-शताब्दी तक प्रदेश-दान करा देने की भाषा वे बोलने लगे हैं। उड़ीसा में केवल दो महीने की अल्प अवधि में ग्रामदानी गाँव के लोगों के प्रशिक्षण के लिए १०४ त्रिदिवसीय शिविर आयोजित हुए और लगभग ६ हजार शांति-सैनिक और शांति-सेवक बनाये गये हैं। इन सबसे यही प्रमाणित होता है कि 'जहाँ चाह, वहाँ राह।' तो, हम इस पर बड़े पैमाने पर विचार करें, योजना बनायें और काम करें।

इस आन्दोलन की प्रेरक शक्ति विनोबाजी रहे हैं। महान् से महान् उपलब्धियों की दिशा में वे हमें धीरे-धीरे प्रेरित करते आये हैं। अब समय आया है कि आन्दोलन स्वयं अपने बल पर आगे बढ़ चले। हिम्मत के साथ अब भारतदान की ओर और भी महान् कार्यों की कल्पना संजोनी चाहिए। हममें वह दृष्टि और वह हिम्मत आये, तो भविष्य हमारे हाथ में है।

आपका
मनमोहन चौधरी

ग्रामदान : रक्त-संचार के लिए

पूसा रोड स्थित लक्ष्मीनारायणपुरी की एक छोटी-सी कोठरी में बैठकर सब समस्याओं से निलिप्त, परन्तु सारे विश्व के सम्बन्ध में मुक्त चिंतन करनेवाले विनोबा, सीमा-क्षेत्र के कार्य की रिपोर्ट पढ़ने के बाद हाथ और पाँवों की उंगलियाँ मसलते हुए पूछने लगे, "जानते हो, क्या है इसका अर्थ ?"

इस सांकेतिक भाषा को समझने की मजबूरी मेरे चेहरे पर झलक आयी, जिसे उन्होंने तुरन्त भाँप लिया, और कहने लगे, "यह हिमालय है, सीमा-क्षेत्र है! बाबा रक्त संचालन के लिए इन्हें मसलता है, क्योंकि ये ठंडी रहती है। रक्त बनने का स्थान है हृदय। और यह अन्तिम स्थान है, जहाँ रक्त पहुँचता है। मरने पर भी पहले हाथ-पैर ठंडे होते हैं। सारा हिमालय प्रदेश ठंडा है न! हृदय में रक्त बनेगा तो यहाँ भी पहुँचेगा। सीमा-क्षेत्रों का विकास नहीं हुआ, वे तो वैसे ही रहनेवाले हैं। आज सेना की वजह से कुछ सड़कें बनी हैं।"

फिर एक उंगली पकड़कर कहने लगे, "यह कालिमपोंग है। स्वाभाविक तौर से ग्रामदान का बंगाल का आक्रमण वहाँ होगा तो कलिमपोंग में खून पहुँचेगा। बालवाड़ी आदि लम्बे समय का काम (लांग टर्म गोल) है। बालवाड़ी आपने शुरू किया, इसका मतलब क्या हुआ? आपको काम मिला। २० साल में जब ये बच्चे बड़े होंगे और आप उन्हें अपने ढंग की शिक्षा देने का प्रबन्ध कर सकेंगे, तब उसका परिणाम नजर आयेगा। नहीं तो इनका कोई धंधा नहीं। आपका विचार वहाँ के लोग अपना लें, इसलिए आपको अपना पूरा का पूरा क्षेत्र ग्रामदानी बनाना चाहिए।" —सुन्दरलाल बहुगुणा

भारतीय भूमिका में लोकतन्त्र के लिए

कुछ नयी वैचारिक स्थापनाएँ

[कुमारप्पा ग्राम-स्वराज्य-संस्थान गोकुल, दुर्गापुरा, जयपुर के तत्त्वावधान में गत १५-१६ जनवरी '६८ को श्री शंकरराव देव के सान्निध्य में लोकशक्ति और लोकतन्त्र के विकास के सम्बन्ध में एक विचार-गोष्ठी का आयोजन किया गया था, जिसमें राजस्थान के रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने भाग लिया था। उस गोष्ठी में श्री शंकररावजी द्वारा प्रस्तुत लोकतन्त्र की एक समग्र परिकल्पना पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है। —सं०]

लोकतन्त्र केवल शासन-पद्धति नहीं है। वह केवल आर्थिक पद्धति और केवल सामाजिक व्यवहार पद्धति भी नहीं है। जिस प्रकार पानी के बर्तन में पड़ी हुई नमक की डली सारे पानी में घुल जाती है और अपनी शक्ति के अनुसार बर्तन के सारे पानी को प्रभावित करती है वैसी ही स्थिति लोकतन्त्र की है। लोकतन्त्र एक सम्पूर्ण जीवन पद्धति है। जीवन के हर एक अंग में उसका होना अनिवार्य है। किन्तु हमारे देश में लोकतन्त्र का आरम्भ उल्टा हुआ है—पहले शासन पद्धति में फिर आर्थिक क्षेत्र में, और उसके बाद सामाजिक व्यवहार में और अन्त में आध्यात्मिक क्षेत्र में यानी जीवन में। परिणाम यह हुआ है कि यहाँ की अध्यात्मिक लोकशाही मुर्दे के समान प्राणविहीन है। ईजिप्त के पीरामिडों में जिस प्रकार ममियाँ रखी जाती हैं, उसी प्रकार लोकतन्त्र का प्राणहीन शरीर भी मसाला डालकर सदियों तक सुरक्षित रखा जा सकता है, लेकिन वह शरीर जीवन की अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं बन सकता। इसका कारण यह है कि यहाँ के लोकतन्त्र का जन्म एक जीवन-पद्धति के रूप में नहीं हुआ।

लोकतन्त्र के कुछ श्रेष्ठ मूल्य

इस देश में जो लोकतन्त्र चल रहा है, उसका उद्गम पश्चिम में हुआ है। वहाँ मध्ययुग की, जो तमोयुग (डार्क एज) के नाम से ज्ञात है, समाप्ति हुई और नये युग का आरम्भ हुआ तो उसको वे 'रेनेसान्स' (प्रबोधन) कहते हैं। लोकतन्त्र उस प्रबोधन की देन है। मानव जीवन सत्य की उपासना के लिए ही है। सत्य को ग्रहण करने की शक्ति केवल मनुष्य में ही है। सत्य को प्राप्त करने की समझ का और उसका उपयोग करने की हर एक मनुष्य को पूरी आजादी और अवसर मिलना चाहिए। एकमात्र लोकतन्त्र में ही यह सम्भव है। और यही लोकतन्त्र का आत्मा है।

लोकतन्त्र का दूसरा मूल्य है व्यक्ति की प्रतिष्ठा। सत्य समझने की शक्ति व्यक्ति में ही है। अगर व्यक्ति की इस शक्ति को समझ कर उसके साथ अपना सम्बन्ध और व्यवहार स्थापित करना सामाजिक जीवन की आधार-शिला है। इसलिए सत्य समझने और समझाने के लिए जिन साधनों की आवश्यकता होगा, उन साधनों की लब्धि के लिए

शंकरराव देव

श्रम करना व्यक्ति का धर्म है, और वह श्रम करने पर व्यक्ति को वे साधन मिल सकें ऐसी व्यवस्था करना समाज का धर्म है। जिस समाज में इस धर्म का सम्यक् पालन होगा, वही सच्चे माने में लोकतन्त्र स्थापित हो सकेगा।

सत्यदर्शन के लिए किसी मध्यस्थ व्यक्ति की आवश्यकता नहीं है, यह सत्य है। लेकिन आज जीवन के सभी क्षेत्रों में पण्डों का राज्य है। तथाकथित लोकतन्त्र की समाज-पद्धति में भी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्थिति ऐसी बनी है कि सत्य की प्राप्ति मध्यस्थ व्यक्ति के बिना असम्भव हो गयी है। लेकिन मध्यस्थ को स्वीकार करने पर जीवन के सभी क्षेत्रों में उसका दाम भी चुकाना पड़ता है। सच्चा लोकतन्त्र इस पण्डागिरी के खिलाफ एक बलवा है, प्रोटेस्ट है। यूरोप में जो प्रबोधन हुआ उसका मूल स्रोत धार्मिक क्षेत्र की पण्डागिरी के विरुद्ध हुए बलवे में है। सच्चा लोकतन्त्र कहता है कि अपने-अपने गुणों का विकास करते हुए सत्य का साक्षात्कार करने की शक्ति व्यक्ति में है, इसलिए सत्य को प्राप्त करने की स्वतन्त्रता और साधन प्रत्येक को प्राप्त होना चाहिए।

अर्थ का उपार्जन, उसका विभाजन तथा विनिमय सारे समाज के हित की दृष्टि से हो, यह लोकतन्त्र का एक प्रमुख तत्त्व है। सामाजिक राजनीतिक, आर्थिक, नैतिक तथा बौद्धिक क्षेत्रों में व्यक्ति को स्वतन्त्रता रहनी चाहिए। लेकिन वह स्वतन्त्रता इसलिए नहीं कि वह समाजविरोधी और आत्मकेन्द्रित स्वच्छन्द जीवन बिता सके, बल्कि आजादी इसलिए कि वह व्यक्ति सत्य की खोज कर सके और स्वप्रेरणा से अपना जीवन समाज को समर्पित कर सके। लोकतन्त्र में व्यक्ति की प्रतिष्ठा का जो मूल्य है उसके मानी यह नहीं है कि वह सामाजिक जीवन का एक आत्मकेन्द्रित घटक बन जाय, बल्कि वह इसलिए है कि व्यक्ति विचारपूर्वक एक ऐसे सामूहिक जीवन का घटक बने, जिसमें व्यक्ति को पूरी स्वतन्त्रता हो और उसमें समाज का हित जुड़ा हो। यानी दोनों में सामंजस्य हो। लोकतन्त्र का यह बुनियादी सिद्धान्त है। जब तक मनुष्य स्वतन्त्र नहीं होगा तब तक उसकी पूरी शक्ति का लाभ समाज को नहीं मिल सकता। सेवक अपने स्वामी के लिए पूरे मन से काम करे यह सम्भव नहीं है और उससे वैसी अपेक्षा रखना उचित भी नहीं है। यदि व्यक्ति अपने स्वातन्त्र्य का उपयोग अपने स्वार्थ के लिए ही करता है, तो वह स्वातन्त्र्य स्वैराचार बन जाता है। व्यक्ति यदि अपने स्वातन्त्र्य का उपयोग "बहुजनहिताय बहुजनसुखाय" यानी सर्वजन के हित के लिए करता है, तो वह उसका स्वातन्त्र्य एक शुभ शक्ति में परिणत हो जाता है।

जिसके पास शक्ति और बुद्धि अधिक है, वह उसका उपयोग कम शक्ति-बुद्धिवाले की बुद्धि और शक्ति बढ़ाने के काम में करे, क्योंकि व्यक्ति को जो भी बुद्धि और

शक्ति मिली है वह उसे समष्टि के एक घटक के नाते ही मिली है। जो वस्तु जिससे मिली है उसे उसीके लिए समर्पित करना बुद्धिमानी का लक्षण है। शक्ति और बुद्धि के भेद के कारण जीवन के उपभोग और विकास के साधन और अवसर-प्राप्ति के बारे में व्यक्ति-व्यक्ति के बीच विषमता पैदा न हो इसका यही एक स्वाभाविक और सच्चा मार्ग दिखायी देता है। मैं अपनी शक्ति और बुद्धि का उपयोग केवल अपने ही शीघ्र विकास के लिए करूँ, इसमें मेरी मानवता की सिद्धि और कृतार्थता नहीं है।

विगत की देन

प्राचीन युग के इतिहास में दो राष्ट्रों में लोकतांत्रिक प्रणाली के होने का प्रमाण मिलता है। एक है ग्रीस का नगरराज्य (सिटी स्टेट), और दूसरा है भारत का गणराज्य। हमें इन दोनों प्रयोगों का गहरा अध्ययन करना चाहिए। ग्रीस के नगरराज्य और आज के लोकतंत्र में एक बुनियादी फर्क है। उन नगरराज्यों में दो प्रकार के लोग थे—स्वतंत्र और गुलाम। उनमें स्वतंत्र लोगों को ही मतदान का हक था। लेकिन गुलामों की संख्या स्वतंत्र लोगों की अपेक्षा अधिक थी और स्वतंत्र लोग अल्पसंख्यक थे। इसी प्रकार हमारे यहाँ के गणराज्य में भी एक ही जाति का—क्षत्रियों का—ही राज्य था, जिन्हें वंशपरम्परा से राजन्य की संज्ञा प्राप्त थी। उस क्षत्रिय जाति में भी विशिष्ट परिवारों का ही राजन्य पर अधिकार होता था। इसलिए आज हमें देखना होगा कि उन नगरराज्यों और गणराज्यों में जो गुण रहे हों वे ही स्वीकार किये जायँ और जो-जो दोष रहे हों उनका त्याग किया जाय।

सन् १६०० में स्वामी विवेकानन्द ने शिकागो (अमरीका) में एक व्याख्यान दिया था, जिसका विषय था—"क्या वेदान्त विश्वधर्म बन सकता है?" उसमें उन्होंने कहा था कि अमरीका का धर्म वेदान्त हो सकता है, क्योंकि वहाँ लोकतंत्र है। इसका आशय यह है कि वेदान्त और लोकतंत्र का अविनाभाव सम्बन्ध है। क्योंकि वेदान्त में कोई ईश्वरवाद नहीं है, न ग्रन्थप्रामाण्य है, न ही पैगम्बर को स्थान है। वेदान्त का कहना है कि स्वयं मनुष्य ही देहधारी ईश्वर है। बिलकुल यही बात एक तरह से लोकतंत्र भी कहता है। लोकतंत्र में जो धर्मनिरपेक्षता है, जो 'सेक्युलरिज्म' है, उसका अर्थ भी यही है कि यहाँ ईश्वर, ग्रन्थ या पैगम्बर का प्रामाण्य नहीं चलता है, उसमें मानव ही अन्तिम मूल्य है। इसलिए जहाँ वेदान्त है, वहाँ लोकतंत्र होना चाहिए और जहाँ लोकतंत्र है वहाँ वेदान्त होना चाहिए। इसीलिए विवेकानन्द ने कहा था कि वेदान्त अमरीका का धर्म बन सकता है।

शासन-व्यवस्था नहीं, जीवन-व्यवस्था

आम तौर पर लोकतंत्र का अर्थ माना जाता है—जनता का, जनता के लिए, जनता द्वारा शासन। लेकिन यही कारण है कि आज के लोकतंत्र में शासन और सत्ता को इतनी प्रधानता मिली है। और इसी-लिए संसार के सभी भागों में लोकतंत्र भ्रष्ट हुआ है और संकट में है। इसलिए मैं इस व्याख्या में शासन (गवर्नमेण्ट) की जगह "जीवन-व्यवस्था" (मैनेजमेण्ट) शब्द को और उसमें गर्भित अर्थ को अधिक पसंद करूँगा। इस रूप में हम यदि लोकतंत्र को स्वीकार करते हैं तो ही वह जीवन-पद्धति बन सकेगा।

प्रशासन तंत्र की मूलभूत इकाई क्षेत्र और संख्या की दृष्टि से ऐसी होनी चाहिए कि उस समुदाय की सर्वांगीण जीवन-व्यवस्था की जिम्मेदारी उसी क्षेत्र के लोग मिलकर अपनी बुद्धि से पूरी कर सकें। यानी क्षेत्र इतना विशाल न बन जाय कि प्रशासन के लिए आवश्यक अधिकार जनता को दूसरों के हाथों, अर्थात् चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथों सौंपना आवश्यक हो जाय। क्षेत्र के विस्तार और संख्या में अमर्याद वृद्धि होने के ही कारण लोकतांत्रिक शासन में या व्यवस्था-पद्धति में चुनाव और प्रतिनिधित्व के तरीके अनिवार्य रूप से दाखिल हो गये हैं। शुद्ध लोकतांत्रिक शासन-पद्धति की दृष्टि से जो एक दोष है, अवगुण है, वह धीरे-धीरे लोकतंत्र का अनिवार्य अंग बन गया, उसे लोकतंत्र का गुण माना गया।

हमने यह लोकतंत्र जिस पश्चिम से लिया है वहाँ उसका विकास दो-तीन सदियों से होता आया है। उसमें परिणामस्वरूप पाश्चात्यों की प्रकृति में और परम्परा में जो गुण-दोष है, वे उनके लोकतंत्र में भी आये हैं और ऐसा होना अनिवार्य ही था। इसके बावजूद यह भी सत्य है कि गत दो-ढाई सौ वर्षों में उन देशों के लोगों ने तथा वहाँ के लोकतंत्र ने एक-दूसरे का विकास करने में परस्पर सहयोग भी दिया है।

उनके गुण-दोषों के साथ पश्चिम में जिस लोकतंत्र का विकास हुआ है उसे ही भारत ने स्वीकार किया है। इसका परिणाम यह हुआ है कि लोकतंत्र को निभाने का जहाँ तक संबंध है हमारी स्थिति ऐसी ही हुई है, जैसी नाना का अंगरखा नाती पहने! इस लोकतंत्र का अंकुर भारतीय प्रकृति और भारतीय परम्परा में से नहीं फूटा है, न वह भारतीय वातावरण में पला है।

मौलिक अधिकार, किन्तु कर्तव्य का कलश?

भारत ने जो लोकतंत्र अपनाया है, उसकी बुनियाद व्यक्तिगत मौलिक अधिकार है, व्यक्ति का हक है। परन्तु उस पर कर्तव्य का कलश नहीं चढ़ पाया है। फलस्वरूप जीवन का लक्ष्य भोग बन गया है और इसी-लिए हर कहीं भ्रष्टाचार फैल गया है। आज की नौकरशाही पुलिसराज की (वह भी परकीय) ही चोखट है। प्रजा के ही समान उसे भी लोकतांत्रिक शासन-पद्धति की जनम-घुट्टी नहीं पिलायी गयी है।

इस सारी स्थिति को सुधारने का आज एक ही साधन है—शिक्षा। लेकिन केवल शिक्षा को ही ज्ञान नहीं समझना चाहिए, शिक्षा तो ज्ञान प्राप्त करने का एक प्रमुख साधन है। शिक्षा का सीधा और व्यावहारिक आशय यही है कि वह शिक्षित को अपने तथा अपने समूह के जीवन की जिम्मेदारी उठाने योग्य बनाये।

बुनियादी इकाई, आकार और प्रकार

लोकतंत्र का मुख्य आधार-तत्त्व है लोगों की सर्वांगीण जीवन-व्यवस्था में लोगों का अधिक-से-अधिक योगदान (पार्टिसिपेशन)। इसके लिए लोकतंत्र की बुनियादी इकाई छोटी

होनी चाहिए और उनका काम लोगो की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना ही होना चाहिए। ऐसा करने पर ग्रामीण सगठन सगठन की दृष्टि से ढीला होगा, और वहाँ की जीवन-व्यवस्था में लोगो का योगदान अधिक रहेगा। इसके मानी ये नही कि देहाती जनता की आवश्यकता भी प्राथमिक आवश्यकता तक ही सीमित रहेगी या रहनी चाहिए। आज के युग में मानवीय जीवन को सम्पन्न करना है तो उसकी आवश्यकताएं बहुविध होंगी। लेकिन उन सबकी पूर्ति बुनियादी इकाई में ही करने की कोशिश होगी तो उसके लिए सगठन को मजबूत करना पड़ेगा और तब जीवन में तीव्रता (इटेन्सिटी) और प्रतिस्पर्धा बढे बिना नही रहेगी। परिणाम यह आयगा कि लोगो का जीवन में योगदान कम होगा और तंत्र और तन्त्रज्ञो का राज्य शुरू होगा। इसलिए मानवीय आवश्यकता की पूर्ति के काम में श्रम विभाजन अवश्य होना चाहिए और इस आधार पर गाँवो का यानी परिवारो का सहयोगी सघ बनना चाहिए।

पश्चिम में ज्यो-ज्यो बुनियादी इकाई बडी होती गयी, त्यो-त्यों उसकी व्यवस्था के लिए प्रातिनिधिक सस्था अनिवार्य होती गयी। वास्तव में यह प्रातिनिधिकता लोकतन्त्र का धर्म नहीं, आपद्धर्म है। इस बात को हमें याद रखना चाहिए। हमारे सविधान में जो निर्देशक सिद्धान्त (डायरेक्टिव प्रिन्सिपल्स) है, उनमें यह सिफारिश की गयी है कि लोकतन्त्र की आधारभूत इकाई स्वयशासित पंचायतें हो। हमारे यहाँ पचायती राज तो कायम किया गया, लेकिन उसके पीछे यह जो मकसद होना चाहिए था, वह नहीं रखा गया। राज्य-सरकारों ने अपने अधिकारों में से कुछ अधिकार उन पचायतो को दिये और उन्हें अपनी योजनाओ को अमल में लाने का एक साधन बनाया। यही कारण है कि पाश्चात्य लोकतन्त्र के मूलभूत दोषो का निराकरण ये पचायतें नहीं कर सकीं, यही नहीं, बल्कि हमारे यहाँ के भी दोष और उसमें जुड गये।

आज का जीवन बडी जटिलताओं से भरा है और उसके सुख और सुविधाओ के प्रकार भी बहुत बढ गये है। इसलिए आज की सारी आवश्यकताओ की पूर्ति करने की शक्ति, बुद्धि और साधन-सम्पत्ति इन छोटी-छोटी इकाइयो में हो ऐसी अपेक्षा रखना ठीक नहीं होगा। यह असम्भव है। इसी कारण से सघात्मक सगठन प्रदेश के या धर्म, जाति आदि तत्त्वो के आधार पर नहीं, बल्कि भौगोलिक समीपता और भौतिक आवश्यकताओ की पूर्ति करने की क्षमता पर आधारित होगा। उस संघ मे वहाँ की भौतिक आवश्यकताओ की पूर्ति करने योग्य साधन-सम्पत्ति होनी चाहिए और उनको उपभोग्य सामग्री में रूपान्तरित करने की शक्ति और बुद्धि होनी चाहिए। यह सब 'वर्टिकल' (उभरा हुआ) नही होगा, 'हारिजाण्टल (समथर) होगा। जैसे गाधीजी कहते थे उस प्रकार स्वदेशी धर्म का आशय यही है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओ और सेवाओ को पहले अपने पडोसी से जोडे। यह स्वदेशी धर्म इस सघात्मक समाज का धर्म होगा।

इस प्रकार यह समाज रचना आज की राष्ट्रीय, धार्मिक, सास्कृतिक आदि सभी सीमाओ को लाघकर आगे बढ़ेगी। आज तक जो भी सगठन धार्मिक, प्रादेशिक या राष्ट्रीय आधार पर बने है, उनके कारण मनुष्य को सुख और शान्ति नही मिली, जिसे प्राप्त करने का उसे हक है और जितनी उसे आवश्यकता है। चूंकि ये सगठन भेद पैदा करनेवाले है, इसलिए इनका बाहरी समाज के साथ सघर्ष निश्चित ही था, परन्तु इनके अन्दर भी कई प्रकार का सघर्ष और तनाव उत्पन्न होता रहा है, जिसे ये सगठन मिटा नहीं सके। इसका कारण यह है कि इन सगठनो के और बाहर के समाज के हितों में विरोध तो है ही, इनके अन्दर भी आन्तरिक हित विरोध बना हुआ है। इसका आशय यह है कि सहकार और शान्ति की स्थापना के लिए हितैक्यता (आइडेण्टिटी आफ इण्टरेस्ट्स) आवश्यक है। सगठन ऐसे ही लोगो का होना चाहिए जिनमें हितैक्य हो, ताकि उस सगठन से उनके हितो की पूर्ति हो सके। यह हितैक्य मानवीय आवश्यकताओ में ही हो सकता है, विचारो और कल्पनाओ में नही। केवल सावधानी इस बात की होनी चाहिए कि उन आवश्यकताओ की मात्रा और स्वरूप वैज्ञानिक पद्धति से ही निर्धारित होने चाहिए।

जिस समाज में हर एक व्यक्ति की आवश्यकताओ को पूरी करने के तत्त्व पर हर एक की शक्ति और सम्पत्ति का सहयोग स्वय-प्रेरणा और विज्ञान के आधार पर उपलब्ध हो सके, ऐसे समाज में ही सच्चा लोकतन्त्र प्रस्थापित और प्रतिष्ठित हो सकेगा। ●

बाबा रोता क्यों नहीं ?

इन दिनों बाबा हँसता ही रहता है। इसलिए हँसता है कि रोना वाजिब नहीं है, अगरचे हालत रोने लायक है। और इसलिए भी हँसता है कि बाबा को उसका उपाय सूझा हुआ है। बाबा देखता है कि यह उपाय अगर लोगों को सूझेगा तो सारे भारत में आनन्द होगा। तो यह आनन्दमय निश्चित भविष्य ध्यान में रखकर बाबा हँसता है। और वह इसलिए भी हँसता रहता है कि वह इस दुनिया को निकम्मा समझता है। बहुत ज्यादा वास्तविक अस्तित्व इसको है, ऐसा बाबा को प्रतीत नहीं होता।

खैर, मेरा मतलब है कि परिस्थिति बहुत शोचनीय है भारत की। क्या क्या भयानक प्रकार हिन्दुस्तान में हो रहे हैं, ऐसा प्रश्न पूछने के बजाय यही पूछना बेहतर होगा कि कौनसे प्रकार नहीं हो रहे हैं! सार्वजनिक जीवन के विषय में जितने खराब प्रकार हो सकते हैं लाजिकली, उतने सब हो रहे हैं। और इसलिए अन्दर से बहुत वेदना का अनुभव होता है।
[विनोबा-निवास, मुगेर : १९-२-'६८]

—विनोबा

शान्ति-केन्द्र : 'शान्ति-दिवस' के आयोजन

देश भर में विभिन्न स्थानों पर गत ३० जनवरी का दिन 'शान्ति-दिवस' के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर प्रभात फेरी, सामूहिक सफाई, प्रार्थना-सभाएँ, सूत्रयज्ञ, श्रद्धांजलि, सर्वोदय-साहित्य का पठन-पाठन, जन-सम्पर्क, शान्ति-बिल्लें और सर्वोदय-साहित्य की बिक्री आदि के कार्यक्रमों के अतिरिक्त विचार-गोष्ठी, शान्ति-सेना रैली, मौन जुलूस, नशाबन्दी आदि के विशिष्ट आयोजन भी किये गये। उ० प्र० और बिहार के समाचार पिछले अंक में दिये गये थे। शेष यहाँ दिये जा रहे हैं।

गुजरात

अहमदाबाद : प्रार्थना-सभा में श्री नारायण देसाई ने बापू की शान्ति-प्रक्रिया पर प्रकाश डाला। रेलवे स्टेशन पर सर्वोदय-साहित्य के नये स्टाल का उद्घाटन श्रीमती मदालसा बहन ने किया। साबरमती आश्रम में हुई शान्ति-रैली को श्री काका साहब कालेलकर ने सम्बोधित किया। दो हजार की संख्या में शान्ति-जुलूस कोचरब आश्रम पहुँचा। सभा में राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण ने गांधी-मार्ग और सर्वोदय-प्रवृत्तियों की विवेचना की। आकाशवाणी और सरकार के सूचना-प्रचार-विभाग का सराहनीय सहयोग रहा। चुने हुए प्रवचन-अंश रेडियो से प्रसारित किये गये। —रमण भाई

सूरत और वलसाड : 'गांधी शताब्दी' के लिए निम्नलिखित कार्यक्रम तय किया गया : सारी शक्ति त्रिविध कार्यक्रम पर केन्द्रित की जाय, ग्रामदान के लिए एक हजार कार्यकर्ता वर्ष में दो महीने दें, सौ गाँवों में सम्पूर्ण वस्त्र-स्वावलम्बन किया जाय, एक हजार शान्ति-सेवक और एक सौ शान्ति-सैनिक भरती किये जायँ, सन् १९७० के गांधी मेले के समय २५,००० कातनेवालों का विराट कताई-प्रदर्शन हो।

व्यारा, ग्राम सेवा-समाज : प्रातः ४॥ बजे वेडछावादर कन्या शाला से निकली ३० मील लम्बी शान्ति-पदयात्रा शाम ५ बजे डालपण में प्रार्थना-सभा में परिणत हुई, १६० भाई-बहनों ने यात्रा में भाग लिया। —इन्द्रसिंह रावत

मध्य प्रदेश

रायपुर : गांधी चौक में प्रार्थना-सभा हुई, जिसमें नागरिकों एवं राजनीतिक दलों के नेताओं ने भी भाग लिया। —मोतीलाल

सरगुजा : अम्बिकापुर का नगर-कार्यक्रम विशेष ध्यानाकर्षक रहा। अलग-अलग शिक्षण-संस्थाओं के शिक्षकों और छात्रों की एक रैली हुई। शान्ति-यात्रा में करीब दो हजार छात्रों, शिक्षकों, नागरिकों और शान्ति-सैनिकों की संख्या थी। —छन्नूराम गौड़

रतलाम : सर्वोदय-पक्ष में टोलियाँबद्ध होकर गाँवों में पदयात्राएँ की गयीं। —मानव मुनि

राजस्थान

पथवारी : शराब-बन्दी के लिए एक शराब की दूकान पर सत्याग्रह किया गया। —दरबार सिंह

नारलाई : सर्वोदय-पक्ष में जिला स्तर पर सर्वोदय तथा कृषि-संगठन का कार्य-निश्चय किया गया। —राधेश्याम दवे

केशोपुर : ग्राम-कोष के लिए १०१ रुपये एकत्र किये गये। —जितेन्द्र कुमार

बाँसवाड़ा : १७५ रुपये २५ पैसे का कोष एकत्र किया गया। —अम्बाराम

पंजाब-हरियाना

प्रधान आश्रम, पठानकोट : पंजाब-हरियाना सर्वोदय मण्डल की नवम्बर की बैठक में ग्रामदान पुष्टिकार्य और दोनों प्रदेशों की सरकार द्वारा ग्रामदान-कानून निश्चित किया गया। आश्रम को सार्वजनिक सेवा का विशेष केन्द्र बनाने के लिए शिविर और बाल-वाड़ी शुरू करने की रूपरेखा बनायी गयी। एक कार्यकर्ता-शिविर फरवरी में रखा गया। कांगड़ा जिले में १०४ और हिसार जिले में ३६ ग्रामदान मिले। कार्य की सुविधा की दृष्टि से प्रान्तीय शान्ति सेना मण्डल का प्रधान कार्यालय प्रधान आश्रम में स्थानान्तरित किया गया है। —यशपाल मित्तल

रेवाड़ी : जिला सर्वोदय मण्डल, गुड़गाँव, शान्ति-केन्द्र, गांधी अध्ययन केन्द्र, गांधी खादी भण्डार, जिला स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी संघ और हरिजन सेवक संघ ने मिलकर शान्ति-दिवस मनाया। शहीदों की चित्र-प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया। —खुशीराम

असम

कुमारीकट्टा (कामरूप) : विनोबापुर से १०० यात्रियों का शान्ति-जुलूस १२ मील का रास्ता तय करके जब कुमारीकट्टा पहुँचा, तब यात्रियों की संख्या एक हजार थी। घोघामारी, काउली बाजार आदि शान्ति-केन्द्रों पर भी आयोजन हुए।

चराइदलनी : असम के दो जिलों में ग्रामदान-अभियान चलाया। दो शान्ति केन्द्रों की स्थापना की, एक की स्थापना शान्ति-दिवस पर की गयी। —फणीधर हाजरिका

काउली बाजार : खेती-सुधार की बातों का प्रचार किया गया। सब ग्रामवासियों ने तय किया कि सप्ताह में एक दिन का उपवास करके साधनहीन किसानों को साधन जुटाने के लिए पैसे बचायेंगे। —वैद्य वासुदेव सहाय

उड़ीसा

'शान्ति-दिवस' विशेष रूप से मनाने के लिए उड़ीसा प्रदेश सर्वोदय मण्डल ने जनवरी, '६७ में भुवनेश्वर में हुई बैठक में तय किया था कि ३० जनवरी, '६८ तक एक हजार ग्रामदान प्राप्त किये जायँगे और दस हजार शान्ति-सैनिक बनाये जायँगे तथा २० फरवरी तक कोरापुट और मयूरभंज का जिलादान प्राप्त करेंगे। इस अवधि में ८८७६ ग्रामदान, जिसमें ३४ प्रखण्डदान हैं, प्राप्त हुए। ५१७५ शान्ति-सैनिक बनाये गये। सारे जिले में कुल मिलाकर इस वर्ष ११२ शिविर सम्पन्न हुए। कोरापुट, पुरी, गंजाम, कटक, ढेंकानाल, मयूरभंज, बालेश्वर जिले के विभिन्न स्थानों पर आयोजित शान्ति-सेना रैली में ३०० से १६०० तक शान्ति-सैनिकों ने भाग लिया। कई आदिवासी चालीस-चालीस मील से पदयात्रा करके शान्ति-यात्रा में सम्मिलित हुए।

कलकत्ता : १४४ धारा के कारण जुलूस नहीं निकल सका। १५ नये शान्ति-सैनिकों ने प्रतिज्ञापत्र भरे। —चितरंजन दास

आन्ध्र

हैदराबाद : भूतपूर्व गृहमन्त्री श्री गुलजारीलाल नन्दा की अध्यक्षता में १५०० छात्र-छात्राओं और नागरिकों का एक शान्ति-जुलूस निकला। विद्यालयों में वक्तृत्व-स्पर्धा एवं चर्चा-सभाओं के आयोजन हुए। —एन०एल० नारायण

विजयवाडा : 'पीस मार्च' की अगवानी आन्ध्र के सर्वोदय-नेता डा० सूर्यनारायण और श्री लवणम् ने की। —जनार्दन स्वामी

त्रिवेन्द्रम (केरल) शान्ति-यात्रा में लगभग १५०० नागरिकों, छात्रों, शिक्षकों और राजनीतिक नेताओं ने भी भाग लिया। —पी० गोपीनाथन नायर

कालीकट एक हजार लोगों ने शान्ति जुलूस में भाग लिया। —गांधी फाउण्डेशन

इसके अलावा नीचे दिये गये स्थानों से भी 'शान्ति-दिवस' उत्साहपूर्वक मनाये जाने के समाचार प्राप्त हुए हैं —

गउरवेला, सनना, आनन्दनगर, मालधन चौड़, छतारी, सादाबाद, कमलाकोरिया, बेतारोड, शिवकर थला, समन्वय आश्रम बोधगया, मिरपुर, गाजीपुर, रामवाम, आदि।

—अ० भा० शान्ति-सेना कार्यालय से

---

३१ मार्च '६८ तक

"भूदान-तहरीक" (उर्दू पाक्षिक) के ग्राहकों को विशेष छूट

गांधी-शताब्दी समिति की जनसम्पर्क समिति की ओर से "भूदान तहरीक" के हर नये ग्राहक को एक रुपया 'रिबेट' (छूट) देने की घोषणा की गयी है। यह 'रिबेट' ३१ मार्च '६८ तक ही जारी रहेगा। "भूदान तहरीक" का सालाना चन्दा चार रुपया है। कृपया सिर्फ तीन रुपये मनिआर्डर से भेज कर ग्राहक बनिये। —संचालक

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

भंडारा जिला सर्वोदय सम्मेलन

गत ३० जनवरी को आकोट गाँव में भंडारा (महाराष्ट्र) जिला सर्वोदय सम्मेलन हुआ। इस अवसर पर आकोट गाँव ने भंगी-मुक्त खाद उत्पादक ५० पाखाने बनाये। संयोजक श्री बापट ने कार्य विवरण प्रस्तुत करते हुए बताया कि जिले में अब तक २२३ ग्रामदान हुए, ८०० से अधिक भंगी मुक्त पाखाने बनाये। धान-कुटाई स्वावलम्बन योजना २०० गाँवों में चल रही है। गांधी शताब्दी तक सम्पूर्ण जिले में इन कामों का व्याप बढ़े, इस पर भी चर्चा हुई। संकल्प किया गया कि आगामी साल में ३०० गाँवों का ग्रामदान हो, ५०० गाँवों में धानकुटाई स्वावलम्बन हो, २००० पाखाने बनाये जायँ, १०० ग्रामदानी गाँवों का रजिस्ट्रेशन हो।

ग्रामदान-अभियान

इन्दौर। मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल के द्वारा प्रान्त के विभिन्न जिलों में चलाये जा रहे ग्रामदान आन्दोलन के अन्तर्गत अभी हाल में ही इन्दौर तथा दुर्ग जिले में पाँच-पाँच नये ग्रामदान घोषित हुए हैं। इन्दौर जिले में सर्वोदय-सेवक श्री शंकरलाल मंडलोई के नेतृत्व में सतत पदयात्रा चल रही है।

अ०भा० खादी ग्रामोद्योग द्वारा प्रमाणित खादी ग्रामोद्योग भण्डारों में मिलता है

नरसिंहपुर, २० फरवरी। महाकोशल क्षेत्र के १७ जिलों में जनवरी '६८ तक भूदान में प्राप्त कुल १,१२,२७८ ६६ एकड़ भूमि में से ४५,४५७ भूमिहीन कृषकों को ७७,३६६-३२ एकड़ भूमि वितरित की जा चुकी है और २१,८७२ ७६ एकड़ भूमि वितरण के लिए शेष है। शासन द्वारा अब तक ६७,६२२ १० एकड़ भूमि का प्रमाणीकरण किया गया तथा १२,६०२ ५२ एकड़ भूमि नामंजूर की गयी है।

साहित्य-सेवा

● सर्वोदय-साहित्य-मन्दिर, अहमदाबाद : ३० जनवरी से २६ फरवरी तक कुल ३१ दिन में ३,६०१ रुपये ६४ पैसे की साहित्य-बिक्री हुई। 'भूमिपुत्र' दसवारिक के २ ग्राहक बने। कुल मिलाकर १५७७ व्यक्तियों ने साहित्य मंदिर से किताबें खरीद की।

● बड़ौदा। जिला सर्वोदय मंडल की ओर से सूरत काटन मिल्स में ७,८५८ रु० ६२ पै० के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई। बिक्री में पचास प्रतिशत की रियायत मिल-व्यवस्थापकों ने स्वयं की ओर से दी। इसी प्रकार वलसाड जिले के गणदेवी और चीखली तालुके में हाल में ही आयोजित पदयात्राओं के दौरान १३ टुकड़ियों ने ६५५ रु० की साहित्य बिक्री की।

गुजरात का आह्वान

● बड़ौदा। गुजरात सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष डा० द्वारकादास जोशी ने गांधी जन्म-शताब्दी तक गुजरात के १६,००० गाँवों में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का सन्देश पहुँचाने एवं लोकसम्पर्क की दृष्टि से ४०० निष्ठावान कार्यकर्ताओं के लिए आह्वान किया है, ताकि व्यापक पैमाने पर पदयात्राएँ आयोजित की जा सकें। उक्त योजना को चरितार्थ करने के लिए प्रारम्भ में १०० कार्यकर्ताओं के लिए दो लाख रुपये की अपील की है और सुझाया है कि हजारों की संख्या में सर्वोदय-मित्र ऐसे कार्यकर्ताओं की जिम्मेदारी उठा लेंगे। इसके अतिरिक्त गुजरात सर्वोदय मंडल, गुजरातपागा, बड़ौदा १ के पते पर सीधे सहायता भी भेजी जा सकती है।

पारिवारिक खर्च का एक प्रतिशत विनोबाजी को भेंट

व्यापारियों का शुभ-संकल्प

पटना, १ मार्च। अभी हाल ही में बिहार-दान के सिलसिले में यात्रा के दौरान जिला सर्वोदय मंडल के तत्वावधान में मुंगेर पड़ाव पर आयोजित एक गोष्ठी में श्री विनोबाजी ने व्यापारियों की वर्तमान स्थिति पर चिन्ता प्रकट करते हुए उनके प्रति गहरी सहानुभूति प्रकट की और कहा कि "ग्रामदान-प्रखण्डदान के द्वारा हमारा प्रवेश गाँव के किसानों और मजदूरों में हो रहा है, लेकिन शहर के व्यापारी वर्ग से वैसा सम्बन्ध आया नहीं। मैंने अभी उम्मीद छोड़ी नहीं है। मैं चाहता हूँ कि एक-एक व्यापारियों के परिवार में बाबा का प्रवेश हो। बाबा गाँववालों से उसकी आमदनी का चालीसवाँ भाग माँगता है, लेकिन व्यापारियों से उनकी आमदनी का हिस्सा नहीं माँगता। बाबा प्रत्येक व्यापारी के परिवार का एक सदस्य बनना चाहता है। इसलिए व्यापारी अपने पारिवारिक खर्च का एक भाग बाबा के काम के लिए दान के रूप में दें, यह अपेक्षा है।"

उक्त उद्‌गारों से प्रेरित होकर मुंगेर के १४ प्रमुख व्यापारियों ने अपने पारिवारिक खर्च का एक प्रतिशत भाग प्रति वर्ष भेंट करते रहने का सामूहिक समर्पण-पत्र श्री विनोबाजी को समर्पित किया।

बिहारदान की दिशा में

● बोधगया : २१ से २७ फरवरी तक गया जिले के १२ प्रखण्डों में शिक्षकों तथा *पंचायत-मुखियाओं आदि की सभाएँ रखी* गयी थी। रोज २ से ३ सभाओं में ग्रामदान का विचार लोगों के सामने रखा। अगले ६ महीनों में ५०-६० कार्यकर्ता सतत जिलादान के काम में लगनेवाले हैं। जिले की खादी-संस्था तथा पंचायत परिषद् की ओर से काफी मदद इस काम में दी जा रही है। अगले महीने होली के बाद से जिला-दान अभियान जोर पकड़ेगा, ऐसी आशा है।

—सिद्धराज ढड्ढा

● *भागलपुर : जिले के सदर सबडिविजन* का नाथनगर, सुल्तानगंज और शाहकुण्ड प्रखण्ड में प्राप्ति का कार्यारम्भ हो गया है। कार्य में गति प्रदान करने के लिए जिला सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष पंडित बोधनारायण मिश्रजी एवं प्रोफेसर श्री रामजी सिंह ने अपना समय दौरा हेतु दिया है।

—हरिनारायण साहु 'माधव'

● बगोदर, ८ मार्च जिला सर्वोदय मंडल हजारीबाग के कार्यकर्ताओं के प्रयास से जिले का बगोदर प्रखंड विधिवत् प्रखंडदान घोषित हो गया। इस प्रकार हजारीबाग जिले का प्रतापपुर, पीरटाँड़, सिमरिया एवं बगोदर कुल ४ प्रखंडदान की घोषणा विधिवत् हो चुकी है।

—रामनन्दन सिंह

● जमशेदपुर। ३ मार्च '६८ को ईचागढ़ प्रखण्ड का बाजाप्ता प्रखण्डदान घोषित हुआ। यह इस जिले का दूसरा प्रखण्डदान है। ईचागढ़ प्रखण्डदान में शामिल गाँवों का विस्तृत ब्योरा इस प्रकार है : कुल ग्राम १३७, चिरागी १३२, बेचिरागी ५, ग्रामदान में शामिल गाँव १०७, प्रतिशत ८१, कुल जनसंख्या ५२७४३, शामिल जनसंख्या ४११४०, प्रतिशत ७८, कुल परिवार ११०००, शामिल परिवार-संख्या ८४७०, प्रतिशत ७८।

—मुहम्मद अयुब खाँ

● पूर्णिया में सर्वोदय-पक्ष : सर्वोदय-नेता श्री वैद्यनाथ बाबू की यात्रा ३० जनवरी '६८ से जानकीनगर से प्रारम्भ हुई और ११ फरवरी को कोसी-गंगा के संगम पर कुरसेला में पूर्ण हुई। श्री वैद्यनाथ बाबू की यात्रा कुल ५ प्रखण्डों में हुई।

इस अवसर पर जिले में अन्य स्थानों पर पदयात्राएँ भी चलीं। कुल १४ प्रखंडों में पदयात्रा की गयी। १४६ गाँवों से सम्पर्क स्थापित किया गया। कुल ३६३ मील की यात्रा की गयी। ७२ आम सभाओं के द्वारा लगभग ५,२०० लोगों के बीच गांधी और विनोबा के विचारों का प्रचार हुआ। यात्रा के क्रम में सर्वोदय-कोष में ४,४४८ रुपये ७५ पैसे नकद और १९०.८ मन अनाज प्राप्त हुआ। ११५ रु० ७४ पैसे के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई और 'ग्रामोदय' के ४ ग्राहक बनाये गये। ८६५ सूत की गुण्डियाँ सूतांजलि में प्राप्त हुईं।

—दामोदरप्रसाद 'काम'

● गोरखपुर। उत्तर प्रदेश में ७ मार्च तक ३४ प्रखण्डदान हो चुके हैं, जिनके ग्रामदानी गाँवों की संख्या ४,१५० है।

सर्वोदय आन्दोलन का जागतिक प्रभाव

विदेश में एक कारखाना मजदूरों को समर्पित

ज्ञात हुआ है कि हैये इंजीनियरिंग कम्पनी, हैये इलेक्ट्रोनिक्स लिमिटेड, हैये (केन्ट) के श्री विक्टर थामसन ने भारत में ग्रामदान-आन्दोलन के प्रणेता आचार्य विनोबा भावे से प्रेरित होकर अपनी मालिकी को उक्त कारखाना उसमें काम करनेवाले मजदूरों को समर्पित कर दिया। इस सिलसिले में श्री विनोबाजी के नाम श्री थामसन ने अपने पत्र में लिखा है कि "सात-आठ वर्ष पूर्व मेरा एक मित्र मैथ्यू आपके साथ पदयात्रा में रहा था। आपसे उसने जो कुछ सीखा, उसे मैंने भी समझा। आपकी फिलासफी से मैं इतना प्रभावित हुआ हूँ कि मैंने अपना कारखाना उसमें काम करनेवाले मजदूरों को समर्पित कर दिया है। आप जो सिद्धान्त गाँवों पर लागू करते हैं, उसे मैंने अपने कारखाने पर लागू कर दिया है। मजदूरों की यह सहभागी-पद्धति यहाँ 'विनोबा-पद्धति' के नाम से जानी जाती है।"

श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा-संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

MAR 19

भूदान-यज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

सम्पादक : राममूर्ति

शुक्रवार वर्ष : १४

२२ मार्च '६८ अंक : २५

इस अंक में

वार्षिक शुल्क १० रु०

एक प्रति २० पैसे

विदेशों में साधारण डाक-शुल्क—

१८ रु० या १ पौण्ड या २॥ डालर

(हवाई डाक शुल्क देशों के अनुसार)

सर्व-सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१

शास्त्रीय वृत्ति : 'कारक' की नहीं, 'ज्ञापक' की

इन दिनों मैंने सूक्ष्म में प्रवेश किया है, यह बात जाहिर हो गयी है। स्थूल का प्रयोग पचास साल किया। फिर मन में विचार आया कि सूक्ष्म-संशोधन होना चाहिए। विज्ञान में जब से 'न्यूक्लीयर एनर्जी' (अणु शक्ति) आयी है, तब से ध्यान में आया है कि स्थूल से अनिर्वचन सूक्ष्म शस्त्र ज्यादा परिणामकारी होते हैं। जैसे उन्होंने साइन्स के क्षेत्र में सूक्ष्म शस्त्र निकाले हैं, वैसे अध्यात्म के क्षेत्र में भी सूक्ष्म शोधन हो सकता है। साढ़े तेरह साल पदयात्रा हुई, हर रोज औसत तीन व्याख्यान हुए। साल भर की हजार तकरीरें मानें तो भी १३-१५ हजार भाषण हुए। इसलिए शब्दों से जितना हो सकता था हो गया है। अगर हमारे विचार लोगों को जँचें, मान्य हों, तो अच्छी बात है, नहीं जँचें और उन पर अमल नहीं किया, तो भी कोई खास बात नहीं है। जो शास्त्रकार होते हैं वे हाथ पकड़कर करवाते नहीं। साईनबोर्ड दिखाता है कि यह रास्ता यहाँ से दरभंगा जा रहा है, आपको जाना है तो उस रास्ते से जा सकते हैं, नहीं जाना है, तो नहीं जा सकते हैं। साईनबोर्ड ने अपना काम कर दिया। जो शास्त्रीय वृत्ति रखता है वह हमेशा 'ज्ञापक' होता है, 'कारक' नहीं। 'कारक' यानी करवानेवाला, 'ज्ञापक' यानी जतानेवाला, सुझानेवाला।

पश्चिम में इन दिनों अनेक नये शास्त्रों की खोज हुई है। खास करके विज्ञान का बहुविध विकास हुआ है। वह सब हमको सीखना ही चाहिए। इस वास्ते हमको कई नयी-नयी चीजें सीखनी पड़ेंगी, इसमें कोई शक नहीं। फिर भी भारत के कुछ अपने भी विचार हैं, और वे प्राचीन काल से विकसित किये गये हैं। उन शास्त्रों में शिक्षा-शास्त्र एक है। यह एक ऐसा शास्त्र है, जिसका भारत में काफी विकास हुआ था, इस सिलसिले में भी हमको कुछ नया सीखना है। दुनिया भर से अच्छे विचार हमारे पास आयेंगे। हम सब विचारों का स्वागत करते हैं। लेकिन जो अपने पास है, उसे भी पहचानना चाहिए, क्योंकि वह चीज यहाँ की परिस्थिति के अनुकूल है।

तो, ऐसे जो ग्रन्थ संस्कृत भाषा में शिक्षा-शास्त्र के हैं, उन सबमें शिरोमणि ग्रन्थ है पतंजलि का योगशास्त्र। उसमें शिक्षा के विषय में मानस और अतिमानस, दोनों दृष्टियों से विचार किया गया है। मानस शास्त्र की दृष्टि से सोचना शिक्षा के लिए बहुत जरूरी होता है। उसके बिना शिक्षा शास्त्र शुरू नहीं होता है। लेकिन शुरू के लिए यद्यपि मानस-शास्त्र *की जरूरत होती है तो भी उसकी आखिरी मंजिल कहाँ है,* कहाँ तक हमें वह ले जाती है, यह समझने के लिए अति मानस ज्ञान की जरूरत होती है। दोनों दृष्टियाँ ध्यान में रखकर पतंजलि ने बहुत थोड़े में योगशास्त्र प्रस्तुत किया है। पतंजलि क्या कहता है? वह परमात्मा को गुरु रूप में देखता है। परमात्मा प्राचीन ज्ञानियों का भी गुरु है। मुझे बहुत सी भाषाएँ पढ़ने का मौका मिला है, लेकिन मैंने यह कभी देखा नहीं, किसी धर्म ग्रन्थ में या किसी मानस-शास्त्रीय ग्रन्थ में, कि उसने परमात्मा को गुरु रूप में देखा हो। परमात्मा को पिता के रूप में तो अक्सर देखा ही जाता है, माता के रूप में भी देखा जाता है, लेकिन योगशास्त्र ने गुरु के रूप में देखा।

[पूना रोड, ७-१२-'६७]

—विनोबा

देश :

११ मार्च : फारस की खाड़ी में से तेल निकालने में मिली सफलता से भारत कच्चे तेल में आत्मनिर्भर हो सकता है।

१२ मार्च : पंजाब के राज्यपाल डा० डी० सी० पावटे ने राज्य विधानसभा का आज समावसान कर दिया।

१३ मार्च : सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री हिदायतुल्ला, जस्टिस अमरनाथ ग्रोवर तथा जस्टिस सी. ए. विद्यालिंगम की आज भरी अदालत में छुरे से हत्या करने की कुचेष्टा की गयी।

१४ मार्च : श्री मोरारजी देसाई ने आज लोकसभा में कहा कि आर्थिक मंदी को दूर करने के लिए घाटे की अर्थ-व्यवस्था के सिवाय आज कोई दूसरा चारा नहीं है।

१५ मार्च : कृषि-आयोग ने नयी रिपोर्ट में सिफारिश की है कि गेहूँ की वसूली-भाव गत वर्ष की तुलना में थोड़ा घटाया जाय।

१६ मार्च : रबीवाले राज्यों के मुख्य-मंत्रियों के सम्मेलन में पंजाब, हरियाना, हिमाचल प्रदेश तथा जम्मू-कश्मीर का एक वृहत् गेहूँ-क्षेत्र बनाने का फैसला किया गया।

विदेश :

११ मार्च : रोडेशिया-सरकार ने आज प्रातः दो और अफ्रीकियों को फाँसी दे दी।

१२ मार्च : संयुक्त राष्ट्र संघ स्थित अफ्रीकी प्रतिनिधि रोडेशिया में हुई फांसी के मामले को सुरक्षा-परिषद् में रखेंगे।

१३ मार्च : अमरीका के ४९ प्रतिशत नागरिकों का मत है कि उसने वियतनाम-युद्ध में अपने को फँसाकर गलती की है।

१४ मार्च : मलयेशिया के प्रधान मंत्री ने ब्रिटेन से मांग की कि वह रोडेशिया को स्वतंत्र देश मानता है या उपनिवेश, घोषणा करे।

१५ मार्च : अमरीकी तथा दक्षिण वियतनामी सेनाओं ने सैगान के पास के पाँच प्रान्तों में वियतकांगों को खत्म करने के लिए बड़े पैमाने पर कार्रवाई शुरू की है।

१६ मार्च : जॉनसन ने वियतनाम में और सैनिक भेजना स्वीकार कर लिया है।

एक दूसरा दृष्टिकोण

युग-परिस्थिति और रचनात्मक कार्यकर्ता

श्री टी० के० महादेवन् का 'दृष्टिकोण' १ मार्च '६८ के "भूदान यज्ञ" में छपा है। उन्होंने श्री शंकररावजी के शब्दों से प्रेरणा ली है। लेकिन यह स्पष्ट नहीं है कि शंकररावजी ने किस सन्दर्भ में यह कहा कि "प्रतीकात्मक कार्यों और निष्ठाओं के दिन बीत गये"। इन शब्दों का अच्छा अर्थ लेना हो तो यही लिया जा सकता है कि पुराने प्रतीक नये जमाने के काम के नहीं होते और पुरानी निष्ठाओं में भी परिवर्तन आवश्यक है। क्योंकि यह ठीक ही है कि कर्मकाण्डियों की तरह अमुक कुछ क्रियाकलापों में ही हमें बँधे नहीं रहना चाहिए और नित्य जीवन से प्रत्यक्ष संबंध न रखनेवाले दार्शनिक तत्त्वज्ञान की लकीर के फकीर नहीं बनना चाहिए। लेकिन यह तो नहीं हो सकता कि रचनात्मक काम की अपनी कोई 'निष्ठा' ही न हो, और वह किसी उन्नत समाज का दिशा-संकेत करनेवाला भी न हो।

प्रायः यह देखा जाता है कि "वास्तविक परिस्थिति" की दुहाई देकर जीवन के स्थायी मूल्यों की अवहेलना करने का फैशन-सा चल पड़ा है। लेकिन दिशाहीन जीवन-धारा के अकाण्ड ताण्डव से हम लोग अपरिचित नहीं है। "पुराणमित्येव न साधु सर्वं" कहनेवाली बीटनिक-पीढ़ी ने उसके रहे-सहे अपरिचय को भी खूब अनावृत कर दिया है। जयपुर की एक गोष्ठी में कहा हुआ श्री शंकररावजी का यह कथन समझ में आता है कि "रचनात्मक कार्य और संस्थाओं का संगठन मानवीय हितैक्य (आइडेण्टिटी आफ इण्टरेस्ट) के आधार पर हो, कोरे विचारों और कल्पनाओं के आधार पर नहीं।" लेकिन इसका अर्थ कदापि यह नहीं हो सकता कि उस हितैक्य के मूल में कोई 'निष्ठा' नहीं होगी।

इस बात से कौन इनकार कर सकता है कि रचनात्मक कार्य हित-विरोध को पाल नहीं सकता, बल्कि सर्वेषामविरोधेन व्यक्ति-सेवा करनेवाला होगा? क्या यही लोकतंत्र की मूल 'निष्ठा' नहीं है? क्या यह व्यक्ति-सेवा सर्वाविरोध का 'प्रतीक' नहीं है?

अक्सर हर कोई अपनी बात के समर्थन में गांधीजी का नाम ले लेता है। गांधी-जन्म-शताब्दी ने तो अब उस नाम के उपयोग की "विशेष छूट" दे रखी है। लेकिन यह भूलने से कैसे काम चलेगा कि गांधीजी जब जीवित थे, तब हमारे देश में लोकतंत्र नहीं था? हमने लोकतंत्र को स्वीकार किया है, तो कोई साधारण काम नहीं किया है, बड़ी जिम्मेदारी ली है, सारा सन्दर्भ ही बदल दिया है। लोकतंत्र का मूल तत्त्व है नागरिक प्रतिष्ठा और इसीलिए आज 'बहुमत' भी अपर्याप्त हो गया है। 'सर्वसम्मति' की दिशा में कदम उठ रहे हैं, ताकि अदना-से-अदना शख्स भी किसी व्यक्ति-विशेष के अंकुश से न दबने पाय। ऐसी स्थिति में "सफल नेतृत्व" की कीमिया का गुणगान सुनकर जी कचोट उठता है। क्या वास्तव में "लोग भेड़ जैसे ही होते है?" क्या लोकतंत्र में भी 'लोक' के प्रति यही भावना रखकर काम करना है? बड़ा दुःख होता है। शहरी भीड़ को ही देखकर लोक को भेड़ बना देना क्या कम प्रतीकपूजा है? याद रखना चाहिए कि लोक को भेड़ मानकर चाहे जैसा—भला या बुरा—मोड़ देनेवाला 'नेता' लोकतंत्र के नागरिक को बरदाश्त नहीं हो सकता, न होना चाहिए।

यह लिखते समय मुझे इस बात का भान है कि हमारे देश के नागरिकों को विविध दिशाओं में शिक्षित करने की बहुत आवश्यकता है। लेकिन शिक्षक और नेता एक नहीं हैं। बहुत सम्भव है कि कोई शिक्षक नेता के रूप में दिखाई दे, और कोई नेता शिक्षक-जैसा काम करे। लेकिन सच्चा शिक्षक नेतृत्व करते हुए भी 'शिष्यादिच्छेत् पराजय'

[शेष पृष्ठ ३०३, कालम ३ पर]

गांधी-विचार

अहिंसा : सबसे बड़ी ताकत

जब तक अहिंसा की भावना करोड़ों स्त्री-पुरुषों में प्रधान नहीं बन जाती, तब तक शान्ति की गुहार एक अरण्यरोदन ही रहेगी।

राष्ट्रों के सशस्त्र-संघर्ष से हम भयाक्रान्त हो जाते हैं। लेकिन आर्थिक संघर्ष उस सशस्त्र संघर्ष से किसी तरह कम नहीं है। सशस्त्र संघर्ष मानों एक शल्यचिकित्सा है और आर्थिक संघर्ष में दिनों तक चलनेवाली पीड़ा। युद्ध-साहित्य कहलानेवाले साहित्य में युद्ध के जो परिणाम पढ़ने में आते हैं, इनके दुष्परिणाम उनसे कम भयानक नहीं है। हम इस दूसरे युद्ध (आर्थिक) को अधिक महत्व नहीं देते, क्योंकि हम इसके घातक प्रभावों के आदी हो गये हैं।

युद्ध विरोधी आन्दोलन सर्वथा उचित है। मैं उसकी सफलता की कामना करता हूँ। लेकिन अपने में अपने मन को कुरेदने वाली यह आशंका व्यक्त किये बिना भी नहीं रह सकता कि यदि आन्दोलन समस्त दोषों की बुराइयों के मूल कारण पर कुठाराघात नहीं करता, तो वह असफल हो जायगा।

क्या अमरीका, इंग्लैंड और पश्चिम के अन्य महान् राष्ट्र तथाकथित अधिक दुर्बल या असभ्य जातियों का शोषण जारी रखते हुए भी उस शान्ति को हासिल करने की आशा कर सकते हैं, जिसके लिए सारा संसार ललक रहा है? या क्या अमरीका आदि एक-दूसरे का शोषण और व्यावसायिक स्पर्धा जारी रखते हुए भी विश्व को शान्ति बनाये रखने का आदेश देने की धृष्टता करेंगे?

जब तक भावना नहीं बदल जाती, बाह्य स्वरूप भी नहीं बदला जा सकता। बाह्य स्वरूप तो भीतरी भावना की अभिव्यक्ति मात्र है। ऊपरी तौर से हम स्वरूप बदल सकने में शायद सफल हो जायँ, लेकिन यदि भीतरी भावना अपरिवर्तित रहे तो वह परिवर्तन अवास्तविक, नाममात्र का ही होगा। पुती हुई कब्र दिखाई देनेवाली चमकदार वस्तु किसी गल रहे मांस और अस्थियों को ही ढँकती है।

१५, जुलाई '२९

सम्पादकीय

पाकेट का अर्थशास्त्र

कई वर्ष हुए सरकार की एक बड़ी नौकरी के लिए चुनाव का इंटरव्यू हो रहा था। तीन परीक्षकों में से एक परीक्षक ऐसा था जो लगभग हर परीक्षार्थी से अर्थशास्त्र का ही कोई-न-कोई प्रश्न पूछता था। स्वभावतः जो परीक्षार्थी अर्थशास्त्र नहीं जानते थे, बड़े परेशान थे। इतने में एक परीक्षार्थी की बुलाहट हुई। वह बेचारा अर्थशास्त्र का विद्यार्थी नहीं था, डरता-डरता गया। पहुँचते ही परीक्षक महोदय ने पूछा, 'क्या तुम्हें अर्थशास्त्र में रुचि है?' 'जी हाँ, बहुत ज्यादा', परीक्षार्थी ने उत्तर दिया। 'अर्थशास्त्र की किस शाखा में?' परीक्षक ने फिर पूछा। 'श्रीमान्, पाकेट के अर्थशास्त्र में', नम्रता के साथ परीक्षार्थी ने निवेदन किया। इसके बाद परीक्षक ने दूसरा प्रश्न ही नहीं पूछा। परीक्षा-फल निकला तो इंटरव्यू में इस परीक्षार्थी को सबसे अधिक नम्बर मिले थे।

साल में एक बार जब विभिन्न सरकारों के बजट विधान-सभा या संसद के सामने पेश होते हैं तो विशेषज्ञ अर्थशास्त्र की दृष्टि से उनकी समीक्षा करते हैं, पत्रकार बड़े बड़े लेख लिखते हैं, व्यापारी खरीद-बिक्री के लिए स्टाक ठीक करते हैं। लेकिन इन सबसे अलग थोड़ी कमाई से खाना और बालबच्चों का पेट पालनेवाला सामान्य नागरिक बार बार अपना पाकेट देखता है, क्योंकि वह एक ही अर्थशास्त्र जानता है—पाकेट का अर्थशास्त्र। उसे इतने से ही रुचि है कि उसके पाकेट में कितना आया, और पाकेट में कितना बचा। इस अर्थशास्त्र का वह विशेषज्ञ है। दूसरा हर अर्थशास्त्र उसकी नजर में अनर्थशास्त्र है।

अगले १ अप्रैल से वह रेल पर चढ़ेगा तो किराया अधिक देना पड़ेगा और किसी सम्बन्धी को पत्र लिखना चाहेगा तो डाकखाना पोस्टकार्ड की कीमत अधिक माँगेगा। दोनों जगह उसके पाकेट से ज्यादा पैसा जायगा। और जब बाजार में जायगा तो? क्या बजट के बाद ऐसा होगा कि अगर वह कोई चीज बेचेगा तो पहले से ज्यादा दाम मिलेगा, या कोई चीज खरीदेगा तो कम दाम देना पड़ेगा? वह देखता तो यह है कि बजट चाहे जैसा हो, जब व्यापारी स्टाक खरीद करना चाहता है तो बाजार को मन्दा कर देता है और बेचना चाहता है तो चढ़ा देता है। कहा जाता है कि सरकार के हाथ में दो शक्तियाँ हैं—बागी के लिए बन्दूक, और बाजार के लिए बजट। इसलिए जब बजट पेश होता है तो नागरिक यह देखना चाहता है कि सरकार के इस अस्त्र का बाजार पर क्या असर हुआ है। अभी तक तो ऐसा नहीं दिखायी देता कि बाजार को सरकार के अस्त्र से डर हुआ हो। बाजार के पास हजार चोरदरवाजे हैं। सरकार के प्रहारों से बचने को उसके पास एक नहीं, अनेक ढालें हैं। क्या वित्तमंत्री के नये बजट में कोई ऐसी बात है, जिससे भरोसा हो कि अब बाजार के मुकाबिले सरकार मजबूत पड़ेगी?

जो बजट दिल्ली में पेश हुआ है, उसमें भारत सरकार की आमदनी खर्च से कम दिखायी गयी है। खर्च अधिक, आमदनी कम का सिलसिला चलता आ रहा है। आखिर खर्च क्यों बढ़ता जा रहा है? क्या इसलिए कि सरकार जनता की भलाई के जो काम कर रही है, उनका खर्च जनता की कमाई से निकल नहीं पा रहा है? कुछ हद तक यह बात सही हो सकती है, लेकिन इससे बड़ी बात यह है कि सरकार का अपना ही खर्च बेहिसाब बढ़ता जा रहा है। आमदनी का बहुत बड़ा भाग सरकार के आदमियों के वेतन और दफ्तरों के खर्च में निकल जाता है। खर्च बढ़ रहा है, और आबादी तथा बेरोजगारी बढ़ रही है, मगर घट रही है तो काम की क्षमता। प्रश्न है कि खर्च बढ़ता ही रहे और काम घटता ही रहे तो यह बढ़ता हुआ खर्च आयगा कहाँ से? एक ओर सरकार की माँगें हैं, तो दूसरी ओर जनता की माँगें हैं, दोनों का मेल कैसे होगा? →

→इस साल के बजट की एक अच्छाई यह बतायी जा रही है कि घाटे की पूर्ति के लिए वित्तमंत्री ने कुछ ज्यादा टैक्स नहीं लगाये है, बल्कि उद्योगों पर लगे हुए टैक्स का भार कुछ घटाया ही है। वह चाहते हैं कि उद्योगों के पास पूंजी अधिक बचे, और कई उद्योगों में जो मंदी आ गयी है वह दूर हो जाय। थोड़ी देर के लिए ऐसा करना ठीक हो सकता है, लेकिन इससे साल-साल बढ़ते हुए सरकारी खर्च का सवाल कैसे हल होगा ? क्या अधाधुंध नोटें छापी जायेंगी ? तब तो बाजार और भी ज्यादा बेकाबू हो जायगा। बाजार के बेकाबू होने का अर्थ है कि देश के दस करोड़ परिवार, जिनमें से अधिकांश आज भी घाटे पर ही चल रहे हैं, और भी अधिक घाटे में पड़ जायेंगे। सरकार भी घाटे में हो और देश के परिवार भी घाटे में हों; इससे बढ़कर आर्थिक संकट दूसरा क्या होगा ? देश सरकार और जनता को मिलाकर होता है। एक का संकट दूसरे के संकट का कारण भी है और परिणाम भी। देश दोहरे घाटे को कबतक और कैसे बर्दाश्त करेगा ?

सरकार कहती है कि देश की सुरक्षा के लिए सेना का खर्च अनिवार्य है। ठीक है, जब शत्रु हैं तो सेना भी होगी, जब तक कि देश प्रतिकार का दूसरा कारगर विकल्प न ढूंढ ले। लेकिन इसका क्या कारण है कि हमारे आन्तरिक जीवन में भी सेना की जरूरत बढ़ती जा रही है ? क्या पुलिस बेकार होती जा रही है ? इसी तरह जब काम नहीं बढ़ रहा है तो सरकार के आदमी और नौकर क्यों बढ़ रहे हैं ? काम का स्थान कागज क्यों ले रहा है ?

सुरक्षा ही नहीं, नागरिक जीवन के लिए भी सेना जरूरी हो; काम बढ़े या न बढ़े, सरकार बढ़ती रहे, परिस्थिति की मांग कुछ भी हो, मनचाही योजनाएँ और बेतुकी राजनीतिक पैंतरेबाजियाँ चलती रहें, उद्योग थोड़े-से कारखानों में ही चलें और लाखों गाँव वीरान होते चले जायँ, यह सब होता ही रहे तो घाटे का ही क्यों, कोई भी सवाल कैसे हल होगा ? और, क्या बजट में कोई ऐसी बात है, जिससे यह संकेत मिले कि सरकार का ध्यान बड़े उद्योग को छोड़कर छोटे उद्योग या छोटे आदमी की ओर भी है ? भारत में तो छोटे आदमी के लिए जैसे जगह ही नहीं रह गयी। जो सरकार देश की असंख्य जनता की शक्ति और बुद्धि का अनादर करे, और विदेशी बुद्धि और पूंजी की मोहताज बनी रहे उससे आशा भी कैसे की जाय कि वह किसी सवाल को हल भी कर सकेगी ? जनता के पास जो कुछ है उसे लेने की सरकार के पास योजना नहीं है। अनुमान है कि अपने देश में दस करोड़ से अधिक लोग रोज बेकार रहते हैं। अगर प्रति व्यक्ति एक रुपया रोज के हिसाब से भी कमाई जोड़ी जाय, और महीने में २५ दिन भी काम के माने जायँ तो आज देश एक साल में तीस अरब रुपये का नुकसान उठा रहा है। यह नुकसान न हो, इसका सरकार के पास क्या उपाय है ?

बजट घाटे का हो या मुनाफे का, देश में अब शक्ति नहीं है कि वह भारी-भरकम सरकार, उसकी भारी-भरकम योजना, और सबके ऊपर भारी-भरकम राजनीति का त्रिविध बोझ बर्दाश्त कर सके। परिस्थिति की मांग है कि सरकार अपने घाटे में अधिक चिन्ता अपने आप को घटाने की करे। सरकार के 'बजट के अर्थशास्त्र' से ज्यादा जनता को 'पाकेट का अर्थशास्त्र' चाहिए। लेकिन उसके लिए तो जनता को कुछ और ही करना पड़ेगा ! ●

बजट की झलकियाँ

२९ फरवरी को अपने जन्म-दिवस पर केन्द्रीय वित्तमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने सन् १९६८-६९ का जो बजट पेश किया, उसमें चालू वर्ष में ३ अरब रुपये का घाटा दिखाया गया है। नये बजट को, जिसके अन्तर्गत श्री देसाई को वर्ष में ३१ अरब ३२ करोड़ की राजस्व-आय का अनुमान है, कुछ झल-कियाँ इस प्रकार हैं :

● अर्जित और अनर्जित आय पर, वर्गीकृत सीमा से अधिक पृथक् सरचार्ज नहीं लगेंगे। लेकिन मूल आय-कर के १० प्रतिशत पर मौजूदा विशेष सरचार्ज कायम रहेगा।

● निर्धारित वर्ष सन् १९६९-७० से सामान्य सम्पत्ति-कर की दर में वृद्धि इस प्रकार होगी।

१० लाख रुपये से २० लाख रुपये तक : २ प्रतिशत से बढ़ाकर २.५ प्रतिशत। २० लाख रुपये से ऊपर सामान्य सम्पत्ति पर २.५ प्रतिशत से बढ़ाकर ३ प्रतिशत।

● करों की चोरी को रोकने के लिए भूमि, भवनों तथा अन्य सम्पत्तियों का मूल्यांकन कराने के लिए एक विभागीय संगठन की व्यवस्था की जायगी। इसके अतिरिक्त :

● बड़े-से-बड़े व्यापार या पेशे के लिए मनोविनोद सम्बन्धी व्यय की अधिकतम राशि ३० हजार रुपये होगी।

● अपनी वास्तविक आय या सम्पत्ति छिपानेवालों को कड़े-से-कड़ा अर्थ-दण्ड दिया जायगा। इसके अन्तर्गत अर्थ-दंड की राशि छिपायी गयी सम्पत्ति पर कम-से-कम १०० प्रतिशत और अधिक-से-अधिक २०० प्रतिशत कर दी जायगी। नये बजट में कुछ अन्य परिवर्तनों से ४ करोड़ रुपये की हानि होगी। १४ करोड़ रुपये का जो अतिरिक्त राजस्व हाथ आयगा उसमें से ८.१६ करोड़ राज्यों को मिलेगा।

● नये बजट में कर-रहित नयी पंचवर्षीय जमा-योजना की घोषणा की गयी है, जिसके अन्तर्गत जमा-कर्ता को ४.५ प्रतिशत वार्षिक ब्याज मिलेगा।

● बजट में कुछ नयी वस्तुओं पर भी चुंगी वसूल की जायगी। लेकिन इस वसूली को सगठित क्षेत्रों तक ही सीमित रखा जायगा।

सामग्री	दर	उपलब्धि (करोड़ में)
मिष्ठान्न और चाकलेट	८० पैसे प्रति किलो०	२.४
चमड़े के कपड़े	२५ प्र० श०	५.४
वाल्व और ट्रांजिस्टर	क्रमश. ३ और १ रु० प्रति	२.६

→

इस अंक में पढ़ें—

२२ मार्च, '६८
वर्ष २ अंक १६] [१८ पैसे

देहात और दिल्ली

सरकार का बजट भी बाढ़ आँधी और तूफान जैसे प्राकृतिक प्रकोपों की तरह एक प्रकोप ही है जो किसी को तो पामाल कर देता है और किसी को खुशहाल और मालामाल। देश के सब लोग आशंका में रहते हैं कि पता नहीं नया बजट किसके लिए वरदान लायगा और किसके लिए विपत्ति। वित्त मंत्री द्वारा घोषित नये-नये कर प्रस्ताव जहाँ कुछ लोगों की कठिनाइयाँ बढ़ाते हैं वहीं बजट में प्रस्तावित नयी छूटें कुछ लोगों के लिए मुनाफे की बहार लाने का जरिया बनती हैं।

प्रति वर्ष प्रायः मार्च महीने में बजट मंथन का अनुष्ठान होता है। बाजार के बड़े बड़े व्यापारी उन चीजों का स्टाक जमा करने लगते हैं, जिनपर नये कर लगने का उन्हें अनुमान होता है। अगर उनका अनुमान सही हुआ तो वे भारी मुनाफा कमा लेते हैं। अगर उनका अन्दाज सही साबित नहीं होता तो घाटा उठाने का खतरा भी रहता है।

वित्त मंत्री श्री मोरारजी देसाई ने जिस दिन लोकसभा में सन् १९६८-६९ का बजट पेश किया उस दिन मैं एक गाँव में था। गाँव के एक चतुर किन्तु बूढ़े किसान ने जब सुना कि लिफाफा पोस्टकार्ड और मनीआर्डर की दर बढ़ा दी गयी तो उसने कहा— प्राकृतिक प्रकोप से तो हम जूझ लेते हैं और थोड़ा बहुत अपना बचाव भी कर लेते हैं पर इस सरकारी प्रकोप के
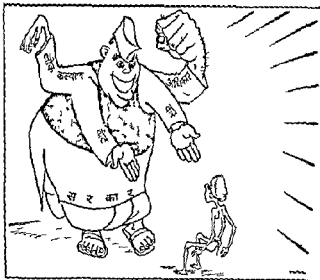
सरकार के हाथ : लेने के पुष्ट, देने के पंगु

आगे हम साधारण लोगों की कुछ नहीं चलती है। सरकार जब जितना चाहती है वसूल कर लेती है। लेकिन यही सरकार बड़े-बड़े व्यापारियों और कारबारियों की जेबों को किसी तरह नही पकड़ पाती। वे अकसर बजट में रखी गयी रियायतो का तो भरपूर फायदा उठाते हैं लेकिन जहाँ सरकार को कुछ देने की बात होती है वहाँ कानून की आँख बचाकर टाल जाते हैं। हरसाल आयकर की न जाने कितनी चोरी की रकम व्यापारियों की तिजोरियों की शोभा बढ़ाती है। कड़ी छानबीन करने पर कोई-कोई पकड़ मे आते हैं पर ऐसा बहुत कम ही हो पाता है।"

उसी दिन गाँव के एक भोले किसान ने पूछा—

"भाई जी! सरकार ने इस साल घाटे का बजट बनाया है। यह घाटे का बजट क्या होता है?"

"अरे भैया, भाई जी से क्या पूछते हो? मैं तुम्हे बताता हूँ—" एक मसखरे ग्रामीण युवक ने कहा। "देखो! जिस साल हम लोगों के यहाँ गुड़ की पैदावार कम होती है उस साल रस घोलते समय हम गुड में कुछ ज्यादा पानी मिलाकर रस पतला कर लेते हैं। इसी तरह जब सरकार के खजाने मे आमदनी कम होती है तो वह कागज के नोट छापकर खर्च का भुगतान कर देती है।"

"क्यों भैया! जब, नोट छापने से ही सरकार का काम चल सकता है तो वह हर साल नये-नये टैक्स क्यो बढ़ाती जाती है?"

दादा आप बिलकुल भोले हो। जैसे गुड मे पानी मिलाने की एक हद होती है वैसे ही नोट छापने की भी। बहुत ज्यादा नोट छाप देने से मँहगाई सुरसा की तरह बढ़ने लगती है।

श्री मोरारजी देसाई ने भारत सरकार का सन् १९६८-६९ का जो बजट लोकसभा मे पेश किया है वह लगभग गाँव के किसान जैसी मजबूरी और पिछड़ेपन का नमूना है। किसान की आमदनी का मुख्य भाग फौजदारी-दीवानी के मुकदमों, मकान, शादी ब्याह, जेवर और तीर्थ यात्रा में खर्च होता है। इन खर्चों के बाद खेती के लिए वह सिर्फ बीज और बैल का इन्तजाम ही कर पाता है। खेती के अच्छे और सुधरे हुए साधन जुटाने की उसके पास पूँजी ही नही रह पाती। इसी तरह आज की सरकार की आमदनी का इतना बड़ा हिस्सा फौज, प्रशासन, विदेश विभाग, शानदार इमारतो और बाहरी दिखावे के कामों में खर्च हो जाता है कि देश की पैदावार बढ़ाने और लोगों को काम काज में लगाने-वाली योजनाओं और कार्यक्रमों के लिए सरकार के खजाने मे पैसा ही नहीं बचता। गाँव का किसान एक तरह के अज्ञान और पिछड़ेपन का शिकार है तो सरकार अनुत्पादक योजनाओं के भूलभुलैये में गिरफ्तार है। जिन कार्यक्रमों और योजनाओं में पूँजी लगाने से बहुत थोड़े समय में देश की पैदावार बढ़ सकती है (जैसे खेतों की सिंचाई और सुधरे हुए औजार) उनके लिए न तो किसान के पास पर्याप्त पूँजी है और न सरकार के पास।

खेती ही भारत की अर्थ व्यवस्था की बुनियाद है इसका ताजा प्रमाण इस साल की अच्छी फसल ने दिया है। बीस वर्षों और अरबों-खरबों की लागत से हासिल कल-कारखानों के उत्पादन ने हमें मँहगाई और कर्ज के बोझ से दबा दिया है।

हमारे वित्तमंत्री बड़े सुलझे हुए और दूरदर्शी माने जाते हैं। वे आम जनता और सरकारी तन्त्र दोनों के गुण-धर्म के जानकार हैं। उनके द्वारा पेश किये बजट से देश की अर्थ व्यवस्था उन्नत होगी या बिगड़ेगी यह तो आनेवाला समय ही बतायेगा। हम तो आज साफ-साफ देख रहे है कि सरकार के कर माँगनेवाले हाथ जितने सक्रिय हैं, सुरक्षा तथा प्रशासन चलानेवाले हाथ जितने पुष्ट हैं, उसी अनुपात मे लोक-कल्याणकारी हाथ पंगु हैं। सरकारी तंत्र के इस विरोधाभास को जब तक सरकार दूर नही कर पाती तब तक उसकी कार्यक्षमता कुंठित ही रहेगी और वित्तमंत्री के लाख संकल्प करने पर भी राष्ट्रीय बजट घाटे का ही रहेगा।●

संस्मरण

आवश्यकता से अधिक लेना चोरी है

एक दिन की बात है। गाधीजी दौरे पर थे। एक आदमी के घर ठहरे थे। गंगा-किनारे का गाँव था। गांधीजी ने पानी माँगा। एक गिलास भर पानी लाया गया। गाधीजी ने दो-एक घूँट पी लिये और गिलास को वहीं रख दिया। मेजबान ने झट गिलास में बचा पानी फेंक दिया। गांधीजी ने नाराज होकर पूछा, "भाई, पानी इस तरह क्यों फेंक दिया? हमें कोई अधिकार नही है कि हम इस तरह पानी को नाहक खर्च करें।"

"लेकिन बापू, गंगा तो बहती है न?"

"भाई, वह मेरे अकेले के लिए थोड़े ही बहती है? आवश्यकता से अधिक लेना एक तरह की चोरी होती है।"

—'गांधी जीवन दीपिका' से
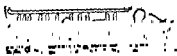
ग्रामस्वराज्य की इमारत की बुनियादें

ग्रामदान के बाद गुलपुरा गाँव में एक सर्वसम्मत ग्राम स्वराज्य सभा बनाने के लिए हम लोग कोशिश करते रहे। इसके लिए गाँववालों की एक सभा २४ दिसम्बर ६७ को हम लोगों ने बुलायी। गाँव का सबसे पवित्र स्थान यतीजी के मन्दिर पर लोगों को एकत्र होने को कहा गया था। काफी प्रतीक्षा और कोशिश के बाद कुल १४ व्यक्ति ही आये जिनमें कई ५० साल से ऊपर की उमर के ही लोग रहे होंगे। ऐसी स्थिति देखकर मन में बड़ी निराशा हुई। १४ लोगों की उपस्थिति में कैसे ग्रामसभा बनायी जाय यह एक प्रश्न था। फिर भी उतने ही लोगों ने मिलजुलकर यह सोचा कि इन १४ लोगों की एक तदर्थ समिति इस बात के लिए गठित कर दी जाय कि यही लोग गाँव भर के लोगों को जुटाकर ग्राम-स्वराज्य सभा बनाने की दिशा में प्रयत्न करें। साथ ही साथ लोगों ने यह भी तय किया कि जनवरी के अन्त तक आचार्य राममूर्ति को बुलाकर उनकी उपस्थिति में ही ग्रामसभा के गठन की घोषणा की जाय तथा उन्हींसे पहली दीक्षा ली जाय। यह भी तय हुआ कि भविष्य में तदर्थ समिति की बैठक मुहल्ले-मुहल्ले हो तथा इन १४ सदस्यों में जो आमंत्रित करे उसके दरवाजे पर हो। इस समिति के अध्यक्ष वयोवृद्ध बाबू हरिहर सिंहजी बनाये गये।

अब पूर्वनिश्चय के अनुसार मुहल्लेवार बैठक होने लगी। जिस सदस्य के यहाँ बैठक होती थी वह अपना यह फर्ज समझता था कि सबको चाय-नाश्ता कराये तथा अपने मुहल्ले के सभी घरों के लोगों को इकट्ठा करे। इस कार्यक्रम में हम लोगों को आशा से बहुत अधिक सफलता मिली। लोगों ने बैठकों में उत्साहपूर्वक भाग लेना शुरू किया। हर मुहल्ले के लोगों ने कुछ ऐसे लोगों का नाम पेश किया जो गाँव के काम में सक्रिय भाग ले सकें। इसी बीच गाँववालों ने आचार्य राममूर्तिजी का समय माँगा और उन्होंने २ फरवरी का समय भी दे दिया। इस आयोजन के प्रबन्ध का सारा जिम्मा भी गाँव के लोगों ने आपस में बाँट लिया। धीरे-धीरे लोगों का उत्साह बढ़ता गया यहाँ तक कि एक दूसरे के विरोधी भी एक-दूसरे के यहाँ बैठकों में भाग लेने के लिए जाने लगे।

इस प्रकार कुल ९ बैठकें हुईं। अन्त में गाँव के सभी लोगों की सम्मिलित बैठक भी हुई जिसमें यह तय किया गया कि गाँव के चारों मुहल्लों से सात-सात व्यक्तियों को लेकर २८ लोगों की एक ग्रामस्वराज्य समिति बना ली जाय। इसमें चुनाव न करके जो लोग अपनी मर्जी से गाँव की सेवा करना चाहते हों उनका नाम सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया जाय। स्थान तय हुआ यतीजी का पवित्र चबूतरा जहाँ लोग सच्चे मन से अपना नाम दें। पहली फरवरी का दिन तय हुआ। गाँव के उत्साही युवकों व बुजुर्गों ने बड़े ही उल्लास से पूरे गाँव को एकत्र करने का अथक परिश्रम किया और यह प्रयास निष्फल भी नहीं गया। शाम को चार बजे से यतीजी के चबूतरे पर लोग जुटने लगे। २८ की जगह ४६ लोगों ने अपना नाम लिखाया। उस दिन इसी काम में काफी देर हो गयी इसलिए अध्यक्ष और मंत्री आदि का चुनाव न हो सका।

२ फरवरी को आचार्यजी आये। उनका स्वागत करने के लिए गाँववालों ने उत्साही युवक श्री बाके सिंह को बलिया भेजा था। दिन भर उनका व्यस्त कार्यक्रम रहा। लोगों ने बड़े चाव से ग्रामदान की बातें सुनी। अन्त में यह महसूस किया कि वास्तव में गाँव की भलाई यदि किसी तरह हो सकती है तो ग्रामदान द्वारा ही। रात सात बजे से गोष्ठी एवं प्रश्नोत्तर शुरू हुए। बहुत समय लगा। अध्यक्ष का चुनाव पुनः टल गया क्योंकि देर हो गयी थी।

पुरानी तदर्थ समिति विघटित हो गयी। आगे की गोष्ठी बुलाने के लिए श्री वीरेन्द्र सिंह को संयोजक चुना गया। ६ फरवरी को पंचायत घर में बैठक हुई। इस बीच चुनाव की काफी चर्चा रही। यह असम्भव ही लगता था कि सारा काम निर्विरोध हो जायगा। इसका वातावरण बनाने का काम हम लोगों ने किया। अन्त में निर्विरोध चुनाव हुआ। सर्वसम्मति से समिति चुनी गयी।

इस समिति ने अपने काम के लिए कुछ मुद्दे तय किये

१ गाँव के संगठन को और भी मजबूत बनाने की लगातार कोशिश की जाय। पूरी तरह से गाँव अदालत मुक्त हो जाय।

२. ग्रामदान में शतप्रतिशत लोगों को शामिल करने का प्रयास किया जाय।

३. आम रास्तों पर रोशनी का प्रबन्ध किया जाय।

४. शान्ति-सेना का गठन किया जाय।

इस कार्य-समिति का कार्यकाल १ वर्ष तक यानी होली-से-होली तक रहेगा। कार्य-समिति की बैठकें पाक्षिक एवं सभा की मासिक हुआ करेंगी।

गाँव के शिक्षक-वर्ग ने भी इस कार्य को सफल बनाने मे अगुवाई की। इस समिति को बराबर शक्तिशाली बनाये रखने के लिए अब आगे भी वे कोशिश करते रहेंगे।

—कमलापति

गांधी-संस्मरण

कर्ज चुकाओ

एक दिन एक नौजवान गांधीजी से मिलने आया। पढ़ा-लिखा था, धनी घर का बेटा था।

गांधीजी ने पूछा, "बताओ, कितना पढ़े हो?"

"स्नातक हूँ विश्व-विद्यालय का।"

"तो तुम्हारी पढ़ाई का खर्च किसने किया?"

"घरवालों ने ही तो किया।"

"पैसा कहाँ पैदा होता है, जानते हो?"

"जी हाँ, व्यापार में।"

"नहीं, सही धन पैदा करते हैं किसान और मजदूर। सच्चा धन श्रम से पैदा होता है। उन्हींके पैसों से तुम्हारी पढ़ाई हुई है।"

"लेकिन बापू, इसमें मेरा क्या कसूर है?"

"मैं कहाँ तुम्हे दोषी ठहराता हूँ। किसीके घर में पैदा होना यह हमारे बस की बात नहीं होती। लेकिन एक बात जरूर है।"

"क्या बापू?"

"जिनके पसीने के पैसे से पढ़े हो, उनका भला भी तो कुछ करना चाहिए।"

"हाँ बापू।"

"तो क्या करोगे?"

"बापू, अब शहर का आदी हो गया हूँ, देहात मे थोड़े ही जा सकूँगा।"

"नहीं जा सकते तो भले न जाओ, लेकिन कुछ तो चुकाओगे कर्जा?"

"हाँ, बतलाइये, मैं क्या करूँ?"

"मैं बनिया हूँ, किसीको ऐसे-वैसे नहीं छोड़ूँगा। तो ऐसा करो न, तुम अपनी कमाई मे से एक महीने की कमाई इनके लिए दे दो। कुछ बड़ी बात नहीं है। अगर एक सेवक की जिम्मेदारी इस तरह के शहर के बारह-पन्द्रह लोग उठा लें तो गाँव की हालत जरूर बदल जायगी। जब शहर के लोग देहातों की ओर वहाँ के गरीबों की फिक्र करने लगेंगे तभी देश की हालत सुधरेगी, क्योंकि आखिर भारत देहात में ही तो बसा है।"

—यदुनाथ थत्ते

यह ढोंग ! यह ढकोसला !!

गाँवों में आज भी ऊँचे घरानों की स्त्रियाँ बाहर नहीं निकलतीं। यह भी कहा जाता है कि जिस घर की स्त्रियाँ जितना कम बाहर निकलती हैं, वह घर उतना ही कुलीन और ऊँचा है।

यदि किसी बहिन को पड़ोस में किसी बहिन से मिलने जाना हो तो वह तड़के भोर में किरण फूटने से पहले के अँधियारे झुटपुटे में या रात के पहले पहर में घर से निकलकर दबी बिल्ली की तरह सपाटे में एक द्वार से दूसरे द्वार तक जायगी। जब दूसरे लोगों का आवागमन कम होता है उस समय उसको कुछ हद तक निर्भयता होती है। लम्बे घूँघट के अलावा भारी चादर से देह को गठरीनुमा बनाकर निकलना तो और भी ऊँचे और कुलीन वर्ग की निशानी माना जाता है। ऐसी परदा प्रथा से पीड़ित उस गाँव में बिहार की एक मंत्रीजी का आगमन हुआ।

अड़ोस-पड़ोस के गाँवों के मुखिया लोगों ने उनकी सभा का आयोजन किया था। कोई बहिन सभा में बोलनेवाली है, वह भी सरकार के एक विभाग की मंत्री हैं इस खबर को सुनकर काफी भीड़ एकत्र हो गयी थी। सभा-मंच पर स्थानीय नेताओं से घिरी उस बहिन मंत्रीजी के अलावा पूरी सभा में गाँव की दूसरी कोई स्त्री नहीं थी। सभा में उपस्थित लोगों को एक बार गौर से देखती हुई मंत्रीजी ने अचानक सवाल किया—'क्या इस गाँव में कोई बहिन नहीं रहती ? क्या यहाँ स्त्रियों को सभा में आना मना है ? यह कैसा गाँव है, जहाँ पुरुष-समाज ने उन्हें चहारदीवारी में कैद कर रखा है ? आश्चर्य है कि देशभर में स्त्री-समाज देश के हर काम में पूरी तरह भाग ले रहा है, और यहाँ का स्त्री-समाज अभी तक जड़ बना हुआ है। आगे उन्होंने मुखिया से कहा कि उन्हें अपने-अपने घरों से स्त्रियों को लेकर सभा में आना चाहिए था। इस बात पर श्रोताओं को ताली पीटते देर नहीं लगी। मुखिया लोग कुछ सकपका से गये।

कुछ समय बाद फिर यह संयोग आया कि दुबारा उस गाँव के पास ही के गाँव में उन्हीं बहिन मंत्री का आगमन हुआ। फिर गाँव में सभा जुटी और इस बार वे बहिनजी यह देखकर बहुत खुश हुईं कि स्त्रियों का एक समूह-का-समूह सभा में उपस्थित है। वे उत्साहपूर्वक देश के निर्माण में बहिनों के योगदान की बात सुनाने लगीं। देर तक यह समझाती रहीं कि परदा प्रथा का अन्त होना चाहिए। स्त्रियों को पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधे मिलाकर हर काम में साथ देना चाहिए आदि-आदि।

सभा विसर्जित हो चुकी थी, बहिनें भी चली गयी थीं। मेरे मन में मुखिया परिवार की बहिनों से घर पर जाकर मिलने की इच्छा हुई। अतः मैं एक परिवार में गयी। मुखियाजी की धर्मपत्नी से मैंने कहा, "यह कितनी खुशी की बात है कि अब लोग इस बात की आवश्यकता समझने लगे हैं कि स्त्रियाँ भी सभाओं में उपस्थित होकर समाज के काम में भाग लें।"

इस पर मुखियाजी की धर्मपत्नी बीच में ही बोल उठीं—'बहिन, क्या छिपाना ! हम लोगों में से कोई भी सभा में नहीं गया था। हम लोग जा भी नहीं सकतीं। वह जो औरतों का झुण्ड था, हरिजनों की औरतों को भाड़े पर इकट्ठा करके भेजा गया था, ताकि मंत्री बहिनजी मुखिया लोगों को डाँटें नहीं। बहिनजी, यही सब तो 'राजसी ठाठ' है। जब कोई नेता आता है तो सभा में खादी पहिनकर जाते हैं और नीच जाति की औरतों को भाड़े पर इकट्ठा कर देते हैं।'

मैं चुपचाप सुनती रह गयी। यह एक ऐसे रहस्य का उद्घाटन था, जिसने अनेक प्रश्न मेरे सामने खड़े कर दिये। एक घुटन-सी हुई उफ ! यह ढोंग, यह फरेब कब मिटेगा ? कब गाँव जागेगा और मानव कब पुरानी रूढ़ियों को छोड़कर समझदारी के साथ नया समाज बनाने में लगेगा ? कब आखिर कब ?

—प्रभा

'थड्डकिलासी' जनता : 'फस्टकिलासी' नेता

गाडी मे इतमीनान की जगह मिल गयी तो बहोरन ने सतोष की सांस लेते हुए कहा, "देख ली न मुखियाजी, दिल्ली की दुनिया ? यही है हम लोगो के भाग्यविधाताओ की इन्द्रपुरी ! यही आने के लिए नेताजी लोग पांच साल मे एक बार हम गरीबो के दरवाजे की मिट्टी अपने जूतो की रगड से खोद डालते हैं। बस, हमारी 'सेवा' का मौका पाने के लिए बेचारे इतनी मारधाड मचाते हैं कि दया आती है इन पर।"

"देख ली बहोरन, दिल्ली की दुनिया देख ली। जिनिगी की साध पूरी हो गयी। पुरखे लोग मरने के बाद इन्द्रलोक जाते थे, हम इस कलियुग मे जीतेजी आये और रहकर अपने मृत्युलोक मे लौट भी रहे हैं। वाह री दिल्ली !" मुखियाजी ने गम्भीर सांस ली।

गाडी मे भीड नही थी। नेता बाबू ने बडी अच्छी गाडी बतायी थी। बहोरन मन-ही-मन सोच रहा था। लेकिन मुखियाजी को यह बात अब भी खटक रही थी। उन्होने जब नेता बाबू से पूछा था, "नेता बाबू, आपकी किरपा से हमलोग दिल्ली खूब घूमे, अब बताइये, घर जाने के लिए गाडी कौनसी ठीक होगी ?" "जनता।' नेता बाबू ने कहा था। 'जनता गाडी ? क्या उसमे सब 'जनता' ही बैठती है, और कोई नही ?" मुखियाजी ने अचरज से पूछा था। "जनता गाडी में सब 'थड्डकिलास' का डब्बा होता है मुखियाजी, इसीलिए उसे 'जनता गाडी' कहते हैं। भीड भी इस गाडी मे कम होती है। आप लोग आराम से घर पहुँच जायेंगे।' नेता बाबू ने समझाया था। "तब तो आप भी इसी गाडी से घर आते-जाते होगे नेता बाबू ?" "नहीं मुखियाजी, बात यह है कि हम लोगो के पास 'फस्टकिलास' का पास होता है। इसलिए हम दूसरी गाडी से जाते हैं, जिसमें 'फस्टकिलास' का डिब्बा लगता है। 'जनता' में 'फस्टकिलास' नही होता।" मुखियाजी के सवाल का जवाब नेता बाबू ने दिया था। नेता बाबू की यह बात सुनकर बहोरन उजड्ड-गँवार की तरह कह बैठा था, "नेता बाबू, अपने देश की 'जनता' सचमुच 'थड्डकिलासी' है, नही तो आप 'जनता' के सेवक लोग 'फस्टकिलासी' कैसे बन पाते ?" मुखियाजी ने उस समय बहोरन को बुरी तरह डांट दिया था। लेकिन दिल मे वह बात तब से ही कुरेद रही है। "कभी-कभी लगता कि बहोरन ने ठीक ही कहा था, कि हमारे देश की जनता 'थड्डकिलासी' है, नही तो इसी जनता की सेवा का नाम लेकर 'थड्डकिलासी' लोग हाँ-हाँ मे 'फस्टकिलासी' कैसे बन जाते ?" मुखियाजी सोच रहे थे, और गाडी दिल्ली के ऊँचे-ऊँचे महलो, भीडभरी सडको और बिजली की जगमगाहट से दूर भाग रही थी।

मुखियाजी गाँव से कभी इतनी दूर नहीं गये थे। लालसा दिल मे बहुत थी कि अन्तिम समय मे चारो धाम तीरथ कर ले, लेकिन न जाने क्यो, ऐन मौके पर कोई-न-कोई झंझट आ ही जाती थी।

मुखियाजी अब नाम के ही मुखिया हैं। वैसे गाँव मे लोग बडा आदर करते हैं। मुखियाजी का एक ही लडका था, जो सन् '४२ की तोड-फोड में १५ साल की उमिर मे ही पुलिस की गोली का शिकार हुआ था। मुखियाजी की पत्नी पुत्र वियोग अधिक दिनो तक नही सह सकी थी, दुख-दर्द की काली छाया उनके जीवन पर पडी तो फिर हटी नही, और ३॥ साल के अन्दर-अन्दर मुखियाजी को अकेला छोडकर वह भी चल बसी। तब से मुखियाजी अकेले हैं। दुख की काली रात या सुख की सुनहली सुबह, सब उनके लिए तब से बराबर हो गयी।

लेकिन इसके बावजूद मुखियाजी जीवटवाले जीव थे। दिल मे दर्द पैदा हुआ, लेकिन सकुचित नही हुआ। पूरा गाँव ही जैसे उनके लिए परिवार बन गया है। आपस मे कोई कितना भी झगडे, मुखियाजी की चौपाल म आने पर सारे वैर भाव चमरौधे जूते की तरह बाहर ही छूट जाते हैं।

गाडी भागती चली जा रही थी। दूर-दराज के गाँवो म जल रहे छिटपुट चिराग झिलमिला रहे थे। (क्रमश)

२२ मार्च, '६८

भूमि-सुधार : आवश्यकता और प्रयोग

आजकल भूमि-सुधार का नारा बहुत जोरों से चल रहा है। भूमि-सुधार से ही देश मे अन्न की समृद्धि होगी ऐसा नेताओं का कहना है। यह बात सही है, परन्तु भूमि-सुधार का मतलब 'सीलिंग' लगाना या कानूनी मालकियत आदि में परिवर्तन करना ही नही है। गाँव की जमीन की रचना प्रकृति के आधार पर करनी होगी। बरसात के पानी तथा जमीन के अन्दर की तरी (पनिहाई) के आधार पर भूमि की पुन: रचना करनी पड़ेगी। इस प्रकार की रचना तभी सम्भव है, जब कि जमीन की व्यक्तिगत मालिकी खत्म होगी।

भूमि की वर्तमान रचना को कायम रखकर चाहे जितनी भी पंचवर्षीय योजनाएँ बनेंगी, अपना देश अन्न में स्वावलम्बी नही हो सकता। पानी के निकास की अच्छी व्यवस्था किये बिना फसल की वृद्धि सम्भव नहीं है। आज ऐसी परिस्थिति है कि एक एकड़ के पानी की निकासी की अच्छी व्यवस्था करनी हो तो पचासों एकड़ की वर्तमान जमीन की रचना तोड़नी होगी।

देश में करीब-करीब बरसात निश्चित समय पर आकर चली जाती है। 'सीलिंग' से या कानून से बरसात के समय में अदल-बदल नहीं किया जा सकता। यह तो प्रकृति का नियम है। आज भूमि की रचना ऐसी है कि २५ मिलीमीटर (१ इंच) वर्षा का पानी सहन नहीं कर सकती है। वर्तमान भूमि की रचना ही बाढ़ तथा अकाल के लिए वरदान है।

भूमि-सुधार, भूमि-समस्या तथा कृषि पर गहराई से अनुसन्धान करना होगा ऐसा विचार मेरे मन में बहुत दिनों से चल रहा था।

जब भारत-चीन सीमा पर लड़ाई आरम्भ हुई तो यह अन्दाज लगाना असम्भव नहीं था कि देश के खाद्यान्न पर बुरा असर पड़नेवाला है। अतः अपना फर्ज है कि अधिक उत्पादन की व्यवस्था की जाय। परन्तु उसके लिए सिंचाई की व्यवस्था करनी होगी और श्रम-शक्ति का पूरा उपयोग करना होगा। ऊपर लिख चुका हूँ कि पानी के निकास की अच्छी व्यवस्था किये बिना फसल की वृद्धि सम्भव नहीं है। सोचते-सोचते एक माह निकल गया। पहले भूमि-सुधार का कार्य आरम्भ करना था। एकदम कृषि के अयोग्य घनघोर जंगल में भूमि-सुधार का काम ३-११-'६२ के दिन रणरंग में आरम्भ हुआ।

मिट्टी काटकर १·४३ हेक्टर (३·५८ एकड़) भूमि समतल की गयी और धान रोपने लायक खेत बनाया गया। ०·४३ हेक्टर मे ०·१५ हेक्टर गाँव की जिरायत भूमि है, बाकी जमीन खेती के अयोग्य जंगल थी, जो सरकार की थी। सरकारी आफिसरों से मिलकर बातचीत की। उन्हें दरखास्त दी, परन्तु उसका कोई परिणाम नही निकला। यह जमीन खेती के इतनी अयोग्य थी कि यदि आदमी जंगल मे घूमते समय गिर जाय तो ६०-७० फुट तक नीचे लुढ़कता चला जाय। छोटे-छोटे पेड़ आदि लगभग २०० थे। एक छोटा-सा नाला था, जिसके दोनों बाजू की जमीन की ढाल २० से ५० डिग्री तक थी। १० फुट तक ऊँची-नीची मिट्टी के ढेले थे। मिट्टी एकदम कनिष्ठ दर्जे की थी। कहीं-कहीं मुरम तथा कहीं-कहीं पत्थर के चट्टान भी थे। २५×१० फुट मिट्टी की दीवाल जैसी थी। और २७ छोटी-बड़ी खाइयाँ थी।

१·४३ हेक्टर भूमि के सुधार मे ६,३७० रुपये का खर्च हुआ। ५ लाख ६८ हजार घनफुट मिट्टी काटी गयी।

कुल छोटे-छोटे १४ टुकड़े (प्लाट) थे। सन् १९६८ में सभी टुकड़ो मे धान की रोपाई हो सकेगी। १५० मिलीमिटर (६ इंच) वर्षा का पानी सहन करने के बाँध बने हैं। सभी टुकड़ों मे पानी के निकास की सुविधा है। पूरी जमीन में सिंचाई की व्यवस्था है।

—गोविंद रेड्डी

'थर्डकिलासी' जनता : 'फस्टकिलासी' नेता

गाड़ी में इतमीनान की जगह मिल गयी तो बहोरन ने संतोष की सांस लेते हुए कहा, "देख ली न मुखियाजी, दिल्ली की दुनिया ? यही है हम लोगों के भाग्यविधाताओं की इन्द्रपुरी। यहीं आने के लिए नेताजी लोग पाँच साल में एक बार हम गरीबों के दरवाजे की मिट्टी अपने जूतों की रगड़ से खोद डालते हैं। बस, हमारी 'सेवा' का मौका पाने के लिए बेचारे इतनी मारधाड़ मचाते हैं कि दया आती है इन पर।'

"देख ली बहोरन, दिल्ली की दुनिया देख ली। जिनिगी की साध पूरी हो गयी। पुराने लोग मरने के बाद इन्द्रलोक जाते थे, हम इस कलियुग में जीतेजी आये और देखकर अपने मृत्युलोक में लौट भी रहे हैं। वाह री दिल्ली!" मुखियाजी ने गम्भीर साँस ली।

गाड़ी में भीड़ नहीं थी। नेता बाबू ने बड़ी अच्छी गाड़ी बतायी थी। बहोरन मन-ही-मन सोच रहा था। लेकिन मुखियाजी को यह बात अब भी खटक रही थी। उन्होंने जब नेता बाबू से पूछा था, 'नेता बाबू, आपकी किरपा से हमलोग दिल्ली खूब घूमे, अब बताइये घर जाने के लिए गाड़ी कौनसी ठीक होगी ?' 'जनता।' नेता बाबू ने कहा था। 'जनता गाड़ी ? क्या उसमें सब 'जनता' ही बैठती है, और कोई नहीं ?' मुखियाजी ने अचरज से पूछा था। "जनता गाड़ी में सब 'थर्डकिलास' का डब्बा होता है मुखियाजी इसीलिए उसे 'जनता गाड़ी' कहते हैं। भीड़ भी इस गाड़ी में कम होती है। आप लोग आराम से घर पहुँच जायेंगे।' नेता बाबू ने समझाया था। "तब तो आप भी इसी गाड़ी से घर आते-जाते होंगे नेता बाबू ?' "नहीं मुखियाजी, बात यह है कि हम लोगों के पास 'फस्टकिलास' का पास होता है। इसलिए हम दूसरी गाड़ी से जाते हैं, जिसमें 'फस्टकिलास' का डिब्बा लगता है। 'जनता' में 'फस्टकिलास' नहीं होता।' मुखियाजी के सवाल का जवाब नेता बाबू ने दिया था। नेता बाबू की यह बात सुनकर बहोरन उजड्ड-गँवार की तरह कह बैठा था, "नेता बाबू, अपने देश की 'जनता' सचमुच 'थर्डकिलासी' है, नहीं तो आप 'जनता' के सेवक लोग 'फस्टकिलासी' कैसे बन पाते ?" मुखियाजी ने उस समय बहोरन को बुरी तरह डाँट दिया था। लेकिन दिल में यह बात तब से ही कुरेद रही है। 'कभी-कभी लगता कि बहोरन ने ठीक ही कहा था, कि हमारे देश की जनता 'थर्डकिलासी' है, नहीं तो इसी जनता की सेवा का नाम लेकर 'थर्डकिलासी' लोग हाँ-हाँ में 'फस्टकिलासी' कैसे बन जाते ?' मुखियाजी सोच रहे थे, और गाड़ी दिल्ली के ऊँचे-ऊँचे महलों, भीड़भरी सड़कों और बिजली की जगमगाहट से दूर भाग रही थी।

मुखियाजी गाँव से कभी इतनी दूर नहीं गये थे। लालसा दिल में बहुत थी कि अन्तिम समय में चारों धाम तीरथ कर लें, लेकिन न जाने क्यों, ऐन मौके पर कोई-न-कोई झंझट आ ही जाती थी।

मुखियाजी अब नाम के ही मुखिया हैं। वैसे गाँव में लोग बड़ा आदर करते हैं। मुखियाजी का एक ही लड़का था, जो सन् '४२ की तोड़-फोड़ में १५ साल की उमिर में ही पुलिस की गोली का शिकार हुआ था। मुखियाजी की पत्नी पुत्र वियोग अधिक दिनों तक नहीं सह सकी थी, दुख-दर्द की काली छाया उनके जीवन पर पड़ी तो फिर हटी नहीं, और ३॥ साल के अन्दर अन्दर मुखियाजी को अकेला छोड़कर वह भी चल बसी। तब से मुखियाजी अकेले हैं। दुख की काली रात या सुख की सुनहली सुबह, सब उनके लिए तब से बराबर हो गये।

लेकिन इसके बावजूद मुखियाजी औघड़पाले जीव थे। दिल में दर्द पैदा हुआ लेकिन संकुचित नहीं हुआ। पूरा गाँव ही जैसे उनके लिए परिवार बन गया है। आपस में कोई कितना भी झगड़े, मुखियाजी की चौपाल में आने पर सारे बैर भाव चमरौंधे जूते की तरह बाहर ही छूट जाते हैं।

गाड़ी भागती चली जा रही थी। दूर-दराज के गाँवों में जल रहे टिमटिम चिराग झिलमिला रहे थे। (क्रमशः)

वियतनाम

मुक्ति का मोर्चा या कसाईखाना

पूँजीवादी देशों मे सरकारी नीति के कारण नफाखोरी की प्रवृत्ति बराबर बढ़ती जाती है। यह भी सच है कि युद्ध के समय पूँजीवादी देशों के उद्योगपतियों का अधिक-से-अधिक लाभ होता है।

अपने देश से दस हजार मील दूर जाकर वियतनाम मे युद्ध करने के कारण अमरीका का सैनिक-व्यय दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। सन् १९३५ मे अमरीका अपने राष्ट्रीय उत्पादन का १० प्रतिशत सुरक्षा पर खर्च करता था। किन्तु सन् १९६० तक इसमें इतनी वृद्धि हुई कि युद्ध मे १० प्रतिशत की जगह ५८ प्रतिशत व्यय होने लगा।

आज वियतनाम में अमरीका प्रतिदिन ७ करोड़ रुपये व्यय कर रहा है। इस युद्ध में उसके १ लाख से अधिक जवान मारे गये। दूसरे महायुद्ध में अमरीका ने जितनी बम-वर्षा सारे यूरोप में नही की थी, उतनी वियतनाम जैसे छोटे से राष्ट्र पर की है।

अमरीका के प्रसिद्ध समाजविज्ञ डा० सोरोकिन ने अमरीका वियतनाम में क्या कर रहा है, इसका विवरण इस प्रकार दिया है :

- अब तक १ लाख ७० हजार लोगों को मार डाला।
- बमबारी द्वारा तथा यंत्रणा देकर ८ लाख लोगों को घायल किया।
- १ हजार कैदखानों में ८ लाख से अधिक बन्दी रखे हैं।
- अनगिनत घरों तथा गाँवों को ध्वस्त किया तथा कई लोगों को उनकी इच्छा के विरुद्ध घर छोड़कर दूसरी जगह जाने को मजबूर किया।
- ५ हजार लोगों को या तो आँते निकाल दी गयी या उनको जीवित दफनाया गया।
- ३० हजार औरतों का शीलभंग किया गया, जिनमे अधिकाश बौद्ध भिक्षुणियाँ थी।
- हजारों एकड़ जोतने योग्य उपजाऊ जमीन को जहरीले रासायनो द्वारा बेकार किया गया। इसके कारण बहुत-से लोग तथा पशु भी मारे गये।

अमरीकी काग्रेस-सदस्य जार्ज ब्राउन ने अपने भाषण मे कहा है, "मेरा देश वियतनाम मे आज जो नीति अपना रहा है, वह हमारे इतिहास मे सबसे दुखद एवं अनैतिक है। इस युद्ध द्वारा हमारे लोगों का चरित्र बिगड़ रहा है। उनकी नीच प्रवृत्तियाँ बलवती हो रही हैं। वियतनाम मे चलनेवाली लड़ाई के लिए, जो इतनी दूर हो रही है, अमेरिका अपने युवकों को अनिवार्य रूप से सेना मे भर्ती किये जाता है। यदि युवक इन्कार करते हैं तो उन्हे जेल भेजा जाता है। एक ओर अमरीकी युवकों को बलि पर चढ़ाया जा रहा है और दूसरी ओर उद्योगपति परिस्थिति का नाजायज लाभ उठाकर दोनो हाथो से पैसा बटोर रहे हैं।"

"बिजनेस वीक" नाम के एक पत्र के अनुसार वियतनाम में युद्ध-सामग्री भेजकर कई उद्योगपतियो ने अपार धन कमाया है। आज उन्हे दो रुपये की वस्तु के लिए सरकार की ओर से लगभग १७५ रुपये तक मिल जाते हैं।

लोगों पर युद्धकर लगाने के बदले सरकार सैनिक-सामान लागत मूल्य पर क्यों नही खरीदती ? यदि अमरीकी जनता इस बात पर डट जाय कि जब तक युद्ध का सामान क्रयमूल्य पर खरीदकर यह नफाखोरी बन्द नही की जाती, तब तक देश के एक भी युवक की अनिवार्य भरती नही हो सकती, तो उस के देश राष्ट्रीय दृष्टिकोण मे महान परिवर्तन आयेगा। इससे उद्योगपति भी अपनी देशभक्ति का परिचय दे सकेंगे। हो सकता है कि सरकार की इस नीति के कारण वियतनाम युद्ध ही बन्द हो जाय, क्योंकि इससे नफाखोरों की स्वार्थ-पूर्ति नही होगी।

(गाधी शान्ति प्रतिष्ठान के सौजन्य से।)

'गाँव की बात'। वार्षिक चंदा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा-संघ के लिए प्रकाशित एवं मंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित।

→जो भाषा में कहना हो, तो जो भगवान के लिए 'नपुंसक' बना होगा, उसीका यह काम है। ईसामसीह ने बड़ा विलक्षण शब्द इस्तेमाल किया। ब्रह्मविद्या मन्दिर के जरिये मैं जो चाहता हूँ, वह यह चीज है। स्त्री-पुरुष दोनों को लागू होनेवाला यह शब्द है।

अनावश्यक इजहार

एक बार रवीन्द्रनाथ ठाकुर के किसी उपन्यास का तर्जुमा हिन्दी में होने लगा। रवीन्द्रनाथ की शिकायत रही कि मूल उपन्यास में तो लिंग नहीं है, लेकिन अनुवाद में अलग-अलग लिंग इस्तेमाल किया गया है। बंगाली भाषा में क्रियापद में और सर्वनाम में लिंग नहीं है (आजकल उन लोगों ने नाहक नया लिंग शुरू कर दिया है। जैसे- विद्यावान और विद्यावती। असमिया भाषा में भी यह शुरू हुआ है—'रसमय भक्ति' के बदले 'रसमयी भक्ति' कर दिया है।) उस हालत में उनका जो वाक्य बनता है, वह लिंगविहीन बनता है और उसका तर्जुमा जब हिन्दी में करते हैं, तब लिंगयुक्त हो जाता है।

हिन्दी में दो वाक्य होंगे—'मैं जाता हूँ,' 'मैं जाती हूँ।' गमन क्रिया के साथ-साथ एक अनावश्यक जाहिरात करनी पड़ेगी कि मैं 'स्त्री' हूँ या 'पुरुष' हूँ। किसी क्रिया के साथ-साथ स्त्री है या पुरुष है, इसका इजहार करते जाना कोई अच्छा लक्षण नहीं है। लेकिन वह चलता है। हिन्दी का यह दोष बंगला-असमिया में नहीं है। भाषा का विशेष सूक्ष्म प्रयोग है, इसलिए इसको गुण भी कह सकते हैं। लेकिन संस्कृत में यह खूबी है कि उसको टालना चाहें तो टाल भी सकते हैं, रखना चाहें, तो रख भी सकते हैं। 'सः गतः', 'सा गता'। 'सः अगच्छत्', 'सा अगच्छत्।' अगच्छत् क्रियापद में कोई फरक नहीं हुआ। संस्कृत के टालनेवाले प्रयोग से बंगला, असमिया निकली और रखनेवाले प्रयोग से हिंदी, गुजराती, मराठी निकली। मैं कहना यह चाहता था कि रवीन्द्रनाथ को हिन्दी तर्जुमा बड़ा विचित्र लगा। 'जहाँ मैं लिंगरहित लिख रहा हूँ और जहाँ लिंग बनाने की कोई अपेक्षा भी नहीं है, वहाँ नाहक लिंग दाखिल करते है, तो मेरे उपन्यास का हिन्दी तर्जुमा नहीं हो सकता', ऐसा उन्होंने कह दिया।

वृत्ति बदलें

मेरा ख्याल है कि उन्होंने ठीक कहा; क्योंकि उसमें वृत्ति का सवाल है, भाषा-प्रयोग का सवाल नहीं। इसलिए मैंने कहा कि तुम लोग नपुंसक बनो। अगर नपुंसकत्व समाज में रूढ़ होगा तो समाज में स्त्रियों के प्रति जो गलत धारणा रूढ़ हो गयी है, उसका निरसन हो सकता है।

३१-१०-'६४

खादी-ग्रामोद्योग की भावी दिशा

पानीपत-सम्मेलन के निर्णय

खादी आश्रम, पानीपत में गत २८ और २९ फरवरी को सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति और खादी-ग्रामोद्योग ग्रामस्वराज्य समिति की संयुक्त बैठक हुई और उसके बाद वहीं पर २ और ३ मार्च को अखिल भारत खादी-कार्यकर्ता सम्मेलन भी हुआ।

नवद्वीपधाम (बंगाल) में फरवरी, '६३ में इसी तरह का अखिल भारतीय सम्मेलन विनोबाजी की उपस्थिति में हुआ था और सरकारी सहायता, बिक्री—'रीबेट' के बदले मुफ्त बुनाई के स्वरूप में लेने का निर्णय लिया गया था। खादी-कार्य की पटरी सरकाराभिमुख या नगराभिमुख के बदले ग्रामाभिमुख की दिशा में मोड़ने तथा परिवार में कताई करनेवालों को केवल रूई के दाम में खादी प्राप्त हो सके और क्षेत्रीय वस्त्र-स्वावलम्बन की दिशा में खादी का काम तेजी से बढ़ सके, इस उद्देश्य से यह मौलिक परिवर्तन किया गया था। उसी सम्मेलन में विनोबाजी ने खादी की लड़ाई—अन्तिम और सर्वोत्तम—की क्रान्तिकारी घोषणा की थी।

पिछले चार वर्षों में उपर्युक्त उद्देश्य की दिशा में खादी-कार्य कुछ खास प्रगति नहीं कर सका। इसलिए फिर से सोचने के लिए यह सम्मेलन बुलाया गया था। खादी-ग्रामोद्योगों के जैसे विकेन्द्रित कुटीरोद्योग ही भारत की वर्तमान परिस्थिति में देश की बहुसंख्य ग्रामीण जनता को आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता प्रदान कर सकती है, यह खादी-ग्रामोद्योग के पीछे दृष्टि रही है। इस व्यापक और मौलिक दृष्टि को खादी-ग्रामोद्योग के सभी कार्यकर्ता ठीक तरह से समझ लें और एक ध्येयवाद सामने रखकर काम करें तो खादी-ग्रामोद्योग कार्य तेजस्वी रूप धारण कर सकता है, इस बात को स्पष्ट रूप से घोषित करने की आवश्यकता श्री शंकरराव देव ने बैठक के सामने रखी।

ग्रामीण जनता कृषि पर निर्भर है। और कृषि के साथ गोपालन, खादी, ग्रामोद्योग और अन्य छोटे-मोटे कुटीरोद्योगों के आधार पर एक समन्वित योजना गाँवों के लिए उपकारक होगी, इस दृष्टिकोण को ढेबरभाई ने बैठक के सामने रखा। आत्मनिर्भरता और आत्मगौरव की भावना देश में लानी चाहिए और आधुनिकतम विज्ञान की तथा अर्थशास्त्रियों की सम्मिलित शक्ति खादी-ग्रामोद्योग में लगनी चाहिए, यह भी उन्होंने कहा।

उपर्युक्त दोनों बातों को एक प्रस्तावन के रूप में रखकर उसके अमल की दिशा बतानेवाला एक प्रस्तावनुमा निवेदन प्रबन्ध-समिति और खादी-समिति की बैठक में तैयार किया गया। खादी-कार्यकर्ता सम्मेलन में उस पर विचार किया गया और सबकी स्वीकृति से वह सम्मत हुआ।

खादी-कार्यकर्ताओं ने चार-पाँच घण्टे तक तीन गोष्ठियों में तीन विषयों को लेकर चर्चा की। वे विषय इस प्रकार थे: (१) उद्देश्य और दिशा की स्थापना, (२) कार्य-व्यवस्था, संयोजन, और परस्पर सहकार तथा समन्वय, (३) वैज्ञानिक सहायता की दिशा और मर्यादा। इन तीनों विषयों में निहित अन्य उपविषयों की भी सूची हर गोष्ठी को दी गयी थी। सर्वश्री मनमोहन चौधरी, विचित्रनारायण शर्मा और अरुणाचलम् क्रमशः उपर्युक्त गोष्ठी के अध्यक्ष थे। गोष्ठी की चर्चा के निष्कर्षों की रिपोर्ट

आन्दोलन के समाचार

● उत्तर प्रदेश में १५ मार्च '६८ तक ४४१२ ग्रामदान तथा २५ प्रखंडदान हो गये। —श्री कपिल भाई के पत्र से।

● शहीदगाँव (वाराणसी) : १३ मार्च को वाराणसी जिले के धानापुर प्रखण्ड में ग्रामदानी ग्रामस्वराज्य अभियान का समापन-समारोह श्री दत्तोबा दास्ताने की अध्यक्षता में प्रखण्डदान की घोषणा के साथ सम्पन्न हुआ। सघन क्षेत्र शहीद गाँव, अजगरा और जिला सर्वोदय मंडल वाराणसी के २२ कार्यकर्ताओं तथा १५० नागरिकों ने इसमें सक्रिय भाग लिया। इस प्रकार चहनिया के बाद धानापुर प्रखण्ड ने काशी के जिलादान का मार्ग प्रशस्त कर दिया है। —भवानी शंकर

● वाराणसी : १६ मार्च। आचार्य श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी ने १० मार्च को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रांगण में स्थित मालवीय भवन में सर्वोदय-साहित्य-प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। प्रदर्शनी १८ मार्च तक चली।

● ठाणे : महाराष्ट्र के ठाणे जिले की ठाणे और वसई तहसील में गत १५ से २३ फरवरी तक १० टोलियाँ घूमीं। ठाणे में ६ और वसई में ६, इस तरह १२ ग्रामदान मिले। २८६ ६० की साहित्य-बिक्री भी हुई।

श्री कपिल भाई

उत्तर-प्रदेशीय ग्रामदान प्राप्ति समिति के संयोजक श्री कपिल भाई गत १५ मार्च '६८ को गोरखपुर में शौचालय जाते समय फिसलकर गिर गये। उनके बायें हाथ में काफी सूजन और दर्द है। डाक्टर ने जाँच के बाद बताया है कि हड्डी टूटी हुई नहीं मालूम पड़ती। पुनः जाँच के बाद निश्चित पता चलेगा। सूजन और दर्द कम करने के लिए इलाज चल रहा है। श्री कपिल भाई को प्रदेश के दौरे के कार्यक्रम फिलहाल स्थगित करने पड़े हैं।

बिहारदान की ओर

● गया : १२ मार्च। बिहारदान के सन्दर्भ में गया जिले का ग्रामदान २ अक्तूबर '६८ तक सम्पन्न किये जाने के उद्देश्य से ग्राम-निर्माण मंडल खादी-ग्रामोद्योग समिति, गया ने ३३ खादी-कार्यकर्ताओं को सेवा के लिए अक्तूबर, '६८ तक जिलादान समिति के जिम्मे सुपुर्द किया है। ऐसे सभी कार्यकर्ताओं का द्विदिवसीय शिविर गया में श्री सिद्धराज ढड्ढा के मार्गदर्शन में ८ और ९ मार्च को सम्पन्न हुआ। —केशव मिश्र

● रानीपतरा : ११ मार्च। गत १० मार्च को यहाँ से ३० मील दूर मनिहारी वल्लभस्वामीनगर में आयोजित पूर्णियाँ जिला सर्वोदय सम्मेलन शान्तिपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हो गया। सम्मेलन का उद्घाटन श्री धीरेन्द्र मजूमदार तथा समापन विनोबाजी के भाषण से हुआ। सम्मेलन में जिले तथा प्रान्त के लगभग पाँच सौ प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

द्विदिवसीय सम्मेलन के अन्त में स्वीकृत प्रस्ताव में इस बात पर जोर डाला गया कि देश में हिंसक प्रवृत्तियों के बढ़ावे को रोकने की दिशा में जनता को समर्थ एवं शिक्षित किया जाय। त्रिविध कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए प्रस्ताव में ग्रामदान-पुष्टि, स्वावलम्बी-खादी का प्रचार तथा शान्ति-सेना के संगठन पर विस्तार से कार्यक्रम तय किये गये।

● धनबाद : ९ मार्च। अब यहाँ गोविन्दपुर और निरसा प्रखंडों का दान कराने का प्रयत्न हो रहा है। प्रखंड में ३६ ग्रामदान हो चुके हैं। शिक्षकों, सरकारी अधिकारियों और पंचायत के मुखियों का सहयोग प्राप्त करने के निमित्त एक क्षेत्रीय सभा बुलायी गयी। सभा में प्रखंड विकास अधिकारी, स्थानीय कालेज के प्राचार्य, प्रोफेसर, शिक्षक और मुखिया, लगभग १०० सज्जन उपस्थित थे। सबने सहयोग का पूरा आश्वासन दिया। —शीतलप्रसाद तायल

झाझा प्रखंड-दान अभियान
कुछ तथ्य

● संकल्प : १४ फरवरी '६८ को ग्रामदानी गाँवों के प्रतिनिधियों द्वारा मुंगेर में पूज्य बाबा के समक्ष प्रखंड-दान प्राप्त करने का संकल्प। पूज्य बाबा का आशीर्वाद प्राप्त।

● पूर्वतैयारी : १७ फरवरी '६८ को झाझा प्रखंड की प्रखंड विकास समिति की बैठक में जिला विकास पदाधिकारी मुंगेर की उपस्थिति में उपर्युक्त संकल्प का सर्वसम्मत अनुमोदन और प्रस्ताव पारित कर सभी मुखियों और सरकारी कर्मचारियों द्वारा सहयोग का आश्वासन।

● अभियान : २२ फरवरी '६८ को प्रखंडदान-प्राप्ति के लिए कार्यकर्ताओं की गोष्ठी, उपस्थित कार्यकर्ता ११ टोलियों में निकले :

ग्रामस्वराज्य संघ, मुंगेर के	...	३
ग्रामदानी गाँव के	...	५३
प्रखंड के शिक्षक	...	४०
प्रखंड के मुखिया	...	५
अन्य गाँवों के लोग	...	११
सरकारी कर्मचारी	...	७

● सहयोग : २६ फरवरी को झाझा प्रखंड विद्वद्गोष्ठी आचार्य श्री कपिलजी के मार्गदर्शन में। तीन दिनों तक सभी शिक्षकों का एकजुट होकर प्रखंडदान-प्राप्ति के कार्य में सक्रिय सहयोग का संकल्प।

● निष्पत्ति :

कुल पंचायत : (शहरी क्षेत्र मिलाकर)	२१
शामिल पंचायत :	१७
कुल ग्रामसंख्या :	१८२
शामिल ग्रामसंख्या :	१६१
कुल जनसंख्या :	९०,०००
शामिल जनसंख्या :	७२,००० (८० प्रतिशत)
कुल जमीन का रकबा :	१,०४,९२० एकड़
शामिल जमीन :	६४,००० एकड़ (६१ प्रतिशत)

● समर्पण : ४ मार्च '६८ को झाझा प्रखंडदान खादीग्राम पधार कर विनोबाजी को। —नित्यानंद झा

श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा-संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस, मानमंदिर वाराणसी में मुद्रित

सामान्य जन की अन्तरात्मा की पुकार
क्रांति की आगाही
पाप में शामिल होने के लिए बाध्य करनेवाले कानूनों की अवहेलना मानव का जन्म-सिद्ध अधिकार

पिछले महीने अमेरिका के बोस्टन शहर की अदालत में पाँच नागरिकों पर एक मुकदमा शुरू हुआ है। इन पाँच में एक डाक्टर, एक विश्वविद्यालय के पादरी, एक लेखक, एक विद्यार्थी और एक किसी संस्थान के व्यवस्थापक हैं। अमेरिका की सरकार द्वारा इन पर यह आरोप लगाया गया है कि वे "नौजवानों को सेना में भर्ती होने से इन्कार करने और भर्ती सम्बन्धी कानून भग करने के षड्यन्त्र में शामिल है।"

मानव मूल में स्वातन्त्र्य-प्रेमी जरूर है, पर साथ ही वह सामान्य तौर पर अपने रोजमर्रा के जीवन-प्रवाह में विक्षेप नहीं चाहता। सत्ता, सम्पत्ति आदि के जरिये अपनी स्वार्थ-सिद्धि करनेवाले लोग युगयुगान्तर में मनुष्य की इस कमजोरी का फायदा उठाते आये हैं। अक्सर यह वर्ग सामान्य लोगों के शोषण के लिए समाज-व्यवस्था के प्रचलित तन्त्र का उपयोग करता रहता है, और लोग यह समझकर कि उनका भाग्य ही ऐसा है, या प्रचलित व्यवस्था को बदलने में अपने को निःसहाय पाकर अन्याय, शोषण और अत्याचार को बर्दाश्त करते जाते हैं। मध्यम वर्ग के अधिकांश लोग भी हर युग में सत्ता और सम्पत्ति के उपासक ही रहे हैं और आम जनता के शोषण में हिस्सेदार! इस प्रकार अन्याय की चक्की चलती रहती है और लोग उसमें पिसते रहते हैं।

पर जब शोषण और अन्याय अपनी सीमा पार करने लगता है और प्रचलित व्यवस्था असह्य हो उठती है तब आखिरकार मनुष्य की मूल चेतना, उसकी अन्तरात्मा जागृत हो जाती है और विद्रोह मुखरित होता है, प्रचलित व्यवस्था से फायदा उठानेवाला सत्ताधारी वर्ग इसे 'षड्यन्त्र', 'कानून की अवहेलना', 'बगावत' आदि का नाम देकर हर सम्भव तरीके से उसे दबाने की कोशिश करता है। युग-युग का यही इतिहास है। सुकरात ने जब यूनान की सही परिस्थिति और सत्ताधारियों के अन्याय का भण्डाफोड शुरू किया तब उस पर मुकदमा चला और उसे मृत्युदण्ड में जहर का प्याला पीना पड़ा। ईसामसीह ने जब तत्कालीन मन्दिरों, मठों और सत्ताधारियों के खिलाफ आवाज उठायी तो उसे सूली पर चढ़ाया गया। देश-भक्ति, सुरक्षा आदि के नाम पर आज के सत्ताधारी भी न केवल युद्ध में हजारों-लाखों लोगों को होमते रहते हैं, बल्कि कानून और दण्ड के आधार पर लाखों नौजवानों को सेना में भर्ती होने और मार-काट में शरीक होने आदि के लिए मजबूर करते हैं।

अमेरिका के उपर्युक्त ५ नागरिकों ने अपनी सरकार द्वारा वियतनाम में किये जा रहे अन्यायपूर्ण युद्ध और भीषण नरसंहार से व्यथित होकर यह आवाज उठायी है कि जो नौजवान लड़ाई को गलत काम मानता है, उसे बावजूद सरकार के अनिवार्य सेना-सेवा कानून के, युद्ध में शरीक होने से इन्कार करने का अधिकार है। मनुष्य जिस काम को घृणित, गलत और पाप समझता है उसमें शरीक न होने का उसका अधिकार वास्तव में स्वयंसिद्ध है, लेकिन आज की सरकारें कानून बनाकर मानव के उस मूलभूत अधिकार को भी छीन रही हैं। किसीसे पाप का काम जबरदस्ती कराने का अधिकार किसी दूसरे को नहीं हो सकता, चाहे वह सरकार या उसके द्वारा बनाया हुआ कानून ही क्यों न हो। अमेरिका के इन नागरिकों ने इसी अन्याय के खिलाफ आवाज उठायी है, और अमेरीकी सरकार ने उनके खिलाफ युद्ध कानून भंग करने और नौजवानों को कानून भंग करने के लिए बहकाने का षड्यंत्र करने के आरोप में मुकदमा चलाया है।

चिन्तन-प्रवाह

इस मुकदमे ने अमेरिकन राष्ट्र में काफी हलचल पैदा कर दी है। समझदार लोग पूछने लगे हैं कि क्या जनतान्त्रिक कहे जानेवाले देश में उनके नागरिकों को अपनी सरकार के गलत और अन्यायपूर्ण कानून के खिलाफ आवाज उठाने का अधिकार नहीं है? इन पाँचों में से एक अभियुक्त, येल विश्वविद्यालय के पादरी विलियम काफिन ने किसी भी प्रकार के षड्यंत्र का या बगावत का इन्कार करते हुए अपनी सीधी और सरल भाषा में एक बुनियादी प्रश्न उठाया है। उन्होंने कहा—"हम न अराजकतावादी हैं, न क्रान्तिकारी हैं, हम तो सिर्फ ऐसे लोग हैं जो अपनी अन्तरात्मा को कभी भी राज्य या कानून के समर्पित नहीं कर सकते।"

काफिन ने ठीक ही कहा है कि चाहे सरकार ने किसी चीज को कानून का जामा पहनाकर उसे सामाजिक प्रतिष्ठा और नागरिक-कर्तव्य का दर्जा दिया हो, पर अगर किसी व्यक्ति की अन्तरात्मा उस काम को गलत मानती है तो उस कानून या व्यवस्था को मानने से इन्कार करना मनुष्य का सहजधर्म है। इसमें अराजकता या क्रान्ति का सवाल कहाँ है? लेकिन वास्तव में क्रान्ति का आरम्भ युग युग में इसी प्रकार होता है, जब सामान्य माने जानेवाले मनुष्य की अन्तरात्मा अन्याय को बर्दाश्त करने से इन्कार कर देती है, और उसके खिलाफ इस प्रकार सहज विद्रोह प्रकट होता है। इस अर्थ में काफिन और उसके सहयोगियों की आवाज एक क्रान्ति की आगाही देती है। प्रचलित अन्याय और व्यवस्था के खिलाफ मानव की अन्तरात्मा की यह सहज पुकार है। आशा है, हर देश में मानवता के उपासक लोगों द्वारा उनके इस विद्रोह का समर्थन होगा।

जयपुर,
१८-३-'६८

—सिद्धराज ढड्ढा

आगे बढ़कर समाजवाद कभी सामान्य समाज की निष्ठा और निर्णय का विषय भी बनेगा? बनेगा तो कैसे बनेगा? समाजवाद की पार्टियाँ तो बन गयीं, लेकिन जो क्रान्तिकारी सामाजिक शक्ति चाहिए वह कहाँ है? नहीं है तो कैसे आयगी? गाँव-गाँव में फैली हुई हमारी असंख्य जनता समाजवादी कैसे बनेगी, और गाँव-गाँव में समाजवादी व्यवस्था की शुरुआत कैसे होगी? क्या सरकार के कानून में यह करने की शक्ति है? क्या नेताओं के भाषणों में है? समाजवाद की शक्ति का स्रोत कहाँ है? क्या जनता को समाजवाद की प्रक्रिया से अलग रखकर भी समाजवाद की स्थापना की जा सकती है? समाजवाद का वह विधायक किंतु विद्रोहात्मक जन-आन्दोलन कहाँ है, जिसकी कल्पना और कामना डा० लोहिया ने बार-बार की थी?

समाजवाद में शक्ति है, बशर्ते वह सरकारवाद से आगे जाने को तैयार हो; लोकतंत्र में शक्ति है, बशर्ते उसे दलवाद के घरौंदे के बाहर निकलने दिया जाय। वास्तव में भारत की परिस्थिति लोकतंत्र और समाजवाद में एक नये साहसपूर्ण प्रयोग की माँग कर रही है। लेकिन अफसोस इस बात का है कि इक्कीस वर्षों के अनुभव के बाद भी समाजवादी मित्र उस प्रयोग के लिए तैयार नहीं दिखायी देते। क्या तब तैयार होंगे जब सत्तालोलुप राजनीति देश को फासिस्टवाद के मुँह में पहुँचा चुकेगी? अभी तो साम्यवाद और सम्प्रदायवाद के बीच में ही रहकर समाजवाद अपने विरोधवाद को कायम रखने की विफल कोशिश करता दिखायी दे रहा है। उसे दूसरी चीजों के लिए फुर्सत कहाँ?

ग्रामदान की शक्ति आज चाहे जितनी क्षीण हो, लेकिन उसकी कोशिश यही है कि फासिस्टवाद के मुकाबिले गाँव-गाँव में लोकतंत्र और समाजवाद की लोक-शक्ति संगठित हो। ग्रामदान नयी व्यवस्था की शुरुआत के लिए समाजवादी या अन्य किसी पार्टी की विजय या पराजय की राह नहीं देखना चाहता। उसके लिए जनता का निर्णय काफी है। ग्रामदान के सिवाय आज दूसरी कौन आवाज है जो निजी स्वामित्व और सरकार-स्वामित्व के अन्त की एक साथ पुकार लगाती हो, जो ग्राम-नेतृत्व द्वारा सत्ता को प्रत्यक्ष जनता के हाथों में सौंपने की घोषणा करती हो?

क्या मधुजी ने ग्रामदान में ग्रामस्वराज्य के इन पहलुओं और प्रक्रियाओं पर कभी ध्यान दिया है? क्या उन्होंने कभी यह सोचा है कि अगर ग्रामदान सफल हो जायगा तो समाजवादी दल भले ही न रह जाय, पर समाजवाद रहेगा—देश में रहेगा, जनता के जीवन में रहेगा, समाज की रचना में रहेगा? अगर मधुजी समाजवादी दल की सीमाओं से उठकर समाजवाद के लिए तैयार हो जायें तो ग्रामदान का सही स्वरूप स्पष्ट हो जायगा, और ग्रामदान लोकतंत्र और समाजवाद के प्रारम्भ-बिन्दु के रूप में दिखायी देने लगेगा। वह रूप विशुद्ध भारतीय होगा। लेकिन जरूरत है दल के रंगीन चश्मे को उतारकर देखने की।

हम चाहते हैं कि देश में सच्चे लोकतंत्र और सच्चे समाजवाद की स्थापना हो—ऐसा समाजवाद जिसमें समाज के हर सदस्य के लिए सम्मानपूर्ण स्थान हो। अगर समाजवाद भी 'कुछ' के ही लिए हो, और उसे भी वर्ग-संघर्ष के ही रास्ते पर चलना हो, तो फिर साम्यवाद से अलग एक नया नाम और नारा क्यों? लोकतान्त्रिक समाजवाद का आकर्षण ही यह रहा है कि वह "सर्व" के लिए है, और "सर्व" का उदय उसका ध्येय है। किन्तु दल की कठोर सीमाओं में बँधकर समाजवाद अपना मूल आकर्षण और अपनी मानवीय प्रेरणा खो रहा है।

ग्रामदान में "सर्व" का समाजवाद है। लोकतंत्र का दूसरे किसी समाजवाद से मेल ही नहीं बैठता। कितना अच्छा होता अगर मधुजी इस तथ्य को पहचान लेते! संतोष है कि अब ऐसे समाजवादी निकल रहे हैं जो साहस के साथ इस तथ्य को पहचानने लगे हैं। हम अपनी बात भले ही मधुजी के पास न पहुँचा सकें, लेकिन परिस्थिति तो पहुँचाकर रहेगी।●

ग्रामदान : समस्या और संभावना–२

जिनका संकल्प, उन्हींके द्वारा पूर्ति

१४ फरवरी को मुंगेर के पड़ाव पर झाझा प्रखण्ड के अठारह ग्रामदानी नागरिकों ने विनोबाजी के सामने प्रखण्ड-दान का संकल्प किया, और उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। ४ मार्च को खादीग्राम (मुंगेर) के पड़ाव पर उन लोगों ने अपने प्रखण्ड का दान समर्पित किया।

इस अभियान में कुल ११९ कार्यकर्ता लगे थे, जिनमें संस्था के कार्यकर्ता सिर्फ ३ थे, शेष ११६ थे समाज के सामान्य नागरिक।

प्रखण्डदान के बाद ये नागरिक कार्यकर्ता सोच रहे हैं कि प्रखण्ड में जो गाँव बच गये हैं, उनका ग्रामदान पूरा कराकर पड़ोस के प्रखण्ड में लगा जाय।

एक समय था जब संस्था के कार्यकर्ता अकेले घूमते थे, दूसरा कोई साथ नहीं देता था। फिर एक-दो भावनाशील व्यक्ति पास के गाँवों में जाने लगे। अब सामान्य ग्रामदानी नागरिक भी उत्साहपूर्वक सामने आ रहे हैं। संयोजन और नेतृत्व अभी भी संस्था के ही कार्यकर्ताओं का है, लेकिन यह स्थिति भी शीघ्र दूर हो जायगी। 'बिहार-दान' के नारे ने प्राप्ति की पद्धति में जबरदस्त मोड़ पैदा कर दिया है। सन् १९७२ में प्रतिनिधि ग्रामसभाओं के, दलों के नहीं—यह पुकार छोटे लोगों में शक्ति, सम्मान और उत्तरदायित्व की नयी प्रतीति जगा रही है।●

अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन

१७वाँ अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन इस वर्ष आबूरोड (राजस्थान) में करने का निश्चय हुआ है। सर्वोदय-सम्मेलन की तारीखें ८-९-१० जून, १९६८ हैं। इसके पूर्व वहीं पर ६-७-८ जून, को सर्व सेवा संघ का वार्षिक अधिवेशन होगा। आबूरोड जाने के लिए रियायती टिकट की सुविधा हेतु रेलवे-बोर्ड को लिखा गया है। जवाब मिलने पर आगे की आवश्यक सूचना दी जायगी।

पूँजी के 'शोर' में श्रम का 'जोर'

अण्णासाहब सहस्रबुद्धे

हमारे सामने प्रश्न है कि खादी का भविष्य क्या होगा ? इसके लिए हमको खादी के क्रमिक विकास को जानना होगा। सन् १९२१ में खादी विदेशों से प्रतिवर्ष आनेवाले ६० करोड़ रुपये के वस्त्र को रोकने के साधन के रूप में चलती थी। सन् १९२७ में साबरमती आश्रम में रहते हम लोग सोचते और हिसाब लगाते थे कि खादी बाजार में मिल का मुकाबिला कर सकती है। श्री मगनलाल गांधी ने हिसाब लगाया था कि केवल २५ प्रतिशत ही खादी का अधिक दाम होगा। सन् १९३३ में गांधीजी ने सारे देश में हरिजन-यात्रा की। इसी सिलसिले में वह खादी-संस्थाओं में भी गये तो उन्होंने कहा कि 'जीवन-मजदूरी' देना चाहिए और इस प्रकार जो भी दाम पड़े उस दाम पर खादी बिकनी चाहिए। सन् १९४५ में जब गांधीजी आगाखाँ महल से छूटकर आये तो उन्होंने खादीवालों की सभा बुलाकर "जो काते सो पहने और जो पहने वह जरूर काते" का नारा दिया। गांधीजी ने खादी द्वारा आर्थिक विषमता का निराकरण, अहिंसक समाज की रचना और विकेन्द्रीकरण पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि केवल कपड़े के रूप में खादी का उपयोग नहीं करना चाहिए।

इतिहास का नया पन्ना

इसके बाद स्वराज्य आने पर खादी के इतिहास में एक नया पन्ना जुड़ा। सन् १९४६ की सरकारें बनीं तो मद्रास के मुख्य मन्त्री श्री टी० प्रकाशम् ने मद्रास में 'फिरका एम्प्लायमेंट स्कीम' लागू करके खादी-काम करने का कार्यक्रम बनाया। इस आधार पर मद्रास सरकार ने ऐलान किया कि जिस क्षेत्र में यह स्कीम लागू हो वहाँ मद्रास में बाहर से कपड़ा नहीं आयगा। इस बात से इतना तहलका मचा कि टी० प्रकाशम् को मुख्य मन्त्री पद छोड़ देना पड़ा। केन्द्रीय सरकार ने भी इस प्रकार की राज्यों की कार्यवाही को संविधान के विरुद्ध बताया।

'अम्बर' के जन्म की भूमिका

इसी बीच पूना में गांधीजी ने लोगों से कहा कि १५ गज प्रति व्यक्ति के हिसाब से जितना कपड़ा लगता है, उसे कितने चरखे चलाकर तैयार किया जा सकता है। श्री कृष्णदास गांधी, मगनलाल गांधी आदि हिसाबी लोगों ने बताया कि प्रति ५ व्यक्तियों के पीछे एक आदमी लगेगा। गांधीजी ने तुरन्त कहा कि ऐसा चरखा नहीं चाहिए। मैं प्रत्येक परिवार में एक आदमी से अधिक इस काम के लिए नहीं दे सकता। यदि हम यह नहीं कर सकते तो चरखा बन्द करने को कह देना चाहिए। 'अम्बर' चरखे के जन्म की शुरुआत यहीं से हुई।

आज भले ही यह सम्भव हो कि कपड़े की आवश्यकता के लिए हर घर में ८ घण्टे चरखा चलाकर पूर्ति कर ली जाय, किन्तु भविष्य में मैट्रिक पास महिला कदापि चरखा नहीं चलायगी। इसलिए १ घण्टा चरखा चलाकर हर परिवार में वस्त्र की पूर्ति हो जाना जरूरी है, इसके लिए ६ की जगह चाहे १२ तकुए का अम्बर चलाना पड़े या पावर का प्रयोग करना पड़े। यद्यपि मेरा सबसे मतभेद रहता है तो भी मेरी मान्यता है कि गांधीजी ने खादी के लिए जो तीन सिद्धान्त—(१) विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था, (२) शोषण-मुक्ति और (३) बेकारी-मुक्ति—बनाये थे, उनका पालन करते हुए हमें प्रत्येक सुधार अपनाने के लिए तैयार रहना चाहिए।

'श्रम' और पूँजी का शास्त्र

विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था के लिए हमें खेती पर आना पड़ेगा। भविष्य में छोटे-छोटे खेत, सबको काम, सघन खेती, किस फसल में कितने मनुष्य-घंटे लगेंगे, इन सब बातों पर ध्यान देना होगा। अगले १० साल की योजना बनानी हो तो हमें मानना चाहिए कि ५० करोड़ की आबादी में २५ करोड़ लोग काम करनेवाले हैं। कितनी श्रम-शक्ति किस काम में लगायी जाय, देखना होगा। हाथ से काम करने में १०० रु० का वस्त्र तैयार करने पर १५० रुपये और मिल से १०० रु० का माल तैयार करने पर ८०० रु० की पूंजी लगती है। सबसे कम पूंजी खादी के काम में लगती है, किन्तु यह अर्थशास्त्र शासन-कर्ता अर्थशास्त्रियों की समझ में नहीं आता, और न हम उन्हें समझा सकते हैं, क्योंकि ट्रेड यूनियनवादी प्रदर्शन एवं 'घेराव' की भाषा हम नहीं जानते।

इस प्रकार पूरे देश की योजना तैयार की जा सकती है, जिसमें प्रारम्भिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाय और कोई बेकार भी न रहे। अन्न, वस्त्र, शिक्षा और सुरक्षा, इन चार प्रारम्भिक बातों के लिए स्वावलम्बन का सिद्धान्त अपनाने में ही देश का हित निहित है।

'प्रदर्शन' और 'घेराव' की तैयारी

हमारी हालत यह है कि जहाँ सन् १९०० में ४० प्रतिशत कारीगर देश में थे, वहाँ आज केवल ३ प्रतिशत रह गये हैं। वर्तमान स्थिति बनी रही तो यह संख्या और भी कम होनेवाली है। इसके विपरीत ६० प्रतिशत के बजाय आज ७८ प्रतिशत लोग खेती में लगे हैं। जमीन तो बढ़ी नहीं, पर जमीन पर श्रम करनेवालों का बोझ दिन-पर-दिन बढ़ता जा रहा है। इसे कम करने के लिए मानवीय श्रम-शक्ति के आधार पर योजना बनानी होगी। हम लगभग ४० हजार कार्यकर्ता खादी-काम में लगे हैं। कारीगरों को भी लगायें तो २५ लाख संख्या हो जाती है। इस प्रकार की योजना बनाने की जिम्मेवारी आज हमारी है। यदि सुनवाई न हो तो सरकार की समझ में आनेवाली अखण्ड प्रदर्शन तथा घेराव की पद्धति का उपयोग करने की भी तैयारी करनी चाहिए।

दावा सिद्ध करना है

कच्चे माल का पक्का माल तैयार करने की क्रिया ग्रामीण शक्ति के आधार पर करनी होगी। चरखे के एक तकुए को चलाने पर जहाँ २५ रु० खर्च होता है वहाँ मिल के→

ग्रामदान के यूरोपीय संस्करण की खोज

• सतीशकुमार

कारों के अन्दर बेहद सिकुड़ा, भयंकर मशीनों से जकड़ा, और अनचाही व्यस्तता से अकड़ा यूरोप का आदमी, खास तौर से नौजवान एक बार फिर भारत की ओर आशाभरी नजर से देख रहा है। भले ही महर्षि महेश के जाल मे उसे फँसना पड़ रहा हो, या फिर ध्यान और योग द्वारा निर्वाण-प्राप्ति की आकांक्षा उस पर विजय पा रही हो, उसकी नजर भारत पर ही है। बीटनिक और हिप्पी आन्दोलन के लोग सितार की साधना करते हुए और गांजे का दम लगाते हुए इस मशीनी समाज से दूर भागना चाहते हैं। 'एल० एस० डी०' का सेवन करके या पॉपकला में अपने आपको भुला करके ये जवान आज की सम्पन्न, पर मशीन-दमित समाज-रचना को अस्वीकार कर रहे हैं। परन्तु यह अस्वीकार अधूरा है, नकारात्मक है। यदि इस अमानवीय और मशीन-नियन्त्रित समाज को हम अस्वीकार करते हैं तो वह कौनसा समाज होगा, जो मानवीय आधार पर खड़ा होगा? इस सवाल का उत्तर यूरोप ढूंढ़ रहा है।

इस पृष्ठभूमि में यूरोप के अनेक चिंतकों की दृष्टि विकेन्द्रित अर्थ-रचना की ओर खिंच रही है। *ब्रिटेन के सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री* शूमाखेर 'इंटरमीडिएट टेक्नोलॉजी' का विकास कर रहे हैं। अमेरिका के आर्किटेक्ट पॉल गुडमेन शहरीकरण के अभिशाप से मुक्त छोटे और मानव-सुलभ नगरों की योजना बना रहे हैं। लन्दन के शान्तिवादी पत्रकार जोन पापवर्थ ने विकेन्द्रीकरण के इर्द-गिर्द घूमनेवाले विचारों का द्वैमासिक प्रकाशन : *'रीसर्जेंस' प्रारंभ किया है।* यह पत्रिका अंग्रेजी के बुद्धिजीवी पाठकों में बेहद लोकप्रिय हो रही है।

जोन पापवर्थ ने हमें लिखा कि "गांधी की सबसे बड़ी देन विकेन्द्रीकरण है। ग्रामदान इस विकेन्द्रीकरण का आधार है। हम यूरोप-वासी ग्रामदान के बारे मे बहुत कम जानते हैं। इसलिए क्या आप इंग्लैंड आकर ग्रामदान आन्दोलन पर प्रकाश डाल सकेंगे?"

जोन पापवर्थ ने यह बात 'कमिटी ऑफ *हण्ड्रेड' के मंत्री पीटर कडागन और* 'नेशनल पीस कौंसिल' के मंत्री डोनाल्ड ग्रूम की सलाह से लिखी थी। मैंने और ग्रामदान-आन्दोलन के मेरे *साथी कार्यकर्ता भरत ने यह तय* किया कि हम लोग इंग्लैंड जाकर ग्रामदान-आन्दोलन के बारे मे चर्चा करेंगे। "खास *तौर से गांधी-जन्म-शताब्दी की तैयारी में* ग्रामदान को समझना हमारे लिए बहुत उपयोगी होगा", ऐसा पीटर कडागन ने हमें लिखा। *गांधी-शताब्दी की कड़ी ग्रामदान के* साथ जुड़े, इससे अच्छी बात और क्या हो सकती थी!

अधूरा अस्वीकार ⋯शहरीकरण के अभिशाप से मुक्ति की अकुलाहट⋯फीकी हवाई-यात्रा⋯असफलता को आवरित करने की असफल चेष्टा⋯रोम की शांति-पदयात्रा⋯'इटली के गांधी'⋯भारत में जवान नेता नहीं

२३ नवम्बर, १९६७ को हम लोग भारत से रवाना हुए। इटली में हमारा पहला पड़ाव था। ठंड से ठिठुरे हुए रोम के हवाई अड्डे पर जब एयर इंडिया का ७०७ नम्बर का जेट विमान उतरा तो महसूस हुआ ही नहीं कि हम पिछले दस घंटों में पाँच हजार मील दूर पोप की धर्मनगरी रोम पहुँच गये हैं। मुझे याद आयी अपनी पिछली पद-*यात्रा* की, जब धीरे-धीरे वनों, पहाड़ों, रेगिस्तानों को पार करके हम यूरोप पहुँचे थे। मुझे याद आये वे अनुभव, जिन्होंने विश्व की एकरूपता का दर्शन कराया था। वह खुला आसमान, वे बहती हुई नदियाँ वे सीधे-सरल लोग, वे अंगूरों और अनारों के बाग, वह अप्रत्याशित आतिथ्य! उस सबकी तुलना में यह अत्यन्त गतिशील हवाई-यात्रा फीकी-सी लगी।

रोम क्रिसमस की प्रतीक्षा में अपना शृंगार कर रहा था। रोमन एम्पायर की गाथा को अतीत में छिपाये रोमवासी अपने चेहरों पर वाटिकन से उधार मांगी हुई मुस्कान बांटे हुए थे। धर्म और चर्च की असफलता को छिपाने के लिए वाटिकन कैथिड्रल का घंटा अब भी पूरी गूँज के साथ *बजता है, पर दुनिया जानती है* कि पश्चिमी यूरोप में इटली के कम्युनिस्ट सबसे अधिक *प्रभावशाली*, शक्तिशाली और *अधिक* संख्या-वाले हैं। ३५ प्रतिशत वोट हासिल करनेवाली इटालियन कम्युनिस्ट पार्टी इटली की सबसे बड़ी विरोधी पार्टी ही नहीं है, बल्कि चर्च के खिलाफ नौजवानों के विद्रोह का सबसे बड़ा प्रमाण भी है।

'इटली के गांधी' की संज्ञा से मशहूर डेनलो डोलची ने हमें लिखा था कि आप इंग्लैंड जाते हुए इटली रुकें और नेपल्स से *रोम की शान्ति-पदयात्रा में भाग लें।* उन्हीं के निमंत्रण पर हम इटली में थे। अतः रोम पहुँचते ही सीधे हम डेनलो डोलची के पद-यात्रा-पड़ाव पर पहुँचे। पदयात्री अधिकांश जवान थे—लड़के और लड़कियाँ, बागी और विद्रोही जवान। गाते-बजाते हुए, सोतों को जगाते हुए, शान्ति और आजादी के नारे लगाते हुए ये पदयात्री डेनलो डोलची के पीछे-पीछे चल रहे थे। मुझे याद आयी विनोबा-*पदयात्रा की। करीब-करीब वैसा ही दृश्य* था। डोलची ने मिलते ही मुझसे कहा: "ओह, आप तो एकदम युवक हैं। मैंने तो

तीन, नहीं

रामवृति : सन् १९७२ के चुनाव में ग्रामसभाओं को अपने प्रतिनिधि भेजने हैं, न कि दलों के उम्मीदवारों को वोट देना है। यह बात अब जोर देकर कहनी चाहिए न?

आदर भी, अनास्था भी — मात्र सुधार नहीं, समग्र परिवर्तन — प्रारम्भ विरोध से, अंत भी विरोध से — लक्ष्यसिद्धी के चार कार्यक्रम — शांतिवाले वामपन्थी राजनीति के मोहरे — ग्रामदान के यूरोपीय संस्करण की खोज

सोचा था कि ग्रामदान का संदेश लेकर कोई बुजुर्ग सतीशकुमार आ रहे होंगे।" डोलची के इस 'रिमार्क' पर मैंने कहा "आपने ऐसा क्यों अन्दाज किया?" मेरे इस सवाल पर डोलची मुस्कराये और बोले "जब मैं भारत गया था तो मुझे ऐसा लगा कि सर्वोदय आन्दोलन का सारा नेतृत्व एकान्त रूप से बुजुर्गों के हाथ में है। मुझे एक भी जवान नेता नहीं मिला।' उनके इस पहली ही मुलाकात के 'रिमार्क' पर मुझे मौन रहना पड़ा। पर मैंने समझाते हुए कहा कि 'अब स्थिति बदल रहा है।"

डोलची की पदयात्रा में अहिंसावादी और कम्युनिस्ट, दोनों तरह के शान्ति कार्यकर्ता शामिल थे। इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य था वियतनाम शांति। जब हम रोम पहुँचे तो पदयात्रियों की संख्या १० हजार तक पहुँच गयी थी। डेनलो डोलची के 'अहिंसावाद में विश्वास करनेवालों की संख्या मुश्किल से ५७ प्रतिशत रही होगी। मेरे साथ रोम विश्वविद्यालय की एक सुनहरे बालोंवाली खूबसूरत छात्रा चल रही थी। बहुत कम लोग अंग्रेजी बोलनेवाले थे, इसलिए इस छात्रा नाम की छात्रा के साथ ही मैं बराबर चल रहा था। एक बार छात्रा ने कहा कि 'डोलची व्यक्तिगत रूप से एक महान व्यक्ति है। उनके प्रति हम लोगों में बहुत आदर भी है। परन्तु उनके तरीकों से पिछड़े क्षेत्रों में थोड़ा-बहुत सुधार भले ही हो जाय पर समाज-व्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन लाने का कोई तरीका डोलची के पास नहीं है। इसलिए भले ही वियतनाम शान्ति के नाम पर साम्यवादी और गैर-साम्यवादी सम्मिलित रूप से उनके साथ शान्ति-यात्रा कर लें पर आम तौर से डोलची के साथ ज्यादा जन-बल नहीं है।" छात्रा के इस रिमार्क में काफी हद तक सचाई है।

पूरे पश्चिमी शान्ति-आन्दोलन का अगर विश्लेषण किया जाय तो यह कहना होगा कि उसके सामने किसी स्पष्ट आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक ढाँचे की कल्पना का अभाव है। पश्चिम का शान्ति-आन्दोलन युद्ध विरोध से प्रारम्भ होता है और युद्ध विरोधी प्रदर्शनों के साथ समाप्त हो जाता है। इस नकारात्मक शांतिवाद की तरफ आज का यूरोपीय युवक अधिक दिन आकृष्ट नहीं रह सकता।

इटली के नामी उपन्यासकार अलबर्टो मोराविया से बातचीत के दौरान में मैंने पूछा कि इटली के युवक कम्युनिज्म की तरफ जिस तरह आकृष्ट हो रहे हैं, उस तरह शान्ति-आन्दोलन की तरफ आकृष्ट क्यों नहीं होते?

मोराविया ने कहा 'शान्ति-आन्दोलन एक युद्ध विहीन समाज का लक्ष्य लेकर चलता है। यह अच्छा लक्ष्य है। इस लक्ष्य को छोड़कर शान्ति आन्दोलन के पास कुछ भी नहीं है। किसी भी लक्ष्य को पाने के लिए चार कार्यक्रम आवश्यक होते हैं (१) समग्र दर्शन (२) व्यूह रचना, (३) प्रक्रिया और (४) कारवाई। [(१) टोटल फिलोसोफी, (२) स्ट्रेटजी, (३) टेक्नीक और (४) एक्शन]। ये चारों चीजें कम्युनिस्टों के पास हैं। इसलिए वे युवकों को खींचने में कामयाब होते हैं। मोराविया का यह विश्लेषण शान्ति आन्दोलन को सोचने की काफी सामग्री दे सकता है। अन्यथा शान्ति का काम साम्यवादी आन्दोलन के साथ अधिक-से-अधिक जुड़ता चला जायगा। वैसे तो आज भी साम्यवादी शान्ति-आन्दोलन ही सबसे अधिक मजबूत है और इसलिए इटली में 'शान्ति' शब्द काफी भ्रष्ट हो गया है। जब मैं रोम विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० दगाव से मिला और गांधी-शताब्दी के अवसर पर रोम विश्वविद्यालय में कुछ कार्यक्रम आयोजित करने के सम्बन्ध में बात की तो वे बोले कि 'निश्चय ही हम अपने विश्वविद्यालय में गांधी विचार पर एक अच्छा-सा परिसंवाद करना चाहेंगे। पर हम जो कुछ करेंगे, वह अपनी ओर से ही करेंगे। शान्ति आन्दोलन के साथ सहयोग करना हमारे लिए सम्भव नहीं होगा। क्योंकि शान्तिवाले वामपंथी राजनीति के मोहरे बने हुए हैं।"

लगभग यही बात फ्लोरेंस विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० देवोतो ने भी कही। यद्यपि रोम और फ्लोरेंस विश्वविद्यालय गांधी विचार के प्रति काफी दिलचस्पी ले रहे हैं, पर काश! इस दिलचस्पी का लाभ इटली के शान्ति-आन्दोलन को मिल पाता।

एक अहिंसक समाज का समग्र-दर्शन यदि किसी के सामने है तो उनमें इटली के लब्ध प्रतिष्ठ शिक्षाशास्त्री आलदो कापितिनी का नाम लिया जा सकता है। हालाँ कि उनके पास भी कोई व्यूहरचना या प्रक्रिया नहीं है, पर वे यह जानते हैं कि 'आज के समाज का ढाँचा ही युद्ध पैदा करता है। इसलिए एक विकेन्द्रित एवं अहिंसक समाज की रचना के बिना शान्ति की स्थापना असम्भव है।" कापितिनी ने साफ शब्दों में मुझसे यह बात कही। और इसी सन्दर्भ में उन्होंने कहा कि 'गांधी को स्वातन्त्र्य-सेनानी और सत्याग्रही के रूप में तो यूरोप जानता है, पर गांधी ने कोई आर्थिक ढाँचा भी समाज के सामने रखा था, यह बात विशेष प्रचारित नहीं है। वास्तव में यूरोप की परिस्थितियों के अनुसार हमें ग्रामदान जैसा ही कोई रचनात्मक कार्यक्रम चाहिए। ग्रामदान में ही मुझे युद्ध का उत्तर दिखाई देता है। अगर गांधी शताब्दी के अवसर पर हम ग्रामदान के यूरोपीय संस्करण की खोज करने में सफल हो जायँ तो यह एक सफल गांधी-वर्ष माना जायगा।" ●

तो पचीस

विनोबा : हाँ रे भाई, कहनी ही नहीं, कभी न करनी चाहिए। इस बार चूक गये तो समझ लो पचीस साल तक तुम्हें कोई पूछेगा नहीं! भले लोग हो, भला काम करते रहोगे, पर क्रान्ति का नाम नहीं ले पाओगे।

हिमालय की घाटियों में ग्रामदान की गूँज

ऊँची-ऊँची चोटियों पर तूफान के झोंके

हिमालय ठण्डा है और इस वर्ष जनवरी और फरवरी में अप्रत्याशित वर्षा और हिमपात के कारण शीत का प्रकोप भयंकर हो गया है। लम्बा-चौड़ा क्षेत्रफल और ऊँची-ऊँची चोटियों तथा गहरी घाटियों में बिखरी हुई यहाँ की जनसंख्या दूसरी विशेषता है। उ० प्र० के उत्तरी-पश्चिमी छोर पर बसा हुआ उत्तरकाशी जिला तेजी से जिलादान की ओर बढ़ रहा है। देश की दो पावन नदियों—गंगा और यमुना—का उद्गम उस जिले में है। इसके उत्तर में तिब्बत, पश्चिम में हिमाचल प्रदेश, दक्षिण में देहरादून का जौनसार बावर तथा पूर्व में टिहरी गढ़वाल है। उत्तरकाशी की जनसंख्या डेढ़ लाख से थोड़ी अधिक है, परन्तु क्षेत्रफल ३ हजार वर्गमील से भी अधिक है।

३० जनवरी '६८ से ग्रामदान-तूफान को अधिक वेगवान बनाने की योजना बनी थी, परन्तु २७ जनवरी को ही हिमपात प्रारम्भ हो गया। यमुना के तट पर स्थित बडकोट गाँव में शान्ति-सैनिकों ने शान्ति-दिवस मनाया। वे केवल ६ थे। सामने बर्फ से ढँके हुए गाँव और काट खानेवाली बर्फीली हवा थी, पीठ पर झोले लादे, "हिम, आतप, वर्षा भी जिनके बढ़ते पैर न रोक सके" गाते हुए दो-दो की टोलियों में गाँवों की ओर बढ़ गये। श्री विश्वेश्वरप्रसाद और श्री कर्णसिंह बनाल में गये। जिला गांधी-शताब्दी समिति के मंत्री और लोकप्रिय लोकनायक श्री घनश्याम पाण्डे जौनसार बावर से मिले हुए गोडर खारव क्षेत्र में पहुँच गये। वर्षा और बर्फ ने वहाँ भी पीछा नहीं छोड़ा। ग्रामदान की अधिकांश सभाएँ चूल्हों के आस-पास आग को घेरकर बैठे हुए लोगों के बीच हुईं। लोकगीतों के साथ "गोंगो मा गों स्वराज्य" का नया स्वर भी जुड़ गया।

परन्तु इस आनन्ददायक वातावरण के बीच अत्यधिक शीत और बर्फीली हवाओं के कारण जुकाम, खाँसी और बुखार ने भी ग्रामदान-यात्रियों की परीक्षा की, और ५ फरवरी को तो एक भारी दुर्घटना हो गयी। बादलों के बीच से झाँकनेवाली चाँद की रोशनी में श्री बद्रीदत्त काण्डपाल का पैर चट्टान से नीचे फिसल गया। वे बिच्छू घास की झाड़ी में फँस गये। बहुत देर बाद कराहते हुए वापस आते ही अचेत हो गये। पसलियाँ दर्द से अकड़ गयीं। गाँव के लोगों ने उनकी सेवा-सुश्रुषा की। अब वे पुनः यात्रा पर निकल पड़े हैं।

जिला गांधी-शताब्दी समिति ने जिलादान का संकल्प किया है। अध्यक्ष के नाते जिला मजिस्ट्रेट श्री गंगाराम सर्वोदय-पक्ष के दौरान में अभियानवाले क्षेत्र में यात्रा पर निकलनेवाले थे, पर राडी की चोटी पर हिमपात के कारण यमुना घाटी का उत्तरकाशी से सम्बन्ध-विच्छेद हो गया। उन्होंने भागीरथी की घाटी में यात्रा की। परन्तु बर्फ पिघलते ही २४ फरवरी को सायीं क्षेत्र आ गये। अगले दिन रामासिराजी पट्टी में वे पैदल यात्रा के लिए निकल पड़े। ग्रामदान-अभियान को सफल बनाने के लिए अपनी अपील में वे पहले कह चुके थे—"देश की उत्तरी सीमा पर स्थित होने के कारण देशवासियों ने हमें सीमा का प्रहरी होने का गौरवपूर्ण दायित्व सौंपा है। ग्रामदान से गाँव मजबूत बनेंगे।" अपनी सभाओं में वे कहते हैं—"यह गांधीजी के सपनों का रामराज्य लाने का रास्ता है।" सूचना-विभाग ने बापू और विनोबा की फिल्मों का प्रदर्शन किया।

पुरोला विकास खण्ड की रामासिराजी पट्टी में १२० परिवारों का गुदियार गाँव यहाँ का सबसे बड़ा गाँव है, और कडियाल गाँव के श्री लालीराम सिंह सबसे बड़े भूमिपति। पहले ही दिन उन्होंने ग्रामदान के संकल्प-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिया। उत्तरकाशी जिले के प्रथम ग्रामदानी गाँव सैंज के सभापति श्री घनश्याम सिंह यहाँ आये और गाँव-गाँव में विनोबा का 'रैबार' (सन्देश) पहुँचा गये। पूर्वतैयारी में पोरा गाँव का ग्रामदान हो गया था। अब पोरा से श्री पूर्णानन्द और श्री खिलानन्द अभियान के लिए निकल पड़े।

जिलाधीश की सभा गुदियार गाँव में सूर्यास्त तक चलती रही। ग्रामदान-यात्रियों ने तय किया आज रात कम-से-कम चार गाँवों में तो पहुँचना ही चाहिए।

रात को ही लोग घरों पर मिल सकते हैं। सूर्योदय से सूर्यास्त तक का जीवन पहाड़ों के व्यस्त जीवन में अनमोल है। मिट्टी का तेल मिलता नहीं, अन्धेरे में कैसे जायँ ? चीड़ की तेज जलनेवाली लकड़ी (दलों के छिलके) की मशाल लेकर तीन ग्रामदान-यात्री सुकशाला की ओर निकल पड़े। कीचड़ और फिसलनवाले रास्ते से नीचेवाले तक पहुँच गये। एक नाला पार किया, कुछ आगे बढ़कर कमल नदी पार करनी पड़ी। दलदलवाले खेतों की मेड़ों से रास्ता जाता था। पीठ पर सामान लदा हुआ था। जब गाँव के मुख्य व्यक्ति के द्वार पर पहुँचे तो अन्दर से आवाज आयी, "इतनी रात गये कौन ?" और यात्रियों का उत्तर था—"विनोबा के शान्ति-सैनिक। ग्राम-स्वराज्य के रैबारू (सन्देशवाहक)।" पूछनेवाली लड़की खिलानन्द की भाँजी थी। माँ और पिताजी को मामा और उनके साथ दो अजनबियों के आने की सूचना दी। खिलानन्द ने कहा, "आज विनोबा का सिपाही बनकर आया हूँ। गाँव के लोगों को इकट्ठा करो।" और कुछ ही देर में सारा गाँव इकट्ठा हो गया। संकल्प-पत्र पर हस्ताक्षर हो गये, जो नहीं पहुँच सके उनके पास जाने के लिए कई टोली बन गयीं।

अभियान इन दिनों अपेक्षाकृत निचले क्षेत्रों में चल रहा है। इसमें १००-२०० कार्यकर्ताओं का भारी समूह नहीं है। परन्तु ग्राम-स्वराज्य के लिए समर्पित ४-६ लोगों की एक टुकड़ी है। इसके पीछे खड़े हैं विकास-कार्यकर्ता और शिक्षक और सदियों से पीड़ित और दलित ग्रामों की मुक्ति के लिए व्याकुल जागरूक ग्रामीण। हिमालय→

मध्यप्रदेश सर्वोदय सम्मेलन का निश्चय

अगला वर्ष पराक्रम का होगा

भारत में नयी समाज रचना का जो आन्दोलन देश के विभिन्न प्रान्तों में चल रहा है, उसमें मध्यप्रदेश ने भी अपना एक स्थान बनाया है। इस मार्च महीने के दूसरे सप्ताह में प्रदेश के ऐतिहासिक स्थान ग्वालियर में कार्यकर्ताओं की तालीम और प्रदेश का आगे का कार्यक्रम निश्चित करने की दृष्टि से शिविर और सम्मेलन के आयोजन हुए।

श्री देवेन्द्र कुमार गुप्त ने अपने ताजे चिंतन की भेंट करते हुए शिविर का उद्घाटन किया "बैलगाड़ी की गति धीमी है, इसलिए उसका जमीन के साथ बड़ा संघर्ष रहता है तो भी चलता है, परन्तु उतना संघर्ष रेलगाड़ी में रहेगा तो वह जलकर खाक हो जायगी। इसलिए जितनी गति बढ़े, समाज में जितना विज्ञान बढ़े, उतना ही संघर्ष कम होते जाना चाहिए, नहीं तो समाज भस्मीभूत होगा। इस दृष्टि से समाज में हितविरोध की जगह हितसाम्य की स्थापना करना आज की अनिवार्य आवश्यकता बन गयी है।'

श्री नारायण देसाई ने क्रांति के विविध पहलुओं की व्याख्या करते हुए कहा

- क्रांति कोई पक्ष नहीं, जनता करती है।
- आन्दोलन-कार्यक्रम केन्द्रित नहीं, समस्या-केन्द्रित चाहिए।
- आन्दोलन संस्थागत भी न हो और संस्थाविमुख भी न हो।
- क्रांति की कार्यपद्धति लोकप्रेरक हो।
- नेतृत्व में गणसेवकत्व हो।
- साधन-शुद्धि का आग्रह हो।

श्री गोविंदराव देशपांडे ने शिविर के सामने देश के आन्दोलन कार्य के निरीक्षण में ये दो बातें रखीं

- कार्यकर्ताओं में परस्पर-स्नेह, कुशलता, क्षमता आदि गुण जितने बढ़ने चाहिए, उतने नहीं बढ़ पाये हैं।
- जिन मूल्यों को हम समाज में स्थापित करना चाहते हैं, वे हमारे परिवारों में नहीं दीख पड़ते।

गुजरात सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष डा० जोशी ने अपने जीवन का अंतर्निरीक्षण प्रस्तुत किया। जीवन-परिवर्तन की उस रोचक और आकर्षक कहानी ने सबको बड़ी प्रेरणा और बल दिया।

श्री सुब्बाराव ने राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में भाषा प्रश्न का स्वरूप और उसके हल के लिए अपनी दृष्टि रखी। राष्ट्रभाषा का पूरा आदर करते हुए भी उत्तर का रुख दक्षिण पर कैसी प्रतिक्रिया करता है, यह मिसालों से बताया। उनके संतुलित दृष्टिकोण से अधिकतर लोगों को लगा कि उत्तर के लोगों को दक्षिण की कम-से-कम एक भाषा सीखनी चाहिए।

श्री बनवारीलाल चौधरी ने अपनी हाल ही की विदेश-यात्रा के अनुभव सुनाते हुए कहा कि पश्चिम के देशों की तुलना में पूर्व के देशों में भ्रष्टाचार ज्यादा होने का प्रमुख कारण राष्ट्रीयता की कमी है। इसलिए परिवार के प्रति ज्यादा लगाव है और उसमें से भाई भतीजावाद पनपता है।

शिविर की चर्चाओं में प्रत्यक्ष कार्य में लगे हुए युवक मित्रों ने भी दिलचस्पी के साथ भाग लिया।

शिविर के आयोजन के बाद प्रादेशिक सम्मेलन शुरू हुआ, जिसकी अध्यक्षता गुजरात की कार्यकर्त्री बहन सुश्री हरविलास शाह ने की। मंगल-प्रवचन करते हुए डा० जोशी ने बताया कि धर्म-युग के बाद भक्ति-युग और उसके बाद स्वातंत्र्य-युग आया, अब समाजता का युग आया है। भारत में इस युगकार्य के लिए विनोबा ने यज्ञ शुरू किया है। लोग दान दे रहे हैं, और हम कार्यकर्ताओं को वह करना है। मध्यप्रदेश के मध्य में होने की वजह से यहाँ जितना काम बढ़ेगा उतना असर उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम भारत पर पड़ेगा। सुश्री निर्मला बहन देशपांडे ने कहा कि अब हम प्रखण्डदान और जिलादान की भूमिका पर पहुँचकर प्रान्तदान की ओर अग्रसर हो रहे हैं, और इससे देश में अब हम नयी अर्थनीति और नयी राजनीति का सूत्रपात करने के लिए सक्षम हो सकेंगे।

पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और उत्तर प्रदेश में तूफान खड़ा करने में जिनका बड़ा हाथ है उन डा० दयानिधि पटनायक ने उत्साहप्रेरक वाणी में सम्मेलन को वैचारिक स्फूर्ति प्रदान की। उन्होंने कहा "एक आध्यात्मिक शक्ति है और दूसरी दैहिक। गांधीजी आध्यात्मिक शक्ति के मालिक थे। अपने इस देश में जहाँ अच्छी सुई तक नहीं बनती थी, वहाँ रेल के इंजिन और हवाई जहाज बनने लगे हैं, और साथ-साथ हर रोज लाठी, गोली, अश्रु-गैस और दफा १४४ भी चलने लगे हैं। आध्यात्मिक आधार के बिना यही दशा होती है।

"ग्रामदान के आन्दोलन को जन-आधारित करना ही है, परन्तु उसके पहले, गांधी का नाम लेनेवाले हर व्यक्ति और संस्था के आधारित यह आन्दोलन करना है। ग्रामदान, खादी, शान्ति-सेना—तीनों के कार्यकर्ताओं में अब तक काफी निकटता आयी है और अब से तो उनका बिलकुल एकरूप हो जाना है।

"हमारे देश में बुद्धि है, शक्ति है, दिल है, दिमाग है, जमीन भी बड़ी अच्छी है। अब जरूरत है भाईचारा बढ़ाने की, दिल से दिल जोड़ने की। यह काम कोई भी सरकार तो नहीं कर सकती। हमें जा जाकर जनता को समझाना होगा कि तुम अपने ऊपर विश्वास करो और अपना ठोस संगठन करके आगे बढ़ो तो कोई भी पक्ष शासन में होगा तो भी उसको सहयोग देना पड़ेगा।"

वर्तमान स्थिति का बयान करते हुए डा० दयानिधि ने बताया, "रूस और

→में ग्राम-स्वराज्य के द्वारा "कपड़े, झगड़े और दारू की दुकानों के शोषण से मुक्ति" पाने का आश्वासन जन-जन के हृदय में बैठ गया है। उत्तरकाशी जिले के ६६२ गाँवों में से अब तक ३४४ ग्रामदान हो चुके हैं।

पुरोला, उत्तरकाशी —सुन्दरलाल बहुगुणा

अमेरिका हमें मदद दे रहे है और चीन नकसलबाड़ियाँ खड़ी करने के प्रयत्न में है। तीनो भारत के लिए लाछायित हैं। तीनों का असर बढ़ता जायगा तो भारत में एक नहीं, हजार-हजार वियतनाम बन जायँगे, खून की नदियाँ बहेगी। इन तीनों को अपनी-अपनी जगह रखकर हमें अपना मार्ग निकालना है। इसके लिए विनोबा ने देश के सामने ग्रामदान के रूप में कार्यक्रम रखा है। इस कार्यक्रम का महत्त्व हम समझेंगे और सबको समझा सकेंगे तो हमारा देश अपना सच्चा स्थान प्राप्त कर सकेगा।"

भिण्ड-मुरैना शान्ति-समिति के मन्त्री श्री महावीर प्रसाद ने बागी क्षेत्रों में किये गये कार्यों का विवरण पेश किया। २० आत्म-समर्पणकारियों में से १६ मुक्त हुए और ४ को आजन्म कारावास दिया गया है। उनको मुक्त कराने के प्रयत्न की आवश्यकता बतायी। उन्होंने कहा कि ग्रामदान के कार्यक्रम में से पूरे बागी क्षेत्र की समस्या का हल निकल सकता है।

प्रदेश सर्वोदय मण्डल के मंत्री श्री नरेन्द्र दुबे ने सम्मेलन की ओर से निवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें वर्तमान समस्याओं पर सर्वोदय का दृष्टिकोण पेश करने के साथ-साथ प्रदेशदान की ओर तीव्रता से बढ़ने का सकल्प और आह्वान था। पूर प्रदेश के हर जिले में सामूहिक पदयात्राएँ चलें और ६ जिलों में जिलादान का सघन प्रयत्न हो, ऐसा कार्यक्रम बना।

सुश्री हरविलास बहन ने सम्मेलन का समारोप करते हुए चार बातें रखी :

● ग्रामदान की प्राप्ति के साथ-साथ उतनी ही गति से अपनी पत्रिकाओं के ग्राहक बनाने का और साहित्य-प्रचार का कार्य चलाने की जरूरत है।

● कार्यकर्ता-परिवारों में स्वेच्छिक सतति-मर्यादा होनी चाहिए।

● शिविर-सम्मेलनों में परिवारों की बहनें विशेष हिस्सा लें।

● कार्यकर्ता एक-एक अन्य भाषा सीखें।

ग्वालियर के खादी-सदन में ३ से १० मार्च तक आयोजित शिविर और सम्मेलन का सुचारु संचालन श्री काशिनाथजी त्रिवेदी ने किया। श्री खोडेजी और श्री दादाभाई नाइक की उपस्थिति ने भी आयोजनों की सफलता में सहयोग दिया। मध्यप्रदेश में अब तक २,७०५ ग्रामदान हुए है, जिसमें ७ प्रखण्डदान और २ तहसीलदान शामिल हैं। इस सम्मेलन के संकल्प के अनुसार अब अगला साल पराक्रम का साल रहेगा।

—वसंत व्यास

'पराक्रम-वर्ष' के कार्यक्रम

गत ९-१० मार्च को ग्वालियर में आयोजित दसवें प्रादेशिक सर्वोदय-सम्मेलन में निम्नलिखित कार्यक्रम सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए :—

(१) इस वर्ष प्रदेश की समस्त रचनात्मक संस्थाओं, जिला सर्वोदय-मडलों तथा सर्वोदय-मित्रों के सहयोग से प्रदेश के सभी जिलों में गांधी-शताब्दी-शिविरों की शृंखला का आयोजन किया जाय। इसके अन्तर्गत हर एक जिले में व्यापक पदयात्रा-अभियान आयोजित कर ग्रामदान प्राप्त किये जायँ तथा जिले में ग्रामस्वराज्य की व्यूह-रचना की दृष्टि से शताब्दी के कार्यक्रम को विकसित किया जाय।

(२) प्रदेश के ५ जिलों—इंदौर, पश्चिम निमाड़, टीकमगढ़, सरगुजा और मुरैना—में ग्रामस्वराज्य का चित्र खड़ा करने की दृष्टि से सघन अभियानों द्वारा जिलादान-प्राप्ति का प्रयत्न किया जाय।

(३) गांधी-जन्म-शताब्दी के सन्दर्भ में प्रदेश के नये कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण तथा पुराने कार्यकर्ताओं के पुनर्संस्कार प्रशिक्षण के लिए एक प्रवासी-प्रशिक्षण-विद्यालय चलाया जाय। सघन अभियान के क्षेत्रों में ही प्रशिक्षण विद्यालय के सत्र चलाने की व्यवस्था की जाय।

(४) अब प्रदेश में ग्रामदान-पुष्टि का अभियान प्रारम्भ करने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से दो जिलों में, जहाँ सघन रूप से तहसीलदान और प्रखण्डदान हुए है, ग्रामदान-पुष्टि अभियान का भी सयोजन किया जाय। पुष्टि-अभियान के द्वारा ग्रामदानी गाँवों में ग्रामसभाओं का गठन, ग्रामसभाओं के द्वारा खादी तथा ग्रामोद्योगों का सगठन, नशाबंदी, भगी-मुक्ति इत्यादि विध रचनात्मक प्रवृत्तियों के सघन कार्यक्रम भी आयोजित किये जा सकेंगे।

(५) अहिंसक क्रांति का शक्ति-स्रोत सर्वोदय-साहित्य है। इसके लिए इस वर्ष प्रदेश में गांधी-स्मारक निधि द्वारा एक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया जा रहा है। यह प्रयास किया जाय कि प्रत्येक ग्रामदानी गाँव में सर्वोदय-साहित्य के सेट के साथ इस पत्रिका का भी प्रवेश हो। प्रदेश में एक जिले के सभी गाँवों में हमारी कोई-न-कोई पत्रिका पहुँचे, इसका प्रयास भी इस वर्ष के हमारे कार्यक्रम का एक मुख्य अंग बने।

(६) नगरों में सर्वोदय-विचार के प्रवेश और युवक-शक्ति के जागरण की दृष्टि से इस वर्ष तरुण शान्ति-सेना के संगठन पर विशेष जोर दिया जाय। प्रदेश के सभी प्रमुख नगरों में तरुण शान्ति-सेना के शिविर आयोजित किये जायें तथा केन्द्र स्थापित किये जायें।

(७) प्रदेश में खादी-ग्रामोद्योग की सभी संस्थाओं में मुख्य रूप से तथा प्रदेश की विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं में व्यापक रूप से समन्वय हो, इस पर विशेष जोर दिया जाय तथा खादी के लिए प्रांत में संयुक्त नेतृत्व विकसित करने का प्रयत्न किया जाय। ●
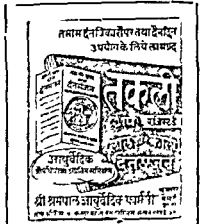
सुश्री निर्मला देशपाण्डे : २१ वीं सदी का सपना

कार्टेड (के प्रतिनिधियों की मथुरा की यात्रा सफल होने के पश्चात् मैं बड़ा-बड़ा वापस घर लौटा था। प्रातः अखबार में समाचार था कि विनोबाजी की मानस-पुत्री सुश्री निर्मलाजी सर्वोदयी कार्यकर्ताओं को संबोधित करेंगी। मैंने खादी भवन से दूरभाष से सम्पर्क स्थापित कर उनसे भेंट करने का समय माँगा। सायंकाल ६ बजे मुझे सम्मेलन के प्रांगण में उपस्थित होने को कहा गया।

इस अवसर को मैं बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा था। आज से सत्रह वर्ष पूर्व की मेरे महाविद्यालयीन छात्र जीवन की मिली-जुली स्मृतियाँ परत-दर-परत उभरने लगी थीं। सन् १९५१-५२ में तब मैं इंटर मीडिएट का छात्र था। उसी समय सुश्री निर्मला देशपाण्डे की नियुक्ति नागपुर महाविद्यालय में राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापिका के पद पर हुई थी। वे नयी-नयी ही आयी थीं। जैसा कि छात्रों का नटखट स्वभाव होता है छात्रगण इसी ताक में थे कि विद्यार्थियों पर अपना रोब जमाये इसके पहले ही नयी प्राध्यापिकाजी को किसी तरह नरवस किया जाय। किन्तु निर्मलाजी के साथ तो कुछ और ही बात हुई।

उनके सादगीपूर्ण व्यक्तित्व में एक अजीब सौम्यता थी विचित्र आकर्षण था। कहाँ तो लड़कों ने तंग करने की योजना बनायी थी परन्तु राजनीतिशास्त्र के विषयों के विवेचनात्मक एवं सहज व्यावहारिक रूप में प्रतिपादित करने के उनके रोचक ढंग से प्रथम भाषण सुनकर ही सबके सब मुग्ध हो गये। समय का अहसास तब हुआ जबकि पीरियड समाप्त होने की घंटी बजी।

सत्रह वर्षों के पश्चात् जब मैं उनसे लश्कर (ग्वालियर) स्थित खादी भवन के प्रांगण में मिलने गया तो मन में अजीब अजीब से सवाल उठ रहे थे। इन वर्षों में उनके व्यक्तित्व में उम्र के हिसाब से कुछ परिवर्तन तो हुए हैं किन्तु मानसिक धरातल अधिक गहराई तक चला गया है। उनके वार्तालाप में गांधी और विनोबाजी के अध्यात्म-दर्शन की पूरी पूरी छाप है। हाव भाव में पहले से अधिक गाम्भीर्य आ गया है।

ग्रामदान के सम्बन्ध में चर्चा करते हुए सुश्री निर्मलाजी ने बताया कि फिलहाल बिहार में इस कार्यक्रम को अधिक प्रोत्साहन और बल मिल रहा है। पिछले पन्द्रह वर्षों में भारत में लगभग ५० हजार से अधिक ग्रामदान किये जा चुके हैं जिनमें से १६ हजार से भी अधिक ग्राम केवल बिहार राज्य में ही दान में प्राप्त हुए हैं। अभी तो करीब ५ लाख गाँव और ४० करोड़ लोग

लेखक निर्मलाजी के साथ

और शेष हैं। आपसी सहयोग परिश्रम एवं लगन से ग्रामवासी किस प्रकार से अपने गाँवों को गांधीजी के सपनों के अनुसार प्रगतिशील एवं उन्नतिशील बना सकते हैं इसका उदाहरण बिहार राज्य के दरभंगा शहर से लगभग आठ मील की दूरी पर स्थित कोरा नामक गाँव है। यहाँ के लोगों ने सर्वसम्मति से गाँव का मंत्रिमण्डल चुना तथा उनके विभागों का आपस में बटवारा किया पंचवर्षीय योजना बनाकर उन्हें क्रियान्वित किया कृषि जनस्वास्थ्य शिक्षा पेयजल बाढ़ की रोकथाम सड़क निर्माण आदि का कार्य बिना किसी प्रकार की बाहरी मदद लिए हुए कर रहे हैं।

उन्होंने एक दूसरा उदाहरण ग्रामदानी ग्रामसभाओं के कार्यों की सफलता का दिया। उत्तरकाशी के मंगोली प्रखण्ड के गाँवों में विभिन्न अदालतों में लगभग १४०० से भी अधिक मुकदमे चल रहे थे। लेकिन सम्पूर्ण क्षेत्र के ग्रामदान के अन्तर्गत आ जाने के फलस्वरूप सभी मुकदमे अदालतों से वापस ले लिये गये तथा उनका निपटारा गाँवों में ही आपसी समझौते से किया गया।

सुश्री निर्मला देशपांडे का विश्वास है कि ग्रामदान के द्वारा यह आन्दोलन एक नया जीवन दर्शन प्रस्तुत कर रहा है। भारत में सामाजिक आर्थिक नैतिक और राजनैतिक क्रान्ति प्रेम दया सत्य और अहिंसा के चिर पुरातन सिद्धान्त के प्रतिपादन से ही आ सकती है। और तब भारत पुनः युद्ध से प्रज्वलित आणविक ज्वालामुखी की चोटी पर अविश्वास एवं अनास्थापूर्वक बैठी पश्चिमी दुनिया को अन्तर्राष्ट्रीय बन्धुत्व एवं सार्वभौमिक विश्व धर्म का अभिनव सन्देश देगा। वह २१वीं सदी भारत की होगी। सत्य से अहिंसा एवं शांति का संदेश सम्पूर्ण विश्व को मिलेगा।

फिलहाल बिहार राज्य में दरभंगा जिला जिलादान के अन्तर्गत प्राप्त हो चुका है तथा तमिलनाडु का तिरुनेलवेली जिला भी ग्रामदान के अन्तर्गत आ चुका है। अब उनका लक्ष्य बिहार राज्यदान है। इसके अतिरिक्त इस दिशा में बिहार उड़ीसा उत्तर प्रदेश हिमाचल हरियाणा पंजाब तमिलनाडु महाराष्ट्र गुजरात एवं मध्यप्रदेश आदि राज्यों में ग्रामदान एवं राज्यदान के लिए तीव्र प्रयास किये जा रहे हैं एवं इन क्षेत्रों में काफी उत्साहवर्द्धक सफलताएँ मिल रही हैं।

सुश्री देशपाण्डे की एक पुस्तक चिंगलिंग हिन्दी मराठी गुजराती तेलुगु अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित हुई है। इसमें उन्होंने एक चीनी लड़की की पार्श्वभूमि में पटकथा बुनकर अन्तर्राष्ट्रीय बन्धुत्व एवं अहिंसात्मक शान्ति का अभिनव सन्देश दिया है। —राजेन्द्र तिवारी एम० ए०
क्षेत्रीय प्रचारक अधिकारी ग्वालियर

गांधी : संस्मरण और विचार

प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, कनाट सर्कस, नयी दिल्ली;

पृष्ठ : ६०८; मूल्य : रु० ३८-००

प्रस्तुत ग्रन्थ का प्रकाशन सन् १९६९ में पड़नेवाली गांधी जन्म-शताब्दी को ध्यान में रखकर किया गया है। इस कड़ी में पहले एक ग्रन्थ 'गांधी : व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव' प्रकाशित हो चुका है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में दो विभाग हैं। पहले विभाग में गांधीजी द्वारा लिखे गये विभिन्न व्यक्तियों के सम्बन्ध में संस्मरण हैं और दूसरे विभाग में गांधीजी के विभिन्न विचारों का संकलन किया गया है। ये विचार सन् १९१५ से लेकर सन् १९२१ तक के हैं। गांधीजी सन् १९१५ में भारत लौटे थे और उसके बाद उनका राष्ट्रीय कार्य-क्षेत्र दिनोदिन व्यापक और तेजस्वी बनता गया। असहयोग तथा सविनय अवज्ञा जैसे आन्दोलन इसी काल के आन्दोलन हैं। सन् '२१ तो गांधीजी और कांग्रेस के इतिहास में अद्वितीय रहा है।

गांधीजी ने विभिन्न देश-सेवकों, साथियों, परिवार के सदस्यों, अंग्रेज शासकों, अधिकारियों, विरोधियों आदि के सम्बन्ध में उनके व्यक्तित्व, त्याग, स्नेह, विद्वत्ता, सौहार्द्र आदि की समय-समय पर अपने पत्रों में चर्चा की है, उनका गौरव किया है, उनको प्रोत्साहन दिया है और उनको सेवा में लगाया है। गांधीजी मूलतः धार्मिक और आध्यात्मिक निष्ठा से ओत-प्रोत थे और जहाँ भी गुण का अणु-सा कतरा मिल जाता था, उसे बटोर लेते थे और उसको चमका देते थे। गांधीजी उन व्यक्तियों में थे जो साहित्य के लिए नहीं लिखते थे, बल्कि जो कुछ लिखते थे वह साहित्य बन जाता था। बहुत से लेखक संस्मरण लिखने की कला-साधना के पीछे वर्षों खपा देते हैं और तब भी उनकी लेखनी शब्दाडम्बर से अधिक कुछ देने में असमर्थ रह जाती है। गांधीजी के संस्मरण अपने में ही एक कला बन गये हैं और उनकी शैली वह शैली है, जो व्यक्तित्व और हार्दिकता से अलग नहीं की जा सकती।

इन संस्मरणों से हमें अनेक बातें जानने-सीखने को मिलती हैं। क्या वह जमाना था, जब ऊँचे-ऊँचे लोग भी सम्पत्ति और प्रतिष्ठा को ठोकर मारकर स्वराज्य की ओर देशभक्ति की आग में कूद पड़े थे और एक लंगोटीधारी फकीर की आवाज पर सरफरोशी की तमन्ना लेकर चलते थे! ये लोग साहसी थे, वीर थे, विद्वान थे, सब कुछ थे। लेकिन उन्होंने देश-सेवा का व्रत लिया, फकीरी का बाना अपनाया और निकल पड़े। गांधीजी को अगर ऐसे संगी-साथी न मिले होते तो क्या गांधीजी के लाये स्वराज्य आ जाता? गांधीजी की भी यह विशेषता रही है कि उनमें लोक-संग्रह का बहुत बड़ा गुण था। छोटे-से-छोटे और बड़े-से-बड़े व्यक्ति के गुणों का आदर करना, उसे अपनाना तथा गौरव देना वे कभी भूलते नहीं थे। इन संस्मरणों को पढ़ते ऐसा अनुभव होता है मानो हम किसी ऐसे उद्यान में विहार कर रहे हैं, जहाँ देश-देश के पुष्प खिले हैं और जिनका आकार, रंग और सुगंध हमारे दिल-दिमाग को मस्त बना देती है।

दूसरे 'विचार' खण्ड में गांधीजी के सन् १९१५ और १९२२ के बीच के विचारों का संकलन है। इन विचारों में उनके धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विचारों का दर्शन हो जाता है। सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने अपनी प्रस्तावना में ठीक ही लिखा है कि "गांधीजी के लिए स्वाधीनता केवल एक राजनैतिक तथ्यमात्र न थी। यह एक सामाजिक सचाई भी थी। वह भारत को विदेशी शासन से नहीं, अपितु सामाजिक कुरीतियों और साम्प्रदायिक झगड़ों से भी मुक्ति दिलाने के लिए लड़े थे। गांधीजी समस्या को सतही स्तर से नहीं, जड़ से देखते थे और उन्होंने भारतवासियों को जो शिक्षा दी है, जो सिद्धांत दिये हैं, जो मार्ग बताया है वह मनुष्य को मनुष्य बनाने के लिए है। यह मार्ग तात्कालिक नहीं है, शाश्वत है। इसमें सन्देह नहीं कि हमने उनके शरीर का अंत कर दिया, किन्तु उनकी आत्मा, जो स्वयं एक दैवी प्रकाश है, बहुत दिनों और बहुत दूर तक प्रवेश कर असंख्य पीढ़ियों को श्रेष्ठता से जीवन-यापन के लिए प्रोत्साहित करती रहेगी।"

इस ग्रन्थ के सम्पादन-संकलन का दायित्व एक संपादक-मंडल पर रहा है। इसमें सर्वश्री काकासाहब कालेलकर, वियोगी हरि, बनारसीदास चतुर्वेदी, डाक्टर केसकर, हरिभाऊ उपाध्याय, विष्णु प्रभाकर तथा यशपाल जैन हैं। इन सबके कुशल तत्वावधान में इस ग्रन्थ का संपादन हुआ है।

बड़े आकार के, सुन्दर-आकर्षक छपाई से युक्त और बढ़िया कपड़े की जिल्द के इस ग्रन्थ को अपने संग्रह में रखने का और उसका अभिमान मानने का लोभ संवरण करना किसके लिए संभव होगा? —जमनालाल जैन

× × ×

गांधी-जीवन दीपिका : लेखक—श्री यदुनाथ थत्ते, प्रकाशक—महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पूना-२, मूल्य १ रुपया।

गांधी-जन्म-शताब्दी को दृष्टि में रखते हुए इधर जो साहित्य प्रकाश में आ रहा है, उसमें 'गांधी-जीवन दीपिका' एक बोधगम्य पुस्तक है। महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पूना ने गांधीजी के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करने के लिए 'गांधी-जीवन-बोध' नामक परीक्षा का आयोजन किया है। इस परीक्षा की तैयारी के लिए विद्यार्थी उक्त पुस्तक से यथेष्ट सहारा ले सकते हैं। इतना ही नहीं, गांधीजी के जीवन-चरित्र से प्रेरणा लेकर अपने जीवन में अच्छा संस्कार डालने में भी पुस्तक सहायक सिद्ध होगी। न केवल विद्यार्थियों के लिए वरन् सभी के लिए पुस्तक उपयोगी है। लेखक श्री यदुनाथ थत्ते एक राष्ट्रीय कार्यकर्ता और सेवक हैं। पुस्तक की छपाई-सफाई सुन्दर है। —प्रभु

समाचार डायरी

देश :

१७ मार्च : बजट का घाटा पूरा करने के लिए रेलवे मंडल द्वारा तीस हजार अस्थायी रेल-कर्मचारियों की छटनी का प्रस्ताव किया।

१८ मार्च : बिहार में ४७ दिन की मंडल-सरकार का पतन, अविश्वास प्रस्ताव १४८ के विरुद्ध १६५ मतों से स्वीकृत।

१९ मार्च : प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा परराष्ट्र मंत्रालय की संसदीय सलाहकार समिति में शेख अब्दुल्ला के खिलाफ उचित कार्रवाई का आश्वासन।

२० मार्च : पालविगो (मैसूर), रेल दुर्घटना में ५२ व्यक्ति मरे और ४१ घायल हुए।

२१ मार्च : पंजाब में राष्ट्रपति शासन अविलम्ब लागू करने की लोकसभा में मांग।

२२ मार्च : चीन व पाक की फौजी तैयारी से खतरा बढ़ा। भारत में सेना के सभी अंगों को सुदृढ़ किया जा रहा है।

२३ मार्च : सेठ गोविंददास ने राजभाषा संशोधन कानून के विरुद्ध आज सर्वोच्च न्यायालय में प्रार्थनापत्र (रिट) दायर की।

विदेश :

१७ मार्च : परमाणु अस्त्रविहीन राष्ट्रों को संरक्षण देने की अमरीकी रूसी संधि पर यूगोस्लाविया ने हस्ताक्षर न करने का निश्चय प्रकट किया।

१८ मार्च : वाशिंगटन-सम्मेलन में सोने के दो तरह के भाव कायम करने का निश्चय किया गया।

१९ मार्च : राष्ट्रपति जानसन ने अमरीकी जनता से अपने खर्चों में कटौती करने के लिए देशव्यापी प्रयत्न करने की अपील की, ताकि वियतनाम-युद्ध जीता जा सके।

२० मार्च : रोडेशियाई अफ्रीकी मुक्ति आन्दोलन के राष्ट्रवादियों ने मुक्ति-युद्ध में १८ गोरों को मार डाला।

२१ मार्च : इसरायली सेना का जोर्डन पर हमला हुआ। स्वेज क्षेत्र में भी लड़ाई हुई।

पदयात्राओं के विराट आयोजन

गांधी-शताब्दी सन् '६९ तक गुजरात के गांव-गांव में विनोबाजी द्वारा प्रवर्तित त्रिविध कार्यक्रम—सुलभ ग्रामदान, ग्रामाभिमुख खादी तथा शांति-सेना—का संदेश पहुँचाने के लिए कार्यक्रम बनाया जा रहा है। इसके एक भाग के रूप में गुजरात सर्वोदय मंडल के उपक्रम से आगामी मई माह में सूरत और सौराष्ट्र के पांच जिलों में सामूहिक पदयात्राओं का आयोजन होगा। इसके अन्तर्गत १ से ६ मई के दौरान सूरत जिले के १३०० गांवों में २५० पदयात्रा-टुकड़ियों द्वारा ग्रामस्वराज्य का संदेश पहुँचाया जायगा। इसके बाद १६ से २४ मई की अवधि में सौराष्ट्र विभाग में पदयात्राएँ होंगी। इन पदयात्राओं के पूर्व प्रत्येक विभाग में तहसील और जिला स्तरीय प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन भी किया जा रहा है।

सरगुजा जिले में महिला लोकयात्रा

देश में शक्ति-जागरण के उद्देश्य से १२ वर्ष तक भारतयात्रा का संकल्प लेकर निकली महिला लोकयात्रा का सरगुजा जिले में २६ फरवरी के दिन से द्वितीय दौर रामानुजपुरी ग्राम से आरम्भ हुआ। सर्वप्रथम अम्बिकापुर प्रखण्ड में ११ मार्च तक का कार्यक्रम रखा गया। पन्द्रह दिन की अवधि में लोकयात्री बहनें घने जंगलों, ऊँची पहाड़ियों को पार करके साठ मील की पदयात्रा कर चुकी हैं। चौदह गांवों में अपने मिशन का संदेश पहुँचाया गया। १७ महिला सभाओं तथा १६ ग्राम-सभाओं को सम्बोधित किया गया। आध्यात्मिक दृष्टि से जिलादान के लिए अनुकूल वातावरण बन रहा है। इस यात्रा के दौरान सात ग्रामदान प्राप्त हुए।

—हनुमान गौड़

श्री सुरेशराम भाई का उपवास

इलाहाबाद २४ मार्च। खबर मिली है कि साम्प्रदायिक तनावों को समाप्त करने के उद्देश्य से श्री सुरेशराम भाई ने १५ दिन का उपवास आरम्भ कर दिया है।

एक आवश्यक स्पष्टीकरण

"एसन्स आफ दि क्रिश्चियन टीचिंग्स" "खिस्तधर्म सार"

श्री विनोबाजी द्वारा चयन किया गया बाइबल का सार "एसन्स आफ दि क्रिश्चियन टीचिंग्स" नाम से सर्व सेवा संघ प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हुआ है। यही पुस्तक एक साल पहले ब्रह्मविद्या मन्दिर, पवनार द्वारा 'खिस्तधर्म सार' नाम से सीमित प्रतियों में प्रकाशित की गयी थी। श्री विनोबाजी ने संस्कृत सूत्रों में जो बाइबल सार इस पुस्तक के प्रारम्भ में लिखा है, उसका शीर्षक 'खिस्त धर्म-सार' है। इसीलिए पवनार से प्रकाशित पुस्तक का नाम "खिस्तधर्म-सार" ही रखा गया था, लेकिन इससे पाठकों की धारणा बन जाती है कि अंग्रेजी बाइबल-सार का ही हिन्दी अनुवाद 'खिस्तधर्म सार' नाम से प्रकाशित है।

दरअसल पवनार से प्रकाशित और सर्व सेवा संघ से प्रकाशित दोनों पुस्तकें अंग्रेजी में ही हैं, लेकिन नाम अलग-अलग हो जाने से गलतफहमी हो जाती है। कई ग्राहकों से हिन्दी खिस्तधर्म सार की मांग आती रहती है। पाठक कृपया नोट कर लें कि बाइबल-सार का हिन्दी अनुवाद अभी प्रकाशित नहीं हुआ है। जब हो जायगा तब उसकी सूचना पाठकों को अवश्य दी जायगी। —संचालक

सर्व सेवा संघ प्रकाशन—वाराणसी १

नयी तालीम आवासिक शाला

नयी तालीम आवासिक शाला अप्रैल, '६३ से गांधी स्मारक निधि, पंजाब, हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेश के तत्वावधान में जारी की गयी है। प्रवेश के समय बच्चे की अवस्था ५ से ८ वर्ष होनी चाहिए। बच्चे का भोजन-खर्च पालकों को कम-से-कम २० रुपये मासिक देना होगा। अन्य साधन-सामग्री का खर्च संस्था का होगा। बच्चों की बातचीत (इण्टरव्यू) १० मई, '६८ को प्रातःकाल होगी। विशेष जानकारी के लिए लिखें, या मिलें —श्री सत्यप्रकाश शर्मा, मंत्री, गांधी स्मारक निधि, पट्टीकल्याणा (करनाल)।

भूदान-यज्ञ २६-३-'६८ : रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३१४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए. ३४

आन्दोलन के समाचार

बिहारदान की ओर

● बोधगया : १० मार्च। बोधगया प्रखंड के मुखियों, सरपंचों तथा समाज-सेवी कार्यकर्ताओं की एक सभा स्थानीय सूचना-केन्द्र में जिला पंचायत परिषद के अध्यक्ष श्री शुकदेव प्रसाद वर्मा की अध्यक्षता में हुई। अध्यक्ष-पद से श्री वर्माजी ने बिहारदान के महत्त्व को समझाते हुए कहा कि बिहार राज्य पंचायत परिषद काफी विचार-विनिमय के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँची है कि आज की परिस्थिति में ग्रामदान ही एक कार्यक्रम है, जिससे गांवों का संगठन हो सकता है और ग्रामस्वराज्य की स्थापना हो सकती है। प्रशासन की बुनियाद गांव है और सभी योजनाएँ गांवों के लोग मिलकर ग्राम-स्तर पर ही बनायेंगे तो प्रशासन सक्षम होगा, गांवों का अभिक्रम जागृत होगा। इसी अभिक्रम के माध्यम से गांव सुखी हो सकेंगे। ग्रामदान के सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए जोर दिया *कि हम सभी गांधीजी* के स्वप्न को प्रत्यक्ष करने में जुट जायें। सर्वसम्मति से प्रखण्डदान प्राप्ति-समिति का गठन किया गया और प्रखण्ड को ९ भागों में *विभक्त कर कार्य-योजना तैयार की गयी।* इस अवसर पर प्रखण्ड विकास पदाधिकारी, समन्वय आश्रम के व्यवस्थापक व जिलादान प्राप्ति-समिति के संयोजक ने भी चर्चा में भाग लिया। —दिवाकर

● मधुबनी : ७ मार्च। २ फरवरी '६८ से दरभंगा जिले के अधराठाढ़ी प्रखंड से *ग्रामसभा-अभियान शुरू हुआ। टोली* में श्री रामचन्द्र साधक, श्री जगदीश भवानी और तीन विद्यार्थी हैं। सघन-यात्रा के दौरान फरवरी माह में बीस ग्रामसभाएँ गठित हुईं, मार्च तक प्रखण्ड के सब गांवों में गठित हो जायेंगी। नये भूमिवानों के ग्रामदान-फार्म पर हस्ताक्षर भी रोज मिलते हैं। बिठौनी के सभापति सुखलाल महतो ग्रेजुएट हैं। *भिखना के सभापति लालजीराम हरिजन हैं,* मंत्री ब्राह्मण, और कोषाध्यक्ष राजपूत हैं। तारापट्टी के सभापति रामफल हरिजन हैं, और मंत्री सुखदेव अमात्य ब्राह्मण। नवटोली के सभापति नवकान्त मिश्र, और मंत्री इसलाम नदाफ चुने गये।

भण्डरिया का प्रखण्डदान

इस मास पलामू जिले में ग्रामदान में भंडरिया नामक प्रखण्ड प्राप्त हुआ है। इस प्रखण्ड में कुल ६६ गांव हैं, जिनमें से ५६ गांवों का ग्रामदान हो चुका है। २४०० की जनसंख्या का गांव शहापुर भी ग्रामदान में प्राप्त हुआ है। —ठाकुरदास बंग

उत्तर प्रदेश

ग्रामदान-अभियान—मेरठ जिले के हापुड़ तहसील के दो ब्लाकों में सिम्हावली तथा गढ़मुक्तेश्वर में ६ से १३ मार्च होली का समय होते हुए भी, और चौधरी चरणसिंह और प्रकाशवीर *शास्त्री के भाषणों से उत्पन्न* परिस्थिति के बावजूद—जो अनुकूल नहीं थे, दस-ग्यारह हजार तक के बड़े-बड़े गांव ग्रामदान में शामिल हुए। इनमें से अधिकांश *गांव मुस्लिम आबादी के हैं, जो साम्प्रदायिक* दंगों के कारण क्षुब्ध थे। ऐसी परिस्थिति में भी उन्होंने ग्रामदान के विचार को स्वीकार किया। ६६ ग्रामदान हुए। —कपिलभाई

गुजरात ग्रामदान सम्मेलन

आगामी १८ अप्रैल—भूमिक्रांति दिवस—को अहमदाबाद में गुजरात ग्रामदान-सम्मेलन आयोजित किया गया है। सम्मेलन में गुजरात के रचनात्मक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, राजकीय और सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्र के प्रतिनिधिगण भाग लेंगे। यह सम्मेलन गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण और श्री दादा धर्माधिकारी के सान्निध्य में होगा।●

दरभंगा में पुष्टि-कार्य

(सदर अनुमण्डल की जनवरी '६८ तक की प्रगति)

प्रखंड	ग्रामसभा संख्या	पुष्टिलायक तैयार कुल गांव-संख्या	पुष्टि-पदाधिकारी के यहाँ दाखिल गांव-संख्या
केउटी	१७	११	७
घनश्यामपुर	२७	२०	५
जाले	३८	१२	४
दरभंगा सदर	६	७	२
बहादुरपुर	५	६	४
बहेड़ी	८०	१ पंचायत २ गांव	--
बिरौल	१२	२	--
बेनीपुर	१७	१५	--
मनीगाछी	१६	८	--
सिंहवाड़ा	२०	८	२
हायाघाट	२२	१६ गांव १ पंचायत	६
कुल	२६०	११० गांव २ पंचायतें	३० गांव

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड; या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : २७

शुक्रवार ५ अप्रैल '६८

इस अंक में

सम्पादक

राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट वाराणसी १ उत्तर प्रदेश

समर्पण की भावना का नाम ग्रामराज्य

आज सुबह मैं समुद्र पर गया और समुद्र के पानी का स्पर्श, सूर्यनारायण का उदय और कन्याकुमारी का स्मरण करते हुए फिर से मैंने प्रतिज्ञा दोहरायी जब तक हिन्दुस्तान में ग्रामराज्य की स्थापना न होगी तब तक यह यात्रा जारी रहेगी।

ग्रामराज्य की मेरी कल्पना अलग है। ग्रामराज्य कोई आयोजन नहीं, एक विचार है। मेरी कल्पना 'वेलफेयर ग्राम' की नहीं—सबको अच्छा और पेटभर खाना मिले, कपड़ा मिले, यह मेरी कल्पना नहीं है। यह तो हर मनुष्य जानता है कि वह बिना खाये नहीं रह सकता, तो मेरा काम है क्या ? समझना यह है कि ग्रामराज्यवाले गाँव के सब लोगों को दुख और सुख साथ-साथ बाँटने की यह भावना है। खायेंगे तो गाँव के सब लोग खायेंगे और किसीको फाका करना पड़ेगा तो सारा गाँव फाका करेगा। अमेरिका में खाने-पीने के लिए बहुत है, तो क्या वहाँ सर्वोदय हो सकता है ? सर्वोदय सबको खाना देना, मिलता नहीं। किसीको खाना नहीं मिलता तो भूदान यह कहती है कि उसको खाना मिले। आखिर उत्पादन बढ़ेगा, तभी पेटभर खाना मिलेगा। और उत्पादन का आधार भी ईश्वर पर ही है या नहीं ? बारिश आयेगी तो फसल होगी। हमें बताया गया कि इस इलाके में ५-६ साल से वर्षा नहीं हुई। तो आज गाँव के लोग दुखी हैं। तो भी वे सब साथ हैं। हम कम्यून की यही भावना बढ़ाना है। हम कोशिश जरूर करेंगे कि गाँव में उत्पादन बढ़े, पर उत्पादन बढ़ने भर से हमें सन्तोष नहीं, हृदय भी व्यापक बनाना है। यह चीज जब तक नहीं आती तब तक प्रयत्न जारी रहे, यह की विशेष बात होगी।

हमने प्रतिज्ञा इसलिए की है कि जमाना माँग कर रहा है। दो-चार गाँव माँगकर उसके विकास के लिए बैठ जायँ तो काम नहीं होगा। सरकार का काम व्यापक पैमाने पर चलता है। वह चाहे तो गलत विचार भी समाज में फैला सकती है। अगर हम छोटे विचार में रहें तो छोटा विचार डूब जायगा। इसलिए हमें व्यापक काम करना होगा। सर्वोदय की हवा तैयार करनी होगी ताकि यह वेलफेयर स्टेट, कम्युनिज्म आदि की जो हवाएँ चलती हैं, वे न टिकें।

हमारी प्रतिज्ञा का यह अर्थ नहीं कि हिन्दुस्तान के सब गाँववालों को अच्छा खाना मिले। अच्छा खाना मिले, यह तो सब कहते हैं। पर व्यक्तिगत स्वार्थ की नीति पर कोई न चले, यही हम चाहते हैं। फिर भी सामूहिक जीवन के लिए लोगों को प्रवृत्त करना है। इसलिए गाँव के लोग जो दान-पत्र देते हैं, उसमें केवल जिनके पास जमीन है, उन्हींसे दान-पत्र मैं नहीं चाहता। मैं तो भूमिहीनों से भी दान-पत्र चाहता हूँ। वे कहें कि हमारे पास जो श्रम है, वह समाज के लिए समर्पित है। सबके पास देने की चीज है। अपने पास जो कुछ है, उसे समाज को समर्पित करने की भावना का ही नाम ग्रामराज्य है।

कन्याकुमारी १५ अप्रैल '५७

ग्राम-स्वराज्य की घोषणा

ग्रामदान : ग्राम-स्वराज्य के लिए !

हम मानते हैं कि ग्राम-स्वराज्य की सिद्धि के लिए जिन संकल्पों की पूर्ति तत्काल आवश्यक है वे ये हैं :

१. स्वायत्त ग्रामसभा

ग्रामस्वराज्य के लिए गाँव एक संपूर्ण इकाई होगा। गाँव में आज भेद हैं, विरोध हैं, संघर्ष है, *लेकिन मूलतः गाँव को एक समुदाय होना है, जिसमें हित-विरोध न हो।* इसका एक ही हित है—ग्रामहित। ग्रामहित की सिद्धि की दृष्टि से गाँव के विकास की जिम्मेदारी ग्रामदान के बाद बालिगों की ग्रामसभा पर हो। ग्रामसभा स्वायत्त हो, *जिसके काम में सरकार की मदद तो हो, लेकिन हस्तक्षेप न हो।*

२. दलमुक्त ग्राम-प्रतिनिधित्व

अभी जो सरकार बनती है वह राजनैतिक दलों के प्रतिनिधियों को लेकर बनती है। ग्राम-स्वराज्य गाँव को या नगर को सामाजिक सगठन की बुनियादी इकाई मानता है, इसलिए विधान-मण्डल में सगठित ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि जाने चाहिए, न कि दलों के। सरकार ग्रामसभाओं तथा नगर-सभाओं के प्रतिनिधि इन्हीं प्रतिनिधियों की हो, दलों की नहीं। गाँव और उनकी *ग्रामसभाएं सत्ता की राजनीति और उसकी लड़ाई में न पड़ें।* दल-मुक्ति लोकनीति के लिए अनिवार्य है।

३. ग्रामाभिमुख अर्थनीति

सरकार की नीति; और बाजार की रीति, दोनों गाँव के प्रतिकूल है। बड़े उद्योग और व्यापार, तथा शहरी अर्थनीति के हित *में गाँवों का शोषण हो रहा है। यह समाप्त हो।* गाँव अपनी आवश्यकताओं और साधनों को सामने रखकर योजना बनायें। सरकार मदद करे। गाँव का लक्ष्य एक ऐसी स्वाश्रयी अर्थनीति हो जिसमें सबकी (अन्तिम व्यक्ति की) जीविका सुरक्षित हो, किसीका शोषण न हो, और सबके लिए भौतिक और सास्कृतिक *विकास का अवसर हो। यह अर्थनीति बाजार* की नहीं होगी, सरकार की नहीं होगी, बल्कि भाईचारे (शेयरिंग) की होगी। स्वावलम्बन साधते हुए गाँवों का आपसी तथा शहरों से सम्बन्ध परस्परावलम्बन का होगा।

४. स्वतन्त्र शिक्षा

शिक्षा सरकार से पूर्णतः स्वतन्त्र होनी चाहिए, तभी वह समाज को आगे ले जाने-वाली स्वतन्त्र और रचनात्मक बुद्धि का *विकास कर सकेगी। लेकिन इतना तो तत्काल होना चाहिए कि* जिस तरह सरकार का विभाग होते हुए भी न्याय स्वतन्त्र है, उसी तरह शिक्षा भी हो। सरकार सहायता करे, *किन्तु सचालन और नियमन शिक्षकों* और अभिभावकों के द्वारा हो।

५. पुलिस-अदालत-मुक्त व्यवस्था

पुलिस और अदालत के कारण होनेवाला नागरिक-शक्ति का ह्रास तुरन्त बन्द होना चाहिए। शान्ति, सुरक्षा और सुव्यवस्था के लिए गाँव-गाँव में शान्ति-सेना का सगठन हो। *गाँव के झगड़े गाँव में ही तय हों, जो अदालत में जा चुके हैं, वे वापस ले लिये जायँ।*

६. सर्व-धर्म-समभाव

किसी धर्म को माननेवाला हो, कोई भाषा बोलनेवाला हो, भारत का हर नागरिक हमारा भाई हो हमारा, गाँव एक 'परिवार' हो, *जिसमें सब समान हों,* स्वतन्त्र हों, सुखी हों।

हम इन सकल्पों की पूर्ति के लिए तैयार हों, और अपने गाँव को तैयार करें। उसी तरह जिला, राज्य, और अन्त में पूरा देश तैयार हो। हम मानते हैं कि ग्रामदान गाँव की मुक्ति का आन्दोलन है। वह मुक्ति सबके निर्णय से आयेगी, सबकी शक्ति से आयेगी, सबके हित में आयेगी। 'सर्व' का यह मन्त्र ग्राम-स्वराज्य को प्रेरणा हो।

ग्राम-स्वराज्य में हिन्द स्वराज बचेगा, और विश्व-परिवार बनेगा।

[६ अप्रैल हम 'ग्रामस्वराज्य-दिवस' के रूप में मनाते हैं। इस अवसर पर ग्राम-स्वराज्य की घोषणा उपयोगी होगी।—सं०]

"आज कन्याकुमारी के चरणों में हिन्द महासागर के किनारे और सूर्य भगवान् की उपस्थिति में हम यह प्रतिज्ञा करते हैं कि जब तक भारत में ग्रामराज्य की स्थापना नहीं होगी, तब तक हम उसीके लिए घूमते हुए प्रयत्न जारी रखेंगे। उसकी सिद्धि के लिए हम भगवान् से बल-प्राप्ति की प्रार्थना करते हैं।"

(कन्याकुमारी, १५ अप्रैल '५७) —विनोबा

ग्राममूर्ति : क्या हम निम्नलिखित ५ मुद्दों को ग्राम-स्वराज्य का सार मान सकते हैं, और ऐसा मानकर 'ग्राम-स्वराज्य की घोषणा' के रूप में जनता के सामने प्रस्तुत कर सकते हैं ?

(१) *स्वायत्त ग्रामसभा*
(२) दलमुक्त ग्राम-प्रतिनिधित्व
(३) न्याय-विभाग की तरह स्वतन्त्र शिक्षा
(४) ग्रामाभिमुख अर्थनीति
(५) पुलिस-अदालत-मुक्त व्यवस्था

विनोबा : आज की परिस्थिति में एक छठवाँ मुद्दा आवश्यक है, वह है—

(६) सर्व-धर्म-स्वभाव।

इन छ को मिलाकर ग्राम-स्वराज्य की घोषणा बन जाती है।

भारत में ग्रामदान-प्रखंडदान
(३१ मार्च '६८ तक)

प्रान्त	ग्रामदान	प्रखंडदान
बिहार	१७,६३६	१४२
उड़ीसा	८,८७६	३४
तामिलनाड	४,६६२	४४
आन्ध्र	४,२००	१०
पंजाब	३,२६६	९
उत्तर प्रदेश	४,४१२	२५
महाराष्ट्र	३,१२६	११
मध्यप्रदेश	२,६४२	६
आसाम	१,४६३	१
राजस्थान	१,०२१	–
गुजरात	७५८	३
बंगाल	६२७	–
केरल	४०९	–
कर्नाटक	३२५	–
दिल्ली	७४	–
हिमाचल प्रदेश	१७	–
कुल :	५३,८७४	२८५

सम्पादकीय

उनके आने की खुशी क्या और जाने का गम क्या ?

दो महीने की बैठक ! लगभग डेढ़ करोड़ का खर्च। सोलह सौ व्यक्तियों की अनवरत चर्चा। इतना करके २९ मार्च को 'अंकटाड' की बैठक खत्म हो गयी। दिल्ली के एक प्रसिद्ध साप्ताहिक ने अपने मुखपृष्ठ पर लिखा 'अंकटाड !! शब्द, शब्द, शब्द'।

कोई कहेगा, इससे ज्यादा होता ही क्या ? कोई कहेगा यही, क्या कम था कि दुनिया के बड़ों ने अपने गरीब रिश्तेदारों को देखा, और उनका दुख दर्द सुन तो लिया ! जो वादे हुए हैं उनमें से शायद कुछ पूरे भी हो जायँ। भले ही कुछ कबूल न हो सके पर इतने के लिए भी हम उनके कृतज्ञ क्यों न हों ?

आज की दुनिया धनी और गरीब में बॅटी हुई है। दुनिया ही क्या हर कौम और हर देश में धनी-गरीब की दीवारें खड़ी होती जा रही हैं। धरती पर बसनेवाले दो तिहाई लोग गरीब हैं। दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका, दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया में गरीबी का साम्राज्य है। इस विशाल भूखण्ड के बहत्तर देशों ने धनी देशों से यह माँग की थी कि अपनी राष्ट्रीय आय में से प्रति सौ रुपये पीछे एक रुपया हमें दे दो। हमें पूँजी चाहिए, मशीन चाहिए। हम भी तुम्हारी बिरादरी में आना चाहते हैं।

यह और बात है कि आज जो धनी हैं उन्होंने इन्हीं गरीबों की बदौलत धन बटोरा है। इतिहास रचा हुआ है, लेकिन किसीको करनी की याद दिलाने से क्या फायदा ? आज हम कुछ भी कहें, बात तो यह है कि योरप और अमेरिका से हमारी माँग पूरी नहीं होनेवाली है। ब्रिटेन खुद परेशान है, अमेरिका वियतनाम में इस बुरी तरह फँस गया है कि उसे अपने डालर की ही बचाने की पड़ी है और योरप के देशों का ध्यान आपस के लेन-देन पर ही अधिक है। क्या पूँजीवादी देश और क्या रूस के 'समाजवादी' देश, सब एशिया और अफ्रीका की तीसरी दुनिया से अपना हाथ खींचते जा रहे हैं। क्या हो, धनी को गरीब से मुहब्बत बहुत है लेकिन रहना है गरीब को गरीब ही। धनी देशों की नजर में गरीब देशों का काम है कच्चा माल देना और तैयार माल लेना। यह सम्बन्ध शोषण का है। लेकिन दुनिया के बाजार में इससे भिन्न कुछ होता नहीं।

गरीब देश चाहते हैं कि धनी देश उनका माल खरीदें ताकि उन्हें व्यापार में घाटा न हो। इसके अलावा उन्हें पूँजी और मशीन भी दें ताकि वे अपना आर्थिक विकास कर सकें। धनी देशों को ये दोनों माँगें मंजूर भी हैं लेकिन उनकी अपनी मजबूरियाँ हैं। गरीब देशों के पास बेचने को क्या है ? पेट्रोलियम छोड़ दें तो कुछ कच्चा माल, कुछ हल्के तैयार माल, चाय, कोको, चीनी, रबड़ के सिवाय और क्या है ? धनी देशों की आवश्यकताएँ बदलती जा रही हैं। उनकी उत्पादन-तकनीक बदलती जा रही है। दिनोंदिन वे नये-नये 'सिन्थेटिक' सामान बनाते जा रहे हैं। कहाँ उनकी दिशा और कहाँ हमारी दशा ?

दिल्ली की बैठक में हमारी माँगें पूरी नहीं हुईं, यह एक तरह से अच्छा ही हुआ। आखिर, गरीब देशों ने अपने विकास का क्या चित्र बनाया है ? क्या यही कि योरप अमेरिका जैसे हो जायँ ? क्या इस नकल में वे अपना भविष्य देखते हैं ? एशिया और अफ्रीका के शासकों ने अपने-अपने देश में अब तक क्या किया है ? अस्त्र-शस्त्र, पूँजी, तकनीक, सामाजिक आदर्श सब उन्होंने विदेशों से प्राप्त करने की कोशिश की है। परिणाम क्या हुआ है ? लोकतन्त्र समाप्त हुआ, घर का पूँजीवाद मजबूत हुआ, नौकरशाही जनता के सीने पर सवार हुई, भुखमरी और बेकारी का राज हुआ। एक के बाद दूसरे देश में देखिये, यही दृश्य दिखायी देता है। और, यह सब विकास और विज्ञान के नाम में, और विदेशी सहायता की मदद से हुआ, और हो रहा है। जो बर्ताव दूसरे हमारे साथ कर रहे हैं वही बल्कि उससे बदतर, बर्ताव हम अपने गाँवों के साथ कर रहे हैं। हर जगह गाँव शहरों के उपनिवेश बने हुए हैं। पश्चिमी देशों से अभी तक जो मदद मिली है उसका सूद तक चुकाना मुश्किल हो रहा है। यह जानते हुए भी कि पश्चिम की जीवन पद्धति और 'तकनीक' हमारे लिए सर्वथा अनुपयुक्त है हम उसके पीछे दौड़ रहे हैं।

हमने विकास के नाम में अपनी जनता को छोड़ दिया है। उसकी श्रम-शक्ति की उसकी प्रतिभा की उसके संगठन और सहकार की हमारी नजर में कोई कद्र नहीं। हमने जनता से ज्यादा सरकार और बाजार पर भरोसा किया है। हमने अपनी परिस्थिति और परम्परा के अनुसार अपनी नयी राजनीति, नयी अर्थनीति नयी शिक्षानीति नहीं निकाली। हम पिछलग्गू थे, पिछलग्गू ही रह गये। यह रास्ता सम्मान और समृद्धि का नहीं है। जनता द्वारा उत्पादन, जनता के लिए उत्पादन—यही रास्ता हमारी मुक्ति का है।

अगर 'अंकटाड' अब भी हमारी आँखें खोल दे तो हम मानेंगे कि हम जितना चाहते थे उससे कहीं ज्यादा हमें मिल गया।

यह अमीरकी, यह गरीब की क्या दो दुनिया रहेंगी तो कभी एक होगी ! ●

गांधी-विचार

अधिकार नहीं, कर्तव्य

अगर सब लोग केवल अधिकारों का आग्रह रखें और कर्तव्यों पर जोर न दें, तो चारों तरफ बड़ी गड़बड़ी और अव्यवस्था फैल जायगी। यदि अधिकारों के आग्रह के बजाय हरएक अपना कर्तव्य-पालन करे, तो मानव जाति में तुरत व्यवस्था का राज्य स्थापित हो जाय। यदि आप यह सादा और सार्वत्रिक नियम मालिकों और मजदूरों, जमींदारों और किसानों हिन्दुओं और मुसलमानों पर लागू करें, तो देखेंगे कि भारत और संसार के दूसरे भागों में जीवन और व्यवसाय में आज जैसी पायी जाती है वैसी अशान्ति और अस्तव्यस्तता पैदा किये बिना जीवन के तमाम क्षेत्रों में अत्यन्त सुन्दर संबंध स्थापित किये जा सकते हैं। (हरिजन, ६-७-'४७)

धर्म और राजनीति का विकल्प

•

अध्यात्म और विज्ञान

एक बात मैंने बीसों बार अपनी यात्रा के दरम्यान दुहरायी और मुझे उत्तम प्रचारक मिले थे पंडित जवाहरलाल नेहरू। उन्होंने मेरे नाम से वह विचार चलाया। जहाँ-जहाँ गये—रूस में, अमेरिका में, सब जगह सुनाया कि बाबा का कहना है कि साइन्स और स्पिरिचुएलिटी दोनों का इकट्ठा होना चाहिए, भिन्न-भिन्न धर्मों की जगह स्पिरिचुएलिज्म आना चाहिए और पालिटिक्स की जगह साइन्स आना चाहिए, तब काम होगा। पालिटिक्स छोड़ना होगा, रिलीजन छोड़ना होगा, व्यापक साइन्स और व्यापक अध्यात्म को स्वीकार करना होगा तभी दुनिया के मसले हल होंगे, अन्यथा राजनीतिज्ञ जो चीज एकता के लिए करते जायेंगे

विनोबा

वह फूट डालनेवाली ही बात होगी। उन्होंने बंगला भाषा के दो टुकड़े कर दिये। उर्दू के दो टुकड़े कर दिये। पंजाबी के दो टुकड़े कर दिये। तीनों भाषाओं की ताकत खंडित की। जर्मनी और कोरिया के दो टुकड़े कर दिये, बर्लिन के दो टुकड़े कर दिये। वे टुकड़े करना जानते हैं, यह मानकर कि इससे एकता फैलेगी। दुनिया में सब लोगों को मिलकर सामूहिक ढंग से सोचना होगा, तभी मसले हल होंगे। इसलिए छोटी-छोटी जो पालिटिक्स है, उससे मुक्ति पानी होगी और छोटे-छोटे धर्म-पन्थों से मुक्ति पानी होगी।

प्राचीन काल में यज्ञ में घी जलाने का रिवाज था, धर्म था। क्या इस जमाने में यह धर्म माना जायगा? यज्ञ माना जायगा? घी अगर जलेगा तो लोगों की हालत क्या होगी? उस जमाने में तो अग्नि बनाने के लिए घी था। जंगलों में जंगल पड़े थे, हजारों की तादाद में गायें थीं, इस वास्ते घी उनका साधन था।

पुरानी बात है। हमारे मित्र-परिवार में एक शादी होनेवाली थी। पुरोहित ने कहा कि अग्नि में घी की आहुति देनी पड़ेगी। मैंने उनको शास्त्र समझाया। एक सुन्दर ताम्रपात्र लो। उस पर लिखो—"अग्नि।" साक्षी के तौर पर एक वहाँ दीया रखो। "अग्नये स्वाहा" करके आहुतियाँ उस पात्र में डालो और जो घी जमा होगा उस सबको प्रसाद में दे दो। यज्ञ भी सांगोपांग होगा और वेद भगवान् की तृप्ति होगी। मीमांसाशास्त्र में चर्चा है कि वरुण का क्या स्वरूप है? व-रु-ण यानी देवता सारे अक्षरात्मक है। अग्नि-पात्र में घी डालकर काम हो सकता है। लोगों ने कहा, यह युक्ति अच्छी है। पुराने लोगों के प्रति आदर रखना चाहिए। वह भी इसमें कायम है और नये समाज के लिए जो जरूरी बात है, वह भी इसमें आ जाती है।

नये युग में नया धर्म हो

चीजें जो पुरानी हो चुकीं, उन्हें धर्म के नाम पर वैसे ही जारी रखना तो उचित नहीं माना जायगा। पहले के राजा द्यूत खेलते थे। पाण्डव हारे तो द्रौपदी कौरवों की दासी बन गयी। महान्-महान् पण्डित वहाँ थे। भीष्म थे। द्रौपदी ने खड़े होकर पूछा आप लोगों की राय में क्या स्त्री सम्पत्ति है? द्यूत में लगायी जा सकती है? "भीष्म, द्रोण, विदुर भये विस्मित।" विदुर इतना बड़ा ज्ञानी था कि उसके लिए पाणिनी को सूत्र बनाना पड़ा। इतना महान ज्ञानी भी विस्मित हो गया और निर्णय नहीं दे सका। आज का बच्चा भी निर्णय देगा—स्त्री क्या कोई सम्पत्ति है, जो द्यूत में लगायी जाय? बिलकुल गलत काम!

सार यह है कि पुराने जो विचार रूढ़ हो गये हैं, उनके विचारों को ज्यों-का-त्यों स्वीकार कर लेने में सार नहीं है। अध्यात्म का आधार लेना चाहिए। अध्यात्म-विद्या का तो अपने यहाँ कोई मुकाम है ही नहीं स्कूल में। 'सेक्युलर' के नाम से एक चीज है, यह कि रामायण सिखा नहीं सकते, बाइबिल सिखा नहीं सकते, कुरान सिखा नहीं सकते! फिर क्या सिखा सकते हैं? इसके लिए अंग्रेजी में बहुत सुन्दर शब्द है—'लिटरेचर' के तौर पर रामायण का "पोम" हो सकता है। लेकिन यह 'सेक्युलरिज्म' का गलत ख्याल है। सर्वोदय, अध्यात्म जो भारत में था, उसका अध्ययन-अध्यापन स्कूलों में होना चाहिए और साथ-साथ माडर्न साइंस का भी अध्ययन होना चाहिए।

"शिष्यापराधे गुरोर्दण्ड" शिष्य से अगर अपराध हुआ तो गुरु को दण्डित करना चाहिए। इस वास्ते विद्यार्थियों के जितने भी अपराध हों, उनके जिम्मेवार शिक्षक हैं, यह अपने यहाँ का न्याय है। अगर ठीक से तालीम रही और विद्यार्थियों को शिक्षा में कोई सार मालूम हुआ तो निश्चय है कि वे अध्ययन करेंगे। लेकिन आज की हालत तो ऐसी है कि उनकी शिक्षा पांगलेप, निरर्थक है। (पूना रोड, ७-१२-'६७)

ग्रामदान : समस्या और संभावना—२

मूल्यांकन नहीं, संशोधन

राममूर्ति—ग्रामदान आन्दोलन ऐसी मंजिल पर पहुँच गया है कि उसकी समस्याओं और संभावनाओं का शोध और अध्ययन तत्काल शुरू होना चाहिए। इसकी जरूरत मैं तीव्रता के साथ महसूस कर रहा हूँ। यह काम आधुनिक ढंग के शोध-विभाग संस्थानों में नहीं होता दिखाई देता। क्या यह ठीक होगा कि कुछ दूसरे ढंग से काम शुरू करने की बात सोची जाय?

विनोबा—ग्रामदान के लिए यह काम बहुत जरूरी है। आजकल जो बड़े [illegible] शहरों में चल रहे हैं, उनसे इस काम की आशा नहीं की जा सकती। मैं तो उन्हें 'हवाई' [illegible] कहता हूँ। ग्रामदान का [illegible] और [illegible] उन्हें करना चाहिए जो गाँवों से जुड़े हुए हों, और जिनका ग्रामदान से पूरा सम्बन्ध हो। ग्रामदान के [illegible] का काम होगा लोकशक्ति की [illegible] को

इस गाँव में स्वस्थ और परिपुष्ट विश्व का दर्शन हो।

५ अप्रैल, '६८

वर्ष २, अंक १७] [१८ पैसे

बाजार के भँवर : सरकार के नागफाँस

रामबली और फेंकनराम मेहनगर बाजार से लौट रहे थे। दोनों का चेहरा जैसे मुरझा गया था।

रामबली ने दो बीड़ियाँ सुलगाकर एक फेंकनराम की ओर बढ़ाते हुए कहा—

'फेंकन भैया, इस बीड़ी के धुएँ के साथ मन की कड़ुआहट फूँककर उड़ा दीजिये। जैसे तेज बयार में दीया तो बुझने लगता है लेकिन चूल्हे की आग धधकने लगती है, वैसे ही बाजार और सरकार के करतब से हम गरीबों की तो मिट्टी-पलीद होती जा रही है और सेठ-साहूकार आबाद होते जा रहे हैं।"

"तुम्हारी बात कुछ हद तक ठीक है रामू। बाजार भाव गिरने पर सिर्फ किसानों का ही घाटा नहीं होता, कई सेठ-साहूकारों का भी दिवाला निकल जाता है। हाँ, इतना सही है कि उनका कभी कभी घाटा होता है, लेकिन हमारा तो धंधा ही घाटे का है।'

"एक फरक और भी है फेंकन भैया, सेठ-साहूकार का दिवाला निकल जाय तब भी उनके खाने पीने पर कुछ खास असर नहीं होता। बस उनकी तिजोरी के धन की कुछ घटती हो जाती है। पर हमारे लिए तो भाव कम होने का मतलब है घर के प्राणियों के लिए साल भर की मुसीबत का बढ़ जाना। तीन महीने पहले मैं यही बोरी लेकर खाने के लिए जौ खरीदने आया था, उस समय मुझे पच्चीस रुपये में भी बोरी भरकर जौ नहीं मिला था। अब जब कि हमारी फसल तैयार हो गयी तो उतने ही जौ का भाव इतना कम हो गया कि पूरे

मन में कुछ और है, दाम में कुछ और।
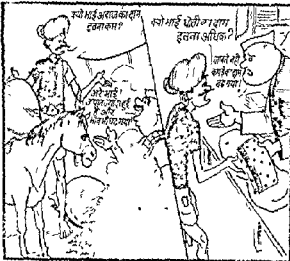
अठारह रुपये भी नहीं मिले।" रामबली ने कहा।

"अरे रामू! बाजार-भाव भी समुन्दर के ज्वार-भाटे की तरह बढ़ता और घटता है, लेकिन एक फरक है। जब पुनवासी का चन्द्रमा आसमान में उगता है तो समुन्दर में ज्वार आने लगता है। इधर जब खलिहान में अनाज इकट्ठा होता है तो बाजार-भाव के भाटे का समय आ जाता है", फेंकन ने फिर एक लम्बी साँस लेकर कहा—"जब खेती में अधिक लागत और मिहनत लगाने के बाद आमदनी घट जाती है तो किसान का दिल बैठ जाता है। वह किसलिए ज्यादा झंझट और खर्च की बला मोल ले?"

रामबली—"भैया! हमारी हालत साँप-छछूंदर जैसी है। न तो हमसे अच्छी खेती करते बनता है और न खेती से छुटकारा लेते बनता। खेती में बरकत नहीं और खेती न करें तो पेट जो आधा-तीहा भरता है वह भी न भरे।"

फेंकन—"भैया! बाजार के नागफाँस में हम किसान जकड़ लिये जाते हैं। बेचारे छोटे-छोटे रोजगारी और दूकानदार भी हमारी ही तरह भाव के ज्वार-भाटे में डूबते-उतराते रहते हैं।"

सरकारी केन्द्रों—राजधानियों और सचिवालयों—में शासन का रोजगार चलता है और बड़ी-बड़ी मंडियों और उद्योग-केन्द्रों में साहूकारों और पूँजीपतियों का। राजधानियों में नयी सरकारें बनाने और दल बदलने का काम चलता है तो मंडियों में दलाली और भाव के उतार-चढ़ाव का। दोनों में से कोई वोटर या खरीददार के फायदे की उतनी परवाह नहीं करते जितनी अपने-अपने फायदे की। जिस दिन गाँव-गाँव अपनी ग्रामसभा संगठित करके सारे भारत में ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के काम में जुट जायँगे उसी दिन वे सचमुच बाजार के भँवर और सरकारी नागफाँस की जकड़ से मुक्त हो सकेंगे। तब अनाज का भाव अनाज की मंडियों के बड़े-बड़े व्यापारी नहीं तय करेंगे और न अकेले सरकारी खाद्यमंत्री, बल्कि देशभर की ग्रामसभाओं की भी राय लेना आवश्यक होगा।

जब देश में सभी चीजों के भाव ऊँचे हों, उस समय अनाज का भाव सिर्फ इस बहाने पर कम किया जाना कि इस साल फसल अच्छी हुई है—देश के करोड़ों किसानों के प्रति निरा अन्याय है। किसान के लिए खेती भी एक रोजगार है, जिसमें वह अपना धन, अन्य साधन और अपनी मिहनत लगाता है। अनाज का भाव तय करते समय खेती के खर्च और किसान के परते का भी विचार होना चाहिए, जैसा कि अन्य उद्योगों और रोजगारों के मामले में होता है। किसान को पहले से मालूम रहना चाहिए कि कौनसी फसल किस भाव पर बिकेगी, ताकि वह उसीके अनुसार अपनी खेती की योजना और तैयारी कर सके।

सरकार उद्योग और व्यवसाय में लगे हुए लोगों को तो अनेक प्रकार का सहयोग और संरक्षण दे रही है। किन्तु देश के मुख्य उद्योग में लगे हुए सबसे पिछड़े और संख्या में अधिक लोगों को बाजार के भँवर में डूबने के लिए असहाय छोड़ देती है। गाँव-गाँव का ग्रामस्वराज्य किसानों को इस भँवर-जाल से छुड़ाने का एकमात्र मार्ग दीख रहा है। इसीलिए समझदार किसान अपने यहाँ ग्रामस्वराज्य को साकार करने के लिए पूरी शक्ति लगा रहे हैं।●

कहीं-कहीं लोग यह कहते हैं कि किसी ग्रामदानी गाँव को नमूने के रूप में बनाकर दिखाइये तो उससे अन्य गाँवों को प्रेरणा मिलेगी। ऊपर से सुनने में यह कहना सही लगता है, पर समाज से कटा हुआ नमूने का कोई गाँव बननेवाला है नहीं। फिर भी ग्रामदान से गाँव में कैसे शक्ति बनती है, इसे जिनकी आँखें खुली रहती हैं, वे उभड़ती शक्ति को देख सकते हैं।

ग्रामसभा खाजेडीह के निर्माण के बाद से ही इस गाँव के दो बुजुर्ग व्यक्ति ग्रामसभा को सही दिशा में ले चलने को तत्पर हैं। अब तक इनकी निश्छल समाज-सेवा को देखते हुए गाँव के प्रत्येक परिवार ने इन पर भरोसा किया और धान की पिछली फसल में एक सौ मन धान ग्रामकोष में इकट्ठा किया। जिन्हें नमूना देखने की इच्छा होती हो, उनसे निवेदन है कि इस गाँव का ग्रामकोष आकर देखें। जयनगर-खुटौना जिला बोर्ड की सड़क पर खाजेडीह के ग्रामकोष का धान सड़क के किनारे ही कोषाध्यक्ष के घर के बगल में बखारी (बाँस की कोठी) में जमा है। प्रखण्ड विकास योजना की शुरुआत से अब तक इस गाँव को इतनी बड़ी रकम विकास के लिए नहीं मिली है। ग्रामदानी ग्रामसभा की शक्ति का यह एक नमूना है।

ग्राम : खाजेडीह (दरभंगा) दिनांक : २६-१-'६८ —देवनाथ
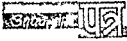
ग्रामस्वराज्य की मंजिलें : भूदान से प्रदेशदान तक

प्रिय भाइयो, बहनो,

सप्रेम जय जगत्

आप जानते हैं कि देश भर में भूदान ग्रामदान नाम से एक आन्दोलन चल रहा है। यह आन्दोलन १८ अप्रैल सन् १९५१ को शुरू हुआ था। आंध्र प्रदेश में एक जिला है तेलंगाना। जिन दिनों यह आन्दोलन शुरू हुआ उन दिनों वहाँ जमीन के मालिकों और बेजमीनवालों में भयंकर लड़ाई झगड़े चल रहे थे। साम्यवादी उस लड़ाई-झगड़े की आग में जलावन डालने का काम कर रहे थे।

विनोबा जब उधर से गुजरे तो तेलंगाना के पोचमपल्ली नामक गाँव की सभा में गाँव के लोगों ने कहा कि हम इस तबाही से बचाइये। विनोबा बहुत सोच में पड़े। पता तो था ही कि सारे झगड़ों की जड़ में जमीन है। उन्होंने बेजमीनवालों की ८० एकड़ जमीन की माँग पूरी कराने की बात कही। सोचा कि इनको सरकार से कहीं पर जमीन दिला देंगे।

लेकिन विनोबा जी सरकारी कारोबार से परिचित थे। उन्हें पता था कि यहाँ एक घंटे का काम एक साल में हो जाय तो भी गनीमत ही समझना चाहिए। सो उन्होंने सोचा कि कोई और ही उपाय ढूँढ़ना चाहिए। मन में आया कि क्या कोई ऐसा आदमी नहीं होगा जो इन बेजमीनों के लिए इतनी जमीन का दान दे दे?

मन में आयी बात को उन्होंने सभा में पेश कर दिया। संयोग ऐसा कि सभा में शामिल एक आदमी श्री रामचन्द्र रेड्डी ने १०० एकड़ का दान तुरन्त विनोबा को अर्पित कर दिया और इस आन्दोलन की गंगोत्री प्रकट हुई जो लगातार आगे बढ़ती और फैलती जा रही है।

विनोबा ने देश के कोने-कोने में पैदल घूमकर भूदान में जमीन माँगना शुरू कर दिया। देश के हजारों कार्यकर्ता उनकी प्रेरणा से इस आन्दोलन को आगे बढ़ाने और फैलाने में जुट गये। लाखों एकड़ जमीन दान में मिली और बेजमीनों को बाँटी गयी।

भूदान से ग्रामदान, ग्रामदान से प्रखण्डदान और प्रखण्डदान से जिलादान और अब जिलादान से प्रदेशदान की आवाज देश की हवा में गूँज रही है। बिहार प्रदेश में बिहारदान के लिए जोरदार कोशिशें चल रही हैं। बिहार के पड़ोसी उत्तर प्रदेश में भी अब प्रदेशदान के लिए तेजी के साथ काम करने की हवा बह रही है।

साल भर से कुछ ही दिन अधिक हुए जब दरभंगा का पहला जिलादान घोषित हुआ था। उसके पहले जिलादान की बात बहुत ही कठिन मालूम पड़ती थी और प्रदेशदान की बात तो असम्भव ही मालूम पड़ती थी। लेकिन अब जिलादान उतना कठिन नहीं रहा। बिहारदान या उत्तर प्रदेशदान की बात असम्भव नहीं रही।

पिछले २६ सितम्बर ६७ को मद्रास प्रदेश के एक जिले का दान घोषित हुआ। जिले का नाम है तिरुनेलवेली।

महाराष्ट्र में थाना, आंध्र में कृष्णा, उड़ीसा में कोरापुट और मयूरभंज, मध्यप्रदेश में इन्दौर, उत्तर प्रदेश में उत्तरकाशी और बिहार में मुजफ्फरपुर, मुंगेर जैसे जिले हैं जो बहुत ही तेजी से जिलादान की मंजिल तक पहुँचने की कोशिश कर रहे हैं।

बिहार का पूर्णिया जिला और उत्तर प्रदेश का बलिया जिला एक-दो महीने के अन्दर ही जिलादान की मंजिल तक पहुँचने वाले हैं। क्या संयोग है यह भी, उधर पूर्णिया बिहार प्रदेश का सबसे पूर्वी और आखिरी जिला, और इधर बलिया उत्तर प्रदेश का सबसे पूर्वी और आखिरी जिला। इन हलचलों की आपको जानकारी मिले इसीलिए हमने सोचा है कि गाँव-गाँव में चल रहे ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन की जानकारी आगे भी इसी प्रकार आपकी सेवा में भेजते रहें। हमें आशा है कि आपको यह बात पसन्द आयगी।

अगर आपके मन में कोई शंका या जानकारी के लिए कोई सवाल पैदा हो तो अवश्य लिखें। हम आपके पत्र का इन्तजार करेंगे।

आपका सेवक,

सम्पादक

'नेहरू-राजा' की याद

गाड़ी लोहे की पटरी पर सरसराती हुई भागती जा रही थी। स्टेशन आते, थोड़ी देर के लिए पान-बीड़ी, चाय-सिगरेट का शोर सुनाई देता और फिर सब कुछ पहले जैसा हो जाता। गाड़ी छक-छक छक-छक करने लगती।

मुखिया को गाड़ी मे नीद नही आती, लेकिन वहोरन की नाक ऐसी बज रही थी मानो 'कटहा-कुक्कुर' गुर्रा रहा हो।

मुखिया को दिल्ली की बातें याद आ रही थी। दिल्ली आने से पहले उसने दिल्ली के जिस आकार-प्रकार की कल्पना की थी, दिल्ली उससे कितनी भिन्न निकली? उसने सोचा था, दिल्ली एक बहुत बडा गांव होगा, बहुत सारी चीजों की दूकानें होंगी और सबके बीच अपने देश के राजा का महल होगा। उसने अपनी आँखों देखा था 'नेहरू-राजा' को। जब वह उसके गाँव से सात कोस दूर एक आश्रम मे दस मिनट के लिए आये थे, तो वह भी अपने गाँव के बहुत-से लोगों के साथ बैलगाड़ी मे बैठकर आश्रम मे 'नेहरू-राजा' के दर्शन करने गया था।

'नेहरू-राजा' कहने पर गाँव के पढ़े-लिखे छोकरे उसे बहुत चिढ़ाते थे। कहते थे—"अब अपने देश मे कोई राजा-रानी नही है। देश का कोई भी नागरिक नेहरूजी की बराबरी कर सकता है। सबको 'भोट' देने का बराबर हक है। चतुरी चमार, तेतर तेली, गंगुआ गोड़, और हरशंकर पंडित सबको एक ही 'भोट' देने का अधिकार है, नेहरूजी को भी। देश का कोई भी आदमी चुनाव लड़कर नेहरूजी की जगह प्रधान मंत्री हो सकता है।"

जब चुनाव के दिन आते हैं, और जब बड़े-बड़े नेता उसके गाँव के छोटे-छोटे लोगों की भी 'चिरौरी' करते-फिरते हैं तो मुखिया को लड़कों की बात कुछ-कुछ सही भी मालूम पड़ती है, लेकिन चुनाव के बाद का रंग-ढंग देखकर वह यही सोचता है कि यह सब गाँव-गिराँव के गरीब-गँवई मूरख लोगों को 'भुतलाने' की बात है। नहीं तो जिसके 'भोट' से लोग राजा बन जाते हैं, वह फकीरचन्द ही क्यों बना रहता है? कुछ तो उसकी हालत में सुधार होता?

मुखिया मानता है कि पुरखों की बातें झूठी नही हो सकतीं। भला 'राजा' भी कहीं आदमी के 'भोट' से बनता है? वह तो भगवान का भेजा हुआ प्रजापालक होता है। उसने पंडितों से, गाँव के बड़े-बूढ़ों से कथा-पुराणों की बातें सुनी हैं। उनमे कहा गया है कि 'राजा' के बिना 'प्रजा' अनाथ होती है। इसलिए प्रजा की देख-रेख के लिए भगवान 'राजा' को भेजता है। भला यह बात कभी झूठी हो सकती है? कहने के लिए चाहे 'राजा' कह लो या परधान मंत्री, उससे क्या फरक पड़ता है? नेहरूजी हमारे राजा थे। बिलायत के 'लाट' से लड़ाई लड़के नेहरूजी ने 'राज' लिया था, वह कोई हमारे 'भोट' से बने थे?

सिरी राम सिरी राम! मुखिया ने दुखती टाँगों को पसार लिया। उसका दिल गद्गद हो रहा था उस दिन की याद करके।

जब वह दल-बादल सहित आश्रम पहुँचा तो देखा कि एक बड़े मकान के बाहर भीड़ लगी है। लोग भीतर जाना चाहते हैं, लेकिन लाल पगड़ीवाले उन्हे भीतर नही जाने देते। मुखिया को अपने गाँव के शोहदे-छोकरों पर हँसी आयी, "लो देखो! तुम्हारे 'भोट' से नेहरू राजा बने हैं, तो फिर जाकर 'बातचीत' कर आओ न! तुम तो राजा बनानेवाले हो न? तुम्हें कौन रोक सकता है भला? है हिम्मत किसीकी? अरे, राजा जहाँ जाता है वहाँ अर्दली-सिपाही, चौकीदार, सब उनको घेरे रहते हैं। 'राजा' से हर कोई थोडे मिल सकता है?"

लेकिन मुखिया को बड़ी लालसा थी 'नेहरू-राजा' के दर्शन की। उसके मन के किसी कोने मे बात जमी हुई थी कि राजा के दर्शन करने से भगवान के दर्शन बराबर 'पुन्न' मिलता है। इसलिए वह भी उसी बड़े मकान की भीड़ मे घुस गया। उसकी आँखें दरवाजे की ओर निहार रही थी, कि तभी भरभराकर भीड़ बाहर निकली। लड़के चिल्ला पड़े—'चाचा नेहरू: जिन्दाबाद!'

इधर लाल पगड़ीवाले 'रास्ता छोड़ो' रास्ता छोड़ो'' चिल्ला रहे थे; अपना बेंत का डण्डा घुमा घुमाकर भीड़ को भगाने की कोशिश कर रहे थे। मुखिया को एक डण्डे की नोक से जरा-सा झटका भी लग गया था, लेकिन वह हटा नही। उसके मुँह से 'चीख' निकल पड़ी—"हम अपने 'नेहरू-राजा' के दर्शन किये बिना नही जायेंगे, नही जायेंगे।"

और तभी एक सुन्दर सुकुमार आदमी बहुत सारे गुलाबों की माला लिये भीड़ में घुस आया। 'लो देखो, मैं ही तुम्हारा नेहरू हूँ।'

आँखें जुड़ा गयी थीं मुखिया की। नेहरू-राजा ने गुलाब के सारे फूल बाँट दिये थे। उसे तो पूरी एक माला ही मिल गयी थी जिसे उसने आज भी रतन की तरह 'जतन से रखा है। बहोरन ने जब उसे 'नेहरू राजा' के 'सरगबासी हो जाने की खबर सुनायी थी तो वह उसी सूखी माला को देखकर फूट फूटकर रोया था।

उसके बाद से ही मुखिया के दिल में यह इच्छा जोर मारती रही थी कि जैसे भी हो वह एक बार दिल्ली जरूर जायगा और नेहरू राजा का महल देखेगा।

इसीलिए दिल्ली पहुँचते ही उसने अपने इलाके के नेता बाबू से अपनी यह इच्छा जाहिर की थी कि पहले वह नेहरू राजा का महल देखेगा। नेता बाबू उसका मतलब समझ गये थे।

मुखिया को अपार खुशी हुई थी कि उसका बहुत दिनों का सपना सच हुआ। लेकिन दिल्ली का आकार प्रकार और रूप रंग देख कर वह बिल्कुल ही घबड़ा गया था। उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि कोई ऐसी जगह भी हो सकती है जहाँ महल-ही-महल, आदमी-ही-आदमी, गाड़ी-ही-गाड़ी दिखायी दें। जहाँ सारा दिन दीवाली मनायी जाती हो। वह समझ ही नहीं पा रहा था कि इतने बड़े शहर में जहाँ इतने सारे लोग रहते हैं सड़क-मैदान, गली-कूचे में कहीं भी तो कोई खेत या बाग-बगीचा दिखायी नहीं देता, क्या लोग अन्न नहीं खाते? आखिर इतने लोगों का पेट कहाँ से भरता है? इतनी दौलत कहाँ से आती है कि हर कोई फुर फुर हवागाड़ियों में भागता फिरता है। उसकी समझ में यह भी नहीं आ रहा था कि इतने सारे लोग करते क्या हैं?

उसने सुना था, दिल्ली अपने देश की राजधानी है। उसने मान लिया था, क्योंकि बात साफ थी। राजधानी है तभी तो 'नेहरू राजा' यहाँ रहते थे। लेकिन उसके साथ एक दूसरी बात भी उसने सुनी थी कि यहाँ से देश की भलाई का काम भी होता है। तो क्या इतने सारे लोग देश की भलाई के लिए ही दिल्ली में जुटे हुए हैं? तो फिर देश की भलाई होती क्यों नहीं? आखिर दिन रात उसमें क्या कर रहे हैं? (क्रमशः)

सान्त्वना की नहीं, हिम्मत की जरूरत

देश में जातीयता की आग भभक उठी थी। गांधीजी उसको बुझाने की कोशिश करते रहे, लोगों को समझाते रहे। नोआखाली में शान्ति-यात्रा के लिए निकल पड़े। देश में आँसू और खून की नदियाँ बहायी जा रही थीं। लोग बेरहम और बेहया बन गये थे। उन पर शैतानियत सवार हो गयी थी। गांधीजी लोगों को ठिकाने पर लाने की कोशिश कर रहे थे।

नोआखाली के एक देहात की बात है। उस देहात के एक एक पुरुष को चुनकर मार डाला गया था। दीवारें खून से रंग गयी थीं। लड़के-बच्चे लेकर औरतें शरणार्थियों की छावनी में दाखिल हो गयी थीं। गांधीजी के उस देहात में आने की खबर सुनी तब वे सब उनके पास चली आयीं। एक अहाते में गांधीजी बैठे थे। उन्होंने आपबीती सुनायी, 'बापू, हमारे भाई लेकर पति सबके सबको मार डाला गया है। हमारा सब कुछ छीन लिया गया है। अब आपसे सान्त्वना पाने के लिए हम यहाँ आ पहुँची हैं।'

गांधीजी ने शान्ति से उनकी बातें सुनीं। फिर बोले, 'बहनो, मैं क्या सान्त्वना दे सकता हूँ? मैं तुम्हें सान्त्वना देने के लिए नहीं आया हूँ। सान्त्वना की बात छोड़ो। आज सान्त्वना की नहीं बल्कि हिम्मत की और ढाढ़स की आवश्यकता है। निडरता ही हमारी—याने हमारी इज्जत की रक्षा कर सकती है। गुंडों का डटकर सामना करना चाहिए। कायरता से मैं हिंसा को पसन्द करता हूँ। हाँ अगर शान्ति से गुंडों का सामना किया जा सके तो सबसे बढ़िया। लेकिन किसी भी हालत में डरकर भागना नहीं चाहिए।'

उसी शाम को गांधीजी के एक साथी ने पूछा, 'बापू, वे स्त्रियाँ आपसे शान्ति पाने आयी थीं लेकिन आपने उन्हें सान्त्वना देने से क्यों इनकार किया?'

गांधीजी ने कहा, 'भाई सान्त्वना देने का यह समय नहीं, हिम्मत बँधाने का है। चारों तरफ संहार हो रहा हो, सब तरफ अच्छाई दब रही हो, बुराई पनप रही हो, तब ढाढ़स की आवश्यकता होती है। हिम्मतहारों को हिम्मत देना बड़ा काम है। निराश खोये लोगों में आत्मविश्वास पैदा करना होगा, तभी हालत बदलेगी।'

—गांधी-जीवन दीपिका से
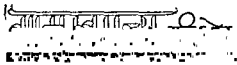
दुर्गादासिन : सच्चे अर्थों में ग्राममाता

विनोबा की आज्ञा से दरभंगा जिले के मधुबनी अनुमंडल मे पाँच महीने से घूम रहा हूँ। आज तक जितनी भी ग्रामसभाएँ हमने बनायी हैं उनकी कार्य-समिति मे किसी बहन का नाम नही सुझाया गया था। विनोबा कहते हैं कि बिहार की बहनें मानो जेल मे हैं! आज उसी बिहार की एक बहन जेल से बाहर निकली। और उसे बाहर निकालने का श्रेय भी गाँववालों को ही है।

मडुकिया गाँव की यह बहन दुर्गादासिन, लगभग पैंतालीस बरस की है। बिहार की सौम्यता और शान्ति उसके चेहरे से झलकती है। उसके घर की मिट्टी की दीवार पर सफेद बेलबूटे और कुटिया की सफाई देखकर मुग्ध होना पड़ता है। सफेद कपड़े पहनी हुई साध्वी दुर्गादासिन ने मुझे बताया कि एक पुत्र होने के बाद वह ब्रह्मचर्य का जीवन बिताती आयी है। पेट पालने के लिए पांच कट्ठा जमीन जोतती है। साथ-साथ गरीब बच्चों की देखभाल, दवादारू, खाना खिलाना और सेवा करना उसने अपना मुख्य धर्म माना है। प्रेम भरा हाथ मेरे सिर पर फिराकर उसने आशीर्वाद दिया "जुड़पल रहब, आनंदित रहो, तुम्हें कोई कष्ट न हो।"

उस माता के आशीर्वाद पाकर मन गद्गद हो गया। उसके मीठे बोल, नेत्रों से टपकते हुए वात्सल्य, स्नेहिल स्पर्श ने मेरी माँ की कमी पूरी कर दी। माँ बरसों से बुलाती रहती है, और मैं जा नही पाता हूँ।

दुर्गादासिन सच्चे अर्थों में ग्राममाता है, सबको प्रेम देती है, सूखे दिलों को हरामरा कर देती है। गाँव मे जो कलह और कटुता होती है, उस पर प्रेम का मलहम लगाती है।

विनोबा ठीक कहते है कि सर्वहारा कोई नहीं है। हरएक व्यक्ति कुछ-न-कुछ दे सकता है। लूला-लंगड़ा, अंधा-बहरा भी प्रेम दे सकता है। भगवान ने हमें जो क्षमता दी है, उसके हम मालिक नही, सेवक हैं, थातीदार हैं। उसे खूब बाँटते चलें, प्रेम की गंगा बहाते चलें। यह सबक दुर्गादासिन से मिला।

मैंने विदा होते समय एक नम्र सुझाव उसके सामने रखा कि गाँव मे रोज बहनों की सामूहिक प्रार्थना कराये। उसने उत्तर दिया, "मैं तो अनपढ़ गँवार हूँ।"

मैंने पूछा, "मीराबाई किस स्कूल-कालेज मे पढ़ी थी?

पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ, पंडित हुआ न कोय,
ढाई अक्षर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय।

प्रेम के सामने ज्ञान हार जाता है।"

कार्यसमिति के अध्यक्ष ईश्वरगिरि, मंत्री जीवछ साह, कोषाध्यक्ष राजेश्वर ठाकुर और सदस्य दुर्गादासिन, सोनाय मोमिन, सदीक मियाँ और तीन हरिजन सर्वसम्मति से बनाये गये।

—जगदीश थवानी

डायरी के पन्ने
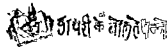
सरगुजा के सुसभ्य आदिवासियों के बीच

[विनोबाजी ने देश में महिलाओं की शक्ति जगाने के लिए महिला लोकयात्रा का सुझाव दिया। उनके विचार के अनुसार ३ बहनों ने १२ साल तक देश भर में घूम घूमकर महिला जागरण का काम करने का संकल्प किया।

उन बहनों की ३ महीने की लोकयात्रा मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले में पूरी हुई। अब ये बहनें मध्यप्रदेश के ही सरगुजा जिले में घूम रही हैं। इसी तरह बिहार के दरभंगा जिले में भी सुश्री सरला बहन की लोकयात्रा चल रही है।

इन यात्राओं में लाखों गाँवों में फैले अनपढ़, अज्ञानी, और असभ्य कहे जानेवाले लोगों से लोकयात्री बहनें मिलती हैं, और पाती हैं कि इन गाँवों में पढ़े-लिखे लोग कम हैं, पैसा इनके पास अधिक नहीं है, बहुत टीपटाप में रहना ये नहीं जानते, लेकिन इनका हृदय भावनाओं से भरा होता है : स्नेह, सहानुभूति और सत्कार की भावनाओं से। लोकयात्री बहनों की डायरी के पन्ने उनके हृदय के धन से आपका परिचय करायेंगे और आपको यह परिचय भायेगा, ऐसा हमारा विश्वास है। —सं०]

सरगुजा जिले को रायगढ़, बिलासपुर, सीधी, शहडोल,

मिर्जापुर (उ० प्र०) पलामू (बिहार) इन छह जिलों ने घेरकर रखा है। परन्तु इस जिले में प्रवेश करने के तीन ही मार्ग हैं—एक तो बिहार के पलामू जिले से होकर दूसरा रायगढ़ होकर और तीसरा मार्ग शहडोल होकर। वर्षा ऋतु में एक मार्ग तो करीब-करीब बन्द रहता है। हम बिहार के पलामू होकर आयी थी। रास्ते में टीला-टेकरी जंगल नदी-नाले पार करते हुए आयी। घने जंगलों में साल वृक्ष के बीच-बीच में आवलों से लदे हुए अनेक वृक्ष भी देखने को मिले।

इस आदिवासी क्षेत्र की भक्त बहन माता राजमोहिनी देवी से हमारा मिलना हुआ। करीब सत्रह वर्ष के पहले इस क्षेत्र में अकाल पड़ा था। अकाल का सामना करते समय एक दिन एक संन्यासी से उनकी भेंट हुई। संन्यासी से माता राजमोहिनी देवी ने लोगों के दुःख का कारण पूछा। संन्यासी ने कहा— तुम लोग शराब पीते हो ईश्वर की भक्ति नहीं करते और साफ-सुथरे नहीं रहते। इससे दुःख नहीं होगा तो क्या होगा ? इतना सुनने के बाद वे गृहस्थी के जीवन में नहीं रम सकीं। वे घर-द्वार छोड़कर निकल पड़ीं—यही सन्देश जन जन को सुनाने के लिए। तब से आप सत्रह साल आदिवासी क्षेत्र सरगुजा रायगढ़ सीधी और मिर्जापुर जिले में घूमती आयी हैं। लम्बा कद साँवला रंग प्रसन्नमुख मितभाषी और धीर उस भक्त बहन की बातों को अनेक लोगों ने माना और शराब माँस आदि छोड़ने लगे।

● २६ जनवरी महाशिवरात्रि का दिन था। सुबह ६॥ बजे राधापुर आश्रम में प्रार्थना हुई। माता राजमोहिनी देवी और उनके भक्तगण आश्रम के आसपास गाँव के लोग प्रार्थना में उपस्थित थे। शान्त स्वच्छ वातावरण। प्रभात का समय था। सूर्य पूर्व दिशा से उग रहा था। निश्चल स्वभाव माता राजमोहिनी देवी ने मंगल कामना के साथ यात्रियों को विदा दी। यात्रा आगे बढ़ी। साथ-साथ राजमोहिनी देवी और उनके भक्तगण अन्य ग्रामवासियों के चरण भी आगे बढ़े। आगे अम्बिकापुर नगरनिवासियों ने टोली का स्वागत किया। दो दिन का पड़ाव इस शहर में था। अम्बिकापुर इस जिले का मुख्य स्थान है। जन-संख्या २४ हजार है। शहर छोटा है फिर भी देश के सब प्रान्तों के लोग यहाँ हैं। सबसे मिलने का मौका हमें मिला। शहर की महिलाएं अपने संगठन के द्वारा शहर तथा गाँव की सेवा करना चाहती हैं। शहर में अलग-अलग भाषाएँ बोलनेवाले और अलग-अलग धर्म माननेवाले लोगों के साथ मधुर सामूहिक प्रार्थना शान्ति तथा शीलरक्षा के कार्यक्रम बहनों के सामने रखे गये।

● आगे पाँच मील का रास्ता था—जंगल से भरा हुआ और एकान्त। कहीं-कहीं पक्षियों का कलरव। चार यात्री और एक मार्गदर्शक भाई। जंगल पार करने के बाद भी गाँव दिखाई नहीं पड़ा। लेकिन स्वागत के लिए आये हुए स्त्री-पुरुषों का समूह गाजे-बाजे के साथ आता हुआ दिखाई पड़ा। फिर चलते चलते गाँव नजदीक आया साफ सुथरा रास्ता। देखकर हम चकित हो गये। लोगों ने कहा था कि यह आदिवासी क्षेत्र है। परन्तु उनका रहन-सहन घर-द्वार और व्यवहार देखकर तो कोई नहीं कह सकता कि ये आदिवासी हैं असंस्कृत हैं।

● हमारा पड़ाव रखा गया था एक खादी केन्द्र में। दोपहर के भोजन के लिए एक परिवार में हम गये। गाँव काफी फैला हुआ है। दस-पाँच परिवार यहाँ बसे हैं तो दस-पाँच परिवार आधा-पौन मील दूरी पर। जिनके घर में हम भोजन के लिए गये थे उनका घर देखकर मुँह से इतना ही निकला—राम ! कितना सुन्दर ! इसके सिवाय दूसरा कुछ शब्द निकला ही नहीं। गोबर से लिपा हुआ घर। कहीं भी धूल नहीं कहीं भी गंदगी नहीं। सब दीवारें अल्पना से सजी हुई थीं। छुई मिट्टी नामक एक प्रकार की सफेद मिट्टी से यहाँ के लोग दीवारों को सफेद करते हैं और सफेदी करते समय उस पर अपनी कला भी अंकित कर देते हैं।

● उनके घर में एक बाँस का चरखा भी देखा। किसीने उनका कता हुआ सूत दिखाया। अपने ढंग की बाँस की अटेरन में लपेटा हुआ मोटा सूत। गुंडी का कोई हिसाब नहीं। हिसाब वजन का ही है।

इस तरह सरगुजा जिलानिवासी भाई बहनों के बीच में हमें घूमने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। यहाँ के निवासियों का परिचय दूसरे लोगों की तरह हमें भी नहीं था। लेकिन एक-दो दिन में ही हम उनके परिवार के बन गये। अब परिचय की जरूरत भी क्या रही ? अब तो आगे अपने परिवारों में ही घूमना है।

—लक्ष्मी फूकन

रंगभेद का दानव : दाँत तोड़ डालें

इस धरती का एक बड़ा भूभाग है 'अफ्रीका' महाद्वीप के नाम से। इसमें बहुत से देश हैं। भारत की तरह ही इन देशों में भी सैकड़ों वर्षों तक विदेशी लोगों का राज बना रहा। लेकिन दुनिया में आजादी की लड़ाई का जोर हुआ तो उसका असर अफ्रीका पर भी हुआ और वहाँ के गुलाम देशों में भी आजादी की लड़ाई शुरू हो गयी। एक के बाद दूसरे देश आजाद होते गये।

पिछले लगभग साठ-सत्तर साल में दुनिया के गुलाम देशों मे आजादी की माँग आँधी के वेग से आयी और गुलामी की जड़ें उखड़ गयीं। देश-देश मे उस देश के वासियों का राज कायम हुआ। यह इतिहास का बहुत ही सुन्दर अध्याय है।

लेकिन इन्ही दिनो मानव-विकास की कहानी मे बहुत ही भयंकर और काली करतूतोंवाली घटनाएँ भी जुड़ रही हैं।

अधिकांश गुलाम देशों मे राज करनेवाले विदेशी अपने मूल देश के लिए धन हड़पने, चूसने और भोगने मे लगे रहे, और जब उन्हें वह देश छोड़ना पड़ा तो छोड़कर वापस आ गये, बहुत हुआ तो उस देश को छोड़ते समय आपसी फूट-बैर की आग सुलगाते गये। भारत सहित ऐसे अधिकांश देश जो इधर बीस-पचीस वर्षों में आजाद हुए हैं, इस आग मे जले हैं, अब भी जल रहे हैं।

लेकिन इससे अधिक खतरनाक हालत कुछ ऐसे देशों की है, जहाँ ये विदेशी बस गये हैं, यानी उसी देश के नागरिक हो गये हैं।

जिन देशों में राज करनेवाले गोरे लोग बस गये हैं, उनमें अफ्रीका के दो मुख्य देश हैं, रोडेशिया और दक्षिण अफ्रीका। दक्षिण अमेरिका, ब्राजील आदि और भी ऐसे अनेक देश हैं, जहाँ ये लोग बसे हैं।

दुनिया मे कहीं भी किसीका बस जाना कोई गलत बात नही है। भगवान की ही बनायी यह धरती है, और भगवान के ही बनाये हम सब हैं।

लेकिन इस तरह के देशों मे कुछ और ही बातें चल रही हैं। दुनिया मे अपने 'रक्त की श्रेष्ठता' का दावा करनेवाले और पूरी धरती पर अपने राज्य की स्थापना का सपना देखनेवाले हिटलर का नर-संहारी युद्ध का नंगा नाच इतिहास ने देखा। उम्मीद थी कि अपने अरमानों सहित हिटलर का अंत हो जाने के बाद दुनिया में फिर कभी 'रंग' की श्रेष्ठता का अभिमान नहीं जागेगा और धरती पर यह आग नहीं भड़केगी, लेकिन वह उम्मीद नाउम्मीदी मे बदल रही है।

अभी पिछले दिनो रोडेशिया मे लगभग ४० लाख मूल निवासियो पर राज करनेवाली सिर्फ २ लाख जनसंख्या की प्रतिनिधि गोरी सरकार के प्रधान मंत्री ने रोडेशिया के ५ देश-भक्तों को फाँसी की सजा दे दी। और ऐसी खबर है कि भविष्य मे और भी ऐसे देशभक्तों को, जिन्हे अभी जेल मे सड़ाया जा रहा है, फाँसी दे दी जायगी। बात इतने तक रुकनेवाली नहीं है, कोशिश यह हो रही है कि वहाँ के मूल निवासियो के ऊपर 'परिवार-नियोजन' का कानून लागू कर दिया जाय, ताकि उनकी संख्या घट जाय, और दूसरी ओर गोरे लोगों को बुला-बुलाकर बसाया जाय।

ब्राजील मे तो वहाँ के मूल निवासियो को और भी कई प्रकार के भ्रष्ट तरीकों से लगभग समाप्त ही कर दिया गया है। ऐसी ही कोशिशें दुनिया के और भी अनेक स्थानों पर हो रही हैं।

लेकिन इस समय रोडेशिया की गोरी सरकार का दानवी व्यवहार देखकर दुनिया ठिठक गयी है।

चमड़ी के रंगो की बड़ाई-छोटाई और 'खून' की उच्चता-नीचता का यह दानव किसी-किसी रूप मे हमारे गाँवो मे भी दिखाई दे जाता है। क्या हमारी-आपकी यह जिम्मेदारी नहीं है कि हम सब मिलकर इस 'दानव' के दाँत तोड़ दें? यानी 'रंग' और 'रक्त' के भेद-भाव की भावना को समाप्त करके हर 'रंग' और हर 'रक्त' मे रम रही 'आत्मा' को एक मानें, जिसे हम भगवान का ही अंश मानते हैं।●

'गाँव की बात' : वार्षिक चंदा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित।

सघनता, उनकी समस्याओं के समाधान में सहयोग देना, अन्दाइयों के प्रचार में मदद करना। उनके विकास में 'बेलेंस' ठीक रखने का काम यह संस्थान करेगा। मैं इसे 'संशोधन' कहता हूँ। मेरा एक सूत्र है कि 'मूल्यांकन' नहीं करना चाहिए। जो क्रांति के काम में लगे हुए है, उन्हें मूल्यांकन की फुर्सत नहीं, और जो नहीं लगे हुए हैं उनसे यह सधेगा नहीं। हमारा मूल्यांकन हमारी मृत्यु के बाद होगा। बुद्ध के उपदेशों की महानता आज इतने हजार वर्षों बाद महसूस की जा रही है।

हमारे कार्यकर्ताओं में अध्ययन की वृत्ति होनी चाहिए। शंकराचार्य के मठों में आज भी तीन बातों पर जोर है

१—शंकराचार्य के ग्रन्थों का अध्ययन २—ज्ञान निष्ठा, ३—भक्ति। हम लोगों में अध्ययन की कमी है। गांधीजी के समय में भी अध्ययन छूट ही रहा। अब यह काम होना चाहिए। 'ग्रामदान संशोधन' केन्द्र इस काम में मदद कर सकता है।

एक बात और। हम ग्रामदान के बाद की बात तो सोचते हैं, लेकिन यह भूल जाते हैं कि ग्रामदान अपने में एक 'मूल्य' (वॅल्यू) है। लोग कहते हैं कि ग्रामदान के बाद कितना उत्पादन बढ़ा, कितना आर्थिक विकास हुआ कितना स्टैण्डर्ड आफ लिविंग बढ़ा। मैं कहता हूँ, यह सब तो गाँव की क्षमता के अनुसार होगा, किन्तु असली बात तो 'मूल्य' की है। देखना यह होगा कि ग्रामदान जिस प्रेरणा से किया गया है उसमें वृद्धि हुई है, या ह्रास। अगर प्रेम और करुणा की ही वृत्ति घट गयी तो ग्रामदान का क्या रहा? उस मसाले को बराबर बना रहना चाहिए। 'ग्रामदान संशोधन केन्द्र' को इस 'मूल्य' को सामने रखने का काम करना चाहिए। इसका अध्ययन हो, रिसर्च के द्वारा इसका प्रचार हो। ग्रामदान में 'शेयरिंग का सुख' है, सहयोग और सहभाग है। यह हमारे अध्ययन एवं शोध से निकलना चाहिए।

× × ×

विनोबाजी चाहते हैं कि ग्रामदान की समस्याओं और सम्भावनाओं का अध्ययन शुरू होना चाहिए, साथ ही ग्रामीण जीवन का संशोधन भी। कब, कैसे, कहाँ होगा, कहना कठिन है, लेकिन बिना हुए काम नहीं चलेगा, यह स्पष्ट है। हम कार्यकर्ता जितना कर सकते हैं उतना करना शुरू करें लेकिन विद्यालयों और संस्थानों के जो मित्र रुचि रखते हों उन्हें भी साथ लें। अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र आदि के बुद्ध ज्ञान कार मित्रों में हल्की हलचल के लक्षण दिखायी देने लगे हैं। क्या हमारे ये शास्त्र, 'पावर पॉलिटिक्स' (सत्ता की राजनीति) 'बिग बिजिनेस' (बड़ा व्यापार), और 'वार मशीन' (युद्ध-तंत्र) के ही चारों ओर घूमेंगे, या 'जीवन की नयी कला' (डिजाइन फार न्यू लिविंग) पर भी ध्यान देंगे? बाजार की अर्थनीति (पूँजीवाद) दुनिया ने देख ली सरकार की अर्थनीति (साम्यवाद) भी देख ली और अब मिश्रित भी देख रहा है। इनसे आगे जाकर क्या 'भाईचारे' (शेयरिंग) की भी कोई 'अर्थनीति', राजनीति, समाज-नीति बन सकती है? अगर दुनिया को कायम रहना है तो बननी चाहिए। अगर नहीं तो 'बनेगी' किसलिए? ग्रामदान का 'न्यू डिजाइन फार लिविंग' के संदर्भ में अध्ययन होना चाहिए। ●

आपकी अपेक्षाएँ : हमारी सीमाएँ

प्रिय साथी,

आपमें से कई साथियों के पत्र आते रहते हैं। उनमें आपकी सद्भावना तो रहती ही है, साथ ही सुझाव रहते है और अपेक्षाएँ भी रहती है। हम बहुत चाहते है कि भूदान-यज्ञ ऐसा निकले जिसमें वे सारी चीजें रहें, जिन्हें आप चाहते हैं। पूज्य विनोबाजी की तो बार बार माँग है कि 'भूदान-यज्ञ एक फर्स्ट-क्लास सम्पूर्ण साप्ताहिक के रूप में निकले। लेकिन उसके लिए तो फर्स्ट-क्लास सम्पादक और फर्स्ट-क्लास साधन चाहिए। इसमें कोई शक नहीं कि जैसा हमारा विचार है उसके अनुरूप विचार का यह वाहन नहीं है। किन्तु वह अपेक्षा मुझ-जैसे सीमित शक्ति के व्यक्ति की पहुँच के बाहर है। मेरी चिन्ता इस बात की जरूर है कि आपकी अपेक्षाएँ पूरी हों जो असामान्य नहीं हैं, और अव्यावहारिक भी नहीं है। लेकिन क्या हो अपनी सीमाएँ इतनी कठोर हैं कि उतना भी नहीं होने देती है। आप चाहते हैं कि विनोबा के भाषण छपें। भाषण वह दे नहीं रहे है। चर्चाएँ करते है, लेकिन उनकी रिपोर्टिंग की व्यवस्था नहीं हो पा रही है। आप चाहते हैं कि पत्र में विविधता हो। विविधता बहुत खर्चीली होती है। फिर, आपकी माँग है कि आन्दोलन के समाचार खूब दिये जायें। हम भी मानते है कि अगर 'भूदान-यज्ञ इतना भी नहीं करेगा तो करेगा क्या? लेकिन जब आन्दोलन चलानेवाले देश भर में फैले हजारों साथी अपने काम की खबर ही न भेजें तो क्या छपे? पचीस-तीस हजार के वार्षिक घाटे पर चलनेवाला भूदान-यज्ञ अपनी ओर से कितना पुरुषार्थ करेगा?

इतने होते हुए भी हम कोशिश कर रहे है कि आन्दोलन के सघन क्षेत्रों के विस्तृत विवरण प्राप्त किये जायें। ग्रामदान की समस्याओं और सम्भावनाओं को सही सन्दर्भ में प्रस्तुत किया जाय। स्वामित्व विसर्जन और नेतृत्व विसर्जन के सम्बन्ध में सुव्यवस्थित चिंतन के लिए सामग्री जुटायी जाय। ये सब बातें अपने मन में है। वे पूरी तब होंगी जब आपका पूरा सहयोग मिलेगा। 'भूदान यज्ञ' को अपना मानिये, अपनी बात लिखिये उसे दूसरों तक पहुँचाइये। 'भूदान-यज्ञ' का पोषण कीजिये, वह आपके प्रेम और विश्वास का पात्र बनने के लिए कुछ उठा नहीं रखेगा। क्या इतना भी मान्य नहीं होगा? जय जगत्।

२१-३ ६८

आपका,
राममूर्ति

शान्ति हेतु पन्द्रह दिन का उपवास

सर्वोदय-जगत के सुप्रसिद्ध लेखक श्री सुरेशराम ने २४ मार्च, '६८ से इलाहाबाद में उपवास प्रारम्भ किया है, उसके सम्बन्ध में प्रसारित उनका वक्तव्य :

होली के त्योहार के तीसरे दिन और उसके बाद इलाहाबाद शहर में जो घटनाएँ हुई, वे बहुत दुःखद होने के साथ-साथ चिन्ताजनक भी है। दस दिन बीत जाने पर भी हालत ठीक नहीं कही जा सकती। वैसे तो दुकानें खुल गयी हैं और मेल-मिलाप के कार्यक्रम भी सम्पन्न हो गये है, लेकिन सगीनों के बल पर और पी० ए० सी० की छत्रछाया में ही। नगर के विभिन्न मुहल्लों में घूमकर और अनेक लोगों से मिलकर सारे मामले को समझने की मैंने कोशिश की। जगह-जगह जो बर्बादी हुई वह भी देखी। बड़ा करुणामय दृश्य था।

परिस्थिति का अध्ययन करने के बाद मुझे ऐसा महसूस होता है कि होली का रंग तो एक बहाना मात्र था। असल चीज है आपस का अविश्वास और मन का डर। हिन्दू को भरोसा नहीं है मुसलमान पर और वह उसकी देशभक्ति पर शक करता है, और मुसलमान को भरोसा नहीं है हिंदू पर और वह उसकी नेकनियती पर शंका रखता है। इस प्रकार के दंगे के लिए प्रायः 'असामाजिक' तत्त्वों को दोष दे दिया जाता है। मुझे यह सही नहीं जँचता। जिन्हें "गुण्डा" कहा जाता है वे तो इस्तेमाल होते हैं श्रीमानों के हाथों में—जिनके पास पैसा है, शक्ति है, साधन है और सत्ता भी है या सत्ता की आकांक्षा है। चाहे अपने कारोबार के कारण, चाहे अपना असर बढ़ाने के कारण या चाहे चुनाव जीतने के कारण, वे उनको आश्रय और शह देते हैं। बाद में वे उन्हीं के उल्टे गोस्तार-से बन जाते हैं और इस तरह कुचक्र चलता है, जिसमें दोनों नाचते है। मगर इसका फल भोगना पड़ता है आम आदमी को, मजदूरी-पेशा गरीब को, जिसकी रोजी मारी जाती है और जिसके बाल-बच्चे दाने-दाने के लिए तरस जाते है।

बड़ी अजीब बात यह देखने में आ रही है कि एक धर्म या मतवाले गैर को दोष देते नहीं थकते। अपनी तरफ से जो बड़ी हरकत भी हुई हो उसे छोटा और दूसरे की जरा-सी चीज को भी पहाड़ बनाकर पेश करते और प्रचार करते हैं। अलग होकर मानवीय दृष्टिकोण या इन्सानी नजरिये से समझने और स्वीकार करने की तैयारी नहीं है। अगर यही हालत बनी रही तो समाज पर संकीर्ण, स्वार्थ-प्रधान और अनैतिक तत्त्वों का अंकुश बढ़ जायगा और क्या हमारी स्वतन्त्रता, क्या हमारा प्रजातन्त्र, और क्या हमारा संस्कृति—सभी खतरे में पड़ जायँगे, जिससे देश की आजादी और एकता छिन्न-भिन्न हो सकती है।

इलाहाबाद के वर्तमान साम्प्रदायिक विस्फोट की यह सबसे बड़ी चुनौती है। इसका सफलतापूर्वक सामना तभी किया जा सकेगा जब यहाँ शान्ति की, अहिंसा की, करुणा की शक्ति खड़ी होगी। आज भी यह कुछ अंश में मौजूद तो है, लेकिन उसकी अपनी कोई हस्ती नहीं है और वह हिंसा या दण्ड-शक्ति की दासी के रूप में है। होना चाहिए उसका उल्टा, ताकि क्या समाज का व्यवहार, क्या शासन और क्या राजनीति, सभी उसके आधिपत्य में चलें और जनता की सुगन्ध सब दूर फैले।

इसको पूरा करने की जिम्मेदारी हर भारतवासी की, हर नागरिक की, हर इलाहाबाद-वासी की है। हम अपना-अपना दिल टटोलें और अपने से पूछें कि क्या मेरी तरफ से कोई गलत काम तो नहीं हो रहा है। अगर नहीं हो रहा होता तो न अशान्ति होती, न कोई गड़बड़ी मचती। इसलिए इसे खोजकर निकालना होगा और अपना मन साफ करना होगा। सभी पड़ोसी के, दूसरों के, सबके दिल साफ होंगे और जो लोग घर छोड़कर भाग गये हैं वे वापिस आकर बसेंगे और असली अमन और सच्ची शान्ति होगी।

यह सब सोच-विचारकर, आत्मशुद्धि की खातिर मैंने उपवास करने का तय किया। यह उपवास कल दोपहर बारह बजे से शुरू हुआ। पन्द्रह दिन चलेगा। इस अरसे में केवल पानी और उसके साथ नींबू या सोडे का उपयोग करूँगा। —सुरेशराम

इलाहाबाद, २५ मार्च, '६८

संस्मरण

असहिष्णुता की बलिवेदी

११ फरवरी की शाम। तांगे में बैठे कुछ जनसंघी कार्यकर्ता लाऊडस्पीकर से पं० दीनदयालजी उपाध्याय की निर्मम हत्या की खबर दे रहे थे, उनकी जुबान में वेदना से अधिक प्रतिशोध की तैयारी थी और उत्पीड़ा से अधिक राजनैतिक आवेश। वे लोग आम हड़ताल रखने व शोक-सभा में अधिक संख्या में सम्मिलित होने के लिए लोगों से आग्रह कर रहे थे, यह क्रम रात को न जाने कब तक चला, प्रातः बिछौना छोड़ने से पूर्व भी वही आवाज कान में आ रही थी।

परिणामतः १२ फरवरी को नगर में हड़ताल रही, शोक-सभा में उपस्थिति अच्छी थी। जनसंघी कार्यकर्ता जन-भक्ति का मोड़ अपनी तरफ देखकर सन्तुष्ट दिखे, पर मुझे यह सब अटपटा-सा लग रहा था।

देश के किसी भी नेता की निर्मम हत्या-प्रकरण को उसके साथी अनुयायी दलबंदी मजबूत करने के लिए उपयुक्त मानें, यह न मानवीय दृष्टिकोण कहा जा सकता है, न राष्ट्रीय दृष्टिकोण। राजनैतिक असहिष्णुता की बलिवेदी पर कल महात्मा गांधी का बलिदान हुआ था और आज सम्भवतः उसी रास्ते श्री उपाध्याय गये, अतः जरूरी लगा कि आज सर्वदलीय सभाएँ होतीं और उसमें घर की गयी असहिष्णुता की महामारी के रोकथाम के उपाय निश्चित किये जाते, परन्तु राष्ट्रीय हानि की आड़ में दलबंदी और दल की आड़ में निहित-स्वार्थ। मेरे मन में प्रश्न था कि ऐसी हिंसात्मक या असहिष्णु भावना की रोकथाम न करें हम भला कहाँ के रहेंगे? —भगवानदास

देश

२४ मार्च द्वितीय राष्ट्रसंघ व्यापार व विकास सम्मेलन में मुख्य प्रश्नों पर समझौता अनिर्णीत।

२५ मार्च नागालैंड में अलग राज्यपाल की माँग। मार्क्सवादी षड्यंत्र से पूर्वांचल में खतरा।

२६ मार्च मगध में छात्रों व बस कर्मचारियों में संघर्ष। गैस के विरुद्ध कानूनी कारवाई करने के लिए संसद-सदस्यों ने माँग की।

२७ मार्च देशद्रोहियों को कुचल देने की चह्वाण द्वारा चेतावनी। वामपंथी कम्युनिस्टों पर प्रतिबंध की माँग।

२८ मार्च राज्यों के अधिकार बढ़ाने के सम्बन्ध में विरोधी सदस्यों की माँग चह्वाण द्वारा रद्द।

२९ मार्च बिहार विधानसभा में कांग्रेसी सदस्य ने कम्युनिस्ट सदस्य पर कुर्सी फेंका।

विदेश

२४ मार्च पाकिस्तान को इटली से १०० टैंक बेच जाने की अमरिका ने अनुमति दी। अरब इस्राइल में पुनः बड़े पैमाने पर युद्ध की आशंका।

२५ मार्च सुरक्षा परिषद् द्वारा जोर्डन पर इस्राइली हमले की निन्दा।

२६ मार्च चीन इस वर्ष सन्धियों में प्रक्षेपास्त्र छोड़ेगा।

२७ मार्च जनरल सुहार्तो इंडोनेशिया के राष्ट्रपति बने। प्रथम अन्तरिक्षयात्री गगारिन की हवाई-दुर्घटना में मृत्यु।

२८ मार्च अरब-इस्राइल सेनाओं में जोर्डन नदी के किनारे १ घंटे तक संघर्ष।

२९ मार्च जोर्डन नदी के किनारे पुनः युद्ध टैंकों का प्रयोग शुरू।

३० मार्च लंदन के टेवीस्टॉक स्क्वायर में आगामी १७ या १८ मई को म० गांधी की प्रतिमा का अनावरण होगा।

आन्दोलन के समाचार

नक्सलबाड़ी क्षेत्र में ग्रामदान

कलकत्ता २७ मार्च। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं द्वारा उत्तरी बंगाल के नक्सलबाड़ी क्षेत्र में व्यापक अभियान आरम्भ करने के बाद केतुगाबुर गाँव ग्रामदान में प्राप्त हुआ। नक्सलबाड़ी क्षेत्र में जहाँ भूमि को लेकर हिंसक उपद्रव हुए थे यह पहला ग्रामदान है। केतुगाबुर की तरह और भी कुछ ग्रामदान मिलने की सम्भावना है। ऐसा अनुमान है कि विनोबाजी भी शीघ्र नक्सलबाड़ी की यात्रा करेंगे। (सप्रस)

१८ अप्रैल ६८ तक उत्तरकाशी जिलादान का संकल्प

उत्तरकाशी। गत २० मार्च को यहाँ सम्पन्न हुए रचनात्मक कार्यकर्ताओं के गांधी शताब्दी शिविर में उत्तरकाशी जिले के जिलादान १८ अप्रैल ६८ तक करने का निश्चय किया गया। अब तक उत्तरकाशी जिले के ६ गाँवों में से ३६ गाँवों का ग्रामदान हो चुका है। (सप्रस)

गुजरात में १ ०३ ५३० एकड़ भूदान प्राप्त

गुजरात सर्वोदय मण्डल द्वारा प्रसारित एक जानकारी के अनुसार गुजरात में अब तक कुल १ ०३ ५३० एकड़ भूदान में भूमि मिली है जिसमें २४ ६६६ एकड़ जमीन तत्कालीन सौराष्ट्र सरकार ने भूदान में दी थी। शेष ७८ ३५० एकड़ भूमि २० हजार दाताओं से भूदान में मिली है। इसमें से ३६ ५७० एकड़ और सरकार द्वारा प्राप्त भूदान में से १४ ४१४ एकड़ इस प्रकार कुल ५० ९८४ एकड़ भूमि १० २७० भूमिहीन परिवारों में वितरित की जा चुकी है। सौराष्ट्र में १९५३ में भूदान-एक्ट पारित हुआ तब से वितरण का कार्य सौराष्ट्र भूदान यज्ञ समिति कर रही है। परन्तु शेष गुजरात के लिए कोई भूदान-कानून नहीं बना है अतः उसका कार्य गुजरात सर्वोदय मण्डल सम्हाल रहा है। (सप्रस)

विनोबाजी द्वारा श्रमशाला का उद्घाटन

४ मार्च को विनोबाजी ने खादीग्राम मुंगेर में श्रमशाला का उद्घाटन किया। इस श्रमशाला की प्रेरणा का स्रोत था १३ फरवरी को मुंगेर की आम सभा में विनोबाजी का भाषण जिसमें उन्होंने चीन में चलनेवाले हाफ-हाफ स्कूलों का जिक्र किया था। श्रमशाला में जीविका के लिए ६ घण्टे काम और २ घण्टे पढ़ाई होती है। शारीरिक श्रम के बारे में विनोबाजी ने कहा कि यह अधिक है और उन्होंने ढेढ़-ढेढ़ घण्टे श्रम के बाद पढ़ाई के क्रम से कार्यक्रम बनाने का सुझाव दिया। उन्होंने कहा कि गुरु को शिष्य से पराजय की कामना करनी चाहिए।

—पारस भाई

सर्वोदय साहित्य प्रदर्शनी

● वाराणसी १ मार्च। वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय में २७ मार्च से ३० मार्च तक सर्व सेवा संघ की ओर से सर्वोदय साहित्य प्रदर्शन का आयोजन किया गया था। प्रदर्शनी के अतिरिक्त प्रतिदिन गांधी विचार तथा सर्वोदय-सम्बन्धित विषयों पर विद्वानों के भाषण भी हुए। प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० गौरीनाथ शास्त्री ने कहा कि गांधी बातों का आचरण में लाने के लिए सर्वोदय-साहित्य का प्रचार आवश्यक है। सर्वश्री जगन्नाथ उपाध्याय करुणापति त्रिपाठी आदि विद्वानों के भी भाषण हुए।

खादी एवं विकास कार्यकर्ताओं का सम्मेलन सम्पन्न

इंदौर। स्थानीय विसर्जन आश्रम में दिनांक २३ २४ मार्च को आयोजित दो दिवसीय सम्मेलन में प्रदेश की ३० खादी संस्थाओं ७५ प्रतिनिधियों तथा १५ स्थानीय कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। सम्मेलन की अध्यक्षता प्रान्त के सुप्रसिद्ध सर्वोदय-सेवक श्री बैजनाथ महोदय ने की। (सप्रस)

बिहारदान की ओर

● रानीपतरा, १२ मार्च : कल यहाँ पहुँचने पर विनोबाजी ने कहा कि यह सीमा-क्षेत्र होने से विशेष जिला माना जायगा। यहाँ अगर अपेक्षा पूर्ण हुई तो हमें घूमना नहीं पड़ेगा। हर गाँव में कम-से-कम १० शान्ति-सैनिक हों। गाँव के झगड़े अदालत में न जायँ।

● गया, २६ मार्च। होली के बाद ग्रामनिर्माण मंडल की खादी-उद्योग समिति के ३२ कार्यकर्ता जिले के कई भागों में विभक्त होकर काम में लग गये हैं। श्री सिद्धराज ढड्ढाजी के पिछले दिनों के भ्रमण से जिले में ग्रामदान के लिए अनुकूलता पैदा हुई है। विशेषत शिक्षक, ग्रामपचायतों के कार्यकर्ता सक्रिय हो रहे हैं। स्थान-स्थान पर प्रखण्ड विकास पदाधिकारियों की मदद के कारण सरकारी कर्मचारी वर्ग भी सहायता कर रहा है। जिलादान-प्राप्ति समिति के संयोजक दिवाकरजी १६ मार्च से दक्षिणी क्षेत्र का व्यापक दौरा कर रहे हैं। सोखोदेवरा आश्रम के मंत्री श्री त्रिपुरारी शरण ने गोविन्दपुर प्रखण्डदान के लिए दौरा जारी किया है। बाराचट्टी प्रखण्डदान समिति का गठन हुआ है। जिले के तथा प्रांत के प्रमुख नेताओं से निवेदन किया गया है कि अप्रैल माह में कम-से-कम तीन दिनों का समय यहाँ के ग्रामदान-अभियान के लिए दें। —केशव मिश्र
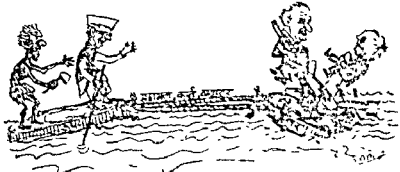
३१ मार्च '६८ तक

दरभंगा जिलादान में :	प्रखंडदान ४४	ग्रामदान ३,७२०
तिरुनेलवेली जिलादान में :	प्रखण्डदान ३१	ग्रामदान ७,८९६
बिहार में : जिलादान १,	प्रखण्डदान १४२	ग्रामदान १७,९३६
भारत में : जिलादान २,	प्रखण्डदान २८५	ग्रामदान ४३,८७४

बिहार में ग्रामदान-प्रखंडदान

(३१ मार्च '६८ तक)

जिला	ग्रामदान	प्रखंडदान
पूर्णिया	४,१७१	३७
दरभंगा	३,७२०	४४
मुजफ्फरपुर	१,८८९	२०
मुंगेर	२,११८	१६
गया	१,१२६	१
हजारीबाग	९१२	४
संथाल परगना	८३५	१
सारण	६६०	५
पलामू	६१८	४
धनबाद	२११	१
सिंहभूम	२६६	[illegible]
सहर्षा	४६७	२
भागलपुर	४४८	३
शाहाबाद	१०३	१
रांची	४४	–
पटना	२५	–
चंपारण	२४०	
कुल :	१७,९३६	१४२

● जमशेदपुर, २६ मार्च। गत ८ मार्च से जिला शान्ति-सेना समिति के कार्यकर्ताओं एवं स्थानीय गांधी-स्मारक निधि द्वारा संचालित आश्रम नयागाँव के कार्यकर्ताओं की काफी शक्ति प्रखण्डदान-अभियान में लगी। फलस्वरूप २५ मार्च को सिंहभूमि जिले का तीसरा प्रखण्ड सरायकेला प्रखण्डदान घोषित हुआ। ८८ गाँवों में से ६६ गाँव, यानी कुल गाँवों के ७५ प्रतिशत गाँव एवं ७६ प्रतिशत परिवार ग्रामदान में शामिल हुए। —मु० अयूबखाँ

उत्तर प्रदेश

● लखनऊ, २५ मार्च। कानपुर, फतेहपुर, उन्नाव, रायबरेली, लखनऊ, हरदोई, सीतापुर और खीरी जिलों के १७ वरिष्ठ कार्यकर्ताओं एवं नेताओं की एक बैठक २२-२३ मार्च को कानपुर में हुई। सर्वसम्मति से निर्णय हुआ कि ग्रामदान ग्रामस्वराज्य आन्दोलन को व्यापक बनाया जाय। इस दृष्टि से उपर्युक्त जिलों के प्रतिनिधियों की "कानपुर क्षेत्रीय ग्रामदान ग्रामस्वराज्य समिति" का निर्माण श्री ब्रजमोहन त्रिपाठी की अध्यक्षता में किया गया। श्री हरिप्रसाद, अध्यक्ष, जिला परिषद फतेहपुर इसके मंत्री मनोनीत हुए। जिला समितियों के गठन तथा ग्रामदान-अभियानों के संयोजन की योजना भी बनायी गयी। प्रयत्न यह है कि २ अक्तूबर '६९ तक उ० प्र० के सभी ग्रामों में ग्रामस्वराज्य का संदेश पहुँच जाय। —लक्ष्मीन्द्र प्रसाद

● गांधीबाग (जयपुर), २४ मार्च। सर्वसम्मति से राजस्थान खादी संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा, उपाध्यक्ष रामेश्वरजी अग्रवाल और मंत्री श्री दीपचन्दजी गोयल चुने गये।

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-संकट पर श्री मनमोहन की चेतावनी

रस्सी काटो

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड; या ३॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस, मानमंदिर वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : २८

शुक्रवार, १२ अप्रैल, '६८

इस अंक में

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश

कष्ट-सहिष्णुता से ही दमन-उत्पीड़न का मुकाबला

नीग्रो जाति, जो किसी जमाने में एक असहाय बाल्यावस्था में थी, आज राजनैतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक क्षेत्रों में काफी आगे बढ़ चुकी है। इसलिए बहुत-से श्वेतांग नागरिकों को यह भय होता है कि कहीं नीग्रो लोग बदला चुकाने पर उतारू न हो जायें। अब यह नीग्रो लोगों का काम है कि वे उन भयभीत श्वेतांगों को यह समझायें कि उन्हें डरने की कोई जरूरत नहीं है कि नीग्रो लोग परिस्थिति को समझते हैं और इसलिए वे सब कुछ माफ किये दे रहे हैं और अतीत को भूल जाने के लिए तैयार हैं। नीग्रो लोग केवल न्याय प्राप्त करने की चेष्टा कर रहे हैं और वह न्याय भी दोनों के लिए—अपने लिए भी और श्वेतांगों के लिए भी। अहिंसा के सिद्धान्तों पर चलनेवाला एक व्यापक आन्दोलन यह सिखाता है कि हाथ में शक्ति होने के बावजूद किस तरह अनुशासित रहना चाहिए। वह श्वेतांग समुदाय के सामने प्रदर्शन इस बात का भी करता है कि अगर इस प्रकार का आन्दोलन शक्तिशाली बनता है तो वह अपनी ताकत का उपयोग विधायक कामों में करेगा, न कि उस शक्ति के उन्माद में पागल हो जायगा। अहिंसा मनुष्य के उस भाग को छू सकती है, जहाँ कानून नहीं पहुँच सकता। जब कानून के द्वारा मनुष्य के व्यवहार पर नियंत्रण लगाया जाता है, तब वह कानून अप्रत्यक्ष रूप से जनभावना को मोड़ने का काम करता है। कानून का पालन करवाना अपने-आप में एक शान्तिपूर्ण परिवर्तन का ही तरीका है। पर कानून भी किसीकी मदद चाहता है। एक न्यायालय सार्वजनिक स्कूलों में रंग-समन्वय के लिए आदेश दे सकता है। परन्तु लोगों के मन के भय को मिटाने के लिए, घृणा को दूर करने के लिए, हिंसा एवं स्कूलों में रंग-समन्वय के विचार के विरुद्ध फैले हुए अनुचित तर्कों को मिटाने के लिए और जाति के नाम पर समाज को नुकसान पहुँचानेवाले लोगों के हाथों से अभिक्रम-शक्ति ले लेने के लिए क्या किया जा सकता है ? कानून के प्रति आदर पैदा करने के लिए तथा कानून का पालन करवाने के लिए यह आवश्यक है कि लोगों में उनके सही होने का विश्वास पैदा हो।

डा० केनेथ क्लार्क ने बड़े प्रेरक स्वरों में कहा है : "बर्बरता और अवैधानिकता, निर्दयता और अन्यायपूर्ण हमला अगर किसी एक नीग्रो पर होता है तो उसका सामना करने का उपाय यही है कि उस एक के स्थान पर सौ नीग्रो अपने-आपको इन अन्यायों का शिकार बनने के लिए प्रस्तुत कर दें।"

जब इस चमत्कारपूर्ण एकता, अद्भुत स्वाभिमान, कष्ट-सहिष्णुता और बदला न लेने की वृत्ति के साथ दमनकारियों का मुकाबला होगा, तब अन्य दमनकारियों की भाँति ही ये भी अपनी बर्बरता के खुद शिकार हो जायेंगे। इन दमनकारियों को जब दुनिया के सामने और ईश्वर के सामने अपने भाइयों के खून से रंगे हुए दामन के साथ खड़े होने के लिए बाध्य होना पड़ेगा, तब वे अपने आपको ही हरा देनेवाली इस हिंसक पद्धति से बाज आयेंगे ही।

('आजादी की मंजिलें' से) —मार्टिन लूथर किंग

शहीद का खून या नागरिक का निर्णय ?

समाज शहीद के खून से बदलेगा या नागरिक के निर्णय से ?

१३ अप्रैल जलियांवाले बाग के शहीदों की याद का दिन है। उनका खून ४८ साल पहले बहा था। अपने लिए नहीं, देश के लिए बहा था। लेकिन क्या आज हम यह कह सकते हैं कि उन शहीदों की याद देश को है? शायद कुछ बूढ़ों को होगी या उनको होगी जो इतिहास से परिचित होंगे। लेकिन उनकी संख्या कितनी है? सच बात तो यह है कि देश उन शहीदों को याद रखने की जिम्मेदारी इतिहास को सौंपकर स्वयं निश्चिन्त हो गया है। याद आती है भारत की जीवन भर सेवा करने के बाद श्रीमती एनी बेसण्ट की एक बार की कही हुई यह बात कि भारतीयों की सबसे बड़ी विशेषता है, अकृतज्ञता। अपने शहीदों को भूलनेवाले,

चिन्तन-प्रवाह

अपने राष्ट्रपिता को गोली मारनेवाले देश के लिए अगर यह कहा जाय तो गलत क्या होगा?

इसी महीने के १८ अप्रैल को भूक्रान्ति-दिवस है। १७ वर्ष पहले विनोबा ने इसी दिन घोषणा की थी कि इस देश की मुख्य समस्या भूमि की है, इसी देश की नहीं, तमाम एशिया की। भूमि का ही प्रश्न एशिया के जीवन-दर्शन (आइडियालोजी) और तकनीक (टेक्नालाजी) दोनों को स्थिर करेगा। भूमि भारत और एशिया के भविष्य का आधार है; करोड़ों-करोड़ लोगों के जीवन-मरण का प्रश्न है। एशिया किधर जायगा, इसका निर्णय भूमि ही करेगी, दूसरी कोई चीज नहीं। ऐसे क्रान्तिकारी महत्व के दिन की याद—याद छोड़िये जानकारी भी—कितने लोगों को है?

क्या अब यही सुनना बाकी है : अकृतज्ञते, तेरा ही दूसरा नाम भारतीय है?

नहीं, शायद एक दूसरा पहलू भी है। राम और कृष्ण को हम नहीं भूले हैं। तुलसी, कबीर और चैतन्य हमें खूब याद हैं। हो सकता है, भारत की राष्ट्रीय प्रतिभा घटना से अधिक महत्व भावना और साधना को देती है। सामाजिक विकास की जिस मंजिल पर यह देश पहुँच गया है, तथा लोकतन्त्र और विज्ञान के कारण जीवन का जो सन्दर्भ बनता जा रहा है, उसे देखते हुए ऐसा लगता है कि अब परिस्थिति शहीद के बलिदान की आवश्यकता से कहीं आगे निकल गयी, अब उसे आवश्यकता है नागरिक के सही, सामूहिक निर्णय की। शहीद अब भी अपनी आन पर कुर्बान हो सकता है, लेकिन नये जमाने की क्रान्ति राह देख रही है नागरिक की विद्रोह-शक्ति की, जो साहस-पूर्वक और विवेकपूर्वक भविष्य के समाधान के लिए वर्तमान का संशोधन कर सके।

दूसरे ही ढंग से सही, पिछले चुनाव में नागरिक का निर्णय किसी अंश में प्रकट हुआ था। उससे कहीं अधिक वह प्रकट हो रहा है देश भर में होनेवाले हजारों ग्रामदानों के रूप में। ग्रामदान में सामान्य नागरिक का क्रान्तिकारी निर्णय तो है, लेकिन उसमें अभी वह शक्ति और तेजस्विता नहीं है जो शहीद के संकल्प और समर्पण में होती है। उस तेजस्विता के बिना मात्र निर्णय एक गहरी आह और ऊँची आशा के सिवाय दूसरा क्या होगा?

जलियांवाले बाग के शहीदों के श्रद्धा-पूर्वक स्मरण से हृदय ऊँचा उठता है। लेकिन अब कामना यह नहीं होती कि किसी दूसरे को शहीद होते देखना पड़े या खुद शहीद होने की नौबत आये। वास्तव में शहीद की शहादत शासन और समाज की व्यवस्था में घुसी हुई घोर बर्बरता और अज्ञान का प्रमाण है। अगर नागरिक अपनी नागरिकता को पहचाने और उसकी जिम्मेदारी निभाये तो क्यों किसीको शहीद होना पड़े? लोकतंत्र की शक्ति नागरिक के विवेक और निर्णय की शक्ति है। उसीको जगाना नये जमाने के क्रान्तिकारी का काम है, सिर तोड़ना और खून बहाना नहीं। यह ठीक है कि आज की समाज-रचना में नागरिक की मजबूरियाँ अनेक हैं, लेकिन यह भी उतना ही सही है कि अगर लोकतन्त्र और विज्ञान को बनाये रखना हो तो उन मजबूरियों को दूर करने का सबसे सरल उपाय है, नागरिक का निर्णय और उस पर चलने का संकल्प। नागरिक का विकल्प तानाशाह नहीं है, शहीद भी नहीं है।

दुनिया भूतपूर्व देशभक्त आततायियों और तानाशाहों और उनके बलबोध कर देनेवाले कारनामों को देख चुकी है, अब वह सामान्य, पड़ोसी के साथ चलनेवाले, करुणाप्रेरित, सौम्यनिष्ठ, नागरिकों को देखना चाहती है।

राममूर्ति

गोरों के नाम

मानवता की अमर अपील

कष्ट देने की आपकी शक्ति के मुकाबले हम अपनी कष्ट सहने की शक्ति का प्रयोग करेंगे। आपके दुराग्रह का मुकाबला हम सत्याग्रह से करेंगे। हम आपसे घृणा नहीं करेंगे, लेकिन अपनी समस्त आत्मचेतनाओं के साथ हम आपके अन्यायपूर्ण कानूनों का पालन भी नहीं कर सकते। आप हमारे प्रति जो भी करना चाहें, कीजिये, हम फिर भी आपसे प्रेम करेंगे। हमारे घरों पर बम-विस्फोट कीजिये, हमारे बच्चों के लिए खतरा पैदा कीजिये, नकाबपोश हिंसा के दूतों को हमारे मोहल्लों में भेजिये और हमें सड़कों पर मार-पीटकर, अधमरा बनाकर घसीटिये, हम फिर भी आपसे प्रेम करेंगे। किन्तु हम शीघ्र ही अपनी कष्ट-सहिष्णुता की शक्ति से आपको थका देंगे। फिर अपनी स्वतन्त्रता जीतकर हम इस तरह आपसे पेश आयेंगे कि आपके हृदय और चेतना में नया परिवर्तन आ जायगा। इस प्रकार हम ही आप पर विजय प्राप्त करेंगे।

—मार्टिन लूथर किंग

गांधी-विचार

कर्तव्य और अधिकार

जिसे मैं सत्याग्रह का कानून कहता हूँ, वह कर्तव्यों को पूरी तरह समझने और उससे पैदा होनेवाले अधिकारों से उत्पन्न होगा।

उदाहरणार्थ, एक हिन्दू का अपने मुसलमान पड़ोसी के प्रति क्या फर्ज है? उसका फर्ज इनसान के नाते उससे दोस्ती करना, उसके सुख-दुःख में शरीक होना है। तब उसे अपने मुसलमान पड़ोसी से वैसे ही बरताव की आशा रखने का हक होगा, और बहुत करके उसको तरफ से आशानुसार ही उत्तर मिलेगा। मगर मान लीजिये कि बहुत-से हिन्दुओं के ठीक बरताव का थोड़े-से मुसलमान वैसा ही बदला न दें और हर काम में लड़ाई का ही रुख दिखायें तो यह उनकी गैर इनसानियत की निशानी होगी। तब बहुसंख्यक हिन्दुओं का क्या धर्म होगा? अवश्य ही बहुतों के पशुबल से उन्हें दबा देना हिन्दुओं का धर्म नहीं होगा। उनका फर्ज होगा कि वे मुसलमानों के गैर इनसानियत के व्यवहार को उसी तरह रोकें, जिस तरह वे अपने सगे भाइयों के ऐसे व्यवहार को रोकेंगे।

('हरिजन', १७'४०)

नम्रता

असहयोगी अगर नम्र नहीं है तो शुद्ध नहीं है। जो नम्रता और धर्म की भावना से थोड़ा-सा त्याग करता है वह उसकी अल्पता को जल्दी ही अनुभव कर लेता है। एक बार त्याग के मार्ग पर अग्रसर हो जाने पर हम अपनी स्वार्थ परायणता की मात्रा का पता लगा लेते हैं और फिर हमें लगातार अधिक बलिदान करते रहना चाहिए और जब सम्पूर्ण आत्मसमर्पण न हो जाय, तब तक संतोष नहीं मानना चाहिए।

('यंग इंडिया', २६ १-'२१)

सम्पादकीय

जानसन : 'त्याग' का प्रायश्चित्त ?

केनेडी मरा तो शहीद हुआ। मरने पर कहनेवालों ने यह कहा कि केनेडी की महानता इसमें नहीं थी कि जीते जी उसने अपनी महानता सिद्ध कर दी थी, बल्कि इसमें थी कि अगर वह संकीर्णता की वेदी पर बलि न चढ़ा दिया गया होता तो न जाने कितना महान होता। केनेडी के बारे में यह बात सही हो सकती है, क्योंकि उसमें महानता के अंकुर थे। लेकिन कौन जाने? अमेरिका की राजनीति बम और डालर का एक ऐसा विलक्षण घोल है जो महानता के मानवीय स्वरूप को शायद प्रकट नहीं होने देता।

जानसन राष्ट्रपति की हैसियत से महान नहीं हो सका। उसके समय में सर्वशक्तिमान डालर, जिसका भगवान के बाद दूसरा नम्बर था, कमजोर हुआ। और उसीके समय अमेरिका ने देखा कि सर्वशक्तिमान अणुबम के प्रतिकार में दुनिया का प्रबुद्ध विशाल जनमत खड़ा है। एक ओर जनमत, दूसरी ओर वियतनाम के युवकों और युवतियों की संकल्प शक्ति जो हर हार को जीत और हर मृत्यु को जीवन बनाती रहती है। जानसन न डालर की प्रतिष्ठा बचा सका न बम का भय जगा सका। डालर और बम से अधिक अमेरिका का शासक—जनता नहीं—जानता क्या है? अब कहा जा रहा है कि चुनाव में खड़ा न होने की घोषणा करके जानसन राष्ट्रपति के पद से ऊंचा उठकर राष्ट्रनेता हो गया, और वियतनाम की बमबारी को ज्यादा से ज्यादा बन्द करके उसने वियतनाम की हत्याओं का प्रायश्चित्त कर लिया।

प्रायश्चित्त हुआ या नहीं यह तो भविष्य बतायेगा। किन्तु जानसन के 'त्याग', प्रायश्चित्त या चुनाव में हार जाने का खतरा टालने की राजनैतिक बुद्धि ने अमेरिका को इतना तो बता ही दिया कि चन्द्रलोक की यात्रा, असीम भौतिक वैभव और दुनिया को साम्यवाद से बचाने की ठीकेदारी—तीनों आकांक्षाओं की पूर्ति एक साथ नहीं हो सकती। कुबेर का धन भी इस त्रिविध भार को नहीं बर्दाश्त कर सकता।

जानसन ने कहा है कि उसने यह त्याग राष्ट्र की एकता और विश्व की शान्ति के लिए किया है। एकता अमेरिका ही नहीं सबके लिए जरूरी है। शान्ति दुनिया के लिए जीवन मरण का प्रश्न है। पर वह एकता किस काम की जो दूसरे जगह अपार हिंसा का कारण बने, और वह शान्ति किस काम की जिसके अस्तित्व के लिए अन्याय आवश्यक हो? अगर जानसन के इस कदम से उसका देश यह नसीहत ले ले कि अमेरिका को बम और डालर की भाषा छोड़नी चाहिए तथा विश्व-परिवार में प्रतिष्ठा का स्थान पाने के लिए घर और बाहर नयी राष्ट्रनीति अपनानी चाहिए तो निश्चित रूप से जानसन की घोषणा जानसन से कहीं अधिक महान सिद्ध होगी। यह यश बहुत बड़ा होगा, और इतिहास जानसन के यश को स्वीकार करेगा।

एक और शहादत....

डा० किंग की हत्या की खबर से नवीनतम सन्न रह गये।

रोज रोज यह सिद्ध होता जा रहा है कि सभ्यता का विकास अहिंसा के साथ जुड़ा हुआ है न कि 'स्टार्टिंग-वार' में। हिंसा अपनी अन्तिम आहुतियाँ ले रही है। अहिंसा वालों को खुशी खुशी हिंसा के मुँह में जाने के लिए तैयार होना पड़ेगा। साथ ही यह बात भी है कि अब अन्याय को रखकर हिंसा से नहीं बचा जा सकता। अहिंसा का अर्थ ही होना चाहिए, अन्याय से मुक्ति। अन्याय समाज की रचना में है, सम्बन्धों में है, साधनों में है, मन में है। इसका अर्थ है 'टोटल रेवोल्यूशन' ताकि मनुष्य को मनुष्य के सारे प्रतिष्ठा हो सके। शहीद होने की आवश्यकता कब तक बनी रहेगी? ●

भाषाओं का वैभव • विनोबा

मुझे भाषाओं के प्रति अत्यन्त प्रेम है। मैंने भी अनेक भाषाओं के अध्ययन की कोशिश की। हिन्दुस्तान की भाषासूची में १५ भाषाओं के नाम मौजूद हैं। उन सब भाषाओं का अध्ययन बाबा का हुआ है। उसके बाद पर्शियन और अरबी, दोनों भाषाओं का अच्छा अध्ययन बाबा ने किया है। अरबी भाषा का तो बाबा पंडित ही कहा जायगा और उसने कुरान का एक सार भी निकाला है। फिर हमने चीनी और जापानी भाषाओं का थोड़ा-सा अध्ययन करने की कोशिश की। जापान के एक भाई मेरे यहाँ आये थे और महीनाभर उन्होंने मुझे जापानी सिखायी। मेरे ध्यान में आया कि अगर नागरी लिपि भारत में चलेगी तो जापान के लोग भी नागरी लिपि का स्वीकार कर सकते हैं, क्योंकि वे लिपि की तलाश में हैं। एक बड़ी बात मैंने पायी कि उनकी भाषा की रचना भारतीय भाषा की जैसी है, यूरोपियन भाषा की जैसी नहीं। शब्द तो उनके अलग हैं, लेकिन रचना कैसी है? 'इन दि रूम'—यह इंग्लिश रचना है। 'कोठरी में'—यह भारतीय रचना है। यानी अपने यहाँ 'प्रोपोजिशन' होते हैं, 'प्रीपोजिशन' नहीं होते। 'प्रीपोजिशन' माने संज्ञा के पहले शब्दयोगी अव्यय रखना। उसे संज्ञा के बाद में रखने को 'प्रोपोजिशन' कहते हैं। हम 'में कोठरी' नहीं, बल्कि 'कोठरी में' बोलते हैं।

फिर हमने चीनी भाषा का अध्ययन करने की कोशिश की। उसके लिए एक चीनी भाई भी मेरे पास आये थे। बड़ी ही विकट भाषा है। उसकी खूबी यह है कि वह चित्र-भाषा है। चित्र-लिपि के कारण उसमें हजार-बारह सौ संज्ञाएँ हैं। ये सारे प्रतीक सीखने के बाद भाषा आती है। वह लिपि ऐसी है कि उससे आप अपनी भाषा भी पढ़ सकते हैं। मान लीजिये कि बाघ का चित्र आपके सामने खड़ा कर दिया, तो इंग्लिश में कहेंगे 'टाइगर' और हम कहेंगे 'बाघ'। चीनी भाषा में एक खूबी है कि चीन में अनेक भाषाएँ हैं, लेकिन उनकी एक लिपि—चित्र-लिपि—होने के कारण चीनी लोग अपनी-अपनी भाषाएँ पढ़ लेते हैं। मैंने उसमें से मराठी पढ़ना शुरू कर दिया।

भाषाओं के प्रति आदर

तात्पर्य यह है कि मैंने भाषाओं के लिए काफी परिश्रम किया और मुझे उनके प्रति काफी आदर है। इंग्लिश तो मैंने थोड़ी सीखी है, फ्रेंच सीखी है। मेरी पदयात्रा में एक जर्मन लड़की आयी तो उससे जर्मन सीख ली। इंग्लिश और फ्रेंच, दोनों जानता था, अतः जर्मन सीखने में ज्यादा मिहनत नहीं हुई। एक महीने के अन्दर जर्मन सीख गया। दोनों-तीनों भाषाओं की रचना समान है। उसके बाद लैटिन का भी थोड़ा अभ्यास किया। मैंने समझा, काफी अध्ययन कर लिया, बस है। एक भाई आये और बोले कि अध्ययन तो आपने काफी किया, लेकिन एक भाषा का अध्ययन नहीं किया और इस वास्ते आपका ज्ञान बहुत ही कमजोर है। बोले, आपको 'एस्पराण्टो' सीखना चाहिए। मैंने कहा अगर एस्पराण्टो' का शिक्षक मिल जाय तो सीख सकता हूँ। युगोस्लाविया ने एक शिक्षक भेजा। मैं उन दिनों पंजाब में पदयात्रा कर रहा था। तो मेरे साथ पदयात्रा में वह आदमी रहा। बीस दिन में 'एस्पराण्टो' मैंने सीख ली। मुझे भाषाओं के प्रति अत्यन्त आदर है। आज भी कोई भाषा सिखानेवाला मिल जाय और जरूरत पड़े तो मैं नयी भाषा सीख सकता हूँ। इस वास्ते भाषा के बारे में मैं जो कहूँगा, उसमें किसी भाषा के प्रति पूर्वग्रह होगा, ऐसी बात नहीं।

सात विदेशी भाषाओं का अध्ययन हो

अंग्रेजी के बारे में मैं एक बात कहना चाहता हूँ। बहुत लोगों का कहना है कि अंग्रेजी भाषा के बिना शिक्षा अधूरी रहेगी, क्योंकि वह दुनिया के लिए 'विण्डो' (खिड़की) है। यह बात मैं मानता हूँ, लेकिन मैंने ऐसे घर देखे कि उन घरवालों ने एक ही दिशा में एक ही खिड़की रखी थी। तो परिणामतः उनको चारों तरफ का दर्शन नहीं होता था, एक ही तरफ का दर्शन होता था। वैसे ही अगर आप हिन्दुस्तान में एक ही 'विण्डो' (खिड़की) रखेंगे तो सर्वांग-दर्शन होगा नहीं, एक ही अंग का दर्शन होगा। तो कम-से-कम आपको सात 'विण्डोज' (खिड़कियाँ) रखनी होंगी—इंग्लिश, फ्रेंच, जर्मन, रशियन, ये चार यूरोप की। चाइनीज, जापानीज—ये दो 'फार ईस्ट' (सुदूर पूर्व) की, और ईरान से लेकर सीरिया तक जो सारा हिस्सा है, उसके लिए अरबी। ये सात 'विण्डोज' आप रखेंगे तो आपका काम ठीक होगा, अन्यथा एक 'विण्डो' आपने रखी तो बहुत एकांगी दर्शन होगा और दुनिया का सही, सम्यक् दर्शन होगा नहीं, गलत दर्शन होगा।

यह मैं मान्य करता हूँ कि हमारे यहाँ इंग्लिश सिखाने की सहूलियत काफी अच्छी है और इस वास्ते इंग्लिश सिखानेवाले लोग ज्यादा निकलेंगे और दूसरी भाषा सिखानेवाले कम निकलेंगे। लेकिन इन सात भाषाओं के उत्तम जानकार अपने यहाँ होने चाहिए। तभी भारत का काम ठीक चलेगा। नहीं तो भारत के लिए खतरा है।

अगर आठ साल की शिक्षा हम बच्चों को देंगे तो उसे आठ साल के अन्दर अंग्रेजी, फ्रेंच या जर्मन आदि 'विण्डो' (खिड़की) रखना बेकार है। उसकी जरूरत नहीं है, क्योंकि वे तो आठ साल की परीक्षा पास करके खेती में जायेंगे या अपना-अपना काम करेंगे। उन सब लोगों पर इतनी भाषाएँ लादना ठीक नहीं है।

संस्कृत की विशेषता

जो विद्यार्थी हिन्दी सीखेगा, उसे संस्कृत भी सिखानी चाहिए। संस्कृत में जिसे शब्द-साधनिका कहते हैं, वह हमारी सब भाषाओं का आधार है। वह सारी शब्द-साधनिका उनको सिखानी चाहिए। मिसाल के तौर पर योग, उद्योग, संयोग, प्रयोग, वियोग, अभियोग, प्रतियोग—ये सारे शब्द 'योग' से बने। फिर योग्य, अयोग्य—ये विशेषण बने। युक्त, अयुक्त, आयुक्त, प्रयुक्त—ये भूत-

इत्यादि रूप बने। योगी, वियोगी, संयोगी— इत्यादि रूप बने। योज्य, योजनीय, प्रयोजनाय इत्यादि शब्द बने। एक 'युज्' धातु पर से कम से कम ४०० शब्द हिन्दी में चलते हैं। वे संस्कृत माने जायेंगे, लेकिन बाप की इस्टेट (जायदाद) बेटे की होती ही है। तो संस्कृत के बिना हिन्दी का ज्ञान एकदम अधूरा रहेगा और हिन्दी भाषा सर्व विचार प्रकाशन में समर्थ नहीं होगी। यह बहुत जरूरी है कि शब्द-साधनिका उनको सिखायी जाय। इस प्रकार एक ही धातु से इतने सारे शब्द बनते हैं और वे शब्द आपको मालूम हैं। संस्कृत की वह शब्द-साधनिका हिन्दी भाषा के अध्ययन का एक भाग होना चाहिए। उसके बिना हिन्दी भाषा का अध्ययन हुआ, ऐसा मानना नहीं चाहिए।

'मुद मंगलमय सन्त समाजू,
जो जग जंगम तीरथ राजू।'

अब मैं इसका संस्कृत कहता हूँ—

'मुद मंगलमय स सन्त समाज,
यो जगत् अगमित तीरथ राज।'

यानी उन्होंने संस्कृत ही लिखा है। लोगों को उच्चारण आता नहीं थे इस वास्ते लोगों को समझाने के लिए जनता की भाषा में बोले। बंगाली लोग कहते हैं कि हमारी भाषा में तीन 'स' है। स—स—स, यानी तीनों "स" के उच्चारण में कोई फर्क नहीं। उत्तम-से-उत्तम कवि जो हो गये हैं, उनका काम भाषा सिखाना नहीं, बल्कि धर्म-विचार सिखाना था। उन्होंने लोक भाषा में जो प्रयुक्त उच्चारण है, वह उच्चारण मान करके तदनुसार लिखा है। लेकिन जो लिखा है वह ज्यादातर संस्कृत से मिला हुआ ही है। रवि ठाकुर की भाषा पर क्या कहा जाय? "जनगणमनअधिनायक' कितना बड़ा समास हो गया! रवि ठाकुर की भाषा में बहुत संस्कृत शब्द आपको मिलेंगे। हमारी बहुत सारी भाषाओं में संस्कृत पायी जाती है।

मातृभाषा में शिक्षण

फिर एक प्रश्न आता है कि मातृभाषा के द्वारा शिक्षा दी जानी चाहिए कि नहीं। यह तो बड़ा विलक्षण विषय है जिसमें दो राय तो होनी ही नहीं चाहिए। गधे के बच्चे से अगर पूछा जाय कि तुमको गधे की भाषा में ज्ञान देना चाहिए कि सिंह की भाषा में, तो गधा कहेगा कि सिंह की भाषा चाहे जितनी अच्छी हो, मुझे तो गधे की ही भाषा समझ में आयगी। तो यह जाहिर बात है कि मनुष्य के हृदय को ग्रहण करनेवाली जो भाषा है वह मातृभाषा है, तो उसीके द्वारा शिक्षा होनी चाहिए।

अब सवाल उठता है कि कितना समय इसके लिए लिया जाय? चार साल या पाँच साल? कमीशन की जो रिपोर्ट है, उसमें है ज्यादा-से-ज्यादा दस साल। उन्होंने जो 'जजमेंट' दिया है, वह काफी अच्छा 'जजमेंट' है। मेरी अपनी राय है कि पाँच साल में भी हो सकता है, अगर पूरा यत्न किया जाय तो। मातृभाषा के द्वारा ही पहले से आखिर तक सारी तालीम दी जानी चाहिए इसमें कोई शक होना नहीं चाहिए।

मैंने असमिया भाषा का अध्ययन किया और मैंने पाया कि वह समर्थ भाषा है। उसमें 'साइंस' (विज्ञान) के शब्दों की जरूरत होगी तो धीरे-धीरे 'साइंस' के शब्द बनाते जायेंगे और जब तक नहीं बनें, तब तक इंग्लिश शब्द इस्तेमाल करेंगे। 'हाईड्रोजन' दो भाग और 'आक्सीजन' एक भाग लेकर पानी बनता है, यह पढ़ाते समय 'हाईड्रोजन' और 'आक्सीजन' के लिए नये शब्द बनाने तक रुकने की जरूरत नहीं। हमारी भाषाएँ आज भी काफी विकसित हुई हैं और वे आगे और भी समृद्ध होंगी।

(७-१२-'६७, पूसा रोड के भाषण से)

संस्मरण

चीर-फाड़ पसन्द नहीं

आपरेशन का खयाल डा० लोहियाजी को खराब लगता था वह सिद्धान्ततः उसके खिलाफ थे। मैंने उनसे पूछा क्या वह छुरे से डरते हैं? यह सवाल मैंने ऐसे आदमी से किया, जिसे जिन्दगी में किसी तरह के डर का एहसास न था।

उन्होंने कहा—"ऐसा नहीं है।"

'क्या इसका हिंसा और अहिंसा से ताल्लुक है?

उनका मुख स्नेह की अपूर्व मुस्कान में खिल गया—

"तुमने बात ठीक पकड़ी। यह चीरने-फाड़ने की बात मुझे पसन्द नहीं आती। मुझे समझ में नहीं आता कि तुम लोग किस तरह मुर्गी, मछली और जीवित जानवर खाते हो और फिर बदले भी मारते हो।"

उन्हें पेड़ों की शाखाएँ काटना भी कभी नहीं भाया। बहुत दफे उन्होंने मुझसे शिकायत की कि माली डालें काट देता है। मैं उनसे कहा करती, 'यह पेड़ों के भले के वास्ते है, काँट छाँट से वे बढ़ते हैं।"

"अगर तुम्हारे हाथ-पैर काट दिये जायें तो तुम्हें कैसा लगे।"

आपकी यह तुलना सही नहीं है, मैं कहती। जीवित प्राणी के प्रति किसी भी प्रकार की निर्ममता उनके स्वभाव के प्रतिकूल थी। वही अकेले आदमी थे, जिन्होंने हिंसा को लेकर जान और माल के बीच फरक किया।

"माल इस देश में ज्यादा रक्षणीय रहा है, वह व्यंग्य में कहते, "मनुष्य तो मक्खियों की तरह है, सो उसके मरने की किसीको क्यों परवाह हो।'

['जन' से साभार]

—रमा मित्र

प्रदर्शन, धरना और जेलयात्रा के बाद ? ? ?

नकारात्मक शांतिवाद

सतीश कुमार

जोन पापवर्थ इंग्लैंड के विल्फ्रेड वेलाक नं० २ माने जाते हैं। मशीनीकरण के दुष्परिणामों पर जोन ने गहरा चिन्तन किया है। अन्धाधुन्ध बढ़ते हुए शहरों और मानवीय संभावनाओं को सीमित कर देनेवाले उद्योगों पर विल्फ्रेड वेलाक के बाद जोन पापवर्थ ने सबसे तीखा प्रहार किया है! सत्ता और संपत्ति के घोर केन्द्रीकरण में जीनेवाले समाज की दुर्दशा पर उन्होंने पूरी शक्ति के साथ हमला किया है। 'पीस न्यूज' के पाठक उनकी कलम से अच्छी तरह परिचित हैं और इस समय तो वे स्वयं एक द्विमासिक पत्रिका का प्रकाशन कर रहे हैं, 'रीसर्जेंस' के नाम से।

हमारा इंग्लैंड का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ—१८ दिसम्बर, '६७ से ६ फरवरी, '६८ तक का लम्बा कार्यक्रम। ५४ दिनों के अन्दर हमने पूरे ग्रेटब्रिटेन की यात्रा की। ३८ दिन तो हमने सिर्फ लन्दन में ही बिताये।

लन्दन में मैंने लार्ड माउंटबेटन के साथ मुलाकात की। गांधीजी के साथ उनके संस्मरण अपने आपमें एक पुस्तक का विषय है। वे गांधी-जन्म-शताब्दी के अवसर को ब्रिटेनवासियों के लिए गांधी-विचार के सही मूल्यांकन का अवसर मानते हैं। 'इंडिया लीग' के अध्यक्ष लार्ड सोरेनसन भी गांधी-जन्म-शताब्दी को बड़े पैमाने पर मनाने की बात सोच रहे हैं। मुझसे लार्ड सोरेनसन ने बताया कि "टाविस्टोक स्क्वायर में गांधीजी की मूर्ति खड़ी करने की सारी तैयारियाँ पूरी हो चुकी हैं और गांधी-शताब्दी वर्ष प्रारंभ होने के पहले-पहले हम मूर्ति की स्थापना कर देना चाहते हैं।" ब्रिटिश कोल बोर्ड के आर्थिक सलाहकार और सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री ई० एफ० शूमाखर के साथ की लम्बी बातचीत को मैं भूल नहीं पाऊँगा। शूमाखर ने कहा कि "एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के देश बड़ी-बड़ी मशीनों के लिए जिस तरह उतावले हो रहे हैं, वह दूरदर्शितापूर्ण नहीं है। खेती का 'मेकेनाइजेशन', मशीनीकरण और ट्रैक्टर से प्यार इन विकासशील देशों को उसी दुश्चक्र में फँसा देगा, जिसमें हम फँसे हुए हैं। जरूरत है 'इंटरमीडियेट टेक्नोलोजी' की। 'हाई टेक्नोलोजी' के लिए इन विकासशील देशों के पास पूंजी नहीं है, इसलिए वे पश्चिम के ५-७ देशों की सहायता पर निर्भर करते हैं। और उसी पर निर्भरता के कारण कर्जदार एवं शोषण के शिकार बनते हैं।" शूमाखर केवल बातें करनेवाले आदमी नहीं हैं। उन्होंने 'इंटरमीडियेट टेक्नोलोजी इन्स्टीट्यूट' की स्थापना की है और 'प्रगति के औजार' नाम से एक बहुत ही सुन्दर मार्गदर्शिका का प्रकाशन भी उन्होंने किया है। ग्रामदानी गाँवों के लिए यह मार्गदर्शिका अत्यन्त उपयोगी साबित होगी।

३८ दिन के लन्दन-निवास के बाद हमने अपनी भाषण-यात्रा शुरू की। दक्षिण, मध्य और उत्तर इंग्लैंड के अतिरिक्त हम लोग स्काटलैंड भी गये। एडिनबरा और ग्लासगो में स्काटलैंड की आजादी के लिए आन्दोलन करनेवालों से भी हम मिले। ग्रेटब्रिटेन मुख्य रूप से इंग्लैंड, वेल्स और स्काटलैंड, इन तीन भागों में बँटा हुआ है। वेल्स और स्काटलैंड को स्वतंत्र कराने का आन्दोलन करनेवाले सत्ता के विकेन्द्रीकरण की बात पर काफी जोर देते हैं। वेल्स और स्काटलैंड की भाषा अंग्रेजी से काफी भिन्न है। १६ दिनों की इस भाषण-यात्रा में हमने २५ भाषण किये। भाषणों के मुख्य विषय थे—गांधी-दर्शन, क्या गांधी-विचार आज के मशीन-युग के अनुकूल है? अहिंसक क्रान्ति की संभावनाएँ, अहिंसा का भविष्य, सत्य की शक्ति और सत्याग्रह, विद्रोही गांधी, ग्रामदान आन्दोलन, शान्ति-सेना, आदि।

अपनी इस यात्रा में मैंने पाया कि ब्रिटेनवासी ग्रामदान आन्दोलन के बारे में काफी जानते हैं। साथ ही उनके मन में इस आन्दोलन के प्रति एक गहरी रुचि और आकर्षण है। एक से अधिक व्यक्तियों ने कहा कि "अहिंसक क्रांति का रास्ता दिखाने और उसके लिए नेतृत्व करने के लिए हम भारत की ओर आशाभरी नजरों से देखते हैं। शायद ग्रामदान हमारी उस आशा को पूर्ण करेगा।"

'वार ऑन वाण्ट' नाम की संस्था के अनेक लोगों से जगह-जगह भेंट हुई। ७५० ग्रामदानी गाँवों को इस संस्था की ओर से लगभग ४५० पौंड प्रति गाँव के हिसाब से मदद भेजी जाती है। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि इस संस्था के लोग हमसे ग्रामदान के बारे में ज्यादा सवाल पूछते। उन लोगों को यह शिकायत भी थी कि ग्रामदान के बारे में, खास तौर से उन गाँवों के बारे में, जिनको 'वार ऑन वाण्ट' से मदद मिल रही है, उन्हें बहुत कम जानकारी मिलती है। अगर पर्याप्त जानकारी मिले तो और अधिक मदद भेजना सम्भव हो सकता है। बहुत से लोगों के दिमाग में ग्रामदान का काम एक 'चेरिटी' का काम है, ऐसी कल्पना भी हमने पायी। कुछ लोगों ने इससे अधिक यदि समझा है, तो वह भी इतना भर कि यह एक ग्राम-सुधार या ग्राम-निर्माण का काम है। जब मैंने अपनी सभाओं में ग्रामदान के क्रांतिकारी एवं समाज-परिवर्तनकारी स्वरूप पर प्रकाश डाला तो लोगों की दिलचस्पी और अधिक बढ़ी।

सत्ता और सम्पत्ति के विकेन्द्रीकरण की जब भी हमने चर्चा की तब लोगों ने यह तो महसूस किया कि आज का असीमित केन्द्रीकरण मानव के मूलभूत स्वातंत्र्य का हनन कर रहा है, पर "स्थिति इतनी पेचीदा और हाथ से बाहर हो चुकी है कि अब हमारे बस में कुछ भी दिखाई नहीं देता। स्थिति नियंत्रण से परे जा चुकी है।" यह असहाय-अवस्था लोगों को उत्साहहीन कर रही है। जब मैं सन् १९६२ में शान्ति-यात्रा के दौरान

ब्रिटेन में गांधी शताब्दी की तैयारी   मशीनीकरण का दुश्चक्र
नकारात्मक शान्ति आन्दोलन का भविष्य   युवा शान्तिवादियों का चिन्तन
सर्वोदय आन्दोलन के चिरपरिचित ब्रिटिश साथी

यहाँ आया था तब मैंने देखा था कि शान्ति के समर्थन एवं युद्ध व बमों के विरुद्ध आयोजित होनेवाले प्रदर्शनों में १० से २० हजार तक लोगों की भीड़ जमा हो जाती थी। पर आज सन् १९६८ में वह उत्साह मन्द पड़ गया है। आज के प्रदर्शन सौ-दो-सौ या ज्यादा खींच-तानकर हजार-पाँच सौ लोग जमा कर पाते हैं। अनेक शान्तिवादियों ने मुझसे कहा कि 'हम प्रदर्शन करते हैं, धरना देते हैं, जेल जाते हैं, पर इससे आगे क्या? हमारा उत्साह ठंडा पड़ रहा है। इस शान्ति आन्दोलन का कोई भविष्य नहीं दीखता!'

ब्रिटेन का शान्तिवाद शुरू से ही नकारात्मक रहा है। यहाँ के शान्तिवादियों ने युद्ध के खिलाफ तो नारा दिया, पर किसी रचनात्मक कार्यक्रम के अभाव में यह नारा ज्यादा दूर तक चल नहीं पाया। आखिर युद्ध के कारण क्या हैं, उनकी खोज किये बिना और उन कारणों का निवारण किये बिना कोरा युद्ध विरोधी प्रदर्शन कितने दिन उत्साह कायम रख सकता है? ऑक्सफोर्ड और न्यूकैसल के विश्वविद्यालय के छात्रों ने मुझसे कहा कि 'संसार में किसीसे भी पूछिये तो उत्तर मिलेगा कि सभी शान्ति चाहते हैं। मृत्यु और विनाश कोई नहीं चाहता। फिर युद्ध क्यों लड़े जाते हैं? जब तक इस सवाल का उत्तर हम नहीं ढूँढ़ लेते तब तक शान्ति की बातें कोरी बातें ही रहेंगी।" ब्रैडफोर्ड विश्वविद्यालय के उप-कुलपति श्री मिशिन ले ने कहा कि 'हमारे समाज का ढाँचा ही युद्ध पैदा करनेवाला ढाँचा है। हम एक युद्धमय समाज में रह रहे हैं। जरूरत है एक शान्तिमय या अहिंसक समाज रचना की। उसके लिए पूरे ढाँचे को ही बदलना पड़ेगा।" श्री मिशिन ले की बातों में मुझे एक खोजपूर्ण दृष्टि नजर आयी। पर उनके सामने उस 'शान्ति-समाज' के लिए कोई कार्यक्रम नहीं है। शायद ग्रामदान के किसी यूरोपीय संस्करण की इन्हें भी तलाश है।

ब्रिटेन के शान्तिवादी नेता और कार्यकर्ता किसी-न-किसी रूप में अपने-अपने ढंग से विभिन्न प्रवृत्तियाँ और संस्थाएँ चला तो रहे हैं, पर उनमें आपस का सामंजस्य और सम्पर्क पर्याप्त न होने से एक के काम से दूसरे को बल नहीं पहुँचता। सभी अपने-अपने काम को सबसे अधिक आवश्यक एवं श्रेष्ठ मानते हैं। कुछ लोग रंग-समन्वय के काम में लगे है तो कुछ लोग मात्र युद्ध विरोधी प्रचार में लगे हैं। कुछ लोग मात्र अणुबम विरोध का ही आवश्यक मानते हैं और उसीके लिए संस्था चला रहे हैं, तो कुछ लोग हमेशा प्रदर्शन और अहिंसक कारवाइयों में जुटे हुए हैं। ये सभी संस्थाएँ दरअसल एक दूसरे की पूरक है पर पूरक बन नहीं रही हैं। अगर ब्रिटेन की शान्तिवादी संस्थाओं की सूची बनायी जाय तो शायद उनकी संख्या १०० के आस पास पहुँचेगी। यदि इन संस्थाओं के बीच कोई एक धागा पिरोया जा सके तो इनकी शक्ति काफी बड़ी और प्रभावशाली हो सकती है।

ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में छात्रों की सभा काफी बड़ी थी। भाषण का विषय था अहिंसा का भविष्य। भाषण के बाद प्रश्नोत्तर के दौरान छात्रों ने जो विचार रखे उसमें यह बात स्पष्ट थी कि "यदि गरीब और अमीर देशों के बीच की असमानता दूर करने की दिशा में शान्ति-आन्दोलन कदम नहीं उठाता है तो वह असफल हो जानेवाला है। एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के देशों में यह विषमता हिंसक मनोवृत्ति को बढ़ावा देनेवाली साबित होगी। गुरिल्ला-युद्ध और हिंसक-क्रान्ति के अलावा लोगों के सामने कोई रास्ता नहीं रह जायगा।" इस तरह का मूलभूत चिन्तन आशाकुल युवा और नये शान्तिवादियों में चल रहा है, यह देखकर खुशी हुई है।

बर्मिंघम में श्रीमती रूथ रिचर्डसन एवं डाक्टर ओम्टरगार्ड ने मिलकर अपने शहर में गांधी-शताब्दी मनाने के लिए एक कमेटी बनायी है। यह कमेटी उत्सवों और समारोहों की शताब्दी नहीं, बल्कि सही अर्थ में गांधी-विचार को समझनेवाली शताब्दी का आयोजन करेगी ऐसा विश्वास किया जा सकता है। बर्मिंघम विश्वविद्यालय की छात्र सभा काफी बड़ी और दिलचस्प चर्चा से परिपूर्ण थी।

पूरे ब्रिटिश शान्ति-आन्दोलन की ओर से गांधी-शताब्दी के संयोजक का काम डोनाल्ड ग्रूम कर रहे हैं। डोनाल्ड हमारे सर्वोदय आन्दोलन के चिरपरिचित साथी हैं। वे किसी भी भारतीय से अधिक भारतीय और किसी भी सर्वोदयी से अधिक सर्वोदयी हैं, ऐसा कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। उन्होंने अपना जीवन भारत और सर्वोदय विचार के लिए अर्पित किया है। हमारी यात्रा की सफलता का श्रेय भी उन्हींको है।

हम तो भारत से तीन पौण्ड लेकर चले थे। पंजाब खादी ग्रामोद्योग संघ ने हमारे कपड़े बना दिये थे और किसी तरह मित्रों के सहयोग से लन्दन तक की हवाई-यात्रा का किराया हमने जुटाया था। बाकी ब्रिटेन में पूरे आतिथ्य और सब का प्रबन्ध डोनाल्ड एवं अन्य शान्तिवादी मित्रों ने किया। न तो हम किसी संस्था का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, और न हम किसी शिष्टमंडल के रूप में यहाँ हैं। पूरी तरह से व्यक्तिगत संपर्कों के आधार पर और व्यक्तिगत जिम्मेदारी पर चल रही इस यात्रा का आनन्द और अनुभव जिस गहराई से हमें प्राप्त हो रहा है, वह संस्था प्रतिनिधित्व एवं शिष्टमण्डलों में कहाँ?

(१३-३-६८, बेलफेस्ट)

खादी : गौरवपूर्ण अतीत, लेकिन भविष्य ?

पिछले महीने २-३ मार्च को पानीपत में खादी-कार्य में लगे देशभर के प्रतिनिधि कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन हुआ था। सम्मेलन में 'खादी' से लेकर 'गादी' तक के ऊँचे-से-ऊँचे नेता उपस्थित थे। सबके सामने खादी एक समस्या और एक चुनौती के रूप में खड़ी थी। एक ऐसी समस्या, जिसका समाधान लाख हाथ-पाँव मारने पर भी निकलता दिखाई नहीं देता; एक ऐसी चुनौती, जिसे स्वीकार करने का साहस नहीं होता, और मुकर जाने की गुंजाइश भी दिखाई नहीं देती।

सम्मेलन में भाग लेनेवाले संस्थाओं के प्रतिनिधियों की आशाएँ और नेताओं की अपेक्षाएँ कितनी पूरी हुईं, कहना मुश्किल है। खादी का काम करनेवाले एक बड़े प्रदेश के बड़े नेता ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की कि 'समस्याएँ लेकर आये थे, उलझन लेकर जा रहे हैं!' हम नहीं कह सकते कि सम्मेलन में भाग लेनेवाले सभी साथियों की राय इससे मिलती हुई ही होगी। लेकिन इतना जरूर कहना चाहते हैं कि मंथन की आवश्यकता अभी भी अवश्य है।

इसी आवश्यकता को ध्यान में रखकर हम इस परिचर्चा का प्रारम्भ चिन्तन को उभाड़नेवाले तीन महत्वपूर्ण लेखों से कर रहे हैं। हम चाहेंगे कि यह परिचर्चा चालू हो, मंथन का क्रम चले और सद्-चिन्तन से समस्या के सही स्वरूप और समाधान की उपयुक्त दिशा निकल सके। —सं०

पुरुषार्थ को चुनौती

खादी अहिंसा का साधन थी। अहिंसा और सत्य पर आधारित, जिसमें संपूर्ण समता और स्वातंत्र्य सबको मिलेगा ऐसा एक समाज—जिसको अंग्रेजी में 'इगलीटेरियन सोसाइटी' कहते हैं—निर्माण करने का खादी एक जरिया थी। खादी केवल कपड़ा नहीं थी। यह कम्युनिटी डेवलपमेंट का एक मुख्य आधार थी। खादी एक शक्ति थी और इस शक्ति से दुनिया का जो सबसे बड़ा साम्राज्य था उसके खिलाफ हम खड़े हो गये, और सफलता से हमने उसको हटाया। खादी में एक महान शक्ति है, यह दुनिया को हमने दिखाया। आजादी और खादी का साध्य-साधन सम्बन्ध था।

जब ऊँचे लक्ष्य होते हैं तो उसके जो साधन होते हैं, वे भी ऊँचे बन जाते हैं। जब लक्ष्य छोटे हो जाते है, तब उसके साधन भी छोटे हो जाते हैं। पुराने साधन होते हुए भी—अर्जुन के गांडीव में गांडीव होते हुए भी—बाद में वह शक्ति नहीं रही थी। वैसे ही खादी वही है, हम भी वही हैं, लेकिन वह प्राण, वह जान, वह शक्ति खादी में नहीं है जो पहले थी। क्योंकि अब हमारा जो लक्ष्य है वह छोटा बन गया है। आजादी हासिल की, "व्हाट नेक्स्ट"—बाद में क्या—इसका सही जवाब खादी से जनता को नहीं मिलता है। आजादी तब साध्य था, आज केवल साधन है। हाँ, कुछ लोग मानते हैं कि आजादी मिली, सब काम समाप्त हो गया, अब क्या? अभी कुछ नहीं, भोग ही भोग है। अभी कुछ करने को नहीं है, भोगना ही बाकी है। लेकिन गांधीजी का यह ख्याल नहीं था और न जनसामान्य का ही। आजादी मिल गयी, अभी करने को बाकी कुछ नहीं रहा, ऐसा जो मानता है वह तत्क्षण गुलाम हो गया। पुरुषार्थ के लिए सतत प्रयत्नशील रहने की प्रेरणा जिस आजादी से नहीं मिलती है, वह आजादी नहीं है, वह गुलामी है। आप कहेंगे कि खादी आजादी की निशानी बन गयी है तो उसको क्यों नहीं फेंकते हो? मैं नहीं फेंक सकता हूँ, क्या करूँ? जैसे मैं अपनी जान को नहीं फेंक सकता, प्राण को नहीं फेंक सकता, वैसे ही खादी को नहीं फेंक सकता। वह मुझसे अलग नहीं है। यह मेरी हालत होते हुए भी मैं आपसे साफ कहना चाहता हूँ कि उस आजादी का, जो हमेशा के लिए चलनेवाली प्रक्रिया है, खादी आज साधन नहीं रही है।

गांधीजी ने 'रचनात्मक कार्यक्रम' नाम का एक छोटा पैम्फलेट लिखा है। उसकी प्रस्तावना में उन्होंने लिखा है कि इसमें जो रचनात्मक कार्यक्रम दिये हैं, वे उदाहरण के तौर पर दिये हैं। इनसे सारे रचनात्मक कार्यक्रम की फेहरिस्त पूरी नहीं हो जाती। कोई भी काम जो नवराष्ट्र के निर्माण में योगदान देता है वह रचनात्मक काम है। उनकी फेहरिस्त का अन्त नहीं है। गांधीजी की राय से खादी इन कार्यक्रमों में सूर्य के समान थी। क्या आज खादी के बारे में हम यह कह सकते हैं? जैसे सूर्य के साथ अन्य ग्रह चलते हैं, वैसे आज खादी के साथ राष्ट्र-निर्माण के सब काम चलते हैं, ऐसा खादी-कार्यकर्ता और खादी-संस्थाएँ दावे के साथ क्या कह सकती हैं? अगर नहीं चलते हैं, तो खादी भी नहीं चल सकती।

इसलिए निवेदन में कहा गया है कि ऐसी जहाँ-जहाँ प्रवृत्ति होगी, उन सबको सर्वोदय की दृष्टि से अपने साथ लेना होगा। अगर वह सर्वोदयी नहीं है तो उसको बनाने की कोशिश हम कर सकते हैं, इतना आत्म-विश्वास आपको होना चाहिए। हमारे दिल में डर है कि उनको लेंगे तो हम अपने को खो बैठेंगे। लेकिन खादी पहले से ही खो गयी है, अभी खोना बाकी क्या रहा है? नदियाँ कितनी भी महान हों, उनको अपने में समा लेने का भय सागर को कभी भी नहीं लगता है। क्या इतनी महानता आज की खादी में है, यह एक सवाल है।

'पावर' का प्रश्न

कुमारप्पाजी ने अपनी "चिरस्थायी अर्थनीति" पुस्तक में *बताया था कि किस* तरह दुनिया में कई धातु, दूसरे कच्चे माल तथा तेल, कोयला आदि जैसे 'पावर' के लिए आवश्यक जलन पदार्थों की थाती सीमित है और उनके मनमाना उपयोग के कारण यह थाती खतम होती जा रही है तथा इस गति से आगे बड़ा आर्थिक संकट पैदा होना अनिवार्य है। इसलिए नित्य नये उत्पन्न होनेवाला कच्चा माल तथा निरंतर मिलती रहनेवाली शक्ति-स्रोतों के ही आधार पर आर्थिक रचना बननी चाहिए। दूसरी मान्यता यह रही है कि जब तक सब गाँवों में सब लोगों के लिए बिजली या अन्य शक्ति उपलब्ध नहीं होगी, तब तक कुछ के लिए शक्ति का उपयोग विषमता को बढ़ानेवाला सिद्ध होगा। इसलिए उस समय तक खादी-ग्रामोद्योगों में शक्ति का उपयोग नहीं होना चाहिए या बहुत सीमित रूप से होना चाहिए।

यह सही है कि आज दुनिया में कच्चे माल तथा दूसरे प्राकृतिक संपदाओं के बेरोकटोक उपयोग के कारण कई चीजों का अभाव महसूस होने लगा है और चिन्ताजनक स्थिति पैदा हो रही है। तेल आदि के खानों पर अधिकार के लिए बड़े संघर्ष चले हैं और चल रहे हैं। इस समस्या की ओर दुनिया का ध्यान जाने लगा है और प्राकृतिक संपदाओं *के संरक्षण के उपाय सोचे और काम में लाये जा रहे हैं। बेशक पूँजीवादी अर्थव्यवस्थाओं* में इस प्रकार संपदाओं के बेतहाशा उपयोग के लिए एक अन्तर्निहित प्रेरणा है, और युद्ध की तैयारी से भी इसको अधिक बढ़ावा मिलता है। चिरस्थायी अर्थ-रचना के लिए इस सवाल को गंभीरता से ध्यान में लेना चाहिए। पर इसका आशय यह *नहीं होना चाहिए कि पृथ्वी पर सीमित पैमाने में* उपलब्ध संपदाओं का उपयोग ही न किया जाय। वैसे आज अणुशक्ति के आविष्कार से शक्ति का नया और अथाह स्रोत खुल गया है। सूर्य तथा समुद्र की ज्वार की शक्तियों के उपयोग की भी तरकीबें निकल रही हैं। इस तरह कोई वजह नहीं कि प्राकृतिक शक्ति का उपयोग बिलकुल न किया जाय।

दूसरी शंका है कि भोगों के पीछे दौड़ने के कारण ही वस्तुओं की आवश्यकता बढ़ती है और इफरात 'पावर' के उपयोग का *प्रश्न खड़ा होता है। आध्यात्मिक और सरल जीवन के लिए अपने शरीर की शक्ति ही* पर्याप्त मानी जानी चाहिए। विनोबाजी के द्वारा अणु-शक्ति के स्वागत तथा गाँव-गाँव में उसकी मदद से जल्द-से-जल्द बिजली पहुँचाने की माँग के बाद इस सम्बन्ध में कुछ अधिक कहने की जरूरत नहीं होनी चाहिए थी। फिर भी मैं इस सम्बन्ध में एक दृष्टि रखना चाहता हूँ।

शायद बर्नार्ड शॉ ने कहा है कि आध्या*त्मिक विकास के लिए बहुत सारी साधन-*सम्पत्ति चाहिए। अभाव में वह सध नहीं सकता। मैं इसे काफी हद तक सही मानता हूँ। रेशम के कपड़े, सोने के गहने या चाँदी के बर्तन से आध्यात्मिक विकास में मदद नहीं होती। पर किताबों से और अखबारों से होती है, और बड़े पैमाने पर इनका प्रकाशन *और प्रचार* बहुत सारे आधुनिक *तकनिकों* पर *तथा 'पावर' के उपयोग पर अवलम्बित* है। तार, टेलीफोन, रेडियो आदि के द्वारा हमारा आज कुल दुनिया के साथ निकट का सम्बन्ध बना है। रेल, जहाज और जेट विमान से, जो एक दिन दूर का था वह निकट का बन गया है। आज इनके कारण संघर्ष बढ़ा है, पर *साथ-साथ उस संघर्ष का निराकरण करनेवाली जागतिक दृष्टि का* विकास भी हो रहा है। यह जागतिक दृष्टि एक आध्यात्मिक प्राप्ति ही है।

फिर आधुनिक विज्ञान ने मनुष्य को सिर्फ भौतिक सुख-संपदा के साधन उपलब्ध कराये हो, इतना ही नहीं, वैज्ञानिक ज्ञान ने मनुष्य की दृष्टि को *व्यापक और सूक्ष्म बनाने* में मदद की है। उसके हृदय को विशाल और भावनाओं को गहरी बनाने का मसाला उपलब्ध कराया है। इलेक्ट्रान अणुविज्ञान से सूक्ष्म-से-सूक्ष्म वस्तु का तथा रेडियो दूरबीन से विशाल महाविश्व का रहस्य मनुष्य के हाथ लग रहा है। ये तो विज्ञान के असंख्य चमत्कारिक कृतियों में से दो ही नमूने हुए। विज्ञान की ये सारी सफलताएँ तकनीक के ऊँचे-से-ऊँचे स्तर के साथ जुड़ी हुई हैं। उच्चतम तकनीक के अभाव में ये हासिलात सम्भव नहीं थे। इस तरह विज्ञान और तकनीक (टेक्नोलोजी) को हम भौतिकता का ही *प्रादुर्भाव कहकर अलग नहीं रख सकते। मानव समाज के आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक* जीवन के साथ ये ओतप्रोत हैं।

व्यावहारिक स्तर पर आयें तो यह स्पष्ट है कि भारत के गाँव के लोगों के लिए जो न्यूनतम सुसंस्कृत तथा सुखी जीवनमान चाहिए, कम-से-कम जिस स्तर का जीवन हम कार्यकर्ता-वर्ग को उपलब्ध है उसे जनता के लिए उपलब्ध करने के लिए मनुष्य तथा *पशु-शक्ति के अलावा काफी मात्रा में 'पावर'* का भी उपयोग चाहिए। इसलिए आज यह आवश्यक है कि जहाँ 'पावर' उपलब्ध है, वहाँ उसका उपयोग खादी और ग्रामोद्योगों में भरसक हो। इसे मैं कोई एक न टाली जानेवाली बुराई के साथ समझौते के रूप में नहीं देखता हूँ, बल्कि मानव समाज की *आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और भौतिक प्रगति* के बढ़ते हुए कदम के रूप में देखता हूँ।

बेशक इसमें हमने जो मर्यादा मान्य की है, वह जरूर ध्यान में रखनी होगी कि 'पावर' के उपयोग के कारण बेकारी न पैदा हो और शोषण न हो। इस सिलसिले में दो सवाल सामने आते हैं। एक यह कि कुछ *जगह 'पावर' मिलती है और बाकी जगह नहीं, इस हालत में हम उसका उपयोग करें* तो उससे विषमता बढ़ेगी। इसलिए जब तक सबके सब गाँवों को 'पावर' उपलब्ध नहीं होगी, तब तक उसका उपयोग नहीं करना चाहिए।

इस बारे में एक विषय के प्रति मैं आपका ध्यान दिलाऊँगा। *आर्थिक विकास का सिलसिला कदाचित* ही ऐसा हो सकता है कि कोई नया साधन या सहूलियत सब जगह सबको एकसाथ मिले। प्राकृतिक, तात्कालिक तथा सैकड़ों दूसरे कारणों से विषमता पैदा हुई है और होती जा रही है। इसका इलाज यही

है कि किसी अधिक सहूलियत के कारण किसी व्यक्ति या समूह की उत्पादन-क्षमता और आमदनी बढ़ती है तो उस अधिक आमदनी का कुछ हिस्सा उनसे कम भाग्यवान व्यक्ति तथा समूहों के विकास के लिए मिले। यह सिद्धान्त आज की दुनिया में कई स्तर पर मान्य हो रहा है। अपने तथा दूसरे देशों की कर-वसूली की नीति में यह मान्य है। ऊँची आमदनी पर अधिक आयकर होता है। पिछड़े हुए क्षेत्र तथा समूहों के लिए उनसे जितना कर के रूप में मिलता है उससे अधिक खर्च करने का सिलसिला कुछ हद तक मान्य है। अभी दिल्ली में चलनेवाले 'अंकटाड' सम्मेलन में आगे बढ़े हुए तथा पिछड़े हुए देशों के बीच में यही सिद्धान्त लागू करने का प्रयत्न चल रहा है। पारंपरिक चरखे और अम्बर चरखे की खादी की कीमत की 'पूलिंग' करके हम यही प्रयत्न कर रहे हैं कि अम्बर चरखे का अधिक उत्पादन का लाभ पारंपरिक चरखे की कत्तिन को मिले।

सरकारें यह बँटवारा कर-वसूली के द्वारा करना चाहती है और हम चाहेंगे कि लोग यह स्वेच्छा से करें। कानून के बदले करुणा काम करे, यही फरक है। करुणा से विषमता मिटाने की ओर आगे बढ़ने का मार्ग भूदान ग्रामदान ने बता दिया है। उसका अधिक विकास करते जाना होगा। खादी ग्रामोद्योगों के संगठन में 'पूलिंग' के जैसे दूसरे उपायों को ढूँढ़कर अमल में लाना होगा। कानून का भी समाज-जीवन में अपना न्यायसंगत स्थान है। ग्रामस्वराज्य में तो स्वैच्छिक कार्य और कानून में फरक हो कम रह जायगा। —मनमोहन चौधरी

प्रौद्योगिकी के अनेक आयाम

मानव-इतिहास में पहली बार ऐसी स्थिति बनी है कि मनुष्य द्वारा किये जानेवाले श्रम के एवज में मशीनों का उपयोग किया जा सकता है। अब प्रश्न यह नहीं उठा करता कि क्या यह काम हम यंत्रों द्वारा कर सकते हैं? बल्कि प्रश्न यह पेश हुआ करता है कि क्या ऐसा करना सबसे उत्तम होगा? इस प्रकार की प्रौद्योगिकी की बुनियाद उन्नीसवीं शताब्दी में पड़ी, जब कि विज्ञान के विकास का सम्बन्ध उद्योग की प्रक्रियाओं से स्थापित हुआ।

अठारहवीं शताब्दी की तरह इन दिनों किसी एक व्यक्ति के प्रतिभापूर्ण प्रयत्नों के परिणाम से प्रौद्योगिकी का विकास नहीं होता। अमेरिका के "वैज्ञानिक शोध और विकास कार्यक्रम' के निदेशक श्री बुश ने कहा है कि आज हमारा ऐसे विशेषज्ञ हैं, जो हमारी जरूरत के अनुसार प्रौद्योगिकी का नमूना पेश कर सकते हैं। आदमी की मेहनत के द्वारा होनेवाले हर प्रकार के कामों को करने के लिए आज दूर नियन्त्रित और स्व-चालित उपकरण उपलब्ध हो सकते हैं।

प्रौद्योगिकी के इस ऐतिहासिक विकास क्रम में वैज्ञानिक और तकनीकी विशेषज्ञों का महत्व इतना ज्यादा बढ़ता जा रहा है कि संयुक्तराज्य अमेरिका जैसे देश में पेशेवर वैज्ञानिक और तकनीकी विशेषज्ञ एक नये प्रकार के प्रशासकीय अधिकारियों का दर्जा हासिल करते जा रहे हैं। प्रश्न यह उपस्थित होता है कि क्या नयी प्रौद्योगिकी द्वारा समाज अधिक मानवीय बन सकेगा, अर्थात् क्या नयी प्रौद्योगिकी के जरिये मनुष्य और मनुष्य के बीच नये सम्बन्धों का निर्माण हो सकेगा?

प्रौद्योगिकी के नवोन्मेष द्वारा जहाँ एक ओर यह सम्भावना दीखती है कि बिना श्रम किये मनुष्य उपभोग की वस्तुएँ पा सके, वहीं दूसरी ओर उसके जरिये एक नये प्रकार का आश्वासन भी मिला है—वह आश्वासन है, विकेन्द्रित सामुदायिक जीवन-पद्धति का। प्रौद्योगिकी के नवोत्थान का लाभ उठाकर औद्योगिक कृषि-उत्पादन को सामुदायिक विकेन्द्रित और सन्तुलित जीवन-पद्धति में परिवर्तित किया जा सकता है। इस नयी व्यवस्था में प्रौद्योगिकी का उपयोग ऐसे क्षेत्रों और कार्यक्रमों में किया जा सकता है, जिससे मानवीय कार्यक्रमों और मूल्यों को भरपूर बढ़ावा मिलता रहे।

प्रौद्योगिकी की इस दिशा में उपयोग करने के मार्ग में क्या-क्या रुकावटें अथवा बाधाएँ आ सकती हैं? बहुत सी बाधाओं और रुकावटों की जड़ मनुष्यों के आज के सोचने के तरीके और मूल्यांकन प्रणाली में मौजूद है।

आज के मनुष्यों का चिन्तन उपयोगिता-वाद पर आधारित है। उपयोगितावादी दर्शन मानता है कि जीवन की सार्थकता कम-से कम तकलीफ झेलने और ज्यादा-से-ज्यादा सुख पाने में निहित है। अतः अधिक-से-अधिक लोगों को अधिक-से अधिक सुख मिलना सबसे अच्छी बात है।

चूँकि आज प्रौद्योगिकी समाज पर हावी है, इसलिए सुख और आनन्द की अनुभूति मनुष्य की आन्तरिक उपलब्धि के बदले सुख और प्रसन्नता पाने के बाहरी साज सामानों पर निर्भर होती जा रही है। सुख और आनन्द दिलानेवाले ऐसे साधन-सामानों के प्रकार के निरन्तर वृद्धि होती जा रही है, जिन्हें आदमी सबको दिखाते हुए इस्तेमाल करना पसन्द करे। मनुष्य को सुखी बनानेवाले ये साधन-सामान आदमी की भीतरी चाह की पूर्ति करने से अधिक बाहरी दिखावे के काम आते हैं। ये साधन ऐसे हैं जिन पर बाहर से प्रभावित करने के तरीकों का आसानी से उपयोग हो सकता है।

हमारे पास प्रगति की कोई रूपरेखा नहीं है और न हम उसकी कोई रूपरेखा निर्धारित ही करना चाहते हैं। हम अपने आपको काल प्रवाह और परिस्थितियों के उतार चढ़ाव के भरोसे छोड़ चुके हैं। हम परिस्थितियों के बहाव में बहते हुए समाज में प्रचलित साज-सामान की विविधताओं में अपने को उलझाते चले जा रहे हैं। हम यह मानने लगे हैं कि जैसे बाजार की चीजों को तौला और नापा जा सकता है, उसी तरह सुख आनन्द, प्रेरणा और उद्देश्य की भी नाप-जोख की जा सकती है। यह हैरत की बात है, लेकिन यथार्थ है कि हम प्रौद्योगिक उपयोगितावाद को नैतिकता और देवत्व की बराबरी में प्रतिष्ठित करना चाहते हैं।

आजकल की प्रौद्योगिकी द्वारा जो कुछ भी कार्य-सम्पन्न होता है वह किसी-न किसी

निर्धारित 'डिजाइन' की पूर्ति के लिए ही होता है। इस प्रसंग में सबसे अहम और मानवीय प्रश्न उठता है कि 'डिजाइन' किसलिए? इस प्रश्न का सम्बन्ध एक इससे भी अहम प्रश्न के साथ जुड़ा हुआ है कि *आदमी किसलिए है?*

प्रौद्योगिक उपयोगितावाद के साथ सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि उसके हिमायती यह माने बैठे हैं कि उन्हें यह मालूम है कि आदमी किसलिए है। वे मानते हैं कि आदमी इसलिए है कि उसे खिलाया जाय, उसे खुशहाल बनाया जाय। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे आदमी को ऐसे साधन जुटा देना चाहते है, जिससे उसे सुख मिलता रहे। *उपयोगितावाद के हिमायतियों के लिए दार्शनिक और गुणात्मक प्रश्न बेमानी है,* क्योंकि उन्होंने सिर्फ संख्या और उत्पादन सम्बन्धी प्रश्नों को ही लिया है।

प्रौद्योगिकी का मानवीय लक्ष्यों की पूर्ति में उपयोग हो, इस दिशा मे सोचनेवालों के सामने एक जटिल तथा मनोवैज्ञानिक बाधा यह आती है कि आज भी बहुत-से असंतुष्ट और अभावग्रस्त लोगों के लिए स्वयंभरित *प्रौद्योगिकी द्वारा उपलब्ध होनेवाली उपयोग* की प्रचुर सामग्री की सम्भावना एक चर्मामर है। मानव-आबादी के इतने अधिक लोग *अभावग्रस्त हैं कि उनके अभाव की पूर्ति के* लिये तत्काल कोई कारगर उपाय होना ही चाहिए।

अभावग्रस्त लोगों के अभाव की पूर्ति होनी ही चाहिए, *यह स्वीकार करते हुए हमें उन लोगों की स्थिति भी ध्यान में रखनी होगी,* जिनके जीवन में भौतिक साधनों की प्रचुरता से अनेक नयी परेशानियाँ पैदा हुई है। भौतिक साधनों से सम्पन्न लोगों में पायी जानेवाली, बेचैनी, विलास-आसक्ति, शराबखोरी, प्रमाद और नाना प्रकार की मानसिक असंतुष्टता के *आँकड़े प्रौद्योगिकी द्वारा प्राप्त* होनेवाले सुखों की तरह ही जाहिरा तौर पर नापे जा सकते है। उपयोगितावाद का मूल्यांकन करते समय उपयोगितावादी समाधान के अन्दर से जो समस्याएँ उभरकर सामने आयी हैं, उन्हें आँखों से ओझल नहीं किया जा सकता।

उपयोगितावादी दर्शन से मनुष्य का कल्याण हो सकता है, यह मान लेने पर मनुष्य को उपयोगितावाद पर आधारित मशीनी-उत्पादन की सम्पन्नता की परेशानियाँ कबूल करनी ही पड़ती हैं। *जब मनुष्य का मापदण्ड मशीनें निर्धारित करती हैं,* तो मनुष्य भी एक मशीन मात्र हो जाता है।

एक ऐसे विश्व-समाज में, *जहाँ अलग-अलग* शताब्दियों की संस्कृतियाँ साथ-साथ मौजूद हैं, कोई भी प्रौद्योगिकी सबके लिए समान रूप से उपयुक्त नहीं हो सकती। ब्रिटेन के अर्थशास्त्री श्री ई० एफ० शूमाखर ने अमेरिका जैसे देशों पर आरोप लगाया है कि उन्होंने उन देशों में जहाँ मध्यवर्ती प्रौद्योगिकी की भारी जरूरत थी, *वहाँ उच्चस्तरीय प्रौद्योगिकी का प्रवेश कराया। श्री शूमाखर के* अनुसार विकासशील (अर्द्धविकसित) देशों में उच्च-स्तरीय प्रौद्योगिकी का प्रवेश लाभदायक होने की जगह हानिकारक प्रभाव पैदा करता है। जिन क्षेत्रों में मिहनत करनेवालों की श्रमशक्ति की पूँजी बहुतायत मे मौजूद है वहाँ अमेरिका जैसे देशों ने ऐसी प्रौद्योगिकी बैठायी, जिससे मिहनत करनेवालों की श्रम-शक्ति की *जरूरत न पड़े।* इसका यह असर हुआ कि उस देश के लोगों को रोजगार मिलने के बदले उनकी बेकारी बढ़ी। ऐसे देशों में जरूरत *इस बात की थी कि वहाँ लोगों की आवश्यकताओं* की सामग्री तैयार करनेवाले औजारों की पूर्ति करनेवाली प्रौद्योगिकी प्रस्थापित की जाती। जहाँ की जनता अभी तक कृषि और *हस्त-उद्योग के युग मे ही है,* वहाँ के लोगों के लिए मध्यवर्ती यानी हस्तोद्योग पर आधारित प्रौद्योगिकी ही मौजूँ हो सकती। लुइस हूवर नामक विचारक ने उन देशों की जनता के लिए, भी जहाँ आज उच्चस्तरीय प्रौद्योगिकी प्रचलित है, हस्त-उद्योग-केन्द्रित प्रौद्योगिकी की भारी हिमायत की है।

स्वयंभरित प्रौद्योगिकी चाहे जिस हद तक समाज के सब लोगों के लिए प्रचुर सामग्री जुटा सकने में समर्थ हो, फिर भी उसके अन्तर्गत जीवनयापन करनेवाले लोग अपने को पराश्रयी और शक्तिहीन समझेंगे। जिस व्यवस्था में आदमी के योगक्षेम के लिए ऊपर से परिचालित अथवा कानूनी पद्धति अपनायी जायगी उसमें पराश्रयी मनोभावना उपजेगी ही। वस्तुत. मनुष्य के मानवीय होने की सम्भावना ऐसी परिस्थिति में ही *सम्भव है,* जिसमें वह स्वेच्छापूर्वक किसी लक्ष्य-विशेष के लिए परस्पराधारित जीवन-पद्धति अपनाये।

प्रश्न उठता है कि प्रस्तुत परिस्थिति में रचनात्मक परिवर्तन कैसे लाया जाय? गांधीजी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रम के लिए जिन सिद्धान्तों को अपनाया, जिन्हें इटली के श्री डोलची सिलीसिया गरीबों के उद्धार के लिए उपयोग में ला रहे हैं, और जिसे विनोबा और जयप्रकाश नारायण अपने *सामुदायिक प्रयत्नों में उपयोग में ला रहे हैं, उसे अपनाकर ही परिस्थिति में ऐसा परिवर्तन* लाया जा सकता है। गांधी के रचनात्मक सिद्धान्त के अन्तर्गत मनुष्यगण इस बात की तलाश करते हैं कि कैसे वे उपयोगितावादी योजना के आँकड़े बनने से मुक्ति पा सकते हैं और इसके साथ ही अपने भीतर से स्वतन्त्रता *और सक्षमता का साक्षात्कार कर सकते है।* ऐसे लोग ऊपर उठने पर समाज के ऐसे अगुआ बन जाते है, जो किसी बनी बनायी रूपरेखा की नकल नहीं होते। ऐसे लोग अपनी आवाज खुद बुलन्द करते हैं और उसके अमल के लिए खुद ही कदम उठाते है।

(अंग्रेजी साप्ताहिक "मनस" —रुद्रभान मे प्रकाशित एक लेख का सारांश)

सुरेशराम भाई का अनशन समाप्त

इलाहाबाद के साम्प्रदायिक दंगे के सिलसिले में श्री सुरेशराम भाई द्वारा १५ दिन का किया गया उपवास ८ अप्रैल को दिन में १२ बजे उनके निवास-स्थान पर समाप्त हुआ।

उपवास की समाप्ति के अवसर पर नगर के प्रमुख नागरिक उपस्थित थे। सर्वोदय के प्रमुख विचारक दादा धर्माधिकारी ने अपना आशीर्वाद श्री सुरेशराम भाई को देते हुए कहा कि हम लोगों का हृदय आज इतना मुर्दार हो गया है कि समाज में चल रहे अशोभन प्रसंगों का असर हम पर नहीं होता है। श्री सुरेशराम भाई के दिल पर यहाँ की हिंसक घटनाओं का असर पड़ा और उन्होंने उपवास का व्रत लिया। यह इनके दिल की छटपटाहट, उत्कटता तथा तीव्र संवेदना ही थी, जिसके कारण इस लम्बे उपवास के बाद भी वे हमें स्वस्थ दिखाई दे रहे हैं। सही आशीर्वाद इसी रूप में हो सकता है कि इस नगर में फिर इन्हें इस प्रकार का प्रायश्चित्त करने का अवसर न आये।

नगर के प्रतिष्ठित नागरिक श्री छोटे मियाँ साहब ने श्री सुरेशराम भाई को संतरे का रस पिलाया। शान्ति-सेना के संगठक श्री ब्रह्मलोचन दुबे ने नगर में शांति-स्थापना में योग देनेवालों तथा इस अवसर पर उपस्थित सज्जनों को धन्यवाद दिया।

—अमरनाथ,
शान्ति-सेना मंडल, वाराणसी

सम्पादक के नाम पत्र

दल-बदल या दलातीतता ?

चौथे आम चुनाव के बाद जनता ने सोचा कि यहाँ स्वस्थ लोकतंत्र और विशुद्ध लोकतंत्र प्रस्थापित होगा। इसीलिए उसने अनेक नये खून के नेता चुन दिये। 'संयुक्त विधायक दल' के रूप में विभिन्न राज्यों में उनका शासन भी चल पड़ा। फिर कुछ ही महीनों में लगातार वे नयी-नयी शासन-संस्थाएँ टूटती गयी और लोकतंत्र का सर्वथा विरोधी राष्ट्रपति-शासन उन-उन स्थानों पर लागू हो गया या लागू होने की दिशा में है।

वस्तुतः विचार करें तो लोकतांत्रिक शासन भी राष्ट्र की अपनी विशेषताओं के अनुसार विभिन्न राष्ट्रों में विभिन्न प्रकार का हुआ करता है। ऐसी स्थिति में हम भारत में बिना किसी विघ्न-बाधा के लोकतंत्र चलाना चाहते हों तो उसमें इस देश की विशेषता को देखते हुए अपेक्षित परिवर्तन करना अत्यावश्यक ही कहा जायगा।

अवश्य ही विरोधी दल लोकतंत्र का एक अंग माना जाता है। पर भारतीय शासन में उसकी कोई खास आवश्यकता नहीं मालूम पड़ती। जब किसी भी विषय में चर्चा चल पड़े तो जिस विधायक को जैसा पसन्द पड़े, उस विषय में अपना मत प्रदर्शित करे। अन्ततः बहुमत से, और अच्छा तो यह है कि मनाकर प्राप्त किये सर्वमत से, उस विषय का निर्णय किया जाय।

इस प्रकार अन्ततः यहाँ का लोकतंत्र दल-निरपेक्ष शासन के रूप में परिणत हो जायगा। इस प्रकार काम चलाने पर शासन से दलीय अनुचित महत्त्व भी सहज ही जाता रहेगा। हमारा तो यह दृढ़ मत है कि भले निर्वाचन के समय अनेक राजनीतिक दल बने रहें, किन्तु निर्वाचित हुए विधायक शासन-सचालन के समय अपना दलीय आवरण ससमारोह उतारकर दल निरपेक्ष बन जायँ।

—गो० न० वैजापुरकर

देश

३१ मार्च · दल बदलुओं के अभिशाप से मुक्ति के लिए स्वराष्ट्र मन्त्रालय द्वारा जन प्रतिनिधि कानून में संशोधन का प्रस्ताव।

१ अप्रैल लोकसभा में नयी आयात-नीति की घोषणा, प्राथमिकता प्राप्त दस उद्योगों के लिए पाँच प्रतिशत निर्यात अनिवार्य।

२ अप्रैल लोकसभा में इस बात पर बल दिया गया कि प्राथमिक पाठशालाओं के शिक्षा-स्तर में सुधार होना चाहिए।

३ अप्रैल प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने लोकसभा में कहा कि भारत और बर्मा अपनी-अपनी सीमाओं पर नागाओं को रोकने के लिए प्रयत्नशील हैं।

४ अप्रैल पाक को अमरीकी युद्ध सामग्री दिये जाने पर भारत सरकार द्वारा चिन्ता व्यक्त।

५ अप्रैल . नीग्रो नेता डा० किंग की हत्या पर प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी द्वारा लोकसभा में शोक व्यक्त।

विदेश ·

३१ मार्च सुरक्षा परिषद में अमरीकी प्रतिनिधि आर्थर गोल्डबर्ग ने इसरायल जोर्डन सीमा पर प्रेक्षक तैनात करने की माँग की।

१ अप्रैल · अमरीकी राष्ट्रपति जानसन ने उत्तर वियतनाम में बमबारी बन्द करने की घोषणा की।

२ अप्रैल वियतनाम में राष्ट्रपति जानसन की शान्ति घोषणा पर राजनीतिक-वार्ता करने का भारत का स्वागत।

३ अप्रैल बमबारी बन्द करने की घोषणा पर हनोई अमरीका से वार्ता करने को तैयार।

४ अप्रैल : वियतनाम-शान्ति के लिए अमरीका द्वारा हनोई से सम्पर्क का प्रयत्न।

५ अप्रैल : गांधीवादी नीग्रो नेता डा० मार्टिन लूथर किंग की मेमफिस (टेनेसी) में कल एक गोरे ने गोली मार कर हत्या कर दी।

आन्दोलन के समाचार

पिथौरागढ़ जिलादान का संकल्प

● पिथौरागढ़, ३० मार्च। डीडीहाट में २७ मार्च को समाप्त हुए रचनात्मक कार्यकर्ता शिविर में संकल्प किया है कि आगामी 'विनोबा-जयन्ती', ११ सितम्बर '६८ तक सीमान्त जिला पिथौरागढ़ का जिलादान सम्पन्न किया जाय। इस संकल्प की पुष्टि जिला गांधी जन्म शताब्दी समिति ने भी की। जिले के सभी राजनीतिक पक्षों के मुख्य कार्यकर्ताओं एवं समाजसेवकों ने ग्राम-दान-अभियान को सफल बनाने के लिए अपील भी निकाली है। २५ २६ मार्च को डीडीहाट एवं पिथौरागढ़ की सार्वजनिक सभाओं में सुश्री निर्मला देशपाण्डे ने बताया कि ग्रामदान से न केवल देश की सुरक्षा, विकास और लोकतंत्र की समस्याएँ ही हल होंगी, बल्कि विश्वशान्ति का मार्ग भी प्रशस्त होगा।

मीरजापुर में ७ ग्रामदान

● गोविन्दपुर, २ अप्रैल। मीरजापुर जिले की दुद्धी तहसील में उ० प्र० गांधी स्मारक निधि वनवासी सेवा आश्रम के कार्यकर्ताओं की ६ टोलियाँ प्रखण्ड में ग्रामदान अभियान पर गत १९ मार्च से निकली थीं। उनका शिविर गोविन्दपुर में १ अप्रैल को हुआ। मार्च महीने की पदयात्रा में कुल ७ ग्रामदान प्राप्त हुए। इस प्रकार जिले में २ प्रखण्डदान तथा कुल २१७ ग्रामदान हो चुके हैं। टोलियाँ पुनः अभियान पर निकल पड़ी हैं।

—रेवतादीन मिश्र

रतलाम प्रखण्डदान का संकल्प

● इन्दौर २७ मार्च। रतलाम सर्व सेवा संघ के तत्वावधान में १७-१८ १९ मई को श्री बनवारीलाल चौधरी परिवार के सान्निध्य में मध्यप्रदेश के रचनात्मक कार्यकर्ताओं के पारिवारिक शिविर का आयोजन किया गया है। २ अक्तूबर '६८ तक रतलाम प्रखण्डदान करवाने का संकल्प रतलाम सर्वोदय-परिवार के कार्यकर्ताओं ने किया है।

मनमोहनजी की नेफा-यात्रा

● कुमारीकाटा, ३० मार्च। सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी ने श्री रवीन्द्र भाई तथा अशोक भाई के साथ २३ मार्च से २६ मार्च तक नेफा स्थित शान्ति-केन्द्रों का दौरा किया। २५ मार्च को शान्ति-केन्द्र जेदुआ और २६ मार्च को केन्द्रों में ग्रामीणों से मिले। रात को गाँव-प्रमुख तथा अन्य लोगों के अलावा नौजवानों से चर्चा हुई। दूसरे दिन गाँव की परिक्रमा कर शान्ति-केन्द्र के कार्यकर्ताओं से बातचीत की। रात को खोसा में वहाँ के सरकारी अधिकारियों से नेफा की समस्याओं, सम्भावनाओं तथा शान्ति-केन्द्रों के संबंध में विचार विमर्श किया। सबने शान्ति केन्द्रों के काम से संतोष प्रकट किया। कार्यकर्ताओं को समझाया कि ग्रामदान के कई तत्त्व यहाँ मौजूद हैं, वे ग्राम-स्वराज्य की स्थापना करने की कोशिश करें।

—रवीन्द्रनाथ

शराबबन्दी के लिए लोकयात्रा

● बम्बई, २६ मार्च। महाराष्ट्र सरकार की शराबबन्दी-नीति के प्रति विरोध प्रदर्शित करने लिए श्री बाबूराव चंदावार आदि चार कार्यकर्ताओं ने पूना जिला स्थित तीर्थक्षेत्र आळंदी से लोकशिक्षण करते हुए लोकयात्रा १८ मार्च से प्रारंभ की। ६ अप्रैल को बम्बई पहुँचकर मुख्यमंत्री से मिलकर जनता की मनोव्यथा प्रकट करेंगे। शराबबन्दी ढीली करने की दृष्टि से अपनायी गयी नीति पर पुनर्विचार करने के लिए मुख्यमंत्री को पत्र भी लिखा गया।

बिहारदान की ओर

● लहेरियासराय, २६ मार्च। दरभंगा सदर अनुमण्डलीय ग्राम-स्वराज्य समिति की बैठक २७ मार्च को यहाँ हुई। २५ मार्च तक हुए कार्य का ब्योरा—

कुल गठित ग्रामसभा	३०६
पुष्टिदायक तैयार गाँव	१४६
पुष्टि-पदाधिकारी के यहाँ दाखिल गाँव	३३
मालिक तैयार गाँव	१

—रामप्रताप ठाकुर

भूदान-यज्ञ १२-४-'६८ : रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए. ३४

पूर्णिया का जिलादान पूर्ण

बिहार के नक्शे पर दूसरा और भारत के नक्शे पर तीसरा जिलादान

महातूफान अभियान ने सफलता की एक और मंजिल पूरी की

पूर्णिया, ६ अप्रैल। आज पूर्णिया के कुल ३८ प्रखण्डों का दान सम्पूर्ण हुआ। १८ अप्रैल को महातूफान अभियान की प्रेरणा के प्रतीक आचार्य विनोबा भावे को पूर्णिया का जिलादान समर्पित किया जायगा। पूर्णिया के वरिष्ठ कार्यकर्ता श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी की अनवरत सेवा और विचार की अखण्ड साधना के परिणामस्वरूप पूर्णिया में इस ऐतिहासिक संकल्प की पूर्ति हो सकी है। विनोबा ने पूरी आशा व्यक्त की है कि पूर्णिया में प्राप्ति की तरह ही पुष्टि का काम भी महातूफान की गति से होगा और ग्रामदान की शक्ति वहाँ प्रकट होगी।

इस सम्बन्ध में स्मरणीय है कि पुष्टि के लिए बिहार भूदानयज्ञ कमेटी की ओर से २ पुष्टि-अधिकारी और ११ कार्यकर्ता सघन रूप से कार्यरत हैं। फिलहाल २ प्रखण्डों—रूपनारायणनगर तथा पूर्णिया पूर्व—में सघन रूप से काम कर रहे हैं। अब तक पुष्टि के लिए ७०० गाँवों के कागजात प्राप्त किये गये हैं, १२५ गाँवों की पुष्टि हो चुकी है।

—विशेष संवाददाता द्वारा

२ अक्तूबर '६८ तक बिहारदान की लक्ष्य-पूर्ति के लिए

७० प्रखण्डदान प्रति माह पूर्ण करने की आवश्यकता

पटना, ४ अप्रैल। प्रान्तीय ग्रामदान-प्राप्ति संयोजन समिति की बैठक में बिहार की व्यूह-रचना पर सविस्तार चर्चा हुई। बैठक की अध्यक्षता श्री मनमोहन चौधरी ने की। बिहार के वरिष्ठ और प्रमुख सर्वोदय-कार्यकर्ता साथियों के अतिरिक्त समिति के सदस्य सर्वश्री जगन्नाथ सरकार, मन्त्री, बिहार साम्यवादी दल, हरिवंश नारायण सिंह, उपाध्यक्ष, बिहार जनसंघ दल, राजेन्द्र मिश्र, भू०पू० अध्यक्ष, बिहार कांग्रेस कमेटी, विनोदानंद झा आदि बिहार के प्रमुख राजनीतिक नेताओं ने भी भाग लिया।

बिहारदान-प्राप्ति की गति को तीव्रतर करने के लिए सभी तबके के लोगों से सहयोग लेने, आर्थिक मदद प्राप्त करने आदि के लिए विस्तृत योजनाएँ बनीं। बिहार गांधी-शताब्दी समिति की मदद से हर जिले में एक-एक ग्राम-स्वराज्य शिविर आयोजित किये जायँगे। सुप्रसिद्ध सर्वोदय-विचारक आचार्य दादा धर्माधिकारी ने इन शिविरों में मार्गदर्शन हेतु ३१ मई तक का समय दिया है। बिहार ग्रामदान-प्राप्ति संयोजन समिति के सहमंत्री श्री कैलाशप्रसाद शर्मा ने बताया कि २ अक्तूबर '६८ तक बिहारदान के लक्ष्य की पूर्ति के लिए ७० प्रखण्डदान प्रति माह प्राप्त करने की आवश्यकता है। अब तक बिहार के कुल ५८७ प्रखण्डों में से १४६ प्रखण्डों का दान हो चुका है।

२२ अप्रैल को श्री जयप्रकाश नारायण विदेश-यात्रा पूरी कर वापस लौट रहे हैं, समिति ने निश्चय किया है कि उनका स्वागत ५० प्रखण्डदान और ७२ हजार रुपये की थैली से किया जाय। पटना के नागरिकों की ओर से स्वागत-समारोह का भी आयोजन किया जा रहा है। ●

सीमा-क्षेत्र में लोकयात्री महिलाएँ

सरनिया कस्तूरबा आश्रम की तीन महिला कार्यकर्त्रियाँ श्रीमती घनदा बारूय, श्रीमती स्वर्णा देवी और श्रीमती भारती देवी, जिन्होंने महिला जागरण और संगठन के लिए लोकयात्रा प्रारम्भ की है, दिनांक २२-२-'६८ को गोहाटी में जनसम्पर्क किया। अब वृहद गोहाटी के सीमा-क्षेत्रों में घूम रही हैं। इस महिलात्रयी ने शान्तिपुर, भरालमुख, कुमारपारा, माछखोवा, फैंसी बाजार, ताकोबारी, अथगून, सतरीबारी, फटासिल और काला पहाड़ में लोकयात्रा की और अब रेहाबारी क्षेत्र में प्रवेश किया है। ग्रामीण महिलाओं में उत्साह देखा जा रहा है।

—कु० समीरण दास

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड; या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : २९

शुक्रवार, १९ अप्रैल, '६८

यह अंक
आजादी के पथ पर अमर शहीद डा० किंग
की याद में

हो सकता है कि यह (नागरिक अधिकारों की शान्तिमय लड़ाई) मुझे सूली पर चढ़ा दे। यदि मैं लड़ते लड़ते खेत रहूँ तो लोग कम-से-कम यह तो कहेंगे कि वह लोगों को आजाद करने के लिए मरा। —मार्टिन लूथर किंग

सम्पादक
राममूर्ति

●

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१ उत्तर प्रदेश

डा० किंग : मानवता की अखण्ड-ज्योति

● अभी एक आश्चर्यजनक समाचार मिला है। डा० मार्टिन लूथर किंग की हत्या कर दी गयी। ३९ साल का जवान। दुनिया में प्रसिद्ध हुआ। गांधी का शिष्य बना। शान्तिपूर्ण कार्य किया। इसके लिए नोबल प्राइज मिला। उसे एक दूसरे जवान ने गोली मार दी।

हमें अध्यात्म और विज्ञान दोनों को जोड़ना है। दोनों परस्परपूरक हैं। यंत्र दो प्रकार के होते हैं : दिशादर्शक और गतिवर्धक। हमें दोनों चाहिए। अध्यात्म दिशादर्शक है और विज्ञान गतिवर्धक। आज अमरीका के पास विज्ञान है, अब आवश्यकता महसूस हो रही है अध्यात्म की। वहाँ सुख भी बहुत बढ़ा और अशान्ति भी।

जहाँ जीवन में सुख-ही-सुख है, भोग ही भोग है, पुरुषार्थ नहीं, उस जीवन में कोई रस नहीं। —विनोबा

● डा० मार्टिन लूथर किंग का दुःखद देहावसान महात्मा गांधी की शहादत की पुनरावृत्ति ही है, जो जन जन के हृदय को गहरा आघात पहुँचानेवाला है। गांधीजी के समान डा० किंग ने मानव-मानव के भ्रातृत्व की सिद्धि के लिए अपना जीवन समर्पित किया था और गांधीजी के ही समान वे भी निमम द्वेष की ज्वाला के शिकार हुए।

उन्होंने ऐसी समस्या को हाथ में लिया था जो वर्तमान संसार की अत्यन्त विस्फोटक समस्याओं में से एक थी और वह थी काले-गोरे का वर्ण विद्वेष। अमरीका में यह विद्वेष अत्यन्त उग्र अवस्था में पहुँचा है, लेकिन इस समस्या के समाधान के लिए डा० किंग के प्रयत्नों के अनुभवों और सफलताओं के कारण आशा बंधी थी कि विश्व रंगमंच पर घटनेवाली घटनाओं को सही दिशा देने में वे बहुत सहायक हो सकेंगे। डा० किंग जिस महान् शिखर पर आ पहुँचे थे उसकी तुलना में उनकी अवस्था अल्प थी और संसार को आशा थी कि दीर्घ काल तक वे सफल जीवन जीयेंगे। परन्तु एक पागल दुष्कृत्य ने सारी आशाओं पर पानी फेर दिया।

डा० किंग प्रेम और द्वेष की समस्या के अन्तस्तल तक जा पहुँचे थे। प्रेम शक्ति पर उनकी श्रद्धा इतनी सुदृढ़ थी कि भयानक-से-भयानक उत्तेजना के अवसरों पर भी वह विचलित नहीं हो सकती थी। यही उनकी महानता और शक्ति का रहस्य था। चूँकि ऐसी श्रद्धा में इस स्थूल शरीर का अन्त हो जाने के बावजूद बने रहने की और सक्रिय रहने की अद्भुत शक्ति है, इसलिए इसमें कोई शंका नहीं कि डा० किंग द्वारा जलायी हुई वह श्रद्धा-ज्योति आगामी कई सदियों तक मानवता को स्फूर्ति प्रदान करती रहेगी और पथ आलोकित करती रहेगी।

—मनमोहन चौधरी
अध्यक्ष, सर्व सेवा

सक्रिय अहिंसा

● 'दुष्टता के विरुद्ध सब प्रकार की सच्ची लड़ाई का परित्याग' अहिंसा नही है। इसके विपरीत, मेरी कल्पना की अहिंसा प्रतिशोध की अपेक्षा अधिक सक्रिय और दुष्टता के खिलाफ सच्ची लड़ाई है, क्योंकि प्रतिशोध कुदरती तौर पर दुष्टता को बढ़ाता है। मेरा इरादा अनाचारों का मानसिक और इसलिए नैतिक विरोध करना है। मैं अत्याचारी की तलवार को बिलकुल भोथरी कर देना चाहता हूँ। यह काम मैं मुकाबले में अधिक तेज तलवार का उपयोग करके नही, बल्कि उसे इस बात में निराश करके करूँगा कि मैं उसका शारीरिक विरोध करनेवाला हूँ। मैं आत्मा द्वारा जो प्रतिरोध करूँगा, वह उसे घबड़ा देगा। पहले तो उसे इससे चकाचौंध होगी और अन्त में वह उसे मान लेने को मजबूर हो जायगा, ऐसा करके वह जलील नही होगा, बल्कि ऊँचा उठेगा।[1]

● सक्रिय अहिंसा का अर्थ ज्ञान-पूर्वक कष्ट-सहन है। इसका मतलब यह नहीं कि दुराचारी की मरजी के सामने चुपचाप गरदन झुका दी जाय, परन्तु इसका मतलब यह है कि अत्याचारी की मरजी के विरुद्ध अपनी आत्मा की सारी शक्ति को लगा दिया जाय। जीवन के इस धर्म का आचरण करते हुए एक अकेले व्यक्ति के लिए भी यह सम्भव है कि वह अपने सम्मान, अपने धर्म और अपनी आत्मा की रक्षा के लिए एक अन्यायी साम्राज्य की सारी ताकत का मुकाबला करे और उस साम्राज्य के पतन या पुनरुद्धार की बुनियाद डाले।[2]

१. 'यंग इण्डिया', ८-१०-'२५
२ 'यंग इण्डिया', ११-८-'२०

...अब किंग !

२० साल पहले गांधी, और अब किंग ! दोनों उन्माद के शिकार हुए। मनुष्य के उन्माद के—जिसे मानवीय बनाने की साधना दोनों ने अपने जीवन की हर सांस के साथ की। सचमुच, मनुष्य के लिए मनुष्य का प्रेम कितना खतरनाक हो सकता है ! सुकरात और ईसा से लेकर आज तक मनुष्य का सबसे बड़ा अपराध शायद यही माना गया है कि वह हर मनुष्य को मनुष्य माने और अपने से बढ़कर दूसरे को प्यार करे।

अभी ७ अप्रैल को रामनवमी के दिन इलाहाबाद के शान्ति-जुलूस में नारा लगाया जा रहा था . 'हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई, आपस में हैं भाई-भाई'। अपने देश में पिछले चालीस-पचास वर्षों से यह नारा लगाया जा रहा है। आज भी लगता ही जा रहा है। इतने पर भी रोज भाई भाई से दूर होता जा रहा है, और यह कहने के लिए भी कि हम आपस में भाई-भाई हैं, किसी-न-किसीको शहीद होना पड़ता है। गांधी ने और क्या किया था सिवाय यह कहने के कि हिन्दू-मुसलमान भाई-भाई हैं ? और किंग ने क्या किया था सिवाय यह कहने के कि काले और गोरे भाई-भाई हैं ? जो भाई हैं, उन्हें भाई कहना अक्षम्य है !

कैसी है यह हिंसा जो अहिंसा की बड़ी-से-बड़ी बलि लेकर भी तृप्त नही होती ? कितनी है उसकी प्यास जो सारे ज्ञान और विज्ञान, साधना और सुधार, सौन्दर्य और सभ्यता के होते हुए भी बुझना नही जानती ? क्या हिंसा का अनश्वर निवास मानव के मन में ही है, जिसके फूट पड़ने को रोकना मनुष्य की शक्ति के बाहर है ? या, समाज की रचना ही ऐसी है कि उसकी उत्तेजनाएँ मनुष्य-मनुष्य के सम्बन्धों को सही और सन्तुलित रहने नही देती, और तब मनुष्य भय, अहंकार और अरक्षा में जीवन की उसी स्थिति में लौट जाता है जिसे वह सदियों पहले छोड़ चुका। रह-रहकर पशुता की ओर लौटने का यह क्रम कब रुकेगा, कैसे रुकेगा ? मनुष्य में इतनी महानता और इतनी क्षुद्रता क्यों है ?

गांधी की हत्या हुई तो हमने सोचा कि भारत रूढ़ियों में जकड़ा हुआ ऐसा देश है, कि गांधी को पचा नही सका। लुथुली के अफ्रीका का भी यही हाल था। लेकिन जब अमेरिका जैसे विज्ञान और वैभव में सिरमौर डालर के ढेर पर बैठनेवाले और चन्द्रलोक की सैर करनेवाले देश में, काले गोरे जैसे प्रश्न पर किंग की हत्या हुई तो यह मानना पड़ा कि इस विज्ञान और वैभव में ही कही कोई जहर है जो मनुष्य को मनुष्य नही रहने दे रहा है। क्या है वह जहर ? कैसे निकलेगा ? क्या विज्ञान के साथ विकास का दूसरा भी कोई तत्त्व चाहिए जो अब तक गायब रहा है ?

देश-देश में हम क्या देखते हैं ? युद्ध का वही तंत्र (वार मशीन), सत्ता की वही होड़ (पावर पालिटिक्स), व्यवसाय की वही माया (बिग बिजिनेस) : इन्हीं तीन पर आधुनिक सभ्यता और समाज की रचना टिकी हुई है। इस रचना के पूरे ताने-बाने में हिंसा है। हिंसा ही हिंसा है। इस त्रिविध हिंसा से अगर मुक्ति पानी हो तो सम्पूर्ण अहिंसा चाहिए। अहिंसा यानी नयी प्रेरणा का जीवन और नयी बिजाइन का समाज चाहिए। अब प्रश्न मूल्यों और सम्बन्धों का है। मात्र साधनों और तकनीकों का नहीं। नये जमाने की क्रान्ति की यही माँग है। इसीमें मुक्ति है।

गांधी से लेकर किंग तक के बीस वर्षों ने यह सिद्ध कर दिया है कि हिंसा के साथ विज्ञान कितना खोखला, समता कितनी निरर्थक, और वैभव कितना कुत्सित है। अहिंसा से जुड़कर ही मनुष्य के लिए विज्ञान, समता और समृद्धि की सार्थकता है। अहिंसा सन्त की आकांक्षा नही, नागरिक की आवश्यकता है। ●

स्वर्गीय डा० किंग : अहिंसक आन्दोलन का भविष्य ?

बुसेल्स पहुँचकर अपने शान्तिवादी मित्र माइकेल को फोन किया तो उसने बताया कि ४ अप्रैल को एक श्वेतांग तरुण ने मार्टिन लूथर किंग की हत्या कर दी। टेलीफोन हाथ का हाथ में रह गया। इतना अनपेक्षित समाचार !

मन पर गहरा आघात लगा। अमेरिका के सारे अहिंसक आन्दोलन का भविष्य तो काला दिखाई देने ही लगा साथ ही डा० किंग के अपने व्यक्तिगत सम्बन्धों के कारण भी मेरा मन बिलकुल हतप्रभ रह गया। सबसे पहले मैं डा० किंग से सन् १९५९ में मिला था उसके बाद सन् १९६३ में अमेरिका में उनके अपने शहर अटलांटा में हमारी लम्बी बातचीत हुई थी। फिर मैंने उनके अनेक व्याख्यान सुने थे। उन्होंने अपनी पहली पुस्तक स्ट्राइड टुवार्ड फ्रीडम मुझे भेंट की थी। मैंने आजादी की मंजिल नाम से उस पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद किया है। इन दिनों मैं डा० किंग की जीवनी लिखने में व्यस्त था। इतने लम्बे सम्पर्क के कारण उनके साथ एक व्यक्तिगत आत्मीयता-सी हो गयी थी। अचानक ऐसा लगा कि उस लगाव को किसीने बेरहमी से तोड़ दिया।

अमरीकी-अहिंसा आन्दोलन को सपने में भी यह खयाल नहीं रहा होगा कि केवल ३९ वर्ष की उम्र में उनका नेता उनसे छीन लिया जायगा। इसलिए इस धक्के को बर्दाश्त करने की क्षमता विकसित करने का उन्हें अवसर नहीं मिला। उधर स्टोकले कारमाइकेल जैसे क्षणिक चमत्कार दिखाने वाले नेता के लिए यह सहज सम्भव होगा कि पीड़ित दमित शोषित और निराश नीग्रो समाज को हिंसक प्रतिकार और बदला लेने के लिए उकसाया जा सके।

चारों तरफ फैली हुई अपार सम्पन्नता और ऊँचे रहन-सहन के बीच गरीब नीग्रो को जिस मानसिक पीड़ा का जहर पीना पड़ता है उसकी कल्पना ही की जा सकती है। यदि यह पीड़ा निराशा में बदलकर हिंसक प्रतिकार का रूप ले ले तो उसे असम्भव नहीं कहा जा सकता। डा० किंग की हत्या के बाद यदि अमेरिका का श्वेतांग समाज एक धक्का महसूस करे या उसने नीग्रो समाज के प्रति जो अन्याय किया है उसे समझने की कोशिश करे या कम से कम बड़े खून-खराबे का ही डर महसूस करे और नीग्रो विरोधी पूर्वाग्रहों का वह त्याग करे तो शायद मार्टिन लूथर किंग का यह बलिदान एक नसीहत बनेगा। यदि सन् १९६० की तरह जब कि ग्रीन्स बोरो नगर के नीग्रो युवकों पर रंगभेद माननेवाले रेस्तरां में प्रवेश करने पर श्वेतांगों ने हमला बोल दिया था या बर्मिंघम नगर में डा० किंग के अनुशासनबद्ध अहिंसक सत्याग्रहियों पर श्वेतांग पुलिस ने शिकारी कुत्ते छोड़ दिये थे अब भी नीग्रो-दमन की नीतियाँ चलने वाली होंगी तो अमेरिका न केवल गृहयुद्ध बल्कि गुरिल्ला युद्ध का मैदान बनेगा ऐसी आशंका अस्वाभाविक नहीं।

सतीशकुमार

अपने विरोधियों के प्रति पूरा सम्मान और साध्य की भाँति ही साधनों की पवित्रता में विश्वास के साथ-साथ अपने अधिकारों के लिए सत्य और न्याय प्राप्त करने के लिए आग्रह और निष्ठा का मेल बढ़ाने में डा० किंग ने अद्भुत सफलता पायी थी। वे अपने पीछे एक ठोस ऐतिहासिक उपलब्धि छोड़ गये हैं। जो हिंसक क्रान्ति का विकल्प ढूँढ़ना चाहते हैं उनके लिए डा० किंग एक आशा की चिनगारी छोड़ गये हैं। यदि कुछ समय के लिए स्टोकले कारमाइकेल नीग्रो युवकों की भावनाओं को हिंसक मोड़ देने में सफल भी हो गये तो भी डा० किंग द्वारा प्रस्तुत अहिंसक विकल्प हमेशा महत्त्वपूर्ण रहेगा क्योंकि हिंसा नयी हिंसा को जन्म देती है और आखिरी समाधान लाने में वह असफल रहती है। डा० किंग के विचार अमरीकी समाज को अपने पूर्वाग्रहों से मुक्त होने के लिए अब भी प्रेरणा देंगे और इस रंगवाद का अन्त होगा। पिछले साल के दंगों पर राष्ट्रपति ने जो कमीशन बैठाया था उसने एक महत्त्वपूर्ण रिपोर्ट पेश कर दी है और यदि कम से कम उस रिपोर्ट में दी गयी सलाहों को ही मान लिया गया तो एक नये परिवर्तन का प्रारम्भ होगा।

जहाँ गोराशाही के पूर्वाग्रहों ने असभ्य और अमानवीय तरीके अपनाये वहाँ डा० किंग के नेतृत्व में नीग्रो समाज ने सभ्य और मानवीय तरीकों से उनका प्रतिकार किया। डा० किंग ने अपने इस शक्तिशाली अहिंसक आन्दोलन की प्रेरणा गांधी से पायी थी। मोर हाउस कालेज से डिग्री पाने के बाद किंग चेस्टर नाम के एक नगर में जब थियोलोजी (अध्यात्म विद्या) पढ़ रहे थे तब उन्होंने हीगल कांट और गांधी के दार्शनिक तथ्यों की गवेषणा की और उन्हें लगा कि दार्शनिक विचार केवल एकेडमिक बहस और बुद्धिविलास की चीज नहीं बल्कि रोजमर्रा की समस्याओं के साथ उनका सीधा सम्बन्ध है। खास तौर से उन्होंने महसूस किया कि सीमित कानूनी तरीकों से नीग्रो दमन का विरोध मात्र मनबहलाव है जब तक एक व्यापक जन-आन्दोलन और नयी समाज रचना का एक साफ चित्र खड़ा नहीं किया जाता तब तक नीग्रो-स्वातन्त्र्य एक सपना ही रहनेवाला है। चेस्टर की पढ़ाई समाप्त करने के बाद किंग ने बोस्टन विश्वविद्यालय से डाक्टर की डिग्री हासिल की और मोंटगोमरी नगर के एक मशहूर चर्च के पादरी बन गये। इस बीच उन्होंने कोरेटा स्काट के साथ विवाह कर लिया था।

दिसम्बर १९५५ ने अचानक डा० किंग को एक अप्रत्याशित संघर्ष का नेतृत्व करने की जिम्मेदारी डाल दी। एक दर्जी महिला रोजा पार्क्स को मोंटगोमरी नगर की बस सर्विस के नियमानुसार एक श्वेतांग यात्री के लिए सीट छोड़कर खड़ा हो जाना चाहिए था पर उसने इस नियम का पालन नहीं किया और परिणामस्वरूप उसे गिरफ्तार किया गया। इस गिरफ्तारी ने एक अनुशासनबद्ध बस-बहिष्कार सत्याग्रह को जन्म दिया

जो ३८२ दिनों तक चला। डा० किंग इस बस-बहिष्कार सत्याग्रह-समिति के अध्यक्ष थे। उनकी 'स्ट्रेटेजी' ने सत्याग्रह को पूरी सफलता दिलायी और आखिर मोटगोमरी की बसों में रंगभेद समाप्त किया गया। इस सत्याग्रह के दौरान डा० किंग के घर पर बम फेंका गया, और उन्हें गिरफ्तार भी किया गया, परन्तु *न्याय की विजय हुई, अहिंसक-संघर्ष* के रास्ते से। इसके बाद तो 'फ्रीडम मार्च' तथा विभिन्न प्रकार के सत्याग्रहों के लिए रास्ता ही खुल गया। डा० किंग ने 'विद्यार्थी अहिंसक-संघर्ष संघ' की स्थापना करके युवक-शक्ति को संगठित किया। सन् १९५८ और ५९ में विद्यार्थियों द्वारा आयोजित विभिन्न सत्याग्रहों ने *दुनिया का ध्यान नीग्रो-आन्दोलन की* तरफ आकृष्ट किया। तब आया सन् १९६१ का बर्मिंघम-सत्याग्रह। इस सत्याग्रह ने न केवल अन्तरराष्ट्रीय समाचार-पत्रों के कालम भरे, *बल्कि स्वयं नीग्रो-आन्दोलन के लिए* अग्निपरीक्षा का अवसर प्रस्तुत किया। डा० किंग ने अखबारों के हासिये पर एवं 'टायलेट पेपर' पर नीग्रो-आन्दोलन का समग्र दर्शन प्रस्तुत करते हुए जो 'पत्र' लिखा वह एक ऐतिहासिक दस्तावेज के रूप में दुनिया के सामने आया।

डा० *किंग* ने घोषित किया कि कमजोर अहिंसा हिंसा से बदतर है। मौन रहकर हिंसा को सहना स्वयं हिंसा करने से बदतर है। इसलिए भोथरी अहिंसा हमें नहीं चाहिए।

इस तरह अहिंसा और शक्ति, दोनों का मेल बैठानेवाला शास्त्र बर्मिंघम की जेल *में लिखा गया*। इस *सत्याग्रह ने* राष्ट्रपति केनेडी और अमरीकी सरकार को भी जगाया। नागरिक-अधिकार कानून की रचना की गयी। इसी बर्मिंघम सत्याग्रह की नींव पर सन् १९६३ में 'वाशिंगटन मार्च' आयोजित किया गया, जिसमें लाखों स्वातंत्र्य-संग्राम के समर्थकों ने भाग लिया। लिंकन मेमोरियल पर खड़े होकर डा० किंग ने जो भाषण दिया, वह 'सिंहगर्जना' चित्रित कर रही थी डा० किंग के उस सपने को, जिसमें काले और गोरे भाई बनकर रहेंगे।

डा० किंग का मानना था कि दमन और अन्याय के विरुद्ध हमें अड़ जाना है।

अमेरिका की कंजर्वेटिव यानी अनुदारवादी साप्ताहिक पत्रिका 'टाइम' ने डा० किंग को सन् १९६३ का हीरो घोषित किया।

मार्टिन जिन्दा है...जिन्दा है!

तिमिर ने दाग दी गोली
उजाले के कलेजे पर
और नफरत ने गोली से
मुहब्बत को मारा चांटा
लेकिन फिर से अंधेरे
और नफरत के दावेदार
भूल गये कि महापुरुष की रोशनी
कभी बुझती नहीं
और मुहब्बत नफरत से
डरती नहीं।
महापुरुष जो जिन्दगीभर
जीकर नहीं कर पाता
वही उसकी शहादत
पल में कर जाती है।
अफसोस, कि खूनी हाथों के धब्बे
धुल नहीं पाते कि दूसरा धब्बा
लग जाता है,
लेकिन खुशी इस बात की है, कि
'महापुरुष का उजाला
बेदाग बच जाता है।'
इसीलिए तो मरकर भी
ईसा जिन्दा है
गांधी जिन्दा है और
मार्टिन भी जिन्दा है...
जिन्दा है!

—गोपाल भट्ट

सन् १९६४ में उन्हें नोबल शान्ति-पुरस्कार दिया गया। अब तक नोबल शान्ति-पुरस्कार पानेवालों में डा० किंग सबसे कम उम्रवाले थे। अमेरिका में और अमेरिका के बाहर नीग्रो-स्वातंत्र्य और डा० किंग एक-दूसरे के पर्यायवाची बन गये थे। पर दुर्भाग्य से गोरे रंग के अहंकार ने तथा अमरीकी सरकार की ढिलाइयों ने डा० किंग को समाप्त कर दिया है तथा नीग्रो-क्षोभ को भड़कने के लिए अवसर दे दिया गया है।

दुनिया में जनतंत्र की रक्षा करने के *लिए पुलिसमैन की तरह चौकीदारी करने*-वाली अमरीकी सरकार, अपने राजनैतिक हितों के लिए, दुनिया की गरीबी मिटाने के नाम पर करोड़ों-अरबों की विदेशी सहायता भेजनेवाली अमरीकी सरकार, विश्व भर के प्राकृतिक खजानों को अपने कब्जे में रखकर और दुनिया के सर्वश्रेष्ठ क्षेत्रों में से एक क्षेत्र में रह कर सर्वाधिक सम्पन्नता का दावा करनेवाली अमरीकी जनता क्या अपने दो करोड़ काले नागरिकों के लिए कुछ भी नहीं कर सकती? यह एक सवाल है, जो डा० *किंग अपने पीछे छोड़ गये हैं।*

नीग्रो-गुलाम-प्रथा के अन्त की चारसौवीं जयन्ती डा० किंग के नेतृत्व में फ्लोरिडा में मनायी गयी। फ्लोरिडा पूरी तरह से रंगभेदवादी नगर है। वहाँ के सार्वजनिक स्थानों पर प्रेमाक्रमण करने और रंग-समन्वय करने के इस आयोजन को भी काफी सफलता मिली। सन् १९६५ में 'सेलमा-मार्च' भी अपने विशिष्ट प्रभावों और सफल परिणामों के लिए मशहूर हुआ। इस मार्च में भी डा० किंग पर हमला किया गया था और उन्हें गिरफ्तार किया गया था। डा० किंग ने सन् १९६६ में मिसिसिपी राज्य के कुक्लक्स क्लान नाम की रंगभेदवादी जमात की बस्तियों में प्रदर्शन किये, जहाँ तीन 'स्वातंत्र्य-सैनिक' मारे गये। डा० किंग की अन्तिम जेलयात्रा पिछले वर्ष अक्टूबर में हुई थी। *और इस वर्ष वे नीग्रो-समाज को आर्थिक* दुर्दशा के सुधार के लिए वाशिंगटन-मार्च की योजना बना रहे थे।

जिसने बन्दूक ईजाद की, उसने शायद ही सोचा हो कि उसकी बन्दूक का इस्तेमाल लिंकन, गांधी, केनेडी और किंग को मारने के लिए किया जायगा। *काश! किसीको* बन्दूक बनाना ही न आया होता।●

उठे, मशाल दूर छिटक गयी और मुक्ति की उस प्रतिमा की आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली और बह-बहकर डा० किंग की लाश को नहलाने लगी, गंगाजल की तरह अश्रुजल का अन्तिम और पवित्र स्नान।

पिस्तौल की जो गोली गांधीजी के सीने का खून पीने के बाद तृप्त नहीं हुई, वह डाक्टर किंग का खून पीकर सन्तुष्ट हो जायगी और फिर, दुनिया मे यह कुकृत्य सदा-सदा के लिए बन्द हो जायगा, इसमे शंका है। लेकिन जो पशुता गांधीजी की हत्या करके भी उन्हें दुनिया के करोड़ों लोगों के दिलो से नही निकाल सकी, वह पशुता डा० किंग की सिर्फ ३९ साल की कच्ची उम्र को चबाकर भी मनुष्य होने के नाते मनुष्य की आजादी और समानता की माँग को खत्म नही कर सकेगी, मनुष्यता को धरती से नही मिटा सकेगी, हर्गिज नही।

महामानवों के रक्त से सीची जा रही मानवता की पौद एक-न-एक दिन सम्पूर्ण धरती पर शीतल छाँह फैलायेगी, और इस पशुता का, हिंसा का अन्त होकर रहेगा।

श्रद्धांजलि

एक और गांधी की हत्या

उस दिन भी अहिंसा के हत्यारे ने गोली दागी थी और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी शहीद हुए थे।

अहिंसा के हत्यारे ने फिर गोली दागी और, राष्ट्रपति केनेडी शहीद हुए।

इस बार की गोली गांधी के महान् शिष्य मार्टिन लूथर किंग के कपाल को फाड़ती हुई निकल गयी।

ईसा से लेकर लिंकन, गांधी, केनेडी और अब किंग को सामने खड़ी अकाल मौत को गले लगाना पड़ा।

परन्तु अहिंसा का मार्ग खत्म नहीं हुआ, वह और भी पक्का हो गया। डा० किंग की पत्नी श्रीमती किंग उस मार्ग पर लाखों लोगों के साथ आगे बढ़ रही हैं। उन्हें परमात्मा मे पूरा विश्वास है।

सन् १९६३ के अगस्त महीने मे दो लाख लोगो का वह विराट् ऐतिहासिक जुलूस क्या कभी भुलाया जा सकता है, जो वाशिंगटन की सड़कों पर मार्च करता लिंकन की समाधि पर पहुँचा था! जहाँ अमरीकी समाज से डा० किंग ने कहा था,

'वह दिन आयेगा जब कि पुराने गुलामों की औलाद और पुराने गुलाम मालिको की औलाद आपस मे मिलेंगी और एक मेज पर भाईचारे के साथ बैठ सकेंगी।'

कोई देश किसी बात मे नेकनाम होता है तो कोई बदनाम भी होता है। अमरीका संसार मे सबसे धनी देश है। परन्तु उसने दो बातों मे बदनामी हासिल की है। पहली बात तो यह है कि उसने वियतनाम में बमबारी की और दूसरी बात है कि उसने इनसान-इनसान के बीच फरक पैदा कर दिया—यह काला है, यह गोरा है। चमडी के रंग मे अन्तर हो जाने से क्या आदमी आदमी नही रहता? गोरों ने कालों पर जानवरों के जैसा, बल्कि उससे भी गिरा हुआ बरताव तथा अत्याचार किया। आज भी वह खत्म नही हुआ है। लेकिन हिंसा के मुकाबले गांधी की अहिंसा को खड़ा करनेवाला दलितों-पीड़ितों की आजादी का अलंबरदार नीग्रो नेता डा० किंग खत्म हो गया। लेकिन उनका सपना कि नीग्रो और श्वेत जनता के बीच समानता कायम हो, हर क्षेत्र मे हम बराबरी से हाथ मिलायें, कभी खत्म नही होगा, वह पूरा होकर रहेगा। उनका यह सन्देश कि गुलामी से मुक्ति पाने का मार्ग हिंसा नही, वरन् अहिंसा है, अमर है।

महात्मा गांधी नही हैं, लेकिन यह देश है। इस देश मे कभी अछूत समझे जानेवाले, बुरी नजर से देखे जानेवाले लोग आज भी हैं। बापू ने उन्हे 'हरिजन' कहा और सबने माना कि उन्हे भी जीने का समान अधिकार है। अछूतों के लिए बापू ने बड़े-से-बड़े कष्ट सहे और उनके रास्ते के अंगारों को फूलों मे बदल दिया। मगर अभी भी हमारे हरिजन भाई दुःख और अपमान का जीवन जी रहे हैं।

उसी प्रकार अमरीका मे नीग्रो लोगों के साथ दमन-उत्पीड़न का बरताव चल रहा है। डा० किंग अब नही रहे, लेकिन नीग्रो जाति के लिए जो कुछ भी उन्होंने किया, उसने सारे संसार में प्रकाश फैला दिया। उन्होने बता दिया कि समान नागरिक-अधिकारो के लिए किस प्रकार शान्तिपूर्ण तरीके से लड़ा जा सकता है और किस प्रकार सत्याग्रह से बढ़कर दूसरा कोई हथियार नही है।

एक सूट-बूटधारी गोरे ने अमरीका के मेमफिस नगर में उन पर मोटर मे से गोली चला दी। वे मकान के छज्जे पर खड़े थे। हत्यारा भाग गया। वह अभी तक पकड़ा नही गया है।→

आजादी की राह पर

डा० मार्टिन लूथर किंग गोरी जाति द्वारा कुचली रौंदी गयी काली जाति के नेता थे। दरअसल वे नीग्रो गांधी थे।

कितना बड़ा देश है अमेरिका। किसी चीज की कमी वहाँ नहीं। लेकिन वहाँ के लोग ऐसे हैं जो कि केवल अपने ही सुख के लिए जीना चाहते हैं। अपनी आजादी को ही आजादी समझते हैं। एक आदमी से इतना डर गये कि उसको उन्होंने खत्म ही कर डाला। भला बताइये गोली मार मारकर क्या संसार से सच्चाई के रास्ते पर चलकर भलाई और प्रेम करने वाले खत्म किये जा सकते हैं?

डा० किंग के शव का जो जुलूस निकला उसमें संसार भर के देशों के प्रतिनिधि शामिल हुए। अमेरिका के बड़े बड़े लोग ऊँची जातवाले गोरी चमड़ीवाले क्या गोरे क्या काले सभी सिर झुकाये हुए थे। किसानों की गाड़ी थी जिस पर उनका शव ले जाया जा रहा था। दो खच्चर गाड़ी खींच रहे थे। गरीबों को सम्मान के साथ रोजी रोटी दिलाने और गरीबी मिटाने के लिए वे खच्चर-गाड़ियों का प्रदर्शन करनेवाले थे।

डा० किंग के शव को अतलान्ता नगर में कब्र में दफना दिया गया। वहीं पास में उनके दादा की भी कब्र थी। डा० किंग जीवन भर आजादी के लिए लड़े। उनकी कब्र पर लिखा गया— हे परमात्मा! आखिर मुझे आजादी मिल गयी भगवन् तुम्हें धन्यवाद

वे अपने पीछे दो प्यारे बच्चे और दो सलोनी बच्चियां छोड़ गये हैं। और छोड़ गये हैं अपनी ही तरह बहादुर अपनी ही तरह गरीबों के हकों के लिए लड़ने के कुरबान होनेवाली साहसी

सन् १९५९ में वे गांधी के सपनों का भारत देखने के लिए आये थे। उन्होंने केवल ३९ वर्ष की उमर पायी। चार साल पहले उन्हें नोबेल शान्ति-पुरस्कार प्रदान किया गया था। हिन्दी में उनकी बड़ी मशहूर किताब है आजादी की मंजिल जिसको पढ़कर हृदय रो पड़ता है।

हमें गाँव गाँव से छूत-अछूत ऊँच-नीच और जात-पांत की भावना को मिटाकर गांधी के महान् अनुयायी डा० किंग को सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित करनी चाहिए।

—प्रभु

पत्नी। सौंप गये हैं वे एक अधूरा रास्ता एक बड़ा मिशन जिस पर तमाम दुनिया की आजादी के दीवानों को हमें व आपको सबको चलना है चलते रहना है।

डा० रेवरेन्ड मार्टिन लूथर किंग का जन्म अतलान्ता (जार्जिया) में १५ जनवरी सन् १९२९ को हुआ था। आपने बोस्टन विश्वविद्यालय से दर्शनशास्त्र में पीएच० डी० की उपाधि हासिल की थी। आप एक पादरी थे। आपका नारा था— दुनिया में रंग भेद जाति भेद खत्म करो आने का अधिकार सभी को है।
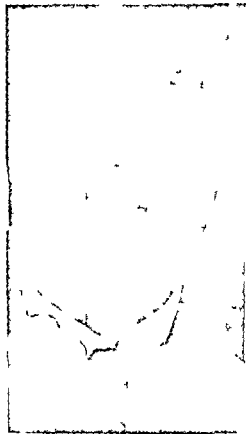
मेरा एक सपना है कि मिसिसिपी में अलाबामा में जार्जिया में एक दिन छोटे नीग्रो लड़के और लड़कियां छोटे गोरे लड़कों और लड़कियों के साथ हाथ में हाथ लेकर भाई-बहन जैसे रह सकेंगे।

—मार्टिन लूथर किंग

२८ अगस्त १९६३

कहाँ है कानून, कहाँ है सरकार, कहाँ है धर्म, कहाँ है मनुष्यता ?

१६ साल का नवयुवक। पिता मर चुका। अकेली माँ और उसका एकलौता बेटा—उसके जीवन का सहारा।

लड़के के हाथ पीछे पीठ पर बाँध दिये गये। उसके बाद वह एक खम्भे से बाँधा गया। लगातार डेढ़ घंटे तक उसके ऊपर डंडे बरसते रहे। वह पीड़ा मे कराहता रहा। लोग खड़े तमाशा देखते रहे। देखते ही नही, खुश भी होते रहे। लड़का चिल्लाता था, और बेबस माँ रोती थी, सिर धुनती थी, छाती पीटती थी। तमाशा देखनेवालो मे एक भी नही था, जो पास जाता और कुछ कहता।

कहने को बात तो दूर, एक ने दियासलाई जलायी और लड़के की कमीज मे आग लगाने की कोशिश की। कपडे ने आग नही पकडी तो एक युवक दौड़कर एक डिब्बा मिट्टी का तेल लाया। पूरा तेल उसके शरीर पर छिड़क दिया गया। तीन आदमियो ने तीन दियासलाइयाँ जलायी और तीन तरफ से लड़के की कमीज और नेकर मे आग लगायी। कपड़ो से लपटे उठने लगी। लड़का जल-जलकर छटपटाता रहा, पुकार लगाता रहा अब भी कोई नजदीक नही गया। उठती लपटो से लड़के को बाँधनेवाली रस्सियाँ जलकर टूट गयीं। तब तक लड़का बुरी तरह जल गया था। शरीर पर एक सूत नही, बिलकुल नंगा था। लोग चारो ओर खड़े नाटक के बदलते दृश्य देखते रहे।

लड़का घायल, जला, नंगा, किसी तरह भागकर लगभग सौ गज दूर सड़क पर पहुँचा। वहाँ से एक फर्लांग दूर एक डाक्टर की दुकान पर गया। डाक्टर ने यह कहकर भगा दिया कि सरकारी अस्पताल मे या पुलिस मे जाओ।

गाँव के बाहर का एक रिक्शावाला था। उसने उसे पुलिस के थाने मे पहुँचाया। इतमीनान के साथ पुलिसवालो ने रिपोर्ट लिखी और उसे सरकारी अस्पताल भेजा, जो वहाँ से १२ मील दूर था। अस्पताल मे वह पूरे १८ घंटे पडा रहा, न डाक्टर ने देखा, न दवा मिली। यों ही पड़ा छटपटाता रहा। अन्त में वहाँ से ३० मील पर विजयवाड़ा अस्पताल भेजा गया, जहाँ मृत्यु ने कृपा की और वह इस जीवन की यातना से मुक्त हुआ।

मनुष्य बर्बरता मे कहाँ तक पहुँच सकता है, इसका अन्दाज इससे लगेगा कि जब लडके पर मार पड़ रही थी तो उसकी जेब मे कुछ रुपये थे। जो तीन व्यक्ति उसे मार रहे थे, उन्होंने रुपये निकाले, नजदीक की शराब की दुकान पर गये, खूब पी, और लौटकर फिर मारना शुरू किया। अन्त में इन्ही तीनों ने लड़के की कमीज मे आग भी लगायी।

आन्ध्र के कंचिकचेरला नाम के जिस गाँव मे यह घटना हुई, वह विजयवाडा के बड़े शहर से केवल २० मील दूर है। 'नेशनल हाई वे' पर है, और १० हजार की जनसंख्या है। आमदनी के कारण कंचिकचेरला बड़ी पंचायतों मे से एक है, और वही पंचायत समिति का कार्यालय भी है। गुन्टूर के बाद यह तम्बाकू की सबसे बड़ी मंडी है। एक एकड़ से तम्बाकू का किसान दस हजार रुपये तक कमा लेता है। अधिकाश भूमि कम्मा जाति के लोगो के हाथ मे है। गाँव मे एक हाईस्कूल भी है, और लोगो के पास रेडियो और ट्राजिस्टर तो कितने ही हैं। गाँव मे पाँच मन्दिर हैं, और तीन जगह महात्मा गाधी, नेहरूजी और श्री रंगा की मूर्तियाँ खडी हैं। आखिर वह अपराध क्या था, जिसके लिए इस लड़के को यह दण्ड दिया गया? कहा जाता है कि फरवरी मे उसने एक जोडी चप्पल चुरायी थी। इस पर लोगों ने उसे तम्बाकू के गोदाम मे बन्द कर दिया था जहाँ से वह खिडकी के रास्ते कूद कर भाग निकला। बाद को उसने पीतल के दो जग और गिलास चुराये, जिन्हें बाजार के होटलवाले के हाथ डेढ़ रुपये मे बेचा। बर्तन एक पचपन वर्ष की धनी कम्मा महिला के थे, जिसके पास तम्बाकू के ४० एकड खेत हैं, जिनसे लगभग ४ लाख की सालाना आमदनी होती होगी। इसी महिला ने २४ फरवरी को, पड़ोसी के लड़के के बताने पर इस लड़के को पकडवाया, हाथ बँधवाया, पिटवाया, और चोरी कबूल करवायी। उसके बाद वह औरत होटलवाले के यहाँ गयी और पीतल के बर्तन बरामद किये। बर्तन मिल जाने पर वह लडके को वापस ले गयी, अपने घर के पीछे एक खम्भे में बँधवाया, और दण्डे लगवाने शुरू किये। इस कोशिश

मे कि वह गाँव में हुई दूसरी चोरियों को भी कबूल कर दे। उन्हीं के कहने पर लड़के की कमीज में आग भी लगायी गयी।

कोटय्या (मरनेवाले लड़के का नाम) हरिजन खेतिहर मजदूर था। उस गाँव का भी नहीं था, दो मील दूर दूसरे गाँव का था। कंचिकचेरला में जहाँ यह भयंकर कांड हुआ, कांग्रेस और कम्युनिस्ट की पुरानी दुश्मनी है। गाँव के कम्मा और कापू जाति के लोग कांग्रेसी हैं और १६०० हरिजन कम्युनिस्ट हैं।

अब पता चल रहा है कि तम्बाकू के इस क्षेत्र में इस तरह की बर्बरतापूर्ण घटनाएँ अक्सर होती हैं। पुलिस के अधिकारी परेशान हैं। उनका कहना है, और उनका कहना ठीक भी है कि पंचायतें तम्बाकू के धनी किसानों और व्यापारियों के हाथ में हैं, और वे खुलकर 'न्याय' के नाम में अपने अधिकार का दुरुपयोग करते हैं।

जाति, धन अधिकार, शराब—इनमें से एक का ही नशा काफी है, पर जहाँ चारों मिल जायँ, वहाँ दिमाग कैसे सही रह सकता है? अगर समाज की पुरानी बुनियादें न बदलें, और उन्हीं बुनियादों पर दलबन्दी की राजनीति चलायी जाय, विकास के नाम में शोषण के कार्यक्रम चलाये जायँ, और लोकतन्त्र के नाते गाँव के प्रभावशाली लोगों के हाथ में अधिकार दिये जायँ, तो जुल्म के सिवाय दूसरा क्या होगा?

जुल्म समाज की सारी रचना में ही घुसा हुआ है। अहिंसक क्रान्ति की सात्त्विक आग में तपकर ही भारतीय जीवन का सोना निखरेगा, चमकेगा। पाप में पुण्य का पैबन्द लगाते रहने से काम नहीं चलेगा।●

ग्राम-गीत

गाँव गाँव का ग्रामदान भैया जिस दिन हो जायेगा
गांधी के सपनों का भारत, बस उसी रोज बन जायेगा।
रामराज की गाँव गाँव में, गंगा बहती आयेगी
उसी रोज यह अपनी धरती, स्वर्गलोक बन जायेगी।
धनी और निर्धन का उस दिन, भेद मात्र भी नहीं रहेगा
प्रेम और भाईचारे का, गाँव-गाँव में फूल खिलेगा।
जुल्म न रह जाये जीवन में, हम ऐसा अभियान करेंगे
बाबा के पथ पर चल कर, हम गाँवों का उत्थान करेंगे।

—प्रो॰ सलिल

क्या काला, क्या गोरा
आदमी तो आखिर आदमी है!

'मिस्टर, अब आप तीसरे दर्जे के डिब्बे में जाकर बैठें तो अच्छा।' टिकट चेकर ने कहा।

'मिहरबान, मैंने भी पहले दर्जे का टिकट खरीदा है और जगह सुरक्षित कर ली है। भला मैं क्यों तीसरे दर्जे के डिब्बे में चला जाऊँ?' गांधीजी ने कहा।

"काला आदमी गोरे आदमी के डिब्बे में सफर नहीं कर सकता, चाहे किसी दर्जे का उसका टिकट क्यों न हो?" टिकट चेकर ने कहा।

गांधीजी ने डटकर कहा, 'मैं यहाँ से अपने आप हर्गिज नहीं हटूँगा। फिर आप चाहे जो करें।'

फिर क्या था? आज तक इस तरह गोरे की आज्ञा मानने से किसीने इनकार नहीं किया था। पुलिस बुलायी गयी। गांधीजी खुद डिब्बे से निकलने से इनकार करते थे, इसलिए पुलिसवालों ने उन्हें घसीटकर बाहर निकाला। उनका सामान-असबाब भी निकाल कर फेंक दिया गया।

चार्ल्स टाउन जाते समय घोड़ागाड़ी में भी ऐसा ही बुरा अनुभव हुआ। जोहान्सबर्ग में भी इसी तरह अपमानित होना पड़ा। इनसान से इनसान ही इस तरह गैर इनसानी बर्ताव करे, यह गांधीजी की कल्पना के बाहर की बात थी।

यह हालत बदलनी होगी। लेकिन कैसे बदली जायगी? गरीब और दलित अन्याय का सामना किस बल पर कर सकेंगे? कोई-न-कोई रास्ता ढूँढ़ निकालना ही होगा। इस तरह इनसानियत खोकर जीना भला क्या जीना है? वे सोचते थे कि भले ही चमड़ी का रंग काला, पीला या सफेद हो, लेकिन आखिर आदमी तो आदमी है। उसको इज्जत के साथ रहने का मौका मिलना ही चाहिए।●

गाँव में महिला-उत्थान की समस्या

मिथिला के गाँवों मे घूमते समय उधर की बहनों के प्रेम-भरे स्वभाव और सौम्यता का अनुभव बराबर मिलता रहता है। लेकिन समाज को उसका कोई लाभ नही मिलता है और न बच्चो को। गाँव का पारिवारिक जीवन टूटता जा रहा है और गाँव के बच्चे आवारा-सा हो रहे हैं। जैसे ये माँ की गोद से अलग होते हैं, वैसे-वैसे ये गाँव मे झुण्ड-के-झुण्ड घूमने लगते हैं। जब भूख लगी तो घर मे आकर खाना खाया और खाकर फिर बाहर भाग गये। घर मे उनके लिए कुछ भी रोचकता नही रहती है। माँ-बच्चे का आपसी सम्पर्क बच्चो को खिलाने-पिलाने और कपडे पहनाने तक ही सीमित रहता है।

दुनिया भर मे यह समझा जाता है कि देश की सभ्यता और संस्कृति को बनाये रखना और बच्चो को अच्छे-अच्छे संस्कार देना माताओं की ही जिम्मेवारी है। माँ की लोरियो के द्वारा बच्चों की तोतली बोली मे मिठास आती है। बच्चे खुद उन गीतों को दोहराने लगते हैं। उस उम्र मे बच्चे बहुत जल्दी-जल्दी सीखते हैं और उनके जीवन पर उस समय के वातावरण का बहुत गहरा प्रभाव पडता है।

जिन गाँवो में स्त्रियाँ अनपढ़ हैं और परदे मे रहती हैं, वहाँ स्त्री-पुरुष के बीच अनेक तरह की न होने लायक बातें होती रहती हैं। अच्छे सम्बन्धों का सिलसिला टूटने का असर हमारे विवाह-सम्बन्धों पर भी पड़ रहा है।

स्त्री-जाति के लिए दहेज की प्रथा से ज्यादा अपमानजनक रिवाज क्या हो सकता है? लेकिन आजकल के विवाह-सम्बन्धों की मुख्य चीज सम्पत्ति, जायदाद और दहेज ही रह गया है। दुलहिन का आदरभाव उसके शील और चरित्र के आधार पर नहीं होता, उसके मायके से मिले दहेज के अनुसार होता है। इससे पति-पत्नी के सम्बन्ध शुरू से ही भौतिक (यानी शारीरिक) बन जाते हैं।

ऐसी हालत में गाँव की स्त्रियों को जगाकर पारिवारिक और राष्ट्रीय जीवन मे उनके प्रेम और सौम्यता का सदुपयोग कैसे किया जाय, यह देश के भविष्य के लिए एक मुख्य समस्या है। बिहार मे जिलादान और प्रान्तदान के बढ़ते हुए कदमों के साथ इस समस्या पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

—सरलादेवी

कौआकोल प्रखण्ड में निर्माण-कार्य

गाँवों में पूँजी-निर्माण तथा किसानों-मजदूरों के बीच की खाई पाटने के तरीकों की खोज व प्रयोग।

श्री जयप्रकाश नारायणजी द्वारा स्थापित ग्राम-निर्माण मंडल, सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा (गया) मे इस वर्ष प्रति एकड ६० मन २० सेर मेक्सिकन प्रकार का लरमारोहो गेहूँ पैदा किया गया। वर्तमान बाजार-दर से गेहूँ और भूसे की कीमत २,७२० रुपये हुई, जब कि कुल लागत-खर्च ७५० रुपये मात्र हुआ। इस प्रकार प्रति एकड १,९७० रुपये की बचत हुई।

यहाँ की भूमि जंगल के किनारे ऊँची जगह पर है। आज से १२ साल पूर्व यह जमीन अत्यधिक ऊँची-नीची और झाडीदार जंगल से ढँकी थी, बंजर थी, जिसे तोडकर खेत बनाये गये और अब यहाँ खेती की जा रही है।

इस इलाके मे खेती मे अधिक-से-अधिक उत्पादन और अधिक-से-अधिक गाँवों मे पूँजी-निर्माण तथा किसानों एवं मजदूरो के बीच की खाई पाटने के तरीको की खोज और प्रयोग हो रहे हैं। इस वर्ष ग्राम-निर्माण मंडल की योजना है कि कौआकोल प्रखण्ड मे दो हजार किसानो के बीच विकसित तरीके से खेती का विस्तार किया जाय। इसके लिए मंडल 'आक्सफेम' नामक संस्था की सहायता से पानी, खाद, बीज, दवा और खेती की जानकारी देने की व्यवस्था कर रहा है। कौआकोल गया जिले का पहला प्रखण्डदान है। ग्राम-निर्माण मंडल का मुख्य कार्यालय सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा इसी प्रखण्ड मे है।

सर्वोदय आश्रम, —त्रिपुरारिशरण
सोखोदेवरा, गया मंत्री

समस्याओं में उलझे गाँव
और
गरीबी में जकड़े ग्रामीण

[पाठकों को याद होगा कि चार लोकयात्री बहन मध्य प्रदेश के पिछड़े हुए जिले—सरगुजा, के गाँवों में पदयात्रा कर रही हैं। पिछले अंक में लोकयात्रियों की डायरी में आपने पढ़ा था, 'सुसभ्य आदिवासी क्षेत्र में।' इस अंक में पढ़े—उस क्षेत्र की गरीबी का हाल और उसमें जी रहे बेहाल लोगों की छिट पुट बातें। —सं०]

● एक दिन रास्ते में देखा कि एक दस-बारह साल का लड़का लकड़ी का बोझ उठाकर शहर की ओर जा रहा था। साथ में बहनें भी थीं। किसीके हाथ में दातौन तो किसीके हाथ में पत्ता। एक छोटे लड़के के कंधे पर ज्यादा वजन का भार देखकर हममें से एक ने पूछा कि "कहाँ जा रहे हो? इसको बेचने में कितने पैसे मिलेंगे? घर पे कोई बड़े नहीं हैं क्या?" जवाब मिला, 'पिताजी नहीं हैं, अम्बिकापुर शहर जा रहे हैं, एक रुपया या उससे कुछ कम मिलेगा।

● पुरुष हो या स्त्री हो, कभी-कभी वे अपनी दुःख की बात बताने हमारे पास आते हैं। एक दिन चार-पाँच बहनें नजदीक आयीं और कहने लगीं— आप लोगों ने प्रेम का परिवार बनाने को कहा है लेकिन कौन सुनेगा? जमीन कौन देगा? हम न काम मिलता है न धंधा। और अगर काम मिलता भी है तो पूरी मजदूरी कहाँ मिलती है? खाना नहीं, कपड़ा नहीं और रहने का मकान नहीं। जिसकी जमीन पर घर बनाकर रह रहे हैं, वे कहते हैं कि घर उठाकर ले जा, नहीं तो तोड़ दूँगा। इतने बाल-बच्चों के साथ कैसे जीयें? हमको गोली से मार डाले तो अच्छा है, खुद मरें भी कैसे?" बोलते-बोलते उनकी आँखों से आँसू बह निकले। बेचारी वेदना को दबा न सकीं।

● आम सभा के बाद गोष्ठी में ग्राम-परिवार, ग्राम-स्वराज्य की काफी चर्चा होती है। स्वामित्व विसर्जन, बीसवाँ हिस्सा भूमिहीनों को देना, ग्रामसभा बनाना और गाँवकी सामूहिक पूँजी अथवा राम कोठी बनाना, इन चार बातों में से पहली दोनों बातों को छोड़कर राम कोठी बनाने में और ग्रामसभा बनाने में धनी लोगों का ज्यादा उत्साह देखा जाता है। उन्हें इस तरह तृष्णा-त्याग की बात को भूलते देखकर अनेक बार लगता है कि अगर ये लोग परिस्थिति के अनुकूल होकर नहीं चलेंगे तो दुःखितों के आँसू कभी-न-कभी अंगार बन जायेंगे। पेट की जो आग अभी ठंडे आँसू के रूप में निकली है, आगे कभी वह शोला बनकर भड़क सकती है।

● एक दिन हम शिक्षक और विद्यार्थियों के आग्रह से एक प्राथमिक शाला देखने गयीं। बच्चे उस शाला के बगीचे में काम करते हैं और उसके फल का उपभोग भी बच्चे ही करते हैं। जब थोड़ा ज्यादा पैदा होता है, तब उस पैसे से गरीब बच्चों की मदद भी देते हैं। बच्चों के साथ हमने बात-चीत शुरू की। बच्चों से पूछा, "हमारे देश का नाम क्या है?" जवाब मिला "सरगुजा"। प्राथमिक शाला के बच्चे अपने देश का नाम बता नहीं सके। फिर बातचीत के दौरान पड़ोसी देश का नाम भी पूछा गया। उस गाँव के पास 'कठी' नाम का एक गाँव था। बच्चों ने जवाब दिया "पड़ोसी देश का नाम कठी।"

● होली में दो दिन हमारा पड़ाव एक गाँव में था। खूब शराब पीनेवाले लोग हैं, होली के समय शराब पीकर लोग मतवाले होंगे इसलिए कार्यकर्ता उस गाँव में पड़ाव रखने में हिचकिचा रहे थे। लेकिन हमारा पूर्ण विश्वास था और श्रद्धा थी कि पूरे गाँव के लोग कभी ऐसा नहीं कर सकते हैं। आखिर उन दो दिनों में न तो हमें शराब पीकर मतवाले होने वाले लोग दिखाई दिये, न अश्लील बकवास करनेवाले मिले। होली के रंग में रंगे हुए लोग भगवान का भजन-कीर्तन करके गाँव में घूमे, और श्रद्धा भक्ति से यात्रियों के चरणों में अबीर चढ़ाकर प्रणाम किया।

—लक्ष्मी

लदनिया की ललकार

"ग्रामस्वराज्य को साकार करने के लिए विभिन्न प्रकार के संगठन खड़े करने होंगे। जो संगठन अभी हैं, उन्हें इस दिशा में मोड़ने की जरूरत है। युवक-संगठन सबल बनाने का मैंने बीड़ा उठाया है।" लदनिया (दरभंगा) के संगठक श्री पलटन आजाद ने मेरे कन्धे पर हाथ रखकर कहा। उनकी वाणी मे आत्म-विश्वास के साथ ही एक ललकार भी थी।

इस प्रखण्ड की कुल आबादी सत्तर हजार है, और भूमि का कुल रकबा उनसठ हजार एकड़ है, जिसमे से आधी भूमि प्रखण्ड के बाहरवालो की है। उद्योग की दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ क्षेत्र है।

दरभंगा के जिलदान के बाद हो रही लगातार कोशिशों के कारण अब हर गाँव ग्रामदान की बुनियाद बन रहा है। पदयात्रा, गोष्ठी, सभा, शिविर आदि कार्यक्रमों के मार्फत स्थानीय नेतृत्व पैदा करने का प्रयास हो रहा है। लोकशक्ति प्रकट करने के लिए अप्रैल के अन्त मे प्रखण्ड-सेवक आचार्य राममूर्ति के मार्गदर्शन मे तीन दिनो का एक शिविर होने जा रहा है, जिसमे हर गाँव से दो-तीन नौजवान, ग्रामसभाओ के अध्यक्ष-मंत्री, अपना-अपना राशन लेकर शामिल होनेवाले हैं। आजादजी का कहना है कि "जब तक गाँव-गाँव मे सेवा और समर्पण की भावना लेकर नौजवान नही निकलेंगे, तब तक ग्रामस्वराज्य की दिशा मे कोई काम नही होगा। ग्रामदान आन्दोलन को जन-आन्दोलन बनाने का तरीका क्या होगा, यह प्रश्न बहुत महत्व का है।"

बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ ने निश्चित ग्रामदान-आन्दोलन को जितना सहारा दिया है, उतना भारत के अन्य प्रान्तो मे किसी संस्था ने नही दिया है। यहाँ खादीवाले-सर्वोदयवाले दोनों एक हो गये हैं।

"आप लोगो मे बुराइयाँ हैं, मगर अन्य दलों या संस्थाओ से कम", ऐसा जनता के मुँह से कम सुनते हैं। अब इस आन्दोलन को जनता अपने कन्धों पर उठा ले, यही कोशिश यहाँ चल रही है।

इस प्रखण्ड के गाँव-गाँव मे ग्रामसभा का गठन कर सारा कार्य उन्हे सौप दिया गया है। अच्छी ठोस ग्रामसभाएँ बनी हैं। सभी वर्गों और जातियो में से अध्यक्ष-मंत्री आये हैं, जैसे पदमा के श्री वंकरदास और चन्द्रशेखर झा, नायपट्टी के महम्मद ईशाक और सत्यनारायण सिंह, मिर्जापुर के हाफीज़ अहमद हनीफ़ और रामचन्द्र।

अभी ग्रामदान-पुष्टि-अभियान जारी है, पंडित उग्रनाथजी के सुयोग्य नेतृत्व मे लगभग तीस कार्यकर्ता प्रखंडभर में लगे हुए हैं। पुष्टि-कार्य ग्रामसभाओ द्वारा नहीं हो सका, यह हम लोगो की कमजोरी है। शिविर चलाकर ग्रामसभाओ वी सेवक-समितियो को अधिक कुशल और क्षमतावान बनाने की कोशिश हो रही है।

धरमबन, भुतहा, चिकलोटवा, महुथा हर जगह रात को हम कीर्तन-सभा कर गाँव के विभिन्न दलों और दिलों वो जोड़ने का प्रयास करते आये। एक तरफ सिघप के शर्माजी हमें अपने घर से जाने नही दे रहे थे, और पुन: आने की प्रतिज्ञा करवा कर छोडे, तो दूसरी तरफ, चिकलोटवा मे सतुआ खाकर सो जाना पड़ा। धरमबन के सुखदेव मंडल हाथी पालते हैं, घर मे दो चार डकैती हुई है, हमे शुरू मे टिकने नही दिया। लेकिन हमने उपवास किया, तो उन्होंने कहा "मैं भी नही खाऊँगा।" आखिर में उनका प्रेम उमड़ ही पड़ा।

—जगदीश थवानी

'गाँव की बात' : वार्षिक चंदा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा-संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित।

अखिल बिहार आचार्यकुल : उद्गम एवं विकास

बुनियादी शिक्षा के कर्णधार राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन जब पिछले साल आचार्य विनोबा से मिले तब और समस्याओं के अतिरिक्त शिक्षा एवं शिक्षकों की समस्याओं पर भी चर्चा की। अध्यापकों की वर्तमान दुरवस्था से दुखी होकर राष्ट्रपति ने आचार्य विनोबा से इस दिशा में मार्गदर्शन की अपेक्षा की। विनोबाजी ने उसे सहर्ष स्वीकार किया। बिहार के तत्कालीन शिक्षा-मंत्री श्री कर्पूरी ठाकुर ने इसको सुअवसर मान विगत ७-८ दिसम्बर '६७ को पूसा रोड में विनोबाजी के सान्निध्य में बिहार के सभी विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों, प्राचार्यों एवं प्रमुख शिक्षाविशारदों की एक विद्वत् परिषद् का आयोजन किया। केन्द्रीय शिक्षा-मंत्री श्री त्रिगुण सेन ने परिषद् का उद्घाटन किया। परिषद् को श्री जयप्रकाश नारायण एवं श्री धीरेन्द्र मजूमदार का भी मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

गुरु की हैसियत

विनोबाजी ने शिक्षकों को उनके कर्तव्य के प्रति उद्बोधन करते हुए उनकी स्वतंत्र शक्ति खड़ी करने के लिए कृतसंकल्प होने की प्रेरणा दी। उन्होंने बताया कि शिक्षा-शास्त्र पर संस्कृत भाषा में जितने ग्रन्थ हैं उन सब में शिरोमणि ग्रंथ है पतंजलि का 'योग शास्त्र'। उसमें शिक्षा के विषय में मानस और अतिमानस, दोनों दृष्टि से विचार किया गया है। 'साइकोलोजिकली' सोचना शिक्षा के लिए बहुत जरूरी होता है। वृत्तियों के अनुकूल कैसे बरता जाय और वृत्तियों से परे कैसे हुआ जाय, ये दोनों बातें उसमें बतायी हैं। परमात्मा को पिता एवं माता के रूप में तो देखा ही जाता है, परन्तु पतंजलि ने परमात्मा को गुरु के रूप में देखा है। परमात्मा परम गुरु है। वह शिक्षा देता है। हमको उसका अनुकरण करके सीखना है, सिखाना है। गुरु अत्यन्त तटस्थ होकर सिखाता है। वह कोई चीज लादता नहीं। आप सारे लोग गुरु की हैसियत रखते हैं। यह बहुत बड़ी बात है।

शिक्षा-विभाग की स्वायत्तता

शिक्षकों के हाथ में सारे देश का मार्गदर्शन होना चाहिए, लेकिन आज वे 'गाइडेंस' खोये हुए हैं, और एक सामान्य नौकर की हैसियत में आ गये हैं। यह शिक्षा जगत् का दुर्भाग्य है कि जो स्वतंत्रता न्याय विभाग को है, उतनी भी स्वतंत्रता शिक्षा विभाग को नहीं है। न्याय विभाग की सरकार से ऊपर एक स्वतन्त्र हस्ती है। वह सरकार के खिलाफ भी फैसला दे सकती है और उस फैसले का अमल उसे करना पड़ता है। यह न्याय विभाग का प्रतिष्ठा आप देखते हैं। यद्यपि उनको तनख्वाह सरकार की ओर से मिलती है, लेकिन वे सरकार के मातहत नहीं हैं। वैसे ही शिक्षक को भी सरकार की ओर से तनख्वाह भले ही मिले, क्योंकि सरकार लोगों से ही लेकर देती है, लेकिन आपकी स्वतन्त्र हस्ती होनी चाहिए और आप देश के मार्गदर्शक हैं, ऐसा होना चाहिए।

राजनीति से मुक्त लोकनीति से युक्त

परन्तु शिक्षा विभाग की स्वायत्तता सच्चे अर्थ में उपलब्ध एवं कार्यान्वित करने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा सत्ता के पीछे न भागकर स्वयं अपनी स्वतंत्र शक्ति का विकास करे। इसलिए शिक्षकों को पक्ष एवं भेदभाव सत्ता एवं संघर्ष की कलुषित राजनीति से मुक्त होकर, संकीर्ण मतवादों से ऊपर उठकर विश्वव्यापक मानवीय राजनीति तथा जनशक्ति पर आधारित लोकनीति को अपनाना होगा। राजनीति से अलग हुए बिना राजनीति पर असर नहीं पड़ेगा। पहले राजनीति से अलग होना पड़ेगा। आज स्थिति ऐसी है कि इसकी किसीने कल्पना ही नहीं की कि 'पार्टी-पालिटिक्स' के बिना राजनीति हो सकती है।

आज 'डेलीगेटेड डिमोक्रेसी' है 'पार्टीसिपेटिंग डिमोक्रेसी' नहीं है। अगर शिक्षक ऐसा मानते हैं कि हमने स्कूल-कालेजों में पढ़ा दिया, अब हमारा कोई कर्तव्य नहीं है तो चलेगा नहीं। शिक्षकों का जनता से सम्पर्क होना चाहिए। जनता के साथ सम्पर्क न हो, तो राजनीति पर असर नहीं पड़ेगा।

शिक्षकों के गुण

शिक्षकों के जीवन में ज्ञानी की प्रज्ञा, सत का शील और माता की करुणा का सम्पुट चाहिए। शिक्षक के हृदय में विद्यार्थियों के प्रति प्रेम, अनुराग एवं वात्सल्य के साथ-साथ मुनियों की तरह निरन्तर अध्ययन अध्यापन अपेक्षित है। चाहे सत्य की साधना हो या मन शांति की, चाहे इन्द्रिय-दमन की साधना हो या अतिथि-सत्कार की, जीवन की हर साधना के साथ स्वाध्याय एवं प्रवचन का योग आवश्यक है। 'सत्य च स्वाध्याय प्रवचने च। शमश्च स्वाध्याय प्रवचने च। दमश्च स्वाध्याय प्रवचने च। अतिथिश्च स्वाध्याय प्रवचने च।' इस उत्कट ज्ञान पिपासा के साथ शिक्षकों के हृदय में करुणा की अखंड धारा बहती रहे, अन्यथा ज्ञान एवं विद्वत्ता शुष्क रहेगी। यही कारण है कि परम तत्त्वज्ञानी शंकराचार्य ने भगवान से प्रार्थना की थी कि 'भूत दया का विस्तार हो।' "अविनय मपनय विष्णु भूत दया विस्तारय संसार सागरा।" बुद्ध के हृदय में भी यही करुणा थी। इसी संदर्भ में विनोबाजी ने शिक्षकों का ध्यान भारतवर्ष में व्याप्त दुख-दारिद्र्य, कलह और फूट तथा नित्य प्रति बढ़ती हुई हिंसा की ओर खींचते हुए उन्हें इसके लिए अपना पुरुषार्थ और पराक्रम प्रकट करने को प्रेरित किया। माडर्न जर्मनी को शिक्षकों ने बनाया, ऐसा कहा जाता है। भारत को तो आचार्यों ने ही बनाया है। इसलिए शिक्षकों को शिक्षालयों के बाहर समाज के प्रति अपना दायित्व समझना चाहिए। इसीको विनोबाजी ने शिक्षा में अहिंसक क्रांति की संज्ञा दी।

अशांति शमन

पूसा रोड में [illegible] आये। वहाँ बिहार [illegible] कुलपति एवं प्रमुख [illegible] विद्यालयों के [illegible] हस्तक्षेप [illegible] कहा, "[illegible] [illegible]

काम करती है तो वह आचार्यों एवं शिक्षकों के लिए लांछन है। आचार्य, लोगों को विचार समझाते हैं, विचार-परिवर्तन करते है, हृदय-परिवर्तन करते है और जीवन-परिवर्तन की दिशा दिखाते हैं। इस प्रकार के परिवर्तन करनेवाली शिक्षकों की जमात पुलिस-विभाग की आवश्यकता भारत में रहने दे, यही लांछन है। भारत का नागरिक शान्ति से चलता है। अपने हक और कर्तव्यों पर जागरूक है। जो कुछ भी करता है, समझ-बूझकर करता है और पुलिस की जरूरत रहती नहीं। यदि समाज में कहीं अशांति हुई तो शिक्षक अपने विचार एवं नैतिक शक्ति द्वारा अशान्ति-शमन करें, ताकि सरकार की दण्ड-शक्ति को अशान्ति-दमन के लिए मौका ही न मिले। इस प्रकार भारत भर में दमन का अवसर ही न आये, सिर्फ शमन से काम हो। उसके लिए शिक्षकों को अशांति-शमन के लिए कृतसंकल्प होना चाहिए।"

अध्यापकों का संकल्प-पत्र

अध्यापकों को सर्वप्रथम अपनी स्वतन्त्र हस्ती का भान होना चाहिए और तटस्थ होकर देश की समस्याओं का मार्गदर्शन करना चाहिए। उन्हें यह घोषित कर देना होगा कि शिक्षक किसी दल-विशेष के बन्दी नहीं, किसी राजनीतिक पक्ष की कठपुतली नहीं और किसी सत्ता के आग्रही नहीं। इन्हीं उदार भावनाओं से प्रेरित होकर मुजफ्फरपुर के अध्यापकों ने एक संकल्प-पत्र बनाया एवं लगभग १५० अध्यापकों ने निष्ठापत्र पर हस्ताक्षर किये। पटना में भी इस निष्ठापत्र का विश्वविद्यालय के शिक्षाविदों ने स्वागत एवं समर्थन किया। फिर विनोबाजी मुंगेर कालेज में दस दिनों तक शिक्षकों के बीच रहे तो वहाँ के अध्यापकों ने अपने लिए एक विस्तृत कार्यक्रम तथा संगठन की रूपरेखा भी बनायी। वहाँ यह भी तय हुआ कि हर जिला इस संगठन की इकाई होगा, जिसमें प्राइमरी से लेकर विश्वविद्यालय-स्तर तक के सभी शिक्षक शामिल रहेंगे। हाँ, विश्वविद्यालय की विशेष समस्याओं पर विचार करने के लिए विश्वविद्यालय-स्तर पर भी इसकी एक कड़ी रहेगी।

आचार्यकुल की स्थापना

६-७ मार्च को जब विनोबाजी भागलपुर पधारे तो विद्वानों के साथ इसके संगठन एवं कार्यक्रमों के विषय में विस्तृत चर्चाएँ हुईं। वहीं अखिल बिहार आचार्यकुल नाम प्रकट हुआ। ८ मार्च को प्राचीन विक्रमशिला के समीप कहोल मुनि के नाम से प्रसिद्ध कहल-गाँव में "आचार्यकुल" की स्थापना की घोषणा विनोबाजी ने की। इस प्रकार शिक्षकों के जीवन-निर्माण की दिशा में एक नया आरोहण आरम्भ हुआ।

निवेदन

शिक्षकों की नैतिक प्रतिष्ठा बने और बढ़े एवं उनकी सामाजिक हैसियत का उन्नयन हो। न्याय-विभाग की भाँति शिक्षा-विभाग की स्वायत्तता सर्वमान्य हो। हिंसा-शक्ति की विरोधी और दंड-शक्ति से भिन्न लोक-शक्ति का निर्माण हो। विश्व-शांति के लिए आवश्यक वृत्ति एवं दृष्टिकोण बने तथा शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति का श्रीगणेश हो, ऐसे कुछ उद्देश्यों से आचार्यकुल का प्रारम्भ हुआ है। शिक्षकों से निवेदन है कि वे इन पर गहराई से विचार करें। युग की आवश्यकता और अपनी महत्ता महसूस कर अग्रणी बनें। अध्यापकों का संकल्प-पत्र भरें और साथ बैठ कर अपने कार्यक्रम तथा संयोजन के बारे में सोचकर निर्णय करें।

—कृष्णराज मेहता

विनोबा-निवास, बिहार

ग्रामदान-प्रखण्डदान

(३ अप्रैल '६८ तक)

भारत में		
ग्रामदान	:	५६,५१४
प्रखण्डदान	:	२८७
जिलादान	:	२
बिहार में		
ग्रामदान	:	२०,५७६
प्रखण्डदान	:	१४६

अध्यापकों का संकल्प-पत्र

प्राक्कथन :

आज जब कि हमारे देश का वातावरण भिन्न-भिन्न प्रकार की हिंसात्मक घटनाओं से विषाक्त और आतंकित हो रहा है तथा जिनका दमन करने के लिए पुलिस द्वारा विश्वविद्यालयों के अहातों तक का अतिक्रमण होने लगा है, हम शिक्षकों का यह प्राथमिक कर्तव्य हो गया है कि हम स्वयं अपनी शक्ति से इन सारे उपद्रवों का शमन करें और अपने परिवेश में शांति को स्थायी रूप में सुप्रतिष्ठित करें।

इससे भी अधिक हम अपने विश्व-विद्यालय के अहातों में ही अपनी समग्र शक्ति को निःशेष नहीं समझेंगे, बल्कि सारे देश को ही विश्वविद्यालय का प्रशस्त और विराट् प्रांगण समझेंगे और उसमें किसी भी प्रकार का हिंसात्मक विस्फोट हो और पुलिस उसका दमन करने आये, इसका कभी अवसर ही न आने देंगे। हमारी शमन-शक्ति सर्वोपरि हो।

यों तो न्याय-विभाग की भाँति शिक्षा-विभाग की स्वायत्तता भी सर्वमान्य है, किन्तु उसे सच्चे अर्थ में उपलब्ध एवं कार्यान्वित करने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा सत्ता के पीछे न भागकर स्वयं अपनी स्वतन्त्र शक्ति का विकास करे।

× × ×

उपरिनिर्दिष्ट प्राक्कथन में मैं सहमत हूँ और संकल्प करता हूँ कि :

[क] मैं किसी भी राजनीतिक पक्ष का सदस्य न बनूँगा और न चुनावों में किसी पक्ष-विशेष का प्रचार ही करूँगा।

[ख] सारे राज्य को शिक्षा का कार्य-क्षेत्र मानकर विचार द्वारा अशान्ति के शमन का प्रयास करूँगा, जिससे अशान्ति के दमन के लिए दंड-शक्ति का उपयोग न करना पड़े।

पूरा नाम..

घर का पता.......................................

संस्था का पता...................................

अध्यापन का विषय..............................

हस्ताक्षर..

तिथि...

मुंगेर कॉलेज के अध्यापकों के कार्य-सूत्र

(मुंगेर के अध्यापकों का निर्णय)

आचार्य पूज्य विनोबाजी ने प्राध्यापकों के बीच प्रवचन करते हुए अध्यापकों के एक ऐसे संगठन की नींव डाली जो अध्यापकों की नैतिक प्रतिष्ठा का उनकी सामाजिक हैसियत का उन्नयन करेगा। उन्हें इसका आंतरिक दुख है कि न केवल सरकार या समाज की दृष्टि में बल्कि अध्यापक स्वयं अपनी दृष्टि में भी आखिरी हद तक गिर चुके हैं। इसलिए उन्हें तत्काल जगना चाहिए सक्रिय होना चाहिए दृढ़-संकल्प होना चाहिए जिससे उस आत्मबोध से प्रकाश किरण का प्रसारण हो सके और वे आत्मतोष कर सकें। इसलिए आत्मबुद्ध प्रबुद्ध अध्यापक निम्नलिखित कार्यक्रमों को अपने संगठन के माध्यम से कार्यान्वित करें

१ अध्ययन की प्रवृत्ति जगाना।

२ अशान्ति शमन का दायित्व लेना।

३ समाज और देश की समस्याओं पर चिन्तन कर सर्वसम्मत राय प्रकट करना।

४ छात्रों के साथ अतन-अपक का ध्यान रखते हुए आत्मीयता का सम्बन्ध बनाना तथा उनके समुचित विकास की चिन्ता करना।

५ शिक्षण-संस्थाओं की स्वायत्तता का संरक्षण और विकास करना।

६ राजनीति के तमस से परे रहने का अभ्यास करना।

७ शिक्षण-पद्धति के सर्वतोमुखी विकास का ध्यान रखते हुए छात्रों के लिए तदनुरूप पाठ्यक्रम प्रस्तुत करना जिससे समाज को सुगठित शील और विनययुक्त सुसभ्य नागरिक मिल सकें और उसका कल्याण हो सके।

८ आर्थिक कठिनाइयों के बीच नैतिक ह्रास से अपने को बचाना।

९ जिले के ग्रामों एवं नगरों का सर्वेक्षण करना।

ऐसे ही किसी इनके सदस्य उन्हीं की पूर्ति से ही लोक-शिक्षा का समाज में प्रवेश हो सकेगा। इस संगठन के संचालन के लिए निम्नलिखित सुझाव विचारणीय हैं —

१ बिहार का प्रत्येक जिला इस संगठन की एक इकाई होगा।

२ प्रत्येक इकाई को पूरा समय देनेवाला एक संयोजक कोई प्राध्यापक ही होगा जिसके साथ कम-से-कम ११ प्राध्यापकों की एक टोली होगी जो समय-समय पर अवकाशों में क्षेत्र के शिक्षकों से सम्बन्ध स्थापित करेगी।

३ इस इकाई के प्रत्येक सदस्य को अपने निर्धारित वेतन का एक प्रतिशत उसके संचालन के लिए अनिवार्य दान देना होगा जिससे पूरा समय देनेवाले का वेतन दिया जा सके तथा अन्य दूसरी व्यवस्थाओं पर व्यय हो सके।

४ सभी इकाइयों का केन्द्रीय कार्यालय राज्य की राजधानी में रहेगा जहाँ की व्यवस्था में एक प्रभारी होगा तथा दो-तीन सहयोगी। इसका व्यय प्रत्येक मंडल को एक निर्धारित अंश में देना होगा।

आचार्य देवो भव

त्वं नो अस्या अमतेरुत क्षुधो अभिशस्तेरव स्पृधि
त्वं न ऊती तव चित्रया धिया शिक्षा शचिष्ठ गातुवित्।
(ऋग्वेद ८।६६।१४)

—हे शक्तिशाली मार्गदर्शक! तेरी रक्षणशक्ति और अद्भुत ध्यान-शक्ति से तू हमें उत्तम शिक्षा दे।
हमें अज्ञान क्षुधा और व्याधि से मुक्त कर।

समाचार डायरी

देश

७ अप्रैल उत्तर प्रदेश में मध्यावधि चुनाव की सम्भावना राज्यपाल द्वारा व्यक्त।

८ अप्रैल अखिल भारतीय सिंचाई आयोग स्थापित किये जाने के फैसले की लोकसभा में घोषणा।

९ अप्रैल केन्द्र में मिलीजुली सरकार बनाने का विपक्ष का सुझाव प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी तथा उपप्रधान मंत्री श्री मोरारजी देसाई ने अमान्य कर दिया।

१० अप्रैल लोकसभा में माँग की गयी कि किसानों को समुचित सुविधा दी जाय।

११ अप्रैल कृषि मंत्रालय के राज्य मंत्री श्री शिन्दे ने लोकसभा में बताया कि इस वर्ष देश में ९ करोड़ ५० लाख टन अन्न के उत्पादन की आशा है।

१२ अप्रैल राष्ट्रपति के शासन उत्तर प्रदेश सचिव बहुमत प्रदर्शन करेगा।

विदेश

७ अप्रैल शिकागो में हिंसात्मक दंगों में ११ नीग्रो मार गये १०० घायल ८०० जेल में और २०० स्थानों में आग-लूटपाट।

८ अप्रैल जेनेवा में शान्ति-वार्ता का अमरीकी सुझाव उत्तर वियतनाम को और नोमपेन्ह में वार्ता का उत्तर वियतनाम का सुझाव अमरीका को स्वीकार नहीं।

९ अप्रैल नीग्रो नेता डा० किंग के शव को एटलांटा में उनके दादा की कब्र के पास दफनाया गया।

१० अप्रैल संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि श्री यारिंग का पश्चिम एशिया पर शान्ति मिशन प्रायः असफल।

११ अप्रैल मियामी विश्वविद्यालय के जीव रसायनज्ञ डा० सिडनी फाक्स ने खोज की है कि जीवन का प्रादुर्भाव कैसे हुआ।

१२ अप्रैल वियतनाम वार्ता सम्भवतः पेरिस में।

१३ अप्रैल पूर्वी पाक में तूफान से १५० मरे व एक हजार घायल।

पूर्णिया की उपलब्धि और हमारा दायित्व

५ जून '६६ को रानीपतरा में ही जब हजारीबाग जिले के प्रतापपुर प्रखण्ड का पहला दान विनोबा को समर्पित किया गया था, तो विनोबा ने कहा था, "प्रखण्डदान की शुरुआत हो गयी, अब तो यहाँ 'भेड़ियाधसान' काम होना चाहिए।" और सचमुच विनोबा की बात को सार्थक कर दिखाया बिहार के लोगों ने।

उसके बाद हुआ था—दरभंगा का जिलादान। उस समय विनोबा की माँग थी कि उत्तर बिहार के लगभग सवा करोड़ की आबादीवाला पूरा क्षेत्र ग्रामदान में आये, 'सर्वोदय-क्षेत्र' बने। और, अब जब कि पूर्णिया का जिलादान १८ अप्रैल, '६८ को समर्पित किया जा रहा है, उस समय विनोबा की माँग बढ़ गयी है, 'बिहारदान' तक। तूफान से महातूफान का अखण्ड क्रम चल रहा है। विनोबा की माँगें बढ़ती जा रही हैं, बिहार के लोग उसे अपनाते जा रहे हैं। जैसे-जैसे सफलताओं की मंजिलें तय हो रही हैं, हौसले का आवेग बढ़ता जा रहा है। साथ ही पुरुषार्थ के लिए चुनौतियाँ भी बढ़ती जा रही हैं, क्रान्ति की सम्भावनाओं का क्षितिज स्पष्टतर होता जा रहा है।

सम्भव है पूर्णिया की पूर्णता पर विनोबा कुछ और माँग पेश करें। या कम-से-कम 'भेड़ियाधसान जिलादान' की ही माँग करें। 'के बाद' का प्रश्न 'बाद वालों' के लिए छोड़कर विनोबा ने क्रान्ति की 'इमेज' देश और दुनिया के सामने रख दी, तथा खुद इस क्रम में प्रश्नों के प्रतीक बन गये। तरुण पीढ़ी और आगे आनेवाली नयी पीढ़ी हल करे उन सवालों को। सवाल हैं, और उन्हें हल करने के फार्मूले हैं। चाहिए बस, अभ्यास और सातत्य की लगन!

कहाँ से आयेगी यह लगन? तरुण पीढ़ी और आगे आनेवाली पीढ़ी का रुख तो किसी और ही दिशा की ओर है! मन में था कि बिहार के ग्रामदान आन्दोलन की रीढ़ बनकर काम करनेवाले बुजुर्ग श्री वैद्यनाथ बाबू के सामने यही सब मन की उलझनें पेश करूँगा। लेकिन ठाकुरगंज में जब उनसे चर्चा के लिए आमने-सामने बैठा तो लगा कि 'के बाद' की बातें और 'मन की उलझनें' हम युवकों के लिए चुनौती होनी चाहिए, और मार्ग ढूंढ़ने की जिम्मेदारी हमारी होनी चाहिए। सवालों और उलझनों को बुजुर्गों के सामने रख देने मात्र से हम इस जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो जाते।

इसलिए उन बातों को मन के अन्दर ही रहने दिया और हमारी बातचीत पूर्णिया की पूर्णता के अनुभवों तक की सीमा में ही सिमट आयी।

श्री वैद्यनाथ बाबू ने जिले के काम की अनुकूलता-प्रतिकूलता की चर्चा करते हुए कहा, "पूर्णिया सदर पूर्व, कृत्यानन्दनगर, बनमनखी, अमदाबाद और मनिहारी प्रखण्ड सामाजिक चेतना की दृष्टि से जिले के प्रमुख प्रखण्ड हैं, और हमारे काम के लिए सबसे अनुकूल हैं। इलाके को नेतृत्व देनेवाले प्रायः सभी गाँव ग्रामदान में आ चुके हैं। अमदाबाद में तो ३२ हाजी ग्रामदान में आये हैं। इस इलाके के १८७ गाँवों के कागज पुष्टि हेतु दाखिल हो चुके हैं। प्राप्ति-कार्य में स्थानीय कार्यकर्ताओं—मुसलमानों का भी, सक्रिय सहयोग मिला है। सबसे कठिन प्रखण्ड साबित हुआ है 'जोकीहाट'। सन् '६६ में जब विनोबाजी आये थे तो पूर्णिया के सभी प्रखण्डों में ग्रामदान हुए थे, सिर्फ जोकीहाट में नहीं; और अब जब सन् '६८ में विनोबाजी आये तो जिले के सभी प्रखण्डों का दान हो चुका था, सिर्फ जोकीहाट का नहीं।

"पूर्णिया का पहला प्रखण्डदान १ जुलाई '६६ को हुआ था और प्राप्ति-अभियान पूर्ण हो रहा है १८ अप्रैल '६८ को। अभियान के क्रम में लगभग १००' से २०० कार्यकर्ता लगे। स्थानीय लोगों में मुख्य रूप से शिक्षकों का सहयोग मिला। प्राप्ति-अभियान के लिए खर्च की व्यवस्था बाहरी चन्दे आदि से लगभग एक लाख रु० की करनी पड़ी, लेकिन स्थानीय सहयोग इससे अधिक मात्रा में ही मिला।

"स्थानीय सहयोग में खास बात यह रही कि अधिकांश धनी लोग योजना और विचार-पूर्वक शामिल नहीं हुए। जमीन के सम्बन्ध में इधर की कुछ विशिष्ट परिस्थितियाँ हैं, जिनमें 'वासा'वाले बड़े भूमि-मालिकों की बड़ी संख्या का होना मुख्य है। बँटाईदारी के प्रश्न पर साम्यवादी संघर्ष भी काफी सक्रिय रहा है।"

इसी चर्चा में पूरा समय गुजर गया और शेष प्रश्नों की चर्चा के लिए फिर कभी का वादा लेकर हम अलग हुए।

१८ अप्रैल - भूमि-क्रान्ति दिवस की ऐतिहासिक उपलब्धियों में पूर्णिया की एक और कड़ी जुड़ गयी है। पूर्णिया की पूर्णता पूरे ग्राम-स्वराज्य आन्दोलन को पूर्णता की मंजिल तक पहुँचाने की प्रेरणा देगा इसमें कोई शक नहीं। —राही

शोक-समाचार

● छपरा, ११ अप्रैल। श्री भरत भाई के पत्र से ज्ञात हुआ है कि सारन जिले के एक कार्यकर्ता श्री बैजू भाई का ११ अप्रैल '६८ को पेटदर्द के कारण देहावसान हो गया। श्री बैजू भाई के देहावसान के कारण एक निष्ठावान कार्यकर्ता साथी की अपूरणीय क्षति हुई है।

इस अंक में

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड; या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ३०

शुक्रवार, २६ अप्रैल, '६८

इस अंक में

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन ४२८५

नारायण की प्रेरणा : विश्वास की शक्ति

बैठे-बैठे थक गया इसलिए खड़ा हुआ। मुझे ज्यादा बोलना नहीं है। आप लोग जानते हैं, इन दिनों स्थूल क्रिया कम की है और सूक्ष्म कर्मयोग में प्रवेश किया है, और आशा रखी है कि स्थूल कर्मयोग से जितना काम बना उससे सूक्ष्म कर्मयोग से ज्यादा बनेगा।

पोचमपल्ली में पहला भूदान हुआ आज की ही तारीख १८ अप्रैल को। उसको १७ साल हुए। १७ साल में हम जिलादान तक पहुँच गये। अब चन्द महीनों में प्रान्तदान होने जा रहा है। तो यह सारा अगर मैं ही घूमता रहता तो नहीं होता। लोग कहते कि बाबा को आने दीजिये फिर करेंगे! अब लोगों के ध्यान में आया है कि यह ज्यादा बोलेगा नहीं, घूमेगा नहीं अभिध्यान करेगा काम की तरफ नजर रखेगा। अब हमको काम करना होगा। इस प्रकार की प्रेरणाएँ सारे भारत में मिल रही हैं। हम यहाँ बिहार में बैठे हैं और जिलादान वहाँ तमिलनाड में हुआ है। उधर उत्तरप्रदेश वाले सोच रहे हैं कि अगले साल हम कोशिश करेंगे कि सारा उत्तरप्रदेश ग्रामदान में आ जाय। अगर बाबा घूमता होता, तो यह बनता नहीं।

बहुत अच्छा काम आप लोगों ने किया है इसके लिए धन्यवाद है, कार्यकर्ताओं को। सैकड़ों की तादाद में कार्यकर्ताओं ने परिश्रम किया है वर्षों तक, जिसका यह परिणाम है। अभी दादा ने आपको सुनाया कि इसमें तो हमारा आरम्भ होता है। यह तो एक बुनियाद बनी है। मकान बनाने का आरम्भ होता है। तो जिन्होंने यह काम किया है, उनको धन्यवाद है। दानपत्र भरे हैं, जिन्होंने हस्ताक्षर किये हैं उनको बहुत धन्यवाद।

अब कार्यकर्ताओं के लिए एक बात कहकर मैं समाप्त करूँगा। उन्हें समझना चाहिए कि निजी कोई शक्ति हमारे पास है नहीं। लेकिन अगर कोई शक्ति हमारी हो सकती है तो वह विश्वास शक्ति है। अभी हमने मान लिया कि ७५ फीसदी लोगों के हस्ताक्षर हुए और ५१ प्रतिशत जमीन आ जाय तो ग्रामदान हो गया। जाहिर है कि २५ फीसदी लोगों के हस्ताक्षर हमें प्राप्त नहीं हैं, और जमीन भी ५१ फीसदी आयी होगी, ४९ फीसदी आयी होगी। तो बार बार लोगों के पास जाना चाहिए, और अत्यन्त विश्वासपूर्वक जाना चाहिए। मानव-हृदय में विश्वास होना चाहिए कि भगवान नारायण हर शरीर में मौजूद है। जिनको आज प्रेरणा नहीं दी है उनको वह बाद में देगा। एक दफा जाने से काम नहीं हुआ तो फिर फिर जायेंगे। उनको प्रेमपूर्वक, विनयपूर्वक समझायेंगे। विश्वासपूर्वक जायें। यह समझकर कि क्या आदमी है देगा नहीं, टालें नहीं। माँ से बच्चा विश्वास से माँगता है, तो माँ को देना ही पड़ता है। जितना दे सकती है, देती है। वैसे हम निःपुलक विश्वास रखें नारायण पर, कि वह नारायण सबों के अन्तर्यामी है। इससे ज्यादा कहना नहीं। सबको प्रणाम!

—विनोबा

(पूर्णिया जिलादान-समारोह के अवसर पर, रानीपतरा, १८-४-'६८)

सर्वोदय-क्रांति का संदर्भ : 'मैं' और 'वाले' की भूमिका

श्री धीरेन्द्र भाई से प्रश्नोत्तर

प्रश्न : सर्वोदय में जिस तरह के लोग मिलते हैं, देखकर दंग रह जाना पड़ता है! मुझे ही कई सज्जन चकमा दे गये हैं। ये बातें नयी नहीं हैं, हमारे समाज में होती ही रहती है। मैं स्वयं ही एक व्यापक शोषण की नींव पर अनेक लोगों के साथ खड़ा हुआ आराम से रह रहा हूँ। लेकिन ये ही सब बातें जब सर्वोदयवालों में भी देखने को मिलती हैं तो दंग होना स्वाभाविक ही है।

एक छोटी-सी बात याद आती है। उन्हीं दिनों अमेरिका ने हनोई और उसके आस-पास के इलाकों में बमबारी शुरू की थी। इस लड़ाई के प्रति मेरे मन में आरम्भ से ही क्षोभ था। ······जी अचानक मिले तो किसी चर्चा के दौरान मैंने उनसे कहा, "अमेरिका वियतनाम की पीड़ा को बढ़ाता ही जा रहा है। अब उसने अमुक-अमुक जगह भी बमबारी शुरू कर दी है।" इसके जवाब में श्री······ जी ने बड़े तपाक से तथा अत्यन्त निर्लिप्त भाव से कहा—"अमेरिका तो सैनिक अड्डों पर बमबारी कर रहा है। इसलिए नये इलाकों की बमबारी में कोई नयी बात नहीं है।" आशय उनका यही लगा कि जो हो रहा है वह ठीक हो रहा है। आगे कोई चर्चा बढ़ाने की हिम्मत मेरी नहीं हुई। अन्दर से मेरी तबियत बुझ-सी गयी। खयाल हुआ कि इस युग के इस व्यापक और भयानक संगठित अत्याचार के प्रति यदि सर्वोदय-दिग्गजों की यही भावना है तो सर्वोदय के (यानी इन लोगों के) माध्यम से इस देश का कल्याण असम्भव है।"

उत्तर : सर्वोदय के लिए तुम्हारी परेशानी मालूम हुई। वियतनाम या अन्य ऐसे ही प्रश्न पर भिन्न-भिन्न लोगों की अपने अध्ययन, चिन्तन और विचार के अनुसार भिन्न-भिन्न रायों का होना स्वाभाविक है। कोई व्यक्ति हमसे भिन्न राय रखता है और वह सर्वोदय-विचार के अनुसार कुछ बुनियादी कार्यक्रमों में लगा है तो सर्वोदय से कुछ भला होना असम्भव है, *ऐसा नहीं मानना चाहिए।* अगर साम्यवाद की स्थापना साम्यवादियों द्वारा होगी, 'फासिज्म' फासिस्टों द्वारा आयगा, यानी कोई भी विशिष्ट 'वाद' उसी 'वादी' द्वारा सफल हो सकेगा, तो समझना चाहिए कि सर्वोदय की सफलता सर्व द्वारा ही सम्भव हो सकेगी। और सर्व में सब प्रकार के विचारवाले आयेंगे चाहे वे परस्पर-विरोधी विचारवाले ही क्यों न हों। तुम्हारे दूसरे व्यापारी साथी तुमको भी तो सर्वोदय वाला ही समझते हैं। वादमूलक आन्दोलन का संस्कार हम सब लोगों में है। इसीलिए सर्वोदय की यह बात पचने में कठिन होती है।

एक और बात समझ लेनी चाहिए कि "सर्वोदय में" या "सर्वोदय वाले" की संज्ञा अर्थहीन है। वस्तुतः मानव समाज के *लिए "मैं" और "वाले",* ये दो शब्द बहुत बड़े अभिशाप के रूप में हैं। सारे झगड़े और अनेक प्रकार की विडम्बनाओं की जड़ ये ही दो शब्द हैं। अगर इतिहास के पन्नों को देखा जाय और उन पर थोड़ी गहराई से विचार किया जाय तो स्पष्ट समझ में आयगा कि *मानव-समाज में जितनी क्रान्तियाँ हुई हैं,* उन सबको 'बिट्रे' करनेवाले ये ही "मैं" और "वाले" रहे हैं।

यही कारण है कि विनोबा ने आरम्भ से ही किसी संस्था, दल और नेता को अपना *आधार नहीं बनाया।* उन्होंने *एक विचार* का उद्घोष करके चलना शुरू किया और देश के हर व्यक्ति और संस्थाओं को इसमें शामिल होने के लिए आह्वान किया। आज वे खादी तथा अन्य कार्यक्रमों को लेकर जितनी संस्थाएँ बनी हैं, उन सबको आह्वान करते हैं, हर राजनीतिक दलों से कहते हैं, पंचायत के लोगों से कहते हैं, राजकीय कर्मचारियों से भी कहते हैं कि आप इस काम को उठाइये।

जब कोई भी क्रान्ति विशिष्ट नेता के नेतृत्व से तथा किसी एक दल के संयोजन से चलती है तो जिस अनुपात में उस क्रान्ति की उपलब्धि होती है, उसी अनुपात में वह उपलब्धि उस नेता और दल के लिए निहित स्वार्थ 'वेस्टेड इण्टरेस्ट' की चीज बन जाती है। फिर क्रान्ति की मूलधारा छूट जाती है, और उपलब्धियों को अपने हाथ में रखने की *फिक्र बढ़ जाती है। सर्वोदय की क्रान्ति* जब सर्व की है, तो इस क्रान्ति के संदर्भ में "मैं" और "वाले" की दृष्टि की कतई कोई गुंजाइश नहीं है। [प्रेषक : नरेन्द्र]

कश्मीर में भी ग्रामदान की ज्योति जली

मैं अभी स्टाक लेने श्रीनगर गया था। १०-४-६८ को वहाँ गुडुरू ग्राम में जाने का अवसर मिला। वहाँ के मुख्य-मुख्य लोगों को इकट्ठा किया और उनके सामने विनोबाजी द्वारा बताये गये ग्रामदान के विचार को रखा। वहाँ के मुख्य-मुख्य ग्राम-निवासियों ने नीचे लिखी घोषणा की है :

जनाब विनोबा भावे साहबजी,

नमस्कार! हम बाशीन्दगान गुडुरू, तहसील पुलवामा-जुलअफराद (११६ घर) तहरीर करके लिख दे रहे हैं और अहद करते हैं कि हम विनोबा भावेजी साहब के ४ बसूलों को, जो कि हमने सुने हैं अमलन दिखा के रहेंगे, जिसमें हमारा ही फायदा है।

बाशीन्दगान गुडुरू बजरिये, गुलाम मुहम्मद भट्ट

नम्बरदार-गुडुरू, पो० तहसील-पुलवामा, पामपुर (कश्मीर)

उपरोक्त घोषणा गांधी आश्रम के साथी श्री मोहनलाल बक्शी व श्री नन्दलाल रैना के सम्मुख सभी निवासियों ने दुहरायी। घर-घर जाकर हस्ताक्षर लेने का अभियान जारी है। हर घर से ग्रामकोष के लिए १० नया पैसा प्रतीक के रूप में इकट्ठा कर रहे हैं। हर घर में १ मीटर खादी लेने का वायदा भी हुआ है। —शिवप्रसाद गुप्त

लोकतंत्र की बुनियाद

समाज का फैलाव एक के ऊपर एक के ढंग का नहीं, बल्कि लहरों की तरह एक के बाद एक की शकल में होगा। जीवन मीनार की शकल में नहीं होगा, जहाँ ऊपर की तंग चोटी को नीचे के चौड़े पाये पर खड़ा रहना पड़ता है। व्यक्ति गाँव के लिए और गाँव ग्राम-समूह के लिए मर मिटने को हमेशा तैयार रहेगा। इस तरह अन्त में सारा समाज ऐसे व्यक्तियों का बन जायगा जो अहंकार में आकर कभी किसी पर हमला नहीं करेंगे, बल्कि सदा विनीत रहेंगे और उस समुद्र के गौरव के हिस्सेदार बनेंगे, जिसके वे अविभाज्य अंग हैं।

इसलिए सबसे बाहर का घेरा अपनी ताकत का उपयोग भीतरवालों को कुचलने में नहीं करेगा, बल्कि भीतरवाला सबको ताकत पहुँचायेगा और स्वयं उनसे बल ग्रहण करेगा। मुझ पर यह कटाक्ष किया जा सकता है कि यह सब खयाली पुलाव है और इसलिए जरा भी विचारणीय नहीं है। यूक्लिड की परिभाषा का बिन्दु भले ही मनुष्य खींच न सके तो भी उसका शाश्वत मूल्य तो है। इसी तरह मेरे इस चित्र का भी मानव-जाति के जीवित रहने के लिए अपना मूल्य है। इस सच्चे चित्र तक पूरी तरह पहुँचना सम्भव नहीं है, फिर भी इस सही तसवीर तक पहुँचना भारत की जिन्दगी का मकसद होना चाहिए। हमें क्या चाहिए, इसका सही चित्र तो हमारे पास होना चाहिए। तब हमें उससे मिलती-जुलती कोई चीज प्राप्त हो सकती है। यदि कभी भारत के प्रत्येक गाँव में एक-एक प्रजातंत्र स्थापित हुआ, तो मेरा दावा है कि मैं इस चित्र की सचाई सिद्ध कर सकूँगा, जिसमें सबसे आखिरी और सबसे पहला दोनों बराबर होंगे या दूसरे शब्दों में कहें तो न कोई पहला होगा, न आखिरी।

हरिजन, २८-७-४६।

अब किधर ?

हरियाणा, बंगाल, पंजाब, बिहार, और अब उत्तर प्रदेश भी। कुल मिलाकर उत्तर भारत पूरा हो गया। हरियाणा, बंगाल और उत्तर प्रदेश में मध्यावधि चुनाव होंगे। पंजाब और बिहार में क्या होगा, अगले महीने बतायेंगे। लेकिन वहाँ जो हालत है उसे देखते हुए यह सोचा जा सकता है कि कुछ-न-कुछ तो होता ही रहेगा, और कोई आश्चर्य नहीं कि किसी दिन यह तय हो जाय कि उनके यहाँ भी वही होगा जो पड़ोसियों के यहाँ होनेवाला है।

मध्यावधि चुनाव होंगे तो क्या होगा? हो सकता है कि किन्हीं राज्यों में एक दल का स्पष्ट बहुमत हो जाय। उस हालत में वहाँ सरकार स्थायी बन सकती है, लेकिन क्या स्थायी सरकार बनने से ही सार्वजनिक जीवन उपद्रव से मुक्त हो जायगा, और उसे सही दिशा मिल जायगी? और, अगर किसी दल का स्पष्ट बहुमत न हुआ तब तो पदलोलुप नेता सरकार को जल्दी बनने ही नहीं देंगे, और अगर बन भी गयी तो टिकने नहीं देंगे।

इतनी लक्ष्यहीनता और दिशाशून्यता स्वतंत्रता के बाद इतनी तेजी से फैलेगी, इसकी कल्पना नहीं होती थी। लेकिन जो नहीं होनेवाला था वह सब होकर रहा। और, राजनीति का पर्दा इस बुरी तरह आँखों पर पड़ गया है कि दूर तक देखना चाहें तो दिखायी भी नहीं देता।

इसके लिए दोषी कौन है? क्या लोग बुरे थे जिन्हें समय ने अवसर दिया था या सारी पद्धति और व्यवस्था ही बुरी है जो हमारे मत्थे पड़ी, और जिसे हमने भ्रम में स्वीकार कर लिया? व्याख्या के लिए यह प्रश्न रोचक है, और उसके अलग-अलग उत्तर भी हो सकते हैं, लेकिन इतना स्पष्ट है कि यह व्यवस्था टूट चुकी है। चिथड़े को दल-बदल, संयुक्त दल, या लोकतांत्रिक मोर्चा, आदि नाम के पैबन्द लगाकर कब तक टिकाया जा सकता? देश के जीवन में जो जबरदस्त बाहरी और भीतरी समस्याएँ पैदा हो गयी हैं उनका मुकाबिला करने की शक्ति दलीय सरकार की व्यवस्था में नहीं रह गयी है। करोड़ों की संख्या में बेकार और विषमता के शिकार लोग बदला लेने की तैयारी में हैं, कोई-न-कोई नारा लगाकर एक समुदाय दूसरे समुदाय को उखाड़ फेंकने को तैयार है, बाहर शत्रु बारूद पर बैठे हुए हैं, युवक दुनिया को सिर पर उठा लेने पर उतारू हैं। चलती नदी के बीच में टूटे कंकर की तरह देश इतिहास के भँवर में पड़ गया है। कहाँ पहुँचेगा, ठिकाना नहीं।

समय आ गया है यह तय करने का कि पार्टी की पूजा करने का समय अब नहीं रहा। एक पार्टी का शासन तो खत्म हो गया, संयुक्त मोर्चों का भी खत्म हो चुका है। अब जरूरत है पार्टी को दिमाग से निकालकर सोचने की। ऐसी व्यवस्था सोचनी चाहिए जो लोकतांत्रिक हो, लेकिन दलतांत्रिक न हो, जिसमें सत्ता सीधी जनता के हाथ में रहे, दलों में न रह जाय। ऐसी ही व्यवस्था सुरक्षा, विकास और समता के संयुक्त मोर्चे पर एक साथ लड़ सकेगी। ●

आचार्यकुल की आत्मज्योति प्रकट हो • विनोबा

२० साल पहले बापू की मृत्यु के बाद मुझे अपना एकांत-साधना का स्थान छोड़कर लोगों में आना पड़ा और तब से आज तक बीस साल हुए, सतत यात्राक्रम जारी रहा। भूदान के नाम से आन्दोलन शुरू हुआ, जिसका आखिरी दौर अभी चल रहा है। बिहारदान का संकल्प हुआ है। उसमें यहाँ के सब नेताओं ने सम्मिलित होकर निर्णय लिया कि २ अक्तूबर १९६८ तक बिहारदान करना है। अन्नदाता-वर्ग की भारत में अत्यन्त उपेक्षा हो रही है। उनको ऊपर उठाने के लिए कोशिश चल रही है, अन्न उत्पादन करनेवालों के लिए कोशिश चल रही है।

लेकिन विद्वानों में प्रवेश करने का मौका अभी तक मिला नहीं था। वह पूसा-कान्फ्रेंस में मिला। उनसे परिचय हुआ। हमको उससे बहुत खुशी हुई और अनुभव आया कि ये सारे विद्वान, आचार्य, प्राचार्य—जिनसे मिलने का मौका मिला था उनकी मैं बात कर रहा हूँ—बहुत उत्सुक हैं आत्मदर्शन के लिए, अपने स्वरूप का दर्शन करने के लिए। तुलसीदास ने जागृति का एक पद्य लिखा है :

> जागु, जागु, जीव जड़ !
> जोहै जग-जामिनी
> देह-गेह-नेह-जानि
> जैसे घन-दामिनी। ('विनयांजलि' १६)

वेद कहते हैं, और बुद्ध कहते हैं एक ही बात कि स्वप्न के दोष के लिए और स्वप्न के लिए सर्वोत्तम औषध जागृति ही है, जागृति ही सर्वोत्तम उपाय है। न जागते हुए स्वप्न के अन्दर जितने उपचार किये जायेंगे, उतनी स्वप्न-सृष्टि लम्बी होती जायगी। इसलिए जागृति ही सर्वोत्तम उपाय है। हमें बहुत खुशी है कि विद्वानों की जमात में यह भान अब आने लगा है।

मनुष्य के मन में संशय तो होते ही हैं। उसके लिए किसीको दोष देना ठीक नहीं। धीरे-धीरे शंकाओं का निरसन होता है। एक नया आन्दोलन शुरू हुआ है तो उसमें शंकाएँ उत्पन्न होना स्वाभाविक है। धीरे-धीरे वे दूर होती जायेंगी। प्रयत्न हो रहा है कि अखिल बिहार 'आचार्यकुल' की स्थापना हो। एक बड़ा आरोहण-कार्य अध्यापकों के द्वारा हो रहा है। 'कुल' शब्द परिवारवाचक है। हम सारे आचार्यों का एक ही परिवार है। ज्ञान की उपासना करना, चित्तशुद्धि के लिए प्रयत्न करना, विद्यार्थियों को वात्सल्य-भाव से सतत समझाने का प्रयत्न करते रहना, सारे समाज के सामने जो समस्याएँ आयेंगी, उन पर तटस्थ भाव से चिन्तन करके अपना निर्णय समाज के सामने रखना और समाज को मार्गदर्शन देना, इत्यादि कार्य करते जा रहे हैं। 'शिक्षक सारे', इसमें परिवार की भावना है।

'कुल' शब्द परिवारसूचक है। उसके अलावा अरबी के साथ उसका मेल बैठता है। ऐसे कई शब्द हैं, जो संस्कृत होते हुए भी अरबी से मिलते हैं। कुल यानी कुल—

> अन्नदाता वर्ग की भारत में अत्यन्त उपेक्षा ''उनको ऊपर उठाने की कोशिश ''जागृति : सर्वोत्तम औषध और उपाय ''अखिल बिहार आचार्यकुल : एक बड़ा आरोहण-कार्य कर्तव्य की जागृति और हैसियत के लिए ''निश्चयात्मक बुद्धि : कर्मयोगी की पहचान ''

कुल के कुल, और कुल यानी परिवार। आचार्यों का परिवार और कुल-के-कुल आचार्य। परिवार में उच्च-नीच और छोटे-बड़े की भावना नहीं होती। वैसे छोटे-बड़े सारे आचार्य आदरणीय हैं। सबका सम्मिलित प्रयत्न होगा, तब यह गोवर्धन उठेगा। आज जो समस्याएँ हैं, उनसे अलग रहने से काम होगा नहीं। गौतम बुद्ध ने कहा है—पर्वत-शिखर पर बैठा हुआ आदमी भूमि पर क्या चल रहा है, यह देखता रहता है और गाइडेंस देता है। और बिलकुल ठीक ऐसी ही भाषा वेद में आयी है : जो पर्वतों के शिखर पर चढ़ गये हैं, वे सेवकों की सत्कल्प-शक्ति बढ़ाते रहते हैं, जिनकी प्रेरणा क्षीण हो गयी है, उनकी प्रेरणा बढ़ाते रहते हैं। स्वयं आचरण करने की दृष्टि से ऊपर चढ़ने की वृत्ति हुई, लेकिन लोगों के स्तर पर आकर सोचते हैं और लोगों को ऊपर चढ़ाने की कोशिश करते हैं।

यह आचार्यकुल की स्थापना हो रही है, वह अपने अधिकार प्राप्त करने के लिए नहीं है। उसके लिए संघ वगैरह होते हैं, उससे हमारा विरोध नहीं है; लेकिन यह अपने कर्तव्य की जागृति के लिए है। और उससे सारा शिक्षक-समाज अपनी हैसियत पायेगा। महाभारत में वर्णन है : एक दफा धर्मराज के मुख से संदिग्ध वचन निकला। परिणाम यह हुआ कि उनका रथ, जो भूमि से चार अंगुल ऊपर चलता था, वह एकदम नीचे गिर गया और धरातल पर आ गया। तो शिक्षकों का मनोरथ भूमि से ऊपर था, लेकिन आज नीचे गिर गया है और सामान्य धरातल पर आ गया है। लेकिन यह भान मनुष्य को जिस क्षण हुआ, उसी क्षण वह मुक्त हो गया। मुक्ति का सरल अर्थ है अपने को पहचानना। जिसने आत्मा को जाना, वह नया मानव बना। दृष्टि आ गयी, तो सृष्टि का रूप बदला। 'यथा दृष्टिः तथा सृष्टिः'। तो यह जो नया रूप आ रहा है, मुझे आशा है, उसमें से अनेक समस्याओं का हल निकलेगा। बीच-बीच में हम मिलेंगे, शंकाएँ दूर करेंगे। लेकिन शंकाओं के बावजूद दृढ़ निश्चय हो जाय। गीता ने कहा है : 'बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्।' (२.४१) जिसका निश्चय नहीं होता, उसकी बुद्धियाँ अनेक होती हैं और जो एक निश्चय पर एकाग्र होते हैं वे कर्मयोगी होते हैं। इस तरह गीता ने निश्चयात्मक बुद्धि पर जोर दिया है। और हमारी निश्चयात्मक बुद्धि हो, ऐसा निश्चय करेंगे तो हम तीसरी शक्ति खड़ी करने में समर्थ होंगे। तीसरी शक्ति कौनसी ?

वह है हिंसा-शक्ति की विरोधी, दण्ड-शक्ति से भिन्न लोकशक्ति। लोगों ने अपनी सम्मति से व्यवस्था के लिए कानूनी तौर पर जो अधिकार दिया है, उसका नाम

दण्डशक्ति है। यह तीसरी शक्ति दण्ड-शक्ति की विरोधी नहीं, अनुकूल भी नहीं, भिन्न है और दूसरी शक्ति—हिंसा शक्ति—की विरोधी है। ऐसी तीसरी शक्ति खड़ी करने की कोशिश हो रही है। और इसलिए आप सब लोगों का आवाहन किया जा रहा है। राह खुल गयी है।

दो प्रकार के मार्ग हैं। एक है क्षुरस्य धारा—तलवार की धार पर चलने जैसा। कठिन मार्ग है। दूसरा मार्ग शिक्षकों का। समझाते रहना प्रेम से, द्वेष करनेवाले को भी प्रेम से समझाना। 'यमास्थाय मुनिसत्तमः ऐसा पदं न स्खलेन्न पतेदिह।' (भागवत ११ २ ३५) ऐसा मार्ग है कि आँखें बंद करके दौड़े चले जायें, ठेस नहीं लगेगी। क्योंकि इसमें खोना है नहीं, पाना ही है। प्रेम से सहन करना है, दुष्टता का प्रतिकार साधुता से करना है, क्रोध का प्रतिकार क्षमा से करना है, अज्ञान का प्रतिकार ज्ञान से करना है। आज मुझसे किसीने पूछा था कि चारों ओर अन्धकार फैला है, कैसे काम करें। हमने कहा अँधेरे को देखना चाहिए। एक मनुष्य गुफा में गिरा, गुफा पर अँधेरा था, उस अँधेरे में गिरा। वह सोचने लगा, 'कितना कचरा पड़ा है यहाँ। इसको साफ करना चाहिए।' उसने कचरा खोदना शुरू किया। खोद-खोदकर थक गया, पर कचरा कम नहीं हुआ। उसके खोदने की आवाज सुनकर नजदीकवाले घर से एक आदमी देखने के लिए हाथ में लालटेन लेकर बाहर आया, तो एकदम सारा कचरा गायब हो गया। क्योंकि लालटेन आया, तो प्रकाश आया। प्रकाश के सामने अँधेरा टिकेगा नहीं। और अँधेरा जितना पुराना होगा, उतना अधिक कच्चा होगा। घनघोर गुफा में सैकड़ों साल का अँधेरा है। आप 'टार्च' लेकर आइये, तो एकदम सारा खतम होगा। प्रकाश के आघात और किसी प्रकार के प्रहार से वह खतम नहीं होगा, बल्कि अँधेरे का अस्तित्व ही नहीं है। ऐसे प्रयत्नों से अस्तित्व भास होता है। वास्तव में अँधेरा इसलिए है कि प्रकाश है नहीं। हमारी जो आत्मशक्ति है, वह ज्योति है। प्रकाश विचार, चिन्तन, मनन है। यह जो शक्ति है, उसके सामने कौनसी शक्ति टिकेगी?

और यह ध्यान में रखिये कि दुनिया नजदीक आ रही है, मानव-मानव नजदीक आ रहा है। आकाश और अवकाश कम पड़ रहे हैं—इतना ज्यादा 'साइन्स' आगे बढ़ रहा है। जहाँ दिमाग इतना बड़ा बना है, वहाँ दिल छोटा रहा, तो मनुष्य के जीवन में विसंवाद खड़ा होगा और आज दुनिया में जो झगड़े चलते हैं, वे सारे इस विसंवाद के कारण हैं। क्योंकि बुद्धि बड़ी बनी और दिल छोटा रहा। अगर हमारा दिमाग भी छोटा होता और दिल छोटा होता, तो इतनी समस्याएँ नहीं होतीं। शेर का दिमाग भी छोटा होता है और दिल भी छोटा होता है। आज खाने-पीने को मिल गया तो उसे सन्तोष है। दूसरे शेरों का क्या होगा, अपनी जमात कितनी बड़ी है, इसकी उसको चिंता नहीं। लेकिन मनुष्य की हालत क्या हुई है? दिमाग इतना व्यापक हुआ है कि न्यूटन जैसे महामुनि और व्यास जैसे भगवान छोटे पड़े हैं। उनको जितना ज्ञान था, उससे बहुत ज्यादा ज्ञान आज हमारे बच्चों को है। ज्ञान इतना विस्तृत हुआ और दिल छोटा रहा। हम कौन? भूमिहार! यह हरिजन, यह सिख, यह ब्राह्मण! हम इस पार्टी के, तुम उस पार्टी के! हमने एक कविता बनायी है—जाति, धर्म, पंथ, भाषा, पक्ष, प्रांत, इन सबका अंत सर्वोदय। ये छोटी-छोटी चीजें हमारे दिल में पड़ी रहीं और मामूली प्रश्नों पर दिमाग उलझा रहा, तो हम इस जमाने के लायक नहीं रहेंगे। तो अब क्या करें? या तो दिमाग छोटा करें, या दिल बड़ा करें। दिमाग छोटा करना यानी 'साइन्स' को पीछे हटाना। यह अब हो नहीं सकता। 'साइन्स' को पीछे हटाने में सार नहीं। वह हटेगा नहीं, उत्तरोत्तर आगे बढ़ेगा। तो अब दूसरा क्या उपाय है सिवा इसके कि दिल बड़े बनायें?

'हम भारत के', 'हम बिहार के', यह चलेगा नहीं। जय जगत्! हम विश्वमानव हैं। ऋग्वेद में शब्द आया 'विश्वमानुष', इसके सिवा गति नहीं।

यह जो विश्वमानुष की हैसियत है, यह अध्यापकों की न हो, तो किसकी हो? अब जनता की तो हो नहीं सकती। इसलिए शिक्षकों का दिल बड़ा होना चाहिए। आपकी जमात विश्वमानव बने, आचार्यकुल की स्थापना हो, उनकी अपनी शक्ति खड़ी हो, तो शिक्षकों का स्वरूप बदल जायगा। गौतम बुद्ध, महावीर, याज्ञवल्क्य, जनक, अशोक सारे देख रहे हैं कि हमारे बच्चे क्या करने जा रहे हैं? और मैं महसूस करता हूँ कि इन सबका आशीर्वाद हमें प्राप्त हो रहा है, इसमें मुझे तनिक भी संशय नहीं।

एक बात और कहनी होगी। इस काम के लिए आपको कुछ धन इकट्ठा करना होगा, ताकि एक दफ्तर होगा और कुछ कार्यकर्ता खड़े होंगे। मैंने सुझाया है कि 'आचार्यकुल' के जितने सदस्य होंगे, वे अपने वेतन का एक प्रतिशत दान दें। मान लीजिये कि ५०० रु० वेतन है, तो ५ रु० देना होगा। छोटी-सी रकम है। ज्यादा की जरूरत भी नहीं। इससे 'आचार्यकुल' का अच्छा आयोजन कर सकते हैं।

[प्राध्यापकों और शिक्षकों की गोष्ठी में, भागलपुर (बिहार) ७-३-'६८]

तीसरी शक्ति हिंसा शक्ति-विरोधी, दण्ड शक्ति से भिन्न लोक-शक्ति दुष्टता का प्रतिकार साधुता से अँधेरे के अस्तित्व पर प्रकाश का प्रहार दिल छोटा, दिमाग बड़ा तो विसंवाद विश्वमानव की भूमिका

अहिंसा के आधार पर स्वराज्य की रचना

सच्चे लोकतंत्र का संचालन-केन्द्र में बैठे हुए बीस आदमियों से नहीं हो सकता। उसका संचालन नीचे से प्रत्येक गाँव के लोगों द्वारा करना होगा।

यदि हम चाहते हैं कि स्वराज्य की रचना अहिंसा के आधार पर की जाय, तो हमें गाँवों को उनका उचित स्थान देना होगा। —मो० गांधी

चिन्तन-प्रवाह

हड़ताल का सीजन : गैरजिम्मेदार नेतृत्व

कभी-कभी यह शंका होने लगती है कि इस देश में बसनेवाले लोगों का दिमाग दुरुस्त है या नहीं! यह सही है कि इस प्रकार की शंका करनेवाले व्यक्ति के खुद के दिमाग के बारे में भी यह शंका की जा सकती है। वह कहावत मशहूर है, जिसमें पागलों के देश में जा चढ़नेवाले व्यक्ति को ही पागल करार दिया गया था।

इस सप्ताह में बिहार के दरभंगा जिले के गाँवों में घूम रहा हूँ। बिहार के शिक्षकों की राज्यव्यापी हड़ताल चल रही है। जगह-जगह स्कूल, विद्यालय बंद पड़े हैं। लड़के बेकार घूमते-फिरते हैं। शिक्षक जेलों में भर रहे हैं या आवारागर्दी करते फिरते हैं। बिहार के एक जिले की स्थिति का आज के अखबार में इस तरह वर्णन छपा है: "शाहाबाद जिले के करीब-करीब २० हजार शिक्षकों की १८ दिन की हड़ताल ने इस जिले की शिक्षण-व्यवस्था को करीब-करीब ठप्प कर दिया है। ६ डिगरी कालेज, २१० माध्यमिक, उच्च माध्यमिक स्कूल, ७०० मिडिल स्कूल और करीब ४ हजार प्राइमरी स्कूलों में पढ़नेवाले (?) प्राइमरी, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक, कालेज आदि स्तर के २ लाख छात्रों का शिक्षण रुक गया है।"

स्कूल-कालेज खुलते हैं तब उनमें भर्ती के लिए विद्यार्थियों का ताँता लग जाता है। कई जगह तो स्कूल-कालेजों में भी आजकल बिना सिफारिश के या पैरवी के भर्ती होना असम्भव हो गया है। जब भर्ती का 'सीजन' खतम हो जाता है तब उस काम से छुट्टी पाकर विद्यार्थी आज इस, तो कल उस बहाने हड़तालों का ताँता शुरू करते हैं। विद्यार्थियों की हड़ताल का 'सीजन' खतम होता है और उन्हें परीक्षा के लिए कुछ पढ़ने का ध्यान आता है तब शिक्षकों की हड़ताल का 'सीजन' शुरू होता है, क्योंकि शिक्षक समझते हैं कि ऐसे ही वक्त थोड़े दिन की हड़ताल भी समाज पर ज्यादा दबाव लाती है। हमारे देश के स्कूलों और विद्यालयों में वैसे भी पढ़ाई के दिन साल में १८० यानी साल में ६ महीने से ज्यादा नहीं होते हैं, और दिन भी मुश्किल से ३-४ घंटे का होता है। फिर ऊपर से ये हड़तालें! मैं हैरान होकर कभी-कभी किसी परिचित विद्यार्थी से पूछता हूँ कि इस सारी परिस्थिति में पढ़ाई क्या और कैसी होती है और कैसे वे लोग पास हो जाते हैं। अक्सर विद्यार्थी हँस देते हैं और चुप रह जाते हैं। एक विद्यार्थी ने एक दिन हँसते हुए मुझे बताया कि 'हर साल बोर्ड की परीक्षा में बैठने के लिए जो परीक्षा होती है और जिसके आधार पर विद्यार्थी 'सेण्ट-अप' होते हैं वह परीक्षा इस साल नहीं ली गयी और हम लोग 'सेण्ट-अप' कर दिये गये हैं। बोर्ड की परीक्षा की तारीख भी दो बार तो बदल चुकी है, शायद उसमें भी हम बिना बैठे ही पास कर दिये जायँ।" और विद्यार्थी यह माँग क्यों न करें कि साल भर हमारी पढ़ाई नहीं हो सकी, शिक्षकों ने भी समय पर हड़ताल कर दी, इसलिए हमें बिना परीक्षा लिये ही उत्तीर्ण माना जाय, वरना हमारा एक साल बरबाद होगा।

और, इसमें हर्ज भी क्या है? पढ़ाई तो आजकल योग्यता बढ़ाने के लिए नहीं होती, नौकरी पाने के लिए होती है। और नौकरी भी अधिकतर सिफारिश या पैरवी से ही मिलती है। इसलिए विद्यार्थी ने पढ़ाई की है या नहीं, इसका विशेष प्रयोजन क्या है?

आज कमोबेश सारे राष्ट्र में यही हो रहा है। और इस पढ़ाई (?) के लिए करोड़ों रुपया राष्ट्र खर्च करता है। सारा राष्ट्र इस परिस्थिति को बर्दाश्त करता रहता है। न विद्यार्थियों से न शिक्षकों से, न नेताओं से कोई जवाब-तलब करनेवाला है कि गरीब देश के दुर्लभ साधनों का यह घोर अपव्यय क्यों हो रहा है? पूछनेवाला शायद समझदारों की इस दुनिया में पागल ही माना जायगा।

अगर शिक्षकों और विद्यार्थियों को अपनी माँगें सम्बन्धित अधिकारियों या वर्गों से मनवाने के लिए हड़ताल करनी ही हो तो भी क्या यह नहीं हो सकता कि हड़ताल के दिनों में वे संगठित होकर निर्माण के किसी काम में लगें, जो जगह-जगह काम करनेवाले हाथों की बाट देख रहा है? लेकिन तब तो शायद हड़ताल की 'नुइसेन्स वेल्यू' ही खतम हो जाय और देश के व्यवस्थापकों को मौजूदा शिक्षा-प्रणाली—जिसके बारे में त्रिगुण सेन से लेकर रास्ते चलते व्यक्ति तक का फतवा है कि वह निकम्मी है, लेकिन करता जिसके बारे में कोई कुछ नहीं—को समाप्त कर देने का सूझ जाय।

× × ×

पर विद्यार्थियों या शिक्षकों की क्या बात, देश की व्यवस्था का संचालन करने का दावा रखनेवाली जो राजनीतिक पार्टियाँ हैं वे भी पीछे नहीं हैं। सरकस के खिलाड़ियों की तरह एक-से-एक बढ़कर अपनी कला से वे लोगों को खुश करना चाहते हैं, ताकि उन्हें वोट मिल सकें। राजनीति के मैदान में अपने प्रतिद्वन्द्वियों को फीका दिखाने के लिए ऐसी-ऐसी घोषणाएँ और माँगें पेश करते हैं, जिनके बारे में वे भी समझते जरूर होंगे कि उन पर अमल नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी ने अपने पिछले राष्ट्रीय सम्मेलन में एक बारहसूत्री कार्यक्रम की घोषणा की थी, जिसकी पूर्ति के लिए उन्होंने ता० १ मई से जन-आन्दोलन करने की धमकी दी है। इस कार्यक्रम की कुछ मदें इस प्रकार हैं—कोई भी व्यक्ति १५०० रु० महीने से ज्यादा खर्च न कर सके ऐसी पाबन्दी लगाना, कारखानों में बने माल और खेती के उत्पादन की कीमतों में सामंजस्य लाना, कारखाने के माल की कीमत उसके निर्माण की लागत से ५० प्रतिशत से ज्यादा न हो, प्राइमरी शिक्षा के ढंग में सबके लिए समानता हो, मन्त्रियों और अफसरों के खिलाफ किसी भी नागरिक द्वारा की गयी शिकायतों की जाँच के लिए भ्रष्टाचार-उन्मूलन आयोग या संस्था की स्थापना हो—इत्यादि। ये उद्देश्य गलत→

अहिंसक क्रांति : प्रक्रिया या परिणाम ?

• सतीशकुमार

सुप्रसिद्ध इटालियन लेखक मारावियो का कथन है कि "भले ही फ्रांस ने अपना राजनैतिक साम्राज्य खो दिया हो, उसने अपना बौद्धिक साम्राज्य अभी भी फैला रखा है।" मुझे अपने पेरिस निवास में यह बात शत-प्रतिशत सही महसूस हुई। रूसो, वाल्तेयर और विक्टर ह्यूगो ने जिस फ्रांसीसी प्रतिभा का सिक्का जमाया था उसे काम्यू, सार्त्र, लेवी स्ट्रॉस, सिमोन द बोउवा, जेने और इसी तरह के प्रथम श्रेणी के साहित्यकारों ने कुछ ज्यादा ही चमकाया है। भारतीय समकालीन साहित्य पर फ्रांसीसी लेखन और अस्तित्ववाद का जितना प्रभाव है, उतना शायद ही अन्य किसी लेखन का हो। लन्दन के जरूरत से ज्यादा व्यापारिक और राजनैतिक वातावरण से ऊबने के बाद पेरिस के साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं कलात्मक वातावरण में जरा शान्ति के साथ सांस ली जा सकती है। विश्व का सर्वश्रेष्ठ कला-संग्रहालय मुसे दु लूव्र' और सुन्दर विपुल स्थापत्य का नमूना 'नोत्रदाम' चर्च के सामने दिगाल की राजनैतिक चालें बौनी मालूम देती हैं।

मेरे लिए पेरिस का ऐतिहासिक महत्त्व है। राष्ट्रपति दिगाल की जेल में काटे हुए दिनों की दिलचस्प यादें और पिस्तौल का निशाना बनते-बनते बचने के रोमांचकारी संस्मरण मुझे अपनी विश्व शान्ति-यात्रा के दिनों की ओर ले गये। उस समय के मित्रों से पुनः मिलकर अपार आनन्द हुआ।

फ्रांस बौद्धिक प्रतिभा के मित्र, दिगाल की जेल और पिस्तौल का सामना—एक पुरानी याद, मानवीयता में सम्पन्न क्वेकर समाज, अहिंसक क्रांति का भविष्य और गांधी जन्म-शताब्दी, 'अ व्हेम आफ गांधी', सुविधानुसार गांधी के गढ़े गये चेहरे

अन्तर्राष्ट्रीय क्वेकर केन्द्र ने हमारे लिए एक गोष्ठी का आयोजन किया था। क्वेकर समाज भले ही एक छोटा-सा समाज है, पर सार्वजनिक सेवा और सुधार के कामों में हमेशा सक्रिय रहने के कारण सारे विश्व में उसकी प्रतिष्ठा है। विश्व की लगभग सभी प्रमुख राजधानियों में उनके अन्तरराष्ट्रीय केन्द्र हैं और विश्व के किसी भी कोने में पीड़ित और शापित लोगों की सहायता के लिए ये लोग दौड़कर पहुँचते हैं। हालाँ कि क्रिश्चियन धर्म की ही यह एक शाखा है, पर धर्मान्धता अथवा कट्टरता से दूर मानवीय गुणों की उपासना करनेवाला यह समाज है। गांधी विचार के अत्यन्त निकट यदि कोई समाज पश्चिम में है, तो वह क्वेकर-समाज ही है। प्रथम एवं द्वितीय महायुद्ध के दिनों में क्वेकर-समाज के लोगों ने ही युद्ध में भाग लेने से इनकार करके जेल जाने और इस तरह शान्तिवादी तत्त्वों का नेतृत्व करने में पहल की थी। हारेस अलेक्जेंडर, डोनाल्ड ग्रूम, मार्जरी साइक्स, रेनॉल्ड आदि हमारे सर्वोदय-आन्दोलन के विदेशी साथी क्वेकर ही हैं। पेरिस के क्वेकर-केन्द्र ने हमारे लिए जिस गोष्ठी का आयोजन किया था, वह अत्यन्त सफल रही। हमने अहिंसक क्रान्ति के भविष्य के सन्दर्भ में गांधी शताब्दी के अवसर का उपयोग कैसे किया जाय, इस सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये।

फ्रांस के लब्धप्रतिष्ठ शान्तिवादी और सर्वोदयवादी नेता लुइ लुइ लुइ भी इस गोष्ठी में उपस्थित थे। उन्होंने गांधी शताब्दी को सरकारी शोर शराबे और दिखावे से बचाने की ओर संकेत करते हुए कहा कि "आज की सरकारें अपना मतलब पूरा करने के लिए और जनता में लोकप्रिय बने रहने के लिए किसी भी महान व्यक्ति को श्रद्धांजलि ऊपरी तौर पर अर्पित कर देती हैं

उनके आचरण उस व्यक्ति

सर्वथा विपरीत होते हैं

सत्ता के व्यामोह

हलन को

करने

—नहीं है। इसकी पूर्ति भी होनी चाहिए, पर सामान्य बुद्धिवाला व्यक्ति भी समझ सकता है कि इस तरह की माँगें या संकल्प अलग-अलग पूरी नहीं की जा सकती हैं। उन्हें पूरा करना हो तो वह किसी सरकार के खिलाफ जन-आन्दोलन करने या उसको धमकी देने से नहीं हो सकता, वह तो राष्ट्रीय रचनात्मक संकल्प और प्रयत्न से ही सम्भव है। आज की केन्द्रित और अर्थप्रधान गुंथी हुई (काम्प्लीकेटेड) व्यवस्था में क्या अन्य सारी बातों से निरपेक्ष इस तरह की बातों के पूरी होने की कोई गुंजाइश है? इनमें से एक-एक संकल्प भी ऐसा है कि उसे पूरा करना हो तो प्रचलित समाज-व्यवस्था की आमूल बदले बिना शायद वह पूरा नहीं हो सकेगा। "संसोपा" के इस बारहसूत्री कार्यक्रम के पीछे अगर सचमुच कोई गंभीरता है तो संसोपा के नेताओं को अपने सामने बारह के बजाय एक ही कार्यक्रम रखना काफी था कि समाज की मौजूदा व्यवस्था का आमूल परिवर्तन किया जाय।

अगर ऐसी परिस्थिति में कोई यह समझे कि इस प्रकार के संकल्प और घोषणाएँ केवल जनता को भुलावे में डालने के लिए हैं तो शायद गैर-वाजिब नहीं होगा। और यह केवल संसोपा की बात नहीं है, आज हर राजनीतिक पार्टी इसी तरह बढ़-चढ़कर ऐसे अनगल संकल्प, वादे और घोषणाएँ करती है, यह जानते हुए भी कि वे उन्हें पूरा नहीं कर सकते।

सर्वोदयाश्रम — सिद्धराज ढड्ढा
१४६८

चाहिए। यदि इस तरह की गांधी-शताब्दी मनायी जानेवाली हो तो मैं उसमें अपनी पूरी शक्ति के साथ लगाने को तैयार हूँ और यदि इस महान् अवसर को एक सरकारी तमाशा मात्र बनाना हो, तो मेरी उसमें कोई रुचि नहीं है।"

फ्रांस में एक संस्था है, जिसका नाम है—"फ्रेण्ड्स आफ गांधी।" इस संस्था की स्थापना मशहूर फ्रेंच लेखिका कामी द्रोवे ने की थी। कई सौ सदस्य इस संस्था में हैं और वे यदा-कदा मिलकर गांधी-साहित्य का अध्ययन करते हैं, अथवा गांधी-विचार पर चर्चा करते हैं। कामी द्रोवे ने फ्रेंच भाषा में गांधीजी के जीवन और उनके विचारों पर विभिन्न प्रकार की आठ पुस्तकें लिखी हैं और सभी प्रकाशित हो चुकी हैं। वे काफी वृद्ध हो चुकी हैं, फिर भी पेरिस के बुद्धिजीवी-वर्ग पर काफी प्रभाव रखती हैं और अभी भी काफी सक्रिय हैं। मैं उनसे उनके घर पर भी मिला था और वे गोष्ठी में भी आयी थीं। उन्होंने इस बात पर बहुत जोर दिया कि "पश्चिम के लोगों ने गांधी को अपने-अपने ढंग से तोड़-मरोड़कर समझने और समझाने की कोशिश की है। यहाँ लोगों ने अपनी-अपनी सुविधा के अनुसार गांधी का चेहरा रच डाला है। यदि हम गांधी के साथ न्याय करना चाहते हैं, तो उन्हें उनके सही परिप्रेक्ष्य में देखने समझने की कोशिश करनी चाहिए। यदि गांधी को सही समझने की कोशिश नहीं की गयी तो गांधी के नाम पर भी एक सम्प्रदाय खड़ा हो जायगा। यह सम्प्रदाय गांधी की तारीफ करेगा और उसके नाम पर रोटी खायेगा।"

उदार पंथी और शान्तिवादी क्रिश्चियनों ने 'फेलोशिप ऑफ रीकन्सीलिएशन' नाम की एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था बना रखी है। फ्रांस की शाखा के वार्षिक अधिवेशन में मुझे भी भाग लेने का अवसर मिला। अधिवेशन में लगभग दो सौ प्रतिनिधि भाग ले रहे थे। चर्चा का विषय था : क्रान्ति की आवश्यकता और उसकी प्रक्रिया। विभिन्न गोष्ठियों में और [illegible] अधिवेशन में यह आम राय थी कि आज संसार जिस तरह के शोषण एवं आर्थिक विषमता के दौर से गुजर रहा है, उसमें क्रान्ति आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य और अपेक्षित भी है। पर क्रान्ति की प्रक्रिया पर सभी लोग सहमत नहीं हो पा रहे थे। एक कैथोलिक पादरी बड़ी तीव्रता के साथ इस बात की वकालत कर रहे थे कि हम क्रान्ति की प्रक्रिया को ज्यादा महत्व न दें। किसी प्रक्रिया को यह कहकर अस्वीकार न करें कि वह हिंसक है और किसी प्रक्रिया को यह कहकर भी स्वीकार न करें कि वह अहिंसक है। प्रक्रिया का हिंसक या अहिंसक होना उतना महत्वपूर्ण नहीं है, जितना इस बात का कि वह हमें सफलता दिलाती है या नहीं। साथ ही प्रक्रिया का निर्धारण इस बात पर भी निर्भर करता है कि वह किन परिस्थितियों में प्रयोग में लायी जा रही है। दूसरे शब्दों में इन पादरी महोदय का कथन यह था कि साध्य का महत्व है, साधन का नहीं। यह बात एक कैथोलिक पादरी के मुँह से सुनकर मुझे जरा अटपटा लग रहा

क्रांति की आवश्यकता और प्रक्रिया ''महत्व प्रक्रिया का नहीं, परिणाम का ? ''गांधी की प्रयोगशाला—पेरिस से एक हजार किलोमीटर दूर ''कैंडिल लाइट में जीवन की साधना ''स्वावलम्बी आश्रम ''अहिंसा एक मानवीय गुण : शतरंज की बाजी नहीं ''

था। ये सज्जन एक वैचारिक पत्रिका भी प्रकाशित करते हैं, जिसमें उपरोक्त प्रकार के विचारों का विस्तृत प्रतिपादन रहता है। यह पत्रिका काफी लोकप्रिय भी है। फ्रांस मुख्यतः कैथोलिक धर्म को माननेवाला देश है, पर यहाँ भी इटली की भाँति न केवल सशक्त कम्युनिस्ट पार्टी है, बल्कि गैर-कम्युनिस्टों पर भी कम्युनिस्ट विचारधारा का काफी प्रभाव है।

फ्रांस आकर हम गांधीजी के अनुयायी लांजा देल वास्तो के आश्रम में न जायें, ऐसा कैसे हो सकता था! हालाँकि वे पेरिस से लगभग एक हजार किलोमीटर दूर रहते हैं, फिर भी उनसे मिलने हम गये। ला बास्तिद नामक एक छोटा-सा रेलवे स्टेशन दक्षिणी फ्रांस की पहाड़ियों में पड़ता है। इस स्टेशन पर सिर्फ एक आदमी रहता है, जो स्टेशन मास्टर से लेकर चपरासी तक की सारी जिम्मेदारियाँ पूरी करता है। उस दिन इस स्टेशन पर उतरनेवाले सिर्फ हम दो ही यात्री थे—अनंत और मैं। ऐसा लग रहा था मानो यह स्टेशन यात्रियों के लिए तरस रहा है और यदा-कदा किसी यात्री को पाकर स्वयं को चरितार्थ समझता है। स्टेशन पर लांजा के 'आर्क-आश्रम' का कोई निशान नहीं। स्टेशन मास्टर ने हमें एक छोटी-सी पगडण्डी बतायी और इशारे से समझाया कि इस पर चलते चले जाओ, आश्रम पहुँच जाओगे। एक छोटे-से पानी के नाले के किनारे-किनारे, पहाड़ी के बीच से और ऊँचे पेड़ों के अन्दर से यह तीन फुट चौड़ी पगडण्डी नीरव वातावरण में अकेली बढ़ती चली जा रही थी, जिसने हमें लांजा के आश्रम तक पहुँचाया। १२०० एकड़ में फैला हुआ १०० सदस्यों का यह आश्रम किसी भी सर्वोदय-आश्रम की याद दिला देता है। बिजली यहाँ पहुँची है, पर आश्रम-वासियों ने 'कनेक्शन' काट डाला है। वे कैंडिल (मोमबत्ती) के प्रकाश में ज्यादा प्रसन्नता पाते हैं। आश्रमवासी अपने-अपने परिवार के साथ रहते हैं। सुबह का नाश्ता और रात्रि का भोजन परिवार में करते हैं। केवल दोपहर का भोजन सभी आश्रमवासियों का सामूहिक होता है। बच्चों के लिए आश्रम का अपना स्कूल है। कताई-बुनाई और खेती, आश्रम की ये तीन प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं। आश्रमवासी इतनी मात्रा में ऊनी कपड़ा बना लेते हैं कि आश्रम की जरूरत पूरी करने के बाद वे बाहर भी बेच सकते हैं। खेती की पैदावार पर आश्रम का सारा खर्च चलता है। हमारे यहाँ अभी भी आश्रम प्रायः बाहर के पैसों पर निर्भर करते हैं, किन्तु लांजा ने इस आश्रम को स्वावलम्बी बना डाला है।

लांजा देल वास्तो इटली के एक राज-

आर्थिक समस्या और चलन-शुद्धि

[श्री अप्पासाहब अरसे से चलन-शुद्धि के कार्यक्रम में लगे हुए हैं। इसी काम के लिए सतत और सर्वत्र घूमते रहने का आपने निश्चय किया है। दीर्घ चिंतन और निरीक्षण के बाद उनके परिपक्व विचार और भावनाओं का सार यहाँ प्रस्तुत है।—सं०]

आर्थिक समस्या क्या है ? अर्थ के मानी पैसा, सिक्के, 'मनी' (Money)। ये सिक्के व्याजखोर हैं। धातुपूर्व संपत्ति—अनाज, फल, दूध, पशु, इत्यादि—सारी नश्वर थी। उसका हद से ज्यादा अरसे तक संग्रह नहीं किया जा सकता था। फलतः अतिरिक्त अनाज दान-धर्म के द्वारा समाप्त करना पड़ता था, और श्रावण महीने में कोई पड़ोसी चार मन अनाज उधार लेकर कार्तिक महीने में नयी फसल आते ही वापस देने का वादा करता, तो स्वार्थी, लोभी साहूकार भी सवाये की शर्त लगाये बगैर उसको उधार दे डालते थे, क्योंकि वह पुराना, सड़नेवाला अनाज देता था और नया अच्छा अनाज पाता था। लेकिन यह हुई धातु-पूर्व काल की बात। धातुओं के और सिक्कों के उदय के बाद धातुओं के अक्षय सिक्के बनने लगे। तब से स्वाभाविक तौर पर दान-धर्म मिट गया और बिक्री शुरू हुई। और सिक्के सड़ते नहीं, इसलिए उनका ब्याज लेने-देने की प्रथा जारी हुई। अनाज, जमीन, कल-कारखाने—ये संपत्ति के सारे प्रकार अब पैसों के ही अलग-अलग रूप बने और अनाज की सवाई, जमीन की बँटाई, मकानों का किराया, और कल-कारखानों का मुनाफा या 'डिविडेंड'—सब जारी हुआ। संक्षेप में पूंजीशाही पैदा हुई और पनपती गयी। लूट-मार की जगह आपसी शोषण शुरू हुआ और उसमें से विषमता और वर्ग-विग्रह बढ़ा। इस आपसी फूट को, अर्थात् शोषण और वर्ग-विग्रह को कैसे मिटाया जाय ? यही तो आर्थिक समस्या है। सिक्कों की ब्याजखोरी में से यह समस्या पैदा हुई। उसके तीन हल बताये जाते हैं: साम्यवाद, ट्रस्टीशिप, भूदान।

नैसर्गिक चलन-शुद्धि

लेकिन भगवान की कृपा से—चाहे 'निसर्ग की' भी कह सकते हैं, पिछले कुछ सालों से पैसे का स्वरूप और स्वभाव आमूलाग्र बदल गया है। हजारों सालों से पैसा सख्त, अमर धातुओं के सिक्कों का चलता था, अब उसके बदले नरम कागजी नोटों का बन गया है—न केवल भारत में, बल्कि सारी दुनिया में। किसी भी देश में किसीने भी नये कागजी चलन का विरोध या बहिष्कार नहीं किया, बल्कि सारे समझदार लोगों ने इस नये चलन का स्वागत किया या मांग भी की। अपने-अपने सोना-चांदी के सिक्के सरकारों को बेचकर कागजी नोट ले लिये, क्योंकि तिगुना-चारगुना तक मिले। चांदी के एक रुपये के बदले चांदी के चार रुपये प्राप्त किये गये।

अप्पासाहब पटवर्धन

स्व० किशोरलालजी का तंत्र

स्व० किशोरलाल मशरूवाला ने इस सार्वत्रिक और सर्वसंतोषकृत घटना के आधार पर आर्थिक समस्या सुलझाने के लिए एक अनोखी योजना सुझायी थी। साप्ताहिक अंग्रेजी "हरिजन" पत्रिका के १६ सितम्बर '४८ और ३१ अक्तूबर '४८ के अंकों में उन्होंने "चलन की समस्या" और "अपने आप घटनेवाला चलन", इन शीर्षकों के दो महत्वपूर्ण लेख लिखकर अपनी योजना भारत-सरकार के सामने रखी थी। मोटे तौर पर उनकी योजना इस प्रकार थी :

(१) सरकार हर नोट पर इसवी सन् का अंक छापा दे। हर सन् के नोट उसी सन् के दरमियान (बारह महीनों तक) चलें। व्यवहार में रहने पर नोट बारह महीनों में जीर्ण हुए से हो हैं, इसलिए इस सन् के नोट अगले सन् में जीर्ण और रद्द ठहराये जायं। उनका नूतनीकरण फिलहाल सरकार खुद होकर मुफ्त में, अर्थात् जनता के खर्च से करती है उसके बजाय नोटधारकों के खर्च से ही किया जाय। उसका शुल्क, रुपये में एक आना रहे।

(२) लेकिन बचत करनेवालों के लिए खास व्यवस्था की जाय कि अगर वे अपनी बचत घर में रखने के बजाय सरकारी बैंक में कायम (फिक्स्ड) रखें तो उनको, वे अपनी रकम वापस लेना चाहेंगे तब, पूरी रकम वापसी के सन् के नये नोटों में मिले।

(३) इससे सरकार को बिना ब्याज 'डिपाजिट' मिलेंगे। फिर सरकार सब तरह के लोकोपयोगी उत्पादकों को बिना ब्याज के तकावी दे।

इसी योजना को मैंने "चलनशुद्धि योजना" नाम दिया है।

अनवधान

दुर्दैव की बात है कि इस सरल-सौम्य, लेकिन असरकारक योजना की तरफ किसीने ध्यान तक नहीं दिया। न भारत-सरकार ने दिया, न हम समाज-सेवकों ने दिया। यह मामूली-सी तीन सूत्रों की योजना भूमि-समस्या की, आर्थिक समस्या की और सर्वोदय की चाबी है। लेकिन हम ध्यान दें तब ! यह योजना मानो ईश्वरकृत चलन-सुधार का स्वीकार और अमल है। उस चलन-परिवर्तन का सब लोगों ने जबानी स्वागत भले न भी किया हो, तो भी सक्रिय स्वागत किया भी था। आज सारी दुनिया की सभाएं इस विश्वकल्याणकारी ईश्वरी चलन-सुधार को तोड़ डालती हैं, इन निर्दोष नोटों को बलात्, हठात्, छुरे से, अन्याय से दूषित अर्थात् अमर और ब्याजखोर बनाती है। शायद इसी लिए भगवान् ने इन दिनों राज-सत्ता को भी सरकारों के हाथों से छीनकर जनता के हाथों में दे डाला, ताकि जनता ही अपने पक्षातीत मंत्रिमंडलों के द्वारा इस योजना का स्वीकार और तद्द्वारा पूंजीशाही, शोषण, विषमता और वर्गविग्रह इत्यादि अनर्थों का परिहार कर सके। यह काम तभी हो सकेगा जब जनता को इस चलन-परिवर्तन का मर्म और उसका करिश्मा

प्रमुख और वनत्य समझाया जाय। लेकिन जनता के नेता सेवक या शिक्षक खुद ही इस योजना का भारी महत्व और औचित्य नहीं समझ रहे हैं, या समझकर भी आँखमिचौनी कर रहे हैं।

इस अनवधान में खुद किशोरलालजी भी, मुझे लगता है शामिल हैं। उन्होंने अपनी योजना चलन-वृद्धि महँगाई और छिपे हुए पैसे इन्हींके उपलक्ष्य में पेश की है। अपनी योजना की भारी सम्भावनाओं की तरफ खुद उनका भी ध्यान नहीं गया है। उन्होंने उसको 'खाँसी की दवा' कहकर पेश की जब असल में वह टी० बी० की दवा है। मामूली खाँसी के लिए इतनी भारी दवा की जरूरत भी नहीं है। सरकार खुद ही बेहिसाब, निराधार नोट छापना बन्द करके चलन-वृद्धि और महँगाई मिटा सकती है। उसके लिए चलन-शुद्धि जैसी क्रान्तिकारी योजना की जरूरत नहीं है।

भारी सम्भावना

भारत-सरकार अगर उपयुक्त तान काम करती है तो उससे निम्न परिणाम आयेंगे

(१) लोग बिना ब्याज के या नाम मात्र के ब्याज पर कर्ज लेने-देने लगेंगे। सरकार बिल्कुल ब्याज नहीं देगी और घर में रखें तो रकम घटती जायगी इस परिस्थिति में लोग अपनी बचत पड़ोसियों को तीन प्रतिशत ब्याज पर भी कर्ज में देंगे। निपक्षों के बिना ही ब्याज के भाव नीचे उतरेंगे और साहूकारों के प्रति कर्जदारों में द्वेष-भाव नहीं रहेगा।

(२) बँटाईदार बँटाई की जमीन मालिक को छोड़ देंगे बिना ब्याज की तकावी लेकर और जमीन खरीदकर स्वतन्त्र खेती करेंगे और परम्परागत बँटाई जितनी ही किस्तें सरकार को देकर कुछ वर्षों के अन्दर ही अपनी जमीन के मालिक बन जायेंगे। इसी तरह किरायेदार अपने-अपने मकानों के और मजदूर अपनी-अपनी फैक्टरी के मालिक बन सकेंगे।

(३) मालिकों को अपनी जमीन खुद जोतनी होगी, अपनी मशीन खुद चलानी होगी। धीरे धीरे सारे एक वर्ग मालिक श्रमिक बन जायेंगे।

(४) उद्योग बढ़ेगा आलस निकल जायगा और वर्ग-कलह मिट जायगा। गाँव गाँव में ऐक्य शान्ति-समृद्धि होगी। ग्रामराज्य मजबूत बनेगा।

(५) दूसरे राष्ट्र भी धारे धीरे भारत का अनुकरण करेंगे। दुनिया भर में सत्यतर युग प्रकटेगा।

दिक्कत, झंझट और उनका परिहार

सरकार जब इस योजना को अमल में लायगी तब एक झंझट पैदा होनेवाली है। लेकिन उससे घबराने की या हार मानने की जरूरत नहीं है। एक उदाहरण की मदद से इस झंझट का स्वरूप समझ में आ जायगा—सौ रुपयों का एक नोट है। सन् के अन्त में वह रद्द होगा और ३१ दिसम्बर के दिन जिसके हाथ में होगा उसको सरकार में छह रुपये भरने होंगे। लेकिन सरकार के सामने धर्मसंकट खड़ा होगा कि उस बेचारे अकेले से पूरे ६ रुपये कैसे वसूल करे? सालभर में जिन जिन लोगों के हाथों में से वह नोट गुजरा उनके नाम धाम सरकार खोज नहीं सकती। वे अपने-अपने उचित हिस्से से छूट जाते हैं। फिर अकेले आखिरी आदमी से पूरा शुल्क लेना अन्याय होगा। इसलिए आज सरकार बिना शुल्क के उसको नया नोट देती है। यह है सरकार की दिक्कत।

यह दिक्कत सुलझायी जा सकती है। सरकार एक नियम जारी करे जिसके आधार पर मान लें ता० १ जनवरी के दिन किसी शिक्षक को दिसम्बर के वेतन में सौ रुपये का एक नोट मिला। उसने उस नोट को १५ दिन अपने पास रखकर १६ जनवरी के दिन वही नोट देकर एक साइकिल खरीदी तो वह शिक्षक सौ रुपये के अलावा सौ रुपयों का १५ दिनों का 'बँटाव' २५ पैसे साइकिलवाले को दे और लेनेवाला भी ले। साइकिलवाला भी एक महीने के बाद १५ फरवरी के दिन नयी साइकिलें खरीदते समय फैक्टरीवालों को डेढ़ महीने के प्रतिशत बारह आने दे। अर्थात् सालभर में किसी भी महीने की किसी भी तारीख को पैसों की लेन देन करते वक्त रकम के साथ उस रकम का बटाव भी रकम देनेवाला दे और लेनेवाला भी लें। इस नियम के लागू होने से सरकार की दिक्कत मिट जायगी।

लेकिन लोगों के लिए पैसों के हर व्यवहार में बँटाव लेन-देन की एक नयी झंझट शुरू होगी। लेकिन वह झंझट हलकी बनायी जा सकेगी। सरकार इस बँटाव के तफसीलवार कोष्टक बनाये और उनका सार्वत्रिक प्रचार करे ताकि हर व्यवहार में बँटाव का गणित न करना पड़े। हर नोट की पिछली बाजू पर भी उस नोट के बँटाव का कोष्टक सक्षेप में छपवाया जा सकेगा। और हमारे देश में जो करोड़ों बिल्कुल अनपढ़ लोग हैं उनकी जानकारी के लिए ग्रामीण रेडियो-कार्यक्रमों में हर दिन सुबह ही आज का बँटाव जाहिर किया जाय। कैलेण्डर डायरियाँ पंचांग इत्यादि में भी फिर दैनिक बटाव बताया जायगा और पत्रकों में आज का बटाव भी बतलाया जायगा। सस्थाओं और सरकारी दफ्तरों के नोटिसबोर्डों पर भी आज का बँटाव जाहिर किया जायगा। टेलीफोन एक्सचेंज से भी ऐसा पूछा जा सकेगा कि आज का फलानी रकम का बँटाव कितना होता है? मिनिट मिनिट में बदलते हुए टाइम से जैसे लोग परेशान नहीं होते उलटे अपनी घड़ियों में सेकेण्ड का काँटा भी रखते हैं वैसे ही २४-२४ घण्टों में बदलते हुए बँटाव के भी वे आदी बन जायेंगे। मतलब यह कि लोगों को भी इस बटाव की झंझट से हार मानने की आवश्यकता नहीं रहेगी।

ईश्वरी योजना

चलनशुद्धि-योजना कोई आदर्शवादी या मौजूदा मानव-स्वभाव से अनुचित अपेक्षा रखनेवाली योजना नहीं है। वह वस्तुनिष्ठ, व्यवहार सौम्य सरल सत्वर अमल में लाये जाने लायक समाजहितकारी योजना है। लेकिन वह अत्यन्त क्रान्तिकारी भी है। सारे स्थिर शासनों का दम पकड़ कर बैठा हुआ झोली की तरह ही रहता है। इसलिए कोई भी शासन शुरू→

तमिल प्रवेश : नागरी लिपि

ले० : रा० शंकरन्, मूल्य : दो रुपया
प्राप्ति-स्थान : सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी–१

इन दिनों भाषा के प्रश्न ने एक जटिल समस्या का रूप धारण कर लिया है। भारत विभिन्न भाषा-भाषी प्रदेशों का एक मानव-समुद्र है। भिन्न भाषी भारतीय व्यक्ति एक-दूसरे के साथ वार्तालाप किस भाषा में करें? प्राचीन काल में संस्कृत भाषा अखिल भारतीय सम्पर्क-भाषा थी। अंग्रेजों के आने के बाद इंग्लिश भाषा को वह स्थान प्राप्त हुआ। लेकिन आजादी की लड़ाई के साथ-साथ स्वदेशी भाषा का प्रेम भी हिंदी के रूप में अभिव्यक्त होता गया। उत्तर भारत के मराठी, गुजराती, बंगाली-भाषी आदि व्यक्ति हों, या दक्षिण के कानडी, तेलुगु, तमिल-भाषी आदि व्यक्ति हों, जहाँ कहीं भी वे मिलते, अंग्रेजी के अलावा हिन्दी में ही बात कर सकते थे। इसलिए आजादी के बाद हिन्दी भाषा भारतवर्ष की सम्पर्क-भाषा बनेगी, यही सबकी स्वाभाविक धारणा थी। स्वतन्त्र भारत के संविधान में घोषित किया गया था कि १५ साल के बाद हिन्दी राजभाषा का स्थान लेगी। माना यह गया था कि बीच के समय में हिन्दी धीरे-धीरे अंग्रेजी की जगह ले लेगी। हिन्दी भाषा को सपन्न और पुष्ट बनाने की दिशा में जितनी तत्परता से प्रयास होना चाहिए था, वह नहीं हुआ। सरकारी स्तर पर केन्द्र में, और प्रदेशों में भी, अंग्रेजी का ही अधिक व्यवहार होता रहा। फिर भाषिक राज्य बने। हर प्रदेश अपनी भाषा ही उस प्रदेश की सरकारी भाषा घोषित करने की दिशा में बढ़ने लगा। वह ठीक भी था।

लेकिन राजभाषा के प्रश्न का कानूनी विचार भाषा-विधेयक के रूप में लोकसभा में आते ही भाषा के प्रश्न को राजनीतिक रूप आ गया और वह प्रश्न उग्र बन गया। हिन्दी के समर्थकों के आग्रहपूर्ण रुख की प्रतिक्रिया दक्षिण के लोगों पर तीव्र रूप से हुई और 'उत्तर भारत विरुद्ध दक्षिण भारत', इस तरह का प्रतिद्वंद्वी स्वरूप भाषा के प्रश्न के कारण देश में खड़ा हुआ। इससे देश की एकात्मता ही खतरे में आ गयी।

भाषा एक-दूसरे के हृदय में प्रवेश पाने का माध्यम होती है। एक-दूसरे के प्रति प्रेम और सहृदयता राष्ट्रीय एकात्मता की नींव है। इसलिए अखिल भारतीय सम्पर्क-भाषा के प्रश्न का विचार करते समय प्रेम की जगह द्वेष कदापि न लें, इसकी सावधानी रखने की आवश्यकता सर्वप्रथम है। भाषा का माध्यम प्रेम-सवर्द्धक साबित होना चाहिए। दक्षिण के लोगों को हिन्दी सीखना चाहिए, ऐसा जब हम कहते हैं तो उत्तर के लोगों को भी दक्षिण की कोई एक भाषा सीखनी चाहिए। दक्षिण के लोगों के हृदय में उनकी भाषा के द्वारा जल्दी प्रवेश पा सकेंगे। जबरदस्ती से नहीं, बल्कि प्रेम और आत्मीयता की भावना से जब हम एक-दूसरे की भाषा सीखेंगे तभी एकात्मता बढ़ेगी।

दक्षिण की भाषाओं में तमिळ समृद्ध और मधुर भाषा है। वह बहुत पुरानी भाषा है और उस भाषा में साहित्य भी विपुल है। इस भाषा का अभ्यास सरल बनाने की दृष्टि से सेवाग्राम-आश्रम के एक तमिळ-भाषी कार्यकर्ता श्री शंकरन्‌जी ने सन् १९५५ में ही 'तमिळ प्रवेशिका' नागरी लिपि में प्रकाशित की थी। लिपि और भाषा, दोनों अपरिचित हों तो सीखने में कठिनाई होती है। भिन्न भाषा नागरी लिपि में लिखी हो तो पढ़ने में बहुत आसानी हो जाती है। तमिळ भाषा हिन्दी भाषी साथियों को पढ़ाते समय श्री शंकरन्‌जी को जो अनुभव आये, उनके आधार पर उन्होंने पाठ तैयार किये। एक-एक पाठ पढ़ाते-पढ़ाते पचीस पाठों की यह पुस्तक बन गयी है। तमिळ के उच्चारण नागरी लिपि में प्रकट करने के लिए उनको स्वतंत्र टाइप भी बनवाने पड़े हैं।

आज की राष्ट्रीय परिस्थिति को देखते हुए तमिळ भाषा का अध्ययन करने के लिए लोक-मानस तैयार करने की दिशा में विचारक सोच रहे है। इस प्रयास में यह पुस्तिका उपयोगी होगी। इसलिए सर्व सेवा संघ प्रकाशन के द्वारा इस नागरी तमिळ प्रवेशिका को हमारे सभी साहित्य-भण्डारों में उपलब्ध कराने का विचार है। तमिळ भाषा में प्रवेश पाने के लिए यह प्रवेशिका बहुत ही उपयोगी साबित होगी। इसलिए सर्वोदय-साहित्य के सभी भण्डारों से और साहित्य-प्रचारकों से प्रार्थना है कि इस पुस्तिका का स्वयं अध्ययन करें और अपने मित्रों में भी इसका प्रचार करें। —दत्तोबा दास्ताने, संचालक सर्व सेवा संघ प्रकाशन

→ होकर उसका अमल नहीं करेगा। स्व० किशोरलालजी ने भी लिखा है कि "वर्तमान अर्थशास्त्री और शासन के आर्थिक सलाहकार भी ऐसी किसी योजना को व्यवहार्य नहीं बतायेंगे कि जिसको लेकर उन्हीं के परम्परा-प्राप्त सुख-साधनों में कटौती होगी।" लोकतन्त्र के इस युग में मतदाताओं को शिक्षित करके उनके सघटित बल से इस योजना को सरकार से मंजूर करवाना होगा।●

उत्तर प्रदेश : प्रश्नों के बाद प्रश्न

गत १८ अप्रैल को लोकसभा ने उत्तर प्रदेश में विधानसभा के विघटन तथा मध्यावधि चुनाव के लिए राष्ट्रपति की उद्‌घोषणा का अनुमोदन कर दिया। राष्ट्रपति ने १५ अप्रैल को राज्यपाल श्री रेड्डी की सलाह से उत्तर प्रदेश की विधान सभा को भंग किया था। राज्यपाल श्री गोपाल रेड्डी ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि वे संविद अथवा कांग्रेस के बहुमत के दावों से सन्तुष्ट नहीं थे।

राष्ट्रपति की घोषणा से उत्तर प्रदेश के कांग्रेस विधायक दल के नेता श्री चन्द्र भानु गुप्त को कोई आश्चर्य नहीं हुआ। उन्होंने मान लिया कि इसके अतिरिक्त कोई चारा नहीं था। संविद-सरकार के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री चरण सिंह ने भी अपना इस्तीफा देने के बाद मध्यावधि चुनाव की सलाह राज्यपाल को दी थी।

राष्ट्रपति की घोषणा के अनुसार विधानसभा के वर्तमान अध्यक्ष नयी विधान-सभा के निर्माण तक अपने पद पर बने रहेंगे।

गत १६ अप्रैल को केन्द्रीय गृहमंत्री श्री चह्वाण ने राष्ट्रपति की घोषणा तथा राज्यपाल की रिपोर्ट की प्रति ज्यों ही लोकसभा के पटल पर रखी, विरोधी सदस्यों ने शर्म-शर्म के नारे लगाये।

गत १८ अप्रैल को जनसंघ के श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने लोकसभा में राष्ट्रपति की उद्‌घोषणा के विरोध में एक प्रस्ताव पेश करते हुए कहा कि इससे उत्तर प्रदेश में जनतंत्र और संविधान की हत्या हुई है। उन्होंने राज्यपाल की रिपोर्ट को हास्यास्पद बताते हुए कहा कि इस बात का निर्णय हो जाना चाहिए कि किसी राज्य-सरकार के भाग्य का निपटारा विधान-सभा में होगा या राजभवन में।

श्री वाजपेयी का समर्थन करते हुए द्रमुक नेता श्री सेझियन ने कहा कि राज्यपाल के अधिकारों व कर्तव्यों की स्पष्ट व्याख्या हो जानी चाहिए। श्रीमती सुचेता कृपालानी ने कहा कि राज्यपाल को कांग्रेस को सरकार बनाने का मौका देना चाहिए था, क्योंकि संविद में फूट हो गयी थी। साम्यवादी नेता श्री डांगे ने कहा कि संविद में फूट है या नहीं, यह देखना राज्यपाल का काम नहीं है। किसी भी पार्टी की शक्ति-परीक्षा विधानसभा में ही हो सकती है। संसोपा के सदस्य श्री अर्जुनसिंह भदौरिया ने कहा कि उत्तर प्रदेश के राज्यपाल एक राज्यपाल की तरह नहीं, बल्कि मुख्यमंत्री या मुख्यसचिव की तरह व्यवहार कर रहे हैं। निर्दलीय सदस्य आचार्य जे० बी० कृपालानी ने कहा कि राज्यपाल का काम सिर्फ यह देखना है कि सरकार संविधान के मुताबिक चल रही है कि नहीं, वह ज्योतिषी नहीं है, जो किसी सरकार के स्थायित्व के बारे में भविष्यवाणी करे। निर्दलीय सदस्य श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने वर्तमान अस्थिरता के लिए केन्द्र को दोषी ठहराते हुए सर्वदलीय सरकार के निर्माण पर बल दिया और कहा कि इसकी शुरुआत केन्द्र से होनी चाहिए। केवल एक कांग्रेसी सदस्य ने श्री शिवनारायण को छोड़ बाकी कांग्रेस सदस्यों ने इस घोषणा का समर्थन किया। श्री शिवनारायण ने इस घोषणा का जबरदस्त विरोध करते हुए कहा कि कुछ राज्यपाल डिक्टेटर की तरह काम करने लगे हैं, जिस पर राष्ट्रपति को आँख मूँदकर मुहर नहीं लगाना चाहिए।

राष्ट्रपति की घोषणा का समर्थन करते हुए गृहमंत्री श्री चह्वाण ने कहा कि साधारण स्थिति में यह बात सही है कि बहुमत का फैसला विधान-सभा ही कर सकती है, पर उत्तर प्रदेश की विधान-सभा की बैठक बुलायी ही नहीं जा सकती थी, क्योंकि उसे बुलाने का अधिकार केवल मुख्यमंत्री को है, और उत्तर प्रदेश में कोई मुख्यमंत्री नहीं था। राज्यपाल के कार्य को संविधानोचित बताते हुए उन्होंने कहा कि इसके अतिरिक्त कोई चारा नहीं था।

दैनिक पत्र "हिन्दुस्तान" ने इस घटना पर क्षोभ प्रकट करते हुए जनता से अपील की है कि वह ऐसा मतदान करे, जिससे शासन के लिए अस्थिर तथा अनिश्चित स्थिति न रहे।

दैनिक "आज" ने लिखा है कि हम यही आशा करते हैं कि अपनी नेकनीयती साबित करने का जो अवसर राजनैतिक दलों और भावी विधायकों को मिला है, उसका वह दुरुपयोग न करेंगे।

अंग्रेजी दैनिक 'टाइम्स आफ इंडिया" ने लिखा है कि राज्यपाल के पास इसके सिवाय कोई चारा नहीं था।

अंग्रेजी दैनिक 'अमृत बाजार पत्रिका" ने लिखा है कि क्या इसकी गारंटी है कि मध्यावधि चुनाव के बाद की सरकार अधिक टिकाऊ होगी?

—नेम

तरुण शान्ति-सेना शिविर

अ० भा० शांति-सेना मण्डल द्वारा तरुण शांति-सेना के दो शिविर इस वर्ष ग्रीष्मावकाश में आयोजित किये गये हैं। प्रथम शिविर १९ मई से ३१ मई '६८ तक मदुराई (मद्रास) में तथा दूसरा शिविर १५ जून से २६ जून '६८ तक पठानकोट (पंजाब) में होगा। जनतंत्र, सर्वधर्म समभाव तथा राष्ट्रीय एकात्मता में दिलचस्पी रखनेवाले कालेज तथा विश्वविद्यालय स्तर के छात्र छात्राएँ शिविर में भाग लेंगी। एक डाक टिकट भेजकर मंत्री, शांति सेना मण्डल, राजघाट, वाराणसी–१ से शिविर में सम्मिलित होने के लिए आवेदन-पत्र प्राप्त किया जा सकता है।

शिविरार्थियों द्वारा आवेदन-पत्र भरकर मदुराई शिविर के लिए ३० अप्रैल तक तथा पठानकोट के लिए ७ मई '६८ तक उपरोक्त पते पर पहुँच जाने चाहिए। —अमरनाथ

अ० भा० शांति सेना मण्डल
राजघाट, वाराणसी–१

आन्दोलन के समाचार

उत्तर प्रदेश में तूफान-अभियान

● प्रदेश में १५ मार्च से १५ अप्रैल के बीच २६५ नये ग्रामदान प्राप्त हुए। अभी तक पूरे प्रदेश में २६ प्रखण्डदान और ४७१७ *ग्रामदान प्राप्त हुए हैं।*

● मिर्जापुर में ८ अप्रैल तक २४ ग्रामदान दुद्धी प्रखण्ड में और प्राप्त हुए हैं। यह *मिर्जापुर का तीसरा प्रखण्ड है, जहाँ प्रखण्डदान* अभियान चल रहा है। अब तक जिले में २३४ ग्रामदान हो चुके हैं।

● *श्री मंगलचेतन लोक-पदयात्री* गत १३ अक्तूबर '६७ से "गीता-प्रवचन" और सर्वोदय-विचार का सतत प्रचार करते हुए *पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में पदयात्रा* कर रहे हैं।

फर्रुखाबाद जिलादान की ओर

● फर्रुखाबाद, १४ अप्रैल। इस जिले में अप्रैल ६ से १३ तक ग्रामस्वराज्य सप्ताह में मुहम्मदाबाद कमालगंज एवं बढ़पुर ब्लाकों में ग्रामदान ग्रामस्वराज्य अभियान नवयुवक कार्यकर्ता श्री रामजी भाई के नेतृत्व में चलाया गया। फलस्वरूप १६८ ग्रामों ने ग्रामदान की घोषणा की। अभियान में जिला परिषद के १४५ शिक्षक, ३० पंचायत-सेक्रेटरी, ६४ खादी-कार्यकर्ता सम्मिलित हुए। इसके अलावा *कई वकील, प्रोफेसर, डाक्टर टोलियाँ लेकर* गाँव-गाँव गये और ग्रामदान प्राप्त किये।

१३ अप्रैल को समापन-समारोह में क्षेत्र *के सैकड़ों कार्यकर्ता एवं जिले के नेताओं ने* भाग लिया। सम्पूर्ण फर्रुखाबाद के जिलादान की योजना बनायी गयी। जिलादान की महाअभियान समिति का गठन किया गया। समारोह की अध्यक्षता श्री नर्मदा प्रसाद अवस्थी ने की। प्रातःकाल नगर में *शान्ति-सेना* रैली निकाली गयी। जनता में ग्रामदान, ग्रामस्वराज्य के विचार के प्रति बहुत उत्साह पैदा हो रहा है। —*लक्ष्मीन्द्र प्रकाश*

बलिया जनपद में ग्रामदान के बढ़ते चरण

● बलिया, १७ अप्रैल। जिले में ग्रामदान का कार्य बढ़ता जा रहा है। बाँसडीह तहसील के सभी प्रखण्ड, जिनकी संख्या ६ है, १९६७ में ही ग्रामदान में शामिल हो चुके हैं। नये वर्ष में बलिया सदर तहसील में कार्य प्रारंभ हुआ है। तहसील के ४ *प्रखण्ड—बेरिया, बेलहरी, मुरलीछपरा तथा* दुबहड़ का प्रखण्ड-दान पूरा हो चुका है। पाँचवें प्रखण्ड हनुमानगंज में, जहाँ सोलहवाँ सर्वोदय-सम्मेलन सपन्न हुआ था, कार्य चालू है। पचास प्रतिशत कार्य पूरा हो चुका है। २० अप्रैल तक प्रखण्डदान हो जाने की पूरी उम्मीद है। तत्पश्चात् सदर तहसील के शेष दोनों प्रखण्डों—गड़वार और सोहाँव—में २१ अप्रैल से कार्य प्रारंभ होगा। मई के प्रथम सप्ताह में रसड़ा तहसील के पाँचों प्रखण्डों में एकसाथ काम प्रारंभ करने की तैयारी हो रही है।

दुबहड़ प्रखण्डदान का विवरण

कुल राजस्वग्राम-१३६; नाचिरागी (५२), छोटे (८) कुल ६०; ग्रामदान में शामिल ग्राम—७०; ग्राम का प्रतिशत ९०%; प्रखण्ड की कुल जनसंख्या—७०,५००, ग्रामदान में शामिल संख्या—६१,८७६, जनसंख्या का प्रतिशत ८८%, प्रखण्ड का कुल रकबा—३१,२२८, कृषियोग्य भूमि—२४,१०८; ग्रामदान में शामिल रकबा—१५,५६१; रकबा का प्रतिशत ६३%। बलिया जिले में अब तक ग्रामदान ९१६, प्रखण्डदान १०, तहसीलदान १

—रामवृक्ष शास्त्री

भारत में ग्रामदान, प्रखण्डदान, जिलादान (१८ अप्रैल '६८ तक)

दरभंगा जिलादान में	प्रखंडदान	:	४४,	ग्रामदान : ३,७२०
पूर्णिया जिलादान में	प्रखंडदान	:	३८,	ग्रामदान : ८,१२७
तिरुनेलवेली जिलादान में	प्रखंडदान	:	३१,	ग्रामदान : ३,८९६
बिहार में जिलादान : २,	प्रखंडदान	:	१४८,	ग्रामदान : २२,४५०
भारत में जिलादान : ३,	प्रखंडदान	:	२९७,	ग्रामदान : ४८,९२४

राजस्थान में शराबबन्दी सत्याग्रह

● जयपुर, १८ अप्रैल। ११ अप्रैल से कोटखावदा डिस्टीलरी पर 'राजस्थान में पूर्ण शराबबन्दी' को लेकर श्री गोकुलभाई भट्ट के नेतृत्व में सत्याग्रह प्रारम्भ हो गया। प्रातः ७ बजे शराबबन्दी सत्याग्रह समिति कार्यालय से दो जत्थे कोटखावदा डिस्टीलरी पर धरना देने के लिए रवाना हुए थे। एक जत्थे का नेतृत्व स्वयं श्री गोकुलभाई भट्ट और दूसरे का श्री यशदत्त उपाध्याय कर रहे थे। रास्ते में स्थान-स्थान पर राज्य विधान-सभा के सदस्य श्री मनोहरसिंह मेहता और श्री गोकुलभाई ने लोगों को सत्याग्रह की पृष्ठभूमि समझायी और जयपुर की अधिकाधिक जनता से शराब को बन्द कराने में सभी प्रकार का सहयोग देने का आह्वान किया। डिस्टीलरी पर चौबीसों घण्टे धरना देने का कार्यक्रम चल रहा है।

● टोंक, चित्तौड़, सिरोही, अजमेर, भीलवाड़ा, जोधपुर, सीकर, बीकानेर, झूँझुनू, उदयपुर आदि प्रमुख स्थानों पर १० अप्रैल को सत्याग्रहियों के जत्थों ने शहर में से जुलूस निकालकर शराबबन्दी के नारे लगाये। लोगों में इस कार्यक्रम के प्रति उत्साह नजर आया।

● भारत के उपप्रधान मंत्री श्री मुरारजी देसाई ने ११ अप्रैल को श्री गोकुलभाई भट्ट को भेजे गये पत्र में सत्याग्रह को आशीर्वाद देते हुए लिखा है—"आपका सत्याग्रह शुद्ध है। इससे इसका परिणाम अच्छा ही आयेगा, ऐसी मुझे आशा है।"

बिहारदान के सदर्भ में दादा धर्माधिकारी का शिविर-कार्यक्रम

पटना-अप्रैल २५-२८, शाहाबाद-२९, मार्ग में-३०। चम्पारण-मई १, २, मुजफ्फरपुर-३, ४, लहेरियासराय-५, ६, विश्राम ७-१४, दरभंगा-१२, १६, मार्ग में-१७, सन्थाल परगना-१८, १९, हजारीबाग २०, २१, गया-२२, २३, पलामू-२४, २५, राँची-२६, २७, मानभूम-२८, २९, सिंहभूमि-३०, ३१।

अब तक सहर्षा, मुंगेर और भागलपुर के कार्यक्रम हो चुके हैं।

नक्सालबाड़ी में ग्रामदान-तूफान

श्री क्षितिश बाबू के पत्र से सूचना मिली है कि नक्सालबाड़ी में ग्रामदान-अभियान चल रहा है। नक्सालबाड़ी में ६ प्रमुख व्यक्तियों ने ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये हैं, और अब वे लोग पूरे नक्सालबाड़ी का ग्रामदान कराने के लिए प्रयत्नशील हैं। स्मरणीय है कि इसके पूर्व नक्सालबाड़ी थाने में दो और खड़ीबाड़ी थाने में सात ग्रामदान हो चुके हैं।

एक समाचार

'भूदान-यज्ञ' के २९ मार्च के अंक में पृष्ठ ३२० पर 'उत्तर प्रदेश ग्रामदान' के अंतर्गत यह समाचार छपा है कि 'मेरठ जिले के हापुड़ तहसील के दो ब्लाकों, सिम्भावली तथा गढ़-मुक्तेश्वर में ६ से ११ मार्च होली का समय होते हुए भी श्री चौधरी चरण सिंह और प्रकाशवीर शास्त्री के भाषणों से उत्पन्न परिस्थिति के बावजूद जो अनुकूल नहीं थे, दस-ग्यारह हजार तक के बड़े-बड़े गाँव ग्राम-दान में शामिल हुए।'

इन पंक्तियों को पढ़कर कुछ मित्रों ने लिखा है कि सही बात यह नहीं थी। एक तो श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने भाषण दिया ही नहीं। दूसरे चौधरी श्री चरण सिंह। उन्होंने अपने विचार प्रकट किये। उन्होंने स्वीकार किया कि यह आन्दोलन गांधी-विनोबा का है। साथ ही उन्होंने अपनी राय भी जाहिर की (जो उनकी पुस्तकें पढ़नेवालों को पहले से मालूम है) कि यह जरूरी नहीं है कि भूमि सबको मिले और सब लोग खेती ही करें। खेती में कम-से कम लोगों को लगना चाहिए। जिस देश में जितने ही कम लोग खेती में लगे हुए हैं वह उतना ही अधिक समृद्ध है" आदि।

जमशेदपुर में शान्ति-कार्य

जमशेदपुर, ११ अप्रैल। यहाँ रामनवमी एवं मुहर्रम जो क्रमशः ८ और ९ अप्रैल को था, शान्तिपूर्वक सम्पन्न हुआ। दोनों जुलूसों में हजारों आदमियों ने भाग लिया। सन् १९६४ के बाद से यह पहला मौका था जब कि यहाँ दोनों सम्प्रदाय के लोगों ने एक-दूसरे के अखाड़े पर जाकर खेल-तमाशा दिखलाया। इन आयोजनों के लिए जिला शान्ति-समिति ने पूरी तत्परता दिखायी।

एक दृष्टि से ग्रामदान आन्दोलन किसीको विरोधी मानता ही नहीं क्योंकि वह स्वयं अविरोधी है। सर्वोदय विरोधवाद का दर्शन नहीं है। हाँ, स्वतंत्र विचारों के लिए भरपूर स्थान है, जैसा कि लोकतंत्र में होना चाहिए। ग्रामदान की कोशिश तो यही है कि जीवन पर विचार का शासन हो, और समाज विचार-शक्ति से चले। इस नाते श्री चरण सिंह के विचारों का स्वागत है, इसलिए भी कि वह खेती और खेतिहरों के हितैषी हैं।

लेकिन हमारा एक निवेदन है उन मित्रों से जो ग्रामदान की बैठकें करते हैं। अभियान की दृष्टि से हम कभी कार्यकर्ता-शिविर करते हैं, और कभी विचार के विभिन्न पहलुओं की सफाई की दृष्टि से गोष्ठी आदि करते हैं। कार्यकर्ता शिविर विशिष्ट विचार और कार्यक्रम को सामने रखकर किये जाते हैं। वह अवसर तरह-तरह के 'स्वतंत्र विचारों' का नहीं होता। अगर वहाँ हम 'स्वतंत्र विचार' का प्रयोग करने लगें तो परिणाम होगा भ्रम और बुद्धिभेद। किस अवसर पर हम किसे बुलायें, इसका विवेक नहीं रहेगा तो जिन्हें हम मंगल 'विभूतियाँ' समझते हैं वे अमंगलकारी सिद्ध होंगी। दुःख है कि कई बार यह विवेक हम नहीं रखते।—राममूर्ति

भूदान यज्ञ २६-४-'६८ : रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए. ३४

पूर्णिया का जिलादान विनोबाजी को समर्पित

१८ अप्रैल को पूर्णिया जिले के जिलादान-समारोह की अध्यक्षता दादा धर्माधिकारी ने की। श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने पूर्णिया जिले के आन्दोलन का परिचय देते हुए कहा, "पूर्णिया-दान की घोषणा से ग्राम-स्वराज्य के चित्र को मूर्तरूप देने के लिए गुरुतर कार्यों का मात्र द्वार खुला है। यह स्पष्ट है कि ग्रामस्वराज्य को मूर्तरूप देने का काम केवल सर्वोदय आन्दोलन में जुटे थोड़े-से कार्यकर्ताओं के द्वारा न तो सम्भव है, न वांछनीय है।" पूर्णिया जिले में जिलादान की घोषणा से ग्रामस्वराज्य की स्थापना के लिए अनुकूल स्थिति निर्माण हुई है। इस महान कार्य की सफलता से न केवल पूर्णिया का भला होगा, बल्कि पूर्णिया जिले का यह कार्य विश्व-इतिहास में उसकी एक अमर देन होगी।

इसके बाद दादा ने अपने अध्यक्षीय प्रवचन में इस बात की ओर इशारा किया कि इसे अपने कार्य का प्रारम्भ मानना चाहिए। और आज से जिम्मेदारी का और चिंता का आरम्भ मानना चाहिए। उन्होंने कार्यकर्ताओं का अभिनन्दन करते हुए कहा, "आपसे निवेदन करता हूँ कि आज के शुभ अवसर पर आप इस आन्दोलन की जो मर्यादाएँ हैं, उन मर्यादाओं का चिन्तन करें। उन मर्यादाओं को कार्यान्वित करने के लिए लोक-जीवन में और अपने जीवन में भी, उन मर्यादाओं को चरितार्थ करना पड़ेगा, उनका गम्भीरतापूर्वक आज से विचार करें।"

बिहार के मुख्यमंत्री श्री भोला पासवान शास्त्री ने कहा, "इस ग्रामदान-योजना का कार्यान्वय होना चाहिए, तभी गाँवों का समग्र विकास, सर्वांगीण विकास सम्भव है।" परन्तु आज समाज का जो मानस बना है, उसे देखते हुए मुख्यमंत्री ने कहा कि आज समाज में प्रेम का अभाव है, करुणा का अभाव है। प्रेम से जो कुछ भी करने जाते हैं, वहाँ बाधा उपस्थित हो जाती है। उन्होंने कहा कि मुख्यमंत्री की हैसियत से तथा इस जिले के निवासी की हैसियत से, जो भी आपकी कल्पना के अनुसार करने की आवश्यकता पड़ेगी, उसे करने का प्रयत्न करूँगा। उन्होंने बाबा को जिले का दान समर्पित किया।

बाबा मंच पर खड़े हो गये। उन्होंने जिलादान के काम में परिश्रम करनेवाले कार्यकर्ताओं को धन्यवाद दिया। बाबा ने इस बात पर जोर दिया कि जो लोग आज ग्रामदान में शामिल नहीं हुए हैं, उनके पास फिर से जाना चाहिए और प्रेमपूर्वक समझाना चाहिए। यह विश्वास होना चाहिए कि आज जिसे भगवान नारायण ने प्रेरणा नहीं दी उसे कल देगा।

इसके बाद समारोह की कार्रवाई समाप्त हुई। —कृष्णकुमार

पूर्णिया : जिलादान के बाद

● पूर्णिया जिले में गोधन का बड़ा ह्रास है। कृषि की उन्नति के साथ गोधन की उन्नति आवश्यक है। अतएव गोधन की विकास-योजना पर विशेष ध्यान दिया जाय। प्रत्येक अनुमण्डल में एक समुन्नत गोशाला हो, जिसके द्वारा नस्ल-सुधार के कार्य किये जायँ।

● कृषि-गोपालन एवं ग्रामोद्योग के आधार से समन्वित ग्रामविकास-योजना की जाय।

● संगठन एवं विचार-शिक्षण की दृष्टि से प्रत्येक गाँव में कम-से-कम १० सर्वोदय-पात्र या सर्वोदय-मित्र रु० ३-६५ वार्षिक के बनाये जायँ। उस आय से प्रत्येक गाँव में एक साप्ताहिक ('भूदान यज्ञ' या 'ग्रामोदय') पत्रिका दी जाय। शेष रकम का उपयोग सर्वोदय के संगठनात्मक खर्च के लिए किया जाय।

● प्रत्येक प्रखण्ड में एक सेवा-केन्द्र हो, जहाँ ३-४ कार्यकर्ताओं की टोली आकर प्रखण्ड के ग्रामदानी गाँव के संगठन, शिक्षण एवं निर्माण कार्य में ग्राम-सभाओं को सलाह-सहायता देने का कार्य करे।

—श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी द्वारा प्रस्तुत जिलादान के बाद के कार्यक्रम

● गुहियाजोरी, ४ अप्रैल : संथाल परगना में जिलादान का प्रयत्न जारी है। जवल सारठ में कार्यकर्ताओं की एक टोली घूम रही है। महाराष्ट्र के वरिष्ठ कार्यकर्ता श्री गोडुगाँवकरजी के साथ अन्य कार्यकर्ता प्रचार-यात्रा कर रहे हैं। तीन गाँव ग्रामदान में मिले हैं।

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड; या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ३१

शुक्रवार, ३ मई, '६८

इस अंक में

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन ४२८५

विकास का क्रम और क्रांति का क्षण

जमाने की माँग और सन्तों के उपदेश इकट्ठे होते हैं तो क्रांति होती है। 'सत्य' की बात हमेशा के लिए अच्छी है, लेकिन आज की हालत ऐसी हो गयी है कि उसके बिना समाज टिकेगा नहीं। युग की माँग को जाहिर करनेवाला सन्त युगपुरुष हो जाता है। उसकी वाणी में क्रांति की शक्ति मिल जाती है।

भारत में शस्त्र सीमित करने का प्रयोग हुआ। लेकिन शस्त्र से संरक्षण की बात भी रही। अंग्रेज आये तो प्रजा को निःशस्त्र बनाये। उसके पहले तक किसीने ऐसा नहीं किया था।

भारत के लोगों के पास शस्त्र थे नहीं, इसलिए उनके पास शस्त्र की शक्ति नहीं थी, अतएव भारत कभी तक गुलाम रहता। इस Historical neccessity (ऐतिहासिक आवश्यकता) में अहिंसा की बात गांधीजी ने कही।

सनातन सत्य को युग की आवश्यकता के साथ जोड़नेवाले युगपुरुष होते हैं, उनकी बातों का Short range (अल्पावधि) में असर होता है। महापुरुष की बात का युग की माँग के साथ मेल नहीं होता पर वे धर्मपुरुष हो जाते हैं। उनका Long range (दीर्घावधि) में असर होता है।

प्रवाह चार प्रकार के होते हैं :

स्वार्थ प्रवाह : हर व्यक्ति अपने लिए कुछ-न-कुछ भला चाहता है, अन्न, वस्त्र, निवास, औषध, शिक्षा, आराम, मनोरंजन के साधन। लेकिन यह प्रवाह समाज प्रवाह के खिलाफ जायगा, तो स्वार्थ टिकेगा नहीं।

लोकप्रवाह : भारत राष्ट्रवादी है, लेकिन परमाणु युग में वह चलेगा नहीं, लोकप्रवाह, युगप्रवाह के खिलाफ जायगा। इसलिए पूरी शक्ति विश्व स्तर की होनी चाहिए।

युगप्रवाह : युग की माँग के अनुसार दुनिया को आना होगा, विश्वराष्ट्र की दिशा में।

ईश्वरप्रवाह : युग अगर ईश्वरप्रवाह के खिलाफ जायगा तो भी चलेगा नहीं। विश्वराष्ट्र सीमाहीन भौतिक उन्नति करने में लगा तो ईश्वरप्रवाह के खिलाफ जायगा और प्रलय आयगा।

क्रांति तो एक क्षण में होती है, विकास धीरे धीरे होता है। जीवन में विकास और मृत्यु में क्रांति! क्षण में होनेवाली क्रांति की पूर्वतैयारी में श्रम करना होता है। विकासक्रम क्रांति के अनुकूल चला तो क्रांति होगी।

रचनात्मक कार्यक्रम क्रांति की पूर्वतैयारी है, लेकिन क्रांति अभिमुख नहीं है। बहुत सारे रचनात्मक कार्यक्रम सरकार के पेट में हैं। कुछ रचनात्मक कार्य चाहे और विरोध के होते हुए भी क्रांति के अनुकूल नहीं हैं।

ठाकुरगंज (पूर्णिया) ७ अप्रैल '६८ —विनोबा

गांधी विचार

जबरदस्ती, असहिष्णुता नहीं

हमारा अत्याचार, अगर हम अपनी इच्छा दूसरों पर लादें, उन मुट्ठीभर अंग्रेजों के अत्याचार से हजार गुना खराब होगा, जिन्होंने नौकरशाही को जन्म दिया है। उनका आतंकवाद एक ऐसे अल्पमत का लादा हुआ है, जो विरोध के बीच में अस्तित्व के लिए संघर्ष करता है। हमारा आतंकवाद बहुमत का लादा हुआ होगा, इसलिए वह उससे ज्यादा बुरा और सचमुच ज्यादा दानवी होगा। इसलिए हमें अपने संग्राम में से हर प्रकार की जबरदस्ती को निकाल देना चाहिए। अगर हम असहयोग के सिद्धान्त पर स्वतन्त्रतापूर्वक डटे रहनेवाले थोड़े ही लोग हों, तो हमें दूसरों को अपने विचार के बनाने की कोशिश में मरना पड़ सकता है। मगर यह तो कहा जायगा कि हमने अपने पक्ष का बचाव और प्रतिनिधित्व सचाई के साथ किया।

अगर हम असहिष्णुता से दूसरों के मत का दमन करेंगे, तो हमारा पक्ष बिगड़ जायगा। कारण, उस सूरत में हमें *यह कभी मालूम नहीं हो पायगा कि कौन* हमारे साथ है और कौन हमारे विरुद्ध। इसलिए सफलता की अपरिहार्य शर्त यह है कि हम *अधिक-से-अधिक मत-स्वातंत्र्य* को प्रोत्साहन दें। अपने मौजूदा 'स्वामियों' से हमें कम-से-कम इतना सबक तो सीख ही लेना चाहिए। उनके जाब्ता फौजदारी में उनके खिलाफ राय रखने के लिए सख्त सजाएँ रखी गयी हैं। और उन्होंने हमारे देशवासियों में से कुछ अत्यन्त उदात्त *व्यक्तियों को अपनी राय जाहिर करने* के कारण गिरफ्तार किया है। हमारा असहयोग इस प्रणाली के विरुद्ध एक खुला *विद्रोह है। मत पर लगाये गये इस* प्रतिबन्ध के विरुद्ध लड़ने में हमें यही प्रतिबन्ध दूसरों पर लगाने का अपराधी *नहीं बनना चाहिए।*

सम्पादकीय

इसके बाद किसका नम्बर ?

गत १९ अप्रैल को रेडियो पर तीन खबरें एक साथ आयीं। एक, पूर्णिया में मुख्यमंत्रीजी ने जिलादान समर्पित किया; दो, गुजरात के राज्यपाल ने अहमदाबाद के ग्रामदान-सम्मेलन में सन् १९६९ के लिए ग्रामदान के दृढ़ कार्यक्रम पर जोर दिया; तीन, मध्यप्रदेश सरकार ने गांधी-जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में उन तीन डाकुओं को छोड़ दिया *जिन्होंने सात वर्ष पहले विनोबाजी के सामने आत्म समर्पण किया था।*

ये तीन खबरें एक साथ सुनायी गयीं, लेकिन कोई मेल भी है ? देखने में इनमें से कोई भी ऐसी घटना नहीं है जिसका देश के आज के जीवन में कोई महत्व दिखायी देता हो, लेकिन क्या इतना भी मानना गलत होगा कि ये लक्षण हैं उस राष्ट्रीय चेतना के जो परेशान है किसी चीज की तलाश में, जो उसे सरकार या बाजार के परिचित स्थानों में नहीं मिल रही है। चेतना को तलाश है नयी रोशनी की। वह देख चुकी है कि नये सवालों के लिए पुराने तरीकों की नहीं, नये तरीकों की जरूरत है।

भारत का नागरिक ग्रामदान-जिलादान-राज्यदान की खबरें अखबार में पढ़ता है, रेडियो पर सुनता है। वह ऊपर देखता है और सोचता है, यह सब मैं क्या सुन रहा हूँ ? क्या देख रहा हूँ ? केवल अपने दुःखों का क्रूर उपहास, कुछ भ्रमित आदर्शवादियों का *मिथ्या प्रयास, या सचमुच मुक्ति का कोई नया संदेश, जिसकी चमक को अभी मेरी आँखें* पकड़ नहीं पा रही हैं ? उसने आशाभरी निगाहों से ग्रामदान को देखना शुरू कर दिया है।

बिहार के १७ जिलों में से दो जिलों का दान पूरा हो चुका, १५ बाकी हैं। और, बिहारदान के लिए घोषित तारीख के पूरा होने में बाकी है सिर्फ ४ महीने और कुछ थोड़े दिन। दो जिले मिल गये, इससे ज्यादा खुशी इस बात की है कि अब सिर्फ पन्द्रह रह गये हैं। पन्द्रह में जहाँ पाँच-छह और आये कि बाकी का संकोच देखते-देखते टूट जायगा। और, अगर बिहार आ गया तो दूसरे राज्य क्या बैठे देखते रहेंगे ? बिहार के अलावा ८३ जिलों का और दान हो जाय तो एक सौ की शानदार संख्या पूरी हो जाय। १९६९ के लिए इससे बड़ा दूसरा क्या संकल्प होगा ? उत्तर प्रदेश ने तो 'उत्तर प्रदेश दान' की बात सोची भी है।

अभी 'दान' पूरा हो रहा है, काम शुरू होना बाकी है। हम इतना ही संतोष कर सकते हैं कि हमें लोक-हृदय में प्रवेश मिल गया है। किसी समय ऐसा लगने लगा था कि लोकहृदय का रास्ता हमारे लिए बंद हो गया है, लेकिन 'दान' से सिद्ध हो गया कि भारत की आत्मा अभी जीवित है। उसके अन्दर जरूर कोई ज्योति जल रही है जिसके *ऊपर सिर्फ राख पड़ गयी है। उसे हटाते ही ज्योति चमक उठती है।*

समर्पण का कृत्य भले ही मुख्यमंत्री या राज्यपाल के हाथों सम्पन्न हो, पर इस समर्पण के पीछे जिस संकल्प की घोषणा है उसकी पूर्ति जनता का ही काम है। वह बड़ा काम है; बहुत बड़ा है, इतना बड़ा है कि छोटों की शक्ति के बिना पूरा हो नहीं सकता। युग की धारा बदलने की शक्ति छोटे लोगों में ही होती है। गोवर्धन के उठाने के लिए ग्वालबालों का हाथ लगना जरूरी था। पुरोहित ने कथा कह दी, यजमान ने श्रद्धा के साथ सुन ली, लेकिन सुनने के बाद की सारी साधना यजमान को ही पूरी करनी है। क्रान्ति के इस यज्ञ में यजमान जनता है। जिलादान होते ही क्रान्ति कार्यकर्ता की शक्ति के बाहर चली जाती है। यह कार्यकर्ता का गौरव है कि उसने क्रान्ति को जनता के पास पहुँचा दिया। अब कार्यकर्ता दृष्टि देगा, और जनता अपनी शक्ति से नयी सृष्टि करेगी। वह सृष्टि भी क्या ? गाँव-गाँव में स्वराज्य, इससे कम कुछ नहीं। सन् १९४७ की स्वतंत्रता में 'स्व' नहीं प्रकट हुआ था, इस बार वह पीछे न रहने पाये।

पूर्णिया के बाद किसका नम्बर है ?

—राममूर्ति

गम्भीर दायित्व और उत्कट चिन्तन की वेला

पूर्णिया जिलादान समारोह में दादा धर्माधिकारी का अध्यक्षीय भाषण (पूर्वांश)

आज का अवसर केवल अभिनन्दन का एक शुभ अवसर ही नहीं है, बहुत गंभीर है, बहुत पवित्र है और मेरी अपनी धारणा तो ऐसी है कि हमारे लिए कुछ चिंता का भी विषय है। सफलता मनुष्य को प्रेरणा देती है और नम्र भी बना देती है। सफलता में एक प्रकार का खतरा है। सफलता कभी-कभी मनुष्यों को दायित्व की तरफ से उदासीन बना देती है। मैं ऐसा मानता हूँ कि आज से आपकी और हमारी जिम्मेवारी का और चिन्तन का आरम्भ होना चाहिए। यह ग्रामदान के बाद प्रखण्डदान और जिलादान का जो सिलसिला चला है, इसकी परिसमाप्ति बिहारदान में हम चाहते हैं। आज हमारे लिए आत्मपरीक्षण का और बहुत उत्कट चिन्तन का अवसर है। सुयोग तो है ही। सुयोग यह है कि आज लौकिक सत्ता और धार्मिक सत्ता दोनों का संयोग हो रहा है।

लोकहृदय के प्रतिनिधि

पूज्य बाबा की प्रेरणा से और उन्हीं के प्रताप से हम इस मुकाम तक, इस मंजिल तक पहुँच सके हैं। उनका नाम इस आन्दोलन के साथ जुड़ा हुआ है इसलिए हमारी जिम्मेवारी और भी अधिक बढ़ जाती है। मैं जब कल यहाँ आ रहा था और इस अवसर के विषय में सोच रहा था तो शुकाचार्य का वर्णन जिस श्लोक में किया गया है वह श्लोक हठात् मेरे मन में बार-बार चक्कर काटने लगा। जब शुकाचार्य परिव्राजक होकर घर से निकले तो उनके पिता सत्यवतीनन्दन वेदों में पारंगत व्यास मुनि पीछे-पीछे दौड़े विरह-कातर होकर। और हे बेटा, हे पुत्र कहकर पुकारने लगे। तो कवि लिखता है तन्मयतया तरवोऽभिनेदुः जितने वृक्ष थे वे सब प्रतिध्वनित हो उठे तन्मयता से। तम् सर्वभूतहृदयम् मुनिमानतोऽस्मि उस मुनि को मैं वन्दन करता हूँ जो सर्वलोक हृदय है। हमने हमेशा यह माना कि बाबा लोकहृदय के प्रतिनिधि हैं। युग की आकांक्षा के मूर्तस्वरूप हैं। उनके व्यक्तित्व में और उनके शब्दों में उनके उद्गारों में आज के युग की आकांक्षाएँ मुखरित हुई हैं। यदि यह सच है कि लोकहृदय के वे प्रतिनिधि हैं तो आपकी और मेरी जिम्मेवारी इसलिए और भी बढ़ जाती है कि लोगों की अपेक्षाएँ हमसे उतनी ही अधिक होंगी।

किसी दूसरे क्षेत्रों में जो पाप होता है कहते हैं कि पुण्य क्षेत्रों में वह पाप छूट जाता है। किन्तु पुण्य क्षेत्र में जो पाप होता है वह वज्रलेप हो जाता है, वह कहीं नहीं छूटता। दूसरे क्षेत्र में, दूसरे जमाने में जो दोष हैं, जो गलतियाँ हैं, जो अपराध हैं उनको तो लोग दैनन्दिन व्यवहार का अंग ही मानते थे। लेकिन इस क्षेत्र में, इस पुण्य पुरुष के नाम पर जो आन्दोलन चलेगा उसमें कोई अंश या कोई हिस्सा जरा-सी भी कोई बर्दाश्त नहीं कर सकेगा। मैं हूँ, कल मुझे कोई सिगरेट पीते हुए देख लेता है तो इतना ही कहेगा कि पान-सुपारी तो खाता ही था, पहले चाय भी पीता था अब सिगरेट पीने लगा तो कौन बड़ी बात हो गयी? लेकिन यदि कल कोई बाबा को ही सिगरेट पीते हुए देख ले तो वह सिर्फ बाबा को ही दोष नहीं देगा। भूदान-ग्रामदान का आन्दोलन ही खतम हो जायगा। इसकी जिम्मेवारी हम लोगों पर, जो अपने आपको उनका अनुयायी मानते हैं उन पर है। अनुयायी से मेरा मतलब शिष्य से नहीं है। मैं अनुयायी से इतना ही मतलब समझता हूँ कि इस काम को हम एक बहुत अच्छा लोक-कार्य मानते हैं, उनके कदमों पर उस कार्य में हम चलना चाहते हैं—अपनी यथाशक्ति, यथामति के अनुरूप।

पौरोहित्य की अलौकिकता

मुख्यमंत्रीजी भी यहाँ उपस्थित हैं। इसीलिए मैंने कहा कि लौकिक सत्ता के, राज्यसत्ता के प्रतिनिधि भी यहाँ उपस्थित हैं। इन दोनों के समक्ष, इन दोनों की उपस्थिति में यह दान हो रहा है। विनोबाजी एक तरह से एक अद्भुत पुरोहित हैं। वेदों में और हमारे पुराने ग्रन्थों में अग्नि को देवताओं का मुख माना है। अग्नि में आहुतियाँ दी जाती हैं और माना यह जाता है कि वे हवि देवताओं को पहुँचती हैं। अग्नि की तरह पुरोहित को भी भगवान का, देवों का मुख माना है। लेकिन आप जानते हैं कि जितने देवताओं के पुरोहित आज तक हुए वे सब पेटू हुए। और अग्नि में आज तक जो आहुतियाँ दी गयीं वे सारी भस्मसात् हो गयीं। यह पौरोहित्य ऐसा है कि जिस पौरोहित्य में स्वीकार है, केवल तटस्थ स्वीकार है, लेकिन अपने लिए नहीं, देवताओं के लिए भी नहीं। बल्कि जो दान देते हैं उन्हीं के लिए एक अद्भुत पौरोहित्य है। इस पौरोहित्य की अलौकिकता एक महान खोज में है। आज की राज्यसत्ता और आज की धार्मिक सत्ता दोनों लोकसत्ता की खोज में हैं। यह लोक कहीं दिखाई नहीं दे रहा है। हम उसको भूल गये हैं।

एक प्रसंग मुझे याद आता है। एक अमीर अपनी कोठी पर बैठा हुआ था मसनद से टिककर। भिखारी आया, भगवान तुम्हारा भला करे, एक पैसा मिल जाय वगैरह लगातार रट लगाता रहा। थोड़ी देर तक अमीर ने सुना और बाद में कहा—जाओ यहाँ कोई आदमी नहीं है। अब भिखारी खड़ा ही है, माँगे ही जा रहा है। अमीर ने कहा कि तुमसे दो बार कहा, तीन बार कहा कि कोई आदमी नहीं है, तुम सुनते नहीं हो? भिखारी बोला—हुजूर सुन तो रहा था लेकिन मैं देख रहा था और सोच रहा था कि मैं आदमी के ही सामने खड़ा हूँ, मुझे पता नहीं था कि यहाँ कोई आदमी नहीं है। इस देश में और आज के हमारे समाज में वह आदमी कहीं है नहीं। आज तक का जितना इतिहास बना, कभी वीर पुरुषों ने बनाया, कभी राजाओं ने बनाया, कभी साधु-सन्तों ने बनाया, कभी शस्त्रधारियों ने, योद्धाओं ने बनाया। लेकिन उसने कोई इतिहास नहीं बनाया जिसके हाथ में कुदाली और कुल्हाड़ी है, जिसके हाथ में हँसिया और हथौड़ा है। जिसने इतिहास बनानेवालों के आयुध और

औजार बनाये वह इतिहास का कर्ता नहीं है, इतिहास का विषय है।

ग्रामसंकल्प के पीछे सहजीवन की यथार्थ आकांक्षा

ग्रामदान का यह आन्दोलन इतिहास के उस भावी विधाता की खोज के लिए है। 'लोक' शब्द के दो अर्थ है। एक तो व्यक्ति और दूसरा समुदाय। 'लोक', 'पिपुल', 'पब्लिक' वह समुदाय है, जिसका कोई एक मन होता है, जिसमें सहजीवन की आकांक्षा होती है, सहजीवन का संकल्प होता है। अंग्रेजी में इसे 'कम्युनिटी' भी कहते है। हमारे यहाँ उसे 'ग्राम' कहते हैं। केवल कुछ झोपड़ियों का समूह, थोड़े-से मनुष्यों का झुंड, ग्राम नहीं है। ग्राम मनुष्यों का वह समूह है, वह समुदाय है, जो एक-दूसरे के साथ रहना चाहते है। आपने बाबा को कई बार यह कहते सुना होगा कि अगर दरअसल, यथार्थ ग्राम-संकल्प है, उसके पीछे सहजीवन की यथार्थ आकांक्षा है तो जहाँ भूमिदान हो चुका है और जमीन का वितरण हो चुका है, वहाँ बेदखलियाँ होनी ही नहीं चाहिए। संकल्प में अद्भुत शक्ति होनी चाहिए। शस्त्र की अपेक्षा, कानून की अपेक्षा, विधि-विधान की अपेक्षा, राज्य-सत्ता की अपेक्षा और धन-सत्ता की अपेक्षा मनुष्यों के सामुदायिक संकल्प में अधिक शक्ति होनी चाहिए। सामुदायिक संकल्प में जो शक्ति है, मित्रो वह कानून में कभी आ ही नहीं सकती। कानून दो तरह का होता है। कुछ लोग विधिपरायण, कानूनपरस्त होते हैं। मतलब यह है कि बगैर दंड के भय के वे नियमों का पालन करते है। सभ्यता के संस्कारों के कारण नियमों का पालन करते हैं। दूसरे कुछ लोग होते हैं, जिनका नाम है कानूनबाज लोग। अंग्रेजी में उन्हें 'लिटीगेंट्स' कहते हैं। एक दफा ऐसा हुआ, दो वकील एक-दूसरे के अगल-बगल में रहते थे। एक दीवार दोनो के घरों के बीच में थी। वह दीवार गिर गयी। जिस वकील की दीवार थी उसकी छत पर नहीं गिरी, दूसरे की छत पर गिरी। अब इस वकील ने उसको नोटिस दिया कि आपकी दीवार का इमला→

पूर्णिया जिलादान :

क्रमिक विकास	ग्रामदान	प्रखण्डदान
१. पुराने ग्रामदान : रायपुर-सम्मेलन के पूर्व	२४	—
२. सुलभ ग्रामदान : जे० पी० की यात्रा (१ दिसम्बर '६३) में	११	—
३ ,, ,, मई '६५ तक	२६	—
४. विनोबा के बिहार-आगमन (११ सितम्बर '६५) तक	९०	—
५. विनोबा के रानीपतरा-निवास (१ जुलाई '६५) तक	१,६६९	१
६. विनोबा-आगमन (११ मार्च '६८) तक	६,१०२	३६
७ ६ अप्रैल '६८ तक	२३५	१
कुल :	८,१५७	३८

प्रखण्डदान के आँकड़े

प्रखण्ड का नाम	प्रखण्ड की कुल		ग्रामदान में शामिल	
	जनसंख्या	रकबा	जनसंख्या	रकबा
पूर्णिया सदर अनुमण्डल				
१. रूपौली	७६,६२२	६१,२१९-००	६१,६१०	५,५९०-६५
२. भवानीपुर	५०,१३०	३९,८६८-५०	४२,७५२	३,५६६-६०
३. धमदाहा	९९,६९२	८७ १३०-६५	७५,३५४	६,५६३-७८
४. बड़हरा	७४,३४९	५४,२२३-५५	५६,७२६	७,०५६-२५
५. बनमनखी	१,१३,४०७	९५,१९१-०१	९१,३७३	१५,४५१-१५
६. सदर पूर्व	७४,४०४	१,१२,६००-३७	५९,६१५	६,२६४-३१
७. कृत्यानन्दनगर	६४,७०२	२३,२६२-५८½	५७,३७४	२४,६६१-८०
८. कसबा	७७,११८	६६,२८६-७४	६२,४११	७,८५०-१४
९. वायसी	७०,९८१	११,९४७-६६½	५८,६३५	८,५८०-२२
१०. वैसा	४३,९४३	४८,४५६-६४	३७,४०७	८,७७९-२७
११ अमौर	६०,०६९	५३,९९९-००	४२,७९९	१०,३७६-१०
कुल :	८,०५,४१७	६,७३,२१५-७२	६,५६,०५६	१,०४,७४३-३०
कटिहार अनुमण्डल				
१. मनिहारी	७१,५०२	६२,३०७-१३	५४,८११	८,६९२-३०½
२. बरारी	१,१५,८००	२०,२९८-९९	९०,८४९	१७,२४९-६५
३. आमदाबाद	५६,९७४	६७,४३७-०८	४६,७५१	९,२५४-०३
४. बारसोई	९१,१३८	१४,३८८-४५	६६,५२८	१०,०४९-७७
५. कटिहार	६२,८०७	१४,७०६-३२	४७,९२२	११,६३३-९२
६. बलरामपुर	४०,५२२	५,९२४-६०	३८,६३१	५,११०-३३
७. प्राणपुर	५४,३२१	६१,६१५-४७	४९,२३५	७,५३४-८२½
८. कदवा	७९,८६०	१०,८९५-७९	६०,५१७	९,०१३-०४
९. फलका	६९,४४९	६२,५९६-१७	५६,०५८	५,५९०-९१
१०. आजमनगर	८९,६०८	३५,१५०-१५	७०,३४७	१६,७३५-५५
११. कोढ़ा	७२,४३९	४२ ३७५-१८	५७,४३९	१९,८९३-३०
कुल :	८,०४,४२०	३,९७,६९४-३३	६,४२,०८८	१,२१,७५७-६३

इस कोष मे स्वस्थ और परिपुष्ट चित्त का दर्शन हो।

३ मई, '६८

वर्ष २, अंक १९] [१८ पैसे

नक्सालबाड़ी मे एक दूसरा तूफान

नक्सालबाड़ी से लगभग १ मील दूर मेची नदी के किनारे एक गाँव है बारिसजोत। मेची नदी भारत और नेपाल के बीच बहती है, और दोनों देशो की सरहदे बनाती है। लेकिन ये सरहदे तो राजाओ और राजनीतिज्ञो के लिए होती हैं जनता के लिए नही। बारिसजोत के लोगो की रिश्तेदारियाँ नदी पार नेपाल के गाँव म हैं। आना जाना, लेन-देन सब चलता है।

नक्सालबाड़ी का यह क्षेत्र पिछले साल बहुत अशांत रहा। सारे देश और दुनिया मे उसकी चर्चाएँ हुईं। क्योंकि कम्युनिस्ट पार्टी के लोगो ने वहाँ के बेजमीन और गरीब आदिवासी मजदूरों को संगठित करके मालिकों के खेतों-खलिहानो और अनाज के भण्डारो पर धावा बोल दिया था। लूटपाट, मार काट और पुलिस की दौड़ धूप से पूरा इलाका दहल उठा था।

बारिसजोत के एक प्रमुख ग्रामवासी श्री रघुनाथ मिश्र से जब मैंने उन दिनो की बातें पूछी, तो उन्होने बताया कि "हम सब उस समय गाँव छोड़कर नेपाल भाग गये थे। परिवार को वहीं अपने किसी परिचित के यहाँ छिपा दिये थे, और खुद नदी के किनारे खड़े-खड़े दूर से हालचाल ताकते थे। पता नहीं कब लोग आयें और घर लूटपाट न जायँ। लेकिन कोई आया नहीं। जब पुलिस बहुत बड़ी ... मे आयी तो हम लोग फिर गाँव म लौटकर गये।

जून १९६७ मे आसपास लूटपाट का तूफान आया था। वह तूफान थमा, तो वहाँ एक दूसरा तूफान इस साल फरवरी-

नेता की ललकार : विनोबा की पुकार

मार्च १९६८ में आया। पहले तूफान में तो वारिसजोत बच गया था, लेकिन इस तूफान में नहीं बच सका।

लेकिन दोनों तूफानों में एक बहुत बड़ा फर्क है। वह तूफान आया तो लोग थर्रा उठे। खून बहा, तीर और ढेले पत्थर से लेकर गोली तक चली। उस तूफान ने दिल्ली की सरकार के कान खड़े कर दिये। पुलिस के दस्ते आये और तूफान के दमन का दौर शुरू हुआ। कुछ लोग जेलों में भरे गये। कुछ लोग जंगलों में छिप गये। पूरा इलाका भय से कांप उठा, कोई कम्युनिस्टों के भय से, तो कोई पुलिस के।

और इस तूफान के बाद आया दूसरा तूफान, लेकिन ऐसा जिसके आने से न मालिक डरे, न मजदूर डरे, न सरकार चौंकी। पुलिस की बन्दूक, मजदूरों के ढेले-पत्थर, आदिवासियों के तीर-कमान और मालिकों के घर छोड़कर भागने की कोई जरूरत नहीं रह गयी। वह दूसरा तूफान है ग्रामदान का।

नक्सालबाड़ी क्षेत्र के गाँव-गाँव में ये पोस्टर बंगला और हिन्दी में लगाये गये।

पहले गाँव-गाँव में ग्रामदान के पोस्टर चिपकाये गये। कार्यकर्ताओं ने गाँव-गाँव, घर-घर जाकर लोगों के मन की बातें सुनीं, और अपनी बातें बतायीं। उन्होंने मालिकों से कहा, "गरीबी रहेगी, बेजमीनवाले रहेंगे, दुःख रहेगा, तो आपकी अमीरी, जमीन-जायदाद और सुख-सुविधाएँ नहीं रहेंगी। दुश्मन आपके मजदूर नहीं, उनकी गरीबी है।" मजदूरों से कहा, "जो आग आप सुलगा रहे हैं, भड़का रहे हैं, उसमें आप नहीं जलेंगे, ऐसी निश्चिन्तता कहाँ है? नेताओं की ललकार पर पड़ोसियों के घर फूँकनेवाले का खुद का घर भी जलकर राख होगा। यह ठीक है कि आज के जीने से बेहतर है अच्छी जिन्दगी की कोशिश करते-करते मर जाना। लेकिन इस कोशिश में दुःखी-सुखी सबकी जिन्दगी स्वाहा हो जाय तो इसे बुद्धिमानी की बात नहीं मानी जायगी।" फिर दोनों तबके के लोगों को समझाया, "आज की हालत तो नहीं ही चलनेवाली

ग्रामदान

ग्रामदान का चले तूफान,
गाँव में आये नयी जान!
मिलकर सभी अमीर-गरीब,
गाँव में लायें ग्रामस्वराज्य!
नवयुग की है यही पुकार,
गाँव-गाँव में ग्राम परिवार!

—पश्चिम बंग सर्वोदय मण्डल

हमारे आदमी हैं

गांधीजी ने चंपारण में एक आश्रम बनाया। दिनभर चर्चाएं चलतीं। अभ्यागतों से बातें होतीं। स्वराज्य के लिए तैयारी हो रही थी। गांधीजी के बारे में लोगों को कौतूहल-सा रहता।

वल्लभभाई पटेल अहमदाबाद में वकालत करते थे। गांधीजी की बातें जब शाम को क्लब में निकलतीं तो वे खिल्ली उड़ाया करते। लेकिन अपने हृदय में खिंचाव महसूस करते थे। वे बरबस वहां जा पहुंचे। देखते क्या हैं कि गांधीजी तरकारी काट रहे हैं और देश की स्वतंत्रता की बातें कर रहे हैं। अजीब-सी बात थी। लेकिन वल्लभभाई के दिल पर गांधीजी की सचाई का बहुत प्रभाव पड़ा। वे अनजाने ही गांधीजी के हो गये।

आश्रम चलता था और स्वराज्य की बातें चलती थीं। अंग्रेज सरकार को बात अखरती थी। यह कोई मामूली आश्रम नहीं है, ऐसा उसको लगता था। गांधीजी के जाल में अगर इस तरह नौजवान फंसते गये तो अंग्रेजी सल्तनत को धोखा होगा, ऐसा डर उसको लग रहा था। गांधीजी को किसी-न-किसी बहाने अगर जेल में ठूंस दिया जाय तो ये सब लोग तितर-बितर हो जायेंगे, ऐसी धारणा सरकार की थी। सरकार ताक में थी ही और गांधीजी को गिरफ्तार किया गया। उन पर केस चलाया गया। उसमें भी कुछ अजीब-सा बर्ताव गांधीजी ने किया। जो रास्ता लोग अख्तियार करते थे, उससे बिलकुल जुदा ही रास्ता उन्होंने अख्तियार किया।

जब न्यायाधीश ने उनसे पूछा, "तुम कौन हो?" सहज भाव से गांधीजी ने कहा, "बुनकर और किसान हूं।" सब देखते ही रह गये। कैसा गजब का आदमी है! इंग्लैंड में जाकर बैरिस्टरी पास कर आया है, लेकिन अपने को किसान और बुनकर कहलाते इसे शर्म नहीं आती।

फिर न्यायाधीश ने कहा, "आप अंग्रेजी सल्तनत के खिलाफ लोगों को भड़का रहे हैं, यह जुर्म है।"

गांधीजी ने कहा, "यह शैतान सरकार है और इसकी मुखालिफत करना मैं अपना धर्म मानता हूं। लोगों में इसके खिलाफ असंतोष पैदा करना मैं अपना फर्ज मानता हूं।"

न्यायाधीश ने कहा, "जानते हो इसका क्या फल होगा?"

गांधीजी ने कहा, "हां-हां, जानता हूं। मैं तो आपसे प्रार्थना करना चाहता हूं कि अपने देश के लिए काम करना अगर आप गुनाह समझते हो तो मैंने जान-बूझकर वह गुनाह किया है और आपके बस में हो उतनी ज्यादा सजा आप मुझे दें। हां, अगर आपको लगे कि जो कुछ मैं कर रहा हूं, वह ठीक है तो आपको चाहिए कि आप इस्तीफा देकर मेरे साथ हो लें।"

न्यायाधीश महोदय ने छः साल की कड़ी सजा देकर गांधीजी को जेल की दीवारों के पीछे बन्द कर दिया। लेकिन इधर देश के करोड़ों लोगों के हृदय में गांधीजी की मूर्ति विराजमान हो गयी। कैसी निडरता है! कैसा साहस है!! सारे देश में एक नयी चेतना दौड़ गयी। अंग्रेजी सल्तनत की सारी साख एक छोटे-से आदमी ने खाक में मिला दी। गांधीजी की गिरफ्तारी का देश के कोने-कोने में असर हुआ। गांधीजी की सजा की खबर आग की तरह सब दूर तक फैल गयी। बंगाल के एक गरीब नौकर को उसके मालिक ने रोता हुआ देखा। मालिक ने पूछा, "क्यों भाई, रोते क्यों हो?"

नौकर बोला, "गांधीजी गिरफ्तार हो गये हैं। छः साल की कड़ी सजा उन्हें दी गयी है। अभी यह खबर सुनी तो आप-ही-आप आंसू आने लगे।"

मालिक ने कहा, "अरे बेवकूफ, गांधीजी तेरे कौन होते हैं जो तू रो रहा है?"

नौकर बोला, "गांधीजी हमारे आदमी हैं। उन्होंने न्यायाधीश को बताया कि—'मैं एक बुनकर हूं, किसान हूं।'"

गांधीजी सचमुच ही श्रमिकों के आदमी थे। वे कहा करते थे, "मैं दरिद्रनारायण का उपासक हूं।"

बहुगुणी लोबिया

लोबिया एक बहुगुणी फसल है, क्योंकि यह फसल हमारे अत्यन्त काम की है।

लोबिया दाल के लिए, चारे के लिए और हरी खाद के लिए उगाते हैं। लोबिया का चौथा लाभ यह है कि वह खेत की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती है। लोबिया की जड़ों में पाये जानेवाले कीटाणु हवा से नत्रजन लेते हैं और खेत को देते है, साथ ही खेत के माइक्रोवाइल जीवाणु के भी सक्रिय हो जाने से खेत की उर्वरा शक्ति बढ़ती है। फसल कट जाने पर उसमे बोयी गयी फसल को विशेष तत्त्व मिलता है। यदि लोबिया की फसल जोरदार रही हो तो १० से १२३ पौण्ड तक अतिरिक्त नत्रजन मिलता है। यदि लोबिया हरी खाद के रूप मे प्रयोग की जाय, तो २०-२५ पौण्ड नत्रजन प्रति एकड़ मिलता है।

लोबिया का एक और भी गुण है। उसकी फलियों की बहुत अच्छी तरकारी बनती है। इन ५ विशेष गुणों के कारण लोबिया की खेती बहुत ही लाभदायक है।

बोने का समय : लोबिया सिंचाई के साधन होने पर जायद में मार्च के प्रथम सप्ताह या खरीफ मे जून-जुलाई मे बोयी जानी चाहिए।

खेत का चुनाव : खेत विशेषकर दोमट तथा अच्छे जल निकासवाला चौरस होना चाहिए।

खेत की तैयारी : भारी पैदावार लेने के लिए खेत मे ७५-१०० मन गोबर की खाद, २० किलो से २ मन 'सुपरफास्फेट' और ३५ किलो 'म्युरियेट आफ पोटाश' देना चाहिए।

यदि खेत सूखा है और नमी कम है तो पलेवा करके खेत की जुताई करें। इसकी पहचान मूल निकालने समय हो जायगी। यदि मिट्टी भुरभुरी हो और हल से मूल की मिट्टी दोनो ओर चिपक जाय तो पर्याप्त नमी है। यदि ऐसा न हो तो गोबर की खाद छितराकर पलेवा करें। ओट आने पर मिट्टी पलटनेवाले हल से एक जुताई करें। पाटा लगाकर हैरो चलाकर खरपतवार इकट्ठा करें, फिर पाटा लगाकर ३-४ बार देशी हल से जुताई करें। दीमक की रोकथाम के लिए आखिरी जुताई पर खेत मे १५ किलो बी० एच० सी० चूर्ण १०% बुरके।

किस्में : पूसा सावनी, पूसा बरसाती, टाइप-५२६६, टाइप-५२६६, कल्यानपुर मूदेदार, टाइप-५६०३ ए०।

बीज-शोधन : भारी उपज के लिए बीज को कैप्टान या थिराम १ भाग दवा ४०० भाग बीज मिलाकर बोयें। १/३ चाय की चम्मच दवा १/२ सेर बीज के लिए काफी है।

बीज की मात्रा :

हरे चारे के लिए—१०-१२ किलो

हरी खाद के लिए—८ किलो

दाल तथा हरी फलियो के लिए—३-४ किलो

बुवाई : चारे और हरी खाद के लिए बीज बिखेरकर बो सकते हैं। या फिर हल के पीछे कूंड मे बोइये। परन्तु दाल अथवा हरी फलियों के लिए बीज को लाइनो मे २ फीट के अन्तर पर बोइये। बीज देशी हल के पीछे बोइये और दूसरे हल से रासायनिक खाद बीज से हटकर ३-५ इंच की गहराई पर नाई या चोगा द्वारा डालिये। बीज जम जाने पर पौधे-से-पौधे एक फुट रखकर बाकी पौधे निकाल दीजिये।

सिंचाई : बोने के बाद पहली सिंचाई १४-१५ दिन में जरूर करे। जायद मे हर १० दिन बाद सिचाई करें। खरीफ मे १५ दिन पर सिंचाई करें।

निराई-गुड़ाई : पहली सिंचाई के बाद तुरंत ओट आने पर निराई गुड़ाई करें। फिर फसल के अनुसार करते रहे।

कीड़े व रोगों से बचाव : जब फसल एक बालिश्त की हो तो उस पर कीड़े तथा रोगो से बचाव के लिए प्रति एकड़ ४०० ग्राम कुमान, ६४० सी० सी० इंड्रिन, २० ई० सी० दवा को ४०० लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करें। इससे पौधों मे रोग नहीं लगता है तथा बल्ले और गांठें बहुत निकलते हैं। उकटा तथा जड़-सड़न की बीमारी का भी कम प्रकोप होता है।

माहूँ लग जाने पर फसल पर १ लीटर डायाजिनान या ८० सी० सी० डायमेक्रान या नुवान दवा को ४०० लीटर पानी में घोलकर छिड़किये। पत्तियो का पीला पड़ना या धब्बे के रोग में जिनेब ८००-१२०० ग्राम या कुमान १ किलो; २ कीलो यूरिया खाद के साथ ४०० लीटर पानी मे घोलकर छिड़किये। यदि खेत मे छोटे-छोटे सफेद या हरे भुनगे हों तो १ लीटर इंड्रिन इन्हीं दवाओं में मिलाकर छिड़कें। दवा छिड़कने के १५ दिन तक

पशी न खाये, न चारा ही जानवरों को खिलायें, क्योंकि दवाएँ जहरीली होती हैं।

हरी खाद के लिए रशियन जाइण्ट, टाइप २ लोबिया बोइये। इससे लगभग २०-२५ पौण्ड नत्रजन खेत को प्रदान होगा।

हरे चारे के लिए टाइप २, टाइप ५२६६ तथा रशियन जाइण्ट बोइये। इससे लगभग ३००-३५० मन हरा चारा मिलता।

हरी फलियों के लिए पूसा सावनी, बरमाण गुच्छेदार या टाइप ५२६६ बोइये। इससे लगभग ८०-१०० मन हरी फलियाँ मिलती २५-३० मन तक दाना मिलेगा। पैदावार के लिए ५६०३ एक जाति भी बहुत अच्छी है। —महेश शरण सक्सेना

आपसे निवेदन

हम खेती के बारे में उपयोगी जानकारी देने की कोशिश करते हैं। उनसे गाँव के लोगों को अधिक-से-अधिक लाभ हो, यह हमारी मंशा रहती है। ये जानकारियाँ हम अधिकतर खेती के बारे में प्रयोग और खोज करनेवाली संस्थाओं और लोगों से मिलती हैं। उनमें अधिकतर रासायनिक खादों और अंग्रेजी दवाओं के इस्तेमाल की बात लिखी होती है। इन खादों और दवाओं का मिलना साधारण किसानों के लिए आसान नहीं होता, बल्कि असम्भव सा होता है। इसके साथ ही बड़े पैमाने पर खेती करने पर इन तरीकों से क्या लाभ-हानि होगी, इसका अनुभव पूरा-पूरा नहीं होता है।

हम जानते हैं कि गाँवों में कुछ किसान अपनी सुविधा, पहुँच और अनुभवसिद्ध खेती की विशेष जानकारी रखते हैं। वैसी जानकारी और अनुभव हमारे किसान भाइयों के लिए बहुत उपयोगी साबित होगी।

हम आपसे निवेदन करते हैं कि आप किसान भाई या पाठक मित्र 'गाँव की बात' के माध्यम से अनुभवों का लाभ देश के दूसरे किसान भाइयों तक पहुँचाने में हमारी मदद करें और अपने अनुभव हमें लिख भेजें। —सम्पादक

पहले इनकार, फिर स्वीकार

एक दिन हम कुछ साथी सीतापुर कौर शिविर में ठहरे हुए थे। नजदीक के ही गाँव हरखा के कुछ लोग सूत की गड्डी लेकर आये। एकाध घंटे का इन्तजारी के बाद जब खादी भंडार के व्यवस्थापक नहीं पहुँचे तो थोड़ी काना-फूसी शुरू हो गयी। एक ने कहा : ये खादी भंडारवाले दिन-रात झूठ बोल-बोलकर हम लोगों को परेशान करते रहते हैं और माल बनाने में लगे रहते हैं। दूसरे सज्जन ने हमलोगों की ओर इशारा करके कहा : सर्वोदय तथा ग्रामदानवाले लोग भी तो अनाप-शनाप कह कर तथा जाली निशान उसान बनवाकर लोगों को धोखा दे रहे हैं। कुछ देर बाद जब बातों का दौर कुछ थमा पड़ा तो मैंने भी अपना मौन तोड़ा। यह बात आप लोगों की बिल्कुल सही है। आप सब काम धाम छोड़कर लगभग २ घंटे से बैठे हुए हैं खादी बदलने के लिए। हमारी एक सलाह है आप लोगों से कि यह खादी भंडार आप अपने गाँव में ही बनायें। ग्रामदान में पूरे खादी-काम को गाँव में ही ले आने की बात है। आप किसीके भरोसे अथवा इन्तजार में घंटों क्यों बितायें? आप अपने गाँव में ग्रामस्वराज्य को जल्दी लायें। 'गाँव की खेती, गाँव का काज, गाँव गाँव में हो स्वराज्य।' मेरे इस सुझाव का लोगों ने स्वागत किया और कहा : निश्चित ही इससे बगैर हमलोगों का भला नहीं हो सकेगा। खेती के साथ ग्रामोद्योगों को खड़ा करने में ही सब प्रकार की भलाई है। फिर देर तक सवाल-जवाब होता रहा। तब तक खादी भंडार के व्यवस्थापक भी पहुँच गये। सबका काम भी हो गया। लौटते समय वे लोग ग्रामदान के कुछ पर्चे-पोस्टर आदि भी लेते गये। एक प्रौढ़ महिला ने पढ़कर अपने गाँव के लोगों को समझाया : इसमें तो सब प्रकार से अपना तथा गाँव का ही हित है। ये लोग कहाँ कुछ ले जा रहे हैं?

जिस हरखा गाँव के लोगों ने पिछले साल प्रखण्डदान अभियान का बहिष्कार कराया, कई गाँवों के भरे हुए दानपत्र भी वापिस करवाये, उसी गाँव के कुछ उत्साही नवयुवक तथा प्रौढ़ महिलाएँ ग्रामदान कराने में जुट गयीं। —गंगाप्रसाद सहाय

बाईस गाँवों की सभा

एक-दो नहीं, पूरे बाईस गाँवों के लोग आये हुए थे—हर गाँव से दो-चार। लगभग सब गरीब लोग थे। कुछ ही कमीज या कुर्ता पहने हुए थे। जिन्हें सफेदपोश कहते हैं, वे तो शायद दो या तीन ही थे।

उस प्रखण्ड का दान हो चुका है। लोग अपने-अपने गाँव मे ग्रामसभा बना रहे हैं। जो ग्रामसभाएँ बनती जा रही हैं वे अपने-अपने गाँव मे ग्रामकोष निकलवा रही हैं, भूमिहीन को बीघा-कट्ठा जमीन दिलाने की कोशिश कर रही हैं, और लोगों से कह रही हैं कि अब पुराने झगड़े आपसी ढंग से हल कर लिये जायँ, और नये झगड़े पुलिस अदालत मे न जायँ। झगड़े रहेंगे तो ग्रामदान नहीं चलेगा।

उस दिन 'प्रखण्ड मित्र-मंडल' की बैठक थी। जब प्रखण्ड के आधे से अधिक गाँवों मे ग्रामसभाएँ बन जायँगी तो उनके प्रतिनिधियों को लेकर प्रखण्डसभा बनेगी। तब तक यह मित्रमंडल प्रखण्ड-स्तर पर काम करेगा। उस दिन बैठक खास तौर पर प्रखण्ड के भूदान किसानों के (जिन्हें भूदान मे मिली भूमि दी गयी है) सवालों पर विचार करने के लिए बुलायी गयी थी। ग्रामदान के बाद सबको एक-दूसरे के सुख-दुख में शरीक होना है, इसलिए भूदान-किसानों का दुख केवल उनका नहीं है, बल्कि प्रखण्ड भर की जनता का है। ग्रामदान मानता है कि मालिक, महाजन, मजदूर मे से चाहे जिसका सवाल हो, सबको मिलकर सोचना है, और रास्ता निकालना है।

दो गाँवों में भूदान-किसानों को बेदखल कर दिया गया है, और बहुत-से भूदान-किसानों को प्रमाण-पत्र तो मिल गया है, लेकिन सरकारी तौर पर दाखिल-खारिज नहीं हुआ है। बरसों से कागज बी० डी० ओ० के दफ्तर मे पडे हुए हैं। बेदखली और दाखिल-खारिज का न होना—ये दो सवाल थे। लोग सोच रहे थे कि क्या किया जाय। अंत मे तय हुआ कि बेदखली के मामले मे सबसे पहले बेदखल करनेवाले मालिकों से मिला जाय और मालूम किया जाय कि दान देकर उन्होंने दान वापस क्यों लिया? दूसरे पक्ष की बात सुनना जरूरी है। पूरी जानकारी कर लेने के बाद दूसरी बैठक मे तय किया जायगा कि आगे क्या करना चाहिए। कुछ भी हो बेदखली को मानकर चुप नहीं बैठना है।

आदिवासी गाँवों की समस्या बड़ी विकट है। आज कितने दिनों से ऐसा होता आया है कि पैसेवाले लोग पैसा देकर, फुसलाकर, डरा-धमकाकर, मुकदमे मे फँसाकर, आदिवासी किसानों की जमीनें लिखाते आये हैं, और उनको जमीन पर कब्जा करते आये हैं। इधर कुछ दिनों से उनमे कुछ चेतना आ रही है। सोचने-समझने के कारण वे अपनी जमीन की माँग करते हैं, और कभी-कभी जबरदस्ती कब्जा की हुई जमीन पर लगी हुई फसल काट भी लेते हैं। इस पर उनके ऊपर मालिक लोगों की ओर से पुलिस-अदालत में लूट-केस कर दिया जाता है। एक नहीं, कितने ही लूट-केस चल रहे हैं। जंगल-विभाग की ओर से चलनेवाले मुकदमे अलग हैं। आदिवासी को जंगल के शेर-भालू का डर नहीं है, डर है तो इन 'दिकू' लोगों का जो मनुष्य के भेष मे शेर-भालू बने हुए हैं।

जंगल मे बीडी का पत्ता तोडने-बेचने के लिए 'सहकारी समितियाँ' बनी हुई हैं। बीडी का बहुत बड़ा रोजगार है। हजारों मजदूर बीड़ी के कारखानों मे काम करते हैं। मालिकों की कोठियाँ खड़ी हो गयी हैं। पत्ते का मुनाफा लेता है व्यापारी, और इलाके के नेता, लेकिन पत्ता तोडनेवाला मजदूर क्या पाता है? महँगी हजार हो, पर उसकी मजदूरी नहीं बढ़नेवाली है। फिर ये सहकारी समितियाँ किसलिए हैं, नेताओं के भाषण और नारे किसलिए हैं, और सरकारी दफ्तर किसलिए हैं? ग्रामदान के बाद इन सवालों का भी जवाब ढूँढ़ना है।

तब तक क्या किया जाय? पत्ता तोड़नेवालों का संगठन किया जाय? न्याय की माँग है तो संगठन क्यों न बनाया जाय? जरूर बनाया जाय, लेकिन किसका? केवल पत्ता तोडनेवाले मजदूरों का? नहीं, बैठक मे तय हुआ कि जिन ग्राम-सभाओं मे ये मजदूर रहते हैं, उन ग्रामसभाओं का—केवल मजदूरों का नहीं—सम्मेलन बुलाया जाय। सम्मेलन में तय किया जाय कि क्या करना चाहिए। लेकिन दो बातें तय हैं: एक, यह 'लड़ाई' ग्रामसभाओं की है, केवल मजदूरों की नहीं; दो, सबसे पहले ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि पत्ते के खरीददारों से मिलें और उनसे चर्चा करें। कोई कारवाई एकतरफा न की जाय।

१८ ता० की बैठक मे इतनी चर्चा हुई। दूसरी बैठक झाझा मे २ मई को बुलायी गयी है। ●

'गाँव की बात': वार्षिक चंदा: चार रुपये, एक प्रति: अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा-संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित।

निहारदान की दूसरी मंजिल

प्रखण्ड का नाम	प्रखण्ड की कुल जनसंख्या	प्रखण्ड की कुल रकबा	ग्रामदान में शामिल जनसंख्या	ग्रामदान में शामिल रकबा
किशनगंज अनुमण्डल				
१ दिघलबाक	४७ ६०१	२० [illegible]१२ ६४	४१ ०५३	१६ ४६४ ६४
२ बहादुरगंज	७६ ८२५	३२ ०६० ६१	६३ ४३४	२१ १३८ ०६
३ टेढ़ागाछ	४३ ४२३	२८ २४४ ०७	३४ ०५१	२१ ०२६ ५
४ पोठिया	६६ ६६२	१६ २८५ ३६	५ २६६	९६ ३ ४ ३६
५ ठाकुरगंज	७६ ४८८	३१ ३२ ६५	५७ ७५८	१६ ७ ८ ६६
६ किशनगंज	२२ ४८५	६ ५७१ ८५	१० ७१०	५ ८१० ०१
७ बाराधामन	८१ ६८४	२२ ६६१ २२	६४ ८५७	१ ८६४ ७१
कुल	४१८ ७६८	१ ६० ४८६ ७३	३ २ १६०	१ २५ ७२ ०
अररिया अनुमण्डल				
१ रानीगंज	१६ ६७४	१ १६ [illegible]२२ २८	८४ ७६६	११ ६७८ ९
२ मरगामा	७२ ६३८	६२ ४७५ ०५	५५ ४८६	५६ १ ४४
३ नरपतगंज	१ ६ ६३६	६६ ८६ ३८	८३ १५७	१६ ६१६ ३
४ फारबिसगंज	१ १३ ३०७	६५ ८८७ ६२	७८ ६१५	२० ३५४ १३
५ अररिया	१ ०३ ६३४	६[illegible] ३४० ००	८७ ३८४	३६ ८७३ ६५
६ सिकटी	४४ ६१२	४६ ७६५ ३६	३६ ८५३	१४५ ७ ४६
७ पलासी	६६ ७५०	६१ [illegible]८३ ००	५४ २०३	१७ १६६ ३६
८ कुर्साकांटा	४३ १४१	४० ५१[illegible] १७	[illegible]६ २१	१२ ४१५ ०८
९ जोकीहाट	८५ ५६३	६५ ६६ ००	६१ १६	२२ ५७८ ४७
कुल	७ ५२ ५५३	६ ७८ २८६ १६	५ ८३ २३७	१ ७१ ४६६ ५४
कुल योग	२७ ८१ १८८	११ ०६ ६८२ ६७	२२ १३ ८४१	५ २२ ७२१ ३४

द्रष्टव्य सही जनसंख्या को बाद कर शेष जनसंख्या में से ७५ प्रतिशत के हस्ताक्षर एवं प्रत्येक ग्रामदानी गाँव या टोले में (उस गाँव में बसनेवाले) व्यक्तियों से उस गाँव या टोले में आने निज के जमीन की ५१ प्रतिशत जमीन ग्रामदान में शामिल कर प्रखण्ड दान कराया गया है। आँकड़ों को देखने से जिले के कुल रकबा का बहुत ही कम भाग प्रखण्डदान में सम्मिलित हुआ है। इसका मूल कारण यह है कि ग्रामदान में सम्मिलित व्यक्तियों की अधिकाधिक जमीन दूसरे गाँवों में भी पड़ती है जिस गाँव के ग्रामदान में वह शामिल नहीं हुआ है एवं इस जिले में अधिकांश जमीन दूसरे जिले के लोगों की है जिनका यहाँ कामत होता है।

ग्रामदान सम्पुष्टि की तैयारी

बिहार ग्रामदान अधिनियम के अंतर्गत घोषित ग्रामदान को सरकारी मान्यता दिलाने के संबंध में ५६ गाँवों के कागजात तैयार किये गये एवं सम्पुष्टि पदाधिकारी के कार्यालय में ३७० गाँवों के व्यक्तिगत दाखिल किये गये।

सम्पुष्टि-पदाधिकारी द्वारा २१ गाँवों को की गयी विज्ञप्ति के बाद ६७ गाँवों की भूमि की व्यक्तिगत संकलित ग्रामसभा में सन्निहित की जा चुकी है तथा इन गाँवों को विधिवत् ग्रामदानी गाँव घोषित करने की आवश्यक कारवाई की जा रही है।

—नारायण प्रसाद महतो संयोजक जिला सर्वोदय मंडल पूर्णिया

→हमारी छत पर पड़ा हुआ है जल्दी हटा लीजिये नहीं तो हम किराये के लिए नालिश दायर करेंगे। दूसरे ने नोटिस दिया कि हमारा हमला आपकी छत पर महीनों से पड़ा हुआ है आप उसे लौटाइये नहीं तो हम हरजाने के लिए दावा करेंगे। दोनों कानून जानते थे। कानून मनुष्यों को मिला नहीं सकता लड़ने से रोक सकता है। अगल बगल में बैठे हुए मनुष्यों को एक-दूसरे से लड़ने से रोकना इतनी ही कानून की मर्यादा है। मनुष्यों को मिलाना किसी कानून की मर्यादा में नहीं आता।

मनुष्यों को मिलाने का आंदोलन

परन्तु हमारा यह आन्दोलन मनुष्यों को मिलाने का आंदोलन है। वे जो मालिक है उनको वे जो गैर मालिक है उनके साथ मालकियत के निराकरण के द्वारा मिलाने के इस आन्दोलन का नाम ग्रामदान और भूदान आन्दोलन है। इसमें कई बार हमारी श्रद्धा कुंठित हो जाती है मानव निष्ठा कुंठित हो जाती है हमारी कल्पना शक्ति कुंठित हो जाती है और हम कहने लगते है कि यह ऐसा अवसर है जब कानून की मदद और जोर जबर्दस्ती अनिवार्य है। मित्रो यह अनिवार्य शब्द बड़ा खतरनाक है बहुत भयानक है। किसी बुराई को हम अनिवार्य मानकर अपनी बरदाश्त का समझौता कर लेते हैं। धीरे धीरे क्या हो जाता है? बुराई की भावना उसमें से निकल जाती है अनिवार्यता की धारणा ही शेष रह जाती है। और जब अनिवार्यता ही शेष रह जाती है तो शुभ मार्ग समाप्त हो जाता है। इसलिए हमको बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है। कानून से हृदय से मनुष्य से मनुष्य कभी नहीं मिला।

हमारा आंदोलन अगर मनुष्यों को मिलाने का है तो उसका कोई कैलेंडर नहीं हो सकता। हम कहते है कि इतने समय में होना चाहिए। यह हमारी उत्कटता का द्योतक है। जब हम कहते है कि अक्तूबर तक होना चाहिए तो उसका एक ही मतलब है कि एक क्षण में हो जाना चाहिए आज हो जाना चाहिए। क्रांति के कलेंडर में उसके पचास में आज→

भूदान-यज्ञ ३-५-'६८ : रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नं० ए. ३४

श्री जयप्रकाश नारायण

का पटना में भव्य स्वागत

पटना : २८ अप्रैल। ७० दिनों की विश्वयात्रा से वापस लौटने पर यहाँ श्री जयप्रकाश नारायण का भव्य स्वागत हुआ। बिहार ग्रामदान आन्दोलन की ओर से उन्हें ३१,८३६ रुपये की थैली तथा २७ प्रखण्डदान समर्पित किये गये। श्री जयप्रकाशजी ने दोपहर को राज्य की विभिन्न संस्थाओं के प्रतिनिधियों के बीच दो घंटे भावपूर्ण भाषण किया। शाम को एक विशाल जन-सभा भी हुई।

श्री सुरेशराम भाई द्वारा पुनः उपवास

इलाहाबाद : २३ अप्रैल। नगर की अशांत और दुखद स्थिति से व्यथित होकर श्री सुरेशराम भाई ने आज दोपहर से पुनः उपवास शुरू कर दिया है। इसके पूर्व ८ अप्रैल को उनका १५ दिन का उपवास पूरा हुआ था। उपवास की घोषणा करते हुए श्री सुरेशराम भाई ने अपने वक्तव्य में कहा है कि अगर हालत सुधरती है, और नगर में स्थिति सामान्य हो जाती है, तो वे उपवास समाप्त कर सकते हैं।

इलाहाबाद में शांति-प्रयास के लिए कुछ शांति-सैनिक सक्रिय हैं। कुछ प्रमुख नागरिकों की ओर से कोशिश चल रही है कि हिंदू-मुसलमान सद्भावना के प्रतीक-स्वरूप दोनों तरफ से क्षति-पूर्ति के लिए कुछ कार्य किये जायें।

साधारणतया अभी उनका स्वास्थ्य ठीक है, लेकिन वजन तेजी से गिर रहा है।

एक अधिकारिक सूचना के अनुसार २६ अप्रैल को श्री जयप्रकाश नारायण इलाहाबाद आनेवाले हैं। उस समय तक नगर की स्थिति सामान्य हो जाने और उसके फलस्वरूप श्री सुरेशराम भाई का उपवास समाप्त हो जाने की आशा की जाती है।

उपवास : तीव्र संवेदना का द्योतक

सुरेशराम भाई ने २३ अप्रैल की दोपहर से आमरण उपवास शुरू किया है। उन्होंने इसके पहले १५ दिन का उपवास किया था। उस उपवास का पारण ८ अप्रैल को हुआ। उस दिन मैंने उनकी जो स्थिति देखी, वह काफी अच्छी थी। मन उनका बिलकुल सचेत, जागरूक और स्वस्थ था। शरीर कमजोर था, लेकिन बहुत स्वस्थ था, और समस्या की तरफ देखने की उनकी जो वृत्ति थी, वह भी मुझे बहुत उदात्त मालूम हुई। मैं ऐसा समझता था कि उनकी इस तपस्या के बाद, शायद वहाँ की परिस्थिति सुधरती चली जायगी। परन्तु कुछ दिन की शान्ति के बाद फिर घटनाएँ होने लगीं छुरेबाजी की और दूसरी तरह की। उनके पत्र से मालूम हुआ कि दो बूढ़े मुसलमानों को बहिश्त भेज दिया गया। एक कम्युनिस्ट तरुण और एक दूसरे तरुण जो दोनों हिन्दू थे, उनको भी मार डाला गया। पत्र १८ तारीख का था। उसमें उनके चित्त की व्यथा व्यक्त की गयी थी। लेकिन कल मालूम हुआ कि उन्होंने आमरण उपवास शुरू कर दिया है। वे शान्ति-सैनिक हैं। उन्होंने यह लिखा है कि जहाँ हम रहते हैं वहाँ अगर ऐसी परिस्थिति पैदा होती है, और उस परिस्थिति पर हम किसी तरह काबू नहीं पा सकते हैं, तो हमारे जीने में क्या अर्थ रह जाता है? कौनसा मतलब रह जाता है? ऐसी उनकी उत्कट भावना है। वह तद्रूप इस उपवास के रूप में प्रकट हुई है। यह उपवास स्वयंपूर्ण प्रार्थना है। वह उनकी अपनी तीव्र संवेदना का और हृदय की पीड़ा का द्योतक है। हम भी प्रार्थना करें कि उनकी यह प्रार्थना शीघ्र ही फलद्रूप हो और उनका उपवास सफल होने की परिस्थिति शीघ्र ही प्रस्तुत हो।

पटना, २७-४-'६८ —दादा धर्माधिकारी

तीन बागी भाई जेल से मुक्त

आगरा, १८ अप्रैल। जेलवालों के बागी भाइयों की मुक्ति के लिए २६ जुलाई '६७ को श्री कृष्णचन्द्र सहाय, (गांधी स्मारक निधि) तथा कु० सन्तोष निगम (महिला गांधी विचार परिषद) ने राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन से मिलकर प्रार्थना-पत्र दिया था। गांधी जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में मध्यप्रदेश के राज्यपाल ने १५ अप्रैल '६८ को ग्वालियर जेल के बन्दी सर्वश्री लोकमन उर्फ लुक्का, भगवान सिंह, तेज सिंह इन तीन बागी भाइयों को बिना किसी शर्त के तुरन्त दण्डमोचित करने का आदेश दिया है। इन भाइयों ने विनोबाजी के समक्ष चम्बल घाटी में आत्मसमर्पण किया था।

मौन शांति-जुलूस

रतलाम, ८ अप्रैल। यहाँ नगर शान्ति-मंडल के तत्त्वावधान में श्रीरामजन्म महोत्सव और मुहर्रम के पवित्र पर्व पर हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिक सद्भावना हेतु ७-८-९ अप्रैल को मौन शान्ति जुलूस का आयोजन किया गया। इसमें सभी जाति, धर्म और सम्प्रदाय के प्रमुख और प्रतिष्ठित नागरिकों ने भाग लिया। जुलूस में शामिल सभी शान्तिसैनिकों के हाथ में शान्ति-सन्देश के पोस्टर थे। जुलूस में लगभग दो सौ नागरिक भाई-बहनों ने भाग लिया। (सप्रेम)

एक आवश्यक सूचना

'भूदान-यज्ञ' का ७ जून '६८ का अंक विशेषांक होगा। —सं०

भूल सुधार

(भूदान-यज्ञ : १६-४-'६८ के अंक में पृष्ठ ३४६ : कालम तीन में)

"अविनयमपनय विष्णो दमय मनः शमय विषय मृगतृष्णाम्।
भूतदयां विस्तारय तारय संसार-सागरतः॥"

भूल के लिए क्षमा करें। —सं०

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड; या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदानयज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ३२

शुक्रवार, १० मई, '६८

इस अंक में

सम्पादक

राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश

फोन ४२८५

जनता का विश्वास

जनता याने गाँव-गाँव की आम जनता। उनका विश्वास अपने पर कभी नहीं था। जो था ही नहीं, उसे खोया भी नहीं जा सकता। 'आत्मविश्वास' न था, न उसे खोया ही। गांधीवालों पर क्यों विश्वास हो? वे हमारी समस्याएँ हल करेंगे, ऐसा जनता का उन पर कभी विश्वास नहीं था। इसलिए उसे खोने का सवाल ही नहीं उठता। हाँ, राजनीतिक दलों पर विश्वास था, उस विश्वास को जनता ने खोया है।

जनता को पूर्वजन्म के पुण्यों के कारण ईश्वर पर विश्वास था, उसे नहीं खोया। सौ में निन्यानबे लोग ऐसे हैं, जिन्हें ईश्वर पर विश्वास अभी भी है। एक-आध प्रतिशत का नहीं होगा।

यही बचाव (सेविंग पेस) है।

- जनता को अपने पर विश्वास—शून्य।
- गांधीवालों पर विश्वास—नहीं था।
- राजनीतिक दलों पर विश्वास—था मगर खो चुके।
- ईश्वर पर विश्वास—निन्यानबे प्रतिशत है।

ग्रामदान होंगे, इन्का ग्रामस्वराज्य स्थापित होगा तो गांधीवालों पर विश्वास आयेगा। करके देखें।

कोई भी किसान ईश्वर पर विश्वास किये बिना, बीज बो नहीं सकता। बोया हुआ उगेगा ही यह भरोसा कौन देता है?

शब्दातीत = शब्द के उस पार। शब्दसह = शब्द को सहन करनेवाला। भगवान प्रेम से सह लेता है। उसे हम 'खुदा' कहें, तो यह भगवान की निंदा है, स्तुति नहीं। खुदा याने किसान। उसे 'पिता' कहना भी निंदा है, स्तुति नहीं। हम बच्चों के मन में क्या भाव है उसे देखकर भगवान सहन करता है। संत तुकाराम कहते हैं, "मेरा मुँह आज बिगड़ गया है, भगवान तू बैल है, तू भारवाही गधा है।" सही है। भगवान बैल भी है गधा भी है। विठ्ठल के बारे में आप जो भी कहिये, वह उसे शोभा देगा। भगवान् थूकने का पात्र है जितना भी थूकना है, थूकिये। भगवान 'टेबिल' भी है, आधार है, जिस पर हम टिक सकते हैं। "आधारनिलय।"

(कुरान की आयतें पढ़ते हुए) मोहम्मद पैगम्बर कहते हैं, "तेरी स्तुति कौन कौन करते हैं? दरख्त, सितारे, चाँद, सूरज, पक्षी, और कुछ मनुष्य।" मनुष्यों में ही ऐसे बेवकूफ हैं, जो स्तुति नहीं करते। कुरान के मुताबिक पक्षी परमात्मा पर सौ प्रतिशत विश्वास रखते हैं। इन्सान ज्यादातर, सौ प्रतिशत नहीं। जो परमात्मा को नहीं मानते, उन पर यही टीका की गयी है।

रानीपतरा १४-४-६८ —विनोबा

(श्री जगदीश बजाजी द्वारा पूछे गये एक प्रश्न का उत्तर)

आलोक और उन्माद

'आलोक' का अर्थ है प्रकाश। उसका काम है अंधेरा दूर करना। वह न तो आँखें खोलता है और न चलने के लिए कहता है। इनके लिए व्यक्ति को स्वतन्त्र छोड़ देता है। इसके विपरीत 'उन्माद' का अर्थ है नशा या पागलपन। यहाँ व्यक्ति की चेतना पर कोई बाह्य शक्ति हावी हो जाती है।

धर्म, राजनीति, कला, साहित्य आदि संस्कृति के सभी तत्त्वों में दोनों रूप मिलते हैं। उनका जन्म आलोक के रूप में होता है, किन्तु रूढ़ि या परम्परा बनकर वे ही उन्माद हो जाते हैं। आलोक प्रगति का प्रेरक है और उन्माद प्रवाह का।

दूसरे द्वारा कही गयी बात कितनी ही अच्छी हो, उसे कितने ही आकर्षक शब्दों में प्रकट किया जाय, जब तक जीवन में नहीं उतरती, अनुभव नहीं बनती। और जब तक अनुभव नहीं बनती उसे आलोक नहीं कहा जा सकता। तब तक वह कोरा उन्माद है। भगवान बुद्ध ने कहा था, 'आओ और परीक्षा करके देखो, किसी बात को तब तक स्वीकार मत करो जब तक बुद्धि में न उतरे।' उनकी घोषणा थी कि प्रत्येक व्यक्ति को अपना दीपक स्वयं बनना चाहिए। भगवान महावीर ने उसी बात को दूसरे शब्दों में प्रकट किया। उन्होंने कहा, 'अरे मानव तू ही तेरा मित्र है। बाहर क्यों ढूंढ रहा है?' उपनिषदों ने इसी तथ्य को श्रवण, मनन और निदिध्यासन के रूप में उपस्थित किया। उन्होंने कहा, 'दूसरे की बात सुनो, किन्तु तब तक न मानो जब तक तर्क की कसौटी पर न उतरे। बुद्धि में उतर जाने पर उसे जीवन में उतारो, तभी सत्य का साक्षात्कार होगा।'

सन्तों, तपस्वियों और ऋषियों ने धर्म को आलोक के रूप में उपस्थित किया। वे दीया और बत्ती बनकर स्वयं जले। पथ आलोकित किया। लेकिन धीरे-धीरे आलोक समाप्त होता गया और परम्परा के रूप में वे उन्माद बन गये। उनका नाम लेकर अहंकार की पूर्ति होने लगी। अनुयायी वर्ग पागल होकर नारे लगाने लगा, ढोल पीटकर नाचने लगा। दूसरी परम्पराओं पर गालियों की वर्षा करने लगा। फलस्वरूप धर्म-संस्था वरदान के स्थान पर अभिशाप बन गयी और नव-मानव स्वागत के स्थान पर उससे त्राण पाने का उपाय ढूंढ रहा है। नीति-कुशल जन-नायकों ने इस उन्माद का प्रयोग अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए प्रारम्भ किया। वे तरह-तरह के चोगे पहनकर, समझ में न आनेवाली भाषा में कुछ गुनगुनाकर, पागल की तरह नाचकर तथा अन्य चेष्टाएँ करके भोली-भाली जनता में उन्माद उत्पन्न करने लगे, जो वर्तमान विश्व की विकट समस्या बने हुए हैं।

धार्मिक उन्माद के पुस्तक, ईश्वर, प्रवर्तक, गुरु, वेशभूषा, क्रियाकाण्ड आदि अनेक रूप हैं। कुछ धर्मों ने पुस्तक-विशेष का नाम लेकर कहा कि उसमें लिखी हुई

चिन्तन-प्रवाह

बात को अक्षरशः सत्य मानना चाहिए। वह बुद्धि में उतरे या न उतरे। इतना ही नहीं, उसके विरुद्ध सोचना भी बड़ा पाप बताया। जो बात समझ में न आये उसके लिए अपनी बुद्धि को दोष देने के लिए कहा। दूसरी ओर स्वतन्त्र बुद्धि से काम लेनेवालों के लिए नास्तिक, मिथ्यात्वी, काफिर, ऐथिस्ट (Atheist) आदि शब्द घड़ लिये। इतना ही नहीं कुछ परम्पराओं ने तो उस पुस्तक का पढ़ने और अर्थ समझने तक का अधिकार वर्ग-विशेष तक सीमित कर दिया। इतर वर्ग का धर्म एकमात्र उस वर्ग की आज्ञाओं पर चलना हो गया।

कुछ परम्पराएँ व्यक्ति-विशेष को अपना केन्द्र मानने लगीं। उनका कथन था कि वह व्यक्ति स्वयं परमात्मा या उसका अवतार है। उसकी प्रत्येक चेष्टा तथा प्रत्येक हलचल धर्म है। उसने लड़ाइयाँ लड़ीं, दूसरों को धोखा दिया, झूठ बोला, प्रेम-लीलाएँ कीं, कामुकता का प्रदर्शन किया, इस सबको धर्म मान लिया गया। वहाँ अपने आप में अनैतिकता या दुराचार नाम की कोई वस्तु न रही। उस व्यक्ति की प्रशंसा करते रहना तथा उसके प्रति प्रेम प्रकट करना ही एकमात्र धर्म का आधार हो गया। ऐसे सम्प्रदाय भी चले जहाँ यह कहा गया कि संसार में पुरुष एक-मात्र वही है। समस्त भक्त अपने आपको स्त्री समझें और उसे रिझाने का प्रयत्न करते रहें। फलस्वरूप भक्तों में गिनती कराने के लिए पुरुष भी साड़ी पहनने और स्त्रियों के समान चेष्टाएँ करने लगे। परस्पर-व्यवहार में स्त्रीलिंग का प्रयोग होने लगा और महीने में चार दिन रजस्वला रहना भी प्रारम्भ कर दिया।

कश्मीर में मोहम्मद के बाल को लेकर आतंक फैल गया। हजरत मोहम्मद झूठ, चोरी, व्यभिचार तथा बेईमानी को बड़ा पाप मानते थे, किन्तु अनुयायियों ने उन्हें इतना बुरा नहीं समझा, जितना उस बाल के गुम होने को। भगवान बुद्ध का दाँत लन्दन से भारत लाया गया, एक वर्ष तक जुलूस निकलते रहे और करोड़ों व्यक्तियों ने दर्शन किये। ये सभी उन्माद के विविध रूप हैं।

प्रत्येक धर्माचार्य अपनी परम्परा को ईश्वर, उसके अवतार एकमात्र या समकक्ष व्यक्ति से जोड़ता है। यह घोषणा करता है कि मैं उसका उत्तराधिकारी या वंशज हूँ।

राजनीति के क्षेत्र में यह उन्माद मिथ्या प्रदर्शनों, आन्दोलनों, नारों और अतीत का गौरव गाकर उत्पन्न किया जाता है। अपने में गुण न होने पर भी पूर्वजों के गुण गाये जाते हैं। सैकड़ों वर्ष बीत जाने पर भी किसी अतीत महापुरुष के साथ अपना सम्बन्ध जोड़कर अहंकार का अनुभव किया जाता है और उतने मात्र से अपने आपको उच्च समझ लिया जाता है। भोली जनता विवेक खोकर उन्माद में बही जाती है। वास्तव में देखा जाय तो व्यक्ति का मूल्यांकन निजी गुणों के आधार पर होना चाहिए। इस प्रकार के उन्माद उत्पन्न होने पर दृष्टि सत्य को नहीं पहचान पाती।—इन्द्रचन्द्र शास्त्री
एम० ए० पीएच० डी०

गांधी विचार

शान्ति-सेना

दंगों को अहिंसक ढंग से शान्त करने के लिए दिल में सच्ची अहिंसा होनी चाहिए, ऐसी अहिंसा जो दोषी-दंगाई का भी प्रेमपूर्वक आलिंगन करती है। ऐसी वृत्ति एकाएक नहीं पैदा हो सकती। वह तभी आ सकती है, जब उसके लिए धीरज के साथ लम्बा प्रयत्न किया जाय।

शान्ति-सेना के भावी सिपाही को अपने पड़ोस के तथाकथित गुण्डों के गहरे सम्पर्क में आना और उनसे परिचय बढ़ाना चाहिए। वह सबसे और सब उससे परिचित होने चाहिए। और उसे अपनी प्रेमपूर्ण और निःस्वार्थ सेवा द्वारा सबके हृदय जीत लेने चाहिए। समाज का कोई हिस्सा इतना तुच्छ और हलका न माना जाय, जिससे वे घुलमिल न सकें। गुण्डे आकाश से नहीं टपक पड़ते और न वे भूतों की तरह जमीन से निकल आते हैं। वे समाज की कुव्यवस्था की ही उपज हैं और इसलिए उनके अस्तित्व के लिए समाज जिम्मेदार है। दूसरे शब्दों में, वे हमारे समाज के रोग की निशानी समझे जाने चाहिए। रोग को दूर करने के लिए पहले हमें उसके असली कारण का पता जरूर लगाना चाहिए।[1]

ऊपर के कथन से कोई यह न समझे कि अहिंसक दल (शान्तिसेना) उन्हींके लिए खुली है जो अपने जीवन में अहिंसा के भीतर रहे तमाम वर्तों का कड़ाई से पालन करते हैं। वह उन सबके लिए खुली है, जो उन व्रतों का स्वीकार करते हैं और उन पर अमल करने का अधिकाधिक प्रयत्न करते हैं। पूर्ण अहिंसक लोगों की शान्ति-सेना कभी नहीं बनेगी। वह उन लोगों की होगी, जो अहिंसा के पालन की ईमानदारी से कोशिश करेंगे।[2]

१ 'हरिजन', २६-८-'४०।
२ 'हरिजन', २१-७-'४०।

सम्पादकीय

कितनी क्रान्तियाँ, लेकिन क्रान्ति कहाँ ?

अगर सरकार की बात सच हो तो स्वतंत्रता के बीस वर्षों में कई क्रान्तियाँ हो चुकीं। वर्षों पहले जब सामुदायिक विकास-योजना का उद्घाटन हुआ था तो कहा गया था कि यह नये भारत की नयी क्रान्ति है। पंचायती राज को भी क्रान्ति का ही नाम दिया गया था। भाखरा नंगल को तो नेहरूजी ने साक्षात तीर्थ-स्थान ही कहा था और पंचवर्षीय योजना में तो सम्पूर्ण क्रान्ति की दृष्टि से कोई कमी थी ही नहीं।

ये 'क्रान्तियाँ' हो चुकी थीं जब एक पारखी विदेशी पत्रकार ने भारत के बारे में लिखा कि यह एक ऐसा देश है जो एक नहीं, आधी दर्जन क्रान्तियों के लिए पका हुआ है, लेकिन आश्चर्य है कि एक क्रान्ति भी नहीं हो रही है।

यह भी एक कौतुक ही है कि जितनी 'क्रान्तियाँ' होती हैं उन सबका पता केवल सरकार को रहता है, दूसरे किसीको ढूँढ़ने से भी नहीं मिलतीं।

इधर कुछ दिनों से खेती में होनेवाली एक क्रान्ति की चर्चा जोरों से चल पड़ी है। कौतुकपूर्ण बीज (वण्डर सीड) उस क्रान्ति का नायक है। धान, गेहूँ और मक्के के कुछ ऐसे बीज निकल आये हैं जिन्हें अगर उचित मात्रा में रासायनिक खाद और पानी मिल जाय तो उपज बहुत बढ़ जाती है। इसके अलावा यह भी समझ हो गया है कि पानी और खाद के मिलने पर एक खेत से दो-तीन फसलें ली जा सकती हैं। इन बातों से यह आशा होती है कि वह दिन अब दूर नहीं है जब भारत को विदेशों से अन्न नहीं मंगाना पड़ेगा, बल्कि भारत दूसरे देशों को अनाज भेज सकेगा।

ऐसा दिन भी आयेगा यह सोचकर किसे खुशी नहीं होगी ? हम तो यह सोचते हैं कि वह दिन आ गया। विदेशों से अन्न मंगाना तो आज, अभी बन्द कर देना चाहिए। सबसे बड़ी और पहली क्रान्ति यही है कि भारत के पास जो कुछ है—और वह कम नहीं है—उसे बाँटकर खाना सीखें, और अगर मरना ही हो तो इज्जत के साथ मरना जानें।

कपड़ा तो इस वक्त भी दूसरे देशों को भेजा जा रहा है, लेकिन क्या उतने से ही हम मान लें कि 'कपड़े की क्रान्ति' हो गयी ? लाखों करोड़ों नंगी पीठें चिल्ला-चिल्लाकर कह रही हैं कि यह क्रान्ति झूठी है, झूठी है। क्रान्ति तो तब मानी जाय जब पीठें ढकें।

नये बीज, रासायनिक खाद, ट्यूबवेल और नहर का पानी, सरकार से मिलनेवाली पूंजी आदि के आधार पर खेती में 'क्रान्ति' की जो बात कही जा रही है उससे देश में उत्पादन तो बढ़ जायगा, इसमें शक नहीं, और उत्पादन बढ़ेगा तो विदेशी मुद्राएं भी मिलेंगी, पर प्रश्न यह है कि बढ़ा हुआ उत्पादन भूखी और बेकार जनता के पेट में कैसे पहुँचेगा ? इससे व्यापक बेकारी कैसे मिटेगी ? उत्पादक के शोषण का कैसे अन्त होगा ? विषमता से मुक्ति कैसे मिलेगी ? समता की ओर कदम कब बढ़ेंगे ? और, साधनों के विकास के साथ साथ समाज का गुण विकास कैसे होगा ? क्या इस तरह की उत्पादन-वृद्धि से यह सब होगा ?

अगर केवल उत्पादन ही किसी तरह बढ़ाना हो तो क्यों नहीं खुलकर पूंजीवाद और फासिस्टवाद, और क्यों नहीं साम्यवाद ? सामाजिक मूल्यों को अलग रखकर मात्र उत्पादन-वृद्धि की बात करना सौ साल पहले की बात है—बिलकुल पुरानी और निकम्मी। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कहना जमाने से आँख मूँदना है। क्योंकि अब सामाजिक न्याय और उत्पादन का मेल मिलाना है। भारत को उसी मेल की जरूरत है।

खेती में सरकार की यह सारी क्रान्ति सम्पन्न किसानों को लेकर की जा रही है। हम जानते हैं कि देश के खेतिहरों में ८० फीसदी से ज्यादा 'गुजर की खेती' करते हैं।

आलोक और उन्माद

'आलोक' का अर्थ है प्रकाश। उसका काम है अंधेरा दूर करना। वह न तो आँखें खोलता है और न चलने के लिए कहता है। इनके लिए व्यक्ति को स्वतन्त्र छोड़ देता है। इसके विपरीत 'उन्माद' का अर्थ है नशा या पागलपन। वहाँ व्यक्ति की चेतना पर कोई बाह्य शक्ति हावी हो जाती है।

धर्म, राजनीति, कला, साहित्य आदि संस्कृति के सभी तत्त्वों में दोनों रूप मिलते हैं। उनका जन्म आलोक के रूप में होता है, किन्तु रूढ़ि या परम्परा बनकर वे ही उन्माद हो जाते हैं। आलोक प्रगति का प्रेरक है और उन्माद प्रवाह का।

दूसरे द्वारा कही गयी बात कितनी ही अच्छी हो, उसे कितने ही आकर्षक शब्दों में प्रकट किया जाय, जब तक जीवन में नहीं उतरती, अनुभव नहीं बनती। और जब तक अनुभव नहीं बनती उसे आलोक नहीं कहा जा सकता। तब तक वह कोरा उन्माद है। भगवान बुद्ध ने कहा था, 'आओ और परीक्षा करके देखो, किसी बात को तब तक स्वीकार मत करो जब तक बुद्धि में न उतरे।' उनकी घोषणा थी कि *प्रत्येक व्यक्ति को अपना दीपक स्वयं* बनना चाहिए। भगवान महावीर ने उसी बात को दूसरे शब्दों में प्रकट किया। उन्होंने कहा, 'अरे मानव तू ही मेरा मित्र है। बाहर क्यों ढूँढ रहा है?' उपनिषदों ने इसी तथ्य को श्रवण, मनन और निदिध्यासन के रूप में उपस्थित किया। उन्होंने कहा, 'दूसरे की बात सुनो, किन्तु तब तक न मानो जब तक तर्क की कसौटी पर न उतरे। बुद्धि में उतर जाने पर उसे जीवन में उतारो, तभी सत्य का साक्षात्कार होगा।'

सन्तों, तपस्वियों और ऋषियों ने धर्म को आलोक के रूप में उपस्थित किया। वे दीया और बत्ती बनकर स्वयं जले। पथ आलोकित किया। लेकिन धीरे-धीरे आलोक समाप्त होता गया और परम्परा के रूप में वे उन्माद बन गये। उनका नाम लेकर अहंकार की पूर्ति होने लगी। अनुयायी वर्ग पागल होकर नारे लगाने लगा, ढोल पीटकर नाचने लगा। दूसरी परम्पराओं पर गालियों की वर्षा करने लगा। फलस्वरूप धर्म-संस्था वरदान के स्थान पर अभिशाप बन गयी और नव-मानव स्वागत के स्थान पर उससे त्राण पाने का उपाय ढूँढ रहा है। नीति-कुशल जन-नायकों ने इस उन्माद का प्रयोग अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए प्रारम्भ किया। वे तरह-तरह के चोगे पहनकर, समझ में न आनेवाली भाषा में कुछ गुनगुनाकर, पागल की तरह नाचकर तथा अन्य चेष्टाएँ करके भोली-भाली जनता में उन्माद उत्पन्न करने लगे, जो वर्तमान विश्व की विकट समस्या बने हुए हैं।

धार्मिक उन्माद के पुस्तक, ईश्वर, प्रवर्तक, गुरु, वेशभूषा, क्रियाकांड आदि अनेक रूप हैं। कुछ धर्मों ने पुस्तक-विशेष का नाम लेकर कहा कि उसमें लिखी हुई

चिन्तन-प्रवाह

बात को अक्षरशः सत्य मानना चाहिए। वह बुद्धि में उतरे या न उतरे। इतना ही नहीं, उसके विरुद्ध सोचना भी बड़ा पाप बताया। जो बात समझ में न आये उसके लिए अपनी बुद्धि को दोष देने के लिए कहा। दूसरी ओर स्वतन्त्र बुद्धि से काम लेनेवालों के लिए नास्तिक, मिथ्यात्वी, काफिर, ऐथिस्ट (Atheist) आदि शब्द घड़ लिये। इतना ही नहीं कुछ परंपराओं ने तो उस पुस्तक का पढ़ने और अर्थ समझने तक का अधिकार वर्ग-विशेष तक सीमित कर दिया। इतर वर्ग का धर्म एकमात्र उस वर्ग की आज्ञाओं पर चलना हो गया।

कुछ परम्पराएँ व्यक्ति-विशेष को अपना केन्द्र मानने लगीं। उनका कथन था कि वह व्यक्ति स्वयं परमात्मा या उसका अवतार है। उसकी प्रत्येक चेष्टा तथा प्रत्येक हलचल धर्म है। उसने लड़ाइयाँ लड़ीं, दूसरों को धोखा दिया, झूठ बोला, *प्रेम-लीलाएँ कीं, कामुकता*

गांधी विचार

शान्ति-सेना

दंगों को अहिंसक ढंग से शान्त करने के लिए दिल में सच्ची अहिंसा होनी चाहिए, ऐसी अहिंसा जो दोषी-दंगाई का भी प्रेमपूर्वक आलिंगन करती है। ऐसी वृत्ति एकाएक नहीं पैदा हो सकती। वह तभी आ सकती है, जब उसके लिए धीरज के साथ लम्बा प्रयत्न किया जाय।

शान्ति-सेना के भावी सिपाही को अपने पड़ोस के तथाकथित गुण्डों के गहरे सम्पर्क में आना और उनसे परिचय बढ़ाना चाहिए। वह सबसे और सब उससे परिचित होने चाहिए। और उसे अपनी प्रेमपूर्ण और निःस्वार्थ सेवा द्वारा सबके हृदय जीत लेने चाहिए। समाज का कोई हिस्सा इतना तुच्छ और हल्का न माना जाय, जिससे वे घुलमिल न सकें। गुण्डे आकाश से नहीं टपक पड़ते और न वे भूतों की तरह जमीन से निकल आते हैं। वे समाज की कुव्यवस्था की ही उपज हैं और इसलिए उनके अस्तित्व के लिए समाज जिम्मेदार है। दूसरे शब्दों में, वे हमारे समाज के रोग की निशानी समझे जाने चाहिए। रोग को दूर करने के लिए पहले हमें उसके असली कारण का पता जरूर लगाना चाहिए।[1]

ऊपर के कथन से कोई यह न समझे कि अहिंसक सेना (शान्तिसेना) उन्हीं तक सीमित है जो अपने जीवन में अहिंसा के भीतर रहे तमाम अर्थों का कड़ाई के साथ पालन करते हैं। यह उन सबके लिए खुली है जो उन अर्थों का स्वीकार करते हैं और उन पर अमल करने का अधिकाधिक प्रयत्न करते हैं। पूर्ण अहिंसक लोगों की शान्ति-सेना कभी नहीं बनेगी। वह उन लोगों की होगी, जो अहिंसा के पालन की ईमानदारी से कोशिश करेंगे।[2]

---

१ 'हरिजन', ११-६-'४०।
२ 'हरिजन', २१-७-'४०।

सम्पादकीय

कितनी क्रान्तियाँ, लेकिन क्रान्ति कहाँ ?

अगर सरकार की बात सच हो तो स्वतंत्रता के बीस वर्षों में कई क्रान्तियाँ हो चुकीं। वर्षों पहले जब सामुदायिक विकास-योजना का उद्घाटन हुआ था तो कहा गया था कि यह नये भारत की नयी क्रान्ति है। पंचायती राज को भी क्रान्ति का ही नाम दिया गया था। भाखरा नंगल को तो नेहरूजी ने साक्षात तीर्थ-स्थान ही कहा था और पंचवर्षीय योजना में तो सम्पूर्ण क्रान्ति की दृष्टि से कोई कमी थी ही नहीं।

ये 'क्रान्तियाँ' हो चुकी थीं जब एक पारसी विदेशी पत्रकार ने भारत के बारे में लिखा कि यह एक ऐसा देश है जो एक नहीं, आधी दर्जन क्रान्तियों के लिए पका हुआ है, लेकिन आश्चर्य है कि एक क्रान्ति भी नहीं हो रही है।

यह भी एक कौतुक ही है कि जितनी 'क्रान्तियाँ' होती हैं उन सबका पता केवल सरकार को रहता है, दूसरे किसीको ढूँढने से भी नहीं मिलती।

इधर कुछ दिनों से खेती में होनेवाली एक 'क्रान्ति' की चर्चा जोरों से चल पड़ी है। कौतुकपूर्ण बीज (वण्डर सीड) उस क्रान्ति का नायक है। धान, गेहूँ और मक्के के कुछ ऐसे बीज निकल आये हैं जिन्हें अगर उचित मात्रा में रासायनिक खाद और पानी मिल जाय तो उपज बहुत बढ़ जाती है। इसके अलावा यह भी सम्भव हो गया है कि पानी और खाद के मिलने पर एक खेत से दो-तीन फसलें ली जा सकती हैं। इन बातों से यह आशा होती है कि वह दिन अब दूर नहीं है जब भारत को विदेशों से अन्न नहीं मँगाना पड़ेगा, बल्कि भारत दूसरे देशों को अनाज भेज सकेगा।

ऐसा दिन भी आयेगा, यह सोचकर किसे खुशी नहीं होगी? हम तो यह सोचते हैं कि वह दिन आ गया। विदेशों से अन्न मँगाना तो आज, अभी बन्द कर देना चाहिए। सबसे बड़ी और पहली क्रान्ति यही है कि भारत के पास जो कुछ है—और वह कम नहीं है—उसे बाँटकर खाना सीखें और अगर मरना ही हो तो इज्जत के साथ मरना जानें।

कपड़ा तो इस वक्त भी दूसरे देशों को भेजा जा रहा है, लेकिन क्या उतने से ही हम मान लें कि 'कपड़े की क्रान्ति' हो गयी? लाखों-करोड़ों नंगी पीठें चिल्ला-चिल्लाकर कह रही हैं कि यह क्रान्ति झूठी है, झूठी है। क्रान्ति तो तब मानी जाय जब पीठें ढँकें।

नये बीज, रासायनिक खाद, ट्यूबवेल और नहर का पानी, सरकार से मिलनेवाली पूँजी आदि के आधार पर खेती में 'क्रान्ति' की जो बात कही जा रही है उससे देश में उत्पादन तो बढ़ जायगा, इसमें शक नहीं, और उत्पादन बढ़ेगा तो विदेशी मुद्रा भी मिलेगी, पर प्रश्न यह है कि बढ़ा हुआ उत्पादन भूखी और बेकार जनता के पेट में कैसे पहुँचेगा? इससे व्यापक बेकारी कैसे मिटेगी? उत्पादक के शोषण का कैसे अन्त होगा? विषमता से मुक्ति कैसे मिलेगी? समता की ओर कदम कब बढ़ेंगे? और, साधनों के विकास के साथ-साथ समाज का गुण-विकास कैसे होगा? क्या इस तरह की उत्पादन-वृद्धि से यह सब होगा?

अगर केवल उत्पादन ही किसी तरह बढ़ाना हो तो क्यों नहीं खुलकर पूँजीवाद और फासिस्टवाद, और क्यों नहीं साम्यवाद? सामाजिक मूल्यों को अलग रखकर मात्र उत्पादन-वृद्धि की बात करना सौ साल पहले की बात है—बिलकुल पुरानी और निकम्मी; बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कहना जमाने से आँख मूँदना है, क्योंकि अब साम्य, न्याय और उत्पादन का मेल मिलाना है। भारत को उसी मेल की जरूरत है।

खेती में सरकार की यह सारी क्रान्ति सम्पन्न किसानों को लेकर की जा रही है। हम जानते हैं कि देश के देहातों में ८० फीसदी से ज्यादा 'गुजर की खेती' करते हैं।

उनकी औकात इतनी छोटी है कि इस खेती से उनका ३० दिन १२ महीने दोनों वक्त पेट नहीं भरता। इस खेती में क्रान्ति कब और कैसे होगी ?

सरकारी 'क्रान्ति' पेट की नहीं, पैसे और मुनाफे की खेती को बढ़ावा दे रही है। जो सम्पन्न हैं उन्हें और अधिक सम्पन्न बना रही है। सम्पन्न किसान मशीनें अपनाते और मजदूरों को निकालते जा रहे हैं। पिछले वर्षों में बड़ा किसान, व्यापारी, अधिकारी और स्थानीय नेता, इन चार का गांव-गांव में ऐसा जबरदस्त गुट बन गया है कि सामान्य किसान, कारीगर या मजदूर अपने लिए कहीं स्थान नहीं देखता। इन चार बड़ों का पंचायतीराज अभिशाप बन गया है। सरकार और बाजार के सम्मिलित प्रहारों को बर्दाश्त करने की शक्ति जनता में नहीं रह गयी है। इसके अलावा सरकार की यह नयी 'क्रान्ति' पूरी खेती को आज से कहीं अधिक सरकार और व्यापार की मुहताज बना देगी, और उत्पादन-वृद्धि का यह नारा देशव्यापी नये पूंजीवाद का जन्मदाता सिद्ध होगा। अगर यही क्रान्ति है तो फिर प्रतिक्रान्ति क्या है ?

विज्ञान और विकास के छलिया नारों से लोग कब तक ठगे जायेंगे ? एक ओर साधनों का विकास हो, और दूसरी ओर समाज जातिगत, वर्गगत, पेशागत विषमताओं और संघर्षों में डूबता जाय, तो ऐसी क्रान्ति किस काम की ? क्रान्ति उसे कहेंगे जिसमें विज्ञान और समता के समन्वय से जीवन का एक संपूर्ण नया नमूना विकसित हो। लेकिन वह क्रान्ति दफ्तरों से नहीं निकलेगी, उसका उद्गम जन-जीवन में ही कहीं होगा। ●

किसकी जिम्मेदारी, कैसी कुण्ठा ?

जगदीश : देश में जो हिंसा और तोड़फोड़ की प्रवृत्ति बढ़ रही है, क्या यह गांधी-विचार माननेवालों की विफलता का सबूत और परिणाम है ?

विनोबा : इसकी जिम्मेदारी भारत के पचास करोड़ लोगों पर है, जिनमें 'बाबा' भी शामिल है। बाबा १/५० करोड़ जिम्मेदार है। कुल जिम्मेदारी पचास करोड़ जनता पर है। प्रधानमंत्री की ज्यादा है, क्योंकि जनता ने उन्हें चुना है, वे मात्र एक व्यक्ति नहीं हैं। उन राजनीतिक दलों की भी ज्यादा है, जो सरकार चलाते हैं, जीवन-विचार माननेवालों की जिम्मेदारी है, केवल गांधी-विचार माननेवालों की ही नहीं।

शिक्षकों की नैतिक जिम्मेदारी

जनता के साथ सीधा सम्पर्क आवश्यक : प्रभाव की शक्ति पैदा हो

विनोबा : 'पालिटिशियन्स' का तरीका है कि वे टुकड़े करना जानते हैं। इस शक्ति को तोड़ना हो, तो दूसरी शक्ति खड़ी होनी चाहिए—गाँव की शक्ति। एक किसानों की शक्ति खड़ी हो और दूसरी विद्वानों की, शिक्षकों की शक्ति खड़ी हो। दोनों की आवश्यकता है। उपनिषदों ने आदेश दिया—अन्नं ब्रह्म ति व्यजानात्, अन्नं बहु कुर्वीत। (अन्न को ब्रह्म समझना चाहिए, और उसे बढ़ाना चाहिए।) खेती की उपेक्षा की, तो लड़ाई भी जीती नहीं जा सकती। दूसरी शक्ति है ज्ञान की। चैतन्य को आकार देने का काम आपको सौंपा गया है। यह जो शिक्षकों की हैसियत थी, उसके बजाय शिक्षक आज सामान्य हैसियत में आ गये हैं। शिक्षकों में विभाग हुए हैं, विद्यार्थियों में विभाग हुए हैं। फिर विद्यार्थी विरुद्ध शिक्षक, ऐसे विभाग हुए हैं। दोनों मिलकर होती है विद्या शक्ति। पर उनके आज अलग-अलग विभाग हो गये हैं। जिनका 'इंटरेस्ट' वास्तव में एक होना चाहिए, वे अगर अपने-अपने अलग-अलग संघ बनायें, तो शक्ति कैसे खड़ी होगी? इन सारे प्रश्नों का उत्तर कहीं हो सकता है, तो वह शिक्षक में ही हो सकता है। और वह होगा राजनीति से अलग होने से और लोकनीति से जुड़ जाने से।

राजनीति-मुक्त और लोकनीति-युक्त होने में लाभ है। राजनीति से अलग हुए बिना राजनीति पर असर पड़ेगा नहीं। पहले राजनीति से अलग होना पड़ेगा। फिर हमने शासन-मुक्ति की बात कही ही है। आज स्थिति ऐसी है कि इसकी किसीने कल्पना ही नहीं की, कि पार्टी-पालिटिक्स के बिना राजनीति हो सकती है, यह किसीने सोचा तक नहीं। आज 'डेलीगेटेड डेमोक्रेसी' है, 'पार्टिसिपेटिंग डेमोक्रेसी' नहीं है। अगर शिक्षक ऐसा मानें कि हमने स्कूल-कालेजों में पढ़ा दिया, अब हमारा कोई कर्तव्य नहीं है, तो चलेगा नहीं। आपका 'मासेज' के साथ 'कान्टैक्ट' होना चाहिए। 'मासेज' के साथ 'कन्टैक्ट' न हो, तो राजनीति पर आपका असर नहीं पड़ेगा।

प्रश्न : फिर लोकनीतिवालों का भी एक दल बनेगा।

विनोबा : सत्य का भी एक दल बनेगा, ऐसा आपका कहना है?

प्रश्न : राजनीतिमुक्त और लोकनीतियुक्त किस तरह के आचरण द्वारा बन सकते हैं?

विनोबा : इसका निर्णय विद्वान् खुद तय करें कि क्या कोई उनको 'डिक्टेट' करे? आपकी 'कान्फरेन्सेस' होंगी, सेमिनार होंगे, उसमें आप सर्वसम्मति से अपनी राय प्रकट करेंगे। विद्वानों की सर्वसम्मति से राय प्रकट होती है तो वह भी असर डालती है। ये चीजें कैसे करना, यह डिटेल का विषय है। प्रथम यह ध्यान में आ जाय कि हमारी एक स्वतंत्र ताकत है, जो हमने खोयी है, उसको जागृत करना है। मैं शिक्षकों को आदेश दूँगा नहीं, बल्कि वे देश को आदेश दें, ऐसा मैं चाहूँगा।

प्रश्न : अशान्ति-शमन की जिम्मेदारी उठाने का मतलब तो 'ला एण्ड आर्डर' की जिम्मेदारी उठाने जैसा है।

विनोबा : 'ला एण्ड आर्डर' की जिम्मेदारी आप पर नहीं, आप पर नैतिक प्रभाव की जिम्मेदारी है। कम्युनिस्टों का मानना है कि 'स्टेट विल विदर अवे।' यानी हर कोई अपनी-अपनी जिम्मेदारी समझेगा और ठीक व्यवहार करेगा, तो 'स्टेट' की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। अब इसके लिए नैतिक प्रभाव की आवश्यकता होती है। आपको सोचना होगा कि नैतिक प्रभाव शिक्षकों का नहीं पड़ेगा, तो किसका पड़ेगा? अगर उनका नैतिक प्रभाव न पड़ता हो, तो शिक्षकों को मानना होगा कि उनकी कमी है। कहीं दंगा हुआ, और पुलिस आयी, तो आपको नौकरी से 'सस्पेंड' किया ऐसा नहीं होगा। लेकिन आप मानेंगे कि वह आपकी गैरजिम्मेदारी है, नाकामयाबी है। अगर आपके विद्यार्थियों में से बहुत ज्यादा 'परसेंटेज' विद्यार्थी परीक्षा में फेल हुए, तो आप वह आपकी जिम्मेदारी मानेंगे या नहीं? वैसा ही यह है।

प्रश्न : मनुष्य-स्वभाव स्वार्थी है, यह इसकी ओर कैसे झुकेगा?

विनोबा : आपका यह सवाल जमाने के खिलाफ है। स्वार्थ छोड़ने को बाबा कभी नहीं कहता। सच्चा स्वार्थ जानें, इतना ही कहता है। आप यह सोचें कि अपना स्वार्थ ठीक तरह से कैसे सधेगा? आपके पूछने का मतलब यह है कि बाबा 'सुपर ह्यूमन क्वालीटीज' चाहता है क्या? आप मानते हैं कि मानव का स्वभाव है कि वह अपना-अपना स्वार्थ सोचता है। मैं उलटा मानता हूँ। मानव स्वभाव कैसा है, इसका निदर्शन उत्तम-से उत्तम कानून में दीखता है। मान लीजिए कि सत्य पर चलते हैं, तो कानून में बाधा नहीं है। सत्य पर मनुष्य चला, तो उसका टेलीग्राम नहीं जायगा। चोरी का टेलीग्राम जायगा और कानूनन सजा होगी। कत्ल हुई तो अखबारों को टेलीग्राम जायगा, क्योंकि वह मानव-स्वभाव के खिलाफ है। कहीं माता ने लड़के पर प्रेम किया, ऐसी खबर पेपरों में नहीं जाती, क्योंकि प्रेम करना मानव के लिए स्वाभाविक है। दूसरी बात कोर्ट में जो आक्षेप लगाता है, उसको साबित करना पड़ता है, और 'डाउट' का लाभ मुजरिम को मिलता है। अपने सुख से सुखी होना पशु का स्वभाव है। दूसरों के सुख से सुखी होना और दूसरों के दुःख से दुःखी होना मनुष्य का स्वभाव है।

[भागलपुर विश्वविद्यालय के आचार्य आदि के साथ दिनांक ६-३-'६८ को हुई चर्चा से]

सामान्य नागरिक के आत्मप्रत्यय का आधार

लोकसत्ता

पूर्णिया जिलादान-समारोह में दादा धर्माधिकारी का अध्यक्षीय भाषण

(उत्तरांश)

सन् १९०६ में पहली बार जब 'स्वराज्य' शब्द का उच्चारण राष्ट्रपितामह दादाभाई नौरोजी ने किया, तो तीन शब्द उन्होंने दिये : 'एज्युकेट, एजीटेट, ऑर्गनाइज'—लोक-शिक्षण करो, आन्दोलन करो और संगठन करो। ये तीन प्रक्रियाएँ भिन्न-भिन्न नहीं हैं। एक ही प्रक्रिया के ये तीन अंग हैं और तीनों साथ-साथ चलाने चाहिए। आज हम रूस और चीन की क्रांति के बाद, फ्रांस की क्रांति तो पुरानी हो गयी, ऐसे युग में आ गये हैं कि जब क्रांति की प्रक्रिया में से ही लोक-शिक्षण होना चाहिए।

जिनके पास सम्पत्ति नहीं है, जिनके पास स्वामित्व नहीं है, ऐसे व्यक्तियों की संख्या समाज में अधिक है। जो समाज में बहुसंख्य हैं, जिनको वोट का अधिकार प्राप्त है, जो अपने वोट से दिल्ली के तख्त को उलट सकते हैं, पलट सकते हैं, इतनी शक्ति जिनके वोट में है, और जिनकी संख्या समाज में बहुत अधिक है, उनको अगर आपने हिंसा के और कुसंस्कारों के पाठ पढ़ा दिये, तो समाज का कोई हित कभी नहीं हो सकता। लोकसत्ता हमेशा के लिए तिरोहित हो जायगी। उनको हिंसा का पाठ पढ़ाने की आवश्यकता नहीं है। जो पढ़ाना चाहते हैं, मैं समझता हूँ वे निराश हो गये हैं, लोकात्मा पर से उनका विश्वास उठ गया है, मनुष्यता पर से विश्वास उठ गया है। क्या वे यह मानते हैं कि हिंसा से सत्ता उनके हाथ में जायगी, जिनके हाथ में आज कुदाली, कुल्हाड़ी और हल है?

डंडा चलेगा तो सत्ता उसके हाथ में जायगी जो डंडा चलाने में सबसे अधिक निपुण होगा। और जो डंडा कुशलता के साथ चला सकेगा, उसके हाथ में अगर सत्ता और सम्पत्ति जायगी, सत्ता, सम्पत्ति, शस्त्र, तीनों अनर्थमूलक साधन जिस व्यक्ति, या व्यक्तियों के समूह के हाथ में जायँगे, क्या वह देवदूतों का समूह होगा? क्या वह फरिश्तों का समूह होगा? उसमें न 'लोक' रहेगा और न 'लोक-चारित्र्य' रहेगा। जिसे आप 'सिविल कॅरेक्टर' कहते हैं, नागरिक-चारित्र्य कहते हैं, उस नागरिक-चारित्र्य की दीक्षा क्रांति की प्रक्रिया में से ही दी जानी चाहिए।

आत्मश्राद्ध का संस्कार : लोक-चारित्र्य का निर्माण

परम्परागत दान में और इस दान में बहुत बड़ा अन्तर है। परम्परागत दान संपत्ति और स्वामित्व के संरक्षण के लिए था। जो निर्धन है, जो दरिद्र है, जो स्वामित्वहीन है, उनकी सद्भावना प्राप्त करो, सद्भावना इसलिए प्राप्त करो कि तुम्हारे धन और तुम्हारे स्वामित्व का संरक्षण हो। आज तक का दान यह था, लेकिन यह दान कहता है कि सभी छोटे-बड़े, सभी मालिकों का दान करना है। स्वामित्व छोटा-बड़ा नहीं होता, स्वामित्व स्वामित्व है। वह चाहे छोटा हो या बड़ा हो। वह अनर्थमूलक है। सभी को स्वामित्व का विसर्जन करना है।

पहले-पहल जब मैं गयाजी आया, बहुत पहले की बात है, तो एक वृद्ध सज्जन धर्मशाला में मिले। हमने पूछा कि क्या पिताजी का श्राद्ध करने आये हैं? कहा नहीं, हम तो गयाजी देखने आये हैं। मैंने उनसे पूछा कि आप कैसे आ गये? कहने लगे, मैं अपना ही श्राद्ध करने आया हूँ! पहले-पहल यह बात सुनी थी। मुझे ताज्जुब हुआ कि यह आदमी होश में है या नहीं! अपना श्राद्ध कैसे करेगा? उन्होंने कहा, नहीं हमारे बेटे वगैरह सब नास्तिक हो गये हैं, हमको पता चल गया है कि ये हमारा श्राद्ध नहीं करनेवाले हैं, इसलिए हम अपना ही श्राद्ध करने के लिए आये हैं और इस आत्मश्राद्ध से हमें स्वर्ग प्राप्त होनेवाला है! गयाजी आपके बिहार में ही है। यहीं पर दो महापुरुष हुए, जिनके नाम सार्वभौम हैं—गौतमबुद्ध और अशोक। राजाओं में अशोक और संतों में, महात्माओं में, गौतम बुद्ध। ये दो पुरुष ऐसे हैं, जो सार्वभौम माने जाते हैं। देशकाल, सम्प्रदाय-निरपेक्ष मान्यता जिनके लिए संसार में है, ऐसे ये दो ही महापुरुष हैं और वे आपके बिहार में हुए। मैं समझता हूँ कि उन महापुरुषों का तर्पण अब, स्वामित्व जिन लोगों के पास में है, चाहे अल्प हो या महान्, उन लोगों के आत्म-श्राद्ध से ही होनेवाला है। उनके लिए यह मुहूर्त है। और पौरोहित्य ऐसा पवित्र पुरुष अगर करता है तो बिहार के लोगों का प्रसन्न होना चाहिए। बिहार-निवासियों के लिए अत्यन्त पुण्य का यह अवसर है। इस दान में एक संस्कार निहित है। इस क्रिया में से जो संस्कार होगा, उसमें से लोक-चारित्र्य का निर्माण होगा, और उस लोक-चारित्र्य का यह प्रभाव होगा कि अंत में आपको राज्यसत्ता और विधि-विधान के सहारे के बिना लोकशक्ति, प्रभावशाली लोकशक्ति जागृत करने की सामर्थ्य और प्रयत्न प्राप्त होगा।

मित्रो, यह लोकशक्ति अदृश्य शक्ति होती है। कहा यह जाता है कि वातावरण में एक 'स्क्वेयर' इंच के लिए सोलह पौंड 'प्रेशर' होता है। हमको और आपको वह दिखाई नहीं देता। इसी तरह लोकमत का प्रभाव, लोकमत का एक अदृश्य दबाव होता है। वह सत्त्व-शील से जागृत होता है।

मिस्टर 'नो-बडी' : वर्तमान भारत का सर्वव्यापी भगवान

अंत में मैं एक बात कहूँगा। एक दफा चार बुद्धिमानों में बहस चल पड़ी, विवाद छिड़ा। एक था इंजीनियर, दूसरा था सर्जन-बड़ा भारी सर्जन, तीसरा था पुलिस का इन्स्पेक्टर जनरल, और एक चौथे सज्जन थे जिनके व्यवसाय का किसीको पता नहीं था। चर्चा का विषय था—बाइबिल में कहा गया

है कि जब हौवा और आदम को भगवान ने पैदा किया तो पहले आदम को पैदा किया और उसकी पसली में से यह हौवा पैदा हुआ। सर्जन कहने लगा, 'वह सबसे पहले मुझे पैदा किया होगा। नहीं तो पसली में से निकाला किसने होगा? वहाँ तो मैं ही रहा होऊँगा सबसे पहले। इसलिए मेरा जो पेशा है वह सबसे पुराना है।' इंजीनियर कहने लगा, 'रहने दीजिये, उसको रखा कहाँ होगा पहले? पहले तो झोपड़ी बनानी पड़ी होगी। यह बगैर इंजीनियर के हो सकता है? तुमसे पहले मैं रहा होऊँगा।' तीसरा कहने लगा कि 'इसके लिए कम-से-कम शांति तो चाहिए? किसीसे खतरा न हो डर न हो, इसलिए व्यवस्था की आवश्यकता थी। सबसे पहले मैं व्यवस्थापक पुलिसवाला रहा होऊँगा। तुम लोग नहीं।' और यह चौथा जो अराजिक था, वह कहने लगा कि व्यवस्था के लिए पहले अराजकता का निर्माण करना जरूरी है वह किसने पैदा की होगी? अगर मैं नहीं रहा होऊँ?' यह जो मिस्टर 'नो बडी' हमारे देश में है, आज यह ईश्वर से भी अधिक सर्वव्यापी है। मोटरें किसने जलायीं? आग किसने लगायी? दुकानों के काँच किसने तोड़े? दंगे में कितने मरे? किसने मारे? हर पार्टी कह देगी, हमने नहीं किया। विद्यार्थी कहेंगे, हम नहीं थे। नेता कहेंगे, हम नहीं थे। गुंडे कहेंगे, हम भी नहीं थे। तो भाई फिर भी तो हमारी मोटर टूटी, हमारी बस जली, हमारा मकान गिराया गया। यह सब किसने किया? मिस्टर 'नो बडी' ने। वह कहाँ है ही नहीं। सर्वत्र है और कहीं नहीं है। यह जो 'अराजिक है', मिस्टर 'नो-बडी' है, इसकी सत्ता जब तक है तब तक लोकसत्ता का आविर्भाव नहीं होगा। उसकी सत्ता अब देश में और दुनिया में कहीं नहीं चलनी चाहिए।

संरक्षण की जन आकांक्षाएँ और निर्माण संस्थाएँ

मार्टिन लूथर किंग की हत्या हुई। पता नहीं है किसने हत्या की। और मारकाट हो रही है। मकान जलाये जा रहे हैं। साधारण नागरिक आतंकित है। उसको संरक्षण की आकांक्षा है। संरक्षण कोई नहीं दे सक रहा है। राजसत्ता संरक्षण नहीं दे सक रही है। धर्मसत्ता तो बिलकुल निष्प्राण हो रही है। लोकसत्ता ही एकमात्र ऐसी सत्ता है जो साधारण व्यक्ति को, साधारण नागरिक को, फिर से आत्मप्रत्यय दिला सकती है।

यह जो लोकसत्ता है वह व्यक्तिगत भी है और सामुदायिक भी है। केवल सामुदायिक होगी तो शून्य होगी, केवल भाववाचक होगी एक 'फिक्शन' होगा, कल्पना होगी। वह जितनी सामुदायिक है, उतनी ही व्यक्तिगत भी है। इसीलिए आपने देखा होगा कि लोकसत्ता में जिस राज्य का निर्माण होता है वह सामुदायिक सत्ता का प्रतीक होता है, लेकिन व्यक्तिगत मत उसमें सबसे महत्व की वस्तु होती है। उसका अंतिम अधिष्ठान हरेक व्यक्ति का वोट, हरेक व्यक्ति का मत है। लोकसत्ता के इस अधिष्ठान की, इस 'सैंक्शन की' स्थापना अगर हमको करनी है तो मैं समझता हूँ कि इसका एक प्रधान साधन विनोबा का यह ग्रामदान है। इसलिए मुझ जैसा व्यक्ति, ऐसा व्यक्ति जो साधारण से-साधारण, अदना-से अदना नागरिक है, जिसका किसी संस्था, किसी संगठन के साथ कोई प्रत्यक्ष या औपचारिक सम्बन्ध नहीं है, ऐसा व्यक्ति आपके सामने हाथ जोड़कर यह निवेदन करने आता है कि इस देश में और दुनिया में लोकसत्ता की स्थापना अगर होगी तो उन्हीं मर्यादाओं में होगी, जिन मर्यादाओं को यह ग्रामदान आन्दोलन मानता है। इस प्रक्रिया से होगी या नहीं, इसी विधि से होगी या न होगी, यह भगवान जानता है। लेकिन उन्हीं मर्यादाओं से होगी, जिन मर्यादाओं को, जिन मूल्यों को स्वीकार हमने किया है। इसलिए आज के इस शुभ अवसर पर मैं आप सब लोगों को बधाई देता हूँ। आपका अभिनन्दन करता हूँ और आपसे निवेदन करता हूँ कि आज के शुभ अवसर पर आप इस आंदोलन की जो मर्यादाएँ हैं उन मर्यादाओं का चिंतन करें। उन मर्यादाओं को कार्यान्वित करने के लिए, लोकजीवन में और अपने जीवन में भी उन मर्यादाओं को चरितार्थ करना पड़ेगा, उनका गंभीरतापूर्वक आज से विचार करें। उन विचारों के अनुरूप आचरण करने की प्रेरणा आप लोगों में भगवान की कृपा से जागृत हो, यही उससे प्रार्थना करता हूँ और आप सबको नमस्कार करता हूँ। (समाप्त)

धानापुर प्रखण्डदान : कुछ तथ्य

● पूर्वतैयारी : २९ फरवरी को संचालक श्री रामजी भाई अपने सहयोगियों के साथ शहीदगाँव पधारे। १ मार्च से १३ मार्च तक अभियान का कार्यक्रम बना। १ से ३ तक प्रबुद्ध वर्ग से सम्पर्क, ४ से ५ तक शिविर हुआ। प्रारम्भिक विद्यालयों, निम्न माध्यमिक विद्यालयों, इंटरमिडिएट कालेजों के समस्त अध्यापकों का सम्मेलन हुआ। तरुण कवि मालवर विश्व ने ग्राम-गीतों से गाँव-गाँव प्रचार किया। ७ मार्च को क्षेत्र विकास समिति के सदस्यों की सभा हुई। विशिष्ट एवं सामान्य नागरिकों से सम्पर्क स्थापित करते रहे।

● अभियान : ६ से १२ मार्च तक ग्रामदान घोषणापत्रों पर हस्ताक्षर हुए।

● सहयोग : क्षेत्र के सन् '४२ के क्रान्ति-सेनानी वयोवृद्ध नेता श्री कामता प्रसाद विद्यार्थी ने सारे क्षेत्र में दौरा किया। सर्वश्री रामजी भाई, ब्लाक प्रमुख रामजन्म सिंह, सघन क्षेत्र के संचालक भवानीशंकर आदि कार्यकर्ताओं ने काफी प्रचार-कार्य किया। सघन क्षेत्र विकास समिति शहीदगाँव, अजगरा और जिला सर्वोदय मंडल वाराणसी के २२ कार्यकर्ताओं तथा १५० नागरिकों ने सक्रिय भाग लिया।

● निष्पत्ति : प्रखण्ड के १२ अदालती पंचायतों की कुल ग्रामसंख्या १२२ में से ९३.५ प्रतिशत, यानी ११४ गाँव ग्रामदान शामिल हुए। धानापुर प्रखण्ड की कुल आबादी ८३,९२० है।

● घोषणा : १३ मार्च को सर्व सेवा संघ के सहमंत्री श्री दत्तोबा दास्ताने की अध्यक्षता में हुई अभियान समापन सभा में प्रखण्डदान की घोषणा हुई।

—भवानी शंकर

नक्सालबाड़ी : अशान्ति के क्षेत्र में प्रशान्ति की चेष्टा

३० जुलाई, १९६७ के 'दिनमान' में श्री इन्द्रलाल ने दो टूक बात कहते हुए भूदान की सीमाएँ बतायी थी और यह प्रश्न उठाया था कि क्यों नहीं विनोबा नक्सालबाड़ी जाते? पढ़कर एक तीव्र प्रतिक्रिया मन पर हुई थी, 'विनोबा क्या सचमुच कोई दमकल है कि जहाँ अशान्ति की आग लगे वहाँ पहुँच जायँ आग बुझाने? और, क्या श्री इन्द्रलाल जैसे दो टूक बात कहनेवाले लोगों का फर्ज और जिम्मेदारी बस इतनी भर है कि विनोबा को आगाह कर दें, ललकार दें या असफल सिद्ध कर दें?' बात बेतुकी मालूम हुई थी।

विनोबा ने बहुत पहले से ग्रामदान को 'डिफेन्स मेजर' कहा था, और सारे देश के प्रायः सभी दलों के नेताओं के सामने भी (सन् १९५७ के एलवाल ग्रामदान कान्फरेंस में) यह बात रख दी गयी थी। नेताओं ने इस आन्दोलन को अपना पूर्ण समर्थन भी दिया था। लेकिन इसके बाद किसीने अपनी सम्मति जाहिर करने के बाद का कोई कदम नहीं बढ़ाया। फुरसत हो किसे रही गद्दी की उपासना करने से!

विनोबा ने सन् १९५७ में यह बात कही थी, और ठीक दस साल बाद सन् १९६७ में जब नक्सालबाड़ी में उपद्रव की आग जली, और चीन ने उसको अपने 'रेडियो पेकिंग' के मोर्चे से जोरदार समर्थन दिया तो नक्सालबाड़ी के आदिवासियों की हरकतों ने दिल्ली तक के कान खड़े कर दिये। और उस उपद्रव या क्रान्ति को दबाने के लिए सरकार दौड़ पड़ी। समस्याओं के उभाड़ को समस्याओं की तह में गये बिना दबा देने की कोशिश शुरू हो गयी।

लेकिन विनोबा मानते हैं, और यह साफ दिखाई दे रहा है कि इस दबाव से नक्सालबाड़ी की आग बुझायी नहीं जा सकती, उसका एक ही उपाय है कि समस्याएँ हल हों। संघर्ष का सन्दर्भ ही समाप्त कर दिया जाय। ग्रामदान इसके लिए विकल्प रूप में प्रस्तुत है। लेकिन इस विकल्प की संभावनाओं को मान्यता देकर भी नेताओं ने इसके क्रियान्वयन में अपनी शक्ति नहीं लगायी! 'यह शायद एक ऐतिहासिक संयोग ही रहा, ग्रामदान की अपनी शक्ति के विकास के हक में!' यह बात स्पष्ट हुई थी दरभंगा के जिलादान की घोषणा से, और स्पष्टतर हो गयी बिहार-दान के संकल्प से। इस संकल्प की पूर्ति के हो रहे बिहार के प्रयत्नों में गति देने के लिए

नक्सालबाड़ी का आदिवासी :
तीर-धनुष की क्रांति

विनोबा ने कुछ घूमना शुरू किया और उसी क्रम में जब पूर्णिया पहुँचे, तो सन् १९६७ के अशान्त और १९६८ के ऊपर से निश्चिन्त, किन्तु अन्दर से अशान्त और सक्रिय नक्सालबाड़ी ने उन्हें भी अपने करीब खींच लिया।

युग की समस्याएँ—जिनका हल अस्तित्व-रक्षा के लिए अनिवार्य हो जाता है, क्रान्तिकारी को अपनी ओर खींचती ही हैं।

× × ×

विनोबा नक्सालबाड़ी के करीब पहुँचे हैं, तो वहाँ कुछ होगा। क्या होगा? यही प्रश्न मन में लिये जब हम ६ अप्रैल को शाम को ठाकुरगंज पी० डब्ल्यू० डी० के डाक-बंगले पर पहुँचे (जहाँ विनोबाजी का पड़ाव था) तो एक छोटे-से हाल में गोष्ठी जमी हुई थी। खिड़की से झाँककर देखा तो अन्दर कहीं जगह नहीं थी। यात्रा की थकान को भूलकर वहीं खड़े-खड़े गोष्ठी का आनन्द लेने लगे।

"बाबा की ४० दिन की जेल कबूल करो।···जिसे यह जेल कबूल हो, वह हाथ उठाये एक नहीं रे भइया, दोनों···दोनों हाथ" (खुद दोनों हाथ उठाकर) इस तरह।

'सिर पर बाँध कफन जो निकले,
बिन सोचे परिणाम रे!'

बिना कुछ सोचे बाबा की यह जेल कबूल करोगे तो नक्सालबाड़ी का काम अवश्य होगा। इसका प्रभाव पूरे बिहार, बंगाल पर पड़ेगा। पूरे देश पर पड़ेगा, पूरी दुनिया पर पड़ेगा।"

बाबा कहते जा रहे थे, "··· 'नक्सालबाड़ी की एक हवा बनी, समस्या चुनौती बनकर आयी। अगर इसका हल नहीं होगा तो अशान्ति बढ़ती जायगी। लेकिन अगर शान्ति की शक्ति से यह काम हो सकता है तो दुनिया में अहिंसा की शक्ति पर विश्वास बढ़ेगा। यह भरोसा पैदा होगा कि अहिंसा की शक्ति से दुनिया के मसले हल हो सकते हैं। जिसकी आज दुनिया को सख्त जरूरत है।···हिंसा से दुनिया के मसले सुलझते नहीं, उलझते ही हैं।"

फिर घोषणा हुई, "चालीस दिनेर जेल स्वीकार!" लेकिन जेल की अवधि ४० दिन की ही क्यों? बाबा बताते हैं इस ४० दिन की महिमा—'बुद्ध, मोजेस, ईसा ने चालीस-चालीस दिनों का उपवास, तप आदि किया था। अपार महिमा है चालीस दिन की!

× × ×

बाबा ने बहुत पहले इस नक्सालबाड़ी क्षेत्र को भारत की गर्दन की संज्ञा दी थी। और आज वह संज्ञा सार्थक सिद्ध हो रही है। दोनों (पाकिस्तान और चीन) ओर से गर्दन दबाने की चेष्टाएँ चल रही हैं। नक्सालबाड़ी के बाद गुवाहाटी के उपद्रव इस आशंका को ताकत दे रहे हैं।

नक्सालबाड़ी के कुछ प्रमुख लोगों से

सामने बाबा ने सुझाव दिया 'नक्सलबाड़ी के अशान्ति क्षेत्र में प्रशान्ति निकेतन की स्थापना' का। यह प्रशान्ति निकेतन शान्ति-निकेतन का एक केन्द्र बने। स्वरूप हो उसका एक 'कल्चरल यूनिवर्सिटी' (सांस्कृतिक विश्वविद्यालय) का। उसकी प्रवृत्तियाँ स्थानीय परिस्थिति का अध्ययन करके उसकी आवश्यकताओं, समस्याओं को ध्यान में रखकर निश्चित हों।

शान्ति निकेतन ने बाबा की पुकार सुनी है, और इस कल्पना के साकार होने की भरपूर सम्भावना प्रगट हुई है।

× × ×

रोटी के लिए संघर्षरत क्षेत्र की अशान्ति को प्रशान्ति में बदलने के लिए सांस्कृतिक विश्वविद्यालय की कल्पना पर कुछ क्षणों तक मुझे अन्दर-ही-अन्दर हँसी आती रही, उपहास और अवहेलना का कुछ अंश लिये शायद एक व्यंग्यपूर्ण हँसी। "जिन्हें पेट भरने को भात चाहिए उनको यहाँ से भात के बदले रवीन्द्र संगीत की भेंट दी जायगी? लेकिन दिल पूरी तरह कबूल नहीं कर पा रहा था कि बाबा समस्या की चुनौती के साथ ऐसा मजाक करेंगे। जरूर इसकी तह में कोई खास बात होगी लेकिन इस सम्बन्ध में कुछ पूछने का साहस भी नहीं हो रहा था।

दोपहर की इस चर्चा के बाद काफी देर तक इसी ऊहापोह में टहलता रहा। कल शाम से आज दोपहर तक की यहाँ की बातें दुहराता रहा।

फिर ख्याल आया 'शांति का अहिंसक स्वरूप शायद सांस्कृतिक आधार पर ही खड़ा हो सकता है। शान्ति को केवल 'रोटी' के साथ जोड़ने पर शायद उसका हिंसक होना अनिवार्य हो जाता है। सम्भवतः इसलिए कि मानव एक स्थूल शरीर-भर तक सीमित नहीं है, संवेदना के किसी व्यापक परिवेश के साथ भी जुड़ा हुआ है। शायद इसीलिए विनोबा ने कल नक्सलबाड़ी में ग्रामदान का तूफान खड़ा करने के लिए बंगाल के साथियों से ४० दिनों की जेल कबूल करायी थी और आज इस प्रशान्ति निकेतन की बात कह रहे थे।' इस ख्याल ने कुछ सहारा दिया।

फिर तो जैसे-जैसे सोचता गया '४० दिन की जेल और प्रशान्ति निकेतन का मेल' बैठता गया।

× × ×

तीसरे पहर हम मिले बंगाल के दो प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ता साथियों से।

बुजुर्ग श्री चारुदा और तरुण श्री हिमांशुदा, दोनों नक्सलबाड़ी के फ्रण्ट पर डटे हुए हैं अपने साथियों सहित। हिमांशुदा की सहधर्मिणी श्रीमती अम्बालिका दीदी (मंत्रालिका, कस्तूरबा ट्रस्ट, प० बंगाल शाखा) भी ट्रस्ट की सेविका बहनों के साथ अशान्ति पर प्रशान्ति का प्रलेप करने में जुट गयी हैं।

ग्रामदानी गाँव चरिमजोत
स्वामित्व समर्पण की शर्त

श्री चारुदा ने जानकारी दी, "इस क्षेत्र में साम्यवादी संगठन बहुत ठोस है। 'कोर' आदिवासी है। नक्सलबाड़ी में अशान्ति की बुनियाद है राजनीतिक और आर्थिक। बंगाल की संयुक्त मोर्चा सरकार बनी, उसके तीसरे महीने बुडागञ्ज हाथीघिसा में संघर्ष शुरू हुआ। तीन महीने तक कोई पुलिस-कारवाई नहीं हुई, पूरी अराजकता रही। उसके बाद पुलिस की कारवाई शुरू हुई।

"आर्थिक स्थिति ऐसी है कि सिर्फ इन तीन अंचलों में ही ३२ 'टी स्टेट' हैं। एक 'टी स्टेट' को मुनाफे की स्थिति बनाये रखने के लिए कम से कम ५ हजार एकड़ जमीन चाहिए। इनमें से एक भी 'टी स्टेट' स्थानीय निवासियों का नहीं है, सब बाहरवालों के हैं। खेती के लायक बची हुई जमीन पर जो मजदूर बँटाई करते हैं, उन्हें मालिक बेदखल करते रहते हैं।

"अक्टूबर '६८ से हमने यहाँ काम शुरू किया दो शान्ति-केन्द्रों की स्थापना की। पहली मार्च ६८ से करीब ६० कार्यकर्ता इस क्षेत्र में काम कर रहे हैं। हमारे काम का लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ रहा है। क्षेत्र के कुल ३८० गाँवों में हमारे कार्यकर्ता पहुँच चुके हैं। १५ हजार ग्रामदान के पोस्टर लगाये गये हैं। इधर जनमत के लोग भी सक्रिय हो गये हैं। हमारे काम में उनकी अनुकूलता है।

"और प्रेरणा? सच तो यह है कि स्वार्थ प्रेरणा ही मुख्य है। मालिक मजदूर सब महसूस कर रहे हैं कि इस काम से हमारा भला होगा। पुलिस की कारवाई के बाद तो अब एक-एक आदमी पर ७-७ केस तक चल रहे हैं। हफ्ते में ३-३ बार अदालत जाना पड़ता है। आखिर कोई कितनी परेशानी उठा सकता है।

"सुरक्षा की दृष्टि से कितने महत्त्व का क्षेत्र है यह! फाँसीदेवा पूर्व पाकिस्तान से सटा हुआ है और नक्सलबाड़ी नेपाल से। दोनों के बीच सिर्फ १५ मील का फासला है। इसीको बाबा भारत की गर्दन कहते हैं। नक्सलबाड़ी हाथीघिसा, फाँसीदेवा—यही तो मुख्य अंचल हैं संघर्ष के। हाथीघिसा के पास ही पहला ग्रामदान हुआ। एक ग्रामदानी गाँव की कुल २५० बीघे जमीन में से २५० बट्ठा जमीन निकाली गयी है। जमीन बँटी भी है।"

हिमांशुदा कह रहे थे 'अभी १ माह से नक्सलबाड़ी में हूँ। कोशिश चल रही है कि सारा नक्सलबाड़ी का ग्रामदान हो जाय। प्रमुख लोग राजी हो गये हैं। (नयतम सूचनानुसार ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर हो रहे हैं, प्रमुख लोग खुद हस्ताक्षर करके और लोगों के हस्ताक्षर कराने में जुट गये हैं।) हमने उनके सामने ग्रामदान में जीवन सहकार की कल्पना रखी है। और मुख्य कोशिश यही है

कि उनमें पोर्शीन (भागीदारी) का भाव जगे। स्थानीय मध्यम श्रेणी के तरुण लोगों को अपना साथी बनाकर उनके मार्फत ही सारा काम करने की कोशिश चल रही है।

"इस समय गरीबों में मायूसी है, भय है, हिचकिचाहट है। कुछ दिनों तक लगातार सम्पर्क करने और कुछ काम करने पर ही वे खुले हैं। प्रसादजोत (नक्सालबाड़ी के पास का एक गाँव) के कस्तूरबा-केन्द्र की बहनें बहुत लोकप्रिय हैं। लोग जब डर के मारे

प्रसादजोत का कस्तूरबा सेवा-केन्द्र :
उपद्रव में दिलासा

गाँव छोड़कर भाग गये थे तो घर-घर जाकर उन्होंने बच्चों को सम्भाला था। लोगों के मन में उन बहनों के लिए बड़ा आदर है।"

क्षितीशदा ने नक्सालबाड़ी के पूरे साम्यवादी आन्दोलन की चर्चा करते हुए बताया, "शान्तु सान्याल (जो यहाँ का मुख्य नेता है) ने करीब १७ साल से इस क्षेत्र में गरीबों के बीच काम किया है, उसकी अपनी कोई घर-गृहस्थी नहीं है। उसकी सेवा का प्रभाव और यहाँ के शोषण की चरम सीमा ने ही इस संघर्ष को जन्म दिया है। चायबगानों के कारण अच्छी खेती लायक जमीन यों ही कम है, सरकारी जमीन (वेस्ट लैंड) भी धनी लोग ही हड़प लेते हैं। यह बेजमीन गरीबों को मिलनी चाहिए। लोगों ने व्यक्तिगत झगड़े को भी इस संघर्ष में लपेटा है।"

गम्भीर चेहरा और कुछ दर्दभरी आवाज में श्री क्षितीशदा ने कहा :

● जिनके लिए यह आन्दोलन है, उनकी सक्रियता अभी तक नहीं बढ़ पायी है। हमारा काम अभी आन्दोलन का रूप नहीं ले पाया है।

● हमें हिंसा और दबाव से मुक्त क्रान्ति का समग्र चित्र लोगों के सामने रखना चाहिए।

● क्षेत्र के लोगों के साथ हमारा सहजता का सम्बन्ध और प्रेम का भाव बढ़ना चाहिए।

● क्रान्तिकारी प्रतिभावाले लोगों का इस क्षेत्र में आना चाहिए और एक टीम बनाकर काम करना चाहिए।

● जमीन की समस्या हल होनी चाहिए और उसके साथ ही उत्पादन-वृद्धि की योजना भी बननी चाहिए।

× × ×

और, जब हम थोड़े समय के लिए नक्सालबाड़ी पहुँचे, तो इतनी चर्चा के कारण वहाँ के आकर्षण नहीं रह गये थे।

नक्सालबाड़ी के मकानों की अधिकतर लकड़ी की बनी दीवारों पर ग्रामदान के बंगला और हिन्दी के पोस्टर्स कुछ बरसात में धुले, कुछ तूफान में उड़े इधर-उधर दिखाई दे रहे थे। बाकी सब कुछ शान्त था। लोगों के जीवन में कोई अस्वाभाविकता नहीं थी।

कुल चार घंटों के उस प्रवास-काल में हम नक्सालबाड़ी के शान्ति-केन्द्र प्रसादजोत के कस्तूरबा-केन्द्र और वारिसजोत नाम के ग्रामदानी गाँव में गये।

वारिसजोत नेपाल से सटा हुआ गाँव है। और प्रसादजोत से करीब १ मील दूर है। कुल २२ परिवारों के इस गाँव में १ परिवार भूमिहीन है, २-३ के पास २५ से ३० बीघे जमीन है। बाकी लोगों के पास थोड़ी-थोड़ी जमीन है। गाँव के एक प्रमुख व्यक्ति श्री रघुनाथ मिश्र से जब मैंने ग्रामदान के पीछे क्या प्रेरणा है यह जानने की कोशिश की, तो उन्होंने बताया, "आज जो हालत है, वही बना रहेगा, तो आग फिर भड़केगा। भलाई इसीमें है कि सब लोग मिलकर सब गाँव का सोचें।" फिर उन्होंने ग्रामदान की शर्तों को दुहराते हुए कहा, "हमारा गाँव का लोग को इसमें अपना ही भलाई दिखाई पड़ा है। है भी असल में ग्रामदान सबका भलाई के लिए। लूटपाट करने से न तो गरीब का ही भलाई होता है, न अमीर का ही। गरीब सोचता है कि मरना है तो मार-कर ही मरेगा, अमीर सोचता है, जान जाय तो जाय, लेकिन धन नहीं छोड़ेगा।...लेकिन अब दोनों को जीने का वास्ते ग्रामदान का बात समझना पड़ेगा, मानना पड़ेगा। आज नहीं मानेगा लोग तो कल मानेगा। नहीं मानने से कैसे होगा ?" (बंगाली-हिन्दी में)
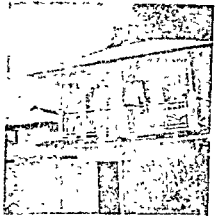
नक्सालबाड़ी का शांति-केन्द्र :
अशांति में प्रशांति

इस ग्रामदानी गाँव के एक व्यक्ति की आस्थापूर्ण ये बातें सुनकर हमें बहुत खुशी हुई। प० बंगाल के उस क्षेत्र में काम कर रहे साथियों की विचार-शिक्षण के पहलू पर जागरूकता की झलक मिली। अब तक उनकी मिहनत का सुफल निम्न प्रकार है :

ग्रामदानी गाँव	थाना	परिवार-संख्या
१. केनुगापुर जोत	नक्सालबाड़ी	६४
२. भेलटा जोत	,,	२१
३ भोदा जोत	खाड़ीबाड़ी	६४
४. वारिस जोत	,,	२३
५. मदन जोत	,,	६
६. डगु जोत	,,	२२
७. कदुमनि जोत	,,	२४
८. डुबा जोत	,,	४१
९. कुचिया जोत	,,	१८

डगुजोत, कदुमनिजोत और कुचियाजोत के ग्रामदान में शत-प्रतिशत लोग शामिल→

हिमालय जाग उठा

• निर्मला देशपांडे

हिमालय और गंगा, भारतीय संस्कृति के सार के भव्य द्योतक प्रतीक, जिनके स्मरण मात्र से सोया हुआ भारतीय मन जाग उठता है और खोया हुआ गौरव फिर से प्राप्त करता है। इसी हिमालय और गंगा के प्रदेश (उत्तराखण्ड) में भारतीय संस्कृति का नूतनतम आविष्कार प्रकट हो रहा है, अपनी समस्त प्रतिभा के साथ। शान्तिमय क्रान्ति को लानेवाला ग्रामदान आन्दोलन हिमालय की चोटी से ललकार रहा है।

उत्तरकाशी में साधुओं की बस्ती—चौली में गांधी शताब्दी शिविर में एकत्रित जिले के सभी तबकों के प्रतिनिधियों के शिविर में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की अपेक्षा, अन्य नागरिक, ग्रामदानी गांवों के प्रमुख सरकारी कर्मचारी, अध्यापक, आचार्य आदि की संख्या अधिक थी। ग्रामस्वराज्य-प्राप्ति, पुष्टि, निर्माण योजना के साथ-साथ प्रतिदिन प्रातःकाल आध्यात्मिक सत्रों के द्वारा आरोहण की बुनियाद मजबूत बनाने का प्रयास चला और परिसमाप्ति के समय जिलादान के लक्ष्य को शीघ्र पूर्ण करने के संकल्प के साथ-साथ हर व्यक्ति का अपनी जीवन साधना की दृष्टि से चित्तशुद्धि के विविध उपायों का अवलम्ब करने के संकल्प भी हुए। हिमालय की गोद में भागीरथी के तीर पर, साधुओं की बस्ती में यह घोषित किया गया कि क्रान्ति और साधना का युगानुकूल मार्ग है ग्रामदान।

ग्रामदान सुरक्षा, सुव्यवस्था का एकमात्र आधार

उत्तरकाशी आज एक अद्भुत संगम स्थान बना हुआ है। शासन के अधिकारी, राजनैतिक पक्षों के कार्यकर्ता, सामाजिक कार्यकर्ता, सब एक आवाज से ग्रामदान की महिमा को प्रतिपादित कर रहे हैं। जिला गांधी शताब्दी समिति के अध्यक्ष उत्तरकाशी के जिलाधीश श्री गंगारामजी शिविर में सम्मिलित हुए और उन्होंने ग्रामदान के लिए याचना भी की। वे मानते हैं कि सीमावर्ती क्षेत्र में शान्ति तथा सुव्यवस्था बनाये रखने के लिए, देश की सुरक्षा के लिए एकमात्र आधार है ग्रामदान, और गांधीजी का स्वप्न साकार करने का भी वही एक मार्ग है। उनके सहयोग के कारण शासन के कर्मचारी भी उत्साह से ग्रामदान का काम कर रहे हैं। यमुनाघाटी के एक सुदूर पहाड़ी में बसे हुए गांव में परगनाधीश तथा तहसीलदार ने सर्वोदय कार्यकर्ताओं से कहा, "इस इलाके में आप थोड़े-से कार्यकर्ता कहाँ-कहाँ पहुँचेंगे? हमारे पास ग्रामदान के घोषणापत्र दे दीजिये, दौरे पर जायेंगे तो साथ-साथ ग्रामदान भी हासिल करेंगे।" एक पादरी ने कहा, "मैं ध्यान छोड़ नहीं सकता हूँ, इसलिए वहीं पर रहते हुए पुष्टि तथा शान्ति-सेना का काम करूँगा।"

मतान्तरों के मध्य मतैक्य

उत्तरकाशी की आम सभा में साम्यवादी दल, जनसंघ तथा कांग्रेस के नेताओं ने एक ही मंच से ग्रामदान का समर्थन किया। साम्यवादी दल का जिले के कुछ क्षेत्रों में विशेष प्रभाव है। इस दल के कार्यकर्ताओं ने क्रान्ति का अपना ढंग अपनाकर शासन के सामने कठिन समस्या पैदा कर दी थी। लेकिन ग्रामदान तूफान की बढ़ती गति को देख साम्यवादी दल के नेता श्री कमलाराम नौटियाल ने सभा में कहा, "हमारा यह सौभाग्य है कि उत्तरकाशी जिले में शान्तिमय क्रान्ति हो रही है। हम वर्गसंघर्ष को माननेवाले हैं, लेकिन शान्तिमय ढंग से क्रान्ति होती हो तो हम उसका स्वागत करेंगे। इस दुर्गम पहाड़ी प्रदेश में सर्वोदय के कार्यकर्ता अद्भुत तपस्या कर रहे हैं। हम ग्रामदान का समर्थन करते हैं, क्योंकि हम देख रहे हैं कि इससे जमीन की विषमता मिट रही है।" उसी मंच से जनसंघ के नेता श्री नेमिचन्द ने कहा, "सर्वोदय यानी सबकी भलाई का जो विचार है और हृदय-परिवर्तन का जो तत्त्व है उसको हम भी मानते हैं। आज इस पहाड़ी क्षेत्र में सर्वोदय-वाले जो तपस्या कर रहे हैं उससे सारे भारत पर उसका असर होगा। भारत में ही नहीं बल्कि विश्व में सर्वोदय विचार फैलेगा और एक दिन आयेगा जब सर्वोदय-विचार विश्वयुद्ध का स्थान ग्रहण करेगा।" कांग्रेस के नेता श्री कुन्दन सिंहजी ने कहा कि अब तो ग्रामदान के ही कार्यकर्ता हैं।

आनेवाले जमाने का नेता

इस अनोखी सभा की विशेषता यह थी कि साधु-सन्यासी, पंडित और नेताओं की नगरी में सभा की अध्यक्षता प्रथम ग्रामदानी गांव के मुखिया श्री घनश्याम सिंहजी कर रहे थे जिनके फटे हुए कोट को मोटा कम्बल ढाँक रहा था। और उनके नाम का प्रस्ताव रखा एक प्रतिष्ठित वकील ने, यह सूचन करते हुए कि आनेवाले जमाने का नेता है, ग्रामदानी गांव का किसान। उत्तरकाशी जिलादान का संकल्प करने की हिम्मत कार्यकर्ताओं ने नहीं, ग्रामदानी गांववालों ने दिखायी। घनश्याम सिंहजी ने कहा, "कब तक टुकपुट ग्रामदान हासिल करते रहेंगे? अब जिलादान किये बगैर चैन न लेंगे।" गगोनी (भटवाड़ी) प्रखण्ड का दान डेढ़ साल पहले ही हुआ है जिसमें घनश्याम सिंहजी और उनके साथियों ने नयी चेतना लायी है। सहज भाव से वे कहते हैं, "हम अभी तक विशेष कुछ नहीं कर सके हैं। मुकदमे कोर्ट में नहीं ले जाते। गांव के झगड़ों का निपटारा गांव में करते हैं। अन्न स्वावलम्बन का प्रयास कर रहे हैं और कन्या विक्रय जैसी सामाजिक कुप्रथाओं को खतम किया है, जनमत को जागृत करके।" उन्हें

—है। इन गाँवों की ६० से ७० प्रतिशत जमीन ग्रामदान में शामिल है।

अशान्त नक्सलबाड़ी में प्रशान्ति स्थापना का यह जो क्रान्तिकारी अभियान चल रहा है, वह बाबा के कथनानुसार निश्चित ही दुनिया के मानस को प्रभावित करेगा। उस स्थिति को लाने के लिए बाबा की ४० दिन की जेल कबूल करनेवाले कार्यकर्ता साथियों को हमारी बधाई! —रामचन्द्र राही

विश्वास है कि गाँव-गाँव में अपनी योजना बनेगी, अगले चुनाव में लोकनीति का दर्शन होगा और बाह्य विकास के साथ-साथ चित्त-शुद्धि के द्वारा भक्ति बढ़ेगी, आन्तरिक विकास होगा।

क्रान्ति की भागीरथी

निरट के चमोली जिले के साथियों ने अपने अन्य कामों को समेटकर ३० जून तक चमोली जिलादान करने का संकल्प किया। श्री चंडीप्रसाद भट्ट और उनके साथियों को विश्वास है कि जिस जिले में उत्तराखण्ड प्रथम प्रखण्डदान हुआ और वह भी भारत का मुकुटमणि बदरीनाथ का, वह जिला अहिंसक क्रान्ति में पीछे नहीं रहेगा। फिर तीसरा सीमावर्ती जिला—पिथौरागढ़—कैसे पीछे रह सकता है? श्री कृजवालजी के संयोजकत्व में उस जिले के साथियों ने भी ११ सितम्बर, '६८ तक जिलादान करने का संकल्प किया। कैलास और मानसरोवर जाने का प्राचीन पथ, इस जिले में है। गंगोत्री और बदरीनाथ के साथ-साथ कैलास ने भी कदम मिलाये। उत्तरकाशी के जिलाधीश ने अन्य दोनों जिलाधीशों को सन्देश भेजकर इस गांधीजी के काम की याद दिलायी थी। इसलिए दोनों जिलों के जिलाधीशों ने जिला गांधी-शताब्दी समिति की बैठकें आयोजित कर, शासन के सहयोग का आश्वासन दिया। पिथौरागढ़ के जिलाधीश श्री वासदेवन् तमिलनाड के युवक हैं, और तमिलनाड की भक्ति-परंपरा में पले हैं। चाहते हैं कि जिले का हर गाँव ग्रामदान हो और साथ-साथ गाँव में सामूहिक प्रार्थना का क्रम भी चले। पिथौरागढ़ के सभी राजनैतिक पक्षों के नेताओं ने एक आवाज से ग्रामदान के लिए अपील निकाली।

गाँव-गाँव माँ गाँव का राज

सीमा-क्षेत्र की प्रेरणा सर्वत्र पहुँचने लगी। टिहरी के साथियों ने भी उत्तराखण्ड सर्वोदय मण्डल के नये अध्यक्ष, उत्साही युवक श्री योगेश बहुगुणा के साथ प्रखण्डदान का पहला कदम उठाने का संकल्प किया और टिहरी शहर के नागरिकों ने क्रान्ति में पूरा सहयोग देने का आश्वासन दिया। भूतपूर्व नगराध्यक्ष, एडवोकेट श्री महावीर प्रसाद गैरोला मानते हैं कि ग्रामदान के द्वारा देश का आध्यात्मिक उत्थान होगा। लोकप्रिय कवि श्री घनश्याम रतूड़ी डफली बजाकर 'गाँव-गाँव माँ गाँव का राज' गाते हुए अलख जगा रहे हैं और विमला बहुगुणा, राधा भट्ट जैसी निष्ठावान बहनें अपनी सेवा के द्वारा काम में बल प्रदान कर रही हैं। कहा जाता है कि, 'योजकस्तत्र दुर्लभः'। फूल बिखरे पड़े रहते हैं, लेकिन पिरोनेवाला धागा चाहिए। बरसों से अखण्ड तपस्या करनेवाले श्री सुन्दरलाल बहुगुणा जैसे कुशल योजक उत्तराखण्ड को प्राप्त हुए हैं और इस सारे काम के पीछे सरलादेवी की प्रेरणा है, जो उत्तराखण्ड के कार्यकर्ताओं के लिए मातृस्थान हैं।

तूफान की गति बढ़ रही है, उत्तराखण्ड-दान भी अब बहुत दूर नहीं है। जगह-जगह लोग पूछते हैं, "विनोबाजी यहाँ कब आयेंगे? उन्हें एक बार तो आना चाहिए, हिमालय में।" सुन्दरलालजी भारी पिट्ठू उठाकर यात्रा आरम्भ करते हुए जवाब देते हैं—"बाबा हिमालय में नहीं तो और कहाँ है? जिस हिमालय में भारत के अगणित ऋषि-मुनि साधु संत, साधक-शोधक, सन्यासी रहे थे, और रहेंगे, उस हिमालय में बाबा के आने की क्या आवश्यकता? हाँ, सुना है कि एक बार हिमालय आने पर वे वापस नहीं जायेंगे, इस दुनिया के सवालों को हल करने के लिए।" यह सुनते ही प्रश्नकर्ता कह देते हैं, "तो फिर बाबा बिहार में ही रहें।" ●

सहर्षा में ग्रामदान-तूफान

सहर्षा, पूर्णिया, दरभंगा, भागलपुर, मुंगेर के बीच में स्थित है। उत्तर में नेपाल है। दरभंगा और पूर्णिया का जिलादान हो चुका है। भागलपुर और मुंगेर के जो क्षेत्र इस जिले की सीमा पर पड़ते हैं उनका भी ग्रामदान हो चुका है। सहर्षा बीच में परती पड़ा हुआ है।

विनोबाजी ने अपनी आकांक्षा व्यक्त की कि सहर्षा का जिलादान दो महीने के अन्दर होना चाहिए। जिले के कार्यकर्ताओं ने संकल्प किया है कि ३० जून तक सहर्षा जिले का ग्रामदान पूरा हो। श्री महेन्द्रनारायणजी के संयोजकत्व में यह काम आरम्भ हो चुका है। थोड़े दिनों के परिश्रम के फलस्वरूप एक प्रखण्डदान हुआ।

सहर्षा जिले में आन्दोलन का काम कभी भी गतिमान नहीं हुआ था। इस जिले में कार्यकर्ताओं की कमी तो है, साथ ही पैसे की तंगी बहुत अधिक है। अर्थ-संग्रह का प्रयत्न हो रहा है परन्तु अभी कुछ मिला नहीं है। श्री महेन्द्रनारायणजी ने बताया कि १०,००० रुपये तक मिल जाने की संभावना है।

६ अप्रैल को जिला ग्रामदान प्राप्ति समिति की एक बैठक हुई थी। उस बैठक में श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी तथा श्री कृष्णराज मेहता शामिल हुए थे। जिले के काम को तेज रफ्तार देने के लिए कार्यक्रम की निम्नलिखित रूपरेखा तैयार हुई है —

(१) राजनैतिक, पंचायत, रचनात्मक एवं सर्वोदय-कार्यकर्ताओं, शिक्षकों, सर्वोदय-प्रेमियों तथा अन्य समाज-सेवकों को लेकर प्रखण्ड के किसी अनुकूल स्थान पर दो दिनों का ग्रामदान-प्राप्ति प्रशिक्षण शिविर किया जाय।

(२) शिविर में आजादी की लड़ाई, पंचवर्षीय योजना, खादी-ग्रामोद्योग, भूदान, लोकतंत्र, सर्वोदय, समाजवाद, साम्यवाद, अध्यात्म, विज्ञान, ग्रामदान आदि विषयों पर प्रकाश डाला जाय। साथ ही सर्वोदय तथा ग्रामदान सम्बन्धी संगीत, नारे, नाटक तथा प्रहसन आदि के भी अभ्यास कराये जायँ।

(३) शिविर के तीसरे दिन चार-पाँच साथियों की टोलियाँ बनाकर हर पंचायत में या दो-तीन पंचायतों में विचार-प्रचार तथा अर्थ-संग्रह करने हेतु सात दिनों की यात्रा की जाय।

(४) आठवें या नौवें दिन किसी खास अनुकूल जगह पर एक दिन की समीक्षात्मक बैठक रखी जाय। इस बैठक में सभी ग्रामदान-प्राप्ति यात्रा-टोलियाँ अपनी रिपोर्ट देने तथा प्राप्त अनुभव के आधार पर आगे की कार्य-योजना बनाने के लिए उपस्थित रहें।

(५) हर टोली में एक नायक और चार-पाँच टोली-नायकों पर एक नेता बनाया जाय।

(६) हर टोली-नायक को पम्फलेट्स, पोस्टर्स, साहित्य, फोल्डर्स, कूपन तथा दान-पत्र दिये जायँ। साथ ही इनका ठीक-ठीक हिसाब रखा जाय।

(७) हर पंचायत से कम-से-कम एक सौ रुपये संग्रह करने का प्रयास करना चाहिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि पंचायत के सभी टोलों से रुपये संग्रह किये जायँ और एक सौ रुपये संचित होने पर मनीआर्डर द्वारा जिला ग्रामदान प्राप्ति समिति को भेज दिया करें।

(८) कुल २१ प्रखण्डों में प्रखण्ड-नेता बनेंगे। १२ प्रखण्डों में नेता चुने जा चुके हैं।

(९) हर प्रखण्ड को जिले से १० कार्यकर्ता मिलेंगे जो प्रखण्ड-नेता के नेतृत्व में कार्य करेंगे।

जिले की ओर से हर प्रखण्ड को १०-१० कार्यकर्ता मिलेंगे, जब ऐसी बात मैंने सुनी तो मेरे मन में कुतूहल पैदा हुआ कि इतने कार्यकर्ता कहाँ से आ जायेंगे? जिले के संयोजक श्री महेन्द्रनारायणजी से मैंने पूछा कि इतने कार्यकर्ता आयेंगे कहाँ से? उन्होंने बताया कि इम्प्लायमेंट एक्सचेंज में हजारों लोगों के नाम दर्ज होते हैं। उनमें शिक्षक टाइप के लोग भी होते हैं। इम्प्लायमेंट एक्सचेंज के अधिकारी से उन्होंने बातचीत की कि ग्रामदान के कार्य के लिए २५० कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। उन्हें लोक-शिक्षक कहा जायगा। अधिकारी ने ५०० लोगों को पत्र लिखा है। इनका इंटरव्यू मई के पहले सप्ताह में करेंगे। उनमें से जो उनके काम के अनुकूल होंगे उन्हें प्रखण्ड-नेताओं की मदद में भेज देंगे। प्रखण्ड-नेता के साथ काम के साथ-साथ इनका प्रशिक्षण होगा। प्रखण्ड-नेता की रिपोर्ट के आधार पर उन लोक-शिक्षकों को ३० रुपये से ७५ रुपये तक की आर्थिक मदद करेंगे।

श्री महेन्द्रनारायणजी बड़े उत्साही नौजवान हैं। जितना उत्साह मैंने इनमें पाया उतना ही उत्साह उनके कुछ अन्य कार्यकर्ताओं में भी पाया। जब प्रखण्ड-नेता अपने-अपने प्रखण्ड की रिपोर्ट सुना रहे थे तो सबने अपना भरोसा और विश्वास व्यक्त किया कि क्षेत्र में सिर्फ जाने भर की देर है। ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए लोग तैयार हैं।

—कृष्णकुमार

गाँवों का पुरुषार्थ जगाकर स्वावलम्बन बढ़ायें

देहातियों को समझाना पड़ेगा कि भाग्य को पुरुषार्थ से बदला जा सकता है। दैव-दैव तो आलसी पुकारता है। मुख्य काम गाँवों का पुरुषार्थ जगाकर उनका परावलम्बन मिटाना है और यह काम गाँववालों को खुद करना होगा—उनकी अपनी योजना से ही इसे दूर करना होगा। सरकारी योजना का उद्देश्य तो स्टैण्डर्ड बढ़ाना होता है। इसका अर्थ होता है कि स्टैण्डर्ड बढ़ाने की होड़ में अपने पड़ोसियों को लूटते हैं। मुख्य सवाल रोजी, रोटी, स्वास्थ्य, शिक्षा और आवास ये पाँच लक्ष्य तय होने चाहिए। पंचायतों या सरकारी आँकड़ों से नहीं, व्यक्ति से डील करना होगा। व्यक्ति की प्लानिंग से ही गाँव की प्लानिंग निकलेगी और गाँव की प्लानिंग से सारे क्षेत्र की।—वैद्यनाथप्रसाद चौधरी

भारत के लिए अन्न के मामले में आत्मनिर्भरता अनिवार्य

विदेश-यात्रा से लौटने पर श्री जयप्रकाशजी के उद्गार

श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने ७० दिनों के प्रवास-काल में कुल ६ देशों की यात्रा की। भारत लौटने पर आपने अपने अनुभवों की चर्चा करते हुए बताया कि पिछले दिनों के सूखे और अकाल ने, भयंकर दारिद्र्य और धीमी आर्थिक प्रगति ने, राज्यों की अस्थिर राजनीतिक स्थिति और साम्प्रदायिक दंगों ने, तथा इसी प्रकार भाषायी और अन्य उपद्रवों ने भारत की एक विकर्षक तस्वीर दुनिया के सामने पेश की है। ताज्जुब है कि इतने पर भी हमारे लिए विदेशों में सद्भावना भरपूर है।

श्री जयप्रकाश नारायण अपनी पत्नी श्रीमती प्रभावतीजी सहित गत १६ फरवरी को विदेश-यात्रा पर गये थे और २५ अप्रैल को काबुल से वापस लौटे।

श्री जयप्रकाश नारायण ने बताया कि अमरीकी समाज संकटमय स्थिति में से गुजर रहा है। गृहयुद्ध के बाद पहली बार यह स्थिति उत्पन्न हुई है। युवकों में क्रांतिकारी चेतना है। वियतनाम आदि समस्याओं के कारण अमरीकी लोग शांति की खोज में हैं। उन्होंने आशा व्यक्त की कि अमरीकावासी देश की वर्तमान संकटमय स्थिति पर काबू पाने में सफल होंगे।

उन्होंने कहा कि जापान में कृषि, सहकारिता तथा लघु उद्योग क्षेत्रों में हुई प्रगति से हमें शिक्षा लेनी चाहिए। इससे भी बढ़कर जापानियों से देशभक्ति की सीख लेने की आवश्यकता है।

रूस के बारे में उन्होंने बताया कि वहाँ स्वतंत्रता की भावना प्रबल हो रही है। रूसी भारत के सच्चे मित्र हैं।

श्री जयप्रकाशजी ताशकन्द में उस स्थान में भी गये, जहाँ श्री लालबहादुर शास्त्री का देहावसान हुआ था।

काबुल में खान अब्दुल गफ्फार खाँ के साथ हुई भेंट की चर्चा करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि वह चाहते हैं कि खान भारत आना चाहते हैं, लेकिन केवल इसलिए नहीं कि उनका यहाँ भव्य स्वागत हो, बादशाह खान की यह इच्छा है कि पख्तूनों की आजादी के लिए भारत सक्रिय रूप से सहायता करे और तभी वह भारत आना पसन्द करेंगे।

पख्तूनों की आजादी के लिए भारत वचनबद्ध है या नहीं, इस बारे में पूछे गये प्रश्नों के उत्तर में श्री जयप्रकाशजी ने कहा, इस बारे में यह नहीं कह सकता हूँ कि भारत सरकार के समक्ष कोई लिखित वादा है या नहीं। महात्मा गांधी ने कहा था कि हम पख्तूनों की आजादी का समर्थन करेंगे। लार्ड वेवल ने भी पश्चिमोत्तर प्रान्त में भाषण करते हुए पख्तूनों को आश्वासन दिया था कि भारत और पाकिस्तान के बीच चाहे जो भी बंटवारा हो, इससे उनकी स्वाधीनता के अधिकार पर प्रभाव नहीं पड़ेगा।

बादशाह खान से हुई भेंट को भी जयप्रकाशजी ने कहा कि जलालाबाद में उनसे भेंट होने पर मुझे ऐसा ही लगा जैसे काबुल मेरे लिए काशी हो।

उन्होंने कहा कि हमें अनाज के मामले में आत्मनिर्भर बनना ही पड़ेगा और इस दिशा में हमें यह संकल्प कर लेना चाहिए कि चौथी योजना के बाद किसी भी हालत में भारत को विदेशों से अनाज नहीं मँगाना चाहिए।●

तमिलनाड

श्री शंकरराव देव के एक पत्र के अनुसार विदित हुआ है कि २२ अप्रैल को तिरुपुर में हुई उनकी बैठक में तमिलनाड सर्वोदय संघ ने संकल्प किया कि २ अक्तूबर, १९६९ तक सम्पूर्ण तमिलनाडदान के लिए सब सक्रिय रहेगा।

"भूदान-यज्ञ"

एक और महत्त्वपूर्ण विशेषांक

दिनांक ८, ९, १० जून '६८ को आबू में हो रहे सत्रहवें अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर।

पिछले बलिया सर्वोदय-सम्मेलन और इस आबू-सम्मेलन के बीच दो साल का अन्तराल है। इस अवधि में सर्वोदय-आन्दोलन ने कई ऐतिहासिक महत्त्व की मंजिलें पूरी की हैं। तब ग्रामदान एक कल्पना थी, अब प्रखण्डदान एक सम्भावना है। तब हम अधिकतर ग्रामदान का विचार की भूमिका में रहते थे, अब प्रखण्डदान की सम्भावना और पू० विनोबाजी की दस नहीं लाख-प्रतिनिधियों की बात ग्रामदान का समग्र परिवर्तन के सन्दर्भ में प्रस्तुत कर रही है। आन्दोलन के नये आयाम दिखायी देने लगे हैं। ऐसे वक्त में चिन्तन को सही दिशा देने के लिए आन्दोलन में लगे हम सब साथियों को एकत्र होकर का मनोयोग होना चाहिए।

अब हमारा आन्दोलन जिस मंजिल पर पहुँचा है, वहाँ से दो बातें साफ दिखायी दे रही हैं—ग्रामस्वराज्य और लोक-प्रतिनिधित्व की। "भूदान-यज्ञ" के लिए इस विशेषांक में हम इन्हीं दो दिशाओं पर आधार और विचार प्रस्तुत करने जा रहे हैं।

× × ×

"भूदान-यज्ञ" के ३१-५-'६८ के अंक के साथ वार्षिक अनुक्रम के अनुसार 'गाँव की बात' प्रकाशित होनी चाहिए, लेकिन हम पाठकों को सूचित कर रहे हैं कि उसके बदले ३१ जून का "भूदान-यज्ञ" ही होगा। 'गाँव की बात' २४-५-'६८ के अंक के साथ अनुक्रम के रूप में प्रकाशित होगी। —सम्पादक

आन्दोलन के समाचार

बिहारदान की ओर

—मुंगेर जिलादान अभियान का कार्य चल रहा है। जिले में कुल ३७ प्रखण्ड और ४ अनुमंडल हैं, जिनमें उत्तर मुंगेर के २ अनुमंडल—खगड़िया और बेगुसराय का दान सम्पन्न हो गया है। मार्च महीने में ४ और अप्रैल में १ प्रखण्डदान चुके हैं। अब दक्षिण मुंगेर के सदर और जमुई अनुमंडल में शक्ति लगी है। अभी तारापुर में अभियान चल रहा है। जिले के कुल १८ प्रखंडों का दान सम्पन्न हो चुका है। १९ प्रखंडों का दान भी १५ अगस्त तक सम्पन्न हो जाय इसकी कोशिश हो रही है। —रामनारायण सिंह

—धनबाद, १ मई। अप्रैल '६८ तक इस जिले में ४०४ ग्रामदान एवं १ प्रखंडदान हो चुके हैं, जिसमें सिर्फ अप्रैल में ७३ हुए हैं। निरसा तथा गोविन्दपुर प्रखंड में काम चल रहा है जून तक दोनों प्रखंडों का प्रखंडदान हो जायगा। पुष्टि के लिए १७ गाँवों के कागजात तैयार हो चुके हैं। इन सब कामों में २० कार्यकर्ता संलग्न हैं।

—हरिशंकर प्रसाद

—पूर्णिया जिले के दलका प्रखण्डान्तर्गत पोठिया एवं शल्दा ग्रामदानी गाँव के दो सौ परिवार गत माह अग्निकाण्ड में स्वाहा हो गये। अंचल समन्वय समिति तथा प्रखण्ड भ्रष्टाचार निरोध समिति के मंत्री श्री विमलेन्द्र झा की अपील पर गाँव के प्रमुख लोगों ने अग्निपीड़ित परिवारों की सहायता की।

—योगेश्वर झा

कपिलभाई का स्वास्थ्य

उत्तर प्रदेश ग्रामदान अभियान के संयोजक श्री कपिलभाई गत १५ मार्च '६८ को फिसलकर गिर गये थे, उनकी बाँह की जोड़ में से हड्डी का कुछ अंश टूटकर अलग हो गया था, इसलिए बाँह पर महीने भर के लिए प्लास्टर लगाया गया था। किंतु प्लास्टर कटने के बाद भी अभी तकलीफ दूर नहीं हुई है।

बिहार में ग्रामसभा-गठन तथा पुष्टि-कार्य की प्रगति

(मार्च १९६८ तक)

जिला	गठित ग्रामसभाएँ	पुष्टि हेतु गाँवों के तैयार कागजात	पुष्टि पदाधिकारी के पास दाखिल कागजात	अभिपुष्टि गाँवों की संख्या	विशेष
१ पूर्णिया	७२८	५७८	४६०	२४	मार्च तक
२ सहर्षा	४२	९	—	—	अधूरा
३ भागलपुर	३३	४	—	—	मार्च
४ संथाल परगना	३८	१२९	१२६	१२०	मार्च
५ मुंगेर	४२	४६	—	—	अधूरा
६ दरभंगा सदर अनुम०	३२३	१५९	४२	—	मार्च
७ मधुबनी अनुम० (दरभंगा)	२९६	४६	२३	२	अधूरा
८ समस्तीपुर ,, ,,	२३७	२६७	१७२	८०	फरवरी
९ मुजफ्फरपुर	६०	४६	६७	१३	मार्च
१० सारण	७०	१९	—	—	जनवरी
११ चम्पारण	५७	५३	—	—	मार्च
१२ पटना	२३	१३	—	—	मार्च
१३ गया	१७	७	—	—	मार्च
१४ शाहाबाद	—	१७	—	—	अधूरा
१५ पलामू	५५	११	—	—	फरवरी
१६ हजारीबाग	७६	८५	—	—	मार्च
१७ राँची	—	—	—	—	अधूरा
१८ धनबाद	३०	१०	—	—	मार्च
१९ सिंहभूम	२१	१४	—	—	मार्च
कुल	२,१०८	१,५४३	९१०	२३९	

—कमलनारायण

उत्तरप्रदेश

—३० अप्रैल तक उत्तरप्रदेश में प्राप्त ग्रामदानों की संख्या ५,२७७ हो गयी है। देवरिया के अभियान में ६० ग्रामदान तथा दुद्धी मिरजापुर में १८ ग्रामदान प्राप्त होने की ताजी खबर मिली है। देवरिया में गांधी आश्रम के तीन जिलों, बस्ती, गोरखपुर और देवरिया के ४० कार्यकर्ता तथा स्थानीय पथरदेवा कालेज के ३० व्यक्ति मिलकर २३ टोलियों गाँवों में गयी थीं। समारोह की अध्यक्षता श्री रामजी वर्मा ने की और बाबू गेंदासिंह तथा रामलाल चतुर्वेदी भी सम्मिलित हुए। उत्तरप्रदेश के पूर्वांचल देवरिया जिले में लोगों को अपनी समस्याओं का हल ग्रामदान में महसूस होने लगा है। बलिया के गड़वार और सोहाँव ब्लाक में चल रहे अभियान में अभी ९० ग्रामदान प्राप्त होने की सूचना मिली है। —कपिलभाई

चम्बल घाटी में तूफान

—आगरा जिले की बाह तहसील के १८० ग्रामों ने ग्रामदान घोषित करके विनोबाजी के मार्ग पर दूसरा कदम रखा। प्रथम कदम क्षेत्र के २० बागी भाइयों ने सन् १९६० में बाबा के समक्ष अपना आत्म-समर्पण करके उठाया था। इनमें से १६ को अदालत ने मुक्त कर दिया, शेष ४ में से ३ को मध्यप्रदेश के राज्यपाल ने बाह के अभियान प्रारम्भ होने से ९ दिन पूर्व ही मुक्त कर दिया, यह एक शुभ संकेत ही है।

—कल्मीन्द्र प्रकाश

राजस्थान

—१ मई से जोधपुर की मंडोर डिस्टीलरी पर राजस्थान समग्र सेवा संघ के अध्यक्ष श्री यज्ञदत्त उपाध्याय के नेतृत्व में शराबबंदी सत्याग्रह अभियान चालू कर दिया गया है। आगे की खबर है कि डिस्टीलरी में माल न जाने देने के लिए सत्याग्रहियों को ट्रक के सामने लेट जाना पड़ा! डिस्टीलरी में चोरी से माल भेजने का प्रयत्न किया जा रहा है। —सरदारमल जैन

—जयपुर, २६ अप्रैल। राजस्थान शराबबंदी सत्याग्रह समिति के संयोजक श्री गोकुलभाई भट्ट ने एक प्रेस-वक्तव्य जारी कर कहा है कि हम भोटवाड़ा जैसी सफलता पाते-पाते राजस्थान के सब केन्द्रों के काम को बन्द करवायेंगे, जब तक कि राजस्थान-सरकार गांधी जन्म-शताब्दी अर्थात् २ अक्तूबर, १९६९ तक पूर्ण शराबबन्दी लागू करने के बारे में एलान न करे और उसके अनुरूप कार्यक्रम न बनाये। —ज्ञानचन्द्र टुंकलिया

अ० भा० सर्वोदय सम्मेलन

इस वर्ष अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन आगामी ८, ९ तथा १० जून को आबूरोड, जिला-सिरोही (राजस्थान) में हो रहा है। इसके पूर्व दिनांक ६, ७, ८ को उसी स्थान पर संघ का वार्षिक अधिवेशन भी होगा।

सम्मेलन में भाग लेने के इच्छुक व्यक्ति २५ मई, '६८ तक मंत्री, सर्व सेवा संघ राजघाट, वाराणसी-१ के नाम से पाँच रुपया प्रतिनिधि-शुल्क भेजकर प्रतिनिधि बन जायँ। रेलवे-बोर्ड ने इस अवसर पर सम्मेलन में आनेवाले प्रतिनिधियों को निर्धारित शर्तों के साथ रेलवे-कन्सेशन (एक तरफ के किराये में ही जाने-आने) की सुविधा प्रदान की है।

प्रतिनिधियों के ठहरने की व्यवस्था आबूरोड स्टेशन के समीप ही जहाँ सम्मेलन हो रहा है, धर्मशालाओं तथा विद्यालयों की इमारतों में की गयी है। आबू स्टेशन दिल्ली-अहमदाबाद मीटरगेज लाइन पर है।

—राधाकृष्ण, मंत्री, सर्व सेवा संघ

एकता के पौधे को मुहब्बत से सींचें

श्री सुरेशराम की उपवास-समाप्ति पर जे० पी० के उद्‌गार

इलाहाबाद : २९ अप्रैल '६८। "अभी मैं विदेश से घूमकर लौटा हूँ। यह तो आप जानते ही हैं कि विदेशियों की निगाह में भारत का चित्र कोई विशेष आकर्षक नहीं है। हम अपने खाने का अनाज तक पैदा नहीं कर पाते और बाहर से मँगाते हैं! रुपया भी कर्ज लेते हैं और उसका सूद चुकाने के लिए नया कर्ज लेते हैं। लेकिन इससे भी ज्यादा दुखदायी बात यह है कि हमारे यहाँ धर्म, जाति या भाषा के नाम पर दंगे व मार-काट होते हैं। यह सब देखकर विदेश के लोगों को बड़ा आश्चर्य होता है और आज भारत उनकी दृष्टि में एक प्रश्नचिह्न बन गया है।"

उपर्युक्त उद्‌गार कल सर्वोदय-कुटी में श्री जयप्रकाश नारायणजी ने प्रकट किये। वहाँ वे श्री सुरेशराम भाई से मिले, जिन्होंने नगर की साम्प्रदायिक स्थिति से दुखी होकर पहले १८ दिन का उपवास किया था। फिर गत २३ अप्रैल से आमरण उपवास शुरू किया। श्री जयप्रकाश बाबू के आगमन के अवसर पर प्रतिष्ठित नागरिक और आम लोग (हिन्दू तथा मुसलमान दोनों) काफी तादाद में मौजूद थे।

श्री जयप्रकाश बाबू ने अपने भाषण में कहा कि इलाहाबाद से मेरा भी निकट का सम्बन्ध रह चुका है। यहाँ पर दंगों का सुनकर मुझे बहुत व्यथा हुई।

श्री जयप्रकाश बाबू ने कहा कि काबुल में परम पूज्य खान अब्दुल गफ्फार खाँ साहब से मैं मिला था। उन्होंने बड़े दुःख के साथ कहा कि एकता का जो पौधा महात्मा गांधी ने अपने खून से सींचा था, वह मुरझा रहा है, क्योंकि उसे मुहब्बत का खून नहीं मिल रहा है। देश की स्थिति बड़ी भयानक है। हमारा और आप सबका उत्तरदायित्व है कि इसे संभालने में जुट जायँ।

इस अवसर पर भजन हुआ और कुरान तथा बाइबिल से प्रार्थना भी की गयी। इलाहाबाद डिविजन के कमिश्नर श्री राम सहाय ने कहा कि मुझे इस शहर में आये हुए अभी ग्यारह दिन ही हुए हैं। शांति-स्थापना का जो काम था उसमें तो मैं सफल हो चुका हूँ। लेकिन असली शांति पुलिस के बल पर २५ प्रतिशत ही लायी जा सकती है, बाकी ७५ प्रतिशत तो लोगों द्वारा पारस्परिक विश्वास और सद्‌भावना से ही आ सकती है। ७५ प्रतिशत काम अभी बाकी है। मेरा यकीन है कि श्री जयप्रकाश बाबू के आने से इस काम में मदद मिलेगी।

श्री करण भाई ने कहा कि सर्वोदय, शान्ति-सेना के काम से जो भूमिका बनी है, उसे आगे बढ़ाने में आप योगदान दें।

डा० श्रीमती राजेन्द्रकुमारी वाजपेयी ने कहा कि एक नागरिक और सार्वजनिक कार्यकर्ता के नाते तो मैं पिछले डेढ़ महीने की घटनाओं से दुखी हूँ। इस पिछले वातावरण में सुरेशराम भाई ने नैतिक साहस का परिचय दिया और हम सबको हिम्मत आयी। उनको मैं बधाई देती हूँ। अब हमको दिल-से-दिल जोड़ने का काम करना है।

मौलाना मुहम्मद मियाँ फारुकी ने कहा कि दिल से-दिल जोड़ने का काम बहुत जरूरी है। लेकिन उसमें हम तभी कामयाब हो सकते हैं जब हमारा दिल साफ हो। अपने अन्दर की सफाई होने ही उसका असर बाहर पड़ने लगता है। मेरी दस्तेदुआ है कि हम सैकनियतों के साथ शहर की हवा बदलने के काम में लग जायँ।

श्री जयप्रकाश बाबू ने सुरेशराम भाई को अपने हाथ से फलों का रस दिया और उन्होंने अपना उपवास समाप्त किया।

—कमललोचन दूबे

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड; या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ३३

शुक्रवार, १७ मई '६८

इस अंक में

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन : ४२८५

पेशे का चुनाव : मानवता की कसौटी

हर युवक का, जो जीवन-यात्रा शुरू करनेवाला है और यह चाहता है कि मात्र संयोग उसके महत्वपूर्ण मामलों का निर्णायक न हो, यह कर्तव्य है कि वह अपना यह चुनाव गम्भीरतापूर्वक करे। हर व्यक्ति का एक लक्ष्य होता है और वह उसके लिए महान होता है। और यदि गहनतम विश्वास और हृदय के अन्तरतम की आवाज उस लक्ष्य को महान समझे तो वह लक्ष्य महान होता भी है।

प्रकृति किसी सांसारिक प्राणी को अपने निर्देशन से पूर्णतया वंचित नहीं रखती। मनुष्य के हृदय की आवाज बहुत धीमी किन्तु स्पष्ट होती है। लेकिन अन्तर की इस आवाज को दबाना भी बड़ा सरल है। हम जिसे प्रेरणा समझते हैं, वह सम्भवतः किसी एक क्षण में उत्पन्न हुई थी और इसी प्रकार यह भी सम्भव है कि कोई एक दूसरा क्षण उस प्रेरणा को नष्ट भी कर दे। कभी हम किसी अंश में इतने प्रभावित हो सकते हैं कि उसे स्वयं प्रकृति द्वारा उद्भूत समझें किन्तु थोड़े ही दिन में ऐसा हो सकता है कि हमारे अन्दर उसके प्रति विकर्षण का भाव उत्पन्न हो जाय।

इसलिए हमें सावधानी और गम्भीरता से इस बात की जाँच करनी चाहिए कि हम जिस पेशे का चुनाव करते हैं वह हमें सचमुच प्रेरणा देता है या नहीं, हमारे अन्तर की आवाज उसका अनुमोदन करती है या नहीं ?

किसी कार्य के प्रति महत्ता का भाव ही मनुष्य को ऊपर उठाता है। उसके कार्यों और समस्त आकांक्षाओं को महान बनाता है और उसे भीड़ से ऊपर उठने में सक्षम बनाता है और उसमें प्राणभाव जागृत करता है।

लेकिन महत्ता उसी पेशे में आ सकती है जिसमें हम उसके गुलाम न बनें। लेकिन जिसमें हम स्वतन्त्र रचनात्मक कार्य कर सकें, जिसके लिए निषेधात्मक कार्यों की—चाहे बाहरी ही क्यों न हो—जरूरत न पड़े और जिसे सबसे अच्छे लोग भी गर्व के साथ कर सकें। जिस पेशे में ये सभी बातें हों वह सम्भव है कि सबसे ऊँचा काम न हो, किन्तु वह सबसे अधिक पसन्द आनेवाला काम अवश्य है।

ऐसे पेशे जो अमूर्त सत्यों के चिन्तन से उत्पन्न होते हैं और जीवन से सम्बन्ध नहीं रखते, किसी युवक के लिए जिसके अभी कोई दृढ़ सिद्धान्त और विश्वास नहीं बने होते, खतरनाक होते हैं। लेकिन यदि ऐसे पेशे किसीके मन में गहरी जड़ें जमा लें, यदि हम उनके लिए सब कुछ बलिदान करने को तत्पर हों तो वह उसके लिए प्रसन्नता का माध्यम बन सकते हैं। लेकिन जो लोग ऐसे पेशों को जल्दी में, क्षणिक आवेश में चुनते हैं, उनके लिए ये विनाश का कारण बनते हैं।

किसी पेशे को चुनते हुए हमारी मुख्य कसौटी मानवता की भलाई और आत्म विकास होनी चाहिए। ये दोनों बातें परस्पर-विरोधी नहीं हैं।

केवल अपने लिए कार्य करनेवाला व्यक्ति चाहे एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक, बहुत बड़ा संत या बहुत अच्छा कवि बन जाय, किन्तु वह वास्तविक रूप से एक पूर्ण तथा महान व्यक्ति कभी नहीं बन सकता।

(सत्रह वर्ष की अल्पायु में लिखे गये एक लेख से) —कार्ल मार्क्स

गांधी जन्म-शताब्दी तक भारत इस दुर्व्यसन से मुक्त हो

राजस्थान शराबबंदी-सत्याग्रह के सिलसिले में सर्व सेवा संघ के प्रधानमंत्री श्री राधाकृष्ण की अपील

देश के रचनात्मक कार्यकर्ताओं में काफी अरसे से यह एक असंतोष का विषय रहा है कि देशव्यापी शराबबंदी के लिए रचनात्मक संस्थाओं के द्वारा जितना प्रयत्न किया जाना चाहिए था, वह नहीं किया गया और इधर-उधर कुछ स्थानीय प्रयास के अतिरिक्त कहीं कुछ विशेष काम नहीं हो पाया।

प्रादेशिक सरकारों ने पहले से चली आयी नीति को और भी ढीली करना शुरू किया। केरल में श्री के० केलप्पन के नेतृत्व में राज्य-सरकार को नीति के विरुद्ध 'पिकेटिंग' आदि कार्य हुए, मैसूर में भी आंदोलन चला, और श्रीमती यशोधरा दासप्पा ने सरकार की नीति के विरोध में मंत्रित्व का त्याग भी किया, महाराष्ट्र में श्री जीवराज मेहता और अन्य साथियों ने अक्तूबर से मुख्यमंत्री के निवास के सामने मौन प्रार्थना का आयोजन किया था। इन सब प्रयत्नों के बावजूद राज्य-सरकारों की नीति में कोई परिवर्तन नहीं आया, बल्कि मद्रास के श्री अण्णादुरै के अलावा और कहीं शराबबंदी की नीति के प्रति विशेष आस्था भी नहीं दीखती है।

शराबबंदी की नीति को ढीली करने के पक्ष में राष्ट्र की आर्थिक उन्नति की दुहाई दी जाती है। यही नहीं, बल्कि मद्यपान को प्रगति का चिह्न मानकर उसे प्रोत्साहन देने की बात की जाती है। जहाँ तक सरकार को आय का प्रश्न है, प्रायः यह तथ्य भुला दिया जाता है कि सरकारी खजाने को प्राप्त होनेवाली रकम से कई गुना अधिक रकम, बीच के ठेकेदारों की जेब में जाती है, और वह सारी रकम आखिर गरीबों से ही आनेवाली है।

एक ओर अगले वर्ष सारे राष्ट्र में गांधीजी की शताब्दी मनाने का विशाल आयोजन हो रहा है, तो दूसरी ओर मद्यपान की छूट बढ़ती जा रही है! इस परिस्थिति को सहन न कर सकने के कारण राजस्थान के कार्यकर्ताओं ने श्री गोकुलभाई भट्ट के नेतृत्व में राजस्थान में पूर्ण शराबबंदी के लिए सत्याग्रह का जो आंदोलन शुरू किया है, वह स्वाभाविक और उचित ही है।

देश में आज जनता को सरकार पर तथा सरकारी कानूनों पर कोई भरोसा नहीं रह गया है। अब समय आ गया है कि केवल शराबबंदी के ही क्षेत्र में नहीं, बल्कि राष्ट्र जीवन के सभी क्षेत्रों में जो भी नीति निर्धारण करना है और उसे कारगर बनाना है, वह स्वयं जनता को ही करना है। शराबबंदी की नीति की आज की स्थिति देशवासियों के लिए चुनौती ही है।

सर्व सेवा संघ ने दो वर्ष पहले अपने पटना अधिवेशन में अपना अभिमत स्पष्ट किया था, कि शराबबंदी का काम सरकारी कानून का नहीं है। क्योंकि यह स्पष्ट है कि शराबबंदी का कार्यक्रम मूलतः सामाजिक मूल्य-परिवर्तन का और नैतिकता के प्रसार का कार्यक्रम है। अतः यह विशुद्ध लोक-शिक्षण का काम है। पिकेटिंग, धरना, सत्याग्रह आदि विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम उसी लोकशिक्षण के ही अंग के रूप में चल सकते हैं और यह लोकशिक्षण का कार्यक्रम देश भर में चलना चाहिए। इस दृष्टि से राजस्थान का यह उपक्रम स्वागत-योग्य है।

आगामी मास में राजस्थान में सर्वोदय-सम्मेलन होने जा रहा है। गत सम्मेलन उत्तर प्रदेश के बलिया में हुआ था, तो वहाँ के साथियों ने दो-तीन मास पहले से जिले भर में सघन ग्रामदान-अभियान का आयोजन करके ग्राम-स्वराज्य की जागृति के प्रकाश में सम्मेलन का स्वागत किया था, उसीके परिणामस्वरूप अब एक-दो महीने में बलिया जिले का जिलादान घोषित होने की परिस्थिति निर्माण हुई है। उसी प्रकार यह प्रसन्नता की बात है कि इस बार राजस्थान शराबबंदी-सत्याग्रह के नैतिक आंदोलन के साथ सम्मेलन का स्वागत कर रहा है, तो आशा है कि उस सत्याग्रह का प्रभाव देश पर अवश्य पड़ेगा और गांधी जन्म-शताब्दी तक भारत इस दुर्व्यसन से मुक्त हो सकेगा। ●

गांधी-विचार

शराब की बुराई

मैं शराबखोरी को चोरी और शायद व्यभिचार करने से भी अधिक निन्दनीय मानता हूँ। क्या वह अक्सर इन दोनों की जननी नहीं होती? मेरा अनुरोध है कि आप शराब की आमदनी का अस्तित्व मिटा देने और शराबखानों को उठा देने के काम में देश का साथ दें।

('यंग इंडिया', ८-६-'२१)

शराब और नशीले द्रव्य, जिन्हें उनका व्यसन है और जो उनका रोजगार करते हैं दोनों को गिराते हैं। शराबी आदमी पत्नी, माता और बहन का भेद भूल जाता है और ऐसे गुनाह कर डालता है, जिन पर वह अपनी शान्त अवस्था में लज्जा अनुभव करता है। जिसका मजदूरों से कुछ भी सम्बन्ध आया है, वह जानता है कि जब वे शराब के पैशाचिक प्रभाव के अधीन होते हैं, तब उनकी क्या दशा होती है। दूसरे वर्गों के व्यक्तियों पर भी उसका प्रभाव ऐसा ही होता है। मैंने एक जहाज के कप्तान को नशे की हालत में बेसुध होते देखा है। जहाज की जिम्मेदारी उसकी इस हालत के कारण प्रधान अधिकारी को सौंप देनी पड़ी थी। बैरिस्टरों को शराब पीने के बाद नालियों में लुढ़कते देखा गया है।

('यंग इंडिया', ४-२-'२६)

जिम्मेदारी किसकी ?

प्रश्न : ग्रामदान होते है बहुत-से, दरभंगा का, पूर्णिया का जिलादान भी हुआ, तो इसके आगे की कारंवाई क्यों नही की जाती है ?

उत्तर : पहला प्रश्न है, यह आन्दोलन आपका है या मेरा ? दानो का है न ? आप अपने को भी शामिल करते हैं, तब प्रश्न सबका हो जाता है। इसका जवाब हम सबको खोजना होगा। हमने क्या माना है कि विनोबा ने ग्रामदान, जिलादान कराया। अब वह आगे का क्यों नहीं करा रहा है ? मैं यह जिम्मेदारी विनोबा की नही मानता। वह तो फकीर आदमी है और कल मर भी सकता है। गाधी को मारा गया तो हम क्या कहें कि अब हम विधवा हो गये ? इसलिए हम जो चाहते हैं, हम ही को करना होगा। आज यह नही हो रहा है। वह इसलिए नहीं हो रहा है कि उसके लिए जो साधन चाहिए, वे हमारे पास नही हैं। तीन साधनो से यह काम हो सकता है। एक तो, पुष्टि के लिए सरकारी कागज चाहिए। मेरा खुद का अनुभव है भूदान के जमाने का। मेरे साथी भूदान लाते थे। नाम दर्ज कराने के लिए मैं मिनिस्टर के पास जाता था। वह कलेक्टर को फोन कर देता था, कलेक्टर तहसीलदार को कहता था। उस समय बी० डा० ओ० नहीं था। बस, सबको फोन होते थे और पटवारी काम ही नहीं करता था। *ये सारे धन्धे हमारे कार्यकर्ता कर नहीं सकते* है। गाँववालों में यह दम नहीं है कि जिनको हमने जमीन बाँट दी है, उसको कोई बेदखल न कर सके, और वह पटवारी इस गाँव में रहकर ये सारी हरकतें कर सकता है।

गाँववाले उदासीन हैं। उनको जागृत करने की शक्ति हममें नहीं है। इसलिए फिर दूसरा तरीका हमने अपनाया। अगर सारा बिहारदान हो जाता है तो इतनी तो हवा बन जाती है कि इन लोगों के पैर उखड़ने लगते हैं। एक गाँव टापू रह जाता है तो छोटा रह जाता है। जिला हो जाता है तो कुछ और हवा हो गयी। और प्रान्त हो जाता है तो कम-से-कम ये चौकन्ने तो हो जायँगे। इनके दरवाजे पर हमको नही जाना पड़ेगा बार-बार। दूसरी चीज, हमारे पास पैसा नही है, जो इसके लिए आवश्यक है। उसके लिए हम या तो गाधी-निधि के पास गिड़गिड़ायें या सरकार के पास। और वह जो मिनिस्टर कह गया वह काम जरूर हो जायगा, ऐसा आज है नहीं। लेकिन उसीकी खुशामद करनी पड़ती है। यह सब हमसे होता नही। अब होगा तो लोकशक्ति से होगा, नही तो कुछ नही होगा। तीसरे, डंडे से काम हो सकता है, लेकिन डंडे से काम हम लेना नहीं चाहते। तो तीनो साधन हमारे पास नही हैं। इसलिए जिलादान हो जाता है और आगे का काम रह जाता है।

हमारा निवेदन इतना ही है कि जिलादान की परिस्थिति जो है, इस देश में कौन-सी ऐसी पार्टी है कि उन परिस्थितियों को नहीं चाहती है ? आप जोर-जबरदस्ती से बिलकुल नक्सालवाडी के तरीके से करना चाहें तो भी यही कहेंगे न कि लोग तैयार हो जायँ बगैर नक्सालवाडी से, और बगैर कानून से। अगर लोग तैयार हो जाते हैं, स्वामित्व-विसर्जन के लिए, तो जो इतना कराता है, आप उसीसे पूछते है कि आगे का क्यों नहीं कराता ? आगे का तुम क्यों नही करते हो ? हमारे लिए तो हम साफ कह दें कि यह *हमारी ताकत से बाहर है। ग्रामदान, जिला*दान, बिहारदान करोगे तो तुम्हारी, लोगों की ताकत बढ़ेगी। यह चीज है। इसे समझिये और समझाइये।

मेरे मित्र एक गाँव देखना चाहते हो थे, जहाँ यह हुआ है। मैंने कहा, दिखा हो सकता तो क्रान्ति हो जाती ! विनोबा यहाँ तक लाया है। दूसरों के पास तो सवाल ही सवाल है। विनोबा ने लोगो से इतना तो कहलवाया कि हम जमीन देते हैं। और, जितनी जमीन कोई नहीं बँटवा सका इतनी जमीन बँटवा भी दी। अब वह जमीन भी दिलवा दे और वह जमीन कोई छीनता है तो मरने के लिए भी वह जाय ! यह कुछ समझ में नही आता। कभी ऐसी क्रान्ति हुई है दुनिया में, दूसरों के भरोसे ? इससे हम जनता को बिलकुल बेकार, पंगु बना देते हैं। हम तो जनता को समर्थ बनाना चाहते हैं। यह सवाल सारे देश के सामने है। जैसे, स्वराज्य मिला और उसके बाद कुछ क्यों नही हुआ, सवाल सरकार का नही है, मेरा भी है, जो उसे रोज बनाता हूँ और बिगाड़ता हूँ। वह गरीब कहता है—स्वराज्य हुआ मेरा तो कुछ हुआ ही नहीं। फिर वोट क्यों दे रहा है ? वोट और गालियाँ साथ-साथ दे देता है। उसको यह समझाने की आज जरूरत है। —दादा धर्माधिकारी

सहरसा, १६-४-'६८

रूस में गाधी-शताब्दी समारोह

यूनेस्को के रूसी आयोग ने सन् १९६९ में महात्मा गाधी शताब्दी समारोह का आयोजन करने के लिए एक विशेष आयोग गठित किया है। इस आयोग के सचिव श्री एम० वासुदेव ने शिक्षा मन्त्रालय के सचिव श्री प्रेम कृपाल को लिखे एक पत्र में इस बात की जानकारी दी है। इस विशेष आयोग के अध्यक्ष रूस की विज्ञान अकादमी के एशियाई लोगों के संस्थान के अध्यक्ष प्रो० बी० जी० गाफरोव होंगे। महात्मा गाधी के सिलसिले में लेनिनग्राड और ताशकन्द में कई विशेष सभाओं का आयोजन किया जायगा, जिनमें रूस के प्रमुख वैज्ञानिक, कलाकार और युवकों तथा जनता के प्रतिनिधि भाग लेंगे। *इसी प्रकार, मास्को* में जनता के प्रमुख वर्गों के प्रतिनिधियों की एक विशेष सभा का आयोजन किया जायगा।

महात्मा गाधी को समर्पित पुस्तकों की प्रदर्शनी का आयोजन मास्को में किया जायगा तथा यासनाया पोलियाना में तालस्ताय स्मारक संग्रहालय में "महात्मा गाधी और तालस्ताय" नामक प्रदर्शनी का आयोजन किया जायगा। इस अवसर पर कई एक पुस्तकें प्रकाशित की जायँगी तथा रेडियो और टेलीविजन पर विशेष कार्यक्रम प्रस्तुत किए जायँगे। (प्रे०ट्र०)

परिवार-नियोजन : संयम और स्नेह की भूमिका में

हमारे कार्यकर्ताओं को संयम से जीना सीखना चाहिए और संयम का निश्चय करना चाहिए। मैंने कई दफा कहा है कि अगर ब्रह्मचर्य न हो, तो अहिंसा हो नहीं सकती। इस तरफ गीता ने हमारा ध्यान खींचा है "ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते।" शारीरिक तप में ब्रह्मचर्य और अहिंसा को इकट्ठा रख दिया। अगर दोनों को इकट्ठा नहीं रखेंगे, दोनों को एक नहीं समझेंगे और मानेंगे कि विषय वासना बढ़ाना जायें और फिर भी अहिंसा रहे, तो वह होगा नहीं। इसलिए महावीर स्वामी ने अहिंसा पर जोर दिया और उसके साथ ब्रह्मचर्य पर भी जोर दिया। इसलिए बुद्ध ने गृहत्याग पर जोर दिया। वे भी अहिंसा को मानते थे। इसलिए गीता ने अहिंसा के साथ ब्रह्मचर्य को रखा। इसलिए पतंजलि ने पंच महाव्रतों में अहिंसा के साथ ब्रह्मचर्य को रख दिया।

मैंने सुझाव पेश किया था कि जो जवान हैं, उनको दो सन्तानों में तृप्ति माननी चाहिए। फिर उन सन्तानों को परमेश्वर की मूर्ति समझकर उनके पालन पोषण, शिक्षण की ओर ध्यान देना अपना कार्य समझेंगे, तो वासना पर अंकुश आयेगा। वासना पर अंकुश लाना होगा। यह जरूरी नहीं कि पति-पत्नी इकट्ठा सोवें। बच्चों को साथ लेकर सोवें तो संयम को मदद मिलेगी। बच्चों की उपस्थिति भगवान् की उपस्थिति समझकर उन्हें अपने और पत्नी के बीच सुलाना चाहिए। इससे प्रेम और संयम बढ़ेगा।

किसीने कहा था कि तीन बच्चे मानना चाहिए। लेकिन मैंने कहा कि माता पिता मिलकर दो हैं, तो दो ही बच्चे पैदा करें। तीन होंगे तो डेढ़ गुना जनसंख्या बढ़ेगी।

रामजी ने ऐसा किया था। माना जाता है कि रामजी आदर्श पति थे, आदर्श भाई थे, आदर्श पुत्र थे, आदर्श स्वामी थे, आदर्श सेवक थे। उन्होंने सारा आदर्श पेश किया। मर्यादा-पुरुष थे। उन्होंने दो बच्चों में सन्तोष माना। पिताजी ने वन भेज दिया था। तब सीताजी भी साथ जाने के लिए निकलीं। रामजी ने उन्हें समझाया कि क्यों मेरे साथ आती हो? यहीं रहकर दशरथजी की सेवा करो, मैं अभी आ रहा हूँ। अभी यानी चौदह वर्ष। लेकिन बहुत समय 'चौदह वर्ष' नहीं कहा, 'नव पंच वर्षाणि' कहा। वाल्मीकि रामायण में यह आता है। कम समय बताना चाहते थे, इसलिए 'नौ पाँच वर्ष' कहा। सीता ने कहा—'सहधर्मचारिणी' का धर्म है कि पति जिस धर्म का आचरण करता है उसीका वह करे। तब रामजी ने उन्हें अपने साथ ले लिया। चौदह साल जंगल में घूमते रहे। चौदह साल रामजी ने ब्रह्मचर्य का पालन किया, ऋषियों के समान रहे। सीताजी ने भी ब्रह्मचर्य का पालन किया। फिर जब वापस आये, राज्याभिषेक हुआ, तब दो बच्चे हुए और मामला खतम कर दिया।

भूदान यज्ञ : शुक्रवार, १० मई, '६८

विनोबा

इन दिनों लोकमत का असर होता है। हमारा लोकमत हो कि दो बच्चों में समाप्ति मानना तो इस लोकमत का असर होगा। अगर यह न माना जाय, तो उस लोकमत का असर पड़ेगा। यह मेरा खास सुझाव है। इस पर आप लोग सोचें।

कुछ लोगों को लगता है कि पत्नी की सम्मति न मिली, तो पति बाहर जायगा, दूसरी स्त्री के साथ सम्बन्ध रखेगा। डर महसूस होता है कि दो बच्चों की मर्यादा मानी जाय और पत्नी संयम की प्रेरणा दे, तो शायद वह बाहर स्त्रीगमन (व्यभिचार) करेगा। ऐसा डर रहना उनके मन में होता है, इसलिए वे सम्मति दे देती हैं। हमको सोचना चाहिए कि हम बाहर जाते हैं वह जमाने के लिए जाते हैं या कि वासना बढ़ाने के लिए। बाहर जाना होता है, वह परमात्म दर्शन है, उसकी सेवा के लिए हम जाते हैं। बाहर की दृष्टि हमारे लिए तारक होनी चाहिए मारक नहीं। आप सर्वसामान्य लोग नहीं, मिशनरी लोग हैं। इसलिए संयम की बुनियाद को छोड़ना नहीं चाहिए।

संयम की बात चली तब किसीने कहा था कि इसराइल को तो ज्यादा लोकसंख्या की आवश्यकता है। वहाँ संयम की बात कैसे होगी? लेकिन इसराईलवालों को ज्यादा लोकसंख्या की आवश्यकता है तो भारत को भी है ऐसा नहीं। यह भी आवश्यक नहीं कि इसराईल में अधिक लोगों की आवश्यकता है, तो इसराईल में ही लोग बढ़ने चाहिए। मनुष्य समाज काफी बढ़ चुका है। अब अधिक बढ़ाने की आवश्यकता नहीं। अभी एक इंग्लिश पति पत्नी मेरे पास आये थे। उन्होंने यहाँ की एक बच्ची को गोद लिया। गरीब था, भूखी थी, तो इन लोगों ने उसे अपनी लड़की मानकर पास में रख लिया। वे दोनों बिलकुल सफेद हैं और वह लड़की एकदम काली। यह जरूरी नहीं था कि उनको इंग्लिश लड़की ही मिले। एक लड़की मिल गयी, बस हो गया। इसराईल अपनी लोकसंख्या बढ़ाना चाहता हो, तो भारत के पास माँग करे कि हमें एक लाख लोग चाहिए तो भारत से तुरन्त उतने लोग भेजे जा सकते हैं। इसराईल की अपनी ही पैदाइश हो, यह जरूरी नहीं। औलाद सबकी उपलब्ध है। अपनी ही औलाद बढ़ाना जातीयवाद है। और अपनी ही औलाद बढ़े, ऐसा जो सोचते होंगे, वे जरूर मार खायेंगे। रूस चाहता है कि लोग बढ़ें, इसराईल चाहता है कि लोग बढ़ें, चीन चाहता है कि बढ़ें। तो सारे देशों के लोग इकट्ठा होकर प्रस्ताव करें कि चीन के लोगों को आस्ट्रेलिया में बसाया जाय, फलाने देश के लोगों को फलाने देश में बसाया जाय वगैरह।

आपको यह जो जमाना है, उसके सब लोग मिलकर प्रस्ताव पास करें कि दो बच्चों में सन्तोष माना जाय तो समाज पर उसका असर पड़ेगा।

(राजगृह बिहार में ८ फरवरी '६८ को बम्बई के कार्यकर्ता साथियों से हुई चर्चा से)

यह अजीब विरोधाभास !

देश भर में आर्थिक मन्दी की जो लहर फैल रही है, उसकी तरफ आपका ध्यान गया ही होगा। बेकारी बढ़ रही है, विशेष रूप से शिक्षित लोग अधिक संख्या में बेरोजगार होते जा रहे हैं ! बताया गया है कि आज देश में लगभग दस हजार इंजीनियरों के पास काम नहीं है ! कई उद्योगों का उत्पादन घटा दिया गया है और कामगारों को काम से अलग होना पड़ा है, क्योंकि उस माल की खपत नहीं हो पा रही है ! इस कारण हड़ताल, घेराव और अन्य नाना प्रकार के हंगामे होने लगे हैं। कीमतें तो ऊँची ही हैं, और सामान्य जनता को गहरी चोट सहनी पड़ रही है।

कई राज्य-सरकारों का खजाना खाली हो गया है और विकास और कल्याणकारी योजनाओं का खर्च एकदम बन्द कर दिया गया है। सरकारी कर्मचारियों को वे बरखास्त नहीं कर पा रहे हैं, क्योंकि वैसा करने से बड़ा होहल्ला मचेगा; इसका अर्थ यह है कि कई विभागों में कर्मचारियों के पास केवल वेतन पाने के सिवा और कुछ काम नहीं है ! सन् १९६६ में तीसरी पंचवार्षिक योजना समाप्त हुई। अभी तक चौथी योजना नहीं बनी है। आशा की जा रही है कि अगले वर्ष तक बन जायगी।

नष्ट-भ्रष्ट अर्थव्यवस्था

जब से हमारे नेताओं ने देश के विकास और समृद्धि के साधन के रूप में पंचवार्षिक योजनाएँ बनायीं, तभी से देश के तथा विदेश के भी कई विशेषज्ञ और विवेकशील व्यक्ति इन योजनाओं के और देश की अर्थ-नीति के घोर असन्तुलन की आलोचना करते रहे हैं और उनसे संभावित दुष्परिणामों की ओर इशारा करते रहे हैं। उनमें जो विशेष उग्र विचार के हैं, वे यहाँ तक कहते आये हैं कि देश की सारी अर्थव्यवस्था ठप्प हो जानेवाली है। ऐसा मालूम हो रहा है कि बुरी-से-बुरी आशंका ही सच होने जा रही है और सारी अर्थव्यवस्था नष्ट-भ्रष्ट हो रही है।

कृषि की उपेक्षा

अत्यन्त महत्वपूर्ण विफलताओं में एक यह है कि हमने कृषि की उपेक्षा की। देश के ८५ प्रतिशत लोग आज भी कृषि पर निर्भर हैं और यह भी बिलकुल स्वाभाविक है कि देश के अधिकांश उद्योग इन लोगों की आवश्यकता पूरी करके ही समृद्ध हो सकते हैं। इधर-उधर कहीं उल्लेखनीय प्रगति भले हुई हो, फिर भी कुल मिलाकर कृषि हमारे देश में जहाँ के तहाँ ही रह गयी है। इसका कारण आप सब जानते ही हैं। जोत के नीचे की धरती के तीन-चौथाई हिस्से में सिंचाई का प्रबंध नहीं है। कृषि की उपज के भाव के साथ ऐसा छल किया जाता है कि किसान की आय का अच्छा खासा हिस्सा कर्ज चुकाने में ही खर्च हो जाता है। कृषि से सम्बन्धित जो कर्जा सरकार की ओर से दिया जाता है वह भी साहूकारों और महाजनों के ही हाथों में सौंप गया, जो अपने कर्जदारों का बराबर चूसते ही रहे हैं, इत्यादि अनेक कारण हैं।

दूसरी भूल यह की गयी कि देहातों और शहरों में पड़े हुए लाखों-करोड़ों बेकारों और अर्धबेकारों की उपेक्षा की गयी। उनके हाथ में कोई उत्पादक उद्योग देने की दिशा में नहीं के बराबर प्रयत्न हुआ। इस कारण लोगों की क्रयशक्ति कम ही रह गयी।

पूँजीवादी अर्थव्यवस्था

तीसरी भूल, जो कि सबसे अधिक महत्व की है, यह है कि देश की अर्थव्यवस्था का स्वरूप पूँजीवादी ढंग का ही रखा गया, जिसका एक अनिवार्य दोष है आय के वितरण की असमानता। अनेक आलोचकों ने इस बात की ओर संकेत किया है। स्थूल रूप से वह इस प्रकार है : पूँजीवादी रचना में उद्योगपति अधिकाधिक मुनाफा कमाना चाहते हैं। इसका अर्थ है कि वस्तु के उत्पादन में अर्थात् कच्चा माल, मजदूरी, व्यवस्था आदि में जितना खर्च हुआ होगा, उससे अधिक दाम पर माल उन्हें बेचना होगा। इसका अर्थ यह है कि कच्चा माल पैदा करनेवालों, मिल-मजदूरों, व्यवस्था विभाग के कर्मचारियों आदि सबकी कुल मिलाकर जो आमदनी है—देश भर के उत्पादन की जो आय है—वह उत्पादित माल के दाम से कम ही रहेगी। इसलिए जितना माल तैयार हुआ है, वह पूरा-का-पूरा खरीदने की स्थिति में लोग नहीं रह जाते हैं। इसलिए उत्पादन के अमुक एक हिस्से की बिक्री के लिए देश के बाहर बाजार खोजना पड़ता है। इसीलिए इंग्लैण्ड, फ्रान्स, इटली वगैरे पूँजीवादी राष्ट्रों को दूसरे राष्ट्रों पर कब्जा करना पड़ा था और अपना साम्राज्य खड़ा करना पड़ा था। उन्हें इन देशों की आवश्यकता इसी रूप में थी कि अपने यहाँ के तैयार माल के लिए बाजार मिले और यहाँ से कच्चा माल सस्ते में प्राप्त कर सकें।

तेजी-मन्दी का व्यावसायिक चक्र

इस तरह के पूँजीवाद में, अर्थव्यवस्था में बार-बार तेजी और मन्दी भी आया करती है। इसे 'व्यावसायिक चक्र' (ट्रेड साइकल) कहते हैं। कुछ वर्षों तक बड़ी तेजी आ सकती है, माँग खूब बढ़ सकती है, उत्पादन बढ़ सकता है, नये उद्योग खड़े हो सकते हैं, और फिर मंदी शुरू हो जाती है। माँग घट जायगी। दाम गिर जायेंगे। उद्योग बन्द पड़ जायेंगे। उत्पादन घटाना पड़ जायगा। और बेकारी बढ़ने लग जायगी। बिलकुल यही आज हम सब भोग रहे हैं।

विदेशी व्यापार पर निर्भरता

हम कहने को तो समाजवाद की बातें बहुत कहते हैं, लेकिन हमारे यहाँ की अर्थव्यवस्था बिलकुल पूँजीवादी ढंग की ही है। इसीलिए उसके सारे परिणाम हमें भुगतने पड़ रहे हैं। दिन-ब-दिन हम विदेशी बाजार पर अधिक निर्भर होते जा रहे हैं। हमारे देश में पैदा होनेवाले कई पदार्थों की माँग देश के अन्दर नहीं है। कपड़ा, चीनी,

वगैरह कई चीजों के लिए, जिनकी आज देश में कमी है, विदेशी बाजार खोजने की दिशा में हमारे उद्योगपतियों को प्रोत्साहित किया जा रहा है, क्योंकि वर्तमान पूंजीवादी ढांचा ही यदि बना रहा तो आखिर लोग सारा उत्पादन कभी खपा ही नहीं सकेंगे। हाल में हमारे उप-प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने कलकत्ता के एक भाषण में सुझाव दिया है कि इंजीनियरिंग उद्योग के लिए विदेशी बाजार खोजना चाहिए।

यह एक अजीब विरोधाभास है कि जब कि देश के करोड़ों लोगों को काम देने के लिए नई उद्योगों की आवश्यकता है, उत्पादन बढ़ाने के लिए सुधरे औजारों और उन्नत उपकरणों की आवश्यकता है जब कि कुल जोत की तीन चौथाई जमीन सिंचाई के प्रबन्ध से वंचित है, लाखों गांवों में अच्छी सड़कें नहीं हैं, और भी कई काम हैं, जो जनता की थोड़ी सी उन्नति के लिए अवश्य करने के हैं, तब भी देश के दस हजार इंजीनियरों को बेकार रहना पड़ रहा है और इंजीनियरी उद्योग को रुका रहना पड़ा है।

विश्वव्यापी अर्थसंकट

पूंजीवादी राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था पर संकट बार बार आता रहा है। सन् १९२९ में एक बार भयंकर संकट आया था। वह अमरीका में शुरू हुआ और सारे पूंजीवादी जगत् पर छा गया। उसके परिणामस्वरूप करोड़ों लोगों को भारी दुःख और तकलीफ भोगनी पड़ी थी। अभी कुछ सप्ताह पहले संसार पर जो डालर का संकट उग्र रूप में भड़क उठा, वह उसी प्रकार के विश्वव्यापी अर्थसंकट का सूचक है। यद्यपि राष्ट्र-नायकों ने उस संकट के विपरीत हम लोगों को आश्वासन दिया है, फिर भी हमारे देश को उस संकट का बुरी तरह शिकार होना ही पड़ेगा।

हम दिन-ब-दिन विदेशों पर अधिकाधिक अवलम्बित हो चले हैं। इसके दो कारण हैं, एक यह कि जैसा ऊपर विवेचन किया है, हमारी अर्थव्यवस्था पूंजीवादी ढंग की है, और दूसरा यह कि देश की नियोजित प्रगति के लिए देश में पड़े हुए साधन स्रोतों का समुचित विनियोग हम कर नहीं पाये। हम विदेशी सहायता और विदेशी व्यापार, इन दोनों पर अत्यधिक निर्भर रहे। इसलिए हम अपने यहाँ के हर काम के लिए पश्चिमी हुकूमत पर आश्रित रह गये। इसी परा-धीनता के कारण रुपये का मूल्य घटाने के उनके सुझाव के सामने हमें घुटने टेकना पड़ा, जिसका परिणाम बड़ा बुरा हुआ। आज हमारी दशा पहले से अधिक बिगड़ गयी। अमरीका तथा अन्य पर-राष्ट्रों ने अपने यहाँ के आयात पर काफी रोक लगा दी, पर्यटन पर नियंत्रण लगाया, सहायता देना घटा दिया और यह सब अपने यहाँ की अर्थव्यवस्था को सन्तुलित करने के लिए किया, लेकिन आगे चलकर इसका दुष्परिणाम हमारी अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा ही।

योजना की मूलभूत गलती

यह भी सही है कि हमारी अर्थव्यवस्था के बिगड़ने के और भी अनेक कारण हैं। लगातार पिछले दो वर्षों में काफी प्रदेशों में सूखा पड़ा, पाकिस्तान के साथ दुर्भाग्यपूर्ण संघर्ष हुआ, रुपये का मूल्य घटा, संयुक्त विधायक दलों की सरकार की नीतियां भी कुछ ऐसी ही रहीं, इन सब पर दोष देना होगा। परन्तु इनमें से अधिकांश कारण तो योजना की मूलभूत गलती की ही शाखाएं हैं, उसकी ही वजह से पैदा हुए हैं। सूखे का परिणाम इतना भयानक इसीलिए हुआ कि गत २० वर्षों में खेती की भारी उपेक्षा हुई, हिन्द-पाक संघर्ष हमारे यहाँ आये दिन होने-वाले घेरावों और दंगों का ही एक प्रकार-विशेष था, संयुक्त विधायक दलों की नीतियां आर्थिक अवनति के कारण उतनी नहीं थीं, जितनी कि परिणाम थीं।

'मूल्य-नीतियाँ' अपनायी जाय

इस संकट से कैसे उबरा जाय? पूंजीवादी अर्थनीति के पुराने तरीके हैं ही। पूंजीपतियों को 'प्रेरित' करने के लिए उन पर से करभार घटाया जा सकता है। औद्योगिक मजदूरों की मजदूरी की हदबन्दी की जा सकती है, अर्थात् बढ़ने से रोका जा सकता है। कृषि-उत्पादनों के दाम घटाने के लिए 'मूल्य-नीतियां' अपनायी जा सकती हैं, ताकि उद्योगों को कच्चा माल सस्ते दामों पर प्राप्त हो सके। विदेशी बाजार खोजा जा सकता है और फैलाया जा सकता है, जैसा कि ऊपर कहा गया है। इन सारे कदमों से अर्थव्यवस्था सुधर सकती है, परन्तु इसके लिए आम जनता को जिन्दगी की कीमत चुकानी होगी। हम ऐसे संकेत देख भी रहे हैं कि परिस्थिति को संभालने के लिए इन कदमों का तथा ऐसे ही अन्य उपायों का समर्थन किया जा रहा है और वे अपनाये भी जा रहे हैं।

स्वतन्त्र कृषि-औद्योगिक अर्थव्यवस्था

दूसरा मार्ग अर्थनीति को आमूलाग्र बदलने का है, जिससे राष्ट्रीय आय का समान वितरण होते होते देश की अर्थ-व्यवस्था सुधर जाय। इसके लिए क्रान्तिकारी परिवर्तन करने की आवश्यकता होगी। इस परिवर्तन की बुनियाद गांवों पर खड़ी करनी होगी, क्योंकि दुखी और पिछड़ी जनता का अधिकतर हिस्सा गांवों में ही बसा है। देश के एक विख्यात अर्थशास्त्री डा० डी० एन० गांगुली ने कुछ समय पहले कहा था कि देश की शहरी अर्थनीति के साथ हमारे गांवों का आज बिलकुल वही स्थान है, जो स्वातंत्र्य प्राप्ति से पहले अंग्रेजों के साथ रहा है। यानी जिस प्रकार इंग्लैण्ड के लाभ के लिए तब गांवों का शोषण हुआ करता था, उसी प्रकार आज शहरों के लाभ के लिए गांवों का शोषण हो रहा है। इसलिए अर्थ-नीति में आमूल परिवर्तन करने की दिशा में पहला कदम यही होना चाहिए कि गांव अपनी स्वतन्त्रता के लिए कमर कस लें। गांवों को पूंजीवादी ढंग से भिन्न, अपनी स्वतन्त्र कृषि-औद्योगिक अर्थव्यवस्था विकसित और संगठित करनी होगी। तभी, कुछ हद तक वे पूंजीवादी व्यवस्था के भ्रमजाल से मुक्ति पा सकेंगे। पूरी राहत तो तभी मिल सकेगी, जब गांवों की नयी रचना मजबूत हो जायगी और देश की सम्पूर्ण अर्थनीति को प्रभावित और परिवर्तित कर सकेगी। ग्रामदान आन्दोलन का यह एक प्रमुख उद्देश्य है।

—मनमोहन चौधरी

अध्यक्ष की चिट्ठी

यह अजीब विरोधाभास !

देश भर में आर्थिक मन्दी की जो लहर फैल रही है, उसकी तरफ आपका ध्यान गया ही होगा। बेकारी बढ़ रही है; विशेष रूप से शिक्षित लोग अधिक संख्या में बेरोजगार होते जा रहे हैं। बताया गया है कि आज देश में लगभग दस हजार इंजीनियरों के पास काम नहीं है! कई उद्योगों का उत्पादन घटा दिया गया है और कामगारों को काम से अलग होना पड़ा है, क्योंकि उस माल की खपत नहीं हो पा रही है! इस कारण हड़ताल, घेराव और अन्य नाना प्रकार के हंगामे होने लगे हैं। कीमतें तो ऊँची ही हैं, और सामान्य जनता को गहरी चोट सहनी पड़ रही है।

कई राज्य-सरकारों का खजाना खाली हो गया है और विकास और कल्याणकारी योजनाओं का खर्च एकदम बन्द कर दिया गया है। सरकारी कर्मचारियों को वे बरखास्त नहीं कर पा रहे हैं, क्योंकि वैसा करने से बड़ा होहल्ला मचेगा; इसका अर्थ यह है कि कई विभागों में कर्मचारियों के पास केवल वेतन पाने के सिवा और कुछ काम नहीं है। सन् १९६६ में तीसरी पंचवार्षिक योजना समाप्त हुई। अभी तक चौथी योजना नहीं बनी है। आशा की जा रही है कि अगले वर्ष तक बन पायगी।

नष्ट-भ्रष्ट अर्थव्यवस्था

जब से हमारे नेताओं ने देश के विकास और समृद्धि के साधन के रूप में पंचवार्षिक योजनाएँ बनायीं, तभी से देश के तथा विदेश के भी कई विशेषज्ञ और विवेकशील व्यक्ति उन योजनाओं के और देश की अर्थ-नीति के घोर असन्तुलन की आलोचना करते रहे हैं और उनसे सम्भावित दुष्परिणामों की ओर इशारा करते रहे हैं। उनमें जो विशेष उग्र विचार के हैं, वे यहाँ तक कहते आये हैं कि देश की सारी अर्थव्यवस्था ठप्प हो जानेवाली है। ऐसा मालूम हो रहा है कि बुरी-से-बुरी आशंका ही सच होने जा रही है और सारी अर्थव्यवस्था नष्ट-भ्रष्ट हो रही है।

कृषि की उपेक्षा

अत्यन्त महत्वपूर्ण विफलताओं में एक यह है कि हमने कृषि की उपेक्षा की। देश के ८५ प्रतिशत लोग आज भी कृषि पर निर्भर हैं और यह भी बिलकुल स्वाभाविक है कि देश के अधिकांश उद्योग इन लोगों की आवश्यकता पूरी करके ही समृद्ध हो सकते हैं। इधर-उधर कहीं उल्लेखनीय प्रगति भले हुई हो, फिर भी कुल मिलाकर कृषि हमारे देश में जहाँ के तहाँ ही रह गयी है। इसका कारण आप सब जानते ही हैं। जोत के नीचे की धरती के तीन-चौथाई हिस्से में सिंचाई का प्रबंध नहीं है। कृषि की उपज के भाव के साथ ऐसा छल किया जाता है कि किसान की आय का अच्छा खासा हिस्सा कर्ज चुकाने में ही खर्च हो जाता है। कृषि से सम्बन्धित जो कर्जा सरकार की ओर से दिया जाता है वह भी साहूकारों और महाजनों के ही हाथों में सौंपा गया, जो अपने कर्जदारों का बराबर चूसते ही रहे हैं, इत्यादि अनेक कारण हैं।

दूसरी भूल यह की गयी कि देहातों और शहरों में पड़े हुए लाखों-करोड़ों बेकारों और अर्धबेकारों की उपेक्षा की गयी। उनके हाथ में कोई उत्पादक उद्योग देने की दिशा में नहीं के बराबर प्रयत्न हुआ। इस कारण लोगों की क्रयशक्ति कम ही रह गयी।

पूँजीवादी अर्थव्यवस्था

तीसरी भूल, जो कि सबसे अधिक महत्व की है, यह है कि देश की अर्थव्यवस्था का स्वरूप पूँजीवादी ढंग का ही रखा गया, जिसका एक अनिवार्य दोष है आय के वितरण की असमानता। अनेक आलोचकों ने इस बात की ओर संकेत किया है। स्थूल रूप से वह इस प्रकार है: पूँजीवादी रचना में उद्योगपति अधिकाधिक मुनाफा कमाना चाहते हैं। इसका अर्थ है कि वस्तु के उत्पादन में अर्थात् कच्चा माल, मजदूरी, व्यवस्था आदि में जितना खर्च हुआ होगा, उससे अधिक दाम पर माल उन्हें बेचना होगा। इसका अर्थ यह है कि कच्चा माल पैदा करनेवालों, मिल-मजदूरों, व्यवस्था विभाग के कर्मचारियों आदि सबकी कुल मिलाकर जो आमदनी है—देश भर के उत्पादन की जो आय है—वह उत्पादित माल के दाम से कम ही रहेगी। इसलिए जितना माल तैयार हुआ है, वह पूरा-का-पूरा खरीदने की स्थिति में लोग नहीं रह जाते हैं। इसलिए उत्पादन के अमुक एक हिस्से की बिक्री के लिए देश के बाहर बाजार खोजना पड़ता है। इसीलिए इंग्लैण्ड, फ्रान्स, इटली वगैरे पूँजीवादी राष्ट्रों को दूसरे राष्ट्रों पर कब्जा करना पड़ा था और अपना साम्राज्य खड़ा करना पड़ा था। उन्हें इन देशों की आवश्यकता इसी रूप में थी कि अपने यहाँ के तैयार माल के लिए बाजार मिले और यहाँ से कच्चा माल सस्ते में प्राप्त कर सकें।

तेजी-मन्दी का व्यावसायिक चक्र

इस तरह के पूँजीवाद में, अर्थव्यवस्था में बार-बार तेजी और मन्दी भी आया करती है। इसे 'व्यावसायिक चक्र' (ट्रेड साइकल) कहते हैं। कुछ वर्षों तक बड़ी तेजी आ सकती है, माँग खूब बढ़ सकती है, उत्पादन बढ़ सकता है, नये उद्योग खड़े हो सकते हैं; और फिर मंदी शुरू हो जाती है। माँग घट जायगी। दाम गिर जायँगे। उद्योग बन्द पड़ जायँगे। उत्पादन घटाना पड़ जायगा। और बेकारी बढ़ने लग जायगी। बिलकुल यही आज हम सब भोग रहे हैं।

विदेशी व्यापार पर निर्भरता

हम कहने को तो समाजवाद की बातें बहुत कहते हैं, लेकिन हमारे यहाँ की अर्थव्यवस्था बिलकुल पूँजीवादी ढंग की ही है। इसीलिए उसके सारे परिणाम हमें भुगतने पड़ रहे हैं। दिन-ब-दिन हम विदेशी बाजार पर अधिक निर्भर होते जा रहे हैं। हमारे देश में पैदा होनेवाले कई पदार्थों की माँग देश के अन्दर नहीं है। कपड़ा, चीनी,

वगैरह कई चीजों के लिए, जिनकी आज देश में कमी है, विदेशी बाजार खोजने की दिशा में हमारे उद्योगपतियों को प्रोत्साहित किया जा रहा है, क्योंकि वर्तमान पूंजीवादी ढांचा ही यदि बना रहा तो आखिर लोग सारा उत्पादन कभी खरा ही नहीं सकेंगे। हाल में हमारे उप-प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने कलकत्ता के एक भाषण में सुझाव दिया है कि इंजीनियरिंग उद्योग के लिए विदेशी बाजार खोजना चाहिए।

यह एक अजीब विरोधाभास है कि जब कि देश के करोड़ों लोगों को काम देने के लिए नई उद्योगों की आवश्यकता है, उत्पादन बढ़ाने के लिए सुधरे औजारों और उन्नत उपकरणों की आवश्यकता है, जब कि कुल खेती की तीन चौथाई जमीन सिंचाई के प्रबन्ध से वंचित है, लाखों गांवों में अच्छी सड़कें नहीं हैं, और भी कई काम हैं, जो जनता की थोड़ी सी उन्नति के लिए अवश्य करने के हैं, तब भी देश के दस हजार इंजीनियरों को बेकार रहना पड़ रहा है और इंजीनियरी उद्योग को रुका रहना पड़ा है।

विश्वव्यापी अर्थसंकट

पूंजीवादी राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था पर संकट बार-बार आता रहा है। सन् १९२९ में एक बार भयंकर संकट आया था। वह अमरीका में शुरू हुआ और सारे पूंजीवादी जगत् पर छा गया। उसके परिणामस्वरूप करोड़ों लोगों को भारी दुख और तकलीफ भोगनी पड़ी थी। अभी कुछ सप्ताह पहले संसार पर जो डालर का संकट उग्र रूप में भड़क उठा, वह उसी प्रकार के विश्वव्यापी अर्थसंकट का सूचक है। यद्यपि राष्ट्र-नायकों ने उस संकट के विपरीत हम लोगों को आश्वासन दिया है, फिर भी हमारे देश को उस संकट का बुरी तरह शिकार होना ही पड़ेगा।

हम दिन-ब-दिन विदेशों पर अधिकाधिक आवलम्बित हो चले हैं। इसके दो कारण हैं, एक यह कि जैसा ऊपर विवेचन किया है, हमारी अर्थव्यवस्था पूंजीवादी ढंग की है, और दूसरा यह कि देश की नियोजित प्रगति के लिए देश में पड़े हुए साधन स्रोतों का समुचित विनियोग हम कर नहीं पाये। हम विदेशी सहायता और विदेशी व्यापार, इन दोनों पर अत्यधिक निर्भर रहे। इसलिए हम अपने यहाँ के हर काम के लिए पश्चिमी हुकूमत पर आश्रित रह गये। इसी परा-धीनता के कारण रुपये का मूल्य घटाने के उनके सुझाव के सामने हमें घुटने टेकना पड़ा, जिसका परिणाम बड़ा बुरा हुआ। आज हमारी दशा पहले से अधिक बिगड़ गयी। अमरीका तथा अन्य पर राष्ट्रों ने अपने यहाँ के आयात पर काफी रोक लगा दी, पर्यटन पर नियंत्रण लगाया, सहायना देना घटा दिया और यह सब अपने यहाँ की अर्थव्यवस्था को सन्तुलित करने के लिए किया, लेकिन आगे चलकर इसका दुष्परिणाम हमारी अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा ही।

योजना की मूलभूत गलती

यह भी सही है कि हमारी अर्थव्यवस्था के बिगड़ने के और भी अनेक कारण हैं। लगातार पिछले दो वर्षों में काफी प्रदेशों में सूखा पड़ा, पाकिस्तान के साथ दुर्भाग्यपूर्ण संघर्ष हुआ, रुपये का मूल्य घटा, संयुक्त विधायक दलों की सरकार की नीतियां भी कुछ ऐसी ही रहीं, इन सब पर दोष देना होगा। परन्तु इनमें से अधिकांश कारण तो योजना की मूलभूत गलती की ही शाखाएँ हैं, उसकी ही वजह से पैदा हुए हैं। सूखे का परिणाम इतना भयानक इसीलिए हुआ कि गत २० वर्षों में खेती की भारी उपेक्षा हुई हिन्द-पाक संघर्ष हमारे यहाँ आये दिन होने-वाले घेरावों और दंगों का ही एक प्रकार विशेष था, संयुक्त विधायक दलों की नीतियां आर्थिक अवनति के कारण उतनी नहीं थीं, जितनी कि परिणाम थीं।

'मूल्य-नीतियाँ' अपनायी जाय

इस संकट से कैसे उबरा जाय? पूंजीवादी अर्थनीति के पुराने तरीके हैं ही। पूंजीपतियों को 'प्रेरित' करने के लिए उन पर से कर भार घटाया जा सकता है। औद्योगिक मजदूरों की मजदूरी की दर-वृद्धि रोकी जा सकती है, अर्थात् बढ़ने से रोका जा सकता है। कृषि-उत्पादनों के दाम घटाने के लिए 'मूल्य-नीतियाँ' अपनायी जा सकती हैं, ताकि उद्योगों को कच्चा माल सस्ते दामों पर प्राप्त हो सके। विदेशी बाजार खोजा जा सकता है और फैलाया जा सकता है, जैसा कि ऊपर कहा गया है। इन सारे कदमों से अर्थव्यवस्था सुधर सकती है, परन्तु इसके लिए आम जनता को जिन्दगी की कीमत चुकानी होगी। हम ऐसे संकेत देख भी रहे हैं कि परिस्थिति को संभालने के लिए इन कदमों का तथा ऐसे ही अन्य उपायों का समर्थन किया जा रहा है और वे अपनाये भी जा रहे हैं।

स्वतंत्र कृषि-औद्योगिक अर्थव्यवस्था

दूसरा मार्ग अर्थनीति को आमूलाग्र बदलने का है, जिससे राष्ट्रीय आय का समान वितरण होते होते देश की अर्थव्यवस्था सुधर जाय। इसके लिए क्रान्तिकारी परिवर्तन करने की आवश्यकता होगी। इस परिवर्तन की बुनियाद गांवों पर खड़ी करनी होगी, क्योंकि दुखी और पिछड़ी जनता का अधिकतर हिस्सा गांवों में ही बसा है। देश के एक विख्यात अर्थशास्त्री डा० बी० एन० गांगुली ने कुछ समय पहले कहा था कि देश की शहरी अर्थनीति के साथ हमारे गांवों का आज बिलकुल वही स्थान है, जो स्वातंत्र्य प्राप्ति से पहले अंग्रेजों के साथ रहा है। यानी जिस प्रकार इंग्लैण्ड के लाभ के लिए तब गांवों का शोषण हुआ करता था, उसी प्रकार आज शहरों के लाभ के लिए गांवों का शोषण हो रहा है। इसलिए अर्थ-नीति में आमूल परिवर्तन करने की दिशा में पहला कदम यही होना चाहिए कि गांव अपनी स्वतंत्रता के लिए कमर कस लें। गांवों को पूंजीवादी ढंग से भिन्न, अपनी स्वतंत्र कृषि-औद्योगिक अर्थव्यवस्था विकसित और संगठित करनी होगी। तभी, कुछ हद तक वे पूंजीवादी व्यवस्था के भ्रमजाल से मुक्ति पा सकेंगे। पूरी राहत तो तभी मिल सकेगी, जब गांवों की नयी रचना मजबूत हो जायगी और देश की सम्पूर्ण अर्थनीति को प्रभावित और परिवर्तित कर सकेगी। ग्रामदान आन्दोलन का यह एक प्रमुख उद्देश्य है।

—मनमोहन चौधरी

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, १७ मई, '६८

पाठकों को स्मरण होगा कि हमने "भूदान-यज्ञ" के दिनांक १२ अप्रैल '६८ के अंक में एक परिचर्चा शुरू की थी, यह उसी परिचर्चा का दूसरा भाग है। इसमें प्रस्तुत है, बिहार के प्रमुख कार्यकर्ता साथियों की सर्वसम्मत राय और योजना, श्री गांधी आश्रम, उत्तर प्रदेश के एक पुराने खादी-कार्यकर्ता तथा खादी-जगत के वरिष्ठ साथी के विचार।—सं०

खादी : ग्रामदान के संदर्भ में

[गत २२ से २४ जनवरी तक श्री राममुमरण शिल्पशाला, उलाव (मुंगेर) में बिहार के खादी के कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओं की चर्चा ग्रामदानी गाँव में खादी के स्वरूप पर हुई। चर्चा में सर्वश्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, रामश्रेष्ठ राय, हरिकृष्ण ठाकुर, कैलाश प्रसाद शर्मा, निर्मल चन्द, जीवनेश्वर बाबू, खादी-विकास पदाधिकारी, राज्य खादी बोर्ड, आदि ने भी भाग लिया था। चर्चा की सर्वसम्मत निष्पत्ति निम्न प्रकार है।]

नये गाँव में खादी

ऐसे गाँव से तात्पर्य उन गाँवों से है, जहाँ ग्रामदान तो हुए हैं, पर खादी का काम प्रारम्भ न हुआ हो या ग्रामोद्योग की योजना नहीं चल रही हो।

(क) प्रारम्भ : ग्रामदानी गाँव से स्वाश्रयी एवं स्वावलम्बी समाज की रचना की आशा है, इस कारण इन गाँवों के निर्माण की दिशा कल्याणकारी विकास की प्रक्रिया से भिन्न होगी। सरकार एवं संस्थाएँ इनके अभिक्रम को प्रकट करने में सहायक होंगी। स्पष्ट है कि सेवा की आतुरता में हम अपनी योजना चाहे कितनी भी मँजी हुई बनायें, गाँव के ऊपर न लादें। पहली आवश्यकता है गाँव में योजना की भूख पैदा करना।

(ख) पूँजी : योजना गाँव की होगी एवं पुरुषार्थ गाँव का, तो स्पष्ट है कि पैसा भी गाँव का ही होगा। कोई भी योजना उसके सम्पूर्ण आयोजन की एक कड़ी होगी। सम्भव है कोई गाँव अपने आर्थिक विकास का श्रीगणेश खादी-ग्रामोद्योग से ही करे।

चूँकि योजना गाँव की आर्थिक विकास की एक कड़ी है, इस कारण इसका आर्थिक दायित्व एवं लाभ भी गाँव का ही होगा। कोई भी बाहरी सहायता या ऋण गाँव को प्राप्त होगा। गाँव योजना प्रारम्भ करने के पहले अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह समझ ले। आज किसी योजना के लिए कोई-न-कोई अनुदान या उपादान प्राप्त है, कुछ नहीं मिलनेवाला है, फिर भी योजना गाँव के हित में है तो गाँव को चलाना है।

कोई गाँव आज नितान्त विपन्नावस्था में है। वैसा गाँव सरकार या संस्था से खादी-ग्रामोद्योग की किसी योजना को चालू करने के लिए आग्रह कर सकता है और इन्हें वैसे गाँव की मदद में जाना चाहिए, पर संस्था या सरकार को अपनी ओर से वहाँ किसी उद्योग का संचालन गाँव के निर्णय के अनुरूप ही करना चाहिए। ऐसे भी गाँव होंगे जहाँ सेवा-संस्थाएँ या सरकार प्रारम्भ में अपनी ओर से व्यवस्था की समय-समय पर जानकारी देंगी, पर गाँव निर्णय देने में असमर्थ होगा। गाँव की विपन्नता के कारण उद्योग का श्रीगणेश तो कर दिया जाय, पर जितनी जल्दी गाँव अपनी लाठी टेक ले, उतनी जल्दी सेवा की सार्थकता सिद्ध होगी।

(ग) कार्यकर्ता : (१) कौन—योजना गाँव की, पूँजी गाँव की तो कार्यकर्ता भी गाँव के, तभी तन, मन और धन, तीनों गाँव के निर्माण में लगा माना जायगा। गाँव के कार्यकर्ता से अर्थ—गाँव का कोई व्यक्ति आंशिक या सम्पूर्ण सेवा वैतनिक या अवैतनिक नियमित रूप से देने का संकल्प करता है। कोई बाहर का सेवक, जो अपने को उस गाँव की सेवा में लगाना चाहता है और जिसे गाँव ने स्वीकार किया है। गाँव किसी व्यक्ति की सेवा अमुक अवधि के लिए ऋण ले सकता है।

(२) कैसे—गाँव जो भी उद्योग चलाना चाहता है उसके लिए गाँव को व्यवस्थापकीय एवं तकनीकी ज्ञान का कार्यकर्ता चाहिए। ऐसे जानकार कार्यकर्ता गाँव में मिल भी जा सकते हैं, लेकिन कार्यकर्ता तैयार भी करने होंगे। उद्योग के लिए समय-समय पर व्यवस्थापकीय या तकनीकी प्रशिक्षण या शिविरों में भाग लेना, उद्योग के ज्ञान, प्रत्यास्मरण एवं संशोधनों के लिए आवश्यक होगा। आज ऐसे प्रशिक्षणों के लिए सरकारी छात्रवृत्ति प्राप्त है तथा शिक्षण-शुल्क भी नहीं देना पड़ता। आगे यह सुविधा नहीं भी मिल सकती है। आज भी कुछ वैसे लम्बे शिविरों की आवश्यकता महसूस होती है, जिसमें ग्रामीणों को थोड़े समय में कुछ मोटी जानकारी दी जा सके। ऐसे शिविरों के संयोजन में अर्थाभाव के कारण बाधा आती है।

गाँव को अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। अमुक व्यक्ति को अपने काम के लिए तैयार कर रहे हैं तो उसको रोटी का उत्तर-दायित्व गाँव का है। प्रशिक्षण के लिए सारी सुविधा प्राप्त भी है, उसके लिए भी अमानत-जमा या गणवेश, ऊपर-खर्च आदि का खर्च सामने आता है। गाँव प्रतीक स्वरूप इस प्रकार के खर्च का वहन अपने कोष में से करे या प्रयोजन के लिए गाँव से चन्दा इकट्ठा करे। इससे गाँव तथा व्यक्ति, दोनों का नैतिक उत्तरदायित्व बढ़ता है।

ऐसे प्रयोजनीय प्रशिक्षण जिसके लिए कोई सहायता उपलब्ध नहीं है, गाँव अपनी आवश्यकतानुसार वैसे प्रशिक्षणों का लाभ सारा खर्च देकर भी प्राप्त करेगा ही।

पुराने गाँव

पुराने गाँव से तात्पर्य उस गाँव से है जहाँ ग्रामदान के पहले से या ग्रामदान के बाद भी किसी संस्था ने अपनी ओर से वहाँ खादी ग्रामोद्योग का काम प्रारंभ किया। संभव है कि उस गाँव की कोई सहयोग समिति भी उद्योग चला रही हो। इसके सम्बन्ध में मात्र इतना ही कहना है कि उद्योग गाँव की योजना का स्वरूप ले। गाँव के पुरुषार्थ की शक्ल ग्रहण करे। यदि संस्थाएँ उद्योग चला रही हों तो मानना चाहिए कि वे गाँव का काम कर रही हैं तथा सीधे गाँव इसके लिए जिम्मेवार होकर खड़ा हो जाय इसकी कोशिश हो। यदि गाँव की सहकारी समिति है तो वह पूरे गाँव में व्यापक हो तथा सहकारी समिति का धंधा पूरे गाँव की योजना का अंग बने। खादी की सहयोग समिति बनी है पर उसका सम्बन्ध खेतिहर मजदूर से नहीं होता तो नहीं चलेगा। धान कुटाई एवं तेलघानी की अलग-अलग सहयोग समितियाँ पूरे गाँव के आर्थिक संयोजन के अभाव में अपनी अपनी जगह अपूर्ण रहेंगी।

नये गाँव में सारी ग्रामोद्योग की प्रक्रियाएँ एवं निष्ठाएँ वही होंगी जो शुरू में ही नये गाँव के लिए मानी गयी हैं। पुराना काम नये प्रारंभ के लिए सुलभ सुयोग सिद्ध हो।

यंत्र

यंत्र के सम्बन्ध में दो प्रश्न आते हैं

(क) केन्द्रित या विकेन्द्रित

(ख) हाथ तथा पशुचालित या विद्युत चालित।

केन्द्रित या विकेन्द्रित यंत्र के दो अर्थ हो सकते हैं—एक अर्थ में यंत्र की मालकियत गाँव की हो। व्यक्ति गाँव की अर्थ रचना में नियोजित उत्पादन के लिए मजदूरी करता है। उदाहरणार्थ—गाँव की धनशाला में चरखे पड़े हैं। व्यक्ति निश्चित समय पर आकर मजदूरी करता हो। दूसरी कल्पना यह भी हो सकती है कि गाँव के चरखे पड़े हों व्यक्ति आवश्यकतानुसार अपने लिए उत्पादन करे। केन्द्रित यंत्र का दूसरा अर्थ उसके आकार या उत्पादनशीलता होता है। यंत्र एक हद तक इतनी उत्पादन-क्षमता का हो जो उत्पादित वस्तु को मिल के मुकाबले उपभोक्ता को उपलब्ध हो। प्रायः इसी अर्थ में विद्युत शक्ति के प्रयोग का प्रश्न आता है।

चर्चा में इन सारे पहलुओं पर विचार विमर्श के बाद एकमत से यह राय स्थिर हुई कि वस्त्र उद्योग में कताई-पूर्व प्रक्रिया यानी रूई खोलना धुनाई एवं संभव हो तो पूनी तैयार करने तक का काम केन्द्रित उद्योगशाला में यदि बिजली उपलब्ध हो तो विद्युत शक्ति से किया जाय। कताई गाँव एवं व्यक्ति की सुविधानुसार श्रमशाला या घर घर में हो।

अन्य उद्योग के लिए प्रायः सामूहिक उत्पादन की नीति मान्य की गयी। प्रत्येक दशा में आधुनिकतम सुधरे हुए औजार गाँव को सुलभ हों। संस्थाओं की पुरानी जिम्मेवारी या व्यवस्था के अभाव में पुराने या घटिया औजार का बोझ गाँव पर न हो।

करघा सामूहिक या व्यक्तिगत हो सकता है पर तानी केन्द्रित उद्योगशाला में तैयार हो।

जिन गाँवों में परम्परागत चरखे चल रहे हैं वहाँ का प्रश्न जटिल है। प्रथम तो यह कि परम्परागत चरखे का वस्त्र सोलह आने स्वावलम्बन के लिए हो। दूसरा यह कि परम्परागत चरखे का सूत कच्चा होता है। इसलिए उसके सूत को या तो कत्तिन से डुबट करा लिया जाय या संस्था डुबट कराकर बुनाई करे। इस प्रक्रिया में थोड़ी भी ढिलाई से बहुत बड़ी कमजोरी आती है।

कामगार-प्रशिक्षण

गाँव का कार्यकर्ता शिक्षण प्रशिक्षण प्राप्त कर गाँव के कामगारों का प्रशिक्षण करेगा। गाँव के आकार के अनुसार वह पूरा समय आंशिक या अवैतनिक प्रशिक्षण का काम करेगा। प्रशिक्षक अपनी पूरी जीविका के लिए प्रशिक्षण तथा व्यवस्था—दोनों का काम करेगा या प्रशिक्षण के साथ-साथ अपना उत्पादन कर पूरी जीविका प्राप्त करेगा। उसी प्रकार सर्विसिंग गाँव के द्वारा नियुक्त मजदूरी व्यक्ति से लेकर या गाँव द्वारा नियुक्त कार्यकर्ता के रूप में करेगा।

कुछ कामगारों का सीधा प्रशिक्षण संस्था के द्वारा हो सकता है। गाँव के दो चार आदमी धुनाई-बुनाई का काम सीखकर पूरे समय का धंधा करेंगे। संस्था अपना यंत्र गाँव में भेजकर वहाँ कामगार तैयार कर गाँव के पास यंत्र छोड़ देगी।

गाँव के कामगारों का प्रशिक्षण उत्पादन सह प्रशिक्षण केन्द्र में हो जहाँ प्रशिक्षणार्थी उत्पादन की क्षमता से जीविका के लिए आश्वस्त हो जाय। घाटे के व्यापार की छाप उन पर कतई न पड़े। सम्भव हो तो उत्पादन की दशा में भी आगे बढ़कर कमा कर खाने का भरोसा प्राप्त हो।

उत्पादन की खपत

ग्रामीण अर्थशास्त्र में उद्योग का सबसे बड़ा आधार स्वावलम्बन एवं परस्परावलम्बन है। स्वावलम्बन का अर्थ व्यक्ति एवं ग्राम स्वावलम्बन दोनों से है। आज की परिस्थिति में गाँव की गरीबी के कारण परस्परावलम्बन जो कि गाँव की आर्थिक सुदृढ़ता का थोड़ा दूरगामी कार्यक्रम है दुर्लभ हो जाता है। गरीब आदमी इसकी गूढ़ता को नहीं समझ पाता या व्यवहारिक रूप से यह संभव नहीं हो पाता कि यदि राम श्याम से मँहगा कपड़ा खरीदेगा तो श्याम भी उसका तेल खरीदेगा। अन्ततोगत्वा गाँव जब तक इसे नहीं समझेगा गाँव में कोई अधिक दृढ़ता नहीं आ सकती।

दूसरा प्रश्न गाँव की बेकारी निवारण का है। बेकारी-निवारण की अनिवार्यता एवं त्वरित आवश्यकता को महसूस करते हुए भी सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि गाँव के बेकारों को काम देने का बोझ आज की विषम अवस्था में गाँव बहुत सीमित दायरे में उठा सकता है। बेकारी अधिक है शेष लोगों की दशा किसी प्रकार गुजारा करने जैसी है। इस कारण प्रथम सोपान में व्यक्तिगत स्वावलम्बन तक ही अपनी सीमा माननी होगी। इसी क्रम में कुछ लोगों को बेकारी निवारण भी हो सकती है।

आज की संस्थाएँ इनके लिए कच्चे माल की व्यवस्था एवं इनके अतिरिक्त उत्पादन का निर्यात करेंगी। स्वावलम्बन को प्रोत्साहन देने के लिए संस्थाएँ अपनी दूकानों में स्वावलम्बी गाँव एवं क्षेत्र के अतिरिक्त उत्पादन की निकासी को प्राथमिकता दें। इसके साथ ही जो क्षेत्र अपने उत्पादन की निकासी के लिए अपना भण्डार करता है, उनको संस्थाओं की प्रतियोगिता का सामना न करना पड़े।

वास्तव में संस्था इसके 'फेडरेशन' का रूप लेगी जो इनके व्यापार को सुघड़ एवं सुलभ बनायेगी। इनको तकनीकी एवं व्यवस्था-पकीय प्रशिक्षण देगी। इनके 'आडिट' आदि की सेवा गाँव के लिए उपलब्ध रहेगी।

गाँव की संस्था

ग्रामदानी गाँव में ग्रामसभा होगी। ग्रामसभा अपनी सुविधा के अनुसार उद्योग के लिए उपसमिति गठित करेगी। चूँकि उद्योग के साथ गाँव के अन्य आर्थिक विनि-योग भी परस्पर-पूरक ढंग से चलेंगे, इसलिए अलग से सहयोग समिति बनाना आवश्यक नहीं है। ग्रामदान अधिनियम (बिहार) के अनुसार ग्रामसभा को सहकारी समिति की हैसियत प्राप्त है। गाँव में यदि पहले से सहयोग समिति चलती हो, तो उसे अपनी सेवा ग्रामसभा को समर्पित करनी चाहिए। उसी प्रकार यदि ग्रामदानी गाँव की पंचायत में सहयोग समिति है जिसका कार्यक्षेत्र ग्राम-दानी गाँव भी हो, तो वह ग्रामसभा की राय से उसकी योजना के अन्तर्गत ही काम करे। इन दोनों दशाओं में गाँव के प्रत्येक व्यक्ति को उस समिति का सदस्य होना चाहिए।

संस्थाएँ आदि यदि पहले से हों, तो गाँव की तैयारी होते ही ग्रामसभा को अपने काम का जिम्मा दे। जब तक गाँव तैयार नहीं होता है, तब तक गाँव को तैयार करे।

●

सूत की समता और क्षमता का सम्बल

खादी का लक्ष्य क्या है, इस बारे में पूरी तौर पर तय हो जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में अलग-अलग राय है। मसलन, कुछ लोग वर्गहीन शासन व सत्तामुक्त समाजरचना इसका लक्ष्य बताते हैं और कुछ लोग कहते हैं कि कभी भी अंतिम रूप से समाज न तो शासनमुक्त हो सकता है और न वर्गहीन। इसलिए असम्भव लक्ष्य रखना बेईमानी है।

किन्तु खादी का ऊँचा-से-ऊँचा लक्ष्य जिसके बारे में सभी सहमत हैं, समता, स्वातन्त्र्ययुक्त शोषणहीन अहिंसक समाजरचना है। कई लोग खादी द्वारा गरीबों को राहत पहुँचाने और बेरोजगारी दूर करने को छोटा लक्ष्य बताते हैं। हमारी राय में उक्त अहिंसक समाजरचना के ऊँचे और राहत पहुँचाने अथवा रोजी देने के छोटे लक्ष्य में कोई फर्क नहीं है। राहत पहुँचाने व रोजी देने का यह पहला कदम है, जो अन्त तक—अहिंसक समाजरचना तक—कायम रहेगा।

लेकिन अहिंसक समाजरचना का यह ऊँचा लक्ष्य, मात्र खादी से पूरा नहीं हो सकता। खादी का उसमें बड़ा 'रोल' अवश्य होगा। इस लक्ष्य-पूर्ति के लिए कृषि-भूमि का उचित बँटवारा, खादी व ग्रामोद्योगों का देश भर में प्रसार, नयी बुनियादी शिक्षा और लोकशक्ति का प्रादुर्भाव आवश्यक है। इसीलिए विनोबा ने भूदान-मूलक, खादी-ग्रामोद्योगप्रधान, अहिंसक समाजरचना का मंत्र दिया। किन्तु बिना समुचित परिस्थिति निर्माण हुए कोई नयी बात कैसे लागू हो सकती है? इस तरह की परिस्थिति के लिए आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक विकेन्द्रीकरण जरूरी शर्तें है।

खादी को अपना 'रोल' अदा करने के लिए जरूरी है कि वह देश के समूचे गाँवों में तथा शहरों में भी फैल जाय और देश की वस्त्र की समस्या को हल करे। जैसे प्राणी का शरीर न हो तो आत्मा टिक नहीं सकती और फिर उसके गुणों के प्रगट होने का प्रश्न नहीं रहता। उसी भाँति खादी के अपेक्षित गुणों के लिए उसके बाह्य रूप का विकसित होना बुनियादी शर्त है, तभी उसका लक्ष्य पूरा होगा। अब यह कैसे हो, यही मुख्य प्रश्न है, जिस पर विद्वानों व खादी के विशेषज्ञों को विचारना होगा।

लोगों की राय है कि खादी-संस्थाएँ अपना यह खरीद-बिक्री का व्यापारिक ढंग बदलकर इस काम को गाँवों के संगठनों को सुपुर्द कर दें, जिसकी बड़ी-से-बड़ी इकाई ब्लाक के संगठन के रूप में हो। आज विनोबा का ग्रामदान आन्दोलन इसका एकमात्र हल माना जाता है। मान्यता यह है कि ग्रामसभा कृषि के बाद उद्योगों के लिए खादी व ग्रामोद्योगों को ही अपनायगी। परन्तु यह 'प्रोसेस' भी लम्बा दीखता है। और यह अभी साबित होना बाकी है कि गाँव के लोग उस हालत में खादी को अपना ही लेंगे। ऐसा होना मुमकिन होता, यदि खादी के रास्ते में मिलों का पहाड़ आड़े न आता। खादी-कार्यकर्ता इस बात को जानते हैं कि इस कार्य को लागू करने में न सिर्फ वर्षों की दक्षता आवश्यक है, बल्कि पूँजी खड़ी करना और घोर परिश्रम तथा अध्यवसाय के बाद भी भरण-पोषण के लिए गुजारा मात्र लेकर वर्षों काम को हानि में चलाना होता है! एक ध्येय में बँधे हुए निष्ठावाले थोड़े-से निष्णात लोग जब इसे आगे चलाने में असफल सिद्ध हो रहे हैं, तो आम जनता जो किसी भी हालत में उतनी ध्येयनिष्ठ नहीं हो सकती, वह खादी-कार्य को सफलतापूर्वक उठा लेगी इसमें पूरा संदेह है। इसीलिए खादी-संस्थाएँ अपना यह व्यापारिक ढंग कायम रखने में मजबूर हैं, क्योंकि न कुछ से कुछ-न-कुछ तो अच्छा ही है।

वास्तव में खादी का भविष्य उसके सूत पर निर्भर करता है। आज खादी का सूत कमपतरा, कमजोर व मोटा है। उसका वस्त्र न सिर्फ पहनने में मिल के वस्त्र की अपेक्षा कष्टदायक है, बल्कि कमजोर व बहुत महँगा

है। इसलिए खादी की बिक्री की, उसे आम लोगों द्वारा अपनाये जाने की समस्या है। यही नहीं, वह बुनने में भी बहुत तकलीफदेह है। बहुत महँगी बुनाई लेकर भी अच्छा बुनकर उसे बुनने को तैयार नहीं है। जब तक यह हालत कायम रहती है, खादी कभी भी, किसी भी रूप में व्यापक नहीं हो सकती। इसलिए खादी के सूत को मिल के सूत की तरह मजबूत और समान होना चाहिए। उसे मिल के सूत से बहुत महँगा भी नहीं होना चाहिए। कातने-बुनने में आसान इस तरह के सूत से बनी खादी अगर मिल-वस्त्र से थोड़ी महँगी भी हो, तो घर घर में पकनेवाली रोटी की तरह वह लोगों द्वारा ग्राह्य हो सकेगी।

इसके लिए यह बहुत जरूरी है कि खादी-व्यवसाय में उत्तमोत्तम तकनीक दाखिल की जाय। छोटे-छोटे हाथ से चलनेवाले ऐसे चरखे बनें, जिनकी न सिर्फ कातने की गति अच्छी हो, बल्कि वे चलाने में भी आसान हों। यह विज्ञान का युग है और सभी बातें गति से होने की अपेक्षा रखती है। अब उसके विपरीत जाना विफलता मोल लेना होगा। आज के सुधरे हुए अम्बर चरखे पहले कदम की शक्ल में ठीक कहे जा सकते हैं। पूनी बनाने का काम तो छोटी मशीनों में पावर का इस्तेमाल करके 'आटोमेटिक' होना ही चाहिए, तभी वह समान, साफ व सस्ती हो सकेगी। श्री मनमोहन भाई का यह ख्याल तो बिल्कुल सही है कि आखिर विकास का सिलसिला कदाचित् ही ऐसा हो सकता है कि कोई नया साधन या सहूलियत सब जगह सबको एकसाथ मिले। इसलिए यह सोचना कि जब सभी जगह बिजली पहुँच जायगी तभी उसका इस्तेमाल ठीक होगा, वर्ना शोषण का भय है, गलत ढंग से सोचना है। क्योंकि मिलों के द्वारा सारे जनसमुदाय को बेकार बनाकर सबसे बड़ा शोषण तो आज जारी ही है। अब बिजली लगाकर जगह जगह जितना ही यह काम विकेन्द्रित रूप से बढ़ता है, उतना ही मिलों का बड़ा शोषण कम होगा। इसलिए जहाँ भी सम्भव हो, बिजली का उपयोग तुरन्त होना चाहिए। उद्देश्य सिर्फ यही रहे कि काम व्यापक और विकेन्द्रित हो।

खादी-विशेषज्ञ चाहे जो कुछ कहें, हम धीरे धीरे बाध्य होकर उसी तरफ जा भी रहे हैं। यदि खादी को जिन्दा रखना है तो उसी रास्ते जाना ही पड़ेगा, चाहे हम ऊहापोह में पड़कर आज उसमें देर भले ही क्यों न लगायें। इस घनी आबादीवाले देश को अगर जिन्दा रहना है तो खादी कभी मर नहीं सकती। हाँ, यह जरूरत है कि काल व परिस्थिति के मुताबिक वह अपना रूप बदलकर के सामने आये।

उत्तमोत्तम टेकनालाजी की सहायता प्राप्त, सुधरे हुए औजारों और बिजली की शक्ति से चालित विकेन्द्रित खादी-काम को भी ग्रामदान की परिस्थिति में देश भर में लागू करने के लिए दक्ष खादी-कार्यकर्ताओं की विशाल सेना की आवश्यकता होगी। इसमें शक नहीं कि बिना ध्येयनिष्ठ क्रान्ति के वाहक कार्यकर्ताओं द्वारा उक्त नयी रचना सम्भव न हो सकेगी।

—रामनारायण चौबे

खादी का विस्तार : योजना की सीमा

गांधीजी ने खादी-काम की शुरुआत मिल के सूत की बुनाई से की। वस्त्र निर्माण में सूत की परावलम्बिता हटाने के लिए ही सूत-कताई का काम उन्होंने शुरू नहीं किया, बल्कि यह सोचकर कि बुनकरों का रोजगार जैसे सौ पचास ग्राहकों की खरीद पर निर्भर है उसी प्रकार सूत भी अगर सौ पचास घरों से मिलता रहेगा तो एक प्रकार से यह अन्योन्य निर्भर वृत्ति एक-दूसरे के बल से पनपेगी। खेती के साथ-साथ फाजिल समय में सूत उत्पादन होगा और एक रोजगार, वस्त्रोत्पादन गाँव के लिए सुरक्षित हो जायगा, गाँव का आर्थिक बोझ कुछ परिमाण में हट सकेगा।

दो मजबूत खम्भों के आधार पर एक हजार फुट अंतर के पुल आज बाँधे जाते हैं कि जिसका बोझ नीचे उतारने के बजाय ऊपर ही ऊपर रखकर अन्त में दो सिरों के खम्भों पर पहुँचाया जाता है। तांत्रिकी विज्ञान की करामात आज जगह जगह हम देखते हैं। घर घर का आर्थिक बोझ गाँव के अर्थ-संघटन के पहियों पर उतारने का तत्सदृश काम उन्होंने चरखा तथा करघे द्वारा शुरू किया।

खादी के काम की प्रमुख दिशा यही है, ऐसा हम कह सकते हैं। लेकिन इसके साथ ही-साथ चरखे के अन्य गुण भी प्रकाशित होने लगे जिनमें असहायों का सहारा और स्वाभिमान, रक्षित काम, ये दो समाज सुधार के प्रमुख पहलू अधिकाधिक स्पष्ट होते गये और स्वाभाविक ही है कि समाज ने उनको उठा लिया, पनपाया और आज सन् १९६८ में मानों यही बतलाया कि दस पचास पैसे रोजगारी के साथ-ही-साथ वस्त्र स्वावलम्बन का काम बढ़ता रहेगा। केवल स्वावलम्बन का काम पनप नहीं सकेगा और पूर्ण रोजगारी के लिए भी कताई का काम अल्प मात्रा में ही होगा। कताई के लिए कुछ शिक्षण, सयोजन तथा समझ की आवश्यकता रहती है। यही कारण है कि दीन भिखारी को वह काम एकाएक आकृष्ट नहीं करता।

सन् १९१८-२० में गांधीजी ने खादी काम आश्रम में शुरू किया, उस वक्त तो वह आश्रम के व्यक्तियों के लिए भी अपर्याप्त था। धीरे धीरे वह काम आकार प्रकार तथा विस्तार में बढ़ता गया और जब पंचवार्षिक योजना बनने की स्थिति पर हमारे देश की तरक्की हो गयी, उस समय वह ६० लाख वर्गमीटर गज तक बढ़ गया था और आज सन् १९६८ की शुरुआत में वह ९०० लाख वर्गमीटर पर गूँज रहा है। व्यक्तिगत स्वावलम्बन की खादी ८ लाख वर्गमीटर से ३२ लाख वर्गमीटर पर पहुँच गयी, यानि एक की वृद्धि दस गुना हो गयी और दूसरे की चार गुना।

इन्हीं विलोभनीय आँकड़ों की निःस्सारता 'अशोक मेहता समिति' ने जाहिर की है। वे कहते हैं कि सन् १९५३ में स्वावलम्बन-→

राजस्थान शराबबन्दी सत्याग्रह

[हमारे पाठकों और साथियों को स्मरण होगा कि राजस्थान में शराबबन्दी सत्याग्रह ६ अप्रैल से शुरू हुआ है। राजस्थान के साथी इस महत्वपूर्ण कार्य में पूरी शक्ति से जुटे हुए हैं। विनोबा ने इस सत्याग्रह को पूरी सहमति दी है, और देश भर में फैले हम कार्यकर्ता साथियों का नैतिक बल तो उनके साथ है ही। हम यहाँ राजस्थान के दो प्रमुख साथियों के इस सत्याग्रह के सम्बन्ध में कुछ विचार प्रस्तुत कर रहे हैं।—सम्पादक]

कार्यक्रम विरोधात्मक नहीं

शराबबन्दी का कार्यक्रम गांधीजी का अत्यन्त प्रिय कार्यक्रम था। उन्होंने यहाँ तक भी कह डाला था कि आबकारी की आय एक बेईमानी की आय है। किसी भी सरकार को आबकारी की आय से शासन चलाने का अधिकार नहीं है।

भ्रष्टाचार, अदालती मुकदमे या नीति-स्तर की गिरावट का एक बड़ा कारण शराब है। शराबबन्दी के बिना अपराध-नियंत्रण होना संभव नहीं है, क्योंकि शराब अनेक पाप-कर्मों की जननी है। ऐसी सब चीजों का स्वीकार करते हुए भी हमारे देश के कई प्रान्त अभी शराबबन्दी का कुछ भी विचार नहीं कर रहे हैं। यह अत्यन्त सोचनीय बात है। इसीलिए गत १२, १३, १४ अप्रैल के अखिल भारतीय नशाबन्दी सम्मेलन में ठीक ही कहा गया है कि गांधी जन्म-शताब्दी महोत्सव शराबबन्दी कार्यक्रम के बिना निरर्थक व फीका रहेगा।

हमारे देश में गुजरात तथा मद्रास प्रान्त ऐसे हैं कि जहाँ पर कड़ाई के साथ सफलतापूर्वक शराबबन्दी चल रही है। इसका मतलब कोई यह न करे कि इन प्रान्तों में अवैध शराब कतई नहीं चलती है। चोरी तो कुछ अंश में जरूर होती है, परन्तु अधिकांश लोग शराब से मुक्त हैं। और इस कारण उनकी आर्थिक हालत सुधरी है, उनके बच्चे सुखपूर्वक रहते हैं। परिवार क्लेशविहीन है। वे अपनी रोटी बड़े चाव से और मेलजोल से खाते हैं। महाराष्ट्र में एक तरह से शिथिलता आयी है। वह प्रदेश नशाबन्दी मानता तो है, पर किन्हीं कारणों से उन्होंने अपनी नीति में ढिलाई बरतने का फैसला किया है, जिसके बुरे परिणाम भोगने पड़ेंगे।

हमारा राजस्थान अलग ही चित्र पेश करता है। उसने पूर्ण शराबबन्दी की अपनी नीति कुछ महीनों पहले घोषित की है और उस दिशा में कुछ सराहनीय कदम उठाये हैं। परन्तु वे ऐसे साहसिक नहीं कहे जा सकते, जिससे शराबबन्दी माननेवाले को पूरा समाधान हो जाय, क्योंकि राजस्थान-सरकार अवधि का ऐलान नहीं करती तथा पूर्ण शराबबन्दी का क्रमिक कार्यक्रम भी नहीं बनाती। इसलिए शंका-आशंका का वातावरण पैदा होता है। इसी कारण राजस्थान में शराबबन्दी-सत्याग्रह दिनांक ६ अप्रैल से पुनः आरम्भ हो गया है।

भीटवाड़ा (जयपुर) शराब उत्पत्ति-केन्द्र पर सत्याग्रहियों की चौकी बैठी है। वे शराब के साधन-सामग्री न बाहर से अन्दर जाने देते हैं और न अन्दर से बाहर आने देते हैं। क्योंकि वे मानते हैं :

'अनिष्ट है शराब का व्यापार नीच कर्म है।
रोकना उसे जरूर मानवीय धर्म है।
प्रण हमारा एक है, काम पाकनेक है।
दारूबन्दी का प्रचार साधना व टेक है।।'

इस भावना और विचारधारा को लेकर सत्याग्रही भाई-बहनों का जत्था नीतिमय, न्याय-संगत तथा संविधान के निर्देशन को क्रियान्वित करने के लिए कृतसंकल्प होकर बैठा है। बीच-बीच में सत्याग्रहियों को कुछ कसौटियाँ होती रहती हैं। धमकियाँ भी दी जाती हैं। पर 'टूटे नहीं, डटे रहे, कार्य में लगे रहे', इस प्रणवाले सत्याग्रही अपने काम से कैसे हट जायेंगे ?

राजस्थान का शराबबंदी-सत्याग्रह सरकार को बल पहुँचाने की प्रक्रिया है। यह विरोधात्मक आन्दोलन नहीं है। पर हमारे मित्र वहाँ सरकार में जाकर भटकें नहीं, इसलिए उनको लक्ष्य-सिद्धि पर लाने का प्रेमपूर्ण कार्यक्रम है, जिसमें भाग लेनेवाला अपने ऊपर आफत आमंत्रित कर रहा है, कष्ट झेलता है, तपस्या करता है, धूप-छाँव, शीत-आतप को बरदाश्त करता है, अपने परिवार-जनों से दूर बैठा है। घर के शुभ अवसरों में भाग लेने से वह वंचित रहता है, क्योंकि उसको शराबबंदी-सत्याग्रह एक धर्म-कार्य महसूस हुआ है। मित्र को गलत काम से परावृत्त करना मित्र अपना परम कर्तव्य मानता है, यह मूल भावना हमारी है। राज्य में बैठे साथियों को कमजोर करने की भावना नहीं है। इसलिए हमारे उप-प्रधानमंत्री, शराबबंदी के मुख्य पुरस्कर्ता श्रद्धेय मोरारजी भाई ने तथा हमारे सत्याग्रह शास्त्र को जानने-वाले मार्गदर्शक पूज्य विनोबाजी ने अपना आशीर्वाद तथा पूर्ण सम्मति प्रदान की है।

—गोकुलभाई भट्ट

→खादी कुल उत्पादन के करीब दसवाँ हिस्सा थी, और सन् १९६७ में वह केवल पचीसवाँ रह गयी।

सन् १९२० में स्वावलम्बन-खादी का जो शत-प्रतिशत परिमाण था, उसकी तुलना में आज वह केवल पचीसवाँ भाग ही रह गया, ऐसा नहीं कहा।

साथ-ही-साथ खादी-कमीशन की मदद से राहत का खादी-काम प्रमुखतया करने का कार्यक्रम था, यह बात भी उस कमिटी ने दृष्टि से ओझल कर दी।

—ना० रा० सोवनी

क्या यह शक्य है ?

"ये काग्रेस हाला छो कॉई ?"

"भाई म्हे तो दारूबन्दी हाला छाँ। म्हाँ मैं सभी शामल छै—कांग्रेस हाला भी छै—जो दारूबन्दी कराबो चावे छै।"

मैं तो कल ही सत्याग्रहियों की टोली में

शामिल हुआ था। श्री गोकुलभाईजी और श्री यज्ञदत्तजी की टोलियाँ १५ अप्रैल से जयपुर-डिस्टलरी के सामने सत्याग्रह में संलग्न थीं। श्री यज्ञदत्तजी सत्याग्रह समिति के निर्णय के अनुसार जोधपुर डिस्टलरी के सामने सत्याग्रह चालू करने की दृष्टि से जोधपुर के लिए कल ही रवाना होनेवाले थे। इसलिए मेरी टोली यहाँ श्री गोकुलभाईजी के साथ शामिल हो गयी। श्री यज्ञदत्तजी तथा उनके पाँच साथियों को विदा करने के लिए जयपुर-पश्चिम रेल्वे स्टेशन पर हम सब एकत्रित थे। गाड़ी आने में देर थी। गाँव के चार-पाँच लोग प्लेटफार्म पर बैठे थे। उनके पास मैं चला गया और बातचीत चल पड़ी। मैंने उन्हें दारूबन्दी के सत्याग्रह की और सत्याग्रह क्यों किया जा रहा है, यह बात संक्षेप में समझायी। उन्होंने बड़ी रुचि और ध्यान से सुना और अन्त में एक वरिष्ठ ग्रामीण ने पूछा "अबी पण या बात होयली काँई ?"

मैंने उसे तो जवाब दे दिया—"भाई, आप सब लोग चाहेंगे और कोशिश करेंगे, तो जरूर हो जायगी।" इतने में गाड़ी आ गयी और हम लोग अपने साथियों को विदा करने में लग गये और वे गाँववाले भी दौड़कर गाड़ी में बैठ गये।

पर मेरे मन में यह प्रश्न चलता रहा—'अबी पण या बात होयली काँई ?'

दारूबंदी की समस्या बहुत व्यापक और गहरी है। शराब का व्यवहार इस देश में हजारों वर्षों से चल रहा है। राजमहल और राजभवन से लेकर बस्ती से दूर जंगल में साँसी-कंजर की झोपड़ी तक शराब व्यवहार में आती है। राज्य ने शराब के उद्योग और व्यापार पर एकाधिकार करके करोड़ों रुपये वार्षिक की आमदनी खड़ी कर रखी है। सम्पन्न से लेकर गरीब-से-गरीब तक कुछ 'फैशन' के कारण, कुछ शौक के कारण, कुछ आदत से राजस्थान में ही लाखों आदमी शराब पीते होंगे। फिर शादी-ब्याह में, युद्ध में, चुनाव में, भोज-समारोह में यहाँ तक कि धर्म में भी इसका उपयोग बेलगाम बढ़ता जा रहा है। जमाने की हवा शराब के पक्ष में मालूम होती है।

फिर हम कितने-से लोग हैं ? कितनी-सी हमारी संख्या और कितनी-सी हमारी ताकत है ?

मुझे तुरन्त मोहम्मद साहब की एक कहानी याद आयी। कहा जाता है कि एक बार बड़ी संख्या में दुश्मनों से मुकाबला पड़ा। वे केवल दो ही साथी थे। उस साथी ने मुहम्मद साहब से कहा, "हजरत, हम तो केवल दो ही हैं, इतने लोगों का मुकाबला कैसे करेंगे ?" हजरत मोहम्मद ने तुरन्त जवाब दिया, "हम दो कैसे हैं ? हम तो तीन हैं।" साथी ने पूछा, "तीसरा कहाँ है ?" मोहम्मद साहब ने आसमान की तरफ इशारा करके कहा, "वह तीसरा है, जो हम दो से और उन सैकड़ों से बड़ा है। उसीकी ताकत से हम जीतेंगे।"

तो मुझे लगा कि दारूबंदी आन्दोलन की सफलता हमारी अपनी शक्ति से नहीं, भगवान की कृपा से ही सम्भव होगी।

फिर सवाल खड़ा हुआ, "भगवान क्या और उसकी कृपा कैसी ?" तुरन्त गांधी और ईसा के दो वाक्य सामने आ गये। एक ने कहा था "सत्य ही ईश्वर है।" दूसरे ने कहा था, 'प्रेम ही ईश्वर है।" गांधी ने यह भी कराया, 'सत्य और अहिंसा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।" मुझे प्रतीति हुई सत्य और प्रेम ही ईश्वर है। हम लोग सच्चाई और मोहब्बत से जितने ओतप्रोत होंगे उतने ही हम ईश्वर के अधिक निकट होंगे, उतनी ही ईश्वर की कृपा हम अधिक प्राप्त कर सकेंगे।

इसके सिवाय एक बात और है। जब यह प्रश्न उच्चतम से लेकर निम्नतम वर्गों तक के लोगों को स्पर्श करता है, तो उन सबकी सहानुभूति प्राप्त किये बिना यह काम आगे नहीं बढ़ सकता। हमें मुख्यमंत्री, मंत्रिगण, राज्याधिकारी, राजनीतिक नेता, शिक्षाविद, समाज सुधारक, डाक्टर-वैद्य आदि सभी तक पहुँचना है। और सभी का ध्यान इस तरफ खींचना है, सभी का प्रेम और सहानुभूति हमें प्राप्त करनी है। शत्रु या विरोधी की भाषा में हम सोच भी नहीं सकते। कोई भी शराबबंदी के समाज-हितैषी, धार्मिक तथा पुण्यमय कार्य का विरोधी नहीं हो सकता। कोई स्वयं शराब पीता हो तो भी नहीं हो सकता। किसीका शराब से अपना आर्थिक हित सधता हो तो नहीं हो सकता, क्योंकि बुद्धि चाहे स्वार्थ की ओर झुकती भी हो, पर मनुष्य का अन्तःकरण, जहाँ भगवान का निवास है कभी बुराई का पूरा और खुला समर्थन नहीं कर सकता।

हम संख्या में कम हैं। इसलिए दूध में जामन की तरह ही हमारा काम हो सकता है। जरा सा दही बहुत सारे दूध को दही बनाने की प्रक्रिया का आरम्भ कर सकता है। मुझे लगा कि निश्चय ही शराबबंदी का महत्त्वपूर्ण कार्य राजस्थान में सम्पन्न हो सकता है, क्योंकि इसके पीछे गांधीजी जैसे युगपुरुष की तपस्या है, विनोबा जी जैसे संत का आशीर्वाद है, मोरारजी जैसे नेताओं की हितकामना है। श्री गोकुलभाई भट्ट जैसे सरल हृदय बुजुर्ग सेवक का संयोजन है और स्वयं राजस्थान सरकार का संकल्प इसमें शामिल है। सबसे बड़ी बात यह है कि लाखों गरीब परिवारों, उनके घरों की स्त्रियों और बच्चों की आहें और सिसकियाँ हैं। आवश्यकता केवल इस बात की है कि उन्हें सब छोटे-बड़े सुन सकें और समझ सकें।

—जवाहरलाल जैन

अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन आबू रोड (राजस्थान)

प्रतिनिधियों के लिए आवश्यक सूचनाएँ

कार्यक्रम :

इस वर्ष १७वाँ अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन ८, ९, १० जून, १९६८ को आबू रोड (जिला-सिरोही, राजस्थान) में होने जा रहा है। सम्मेलन के तुरन्त पूर्व, वहीं पर ता० ६, ७, ८, जून '६८ को संघ का वार्षिक अधिवेशन तथा ५ जून को संघ की प्रबन्ध-समिति की बैठक भी होगी।

प्रतिनिधि कैसे बनें :

१. सम्मेलन की कार्रवाई में भाग लेने के इच्छुक भाई-बहन २५ मई, '६८ तक **मंत्री, सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१** के पते पर पाँच रुपये मात्र प्रतिनिधि-शुल्क भेजकर प्रतिनिधि बन सकते हैं।

२. सम्मेलन में भाग लेने के लिए प्रतिनिधि बनना आवश्यक है।

३. सम्मेलन में आनेवाले लोक-सेवकों, जिला-मंडल के संयोजकों-प्रतिनिधियों तथा संघ सदस्यों के लिए भी प्रतिनिधि बनना आवश्यक है।

४. प्रतिनिधि बनने के लिए प्रांतीय सर्वोदय-मण्डलों से भी सम्पर्क किया जा सकता है।

रेलवे-कन्सेशन :

१. सम्मेलन के सिलसिले में आबू रोड जानेवालों के लिए एकतरफा किराया देकर वापसी टिकट की सुविधा रेलवे बोर्ड की ओर से प्रदान की गयी है।

२. तृतीय और द्वितीय श्रेणी में २०० किलोमीटर के ऊपर सफर करनेवालों को ही यह सुविधा प्राप्त हो सकेगी।

३. वापसी टिकट की यह सुविधा फर्स्ट क्लासवालों को उसी हालत में मिल सकेगी, जब उनका किराया ४०० किलोमीटर के दो सेकण्ड क्लास के पूरे किराये से कम न हो।

४ जिनकी मासिक आय एक हजार रुपये के अन्दर है, उन्हीं को रेलवे-कन्सेशन की सुविधा प्राप्त हो सकेगी।

५. समय से कन्सेशन सर्टिफिकेट की प्राप्ति के लिए प्रतिनिधि-शुल्क के पाँच रुपये २५ मई, '६८ के पहले मंत्री, सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी-१ के पते पर भेजना चाहिए।

६ प्रतिनिधि-शुल्क भेजते समय नाम और पता साफ-साफ लिखें, ताकि आगे की कार्रवाई में असुविधा न हो।

निवास-व्यवस्था

गर्मी का मौसम होने के कारण गरम कपड़े साथ लाने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु यदि रात्रि-निवास पहाड़ आदि पर करने का विचार हो तो कुछ गरम कपड़े साथ लाने चाहिए। वैसे निवास का प्रबन्ध आबू रोड स्टेशन के पास धर्मशालाओं तथा विद्यालयों की इमारतों में किया गया है।

मार्ग :

आबू रोड अहमदाबाद-दिल्ली मीटर गेज लाइन (पश्चिम रेलवे) पर अहमदाबाद से १८६ किलोमीटर तथा दिल्ली से ७४६ किलोमीटर है। सड़क से आनेवाले दिल्ली, *जयपुर, अजमेर, ब्यावर, पाली, शिवगंज* तथा सिरोही होकर आ सकते हैं। सम्मेलन स्टेशन के पास ही होगा।

भोजन-शुल्क एवं व्यवस्था :

सबकी सुविधा के लिए तथा भोजन व्यर्थ न हो, इस विचार से यह तय हुआ है कि भोजन-शुल्क अग्रिम जमा कर दिया जाय। इसलिए ८, ९, १० जून का प्रात. के नाश्ते के साथ तीन दिनों का भोजन-शुल्क ९ रुपये मात्र मंत्री, स्वागत-समिति, १७वाँ अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन, आबू रोड (जिला--सिरोही, राजस्थान) के पते पर भेज दें। १२ वर्ष तक की आयु के बच्चों का भोजन-शुल्क पाँच रुपये मात्र होगा। मात्र एक पूरे दिन का भोजन चार रुपये होगा।

भोजन में यदि कोई विशेष आग्रह हो, *अथवा बीमारी या अन्य किसी कारण से* बिना नमक-मिर्च की सब्जी या किसी विशेष प्रकार' के भोजन की आवश्यकता हो तो उसकी सूचना मंत्री, स्वागत-समिति, १७ वाँ अ० भा० सर्वोदय सम्मेलन, आबू रोड (*सिरोही*) के पते पर भेज दें।

दर्शनीय स्थान :

१. आबू रोड से ४ मील पर से ही आबू पर्वत-श्रेणी के लिए चढ़ाई प्रारम्भ *होती है*। पूरी दूरी १८ मील है। इस क्षेत्र में दिलवाड़ा के जैन मंदिर, जो शिल्प-कला के विश्वविख्यात नमूने माने जाते हैं, अचलगढ़, गुरुशिखर, अधेर देवी, सनसेट, पौराणिक की झील आदि अन्य कई दर्शनीय स्थान हैं। आबू रोड से आबू जाने के लिए मोटर-बस का रास्ता है। किराया रु० १-८५ है। जाते समय १-०० यात्रीकर प्रतिध्वनि अतिरिक्त लगता है।

२. आबू रोड से दक्षिण की ओर १४ मील के फासले पर पहाड़ों में अम्बा माताजी का प्रसिद्ध मन्दिर है और वह गुजरात के दाता तालुका में स्थित है। उसके ईर्दगिर्द कुम्भरिया का जैन मंदिर भी देखने लायक है। आबू रोड से बस की पूरी सुविधा है।

३. आबू रोड से दिल्ली की ओर लौटनेवालों के लिए फालना स्टेशन से राणकपुर में कलापूर्ण जैन-मंदिर है।

—राधाकृष्ण, मन्त्री, सर्व सेवा संघ

रेलवे कन्सेशन-फार्म-सम्बन्धी सूचना

आबू रोड (राजस्थान) में होनेवाले १७ वें अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन के लिए जो सज्जन जाना चाहें उनको रेलवे कन्सेशन-फार्म प्रधान कार्यालय, वाराणसी से मँगाने की बजाय अपने नजदीक से ही लेने की सुविधा हो जाय, इस दृष्टि से ये कन्सेशन-फार्म निम्न स्थानों पर भेज दिये गये हैं :— वहाँ से सुविधापूर्वक प्राप्त किये जा सकते हैं।

(१) श्री त्रिलोकचंद जैन, राजस्थान समग्र सेवा संघ, किशोर निवास, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर

(२) श्री अमृत मोदी, गुजरात सर्वोदय मंडल, हुजरात पागा, बड़ौदा

(३) श्री राम देशपांडे, बंबई सर्वोदय मंडल, 'मणिभवन', लेबरनम रोड, बंबई-७

राजस्थान में शराबबन्दी सत्याग्रह

● जयपुर : श्री गोकुलभाई भट्ट ने राज्य के अन्य क्षेत्रों के कार्यकर्ताओं को सुझाव दिया है कि वे सभी इसके विचार का प्रचार करते हुए सत्याग्रह की अनुकूल भूमिका बनायें। उन्होंने कहा है कि जनता के सहयोग से धीरे धीरे सत्याग्रह का क्षेत्र बढ़ाया जायगा। भोटवाड़ा के—जहाँ डिस्टलरी पर सत्याग्रह चल रहा है—नागरिकों ने इस सत्याग्रह के प्रति आभार प्रकट किया है।

● एक सूचना के अनुसार भरतपुर में भी सत्याग्रह-समिति का निर्माण हुआ।

● सत्याग्रह-समिति ने तार द्वारा भारत के राष्ट्रपति से निवेदन किया है कि वे राज्य सरकार को गांधी जन्म शताब्दी तक पूर्ण शराबमुक्ति के निर्णय हेतु प्रेरित करें।

● अ० भा० नशाबन्दी परिषद के महामंत्री ने राजस्थान के सत्याग्रह आन्दोलन का पूर्ण समर्थन करते हुए अन्य प्रदेशीय नशाबन्दी समितियों को राजस्थान के सत्याग्रह में हर प्रकार से सहयोग देने की अपील की है।

● राजस्थान गगोरा के अध्यक्ष श्री मा० आदित्येन्द्र ने कहा कि २० वर्षों में पहली बार राजस्थान में चल रहा ऐसा शांत शराबबन्दी सत्याग्रह देख रहा हूँ। उन्होंने कहा कि इस सत्याग्रह के दूरगामी परिणाम होंगे।

● मई दिवस से जोधपुर स्थित मंडोर डिस्टलरी पर भी सत्याग्रह प्रारम्भ हो चुका है।

● श्री सिद्धराज ढड्ढा ने राजस्थान के मुख्यमंत्री से तार द्वारा सत्याग्रह समिति की माँग को पूर्णतया समर्थन देने की अपील की।

● गांधी स्मारक निधि के मंत्री श्री देवेन्द्रकुमार ने राजस्थान-सरकार को तार भेजकर शराबबन्दी के लिए तत्काल कदम उठाने हेतु अपील की है।

● इसी तरह देश के विभिन्न क्षेत्रों से १५ संसद-सदस्यों ने सत्याग्रह-समिति की माँग का समर्थन करते हुए, उचित हल निकालने की अपील राज्य के मुख्य मंत्री को तार भेजकर की है।

---

(४) श्री एकनाथ भगत, महात्मा गांधी सेवा मंदिर, स्वामी विवेकानंद रोड, बांद्रा, बम्बई–५०

(५) श्री ओमप्रकाश त्रिखा, पंजाब सर्वोदय मंडल, पट्टीकल्याणा, जि० करनाल

(६) श्री हरमोहन पटनायक, उत्कल सर्वोदय मंडल, धोरियामाही, कटक १

(७) श्री प्रभाकरजी, आन्ध्र प्रदेश सर्वोदय मंडल, 'गांधी भवन', हैदराबाद

(८) श्री नटराजन, तमिलनाड सर्वोदय मंडल, मदुराई (तमिलनाड)

(९) श्री नरेन्द्र दुबे, मध्यप्रदेश सर्वोदय मंडल, ४६ पलसीकर कालोनी, इंदौर

(१०) श्री मंत्री, बिहार ग्रामदान प्राप्ति समिति, कदम कुआँ, पटना–३

एक आवश्यक सूचना

पूर्वघोषणा के अनुसार "भूदान-यज्ञ" का अगला अंक १६ पृष्ठों के परिशिष्ट 'गाँव की बात' सहित २४ पृष्ठों का होगा। उसके बाद सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर ७ जून का विशेषांक प्रकाशित होगा। विशेषांक के बाद का अंक २१ जून को सम्मेलन-संयुक्तांक होगा। ३१ मई और १४ जून के अंक नहीं प्रकाशित होंगे।

—सम्पादक

रायपुर के शिवाजी कोटक का निधन

मध्यप्रदेश के रायपुर नगर के सर्वोदय सेवक श्री शिवाजी कोटक का ३० अप्रैल '६८ को मढ़ी (सूरत) स्टेशन पर हृदयगति रुकने से निधन हो गया। कुछ वर्ष पूर्व से आप अपना सारा समय सर्वोदय प्रवृत्तियों में ही दे रहे थे। रायपुर स्टेशन पर सर्वोदय-साहित्य का स्टाल आपके ही पुत्र चला रहे हैं। गत वर्ष दिसम्बर में इन्दौर जिले की ग्रामदान-यात्राओं में आपने अस्वस्थ होते हुए भी महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया था। सूरत जिले की सघन ग्रामदान-यात्राओं में सम्मिलित होने के लिए ही वे आ रहे थे कि रास्ते में मढ़ी स्टेशन पर 'हार्ट अटैक' हुआ और वे चल बसे। भगवान् उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान करें!

—नरेन्द्र दुबे

जयप्रकाशजी की ग्रामदान-यात्रा

दिनांक २२ मई से २७ मई तक गया जिले में श्री जयप्रकाश नारायणजी की ग्रामदान-यात्रा होने जा रही है। इस कार्यक्रम में वे २२ ता० को मखदुमपुर की एक आम सभा में भाषण करेंगे। मखदुमपुर प्रखण्ड के शिक्षक समाज की तरफ से ग्रामदान-अभियान चलाया जा रहा है और २२ मई को श्री जयप्रकाशजी की सभा में प्रखण्डदान घोषित हो, इसकी तैयारी की जा रही है। इस कार्य के लिए स्थानीय सभी राजनीतिक दलों के कार्यकर्ता और पंचायत के कार्यकर्तागण प्रयत्नशील हैं। इसी तरह २३ मई को प्रखण्डदान की घोषणा हो सके, एतदर्थ बाराचट्टी में जयप्रकाशजी का कार्यक्रम है, और २४ मई को गोविन्दपुर की सभा में प्रखण्डदान घोषित करने का अभियान चलाया जा रहा है। गोविन्दपुर प्रखण्डदान-प्राप्ति के लिए सर्वोदय आश्रम सोखोदेवरा के कार्यकर्तागण स्थानीय सभी प्रमुख लोगों के सम्मिलित प्रयास से प्रयत्न कर रहे हैं। तीनों प्रखण्डों में अधिकांश बड़े भूमिवानों ने ग्रामदान के समर्पण पत्र पर हस्ताक्षर करके अपने प्रखण्ड के नागरिकों से ग्रामदान योजना को गाँव के नवनिर्माण और संगठन की बुनियाद मानकर इसमें शामिल होने की अपील की है।

२५, २६ मई को सोखोदेवरा आश्रम में जयप्रकाशजी ठहरेंगे। इस बीच जिले की रचनात्मक संस्थाओं की अनेक बैठकों में वे भाग लेंगे। पुनः २७ मई को गया नगर में जिले के सभी कार्यकर्ताओं की बैठक होगी, जिसमें श्री जयप्रकाश बाबू की उपस्थिति में जिलादान के कार्यक्रम को सम्पन्न करने की योजना बनायी जायगी। इसी दिन संध्या में आजाद पार्क गया के मैदान में आम सभा का आयोजन किया जा रहा है, जिसमें मुख्यतः वे बिहार-यात्रा के अनुभव बतायेंगे।

—दिवाकर

उत्तर प्रदेश का पहला जिलादान

शीघ्र ही दूसरे जिलादान की पूर्ण सम्भावना

देश की सर्वाधिक जनसंख्यावाला प्रदेश राज्यदान की ओर

बलिया-सम्मेलन के समय उत्तर प्रदेश में तूफान की जो लहर दौड़ी थी, उसने आबू-सम्मेलन तक महातूफान का रूप ले लिया है।

आगामी ३० मई को प्रदेश का पहला जिलादान उत्तरकाशी घोषित होने जा रहा है। भारत की दो पवित्र नदियों, गंगा-यमुना के उद्गम-स्थल पर होने जा रहे इस क्रांतिकारी निर्णय की स्फूर्ति निश्चय ही सारा देश महसूस कर सकेगा।

उत्तराखण्ड के प्रमुख कार्यकर्ता साथी श्री सुन्दरलालजी ने एक भेंट में बताया है कि इस जिलादान अभियान के सफल सूत्र-संचालन का काम जिले के पहले ग्रामदानी ग्रामसभा के सभापति श्री घनश्याम सिंह के द्वारा हुआ है।

श्री सुन्दरलालजी ने बताया कि ३०१८ वर्गमील का यह क्षेत्र तिब्बत की सीमा से जुड़ा हुआ होने के कारण बहुत ही महत्वपूर्ण राजनैतिक स्थिति का है।

उत्तरकाशी में पहले-पहल १६ नवम्बर '६५ को २ ग्रामदान तत्कालीन मुख्य मंत्री श्रीमती सुचेता कृपालानी की उपस्थिति में घोषित हुए थे। और अब ३० मई १९६८ को तिलाड़ी की ऐतिहासिक शहीद भूमि पर जिलादान की घोषणा होने जा रही है, जो सम्भवतः श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में होगी।

इस अवसर पर उत्तरकाशी के जिलाधीश सहित जिले के सहयोगी संस्थाओं, प्रतिनिधियों, नेताओं, ग्रामीणों को हम बधाई देते हैं, जिनके सहयोग से जिलादान की मंजिल पूरी हुई है।

इसी सिलसिले में यह उल्लेखनीय है कि उत्तर प्रदेश का सबसे पूर्वी जिला बलिया का जिलादान भी आबू सम्मेलन तक पूर्ण होने की पूरी आशा है। जिले की दो तहसीलों का दान पूरा हो चुका है। तीसरी और आखिरी तहसील-दान को १० दिन में पूर्ण करने का महाभियान १६ मई से होने जा रहा है जिसमें लगभग ढाई सौ कार्यकर्ता लग रहे हैं।

इस प्रकार प्रदेश का माथा और चरण दोनों ग्राम-स्वराज्य की 'क्रान्ति' से तिलकित और प्रक्षालित होने जा रहा है। ●

सन् १९६९ तक तमिलनाड दान का संकल्प

तमिलनाड सर्वोदय संघ का क्रांतिकारी निर्णय

देश की खादी-संस्थाओं के लिए सर्वथा अनुकरणीय—

आगे बढ़ने की आवश्यकता : अब इंतजार का वक्त नहीं

वाराणसी, ९ मई। आज तमिलनाड सर्वोदय संघ के मंत्री, खादी-जगत् के कर्मठ कार्यकर्ता साथी तथा खादी-ग्रामोद्योग ग्राम-स्वराज्य समिति (सर्व सेवा संघ) के मंत्री श्री पी० रामचन्द्रन् ने कहा, "देश में तमिलनाड सर्वोदय संघ पहली संस्था है, जिसने ग्रामदान के आरोहण को प्रदेश-दान की मंजिल तक पहुँचाने में अपनी पूरी शक्ति लगा देने का निश्चय किया है। सर्वोदय संघ ने अपने एक प्रस्ताव द्वारा २ अक्तूबर १९६९ तक प्रदेशदान की मंजिल पूरी करने के लिए ७ लाख तक की पूँजी अर्पित कर दी है। और प्रदेश भर में खादी के काम में लगे संस्था के लगभग २ हजार कार्यकर्ताओं में से १ हजार कार्यकर्ताओं को इस कार्य में लगाने जा रही है।"

विस्तृत जानकारी देते हुए अत्यन्त उत्साह-पूर्ण मुद्रा और ओजस्वी वाणी में श्री रामचन्द्रन् ने हमारे प्रतिनिधि को बताया, "राजगिर-सम्मेलन की प्रेरणा और ग्रामदान आन्दोलन की माँग को देखते हुए संस्था ने यह निर्णय किया है। संस्था ने यह अनुमान किया है कि एक प्रखण्डदान प्राप्त करने में लगभग २ हजार रुपये का खर्च आयगा।"

तमिलनाड के राजनीतिक दलों की प्रतिक्रिया के सम्बन्ध में पूछे गये एक प्रश्न का उत्तर देते हुए श्री रामचन्द्रन् ने कहा, "प्रदेश में राजनीतिक दलों का कोई विरोध नहीं है, और वे मानते हैं कि जो कार्य सर्वोदय के कार्यकर्ता आज कर रहे हैं, वे वही कर सकते हैं, हम (राजनीतिक दलवाले) नहीं कर सकते। "'और प्रेसवालों ने 'ब्लैक-आउट' किया है, यह तो आपको मालूम ही है।"

प्रदेशदान की व्यूहरचना के बारे में चर्चा करते हुए आपने बताया, "मई-जून-जुलाई, इन तीन महीनों में प्रदेश के हर प्रखण्ड में विचार के प्रचार और शिक्षण का व्यापक अभियान चलेगा और उसके बाद सुदर्शन के लिए कौन-कौनसे 'पाकेट्स' बनाये जायें, यह निर्णय किया जायगा। हमारी योजना है कि २ अक्तूबर, १९६८ तक रामनाथ-पुरम्, मदुराई और तिरुनेलवेली जिलों का दान हो जाय।

तिरुनेलवेली का दान पहले ही हो चुका है। शेष ९ जिलों का कार्य हम २ अक्तूबर '६९ तक पूरा कर लेंगे। प्रदेश में अभी डेढ़ सौ कार्यकर्ता ग्रामदान-भूदान में लगे हैं, यह संख्या शीघ्र ही ११२० के करीब पहुँच जायगी। कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए तमिलनाड सर्वोदय मण्डल के पास एक पूरी प्रशिक्षण-टोली है, जो लगातार शिविरों-गोष्ठियों द्वारा विचार-शिक्षण का कार्य करती रहती है।" ●

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड; या ३।। डालर । एक प्रति : २० पैसे
... के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित

चिन्तन-प्रवाह

खेत और अखाड़े

खेत और अखाड़ा, दोनों में शारीरिक परिश्रम किया जाता है, किन्तु लक्ष्य में बहुत भेद है। खेत में जो परिश्रम किया जाता है उसका लक्ष्य दूसरे को पछाड़ना अथवा शारीरिक शक्ति का प्रदर्शन नहीं होता। किसान हल चलाता है, जमीन साफ करता है, बीज बोता है, सिंचाई करता है, देखरेख करता है, फसल काटकर भूसे और अनाज को अलग-अलग करता है और अपने दीर्घकालीन परिश्रम का फल दूसरों को सौंप देता है। उसे केवल जीवन-निर्वाह के लिए थोड़ा-सा मूल्य मिलता है, न यश मिलता है और न प्रतिष्ठा।

इसके विपरीत अखाड़े में जो परिश्रम किया जाता है उसका लक्ष्य उत्पादन न होकर प्रदर्शन होता है। पहलवान दंड पेलता है, बैठकें लगाता है, मुगदर घुमाता है और कुश्ती लड़ता है। इन अभ्यासों के द्वारा वह जिस शक्ति का संचय करता है उसका एकमात्र उद्देश्य दूसरे को पछाड़ना और अपने अहंकार का पोषण होता है।

किसान-मजदूर जब सड़क पर चलता है, समाज उसे तिरस्कार भरी दृष्टि से देखता है। फटी पगड़ी, फटी कमीज और फटे जूते यही उसकी वेशभूषा होती है। इसके विपरीत पहलवान अपना प्रदर्शन करता हुआ चलता है, ढीला-ढाला लम्बा चोगा पहनता है। उभरी हुई मांसपेशियां विज्ञापन करती रहती हैं।

प्रस्तुत दो चित्र संस्कृति की दो धाराओं को प्रकट करते हैं। धर्म, राजनीति, साहित्य, कला आदि सभी क्षेत्रों में दोनों चित्र मिलते हैं। प्रथम चित्र उन श्रमजीवियों का है, जिन्हें न यश प्राप्त होता है और न सम्मान। जीवन-निर्वाह के लिए भी सदा कठिनाई बनी रहती है। किन्तु समाज का जीवन उन्हीं के पसीने पर निर्भर होता है। दूसरा चित्र उन व्यक्तियों का है, जो जुलूस निकालते हैं, मंच पर खड़े होकर बड़े-बड़े भाषण देते हैं, समाचारपत्रों में चित्र छपाते हैं। किन्तु समाज-निर्माण का कोई कार्य नहीं करते।

धार्मिक अखाड़े के पहलवानों को साधु, सन्त, महाराज, गुरुजी आदि शब्दों द्वारा पुकारा जाता है। वे भी विशेष प्रकार की वेशभूषा रखते हैं। इतना ही नहीं, प्रत्येक अखाड़े की वेशभूषा निश्चित है और वह प्रत्येक सदस्य को धारण करनी पड़ती है। कोई सिर मुंडाता है, कोई जटाएँ रखता है, कोई सिर मुड़ाकर दाढ़ी रखता है, कोई भगवे कपड़े पहनता है, कोई सफेद, कोई पीले और कोई काले। कुछ अखाड़े ऐसे भी हैं जहाँ पुरुष स्त्रियों के कपड़े पहनते हैं। साड़ी और चूड़ियाँ पहनकर परस्पर स्त्रीलिंग में *सौतियाडाह की बातें करते हैं।*

इसके विपरीत कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं, जो किसी अखाड़े के साथ सम्बन्ध नहीं जोड़ते। विचारों में सबका भला चाहते हैं, ईमानदारी से रहते हैं, अपने परिवार का सन्तोषपूर्वक भरण-पोषण करते हैं। न उन्हें जयनाद की इच्छा होती है और न किसीको पछाड़ने की। ऐसे व्यक्ति सन्तान तथा परिचित व्यक्तियों के लिए संस्कारों के रूप में जो धरोहर छोड़ जाते हैं वही स्वस्थ जीवन की खुराक बनती है।

राजनीतिक क्षेत्र में किसी अखाड़े के पहलवान सफेद टोपी और ढीला-ढाला कुर्ता पहनते हैं। वे बात-बात में गांधीजी की दुहाई देते हैं। किसी अखाड़े के लाल टोपी और फटी टांग का पायजामा पहनते हैं। ऐसा प्रदर्शन करते हैं, जैसे उन्हें भूखे पेट सोना पड़ता हो, पहनने के लिए कपड़े भी न मिलते हों। वे लेनिन, स्टालिन, और योग्या की बातें करते हैं। पूंजीपति, बुर्जुआ, मजदूर, शोषण आदि शब्द उनकी जबान पर चढ़े रहते हैं।

तीसरे अखाड़ेवाले टोपी धोती पहनते हैं। शिवाजी और राणा प्रताप की दुहाई देते हैं। ऐतिहासिक तथ्यों से अपरिचित होने पर भी बात-बात पर हिन्दू-संस्कृति का बखान करते हैं। उस युग के स्वप्न देखते हैं जब वैदिक सभ्यता और संस्कृति का समस्त भारत पर आधिपत्य हो जायगा और अन्य विचार-धाराएँ समाप्त हो जायँगी।

विद्याध्ययन सत्य की पहचान के लिए किया जाता है। किन्तु वहाँ भी अखाड़ेबाज सत्य को छोड़कर बद्धमूल धारणाओं की रक्षा में लग जाते हैं। दार्शनिक क्षेत्र में एक पहलवान शंकराचार्य को महत्त्व देता है, दूसरा रामानुज को, तीसरा दिङ्नाग और धर्मकीर्ति को। तीनों में से कोई दूसरे की बात समझने के लिए तैयार नहीं है। *प्रत्येक परम्परा अन्य परम्पराओं का खंडन* करने के लिए अपने हथियार पैने करती रहती है।

काव्य के क्षेत्र में छायावाद, रहस्यवाद, हालावाद, राष्ट्रवाद, साम्यवाद, उच्छृंखलतावाद, मानवतावाद आदि को लेकर अखाड़े बन गये हैं। कोई निराला का उपासक है, कोई पंत का, कोई बेधड़क का और कोई बेसुरा का। इन अखाड़ों में भी प्रत्येक की अपनी-अपनी विशिष्ट वेशभूषा है, कविता-पाठ और बातचीत का अपना-अपना ढंग है। हालावादी ऐसा प्रदर्शन करते हैं जैसे अभी सोकर उठे हों। बिखरे हुए बाल, अस्त-व्यस्त कपड़े और बेहोशी। उन्हें व्यवस्था अच्छी नहीं लगती। निराशावादी उस पार की माला फेरते हैं। इस जीवन से उकताये रहते हैं और समाज से चिढ़े हुए। छायावादी पुरुष के कपड़े पहनते हैं, किन्तु मुख पर स्त्री की छाया लाने का प्रयत्न करते हैं। राष्ट्रवादी जोश में भरे रहते हैं, जैसे रणयात्रा की तैयारी कर रहे हों।

संगीत एवं अन्य कलाओं में भी अखाड़े बन गये हैं। फलस्वरूप वे जीवन को आनन्दित करने के स्थान पर उसे विषाक्त करने लगे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि अखाड़ों को खत्म करके खेतों की प्राण-प्रतिष्ठा की जाय। तभी मानवता सुख-पूर्वक जी सकेगी। —डा० इन्द्रचन्द्र शास्त्री

ग्राम-स्वामित्व, ग्राम-नेतृत्व

देश की स्थिति के बारे में हमारे चाहे जो विचार हों, इस बात से इनकार करना कठिन है कि आज औसत व्यक्ति पहले से कहीं अधिक विकास का इच्छुक (डेवलप माइण्डेड) है। वह लोकतंत्र से मिले अवसर तथा विज्ञान से प्राप्त साधनों का भरपूर प्रयोग करना चाहता है। आज उसे असमानता और विषमता (इनइक्वालिटी और डिस्पेरिटी) पहले से कहीं अधिक खल रही है। वह समाज में अपने लिए सम्मान और सुरक्षा (सेक्योरिटी) का स्थान चाहता है।

पिछले बीस वर्षों में जिस तरह की विकास-योजनाएँ चली हैं, उन्होंने समाज में नीचे के लोगों की बहुत बड़ी संख्या को विकास की परिधि के बाहर छोड़ दिया है। उत्पादक की, मुख्यतः खेती में, घोर उपेक्षा हुई है। इसके कारण एक ओर विषमता बढ़ी है, और दूसरी ओर पूँजीवालों की शोषण करने की शक्ति। ऐसा लगता है कि आज हमारी समस्या गरीबी से अधिक विषमता की है। इसका अर्थ यह है कि अगर गरीबी दूर करनी हो तो गरीबी और विषमता, दोनों को साथ दूर करने की कोई सम्मिलित प्रक्रिया निकालनी होगी।

यह कार्य मात्र उन्नत साधनों से नहीं होगा। आज की व्यवस्था में उन्नत साधन साधन-सम्पन्न के पास पहुँचकर रह जाते हैं। इसलिए अब आगे की विकास-योजना में साधन और सम्बन्ध (इम्प्लीमेण्ट ऐण्ड रिलेशनशिप) दोनों को साथ और समान स्थान देना होगा। मालिक-मजदूर के सम्बन्धों के परम्परागत धरातल पर अब उत्पादक को उन्नत साधनों के लिए उत्साह नहीं रह गया है। ये सम्बन्ध बदलने चाहिए, और मालिक-मजदूर दोनों में समता और साझेदारी की भूमिका बननी चाहिए।

सम्बन्ध कैसे बदलेंगे ? साधनों का निजी स्वामित्व (प्राइवेट ओनरशिप) रहेगा तो सम्बन्ध भी मालिक-मजदूर के ही रहेंगे। सामाजिक सम्बन्ध मूलतः साधनों के स्वामित्व के चारों ओर विकसित होते हैं। इसलिए निजी स्वामित्व का अन्त विकास की ही नहीं, बल्कि नये सम्बन्धों के समाज के निर्माण की पहली शर्त है।

निजी स्वामित्व के स्थान पर स्वामित्व का कौनसा नमूना (पैटर्न आफ ओनरशिप) भारतीय समाज के लिए अनुकूल होगा ? प्रचलित नमूने ये हैं :

परिवार-स्वामित्व (पूँजीवाद)
सरकार-स्वामित्व (साम्यवाद)
मिश्रित स्वामित्व (लोककल्याणवाद)

क्या भारत की परिस्थिति में इनमें से कोई उपयुक्त होगा, या नया नमूना—ग्रामस्वामित्व ?

अगर परिवार-स्वामित्व रहेगा तो गरीबी और विषमता के विरुद्ध लड़ाई में हार निश्चित है, अगर सरकार-स्वामित्व होगा तो तानाशाही अनिवार्य है, और, अगर बहुदलीय राजनीति (मल्टी पार्टी-पालिटिक्स) के साथ-साथ मिश्रित स्वामित्व चलेगा तो बराबर राजनैतिक अस्थिरता रहेगी, आर्थिक विकास की गति धीमी होगी, भ्रष्टाचार व्याप्त होगा, तथा सत्ता की राजनीति (पावर पालिटिक्स) और मुनाफे की अर्थनीति (प्राफिट इकानामी) के कारण सामाजिक समन्वय (इंटिग्रेशन) कभी सम्भव नहीं हो सकेगा। ऊबकर अन्त में जनता मुक्ति के लिए सेना की ओर मुड़ेगी। लगता है कि ग्राम-स्वामित्व में पारिवारिक अभिक्रम तथा सामूहिक हित और संयोजन का मेल बहुत अच्छी तरह मिलाया जा सकता है, और करोड़ों लोगों को विकास के "ऐडवेंचर" में शरीक किया जा सकता है। इस तरह गाँव की शक्ति से गाँव की समस्याओं को गाँव में ही हल करने का उपाय निकल आयगा। और, इस पद्धति से देश केन्द्रीकरण तथा शहरीकरण के अनावश्यक अभिशापों से बच जायगा, लेकिन सुव्यवस्था और समुन्नत साधनों के गुणों के गाँव-गाँव में फैलने से गाँव 'आधुनिक' बन जायेंगे। परिणाम यह होगा कि एक-एक गाँव 'ऐग्रोइंडस्ट्रियल' जीवन तथा सहकारी व्यवस्था की इकाई बन सकेगा। गाँव के बनने से देश बन जायगा।

अगर ग्रामस्वामित्व मान्य हो तो उसे प्राप्त करने की 'क्रांतिनीति' क्या होगी ?

राजनीति—दलसत्ता की या लोकशक्ति की ?
अर्थनीति—स्पर्द्धा की या स्वावलंबन की ?
शिक्षानीति—पुस्तककेन्द्रित या समस्याप्रधान ?
समाजनीति—जातिमूलक या मानवनिष्ठ ?
धर्मनीति—सम्प्रदाय की या सारवृद्धि की ?

ग्रामस्वामित्व की क्रान्तिनीति में वर्ग-संघर्ष का क्या स्थान होगा ? क्या वर्ग-संघर्ष तथा 'राइट' और 'लेफ्ट' की राजनीति के कारण पाँच लाख गाँव इकाई के रूप में बचे रह सकेंगे ? वर्ग-संघर्ष, दल-संघर्ष और जाति-संघर्ष के क्या परिणाम होंगे ? क्या क्रान्ति के लिए संघर्ष छोड़कर कोई दूसरी डाइनेमिक्स आवश्यक नहीं है ? अगर विज्ञान है तो विज्ञान और लोकतंत्र के सन्दर्भ में वह क्या होगी ?

ग्रामस्वामित्व की व्यवस्था और विकास-योजना के लिए आवश्यक है ग्रामीण जनता की तीनों शक्तियों का समन्वय—श्रम, पूँजी, बुद्धि। तीनों का समान दर्जा हो और तीनों की मुक्त साझेदारी हो। मुनाफे की समानता हो, न कि एक का दूसरे पर प्रभुत्व।

इस नयी क्रान्ति-योजना में हमारा क्या रोल होगा ? आबू रोड सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर हम इसका विचार करें। अगले ७ जून के विशेषांक में इसी विषय पर चिंतन के लिए कुछ विशेष सुझाव और विचार हम प्रस्तुत करने जा रहे हैं। ●

तब अशांति के दूत : अब शांति के आराधक

आजीवन कारावास की सजा से मुक्त बागियों से एक दिलचस्प मुलाकात

३ मई के अंक में खबर छपी थी कि चम्बल में घाटी विनोबाजी के समक्ष जिन बागियों ने आत्म-समर्पण किया था, उनमें से चार गांधी जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में ग्वालियर जेल से बिना किसी शर्त सम्मोचित कर दिये गये। यही चारों बागी भाई ८ मई को रानीपतरा में विनोबाजी से आशीर्वाद लेकर अपने-अपने घरों को लौट रहे थे। और वहाँ जाते हुए रास्ते में कुछ घण्टों के लिए वाराणसी ठहरे थे।

जब मैं उनसे मुलाकात करने जा रहा था तभी श्री लल्लू दादा ने, जो कि स्वतः को उन्हींमें से एक कहकर अपना परिचय देते हैं, हिदायत दे दी थी कि भाई, उन लोगों को बीते दिनों की याद न दिलाना। लोग जाने क्या-क्या पूछताछ किया करते हैं। परन्तु थोड़ी देर की चर्चा में ही उनकी आत्मीयता ने मुझे सहज ही अपना लिया। और उन लोगों से बातचीत का सिलसिला जो शुरू हुआ तो स्टेशन पर विदाई के क्षणों तक चलता ही रहा।

चारों बागी भाइयों में से एक राणा प्रताप-सी मूछोंवाले हँसमुख नौजवान ने अपने गैंग के सरदार रूपा के बड़े भाई कन्हैयालाल, रूपा के दाहिने हाथ तुकरा, अब लोकमन और तेज सिंह का परिचय देने के बाद अपने बारे में बताया कि मैं अब भगवान सिंह नहीं, भगवान 'दास' हूँ, स्वामी भगवानदास। 'सिंह' से 'दास' विनोबाजी ने कर दिया।'

'विनोबाजी से आप मिले तो उन्होंने आप लोगों से क्या कहा?' मैंने स्वामी भगवानदास से पूछा।

'विनोबाजी ने तो हमसे बहुत कुछ कहा, मगर सबसे अच्छी बात उन्होंने जो हमसे कही, वह यही है कि उन्होंने हमें 'पुत्रवत्' कहा। बोले, तुम लोग हमारे पुत्रवत् हो। अब ईश्वर का चिन्तन करो और परिश्रम करके नये जीवन का निर्माण करो। बस यही बात हमें लग गयी है।'

मैंने इसी क्रम में प्रश्न किया कि, मान लीजिये, आपको अपने इलाके में जमीन नहीं मिली। कहीं और जाना पड़ा तो क्या वहाँ जाकर खेती-किसानी करेंगे? इस प्रश्न को सुनकर कन्हैयालालजी ने एकदम कहा, 'नहीं, नहीं, दूर नहीं पसन्द करेंगे।'

लेकिन भगवानदासजी ने बताया कि देश के किसी भी कोने में जहाँ भी विनोबाजी चाहेंगे, हम रहेंगे और परिश्रम करेंगे। तब कन्हैयालालजी ने इस बात का समर्थन किया और मौन रह गये। उन्हें आशा है कि उन्हें उनके इलाके में ही जमीन मिलेगी।

भगवानदासजी ने आठवें दर्जे तक शिक्षा पायी है। शिक्षा तथा साहित्य में उनकी रुचि है। उनके गाँव गोठ में करीब २०० पुस्तकों का एक पुस्तकालय है। सामने लगे चित्र में गांधीजी को चरखा चलाते हुए देखकर स्वामी भगवानदास ने कहा कि, 'अब हम भी चरखा चलायेंगे और खादी पहनेंगे।'

कन्हैयालालजी कुछ दूर बैठे हुए गुनगुना रहे थे। ध्यान देने पर सुनाई पड़ा, 'जीते लकड़ी, मरते लकड़ी, अजब तमाशा लकड़ी का।' जीवन में लकड़ी का कितना महत्त्व है, इसका कोई प्रमाण उन्हें मिल गया था, उसी पर वे आत्ममुग्ध हो गुनगुना उठे थे। लोकमन के गले में पड़ा हुआ जनेऊ और गाँठ बँधी हुई चोटी उनके ब्राह्मणत्व का परिचय दे रही थी। 'मनुष्य का जीवन बार-बार नहीं मिलता', इस वाक्य को उन्होंने सहसा ही दुहराया। तेज सिंह ने सुना तो वे मेरी ओर देखकर कुछ इस तरह से कहने लगे मानो वे अपना मन्तव्य व्यक्त कर रहे हों कि हाँ भाई, सच ही कहा है, यह जीवन बड़ा कीमती है।

स्वामी भगवानदास विचारमग्न-से सारे माहौल में कुछ अलग ही मालूम पड़ते, एक गम्भीर मुस्कराहट उनके चेहरे पर खेल जाती, जो उनका अन्तरंग-परिचय दे देती कि इस छोटी अवस्था में ही जीवन के सभी उतार-चढ़ाव देख लिये और अब सबके ऊपर हैं, उनकी वह एक मुस्कराहट जो उनकी बड़ी-बड़ी मूछों में छिप नहीं पाती, उन राणा प्रताप-सी मूछों में।

'तो आप लोग खेती-किसानी करेंगे, मेहनत करेंगे, और तपकर अपने जीवन को नये रूप-रंग में निखार देंगे, ताकि आपके जैसे तमाम लोगों के लिए एक रास्ता साफ दीख पड़े, एक चमकता हुआ, आलोक बिखेरता रास्ता...।' मैं उनसे कह रहा था।

स्वामी भगवानदास ने बताया, 'हम लोग तो विनोबाजी के शिष्य हैं, उनके रास्ते पर चलकर यहाँ तक आये हैं और आगे भी यही मार्ग हमें रास्ता दिखायेगा।'

'यह देखिये, विनोबाजी ने हमें आठ पुस्तकें दी हैं।' भगवानदासजी ने सभी पुस्तकें मेरे सामने रख दीं और कहा, 'इन पर हमारा नाम लिख दीजिये।'

'शुचिता से आत्मदर्शन', 'रामनाम एक चिन्तन', 'जपुजी', 'मंगल प्रभात', 'नाम-माला', 'विनयांजलि' और 'गीता-प्रवचन'; इन पुस्तकों को विनोबाजी के आशीर्वाद के रूप में भगवानदासजी ने कपड़े में बाँधकर इस जतन से रखा है कि लगा, यही तो अब इनके लिए सर्वस्व है।

इस बीच बच्चों ने उन्हें आ घेरा। बच्चे तरह-तरह के सवाल करने लगे। कोई बच्चा कुछ पूछता, लेकिन कुछ सहमकर फिर चुप हो जाता, तो भगवानदास उसे उकसाते, 'पूछो और पूछो, जो कुछ भी पूछना है, मन में मत रखो।' प्रत्येक बच्चे से कहते, 'तुम्हें क्या पूछना है, बोलो।'

बच्चे अधिकतर सवाल करते, 'आप लोग क्या घोड़े पर सवार रहते थे?'

घोड़े का नाम सुनकर, भगवानदास हँसते, 'नहीं बच्चो, हम पैदल ही भाग-दौड़ते थे।'

'पैदल-पैदल, जंगल-जंगल, बाप रे!' बच्चे खामोश हो जाते।

एक बच्चा भगवानदास की गोदी में आकर बैठ गया। वह इस अधिकार से आ बैठा था, जैसे वह उनसे गहरा परिचय रखता हो। लोकमन से भगवानदास ने कहा, 'यह जो है न, सो वे जो गांधी महात्मा के साथ थे महादेव देसाई, उनका नाती है।'

'भूदान यज्ञ' २४ मई, '६८ के अंक का परिशिष्ट

संयुक्तांक

इस अंक में

२४ मई, '६८
वर्ष २ अंक २०-२१
मूल्य ३६ पैसे

विधानसभा में प्रतिनिधि कौन ?

गाँव के हमारे भाई-बहन,

जय जगत् !

इस पत्र के पहुँचते-पहुँचते रोहिन नक्षत्र आ जायगा, और आप लोग धान-खेती मे लग जायँगे। मेड बनायँगे, बीज डालेंगे, और अगर पानी होगा तो हरी खाद के बीज भी बो देंगे। आशा है, इस साल वर्षा पिछले साल से अच्छी होगी, और फसल मे कोई कमी नही रहेगी। लेकिन वर्षा पर अपना वश तो है नही ! कितने कौतुक की बात है कि प्रकृति की बार-बार चोटे खाने पर भी हमारा किसान हर साल नयी सृष्टि करता है। हिम्मत हारना तो वह जानता ही नही। शायद वह दिन दूर नही है जब विज्ञान इतना अधिक बढ जायगा कि हम प्रकृति को आज से कही ज्यादा अपने अनुकूल बना सकेंगे।

जिस तरह साहस के साथ हम हर साल नयी नयी फसले बोते हैं, उसी तरह क्या हम यह नही सोच सकते कि एक नया समाज भी बनाने की कोशिश की जाय ? आज के समाज मे जो गरीब है वह तो दुखी है ही, जो गरीब नही है वह भी कितना परेशान है। एक धनी दस-बीस को गरीब बनाकर धनी होता है। इसीलिए समाज मे इतनी अधिक गरीबी, बेकारी और विषमता दिखायी देती है। गरीबी से कही अधिक खलनेवाली चीज है विषमता। परिवार की मिसाल ले लीजिये। परिवार मे एक भाई की कमाई अच्छी हो, और बाकी दो की न हो, तो उन दो का दिल ईर्ष्या से जलता रहता है। अगर ऐसा न भी हो, और तीनो की कमाई अच्छी हो, लेकिन आपस मे प्रेम न हो, तो भी परिवार बहुत दिन नही चलता। इससे उलटी हालत उस परिवार की होती है जिसमे धन-दौलत भले ही थोड़ी कम हो, लेकिन आपस मे प्रेम हो तो वह परिवार सुखी होता है, टिकाऊ होता है। यही हाल समाज का है। समाज वह सुखी होगा जिसमे सबके पास अपना काम होगा, कमाई होगी, विषमता कम-से-कम होगी, और लोगो मे आपसी सम्बन्ध अच्छे होंगे। आज का समाज ऐसा नहीं है। क्या आपकी इच्छा नही होती कि एक अच्छा समाज बनना चाहिए ? आप कहेंगे—'क्या समाज भी बनाया जा सकता है ?' 'हाँ, बनाया जा सकता है।' 'कौन बनायेगा ?' 'आप बनायँगे, हम बनायँगे, सब मिलकर बनायँगे।'

कैसे बनायँगे ? ग्रामदान का नाम आप सुनते होंगे। ग्रामदान के बाद अब आप जिलादान का नाम भी सुनने लगे होंगे। हो सकता है राज्यदान की बात भी कान मे पडती हो। यह ग्रामदान, जिलादान, राज्यदान क्या है ? यही समझिये कि नया समाज बनाने की कोशिश और योजना है।

इस वक्त देशभर मे ५६ हजार ग्रामदान हो चुके हैं। गाँवो का ही नही, चार पूरे जिलो का दान हो चुका है। इनमे एक जिला तिरुनेलवेली मद्रास मे है। इसी जिले मे रामेश्वरम का तीर्थ है। दो जिले दरभंगा और पूर्णिया बिहार मे हैं। दरभंगा जिला तो बहुत बडा है। उसकी जन-संख्या ५० लाख से ज्यादा है। चौथा जिला उत्तरकाशी का उ० प्र० मे है, जिसमे बदरिकाश्रम का तीर्थ है। पाँचवाँ जिला उ० प्र० का बलिया है, जिसका दान शीघ्र पूरा होनेवाला है। उत्तरकाशी और बलिया के दो जिले स्वतंत्रता की लडाई मे बहुत प्रसिद्ध हुए थे। इन दोनो जिलो म क्रान्ति की परम्परा है, इसलिए आश्चर्य की बात नही है कि इन्होने क्रान्ति के इस नये विचार को भी सबसे पहले अपनाया।

बिहार के कुल १७ जिलों का दान २ अक्तूबर सन् १९६८ तक पूरा करने की कोशिश हो रही है। उ० प्र० बिहार से तिगुना बडा है, इसलिए उ० प्र० सोचता है कि अगर बिहारदान १९६८ मे पूरा होता है तो १९६९ मे उसका दान पूरा हो जाय। उधर दक्षिण मे मद्रास मे अभियान चल रहा है। वहाँ के मित्र सोचते हैं कि मद्रास और उ० प्र० का काम साथ-साथ पूरा हो। मध्य प्रदेश और उड़ीसा में भी ओर की हवा बह रही है। ऐसा लगता है कि १९६९ तक, जब गांधीजी की जन्म-शताब्दी मनायी जायगी, कई राज्यदान हो जायँगे। जिले तो हो ही जायँगे। ग्रामदान के विचार की ओर लोग झुक रहे हैं
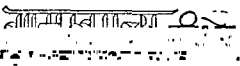
मुजफ्फरपुर जिले का प्रथम ग्रामदानी गाँव

१७वीं अप्रैल के अपराह्न ग्रामदानी गाँव खजूरी के खजूरी आश्रम मे भूदान-किसानो की एक आवश्यक बैठक सभा के सभापति श्री रामफल सावजी की अध्यक्षता मे हुई, जिसमे १८वीं अप्रैल भू-क्रान्ति दिवस के पुनीत अवसर पर, सदर अनुमण्डल (मुजफ्फरपुर) के भूदान-किसानों का एक सम्मेलन आयोजित करने की जो पूर्वनिर्धारित योजना बनायी गयी थी, उसकी समुचित व्यवस्था के बारे में विस्तार से चर्चाएँ हुईं तथा सुबह से ही श्रमदान करने का एक कार्यक्रम बनाया गया। कार्यक्रम को पूरी मुस्तैदी से सम्पन्न करने हेतु ग्रामीणों मे काफी उत्सुकता तथा चहलपहल शुरू हो गयी। सबने अपनी-अपनी जिम्मेदारी महसूस की और अपने-अपने काम मे लग गये।

१८वीं अप्रैल भू-क्रान्ति दिवस की पावन तिथि। प्रातः ५ बजे प्रार्थना के बाद टोकरी कुदाल लिये हुए नवीन समाज के निर्माता खजूरी के ग्रामीणों ने पोखरा खोदना शुरू किया और उस मिट्टी से सडक का निर्माण करने के लिए सुबह ६ बजे से ११ बजे की अवधि में सिर्फ आध घंटे जलपान के छोड़कर साढ़े चार घंटे तक लगातार श्रमदान करते ही रहे। बीच मे खंजरी पर ताल देते हुए सभापति श्री रामफलजी गा रहे थे—'वीरों की यह बाट है भाई, कायर का नही काम रे, चलता मुसाफिर ही पायेगा, मंजिल और मुकाम रे।' कवि दुखायल का यह गीत कितना समयानुकूल-सा लगता था, यह गीत शायद इसी मौके के लिए बनाया गया हो।

अपराह्न ३ बजे से सभा की कार्यवाही शुरू हुई। सभा की अध्यक्षता कर रहे थे ग्रामदानी गाँव सिमराडीह के तपोनिष्ठ सेवक तथा हमारे पुराने साथी श्री रामेश्वर मिश्रजी। प्रारंभ में सभापति श्री रामफल सावजी ने आगत अतिथियों का स्वागत किया और अपने हाल की ही शेखधरा (गया) यात्रा का आँखो-देखा हाल सभा को सुनाया। खजूरी आश्रम का संक्षिप्त इतिहास तथा भावी कार्यक्रम की रूपरेखा आश्रम के प्रभारी श्री गंगा प्रसाद सहनी ने प्रस्तुत की। फिर कुछ भूदान-किसानो ने अपनी-अपनी समस्याएँ रखी, जिसके समुचित हल का आश्वासन उन्हें आश्रम की ओर से दिया गया। अन्त मे आगत सज्जनो का प्रवचन हुआ। फिर सभापति के अमूल्य दिशा-निर्देश के बाद सभा की समाप्ति हुई।

रात्रि मे प्रार्थना तथा एक भजन के बाद सिर्फ भूदान-किसानो की बैठक हुई, काफी विचार-विमर्श तथा अपनी भावी कार्यक्रम की योजना बना लेने के बाद हृदय-मंथन का क्रम शुरू हो गया।

खजूरी गाँव के श्री बोधकृष्ण लालजी ने, जो इस क्षेत्र मे मुंशीजी के नाम से मशहूर हैं—सर्वप्रथम सभा के सामने प्रतिज्ञा की कि मैं शपथ लेता हूँ कि आज से शराब-ताड़ी और मास-मछली का सर्वथा त्याग कर रहा हूँ। उनके इस साहसपूर्ण निर्णय के बाद सभा मे एक समाँ बंध गयी और पूरे खजूरी गाँव के अधिकांश लोगों ने प्रायः सभी दुर्व्यसनो को छोडने का साहसपूर्ण निर्णय लिया। इस प्रकार खजूरी के पिछले १४ वर्षों के इतिहास मे यह अभूतपूर्व सम्मेलन था जिसका असर गाँव के अलावा इस इलाके के उपर जबरदस्त रूप मे हुआ।

खजूरी गाँव की संक्षिप्त जानकारी

सन् १९५४ में मनआरी (मुजफ्फरपुर) के महंत श्री दर्शन-दासजी ने भूदान आन्दोलन से प्रेरित होकर अपनी पूरी जमींदारी (खजूरी गाँव की) दान मे दे दी, जिसमे दो सौ बीघे जमीन के अलावा कचहरी, हल-बैल तथा अन्यान्य सभी सामानो का दान कर दिया। तब वह गाँव मुजफ्फरपुर जिले का प्रथम ग्रामदानी गाँव बना। ४९ भूदान-किसानो के बीच १८५ बीघे जमीन बाँट दी गयी। आश्रम के नाम पर १० बीघा है और शेष मे मकान आदि हैं।

सम्मेलन मे २५० भूदान-किसानों ने भाग लिया। वे सदर अनुमण्डल के ११ गाँवों से आये थे। खर्च की व्यवस्था खजूरी आश्रम की ओर से तथा जनाधारित रूप मे हुई।

—गंगा प्रसाद सहनी

हमारी जीवन-यात्रा के साथ-साथ जंगल और पहाड़ : नदियाँ और मैदान

[हमारे देश के जीवन का आधार है खेती। खेती का शरीर और प्राण है—मिट्टी-पानी। जंगल, पहाड़ और नदियाँ उपजाऊ मिट्टी के मैदान बनाती हैं। उन मैदानों की कुछ समस्याएँ अभी भी बहुत विकट हैं, उन्हें हल करना है। बिना हल किये कोई चारा नहीं। इस लेख में इसी सवाल पर विस्तार से सोचा और सुझाया गया है।—सं०]

मनुष्य के जीवन के लिए दो बहुत ही आवश्यक तत्त्व हैं—हवा और पानी। खुराक और वस्त्र के बिना मनुष्य काफी दिनों तक जीवित रह सकता है, लेकिन हवा के बिना सिर्फ कुछ क्षण तक जीवित रह सकता है और पानी के बिना मुश्किल से एक-दो दिन। पानी सबसे पहले प्यास बुझाने के लिए चाहिए, फिर कृषि और गोपालन के लिए। व्यक्तिगत और सामाजिक सफाई के लिए, मकान और बरतन बनाने के लिए, खाना बनाने के लिए, भाप से चलनेवाली मशीनों को चलाने के लिए, गरमी में ठंडक लाने के लिए, और इसी तरह के कितने ही कामों के लिए पानी आवश्यक होता है। दुनिया की सतह पर सब जगह हवा सब लोगों के लिए काफी मात्रा में मौजूद है, और अभी तक किसी भी अभागे के मन में ऐसा विचार भी नहीं आया है कि हवा पर उसका व्यक्तिगत अधिकार रहे। लेकिन पानी सब जगह नहीं है, और कुछ जगहों में एक मौसम में बहुत ज्यादा है, और दूसरे मौसम में उसका अभाव है। मनुष्य की आबादी कहाँ रहे और उसकी क्या हालत हो, उसकी व्यवस्था कैसी हो, यह एक बड़े अंश में पानी के स्रोतों पर निर्भर है।

दुनिया की सभी पुरानी सभ्यताओं का विकास नदियों के किनारे-किनारे हुआ है। सिन्धु नदी, चीन की बड़ी नदियाँ, इफरात और दजला तथा नील नदी की घाटियाँ मानवीय इतिहास के जन्म-स्थान रही हैं। धीरे-धीरे विज्ञान के विकास के साथ-ही-साथ मनुष्य ने सिंचाई की व्यवस्था के द्वारा रेगिस्तान को आबाद करना सीखा, और निकास की व्यवस्था के द्वारा दलदलों को भी आबाद करना सीखा। शुरू-शुरू में वह नदियों और झरनों पर निर्भर रहा, लेकिन शीघ्र ही उसने कुओं के द्वारा धरती के अन्दर के पानी का उपयोग करना भी सीखा। इसी प्रकार बढ़ती हुई आबादी के साथ-साथ उसमें नयी जगहों को आबाद करने की शक्ति आयी।

विज्ञान की बढ़ती हुई रफ्तार से सिंचाई और विकास के लिए बड़ी नदियों की धाराओं पर बाँध बनाकर सिंचाई की बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनी हैं, उनसे बिजली भी मिलती है। इन योजनाओं में कुछ सफल रहीं, कुछ असफल। पुराने जमाने में सिंचाई के द्वारा इफरात और दजला नदियों की घाटी बहुत उपजाऊ बनी, लेकिन आधुनिक बड़ी नहरों के द्वारा की हुई सिंचाई से ईराक के रेगिस्तान में कुछ ऐसी गड़बड़ी हुई कि सारी भूमि ऊसर हो गयी। अब लोग ५००० वर्ष पुरानी नहरों की खोज कर रहे हैं, जिनके द्वारा २-३ हजार वर्ष तक यह घाटी बहुत उपजाऊ रही थी। पंजाब और मुरैना के नहरी इलाकों में भी यही स्थिति पैदा हो रही है, इसलिए भविष्य में सिंचाई की योजनाएँ बनाने में हमें बहुत सावधान रहना पड़ेगा।

अमेरिका में प्रयोग

अमेरिका की दो बड़ी नदियों—मिसिसीपी और मिसूरी—मिलकर एक विशाल डेल्टा बनाती हैं। वे पहाड़ी क्षेत्रों में जमीन को काटकर अपने साथ काफी मिट्टी बहा ले जाती हैं। इससे सारे डेल्टा का क्षेत्र मिट्टी से भरकर मलेरिया का दलदल बना। लाखों एकड़ भूमि बरबाद हुई, और हर साल काफी तेजी से उस दलदल का फैलाव होता रहा। बीमारी भी व्यापक पैमाने पर फैल रही थी। इसलिए वहाँ 'टेनिसी वेली डेवलपमेंट बोर्ड' (टेनिसी घाटी का विकास संघ) बनाया गया, जो इन दो नदियों की पूरी घाटियों के लिए भूमि और भूमि-संरक्षण व्यवस्था की योजनाएँ बनाता है। पहाड़ों में जंगल लगाने—ऐसा जंगल जिससे मिट्टी का बहाव रुक सके तथा पहाड़ों में नदियों पर छोटे बाँध बनाकर पानी के तेज बहाव को रोककर छोटी-छोटी बिजली की योजनाएँ बनायी गयीं, ताकि रोशनी और उद्योग के दृष्टिकोण से पहाड़ों में सस्ती बिजली मिल सके।

डेल्टा के इलाके में पानी के निकास की और नदियों की तलहटी में बैठी हुई मिट्टी को निकालने की व्यवस्था हुई। ऐसा इन्तजाम हुआ कि नदियों का बहता हुआ पानी सारे समुद्र तक आसानी से पहुंच जाय। अब इलाका सूखकर उपजाऊ मिट्टी का क्षेत्र बन गया है और यह इलाका अब संयुक्त राष्ट्र अमरिका का एक बहुत अच्छा फल उत्पादन क्षेत्र बना है। यह सब काम वहां के लोगों की मिली-जुली शक्ति से हो पाया है।

चीन की समस्या

चीन में बहुत लम्बी और बड़ी नदियां हैं। उनमें से एक नदी का नाम ह्वेंगहो है। उसका मतलब चीन का दुख (दी सारो आफ चाइना) है। चीन जैसे विशाल देश में जहां नदियां यातायात का खास साधन हैं और काफी लोग जीवन भर नदियों पर नावों में रहते हैं और इन नदियों से ही गुजारे का बहुत बड़ा हिस्सा (मछली) पाते हैं तब ऐसी बड़ी और उपयोगी नदी चीन का दुख कैसे बनी? इसलिए कि यह पहाड़ की मिट्टी को बहाकर ले आती है जो उसकी तलहटी में बैठती रहती है। इससे पानी का बहाव धीमा हो जाता है और बीच-बीच में यह नदी अपना मार्ग बदल देती है जिससे हजारों वर्गमील की भूमि बरबाद करती है।

चीन की पुरानी व्यवस्था मुख्य रूप से विकेन्द्रित थी। केन्द्र में सम्राट का शासन कमजोर और उदासीन था इसलिए सदियों से यह क्रम चलता रहा। लेकिन साम्यवादी सरकार बनने पर उन्होंने इस समस्या को हल करने का काम अपने हाथ में लिया। किसानों की होड़ लगायी गयी। किसान हजारों की तादाद में अपना आठ-दस दिन का खाना बांधकर आये और सबने जोश से एकसाथ मिलकर अपनी मिहनत से उन्होंने उस नदी के लिए एक निश्चित गहरा रास्ता खोद दिया। अब ह्वेंगहो नदी लगातार उस मार्ग से बहती रहती है। अब वह चीन का दुख नहीं रही।

आणविक युग की चुनौती

आणविक युग में विज्ञान हमें चुनौती दे रहा है कि ऐ दुनिया के किसानो तुम एक बनो और नेक बनो। अमेरिका (पूंजीवादी) और चीन (साम्यवादी) देशों में लोग इस प्रकार उस चुनौती का उत्तर दे रहे हैं लेकिन भारत में क्या हालत है? आजकल हममें फूट की भावना इतनी बढ़ रही है कि एक प्रान्त के एक नगर के भाग को हड़पकर उस पार समुद्र में बहा दिया जाय कि उसका पानी इस देश के हमारे प्रान्त को न मिल सके। इस काल में हमें दुनिया के सामने कितना लज्जित होना चाहिए?

लेकिन अब इस फूट और भेद की भावना मिट जायगी ऐसी आशा हो रही है। उत्तर भारत के चार प्रान्तों में ग्रामदान की ओर तेजी से बढ़ने का आन्दोलन नयी प्रेरणा दे रहा है। जब उड़ीसा, बिहार, उत्तर प्रदेश और पंजाब का ग्रामदान हो जायगा तब वास्तविक ग्राम स्वराज्य की स्थापना होगी, और तब हम आशा कर सकते कि हिमालय के पहाड़ी जंगलों के बारे में आज जो गलत नीतियां चल रही हैं जिनमें खेती की बरबादी और जमीन का कटाव तेजी से बढ़ रहा है वह समाप्त होगा।

हिमालय के पहाड़ों की हालत

हिमालय के पहाड़ी वनों में चौड़ी पत्तियोंवाले पेड़ होते थे। उनकी फैली हुई शाखाएं और पत्तियां वर्षा की तेज धारा को रोककर उसे हल्के रूप में मिट्टी पर गिरने देती हैं। इससे वह पानी सारी मिट्टी में सूखता है। उन पेड़ों की फैली हुई जड़ों की तरह से मिट्टी पकड़ी रहती है। ये पत्तियां गिरकर जमीन पर दरी के रूप में फैली रहती हैं जिससे पेड़ की छाया से और उनकी दरी से मिट्टी तेज धूप के ताप से भी सुरक्षित रहती है। ये गिरी हुई पत्तियां पानी को ढलान से नीचे बहने से रोक देती हैं। इससे उस क्षेत्र में जमीन में पानी की सतह ऊंची रहती है जिससे साल भर स्रोतों में पानी रहता है। हरी पत्तियां पशुओं को गुजारे के काम में आती हैं और लोग सूखी पत्तियां को गोशाला में बिछाते हैं जिससे अच्छे किस्म की खाद जल्दी ही तैयार हो जाती है। उन पेड़ों के नीचे नमी और ठंडी मिट्टी में घास भी काफी होती है। छोटी पत्तियों के सांस लेने और छोड़ने से हवा में नमी और ठंडक रहती है। इससे बीच-बीच में वर्षा होती है और फसल भी पनप पाती है।

इन पेड़ों से कृषक को काफी लाभ होता है लेकिन सरकार को लकड़ी के सिवा और कोई विशेष आमदनी नहीं होती है। आमदनी के लोभ से ब्रिटिश सरकार ने चौड़ी पत्तियोंवाले वनों को काटकर लकड़ी के लिए चीड़ के वनों को लगाया। चीड़ के पेड़ की पत्तियां नहीं होतीं एक प्रकार का कांटा (नीडल) जिसे निडल कहते हैं होता है। ये निडल वर्षा की धारा को रोक नहीं पाते। वर्षा की तेज धारा सीधी जमीन पर

है। इनके साथ-साथ मे पेड लम्बे होते हैं। फैले हुए नही रहते हैं, इसमे उनकी जड़े भी फैलने के बदले मे सीधे गहराई मे जाती हैं, और जमीन नग्न रहती है। उनके सूखे पिरूल 'लिसे' की वजह से चिकने होते है। पानी उनके ऊपर और उनके बीच मे, और नीचे एकदम घाटी की ओर नीचे बह जाता है। वह सूखी मिट्टी को अपने साथ बहाकर ले जाता है। और वह मिट्टी तेजी से बहती हुई नदियों मे आगे बढ़ती है। जब समतल मैदान मे पहुँचकर नदियों का तेज बहाव कम हो जाता है, तब यह मिट्टी नदियों की तली मे बैठने लग जाती है और नदियां छिछली होती जाती हैं। नदियां जैसे-जैसे मिट्टी से बढ़ती जाती हैं, वैसे-वैसे मैदानो मे बाढ़ का क्षेत्र बढ़ता जाता है।

पिरूलों से वातावरण सूखा रहता है, 'लिसे' के कारण जल्दी सड़ता भी नही। बरसात कम हो जाती है। पशु पिरूल नही खा सकते है, और उन पेडो के नीचे घास बहुत कम होती है। इसलिए चीड के वन कृषि और गोपालन, दोनो के शत्रु हैं। इसके साथ-साथ, उनकी वजह से स्थानीय पानी के स्रोतो की सतह नीचे चली जाती है, और गरमी के दिनो मे तो ज्यादातर वे स्रोत सूख जाते हैं।

चौड़ी पत्तीवाले पेडो के वनो मे जड़ी-बूटियो की संख्या अधिक होती है और उन्हे इकट्ठा करना और उनका पक्का माल बनाना नयी ग्रामसभाओ की समृद्धि को बढ़ाने का एक अच्छा साधन बन सकता है।

मैदान की हालत

बाढ़-निवारण की योजनाएं आम तौर से छोटे पैमाने पर बनती हैं। अनेक बार देखा जाता है कि एक इलाके को बाढ़ से सुरक्षित करने मे दूसरा इलाका डूब जाता है, क्योंकि पानी के निकास की व्यवस्था न करके, उसके मार्ग को रोकने की व्यवस्था होती है। शायद रेल-मार्ग और नेशनल हाइवे आदि के बनने से यह समस्या और भी बढ़ गयी है। कही-कही दस मील तक भी रेल-मार्ग पर पानी के निकास के लिए कोई व्यवस्था नही है। विशेषकर उत्तरी विहार तो उपजाऊ मिट्टी नदियो से नेपाल से बहायी हुई तथा बाढ़ के द्वारा फैलायी हुई मिट्टी है। लेकिन जब तक पानी के प्राकृतिक बहाव को रोका नही जाता था, तबतक बाढ़ का पानी दो चार दिनों में आगे बह जाता होगा, और इसलिए कृषि के लिए लाभदायक होता होगा।

अब जगह-जगह पानी के रोक से महीनो बाढ़ का पानी जमा रहता है, और सारी फसल चौपट हो जाती है। यह इलाका एकदम सपाट और समतल है, इसलिए नदियों का बहाव बहुत धीमा है और सदियों की मिट्टी जमने से नदियां छिछली होती जा रही हैं। इससे कभी-कभी इधर की नदियां भी चीन की 'ह्वैंगहो' की तरह अपना मार्ग बदलती हैं।

जहां विहार में इसी प्रकार हर साल बहुत बडे हिस्से मे खरीफ की फसल ज्यादा या अनियमित वर्षा के कारण जलमग्न होकर नष्ट हो जाती है, वहां पर रबी की फसल पूरी तरह आकाश के पानी पर निर्भर है, और कई बार वही फसल वर्षा के अभाव में चौपट हो जाती है। इसलिए बाढ़-निवारण के साथ-ही-साथ ऐसी योजना बनानी चाहिए, जिससे जाड़े के दिनों मे व्यापक पैमाने पर सिचाई भी हो सके।

उत्तर विहार मे विशाल अमराइयां और बांस की झाड़ियां हवा को रोकने का काम करती हैं, और तूफानी 'पछुआ' से मिट्टी का संरक्षण करती हैं। लेकिन बाढ़-पीडित क्षेत्रों मे धीरे-धीरे सब पेड सूखते जाते हैं। बाढ़ से सब पोखर मिट्टी से भर गये हैं, और सिचाई के अभाव से गरमी के मौसम में कोई मिट्टी को ढँकनेवाली फसल नही रहने से वृक्षो के अभाव मे बाढ़ मे हलकी बनी हुई मिट्टी और रेत तूफान मे उड़ती रहती है। इस प्रकार हवा से मिट्टी का कटाव तेजी से होता रहता है।

व्यापक योजना की आवश्यकता

इस प्रकार के क्षेत्रो मे सही विकास के लिए एक समग्र वैज्ञानिक योजना की आवश्यकता है, जिसमे पहाडी वनो की योजना से लेकर सागर तक निकास और नदियो को गहरा बनाने की व्यवस्था करनी होगी। इसमे देश की श्रमशक्ति का बहुत उपयोग हो सकता है। यह देश का बहुत महत्त्व का सवाल है। इसलिए इसमे बहुत अधिक खर्च करना गलत नही होगा।

पहाड मे चौडी पत्तीवाले वनो के विस्तार के साथ-साथ छोटे पैमाने पर बिजली की योजनाएं भी बनानी चाहिए, ताकि छोटे-छोटे उद्योगधन्धे भी गांव-गांव मे चलाये जायं। इन योजनाओं के सफल होने पर भारत भीख मांगकर जीनेवाला कंगाल नही रह जायगा। लेकिन जरूरत है इसके लिए व्यापक जन-जागरण और संगठन की।

—सरला देवी

कागज का पेट

मैं बड़े उत्साह से संसद का सदस्य हुआ था और शुरू के दिनों में बड़े चाव से संसद-भवन जाया करता था। एक दिन सुबह लोकसभा जाते समय मैंने देखा कि सड़क के किनारे का एक सुन्दर, हरा आम का पेड़ काटा जा रहा है। आश्चर्य हुआ, कि इतना अच्छा पेड़ क्यों काटा जा रहा है! मैंने सोचा, होगी कोई जरूरत। दूसरे दिन फिर वही बात। एक दूसरा हरा पेड़ काटा जा रहा था। मुझे बहुत बुरा लगा, लेकिन मैं फौरन सोच नहीं सका कि किया क्या जाय? तीसरे दिन जब फिर एक तीसरा पेड़ कटता दीख पड़ा तो उस दिन अपना गुस्सा नहीं रोक सका। मैं तुरत लोकसभा के कार्यालय में गया और एक काम-रोको प्रस्ताव लिखकर दे दिया।

मैं अपनी जगह बैठा हुआ था। इतने में कोई आया और उसने मेरे कंधे पर हाथ रख दिया। देखा तो खुद मंत्री महोदय थे—वही जिनके विभाग से मेरे काम-रोको प्रस्ताव का सम्बन्ध था। खीझकर बोले—'आप मेरी पार्टी के मेम्बर हैं। मुख्य सचेतक (चीफ ह्विप) को बताये बिना आप यह प्रस्ताव नहीं ला सकते।' मैंने कहा—'इन बारीकियों के लिए समय नहीं है। तीन दिन मे तीन पेड़ कट चुके हैं। अब यह नागफनी फौरन बन्द होनी चाहिए।'

मेरा रुख देखकर मिनिस्टर साहब बिना कुछ और कहे चले गये। दस ही मिनट बीते थे कि वह वापस आये, लेकिन इस बार चेहरे पर तनाव नहीं था। बोले—'मैंने अफसर को फोन से कह दिया है, अब और अधिक पेड़ न काटे जायँ।' उनके इस आश्वासन पर मैंने अपना प्रस्ताव वापस ले लिया।

लोकसभा में आते-जाते कुछ दिन बीत गये। एक दिन एक डिप्टी मिनिस्टर साहब आये और मेरी बगल में बैठ गये। थोड़ी देर बाद मुस्कराते हुए बोले—'अगर आप किसीसे न कहें, तो आपको एक भेद की बात बताऊँ।' मैंने उन्हें अच्छी तरह विश्वास दिलाया कि *किसीसे नहीं कहूँगा।* उन्होंने बताया कि ७ साल पहले लकड़ी की तंगी हो गयी थी तो तय किया गया था कि इस मोटाई से ज्यादा के पेड़ काट लिये जायँ। लेकिन ७ साल तक पेड़ों की फाइल घूमती रही। घूमते-घूमते ७ साल बाद वह नीचे के एक अधिकारी के पास पहुँची। उसे बड़ा दुख हुआ कि इतने दिनों तक सरकार के हुक्म का पालन नहीं हुआ। बस फौरन उसने आदमियों को पेड़ काटने के काम में लगा दिया। और, अगर मेरी ओर से कार्रवाई न की गयी होती तो न जाने कितने पेड़ काट डाले गये होते!

कागज की सरकार को क्या मतलब पेड़ों से, आदमियों से? कुछ भी हो, कागज का पेट भरना चाहिए, आदमी का भरे या न भरे।

—बी. शिवराव

('ओपिनियन' से साभार)

आपकी जानकारी के लिए

● उत्तर प्रदेश का क्षेत्रफल पूरे देश के क्षेत्रफल का लगभग ६ प्रतिशत है और जनसंख्या देश की कुल जनसंख्या का १७ प्रतिशत है। इस राज्य की आबादी सन् १९०१ में ४ करोड़ ८६ लाख से बढ़कर सन् १९६७ में ७ करोड़ ३७ लाख हो गयी। एक अनुमान के अनुसार इस समय इस राज्य की जनसंख्या ८ करोड़ ४५ लाख तक पहुँच चुकी है।

● नव पाषाण युग के अंत में दुनिया की आबादी ५० लाख से लेकर १ करोड़ के बीच थी। ईसायुग के आरम्भ में दुनिया की आबादी २० करोड़ से लेकर ३० करोड़ के बीच थी। आधुनिक युग के आरम्भ में दुनिया की आबादी लगभग ५० करोड़ थी, जो सन् १९६२ में बढ़कर लगभग ३ अरब हो गयी।

● भारत का क्षेत्रफल कुल दुनिया के क्षेत्रफल का २.४ प्रतिशत है, लेकिन आबादी १४.६ प्रतिशत है। भारत की आबादी पिछले कुछ सौ वर्षों में बहुत तेजी से बढ़ी है। सन् १९६७ में भारत की आबादी ५२ करोड़ तक पहुँच चुकी थी। यदि आबादी की वृद्धि की यही रफ्तार रही तो सन् १९९४ में भारत की जनसंख्या १ अरब हो जायगी।

● सन् १९६१ और १९६५ के बीच देश की जन्म-दर लगभग ४१ और मृत्यु-दर १७.२ प्रतिशत थी।

● कालेजों और विश्वविद्यालयों में सन् १९६७-६८ में छात्रों की संख्या १७,२८,८७३ से बढ़कर १९,४६,०१२ हो गयी। चालू वर्ष में कालेजों की संख्या बढ़कर २,७४९ हो गयी, जब कि विश्वविद्यालयों की संख्या बढ़कर ७० और विश्वविद्यालयों के समकक्ष संस्थानों की संख्या बढ़कर १० हो गयी। यह जानकारी शिक्षा मंत्रालय की सन् १९६७-६८ की वार्षिक रिपोर्ट में दी गयी है।

(पत्र सूचना कार्यालय, भारत सरकार के सौजन्य से)

संकर मक्के की खेती

हमारे देश मे बड़े क्षेत्र मे मक्के की खेती की जाती है। इसकी औसत पैदावार करीब ९.३५ क्विन्टल प्रति हेक्टेयर (१० मन प्रति एकड़) है। पश्चिमी देशों की पैदावार का यह केवल चौथाई है। इतनी कम पैदावार का मुख्य कारण अच्छे बीजों की कमी है। अब हम इसकी पूर्ति संकर मक्का की विभिन्न किस्मों से कर सकते हैं। इन उन्नत किस्मों से ३७.४०-७४.८० क्विन्टल प्रति हेक्टेयर तक (४०-८० मन प्रति एकड़) पैदावार ली जा सकती है। आजकल अमेरिका मे प्राय. संकर मक्के की ही खेती की जाती है। अच्छी पैदावार के लिए हमें बीज के अलावा उचित फसल-चक्र, अच्छे बीज, कतारों मे बुआई, समय से सिंचाई व निराई, गोडाई और खाद के सही प्रयोग पर भी जोर देना चाहिए।

खेती की तैयारी

मक्के की खेती किसी भी प्रकार की भूमि मे की जा सकती है। किन्तु दोमट भूमि, जिसमे जीवांश पदार्थ की मात्रा काफी हो, इसकी खेती के लिए बहुत अच्छी रहती है। भूमि मे पानी की निकासी का उचित प्रबन्ध होना चाहिए। खेत मे पानी रुकने से पौधों की बाढ़ रुक जाती है। खेती की सिंचाई करके दो तीन बार जुताई करनी चाहिए। हर जुताई के बाद पाटा लगाना चाहिए। पाटा लगाने से मिट्टी भुरभुरी हो जाती है।

खाद

मक्के की फसल को अधिक खाद की आवश्यकता होती है। संकर मक्के के लिए करीब १२-१५ टन सड़ी हुई गोबर की खाद के साथ-साथ ८०-१०० किलोग्राम नाइट्रोजन, ६० किलोग्राम सुपर फास्फेट और ४० किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर के हिसाब से खेत मे डालना ठीक होगा। बीज बोने के १८-२० दिन पहले ही गोबर की खाद को डालकर खेत मे अच्छी तरह मिला देना चाहिए। फास्फेटधारी तथा पोटाशधारी उर्वरकों को मक्के को बोने के पहले या मक्के के बीज बोने समय ही नाड़ी के जरिये डाल देना चाहिए। उसी के साथ-साथ नाइट्रोजन की एक-तिहाई मात्रा को भी खेत में डाल देना चाहिए। बाकी बची हुई दो-तिहाई मात्रा दो भागों मे बाँट लेना चाहिए। एक भाग को जब पौधे घुटने तक के हो जायें, उस समय देना चाहिए और दूसरे भाग को नर-फूल निकलने को हो तभी डालना चाहिए।

समय पर बोआई

संकर मक्के की बोआई जून के दूसरे या तीसरे सप्ताह तक कर देनी चाहिए। बोआई कतारों मे करनी चाहिए। कतारों के बीच का फासला प्राय ६० से० मी० होना चाहिए। जब पौधे १५ से० मी० के करीब ऊँचे हो जायें तब पौधे के बीच का फासला २५-३० से० मी० तक कर देना चाहिए। बीज को ५ से० मी० से अधिक गहरा न बोवाये। संकर मक्का गंगा-३ का १५ किलोग्राम बीज १ हेक्टेयर के लिए काफी होता है। इतने बीज से प्रति हेक्टेयर करीब ५० हजार पौधे मिल जाते हैं।

फसल चक्र और फसल-मिश्रण

(१) पहले साल खरीफ के मौसम मे मक्का बोआयें, इसके बाद रबी के मौसम मे गेहूँ बोये। दूसरे साल खरीफ के मौसम मे मक्का और बरबटी मिलाकर बोये और रबी मे बरसीम बोये।

(२) पहले साल खरीफ मे मक्का और रबी मे जौ उगायें। दूसरे साल खरीफ मे मक्का और रबी मे मटर उगाये।

(३) पहले साल खरीफ मे मक्का और रबी मे चना उगाये। दूसरे साल खरीफ मे मक्का और रबी मे गेहूँ उगायें।

(४) पहले साल खरीफ मे मक्का और आलू उगाये, दूसरे साल खरीफ मे मक्का और रबी मे जौ उगायें।

(५) पहले साल खरीफ मे मक्का और रबी मे अलसी उगायें। दूसरे साल खरीफ मे बाजरा और चना उगायें।

किस्में

गंगा-१ :—यह किस्म ८० से ९० दिनों मे पककर तैयार हो जाती है। यह किस्म गंगा सिन्धु के मैदानी भागों के लिए, हिमाचल प्रदेश के तराई क्षेत्रों के लिए और गुजरात क्षेत्र के लिए उपयुक्त पायी गयी है। इसके दाने मोटे पीले होते है। यह किस्म देसी जातियों की अपेक्षा १३ से [illegible] प्रतिशत ज्यादा अनाज और ३५ से २०० प्रतिशत तक ज्यादा चारा देती है।

गंगा-१०१ :—यह किस्म ९५ से १०५ दिनों मे पकती है।

इंग्लैंड में फिर एक बार !

गांधी-इर्विन समझौते के बाद इंग्लैण्ड में ब्रिटिश सरकार ने एक परिषद् बुलायी। जो लड़ाई में गँवाया था, परिषद् में हासिल करने की चालाकी अंग्रेज करना चाहते थे। सत्याग्रह-संग्राम में देश एकात्म विराट पुरुष की तरह उठ खड़ा हुआ था। दुनिया के सामने अंग्रेज दिखाना चाहते थे कि असल में बात वैसी नहीं है। हिन्दुस्तान में बड़ी फूट है और अंग्रेज अगर यहाँ से अपना शासन उठा लें तो देश के टुकड़े-टुकड़े हो जायँगे, अराजकता फैलेगी। इस चुनौती का क्या जवाब दिया जाय ? इस परिषद् में गांधीजी को बुलाया गया था। बड़े सोच-विचार के बाद गांधीजी ने जाना तय किया। दुनिया के सामने अपना पहलू रखने का यह एक अच्छा मौका था।

बम्बई से जहाज द्वारा गांधीजी ने जाना तय किया। तैयारियाँ होने लगीं। गांधीजी का सारा समय अपने साथियों से विचार-विमर्श करने में ही व्यतीत हो गया। गांधीजी के निजी सचिव श्री महादेव भाई देसाई बाकी तैयारी कर रहे थे। हिदायतें देनेवालों की कोई कमी नहीं थी। इंग्लैंड के जाड़े की सबको बड़ी चिन्ता थी।

गांधीजी जहाज पर सवार होने तक बड़े व्यस्त रहे। जहाज रवाना हो गया। तब गांधीजी को जाकर पता चला कि बहुत सारा सामान साथ में ले लिया गया है। ऊनी कपड़ों की बड़ी भरमार थी।

गांधीजी ने महादेव भाई को बुलाया। पूछा, "महादेव, यह इतना सारा सामान साथ में क्यों है ?"

"बापू, इंग्लैंड में बड़ी सर्दी पड़ती है। ऊनी कपड़ों के बगैर कैसे चलेगा ?"

"अरे भाई, मैं इंग्लैंड में रह चुका हूँ। इतने सब कपड़ों की कोई आवश्यकता नहीं है। एकाध ऊनी कम्बल हो तो काम निकल जायगा।"

"बापू, मैंने बहुत मना किया, कितने ही कपड़े मैं वहीं छोड़ आया, लेकिन लोग मानते ही नहीं थे।"

"महादेव, भारत के दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि के नाते हम जा रहे हैं। इस तरह अनावश्यक सामान असबाब के ढेर-के-ढेर ले जाना ठीक नहीं है। अनावश्यक सब सामान हमको वापस भेज देना चाहिए।"

"जी हाँ, बापू, अदन से वापस भिजवा दूँगा।"

और अदन से सन्दूकें वापस भेज दी गयीं।

इंग्लैंड में गांधीजी शाही मेहमान थे, लेकिन उन्होंने वह मेहमानदारी कबूल नहीं की। गरीब मजदूरों की बस्ती में श्रीमती म्यूरियल लिस्टर तथा उनके साथी सेवा-कार्य करते थे। उनके चारों ओर गरीबों से घिरे हुए किंग्स्ले हॉल में उन्होंने रहना तय किया। वहाँ जब कभी गांधीजी को अवकाश मिलता, गरीबों की पूछताछ करने निकल पड़ते।

बस्ती के बच्चों को गांधीजी के बारे में बड़ा कुतूहल था। बच्चे आपस में उनके बारे में बातें करते, गांधीजी को 'मिस्टर गांधी' के बदले बच्चों ने अपना चाचा बनाया। 'अंकल गांधी' के नाम से वे पुकारने लगे।

बच्चे अपनी शिक्षिका से बार-बार उनके बारे में चर्चा छेड़ते।

"वे ऐसे नंगे बदन भला क्यों घूमते हैं ?"

"भारत में गरीबी बहुत है।"

"भले ही देश में गरीबी रहे लेकिन गांधीजी तो बैरिस्टर हैं, उनको किस बात की कमी ? हम क्या उन्हें कोट, पतलून उपहार दें ? बेचारे मारे सर्दी के ठिठुरते होंगे !"

"गांधीजी ने अपने को गरीबों की सेवा में समर्पित कर दिया है। गरीब जब तक सुखी नहीं होते तब तक वे पूरे कपड़े कैसे पहन सकते हैं ? उन्होंने खुद बखुद गरीबी को अपना लिया है।"

"वे हम बच्चों से भला क्यों नहीं मिलते ?"

"बहुत काम में फँसे रहते हैं।"

"वाह, यह भी खूब चाचा रहे ! अपने भतीजों से मिलने की भी फुरसत नहीं है।"

"तुम बड़े शैतान लड़के हो। जाओ खेलो। किसी दिन तुमसे उन्हें मिला दूँगी।"

फिर एक स्थान पर गांधीजी से मिलने का कार्यक्रम बना। पूरा हाल बच्चों से खचाखच भरा था। गांधीजी ठीक समय पर आये। आते समय बीच ही में एक लड़की अपने छोटे भाई को गोदी में लिये हुए खड़ी थी। गांधीजी ने उसे प्यार से चुटकी ली, बच्चा हँस पड़ा।

गांधीजी ज्यों ही कुर्सी पर बैठे कि बच्चे सवाल पूछने लगे। उस बच्ची ने पूछा, "चाचाजी, अहिंसा का मतलब क्या है ?"→

हमलोग बड़े लोगों से इतने सताये गये हैं और डराये गये हैं कि आज भी उसका डर बना हुआ है और आये दिन भी कुछ ऐसी एकाध घटनाएँ हो जाती हैं जिनसे भय खाना पड़ता है। धीरे-धीरे इसमें परिवर्तन आयगा।" (इतना कहकर हाथ जोड़कर बैठ गया)।

इन दोनों की बातें सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई। यही है गाँव की जागृति, जिसमें से गाँव की शक्ति प्रकट होगी।

शिविर में आये हुए लोगों से बातचीत करने पर निराश मन भी आशावान होता है। एक ग्रामसभा के मंत्री जो काफी धनी हैं और समझदार भी हैं, बोले कि जब से प्रखण्डदान हुआ है, यहाँ की हवा बदली हुई है। हम जो शिविर में आये हैं यही सोचा करते हैं कि गाँवों का नक्शा कैसे बदले। इसके पहले हम राजनीति में ही पड़े थे।

जिन्हें यह लगता है कि ग्रामदान और जिलादान बोगस है वे शायद अन्त तक बोगस, बोगस ही कहते चले जायँगे और गाँवों का नक्शा बदल जायगा। उसीमें से उस जन-शक्ति का उदय होगा, जिसे ग्रामदान के द्वारा पैदा करना चाहते हैं।

प्रखण्डदान के बाद इस लदनिया प्रखण्ड में सतत लोक-शिक्षण का काम होता रहा है। ग्रामदान का विचार लोगों तक पहुँचता रहा है। अभी धीरेन्द्र मजूमदार ने १० दिन की वहाँ यात्रा की है। और यही कारण है कि इस ब्लाक में ६८ ग्रामसभाएँ गठित हुई हैं। अगर लोक-शिक्षण का यह सिलसिला हर प्रखण्ड में कायम रहे तो ग्रामदान-पुष्टि का कार्य आसान हो जाय और कार्यकर्ता की परेशानी मिट जाय।

'गाँव की बात' : वार्षिक चंदा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व-सेवा-संघ के लिए प्रकाशित एवं मनोहरलाल प्रेस, मानमंदिर, वाराणसी में मुद्रित।

पहना न होगा, थोड़े ही समय में गांधी माताओं ने इस प्रकार बच्चों से ही नहीं, बल्कि सभी मिलनेवालों से एक पारिवारिक नाता जोड़ लिया।

नारी बाग़ी भाइयों से परिचय के लिए सर्व सेवा संघ के सभी कार्यकर्ताओं की एक सभा हुई। श्री लल्लू दादा ने परिचय देते हुए कहा कि, यदि हम लोग बुरे लोगों के साथ रहना सीख लें तो उनकी बुराई अवश्य ही दूर हो जायगी। नेक समाज में तो हम सदैव ही रहना चाहते हैं। अच्छे लोगों की बुराई ढँकी रहती है, इनकी प्रकट हुई है, बस यही फर्क है।'

लल्लू दादा ने अपने संक्षिप्त वक्तव्य में बताया कि पीड़ित परिवारों के बच्चों का एक स्कूल हम चलाते हैं, जिसमें लोकमन तथा उनके साथियों ने बच्चों के बीच पहुँचकर एक दिन कहा था कि ये तो हमारे ही बच्चे हैं, इनकी शिक्षा आदि का प्रबन्ध हमें करना चाहिए। बच्चों को वाकर की ओर आर टकी लगाकर देखकर इन बाग़ी भाइयों की आँखें भर आयी थीं।

लोकमनजी से जब निवेदन किया गया कि वे भी सर्व सेवा संघ परिवार के बीच कुछ कहें तो लोकमन बड़ी विनम्रता के साथ बड़े सरल भाव से हाथ जोड़कर खड़े हो गये और सभी को उन्होंने प्रणाम किया। तब सारे में उन्होंने इतना ही कहा—

'बीस साल बुरे आदमियों के बीच रहा हूँ, हिचकिचाहट होती है कि कहीं आप अच्छे लोगों के बीच में कोई बुरी बात मुँह से न निकल जाय। आपका प्रेम और आशीर्वाद हर वक्त बना रहे, यही चाहते हैं।'

वे अपने सभी साथियों की ओर से इतना कहकर चुपचाप बैठ गये। सबकी उत्कण्ठा थी कि वे कुछ कहें, कुछ अधिक ही कहें। परन्तु उनके उपर्युक्त चन्द शब्दों ने प्रस्तुत आयाम को झकझोर सा दिया। सभी स्तब्ध हो गये।

श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट ने चम्बल के बीहड़ों के कुछ संस्मरण प्रस्तुत सन्दर्भ में सुनाये और निवेदन किया कि 'आप लोग बाबा से मिलकर आ रहे हैं, हम लोग आपके प्रति सद्भावना प्रकट करें कि आपका आगे का जीवन एक नया जीवन हो, सुखी, परिश्रमी और प्रेरक! सम्पूर्ण क्षेत्र की शान्ति-सुव्यवस्था को सुलझाने में उससे प्रकाश मिले।'

शान्ति सेना मण्डल के मंत्री नारायण देसाई ने नारी भाइयों का यह कहते हुए कि विनोबाजी ने आपको पुत्रवत् कहा है, अतएव आप हमारे भाई ही हैं, शान्ति सेना के केसरिया रूमाल भेंट किये। ये रूमाल उनके गले में खिल उठे। उनकी आँखों से कृतज्ञता झाँक रही थी।

अन्त में काशी स्टेशन पर गांधी इन्स्टीट्यूट के श्री रवीन्द्र भट्टाचार्य ने लल्लू दादा से कहा कि दादा ये चार भाई आपके चार दीप हैं, जो सारी मानवता के लिए आलोक बिखेरेंगे।

—प्रभु

विश्व-शांति के लिए युवक सक्रिय हों

गदर पार्टी के संस्थापक अध्यक्ष बाबा सोहन सिंह भाकना की अपील

अमृतसर में गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के प्रमुख कार्यकर्ताओं से बातचीत करते हुए भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम के इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखनेवाली ऐतिहासिक गदर पार्टी के संस्थापक-अध्यक्ष बाबा सोहन सिंह भाकना ने कहा कि विश्व शांति के लिए दुनिया के नवजवानों को सक्रिय होना चाहिए और मानवता का समाप्त करनेवाले हथियारों की होड़ को प्रतिबन्धित करने के लिए पूरी शक्ति लगानी चाहिए। उन्होंने कहा कि सत्ता पर अधिकार बनाये रखने के लिए अनिवार्य नाशवान किसी दिन पूरी धरती का सफाया कर सकते हैं। भारत को तो कभी सपने में भी अणु परमाणु बमों के बनाने की बात नहीं सोचनी चाहिए। भारत के युवकों से उन्होंने अपील की कि वे किसी प्रकार की साम्प्रदायिक हरकतों में भाग न लेते हुए पूरे जगत् की एकता, शान्ति और कल्याण के लिए काम करें। बाबाजी ने जयप्रकाश नारायण द्वारा हो रहे विश्व शान्ति के कार्यों की सराहना की। श्री बाबा की उम्र ९८ साल की है। ●

समुदाय (गाँव) स्वामित्व
लोक प्रतिनिधित्व
विशेषांक

७ जून १९६८ : वर्ष १४ : अंक ३५-३६

सत्रहवें सर्वोदय सम्मेलन के अध्यक्ष

श्री शंकरराव देव : जीवन-परिचय

३० जनवरी सन् १८९५ को महाराष्ट्र की एक रियासत के ग्रामीण इलाके मे श्री शंकरराव देव का जन्म हुआ। बचपन के दिन गांव मे बीते, विद्यालय की शिक्षा पूना में हुई और विश्वविद्यालयी शिक्षा बड़ौदा और बम्बई मे सम्पन्न हुई। बड़ौदा के अध्ययनकाल में विनोबाजी, स्व० श्री धोत्रे और काकासाहब गाडगिल आपके सहाध्यायी थे।

श्री शंकरराव देव : स्वागतम्

सन् १९१७ मे जब महात्मागांधी ने चम्पारण का सत्याग्रह शुरू करके देश के नवयुवको का आह्वान किया था तो शंकररावजी महाराष्ट्र से स्वयंसेवक के रूप मे गये। उसी समय से श्री शंकरराव देव के सार्वजनिक जीवन का प्रारम्भ हुआ। सन् १९२० मे वे महाराष्ट्र वापस आये। उसके बाद उन्होंने महाराष्ट्र मे कांग्रेस का नेतृत्व सँभाला और अनेक वर्षों तक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी मे महाराष्ट्र के प्रतिनिधि के रूप मे कार्य करते रहे। सन् १९३६ मे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का खुला अधिवेशन फैजपुर (महाराष्ट्र) मे आयोजित हुआ तो उसके स्वागताध्यक्ष का दायित्व श्री शंकररावजी के सबल कंधों पर आया।

सन् १९४६ मे श्री शंकररावजी कांग्रेस के महामंत्री बनाये गये। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद कांग्रेस दल 'लोकसेवक संघ' के रूप मे संगठित हो, ऐसा श्री शंकररावजी मानते थे। कांग्रेस के नेताओं ने सत्तारूढ़ होने का ही मार्ग चुना तो श्री शंकररावजी ने सत्ता के बाहर रहकर विधायक कार्य करने के लिए सर्व सेवा संघ का मंत्री-पद स्वीकार किया।

सन् १९५२ मे श्री शंकररावजी भूदान आन्दोलन मे सक्रिय रूप से शरीक हुए। आपने भूदान के निमित्त राजस्थान, मध्य भारत, मध्य प्रदेश, हैदराबाद, असम, तमिलनाड, केरल आदि प्रदेशों की पदयात्राएँ कीं और भूदान प्राप्त किया।

सन् १९६२ मे भारत पर चीनी आक्रमण होते पर शंकररावजी ने अन्तर्राष्ट्रीय दिल्ली-पेकिंग मैत्री-यात्रा का नेतृत्व किया था।

श्री शंकररावजी का कार्यक्षेत्र राजनीति मे रहा है, किन्तु उनके जीवन की प्रेरणा और अधिष्ठान आध्यात्मिक है। 'उपनिषत्सार' पुस्तक की प्रस्तावना मे आपने लिखा है—"मुझे और पढ़ने को नही मिले, और सिर्फ उपनिषद् ही मेरे पास रहे तब भी जीवन का उच्च आनन्द और रस मुझे अखण्ड मिलता रहेगा, ऐसा मुझे लगता है।"

युवा काल मे आप पर लोकमान्य तिलक के 'गीता रहस्य' और श्री विवेकानन्द व श्रीअरविंद की रचनाओं का प्रभाव था। इन दिनों श्री जे० कृष्णमूर्ति के तत्त्वज्ञान का आप के मानस पर गहरा असर है।

के उदय के लिए कोई अपना अस्त होने नहीं दे सकता। इसलिए 'सर्व' की प्रतीति आज की परिस्थिति की माँग है। ऐसा विचार-परिवर्तन अधिकांश लोगों का सम्भव है। अगर शान्तिपूर्ण विचार-परिवर्तन सम्भव न हो तो विज्ञान और लोकतन्त्र का अर्थ क्या रह जायगा ? आज के जमाने में स्वार्थ भी सामूहिक ही होगा।

इस तर्क के अनुसार सत्ता और सम्पत्ति 'सर्व' के हाथ में रहनी चाहिए, ताकि उनसे सर्व का हित सध सके। सर्व का अर्थ है *प्रत्यक्ष जनता, न कि उसके नाम में काम करनेवाली कोई पार्टी,* या उस पार्टी (एक या अधिक) द्वारा संचालित सरकार। कोई *भी पार्टी हो, वह स्वयं 'पीपुल' नहीं बन सकती। इसलिए ग्रामदान* में 'सर्व' यानी 'सर्व की इकाई गाँव' का स्वामित्व है, और उसीका नेतृत्व है, दल का नहीं। दुनिया ने निजी स्वामित्व देखा है, उसने सरकार-स्वामित्व भी देख लिया। एक में पूँजीवाद है, दूसरे में साम्यवाद। पूँजीवाद में भयंकर शोषण है, और साम्यवाद में भयंकर दमन। पूँजीवाद में पूँजी की शक्ति बुद्धि और श्रम का शोषण करती है, साम्यवाद में जनता के राज्य के नाम में पार्टी के माध्यम से पूँजी और बुद्धि की शक्तियाँ मिलकर श्रम का दमन करती है। पूँजीवाद में रोटी का ठिकाना नहीं है तो साम्यवाद में स्वतंत्रता से वंचित होना पड़ता है। शोषण, और दमन का यह दुष्चक्र चलता ही रहता है, और 'विरोधियों' का संहार कभी बन्द नहीं होता। जनता के नाम में दल ही सत्ता और सम्पत्ति दोनों पर हावी रहता है। वही तय करता है कि कौन क्रान्ति का मित्र है, और कौन क्रान्ति का शत्रु।

अगर रोटी और स्वतंत्रता का मेल मिलाना हो, अगर दलपति, पूँजीपति, बुद्धिपति से एकसाथ मुक्त होना हो तो ग्राम-स्वामित्व और ग्राम-नेतृत्व के ही आधार पर ग्रामस्वराज्य की व्यवस्था विकसित करनी पड़ेगी। 'सर्व' की ये छोटी-छोटी इकाइयाँ ग्राम-स्वराज्य की भी इकाइयाँ बन जायँगी, अपने में पूर्ण, फिर भी एक-दूसरे से गुँथी हुई। गांधी के सपने के अनुसार एक देश में लाखों 'गणराज्य' होंगे। हर राज्य की जनता अपने राज्य का संचालन अपनी सहकारशक्ति से करेगी। इस तरह ग्राम-स्वामित्व और ग्राम-नेतृत्व में जनता की एक नयी अर्थनीति, नयी राजनीति, नयी शिक्षानीति शुरू होगी। 'स्व' को 'सर्व' के साथ जोड़नेवाला जीवनदर्शन, समाज-दर्शन बनेगा। वह साम्य और शान्ति का दर्शन होगा, *जिसमें क्रान्ति के बाद संहार नहीं होगा, और स्वयं क्रान्ति में संघर्ष नहीं होगा।* समाज को संघर्ष से मुक्त करने के लिए क्रान्ति में संघर्ष अनिवार्य है, *यह बात अब पुरानी पड़ गयी है। संघर्ष-मुक्त क्रान्ति*, और संहारमुक्त समाज में ही 'साम्य' सम्भव है।

स्वामित्व और नेतृत्व के प्रश्न एक-दूसरे से अलग नहीं किये जा सकते। दोनों एक ही हाथ में रहेंगे, दो हाथों में नहीं रह सकते। इस जमाने को यह तय करना है कि वे हाथ किसके होंगे। रूस ने 'प्रालितारियत' के नाम में तय किया कि वे हाथ साम्यवादी पार्टी के ही हो सकते है, क्योंकि वही क्रान्ति का वाहन थी, चीन ने नाम तो लिया 'पीपुल' का, लेकिन सौंपा पार्टी को ही, क्योंकि उसने क्रान्ति का निर्णय और नेतृत्व किया था। सर्वोदय की क्रान्ति का निर्णय गाँव-गाँव की जनता के सुपुर्द है। जनता ने अपने निर्णय से क्रान्ति की पहल की है। इसलिए उसका ही स्वामित्व, और उसीका नेतृत्व होगा। ये है नयी क्रान्ति के नये मूल्य। लेकिन अभी मूल्य सिर्फ प्रस्तुत हुए है, उनका अभ्यास बाकी है।

ये प्रश्न ऐसे हैं जिनके बारे में बहुत सोचने-समझने, और करने की जरूरत है। इसी दृष्टि से वर्तमान आन्दोलन की समीक्षा सहित देश की, विदेश की, कुछ नयी, कुछ पुरानी बातें प्रस्तुत की जा रही है। आगे और की जायँगी। तबतक यह विनम्र प्रयास इस आशा से प्रस्तुत है कि दूसरे दिमाग चलेंगे, दूसरी कलमें उठेंगी। ●

जोड़ना है नयी-पुरानी पीढ़ी को

हमें नयी पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी को जोड़ना है। पुरानी पीढ़ी नयी पीढ़ी को मुक्त संचार का मौका नहीं देना चाहती, नयी पीढ़ी इनकी परवाह नहीं करती। वे इनको मूर्ख समझते हैं, ये उनको 'जीर्ण पीढ़ी' समझते हैं।

परशुराम भी नारायण का अवतार और राम भी। परशुराम पुराना, राम नया। नारायण का पुराना अवतार नारायण के ही नये अवतार को नहीं समझ सका। जब धनुर्भंग हुआ तो समझा कि यह नया अवतार है और वह उसके लिए अवकाश छोड़कर चला गया।

पुरानी पीढ़ी के पास अनुभव-संग्रह होता है। उसको नयी पीढ़ी के लोग छोड़ देंगे, तो प्रगति नहीं होगी। यूक्लिड के सिद्धान्त में कुछ जोड़ने के लिए पहले उसे समझना जरूरी है। इसलिए *पुरानी पीढ़ी का अनादर नयी पीढ़ी द्वारा न हो।*

पुरानी पीढ़ी नये को समझदार मानती नहीं, तिरस्कार करती है।

गुणों का विरोध होता है तो बहुत हानि होती है। इसलिए पुरानों के अनुभव और नयों के पराक्रम को जोड़ना है।

ठाकुरगंज, ६-४-'६८ —विनोबा

उत्पादकों का समाज
और
लोकस्वामित्व की बुनियाद

आगे आनेवाले समाज में जो श्रमिक होगा, वह उत्पादक होगा। उत्पादक और श्रमिक सभी होंगे, अनुत्पादक और केवल परिश्रम न करनेवाला अनुत्पादभोगी कोई नहीं होगा। वह उत्पादकों का समाज होगा। जो उत्पादक हैं, वे उपभोक्ता होंगे, और जो उपभोक्ता हैं, वे उत्पादक होंगे। इसलिए *इस समाज में औजारों की भी प्रतिष्ठा होगी* और मनुष्य के साथ औजारों का सम्बन्ध होगा। उत्पादक और अनुत्पादक, यह आज के समाज का जो भेद है, वह नहीं रहेगा।

इस समाज में स्वामित्व का नक्शा क्या होगा? मार्क्स ने 'डिक्टेटरशिप आफ दी प्रोलिटारियट' का विचार रखा। उसके बाद राज्य और समाज एक हो जाता है। पार्टी और राज्य एक, पार्टी और समाज एक। ठीक है वह विचार। लेकिन तानाशाही समाज में राज्य-स्वामित्व ही लोक-स्वामित्व है। उसमें से लोकतांत्रिक समाजों ने एक रास्ता निकाला—राज्य स्वामित्व नहीं होगा, लोक-स्वामित्व होगा। लोक-स्वामित्व किसका होगा, स्वायत्त संस्थाओं का। 'वालंटरी एसोसिएशन', 'कारपोरेशन'। इसे 'प्लुरलिस्टिक सोसाइटी' कहते हैं। एक पार्लियामेंट एक ही 'फंक्शन' के लिए। अलग-अलग संस्थाएँ समाज में हैं, अलग-अलग 'फंक्शन्स' के लिए, अलग-अलग कामों के लिए। इन 'कारपोरेशन्स' का स्वामित्व रहता है।

ये कारपोरेशन्स कैसे बने होंगे? अलग-अलग देशों में समाजवाद का अलग-अलग तरह से विकास हुआ। इंग्लैण्ड में इसमें से एक चीज निकली, जिसका नाम था कारपोरेशन। और कारपोरेशन के साथ-साथ दूसरा एक तरीका आया, जिसे 'कोआपरेटिविज्म' सहकारितावाद कहते हैं। यह सब 'कलेक्टिविज्म' के मुकाबिले है। इसमें से केन्द्रीयकरणवाद आता है। इस केन्द्रीयकरणवाद में से 'वेलफेयरिज्म' कल्याणकारी राज्यवाद का एक दूसरा रास्ता आया। स्वायत्त संस्थाओं का सहकारितावाद आया और 'वेलफेयरिज्म' आया। अब सवाल यह है कि राज्य-स्वामित्व भी नहीं चाहिए और संस्थाओं का स्वामित्व भी नहीं चाहिए। हम चाहते हैं लोक-स्वामित्व। संस्थाओं का भी स्वामित्व क्यों नहीं? इसलिए कि संस्थाओं के स्वामित्व में से व्यवसायात्मक समाज बनेगा। और व्यवसायात्मक समाज 'फंक्शनल सोसाइटी' में सांस्कृतिक विकास नहीं होता। तो इसके लिए किस प्रकार की मालकियत की आव-

दादा धर्माधिकारी

श्यकता होगी? गांधी ने यह सोचा कि जो छोटे-छोटे क्षेत्र बनेंगे, जिनको हमने ग्राम-स्वराज्य का क्षेत्र कहा है, इन ग्राम-स्वराज्य के क्षेत्रों में जो जन-शक्ति होगी, इस जनशक्ति की प्रातिनिधिक संस्था का स्वामित्व होगा। लेकिन स्वामित्व से यह मतलब नहीं कि गाँव की मालकियत हो गयी, तो एक गाँव की जमींदारी हो गयी। इसका तो अर्थ यह होगा कि व्यक्तिगत जमींदारी की जगह सामुदायिक जमींदारी आ गयी। फिर हमारे गाँव में ज्यादा चावल हुआ तो अमेरिका की तरह हम समुद्र में डाल देंगे, लेकिन तुमको नहीं देंगे, या देंगे तो फिर दुगुने दाम में देंगे, चौगुने दाम में देंगे। लोक-स्वामित्व का असली अर्थ यह है कि स्वामित्व रहा है ही नहीं। मनुष्य अधिकारी उपयोग का है। स्वामित्व किसका है? तो 'सबै भूमि गोपाल की' जैसे कहा, वैसे ही हम कहेंगे कि 'मेहनत इंसान की, दौलत भगवान की।' और भगवान से मतलब है मनुष्यमात्र की।

आज की दुनिया में, विज्ञान के युग में अगर मनुष्य दुःखी है, हीन है, दरिद्री है, तो उसका कारण यह है कि उत्पादन का बँटवारा नहीं होता। आस्ट्रेलिया में अगर आदमी कम हैं, और जमीन ज्यादा है तो क्या वजह है कि वहाँ लोग जाकर नहीं रह सकते? अमेरिका और रूस में अगर अन्न अधिक है, और खानेवाले कम हैं तो क्या वजह है कि वह हमको खरीदना पड़े और दान में माँगना पड़े? उत्पादन होना है तो वितरण होना ही चाहिए और वितरण की कोई शर्त नहीं, आवश्यकता के सिवाय। आवश्यकता ही वितरण की योग्यता है, पात्रता है। ये सारे श्रम संसार में होने चाहिए। मार्क्स की तीन प्रतिज्ञाओं में एक प्रतिज्ञा थी कि राज्य-संस्था विलीन हो जायगी। यह जागतिक राज्य होगा। राज्य रहेगा नहीं, जागतिक समाज बनेगा। इस राज्य में क्या होगा? प्रशासन मनुष्यों का नहीं, सिर्फ वस्तुओं का नियमन।...

मनुष्यों का नियमन नहीं होगा, वस्तुओं *की व्यवस्था होगी। लेकिन वस्तुओं की* व्यवस्था है इसका अर्थ ही यह है कि आव*श्यकता जितनी है, उतनी आपकी वस्तु।* आपकी आवश्यकता से अधिक जितनी चीजें *हैं, उन पर आपका कोई अधिकार नहीं।* बल्कि आवश्यकता के लिए जितनी चीजें *आपको चाहिए, उनकी पर भी आपका सबतक* अधिकार नहीं है जबतक दूसरों की आव*श्यकताएँ पूरी नहीं होतीं।*

गाँव की मालकियत का अर्थ होता है मनुष्यमात्र की मालकियत, मानव समाज की मालकियत। किसी देश की मालकियत नहीं। तो ये ग्राम-स्वराज्य और ग्राम-परिवार असल में सगुण रूप हैं, विश्व कुटुम्ब है। विश्व-कुटुम्ब, 'वसुधैव कुटुम्बकम्'। हमारी एक धारणा है, इसका सगुण रूप ग्राम-परिवार है। ग्राम-स्वराज्य उसका सगुण रूप है। ●

यूगोस्लाविया : लोक-स्वराज्य का देश

ग्रामदान और 'ग्राम-स्वराज्य के यूरोपीय संस्करण की एक झांकी' मुझे यूगोस्लाविया में देखने को मिली। 'हल्की-सी झांकी' क्योंकि भारत की एवं यूगोस्लाविया की परिस्थितियों में दर्शन और चिन्तन में फर्क है, साथ ही हमने जिन साधनों पर चलकर ग्राम-स्वराज्य की मंजिल तक पहुँचने का फैसला किया है, वैसा कोई फैसला यूगोस्लाविया ने नहीं किया था। परन्तु यूगोस्लाविया का रास्ता स्टालिन का रास्ता नहीं है, माओ का रास्ता भी नहीं है और चे गेवारा का रास्ता भी नहीं है। जनता स्वयं अपने कर्तव्यों और कार्यक्रमों का निर्धारण करे तथा उन कार्यक्रमों के अच्छे या बुरे परिणामों की जिम्मेदारी भी स्वयं ही उठाये, इस नीति पर चलकर यूगोस्लाविया ने स्टालिन से विरोध मोल लेकर भी 'लोक-स्वराज्य' का प्रयोग किया।

'लोक-स्वराज्य' की योजना यहाँ 'सेल्फ-मैनेजमेंट' के नाम से जानी जाती है। खेत, कारखाने, दफ्तर, स्कूल, विश्व-विद्यालय, अस्पताल, किसी पर भी राज्य का स्वामित्व नहीं और न 'स्टेट मैनेजमेण्ट' के लिए कोई जगह है। काम करनेवाले किसानों या श्रमिकों को कोई बंधी-बंधायी राशि 'वेतन' के रूप में नहीं दी जाती। जितना पैदा किया, जितना कमाया, उस हिसाब से सबको अपना-अपना हिस्सा मिल जाता है।

बेलग्रेड देखने की उत्सुकता उतनी तीव्र नहीं थी मेरे दिल में, जितनी कि किसी ऐसे प्रोजेक्ट को देखने की, जहाँ इस लोक-स्वराज्य का 'सेल्फ मैनेजमेण्ट' का स्वरूप समझ सकूँ। इसलिए यूगोस्लाविया और हंगरी की सीमा पर स्थित 'त्रिवाया' फार्म देखने गया और फार्म के अध्यक्ष, ५५ वर्ष के उत्साही किसान श्री उजेलाच मिलान से बातें करने का अवसर मिला।

उन्होंने बताया कि इस फार्म की स्थापना १९४५ में हुई। इसके पहले यहाँ के फासिस्ट भूमिस्वामी जनता के परिश्रम पर अपना स्वार्थ साध रहे थे। युद्ध की समाप्ति और साम्यवादी क्रान्ति की सफलता के बाद १० हेक्टर से अधिक की सारी व्यक्तिगत भूमि का राज्य ने राष्ट्रीयकरण कर लिया और पाँच वर्ष तक यह फार्म राज्य के सीधे नियंत्रण में था। चार हजार छह सौ हेक्टर के इस विशाल फार्म की सारी जिम्मेदारी, देखभाल, योजना, उत्पादन, वितरण, बजट आदि कृषि मंत्रालय के अधीन था। फार्म पर काम करनेवाले चार सौ आदमी प्रति माह अपना वेतन पाते थे और निश्चिन्त रहते थे। फार्म की जिम्मेदारी और चिन्ता से मुक्ति तो थी, पर फार्म में किसीको दिलचस्पी भी नहीं थी। एक लम्बी 'ब्यूरोक्रेसी' और सरकार-निर्भरता का पत्थर फार्म के गले पर रखा हुआ था।

मनोज कुमार

मेरी उत्सुकता बढ़ी। मैंने यह जानने की इच्छा प्रकट की कि यह सेल्फ मैनेजमेण्ट' कब, कैसे और क्यों शुरू हुआ तथा उसके क्या परिणाम आये। उन्होंने कहा, 'सेल्फ मैनेजमेण्ट शुरू हुआ, तब हमें लगा कि अब क्रान्ति बेलग्रेड से चलकर त्रिवाया फार्म पर पहुँची है। एक नया जीवन हमने अपने चार सौ कार्यकर्ताओं में देखा। जो अबतक सरकारी फार्म पर काम करनेवाले श्रमिक मात्र थे, वे फार्म के भविष्य-निर्धारक एवं फार्म की उपलब्धियों के हिस्सेदार बनने जा रहे थे। स्वशासन या लोकशासन की यह योजना १९५० में प्रारम्भ हुई। प्रत्येक सदस्य को लेकर 'फार्म एसेम्बली' बनायी गयी। इस एसेम्बली ने २ साल के लिए ३१ सदस्यों की कार्यकारिणी का चुनाव किया तथा ११ सदस्यों का व्यवस्थापक-मण्डल उस कार्यकारिणी में से बनाया गया। लेकिन प्रारम्भ से ही, सर्वोच्च शक्तिशाली संगठन 'फार्म एसेम्बली' होगा और कार्यकारिणी एवं व्यवस्थापक-मण्डल 'फार्म-एसेम्बली' के निर्णयों के अनुसार चलेगा, ऐसी नीति निर्धारित कर ली गयी।'

मैंने बीच में एक निरा भौतिक सवाल उठाया कि १९५० में इस फार्म का उत्पादन कितना था और १९६७ में कितना था। यह मैं जानना चाहता था कि लोक-शासन के परिणामस्वरूप उत्पादन कितना बढ़ा है। उजेलाच मिलान मुस्कराते हुए उठे और बुक-सेल्फ में से १९६७ की फार्म की रिपोर्ट निकालकर उन्होंने मुझे बताया कि १९५० में गेहूँ का उत्पादन एक हजार चार सौ टन था, तथा १९६७ में गेहूँ का उत्पादन नौ हजार तीन सौ बीस टन था। उत्पादन-वृद्धि का यह आँकड़ा निश्चय ही मेरा समाधान करनेवाला था। लोक-शासन की इस नीति से सरकार की भी अपनी बहुत-सी उलझनें और परेशानियाँ बच गयी हैं। ये अपने फार्म की योजना स्वयं बनाते हैं। उदाहरण के तौर पर—इस साल 'फार्म-एसेम्बली' ने तय किया कि चार हजार पाँच सौ किलोग्राम गेहूँ प्रति हेक्टर पैदावार होनी चाहिए। अब वर्किंग काउंसिल तथा विभिन्न विभागों में काम करनेवाले ५२ तकनीकी विशेषज्ञों का यह काम है कि वे इस लक्ष्य तक पहुँचने के उपाय सोचें। सरकार तथा बैंक की इन्हें पूरी मदद मिलती है। जिस दर पर किसी कारखाने को ऋण बैंक से मिल सकता है, उसी दर पर किसी फार्म को भी ऋण मिल सकता है। फिर कारखाने से बने हुए सामान एवं फार्म से पैदा किये हुए सामान की कीमतों में सन्तुलन रखने में भी सरकार की मदद मिलती है, इस तरह सरकार की भूमिका एक सहयोगी की भूमिका है। मार्क्सवादी जीवन-दर्शन के बारे में सूचनाएँ, समाचार, इत्यादि देनेवाले एक शिक्षक की भूमिका है, बाकी रोजमर्रा के काम में सरकार का कोई दखल नहीं है। भूमि पर कोई सरकारी लगान नहीं है। प्रत्येक देशवासी पर एक ही स्तर का इनकमटैक्स है, जो सभी से, कारखानेवालों से भी और फार्मवालों से भी, सरकार वसूल करती है।

'त्रिवाया' फार्म के सदस्य काम के→

इसरायल : सामुदायिक स्वामित्व के प्रगतिशील प्रयोग

रवीन्द्रनाथ उपाध्याय

अधिकार की लड़ाई मनुष्य अनादि काल से लड़ता आ रहा है। इस लड़ाई के पीछे प्रेरणा स्वार्थ की जितनी रही है, उससे कहीं अधिक परमार्थ की रही है। इसलिए देश और जनता के कल्याण के लिए तरह तरह की संस्थाओं का जन्म हुआ। अधिकार के दो मैदान रहे—एक राज्य, दूसरा भूस्वामित्व। प्रारम्भ में राज्य को लेकर बड़े-बड़े युद्ध हुए। लेकिन उस समय भूमि की प्रचुरता थी। भूमि के लिए युद्ध अगर करना था तो प्रकृति से। मनुष्य जंगल साफ करता था। बहुत बड़ा पराक्रम था वह। धीरे धीरे परिस्थितियाँ बदलीं। आबादी बढ़ी। भूमि के लिए छीना-झपटी शुरू हुई। इसीमें से राज्य तथा देश की सीमाएँ बनीं।

व्यक्ति इतना निःसहाय है कि अकेला वह कुछ कर नहीं सकता। इसीलिए समाज और राज्य की स्थापना की गयी। और इसीके माध्यम से अपनी अभिलाषाओं की पूर्ति मनुष्य करता आ रहा है।

न्याय तथा कल्याण के लिए राज्य बना। इस संस्था ने मनुष्य की बड़ी बड़ी सेवाएँ कीं। पर मनुष्य के स्वार्थ के कारण कई स्थलों पर ऐसी भूलें हुईं कि उसे मिटाने में ही पूरी शक्ति लगानी पड़ी। इन भूलों में शायद सर्वाधिक महत्व की भूल है—भूमि के ऊपर व्यक्तिगत स्वामित्व की स्थापना। क्योंकि इसीमें से फिर अनेक सारी सामाजिक बुराइयाँ पनपीं।

इस भूल को मिटाने के प्रयास में रूस ने खून की होली खेली, चीन ने लाखों लाखों को मौत के घाट उतारा। इतना ही नहीं, बल्कि उसने लोगों के अस्तित्व तक को अस्वीकार किया। दुनिया में हर जगह यह समस्या सर्वोपरि दिखाई दे रही है। इस समस्या के समाधान के दो रास्ते अपनाये गये। एक, साम्यवादी और दूसरा, प्रजातांत्रिक। प्रजातांत्रिक दिशा में भी अहिंसक मार्ग ग्रामदान आन्दोलन के रूप में सामने आया है।

दुनिया में तीन प्रकार के लोग हैं। एक तो वे जो दूसरों की भूल से ही सीखते हैं, दूसरे वे जो अपनी भूल से सीखते हैं, तीसरे वे जो किसी भी हालत में स्वयं नहीं सीखते-सिखाये जाते हैं।

साम्यवादी देशों की जनता ने सीखने से इनकार किया, अब वह सिखाये जाने के रास्ते गयी। भारत की जनता अपनी भूल से सीखकर सुधार कर रही है। इन दोनों से भिन्न इसरायल ने अपने को रखा। और दूसरों की भूल से शिक्षा लेकर अपनी भूमि व्यवस्था की।

यहूदी लोग दो हजार वर्षों से इसरायल से बाहर बिखरे हुए थे। वे दुनिया भर में फैलकर व्यापार करते थे।

जब इसरायल को पुनः अपना देश बनाने का अवसर मिला तो उसने दूसरों की भूल से शिक्षा ली और व्यक्तिगत स्वामित्व की जगह सामुदायिक स्वामित्व को स्थान दिया। भूमि की मालिकी पूरे देश की एक गैरसरकारी संस्था (केरेन केमेथ) के हाथ में दी, जो भूमि को अलग-अलग बस्तियों के सुपुर्द करती है, तथा आवश्यक धन से भी सहायता करती है।

इसरायल में ३०० के लगभग ऐसे गाँव हैं, जहाँ सभी मिलकर अपनी योग्यता तथा क्षमता के अनुसार काम करते हैं और आवश्यकता के अनुसार उपभोग करते हैं। दूर से सुननेवाले तरह-तरह की शंकाएँ तथा निराशाएँ व्यक्त करते हैं। पर वहाँ जाकर देखने से यह सहज मालूम होता है। समस्याएँ हर व्यवस्था में आती हैं और उनका निराकरण होता है। वे भी वैसा ही करते हैं। लेकिन इतना उन्होंने किया है कि व्यवस्था की कम से कम आवश्यकता रह जाय। इस प्रकार की बस्तियों का नाम 'किबुत्ज' (सहजीवी बस्ती) दिया है। 'किबुत्ज' हिब्रू शब्द है। इसका अर्थ होता है—'सहजीवी बस्ती'।

पूरे गाँव के वयस्कों की सभा होती है। यह सभा प्रति सप्ताह बैठती है, और खेती तथा गाँव के अन्य सारे काम की योजना बनाती है। अपनी योग्यता तथा गाँव की आवश्यकता के अनुसार लोग काम करते हैं। खेती में काम करनेवाले खेतों में, भोजनालयवाले भोजनालयों में, धुलाईवाले धुलाईघरों में, शिक्षक विद्यालयों में, चिकित्सक चिकित्सालयों में अपना अपना काम करने जाते हैं। इस प्रकार लोग अपनी-अपनी काम की योजना बनाकर काम करते हैं। वहाँ पूरी कांचनमुक्ति भी रहती है। पैसे की किसीको आवश्यकता नहीं पड़ती। समय पर भोजनालय में जाकर भोजन कर लिया, चिकित्सालय से दवा ले ली, स्टोर से कपड़े ले लिये, आदि। यहाँ तक कि पत्रालय में पत्र दे दिया, आवश्यक डाक टिकट दफ्तर में लगाकर पत्र को डाक में डाल दिया। इस प्रकार गाँव के जीवन में रुपये की कोई आवश्यकता ही नहीं रहने दी है।

भूमि खरीदने या बिक्री करने की वस्तु है, यह ये लोग नहीं जानते। राष्ट्रीय स्तर पर केरेन केमेथ (राष्ट्रीय कोष) भूमि प्राप्त कर गाँव को दे देता है। और गाँव के लोग अपने ढंग की व्यवस्था करते हैं।

इन बस्तियों के बनाने में व्यक्ति

→घण्टों की गिनती महीने के अन्त में करके अन्दाज से चालू खर्च के लिए फार्म फण्ड से पैसा उठा लेते हैं, पर असली बैलेंस साल के अन्त में निकाला जाता है और काम के घण्टों के अनुसार कुल उत्पादन सभी सदस्यों में बाँट दिया जाता है।

पिछले १७ साल से यह प्रयोग चल रहा है। क्रियाया फार्म तो एक नमूना है सारे देश में यही पद्धति अपनायी गयी है। शायद भारत में ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य की यात्रा में यूगोस्लाविया के अनुभव 'मील के पत्थर' की तरह सहयोगी होंगे।

(बर्लिन, ८-५-'६८)

स्वातन्त्र्य का भी पूरा ध्यान रखा है। ऐसे लोग भी उस देश में है, जो ज्यादा आजादी चाहते है। अपने समय से काम पर जायेंगे, पैसे खुद की इच्छानुसार खर्च करगे। ऐसे लोगो के लिए आजादी है कि वे अपनी पसन्द की बस्ती बनायें। इन लोगो ने जो बस्ती बनायी, उसमें जमीन को जोतें (Holdings) बनाकर परिवारो को बाँट दिया। परिवार खेती करता है और गाँव के विद्यालय, चिकित्सालय आदि के लिए उत्पादन का एक निश्चित अंश देता है। खेती मजदूर से नही करा सकते। बीमारी आदि के कारण काम करने की स्थिति में नही रहने पर गाँवसभा से कहना होगा। ग्रामसभा काम करा देगी और उत्पादन में से काटकर काम करनेवाले को चुकाने की जिम्मेदारी भी ग्रामसभा की होगी। इन बस्तियों का नाम 'मोशव आवडिम' है। यहाँ भी आवश्यक शिक्षा मनोरंजन, चिकित्सा आदि सबको मुफ्त मिलती है, और खर्च का बोझ प्रत्यक परिवार पर उसकी आय के अनुसार पड़ता है। जमीन बेचने का किसीको अधिकार नही है। इसका बँटवारा भी नही हो सकता। सिर्फ उत्पादित वस्तुएँ, अन्न, पशु, पक्षी आदि बाँट सकते है या बेच सकते है।

इसके अलावा तीसरे प्रकार की बस्ती उन लोगों ने बनायी, जो उत्पादन में तो किबुत्स की पद्धति चाहते थे, पर उपभोग व्यक्तिगत पसन्द के अनुसार करते थे। उस प्रकार की बस्तियों को 'मोशव शातुफी' कहते हैं।

इन तीन प्रकार की बस्तियो में हर गाँव की व्यवस्था में भी कुछ-न-कुछ अन्तर है। पर भूमि की मालिकी समुदाय की है, सरकार की नहीं। रोज के जीवन में सरकार का दखल नहीं है। इतना बड़ा सर्वोदयी या सरकारी आन्दोलन होते हुए भी इसरायल-सरकार के सहकारी विभाग मे रजिस्ट्रार से लेकर चपरासी तक की कुल संख्या एक दर्जन से ज्यादा नही है।

क्या यह सब भारत में भी हो सकता है? या अन्य देशों में भी सम्भव है। मुझे भरोसा होता है कि हाँ, यह सम्भव है। पर सरकारी चंगुल से भूमि का मुक्त होना इसकी पहली शर्त है। ग्रामदान का यह पहलू बड़े महत्व का है कि सरकार की आवश्यकता भूमि के सम्बन्ध में करीब-करीब समाप्त हो जाती है।

इसरायल की परिस्थितियाँ भिन्न रही हैं। उन्होने नये सिरे से देश बसाया है। भारत की परिस्थिति भिन्न है। अत. रास्ता और उसके स्वरूप में भी अन्तर होगा। पर यहाँ भी अखिल भारतीय स्तर पर गैर-सरकारी संगठन हो सकता है, जो गाँव-गाँव तक फैला रहे, कृषक तथा अन्य मजदूरो के हकों का संरक्षण करे, परस्पर-सहकार का माध्यम हो, तथा साथ-साथ जिम्मेदारियो को भी उठाये। जिस प्रकार इसरायल का मजदूर-संगठन-'हिस्ताद्रुत'-राष्ट्रीय स्तर पर काम करता है। हर राजनीतिक दल के लोग अपना राजनीतिक भेद भूलकर यहाँ मिलते हैं, और मजदूरों तथा कृषकों के हकों की रक्षा के साथ-साथ उनके लिए रोजगार का नियोजन करते हैं। इस प्रकार अधिकार और कर्तव्य की भावनाएँ समानान्तर है। भारत के मजदूर-संघो में बापू इस तत्त्व को लाना चाहते थे। अहमदाबाद के मजदूर-आन्दोलन के अवसर पर इसे स्पष्ट किया था।

भूस्वामित्व की सामुदायिक मालिकी में सम्भावनाएँ है, जो सरकार को जनता के नियंत्रण में लायेंगी। जनता सरकार मुखापेक्षी न होकर स्वाश्रयी तथा खुद के पराक्रम पर विश्वास करेगी। ●

ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

भारत मे

प्रांत	ग्रामदान	प्रखंडदान
बिहार	२२,४५०	१५२
उड़ीसा	८,८७६	३६
तमिलनाड	५,१६५	४६
उत्तरप्रदेश	५,१६८	२५
आन्ध्र	४,२००	१०
पंजाब	३,२६६	६
महाराष्ट्र	३,१२६	११
मध्यप्रदेश	२,३०५	७
असम	१,४६३	१
राजस्थान	१,०२१	—
गुजरात	८०३	३
बंगाल	६४८	—
केरल	४०६	—
कर्नाटक	३२५	—
दिल्ली	३८	—
हिमाचल प्रदेश	१७	—
	कुल : ५६,७७२	१०३

बिहार मे

जिला	ग्रामदान	प्रखंडदान
पूर्णिया	८,१५७	२९
दरभंगा	३,७२०	४४
मुजफ्फरपुर	१,९८४	२३
मुंगेर	२,११८	१८
हजारीबाग	१,२४०	४
गया	१,१२६	१
संथाल परगना	८३६	२
सारण	६६०	६
पलामू	६३४	५
सहर्षा	४६७	२
भागलपुर	४४८	१
सिंहभूमि	३२०	४
धनबाद	३१२	१
शाहाबाद	१०३	१
चम्पारण	२४०	—
राँची	४४	—
पटना	२८	—
	कुल : २२,४५०	१५२

विनोबा निवास, २७ मई '६८

—कृष्णराज मेहता

सोवियत संघ :

सरकार-नियंत्रित सामुदायिकता

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम के अनुसार समाजवादी राज्य किसानों को भूमि देता है, खेती की उन्नति में उनकी सहायता करता है, उनके श्रम के प्रयत्नों को उनकी इच्छा के मुताबिक सहकारी संघों में संयोजित करता है, उन्हें आधुनिक कृषि मशीनों तथा कृषि-विज्ञान द्वारा सुविधाएं पहुंचाता है। उनके श्रम को अधिक उत्पादनशील बनाता है और भूमि की उर्वरता में वृद्धि करता है।

कोलखोज और सोवखोज

कोलखोज यानी सामूहिक फार्म या कृषि आर्तेल और सोवखोज यानी राजकीय फार्म, जहां तक उनके सामाजिक तत्व का संबंध है, एक-दूसरे से भिन्न नहीं हैं। ये छोटे छोटे किसान फार्म के समाजवादी पुनर्व्यवस्थापन की प्रक्रिया के दौरान में संगठित किये गये हैं और वे सामाजिक सम्पत्ति के दो रूपों पर आधारित हैं—सहकारी सामूहिक सम्पत्ति और राजकीय (सार्वजनिक) सम्पत्ति।

साझे में भूमि जोतने की साधारण संस्थाएं वास्तव में सामूहिक फार्मों का प्रारंभिक रूप थीं। इन संस्थाओं में जो किसान शामिल होते थे वे प्रायः अपनी भूमि और अपने श्रम का समूहन करते थे। बहुत जगहों पर खेती के जानवरों और औजारों का भी समूहन हो जाता था। उन संस्थाओं के सदस्य सामूहिक भूमि को साझे के उपकरण, जानवरों और खेती के औजारों द्वारा सामूहिक रूप से जोतते बोते थे। काम की किस्म और मात्रा के अनुसार पैदावार किसानों में बांट जाती थी।

ऐसी संस्थाओं की आमदनी का एक भाग ट्रैक्टर (कर्षण इंजन) तथा कृषि की अन्य आधुनिक मशीनें खरीदने में खर्च होता था। जैसे जैसे इन संस्थाओं का विकास हुआ और सामूहीकरण एक ऊंचे स्तर पर पहुंचा, वैसे-वैसे उनका रूप कृषि आर्तेलों में बदल गया और सार्वजनिक स्तर पर सामूहीकरण लागू होने के पश्चात् बहुत जल्द उन्होंने सोवियत संघ के देहाती क्षेत्रों में सामूहिक उद्योग की एक आधारभूत ताकत हासिल कर ली। आधुनिक कोलखोज वे स्वत्व में बड़े कृषि आर्तेल हैं जो किसानों को स्वेच्छा के मुताबिक संगठित करते हैं। कृषि-क्षेत्र में वे उत्पादक सहकारी संघ की सर्वोच्च अभिव्यक्ति हैं।

कोलखोजों का आर्थिक और व्यवस्थात्मक आधार

स्वामित्व—कोलखोज उत्पादन के साधनों के सामूहिक स्वामित्व और अपने सदस्यों के सामूहिक श्रम पर आधारित हैं। वे सदा के वास्ते नियुक्त उपयोग के लिए प्राप्त सार्वजनिक भूमि पर खेती करते हैं। कृषि आर्तेल के प्रतिमान नियमों के आधार पर अपने सदस्यों की आम बैठक में निर्धारित नियमों

अवध प्रसाद

के अनुसार प्रत्येक कोलखोज का कार्यकलाप नियंत्रित होता है। इन प्रतिमान नियमों के आधारभूत सिद्धांतों की पुष्टि सोवियत सरकार द्वारा की जा चुकी है।

कोलखोजों की पैदावार सार्वजनिक सम्पत्ति होती है। स्वतः स्वीकृत आधार के मुताबिक वे पैदावार का एक भाग राज्य को बेच देते हैं और उसका एक भाग समाज वादी अर्थव्यवस्था को विस्तृत करने और एक भाग सामुदायिक सेवा कार्यों में लगाते हैं। निजी खर्च के लिए सामूहिक फार्मों का नियत रकम सार्वजनिक कारोबार में लगे हुए सदस्यों में काम की मात्रा और किस्म के अनुसार उनमें बांट जाती है।

कोलखोज का सारा काम आम बैठक द्वारा निश्चित किये हुए नियम के अनुसार उसके सदस्य शुरू करते हैं। विशेष योग्यता एवं कौशल के मामले में ही वेतन पर काम लिया जाता है। सिर्फ असाधारण परिस्थिति में मजदूरी देकर मजदूर काम पर लगाये जाते हैं अर्थात् उस समय जब आवश्यक काम इतना अधिक होता है कि वह निश्चित समय के अन्दर पूरी शक्ति लगाने पर भी कोलखोज के सदस्यों द्वारा नहीं पूरा किया जा सकता।

सामूहिक खेती किसान के निजी हित को मारा जाता या राष्ट्र के हितों से सम्बद्ध कर देती है। सामूहिक खेती कृषि उत्पादन में सुधार और वृद्धि करती है और पूरे समाज के लिए हितकारी सिद्ध होती है।

सामूहिक स्वामित्व के अंतर्गत कोलखोज ही किसानों की आमदनी के प्रधान साधन हैं, गो कि मौजूदा परिस्थिति में कुछ निजी खेत अभी भी किसानों की आवश्यकताएं पूरी करने में सहायक होते हैं। प्रत्येक परिवार के पास थोड़ा सा निजी खेत होता है जिसका क्षेत्रफल और जिस पर किसान कितने जानवर रख सकता है, यह नियमों द्वारा निर्धारित कर दिया गया है। सन् १९६३ में कोलखोज के किसानों (१६१ लाख परिवार) के निजी खेतों का कुल क्षेत्रफल ५१ लाख हेक्टर था जिसमें ४२ लाख हेक्टर कृष्य भूमि थी। अपने निजी खेतों में किसान सब्जी फल अण्डे दूध वगैरह पैदा करते हैं जिन्हें सामूहिक फार्म अब तक पर्याप्त मात्रा में नहीं पैदा कर पाये हैं।

कोलखोजों के विकास का मुख्य आधार उत्पादन का संकेन्द्रण है। सामूहीकरण के शुरू के सालों में साधारणतः पूरा गांव एक कोलखोज में शामिल होता था, बड़े गांव के लिए कई कोलखोज बना दिये जाते थे। सन् १९३२ में एक कोलखोज में औसतन ७१ परिवार, ४३४ हेक्टर खेती की सामूहिक भूमि, ४२ गाय बैल आदि थे। सन् १९६३ में एक कोलखोज में औसतन ४११ परिवार और ८९६ हेक्टर खेती की सामूहिक भूमि सामूहिक स्वामित्व में ६८४ गाय-बैल आदि थे।

सहकारी कृषि संस्थाएं होने के कारण कोलखोजों का प्रबंध जनतांत्रिक तरीके से होता है। कोलखोज के ऊपर की आम बैठक कोलखोज का सर्वोच्च प्रबंधक निकाय है। नियमों के अनुसार आम बैठक ही हर

कोलखोज के साथ मसला भी तय करने के लिए अधिकृत है।

सोवखोज में उत्पादन-व्यवस्था

सार्वजनिक (राज्य) स्वामित्व पर आधारित सोवखोज बड़े-बड़े कृषि-उद्योग है। सोवखोजों के उत्पादन के साधन और उनकी सारी पैदावार सोवियत राज्य की संपदा होती है।

देहात में सोवखोज मुख्य समाजवादी उद्योग है, जिनके जिम्मे सार्वजनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उच्च कोटि की कृषि पैदावार उत्पन्न करना तथा कोलखोजो के लिए सामाजिक उत्पादन के प्रगतिशील, वैज्ञानिक और आर्थिक दृष्टि से लाभदायक तरीकों और श्रम की उच्च उत्पादन-क्षमता का नमूना पेश करना होता है।

सोवखोजों का प्रबंध आर्थिक स्वावलम्बिता के सिद्धान्त पर आधारित है। *अपनी पैदावार सरकार के हाथ निर्धारित* दामों पर बेच देने के बाद उत्पादन और *बिक्री का खर्च सोवखोजो को वापस हो* जाता है। अपने उत्पादन को सोवखोज *लाभकर बनाने का प्रयत्न करते है। मुनाफे* का एक हिस्सा उन्हें पैदावार में वृद्धि करने तथा सोवखोज के मजदूरों *तथा कर्मचारियों* के जीवन-स्तर और उनके सांस्कृतिक प्रतिमान को ऊँचा बनाने के लिए मिलता है। मुनाफे का बाकी भाग केन्द्रीभूत तरीके से राज्य के बजट या सम्बद्ध आर्थिक निकायों द्वारा बँट जाता है।

सोवखोजों को अपने कार्यकलाप को लाभकर बनाने के लिए पूरी-पूरी आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त है और उन्हें आवश्यकतानुसार राज्य के बराबर आर्थिक और राजसमान की सहायता मिलती है। सोवखोज प्रशासन मजदूरों और कर्मचारियों की नियुक्ति करता है, उत्पादन और आर्थिक योजना पूरी करने में क्रियाशील रहता है और पैदावार की बिक्री आदि का प्रबन्ध करता है।

राज्य से प्राप्त धन द्वारा सोवखोज का चालू खर्च पूरा होता है। फलत स्टाक की वसूली का दाम चुकाने के लिए ऋण की रकम खर्च की जाती है। सरकार द्वारा सोवखोज को दिया जानेवाला धन सोवखोज के आयोजित उत्पादन और उसकी कार्य-व्यवस्था में परिवर्तनों के अनुसार निश्चित किया जाता है। *अन्य उद्योगों के साथ सोवखोज ठेकों का भी व्यवहार रखता है।* और अपना काम इन ठेकों के आधार पर चलाता है। वह राजकीय क्रय-केन्द्रों में भी पैदावार पहुँचाने के ठेके लेता है। सोवखोज की आर्थिक व्यवस्था और राज्य के साथ उनके आर्थिक सम्बन्ध बराबर उन्नति कर रहे है।

राज्य के अधिकार में अन्य उद्योगों की तरह सोवखोज भी अपने मजदूरों और कर्मचारियों के काम के सुसंचालन तथा उनकी सांस्कृतिक उन्नति और कल्याण की देखरेख के लिए, उनके सहयोग के साथ एक प्रधान व्यक्ति द्वारा प्रबन्ध के सिद्धान्तों के अनुसार करते हैं। सोवखोज का प्रधान अधिकारी संचालक होता है।

सोवखोज की शाखाएँ और उनके पशु-*फार्म भी उत्तरोत्तर आर्थिक स्वावलम्बिता* के आधार पर चल रहे है। इसका अर्थ यह हुआ कि उन्हें अपना खर्च खुद पूरा करना होता है और साथ-साथ मुनाफा भी दिखाना पड़ता है, जिसका एक भाग मजदूरों को उनकी सामान्य मजदूरी के अलावा, मिलता है। उससे अर्थव्यवस्था में तरक्की होती है और लोगों में कार्य की ओर अनुप्रेरणा उत्पन्न होती है।

[व० मत्रामोव : 'कृषि की अर्थ व्यवस्था तथा उसका संगठन' के आधार पर प्रस्तुत।

चीन का कम्यून : दलवादी समूहीकरण

एक विद्यार्थी

वर्ग संघर्ष, उत्पादन-वृद्धि, तथा समाजवादी प्रयोग। चीन इन तीनों का मेल मिलाना चाहता था। इस कोशिश में 'कम्यून' का जन्म हुआ।

देहात के हर नागरिक को किसान, श्रमिक, सिपाही और विद्यार्थी (माओ द्वारा *दिये गये साम्यवादी सिद्धान्तों का*) एक-साथ बनाना था। माना गया कि कम्यून द्वारा ऐसा करना सम्भव था।

प्रति व्यक्ति औसत ४ बिस्वा भूमि, जनसंख्या अति अधिक, भूमिहीनों और छोटी जोतवाले सत्तर प्रतिशत, पूंजी का अभाव, सिंचाई के साधन नहीं, खेती अत्यन्त पिछड़ी हुई—समस्या थी कि इसे कैसे उठायी जाय? खेती की उन्नति एक ओर, तथा बड़े, बुनियादी उद्योगों का प्रश्न दूसरी ओर, दोनों को मिलाकर सैनिक-शक्ति के लिए साधन जुटाना था और देश के लाखों-लाख युवकों को सैनिक-प्रशिक्षण तथा साम्यवादी दर्शन में दीक्षित करना था। यह लगभग असम्भव काम था, लेकिन कोई-न-कोई रास्ता निकालना ही था। सन् १९४९ में साम्यवादी शासन के कायम होते समय सरकार की शक्ति नहीं के बराबर रह गयी थी। साम्यवादी क्रान्तिकारियों के पास उनकी क्रान्तिकारी *सेना थी, युवक थे, हर वक्त दगने के लिए* तैयार अचूक बन्दूक थी, और था गरीबों की *सद्भावना का अपरिमित बल।*

सन् १९४९ के बाद सात-आठ वर्षों तक 'परस्पर सहयोग' (म्युचुअल एड) तथा सहकारी समितियाँ संगठित करने की कोशिश हुई, लेकिन ग्रामीण विकास की कुंजी नहीं मिली। अन्त में सिंचाई को सामने रखकर आहर, पोखर, पइन, तालाब आदि के निर्माण का देश-व्यापी अभियान शुरू हुआ। गाँवों की सारी श्रम-शक्ति जुटा दी गयी। जगह-जगह मजदूरों की टोलियाँ साथ रहने और काम करने लगी। दिन-रात की मेहनत से तेजी के साथ पानी के साधन तैयार होने लगे।

साथ काम करने, और कहीं-कहीं साथ रहने और खाने-पीने के सन्दर्भ से 'समूहीकरण' *का विचार पनपा। अलग-अलग* मेहनत करने से क्या होगा, और अगर

सामूहिक श्रम अच्छा है, तो पूरे जीवन का ही 'समूहीकरण' क्यों न कर दिया जाय ?

समूहीकरण साम्यवाद को प्रिय होता है। आत्यंतिक व्यक्तिवादी पूंजीवाद का उत्तर है—आत्यंतिक समूहवाद, जिसका संगठित स्वरूप राज्य को मान लिया जाता है, क्योंकि राज्य कम्यूनिस्ट पार्टी के हाथ में होता है, जो अपने को मजदूर और छोटे किसान की पार्टी मानती है तथा मार्क्स और समाजवाद के सिद्धान्तों का प्रतिनिधि। खेती को आधुनिक बनाने, खेती से प्राप्त अतिरिक्त आमदनी को उद्योगों में लगाने, तथा क्षेत्रीय विकास के आधार पर पूरे देश का विकास करने की कल्पना और योजना सन् १९५८ में कम्यून का आधार बनी। औसत २०-२५ हजार जनसंख्या का क्षेत्र कम्यून का कार्य क्षेत्र माना गया। भूमि की निजी मालिकी पहले ही समाप्त हो चुकी थी, बड़े उद्योगों का विकास सरकार के हाथ में जा चुका था, बाकी था खेती का समूहीकरण तथा क्षेत्र का समग्र विकास—खेती, उद्योग व्यापार, शिक्षा, स्वास्थ्य, सैनिक प्रशिक्षण। अपने क्षेत्र में ये सब चीजें कम्यून के अन्तर्गत आ गयीं।

कम्यून के नीचे था 'प्रोडक्शन ब्रिगेड'—कई गांवों को मिलाकर बनाया गया संगठन। ब्रिगेड के बाद थी 'प्रोडक्शन टीम'—२०-२५ परिवारों की ग्रामस्तरीय इकाई। लेकिन नीचे से ऊपर तक पूरा संगठन राज्य और कम्यूनिस्ट पार्टी द्वारा संचालित होता था। उन्हीं की योजना, और उन्हीं के हाथ में प्रशासन। कम्युनिस्ट पार्टी के युवक, नौकरशाही, पार्टी सदस्य ऊपर के नेताओं के आदेश के अनुसार पूरे ढांचे और खेती तथा क्षेत्रीय विकास के कार्यक्रम को चलाते थे।

कम्यून में किसान किसान नहीं था, वह मजदूरी पर काम करनेवाला श्रमिक हो गया था। उसे सामूहिक भोजनालय में भोजन मिलता था, इस्तेमाल के लिए सामूहिक तौर पर कुछ चीजें मिल जाती थीं तथा प्राइवेट-खर्च के लिए कुछ नकद पैसा। सरकार उत्पादन में अपना हिस्सा लेकर जो छोड़ देती थी वही १२ 'मजदूरों' के लिए बच जाता था। 'अपना' कहने लायक उसके पास कुछ नहीं रह गया—न जमीन का टुकड़ा, न पूरक कमाई का कोई साधन। माना गया कि किसान ने समाजवाद से भी आगे बढ़कर साम्यवाद को अपना कर कुछ समर्पित कर दिया। काम के अनुसार कमाई क्यों, एकदम आवश्यकतानुसार वितरण के सिद्धान्त को क्यों न अपना लिया जाय ?

पूरे देश में कम्यून ही कम्यून बन गये। शासन और साम्यवादी विचार के कठोर अनुशासन में काम होने लगा। चीन के क्रान्तिकारियों ने रूस से भिन्न किसानों के लिए साम्यवाद का आविष्कार किया था। उन्हें देश बनाना था, एक नयी दुनिया बनानी थी, जिसके लिए कोई मूल्य अधिक नहीं था। स्त्रियां पुरुषों के जुल्म और रसोई की पिसाई से मुक्त हो गयी थीं, श्रमिक का किसी मालिक के शोषण का डर नहीं था, युवक माता पिता या दकियानूसी समाज के बन्धनों से मुक्त था। इस 'मुक्ति' का नशा सिर पर सवार था, और नशे में शक्ति तो होती ही है। इसमें कोई शक नहीं कि साम्यवाद ने स्त्री, श्रमिक और युवक को पुराने दमन से मुक्त कर उसके हृदय को एक 'नयी' दुनिया के निर्माण के साथ जोड़ा है, जिसका तात्कालिक फल समाज और साम्यवाद दोनों को मिला है।

डेढ़-दो साल तक कम्यून का प्रयोग जोरों से चला, लेकिन फिर उसकी तेजी कम होने लगी। पुराना किसान नये 'मजदूर' की नयी सरकारी व्यवस्था में अपने अभिक्रम और उत्साह को कायम नहीं रख सका। उत्पादन वृद्धि के भ्रामक आंकड़े आते रहे, लेकिन उत्पादन घट गया। लोगों के मन क्षोभ से भर गये, और हाथ ढीले पड़ गये। चीन की खेती संकट में पड़ गयी। नेताओं को महसूस हो गया कि अन्दर कहीं कोई गड़बड़ी है। उन्होंने परिस्थिति को परखा, और धीरे धीरे कदम पीछे हटाया।

यह स्पष्ट हो गया कि खेती के लिए छोटी इकाई होनी चाहिए, जो खेतिहर के नित्य के जीवन के करीब हो। यह भी समझ में आया कि जनता के जीवन में परिवर्तन के लिए समाज के संगठन में परिवर्तन आवश्यक है, लेकिन उतना ही काफी नहीं है। संगठन के साथ साथ शिक्षण चाहिए, जो चित्त को परिवर्तन के अनुकूल बना सके। यह काम दबाव से नहीं हो सकता।

जो सारा जोर कम्यून पर था वह अगले दो-तीन वर्षों में 'प्रोडक्शन टीम' पर आ गया। टीम में भी और छोटी श्रम इकाइयां बन गयीं। २०-२५-३० परिवारों की यह 'प्रोडक्शन टीम' को मालूम हो गया कि उसकी जमीन कितनी है, उसके पास क्या श्रम शक्ति है पशु और औजार कितने हैं। यह प्रोडक्शन टीम हिसाब और उत्पादन की बुनियादी इकाई बन गयी। हां, उत्पादन के लक्ष्य ऊपर से तय होते रहे। सरकार की ओर से उत्पादन में एक 'कोटा' निश्चित होता था, जिसे देना पड़ता था।

लेकिन कुछ परिवर्तन बड़े मार्के के हुए। सन् १९६० में ही हर परिवार को खेत का एक प्लाट मिल गया, जिस पर अपनी मर्जी की चीजें उगाने की उसे छूट दे दी गयी। वह पशु पालने लगा। साथ ही अपने खाली वक्त में वह पूरक कमाई के लिए कुछ धंधे और उद्योग भी करने लगा। यह कहावत ही चल पड़ी कि 'अनाज के लिए सामूहिक, कमाई के लिए पारिवारिक।' निजी उत्पादन की चीजें वह पड़ोस के हाट और मेले में बेच सकता था, जिनका बाकायदा संगठन किया गया। अनाज तथा औद्योगिक कच्चा माल इन हाटों में नहीं आता था। उनकी खरीद सरकार द्वारा होती थी।

ग्रामीण जनता उत्पादन जीविका और संगठन की इस व्यवस्था को स्वीकार करे, इसके लिए कुछ लोकतांत्रिक ढंग अपनाये गये। कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व तो कायम रहा, लेकिन गांव में लोगों की बैठकें होने लगीं, उनकी सलाह मांगी जाने लगी, और उत्पादन के कामों में उन्हें काफी स्वतंत्रता दी जाने लगी। मकान, फर्नीचर, कपड़े बाइसिकिल, सिलाई की मशीन, और बैंक में जमा रुपये पर निजी स्वामित्व का अधिकार मान लिया गया। स्त्रियों के अधिकार पुरुषों के समान रहे। हां, शक्ति की 'मास्टर कुंजी' और अन्तिम निर्णय कम्युनिस्ट पार्टी

और उसकी सरकार के हाथ में ही रहे, जैसे हमेशा थे, लेकिन वे अब अधिक अप्रत्यक्ष हो गये।

चीन की खेती इसी नये ढंग से हो रही है। कम्यून का ढांचा कायम रखा गया है। कम्यून और ब्रिगेड का काम है, नीचे की उत्पादन-टीमों की मदद करना। लेकिन समूहीकरण की नीति हमेशा के लिए छोड़ दी गयी है, ऐसी बात नहीं है, 'निजी प्लॉट' और निजी पूरक उत्पादन के द्वारा पूंजीवादी संस्कारों के लौटने का डर है, हालांकि सहकारी समितियों द्वारा खरीद-बिक्री की व्यवस्था है। यह भी कोशिश चल रही है कि निजी उत्पादन भी अधिक-से-अधिक 'सामूहिक' ढंग से हो। समाजवादी लोक-शिक्षण पर बहुत जोर है। पार्टी के सदस्यों को आदेश है कि वे नियमित रूप से जनता के साथ उसके 'श्रम' में शरीक हों, ताकि सामीप्य बढ़े। पहले के कुछ धनी और बड़े किसानों के पास उत्पादन की जो प्रतिभा है, उसका इस्तेमाल निर्माण में होना चाहिए, इसकी चिन्ता है, लेकिन कोशिश है कि गरीब और निम्न मध्यम वर्ग के खेतिहरों को ज्यादा बढ़ावा दिया जाय और उन्हींको आगे बढ़ाकर पूंजीवादी संस्कारों को समाप्त किया जाय।

खेती में खेत और खेतिहर का क्या सम्बन्ध हो, जनता और पार्टी का क्या सम्बन्ध हो, मशीनीकरण का क्या स्वरूप और सीमा हो, आदि प्रश्नों पर बराबर मंथन चल रहा है। परिस्थिति से सीखने की तैयारी है, लेकिन साम्यवाद के अन्दर ही।

चीन के अनुभव सभी खेतिहर देशों के लिए उपयोगी हैं। उसमें कुछ अपनाने लायक हैं, कुछ कतई छोड़ने लायक। उनके त्रिविध रूप हैं : वर्ग-संघर्ष, उत्पादन और जीविका, साम्यवादी प्रयोग। हमारे-उनके दूसरे और तीसरे समान हैं, लेकिन हमारा तरीका वर्ग-संघर्ष का नहीं हो सकता। हम वर्ग-विसर्जन के अभ्यास में लगे हुए हैं। यह अन्तर गिनने में एक है, लेकिन यही तो सब कुछ है! ●

राजनीति-मुक्त अधिकार और दायित्व

प्रश्न : राजनीति से मुक्त रहने का मतलब क्या वोट न देना है? यह तो मनुष्य के 'फण्डामेंटल राइट्स' पर बन्धन है।

विनोबा : आपका हक है, इसमें कोई शक नहीं। आपकी 'ड्युटी' क्या है, यह आप तय कर रहे हैं। मुझे भी हक है 'इलेक्शन' में भाग लेने का। 'कान्स्टीट्यूशन' ने अधिकार दिया है। मैं उसका उपयोग करना ठीक नहीं मानता। उससे ऊपर उठना चाहता हूँ। तो हक है, यह छोटी चीज है। हक तो बेवकूफ को भी है और अक्लवाले को भी है! अक्लवाला तय कर रहा है कि मैं नहीं करूँगा। मैं और कहूँ? आपको कोई मारने के लिए आया, तो 'सेल्फ-डिफेन्स' के अधिकार से उसको मारेंगे, तो आप गलत नहीं करेंगे, लेकिन मैं कहूँगा कि कुलगति के नाते आपने ठीक नहीं किया। आपको तो यीशु ख्रिस्त को ध्यान में रखना चाहिए। प्रेम से समझाना चाहिए और *आवश्यकता हो तो मर मिटना चाहिए।* 'सेल्फ-डिफेन्स' के अधिकार का उपयोग करना आपका हक है, लेकिन वह इस्तेमाल *नहीं करना चाहिए।* आपको इलेक्शन में खड़े होकर, मुख्यमंत्री बनने का भी हक है, लेकिन सोचना यह है कि मुख्यमंत्री बनने से आपकी हैसियत ऊँची होती है, या आप जिस हैसियत में हैं, उसीमें ऊँचे होते हैं।

प्रश्न : हमारा असर न पड़ा तो?

विनोबा : असर न पड़ा तो तपस्या बढ़ायें। शब्द-शक्ति का यह सवाल है। शब्द-शक्ति कम पड़ने के तीन कारण हैं : १—तपस्या की कमी, २—'क्रिस्टाईज' शब्द बोलना आता नहीं, और ३—समझाने का स्तर बना नहीं। अगर ये हों, तो हम कहेंगे 'ट्राई अगेन'। ईसा मसीह से पूछा गया कि एक बार क्षमा करने से सामनेवाला न माने तो क्या करें? तब उन्होंने कहा कि मैं फिर से क्षमा करूँगा। फिर नहीं माना, तो फिर से क्षमा करूँगा। कितनी बार? तो कहा—'सेवंटी टाइम्स सेवन (सात गुना सत्तर दफे)—और कहा कि क्षमा-शस्त्र ऐसा है कि आखिर उसमें आप कामयाब होंगे ही। यह श्रद्धा ईसा मसीह ने दी। शंकराचार्य से पूछा—*आप समझायेंगे, और कोई न समझा तो?* तब उन्होंने कहा कि एक बार समझाने से, न समझा तो दुबारा समझाऊँगा, दूसरी बार न समझा, तो तीसरी बार समझाऊँगा, चौथी बार समझाऊँगा, और समझाता ही रहूँगा। यही मेरा शस्त्र है। और किसी शस्त्र पर मेरी श्रद्धा नहीं। और कोई न समझे, तो सोचूंगा कि समझाने की कुशलता बढ़ानी है।

[भागलपुर विश्वविद्यालय के प्राचार्य आदि से दिनांक ६-३-६८ को हुई चर्चा से]

एकता का संकल्प

बम्बई विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० गजेन्द्रगडकर के आह्वान पर बम्बई महानगरी में १६ मई से २४ मई तक विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों और छात्रों का एक अखिल भारतीय शिविर आयोजित हुआ, जिसमें भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों के ५०० प्रतिनिधि सम्मिलित हुए।

२४ मई को (शिविर-समापन के दिन) डा० गजेन्द्रगडकर के नेतृत्व में सभी प्रतिनिधियों ने विश्वास और दृढ़ निश्चय के साथ भारत की एकता और अखण्डता की रक्षा करने का संकल्प लिया। प्रतिनिधियों ने लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति, कानून-सम्मत व्यवस्था, धर्म निरपेक्षता और साम्प्रदायिक सद्भावना को सुदृढ़ बनाने का भी संकल्प किया। इसके साथ-साथ उन्होंने विश्वविद्यालय-प्रांगण को संकुचित राजनीति से अलग रखने के विचार को कबूल किया और राजनीतिक दलों को यह समझाने का निश्चय किया कि वे विश्वविद्यालय के छात्रों को राजनैतिक दाव-पेंच का साधन न बनायें।

व्यक्ति, गाँव और समाज : नयी भूमिका में

आजादी नीचे से शुरू होनी चाहिए। हरेक गाँव में प्रजातंत्र या पंचायत का राज होगा। उसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। इसका मतलब यह है कि हरेक गाँव को अपने पाँव पर खड़ा रहना होगा।

ऐसा समाज अनगिनत गाँवों का बना होगा। उसका फैलाव एक के ऊपर एक के ढंग पर नहीं, बल्कि लहरों की तरह एक के बाद एक की शक्ल में होगा।

समुद्र की लहरों की तरह जिन्दगी एक के बाद एक घेरे की शक्ल में होगी और व्यक्ति उसका मध्यबिन्दु होगा। यह व्यक्ति हमेशा अपने गाँव के खातिर मिटने को तैयार रहेगा। गाँव अपने आस-पास के गाँवों के लिए मिटने को तैयार होगा। इस तरह आखिर सारा समाज ऐसे लोगों का बन जायगा, जो उद्दत बनकर कभी किसी पर हमला नहीं करते, बल्कि हमेशा नम्र रहते हैं और अपने में समुद्र की उस शान को महसूस करते हैं, जिसके वे एक अभिन्न अंग हैं।

—मो० क० गांधी

गणसेवकत्व : प्राचीन परम्परा

मैं मानता हूँ कि गणसेवकत्व की महिमा भारत में प्रकट होगी और ध्यान में आयगा कि बड़े बड़े नेता भी पदयुक्त होते हैं, पदमुक्त गणसेवकत्व ही हो सकता है। उसमें नेतृत्व के लिए स्थान ही नहीं।

मेरा जो चिन्तन का ढंग है, उससे थोड़ा मतभेद प्रकट करते हुए हमारे एक साथी ने कहा कि गांधीजी संगठन (आर्गनाइजेशन) में विश्वास करते थे, पर बाबा नहीं करता। शायद इसी कारण से हमारी शक्ति प्रकट नहीं हो रही है। फिर बापू का एक प्रसिद्ध वाक्य उद्धृत किया 'आर्गनाइजेशन इज दि टेस्ट आफ नान-वायलेंस'—अहिंसा की कसौटी संगठन में है। लेकिन इस वाक्य का अर्थ लोग जिस तरह समझते हैं, मैं उससे बिलकुल उलटा ही समझता हूँ। वैसे, गांधीजी के वाक्य का अर्थ करने का कोई मेरा खास अधिकार नहीं लेकिन वह वाक्य मेरे साथ कुछ बोलता है। वह उलटी बात बोलता है। 'नॉन-वायलेंस' यानी अहिंसा। वह किसी पर कोई दबाव डालेगी नहीं और इसलिए अगर वह अहिंसा सच्ची है तो संगठन 'किया' नहीं जायगा, सहज भाव से 'होगा'। और मिलिटरी का संगठन जितना मजबूत होता है, उससे ज्यादा मजबूत होगा तो वह अहिंसा की कसौटी, यानी हममें अहिंसा कितनी है, उसकी कसौटी होगी।

संगठन दो प्रकार के होते हैं—एक शक्ति से, अनुशासन लाद करके, और दूसरा प्रेम से। प्रेम से संगठन 'होते' हैं, शक्ति से संगठन 'किये जाते' हैं। अब सवाल यह है कि जैसे शक्ति सामूहिक तौर पर काम कर रही है, वैसे सामूहिक तौर पर प्रेम काम कर सकता है क्या? इसमें प्रेम की कसौटी है। इसका आशय यह कि गणसेवकत्व में मुख्य आधार प्रेम का रहेगा। और इसलिए नेतृत्व की अपेक्षा बहुत ज्यादा शक्ति उसमें आयगी और वह भारत की अपनी शक्ति है।

❀ ❀ ❀ ❀

राजनैतिक एकता को पुराने जमाने में ज्यादा महत्त्व ही नहीं था। आज महत्त्व आया है, क्योंकि सारी ताकत सरकार में केंद्रित होती है। पहले तो भारत एक था, इसलिए भारत में भिन्न भिन्न प्रान्तों में अलग-अलग राज चलते थे। लेकिन कुल जनता, उत्तर से दक्षिण तक बिलकुल अमरनाथ से कन्याकुमारी तक—कश्मीर में अमरनाथ और दक्षिण में कन्याकुमारी—वहाँ तक भारत एक बना। वह गणसेवकत्व के आधार पर बना। बिलकुल वैदिक जमाने से भी भगवान् का वर्णन किया 'गणानां त्वा गणपतिं हवामहे'—हे भगवन् तू गणपति है और हमारा यह गण है। मतलब, हमारे गण में कोई मनुष्य गणपति नहीं, भगवान् गणपति है। गायत्री मंत्र में भगवान से प्रार्थना की तो 'मेरी बुद्धि को प्रेरणा दे' नहीं कहा, 'हमारी बुद्धि को प्रेरणा दे' कहा। तो उस जमाने में गणसेवकत्व था। यानी उसका विचार था। फिर बुद्ध और महावीर ने गणसेवकत्व स्थापित किया। उसके बाद शैव और वैष्णवों ने कुल भारत में जो काम किया, वह नेतृत्व के आधार पर नहीं, गणसेवकत्व के आधार पर किया।

—विनोबा

साधारण मनुष्य के सत्व का विकास : समन्वित संस्कृति के लिए

संकल्प उधार नहीं लिया जाता है। जहाँ संकल्प उधार लिया जाता है, वहाँ जीवन उधार लिया जाता है। और जहाँ जीवन उधार लिया जाता है, वहाँ जीवन की सारी प्रतिष्ठाएँ उधार ली जाती हैं और वह क्रान्ति भी नगद क्रान्ति नहीं होती, उधार क्रान्ति होती है। इस दृष्टि से जब मैं विचार करता हूँ तब मैं मानता हूँ कि आज इस देश में जड़मूल से अगर कोई आन्दोलन लोकसत्ता को स्थापित करने की कोशिश कर रहा है, तो यह ग्रामदान का आन्दोलन है। इस आन्दोलन में यह कोशिश हो रही है कि लोकसत्ता की जड़ें मजबूत करें। लोग कहते हैं कि जहाँ पर फरिश्ते जाने की हिम्मत नहीं करेंगे, वहाँ मूर्ख चला जाता है! कहीं ऐसा सिद्ध न हो। इसको गंभीरता से सोचने की आवश्यकता है। आपने बहुत बड़ी हिम्मत की है, दुस्साहस किया है एक तरह से। और दुस्साहस की आवश्यकता है। "रैडिकल डिजीजेज रिक्वायर रैडिकल रेमिडीज।" व्याधि जितनी दुर्दम होगी, उपचार भी उतना ही तीव्र चाहिए। तो यह उपचार ऐसा है, जिसके प्रचार से लोकतंत्र की विश्वव्यापी व्याधि का उपचार हो सकता है। आज लोकतंत्र की यह व्याधि विश्वव्यापी है। लोकतंत्र में तीन व्याधियाँ होती हैं: 'एथ्यूज'—एक व्याधि, 'करप्शन'—दूसरी व्याधि, 'फ्रॉड'—तीसरी व्याधि। ये तीन व्याधियाँ दुनियाभर के लोकतंत्र में फैली हैं। ये तीनों चीजें आज हमारी लोकशाही में हैं। ये तीनों चीजें अगर बढ़ती ही गयीं तो लोकशाही को 'सन्निपात' हो जायगा। ये तीनों चीजें लोकशाही के लिए प्राण-घातक-विष हैं। और इसका प्रादुर्भाव आज इस देश में हो गया है। इसलिए आप पार्टियों से कहिये, एक-दूसरे से कहिये, पार्टियाँ एक-दूसरे से कहें, सब एक-दूसरे से कहें, और हम भी एक-दूसरे से कहें, तो इससे क्या होगा?

सत्कार्य में दूसरों के दोषों का ध्यान तो होना ही नहीं चाहिए, अपने भी दोषों का ध्यान नहीं होना चाहिए, मनुष्य कार्यरत होना चाहिए। ध्यान किसीके दोषों का नहीं अपने भी नहीं, दूसरों के भी नहीं। इसमें से चित्त शुद्धि होती है। इसे तटस्थता कहते हैं। इतनी संभावनाएँ मैं इस आन्दोलन में देखता हूँ।

यह क्रान्ति विधायक पुरुषार्थ की क्रांति है। आज संसार में एक ऐसी प्रक्रिया की खोज है, *जो प्रक्रिया एक साधारण मनुष्य के पुरुषार्थ* के अनुरूप होगी, जिसमें शस्त्र, सम्पत्ति और सत्ता—तीनों की शक्तियों के लिए कोई अवसर नहीं होगा, कोई आवश्यक नहीं होगा। इस प्रकार की एक प्रक्रिया का प्रयोग आज विनोबा कर रहा है। उसे कालात्मा का प्रतिनिधि कह लीजिये, लोकात्मा का प्रतिनिधि कह लीजिये। कालात्मा की आवश्यकताएँ, लोकात्मा की आकांक्षाएँ, इस पुरुष ने इस प्रक्रिया में अभिव्यक्त कीं। इसलिए मैं समझता हूँ कि आज हमारे लिए बहुत बड़ा अवसर है। एक ऐसी शक्ति का, एक ऐसी प्रक्रिया का प्रयोग हम करें कि उस प्रयोग में से साधारण मनुष्य के सत्व का विकास हो। एक बायलाजिस्ट ने वर्णन किया है मनुष्य का। मनुष्य की परिभाषा की है। 'मैन इज दि क्रिस्टीलाइज्ड पोटेन्सी आफ एग्जिस्टेन्स।' जीवन के घनीभूत वीर्य का नाम पुरुषार्थ है, मनुष्य है। जीवन का वीर्य घनीभूत हो गया और उसका नाम वीर्य रखा गया। यह जो मनुष्य की सम्भावनाएँ हैं, इन संभावनाओं के लिए यहाँ अवसर है। लेकिन *इसके लिए गाँव का रूप बदलना होगा,* उनका कायाकल्प कराना होगा। इन गाँवों *का कायाकल्प कौन करेगा? तो वे करेंगे,* जो गाँवों में रहते हैं। सिस्टर निवेदिता ने भारतवर्ष की प्रतिभा, जीनियस के तीन लक्षण बताये—'सेण्टीमेंट आफ फ्रेटर्निटी': बन्धुत्व की भावना, 'इंस्टिंक्ट्स आफ सेन्थेटिक': समन्वय की सहज प्रेरणा, 'माइण्ड आफ कोआर्डिनेशन': संगतिकरण का मानस। जो असंगत से भिन्न-भिन्न प्रवाह जीवन में मालूम होते हैं, उन सबमें संगतिकरण का प्रयास है। यह वर्णन उसने भारतवर्ष की प्रतिभा का किया है। अगर भारतवर्ष की कोई विशिष्ट प्रतिभा है तो वह विशिष्ट प्रतिभा इन तीन चीजों में है। इनका विकास हमको ग्राम-स्वराज्य में करना होगा।

गांधी ने पहले-पहल ग्रामों की तरफ ध्यान दिया और उसने यह कहा कि ग्रामों का विकास होगा तो जड़ को पोषण मिलेगा, और जड़ को जब पोषण मिलेगा तो यह जो हमारे देश की संस्कृति—मुसलमान तहजीब—संयुक्त संस्कृति, समन्वित संस्कृति है, उसका विकास होगा। और यह समन्वित संस्कृति मानवीय संस्कृति है।●

दादा धर्माधिकारी

उत्तरकाशी जिलादान के लिए शुभकामना

मुझे प्रसन्नता है कि उत्तरकाशी में ग्रामदान-आन्दोलन पूरी तरह फैल गया है और ३० मई, '६८ को उत्तरकाशी जिलादान की घोषणा होनेवाली है। *आशा है कि यह आन्दोलन सामुदायिक* विकास की एक नयी प्रक्रिया शुरू करेगा, जिससे परम्परागत सामुदायिक सम्बन्धों को नयी शक्ति प्राप्त होगी। *इस आन्दोलन का सबसे अच्छा पहलू यह है कि* यह लोगों के दृष्टिकोण को बदलेगा और हर चीज के लिए सरकार के भरोसे रहने की उनकी पराश्रयिता को दूर करेगा।

इस अवसर पर आन्दोलन की सफलता के लिए मैं अपनी शुभकामनाएँ भेजता हूँ।

—बी० गोपाल रेड्डी

लोक-प्रतिनिधित्व : चुनाव की नयी शैली

—एक महत्त्वपूर्ण सुझाव—

हर निर्वाचन-क्षेत्र में हर ग्रामसभा नियमित रूप से आयोजित आम बैठक में 'निर्वाचक मण्डल' के लिए जिसे निर्वाचक परिषद् भी कहा जा सकता है दो प्रतिनिधि चुने। इस बैठक में उम्मीदवारों के लिए नाम मांगे जायें और प्रस्तावित तथा समर्थित नामों की सूची बना दी जाय और हो सके, तो एक तख्ते के बोर्ड पर लगा दी जाय। यदि दो नामों से अधिक का प्रस्ताव न हो तो वे अपने आप निर्वाचित प्रतिनिधि बन जाते हैं। अन्य स्थिति में हर नाम पर मतदान होना चाहिए। यह मतदान हाथ उठाकर होना चाहिए। हर उम्मीदवार द्वारा प्राप्त मतों को बोर्ड पर दर्ज किया जाना चाहिए। दो से अधिक उम्मीदवारों की स्थिति में ऐसा मतदान बार-बार होना चाहिए और सबसे कम मत पानेवाले उम्मीदवारों को छाँटते जाना चाहिए। चुनाव का यह आसान और कम खर्चीला तरीका है। ज्यों-ज्यों ग्रामसभाएँ बैठक आयोजित करने, बजट पास करने और अन्य सामूहिक निर्णय करने के अनुभव प्राप्त करती जायेंगी यह चुनाव-पद्धति उनके लिए मामूली बात हो जायगी। निर्वाचन के आरम्भ में जो कठिनाइयाँ आयें वे भी पंचायत-अधिकारी के नेतृत्व में किये गये पूर्वाभ्यास (रिहर्सल) द्वारा दूर की जा सकती हैं।

यह चुनाव हो जाने के बाद निर्वाचन परिषद् बुलानी चाहिए। सारी क्षेत्र के किसी केन्द्रीय स्थान में विधानसभा या लोकसभा के सम्बद्ध निर्वाचन-क्षेत्र की ग्रामसभाओं द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों की बैठक होनी चाहिए। निर्वाचन परिषदों को निर्वाचन के लिए उम्मीदवार खड़े करने चाहिए। इसके लिए निम्नलिखित पद्धति अपनायी जा सकती है

पहले उम्मीदवारों के नाम प्रस्तावित और समर्थित किये जायें और समर्थित नाम पर वोट लिये जायँ। एक निर्दिष्ट प्रतिशत—उदाहरण ३० प्रतिशत—से अधिक मत पानेवाले व्यक्ति विधानसभा या लोकसभा के लिए उस निर्वाचन-क्षेत्र से उम्मीदवार घोषित किये जाने चाहिए।

मेरा विचार है कि लोकतन्त्र की परिपक्वता के लिए—वह लोकतन्त्र चाहे किसी भी प्रकार का क्यों न हो—इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि उसकी प्रक्रियाओं में जितना कम मत-विभाजन हो उतना ही अच्छा है। अधिक स्पष्ट शब्दों में वह जहाँ तक सम्भव हो सके एकतामूलक हो। इसलिए मेरा आग्रह है कि विविध शिक्षण तथा और वैधानिक उपायों द्वारा निर्वाचन-परिषदों को एक सीट के लिए एक उम्मीदवार से ज्यादा न खड़े करने के लिए प्रोत्साहित किया जाय। ताकि आखिरकार अंतिम रूप में पूरे निर्वाचन-क्षेत्र का प्रतिनिधित्व एक व्यक्ति ही

जयप्रकाश नारायण

करता है उम्मीदवारों की संख्या चाहे जितनी हो और चुनाव की विधि कोई भी क्यों न हो। (यहाँ मेरा मतलब दल-मुक्त निर्वाचन से है।) और वर्तमान सिद्धांत में यह बात शुरू से मानी है कि एक बार जो प्रतिनिधि चुन लिया गया और उसका चाहे कितना ही प्रबल विरोध क्यों न हुआ हो वह पूरे निर्वाचन-क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। ऐसा मान लिया जाता है कि वह उनकी भी सेवा करेगा जिन्होंने उसका विरोध किया था। यदि निर्वाचन-परिषदों को केवल एक ही उम्मीदवार चुनने के लिए राजी किया जा सके तो धन, शक्ति और समय की बचत तथा कटुता और दंगे की बर्बादी बचायी जा सकती है। यदि कुछ क्षेत्रों में यह आग्रह सिद्ध न हो पाय तो ऊपर कहे ढंग से चुने गये व्यक्तियों के नाम उम्मीदवारों के रूप में घोषित कर दिये जायें और तब अन्तिम निर्वाचन निम्नलिखित ढंग से किया जाय।

निर्वाचन-परिषद् द्वारा चुने गए उम्मीदवारों के नाम सम्बद्ध निर्वाचन-क्षेत्र की सभी ग्रामसभाओं के पास भेज दिये जायें। फिर हर सभा आम बैठक का आयोजन करे जिसमें हर उम्मीदवार के नाम पर मत लिए जायें। उसके बाद निम्नलिखित दो विकल्पों में एक अपनाया जाय

(१) सबसे अधिक संख्या में वोट पानेवाले उम्मीदवार के बारे में घोषणा कर दी जाय कि यह ग्रामसभा अपने प्रतिनिधि के रूप में इस मनुष्य को उच्च सभा में भेजना चाहती है। ऐसे सब व्यक्तियों में से जिन्हें सभी ग्रामसभाओं में सबसे अधिक वोट मिले उन्हें उस निर्वाचन-क्षेत्र से विधानसभा या लोकसभा (जिसके लिए भी चुनाव हुआ हो) का सदस्य घोषित किया जाय।

(२) विकल्पतः हर उम्मीदवार द्वारा हर ग्रामसभा की साधारण सभा में पाये गये वोटों को दर्ज कर लेना चाहिए। तब प्रत्येक उम्मीदवार द्वारा पूरे निर्वाचन-क्षेत्र की विभिन्न ग्रामसभाओं की बैठकों में प्राप्त वोटों का जोड़ लिया जाय। इस प्रकार सबसे अधिक मत पानेवाला उम्मीदवार उस निर्वाचन-क्षेत्र का सदस्य हो जाता है।

इस तरह यह देखा जायगा कि चुनाव के इस तरीके द्वारा दो बुनियादी बातें पूरी हो जाती हैं। पहली यह कि यह लोकतन्त्र की नींव के ऊपरी स्तर को रचनात्मक ढंग से नीचे के स्तर से सम्बद्ध कर देती है और ग्रामसभाओं की स्थानीयता के संकुचित दायरे से उठाकर प्रतिनिधित्व, शक्ति और सार्थकता प्रदान करती है। दूसरी यह कि हर वालिग नागरिक को लोकतन्त्र की ऊँची-से-ऊँची संस्थाओं के निर्वाचन में भाग लेने का अवसर मिलता है और वह एक संगठित रूप में ग्रामसभाओं और निर्वाचन-परिषदों द्वारा करता है जिससे वे अपने प्रतिनिधियों पर ज्यादा प्रभाव डाल सकते हैं। इस रूप में व्यक्तिगत मतदाता बालू के कणों की तरह बिखरे हुए और असहाय न होकर पत्थर की मजबूत ईंट बन जाते हैं। पत्थर की ईंटों की नींव पर खड़ा हुआ मकान बालू पर बने मकान से कहीं ज्यादा मजबूत होगा।

[लोकस्वराज्य पृ० ४८-४९]

ग्राम-गणराज्य :
लोक-नेतृत्व की नयी आधार-भूमि

शोषणहीन, लोकतांत्रिक तथा अहिंसक जीवन-व्यवस्था का निर्माण करना हमारा लक्ष्य है, जो आज की शहरी, केन्द्रित और हिंसा पर आधारित राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक समाज-व्यवस्था का स्थान ले सके। इस जीवन-व्यवस्था की आधारभूत इकाई ग्राम होगी। हमें 'ग्राम' शब्द के संबंध में स्पष्ट हो जाना चाहिए। यह उपर्युक्त व्यवस्था की सबसे छोटी इकाई होगी। आज की व्यवस्था के गाँव, कस्बों तथा शहरों के टोले, मोहल्ले-वार्ड, ये सब 'ग्राम' में शामिल होंगे। राष्ट्र की सारी जनसंख्या ग्रामों का अंग होगी। आबादी के लिहाज से अनुमानतः एक हजार बालिगों का सामान्य परिमाण और न्यूनतम इकाई एक स्थान पर बसे हुए सौ बालिगों की मानी जा सकती है।

हमारे देश में इस प्रकार के 'ग्राम' को ग्राम-गणतंत्र कहा जाय और हमारा देश इस प्रकार के लोकतांत्रिक ग्राम-गणतंत्रों का भारतीय संघ के नाम से जाना जाय। इसके प्रत्येक सदस्य को आज की तरह नागरिक न कहकर ग्रामीण या ग्रामिक कहा जाय।

आज की दुनिया में चालू शब्द राज्य, राजनीति, नागरिक, नागरिकशास्त्र आदि हैं। ये शब्द पश्चिमी यूरोप से दुनिया में फैले हैं। मूलतः ये शब्द प्राचीन यूनानी और रोमन नगर-राज्यों के हैं—पोलिस (Polis) और सिविटास (Civitas) ये उन नगर-राज्यों के इतिहास के सूचक हैं और संस्कृति के सूचक हैं। और ये ही समस्त पश्चिमी दुनिया की शहरी, केन्द्रित, शोषणयुक्त तथा हिंसा पर आधारित समाज-व्यवस्था के सूचक तथा प्रतीक बन गये हैं। अतः यदि हमें इनसे अलग नयी संस्कृति और नये दर्शन को प्रतिष्ठित करना है, तो इन मूल शब्दों को भी बदलना होगा और नयी भावना के सूचक नये शब्दों को ग्रहण करना होगा। इसका असर सारे विचार और चिंतन पर पड़ेगा। इस दृष्टि से 'ग्राम' शब्द को व्यापकतम अर्थ में ग्रहण करना चाहिए।

भारत के ग्राम-गणतंत्र सारे राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक अधिकारों के मूल स्रोत तथा भण्डार होंगे। ये ग्राम-गणतंत्र संविधान परिषद में एकत्रित होकर अपने अधिकारों, शक्तियों तथा कार्यों में से निश्चित अधिकार और शक्तियाँ प्रखंडों, जिलों, राज्यों तथा संघ को प्रदान करेंगे। जो अधिकार और शक्तियाँ इन बाहर के संगठनों को दे दी गयी हैं, उनके अतिरिक्त सब निःशेष अधिकार और शक्तियाँ स्वाभाविक रूप से ग्राम-गणतंत्रों में मौजूद रहेंगी। यह मूलगामी परिवर्तन नयी संविधान-परिषद बुलाकर भी किया जा सकता है और वर्तमान संविधान में संशोधन करके भी संभव है।

जवाहिरलाल जैन

ग्राम-गणतंत्र में सभी बालिग स्त्री-पुरुषों से मिलकर बनी हुई ग्रामसभा को सर्वोपरि संगठन माना जाय। उसके अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को सर्वसम्मति, सर्वानुमति या निर्विरोध तरीके से चुना जाय। जब और जहाँ यह संभव न हो, वहाँ ७५ प्रतिशत मत को निर्णायक माना जाय। यह मत हाथ उठाकर भी लिया जा सकता है और गुप्त पर्ची द्वारा भी। किसी उम्मीदवार को यदि ७५ प्रतिशत मत मतदान में प्राप्त न हो तो दुबारा मत लिये जायँ और प्रत्येक बार में आखिरी उम्मीदवार को जिसे सबसे कम मत प्राप्त हुए हों, मुकाबिले में से हटा दिया जाय। इस प्रकार ७५ प्रतिशत या इससे अधिकवाले उम्मीदवार का चयन कर लिया जाय।

सामान्यतः ग्रामसभा का अध्यक्ष वहाँ का कार्यकारी प्रमुख हो और उपाध्यक्ष उसकी अनुपस्थिति में स्थानापन्न और उपस्थिति में उसका सहायक हो। अगर गाँव में बाहरी क्षेत्रीय संगठनों में अध्यक्ष कार्यकारी चुना जाय तो उपाध्यक्ष कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में ग्रामसभा का कार्य करे।

प्रखंड की ग्रामसभाओं के अध्यक्षों से मिलकर प्रखंड-सभा बने। इसका प्रधान तथा उपप्रधान उपर्युक्त रीति से ही काम करे। इसी प्रकार प्रखंड-सभाओं के प्रधानों से मिलकर जिला परिषद बने और उसके प्रमुख तथा उपप्रमुख चुने जायँ।

राज्य-सभा तथा संघ-सभा में भी उपर्युक्त पद्धति लागू की जा सकती है। पर इसके बारे में और भी सोचने की आवश्यकता है। इस बारे में इन सभाओं के विधि, निर्माण और कार्यकारी स्वरूप की दृष्टि से भी सोचना होगा।

इस प्रकार ग्रामसभा के अध्यक्ष-उपाध्यक्ष के चुनाव ही प्रत्यक्ष रूप से होंगे। बाकी सब अप्रत्यक्ष चुनाव होंगे। इससे आम चुनाव के वर्तमान खर्च, भ्रष्ट पद्धतियों, प्रलोभनों आदि सबसे मुक्ति मिल सकेगी। दूसरी विशेषता यह होगी कि प्रखण्डसभा से लेकर संघसभा तक सभी में ग्रामसभा के अध्यक्ष ही सदस्य होंगे। इस प्रकार एक छोटे-से-छोटे ग्राम गणतंत्र का अध्यक्ष भी संघ के ऊँचे-से-ऊँचे पद और स्थान तक पहुँच सकेगा और उसका संचालन कर सकेगा तथा ग्राम का सीधा सम्पर्क और प्रभाव संघ तक रह सकेगा।

इस प्रकार की व्यवस्था में राजनैतिक दलों को स्थान प्रायः नहीं रहेगा। जब तक कोई राजनैतिक दल ५-६ लाख ग्राम गणतंत्रों तक न पहुँच जाय। अगर पहुँच भी जाय तो सर्वानुमति या ७५ प्रतिशत मतदान में वह बिखर जायगा। इस प्रकार जनता का मन या सहमति (कन्सेन्सस) या समझौता ही कार्यकारी होगा। राजनैतिक संगठन इतना व्यापक हो जाने से एकाधिकार की प्रवृत्ति नहीं बनेगी और गणतंत्रों के अध्यक्षों को ऊँचे तक पहुँचने में सबको समान अवसर मिलेगा और शहरी एकाधिकार समाप्त होगा तथा शहरी प्रभाव सीमित और अपने अनुपात में रह जायगा। राजनैतिक नेतृत्व के बजाय लोक-नेतृत्व को बल मिलेगा। ●

नेतृत्व : परिवर्तन की प्रक्रिया

मनमोहन चौधरी

सर्वोदय आंदोलन की एक अपेक्षा है कि ग्रामदानों में से नया नेतृत्व पैदा होगा और दूसरी अपेक्षा यह है कि इस नेतृत्व का स्वरूप सामूहिक होगा, गण सेवकत्व का होगा।

नेतृत्व तथा उसके परिवर्तन की प्रक्रिया को समझने के लिए समाज की उस परिस्थिति को भी समझना चाहिए जिसमें से वह पैदा होता है। सामाजिक संदर्भ के बाहर उसका अस्तित्व नहीं होता। परिवार से लेकर राष्ट्र तक समाज की एक अटूट शृंखला होती है और उस समाज के नेतृत्व का बीज-रूप तत्त्व उस सारी रचना में परिव्याप्त होता है। नेता और अनुयायी अन्योन्य संबंध रखते हैं, जैसे ताला और चाभी।

समाज के विकास-क्रम को सामंतवादी, पूँजीवादी, समाजवादी आदि युगों में बाँटने का रिवाज चल पड़ा है। इसे हम मोटे तौर पर, कामचलाऊ दृष्टि से, मान्य कर सकते हैं। सामंतवादी याने जमींदार, राजा, महाराजाओं का जमाना। इसमें राजा या सामंत राज्य का चालक होता है। प्रजा के जीवन पर सार्वभौम अधिकार उसके हाथ में होता है। वह एकछत्र मनमाना शासन चलाता है। प्रजा में मान्यता होती है कि राजा उनका पिता है। पिता के समान उसे प्रजा का पालन करना चाहिए और प्रजा को अच्छी संतान की भाँति उसका आदेश शिरोधार्य करना चाहिए।

यह व्यवस्था सिर्फ ऊपर से लादी हुई नहीं होती। इसकी जड़ ठेठ उस समाज की परिवार-व्यवस्था में पायी जायगी। ऐसे समाज में परिवार पितृ-प्रधान होगा। पिता को उसमें सारे अधिकार होंगे। वह अपने परिवार का छोटा-सा स्वैराचारी राजा ही होगा। अपनी पत्नी तथा संतान के जीवन के हर निर्णय में पिता का आखिरी फैसला होगा। जब तक पिता-माता परिवार में होंगे तब तक लड़के-लड़कियों को बालिग होने पर भी कोई अधिकार नहीं होगा। वे अपना होकर या झगड़ा करके ही अपना स्वतन्त्र कर्तृत्व इस प्रकार के परिवार में प्राप्त कर सकेंगे। पर वे भी स्वतन्त्र होकर अपने पिता के जैसा ही आचरण करेंगे। परिवार रचना की यह परंपरा अखण्ड चालू रहेगी, जब तक वह बदल न जाय।

जैसे परिवार में, वैसे राज्य में पिता के कर्तृत्व की अपेक्षा होती है। लोग मानते हैं कि जैसे बाप के बिना परिवार नहीं चलता, वैसे राजा के बिना राज्य। ऐसे समाज में राज्य और परिवार के बीच गाँव तथा दूसरी इकाइयों के मुखिये भी इसी प्रकार एकछत्र अधिकार रखनेवाले होते हैं। यह मान्यता या मानसिक आदत न बदलने तक नेतृत्व का स्वरूप बदलना संभव नहीं होता, भले ही व्यक्ति बदल जायँ। इंग्लैण्ड और फ्रांस में राजाओं के खिलाफ बगावतें हुईं, पर उनके स्थान पर जो बैठे, क्रामवेल और रोब्सपीयर, उनका तौर-तरीका राजाओं का जैसा ही रहा। रूस में स्तालिन के मामले में भी वैसा ही हुआ।

पितृ-प्रधान समाज के विकास-क्रम में ये बातें स्वाभाविक हैं। इसलिए मान्यता बदलने के लिए परिवार का स्वरूप बदलना जरूरी है। यह किसीकी दुष्ट बुद्धि की उपज नहीं है। बच्चे छोटे होते हैं, तो माता-पिता को उन्हें सँभालना पड़ता है। उनकी ओर से माता-पिता को निर्णय लेने पड़ते हैं। बच्चे भी उनके आश्रय से गुजारा करते हैं। पर उनमें स्वातंत्र्य की प्रेरणा भी होती है। माता-पिता को ठीक-ठीक ज्ञान और समझ हो तो वे बच्चों की स्वतन्त्रता के विकास के लिए अवसर देंगे, उसमें मदद करेंगे, नहीं तो उन पर अपना नेतृत्व चलाते रहेंगे। वह बालिग होने पर भी नहीं छोड़ेंगे।

बच्चों में स्वतन्त्रता के विकास की प्रक्रिया ठेठ माँ के दूध के साथ शुरू होनी चाहिए, 'प्राप्ते तु षोडशे वर्षे' नहीं। गोद के बच्चे को भी दूध पिलाते या टट्टी करवाते समय माँ उस पर अपनी इच्छा लादना चाहती है या बच्चे की इच्छा-अनिच्छा, उसको भला-बुरा लगने का ख्याल रखती है, क्या उसके व्यक्तित्व का आदर करती है? यहीं से नेतृत्व का निर्माण शुरू होता है। समाज के नेतृत्व के स्वरूप में परिवर्तन के लिए यहाँ तक पहुँचना पड़ेगा—यानी तालीम के हर स्तर में इसका ख्याल रखना पड़ेगा।

पर इतना ही नहीं, परिवार से ऊपर बड़े समाज में दूसरे सवाल भी खड़े होते हैं। मार्क्स का यह सोचना गलत था कि आर्थिक स्तर के साथ समाज का स्वरूप अविच्छेद्य रूप से जुड़ा हुआ होता है। कृषि-प्रधान समाज का स्वरूप सामंतवादी हो, ऐसी कोई बाध्यता नहीं है। एँथ्रोपोलाजी की कोई भी किताब उठा लें तो पता चलेगा कि एक ही आर्थिक स्तर के पचास जमातों में पचास अलग-अलग प्रकार की समाज-रचनाएँ पायी मिलती हैं। कई ऐसी रचनाएँ मिलती हैं, जिनमें बिलकुल आदर्श लोकतन्त्र का सा ढाँचा है। इतिहास के ज्ञाता कहते हैं कि उत्तर भारत के कुछ हिस्सों में लोकतांत्रिक राज्य प्राचीन जमाने में भी थे।

पता नहीं, दुनिया में सामंतवाद ही क्यों ज्यादा फैला, लोकतांत्रिक रचनाएँ क्यों नहीं फैलीं? शायद बड़े राज्य या साम्राज्य के लिए आवश्यक राज्य-तन्त्र, फौज आदि के संगठन के लिए सामंतवादी ढाँचा अधिक उपयोगी था। यानी उसका जन्म तो हुआ एक खास सामाजिक संदर्भ में से, पर आगे जाकर वह राज्यकर्ता और साम्राज्यवादी वर्ग के लिए उपयोगी चीज साबित हुई और फिर उन्होंने उसको फैलाया।

खैर, समाज के संगठन में दो प्रकार के नेतृत्व की आवश्यकता होती है। एक को प्रेरणा का नेतृत्व कह सकते हैं। समाज में कुछ नया काम शुरू करने, अभियान करने, नया संस्कार स्वीकार करने या पुराना छोड़ने के लिए लोगों को प्रभावित करने का, उनके सामने नया सुझाव रखने का काम करना होता है। नयी फसल बोनी है, तालाब खोदनी

है, पूनम के दिन व्रत रखना है, बच्चों को स्कूल भेजना है, या भूदान में जमीन देनी है—इस प्रकार के काम तो हरेक के लिए अलग करने के होते हैं; नेतृत्व का काम होता है बहुत सारे लोगों को इनके लिए प्रेरणा देने का।

अधिकार और प्रतिष्ठा भेद का उद्भव

पर दूसरे प्रकार के काम होते हैं साथ मिलकर करने के। लड़ाई करनी है, सड़क बनानी या नहर खोदनी है, हाथी पकड़ना है, सेक्रेटेरियट चलाना है—ऐसे काम में एक समय एक साथ बहुत सारे लोगों को एक निश्चित प्रणाली से काम करना होता है। *इसमें संगठन के सारे सवाल खड़े हो जाते* हैं। निश्चित समय पर निश्चित संख्या में लोग इकट्ठे हों, निर्देश के अनुसार अपने-अपने हिस्से का काम ठीक-ठीक करें, यह जरूरी होता है। हरेक के पास सूचना या आदेश पहुँचाने के लिए समर्थ तंत्र की जरूरत होती है।

इन सब कारणों से समाज में अधिकार-भेद और प्रतिष्ठा-भेद का उद्भव हुआ। कुछ वर्गों को आदेश देने का अधिकार और कुछ को पालने का *कर्तव्य। सारे समाज* में वर्ग या जातियों में प्रतिष्ठा का ऊँच-नीच क्रम निश्चित हुआ, जिसमें हुक्म देने की और हुक्म तामील करने की निश्चित शृंखला कायम हुई। सामंतवादी या परंपरागत समाज में यह प्रतिष्ठा-भेद (हायरार्की) वंश या जन्म के आधार पर तय होता है। राजा का लड़का राजा, कोतवाल का लड़का कोतवाल, किसान का किसान।

इसीलिए उस वृद्ध भूमिहार या राजपूत किसान ने *अपना विरोध व्यक्त किया था* कि—"आप लोग हमारी जमीन ले लेंगे इसके लिए मैं तैयार हूँ। पर वे मजदूर मेरे साथ एक ही सतह पर ग्रामसभा में बैठेंगे, यह मैं जब तक जिंदा हूँ तब तक होने नहीं दूँगा। मजदूर निर्णय लेनेवाली और आदेश देनेवाली जमात का नहीं है। उसमें उसके शामिल होने से तो सारे समाज की रचना ही टूट जायगी!

प्रेरणा का सवाल

दूसरा सवाल है प्रेरणा का। काम ठीक-ठीक करने के लिए प्रेरणा कैसे मिले? परंपरागत समाज में परंपरा के लिए आदर ही प्रेरणा का स्रोत होता है। जिसका जो परंपरागत कर्तव्य है, वह करते रहना चाहिए, *नहीं तो मार पड़ेगी, घर जलेगा।*

पूंजीवादी समाज के व्यवस्था-तंत्र में स्थान जन्म या वंश से तय नहीं होता, योग्यता से आँका जाता है, ऐसा कहते हैं और यह कुछ हद तक सही भी है। क्योंकि पूंजीवाद के साथ लोकतंत्र भी ऐतिहासिक संयोग से जुड़ा हुआ है। इसके अलावा पूंजीवाद उद्योग, व्यापार आदि के संगठन और संचालन में खास योग्यता, ज्ञान और अनुभव की जरूरत होती है। परंपरागत *आदत से काम बहुत कम चलता है।* इसलिए पूंजीवादी रचना में सामान्यतया उच्चतर कर्तृत्व के साथ उच्चतर योग्यता जुड़ी हुई होती है। पर इस योग्यता की माप पैसे से होती है और योग्यता प्राप्त करने के लिए काफी पैसे की जरूरत होती है। इसलिए पूंजीवाद में पैसे के आधार से समाज का प्रतिष्ठा-क्रम बनता है।

पूंजीवाद में कर्म-प्रेरणा का नियमन पैसे से होता है। अच्छा काम करने पर *ज्यादा पैसा मिलता है, काम ठीक न करने* पर कटौती होती है।

साम्यवादी तंत्र की रचना—रूस तथा दूसरे योरोपीय राष्ट्रों में—पूंजीवादी तंत्र से मिलती-जुलती है। शुरू में कर्म-प्रेरणा के साधन के तौर पर पैसे का उपयोग खतम करने का ध्येय रखा गया था। पर बाद में वह छोड़ दिया गया। चीन में यह प्रयत्न चालू है, पर उसके बारे में जानकारी कम मिलती है।

साम्यवाद में एक यह खूबी है कि मेहनत करनेवाले स्तरों में से कम्युनिस्ट पार्टी की मार्फत होनहार जवानों को भर्ती करके अच्छी तालीम देने की व्यवस्था वहाँ है। इसलिए ऊपर के कर्तृत्व के स्थानों पर सामान्य जनता में से जितने लोग पहुँच पाये हैं, उतने और किसी व्यवस्था में नहीं। हाँ, पूंजीवादी मुल्कों में भी कुछ 'मोबिलिटी' होती है, याने निचले स्तर के लोग ऊपर के स्तर में पहुँच जाते हैं। पर उसका पैमाना बहुत कम होता है।

नये नेतृत्व के आयाम

अब नये नेतृत्व की चर्चा करेंगे तो उसके कई आयाम ध्यान में आयेंगे। एक तो यह कि हम चाहते हैं कि गाँवों में कर्तृत्व-शक्ति और अभिक्रम पैदा हो। *ऊपर की ओर न ताकते हुए अपनी सूझ* से वे अपनी तरक्की के लिए काम करें। इसके लिए बाह्य तंत्र का ढाँचा हमने विकेंद्रीकरण का सोचा है—*याने गाँवों के* पास अधिक-से-अधिक कर्तृत्व हो। पर यह बहुत संभव है कि विकेंद्रित गाँव का नेतृत्व पुराने सामंतवादी तर्ज का ही हो, और कई ग्रामदानी गाँवों में भी यही देखने को मिला है। इसलिए नये नेतृत्व का दूसरा आयाम कि वह किसी वर्ग, जाति या वंश *के हाथ में न रहे, सारे समाज का उसमें* हिस्सा हो, सबका समान कर्तृत्व हो, यह ध्येय उतने से सधता नहीं है।

पुराने नेतृत्व को हटाने के लिए कई जगह हमारे साथियों ने यह कोशिश की कि नये लोगों को हर प्रकार का समर्थन देकर पुराने नेता के सामने खड़ा किया जाय। *इसमें जहाँ सफलता मिली, वहाँ नेता तो नये* हुए, पर उनके काम करने का ढंग पुराना ही रहा और कई जगह अपने साथी से पुराने नेता की शक्ति अधिक साबित हुई और कार्यकर्ता को भी भागना पड़ा।

पुराना ढाँचा बदलने के लिए पुरानी मान्यता बदलनी पड़ेगी। ग्रामसभा सब बालिगों को लेकर बनेगी। इस सिद्धान्त के प्रचार से तो सबके सोचने के अधिकार का उद्घोष होता है, पर सोचने में सब शामिल होते हैं ऐसा *नहीं।* अच्छे-से-अच्छे ग्रामदान में भी तो बहनें ग्रामसभा में विरली ही आती हैं। वैसे भूमिहीन मजदूरों का भी योगदान कम रहता है। कुछ दिमाग चला कर कुछ

योगदान करने का तथा निर्णय में अपनी राय भी शामिल करने का अधिकार और कर्तव्य, इतने से उनके पास वास्तविक और कीमती चीज नहीं बनती। अपना भाग्य बदल सकता है और उसे बदलने में अपना भी कुछ कर्तृत्व है यह भान जब तक न हो, अपने जीवन को बदलने की आकांक्षा जब तक पैदा न हो, तब तक नागरिक समानता का अधिकार कोरे कागज पर ही रहेगा।

ध्यान देने की बात है कि जहाँ साम्यवादी या दूसरी वामपक्षी पार्टियाँ लोगों में काम करती हैं वहाँ अक्सर अपने भाग्य बदलने की यह आकांक्षा पैदा होती है, उसे बदलने की अपनी क्षमता का भी थोड़ा भान होता है। यह इसलिए कि वे संघर्ष पर, लड़ करके हासिल करने पर, जोर देते हैं। ग्रामदान आन्दोलन में जमीनवालों की ओर ही हमारा ध्यान होता है। वे मान लें तो भूमिहीनों को जमीन मिल जाती है। इसलिए इसकी प्रक्रिया में भूमिहीनों का आत्मविश्वास और अभिक्रम जगाने की कोई प्रक्रिया तत्काल नजर नहीं आती, लेकिन है।

परम्परा के खिलाफ एक शान्त बगावत

एक तो यह कि जैसे ग्रामदान-तूफान के पहले चरण में बिहार में भूमिहीनों के छोटे-छोटे टोले ही ग्रामदान में आये। उस समय कइयों को लगा कि यह बेकार की बात है और आन्दोलन के साथ खिलवाड़ हो रहा है। पर वास्तव में यह पुरानी मान्यताओं को तोड़नेवाली एक महत्त्व की प्रक्रिया थी। गरीब लोगों ने तब तक गाँव के बड़े लोगों, प्रतिष्ठित नेताओं से बिना पूछे या उनकी इच्छा के विरोध में कोई काम किया हो नहीं था। इसलिए भूमिहीन गरीबों की यह ग्रामदान घोषणा इस परंपरा के खिलाफ एक शान्त बगावत ही थी। उसमें चट्टान टूटी और आखिर बड़े लोग भी ग्रामदान में आये। यह उनके आत्म-विश्वास और नीति-धैर्य बढ़ाने में बहुत कारगर साबित हुआ होगा।

दूसरा साधन है ग्रामसभा में सर्व-सम्मति के नियम का। पहले पहल तो सर्व-सम्मति इसी प्रकार होती होगी कि गाँव के दस-पाँच मुख्य लोगों ने जो कुछ प्रस्ताव रख दिया उसीका समर्थन सब कर देते होंगे। मतभेद होता होगा तो इन्हीं पाँच दस के बीच। पर बाकी लोगों को—खास करके अब तक दबे हुए गरीब और भूमिहीन लोगों को—अपनी दृष्टि, अपनी माँगें, अपने सुझाव, ग्रामसभा में रखने के लिए प्रेरित किया जाय तो यह सर्व-सम्मति का नियम पुराने ढाँचे को परिवर्तित करने का एक 'लीवर' बन सकता है। क्योंकि उसमें गरीब मजदूर वर्ग की सम्मति का अभाव एक 'वीटो' का काम करेगा। उसके बिना निर्णय स्थगित रहेगा।

मान्यताएँ, मानसिक आदतें बदलने लगेंगी तो घर की तालीम भी कुछ हद तक अपने आप बदलेगी। फिर 'ऊँचे' लोगों के सामने झुककर बरताव करने की, उनके सामने मुँह न खोलने की तालीम बच्चों को नहीं मिलेगी। फिर भी परम्परा का सारा दबाव हटाने के लिए तालीम के हर स्तर पर मौलिक परिवर्तन करना पड़ेगा। यह बहुत ही महत्त्व का विषय है।

नेतृत्व के विविध पहलू

आजकल समाज विज्ञान में नेतृत्व के विविध पहलुओं का पृथक्करण किया गया है। चर्चा के विषय से सम्बन्धित जानकारी मुहैया करना, नीतिगत भूमिका स्पष्ट करना, व्यावहारिक योजना बनाना और कार्यान्वित करना, प्रोत्साहन देना, आपस के तनावों को मिटाकर सामंजस्य स्थापित करना आदि कई भूमिकाएँ 'नेतृत्व' के अन्तर्गत आती हैं। ऊपर की योग्यताएँ अलग-अलग व्यक्तियों में विविध मात्राओं में होती हैं। हरेक को अपनी योग्यता और क्षमता के अनुसार भूमिका अदा करने का अवसर देकर सबके सामंजस्य से काम चलाना गण-सेवकत्व या सामूहिक नेतृत्व की माँग है। इसके विकास का कोई बना-बनाया तरीका किसीके पास नहीं है। इसमें तो प्रयोग और अनुभव के आधार पर आगे बढ़ना होगा। बेशक, समाज विज्ञान की मदद इसमें कारगर होगी।

निर्णय लेने तथा काम अंजाम करने में विचार, जानकारी और कुशलता का बहुत अधिक महत्त्व होता है। नेतृत्व शक्ति के विकास के लिए आवश्यक है कि ऊपर की ये तीन बातें लोगों के पास पहुँचायी जायँ। जन-शक्ति के बारे में एक धारणा यह है कि जनता जाग्रत होगी और पुरुषार्थ करेगी तो सारी समस्याएँ हल करने की शक्ति उसमें अपने आप निखर उठेगी। लोगों की सहज बुद्धि ही पर्याप्त है। यह एक अर्ध सत्य है।

प्रचण्ड जन-पुरुषार्थ का अलौकिक दर्शन सम्भव

जब तक लोगों में आत्मविश्वास व पुरुषार्थ नहीं होगा तब तक उनकी सहज-बुद्धि का भी उपयोग करने का उनको सूझता नहीं। एक बार असहायता और पर निर्भरता की वृत्ति खतम हो जाती है तो बुद्धि काम करने लगती है, नयी-नयी सूझ पैदा होती है। सोयी हुई पुरुषार्थ-शक्ति एकदम जाग उठे तो प्रचण्ड पुरुषार्थ का अलौकिक सा दर्शन हो सकता है। पर इस पुरुषार्थ को सही दिशा में प्रवाहित करने के लिए, विचार, जानकारी और कुशलता की जरूरत है। जनता में उपलब्ध सहज-बुद्धि एक हद तक ही आसपास की समस्याओं को हल करने में मदद कर सकती है। उससे आगे उसकी शक्ति बढ़ाने के लिए ऊपर की तीन चीजें उसको उपलब्ध होनी चाहिए। छोटे से नाले पर विकास-मण्डवाले पुल बनवा देंगे, इस भरोसे गाँववाले बरसों बैठे रहें। अपने पुरुषार्थ का सूझा तो दो ताड़ के पेड़ डालकर पुल बनवा लेने में एक दिन भी न लगा। पर बड़ी नदी पर पुल बाँधना हो तो यह सहज-बुद्धि और सूझ पर्याप्त नहीं होगी। हाँ, यह सावधानी रखनी होगी कि विचार या तकनीक लोगों पर लादी न जाय।

नये नेतृत्व की पहुँच समाज के विविध क्षेत्रों में तथा उच्चतम स्तर तक होना आवश्यक है, यह ध्यान में रखना होगा। विकेन्द्रीकरण और ग्रामस्वराज्य की बात हम

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, ७ जून, '६८

सोचने है, तो गाँव में हर एक को 'पार्टीसी-पेशन' का मौका मिले और उनके लिए प्रत्यक्ष लोकतंत्र का ढाँचा विकसित हो, यह भी जरूरी है। हमारे सोचने की दिशा यही रही है कि गाँव का तंत्र ऐसा हो, जिसमें जिम्मेवारी बिखरी हुई रहे, किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के हाथों में कम-से-कम रहे। गाँव के स्तर पर यह ठीक भी है। पर गाँव के ऊपर के स्तर पर व्यक्तियों के हाथ में निर्णय तथा संचालन की जिम्मेवारी देने की आवश्यकता अधिक रहेगी। नेतृत्व के सारे दूसरे 'फंक्शन्स' को भी इन स्तरों में, तथा शासन, उद्योग-धंधे, संस्कृति, तालीम आदि हरेक क्षेत्र में आवश्यकता होगी। जिम्मेवारी के हरेक स्थान पर योग्य मनुष्य को चुनकर पहुँचाने की प्रक्रिया का महत्त्व तो है ही, साथ ही समाज के मेहनतकश स्तरों से पर्याप्त संख्या में लोग ऐसे स्थानों पर पहुँचने की योग्यता प्राप्त करें और वहाँ पहुँचें, इसकी प्रक्रिया या तंत्र का भी विकास करना पड़ेगा।

पैसे का सम्बन्ध तोड़ना है

आर्थिक दृष्टि से आगे बढ़े हुए देशों में इस प्रकार से कुछ लोग तो "नीचे" के स्तर से ऊपर के स्थानों पर पहुँचते रहते हैं, पर पूँजीवादी समाज में, उस समाज के गुण के अनुसार उनका सम्बन्ध "नीचे" वर्गों से कट जाता है। वे ऊपर के वर्ग में शामिल हो जाते हैं। मैंने पहले कहा है कि साम्यवादी देशों में मेहनतकश जनता में से होनहार युवक-युवतियों को चुनकर बड़ी जिम्मेवारियों के लिए तैयार किया जाता है। इस प्रकार के तंत्र और उसके अनुकूल प्रक्रियाएँ यहाँ भी खड़ी करनी होंगी।

पर साम्यवादी राष्ट्रों में भी एक बार ऊपर पहुँचे हुए लोग वहीं स्थिर हो जाते हैं। उनके बच्चों को सामान्य लोगों की तुलना में तालीम आदि की सहूलियतें अधिक मिल जाती हैं और वे भी वहीं सरक जाते हैं और इस तरह वहाँ भी इनका स्थायी स्तर बनता जा रहा है।

इसके साथ कर्म-प्रेरणा (इंसेंटिव) का सवाल जुड़ा हुआ है। आधुनिक समाज में योग्यता ही अधिक जिम्मेवारी के स्थान पर पहुँचने का मानदण्ड है, पर योग्यता का मानदण्ड पैसा है। अधिक जिम्मेवारी के साथ अधिक मेहनताना जुड़ा हुआ है। रूस आदि में इसको टालने का प्रयत्न हुआ, पर सफलता नहीं मिली। नेतृत्व और जिम्मेवारी के साथ जन्म, वंश का सम्बन्ध टूट चुका है। अब उसके साथ पैसे के सम्बन्ध को तोड़ना है। हमें इसमें सफल होने के लिए क्या *करना होगा* ?

स्तर-भिन्नता और कर्म-प्रेरणा

पिछड़े हुए देश में इसमें एक खास कठिनाई है। आधुनिक कुशल संगठन की जिम्मेदारी के पद को संभालने के लिए जिस तरह खास योग्यता की जरूरत होती है, उसी तरह साथ-साथ कुछ विशेष भौतिक साधनों की भी। ऐसे साधनों का होना—जैसे टेलीफोन, मोटर या मेज-कुर्सी—उसके और जनता के जीवन-मान में भी काफी फरक पैदा करता है। यह फरक कुछ अधिक सम्पन्न देशों में उतना नहीं होता, जितना विपन्न देशों में होता है। कोरापुट का सामान्य आदिवासी आज जिस स्तर पर जीवन बिताता है उसी स्तर पर रहकर एक कोआप-रेटिव का मंत्री भी अपना काम व्यवस्थित रूप से और कुशलतापूर्वक कर नहीं सकता। इसलिए जब तक जनता का सर्व-सामान्य जीवन-स्तर काफी ऊँचा नहीं उठता तब तक विकास की प्रक्रिया में इस प्रकार की विषमता का पैदा होना अनिवार्य होगा। पर बावजूद इसके अगर जीवन-मान और भौतिक साधनों का सम्बन्ध प्रतिष्ठा और कर्म-प्रेरणा से तोड़ा जा सकेगा तो इससे होनेवाली हानि टल सकती है। फिर कर्म-प्रेरणा किस रूप से दी जाय, यह सवाल बाकी रहता है। सर्वोदय आंदोलन या दूसरे कई समाजसेवी तथा राजनैतिक संगठनों में पद के साथ पैसे का सम्बन्ध नहीं होता। उसमें पुरुषार्थ के लिए, अपनी सामर्थ्य प्रदर्शित करने के लिए जो अवसर मिलता है, दूसरों से जो आदर मिलता है, उसीमें से पर्याप्त कर्म-प्रेरणा मिलती है। सामाजिक मनोविज्ञान के तज्ञों का कहना है कि मनुष्यों में ये दोनों प्रेरणाएँ सर्वत्र काम करती हैं। यहाँ तक कि पूँजी-वादी समाज में—जहाँ मुनाफे की प्रेरणा मुख्य मानी जाती है—वहाँ भी ये दो प्रेरणाएँ काम करती रहती हैं। अब सवाल है कि इनको व्यापक समाज के संगठन की बुनियाद में कैसे डाला जाय। समाज की मान्यता में परिवर्तन का महत्त्व तो है ही।

नेतृत्व की अदला-बदली

समाज के आर्थिक ढाँचे में से पूँजीवाद का तत्त्व निकल जायेगा तो उतने से पैसे की प्रेरणा-शक्ति खतम नहीं होगी। रूस में खतम नहीं हुई है। अपने देश की खादी-ग्रामोद्योगों की संस्थाएँ इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग हैं। उनके ऊपर के नेतृत्व को पैसे की प्रेरणा नगण्य-सी रहती है। ऐसी परम्परा को अधिक सक्षम और शुद्ध करके आर्थिक क्षेत्र में व्यापक करने पर एक हल मिल सकता है।

फिर समस्या है कि 'ऊपर' के स्थानों पर पहुँचे हुए लोगों का वर्ग स्थायी रूप से अलग और पक्का न बन जाय। नेतृत्व के स्थान पर नीचे से नये-नये लोग आते रहें और पुराने नेता समाज में अपने पुराने स्थान पर वापस जाते रहें, इसीमें इस समस्या का समाधान है। अमरीका आदि में ऐसा होता है। सरकार के ऊँचे-से-ऊँचे पद पर काम किया हुआ मनुष्य वापस जाकर किसी कालेज का प्रोफेसर या उद्योग का मैनेजर बनता है या अपने फार्म पर खेती शुरू करता है। पर पिछड़े हुए देश में इसमें यह भी एक दिक्कत है। क्योंकि ऊँचे स्तर की सामर्थ्य एक दुष्प्राप्य चीज होती है।

एक सामर्थ्यवाले मनुष्य को फेंककर दूसरे को ले लेना आसान नहीं होता। फिर संक्रमण-काल में जितने भी सामर्थ्यवान लोग तैयार होते हैं, सब काम में लग जाते हैं। सामर्थ्य की तालीम भी काफी खर्चीली होती है। इसलिए अदला-बदली के लिए अवसर कम रहता है। तो, इस मामले में भी एक समाधानकारक स्थिति पैदा होने के लिए एक लम्बी अवधि चाहिए।

है, और चलेगी भी तो उस सरकार के द्वारा देश की किसी समस्या का हल नहीं हो सकता है। आज देश की विभिन्न पार्टियों की जो स्थिति और रवैया है, उसे देखकर हमें इसी नतीजे पर पहुँचना पड़ता है। और आज इसका कोई लक्षण नहीं दिखाई पड़ रहा है कि निकट भविष्य में कोई एक पार्टी स्थिर सरकार (राज्यों में तथा केन्द्र में भी) बनाने में समर्थ हो सकेगी।

इस वस्तुस्थिति की पृष्ठभूमि में विनोबाजी ने २ अक्तूबर १९६८ तक बिहारदान पूरा करने का आह्वान बिहारवासियों को किया है। उन्होंने इसे 'लास्ट एण्ड बेस्ट फाइट' की भी संज्ञा दी है। उनका मानना है कि २ अक्तूबर '६८ तक *बिहारदान पूरा* होता है, तो १९७२ के चुनाव के पूर्व ३ वर्ष का समय रहेगा, जिसमें पूरी शक्ति लगाकर ग्रामदान की कल्पना के अनुसार ग्रामों का संगठन खड़ा किया जायगा।

ग्रामदान की योजना में गाँव का प्रत्येक आदमी गाँव के सब लोगों की चिन्ता करेगा, फिर गाँव का कार्य आम लोगों की राय से चलाने का अभ्यास करेगा। इस प्रकार से संगठित ग्रामसभाओं (विलेज रिपब्लिक्स) के प्रतिनिधि १९७२ के चुनाव के समय अपने चुनाव-क्षेत्र के लिए आमराय से अपना प्रतिनिधि चुनाव में खड़ा कर सकते हैं। निश्चय ही, इस प्रकार से जो उम्मीदवार खड़े किये जायँगे, भले ही उनका राजनैतिक विचार कुछ भी हो, उनके लिए यह अनिवार्य शर्त होनी चाहिए कि वे किसी पार्टी के उम्मीदवार न बनें, ताकि वे पूर्ण रूप से अपने चुनाव-क्षेत्र के ग्रामसभा-संघ के प्रति ही उत्तरदायी रहें और उसके हित के लिए अपने विवेक से कार्य कर सकें। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि सहयोग एवं त्याग के आधार पर गठित ग्रामसभाओं के प्रतिनिधियों द्वारा पक्ष-निरपेक्ष जो उम्मीदवार चुनाव में खड़े किये जायँगे उन्हें किसी के लिए पराजित करना कठिन होगा।

हम कल्पना करें कि पूरे बिहार के *लगभग सभी क्षेत्रों से यदि ऐसे प्रतिनिधि* चुनकर विधान-सभा में आ जाते हैं, तो जहाँ

उत्तरकाशी जिलादान

—जयप्रकाशजी का संदेश—

उत्तरकाशी की जनता को जिलादान के लिए हार्दिक बधाई! विशेषकर उन समाज-सेवियों को बधाई, जिनके अथक परिश्रम का ऐसा महत्त्वपूर्ण परिणाम हुआ है। उत्तरकाशी उत्तर-प्रदेश का एक पिछड़ा और उपेक्षित क्षेत्र रहा है, फिर भी यह गौरव उसको प्राप्त हुआ है कि अपने विशाल प्रदेश का गांधी-विनोबा के मार्ग पर वह ऐसा अग्रणी बना है। मुझे आशा है कि उत्तर-प्रदेश के अन्य जिलों के लिए अब द्वार खुल गया है।

जिलादान जितनी प्रसन्नता का विषय है, उतनी ही जिम्मेदारी का भी है। जिलादान केवल भित्तिमात्र है, जिसके ऊपर नव-समाज तथा नव-*जीवन की रचना करनी होगी। ३० मई के जिला-सम्मेलन में* इस ओर विशेष ध्यान देना होगा।

अपनी हार्दिक शुभकामनाओं के साथ,

पटना, १६-५-'६८ —जयप्रकाश नारायण

आज का मुख्यमंत्री अपनी एक पार्टी का नेता होता है, चाहे पूरी विधान-सभा की दृष्टि से उस पार्टी का अस्तित्व कितना ही नगण्य क्यों न हो, और जिसके समर्थकों की संख्या के घटने-बढ़ने पर सरकार का अस्तित्व निर्भर करता है, और जिसके कारण ही आज यह दल-बदल का घृणित खेल भी चल रहा है—उसकी जगह पूरी विधान-सभा की आमराय से चुना गया उसका नेता मुख्यमंत्री होगा। वैसी स्थिति में आज की अस्थिरता की गुंजाइश ही नहीं रहेगी। फिर दल-बदल के लिए भी स्थान नहीं रह जायगा।

यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार की परिस्थिति के निर्माण से ही आज की *दलगत-राजनैतिक व्यवस्था की जगह सच्चे* लोक-प्रतिनिधित्व के आधार पर सच्चा लोक-राज्य स्थापित हो सकेगा। उस सरकार के नित्य टूटने-बनने का खतरा नहीं रहेगा। जो पार्टी राज्य में है, उसके अतिरिक्त सभी पार्टियाँ विरोधी ही मानी जायँ, यह स्थिति भी बदल जायगी। विरोधी पार्टियाँ आज सभी *अच्छे-बुरे कार्यों का हड़ताल, प्रदर्शन, सत्याग्रह* दुराग्रह, घेराव आदि के द्वारा विरोध करके अपने नाम को सार्थक बनाने में प्रयत्नशील रहती हैं और इससे देश में आज जिस परिस्थिति का निर्माण हुआ है उससे सभी परिचित और परेशान हैं। लेकिन इस नयी योजना में विरोध के लिए विरोध-प्रदर्शन की न तो आवश्यकता रहेगी और न गुंजाइश। इस पक्ष-विपक्ष की लड़ाई में देश की शक्ति का जो अपव्यय हो रहा है उसकी जगह इस पद्धति में पूरी शक्ति का लाभ मिलने की संभावना पैदा होगी।

आशा है, लोकतंत्र में (मात्र पार्टी-तंत्र में नहीं) निष्ठा रखनेवाले लोग सच्चे लोक-प्रतिनिधित्व के आधार पर लोकराज्य की स्थापना के प्रयत्न में सहायक बनेंगे और *विनोबा के आह्वान को सार्थक बनाने में* अपनी पूरी शक्ति लगायेंगे। निश्चय ही अगर १९७२ के चुनाव में ग्रामदान, बिहारदान का 'इम्पैक्ट' नहीं हो सका और आज का ही नाटक दुहराया गया तो लोकतंत्र का वर्तमान ढाँचा भी कायम रह सकेगा, यह कहना अत्यन्त कठिन है। और इसीलिए *विनोबा ने इसे अहिंसा की 'लास्ट फाइट'* की संज्ञा दी है।●

पराजित अच्छे इरादों का दुखान्तक' (ट्रेजेडी आव गुड इन्टेन्शंस मेल-डिफीटेड) होकर रह जाय ?

ये प्रश्न इसलिए उठते हैं क्योंकि अभी तक यह आन्दोलन हमारे मन से चला है, जनता की माँग से नहीं। जनता के सामने हमने एक विचार रखा, उसे समझाया-बुझाया और उसका हस्ताक्षर लिया, जिसे हमने उसकी सम्मति का प्रतीक माना। कभी-कभी हमको इतना भी नहीं करना पड़ता, फिर भी हस्ताक्षर मिल जाता है! शंका होती है कि क्या इस स्थिति को वास्तविक माना जा सकता है? क्या कार्यकर्ता, और क्या जनता, इन हस्ताक्षरों के पीछे 'कमिटमेण्ट' किसका है? वह कौनसी शक्ति होगी जो ग्रामदान की इस अन्यमनस्क स्वीकृति को संकल्प में परिणत करेगी? भाषण, शिविर, सेमिनार, पदयात्रा, हस्ताक्षर आदि जितनी भी प्रक्रियाएँ हैं, वे सब प्रतीक हैं। क्या इन प्रतीकों और प्रक्रियाओं को अपने में पूर्ण, वास्तविक, क्रान्तिकारी क्रिया मान लेना भूल नहीं है? यह भूल क्यों हो रही है, और कैसे इसका परिमार्जन होगा? इसमें शक नहीं कि जिस हद तक हमने प्राप्ति के कार्य में ढिलाई बरती है, और मन में किसी तरह काम पूरा कर लेने की लालच रखी है, उस हद तक हमने आन्दोलन को कमजोर किया है। इस भूल का सुधार अब तत्परतापूर्वक होना चाहिए। विचार-निरपेक्ष ग्रामदान का कोई अर्थ नहीं होता। अब समय सही ग्रामदान प्राप्त करने का है, मात्र ग्रामदान की हवा बनाने का नहीं। हम कब तक कहते रहेंगे कि हवा बन रही है?

ग्रामसभा में अन्तर्विरोध

प्राप्ति के बाद पुष्टि के कार्य के जो अनुभव आ रहे हैं उनकी ओर हमारा ध्यान जाना चाहिए। सबसे मुख्य बात है ग्रामसभाओं की। एक-एक ग्रामसभा हमारी क्रान्ति की एक-एक सेल है। लेकिन हम देख रहे हैं कि बन जाने बाद जो ग्रामसभाएँ कुछ भी सक्रिय होने की कोशिश कर रही हैं उनमें एक अजीब उलझन पैदा हो रही है। अगर यह उलझन न सुलझी तो ग्रामसभाओं को समाप्त कर देगी। वह उलझन यह है कि ग्रामदान का संरक्षण पाकर जहाँ एक ओर मजदूर और बँटाईदार सजग (कान्शस) होते दिखायी देते हैं, वहाँ मालिक चिन्तित (टेन्स) हो जाते हैं। एक की चेतना दूसरे की चिन्ता बन जाती है, स्फूर्ति नहीं बन पाती। परिणाम यह होता है कि एक-दूसरे के करीब आने की जगह दोनों मन में एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं। मालिक-मजदूर का यह अलगाव, जो पहले से ही कम नहीं है, तुरत तनाव बन जाता है। मालिक को ग्रामसभा खतरनाक लगने लगती है, और मजदूर को बेजार। मजदूर और बँटाईदार का सजग होना, उनमें नयी प्रतीति का पैदा होना, अपने में एक शुभ लक्षण है, लेकिन ग्रामदान के मंच पर हितों के संघर्ष की नहीं, हितों की एकता की क्रिया, दिखायी देनी चाहिए। वह नहीं दिखायी दे रही है। ग्रामदान की यह गुत्थी सुलझनी चाहिए। मेरा ख्याल है कि इस वक्त ग्रामसभा के सामने इससे बड़ा दूसरा कोई प्रश्न नहीं है। अगर हम यह मानते हों कि ग्रामसभा का मोर्चा भी प्राप्ति की ही तरह किसी तरह हल हो जायगा, तो यह घातक भूल होगी। अगर ग्रामीण जीवन के अन्तर्विरोधों का हल करने का रास्ता न निकला—और शीघ्र न निकला—तो गाँव के लोग ग्रामसभा से अपना हाथ खींच लेंगे। और, तब हमारे आलोचक मालिकों और मजदूरों दोनों से कहेंगे: 'हम तो पहले ही कहते थे कि इस भ्रमजाल से क्या होनेवाला है?' इसका हमारे पास क्या उत्तर होगा? इसलिए हर दृष्टि से ग्रामसभा एक अत्यन्त नाजुक पौधा है। उसे विचार के जल से सींचकर बढ़ाने की कला हमारे पास नहीं है। उसे प्राप्त करने में देर नहीं करनी चाहिए।

रचनात्मक कार्य के नये आयाम

वस्तुतः ग्रामसभाओं का प्रश्न शिक्षण और संगठन का है। लेकिन शिक्षण कौन करे? कहाँ हैं वे कार्यकर्ता जिन्हें अपने आन्दोलन के वैचारिक और व्यावहारिक पहलुओं का इतना अभ्यास हो कि वे लोक-चेतना को 'सब्लिमेट' कर ग्रामसभाओं के अन्तर्विरोधों को दूर कर सकें? जब लोक-शिक्षण की सबसे अधिक आवश्यकता है तो उसका पूर्ण अभाव दीखता है। वास्तव में यह काम कार्यकर्ताओं से अधिक स्वयं गाँव के सजग नागरिकों का है। ऐसे सजग नागरिक गाँवों में हैं भी, लेकिन उनके और हम संस्था के लोगों के बीच शंका और दुराव की एक ऊँची मनोवैज्ञानिक दीवाल खड़ी है। हम अपनी अगुआई छोड़ना नहीं चाहते, और वे हमारी अगुआई में आगे बढ़ना नहीं चाहते। अपवाद के कुछ इनेगिने क्षेत्रों में जहाँ इस स्थिति में थोड़ा सुधार है, और लोकनिष्ठ, सर्व-सापेक्ष शक्ति बनाने की इनकी भी कोशिश हुई है, वहाँ कुछ लोग उभरते हुए दिखायी देते हैं, लेकिन यह प्रश्न बना ही हुआ है कि उभरनेवाले को टिकाया और बढ़ाया कैसे जाय। प्राप्ति के तूफान में पुष्टि का उफान (अपसर्ज) कैसे आवे, इस पूरे प्रश्न पर विचार होना चाहिए। वर्गहित और जातिहित के स्थान पर सामूहिक ग्राम-हित विकसित हो, तथा सर्व-सम्मति में सब अपने को सुरक्षित महसूस करें, इसकी प्रक्रिया ढूँढ़नी चाहिए, क्योंकि अगर सामूहिक ग्राम-हित तथा पुरुषार्थ की प्रेरणा न बनी तो ग्राम-स्वामित्व और ग्राम-नेतृत्व, यानी ग्रामस्वराज्य के दोनों पैरों, के टिकने के लिए धरती नहीं रह जायगी। देर की गुंजाइश नहीं है। अनुभव बता रहा है कि अहिंसा के प्रयोगों में समय निर्णायक तत्त्व सिद्ध होता है।

ग्रामहित का विकास और ग्रामशक्ति का संगठन रचनात्मक कार्य की एक बिलकुल नयी दिशा है, लेकिन है दूसरी सब रचनाओं की बुनियाद। इस तरह का रचनात्मक कार्य हमने गाँवों में कभी किया नहीं है। हमारे ये गाँव—विविध जातियों के गाँव, दमन और शोषण से जर्जर गाँव, आधुनिक संस्कारों से वंचित गाँव, प्रमाद के शिकार गाँव—एक होकर अपनी समस्याओं का कैसे मुकाबिला करें, यही मुख्य समस्या है।

उत्तरकाशी जिलादान

—विनोबा का संदेश—

उत्तरकाशी का जिलादान होना एक बहुत ही प्रेरणादायी घटना है। अखिल भारत का वह महान श्रद्धास्थान है। अलावा इसके वह हमारा सीमा प्रदेश भी है। दोनों दृष्टियों से उस क्षेत्र का जिलादान सारे उत्तर प्रदेश को ही नहीं बल्कि सारे भारत को गतिमान करेगा। दान देनेवाले को दिलानेवालों को और उससे सहानुभूति रखनेवालों, सबको बाबा का धन्यवाद।

रानीपतरा १०-५-६८

—विनोबा का जय जगत्

यह गंभीरतम समस्या हमारे वरिष्ठतम साथियों के लिए चुनौती है। हमारे छोटे साथी साथ चल सकते हैं किन्तु इस प्रश्न पर नेतृत्व नहीं दे सकते। समस्याओं के अनुरूप में ग्रामसभाओं की सामूहिक शक्ति यानी रचनात्मक कार्य से पहले रचनात्मक चित्त और रचनात्मक प्रबंध का दर्शन जिलादान के क्षेत्रों में मिले इस ओर हमारा ध्यान तत्काल जाना चाहिए।

जनसंख्या के आधे भाग स्त्रियों तक हम पहुँच नहीं पा रहे हैं। उनके अलग रहने के कारण ग्रामकोष इकट्ठा करने तक में कठिनाई हो रही है। दरभंगा में घूमने से सरला बहन का अनुभव है कि ग्रामकोष में घर का अनाज या पैसा देने से वे इनकार करती है। यही हाल गाँव की शान्ति-सेना का है। पद या प्रतिष्ठा प्राप्त जिन व्यक्तियों के माध्यम से हम प्राप्ति के लिए अब तक गाँवों में प्रवेश करते रहे हैं उनसे प्रेरणा प्राप्त करने की स्थिति में गाँव के युवक नहीं है। उनके सामने प्रेरणा के कुछ दूसरे स्रोत प्रस्तुत करने पड़ेंगे।

कुल मिलाकर हम कुछ पाइलट क्षेत्र में बनाने पड़ेंगे जिनमें ग्रामसभाओं का संगठन ग्रामहित का विकास अंतिम व्यक्ति की मान्यता पुलिस-अदालत मुक्त व्यवस्था लगान की सामूहिक रूप से अदायगी स्त्री शिक्षण शांति सेना-तरुण सेना शिविर साहित्य प्रसार द्वारा लोकशिक्षण आदि के शोध और प्रयोग सुनियोजित ढंग से करने पड़ेंगे। अगर रचनात्मक चित्त के निर्माण तथा रचनात्मक सम्बन्धों के विकास में काम चलाऊ सफलता भी मिल जाती है तो स्थानीय प्रतिभा पूँजी और पराक्रम इतनी मात्रा में उपलब्ध हो जायगा कि खेती खादी ग्रामोद्योग आदि रचनात्मक काम हमारी चिन्ता के विषय नहीं रह जायेंगे रहने भी नहीं चाहिए। लेकिन अगर यह न हो सका तो परम्परागत रचनात्मक कार्यों में बंधे रहकर हम गाँवों को सरकार और बाजार के सम्मिलित प्रहार तथा आन्तरिक विघटन से किसी तरह नहीं बचा सकेंगे। ग्रामदान को अब अहिंसा की व्यवहार-बुद्धि और व्यवहार शक्ति की जरूरत है।

ग्रामप्रतिनिधित्व की पूर्व-तैयारी

जब से बिहारदान के सम्बन्ध में दल प्रतिनिधित्व के स्थान पर ग्रामप्रतिनिधित्व की बात कही जाने लगी है और १९७२ का हवाला दिया जाने लगा है तब से जहाँ-तहाँ लोगों के मन में एक नयी हलचल पैदा होने लगी है। सत्तावाद की राजनीति से परेशानी भले हो हो लेकिन उसमें एक लज्जत है जो छूटती नहीं। लोकनीति तो अभी समझ में आयी नहीं है लेकिन इतनी गंध मिलते ही कि ग्रामदान में भी चुनाव आदि जैसी कुछ चटपटी चीज है केवल लोगों के दिमाग परिचित दिशा में काम करने लगे हैं। किसको उठाय किसको गिराय की बातें जबान पर आने और कान में कही जाने लगी है। लोकनीति के सही शिक्षण द्वारा इस हलचल को सही दिशा में मोड़ना चाहिए नहीं तो स्वार्थपूर्ण महत्त्वाकांक्षाएं जगेंगी और उनके साथ-साथ दोस्ती दुश्मनी के प्रचलित तरीकों को बढ़ावा मिलेगा और ग्रामसभाओं का वातावरण दूषित होगा। अब तक का अनुभव हमारे लिए पर्याप्त चेतावनी होना चाहिए।

अखिल भारतीयता का बल

सही प्रशिक्षण ग्रामसभाओं का संगठन ग्रामकोष का निर्माण सर्व सम्मति और सामूहिक ग्रामहित का विकास, लोकनीति का व्यावहारिक स्वरूप शान्ति सेना आन्दोलन आदि जो भी प्रश्न हैं वे स्थानीय नहीं हैं। आन्दोलन के लिए स्थानीय व निजी आधार व्यापक होने के कारण उनके समाधान के लिए अखिल भारतीय प्रतिभा की आवश्यकता है जिसका हमारे आन्दोलन में अभाव है। कई बार तो ऐसा लगता ही नहीं कि हम कोई अखिल भारतीय आन्दोलन चला रहे हैं। विभिन्न राज्यों में होनेवाले काम तथा उनमें लगे साथियों समस्याओं और संभावनाओं की प्रामाणिक सूचनाएं तक हमें नहीं मिलती सर्व शक्ति की तो बात ही छोड़िये। बेशक हम सबकी प्रेरणा के मानवीय स्रोत विनोबाजी स्वयं है लेकिन हमारा समर्पण उस क्रान्ति विचार के प्रति है जिसने इस यात्रा में हम सबको सहयात्री बनाया है। दुख है कि उस सह की प्रतीति अभी अत्यन्त हल्की है। अखिल भारतीयता की जीवित प्रतीति के बिना क्रान्ति की कल्पना धूमिल रहेगी योजना शिथिल रहेगी और साधना एकांगी रहेगी। इस तरह एक काम करते हुए भी अगर करने वाले अलग-अलग रहेंगे तो क्रांति की शक्ति कैसे प्रकट होगी? कई बार विनोबा की शक्ति को हम अपनी शक्ति मान लेते हैं और सर्व शक्ति की जैसे जरूरत ही नहीं महसूस करते। अखिल भारतीयता के अभाव का असर सुदूर गाँव के काम पर भी पड़ रहा है। छोटे-से छोटे गाँव को व्यापक शक्ति का सहारा चाहिए भले ही वह अप्रत्यक्ष हो।

आन्दोलन के सम्बन्ध में ये कुछ विचारणीय पहलू हैं। दूसरे कई महत्त्वपूर्ण पहलू भी हैं लेकिन हमने यहाँ कुछ खास ऐसे पहलुओं का ही उल्लेख किया है जो गाँव के काम में प्रत्यक्ष रूप से हमारे सामने आये हैं।

लोकतंत्र के विकास का अगला कदम

भारत में ही नहीं, तमाम दुनिया के लोकतंत्र में जन-आन्दोलन को बहुत बड़ी जिम्मेदारी निभानी है। लोकसभा और विधानसभाओं की चहारदीवारी में स्थित लोकतंत्र एक भ्रमपूर्ण और अधूरा राजनीतिक तंत्र है, जिसमें जन की आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं हो पाती।

संसदीय लोकतंत्र आज जिस रूप में समझा और लागू किया जा रहा है वह यूरोप के बुर्जुआ या वैश्य-युग का लक्षण है। यह जन पर जन के नाम पर चलानेवाले वर्ग का शासन है। यही कारण है कि जहाँ आधुनिक संसदीय लोकतंत्र का जन्म हुआ, उस इंग्लैंड और फ्रांस द्वारा बड़े-बड़े साम्राज्य स्थापित करना सम्भव हो सका। इन देशों के लोग अपने यहाँ तथाकथित लोकतंत्र का सुख भोगते रहे और अपने मातहत के देशों में तानाशाही चलाते रहे।

आज हम देखते हैं कि लोकसभा और उसके सदस्यों के महत्त्व में कमी आती जा रही है। इसके मुख्यतः दो कारण दिखायी देते हैं।

पहला कारण है—सबको वोट देने के अधिकार का प्रचलन, जिसके कारण विभिन्न दलों का अस्तित्व सामने आया। दूसरा कारण है—राजनीतिक दल सत्ता हथिया लेनेवाले वर्ग बन गये और उन्होंने लोकसभा को केवल राजनीतिक दलों का ढिंढोरा पीटने का साधन बना दिया। इस कारण सम्राट या राष्ट्रपति के नाम पर अर्द्ध-तानाशाही शासन चलने लगा। लेकिन इन राजनीतिक दलों ने सिर्फ सत्ता ही नहीं हथिया ली, बल्कि इन्होंने लोकसभा को भी अकारगर बना दिया। इसके अलावा आज का संसदीय लोकतंत्र यंत्रयुग की राजनीतिक संस्था है, जिसके बारे में यह मान लिया गया था कि जैसे यदि किसी यंत्र के विभिन्न हिस्से ठीक से बैठाये गये हैं और यंत्र को ठीक से काम में लाया जाता हो, तो वह यंत्र भले ही धीमे चले, लेकिन चलेगा जरूर। जबतक चल सका तबतक यह लोकतंत्र चला, लेकिन अब हम अणु और जेट युग में हैं। प्रौद्योगिक क्रान्ति के साथ-साथ राजनीतिक संस्थाओं को भी विकसित होना होगा। इस सम्बन्ध में मार्क्स बहुत सही थे और उनकी बात सुनी जानी चाहिए।

जेट युग में गति मानव-जीवन का आवश्यक तत्त्व है—सिर्फ भौतिक क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि भावना, बुद्धि और अध्यात्म-क्षेत्र में भी। आज यह आवश्यक हो गया कि जन की भावनात्मक, बौद्धिक और आध्यात्मिक आकांक्षाओं की शीघ्रता के साथ पूर्ति हो, लेकिन हमने जो लोकतांत्रिक पद्धति विरासत में पायी है, वह बहुत धीमी गति से काम करती है। अतः आज विधानसभाओं में जो लोकतंत्र चल रहा है, उसकी पूर्ति विधान सभाओं के बाहर जन-सक्रियता के द्वारा

—शंकरराव देव

करनी होगी, ताकि लोकतंत्र की प्रक्रिया तेज हो सके।

आज दुनिया में दो नहीं, बल्कि तीन प्रकार के देश हैं। वे अपनी प्रौद्योगिक प्रगति, साज-सामान और विकसित प्रौद्योगिकी के उपयोग करने की क्षमता के अनुसार विकसित, विकासोन्मुख या अविकसित स्थिति में हैं। ऐसा होते हुए भी इन देशों के जन की आकांक्षाएँ अलग-अलग प्रकार की नहीं हैं, क्योंकि दरअसल दुनिया एक ही है। इसलिए सिर्फ गति का ही नहीं, बल्कि जन के सन्तोष का भी ध्यान होना आवश्यक है। ऐसा नहीं होता तो, विकसित और अविकसित देशों में संसदीय लोकतंत्र एक वर्ग-विशेष के लिए ऐसी विलास की चीज बन जाता है, जिसे जन बर्दाश्त नहीं कर सकते।

मैं मानता हूँ कि जन-सक्रियता (ऐक्शन) निश्चित रूप से शान्तिपूर्ण और रचनात्मक होनी चाहिए, ताकि वह लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत बनाये और उसके मूल्यों को समृद्ध करे, क्योंकि ये दोनों चीजें मनुष्य के विकास के लिए आवश्यक हैं। जन-सक्रियता से मेरा आशय सिर्फ विभिन्न प्रकार के प्रदर्शनों से नहीं है, बल्कि उस सक्रियता से है, जिसमें जन रचनात्मक वृत्ति से प्रेरित होकर सीधी कार्रवाई करते हैं।

गांधीजी ने लोकतंत्र की व्याख्या एक विज्ञान और सरकार चलाने की कला के रूप में की है, जो राष्ट्र के सभी प्रकार के लोगों की शक्तियों को सबकी भलाई के काम में लगाता है। आज की गुटबन्दी और मतवाद-आधारित दलीय राजनीति इसका ठीक उलटा काम करती है; शरीर के विभिन्न अंगों को एक में जोड़ने की जगह यह उन्हें छिन्न-भिन्न करती है।

जन-सक्रियता के स्वरूप के बारे में मेरी राय है कि उसमें किसी प्रकार के शारीरिक दबाव को स्थान नहीं है। घेराव शारीरिक दबाव की प्रक्रिया का ही एक विशेष प्रकार है। इसका इस्तेमाल उस समय किया जाता है, जब कि विरोध प्रकट करनेवाले अल्पमत में हों। यदि वे बहुमत में हों तो वे रचनात्मक असहयोग का रुख अपना सकते हैं, जो परिस्थिति में मृदुता लाता है और जो आज के वैधानिक ढाँचे में भी मान्य है।

जन के हाथों में एक बहुत बड़ा अस्त्र यह है कि वे बुराई करनेवाले को उस सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आनन्द प्राप्त करने से वंचित करें, जो समुदाय के अन्तर्गत उसे प्राप्त होते हैं। मैं इसे सामाजिक बहिष्कार नहीं कहूँगा, क्योंकि बुराई करनेवाले के खिलाफ कोई शारीरिक दबाव काम में नहीं लाया जायगा। उसके जीने के लिए जिन भौतिक चीजों की जरूरत होगी वे सब उसे प्राप्त रहेंगी। लेकिन समुदाय यह घोषणा कर सकता है कि चूँकि अमुक समुदाय का सदस्य नहीं रह गया है, इसलिए समुदाय का सदस्य होने के नाते जो सुख-सुविधाएँ उसे प्राप्त होती हैं, वे वापस ली जा रही हैं। ●

सन् १९७२ : क्रान्ति की कसौटी
लक्ष्य और प्रक्रिया

—धीरेन्द्र भाई से कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर—

प्रश्न : प्रखण्डदान, जिलादान से भी आगे अब बिहारदान की ओर बढ़ रहे कदमों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि ग्रामदान आन्दोलन की गति काफी तेज है। लेकिन क्या गति देखकर यह माना जा सकता है कि इस आन्दोलन में अन्तिम शक्ति भी आ रही है?

उत्तर : जैसे भौतिक विज्ञान में शक्ति से गति आती है और गति से शक्ति पैदा होती है, उसी तरह समाज विज्ञान में भी शक्ति और गति अन्योन्याश्रित है। विचार का तर्क और परिस्थिति की आवश्यकता ने ग्रामदान आन्दोलन को गति दी है। यह गति जो तेज हो रही है, इसीमें से शक्ति भी पैदा हो रही है।

पिछले साल अप्रैल और मई में मैंने दरभंगा जिले का दौरा किया था, उस समय अपने अनुभव के आधार पर कहा था कि आज ग्रामदान एक क्रान्ति-भाव है। इस भाव को न रूप मिला है और न लोगों ने उसका भान ही समझा है। लेकिन जैसा कि मैंने अभी कहा है, युग की अनिवार्य आवश्यकता के कारण केवल गांव में भी अब गति आयी है और वह तेजी से बढ़ रही है। इस दरम्यान की अवधि में हमारी तरफ से दरभंगा में आन्दोलन की दृष्टि से कोई खास काम नहीं हुआ। लेकिन चूंकि प्रदेश में गति बनी रही—केवल बनी ही नहीं रही, उसमें तेजी भी आ रही है, इसलिए ग्रामदानी लोगों में ग्रामदान का विचार अपने आप गहराई की ओर जा रहा है। यह अनुभव इस साल के दौरे में मुझको हुआ, फलस्वरूप इस साल जब मधुबनी प्रखण्ड में ग्रामसभा गठन का अभियान चलाया गया, तो जो भूमिवान ग्रामदान अभियान के समय ग्रामदान में शामिल नहीं हुए थे वे सब शामिल होते चले गये। यह इसलिए हुआ कि आन्दोलन की गति के कारण उसके अन्दर शक्ति पैदा हो रही है, जिसने तमाम पढ़े-लिखे लोगों व बड़े-बड़े भूमिवानों को शामिल होने के लिए प्रेरित किया है।

इस बात को समझने के लिए और अधिक ब्योरे से विचार करना चाहिए। मैंने भौतिक विज्ञान का उदाहरण दिया है, उसके लिए एक स्पष्ट उदाहरण लीजिये—मोटर चलाने के लिए पहली बैटरी कहीं से चार्ज करके उसके अन्दर रखी होती है, उसमें मोटर गाड़ी को गति देने की शक्ति होती है, फिर मोटर गाड़ी की गति ही बैटरी को चार्ज करती रहती है। और वह नयी शक्ति उसे आगे गति देती है। उसी तरह से इस आन्दोलन के लिए गांधी का विचार, विनोबा की तपस्या, विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं तथा लोक-मानस में विद्रोह की भावना प्राथमिक शक्ति के रूप में रही। उस शक्ति ने ग्रामदान आन्दोलन को गति दी और जैसे-जैसे गति तेज होती गयी, वैसे-वैसे आन्दोलन में रचनात्मक संस्थाओं से बाहर के कार्यकर्ताओं के रूप में नयी शक्तियाँ पैदा होती गयीं, जिनके सहारे आन्दोलन को नयी गति मिलती गयी और जिसके फलस्वरूप उसमें अब तेजी आ रही है।

उसी तरह, जैसा कि मधुबनी प्रखण्ड में अनुभव आ रहा है, जिले और प्रदेश में आन्दोलन की गति में जो वृद्धि हुई है उसने प्रखण्ड भर के शिक्षित तथा बड़े भूमिवानों को शामिल होने के लिए प्रेरित करके आन्दोलन को शक्ति दी है। अब इन्हीं लोगों में से बुद्धि तथा अन्य विकास के काम के लिए कार्यकर्ता निकल रहे हैं। यही शक्ति आन्दोलन को और आगे गति देगी, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

प्रश्न : आप किसे शक्ति का लक्षण मानेंगे?

उत्तर : किसी भी आन्दोलन की शक्ति का स्वरूप उसके लक्ष्य पर निर्भर करता है। भूमिवान वर्ग या मिले लोगों की शक्ति भिन्न-भिन्न स्थानों से शस्त्र-संग्रह करने के परिमाण पर निर्भर करती है। भारत में अंग्रेजी राज्य को खतम करने की और अमेरिका में निग्रो द्वारा समान अधिकार प्राप्त करने की शक्ति अधिकारियों का मुकाबिला करने के लिए एक दृढ़ संकल्पी जमात पर निर्भर रही। हमारा आन्दोलन किसीके मुकाबिले में नहीं है। यह आन्दोलन प्रचलित परम्परा के अनुसार जनता के शोषण और विघटन के लिए जिन तत्त्वों का संगठन हो गया है उनसे मुक्ति का है। मुक्ति के लिए दोनों प्रकार से आन्दोलन किये जा सकते हैं: जनता द्वारा उन तत्त्वों का मुकाबिला करने की पद्धति भी हो सकती है और उन्हें किनारे डालकर अपने को बाहर निकालने की प्रक्रिया भी हो सकती है।

मुकाबिला हिंसात्मक और अहिंसात्मक, दोनों प्रकार से हो सकता है। उसके लिए एक मजबूत हिंसक तथा अहिंसक सेना का संगठन करना पड़ता है, जो जनता की मदद से अवांछनीय तत्त्वों को परास्त कर सके। लेकिन किनारे डालने के लिए पूरी जनता में क्रान्ति का बोध तथा स्वावलम्बन की शक्ति का संगठन करना होता है, ताकि स्वावलम्बी समाज अपने को अलग कर स्वतन्त्र हो सके। इसी सन्दर्भ में हमारे देशी और विदेशी मित्र जब कहते हैं कि विनोबा और उनके साथी सत्याग्रह द्वारा मुकाबिला नहीं करते हैं, यानी गांधी की अहिंसात्मक शक्ति को छोड़ देते हैं, तो उनकी इस भावना का परम्परागत आधार यह है कि वे मुकाबिले की शक्ति को ही एकमात्र शक्ति मानते हैं।

अहिंसक क्रान्ति की प्रक्रिया "प्रतिरोध" नहीं, 'अनुरोध' है। यह तो आप इतने दिन के ग्रामदान-आन्दोलन को देखते हुए स्पष्ट रूप से समझ ही सकते हैं। तो आन्दोलन की शक्ति बढ़ रही है, ऐसा तभी समझा जायगा जब समाज में अनुरोधी शक्ति का संगठन हो। अर्थात् इसके लिए प्रभावशाली अनुरोध करनेवालों की संख्या अगर बढ़ रही है तो समझना चाहिए कि आन्दोलन की शक्ति बढ़ रही है और ऐसा हो रहा है, यह आन्दोलन के अनेक स्थानों पर प्रकट है।

लेकिन जैसा कि मैंने अभी कहा है कि परम्परागत-विचार के कारण लोग पुराने ढंग से सोचते हैं, वे मुकाबिले की शक्ति को ही शक्ति मानते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि सिद्धान्त के रूप से अगर मुकाबिले को क्रान्ति की प्रक्रिया मान भी जाय तो भी आज की परिस्थिति में यह सम्भव नहीं है। जिन तत्त्वों के हाथ में समाज की बागडोर है और जो आज पूरे समाज के अंग-प्रत्यंग में प्रवेश कर जनता का शोषण और निर्दलन कर रहे हैं, विज्ञान ने उनके हाथ में अनन्त शक्ति सौंप दी है। जनजीवन का कोई भी हिस्सा बाकी नहीं रह गया है, जो इस तत्त्व के कब्जे में नहीं हो। अतएव आज के जमाने में कोई ऐसा तत्त्व संगठित करना असम्भव ही है, जो अपने भरोसे जनता की ओर से लड़ सके। मैंने अभी कहा है कि पूरी जनता किसी भी मुकाबिले की प्रक्रिया में शामिल नहीं हो सकती है। उसके लिए जनता में से कुछ ऐसे तत्त्वों का—जो हिम्मती और योग्य हों, संगठन आवश्यक है, जिसे आप सेना कह सकते हैं। ऐसी प्राइवेट सेना के लिए साधन बटोरकर अनन्त साधनवान तत्त्वों के साथ मुकाबिला करना असम्भव ही है।

अगर तर्क के लिए यह माना भी जाय कि एक संगठित अहिंसक सेना जनता की ओर से मुकाबिला कर विजय प्राप्त कर सकती है, तो ऐसी शक्तिशाली विजयी सेना ही दूसरे रूप में जनता की छाती पर बैठ जायगी।

अतएव विचार और व्यवहार, दोनों दृष्टियों से "मुकाबिला" इस आन्दोलन की प्रक्रिया नहीं है। इसकी एकमात्र प्रक्रिया किनारे डालने (बाइ-पास करने) की है। अगर आप देखते हैं कि ग्रामदानी गाँव साथ मिलकर छोटे-से-छोटा भी अपना निर्णय करते हैं और उसके अमल का प्रयास करते हैं, तो समझना चाहिए कि इस आन्दोलन में शक्ति का विकास हो रहा है। एक वाक्य में ग्रामदानी गाँव के स्वावलम्बन का संकल्प और पुरुषार्थ का जागरण इस क्रान्ति की शक्ति का लक्षण है। क्योंकि ऐसा करके जनता अपने जीवन को उपरोक्त तत्त्वों के बाहर निकालकर उन्हें अनावश्यक बना देती है। स्वभावतः समाज के लिए अनावश्यक तत्त्व अपने-आप किनारे पड़ जाते हैं।

प्रश्न : क्या यह सही है कि जनता अभी भी ग्रामदान को कोई गंभीर चीज नहीं मान रही है? देखने से तो ऐसा ही लगता है। अगर सचमुच ऐसी बात हो तो कैसे माना जाय कि सन् १९७२ तक जनता, यानी ग्रामदानी ग्रामसभाएँ, अपने सर्वसम्मत उम्मीदवार लेकर दलों के मुकाबिले खड़ी हो जायगी?

उत्तर : यह सही है कि ग्रामदान-प्राप्ति के अभियान के समय जनता इस आन्दोलन को बहुत गम्भीर चीज नहीं मानती है। लेकिन जो दस्तखत करते हैं, उसके पीछे काल की अदृश्य प्रेरणा तथा विकल्प के लिए एक काल्पनिक समाधान है। ग्रामदान का संकल्प और घोषणा हो जाने पर अन्तर्मन में चिन्तन का प्रारम्भ हो जाता है। और जैसे-जैसे प्रचलित समाज-व्यवस्था तथा संस्थाओं से *असमाधान होता चला जा रहा है,* वैसे-वैसे जनता ग्रामदान को एक गम्भीर चीज मानती जा रही है। ज्यादा दिलचस्पी के साथ विचार की स्पष्टता के लिए जिज्ञासा भी बढ़ रही है। यह अनुभव मुझको दरभंगा जिले के एक साल के अध्ययन से हुआ। अगर आप किसी क्षेत्र का लगातार अध्ययन करते रहेंगे, तो आपको भी इसका अनुभव होगा।

इस प्रकार सन् १९६८ में जब ग्रामदानी गाँव के लोग आन्दोलन को गम्भीरता से सोचने की कोशिश करने लगे हैं, तब चार *साल में दलगत राजनीति की अनिश्चितता* के कारण उन पर जिस तरह संकट का बोझ बढ़ता चला जा रहा है, उससे मुक्ति की तीव्र आकांक्षा पैदा होना असाधारण बात नहीं है। चूँकि सर्वसम्मत उम्मीदवार-पद्धति दलमूलक राजनीति का प्रभावशाली तथा व्यावहारिक विकल्प है, इसलिए जनता उस पद्धति के अमल के लिए तैयार हो जायगी, इसमें सन्देह करने का कोई कारण नहीं है।

लेकिन आप लोग सर्वसम्मत उम्मीदवार-पद्धति का जो नारा लगा रहे हैं वह दोनों तरफ से काटनेवाली तलवार है। अगर विचार की सफाई के लिए जो जिज्ञासा पैदा हो रही है उसे समाधान देनेवाले काफी कार्यकर्ता सतत घूमते नहीं रहेंगे तो जनता सर्वसम्मत उम्मीदवार-पद्धति को प्रचलित *राजनैतिक तथा आर्थिक ढाँचे के अन्तर्गत* पक्षहीन राजनीति के रूप में एक वैधानिक सुधार मात्र समझ बैठेगी। फिर सत्ता की स्पर्धा इस प्रक्रिया में दाखिल हो जायगी *और ग्रामसभाओं में फासिस्टवादी तत्त्व हावी* हो जायँगे। आन्दोलन के कार्यकर्ता भी, जो आज सत्ता से अलग रहकर सेवा द्वारा जनता के विश्वासपात्र बने हुए हैं, सत्ता के लोभ से *प्रेरित होकर अपने को सर्वसम्मत उम्मीदवार* चुनवाने के प्रयास में स्पर्धा का शिकार बन सकते हैं। इस आन्दोलन का लक्ष्य सैनिक-आधारित, दंडवादी राजनीति तथा पूँजीवादी या राज्यवादी बाजार की अर्थनीति और केन्द्रीय सत्तावादी न्यायनीति से मुक्त होकर स्वावलम्बी समाज का अधिष्ठान करना है। जिज्ञासा के समाधान में इस बात की *प्राथमिकता होनी चाहिए। अगर हम* दलगत राजनीति के बदले सर्वानुमत उम्मीदवार के विचार को रखते हैं तो यह बात प्रचलित व्यवस्था के अन्दर आन्दोलन को शक्तिशाली बनाने के लिए सन्धिकालीन तथा सामयिक प्रक्रिया है यह स्पष्ट होनी चाहिए, नहीं तो आपका यह नारा सम्पूर्ण आन्दोलन को समाप्त कर *सकता है।*

प्रश्न : क्या आप मानते हैं कि हमारी रचनात्मक संस्थाएँ, सत्ता और सम्पत्ति के *प्रचलित ढाँचे पर खुला प्रहार करने के काम में सामने आयेंगी?* अब आगे इन संस्थाओं का इस क्रान्ति में क्या रोल है?

उत्तर : हमारे आन्दोलन में सत्ता और सम्पत्ति के प्रचलित ढाँचे पर खुला प्रहार करने का कोई स्थान है ही नहीं। इस संदर्भ में 'मुकाबिला' और 'किनारे डालने' के सिद्धान्त का मैंने पहले ही काफी विस्तार से *विवेचन किया है। हमारी रचनात्मक संस्थाएँ* धीरे-धीरे सत्ता और सम्पत्ति के प्रचलित ढाँचे का ही अंग बनती चली जा रही हैं, *इसलिए अब आगे इस क्रान्ति के वाहन के* रूप में इन संस्थाओं का विशेष रोल नहीं रहेगा। क्रान्ति का वाहन समाज में फैले

हुए विचार से उद्बुद्ध नागरिक तथा सुसंगठित ग्रामसभाएँ होगा।

रचनात्मक संस्थाएँ सत्ता तथा सम्पत्ति के प्रचलित ढाँचे का अंग होते हुए भी क्रान्ति के लिए सहानुभूतिपूर्वक सहायक होंगी। और यह सहायता क्रान्ति को आगे बढ़ाने के लिए एक प्रभावकारी शक्ति बनी रहेगी।

प्रश्न आप अब किन प्रक्रियाओं और मंजिलों की कल्पना करते हैं जिससे यह आन्दोलन जन-आन्दोलन का रूप लेगा? दरभंगा में आपका क्या अनुभव आ रहा है?

उत्तर जब समाज में, जीवन की क्रान्ति के लिए पूर्ण समर्पण करनेवाले कुछ साधक निरन्तर घूमते रहेंगे तथा कुछ ऐसे साधक जगह जगह पर नागरिक की भूमिका में बैठे रहेंगे और काफी तादाद में विचार उद्बुद्ध नागरिक अपने अपने क्षेत्र में प्रेरणा देते रहेंगे, ताकि ग्रामसभाएँ सक्रिय हों तब यह आन्दोलन जनता का आन्दोलन बनेगा। धीरे-धीरे आन्दोलन उस दिशा में आगे बढ़ रहा है। पहले केवल संस्था के कार्यकर्ता ही इसमें काम करते थे, फिर शिक्षक आदि दूसरे बाहर के मित्र कार्यकर्ताओं की मदद करने लगे और उसके बाद अब धीरे-धीरे कार्यकर्ताओं से निरपेक्ष होकर आन्दोलन को आगे बढ़ानेवाले स्वतंत्र नागरिक भी निकल रहे हैं। यह आन्दोलन को जन-आन्दोलन की ओर बढ़ाने की भिन्न-भिन्न स्टेजेज हैं। जैसे जैसे आन्दोलन के विचार की सफाई होती जायगी वैसे-वैसे इस क्रम में गति आयगी। इसके लिए आवश्यकता यह है कि जिस तरह हम प्राप्ति तथा पुष्टि के अभियान चलाते हैं, उसी तरह ग्रामदानी क्षेत्रों में विचार गोष्ठियों का अभियान चलाते रहें। दरभंगा जिले में प्रखण्ड-सेवकों द्वारा गोष्ठियों का जो आयोजन किया जा रहा है इस दिशा में उसका अनुभव अच्छा है।

प्रश्न हम क्रान्ति अपनी निर्माण योजना के लिए एक विशेष प्रकार की शक्ति के ढाँचे (Power structure) का निर्माण करती है। ग्रामदान व उस शक्ति के ढाँचे का क्या स्वरूप है? क्या इसमें निहित स्वार्थों (Vested interests) और टकरावों (Conflicts) के होते हुए भी ग्रामसभाएँ उस शक्ति के ढाँचे की बुनियादी इकाई बन सकेंगी?

उत्तर जिन क्रान्तियों की बात आप कह रहे हैं उनका स्वरूप हमारी क्रान्ति से बिलकुल भिन्न रहा है। हमेशा क्रान्ति की प्रक्रिया में पुरानी पद्धति के संचालकों को पराजित करने के लिए क्रान्ति के विचार को माननेवाले मजबूत और सत्तानिष्ठ व्यक्तियों के दल का संगठन किया जाता रहा है। यही संगठन क्रान्ति के अभियान तथा निर्माण दोनों के लिए शक्ति का केन्द्र होता रहा है लेकिन हमारी क्रान्ति किसी संगठित दल द्वारा जनता की बंधन मुक्ति की नहीं है बल्कि जनता द्वारा अपनी मुक्ति की साधना है। इस क्रान्ति की साधना ही वर्तमान समाज के टकरावों और निहित स्वार्थों (Vested interests) को विचार की प्रेरणा से विघटित करने की है। ग्राम-सभा ही इसके लिए एकमात्र माध्यम है। और ग्रामसभा उसके लिए योग्य बने यही क्रान्ति की प्रक्रिया है। आपका काम होगा ग्रामसभाओं के माध्यम से समाज के उन निहित स्वार्थों (Vested interests) को अपने स्वार्थ छोड़ने के लिए वैचारिक प्रेरणा देना। इसी उद्देश्य को सामने रख कर विनोबाजी समाज में आचार्यकुल का संगठन करने का प्रयास कर रहे हैं। आचार्यकुल की बिरादरी बनने पर वही बिरादरी निहित स्वार्थों को प्रेरणा देकर ग्रामसभा का काम सुगम कर सकेगी। अगर इस प्रकार के लोकशिक्षक समाज का निर्माण नहीं हो सकेगा तो ग्रामसभा के लिए वर्तमान समाज में टकरावों और निहित स्वार्थों (Vested interests) का निराकरण कठिन होगा।

प्रश्न वे कौनसे प्रशिक्षित और समर्पित सिपाही हैं जिन्हें लेकर आप सन् १९७२ में ग्रामप्रतिनिधित्व के द्वारा कम-से-कम बिहार में ग्रामदानी राज्य की कल्पना करते हैं? या अन्य किसी क्रान्तिकारी घटना की राह देख रहे हैं?

उत्तर इस समय हमारे आन्दोलन में ऐसे समर्पित व्यक्तियों की संख्या बहुत है नहीं और न निकट भविष्य में उसकी वृद्धि के आसार दीख रहे हैं। मैं मानता हूँ कि ग्रामसभा के अन्दर ही कुछ दिनों में ऐसी चेतना पैदा होने लगेगी जो निरन्तर बढ़कर आखिरी समय पर एक उभाड़ का रूप ले लेगी। इसके आसार आन्दोलन की गति में मुझको स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। मुझको यह भी लगता है कि उसी उभाड़ के दरम्यान अच्छी तादाद में क्रान्ति के लिए समर्पित कार्यकर्ता भी सामने आयेंगे।

लेकिन एक बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए। सन् १९७२ में राजनीति में जो परिवर्तन लाने की परिकल्पना है उसे ग्रामदानी राज्य नहीं कह सकते हैं। वह परम्परागत वैधानिक लोकतंत्र में एक प्रभावकारी सुधार की योजना है। इससे इतना ही होगा कि राजनीति दलमुक्त होगी। प्रतिनिधि विधान सभाएँ जनता के प्रत्यक्ष नुमाइन्दों द्वारा बनेंगी ताकि वर्तमान लोकतंत्र अधिक लोकमूलक हो सके। ग्रामदानी राज्य तब बनेगा, जब ग्राम-स्वराज्य को केन्द्र मानकर सामुदायिक वर्गों के अनुरूप समाज संगठन के विभिन्न स्तरों के संयोजन हों।●

अ० भा० खादी-ग्रामोद्योग द्वारा प्रमाणित खादी ग्रामोद्योग भण्डारों में मिलता है।

उत्तर-प्रदेश : प्रश्न-प्रदेश नहीं

उत्तरकाशी का उत्तर प्रस्तुत

१० मई '६८ को उत्तर-प्रदेश के माथे पर ग्रामस्वराज्य का तिलक लग गया। उस दिन जिले की जनता ने तिलाड़ी के शहीदों की याद करते हुए यह सामूहिक घोषणा की :

"आज शहीद-दिवस के अवसर पर हम अपने उन शहीदों के प्रति श्रद्धांजलि समर्पित करते हैं, जिन्होंने अपने बलिदान से इस भूमि को पवित्र किया है। लेकिन जिस स्वराज्य की रक्षा के लिए उन्होंने अपने प्राणों की आहुति दी उसकी स्थापना अभी पूरी नहीं हुई है। वह पूरी तब होगी जब गांव गांव में ग्रामस्वराज्य आयेगा तथा गांव खुद अपने विकास और व्यवस्था की जिम्मेदारी लेगा। उस ग्रामस्वराज्य के लिए ही हमने अपने गांव का ग्रामदान किया है। हम मानते हैं कि गांव को परिवार बनाने की जो भावना है, उसके विकास के लिए जरूरी है कि हम बिना किसी भेद-भाव के एक दूसरे के सुख-दुख में शरीक हों। इसलिए आज के दिन हम संकल्प करते हैं कि हम सब गांव के रहनेवाले मालिक, महाजन और मजदूर भाई-भाई की तरह रहेंगे, तथा ग्रामदान की भावना को मानते हुए ग्रामस्वराज्य की दिशा में मिलकर दृढ़ता के साथ आगे बढ़ेंगे।"

यह कितने आश्चर्य की बात है कि बीस वर्ष के बाद भी हमारे गांव के लोग यह प्रश्न नहीं पूछते कि जो स्वराज्य सन् १९४७ में देश में आया वह अभी तक हमारे गांव में क्यों नहीं पहुँचा? वह कहाँ रुका हुआ है? किसने रोक रखा है? कैसे आयेगा? कुछ भी हो, अब गांव-गांव में स्वराज्य लाने का काम शुरू होना चाहिए। उसमें देर की गुंजाइश नहीं है। अपने गांव में स्वराज्य हमें खुद लाना है। दूसरा कौन लायगा?

ग्रामदान ग्रामस्वराज्य लाने का पहला कदम है। गांव एक हो जाय और नेक हो जाय तो अपनी एकता और संगठन की शक्ति से वह अपने गांव की व्यवस्था कर सकता है, विकास कर सकता है। गांधीजी चाहते थे कि हर गांव एक गणराज्य बने। ग्रामदान मालिक, मजदूर, महाजन सबको मिलकर 'गण' बनने और गांव को एक 'राज्य' बनने का रास्ता खोल देता है। पूरे गांव का एक हित हो, तो ग्रामस्वराज्य का आना निश्चित है। अगर हम संघर्ष का रास्ता पकड़ेंगे तो एक-एक गांव वर्ग-संघर्ष और जाति-संघर्ष की आग में जलकर खत्म हो जायगा। उत्तरकाशी की जनता ने इसे महसूस किया है और बीस साल के स्वराज्य के बाद की इस स्थिति को बदलने का संकल्प किया है, और इस समारोह को शहीद-दिवस के रूप में मनाया है। परिस्थिति तो आज भी शहादत की माँग कर रही है, लेकिन बदले हुए संदर्भ में शहीद चाहिए, जो जीवित रहकर जीवन को गति दे सके। खून से सींचे गये स्वराज्य के पौधे को ग्रामस्वराज्य के रूप में पल्लवित और पुष्पित होने के लिए बहते हुए रुधिर की नहीं, श्रमस्वेदों की जरूरत है।

पूरा समय देनेवाले सिर्फ ६ कार्यकर्ताओं ने जिलादान तक की मंजिल तय कर ली, यह उनके लिए गौरव की बात तो है ही, लेकिन उससे भी अधिक गौरव की बात आन्दोलन के लिए है कि यह जिलादान तादात्म्य-शक्ति से सम्भव हुआ है। सरकारी अधिकारी, कर्मचारी, ग्रामसेवक से लेकर जिलाधीश तक, स्कूल-शिक्षकों से लेकर समाज-शिक्षकों, सेवकों, नेताओं तक सबने इस गोवर्धन को उठाने में अपना जोर लगाया है। सबसे अधिक इस अभियान को जन-अभियान का रूप दिया है ग्रामदानी गांव के लोगों ने। जिले के प्रथम ग्रामदानी गांव की ग्रामस्वराज्य सभा के अध्यक्ष श्री घनश्याम सिंहजी ने ही एक दिन कार्यकर्ताओं से कहा था, "इस तरह फुटकर ग्रामदान कब तक कराते रहेंगे? पूरा जिला ही ग्रामदान में आ जाय, इसकी कोशिश क्यों न हो?"

हमारे कुछ साथियों को यह चिन्ता होती है कि जिनका यह आन्दोलन है, वे ही सक्रिय नहीं हैं। चिन्ता व्यक्त करनेवाले मित्र के मन में यह 'इमेज' शायद उस समय धूमिल-सी रहती है कि यह आन्दोलन 'जिनका' नहीं, 'सबका' है। "लेकिन 'जिनका' से मतलब अगर सामान्य या नीचे के स्तर के गरीबों से होता हो, तो उनकी चिन्ता दूर करने के लिए भी उत्तरकाशी के ग्रामदानी गांव के ये अहिंसक क्रान्ति के संदेशवाहक समाधानकारी उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। जिला ग्रामदान-प्राप्ति समिति के संयोजक, और ग्रामदानी की गांव की ग्रामस्वराज्य सभा के अध्यक्ष श्री घनश्याम सिंह के शरीर पर जो फटे पुराने कपड़े झूलते रहते हैं, वे उनकी आर्थिक स्थिति का इजहार करते रहते हैं। लेकिन आर्थिक विपन्नता पर हृदय की सम्पन्नता हावी रहती है, और इसीलिए आज वे इस अभियान के एक सक्रिय, सक्षम और सफल आरोहक हैं।

उत्तरकाशी अनेक विशिष्टताओं से युक्त है। ३०१८ वर्गमील के इस क्षेत्र में ८३.९% भूमि कीमती जंगलों से ढकी है। घाटियों की उर्वर भूमि उत्पादन के नये-नये कीर्तिमान स्थापित करती है। १४० मन प्रति एकड़ तक गेहूँ और ११७ मन प्रति एकड़ तक मक्के की फसल पैदा की जा चुकी है। फिर भी उच्चतर शिखर पर रहनेवाले निवासी 'लेंगड़ा' —एक प्रकार की वनस्पति—उबालकर या जानवरों का शिकार कर अपना पेट भरते हैं। प्रतिव्यक्ति औसत वार्षिक आय १२६ रुपये है। १६८ परिवारवाले एक गांव में एक भी लालटेन नहीं, छोटे-छोटे गांव तो अनेक हैं जहाँ प्रकाश के लिए चीड़ के छिलके जलाते हैं। शराब का दौर जोरों से चलता है। स्थानीय ऊन कारखानों के लिए खरीद कर बाहर चला जाता है। सूती कपड़ों के के द्वारा कमाई मिल-मालिकों की तिजोरियों में पहुँच जाती है। और इस प्रकार दारिद्र्य का कुहरा और घना होता जाता है।

ऐसे क्षेत्र में ग्रामदान की हवा ने लोगों

को सक्रिय किया है, गाँव गाँव में यह आवाज गूँजी है—झगड़े, रगड़े और दारू (शराब) की दूकानें बन्द करेंगे। इस दिशा में भरवाड़ी प्रखण्ड के लोगों ने महत्वपूर्ण काम किया है झगड़े की दूकान (अदालत) से १०५ मुकदमे वापस करके और राजीनामे से झगड़ों को सुलझा करके।

उत्तरकाशी समस्याओं और सम्भावनाओं से भरा हुआ जिलादान है। पूरे प्रदेश का चिंतन प्रदेशदान की ओर तेजी से होगा, यह उत्तरकाशी का गंगा यमुना के उद्गम स्थल का संदेश है। क्या यह संदेश अकारथ जायगा?

बलिया की भेंट : आबू को

और यह एक सुयोग ही है कि उस संदेश को प्रदेश के आखिरी जिले ने सुन भी लिया है। शुरू और आखिर के बिन्दुओं को जोड़नेवाली रेखा कब बनती है इसका ही अब इन्तजार है।

बलिया ने आबू सम्मेलन को अपनी भेंट दी है। ऐसा लगता है कि सर्वोदय की सोलहवीं सालगिरह ने सत्रहवीं का आन्दोलन के जीवन का एक नया अध्याय ही उपहार में प्रस्तुत किया है।

बलिया सम्मेलन के समय मुश्किल से २० ग्रामदान हो पाये थे। वे २० ग्रामदान भी जनवरी ६६ से सम्मेलन के समय तक किये गये सैकड़ों कार्यकर्ताओं के अथक पुरुषार्थ और धीरेन्द्र भाई कपिल भाई आदि के व्यक्तिगत प्रभाव के परिणाम थे।

लेकिन सम्मेलन के बाद अभियान में तूफान की गति आयी और ३ जून ६७ को बाँसडीह का पहला प्रखण्डदान जे० पी० को समर्पित किया गया। पूरी बाँसडीह तहसील का ग्रामदान पूरा हुआ १५ जनवरी ६८ को। तूफान तीव्रतर होता गया। १६ जनवरी ६८ से बलिया सदर तहसील में अभियान शुरू हुआ और १५ मई तक, कुल चार महीनों में ही पूरी तहसील का काम पूरा हो गया, और आखिरी लड़ाई—रसड़ा तहसील की—जो १६ मई को शुरू हुई और ५ जून को अभियान पूरा हुआ। हवा बन ही चुकी थी, आवश्यकता थी, गाँव-गाँव तक पहुँचने की। पूर्वी क्षेत्र के करीब ढाई सौ कार्यकर्ता भिड़ गये अस्वस्थता के बावजूद कपिल भाई और रामूर्तिजी भी जुट गये। और बलिया भी जिलादान के पाँचवें नम्बर पर आ गया। सम्मेलन के समय बलियावालों ने इस क्रांति की प्रेरणा के संत विनोबा को २० ग्रामदानों की भेंट देना चाहा था बहुत आग्रह किया था कि आप पधारें जिले की जनता की निगाह आपकी बाट जोह रही है लेकिन लाख कहने पर भी बाबा नहीं आये थे। अब बलिया ने दो साल में जिस पुरुषार्थ का परिचय दिया है उसने बाबा का आशीर्वाद खींच लिया है। वे आ रहे हैं बलिया, १० से १५ जुलाई '६८ तक के लिए। कोशिश हो रही है कि उस वक्त हर ग्रामदानी गाँव। दो चार प्रतिनिधि आयें, और ग्रामदानी गाँवों के प्रतिनिधियों की एक विशाल रैली और सभा हो।

बलिया ने भी पूरे प्रदेश को नीचे से झकझोरा है। देश की सबसे बड़ी रचनात्मक संस्था श्री गांधी आश्रम ने पुनः अपना क्रांति का बाना धारण कर लिया है। इसलिए पूरे प्रदेश में स्पन्दन है। महत्वपूर्ण कामनेवाले को २ अक्तूबर ६९ तक प्रदेशदान की सम्भावना असम्भव कल्पना नहीं लग रही है।

—राही

आवश्यक सूचना

'भूदान यज्ञ' का अगला अंक १४ जून का और २१ जून का एकसाथ 'सर्वोदय-सम्मेलन अंक' के रूप में २१ जून को प्रकाशित होगा। १४ जून '६८ का अंक नहीं प्रकाशित होगा। —व्यवस्थापक

विनोबाजी का कार्यक्रम

४ जून '६८ से १८ जून '६८ सहर्पा

पता विनोबा निवास

मा० बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ

सहर्पा (बिहार)। फोन नं० ६५

१९ जून ६८ से २८ जून ६८ हाजीपुर। (आवश्यकतानुसार पड़ाव की अवधि बढ़ सकती है।) १० जुलाई ६८ से १५ जुलाई ६८ बलिया (उ० प्र०)

सत्याग्रहियों पर पुलिस की ज्यादती

जोधपुर, २६ मई। जोधपुर की मंडोर डिस्टलरी पर २५ मई को रात्रि के १ बजे पुलिस के सिपाहियों ने व अतिरिक्त दण्डनायक ने सत्याग्रहियों को डिस्टलरी के बाहर घेर लिया। अधिकारीगण रात्रि को बाहर से आये हुए कच्चे माल महुआ व बोतल आदि को डिस्टलरी में ले जाना चाहते थे। सत्याग्रही ट्रक के सामने लेट गये। पुलिस ने उन्हें पसीट और जबरदस्ती अपने वाहनों में डालकर ले गये और उन्हें १६ मील ले जाकर छोड़ दिया। शराबबंदी के सत्याग्रहियों पर रात्रि के १ बजे इस प्रकार पुलिस द्वारा बल प्रयोग व जबरदस्ती, रात्रि के तीसरे प्रहर में डिस्टलरी में माल ले जाने की यह कार्यवाही सर्वथा अनुचित व सामान्य शिष्टाचार व नियम के विपरीत है।

"बिहारदान हो जायगा" के उद्घोषक श्री कमलधारी बाबू का निधन

८ मई १९६८ को प्रात श्री कमलधारी बाबू का निधन अचानक हृदय की गति बन्द हो जाने के कारण हो गया।

१६ जनवरी ६६ को एक सप्ताह में अथक परिश्रम करके साहेबपुरकमाल का प्रखण्डदान विनोबाजी को समर्पित करते हुए श्री कमलधारी बाबू ने दृढ़ विश्वास के साथ कहा था कि आज हम लोग बाबा को प्रखण्डदान समर्पित कर रहे हैं वह दिन दूर नहीं जब मुंगेर जिला ही नहीं पूरा बिहारदान हो जायगा। उस दिन से बिहारदान हो जायगा का जादू सभी लोगों के सिर पर चढ़कर बोलने लगा। २ अक्तूबर ६८ तक बिहारदान का लक्ष्य सामने है। उसकी पूर्ति से श्री कमलधारी बाबू की आत्मा को शान्ति मिलेगी।

—रामनारायण मि.

भूदान-यज्ञ ७-६-'६८ : रजिस्टर्ड नम्बर एल. १२४] पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त [लाइसेन्स नं० ए. १४

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड; या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं खंडेलवाल प्रेस, मानमंदिर वाराणसी में मुद्रित
इस अंक का मूल्य : ४० पैसे

भूदान-यज्ञ

भूदानयज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहि

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ संयुक्तांक : ३७-३८

शुक्रवार २१ जून, '६८

अन्य पृष्ठों पर

सम्पादक

राममूर्ति

•

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश

फोन : ४२८५

सौम्य और उग्र सत्याग्रह

समाज में दया चल रही है। लोग समझते हैं कि त्रिषमता कायम रखते हुए हम दया कर सकते हैं। परन्तु वह दया अब अपर्याप्त है। अब समता की जरूरत है। समता लाने के लिए ही ग्रामदान चल रहा है। निर्वैर प्रतीकार और सत्याग्रह का यह एक अंग है।

दूसरो को तकलीफ दिये बगैर,खुद सहन करना और समझाना ही सत्याग्रह है। सत्याग्रह का नाम लेकर मैं कोई धमकी की बात नहीं कर रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि सत्याग्रह का दुरुपयोग हो सकता है, और इन दिनो तो अक्सर हो रहा है। लेकिन मैं मानता हूँ कि सत्य का आचरण आग्रहपूर्वक करना चाहिए, ताकि सामनेवालों के हृदय पिघल जायें। इसके लिए चाहे जिस त्याग के लिए तैयारी हो वही सत्याग्रह है। मैं यह भी मानता हूँ कि अगर एक भी सच्चा सत्याग्रही दुनिया में होगा तो उसका असर दुनियाभर पर पड़ेगा और दुनियाभर का हृदय पिघलेगा। लेकिन उसके मन में दुनिया के प्रति प्रेम होना चाहिए।

लेकिन आज तो छोटे-छोटे कामो के लिए उपवास होते हैं, यह सारा गलत है। क्योंकि हम देख रहे हैं उससे ऐसी प्रतिक्रियाएँ होती हैं जो मूल उद्देश्य से सर्वथा भिन्न होती है। जहाँ उपवास का परिणाम सबके दिल मे प्रेमभाव निर्माण होने में होता है, वही सच्चा उपवास है। लेकिन जहाँ उसकी विपरीत प्रतिक्रियाएँ होती हैं, द्वेष-भाव और झगड़े होते हैं, वह उपवास गलत है। उपवास तो वहीं होना चाहिए, जहाँ जिसके विरोध में वह किया जाता हो, उसके प्रति हमारे मन में प्रेम हो और उपवास के बाद सामनेवाले को शर्म मालूम पड़े। उसे ऐसा लगे कि मैंने दुष्टता की, गलती की। मैं जिसके विरोध में उपवास या सत्याग्रह करता हूँ, अगर उसके मन मे ऐसी भावना न आयी, तो मैं कच्चा सत्याग्रही साबित होऊँगा। सामनेवाले के मन में जब यह भावना हो कि इस व्यक्ति के मन में मेरे लिए प्रेम है, तभी मैं सच्चा सत्याग्रही साबित होऊँगा।

इसलिए जब मैं सत्याग्रह की बात करता हूँ तो डरिये नहीं। यह मैं विचार की सफाई के लिए कह रहा हूँ। मेरा तो मानना है कि हमारा जो काम चल रहा है, वह एक किस्म का सत्याग्रह ही है। हमने सत्याग्रह का अध्ययन किया है इसलिए हम उसे कुछ तो समझते ही हैं। सत्याग्रह का यह अर्थ नहीं कि किसी एक मौके पर किसीके खिलाफ कुछ करना। इसलिए हमारा जो काम चल रहा है—गाँव-गाँव जाकर लोगो को विचार समझाना, ग्रामदान माँगना—यह सारा सत्याग्रह ही है।

—विनोबा

यह सही है कि वे विद्रोही युवक अभी अपनी विद्रोह-भावना को क्रान्तिकारी रचनात्मक शक्ति नहीं बना पा रहे हैं। तत्काल उन्हें सफलता भी नहीं मिलनेवाली है। अधीर होकर उन्होंने उपद्रव भी कर डाले हैं। यह सब सही है, लेकिन सबसे अधिक यह सही है कि उनके प्रश्नों ने दुनिया के कान खड़े कर दिये हैं। सन्त्रस्त मानव को एक नयी दिशा, एक नया प्रकाश दीखने लगा है। लोग समझने लगे हैं कि नये सवालों के लिए नये तरीके चाहिए। इनसान को रोटी तो चाहिए, लेकिन रोटी के नाम में उसे देर तक इन्सानियत से वंचित नहीं किया जा सकता।

विद्यार्थियों के प्रश्नों ने समाज के संचालकों के मन में (वाल्टेयर के शब्दों में) *यह प्रश्न तो पैदा कर ही दिया है : 'अगर वे सोचने लगेंगे तो हम कहाँ रहेंगे ?'*

युवक सोचने लगे हैं। उनके प्रश्न समय पाकर प्रहार बनेंगे। प्रतिक्रिया के पहाड़ों को टूटना पड़ेगा। मानव मुक्ति के लिए आतुर हो उठा है। युवकों के प्रश्न पश्चिम और पूरब के नहीं हैं, मनुष्य *और मनुष्यता के हैं। युवकों की पुकार उस दुनिया की है जो गर्भ* में है, अब बाहर आना चाहती है। ऐसी दुनिया जो 'जीवन की एक नयी डिजाइन' दे सके। मनुष्यता औद्योगिक सभ्यता के अंतिम चरण से गुजर रही है। कौन जाने युवक के विद्रोह से नयी सभ्यता का पहला अध्याय शुरू हो ! •

कहिये, लेकिन समझकर

'सर्वोदय मृगमरीचिका है। वह वस्तुस्थिति से दूर हट गया है। *स्वावलम्बी गाँव की बात बाजार की अर्थनीति के इस युग में असंगत* है। भूदान का विचार अच्छा था, लेकिन उसका भी क्या हुआ ? क्या भूदान की जमीनों में प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ा ? हजारों ग्रामदानी गाँव हैं, लेकिन उनमें भी सहकारी जीवन-पद्धति का विकास नहीं हुआ। अब भी सर्वोदय के लोग नहीं समझते कि *उपदेश से काम नहीं चलता। अगर कुछ ग्रामदानी गाँव* नमूने के बनाये जा सकें तो उपदेश देने की जरूरत ही नहीं रह जायगी। अभी मातृ-सम्मेलन में जो भाषण हुए उनमें यह जानने की कोशिश नहीं है कि कमी कहाँ है। आश्चर्य है कि ग्रामदान के अनुभव के बाद भी सर्वोदय के कुछ लोग नगरदान की बात करने लगे हैं ! सचमुच, उनकी उड़ान की कोई सीमा नहीं रह गयी है। अच्छा होता कि सर्वोदय आन्दोलन कुछ छोटी योजनाएँ हाथ में लेता।'

'जो लोग खुद कुछ नहीं कर सके वे सरकारी योजना की आलोचना करते हैं ! श्री जयप्रकाश नारायण को डर है कि खेती में इस वक्त जो क्रान्ति हुई है वह अगर जारी रही, और राजनीतिक ढाँचे में परिवर्तन न हुआ तो गरीबों का और भी ज्यादा शोषण होगा। इस आलोचना का कोई आधार नहीं है। देहाती क्षेत्रों में जहाँ-जहाँ प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ा है वहाँ मजदूर की मजदूरी बढ़ी है। राजनीतिक परिवर्तन हो या न हो, उत्पादन बढ़ने से किसीका क्या नुकसान हो सकता है ? उल्टे, आगे चलकर इससे सबकी समृद्धि बढ़नेवाली है। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को चाहिए कि वे सहकारिता का विकास करें, ताकि नयी दौलत *का न्यायपूर्ण बँटवारा हो।* लेकिन सर्वोदय आन्दोलन तो तब लोकमानस को प्रभावित कर सकता है, जब वह खुद तय कर ले कि किस चीज का पहले स्थान है, किसका बाद को। नशाबन्दी के मामले में राज्य-सरकारों को दोष देने से क्या फायदा ? सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को अपने-आपसे पूछना चाहिए कि क्या कारण है कि नशाबन्दी के क्षेत्रों में ही सबसे ज्यादा अवैध शराब बनी। जो आन्दोलन देश के जीवन को बदलने का दावा करता है वह कसमों को लेकर नहीं चल सकता। जब गाँवों में काम ही काम है तो कोई कारण नहीं कि नशाबन्दी के सत्याग्रह में समय गँवाया जाय। जिस काम के लिए समझाना-बुझाना ज्यादा कारगर हो सकता है उसके लिए कानून का सहारा लेना इस बात का प्रमाण है कि सर्वोदयवालों को सर्वोदय के आदर्शों में ही विश्वास नहीं रहा।'

ये केवल विचार नहीं हैं, विचार के साथ नेक सलाहें भी हैं। उन नेक सलाहों के लिए जितना कृतज्ञ हुआ जाय थोड़ा है। लेकिन आश्चर्य तो यह है कि जिस आन्दोलन के कार्यकर्ताओं को सलाहें दी *गयी हैं, उस आन्दोलन के काम और लक्ष्य के बारे में देश के एक* प्रमुख पत्र, 'टाइम्स ऑव इण्डिया' को इतनी कम जानकारी है ! लेकिन क्या सचमुच जानकारी कम है, या दिमाग में कुछ और बातें हैं, जो सचाई को समझने नहीं देतीं ? कितनी बार बताया गया है कि भूदान में जितनी जमीन भूमिहीनों में बँटी है उतनी २०-२१ वर्षों में सरकार द्वारा नहीं बँट सकी है, और बँटी हुई भूमि के अधिकांश पर आदाता खेती कर रहे हैं, लेकिन बावजूद बताने के वे ही सवाल बार-बार पूछे जाते हैं ! लगता है इसमें भी कोई राज है।

एक भ्रम बड़ा जबरदस्त है जो दूर करने पर भी दूर नहीं हो रहा है। हम कैसे समझायें कि सर्वोदय आन्दोलन सरकार के 'कम्युनिटी डेवलपमेण्ट प्रोग्राम' का गैर-सरकारी संस्करण नहीं है। इसलिए यह सवाल ही नहीं उठता कि हम छोटी छोटी योजनाएँ लेकर नमूने पेश करते फिरें। क्या गांधी ने स्वतन्त्रता का कोई नमूना पेश किया था ? कब कौन क्रान्ति पहले से क्रान्ति का नमूना बनाकर रखती है ? और, हम नमूना बनानेवाले हैं कौन ? हम मानते हैं कि हर गाँव अपनी सामूहिक शक्ति से अपने को बनायेगा। कार्यकर्ता बनायें, संस्था या सरकार बनाये, इस परम्परा को, इस अधिकारवाद को, ग्रामदान हमेशा के लिए समाप्त करना चाहता है। जनता की शक्ति नमूनावाद से नहीं जागेगी। वह जागेगी सम्पूर्ण क्रान्ति के आवाहन से। ग्रामदान वही कर रहा है।

अब समय आ गया है कि समाज में मौजूदा ढाँचे को चलानेवाले नेता, शासक, पत्रकार, विद्वान और विशेषज्ञ सर्वोदय आन्दोलन को जरा करीब से समझने की कोशिश करें। जब वे सहानुभूतिपूर्वक समझने के लिए करीब आयेंगे, और निहित स्वार्थों का चश्मा उतारकर सामान्य जनता की दृष्टि से चीजों को देखेंगे तो उन्हें अपने-आप पता चल जायगा कि आज देश में वस्तुस्थिति क्या है, और इस स्थिति में सर्वोदय के विचार कितने सही, या गलत हैं।

सर्वोदय में अपनी बात कहने की सबको छूट है, लेकिन इस छूट के साथ इतनी जिम्मेदारी तो है ही कि कहने के पहले समझने की कोशिश तो की जाय ! •

बलिया से आबू तक

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी द्वारा आबू रोड संघ-अधिवेशन में ६ जून '६८ को प्रस्तुत आन्दोलन का सिंहावलोकन

एक साल हुआ हम सब शिवरामपल्ली में मिले थे। बलिया-सम्मेलन में मिले थे तो उस समय प्रखण्डदान नयी चीज थी। बलिया-सम्मेलन के बाद दो साल बीत चुके। इस बीच में अपना आन्दोलन प्रखण्डदान से जिलादान और अब तो प्रान्तदान तक आगे बढ़ चुका है। बलिया सर्वोदय-सम्मेलन में संकल्प किया था कि १०० प्रखण्डदान तथा ५०,००० ग्रामदान करेंगे। उस समय तक जिलादान नहीं निकला था। शिवरामपल्ली में कई प्रखण्डदान तथा दरभंगा का जिलादान हो चुका था। ५०,००० ग्रामदान प्राप्त करने का संकल्प पूरा नहीं हुआ था। उस दिशा में प्रयत्न चल रहा था। पर इस समय प्रखण्ड-दान पुराना हो चुका है, जिलादान भी पुराना होने जा रहा है, क्योंकि देश भर में कुल ५ जिलादान हो चुके हैं। जिलादानों की संख्या और भी बढ़नेवाली है। इस समय तक प्रखण्डदान ३०० से अधिक हो चुके हैं। इस बीच नये २२,००० ग्रामदान तथा १५० प्रखण्डदान, और ४ जिलादान साल भर में शिवरामपल्ली संघ-अधिवेशन के बाद हुए।

अभी बिहारवालों ने विनोबाजी की प्रेरणा से संकल्प किया है कि २ अक्तूबर १९६८ तक प्रदेशदान पूरा करेंगे। उसके लिए वहाँ प्रयत्न चल रहा है। वहाँ साथियों की पूरी ताकत लगी है बाबा भी मदद दे रहे हैं। बिहार की प्रेरणा से और प्रान्तों—उड़ीसा, उत्तर प्रदेश तथा तमिलनाड—ने भी राज्यदान का संकल्प कर लिया है। तमिलनाड ने सन् १९६९ तक यानी गांधी-जन्म शताब्दी तक प्रान्तदान पूरा करने का संकल्प किया है। वहाँ की खादी की बड़ी संस्था तमिलनाड सर्वोदय संघ का सहकार इस काम में मिल रहा है। ग्रामदान आन्दोलन के खर्च के लिए ६ लाख रुपये उन्होंने मंजूर किये हैं। उसी तरह, मुझे पता नहीं उत्तर प्रदेश में बाकायदा संकल्प हुआ है या नहीं, पर, उत्तर प्रदेश का राज्यदान सन् १९६९ की २ अक्तूबर तक पूरा करने का तय हुआ है। उत्तर प्रदेश का कुंभकर्ण जाग उठा है, इस-लिए अब सन्देह नहीं कि इस आन्दोलन में सबसे आगे उत्तर प्रदेश रहेगा। अभी कुछ दिनों पहले उड़ीसा में प्रान्तीय सर्वोदय सम्मेलन हुआ था, वहाँ भी इसी तरह का संकल्प हुआ है कि गांधी-जन्म-शताब्दी तक उत्कल में राज्यदान में ताकत लगे।

इन दो वर्षों में प्रखण्डदान से जिलादान, जिलादान से राज्यदान तक हमारा काफिला पहुँच चुका है। राज्यदान का विचार आया तो नया आयाम प्रकट हुआ। आज जो सारा संयोजन चल रहा है, उस पर किस तरह असर डाल सकते हैं, जो राज्य-व्यवस्था चल रही है उस पर किस तरह असर डाल सकते हैं? कार्यकर्ताओं में नया उत्साह आया है, क्योंकि ग्रामदान-आन्दोलन अब सिर्फ एक एक गाँव मिलाकर सौ-हजार या पाँच हजार के और एक-एक गाँवों के आर्थिक और नैतिक विकास का मात्र एक कार्यक्रम नहीं रहा, उससे आगे बढ़कर सारे देश की आर्थिक, सामाजिक रचना बदल डालने की जो शक्ति इस आन्दोलन में निहित है, उसकी संभावना और दिशा सबके ध्यान में आ चुकी है। एक नया संचार हुआ है।

कई समस्याएँ भी हमारे सामने खड़ी हैं। उनका सामना हमें करना होगा। एक तो समस्या यह है कि जन-आन्दोलन की व्यापकता के साथ-साथ गहराई कम होने की संभावना उसमें पैदा होती है, जल्दी में फैले तो फिर यह खतरा उसमें होता है। इसलिए हमको सोचना चाहिए किस-किस तरह से विस्तार के साथ-साथ इसकी गहराई भी कायम रहे, ताकि उसमें से जिस शक्ति का दर्शन अपेक्षित है उस शक्ति का दर्शन उसमें से हो। मैं समझता हूँ कि सबसे महत्त्व का प्रश्न इस सन्दर्भ में है कि जिस तरह आज जो साठ हजार गाँव इसमें आये हैं, जिसे अब लाख तक पहुँचाना कोई मुश्किल बात नहीं है, उसी तरह इन लाखों गाँवों में उनकी शक्ति खड़ी हो, स्थानीय नेतृत्व, सेवकत्व उन गाँवों में कैसे पैदा हो, गाँव में जागृति आये और गाँव संगठित तथा शक्तिशाली बनें, यह कोशिश हमें पूरी शक्ति लगाकर करनी है।

ग्रामसभाओं के संगठन पर हमें ध्यान देना होगा, क्योंकि शिवरामपल्ली में संघ

→गांधीजी के शताब्दी-दिवस, २ अक्तूबर, '६९ नजदीक आने के साथ देश भर में शराबबन्दी जल्दी-से-जल्दी लागू की जाने की भावना तीव्र हुई है। राजस्थान में तो वहाँ के सर्वोदय-संगठन और नशाबन्दी समिति के तत्त्वावधान में शराबबन्दी-सत्याग्रह भी आरम्भ कर दिया गया है। सत्याग्रह के आरम्भ के साथ राजस्थान-सरकार ने राज्य में पूर्ण शराबबन्दी के ध्येय को स्वीकार किया है और उसके लिए वचनबद्ध हुई है, यह स्वागत योग्य है। किन्तु शराबबन्दी लागू करने के लिए निश्चित अवधि व क्रमबद्ध सुनिश्चित कार्यक्रम घोषित नहीं किया गया, इससे सरकार की उक्त घोषणा का व्यावहारिक मूल्य बहुत कम रह जाता है। गांधी शताब्दी-दिवस से बढ़कर इस शुभ कार्य के लिए और कौनसा अवसर हो सकता है?

अतः राजस्थान नशाबन्दी समिति तथा समग्र-सेवा-संघ की यह माँग सर्वथा उचित है। इस माँग की पूर्ति न होने के कारण राजस्थान में ६ अप्रैल से पुनः सत्याग्रह चालू किया गया है और संतोष का विषय है कि वह तेजी से गति पकड़ रहा है। यह केवल राजस्थान का ही नहीं, सारे देश का प्रश्न है। राजस्थान और उत्तर प्रदेश का उत्तराखण्ड अंचल इस मोर्चे पर अगवानी कर रहे हैं, उसके लिए इन क्षेत्रों के साथी बधाई के पात्र हैं। सर्व सेवा संघ इस आन्दोलन का हार्दिक समर्थन करता है तथा अन्य राज्यों में भी इसके लिए जो उत्कटता महसूस की जा रही है, उसका स्वागत करता है। संघ को विश्वास है कि इस आन्दोलन के फलस्वरूप देश में लोकशक्ति संगठित व सक्रिय होगी और शराबबन्दी की माँग शीघ्र पूरी होगी। संघ देश भर के लोगों से अपील करता है कि ऐसे आन्दोलन में तन-मन-धन से योग दें।

(६, ७, ८ जून '६८ को आबू रोड संघ-अधिवेशन में स्वीकृत)

का काम कठिन परिस्थितियों से गुजर रहा है। उत्पादन बहुत घटा है। देश की आर्थिक मंदी का सम्बन्ध तो उससे है ही। उसके साथ-साथ हम जिस काम को आज तक करते आये, अब उसको एक मर्यादा आ गयी है। इस तरह से अब आगे नहीं बढ़ सकेंगे। पहले ही विनोबाजी ने चेतावनी दी थी, वह सच साबित हुई। खादी में नया चिन्तन चला है। पानीपत में एक प्रस्ताव पास हुआ। कुछ दिशा-सूचन हुआ। इस पर यहाँ भी सोचना है। अपनी नीति इस बारे में तय करनी है कि खादी-ग्रामोद्योग के बारे में कैसे आगे बढ़ेंगे।

भारत सरकार ने अशोक मेहता की अध्यक्षता में एक कमेटी बिठायी थी। उसकी रिपोर्ट भी आ गयी है। उसमें भी कुछ महत्व के सुझाव दिये हैं। उस कमेटी के सुझावों से पूरा सन्तोष नहीं है। पर वह हमारी कमेटी तो नहीं थी। खादी को माननेवाले और खादी को न माननेवाले ऐसे सब लोगों की मिली-जुली यह कमेटी थी। इसलिए उसमें जो खादी के कायल नहीं हैं ऐसे लोगों ने जिस हद तक हमारी कुछ माँगें स्वीकार की हैं उसका भी काम की दिशा पर असर होनेवाला है। इस बारे में भी यहाँ चर्चा होनी चाहिए।

एक समस्या जो इन दिनों खड़ी हो रही है, वह शराबबन्दी की है। एक तरफ माँग हो रही है कि गांधी-जन्म शताब्दी तक पूर्ण शराबबन्दी हो, दूसरी तरफ जहाँ शराबबन्दी लागू थी वहाँ ढीली होती जा रही है! अब इसको लेकर कुछ प्रान्तों में सत्याग्रह भी चला है। कुछ केरल में चला, कुछ उत्तराखण्ड में चला। अभी बड़े पैमाने पर सत्याग्रह राजस्थान में चल रहा है। इस सत्याग्रह को विनोबाजी का आशीर्वाद मिला है और उनकी पूरी सम्मति मिली है। यह बड़ा मोरचा यहाँ खड़ा किया गया है। इसमें से जनशक्ति का दर्शन होगा। इस प्रान्त में इस मोरचे पर सफलता मिली, तो दूसरे प्रान्तों को भी इससे मार्गदर्शन मिलेगा। इसी प्रकार उत्तराखण्ड में भी सत्याग्रह चला है, शराबबन्दी का आन्दोलन चला है। आधा दर्जन शराब की दूकानें बन्द हो चुकी हैं। वहाँ जन-आन्दोलन बन रहा है। यह लड़ाई भी चली है। अपने आप यह ऊपर उठा है। राजस्थान ने इस चुनौती को उठा लिया है। मैं आशा करता हूँ कि यह आन्दोलन आगे बढ़ेगा। दूसरे प्रान्तों में भी इसकी योजना क्या हो, इस पर हमें सोचना है और सोचकर इस दिशा में आगे बढ़ना है।

देश की परिस्थिति और दुनिया की परिस्थिति को देखते हुए आज शक्तियों का, पक्षों का बँटवारा हो रहा है। इसको रोकना है। दबी हुई जनता में जागृति पैदा हो रही है, इस जागृति को विधायक दिशा में आगे बढ़ाना है। इसके लिए हमको त्रिविध कार्यक्रम के सिवा दूसरा कोई कारगर रास्ता हमारे सामने दीखता नहीं है। हमारे काम में कई समस्याएँ आती हैं; गलतियाँ, कमजोरियाँ आती हैं। और नजदीक से देखते हैं तो ये गलतियाँ, ये कमजोरियाँ दीखती हैं तो लगता है कि इस तरह कहाँतक पहुँच पायेंगे? इसमें से क्या निकलेगा? लेकिन परिस्थिति की माँग रखकर सोचते है तो इसके सिवा दूसरा रास्ता दीखता नहीं। हम यहाँ देश की परिस्थिति की समीक्षा करेंगे। आपस में विचार-विनिमय होगा। मैं चाहूँगा कि देश की परिस्थिति के सन्दर्भ में अपने आन्दोलन को देखें, उसको तेजस्वी करने के लिए जो भी परिवर्तन करना हो करें, और अगले साल के लिए स्पष्ट दृष्टि, स्पष्ट विचार लेकर हम यहाँ से जायें।•

आबू रोड की डायरी से

५ जून : सायंकाल। खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनी के उद्घाटक (राजस्थान सरकार के एक मंत्री महोदय) बहुत विलम्ब से आये। इसलिए, उद्घाटन-समारोह के अन्त में जे० पी० को दो शब्द कहने थे, लेकिन उद्घाटन के पूर्व ही उन्हें भाषण देना पड़ा। उद्घाटक महोदय के विलम्ब की अवधि ज्यों ज्यों बढ़ती गयी, त्यों-त्यों जे० पी० को 'दो शब्दों' वाले भाषण की अवधि भी बढ़ानी पड़ी।

× × ×

६ जून : रात्रि। सर्व सेवा संघ के रात्रि-कालीन अधिवेशन में कई मिनटों तक वक्ताओं और श्रोताओं का मच्छ[?] अभाव रहा।

× × ×

उसी सभा में संघ के अध्यक्ष महोदय मंच पर नंगे बदन बैठे थे। दादा ने देश की आर्थिक परिस्थिति का जिक्र करते हुए कहा, "देश भूखा है, नंगा है। हमारी सभा का अध्यक्ष इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।"

× × ×

८ जून : सुबह। डा० सुशीला नैय्यर का नशाबन्दी पर एक जोरदार भाषण हुआ। भाषण सुनकर एक श्रोता ने लिखित प्रश्न पूछा, "जब आप सरकार में मंत्री थीं, तब आपने क्यों नहीं सरकार से इस विषय पर मतभेद जाहिर किया?" इस प्रश्न का उत्तर देते हुए डा० सुशीला नैय्यर ने कहा, "आप सर्वोदयवालों में एक Spiritual arrogance काम कर रहा है। समझते हैं कि सिर्फ हम ही सही काम करते हैं।"

× × ×

उसी सभा के अंत में संघ का निवेदन प्रस्तुत करते हुए जब निर्मला बहन ने उत्तरकाशी के जिलादान में प्रगट हुई लोकशक्ति का जिक्र किया तो श्रोता प्रतिनिधियों का दिल उछल पड़ा और जब उन्होंने जागतिक परिस्थिति का जिक्र करते हुए स्वर्गीय कैनेडी बन्धु की माँ के हृदय की करुण पुकार सुनायी, तो प्राय सबकी आँखों में आँसू छलक आये।

× × ×

१० जून : सुबह। दादा का भाषण शुरू हुए कुछ ही समय बीता था, भूमिका प्रस्तुत करने के बाद दादा मूल विषय पर आये ही थे कि अध्यक्ष महोदय की घंटी बजी, और वाक्य जहाँ-का-तहाँ छोड़ कर दादा 'माइक' के सामने से हट गये।

× × ×

सम्मेलन की इसी आखिरी सभा में सम्मेलन अध्यक्ष ने अपना समारोप-भाषण शुरू करते हुए कहा, "अभी जे० पी० ने कहा कि आप तो आज 'डिक्टेटर' हो गये हैं! मुझे यह सुनकर दुख हुआ, यह कहूँ तो उन्हें दुख होगा, इसलिए नहीं कहूँगा...लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि मुझे दुख हुआ है।"

देश और दुनिया के वर्तमान सन्दर्भ में भारतदान एक विकल्प

संघ-अधिवेशन में श्री जयप्रकाश नारायण का भाषण

जब सुबह मुझसे बोलने के लिए कहा गया तो मैंने मित्रो से कहा कि मुझे बता दीजिये विषय के बारे में। जो विषय बताया गया वह विषय तो बहुत बड़ा है और वह ऐसा विषय है जिसमे हममें से कोई भी अपरिचित नहीं होगा। हम सब समाज सेवी हैं कार्यकर्ता हैं, एक क्रान्तिकारी आंदोलन में लगे हुए हैं, तो देश दुनिया में क्या चल रहा है, इससे बेखबर होकर हम अपना काम कैसे कर सकते हैं? देश की क्या परिस्थिति है उसका थोड़ा-सा जिक्र मनमोहन भाई ने किया है। जो परिस्थिति है अच्छी नहीं है यह तो स्पष्ट ही है। राजनैतिक आर्थिक अथवा सामाजिक, सब कुछ अगर आप समावेश कर दें तो किसी भी माने में परिस्थिति अच्छी नहीं दिखाई देती है, बल्कि इस परिस्थिति में जो थोड़े से लोग सर्वोदय के झंडे के नीचे हैं और कुछ संस्थाओं के द्वारा निस्पृह सेवा का काम कर रहे हैं वह एक आशा की किरण जैसे है।

जितना काम पिछले दो वर्षों के अर्से में बलिया के बाद से हो चुका है उसकी कल्पना मुझे भी नहीं थी। एक बहुत बड़ा काम हुआ है। जो हम करना चाहते हैं और जो हमारा उद्देश्य है, उसके मुकाबिले में तो कुछ भी नहीं है बहुत कम है ऐसा मानना चाहिए। फिर भी, ६० हजार ग्रामदान हो जायँ ३ सौ प्रखण्डदान हो जायँ ५ जिलादान हो जायँ, ये कोई छोटी मोटी घटनाएँ तो नहीं हैं। मुझे लगता है कि जो देश का बिगाड़ हुआ है, उसके सुधार के लिए थोड़ा सा काम बन पाया है। देश अब कहाँ जायगा, किधर जायगा, यह तो प्रश्न चिन्ह के रूप में खड़ा है, और आप क्या निर्णय लेते हैं और आगे समय में क्या करते हैं उस पर बहुत कुछ निर्भर करता है। यों तो मैं समझता हूँ कि देश चल रहा है शासन है और सामाजिक जीवन टूट नहीं चुका है आर्थिक तन्त्र टूट नहीं चुका है, उसमें सबसे बड़ा कारण इस देश की जनता है। इसके बावजूद लोगों को अनेक प्रकार के घोर बहुत अंश में असह्य कष्ट है। फिर भी हर कोई अपने काम धंधे में लगा है और जो कुछ बन पड़ रहा है वह कर रहा है। इस प्रकार से करोड़ों लोगों के अपने अपने काम में लगे रहने के कारण—भले ही वह काम बाल बच्चे के भरण-पोषण का हो, या और कुछ हो, उससे बाहर निकलकर यह सारा जो काम चल रहा है इसके चलते देश चल रहा है। और यह हमारा सौभाग्य है कि इस देश के लोगों में अभी तक इतनी समझ है और इतना धैर्य है और इतना पराक्रम है। हम अक्सर अधीर हो जाते हैं, इस चिन्ता में कि देश में शक्ति नहीं है और प्रगति धीमी हो रही है यह बात ठीक है। जिस शक्ति की कमी हम देखते हैं वह सामूहिक शक्ति है सहयोगी शक्ति है। फिर वह भी किसी हद तक पायी ही जाती है। लोग मिलकर काम कर लेते हैं। गाँव आज भी खड़े हैं। साढ़े पाँच लाख गाँव हैं—डकैती हो जाती है, और कुछ भी हो जाता है, शहरों में भी यह चल ही रहा है। इसके बावजूद इस प्रकार के और भी अभाव व्याप्त हैं।

मुझे भासता है कि देश की जनता को अगर कोई ऐसा मार्ग मिलता है जिससे देश को मिलकर चलाने की शक्ति पैदा हो जाती है तो हम भविष्य अच्छा बना लेंगे।

गैरकांग्रेसी शासन की निष्पत्ति

पिछले चुनाव के बाद हमारे कितने ही पुराने मित्र जो राजनैतिक पार्टियों के बड़े-बड़े नेता हैं उनको हमने सभाओं में दर्द के साथ कहते हुए सुना, और एक बार नहीं अनेक बार कहते हुए सुना कि पंजाब से चले जायँ केरल तक पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक, तो कहीं भी कांग्रेस का राज्य नहीं मिलेगा। अब देखिये, सारा क्या हो गया? १२ १५ महीनों के अन्दर कितना उलट-फेर हो गया। वह सारी जो आशाएँ पैदा हुई थी, जनता की नयी आशाएँ पैदा हुई थी, वह सब मिट गयीं और एक राजनैतिक अस्थिरता जो पैदा हुई थी, वह कुछ और भी गहरी हुई। और यह मध्यावधि चुनाव अब कई जगह होनेवाला है। इस अर्से में कांग्रेस के मुकाबिले में कोई भी शक्ति पक्ष के रूप में, कहीं ऐसा दीखता नहीं है। साम्यवादियों की शक्ति भी बिखर गयी है।

जो कार्यकर्ता होंगे, और साधारण लोगों में भी अधिक प्रभावी हैं जो वामपंथी हैं, उनके अंदर बंगाल में फूट हो चुकी है और बड़ी फूट है। समाजवादियों का भी हाल बुरा है, ऐसा कहना चाहिए। स्वतन्त्र पार्टी की शक्ति दुर्बल हुई है। उनमें कुछ फूट गुजरात में चुनाव को लेकर पैदा हुई है। और एक जो दुर्बलता कांग्रेस में देखी गयी—अनुशासन की कमी, और नैतिक आधार कमजोर और दुर्बल, यह हर पक्ष में हम देखते हैं। कोई भी जो गैर-कांग्रेसी पक्ष में है, ऐसा दावा नहीं कर सकता कि हमारे पक्ष में अनुशासन है। कांग्रेस के विरोध में या कांग्रेस के अतिरिक्त कोई दूसरी पार्टी नहीं बन पायी अभी तक। डी० एम० के० है, तो एक प्रादेशिक पार्टी है। यह जरूर है कि अकेले कांग्रेस को उसने अपदस्थ किया और कांग्रेस के पद पर बैठी और वह पार्टी आज भी अपना राज्य कर रही है।

जो भी चित्र खींचा गया था अखबारों के जरिये और कांग्रेस के नेताओं के द्वारा—डी० एम० के० का वैसा रूप तो देखा नहीं। अभी अन्नादुराई अमेरिका में गये, तो वहाँ जो कुछ उन्होंने कहा उस पर से हरगिज नहीं लगता है कि वह कोई रीजनल नेता थे, तमिलनाड, भाषा वगैरह के बारे में अपना विचार उन्होंने कहा, वह अलग बात है। हुकूमत की कुर्सियों पर बैठना हो तो सब कांग्रेस के विरोध में हैं, इसलिए सब मिल सकते हैं। कोई जमीन पर है, कोई आसमान पर है कोई एकदम पूरब है और कोई एकदम पश्चिम। इतना फर्क है दोनों में नार्थ पोल और साउथ पोल जैसा, लेकिन सत्ता की भूख है। यह दावा है कि वे कुछ कर सकेंगे मुझे मालूम नहीं कि वे कुछ कर सकेंगे। क्या करेंगे? कुछ कोशिश करेंगे। कांग्रेस के निजलिंगप्पा साहब ने पूना में कहा कि हरि-यारण वगैरह से बहुत ज्यादा सबक हमें ले लेना चाहिए। कुछ इस प्रकार कहते हैं

भूदान यज्ञ : शुक्रवार, २१ जून, '६८

है।"'अब कांग्रेस की हुकूमत है केन्द्र में, तो वहाँ भी कमजोरी है, दुर्बलता है। 'कलेक्टिव लीडरशिप' नहीं है, यह भी एक दुर्भाग्य है। और मेरा ख्याल है अंदर अंदर दाँवपेंच भी जो करनेवाले हैं, वे करते ही हैं। तरह-तरह की अफवाहें हम सुनते हैं। सब अफवाहें सही नहीं हों, लेकिन इतनी बात तो सही है कि हुकूमत कमजोर है। फैसले कर नहीं पाती है। ऐसी परिस्थितियाँ बन जाती हैं, जिनका अगर जवाब जल्द न दिया जाय तो स्थिति बिगड़ जायगी। अब नागालैण्ड के 'सीजफायर' को चार वर्ष से कम नहीं हुआ।

अभी तक नागालैण्ड का सवाल हल नहीं हुआ। चल ही रहा है। और आप अखबारों में देखते ही होंगे कि वे लोग चीन जा रहे हैं। और चीनवालों ने आश्वासन दिया है कि हम हथियार देंगे, ट्रेनिंग कर देंगे।"'परिस्थिति दिन-ब दिन बिगड़ती जाती है। और मैं मानता हूँ कि इस परिस्थिति में जनता कुछ हमारी तरफ देखती है, यह कुछ अतिशयोक्ति होगी। हमारी तरफ याने सर्वोदयवालों की तरफ देखते हैं, यह अतिशयोक्ति होगी।

इस राजनीतिक परिस्थिति में, जब पक्षों की तरफ से---पहले तो कांग्रेस के विरोधी पक्ष थे तो उनकी तरफ कुछ देखते थे, वोट भी आये थे, काफी विजयी हुए थे, काफी राज्य हाथ में आये थे और जो उत्साह मनाया गया उस समय लखनऊ में, कलकत्ता में, पटना में, पंजाब में, चण्डीगढ़ आदि में वह सब आपके ध्यान में होगा, इतने बड़े हीरो माने गये थे ये सब लोग, आज परिस्थिति बदली है, —जनता आज कुछ ऊब-सी गयी है। जो आज राजनीति है, राजनैतिक पक्षों की आपसी लड़ाइयाँ हैं, पक्षों के झगड़े हैं और इनसे कुछ निराशा है, तो उसमें से हमें एक मौका मिलता है।

परिस्थिति की हमारे काम को चुनौती

अब जितना मनमोहन भाई ने कहा वह बहुत बड़ा काम हुआ। लेकिन उस काम में हमारे काम को एक चुनौती है। और उसकी कल्पना करके शरीर कांप उठता है कि वह कैसे होगा अब! मालूम नहीं कि उसकी पूरी कल्पना भी हम सकते हैं या नहीं है, अब बिहारदान २ अक्तूबर तक न भी हुआ तो मान लीजिये ३०-३१ दिसम्बर तक हो। जब भी हो, होगा। बिहारदान के साथ मेरा नाम जोड़ा जाता है। उसका श्रेय हम नहीं लेते, वह तो बाबा के ही काम करने से हुआ, और, बिहार में जो लोग हैं—वैद्यनाथ बाबू, और बाकी बिहार के लोग हैं।

अब तिरुनेलवेली का जिलादान हुआ, उत्तरकाशी का जिलादान हुआ, बलिया का हुआ, तो वहाँ कोई बड़ा नेता तो नहीं था। बाबा तो वहाँ थे नहीं। इसका बहुत बड़ा महत्व है। जिलादान हुआ तो बहुत बड़ा बोझ नहीं आया मानिये। लेकिन एक प्रदेश-दान हो जायगा तो फिर वह सारा बोझ कंधे पर आता है—आर्थिक, राजनैतिक सारे निर्माण का। अब यह कहना कि हमारा काम हाथ फैलाने का है, उसके बाद दूसरे करेंगे। दूसरे करनेवाले हैं, वे तो कर ही रहे हैं। उसी ढंग से होगा? दूसरों को सिखाना पड़ेगा कि कैसे करें। कौन किसको सिखायेगा? कोई कलेक्टर, ए० डी० ओ०, बी० डी० ओ०, पटवारी, तहसीलदार को सिखायेंगे। जनता को सिखायेंगे कि गाँव के अंदर से कोई शक्ति पैदा हो सकती है, जो बुद्धिजीवी हैं, थोड़ा-बहुत खिंचे हैं। वे बहुत ज्यादा तो खिंचे नहीं हैं अभी। और इसमें से एक समस्या पैदा हुई, कि अब जिस जिले का दान हो गया तो उस जिला में दो-चार मसले हैं। अब उनका क्या होगा?

शहरों के लिए हमारे पास क्या कार्यक्रम है? शहरों में हमने शराबबंदी कर ली, कभी पात्र का काम कर लिया, कभी पोस्टर वगैरह का काम कर लिया, तो ठीक है। हम किसी बुनियाद के काम में तो गये नहीं, जैसे ग्रामदान किसी हद तक बुनियाद में जाता है। आज राजनैतिक पार्टियाँ जहाँ तक जाती हैं, उससे अधिक ग्रामदान जाता है। लेकिन ऐसा कोई कार्यक्रम शहरों के लिए हुआ नहीं।

अब बिहारदान हो जायगा, फिर सन् '७२ का चुनाव होगा और सन् '७२ के चुनाव में फिर वही नक्शा निकलेगा। तो उसके क्या माने होंगे? अब इधर तो बिहार का ग्रामदान हुआ और उधर शासन बनता है, जिस शासन से इसका कोई मतलब नहीं है। अपना दलों का शासन, दलों की अपनी-अपनी नीतियाँ हैं, उनको जोड़कर अपना १७ सूत्रीय या २० सूत्रीय कार्यक्रम बने, वह बनता है तो उसमें से कितना जमीन पर उतरता है और कितना कागज पर ही रह जाता है, वह तो देखने से मालूम होता है। यही नहीं रहेगा तो क्या होगा। तब कुछ मुट्ठी भर लोग तो सब कुछ कर नहीं सकेंगे। आज जो देश की राजनीतिक परिस्थितियाँ हैं, उस परिस्थिति में यह जरूर मानना चाहिए कि हमारे काम को सरलता हुई है, मौका मिला है और अब हमें अधिक उत्साह और आत्मविश्वास से और अपने विचार को अच्छी तरह से समझकर काम करना चाहिए।

हजारों लोग काम में लगे हैं, उन्होंने काम के विचार को कहाँ तक समझा है और उनकी नासमझी से आन्दोलन के काम में क्या कच्चापन रह जाता है, इस पहलू पर हमें भरपूर ध्यान देना है। इस आन्दोलन की यह बुनियाद की बात हुई। पहले लोग कहा करते थे कि साहब, आपका काम तो बहुत अच्छा है, लेकिन विलम्ब से होता है। अब उनके मुँह बंद रहते हैं। अब वे बोल नहीं सकते। उत्तर प्रदेश में हुई प्रगति का प्रबंध समिति के सामने आपने जो नक्शा खींचा या शंकररावजी के तमिलनाड में जाने के बाद जो वहाँ आकांक्षा पैदा हुई, उससे यह नहीं लगता कि हम बहुत दूर की बात कर रहे हैं, जो ५० वर्षों के बाद हमारी पकड़ में आयेगी। प्रदेशदान हो जाने के बाद तो हम यह नहीं कह सकते कि जो यह नीचे से काम हो रहा है, इसमें देर लग रही है। यह तो जल्द-से-जल्द होना चाहिए, नहीं तो काम बिगड़ेगा। काम तो नीचे से ही हो रहा है। ग्रामदान, ग्राम-स्वराज्य, प्रखण्डदान, प्रखण्ड-स्वराज्य, जिला स्वराज्य फिर बिहार-स्वराज्य। लेकिन ऊपर से भी कुछ करना चाहिए, यह भी आवश्यक है।

कुछ राष्ट्रीय महत्व के प्रश्न

सेवाग्राम में शंकररावजी की प्रेरणा से एक गोष्ठी हुई थी। गोष्ठी में काफी लोग आये थे। उस गोष्ठी ने भी काफी नेतृत्व दिया और गोष्ठी में जो निर्णय हुए, उस पर कुछ कार्य हुआ। जैसा कि मनमोहन भाई ने कहा,

यह प्रयत्न किया जाय कि पार्टियों के पार स्परिक भेद के होते हुए भी कुछ राष्ट्रीय महत्व के प्रश्न हैं, बुनियादी प्रश्न, जैसे देश की एकता। यह प्रश्न लिया जाय, या सेक्युलरिज्म का प्रश्न लिया जाय, धर्म निरपेक्षता या इसके लिए कोई अच्छा सा शब्द निकालना चाहिए—हिन्दी, मराठी, बंगला, चाहे जिस भाषा में हो, पर अच्छा-सा शब्द निकालना चाहिए। यह प्रश्न लिया जाय। डेमोक्रेसी का प्रश्न लिया जाय। यह खतरे में है। राष्ट्रीय एकता भी खतरे में है। बाहर से नहीं, भीतर से। भीतर की जो शक्ति पैदा हुई है, उससे सेक्युलरिज्म को खतरा है। इधर साम्प्रदायिकता भी कितनी तेजी से बढ़ रही है। इतने दंगे हुए, कलकत्ते में, बंगाल में, मेरठ में, इलाहाबाद में, और भी कई जगह हुए, कहीं साम्प्रदायिकता की आग फूट जाती है तो नजर आता है।

लोकतंत्र जो चल रहा है उसकी जो दुर्बलताएँ हैं, और जो आपका संविधान है, इलेक्शन का जो कानून है, पक्षों के जो अपने आचार व्यवहार हैं, इसके बारे में कुछ सोच विचार हो कि जो भी राजकीय पद्धति आज है उसमें कोई क्रांतिकारी परिवर्तन अगर न भी होता हो कि पार्लमेंटरी सिस्टम से प्रेसीडेंशियल सिस्टम हो या पंचायती सिस्टम हो, और कोई सिस्टम हो, कोई क्रांतिकारी परिवर्तन न होते हुए भी डमोक्रेसी पर जो खतरे आये हैं पिछले चुनाव के बाद से, तो उन खतरों का किस तरह से मुकाबिला किया जाय, कैसे किया जाय? इन प्रश्नों के ऊपर तो कोई पार्टी ऐसी नहीं होगी जो कहेगी कि हम नेशनल यूनिटी के खिलाफ हैं। सेक्युलरिज्म के बारे में शायद जनसंघ कहे कि हमारा विश्वास नहीं है इसमें। मैं नहीं कह सकता हूँ कि कोई ऐसी पार्टी है—सोशलिस्ट हो, गैर-सोशलिस्ट हो, किसी और विचार की पार्टी हो।

मुल्क के आर्थिक प्रश्नों के बारे में हम 'कंसेंसस' लाने की कोशिश करें। चाहे वह खाद्यान्नों का प्रश्न हो, विदेशी कर्जे का प्रश्न हो बेकारी का हो। कुछ ऐसे सवाल लिये जायें जिसमें तत्काल करोड़ों लोगों का सम्बन्ध भी आता हो। उनमें से कुछ 'कंसेंसस' निकाला जाय, एक राय निकाली जाय। एक राय न भी हो तो आमराय निकाली जाय।

इसी तरह भाषा का प्रश्न है। यह तो स्पष्ट है कि इस प्रश्न पर आमराय नहीं होती है। इसमें देश के विघटन के बीज भरे हुए हैं। अब आसाम की सरकार कहती है और आसाम की कांग्रेस पार्टी कहती है कि यह तो हम मान्य नहीं कर सकते हैं कि एक राज्य के अन्दर कोई एक दूसरा और राज्य हो। चाहे उसको उपराज्य (सब स्टेट) ही क्यों न कहा जाय यह हम मानने को तैयार नहीं। क्यों आप मानने को तैयार नहीं हैं? अब इस प्रश्न को लेकर टुकड़े हों। तो मेरी अपनी इसमें एक राय है, इसके बारे में मैं अपना विचार रख देता हूँ। अब सर्व सेवा संघ की क्या राय है, मुझे नहीं मालूम। और इस पर कभी चर्चा हुई है, यह भी मुझे नहीं मालूम और इसके ऊपर कोई कंसेंसस होगा, यह भी मुझे नहीं मालूम। इतना मालूम है कि लोग विकेन्द्रीकरण चाहते हैं सत्ता का और शासन का उसके अनुरूप वह विचार है हमारा। और वह विचार यह है कि भारतीय केन्द्रीय राज्य को जो काम करना है उतना भर उसके पास रहना चाहिए। राज्यों के पास विकेन्द्रित शक्ति रहनी चाहिए। आज जो चल रहा है, वह उल्टी ही गंगा बह रही है। यह नहीं होने का है।

केन्द्र और प्रदेश की जिम्मेदारियाँ?

जब तक केन्द्र में भी और हर प्रदेश में केन्द्रीय राज्य था तब तक तो ठीक था, हालाँकि उस समय भी झगड़े होते थे। अभी अशोक मेहता/अभातुराई ने स्पष्ट कहा है कि सेंटर का जो काम है वह है देश की सुरक्षा का काम, विदेशों के साथ सम्बन्ध रखने का काम विदेशों के साथ आयात निर्यात इत्यादि का काम। हमारे देश का एक सिक्का रहे पार्लमेंट का झंडा रहे और इस तरह से और काम उनके होने चाहिए। बाकी सब काम राज्यों को जाना चाहिए। और यह तभी सम्भव होगा जब सब लोगों की एक राय होगी। लेकिन इसका प्रयत्न कुछ न कुछ करना चाहिए और मैं यह मानता हूँ कि हमारे संघ का और यूनियन का, जो यूनियन आफ इंडिया है, एक यूनिफार्म रिलेशनशिप, एक ही प्रकार का सम्बन्ध रहे (केन्द्र का हर राज्य के साथ) ऐसा होना नहीं चाहिए। केन्द्र और राज्यों का सम्बन्ध भिन्न भिन्न हो सकता है, भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में। उसके लिए हमारे कांस्टीट्यूशन में लचीलापन होना चाहिए। और यदि विकेन्द्रीकरण की तरफ हम जाते हैं तो वह आपसे आप हो जाता है। तब वह प्रश्न गौण बन जाता है। लेकिन दिक्कत यह है कि आज सरकार के पास बाहर का कर्जा है। सब भारत सरकार से अपेक्षा रखते हैं कि हमें कर्जा मिलेगा, मदद मिलेगी, उसके लिए सब उनके दरवाजे पर दौड़कर जाते हैं। राज्यों का कुछ अलग स्वातंत्र्य हो तो उनका कुछ कर्तव्य भी हो। क्या मदद चाहिए, उसका भी एक निश्चय हो जाय। राज्य जो मदद मांगेंगे उतनी ही केन्द्र देगा। अपनी ओर से थोपेगा नहीं। और यह सब प्लानिंग इत्यादि के बारे में भी होना चाहिए।

इसकी नीति तय करने के लिए देश के राजनीतिक नेताओं को और कुछ दूसरे लोग हैं, जो राजनीति में नहीं हैं, फिर भी देश में जिनका ऊँचा स्थान है, समाज में जो माने गये हैं, ऐसे लोगों को बुलाया जाय, ऐसी कोई बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी नहीं की जाय, १०० आदमी हों। उसको एक नेशनल कन्वेंशन कहा जाय, उसकी पूर्वतैयारी हो और उसके इश्यूज बनें, उसके लिए पेपर तैयार हों, और चर्चा करके उसमें से कुछ निकाला जाय। इस बात का प्रयत्न किया जाय कि उसमें जो तय होता है, उस पर सब अमल करें।

६० हजार ग्रामदान होने के बाद और ३ सौ प्रखण्डदान होने के बाद राजनीतिक क्षेत्र में, हम कुछ कर सकें, इसकी एक स्थिति पैदा होती है। लेकिन आर्थिक क्षेत्र में तो हम बहुत दुर्बल रहे। और जो यह त्रिविध कार्यक्रम बना, उसमें तो जिस प्रकार से खादी का काम होता रहा उसी प्रकार होता रहा। बाबा ने कहा तो नया मोड़ हुआ। लेकिन वह तो निष्फल ही हुआ, खादी कोई बहुत ग्रामाभिमुख हुई नहीं सस्थाभिमुख ही हुई और उसमें बहुत ज्यादा हम कुछ कर नहीं पाये। अगर वह हुई होती तो शायद हम अपने पाँव पर खड़े होते।

कृषि-विकास की धीमी रफ्तार !

आर्थिक क्षेत्र में जो स्थिति है, उसमे भगवान् की कृपा से पिछले साल की फसल अच्छी हो गयी। एक तो बरसात अच्छी हुई और दूसरी एक बात और हुई। इसमे किसानो का भी हाथ है और सरकार का भी हाथ है। और कुछ विदेशी एजेंसियों का भी हाथ है, और सबसे बड़ा हाथ तो विज्ञान का है। जो चमत्कार हुआ है, वह नये बीजो के कारण हुआ है और उसकी सम्भावना बहुत बड़ी है। कृषि का अगर कुछ हो, और मांग की जो कल्पना है, तो प्लानिंग कमीशन मे बहुत विचार करके भी, भारत की कृषि के बारे मे जितना गाडगिल साहब समझते हैं, उतना पहले के लोग, जो उपाध्यक्ष होते थे, नही समझते थे। लेकिन बावजूद इसके उनकी हिम्मत नहीं हुई, इससे ज्यादा कहने की कि पाँच फीसदी हमारा ग्रोथ होगा कृषि मे प्रति वर्ष। पाँच फीसदी। अब कोई दवा दो, ढाई फीसदी आबादी बढ़ जाती है तो, पाँच फीसदी अगर बढ़ती है तो, आर्थिक विकास के लिए कोई भूमिका तैयार नही होती। उसमे से इतने 'सरप्लस' नही निकलते हैं, कि जिनसे आर्थिक उद्योग बन सके, और कच्चा माल बन सके। यह बहुत 'स्लो रेट' है। लेकिन बहुत सोच-समझकर कहा उन्होंने, क्योंकि अब तक साढे तीन परसेंट के आसपास लटकता रहा है वह। तो डेढ़ परसेंट बढ़ाया है। उद्योग-धधो का 'ग्रोथरेट' आठ से दस प्रतिशत वे करना चाहते है। अब हम उसके अधिकारी नही है, कि उनका अप्रोच बना दे, अभी तो चौथी योजना बनी नही है। लेकिन प्लानिंग कमीशन ने जो 'अप्रोच टु दी फोर्थ प्लानो के नाम से एक छोटा सा विवरण निकाला है, उसकी कोई एनलिसिस नही की है। उसमे बताया नही है कि क्या कारण है कि इससे ज्यादा नही होगा, कम क्यो होगा, वगैरह।

तरुणों की विद्रोह की भावना

भारत के तरुणों मे आजकल जो कुछ चल रहा है—खास करके विद्यार्थियो मे—वह भी आपके सामने है। हमे लगता है कि बहुत सारा लाभ तो इनका राजनीतिक दल उठाते हैं। कुछ अपने स्वतत्र रूप से भी। हम सो देखते है कि बिहार में दल से भी ज्यादा कुछ जातिवाले फायदा उठा लेते हैं और जातिवाद के आधार पर भी विद्यार्थियो के सगठन हो गये, झगड़े हो गये या तो कतल हो गये! विद्यार्थी ने विद्यार्थी का कतल कर दिया। दो दबग जातियाँ हैं बिहार मे, जो जमीन के मालिक हैं, जिनके हाथ मे जमीन है—भूमिहार और राजपूत। जब इन दोनो जातियों का आपस का झगड़ा होता है तब दोनो के साथ दूसरी जातियाँ हो जाती हैं। कुछ इधर गये, कुछ उधर गये। लेकिन मुख्य इनका झगडा चलता है। तो स्कूलो, कालेजो मे जाति का यह सारा झगडा है, है। लेकिन फिर भी असतोष और भी कारणो से है।

वे खुद समझ पाये हैं कि किसलिए है, ऐसा तो नही कहेंगे, लेकिन शिक्षा की जो बुराइयाँ हैं, शिक्षा-पद्धति की जो बुराइयाँ हैं, जिस प्रकार की उनको शिक्षा दी जाती है, रहने-सहने की सुविधाएँ जैसी उनकी हैं, शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद उनके जो मौके हैं, नौकरी वगैरह के, इन सबका मेल होकर एक विद्रोह की भावना है। फर्क यही दखता हूं विदेशी तरुणों के विद्रोह मे कि उनके काम के उद्देश्य भी क्रातिकारी हैं। और हम कुल मिलाकर यह नहीं कह सकते कि अमुक पार्टियाँ हैं, जो इनका 'एक्स्प्लाइट' कर रही हैं, कम्युनिस्ट पार्टी हों या और पार्टियाँ हो, इनके लोग होगे इसमे। लेकिन कुल मिलाकर एक क्रातिकारी आदोलन है, बल्कि बहुत करके बड़े-बड़े नेता 'एनार्किस्ट' लोग हैं। लेकिन उनके साथ जो इस्टब्लिशमेंट हैं, उसके प्रति विद्रोह है। जो एफ्ल्युएट सोसाइटी, एक सुखी समाज बना विद्रोह उसके प्रति है। जो यह टेकनालाजी है, डेमोक्रेसी है, इन सबको वे 'क्वेश्चन' कर रहे हैं। सभ्यता की पुरानी अपनी दुनिया जो है, उसको भी कर रहे हैं। हमने थियरी भी बनायी है और एक जमाने मे यह बात कही गयी और उसमे यह बात सत्य भी है कि समाज मे जो क्रान्तिकारी वर्ग है, वह सर्वहारा है। और फिर सर्वहारा मे मजदूर, और औद्योगिक मजदूर हैं—वह उस समय भी बहुत सत्य नही था जैसा लेनिन ने कहा भी था। लेकिन आज तो इनका कहना है कि जो मजदूर वर्ग है, वह क्राति का अग्रदूत नहीं बन सकता। और यह तो आप देखते है अमेरिका ट्रेड यूनियन मूवमेंट, फ्रास का ट्रेड यूनियन मूवमेंट, इग्लैण्ड का ट्रेड यूनियन मूवमेंट, जर्मनी का, ये सब कजरवेटिव हैं।

जो कम्यूनिस्ट ट्रेड यूनियन मूवमेट है, फ्रास की टी० वी० टी०, वहाँ भी रोक-थाम कर रहे हैं। तो यह भी एक इस्टेब्लिशमेंट बन गया है, समाज का एक मजबूत पाया बन गया है। एक पावर बन गया है, जो ब्रिटेन की शक्ति के मुकाबले मे उसकी बराबरी मे, सतह मे बैठकर बात कर सकती है। ऐसी शक्ति उनकी बन गयी है। एक 'वेस्टेड इण्टरेस्ट' बन गया है। 'वेस्टेड इण्टरेस्ट' बन जाने से फिर क्रातिकारी शक्ति नही रह जाती है। यूरोप के नौजवान कह रहे हैं कि जो अगली क्राति होनेवाली है, वह *'इण्टेलेक्चुअल्स' की क्राति* होगी। विद्यार्थी उसके 'मास' होगे और क्रातिकारी जो विचारक होगे, उसका नेतृत्व करेंगे। जैसे लेनिन ने कहा कि सर्वहारा तो मास विद्रोह का आधार होगा, नेतृत्व तो बोलशेविक करेंगे। याने एक आइडियोलाजिकल पार्टी बनेगी—चाहे नेता उसके किसी वर्ग से आये हो। अपने देश की जो शिक्षा-पद्धति है, उसमे क्या दोष वगैरह हैं, इस सवाल मे इसकी अक्सर चर्चा होती है। थोड़ी-सी सस्थाएँ हैं, जो थोड़ा-बहुत कर रही हैं। उनकी कोई छाप पडी नही है। और इससे हम एक सबक ले सकते हैं।

नगरो में जो बुद्धिजीवी वर्ग है और विद्यार्थी जमात है, उसको हमने बहुत छुआ नही है। हमने उनके बीच मे बहुत ही कम काम किया है। इस काम के लिए भारतीय *तरुण शाति-सेना एक माध्यम हो सकती है।*

अमेरिकी युवजन विद्रोह की पृष्ठभूमि

अमेरिका मे अहिंसक-समाज-क्राति की सभावनाएँ, इस विषय पर जहाँ-तहाँ मेरे भाषण हुए। शिक्षा-सस्थाओ मे भाषण हुए, विश्वविद्यालयों मे हुए, कुछ और स्थानों मे भी। वहाँ लोग आते थे और मुझसे कहते थे कि दो-तीन वर्ष पहले आकर यह बात कही होती तो हमारा कोई विशेष ध्यान आपकी बातों की तरफ नही जाता। लेकिन आज हम अमेरिकनो के लिए एक गभीर प्रश्न हो गया

है कि इस देश के अंदर, जो क्रांति होनेवाली है या हो रही है, वह शांतिमय क्रांति होगी या हिंसामय क्रांति होगी। यह आज हमारे लिए एक रीयल प्रश्न अर्जेण्ट, तात्कालिक प्रश्न बन गया है। इसलिए हमारा बहुत इंटरेस्ट है जो आप कह रहे हैं उसमें।

वियतनाम की लड़ाई में युवकों की भर्ती हो—इसके लिए अमेरिका में सिलेक्टिव ला है सिलेक्टिव रिक्रूटमेंट ला है। मतलब सरकार को आजादी है कि किसी आदमी को सिलेक्ट करके कह सकती है कि आपको लड़ाई में जाना होगा ड्राफ्ट ला उसको कहते हैं— इस ड्राफ्ट ला के विरोध में (जिसका विरोध करने के लिए पाँच वर्ष की सख्त सजा है और दस हजार डालर का जुर्माना है।) बहुत सारे नवयुवकों ने, विद्यार्थियों ने अपना ड्राफ्ट कार्ड फाड़कर फेंक दिया और आग लगा दी। पकड़े गये। एक को तो दो वर्ष की सजा हुई थी। मेरी मुलाकात भी हुई ऐसे बहुत सारे लोगों से। जर्मनी के युवा छात्रों द्वारा सबसे पहले यह काम शुरू हुआ और कई जगह फैला। यह सब, युगोस्लाविया, चेकोस्लोवाकिया, पोलैण्ड और रूस जैसे कम्युनिस्ट देशों में कभी कभी उभरता है।

युवकों की जो क्रान्ति यूरोप में हो रही है, वे माँगते क्या हैं? उनकी जो माँग है वह डिमोक्रेसी है। आज की डिमोक्रेसी को वे इंकार करते हैं। वे कैसी डिमोक्रेसी चाहते हैं? वे पार्टीसिपेटरी डिमोक्रेसी चाहते हैं, जिसमें जनता का हाथ हो, जनता का राज, जनता के लिए राज्य नहीं। जनता के द्वारा जनता के लिए और जनता का। जनता के लिए है, इसके लिए विवाद हो सकता है।

हमारी कमियाँ

अब इन लोगों के ध्यान में यह बात नहीं आयी है कि जहाँ एंगिल्स, लेनिन, माओ आदि के रास्ते पर चलकर क्रांतियाँ हुई हैं उनके पड़ोस में चेकोस्लोवाकिया है युगोस्लाविया है, पोलैण्ड है, वहाँ भी आजादी की साँस लेने के लिए युवक लड़ रहे हैं, युवक कैद हो रहे हैं। इतनी बात हिंसावाला की समझ में नहीं आती है कि हिंसा से क्रांति हो जायगी, लेकिन हर हिंसक का जो अन्त

भूदान यज्ञ शुक्रवार, २१ जून, '६८

में परिणाम निकलता है, वह क्या होगा? जो हिंसा अधिक कर सकता है, सफलता उसे ही मिलती है। लड़ाई फ्रांस में हुई। रूस में और चीन में चल रही है, वहाँ क्रान्तिकारियों की लड़ाई है आपस की। माओ एक तरफ है, सूमा दूसरी तरफ है। तलवार से क्रान्ति हो जाती है। लेकिन सिर्फ तलवारवालों की जिनकी तलवार चमकती है उनकी हुकूमत बन जाती है। और फिर उस क्रान्ति में से एक नयी क्रान्ति हो, उसका एक तकाजा रह जाता है। तो यह बात उनकी समझ में आयगी। लेकिन यह परिस्थितियाँ ऐसी हैं, जिनका कोई अन्य विकल्प हम लोगों ने नहीं दिया है। चीन के और पाकिस्तान के युद्ध के समय भी, हम आम तौर से राष्ट्रवादी बने रहे।

जिन्होंने कुछ दूसरी भाषा में बोलने की हिम्मत की, वह सब अनादर के ही पात्र बने। कोई युद्ध का विकल्प हमने लिया, ऐसा तो है नहीं। लेकिन कुछ सामाजिक परिवर्तन का विकल्प हम ले सकते हैं साइलेन्ट रेवोल्यूशन का वह भी हुआ है ऐसा हम मानते नहीं हैं। उसकी तरफ हमारे चरण बढ़ रहे हैं इतना ही सिर्फ हम कह सकते हैं। यह जो साठ हजार ग्रामदान हो गये हैं, तो इनकी परीक्षा अभी होनेवाली है। और इनमें क्या क्या है वह सब तो सामने आयगा।

लेकिन उस तरह सफलता इस देश में होती है तो सारी दुनिया को इसमें बल मिलता है, क्योंकि वहाँ सब जगह यह प्रश्न खड़ा है, जहाँ कि गरीबी का कोई प्रश्न नहीं है, उस अमीर समाज में भी। हमारे पास अभी इस बात का उत्तर नहीं है कि इस देश में जो पूँजीशाही है या पूँजीशाही नक्शा है, उसका क्या होगा? प्रतिशत का नारा लगाने से तो कुछ नहीं होगा। उसके कुछ काम हुए, उसमें जो कुछ कठिनाइयाँ हुई उसकी चर्चा कीजिये। ऐसी मान्यता हो सकती है अपने लोगों में, इस देश में, कि भारत में जो क्रान्ति हो सकती थी, उसकी धार हम सर्वोदयवाले लोग भोथरी कर रहे हैं। और ऐसी आलोचना की जाय, तो बिलकुल गैर जिम्मेदारी कहकर उसको छोड़ नहीं सकते। तो इसका मतलब यह है कि अगर कोई विकल्प है तो उसको तेजी से करना चाहिए।

जब मैं अमेरिका में था, तो न्यूहेम्पशायर में प्राइमरी हुई वह डिमोक्रेटिक पार्टी की थी। उसमें मेकार्थी की विजय हुई और उस सारी विजय का श्रेय हमें किसीको देना हो तो मैं मेकार्थी को दूँगा और किसीको नहीं। क्योंकि वह आदमी किनारे पर बैठकर देख सकता है कि वह किधर जाती है। ऊँट किस करवट बैठता है और तब वह कूदा उसमें। इसलिए कुछ मान घटा हमारा, लेकिन उस आदमी ने हिम्मत करके रास्ता खोला। वह तरुणों की क्रान्ति थी शायद। युनिवर्सिटी के स्टुडेंटस ने वह सारा काम किया न्यूहेम्पशायर युनिवर्सिटी के छात्रों ने और दूसरों ने।

वह बात जब बढ़ती गयी तब मेरा खयाल है कि अमेरिका की तरुण क्रान्ति का या तरुणों के आन्दोलन का एक प्रत्यक्ष परिणाम हुआ कि जब जानसन ने देखा कि ये युनिवर्सिटी के विद्यार्थी ही नहीं हैं, बल्कि ये जो कुछ कह रहे हैं झण्डा लेकर आगे आगे चल रहे हैं उनके पीछे वोटर्स हैं मतदाता हैं, यानी अमेरिका के नागरिक हैं। एक बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ वहाँ जिससे उसने निर्णय किया कि हम चुनाव नहीं लड़ेंगे। वियतनाम में भी संधि का प्रस्ताव किया। उसका श्रेय तरुणों के ऊपर रख सकते हैं।

विद्यार्थियों ने जो कुछ इंडोनेशिया में किया यह सब अब सबके सामने है। अब उनकी शक्ति फिर से रोकी गयी है। मिलीटरी डिक्टेटरशिप क्या कर रही है और आगे क्या होगा, मालूम नहीं।

हमारे काम की सम्भावनाएँ

भारत के हमारे तरुणों के लिए आज तो हम नहीं कह सकते हैं कि उन्होंने उस प्रकार का किया, लेकिन साथ-साथ एक क्रांतिकारी शक्ति इसकी बन सके और विधायक शक्ति इसकी हो, यह आज प्रयास करने के लिए हमें एक मौका मिला है और आपमें से जो तरुण हैं, उनका आवाहन मैं करना चाहता हूँ। मैं स्वयं तरुण नहीं हूँ, फिर भी मैं इस माने में करना चाहता हूँ कि मैं यह समझता हूँ कि आज जो परिस्थिति है, इस देश की, उसमें मैं मानता हूँ कि आप और हम कुछ आगे बढ़ें। तभी हम तरुण क्रान्ति→

हम चाहते क्या हैं ?

सम्मेलन के अन्तिम दिन दादा धर्माधिकारी का भाषण

सत्याग्रह के कुछ व्रतों में अस्वाद का एक व्रत है। स्वाद जीभ में दो चीजों का होता है—पकवानों का और शब्दों का। तो पकवानों का जहाँ तक सम्बन्ध है, मैं अपने आपको थोड़ा-बहुत रोक सका हूँ। लेकिन शब्दों के स्वाद के विषय में अब तक कमी नहीं कर सका हूँ। इसलिए कोशिश में था कि यहाँ बैठा-बैठा अस्वाद-धर्म का कुछ पालन करूँ। लेकिन आखिर कमजोर आदमी हूँ, बहुत आग्रह किया गया और उन लोगों ने आग्रह किया, जिन लोगों के कंधे पर आज चल रहा हूँ, कल चलना पड़ेगा, अतएव उस आग्रह को टाल नहीं सका। और अगर आपको मेरा यह भाषण सुनना पड़ रहा है, तो कसूरवार तो जरूर हूँ, लेकिन क्षमा का पात्र इसलिए हूँ कि उसमें कसूर मेरा जरा भी नहीं है।

हम और आप सबके सामने आज सबसे बड़ा सवाल यह है कि हम चाहते क्या हैं ? और हमसे मेरा मतलब यह है कि उसमें मैं भी हूँ। मैं 'हम' कहता हूँ तो अपने को शामिल करता हूँ और इसलिए शामिल करता हूँ कि अपने स्वत्व का भी भान रहे। इतना भी स्वत्व का विकास अभी मुझमें नहीं हुआ है। एक समुदाय में बैठा हुआ हूँ और आप सबके साथ सोचना चाहता हूँ कि आखिर हम कहाँ पहुँचना चाहते हैं। तो अभी थोड़े में यह रख देना चाहता हूँ कि हम कहाँ पहुँचना चाहते हैं।

एक वे हैं, जिनके पास मेहनत ही मेहनत है, और एक वे हैं, जिनके पास फुर्सत ही फुर्सत है। एक वे हैं, जिनके पास मेहनत के साथ मालकियत नहीं है, दूसरे वे हैं जिनके पास मालकियत के साथ मेहनत नहीं है। एक वे जिनके पास काम-ही-काम है, दूसरे वे हैं, जिनके पास आराम-ही-आराम है। तो हम चाहते यह है कि काम, आराम, मेहनत, मालकियत, वक्त, फुर्सत, सबका बँटवारा हो। सवाल यह है कि यह बँटवारा कौन करे और कैसे हो ? आपसे कहा और मैं भी मानता हूँ कि जो मेहनत करता है, वह मेहनत का मालिक है। मुश्किल यह है कि जो मेहनत का मालिक है, उसको बाजार में मेहनत बेचनी पड़ती है और जो पूँजी का मालिक है, उसको बाजार में कुछ नहीं बेचना पड़ता। वह मेहनत का खरीददार है। जो मेहनत का मालिक है, वह बाजार में बैठा है, जो पूँजी का मालिक है, वह भी बाजार में है, लेकिन ग्राहक बनकर बैठा है। इसको अपने आपसे बेचने की जरूरत है, उसको खरीदने की जरूरत अवश्य है, लेकिन वह तो लड़के के बाप जैसा है। शादी की जरूरत लड़का, लड़की दोनों को है। लड़की उम्मीदवार है और लड़का उस उम्मीदवार की दरख्वास्त को स्वीकार करनेवाला है, मंजूर करनेवाला है। इसलिए आप उस धोखे में न रहें कि जो मेहनतकश है, मालिक होते हुए भी उसके

→को मोड़ सकते हैं, जिससे सारे समाज के परिवर्तन में हम जो काम कर रहे हैं, उसमें तरुणों की मदद मिले। हमारा प्रवेश इस प्रकार हो सकता है कि सारे विश्व-विद्यालय, उनके तरुण, शिक्षक और उनमें कुछ सुलझे हुए दिमागवाले, गजेन्द्रगड़कर जैसे लोग, उमाशंकर जोशी जैसे लोग और ऐसे अन्य अपने लोग और उप-कुलपति लोग अगर साथ आयें, तो एक ऐसी शक्ति बन सकती है, जिसका असर पार्लमेंट पर हो सकता है, देश की राजनीति पर हो सकता है। जो पतन दिन-पर-दिन हो रहा है, उस पर उसका असर हो सकता है। हमें इस बात की शिकायत रही है कि इस ओर कम ध्यान दिया गया। बाबा ने कुछ इसका दूसरा पहलू भी सामने रखा है, उसकी तरफ ज्यादा ध्यान गया है। लेकिन भारत में तरुण शांति-सेना की तरफ कम ध्यान गया है। आचार्य-कुल और भारतीय तरुण शांति-दल एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि आचार्यकुल में आचार्य गजेन्द्रगड़कर से लेकर और सबको लाने का हमारा प्रयास हो और फिर इन लोगों की एक धारा बने तो हमें बहुत बड़ी सफलता मिलेगी, और तब हम अपने सारे राष्ट्रीय जीवन को एक मोड़ दे सकते हैं, ऐसी हमें आशा है।

[आबू रोड, ६ जून '६८]

पास किसी प्रकार की शक्ति है, किसी प्रकार का सत्व या सामर्थ्य है।

इस चीज को हम बदल देना चाहते हैं। सवाल इतना ही है कि कौन बदलेगा ? जिसको जरूरत है, वह बदलेगा। जिसको जरूरत नहीं है, वह नहीं बदलेगा। उसको मनाना पड़ेगा, उसको समझाना पड़ेगा। जरूरत दोनों को है। लेकिन एक को जरूरत का एहसास है, दूसरे को जरूरत का एहसास नहीं है। इनमें एक तीसरा है, जो यह कहता है कि हम तुम दोनों का इन्तजाम ठीक ठीक कर देंगे। मालिक बनना चाहते हैं, जिसको मालिक की जरूरत हो, वह हमको खरीदे। इसका नाम है 'इलेक्शन का मेनीफेस्टो'—चुनावों की घोषणा। तो एक तीसरा है, जो इन्तजाम का उम्मीदवार है और उसे किसीने मुख्य धारा और मुख्य प्रवाह कहा है। इससे अलग, और इससे अलग इसलिए कि आज तक दुनिया में जितना इतिहास बना है, उस इतिहास को या तो तख्तनशीन राजा ने बनाया है, अथवा मठ या मन्दिर में रहनेवाले संत या संन्यासी ने बनाया है, या फिर किसी वीर पुरुष ने बनाया है। अब वह युग आ गया है कि इतिहास के विधाता इनमें से कोई नहीं है। धनुषधारी राम नहीं, सुदर्शन चक्रधारी श्रीकृष्ण नहीं, गौतम बुद्ध नहीं, क्रूसधारी ईसा नहीं, मुहम्मद नहीं, सिकन्दर नहीं हेलीवार्न नहीं, शिवाजी नहीं, प्रताप नहीं, भवानी-तलवार नहीं, महावीर की गदा नहीं। इतिहास का विधाता वह होगा, जिसके हाथ में कुदाली कुल्हाड़ी है, चरखा-करघा है, हथौड़ा-हथौड़ा है। यह भगवान् का युगावतार है। हमारे कलयुग का यह अवतार है।

परशुराम लकड़हारा नहीं था, लेकिन कुल्हाड़ी हाथ में आ गयी तो लकड़ी की जगह मनुष्य को काटने लगा ! श्रीकृष्ण का बड़ा भाई बलदाऊ किसान नहीं था, हल हाथ में आ गया तो लोगों के घरों पर से चलाने लगा। गलत आदमियों के हाथ में गलत औजार गये। ये सब हथियार नहीं थे, औजार थे, फिर भी दिमाग सही नहीं था। तो इस जमाने में हम यह चाहते हैं कि आदमी भी सही हो, औजार भी सही हो, और

घोषणा की है कि अगर देश में नयी शक्ति पैदा करनी है तो आज की राजनीति और आज की विकास-योजना को जल्द-से-जल्द बदलना चाहिए। दलबन्दी की राजनीति का क्या हाल है, और किस तरह गाँव-गाँव में राजनीति झगडे और अशान्ति का कारण बन रही है, इसे आप देख रहे है, जान रहे है। जो भेदभाव गाँव मे पहले मे मौजूद थे वे राजनीति के कारण बहुत बढ गये हैं, और बढते ही जा रहे है। जब यह हाल है तो किस तरह गाँव के लोग मिलकर अपनी किसी समस्या को हल कर सकेंगे ? लेकिन सवाल तो यह है कि राजनीति कैसे बदले, और बदलने पर नयी राजनीति कैसी हो ? यह सवाल आसान नही है। सर्वोदय के साथियों ने सोचना शुरू कर दिया है। इतना तय है कि अगले चुनाव में एक निर्वाचन क्षेत्र को सब ग्रामदानी ग्रामसभाएँ मिलकर अपना सर्वसम्मत उम्मीदवार विधानसभा और ससद में भेजे, और किसी दल के उम्मीदवार को अपना उम्मीदवार न माने। जब गाँव की जनता का खुद अपना आदमी होगा तो दल के उम्मीदवार को कितने वोट मिलेंगे ? राजनैतिक दलबन्दी खत्म करने का यह एक रास्ता है। इस तरह विधानसभा में ऐसे लोग पहुँचेंगे जो सरकार मे ग्रामदान की बात कहेंगे, और ग्रामदान का काम करेगे। तब जनता की माँग और सरकार के काम मे अन्तर नही रह जायगा। गाँव में ग्रामसभा जो काम करेगी उसमे मदद करना, उसे आगे बढाना, सरकार का काम होगा। ग्रामदानी सरकार ग्रामदानी ग्रामसभाओं के काम में हस्तक्षेप नही करेगी। गाँव में तो ग्रामसभा ही गाँव की सरकार होगी, जो गाँव की व्यवस्था और विकास के लिए जिम्मेदार होगी। आज नेतृत्व दल का है, तब नेतृत्व गाँव का होगा।

ग्रामदान की व्यवस्था मे गाँव के लिए ग्रामसभा ही एक तरह से सब कुछ है। गाँव के लोगों ने अपने निर्णय से इसे बनाया है, उसे जमीन की मालकियत सौंपी है, और गाँव के विकास के लिए ग्रामकोष इकट्ठा किया है। इतनी शक्ति ग्रामसभा के पास है। पूरे गाँव के लिए ग्रामसभा गाँव के विकास की योजना बनायगी। गाँव-गाँव की योजना के आधार पर ही ऊपर की योजनाएं बनेंगी। आज ठीक इससे उलटा होता है। तभी तो इतने वर्षों में गाँव के सामान्य लोग विकास से अछूते रह गये हैं।

ग्रामसभा के हाथ में गाँव का स्वामित्व हो, और ग्रामसभा के ही हाथ मे गाँव का नेतृत्व हो—ये दोनो बाते निवेदन में कही गयी हैं। इन दो बुनियादों पर ग्रामदान-आन्दोलन ग्राम-स्वराज्य की बात कहता है।

आबू के सम्मेलन मे एक दूसरी बात भी देखने को मिली, जिसका पूरा पता आपको शायद अभी नही होगा। हमारे राजस्थान के साथियों ने शराबबन्दी के लिए सत्याग्रह छेड़ रखा है। राजस्थान के हमारे बुजुर्ग साथी श्री गोकुलभाई भट्ट तो इतने जोश में है जैसे जवान हो गये हों। उन्हें किसी तरह यह बर्दाश्त नही है कि गांधीजी के देश मे सरकार शराब का व्यापार करे और हजारों घरों को बरबाद कर अपनी कमाई बढाये। सत्याग्रह इसलिए है कि सरकार शराब के व्यापार से अपना हाथ हटा ले।

ग्रामदान, शराबबन्दी, शान्ति-सेना और खादी, ये चार सवाल सम्मेलन के सामने सबसे बड़े थे। नागालैंड के दो नगा मित्रों के आ जाने से सम्मेलन का ध्यान नगा-समस्या की ओर भी गया। हमारी सरकार मे नगा लोगो के मतभेद है, लेकिन गाधीजी में उनकी अटूट श्रद्धा है, और वे सर्वोदय के काम को शान्ति और मित्रता का काम मानते है।

६ दिन तक हमलोग आबू रोड में रहे। वहाँ काफी बड़ी भीड थी। सबके लिए निवास, पानी, टट्टी-पेशाब, आदि का सफाई के साथ प्रबन्ध करना, ठीक समय पर सबको नाश्ता और भोजन देना, सभा की व्यवस्था रखना, यह सब काम अच्छी तरह हुआ। आबू रोड कोई बडी जगह नही है, फिर भी रहने के लिए कोई टेंट आदि नही गाड़ने पडे। स्कूल, धर्मशाला, मन्दिर आदि मे काम चल गया। सब काम स्थानीय नागरिको और युवकों ने किया। नगरपालिका के अध्यक्ष से लेकर छोटे लडकों तक सब सुबह से शाम तक लगे रहते थे। सब थककर चूर हो जाते थे, लेकिन चेहरे पर शिकन नही दिखायी देती थी। क्या मिलता था उन्हें ? अतिथि-सेवा के आनन्द के सिवाय दूसरा क्या ?

अगला सर्वोदय-सम्मेलन नवम्बर १९६९ में राजगृह (बिहार) मे होगा। उसी समय राजगृह में बौद्ध लोगों के नये स्तूप का उद्घाटन भी होगा। बहुत-से विदेशी बौद्ध आयेंगे। दोनों उत्सवों को मिलाकर अगला सम्मेलन अन्तरराष्ट्रीय जैसा हो जायगा। कितना अच्छा हो, अगर उस सम्मेलन मे ग्रामदानी गाँवों से भी हजारों प्रतिनिधि आयें ! सर्वोदय का बड़प्पन इसीमें है कि उसमें 'सर्व' का दर्शन हो।

एक किसान पाठक का पत्र ज्यों का त्यों

सम्पादकजी

गांव की बात

निवेदन यह है कि मैं गाँव की बात २५ ६८ के अंक का पढ़ा उसमें खेती के अनुभव आपने मांगा है उसमें पढ़कर मुझे लगा कि अपना भी खेती काम का प्रयोग आपको दूं और आशा है अगर किसान वर्ग इस अनुभव को अपनायेगा तो खाद्य समस्या दूर हो जायगी।

पहला प्रयोग कम बीज बोना —हमारे यहाँ बीज बोने की रीति यह है एक कि बीघा खेत म गेहूं एक मन से कम है तो ३० सेर बीज बोए जाते हैं पूरे भारत मे इसी अनुपात म कहीं १ मन तो कहीं ३० सेर बोया जाता है। अगर इसका चौथाई बीज बोया जाय तो खेत मे पहले की अपेक्षा ज्योढा गेहूं पैदा होगा

बीज कम बोने की विधि —जब खेत बीज बोने काबिल हो गया हो तो कूंड की बोआई करनी चाहिए दो हल से खेत बोया जाय। एक हल के पीछे एक आदमी बीज डाले और दूसरा हल जोताई करेगा। उसके कूंड म बीज नहीं पड़ेगा। करीब ६ इंच मेंत छूट जायगा। इसमे यह हुआ कि आधा बीज यों ही बचा और चाहिए कि कूंड म जो बीज पुराने तरीके से जितना बोया जाता है उसका आधा बीज गिरे। इस तरह से कुल १० सेर बीज लगेगा। इसको लाइन-सोइंग भी कह सकते हैं।

गोडाई —अब यह लाइन भी हो गयी। ६ इंच की दूरी जो है उसकी गोडाई होनी चाहिए। हैण्डहो मे दो या तीन आदमी भी लग सकते हैं एक बीघे की गोडाई म। हम तो एक बीघा मे दो आदमी गोडाई कर लेते हैं। सिंचाई समय समय पर होनी चाहिए

कम बीज अर्थात् दूरी रखने का लाभ लाभ यह कि आप का ३० सेर प्रति बीघा बीज बचा। खेत का हवा धूप पूरा लगेगी। पौधा स्वस्थ और मजबूत होगा। पौधा म कल्ले काफी मात्रा म निकलगी। पौधा मजबूत होगा तो बाल लम्बी पैदा होगा। दाना मोटा और वजनी होगा।

बीज बचा फसल दूनी —अगर आप अपना बीज बचा ले और फसल दूनी हो गयी तो आप विदेशो के मुहताज न रहेगे। मेरा दावा है कि अगर भारत का जो जायज बीज लगता है वही बच जाय तो भारत गल्ले की मुहताजी से बच जाय।

उपरोक्त बात केवल पुरानी पद्धति से योग एक पड़ा है। इतने ही से आपको लाभ है यह सरल है सुविधाजनक है। कम खर्च का है इस तरीके स पूरी खेती सैकड़ो बीघा आदमी कर सकता है।

अब तक हमने खाद पानी का जिक्र नहीं किया तो हमारा मतलब यह नहीं कि विज्ञान का लाभ न लिया जाय। गोबर की खाद तथा रासायनिक खाद का भी आप इस्तेमाल करेगे तो सोना मे सोहागा वाली बात होगी फसल तीन गुनी चौगुनी बढ़ती है। यह सब हमने करके देखा है और कर भी रहे है।

छिटकार की बुआई से बहुत कम बीज लगता है। २॥ सेर का बीघा पर श्रम उससे ज्यादा पड़ता है। मजदूर ज्यादा लगते हैं और उसमे पानी की भी जरूरत लगती है अन्दाज म बोया गया तो खेत खाली रह जाता है इसलिए ज्यादा खेती के लिए लाइन सोइंग ही लाभदायक है आगे हम धान की खेती का तरीका लिखेगे

आपका
भवानी प्रसाद सिंह
बसहिया आजमगढ़।

[नोट—क्षमा करेगे मैं पढ़ा लिखा आदमी नहीं हू। घर घर ही कुछ सीखा हू बिना गुरु के इसलिए आप सुधार कर ले। पर मेरे प्रयोग सफल हैं]

गांधी भी गँवार थे

मुखिया के दरवाजे पर अच्छी खासी भीड इक्ट्ठी हो गयी, दिल्ली के किस्से-कहानियाँ सुनने को। वैसे तो गाँव के कई पढे-लिखे लोग दिल्ली घूम आये थे। दो-तीन तो वहाँ नौकरी भी करते हैं, लेकिन गाँव का कोई अनपढ, बूढा और पूरे गाँव भर के साथ जिसका अपनापन हो, वैसा आदमी मुखिया ही पहली बार गाँव से दिल्ली देखने गया था। इसीलिए दरवाजे पर बडे-बूढ़ो और छोटे बच्चो की भीड़ अधिक थी। इन लोगो मे दिल्ली घूमकर आनेवाले जवान लोग उस तरह की बातें नही करते, जैसे ये लोग सुनना चाहते हैं। शहर से घूमकर आनेवाले जवान लोग तो अक्सर सिनेमा के अभिनेताओं और राजनीति के नेताओ की ही बातें करते हैं, वह भी ऐसी बातें, जो न किसी बूढे आदमी की समझ मे आती है, और न किसी बच्चे की।

मुखिया अभी हाथ-मुँह धोकर सुस्ताने ही जा रहा था कि बच्चो ने उसे घेर लिया, "मुखिया बाबा, मिठाई मुखिया बाबा, मिठाई!" बात यह है कि मुखिया जब भी गाँव मे बाहर जाता है तो आते समय पास-पडोस के बच्चो के लिए कुछ-न-कुछ खाने की चीज अवश्य लाता है। जब बच्चे उसे घेरकर चिल्लाने लगते है, "मुखिया बाबा मिठाई मुखिया बाबा मिठाई" तो उसे लगता है कि १५ साल की उम्र मे ही जीवन सूना करके शहीद हो जानेवाला उसका रामकिशोर भी इन बच्चों के साथ-साथ उसमे मिठाई पाने की जिद कर रहा है।

इसीलिए मुखिया ने 'चार आने में पाँच बोरा, आप भी खाइये, बाल-बच्चोंके लिए ले जाइये' कहकर लेमनचूस बेचनेवाले सरदारजी से मुगलसराय में ही आठ आने का दस बोरा खरीद लिया था। 'चार आने मे पाँच बोरा' की बात सुनकर मुखिया को बहुत हँसी भी आयी थी, सोचा था, "ठीक ही तो कहते है सरदारजी। महँगाई ऐसी ही बढती गई तो किसी दिन चावल-गेहूँ भी ऐसे कागज की पुडिया में बेचा जायगा और उसी पुडिया को बोरा कहा जायगा। आज ढाई मन का बोरा होता है, तब ढाई छटाक का होगा।" गाडी मे बैठे-बैठे मुखिया को ऐसा लगा था कि जमाना इस 'जनता गाडी' से भी तेज भाग रहा है। 'जनता गाड़ी' तो हवड़ा जाकर रुक जायगी, अपने मुकाम पर पहुँच जायगी, लेकिन यह जमाना?...कहाँ जाकर रुकेगा?... कौन जाने?

"मुखिया भाई, क्या सोचने लगे? अरे इतने दिन पर आये हो, कुछ हालचाल तो बताओ।" पड़ोसी हरखूराम ने मुखिया का ध्यान तोड़ा। हरखूराम और मुखिया की बचपन से ही खूब जमती है। गाँव के ही नही, इलाके के लोग भी यह बात कहते हैं कि सहोदरों मे भी उतना प्रेम नही होगा, जितना मुखिया और हरखूराम में है। मुखिया को कोई नयी बात मालूम होती है तो उसे हरखूराम को बताये बिना पेट का पानी नही पचता है। हरखूराम की भी यही हालत है।

मुखिया ने जनता गाडी से लेकर इंडिया गेट के सामनेवाली 'अग्रेज लाट' की मूरत तक की कहानी सुना डाली। सुनकर हरखू बोला, "राजा-राजा सब एक होता है मुखिया भाई, क्या 'खानदानी' राजा, और क्या 'भोट' का राजा! गाधी महात्मा थे इसीलिए तो वे राजकाज के काम से सुराज मिलने पर भी अलग थे। भला सत महात्मा को राजगद्दी से क्या लेना-देना? हाँ, तो अब वही 'तीरथ' वाली बात बताओ। यह सब सुनकर तो जी जलता है, सत पुरुष की बात से ही शांति मिलती है।"

मुखिया की आँखे भर आयी। "मैं भी यही सोचकर वहाँ गया था हरखू, लेकिन क्या कहूँ, कुछ कहते बनता नही। तांगा-वाले को यह मालूम ही नही था कि बिडला-भवन कहाँ है? बडी मुश्किल मे पूछते-पूछते वहाँ पहुँचे। सोचा था, कोई साफ-सुथरी अच्छी-सी जगह होगी, लेकिन काहे को? वहाँ तक पहुँचने के लिए बडी सडक छोडकर जब गलियोवाली सड़क पर पहुँचे तो वहाँ सफाई तक नही, जगह-जगह गन्दगी, और जब तागा से उतरकर 'प्रार्थना-भूमि' तक पहुँचा तो कुछ न पूछो हरखू। अपने यहाँ के 'काली-थान' जैसी भी सफाई और सजावट वहाँ नही थी। जिस जगह बापूजी को गोली लगी थी, वहाँ तुलसी-चौतरा जैसा बनवाया गया था, जिस पर एक सूखा पौधा लगा था, न फूल, न पत्ती। चौतरे पर शायद लडकों ने जगह-जगह लकीरें खीच दी थी। किसीने चौतरे के उस सूखे पौधे पर अधसूखा गेंदे का फूल खोस दिया था। हम लोगों जैसे ही कही दूर से आये हुए गाँव के चार छः लोग चौतरे की परिकरमा कर रहे थे। कहाँ नेहरू राजा का महल, कहाँ 'इंडिया गेट' के पास वाला राजभवन और 'लाट' की मूरत, और कहाँ यह बापूजी की 'प्रार्थना-भूमि'। मैं वहाँ अधिक देर तक नही ठहर सका हरखू भाई। हृदय मे इतना दु:ख हुआ कि उसके बाद दिल्ली मे एक मिनट के लिए भी रहना 'पाप' मालूम होने लगा...... । हाँ 'पाप'।"

"तो, सुराज के बाद हमारे गाँवो की जो दुर्दशा हुई, वही दुर्दशा हमारे उद्धार की बात कहनेवाले बापूजी की हुई।" हरखू ने कहा।

"ना...ना...हरखू भाई। बापूजी 'सरगवासी' हो गये। उनकी

गो-पालन या भैंस-पालन

कुल भारत में दुधारू जानवरों—गाय और भैंस—की संख्या २२ करोड़ कूती जाती है, जिसमें गोवंश १७ करोड़ और भैंस वंश ५ करोड़ है। गोवंश में बैलों की संख्या ७ करोड़, गायों की ५ करोड़ और बछड़े बछड़ियों की ५ करोड़ है। क्योंकि गाय बैल गो आर्थिक रूप से अनुत्पादक है, अतः उनके मालिक उन्हें बेच देते हैं और आखिर में वे कसाईखाने में चली जाती हैं। इन पशुओं की संख्या रोज ३० हजार की तादाद की जाती है। सवाल यह है कि यदि गोकशी समाप्त करनी है, तो इन ५ करोड़ पशुओं का प्रबन्ध सोचना होगा जो आज सालभर में कट जाते हैं। इस सम्बन्ध में विचारकों का मत है कि उनकी संख्या में बैलों की संख्या कम तथा ऐसी गायों की अधिक है जो अनुत्पादक हैं अर्थात् दूध नहीं देतीं।

सवाल है कि क्या न दूध देनेवाली गायों को कत्ल के लिए मजबूर किये जाने के बजाय उनसे कोई खेती, उद्योग के काम लिये जा सकते हैं जिनमें उनकी शक्ति के अनुसार जोतकर काम लिया जा सके? मैसूर में यह प्रथा है। और भी स्थानों पर थोड़ी बहुत मात्रा में यह प्रथा चल रही है, पर धार्मिक बन्धन के कारण सर्वमान्य नहीं है। क्या ठीक न होगा कि गोवध निषेध के बारे में विचार करते समय इस 'धर्म' बन्धन को समाप्त किया जाय? क्योंकि आज वह अधर्म में सहायक साबित होता है।

जहाँतक बैलों का सवाल है उनकी संख्या ठीक है। क्योंकि प्रति १० एकड़ पर यदि एक जोड़ी बैल का हिसाब लें तो भी देश को ३० करोड़ एकड़ भूमि की जोत के लिए ३ करोड़ जोड़ी अर्थात् ६.७ करोड़ बैल चाहिए। जिस पशु की आर्थिक क्षमता गिरती है वह टिक नहीं पाता। भैंस अधिक मिलेंगे, पर भैंसा अनुपयोगी होने से बचपन में ही मर जाता है (या मरने को मजबूर किया जाता है?)। गायों का भी यही हिसाब है। गुजरात जहाँ गोवंश के वध की बिलकुल मनाही है, वहाँ भी गायों की संख्या १८ लाख है जबकि बैलों की ३० लाख है। इसका भी कारण यही है कि अनुत्पादक गायों की देखभाल पूरी न होने से उनमें पशु संख्या अधिक है।

अधिक मात्रा में और अधिक चिकनाईवाला दूध होने के कारण भैंस का कारखाना चढ़ रहा है और इसमें गाय की हालत और भी खराब हुई है पर कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ पीने के लिए गाय का ही दूध उपयोग में लेते हैं। राजकोट शहर में और कलकत्ता में भी ज्यादातर दूध गाय का ही आता है। बिहार, बंगाल में तो रिवाज है कि पीने का दूध गाय का हो, मिठाई आदि बनाने में भैंस के दूध का उपयोग भले हो। गाय के दूध की कीमत जब भैंस के दूध से कम दी जाती है तो इससे भी गोधन में ह्रास होता है। इसलिए गोदुग्ध की आर्थिक स्थिति मजबूत बनाये बिना गोवंश का विकास संभव नहीं।

यदि भैंस के दूध को बढ़ावा देंगे तो गाय मरेगी ही और बैल के लिए दूसरों के भरोसे रहना पड़ेगा। खेड़ा (गुजरात) जिला जो डेयरी क्षेत्र में आगे आया है तथा जहाँ अमूल के दूध का कारखाना है वहाँ भैंस का राज्य पनपा है। उसमें ७७ हजार भैंसें हैं तथा बैलों के लिए जिला हर साल २-३ हजार बैल बाहर से मँगाता है। इस प्रकार सभी तथ्यों को ध्यान में रखकर गाय को देश की अर्थनीति में दाखिल किये बिना केवल भावनात्मक गोवध निषेध-आंदोलन बेमानी सिद्ध होगा।

—देवेन्द्रकुमार गुप्त

दुर्दशा करनेवाला कौन जनमा है इस धरती पर? लेकिन एक बात जरूर है। मैं समझ गया हूँ कि सुराज के बाद जिन गाँवों के 'भोट' से सरकार बनती है, जिनके पसीने की कमाई से देश का पेट भरता है, जिन गाँवों के जवानों से फौज बनती है, देश की रक्षा होती है, उन गाँवों की इस देश में कोई 'कदर' नहीं है। 'भोट' माँगनेवाले किसी नेता को इतनी फुरसत नहीं है कि गाँवों की दुर्दशा के बारे में सोचे। बापूजी देहात की बात कहते थे, नेताओं को राजगद्दी का मोह छोड़कर गाँव गाँव में जाकर गाँव के उद्धार का काम करने को कहते थे। शायद इसीलिये नेताओं ने बापूजी को भी 'देहाती गँवार' मान लिया, और भूल गये उनकी बातों को। उनके शहीद होनेवाले देश के सबसे 'पवित्र' स्थान को। अब कौन है जो हमारे बारे में सोचे? बापूजी का कहना माने?" मुखिया इससे अधिक कुछ नहीं बोल सका।

हम किधर चलें ?

मैं रेल और मोटरो की सड़कों से दूर, दरभंगा के घनश्याम-पुर प्रखण्ड में घूम रही थी। यह बाढ़ग्रस्त क्षेत्र है। चौमासा मे तीन-चार महीनो तक आने-जाने का एकमात्र साधन नाव ही है। सब गाँवों में और छोटी-छोटी नदियों मे नावें पड़ी रहती हैं। पोखर और कुएँ मिट्टी से भर गये हैं। जाड़े के दिनो मे सिंचाई के साधन नही रहते है। पीने के पानी के लिए कल (हैण्ड पम्प) लगे हैं। कुछ बड़े किसान किर्लोस्कर वाले बिजली के पम्प लाकर नदियों से सिंचाई करते है। इससे मजदूरों की सिंचाई करने की मजदूरी भी बन्द हुई है। सब जगह आटा की चक्की और धान कूटने की मशीन चलती है। मजदूर बहनें खाली बैठी रहती हैं। चरखा नाममात्र चलता है। वह भी व्यापारी एक साडी पाने के लिए चार-पांच सेर रूई कातनी पडती है।

मैं विलायत की कुछ खबरें पढ रही थी। वहाँ पर अब कृषि और पशुपालन के बारे मे लोग एक नयी दिशा में सोचने लगे हैं। अब काफी लोग समझने लगे हैं कि एशिया और अफ्रीका के पिछड़े देशों का कल्याण ट्रैक्टर और रासायनिक खाद या मशीनो से नही हो सकेगा। ऐसे देशों में मनुष्य-शक्ति का पूरा उपयोग होना चाहिए। प्राकृतिक कृषि की ओर बढना चाहिए। मनुष्य को प्रकृति का विजेता नही बनना चाहिए। पुराने दिनों के ऋषि-मुनियों की तरह प्रकृति से सीखना चाहिए। प्रकृति के कार्य-कलापो को समझकर उसके अनुसार चलना चाहिए। पशु-पक्षियों का ठोस खुराक खिलाकर उनकी प्रजनन-शक्ति को बढ़ाने के कृत्रिम और यांत्रिक उपायो को छोड़ना चाहिए। इस प्रकार के सगठन अब विलायत में बनने लगे हैं कि फसलों, पशुओ और भूमि के साथ अब करुणा-आधारित पद्धतियां चलनी चाहिए। इस प्रकार विचार की दिशा बदल रही है। पढकर खुशी हो रही थी कि आखिर मे पटरी बदलने की कुछ योजनाएँ बन रही हैं।

इतने मे एक "प्रगतिशील" जवान किसान आकर गप्प लगाने लगे। पहले तो चौमासे की बाढ़ और जाड़े के सूखे का रोना धोना चला। उसके बाद वे आगे बढे। पम्प उनके पास है। उनके गाव मे पिछले साल रासायनिक खाद डालकर फसल अच्छी आयी। इस वर्ष एक किसान ने चार सौ रुपये की खाद खरीद कर खेतो मे डाली, और काफी सिंचाई भी की; लेकिन फसल आधी आयी।

चारो ओर गोबर के उपलो का ढेर पडा था जिन्हे देखकर दिल मे अत्यन्त दु.ख होता है। मैने सुझाया, "अरे भाई, रासायनिक खाद के बदले मे कोयला खरीदते तो सालभर में चार सौ रुपये का कोयला थोडे ही लगता, और यह सारा गोबर खेतो मे जाता, तो उपज बढ़ती, घटता नही।"

"नही, फसल खाद से खराब नही हुई, पक्षुओं से खराब हुई। (हालाकि अन्य खेतो में पशुओं से नुकसान नही हुआ)। "असली बात यह है कि हमे छोटे-छोटे ट्रैक्टर चाहिए और बोरिंग चाहिए। फिर रासायनिक खाद से खूब फायदा होगा।" उस युवक किसान ने कहा।

मैंने सोचा, अब सरकार की विकास-योजनाओं के द्वारा फैलाये हुए इस गलत विचारधारा से छुट्टी पाने का समय आ गया है। उत्तर भारतदान (उडीसा, बिहार, उत्तर प्रदेश और पजाब) से एक नयी दिशा खुलनी चाहिए। अब हम शहरो और नगरो से सरकार को उठाकर उसे गांवों मे लाने जा रहे है तो पूंजीपतियो को फायदा पहुँचाने वाली योजनाओं पर भी फिर से विचार करने की जरूरत है। ट्रैक्टर और रासायनिक खाद के प्रसार से पूँजीपतियों को और शहर के मजदूरो को भले ही लाभ हो, लेकिन उनसे देहाती लोगों की पूँजी और भूमि की उर्वरा-शक्ति समाप्त हो जाती है। अब हमे अपने अनुभव से

अब हम छोड़ देंगे

(राजस्थान शराब बन्दी आन्दोलन का अेक अनुभव)

हम भोटवाड़ा गाव मे प्रचार को निकले। ४-५ बहिनें बैठी थीं। बच्चे भी थे। हम खाट पर उनके घर बैठ गये। मैंने पूछा, "यहां दारू किस मकान मे अधिक पी जाती है?" इशारे मे वह घर उन्होंने बता दिया। १०-१५ मिनट उनसे चर्चा करने के बाद हम उस मकान मे पहुंचे, जहां दारू अधिक पी जाती थी। दोनों भाई चौक मे बैठे थे। उनकी पत्नियां भी थीं और ७-८ बच्चे भी थे। सबके अस्थिपंजर बता रहे थे कि यहां दारू का साम्राज्य है। मैंने कहा, "भाई क्या आप अपनी दारू पीने की आदत से खुश है?"

"बहनजी हम तो नहीं पीते।"

'भाई झूठ न बोलो, एक अपराध छिपाने को आपको कितनी बार झूठ बोलना पड़ेगा।'

तब एक बोला—'हां, पीते हैं जी।"

"आपका स्वास्थ्य सबसे अधिक गिरा हुआ है। स्त्री-बच्चों को क्या खिलाते हो?" बाजरे की टोकरी सामने पड़ी थी, बोले—'ये बाटे।"

"भाई यह तुम नहीं तुम्हारे अन्दर का दारू राक्षस बोल रहा है। ये आपके सबसे निकट के प्राणी हैं। क्या इनको सुख पहुंचाना तुम्हारा काम नहीं?"

यह भाई की बहू चुप न रह सकी, "बहिनजी हमारे जी जानते है हमने बहुत दुःख भोग इनकी आदतों से। ५ साल तक तो जी मे पड़ रहे, तब कहीं अब दम ली है।" १८ साल का एक लड़का था। उसका स्वास्थ्य ठीक था, उसको बताकर—यह दारू से बचा है सो मैं भगवान् का प्रसाद समझती हूं।" छोटी का पति भी सामने ही बैठा था। वह अपनी जवान लड़की का सिर गूंथती जाती थी और पति के सामने देख-देखकर हंसती जाती और कहती जाती, "हां, हम तो भागी हैं भर पूर पीओ!" न मालूम वह अपने पति से कितनी भयभीत थी। पर हृदय की वेदना हमसे छिपी न रही, आंख उसकी गीली होती जा रही थी।

भाई मेरे एक बार मेरा कहना मानकर मैं कहूं सो करके देखो। जितना पैसा दारू मे खर्च करना चाहो, उन पैसों का दूध, फल मिठाई तथा इन उघाड़ बच्चों के लिए कपड़ा ले आओ। सबके साथ बैठकर बच्चों को दूध, मिठाई खिलाकर तुम खुद भी खाओ। देखो, तुम्हें कितना आत्म-सन्तोष होगा। घरवाले तुम्हें कितना प्यार देंगे, तुम्हारी सेवा करेंगे। तुम्हारा स्वास्थ्य भी सुधर जायगा। नशा उतरने पर जो पश्चात्ताप तुम्हें होता है, उससे भी बचोगे।'

'आप ठीक ही कह रही हैं। हम अब छोड़ देंगे। यह बुरी चीज है। काफी भुगत चुके हैं।' हम उनके घर से निकले। कुछ लड़कियां हमारे पीछे-पीछे आती रहीं। वे भी अपना दर्द सुनाकर जी हल्का करना चाह रही थीं। अपने-अपने दुःख सुनाये। एक बोली, "बहिनजी, आपके घर से निकलते ही दोनो भाई कहने लगे, 'देखो भले घर की ये बहनें हमारे दुःख से कितनी दुःखी हैं। कितने प्रेम से हमारे साथ बात की! हमें अब दारू छोड़ ही देनी चाहिए।" हम जिधर से निकलते, हर बच्चे के मुंह पर नारा था—'दारू पीना छोड़ दो, जीवन अपना मोड़ दो' मैं मन ही मन दुआएं दे रही थी, "भगवान्, इन बच्चों के जीवन मे यह नारा सदा के लिए अंकित हो जाय।"

—सुशीला गहाणी

ग्राम स्वराज्य की योजना मे सर्व प्रथम वस्त्र उद्योग और खुराक के कच्चे माल को पक्का माल बनाने के उद्योगों को फिर गांव वालों के हाथों मे लाना चाहिए। तब मजदूरों को मजदूरी मिलने के साथ ही साथ पौष्टिक खुराक भी मिल सकेगी और सब गरीब और अमीर मिलकर सन्तुलित और पौष्टिक खुराक के अभाव मे बढ़नेवाली कमजोरी और बीमारियों से बच सकेंगे। यान्त्रिक-पद्धति के द्वारा तो हमारी खुराक के असली शक्ति बढ़ाने वाले तत्त्व जलकर खाक हो जाते हैं। —सरला देवी

उसका पूरा भान हो गया है। यह आधुनिकता नहीं, दरिद्रता सूचक है। पश्चिम मे लोग इस बात को अच्छी तरह समझने लगे हैं। वे अनुभव करके समझ चुके हैं। हमें भी थोड़ा अनुभव हुआ है। अब उन सारे जाल से बचने का समय आ गया है।

"यह कहना सही है कि इस समय देश की मुख्य समस्या है कि हमारी मनुष्य शक्ति का पूरा उपयोग कैसे हो? हमारी भूमि की उर्वरा-शक्ति कैसे बढ़े? हमें श्रम बचानेवाली नहीं, श्रम बढ़ानेवाली योजनाओं की आवश्यकता है।

कलक्टर का डेरा

"पटवारीजी घर पर हैं ?"

"कौन है रे भाई ! वह तो कलक्टर के डेरे पर गये है।"

"फलां गांव से उनकी यह चिट्ठी आयी है। वहां पर उनका रिश्तेदार सख्त बीमार है। आज ही बुलाया है।"

"यह चिट्ठी भी बड़े आड़े समय आयी है। गांव मे पिछले तीन दिन से कलक्टर का डेरा आया हुआ है। उसके चलते दम मारने तक भी फुरसत नहीं है। आज कैसे जा सकते हैं ?"

× × ×

"आज घर में तीन आदमियों का खाना और बनेगा।"

"क्यों, आज और कौन-कौन आ रहा है ?"

"नायब तहसीलदार, कानूनगो आदि आयेंगे। दाल-भात के साथ एक-दो सब्जी भी बना लेना। देखना किसी चीज की कमी न रह जाय, ऐसे मौके बार-बार नही आते ?"

× × ×

कलक्टर का डेरा आज जानेवाला था। लेकिन अपने परिवार के सदस्यों के कहने पर कलक्टर साहब ने एक दिन का समय और बढा दिया। रुकने पर कुछ-न-कुछ करना जरूरी है। इसलिए ब्लाक के दफ्तर, थाने और एक दूसरे गांव के दौरे का प्रोग्राम बन गया।

सबसे पहले ब्लाक के दफ्तर का दौरा शुरू हुआ। कलक्टर साहब ने दो-चार मिनट घूम-फिरकर देखा। एक दो कागजों का मुआयना किया, दो-चार हिदायतें दीं और जलपान कर दूसरी जगह का मुआयना करने चल दिये।

× × ×

यह है एक गांव की बात, जहां पर कुछ हफ्ते पहले कलक्टर यानी जिला मजिस्ट्रेट का कैम्प लगा था। लेकिन यह बात सिर्फ उसी गांव की नही, उन गांवों की है, जहां पर ऐसे डेरे लगते रहते हैं।

एक जमाना था जब हमारे देश मे बादशाह लोग खुद भेष बदलकर मुआयना किया करते थे। इससे सरकारी मशीनरी के पुर्जे तो चुस्त रहते ही थे, लोगों का भी भला होता था। लेकिन आजकल तो मुआयने सिर्फ 'खानापूर्ति' के लिए किये जाते है। ऊपरवालों को इन मुआयनों मे भत्ते और नजराने के रूप मे अच्छी-खासी आमदनी हो जाती है। नीचे के लोगों का, जिनके जिम्मे सारा काम रहता है, कई सौ रुपया मेहमाननवाजी मे उठ जाता है। जाहिर है कि नीचे के लोग यह पैसा अपनी जेब मे देते से रहे। वे भी इसे कहीं-न-कहीं से निकालेंगे ही ? इस तरह इन मुआयनों का उद्देश्य तो पूरा हो नही पाता, उल्टे भ्रष्टाचार पनपता है और गलत परपराओं को बढ़ावा मिलता है।

डेरा लगने का समय पहले से ही निश्चित रहता है। इसलिए दौरे के समय उन खामी-खराबियों को दूर कर दिया जाता है, जिन पर नजर पड़ने का अंदेशा होता है। जिन लोगों को कुछ शिकायतें होती है, वे भय के कारण अपनी बात नही कह पाते और फिर उनको सुनने का समय भी किसके पास होता है ! इसके विपरीत उन लोगों की चांदी बन आती है, जो पेट-पूजा करके साहबों को खुश करने की टोह मे रहते है।

साहब कुछ सख्त भी हुआ तो भी नजराना किसी-न-किसी रूप मे दे ही दिया जाता है। कोई बात नही बनती तो कहीं-न-कहीं से कोई जान-पहचान पैदा कर ली जाती है। फिर लेनेवाला सख्त होते हुए भी यह सोचकर भेंट स्वीकार कर लेता है कि जान-पहचान और यारी मे सब चलता है।

दौरे अपने मे बुरे नही है, अगर वे अचानक और गांववालों के साथ मिल-बैठकर उनकी समस्याओं और दिक्कतें दूर करने के लिए किये जायें। जब तक दौरों द्वारा यह 'खानापूर्ति' और आंकड़े भरने का काम जारी रहेगा, तब तक गांवों में सच्चा स्वराज्य आने का स्वप्न, स्वप्न ही रहेगा !

—विनोद 'विभाकर'

'गांव की बात' : वार्षिक चन्दा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए इंडियन प्रेस (प्रा०) लि०, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित।

जानता है, पहचानता है, वह आस्तिक है, चाहे ईश्वर को मानता हो या न मानता हो। जो मूल्य को नहीं जानता, और सिर्फ कीमतों को जानता है, उसका नाम नास्तिक है, सिनिक है; हर चीज की कीमत-ही-कीमत मानता है, उसकी कद्र नहीं करना जानता, यह तीसरी चीज परिवार में है। इन तीनों को हम समाज में दाखिल कर देना चाहते हैं। परिवार की दो बुराइयों को छोड़कर। परिवार में दो बुराइयाँ हैं। संपत्ति के सम्बन्ध और दूसरे रक्त के सम्बन्ध। रक्त का सम्बन्ध स्वायत्त नहीं है। वालेंटरी नहीं है। साम्पत्तिक सम्बन्ध मनुष्य को एक-दूसरे से अलग करते हैं। अगर राज्य और तख्त नहीं होता तो कैकेयी और मथरा के लिए कोई अवसर नहीं होता। वह भी ऐसे भाइयों के बीच, जिन भाइयों ने कभी तख्त की उम्मीदवारी नहीं की, कभी कोई इलेक्शन-मेनीफेस्टो नहीं निकाला। उन भाइयों के बीच में भी कैकेयी और मथरा आ सकी, तो कैकेयी और मंथरा नहीं थी, वह सम्पत्ति थी। परिवार में से पारिवारिक सम्पत्ति और रक्त-सम्बन्धों को हटा देंगे तो बाहर नागरिकता और सहृदयता है। परिवार में रिश्तेदारियाँ हैं। परिवार की रिश्तेदारियाँ सदस्यता और नागरिकता की जगह ले लेंगी, तो सारा मनुष्य-समाज विश्व कुटुम्ब में परिणत हो जायगा।

इन मूल्यों को समाज में दाखिल करने में पहला कदम क्या होगा? मनुष्य और मनुष्य के बीच में संपत्ति आती है, स्वामित्व आता है, सत्ता आती है। ये तीन चीजें ऐसी हैं, जो मनुष्य को मनुष्य से अलग करती हैं। कोई भला आदमी नहीं चाहता है कि उसके और इसके बीच में ये तीनों चीजें आयें। कोई भला आदमी नहीं चाहता। जहाँ सम्पत्ति आयी, सत्ता आयी, वहाँ भाई भाई को मार देगा। साथी साथी को मार देगा। चाहे वह भाई पौराणिक काल के हों या ऐतिहासिक काल के, और चाहे कम्यूनिस्ट मास्को के हों, या सिक्किम के हों। सत्ता ऐसी चीज है, जो मनुष्य को मनुष्य से अलग करती है। हम स्वतन्त्रता चाहते हैं, हम मनुष्य-मनुष्यों के बीच शांति चाहते हैं। जिसकी कुछ झाँकी कुटुम्ब-संस्था में दिखाई देती है।

[आबू रोड, १० जून '६८]

आचार्य राममूर्ति द्वारा सर्वोदय-सम्मेलन में दिग्दर्शित

राज्यदान के आयाम

नया सत्य, नयी शक्ति

१७ वर्षों में ग्रामदान आन्दोलन के आयाम क्रमशः एक-दूसरे के बाद प्रकट होते गये हैं। ग्रामदान का जो तूफान हमारे मन में है वह समाज में नहीं है। ग्रामदान और प्रखण्डदान के जो आँकड़े हमारे सामने प्रस्तुत किये गये हैं वे निश्चित रूप से हमारे उत्साह को बढ़ानेवाले हैं। ये आँकड़े कहाँ से कहाँ पहुँच गये! लेकिन यह सवाल हमसे बराबर पूछा जाता है कि ग्रामदान के सारे काम में रचनात्मक कार्य कहाँ हैं, शराबबन्दी कहाँ है, *नयी तालीम कहाँ है; भंगी-मुक्ति कहाँ है;* ग्रामोद्योग कहाँ है? कहा जाता है कि इन कार्यों के बिना ग्रामदान में गांधी का दर्शन कहाँ होता है? राजनीति के हमारे कई मित्र कहते हैं कि पालिटिक्स से अलग रहकर तुम लोग क्या कर सकोगे? वाराणसी के हमारे एक मित्र ने एक गोष्ठी में यहाँ तक कहा कि सन् १९४२ के बाद तुम लोग इतनी जल्दी नपुंसक हो जाओगे ऐसा नहीं सोचा था! राजनीति वालों से भिन्न दार्शनिक वृत्ति के लोग पूछते हैं कि ग्रामदान में वह नया लोक-चित्त (न्यू माइण्ड) कहाँ है जिसके बिना नये युग की किसी नयी चुनौती का मुकाबिला नहीं किया जा सकता?

ये सब सवाल अपनी जगह सही हैं। लेकिन जब हम लोग ग्रामदान के काम में लगे तब यह मानकर नहीं लगे कि हम उमर-खैयाम हो जायेंगे और अपने मन की दुनिया बसा डालेंगे। हमने यह देखा था कि गांधीजी के बाद उनका कोई सत्य या उनकी कोई अहिंसा समाज के पास नहीं रह गयी थी। जो कुछ था वह संस्थाओं और सरकारों में फँस गया था। जनता के पास न कोई सत्य था, न अहिंसा थी। थी केवल गांधी की याद। हम गांधी के सत्य और अहिंसा को समाज में देखना चाहते थे। हम तलाश कर रहे थे एक नयी सामाजिक गतिशीलता (सोशल डाइनेमिज्म) की, एक नयी शक्ति की जो समाज की बुनियादें बदल सके। वह शक्ति कहाँ थी?

इतने वर्षों में ग्रामदान, प्रखण्डदान, जिलादान, राज्यदान तक हम पहुँच गये हैं और अब भारतदान तक का नाम लेने लगे हैं। *इस आरोहण से अहिंसा कितनी बनी है,* मानव कितना बना है, आदि प्रश्नों की छान-बीन की जानी चाहिए। कम-से-कम इतना तो हुआ ही है कि जहाँ परम्परा ने जाति की बात की, साम्यवाद ने वर्ग की बात की, दल ने 'बहु' की बात की, वहाँ ग्रामदान ने 'सर्व' की बात की। हम देख रहे हैं कि हमारी 'सर्व' की इस बात को जनता सुन रही है। किसी ग्रामदानी गाँव ने जमीन बाँटी या नहीं बाँटी, लेकिन सबने 'सर्व' की बात तो मान ही ली। इस 'सर्व' में चंडाल, पूँजीपति, या अल्प-मतवाला, कोई बहिष्कृत नहीं है। यह 'सर्व' सत्य था गांधी का जिसे ग्रामदान ने लोक-मानस तक पहुँचाया है।

वर्ग संघर्ष में क्रान्ति का स्रोत है, यह हम जानते थे, मानते थे और कहते चले आये थे। वर्ग-संघर्ष के सिवाय दूसरी कोई सामाजिक शक्ति सूझती नहीं थी। वर्ग-संघर्ष के विचार में इतनी अच्छाई तो थी ही कि उसके द्वारा साम्यवाद ने हिंसा को एक रचनात्मक शक्ति बना दिया था; हिंसा को एक सामाजिक लक्ष्य मिल गया था। लेकिन जब हम गाँवों में गये तो हमने देखा कि संघर्ष से क्रान्ति एक इंच भी आगे नहीं बढ़ती बल्कि संघर्ष शान्ति—जनता की शान्ति, को खा जानेवाली चीज है। हम सोच नहीं पाते थे कि संघर्ष मालिक और मजदूर दोनों को कहाँ ले जायगा। गाँव के जीवन में जातिगत दमन और वर्गगत शोषण का जो ताना-बाना है वह संघर्ष से कैसे खत्म होगा? और संघर्ष भी किस किस में होगा? जाति जाति में धनी गरीब में, दल-दल में या एक साथ सबमें? संघर्ष में सर्वनाश न भी हो, और विजय किसीकी हो, समाज की रचनात्मक शक्ति तो समाप्त हो ही जायगी। फिर अन्तिम सहारा हिंसा का रह जायगा— राज्य की हिंसा का। लेकिन

अप्रत्यक्ष। यह नये प्रतिनिधित्व की बुनियादी बात है, जिसकी तफसील बनानी होगी।

आज समाज का नेतृत्व व्यवसाय (बिजिनेस) और राजनीति (पालिटिक्स) का है और लोकमानस इसी व्यवसाय और राजनीति के नेतृत्व में बन बिगड़ रहा है। इस विनाशकारी नेतृत्व के रहते नया चित्त कैसे बनेगा? इसलिए इन दोनों का नेतृत्व खत्म होना चाहिए और शिक्षण का नेतृत्व कायम होना चाहिए। आज ग्रामदान का जो काम हो रहा है वह नये स्वामित्व और नये नेतृत्व को कायम करने की प्रक्रिया है।

सन् १९७२ के चुनाव में दलों के उम्मीदवार खड़े होंगे या ग्रामसभाओं के? अबतक हमने दूसरों को प्रतिनिधि बनाया, अब हम चाहते हैं कि ग्रामसभाएँ अपने प्रतिनिधि स्वयं तय करें। इस दृष्टि से ग्रामदान-आन्दोलन ने गाँव को व्यक्तित्व दिया है, उत्पादन और उपभोग के साथ-साथ उसे लोकतंत्र की बुनियादी इकाई बनाया है। यह समाज-दर्शन सर्वोदय को पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों से अलग कर देता है।

संघर्ष नहीं, साझेदारी

प्रश्न हो सकता है कि हम जिन ग्रामसभाओं की बात करते हैं वे ग्रामसभाएँ अभी हैं कहाँ? नहीं हैं; बनाना है। हम ग्रामसभाएँ बनाने का काम कर रहे हैं। कानून के अभाव में ये ग्रामसभाएँ अभी आपसी हैं, उन्हें कानूनी अधिकार नहीं प्राप्त है। इन ग्रामसभाओं को प्रशासन (ऐडमिनिस्ट्रेशन) और प्रतिनिधित्व (रेप्रेजेण्टेशन) दोनों काम अपने हाथ में लेने हैं। गाँव में सरकार भी नहीं, और राजनैतिक दल भी नहीं। लेकिन कठिनाई यह है कि इस वक्त एक-एक गाँव एक विशेष प्रकार के अन्तर्विरोध (इनर कान्ट्रैडिक्शन) का शिकार है। मालिक-मजदूर एक-दूसरे से अलग हैं; अलग ही नहीं, परस्पर-विरोधी हैं। इस अन्तर्विरोध को कैसे दूर किया जायगा? ग्रामसभाओं के चिन्तन के धरातल को कैसे उठाया जायगा? अगर हमने कहीं यह मान लिया कि मालिक और मजदूर में बुनियादी संघर्ष है तो हमें यह भी मानना ही पड़ेगा कि इस संघर्ष का अहिंसा में कोई उपाय नहीं है। कम-से-कम अपने देश में तो दिखाई नहीं देता। अगर सचमुच वर्ग हैं, और उनमें बुनियादी संघर्ष है, तो संघर्ष के अन्त के लिए संघर्ष ही करना पड़ेगा, परिणाम उसका चाहे जो हो।

हमने अपने देश में लोकतंत्र की जो पद्धति अपनायी है वह हितों को सन्तुलित करने में सफल नहीं हुई है। उल्टे हित विरोध बढ़ा है। दलबन्दी के लोकतंत्र में नयी दूसरी क्या पद्धति निकलेगी? बात यह है कि मालिक और मजदूर में बुनियादी विरोध की बात का ग्रामदान से मेल नहीं है; अहिंसा से मेल नहीं है। हमारी नजर में मजदूर मजदूर नहीं है, मेहनत का मालिक है, मालिक भी मालिक, और मजदूर भी मालिक। और जब मजदूर भी मालिक है तो जमीन के मालिकों से वह मालिक की हैसियत से बात कर सकता है। यह एक नया क्रान्तिदर्शन है जो मजदूर को मेहनत का मालिक मानता है। साझेदारी (शेयरिंग) समान लोगों में ही हो सकती है। तभी दान का मतलब दान यानी विभाजन यानी समता होगा, नहीं तो दान भिक्षा होकर रह जायगा। इसलिए ग्रामदान में मालिक, महाजन, और मजदूर यानी तीनों 'मालिकों' की साझेदारी शुरू होनी चाहिए। तीनों की प्रतिभा और सामर्थ्य ग्रामसभा को मिलनी चाहिए। आज एक के द्वारा दूसरे का दमन और शोषण हो रहा है, यह व्यवस्था का दोष है, व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए, जिसमें बुद्धि, पूँजी और श्रम समान हों, और इन सबका समन्वय हो। लेकिन यह बात जब जनता के सामने रखी जाती है तो मजदूर में चेतना आती है, पर मालिक में चिन्ता पैदा होने लगती है। मालिक को जमीन देने में उतनी कठिनाई नहीं है, जितनी मजदूर को समान हैसियत देने में। यह एक 'कान्ट्राडिक्शन' है। इस अन्तर्विरोध के दूर हुए बिना ग्रामसभा गाँव में सबको काम, दाम और आराम की गारंटी कैसे दे सकेगी; संघर्ष से कैसे बच सकेगी?

रचनात्मक कार्य का नया आयाम

ग्रामसभाओं को इस नये क्रान्तिदर्शन में दीक्षित करने का काम बुनियादी महत्व का है। महत्व का तो है ही, कठिन भी है। ग्राम-स्वामित्व और ग्राम-नेतृत्व के अंतर्गत अन्तर्विरोधों के मिटने की सम्भावना प्रस्तुत हुई है। उस सम्भावना को सामने रखकर शिक्षण और संगठन की योजना बननी चाहिए। इसके लिए साथियों की कमी है, वह दूर होनी चाहिए। इसके लिए शिविरों, गोष्ठियों आदि का आयोजन करना होगा। बहुत बड़ा काम है लोकशिक्षण का, लोकशक्ति संगठित करने का! यह रचनात्मक कार्यक्रम का बिलकुल नया आयाम (डाइमेन्शन) है। १८ परिचित रचनात्मक कार्य अपनी जगह हैं; अगर ग्रामसभाओं का संगठन हो जाय तो उन सबको ग्रामसभाएँ उठा लेंगी—नयी तालीम, नशाबन्दी आदि सबको। ग्रामसभाओं के संगठन की कसौटी होगी कि वे सरकार और दलों का कितना काम अपने ऊपर उठा लेती हैं। रचनात्मक कार्यक्रम के तीन पहलू हैं—

रचनात्मक चित्त,
रचनात्मक सम्बन्ध और
रचनात्मक कार्य।

ये तीनों तब सधेंगे जब ग्रामसभाएँ ग्रामदान की पद्धति (ग्रामदान से) से काम करने लगें, सरकार के दमन, राजनीति के संघर्ष और व्यवसाय के शोषण से मुक्त होने की दिशा में चल पड़ें। रचनात्मक कार्य का यही नया आयाम है, और यही चुनौती भी है।

अखिल भारतीयता का बल

अन्त में हमारा एक और बात की ओर ध्यान जाना चाहिए। गाँव की छोटी से-छोटी समस्या भी हल नहीं होगी जबतक इस आन्दोलन का अखिल भारतीय स्वरूप नहीं प्रकट होगा। हमारे आन्दोलन में विचार की धार तो है, लेकिन अखिल भारतीयता के भार की कमी है। इस कमी को फौरन दूर होना चाहिए। जिलावाद और राज्यवाद की संकुचित शक्ति से यह आन्दोलन नहीं बढ़ेगा। जिलादान और राज्यदान का यह अर्थ भी नहीं है। यह बात स्पष्ट है कि समस्या जिस धरातल पर उत्पन्न होती है उससे ऊँचे धरातल पर हल होती है, उसी धरातल पर नहीं। हल ही सकती। गाँव को प्रखण्ड, प्रखण्ड को जिले, जिले को राज्य और राज्य को राष्ट्र का बल चाहिए। इस दृष्टि से सामयानी जनता का और हमारा→

जाते हैं क्योंकि पाँच जो अच्छे हैं, वे किसी भी तरह की जोखिम या खतरा उठाने से डरते हैं। इस तरह पाँच के इशारे पर सब काम होता है। लेकिन अगर अच्छे लोग उठ खड़े हों और हिम्मत से काम लें तो उनके आगे बुरे लोगों की नहीं चलेगी और सारा वातावरण बदल जायगा। आप यह मत भूलिये कि जितने बड़े-बड़े काम हुए हैं वे चन्द लोगों ने किये हैं और दुनिया ने उनका साथ दिया है। इसलिए संख्या का कोई सवाल आपके सामने नहीं उठना चाहिए और आप शान्ति-सैनिक भले तादाद में थोड़े हों अगर लगन से जुट जाते हैं तो अवश्य सफल और यशस्वी होंगे।"

इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के उर्दू विभाग के प्राध्यापक डा० आकिल रिजवी ने कहा कि "इस बार के दंगों ने एक ऐसी फिजा बना दी है, जो पहले कभी नहीं थी। आपस में शकूशुबहे और डर पैदा हो गये हैं। लेकिन *मेरा ख्याल है कि यह कोई टिकाऊ चीज* नहीं है। यह दौर जल्द ही खत्म होगा। इसका सामना करने का सबसे बेहतरीन तरीका यह है कि लोग समझबूझकर और नेकनीयती से मिलकर रहें। मुझे खुशी है कि देहातों में इसका कोई असर *नहीं है* और वहाँ आपसी ताल्लुकात पहले जैसे अच्छे बने आते हैं। असली जिन्दगी देहात में है और वही हिन्दुस्तान की रूह है।"

विवेक की आवश्यकता

दूसरे दिन की चर्चा का समारोप करते हुए श्री विश्वम्भरनाथ पाण्डेय ने कहा कि, "हर धर्म या मजहब में दो चीजें होती हैं। एक तो उसके बुनियादी उसूल और दूसरे उसके रीति रिवाज और कर्मकाण्ड। दुनिया के सारे धर्मों के मूल सिद्धान्त एक से हैं, लेकिन जल,वायु और परिस्थिति के कारण कर्मकाण्ड या तरह अलग-अलग हैं। बदकिस्मती यह हुई कि लोगों ने इन रीति-रिवाजों को ही धर्म समझ लिया और इसी वजह से संकीर्णता और पाखण्ड के शिकार हो गये और आपस में लड़ने लगे। इसलिए हमारा-आपका यह फर्ज होता है कि अन्दर के गूदे और बाहर के छिलके में तमीज करना सीखें और अपनी विवेक-बुद्धि से गूदे को ग्रहण करें और छिलके को फेंक दें। अगर हम इस तरह का अभ्यास करते हैं, तो अपने को ऊँचा उठा ले जायेंगे और उन्नति की राह खुल जायगी। तब हम महसूस करेंगे कि ईश्वर प्रेमस्वरूप है या प्रेम ही ईश्वर है।"

अधिकार बनाम कर्तव्य

तीसरे दिन, २६ मई को प्रातःकाल चर्चा का विषय था -जनतंत्र, धर्मनिरपेक्ष राज्य और हमारा कर्तव्य। विषय-प्रवेश करते हुए डा० मजहर अन्सारी, इलाहाबाद युनिवर्सिटी के इतिहास विभाग के प्राध्यापक ने कहा कि, "जनतंत्र की सफलता तीन बातों पर मुनहसिर है अपने हक की हमें जानकारी *हो, अपने फर्ज को हम समझते हों, और लोगों* की शिकायतों को दूर करने का एक खुला रास्ता हो। हमारे देश का दुर्भाग्य यह रहा कि हम अपने हक के लिए तो हमेशा दावा या शोर करते रहते हैं, लेकिन अपने फर्ज या कर्तव्यों की तरफ कोई ध्यान नहीं देते और न शिकायतें दूर करने का ही कोई रास्ता निकल पाये जिससे सबको इतमिनान हो। यही वजह है कि अपने उद्देश्य या मकसदों को हासिल करने के लिए लोग सारे दिन हिंसा पर उतारू हो जाते हैं। संविधान की दृष्टि से हम धर्मनिरपेक्ष या सेक्यूलर *जरूर हैं, लेकिन अमल में नहीं।* इस असली कारण यही है कि हम पैसापरस्त और स्वार्थी या खुदगर्ज बन गये हैं। एक-दूसरे की चिन्ता करना छोड़ ही दिया है। मेरे ख्याल में यह बड़ा जरूरी है कि छोटे छोटे हल्कों या दायरों में हम सेवा का काम उठा लें और एक-दूसरे के दुख-दर्द में शामिल हों। मुझे पूरा भरोसा है कि अगर शान्ति-सेना इस दिशा में कदम बढ़ाती है तो लोगों के दिल में नयी उम्मीद पैदा करेगी और बहुत कुछ कमाल भी हासिल कर सकेगी।"

आर्थिक स्वावलम्बन जरूरी

सुप्रसिद्ध विचारक और वयोवृद्ध मनीषी प्रोफेसर सतीशचन्द्र देव ने मधुर वाणी में कहा कि, "हम जब संविधान बनाने बैठे तो अनेक देशों के संविधान सामने रख लिये और उनमें से एक-एक धारा छाँटते गये और अपने में जोड़ते गये। इस प्रकार हमने जोड़ की प्रक्रिया से संविधान बनाया, न कि अपने विकास की प्रक्रिया द्वारा। यही कारण है कि अमेरिका के संविधान में पिछले लगभग दो सौ वर्षों में जितने परिवर्तन नहीं किये गये उससे ज्यादा परिवर्तन हमें अपने संविधान में बीस साल में करने पड़ गये। आप मुझे क्षमा करें अगर मैं यह विचार रखूँ कि अभी तक हमारी जनतांत्रिक बुनियाद ही जम नहीं पायी है। प्रायः मेरे मन में सवाल उठा करता है कि क्या भारत में धर्म-निरपेक्ष जनतंत्र टिक सकेगा? क्योंकि *जब तक देश आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी नहीं हो जाता* तब तक धर्मनिरपेक्ष जनतंत्र की स्थापना हो ही नहीं सकती। लेकिन मैं जन्म का आशावादी हूँ और यह उम्मीद करता हूँ कि यह देश एक ऐसा रत्न पैदा करेगा जो आगामी दस सालों में जात-पाँत, धर्म, भाषा और रीति रिवाज आदि के भेदों को तोड़ता हुआ *राष्ट्र को मनोवांछित लक्ष्य की ओर ले* जायगा। यही कारण है कि मेरे मन में शान्ति सेना के प्रति बहुत आदर है और मैं विश्वास करता हूँ कि इसके काम की सुगन्ध दूर-दूर तक फैलेगी।"

समापन समारोह

शिविर का समापन-समारोह क्रिश्चियन कालेज के टंडन हाल में हुआ। इसकी अध्यक्षता हरिजन आश्रम की संचालिका श्रीमती रामादेवी गुप्त ने की। कायस्थ पाठशाला डिग्री कालेज के भूतपूर्व प्रधानाचार्य श्री प्रेमचन्द गुप्त ने शुरू में कहा कि हिंसा या शक्ति से वर्तमान युग में कोई सवाल हल नहीं हो सकते। हमें शान्ति का मार्ग अपनाना होगा और इसके लिए अपना जीवन दर्शन बदलना होगा। नये मूल्यों और मान्यताओं को ग्रहण करना होगा। प्रेम, दया, करुणा आदि गुणों का विकास अब बहुत जरूरी हो गया है। शान्ति-सेना इस दिशा में प्रयत्नशील है और यहाँ श्री सुरेश राम ने और शान्ति-सैनिकों ने जो सुन्दर काम किया उसके लिए हम सब आभारी हैं। हमारा कर्तव्य है कि शान्ति-सेना की हर प्रकार की सहायता करें।

हाईकोर्ट के वकील और नगर के सुपरिचित नेता जनाब बशीर अहमद साहब

बलिया जिलादान : संक्षिप्त विवरण

१२ दिसम्बर '६५ : ग्रामदान अभियान की योजना बाँसडीह में।

१ जनवरी '६६ से कार्य प्रारम्भ।

३० जनवरी '६६ को जयप्रकाशनगर का प्रथम ग्रामदान घोषित।

१७ अप्रैल '६६ के सर्वोदय-सम्मेलन तक २० ग्रामदान प्राप्त।

१५ मई '६६ से पुनः अभियान प्रारम्भ।

३ जून '६७ को बाँसडीह का प्रथम प्रखण्डदान घोषित।

१२ जनवरी '६८ को बाँसडीह तहसील का प्रथम तहसीलदान घोषित।

१५ जनवरी '६८ से बलिया तहसील में अभियान प्रारम्भ।

१० मार्च '६८ को जयप्रकाशजी के गाँव-वाला मुरलीछपरा प्रखण्डदान।

१५ मई '६८ को बलिया तहसील का तहसीलदान घोषित।

१६ मई '६८ से रसड़ा तहसीलदान-महाअभियान प्रारम्भ।

३ जून '६८ को बलिया जिलादान की घोषणा।

जनपद की जनसंख्या	प्रखण्डसंख्या	ग्रामसभाएँ
१३,३८,०००	१८	१,०८६

• कई कारणों से उत्तरप्रदेश में ग्रामदान का कार्य सन् '५२ के बाद सन् '६५ तक रुका रहा। उत्तराखण्ड, मिर्जापुर, मुरादाबाद के क्षेत्रों में थोड़ा कार्य चला। इसी बीच १६वाँ सर्वोदय-सम्मेलन बलिया में करने का निश्चय हुआ। श्री धीरेन्द्र भाई ने समझाया कि सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर दोहरे मोर्चे पर कार्य हो। एक मोर्चा ग्रामदान के प्रारम्भ का हो, दूसरा सर्वोदय सम्मेलन की तैयारी का। उनके इस सुझाव को उत्तरप्रदेश ने मान लिया और श्री कपिल भाई ने ग्रामदान के मोर्चे का नेतृत्व सम्भाला।

• श्री कपिल भाई के प्रयास से १०, ११, १२ दिसम्बर '६५ को बलिया के बाँसडीह केन्द्र पर पूर्वी उ० प्र० के सर्वोदय और श्री गांधी आश्रम के कार्यकर्ता एकत्र हुए। श्री कपिल भाई के साथी श्री राममूर्तिजी, श्री देवव्रत सिंह, श्री करण भाई, श्री बद्री भाई आदि मुख्य लोग उपस्थित हुए।

इसी अवसर पर आचार्य राममूर्ति ने बलिया ग्रामदान अभियान की एक पूरी योजना प्रस्तुत की, जिसे पूरी करने की जिम्मेदारी उत्तर प्रदेशीय गांधी-निधि और श्री गांधी आश्रम अकबरपुर व पंचशील क्षेत्र ने मुख्य रूप से उठाया। प्रान्त की अन्य संस्थाओं ने सहयोग का आश्वासन दिया। परिणाम-स्वरूप पहली जनवरी '६६ से बलिया में प्रान्तीय स्तर पर ग्रामदान-अभियान प्रारम्भ करने का निश्चय हो गया।

• दिसम्बर के मध्य में ग्रामदान अभियान का कार्यालय बलिया में प्रारम्भ हो गया। आश्रम के पुराने साथी श्री बद्री भाई अभियान के संचालक नियुक्त हुए, रामवृक्ष शास्त्री को कार्यालय का भार दिया गया। श्री कपिल भाई ने नेतृत्व सम्भाला, तथा आचार्य राममूर्ति के मार्गदर्शन में सभी संस्थाओं के सहयोग से अभियान कार्य चल पड़ा। पहली जनवरी '६५ को प्रान्त के कोने-कोने से विभिन्न संस्थाओं से आये साथी कार्यकर्ताओं के शिविर से ग्रामदान-अभियान का कार्य प्रारम्भ हुआ। शिविर को श्री जयप्रकाशजी, श्री धीरेन्द्र भाई व श्री कपिल भाई का मार्गदर्शन मिला। जिले के अठारहों प्रखण्डों में १८ टोलियाँ ग्रामदान का सन्देश सुनाने निकल पड़ीं।

• टोलियाँ गाँवों में घूमती रहीं। १५ दिन बाद एक-दो दिनों के लिए मिलकर आगे की योजना करती रहीं।

• श्री धीरेन्द्र भाई, श्री राममूर्तिजी व श्री कपिल भाई जिले के सभी केन्द्रों पर आम सभाएँ करते रहे।

• धीरे धीरे जिले के प्रत्येक क्षेत्र में ग्रामदान का विचार फैल गया। ३० जनवरी '६६ को श्री जयप्रकाश बाबू के गाँव जयप्रकाश नगर का प्रथम ग्रामदान घोषित हुआ। अप्रैल के सर्वोदय सम्मेलन तक कुल २० गाँव ग्रामदान में प्राप्त हुए। बलिया में ग्रामदान की हवा निकल पड़ी। धीरे धीरे बढ़ती गयी। उस समय तक पूरे उत्तरप्रदेश में ४०६ ग्रामदान प्राप्त हुए थे।

• सर्वोदय सम्मेलन के बाद १५ मई '६६ को पुनः साथी कार्यकर्ता बलिया में एकत्र हुए। श्री कपिल भाई की उपस्थिति में आचार्य राममूर्तिजी ने आगे के कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत की। उसे मानकर कार्यक्रम आगे बढ़ा। पूरे जिले का कार्य समेटकर दः चुने प्रखण्डों में कार्य करने की योजना बनी। अब मुख्य रूप से श्री गांधी आश्रम तथा गांधी-निधि के लगभग ४० कार्यकर्ता अभियान में लग गये।

• लगभग एक वर्ष तक छहों प्रखण्डों

→ ४ जनवरी, '६८

श्री गंगारामजी, जिलाधीश द्वारा ग्रामदान के लिए अपील।

१४ से १६ मार्च, '६८

सुश्री निर्मला देशपाण्डे की दूसरी यात्रा; निर्मलाबहन एवं गांधी-स्मारक निधि के मंत्री श्री देवेन्द्रकुमार गुप्त द्वारा गांधी-शताब्दी शिविर को सम्बोधन।

३० मई, '६८

सिताड़ी के मैदान में जिलादान-समर्पण समारोह।

उत्तराखण्ड में सर्वोदय-आन्दोलन

जिलादान — उत्तरकाशी

प्रखण्डदान — जोशीमठ, धारचूला

अन्य जिलों में ग्रामदान

टिहरी गढ़वाल : ४० चमोली : १४८

गढ़वाल : १२ अल्मोड़ा : ४०

पिथौरागढ़ : १०

शराबबन्दी

टिहरी गढ़वाल उत्तरकाशी, पौड़ीगढ़ीपौल, और लक्सार

चमोली	बद्रीनाथ धाम, चमोली
अल्मोड़ा	नगर, बमराड़ी
पिथौरागढ़	धारा

पशोली (टिहरी गढ़वाल) व डीडीहाट (पिथौरागढ़) में मद्य-आन्दोलन जारी है।

श्रमिक सहकारी समितियाँ

मल्ला नागपुर श्रम संविदा सहकारी समिति लि०,

गोपेश्वर : जंगल के ठेके

केमर श्रमिक सहकारी समिति, सिल्यारा : निर्माण-कार्य के ठेके।

आन्दोलन के समाचार

आजमगढ़ जिलादान का संकल्प

आजमगढ़ जिला सर्वोदय मंडल एवं जिला गांधी-शताब्दी समिति के तत्वावधान में जिले की प्रमुख रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधियों एवं कार्यकर्ताओं की एक विचार-गोष्ठी श्री धीरेन्द्र भाई मजूमदार की अध्यक्षता में गत २२ मई को हरिजन गुरुकुल गांधीग्राम दोहरीघाट, आजमगढ़ में हुई। गोष्ठी में सर्वसम्मति से यह निर्णय किया गया कि २ अक्तूबर, '६९ गांधी-जन्म-शताब्दी के पहले ही आजमगढ़ का जिलादान घोषित कराया जायगा।

सिंहभूम जिले में ग्रामदान-कार्य

सिंहभूम ग्रामदान-प्राप्ति समिति के कार्यकर्ता श्री प्रमोदकुमार ने सूचित किया है कि इस जिले में ग्रामदान-आन्दोलन जोर पकड़ रहा है। ३१ मई तक जिले के ३२ प्रखण्डों में से ४ प्रखण्ड एवं ३६५ गाँवों का दान बाजाप्ता घोषित हो चुका है। जिले के तीन अनुमण्डलों सदर, घाटशिला एवं सरायकेला में से सरायकेला को लक्ष्य बनाकर प्राप्ति का कार्य किया जा रहा है। इस अनुमंडल के ८ प्रखण्डों में से ३ प्रखण्ड—चांडिल, ईचागढ़ एवं नीमडीह—का दान हो चुका है। गम्हरिया प्रखण्ड में ३ जून से कार्यकर्ता बड़ी तत्परता से लगे हुए हैं। जून के अन्तिम सप्ताह या जुलाई के प्रथम सप्ताह तक इस प्रखण्ड का भी दान घोषित हो जाने की आशा है।

प्राप्ति-कार्य में निश्चित रूप से दो टोलियाँ कार्य कर रही हैं। एक टोली, जो मु० मयूर भाँकी देखरेख में है, जीप, लाउड-स्पीकर एवं पर्चों के साथ प्रखण्ड के गाँव-गाँव में घूम-घूमकर मुखिया, सरपंच एवं अन्य लोगों से सहयोग प्राप्त कर रही है। इसे प्रचार-टोली कहा जाता है। यह टोली समय निकालकर अनुमण्डल के दूसरे प्रखण्डों में भी प्रचार करने चली जाती जाती है। दूसरी टोली जो श्री तारकेश्वर प्र० सिंह के निर्देशन में कार्यरत है, प्राप्ति का काम कर रही है।

अर्थ संग्रह का भार समिति के संयोजक श्री श्यामबहादुर सिंह ने अपने ऊपर लिया है। कार्यकर्ताओं की एक बैठक में उन्होंने सुझाव दिया कि प्राप्ति-कार्य के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में सर्वोदय-मित्र, तथा 'ग्रामोदय' एवं 'भूदान-यज्ञ' के ग्राहकों की संख्या बढ़ाने की भी कोशिश की जाय।

—मदनलाल सिंह

चम्बल घाटी में १०४ ग्रामदान

चम्बल घाटी शांति-समिति के तत्वावधान में गांधी-जन्म-शताब्दी कार्यक्रम के अन्तर्गत भिण्ड जिले के अटेर विकास खंड में आयोजित पदयात्रा-अभियान के फलस्वरूप १०४ ग्रामदान प्राप्त हुए। स्मरणीय है कि भिण्ड जिले में यह प्रथम प्रयास था। उक्त अभियान का मार्ग-दर्शन उत्कल विश्वविद्यालय के रसायनशास्त्र विभाग के भू० पू० अध्यक्ष डा० दयानिधि पटनायक एवं अ० भा० शांति सेना विद्यालय, कस्तूरबाग्राम इन्दौर, की संचालिका सुश्री निर्मला देशपाण्डे ने किया। अभियान में गांधी-आश्रम उत्तर प्रदेश एवं मध्यभारत क्षेत्र की अनेक रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। (सप्रेस)

रायपुर में १५ ग्रामदान

रायपुर में २१ से ३० मई तक तरुण शांति-सेना शिविर और पदयात्रा-अभियान संपन्न हुआ, जिसमें छत्तीसगढ़ संभाग के स्कूल-कालेजों के लगभग ३० विद्यार्थी और कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। शिविर का कुलपतित्व मध्यप्रदेश शांति-सेना के प्रमुख श्री चतुर्भुज पाठक ने किया। शिविरार्थियों को सर्वश्री नरेन्द्रकुमार दुबे, दादाभाई नाईक, काशीप्रसाद पाण्डे (विधानसभा के अध्यक्ष), आदि के व्याख्यानों का लाभ भी मिला। तरुण शांति-सैनिकों ने १३ टोलियों में विभाजित होकर ६० गाँवों का परिभ्रमण किया और १५ ग्रामदान हासिल किये। (सप्रेस)

गांधी-शताब्दी प्रशिक्षण विद्यालय

मध्यप्रदेश गांधी-स्मारक निधि द्वारा संचालित गांधी-जन्म-शताब्दी कार्यकर्ता-प्रशिक्षण विद्यालय का तृतीय सत्र आगामी १ जुलाई, '६८ से टीकमगढ़ में शुरू होने जा रहा है। विद्यालय का सत्र कुल डेढ़ माह का होगा तथा प्रशिक्षण-काल में प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी को ६० रु० माहवार छात्रवृत्ति दी जायगी। विद्यालय में बौद्धिक पाठ्यक्रम के साथ ही प्रत्यक्ष क्षेत्र में कार्यानुभव का शिक्षण भी दिया जाता है। विद्यालय का उद्देश्य गांधी-शताब्दी कार्यक्रम की दृष्टि से कार्यकर्ता प्रशिक्षित करना है। जानकारी के लिए प्राचार्य, गांधी-शताब्दी प्रशिक्षण विद्यालय, द्वारा—जिला सर्वोदय मंडल, ताल दरवाजा, टीकमगढ़ (म० प्र०) के पते पर संपर्क करें। (सप्रेस)

"शताब्दी-संदेश" का प्रकाशन

मध्यप्रदेश गांधी-स्मारक-निधि के निश्चयानुसार गांधी-शताब्दी के संदर्भ में पाक्षिक "शताब्दी संदेश" का विधिवत् प्रकाशन इंदौर से गत १ जून से प्रारंभ हो गया है। प्रथम और द्वितीय अंक संयुक्तांक के रूप में प्रकाशित हुआ है, जिसमें प्रांत और देश-विदेश में गांधी-शताब्दी कार्यक्रम के विषय में महत्त्वपूर्ण जानकारी दी गयी है। पत्रिका का वार्षिक मूल्य पाँच रुपये है। प्रदेश के सुप्रसिद्ध गांधीवादी विद्वान श्री काशिनाथ त्रिवेदी इसके मुख्य सम्पादक हैं। इसके अलावा डा० रामचन्द्र बिल्लौरे, श्री प्रेमचन्द जैन और श्री महेन्द्र कुमार सम्पादक-मंडल में हैं। देश में शताब्दी-कार्यक्रम की दृष्टि से यह एकमेव पाक्षिक पत्रिका है। (सप्रेस)

क्षमा-याचना

आबू रोड सर्वोदय-सम्मेलन की वजह से तथा प्रेस के परिवर्तन के कारण यह अंक पाठकों के हाथ में कुछ विलम्ब से पहुँच रहा है। कृपया पाठकगण क्षमा करें। सर्वोदय सम्मेलन के और भाषण तथा पूरी रिपोर्ट हम अगले अंक में प्रकाशित करेंगे।—सं०

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०, या १ पौण्ड, या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे, इस अंक का : ४० पैसे
श्रीकृष्णदत्त द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सम्पादकीय

एशिया की गरीबी

जड़ कहाँ है ?

हमारी गरीबी हमारे लिए चिन्ता और पश्चिम के विद्वानों के लिए शोध और अध्ययन का विषय बनी हुई है। अभी स्वीडेन के एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री ने दस वर्ष परिश्रम करके भारत, पाकिस्तान, लंका, बरमा, थाईलैण्ड, मलयेशिया, हिन्देशिया, फिलीपीन, लाओस, कम्बोडिया और दक्षिणी वियतनाम की गरीबी का गहरा अध्ययन किया है। इनमें से भारत और पाकिस्तान का ज्यादा गहरा। उनके ग्रन्थ का नाम है : 'एशियन ड्रामा : राष्ट्रों की गरीबी की जाँच।' यह बड़े महत्व का ग्रन्थ है। यों तो पूरा ग्रन्थ पढने और मनन करने लायक है, पर भारत के सम्बन्ध में कही हुई बातें हम संक्षेप में यहाँ दे रहे हैं। प्रोफेसर गुन्नर मायरडल इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि ग्रामतौर पर यह माना जाता है कि दक्षिणी एशिया के देश पूंजी की कमी के कारण पिछड़े हुए हैं, लेकिन सचमुच वे इसलिए पिछड़े हुए हैं कि उनकी दृष्टि अविवेकपूर्ण है, और संस्थाएँ दकियानूसी हैं। (इर्रेशनल ऐटीट्यूड्स ऐण्ड ग्राउटमोडेड इंस्टीट्यूशन्स)। वह हमारे विकास के लिए संस्थागत परिवर्तन (इंस्टीट्यूशनल चेन्ज) को बुनियादी महत्व देते हैं। उनका यह मानना है कि इन देशों के लिए जरूरी है कि वे अपने सामने कुछ निश्चित लक्ष्य रखें, जिनमें से मुख्य हैं—विकास तथा सामाजिक और ग्रार्थिक समता।

शुरू की भूल

विकास बहुत कुछ सरकार की सही नीतियों तथा उन्हें कार्यान्वित करने की उसकी शक्ति पर निर्भर करता है। एशिया में एक बात यह हुई है कि स्वतन्त्रता के साथ राष्ट्रीय एकता और संगठन नहीं आया है। दूसरे देशों की अपेक्षा भारत में यह अनुकूलता थी कि स्वतन्त्रता के साथ उसे ऐसे नेता मिले, जो राजनीति का अनुभव रखते थे और सामाजिक-आर्थिक सुधार की आवश्यकता महसूस करते थे।

पाकिस्तान, हिन्देशिया और बरमा में लोकतांत्रिक सरकारें विफल हुई और उनके स्थान पर फौजी तानाशाही आ गयी। लंका में भी साम्प्रदायिक उपद्रव बराबर बना रहा, लेकिन सैनिक-शासन सिर्फ इसलिए नहीं हुआ कि सेना स्वयं तैयार नहीं थी। भारत की सरकार सबसे अधिक ठोस साबित हुई। अंग्रेजी राज की समाप्ति और बटवारे से पैदा होनेवाली समस्याओं का उसने खूबी के साथ मुकाबिला किया, तथा 'प्लैनिंग' को सरकार की एक मान्य प्रवृत्ति बना दिया। लेकिन बहुत बड़ी कमी यह रही कि स्वतन्त्रता के उत्साह का लाभ उठाकर बुनियादी सामाजिक और आर्थिक सुधारों का सूत्रपात नहीं किया गया, जिसका परिणाम यह हुआ कि धीरे-धीरे सरकार दकियानूसी और प्रतिक्रियावादी लोगों के हाथ में चली गयी।

पूरे दक्षिण एशिया के क्षेत्र में खेती ही आर्थिक जीवन का आधार है, इसलिए खेती के उत्पादन से विकास का अनुमान हो सकता है। जमीन थोड़ी, सघन खेती का अभाव, प्रति एकड़ उत्पादन कम : ये हैं हमारी खेती के मुख्य लक्षण।

विदेशी बाजार का भरोसा नहीं

खेती के अलावा हमारी आर्थिक अवस्था का एक और बहुत बड़ा तथ्य यह है कि हाल के वर्षों में इन देशों ने बाहर से माल अधिक मँगाया है, और अपना माल बाहर बेचकर कम कमाई की है। भविष्य में यह स्थिति और भी बुरी होनेवाली है, क्योंकि हमारे माल की माँग बढने की आशा नहीं है। हमें अपनी ही ओर देखना पड़ेगा। पश्चिम के बाजार में हम अपने लिए स्थान नहीं बना सकेंगे; और अगर आज की तरह हमें विदेशी कर्ज और अनुदान मिलता भी रहा तो उसके सूद और मूल की अदायगी की रकम इतनी बड़ी होती जायगी कि सहायता का मूल्य क्रमशः कम होता चला जायगा। इसलिए 'विदेशी बाजार' पर भरोसा करके एशिया के देश अपना विकास नहीं कर सकते। क्यों ? अविकसित राजनैतिक ढाँचा, सीमित भूमि, तेजी से बढती हुई जन-संख्या, अत्यन्त गिरा हुआ जीवन-स्तर, तथा स्थिर प्रगतिविहीन सामाजिक और आर्थिक रचना और व्यवस्था। एक ओर तो ये कठिनाइयाँ हैं, दूसरी ओर हमें ऐसी दुनिया में रहना है जो बराबर बदलती जा रही है। हमें अपने भरोसे अपना पैर जमाना है।

पश्चिम की नकल

पश्चिम के देशों में प्लैनिंग विकास के बाद आयी, जब कि हमने और पड़ोसियों ने प्लैनिंग को विकास के लिए अपनाया। इतनी कम्युनिस्ट देशों से समानता है। स्वतन्त्रता के बाद हमने कोशिश की कि एक विकसित लोककल्याणकारी राज्य (वेलफेयर स्टेट) की स्थापना करें, बिना यह सोचे हुए कि लोककल्याणकारी राज्य के लिए विकसित आर्थिक स्थिति और अवसर की समानता की आवश्यकता होती है। राजनैतिक दृष्टि से भी हमने पाश्चात्य संस्थाओं और मान्यताओं के साँचे में अपने लोकतन्त्र को ढालने की कोशिश की। नतीजा यह हुआ कि केवल भारत, लंका, मलयेशिया अब और फिलीपीन में संसदीय पद्धति रह गयी है। बाकी हर जगह तानाशाही कायम हो गयी है। इनमें उस प्रकार की सरकार ज्यादा सफल हुई है, कहना कठिन है। एशिया में समाजवाद की बहुत चर्चा होती है, लेकिन व्यवहार में यह विचार उन्हीं क्षेत्रों में लागू हुआ है, जिनमें निजी प्रतिष्ठान (प्राइवेट इन्टरप्राइज) का अभाव रहा है। पब्लिक सेक्टर के उद्योग, सार्वजनिक सेवाएँ, बहुत बड़े कल-कारखाने, बैंक, बीमा और कुछ व्यापार के अलावा खेती में समाजवाद कहीं दिखायी नहीं देता। दक्षिणी एशिया में समाजवाद का मोटे तौर पर अर्थ है आधुनिक तौर-तरीके तथा योजना के लक्ष्य के रूप में समता की मान्यता। लेकिन हुआ कुछ यह कि स्वतन्त्रता के बाद विषमता घटी नहीं, बढी है, केवल लंका को छोड़कर। प्रोफेसर—→

बेराग मालूम होते हुए भी आपको समझना कि इस बातचीत में पारिवारिकता है।

बहुत-से लोग मुझसे कहते हैं कि आपका कहना कभी-कभी उपरचला जाता है। हां जाता है कभी-कभी बेराग, बेताल, बेसूर। लेकिन परिवार का एक भाई अपने भाइयों के साथ, बहनों के साथ बातें कर रहा है, यह समझकर आप सुनेंगे तो उस बेताल, बेराग में भी आपको जीवन का कुछ स्पर्श होगा, ऐसी मुझे श्रद्धा है और ऐसा विश्वास भी है। यहां एक बात मैं आपसे कह देना चाहता हूं कि जब आप सुनेंगे तो कृपा करके उस पर सुनते सुनते नुक्ताचीनी मत कीजियेगा। क्योंकि आप नुक्ता-चीनी करेंगे तो सुनेंगे नहीं। कुछ विचारों का स्मरण करेंगे, शंकररावजी का सुनेंगे नहीं। इसलिए नुक्ताचीनी मत कीजिये। राय मत बनाइये। हां भी मत कहिये, ना भी मत कहिये। सुनिये। एक केवल सुनने की क्रिया चले तो शब्द में जो सत्य है, उसकी अनुभूति एक बार मन को होगी। सुनते नहीं हैं, इसलिए शब्द में जो सत्य है उसका अनुभव नहीं आता। शब्द में शक्ति है, शब्द में सत्य है। शब्द में से ही सारी सृष्टि का निर्माण हुआ है। इसलिए शब्द में सत्य है, लेकिन उस शब्द का अनुभव नहीं आता, इसलिए कि जब हम सुनते हैं तो उसमें सत्य होगा इस भावना से हम नहीं सुनते।

सिर्फ सुननेवालों का ही दोष है, ऐसा नहीं। सुनानेवालों का भी ज्यादा दोष हो सकता है। कम-से-कम यह मैं अपने लिए कह सकता हूं। शब्द में जो उच्चारण होता है, शब्द में जो सत्य होता है, उसको प्रकट करने के लिए योग्य विभूतिमत्व 'इन्टीग्रेटेड परसनालिटी करेक्टर' की जो आवश्यकता रहती है, वह सुनानेवालों में कभी-कभी बहुत कम होती है।

इतिहास की पुनरावृत्ति

सृष्टि की परिवर्तनशीलता

इतना कहने के बाद मैं जरा आपको इतिहास में ले जाना चाहता हूं। आप कहेंगे कि इतिहास में जाने से क्या लाभ है? सही है, इतिहास में जाने से बहुत लाभ नहीं होता है। एक विश्वास से सबक सीखने की इच्छा, अनुकूलता होते हुए भी उसका लाभ इंसान बहुत कम उठा पाता है। इति-हास में कुछ लाभ होता है, यह भी सही है। इतिहास में पुनरावृत्ति होती है। तो जिसकी पुनरावृत्ति होती है उसको याद करने में कोई लाभ भी नहीं होता; जिसकी पुनरावृत्ति होती है उसको स्वीकार करने से कोई लाभ होनेवाला नहीं है। जो नया है उसको ही स्वीकार करेंगे, तो उससे लाभ होगा और वह सृष्टि का, संसार का धर्म है, स्वभाव है। कुछ परिवर्तनशीलता उसमें है। लेकिन उसकी गति इतनी मंद है कि वह जो परि-वर्तनशीलता है, उसका भी भान करवाना पड़ता है, अपने-से भान नहीं होता। लेकिन इंसान एक ऐसी शक्ति है कि सृष्टि की जो परिवर्तनशीलता है, उससे हजार गुना परिव-र्तनशीलता ला सकती है।

शरीर और आत्मा का सम्बन्ध हम तोड़ नहीं सकते हैं। जिन्होंने यह तोड़ने की कोशिश की, वह महानुभाव असफल हुए। लेकिन शरीर और जो अन्दर है कोई चीज, उसका नाम मैं नहीं लेना चाहता, उसमें एकता होते हुए भी उसमें अलग है वह। और उस अलगपन का भान जब इंसान को हो जाता है तो वह शरीर इतनी गति दे सकता है कि जिसका हिसाब आइन्स्टीन के हिसाब में भी नहीं हो सकता। इसमें गांधीजी का विभूतिमत्व अद्वितीय है, अपूर्व है और जैसा कि आइन्स्टीन ने कहा था, अपनी भाषा में कहा था, मैं उनकी भाषा में नहीं कह रहा हूं, कि 'आगे आनेवाली पीढ़ियां इस पर विश्वास नहीं करेंगी कि एक ऐसा शरीरधारी आत्मा इस दुनिया में घूमता था।' वह अणुशक्ति का प्रवर्तक था। उसने गांधीजी के बारे में यह लिखा।

फरवरी १९४८ को शुभ कल्पना

अमंगल का आगमन

हमारे सामने कुछ भाई बैठे हैं, उनका सद्भाग्य यह था कि गांधीजी के साथ वर्षों तक रहे। लेकिन आखिर शरीर है, उसका अंत है। गांधीजी का शरीर आत्मा के साथ, 'स्पिरिट' के साथ कितना भी संलग्न हुआ हो तो भी, उसका अंत होनेवाला ही था। जिस जीवन के लिए जिस सत्य के लिए गांधीजी प्रतीक थे, गांधीजी के बाद उसकी ज्योति किस तरह प्रज्वलित रहेगी? हम बिलकुल दुबले, कमजोर लोग, जो उनके साथ, उनकी शक्ति के आधार पर चलते थे, उनके लिए कोई रास्ता बन सके तो अच्छा होगा, ऐसी बात हमारे कुछ मित्रों के दिलों में थी और चाहते थे कि गांधीजी के होते हुए यह हो तो बहुत ही अच्छा। इसलिए सोचा था कि सेवाग्राम में फरवरी सन् १९४८ में हम सब लोग इकट्ठा होंगे। २० वर्ष हुए उसको। वह संकल्प दिल्ली में हुआ था, गांधीजी की उपस्थिति में हुआ था। और गांधीजी ने उसको सम्मति दी थी कि हां, जरूर हो। लेकिन जो घटनाएं घटी थीं, वह नहीं घटती, तो जैसे आज जयप्रकाशजी ने कहा, यह भारत ही नहीं, दुनिया भी एक दूसरा रुख लेती इसमें हमारे दिल में कोई शंका नहीं; लेकिन जो संकल्प हुआ, उसकी कुंडली में एक अमंगल ग्रह था। गांधीजी सेवाग्राम नहीं आ सके। आने की इच्छा थी और तीव्र इच्छा थी। वह भी जानते थे कि यह महान् कर्म है। मेरे जीवन का जो संदेश है, वह प्रतीक है जिस जीवन का, उस जीवन को जीना कोई आसान चीज नहीं है। इसलिए जिन्होंने हमारे साथ वर्षों तक समर्पित होकर काम किया, उनके लिए मैं कोई मार्ग बना सकता हूं, तो कोशिश करूंगा बनाने की।

आप जानते हैं वह 'कांफरेंस' हुई, उसमें कुछ मंगल ग्रह भी थे। सेवाग्राम में जो कांफरेंस हुई, उसने हमको विनोबाजी को दिया; हमको ही नहीं, दुनिया को दिया। जवाहरलालजी, मौलाना अबुल कलाम आजाद, राजेन्द्र बाबू, आचार्य कृपालानी, जयप्रकाशजी ऐसे महान्-महान् नेता जो राजकीय क्षेत्र में, रचनात्मक क्षेत्र में गांधीजी के 'कलीग्स' थे, अनुयायी थे, उपस्थित थे, उस 'कांफरेंस' में। और आज भी मुझे याद है कि मौलाना, पंडितजी सबने कहा कि विनोबाजी जो कह रहे हैं, वह पूरा अगर हम न कर सकें, उतना हजम न कर सकें, तो भी जो रास्ता बतला रहे हैं, वही सही रास्ता है, यह हमारा दिल और दिमाग कहता है। इस देश में वह व्यक्ति जिसकी जिन्दगी में संसार और मोक्ष, अध्यात्म और भौतिकता का मिलन हुआ है, उस व्यक्ति के मार्ग-

मोक्षार्थी, संन्यासी, गाँव के बाहर रहता है, २४ घंटे गाँव से जंगल की तरफ जाता है। लेकिन जब बारह बजते हैं, तो उसके पैर गाँव की तरफ आपसे आप चलने लगते हैं, आपसे आप। यह झूठ कहनेवाले कहते हैं कि यह माया है। लेकिन भौतिक जो हैं, वह जितना आध्यात्मिक है, उतना ही 'ट्रूथ' है, सत्य है। तो झूठा क्या है? झूठी सारी चीज हमारे मे है। वह है हमारा मन। कबीर की याद आती है हमेशा। शरीर का मोह है, वह धोने के लिए साबुन है, लेकिन मन को धोने के लिए कौनसा साबुन है? अशुद्ध है, उनको शुद्ध करने के लिए कौनसा साधन है? शरीर शुद्ध है, अशुद्ध नहीं है वह चीज।

मन की शुद्धि
सत्याग्रह का साधन

गांधीजी ने कहा कि मन को धोने के लिए हमारे पास एक साबुन है, उसका नाम है सत्याग्रह। शरीर का एक अस्तित्व है। आत्मा के 'एक्जिस्टेंस' को मानकर जो चल नहीं सकता है, मन उसमे दोनों में कुछ फूट का भाव भर देता है। यह सत्य का आग्रह है कि यह जो शरीर के बारे मे, मन मे, आत्मा के बारे मे, जो आशंकाएँ हैं, वह है कि नहीं, और जो है, वह दूसरा है, यह मलीनता है, इसको धोने के लिए आपको साबुन चाहिए, तो वह साबुन सत्याग्रह है। क्योंकि दोनों को सत्य समझकर, दोनों को साथ लेकर चलने की कोशिश किसीने की हो, तो वह गांधीजी ने की। उन्होंने शरीर को इन्कार नहीं किया। आत्मा का और शरीर का, दोनों का जो सम्बन्ध है, उस सम्बन्ध के बारे मे मन मे अशुद्धि है, आशंका है, उनको आपको साथ ढूँढना है। तो, सत्य का आग्रह जिसको कहते हैं, वह सत्याग्रह उससे शुरू होता है। हम आपस मे जो संघर्ष मानते हैं, द्वैत मानते हैं, उस द्वैत को बनानेवाली चीज है हमारे मन मे, उस मन को शुद्ध करने के लिए अद्वैत मे जाना चाहते हैं, जाना आवश्यक है, और गांधीजी कहते थे कि 'आई बिलीभ इन अद्वैत यूनिटी'—और 'यूनिटी' के मानी 'यूनिवर्सल यूनिटी'। साधन उसका सत्याग्रह है, जिसमे अहिंसा फलित हो रही है, और होगी।

वह नया मानस है जो राम का, रहीम का, क्राईस्ट का नाश नहीं चाहेगा, विरोध नहीं चाहेगा, वह उससे ऊपर जाना चाहता है, और उसको बनानेवाली जो शक्ति है, उसमें मैं जाना चाहता हूँ। उसको अनुभूति में नहीं, जंगल मे नहीं, पहाड़ में नहीं, व्यक्ति और सामूहिक जीवन में लेना चाहता हूँ। और तब नये समाज का निर्माण होगा। नये जीवन का जब हम निर्माण करेंगे, तब नये समाज का निर्माण होगा। उस दृष्टि से भी आप लोग सोचें, अपने प्रोग्राम के बारे मे। तो हमको लगता है काफी चीजें हैं, जिस पर हमको सोचना है।

अखबारवालों की उदासीनता
शक्ति का सवाल

हम अखबारवालों की शिकायत करते हैं कि वे हमारे काम के प्रति उदासीन हैं। लेकिन शिकायत करने से ही नहीं चलेगा। उनको खींचनेवाली शक्ति हम जागृत नहीं कर सके हैं। इसलिए हमको अपने बारे मे सोचना चाहिए। उनको गालियाँ देने से काम नहीं हो सकेगा। वे अपना सोचें कि वे ठीक कर रहे हैं कि नहीं ठीक कर रहे हैं। उनको सिफारिश करने हम नहीं जायेंगे कि वे ठीक कर रहे हैं कि नहीं कर रहे हैं। वह इसको समझें, यह उनका काम है। मैं जानता हूँ उनमे वह शक्ति है। गांधीजी ने हमको वह बतलाया था। गांधीजी के पीछे लोग दौड़ते थे। क्या गांधीजी को बुलाना पड़ता था कि आओ मैं आ रहा हूँ? क्योंकि एक विश्वास, श्रद्धा थी कि जिसके लिए वह दौड़ रहे हैं, यह चीज हमारे लिए भी है। वह तीव्रता आज हमारे कार्यक्रम में नहीं है। इसका भान हमको होगा, तब हम कुछ आगे बढ़ सकेंगे।

गांधीजी ने सभी चीजों को एकसाथ जोड़ दिया था। आजादी, खादी, 'अनटचेबिलिटी' (अस्पृश्यता) आदि सबको।

जब विनोबाजी का भूदान शुरू हुआ, 'इट चेक्ड दी वायलेंस इन आंध्र' मानना होगा। और सबको, देश को बदल देगा, ऐसी आशा बनी। आज सुबह विचित्र भाई कह रहे थे कि 'वायलेंस' बढ़ती जा रही है। जो सामाजिक अन्याय है, अभाव और विषमता है—आर्थिक-सामाजिक सब तरह की, वह सारा 'वायलेंस' ही है, हिंसा है। वह हिंसा फूटती है, तो कुछ तोड़-फोड़ होता है। 'सम टाइम आई विल कमिट इट'। आखिर जिंदा हैं तो रास्ता बनायेंगे कि नहीं? जो मरे हुए हैं वे क्या करेंगे? 'विनोबाजी स्टार्टेड भूदान। इट वाज भूदान, इट वाज नाट ग्रामदान, इट वाज नाट बिहारदान, इट वाज नाट भारतदान, इट वाज ओनली भूदान, बट देयर वाज वन नारा—दानं समविभागः।' ('विनोबा ने 'भूदान' शुरू किया। वह भूदान था, ग्रामदान नहीं, बिहार-दान नहीं, भारतदान नहीं, केवल भूदान था, और एक ही नारा था—दान समविभाग।') अभी तो आजकल वह नारा मैं तो कभी नहीं सुनता। समविभाग अभी वह नहीं रहा है। क्यों नहीं रहा है? सोचना चाहिए। कब आयगा, कब लाना ठीक होगा, यह भी सोचना चाहिए। तो वह नारा नहीं है। भूदान थोड़ा-सा लेकिन उसके पीछे 'पोटेंशियलिटी' इतनी भरी हुई थी—समविभाग, 'सभी भूमि गोपाल की।' अभी हम गोपाल की बात नहीं कर रहे हैं, मुझे माफ कीजिये, हम ग्रामदान की बात कर रहे हैं, हम भूमि के ग्राम-स्वामित्व की बात कर रहे हैं। सभी भूमि गोपाल की है, और सभी भूमि एक गाँव की है, उसमे फरक है। उसको आप नहीं समझेंगे, तो आपको समझना आवश्यक है।

नक्सालवाड़ी की सफलता
हमारी शक्ति की क्षीणता

पन्द्रह साल के बाद नक्सालवाड़ी की छोटी-सी घटना हुई। मानना होगा कि पिछले पन्द्रह वर्षों के अन्दर वह श्रद्धा, वह विश्वास, हमारे भीतर बढ़ता जाता, तो यह नक्सालवाड़ी नहीं हो सकती थी। जैसा अभी कपिल भाई ने कहा कि अभी एम० एल० पी० की तरफ से उत्तर प्रदेश मे कोई सत्याग्रह होनेवाला था बलिया में, वह नहीं हुआ। बहुत अच्छी बात है। लेकिन इस बारे में सोचना चाहिए। अभी हमारी चर्चा बहुत कम होती है कि पन्द्रह वर्ष के बाद हम भूदान से बिहारदान तक आ गये हैं, तो फिर नक्साल-बाड़ी क्यों होती है? उसको जरूर मानना होगा कि पन्द्रह वर्ष के बाद जो श्रद्धा थी, कि सबै भूमि गोपाल की, दान समविभाग',

निर्मला बहन : ऊँचे लक्ष्य

सिद्धराज ढड्ढा : ठोस संगठन

वैद्यनाथ बाबू : बिहारदान

संघ के अध्यक्ष का भाषण : सफलता की गाथा

फुरसत के क्षण

← श्रोता-प्रतिनिधि →

नमूनावाद से क्रान्ति नहीं होती

'आदर्श' की रचना के लिए सम्पूर्ण क्रान्ति अनिवार्य

—सर्वोदय-सम्मेलन में जयप्रकाश नारायण का भाषण : ६ जून '६८—

मुझे आप सब पर दया आती है कि इतनी गर्मी है, और कल से आज तक आप बैठे हैं और आपके कानों पर प्रहार ही हो रहे है, कभी कुछ मधुर संगीत का, लेकिन बाकी तो आपको हमारी बातें ही सुननी पड़ती हैं। मालूम नहीं कि ऐसे भाईचारे के लिए यही तरीका ठीक होगा या कुछ और हम लोगों को सोचना चाहिए। बस, हम बैठकर लेक्चर ही सुनाते रहें आपको। इतनी दूर से आये हैं आप लोग तो किसलिए? ऐसा लोग पूछना भी चाहते हों, शायद कुछ लोग बोलना भी चाहते हों। नरेन्द्र भाई से मैं चर्चा कर रहा था कि भाई, आप लोग बैठकर कुछ रास्ता निकालो। दूर-दूर से लोग आते हैं तो आपस की भी चर्चा हो। मैं तो यह समझता हूँ कि आप पर यह जुल्म है।

मुझे कुछ कहने को बाकी है नहीं। अध्यक्षीय भाषण से लेकर और उसके पहले भी, संघ-अधिवेशन में भी, कितने सुन्दर-सुन्दर भाषण हुए। एक-से-एक अच्छे भाषण हुए हैं, और तत्त्वज्ञान की भी ऊँची उड़ान हुई है। मैं तो यही चाहता था कि छुट्टी मिले मुझे, संघ-अधिवेशन में कुछ बोल चुका था। प्रदर्शनी के उद्घाटन के समय भी कुछ कहा था। लेकिन कुछ बंधुओं की राय है, दबाव है और कुछ मित्र पड़े हैं, जैसे हरविलास बहन, कि हम आपकी यात्रा की कुछ चर्चा सुनना चाहते हैं। अगर कोई समय मिला नहीं तो कहा गया कि इसी समय कहूँ। यह बेवक्त शहनाई जैसी लगती है।

नमूनावाद के नमूने

जो विषय मेरे लिए रखा है, उस पर कम चर्चा हुई है, लेकिन वह एक बहुत बड़ा विषय है, और वास्तव में पूछिये तो मैं कोई विद्यार्थी नहीं। याने कोई एक गहरा विद्यार्थी नहीं हूँ विश्व-शांति के प्रश्न का। अन्तर्देशीय एक समाज के अन्दर सामाजिक क्रान्ति किस प्रकार होती है, मार्क्सवाद के जमाने में कुछ अध्ययन किया और कुछ अध्ययन कर रहा हूँ, इस समय और कुछ अनुभव कर रहा हूँ। लेकिन उस शांति की अनेक चर्चाएँ हुईं और बहुत उत्तम चर्चा हुई यहाँ। उन चर्चाओं पर से कुछ विचार मन में उठते थे तो लोगों को सुनने का वक्त होगा तो बोलूँगा। बहुत सारी हमारी बातें राममूर्ति भाई कह गये, और कुछ और भाई कह गये। दो विषयों पर मैं विश्व-शांति के विषय से अलग चर्चा करना चाहता हूँ। एक तो अपना पुराना परिचित विषय है। कितनी चर्चाएँ हुई हैं, उस पर, लेकिन मेरा ख्याल है कि दिमाग साफ नहीं हुआ। दरभंगा ग्रामदान होने के बाद भी हमारे नरेन्द्र भाई जैसे युवक, पुरुषार्थी वहाँ काम कर रहे हैं। उन्होंने कुछ संघ-अधिवेशन में कहा। कुछ इधर-उधर चर्चा हुई। वह मेरे कानों तक आयी। मैंने सोचा कि उसके सम्बन्ध में दो शब्द कहूँ। यह चर्चा प्रारम्भ से ही चल रही है, और हमारे जैसे छोटे लोगों के बीच ही नहीं, विनोबा और कुमारप्पाजी के बीच भी चली थी। मैं समझता हूँ कि यह कहना चाहिए कि यह एक विचार है, जिसको सक्षेप में नमूनावाद का नाम दिया जा सकता है कि जो भी आपका दर्शन है, विचार है, उसका कहीं नमूना बनाकर दिखा दीजिये। एक नहीं, जितने हो सकें छोटे-बड़े नमूने बनाइये, तो फिर समझ में आयगा। आपमें से जिन लोगों ने अध्ययन किया होगा इस विषय का, उन्हें मालूम होगा कि सैकड़ों वर्ष से दुनिया में ऐसे प्रयोग हुए, आदर्श ग्राम बने, समुदाय बने, कम्युनिटी बने, कालोनीज बने। उनकी कुछ कहानी आपको पार्ट इनोयोपिया में मिलेगी, विचार उसके पीछे जो हो, कुछ उसके उदाहरण मिलेंगे। इनका क्या परिणाम हुआ है अब तक?

विदेश-यात्रा के कुछ अनुभव

हम लोग अब सन् ६८ में गये थे यूरोप की यात्रा पर, वह यात्रा कुछ सकाम यात्रा थी, इस माने में कि मन में कुछ उमंग थी कि कुछ सर्वोदय का सदेश वहाँ सुनायेंगे और भूदान की चर्चा वहाँ करेंगे। इसबार भी मेरी यात्रा हुई। वह निष्काम हुई। अगर लोग पूछते थे कि आपका इस यात्रा का 'परपज' क्या है तो मैं कहता था कि यह 'परपजलेस' है। स्वान्त: सुखाय आया हूँ। अपने पुराने स्थानों को देखने के लिए और कुछ आपसे सुनने के लिए, जानने के लिए आया हूँ। उस समय हम लोगों ने इन आदर्श कालोनीज में से कुछ कालोनीज देखीं। 'ब्रदरहुड' अंग्रेजी में कहते हैं। 'ब्रदरहुड' प्रत्यक्ष में देखा इग्लैण्ड के दक्षिणी भाग में एक आदर्श जीवन है। मुझे नहीं मालूम कि भारत के किसी आश्रम में ऐसा जीवन है। कुछ परिवार हैं, कुल मिलाकर शायद दो सौ। जितने लोग थे सबमें आपस का भाईचारा था। वैयक्तिक कोई संपत्ति नहीं थी, किसीको कोई मजदूरी नहीं मिलती थी। खाना एक जगह, कपड़े धुलते थे एक जगह, काम मिलकर आपस में बाँटते थे, एक मर्यादा थी कि उसके बाहर उत्पादन नहीं करना है, जीवनमान का एक स्तर है, उसके आगे नहीं जाना है, यह भी एक अध्यात्म था उनका, कुछ राजनीति भी थी कि हमें टैक्स नहीं देना पड़े। ईजराइल में कई किबुत्स देखे, वहाँ कुछ दिन रहे। इस तरह से यूरोप में, दक्षिण अमेरिका में, अमेरिका में, कई कालोनीज इतिहास में रही और आज भी हैं। और अद्भुत है उनका काम। जैसे आज आश्रम के अहाते में हम बन्द हैं, वैसे वे अपने कालोनी में बद हैं। उनके आसपास उस नमूने का कुछ खास असर नहीं। समाज का कोई जीवन बदलता नहीं है। नमूना ही बनाना हो, तो बनाइये। लेकिन उससे समाज की शांति नहीं होगी, उससे मूल्यों की शांति नहीं होगी, जीवन की शांति नहीं होगी। आर्थिक रचना, राजनीतिक रचना, सामाजिक रचना, इन सबका परिवर्तन नहीं होगा। ये कोई विवादास्पद बात नहीं। फिर हम उसको दुहराना चाहते हैं यहाँ, तो दुहरायें।

विनोबा ने अपनी पीठ मोड़ी इस मोड़ की ओर से। यह मोड़ है। हम अपने को बाँधना नहीं चाहते हैं। यह विचार है शांति-

पड़ा और मैं सोचता रहा। मेरी समझ में आया कि क्या बात विनोबा ने कही है! विदेशी कपड़ों की होली हुई। नीचे से कागज और ऊपर से विदेशी कपड़े और आग लगा दी देश के बड़े नेता ने। आठ-आठ आने के भाड़े पर स्वयंसेवक भरती हुए, और मित्र यही उमाशंकरजी दीक्षित, डिक्टेटर, तूती बजती थी उनकी बम्बई में उस समय। सारे अंडरग्राउण्ड आंदोलन के बम्बई के वे नेता थे। एक अमुक समय पर ये स्वयंसेवक निकले हैं झण्डा लेकर। क्या वह अच्छा था? क्या वह सत्याग्रह था? लेकिन यह हुआ। यहाँ तक कि 'यंग इंडिया' या 'हरिजन' भी छिपकर छापा। कुछ लोगों ने उसका समर्थन किया और कुछ लोगों ने उसका विरोध किया।

तूफान की प्रकृति

तूफान आता है, तूफान तो एक शुद्ध हवा होती है। हवा अपने आप में शुद्ध ही होती है। लेकिन तूफान में क्या मिलावट नहीं होती? धूल नहीं होती? सूखी पत्तियाँ नहीं होती? तो कोई कहेगा कि यह तूफान नहीं बह रहा है, इसलिए कि यह शुद्ध हवा नहीं है? बाढ़ आती है तो क्या होता है? शुद्ध जल होता है? न जाने कितनी गंदगी बहकर उस पानी में जाती है, कितने पेड़ टूटकर पानी में बह जाते हैं, यह होता है। हिंसक क्रांतियाँ हुई हैं, बहुत-सी क्रांति हुई। एक चमत्कार हुआ, एक उज्ज्वल क्रांति हुई, जिसने दुनिया को हिला दिया। 'टेन डेज : दैट शुक दी वर्ल्ड'। इस पुस्तक का जो मेरे ऊपर जो असर हुआ मैं आपसे बयान नहीं कर सकता और उस काल के मुल्कों पर भी उसका असर हुआ। सारी दुनिया को हिला देनेवाली यह क्रांति हुई। उसमें गुण्डे, बदमाश, लुटेरे नहीं शामिल हुए? होते हैं। तो मैं आपसे यह नम्र निवेदन करना चाहता हूँ कि जब भूदान हुआ तो बाबा को सब भेंट मिल गया है, सब पहाड़ मिल गया, जंगल मिल गया है, और जमींदारों को समझाकर बड़े दान ले लिये कि जमींदारी तो सरकार में जानेवाली थी, सरकार में मिलनेवाली थी, विलीन होनेवाली थी। उन लोगों ने दे दिया, उन लोगों ने कौनसी उदारता की, क्या दान किया? सिर्फ अपना 'कम्पनसेशन' का रुपया बाज आये। ठीक है। वह हुआ। लेकिन उस २१-२२ लाख जमीन में से सिर्फ साढ़े तीन लाख एकड़ जमीन हम बाँट पाये बिहार में। *वह खेती के लायक जमीन बाँटी है।* ठीक है कि २ एकड़ जमीन बाँटने के लिए छः-छः, सात-सात एकड़ जमीन छाँटी है। लेकिन उसमें से जमीन मिली और डेढ़ लाख एकड़ जमीन और मिल जायगी। इस प्रकार पाँच लाख एकड़ जमीन उस भूदान आंदोलन से प्राप्त हुई। जाँच हुई थी भूदान समिति की तरफ से कुछ जिलों में तो यह मालूम हुआ कि जो जमीन दी गयी थी भूमिहीनों को, उसमें से ७० फीसदी से लेकर ८० फीसदी जमीन पर उनका कब्जा है। २० से लेकर ३० फीसदी बेदखल हुए हैं। बिहार में जमींदारी, तालुकेदारी, मालगुजारी की प्रथा थी। आपको मालूम होगा कि सरकार के पास लैण्ड रेकार्ड्स नहीं होते हैं। मैं आपका समय नहीं लूँगा वह टेनेंसी सिस्टम समझाने में। तो रेकार्ड नहीं है जमीन के। बेदखली होती है।

३०-३० वर्ष से खेती कर रहा है बँटाईदार, और बेदखल हो गया। एक पुर्जा नहीं, *जिसमें उसका नाम हो 'कैडेस्ट्रल' सर्वे के नाम चढ़* जाता है, मालिक मुकदमा पर सिविल सूट में जा करके खारिज करा देते हैं। इसलिए बेदखली हुई। महामाया प्रसाद सिंह की हुकूमत में जो राजस्व मंत्री थे श्री इन्द्रदीप बाबू, वह कम्युनिस्ट पार्टी के बिहार के सबसे बड़े नेता, बिहार कम्युनिस्ट पार्टी के जनरल सेक्रेटरी हुआ करते थे, एक बहुत तेज नौजवान, फर्स्ट क्लास फर्स्ट, एम० ए० इकोनामिक्स में हुए, डा० ज्ञानचन्द के चहेते शागिर्द थे पटना कालेज में। उनसे मैंने पूछा, उनकी हुकूमत उलटने के करीब एक सप्ताह पहले कि इन्द्रदीप बाबू, श्रीबाबू के जमाने से लेकर आपके जमाने तक बिहार में कानून से कितनी जमीन का पुनर्वितरण हुआ। पुनर्वितरण कह रहा हूँ ध्यान दीजियेगा। खास महाल जमीन, सरकारी जमीन का वितरण नहीं, 'डिस्ट्रीब्यूशन आफ गवर्नमेंट लैण्ड' नहीं, री डिस्ट्रीब्यूशन'। पुनर्वितरण, जमीनवाले से जमीन लेकर दूसरे को देना। मैंने पूछा कि दस हजार एकड़ जमीन पुनर्वितरित हुई होगी? तो इन्द्रदीप बाबू ने कहा कि पाँच हजार एकड़ भी नहीं हुई होगी। ये जवाब निष्पत्ति है। बीस वर्ष के स्वराज्य, समाजवाद, साम्यवाद और सब वादों की निष्पत्ति है यह।

सरकारी सीमाएँ

उस मिनिस्ट्री में, और अब जो भोला शास्त्री की मिनिस्ट्री बनी है उसमें, जनसंघ को छोड़ करके बाकी सभी हमारे पुराने साथी, हमारे साथ काम किये हुए, समाजवाद के हमारे वर्गों में सीखे हुए हैं, वह पुराने कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के जमाने से। इसलिए बहुत घनिष्ठता, समीपता थी। कुछ चुने हुए थोड़े से लोग आये थे। हमने उनसे कहा था कि कांग्रेस ने कुछ अच्छे-अच्छे कानून बनाये हैं गरीबों के लिए, उसने उन पर अमल नहीं किया। क्योंकि कांग्रेस के अंदर जो निहित स्वार्थ है, उन्होंने अमल होने नहीं दिया और जो सरकारी तंत्र है, उसमें जो निहित स्वार्थ है, उसने नहीं होने दिया और तीसरे, भ्रष्टाचार ने नहीं होने दिया। बड़े लोग रिश्वत दे सकते हैं, थोड़ी जमीनवाले जमीन नहीं दे सकते हैं। उन्हें बड़ा उत्साह हुआ और, हमने *कहा कि चूँकि यह कांग्रेस का बनाया हुआ* कानून है, उनको भी आप बुलाइये। सब पार्टियों और कांग्रेस के नेताओं की सचिवालय में बैठक हुई और मुख्य मंत्री ने उसका सभापतित्व किया। सबने मान्य किया कि यह बहुत अच्छी बात है। कानून बना हुआ है नया कुछ करना नहीं है। तो हमने कहा कि जो क्रांतिकारी कानून नया बनाना हो, *बनाइये। मेरा समर्थन है। समय लगेगा।* वह दीजियेगा। बिहार के गाँवों को आप भी जानते हैं और मैं भी जानता हूँ। एक क्रांति हो जायगी। गरीब की छाती पर से एक पत्थर उठ जायगा। आजादी की साँस ले सकेंगे।

परन्तु वे कुछ न कर पाये। अब वह लम्बी कहानी है कि क्यों कुछ नहीं कर पाये! वह खुद मानते हैं कि क्यों न कर पाये। और जगह है कि नहीं, मुझे पता नहीं भारत में। यह हालत है बिहार में। मैं मानता हूँ कि करीब करीब सब जगह यह हालत होगी। किसी किसान की जमीन है और उसमें किसी गरीब की झोपड़ी है। तो श्रीबाबू के जमाने का बनाया हुआ कानून 'प्रिविलेज परसन्स

सर्व सेवा संघ के संगठन का स्वरूप बदले ग्रामदानी ग्रामसभाओं की ठोस बुनियाद बने

—आबू-सम्मेलन की रिपोर्ट पर विनोबा की प्रतिक्रिया—

'जरा और जोर से बोलिये, आप एक बहरे को सुना रहे हैं।" विनोबाजी ने कहा, तो स्मरण आया कि इसी बिहार प्रदेश के वैद्यनाथधाम देवघर में मंदिर-प्रवेश के समय उनके कान पर एक पण्डे का जोर का डंडा पड़ा था और उनकी श्रवण-शक्ति कम हो गयी। मैं थोड़ा और खिसककर विनोबाजी के कान के पास सटकर बैठ गया और १७वें सर्वोदय-सम्मेलन की रिपोर्ट सुनानी शुरू की।

सम्मेलन के समय ही सर्व सेवा संघ की प्रबंध-समिति और उसके दो दिन पहले संघ-अधिवेशन चलता रहा था, उसकी भी संक्षिप्त जानकारी दी। मैं सुनाता जा रहा था कि संघ प्रबन्ध-समिति ने चम्बल घाटी शांति समिति का पुनर्गठन किया है, भारतीय खादी-ग्रामोद्योग संघ, 'सेवाग्राम नयी तालीम समाज और कृषि-गोसेवा संघ के स्वतंत्र स्वायत्त संस्थाओं के रूप में पंजीकरण का निश्चय हुआ है। अगस्त, '६८ में नेशनल कन्वेंशन बुलाने, उसमें राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के चिन्तन-मनन करने तथा आगामी नवम्बर १९६९ में राजगीर में विश्व शांति के संदर्भ में विश्व सर्वोदय सम्मेलन बुलाने का तय हुआ। पंजाब खादी-ग्रामोद्योग संघ के ट्रस्टी मण्डल की नियुक्ति, पूर्णिया जिला ग्राम-स्वराज्य समिति आदि की घोषणाएँ हुई हैं।

संघ अधिवेशन के बारे में विनोबाजी ने पूछा—"कितने लोग आये थे ?"

"बाबा, लगभग पन्द्रह सौ लोक-सेवकों और संघ-सदस्यों ने संघ-अधिवेशन में भाग लिया। ६ जून से ८ जून, '६८ तक तीन दिन अधिवेशन चलता रहा, जिसमें आन्दोलन की गतिविधि, राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति और नशाबन्दी के बारे में चर्चा और प्रस्ताव हुए। विभिन्न प्रदेशों के कार्यकर्ताओं ने अपने-अपने प्रदेश के उत्साहवर्धक अनुभव सुनाये। बिहारदान के साथ-साथ उत्तरप्रदेश, उड़ीसा और तमिलनाड के लोग भी प्रदेशदान की अपूर्वरचना में लगे हैं।

"सर्वोदय-सम्मेलन में अध्यक्ष थे शंकरराव जी। उन्होंने नया मन व नया मानस बनाने और 'स्पिरिचुअल फ्रॅटर्निटी' (आध्यात्मिक बंधुत्व) की स्थापना पर बल दिया, भूदान की सराहना की और 'सबै भूमि गोपाल की' की भावना को न भुलाने की बात कही। आचार्य राममूर्ति ने एक प्रश्न रखा कि आखिर आज 'गोपाल' कौन है ? उसकी क्या शक्ल है ? ग्रामसभा ही गोपाल है, इसलिए गाँव में 'कन्स्ट्रक्टिव रिलेशनशिप' की स्थापना की जरूरत है। मजदूर भी श्रम का मालिक है। आचार्य दादा धर्माधिकारी ने मालिक और मजदूर के सम्बन्धों का विश्लेषण करते हुए कहा कि ठीक है, मजदूर मेहनत का मालिक जरूर है, पर मुश्किल यह है कि जो मेहनत का मालिक है, उसको बाजार में मेहनत बेचनी पड़ती है और जो पूँजी का मालिक है उसको बाजार में कुछ नहीं बेचना पड़ता। जैनेन्द्रजी ने 'पावर' और 'प्रापर्टी' के साथ 'परसनॅलिटी' को भी जोड़ते हुए कहा कि स्वत्व का सर्वत्व में लीन होना ही सर्वोदय है। चारुचन्द्र भण्डारी ने नक्सलबाड़ी का मार्मिक चित्र खींचा कि वहाँ जन्म-जन्म से बँटाईदार हैं। श्री जयप्रकाश नारायण ने नमूनावाद का खण्डन करते हुए कहा कि नमूना चाहे कितना ही अच्छा क्यों न हो, फिर भी वह पूरे समाज को परिवर्तित करने की शक्ति नहीं रखता। समाज की दिशा बदलने के लिए तो व्यापक क्रांति चाहिए। श्री उ० न० ढेबर ने बड़े ही करुण शब्दों में कहा कि आज गांधीजी होते तो वे चुप न बैठते। आज जिस तरह की सरकारें चलती हैं उनके रहते नहीं चल सकती थीं। श्रीमन्नारायणजी ने शराबबन्दी का समर्थन करते हुए उसे आर्थिक समृद्धि से व्यर्थ बह जानेवाला जन-जीवन का गुराम बताया।" मैं इस तरह कहता चला आ रहा था।

बीच में श्री कपिल भाई ने, जो पास ही बैठे हुए थे, एक टिप्पणी की कि "बाबा, आपको सम्मेलन में जरूर शामिल होना चाहिए। आपकी उपस्थिति में चर्चाएँ, व्यवस्थित और एकसूत्रता में आबद्ध रहेंगी। अभी अलग-अलग विचार सुनकर कार्यकर्ताओं में थोड़ा बुद्धिभेद होता है। वे प्रेरित नहीं हो पाते।"

विनोबाजी हँसकर कहने लगे—"मेरी उपस्थिति के फायदे बता रहे हैं, अनुपस्थिति के लाभ बताइये।"

हम सब चुप रह गये। भला उनकी अनुपस्थिति का क्या लाभ बता सकते थे ?

विनोबाजी ने स्वयं कहना शुरू किया : "बताइये, ढाई हजार लोग सर्वोदय-सम्मेलन में आये, अभी तक किसी नेता ने जीते जी 'कान्फरेन्स अटेण्ड' करना बन्द किया ? सबको इतनी बड़ी भीड़ में जाने की आकांक्षा रहती है, आकर्षण रहता है कि जाकर वहाँ पर कुछ मोड़ देंगे। पर मोड़ने के बजाय उलटे तोड़ताड़ शुरू हो जाती है।

"अन्त तक जो स्थूल कार्य में पड़े रहते हैं, उनकी बहुत बुरी दशा होती है। देश में स्वतंत्र बुद्धि पनपती ही नहीं। मैं इसीलिए पब्लिक मीटिंग में अब नहीं बोलता। 'प्राइवेट टाक्स' होती हैं, वह भी बहुत सीमित। पत्र-व्यवहार बन्द किया है, अखबार भी पढ़ना बन्द। बस, खास-खास खबरों का एक हस्तलिखित अखबार मेरे लिए रोज तैयार होता है, जिसे देखने में तीन चार मिनट लगते हैं। बाद का सारा समय वेदाभ्यास के चिन्तन में बीतता है और व्यक्तिगत रूप से थोड़ा-बहुत सिखाने में।

"बापू का नित्य नया चिन्तन चला करता था। आजादी के बीस साल बाद आज वे क्या करते, इसका अन्दाजा हम यहाँ नहीं लगा सकते हैं। बालक एम० के० गांधी से महात्मा गांधी तक का जीवन सतत जागरूकता का इतिहास है। उनमें जाने के बाद लोगों की अकल टकरायी। राजाजी, नेहरूजी, कृपालानी, जयप्रकाश, सब एक-दूसरे को बराबर काटनेवाले। गांधी निधि से 'गांधी पीस फाउण्डेशन' बना है। उसने तय किया है कि उसके कार्यकर्ता पार्टी-पालिटिक्स में भाग न लें। पर उस पीस फाउण्डेशन के मुखिया पार्टीवाले ही हैं !

भला हो। लेकिन आज सारी दुनिया मे चलता है कि पहले मेरा भला हो, फिर दुनिया का हो। इसी तरह अपने आन्दोलन मे भी, पहले मैं और बाद मे बाबा। बल्कि कभी-कभी तो लोग सोचते हैं कि सब मेरा भला करें। सबसे पीछे मेरा भला हो और सबसे पहले दूसरों का हो, यह सर्वोदय है।"

लिखने को तो बहुत है, अनेक प्रसग हैं, पर सबसे बडी बात यह है कि इन दिनो विनोबाजी का स्वास्थ्य बहुत अच्छा है, कोई किसी प्रकार का शारीरिक कष्ट नही है, बाल और दाढ़ी निकाल दी हैं, बिलकुल चेहरा ही बदल गया है। इन दिनो सतो के भजन बडी मस्ती से गाते रहते हैं। गाते-गाते नाच उठते हैं, भाव-विभोर हो जाते हैं। जब चलने लगा तो देखा कि सध्या के ७ बजे वे सोने जा रहे थे और जोर-जोर से ताली बजाकर गारहे थे

मन का घोड़ा सरपट दौड़ा,
मार लिया मैदान रे।
वीरों की यह बाट है भाई,
कायर का नहीं काम रे॥
चलता हुआ मुसाफिर ही पाता है,
मंजिल और मुकाम रे॥

१८ जून, '६८ सहरसा —गुरुशरण

ग्रामनेतृत्व गोष्ठी

आगामी ५, ६, ७ जुलाई '६८ को सर्व सेवा सघ के प्रधान केन्द्र—वाराणसी मे राज्यदान के सदर्भ मे 'ग्रामनेतृत्व' विषयक गोष्ठी होने जा रही है।

गोष्ठी मे जयप्रकाश नारायण तथा अन्य प्रमुख सर्वोदय-विचारकों के अलावा इस विषय के कुछ तज्ञ लोगो को भी आमन्त्रित किया गया है।

आवश्यक सूचना

"भूदान-यज्ञ" के अगले ५ जुलाई '६८ के अक के साथ क्रमानुसार "गाँव की बात" का अक भी जाना चाहिए, लेकिन सम्मेलन की पूरी सामग्री ५ जुलाई '६८ के अक में चली जाय, इसलिए "गाँव की बात" का अक "भूदान-यज्ञ" के ५ जुलाई '६८ के अंक के साथ नहीं, बल्कि १२ जुलाई '६८ के अक के साथ जायगा।—स०

ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

भारत मे				बिहार मे			
प्रांत	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान	जिला	ग्रामदान	प्रखंडदना	जिलादान
बिहार	२३,४९९	१५३	२	पूर्णिया	८,१५७	३८	१
उडीसा	८,५०६	३६	—	दरभगा	३,७२०	४४	१
उत्तरप्रदेश	६,६००	४१	२	मुजफ्फरपुर	२,२०९	२३	—
तमिलनाड	५,३०२	५०	१	मुगेर	२,११८	१८	—
आन्ध्र	४,२०७	१०	—	हजारीबाग	१,२७३	४	—
स० पजाब	३,२९६	९	—	गया	१,१४३	१	—
महाराष्ट्र	३,१२६	११	—	सथाल परगना	८३९	२	—
मध्यप्रदेश	२,८०९	७	—	सारण	७७६	७	—
असम	१४८९	१	—	पलामू	६३४	५	—
राजस्थान	१,०२१	—	—	सहरसा	९६७	२	—
गुजरात	८०३	३	—	भागलपुर	४१५	३	—
बगाल	६४४	—	—	सिंहभूमि	३१०	४	—
कर्नाटक	४१०	—	—	धनबाद	४०४	१	—
केरल	४०९	—	—	शाहाबाद	११२	१	—
दिल्ली	७४	—	—	चम्पारण	२४०	—	—
हिमाचल प्रदेश	१७	—	—	रांची	४४	—	—
जम्मू-कश्मीर	१	—	—	पटना	३८	—	—
कुल :	६२,२०६	३२१	५	कुल	२३,४९९	१५३	२

दरभंगा जिलादान में प्रखंडदान : ४४ — ग्रामदान : ३,७२०
पूर्णिया „ „ „ : ३८ — „ : ८,१५७
तिरुनेलवेली „ „ „ : ३१ — „ : २,८९६
बलिया „ „ „ : १८ — „ : १,४६६
उत्तरकाशी „ „ „ : ४ — „ : ५६६

बिहार मे जिलादान : २ प्रखडदान : १५३ ग्रामदान २३,४९९
उत्तरप्रदेश में „ : २ „ : ४१ „ ६,६००
तमिलनाड में „ : १ „ : ५० „ ५,३०२
भारत में जिलादान : ५ „ : ३२१ „ ६२,२०६

विनोबा-निवास, १८ जून '६८ —कृष्णराज मेहता

१० जुलाई '६८ को विनोबा के बलिया-आगमन पर जिलादान-समारोह का विराट आयोजन

बलिया। प्राप्त जानकारी के अनुसार विनोबा स्वागत-समिति बलिया की ओर से १० जुलाई को स्थानीय टाउन डिग्री कालेज के मैदान मे विराट जिलादान समर्पण-समारोह का आयोजन किया जा रहा है।

जिले के गाँव-गाँव से ग्रामदानी प्रतिनिधि और जिले की जनता ग्रामस्वराज्य-अभियान की इस सामूहिक घोषणा मे सक्रिय भाग लें, इसकी पूर्वतैयारी मे २५ जून से ही कार्यकर्ता गाँव गाँव मे फैल गये हैं। इस अवसर पर स्वागत-समिति एक विशेष प्रकार के बिल्ले का व्यापक प्रसार कर रही है।

इसी समय उत्तरप्रदेश का प्रातीय-सम्मेलन भी होने जा रहा है। आशा है कि इस सम्मेलन से उत्तरप्रदेश का आन्दोलन और शक्तिशाली एवं गतिशील बनेगा।

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड, या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सम्पादकीय

कृषि-क्रान्ति : गेहूँ और किसान

इस साल रबी की फसल बहुत अच्छी हुई है। इतनी अच्छी हुई है कि अखबार के लोग और सरकार के लोग फूले नहीं समा रहे हैं। एक सरकारी तहसीलदार साहब एक दिन कह रहे थे कि इस साल किसानों के पास भूसा रखने की जगह नहीं है। मैंने पूछा कि ऐसा क्यों है तो बोले कि जिस जगह वे भूसा रखते थे वह अनाज से भर गयी है! और, सरकार तो इतनी खुश है कि उसने डाक का एक नया टिकट निकालने का निर्णय कर डाला है। टिकट पर गेहूँ की तस्वीर बनी रहेगी और लिखा रहेगा . 'खेती की क्रान्ति १९६८'। सरकार के लोग कहने लगे हैं कि दो-तीन साल बाद विदेश से अन्न मँगाने की जरूरत नहीं रह जायगी। कितनी अच्छी बात होगी यह! सचमुच भारत का भाग्य खुल जायगा, और उसकी इज्जत लौट आयेगी।

यह सब तो ठीक है, लेकिन उस दिन विष्णुदेव बाबू अपने छोटे भाई से यह क्यों कह रहे थे कि अगली बार गेहूँ की खेती कम की जाय? मुझे यह सुनकर बहुत अचरज हुआ। मैंने पूछा भी "जब प्रति एकड़ गेहूँ की उपज इतनी अधिक बढ़ गयी है, तो आप गेहूँ की खेती कम करने की बात कह रहे हैं। क्या रुपया रखने की भी जगह नहीं मिल रही है?" कहने लगे "एक दिन मण्डी में चलिये, तो पता चल जायगा कि मैं ऐसा क्यों कह रहा हूँ। गेहूँ में मेहनत लगती है मजदूर की, पूँजी लगती है हमारी, कानून बनता है सरकार का, और मुनाफा होता है व्यापारी का। जब मैं यह देखता हूँ तो सोचता हूँ कि अगर बाजार के व्यापारियों और सरकार के अधिकारियों की ही जेब भरनेवाली है तो हम अधिक गेहूँ पैदा करने के पीछे पागल क्यों हों? गेहूँ कम होगा तो रुपया अधिक मिलेगा। सरकार जब रक्षा नहीं कर पाती तो हम उसकी बात क्यों मानें?"

यह कैसी बात है कि गेहूँ कम होगा तो रुपया अधिक मिलेगा! गेहूँ कम होने पर अधिक रुपया कौन देगा? व्यापारी देगा। व्यापारी को अधिक रुपया कहाँ से मिलेगा? गाहक देगा। किसान खुश हो जायगा। लेकिन आज क्या हो रहा है? गेहूँ ज्यादा हुआ, इतना ज्यादा हुआ कि ढोने के लिए ट्रकें नहीं मिल रही हैं, गोदामों में जगह नहीं रह गयी है, लेकिन गाहक को कितनी राहत मिली है? बहुत कम। किसान के गेहूँ का दाम खूब गिरा, लेकिन गाहक के गेहूँ का दाम उतना नहीं गिरा। क्योंकि बाजार न उत्पादक के हाथ में है, न गाहक के। और सरकार तो मालूम नहीं किसके हाथ में है! द्रौपदी के तो पाँच ही पति थे, सरकार के तो पचास हो गये हैं!

एक बात और है। वही किसान जब गेहूँ बेचकर बाजार में जाता है तो देखता है कि हर चीज का दाम ज्यों का त्यों है। गेहूँ की देखा-देखी किसी दूसरी चीज का दाम नहीं घटा, बल्कि कई चीजों का तो पिछले कुछ दिनों में बढ़ गया है। मंडी का व्यापारी गेहूँवाले को कम दाम देता है, और शहर का व्यापारी अपनी चीज के लिए उससे ज्यादा दाम लेता है। उस बेचारे पर दोनों ओर से मार पड़ती है। शहर गाँव को लूटे, मिल-मालिक व्यापारी को लूटे, व्यापारी किसान को लूटे, बड़ा किसान छोटे किसान को लूटे, किसान मजदूर को लूटे, बनिया गाहक को लूटे, और गेहूँवाला राज्य दूसरे राज्य को लूटे। बस, लूट का मौका मिलना चाहिए; हर एक लुटने के लिए तैयार बैठा है। अगर गेहूँ की कहानी लिखनी हो तो लूट की भाषा में लिखी जा सकती है। आँखें खोल देनेवाली कहानी होगी!

हरियाना में गेहूँ सड़ रहा, और बंगाल-उड़ीसा का गरीब अन्न के बिना मर रहा है। क्यों? क्या गेहूँ पैदा करनेवालों का एक देश है, और गेहूँ के लिए तरसनेवालों का दूसरा?

गेहूँ अधिक-से-अधिक पैदा हो, यह कौन नहीं चाहेगा, लेकिन, केवल इतने से सवाल हल नहीं होगा। गेहूँ जितना ज्यादा पैदा होगा माँग उतनी ही ज्यादा बढ़ेगी कि गेहूँ में सबको हिस्सा मिले। हरएक यह सवाल पूछेगा कि उसे क्यों नहीं मिल रहा है। यह सवाल ही तो इस जमाने की सबसे बड़ी मुसीबत है। और, धीरे-धीरे हर आदमी सवाल पूछना सीखता भी जा रहा है।

एक बात पक्की है कि आज की सरकार और आज के बाजार के पास इस सवाल का कोई जवाब नहीं है। लूट बन्द करना उनके वश की बात नहीं रह गयी है। लूट न तानाशाही में बन्द हो सकती है, और न नेताशाही में। उसे बन्द करने के लिए कोई तीसरी शक्ति चाहिए। भगवान की शक्ति कहाँ है, वह कब और कैसे मिलेगी, इसका पता नहीं है। सरकार में शक्ति नहीं रह गयी है, यह पूरे तौर पर मालूम हो गया है। सचमुच शक्ति स्वयं जनता में है, लेकिन उसे उसका पता नहीं है, और अगर कभी-कभी पता हो भी जाता है तो वह अपनी शक्ति सही ढंग से प्रकट नहीं कर पाती।

गेहूँ गाँव में पैदा होता है। वहीं खेत हैं, वहीं खेत के मालिक हैं, वहीं खेत के मजदूर हैं और वहीं से गेहूँ मंडी में जाता है! जब इतनी चीजें वहाँ हैं तो गाँव के लोग सवाल क्यों नहीं पूछते और अपने सवाल का जवाब क्यों नहीं ढूँढ़ते? जवाब उनके पास है। अगर गाँव की अपनी सरकार बन जाय, और अपना बाजार बन जाय तो समझ लीजिये कि सवाल बहुत कुछ हल हो गया। गाँव में रहनेवाले सब एक हैं--चाहे वे मेहनतवाले मजदूर हों, चाहे खेतवाले मालिक, और चाहे पूँजीवाले महाजन और व्यापारी। किसी एक का भी काम दूसरे दोनों के बिना नहीं चल सकता। जब ऐसी बात है तो उनके एक होकर गाँव गाँव में संगठन कर लेने में कठिनाई क्या है? गाँव का अपना संगठन हो, अपना कोष हो, और सबकी राय से अपना निर्णय हो, तो गाँव की शक्ति बनने में कितनी देर लगेगी? तब गाँव अपने लोगों के खिलाने के बाद बेचेगा, अपनी गोदाम में आगे के लिए रखकर बेचेगा, अपनी रोज की जरूरत की चीजें खुद बनायेगा, बराबरी की हैसियत से शहर से बात करेगा, सरकार में अपने आदमी भेजेगा, अफसर और व्यापारी का मुँहताज नहीं रहेगा। आज यह सब कुछ नहीं है, तभी तो लूट के लिए खुली छूट है। बात यह है कि गाँव ने अभी तक अपना 'स्व' पहचाना ही नहीं, इसलिए गाँव में स्वराज्य पहुँचा नहीं। क्या अब भी नहीं पहचानेगा? •

सर्वोदय-सम्मेलन में व्यक्त उद्गार, अनुभव, उद्बोधन

जनआन्दोलन और राज्यदान की सम्भावनाएँ

यहाँ सारे भारत का दर्शन हो रहा है। इसके पहले बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश की जनता और कार्यकर्ताओं का दर्शन हुआ। उड़ीसा मे देखा कि यहाँ के कार्यकर्ताओं में उत्साह है, विश्वास है, निष्ठा है, उन्होंने भी राज्यदान का संकल्प लिया है। कोरापुट की जनता लग जाय तो जल्द राज्यदान हो सकता है। ग्रामदानी गाँवों से एक सेना मिल सकती है। कार्यकर्ताओं ने यह बात मान ली है। गंगा और यमुना के संगम से काम होगा। यहाँ स्त्रियों की ताकत भी है, जो देश में कहीं भी नहीं है।

नक्सालबाड़ी में ग्रामदान मिल रहा है। चारु बाबू राम की तरह काम कर रहे हैं। उन्हें वानरी सेना की आवश्यकता है। जो जनता हिंसक क्रान्ति के लिए कूद पड़े, वह दूसरा अहिंसा का रास्ता आसानी से पकड़ सकती है। इसलिए मेरे मन में आता है कि नक्सालबाड़ी का पूरा भाग ग्रामदान में आना चाहिए। नक्सालबाड़ी एक चुनौती है, चुनौती के तौर पर यह काम पूरा करना चाहिए।

पूर्णिया में ग्रामदानी संघ बना रहे हैं। जनता का बड़ा सहयोग है। यह मुझे अच्छा लगा। मुझे पूरा विश्वास है कि बिहारदान हो जायगा। वहाँ बाबा हैं, क्रान्तिकारी जे०पी० हैं, जनता भी साथ है।

बलिया में सम्मेलन हुआ, उसके बाद जिलादान हो गया। यहाँ भी सम्मेलन हो रहा है यहाँ भी ग्रामदान जोर पकड़ना चाहिए।

मद्रास में काम बढ़ रहा है। ग्रामदानी किसानों से मैंने कहा कि दूसरे जिले में रस-पन्द्रह दिन के लिए जाना चाहिए। २०० किसानों ने अपना समय दिया। मदुराई से तिरुनेलवेली गये।

ग्रामदान होते ही ग्रामसभा बने। प्रखण्ड-दान में प्रखण्ड-सभा का आयोजन करके लोग इकट्ठा होते हैं। अभी जिले का संगठन नहीं हुआ है करना चाहते हैं। जब सब लोग आयें और कहें कि हमारा जिलादान हो गया, तब जनता को मालूम होगा, कि हमारा आंदोलन है। इसमें से क्रान्तिकारी ताकत निकलेगी। जैसे हमारा सम्मेलन होता है, वैसे ग्रामीण जनता का एक-दो दिन का सम्मेलन होना चाहिए।

इस तरह के सर्वोदय-सम्मेलन में भी ग्रामदानी गाँवों की जनता को आना चाहिए। यहाँ आंदोलन में लगे कार्यकर्ता आते हैं, पर ग्रामदान किसान भी सम्मेलनों में आयें तो ताकत पैदा होगी। अगले सर्वोदय सम्मेलन में यह होना चाहिए। हर प्रांत से सम्मेलन में ग्रामदान-किसान आयें। इस आंदोलन का संदेश आम जनता के पास जल्द-से-जल्द पहुँचना चाहिए। हमको इसके लिए तरीका ढूँढ़ना चाहिए। हर कदम पर प्रखण्डदान जिलादान के लिए कोशिश होनी चाहिए। पुष्टि काम के लिए भी कोशिश करनी चाहिए। हम लोगों की कई समस्याएँ हैं। अभी ठाकुरदासजी मद्रास आनेवाले हैं। मेरे मन में यह दुःख है कि भूमि समस्या हल नहीं हुई है। क्रान्ति का 'सेंटर ग्रामसभा है। ग्रामसभा के जरिये क्रांति होनेवाली है। निर्माण काम में भी लोगों का 'ऐक्टिव पार्टीसिपेशन' होना चाहिए। पुष्टि का काम भी साथ-साथ होना चाहिए।

तमिलनाड ने प्रांतदान का संकल्प लिया है तामिलनाड के लोगों में उत्साह है। वहाँ जनता का आन्दोलन हो सकता है, इसलिए प्रांतदान का संकल्प किया। तमिलनाड का प्रांतदान हो सकता है, इस पर मेरा पूरा भरोसा है।

—एस० जगन्नाथन्

उड़ीसा में जनशक्ति का दर्शन

अभी थोड़े दिन पहले उड़ीसा का पुरी-सम्मेलन हुआ। जगन्नाथनजी ने अध्यक्षता की। जगन्नाथनजी के अनुभव पर से हमारा उत्साह बढ़ा और राज्यदान का संकल्प किया गया।

जे० पी० आये थे तो हमारी निराशा दूर हुई थी, लेकिन पूरा विश्वास नहीं पैदा हुआ था। अब हम सोचने लगे हैं कि जनता और विद्यार्थियों को साथ कैसे लिया जाय। शिविरों के आयोजन हुए थे। सन् '६६ से अब तक २५-३० शिविर हो चुके। ६,००० से ज्यादा व्यक्ति ग्राम शान्ति-सेना में भर्ती हुए हैं। शिविर में आनेवाले अपने साथ खर्च लेकर आते हैं। इस सर्वोदय सम्मेलन में भी अपना खर्च लेकर कुछ ग्रामदानी गाँवों के लोग आये हैं।

सन् '६२ से ही हम कोशिश कर रहे हैं कि जनता की, तथा तरुणों की शक्ति इस काम में लगे। इसमें ज्यादा कुछ नहीं हुआ है, लेकिन हमारी कोशिश चल रही है। कोरापुट में और नवरंगपुर में शान्ति-सेना रैली हुई, नशामुक्ति ऋण मुक्ति के लिए नारे लगाये गये। ग्रामदानी ग्रामीण जब आते हैं तो ग्रामीण समस्याएँ सामने लाते हैं, और इनके समाधान का रास्ता खुद ढूँढ़ते हैं। हम पर हल ढूँढ़ने का भार नहीं डालते। वहाँ बाढ़ की समस्या अकाल की समस्या, नशा की समस्या, ऋण की समस्या को हल करने के लिए काम आगे बढ़ता है, तो ग्रामदान के काम में गति आती है। जहाँ दुर्भिक्ष है वहाँ भी लोग आगे आते हैं।

मयूरभंज, बालेश्वर में एक एक अंचल में जहाँ तूफान आया था वहाँ मकान बनाने का काम किया। संगठन हो जाता है तो यह काम आसान हो जाता है। गांधी-शताब्दी तक राज्यदान हो जाय ऐसा संकल्प हमने किया है। कालेज के विद्यार्थियों को सामने लाने की कोशिश कर रहे हैं, वे सामने आ जायेंगे तो शीघ्र हमारा काम हो जायगा।

—सुधांशु शेखर दास

हरियाना में मतदाता शिक्षण का काम : एक नया अनुभव

सर्वोदय विचार ने एक बात हमें सम-झायी है कि हम इंसान को इंसान समझना सीखें। जहाँ इस पर प्रहार होता है वहाँ काम करने की जरूरत होती है। हम देख रहे हैं कि इस युग में इंसानियत की जितनी मिट्टी पलीद हो रही है उतनी और कभी नहीं हुई होगी। और यह आज की राजनीति के चलते हो रहा है।

आप जानते हैं कि मतदाता नीचे की इकाई है। लोकतंत्र को बचाना है और उसकी रक्षा करनी है तो नीचे की इकाई को शक्तिशाली बनाना होगा।

मतदाता इंसान है। लेकिन मतदाता को हम चुनाव के समय इंसान नहीं मानते। बोली बोली जाती है – ४०-५०-६०-७०। वोट बिकता है। नशाबन्दी की बात हम करते हैं, लेकिन चुनाव मे शराब की नदियाँ बहती हैं! बैरल में शराब रखी जाती है। कोई भी पानी की तरह लेकर पी सकता है। नुमाइन्दे जाति को सामने रखकर तय किये जाते हैं। कौन नुमाइन्दा कहाँ जीतेगा—भाषा, जाति, रिफ्यूजी, धर्म का ध्यान रखकर इस पर विचार किया जाता है, और इनका जहर फैलाया जाता है। उम्मीदवारों के साथी एक-दूसरे के खिलाफ गाली बकते हैं। चारों तरफ चुनाव में अनैतिकता और भ्रष्टाचार का वातावरण रहता है। इस दृष्टि से हमने हरियाना के मध्यवर्ती चुनाव के समय मत-दाता शिक्षण का काम किया।

८१ चुनाव-क्षेत्रों मे से २२ मे हमने काम किया। जुलूस निकाले, पोस्टर्स, लिफलेट्स बाँटे तथा सुलझे हुए कार्यकर्ताओं ने सर्वोदय-विचार की लोकनीति का विचार समझाया। गीतों के माध्यम से भी प्रचार किया। 'ए कोड आफ कण्डक्ट' तैयार करके दलों के नुमाइन्दों से मनवाकर उनके हस्ताक्षर से सबके पास छपवाकर भेजा। ऐसे कामों में हमारे कार्यकर्ता पक्षमुक्त हों, इतना ध्यान अवश्य रखना चाहिए और हमने इसका ध्यान रखा।

हर पार्टी के कार्यकर्ता, उम्मीदवार और जनता ने इस कार्य को पसन्द किया, लेकिन शिकायत की, कि यह काम देर से शुरू हुआ, दो महीना पहले शुरू होना चाहिए था।

—ओमप्रकाश मिश्रा

नगरों की ओर भी निगाह करें

हमें शहरों की समस्याओं को भी लेना चाहिए। ग्रामीण समस्या को दूर करने से शहरों की समस्या दूर होगी, ऐसा मानना ठीक नहीं। हर शहर मे सर्वोदय परिवार बनने चाहिए। एक-दूसरे को जोड़ने का काम मे परिवार करेंगे।

शहरों में वर्ग-संघर्ष चलता है। मजदूर १८ मालिकों की उद्योगदान की बात भी समझानी चाहिए। मालिक और मजदूर आमने-सामने होंगे तो टक्कर होगी ही। मजदूर-मालिक का मेल कराना होगा और उद्योग की कमाई मे दोनों को हिस्सा मिले, यह परिस्थिति लानी होगी। ऐसा नहीं करने पर व्यक्तिगत और सामूहिक पूंजीवाद बढ़ेगा।

शान्ति सेना के शिविर, एक दिन का कैम्प, सफाई, व्याख्यान आदि के कार्यक्रम चलाने चाहिए। साल मे एक बार शहर में पदयात्रा भी होनी चाहिए। —हरीश व्यास

नक्सालबाड़ी के अनुभव : प्रगति की ओर

नक्सालबाड़ी मे जब उपद्रव जारी था, तब सर्वोदय-मण्डल के मंत्री और भूदान-कमेटी से दो साथी वहाँ घूमे थे। बहुत खतरा था। मनाही थी कि बाहर के लोगों को आना न दे, उनसे बात न करें। फिर भी सप्ताह घूमे। उनकी मुलाकात कानू सन्याल से हुई थी। जब पुलिस-ऐक्शन हुआ, तब मनमोहन भाई, अम्बालिका बहन, शक्ति बाबू और मैं वहाँ गये थे। विनोबा ने नक्सालबाड़ी की अशांति का विकल्प पूर्णिया के जिलादान और नक्सालबाड़ी के ग्रामदान को बताया। लेकिन जितनी ताकत से दूसरे राज्यों में १०० ग्रामदान होते हैं, बंगाल मे उतनी ताकत से १ ग्रामदान होता है। यह स्थिति है वहाँ की। मैंने वहाँ मेल से रहने की बात समझायी। घूमते घूमते ग्रामदान की अनुकूलता भी दिखाई दी। १ मार्च '६८ से ग्रामदान अभियान शुरू हुआ। १० कार्यकर्ता वहाँ गये। ११० गाँव नक्सालबाड़ी मे हैं। फोल्डर, लिफलेट्स १० हजार की संख्या मे बाँटे गये। इस तरह हमारा प्रवेश हुआ। वहाँ दो शान्ति केन्द्र स्थापित हैं। उनके कार्यकर्ता काम करने लगे। मनमोहन भाई भी गये थे। हमारे गांधी-निधि के २० कार्यकर्ता लगे। १७ ग्रामदान अब तक हुए हैं। वहाँ के दो कम्युनिस्ट कार्यकर्ता सर्वोदय का काम करने लगे हैं।

नक्सालबाड़ी ऐसा इलाका है, जहाँ नेपाल और पाकिस्तान की सीमा है। पूर्णिया से कूचबिहार तक २३० किलोमीटर की दूरी है। चौड़ाई सिर्फ १५ मील है। वह 'बाटलनेक' है भारत का। बाबा ने वहाँ शान्ति-निकेतन की ओर से प्रशान्ति-निकेतन की स्थापना की बात कही है। उस दिशा मे काम चल रहा है।

—चारुचन्द्र भंडारी

हिंसा और अशान्ति की चुनौती

हम 'चुनौती' शब्द का प्रयोग करते हैं। चुनौती किस बात की है? मूल्य-परिवर्तन की चुनौती है। हजारों वर्षों मे जो परिवर्तन नहीं हुआ, वह पिछले शताब्दियों मे हुआ, शताब्दियों मे नहीं हुआ, वह दशकों में हुआ। चुनौती साधन की है, परिवर्तन की है। जो इस दुनिया को मूल्य देने आये, वे अधिक दिन रह नहीं सके। कभी-कभी ऐसा लगने लगता है कि हिंसा के आगे अहिंसा कहीं छिप तो नहीं जायगी? गांधी ने, मार्टिन लूथर किंग ने जिन मूल्यों की स्थापना करनी चाही, हम उनकी स्थापना की कोशिश करेंगे या साक्षी ही रहेंगे? आज की परिस्थिति में हम साक्षी बनकर नहीं रह सकते।

आज उदासीनता का अर्थ दूसरे पक्ष में सहायता करना होगा। अगर उदासीनता न दिखायी गयी होती, तो हिटलर पैदा होता ही नहीं। शान्ति की भावना हम लेकर रह जायेंगे या इसके लिए क्रियाशील होंगे? पश्चिमी शान्तिवादी युद्ध रोकने मे प्रयत्नशील हैं। हम ऐसी समाज-रचना करना चाहते हैं, जिसमे अशान्ति, युद्ध रह ही न जाय।

समस्याओं के प्रति हमें चिंतित होना चाहिए। अभी हमारे अन्दर इसकी तीव्रता नहीं है। जब तीव्रता होगी, तब हमारी उत्कटता बढ़ेगी।

—नारायण देसाई

चंदौली तहसीलदान

ता० २८ जून'६८ को वाराणसी जिले की चन्दौली तहसील का तहसीलदान श्री धीरेन्द्र मजूमदार को समर्पित किया गया। वाराणसी जिलादान की दिशा मे यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

नौतिक, जो 'कॉम्प्रमेज' है, हाईकमाण्ड हैं, जो नेतृ मंडल है, उन तक यह सीमित रहेगा और वही टिकट का बँटवारा, वही पैसा, वही प्रचार, वही एक दूसरे के ऊपर दोषारोपण, लोकतंत्र और जनता के नाम पर। दुनिया भर में, कोई भारत की पार्टियों का नहीं कह रहा हूँ, जहाँ यह पक्षों की प्रथा है, मैं देखता हूँ इसका संस्कार अगर होगा नया, तो पार्टीलेस डिमोक्रेसी की तरफ होगा और सम्भव है कि युगोस्लाविया में सबसे पहली मिसाल हमें 'पार्टीलेस डिमोक्रेसी' की मिले। क्योंकि कुछ बुनियादें कायम की हैं उन्होंने 'कम्यून्स' के अन्दर, 'सोशल इण्टरप्राइज के अन्दर, सिटी कमिटियों इत्यादि के अन्दर।

वे छोटे छोटे समुदाय, जिनका एक महासंघ यूगोस्लाविया है– जैसे ग्रामराज्यों के समूहों का महासंघ भारत हो, ऐसा निवेदन मैं *कहा गया है कि गांधी का सपना था*, और जैसे आगे जाकर विश्व-व्यापी एक महासंघ बने 'स्मॉल कम्युनिटीज' का, उसकी सम्भावना आज नहीं है इस हथियारबन्द समाज के अन्दर। आज तो भय है एक-दूसरे से, भारत को भी भय है। कोई अमेरिका को ही भय है, ऐसा नहीं। हिन्दू को भय है, मुसलमान को भय है, हरिजन को भय है, ईसाई को भय है और सबको भय है।

मित्रो, बहुत मैं इधर-उधर बहका। लेकिन बात आपसे यह कह रहा हूँ कि हम नमूने बनाने बैठेंगे तो समाज जायगा अपनी गति से, उसको बदल नहीं सकते हैं। नया मानव बनाने की बात ठीक है। नया मन बनाना, चित्त निर्माण करना। लेकिन उस विषय पर बोलने का अधिकारी मैं नहीं हूँ। ऐसी चर्चा होती है तो मैं मूक बन जाता हूँ। और इसके जो सन्त जानकार हैं, विद्वान तो नहीं कहूँगा, जिनका चित्त स्वयं शुद्ध है, उनके सामने हमारा मस्तक झुकता है, उनसे कुछ सीखता हूँ। लेकिन स्वयं चुप रहता हूँ। इतना ही जानता हूँ कि दूसरों का चित्त-निर्माण उपदेश से मैं कर नहीं सकता, अपने जीवन के उदाहरण से कुछ कर सकता हूँ। कुछ मेरे अन्दर है तो होगा, नहीं तो नहीं होगा। मेरे भाषणों के द्वारा चित्त निर्माण हरगिज नहीं होगा। इस विषय पर भाषण का हक है दूसरों का, मेरा नहीं।

ग्रामदान आन्दोलन 'मेन स्ट्रीम' : किनारा नहीं

इतना मुझे नहीं बोलना चाहिए था, कहना इतना ही था कि चाहे उसमें कितनी भी धूल हो, मिट्टी हो, गन्दगी हो, झूठ हो, फिर भी मूलतः सत्य है—यह जो ग्रामदान का आन्दोलन और ग्रामदान की क्रांति चल रही है। ढेबर भाई अक्सर हमसे कहा करते हैं कि आप लोगों को चाहिए 'मेन स्ट्रीम' में आना। शेख अब्दुल्ला साहब जब पटना गये, विनोबाजी से मिलने, तो एक आमसभा थी, बाबा भी पाँच मिनट के लिए आये थे। मुख्य वक्ता तो मैं था। जनता ने चाहा कि कुछ शेख साहब बोलें। बहुत अच्छा भाषण दिया उन्होंने। शायद वही एक स्थान भारत में होगा, जहाँ "शेख अब्दुल्ला जिन्दाबाद" के नारे लगे, न कि "शेख अब्दुल्ला मुर्दाबाद" के। अब उस भाषण में कहा उन्होंने कि ये तो किनारे पर खड़े हैं जयप्रकाश। यह जो राजनीति की गंगा बह रही है उसमें क्यों कूद नहीं पड़ते ? इनको क्या भय है ? तो हमने कहा कि जिसको आप गंगा कह रहे हैं वह तो मुझे कुआँ दीख रहा है, कुआँ, और जहाँ आज हम हैं वही 'मेन स्ट्रीम' हमें दीख रहा है। मैं आपसे पूछता हूँ, कि जमाने की पुकार की वजह से, कुछ सन्त की, विनोबा की कृपा से मान लो बिहारदान हो गया, तो उस बिहारदान के बाद सर्वोदय आन्दोलन 'मेन-स्ट्रीम' में रहेगा कि किनारे पर खड़ा रहेगा ?

उनहत्तर हजार गाँव हैं। पचास हजार गाँवों में भी ग्रामदान हुआ, तो सन् '७२ तक, अगले चुनाव तक—अगर बीच में मध्यवर्ती चुनाव न हो गया तो, सन् '७२ तक पचास हजार ग्रामसभाएँ बन जायेंगी और बाकी उन्नीस हजार ग्रामों में से न जाने कितने और ग्राम आ जायेंगे। और इन पचास हजार ग्रामसभाओं की लोकनीति जो होगी, वह एक नयी 'पार्टिसिपेटिंग डिमोक्रेसी' होगी, जिसकी चर्चा राममूर्ति भाई ने की। और भी चर्चाएँ हुई। राममूर्ति भाई 'पार्टीसिपेटरी डिमोक्रेसी' कहते हैं, सही-शुद्ध शब्द वही है, जिसकी माँग ये नौजवान आज कर रहे हैं अमेरिका के, योरप के। आप हैरान हो जायेंगे, हममें से जो बड़े सयाने लोग हैं, तत्त्वज्ञान के जानकार हैं, उन विद्यार्थियों से बातें करें, उनकी 'मेच्योरिटी', उनकी समझदारी, उनका सयानापन देखेंगे तो, हैरान हो जायेंगे कि कितना अध्ययन किया है इन लोगों ने, कितनी जानकारी है इनकी।

मैंने कहा यह था कि यह सारे 'टेक्नालाजिकल सिविलाइजेशन', यह नयी 'इंडस्ट्रियल सोसायटी', जिसके बारे में ढेबर भाई ने कल ज्ञानदत्त की किताब का जिक्र किया था, उसकी तरफ पीठ मोड़ी है इन लोगों ने। इसको 'रिजेक्ट' किया है, रद्द किया है। उनको अमान्य है, यह 'एफ्लुयेंट सोसायटी'। समाज की यह आर्थिक रचना मान्य नहीं है, लेकिन नयी रचना कैसे करनी है, यह नहीं जानते हम भी नहीं जानते। यह हमें भी नहीं मालूम है कि जो हम करेंगे, उसका क्या स्वरूप निकलेगा। जब उसका अभ्यास करेंगे, कुछ काम करेंगे, नगरों में भी इन विचारों का प्रवेश जब होगा, सर्वोदय के विचारों का, ट्रस्टीशिप के विचारों का, सहयोगी-सहकारी जीवन का, लोकनीति का, तो उससे हम सीखेंगे। काम से ही तो सीखते हैं।

व्यापार का सामाजिक दायित्व

मैंने एक अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी की थी, सोशल 'रिस्पान्सिबिलिटीज आफ बिजिनेस'। अर्नेस्ट बार्डर, जार्ज ग्वायडर, डेविड ब्रूम इत्यादि कई बाहर के मित्र, विचारक उनके ऊपर कार्य करनेवाले और देश के कुछ विचारक इकट्ठे हुए। मानिकतला पब्लिशर, बम्बई ने 'सोशल रिस्पान्सिबिलिटीज आफ बिजिनेस' के नाम से रिपोर्ट निकाली। 'न्यू फार्म्स आफ ओनरशिप' नाम से सर्व सेवा संघ ने भी प्रकाशित किया। एक प्रयास था यह, लेकिन उस पर भी जो प्रतिज्ञा-पत्र उसमें से मान्य हुआ—जमनालाल बजाज स्कूल आफ मैनेजमेन्ट, कलकत्ता; स्कूल आफ मैनेजमेन्ट, अहमदाबाद से तो कोई नहीं आया था। बड़ी बड़ी कम्पनियों के लोग थे वहाँ, जो टाटा की तरफ से, मफतलाल की तरफ से, इन सब लोगों ने मिलकर एक प्रतिज्ञा-पत्र निकाला—वह हमने सबके पास भेजा। कोई भी

कि किस प्रकार से इस इलाके के किसानों के मन में क्षोभ है। यह इंदिरा गांधी ने क्या किया है, हमारे देश का हिस्सा कैसे दे दिया? और किस खूबी से, किस प्रेम से उस शिक्षक जगन्नाथजी ने उनको समझाया कि तुम्हारे दो किसानों के बीच झगड़ा होता है तो क्या करते हो? पंचायती में नहीं देते हो, मुकदमे में लोग बरबाद नहीं हो जाते? घर-बार तक बिक जाता है, तो थोड़ा समझा उन लोगों ने। तो इस प्रकार से कुछ है, लेकिन संयुक्त राष्ट्रसंघ का बहुत चलता नहीं। बहुत माने में वह आज निर्बल है। एक प्रयास यह हो सकता है शांतिप्रिय देशों का, कि संयुक्त राष्ट्रसंघ को और सबल किया जाय। कैसे होगा? शोध का विषय है। बहुत लोगों ने चिंतन किया है, और बहुत-से प्रस्ताव हुए हैं इसके बारे में। चार्टर के 'अमेण्डमेण्ट' के और दूसरे। और बड़ी-बड़ी कई संस्थाएँ हैं—वर्ल्ड गवर्नमेण्ट की हैं, 'कामनवेल्थ फेडरेशन्स' की हैं और कई संस्थाएँ हैं दुनिया में बनी हुई, जो विश्व बन्धुत्व को बढ़ाती हैं, 'वर्ल्ड सिटिजन्स' बनाती हैं, विश्व-नागरिक बनाती हैं, यह सब भी काम चलता है।

'नेशन स्टेट' की समाप्ति

विश्व-परिवार का आधार

लेकिन मेरा ऐसा पक्का निश्चय है कि जब तक यह 'नेशन स्टेट' कायम है, तब तक विश्व शांति कायम नहीं हो सकती। आज के ये जो राष्ट्र हैं, ये अभिशाप हैं मानव के लिए। आज का विज्ञान मानव को बहुत दूर ले गया। आज कोई आवश्यकता नहीं है इन घरौंदों की। कैसे 'नेशन स्टेट्स' का धीरे-धीरे विलयन होगा?

जब मैं युवक मार्क्सवादी था तो अवश्य नया विचार था कि 'कम्युनिज्म' स्टेट्स को खतम करेगा। 'नेशन स्टेट्स' पूँजी के आधार पर 'इण्डस्ट्रियल कामर्शियल कैपिटल' के आधार पर, उन शक्तियों की प्रेरणाओं से कायम हुए और उसका आधार मिट जायगा तो विश्वपरिवार बन जायगा। परन्तु कम्युनिज्म स्वयं 'नेशन स्टेट' का शिकार बन गया। रूस, चीन, पूर्वी यूरोप के सभी कम्युनिस्ट देश, एक-एक करके आज जो युद्ध वहाँ चल रहा है उसमें बहुत कुछ राष्ट्रवाद है। इन देशों ने, कम-से-कम चीन और रूस ने, बहुत से छोटे-छोटे 'नेशन्स' को हजम करके रखा है, उनमें से एक 'नेशन' को मैं देख करके आया, उजबेकिस्तान को। ऐसे आधार दिखाई देते हैं कि इन सब 'नेशनल रिपब्लिक्स' में राष्ट्रवाद पनप रहा है। पाकिस्तान में पख्तूनिस्तान का प्रश्न उठा, बलोचिस्तान का प्रश्न उठा और शायद कल सिन्ध का भी उठे। क्या होगा सीक्यांग का, क्या होगा तिब्बत का, क्या होगा भीतरी मंगोलिया का, मंचूरिया का, मैं नहीं कह सकता हूँ। साम्यवाद ने 'नेशन स्टेट' की दीवारों को तोड़ करके कोई नयी प्रथा कायम नहीं की। इस्लाम भी आज गिरफ्त हो गया 'नेशन स्टेट' की 'आइडियालोजी' में। अरब जाति के लोगों के आज कई 'नेशन स्टेट' हैं और परस्पर उनके द्वंद्व हैं। इस्लाम उसका 'साल्वेण्ट' नहीं बन सका।

हमने आक्सफर्ड में तीन दिन एक सम्मेलन में भाग लिया। गांधीजी के उन छोटे छोटे स्वतंत्र समुदायों का, जो विश्व-समुदाय के 'ओसियानिक सर्किल' के बिन्दु होंगे, उनकी चर्चा थी और 'नेशन स्टेट' का धीरे-धीरे कैसे 'इरोजन' होगा, इस पर चर्चा थी। आज तो भारत में कहीं तो देशद्रोह का मुकदमा चल जाय, लेकिन वहाँ लोग बैठे थे, आक्सफर्ड यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर भी थे, पत्रकार भी थे और भी विद्वान थे। वे यह कह रहे थे कि वेल्स को अधिकार होना चाहिए, इंग्लैण्ड से, ग्रेटब्रिटेन से अलग होना चाहे तो वेल्स हो जाय। स्काटलैण्ड अगर चाहता है अलग होना तो उसको अधिकार है होने का। 'नेशन स्टेट' यह होने देगा? इस प्रकार का स्वातंत्र्य तो लोगों को तब मिलेगा जब यह सेना नहीं रहेगी। जब लोगों का मानस नहीं बदलेगे तो यह कैसे होगा? यह हमारा काम है कि राष्ट्र-स्वार्थ विश्व स्वार्थ कैसे बने, व्यक्ति-स्वार्थ समष्टि-स्वार्थ कैसे बने, इन प्रश्नों का उत्तर खोजें।

उन्नीसवीं सदी के योरप का जो राष्ट्रवाद था वह आज अफ्रीका में, एशिया में खूब तेजी के साथ आगे बढ़ रहा है, आज हम उसके शिकार हो रहे हैं। हर कोई कहेगा—यह हमारा, यह हमारा, यह हमारा और फिर हम मिलेंगे भी, तो नहीं होगा। दुनिया कैसे मिलेगी? (समाप्त)

सर्व सेवा संघ के आबू रोड अधिवेशन में व्यक्त कुछ विचार, सुझाव, मन्तव्य

ग्रामदान

नरेन्द्र दुबे :

• हमारा 'अप्रोच' 'पाजिटिव' होना चाहिए, 'निगेटिव' नहीं। आज दुनिया में मंथन चल रहा है। नयी चुनौतियाँ सामने आयी हैं, नय मूल्यों की खोज भी शुरू हुई है।

• अपने देश में लोकतंत्र के विभिन्न प्रयोग चल रहे हैं। नये प्रयोगों के लिए हमें अपनी मनोभूमिका बनानी चाहिए।

• 'धर्म-निरपेक्षता' की जगह 'सर्व धर्म-समभाव' शब्द प्रयोग में लायें। निरपेक्षता से हमारा मन्तव्य पूरा नहीं होता।

सी० ए० मेनन :

सम्मेलनों में अब विनोबा नहीं आते, वह आकर्षण नहीं रहा। अब हमें आपस में चर्चा करके, नये निश्चय और आत्मविश्वास के साथ लौटने और क्षेत्र में जाकर उत्साह से जुटने लायक स्फूर्तिमय वातावरण बनाना चाहिए। विनोबा जिस तरह दृढ़ निश्चय के साथ डटे हैं, उसी तरह हमें भी डटना है। विविध चर्चाओं को छोड़ें और अपने को 'बिहारदान', 'भारतदान' के लक्ष्य पर केन्द्रित करें।

अनन्त :

पश्चिमी देशों में ग्रामदान के विचार के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ा है, जिज्ञासा बढ़ी है। हमें इस आन्दोलन को दुनिया के स्तर पर फैलाना चाहिए, उसकी अनुकूलता है।

नरेन्द्र भाई :

क्रांति के मूल्यों का अवमूल्यन नहीं होना चाहिए। कार्यक्रम और आन्दोलन

है, "दो सितारे-से मेरे साल कहाँ गये ?" इस प्रकार का उत्तर अहिंसा की शक्ति से ही दिया जा सकता है।

दीपक को अंधेरा नही सूझता, जहाँ जाता है वहीं रोशनी फैलाता है। हम वैसे ही दीपक बनें!

खादी

विचित्र भाई :

खादी की दिशा जो थी वही रहनी चाहिए। बीच बीच में बदल जाती है, यह ठीक नही है। समाज में जो समस्याएँ हैं, उनका हल निकालना है। अगर अहिंसा की शक्ति से नहीं निकलता, तो हमें कोई अधिकार नहीं है कि दूसरे मार्ग पर जानेवालों को रोकें-टोकें। हिंसा में शक्ति की बर्बादी है, इसलिए हमें अहिंसा के रास्ते जीवन के प्रश्नों का हल प्रस्तुत करना है।

ध्वजा बाबू :

आपको पानीपत का प्रस्ताव मिला होगा। 'अशोक मेहता कमेटी' की रिपोर्ट पर भी आप चर्चा करेंगे। पानीपत के प्रस्ताव में काफी कार्यकर्ताओं को दिशा मिली थी। लेकिन 'अशोक मेहता कमेटी' की जो रिपोर्ट आयी, उसे देखकर उसमें कुछ सुझाव देना होगा। उसमें से 'खादी' का नाम ही निकाल दिया गया है, दिशा ही बदल दी गयी है। 'खादी' का नाम छोड़ देना और उसे मान लेना कि वह 'रूरल इंडस्ट्री' में आ जाता है, ठीक नहीं। 'खादी' का नाम छोड़ना खादी को खतम कर देने के बराबर है। अतः सर्व सेवा संघ को गंभीरता से सोचना चाहिए कि 'खादी' का नाम क्या छोड़ा जाय ! इस रिपोर्ट को हम अपनी सहमति नहीं देनी चाहिए। अगर मेहता कमेटी' इससे प्रभावित नहीं होती हो तो हम चरखा संघ को तरह एक गैरसरकारी संगठन खड़ा करके खादी का काम चलाना चाहिए।

कपिल भाई :

अभी तो ग्रामदान का काम पूरा कर लें। उसकी हवा बना लें। फिर उसमें खादी भी जोड़ लेंगे। विचारों की हवा ही बनती है। आज की जो हवा है उसमें दुनिया का दम घुट रहा है। उस हवा को हम बदल देना चाहते हैं। अगर सब लोग एक साल तक विनोबाजी की जेल कबूल कर लें, तो देश और दुनिया की हवा बदल जायगी।

अण्णासाहब सहस्रबुद्धे :

कुछ बड़े उद्योगों को सीमित करना पड़ेगा, और खादी-ग्रामोद्योगों के लिए वह क्षेत्र सुरक्षित करना पड़ेगा। कच्चे माल का पक्का माल गाँव में बनेगा, तभी शोषण समाप्त होगा। गाँव में अभी तो कच्चा माल रह ही नहीं पाता। जिस तरह ग्रामदान में जमीन को गाँव में रखने का उपाय निकाला गया है, उसी तरह गाँव में हमें कच्चा माल कैसे रहे और उसका पक्का माल गाँव में ही कैसे बने, इसका कोई मार्ग ढूँढ़ना होगा।

'अशोक मेहता कमेटी' ने बड़ा अच्छा काम किया है कि खादी-काम के लिए भविष्य में सरकारी सहायता नहीं मिलेगी। हमें ध्वजा बाबू के सुझाव पर गम्भीरता से सोचना चाहिए।

देवेन्द्र गुप्त :

चरखा उत्पादन का यंत्र है, लेकिन उत्पादन उसका मूल मंत्र नहीं है। ग्रामदान और खादी, दोनों का मूलमंत्र यही है कि लोगों के जीवन में सहकार बढ़े।

करण भाई :

खादी-कमीशन १२ वर्षों से काम कर रहा है। यह जिस ढंग से काम कर रहा है, उसकी चर्चा नहीं करूँगा। आगे हम सोच रहे हैं कि खादी का काम कैसे आगे बढ़ाया जाय। पार्लियामेंट में भी खादी के काम को बढ़ाने के लिए सोचा जा रहा है, उसीके आधार पर १५ लोगों की एक कमेटी बनी अशोक मेहता के नेतृत्व में। उसकी रिपोर्ट आ गयी है। देश में जो कुछ हो रहा है, उसीको ध्यान में रखकर उस रिपोर्ट में कहा गया है।

सर्व सेवा संघ को इतना अधिकार हो कि वह 'अप्रोच' तय करे और सरकार के सामने रखे।

शांति-सेना

सुब्बा राव :

शांति-सेना के संगठन को सुदृढ़ करने के लिए शांति-सैनिक बनाने और प्रशिक्षण देने का काम होना चाहिए। सबसे अच्छे कार्यकर्ताओं को शांति-सेना का प्रशिक्षण लेना चाहिए। हर शहर में शांति-सेना का संगठन हो और अधिक-से-अधिक लोग उसमें शामिल किये जायँ।

नारायण देसाई :

त्रिविध कार्यक्रम की त्रिमूर्ति में एकत्व का दर्शन नहीं करेंगे, तो काम नहीं बनेगा।

गंगा-यमुना के संगमस्थल पर क्या शांति-सेना लुप्त सरस्वती है ?

आन्दोलन में नये खून, नये प्राण को लाने तथा हमारे नारों को कार्यक्रम तक ले जाने का काम शांति-सेना द्वारा हो सकेगा।

शराब-बन्दी

डा० सुशीला नायर :

राजस्थान में शराबबन्दी के लिए सत्याग्रह चल रहा है। विनोबाजी का आशीर्वाद मिला है। मोरारजी भाई का आशीर्वाद भी मिला है। ग्रामदान हो स्वराज्य प्राप्ति हो, आर्थिक विकास की बात हो, सबका ध्येय है जन जीवन स्वस्थ बने, सुखी बने। बापू हरेक व्यक्ति को लेकर जो काम देते थे, उसमें यह निहित रहता था कि हर व्यक्ति का संपूर्ण विकास हो।

सन् १९४७ में हमारी हुकूमतें आयीं, पर वह उत्साह नशाबंदी के लिए, व्यक्ति के विकास के लिए नहीं रहा। दो राज्यों— मद्रास और बम्बई में सम्पूर्ण नशाबन्दी हुई। सन् १९४७ के बाद मद्रास ने सम्पूर्ण नशाबंदी लागू कर ली। सन् १९४७ के बाद जहाँ नशाबंदी हुई, वहाँ आर्थिक स्थिति बेहतर है। मैसूर उत्तरप्रदेश की सरकारें पीछे हटीं। जनता के हृदय में आज नशाबंदी के लिए भूख है। मंत्री लोग कहते हैं कि सब ठीक है, पर पैसे कहाँ से लायें ?

राजस्थान-सरकार ने भी कहा कि हम पूर्ण नशाबंदी की बात स्वीकार करते हैं। कुछ जिलों में उन्होंने नशाबंदी की भी, और कहा कि आहिस्ता आहिस्ता करेंगे ! वे कहते हैं, जहाँ नशाबंदी की है वहाँ क्या सफलता मिलती है, उसको देखकर आगे बढ़ेंगे। राजस्थान के साथियों ने कहा कि यह हमको मान्य नहीं।

सर्वोदय-सम्मेलन : सहचिंतन के लिए प्रस्तुत कुछ मुद्दे

आबू रोड सर्वोदय-सम्मेलन को सम्पन्न हुए लगभग एक महीना पूरा हो रहा है। वहाँ की प्रखर धूप और गरम हवाओं की तपन अब हम भूल चुके होंगे, निवासों की बिखरी व्यवस्था और उसकी असुविधाओं, राजस्थान के साथियो की शराबबन्दी-सत्याग्रह के कारण अतिव्यस्तताओं के बावजूद स्थानीय सहकार से की गयी तत्पर व्यवस्था और तीन हजार के लगभग प्रतिनिधियों के 'सम्मेलन' की चहल-पहल, प्रदर्शनी के इर्दगिर्द की राजस्थानी रौनक और हर रात के मनोरंजक कार्यक्रम सभी स्मृतियाँ अब विस्मरण के अंधकार में समा रही होंगी। .शायद हृदय में एक नयी उमग का सचार करनेवाले, कभी शंका और उलझन बढानेवाले, कभी समस्त जगत् को एक नया आधार देनेवाले बहुविध भाषणों के कुछ भाव, सम्भवत कुछ वाक्य भी अभी हमारी याद मे ताजे होंगे। और न सिर्फ हमारी याद मे ताजे होंगे, बल्कि हमको काम करने मे स्फूर्ति, शक्ति और दिशा भी देते होंगे।

प्रतिक्रियाएँ विभिन्न होंगी, और उनको किसी एक प्रकार का आकार देना सम्भव नहीं है, आवश्यक भी नही है। लेकिन अपने मन की कुछ बातें साथियो के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहता हूँ। इस इच्छा को बल मिला था, सम्मेलन मे ६ जून की शाम को जब श्री जयप्रकाश नारायण ने अपना भाषण शुरू करते हुए कहा था कि 'मुझे तो आप लोगो (श्रोताओं) पर दया आती है।' सचमुच जिस समय उन्होंने यह बात कही थी, हम दया के अधिकारी थे। सम्मेलन के समारोप-भाषण मे अध्यक्ष श्री शकरराव देव ने जब 'अनकमिटेड ब्रदरहुड' की बात कही तो अन्दर की प्रतिक्रिया और अधिक तीव्र हुई थी, और आखिर-आखिर में जब सम्मेलन की रिपोर्ट सुनने के बाद बाबा ने अपनी प्रतिक्रिया जाहिर की तो यह साहस हो गया कि अपने मन की बात आपके सामने रखूँ और आमंत्रित करूँ आप साथियों की राय को, प्रतिक्रियाओं को भी। आखिर, हमारी भावनाओं और हमारे विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम 'भूदान-यज्ञ' को बनाना चाहिए न !

सम्मेलन से लौटते समय गाडी मे एक बहन से चर्चा चल पडी। परिचय से पता चला कि वह बहन कानपुर के सर्वोदय कार्य मे काफी मदद करती हैं, और इस विचार से बहुत आकर्षित हैं। विचार का प्रभाव-क्षेत्र बढाने की दृष्टि से वे अपने परिचितों का एक छोटा-सा 'ग्रुप' लेकर सम्मेलन में आयी थीं।

चर्चा चल पडी और मन की बातें कुछ खुलकर सामने आने लगीं तो मुझे लगा कि *शायद ऐसी ही प्रतिक्रियाएँ* लेकर काफी लोग सम्मेलन से लौट रहे होंगे। उस बहन को निराशा थी कि सम्मेलन मे आकर कुछ सफाई नही हुई, बल्कि 'कनफ्यूज़न' और बढा। उनकी कुछ शिकायतें इस प्रकार की थी

- सर्वोदय-सम्मेलन मे भी दूसरे सम्मेलनो की तरह नेताओं और कार्यकर्ताओं के बीच एक फासला रहता है, जिसके कारण समरसता नही आती।
- चर्चा कम होती है, भाषण अधिक होते हैं।
- प्रदर्शनी और प्रदर्शन पर व्यर्थ पैसा बर्बाद किया जाता है।
- स्पष्ट, सुव्यवस्थित और सर्वसम्मत कार्यक्रम और विचार सम्मेलन द्वारा कार्यकर्ताओं और देश की जनता के सम्मुख नही रखा जाता।
- विभिन्न प्रदेशों और क्षेत्रों में काम करनेवाले कार्यकर्ताओं की आपसदारी नही विकसित हो पाती, परिचय और सम्पर्क तक नहीं हो पाता।
- सम्मेलन में कुछ ऐसा सामूहिक और 'सिम्बालिक' काम नही होता, जिसमे यह लगे कि यह सम्मेलन सर्वोदय का है।

उस बहन की चर्चा मे व्यक्त उद्गार हमारे-आपके भाव को भी व्यक्त करते हों, यह जरूरी नहीं है। लेकिन कुछ सोचने को मजबूर अवश्य करती हैं ये बातें।

पहली बात :

क्या सर्वोदय समाज-सम्मेलन का यह सिलसिला इसी रूप मे चलना चाहिए ? और इस सम्मेलन का रूप जो 'अनकमिटेड ब्रदरहुड' का न रहकर 'ग्रामदान आन्दोलन' के प्रति 'कमिटेड' लोगो का होता जा रहा है, वह क्यो ? क्या अब सर्वोदय-समाज सम्मेलन ग्रामदान-सम्मेलन मे समा गया है ?

सर्वोदय-समाज सम्मेलन के पीछे कल्पना थी कि कुछ शाश्वत मूल्यो, जैसे : अहिंसा और सत्य, मे निष्ठा रखनेवालों का यह एक भाईचारा होगा। उसी रूप में सम्मेलन का यह सिलसिला शुरू हुआ, लेकिन भूदान शुरू हुआ तभी से यह सम्मेलन उसका एक अखिल भारतीय मच बन गया। सवाल यह है कि कुछ मूल्यो के प्रति निष्ठावान लोगो की निष्ठा मे से उन मूल्यो को समाज के जीवन मे दाखिल करानेवाली एक क्रांति की धारा प्रकट हुई तो क्या उन मूल्यो के प्रति निष्ठावान लोगों की निष्ठा मे यह क्रांतिधारा कहीं बाधक होगी ? और वह धारा जैसे-जैसे व्यापक होती जायगी, वैसे-वैसे उस व्यापकता का प्रभाव उस भाईचारे के समाज मे दिखाई देगा या नहीं ? ग्रामदान अगर उन्हीं मूल्यों को जन-जीवन मे उतारने के लिए है, जिन मूल्यो के प्रति हम निष्ठावान हैं, तो फिर इसमे राजनीतिक या साम्प्रदायिक 'कमिटमेंट' की दुर्गन्ध क्यो आनी चाहिए ? अगर आती हो, तो उसका परिष्कार होना चाहिए।

दूसरी बात :

श्री एस० जगन्नाथन् और श्री मनमोहन चौधरी ने सम्मेलन मे किये गये अपने भाषण मे इस बात पर जोर दिया कि हमारे सम्मेलनो मे ग्रामदानी गाँवों के लोगों को शामिल होना चाहिए। ग्रामदान से जो नया नेतृत्व विकसित हो रहा है, उसे अवश्य ही हमारे सम्मेलन का प्रतिनिधि और योगदायक बनाना चाहिए।

सोचने की बात है कि गाँव, प्रखण्ड, जिला, प्रदेश और देश के स्तर पर जो ग्रामदानी सगठन खडे होंगे, उनकी अपनी समस्याएँ होंगी, वे अपनी समस्याओं का हल ढूँढना चाहेंगे। हो सकता है कि इस प्रक्रिया में वे 'मूल्यों' की निष्ठावाली धारा से कुछ

भिन्न दिशा की ओर भी रुख करना चाहें या कर लें, वैसी स्थिति में हमारा 'रोल' क्या होगा ?

हम मानते हैं कि हम अपने को हमेशा शिक्षक की भूमिका में रखेंगे तो क्या हमारा और ग्रामदानी संगठनों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन एकसाथ होगा या अलग अलग होगा ? क्या स्थानीयता से मुक्त फिर भी समस्याओं से अनुबन्धित चिन्तन ही विधायक दिशा देने के लिए जरूरी नहीं होगा ? क्या समस्या निरपेक्ष मूल्य चिंतन और मूल्य-निरपेक्ष समस्याओं के समाधान का क्रम चलाना है या इसमें परिवर्तन करना है ?

और भारत दान की कल्पना के साथ ही जब हमारा क्षेत्र किसी दायरे तक सीमित नहीं रह जाता, और जब हम सबको ही इसमें जोड़ना चाहते हैं तो अलगाव का सवाल ही कहाँ रह जाता है ? बल्कि इस दृष्टि से तो ग्रामदानी प्रतिनिधियों को शामिल करने की बात स्वागत-योग्य है, विनोबा ने तो ग्रामदानी सभाओं को ही सब सेवा-संघ की बुनियादी इकाई बनाने की बात भी कही है।

तीसरी बात

सम्मेलन के मंच से कुछ सर्वसम्मत (प्रतिनिधियों द्वारा) विचार कार्यक्रम और वक्तव्य देश और दुनिया की समस्याओं के संदर्भ में प्रस्तुत किये जायें, या मुक्त चिंतन प्रकट किये जाय और जिसको जिस विचार से प्रेरणा लेनी हो ले इसकी छूट रखी जाय ?

क्या यह ठीक होगा कि अधिवेशन की अवधि कुछ लम्बी हो व्याख्यान उसमें न हों, भाग लेनेवालों की संख्या अधिक हो तो 'ग्रुप' में चर्चाएँ हों, खूब मंथन चले, और उसमें से जो नवनीत निकले उसे सम्मेलन के मंच से देश और दुनिया के सामने रखा जाय और बाद में दृढ़ता से, केन्द्रित होकर उसके कार्यान्वयन की कोशिश हो।

सब, थोड़ा और विशिष्ट प्रतिभाओं के मार्गदर्शन, नियंत्रण और नेतृत्व संचालन से मुक्त 'सब' की राय से 'सर्व' की शक्ति तलाशने की दिशा में क्या यह एक प्रयोग माना जा सकता है ?

चौथी बात :

क्या गोष्ठी, अधिवेशन, और सम्मेलन आदि के ऐसे कार्यक्रमों में शान्ति-सैनिकों की रैली और सामूहिक श्रम के कुछ कार्यक्रम, जिनमें सब लोग शामिल हों और भाग लेनेवालों में समरसता का अनुभव हो, जैसा कि रायपुर-सम्मेलन में हुआ था रखे जाने चाहिए ?

कभी कभी लगता है कि सर्वोदय विचार के सन्देशवाहकों में किसी जमाने में अनों के प्रति अति निष्ठा थी तो आजकल अति उदासी नता—उपेक्षा की सीमा तक—है। रायपुर का संस्मरण यह मानने को विवश करता है कि इस प्रकार के आयोजनों से मनोबल पुष्ट होता है। एक नयी उमंग का संचार होता है।

पाँचवीं बात

कांग्रेस अधिवेशनों और सम्मेलनों की तरह हमारे सम्मेलनों के साथ प्रदर्शनी लगायी जाती है। किसी जमाने में मुख्य रूप से खादी और कुछ थोड़े से ग्रामोद्योगों को पुनर्जीवन देने के लिए ऐसी प्रदर्शनियों का बहुत महत्त्व था। लेकिन आज हम देखते हैं कि प्रदर्शनियों में बिजली की जगमगाहट फिल्मी गीतों की गूंज और खादी तथा अन्य प्रकार की बहुरंगी और आकर्षक दूकानों के अलावा खास कुछ रहता नहीं। एक मेला सा रहता है लोग आते हैं घूमकर चले जाते हैं।

हम समाज को बदलना चाहते हैं। नयी रचना करना चाहते हैं तो यह जरूरी है कि आज की रचना के उलझनों और संकटों का विश्लेषण जनता की आँखों के सामने विभिन्न विधाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जाय।

अगर प्रदर्शनी करनी है तो क्या न छोटे रूप में ही सही चित्रों आदि के माध्यम से इन्हीं चीजों को प्रस्तुत किया जाय ? अगर हम कृत्रिम सन्तति नियमन के विचार से सहमत नहीं हैं तो क्यों उसका प्रचार हमारी प्रदर्शनी में हो ? हम दलगत राजनीति को नहीं मानते हैं तो क्या हमारी प्रदर्शनी में किसी पार्टी का झण्डा लहराये ?

भले सरकारी या अर्ध-सरकारी संस्थाओं की मदद का मोह हमें छोड़ना पड़े, क्यों न हम देश के कलाकारों के सामने अपना विचार रखें, जो विचार से सहमत हों उन्हें आम न्त्रित करें और उनकी उन कलाकृतियों की प्रदर्शनी लगायें, जिनमें हमारे विचार की अभिव्यक्ति हो। (यह एक सुझाव है, विस्तार से और भी सोचा जा सकता है।)

छठी बात

प्रायः यह होता है कि अपने 'ग्रुप' के साथ आते हैं अपने ही 'ग्रुप' के साथ घूमते फिरते हैं और अपने ही 'ग्रुप' के साथ गप्प करते हुए लौट जाते हैं। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि अधिवेशन में गोष्ठियों का संयोजन इस तरह से किया जाय कि हर प्रदेश के कार्यकर्ता-साथियों को आपस में विचार और भाव सम्बन्ध विकसित करने का अवसर मिले ?

सातवीं बात,

चूँकि इन और इन्हीं तरह की और भी बातों पर विचार भविष्य में शायद सन् १९६९ के होनेवाले सर्वोदय-सम्मेलन के संदर्भ में ही किया जायगा अतः अभी से क्या ऐसी योजना नहीं बनायी जा सकती कि सन् १९६९ में गांधी जन्म शताब्दी के समय देश के कोने कोने से ग्रामदानी गाँवों के जत्थे हजारों की तादाद में पदयात्रा करते हुए अपने प्रदेश की सीमा तक या सम्मेलन-स्थल तक आयें और सम्मेलन-स्थल तक पहुँचकर यह संख्या कम-से कम १ लाख तक पहुँच जाय। भारत की ओर से बापू के सपना को साकार रूप देने के इस संकल्प और उसकी घोषणा से बढ़कर और कौनसी सच्ची श्रद्धांजलि होगी उनके प्रति आबू रोड-सम्मेलन के निवेदन में यह संकेत है भी। मेरा ख्याल है कि यह कार्यक्रम अहिंसक क्रांति के इतिहास में दी लाग मार्च की कोटि का हो सकता है।

आठवीं बात

हमारे जो भी आयोजन हों गोष्ठी शिविर सम्मेलन उनमें कम क्षमतावालों की ही सही एक प्रेस टीम अवश्य बनायी जाय। हर रोज की चर्चाओं और निर्णयों का सार देश के अखबारों और समाचार एजेंसियों को तैयार करके शीघ्र से-शीघ्र भेज देने का काम यह टीम करे। वर्ना, एक तो अखबार हमारी ओर से उदासीन रहते हैं, कभी इस ओर रुख करते हैं तो सही चीज उनकी पकड़ में आती नहीं; परिणाम यह होता है कि आन्दोलन

राजस्थान शराबबन्दी आन्दोलन

सरकारी हठ : सत्याग्रही निष्ठा

"गांधी के देश में शराबबन्दी के लिए सत्याग्रह करना पड़े, यह दुःख की बात है।" १७ वें सर्वोदय-सम्मेलन के लिए आबू रोड जाते समय ४ जून, '६८ को अजमेर स्टेशन पर बड़े ही दुःख भरे हृदय से श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा, तो राजस्थान शराबबन्दी सत्याग्रह समिति के संयोजक श्री गोकुलभाई भट्ट बोले—'गांधी के देश में शराब चलती रहे और हम देखते रहें तो हमें गांधी-जन्म-शताब्दी मनाने का कोई हक नहीं है। राजस्थान सरकार द्वारा हमारी माँग अनसुनी करने पर हमने आखिर में सत्याग्रह का रास्ता अपनाया है।" विनोबाजी का आशीर्वाद मिला है। उप-प्रधानमंत्री श्री मुरारजी देसाई ने लिखा है "मैं देश में शराब पर प्रतिबन्ध लगवाने के लिए सत्याग्रह आन्दोलन करने के विचार से पूर्णतया सहमत हूँ। वास्तव में मैं उसे एक आवश्यक कदम मानता हूँ।"

सर्वोदय-सम्मेलन के मंच से गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण ने कहा : "मुझे खुशी हुई कि मुझे यहाँ एक कार्यक्रम के सम्बन्ध में लोगों में जोश दिखाई दिया। जोश के बिना काम नहीं होता। देशभर में शराबबन्दी किये बिना हमारा आर्थिक विकास नहीं हो सकता।"

"१६४७ के बाद जिन प्रदेशों में पूर्ण नशाबन्दी हुई वहाँ की आर्थिक स्थिति आज बेहतर है। सर्वोदय तो नशाबन्दी के बिना आ ही नहीं सकता..." डा० सुशीला नैयर जब कह रही थीं तो हम सुननेवालों के मन में आया कि सरकार नसबन्दी का जितनी जोरों से प्रचार कर रही है, नशाबन्दी को तो उससे अधिक जोरों से अपनाना चाहिए।

सर्वोदय-सम्मेलन में इस बार नशाबन्दी की खूब गूँज थी। सघ निवेदन पर बोलते हुए सुश्री निर्मला देशपाण्डे ने उत्तराखण्ड में शराब की दूकानों पर महिलाओं के द्वारा की गयी 'पिकेटिंग' का बहुत ही सुन्दर अनुभव सुनाया और कहा कि वहाँ से दूकानें हटवाकर ही लोगों ने चैन ली है और सरकार को भी मजबूरन वहाँ की प्रजा की यह बात माननी ही पड़ी। इसी तरह उड़ीसा की श्रीमती मालतीदेवी चौधरी ने बड़ी तेजी से मंच पर आते हुए आवेशपूर्ण शब्दों में कहा कि उड़ीसा में नशाबन्दी के लिए जन-जन से जोरदार माँग उठी है।

राजस्थान में ६ अप्रैल, '६८ से पूर्ण शराबबन्दी के लिए शांतिपूर्ण अहिंसक सत्याग्रह चल रहा है। जयपुर-जोधपुर के बाद ५ जून, '६८ से अजमेर में श्री हरिभाऊ उपाध्याय के नेतृत्व में तीसरा मोर्चा खुला है। और श्रीगंगानगर, कोटा, दो अन्य डिस्टलरियों पर सत्याग्रह प्रारम्भ करने की पूर्वतैयारी शुरू हो गयी है। सरकार अब डिस्टलरियों की संख्या ६ से बढ़ाकर ६ करने वाली है और सत्याग्रही वही कहावत सिद्ध कर रहे हैं कि—'जस-जस सुरसा बदन बढ़ावा, तासि दुगन कपि रूप दिखावा।' सत्याग्रही अब डिस्टलरियों पर ही नहीं, बल्कि राजस्थान भर की शराब की दूकानों पर 'पिकेटिंग' का बिगुल बजानेवाले हैं, हर नागरिक से इसके समर्थन में हस्ताक्षर कराकर सरकार के सामने हस्ताक्षरों का ढेर लगा देनेवाले हैं। और साथ ही-साथ हर घर से एक रुपया या एक किलो अनाज इस शुभ कार्य के लिए दक्षिणा में प्राप्त करनेवाले हैं। पंचायतों और नगरपालिकाओं से प्रस्ताव कराने शुरू कर दिये हैं तथा दनादन सत्याग्रहियों की भर्ती और प्रशिक्षण जारी है। सर्वोदय के ये सेनानी हनुमान की तरह जरूर कुछ कर दिखानेवाले हैं। इन्हें जामवंत ने इनकी शक्ति का आभास करा दिया है।

अभी पुलिस चार-छः दिन की अवधि से आती है, सत्याग्रहियों को रात को गिरफ्तार करती है और दो-तीन घण्टे बाद दूर ले जाकर छोड़ देती है। इस बीच में कच्चा माल भीतर और शराब की बोतलें बाहर। लेकिन सत्याग्रही भी खूब अपनी धुन के पक्के हैं। फिर पदयात्रा करते हुए, गाना गाते हुए उसी स्थान पर पुनः आ जाते हैं।

जोधपुर में तो काफी बड़ी संख्या में पुलिस ने मजिस्ट्रेट के साथ आकर सत्याग्रहियों की 'कोर्डन' किया। पर पुलिस डाल-डाल तो जनता पात-पात! अब हजार-हजार नागरिक डिस्टलरी पर आकर पहरा देने लगे हैं। उनको लगा है कि यह उनका काम है। शराबबन्दी में उनका और उनके परिवार का भला है। पुलिस के सामने समस्या है कि अब किसको किसको पकड़े। एक डिस्टलरी पर हजार-हजार लोगों की भीड़ का तमाशा देखने आनेवाले भी अपने दिलों में गुदगुदी अनुभव करते हैं और खुद पहरा देनेवालों में शामिल हो जाते हैं। तमाशायी खुद तमाशा बन जाते हैं। बड़े ही मजे में और हिम्मत के साथ यह सत्याग्रह-अभियान चल रहा है। इसे स्वीकार करने के अलावा सरकार के सामने दूसरा कोई चारा नहीं है। केन्द्रीय सरकार ने पचास प्रतिशत घाटापूर्ति का आश्वासन दिया है। पर राजस्थान-सरकार शत-प्रतिशत अनुदान की माँग पर अड़ी है, जिससे उसे हटकर गम्भीरतापूर्वक शराबबन्दी लागू करके आय की कमी की पूर्ति के लिए आय के दूसरे साधन खोजने होंगे।

ऐसा प्रतीत होता है कि पिछला सर्वोदय सम्मेलन बलिया में हुआ तो दो साल के भीतर बलिया का जिलादान हुआ और अब राजस्थान में इस बार सर्वोदय सम्मेलन हुआ तो बस सम्पूर्ण राजस्थान में नशाबन्दी होने ही वाली है। —गुरुशरण

तेजी से आगे बढ़ रहा है बिहार, उड़ीसा, तमिलनाड और उत्तरप्रदेश में, और 'टाइम्स आफ इण्डिया' के अहमदाबाद-संस्करण में खबरें छपती हैं कि 'इन प्रदेशों में सर्वोदय का काम ठप्प हो रहा है।'

ये कुछ बातें कार्यकर्ता साथियों की सेवा में इस दृष्टि से प्रस्तुत करने का साहस किया, कि आप लोग भी अपना चिंतन इन पहलुओं पर लिखकर भेजें, ताकि 'भूदान यज्ञ' के माध्यम से अगले सम्मेलन के लिए कुछ ऐसी रूपरेखा हम तैयार कर सकें कि सम्मेलन से वापस लौटते समय हमारे मन में शिकायत के लिए एक इंच स्थान रिक्त न रहे, अन्तर एक नयी चेतना, स्फूर्ति, प्रेरणा और पुरुषार्थ की उमंग से लबालब हो। —रामचन्द्र राही

मंडोर में लोकशक्ति का अद्भुत दर्शन

गत १८ जून की बात है। दोपहर की तेज धूप व आंधी में सरकार के शराब के कारखाने के सामने सिर्फ २ बहनें और ५-६ सत्याग्रही भाई बैठे थे। गाँव के कुछ बालक बैठे खेल रहे थे। स्थानीय बूढ़े माली स्वरूपजी 'राधेश्याम राधेश्याम' बोलते हुए पानी पिला रहे थे, कि ठीक ५ बजे दो ट्रकें पुलिस-जवानों से लदी हुई जोधपुर की तरफ से एकाएक आयीं और आते ही अपना स्थान लेने लगीं। पुलिस के आगमन को देखते ही हम जो भी माई-बहन उपस्थित थे सबने बच्चों सहित कारखाने के सामने कतार बनाकर "शराब का व्यापार बन्द करे सरकार", "शराब का कारखाना हटा दे सरकार" के जोर जोर से नारे लगाने लगे। बच्चे तुरन्त गाँव की गलियों में हल्ला करने दौड़े। बात की-बात में १०-१५ मिनट में गाँव के सैकड़ों नर-नारी व नवयुवक कारखाने के सामने आ खड़े हुए। औरतों ने आगे चार कतारें बना लीं, उनके आगे बच्चों ने कतारें बना लीं और उनके आगे हम सब खड़े हो गये। मैदान शराबबन्दी के नारों से गूँज उठा।

कुछ देर बाद पुलिस व न्यायाधिकारी आ पहुँचे। शहर से श्री भाउकजी अपने प्रम प्रतिनिधि एवं अन्य साथियों सहित मौके पर पहुँच गये। श्री रिपगराजजी करनावट व जैन तबीयत खराब होते हुए भी तत्काल आ गये। मैदान में एक मेला सा लग गया। २ घंटे तक अधिकारीगण आपसी गुफ्तगू करते रहे। अन्त में ७ बजे बिना किसी कार्रवाई के वापिस लौट गये। पुलिस के सौ-सवा सौ जवान, जो आये थे, वे बराबर रात भर खड़े रहे। उधर गाँव के नरनारी भी रात भर बराबर डटे रहे।

ता० १८ को जारी हुई तैनात पुलिस अभी भी ज्यों की-त्यों वहाँ कायम है। अधिकारियों का कहना है कि कारखाने की सुरक्षा के लिए इन्हें लगाया गया है। कारण कुछ भी हो, परन्तु इतनी बड़ी तादाद में पुलिस को स्थायी रूप से यहाँ तैनात कर जनता को भयभीत करने का प्रयत्न किया जा रहा है। भिन्न भिन्न प्रकार के भय बताये जा रहे हैं तथा नाला पक्का बनाने का प्रलोभन भी दे रहे हैं।

ता० १९ की रात्रि में गाँव के मुख्य लोगों ने एवं 'मंडोर मदिरा निर्माण-शाला हटाओ समिति' के सदस्यों ने मिलकर कई महत्वपूर्ण निर्णय लिये। उन्होंने ता० २१ जून से शराबबन्दी सत्याग्रह की सफलता एवं 'कारखाना हटाओ' निमित्त सत्संग व हरि-कीर्तन प्रारम्भ करने का तय किया तथा समिति के सदस्यों ने हररोज दो भी सदस्य २४ घन्टे के लिए सत्याग्रहियों के साथ उपस्थित रहें ऐसा निर्णय लिया। इसके अलावा कल से अर्थ संग्रह प्रारम्भ करने का भी निर्णय लिया।

इस प्रकार सरकार की सख्ती के हर कदम से ग्रामीण समाज पूरी ताकत के साथ अपने उद्देश्य पूर्ति हेतु संगठित होता जा रहा है। मंडोर की जनता का हौसला काफी बढ़ चुका है। औरतों ने निर्भयता दर्शायी है। इसलिए मंडोर की जनता की संगठित शक्ति की जीत अवश्यम्भावी है।

२० ६-६८

—बद्रीप्रसाद स्वामी

भरतपुर में सत्याग्रह शुरू

प्राप्त सूचना के अनुसार २७ जून '६८ से भरतपुर में भी शराबबन्दी सत्याग्रह शुरू हो गया है। इस सत्याग्रह में राजस्थान के प्रसोपा के अध्यक्ष मा० आदित्येन्द्र भी सक्रिय भाग ले रहे हैं।

—दुर्गाप्रसाद

महिला सम्मेलन, रतनूपुर का निश्चय

रतनूपुर (जौनपुर)। कस्तूरबा केन्द्र पर एक महिला-सम्मेलन का आयोजन जिला सर्वोदय मण्डल, जौनपुर ने किया था, जिसका संगठन और संचालन श्रीमती भाग्यमानी देवी ने किया। प्रातः ६ से १२ और सायं २ से ५ तक प्रतिनिधि बहनों की बैठक चली। उसके बाद ५ बजे शाम से खुला अधिवेशन हुआ, जिसमें जौनपुर जिले में सरकार की तरफ से पूर्ण नशा-निषेध लागू करने की माँग की गयी तथा शराबी भाइयों की इस बुरी आदत के खिलाफ पता लगने पर कि वे शराब पीते हैं उनकी पत्नियाँ व्रत और उपवास रखें और अगर शराबी भाई नहीं मानता है तो महिला उत्थान समिति के द्वारा गाँव की सब महिलाओं का संगठन करके उपवास और व्रत का सिलसिला चालू किया जाय। आगे न मानने पर गाँव की तरफ से उस व्यक्ति का सामूहिक बहिष्कार करने का भी निश्चय हुआ। •

शर्मनाक कुकृत्य

फलोदी क्षेत्र के लोकसेवक श्री बालकृष्ण मो० थानवी ने पुलिस के दमन का आँखों देखा हाल बताते हुए कहा कि, "१४ जून को अपराह्न में साढ़े तीन बजे भयंकर गर्मी और चिलचिलाती धूप में शराब उत्पादन केन्द्र के बाहर हम सत्याग्रहियों को सैकड़ों की संख्या में आर० ए० सी० और पुलिस के जवानों ने जोधपुर के कार्यवाहक जिलाधीश श्री जे० पी० चंदानी की उपस्थिति में डामर की सड़क, काँच के टुकड़ों व कंकड़ से भरी जमीन पर मरे हुए जानवरों की भाँति घसीटा, इतना ही नहीं, बल्कि हम सत्याग्रहियों के हाथों, पैरों व शरीर के अन्य भागों पर लाठियों के कुन्दों तथा मुक्कों से प्रहार किये गये। हमारे बाल खींचे गये हमें पाशविक ढंग से बार बार सड़क पर पटक पटककर रगड़ा गया और इन सबका नतीजा यह हुआ कि हम १५ सत्याग्रहियों और १३ ग्रामीणों के सारे बदन में आज भी भारी पीड़ा है हम तो पीड़ा सहने ही यहाँ आये हैं। और यह निश्चय कर चुके हैं कि हम अपनी आखिरी साँस तक शराबबंदी आन्दोलन चलाते रहेंगे।"

साम्प्रदायिक उपद्रवों की नयी चुनौती

—जयप्रकाश नारायण—

पिछले कुछ महीनों के दौरान हमारे देश में कितनी जल्दी-जल्दी साम्प्रदायिक उपद्रव हो रहे हैं, नागपुर के साम्प्रदायिक उपद्रव ने इसकी भद्दी याद दिलायी है।

कुछ वर्ष पहले तक भारत में होनेवाले साम्प्रदायिक उपद्रव की व्याख्या पाकिस्तान में होनेवाली घटनाओं की प्रतिक्रिया के रूप में पेश की जाती थी। इस तरह की व्याख्या कभी मानने लायक नहीं थी लेकिन अब तो कोई बहुत पक्षपाती आदमी भी यह नहीं कह सकता, क्योंकि पिछले महीनों में पाकिस्तान में कहीं भी कोई ऐसा उपद्रव नहीं हुआ।

एक भारतवासी के नाते इन घटनाओं के लिए हमें शर्म आनी चाहिए और परिस्थिति की गम्भीरता भी समझनी चाहिए। इनके कारण हमारे देश का भविष्य इसकी भविष्ट राष्ट्रीयता, लोकतांत्रिक संस्थाएँ, सभ्यता, संस्कृति, विकास, प्रगति और सुयश, सबके लिए खतरा पैदा हो गया है।

जब इतनी सारी चीजों पर खतरा है, तब यह अफसोस की बात होगी कि सभी तरह के समझदार लोग, और ऐसे लोग बड़ी तादाद में हैं—इस मौके पर बेचारा, तमाशबीन बने रहें और सरकार अनजान और बेखबर साबित हो। उपद्रव की आग को भड़काने की प्रेरणा देनेवाले और उसे सुलगानेवाले चाहे जो भी लोग हों, वे वास्तव में देशद्रोही हैं और उनके साथ जनता और सरकार को ऐसा ही व्यवहार भी करना चाहिए।

साम्प्रदायिक उपद्रव मामूली-सी घटनाओं के चलते प्रारम्भ होते हैं और जंगल की आग की तरह फैल जाते हैं। उन पर काबू पाने के लिए अक्सर सेना के हस्तक्षेप की जरूरत पड़ती है। इस तथ्य से इस बात का संकेत मिलता है कि कुछ शक्तियाँ आपसी घृणा और हिंसा के बीज बोने में संलग्न हैं।

अराष्ट्रीय शक्तियाँ प्रायः पर्दे की ओट से काम करती हैं, लेकिन वे खुलेआम भी कार्यरत रहती हैं। अगर सरकार सचमुच गंभीरता से काम करने का इरादा रखती है तो उसे अपनी गुप्तचर व्यवस्था को और मजबूत, और तेज बनाना होगा ताकि छिपकर काम करनेवाले संगठनों का पता लगाकर उन्हें नष्ट करने की शक्ति हासिल हो सके। और जहाँ तक खुलेआम काम करने की बात है, सरकार को सिर्फ काम करने के मजबूत इरादे की जरूरत है। मिसाल के लिए भारतीय भाषाओं में ऐसी पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाएँ कम नहीं हैं, जो बिना आड़ या छिपाव के अपना जहर फैला रही हैं। ऐसे प्रकाशनों को बेमुरव्वती के साथ दबाने में प्रेस की स्वतन्त्रता का कोई प्रश्न सामने नहीं आता।

इस प्रसंग में मैं उन आयोगों के व्यवहार की कड़ी निन्दा करना चाहता हूँ जो ऐसे उपद्रवों के कारणों और उनको काबू में करने के तरीकों की जाँच करने के लिए बैठाये गये हैं।

जहाँ इस बात की सख्त जरूरत थी कि ऐसे आयोगों के फैसले जल्दी सामने आते, ताकि उनकी जाँच से इस खतरनाक बीमारी को फैलने से जल्द रोका जा सकता, इन आयोगों ने ध्यानमग्न होकर ज्यादा-से-ज्यादा समय लगाने की कोशिश की।

गुप्तचर विभाग को नये सिरे से सक्रिय बनाने के साथ-साथ कानून और व्यवस्था की संरचना को भी सुधारने की खास जरूरत है।

जो चीज आज व्यवहार रूप में घटित होती है, उसे कल के लिए लिखित व्यवस्थाक्रम का रूप दिया जा सकता है, उन्हें कहीं उतार दिये जायें। इन दस्तों के प्रसंग में जोर देकर मैं कहना चाहता हूँ कि जहाँ तक नौकरी-चाकरी का क्षेत्र है, उनमें किसी तरह की तरफदारी को स्थान नहीं मिलने देना चाहिए। कानून और व्यवस्था का कामकाज चलानेवालों को ऐसे ढंग का प्रशिक्षण देना होगा कि उनमें स्वस्थ राष्ट्रीयता, निष्पक्षता और सम्पूर्णता आये।

श्री चौहान ने पाठ्यपुस्तकों की जाँच के बारे में हाल में जो वक्तव्य दिया है, मैं उसका स्वागत करता हूँ। लेकिन मैं यह भी संकेत करना चाहता हूँ कि राष्ट्रीय एकीकरण (इंटीग्रेशन) के विभिन्न पहलुओं पर पिछले कुछ वर्षों में कई सुयोग्य समितियों ने अपनी रिपोर्टें तैयार की हैं, जिनमें अनेक अन्य सुझाव भी हैं। अब यह समय आ गया है कि इनकी तथा राज्यसरकारों का इन पर ध्यान जाय।

मेरे कहने का यह अर्थ नहीं होना चाहिए कि साम्प्रदायिक दंगों की समस्या सिर्फ सरकार द्वारा हल हो सकती है। इसका अधिक उत्तरदायित्व राजनैतिक दलों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, शिक्षकों, विद्यार्थियों, समझदार नागरिकों, समाचार पत्रों पर है।

सब आपस में मिलजुलकर और हर सम्भव उपाय से एक राष्ट्रव्यापी शैक्षिक और कार्यकारी कार्यक्रम चलायें, जिससे न सिर्फ हिन्दू और मुसलमानों में, देश की सभी जातियों के बीच मधुर सम्बन्ध स्थापित हो सके। और अब [illegible] में मैं श्रीनगर में हुई राष्ट्रीय एकता [illegible] के बारे में कह दूँ। चूँकि केन्द्रीय और प्रादेशिक सरकारों के सभी मुख्य लोग उस समिति के सदस्य हैं, इसलिए बातचीत की [illegible] उनका और निर्धारित नीतियों को लागू करने और उनको कार्यान्वित करने पर होना चाहिए। मेरा कहने का मतलब यह है कि पहले से ही मान ली गयी कुछ नीतियाँ हैं, जिन्हें कड़ाई और ताकत के साथ अमल में लाने की जरूरत है।

सरकार का अपने नागरिकों के प्रति यह प्राथमिक कर्तव्य है कि वह सबकी जिन्दगी की सुरक्षा की जिम्मेदारी संभाले। अब तक यह काम सरकार ने जिस तरह किया उससे कहीं ज्यादा योग्यता और क्षमता से करने की आवश्यकता है, यह सबसे मुख्य काम है।

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में १८ रु०; या १ पौण्ड, या ३।। डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ४१

शुक्रवार १२ जुलाई, '६८

अन्य पृष्ठों पर

सम्पादक
रामभूति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन ४२८५

धरना देते समय ध्यान देने की बातें

विदेशी वस्त्र मादक पेय या पदार्थों के धरने में यह याद रखना चाहिए कि इसका उद्देश्य खरीदनेवाले या नशेबाज को बदलना है। हमारा उद्देश्य नैतिक और धार्मिक सुधार है। इसका राजनैतिक परिणाम तो एक गौण तत्व है। यदि लंकाशायर अपना वस्त्र भेजना बन्द भी कर दे और सरकार आबकारी राजस्व का उपयोग शराबियों और अफीमचियों का नशा छुड़ाने के प्रचार के सिवा अन्य किसी काम में करना रोक भी दे तब भी हम धरना एवं तत्सम्बन्धी प्रचार जारी रखेंगे। अतएव इस प्रसंग में निम्नलिखित नियमों को पढ़ना चाहिए

- दुकानों पर धरना देने में आपका ध्यान खरीदनेवाले से जुड़ना चाहिए।
- आपको कभी क्रेता या विक्रेता के प्रति असभ्य नहीं होना चाहिए।
- आपको भीड़ आकर्षित नहीं करना चाहिए या घेरा नहीं बनाना चाहिए।
- आपका प्रयत्न मौन प्रयत्न होना चाहिए।
- आपको क्रेता या विक्रेता को अपनी इच्छा या जीवन के खतरे का भय न देना चाहिए, चाहे वह न माने या नहीं।
- आपको आवागमन में बाधा नहीं डालना चाहिए।
- आपको हाथ हिलाना नहीं चिल्लाना चाहिए, या सामनेवाले पर उद्गार नहीं प्रकट करने चाहिए।
- आपको प्रत्येक क्रेता की जानकारी होनी चाहिए तथा उसका पता व्यवसाय आदि जानना चाहिए। आपको उसके घर और हृदय में प्रवेश पाना चाहिए। वहीं धरना देनेवाला अपना काम जारी रखे।
- आपको क्रेता और विक्रेताओं की कठिनाइयों को समझना चाहिए और जहाँ आप स्वयं उनको दूर न कर सकें आपको अपने से बड़े कार्यकर्ता को उसकी सूचना देनी चाहिए।
- आपको खरीदारों में बाँटने के लिए अपने पास सम्बद्ध साहित्य रखना चाहिए।
- आपको मैजिक लालटेन और भजन मण्डल के साथ या उसके बिना जुलूस या सभा का गठन करना चाहिए अथवा उसमें शामिल होना चाहिए।
- आपको दिन भर के काम की एक सही डायरी रखनी चाहिए।
- यदि आपको अपने प्रयत्न असफल होते लगें तो निराश न हों किन्तु कारण और प्रभाव के सार्वभौम नियम पर भरोसा रखें और आश्वस्त रहें कि अच्छे विचार, वचन या कार्य निरर्थक नहीं जा सकते। सद्विचार या सद्आचरण हमारा धर्म है, फल देना भगवान के हाथ है।

१६ ३ '३१ मो० क० गांधी

एकता कहाँ ?

अभी कुछ दिन हुए एक गाँव में राजपूतों और हरिजनों में फौजदारी हुई। किसकी ज्यादती थी, यह सवाल दूसरा है, लेकिन फौजदारी में कई हरिजनों को गहरी चोटें आयीं। उन पर लाठियों और भालों से प्रहार किया गया, और उनके कई घरों में आग लगा दी गयी।

जिस इलाके में यह घटना हुई उसमें तीन राजनैतिक दल हैं। तीनों संगठित हैं। तीनों के दफ्तर हैं, कार्यकर्ता हैं। गाँव का एक युवक एक दल के दफ्तर में गया तो पूरा हाल बताने पर जवाब मिला : 'भाई, चुनाव करीब आ रहा है, हमलोग इस झगड़े में नहीं पड़ेंगे।' दूसरे दफ्तर में गया तो उत्तर मिला : 'ज्यादती जरूर हुई है, लेकिन जुल्म करनेवालों का जुल्म देखें या उनका वोट ?' तीसरे दफ्तर में गया तो जवाब मिला . "तुम लोग हमें वोट देने का वादा करो तो हम लोग तुम्हारी पूरी मदद करेंगे।'

यह कोई कहानी नहीं है, घटना है एक गाँव की। और अभी हाल की है। उस क्षेत्र में जो दल हैं वे संविद-सरकार में साथ रह चुके हैं। इस वक्त सब मध्यावधि चुनाव की तैयारी में जुटे हुए हैं। तीनों के नेता श्रीनगर में हाल में हुई राष्ट्रीय एकता की कान्फरेंस में भी शरीक हुए थे, और राष्ट्रीय एकता पर सबके भाषण हुए थे।

लेकिन गाँव गाँव है और श्रीनगर श्रीनगर। एक समुद्र की धरातल से बहुत नीचे है, और दूसरा बहुत ऊपर हिमालय की गोद में, अत्यन्त सुन्दर और मनोहर। एक की बात दूसरे पर नहीं लागू होती। गाँव में राजनीति चलती है, और श्रीनगर में राष्ट्रनीति। गाँव में राजनीति का जो गेर रहता है उसे नाश्ते में गीदड़ रोज चाहिए, जब कि श्रीनगर में देशभक्त का काम सिर्फ एक तश्तरी पुलाव से चल जाता है। इस वक्त हाल यह है कि अगर कोई ऐसा गाँव है जिसमें दल की दाल नहीं गलती तो वह दो में से एक उपाय करता है—या तो किसी तरह कोई नया झगड़ा पैदा कर देता है या पुराने झगड़े में पड़कर किसी दल को मिला लेता है। गाँव में एक दल को मिलाकर उसका वोट लेने का सबसे आसान उपाय है कि गाँव में जो भी एकता है वह तोड़ दी जाय। जहाँ दिल होगें वहाँ दल की कैसे चलेगी ?

गाँव का अनुभव यही बता रहा है कि एकता और राजनीति का सह-अस्तित्व असंभव है। लेकिन अब इस देश में गाँव की एकता का महत्व माननेवाले नेता रह कितने गये हैं ? नेता तो इतना जानता है कि गाँव में वोटर रहते हैं और व्यापारी जानता है कि गाँव में ग्राहक रहते हैं, अधिकारी जानता है कि गाँव में करदाता रहते हैं। इनमें से किसीके लिए गाँव का इससे अधिक कोई महत्व नहीं है। आश्चर्य है कि ये ही लोग जब ठंडी ऊँची जगहों में पहुँच जाते हैं तो राष्ट्र की एकता और जनता के कल्याण की बातें करने लगते हैं! इससे भी बड़ा आश्चर्य यह है कि राजनीति के इन सौदागरों की बातों पर लोगों को भरोसा हो जाता है !!

क्या अभी यह जानना बाकी है कि यह राजनीति एकता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है ? राजनीति को जनता की एकता में रुचि है या अपनी सत्ता में ? राजनीतिक नेता अगर कहते भी हैं तो देश की भौगोलिक एकता की बात कहते हैं, देश में रहनेवाली जनता की बात नहीं। हर दल यह मानता है कि एकता तभी सुरक्षित रहेगी जब सत्ता उसके हाथ में होगी। जनता को अलग हटाकर हमारे दल राष्ट्रीय एकता की मिथ्या बातें करते हैं। जो राजनीति दिन-रात जनता को यही सिखा रही है कि वह जाति से अलग-अलग है, भाषा-क्षेत्र से अलग-अलग है, धर्म संस्कृति से अलग अलग है, आकांक्षाओं और परम्पराओं से अलग-अलग है, वह राजनीति यह कैसे कहेगी कि देश के करोड़ों लोग एक हैं, और कहेगी भी तो उसके कहने का असर क्या होगा ? भेद और अलगाव तो राजनीति के पोषक तत्व हैं। तरह-तरह के अन्यायों को उभाड़कर भेदों को कायम रखना उसका रोज का काम है। ऐसी राजनीति को छोड़े बिना एकता कहाँ ? •

ग्राम-स्वराज्य की भूमिका और तत्व

['भूदान यज्ञ' के ५ अप्रैल, ६८ के अंक में पृष्ठ ३२२ पर ग्राम-स्वराज्य के ६ मुद्दों का उल्लेख किया गया था। श्री जयप्रकाश नारायण की अध्यक्षता में, गांधी विद्या स्थान द्वारा आयोजित गोष्ठी में उन्हीं ६ मुद्दों की परिष्कृत व्याख्या 'ग्राम स्वराज्य के तत्व' के रूप में स्वीकृत हुई, जो प्रस्तुत है।–सं०]

भूमिका

भारत गाँवों का देश है। देश का विकास उसके लाखों गाँवों के विकास पर निर्भर है। इस मूल सत्य को पहचानकर ही गांधीजी ने कल्पना की थी कि स्वतंत्र भारत में गाँव देश की प्राथमिक इकाई बनेगा—हर इकाई अपने में भरी-पूरी, स्वाश्रयी और स्वायत्त, पर एक दूसरे से सहकार के धागे में बँधी हुई, और सब मिलकर पूरे देश और अखिल मानवता से अनेक रूपों में जुड़ी हुई। लेकिन स्वतंत्रता के बाद यह नहीं हुआ। अंग्रेजी राज्य में गाँवों के विघटन का जो क्रम शुरू हुआ था, वह जारी रहा। नयी सरकार की नयी रीत-नीति में—पंचायती राज और सामुदायिक विकास योजनाओं और कार्यक्रमों द्वारा गाँवों के विकास की कोशिश की गयी। लेकिन उसमें सफलता नहीं मिली और गाँव दिनोंदिन अधिक असहाय होते गये, टूटते ही चले गये, यहाँ तक कि आज गाँव घरों के समूह मात्र रह गये हैं। उनका कोई 'स्व' जैसे है ही नहीं। स्वभावतः जब गाँव टूटे तो देश गिरा।

यह क्रम तभी रुकेगा जब एक एक गाँव में स्वराज्य पहुँचेगा। वह एक सम्पूर्ण इकाई माना जायगा, उसका 'स्व' उसे वापस मिलेगा। वह अपने निर्णय और अपनी शक्ति से अपने जीवन का नियमन और संचालन करने को स्वतंत्र होगा।

ऐसे ग्राम-स्वराज्य का अर्थ है मात्र के ढाँचे में आमूल परिवर्तन—

प्रशासन और प्रतिनिधित्व में, अर्थनीति में, शिक्षण में, सबमें। जब तक दमन और शोषण की व्यवस्था का अंत नहीं होगा, गांव की प्रतिभा और शक्ति को प्रकट होने का, तथा सत्य और समता के नये मूल्यों के आधार पर हर व्यक्ति को नये जीवन का, अवसर नहीं मिलेगा।

ग्राम स्वराज्य की क्रान्ति ग्रामदान से शुरू हो गयी है। अनेक प्रखंडों, जिलों, और कई राज्यों में व्यापक परिवर्तन की भूमिका बन रही है। हजारों गांवों में प्रारम्भिक हलचल के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। अभी हल्के ही सही, पर कितने ही कदम आगे बढ़ने को तैयार हो रहे हैं।

जो आन्दोलन करोड़ों को छुए, जो देश के पूरे जीवन को बदलने-बनाने का दावा करे, जो विचार को ही सर्वोपरि शक्ति माने, उसके आदर्शों और दिशाओं के बारे में शुरू से ही अधिक से अधिक स्पष्टता होनी चाहिए। मनुष्यों की तरह क्रान्तियां भी भटक जाती हैं। आज देश की जो स्थिति है उसे देखते हुए यह गुंजाइश नहीं है कि उभरती हुई लोक चेतना सही रास्ते से हट जाय, और जमाने के जंगल में सूनी भटकती फिरे। रचनात्मक क्रान्ति में मूल्यों और विचारों की धूमिलता घातक हो जाती है।

तत्व

(१) स्वायत्त ग्रामसभा :

ग्रामदान के आधार पर बनी हुई हर ग्रामसभा शान्ति, न्याय, ग्राम संयोजन, तथा सांस्कृतिक विकास के क्षेत्र में अपनी भीतरी व्यवस्था और जीवन-पद्धति के विकास के लिए अपनी सामर्थ्य तथा व्यापक हित की मर्यादा में, स्वायत्त होगी। सर्व का निर्णय, सब की शक्ति, सर्व का हित, यह उसका प्रेरणा मंत्र होगा। उसके कार्य सर्व सम्मति अथवा सर्वानुमति से होंगे। गांव एक सुखी, शांत समान परिवार बने, यह उसकी चेष्टा होगी। भीतर सहकार, बाहर सरकार इस प्रकार सरकार पूरक शक्ति के रूप में गांव की सहकार शक्ति को बढ़ावा देगी।

ऐसी इकाइयां अधिक से अधिक स्वावलंबी, किन्तु देश के सन्दर्भ में परस्परावलम्बी होंगी। यह भाव रहेगा कि देश एक अखंड बड़ी इकाई है जिसके प्रति हर छोटी इकाई उत्तरदायी है।

(२) दलमुक्त ग्राम प्रतिनिधित्व :

देश की राज्य-व्यवस्था के अंतर्गत विधान-सभाओं में गांव की जनता का प्रतिनिधित्व उसकी ग्रामसभाओं के द्वारा होगा। जनता के उम्मीदवार उसकी अपनी ग्राम सभाओं द्वारा मनोनीत होंगे, न कि आज की तरह राजनैतिक दलों के द्वारा। चुनाव के कारण ग्राम-सभा अपनी एकता खंडित नहीं होने देगी।

भूदान-यज्ञ : शुक्रवार, १२ जुलाई, '६८

(३) पुलिस अदालत-निरपेक्ष व्यवस्था :

ग्राम सभा की सत्ता सामान्यतः नैतिक होगी। रक्षण, शांति और सुव्यवस्था की दृष्टि से वह अपनी शान्ति सेना संगठित करेगी। न्याय-व्यवस्था उसकी अपनी होगी, जिसमें कानूनी निर्णय से अधिक जोर आपसी समझौते और समाधान पर होगा। प्रयत्न होगा कि गांव में कोई गंभीर अपराध न हो, किन्तु यदि हो गये तो देश के कानून लागू हों। तथा उनके अनुसार सरकार को अपनी ओर से कार्रवाई करने का अधिकार होगा।

(४) ग्रामाभिमुख अर्थनीति :

परिवार की तरह ग्राम सभा गांव के सब सदस्यों के समुचित भरण पोषण की चिन्ता करेगी – स्वभावतः सबसे गरीब और असहाय की सबसे पहले। हर व्यक्ति का विकास हो, और उसके जीवन के हर पहलू का विकास हो, इस दृष्टि से ग्राम सभा गांव की बुद्धि, शक्ति, पूंजी और साधनों के सदुपयोग की योजना बनायेगी, ताकि शोषण समाप्त हो तथा विषमता क्रमशः घटती चले। इस क्रम में ग्राम सभा समय समय पर प्रकट होनेवाले विवादों और विरोधों का ग्रामहित की दृष्टि से शान्तिपूर्ण, पर न्यायोचित हल निकालेगी।

(५) स्वतंत्र शिक्षण :

ग्रामीण शिक्षण गांव के जीवन और विकास से अनुबंधित होगा, तथा शिक्षण में शिक्षक, अभिभावक और विद्यार्थी की सम्मिलित चेष्टा प्रकट होगी। ग्राम-स्वराज्य की इकाइयां अपने क्षेत्र में शिक्षण के लिए उत्तरदायी होंगी, और उन्हें वैज्ञानिक भूमिका में प्रयोग की पूरी छूट होगी। शिक्षण पर सरकार का एकाधिकार नहीं होगा। लेकिन स्थानीय अभिक्रम की पूर्ति में साधन और शोध की अपेक्षा उससे बराबर रहेगी।

(६) सर्व धर्म-समभाव :

सब धर्मों की समानता सर्वमान्य होगी। ग्राम-सभा के द्वारा धर्म के आधार पर किसी प्रकार का पक्षपात नहीं होगा। हर नागरिक को अपने विश्वास और उपासना विधि के अनुसार आचरण की छूट होगी, बशर्ते उससे सार्वजनिक नैतिकता खंडित न होती हो। स्वभावतः ऐसे वातावरण में अस्पृश्यता के लिए कोई स्थान नहीं होगा, और न तो दूसरों को अपने धर्म में मिलाने की कोशिश होगी। एक दूसरे के धर्म के प्रति आदर का भाव रखते हुए लोग पड़ोसीपन का जीवन बितायेंगे। इसी आधार पर हमारे देश की संस्कृति विकसित हुई है, और इसी दिशा में देश का भविष्य भी है।

सर्वोदय समाज के निर्माण की प्रेरणा भौतिक नहीं, नैतिक और आध्यात्मिक

—आबू रोड सर्वोदय-सम्मेलन में श्री शंकरराव देव का समारोप-भाषण—

हम सब लोग जानते हैं, मानते हैं, कहते हैं और दावा भी करते हैं कि हम एक नये समाज का निर्माण करना चाहते हैं। सर्वोदय-समाज का अर्थ भी यही है। नया समाज का निर्माण आजकल किसी एक देश मे नही हो सकता, चाहे वह महात्माओं का देश हो या सामान्यो का देश हो। आज दुनिया जिस परिस्थिति मे है, उसमे नये समाज का निर्माण-क्रम आगे पीछे जैसे रेलगाडी के डब्बे होते हैं, वैसे हो सकता है, लेकिन गाडी एक ही होती है, और एक ही साथ चलती है, चाहे डब्बे 'एअर कण्डीशनिंग' हो या 'थर्ड क्लास' के हों। आज कोई यह कहेगा कि हम हमारे देश मे एक नये समाज का निर्माण करना चाहते हैं, दुनिया का क्या होगा, दुनिया हमारे साथ होगी कि नही होगी, इसकी हमको परवाह नहीं, आवश्यकता भी नहीं सोचने की, तो मैं नम्रता से कहूँगा कि सलग्न को छोडकर आप सोच रहे हैं, कर रहे है। इसलिए दुनिया मे एक नया समाज निर्माण करना है तो इस नयी दुनिया की माँग पर आप थोडा सोचें। यह माँग गरीबो की ओर से आ रही है, ऐसा नहीं है, गरीबो से ज्यादा अमीरो की ओर से आ रही है एक सोचने की बात यह है कि आज तक दुनिया मे गरीब चाहते थे कि एक नयी दुनिया बने। तो अमीर भी नयी दुनिया क्यो चाहते हैं? उन्होने कहा, 'हम थक गये हैं। विपुलता है, रोटी की कोई चिन्ता नही है, लेकिन फिर भी 'मैन इज नाट लिव बाई ब्रेड अलोन'।

सोशलिज्म, कम्युनिज्म, कैपिटलिज्म इसके दिन खतम हुए। पेड़ की जडें जब सूखने लगती हैं तो कुछ दिन तो पेड़ हरा-भरा ही दीखता है, लेकिन जब गौर से देखते हैं तो मालूम होता है आज नही, कल यह तो सूखनेवाला है। क्योकि पेड को जीवन-रस मिलता है जड़ो से और उन जड़ो को ही जीवन-रस नहीं मिल रहा है। जब पेड़ सूख जाता है तो उसके भी कुछ उपयोग होते हैं, बहुत आवश्यक ऐसे उपयोग होते हैं। 'फ्यूडलिज्म' से 'कम्युनिज्म' तक, आखिर इंसान की बनायी चीजें हैं, तो उसमे ऐसी कुछ चीजें तो जरूर होगी कि जिन्हें इसान आगे भी ले जा सकता है। लेकिन उसमें मैं इतना विश्वास नही करता हूँ। ये पुरानी चीजें हम साथ ले जायँगे तो नये युग में नये युग का धर्म जो है, उसका हम पालन कर सकेंगे कि नही कर सकेंगे, इस बारे मे मेरे दिल में शक है।

मार्क्स ने 'इकानोमिक इन्टरप्रिटेशन आफ हिस्ट्री' से कहा कि कम्युनिज्म आनेवाला है। क्योकि इतिहास कह रहा है। लेनिन ने क्या नहीं किया इसके लिए? लेकिन क्या हुआ? मार्क्स के अनुसार कोई नया रास्ता नहीं निकल सका। बतलाने की जो कोशिश की उसमें वह सफल नही हुआ। आज भी लोग यह मानते हैं कि 'व्हाट इज दी डिफरेन्स 'बिट्वीन कैपिटलिज्म ऐण्ड सोशलिज्म ऐण्ड कम्युनिजम?' दी सेम वर्शिप आफ मशीन?' अभी अमेरिका और रूस में जो होड है वह कम्युनिज्म की 'थियरी-आइडिआलोजी' और कैपिटलिज्म की 'थियरी-आइडिआलोजी' मे नही, टेक्नालोजी मे है कि कौन आगे बढता है?

आज सबसे बडी समस्या यह है कि मृत्यु के दुःख के दौरान में सुख के प्रभातकाल का हम दर्शन करने के लिए तैयार हैं कि नहीं? यह चैलेंज है 'म्यूटेशन'। यह साइंस बोल रहा है। सर्वोदय समाज का निर्माण तकनीक, कार्यक्रम मे सीमित नहीं है। 'समथिंग मोर दैन टेकनिक एण्ड प्रोग्राम।' विनोबाजी अपनी भाषा में बोलते हैं चेतन से चेतन का स्पर्श! 'दैन टेकनिक विल कम, प्रोग्राम विल कम आउट आफ दि नीड, नाट आफ दि हेड।'

स्व को भूलकर सर्व मे विसर्जन, प्रवेश, 'ट्रासफार्मेशन' का 'इन्सेन्टिव' हो सकता है क्या? 'मैटेरियल इन्सेन्टिव' से कुछ उपर का 'इन्सेन्टिव'—इसान में हम जागृत कर सकें कि जिससे स्वय को सर्व में विलीन करने की शक्ति उसमें आ जाय, वह सहज क्रिया हो जाय। अन्नमय, प्राणमय, मनोमय से वह गया आनेवाला जो युग है वह है—'विज्ञानमय'। मनोमय तक पशु और मनुष्य मे फरक नही है। इसलिए यह सर्वोदय समाज के लिए एक चुनौती है और सब दुनिया के लिए वह आश्वासन हो सकता है। जब सर्वोदय समाज का निर्माण 'मैटेरियल इसेन्टिव' से नही, 'मारल एण्ड स्पिरिचुअल इसेन्टिव' से हो। 'स्पिरिचुअल मिन्स युनिवर्सल यूनिटी।' 'ऐण्ड मारल मिन्स ह्यूमैन कण्डक्ट बेस्ड आन दैट युनिवर्सल यूनिटी।

१० जून '६८

विनोबाजी का कार्यक्रम

१० जुलाई से १५ जुलाई तक बलिया

१५ जुलाई की रात आठ बजे ट्रेन से बलिया से छपरा पहुँचना

१७ जुलाई को प्रातः ३ बजे छपरा से रवाना

१७ जुलाई को प्रात ४॥ बजे सीवान पहुँचना

२१ जुलाई को प्रात ३॥ बजे सीवान से रवाना

२१ जुलाई को प्रात ४॥ बजे महाराजगज पहुँचना

२२ जुलाई को प्रात ३॥ बजे महाराजगज से रवाना

२२ जुलाई को प्रात ४॥ बजे छपरा पहुँचना

२३ जुलाई को प्रातः ३ बजे छपरा से रवाना

पत्र व्यवहार का पता

विनोबा निवास, बिहार खादी-ग्रामोद्योग सघ, रघुआ मार्केट, छपरा, जिला सारण (बिहार)

किसान सरकार और बाजार, दोनों तरफ से लूटा जा रहा है। किसान अनाज की उपज कम कर दे तो उसे उचित दाम मिल जायगा या उसकी लूट बन्द हो जायगी ऐसी बात नहीं है। आज का सरकारी ढांचा, और बाजार की मुनाफे की नीति कायम रही तो किसान कभी भी उनके चंगुल से नहीं निकल सकेगा।

किसान बाजार और सरकार के चंगुल से निकलना चाहता है तो अनाज का व्यापार व्यापारियों के हाथ से निकालना होगा, सरकार के हाथ से भी। कोई ऐसा तरीका निकालना होगा कि गांव-गांव और शहर-शहर मे अनाज का गोदाम हो। गोदाम न सरकारी हो, न किसी व्यापारी का। क्यों न ग्रामदानी गांवों की ग्रामसभाएँ अपनी गोदाम रखें ? किसान अपना अनाज गांव की गोदाम में पहुँचायें। ग्रामसभा अपने कोष से अनाज का पैसा देगी। ग्रामसभा के पास अपना कोष तो होगा ही। इस प्रकार किसान का काम निकल जायगा और उसे किसी बाजार में या मंडी में जाने की जरूरत नहीं रह जायगी। अगर अनाज गांव से बाहर ले ही जाना है तो ग्रामसभा ले जाय। फिर ग्रामसभा को अनाज बेचने की न मजबूरी होगी और न उसके साथ किसी प्रकार की धांधली ही हो सकेगी। बड़े-बड़े शहरों में भी अनाज का गोदाम उत्पादकों का होगा, न कि व्यापारियों का। परन्तु यह सब तब होगा जब गांव की सहकारी शक्ति प्रकट हो।

ग्रामदान के माध्यम से इसी शक्ति को प्रकट कराने का काम विनोबाजी कर रहे हैं। किसी भी समस्या का समाधान जिनकी समस्या है वही खोज सकते हैं। क्या आप सोचते हैं कि गांव-गांव की ग्रामसभाएँ जब अपनी उपज पर नियंत्रण करने लगेंगी तो आज जो लूट है वह कायम रह जायगी ?

हां, एक बात पर विशेष ध्यान देने की है। कहीं उत्पादक भी व्यापार न करने लग जाय। जब उत्पादक व्यापार करने लगेगा तो वह भी उपभोक्ता को लूटेगा। इसीलिए मैंने उत्पादकों के संघ बनाने की बात नहीं कही है, बल्कि ग्रामसभाएं इस काम को अपने हाथ में रखें, जिन ग्रामसभाओं में उत्पादक, उपभोक्ता सब होंगे। —सं०

ग्रामदान आन्दोलन । जनता का, जनता के द्वारा, जनता के लिए

ग्रामदान में काम करनेवाले लोगो का एक शिविर चौरपुर (वाराणसी) में हो रहा था । उसमे मैं भी शामिल हुआ । दो दिन का शिविर था । शिविर मे कुछ ऐसे लोग भी थे, जिन्हे ग्रामदान के विचार को पूरी जानकारी नही थी । कुछ ऐसे थे जो बिलकुल ही ग्रामदान के बारे में नही जानते थे । चार-छह लोग उन गाँवों से आये थे जिन गांवो का ग्रामदान हो चुका था । ये लोग आदिवासी थे । अत इनका रंग रूप आदिवासी का था, वेशभूषा मजदूर का-सा था । इनमें से कोई भी पढा लिखा नही था । जाडे का समय था, लेकिन उनके पास ओढने के नाम पर सिवाय एक सूती चादर के दूसरा कपडा नही था । ये लोग शिविर मे आते थे और एक कोने में बैठते थे । शिविर में जो भी चर्चा होती थी, उसे ध्यान से सुनते रहे—गांव में पहुँचने पर किससे पहले मिलें, उससे क्या बात कहें, किसनी बात करे, क्या कहे और क्या न कहें आदि । कुछ प्रश्न भी हुए, जिनका उत्तर उन लोगो ने दिया जिन्हें ग्रामदान विचार की कुछ विशेष जानकारी थी ।

कोने में बैठे लोगो मे से एक आदमी खडा हुआ । लोगों का ध्यान उसकी ओर गया । न जाने वह क्या बोलेगा । कुछ बोलेगा भी । उसने कहा, "हम तो निपढ़ आदमी हैं, गंवार हैं, हम जानते हैं कि गाधी महात्मा एक सडक अपने ढंग से बना रहे थे । लेकिन वह सडक पूरी भी नहीं हुई कि वह इस दुनिया से उठा दिये गये । वह सडक अधूरी रह गयी । आज विनोबा बाबा वही अधूरी सडक बना रहे हैं । हमे भी इस काम में लगना चाहिए ।" आदिवासी गाँव का एक निपढ़ आदमी बोल रहा था, लेकिन उसके दिल से विश्वास और श्रद्धा की आवाज निकल रही थी ।

जब ग्रामदान प्राप्ति के लिए टोलियाँ बनने लगी तब वे भी टोलियों में गये । उन लोगो ने ग्रामदान प्राप्ति का कार्य किया । ऐसे लोग भले ही पढ़े-लिखे नहीं होते, पर उनके कहने से भी ग्रामदान के कागज पर हस्ताक्षर होता है ।

१२ दिसम्बर '६८

आबू रोड के सर्वोदय सम्मेलन मे इस बात पर चर्चा हुई कि ग्रामदान के लिए कार्यकर्ता कहाँ से आये ? तमिलनाड के श्री जगन्नाथन्‌जी ने बताया कि जिन गांवो का ग्रामदान हुआ है, उन गांवो के लोगो से कहा जाय कि वे दूसरे गांवो का ग्रामदान कराने के लिए अपना समय दे । उन्होने इस तरह का प्रयास किया था । उन्हें इसमें सफलता भी मिली । तिरुनेलवेली जिलादान मे मदुराई जिले के ग्रामदानी गांवो के २०० लोग ग्रामदान के कार्य मे शामिल हुए । वहाँ पर इसी ढग से काम करने का आयोजन वह आगे भी करनेवाले हैं । कुछ अन्य स्थानो मे भी इसी प्रकार के प्रयास होते हैं । क्या इसी तरह सब जगह आयोजन नही हो सकता है ? ग्रामदान का कार्य सिर्फ थोडे-से कार्यकर्ताओ का ही तो नही है । ग्रामदान में कोई शामिल हो सकता है, कोई भी ग्रामदान का कार्य कर सकता है । और जब ऐसा होगा तब ग्रामदान प्राप्ति के लिए कार्यकर्ता की कमी नही रहगी । फिर तो जितना ही ग्रामदानी गांवो की सख्या बढती जायगी, ग्रामदान के काम करनेवाले कार्यकर्ताओ की संख्या बढती जायगी । आज ग्रामदान का आन्दोलन कार्यकर्ताओ का आन्दोलन है । यह जनता का आन्दोलन तब बनेगा जब ग्रामदानी गांवो के लोग इस आन्दोलन मे भाग ले । अपना काम करते हुए वे ग्रामदान के कार्य के लिए समय निकालें ।

जब इतना हो जायगा तब यह कहने की गुंजाइश नही रह जायगी कि इतना धीरे धीरे क्यों काम करते रहोगे ? धीरे धीरे उतने ही समय तक होगा, जितने समय तक कार्यकर्ता ही इस कार्य को करते रहेगे ।

ग्रामदान से जनता की शक्ति प्रकट नही हुई, जनता का पुरुषार्थ नहीं जगा, परस्पर के सहकार की भावना नही बनी, भाईचारा नही आया, अपने आपको सम्भालने की चेतना नहीं जगी तो उस ग्रामदान का लाभ क्या ? दूसरा हमारी भलाई सोचे, हमारा भला करे—क्यों ? •

मंदारपुर के बाबूसाहब

किसीको भरोसा नहीं था कि मंदारपुर के बाबूसाहब दस्तखत करेंगे, और दस्तखत भी उस कागज पर, जिस पर लिखा हुआ है : "हम अपनी भूमि की मालकियत अपनी ग्रामसभा (ग्रामस्वराज्य सभा) को सौंपते हैं।" इतना बड़ा मालिक अपनी मालकियत गांव की ग्रामसभा को सौंप देने को राजी हो जायगा, यह कौन सोच सकता था ? लेकिन उस दिन जब हमारे साथी ने ग्रामदान का कागज उनके सामने रखा तो ऐसा लगा जैसे वह दस्तखत करने के लिए पहले से तैयार होकर आये हों। हाथ में कागज लिया, ऊपर से नीचे तक निगाह दौड़ायी, जेब से कलम निकाली, और यह कहते-कहते हस्ताक्षर किया : "अब मैं भी आपकी बिरादरी में शरीक हो गया। नेताओं की बात हो चुकी, अब संत की होने दीजिये।"

कानों कान खबर फैल गयी कि बाबूसाहब ने हस्ताक्षर कर दिया। एक आदमी ने सुना तो बोल उठा : "क्या सचमुच ? ग्रामदानवालों ने बाबूसाहब को भी फोड़ लिया?" "जब उन्होंने मान लिया तो कौन नहीं मानेगा ?" दूसरे ने कहा। मेरे साथी ने कहा : "बाबूसाहब, अब आपकी पूरी पंचायत का दान होना चाहिए।" उत्तर मिला : "आप पंचायत की बात कर रहे हैं। आप तैयार हों, परसों से मैं आपके साथ ब्लाक की हर पंचायत में चलूंगा। बात सीधे जनता से करनी चाहिए।"

बाबूसाहब के अपने गांव और अपनी पंचायत का ग्रामदान हो गया। बाबूसाहब दूसरी पंचायतों में जा रहे हैं। जब कार्यकर्ता जाता था तो लोग तरह तरह की बातें कहते थे। लेकिन अब कोई क्या कहे ? कोई यह तो नहीं कह सकता कि बाबूसाहब ग्रामदान को समझते नहीं, कोई क्या कहकर हस्ताक्षर करने से इनकार करे ? हवा बन रही है, बनती जा रही है। आज इस गांव का ग्रामदान हुआ, कल दूसरे का होगा, परसों तीसरे का। पूरे ब्लाक का हो जायगा। बाबूसाहब की एक ही बात है : गांव के सब लोग आपस में भाई-भाई। भेदभाव छोड़कर अपने गांव का संगठन कीजिये। संत की बात मानिये। गांव में स्वराज्य लाने की तैयारी कीजिये।

सचमुच ग्रामदान का आन्दोलन गांव के लोगों का है। अब तक ग्रामदान की बात गांव-गांव में पहुंचाने का काम कार्यकर्ता का था। लेकिन अब बाबूसाहब की तरह कुछ सूझ-समझ और प्रभाव के लोग भी सामने आने लगे हैं। नेता कुछ भी कहें और भले ही कुछ न करें, लेकिन कार्यकर्ता—हर पार्टी के कार्यकर्ता—जो गांव में रहते हैं, वे ग्रामदान के काम में मदद करते हैं, और अलग चर्चा में खुले दिल से स्वीकार करते हैं कि राजनीति से गांवों का भला नहीं होगा, उलटे राजनीति गांव की बची-खुची शक्ति को भी समाप्त कर देगी।

ग्रामदान के बाद कई गांवों में नयी ग्रामसभाएं बन रही हैं, कहीं महुआ, कहीं अनाज, कहीं नकद रुपया ग्रामकोष में इकट्ठा हो रहा है, कहीं मुकदमे कचहरी से उठाये जा रहे हैं। यह इसलिए हो रहा है कि खुद गांव के कुछ लोग उत्साह दिखाने लगे हैं। जिस दिन एक-एक ग्रामदानी गांव से दस-दस, बीस-बीस लोग पड़ोस के गांवों में जाने लगेंगे, जैसे वे उड़ीसा और *तमिलनाड में जा रहे हैं, उस दिन ऐसा लगेगा कि समाज में* एक नया उफान आ गया है, सोयी हुई शक्ति जग गयी है। कौन इस शक्ति के सामने खड़ा होगा ? जो काम बरसों में नहीं हुआ, उसे यह नयी शक्ति घंटों और दिनों में कर डालेगी। •

ग्रामसभा की डायरी

घमना (भाझा, मुंगेर) की ग्रामसभा की बैठक: ८ अप्रैल, १९६९

तीन सदस्यों ने अपना हिस्सा ग्रामकोष में जमा किया :

श्री भुनेश्वर मण्डल	१०-००	दो दिन की मजदूरी
" बासुकी रावत	१०-००	चार दिन की मजदूरी
" रामेश्वर मण्डल	२-००	दो दिन की मजदूरी
	२२-००	८ दिन की मजदूरी

अब तक ग्रामकोष में कुल जमा :

नकद	२४-४७	
महुआ	–	६ सेर
जौ	–	७ सेर
धान	–	१ सेर
हलदी	–	१० छटांक
खेसारी	–	१ सेर
चना	–	१० छटांक

•

बलिया जिलादान की ऐतिहासिक भूमिका

बलिया उत्तर प्रदेश के पूर्वी छोर का आखिरी जिला है, जिसकी सीमा बिहार के सारण और शाहाबाद जिले की सीमा से मिली हुई है। गंगा और घाघरा नदियाँ इस जिले से होकर पश्चिम से पूरब की ओर बहती हैं। इन नदियों के कारण हर साल खेती लायक भूमि का बहुत बड़ा क्षेत्र बाढ़ में डूब जाता है। नदियों की धारा इधर-उधर खिसकते रहने के कारण नदियों के किनारे की जमीन कभी इस प्रदेश की उस प्रदेश में और कभी उस प्रदेश की इस प्रदेश की सीमा में मिलती रहती है। जिले की जमीन पर जनसंख्या का भार वैसे ही अधिक है, ऊपर से बाढ़ और कटाव के चलते भूमि पर जनसंख्या का भार और अधिक बढ़ जाता है। जिले की जनसंख्या के लगभग ७३ प्रतिशत लोग बेकारी की समस्या के शिकार हैं। जिले में इन्हें काम देने लायक उद्योग नहीं हैं। इन कारणों से बलिया के अधिकतर लोग हर साल रोजगार की तलाश में दूसरी जगह जाया करते हैं। और इसीलिए बलिया उत्तर प्रदेश का केरल कहा जाता है।

बलिया के ८८ प्रतिशत गाँव जिलादान में सम्मिलित हुए हैं। बलिया की सामाजिक आर्थिक रचना जिस ढंग की है उसको ध्यान में रखा जाय तो यह बात बहुत चकित करनेवाली है, लेकिन इसमें विस्मय की कोई बात नहीं है। राष्ट्रीय आन्दोलन के समय से ही बलिया जिले की अपनी एक परम्परा रही है। सन् १८५७ के सेनानी कुँवर सिंह, और सन् १९४२ के स्वाधीनता-संग्राम के नेता श्री चित्तू पाण्डेय का नाम सुनकर आज भी बलिया निवासियों के मन में देश प्रेम और त्याग की भावना का ज्वार उमड़ने लगता है। सन् १९४२ में चित्तू पाण्डेय के नेतृत्व में बलिया जिले का प्रशासन एक सप्ताह के लिए जनता के नियंत्रण में आ गया था।

बलिया के लोग शक्ति के उपासक कहे जाते हैं। अतः ग्रामदान द्वारा शक्ति अर्जित करने की बात उन्हें सहज ही अपनी ओर खींच ले गयी। जो लोग तोड़फोड़ की राजनीति को माननेवाले हैं और उसमें लगे हुए हैं, उन्होंने भी बलिया में ग्रामदान का विरोध नहीं किया, बल्कि समर्थन ही किया। इससे यह बात जाहिर होती है कि उन्होंने आज की किसी भी सत्ता से ग्रामदान में अधिक शक्ति की संभावना देखी। उन्होंने यह समझ लिया कि उनके बिना भी जिलादान होगा। अतः जिलादान के अभियान में आगे आना (नेतृत्व लेना) कहीं ज्यादा बुद्धिमानी का काम होगा। वे समझ गये कि उनके पिछड़ने पर जनता उन्हें छोड़कर आगे बढ़ जायगी।

अब तक राजनीतिज्ञों की राजनीति से छला गया सामान्य जन अपना भविष्य ग्रामदान में अधिक सुरक्षित देखता है। 'यदि ग्रामदान ज्यादा अच्छा विकल्प प्रदान करता है तो हमें उसे प्राप्त करना चाहिए'—ग्रामदान की स्वीकृति के पीछे यही भावना काम करती दिखायी पड़ती है। लेकिन इसके साथ ही यह ध्यान में रखना है कि ग्रामदान की स्वीकृति यूँ ही नहीं प्राप्त हो सकी, ग्रामदान सम्बन्धी प्रारंभिक विरोध और शंकाओं पर चर्चा करके तथा भली प्रकार समझा-बुझाकर धीरे-धीरे विजय प्राप्त की गयी। प्रारंभिक विरोध मिटने और शंकाओं के समाप्त होने पर ही लोगों ने ग्रामदान को स्वीकार करना शुरू किया।

जिलादान अभियान की सफलता के पीछे ग्रामदान के काम में लगे यहाँ के कार्यकर्ताओं का भी महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। कार्यकर्ताओं ने जिस सुनियोजित और सुव्यवस्थित व्यूह रचना के अन्तर्गत दो वर्ष तक तूफान अभियान का संयोजन किया उसीके नतीजे से जिलादान सम्पन्न हुआ।

—शशिकान्त मिश्र

पाकेटमार ने पैसे वापस किये

२४ मार्च। राजनगर स्टेशन के टिकट घर की खिड़की पर भीड़ में मेरी जेब से दो रुपये निकल जाते हैं। मैं थका-माँदा, रोज दस मील चलते चलते पेट खराब, अब मधुबनी ८ मील पैदल जाना होगा, एक बेंच पर जरा सुस्ताने के लिए आ बैठा। इतने में पाकिटमार बन्धु माफी मांगते हुए मुझे दो रुपये लौटा देते हैं। उन्हें अपनी गलती पर पछतावा होता है।

याद आया सन् '६१ में वाराणसी के बदनाम मुहल्लों में अपने शान्ति विद्यालय के विद्यार्थियों सहित जाता था, तो भूली-भटकी बहनें 'गीता प्रवचन' खरीदती थीं, "सर्वोदय पात्र" रखती थीं। कोई कितना भी "दुर्जन" हो, उसमें कुछ-न-कुछ सज्जनता अवश्य छिपी होती है और कोई कितना भी सज्जन हो, उसमें कुछ न कुछ दोष अवश्य होते हैं। अतः दूसरों के लिए क्षमा, अपने लिए न्याय।

"यद्यपि ऊपर से आज लगता है कि भारत का नैतिक स्तर बहुत नीचे गिर गया है, लेकिन उसके अन्दर आध्यात्मिक दृष्टि अभी कायम है।"—विनोबा ने सही आँका है।

—जगदीश परानी

वर्षा का पानी : भूमि का संरक्षण

भूमि मानव-समाज का प्राण या आधार है। वर्षा से भूमि का कटाव दिनोंदिन तेजी से होता जा रहा है। इस कारण बहुत-सी भूमि खेती के योग्य नहीं रही और पैदावार घटती जा रही है। पैदावार बढ़ाने के लिए खाद, सिंचाई, बीज, जुताई आदि साधनों की सुविधाएं समय-समय पर उपलब्ध होनी चाहिए, परन्तु भू-सम्पत्ति का संरक्षण यदि न हुआ, तो बाकी सब सुविधाओं का कोई मूल्य नहीं रह जायगा।

भारत में औसत-वर्षा ३७ इंच होती है। इसमें से २२ इंच पानी बहकर समुद्र में चला जाता है। १२॥ इंच पानी फसल को मिलता है। जमीन के ऊपर और अन्दर फालतू पानी बहने से खेती का कितना नुकसान होता है, यह नीचे के आंकड़ों से स्पष्ट है। *ये आंकड़े मध्यप्रदेश के 'किसानी समाचार' से लिये गये हैं।*

'लगातार ४-५ इंच वर्षा हो जाने से एक एकड़ में से २०६० मन मिट्टी बह सकती है। उसके साथ-साथ २५० सेर नाइट्रोजन (१६५० रुपये का), ७२ सेर फासफोरस (७२ रुपये का) और २१६२ सेर पोटाश (२१६१ रुपये का) भी बह जाता है। इस प्रकार मिट्टी को छोड़कर कुल ३६१३ रुपये का नुकसान होता।" इस नुकसान को १८ माह के अन्दर जुताई आदि से प्राप्त कर सकते हैं। मगर वर्षा तो हर साल जारी हो रहेगी, अतः जमीन की क्षति भी जारी रहेगी। इसलिए जमीन की रचना की ओर विशेष ध्यान देना अति आवश्यक है। इसके लिए नीचे लिखे उपाय हैं :

सिर्फ मेढ़ डालने से ही मिट्टी का संरक्षण नहीं होता। *मेढ़ के साथ-साथ नीचे लिखे अनुसार पानी के निकास की योजना* करना भी जरूरी है—

(१) जिस बांध के हिस्से से पानी का निकास हो, उस पर मारवेल घास लगानी चाहिए। पानी घास के ऊपर से बहेगा तो मिट्टी नहीं कटेगी। काली मिट्टी का बांध हो, तो घास लगायें और बांध को मिट्टी में मुरम या रेत मिलानी चाहिए, क्योंकि काली मिट्टी का बांध फटता है। फटा हुआ बांध बरसात के आरम्भ में बहुत रिक करता है।

(२) जहां पानी का निकास हो, वहां पत्थर अच्छी तरह रख दें। *लम्बाई की दोनों दिशाओं में और अपने खेत की तरफ* भी मारवेल घास ही लगायी जाय।

(३) ८-१० फुटी गेल्वेनाइज मोटा टिन मोड़कर पाइप बनायें। दोनों सिरों पर और बीच में लोहे का गोल रिंग बिठायें, *जिससे टिन का पाइप काफी वजन सहन कर सके।* जहां पानी का निकास हो, वहां यह पाइप लगायें। अन्दर की ओर पाइप के चारों ओर भी मारवेल घास लगायें। बाहर की ओर पानी गिरे, वहां १-२ गाड़ी पत्थर डालें। आजकल सिमेंट के पाइप मिलते हैं, मगर उन्हें जोड़ना पड़ता है। जहां पानी गिरता है वहां की मिट्टी अक्सर कटती है, तब जोड़ा गया पाइप निकल जाता है या टूट जाता है।

(४) पानी के आवक प्रमाण और पानी आने का रकबा देखकर बांध छोटा बड़ा बांधना चाहिए। पाया खूब मजबूत हो। पानी की निकासीवाला बांध पत्थर का पक्का हो। छोटी दीवालें हों। दोनों किनारों को बांध से जोड़ते हुए तिरछी ढालदार दीवालों के द्वारा जोड़ दें। दीवाल की ढाल बांध की छोटाई और मोटाई के अनुपात में होगी। वर्षा का पानी दीवाल पर से गिरकर बह जायगा। जहां पानी गिरे, वहां दीवाल पर से लगाकर दो-तीन पक्की सीढ़ियां बना देनी चाहिए, ताकि गिरनेवाला पानी खोदकर मिट्टी बहा न ले जाय। इस प्रकार के बांध हजारों एकड़ तक बहते पानी का दबाव सहन कर सकते हैं।

(५) जहां पानी का निकास करना हो, वहां खेत के किनारे से २०-२५ फुट दूरी पर ४-५ फुट व्यास का पक्का कुआं बांधें। पानी जाने की तरफ कुएं से १००-१५० फुट की दूरी पर समतल के बराबर कुएं की गहराई हो। *कुएं के अन्दर का भाग भी* पक्का हो। नीचे से २-३ फुट का गोल या चौरस पक्का बांधते-बांधते ऊपर तक जायें, सड़कों के पुलों के दोनों ओर जैसा बांधते हैं, वैसी पक्की नाली बांधें। वर्षा का पानी कुएं में गिरकर नाली में होकर चला जायगा। कुआं जमीन से हमेशा ६ इंच ऊंचा हो।

इन पांच नमूनों में पहला-दूसरा नमूना, जहां जमीन सम है और थोड़ी ढालू है, एक एकड़ अन्दर के रकबे में चलेगा। तीसरा नमूना ४-५ एकड़ का पानी सहन कर सकता है। चौथा हजारों एकड़ का पानी संभाल सकता है। ऐसे बांध मैंने ४-५ देखे हैं। पांचवां नमूना १०० एकड़ का पानी संभाल सकता है। चौथा और पांचवां बांध बांधने में सैकड़ों-हजारों रुपये का खर्च आयगा। —गोविन्द रेड्डी
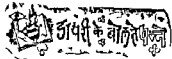
मेरे पति से शराब छुड़वा दीजिए

ग्राम सभा के बाद स्त्रियों की सभा हो रही थी। उनके साथ यहाँ (सरगुजा, मध्यप्रदेश) की विशेष समस्या को लेकर ही बातें शुरू होती हैं। यहाँ की प्रमुख समस्या है 'शराब', और उसीसे सारा दुःख का निर्माण। 'शराब पीने से गरीब होते हैं, घर में कलह होता है, लोग अपनी भूमि को खोते हैं, कोई भी ऐसे मनुष्य की इज्जत नहीं करता है हित अहित का ज्ञान खतम होता है। ऐसे मनुष्य जानवरों से गये बीते हो जाते हैं।' ये सारी बातें विस्तार से समझा रही थी। और गाँव में शराब को मिटाने की तथा भट्टी को बन्द करने की सत्याग्रही युक्ति भी समझा रही थी। खुद शराब मत पीओ, बच्चों को मत पिलाओ, घर में शराब मत बनाओ और अच्छी तरह से पति को समझाओ। घर में शराब न मिलेगी तो पति भट्टी में जाकर शराब पीयेगा, फिर घर आकर खाना माँगेगा, तो शराबी को खाना मत खिलाओ। वह झगड़ा करेगा, मारेगा, पीटेगा, तो उसको उसके बच्चे, घर बार, सब कुछ सौंपकर राम राम करके एक ही दिन में सब शराबियों के घर से बहनें निकल जाओ, जंगल में रहो, खाना न मिलेगा तो एक दो दिन में कोई मरेगा नहीं, लेकिन लौटकर न आना। आखिर अकेला आदमी घर कैसे सम्भालेगा? वह नम्रता से आपके पास जायंगे और क्षमा माँगकर, शराब न पीने का शपथ लेकर बुलाकर लायंगे। इतना साहस करोगी तो वे शराब छोड़ेंगे और भट्ठी भी गाँव से अपने आप ही हट जायगी।

सत्याग्रह का यह तरीका उनको पसन्द आया। अब उस पर साहस से कदम रखने की बात है। ये सब बातें बहनें शान्ति से सुन रही थीं। सभा समाप्ति के बाद एक बहन सामने आयी और कहने लगी कि "आप समझा रही थीं और मैं अपनी दुःख की कहानी स्मरण करके रो रही थी। शराब के कारण मेरे घर में कितना दुःख का निर्माण हुआ! मेरे पति को समझाकर अगर आप शराब छुड़वा देंगी तो मेरा दुःख हरण होगा।" सचमुच स्त्रियों को शराब के कारण कितनी यातनाएँ भुगतनी पड़ती हैं!

वैसे ही ग्रामदानी गाँव के लोगों के साथ ग्रामदान के बाद ग्राम-स्वराज्य स्थापना की चर्चा हो रही थी, चर्चा में एक भाई ने कहा कि—'२० लोगों का मन एक होगा तब तो काम आगे बढ़ेगा। कुछ लोग शराब पीते हैं और वे दूसरे ढंग से सोचते हैं, तो कैसे काम किया जाय?' चर्चा चली, लोगों से पूछा गया— "शराब पीने से दुःख बढ़ता है, गरीबी बढ़ती है, मान सम्मान खोते हैं। यह सब जानते हुए भी क्यों शराब पीते हैं?" जवाब मिला—"बुद्धि ने तो ये बातें समझ ली हैं, लेकिन दिल ने बात को पकड़ा नहीं, इसलिए छोड़ नहीं पा रहे हैं।" आखिर ग्राम स्वराज्य स्थापना के पहले कदम के तौर पर लोगों ने शराब छोड़ने का सामूहिक संकल्प किया।

यहाँ की अनपढ़ बहनों के दिल में भी आध्यात्मिक बुनियाद है। एक दिन एक बुढ़िया आयी और हमारा विचार सुनकर गाँववालों को समझा रही थी—"मानव का एक ही धर्म है, वह है सब पर प्रेम करना, समय पर मदद करना। कोई ५० रुपये कीमती कपड़ा पहनने से ही भगवान् के पास जा नहीं सकता, पुण्य कर्म के द्वारा, प्रेम के द्वारा ही भगवान् को पा सकता है।" और ऐसे भी लोग मिले हैं, जो शिक्षित हैं, वे धार्मिक ग्रन्थ का आधार लेकर कहते हैं, "शराब बनाकर बेचना भी स्वधर्म है, क्योंकि यहाँ के निवासियों के लिए शराब जरूरी है। इसलिए हम शराब का व्यापार करते हैं। हम शराब का व्यापार जितना हो सके उतना निर्मल करते हैं। क्या सजन कसाई ने माँस बेच बेचकर मोक्ष प्राप्त नहीं किया था?"

आजकल अधिकतर लोगों को जंगल में देखा जाता है। रात को महुए के फूल खिलते हैं और सुबह के समय झरते हैं, तो पुरुष स्त्री, बाल बच्चे, सब महुआ चुनने के काम में व्यस्त रहते हैं। महुआ से केवल शराब बना सकते हैं, यही हम जानते हैं। लेकिन अब पता चला कि महुआ गरीब लोगों का खाद्य भी है। दो तीन महीने लोग महुआ खाकर ही गुजारा करते हैं, तो महुआ चुनना माने एक प्रकार का फसल काटना जैसा ही है।

—लक्ष्मी

सारी दुनिया के विद्यार्थी एक हैं !

पिछले महीने फ्रांस के छात्रों ने अपने राष्ट्रपति देगाल के नेतृत्व में चलनेवाली सरकार को उलट देने का संकल्प किया। सारे फ्रांस मे एक हलचल पैदा हो गयी। कुछ लोगों की निगाह मे यह एक नयी सामाजिक क्रान्ति का उफान था। कुछ लोग इसे गृहयुद्ध मानते थे।

फ्रांस के छात्रों का प्रदर्शन शुरू शुरू में पेरिस के लातीनी मोहल्ले में हुआ। जल्द ही छात्रों के इस आन्दोलन को फ्रांस के मजदूरों का भी समर्थन मिल गया। छात्रों के नेतृत्व में ५ लाख से अधिक फ्रांसीसी मजदूरों और अन्य नागरिकों ने पेरिस में भारी जुलूस निकाला।

फ्रांस के युवा छात्र-नेता कोहन बेंदि की आयु २३ वर्ष की है। बेंदि समाजशास्त्र के छात्र हैं। इनके पिता जर्मन यहूदी थे। बेंदि फ्रांसीसी और जर्मन दोनों भाषाएँ अच्छी तरह बोल लेते हैं। कोहन बेंदि ने फ्रांसीसी छात्रों को पुरानी शिक्षा व्यवस्था और पूँजीवादी समाज का विनाश करने के लिए विद्रोह करने की प्रेरणा दी। छात्रों ने सार्बोन विश्वविद्यालय पर कब्जा कर लिया। मजदूरों ने अनेक बड़े-बड़े कारखानों को अपने अधिकार में ले लिया। देश भर में रेलगाड़ियाँ रुक गयी, डाक-व्यवस्था ठप्प हो गयी, और चारों ओर उथल-पुथल का भय फैल गया।

फ्रांसीसी छात्रों ने माँग की कि उनके देश की पुरानी और दकियानूसी परीक्षा-प्रणाली जल्द-से-जल्द खत्म होनी चाहिए। शिक्षा की पुरानी प्रणाली के कारण विश्वविद्यालय ऐसे कारखाने या फैक्टरी का रूप ले चुके हैं, जहाँ से निकलनेवाले छात्र जिन्दगी भर चापलूस और मशीन के पुर्जे से बनकर रह जाते हैं।

दूसरे महायुद्ध के बाद दुनिया भर में अधेड़ों और बूढ़ों का महत्व बढ़ा है। युवकों को शिक्षित होने, और विकास करने का अवसर तो मिला है, लेकिन उनका भाग्य देश के राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक तंत्र के साथ बंधा हुआ है। इस तंत्र या व्यवस्था पर समाज के अधेड़ और बूढ़े लोग पूरी तरह काबिज और हावी हैं। वे अपनी सत्ता और निर्णय करने के अधिकार को न तो बाँटना चाहते हैं, न औरों को सौंपना ही चाहते हैं। चाहे अमेरिका हो या फ्रांस, ब्रिटेन हो या जर्मनी, जापान हो या युगोस्लाविया, चेकोस्लोवाकिया हो या पोलण्ड, भारत हो या अफ्रीका, एशिया हो या दक्षिणी अमेरिका, हर जगह लगभग यही हालत है। हर जगह छात्रों में परिस्थिति के विरुद्ध गहरा असन्तोष है।

अमेरिका के छात्रों में अपनी सरकार की वियतनाम सम्बन्धी नीति के खिलाफ गहरा असन्तोष है। ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, इटली, चेकोस्लोवाकिया, पोलैण्ड और युगोस्लाविया के छात्र अपने देश की केन्द्रित व्यवस्था से असंतुष्ट हैं।

सारी दुनिया के छात्र-आन्दोलनों और भारतीय छात्रों के आन्दोलन मे एक बड़ा फर्क यह है कि विदेशों में छात्र आन्दोलन किसी एक राजनैतिक दल या उसकी नीतियों के समर्थन मे नहीं हुए। विदेशी छात्रों ने अपने देश के सामाजिक-राजनीतिक अधिष्ठान (व्यवस्था, इस्टेब्लिशमेंट) के विरुद्ध आवाज बुलन्द की। अतः उनके आन्दोलनों का दुनिया पर बड़ा प्रभाव पड़ा है।

कांग्रेस-महासमिति के पिछले अधिवेशन में उपस्थित कुछ नव-जवानों ने चेतावनी दी थी कि नेता वर्ग चेता नहीं तो फ्रांस जैसी हालत भारत में भी होगी। यहाँ के विश्वविद्यालयों में हुए उपद्रवों के निम्न आँकड़े इस तरफ संकेत करते हैं। सन् १९६३–६५ के बीच हमारे देश के विश्वविद्यालयों और कालेजों में कुल १,६१७ हड़तालें हुईं, जिनका वर्षवार विवरण इस प्रकार है :

सन्	संख्या
१९६३	११९
१९६४	२६१
१९६५	१,२३७

'गाँव की बात' : वार्षिक चन्दा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए इंडियन प्रेस (प्रा०) लि०, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित।

शुभकामना, चेतावनी, निर्देशन

सर्वोदय सम्मेलन, आबू रोड १० जून '६८

स्वत्व का विसर्जन ?

जो भाषण सुनें एक दो उससे लगा कि सर्वोदय बढ़ा है ग्रामदान हुए हैं। इससे उल्लास हुआ। फिर भी लगता है कि उसमें गांधी तो है लेकिन उसमें कुछ खो गया है। कहीं कुछ और है ? अगर गांधी प्रकट नहीं है तो उनके लिए नीति क्या होगी ? गांधी के जमाने में जो अहिंसा की शक्ति प्रकट हुई वह हिंसा के लिए चुनौती थी। अब जो यह हिंसक शक्ति है उसमें हिंसक शक्ति को कौंपने की जरूरत नहीं पड़ी है। अहिंसा चलती है शांति चलती है लेकिन हिंसा का आसन डोलता नहीं है। अहिंसक नीति में से शक्ति जगे उसका क्या उपाय है ? मैं इस स्थिति पर पहुँचा हूं कि जो छिटफुट हिंसाएं हो रही हैं वे जिस सभ्यता का कुछ पहले विकास हुआ उसका परिणाम हैं।

पावर प्रापर्टी परसनलिटी इन तीनों का भाव स्वत्व में आ जाता है। हम जिस प्रवाह में आ रहे हैं वह स्वत्व की दिशा में ही आ रहे हैं। यह स्वत्व भाव दूसरे से टकराता है। स्वत्व का उपार्जन नहीं करना है स्वत्व का विसर्जन करना चाहता है। स्वत्व को सब में विलीन करते हैं। स्वत्व के विलीनीकरण के अभाव में गांधी शक्ति प्रकट नहीं होती है।

संकोच होता है कहने में कि ग्रामदान और सर्वोदय में जो कुछ हुआ है सुनकर आनंद होता है लेकिन उसमें एक भय है।

कहीं ऐसा तो नहीं कि अहिंसक शक्ति का अभाव है तो सर्वोदय विचार का स्वत्व का सत्व में विसर्जन नहीं हो रहा हो ? कहीं ऐसा तो नहीं कि सब में खो जाने की बजाय उसमें से स्वत्व का निर्माण हो रहा हो ?

—जैनेन्द्र कुमार

खादी का संदेश

सन् १९४८ के बाद '४८ तक का हिंदुस्तान अपने साल पूरे करने में एक साल से लगा हुआ हिंदुस्तान था। हालां कि हिंदुस्तान का विभाजन हुआ था और हिंदुस्तान के दो बड़े टुकड़े खून से भरे थे। सारा पंजाब निकल गया था और बंगाल में ३०-४० लाख रिफ्यूजी बाहर से आये थे। फिर भी एक उत्साह की हवा थी आशा की हवा थी। हिंदुस्तान जरूर आगे बढ़ा है जहाँ तक उद्योग का सवाल है। लेकिन किसी भी हिंदुस्तानी से पूछा जाय कि आगे बढ़ा है कि नहीं तो ऐसे हिंदुस्तानी कम मिलेंगे जिनको संतोष होगा। हिंदुस्तान छोड़कर आप दूसरे मुल्क में चले जायंगे जो धन धान्य से भरे हैं और जहाँ संपत्ति की कोई सीमा नहीं है वहाँ रूस और अमेरिका में भी लोग यहाँ महसूस कर रहे हैं कि मानव समाज का क्या होनेवाला है ? अगर सभी जगह यह हालत है तो इसका कोई गहरा कारण जरूर होगा और है ही।

प्रकृति की रचना में एक खास चीज है कि हरेक चीज जो पैदा होती है उसके साथ साथ उसके गुण भी पैदा होते हैं और उसका स्वभाव भी निर्माण होता है। कोशिश होती है उसके गुण बदलने की उसका स्वभाव बदलने की लेकिन आज तक जितनी कोशिश की गयी कोई सफलता नहीं मिली। कोई नमक का गुण बदलने की कोशिश करे तो वह मीठा नहीं हो सकता और चीनी नमकीन नहीं हो सकती। इंसान की भी एक खासियत है उसका भी एक स्वभाव है। उस स्वभाव से उल्टा अगर स्वभाव को छोड़ एक तरफ से दूसरी बाजू जाने की कोशिश करता है तो उसको फिर वहीं आना पड़ता है जहाँ से अलग रास्ता अख्तियार किया था अगर उल्टा रास्ता अख्तियार किया था तो। हजारों साल का मानव-समुदाय का यह अनुभव रहा है।

हिंदुस्तान में कौन है जो गांधी को छोड़कर इस मुल्क को संघर्ष से बचा सकता है ? हिन्दुस्तान की सैन्य शक्ति ? हिन्दुस्तान की संसद ? कोई राजनैतिक दल ? यह बाहर का जो संघर्ष है जड़ तक पहुँचे हुए जहर और विषमता का संघर्ष है। जो हिंसा अब उभरने लगी है वह तो एक बाहर की थोड़ी सी हिंसा है हिंदुस्तान के रग रग में, हिंदुस्तान के बूंद बूंद में भरी हुई हिंसा जो है, जब प्रकट स्वरूप लेगी तो एक बाजू गीता के ११वें अध्याय में विश्व स्वरूप का दर्शन होगा दूसरी बाजू अर्जुन कांपता खड़ा होगा। कहाँ है हिंदुस्तान आज ? किसी की अंगुली हिंदुस्तान की नब्ज पर है क्या और कोई ताकत है जो स्थिर रख सके अपनी अंगुली हिन्दुस्तान की नब्ज पर ? आज अगर हिंदुस्तान में शांति है उसका श्रेय हिंदुस्तान की जनता को है। और हिंदुस्तान की जनता में इतनी सहिष्णुता नहीं होती और खास तौर से जो घर का बोझ उठा रही हैं बहनें उनमें अपनी त्याग वृत्ति पर निर्भर सहिष्णुता नहीं होती तो आज हम शांति से बैठकर इतनी चर्चा नहीं कर पाते।

विषमता से भरे हुए इस मुल्क में जहाँ इतनी बेहालियत है कंगालियत है परेशानी है जहाँ लाखों आदमी फिकर में पड़े हैं कि हमारे बच्चों को सूखी रोटी मिल सकेगी कि नहीं लाखों की तादाद में उन लोगों के फिकर का बोझ उठाना आसान नहीं है। लेकिन उस फिकर के बोझ को हम फिकर कर रहे हैं उनको विश्वास दिलाने की कोशिश हम क्या कर रहे हैं ? आज गांधीजी जिंदा होते तो मन से बैठते क्या ? दिल्ली और अलग-अलग राज्यों में जो सरकार बैठी हुई है और अपना काम कर रही हैं वे काम कर सकती क्या ? और भारत में इतनी सहिष्णुता नहीं होती तो सरकार टिक सकती क्या ?

हम मानते हैं कि भारतीय अर्थ कारण का सवाल आर्थिक नहीं है नैतिक है इंसानियत का सवाल है। कहाँ तक यह आँकड़ेबाजी चलती रहेगी ? कहाँ तक यह खोखली पंचवार्षिक योजना की बात चलती रहेगी— अगर इसमें इंसानियत की भावना नहीं भरी रहेगी ? अच्छी बात है भाखरा नंगल हो गया अच्छी बात है कल कारखाने हो गये अच्छी बात है हिंदुस्तान में इतने करोड़ बच्चे पढ़ रहे हैं अच्छी बात है इतने रास्ते वगैरह बन गये लेकिन बुनियादी बात को छोड़कर हम आगे जायंगे तो पश्चिम जिस भूल का→

राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी समिति

प्रधान केन्द्र	गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति
१ राजघाट कोलोनी, नयी दिल्ली—१	टुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का भेरों
फोन : २७६१०५	जयपुर—३ (राजस्थान)
	फोन : ७२६८३

अध्यक्ष : श्री डा० जाकिर हुसैन, राष्ट्रपति
उपाध्यक्ष : श्री वी० वी० गिरी, उपराष्ट्रपति
अध्यक्ष : कार्यकारिणी :
श्रीमती इन्दिरा गांधी, प्रधानमंत्री
मंत्री : श्री आर० आर० दिवाकर

अध्यक्ष : श्री मनमोहन चौधरी
मंत्री : श्री पूर्णचन्द्र जैन

गांधीजी के जन्म के १०० वर्ष २ अक्टूबर, १९६९ को पूरे होंगे। आइये, आप और हम इस शुभ दिन के पूर्व—

(१) देश के गाँव-गाँव और घर-घर में गांधीजी का संदेश पहुँचायें।

(२) लोगो को समझायें कि गाधीजी क्या चाहते थे ?

(३) व्यापक प्रचार करें कि विनोबाजी भी भूदान-ग्रामदान द्वारा गाधीजी के काम को ही आगे बढा रहे हैं।

यह सब आप-हम कैसे करेंगे ?

• यह समझने समझाने के लिए रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति ने विभिन्न प्रकार के फोल्डर, पोस्टर, पुस्तक-पुस्तकादि सामग्री प्रकाशित की है। इसे आप पढ़ें और दूसरों को भी पढ़ने को दें।

• इस सब सामग्री और विशेष जानकारी के लिए उपसमिति के ऊपर दिये गये जयपुर कार्यालय से पत्र-व्यवहार करें।

→ दुष्परिणाम आज भुगत रहा है, भारत को भी भुगतना पड़ेगा। हमारी दृष्टि से खंडनात्मक शक्तियाँ जो आज हिन्दुस्तान में बढ़ी हैं, उनका प्रत्युत्तर रचनात्मक काम हैं, और रचनात्मक काम की बुनियाद खादी है। यह संदेश हमको पहुँचाना है जनता के घर घर में।

— उ० न० ढेबर

रचनात्मक कार्यक्रमों की महत्ता

तीन पंचवर्षीय योजनाएं पूरी हुईं, चौथी योजना शुरू होगी। इस बीच काम काफी हुआ, लेकिन फिर भी लोगों में असन्तोष काफी है। और मैं तो योजना-आयोग के सदस्य की हैसियत से बहुत घूमा हूँ अपने देश में। मैंने यह भी देखा है कि जहाँ ज्यादा काम होता है, किसी 'कांस्टीट्यूएंसी' में मिनिस्टर साहब वगैरह हो तो काम काफी कर लेते हैं अपनी 'कांस्टीट्यूएंसी' में। उनके यहाँ जाइए तो उनमें भी ज्यादा असन्तोष है। लोग कहते हैं कि इतना किया, इतना नही किया, तो इतना और कर दीजिये।

आज हम दुनिया में देखते हैं, अमेरिका आदि देशो में देखते हैं, वहाँ के लोग चिल्लाकर कह रहे हैं, कि ये जो घटनाएँ हो रही हैं, क्रूरता की, हिंसा की, वह 'ट्रेजडी आफ एफ्लुयेंस' हैं। आर्थिक सम्बन्धो की करुण-कथा है। लोगों के दिल में आज एक भूख है नैतिकता के लिए, और ऐसी सरकार चाहते हैं, जो कुछ सत्य है, उचित है, उसको करे।

भारत में हमने कहा कि 'वेलफेअर स्टेट' हम कायम करेंगे। उसका भी आज कुछ चला नही। फिर हमने कहा कि 'सोशलिज्म' हम यहाँ लाना चाहते हैं—समाजवाद, *'सोशलिस्ट सेक्युलर डिमोक्रेसी।' उसका भी* कोई जादू नहीं चला। लोगों में असंतोष है, लोगो में एक आकांक्षा है कि हमारा देश जिस तरह से चलना चाहिए, उस तरह से चल नहीं रहा है। मैं जितना ही सोचता हूँ, उतना ही महसूस करता हूँ कि अगर भारत को सही दिशा में जाना है तो, आज भले ही कुछ लोग समझें कि पुरानी बातें पड़ गयी हैं गाधीजी के आदर्शों की और सर्वोदय की, लेकिन दिशा तो सही है, और उसी तरफ जाना होगा।

विनोबाजी अक्सर कहते हैं, कि ग्रामदान→

सहरसा जिलादान अभियान : प्रयोग की एक नयी मंजिल

सहरसा जिला हिमालय और गंगा नदी के बीच में स्थित है। बिहार को गंगा नदी दो भागों में विभक्त करती है—उत्तर और दक्षिण। उत्तर बिहार अगर अनाज का भंडार है तो दक्षिण बिहार खानों एवं उद्योगों का आगार। उत्तर बिहार में प्रति व्यक्ति जमीन करीब ३ एकड़ है किन्तु इसकी तुलना में दक्षिण बिहार में जमीन अधिक है और जनसंख्या कम।

उत्तर बिहार में सारण, चंपारण, मुजफ्फरपुर, दरभंगा, सहरसा, पूर्णिया, और उत्तर मुंगेर तथा उत्तर भागलपुर है। दरभंगा का जिलादान करीब डेढ़ साल पहले घोषित हुआ था। पूर्णिया का जिलादान अप्रैल'६८ में घोषित हुआ। उत्तर मुंगेर और उत्तर भागलपुर के कुल प्रखंडों का भी दान हो चुका है। मुजफ्फरपुर का एक अनुमंडलदान हो गया, दूसरा होनेवाला है, और तीसरे में जोर लगा है। यह जिला भी जिलादान के करीब है। सारण, चंपारण, और सहरसा में प्रखंडदान की गति मन्द थी। बाबा के सामने हमेशा टंगे रहनेवाले बिहार के मानचित्र में स्पष्ट दीख रहा था कि इन तीनों जिलों में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

→ की जड़ तो अध्यात्म है। यह तो एक स्थूल रूप है, जमीन का बंटना और वहीं ग्राम प्रतिनिधित्व होना वगैरह। मैं तो आपसे यही निवेदन करना चाहता था कि जितने काम हम करते हैं रचनात्मक—चाहे वह ग्रामदान का हो, नयी तालीम का हो, खादी ग्रामोद्योग का हो, गोसेवा का हो, मद्यनिषेध का हो—सभी कार्यक्रम आज के जमाने में भी उतने ही आवश्यक हैं, जितने कि सन् १६२० में थे, बल्कि उससे भी ज्यादा आवश्यक हैं, क्योंकि आज जो हमारी कठिनाइयाँ हैं, वह बढ़ गयी हैं। कभी भी हमारे मन में नहीं आना चाहिए कि हम पिछड़ गये हैं। मेरे मन में जरा भी शक नहीं है कि यह बिल्कुल वैज्ञानिक और व्यावहारिक कार्यक्रम है। उनको चलाने में हमारा और दुनिया का भला है। —श्रीमन्नारायण

राँची में हुनने सर्वोदय संघ की बैठक में बाबा का कार्यक्रम तय किया था कि २ अक्तूबर '६८ तक बिहारदान के संकल्प को पूरा करने के लिए हमें प्रेरणा और शक्ति मिले, इसलिए बाबा का बिहार के सभी जिलों में एक-एक सप्ताह का दौरा हो। लेकिन बाबा ने अपनी 'स्ट्रेटजी' स्पष्ट की, और कहा कि दरभंगा तथा पूर्णिया जिलादान के बीच सहरसा क्यों बचा रहेगा? सहरसा का काम तो इन दो जिलों के दबाव से ही पूरा होना चाहिए। "तीन सप्ताह में सहरसा जिलादान" होना चाहिए ऐसा भाव बाबा ने व्यक्त किया। ४ जून से २४ जून तक का उनका कार्यक्रम इस जिले में बना।

सहरसा में २१ प्रखंड हैं २ का दान पहले हो चुका था। लेकिन कार्यकर्ताओं की शक्ति देखते हुए यह प्रयत्न बिल्कुल अनाधिकार ही लगा। बात समझ में नहीं आयी। उधर बिहार के कार्यकर्ता आज रोड सम्मेलन में आने के लिए उतावले थे। बलिया सम्मेलन में आने पर रोक लगी थी, अतः इस बार आने की छटपटाहट थी। लेकिन बाबा ने पूर्णिया और मुंगेर के कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओं को सहरसा के लिए रोक लिया। दरभंगा से भी कुछ कार्यकर्ताओं को बुलाया गया। सहरसा के सभी कार्यकर्ता रह गये। गोपालजी भा शास्त्री को भी बाबा ने रोक लिया। परन्तु २१ दिनों में २० प्रखंड का दान तो किसी भी गणित की सीमा में आ नहीं रहा था। कार्यकर्ता कहाँ से आयें और आयें भी तो उनके लिए आवश्यक खर्च आदि की क्या व्यवस्था हो? कुछ भी प्रबन्ध नहीं था और बाबा सहरसा पहुँच गये। सहरसा के जिला ग्रामदान-प्राप्ति के संयोजक एक तरुण कार्यकर्ता महेन्द्र भाई ने 'एम्प्लायमेण्ट एक्सचेंज' को सूचित किया, कि अगर ग्रामदान के काम में नौकरी चाहनेवाले नौजवान कुछ दिनों के लिए लगते हैं तो उनके बेकार समय का सदुपयोग भी होगा, और सामाजिक काम करने का अनुभव भी होगा। इससे निश्चय ही भविष्य में नौकरी मिलने में भी उनको सुविधा हो सकती है, अतः ऐसे सभी नौजवानों को उन्होंने आह्वान किया, जो नौकरी के लिए अपना नाम 'एम्प्लायमेण्ट एक्सचेंज' में दर्ज कराये हुए थे। यह भी कहा कि इस अवधि में सिर्फ उनके खाने-पीने और घूमने आदि का ही खर्च दे पायेंगे। किन्तु प्रारम्भ में उन्हें अपनी ओर से ही खर्च करना पड़ेगा और उनका काम संतोषजनक हुआ तथा उनका असर लोगों पर पड़ा तो वे ग्रामदान के 'कूपन' बेचकर स्वयं संग्रह इकट्ठा करेंगे। उससे उनका कुछ आवश्यक खर्च वहन किया जा सकेगा।

इस अपील पर जिन नौजवानों ने अपने को प्रस्तुत किया, उनमें से करीब १५० लोगों को चुनकर उनका शिविर करके उन्हें काम में लगाया गया और उनको खाने खर्च के लिए ग्रामदान कोष के 'कूपन' दिये गये। कुछ खादी के कार्यकर्ता तथा राजनैतिक पक्ष के कार्यकर्ता भी लगे और २० दिनों तक करीब १६ प्रखंडों में अभियान चलाया गया। फलस्वरूप २५ तारीख को जब बाबा सहरसा से प्रस्थान करने लगे तो सत्तरकटैया, सिमरी-बख्तियारपुर, गुम्हिया, मधेपुरा, सिंहेश्वर, कुमारखंड, विहारीगंज एवं आलमनगर, इन आठ प्रखंडों का प्रखंडदान समर्पित किया गया तथा राघोपुर, मरौनागंज, नौहट्टा एवं महिषी, इन चार प्रखंडों में अधिकांश काम पूरा हो चुका था।

वैसे तीन सप्ताह में जिलादान पूरा नहीं हुआ किन्तु जो भी सफलता मिली वह ग्रामदान के अभियान में एक अनोखा अनुभव रहा। इतने कम दिनों में बिना किसी व्यवस्थित संगठन के आठ प्रखंडदान पहले कभी भी किसी जिले में नहीं प्राप्त हुए थे। इस बार कार्यकर्ताओं ने हस्ताक्षर कराने के साथ-साथ लोगों से १ रुपया से ५ रुपया तक चन्दा भी प्राप्त किये, हालाँकि कुछ ही कार्यकर्ताओं ने ऐसा किया। [illegible]

बाबा की सहरसा से विदाई के अवसर पर कांग्रेस के प्रमुख नेता भूतपूर्व संसद सदस्य लहटन चौधरी ने, जिन्होंने जिलादान में काफी सहयोग किया है, आगे भी जिलादान का काम शीघ्र ही पूरा करने में काफी सहयोग करने का वादा किया। बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष गोपालजी भा शास्त्री

पंजाब में प्रगति

चण्डीगढ़ से प्रेषित श्री ओमप्रकाश त्रिखा से तार द्वारा सूचना मिली है कि शिमला के पास कसुमपति प्रखण्ड में ३१५ ग्रामदान, और कोटकपुरा प्रखण्ड में २२ ग्रामदान प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार अब तक पंजाब में कुल ३,६३३ ग्रामदान हो चुके।

टीकमगढ़ जिलादान-अभियान

श्री काशिनाथ त्रिवेदी ने मध्य प्रदेश के आन्दोलन की प्रगति का ब्यौरा देते हुए हमारे प्रतिनिधि को बताया कि प्रदेश में १८ अप्रैल से पूर्व कुल २,७०१ ग्रामदान थे। उसके बाद वे चलाये गये अभियानों में ३२० ग्रामदान १ जुलाई '६८ तक प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार अब मध्य प्रदेश में ग्रामदानी गाँवों की संख्या ३,०२१ हो गयी है। आपने बताया कि टीकमगढ़ में जिलादान का अभियान चलाया जा रहा है। उसी क्षेत्र में विनोबा द्वारा संचालित लोकयात्रा भी चल रही है और गांधी-जन्म शताब्दी समिति के विद्यालय का नया सत्र भी शुरू हुआ है। इन प्रवृत्तियों का भी प्रत्यक्ष लाभ जिलादान अभियान को मिल रहा है।

का काफी समय इस जिले को मिला है और आगे भी मिलेगा। बिहार-कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष राजेन्द्र मिश्र का बीमारी के कारण इस अवधि में काफी सहयोग नहीं मिल सका, किन्तु भविष्य में वे लगनेवाले हैं। लगता है कि शीघ्र ही सहरसा जिले का भी दान हो जायगा। बाबा सहरसा से मुजफ्फरपुर जिले के हाजीपुर अनुमण्डल, और सारण होकर बलिया पहुँचे हैं। और उसके बाद फिर एक सप्ताह सारण में समय देकर चम्पारण पहुँचनेवाले हैं। बाबा कहते हैं—चम्पारण उनके लिए 'वाटरलू' है।

—कैलाश प्रसाद शर्मा
सहमंत्री, बिहार ग्रामदान प्राप्ति समिति

बुलन्दशहर में १२१ ग्रामदान

बुलन्दशहर जिले की अनूपशहर तहसील के डिबाई, दानपुर, अनूपशहर तथा ऊँचा गाँव विकास-खण्डों में अभियान गत १५ से २१ जून तक सम्पन्न हुआ, जिसमें हिमांचल प्रदेश, पंजाब, हरियाना, राजस्थान तथा उत्तर-प्रदेश के २२५ कार्यकर्ताओं ने ९० टोलियों में विभक्त होकर गाँव-गाँव में ग्रामदान के क्रान्तिकारी विचार को घर-घर एवं व्यक्ति-व्यक्ति तक पहुँचाया। फलस्वरूप १२१ गाँवों ने अपने यहाँ ग्रामस्वराज्य स्थापित करने के उद्देश्य से ग्रामदान की घोषणा की।

देहरादून में ग्रामदान

देहरादून जिले के डोईवाला प्रखण्ड के ६४ ग्रामों ने अपना ग्रामदान घोषित किया है। मई २० से २७ तक कई प्रान्तों के ७५ कार्यकर्ताओं ने ग्रामदान-अभियान में भाग लिया।

स्मरणीय है कि अक्तूबर '६७ में गांधी-जयन्ती के अवसर पर सहसपुर प्रखण्ड के १३८ ग्रामों के ग्रामदान की घोषणा पहले ही की जा चुकी है। इस प्रकार जिले में कुल २३२ ग्रामदान हो चुके हैं।—लक्ष्मीन्द्र प्रकाश

फर्रुखाबाद जिलादान की ओर

फर्रुखाबाद जिले में ६ अप्रैल से १३ अप्रैल '६८ तक ग्रामदान अभियान चला। १६८ ग्राम ग्रामदान में सम्मिलित हुए। यह अभियान मुहम्मदाबाद, बढ़पुर तथा कमालगंज ब्लाकों में एकसाथ चलाया गया जिसमें ब्लाक के २५० अध्यापकों तथा स्थानीय सर्वोदयी कार्यकर्ताओं एवं गांधी आश्रम के १०० प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

पूर्व उत्साह को देखकर पुनः राजेपुर ब्लाक में २ जून से १० जून '६८ तक ग्रामदान-अभियान चलाया गया, जिसमें १०० अध्यापक ४० गांधी आश्रम के कार्यकर्ता तथा स्थानीय साथी व पड़ोसी जिलों के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। ब्लाक के १७७ गाँवों में (जिनमें से २० नाचिरागी गाँव थे) से १२८ गाँव ग्रामदान में सम्मिलित हुए। इस प्रकार एक तहसील के पूरे ब्लाकों में अभियान चलाया गया। अब जिले के साथियों तथा जनता में ग्रामदान-विचार के प्रति आस्था जमती जा रही है, जिसे देखकर कनौज तथा छिबरामऊ तहसील में बारी बारी से अभियान चलाकर जिलादान की ओर तूफानी गति से बढ़ने का प्रयत्न हो रहा है।

—सुदामा प्रसाद, श्री गांधी आश्रम
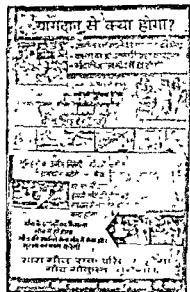
चार रंगी पोस्टर

यह चित्र 'ग्रामदान से क्या होगा?' पोस्टर का है, जिसमें ग्रामदान से गाँव में क्या-क्या होता है, इसका दर्शन कराया है। चार रंग में छपा, २०"×३०" आकार का यह पोस्टर गाँवों में, कसबों में और विभिन्न क्षेत्रों में दीवालों पर चिपकाने योग्य है।

इसका प्रकाशन गांधी जन्म शताब्दी की गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति की ओर से हुआ है।

ग्रामदानी क्षेत्रों तथा संभाव्य क्षेत्रों में प्रचार के लिए कृपया सम्पर्क करें—

संचालक, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २४ शिलिंग, या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ४२

शुक्रवार १९ जुलाई, '६८

अन्य पृष्ठों पर

सम्पादक

राममूर्ति

•

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश

फोन : ४२८५

अन्धेरे के बीच का उजाला

देश की बहुत पुरानी संस्था, जिसकी दुनिया प्रशंसा करती है, उसका पुराना नाम है 'जनपद'। जनपद में रोग अपना कदम नहीं रखता था।

वेद की प्रार्थना में यह बात कही गयी है कि—

हमारे गाँव में समग्र विश्व का दर्शन हो, परिपुष्ट और रोगरहित हर गाँव संपूर्ण आरोग्यमय। इतनी प्राचीन संस्था जनपद है। उसके जो कर्तव्य होते थे ग्राम समिति की ओर से, उसमें वीर पुरुष प्रजावान् काम करता था। पाँच जनों में अनुकूल गाँव के पाँच जन। उनके अनुकूल काम करेगा गाँव का हर बुद्धिमान मनुष्य।

यह हमारा सारा प्रयत्न जनपद जगाने का है। देश में जनपद मजबूत था। जब बाहर से आक्रमण हुआ तब देश परकीयों के हाथ में चला गया। यानी देश पराधीन हो गया। लेकिन उस समय तक भी गाँव के जनपद स्वाधीन थे। उसके पहले से पराधीन काल तक देश भी स्वाधीन थे, गाँव भी स्वाधीन थे। देश तो नाममात्र का स्वाधीन था, अनेक राज्यों में बटा था, फिर भी सारा भारत एक था। गाँव के जनपद पूर्ण स्वाधीन थे। हिमालय से कन्याकुमारी तक भारत भूमि प्राणायाम कर रही थी, ऋषियों की ऐसी ऊँची कल्पना थी। लेकिन तब वहाँ विज्ञान नहीं था। आज विज्ञान है।

जब अंग्रेज आये तो उन्होंने आयोजन नियोजन अच्छी तरह से किया। इस दृष्टि से कि गाँव गाँव से कच्चा माल निकाल सकें, उनका शोषण कर सकें। इसमें वे सफल हो गये, गाँव-गाँव टूट गये। गाँव पराधीन हो गये, देश भी पराधीन हो गया।

गांधीजी और उनके साथी कृपालानीजी जैसे ऋषियों की कोशिश से देश स्वाधीन हुआ, *लेकिन गाँव पराधीन रहे।*

पराधीन गाँवों का स्वाधीन देश, इसकी क्या हालत रहेगी? इसका मजा हम चख चुके हैं। अब और नहीं चाहिए। गाँव भी स्वाधीन, देश भी स्वाधीन, ऐसी स्थिति लानी है। गाँव में जनपद को स्थापित करना है—

देश बनेगा विश्व, भारत बनेगा प्रान्त
जिला बनेगा तहसील, गाँव बनेगा परिवार
तब होगी दुनिया में शान्ति।

एक बात, साथ ही सी बात। उत्तर प्रदेश में १ लाख १० हजार गाँव ग्रामदान में आ जायें, यह भाषा आप बोल रहे हैं। हर गाँव को ग्रामदान में शामिल करना है। जनशक्ति से काम होना है। हर गाँव में आपकी बात पहुँचे, विचार का स्वाध्याय हो, इसके बिना काम कच्चा रह जायगा।

दिल्ली की आवाज गाँव गाँव में पहुँचती तो देश बरबाद हो जाता। ग्राम शक्ति अगर खड़ी करनी है तो विचार के स्वाध्याय की योजना चलानी होगी।

(बलिया १०-७-६८) —विनोबा

ग्रामदान-आन्दोलन को मेरा पूर्ण समर्थन

आचार्य कृपालानी की उद्घोषणा

१२ जुलाई को उत्तर प्रदेश के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के सम्मेलन की द्वितीय बैठक में देश के वयोवृद्ध नेता आचार्य कृपालानी ने कहा कि ग्रामदान-आन्दोलन को मेरा पूर्ण समर्थन प्राप्त है। इसीलिए हमारे गांधी आश्रम के कार्यकर्ता इस आन्दोलन में लगे हुए हैं।

अपनी चिरपरिचित लोकप्रिय विनोदपूर्ण शैली में आपने कहा कि स्वराज्य के आन्दोलन में एक ही नेता था—महात्मा। बाकी हम सब उनके बन्दर थे। महात्मा के जाने के बाद उन बन्दरों ने अपने को नेता मान लिया, इसीलिए वास्तविक स्वराज्य हुआ ही नहीं। आपने कहा कि जीवन से सम्बन्धित किसी भी क्षेत्र से हम उदासीन नहीं रह सकते। राष्ट्र के जीवन का कोई भी पहलू छोड़ा जायगा तो वहीं से धोखा हो सकता है। इसीलिए महात्मा ने पाखाना-सफाई से लेकर अंग्रेजी सरकार को भगाने तक के सारे काम किये।

आपने एक दूसरे प्रश्न का जवाब देते हुए कहा कि भूदान-ग्रामदान कोई अकेली चीज नहीं है। जीवन का हर क्षेत्र उससे जुड़ा हुआ है। देश के विकास के लिए गुलामी एक जबरदस्त रुकावट थी, वह हटी, लेकिन उसके बाद के सारे काम ज्यों के त्यों अभी पड़े हैं। उन्हें करना है।

इस प्रश्न के उत्तर में कि आप अपने विचार के अनुसार कोई नया संगठन क्यों नहीं खड़ा करते आचार्य कृपालानी ने कहा कि विनोबा का यह जो काम चल रहा है उसे करो। मेरी उमर अब ८२ साल की है। अब नया संगठन मैं क्या बनाऊँ? विनोबा जनशक्ति की बात कहते हैं। वह जनशक्ति बनेगी तो समाज बदलेगा, सरकार भी अपने आप खत्म होगी।

एक श्रोता ने जब पूछा कि फिर आप इस काम में क्यों नहीं लगते तो आचार्यजी ने कहा कि मेरा स्वधर्म राजनीति है। मैं सन् १९१६ से इसमें लगा हूँ। इसे छोड़ नहीं सकता। लेकिन दरवाजे और रास्ते भिन्न होते हुए भी हमारी और विनोबा की मंजिल एक है। हम संसद में रहेंगे और आपकी आवाज उठायेंगे।

यह पहला अवसर है जब आचार्य कृपालानी ने सभा के मंच से ग्रामदान-आन्दोलन को अपना खुला समर्थन दिया। आशा है, इससे न केवल उत्तर प्रदेश के काम में, बल्कि पूरे देश के ग्रामदान-आन्दोलन में शक्ति और गति आयगी।

+ + +

सवाल : स्वराज्य की लड़ाई में आपने हमारा नेतृत्व किया था, ग्रामस्वराज्य की लड़ाई में आप हमारा नेतृत्व क्यों नहीं करते?

जवाब : गलत बात है कि मैंने नेतृत्व किया। नेता एक था—महात्मा। मैं उनका एक बन्दर था, सिपाही था। देश का बुरा हाल इसलिए है कि जो सिपाही थे वे अपने को नेता मानने लगे।

सवाल : यह सब सुनकर तो आपको निराशा है ऐसा लगता है?

जवाब : निराशा बिल्कुल नहीं है। गांधी पहले खुद कुछ करता था तब कहता था। मेरी कुछ करने की स्थिति नहीं है अब, इस लिए कहूँ क्या? गांधी की बात सबके लिए उपलब्ध है। उसको पढ़ो और करो।

सवाल : क्या ग्रामदान से देश बनेगा?

जवाब : भाई देखो, कल जयप्रकाश ने कहा कि यह शुरुआत है। खाली एक चीज से काम नहीं होता। गांधी ने कहा कि चरखा चलाओ। चरखा एक प्रतीक था, उसके साथ बहुत सारे काम चलते थे। गांधी ने सरकार के जुल्म के खिलाफ लड़ाई लड़ी और पाखाना सफाई का भी काम किया—जीवन का, राष्ट्र का, कोई पहलू छोड़ा नहीं। सब चीजें जरूरी हैं, उसे छोड़ नहीं सकते। जिस चीज को छोड़ेंगे वह अधिक धोखा दे सकती है। सिर्फ विदेशी सरकार ही जालिम नहीं होती, स्वदेशी सरकार उससे भी अधिक जालिम हो सकती है। जालिम सरकार को हटाने का काम महात्मा नहीं उठाता तो चरखे आदि की बात कोई नहीं सुनता। इसीलिए उसने पाखाना-सफाई से लेकर सरकार को निकालने तक का काम किया। अगर आप भी चाहते हैं कि देश बने तो सभी काम करने होंगे। भूदान-ग्रामदान का मतलब यही है। वह अकेली चीज नहीं है। सब चीजें एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। महात्मा कहता था कि जो चीज हमारी जिन्दगी से जुड़ी हुई है, जिसमें हमारा दखल है, उसे हम छोड़ नहीं सकते। वह आजादी इस वास्ते थी कि देश आगे बढ़े। गुलामी एक रुकावट थी, विकास के रास्ते में, इसलिए उसे हटाया; लेकिन रुकावट हट गयी तो हमने समझा कि काम खत्म हो गया। इसीलिए आज भी समस्याएँ जहाँ की तहाँ हैं।

हमारे देश-जितना ढोंग दुनिया में कहीं नहीं है। जो शराबी है, वही शराबबन्दी के लिए हाय-हाय करता है। बात यह है कि स्वराज्य अभी हुआ ही नहीं। उसके लिए आपको काम करना है।

सवाल : विनोबा, जयप्रकाश को आप यह बात क्यों नहीं समझाते?

जवाब : मैं तो आपको समझा रहा हूँ। विनोबा को मैं क्या समझाऊँगा? उनको तो गांधी ने पहला सत्याग्रही बनाया था। वे खुद देश की स्थिति समझते हैं और उसके लिए काम कर रहे हैं।

सवाल : देश के विकास के लिए आप कोई ठोस संगठन क्यों नहीं करते?

जवाब : यह जो प्रयास हो रहा है विनोबा का, आपके द्वारा, वह तो हो ही रहा है। उसे करो। मेरी उमर अब क्या है नया संगठन बनाने की। और, फिर दो-दो पार्टियाँ बनाकर तो मैंने देख लिया!

सवाल : क्या आपका समर्थन ग्रामदान आन्दोलन को प्राप्त है?

जवाब : मेरा पूरा समर्थन प्राप्त है। नहीं होता तो आश्रम के कार्यकर्ताओं को उस काम में लगने क्यों देता? विनोबा कहते हैं जनशक्ति की बात, वह जनशक्ति बढ़ेगी तो यह सरकार अपने आप खत्म होगी। हमारी मंजिल एक है, लेकिन दरवाजे और रास्ते भिन्न हैं।

सवाल : तो आप इसमें क्यों नहीं जाते?

→

'हमने तो सिर्फ ग्रामदान किया था !'

बलिया के लोगों का यह कहना सही था कि उन्होंने केवल ग्रामदान किया था। हमने इसमें ज्यादा कुछ करने को कहा नहीं था। प्रखण्डदान और जिलादान तो हमारी अपनी गणित से हुआ जिसे वे अच्छी तरह जानते नहीं थे। कुछ भ्रम कुछ भय कुछ रुचि कुछ आकर्षण जिलादान को लेकर एक मिला-जुला भाव लोगों के मन में पैदा हुआ। जिसमें जो रहा हो कुतूहल सबमें था। हर एक कहता था— जरूर कुछ हो रहा है। वह कुछ क्या है अब भी स्पष्ट नहीं है लेकिन निगाहें आगे देखने लगी हैं। बलिया के लोगों ने सन् १९४२ में एक हफ्ते तक अंग्रेजी राज का अंत होते देखा है। जो उस वक्त कांग्रेस के कार्यकर्ता थे इस वक्त सर्वोदय के कार्यकर्ता हैं। उस वक्त जिले की सत्ता छीनी गयी थी इस वक्त पूरा जिला ही दान में ले लिया गया। दान शब्द ने और ४२ की याद ने दिमाग में एक अजीब ताना-बाना बुन दिया। इसलिए अगर जनता ने ४२ और दान को मिलाकर सोच लिया कि जिलादान भी कोई उसी तरह की अचानक घटनेवाली घटना है तो मनोवैज्ञानिक दृष्टि से कोई आश्चर्य की बात नहीं है। आश्चर्य की तो नहीं है लेकिन हमारी आँख खोलनेवाली जरूर है। इसमें साफ संकेत यह है कि अब हम जनता के सामने इस आन्दोलन के बड़े आयाम तथा गुणात्मक पहलू प्रस्तुत करना चाहिए। ग्रामदान और ग्राम-स्वराज्य में वही सम्बन्ध है जो किसी समय नमक बनाने और स्वराज्य की लड़ाई में था। ग्रामदान ग्राम-स्वराज्य का नमक है। गाँव-गाँव की जनता को महसूस होना चाहिए और उसे महसूस तब होगा जब हम उसे महसूस करायेंगे—कि ग्रामदान करके वह ग्राम-स्वराज्य की लड़ाई में शरीक हो रही है। गाँव, प्रखण्ड, जिला और राज्य उस लड़ाई के मोर्चे हैं और उनके दान समारोह उसकी मंजिल हैं।

यह लड़ाई किस शक्ति से लड़ी जायगी ? जाहिर है कि लोकशक्ति से। इस दृष्टि से दादा कृपालानी ने जिलादान-समारोह के अवसर पर होनेवाले उत्तर प्रदेश के रचनात्मक कार्यकर्ताओं के सम्मेलन में बहुत जोर देकर कहा कि रचनात्मक कार्य का मुख्य उद्देश्य है लोकशक्ति का निर्माण। अगर लोक की शक्ति न बनी तो रचना क्या हुई ? यह दूसरी बात है कि उस लोकशक्ति से दादा कृपालानी इस सरकार को हटायेंगे, विनोबा गाँव के जीवन से स्वयं सरकार को हटाकर—वह चाहे जिसकी सरकार हो—शासन मुक्ति की दिशा में कदम बढ़ायेंगे। बात दोनों में गुणात्मक अन्तर है। एक में तत्काल सुराज्य की योजना है, दूसरे में स्वराज्य का शुभारम्भ। एक मानता है कि सुराज्य के बाद स्वराज्य आयेगा, दूसरा कहता है कि स्वराज्य ही सुराज्य है, स्वराज्य से अलग सुराज्य संभव नहीं। कुछ भी हो, लोकशक्ति के बिना न एक आयेगा न दूसरा। इसी दृष्टि से दादा ने एक प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा : मेरा इस आन्दोलन का पूर्ण समर्थन है तभी तो मेरे साथी इसमें लगे हुए हैं।

बलिया के जिलादान ने उत्तर प्रदेश दान के प्रश्न को कार्यकर्ताओं के सामने प्रस्तुत कर दिया है। और उन्होंने समझ भी लिया है कि सारी रचनाओं का आधार है लोकशक्ति और लोकशक्ति का आधार है ग्रामदान। राज्यदान ग्रामदान का सही आयाम है और ग्राम-स्वराज्य के शुभारम्भ के लिए राज्यदान चाहिए।

२१ वर्षों तक इस देश ने दलों का स्वराज्य देखा—एक दल का, दूसरे दल का, मिलजुले दलों का। उसने देख लिया कि दलों का स्वराज्य कैसा है। इसलिए जब दादा कृपालानी ने कहा कि अभी स्वराज्य मिला कहाँ है, तो एक-एक दिल उनके साथ बोल पड़ा। जनता का स्वराज्य ही तो ग्राम-स्वराज्य है, क्योंकि इस देश में गाँव जनता के जीवन की बुनियादी इकाई है।

जिस दिन गाँव के अन्दर से यह आवाज निकलेगी कि ग्राम-स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, उस दिन जनता के स्वराज्य की बुनियाद पड़ जायगी। यह ग्रामदान जिलादान क्या है ? बस उस दिन को शीघ्र लाने का प्रयत्न है। तब बलिया की जनता गर्व से कहेगी कि उसने केवल ग्रामदान नहीं किया था। ०

→ जवाब : मेरा स्वधर्म यह नहीं है। १९१६ से मैं राजनीति में हूँ। उसे छोड़ नहीं सकता। इसे भले ही हमारी कमजोरी समझ लो। मैं पार्लियामेंट में रहूँगा और आपकी आवाज वहाँ तक पहुँचाऊँगा। लेकिन इस काम को पूरा समर्थन प्राप्त है हमारे कार्यकर्ता उस काम को कर रहे हैं।

सवाल : विदेशी सहायता से विकास के जो काम हो रहे हैं, उसके बारे में आपका क्या विचार है ?

जवाब : हम भिखारी हो गये हैं। भिखारियों को क्या मिलता है ? लात। वह हमें मिल रहा है। यह कर्ज हम पर बोझ है। यह सरकार स्वयं हम पर बोझ है। इसकी नीयत खराब है। यह जो भी काम करेगी उन सबसे देश की हालत खराब ही होनेवाली है।

सवाल : खादी के बारे में आप कुछ कहें। सरकारी मदद और अशोक मेहता कमेटी के बारे में।

जवाब : यह सरकार जो कुछ भी खादी के लिए करेगी उसमें खादी का नुकसान ही होनेवाला है। सरकार के पैसे से खादी का उत्पादन तो बढ़ गया लेकिन खादी की शक्ति खत्म हो गयी। पैसा हमें मिला लेकिन हमारा दिमाग खत्म हो गया। मेरा तो जिस तरह अंग्रेजी सरकार से विश्वास उठ गया था उसी तरह इस सरकार से भी उठ गया है।

सवाल : फिर आप इसे छोड़ क्यों नहीं देते ?

जवाब : मैंने तो कई बार छोड़ने की कोशिश की लेकिन ये लोग मुझे नहीं छोड़ते। बाबा की लंगोटी बाबा को नहीं छोड़ती उसी तरह।

आखिरी बात : 'वी मस्ट एजुकेट अवर मास्टर्स।'

बलिया में ग्राम-स्वराज्य की स्थापना का सामूहिक संकल्प

जिलादान की घोषणा के लिए जिले भर से आये हुए ग्रामदानी गाँव के हजारों प्रति-निधियों ने स्थानीय मुरलीमनोहर टाउन डिग्री कालेज के सभा-भवन में ग्रामस्वराज्य की घोषणा करते हुए सामूहिक संकल्प लिया। कार्यक्रम का सञ्चालन श्री कपिलभाई ने किया। बलिया के प्रथम ग्रामदानी गाँव के नागरिक की हैसियत से श्री जयप्रकाश नारायण ने संकल्प की घोषणा पढ़ी और सब लोगों ने उसे दुहराया। घोषणा में कहा गया —

"आज पूज्य विनोबाजी के समक्ष जिलादान समर्पण के अवसर पर बलिया जिले के ग्रामदानी गाँवों के हम निवासी यहाँ इकट्ठा होकर सामूहिक रूप से ग्रामदान में अपनी निष्ठा घोषित करते हैं। ग्रामदान में सत्य, प्रेम और करुणा की जो पुनीत भावना है वह हमें पूर्णतः मान्य है। हमारा पूरा प्रयत्न होगा कि हम अपने सामूहिक निर्णय से अपने गाँव के जीवन का नियमन और संचालन करें, गाँव के विकास में अपने दुःखी, गरीब भाइयों का सबसे पहले ध्यान रखें, अनीति और अन्याय से बचें, तथा बिना किसी भेदभाव के मालिक महाजन मजदूर सब मिलकर गाँव को एक शान्त, सुखी, समान परिवार बनायें। इस प्रकार हम अपने इस जिले के गाँव-गाँव में ग्राम-स्वराज्य की स्थापना करेंगे। ग्राम-स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। हमारा विश्वास है कि गांधी-जी के बताये हुए ग्राम स्वराज्य के सिवाय हमारी मुक्ति का दूसरा मार्ग नहीं है। उस पर मिलकर दृढ़तापूर्वक चलने की शक्ति भगवान् हमें दे।"

मौसम की प्रतिकूलता के कारण सभा-भवन में आयोजन किया गया था, लेकिन उमड़ता हुआ १० हजार का जनसमूह भला हाल में कहाँ तक समाता! आचार्य विनोबा और श्री जयप्रकाश नारायण आदि नेताओं के दर्शनार्थ आतुर जनता को शान्त रखना बहुत कठिन था, लेकिन कार्यक्रम की शुरुआत के साथ ही बलिया की तथाकथित 'बलियाटिक जनता' ने जिस गम्भीरता का परिचय दिया वह निश्चय ही सराहनीय है।

कार्यक्रम की शुरुआत करते हुए श्री कपिल भाई ने कहा कि ग्रामदान में सब लेने ही लेने का कार्यक्रम है। देना है तो सिर्फ भय, अज्ञान और कृपणता। इस आन्दोलन के द्वारा हमें देश को कृपणता और दीनता आदि से मुक्त करना है।

सामूहिक संकल्प की घोषणा के बाद *जिले के कुछ प्रमुख छोटे-बड़े भूमि-मालिकों* ने अपनी भूमि का बीसवाँ भाग भूमि-हीनों को दान में देने की घोषणा की।

सभा की अध्यक्षता जिला परिषद् के अध्यक्ष और एक प्रमुख ग्रामदानी गाँव के नागरिक श्री जवाहर सिंह ने की। आपने अपने भावपूर्ण भाषण में कहा कि सत्य, प्रेम और करुणा की इस क्रान्ति में शामिल होने से हम अपने को रोक नहीं सकते। ग्रामदान की मानवीय क्रान्ति का विचार हजारों हजार लोगों के दिलों को झकझोर रहा है। बलिया दुःखी है, गरीब है, यह मुक्ति चाहता है। ग्रामदान में मुक्ति की झलक हमें दिखाई दे रही है। हम जिले की जनता की ओर से यह जिलादान विनोबाजी को समर्पित करते हैं और आशा करते हैं कि हमारे सूखे हृदयों को करुणा के जल से सींचने के लिए वर्षा की तरह बार बार बाबा यहाँ पधारें।

विनोबाजी ने ग्राम-स्वराज्य के इस सामूहिक संकल्प का हृदय से स्वागत किया। (पूरा भाषण नीचे दिया है।)

बाबा के प्रवचन के बाद श्री जयप्रकाश नारायण ने दो घंटे तक भाषण किया, जिसे उपस्थित जनसमूह एकाग्रतापूर्वक सुनता रहा। (पूरा भाषण पृष्ठ ५१७ पर देखें।)

प्रदेश भर से आये हुए लगभग ढाई हजार रचनात्मक कार्यकर्ताओं, तथा बलिया तथा पड़ोसी छपरा और गाजीपुर के हजारों ग्रामीणों के आगमन से सम्मेलन-स्थल पर दिन भर चहल-पहल बनी रही। ग्रामदान, जिलादान क्या है, इसकी जिज्ञासा, मंथन पैदा करनेवाले प्रश्न आज इस इलाके के लोगों के सामने है। इन प्रश्नों और शंकाओं का समाधान करनेवाले १० हजार पर्चे वितरित किये गये।

सामूहिक संकल्प की आवश्यकता

-विनोबा

बहुत आनंद हुआ, आपकी यह पुण्य गाथा सुनकर। आपने एक बहुत सुन्दर संकल्प किया और उसकी पूर्ति की। उस संकल्प को आपने अभी दुहराया। यह ऐसा काम हुआ है, जिससे भगवान् प्रसन्न हुए हैं और उनका आशीर्वाद आप सबको प्राप्त हुआ है। भगवान् के आशीर्वाद से आप सब लोगों को पूर्ण आयु प्राप्त होगी। यह आयुवर्धक कार्य आपने किया है। यह कार्यक्रम जिन्दगी को बढ़ानेवाला है।

जब मनुष्य के सामने कोई ध्येय होता है, मिशन होता है, तब उसके जीवन में प्रेरणा होती है, उत्साह का संचार होता है, और उसे पूर्ण आयु प्राप्त होती है। यहाँ भी ऐसा अनुभव आ रहा है। कपिल भाई जैसे वृद्ध पुरुष जवान हो रहे हैं। कारण भगवान् के कार्य में वे निमित्त बन गये हैं। कार्य तो भगवान् ही करता है, लेकिन कुछ निमित्त मात्र होते हैं। जो निमित्त मात्र होते हैं, उनका जीवन धन्य होता है।

अपना यह बहुत बड़ा देश है, प्राचीन काल से यह पुण्य-भूमि कहलाया है। हम सबका विश्वास है कि यह पुण्य-भूमि है। और यह आजकल का विश्वास नहीं, पुराने जमाने से चला आया है। एक पुराना वाक्य है—"दुर्लभं भारते जन्म। मानुषी तत्र दुर्लभम्।" हर एक देश के लोग अपने-अपने देश का गुणगान करते हैं और अभिमान

रखते हैं। लेकिन यह जो अभिमान है देश के लिए, वह सारी दुनिया में अद्वितीय है। इसमें प्रथम वाक्य है—भारत में जन्म पाना दुर्लभ भाग्य है, और दूसरा वाक्य है—उसमें भी मानव जन्म पाना उससे भी ज्यादा दुर्लभ भाग्य है। मानव-जन्म पाना दुर्लभ भाग्य माना, मतलब यह हुआ कि भारत में कीड़े मकोड़े का जन्म मिले तो भी भाग्य है, ऐसा मानते थे। अनेक सन्तों के चरण-स्पर्श से यह भूमि पवित्र हुई है। लेकिन फिर भी आज की परिस्थिति में हमें समझना चाहिए कि पुरानी संस्कृति में कुछ दोष भी है।

हमारी पूर्व संस्कृति के कारण हममें कई गुण आये हैं, जो विरासत में हमें मिले हैं। वे हमारी कमाई नहीं हैं। उनमें कुछ गुण भी हैं और कुछ दोष भी हैं—दोष ये हैं कि हम लोगों में संकल्प-शक्ति क्षीण हो गयी है। हम संकल्प नहीं करते हैं। जीवन चल रहा है, जो होता है सो होता है। सोच विचार करके, संकल्प करके जीवन चलाया ऐसा व्यक्तिगत क्षेत्र में भी नहीं दीखता और सामूहिक जीवन में भी नहीं दीखता। भक्ति मार्ग के गलत प्रचार के कारण इसे और बढ़ावा मिला है। लोग कहते हैं—सब कुछ भगवान् करेगा हमारे हाथ में क्या है? एक अर्थ में यह बात सही है, और दूसरे अर्थ में यह बात गलत है। इस अर्थ में सही है कि सब कुछ भगवान् ही करता है। दूसरे अर्थ में गलत है क्योंकि हम भी तो भगवान के अंश हैं। इसलिए हम अपना स्वतंत्र सोच विचार करके करना चाहिए। उसके बजाय भगवान् पर ही सारा भार डाल दें, यह ठीक नहीं है। इसलिए व्यक्तिगत संकल्प की और सामूहिक संकल्प की बहुत जरूरत है। लेकिन इस देश में जिसे सामूहिक संकल्प कहते हैं—इस शक्ति का लगभग अभाव है। ऐसी हालत में इतना बड़ा संकल्प आप कर रहे हैं, यह हिन्दुस्तान के लिए अत्यन्त आनन्ददायी बात है।

यह बच्चिया एक सिरे से है और दूसरे सिरे में असम है। सारे भारत में यह भावना फैल गयी है। जगन्नाथनजी ने हमें पत्र लिखा—उनको एक सपना आया, जिसमें भगवान् नटराजन् नृत्य कर रहे हैं भक्त मण्डली उनके आसपास नाच रही है, बाबा भी उसमें है। ऐसा स्वप्न उस स्वप्नदर्शी को हुआ। इसका अर्थ समझना चाहिए कि ग्रामदान की बात नटराजन् ही तमिलनाड में बोल रहा है। इस तरह से सारे भारत भर में यह हवा फैल रही है।

आपने यह जो संकल्प किया उसे कम से कम उत्तर प्रदेश तक आप करेंगे ही। आपके इस नये सामूहिक संकल्प के लिए आपको धन्यवाद, और भगवान् का आशीर्वाद तो आपको मिला ही है। इसलिए बाबा का भी आशीर्वाद आपको प्राप्त है।

ग्रामदान सामाजिक और आर्थिक विषमता का उपाय

•जयप्रकाश नारायण

बाबा के आशीर्वाद मिले। आप सबने उनके प्रेरणादायी शब्द सुने।

मैं आपके सामने तीन बातें ग्रामदान के सन्दर्भ में पेश करना चाहूँगा—उद्देश्य यह है कि भारत के साढ़े पाँच लाख गाँवों में ग्रामदान हो जाय, ग्रामस्वराज्य हो जाय। मैं लोक विचार के ऊपर, राजनीतिक विचार के ऊपर गाँव के हित को सामने रखकर आपके सामने निवेदन करूँगा।

पिछले आम चुनाव के बाद अपने देश में एक राजनीतिक अस्थिरता पैदा हुई। आपके प्रदेश में दो मंत्रिमण्डल बने और टूटे और बिहार में तीन तीन बार मंत्रिमण्डल बने और टूटे। यहाँ एक आम चुनाव होनेवाला है। हरियाना में अभी एक चुनाव हुआ है। पंजाब की स्थिति भी डाँवाडोल है। इस परिस्थिति में किसीको मालूम नहीं कि क्या होगा। आज के कानून हैं वे चलेंगे या नहीं। ऐसी अस्थिर परिस्थितियों में यह ग्रामदान का आन्दोलन और भी महत्व का बन जाता है।

एक हजार मील दूर से यहाँ आकर अंग्रेजों ने राज्य किया था। उन्होंने सोचा कि इतनी दूर से हम राज्य कर रहे हैं तो इसकी जड़ गहरी जानी चाहिए। उन्होंने ऐसी नीतियाँ अख्तियार कीं कि जिनसे जनता की शक्ति क्षीण हो जाय। किसी अंग को बाँध दिया जाय और उस अंग से काम न लिया जाय और कुछ महीने बाद उसे खोलें तो वह अंग निर्जीव हो जाता है। जिसे अंग्रेजी में 'एट्रोफी' कहते हैं। इस देश का 'एट्रोफी' हो गयी है। जिस शक्ति के कारण यह देश दुनिया में चमका था वह शक्ति अंग्रेजों ने काटी। उन्होंने ऐसा वातावरण पैदा किया जिसमें राज शक्ति सर्व-शक्तिमान हो।

गांधी के बाद का भारत

हमारे सामने अब इस देश को बनाने का काम है। यह देश बनेगा नहीं जब तक कि हाथ और दिमाग कि शिथिलता दूर न हो। यह सन् '४७ से पहले भी गांधीजी ने इस देश को कहा था और बाद में भी कहा था। वे जीवित होते तो एक दूसरी क्रान्ति इस देश में होती जिससे दुनिया को भी रास्ता मिलता। वे चले गये। देश लगभग वहीं है जहाँ उस समय था। जन-शक्ति का देशभर में अभाव है।

जवाहरलालजी गांधीजी के बाद देश के सबसे बड़े नेता थे। उनके दिल में कितनी आग जलती थी—इस देश के ग्रामीणों के लिए, गरीबों के लिए। वे इस देश के ८२-८३ प्रतिशत लोगों को नहीं भूले। सन् १९५२-५३ में उन्होंने देश के सामने सामुदायिक विकास-योजना रखी। ऐसा लगता था कि वे एक नयी क्रान्ति का आह्वान कर रहे हैं। परन्तु आज हर एक के मुँह से सुन लीजिए कि वह असफल रही है, जन सहयोग के अभाव में वह विफल रही है।

जवाहरलालजी ने बलवन्तराय मेहता कमेटी' बनायी—ग्रामीण क्षेत्रों के विकास की योजना में जन-सहयोग कैसे लिया जाय, इसकी खोज के लिए। इस रिपोर्ट के आधार पर १९४९ में देश में पंचायती राज कायम हुआ। तीन स्तर पर इसका संगठन किया गया—ग्राम पंचायत, प्रखण्ड की पंचायत, और जिला परिषद्। इनका चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से करने का निर्णय किया गया। तब से नौ वर्ष हुए। इन नौ वर्षों

का अनुभव क्या है ? क्या जो शक्ति मिट गयी थी वह पंचायत-राज के द्वारा जागृत हुई है ?

सामूहिक संकल्प का अभाव

यदि सामूहिक संकल्प-शक्ति होती तो जितना रुपया खर्च हुआ उससे गाँव का कितना विकास हो गया होता ? सरकारी शक्ति तो दरी के जाजम के जैसी है, कहीं गर्म दूध तो जनता डालेगी। केवल जाजम ही बार-बार डालेंगे तो उसमें बदबू आयगी। भ्रष्टाचार आदि की यही बदबू आज आ रही है।

उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्सों में भयंकर सूखा पड़ा, बिहार में भी पड़ा। जितना अमदाय पाया हमने उन गाँवों के लोगों को। हम ग्राम-स्वराज्य का पुराना इतिहास पढ़ते हैं। अकाल पड़ा। सभा हुई। तालाब बनाने का प्रस्ताव हुआ। एक लाख रुपये कर्ज के रूप में नगर-सेठ से लेने का तय हुआ। यह भी तय हुआ कि कर्ज ३० वर्षों में चुका दिया जायगा। 'गाँव-सभा के सभापति ने नगर-सेठ से एक लाख रुपये कर्ज लिया। यह प्रतिष्ठा उस समय की गाँव-सभा की थी। ताम्रपत्र कहता है कि एक-एक पैसा उस गाँव ने वापस किया। अब कौनसा ऐसा गाँव है इस जिले का ? आज क्या जिले के प्रधान को भी पंचायत के आश्वासन पर कर्ज मिल सकता है ? कहाँ ऐसा संगठन है, और कहाँ ऐसा नैतिक बल है ?

भारत के इतिहासकारों ने इस बात को साबित किया कि जहाँ दुनिया की सभ्यताएँ असफल हुईं, भारत का ग्रामराज्य कायम रहा है। पेड़ को आँधी उखाड़ लेगी, पर पाँवों के तलों की घास को कोई नहीं उखाड़ सकता।

गाँव मजबूत बने

गाँव की दशा २१ वर्षों के स्वराज्य के बाद बिगड़ती ही जा रही है। अनेक भेद हैं गाँवों में—पक्ष-भेद, जाति-भेद, अमीर-गरीब भेद, सवर्ण-अवर्ण भेद, भूमिहीन-भूमिवान भेद। गाँव आज दुर्योधन की सभा बना हुआ है। द्रौपदी का चीर-हरण हो रहा है। भीष्म, सहदेव, नकुल आदि बैठे हैं। भूमिहीन को भूदान में मिली हुई जमीन से बेदखल किया जा रहा है।

अभी तो यह अस्थिरता प्रान्तों तक ही है। भगवान न करे कि यही हालत दिल्ली में हो ! मान लीजिये प्रधान मंत्री और उप-प्रधान मंत्री विदेश जायँ। अमेरिका में जाकर किसी उद्योग के लिए या अन्य किसी सहायता के लिए करार करें और उसी समय उन्हें खबर मिले कि उनकी सरकार का पतन हो गया, तो उस समय भारत की क्या हालत होगी ?

लोकतंत्र के बारे में मैंने एक किताब लिखी थी। उसे जवाहरलालजी को पढ़ने के लिए दी थी। उन्होंने कहा था, अगर हमारे लोकतंत्र की बुनियाद मजबूत रही तो देश मजबूत रहेगा। पहले हम कहते थे—कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी, अब वह हस्ती मिटती जा रही है। धर्म के प्रति जो श्रद्धा थी वह मिटती जा रही है। वह ग्रामराज भी मिट गया। इमारत की पहले क्या चीज गिरेगी ? छत, फिर दीवारें, लेकिन सैकड़ों वर्षों के बाद बुनियाद गिरेगी। यदि बुनियाद मजबूत होगी तो वह सैकड़ों वर्षों तक कायम रहेगी। इस देश की बुनियाद को हम मजबूत करें, चाहे किसी पार्टी के हों।

नैतिक उत्थान का श्रीगणेश

जब यह पंचायतीराज बन रहा था तब हमने कहा था कि हम इसके द्वारा वर्तमान गाँवों के ढाँचे में कोई परिवर्तन नहीं कर रहे हैं। आपस के सम्बन्ध को हम यदि नहीं बदलते तो उससे झगड़े हो बढ़ेंगे। अब वह परिवर्तन ग्रामदान के द्वारा होनेवाला है। उससे गाँव के लोगों के मानसिक और पारस्परिक सम्बन्धों में परिवर्तन आता है।

आज हमारे जीवन का कौनसा क्षेत्र है, जहाँ अनैतिकता नहीं है ? शिक्षा के क्षेत्र में भ्रष्टाचार है। हर जगह भ्रष्टाचार है, आपस में झगड़े हैं, स्वार्थ और मोह की लड़ाइयाँ हैं। धर्मभीरुता खत्म हो रही है। धर्म ढोंग बन रहा है। कर्मकाण्ड रह गया, वास्तविकता समाप्त हो गयी है। एक छोटे-से हिस्से में एक प्रारंभिक अंश में, इस नैतिक उत्थान का श्रीगणेश ग्रामदान से होता है। ग्रामदान में कुछ ऐसे गुण हैं, जिनसे नैतिक उत्थान में मदद होगी। बराबर संकल्पों की पूर्ति प्राप्त करते रहेंगे।

सामाजिक और आर्थिक भेद

आज भारत दुनिया का गरीब-से-गरीब और अमेरिका दुनिया का अमीर-से-अमीर देश है। फिर भी अमेरिका के गरीब और अमीर में जो अन्तर है उससे कई गुना अधिक अन्तर इस देश में है। २१ वर्षों के स्वराज्य के बाद कहाँ है सामाजिक न्याय ? अस्पृश्यता के प्रश्न के लिए बापू ने जो महान प्रयास किया है वह दुनिया की अनोखी मिसाल है। कानून से अस्पृश्यता उठ गयी है, वह दण्डनीय मानी गयी है, बावजूद इसके आंध्र में एक हरिजन को जिंदा जला दिया गया। आज हरिजन गाँव के समाज का अंग नहीं बन पाये हैं।

अब भूमि-व्यवस्था की बात लीजिये। पंडितजी ने कितना जोर दिया था 'सीलिंग' पर। योजना-आयोग ने भी जोर दिया। समाजवाद का नारा दिया। दो समाजवादी पार्टियाँ हैं। दो साम्यवादी पार्टियाँ हैं, तीसरी बन रही है। मैं जापान घूमकर आया। वहाँ २०० एकड़ का एक कोआपरेटिव फार्म देखा। वहाँ पर प्रति परिवार ढाई एकड़ जमीन है। 'सीलिंग' में अधिक-से अधिक एक परिवार के पास ३ एकड़ जमीन रह सकती है। पहाड़ी जमीन ७ एकड़ तक। उनका वर्कशाप देखने गया था। उसमें कितने ही औजार भरे पड़े थे। बिहार के एक मंत्री, श्री इन्द्रदीप बाबू ने बताया कि बिहार में 'सीलिंग' के कानून के बावजूद एक परिवार के पास २० हजार एकड़ जमीन है। अब इस तरह की हालत रहेगी तो शांति कैसे रहेगी ?

भूदान की निष्पत्ति

हिमालय के उस पार लोग हैं, जिन्होंने सामूहीकरण किया, 'कम्यून' बनाये। उन्होंने आजादी हमसे एक साल पीछे पायी, लेकिन उनका कितना विकास हुआ ! वे कहाँ-से-कहाँ पहुँच गये। इस देश के गरीब न्याय माँग रहे है—सामाजिक और आर्थिक

न्याय। कानून से यह न्याय नहीं मिला। जब मैं सोशलिस्ट पार्टी का कार्यकर्ता था और विनोबाजी के पास आया तो मित्रों ने कहा कि जेपी आपने यह क्या किया? भूमि का पुनर्वितरण तो कानून से होगा। भला भीख मांगकर यह कैसे होगा? हमने कहा कि कानून के लिए आप हैं ही भूदान से आपका रास्ता ही साफ होगा।

बिहार में महामाया बाबू की मिनिस्ट्री में इन्द्रदीप बाबू राजस्व मंत्री थे। उनसे मैंने एक दिन पूछा कि कानून से कितनी जमीन भूमिहीनों को मिली होगी? अन्दाजन कुछ हजार एकड़ उन्होंने कहा।

बिहार में भूदान आन्दोलन के द्वारा तीन लाख चालीस हजार एकड़ जमीन बँट चुकी है जिसमें ७० से ८० प्रतिशत भूदान किसान काबिज हैं। २० से ३० प्रतिशत बेदखल किये गये हैं। यह बेदखली कुछ तो लोभ से और अधिकतर सरकार द्वारा जल्दी दाखिल खारिज न करने से हुई है। भूदान में जितनी जमीन मिली है उसमें ७ एकड़ में से एक एकड़ जमीन खेती के लायक निकली है। इस तरह से अभी लगभग डेढ़ लाख एकड़ जमीन और बँट जायगी।

विचित्र भाई से हमने पूछा कि उ० प्र० में सीलिंग' कानून के जरिये कितनी जमीन बँटी होगी? विचित्र भाई ने कहा कि इसका हिसाब आज उन्हें मालूम नहीं है फिर भी उनका अन्दाज यही है कि पाँच हजार एकड़ जमीन मुश्किल से बँटी होगी। सीलिंग का कानून जब बनाया जा रहा था तो अन्दाज लगाया गया था कि सारे भारत में पाँच लाख एकड़ जमीन इसमें मिलगी और उसका बटवारा होगा। लेकिन आप देखेंगे कि केवल बिहार में ही भूदान के द्वारा पाँच लाख एकड़ जमीन का बटवारा हुआ और यहाँ उ० प्र० में चार लाख एकड़ जमीन का। यह गौरव की बात है। यह गांधी और विनोबा की शक्ति है हम लोग तो निमित्त मात्र है।

विषमता का जवाब ग्रामदान

रूस में क्या हुआ? कुछ राष्ट्रीयकरण हुआ, परन्तु उससे कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। आज तो अधिकांश उद्योग घाटे में ही चलते हैं। सम्बन्ध वे पुराने ही हैं। अब ऐसा देश में खूनी इन्कलाब कराने चुप नहीं बैठे। उन्होंने नक्सलबाड़ी तक कुछ करामातें दिखायी। मैं नहीं चाहता कि यहाँ के गाँव गाँव में खून-खराबी हो। मैं यह मानता हूँ कि उसमें गरीबों का बहुत भला नहीं होनेवाला है। लेकिन हम उसको रोक भी नहीं सकते। जमाने की माँग है कि हम तेजी से कदम बढ़ायें। पश्चिम बंगाल में वामपंथी साम्यवादी हुकूमत में थे तो उन्होंने शोषण रोकने के लिए कौनसे कानून बनाये?

कांग्रेस का १९ वर्षों तक प्रभुत्व राज्य रहा फिर भी वह कुछ विशेष नहीं कर सकी। ऐसी परिस्थिति में जनता को न्याय दिलाने का कदम नहीं उठता है तो भविष्य अन्धकारमय है। फिर हिमालय के पार की आग यहाँ आयगी। नेपाल में तो वे भर गये हैं। काठमाण्डू से लेकर कोडारी सड़क पर हर जगह माओ के बड़े बड़े चित्र लगे हुए हैं। लेकिन नेपाल सरकार की हिम्मत नहीं कि वह कुछ कह सके।

जब चीनी लोग नेफा से वापस गये तो हम नेफा और बोमदिला गये। वहाँ से आते समय फौजी जीप के ड्राइवर ने हमसे पूछा कि क्या हम कुछ कह सकते हैं। मैंने कहा कि जरूर तुम निडर होकर सब कुछ कह सकते हो क्योंकि मैं तो सरकार में हूँ नहीं। उसने कहा कि आप हमारे आफिसरों के मेस को देख लीजिये और हम लोगों के मेस को देख लीजिये। कितना अन्तर है। फ्रंट पर लड़ने तो हम हैं ये अफसर तो पीछे रहते हैं। सेना के सिपाही के ये भाव हैं। उनको मालूम है कि सीमा के पार इस तरह का कोई फर्क नहीं है। अफसर और सिपाही दोनों एक ही मेस में भोजन करते हैं। यह सामाजिक अन्याय सीमा के उस पार नहीं है। ये बातें क्या इस देश के गरीबों के कानों में नहीं पड़ रही हैं? बड़ी-बड़ी सेनाएँ हम बना दें। उनकी सेना का भय नहीं है। हमारी सेनाएँ उनको रोक लेंगी लेकिन इस विचार को कोई नहीं रोक सकता। सेना के दिल को घेर कर यह विचार आयगा इसका जवाब भी ग्रामदान देता है।

यह प्रथम चरण है लेकिन कितना बड़ा कदम है।

कोई मालिक नहीं, सब थातीदार

गांधीजी ने एक विचार इस देश को दिया कि जिसके पास जो संपत्ति है उसका वह मालिक नहीं थातीदार (ट्रस्टी) है। थातीदार का कर्तव्य है अपने और बालबच्चों के लिए कम से कम लेना और शेष भगवान् को समर्पित कर देना। किसान जो खेती करता है उसमें खेती के औजारों पर बढ़ई की मेहनत है लुहार की मेहनत है और फिर सबसे अधिक भगवान् की कृपा है। लेकिन किसान कहता है कि यह सारा हमने पैदा किया। इसी तरह कारखाने में भी धन, बुद्धि और रुपये से ही नहीं बल्कि समाज के योगदान से और भगवान् की कृपा से होता है।

जिस गाँव की जमीन गाँव के बाहर चली गयी वह गाँव मुकम्मल हो गया। कानून से इस देश में जमीन की बिक्री बंद हो जानी चाहिए। यह मेरी राय है। यह मूल्य परिवर्तन कानून से नहीं होगा विचार से होगा।

लोकतंत्र में बहुमत नहीं, सर्वसम्मति

पश्चिम का लोकतंत्र हमें सिखाता है— बहुमत का राज्य ५१ लोग एक तरफ और ४९ लोग दूसरी तरफ। यहाँ तक कि २५ प्रतिशत की वोट से जीतनेवाला भी अपने क्षेत्र का प्रतिनिधि बन जाता है। यह समाज को तोड़ने की बात है। ग्रामदानी गाँव की सभा नियमित रूप से बैठेगी। निर्णय सर्वसम्मति से या सर्वानुमति से करेगी। बिहार में कानून के द्वारा ६० प्रतिशत की राय सर्वानुमति मानी गयी है।

ये बातें जिस गाँव में होंगी वह गाँव जाग्रत होगा और उसमें ग्रामराज होगा। यह साढ़े पाँच लाख गाँवों में हो जायगा तो हमारी बुनियाद पक्की होगी।

सभी राजनीतिक पार्टियों को पक्षभेद भूलकर इसके विकास में योगदान देने के लिए निमंत्रण है। हम सबका समर्थन चाहते हैं। किसी पार्टी के सामने इससे महत्वपूर्ण कोई काम नहीं है। हम जिले की जनता को मिलाना चाहते हैं। उसकी शक्ति को प्रकट करना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि इस जिले का विकास हो। (बलिया १० जुलाई '६८)

विकास की दिशा क्या हो?

[१० जुलाई को विनोबाजी की उपस्थिति में बलिया में हुई विकास-गोष्ठी का संक्षिप्त विवरण]

शाम को चार बजे विकास-गोष्ठी हुई। इस गोष्ठी में जिले के नागरिकों राजनीतिक दलों के कार्यकर्ताओं, और सरकारी अधिकारियों ने भाग लिया। गोष्ठी की अध्यक्षता सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी ने की। गोष्ठी का शुभारम्भ करते हुए आचार्य राममूर्ति ने कहा कि ग्रामदान में विकास की दो दिशाएँ हैं, एक यह कि सरकार की शक्ति को कम करें, दूसरी यह कि गाँव खुद अपनी शक्ति का विकास करे। सरकार की शक्ति बढ़ती है तो समाज की घटती है, क्योंकि सारी जिम्मेदारी सरकार की मान कर लोग निश्चिन्त हो जाते हैं। आज गाँव में जो भी काम की शक्ति है, हुनर है, पूँजी है, सबका संगठन होना चाहिए, और उससे विकास का काम शुरू होना चाहिए।

आपने विषमता को असह्य बताते हुए कहा कि इसका निवारण होना ही चाहिए। विज्ञान के साथ उत्पादन-कार्यों को तोड़ने-जोड़ने की अनिवार्यता सिद्ध करते हुए आपने कहा कि गाँव को तोड़ने और चूसनेवाली प्रवृत्तियाँ हमें बन्द करनी है।

गोष्ठी की चर्चा को आगे बढ़ाते हुए आचार्य विनोबा ने कहा कि आज तो गाँव हैं ही नहीं, सिर्फ परिवार हैं। ग्रामदान से गाँव का निर्माण होता है। अब हमें गाँव-गाँव में 'स्वरक्षा' की शक्ति विकसित करनी है। विनोबाजी ने सरकार की विकास-योजना को उधारी-योजना और मुद्रा-स्फीति को बदमाशी का परिणाम घोषित करते हुए जब कहा कि सरकारी यंत्र को एक रुपये की नोट छापने में जो मेहनत करनी पड़ती है, उतनी ही मिहनत सौ रुपये की नोट छापने में करनी होती है। लेकिन १ सेर अनाज जितनी मिहनत से पैदा होता है, १०० सेर अनाज उपजाने में उससे सौगुनी मिहनत करनी पड़ती है। विनोबाजी के इस विश्लेषण पर सभा-भवन में चेतना की नयी लहर दौड़ गयी। विनोदपूर्ण मुद्रा में विनोबाजी ने कहा कि अपने देश में 'मुबवन योजना' चलती है। भारत को 'कृषिप्रधान देश' कहा जाता है, 'उद्योगहीन भारत' कहने से बचने के लिए। और कृषिप्रधान देश में कृषि की सबसे अधिक उपेक्षा की गयी। विनोबाजी ने कहा कि जहाँ अन्न विपुल होता है, वहाँ मन खुला होता है। लेकिन अपने देश में विपन्नता है—अन्न की भी, मन की भी।

महाभारत युग के गाँवों की रचना के बारे में बताते समय विनोबा ने पत्रकारों की ओर इशारा करते हुए दो बार यह बात दुहरायी कि पत्रकार महाशयो, यह स्वर्णाक्षरों में लिख लो, 'जिसका हाथ खेती से जुड़ा नहीं होता, वह हमारी समिति का सदस्य नहीं होता।' यह उस समय के ग्रामीणों की समितियों का नियम था।

आपने योजनाओं की विफलताओं का विश्लेषण करते हुए योजनाकारों की दिल्ली में बैठकर अमेरिकी नकल करने की प्रवृत्ति को गलत बताया।

ग्रामदान की तीन प्राथमिक बातों—*ग्रामसभा, बीघा-कट्ठा के दान, और ग्रामकोष* को बुनियादी काम बताते हुए आपने अन्त में कहा कि जहाँ जाति, सम्प्रदाय, पंथ, पक्ष आदि खत्म होते हैं, वहाँ *सर्वोदय शुरू होता* है। लेकिन राजनीतिवालों के लिए तो यह सब कुछ चाहिए।

बलिया के जिला नियोजन अधिकारी ने जिलादान के बाद स्वावलम्बन की ओर बढ़ने का निश्चय प्रकट करते हुए इस दिशा में पूर्ण सहयोग देने की घोषणा की।

गोष्ठी के मंच से ससपा और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (दक्षिण पंथी) के स्थानीय नेताओं को भी अपनी बातें जनता के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए आमंत्रित किया गया। ससपा-नेता ने सौम्य शब्दों में और साम्यवादी दल के तरुण नेता ने तीव्र शब्दों में अपनी शंकाएँ व्यक्त कीं।

इनकी शंकाओं का बिना किसी प्रकार के तनाव और क्षोभ के बड़ी ही सौम्य भाषा में अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी ने उत्तर प्रस्तुत किया। आपने कहा कि हम कभी भी विचार मंथन से घबड़ाते नहीं, सदैव सबको समझने और समझाने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। उन्होंने कहा कि साम्यवादी नेता भी सर्वोदय के विचार को समझने का कुछ प्रयास करें। (म० प्रे० मु०)

बलिया, १०-७-'६८

उपवास से जीवन-रक्षा

लेखक : हरबर्ट एम० शेल्टन, हिन्दी अनुवादक : श्री धर्मचन्द सरावगी

इधर जनता का ध्यान प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली की ओर तेजी से जाने लगा है। प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली वस्तुतः चिकित्सा नहीं है, बल्कि जीवन जीने की एक पद्धति है। शेल्टन की एक पुस्तक है : 'फास्टिंग कैन सेव योर लाइफ'।

इस पुस्तक की अमेरिका आदि देशों में लाखों प्रतियाँ हाथों हाथ बिक रही हैं। इसीका यह हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत है।

इस पुस्तक में भारतीय परम्परा, आबहवा, धार्मिक मान्यताएँ, खेती-बारी आदि की परिस्थितियों को ध्यान में रखकर उपवास के द्वारा जीवन की रक्षा कैसे हो सकती है, इसका विवेचन किया गया है।

भयंकर से-भयंकर और असाध्य माने जानेवाले रोग भी उपवास के द्वारा दूर हो सकते हैं। यह बात अनेक उदाहरणों द्वारा समझायी गयी है।

पुस्तक में ३४ अध्याय हैं, जिनमें उपवास के महत्व तथा विभिन्न रोगों में उपवास की अवधि, मर्यादा, हानि, परिणाम आदि पर प्रकाश डाला गया है। हर घर में यह पुस्तक चिकित्सक का काम देगी और दवा-डाक्टरों में होनेवाले खर्च से बचायगी।

पृष्ठ-संख्या : २०८, मूल्य तीन रुपये
सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी-१

व्यापारियों के लिए एक अनुकरणीय प्रयोग

सर्वोदय आंदोलन के सम्बन्ध में अक्सर एक चर्चा होती है कि उसका कार्यक्रम जमीन की व्यवस्था, ग्राम-संगठन और ग्राम-जीवन आदि तक ही सीमित है। शहरों की व्यवस्था शहरी जीवन और उद्योग व्यापार आदि पर सर्वोदय का क्या असर होगा और सर्वोदय विचार की *दृष्टि से उनका क्या स्वरूप रहेगा* इसके बारे में सर्वोदय आन्दोलन ने अभी कोई स्पष्ट चित्र प्रस्तुत नहीं किया है। एक माने में यह आलोचना सही है, हालांकि सर्वोदय समाज-व्यवस्था की कल्पना हो ग्रामप्रधान विकेन्द्रित समाज रचना की है। और यह स्वाभाविक है कि उसका पहला और मुख्य कार्यक्रम उसी स्तर से शुरू हो। फिर भी उद्योग धंधा और शहरी जीवन की ओर भी हमारा ध्यान जाना आवश्यक है।

कुछ दिन पहले श्री जयप्रकाश नारायण की प्रेरणा से 'उद्योग-व्यापार की सामाजिक जिम्मेदारी"—इस विषय पर एक गोष्ठी आयोजित की गयी थी। इस गोष्ठी की कार्यवाही भी प्रकाशित हो चुकी है। उद्योग व्यापार आदि का मुख्य उद्देश्य धन कमाना है और, सिवा उन कायदे-कानूनों के पालन के जो राज्य द्वारा बनाये गये हों, उद्योग-धंधा या व्यापार में लगे हुए लोगों का समाज के प्रति और कोई जिम्मेदारी है ऐसी मान्यता आज आम तौर पर नहीं रही है। सामाजिक जिम्मेदारी की भावना के अभाव में एक ओर तो उद्योग व्यापार में स्वेच्छाचारिता बढ़ गयी है, दूसरी ओर आम तौर पर यह धारणा बन गयी है कि व्यापार और ईमानदारी परस्पर विरोधी तत्त्व है, ईमानदारी से व्यापार नहीं चल सकता। उद्योग-व्यापार में सरकार के अनावश्यक दखल, नियंत्रण, लाइसेन्स, परमिट आदि के जरिये भी उत्तरोत्तर ऐसी स्थिति बनती जा रही है कि ख्वाम-ख्वा बेईमानी और भ्रष्टाचार करने का प्रलोभन व्यापारी को होता है।

पिछले वर्षों में सरकार ने अनाज के आवागमन पर जो विविध प्रकार के नियंत्रण लगाये हैं—एक जोन से दूसरे जोन में, एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में, और यहां तक कि कहीं कहीं एक जिले से दूसरे जिले में भी बिना लाइसेन्स या परमिट के अनाज को ले जाना मना है—उनके कारण भ्रष्टाचार को कितना प्रोत्साहन मिला है यह सब जानते हैं। इस रोकथाम के कारण प्रदेशों के सीमावर्ती क्षेत्र में दो चार *मील की दूरी पर ही* भावों में इतना बड़ा अन्तर हो जाता है कि सामान्य आदमी के लिए इधर से उधर अनाज ले जाकर मुनाफा कमाने के प्रलोभन से बचना संभव नहीं होता। न सिर्फ किसान सरकारी भावों से १० २० रुपया या और अधिक दाम प्रति क्विंटल लेकर अपना अनाज चोर-बाजार करनेवालों के हाथ बेचता है, बल्कि प्रदेशों की सीमाओं पर रहनेवाले लाखों गरीब लोग इधर से उधर अनाज पहुँचाने के तथाकथित चोर व्यापार में लग जाते हैं। चोर-बाजारी के अलावा चीजों में मिलावट सेल्सटैक्स इन्कमटैक्स आदि की चोरी आज के उद्योग व्यापार का एक सर्वसामान्य अंग हो गया

सिद्धराज ढड्ढा

है। नतीजा यह हुआ है कि कोई व्यापारी ईमानदारी से काम करना चाहे तो उसके लिए वह संभव नहीं है।

उद्योग-व्यापार की इस विषम और असामाजिक स्थिति से देश को कितना नुकसान पहुँच रहा है इसका अंदाज लगाना कठिन है। चोरबाजारी को प्रोत्साहन मिलने के कारण बेईमानी, भ्रष्टाचार और घूसखोरी उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है और नैतिकता की भावना समाप्त हो रही है। चीजों में मिलावट के कारण जनता का स्वास्थ्य खतरे में है और रोगों की उत्तरोत्तर बढ़ती हो रही है। टैक्स की चोरी के कारण उतनी ही आमदनी के लिए सरकार को चौगुने, दसगुने टैक्स लगाने पड़ते हैं, जिसका बोझ अंततोगत्वा गरीब पर पड़ता है।

टैक्स की चोरी कितनी व्यापक है उसका अनुमान भी कुछ उदाहरणों से स्पष्ट हो जायगा। सरकारी आंकड़ों के अनुसार आन्ध्र प्रदेश में सन् १९६४-६५ के वर्ष में ४८,५२,००० टन चावल का उत्पादन हुआ था। सामान्य तौर पर धान की पैदावार का ५०% बाजार में बिकता है, शेष ५०% किसान अपने खाने या बीज के लिए घर में रखता है, अर्थात् १९६४-६५ में आंध्र में करीब साढ़े २४ लाख टन चावल बाजार में बिका। उस प्रदेश में प्रचलित बिक्री-दरों के हिसाब से प्रति टन धान पर कम-से-कम १५ रुपये बिक्री-कर के प्राप्त होने चाहिए थे। अर्थात् साढ़े २४ लाख टन धान की बिक्री पर कम-से कम ३ करोड़ ६७ लाख रुपया बिक्री कर के रूप में मिलना चाहिए था, पर उस वर्ष सरकार को धान, चावल, भूसा आदि सब पर केवल ४२,२५,००० रुपये बिक्री-कर के रूप में प्राप्त हुए थे। याने जितना टैक्स सरकार को कानून से मिलना चाहिए था उसका केवल ११ से १२ प्रतिशत *ही मिला,* शेष ८८-८९ *प्रतिशत टैक्स* की चोरी की गयी। इसी प्रकार तिलहन पर १९६५-६६ वर्ष में आन्ध्र-सरकार को केवल ९० लाख रुपया बिक्री-कर के रूप में मिला, जब कि उस वर्ष के उत्पादन और भावों को ध्यान में रखते हुए सरकार को कम-से-कम ६ करोड़ रुपया टैक्स का मिलना चाहिए था। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि अगर टैक्स की चोरी न की जाय तो आज की अपेक्षा चौथाई से भी कम टैक्स की दरों से राष्ट्र का काम चल सकता है।

इस प्रकार ईमानदार व्यापारी और गरीब उपभोक्ता को कई गुना अधिक टैक्स का भार वहन करना पड़ रहा है। इस दुष्चक्र से बचने का क्या कोई उपाय है? करों के अत्यधिक भार, मँहगाई, चीजों के अनावश्यक और अस्वाभाविक अभाव, खाने की चीजों, दवाओं आदि में मिलावट आदि के कारण भारत की जनता का आज जो भयंकर शोषण हो रहा है, उससे उसका बचाव करने का क्या कोई उपाय नहीं है?

आन्ध्र-प्रदेश के तैल मिलों के संघ की ओर से अभी हाल ही में एक प्रयोग किया गया, जिससे यह सिद्ध होता है कि व्यापारी और उद्योगपति स्वयं अगर चाहें और कोशिश करें तो इस परिस्थिति में बहुत

कुछ सुधार कर सकते हैं। हैदराबाद और सिकन्दराबाद मे कुल ५१ तेल-मिलें हैं। अन्य उद्योगों और देश के अन्य भागो की तरह इस उद्योग मे भी काफी बेईमानी और टैक्स की चोरी चलती थी। व्यापक चोर-बाजारी के कारण ऐसी परिस्थिति थी कि कोई व्यक्ति ईमानदारी से काम करना चाहे तो भी उसके लिए वह संभव नही था, क्योंकि टैक्स इत्यादि की चोरी तथा अन्य प्रकार की बेईमानियो के कारण सिद्धान्तहीन व्यापारियों का इतना मुनाफा होता था कि ईमानदार व्यापारी का उनके मुकाबिले मे ठहरना संभव नही था। ईमानदार व्यापारी को बिक्री-कर, बाजार की लाग, सेस, उत्पादन-कर, चुंगी, इन्कम टैक्स, सम्पत्ति टैक्स, तरह-तरह की लाइसेन्स फीस इत्यादि देने के अलावा सरकारी विभागो मे तरह-तरह की परेशानी भुगतनी पड़ती है, जब कि बेईमान व्यापारी जगह-जगह घूस देकर इन सब टैक्सों और परेशानियो से बच जाता है।

इस परिस्थिति से त्राण पाने के लिए हैदराबाद तेल मिल संघ के अध्यक्ष ने करीब-करीब २ साल पहले इस प्रश्न को हाथ मे लिया। श्री टोकरसी लालजी कापड़िया के नाम से बहुत से लोग परिचित हैं, हैदराबाद ही नही, बाहर के व्यापारी समाज मे भी उनकी अच्छी प्रतिष्ठा है। सार्वजनिक काम मे भी वे आगे रहते हैं। तेल-मिल संघ के अध्यक्ष के नाते श्री टोकरसी भाई ने तेल-मिल मालिकों से संपर्क किया और उनके सामने यह सुझाव रखा कि अगर सब लोग संगठित रूप से प्रयास करें और ईमानदारी के साथ व्यापार चलाने की कोशिश करें तो किसीको नुकसान नही होगा, बल्कि समाज मे उनकी साख बढ़ेगी, जिसके कारण अन्ततोगत्वा उन्हे लाभ ही होगा। ५१ मे से ५० मिलो ने संघ का सदस्य होना और कामकाज मे ईमानदारी बरतना स्वीकार किया। तेल-उद्योग मे लगे हुए दलालो को भी संघ का सदस्य बनाया गया और उनसे भी सहयोग की प्रार्थना की गयी। हर दलाल से यह अपेक्षा रखी गयी कि वह उसके जरिये होनेवाले तिलहन की खरीद बिक्री की रिपोर्ट प्रतिदिन संघ को दें। इसी प्रकार मिलवाले भी अपनी खरीद बिक्री की साप्ताहिक रिपोर्ट संघ को भेजते हैं। हर महीने की १७ तारीख तक मिलवाले पिछले महीने की अपनी कुल तिलहन-खरीद की रिपोर्ट संघ को भेज देते हैं और साथ मे उस खरीद पर जितना सेल्सटैक्स वाजिब होता है उतनी रकम का चेक भी भेज देते है। संघ के दफ्तर मे दलालों और मिलवालों की सब रिपोर्टों के आधार पर जांच-पड़ताल करके एक सप्ताह के अन्दर वे चेक सरकार को भेज दिये जाते हैं। अगर किसी सदस्य के बारे मे यह पाया जाता है कि उसने टैक्स बचाने की कोशिश की है तो उसे चेतावनी दी जाती है और सुधार का मौका दिया जाता है। अगर इस पर उसने कोई ध्यान नहीं दिया तो व्यापार से उसका बहिष्कार किया जाता है।

तेल-मिल के मालिकों और व्यापारियों आदि के इस स्वैच्छिक और सम्मिलित प्रयत्न का एक ही वर्ष मे आश्चर्यजनक परिणाम सामने आया है। जून १९६६ से मई १९६७ तक के वर्ष मे जब कि सरकार के विभाग द्वारा सीधे बिक्री-कर की वसूली की जाती थी तब औसतन ७४,००० रु० मासिक बिक्री कर की वसूली होती थी। उस वर्षभर मे कुल ९ लाख रुपया बिक्री-कर से वसूल हुआ था। जून १९६७ से जब से, संघ ने बिक्री कर की वसूली अपने हाथ मे ली तब से मासिक वसूली औसत साढ़े तीन लाख से ऊपर हुई है और मई १९६८ तक के १२ महीनों मे कुल ४३,२८,००० रु० बिक्री-कर संघ की ओर से सरकार मे जमा कराया गया है। इस प्रकार पहले ही वर्ष मे तिलहन बिक्री कर से सरकार को पिछले वर्षों की अपेक्षा पांच गुनी रकम मिली है।

हैदराबाद के तेल मिल मालिक संघ का यह प्रयत्न उद्योग-व्यापार के क्षेत्र मे एक युगान्तरकारी परिवर्तन माना जायगा। हिन्दुस्तान के सारे व्यापारी समाज के लिए यह कदम अनुकरणीय है। समाज के विभिन्न वर्ग मौजूदा कानूनों के रहते हुए भी अगर स्वेच्छापूर्वक और मिलकर प्रयत्न करें तो वह किस तरह भ्रष्टाचार की विषम परिस्थिति पर काबू पा सकता है, उसका एक ज्वलन्त उदाहरण हैदराबाद के इस व्यापारी-मंडल ने प्रस्तुत किया है। टोकरसी भाई की इस योजना का शुरू मे तो उपहास और उपेक्षा तथा निहित स्वार्थों द्वारा विरोध होना स्वाभाविक था, पर उनकी निष्ठा और धीरज का फल अन्ततोगत्वा मिला और आन्ध्र सरकार ने यह मंजूर किया कि तेल-मिलो से बिक्री-कर की वसूली सीधे उसके विभाग के कर्मचारियो द्वारा न होकर संघ के द्वारा हो। एक ही वर्ष मे इस योजना का जो परिणाम आया वह आंखें खोलने-वाला है।

तेल-मिल मालिकों को भी इस योजना से लाभ ही हुआ है। यह सही है कि पहले उनको बिक्री कर मे कम पैसा देना पड़ता था। लेकिन बचनेवाली रकम का बहुत-सा हिस्सा तो घूस मे चला जाता था, साथ ही रात-दिन चिन्ता की तलवार तो सर पर लटकती ही रहती थी। घूस देने के बावजूद अधिकारियो से पग-पग पर दबना पड़ता था। समाज मे बदनामी तो थी ही। इसमे कोई सन्देह नही है कि अगर हिसाब लगाया जाय तो व्यापारी भी पायेंगे कि कुल मिलाकर वे पहले की अपेक्षा बहुत अधिक नफे मे हैं। संघ के इस सब कदम से ही उनकी जो प्रतिष्ठा बढ़ी, उसका नतीजा यह हुआ है कि व्यापारियों की दूसरी परेशानियाँ भी कम हो गयी हैं। पहले सब स्वच्छ-बैंगन की उपलब्धि मे तेल-मिलों का काफी दिक्कत होती थी। संघ ने इस मामले को भी उच्च अधिकारियो के समक्ष उठाया और फलस्वरूप अब बैंगनों की मांग और उपलब्धि संघ के द्वारा होती है, जिससे सबको निहायत आसान और नियमित होती जाती है।

श्री टोकरसी भाई ने हैदराबाद के इस अनुभव से उत्साहित होकर भारत के व्यापारी समाज से अनुरोध किया है कि वह इस प्रकार जगह-जगह अपने संगठन और संघो के द्वारा व्यापार मे हिस्सा लें और उचित व्यवहार दाखिल करें। यह नहीं है कि केवल व्यापारियों के प्रयत्न से पूरी परिस्थिति मे सुधार होना संभव नहीं है। समाज के दूसरे वर्गों और सरकार को भी अपने रवैये और नीतियो मे परिवर्तन करना होगा। पर व्यापारी समाज के लिए इस मामले मे पहल करना आसान है और इसमें आ कोई शक नहीं।

ग्रामदान के यूरोपीय संस्करण की खोज

यदि प्राकृतिक वैभव पर्वतीय सौंदर्य और जलाशयों की सम्पदा के साथ स्वर्ग की कल्पना का कोई सम्बन्ध है तो स्विटजरलैण्ड धरती पर स्वर्ग का एक टुकड़ा है। नीले और स्वच्छ आसमान की भव्यता क्या होती है, इसकी सही कल्पना स्विट्जरलैण्ड देखे बिना शायद सम्भव ही नहीं है। बीतती हुई सन्ध्या का उजला सूरज जब चमकती हुई बर्फ पर खिला हो तब सूरज के सही स्वरूप का दर्शन होता है।

जिनीवा में जब हम पहुंचे तब धीमी धीमी बूंदें पड़ रही थीं। पर थोड़ी ही देर में सूरज निकला और ऐसी शान से निकला कि ऐसे खूबसूरत सूरज का दर्शन एकदम नया-सा लग रहा था। ऐसा लगा मानो मैंने पहली बार सूरज देखा हो। ६० मील लम्बा-चौड़ा जिनीवा का जलाशय सूरज की किरणें अपने में ऐसे समेटे हुए था मानो एक लम्बे विछोह के बाद उसे अपना प्रेमी मिल गया हो। मैं स्वभाव से छायावादी नहीं हूं पर जिनीवा झील के किनारे खड़ा कोई भी व्यक्ति भावुक एवं छायावादी बने बिना नहीं रहेगा।

सन् १९३० में रवीन्द्रनाथ टैगोर ने २ महीने जिनीवा में रहकर अपना लेखन-कार्य करने का क्यों निर्णय किया होगा इसका रहस्य यहां की स्वच्छ हवा का एक झोंका पा लेने मात्र से मालूम हो जाता है। हम भी उसी मकान में ठहरे जहां रवि बाबू रहे थे। वातावरण का साधारण परिचय का साथ कलरव और हरी भरी वाटिका का सुहावनापन रवि बाबू को प्रेरित करने में कामयाब हो यह कोई अचम्भे की बात नहीं। जहां हम बैठे हैं चल रहे हैं खा-पी रहे हैं वहीं कभी महाकवि रवीन्द्र भी बैठे होंगे खाते पीते रहे होंगे। यह सोचकर मुझे बड़ा सुख मिल रहा था।

रवि बाबू की सचिव के रूप में काम करने वाली चित्रकार बहन मार्गरिट मिपेल के साथ हमने घण्टों बातचीत की। उनके मन में एक एक स्मृति ऐसी ताजी है मानो सब कुछ कल ही घटा हो मानो अभी अभी रवि बाबू रवाना होकर गये हों। और मार्गरिट उन्हें पहुंचाकर ही वापस आ रही हों। एक भोले सपने की तरह का-सा सारा वातावरण था। मन के किसी कोने में भी दबाव या उत्तेजना नहीं थी। बाहर के वातावरण की आन्तरिक शान्ति के साथ कितना गहरा सम्बन्ध है इसकी अनुभूति हर पल हो रही थी।

सतीश कुमार

स्विटजरलैण्ड की स्थिति विश्व में एकदम निराली है। यह देश संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य नहीं है। यह देश कभी किसी युद्ध में शामिल नहीं हुआ। इस देश के लोगों के लिए राजनीति महत्त्वहीन है। स्त्रियों को न वोट देने का कानूनी अधिकार है और न यहां की स्त्रियां इस अधिकार को अधिकार की संज्ञा देती हैं। जब यह कोई अधिकार ही नहीं तो उसे पाने की मांग करने का प्रश्न ही कहां पैदा होता है? मुझ जैसे व्यक्ति के लिए जिसके देश की प्रधानमंत्री एक स्त्री हो यह समझने में कठिनाई हो रही थी कि बिना एक भी स्त्री के इस देश की लोकसभा कैसी लगती होगी? यहां के किसी सामान्य नागरिक को इसकी बहुत कम परवाह होती है कि उसका राष्ट्रपति कौन है या प्रधान मंत्री कौन है। ये सारे पद मात्र सुविधा और व्यवस्था के लिए हैं, सत्ता या अधिकार से उनका विशेष सम्बन्ध नहीं।

इस देश में राजनैतिक प्रदर्शन विरोध वाद और प्रतिकारमूलक कारवाइयां नहीं के बराबर हैं। इस देश की आबादी भारत के किसी एक जिले में समा सकती है। फिर भी यहां २२ अलग अलग राज्य हैं और ये राज्य भारत के राज्यों से कहीं ज्यादा स्वशासित एवं स्वतंत्र हैं। स्विटजरलैण्ड इन राज्यों का संघ नहीं बल्कि 'फेडरेशन' है। सत्ता का ऐसा विकेन्द्रीकरण राज्यों को इतना स्वाधिकार का ग्राम-स्वराज्य से ही मेल खा सकता है। इस देश ने ग्राम-स्वराज्य की यह विधि स्वतः विकसित की है। और उसके मीठे फलों का आनंद भी वह भोग रहा है। ५० लाख लोगों की आबादी का यह देश फ्रेंच जर्मन एवं इटालियन भाषाओं को बराबरी का हक देकर हर नागरिक की स्वेच्छा का आदर कर रहा है।

जिनीवा एक तरह से विश्व की अनौपचारिक राजधानी का दर्जा हासिल करता जा रहा है। अन्तरराष्ट्रीय शांति अन्तरराष्ट्रीय निःशस्त्रीकरण अन्तरराष्ट्रीय मजदूर संघ अन्तरराष्ट्रीय रेडक्रास और न जाने इसी तरह के कितने अन्तरराष्ट्रीय कार्यक्रमों एवं संगठनों का यह प्रधान केन्द्र है। अन्तरराष्ट्रीय शांति आंदोलन में सम्बन्धित अनेक व्यक्तियों से हमारी भेंट हुई। विशेष रूप से रेने बोवार्ड एवं रोबर्ट जुनो के साथ की मुलाकात स्मरणीय है। ये दोनों सज्जन गांधी विचार से बहुत परिचित हैं। रेने बोवार्ड तो सन् १९४८ में सेवाग्राम के शांति सम्मेलन में भी भाग लेने गये थे। उन्हें जब मैंने वर्तमान गांधी-आन्दोलन अर्थात् ग्रामदान एवं उसकी उपलब्धियों के बारे में बताया तो वे बोले इधर पश्चिम में गांधी का नाम सभी जानते हैं। उनके नेतृत्व में भारत ने आजादी की जो सफल लड़ाई अहिंसक तरीके से लड़ी वह भी जानते हैं। पर उसके अलावा कोई जानकारी हम नहीं मिली। गांधी ने एक अच्छा उदाहरण रखा पर वह एक ऐतिहासिक महत्त्व की सीमा से आगे नहीं बढ़ता। गांधी के पास कोई आर्थिक रचना का सिद्धान्त भी था यह बहुत कम लोगों को मालूम है। गांधी ने कोई नया शिक्षा शास्त्र दिया यह भी इतर

—है कि वे अगर इस तरह पहल करते हैं तो सरकार को भी अपनी नीति और कानून में सुधार करना पड़ेगा और उसका आज की तरह मनमानी चलाना असम्भव हो जायगा। हैदराबाद के तेल-उद्योग ने एक ऐसा मार्ग प्रशस्त किया है जिसका अनुकरण हम आशा करते हैं देश के अन्य व्यापारी भी जगह जगह करेंगे और अपने व्यापार तथा देश को एक बड़े खतरे से बचायेंगे।

२८.६.६९

के समाज को मालूम नहीं है। अतः आज की समस्याओं और आज के प्रश्नों के साथ गांधी का नाम जोड़ पाने में कठिनाई होती है। यदि ग्रामदान, ग्राम-स्वराज्य, ग्राम-गणतंत्र आदि की बातें प्रकाश में लायी जायें तो हमें काफी सोचने-समझने और कुछ करने की सामग्री मिल सकती है।"

स्विस-भारत संघ, जिनीवा के अध्यक्ष और इन्स्टीट्यूट आफ इन्टरनेशनल हायर स्टडीज के प्रोफेसर गिल्बेर एटीन के साथ भी हमारी बातचीत हुई। प्रोफेसर गिल्बेर कई सालों तक भारत में रह चुके हैं। उन्हें ग्रामदान आन्दोलन के बारे में जानकारी तो है, पर उन्हें इस आन्दोलन की सफलता के बारे में सन्देह है। वे कहने लगे कि "समस्या का परिमाण जितना विस्तृत है और भारत की प्रगति के सवाल जितने उलझे हुए हैं, उन्हें देखते हुए गांधी आन्दोलन की क्षमता एवं उसकी सम्भावनाएँ बड़ी सीमित हैं।"

स्विस-राजधानी बर्न में मैंने कुछ घंटे ही बिताये। यह एक शान्त और अपेक्षाकृत छोटा नगर है। जिनीवा और ज्यूरिख रूपी तुला के दो पलड़ों के बीच सन्तुलन साधनेवाला यह 'मुट्ठे' की तरह से महत्वपूर्ण नगर एक साफ-सुथरा स्थान है। बर्न से हम ज्यूरिख आये। यह शहर एक तरह से व्यावसायिक एवं औद्योगिक केन्द्र है। यहाँ के लोगों को झील की शोभा और कुदरत की छटा का आनंद लेने के लिए फुरसत नहीं है। ज्यूरिख को दुनिया की 'स्वर्णनगरी' कहा जा सकता है। विश्व के तमाम धनी और पूँजीपति ज्यूरिख की बैंकों में अपना पैसा जमा रखते हैं। यहाँ के बैंकों में किसका कितना धन जमा है, यह कोई भी व्यक्ति पता नहीं लगा सकता। स्विस-सरकार भी इस मामले में कोई दस्तंदाजी नहीं कर सकती। इसलिए पूर्व और पश्चिम के देशों से बड़े-बड़े धनी यहाँ अपना धन जमा करते हैं। ज्यूरिख की स्वर्ण-मंडी विश्व भर में मशहूर है।

"ग्राम-भावना" के भूतपूर्व सहकारी सम्पादक श्री हरिश्चन्द्र पन्त ज्यूरिख में श्रीमती आल्गि ब्रुगर के साथ रहते हैं। वे यहाँ सर्विस सिविल इन्टरनेशनल के कार्यक्रम के अन्तर्गत आये थे और अब पुस्तकालय विज्ञान का कोर्स कर रहे हैं। पुस्तकालय विज्ञान का अध्ययन करने के साथ-साथ वे एक पुस्तकालय में कार्य भी कर रहे हैं और उनके कारण पुस्तकालय में विनोबा तथा सर्वोदय-आन्दोलन पर कुछ पुस्तकों ने स्थान पाया है। श्रीमती ब्रुगर का उनको पूरा सहारा मिला है। वे पन्तजी को अपने पुत्र की तरह प्यार करती हैं और अपने घर में पन्तजी को रहने और पढ़ने की सुविधा उन्होंने दी है। हमारे ग्रामदान-आन्दोलन के एक पुराने कार्यकर्ता से ज्यूरिख में भेंट करके बड़ी खुशी हुई।

पन्तजी ने हमें ज्यूरिख में जिन अनेक लोगों से मिलाया, उनमें प्रोफेसर बर्ग के साथ की मुलाकात विशेष स्मरणीय है। फोटोग्राफी के विकास के प्रयोगों में लगे हुए इन ब्रिटिश प्रोफेसर महोदय ने हमें बताया कि उन्हें लेबोरेटरी आदि की जो सुविधाएँ यहाँ प्राप्त हैं तथा यहाँ पर इस काम के लिए जितना वेतन मिलता है, वह सब ब्रिटेन में नहीं होने से उन्होंने यहाँ आकर रहने और काम करने का तय किया था। हमारी बातचीत का प्रसंग यह था कि क्यों हर साल ब्रिटेन के अच्छे प्रतिभासम्पन्न वैज्ञानिक अमेरिका, जर्मनी और स्विट्जरलैंड चले जाते हैं और वहीं काम करने लगते हैं। "यह समस्या ब्रिटेन की समस्या नहीं है, बल्कि पूरी दुनिया की समस्या है। प्रतिभा-सम्पन्न एवं बुद्धिजीवी लोग प्रायः अपने पड़ोसी-धर्म को भूलकर अच्छे 'स्टेटस' या अच्छी तनख्वाह के लिए अपना वतन छोड़ देते हैं, जब कि वास्तव में उनकी सेवाएँ अपने वतन के लिए अधिक आवश्यक होती हैं। पिछले एक वर्ष में भारत और पाकिस्तान से १२ सौ डाक्टर ब्रिटेन आकर बसे, जब कि ब्रिटेन ने भारत की 'सहायता' नाम पर २ डाक्टर भेजे।

"इसी तरह अगर छोटे परिमाण में देखें तो गाँव से शहर की ओर जानेवालों की संख्या भी बहुत बड़ी है। थोड़ा पढ़-लिख लेने के बाद आदमी अपना गाँव छोड़कर किसी बड़ी जगह में नौकरी ढूँढ़ने की कोशिश करता है। विकास और सरकारी योजनाओं के नाम पर शहर से जितने डाक्टर, अध्यापक या इंजीनियर ग्रामीण क्षेत्र में भेजे जाते हैं उनकी संख्या का अनुपात, गाँव से शहर जानेवाले डाक्टरों, अध्यापकों या इंजीनियरों की तुलना में बहुत छोटा है।" स्वयं के अनुभव पर आधारित प्रो० बर्ग के ये विचार जानकर खुशी हुई।

"जैसे बुद्धि का प्रवाह देहात से दिल्ली, दिल्ली से लन्दन और लन्दन से न्यूयार्क की तरफ है, वैसे ही संपत्ति का प्रवाह भी उसी दिशा में है। पिछले साल १२ विकसित देशों की प्रति व्यक्ति पीछे आमदनी २५ पाउंड थी और ६८ अविकसित देशों की आमदनी सिर्फ २ पाउंड थी। बुद्धि और सम्पत्ति के इस गलत प्रवाह के कारण गाँव जिले पर निर्भर है, जिला प्रदेश से सहायता माँगता है, प्रदेश केन्द्रीय सहायता की याचना में लगा है और दिल्ली का हाथ विदेशी सहायता के लिए पसरा हुआ है। यह पर-निर्भरता सारे समाज के ढाँचे को खोखला बना देती है। यह समस्या केवल भारत की नहीं, बल्कि एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के लगभग सभी देशों की समस्या है। प्रोफेसर बर्ग एक निष्पक्ष समालोचक की भाँति अपने विचार रख रहे थे। वे पिछले दिनों दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों की यात्रा पर थे और इस यात्रा के बाद उन्हें इस सारी समस्या का अहसास ज्यादा तीव्रता से हो रहा है।

युनेस्को की सर्वोच्च सभा ने एक प्रस्ताव पास करके दुनिया की तमाम राष्ट्रीय युनेस्को शाखाओं से यह निवेदन किया है कि २ अक्तूबर १९६८ से २ अक्तूबर १९६९ तक का समय 'गांधी-वर्ष' के रूप में मनाया जाय। युनेस्को का प्रधान केन्द्र पेरिस में है और वहाँ मैं दर्शन विभाग की संचालिका कुमारी हेर्श से मिला था, तो उन्होंने बतलाया था कि "हम लोग गांधी-विचार पर अक्तूबर १९६९ में एक अन्तरराष्ट्रीय सेमिनार आयोजित करने जा रहे हैं। साथ ही हम आशा करते हैं कि युनेस्को की राष्ट्रीय शाखाएँ अपने अपने देश में पूरे वर्ष का कार्यक्रम बनायेंगी। इसी सन्दर्भ के साथ ज्यूरिख में स्विस युनेस्को के प्रधानमंत्री श्री ... से मेरी अच्छी बातचीत हुई। उन्होंने बताया कि "स्विस

जिलादान का उत्साह

बाबा ने सारण और बलिया के बाद चम्पारण जाने की इच्छा व्यक्त करते हुए कहा, "जानते हो नेपोलियन की हार वाटरलू में क्यों हुई ? बस सिर्फ सात मिनट की देर हुई उसे मदद पहुँचने में। गंडक नदी के किनारे डावनगंज में शाम के समय हाजीपुर पड़ाव पर बाबा सुना रहे थे। मैंने उनसे कहा, '२ अक्तूबर तक जिलादान हो जायगा, ऐसा अब वहाँ के कार्यकर्ता बोलने लगे हैं।" "२ अक्तूबर क्यों कहते हो, तीन सप्ताह के बाद वहाँ पहुँचनेवाला हूँ और तीन सप्ताह रहूँगा। बस छः सप्ताह में काम समाप्त करना है।" जोर देकर बाबा बात रहे थे मानो छः सप्ताह बहुत अधिक समय दे रहे हों, नहीं तो वाटरलू बनने का खतरा है।

गांधीजी ने चंपारण में सत्य एवं अहिंसा का जो प्रयोग किया एवं सदियों से पीड़ित दलित, अतिसाधारण मानव में अत्याचार के खिलाफ खड़ा होने का जो पाठ पढ़ाया वह दुनिया के इतिहास में उस वक्त एक अनोखी मिसाल थी। वह प्रयोग भारत के राष्ट्रीय संग्राम के आनेवाले दिनों में प्रेरणा, उत्साह तथा मार्गदर्शन प्रदान करता रहा। उस समय भारत ही नहीं, दुनिया के लोगों ने चंपारण का नाम सुना।

टेलिविजन, समाचारपत्र तथा विश्व विद्यालयों से इस दिशा में संपर्क साधा जा चुका है और उनसे पूरा सहयोग प्राप्त होने का आश्वासन हमें मिला है। स्विट्जरलैंड एक छोटा-सा देश है पर गांधी के जीवन और दर्शन में हमारी दिलचस्पी बढ़ रही है अतः जितना भी हमारी सामर्थ्य और साधना के अनुसार गांधी को प्रत्येक स्विस-नागरिक तक पहुँचाने के लिए हम कर सकते हैं उतना करने में कोई कसर नहीं रखेंगे।"

इस तरह २१ से २५ फरवरी की हमारी ५ दिनों की यह स्विस दिवस-यात्रा बड़ी अनुभवदायिनी एवं सफल रही। •

चंपारण नेपाल के पड़ोस में स्थित बिहार का धान और ईख पैदा करनेवाला जिला है। यहाँ के निवासी अन्य जिलों के मुकाबिले बड़े सीधे सादे हैं। कोई आंदोलन अभियान तुरंत इस जिले को छू नहीं पाता है। ग्रामदान आंदोलन का तूफान बिहार में सन् १९६५ से चल रहा है। १९६५ में बाबा की यात्रा भी इस जिले में हुई किन्तु तूफान का चंपारण पर कोई असर नहीं हुआ। चम्पारण गहरी नींद में सोता रहा। फिर बिहारदान की योजना बनी। बिहार के सभी जिलों में हलचल प्रारम्भ हो गयी। अब भी चम्पारण शान्त रहा। चम्पारण के मशहूर नेताओं में विपिन बाबू (अब बूढ़े हुए) आज भी हैं। और विभूति मिश्र तो दिल्ली में कायम एक तगड़े नेता माने जाते हैं। यहाँ के अन्य पक्षों के भी नेता बिहार की राजनीति में सक्रिय भाग लेते हैं। यह सब होते हुए भी विनोबाजी के आन्दोलन के प्रति चम्पारण उदासीन ही बना रहा। पहले तो बाबा चम्पारण को गांधीजी के नाम पर छोड़ते गये किन्तु जब उत्तर बिहार के दो जिलों का दान हो गया तथा अन्य जिलों में जिलादान की हलचल ने जोर पकड़ा तो बाबा के सूक्ष्म आक्रमण से चम्पारण बच नहीं सका। हम लोगों की इस सलाह को कि बाबा बिहार के हर जिले में सात-आठ दिनों का समय दें अमान्य करके सहरसा, सारण और चंपारण में जाने का निर्णय बाबा ने किया।

लगता है बाबा के सूक्ष्माक्रमण का गहरा असर पड़ा है। आबू रोड सम्मेलन के अवसर पर सम्मेलन में उपस्थित चंपारण के खादी के कार्यकर्ताओं ने तय किया कि सुगौली प्रखण्डदान जयप्रकाश नारायण को समर्पित करेंगे। चम्पारण में आन्दोलन की जो अब तक गति थी उसमें तो यह संकल्प कल्पित ही दीख रहा था, किन्तु भीतर ही भीतर कोई अदृश्य शक्ति काम कर रही थी। विपिन बाबू का पत्र लेकर श्री प्रभुनाथ सिंह भूतपूर्व एम० एल० ए० आबूरोड में जयप्रकाश बाबू से चंपारण के लिए उनका कार्यक्रम प्राप्त करने पहुँचे थे। सगौली के नेता सन्तसेवकजी भी जे०पी० के कार्यक्रम की माँग कई महीनों से कर रहे थे। जे० पी० का कार्यक्रम बना और कार्यकर्ताओं में उत्साह की लहर दौड़ गयी। आबू सम्मेलन से कार्यकर्ता भारतदान का मंत्र लेकर लौटे। उत्साह की कमी थी नहीं। आयोजन किया तथा २३ जून से ग्रामदान का हस्ताक्षर प्रारम्भ कर दिया गया। ३० जुलाई को जे० पी० सुगौली पहुंचे तो १५ पंचायतों एवं ५० राजस्व ग्राम तथा ७७,२८२ जनसंख्यावाला प्रखंड सुगौली उन्हें समर्पित किया गया, साथ ही ६ हजार की थैली भी समर्पित की गयी, जो मुख्यतः खादी के कार्यकर्ताओं द्वारा एक रुपया, दो रुपया के कूपन बेच कर एकत्र की गयी थी। उस रोज चंपारण जिला भर के करीब १५० कार्यकर्ताओं ने जे० पी० का स्फूर्तिदायक भाषण सुना तथा अभियान की गति में तीव्रता प्रदान करने का संकल्प किया।

सुगौली चंपारण जिला का बहुत ही जागरूक क्षेत्र है। श्री विक्रमा पाण्डेय ने, जो बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के इस जिले के लिए क्षेत्रीय निर्देशक हैं तथा जिनका घर भी इसी जिले में है, इस अभियान का मुख्य संयोजन अपने अभिन्न साथी रामसिंहासन सिंह एवं इन्द्रदेवजी के सहयोग से किया। अब उनके संयोजकत्व में जिले में आगे का काम चलाया जा रहा है। सर्वश्री यमुनाराय, मंगलप्रसाद, संतसेवक एवं शिवशंकर प्रसाद का सक्रिय सहयोग उन्हें उपलब्ध है। रमापति बाबू बीच बीच में पहुँचकर शक्ति प्रदान करते हैं और कार्यकर्ताओं को प्रेरित करते रहते हैं। बाबा २६ जुलाई को चंपारण पहुँचने वाले हैं। बाबा के स्वागत की तैयारी हो रही है। उन्हें भी प्रखंडदान एवं रुपये की थैली समर्पित करने की योजना है। विपिन बाबू सक्रिय होंगे ऐसा आश्वासन उन्होंने दिया है।

—कैलाश प्रसाद शर्मा, सहमंत्री
बिहार ग्रामदान प्राप्ति समिति

गया जिले में भूदान-ग्रामदान आन्दोलन की प्रगति

भूदान आंदोलन के प्रथम चरण में गया जिले के कुल ६,२३३ गांवों में से ५,१०० गांवों के २७,८६७ दाताओं द्वारा भूदान में १ लाख ५ हजार एकड़ जमीन का दान हुआ। प्राप्त जमीन में जांचकर कृषियोग्य कुल भूमि २४,५०० एकड़ का वितरण २,७५६ गांवों में १४,२०० भूमिहीन परिवारों के बीच किया गया। वितरित जमीन पर ७० से ८० प्रतिशत भूदान-किसान सफलतापूर्वक खेती कर रहे हैं। हाल में बाराचट्टी, बोधगया, मोहनपुर और कौआकोल में भूदान-किसानों की भूमि के सुधार, सिंचाई आदि का सघन प्रयास 'आक्स-फेम' आदि कई अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं की सहायता से हो रहा है। भूदान की जमीन पर ३०० परिवारों की १२ नयी बस्तियां बसायी गयी हैं। मकान बनाने, खेती सुधारने और साधन आदि के लिए इन पर ४ लाख रु० खर्च हुए हैं।

ग्रामदान में अब तक कुल ४६ प्रखंडों में से २६ प्रखंडों में १०१७ गांवों का ग्रामदान हुआ है।

कौआकोल प्रखंड का प्रखंडदान पहले ही हो चुका है। पिछले दिनों मखदूमपुर, बाराचट्टी और गोविन्दपुर प्रखंड में जिले की सारी शक्ति केन्द्रित कर प्रखंडदान-प्राप्ति का प्रयास विशेष रूप से किया गया है।

मखदुमपुर में १५ से २२ मई तक जिला शिक्षा-पदाधिकारी, अनुमंडल शिक्षा-पदाधिकारी आदि के नेतृत्व में तमाम शिक्षकों की अगुआई में ग्रामदान-प्राप्ति का प्रयास किया गया। इस दौर में जिला पंचायत परिषद के अध्यक्ष श्रीसुखदेव प्रसाद वर्मा और बिहार रिलीफ कमिटी के प्रधान मंत्री श्री सिद्धराज ढड्ढा ने मार्गदर्शन किया। कुल ३२ गांवों में जोरों का हस्ताक्षर अभियान प्रारंभ हुआ जिसमें करीब ६०० परिवारों के हस्ताक्षर प्राप्त हुए।

बाराचट्टी प्रखंड में भी इसी अवधि में प्रखंडदान-प्राप्ति के प्रयास-स्वरूप काम हुए। एक पूरे पंचायत का ग्रामदान संभव हुआ। एक पूरे पंचायत का दान पहले ही हो चुका है। आशा है, शीघ्र ही वहां प्रखंडदान हो सकेगा।

बाराचट्टी प्रखंड में दिवाकरजी, संयोजक जिलादान-प्राप्ति समिति श्री जगदेव सिंह और श्री श्रीधर नारायण का विशेष योगदान रहा।

गोविन्दपुर प्रखंडदान-प्राप्ति में सोखोदेवरा आश्रम के प्रधान मंत्री श्री त्रिपुरारिशरण और आश्रम के खादी-विद्यालय के प्रशिक्षार्थी और अध्यापकगण विशेष रूप से प्रयत्नशील रहे। श्री शम्भुशरण तथा कई पंचायतों के मुखिया और पाठशालाओं के अध्यापकों की सराहनीय मदद से प्राय: प्रखंड का दान पूरा होने को है। —दिवाकर

प्राकृतिक चिकित्सा की सुविधा

प्राकृतिक चिकित्सालय, बापूनगर, जयपुर (राजस्थान) में निम्न रोगों से ग्रसित गरीब रोगियों को निःशुल्क उपचार एवं भोजन देने की व्यवस्था की गयी है। दमा, मोटापा, गैसट्रबल, रक्तचाप, एक्जिमा आदि। निम्न पते पर पत्रव्यवहार कर उक्त रोगों से नि:शुल्क स्थायी स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करें।-व्यवस्थापक, प्राकृतिक चिकित्सालय, बापूनगर जयपुर-४

सेवाग्राम में आर्यनायकम्-पुण्यतिथि

सेवाग्राम आश्रम के जिस कमरे में आर्यनायकम्‌जी रहते थे, वहीं एक छोटा सा दीपक हवा के झोंकों से लड़ रहा था। ऐसा लगता था कि बुझ-बुझकर भी जल जाने का क्रम इसका कभी खतम नहीं होगा, शायद आत्मा की अमरता की तरह। पांडे गुरुजी वेदोच्चारण कर रहे थे, विष्णुसहस्रनाम, ईशावास्योपनिषद् का पाठ हो रहा था। सूतांजलि के ढेर लगे हुए थे। बरामदे में चरखा चल रहा था। प्रथम वार्षिक पुण्यतिथि होने के कारण, आशादेवी श्रीलंका गयी हुई थीं। निर्मलाबहन गांधी सारी जिम्मेवारी सम्हाल रही थीं। सत्यनारायणजी एवं विद्यालय की 'वानरसेना' सेवा में रत थी।

सेवाग्राम-आश्रम से आधा मील दूर पहाड़ी पर समाधिस्थान है जहाँ प्रोफेसरी यहूदी कार्लिन 'दादू'—गांधीजी के अफ्रीका के साथी जोड़ पर्शिन, धर्मानन्द कोसम्बी और आर्यनायकमजी की समाधियाँ हैं। नायकमजी की समाधि लाल-काले पत्थरों के ऊपर खड़ी है, यानी ठिगना, ध्यानस्थ। बाहर से ऐसा ही खुरदुरा व्यक्तित्व था नायकमजी का। किन्तु भीतर से वे नारियल की भाँति कोमल थे। अन्याय देखकर उनसे रहा नहीं जाता था। सूर्योदय के साथ-साथ सर्वधर्म प्रार्थना की गयी। "निर्बल के बल राम" भजन के पश्चात् 'राम सीताराम' की ध्वनि गूँज उठी। सब लोगों ने समाधि पर पुष्पार्पण किया।

दिनभर अखंड सूतयज्ञ और बुनाई हुई। सूर्यास्त के समय सूत काटकर हम लोग पुनः शान्तिनिवास के पीछे 'रघुपति राघव' गाते हुए समाधि पर आये। कतार में बनी समाधियाँ—राजघाट, दिल्ली—की गांधी, नेहरू, शास्त्रीजी की समाधियों की याद दिलाती हैं। पर यह राजघाट नहीं, सेवाघाट है! लगभग पचास बहनें, जिनमें कई [illegible] थीं, और एक सौ भाइयों ने सर्वधर्म प्रार्थना के पश्चात् अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की—सूत काटकर, सूत चढ़ाकर, हृदय की समस्त शुभ भावनाएँ समर्पित कर। —जगदीश पथानी

राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी समिति

प्रधान केन्द्र
१, राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली–१
फोन २७६१०५

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति
टुकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैरों
जयपुर–३ (राजस्थान)
फोन ७२६८३

अध्यक्ष : डा० जाकिर हुसैन, राष्ट्रपति
उपाध्यक्ष : श्री वी० वी० गिरी, उपराष्ट्रपति
अध्यक्ष : कार्यकारिणी :
श्रीमती इन्दिरा गांधी, प्रधानमंत्री
मंत्री : श्री आर० आर० दिवाकर

अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी
मंत्री श्री पूर्णचन्द्र जैन

गांधीजी के जन्म के १०० वर्ष २ अक्तूबर, १९६९ को पूरे होंगे। आइये, आप और हम इस शुभ दिन के पूर्व—

(१) देश के गाँव-गाँव और घर-घर में गांधीजी का संदेश पहुँचायें।

(२) लोगों को समझायें कि गांधीजी क्या चाहते थे?

(३) व्यापक प्रचार करें कि विनोबाजी भी भूदान-ग्रामदान द्वारा गांधीजी के काम को ही आगे बढ़ा रहे हैं।

यह सब आप-हम कैसे करेंगे?

- यह समझने-समझाने के लिए रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति ने विभिन्न प्रकार के फोल्डर, पोस्टर, पुस्तक-पुस्तिकादि सामग्री प्रकाशित की है। इसे आप पढ़ें और दूसरों को भी पढ़ने को दें।
- इस बारे सामग्री और विशेष जानकारी के लिए उपसमिति के ऊपर दिये गये जयपुर कार्यालय से पत्र-व्यवहार करें।

"उत्तर प्रदेश" दान के संकल्प की घोषणा

बलिया : १५ जुलाई, ६८ । आज सुबह पिछली १० जुलाई से चल रहे प्रदेशीय कार्यकर्ता-सम्मेलन के अन्तिम दिन कार्यकर्ताओं ने आचार्य विनोबा भावे की उपस्थिति में हाथ उठाकर 'प्रदेश दान' (अर्थात् प्रदेश के हर एक गाँव को ग्रामदान में लाने का) का संकल्प किया। आचार्य विनोबा भावे ने इस अवसर पर कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए कहा कि हमारी यह यात्रा पर्वतारोहण की तरह है। हमें दिशा सही रखनी है और एक-एक कदम आगे बढ़ते जाना है। जैसे-जैसे हम आगे बढ़ेंगे, नये नये दिगंतों का दर्शन होगा। अन्तिम शिखर पर पहुँचने के बाद क्या दर्शन होगा, यह हम अभी नहीं समझ सकते। अभी तो हमें एक के बाद दूसरे शिखर का आरोहण-क्रम जारी रखना है। आपने देश को खंडित करनेवाली प्रवृत्तियों का जिक्र करते हुए कहा कि समाज को यह आशा बनी है कि "हमारी जमात" जोड़नेवाली है, तोड़नेवाली नहीं। इस अपेक्षा के बनने में हमारा पुरुषार्थ कम है, लोगों का अधिक है। क्योंकि और सब जगहों से घोर निराशा हुई है, इसलिए हम आशा के केन्द्र बने हुए हैं, लेकिन हमें अत्यन्त सतर्क रहना है कि यह आशा खंडित न हो। "हमारी जमात" की व्याख्या करते हुए आचार्य भावे ने कहा कि करुणा, लोकनिष्ठा और अहिंसा में आस्थावान दुनिया का हर व्यक्ति हमारी जमात में है। हमारी कोई चहारदीवारी नहीं है।

इतने बड़े संकल्प के कारण कार्यकर्ताओं में व्याप्त गंभीरता को दृढ़ता प्रदान करते हुए सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी ने कहा कि जिस तरह फ्रान्स की रोगक्रान्ति का संकल्प टेनिस खेलने की एक छोटी-सी जगह पर लिया गया था उसी प्रकार उत्तर प्रदेश दान का यह संकल्प इस छोटे-से नगर के एक कालेज की नाट्यशाला में लिया जा रहा है। और यह आनेवाला इतिहास बतायेगा कि यह संकल्प फ्रांस की राज्यक्रान्ति के संकल्प से जरा भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। दक्षिणी ध्रुव की खोज में निकली एक टीम की साहसिक यात्रा की कहानी सुनाते हुए आपने कहा कि यात्रियों का जहाज टूट चुका था। मंजिल तक पहुँचने के लिए एक बारह हजार फुट ऊँची बर्फीली चोटी पार करनी थी। जब वे शाम को उस चोटी पर पहुँचे तो उतरने का वक्त नहीं रह गया था। उस बर्फीली चोटी पर अपर्याप्त साधनों के कारण उनकी मौत निश्चित थी। ऐसी स्थिति में उन्होंने बना बहुत देर इंतजार किये चढ़ाई में काम आने वाली रस्सियों की कुंडलियाँ बनायीं और उन्हीं पर आँख मूँद कर बैठ गये तथा भगवान् का नाम लेकर फिसलना शुरू कर दिया। १२ हजार फुट की उतराई उन्होंने ढाई-तीन मिनट में पूरी की। हमारा देश आज ऐसी चोटी पर पहुँच गया है कि अगर हम इंतजार करेंगे। तो फिर सवेरा देखना हमारी नसीब में न होगा। इसलिए बावजूद सारी कठिनाइयों के हमें आगे बढ़ना है और बिना किसी संशय के बढ़ते ही जाना है।

श्री विचित्र भाई ने इस संकल्प को अत्यन्त गंभीर और जिम्मेदारीपूर्ण बताते हुए कहा कि इतिहास के आदिकाल से गंगा-जमुना और राम-कृष्ण के इस प्रदेश ने देश को मोड़ने का काम किया है। यद्यपि आज यह प्रदेश बहुत बदनाम है, लेकिन बदनामी के इस सिलसिले को और अधिक बढ़ाना नहीं है। बल्कि एक आदि कालीन ऐतिहासिक परम्परा को पुनर्जीवित करना है। आपने कहा कि ग्रामदान जनहृदय की पवित्र गंगा को प्रवाहित करने का भगीरथ प्रयत्न है। भगवान् हमें इसको पूर्ण करने की क्षमता दे।

(म० प्रे० स०

वाराणसी जनपद में चन्दौली का प्रथम तहसीलदान घोषित

वाराणसी जनपद के चन्दौली तहसील-दान की व्यूह-रचना गत सक्रान्ति १४ जनवरी '६८ को चहनियाँ क्षेत्र से प्रारम्भ हुई। जनवरी माह में चहनियाँ का प्रखण्डदान, मार्च में धानापुर का प्रखण्डदान व मई में नियामताबाद का प्रखण्डदान घोषित हुआ। जून में एकसाथ शेष तीन प्रखण्ड—बरहनी, चन्दौली व सकलडीहा—के प्रखण्डदान को लेकर छः प्रखण्डों में फैली हुई तहसील चन्दौली के ६६६ गाँवों में से ६०६ गाँवों ने ग्रामदान की घोषणा की है। इस प्रकार चन्दौली का तहसीलदान (८६ प्रतिशत) अवश्यमेव वाराणसी जिलादान के प्रथम चरण का साहसिक कार्य सम्पन्न हुआ है।

तहसील के वयोवृद्ध सेवक रामसूरतजी मिश्र तथा कामता प्रसाद विद्यार्थी, सघन क्षेत्र भभवरा व शहीद गाँव के संचालक रघुनाथ पाण्डे, भवानीशंकर एवं वहाँ के सभी कार्यकर्ता तथा जिला सर्वोदय मंडल के सरजू प्रसाद शर्मा तथा ग्रलख भाई और उत्तरप्रदेश खादी कमीशन की ओर से तूफानी कवि मातवर विश्व गुरु ने आखिर तक जी-जान से जुटे रहे हैं।

चन्दौली में २८ जून '६८ को तहसील-दान धीरेन्द्र भाई को समर्पित किया गया। इस अवसर पर ग्रामदान के विचार का स्पष्टी-करण करते हुए धीरेन्द्र भाई ने कहा कि ग्रामदान का काम जो हो रहा है, वह काल-पुरुष करा रहा है। समय के हिसाब से समाज को चलाने और नियंत्रित करने के जो अब तक के दण्ड और कानून के तरीके रहे हैं, वे बासी पड़ गये हैं। लोकजीवन को अब वे चला नहीं सकते।

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०, या २५ शिलिंग, या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

गोहत्या की क्रमिक योजना

परिवार-नियोजन का देश को निर्माल्य बनानेवाला कार्यक्रम

"अगर भारत के लोग, जो गाय का मांस नहीं खाते हैं, खाने के बजाय उसका अन्य देशों को निर्यात करें तो देश की रक्षा पर जितना खर्च आज हो रहा है वह सारा-का-सारा गोमांस के इस निर्यात से कमाया जा सकता है।" यह देश के उन "प्रमुख अर्थशास्त्रियों" का मत है, जिन्होंने सरकार द्वारा पिछले जून में नियुक्त की गयी गो-रक्षा समिति के सामने अपने बयान दिये हैं। समिति अब तक ऐसे ५५ "विशेषज्ञों" की गवाही ले चुकी है और इनमें से अधिकांश विशेषज्ञ गायों के कतल पर प्रतिबंध लगाने के विरुद्ध हैं। इन लोगों का मत है कि बेकार पशुओं को खिलाने में जो खर्च होता है वह देश का अत्यधिक और अप्रत्यक्ष घाटा हो रहा है। इन विशेषज्ञों की राय में भारत के मौजूदा पशु-धन में केवल १० % ऐसे पशु हैं, जो "उपयोगी" कहे जा सकते हैं। इन विशेषज्ञों ने यह सुझाया है कि "शेष ९० % पशुओं को खतम करने की एक क्रमिक योजना बनानी चाहिए।"

उपरोक्त संवाद अंग्रेजी के प्रतिष्ठित दैनिक "स्टेट्समैन" के २ जुलाई के अंक में प्रकाशित हुआ है। इस संवाद पर अधिक टीका-टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं है। इस देश का यह दुर्भाग्य है कि उसके प्रशासन की बागडोर आज ऐसे ही 'बुद्धिवादियों और विशेषज्ञों' के हाथ में है। और ऐसे ही लोगों की राय का महत्त्व है, जिनका इस देश की संस्कृति, परम्परा, जीवन-मूल्य और उसके आर्थिक जीवन की वास्तविकता आदि से कोई वास्ता नहीं है। ये लोग हर चीज को रुपये-पैसे के दृष्टिकोण से ही देखते हैं और स्याह को सफेद और सफेद को स्याह दिखाने की बौद्धिक कलाबाजी में निपुण हैं। गोमांस खाने से परहेज करना दकियानूसीपन की निशानी है, इतना कहने की हिम्मत तो इन विशेषज्ञों की शायद नहीं है, लेकिन उनका यह कहना है कि हमें गोमांस खाने से परहेज है तो हम उसका निर्यात करके पैसा क्यों न कमायें, उनकी इस भावना का सबूत है। उनकी नजरों में गाय को न मारने और न खाने में वहम के अलावा और किसी तर्कपूर्ण या बुद्धिमानी की दलील का भान होना तो वे ऐसा बेशर्म और उपहास करनेवाला सुझाव न देते। देश का विकास चाहनेवाले और देश की कमाई बढ़ाने के लिए इच्छुक इन योजनाकारों, विशेषज्ञों और बुद्धिमानों की ओर से यह सुझाव आना और बाकी है कि देश की कुल जनसंख्या के उन १५-२० फीसदी बूढ़े, बेकार, अपाहिज, लूले-लंगड़े, तपेदिक कैन्सर या कोढ़ आदि लाइलाज रोगों से पीड़ित लोगों को समाप्त करने की क्रमिक योजना बनानी चाहिए, ताकि उनको जीवित रखने और निभाने में जो व्यर्थ का खर्च राष्ट्र का हो रहा है वह बच सके। शराबबंदी जैसे काम से करोड़ों रुपये की "हानि" होगी, इस दलील का अर्थ अब लोगों की समझ में अच्छी तरह से आ जाना चाहिए। हमारे देश के इन अर्थशास्त्रियों और विशेषज्ञों को इस बात से मतलब नहीं है कि कमाई और धन की बचत किन तरीकों से होती है। वह चाहे गोमांस बेचकर हो, शराब का व्यापार करके हो, लोगों में जुआखोरी बढ़ाकर हो, वेश्यालय खोलकर हो, भ्रूणहत्या करके हो, चाहे बूढ़ों और अपाहिजों जैसे अनुपयोगी लोगों को मारकर हो—कमाई और बचत होनी चाहिए, ताकि हमारे इन शासकों, योजनाकारों, अर्थशास्त्रियों, विशेषज्ञों राजनीतिक नेताओं, उद्योगपतियों, व्यापारियों और पढ़े-लिखे लोगों को अपनी "दाल-रोटी" का खर्च चलाने के लिए हजारों-लाखों रुपया माहवार मिलता रहे।

× × ×

अखिल भारत झारखंड पार्टी के अध्यक्ष आदिवासी नेता श्री मुंडा का कहना है कि भारत प्राकृतिक साधनों से सम्पन्न और भरपूरा है, लेकिन यह दुर्भाग्य की बात है कि उन साधनों का उपयोग गरीबी को मिटाने में करने के बजाय इस देश की केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारें परिवार-नियोजन जैसे कार्यक्रम में अपनी पूरी शक्ति लगा रही हैं, जो कार्यक्रम "राष्ट्र को कमजोर और निर्माल्य करनेवाला है।" लेकिन हमारे बुद्धिमानों और विशेषज्ञों की राय इस सीधे सादे आदिवासी से भिन्न है।

—सिद्धराज ढड्ढा

टीकमगढ़ जिलादान अभियान

निवाड़ी तहसील में ६४ ग्रामदान प्राप्त

टीकमगढ़, १२ जुलाई। मौसम की पहली बारिश और तूफान के साथ ही जिले की निवाड़ी तहसील में १ जुलाई से जिलादान अभियान शुरू हुआ। सर्वप्रथम निवाड़ी में दो-दिवसीय शिविर हुआ। तत्पश्चात् प्रखंड के गाँव-गाँव में ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का संदेश पहुँचाने के लिए १६ टोलियों के अन्तर्गत ५० भाई-बहनें पाँच दिवसीय पदयात्रा के लिए निकल पड़ी। इन पदयात्रा-टोलियों ने क्षेत्र के लगभग ८० गाँवों का भ्रमण किया, फलस्वरूप ५० ग्रामदान घोषित हुए।

जिलादान-अभियान के प्रथम दौरे के पूर्व निवाड़ी तहसील के करीबरवला गाँव में पूर्वतैयारी का एक दूसरा शिविर संपन्न हुआ, जिसके अन्तर्गत क्षेत्र के १४ गाँव ग्रामदान हो चुके हैं।

टीकमगढ़ जिलादान अभियान में म० प्र० गांधी-स्मारक-निधि, सर्वोदय मंडल, गांधी आश्रम के कार्यकर्ता और शान्ति-सेना विद्यालय कस्तूरबाग्राम की बहनों के अलावा स्थानीय शिक्षक भी भाग ले रहे हैं। अभियान का मार्गदर्शन सुश्री निर्मला देशपाण्डे स्वयं कर रही हैं। अभियानों का संयोजन और गवालत निधि के वरिष्ठ सेवक श्री रामचन्द्र भार्गव कर रहे हैं। जिले के १००१ गाँवों में से अब तक ४२५ गाँव ग्रामदान में सम्मिलित हो चुके हैं, जिसमें टीकमगढ़ का तहसीलदान भी शामिल है। [सप्रेस]

सम्पादकीय

उत्तर प्रदेश दान का संकल्प
इतिहास का संकेत

विश्व इतिहास के ममज्ञों का मत है कि कालक्रम से दुनिया में
परिवर्तन की लहर दौड़ती है और कुछ स्थानीय मामूली भिन्नताओं
के बावजूद मूलतः उसकी दिशा एक होती है प्रकृति एक होती है।
पिछले कुछ दशकों में खासकर द्वितीय विश्वयुद्ध के समय जब
कि साम्राज्यवादी शक्तियों को नाजीवाद से टक्कर लेनी पड़ी दुनिया
में उपनिवेशवाद से मुक्ति की छटपटाहट बहुत ही तीव्रता के साथ
पैदा हुई और दुनिया के मानचित्र से उपनिवेशवाद की काली छाया
द्रुत गति से समाप्त होने लगी। उसके साथ ही नवस्वतंत्र राष्ट्रों में
लोकतांत्रिक समाज रचना की जबरदस्त आकांक्षा भी पनपी और
प्रायः हर राष्ट्र में थोड़ी-बहुत भिन्नता के साथ संसदीय लोकतांत्रिक
प्रणाली की शुरुआत हुई तथापि बहुत-सी बाहरी और भीतरी
विसंगतियों के कारण प्राय हर देश में लोकतंत्र की यह रचना भ्रम
फल सिद्ध हुई, और सैनिक तानाशाहों ने उस पर अपना रंग जमा
लिया। इसके क्या कारण रहे अभी हम उसमें न जाकर सिर्फ इस
बात की ओर संकेत करना चाहते हैं कि दुनिया की आकांक्षा और
उसका अन्तर प्रवाह प्राय समान रहा।

अमेरिका और यूरोप के कुछ अगुवा देशों में विकसित इस संस
दीय लोकतांत्रिक प्रणाली का दुनिया में व्यापक प्रसार होने से उसकी
सीमाएँ और विसंगतियाँ अधिक स्पष्टता के साथ विश्व के विचारकों
से लेकर सामान्य जनता तक की निगाहों के सामने आ रही हैं।
और यही कारण है कि वर्तमान काल में दूरदर्शी द्रष्टाओं की निगाहें
आतुरता के साथ विकल्प की तलाश कर रही हैं। आतुरता
इसलिए है कि लोकतन्त्र की विफलता सामान्य मनुष्य के मन
को असंतोष की ओर खींच रही है, और लोग किसी-न-किसी रूप
में साम्राज्यवाद" की हो एक दूसरी धारणा—सैनिक तानाशाही की बात
चाहने लगे हैं। अपने देश में भी हम अखबारों या अल्पपढ़ों की बात
चीत में आजादी के इतने वर्षों के बाद भी यह सुनते हैं कि इससे तो
अंग्रेजी राज ही अच्छा था और पढ़े लिखे लोगों की चर्चाओं में
यह सुन सकते हैं कि एक ही विकल्प है—डिक्टेटरशिप।

एक तरफ जहाँ इस तरह की मनोभावना पनप रही है वहीं
दूसरी ओर न केवल विनोबा ही विकल्प की खोज में लगे हैं बल्कि
दुनिया के बहुत-से चोटी के विचारक इस दिशा में सक्रिय हैं।

इस संदर्भ में विश्व इतिहास के सुप्रसिद्ध विद्वान और चोटी के
विचारक डा० आर्नाल्ड टायनबी का दिल्ली से प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक
'हिन्दुस्तान टाइम्स' के १ जुलाई ६८ के अंक में प्रकाशित एक
लेख 'मानव जाति की आशा का एक पिरामिड—(A pyramid of
hope for mankind) अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। डा० टायनबी का कहना
है कि जिन संस्थाओं से मानव अपने कारोबार को व्यवस्थित करने
में प्रयत्नशील है उनसे वे अत्यन्त असंतुष्ट हैं। उनका मत है कि
'राष्ट्रीय सरकारें (National states) पन्द्रहवीं सदी की पश्चिम यूरोप
की देन हैं संसद' १३ वीं सदी की अंग्रेजी-संस्था है विनियोग
का मूलभूत माध्यम स्वर्ण' भूगर्भ विज्ञान और कला की खोज के
समय से ही चल रहा है। इन सारे साधनों का प्रयोग वर्तमान
आणविक और कम्प्यूटर युग में भी पहले की तरह ही किया जा रहा
है। जब कि वर्तमान स्वरूप में ये पारम्परिक संस्थाएँ और व्यवस्थाएँ
बिलकुल ही अव्यावहारिक हैं और इनसे आज के अभिलषित प्रयो
जन सिद्ध नहीं हो सकते।

डा० टायनबी के अनुसार इस युग की आवश्यकताओं की पूर्ति
ऐसी ही रचना में सम्भव है, जिसमें मनुष्य का मनुष्य से सीधा सम्बन्ध
आये। विश्व की भावी राजनीतिक रचना की बुनियादी इकाई
उतनी ही बड़ी हो सकती है जिसमें मनुष्य का मनुष्य से सीधा
सम्बन्ध बने और कायम रहे। इस बुनियाद पर ही विश्वराज्य की
आखिरी मंजिल टिकेगी। सबसे निचली बुनियाद और सबसे ऊपरी
सिरे के बीच का सन्तुलन बनाये रखने के लिए अनिवार्य इकाइयाँ
बनायी जानी चाहिए।

डा० टायनबी का यह वाक्य—ग्रामसमाज सबसे निचले स्तर
पर और विश्व-सरकार सबसे ऊपरी स्तर पर (Village Commu
nities at the bottom and a world government at the
top)—ग्रामस्वराज्य के विचार को ही पूर्णतया अभिव्यक्ति करता
है। विनोबाजी ने तो नारा ही दिया है

हमारा तंत्र ग्रामदान

हमारा मंत्र जय जगत्।

डा० टायनबी ने अपने निबंध के आखिर में स्पष्ट कहा है कि
यह केवल कोरी कल्पना नहीं है बल्कि युग की माँग है और बिना
वक्त खोये इस दिशा में दुनिया को तेजी से आगे बढ़ना चाहिए,
अन्यथा 'दुनिया जागतिक अराजकता की शिकार हो जायगी और वह
अराजकता अपने को अराजकवादी माननेवाले मुट्ठी भर लोगों के
लिए भी असहनीय होगी।'

डा० टायनबी का कथन हमारे लिए एक महत्त्वपूर्ण चेतावनी
है। विनोबा ने तूफान और महातूफान की जो बात कही है वह
इतिहास की माँग है। इसी माँग ने उस दिन १९ जुलाई ६८ को
बलिया में विनोबा के समक्ष उत्तरप्रदेश के कार्यकर्ता साथियों को
२ अक्टूबर ६९ तक उत्तरप्रदेश-दान के लिए संकल्पित होने की
प्रेरणा दी जिसे सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष मनमोहन चौधरी ने आग
की राज्यक्रान्तिक संकल्प की कोटि का बताया।

यही प्रेरणा देश के हर प्रान्त में पैदा होगी और जैसा कि
विनोबा ने बलिया से विदा होते समय कहा—'अपनी शक्ति से बढ़कर
के सामूहिक शुभसंकल्प को पूरा करने के लिए भगवान् भी अपने
दो हाथ लगा देता है इस प्रकार हर कार्यकर्ता अनुभव होकर काम
करेगा—ऐसी शक्ति हमें भगवान देगा यह हमारी विनम्र
आस्था है। •

उत्तर प्रदेश में आचार्यकुल की स्थापना

एक नयी शक्ति के आविर्भाव की सम्भावना

[दिनांक १४-७-६८ को बलिया में उत्तर प्रदेश के कुछ शिक्षाविदों की गोष्ठी आचार्यकुल की स्थापना के संदर्भ में विनोबा के सान्निध्य में हुई। उक्त गोष्ठी की संक्षिप्त कार्यवाही यहाँ प्रस्तुत है।—सं०]

प्रारम्भ में आचार्यकुल-गोष्ठी के अध्यक्ष-पद के लिए श्री करण भाई ने कानपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति, आचार्य जुगुल किशोर का नाम प्रस्तावित किया। इसके बाद श्री वंशीधर श्रीवास्तव ने गोष्ठी में भाग लेनेवाले उपकुलपतियों, डिग्री कालेज के आचार्यों और अन्य शिक्षाविदों का स्वागत किया और आचार्यकुल की योजना की एक संक्षिप्त जानकारी प्रस्तुत की। आपने आचार्यकुल की संकल्पना के चार मुख्य लक्षण बताये :

(१) शासनमुक्त शिक्षा,
(२) दलगत राजनीति-मुक्त शिक्षा,
(३) अध्ययन-अध्यापन की सुदृढ़ नींव,
(४) नैतिक शक्ति के निर्माण द्वारा अशान्ति का शमन।

आपने कहा कि इन्हीं चार लक्षणों के चौखटे के भीतर गोष्ठी को आचार्यकुल का निर्माण करना है। लेकिन यह लक्ष्मण-रेखा नहीं है। विद्वत्-वृन्द इससे बाहर जाकर अपने विचार प्रकट कर सकते हैं।

आचार्य जुगुल किशोर :

आज की परिस्थिति में शिक्षकों को सोचना होगा कि उनका क्या कर्तव्य है। पुराने समय में शिक्षकों का बड़ा ही ऊँचा स्थान था। परन्तु आज वह स्थान दूषित हो गया है। शिक्षकों की मान्यताएँ आज बदल गयी हैं। आज की जो नयी मान्यताएँ हैं, उन पर सोचना चाहिए। नयी मान्यताओं को हम अपने जीवन में दाखिल करें और शिष्यों में तथा समाज में इसका प्रचार करें। नयी मान्यताओं के आधार पर ही नया समाज बन सकता है, और दोष दूर किये जा सकते हैं। श्रद्धेय विनोबा ने जिक्र किया है कि शिक्षण-संस्थाएँ शासनमुक्त हों। लेकिन जब तक शासन है, तब तक उससे बिल्कुल मुक्त होना सम्भव नहीं लगता। समाज बदल जाय, ग्रामदान के अनुसार संगठन हो, तब शिक्षा शासन-मुक्त हो सकती है और शिक्षक स्वाश्रय स्वतंत्र रूप से काम कर सकते हैं।

हमें सोचना होगा कि समाज का ढाँचा किस प्रकार का हो, जनशक्ति कैसे संगठित हो। समाज में जनशक्ति की प्रधानता हो, तभी शिक्षण-संस्थाएँ शासनमुक्त हो सकती हैं। समाज का ढाँचा बदले बिना शिक्षण-संस्थाएँ शासनमुक्त नहीं हो सकतीं, किन्तु प्रश्न है कि वह ढाँचा कैसा हो।

आज समाज में शोषण की शक्तियाँ भी बढ़ी हैं। उन्हें भी दूर करना है।

जनशक्ति को बढ़ाने के लिए २० वर्षों में कुछ भी प्रयत्न नहीं हुए, लोकतंत्र कमजोर हुआ। अधिकारों की तरफ ज्यादा ध्यान दिया गया है। अब कर्तव्यों की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए। आज शिक्षा बढ़ रही है, लेकिन साथ ही अशांति भी बढ़ रही है। इस अशांति और हिंसा को खत्म करना होगा। नये समाज का निर्माण हमारे अन्दर से ही होगा। बाहरी परिस्थितियों से नहीं।

विनोबा :

मुझे कोई खास लम्बा प्रवचन करने की आवश्यकता नहीं। इस बारे में कई भाषण कर चुका हूँ बिहार में। इसकी छोटी-सी पुस्तिका बनी है, वह आपको मिली होगी। जिन्हें वह न मिली हो, वे प्राप्त कर सकते हैं।

इसकी कल्पना कैसे उदित हुई, इसका विवरण इस पुस्तिका में थोड़े में आया है। बिहार में आचार्यकुल की स्थापना हुई है, यहाँ भी आप स्थापना करना चाहते हैं। अच्छा है। पूरे भारत में इसकी स्थापना होनी चाहिए। इसमें छोटे शिक्षक का भी समावेश हो, इस तरह का प्रश्न उठा। इस पर मैंने सोचने की आवश्यकता महसूस की। मैंने सोचा भी है। वह आपके सामने रखता हूँ। 'आचार्य' शब्द शंकर, रामानुज आदि के लिए इस्तेमाल हुआ है, लेकिन इससे नीचे सर्वसामान्य शिक्षक के लिए भी 'आचार्य' का इस्तेमाल हुआ है—'मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव।' इस तरह माता और पिता के बाद शिक्षक के लिए 'आचार्य' शब्द का इस्तेमाल हुआ। आचार्य कहते हैं कि विद्यार्थियों को हमारे जो सुचरित होंगे, उनकी उपासना करनी है, अन्य की नहीं। आचार्य हो गये तो गलत काम करते नहीं, ऐसा नहीं। अच्छे काम करते हैं, गलत काम भी करते हैं, लेकिन अनुकरण अच्छे काम का करना है, जो सर्वमान्य है। गलत काम का अनुकरण नहीं करना है।

तो मैं कह रहा था कि 'आचार्य' शब्द पुराना है, और व्यापक अर्थ में इसका उपयोग हुआ है। इसलिए इसको ही मानना ठीक होगा, 'शिक्षक' शब्द को नहीं। क्योंकि 'शिक्षक' का मतलब तालीम देनेवाला होता है। अंग्रेजी में शिक्षक के लिए 'टीचर' शब्द का इस्तेमाल हुआ। 'टीचर' यानी 'टीचने' वाला। यह नया शब्द है, बनाया हुआ शब्द है। 'टीचना' यानी सिखाना। अंग्रेजी में दो क्रियाएँ हैं 'लर्निंग' और 'टीचिंग'। हमारे यहाँ किसी भी भाषा में 'टीचिंग' और 'लर्निंग' अलग-अलग नहीं है। 'टीचिंग' शब्द है ही नहीं, 'लर्निंग' ही 'लर्निंग' है। हमें शिक्षकों की बिरादरी नहीं बनानी है। शिक्षकों की बिरादरी तो सारा समाज है। आचार्यों की बिरादरी इससे भिन्न है। बिहार में—भागलपुर, मुंगेर, मुजफ्फरपुर और पटना यूनिवर्सिटी ने—इसे मान्य किया है।

मेरे पास श्री गजेन्द्रगडकर (बम्बई विश्वविद्यालय के उपकुलपति) आये थे। उन्होंने आचार्यकुल के विचार को पसन्द किया और वे चाहते थे कि मैं बम्बई में होनेवाली विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों और शिक्षकों की गोष्ठी में चलूँ। पर मैं नहीं गया। मैंने माना है कि एक ही साधे सब सधे। ग्रामदान मेरा मुख्य काम है। बिहार-

"भूदान-यज्ञ" २६ जुलाई, '६८ के अंक का परिशिष्ट

इस अंक में पढ़ें

२६ जुलाई, '६८

वर्ष २, अंक २४] [१८ पैसे

बलिया का जिलादान

आपने सुना होगा अभी १० जुलाई को विनोबाजी बलिया आये थे। १० से १५ तक ६ दिन रहे। १५ की शाम को छपरा गये।

पूरे ६ दिन बलिया में खूब चहल-पहल रही। पहले दिन जिलादान समारोह था। उसी दिन तीसरे पहर विकास-सम्मेलन हुआ। दूसरे दिन शिक्षकों का सम्मेलन था। तीसरे चौथे दिन उत्तर प्रदेश भर से आये हुए सैकड़ों कार्यकर्ताओं ने अपना सम्मेलन किया। पाँचवें दिन, १४ ता० को कई विश्वविद्यालयों के उप-कुलपति तथा प्रोफेसर आये, चर्चा की और विनोबाजी के सुझाव पर एक नया संगठन बनाया—'आचार्य-कुल', यानी आचार्यों का परिवार। १५ ता० को अंतिम कार्यक्रम था। सुबह शान्ति-सेना की रैली निकली दोपहर की बैठक में राज्य-भर से आये हुए कार्यकर्ताओं ने 'उत्तर प्रदेश दान' का संकल्प लिया। तीसरे पहर विनोबाजी की विदाई हुई।

ग्रामदान के बाद यह आपस की लड़ाई बंद होगी, मेल जोल बढ़ेगा।

इन कार्यक्रमों में शरीक होने के लिए लगभग हर जिले से कार्यकर्ता आये थे—युवक कार्यकर्ता, वरिष्ठ लोग, पुरुष, स्त्रियाँ, सब। श्री गांधी आश्रम और स्वराज्य आश्रम आदि खादी-ग्रामोद्योगों का काम करनेवाली, गांधी स्मारक निधि, कस्तूरबा, गांधी जन्म-शताब्दी, शान्ति-सेना, आदि सभी संस्थाओं के लोग थे। सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष और मंत्री थे। बुजुर्गों में दादा कृपालानी थे, जो अब ८२ साल के हो गये हैं। आँख से कम दिखाई देता है, लेकिन आवाज में वही तेजी है, और दिल देश के दर्द से भरा हुआ है।

उनके बाद के लोगों में श्री जयप्रकाशजी थे, जिन्होंने पूरे तीन दिन का समय दिया, श्री धीरेन् भाई अस्वस्थ होते हुए भी दरभंगा से आये और पाँच दिन रहे, श्री विचित्र भाई, श्री कपिल भाई, ठाकुर देवकरन सिंह, श्री राजाराम भाई और श्री करण भाई पूरे समय डटे रहे, और पूरे कार्यक्रम को संभालते रहे। कुल मिला-

ग्राम स्वराज्य में इस राज्य तंत्र का बन्धन टूटेगा, सब मिलकर काम करेंगे।

कर बहुत अच्छा जमघट था। बहुत दिनों से उत्तर प्रदेश के इतने रचनात्मक कार्यकर्ता एक जगह नहीं इकट्ठा हुए थे। लगभग सबके मन में यही लगन थी कि किस तरह उत्तर प्रदेश में ग्रामदान का काम बढ़ाया जाय, ताकि बलिया की तरह दूसरे जिलों का भी दान सन् १९६९ तक पूरा हो जाय।

१० ता० को साढ़े दस बजे टाउन डिग्री कालेज की बड़ी 'नाटकशाला' में जिलादान समारोह शुरू हुआ। स्वागत-समिति के अध्यक्ष ने, जो जिला परिषद् के भी अध्यक्ष हैं, स्वागत-भाषण पढ़ा, और विनोबाजी को जिलादान समर्पित किया। उन्होंने बताया कि जिले के लगभग साढ़े सोलह सौ गाँवों में से लगभग साढ़े चौदह सौ गाँवों का ग्रामदान हो गया है। एक नयी चेतना पैदा हुई है। अब उनकी शक्ति प्रकट करना है। बहुत अद्भुत दृश्य वह था, जब समर्पण के बाद श्री जयप्रकाश नारायणजी उठे, ग्रामदान की निष्ठा थोड़ी-थोड़ी, धीरे-धीरे पढ़ी और ग्रामदानी गाँवों से आयी हुई जनता ने उनके पीछे-पीछे दुहराया। श्री जयप्रकाशजी खुद बलिया जिले के हैं। उनका गाँव ३० जनवरी १९६६ को सबसे पहले ग्रामदान में शरीक हुआ था। जयप्रकाशजी के बाद लगभग एक दर्जन ग्रामीण भाइयों ने बारी बारी उठकर घोषणा की: "मैं अपनी भूमि मे से बीघा-बिस्वा के अनुसार'''बिस्वा भूमि अपने गाँव के भूमिहीन भाइयों को देता हूँ।" कितनी बडी बात है कि जिस भूमि के लिए आदमी क्या नही कर डालता, उसीके एक टुकडे को ग्रामदान के बाद वह खुशी से दे रहा है। घोषणा करनेवाले अपनी भूमि फसल कटने के बाद दे देंगे। यह ग्रामदान का दान कैसा अनोखा है कि सब सबको देते हैं, और सब सबसे पाते हैं।

विनोबाजी ने बलिया की जनता के सामूहिक संकल्प की प्रशंसा की, और बताया कि संकल्प में बडी शक्ति होती है, जो गाँव के विकास के लिए बहुत आवश्यक है। अन्त मे श्री जयप्रकाशजी ने डेढ घटे के भाषण मे बताया कि किस तरह सौ में कम-से-कम पचहत्तर लोगों के तथा गाँव में गाँववालों की जो भूमि हो उसका सौ में ५१ हिस्सा ग्रामदान में शामिल हो जाय तो गाँव का ग्रामदान होता है; ब्लाक की ७५ प्रतिशत जनता ग्रामदान मे आ जाय तो ब्लाकदान होता है, और जिले के सब ब्लाकों का दान हो जाय तो जिलादान माना जाता है। जिलादान का यह अर्थ नहीं होता कि तुरन्त सारी व्यवस्था ठप हो जायगी, या बदअमनी फैल जायगी, या बाहर से कोई आकर जिले पर कब्जा कर लेगा। जिलादान का अर्थ यह है कि जिले का हर गाँव ग्राम-स्वराज्य सभा बनाये, ग्रामकोष इकट्ठा करे, शान्ति-सेना का संगठन करे, रगड़े-झगड़े गाँव में ही निबटाये, और गाँव के लोग सर्व-सम्मति से, सबका ध्यान रखकर, अपना भीतरी काम चलायें और सबके विकास के लिए योजना बनायें। जयप्रकाशजी की बातें सुनकर सबको भरोसा हो गया कि जिलादान में डरने की कोई बात नहीं है। सचमुच ग्रामदान-जिलादान राज्यदान, आदि एक नयी व्यवस्था की सीढ़ियाँ हैं। उस नयी व्यवस्था को, जिसमें राजनीति नयी होगी, अर्थनीति नयी होगी, शिक्षा-नीति नयी होगी, ग्राम-स्वराज्य कहेंगे। ग्रामदान ग्राम-स्वराज्य की पहली सीढ़ी है।

विनोबाजी ६ दिन रोज बोलते थे। भाषणों के अलावा सुबह से शाम तक कार्यकर्ता, अधिकारी, जिले या शहर के लोग मिलते रहते थे और ग्रामदान-आन्दोलन के बारे में चर्चा करते थे। विनोबाजी और जयप्रकाशजी की चर्चाओं और भाषणों से जनता के दिमाग की सफाई हो गयी। बलिया मे कुछ लोग यह सोचने लगे थे कि जिलादान के बाद न जाने क्या होगा, लेकिन विनोबाजी और जयप्रकाशजी के भाषणों से मन का सन्देह निकल गया, उल्टे एक नयी आशा जग गयी, एक नया विश्वास पैदा हो गया कि ग्रामदान में उन सब प्रश्नों के उत्तर हैं, जो आज जनता को परेशान कर रहे हैं।

अब उत्तर प्रदेश दान के संकल्प के बाद जिले-जिले के कार्यकर्ता अपने अपने जिले में लोगों से मिलेंगे, और मिलकर जिलादान की योजना बनायेंगे। वे गाँव-गाँव जायेंगे, आपके सामने ग्रामदान-ग्राम-स्वराज्य का विचार रखेंगे, और आपसे ग्रामदान के घोषणा-पत्र और समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षर करने को कहेंगे। आप उत्साह के साथ ग्रामदान में शरीक हों, और दूसरों से शरीक होने के लिए कहें। पड़ोस के गाँव मे जायें और वहाँ के लोगों से हस्ताक्षर करायें।

उत्तर प्रदेश के ५४ जिलों मे से २ जिलों का 'दान' पूरा हो चुका है। सिर्फ ५२ जिले और बचे हैं। अगर सब जिलों में एक साथ काम शुरू हो जाय तो सालभर मे 'उत्तर प्रदेश-दान' का संकल्प पूरा हो जाना मुश्किल नही है।

यह आन्दोलन जनता की मुक्ति का है। बस एक बार वह समझ जाय कि ग्रामदान मुक्ति का द्वार है तो उसे ग्रामदान को अपना लेने में देर नही लगेगी।

कैसा परिवर्तन, कितनी सज्जनता !

(एक)

दरभंगा जिले के मधुबनी अनुमण्डल का गाँव घगजरी। १० मार्च को ग्रामसभा गठित करने हम आ पहुँचते हैं। अध्यक्ष हुए नन्दन कामत (हरिजन) और मंत्री सकुन भण्डारी। गाँव के एक सौ घरों में अधिक घर केवटों के हैं। कुछ लड़के हाईस्कूल और कालेज में पढ़ने जाते हैं। गाँव के मुकदमे, ग्रामदान होने के बाद, कचहरी से उठा लिये गये हैं। अपनी शोषण-मुक्ति-समिति बनाकर सब लोगों ने श्रमयज्ञ किया, जिसमें तालाब की कुम्भी-सफाई की और एक फर्लांग लम्बी नहर खोदकर धान सींचा गया। उतना ही लम्बा एक बाँध भी बनाया है। अब फिर सामूहिक पुरुषार्थ से नहर को गहरा करना है। ग्रामकोष में १३ मन धान इकट्ठा हुआ है।

बकरीद है, मुसलमानों के घर जाकर 'ईद मुबारक' कहता हूँ। मैदा चीनी के अभाव में उनका त्योहार सूखा है, मुझे सुपारी ही दे पाते हैं। पाँच छः कट्ठा जमीन सबको भूदान में मिली है। उनकी आँखों में सन्तोष है, "कर गुजरान गरीबी में।" एक बहन से जब हाल चाल पूछता हूँ, तो कहती है, "ये (हिन्दू) हैं, तो हम हैं सरकार!" बच्चों से पूछता हूँ कि वे पढ़ते हैं या नहीं? उत्तर मिलता है, हाँ। तसलीम पढ़ता था, जो अब भैंस चराता है। गाँव में हिन्दू-मुसलमानों का परस्पर-प्रेम देखकर, मुझे बरेली के चुन्नी मियाँ का स्मरण हो आया, जिन्होंने एक लाख रुपये का राधाकृष्ण मन्दिर बनवाया है और जो अपने को चुन्नी भाई कहलवाना अधिक पसन्द करते हैं! और यह भूदान-कार्यकर्ता सकुन भण्डारी, जिसे उसके सनातनी चाचा ने तीन वर्ष बहिष्कृत कर दिया, चूँकि वह मुसलमानों के घर जाता, खाता है! अब उसने चाचा का प्रेम पुनः प्राप्त कर लिया है।

(दो)

रोज नया पड़ाव, रोज भगवान् के नये रूप के दर्शन! सुबह गाँव में ढोल पिटवा देते हैं, दोपहर के बाद पचास-सौ ग्रामीण जुट जाते हैं पेड़ तले, सामूहिक भजन, प्रार्थना और मैथिली गीतों के बाद बैठक दो-तीन घण्टे तक चलती है। कभी कोई भूमिवान भोजन कराता है। कभी भूदान किसान 'मुठिया' इकट्ठा कर दाल-भात, आलू खिलाते हैं। कभी सतुआ, तो कभी अलुआ-बाबा (शकरकंद)। बिठौनी में उस दिन भूखे रहना पड़ा, ग्रामसभा नहीं गठित हुई। रात को एक भूमिवान ने आकर कहा: "आप भूखे रहेंगे तो हमारे गाँव को पाप लगेगा। मेरे घर चलिये। मगर, हाँ, ग्रामदान पर मैं दस्तखत नहीं दूँगा।"

भला आदमी सुबह चुपचाप दस्तखत देता है, गाँव के लोग उसे ही ग्रामसभा का अध्यक्ष चुनते हैं। कैसा परिवर्तन!

—जगदीश थवानी

दो साल पूरे हो गये

इस अंक के साथ ही 'गाँव की बात' के प्रकाशन का दूसरा वर्ष पूरा हो रहा है। इन दो सालों में कार्यकर्ता साथियों, पाठकों और गाँव के भाई-बहनों ने इसे जिस हार्दिकता से अपनाया है, स्नेह, सहानुभूति और सहकार दिया है, उसके लिए हम आभारी हैं और तीसरे वर्ष के आरम्भ के साथ ही हम कुछ और अधिक निकटता की आशा करते हैं।

'गाँव की बात' के प्रकाशन के पीछे मंशा यह रही है कि आन्दोलन के विचार को गाँव तक पहुँचाने का काम अधिक कुशलता के साथ किया जा सके। उस दिशा में प्रगति धीमी है, यह चिन्ता का विषय है। बलिया में विनोबाजी ने कहा कि हमारा विचार गाँव गाँव तक पहुँचे और उसके सामूहिक-वाचन की व्यवस्था हो, तभी आन्दोलन की बुनियाद ठोस बनेगी। यह तभी हो सकेगा, जब गाँव-गाँव में फैले हम सब साथी इस काम की ओर भरपूर ध्यान देंगे। क्यों न हम यह लक्ष्य बनायें कि जिस गाँव का ग्रामदान होता है, उस गाँव में 'गाँव की बात' का कम-से कम एक ग्राहक तो हम बनायें ही। इससे काम को गति मिलेगी, यह शायद लिखने की जरूरत नहीं है।

'गाँव की बात' को अलग पत्रिका के रूप से निकालने के लिए दो साल से कार्यवाही चल रही है, अभी तक प्रेस रजिस्ट्रार की ओर से स्वीकृति नहीं मिली, जिसके कारण काफी कठिनाई हो रही है। देखें कब तक दिल्ली के दफ्तर का दरवाजा खुलता है!

पुनः आप सबके प्रति आभार प्रकट करते हुए, सदैव, सहयोग की आशा में—सम्पादक

भूमिहीनता का कलंक

मैं रिक्शा में बैठकर बैतूल से करजगांव जा रही थी। रिक्शा बीच बीच में खराब हो जाया करता था, और रिक्शा-वाला परेशान था।

"क्यों भाई, यह रिक्शा तुम्हारा अपना है, या किराये पर है ?" मैंने पूछा।

"किराये पर है।" वह बोला।

"किराया रोज कितना देना पड़ता है ?"

"दो रुपये।"

"औसत कितना कमाते हो ?"

"कभी छह रुपये, कभी आठ रुपये और कभी-कभी दस रुपये तक भी। लेकिन रिक्शा की सारी मरम्मत हमारी तरफ है। मेरे पास एक अच्छा रिक्शा था। लेकिन २०-२२ दिन से बीमार रहा, तो किसी दूसरे ने उसे उठाया है। आज इसे निकाला है। इसे मैं वापस दे दूंगा। साला अपने आप उसे ठीक करे !"

"आजकल रिक्शे की कीमत कितनी होती है ?"

"लगभग २५० रु०। (काफी गौरव से)। मेरा अपना रिक्शा अभी तक होता, लेकिन बहन की शादी हुई, और फिर मैं बीमार पड़ा। इसलिए बहुत खर्च हुआ।"

"यह बतलाओ भाई, तुम बैतूल में रहते हो, या गांव में ?"

"बैतूल मे ही।"

"लेकिन किसी गाँव में जमीन तो होगी न ?"

"अजी, बहिनजी ! मैं क्या कहूँ ? हमारे परिवार मे बहुत जमीन थी। १०० बीघे थी। लेकिन मेरे बाबूजी ने सब बेच दी।"

"क्यों बेच दी ?"

"क्यों बेचा, हम क्या जानें ! परन्तु उन्होंने हम लोगों पर बड़ा अन्याय किया। यह किसान का जीवन कितना अच्छा होता ! खुली हवा में, मजे से श्रम करते, शाम को स्वस्थ थकान होती। अपने खेत का अनाज, तरकारी खाते, दूध पीते। बच्चे स्वस्थ और ताजा रहते। अब क्या करें ?

"पिताजी खुद शिक्षित नहीं थे। हमें भी शिक्षा नहीं दिलायी। हम दोनों पति-पत्नी दिन भर मेहनत करके खुद खायें या बच्चों को खिलायें ? बच्चे बीमार पड़ेंगे, तो इलाज के लिए खर्च कहाँ से आयगा ? यह सब सोचकर गुस्सा आया। मैंने नसबन्दी करा ली। ठीक किया है या नहीं ? मेरे भाई के बच्चे तो हैं ही। मेरे पिताजी के दो भाई थे। क्यों, क्या ३० बीघे जमीन पर हम लोग मजे से नहीं रहते ? १०० आम के पेड़ थे। (गौरव से) अब भी दो आम के पेड़ हमारे नाम पर हैं। लेकिन कौन इतनी दूर देखने जाये ! साला, जो खाला होगा, मजे से खाये।"

बड़ी गंभीरता से विचारने के दो मुद्दे सामने आये।

(१) जमीन बेचनेवाले को उसकी सन्तान कितनी कोसती है ! बाबू ने १०० बीघे जमीन बेची और बेटा अपने लिए रिक्शा खरीदने में असमर्थ है। परेशानी मे अपने को सन्तान-हीन भी बनाया। भूमिहीन की परिस्थिति कितनी तेजी से बिगड़ती है !

(२) २५० रुपये की पूंजी लगाकर रिक्शा का मालिक अपने घर में बैठकर साल मे ७००) रुपये से ज्यादा कमाता है, याने ३०० प्रतिशत ब्याज। रिक्शेवाले अपनी सहकारी समिति बनाकर और अपनी दैनिक कमाई की एक निश्चित रकम जमा करके सामूहिक पूंजी का निर्माण करके धीरे-धीरे बारी बारी से खुद रिक्शा-मालिक क्यों न बनें ?

गरीबों की गरीबी यदि मिटानी हो, तो उनके लिए संगठन कितना आवश्यक है ! वास्तव मे, जंजीरों के सिवा उनके पास और क्या है, खोने के लिए ? आपसी फूट और स्पर्धा, फिजूल खर्च, रूढ़िवादी रीति-रिवाजो से यदि वे मुक्त हो पायेंगे, तब उनकी परिस्थिति सुधर सकती है।

ग्रामदान की व्यवस्था में जमीन को बेचने पर जो प्रतिबन्ध है वह किसान की सन्तान के लिए कैसा वरदान है ! भविष्य में क्या १०० बीघे कमानेवाले किसान की सन्तान को इस प्रकार रिक्शा खरीदने के लिए तड़पना पडेगा ? क्या वह अपने को सन्तानहीन बनाने में मजबूरी अनुभव करेगा ? आजकल १०० बीघे का मालिक अपने को बड़ा किसान समझकर कभी-कभी जमीन बेचने की पाबंदी का विरोध करता है, लेकिन इस प्रत्यक्ष उदाहरण से स्पष्ट है कि इसमें वास्तव में उनकी संतान के लिए कितना संरक्षण है !

—सरला देवी

लोकयात्रा के कुछ अनुभव

सरगुजा जिले की भौगोलिक स्थिति एक विशेष प्रकार की है। एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाना हो तो घूमकर जाना पड़ेगा, या तो पहाड़ पार करके जाना पड़ेगा। पहाड़ पार करना है तो कई जगह पड़ाव रखने के लिए गाँव ही नहीं हैं। इसलिए घूम कर नये क्षेत्र में आने का कार्यक्रम यहाँ के कार्यकर्ताओं ने बनाया। करीब ७०-८० मील का चक्कर काटकर गाड़ी से हमने नये क्षेत्र में प्रवेश किया। गाड़ी की यात्रा भी प्रभात की बेला में ही हुई। जंगलों में से गाड़ी आ रही थी। उस समय मुक्तता से विहार करनेवाले हिरणों का दर्शन हुआ। रास्ते में ही हिरण खड़े थे। गाड़ी नजदीक पहुँची। हिरण छलांग मारकर जंगल में अदृश्य हो गये।

× × ×

हिन्दू, ईसाई, इसलाम, ऐसे सब धर्मों के परिवारों में हमारा पड़ाव होता है। एक दिन वैसे ही एक इसलाम परिवार में हमारा पड़ाव था। बिहार से अनेक लोग आकर यहाँ बसे हैं। यह परिवार भी आज से ५० साल पहले यहाँ आया था। और, अब यहाँ का निवासी हो गया है। इस परिवार ने अपनी सेवा यहाँ के गाँव को समर्पित की है। सबके साथ घुल मिल गया है। लेकिन उनकी स्त्रियाँ अब भी पर्दे में, चारदीवारी के अन्दर हैं। इसलिए एक ही घर में रहते हुए भी उनके घर की बहनों से विशेष रूप से हमारा मिलना नहीं हुआ। दूसरी बहनों के साथ सभा में भी नहीं आयी।

दूसरे एक गाँव में आस्ट्रेलिया से आकर सत्रह वर्षों से भारत की सेवा करनेवाले एक ईसाई परिवार से मिलना हुआ। सरगुजा जैसे जिले में, जहाँ आवागमन के विशेष साधन नहीं हैं, जहाँ डाक-तार की भी अच्छी व्यवस्था नहीं है, एक-एक पत्र पाने में महीनों लग जाते हैं, ऐसे स्थान में आकर इस परिवार ने सत्रह वर्षों से अपनी सेवा यहाँ के गरीबों को, यहाँ के निवासियों को समर्पित की है। इतनी कठिनाई में रहते हुए भी उनके चेहरे पर हमने असन्तोष नहीं देखा, सन्तोष, समाधान देखा, स्फूर्ति देखी, विचार के आदान प्रदान से वे हमारे मित्र बने, लोकयात्रा की मदद करते हुए उन्होंने कुछ दवाएँ और पैसे दिये। इस अहिंसात्मक आन्दोलन के साथ सम्बन्ध रखने की दृष्टि से 'भूदान लेटर' मासिक पत्रिका के भी ग्राहक बने।

हिन्दू, इसलाम, ईसाई—तीनों धर्मों के उपासकों से मिलना हुआ है। तीनों उपासकों की उपासना पद्धति अलग अलग हो सकती है। लेकिन आखिर सब एक ही भगवान के भक्त हैं, इसलिए भक्त के जो लक्षण हैं, किसीसे द्वेष न करना, सबसे मैत्री करना, दया भाव रखना, अपना पराया भेद न रखना आदि लक्षणों का सब भक्त अपने में विकास करें और उसके द्वारा समाज का भेद मिटाकर एकता का अनुभव करें ऐसा विचार उन लोगों के सामने रखा गया।

यहाँ भगत और सगत (सगत याने जो अभी तक भगत नहीं बने हैं) के बीच में भी बहुत बड़ा भेद है। जो-जो भगत बने हैं उन्होंने शराब और मांसाहार छोड़ा है, स्वच्छता के कुछ नियमों को अपनाया है, लेकिन जो सगत हैं वे अपने ही ढंग से रहते हैं। इसलिए दोनों के बीच में खाना पीना, शादी ब्याह आदि नहीं होता है। इसके अलावा सद्भावना भी परस्पर कम हो रही है।

गरमी हो, बादल हो, तूफान हो, लोग तीन चार मील दूर-दूर से विचार सुनने को आते हैं। चैत्र सक्रान्ति के दिन खूब जोर से तूफान आया था, तो भी लोग डटकर बैठे रहे थे, और विचार सुना था। बाजार में भी शान्ति से लोगों ने विचार सुना था। यह सब देखकर लोग नये विचार की खोज में हैं ऐसा लगा।

इस ग्रामदान यात्रा में एक दुःख की घटना भी घटी थी। यात्रा की पूर्वतैयारी करने के लिए आते समय बस-दुर्घटना से श्री छन्नूभाई को बायें हाथ में चोट लगी थी, जिससे उनको शारीरिक पीड़ा से अधिक सेवा-साधना खंडित होने की चोट दिल को पहुँची थी।

—लक्ष्मी

एक किसान का पत्र ज्यों का त्यों

श्री संपादकजी,
"गाँव की बात"

आज से ५-६ साल पहले की बात है। मैं वेड़छी सर्वोदय-सम्मेलन में गया था। वहाँ मैंने आश्रम के आसपास धान के कटे हुए खेतों को देखा। पौधों की जड़ जमीन में दूर-दूर थी। उस पर कुछ सोचा और तय किया कि अब की खेत में कम बीज बोकर मैं भी देखूँगा और वैसा ही किया, जिसका इतिहास नीचे है :—

मेरा पच्चीस बिस्वा का एक नम्बर था। खेत में कुछ खाद-गोवर डालकर दो बार जोताई कर दी। खेत में वही पुराने ढग का हेंगा-पाटा कर दिया। खेत समथर भिनमट हो गया। बीज 'धान' घर से २५ सेर आ गया था, क्योंकि हमारे यहाँ बिस्वा सेर बोने का रिवाज ही था। बीज उसी हिसाब से आया था। मैंने कूँड़ खुटहर की बोवाई की याद दिलाया और कहा जैसे जौ-गेहूँ बोते हो उसी तरह बोओ। दो हल चलने लगे। कूँड़ में अकेला बीज बोने लगा। यह देखकर घर के लोग और सहयोगी मजदूर सभी कुढ़ने लगे। जुताई दो हल की, बोवाई एक हल की, बीच की जमीन परती पडती देखकर सभी घबड़ाने लगे। मुझे 'डिक्टेटर' बनना पड़ा तब कहीं खेत बोया गया। बीज केवल ५ सेर पड़ा, बाकी २० सेर बीज बचाया। घर वापस गया तो फसल कम होगी यही सब लोगों की चिन्ता थी। भीतर-भीतर मुझे भी डर लगने लगा था जैसे सीता को त्रिजटा का सपना प्रमाणित करने पर हुआ था। मन आता था कि अगर फसल ठीक नहीं हुई तो फिर क्या होगा!

छह-सात रोज में बीज ऊपर आ गये खेत में। लाइन-से-लाइन मिलती-जुलती थी। पर लाईन की दूरी एक फुट से कोई कम न थी। नतीजा यह हुआ कि अब तक घरवालो की गाली सुनता था, और अब बाहरवालों की भी गाली सुनने लगा! इसी बीच भगवान् का भी प्रकोप चला। १५ दिन तक वर्षा नहीं हुई। पौधो में दीमक लगने लगे। बहुत-से पौधे सूख गये बीड़र में भी बीड़र हो गया। मैं भी घबड़ाने लगा, पर जल्दी ही बारिश हो गयी। दीमक रुक गयी।

पड़ोस के खेत घने पौधों से भरेपूरे और अच्छे लगते थे। मेरे खेत मे लाइन छोड़कर सब परती फूहर मालूम पड़ती थी। फिर संयोग से दूसरी बार बारिश हो गयी और आकाश साफ हो गया। तीन दिन बाद मिट्टी उभरी, गोड़ने काबिल हो गयी तो उसकी गुड़ाई कर दिया। जो खरपतवार जम रहे थे खेत में, सूख गये, केवल धान के पौधे रह गये। फिर चार रोज बाद बारिश हो गयी। पानी के साथ हेंगावन कर दिया। इसको हमारे यहाँ 'लेव' कहते हैं। खेत समथर होकर दब गया। एक सेर बिस्वा के हिसाब से खेत में अमोनियम सलफेट छोड़ दिया। दो-चार रोज बाद रग बदलने लगा। पौधों में गाँध आने लगे। बड़ी-बड़ी लम्बी पैठी हुई पत्तियाँ निकलने लगी। पड़ोस के खेत पीले-पीले छोटे-छोटे पौधे से भर गये और घास की भी कमी न थी। मेरा खेत केवल धान के पौधों से सुहावना लगने लगा। इसी बीच बारिश रुक गयी तो मैंने दूसरी गुड़ाई कर दी। सोहाई की कोई जरूरत ही नहीं हुई। गुड़ाई में ही सोहाई हो गयी।

अब घर के लोग जो मुँह फुलाये रहते थे, खेत पर जाते और लौटकर घर आते तो अदब व लिहाज से दबकर आपस में चर्चा करते कि बड़ा अच्छा धान होगा। गाँव में क्या, पास पडोस मे भी ऐसा धान नहीं है। बाहर के जो लोग गालियाँ दिया करते थे, उनके मुख से आशीर्वाद निकलने लगे। प्रशंसा मे वे कहने लगे -- 'कभी-कभी घूमने जाता है तो कुछ सीख कर आता है। जितना घूमने पर खर्च किय है उससे कई गुना तो इसी फसल मे निकाल लेगा।' लोग कहने लगे कि अब अगले साल से हम भी इसी तरह धान की खेती करेंगे मेरे खेत की फसल पड़ोस के खेत से चौगुनी हुई।

इस रीति की बोवाई को लाइन-सोइंग भी कहते हैं। दो हल की सीधी लाइन की जोताई हो। एक हल के पीछे बोवाई हो, यानी एक हराई खाली जमीन रहेगी, गोड़ाई-कमाई के वास्ते। रोपाई भी की जा सकती है, की जाती है, पर उसमें थोड़ा ज्यादा ज्ञान की जरूरत है। बेहन' २० दिन से २५ दिन के अन्दर रोपी गयी तो धान हो सकता है। लाइन-सोइंग से १०-१५ दिन बाद में पकेगा। इस मियाद के बाद की रोपाई अच्छी नहीं होती। क्योंकि पौधों की उमर घटती जाती है। रोपाई के बाद धान थोड़े ही दिन में फूटने लगता है। ३-४ दाना की बाली निकलती है। इसलिए इसमें देर हुई तो घाटा-ही-घाटा होने लगता है।

लाइन-सोइंग सरल तरीका है। फसल जमने, लगाने का सब एक ही बार हो गया। उसकी कलम, हेंगावन, लेव से→

बच्चे का साहस

स्टेशन मास्टर की भलमनसाहत

आदरणीय दादारामजी,

गत ३१ मई को बलिया जिले के एक छोटे से ग्राम चैन-छपरा से मेरा एक १४॥ वर्ष का पुत्र शिवनाथ चतुर्वेदी अपने चचेरे भाई के साथ कलकत्ता के लिए प्रस्थान किया। पूर्वी रेलवे के बक्सर स्टेशन पर जनता एक्सप्रेस उन्हें मिली। बर्दवान स्टेशन पर लड़का (शिवनाथ) पानी पीने के लिए गाड़ी से उतरा। दुर्भाग्यवश गाड़ी छूट गयी। मदन मोहन अपने छोटे भाई का भी टिकट लिए गाड़ी में बैठे चले आये और बच्चा वहीं छूट गया। बच्चे का कथन है कि मैं तो पहले बहुत घबड़ाया, पर थोड़ी ही देर में मुझे सूझ आयी और मैं सीधे स्टेशन मास्टर के पास चला गया। उनसे सारी घटना कह सुनायी। मेरी बातों को सुनकर स्टेशन मास्टर ने कहा कि देखो बच्चू, मैं भी जब तुम्हारी उम्र का था तो बिना टिकट दिल्ली गया था, इलाहाबाद में पकड़ा गया और मेरी एक साल की कैद हुई। अब तुम भी एकाध साल जेल में रह आओ। इस पर बच्चे का उत्तर था कि 'देखिये, आपने बदमाशी की थी, इस-लिए आपको जेल हुआ। मैंने तो बदमाशी की नहीं, फिर आप हमें जेल क्यों भेजेंगे?

'आप क्यों कहते हैं कि मैंने बुरा काम किया है। मैं अपने भाई के साथ कन्सेशन टिकट लेकर बक्सर स्टेशन पर गाड़ी पकड़ा हूँ। यदि आपको विश्वास नहीं हो तो आप बक्सर से पता लगा सकते हैं कि मेरे नाम का लड़का वहाँ कन्सेशन टिकट लिया है कि नहीं।' बच्चे की बातें सुनकर स्टेशन मास्टर को बिलकुल विश्वास हो गया कि लड़का सच बोल रहा है। शीघ्र एक टी० टी० आई० के साथ बच्चे को लगा दिया और बोले कि बच्चे को अभी दिल्ली एक्सप्रेस आ रही है उसीसे हावड़ा पहुँचा दीजिए। वहाँ इसका भाई मिल जायगा। यदि न मिले तो इसे स्टेशन से बाहर करा दीजिए। इधर मदनमोहन (बच्चे का भाई) जब हावड़ा पहुँचा तो स्टेशन पर एनाउन्सर से बोला गया कि तुम्हारा छोटा भाई दिल्ली एक्सप्रेस से आ रहा है उसे साथ में लेकर जाओ। दोनों भाई स्टेशन पर मिले और साथ आये।

मैं जानता हूँ कि घटना जान लेने पर आपको और आश्चर्य होगा कि ये पराये आदमी आपको क्यों लिख रहा है? यह घटना और आपसे तो कोई सम्बन्ध नहीं।

दादारामजी इसका सारा श्रेय आपके कठोर परिश्रम का है। मैं रोज सोचा करता था कि बच्चे में ऐसा साहस कैसे आया। आज अचानक मेरे मन में आया कि यह साहस विनोबा साहित्य से आया है और साहित्य पहुँचानेवाले आप हैं। इसलिए आप मेरे हार्दिक धन्यवाद को अवश्य स्वीकार करें। भगवान् से मेरी यही प्रार्थना है कि वे आपको दीर्घायु और शक्ति प्रदान करें, ताकि आप अधिक से अधिक घरों में विनोबा साहित्य को पहुँचाकर, समाज और देश को ऊँचा उठाने में सहायक होवें।

आपका शुभेच्छु
मुक्तेश्वर चौबे

→हो जाती है क्योंकि सभी पौधे जमीन में सड़ जाते हैं। उनमें से दूसरे कल्ले निकलते हैं। नयी जड़ें पैदा होती हैं। लाइन सोइंग की पहली गोंडाई काँटावाले हेंगा से भी की जा सकती है। उससे बहुत लाभ होता है। और कोई खर्च नहीं। लाइन सोइंग में यह सावधानी रखनी चाहिए कि बोवाई के बाद हलकी बारिश होकर आकाश साफ रहे तो काँटावाले हेंगा से हेंगाकर पोपरी फोड़ दी जाय, ताकि बीज निकल आवें नहीं तो बीज भीतर-ही भीतर जमकर सिकुड़ जायेंगे। अब तक जो कुछ लिखा है वह सब भादो क्वार के बीच पकनेवाले धानों के बारे में। अगहन में पकनेवाले धान की रोपाई जरूरी है क्योंकि वह क्वारी धान से २ माह पीछे पकता है। इसकी उमर क्वारी धान से २ माह अधिक होती है। गाँव की बात पढ़नेवाले सभी किसान भाई तथा सहयोगी (मजदूर) भाइयों से मेरी विनम्र प्रार्थना है कि खेती में मन, तन और साधन लगाकर काम करें। जय जगत्!

आपका
भवानी प्रसाद सिंह
पखड़िया आजमगढ़

ईश्वर कहाँ रहता है ?

मेरे पिता एक ऐसे गाँव से आये जहाँ सरल लोगों का निवास था। उलझनें नहीं थीं। वह आधुनिक सभ्यता से दूर था। वहाँ के ग्रामीण अपना अन्न उपजाते थे और खाते थे। एक दिन कहीं से कुछ मनुष्य कार में आये। उनके साथ बहुत-से कपड़े और दवाएँ थी। उन्होंने घोषणा की कि वे ये चीजें बीमार और जरूरतमन्द व्यक्तियों को देंगे। किन्तु उनसे मिलने कोई नहीं आया। समाज सेवक बीमार और जरूरतमन्द व्यक्तियों की खोज में गाँव का चक्कर लगाते रहे, पर उन्हें एक भी वैसा व्यक्ति नहीं मिला।

उन्होंने कुछ व्यक्तियों को, जो अर्द्धनग्न थे, वस्त्र देना चाहा, पर उन व्यक्तियों ने नम्रतापूर्वक कहा कि हमें वस्त्रों की तनिक भी आवश्यकता नहीं है। हम अपनी वस्तुओं का ही व्यवहार करेंगे। ग्रामीणों ने उनके साथ अच्छा व्यवहार किया, उन्हें नारियल का पानी दिया। ग्रामीणों ने उनकी कारों और वस्तुओं को बड़े गौर से निहारा। वे लोग व्यस्त आदमी थे। उनके पास अनावश्यक बातों के लिए समय नहीं था। गाँववालों के पास समय बहुत था। इससे वे लोग बड़े परेशान हुए और झल्लाये। उन्होंने मूर्ख, अनजान और जाहिल कहते हुए अपनी वस्तुओं के साथ वापस हो गये।

एक सप्ताह बाद एक धूल से भरा हुआ वस्त्र पहने एक थका-माँदा व्यक्ति इसी गाँव में आया। वह एक मिशनरी था। उसके पास समय भी खूब था और धैर्य भी। उसका काम करने का तरीका भिन्न था। वह अपने साथ उपहार नहीं लाया था। वह एक वृक्ष के नीचे बैठ गया। ईश्वर के सम्बन्ध में बातें करने लगा। जीवन, जन्म और मृत्यु के रहस्य बताने लगा। ग्रामीण उसकी बातें दिन भर सुनते रहे। शाम को उसे पता चला कि उन्होंने कोई बात नहीं समझी। उसने इस बात पर सोचना प्रारम्भ किया। इन लोगों को समझदार बनाने के लिए महीनों श्रम करना पड़ेगा।

इसी समय कुछ घटना घटी। चीख-पुकार, कुत्तों का भूंकना और साथ ही बहुत-से मनुष्यों को इधर-उधर भागते उसने देखा। लोग एक दिशा में भाग रहे थे। पादरी भी उनके पीछे-पीछे दौड़ा। छोटी-छोटी झोंपड़ियों की एक कतार में आग लग गयी थी। इसमें से एक स्त्री की चीख सुनाई पड़ रही थी। ग्रामीण पानी लाने दौड़े। दो आदमी धुँआ और ज्वाला के बीच घुस गये। पादरी के पास खड़े एक बूढ़े ने इस घटना की जानकारी उसे दी। एक स्त्री और उसके दो बच्चे बीच की झोंपड़ी में थे। उसका पति कहीं गया था। उनकी रक्षा करनी थी। कोने में खड़ी और भयभीत दो स्त्रियाँ उन दोनों रक्षकों की पत्नियाँ थी, जो आग में चले गये थे। शंकालु पादरी ने पूछा कि इन दो स्त्रियों ने अपने पतियों को इस कठिन कार्य से क्यों नहीं रोका? बूढ़े ने उत्तर दिया—"श्रीमान् हमलोगों में ऐसे विचार नहीं आते और ये तो दो नासमझ स्त्रियाँ हैं।"

लोग आग को घड़ों के पानी से बुझा रहे थे। इसी बीच एक व्यक्ति उस आग की लपटों में से उन दोनों बच्चों को लेकर वापस आया। प्रतीक्षा करती महिलाओं के हाथों में बच्चों को सौंपकर वह धरती पर गिर पड़ा और अपने कपड़ों में लगी आग को बुझाने की कोशिश करने लगा। अन्य लोग दूसरे व्यक्ति की प्रतीक्षा करते रहे। कहीं कोई चीख-पुकार नहीं, केवल श्मशान-शान्ति थी। दूसरा व्यक्ति भी एक महिला को लिये आ पहुँचा। महिला अचेत और जली हुई थी। वह व्यक्ति भी पहचाना नहीं जा रहा था। वह कुछ क्षणों तक छटपटाता रहा इसके बाद इसके प्राण-पखेरू उड़ गये!

ग्रामीणों ने शान्तिपूर्वक आग बुझायी और तब दूसरे काम की ओर मुड़े। कुछ लोग बच्चों और महिला के उपचार में लगे और कुछ लोग दाह-संस्कार का प्रबन्ध करने लगे। मृतक के पास उसकी विधवा बैठकर धीरे-धीरे रो रही थी।

पादरी ने यह सब देखा। वह भी शान्त था। वह धीरे से उठा। उसने सिर झुकाया और जाने की राह पकड़ी। वृद्ध व्यक्ति उसके साथ चलता रहा। उसने प्रार्थना की कि कुछ अन्न-जल ग्रहण करें।

"किन्तु मैं इस दुर्घटना के बाद कैसे कुछ ग्रहण कर सकता हूँ?" पादरी ने प्रश्न किया।

"श्रीमान्, दुर्घटना जीवन का एक अंग है। भोजन व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। हमें ईश्वर के सम्बन्ध में कुछ विस्तार से बताने की कृपा करें।" वृद्ध व्यक्ति ने उत्तर दिया।

पादरी ने वृद्ध ग्रामीण के सम्मुख सिर झुकाया। उसने कहा—"मित्रवर, आपको मेरी आवश्यकता नहीं है। ईश्वर तो यहाँ स्वयं रहता है।" वह पादरी वहाँ से चला गया। वृद्ध व्यक्ति आश्चर्यचकित नेत्रों से खोज रहा था कि किस झोंपड़ी में ईश्वर रहता है।

—पेरिन सी० मेहता

'गाँव की बात': वार्षिक चन्दा: चार रुपये, एक प्रति: अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि०, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित।

दान का संकल्प है। वहाँ जाने पर इसमें व्यवधान आता। आचार्यकुल तो मेरे कार्य खाने का बाईप्रोडक्ट है। उन्होंने अपनी गोष्ठी में इसे स्वीकार किया है। कुछ प्रतिज्ञाएँ की हैं। अनेक प्रस्ताव किये हैं। बहुत अच्छे प्रस्ताव हैं। लेकिन सबको मैं मान्य नहीं करता। उसमें कहा गया है कि हम सबसे पहले भारतीय हैं उसके बाद भी भारतीय हैं और अन्त तक भारतीय हैं। यह मैं नहीं मानता हूँ। हमें विश्वमानुष बनना है। यह साइंस का जमाना है। हमें विश्वहित के अविरोधी राष्ट्र सेवा करनी होगी। राष्ट्रीयमन आउट डेटेड है। अर्वाचीन भारत में राष्ट्रवाद पर सर्वप्रथम प्रहार रवि बाबू ने किया है। गांधीजी ने भी देश की जो सेवा की वह विश्वहित की अविरोधी थी। पद-यात्रा के समय मुझे मौका मिला पाकिस्तान जाने का। वहाँ भी भूदान हुआ। उसका असर जो पड़ना था पड़ा। सभा में ज्यादा लोग आते थे मुसलिम ज्यादा आते थे। यह स्वाभाविक ही था। मैं वहाँ मौन प्रार्थना कराता था और जय जगत् कहलाता था। दो-तीन दिन तक पाकिस्तान जिन्दाबाद के नारे उन्होंने लगाये। चौथे दिन पाकिस्तान जिन्दाबाद का नारा बन्द हो गया। अगर मैं जय हिन्द या जय भारत कहता तो कोई नहीं सुनता। जय जगत् कहा तो वह पाकिस्तान में चल गया। उसका तजुर्बा किया जाय तो वह चीन में भी चल सकता है और दूसरी जगह भी चल सकता है। मैं *भारत का ही हूँ। यह मुझे मान्य नहीं।* बाबा भारत को यद्यपि पुण्य भूमि मानता है पर भारत विश्वभूमि का ही अंग है।

अथर्व वेद में पृथ्वी-सूक्त है भारतसूक्त नहीं। हम उस पृथ्वी की वन्दना करते हैं जिसमें नाना धर्म हैं जहाँ विविध भाषाएँ बोली जाती हैं—नानाधर्माणां पृथिवी यथौकसम्। भारत की परम्परा है कि उसने भारत का ही गौरव नहीं माना पृथ्वी का गौरव गाया है। उसके लिए वसुधैव कुटुम्बकम् सारी पृथ्वी छोटा सा परिवार है। शंकराचार्य ने कहा कि हम अनंतचित्त के अनंत तरंगोंवाले समुद्र में लीन हो रहे हैं उठ रहे हैं। यह भारत का कितना विशाल था चिन्तन—वेद से शंकराचार्य तक, और आज तक।

आचार्यकुल की परम्परा बहुत ही उज्ज्वल है। उसकी शक्ति बढ़ानी है। शिक्षा क्षेत्र में भी अगर पार्टीपालिटिक्स चलेगी—विद्यालय ही इस पार्टी में और उस पार्टी में जाय और इतना नीचा चिन्तन चले तो हम हीन बनते हैं दीन बनते हैं। पुराने समय में आचार्यों पर किसी का अंकुश चलता ही नहीं था। कृष्ण को गुरु के पास भेजा। (डिग्री की भी जरूरत है न?) गुरु ने उसे एक दरिद्र ब्राह्मण के साथ एक कमरे में रखा। दोनों को जंगल से लकड़ी लाने का काम दे दिया। कहाँ एक राजा का बेटा कहाँ एक गरीब ब्राह्मण का बेटा। यहाँ की शिक्षा-पद्धति पर सम्राटों का अंकुश नहीं था। जो गुरु देगा वह शिक्षा। गुरु की सेवा करके बचे समय में शिक्षा। गुरु की वह हैसियत आपको प्राप्त हो सकती है। जिस प्रकार न्याय विभाग शासन से और राजनीति से स्वतंत्र है उसके अंकुश से मुक्त है उसी प्रकार शिक्षा विभाग को भी अलग होना चाहिए। आप राजनीतिज्ञों से कहें कि वे राजनीति को शिक्षा-संस्थाओं से बाहर करें। बाहर उनके लिए बहुत जगह है। आप पक्षमुक्त राजनीति को मानेंगे। पक्षमुक्त राजनीति ही लोकनीति है। राजनीति का अध्ययन करेंगे राजनीति में पड़ेंगे नहीं।

आचार्यकुल के लिए आप अपने वेतन से कुछ हिस्सा दिया करें। एक आश्रम हो। इस काम के लिए एक आदमी रहे। आप समय समय पर मिलते रहें। बीच-बीच में परिषद् और उपनिषद् करें। जब शिक्षक इकट्ठे होंगे तब वह परिषद् होगी। लेकिन जब नजदीक बैठकर चर्चा करेंगे वह उपनिषद् होगी। उपनिषद् यानी नजदीक बैठकर चर्चा। उसमें लाउड-स्पीकर नहीं होगा। भारत और विश्व में जो समस्याएँ पैदा होंगी उन पर आप अपनी एकमत राय दें। जहाँ एकमत न हो उसे चर्चा करके छोड़ दिया जाय। और जिस पर एक मत हो उसे व्यक्त किया जाय।

बाबा ग्रामदान के काम में लगा है। इसमें आपकी सहायता चाहिए। आप गाँव गाँव में जाकर विचार फैलायें। बाबा आचार्यकुल के लिए अपने को जितना अधिकारी मानता है उतना ग्रामदान के लिए नहीं मानता। बाबा बचपन से आज तक अध्ययन ही करता रहा। आज भी अध्ययन करके यहाँ आया है।

फिर बाबा ने ग्रामदान का काम क्यों उठाया? इसलिए कि यह करुणाकार्य है। वह नहीं हुआ तो आचार्यकुल भी खत्म। अन्न ब्रह्म। जब अन्न कम होगा तो कलह होगा भाईचारा खत्म होगा प्रेम नहीं रहेगा। इसीलिए अन्न बढ़ाने का काम बाबा कर रहा है।

बाबा आपको अपनी शक्ति इस काम में तभी देगा जितनी आप चाहेंगे।

तरुण शांति-सेना का काम भी इन लोगों ने उठाया है। इसमें उम्र की भी कुछ *मर्यादा है। शिक्षक इस काम को कर सकते* हैं। आपको इसमें सहयोग देना चाहिए। सबको प्रणाम। जय जगत्।

श्री राजाराम शास्त्री

विनोबाजी के भाषण से हमें स्फूर्ति मिली। इसमें कोई मतभेद हो नहीं सकता। समस्या है कि शिक्षा को सरकार से स्वतंत्र कैसे करायें? विनोबाजी ने न्याय से तुलना की। वह तुलना एक हद तक सही है। परन्तु आज जिस स्थिति में शिक्षक है उसमें उसका हाथ सरकार को बनाने में उससे पैसा लेने में शिक्षा पद्धति को लेकर उससे सम्बन्धित होता है। इस स्थिति में किसी प्रयोग की गुंजाइश नहीं रह जाती है। जब तक सरकार की मंजूरी नहीं होती तब तक कुछ होता नहीं। मान्यता के आगे कुछ चलता *नहीं। विद्यार्थी को क्या चाहिए वह बिना* मान्यता के मिलता नहीं। उसे प्रमाण-पत्र चाहिए।

शिक्षा प्रान्तीय विषय है या केन्द्रीय विषय? केन्द्र को निर्देश देने का अधिकार है, लेकिन लागू करने का अधिकार है राज्य सरकारों को। इस पर स्वयं शिक्षा मंत्रालय में खींचातानी है।

शिक्षा सरकार से मुक्त हो तो सन्देह नहीं कि शिक्षक का स्तर ऊँचा हो और उसकी प्रतिष्ठा बढ़े। आज तो शिक्षक पर से विश्वास

उठ गया है। परीक्षाओं में बाहर से निरीक्षक बुलाये जाते हैं।

श्री रोहित मेहता :

शिक्षा के बारे में विनोबाजी ने जो मार्ग-दर्शन हमें दिया, उस पर चर्चा शुरू हुई है। हमें सोचना है कि कैसे हम शिक्षा में फर्क कर सकते हैं। यदि भारत में २० वर्ष में कुछ नहीं हो सका तो इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि शिक्षा के क्षेत्र में कुछ नहीं किया गया। शिक्षा के क्षेत्र में जब तक परिवर्तन नहीं आयेगा, तब तक आर्थिक, सामाजिक परिवर्तन नहीं आ सकता।

हमें सोचना है कि हमें किस दिशा में जाना है? विनोबाजी की बतायी हुई दिशा में जाना है या नहीं? अगर इसको तय किये बिना समस्याओं व कार्यक्रमों पर सोचेंगे तो उलझ जायेंगे।

हम आचार्यकुल को स्थापना करना चाहते हैं—बिहार और बम्बई के संकल्प-पत्र हमारे सामने हैं। दोनों को मिलाकर हमें कुछ दिशा मिलेगी। लेकिन केवल सकल्प-पत्र से कुछ नहीं होगा। इसमें 'निगेटिव' कन्टेन्ट है, 'पाजिटिव कन्टेन्ट' चाहिए।

राजनीति और शासन से शिक्षा को तो मुक्त होना ही चाहिए, लेकिन शिक्षा-संस्थाओं के अन्दर के वातावरण को भी राजनीति से मुक्त करना होगा।

जिस समाज में हम जी रहे हैं उसमें आचार्यकुल की व्यापक व्याख्या करनी होगी। उपनिषद् में 'इण्टीग्रेटेड' शिक्षा की चर्चा की गयी है। आज भी हम 'इण्टीग्रेटेड' शिक्षा की बात करते हैं।

विज्ञान और अध्यात्म का आचार्यकुल में समावेश होना चाहिए—दोनों का मिला-जुला आचार्यकुल। अगर ऐसा नहीं होगा तो शिक्षा में हम बहुत आगे नहीं जा सकेंगे। शिक्षा जीवन से अलग नहीं है। शिक्षा की दृष्टि और जीवन की दृष्टि हम अलग नहीं कर सकते।

मूल्य परिवर्तन करना है। कौन करेगा? आचार्यकुल करेगा, लेकिन वह आचार्यकुल, जो व्यापक होगा।

आज का युग गतिप्रधान है, लेकिन गति के साथ दिशा आवश्यक है। राजनीतिवाले गति दे सकते हैं और आचार्यकुल के द्वारा दिशा मिल सकती है। उत्तर प्रदेश में आचार्य-कुल की स्थापना करके शिक्षामें परिवर्तन की कोशिश हम करें। लेकिन यह तब संभव है, जब विनोबा ने जो दिशा दी है, उस दिशा में हम काम करें।

बैठक के निर्णय :

१. आचार्यकुल के इस सम्मेलन में एकत्र उपकुलपति, आचार्य और शिक्षा-प्रेमी, हम लोग प्रस्ताव करते हैं कि हम उत्तर प्रदेश में आचार्यकुल की स्थापना करेंगे।

२. *'आचार्यकुल' के लक्ष्यों में हमारी* आस्था है। अतः उनकी प्राप्ति के लिए हम आचार्यकुल संहिता तैयार कर, तदनुसार आचरण करेंगे।

३. आचार्यकुल के तात्कालिक और दूर-गामी कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करने और *उसे कार्यान्वित करने के लिए, प्रादेशिक स्तर* पर, नीचे लिखे सदस्यों की एक 'संचालन समिति' प्रस्तावित की जा रही है, जिसे और सदस्यों को मनोनीत करने का अधिकार होगा :

१ आचार्य जुगुल किशोर, उपकुलपति, कानपुर [अध्यक्ष]
२ उत्तर प्रदेश के अन्य सभी विश्वविद्यालयों के उपकुलपति
३. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, वाराणसी
४. श्री रोहित मेहता, वाराणसी
५. डा० वी० चलम, वाराणसी
६. डा० अनन्तरमन्, वाराणसी
७. आचार्य राममूर्ति, वाराणसी
८. प्रोफेसर उ० आसरानी, लखनऊ
९. श्री रामचन्द्र शुक्ल, लखनऊ
१०. प्रोफेसर शीतल प्रसाद, मेरठ
११. श्रीमती सुमदा तैलंग, वाराणसी
१२. श्रीमती लीला शर्मा, वाराणसी
१३. डा० राजनाथ सिंह, वाराणसी
१४. श्री दूधनाथ चतुर्वेदी, वाराणसी
१५. प्रोफेसर सुगत दासगुप्ता, वाराणसी
१६. श्री वंशीधर श्रीवास्तव, वाराणसी [संयोजक]

४. फिलहाल इस समिति के कार्यक्रम की रूपरेखा इस प्रकार रहेगी :

(क) समिति अध्यापकों और प्रोफेसरों से मिलकर आचार्यकुल के लक्ष्य और कार्य-क्रम के सम्बन्ध में विचार-विनिमय करेगी और संकल्प-पत्र तैयार करेगी।

(ख) छात्रों से मिलकर उनकी समस्याओं पर चर्चा करेगी और उनके सहयोग द्वारा शान्तिपूर्ण ढंग से समस्याओं के निराकरण का प्रयास करेगी।

(ग) शिक्षा-संस्थाओं के अधिकारियों से मिलकर संस्थाओं के वातावरण को परिवर्तित करने के साधनों पर विचार-विमर्श करेगी।

(घ) आचार्यकुल के तात्कालिक और दूरगामी कार्यक्रम की योजना प्रस्तुत करेगी।

५ चूँकि इस समय विश्वविद्यालयों और डिग्री कालेजों के खुलने के कारण प्रदेश के अधिकांश उपकुलपति और आचार्य सम्मिलन में उपस्थित नहीं हो सके है, अत अक्तूबर, १९६८ में *लखनऊ या कानपुर में फिर आचार्य*कुल सम्मिलन बुलाया जाय, जिसमें संचालन समिति द्वारा प्रस्तुत तात्कालिक और दूरगामी कार्यक्रमों को अन्तिम रूप दिया जाय। •

मध्यप्रदेश के धार जिले में झाबुआ प्रखंडदान घोषित

विकास खंड की संक्षिप्त जानकारी इस प्रकार है :

कुल गाँव ६१, ग्रामदानी गाँव ५३, ग्रामपंचायतें १८, जनसंख्या ३५,०००, आदिवासी जनसंख्या ३१,००४, क्षेत्रफल १,१८,२०५ एकड़, कृषि का रकबा ४३,५४१ एकड़।

अभियान की सफलता में विकासखंड के *सभी कर्मचारियों का सराहनीय सहयोग* मिला। झाबुआ-नरेश श्री देवीसिंहजी एवं श्री के० डी० रामनानी, क्षेत्रीय संयोजक, विकासखंड, झाबुआ का सहयोग विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

झाबुआ मध्यप्रदेश में आठवाँ प्रखंडदान है। इसके पूर्व प० निमाड में ३, टीकमगढ़ में २, सिवनी में १ तथा सरगुजा में १ प्रखंडदान हो चुके हैं। (सप्रेम)

गुजरात की चिट्ठी

शान्ति-सेना तथा ग्रामदान की प्रगति

शिवरामपल्ली संघ-अधिवेशन के बाद आबू रोड सर्वोदय-सम्मेलन तक के पूरे एक साल में गुजरात में विविध कार्यक्रम के संदर्भ में जो कुछ काम हुआ, उसकी कुछ झाँकी प्रस्तुत है।

शान्ति-सेना

विचार शिविर हमारे आन्दोलन का एक महत्व का अंग है इसलिए किसी न किसी मौके पर हम शिविरों का आयोजन करते रहते हैं। तरुण शान्ति-सेना के शिविरों के द्वारा गुजरात के विद्यार्थी जगत् से अच्छा सम्पर्क बन रहा है। इस साल में करीब आठ-नौ शिविर हुए। विद्यार्थियों में सर्वोदय-विचार को समझने की और शांति-सेना के कार्यक्रम को अमल में लाने की दिलचस्पी बढ़ रही है। संख्या की मर्यादा, खर्च वगैरह की दृष्टि से रखनी ही पड़ती है। इसलिए काफी विद्यार्थियों को शिविर में प्रवेश नहीं दे पाते हैं यह दुःख की बात है। गुजरात के शिविरों का संचालन मुख्यतः जगदीशभाई लाखिया करते हैं।

अगस्त '६७ में अहमदाबाद में गुजरात गांधी स्मारक निधि और गुजरात सर्वोदय मंडल के तत्वावधान में एक अभ्यास शिविर बहुत अच्छा हुआ था। इसमें गुजरात के विविध क्षेत्र के करीब १२५ भाई-बहनों ने भाग लिया। समाज के हरेक व्यक्ति को स्पर्श करनेवाली विविध समस्याओं पर चर्चाएँ हुईं। शिविर-संचालन श्री नारायणभाई देसाई ने किया था।

चुनाव के बाद सुश्री विमला बहन ठकार ने मेहसाणा जिले में दो मतदाता-शिक्षण शिविर लिये। इस विचार को चालना देने के लिए वहाँ एक अच्छा ग्रुप बना है।

शिक्षण और बहनों की समस्याओं को लेकर महिलाओं का भी एक शिविर हुआ, जिसका मार्गदर्शन भी सुश्री विमला बहन ने किया।

३० जनवरी से १२ फरवरी तक श्री नारायण भाई का गुजरात के मुख्य मुख्य शहरों में प्रवास कार्यक्रम हुआ। खास करके शान्ति सेना के बारे में उनके व्याख्यान हुए। उनके प्रवास कार्यक्रम से शांति सेना के कार्यक्रम को यहाँ गति मिल रही है। गांधी विद्यापीठ वेडछी में जून '६८ से शान्ति सेना विद्यालय खोलने का तय हो चुका है।

३० जनवरी को अहमदाबाद में शान्ति कूच का आयोजन किया गया था। साबरमती आश्रम में शान्ति-सेना रैली होने के बाद वहाँ से कोचरब आश्रम तक शान्ति कूच पहुँची जिसमें करीब दो हजार लोगों ने भाग लिया। इसमें अहमदाबाद के मेयर डा० वासुदेव त्रिपाठी और मजदूर नेता श्री श्यामप्रसाद वसावडा भी थे। पू० काका साहब और गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण वगैरह ने शांति-कूच में भाग लेनेवालों को सम्बोधन किया। नारायण भाई ने शान्ति-कूच का संचालन किया।

साहित्य प्रचार

गुजरात में 'भूमिपुत्र' और साहित्य के द्वारा विचार प्रचार के ठोस प्रयत्न भी किये जाते हैं। इस साल करीब ११-१२ हजार व्यक्तियों से सम्पर्क किया गया और 'भूमिपुत्र' पढ़ने के लिए उन्हें प्रेरित किया गया। कान्ता बहन और डा० नवनीत भाई फौजदार करीब-करीब अपना पूरा समय इस काम के लिए देते हैं। पदयात्राओं में भी 'भूमिपुत्र' और साहित्य का काम अच्छा होता है। श्री मनुभाई मजुमदार और बड़ौदा शहर के कार्यकर्तागण अपने विशेष प्रयत्नों से साहित्य बिक्री का काम करते रहते हैं। इस साल में 'भूमिपुत्र' के १५ हजार ग्राहक रहे। साहित्य बिक्री करीब ३० हजार रुपये की हुई।

३० जनवरी को अहमदाबाद रेलवे स्टेशन पर 'सर्वोदय साहित्य मंदिर' का उद्घाटन हुआ। वहाँ हर रोज करीब सौ रुपये की साहित्य बिक्री हो रही है।

ग्रामदान

बलसाड जिले में धरमपुर तहसीलदान हुआ है। गत साल वहाँ भी भयंकर अकाल था। हमारे कार्यकर्ताओं ने गाँव-गाँव में जाकर लोगों को अनाज, कपड़े वगैरह की मदद पहुँचायी और उनको रोजगारी बराबर मिले, इसके लिए भी कोशिश की।

पिछले २३ महीनों से धरमपुर में पुष्टिकार्य करने का भी आरंभ हुआ है। करीब १२० ग्रामसभाओं की रचना हुई है और ३० गाँवों के व्यक्तिगत समर्पण पत्र भरवाये गये।

२६ से ३० जनवरी तक आचार्य दादा धर्माधिकारी को बड़ौदा शहर में निमंत्रित किया गया था। वर्तमान परिस्थिति और लोकशाही के संदर्भ में उनके अच्छे व्याख्यान हुए।

डा० जोशी के नेतृत्व में ग्रामदान पदयात्राएँ भी होती रहीं। पदयात्राओं के द्वारा ग्रामदान का विचार प्रचार जरूर हुआ, लेकिन ग्रामदान प्राप्ति बहुत कम हुई। अभी सुरत जिले में १ मई से ६ मई तक १५० टोलियों ने पूरे जिले में पदयात्रा की। इससे ग्रामदान के लिए अनुकूल भूमिका बनाने में मदद मिली है। रचनात्मक कार्यकर्ताओं में और कांग्रेस के कार्यकर्ताओं में उत्साह का संचार हुआ और यह बात लोगों से कहने के लिए आत्मविश्वास जगा। पदयात्रा के दौरान कुल ४५ ग्रामदान हुए। कुल मिलाकर पूरे साल में ६१ ग्रामदान हुए हैं।

सौराष्ट्र के पाँच जिलों में मई की १२ से २२ तारीख तक पदयात्रा का आयोजन हुआ। व्यापक पदयात्राओं के लिए अनुकूल वातावरण बने, इस दृष्टि से १८ अप्रैल को गुजरात के विविध क्षेत्र में काम करनेवाले लोगों का ग्रामदान सम्मेलन श्री नारायण भाई की अध्यक्षता में बुलाया था। अतिथि विशेष के रूप में श्री श्रीमन्नारायण भी उपस्थित रहे थे।

अगस्त, '६७ में आचार्य राममूर्तिजी की अध्यक्षता में गुजरात का सर्वोदय-सम्मेलन हुआ था। उनके प्रभावपूर्ण और वेधक वक्तव्यों से काफी असर हुआ।

अक्तूबर में पू० विनोबाजी के पास पूसा रोड में हम २१ कार्यकर्ता भाई-बहन सप्ताह भर के लिए गयी थी। गुजरात के बारे मे पू० बाबा के साथ काफी चर्चाएँ हुई। उस सन्दर्भ मे सघन कार्य की दृष्टि से सूरत, बलसाड़ जिले मे काम कर रहे हैं। यहां हमारे काम के लिए काफी अनुकूलता है। जिला पंचायत और अन्य सभी लोगो का अच्छा साथ मिल रहा है।

श्री बबलभाई महेता ने भी सूरत जिले के शिविर और तहसील की सम्मेलन मे अपना समय देकर ग्रामदान की बातें कहीं।

५० गांवों के बीच एक कार्यकर्ता की दृष्टि से गुजरात के करीब २० हजार गांवो के लिए ४०० कार्यकर्ता सर्वोदय-कार्य के लिए होने चाहिए ऐसी बात पू० बाबा ने कही थी। इसके सन्दर्भ मे अभी एक सौ कार्यकर्ताओं की योजना हमने बनायी है। गुजरात सर्वोदय मण्डल के आर्थिक निभाव के लिए हर साल चन्दा इकट्ठा कर लेते हैं। गत मार्च महीने मे थोड कार्यकर्ताओं ने इसके लिए कोशिश की। बडौदा जिले का रंगपुर ग्रामदानी क्षेत्र श्री हरिवल्लभ परीख के मार्गदर्शन मे ग्राम-स्वराज्य की दिशा मे आगे बढ रहा है।

बलिया-सम्मेलन मे ५० हजार ग्रामदान की प्राप्ति करने का पूरे देश का जो संकल्प हुआ था, उसमे गुजरात ने अपना हाथ कम बँटाया है, उसका अफसोस हमे जरूर है, लेकिन साथ-साथ दिल मे ऐसी आशा छिपी हुई है कि यहां भी सबका तीव्र पुरुषार्थ जुटेगा तो गांधी जन्म-शताब्दी तक यह कार्यक्रम जरूर सफल होगा। —कान्ता-हरविलास

श्रद्धाञ्जलि

बलिया के उत्तर प्रदेशीय सर्वोदय-सम्मेलन में दिनांक १३ अप्रैल को कस्तूरबा ट्रस्ट, उत्तर प्रदेशीय शाखा के पसना केन्द्र मे दो साल से प्रशिक्षण प्राप्त कर रही हरदोई जिले की बहन अन्नपूर्णा देवी का आकस्मिक निधन हो गया। ईश्वर उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी समिति

प्रधान केन्द्र
१, राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली–१
फोन : २७६१०५

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति
टुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैंरों
जयपुर–३ (राजस्थान)
फोन : ७२६८३

अध्यक्ष : डा० जाकिर हुसैन, राष्ट्रपति
उपाध्यक्ष : श्री वी० वी० गिरी, उपराष्ट्रपति
अध्यक्ष : कार्यकारिणी :
श्रीमती इन्दिरा गांधी, प्रधानमंत्री
मंत्री : श्री आर० आर० दिवाकर

अध्यक्ष : श्री मनमोहन चौधरी
मंत्री : श्री पूर्णचन्द्र जैन

गांधीजी के जन्म के १०० वर्ष २ अक्तूबर, १९६९ को पूरे होंगे। आइये, आप और हम इस शुभ दिन के पूर्व—

(१) देश के गांव-गांव और घर-घर में गांधीजी का संदेश पहुँचायें।

(२) लोगों को समझायें कि गांधीजी क्या चाहते थे ?

(३) व्यापक प्रचार करें कि विनोबाजी भी भूदान-ग्रामदान द्वारा गांधीजी के काम को ही आगे बढ़ा रहे हैं।

यह सब आप-हम कैसे करेंगे ?

- यह समझने समझाने के लिए रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति ने विभिन्न प्रकार के फोल्डर, पोस्टर, पुस्तक-पुस्तकादि सामग्री प्रकाशित की है। इसे आप पढ़ें और दूसरों को भी पढ़ने को दें।
- इस सब सामग्री और विशेष जानकारी के लिए उपसमिति के ऊपर दिये गये जयपुर कार्यालय से पत्र-व्यवहार करें।

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०, या २५ शिलिंग, या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ४४

शुक्रवार २ अगस्त, '६८

अन्य पृष्ठों पर

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन ४२८५

इतिहास की प्रेरक आवाज

लोगों में मेरी जो प्रतिष्ठा है, उसका आधार मेरा चरित्र है। इस राजनैतिक अभियोग में डर जाना मेरे लिए लज्जास्पद होगा। यदि मैं दब गया तो मेरे लिए पूना में रहूँ या अण्डमान में, दोनों एक ही-से होंगे। यदि हमें राजनीति में भाग लेना है तो ऐसे संकटों के लिए सदा उद्यत रहना चाहिए। सरकार का उद्देश्य हमें जनता की दृष्टि में गिराना है, परन्तु मुझे विश्वास है कि वह हमें झुकाने में सफल नहीं होगी। वह हमें ऐसा कच्चा बाँस न पायगी कि जरा से बोझ से टूट जाय। हमें यह भी तो याद रखना चाहिए कि अन्त में हम किसी हद तक जनता के सेवक ही तो हैं। यदि नाजुक समय आने पर हम लोग भाग निकलेंगे तो यह जनता के साथ विश्वासघात और द्रोह ही तो माना जायगा। यदि मुझे सजा हुई तो देशवासियों की जो सहानुभूति मुझे प्राप्त होगी, वही मुझे सहारा देगी।[1]

मैं केवल इतना कहना चाहता हूँ कि यद्यपि जूरी ने मुझे दोषी ठहरा दिया है, फिर भी मैं दृढ़तापूर्वक कहता हूँ कि मैं निर्दोष हूँ। संसार का शासन करने वाली शक्ति इस अदालत से बहुत ऊँची है और संभवतः भगवान की यही इच्छा है कि मैं जिस ध्येय का प्रतिनिधि हूँ, वह मेरे स्वतन्त्र रहने की अपेक्षा मेरे जेल के दुःख उठाने से अधिक फल फूल सकेगा।[2]

समय की माँग है कि केवल शब्दों का भरोसा न करके हम क्रिया द्वारा अपने भावों को व्यक्त करें।[3]

सफलता दो प्रकार से प्राप्त होती है—या तो स्वाधीनता के लिए यत्न करने वालों को किसी उदार और प्रबल शक्ति की सहायता मिल जाय अथवा जब वे अपनी सारी शक्ति को लक्ष्य के प्राप्त करने में लगा दें। न्याय-युक्त अधिकार प्राप्त करने के लिए प्राणों तक की आहुति देने के लिए उद्यत होना चाहिए।[4]

हम जो कि नये विचार के लोग हैं अपना झण्डा स्वराज्य से एक इञ्च भी नीचे नहीं गाड़ेंगे।

स्वराज्य के बिना हमारी जिन्दगी और हमारा धर्म व्यर्थ है।
स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, और हम उसे लेकर रहेंगे।[5]

—बाल गंगाधर तिलक

'लोकमान्य तिलक और उनका युग" पृष्ठ १-१०३, २-१६२, ३ १२१, ४-१२८, ५-१३१।

लोकमान्य : जनता के आराध्यदेव

लोकमान्य तिलक

पुण्यतिथि : १अगस्त

लोकमान्य तो एक ही था। लोगों ने उन्हें जो पदवी दी, जो सम्मान दिया, वह राजाओं के दिये गये खिताबों से लाख गुना कीमती था। देश ने आज यह बात सिद्ध कर दिखायी है। उनके आखिरी दिनों में जो दृश्य मैंने देखा, वह कभी भुलाया नहीं जा सकता। लोगों के उस प्रेम का वर्णन करना असम्भव है।

लोकमान्य जनता के आराध्यदेव थे, प्रतिमा थे। उनके वचन हजारों के लिए वेदवाक्य थे। पुरुषों में पुरुष-सिंह! देश-भक्ति उनका धर्म हो गयी थी। जितनी स्थिरता और दृढ़ता के साथ उन्होंने स्वराज्य के लिए काम किया, उतना और किसीने नहीं किया। उन्होंने निःसन्देह स्वराज्य की अवधि कई वर्ष कम कर दी। भारत की भावी सन्तति के हृदय में यही भाव बना रहेगा कि लोकमान्य नवीन भारत के निर्माता थे, वे उनका यह कहकर स्मरण करेंगे कि एक पुरुष था, जो हमारे लिए ही जन्मा और हमारे लिए ही मरा।

लोकमान्य का देशवासियों के हृदयों पर ऐसा गहरा प्रभाव था, उसका कारण क्या था? मैं समझता हूँ, इसका उत्तर सरल है। देशप्रेम उनके हृदय की सबसे बड़ी तृष्णा थी। वही उनका धर्म था। वह जन्म से ही जनसत्ता पर विश्वास रखते थे। उनकी बहुमत पर इतनी गहरी आस्था थी कि मैं कभी-कभी उससे डर जाता था। परन्तु वही तो लोक-मान्य के प्रभाव का आधार था। उनकी इच्छा-शक्ति फौलाद के समान थी, जिसका उन्होंने देश के लिए उपयोग किया। उनका जीवन खुली पुस्तक के समान था। उनके शौक अत्यन्त सादे थे। उनका निजी जीवन निष्कलंक और शुद्ध था। लोकमान्य ने लोकातिशायी गुणों का उपयोग अपने देश के लिए किया। जितनी दृढ़ता और स्थिरता से स्वराज्य-धर्म का प्रचार लोकमान्य ने किया उतना और किसीने नहीं किया। यही कारण था कि उनके देशवासी उन पर पूरी श्रद्धा रखते थे। उनका साहस कभी लड़-खड़ाया नहीं, और उनका आशावाद अदम्य था। उन्हें आशा थी कि स्वराज्य उनके जीवन-काल में आ जायगा। नहीं आया तो इसमें उनका कोई दोष नहीं। यह असंदिग्ध है कि उनके प्रयत्नों से स्वराज्य कई वर्ष पास आ गया है।

हमारी धर्म और ज्ञान की परम्पराएँ अत्यन्त प्राचीन हैं। धर्म और ज्ञान के सम्बन्ध में हमारी परम्पराएँ अन्य किसी भी देश से घटिया नहीं, अपितु उत्कृष्ट ही होंगी। यदि हम उन परम्पराओं को छोड़ दें तो हमारी जाति को परस्पर जोड़ने का कोई साधन न रहेगा। प्राचीन मान्यताओं को तोड़ने का परि-णाम यह होगा कि जाति का शीराजा बिखर जायगा। हमें सदा ये बातें याद रखनी चाहिए।

तिलक-गीता का पूर्वार्द्ध है, 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है', और उसका उत्तरार्ध है, 'स्वदेशी हमारा जन्मसिद्ध कर्तव्य है।'

—मो० क० गांधी

पक्षों से परे होकर काम करूँगा

गुजरात के प्रमुख नेता श्री इंदुलाल याज्ञिक की घोषणा

महागुजरात जनता परिषद के अध्यक्ष श्री इंदुलाल याज्ञिक ने कहा है कि सर्वोदय आन्दोलन की तरफ मैं अपना मन एकाग्र करना चाहता हूँ।

श्री याज्ञिक ने कहा है कि मुझे व्यापक पैमाने पर रचनात्मक कार्य करने की भूख लगी है। जनता के सच्चे संगठन के लिए यह कार्य मुझे अनिवार्य लगता है। इसके लिए मैं सब पक्षों का सहकार लेनेवाला हूँ। आज कांग्रेस सत्तारूढ़ है, और विरोधी पक्षों की निगाहें भी सत्ता की गद्दी की ओर ही लगी हैं। गांधीजी और सर्वोदय-नेताओं की नीति के मुताबिक जनशक्ति को जागृत करने का काम कोई पक्ष आज करता नहीं है।

सर्वोदय की प्रवृत्तियों में भाग लेनेवाले व्यक्ति को राज-सत्ता को छोड़ देना चाहिए, ऐसा एक मत है। और दूसरा विचार है कि इस काम को करते रहें, लेकिन रचनात्मक प्रवृत्तियों को राजनीतिक रंग न दिया जाना चाहिए। मैंने सर्वोदय-नेता श्री जयप्रकाश नारायण से इस सम्बन्ध में मार्गदर्शन मांगा, तब उन्होंने मुझे राजनीतिक और सत्तात्मक कार्य करते रहने की सलाह दी, तथा लोक-सभा का सदस्य भी रहने की सलाह दी।

श्री याज्ञिक ने कहा है कि भूदान, सर्वोदय, स्वदेशी, लोक-शाही तथा विविध रच-नात्मक कार्य करने के लिए शांति-सेना दल खड़ा करना चाहता हूँ। यह काम मैं स्वदेशी सभा द्वारा करूँगा।

आपने यह भी कहा है कि किसी भी पक्ष से परे होकर जब मैं नया कार्य आरम्भ करने का निर्णय कर रहा हूँ, तो मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं जीवन की उत्तम परम्परा का अनु-सरण कर रहा हूँ। मैंने किसी पक्ष की कंठी बांधी नहीं है और उसे तोड़ने का भी कोई सवाल ही नहीं खड़ा होता। गांधीजी के पास से अहिंसा की दीक्षा ली, उसके बाद विचारों की किसी प्रकार की भी उथल पुथल में हिंसा का कभी विचार ही नहीं किया है, इसलिए अहिंसा की नयी प्रतिज्ञा लेने की जरूरत नहीं है। अनेक पक्षों के साथ निश्चित समान भूमिका पर संयुक्त मोर्चे में मैंने काम किया है और उसका मुझे पश्चात्ताप नहीं है। अब से सब पक्षों से परे होकर गांधीजी और विनोबाजी के बताये हुए मार्ग पर आगे बढ़ूँगा। कोई भी पक्षवादी और दूसरे हितैषी सहकार देंगे तो मैं कबूल करूँगा। ऐसे सर्व-सम्मति से रचनात्मक कार्य करते हुए मैं किसी वर्ग के पक्ष की टीका नहीं करूँगा, मगर उसकी नीति-रीति की जरूरी टीका करने में मुझे हिचक भी नहीं होगी।

—'गुजरात समाचार'

उत्तर प्रदेशदान

गाँव-गाँव और घर-घर को छूनेवाला संकल्प

उत्तर प्रदेश के बलिया नगर से बिहार वापस लौटते समय विनोबा का विदाई-भाषण

आज यहाँ पर जो एक अत्यन्त क्रांतिकारी और बहुत बड़ा मंगल कार्य का संकल्प हुआ, उसका मेरे हृदय पर इतना प्रभाव पड़ा है कि मेरी वाचा कुंठित-सी हो गयी है। १८ अप्रैल १९५१ को बाबा को पहला भूदान मिला और उसको ईश्वर का इशारा समझकर ईश्वर के साथ बातचीत के बाद, बाबा ने उस काम को उसी दिन से उठाया और दूसरे दिन से भूदान माँगना शुरू किया। किसको खयाल था कि सत्रह साल के बाद वह भूदान का छोटा-सा बीज, जो उस वक्त बोया गया था, उसका ऐसा महान् वृक्ष बनेगा और प्रांतदान तक बात आ जायगी!

सन् १९४२ में 'Quit India' (भारत छोड़ो) का संकल्प भारत ने किया था। अगर तुलना करके देखें तो वह संकल्प, तुलना में आज के संकल्प से आसान था, और यह बहुत बड़ा संकल्प है, गाँव-गाँव को छूनेवाला, घर-घर को छूनेवाला संकल्प है। 'भारत छोड़ो' के संकल्प में, अंग्रेजों को छोड़कर जाना था। हम ही ने उनका राज्य चलाया था, हमारे ही आधार से उनका राज्य चलता था, हमने वह आधार छोड़ दिया तो उनको यहाँ से जाना ही था। इसलिए वह 'निगेटिव' (अभावात्मक) काम था। लेकिन इस संकल्प में गाँव को अपनी जमीन समर्पण करनी है, गाँव का परिवार बनाना है और इस आधार पर स्वयंशासित गाँव बनाना है। ऐसा संकल्प साढ़े सात करोड़ की आबादीवाले प्रान्त के लिए करना, बहुत बड़ी बात है। साढ़े सात करोड़ का प्रदेश यूरोप में तो एक राष्ट्र माना जायगा। 'इण्डिया' को छोड़कर, यूरोप के सब राष्ट्रों से, उत्तर प्रदेश बड़ा है; फ्रान्स, जर्मनी उत्तर प्रदेश से छोटे हैं।

हमारा भारत एक बहुत बड़ा देश है, इसलिए उत्तर प्रदेश को प्रांत माना जाता है, लेकिन यूरोप में उत्तर प्रदेश नंबर दो का राष्ट्र माना जायगा। ऐसे राष्ट्रतुल्य प्रांत ने यह संकल्प किया है कि हम जमीन की मालकियत ग्रामसभा को समर्पित करेंगे।

ऐसा शुभ संकल्प, अपनी ताकत के बाहर का संकल्प, सब मिलकर करते हैं तो वह भगवत्प्रेरित ही होना है और उनकी कृपा से ही किया जाता है। जब मनुष्य अपनी ताकत के अंदर का संकल्प करता है तो भगवान् कोई खास तकलीफ नहीं उठाते हैं, कोई खास मदद नहीं देते हैं, क्षीरसागर में शेषशायी भगवान सोते रहते हैं। लेकिन जब भगवान देखते हैं कि अपने भक्तों ने अपनी ताकत के बाहर का संकल्प किया, सम्मिलित, सामूहिक संकल्प किया और सबकी सम्मिलित ताकत के भी बाहर का संकल्प किया, तब वे शेषशायी भगवान न रहकर, उत्थित होते हैं, आगे-पीछे, ऊपर-नीचे घूमने रहते हैं, भक्तों को हमेशा उत्साह देते रहते हैं, यह भक्तों का अनुभव है और यही अनुभव हमें इस काम में आयगा।

इसमें कोई शक नहीं है कि अपनी ताकत से हम ऐसा संकल्प करनेवाले थे ही नहीं। कल तक बात क्षेत्र की चल रही थी, प्रांत की नहीं चल रही थी। अलग-अलग क्षेत्रवालों ने अपना कुछ कार्यक्रम बनाया था। आज हमें जाना था, भगवान की एक विचित्र शक्ति जाग गयी और विचित्र भाई के मुख से ही निकला कि *बाबा आप सबसे हाथ उठवाकर देख लीजिए, संकल्प हो सकता है!* और मैंने वैसा किया। अगर विचित्र भाई के मुख से यह बात नहीं निकलती तो बाबा वैसा कराता नहीं। पर उन्होंने कहा, इसलिए बाबा ने किया। और मेरा खयाल है कि उनके खुद के मन में भी पाँच मिनिट पहले वह बात नहीं थी, अचानक ही यह बात उन्हें सूझी। इस पर से ध्यान में आता है कि यह ईश्वर का कार्य है और हमें निमित्तमात्र बनकर करना होगा, ऐसा उन्हें भी सूझा। ब्रह्मसूत्र में एक सूत्र आया है—'आत्मनि चैवं विचित्राश्च हि। (ब्र० सू० २-१-२८) आत्मा में विचित्र शक्ति होती है, उसका दर्शन आज हुआ। परमात्मा की विचित्र शक्ति ने एक संकल्प यहाँ कराया। इसलिए हम अत्यन्त निर्भय, निश्चिन्त होकर यहाँ से जा रहे हैं। *यह भगवद् संकल्प है, उनकी प्रेरणा* से इस काम में सबके दो हाथ लगेंगे और भगवान के भी दो हाथ जुड़ जायँगे। तो हर कोई चतुर्भुज होकर काम करेगा, ऐसा विश्वास लेकर हम जा रहे हैं।

(बलिया १५-७-'६८)

सरगुजा जिले में महिला-लोकयात्रा की फलश्रुति

इन्दौर, १६ जुलाई। देश में स्त्री-शक्ति जागरण के उद्देश्य से गत वर्ष इन्दौर से पू० विनोबाजी के तत्वावधान में प्रारम्भ हुई। बारह वर्षीय महिला-लोकयात्रा ने चार माह सरगुजा जिले में पदयात्रा की, जिसकी फलश्रुति उत्साहवर्धक रही।

जिले की चार तहसीलों में अन्तर्गत १८ विकास-खंडों की १०५ ग्राम-पंचायतों के ५१७ गाँवों में संदेश पहुँचाया। १०५ पड़ाव और ५६३ मील की पदयात्रा हुई। १०४ ग्राम सभाएँ, ८६ गोष्ठियाँ, ८१ महिला सभाएँ और स्कूल-कालेजों में २६ व्याख्यान हुए। २६७-५०६० के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई और लोकयात्रा-खर्च हेतु जनता-जनार्दन से ३,७६० रु० का दान मिला।

उक्त अवधि में डेढ़ माह तक प्रदेश सर्वोदय मंडल और गांधी-स्मारक-निधि के तत्वावधान में जिलादान-अभियान भी चलाया गया, जिसके फलस्वरूप १०५ नये ग्रामदान मिले। सरगुजा जिले में अब ६५० ग्रामदान मिल चुके हैं।

यह उल्लेखनीय है कि सरगुजा में लोकयात्रा का कुशल संयोजन और व्यवस्था सर्वोदय-समिति सरगुजा ने की। सरगुजा के बाद लोकयात्रा २ जुलाई, '६८ से टीकमगढ़ जिले में शुरू हुई है। [सप्रेस]

मे प्रत्यक्ष रूप से निर्णायक भूमिका अदा करने का अवसर मिल सके।

यह सही है कि छात्र-नेताओं मे से अधिकांश प्रगतिशील दृष्टिकोण के हैं, अस्पष्ट लोकतंत्र के हिमायती हैं और आम तौर पर समाजवादी लक्ष्य के प्रति निष्ठावान हैं, पर इसके आधार पर यह मानना असंगत है कि वे किसी राजनैतिकवाद विशेष के पक्षधर हैं।

यूरोप अथवा समस्त विश्व के छात्र-आन्दोलन पर इस परिप्रेक्ष्य मे विचार करने पर यह साफ दिखाई देता है कि आमूल सामाजिक परिवर्तन की मांग प्रस्तुत करनेवाला यह आन्दोलन केवल उन्हीके बूते पर पूरी तरह कारगर नही हो सकता। छात्र-आन्दोलन पर्याप्त कारगर हो इसके लिए यह जरूरी है कि समाज की अन्य विधायक प्रवृत्तियों और लोकतांत्रिक शक्तियों का भरपूर सहयोग उन्हे प्राप्त हो। जहां इस प्रकार का सहयोग सहज रूप मे उपलब्ध नही होगा, वहां यह आन्दोलन हवा के रुख की ओर संकेत करनेवाला गर्द-गुबार मात्र बनकर रह जायगा। दुनिया के हर देश का आर्थिक, सामाजिक ढांचा थोड़ी-बहुत विभिन्नता रखता है। अतः प्रत्येक देश का छात्र-आन्दोलन अपने अधिष्ठान के सन्दर्भ मे सक्रिय होता दीखता है।

लैटिन अमेरिका में, जहां आज भी राजनैतिक और आर्थिक पराधीनता का बोलबाला है, वहां छात्रों को दुहरे मोर्चे पर लड़ाई लड़नी पड़ रही है। एक ओर उन्हे सत्ताधारी शासकों से जूझना पड़ रहा है, दूसरी ओर उन्हे राष्ट्रीय स्वातंत्र्य और नये सामाजिक ढांचे के लिए कशमकश करनी पड़ रही है। स्पेन के छात्रों को भारी बलिदान करके वहां के प्रतिक्रियावादी सैनिक-शासन के खिलाफ आवाज उठाते हुए वहां की कुंठित धार्मिक रूढ़िवादिता के विरुद्ध भी संघर्ष करना पड़ रहा है।

विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता

अघोषित राजनीतिक दासता से मुक्ति

यूगोस्लाविया, पोलैण्ड, और चेकोस्लोवाकिया जैसे कम्युनिस्ट देशों की स्थिति ऐसी है कि वहां राजनैतिक विरोध जैसी किसी प्रवृत्ति का अस्तित्व ही नही है। इन देशों मे एक ऐसा लोककल्याणकारी राज्यवाद जनजीवन पर मजबूती से हावी है, जो किसी भी आधुनिक परिस्थितियों में भी अपनी सामाजिक, राजनीतिक संरचना मे किसी प्रकार का हेर-फेर नही करना चाहता। इन देशों के छात्रों की नवचेतना की लहर लोककल्याणकारी राज्यवाद की मजबूत चट्टान से टकराकर उसमे दरारें पैदा करने का अभूतपूर्व अभिक्रम दिखा रही है। विशेष रूप से चेकोस्लोवाकिया और पोलैण्ड के छात्रों ने यह उद्घोष बुलंद करने का साहस किया है कि विश्वविद्यालयों को राज्य की घोषित राजनीति की दासता से मुक्ति मिलनी चाहिए।

एशिया और अफ्रीका के कई देशों ने द्वितीय महायुद्ध के बाद स्वतंत्रता पायी। नव-स्वतंत्रता का प्रसाद पाने के साथ इन देशों के छात्रों मे विकासोन्मुख समृद्ध जीवन की आकांक्षा व्यापक रूप मे फैलती गयी। इसीलिए, भारत, पाकिस्तान, मिस्र और नव-अफ्रीकी देशों के छात्रों के आन्दोलनों में शैक्षिक सुविधाओं के विस्तार, परीक्षा-पद्धति के सुधार और विश्वविद्यालय की चहारदीवारी के भीतर के लोकतांत्रिक अधिकारों की मांग का स्वर मुखरित हुआ। यूरोप के छात्र-आन्दोलनों द्वारा अधिष्ठान के प्रति जो तीव्र और व्यापक क्षोभ उभरकर सामने आया है, उसकी नव-स्वतंत्रता-प्राप्त छात्र-आन्दोलन से तुलना नही की जा सकती है। नव-स्वतंत्रता पानेवाले देशों के छात्रों की स्वतंत्र चेतना अभी प्राय अर्द्धजाग्रत ही है, इसीलिए वह प्राय सत्ता, निहित स्वार्थ, और पक्ष-राजनीति का मोहरा बना हुआ है। किन्तु वह बहुत दूर नही है, जब कि नव स्वतंत्र देशों का छात्र-आन्दोलन भी विश्व छात्र-आन्दोलन का सहयात्री बन जायगा। —रुद्रभान

हमारी यूरोप-यात्रा—५

विज्ञापनबाजी से मुक्त यूगोस्लाविया और भारत की भ्रामक तस्वीर

पश्चिमी यूरोप के पूंजीवादी देशों से पूर्वी यूरोप के साम्यवादी देशों मे आते ही एक परिवर्तन-सा महसूस होता है। तुरन्त ध्यान आकृष्ट करनेवाला पहला परिवर्तन विज्ञापनों की चकाचौंध का अभाव है। ज्यों ही वियना से यूगोस्लाविया के प्रथम शहर लुबलियाना तक की यात्रा पूरी करके हम स्टेशन पर उतरे तो वातावरण मे एक प्रकार की शांति का अनुभव हुआ। कुमारी युदिता, जो स्टेशन पर हमारी अगवानी करने आयी थी, ने हमारा सामान कार मे रखा और घर की तरफ प्रयाण करते हुए पूछा: "कैसा लगा आपको हमारे देश का प्रथम दर्शन?"

विज्ञापन की चकाचौंध

लुबलियाना विश्वविद्यालय की यह छात्रा शायद ऐसी आशा नहीं कर रही होगी कि मैं सबसे पहले कहूंगा कि भले ही पश्चिम के लोग इस 'अभाव' को पिछड़ापन कहें, पर मेरी दृष्टि से यह 'अभाव' मानव स्वभाव के ज्यादा करीब है। कौनसी ब्रेड (रोटी) खायें, कौनसे मार्क का पानी पीयें, कौनसी सिगरेट पीने से हम ज्यादा 'माडर्न' माने जायेंगे और हमारे घर का हर सामान पुरानी फैशन का हो गया है, इसलिए हमे नया सोफा, नया रेडियो, नये बर्तन और शायद नयी पत्नी तथा नये बच्चे भी प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए, ऐसी मुफ्त की नेक सलाह देनेवाला मुनाफाखोरी का व्यापार पश्चिमी यूरोप मे छाया हुआ है। वहां के लोग इसे 'प्रगति' का प्रतीक मानते हैं।

कुमारी युदिता के साथ हम इस विषय पर पूरे रास्ते बात करते रहे। घर पहुंचते-पहुंचते युदिता ने कहा कि "जब मैं रोम में थी, तो मुझे ऐसा महसूस हुआ कि लोग सामान इसलिए नही खरीदते कि अमुक वस्तु की उन्हे सचमुच जरूरत है। बल्कि सामान पैदा करनेवाला अप्रत्यक्ष तरीकों से आपके

मानस को इस तरह मोड़ लेता है कि आप उस सामान को खरीदने के लिए बाध्य हो जाते हैं। उस सामान के अभाव में आप अपने आपको हीन और निम्न स्टैंडर्ड मानने लगते हैं। पर यूगोस्लाविया में कोई एक आदमी तो मुनाफा कमानेवाला है नहीं। जो उत्पादक है वही उपभोक्ता भी है और इसलिए विज्ञापनों की चकाचौंध इस तरह के समाज के लिए अनावश्यक है। इसीलिए अखबारों में रेडियो और टेलीविजन पर अथवा सड़कों पर पश्चिमी ढंग का विज्ञापन आप नहीं देख रहे हैं। असल में विज्ञापनबाजी मानव को एक नयी तरह की गुलामी में फँसाने का तरीका है। मानव मस्तिष्क के 'कडीशन्ड' करके उसे एक निश्चित दिशा में खींच लेनेवाले विज्ञापनबाजी से मैं बहुत डरती हूँ।

आलोचना की भी गुंजाइश

कुमारी मुन्दिरा से हमारी पहली मुलाकात रोम में ही हुई थी। वह एक धार्मिक प्रवृत्ति की महिला है और मार्शल टीटो एवं साम्यवादी सरकार की आलोचक भी है। यूगोस्लाविया इस मामले में अन्य साम्यवादी देशों से काफी आगे बढ़ा हुआ है। यहाँ के लोग काफी खुलकर बातचीत करते हैं और लोगों के मुँह गढ़े-गढ़ाये सरकारी जवाब भरे हुए नहीं हैं। मुन्दिरा ने जहाँ साम्यवादी उपलब्धियों की तारीफ की वहाँ ब्यूरोक्रेसी में व्याप्त अकर्मण्यता आलस्य बुद्धिहीनता आदि दोषों की निंदा भी की। रोम में ही हमें मुन्दिरा की इस समालोचक प्रवृत्ति का आभास मिल गया था। उसने हमें युगोस्लाविया आने और उसके घर पर अतिथि बनने का निमंत्रण दिया इसलिए हम यूगोस्लाविया में सबसे पहले मुन्दिरा के घर पर ठहरे। उसके माता पिता अंग्रेजी नहीं जानते थे अतः मुन्दिरा दुभाषिया का दायित्व भी पूरा कर रही थी। हमने २४ घंटे मुन्दिरा के साथ बिताकर यूगोस्लाव सान्निध्य का आनंद लिया।

वैज्ञानिक ईवान सुपेक से मुलाकात

मुन्दिरा से हम जागरेब नाम के नगर में रुके। यहाँ हम यूगोस्लाविया के विश्वविख्यात वैज्ञानिक ईवान सुपेक से मिलने के लिए रुके थे। शान्तिपूर्ण कामों के लिए अणुशक्ति का प्रयोग किया जाय इस सिद्धांत में विश्वास करनेवाले दुनिया भर के वैज्ञानिकों ने पगवाश नाम की एक संस्था बनायी है। स्वर्गीय डा० भाभा भारत की तरफ से इस संस्था के सदस्य थे और उन्होंने कुछ वर्ष पहले उदयपुर में पगवाश वैज्ञानिकों का एक सम्मेलन भी बुलाया था। श्री ईवान सुपेक ने पगवाश की ओर से हमारे ठहरने की व्यवस्था एक होटल में की थी और दो अंग्रेजी जाननेवाली बहनों ने हमें जागरेब शहर के दर्शन कराये। जागरेब विश्वविद्यालय में इंडालोजी विभाग भी है जहाँ भारतीय भाषाओं और भारतीय दर्शनों की पढ़ाई होती है। गांधी-शताब्दी के अवसर पर इंडोलोजी विभाग की ओर से एक लंबे सेमिनार की योजना बनायी जा रही है।

ईवान सुपेक से हमारी लंबी बातचीत हुई। उन्होंने कहा कि अणुशस्त्र संपन्न बड़े देश विश्व-जनमत की परवाह किये बिना आज भी और तरीकों से काम लेते रहे हैं जबकि शान्ति विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के बीच आर्थिक समानता विकासशील देशों में आर्थिक शोषण समाप्त करके ही सम्भव है। सही अर्थों में प्रगति आदि महत्त्वपूर्ण प्रश्न द्वितीय महायुद्ध के बाद में उलझते ही जा रहे हैं। मुझे लगता है कि ये तथाकथित बड़े देश संसार की समस्याओं से कम चिंतित हैं और अपनी प्रतिष्ठा सत्ता एवं संपन्नता कायम रखने के लिए अधिक चिंतित हैं। अब इन देशों की नीति पर से दिन प्रतिदिन मेरा विश्वास उठता जा रहा है। 'छोटे देशवालों को अब स्वयं ही अपनी मदद करके इन संसार की समस्याओं को हल करने का कोई रास्ता निकालना चाहिए।

और तब हम बेलग्रेड आये। बेलग्रेड में मैं 'यूगोस्लाव शान्ति-सभा' के अतिथि के रूप में रहा। यह शान्ति-सभा किसी भी कम्युनिस्ट या गैर-कम्युनिस्ट शान्तिवादी संस्था के साथ जुड़ी हुई नहीं है और न किसी अंतर्राष्ट्रीय शान्ति-संस्था की शाखा ही है। स्वतंत्र और तटस्थ नीति के आधार पर इस संस्था का काम चलता है। लेकिन अब यूनेस्को छात्र यूनियन तथा विश्वविद्यालय में इस शान्ति-सभा ने मेरे कार्यक्रम रखे थे।

भारत के बारे में गलत धारणा

जहाँ भी मैं गया, लोग भारत के बारे में अनेक सवाल पूछते थे। यूरोप में आम तौर पर ऐसी धारणा है कि भारत में बूढ़ी बेकाम गायों की तादाद बहुत ज्यादा है और वे खुली सड़कों पर घूमती हैं। भारतवासी गाय को पवित्र मानकर उसकी पूजा करते हैं। यूरोप के अनेक देशों में लोग मुझसे कहते हैं कि यदि भारत की जनता भूखी है तो आप लोग गाय क्यों नहीं खाते? शायद ही ऐसा कोई दिन जाता होगा जिस दिन मुझे इस सवाल का सामना नहीं करना पड़ता होगा। दूसरी बात जो पूरे यूरोप में मुझसे कही जाती है, वह यह है कि भारत की प्रगति में हिन्दू धर्म के संस्कार बहुत बड़ी बाधा हैं। या फिर लोगों की यहाँ पर यह भी धारणा है कि जब तक संतति नियमन नहीं होगा तब तक भारत की समस्या का कोई हल नहीं है। एक स्कूल में मुझे भाषण देने के लिए बुलाया गया। बच्चों से मैंने सहज ही पूछा कि 'आप लोग भारत के बारे में क्या जानते हैं?' आठवीं से दसवीं क्लास के बच्चे मेरे सामने थे। एक ने कहा पवित्र गाय, दूसरे ने कहा साधुओं और फकीरों का देश, तीसरे ने कहा गरीबी भुखमरी और भिखमंगी, चौथे ने कहा अनेक धनी राजे महाराजे।' पाँचवें ने कहा गंगा और ताजमहल, छठे ने कहा बेहद और बढ़ती हुई जनसंख्या इत्यादि। उत्तर सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ। हालाँकि ये सभी बातें सही हो सकती हैं पर जिस परिप्रेक्ष्य में और जिस भाषा में यूरोपवासी इन बातों को जानते हैं वह बिल्कुल गलत है। पर पत्रकारों को तो अखबारी बात चटपटी भाषा में ऊपर-ऊपर से देखकर लिखने में मजा आता है और शायद उनको इसी बात का वेतन भी मिलता है। सही परिप्रेक्ष्य और सही भाषा में जानकारी देने का काम शायद हमारे दूतावासों को करना चाहिए। पर अत्यन्त मोटी बुद्धि के ब्यूरोक्रेट्स हमारे दूतावासों में भरे हैं और दफ्तर में टेबुल के सामने बैठ जाना कुछ रद्दी चिट्ठियाँ अथवा सरकारी सूत्र की खानापूर्ति कर देना→

११ सितम्बर '६८ तक पूर्ण सफलता की आशा

टीकमगढ़ मध्यप्रदेश के रीवा सम्भाग में एक महत्वपूर्ण प्रशासनिक इकाई है। यह जिला उत्तर-पश्चिम में उत्तर प्रदेश के झांसी जिले से घिरा होने के कारण सीमान्त जिला है। जिले का अधिकांश भाग जंगलों, नदियों और छोटे-छोटे तालों से भरा हुआ है। आवागमन के साधनों की कमी है। गांवों में शिक्षा का अभाव और बेरोजगारी है।

यह जिला ७५ मील चौड़ा तथा ५० मील लम्बा है। इसकी जनसंख्या ५ लाख है। जिले में कुल १००३ गांव हैं। टीकमगढ़, निवाड़ी तथा जतारा: तीन तहसीलें हैं। टीकमगढ़ तहसील पूरी ग्रामदान में आ चुकी है। इस तहसील में बलदेवगढ़, टीकमगढ़, दो विकास-खण्ड हैं। जिले भर में बलदेवगढ़, टीकमगढ़, निवाड़ी, पृथ्वीपुर, जतारा तथा पलेहरा, ये छ. विकास-खण्ड हैं। इस जिले में बड़े काश्तकार नहीं हैं, विषमता कम है। भूमिहीन भी बहुत ज्यादा नहीं हैं।

मध्यप्रदेश सर्वोदय-मण्डल के निर्णयानुसार तथा टीकमगढ़ जिले के साथियों की सलाह से जिलादान अभियान यहां चल रहा है। शान्ति-सेना विद्यालय, कस्तूरबाग्राम, इन्दौर की बहनें बड़े उत्साह तथा लगन से अभियान चला रही हैं।

टोलियां अक्सर पांच दिन तक गांवों में घूमती हैं। तत्पश्चात् सभी टोलियों का दो दिवसीय शिविर किया जाता है, जिसमें टोलियां अपना-अपना अनुभव तथा फलश्रुति सुनाती हैं। शान्ति-सेना विद्यालय की बहनें ग्रामदान लेकर लौटती हैं तो उनके चेहरों पर मुस्कान तथा आत्मविश्वास की रेखाएँ झलकती रहती हैं। खेती का मौसम होने के कारण लोग खेतों में काम करने चले जाते हैं। पर शान्ति-सेना विद्यालय की बहनें वहां भी उनका पीछा नहीं छोड़ती। खेतों पर डट जाती हैं और घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर करवा कर ही हटती हैं। यदि बहनों को भूख लगी रहती है तो खेत पर आयी हुई रोटी में हिस्सा भी बँटाती हैं।

ग्रामदान अभियान का चौथा दौर पृथ्वीपुर विकास-खण्ड के शेष गांवों में १७ जुलाई से शुरू हुआ है। कुल २१ टोलियां निकल पड़ी हैं। १५ अगस्त तक अभियान का क्रम चलाया जायगा।

टीकमगढ़ जिलादान अभियान में मध्यप्रदेश सर्वोदय-मण्डल, मध्यप्रदेश गांधी स्मारक निधि, शान्ति-सेना विद्यालय की बहनों, गांधी-शताब्दी विद्यालय के छात्रों, गांधी आश्रम के कार्यकर्ताओं के अलावा स्थानीय शिक्षक भी भाग ले रहे हैं। अभियान का मार्गदर्शन श्री काशिनाथ त्रिवेदी तथा सुश्री निर्मला देशपाण्डे कर रही हैं। इसका संयोजन और संचालन मध्यप्रदेश गांधी-निधि के वरिष्ठ कार्यकर्ता श्री रामचन्द्र भार्गव कर रहे हैं।

जिले के प्रमुख साथी सर्वश्री चतुर्भुज पाठक, बेसिक ट्रेनिंग कालेज कुण्डेश्वर के प्राचार्य श्री प्रेमनारायण रूसिया और श्री जमना प्रसाद रावत, श्री दामोदर प्रसाद पुरोहित एवं श्री हरगोविन्द त्रिपाठी "पुष्प" का सहयोग सराहनीय है।

ऐसा देखने में आया कि जिला टीकमगढ़ के अन्तर्गत चल रहे ग्रामदान-अभियान में अन्य सार्वजनिक कार्यकर्ता, नेता एवं ग्रामीणों के साथ-साथ शिक्षकों का तथा प्रशिक्षण महाविद्यालय कुण्डेश्वर के प्राचार्य व छात्रों का सहयोग निःसन्देह प्रशंसनीय है। पृथ्वीपुर इण्टर कालेज में दो दिवसीय शिविर सम्पन्न हुआ। यहां के शिक्षकों तथा छात्रों ने भी उल्लेखनीय सहयोग दिया।

जिला टीकमगढ़ के जिलाधीश श्री डी० सी० मसीह एवं अन्य शासकीय कर्मचारियों का भी सहयोग उल्लेखनीय है। जिलाधीश ने स्वयं विचार-गोष्ठी एवं सभाओं का आयोजन करने में पूर्ण सहयोग दिया। आवागमन एवं टोलियों के ठहरने आदि की समुचित व्यवस्था का उन्होंने पूर्ण ध्यान रखा और अपने नीचे के अधिकारियों को भी समुचित व्यवस्था करने के लिए सूचित किया।

इस जिले में कांग्रेस और पी० एस० पी० का मुख्य रूप से प्रभाव है। कांग्रेस का पूरा सहयोग कई कारणों से नहीं मिल पा रहा है। कहीं-कहीं तो विरोध भी कर रहे हैं। कांग्रेस के लोगों को शंका है कि जिलादान का श्रेय पी० एस० पी० को मिलेगा। यहां का जनमानस इस आंदोलन के काफी अनुकूल है।

अभियान को आर्थिक सहायता देने में भी टीकमगढ़ जिले के विद्यालयों का सहयोग प्रशंसनीय है। इस अभियान के लिए शिक्षकों ने एक-एक रुपया देना सहर्ष स्वीकार किया है। स्थानीय जनता गल्ले के रूप में मदद दे रही है। १२ क्विंटल गल्ला इस अभियान के दरम्यान मिला। गांधी आश्रम उत्तर प्रदेश ने ५०० रु० की सहायता जिलादान-अभियान के लिए दी है। श्री राजाराम भाई ने बलिया में सुश्री निर्मला बहन को आश्वासन दिया है कि गांधी आश्रम के सात-आठ कार्यकर्ता जिलादान-अभियान के लिए देंगे। पर कुल मिलाकर जिलादान-अभियान चलाने के लिए आर्थिक कठिनाई आ रही है। इस समस्या के समाधान में श्री नरेन्द्र दुबे अपनी झोली फैलाकर घूम रहे हैं। →

→उनके लिए पर्याप्त होता है। इसके बाद पार्टियां, शराब, रात्रि-क्लब और मस्ती! यही है दूतावासों का रंग।

बेलग्रेड-प्रवास के दौरान मुझे सुप्रसिद्ध राजनैतिक विद्रोही और विचारक मिलोवान जिलास से भी मिलने का अवसर प्राप्त हुआ, उन्होंने विनोबा, जयप्रकाशजी तथा ग्रामदान आन्दोलन के बारे में जानकारी चाही। उन्होंने कहा कि "यदि ग्रामदान से समाज को वे ही परिणाम प्राप्त हो सकें, जो साम्यवादी क्रांति के बाद आम तौर पर प्राप्त होते हैं, आर्थिक शोषण से मुक्ति, तब तो दुनिया का ध्यान इस आन्दोलन की ओर जायगा, अन्यथा एक सुन्दर आदर्श के रूप में यह आन्दोलन भी इतिहास की चीज बन जायगा। मैं इस आन्दोलन के परिणामों की प्रतीक्षा कर रहा हूं कि क्या आप लोग ग्रामदान के जरिये भारतीय जनता को सचमुच 'लिबरेट' कर सकेंगे?"

—सतीश कुमार

भारतदान के सन्दर्भ में ग्राम-शक्ति संगठित हो

बलिया और आबू रोड के बीच के दो वर्ष निश्चित ही सफलताजनक रहे हैं। चौबीस हजार के लगभग नये ग्रामदान मिले, जिन्हें मिलाकर ग्रामदान की कुल संख्या ६० हजार से अधिक, प्रखंडदान की संख्या २६० से अधिक हो गयी है, और पाँच जिले ग्रामदान में आ गये हैं, यह बेशक बहुत बड़ी आकर्षक संख्या है। इससे भी अधिक आकर्षक तो वह संकल्प और आत्मविश्वास है, जिससे यह उपलब्धि सामने आयी। इसे कई राज्यदान के संकल्प ने अधिक स्पष्ट कर दिया है। विनोबाजी की प्रेरणा से बिहार ने पहल की। इससे प्रेरित होकर दूसरे प्रदेशों में भी राज्यदान की होड़ शुरू हुई और मद्रास तथा उत्कल ने अपनी ओर से राज्यदान का संकल्प किया, यद्यपि यह एक वर्ष बाद, गांधी-जन्म-शताब्दी तक पूरा करने की बात है। उत्तर प्रदेश ने भी १५ जुलाई को बलिया में विनोबा की उपस्थिति में विधिवत् सकल्प घोषित किया है। राज्यव्यापी ग्रामदान की सूची में उत्तर प्रदेश का नाम सबसे अन्त में था, परन्तु अपनी दृढ़ता और लगन के बल पर अब वह शिखर के निकट पहुँच गया है।

भारतदान का लक्ष्य
जनशक्ति का सम्बल

इस प्रकार भौतिक उपलब्धियों की अपेक्षा आन्तरिक प्रेरणा और स्फूर्ति से प्रेरित होकर देश के चारों कोनों से हमारे साथी कार्यकर्ता आबू रोड आये थे। सारा वातावरण शान्त उत्साह और विश्वास से स्पन्दित हो रहा था। उत्तर प्रदेश और मद्रास के खादी-कार्यकर्ता के कारण, जो कि ग्रामदान के काम में गहरे लगे हुए हैं, एकात्मता और पारस्परिकता का दर्शन पहले से कई गुना अधिक हो रहा था। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि सम्मेलन ने भारतदान का लक्ष्य तय किया और उसके उपाय और साधन खोजने का प्रयास किया।

स्वाभाविक ही लोगों ने महसूस किया कि आन्दोलन की शक्ति का मूल स्रोत और बड़ी निधि तो स्वयं ग्रामदानी गाँवों की जनता ही है। उन्होंने कई राज्यों में अनेक प्रकार से अपना सत्त्व सिद्ध करके दिखाया भी है। सम्मेलन ने इस महान् शक्ति को सगठित करने और सही दिशा में मोड़ने पर ठीक ही जोर दिया है। ग्रामदान-आन्दोलन देश के पाँच लाख गाँवों को ग्रामदान में लाने के अपने अन्तिम लक्ष्य को इस नये लोक-नेतृत्व की शक्ति से ही सिद्ध कर सकेगा।

उपेक्षितों की माँग
सम्पन्नों की परेशानी

इसके कार्यक्रम का स्वरूप यही होगा कि गाँवों में ग्रामसभा और ग्राम शान्ति-सेनाओं का गठन हो और वे सक्रिय हों। जहाँ-जहाँ ग्रामसभाएँ गठित हुई हैं, वहाँ एक समस्या खड़ी हो रही है, जो अनिरीक्षित नहीं थी, कि अब तक जो भूमिहीन और गरीब किसान दलित और उपेक्षित थे, वे अब अपना हक समझने लगे हैं और ग्रामसभाओं में अपनी माँग साफ शब्दों में पेश करने लगे हैं। इससे गाँव के उच्च समझे जानेवाले लोगों को परेशानी होने लगती है जो आज तक ग्राम के आर्थिक और सामाजिक जीवन पर अपनी सत्ता पीढ़ियों से चलाते आ रहे थे।

जो कार्यकर्ता ग्रामदान के बाद गाँवों में सौहार्द की अपेक्षा करते रहे हैं, वे ग्रामसभाओं के एक तनाव और संघर्ष को देखकर घबड़ा जाते हैं। लेकिन घबड़ाने की बात नहीं है, गाँवों के विभिन्न स्तरों और तबकों के लोगों का आपसी सम्बन्ध रहा है, वह सदियों से शोषण और विषमता से विषाक्त हो गया है। सदियों से गरीब और पिछड़े लोग अपना मुँह खोलने या अपना कोई हक जताने की हिम्मत नहीं कर सकते थे।

जीवन की नयी झाँकाशाएँ
आशा की नयी किरणें

उनका जीवन जानवरों से बदतर था। अब ग्रामदान ने उनमें नयी आशा की किरणें जगायी हैं और उनके अन्दर आकांक्षाएँ उत्पन्न की हैं। समूचे गाँव ने एक नया जीवन जीने का और उन दीन-हीन भाइयों को समान साथी के रूप में देखने का संकल्प किया है। कई सदियों के अलगाव के बाद अब ग्राम-समाज के विभिन्न तत्त्व ग्रामसभा में समानता के स्तर पर आमने-सामने आ रहे हैं। लेकिन पुरानी आदतें और वृत्तियाँ मुश्किल से ही टूटती हैं। इसलिए कुछ-न-कुछ संघर्ष का होना स्वाभाविक है। यद्यपि इससे घबड़ाने की कोई बात नहीं है, फिर भी इन समस्याओं को हल करने की ओर पर्याप्त ध्यान देना भी जरूरी है। नहीं तो गाँवों की उस क्रान्तिकारी शक्ति को बाहर आने देना और आन्दोलन को आगे ले जानेवाले सामूहिक नेतृत्व को चालना देना सम्भव नहीं होगा। उस तनाव को ग्रामदान की प्रक्रिया और भावना से ही मिटाया जा सकता है और उसीसे मिटाना चाहिए। उसमें तीन बातें हैं।

पहली बात, प्रत्येक व्यक्ति अथवा परिवार के साथ कुछ-न-कुछ वाजिब स्वार्थ लगा हुआ है। आज उनमें संघर्ष दिखाई देने लगा है, परन्तु उसे सब मिलकर तभी हल कर सकते हैं, जब समस्याओं में सब अपना दिल और दिमाग लगायें।

दूसरी बात, सबका उत्तम कल्याण प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक परिवार उत्तम ढंग से तभी कर सकता है, जब उनका स्वार्थ विशाल हो, पूरे गाँव को ही परिवार समझकर सबके भले की बात सोचें; यह नहीं कि हर कोई अपने-अपने संकुचित स्वार्थ तक ही सीमित रह जाय।

तीसरी बात, प्रत्येक को अपने पास जो कुछ है उसे दूसरों के साथ बाँट लेने की वृत्ति को जीवन का मूल सिद्धान्त और समस्याओं के परिहार का मुख्य बिन्दु समझना चाहिए।

और बेशक, सामाजिक और आर्थिक समता हमारा मुख्य लक्ष्य है और उसीके लिए हमें प्रयास करना है।

स्वार्थों का विलीनीकरण
समस्या का समाधान

इन तीन सिद्धान्तों को लागू करने का अर्थ है कि किसी समस्या को दबा नहीं पायेंगे

या किसी भी दृष्टि विशेष की उपेक्षा नहीं कर सकते। जो भी दबाव तनाव पैदा करे, उसके बारे में तटस्थता के साथ खुलकर चर्चा करनी होगी, ऐसी खुली चर्चा हो जिसमें सब इतना समझ लें कि सबके पास कुछ-न-कुछ जायज स्वार्थ है, फिर भी समुदाय के भले के लिए सबको अपना अपना निजी स्वार्थ सामूहिक स्वार्थ में शामिल कर देना चाहिए, उसके अधीन बना देना चाहिए। तभी समस्या का समाधान सहज हो जायगा।

हमें समझ लेना चाहिए कि किसी भी समस्या का अन्तिम समाधान लम्बे समय तक सतत प्रक्रिया द्वारा ही सम्भव है। अन्तिम समाधान तत्काल चुटकी बजाने भर में प्राप्त नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए मान लीजिए, मजदूरी की दर बढ़ाने की समस्या ग्रामसभा के सामने पेश है। तब ग्रामसभा को यह तो सिफारिश करनी ही चाहिए कि तत्काल जितनी सम्भव हो उतनी मजदूरी बढ़ायी जाय, बल्कि साथ ही आमदनी वृद्धि की भी योजना बनाने का प्रयत्न करना चाहिए जो कृषि उत्पादन की वृद्धि के साथ जुड़ी हो।

दूसरा उदाहरण लें। भूमि का बीसवाँ हिस्सा जो निकाला जाता है वह गाँव के सभी भूमिहीनों के लिए पर्याप्त होगा, ऐसी सम्भावना बहुत कम गाँवों में होगी। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि इसके लिए कुछ उपाय किया नहीं जा सकता। बीसवाँ हिस्सा जमीन निकालना तो प्रारम्भ है। गाँव सभा को बैठकर विचार करना चाहिए कि अधिक जमीन निकाली जा सकती है या नहीं। अनेक गाँवों का प्रत्यक्ष उदाहरण हमारे सामने है कि जब ज्यादा जमीन की जरूरत पड़ी तो वहाँ के बाकी सब भूमिवान लोगों ने स्वेच्छा से और खुशी से बीसवें हिस्से से अधिक जमीन निकाल दी। फिर जहाँ ज्यादा जमीन नहीं निकाली जा सके वहाँ पर ग्रामसभा को उन भूमिहीन लोगों के लिए दूसरे उद्योगों का प्रबन्ध करना होगा।

ऐसी समस्याओं का हल करने में ग्राम शान्ति-सेना बहुत बढ़िया काम कर सकती है। वह गाँव में सहिष्णुता का वातावरण निर्माण कर सकती है, ग्रामसभाओं में सही दिशा में ठीक से चर्चा चले इसमें मदद कर सकती है, गाँव में जितने विवाद हों, उनके निबटाने का काम कर सकती है। उन्हें इन सब कामों का व्यवस्थित प्रशिक्षण देना चाहिए। इस प्रकार ग्रामसभाओं के गठन के साथ-साथ ग्राम शान्ति-सेना का संगठन भी होते जाना चाहिए और उनके प्रशिक्षण का क्रम भी प्रत्येक प्रदेश में प्रारम्भ होना चाहिए।

—मनमोहन चौधरी

खादी की दिशा

सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति द्वारा ५-६-७-९ जून, १९६८ की आबूरोड की बैठक में स्वीकृत प्रस्ताव

भारत सरकार द्वारा श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में नियुक्त की गयी खादी ग्रामोद्योग कमिटी की रिपोर्ट तथा सिफारिशों पर सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति में विचार किया गया।

खादी-ग्रामोद्योग कमिटी की सिफारिशों पर स्वाभाविक तौर पर अ० भा० खादी ग्रामोद्योग बोर्ड, खादी ग्रामोद्योग कमीशन, राज्य-सरकारों तथा भारत-सरकार द्वारा विचार किया जायगा। यह आशा की जाती है कि इस तरह के विचार के सिलसिले में किसी न किसी समय सर्व सेवा संघ से भी परामर्श किया जायगा और उसकी राय और सलाह माँगी जायगी। इसलिए प्रबंध समिति अब तक के लिए इस रिपोर्ट पर तफसील से विचार करने की बात स्थगित करके अपनी प्रारम्भिक प्रतिक्रिया मोटे रूप में व्यक्त करना चाहती है।

प्रबंध समिति को आशा थी कि यह कमिटी देश की पूर्ण तथा अर्द्ध बेरोजगारी की विशाल एवं जटिल समस्या को देखते हुए उसे विस्तृत पैमाने पर ग्रामीण क्षेत्र में पूरक उद्योगों का हल खोजने का प्रयास करेगी। देश को खादी ग्रामोद्योग कमीशन तथा स्मॉल इंडस्ट्रीज प्लानिंग कमिटी का अब तक का अनुभव है। राष्ट्रीय आयोजन में इस कमी की पूर्ति करने में एक गंभीर खाई बनी हुई है, यह बार बार स्पष्ट हुआ है। विकेन्द्रित उद्योगों के साथ-साथ बड़े पैमाने के उद्योगों को रखने से क्या उलझनें खड़ी होती हैं उसका अब तक गहराई से अध्ययन नहीं किया गया है और यदि किया भी गया है तो बिना कोई सुधार किये उसे स्वीकार नहीं किया गया है। प्रबंध समिति को आशा थी कि उपरोक्त उलझनों का विचार करके छोटे उद्योगों के उत्पादन का क्षेत्र सुरक्षित रखने या उनको संरक्षण देने के प्रश्न पर सरकार उसकी छानबीन करेगी तथा सामाजिक और आर्थिक नीति की इस प्रकार व्याख्या करेगी कि उस नीति के दायरे में ग्रामीण उद्योगों का विकास और समृद्धि संभव हो सके।

यह सही है कि कमिटी ने संरक्षण के सिद्धान्त को मान्य किया है। किन्तु यह स्पष्ट है कि परम्परागत उद्योगों में तकनीकी सुधार अमल में लाने और उनको पर्याप्त संरक्षण देने की सामान्य नीति सरकार द्वारा घोषित किये बिना ग्रामीण उद्योगों का विकास कदापि संभव नहीं है। प्रबंध समिति की यह सुनिश्चित राय है कि भारत के कृषि पर निरन्तर बढ़ते हुए दबाव को कम करने तथा लोगों को पूरक रोजगार मुहैया करने की दृष्टि से क्षेत्रीय स्वावलम्बन के सिद्धान्त पर आधारित विकेन्द्रित ग्रामीण औद्योगीकरण की नीति स्वीकार करना होगा और इस संदर्भ में दैनंदिन जीवन की ऐसी सभी वस्तुओं के उत्पादन का कार्य ग्रामीण क्षेत्रों में करना होगा जिनके लिए उस क्षेत्र में कच्चा माल उपलब्ध हो। वैसे ही इन विकेन्द्रित उद्योगों के लिए कच्चा माल उपलब्ध कराने, उत्पादन का क्षेत्र सुरक्षित रखने और इन उद्योगों को संरक्षण देने के सम्बन्ध में सरकार को निश्चित कदम उठाने होंगे। आगामी पंचवर्षीय योजनाओं में सरकार यदि इस तत्त्व को स्वीकार नहीं करेगी तो केवल ग्रामीण उद्योग आयोग का गठन करने से ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास के उद्देश्य की पूर्ति कदापि नहीं हो सकेगी।

इन सबके बावजूद यह समिति ग्रामीण उद्योग आयोग के विचार का स्वागत करती है। समिति को आशा है कि यह नया विचार→

खादी-संस्थाओं के लिए आचार-संहिता

खादी-ग्रामोद्योग ग्राम-स्वराज्य समिति की १९, २० नवम्बर, '६७ की बैठक में स्वीकृत

संस्थाओं के संचालकों की जिम्मेदारी

१. ट्रस्ट का पैसा जिस काम के लिए अंकित कर दिया हो, उसी काम के लिए खर्च होता है या नहीं इसकी जानकारी रखना, और नहीं होता है तो उसे रोक लेना।

२. जिस काम के लिए 'ग्राण्ट' या 'लोन' बाहर से माँगा जाता है वह उस कार्य में खर्च होता है कि नहीं। यदि नहीं होता है तो उसे रोकना।

३. ट्रस्ट का पूरा लक्ष्य विधान और उप-विधियों का अध्ययन करना और उसके अनुसार ट्रस्ट चलता है या नहीं, उस बारे में जागृत रहना।

४. प्रमाण-पत्र के नियमावली का पालन पूर्ण रूप से होता है या नहीं, उस संबंध में जानकारी रखना और जागृत रहना।

५. ट्रस्ट की जायदाद और नगद पैसा आदि का ठीक ढंग से ट्रस्ट के काम में उपयोग होता है या नहीं उसकी देखभाल करना।

६. ट्रस्ट का पैसा सुरक्षित रहे, उसके लिए जागृत रहना और धार्मिक जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर उसे पूरा करना और अपना कर्तव्य मानना।

ट्रस्टी मंडलों का कर्तव्य

१. ट्रस्टी मंडल की नियमावली पूरी तरह से ध्यान में रखकर कामकाज की देखभाल करना।

२. हर साल का काम पूरा होने के पहले अगली साल के बजट तैयार करना और उसका अध्ययन करके स्वीकार करना और अमल में लाना।

३. बजट में उल्लेख न की गयी बातों को अमल में न लाना और बजट के अनुसार काम होता है या नहीं उस बारे में साल में कम-से-कम दो बार 'रिव्यू' करना और उस मुताबिक कार्य करने की कोशिश करना।

४. बजट में स्वीकृत पूँजी से ज्यादा न लगाना और यदि कम-से-कम चलाना हो तो बजट 'रिवाइज' कर पुनर्विभाजन करना।

५. उचित समय पर सालाना हिसाब बनाना, उसका आडिट करवाना और आडिटरों के आक्षेप को दूर करके हिसाब ठीक कर सब ट्रस्टियों व कार्यकर्ताओं को पहुँचा देना।

६. प्रमाण-पत्र के नियमों के अनुसार उचित प्रमाण में ही 'मार्जिन' रखना और उसी प्रकार खर्च को भी सीमित रखना।

७. बजट के बाहर 'लोन और 'ग्राण्ट' न लेना। जो लिया गया है उसे निश्चित समय पर वापस करना।

८. अतिरिक्त मुनाफा हो तो उसका उपयोग प्रमाण-पत्र समिति के नियमानुसार और समिति की सलाह पर खर्च करना, अंकित करना।

९. प्रमाण-पत्र के नियमानुसार कामगारों को उचित मजदूरी देना और खरीददारों को उचित दाम पर बेचना।

१०. माल की शुद्धता शत-प्रतिशत हो, उस बारे में सख्त देख-रेख रखना। •

—सभी संबंधित पक्षों द्वारा स्वीकृत हो जाने के बाद भारत सरकार उसका ठोस रूप निश्चित करेगी और तत्सम उद्देश्य से काम करनेवाले विभिन्न संगठनों को एक तंत्र के अन्दर लायेगी।

यद्यपि इस रिपोर्ट का अपना महत्त्व है, फिर भी यह समिति एक बार और स्पष्ट करना चाहती है कि खादी और ग्रामोद्योग कार्यक्रम की सफलता अन्ततोगत्वा प्रबंध समिति की पानीपत-बैठक की सिफारिशों के अमल पर निर्भर करती है। खादी ग्रामोद्योगों के कार्यक्रम की सफलता की कसौटी केवल उत्पादन वृद्धि में नहीं है, बल्कि देश की आम जनता में एक नयी आशा का संचार, आत्म-निर्भरता की भावना एवं ग्रामभावना के निर्माण करने में है। इसलिए खादी और ग्रामोद्योगों का विचार ग्रामदान, स्वावलंबन और स्वयंपूर्णता के संदर्भ में करना होगा।

यह समिति पानीपत-सम्मेलन में स्वीकृत प्रस्ताव को दोहराते हुए देश के सभी रचनात्मक कार्यकर्ताओं से अनुरोध करती है कि पानीपत के प्रस्ताव में सूचित कार्यक्रम को सफल बनाने में वे अपनी शक्ति केंद्रित करें।

(मूल अंग्रेजी से)

शाहाबाद जिलादान के प्रथम चरण की पूर्वयोजना

ग्रामदान-कार्य के लिए कोष-संग्रह हेतु श्री ध्वजा प्रसाद साहु, अध्यक्ष, बिहार राज्य खादी-ग्रामोद्योग बोर्ड का समय चार दिनों के लिए १३ से १६ जुलाई तक इस जिले को मिला। जिले के हर अनुमंडल में एक एक दिन का उनका कार्यक्रम रखा गया था। हर अनुमंडल में नागरिकों, सर्वोदय और खादी कार्यकर्ताओं की एक-एक गोष्ठी हुई जिसमें ग्रामदान के संबंध में श्री ध्वजा बाबू ने चर्चा की। ग्रामदान कोष के लिए उन्हें इस प्रकार थैलियाँ समर्पित की गयीं

बक्सर अनुमंडल—७५४ रु०

भभुआ ,, —८४० रु०

सासाराम ,, —३१६३ रु०

आरा सदर ,, — ५१४ रु०

कुल—५२७१ रु०

उनके अंतिम पड़ाव पर आरा में १६ जुलाई को जिला सर्वोदय मंडल की बैठक श्री हरिकृष्ण ठाकुर की अध्यक्षता में श्री ध्वजा प्रसाद साहु और श्री कैलाश प्रसाद शर्मा, सहमंत्री, ग्रामदान-प्राप्ति संयोजन समिति, पटना की उपस्थिति में हुई, सर्वसम्मति से श्री रामेश्वर प्रसाद जिला ग्रामदान प्राप्ति-समिति के संयोजक निर्वाचित हुए और पाँच प्रखंडों को सघन रूप में ग्रामदान का कार्य करने हेतु चयन किया गया, ताकि ११ सितम्बर, '६८ तक इन प्रखंडों के दान की घोषणा की जा सके। —मंत्री

जिला सर्वोदय मंडल, शाहाबाद, बिहार

श्री सम्पादक जी
भूदान यज्ञ

भाई रामचन्द्र राही ने सर्वोदय-सम्मेलन के संबंध में सहचिंतन के लिए जो मुद्दे ५ जुलाई के भूदान यज्ञ में प्रस्तुत किये हैं वे अवश्य ही विचारणीय हैं। आखिर सम्मेलन का आयोजन हम क्या करते हैं? क्या सिर्फ इसलिए कि घंटों बेहिचक बिना किसी टिप्पणी के बड़े बड़े नेताओं के भाषण सुनते रहें जिनके भाषण बराबर किसी-न-किसी मंच से सुनने को मिलते ही रहते हैं? वास्तव में जे० पी० ने अपना भाषण प्रारंभ करते हुए हजारों हजार कार्यकर्ताओं के मन की बात कही थी। उन्होंने नरेन्द्र भाई से कहा था कि कोई रास्ता ऐसा निकालना चाहिए कि जिससे प्रतिनिधियों को सिर्फ भाषण की घुट्टी ही नहीं पिलायी जाय।

अब सर्वोदय आंदोलन सिर्फ हवा और वातावरण में उसके कुछ शाश्वत मूल्यों को फैलाने तक ही सीमित नहीं है। उसकी कल्पना अब हजारों हजार गाँवों में ग्रामदान के रूप में भूमि पर उतर रही है। ऐसी परिस्थिति में कार्यकर्ताओं के मन में अब ग्रामदान की कल्पना को साकार करने की व्यग्रता है। बाबा कहते हैं कि हम तो समस्याएं पैदा करते जाते हैं। बात बिलकुल ठीक है। जैसे जैसे ग्रामदान आंदोलन की प्रगति हो रही है कार्यकर्ताओं के सामने एक के बाद दूसरी समस्याएं खड़ी होती जा रही हैं। समस्याओं से लड़ते-जूझते जब सर्वोदय सम्मेलन में कार्यकर्ता पहुँचता है तो इस उम्मीद में कि देश के कोने कोने से आये हुए प्रतिनिधियों के साथ चर्चा करके अपनी समस्याओं का कुछ हल ढूँढ़ने में सफल होगा। किन्तु जब उस बहुत की तरह '[illegible]' का बोझ सिर पर लेकर कार्यकर्ता सम्मेलन से लौटता है तो क्या यह चिन्ता की बात नहीं है? हो सकता है जो सुलझे दिमाग के कार्यकर्ता हैं उन पर यह लागू न होता हो तो क्षमा करेंगे।

सर्वोदय सम्मेलन

बिहारदान का संकल्प लिया गया। बाबा के सूक्ष्म की प्रेरणा जे० पी० के नेतृत्व एवं हजारों हजार छोटे बड़े कार्यकर्ताओं की मेहनत से यह संकल्प पूरा होने में कोई शंका नहीं है भले ही समय कुछ और लग जाय। उत्तर प्रदेश और तमिलनाड के राज्यदान का निर्णय लिया जा रहा है। हम कहा करते हैं कि राज्यदान के बाद राज्य की शासन व्यवस्था पर ग्रामदान का प्रभाव पड़नेवाला है और यह भी कहते हैं कि अब पक्षों के नहीं जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में प्रशासन होगा। क्या इस संबंध में सम्मेलन में थोड़ी भी चर्चा हमने की? हरियाना में मध्यावधि चुनाव हुआ उत्तर प्रदेश और बिहार में होनेवाला है जहाँ हजारों ग्रामदान हो चुके हैं जिलादान भी हो चुके हैं। मध्यावधि चुनाव में इन क्षेत्रों में हम क्या करनेवाले हैं? क्या हम निष्क्रिय और उदासीन रहेंगे क्या सिर्फ जे० पी० आचार्यजी जैसे नेताओं के भाषण में इसका जिक्र मात्र होने से कार्यकर्ताओं का दिमाग इस मुद्दे पर स्पष्ट हुआ? कहने का मतलब यह कि देश की जो तात्कालिक समस्याएं हैं, उनको तो हम छूते नहीं किंतु अपने आंदोलन की भी जो तात्कालिक समस्याएं हैं उसे भी भूल से कतराते हैं।

इस अखिल भारतीय सर्वोदय-सम्मेलन में हमने भारतदान का लक्ष्य तय किया और उधर देश के अखबारों ने इसकी कोई नोटिस ही नहीं ली आखिर यह क्या सिर्फ उनका ही दोष है हमारा नहीं? हमें यह सोचना चाहिए कि कैसे देश के प्रसों तक हम अपनी सही बात पहुँचा सकें। कम-से कम सम्मेलनों के अवसर पर तो प्रयास करना ही चाहिए।

उस बहुत के उस अनुभव— विभिन्न प्रदेशों और क्षेत्रों में काम करनेवाले कार्यकर्ता की परस्पर नहीं मिल हो पाती परिचय और सम्पर्क तक नहीं हो पाता —को हम सिर्फ एक व्यक्ति का अनुभव कहकर टाल नहीं सकते। हमने तो महसूस किया कि अपने-अपने क्षेत्र में बड़ी लगन निष्ठा और सूझ-बूझ से काम करनेवाले प्रतिनिधि सम्मेलन में इकट्ठा होते हैं किन्तु कुछ भाषा की कठिनाई के कारण भी अपना विचार नहीं रख पाते हैं। क्या कुछ ऐसा सोचा जा सकता है कि भाषा की कठिनाई के कारण किसीको भी सम्मेलन में अपना विचार रखने में संकोच न हो? खासकर दक्षिण के प्रतिनिधियों के सम्बन्ध में तो अवश्य ही उस पर सोचना चाहिए।

और भी बहुत सारी बातों पर विचार किया जा सकता है। बीता सो बीता आने वाले अवसरों पर हम चूकें नहीं इसका प्रयास किया जा सकता है। अभी सारी बातों को गिनाना उचित नहीं दीखता है। किन्तु भय यह है कि सम्मेलन के तुरत बाद इस बात की जितनी चर्चा हो रही है और इसको महत्त्व दिया जा रहा है तो हम सारे पुराने अनुभव भूल जायेंगे और फिर वही परम्परा गत ढंग से सम्मेलन के सारे आयोजन होंगे। पता नहीं सम्मेलन के पहले सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति में सम्मेलन को प्रभावकारी बनाने के संबंध में चर्चा होती है या नहीं? हमारी सलाह है कि इस संबंध में जो भी सुझाव आये उन्हें प्रबंध समिति को अभी से नोट कर लेना चाहिए और अवसर पर उन पर अमल में लाने के लिए एक उपसमिति का गठन कर उसके माफत संयोजन करना चाहिए।

आपका
कैलाश प्रसाद शर्मा पटना

× × ×

भूदान-यज्ञ के ५ जुलाई ६८ के अंक में श्री रामचन्द्र राही का सम्मेलन के संबंध में विचारप्रवर्तक लेख [illegible]। इस पर विचार होना चाहिए। —नरेन्द्र दुबे इन्दौर

सफाई विद्यालय का नया सत्र

सफाई विद्यालय, गांधी स्मारक निधि, पट्टीकल्याणा [करनाल] का अगला प्रशिक्षण-सत्र दिनांक १५-८-६८ से ३१-१०-६८ तक निधि के ग्रामसेवा केन्द्र, गाँव व पो० डेरा-बस्सी, जिला पटियाला [पंजाब] में आरम्भ होने जा रहा है। जो व्यक्ति सफाई तथा भंगी मुक्ति का वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त करना चाहते हों, वे विद्यालय के आचार्य से प्रवेश-पत्र मँगाकर अनुमति प्राप्त करें।

प्रशिक्षार्थियों को प्रशिक्षण-अवधि में ६० रु० मासिक छात्रवृत्ति तथा आने-जाने का तृतीय श्रेणी का मार्ग-व्यय दिया जायगा। प्रशिक्षार्थी हिन्दी अथवा उर्दू के माध्यम से दसवीं कक्षा तक योग्यता (प्रमाणपत्र सहित) रखता हो। अधिक जानकारी के लिए आचार्य से पत्र-व्यवहार करें।

नोट —डेराबस्सी अम्बाला से १६ मील चण्डीगढ़ की ओर और चण्डीगढ़ से १२ मील अम्बाले की ओर बस-मार्ग पर स्थित है।

आचार्य, सफाई विद्यालय,
आश्रम पट्टीकल्याणा [करनाल]

राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी समिति

प्रधान केन्द्र
१, राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली—१
फोन : २७६१०५

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति
टुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैंरों
जयपुर—३ (राजस्थान)
फोन : ७२६८३

अध्यक्ष : डा० जाकिर हुसैन, राष्ट्रपति
उपाध्यक्ष : श्री वी० वी० गिरी, उपराष्ट्रपति
अध्यक्ष : कार्यकारिणी :
श्रीमती इन्दिरा गांधी, प्रधानमंत्री
मंत्री : श्री आर० आर० दिवाकर

अध्यक्ष : श्री मनमोहन चौधरी
मंत्री : श्री पूर्णचन्द्र जैन

गांधीजी के जन्म के १०० वर्ष २ अक्तूबर, १९६९ को पूरे होंगे। आइये, आप और हम इस शुभ दिन के पूर्व—

(१) देश के गाँव-गाँव और घर-घर में गांधीजी का संदेश पहुँचायें।

(२) लोगों को समझायें कि गांधीजी क्या चाहते थे ?

(३) व्यापक प्रचार करें कि विनोबाजी भी भूदान-ग्रामदान द्वारा गांधीजी के काम को ही आगे बढ़ा रहे हैं।

यह सब आप-हम कैसे करेंगे ?

- यह समझने समझाने के लिए रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति ने विभिन्न प्रकार के फोल्डर, पोस्टर, पुस्तक-पुस्तिकादि सामग्री प्रकाशित की है। इसे आप पढ़ें और दूसरों को भी पढ़ने को दें।
- इस सब सामग्री और विशेष जानकारी के लिए उपसमिति के ऊपर दिये गये जयपुर कार्यालय से पत्र-व्यवहार करें।

पूर्णिया की प्रगति

ग्रामदान-सम्पुष्टि

मार्च '६८ तक जिले में सम्पुष्टि के लिए ५७८ ग्रामदानी गाँवों का कागज तैयार हो चुका था, जिसमें से हमने ४९० ग्रामदानी गाँवों का तैयार कागजात पुष्टि कामों के वास्ते जिला भूदान-यज्ञ कमिटी को सुपुर्द कर चुका था। ३६ ग्रामदानी गाँवों का कागज भी सम्पुष्ट हो चुका था। ग्रामदान सम्पुष्टि कार्य के लिए पहले बिहार ग्रामदान प्राप्ति समिति पटना से आर्थिक मदद मिलती थी, परन्तु फरवरी '६८ से ही वहाँ से आर्थिक मदद मिलना बन्द हो गया था।

२२ मार्च '६८ को जिला खादी ग्रामोद्योग समिति की बैठक सर्वोदय आश्रम रानी पतरा में श्री गोपाल झा 'शास्त्री' की अध्यक्षता में हुई। ग्रामदान सम्पुष्टि के काम को तेजी से चलाने का निर्णय लिया गया। तय हुआ कि तत्काल ग्राम इकाई योजना में लगे १६ कार्यकर्ताओं की शक्ति इस काम में लगायी जाय। अप्रैल '६८ से इन कामों में कुछ कार्यकर्ताओं की शक्ति लगी। विभागीय कार्यों तथा जिम्मेवारियों को सभालते हुए छिट-फुट ढंग से कुछ कार्यकर्ताओं ने अपना समय इन कामों के लिए दिया। फलस्वरूप अप्रैल, '६८ से जून, '६८ तक १७ ग्रामदानी गाँवों का कागज तैयार किया गया। १७ ग्राम-सभाओं का निर्माण किया गया। १७ ग्रामदानी गाँवों में ११४ दानाओं की १३ एकड़ ७ डि० जमीन का वितरण ११२ भूमिहीन परिवारों में किया गया। पूज्य श्री वैद्यनाथ बाबू के सद्प्रयास से जिले के बरारी, फलका, रानीगंज एवं सदरपूर्व प्रखंड में प्रखंड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन किया गया। जिले में पहले से ही ६ प्रखंडों में प्रखंड ग्राम-स्वराज्य समिति का गठन हो चुका था। प्रगति प्रतिवेदन की अवधि में कुल ४ प्रखंड ग्रामस्वराज्य समिति का गठन किया गया।

अर्थ संयोजन

जिले में ग्रामदान-प्राप्ति तथा ग्रामदान सम्पुष्टि के कामों में बिहार ग्रामदान प्राप्ति समिति, पटना से पहले आर्थिक मदद दी जाती थी। सन् १९६८ से ही वह सहायता बंद हो गयी। ग्रामदान प्राप्ति एवं ग्रामदान सम्पुष्टि के कामों की सारी जिम्मेवारी जिला सर्वोदय मंडल के कंधों पर आ पड़ी। अर्थ की कमी के कारण आन्दोलन के कामों में थोड़ी शिथिलता आना स्वाभाविक ही था। लेकिन जिसने इस वृक्ष को सदा अपने खून और पसीने से सींचा है वह इसे मुरझाया हुआ कैसे देख सकता है? इस मँहगी और इस बीहड़ समय में भी इस वृक्ष के पोषक मान्य श्री वैद्यनाथ बाबू ने बनमनखी, रानीगंज और अररिया के सुदूर देहातों में उस धूप और गर्मी के समय में दो-दो दिनों की यात्रा की। बनमनखी में २७ मन अनाज और नगद ७५ रुपये अररिया में ७४ मन अनाज एवं रानीगंज में १४४ मन अनाज प्राप्त हुए।

—दामोदर प्रसाद 'काम'
का० मं० जिला सर्वोदय मंडल, पूर्णिया

प्रख्यात जर्मन पत्रकार और प्रकाशक की गांधी के देश की तीर्थयात्रा

श्री राल्फ हिडेर, जिन्होंने गांधीजी की पुस्तक-'सर्वोदय' और रिचार्ड बी० ग्रेग की पुस्तक 'पावर ऑफ नानवायलेंस' का जर्मन भाषा में प्रकाशन किया है, आगामी २० अक्तूबर ६८ को 'गांधी के देश की तीर्थयात्रा' पर कार से रवाना हो रहे हैं। उनके साथ ३ व्यक्ति और होंगे। आपकी यात्रा का विशेष उद्देश्य है भारत के विभिन्न स्थानों पर ग्रामदान के काम को देखना और ग्रामदानी कार्यकर्ताओं से मुलाकात करना। जर्मनी से आप बेलग्रेड, सोफिया, इस्तामबुल, अंकारा, बगदाद, तेहरान, काबुल, रावलपिंडी होते हुए ५ नवम्बर '६८ को दिल्ली पहुँचेंगे। ६ दिसम्बर ६८ तक आप भारत के विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण करेंगे।

कर्नाटक में आन्दोलन की प्रगति

(१४ नवम्बर '६६ से मई '६८ तक)

जिला	गाँवों से सम्पर्क	साहित्य बिक्री	पत्रिका के ग्राहक	प्राप्त ग्रामदान
धारवाड़	११८२	१४,०८८ ३६	८८५	३६०
कारवार	३८८	५४१६ ३४	२७५	४४
कुल	१५७०	१९,५०४ ७०	११६०	४०४

कार्यकर्ता शिविर—४, अन्य गोष्ठियाँ तथा परिचर्चाएँ—७

—गुण्डाचार

एकमा सारण जिले का नौवाँ प्रखण्डदान

विनोबाजी, बलिया जाते समय तथा वहाँ से लौटते समय सारण जिले में कुल १४ दिन ठहरे। उनका कार्यक्रम पूरे जिले में बना था। उनके घूमने के कारण जिलादान की हवा बनी है। कार्यकर्ताओं में उत्साह आया है। विनोबाजी को एकमा का प्रखण्डदान समर्पित किया गया। २ अक्तूबर तक जिलादान का भरपूर प्रयत्न हो रहा है।

चलो देहात (पाक्षिक)

सर्वोदय आश्रम सादाबाद की ओर से 'चलो देहात' नामक एक पाक्षिक पत्र श्री जयती प्रसाद के सम्पादकत्व में पिछले वर्ष से प्रकाशित हो रहा है।

पहाड़ी क्षेत्र की जनता को देश की सामान्य, सारभूत जानकारी देने, गांधीजी की संदेश जन जन तक पहुँचाने तथा ग्रामाभिमुखी आंदोलन को सफल बनाने के उद्देश्य से इस पत्र का प्रकाशन हो रहा है।

आठ पृष्ठों के इस पत्र का वार्षिक शुल्क रु० ३-०० है।

प्रकाशक
सर्वोदय आश्रम, सादाबाद (उ० प्र०)

बिहारदान की दिशा में : प्रगति के आँकड़े

मई १९६८ तक

जिला	ग्रामदान	प्रखण्डदान	गठित ग्राम सभाएँ	पुष्टि हेतु गाँवों के तैयार कागजात	पुष्टि पदाधिकारी के पास दाखिल कागजात	अभिपुष्टि गाँवों की संख्या	विशेष
१. पूर्णिया	८,१५७	३८	७३६	५८६	४६०	१६६	मई तक
२ सहरसा	७२८	२	४४	६	—	—	अप्रैल
३. भागलपुर	४६५	३	३३	४	—	—	मई
४. संथाल परगना	८६८	२	३८	१६६	१६५	१४०	मई
५. मुंगेर	२,०४५	१६	५२	७६	—	—	मई
६ दरभंगा सदर अनुमंडल		—	३२३	१५६	४२	—	मार्च
७ मधुबनी अनु० (दरभंगा)	३,७२०	४४	४८३	६३	३५	३३	मार्च
८. समस्तीपुर ,, ,,			२३७	३५३	१०७	६	अप्रैल
९. मुजफ्फरपुर	२,२०६	२३	६०	४६	३५	१८	मई
१०. सारण	७६६	७	६८	५०	—	—	मई
११. चंपारण	२४०	—	५७	५३	—	—	मई
१२ पटना	४६	—	२३	१३	—	—	फरवरी
१३. गया	१,१४८	१	१७	७	—	—	अप्रैल
१४. शहाबाद	११३	१	४०	२३	—	—	अधूरा
१५ पलामू	६३४	४	५५	११	—	—	फरवरी
१६ हजारीबाग	१,२७३	४	८१	८५	—	—	अप्रैल
१७. रांची	४४	—	—	—	—	—	अधूरा
१८. धनबाद	४३८	१	३०	२०	—	—	मई
१९. सिंहभूमि	३३०	३	२१	१४	—	—	मार्च
कुल	२३,३७६	१५२	२,४३१	१,७१६	८७१	३६८	

—बिहार ग्रामदान प्राप्ति संयोजन समिति, पटना

"मण्डोर डिस्टिलरी हटाओ" आन्दोलन स्थगित

मण्डोर (जोधपुर) के प्रतिनिधि मंडल से दो दिन की बातचीत व मण्डोर डिस्टिलरी, शराब बनाने के कारखाने का प्रत्यक्ष निरीक्षण करने के बाद राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री मोहनलाल सुखाडिया ने मण्डोर की जनता की शिकायतों को सही पाया व जनता को आश्वासन दिया कि मण्डोर डिस्टिलरी पर शराब बनाने का कार्य पुनः आरम्भ नहीं होगा।

सरकार को इस आश्वासन के बाद यहाँ चल रहा "मण्डोर डिस्टिलरी हटाओ" आन्दोलन समाप्त कर दिया गया।

स्मरण रहे कि प्रान्त भर में शराबबन्दी सत्याग्रह स्थगित हो जाने के बाद भी मण्डोर डिस्टिलरी पर वहाँ की जनता द्वारा 'डिस्टिलरी हटाओ' आन्दोलन जारी रखने का निर्णय किया गया था।

"मण्डोर डिस्टिलरी हटाओ" की यह माँग यहाँ की जनता की बहुत पुरानी माँग है। इस डिस्टिलरी के कारण यहाँ कुएँ सब खराब हो गये, पानी पीने की बात तो दूर, सिंचाई के काम आने लायक भी वह न रहा, खेत बरबाद हो गये। जनता को इस समय तीन मील दूर से पीने के लिए पानी लाना पड़ता है। अपने इस दर्द को यहाँ की जनता ने कई बार अधिकारियों के समक्ष रखा, पर सुनवाई नहीं हुई। बीच में एक बार भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री जयनारायण व्यास ने दस साल तक इसको जरूर बन्द रखा, पर फिर पुनः यह चालू कर दी गयी।

—सरदारमल जैन
राजस्थान शराबबन्दी सत्याग्रह समिति

वार्षिक शुल्क: १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग, या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इंडियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ४५

शुक्रवार ९ अगस्त, '६८

उत्साह के साथ सातत्य भी

एक बात समझने की है। उत्साह की कमी भारत के लोगों में नहीं। हम लोगों में उसकी सामान्यतया कमी नहीं थी, न आज है, न पहले थी। कमी है सातत्य की, उत्साह सतत टिकाने की। आप जानते हैं कि नया दृश्य देखने से बच्चे भी नाचने लगते हैं। उत्साह तो है, लेकिन वह सतत टिका रहे और काम के आखिर के सिरे का जब तक दर्शन नहीं हुआ, तब तक काम जारी रखें बराबर, इसको कहते हैं सातत्य योग। और गीता ने तो उसके लिए एक अध्याय ही अलग कर दिया है, और कहा है—अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः—जो मेरा नित्य स्मरण करेगा। फिर कहा—सततम्। नित्य भी कह दिया, फिर सतत भी कहा, दोनों में फरक नहीं। लेकिन जोर देने के लिए यहाँ सतत भी कह दिया।

मैंने कहा 'नित्य' और सतत में फरक नहीं है। लेकिन गीता ने दो शब्द इकट्ठे रख दिये हैं, तो चित्त विचार करता ही है कि दो शब्द क्यों रखे। नित्य यानी हमेशा और सतत यानी प्रतिक्षण। हम हमेशा भोजन करते हैं, प्रतिक्षण नहीं करते। लेकिन रोज चलता है, तो भोजन-कार्य नित्य है, लेकिन सतत नहीं, प्रत्येक क्षण उसमें लगा नहीं है। भगवान का स्मरण सतत यानी प्रतिक्षण करें और नित्य करें। फिर कह दिया, चित्त अनन्य होना चाहिए, चित्त दूसरी बातों में जाना नहीं चाहिए। नित्य, सतत कहकर तृप्ति नहीं होती थी, तो कहा, अनन्य निष्ठा।

और उसके लिए जरूरी गुण है धैर्य, धृति, धीरज। अरबी में सबर कहते हैं। सबर कर। चार दिन काम किया, परिणाम आया नहीं। उत्साह घट गया। अरे भया! चार दिन से क्या होता है?

साहिब मिले सबूरी में, मन लागो यार फकीरी में।

आपको फकीरी में लगना होगा। गाँव-गाँव में जाना होगा। और कितने दिन हुए, ऐसी गिनती नहीं करनी होगी। सतत काम में लगे रहना होगा।

गीता ने कहा सात्विक कर्ता कैसा होता है? धृति और उत्साह दो गुणों से युक्त होता है, वह सात्विक कर्ता होता है। गीता ने हमारी नाड़ी परख ली थी कि इनमें उत्साह तो है ही, लेकिन धीरज की जरूरत पड़ेगी। इसलिए कहा—

'धृत्युत्साह समन्वितः कर्ता सात्विक उच्यते।'

हम आशा करते हैं—आप सब लोग डटकर काम में लग रहेंगे। सन् १९७२ तक काम करना होगा। सन् १९७२ में चुनाव होंगे। तब तक गाँवों में सम्पर्क कर गाँवों की शक्ति खड़ी करनी होगी। आज सरकार पर शहरों का रंग है। जब कि ८० प्रतिशत मत गाँव के होते हैं। तो गाँव के रंग से सरकार रंगे। चार साल धीरज के साथ काम करना होगा। और समर्पणपूर्वक करना होगा। समझायेगा कौन? बुजुर्गों का काम अध्ययन अध्यापन का होगा। कार्यकर्ताओं को समझाना होगा। इसका ज्ञान अशोध्य निष्ठ होना चाहिए।

—विनोबा

सीतामढ़ी कार्यकर्ताओं के बीच ता० २२-७-६८ को दिये गये भाषण से।

अन्य पृष्ठों पर

आवश्यक सूचना

१६ अगस्त '६८ के बाद से भूदान-यज्ञ का प्रकाशन शुक्रवार के बदले सोमवार को होगा। इस निर्णय के अनुसार १६ अगस्त ६८ के बाद का अंक शुक्रवार यानी २३ अगस्त ६८ को नहीं, सोमवार यानी २६ अगस्त ६८ को प्रकाशित होगा। —व्यवस्थापक

सम्पादक

राममूर्ति

•

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१ उत्तर प्रदेश

फोन : ४२८५

नौकरशाही की जड़ता का नमूना

सरकारी नौकरशाही की कार्य-पद्धति कितनी जड़ तथा दुर्भाग्यपूर्ण है, इसका एक नमूना भारत सरकार द्वारा खादी-ग्रामोद्योग काम के सिंहावलोकन के लिए नियुक्त कमिटी की रिपोर्ट से मिलता है, जो अभी हाल ही में प्रकाशित हुई है। यह सर्वविदित है कि शुरू में अखिल खादी-ग्रामोद्योग बोर्ड तथा खादी-ग्रामोद्योग कमीशन की नियुक्ति पूज्य विनोबाजी के मार्गदर्शन में सर्व सेवा संघ और सर्वोदय-जगत् की सिफारिश के अनुसार भारत सरकार ने की थी। यह भी सब जानते हैं कि खादी-ग्रामोद्योग का काम सरकार के दूसरे कामों तथा योजनाओं की तरह का काम नहीं है, बल्कि उसका एक विशेष लक्ष्य और पृष्ठभूमि है। और इसलिए देश में खादी-ग्रामोद्योग का जो काम चल रहा है उसका नैतिक मार्गदर्शन पूज्य विनोबाजी करते हैं। खादी-ग्रामोद्योग कमीशन भले ही सरकारी या अर्धसरकारी संस्था हो, पर कमीशन के अध्यक्ष तथा सदस्य आदि बराबर विनोबाजी से सलाह लेकर काम का संचालन करते रहे हैं, यह सर्वथा उचित भी है।

भारत सरकार अपनी अन्य योजनाओं के अनुपात में खादी-ग्रामोद्योग के काम के लिए बहुत नगण्य-सा खर्च करती रही है। इसलिए खादी-ग्रामोद्योग के काम की समीक्षा के लिए उसने समिति नियुक्त की, यह तो ठीक है, पर समिति के अध्यक्ष तथा उसके कार्यालय ने नीचे लिखी घटना के संदर्भ में जिस जड़ता तथा भावशून्यता का परिचय दिया है वह भी आश्चर्यजनक है। उसका औचित्य किसी भी दृष्टि से सिद्ध नहीं किया जा सकता। समिति के एक सदस्य डा० महादेव प्रसाद ने जाहिर किया है कि खादी-ग्रामोद्योग के काम के बारे में समिति के सदस्य खास तौर से विनोबाजी के विचार जानने के लिए ७०० मील का विमान, रेल, तथा मोटर का प्रवास करके जहाँ उस समय विनोबाजी थे वहाँ पूसारोड में आये। दो दिन तक कई बैठकों में समिति ने उनके विचार सुने। समिति की ओर से विनोबाजी को पूछा गया कि खादी-ग्रामोद्योग के बुनियादी दृष्टिकोण के बारे में उनकी क्या राय है, तो डा० महादेव प्रसाद के अनुसार विनोबाजी ने "बहुत विस्तार से और अत्यन्त सरल भाषा में उत्साहपूर्वक अपने विचार व्यक्त किये। हम सब मंत्रमुग्ध होकर सुनते रहे, क्योंकि हमको ऐसा लगा कि उनके मुँह से एक ऐतिहासिक वक्तव्य निकल रहा है।" लेकिन यह अत्यन्त दुःख का विषय है कि विनोबाजी के इस वक्तव्य को अक्षरशः नोट या रेकार्ड नहीं किया गया। विनोबाजी के विचारों को जानना इतना आवश्यक और महत्वपूर्ण माना गया कि दूसरे लोगों की राय तो समिति ने उन्हें दिल्ली में बुलाकर सुनी, लेकिन विनोबाजी की राय जानने के लिए समिति मय अपने मंत्री, दो उप-मंत्री और एक स्टेनोग्राफर के पूसारोड बिहार में गयी। यह आशा करना स्वाभाविक ही था कि समिति ने विनोबाजी जैसे व्यक्ति के विचार अक्षरशः रेकार्ड करने का इन्तजाम किया होगा, ताकि रिपोर्ट लिखते समय समिति के सदस्यों के सामने विनोबाजी के पूरे विचार रहें, पर जब डा० महादेव प्रसाद ने समिति के कार्यालय से विनोबाजी के वक्तव्य की माँग की तो उन्हें बताया गया कि समिति के पास हिन्दी स्टेनोग्राफर नहीं था, इसीलिए विनोबाजी के विचार अक्षरशः लिपि-बद्ध नहीं किये जा सके। जब डा० महादेव प्रसाद ने इस सम्बन्ध में अपना विरोध नोट समिति की रिपोर्ट के साथ दिया तब समिति के अध्यक्ष, भारत सरकार के एक मंत्री, श्री अशोक मेहता ने भी डा० महादेव प्रसाद के प्रश्न का सीधा जवाब न देकर अपनी ओर से सफाई में यह नोट लगा दिया कि "मैंने इस बात की पूरी दिलजमाई कर ली है कि समिति के सदस्यों ने आचार्य विनोबा भावे के साथ जो विचार-विनिमय किया उसका सारांश ठीक-ठीक नोट किया गया था। वह सारांश समिति के सब सदस्यों को तथा श्री विनोबा भावे के निजी मंत्री को भेजा गया था। उस नोट को किसी प्रकार का फेरफार करने की किसीकी ओर से कोई सूचना नहीं मिली।"

हमारे देश की सरकार और योजना बनानेवाले लोग किस प्रकार काम करते हैं, उसका यह नमूना आँखें खोलनेवाला है। यह अपने आप में एक आश्चर्य की बात है कि भारत सरकार की जिस समिति की नियुक्ति एक ऐसे काम की समीक्षा के लिए हुई थी, जिसका सम्बन्ध मुख्यतः गाँवों से है और जिसका अधिकांश व्यवहार हिन्दी में या अन्य प्रादेशिक भाषाओं में चलता है, उसके दफ्तर में केवल अंग्रेजी का स्टेनोग्राफर रखा गया! इसका यह मतलब तो स्पष्ट है कि जब समिति के सामने अंग्रेजी में विचार व्यक्त करनेवालों की बातें ज्यों-की-त्यों अक्षरशः नोट की गयी, हिन्दी में बोलनेवालों की वैसे नहीं की जा सकी; हालांकि जो लोग खादी-ग्रामोद्योग के काम से सीधे सम्बन्धित हैं वे अपना सारा काम हिन्दी में चलाते हैं। स्पष्ट है कि समिति की नजरों में इन लोगों की राय का उतना महत्त्व नहीं था जितना खादी-ग्रामोद्योग के काम से सम्बन्ध न रखनेवाले अन्य "अर्थशास्त्रियों और विशेषज्ञों" का।

यह जो कुछ भी हो, पर जब समिति के सदस्य विनोबाजी के विचार जानने के लिए खास तौर से पूसारोड गये तब भी समिति का दफ्तर इतनी भी सूझ-बूझ नहीं दिखला सका कि उस समय के लिए कम-से-कम विशेष तौर पर हिन्दी के स्टेनोग्राफर का इन्तजाम करता। इससे अधिक कल्पना-शून्यता और जड़ता का परिचय और क्या होगा? हिन्दी का स्टेनोग्राफर उपलब्ध नहीं था तो टेप-रेकार्डर से भी काम लिया जा सकता था। अन्य बातों के लिए तो विज्ञान के युग की दुहाई बहुत दी जाती है और विज्ञान के नाम पर मानवीय मूल्यों की उपेक्षा की जाती है, पर जहाँ विज्ञान का उपयोग करना चाहिए वहाँ नहीं किया जाता, यह विज्ञान की दुहाई देनेवालों की असली मनोदशा का सूचक है। जैसा डा० महादेव प्रसाद→

बन्दूक का अन्तिम फायर

जिस दिन पहले-पहल मनुष्य ने पत्थर का एक टुकड़ा उठाकर दूसरे मनुष्य को मारा होगा, उस दिन उसे क्या पता रहा होगा कि कोई दिन ऐसा भी आयेगा जब लाखों का संहार एक साथ आसमान से एक छोटा सा बम गिराकर किया जा सकेगा, और बम गिरानेवाला जानेगा भी नहीं कि उसके बम से जलनेवाले मरनेवाले, कौन हैं, और उनकी उससे क्या दुश्मनी है।

६ अगस्त १९४५ को जब पहला अणुबम हिरोशिमा पर गिरा तो दुनिया ने व्यापक संहार का पहला, हलका, अनुभव किया। तब से अब तक के बाईस-तेईस वर्षों में युद्ध का विज्ञान इतना बदल गया है, और संहार जीवन के इतने करीब पहुँच गया है कि विश्व के पैमाने पर जीने और मरने के बीच की रेखा अत्यन्त क्षीण हो गयी है। शायद इतनी क्षीण हो गयी है कि रह ही नहीं गयी है।

अणुबम का परिणाम व्यापक संहार के सिवाय दूसरा क्या होगा? सम्भवतः इस प्रतीति में से विश्व शान्ति की चाह पैदा हुई है। अणुबम की इतनी देन तो माननी ही चाहिए कि उसने मनुष्य को अहिंसा के बहुत करीब पहुँचा दिया है। हर देश का सामान्य नागरिक शान्ति चाहता है जब कि उसकी सरकार युद्ध को पहला स्थान देती है, और कहती है कि नागरिक की सुरक्षा इसीमें है कि सरकार युद्ध के लिए हर वक्त हर सामान के साथ तैयार रहे। अणुबम और राष्ट्रवाद सगे भाई हैं—दोनों शान्ति के शत्रु।

९ अगस्त १९४२ को लगनेवाला 'भारत छोड़ो' का नारा भारतीय राष्ट्रीयता का नारा था। उसके पहले भारत राष्ट्र नहीं था, मात्र देश था—सम्मान और स्वत्व दोनों से वंचित, टूटा हुआ, बुझा हुआ। युद्ध के संहार में शरीर का अन्त होता है, गुलामी में आत्मा का। इन दोनों में एक को चुनना ही हो तो मनुष्य संहार को चुनेगा, गुलामी को नहीं। 'भारत छोड़ो' का नारा अन्तिम प्रयत्न था भारत की आत्मा को मर जाने से बचा लेने का।

भारत में ही नहीं, दुनिया में गुलामी के दिन तो खत्म हो गये, लेकिन स्वामित्व के अभी नहीं खत्म हुए हैं। संहार और स्वामित्व दोनों साथ मौजूद हैं—शायद पहले से अधिक संगठित, अधिक व्यापक। लेकिन एक बात हुई है। मनुष्य की मुक्ति की चाह भी पहले से अधिक संगठित और व्यापक होती जा रही है। उसे संहार का भय नहीं है। वह मुक्ति के लिए अधीर हो उठा है।

अणुबम स्वामित्व का रक्षक है और हथियारबन्द राष्ट्रवाद का पोषक। अगर स्वामित्व रहेगा तो संहार किसी तरह नहीं टलेगा। किसी देश का दूसरे देश पर, जाति का जाति पर, वर्ग का वर्ग पर, आदि किसी भी तरह का स्वामित्व रहेगा तो संघर्ष अनिवार्य है और यदि संघर्ष हुआ तो संहार होकर ही रहेगा।

गांधीजी ने कोशिश की थी कि स्वामित्व अमानतदारी में बदल जाय, और उग्र राष्ट्रवाद 'स्वदेशी' में, यानी पड़ोसीपन में। लेकिन उनकी बात उनके जीते-जी नहीं सुनी गयी। उनके बाद अपने देश में स्वामित्व भी बढ़ा और उग्र राष्ट्रवाद भी। राष्ट्रवाद ने राष्ट्रीयता का जामा पहन लिया है।

संहार भी जागतिक है और शान्ति भी। तो शान्ति का अभियान शुरू कहाँ से होगा? पश्चिम की दुनिया में 'स्वामित्व' (आर्थिक, राजनैतिक, बौद्धिक) के विरुद्ध उफान उठ रहा है, भारत में 'स्वामित्व' के विरुद्ध तूफान चल रहा है—ऐसा तूफान जिससे रचना होगी ऐसी व्यवस्था की जो स्वामित्व से मुक्त होगी। पश्चिम के नागरिक प्रश्न पूछ रहे हैं भारत के गाँव निर्णय कर रहे हैं। ग्रामदान की घोषणा में स्वदेशी का संकल्प है, 'स्वदेशी' में शान्ति की गारंटी है।

अपने को कायम रखने के लिए स्वामित्व बम बनाता है। अपने को मुक्त करने के लिए मनुष्य बन्दूक चलाता है। बन्दूक बम की जननी है। जब तक मुक्ति चाहनेवालों के हृदय में बन्दूक रहेगी, तब तक संहार करनेवालों के हाथ में बम रहेगा। इसलिए बम को रहना चाहिए या नहीं, यह निर्णय उनके ही हाथ में है जिनकी पहुँच बम तक नहीं है। यानी बम का निर्णय नागरिक के हाथ में है। अगर नागरिक बन्दूक फेंक दे (ढेला, पत्थर सब बन्दूक की ही कोटि में हैं) तो सैनिक का बम धरा रह जायगा। बम बन्दूक का अन्तिम फायर है।

हिरोशिमा का सही उत्तर है, बन्दूक फेंक देने में, 'भारत छोड़ो' की वास्तविक पूर्ति है स्वयं स्वामित्व छोड़ देने में।

संहार और स्वामित्व जब तक रहेंगे, साथ रहेंगे और जब जायेंगे तो साथ जायेंगे। ●

→ने कहा है समिति के सामने विनोबाजी का वक्तव्य एक ऐतिहासिक वक्तव्य था, यह आश्चर्य की बात नहीं है। स्वाभाविक था कि ऐसे अवसर पर खादी ग्रामोद्योग के विषय पर विनोबाजी, जिनका पिछले ५० वर्षों से खादी-ग्रामोद्योग के काम और विचारों से अटूट सम्बन्ध रहा है, और जो काम गांधीजी के तथा उनके जीवन-दर्शन का केन्द्र-बिन्दु है, अपना सारा अन्तर उंडेलकर रख देते। समिति या समिति के सदस्यों के नाम से विनोबाजी के उस ऐतिहासिक वक्तव्य के अभाव में जो भी कमी रही हो, सारे खादी ग्रामोद्योग-जगत् के लिए और समाजशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए यह अभाव अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है। समिति के अध्यक्ष अशोक मेहता स्वयं एक विचारक हैं। समिति के अध्यक्ष के नाते भले ही उन्होंने समिति की इस असाम्य अकार्यकुशलता का बचाव किया हो, लेकिन वे खुद अच्छी तरह समझते होंगे कि उस वक्तव्य के अभाव से पैदा हुई कमी किसी भी सारांश से पूरी नहीं की जा सकती। हम सबको इस बात का दुःख है कि हम विनोबाजी के उस 'ऐतिहासिक' वक्तव्य से वंचित रहे हैं।

—सिद्धराज ढड्ढा

परिचर्चा

आन्दोलन : आन्दोलनकारियों की निगाहों में

[हजारीबाग रोड स्टेशन के नजदीक ही सरिया में बिहार के कुछ तरुण कार्यकर्ताओं की एक त्रिदिवसीय विचार-गोष्ठी दिनांक २८,२९, ३० जुलाई को आयोजित की गयी थी। गोष्ठी की अध्यक्षता की थी श्री श्याम बहादुरजी ने। भाग लेनेवाले अन्य लोग थे : सर्वश्री हरिकृष्ण ठाकुर, श्याम प्रकाश, मु० अयूब, बद्री बाबू, लक्ष्मेन्द्र सिंह, शिवेन्द्र शरण, देवसिंह, रामनन्दन सिंह, कैलाश प्रसाद शर्मा, लक्ष्मण ओझा, वैद्यनाथ ठाकुर, कर्णजी और रामचन्द्र राही। खुले मन से इन तीन दिनों में सभी ने अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कीं, चर्चाओं में विश्लेषण प्रस्तुत किये और अंत में सहचिंतन के तौर पर कुछ मुद्दे निर्णय में आये।

आन्दोलन में क्या नहीं हुआ है, क्यों नहीं हुआ है, क्या होना चाहिए, इन पहलुओं पर काफी विस्तार से चर्चाएँ हुईं। और हमें कुछ करना है, इस तरह की मिली-जुली आवाज भी अंतिम दिन सुनाई पड़ी, जिससे आशा की जा सकती है कि जो नहीं हो सका और जिन कारणों से नहीं हो सका, उस दिशा में कुछ संशोधन भी हो सकेगा।

लेकिन एक विषय चर्चा से परे रह गया। क्रांति की शक्ति प्रगट होती है क्रांति कार्य में लगे हुए व्यक्तियों के समर्पण और जनता के सक्रिय समर्थन से। इस समर्थन के लिए समर्पण चाहिए और समर्पण के लिए जैसा कि विनोबाजी ने सीतामढ़ी में कार्यकर्ताओं के बीच बोलते हुए कहा है (देखें : इस अंक का प्रथम पृष्ठ), उत्साह भी चाहिए और सातत्य भी चाहिए। बिहारदान और सन् १९७२ का चुनाव, ये दो चुनौतियाँ बिहार के साथियों के सामने हैं, बल्कि पूरे देश के साथियों के सामने हैं। क्या यह आशा की जाय कि हजारीबाग में मंथन का जो क्रम शुरू हुआ है, उसमें आन्दोलन के शक्तिवर्धन-हेतु पोषक नवनीत निकलेगा ! अगली गोष्ठी शायद इसका जवाब प्रस्तुत कर सके।

इतना अवश्य है, कि मंथन चलते रहना चाहिए, तभी आन्दोलन की अपेक्षाएँ हम पूरी करने में समर्थ हो सकेंगे। —सम्पादक]

सरिया (हजारीबाग) में आयोजित यह गोष्ठी महसूस करती है कि ग्रामदान की प्रगति जिलादान तक हुई, राज्यदान का प्रयास चल रहा है, लेकिन समाज में उसका अपेक्षित प्रभाव (इम्पैक्ट) नहीं दिखाई दे रहा है। गोष्ठी में भाग लेनेवाले साथी इसके कारणों की खोज, विश्लेषण और निदान-स्वरूप निम्न निष्कर्षों पर पहुँचे हैं :

मूल्यांकन

• भूदान की जमीन प्राप्त करनेवालों ने इसे मन का प्रसाद माना, इस आन्दोलन से वे मजदूर रहे, उनकी शक्ति नहीं बन पायी। ग्रामदान में भी ग्रामदानी लोग आन्दोलन के वाहक नहीं बन रहे हैं।

• जन-जीवन के अन्य क्षेत्रों में जो समस्याएँ हैं, संघर्ष हैं, उनको हमने स्पर्श नहीं किया। हम इन पहलू पर पूर्ण उदासीन रहे।

• वैसे कुछ अनिश्चित प्रभाव तो पड़ा है, लेकिन यह नाकाफी है, और समाज-परिवर्तन की शक्ति उसमें से निकलेगी, ऐसा भरोसा नहीं किया जा सकता। इसका कारण यह है कि हमारी शक्ति पर्याप्त नहीं है। और ग्रामदान की प्राप्ति के साथ ही ग्रामदान के विचार के आधार पर गाँवों के पुनर्गठन का प्रयास नहीं हुआ है।

• साथ ही जो लोग इस काम में लगे हैं उनमें से अधिकांश की बहुत-सी कमजोरियाँ हैं, सम्पत्ति और व्यक्तित्व दोनों प्रकार की, जिसका परिणाम यह होता है कि क्रान्ति की धार कमजोर रहती है, और विचार की पूरी सफाई नहीं की जाती, लोगों के सामने ग्राम-दान की सभी शर्तों और ग्राम-स्वराज्य के समग्र चित्र को पेश करने में या तो हम स्पष्ट हैं या हिचकते हैं कि पूरी बात साफ होने पर शायद हस्ताक्षर न मिलें।

• देश की और दुनिया की चिन्तन धारा पर सर्वोदय आन्दोलन का प्रभाव पड़ा है, और इस तरफ आकर्षण भी बढ़ा है।

विश्लेषण

• हमारे आन्दोलन के संगठन सचित निधि से जुड़े रहे, संस्था-निरपेक्ष आन्दोलन कभी हुआ नहीं, यह एक चरित्र-दोष है इस आन्दोलन का।

• कार्यकर्ताओं के पूर्ण समर्पण से ही क्रान्तिकारी आन्दोलन की शक्ति बढ़ती है, इसका काफी हद तक अभाव रहा है। जो कार्यक्रम है उनके तत्त्व का दर्शन कार्यकर्ताओं के जीवन में नहीं होता।

• आन्दोलन का समाज पर कितना प्रभाव पड़ा है या नहीं पड़ा है, इस पर विचार करते समय यह भी सोचना चाहिए कि हमारा अपना चित्त इससे कितना प्रभावित हुआ है।

• सर्वोदय-दर्शन के अनुसार समाजरचना का चित्र अभी तक हम नहीं तैयार कर पाये हैं। यह ठीक है कि आन्दोलन के क्रमिक विकास के साथ-साथ चित्र स्पष्ट हो रहा है, लेकिन अब हम जिस मंजिल पर पहुँचे हैं, वहाँ यह अनिवार्य हो गया है कि समाज रचना का समग्र चित्र प्रस्तुत किया जाय।

• भूदान में तो कुछ देना-लेना मात्र ही होता था, ग्रामदान में वैसा कुछ तत्काल होता नहीं। ग्राम सभा संगठित हो तो उसके द्वारा प्रभावकारी कदम उठाये जा सकते हैं, लेकिन वह भी अब तक किया नहीं जा सका है।

• हम अपने आन्दोलन का तो आदर्श देखते हैं और दूसरे का व्यवहार। हमें अपने व्यवहार का भी निरीक्षण करते रहना चाहिए।

• सर्वोदय प्रवृत्ति में एक हद तक लचक है, लेकिन यह इतना न बढ़ जाय कि उद्देश्य को ही निगल जाय, इसका भी ध्यान रखें।

संशोधन, सुझाव और सवाल

• किसी भी क्रान्ति की जो 'इमेज' समाज के सामने पेश की जाती है, वह 'इमेज'

इस अंक में पढ़ें

९ अगस्त, '६८

वर्ष ३, अंक १] [१८ पैसे

कब तक चेतेंगे !

आज से २६ साल पहले ९ अगस्त १९४२ को अपने देश में एक भयंकर उथलपुथल मची थी। तब भारत में अंग्रेजी राज था और भारत के लोग उससे छुटकारा चाहते थे। इसीलिए ९ अगस्त १९४२ को देश के कोने कोने मे यह आवाज गूँज उठी थी— अंग्रेजो भारत छोडो! गुलामी की जंजीरो से जकडा हुआ भारत सिंहगर्जन करके बंधन की सारी कड़ियाँ तोड फेंकने के लिए आतुर हो उठा था।

आज भी पटना की वह पटना याद आने पर नसों का खून तेजी से दौड़ने लगता है रोंगटे खडे हो जाते हैं। खून से लथपथ उस विद्यार्थी के प्राणपखेरू उडने ही वाले थे। पटना-सचिवालय के सामने अंग्रेजो भारत छोडो का नारा लगाते समय वह पुलिस की गोली का शिकार हुआ था। मरते मरते पूछा था गोली मेरी पीठ में लगी है या छाती में ?

छाती में! किसीने आँखों से उमडते हुए आँसुओं को रोककर कहा था। और तब उसका चेहरा खुशी से खिल उठा था अंतिम बार! उसकी लडखडाती आवाज से अंतिम शब्द निकाला — वन्दे मातरम्! उस आजादी के परवाने को संतोष था कि उसने भागते हुए गोली नही खायी है अत्याचारियों का सामना उसने किया है।

एक नही अनेक शहीदों की यादें इस ९ अगस्त के साथ जुडी हुई हैं। पूरा देश ही एक तरह से आजादी के लिए जान की बाजी लगा चुका था और तब जाकर १५ अगस्त १९४७ को हम आजाद हुए थे। पटना सचिवालय के सामने बनाया
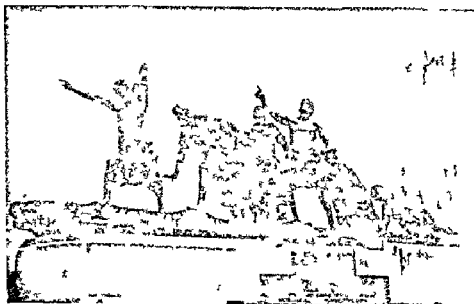
पटना सचिवालय के सामने का शहीद स्मारक

अणुबम के गिरने पर

गया 'शहीद स्मारक' उन बीती हुई कहानियों की हर वक्त याद दिलाता है। और, रह-रहकर यह सवाल पूछता है कि 'क्या अंग्रेजों के भारत छोड़कर चले जाने के बाद भारत पूरी तरह आजाद हो गया ? क्या देश का छोटा-से छोटा आदमी' आदमी' की तरह जीने का अवसर पा रहा है ? क्या अंग्रेजी हुकूमत में रौंदा गया, कुचला गया, चूसा गया भारत जैसा का तैसा बना रहेगा ? आजादी के लिए खून बहाने में जो देश पलभर को नहीं पीछे हटा, देश बनाने के लिए पसीना बहाने में वह *आगे क्यों नहीं आता ? क्या अब देश के जवानों में 'जवानी का जोश'* खत्म हो गया ?

× × × ×

९ अगस्त १९४२ के ठीक तीन साल बाद ६ अगस्त १९४५ में दुनिया ने युद्ध की एक संहार-लीला देखी थी। जापान के हिरोशिमा नगर पर अणुबम गिरा था, और पलभर में पूरा नगर धधकती चिता बन गया था। दुनिया की भोली-भाली जनता के जीवन को जुए के दाव पर लगानेवाले शासनकर्ताओं के झगड़े ने हरे-भरे चमन को श्मशान बना डाला था। आज भी उनकी तड़पती आत्माएं चीख-चीखकर कह रही हैं कि यही सिलसिला चलता रहा, जनता शासन करनेवालों के हाथ की कठपुतली बनी रही, तो एक-न-एक दिन यह पूरी धरती हिरोशिमा की *तरह श्मशान बन जायगी ! विनाश के इस खतरे से* मनुष्य को बचना है तो आज दुनिया का जो भी ढांचा है उसे बदलो। आदमी को सीधे आदमी के साथ जुड़कर रहने लायक नयी दुनिया बनाओ। तरह-तरह के बहकावे में भरमाकर धरती को धधकती चिता बनाने की जोर-शोर से तैयारियां करनेवाले शासनकर्ताओं से दुनिया को आजाद करो।

× × ×

अंग्रेज भारत छोड़कर चले गये। लेकिन भारत का जन-जन आज भी अभाव, अन्याय और अज्ञान की गुलामी में जकड़ा हुआ है। भारत के गांव आज भी चूसे जा रहे हैं, कुचले और रौंदे जा रहे हैं। आखिर यह सिलसिला कब तक चलेगा? ६ अगस्त १९४५ के अणुबम के गिरने से जो हिरोशिमा वीरान बन गया था, उसे लोगों ने दुबारा एक सुन्दर नगर बना दिया। श्मशान फिर चमन बन गया। लेकिन कब तक बना रहेगा ?

६ अगस्त और ९ अगस्त हमसे ये सवाल पूछ रहे हैं, और नयी पीढ़ी को चेतावनी दे रहे हैं। हम कब तक चेतेंगे ?

नगर श्मशान बन गया

अधमरे लोग

एक बच्चे की लाश

'स्वराज्य' हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।

'ग्रामस्वराज्य' हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।

गाँव की मुख्य समस्या

एक विदेशी मित्र कुछ महीनों से हमारे देश में घूम रहे हैं। शहरों को छोड़कर विशेष रूप से गाँवों को ही देख रहे हैं। कहते हैं कि शहर हर जगह लगभग एक ही तरह के हैं, मगर अन्तर है तो गाँवों में। कई राज्यों में घूमकर आने के बाद हमलोगों के केन्द्र पर कुछ दिन ठहरे। चाहते थे कि यहाँ रहकर पास पड़ोस के गाँवों को जरा गहराई से देखें, और जब मौका मिले तो हमलोगों से चर्चा भी करें। वह रोज सुबह हमारे एक साथी को लेकर निकल जाते थे, और कई गाँवों में घूमकर दोपहर तक लौटते थे। फिर तीसरे पहर जाते थे और शाम को अँधेरा होने पर लौटते थे। कई दिन तक यही उनका रोज का क्रम रहा। रुचि का भोजन नहीं, आराम का मौका नहीं, जान-पहचान के लोग नहीं, फिर भी वह मस्त थे, और खूब घूमते थे। उम्र से ही नहीं, दिल और दिमाग से भी नये और ताजे थे।

पाँच छह दिन के बाद वह एक दिन तीसरे पहर चर्चा के लिए आये। बोले 'आपके विचार में यहाँ के गाँवों की मुख्य समस्या क्या है?'

मैंने उत्तर दिया 'मुख्य समस्या यह है कि गाँव के लोग गाँव की बात सोचते नहीं, जानते नहीं, कहते नहीं।'

'क्या मतलब?' उन्होंने फिर पूछा।

मैंने कहा 'गाँव के लोग इतना ही जानते हैं कि उनके गाँव में पचास घर हैं, लेकिन सब पचास घर एक ही गाँव के हैं, यह उनकी चेतना में नहीं आता। गाँव एक है, घर अनेक हैं। गाँव एक है, इसलिए उसमें उसकी एक ही बात होनी चाहिए। एक बात होने के लिए एक दिल होना चाहिए। लेकिन गाँव में ऐसा नहीं है। उलटे यह है कि जितने घर हैं उतने दिल हैं, और जितने दिल हैं, उतनी बातें हैं। पूरे गाँव की एक बात गाँव में है ही नहीं।'

'आपका मतलब यह है कि गाँव के लोग गाँव की एकता नहीं महसूस करते। एक का दिल दूसरे के दिल से दूर है, एक की बात दूसरे की बात को काटने के लिए होती है। क्यों, यही न?' उसने समझ की नोयत से कहा।

'हाँ यही बात है। जिस दिन गाँव के लोगों के मन में गाँव की बात बस जायगी, और वे गाँव की बात सोचने लगेंगे, उस दिन एक नयी जागृति, एक नयी शक्ति, दिखायी देने लगेगी, और गाँव घरों का समूह न रहकर एक इकाई बन जायगा। फिर कौनसा ऐसा सवाल होगा, जिसके लिए गाँव की शक्ति कोई न कोई रास्ता नहीं निकाल लेगी?' मैंने समझाते हुए कहा।

वह मित्र इस बात को अच्छी तरह समझ गये। फिर उन्होंने ग्रामदान आन्दोलन के बारे में पूछा। ग्रामदान की शर्तें क्या हैं, ग्रामदान कैसे होता है, ग्रामदान होने पर क्या होता है, ग्रामदान से ग्राम स्वराज्य कैसे आयगा, आदि प्रश्न घंटे भर तक पूछते रहे, समझते और लिखते रहे। और, जब मैंने यह कहा कि हमलोग गाँवों के लिए "गाँव की बात" नामकी एक पत्रिका निकालते हैं तो बहुत खुश हुए।

उस मित्र को गये हुए महीनों हो गये। वह यहाँ से यह संतोष लेकर गये कि हमारे गाँव अब अपनी बात समझने लगे हैं। उन्हें यह एक चिन्ता जरूर थी कि 'गाँव की बात' गाँव के अन्दर से नहीं निकल रही है, बल्कि बाहर से गाँव में पहुँचानी पड़ रही है। जो चिन्ता उस मित्र को थी वह चिन्ता हम सबको होनी चाहिए।

'गाँव की बात' गाँव में कब पहुँचेगी?

"गाँव की बात" के तीसरे वर्ष का पहला अंक आपके हाथ में है। बड़ी ही खुशी की बात है कि हर क्षेत्र से इसका स्वागत हुआ है और इसे भरपूर प्रशंसा मिली है। हमारा प्रयत्न रहता है कि "गाँव की बात" गाँवों के लिए ज्यादा उपयोगी बने और इसके विषय ग्रामीण समस्याएँ हों और इसकी भाषा इतनी सरल रहे कि गाँव के साधारण पढ़े लिखे लोग तो समझें ही, जो नहीं पढ़े लिखे हैं वे भी सुनकर समझ सकें। परन्तु बड़ी चिन्ता की बात यह है कि बावजूद इन सारी बातों के "गाँव की बात" गाँवों में बहुत ही कम पहुँच रही है। गाँव में "गाँव की बात" पहुँचानेवाले हमारे साथी भी इस ओर उतना ध्यान नहीं दे रहे हैं, जितना उन्हें देना चाहिए। आखिर क्या कारण है कि "गाँव की बात" ग्रामदानी गाँवों में भी नहीं पहुँच रही है? क्या ग्रामदानी गाँव शहर की बात पर आगे बढ़ेंगे? अगर ग्रामदानी गाँव भी "गाँव की बात" नहीं समझेंगे तो उनकी शक्ति कैसे बनेगी?

आज हमारे गाँवों में कितनी भी गिरावट आयी हो, उनमें कितनी भी गरीबी, बेकारी, बीमारी और फूट हो, लेकिन इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि अभी भी उनमें शक्ति बाकी है। उसे जगाने के लिए "गाँव की बात" गाँव गाँव पहुँचानी चाहिए। बताइये कब पहुँचेगी? कैसे पहुँचेगी??

—सम्पादक

ग्रामदान के बाद ग्रामसभा—१

प्रश्न—ग्रामदान में इतनी बड़ी-बड़ी बातें बतायी जाती हैं। कहा जाता है कि ग्रामदान के बाद गांव का संगठन होगा, भूमिहीन को बीघा-कट्ठा भूमि मिलेगी, ग्रामकोष बनेगा, शान्ति-सेना खड़ी होगी, गांव के झगड़े गांव में ही तय हो जायंगे, जमीन के कागज गांव में रहेंगे, यहां तक कि गांव के विकास की योजना गांव के लोग खुद बनायंगे, और सरकार उसमें सलाह और साधन से मदद करेगी। यह सब सुनकर ऐसा लगता है, जैसे गांव में गांववालों की अपनी एक नयी सरकार बन जायगी। क्या सचमुच ऐसी बात है?

उत्तर—क्यों, आश्चर्य की क्या बात है? गांव का काम कैसे चलेगा? आप देखते नहीं हैं कि गांव में वे सब काम होते हैं, या होने चाहिए, जो सरकार में होते हैं? गांव के लोग अपने गांव को, अपने को, अपनी आवश्यकताओं और अपनी शक्ति को अच्छी तरह समझते हैं। इसलिए अच्छा होगा कि उनके गांव में उनका ही निर्णय चले, उनकी ही व्यवस्था चले। लेकिन आज की सरकार और गांव में गांव की सरकार में, एक बहुत बड़ा अन्तर है।

प्रश्न—वह क्या?

उत्तर—आज की सरकार पुलिस और फौज रखती है, टैक्स वसूल करती है, और जो उसका आदेश नहीं मानता उसे दण्ड देती है। जहां डंडा है वहां भय है। यह सरकार भय की शक्ति से ही चलती है।

प्रश्न—और, हमारी ग्रामदानी सरकार कैसे चलेगी? इस सरकार के पास इतनी शक्ति है तब तो इसकी बात लोग मानते ही नहीं, तब हमारी सरकार की कौन मानेगा, जिसके पास कोई शक्ति नहीं होगी?

उत्तर—यही बात, समझाने की है। मान लीजिए कि ग्रामदान के बाद जो ग्रामसभा बनेगी वह गांव की सरकार होगी। आपने तथा गांव के लोगों ने अपने निर्णय से ग्रामदान किया है; ग्रामदान के बाद सब बालिगों को मिलाकर ग्रामसभा बनायी है। यह ग्रामसभा दुर्गा की तरह ग्राम-माता होगी। ग्राम-माता के पास पुलिस का डंडा नहीं होगा। वह जबरदस्ती टैक्स नहीं वसूल करेगी। गांव का हर परिवार गांव के काम के लिए, यानी अपने काम के लिए, उसे 'दान' देगा, ग्रामकोष बनायेगा; सब लोग एक जगह बैठकर चर्चा करेंगे, और सबकी भलाई का ध्यान रखकर सर्वसम्मति से निर्णय करेंगे, और उस निर्णय को अमल में लायंगे। ग्रामसभा की शक्ति प्रेम की होगी, डंडे की नहीं। दूसरे ढंग से कहें तो कह सकते हैं कि गांव में सरकार नहीं होगी, सहकार होगा, और सहकार की शक्ति से चलनेवाली व्यवस्था होगी। गांव के भीतर सहकार, गांव के बाहर सरकार, यह ग्राम-स्वराज्य का शुरू का मंत्र है। कुछ भी हो, अच्छा काम भले ही रुक जाय, लेकिन गांव की एकता न टूटने पाये, बस अगर इतनी बात का ध्यान रहेगा तो ग्रामसभा की शक्ति बढ़ती चली जायगी। सबसे मुख्य बात है गांव की एकता।

प्रश्न—फिर भी गांव में विकास के, व्यवस्था के, अनेक काम होंगे, जिन्हें करने के लिए ठोस संगठन की जरूरत होगी। वह कैसे होगा?

उत्तर—हर हालत में संगठन जरूरी है। संगठन के प्रश्न को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। यों तो ग्रामसभा ही गांव का मुख्य और बुनियादी संगठन होगी, पर गांव की व्यवस्था के रोजमर्रा के कामों को चलाने के लिए एक कार्य-समिति बनानी होगी। वह संगठन की पहली कड़ी होगी। उसमें ५ से १० तक सदस्य हो सकते हैं। कार्य-समिति को पूरी ग्रामसभा सर्वसम्मति (या सर्वानुमति) से चुनेगी। यह कार्य-समिति ग्रामसभा की ओर से गांव का काम करेगी, और अपने काम और हिसाब का ब्यौरा हर महीने ग्रामसभा के सामने पेश करेगी। कार्य-समिति के अलग-अलग सदस्य अलग-अलग काम देखेंगे, जैसे—कोई खेती-सिंचाई का काम देखेगा, कोई उद्योग का, कोई शिक्षण का, कोई स्वास्थ्य का, आदि। लेकिन सब मिलकर जिम्मेदार होंगे। असली शक्ति है मिलकर काम करने में।

प्रश्न—यह बहुत जरूरी चीज है। लेकिन गांव के सामने बहुत बड़ा सवाल होता है आपसी झगड़ों का। उनका निबटारा कैसे होगा?

उत्तर—गांव के झगड़े गांव में ही तय हों, यह मानकर चलना होगा। मान लीजिए, मोहन और सोहन में झगड़ा हुआ।

इस झगड़े की खबर अपने-आप, या मोहन और सोहन में से किसीके कहने से, कार्य-समिति के उस सदस्य (मंत्री) को मिली, जिसको गांव की शान्ति और न्याय का काम सौंपा गया है। खबर मिलने पर न्याय मंत्री मोहन और सोहन से क्या कहेगा ? वह कहेगा, "भाई देखो, झगड़ा बढ़ाना ठीक नहीं है। जो भी झगड़ा हो, शान्ति के साथ तय कर लेना चाहिए। सबसे अच्छा तो यह होगा कि तुम दोनों खुद बैठ जाओ, और दिल खोलकर आपस में चर्चा कर लो, और मन की गांठें खोल डालो। अगर यह न हो सके तो तुम दोनों किसी एक व्यक्ति को चुन लो, और वह जो फैसला कर दे उसे मान लो। एक व्यक्ति को न मानो तो गांव या गांव के बाहर के पांच व्यक्तियों को चुन लो। वे पांचों एक राय से जो कह दें उसे मान लो। 'पंचपरमेश्वर' की बात पक्की होगी। अगर यह भी न कर सको तो कहो हम कार्यसमिति से कहें। कार्यसमिति से सन्तोषन हो तो पूरी ग्रामसभा की बैठक बुलायी जा सकती है। गांवसभा कुछ पंच चुन देगी जो दोनों के बीच पंचायत कर देंगे। इससे भी आगे तुम लोग चाहो तो पड़ोसी गांवों के कुछ सज्जन बुलाये जा सकते हैं, जिसमें तुम्हारी राजी खुशी हो वह किया जाय।

प्रश्न—ठीक है, लेकिन गांव के लोग कानून तो जानते नहीं।

उत्तर—कानून नहीं जानते तो क्या हुआ ? गांव में कानूनी न्याय की जरूरत भी नहीं है। गांव में उस न्याय की जरूरत है, जिससे लोगों का समाधान हो। आजकल अदालत में कानूनी न्याय भले ही होता हो, लेकिन उससे किसीका समाधान नहीं होता। उस न्याय को मन नहीं मानता। इसलिए अदालत के न्याय के बाद भी झगड़े की आग बनी ही रहती है।

प्रश्न—एक संगठन व्यवस्था और विकास के लिए हुआ, दूसरा न्याय के लिए हुआ, क्या तीसरा भी कोई होगा ?

उत्तर—हां, शान्तिसेना। हर गांव की अपनी शान्तिसेना होनी चाहिए—ग्राम शान्तिसेना। १६ साल से ४५-५० साल के लोग ग्राम शान्तिसेना में भरती होंगे। गांव में कम से कम १० का एक दस्ता होना चाहिए। आगे चलकर १० से १५ की आयु के किशोरों का एक दस्ता अलग हो सकता है, १६ से २५, २५ से ३५, और ३५ से ऊपर की आयुवालों के दस्ते अलग-अलग बन सकते हैं। स्त्रियों के दस्ते भी बन सकें तो बहुत अच्छा होगा।

प्रश्न—इस ग्राम शान्तिसेना के काम क्या होंगे ?

—(उत्तर अगले अंक में)

"बाई, बिआरी कबै करो ?"

ता० १६ को पृथ्वीपुर (टीकमगढ़) में वनिता बहन की टोली का अनुभव बड़ा दिलचस्प रहा। वनिता बहन ने कहा कि मैं ग्राम मुडारा के ग्रामदान के लिए गांव में गयी थी। वहां के भाई लखमन प्रसाद दुबे मुझे रास्ते में मिल गये। बड़े प्रेम से हम लोगों को अपने यहां ले गये और ठहरने आदि की समुचित व्यवस्था की। दुबेजी ने रात का भोजन अपने घर करने के लिए हम सबसे आग्रह किया और अपने खेत पर चले गये। रात उन्हें खेत पर ही रहना पड़ता था।

दुबेजी की पत्नी रात में वनिता बहन के पास आयी और कहने लगी, "बाई, बिआरी कबै करो ?" (बाई, रात का भोजन कब करोगी ?) वनिता बहन बम्बई की रहनेवाली बुन्देली भाषा को समझ न सकी और "बिआरी" शब्द का अर्थ विवाह से लगाकर उत्तर दिया "जब मेरी मरजी होगी तब करूंगी।" ग्रामों में टोली की बहनों से अक्सर यह पूछा जाता है कि विवाह किया है या नहीं ? नहीं किया है तो कब करोगी !

बेचारी दुबेजी की पत्नी भोजन कराने की प्रतीक्षा में रात भर बैठी रही, पर वनिता बहन की टोली भोजन करने नहीं गयी। मेजबान और मेहमान, दोनों रात भर प्रतीक्षा में बैठे रहे। वनिता बहन की टोली भूख से रात भर करवटें बदलती रही ! सुबह दुबेजी खेत पर से घर पहुंचे और पूछा, 'बहनजी, रात कोई तकलीफ तो नहीं हुई न ?' वनिता बहन ने कहा, "कोई तकलीफ नहीं हुई। सिर्फ भोजन नहीं मिला।" दुबेजी बहुत शर्मिन्दा हुए और अपनी पत्नी से पूछा तो पत्नी ने बताया कि 'बिआरी कबै करो' मैंने पूछा तो उन्होंने कहा कि जब इच्छा होगी तो करेगी। अन्त में "बिआरी" शब्द का अर्थ स्पष्ट हुआ तो सारी बहनें हंसते हंसते लोट-पोट हो गयीं।

—नाथूराम प्रसाद शर्मा

एक वर्ष (१९६७-६८ में)

सर्वोदय-पात्र से :	६६,८५४.९१
चन्दा के रूप में तथा शिक्षण-शुल्क	१०,५९३.१८
कुल :	७७,४४८.०९
कार्यकर्ता की आजीविका में :	४१,४७६.७२
कार्यकर्ता-प्रशिक्षण, मकान-भाड़ा, आदि में :	शेष रकम

तेनाली सर्वोदय-पात्र की प्रेरक प्रगति

[सर्वोदय-पात्र की बात वर्षों पहले विनोबाजी ने कही थी। हर रोज जो अन्न खाया जाता है उस अन्न में से एक मुट्ठी अन्न समाज के लिए निकाला जाय। यह एक मुट्ठी अन्न सयाने के हाथ से न निकले, परिवार का सबसे छोटा बच्चा निकाले। तेनाली में दस वर्षों से सर्वोदय-पात्र का कार्य व्यवस्थित रूप से चल रहा है। एक-एक मुट्ठी अन्न की शक्ति का दर्शन होता है उनके नीचे के विवरण में। क्या आप भी अपने परिवार में सर्वोदय-पात्र रख सकते हैं?—सं०]

तेनाली (आन्ध्र) के केन्द्र-कार्यालय के तत्वावधान में गुंटूर, विजयवाड़ा, मछलीपट्टनम्, रेपल्ले, चिराला, बापट्ला, ओंगोल एलूर और ताडेपल्लीगूडेम के कुल नौ शाखा कार्यालयों के मार्ग-दर्शन में इस सारे क्षेत्र में लगभग ३० हजार गृहस्थों के घरों में सर्वोदय-पात्र चालू हैं। वे सब बड़े प्रेम से पात्र में चावल दे रहे हैं। कुल मिलाकर ३५ भाई और बहनें सप्ताह में एक बार इन गृहस्थों के यहाँ जाकर नियमित रूप से अन्न-संग्रह करने का काम करती हैं। इसके अतिरिक्त ये कार्यकर्ता लोग "साम्ययोगमु" पत्रिका एवं सर्वोदय-साहित्य का प्रचार, विशिष्ट अवसरों पर स्वच्छंद सेवा (वालेण्टियर का काम), सामूहिक ग्राम-सफाई आदि सेवा-कार्य भी करते रहते हैं। इनके अलावा ३० कार्यकर्ता केन्द्र-कार्यालय तथा विविध स्थानों के महिला सेवा-केन्द्रों में काम कर रहे हैं।

इस क्षेत्र के प्रत्येक शाखा-कार्यालय के नगर में महिलाओं के लिए जो सेवा-केन्द्र चलाये जा रहे हैं, उनमें कोई चार सौ बहनें मशीन की सिलाई, चरखे की कताई तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी की शिक्षा पा रही हैं। इसके अतिरिक्त तेनाली केन्द्र-कार्यालय में तिल का तेल और नारियल का तेल निकालने के लिए दो घानियाँ काम कर रही हैं। इस उद्योग के लिए कुटीर, बैल और घानियों के निमित्त १२०० रु० की पूँजी लगायी गयी है और इस साल नारियल का तेल और तिल का तेल खली आदि रु० १३,६५२-११ का बेचा गया है। विजयवाड़ा के कार्यालय में नारियल के रेशों से रस्सी, पायदान आदि बनाने का जो उद्योग चल रहा है, उसमें ३००० रु० की पूँजी लगी हुई है। और इस साल रु० १,१४६.५८ का माल तैयार करके बेचा गया है।

सर्वोदय-पात्र के इस पूरे क्षेत्र में सर्वोदय-पात्रों से इस साल रु० ६६,८५४-९१ की आय हुई है। इसके अतिरिक्त चन्दों के द्वारा और सेवा-केन्द्रों की विद्यार्थिनियों के शिक्षण-शुल्कों के द्वारा रु० १०,५९३-१८ की आमदनी हुई है। इस रकम में से सभी कार्यकर्ताओं की आजीविका के निमित्त रु० ४१,४७६-७२ का खर्च किया गया है। बाकी रकम मकान-भाड़े, मार्ग-व्यय, सेवा-केन्द्रों की व्यवस्था, कार्यालय-खर्च, नये कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण इत्यादि के मदों में खर्च की जा रही है।

"साम्ययोगमु" तेलगु पाक्षिक पत्रिका भी सर्वोदय-पात्र की व्यवस्था की ओर से ही चल रही है, जिसके इस साल में चार हजार ग्राहक हैं। दो कार्यकर्ता—श्री नारूमंचि राधाकृष्ण मूर्ति तथा श्रीमती वासरेड्डी अन्नपूर्णम्मा—विशेष रूप से पत्रिका-प्रचार के काम में लगी हुई हैं। भाई श्री चापराला सीतारामदास तथा श्रीमती चापराला जानकीदेवी स्वास्थ्य-प्रचार तथा कार्यालय के काम में योग दे रहे हैं।

सन् १९६८-६९ साल में ग्रामाभिमुख खादी का कार्यक्रम तथा सर्वोदय-साहित्य-प्रचार का काम गांधी शत्-जयन्ती के उपलक्ष्य में विस्तृत रूप से चलाने की योजना की जा रही है। "साम्ययोगमु" के सम्पादक श्री के० वें० नृ० अप्पारावजी के मार्गदर्शन में सर्वोदय-सिद्धान्तों के प्रचार के लिए कार्यकर्ताओं के लिए विशेष प्रकार का प्रशिक्षण चलाने की योजना के बारे में भी विचार किया जा रहा है। इन नये कार्यक्रमों को चलाने के लिए जरूरी पूँजी इकट्ठी करने के लिए पूज्य डाक्टर साहब अर्थ-संग्रह-अभियान में हर महीने दो-चार दिन समय दे रहे हैं। आन्ध्र की जनता का प्रेमपूर्वक सहयोग हमें प्राप्त हो रहा है। अतएव हम आशा करते हैं कि इस नयी योजना के अनुसार हमारा कार्यक्रम दिन दुगुना रात चौगुना बढ़ता जायगा। इससे सर्वोदय-विचार हमारे इस क्षेत्र में अधिकाधिक लोकप्रिय बनेगा, ताकि हम गांधी शत्-जयन्ती उत्सव सफलतापूर्वक मना सकें।

—चलं जनार्दन स्वामी

रक्षाबन्धन के अवसर पर

एक खत, एक पत्र

भाईजान्,

आपको मेरा यह खत पाकर कुछ ताज्जुब होगा, और खत के साथ साथ यह 'राखी' तो आपको बिलकुल ही हैरत में डाल देगी। शायद आप सोचेंगे कि यह फातिमा मुझे भाईजान् कहती है जरूर, लेकिन है तो आखिर यह मुसलमान की बेटी! इसने राखी क्यों भेजी? यह पर्व तो हिन्दुओं का है न!

कितना अच्छा होता कि न मैं किसी मुसलमान की बेटी होती और न आप किसी हिन्दू के बेटे! हम दोनों ऐसे माँ-बाप के बेटे-बेटी होते, जो अपने को धर्म की दीवालों में नहीं घेरते, बल्कि आदमी के नाते दुनिया के हर आदमी के साथ मिल सकते, बिना किसी हिचक के, बिना किसी भेदभाव के। खैर, भाईजान् वह तो हमारे बस की बात नहीं थी, लेकिन क्या एक मुसलमान बहन की राखी एक हिन्दू भाई अपने हाथों में बाँधेगा, तो अपवित्र हो जायगा? मैं तो सोचती हूँ कि दुनिया के किसी कोने से कोई बहन दुनिया के किसी कोने के किसी भाई को मुहब्बत के इन धागों को भेजती है तो वह बिलकुल पवित्र है। आज दुनिया में ज्यादातर मनुष्य के दिल को तोड़नेवाली बातें ही चल रही हैं, वैसे में अगर दुनिया की हर बहन धर्म, देश, जाति आदि की छोटी-छोटी बातें छोड़कर भाइयों को प्यार की राखी भेज तो दिलों को जोड़ने का एक बड़ा काम हो सकता है।

बहन भाई को राखी बाँध रही है

बस, इससे अधिक तो एक बहन का प्यार अपने भाई के लिए 'राखी' के इन धागों के रूप में उसके सामने हैं ही।

खुदा का साया मेरे भाई के सर पर बना रहे, इस आरजू के साथ,

प्यार सहित, आपकी बहन
फातिमा

× × ×

प्यारी बहन फातिमा,

तुम्हारा पत्र पढ़कर मेरी आँखों में आँसू छलक आये, दुख के नहीं, सुख के।

बचपन में महारानी कर्मवती और हुमायूँ की कहानी पढ़ी थी। संकट के समय सहारे के लिए महारानी ने हुमायूँ को राखी भेजी थी। एक हिन्दू महिला ने मुसलमान पुरुष को अपना भाई बनाया था। और वह मुसलमान बादशाह अपनी हिन्दू बहन को मदद देने के लिए तुरत चल पड़ा था। हिन्दू-मुस्लिम का भेद खतम हो गया था। तभी से मन में साध उपजी थी कि मेरे कोई मुसलमान बहन होती, जो रक्षाबंधन के दिन मुझे राखी भेजती। आज तुमने मेरी वर्षों पुरानी साध पूरी कर दी।

भाई बहन के प्रेम का यह पर्व किसी धर्म का नहीं है, दुनिया के हर भाई और हर बहन के लिए है। और देखा जाय तो हम न हिन्दू की संतान हैं और न मुसलमान की, हम तो ईश्वर की संतान हैं, अल्लाह की औलाद हैं। इसीलिए बहन, मन में इस तरह का कोई भाव मत रखना कि धर्मभेद अब हमारे दिलों को टुकड़ों में बाँट सकेगे।

बहन फातिमा, तुम तो हमारे पड़ोस की ही हो। बचपन से हम एक-दूसरे से अच्छी तरह परिचित हैं। तुम्हें मालूम ही है कि हम चार भाइयों के बीच एक ही बहन थी प्यारी प्यारी गुड़िया-सी! लेकिन वह हमें ५ साल की उम्र में ही छोड़कर चल बसी! आज लगता है कि पन्द्रह सालों बाद हमारी गुड़िया लीली अब फातिमा बनकर आ गयी है। इसीलिए तुम्हारा पत्र और राखी पाकर मेरी आँखें भर आयी।

फातिमा, तुमने राखी तो भेजी ही, लेकिन उसके साथ जो भावना तुमने भेजी है वह तो बहुत ही अधिक महत्त्व की चीज है। एक जमाना था जब बहन अपनी रक्षा के लिए भाई को राखी बाँधती थी। समाज की रचना ऐसी थी कि बहन अपने को अरक्षित मानती थी, अरक्षित वे थीं भी। लेकिन अब हमें समाज की रचना बदलनी है और ऐसा समाज बनाना है, जिसमें कोई अपने को अरक्षित न महसूस करे, सब सबकी रक्षा करें।

आशा है, एक बहन का प्यार एक भाई को, और एक भाई का प्यार एक बहन को बराबर आगे बढ़ने की शक्ति देगा।

स्नेह सहित, तुम्हारा भाई
कृष्णन्

१ अगस्त, '६८

रण दिवस के अवसर पर

तुलसीदास इतना महान् कैसे हुए ?

तुलसी-रामायण हिन्दी-भाषी लोगों का एक धर्मग्रन्थ है। सारे भारत में इतनी लोकप्रिय पुस्तक दूसरी नहीं है। वैसे गीता भी है। दर्शन के रूप में वह हमें बोध देती है, लेकिन रामायण घरेलू चीज है, उसने घर-घर में प्रवेश पाया है, यह मेरा अपना अनुभव है। मेरे दो सगे भाई हैं, लेकिन मुझे उनके विषय में उतनी जानकारी नहीं, जितनी लक्ष्मण और भरत के बारे में है। ये दोनों हमारे भाइयों से भी अधिक निकट हैं। इस प्रकार लोक-जीवन में इस महान् ग्रन्थ ने प्रवेश पाया है।

यह कथा ऐसी है कि छोटे बच्चों से लेकर औरतों और ग्रामीणों तक को— जिनमें ज्यादा संस्कार नहीं है, उनको भी सुनने और गाने में आनन्द आता है। जिनको गहराई में पैठने की आदत है, उनको तो वैसे भी पैठने का मौका मिलता है। इस तरह तुलसीदासजी ने हम सब पर बड़ा भारी उपकार किया है।

तुलसीदासजी, जो वाल्मीकि के भक्त थे, वाल्मीकि से भी आगे बढ़ गये। मेरा खयाल है कि उत्तर प्रदेश में बुद्ध भगवान् के बाद जनहितकारी तुलसीदासजी सबसे महान् हो गये।

भलो जो है, पोंच जो है, दहिनो जो बामरे—सबके काम की चीज तुलसीदासजी ने दी, जिसके आधार पर सज्जन आत्मानन्द पाते हैं, जिनके आधार पर दीन-हीन, पतित आश्वासन पाते हैं, जिसके आधार पर थका-माँदा किसान अनन्त चिन्ताओं के बावजूद रात को गहरी नींद सो पाता है, जिसके आधार पर आप देखेंगे कि यूनिवर्सिटियाँ चलनेवाली हैं, राष्ट्रभाषा का प्रेम भारत में फैलेगा और भारत एकरस बन जायगा।

इतना सब तुलसीदास कैसे कर सके ? वे इतने ऊँचे कैसे हुए ? क्योंकि वे अपने को सबसे नीचा मानते थे। गणिका, अजामिल तथा दस-बीस और नाम लें। वे सब तुलसीदास की दृष्टि में उतने पापी नहीं, जितना वे स्वयं को मानते हैं। हम जरा कुछ अच्छा काम कर लेते हैं, या जो सहज परिस्थितिवश हमसे बन पड़ता है, तो उसके लिए हमारे मन में कितना अभिमान होता है ! यद्यपि हम कई पाप करते हैं, पर उन्हें छिपाते रहते हैं। खैर, छिपायें, लेकिन रामजी से कैसे छिप सकते हैं? किन्तु 'तुलसी' तो सारा पाप खोलकर रख देते हैं। इस तरह उनमें नम्रता चरम सीमा पर पायी जाती है।

कोई भी पूछ सकता है कि क्या सचमुच केवल आत्म-समाधान के लिए उन्होंने रामायण लिखी ? लेकिन तुलसीदास जब यह कहते हैं कि, मेरे जैसा 'प्रकट-पातकसम' तर गया तो क्या हम यह समझें कि वे अपने निज के लिए, अपनी इस देह के लिए यह सब कर रहे हैं ? नहीं वे समाज के अत्यन्त पापी और पतित का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। जैसे गांधीजी ने आमरण दरिद्र-नारायण का प्रतिनिधित्व किया, वैसे ही तुलसीदास ने सबसे अधिक पापी का प्रतिनिधित्व किया। उसके पाप उन्होंने अपने निज के पाप महसूस किये। इसलिए उनके स्वान्तः सुख (अपना सुख) में सारे विश्व का सुख समा गया।

श्री भारतन् कुमारप्पा जेल में मेरे साथ थे। उन्होंने मुझसे हिन्दी सीखने की इच्छा बतायी। उनकी मातृभाषा तो तमिल थी, पर इंग्लिश के उत्तम ज्ञाता थे। मैंने कहा : 'मैं हिन्दी क्या सिखाऊँ ? मेरी भी मातृभाषा हिन्दी नहीं है।' यों कहकर मैंने तुलसी-रामायण उनके साथ पढ़ना शुरू किया। उसका महत्व समझाते हुए मैंने उनसे कहा था कि तुलसीदासजी की रामायण यानी शेक्सपियर और बाइबिल, दोनों को मिलाकर समझ लो।

तो, तुलसीदासजी की साहित्यिक योग्यता मुझे सर्वथा मान्य है। फिर भी मेरा कहना है कि करोड़ों को जो शान्ति उन्होंने दी है, उसे देने की शक्ति शेक्सपियर में नहीं है और वही तुलसीदासजी की महान् शक्ति है। साथ-साथ साहित्य की भी शक्ति उनमें आ गयी। और भी कई अन्य गुण उनकी वाणी में आ गये। इसका सार मैं यही निकालता हूँ कि जो परमेश्वर का आश्रय लेता है, उसके लिए सारी चीजें सहज-लभ्य हैं।

हिन्दुस्तान के लोग सिर्फ एक ही राजा को जानते हैं: 'राजा राम'। अब भी वे उसीका नाम लेते हैं। हिन्दुस्तान की जनता की यह हालत है कि वे लोग अकबर को नहीं जानते, जानते हैं संत पुरुषों को ही।

इस दृष्टि से इतिहास में जो लिखा जाता है कि 'अकबर के जमाने में तुलसीदास हुए', यह हमारी समझ में नहीं आता। क्या वह जमाना अकबर का था या तुलसीदास का ? यहाँ यह कह सकते हैं कि तुलसीदास के जमाने में अकबर नाम का कोई एक बादशाह हुआ और उसने प्रजा पर अपनी सत्ता चलाने की कोशिश की और उसके वंशजों ने भी काफी प्रयत्न किये सत्ता चलाने के, लेकिन आखिरकार वे मिट गये। बावजूद इसके कि तुलसीदास कायम रहे और उनकी श्रद्धा आज भी लोगों के हृदय पर कायम है। —विनोबाजी के भाषण से

'गाँव की बात' : वार्षिक चन्दा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए इंडियन प्रेस (प्रा०) लि०, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित।

रवीन्द्र पुण्यतिथि : ७ अगस्त के अवसर पर

दो पंछी

पिंजड़े का पंछी था सोने के पिंजड़े में,
वन का पंछी वन में।
एक समय हो गया मिलन दोनों का,
क्या जाने था विधना के क्या मन में।
वन का पंछी बोला, 'पिंजड़े के पंछी भाई,
चलो, चलें हम वन में।'
पिंजड़े का पंछी बोला, आओ तुम वन के पंछी
पिंजड़े में रहें विजन में।'
वन का पंछी बोला, 'ना मैं जंजीरों में
नहीं कभी पकड़ाऊँगा।'
पिंजड़े का पंछी बोला, हाय, मैं वन में
कैसे बाहर होऊँगा।
वन का पंछी बाहर बैठ-बैठकर गाता
वन में जितने गान।
पिंजड़े का पंछी दुहराया करता हरदम
सिखी सिखाई बात,
दोनों की थीं दो बोलियाँ।
वन का पंछी बोला, पिंजड़े के पंछी भाई
वन के गान जरा गाओ ना।
पिंजड़े का पंछी बोला, ऐ वन के पंछी भाई,
गीत सीख लो तुम भी अब पिंजड़े के।
वन पंछी ने कहा 'चाहिए नहीं मुझे
गीत ये सीखे सिखाये।'
पिंजड़े का पंछी बोला, हाय मैं
गाऊँ वन के गीत, तो कैसे।'
वन पंछी ने कहा, 'घने निलाम्बर में,
है नहीं कहीं कोई बाधा।'
पिंजड़े का पंछी बोला, 'किस तरह मुझे खूब
ढका हुआ है
पिंजड़ा मेरा सभी ओर से।'
वन पंछी बोला, 'अपने को तुम मेघों में,
सम्पूर्ण रूप से छोड़ दो।'
पिंजड़े का पंछी बोला, 'इस निर्जन सुख के कोने में,
खुद को तुम भी बांध दो।'
वन पंछी ने कहा, नहीं मैं वहाँ
उड़ कहां पाऊँगा!'
पिंजड़े का पंछी बोला हाय मेघमाला में,
बैठ कहाँ पाऊँगा!
करते बहुत प्यार ये पंछी एक दूसरे को
पर निकट नहीं आ पाते।
पिंजड़े के छिद्रों से करते स्पर्श और
बस नयन नयन को ही निहारते जाते।
समझ नहीं पाते दोनों, दोनों को,
और नहीं दोनों ही खुद को।
दोनों अलग अलग मारते झपट्टे पंखों के और,
कातर स्वर में कहते आओ निकट।
'ना पिंजड़े का कभी बंद कर देगा दरवाजा पंछी कहता वन का।
हाय! नहीं उड़ने की मेरी शक्ति,
बोलता पंछी वह पिंजड़े का।

२ जुलाई, १८९२ --रविन्द्रनाथ ठाकुर

—अनुवादक अनिकेत

→ही समाज को बहुत हद तक आंदोलित करती है। वर्तमान समय में जीवन के हर क्षेत्र में जो घुटन और सत्रास है, शोषण और उत्पीडन है, सर्वोदय की क्रान्ति उससे मुक्ति का मार्ग प्रस्तुत करती है और एक नयी वैकल्पिक समाज रचना का समग्र चित्र पेश करती है इस आशय का सर्वोदय घोषणा-पत्र शीघ्रातिशीघ्र तैयार करना है।

• जीवन को प्रभावित करनेवाले हर सम्बद्ध क्षेत्रों की समस्याओं के प्रति हमें सक्रिय रहना है अन्याय के प्रतिकार के लिए स्थानीय शक्ति और नेतृत्व विकसित करना है और स्थानीय समस्याओं को हल करना है अन्यायों का प्रतिकार करना है। ग्रामसभाओं को इतना सशक्त बनाना है कि सरकारी तन्त्र उसके अनुसार काम करे।

• सरकार पर भरोसा न करते हुए उसकी शक्ति और साधनों का इस्तेमाल करना है संस्थाओं की शक्ति और साधन का भी इस्तेमाल करना है उनके आश्रित नहीं रहना है।

• कार्यकर्ता और कार्यक्रम में मेल हो कार्यकर्ता पूर्ण समर्पण भाव से लगें, इसके लिए आवश्यक शैक्षणिक और संगठनात्मक काम करने हैं ग्रामदानी क्षेत्रों में ग्रामसभाओं के ठोस संगठन का और उनके मार्फत कृषि, उद्योग और शिक्षण के क्षेत्र में कुछ प्रयोगिक काम भी करने हैं। ऐसे स्थानीय कार्यकर्ता तैयार करने हैं, जिनके आय के स्रोत स्वतन्त्र हों, और जो लोग इस विचार के प्रति आत्मर्पित हों। कुछ प्रखण्डों में सघन प्रयोग भी करने हैं।

• हमें यह ध्यान रखना है कि हम राजनीति को बदलना चाहते हैं, सिर्फ प्रभावित करना नहीं। हमें उसके लिए काम करना है।

• आन्दोलन को चालना देने के लिए तदर्थ संगठन खड़ा करना है, तब तक के लिए जब तक कि नीचे से बुनियादी ठोस संगठन नहीं बन जाय। संगठन के स्वरूप के बारे में सुझाव देने के लिए बैठकों में जो समिति बनी थी, गोष्ठी उससे शीघ्र सुझाव तैयार कर प्रदेश के कार्यकर्ताओं के समक्ष प्रस्तुत करने की सिफारिश करती है।

• प्रखण्ड और जिलादान की घोषणा की शर्तों की पूर्ति हुई या नहीं इसकी जाँच घोषणा से पूर्व की जाय, और घोषणा के→

चम्पारण जिले का मोतीहारी प्रखंडदान घोषित

प्रखंड का कुल रकबा : ६७,८०८-७० एकड़

	एकड़
सरकारी जमीन :	३,१४७
मोतीहारी नगर का क्षेत्रफल :	६,७१७
गैरआबादी :	५,३३२
बाहरवालों की जमीन :	६,२७९
कुल :	२१,४७५

कुल जोत का रकबा :	४६,३३३
प्रखंडदान में शामिल रकबा :	२७,३९५-०६
शामिल रकबा का प्रतिशत :	५९
पंचायत-संख्या :	१९
प्रखंड की कुल जनसंख्या :	१,२०,३२३
मोतीहारी नगर की जनसंख्या :	३२,६७२
शेष ग्रामीण जनसंख्या :	८७,६५१
प्रखंडदान में शामिल जनसंख्या :	६७,२७५
शामिल जनसंख्या का प्रतिशत :	७७

संयोजक, ग्रामदान प्राप्ति समिति

—प्रखंड विकास पदाधिकारी, मोतीहारी

सारण जिले का घोषित एकमा प्रखंडदान : आँकड़े

कुल गाँव :	९२
ग्रामदान में शामिल गाँव :	७५
कुल पंचायत-संख्या :	२२
ग्रामदान में शामिल :	१८
कुल क्षेत्रफल, एकड़ में :	३८,१७५-००
जोत की जमीन, एकड़ में :	२५,९७९-२५
ग्रामदान में शामिल, एकड़ में :	१३,३४९-६३
कुल जनसंख्या :	९०,४५६
ग्रामदान में शामिल जनसंख्या :	७०,८४२

—मंत्री, जिला ग्रामदान-प्राप्ति समिति, सारण

→आयोजन में क्षेत्र के लोगों को अधिक से अधिक शामिल करें।

• पूरे राज्य में लोक शिक्षण और विचार प्रचार के कार्यक्रम को अत्यधिक गति से चलाना है और उसके लिए ठोस संगठन करना है।•

उत्तर प्रदेश की चिट्ठी

आन्दोलन की प्रगति

आगरा जिले की फिरोजाबाद तहसील के फिरोजाबाद तथा कोटला प्रखण्ड में २१-२२ जुलाई को शिविर हुए और २३ को अभियान शुरू हुआ, जिसमें २०० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। २८ जुलाई को अभियान का समापन हुआ। उस समय तक फिरोजाबाद में ११६ तथा कोटला में ९५ ग्रामदान हुए। सर्वश्री डा० दयानिधि पटनायक, रामजी भाई, राजाराम भाई, निर्मला देशपांडे का अभियान में सक्रिय सहयोग मिला। स्थानीय महिला डिग्री कालेज और हाईस्कूल की अध्यापिकाओं के बीच सुश्री निर्मला देशपांडे का प्रभावकारी प्रवचन हुआ।

इटावा जिले में २६ जुलाई को गांधी-शताब्दी समिति के तत्त्वावधान में ग्राम-स्वराज्य गोष्ठी हुई और आगामी २१ से २८ सितम्बर '६८ तक शिविर तथा अभियान चलाने का निर्णय हुआ।

गाजीपुर जिले में भी गांधी-शताब्दी समिति के तत्त्वावधान में २८ जुलाई को बैठक हुई और वहाँ के कार्यकर्ताओं ने ११-१२ अगस्त से सादात ब्लाक में अभियान चलाने का निश्चय किया।

फैजाबाद जिले के पूरा ब्लाक में भी १३-१४ अगस्त को शिविर होने जा रहा है, उसके बाद वहाँ अभियान शुरू होगा।

कानपुर जिले की डेरापुर तहसील में मीझक नामक स्थान पर अभियान की पूर्व-तैयारी के लिए ३-४ अगस्त को शिविर हुआ।

सहारनपुर जिले के रुड़की तहसील में २०-२१ अगस्त को अभियान की पूर्वतैयारी का शिविर होने जा रहा है।

दिनांक ३१-७-६८ —कपिलभाई

सेवापुरी प्रखण्ड में २ न्याय-पंचायतें ग्रामदान में

वाराणसी जिलादान की भूमिका में चन्दौली तहसीलदान के बाद वाराणसी तहसील को लिया गया है। इसमें सेवापुरी प्रखण्ड में ३ दिनों का अभियान चला और २ न्याय-पंचायतों में अब तक १५ ग्रामदान मिल चुके हैं। १५ अगस्त '६८ तक प्रखण्डदान पूरा करने की कोशिश में ५ टोलियाँ घूम रही हैं। शीघ्र ही १० टोलियाँ और अभियान में लगने वाली हैं। —धर्मपाल सिंह

भारत में ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

भारत में				बिहार में			
प्रान्त	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान	जिला	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान
१ बिहार	२३,४६६	१६५	२	पूर्णिया	८,१५७	३८	१
२ उड़ीसा	८,५०६	३६	—	दरभंगा	३,७२०	४४	१
३ उत्तर प्रदेश	६,६००	४१	२	मुजफ्फरपुर	२,२०९	२७	—
४ तमिलनाड	५,३०२	५०	१	मुंगेर	२,११८	१८	—
५. आन्ध्र	४,२००	१०	—	हजारीबाग	१,२७३	४	—
६ सं० पंजाब	३,६३३	७	—	गया	१,१४३	१	—
७ महाराष्ट्र	३,१२६	११	—	संथाल परगना	८३९	२	—
८. मध्यप्रदेश	२,८०९	७	—	सारण	७७६	७	—
९ आसाम	१,४८६	१	—	पलामू	६३४	५	—
१० राजस्थान	१,०२१	—	—	सहरसा	९६७	१०	—
११ गुजरात	८०३	३	—	भागलपुर	४६५	३	—
१२ बंगाल	६४४	—	—	सिंहभूमि	३३०	४	—
१३ कर्नाटक	४१०	—	—	धनबाद	४०४	१	—
१४ केरल	४१८	—	—	शाहाबाद	११२	१	—
१५ दिल्ली	७४	—	—	चम्पारण	२४०	—	—
१६ हिमाचल प्रदेश	१७	—	—	रांची	४४	—	—
१७ जम्मू-कश्मीर	१	—	—	पटना	३८	—	—
कुल	६२,५५२	३३३	५	कुल :	२३,४६६	१६५	३

दरभंगा जिलादान में प्रखंडदान : ४४ ग्रामदान : ३,७२०
पूर्णिया " " " : ३८ " : ८,१५७
तिरुनेलवेली " " " : ३१ " : २,८१६
बलिया " " " : १८ " : १,४१६
उत्तरकाशी " " " : ४ " : ५६६

बिहार में जिलादान २ प्रखंडदान : १६५ ग्रामदान : २३,४६६
उत्तर प्रदेश में " २ " : ४१ " : ६,६००
तमिलनाड में " १ " : ५० " : ५ ३०२
भारत में " ५ " : ३३३ " : ६२,५५२

विनोबा-निवास, दिनांक ६ जुलाई, '६८ —कृष्णराज मेहता

फिरोजाबाद-अभियान की उपलब्धि

प्रखण्ड :	कुल ग्राम	प्राप्त	प्रतिशत
फिरोजाबाद	१४१	११६	८६%
कोटला	१४६	९५	६५%
कुल	२८७	२१४	७५%

—चन्द्रभान सिंह, मं०, अभियान आगरा क्षेत्र

वार्षिक शुल्क : १० रु०, विदेश में १८ रु०, या १ पौण्ड, या २॥ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ४६

शुक्रवार १६ अगस्त, '६८

अन्य पृष्ठों पर

आवश्यक सूचना

इस अंक के बाद से भूदान-यज्ञ का प्रकाशन शुक्रवार के बदले सोमवार को होगा। इस निर्णय के अनुसार अगला अंक शुक्रवार यानी २३ अगस्त ६८ को नहीं सोमवार यानी २६ अगस्त ६८ को प्रकाशित होगा। —व्यवस्थापक

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट वाराणसी-१ उत्तर प्रदेश
फोन : ४२८५

गुलामी : एक नये प्रकार की [1]

प्रश्न रूस पाकिस्तान को शस्त्रास्त्रों की मदद कर रहा है। इस सम्बन्ध में आपकी क्या राय है ?

उत्तर इसमें हमारी राय का क्या सवाल है ? हमसे पूछकर तो काम किया नहीं। जिनसे पूछना चाहिए उनको वोट देकर अधिकार दिया है। आपने किसी पार्टी को चुनकर दिया है, वे अधिकारी हैं। और रूस कहता है कि, 'अगर हम पाकिस्तान को मुफ्त शस्त्र देते, तो कह सकते थे कि हमने गुटबंदी की। हम तो उन्हें शस्त्र बेच रहे हैं। आपको भी बेचने को राजी हैं। हमारा तो धंधा ही है शस्त्र बनाना और बेचना। उससे हमारे देश में इम्प्लायमेण्ट बढ़ता है। आप अमेरिका से भी खरीद सकते हैं। हम यह भी नहीं कहते कि उनसे न खरीदें। और यह भी नहीं कहते कि हम आपको नहीं देते। आपको भी देने को राजी हैं। यह तो व्यापार का सवाल है, हम बेच रहे हैं।

जब तक आप पाकिस्तान से प्रेम सम्बन्ध नहीं बनाते, तब तक आपको खतरा है और पाकिस्तान को भी तब तक खतरा है। शस्त्रास्त्र से खतरा कम नहीं होगा। शस्त्र-मुक्ति की हिम्मत आप करेंगे, तो कम-से-कम पाकिस्तान के साथ आपका मामला हल हो जायगा। यह हिम्मत आप नहीं कर रहे हैं। उसके लिए मैं आपको दोष नहीं देता, वह तो बहुत बड़ी बात है। लेकिन पाकिस्तान से प्रेम-संबंध नहीं बनता, तब तक ऐसा ही चलता रहेगा।

पाकिस्तान चीन और इंग्लैंड से मदद ले रहा है। आपको भी सबसे मदद लेने की इजाजत है। आप चीन से मदद लेते नहीं क्योंकि आपका उसका विरोध है। बाकी सबसे आप मदद मांगते हैं। और आप मदद लेते हैं, तो पाकिस्तान उससे ज्यादा लेगा और फिर तो आप उससे ज्यादा लेंगे। ४० प्रतिशत खर्च अपका सेना पर होता है। बाकी सब पर मिलाकर ६० प्रतिशत। २॥ प्रतिशत तालीम पर, और ४० प्रतिशत सेना पर। तालीम पर तो ज्यादा खर्च होना चाहिए। लेकिन हिन्दुस्तान समझता है कि आर्मी पर हम कम खर्च करेंगे तो हिन्दुस्तान खतरे में है। आप अपना 'प्लानिंग' कर नहीं रहे हैं। बजट बनाने में आप स्वतंत्र नहीं हैं। पाकिस्तान ने आर्मी पर कितना खर्च किया, यह देखकर आप अपना बजट तय करते हैं, पाकिस्तान आपकी ओर देखकर। रूस अमेरिका की ओर देखकर और अमेरिका रूस की ओर देखकर। दूसरे की ओर देखकर आप अपना बजट बना रहे हैं, यानी आप गुलाम हैं। यह गुलामी सब राष्ट्र में है। इसमें से जनता को मुक्त करना है। उनको समझाना है। सरकार पर गाँवों का रंग चढ़ाना है। सारे गाँव मिलकर अपना मनुष्य चुनाव के लिए खड़ा करेंगे। पार्टी-बार्टी की बात नहीं रहेगी। गाँवों की सर्वानुमति से उनका मनुष्य खड़ा किया जायगा। हर जगह से ऐसे लोग एसेम्बली में आयेंगे। सरकार गाँवों के रंग से रँगेगी। यह सारा कब होगा ? जब जनशक्ति खड़ी होगी।

—विनोबा

[1] सीतामढ़ी २५ ७ ६८ प्राध्यापकों के साथ की चर्चा से

गोहत्या ... और 'रेशनेलिटी'

श्री संपादकजी,

'भूदान-यज्ञ' के २६ जुलाई '६८ के अंक में चिन्तन-प्रवाह के अन्तर्गत माननीय श्री सिद्धराज ढड्ढा ने गोहत्या की क्रमिक योजना के बारे में जो विचार व्यक्त किये हैं; मैं उनसे पूर्ण रूप से सहमत नहीं हूँ। यदि उचित समझें तो मेरे विचार प्रकाशित कर शंका-समाधान हेतु अवसर प्रदान करें।

एक दुग्ध देनेवाले पशु के रूप में गाय निश्चय ही अन्य पशुओं के समकक्ष ही है तथा सिवाय गो-मूत्र, गो-घृत (पुराना) तथा ऐसी ही कुछ अन्य वस्तुओं को छोड़कर गाय को एक विशेष स्थान प्राप्त करने का औचित्य मुझे कुछ समझ में नहीं आता है। प्रश्न है, क्या भारतीय संस्कृति और जिन मूल्यों की गाय के संदर्भ में हम दुहाई देते हैं, वे महज भावनात्मक बौद्धिकता की उपज हैं अथवा उसमें कुछ युक्तता (Rationality) भी है तथा जो विचार व्यक्त किये गये हैं, वे क्या एक मांसाहारी व्यक्ति की अनुभूतियाँ भी हैं? और अगर हैं भी, तो क्या वे थोथी भावुकता की प्रतीक नहीं हैं?

हिन्दू गाय का मांस नहीं खाते हैं (ऐसा सोचने और पढ़ने से भी शायद बहुतों को पाप की अनुभूति हो), मुसलमान सूअर का मांस नहीं खाते,' सिक्ख झटके का पसन्द करते हैं और मुसलमान हलाल का, इनके पीछे जो भी भावना है, वह एक धर्म-विशेष की उपज भले ही हो, परन्तु एक मानव होने के नाते मुझे लगता है, ऐसा सोचना असंगत (Irrational) है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि एक मांसाहारी व्यक्ति के लिए किसी भी जानवर का मांस खाने से हिचक अथवा परहेज केवल उसकी संकीर्ण मनोवृत्ति की उपज है।

बहुत-से काल्पनिक आदर्शवादी जब बूढ़े और बेकार पशु-धन के समाप्त करने की चर्चा को सुनते हैं तो एक तीखा व्यंग्य करते हैं—क्या घर में माँ-बाप के बूढ़ा होने पर उन्हें खाना नहीं दिया जाता है, अथवा भूखों मार दिया जाता है? उनसे मैं नम्रता-पूर्वक निवेदन करना चाहता हूँ कि पशु की कद्र केवल उसकी शारीरिक क्षमता तथा मनुष्य हेतु उसकी उपादेयता पर निर्भर करती है, परन्तु मनुष्य की कद्र में उसके मानसिक विकास तथा चिन्तन का बहुत बड़ा योग होता है। मनुष्यों में भी वृद्ध हो जाने पर उनकी तुलनात्मक बौद्धिक योग्यता एवं उनकी मनुष्यमात्र के लिए उपयोगिता के आधार पर ही उसका मूल्यांकन किया जाता है। वृद्धों में चाहे बाबा विनोबा हों, शेख अब्दुल्ला हों अथवा बर्ट्रेंड रसेल हों, हर व्यक्ति की अलग-अलग उपयोगिता है और जिस दिन उनका मूल्यांकन समाज की नजरों में नगण्य हो जायगा, उस दिन उनकी उपादेयता के समक्ष भी एक प्रश्नचिह्न लग जायगा।

मुझे ऐसा लगा है कि कुछेक आदर्श-वादियों को उपयोगिता की 'थ्योरी' हास्या-स्पद लगती है, परन्तु इसमें न तो कुछ अस्वा-भाविक ही है और न अनैतिक ही। 'जो सबको पैदा करता है, वही सबकी फिक्र भी करेगा', अधिक अच्छा हो कि हम इस भावना एवं थोथे भाग्यवाद को अपने जीवन से निकाल दें, और केवल मात्र इतना याद रखें 'भगवान उन्हींकी मदद करता है, जो स्वयं अपनी मदद करते हैं।'

आज जब मनुष्यमात्र का ही पेट भरना मुश्किल हो गया है, (भले ही उसका कारण गलत अर्थ-व्यवस्था हो) तब सुबह-शाम गो-माता को एक रोटी खिलाने और गंगा जाते समय चींटियों को आटा खिलाने में एक झूठी तृप्ति भले ही मिल जाती हो, पर अपने आप में यह तृप्ति कितनी थोथी और घृणित है, यह तो उन अनगिनत भूखों से पूछिए, जो महज एक वक्त खाकर जिन्दगी की तारीखें बदलते रहते हैं! मैं आपसे पूछना चाहता हूँ; 'आखिर आप वृद्ध और अनुपयोगी पशु-धन का संरक्षण क्यों करना चाहते हैं तथा ऐसा न करने से भारतीय-संस्कृति की कौनसी गरिमा अथवा शाश्वत मूल्य नष्ट होते हैं? आखिर हम कब तक झूठे भाव-नात्मक मूल्यों के चक्कर में भ्रमित रहेंगे?

इस बारे में दो प्रश्न रह जाते हैं :

पहला—जिस जीव को हमने पैदा नहीं किया, क्या उसको मारने का मनुष्य को कोई अधिकार है, और—

दूसरा—क्या किसी जीव की उपयोगिता मनुष्य मात्र के लिए समाप्त हो गयी, महज इस कारण उसका वध कर दिया जाय?

जीवों में मनुष्य की श्रेष्ठता यदि स्वयं सिद्ध है तो एक श्रेष्ठ जीवन को जीवित रखने के लिए एक अनुपयोगी जीवन को एक उपयोगी मरण में बदलने की प्रक्रिया में कुछ भी अनैतिक नहीं रह जाता है, तथा मनुष्य को जीवित रहने का अधिकार यदि अन्य जीवों के जीवित रहने से ऊपर है (जो उसकी श्रेष्ठता के कारण होना ही चाहिए), तो किसी पशु के मारने में भी वही अनैति-कता नहीं रह जाती है।

उपयोगिता-रहित पशु-धन के संरक्षण की दर्शन-दृष्टि अपूर्ण है, अर्थात् केवल भावना (Sentiment) की उपज है, क्या इस दर्शन में युक्तता (Rationatily) नहीं है?

भवनिष्ठ,

—राजकुमार कपूर, असिस्टेंट इंजीनियर,
६३, अफूरी बाग, रामपुर (उ० प्र०)

क्या भावना को युक्तिसंगत बौद्धिकता का विरोधी कहना युक्तिसंगत है? (पढ़ें, अगले अंक में श्री सिद्धराज ढड्ढा का प्रत्युत्तर)

संपादकीय

तीसरी धारा

रूस और चेकोस्लोवाकिया को लेकर जो तनाव पैदा हो गया था वह इतना जबरदस्त होता जा रहा था कि एक बार लगने लगा था कि दोनों के बीच खुला संघर्ष होकर रहेगा और चेकोस्लोवाकिया को शायद दूसरा हंगरी बनना पड़ेगा। लेकिन १९५८ के मुकाबिले १९६८ में रूस ज्यादा सजग है और आज का चेकोस्लोवाकिया दस साल पहले के हंगरी से ज्यादा दृढ़ और जागृत। चेकोस्लोवाकिया ही नहीं पूरे यूरोप की हवा बदली हुई है। वहाँ कम्युनिस्ट क्या गैर कम्युनिस्ट हर देश में एक नयी चेतना की लहर उठ रही है जिसके सामने श्रमिक आन्दोलन जो किसी समय सबसे अधिक प्रगतिशील जन आन्दोलन माना जाता था फीका पड़ता जा रहा है। वस्तुतः श्रमिक आन्दोलन सत्ता और सम्पत्ति के मौजूदा ढाँचे का अंग बन चुका है। ऐसी हालत में रूस दूसरे मित्र देश की नयी चेतना को अपने बम और बन्दूक से दबाने की कोशिश करेगा खास तौर पर जब वह खु्रुश्चेव के जमाने में स्टालिन की ज्यादतियों के खिलाफ कार्रवाई कर चुका था ऐसी उम्मीद नहीं थी। फिर भी डर था कि कौन जाने जो देश संघर्ष के दमन में विश्वास रखता हो और जिसने अपनी शस्त्र शक्ति सुसज्जित कर रखी है और सैनिक शक्ति रखते हुए भी भयग्रस्त है वह अपने अहंकार पर विजय न पा सके और विवेक खो बैठे। ऐसा नहीं हुआ और समझौता हो गया। तय हुआ कि चेकोस्लोवाकिया साम्यवादी परिवार में रहेगा और रूस उसके भीतरी मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।

साम्यवाद तो कब का राष्ट्रीय हो चुका था। टीटो के युगोस्लाविया ने सबसे पहले समाजवाद के साथ राष्ट्रीयता का नारा बुलन्द किया था। दुनिया के मजदूरो एक हो जाओ का नारा तो रूस ही छोड़ चुका था। अब इस नारे को भी कि कम्युनिस्ट देशों के मजदूरो एक हो जाओ कोई सुननेवाला नहीं है। विचार की बिरादरी से कहीं अधिक बड़ी और मजबूत बिरादरी होती है राष्ट्र की। इस तथ्य को स्वीकार और नये सिरे से मान लेने का एक बहुत बड़ा लाभ यह होगा कि हर देश अपनी परिस्थिति परम्परा और प्रवृत्ति के अनुसार साम्यवाद का स्वदेशी नमूना विकसित करने के लिए स्वतंत्र होगा। राष्ट्रीय बनकर साम्यवाद शायद उदार भी बनेगा। और अगर उदार बनने की प्रक्रिया इस तरह विकसित होती रही कि साम्यवाद दल के शिकंजे से निकलकर जनता के करीब आ गया यहाँ तक कि जनता का हो गया तो हो सकता है कि साम्यवाद के वाद का लोप हो जाय और साम्य ही रह जाय। अगर ऐसा हुआ तो साम्यवाद में विचार की वास्तविक शक्ति आ गयी और दुनिया सही अर्थ में साम्य के रेशमी धागे में बँध जायगी। कौन देश होगा जिसे आज के जमाने में साम्य से इनकार हो ? लेकिन अगर ऐसा न हुआ और साम्यवाद ने उग्र राष्ट्रीयता विकसित कर ली तो साम्यवादी होते हुए भी देश उसी तरह राष्ट्रीय भयों और प्रतिद्वन्द्विताओं के शिकार होकर लड़ाई करते जिस तरह आज तक देश करते रहे हैं। इसके लिए राष्ट्रीय साम्यवाद को दल निष्ठा से मुक्त होकर लोक निष्ठ होना ही पड़ेगा नहीं तो वह एक नृशंस राष्ट्रीय फासिस्ट शक्ति बनकर रह जायगा। चेकोस्लोवाकिया अगर साम्यवाद को वाद के विवाद से मुक्त करने का निमित्त बन जाय तो दुनिया के इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ेगा।

एक दूसरी बात भी है जिसकी ओर चेकोस्लोवाकिया के सम्यवादी मित्रों का ध्यान जाना चाहिए। वह यह है कि आज की दुनिया में समाज-परिवर्तन केवल आइडियालोजी का प्रश्न नहीं रह गया है। टेक्नालोजी का शक्ति कई दृष्टियों से कहीं अधिक है। साम्यवाद का सारा आकर्षण इस बात में रहा है कि उसने दुनिया को साम्य और शोषणमुक्ति का संदेश दिया है। रूस से समझौते के बाद चेकोस्लोवाकिया पोलैण्ड रूमानिया आदि देशों के साम्यवादी क्रान्तिवादी मित्रों के सामने यह सुझाव रखने की इच्छा होती है कि अगर उनका नया साम्यवाद भी विकास और संगठन के लिए उन्हीं शक्तियों पर भरोसा करता रहा जिन पर पुराना साम्यवाद या पूँजीवाद करता रहा है तो वह कब तक रूसी या चीनी साम्यवाद की भयंकरता से बचेगा ? केन्द्रित पूँजी केन्द्रित टेक्नालाजी केन्द्रित प्लैनिंग और केन्द्रित कल्चर के ही कारण तो साम्यवाद विकृत हुआ है और वह नये दमन और नये शोषण का जन्मदाता बना है उससे चेकोस्लोवाकिया अपने साम्यवाद को कैसे बचायगा ? उसे नयी तकनीक और नयी समाज-व्यवस्था की तलाश करनी चाहिए।

साम्यवाद उदार बन रहा है यह ठीक है। अब उसमें विचार की स्वतन्त्रता को स्थान मिलेगा। लेकिन क्या वह विचार भेद के साथ साथ वर्ग भेद को भी बर्दाश्त करेगा और मनुष्य को मनुष्य मानेगा ? जिस उदारता और प्रगतिशीलता में मनुष्य को मनुष्य के नाते प्रतिष्ठा नहीं होगी वह कितने दिन टिकेगी ?

सर्वोदय ने सब और साम्य दोनों की घोषणा की है। साम्यवाद में साम्य है लेकिन सब नहीं। आशा होती है कि अब साम्यवाद में रूस और चीन से अलग एक तीसरी धारा निकलेगी जो सब को स्वीकार करेगी। जिस दिन सब और साम्य का मेल होगा उस दिन मार्क्स का स्वप्न पूरा होगा समाज मुक्त मानवों का मुक्त भाईचारा होगा।

एक मित्र, दूसरा पड़ोसी

पाकिस्तान हमारा पड़ोसी है लेकिन मित्र नहीं। रूस हमारा पुराना मित्र है। मित्र ने हमको छोड़ा नहीं है लेकिन इधर पड़ोसी से कुछ अधिक प्रेम दिखाने लगा है। इस अचानक प्रेम से हमारे मन में शंका होने लगी है कि यह सचमुच प्रेम ही है या और कुछ ?

हम और पाकिस्तान कभी हाथ-पाँव के एक थे लेकिन आज अलग हैं। जब भाइयों का दिल फट जाता है तो मामूली पड़ोसीपन भी नहीं रह जाता। एक को दूसरे से डर हो जाता है। आज भारत पाकिस्तान से डरता है और पाकिस्तान भारत से। एक की ताकत दूसरे को खतरा मालूम होती है। इसलिए अभी कुछ दिन पहले

५६१

स्वाधीनता-दिवस...

"आज स्वाधीनता-दिवस है। "आज हम लोग स्वतंत्र हो गये हैं।"' तब हम इस उत्सव को क्यों मनायें?"' आज हम यह उत्सव इसलिए मना सकते हैं कि हमारी अनेक नयी आशाएँ परिपूर्ण हों। अब भारत के सात लाख (अब ५।। लाख) गाँव स्वतंत्र होकर यह दिखायें कि भारत का सच्चा सोना और खमीर तो हम ही हैं। यह नूर दिखाना स्वतंत्रता में ही सम्भव है।

—मो० क० गांधी

जब रूस ने पाकिस्तान को लड़ाई के हथियार देना तय किया तो भारत को बहुत बुरा लगा। हम सोच सकते थे कि पाकिस्तान ने किसीसे हथियार लिए तो हमसे क्या, हम भी किसी से ले लेंगे! लेकिन नहीं, हमको लगा कि हमारा पुराना दोस्त होते हुए भी रूस ने हमारे 'दुश्मन' से दोस्ती दिखायी तो हमारे साथ दगा हुआ। 'दुश्मन' के नये 'दोस्त' की नीयत पर कैसे भरोसा किया जाय?

रूस से हथियार पाकर पाकिस्तान की जो शक्ति बढेगी, उसका इस्तेमाल वह हमारे सिवाय और किसके खिलाफ करेगा? दूसरा दुश्मन उसका है कौन? पाकिस्तान चीन का 'दोस्त' है। चीन हमारा 'दुश्मन' है।

रूस की मदद से हमारे 'दुश्मनों' की शक्ति बढे, यह हमे अपने लिए खतरा मालूम होता है। क्यो न मालूम हो? हमारी शक्ति से पाकिस्तान को भी इसी तरह खतरा मालूम होता होगा।

पाकिस्तान अपनी ताकत बढायेगा तो भारत और अधिक बढायेगा। इस तरह हथियार बढाने की होड़ बढती चली जायगी। फिर पडोसी देश भी चुप नहीं बैठेंगे। नतीजा यह होगा कि दक्षिणी एशिया मे शीत युद्ध का वातावरण बन जायगा। भारत कहता है कि पाकिस्तान को हथियार देकर रूस ने एशिया के इस भाग मे युद्ध के वातावरण को बढावा दिया है, जब कि रूस हमेशा कहता आया है कि वह भारत और पाकिस्तान के बीच मित्रता और पूरे क्षेत्र मे शान्ति चाहता है। उसने इस हैसियत से कई काम किये भी हैं।

राजनीति में कौन किसका दोस्त और कौन किसका दुश्मन होता है? राजनीति मे होती ही है 'मतलब की यारी'। राजनीति शासकों की होती है; उसमे नैतिकता कहाँ? यह सोचना बेकार है कि रूस साम्यवादी है, और पाकिस्तान सम्प्रदायवादी, दोनों मे दोस्ती कैसे होगी? हर देश अपना मतलब देखकर दोस्त-दुश्मन बनाता रहता है। वह हिसाब लगा लेता है कि कब, किससे, कितनी, किस तरह की दोस्ती या दुश्मनी रखनी है। पाकिस्तान अभी तक मौका देखकर चीन या अमेरिका की गोद में बैठता रहा है; अब रूस ने अपनी बाहें खोल दी हैं। क्या शिकायत पाकिस्तान की कि उसने हथियार लिये, और क्या शिकायत रूस की कि उसने हथियार दिये?

बात यह है कि जब एक बार भारत और पाकिस्तान जैसे कमजोर और गरीब देशो ने तय कर लिया कि प्रतिरक्षा हथियार से ही हो सकती है, तो हमारी यह विवशता ही रूस और अमेरिका आदि देशों के लिए अवसर बन गयी। हमारे और पाकिस्तान के बीच की अनबन ने तो उसे विदेशी कूटनीति के लिए आमंत्रण का काम किया। अगर हमारे झगड़े इसी तरह चले रह गये, अगर हमने अपनी आन्तरिक समस्याओं के शान्तिपूर्ण समाधान न निकाले, और अगर हमने प्रतिरक्षा का लोकशक्तिमूलक कोई रास्ता न ढूँढा तो हम बडे देशों के हाथ की कठपुतली बने ही रहेंगे। वे जैसे चाहेंगे हमें नचायेंगे। क्या यह बात अभी बताने की रह गयी है कि बड़े देश, सशक्त और सम्पन्न देश, अपने हथियार, अपने पैसे, अपने प्रचार, अपनी कला और साहित्य, सबका इस्तेमाल गरीब और कमजोर देशों को अपने प्रभाव, और अपने प्रभुत्व मे रखने के लिए कर रहे हैं? उनकी चालों से बचना हो तो जनता को प्रचलित तरीकों से अलग हटकर अपनी प्रतिरक्षा, अपने विकास, और अपने लोकतंत्र के नये तरीके निकालने पडेंगे। बन्दूक और सन्दूक की व्यवस्था में जनता कभी शान्त, सुखी और सुरक्षित नहीं रह सकती। •

भगवान की थाती

एक बार नारदजी जब बैकुंठ आये, तो उन्होंने देखा कि महाविष्णु चित्र बनाने मे निमग्न हैं। विष्णु ने नारदजी की ओर दृष्टिपात नहीं किया! नारदजी को विष्णु का यह व्यवहार बड़ा अपमानजनक प्रतीत हुआ। आवेश मे पास ही खड़ी लक्ष्मी से पूछा—"आज इतनी तन्मयता के साथ भगवान् किसका चित्र बना रहे हैं?" लक्ष्मी ने कहा—"अपने सबसे बड़े भक्त का—आपसे भी बड़े भक्त का!"

दोहरे अपमानित नारदजी ने पास जाकर देखा, तो आश्चर्यस्तब्ध हो गये—अचल ध्यानावस्थित विष्णु एक मैले-कुचैले, अर्द्धनग्न मनुष्य का चित्र बना रहे थे। नारदजी का चेहरा क्रोध से तमतमा गया। वे उल्टे पाँवों भूलोक की ओर चल पडे। कई दिनों के भ्रमण के बाद उन्हें एक अत्यन्त घिनौनी जगह पर पशु-चर्मो से घिरा एक चमार दिखायी दिया, जो गदगी और पसीने से लथपथ चमड़ों के ढेर को साफ कर रहा था। पहली दृष्टि में ही नारदजी ने पहचान लिया - विष्णु उसीका चित्र बना रहे थे। दुर्गन्ध के कारण नारदजी उसके पास न जा सके। अदृश्य होकर दूर से ही उसकी दिनचर्या का निरीक्षण करने लगे।

सन्ध्या होने को आयी, किन्तु वह चमार न तो कभी मंदिर में गया और न आँख मूँदकर उसने क्षणभर के लिए हरि-स्मरण ही किया। नारदजी के क्रोध की सीमा न रही। शाप देने के लिए उन्होंने अपना तेजस्वी बाहु ऊपर उठाया। किन्तु, सहसा लक्ष्मी ने प्रकट होकर उसका हाथ पकड लिया—'देव, भक्त की उपासना का उपसंहार तो देख लीजिए। फिर जो करना हो, वह कीजिए।"

चमार ने चमड़ों के ढेर को समेटा। सबको एक गठरी में बांधा। फिर एक मैले कपडे से सिर से पैर तक शरीर पोंछा और गठरी के सामने झुककर विनय-विह्वल वाणी मे कहने लगा—'प्रभो, दया करना, कल भी मुझे ऐसी ही सुमति देना कि, आज की तरह ही पसीना बहाकर तेरी दी हुई इस चाकरी मे सारा दिन गुजार दूँ।"

—श्री रामकृष्ण परमहंस के वचनामृत के आधार पर

एक अवसर : एक चुनौती

सर्वोदय संदेश घर घर पहुँचायें

हाल ही में जब हम कुछ लोग विनोबाजी से बलिया में मिले, तो उन्होंने एक ही बात पर विशेष जोर दिया और वह यह कि देश के प्रत्येक गाँव में सर्वोदय विचार बराबर पहुँचाने की आज सख्त आवश्यकता है। प्रत्येक राज्य में भिन्न भिन्न भाषाओं में प्रकाशित होनेवाली सर्वोदय पत्र पत्रिकाएँ ही इसका एकमात्र साधन हैं। उनकी यह बात नयी नहीं थी, परन्तु उनकी बातों में जो त्वरा और गहरी चिन्ता व्यक्त होती थी, वह विशेष मार्मिक थी। उनकी बातों के सन्दर्भ का हम लोगों को भान था। गत तीन वर्षों में सर्वोदय आन्दोलन के आयाम बहुत बदल गये हैं। आज ग्रामदानों की संख्या ६५ हजार से अधिक हो गयी है, बिहार, मद्रास और उत्कल—तीन प्रदेशों ने राज्य-दान का संकल्प घोषित किया है और उत्तर प्रदेश ने भी बलिया में संकल्प जाहिर किया है। इन चारों प्रदेशों के गाँव देश के कुल गाँवों की लगभग आधी संख्या तक पहुँच जाते हैं। परन्तु जो गाँव ग्रामदान में आ चुके हैं उनमें कितने गाँवों के साथ हमारा सतत सम्पर्क सध सका है और देश के कुल साढ़े पाँच लाख गाँवों में कितने गाँवों तक हमारा विचार पहुँच सका है?

देश में कुल जितनी सर्वोदय पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं उनकी ग्राहक-संख्या एक लाख से भी कम है और एक गाँव या एक शहर में कई ग्राहक जाते होंगे ऐसे स्थानों को गिनें तो उन स्थानों की संख्या पन्द्रह हजार से ज्यादा न होगी। ग्रामदानी गाँवों में भी दस हजार से अधिक गाँवों में पत्रिकाएँ नहीं पहुँचती होंगी। यदि हजारों गाँवों का आपसी सम्बन्ध नहीं जुड़ता है और आन्दोलन की गतिविधि से परिचय नहीं रहता है, तो फिर आन्दोलन गहरा और शक्तिशाली कैसे होगा? यदि हमारी आकांक्षा ५ लाख गाँवों को ग्रामदान में लाने की है, तो समय पर वहाँ मात्रा सन्देश पहुँचाने का भी हमें आयोजन करना ही होगा।

हम सबको अपनी पत्र पत्रिकाओं की ग्राहक-संख्या बढ़ाने का गम्भीर प्रयास करना चाहिए, ताकि वे प्रत्येक ग्रामदानी गाँव में पहुँच सकें। प्रादेशिक तथा जिला सर्वोदय मण्डलों को इसमें पहल करना चाहिए। प्रत्येक गाँव में अखबार पहुँचाने का एक सादा उपाय विनोबाजी ने सुझाया है। उनका सुझाव यह है कि प्रत्येक गाँव में कम से कम दस सर्वोदय-पात्र हों। इनसे सालाना ३६ रुपये एकत्रित होते हैं। उनमें से दस रुपये सर्वोदय-पत्रिका के लिए खर्च किये जायँ और बारह रुपये प्रादेशिक सर्वोदय मण्डल तथा सर्व सेवा संघ को दिये जायँ और बाकी रकम गाँव के काम के लिए गाँव में ही रखी जाय। अब इस योजना को अमल में लाने और हर गाँव में इसे जारी करने का प्रयत्न स्थानीय कार्यकर्ताओं को करना चाहिए। ग्रामदानी गाँव के लोगों को भी बाहरी दुनिया में आन्दोलन की ताजा गति विधियों से तथा नये विचारों और जानकारियों से वाकिफ होने की आवश्यकता महसूस करनी चाहिए।

विनोबाजी ने हमारी पत्र-पत्रिकाओं का स्तर उठाने पर भी उतना ही जोर दिया है। इन पत्र पत्रिकाओं के सम्पादन कार्य में लगे हुए हम सब लोगों को इस पर गम्भीरता से सोचना चाहिए और इसका एक उपाय है कि पत्रिकाओं और पाठकों के बीच दोनों ओर से, विचारों की लेन देन चलनी चाहिए। पाठक केवल निष्क्रिय पाठक ही न रहें, बल्कि पत्र-पत्रिकाओं के बारे में अपनी राय और अपने सुझाव देते रहें। गाँव के लोग अपने काम और अनुभवों की जानकारी भेज सकते हैं जिन्हें पत्रिकाओं में प्रकाशित कर सकें जिससे दूसरों को भी लाभ हो। इस प्रकार परस्पर सहयोग से पत्रिकाओं का स्तर उन्नत हो सकता है।

प्रत्येक गाँव में गांधी-जयन्ती

इस वर्ष की गांधी जयन्ती के लिए केवल दो महीने बाकी हैं। उस दिन से गांधी जन्म शताब्दी का वर्ष आरम्भ होता है। गांधी जन्म शताब्दी की राष्ट्रीय समिति की लोक सम्पर्क उपसमिति ने निश्चय किया है कि उस दिन देश के प्रत्येक गाँव में गांधीजी का तथा शत्-संवत्सरी का सन्देश पहुँचाने का पूर्ण प्रयास करना चाहिए। उस दिन कोई-न-कोई व्यक्ति हर एक द्वार खटखटाये और हर एक घर में सन्देश पहुँचाये।

यह बड़ा सीधा-सादा और साधारण-सा काम दिखाई देता है। लेकिन वास्तव में यह बहुत बड़ा काम है और इतना हम कर सकें तो निश्चित ही बड़ा काम होगा। इस काम में रुचि रखनेवाली प्रत्येक संस्था के पास—जैसे सर्वोदय-संस्थाएँ कार्यकर्ता शिक्षक विद्यार्थी, पंचायत सहकारी समितियाँ राजनैतिक कार्यकर्ता आदि के पास जाना होगा और उन्हें काम में लगाना होगा। उपयुक्त उपसमिति इस प्रयत्न में है कि एक फोल्डर देश की समस्त भाषाओं में पर्याप्त मात्रा में तैयार किया जाय जो हर घर पहुँचाया जा सके। इसमें कुछ समय लगेगा। उस बीच प्रादेशिक सर्वोदय मण्डल गांधी जन्म शताब्दी समिति के सहयोग से इसकी पूर्व-तैयारी के काम में लगें। क्षेत्र विशेष की जिम्मेदारी लेने के लिए किसी-न-किसी प्रमुख संस्था को तैयार करना होगा जो क्षेत्र के अन्तर्गत अन्य संस्थाओं की हर सम्भव सहायता और सहयोग प्राप्त करे। उन विभिन्न संस्थाओं के सहयोग की सम्मति प्राप्त करने के लिए समुचित अधिकारियों से सम्पर्क करना होगा। हर सम्भव साधनों द्वारा इस विचार का व्यापक प्रसार अभी से करना होगा कि प्रत्येक गाँव में ठीक ढंग से गांधी जयन्ती मनायी जानी चाहिए जिसमें प्रभात फेरी सूत्रयज्ञ प्रार्थना-सभा आदि हों। ग्राम दान ग्रामाभिमुख खादी और शान्ति-सेना का त्रिविध कार्यक्रम गांधी जन्म शताब्दी के सन्देश का एक प्रमुख भाग बनेगा ही। यह सन्देश घर घर पहुँचाने के अलावा, प्रत्येक प्रार्थना सभा में पढ़ा जाना चाहिए। हम सर्वप्रथम प्रत्येक ग्राम और प्रत्येक घर तक पहुँचने का पूरा प्रयत्न करें और फिर उनके साथ नित्य और स्थायी सम्पर्क साधने की कोशिश करें।

—मनमोहन चौधरी

स्वामित्व, साझेदारी और अमानतदारी

[इस बार आबू सम्मेलन में कई तात्त्विक प्रश्न छिड़ गये। प्रश्न महत्त्व के हैं। उन प्रश्नों पर बलिया में विनोबा के साथ जो संवाद हुआ, उसे हम क्रमशः प्रकाशित कर रहे हैं। —सं०]

राममूर्ति : पहले नारा था—'सबै भूमि गोपाल की'। लेकिन अब सुलभ ग्रामदान में हम भूमि का स्वामित्व ग्रामसभा को सौंप रहे हैं। इस तरह हम मिलकियत को समाप्त नहीं कर रहे हैं, बल्कि एक नयी मिलकियत खड़ी कर रहे हैं?

विनोबा : ऐसा है, यह जो भाष्य में आया है—"शब्दमात्रे विवादः स्यात् न तु अर्थ-भेदः"—शब्दमात्र में भेद है, अर्थ में नहीं है। जमीन परमात्मा की है और उसकी तरफ से ग्रामसभा के पास है। मिलकियत ग्रामसभा की नहीं है, भगवान की है। 'सबै भूमि गोपाल की' हमने गोपाल की सत्ता हटाकर ग्रामसभा की सत्ता स्थापित की, ऐसा नहीं है। गोपाल की सत्ता कायम है। उसकी तरफ से ग्राम-सभा काम करेगी। विरासत का, पैदावार का अधिकार व्यक्ति का रहेगा और जमीन बेचने का हक ग्रामसभा का रहेगा यानी ग्रामसभा की अनुमति से गाँव के अन्दर जमीन बेची जा सकती है। प्रेम-चिह्न के तौर पर हर कोई बीसवाँ हिस्सा जमीन दान देगा तो उसमें हमने 'सबै भूमि गोपाल की' मन्त्र छोड़ा है, ऐसा हमें लगता नहीं।

मिलकियत किस-किसकी हो सकती है?—
(१) या तो उस व्यक्ति की हो सकती है,
(२) सामूहिक यानी गाँव की हो सकती है,
(३) सरकार की यानी 'नेशन' की हो सकती है।

इन तीन के अलावा कुछ नहीं हो सकता है। 'नेशन' की मिलकियत करना हम उचित नहीं समझते हैं। अगर कहनेवाले की यह मंशा हो कि जमीन सबकी है, सबको समान रूप से बाँटी जाय, और सुलभ ग्रामदान में वह छोड़ा गया है, तो यह आरोप सही है। लेकिन मुख्य बात यह है कि हृदय को हृदय के साथ जोड़ना है। भूमि तो आप छोड़कर जानेवाले हैं और भूमि यहीं पर रहनेवाली है। इस हालत में दिल जोड़ना ही मुख्य बात है। इसलिए सुलभ ग्रामदान लाखों होंगे। पुराने ग्रामदान तो पाँच लाख में से मुश्किल से पाँच-छः हजार हुए थे। क्रान्ति व्यापक होनी है। कोई बहुत अच्छी चीज है, जैसे—शंकराचार्य का अद्वैत। लेकिन वह व्यापक कब होगा? व्यापक तो उपासना होती है। इसलिए सुलभ ग्रामदान में हमने पुराना विचार छोड़ा। उस समय हमने देखा कि अभी तक दो-चार हजार गाँव ही हाथ में आये हैं। इसी गति से काम चलेगा तो पाँच लाख तक कब पहुँचेंगे? और चीन का जवाब कब देंगे? इसलिए हमने सुलभ ग्रामदान की बात चलायी। हमारे कुछ साथियों को लगा कि यह 'वाटर डाउन' किया गया है, पतला बनाया है। लेकिन जब बंगाल जैसे प्रदेश में तीन-चार सौ ग्रामदान हुए, तब जयप्रकाशजी के ध्यान में आया कि जिस बंगाल में बापू की भी नहीं चली, वहाँ पर इतने ग्रामदान होते हैं तो यह चीज प्राणमय है। इसकी व्यापकता व्यापक है। और, जिसकी व्यापकता व्यापक होती है उसीमें क्रान्ति होती है, इसलिए जयप्रकाशजी को यह बात जँच गयी।

राममूर्ति : पहले के ग्रामदान में जमीन का समान वितरण था। नये ग्रामदान में नहीं है। केवल बीघा-बिस्वा में 'शेयरिंग' नहीं होती और जब 'शेयरिंग' नहीं रह जाती तो क्रान्तिकारिता कहाँ है?

विनोबा : क्रान्ति अच्छे विचार में है और क्रान्ति व्यापक विचार में है। एक विचार अच्छा है, लेकिन वह व्यापक नहीं हो सकता है, तो अपने स्थान पर है। लेकिन वह क्रान्ति नहीं ला सकता है। सन्तों का विचार अच्छा है। जिस जमाने में उसकी आवश्यकता थी उस जमाने में काल के कारण उपयोग हुआ। लेकिन समझने की बात है कि आज कोई अच्छा विचार क्रान्ति करेगा जो व्यापक बन सकेगा। मुझे उस वक्त उम्मीद नहीं थी और आज भी नहीं है कि पुराना ग्रामदानवाला विचार एक 'मीजरेबुल पीरिएड' (मर्यादित काल) में व्यापक बन सकता है। अपनी पीढ़ी में तो, यह असम्भव दिखता है और आगे तो और कम सम्भव होगा, क्योंकि जन-संख्या बढ़ रही है। इस हालत में वह काम और कठिन होगा। फिर लोगों को दूसरे धन्धों में लगाना पड़ेगा। इसलिए जमीन का बँटवारा तो 'टोकेन' (प्रतीक) स्वरूप का होगा। इस में सामूहिक मिलकियत मानी गयी है। तो साथ-साथ एक चीज मानी गयी है कि 'किचेन गार्डेनिंग' के तौर पर हर एक को पौन एकड़ जमीन दी जानी चाहिए और बाकी जमीन की मिलकियत सामूहिक होनी चाहिए। मैं सोचता हूँ, भारत में मैं वैसा करूँ और हर परिवार को पौन एकड़ दूँ तो सामूहिक मिलकियत के लिए जमीन बाकी नहीं रहेगी। बलिया जिले में टोटल 'जियोग्राफिकल एरिया' (कुल भौगोलिक प्रदेश) आधा एकड़ है। जिसमें शहर, नदी, ताल, ऊसर सब कुछ आ गया। तो फिर काश्त के लिए कितना आयगा? एक-चौथाई एकड़। इस हालत में 'किचेन गार्डेन' के लिए जमीन बाँट दी जाय तो सामूहिक मिलकियत के लिए कुछ भी शेष नहीं रहेगी।

इसलिए भारत की परिस्थिति देखते हुए सुलभ ग्रामदान अत्यन्त व्यावहारिक चीज है और अच्छी भी है। हमने यह भी कहा है कि गाँव में जमीन की बिक्री होगी, तो उसके साथ भी बीसवाँ हिस्सा बँटना चाहिए। किसीने २० एकड़ जमीन खरीदी तो उसे एक एकड़ जमीन दान देनी होगी। सुलभ ग्रामदान में 'ग्राम-कोष' के लिए ४० वाँ हिस्सा देने की बात है, मुनाफे का नहीं, आमदनी का ४० वाँ हिस्सा देने की बात है। अगर मैं आपको बीसवें हिस्से जमीन के साथ और एक २० वाँ हिस्सा दूँ, तो आपको उसमें मेहनत करनी पड़ेगी, लेकिन ग्रामकोष के द्वारा तो पैदावार का ही हिस्सा देना है। इस तरह कुल मिलाकर आठवाँ हिस्सा बँटा और 'लेवलिंग प्रोसेस' (समानीकरण की प्रक्रिया) जारी रहेगी। आप की पीढ़ियाँ जमीन के बारे में बार-बार सोचेंगी, कौनसे→

हमारी यूरोप-यात्रा—६

वियना में गांधी-विनोबा की याद

रात्रि के सन्नाटे को चीरती हुई हमारी रेल स्विटजरलैंड को पीछे छोड़कर आस्ट्रिया की धरती पर दौड़ रही थी। यूरोप की रेलें अन्तर्राष्ट्रीय होती हैं और सीमाओं पर दोनों तरफ के देश पासपोर्ट तथा कस्टम की चेकिंग के लिए अपने पहरेदार भेजते हैं। वे कभी नींद भंग करते हैं तो कभी सामान की तहकीकात के नाम पर तंग करते हैं। इन सब अनुभवों का अपना ही रंग होता है जो काफी समय भी बर्बाद करता है। ज्यूरिख और वियना के बीच पूरी रात का सफर है। रेल बहुत महंगी है पर भीड़भाड़ का नामोनिशान नहीं। कभी-कभी यात्रियों और पहरेदारों के बीच जबानी जंग भी छिड़ जाता है। अक्सर लोग कार से यात्रा करते हैं, या फिर हवाई-विमान से।

वियना की पहली सर्द सुबह चहल-पहल की गरमी के कारण भली प्रतीत हो रही थी। आस्ट्रिया का प्रथम-दर्शन अन्तर्राष्ट्रीयता की झलक दे रहा था। पश्चिमी-यूरोप के लिए भी और पूर्वी यूरोप के लिए भी आस्ट्रिया द्वार की भांति है। आस्ट्रो-हंगेरियन साम्राज्य के इतिहास की गाथाएं हवा से भी सुनी जा सकती हैं जब कि १२ देशों के नागरिक एक ही सत्ता-सूत्र में बंधे हुए थे। शायद इसीलिए आस्ट्रिया के वातावरण में विविध मानव-संस्कृतियां एवं स्वभावों की गहरी छाप है। यह अच्छा ही है कि पूर्व और पश्चिम के राजनीतिक विवाद में आस्ट्रिया की भूमिका तटस्थता की है। यह तटस्थता इस देश के महत्व को और भी बढ़ा देती है। यात्रियों व्यापारियों और विचारकों का खुला आवागमन इस तटस्थता के अभाव में आज की भांति संभव नहीं हो पाता। आस्ट्रिया यूरोप का हृदय बन गया है। वियना तो इस हृदय का भी हृदय है। इस हृदय में बहनेवाली धारा का नाम है दानुब नदी। जर्मनी के काले जंगलों से चलकर आस्ट्रिया चेकोस्लोवाकिया हंगेरी युगोस्लाविया रोमानिया बुल्गारिया और सोवियत संघ की धरती के चरण पखारती यह नदी काले सागर से जाकर मिल जाती है। आठ देशों को एक ही धागे में पिरो देने का काम करनेवाली इस नदी को गंगा से कम पवित्र नहीं कहा जा सकता। इसलिए वियना ने अनेक कलाकारों संगीतज्ञों और दार्शनिकों को प्रेरणा दी होगी। महान् संगीत-शास्त्री बीथोवन से लेकर महान् मानस शास्त्री फ्रायड तक जैसे लोगों की रचना-भूमि वियना रही है। संगीत और नाटक के प्रेमी यूरोपियनों के लिए वियना मक्का की तरह महत्वपूर्ण है। गांधी परिवार की हमारी प्रिय सदस्या मीरा बहन के जीवन को गांधी और बीथोवन ने प्रभावित किया है इसलिए गांधीजी की मृत्यु के बाद वे वियना आकर रहने लगी हैं ताकि अपनी वृद्धावस्था में वे बीथोवन के संगीत का सान्निध्य पा सकें।

मीरा बहन से मुलाकात

मैं मीरा बहन से कभी मिला हुआ नहीं था। अपना देश ब्रिटेन छोड़कर वे भारतीय नागरिक बन गयी थीं और अब भी वे वियना भारतीय पासपोर्ट पर रह रही हैं। किन्तु गांधी के बाद के भारत में या गांधी रहित भारत में उनके लिए कोई प्रेरणा नहीं बची होगी और शायद इसीलिए वे बीथोवन की पास्टोरल सिम्फोनी के निकट आकर बस गयी होंगी। वियना में उन्हें अच्छे स्वास्थ्य में पाकर और उनसे कुशल समाचार जानकर मुझे बेहद प्रसन्नता हुई।

शांति आन्दोलन और ग्रामदान

वियना पूर्व और पश्चिम के बीच पुल की तरह है। इसलिए यहां अनेक अन्तर्राष्ट्रीय शांति आन्दोलनों के प्रधान कार्यालय हैं। शांतिवादियों के मुक्त संचार की व्यवस्था करनेवाली संस्था सरवास और तमाम विश्व के प्रगतिशील क्रिश्चियनों को शान्ति के कार्य क्रमों में भाग लेने की प्रेरणा देनेवाली संस्था फेलोशिप आफ रीकन्सीलिएशन (एफ० ओ० आर०) के केन्द्रीय कार्यालय वियना में ही हैं। क्वेकर-समाज की ओर से भी यहां एक अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र है। क्वेकर केन्द्र के संचालक श्री मेटकाफ एफ० ओ० आर० के मंत्री श्री रेन्नेर्ट एवं आस्ट्रियन

—टुकड़े इकट्ठा करने चाहिए वगैरह बातों पर आवश्यकता के अनुसार सोचेंगी।

रामभूर्ति : ग्रामदान में ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त नहीं है जब कि बापू ने सबसे अधिक जोर ट्रस्टीशिप पर ही दिया था ?

विनोबा : यह अजीब बात है। यह मामला पहले उठा था गुजरात में। जब वहां गया था कि बापू का विचार ट्रस्टीशिप का है और बाबा 'ओनरशिप ट्रान्सफर' (मिल्कियत का हस्तान्तरण) करता है। तब मैंने समझाया था कि ट्रस्टीशिप का अर्थ क्या है? पिता अपने पुत्र के लिए ट्रस्टी है। उसके दो लक्षण हैं—(१) पुत्र को जल्द से जल्द समर्थ बनाकर उसके हाथ में सब कुछ सौंपना चाहता है। (२) जब तक उसके हाथ में नहीं सौंपा तब तक वह अपनी जितनी चिन्ता करेगा उससे ज्यादा चिन्ता उसकी करेगा। यहां अपनी चिन्ता करना और बाद में ट्रस्ट की करना यह ट्रस्टी का लक्षण नहीं है। मैं उत्तम ट्रस्टी बाप को मानता हूं। अपने हाथ में मिल्कियत कायम रखना यह बाप का लक्षण नहीं है। सुलभ ग्रामदान में व्यवहारतः (प्रैक्टिकली) जमीन आपके हाथ में रहेगी। और इसको मुख्य बात यह है कि इसमें सहयोग होता है। अब गुजरातवालों का आक्षेप नहीं रहा है। वे कहते हैं कि सुलभ ग्रामदान गांधीजी की थियरी के अनुसार है।

रामभूर्ति : वर्ग संघर्ष एक तथ्य है जिससे हम इन्कार नहीं कर सकते। हमारा सिर्फ इतना काम है कि हम वर्ग-संघर्ष को शांति पूर्ण हल निकालें। लेकिन आपने स्वराज्य शास्त्र में समय पसमय का भेद माना है वर्ग भेद नहीं। मेरा मानना है कि अगर एक बार हमने वर्ग भेद का अस्तित्व मान लिया तो संघर्ष अनिवार्य है। इसके अलावा क्या हम कहेंगे कि पूंजी के मालिक और श्रम के मालिक (मजदूर) अलग अलग वर्ग के हैं ?

(उत्तर अगले अंक में)

शान्ति-आन्दोलन के दो प्रमुख नेता, श्रीमती हिल्डगार्ड गोस्स एवं डा० ग्वार्स के साथ एक संयुक्त मीटिंग में हमारी बातचीत हुई।

वैचारिक दृष्टि से तो इन सज्जनों को विशेष कुछ समझने की जरूरत नहीं थी, क्योंकि ये सभी शान्तिवादी हैं और सर्वोदय विचार की मूलभूत बातों से परिचित हैं। परन्तु वर्तमान गांधी-आन्दोलन, ग्रामदान की उपलब्धियाँ एवं दिक्कतें तथा विश्व-सन्दर्भ में अहिंसक-क्रान्ति की सम्भावनाओं के बारे में चर्चा करने के लिए हम एकत्र हुए थे। श्रीमती हिल्डगार्ड गोस्स विशेष रूप से दक्षिण अमेरिका की समस्याओं का अध्ययन करती रही हैं और वहाँ के आन्दोलनों के साथ निकट से सम्बद्ध हैं। आर्थिक विषमता, सामाजिक अन्याय और मानवीय शोषण के खिलाफ विधायक क्रांति का कार्यक्रम दिये बिना कोरी हिंसा विरोधी बातोंवाला शान्ति-आन्दोलन नाकामयाब ही रहेगा, इस बात पर वे काफी जोर दे रही थीं। यूरोप का परंपरागत शान्ति-आन्दोलन इस दिशा में अब सोचने लगा है, और इसीलिए वह ग्रामदान, जिलादान एवं प्रान्तदान की अद्यतन जानकारी प्राप्त करने के लिए बेहद उत्सुक हैं। इन मित्रों ने ग्रामदान, पुष्टि, ग्रामसभा, उसके बाद का निर्माण कार्य, सरकार के साथ का हमारा सम्बन्ध, इत्यादि सवालों को समझने के लिए हमारे साथ कोई तीन-चार घण्टे चर्चा की।

नॉनवायलेंस इंटरनेशनल

"जिस प्रकार 'कम्युनिस्ट इंटरनेशनल' है, उसी प्रकार हमें 'नानवायलेंस इंटरनेशनल' की बात दिमाग में रखकर काम करना चाहिए। अमेरिका में नीग्रो लोग कोई कदम उठाते हैं, या भारत में विनोबा का ग्रामदान चलता है, या सिसली में डेनिलो डोलची माफिया विरोधी आन्दोलन करते हैं तो इन अहिंसक आन्दोलनों के समर्थन में सारे विश्व के अहिंसावादियों को 'सोलिडेरिटी' जाहिर करनी चाहिए।" एफ० ओ० आर० के मंत्री रेन्नेर्ट ने कहा।

हम वियना में अन्तर्राष्ट्रीय 'पीस इंस्टीच्यूट' के अतिथि थे। 'वर्ल्ड पीस काउंसिल' के तत्वावधान में यह इंस्टीच्यूट चलता है। इंस्टीच्यूट के प्रमुख संचालकों के साथ भी हमारी लम्बी बैठक चली। गांधी ने विषमतापूर्ण आर्थिक रचना को बदलने के लिए शान्तिपूर्ण संघर्ष की जिस प्रक्रिया की विवेचना की, उस पर गंभीर शोध का काम गांधी-शताब्दी के अवसर पर यह इंस्टीच्यूट अपने हाथ में लेना चाहता है। साथ ही गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद एवं भारत में जातिभेद को समाप्त करने का जो संघर्ष किया, उस पर एक सेमिनार करने की योजना भी इंस्टीच्यूट कर रहा है।

यूनेस्को के मंत्री डा० एरिक फ्रोनर ने मुझे बताया कि एक आस्ट्रियन लेखक श्री बेच्ची ने गांधी पर एक खूबसूरत नाटक लिखा है, गांधी-शताब्दी के दौरान यह नाटक प्रदर्शित करने की योजना बनानी चाहिए। आस्ट्रिया के बहु-विश्रुत शिक्षा शास्त्री प्रो० अर्नेस्ट विन्टर बड़ी गंभीरता से विकेन्द्रीकरण एवं मशीनों से दमित समाज को मानवीय-स्केल पर संगठित करने के गांधी-विचार का महत्त्व स्वीकार करते हैं।

सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखिका एवं पेन क्लब की मंत्रिणी श्रीमती हिल्डे स्पील, यूनाइटेड नेशन्स एसोसिएशन के मंत्री श्री आस्वेल बुस्टेन हागेन, आस्ट्रो-इंडियन एसोसिएशन की मंत्रिणी श्रीमती केजरलिंग एवं उनके प्रोफेसर पति इत्यादि अनेक दिलचस्प व्यक्तियों से हमारी मुलाकातें हुई। इन सब लोगों से बातचीत करने के दौरान मुझे बार-बार महसूस होता है कि यदि हमारा यह सम्पर्क कायम रह सके, इन सब लोगों को हमारे आन्दोलन की नियमित जानकारी भेजी जा सके, ग्रामदान की मोटी-मोटी उपलब्धियों का परिचय देनेवाली कोई छोटी-सी पुस्तिका इन्हें भेजी जा सके, तो शायद 'नॉनवायलेंस इंटरनेशनल' का निर्माण करने में इन लोगों का पूरा सहयोग प्राप्त होगा। निश्चय ही जय-जगत् की भूमिका में हमारा विश्व के साथ सम्पर्क बढ़ना चाहिए और ग्रामदान की बात सारे संसार की जानकारी में अधिक-से-अधिक आनी चाहिए।

—सतीशकुमार

हजारीबाग-गोष्ठी का निष्कर्ष

सर्वोदय की राज्य-व्यवस्था

गाँव से राज्य और राष्ट्र-स्तर तक के संगठन के बारे में चिंतन और विवेचन की आवश्यकता

काफी विचार-विमर्श के बाद इस गोष्ठी में ऐसा महसूस किया गया कि सभी देशों में राजनीतिक संगठन में इन दिनों गाँवों को सबसे कम महत्त्व दिया जाता है, जिसके फलस्वरूप न जाने कितनी समस्याएँ खड़ी हो गयी हैं। अपना देश और राज्य इसका अपवाद नहीं है। अतः यह गोष्ठी सर्वप्रथम जोर डालती है कि ग्रामदानी गाँवों को ग्रामसभा ही देश की स्थानीय से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक रचना की मुख्य इकाई होगी। ग्रामदान आन्दोलन के कारण गाँव के संगठन का चित्र सर्वोदय-दर्शन के अनुसार स्पष्ट हुआ है।

परन्तु दूसरे ही चरण में यह भी महसूस किया गया कि जिला और राज्यदान के रूप में आन्दोलन के बढ़ते चरण के अनुसार अब यह आवश्यक हो गया है कि गाँव के बाद प्रखण्ड से जिला, राज्य तथा पूरे देश के स्तर तक के राजनीतिक संगठन का स्वरूप स्पष्ट होना चाहिए, जिसका अभी तक नितान्त अभाव रहा है।

इस सन्दर्भ में यह गोष्ठी समझती है कि बिहार की एक विशेष परिस्थिति है, क्योंकि यही ऐसा राज्य है, जिसने सारे देश में सबसे पहले राज्यदान का संकल्प लिया है और यहाँ के लोग इस ओर प्रयत्नशील भी हैं। साथ ही इस राज्य की राजनीतिक अस्थिरता भी हमें मजबूर करती है कि हम सर्वोदय-दर्शन के अनुसार राजनीतिक संगठन की तात्कालिक और दीर्घकालिक योजना प्रस्तुत करें। इसलिए→

भारत में छात्र-आन्दोलन

संदर्भ : राष्ट्रीय नहीं, स्थानीय

शिक्षा-व्यवस्था में परिवर्तन आवश्यक

'भारत का छात्र आन्दोलन इतने वर्गों में विभाजित है कि अभी तक उसका कोई राष्ट्रीय स्वरूप नहीं बन पाया है। यहाँ के छात्र आन्दोलन ज्यादातर स्थानीय समस्याओं को लेकर होते हैं। छात्रों का यह असंतोष वस्तुतः परिवार और समाज में व्याप्त व्यापक असंतोष और निराशा का ही एक अंश है। आज के भारतीय छात्र जो भी कर रहे हैं वह इसके पूर्व की पीढ़ी की देन है। इस स्थिति में परिवर्तन के लिए शिक्षा व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन आवश्यक है।'

उक्त निष्कर्ष है गांधी विद्या संस्थान, वाराणसी में आयोजित द्विदिवसीय विचार-गोष्ठी के, जो विश्वभर में फैल रही छात्र आन्दोलन की लहर से उत्पन्न स्थिति पर विचार करने के लिए आयोजित की गयी थी।

गोष्ठी की अध्यक्षता की श्री जयप्रकाश नारायण ने और उद्घाटन किया श्री अच्युत पटवर्धन ने। आपने अपने उद्घाटन भाषण में कहा कि भारत में युवक आन्दोलन का न तो कोई आदर्श है और न तो उसका वास्तविक समस्याओं से सम्बन्ध है। आपकी दृष्टि में भारत का युवा आन्दोलन प्रतिक्रियावादी और पुनर्जागरणवादी है।

श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि भारतीय युवकों की स्थिति को उनके परिप्रेक्ष्य में ही देखना चाहिए। आपने इस बात का खतरा किया कि भारतीय युवक आन्दोलन में सबसे खतरनाक तत्त्व विकसित हो रहा है राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के रूप में, जिसका स्पष्ट दावा है कि भारत हिन्दू राष्ट्र है और दूसरे लोग आक्रामक हैं। भारतीय एकता और लोकतंत्र के सिद्धान्तों के लिए—जिन्हें भारत ने पिछले दिनों विकसित किया है यह एक घातक स्थिति है। आपने कहा कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ वर्तमान आर्थिक और सामाजिक ढाँचे को समर्थन देता है इसकी शक्ति के बढ़ाने से सामाजिक और आर्थिक सुधार कार्यों की समाप्ति हो जायगी।

गोष्ठी में सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी ने इस बात पर दुःख प्रकट किया कि भारत का छात्र आन्दोलन अनेक वर्गों में विभाजित है। इसकी वजह से छात्रों का आन्दोलन कोई राष्ट्रव्यापी आन्दोलन नहीं रह गया है। आपने कहा कि छात्रों को विभिन्न समस्याओं पर अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ में विचार करना चाहिए।

अमेरिकी पत्रिका 'डिसेण्ट' के सम्पादक प्रो० स्टेनली प्लास्ट्रिक का मत था कि भारत के लोग स्थानीय समस्याओं पर ज्यादा जोर देते हैं और यहाँ के अधिकारियों को यह मालूम नहीं है कि कोई स्थिति उत्पन्न हो जाने पर उसका सामना किस ढंग से किया जाय। आपकी राय थी कि अमेरिका और भारत, दोनों जगह लड़कों तथा लड़कियों को अठारह वर्ष की उम्र में ही मताधिकार दे दिया जाना चाहिए। आपने शिक्षा में बुनियादी परिवर्तन की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि बीसवीं सदी में शिक्षा देश की आर्थिक स्थिति से संबंधित होनी चाहिए।

राजस्थान के शिक्षा-विभाग के भूतपूर्व निदेशक श्री पी० डी० जैन का मत था कि हमारे युवक कोई सार्थक क्रान्ति करने के योग्य नहीं हैं। समाज की जिन बुराइयों के विरुद्ध उन्हें वस्तुतः विद्रोह करना चाहिए, उसे उन्होंने नहीं किया। आपने कहा कि शिक्षक और प्रोफेसर उसी व्यक्ति को होना चाहिए, जिसमें वस्तुतः शिक्षा के प्रति स्वाभाविक सम्मान हो।

गांधी विद्या संस्थान के संयुक्त निदेशक प्रोफेसर सुगत दासगुप्ता ने कहा कि आज युवकों की समस्या सभी लोगों के सामने एक प्रमुख प्रश्नचिह्न के रूप में उपस्थित है। विश्व के युवकों में उत्पन्न इस असन्तोष का विश्लेषण आपने वस्तुपरक दृष्टि से करने की अपील वहाँ उपस्थित लोगों से की।

पटना विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर डा० नर्मदेश्वर प्रसाद ने एक ऐसा आदर्श विश्वविद्यालय अधिनियम बनाने का सुझाव दिया, जिससे न केवल विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता की रक्षा हो बल्कि उसमें प्रगतिशील पाठ्यक्रम और वैज्ञानिक परीक्षा पद्धति का भी समावेश हो।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग के प्रोफेसर डा० एस० के० श्रीवास्तव ने कहा कि भारतीय युवक आन्दोलन ने न केवल अपने को अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ से अलग रखा है बल्कि इसका अभी तक कोई राष्ट्रीय स्वरूप भी नहीं बन पाया है। यह स्थानीय और क्षेत्रीय समस्याओं में बुरी तरह उलझा हुआ है, जिससे क्षेत्र, जाति, भाषा और सम्प्रदायवादी प्रवृत्तियाँ काम कर रही हैं।

यहाँ के युवकों के सामने से दूसरी कठिनाई यह अशिक्षा है, जो उसने पुरानी पीढ़ी के लोगों से प्राप्त की है कि हर समस्या को हल करने के लिए अनशन का रास्ता अख्तियार करो।

मजलिसे मुशावरात (लखनऊ) के अध्यक्ष डाक्टर ए० जे० फरीदी ने कहा कि यह कहना बिलकुल गलत है कि भारत में युवकों का कोई विद्रोह हो रहा है। ज्यादा से ज्यादा इसे केवल छात्रों की बेचैनी कहा जा सकता है।

—राज्य की इस धारणा को पूरा करना देश के सर्वोदय विचारकों का प्रथम कर्तव्य हो जाता है।

इस कर्तव्य को पूरा करने के लिए गोष्ठी तय करती है कि इस समस्या पर विचारकों के विचार आमंत्रित किये जायें। साथ ही अपेक्षित तैयारी के साथ आगामी सितम्बर '६८ में ही तीन दिनों की एक गोष्ठी का आयोजन बिहार के किसी स्थान में किया जाय जिसमें इस विषय के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक सभी पहलुओं पर पूरा विचार किया जा सके। ●

आपने कहा कि शिक्षा-संस्थाओं के पाठ्य-क्रम में इस प्रकार का परिवर्तन किया जाना चाहिए, जिसमें छात्र हर समय किसी-न-किसी उपयोगी काम में लगे रहें और उन्हें कोई अवांछनीय कार्य करने का मौका ही न मिल पाये।

आपने कहा कि जिस तेजी से छात्रों की संख्या बढ़ रही है, उसके हिसाब से खेल के मैदान, पुस्तकालयों और छात्र की अन्य सुविधाओं का विस्तार नहीं हो रहा है। यह भी उनके असंतोष का एक प्रमुख कारण है। आपने छात्रों और अध्यापकों के बीच की दूरी को समाप्त करने की आवश्यकता पर जोर दिया और कहा कि स्कूलों में नैतिक शिक्षा और कर्तव्य-भावना के विकास पर विशेष जोर दिया जाना चाहिए।

आपने ऐसे आवासीय स्कूलों की बड़ी संख्या में स्थापना पर जोर दिया, जिनमें छात्रों पर कड़ा अनुशासन रखा जा सके और जहाँ कोई राजनीतिक हस्तक्षेप न कर सके।

प्रसोपा के नेता डा० रामचन्द्र शुक्ल एम० एल० सी० ने कहा कि मूल्यों में तेजी से हो रहे परिवर्तनों और अनेक प्रकार के संघर्षों के कारण युवक पीढ़ी में बेचैनी होना स्वाभाविक है। उनमें व्याप्त अनुशासनहीनता भी परिवार और समाज में व्याप्त आम अनुशासनहीनता का ही एक अंग है। छात्रों में व्याप्त इन बुराइयों का एक मुख्य कारण हमारे राजनीतिक नेतृत्व का दिवालियापन भी है।

आपने कहा कि शिक्षा समाप्त करने के बाद काम न मिलने की सम्भावना और आशा की अनेक स्थितियों के कारण युवकों में निराशा फैल रही है, जिसकी वजह से वह सामान्य उत्तेजना पर भी उबल पड़ता है। •

विनोबाजी का कार्यक्रम

चम्पारन (बिहार) : ३१ अगस्त '६८ तक
मा० बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ,
मोतीहारी, जिला : चम्पारन

मुजफ्फरपुर (बिहार) : ७ से १२ सितम्बर '६८
मा० बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ,
सर्वोदयग्राम, जिला : मुजफ्फरपुर

खादी और ग्रामोद्योग पर अशोक मेहता समिति का प्रतिवेदन

निष्कर्ष और सुझावों का सारांश—१

खादी और ग्रामोद्योग समिति ने, जिसके अध्यक्ष केन्द्रीय पेट्रोलियम, रसायन और सामाजिक सुरक्षा-मंत्री श्री अशोक मेहता थे, हाल ही में भारत सरकार को प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन में मुख्यतः सुदृढ़ "ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए कृषि-औद्योगिक आधार" बनाने हेतु खादी और ग्रामोद्योग-कार्यक्रमों को नया रूप देने की सिफारिश की है। यह प्रतिवेदन संसद में भी पेश कर दिया गया है।

समिति ने कहा है कि खादी-कार्यक्रम के प्रयोजन और मूल दृष्टिकोण का निर्धारण तीन विस्तृत उद्देश्यों को लक्ष्य में रखकर करना चाहिए एवं इन तीनों में प्रत्येक पर समुचित जोर डालना चाहिए। ये तीनों उद्देश्य हैं : (१) बिकने लायक चीज का उत्पादन करने का आर्थिक उद्देश्य, (२) लोगों को रोजगार देने का सामाजिक उद्देश्य और (३) लोगों में आत्मनिर्भरता पैदा करने तथा एक सुदृढ़ ग्राम्य सामुदायिक भावना पैदा करने का बृहत्तर उद्देश्य।

समिति की सिफारिशों में से विशेष महत्त्व के हैं : वर्तमान खादी और ग्रामोद्योग *कमीशन को ग्रामीण उद्योग-आयोग तथा राज्य खादी और ग्रामोद्योग-मंडलों को राज्य* ग्रामीण उद्योग-मंडलों में पुनर्गठित करना; ग्रामीण उद्योगों के लिए समुचित प्रौद्योगिकी की समस्याओं पर अनुसंधान करने हेतु छोटे उद्योगों के लिए एक प्रौद्योगिक अनुसंधान-संस्थान की स्थापना, ग्रामीण उद्योगों की स्थापना में अभिरुचि रखनेवालों को उत्पादन या विक्रय के स्तर पर तकनीकी, सेवा और विशेष सुविधाओं के रूप में प्रोत्साहन देना चाहिए, *न कि सरकारी सहायता पर अत्यधिक निर्भर करना; कार्यक्रम के लिए प्रबन्ध अनुदान*, बिक्रय-छूट, उपदान, परम्परागत कताई (अम्बर सहित) प्रशिक्षण आदि के रूप में प्रति वर्ष दिये जानेवाले सरकारी अनुदानों की कुल रकम के लिए पाँच करोड़ रुपये की उच्चतम राशि निर्धारित करना, परम्परागत खादी-कार्यक्रम व्यक्ति व ग्राम-स्वावलम्बन के लिए संगठित करना तथा बिक्री के लिए खादी का उत्पादन नये नमूने के चरखे पर कते सूत से करना, *अपने राज्य में कार्यक्रम के कार्यान्वय की पूरी जिम्मेदारी पाँच वर्षों के अन्दर ले सकें* इसके लिए राज्य-मण्डलों को मजबूत बनाना, परम्परागत उद्योगों में से प्रत्येक को—खादी को भी—जीवंत बनाने हेतु उनकी तकनीकी में निरन्तर सुधार लाने के लिए सतवर्षीय कार्यक्रम बनाना, केवल उन्हीं उद्योगों को प्रोत्साहनमूलक सहायता देने के लिए लेना, जिनमें एक निश्चित अवधि के बाद अवक्षयण भार तथा ऋण व उसके ब्याज के भुगतान के लिए लागत *व्यय के ऊपर पर्याप्त बचत की सम्भावना हो।*

समिति का गठन जून १९६६ में अब तक खादी और ग्रामोद्योगों द्वारा की गयी प्रगति का मूल्यांकन, संगठनात्मक पहलुओं का परीक्षण तथा चतुर्थ योजनावधि में कार्यान्वित किये जानेवाले कार्यक्रम के सन्दर्भ में कमीशन एवम् खादी और ग्रामोद्योग कार्यक्रमों के कार्यान्वय में लगी अन्य संस्थाओं के बीच समन्वय में सुधार लाने के लिए आवश्यक स्वरूपात्मक अथवा वैधानिक परिवर्तन हेतु *उपायों की सिफारिश करने के लिए किया* गया था।

समिति के सदस्य थे : श्री अशोक मेहता (अध्यक्ष), श्री उ. न. ढेबर, श्री खंडुभाई देसाई, श्री जी रामचन्द्रन्, श्री एम पी भार्गव, श्री चन्द्रशेखर, श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे, श्री मनमोहन चौधरी, डा पी एम लोकनाथन्, डा डी के. रांगनेकर, श्री अनन्तराव वी पाटील, श्री सैयद अहमद आगा, डा. महादेव प्रसाद, श्री अनिल कुमार चन्दा, श्री डी. के. मल्होत्रा (सचिव) और *श्री गुलाबराय मंत्रोही (सचिव)।*

अपने डेढ़ साल से भी अधिक के कार्य-

काल में समिति ने विभिन्न कार्यक्रमों की प्रगति के सम्बन्ध में कमीशन, राज्य-मण्डलों और अन्य सम्बन्धित संस्थाओं द्वारा प्रस्तुत आंकड़ों व अन्य सामग्री का अध्ययन व उनके संगठनात्मक स्वरूप का मूल्यांकन करने के अतिरिक्त आचार्य विनोबा भावे तथा श्री जयप्रकाश नारायण से मुलाकात की, चन्द राज्य खादी और ग्रामोद्योग मंडलों के अध्यक्षों, खादी ग्रामोद्योग कार्यों में लगे प्रमुख रचनात्मक कार्यकर्ताओं व प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों को कार्यक्रमों के विभिन्न पहलुओं पर अपने विचार व प्रमाण प्रस्तुत करने के लिए निमंत्रित किया, राज्य मण्डलों के खादी ग्रामोद्योग कार्यों में लगे कार्यकर्ताओं व समिति के सदस्यों के साथ अलग अलग व सामूहिक रूप से विचार विमर्श किया तथा कार्यक्रमों का प्रत्यक्ष कार्यान्वयन देखने हेतु विभिन्न राज्यों के चन्द चुनिन्दा उत्पादन-केन्द्रों का निरीक्षण किया।

यहाँ पर समिति के प्रतिवेदन का आठवाँ अध्याय प्रस्तुत किया जा रहा है जिसमें 'निष्कर्षों और सुझावों का सार' है

निष्कर्ष और सुझाव

१ खादी-ग्रामोद्योग कार्यक्रम के सम्बन्ध में मूल दृष्टिकोण विकासोन्मुख होना चाहिए और देश के रोजगार की साधारण परिस्थिति तथा आर्थिक विकास के संदर्भ को ध्यान में रखकर निश्चित होना चाहिए। प्रत्येक पारम्परिक उद्योग के सम्बन्ध में, जिसमें खादी भी शामिल है, एक मध्यवर्गीय कार्यक्रम उसकी तकनीक के गतिशील सुधार के लिए बनाना चाहिए, ताकि वह उद्योग वर्धनक्षम बन सके। पारम्परिक ग्रामीण उद्योगों में पहले से ही लगे हुए कारीगर उच्चतर तकनीकों को अपनाने की अवधि में बेकार न हो जायें, इसके लिए सुरक्षा-व्यवस्था होनी चाहिए। जिन पारम्परिक उद्योगों में अपेक्षाकृत निम्न स्तर के तकनीकों का काम में लाया जाना है, उनमें और अधिक आदमी जायें, इसके लिए प्रशिक्षण की सुविधाओं और अन्य सहायता द्वारा किसी तरह का प्रोत्साहन नहीं दिया जाना चाहिए। छोटे नगरों और गांवों में विकेन्द्रित उद्योगों के ढांचे के निर्माण के लिए सामाजिक उपरि-व्यय तथा अन्य आवश्यक सुविधाओं—जिनमें यातायात, पानी और बिजली की पूर्ति, ऋण, तकनीकी प्रशिक्षण तथा परामर्श आदि की अच्छी व्यवस्था शामिल है—के प्रबन्ध के लिए समुचित उपायों का अवलंबन आवश्यक है। विशेषकर पिछड़े हुए क्षेत्र और सूखा तथा बाढ़ जैसे असाधारण कठिनाई की परिस्थिति में उच्चतर तकनीकों को अपनाने की प्रक्रिया को समुचित रूप से समायोजित किया जा सकता है, ताकि मौजूदा पारम्परिक कारीगरों को कुछ लम्बी अवधि के लिए संरक्षण दिया जा सके।

मूल दृष्टिकोण

२ खादी कार्यक्रम के प्रयोजन और मूल दृष्टिकोण का निर्माण तीन विस्तृत उद्देश्यों को लक्ष्य में रखकर करना चाहिए एवं इन तीनों में प्रत्येक पर समुचित जोर डालना चाहिए। ये तीनों उद्देश्य है

(१) बिकने लायक चीज का उत्पादन करने का आर्थिक उद्देश्य,

(२) लोगों को रोजगार देने का सामाजिक उद्देश्य, और

(३) लोगों में आत्मनिर्भरता पैदा करने तथा एक सुदृढ़ ग्राम्य सामुदायिक भावना पैदा करने का वृहत्तर उद्देश्य।

इन तीनों उद्देश्यों में से किसी की उपेक्षा नहीं की जा सकती है, पर खादी कार्यक्रम के भावी विस्तार में उत्पादन के ऐसे तरीके पर क्रमशः अधिक जोर डाला जाय कि प्रत्यक्ष या प्रबन्ध अनुदान और मुफ्त बुनाई की सुविधाओं के रूप में सरकारी सहायता घटकर यथासंभव कम-से-कम रह जाय। इसके लिए कताई बुनाई की उच्चतर तकनीकों को अपनाना होगा और संगठन के उपरिव्ययों को घटाना होगा।

रोजगार

३ बड़े परिमाण में रोजगार देना खादी कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य जारी रहना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन के निम्न स्तर, अत्यधिक आंशिक बेकारी की स्थिति और ग्रामीण परिवारों के लिए आय के किसी सहायक स्रोत की आवश्यकता के कारण यह अनिवार्य हो जाता है कि खादी-कार्यक्रम को एक समुचित स्तर पर कायम रखा जाय। ग्रामीण क्षेत्रों में काम देने के अन्य सभी जरिये इस बीच खोज निकाले जायें।

४ खादी कार्यक्रम में रोजगार देना एक साध्य के रूप में न मानकर ग्रामीण परिवारों की आय को बढ़ाने के एक साधन के रूप में मानना चाहिए। अतः खादी-कार्यक्रम से छोटे तथा मध्यम श्रेणी के भूस्वामियों के अतिरिक्त ज्यादा जरूरतमंद लोगों को, खासकर खेतिहर मजदूरों तथा गरीब किसानों के परिवारों को सहायक धंधा मिलना चाहिए। इस कार्यक्रम के द्वारा औसत दैनिक मजदूरी इतनी मिलनी चाहिए कि जरूरतमंद लोग हाथकताई और बुनाई को अपनाने के लिए आकर्षित हों।

५ खादी के जिस मौजूदा कार्यक्रम में सन् १९६५-६६ में ७६० लाख मीटर सूती खादी का उत्पादन हुआ, उसका लोगों को पूरक धंधा देने के सामाजिक उद्देश्य पर तथा लोगों में आत्मनिर्भरता एवं सुदृढ़ ग्राम्य सामुदायिक भावना निर्माण करने के वृहत्तर उद्देश्य पर जोर डालने का वर्तमान रुख जारी रहना चाहिए। इसके लिए सरकारी सहायता जारी रखनी होगी। पर इस कार्यक्रम को कार्यान्वित करने में संगठनात्मक तथा अन्य सुधारों द्वारा सरकार की कुल वित्तीय सहायता का परिमाण घटाया जाना चाहिए।

६ कुल खादी उत्पादन में वैयक्तिक स्वावलम्बी उत्पादन का अनुपात अभी केवल ४ प्रतिशत है। इसको श्रमिक कार्यक्रम द्वारा बढ़ाना चाहिए।

७. नये खादी कार्यक्रम यानी खादी उत्पादन के भावी विस्तार के सम्बन्ध में (क) पारम्परिक, जिसमें अम्बर खादी भी शामिल है, तथा (ख) नये माडल के चरखे से उत्पादित खादी के बारे में मूल दृष्टि एवं उद्देश्य पर अलग अलग विचार किया जा सकता है। पारम्परिक खादी के बारे में दृष्टि यह होनी चाहिये कि भविष्य का सारा नया उत्पादन स्वावलंबन के आधार पर हो। नये माडल के चरखे की खादी के बारे में व्यापारिक आधार पर इसको विकसित करने की दृष्टि होनी चाहिए। सरकारी अनुदानों का परिमाण, खासकर सहायता के रूप में, बहुत कम होना चाहिए।

ग्रामोद्योग

८. ग्रामोद्योगों के कार्यक्रम के संबंध में अपने प्रयत्नों और संसाधनों को सबसे ज्यादा महत्त्व के उद्योगों पर केन्द्रित करना वाञ्छनीय है तथा वे उद्योग एक बृहत्तर क्षेत्र में फैले हों एवम् उनमें ज्यादा परिमाण में कारीगर लगे हों, यह भी ध्यान में रखना उचित होगा। तकनीकी सुधारों और बिजली के उपयोग के लिए उनमें व्यापक गुञ्जाइश होनी चाहिए।

९. ग्रामीण उद्योगों में से एक के रूप में खादी का मान्यता-प्राप्त स्थान जारी रहेगा और कुछ क्षेत्रों में ग्रामीण उद्योगों में उसका स्थान सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हो सकता है, पर वैज्ञानिक खेती के विकास तथा ग्रामीण बिजलीकरण की प्रगति के साथ यह संभव है कि कृषि-संबंधी चीजों के प्रशोधन तथा कृषि में लगनेवाली चीजों के निर्माण जैसे अधिक आमदनीवाले अन्य ग्रामीण उद्योग खादी का स्थान ले लें। खादी के बारे में किसीका यह दृष्टिकोण हो सकता है कि यह एक स्थायी कार्यक्रम है। इसके बावजूद इस बात से सहमत हुआ जा सकता है कि निकट भविष्य के कुछ समय के लिए पिछड़े हुए ग्रामीण क्षेत्रों में तथा पिछड़े वर्ग के लोगों को काम देने के हेतु इसका एक उपयोगी स्थान होगा। हम इस पर जोर देंगे कि संगठन में आवश्यक परिवर्तन करके ग्रामीण उद्योगों की इस धारणा को ठोस अभिव्यक्ति होनी चाहिए, जिसमें खादी का समुचित स्थान हो सकता है।

१०. आत्मनिर्भर व्यक्तियों और समुदायों के निर्माण के लिए तथा ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े परिमाण में सामाजिक एवम् आर्थिक परिवर्तन का आधार बनाने के लिए एक साधन के रूप में खादी की कितनी क्षमता है इसके पुनः परीक्षण की आवश्यकता है, क्योंकि आर्थिक विकास की अभी जो दृष्टि है उसके संदर्भ में केवल खादी जैसे परिवर्तन के लिए आवश्यक प्रोत्साहन नहीं दे सकती।

११. खादी-कार्यक्रम इस अर्थ में आत्मनिर्भर नहीं बनाया जा सकता कि वह बिना सरकारी सहायता तथा छूट (रिबेट) के चलने में समर्थ नहीं है। यदि खादी-कार्यक्रम से ग्रामीण लोगों के कुछ वर्गों को सहायक धंधा देने का मुख्य प्रयोजन सिद्ध करना है तो इसके लिए सरकारी सहायता और छूट देना निकट भविष्य के कुछ समय के लिए जारी रखना होगा। पर इस बारे में सरकारी वचन बढ़ता अनिश्चित या अपरिमित नहीं होनी चाहिए।

विकासात्मक सहायता

१२. भविष्य में विकासात्मक सहायता के रक्षणात्मक स्वरूप पर अधिक जोर न देकर विधायक स्वरूप पर अधिक जोर देना चाहिए। सहायता के विधायक प्रकारों में प्रशिक्षण, अनुसंधान, तथा तकनीकी परामर्श और सहायता के लिए अनुदान एवं कार्यवाहक पूँजी के लिए कर्ज हैं, जिन्हें आवश्यकतानुसार बढ़ाया जाना चाहिए। खादी-कार्यक्रम के लिए कर्ज पर ब्याज की रियायती दरें भी स्वीकार करनी चाहिए।

१३. खादी-कार्यक्रम के लिए सरकारी सहायताओं का परिमाण सीमा के भीतर रखना चाहिए। पारम्परिक खादी (जिसमें अम्बर चरखा भी शामिल है) कार्यक्रम के लिए प्रबन्ध अनुदान, विक्रय-छूट, सहायता, प्रशिक्षण आदि के रूप में प्रतिवर्ष दिये जानेवाले सरकारी अनुदानों की कुल रकम के लिए ५ करोड़ रुपये की एक उच्चतम राशि निर्धारित कर देनी चाहिए। इस राशि में ऐसी सारी सहायता शामिल होगी, जिसकी जरूरत ग्रामदानी गाँवों में या अन्य उपयुक्त क्षेत्रों में या एक और दा नमूने के चरखे को चालू करने या पारम्परिक चरखे में पूरी कताई के पुर्जे दाखिल करके स्वावलंबी खादी के विस्तार के लिए हो सकती है।

(चालू रहेगा)

स्व० महादेव भाई

(पुण्यतिथि : १५ अगस्त)

एक मोती

इसने आश्रम की कमी पूरी कर दी है। यह आश्रम से धन्य होने के लिए नहीं, बल्कि आश्रम को धन्य बनाने के लिए आया है। कहते मुझे शर्म आती है, पर बात यह सच है कि यहाँ कुछ लोग ऐसे हैं, जो आश्रम को धन्य बनाते हैं, आश्रम से अपने को धन्य नहीं बनाते। ऐसे कुछ मोती मुझे मिल गये हैं। उन्हींमें से एक यह (महादेवभाई) है।

—मो० क० गांधी

× × ×

एक स्नेहिल डांट

रात को खूब मिलने-भेंटने के बाद सो गये। सुबह ही सुबह मुझे बुलाकर (बापू ने) एक प्रवचन सुना दिया : तुमने प्रेम से किया है, इसलिए क्या कहूँ ? किन्तु मुझे यह कहना पड़ता है कि आध्यात्मिक दृष्टि से तुमने बहुत बुरा काम किया। तुमने उस दिन मेरे आने बिना भोजन क्यों नहीं किया ? मुझे उस दिन बड़ा कष्ट हुआ। तुमने प्रीति की भावना से न खाया हो, तो यह प्रीति व्यर्थ है। सिर्फ इस भावना से न खाया हो कि मेरे आने के बाद आनन्द से साथ खायेंगे, तो यह तो विषय-भोग करने जैसा हुआ। मुझे तुम्हें तुरन्त कहीं भेजना था, पर मैंने देखा कि तुमने खाया नहीं है। इस तरह मैं तुमसे कैसे काम ले सकता हूँ ? तुममें अपनी बुरी आदत को भी अच्छी मानने की आदत पड़ गयी है। फलाँ बात नहीं हो सकती, ऐसा कैसे चल सकता है ?

—'महादेव भाई की डायरी' से, पृष्ठ : १०५

× × ×

पुण्य-स्मरण

महादेव में अद्भुत सामर्थ्य थी। आज पग-पग पर महादेव की कमी खटक रही। उसमें समर्पण शक्ति तो अद्भुत थी !

— मो० क० गांधी

अमेरिका में अध्यक्ष पद का चुनाव

मुख्य प्रश्नों पर उम्मीदवारों के विचार

विभिन्न प्रश्नों पर उन लोगों के क्या विचार हैं जो अमेरिका का प्रेसिडेण्ट बनना चाहते हैं ? प्रेसीडेण्ट के इस चुनाव-वर्ष में जनता की सबसे अधिक दिलचस्पी के प्रश्नों पर सभी उम्मीदवारों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं और उनके दृष्टिकोण अधिकाधिक स्पष्ट होते जा रहे हैं।

मुख्य उम्मीदवारों के नाम हैं

डेमोक्रेटिक—वाइस प्रेसिडेण्ट ह्यूबर्ट एच० हम्फ्री और अमेरिका सेनेटर यूजीन मेकार्थी।

रिपब्लिकन—भूतपूर्व वाइस प्रेसीडेण्ट रिचर्ड एम० निक्सन और न्यूयार्क के नेलसन रॉकफेलर।

अमेरिकन इण्डिपेण्डेण्ट—अलाबामा के भूतपूर्व गवर्नर जार्ज सी० वालेस।

इन उम्मीदवारों ने चुनाव आन्दोलन के सिलसिले में प्रकाशित सामग्री भाषणों वक्तव्यों सम्वाददाताओं से की गयी वार्ताओं और पत्रकार सम्मेलनों में दो मुख्य प्रश्नों—वियतनाम और नागरिक अधिकारों—के विषय में जो विचार व्यक्त किये वे इस प्रकार हैं

वियतनाम

श्री हम्फ्री वह जानसन प्रशासन की नीति के दृढ़ और निरन्तर समर्थक रहे हैं। उनका कहना है कि प्रशासन की नीति का एकमात्र उद्देश्य कोई ऐसा उपाय खोजना है जिससे शान्ति बनी रहे राजनीतिक समाधान के लिए बातचीत की जा सके और इस कार्य को सम्मानजनक तरीके से किया जाय ताकि अपने जीवन की रूपरेखा बनाने और अपनी शासन प्रणाली तथा सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करने के बारे में लोगों के अधिकारों की रक्षा हो सके और वे अपने पड़ोसियों के साथ शान्ति से रह सकें।

श्री मेकार्थी उनकी सम्मति में अमेरिका को सम्मानजनक तरीके से और यथाशीघ्र उस युद्ध से अलग हो जाना चाहिए जिसका नैतिक और कूटनीतिक दृष्टि से समर्थन नहीं किया जा सकता। वह इस पक्ष में हैं कि अमेरिका के सैनिक प्रयत्नों में तेजी से कमी की जाय और दक्षिण वियतनाम को राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा (वियतकांग) से समझौते की बातचीत चलानी चाहिये।

श्री निक्सन : उन्होंने इस बात की पैरवी की है कि बातचीत द्वारा समझौता कराने के लिए सैनिक आर्थिक और कूटनीतिक सभी ढंग से दबाव डाला जाय। उन्होंने खबरदार किया है कि छद्म रूप में आत्मसमर्पण करने से बचने के लिए बराबर चौकस रहने की आवश्यकता है।

श्री रॉकफेलर वियतनाम के बारे में अमेरिका की नीति के आलोचक होते हुए भी उन्होंने बातचीत द्वारा इस समस्या से निबटने के लिए पेरिस सम्मेलन को सही दिशा में उठाया गया कदम बतलाया है। उनका कहना है कि अमेरिका को बातचीत के दौरान ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे दक्षिण वियतनाम की सेना और सरकारी अधिकारी कहीं अधिक दायित्व सम्भालें ताकि समझौता होने पर हम व्यवस्थित ढंग से वहाँ से हटने के लिए तैयार हो सकें।

श्री वालेस इनका कहना है कि मैं सम्मानजनक शान्ति और दक्षिण वियतनाम की सरकार और जनता की अखण्डता की रक्षा चाहता हूँ। किन्तु कुछ ऐसी बातें हैं जिन्हें हमें वहाँ अपने उलझने के कारण सीखनी चाहिए—उदाहरण के तौर पर यह कि हमें अकेले कभी नहीं उलझना चाहिए।

नागरिक अधिकार

श्री हम्फ्री वह अपने जीवन में अल्पसंख्यक वर्गों को नागरिक अधिकार तथा समान अवसर दिये जाने के बारे में राष्ट्र के प्रबलतम समर्थकों में रहे हैं। उनका कहना है क्या इस देश में हम अजनबी लाखों के बजाय पड़ोसियों की तरह नहीं रह सकते ? जिस राष्ट्र ने अणु का विखण्डन करना सीखा है उसे यह भी सीखना चाहिए कि काले और गोरे लोगों के बीच भेद को कैसे दूर किया जा सकता है।

श्री मेकार्थी वह नागरिक अधिकारों के बारे में कानून बनाये जाने के बराबर समर्थक रहे हैं। उनका कहना है कि संघीय सरकार की ओर से ऐसे जोरदार कदम उठाये जायें जिससे विभिन्न जातियों में सुलह-सफाई हो सके लोगों को एक निश्चित वार्षिक आमदनी का भरोसा हो सके और सरकारी सहायता से स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रम और लोगों को रोजगार का प्रशिक्षण दिलाने की व्यवस्था हो सके।

श्री निक्सन अमेरिका में अवसर प्राप्त होने का अर्थ काले या गोरे लोगों की दृष्टि से नहीं है—लेकिन यदि हमें अपनी जनता को एक करके अपने राष्ट्र को फिर अखण्ड बनाना है तो हमें काले लोगों को अधिक अवसर प्रदान करने की बात माननी होगी। अपने नगरों में शक्ति का ठीक सन्तुलन रखने का एकमात्र उपाय यह है कि नीग्रो मोहल्लों को अपेक्षाकृत अधिक शक्ति दी जाय ऐसी शक्ति जिससे लोग अपनी बस्तियों पर अपना प्रभाव डाल सकें ऐसी शक्ति जो समाज की राजनीतिक और आर्थिक प्रक्रियाओं में भाग लेने से आती है। उन्होंने सन् १९४७ से नागरिक अधिकार सम्बन्धी सभी विधेयकों का समर्थन किया है।

श्री रॉकफेलर उनका कहना है कि नीग्रो लोगों ने व्यक्तिगत प्रतिष्ठा प्राप्त करने का एक जोरदार प्रयत्न आरम्भ किया है और उन्हें इस लक्ष्य को प्राप्त करने में मदद देने के लिए राष्ट्रीय वचनबद्धता के एक गम्भीर कृत्य की आवश्यकता है। उनका कहना है कि सभी क्षेत्रों में समानता से सम्बन्धित कानूनों के अलावा सरकार की ओर से भी कार्यवाही किये जाने की आवश्यकता है। ऐसे उन लोगों की विशेष सहायता करने के लिए जिन्हें पहले यह अवसर प्राप्त नहीं था गैरसरकारी संगठनों के प्रयत्नों को बढ़ावा देना चाहिए। वह संघ और राज्यों की सरकारों द्वारा नागरिक

ग्रामोद्योग

८ ग्रामोद्योगों के कार्यक्रम के संबंध में अपने प्रयत्नों और संसाधनों को सबसे ज्यादा महत्त्व के उद्योगों पर केन्द्रित करना वाछनीय है तथा वे उद्योग एक बृहत्तर क्षेत्र में फैले हों एवम् उनमें ज्यादा परिमाण में कारीगर लगे हों, यह भी ध्यान में रखना उचित होगा। तकनीकी सुधारों और विजली के उपयोग के लिए उनमें व्यापक गुन्जाइश होनी चाहिए।

९ ग्रामीण उद्योगों में से एक के रूप में खादी का मान्यता-प्राप्त स्थान जारी रहेगा और कुछ क्षेत्रों में ग्रामीण उद्योगों में उसका स्थान सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हो सकता है, पर वैज्ञानिक खेती के विकास तथा ग्रामीण *बिजलीकरण की प्रगति के साथ* यह संभव है कि कृषि-संबंधी चीजों के प्रशोधन तथा कृषि में लगनेवाली चीजों के निर्माण जैसे अधिक आमदनीवाले अन्य ग्रामीण उद्योग खादी का स्थान ले लें। खादी के बारे में किसीका यह दृष्टिकोण हो सकता है कि यह एक स्थायी कार्यक्रम है। इसके बावजूद इस बात से सहमत हुआ जा सकता है कि निकट भविष्य के कुछ समय के लिए पिछड़े हुए ग्रामीण क्षेत्रों में तथा पिछड़े वर्ग के लोगों को काम देने के हेतु इसका एक उपयोगी स्थान होगा। हम इस पर जोर देंगे कि संगठन में आवश्यक परिवर्तन करके ग्रामीण उद्योगों की इस धारणा की ठोस अभिव्यक्ति होनी चाहिए, जिसमें खादी का समुचित स्थान हो सकता है।

१० आत्मनिर्भर व्यक्तियों और समुदायों के निर्माण के लिए तथा ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े परिमाण में सामाजिक एवम् आर्थिक परिवर्तन का आधार बनाने के लिए एक साधन के रूप में खादी की कितनी क्षमता है इसके पुन परीक्षण की आवश्यकता है, क्योंकि आर्थिक विकास की अभी जो दृष्टि है उसके संदर्भ में केवल खादी जैसे परिवर्तन के लिए आवश्यक प्रोत्साहन नहीं दे सकती।

११. खादी-कार्यक्रम इस अर्थ में आत्मनिर्भर नहीं बनाया जा सकता कि वह बिना सरकारी सहायता तथा छूट (रिबेट) के चलने में समर्थ नहीं है। यदि खादी-कार्यक्रम से ग्रामीण लोगों के कुछ वर्गों को सहायक धधा देने का मुख्य प्रयोजन सिद्ध करना है तो इसके लिए सरकारी सहायता और छूट देना निकट भविष्य में कुछ समय के लिए जारी रखना होगा। पर इस बारे में सरकारी वचन बद्धता अनिश्चित या अपरिमित नहीं होनी चाहिए।

विकासात्मक सहायता

१२. भविष्य में विकासात्मक सहायता के रक्षणात्मक स्वरूप पर अधिक जोर न देकर विधायक स्वरूप पर अधिक जोर देना चाहिए। सहायता के विधायक प्रकारों में प्रशिक्षण, अनुसंधान, तथा तकनीकी परामर्श और सहायता के लिए अनुदान एवं कार्यवाहक पूँजी के लिए कर्ज हैं।, जिन्हें आवश्यकतानुसार बढ़ाया जाना चाहिए। खादी-कार्यक्रम के लिए कर्ज पर ब्याज की रियायती दरें भी स्वीकार करनी चाहिए।

१३. खादी-कार्यक्रम के लिए सरकारी सहायताओं का परिमाण सीमा के भीतर रखना चाहिए। पारम्परिक खादी (जिसमें अम्बर चरखा भी शामिल है) कार्यक्रम के लिए प्रबन्ध अनुदान, बिक्री-छूट, सहायता, प्रशिक्षण आदि के रूप में प्रतिवर्ष दिये जानेवाले सरकारी अनुदानों की कुल रकम के लिए ५ करोड़ रुपये की एक उच्चतम राशि निर्धारित कर देनी चाहिए। इस राशि में ऐसी सारी सहायता शामिल होगी, जिसकी जरूरत ग्रामदानी गाँवों में या अन्य उपयुक्त क्षेत्रों में या एक और दो तकुए के चरखे को चालू करने या पारम्परिक चरखे में पूरी कताई के पुर्जे दाखिल करने द्वारा खादी के विस्तार के लिए हो सकती है।

(चालू रहेगा)

स्व० महादेव भाई

(पुण्यतिथि : १५ अगस्त)

एक मोती

इसने आश्रम की कमी पूरी कर दी है। वह आश्रम से धन्य होने के लिए नहीं, बल्कि आश्रम को धन्य बनाने के लिए आया है। कहते मुझे शर्म आती है, पर बात यह सच है कि यहाँ कुछ लोग ऐसे है, जो आश्रम को धन्य बनाते हैं, आश्रम से अपने को धन्य नहीं बनाते। ऐसे कुछ मोती मुझे मिल गये है। उन्हींमें से एक यह (महादेवभाई) है।

—मो० क० गांधी

× × ×

एक स्नेहिल डांट

रात को खूब मिलने-भेंटने के बाद सो गये। सुबह ही सुबह मुझे बुलाकर (बापू ने) एक प्रवचन सुना दिया : तुमने प्रेम से किया है, इसलिए क्या कहूँ? किन्तु मुझे यह कहना पड़ता है कि आध्यात्मिक दृष्टि से तुमने बहुत बुरा काम किया। तुमने उस दिन मेरे आये बिना भोजन क्यों नहीं किया? मुझे उस दिन बड़ा कष्ट हुआ। तुमने प्रीति की भावना से न खाया हो, तो यह प्रीति व्यर्थ है। सिर्फ इस भावना से न खाया हो कि मेरे आने के बाद आनन्द से साथ खायेंगे, तो यह तो विषय-भोग करने जैसा हुआ। मुझे तुम्हें तुरन्त कही भेजना था, पर मैंने देखा कि तुमने खाया नहीं है। इस तरह मैं तुमसे कैसे काम ले सकता हूँ? तुममें अपनी बुरी आदत को भी अच्छी मानने की आदत पड़ गयी है। फलाँ बात नहीं हो सकती, ऐसा कैसे चल सकता है?

—'महादेव भाई की डायरी' से, पृष्ठ : १०५

× × ×

पुण्य-स्मरण

महादेव में अद्भुत सामर्थ्य थी। आज पग-पग पर महादेव की कमी खटक रही! उसमें समर्पण शक्ति तो अद्भुत थी!

— मो० क० गांधी

अमेरिका में अध्यक्ष पद का चुनाव

मुख्य प्रश्नों पर उम्मीदवारों के विचार

विभिन्न प्रश्नों पर उन लोगों के क्या विचार हैं जो अमेरिका का प्रेसिडेंट बनना चाहते हैं? प्रेसीडेन्ट के इस चुनाव-वर्ष में जनता की सबसे अधिक दिलचस्पी के प्रश्नों पर सभी उम्मीदवारों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं और उनके दृष्टिकोण अधिकाधिक स्पष्ट होते जा रहे हैं।

मुख्य उम्मीदवारों के नाम हैं

डेमोक्रेटिक—वाइस प्रेसिडेण्ट ह्यूबर्ट एच० हम्फ्री और अमेरिकी सेनेटर यूजीन मेकार्थी।

रिपब्लिकन—भूतपूर्व वाइस प्रेसीडेण्ट रिचर्ड एम० निक्सन और न्यूयार्क के नेलसन रॉकफेलर।

अमेरिकन इंडिपेण्डेण्ट—अलाबामा के भूतपूर्व गवर्नर जार्ज सी० वालस।

इन उम्मीदवारों ने चुनाव आन्दोलन के सिलसिले में प्रकाशित सामग्री भाषणों वक्तव्यों सम्वाददाताओं से की गयी वार्ताओं और पत्रकार-सम्मेलनों में दो मुख्य प्रश्नों—वियतनाम और नागरिक अधिकारों—के विषय में जो विचार व्यक्त किये वे इस प्रकार हैं

वियतनाम

श्री हम्फ्री वह जॉनसन प्रशासन की नीति के दृढ़ और निरन्तर समर्थक रहे हैं। उनका कहना है कि प्रशासन की नीति का एकमात्र उद्देश्य कोई ऐसा उपाय खोजना है जिससे शान्ति बनी रहे राजनीतिक समाधान के लिए बातचीत की जा सके और इस कार्य को सम्मानजनक तरीके से किया जाय ताकि अपने जीवन की रूपरेखा बनाने और अपनी शासन प्रणाली तथा सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करने के बारे में लोगों के अधिकारों की रक्षा हो सके और वे अपने पड़ोसियों के साथ शान्ति से रह सकें।

श्री मेकार्थी उनकी सम्मति में अमेरिका को सम्मानजनक तरीके से और यथाशीघ्र उस युद्ध से अलग हो जाना चाहिए जिसका नैतिक और कूटनीतिक दृष्टि से समर्थन नहीं किया जा सकता। वह इस पक्ष में हैं कि अमेरिका के सैनिक प्रयत्नों में तेजी से कमी की जाय और दक्षिण वियतनाम का राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा (वियतकांग) से समझौते की बातचीत चलायी जाय।

श्री निक्सन : उन्होंने इस बात की पैरवी की है कि बातचीत द्वारा समझौता कराने के लिए सैनिक आर्थिक और कूटनीतिक सभी ढंग से दबाव डाला जाय। उन्होंने खबरदार किया है कि इस युद्ध में आत्मसमर्पण करने से बचने के लिए बराबर चौकस रहने की आवश्यकता है।

श्री रॉकफेलर वियतनाम के बारे में अमेरिका की नीति के आलोचक होते हुए भी उन्होंने बातचीत द्वारा इस समस्या से निबटने के लिए पेरिस-सम्मेलन को सही दिशा में उठाया गया कदम बतलाया है। उनका कहना है कि अमेरिका को बातचीत के दौरान ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे दक्षिण वियतनाम की सेना और सरकारी अधिकारी कहीं अधिक दायित्व सम्भालें ताकि समझौता होने पर हम व्यवस्थित ढंग से वहाँ से हटने के लिए तैयार हो सकें।

श्री वालेस इनका कहना है कि मैं सम्मानजनक शान्ति और दक्षिण वियतनाम की सरकार और जनता की अखण्डता की रक्षा चाहता हूँ। किन्तु कुछ ऐसी बातें हैं जिन्हें हमें वहाँ अपने उलझने के कारण सीखनी चाहिए—उदाहरण के तौर पर यह कि हमें अकेले कभी नहीं उलझना चाहिए।

नागरिक-अधिकार

श्री हम्फ्री वह सार्वजनिक जीवन में अल्पसंख्यक वर्गों को नागरिक अधिकार तथा समान अवसर दिए जाने के बारे में राष्ट्र के प्रबलतम समर्थकों में रहे हैं। उनका कहना है क्या हम रूप में हम अजनबी लोगों के बजाय पड़ोसियों की तरह नहीं रह सकते? जिस राष्ट्र ने अणु का विखण्डन करना सीखा है उसे यह भी सीखना चाहिए कि काले और गोरे लोगों के बीच भेद को कैसे दूर किया जा सकता है।

श्री मेकार्थी वह नागरिक अधिकारों के बारे में कानून बनाये जाने के बराबर समर्थक रहे हैं। उनका कहना है कि संघीय सरकार की ओर से ऐसे जोरदार कदम उठाये जायँ जिससे विभिन्न जातियों में सुलह-सफाई हो सके लोगों को एक निश्चित वार्षिक आमदनी का भरोसा हो सके और सरकारी सहायता से स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रम और लोगों को रोजगार का प्रशिक्षण दिलाने की व्यवस्था हो सके।

श्री निक्सन अमेरिका में अवसर प्राप्त होने का अर्थ काले या गोरे लोगों की दृष्टि से नहीं है—लेकिन यदि हम अपनी जनता को एक करके अपने राष्ट्र को फिर अखण्ड बनाना है तो हमें काले लोगों को अधिक अवसर प्रदान करने की बात माननी होगी। अपने नगरों में शान्ति का दौर मजबूत रखने का एकमात्र उपाय यह है कि नीग्रो आबादी को अपेक्षाकृत अधिक शक्ति दी जाय ऐसी शक्ति जिससे लोग अपनी बस्तियों पर अपना प्रभाव डाल सकें ऐसी शक्ति जो समाज की राजनीतिक और आर्थिक प्रक्रियाओं में भाग लेने से आती है। उन्होंने सन् १९४७ से नागरिक अधिकार सम्बन्धी सभी विधेयकों का समर्थन किया है।

श्री रॉकफेलर उनका कहना है कि नीग्रो लोगों ने व्यक्तिगत प्रतिष्ठा प्राप्त करने का एक जोरदार प्रयत्न आरम्भ किया है और उन्हें इस लक्ष्य को प्राप्त करने में मदद देने के लिए राष्ट्रीय वचनबद्धता के एक गम्भीर कार्य की आवश्यकता है। उनका कहना है कि सभी क्षेत्रों में समानता से सम्बन्धित कानूनों के अलावा सरकार की ओर से भी कार्यवाही किये जाने की आवश्यकता है। उसे उन लोगों की जिन्हें सहायता करने के निमित्त जिन्हें पहले पद ... अवसर प्राप्त नहीं था गैरसरकारी संगठनों के प्रयत्नों को बढ़ावा देना चाहिए। वह संघ और राज्यों की सरकारों द्वारा नागरिक

प्रधिकारों के बारे में कानून बनाये जाने के प्रबल समर्थक हैं।

श्री वालेस :—वह जातीय पृथक्करण के समर्थक और नागरिक-अधिकारों के सम्बन्ध में कानून बनाये जाने के विरोधी हैं। वह सन् १९६४ के नागरिक-अधिकार कानून और १९६५ के मताधिकार सम्बन्धी कानून को रद्द किये जाने के समर्थक हैं। अपने को पृथकतावादी मानते हुए भी उनका कहना है कि मैं कट्टर जातिवादी नहीं हूँ।

— डब्ल्यू० ए० स्वार्टवर्थ

('यू एस आई एस' के सौजन्य से)

कर्नाटक-समाचार

धारवाड़ जिले की हुवली तहसील में १२ और धारवाड़ तहसील में ५ नये ग्रामदान प्राप्त हुए हैं। अगस्त १६ से २४ तक धारवाड़ तहसील में तीन पदयात्राएँ चलेंगी। हुवली तहसील की पदयात्रा में ६४१ रु० का साहित्य बिका और कन्नड़ 'भूदान' के ५० नये ग्राहक बने।

चेनारी (शाहबाद) प्रखण्डदान की तैयारी

बिहारदान आन्दोलन की दिशा में दक्षिणी शाहाबाद के चेनारी प्रखण्ड के अलावा कुदरा और भगवानपुर में सघन कार्य चल रहा है। भगवानपुर में सबसे पहले कार्य प्रारम्भ किया गया है। जन-सम्पर्क कार्य चल रहा है। सुलभ ग्रामदान का परचा लोगों के हाथों में पहुँचाया जा रहा है। —प्रभु

राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी समिति

प्रधान केन्द्र
१, राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली—१
फोन : २७६१०५

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति
टुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैरों
जयपुर—३ (राजस्थान)
फोन : ७२६८३

अध्यक्ष : डा० जाकिर हुसैन, राष्ट्रपति
उपाध्यक्ष : श्री वी० वी० गिरि, उपराष्ट्रपति
अध्यक्ष : कार्यकारिणी :
श्रीमती इन्दिरा गांधी, प्रधानमंत्री
मंत्री : श्री आर० आर० दिवाकर

अध्यक्ष : श्री मनमोहन चौधरी
मंत्री : श्री पूर्णचन्द्र जैन

गांधीजी के जन्म के १०० वर्ष २ अक्तूबर, १९६९ को पूरे होंगे। आइये, आप और हम इस शुभ दिन के पूर्व—

(१) देश के गांव-गांव और घर-घर में गांधीजी का संदेश पहुँचायें।

(२) लोगों को समझायें कि गांधीजी क्या चाहते थे ?

(३) व्यापक प्रचार करें कि विनोबाजी भी भूदान-ग्रामदान द्वारा गांधीजी के काम को ही आगे बढ़ा रहे हैं।

यह सब आप-हम कैसे करेंगे ?

• यह समझने समझाने के लिए रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति ने विभिन्न प्रकार के फोल्डर, पोस्टर, पुस्तक-पुस्तिकादि सामग्री प्रकाशित की है। इसे आप पढ़ें और दूसरों को भी पढ़ने को दें।

• इस प्रकार की सामग्री और विशेष जानकारी के लिए आप अपने प्रदेश की गांधी-जन्म-शताब्दी समिति तथा प्रदेश के सर्वोदय-संगठन से सम्पर्क व पत्र-व्यवहार करें।

सहरसा जिले में प्रखण्डदान (२५-६-६८ तक)

प्रखण्ड	कुल जनसंख्या	शामिल जनसंख्या	कुल रकबा एकड़	ग्रामदान में शामिल रकबा	शामिल गाँव
१ सलखुआ	७१,८१६	५५,५६५	६१,६४९	५,२८५ ७२	१२६
२ सिमरी बख्तियारपुर	६२,४५६	८०,०००	११,२००	६,७००	८०
३ सुपौल	१,१२,८०२	७१,४६२	५३,७४३	६ ३३६ ५८	२२६
४ छातापुर	८२,६१८	५७,१८०	६६ ३६५	३३,५००	१२४
५ त्रिवेनपुर	६६,५८७	६२,०००	६६,०००	२४,०००	७५
६ कुमारखण्ड	८०,६२१	६६,१५०	६२,५११ ४१	११,०२२ ४१	१५६
७ त्रिवेणीगंज	१,००,०००	७८,३१६	७५,११५	५२,११८	१५६
८ आलमनगर	६५,३७७	४६,८००			(अप्राप्त)
९ मरौना	(पूर्वघोषित)				
१० निर्मली	(पूर्वघोषित)				

आन्दोलन के समाचार

मुजफ्फरपुर जिलादान की ओर

सर्वप्रथम बाबा का शुभागमन इस नगर में सन् १९५२ में हुआ, तब से अब तक का संक्षिप्त कार्य विवरण

जिले के २६७२ गाँवों के १९,७४५ दाताओं ने भूदान-यज्ञ में ११,८७० एकड़ जमीन दान दी, जिसमें से १५०४ गाँवों के ८२८१ भूदान किसानों के बीच ४,६१४ एकड़ वितरित कर दी गयी।

साहित्य-प्रसार :

सर्वोदय साहित्य भंडार, इन्दौर की प्रगति का एक वर्ष

मई '६७ से अप्रैल '६८ तक की बिक्री	भंडार	स्टाल	कुल
गत वर्ष की कुल बिक्री	५०८४९-८६	१३५०६ १७	६४३५६ ०३
अप्रैल '६८ अंत तक की कुल बिक्री	५९१७९ ८७	१००१७ ६८	६९११७-५५
बिक्री का अनुपात	३२८३५१ १४	४७२१५ १९	३७५५६६-३३

विषयवार बिक्री	प्रतिशत
(१) गांधी तथा सर्वोदय-साहित्य	६५%
(२) आध्यात्मिक साहित्य उपरोक्त के अतिरिक्त (आ० सा० उपरोक्त में सम्मिलित ४०%) इस तरह कुल ६०%)	
(३) प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य संबंधी	२०%
(४) बाल साहित्य	४%
	३%
(५) काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि	३%
(६) विविध (कृषि, गोपालन, आदि)	
(७) .. .. विविध	५%

प्रकाशकवार	
सर्व सेवा संघ प्रकाशन	४० %
सस्ता साहित्य मंडल	७%
नवजीवन प्रकाशन	६%
परधाम, सर्वोदय प्रचुरालय व अन्य सर्वोदय प्रकाशन	५%
विवेकानन्द, तिलक, रामकृष्ण रामतीर्थ, रमण आश्रम, आदि प्रकाशन	९%
गीता प्रेस, गोरखपुर	५%
शासकीय तथा अन्य विशेष प्रकाशन	२८%

भंडार के कुल स्थायी सदस्य १०१

स्थायी सदस्यों से साहित्य हेतु प्राप्त जमानत पूंजी रु० १०,१००.००

इस समय भंडार में कुल साहित्य : रु० ४२,७७५ १२

—व्यवस्थापक, सर्वोदय साहित्य भंडार, महात्मा गांधी मार्ग, इन्दौर

मुजफ्फरपुर जिला के दो प्रखण्डदान

संक्षिप्त विवरण

प्रखण्ड का नाम	गोरौल	पातेपुर
कुल जनसंख्या	१ २३,१९६	१ ३२,६६२
शामिल जनसंख्या	९४ ४९७	१,०८,४०८
शामिल जनसंख्या	७९%	८२%
कुल रकबा, एकड़ में	५२ ०६५	६६ ६६८
शामिल रकबा	२७,२६४	३५,५४६
शामिल रकबा	५२%	५१%
कुल पंचायतें	२७	२३
शामिल पंचायतें	२८	२३
कुल गाँव	१५४	१४४
शामिल गाँव	१२०	१३८
कुल परिवार	२२,६३९	२४,०९९
शामिल परिवार	१८ ३२७	१८,०६८
शामिल परिवार	८०%	७५%

—मंत्री, जिला सर्वोदय मंडल, मुजफ्फरपुर

जुलाई '६८ तक सदर एवं सीतामढ़ी अनुमंडल के २९ प्रखंडदान के अलावा हाजीपुर के ४ प्रखंडदान भी हो चुके हैं। इस प्रकार कुल ३३ प्रखंडदान घोषित हो चुके हैं। शेष ७ प्रखंडों में प्राप्ति के लिए अभियान जोरों से जारी है। जिले भर में तीन हजार ग्रामदान हो चुके हैं, जिनमें से २५० गाँवों में ग्रामसभाएँ संगठित हो चुकी हैं। पुष्टि का काम विशेषकर सकरा-मुरौल प्रखंड में चल रहा है। जहाँ श्री गोपालजी मिश्र, मंत्री, अनुमंडलीय ग्रामदान प्राप्ति समिति, मुजफ्फरपुर के सक्रिय→

गांधी बिबलियोग्राफी :

लेखक : धर्मवीर
प्रकाशक : गांधी स्मारक निधि, पंजाब, हरियाणा, हिमांचल प्रदेश, चंडीगढ़–१७।

पृष्ठ : ५७५; मूल्य : २५-००

अभी उस दिन अमेरिका की विस्कान्सिन यूनिवर्सिटी के एक भारतीय प्रोफेसर बता रहे थे कि अमेरिका का बुद्धिवादी अपनी अति सम्पन्नता, अपनी सरकार, और अपने पूँजीवादी सामाजिक ढाँचे से ऊबा हुआ है। ऊबा हुआ है, लेकिन साम्यवाद से बचना चाहता है, क्योंकि वह देख रहा है कि साम्यवादी ढाँचा पूँजीवादी ढाँचे से भी अधिक कठोर है। दमन से बचे, तो शोषण हो, शोषण से बचे तो दमन हो; इस दुष्चक्र से वह किसी तरह मुक्ति चाहता है लेकिन मुक्ति मिले कैसे? रास्ता कौन दिखाये? वह ढूँढ रहा है।

प्रो० मित्र कह रहे थे कि जो लोग कुछ आगे की बात सोचते हैं वे गांधी की ओर मुड़ रहे हैं। जगह-जगह गांधी के नाम से स्वाध्याय-मण्डल खुल रहे हैं। राजनीति के विद्यार्थी चाव से गांधी-विचार का विषय ले रहे हैं। लोग गांधी को अब नये सिरे से जानना चाहते हैं। स्वातंत्र्य-संग्राम का नेता गांधी बीत चुका; अब सामाजिक क्रान्तिकारी के रूप में गांधी का समय आया है। दुनिया में गांधी का नया अवतार हो रहा है।

पंजाब, हरियाणा, हिमांचल गांधी स्मारक निधि के यशस्वी संचालक श्री ओमप्रकाश त्रिखा ने जमाने की माँग पहचानी है और यह पुस्तक प्रकाशित कर दी है। अभी से '६६ तक गांधी की याद में जो काम होंगे, और जो तरह-तरह के प्रकाशन होंगे, उनमें इस ग्रन्थ का विशिष्ट स्थान होगा। गांधीजी ने क्या पढ़ा, किन पुस्तकों की प्रस्तावना लिखी, दूसरों ने उनके बारे में क्या लिखा, विश्वविद्यालयों में क्या शोध हो रहे हैं, आदि सब कुछ इस ग्रन्थ में है। जिनके लिए गांधी बुद्धि का विषय है—विज्ञान के जमाने में बुद्धि नहीं तो वह होगा और किस चीज का विषय?—उनके लिए यह अत्यंत उपयोगी ग्रन्थ है। भरी-पूरी सूचियाँ हैं। ग्रन्थ अंग्रेजी में है, इसलिए भारत और विदेश, हर जगह उपयोगी होगा। इस ग्रन्थ को निकालकर निधि ने वास्तव में गांधी का एक उपयुक्त स्मारक प्रस्तुत किया है। —विद्यार्थी

अकाल पुरुष गांधी

लेखक : जैनेन्द्रकुमार
प्रकाशक : पूर्वोदय प्रकाशन, ८ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

पृष्ठ : १४५; मूल्य : १५ रुपये

'अकाल पुरुष गांधी' पुस्तक पढ़ने का अवसर आया। जैनेन्द्रजी ने जिस रूप में गांधीजी को समझा और प्रस्तुत किया है, वैसे समग्र और तटस्थ भाव से अपने को गांधीजी के निकट-से-निकट माननेवाला कोई अब तक नहीं कर सका है। दूसरे यह जानकारी मेरे लिए सुखकर और नयी है, कि यद्यपि मैं जैनेन्द्रजी को इतने समय से मानता-, जानता रहा हूँ, कि वह गांधीजी के आत्मिक रूप से इतने निकट रहे हैं। तीसरे,→

→मुझे यह चर्चा याद आयी जो कुछ दिन हुए जैनेन्द्रजी के साथ हुई थी। उन्होंने कहा था कि पराक्रमी गांधी को हम अपने धर्म से दुनिया के सामने नहीं रख सके हैं। राष्ट्रनीति के द्वारा उनको प्रस्तुत करने में देश-नेता असमर्थ हुए हैं। इसलिए राष्ट्र-जीवन में से उनकी झलक देने और लेने का प्रयास गांधी के व्यक्तित्व को अधूरा रखता है, पूरा नहीं दे पाता। आवश्यक है कि उनके अन्तरंग सत्व को लेकर एक नयी समग्र जीवन-नीति के प्रतीक के रूप में गांधी को दुनिया के समक्ष लाया जाय। जैनेन्द्रजी के "गांधी इन्टरनेशनल" के प्रस्ताव के लिए यह पुस्तक समुचित भूमिका प्रस्तुत करती है। सचमुच अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उससे एक नया मोड़ आ सकता है। —शंकरराव देव

प्रकृति और पुरुष
सत्ता और सतत्व

मनुष्य की चेतना में एक बात है, जो नियम की चौखट में नहीं बसी जा सकती। वह है, आत्मसत्ता का आन्तरिक सतत्व। उसमें उसकी एक ऐसी श्रद्धा होती है, जो जीव-भाव के उत्कर्ष के साथ बढ़ती जाती है। इस आन्तरिक सत्ता में सत्ता का सतत्व प्रकृति नहीं, बल्कि पुरुष है। प्रकृति स्वयं पुरुष की एक शक्ति है। मूल तो एक आत्मा है, एक पुरुष है, एक आत्मस्वरूप है, जो सबके अन्दर एक है। वही पुरुष इस जगत् का स्वामी है और यह जगत् उसका केवल एक अंश-मात्र है। उसकी अनुमति से ही प्रकृति का कानून चलता है और प्रकृति की शक्ति विविध मार्गों से काम करती है। प्रकृति के अन्दर जो पुरुष है, वही ज्ञेय है। वही पुरुष प्रकृति को प्रकाश देता है और हमारे अन्दर उसे चेतन बनाता है। मानुषी तन का पुरुष भी इन्हीं भगवान का अंश है और वह इन्हीं के स्वभाववाला है।

—श्रीअरविन्द

→प्रयत्न से ३७ गाँवों के कागजात पुष्ट हो चुके हैं, जो सरकारी गजट में प्रकाशनार्थ भेजे जा रहे हैं।

११ सितम्बर '६८ तक मुजफ्फरपुर के लिए श्री ध्वजा प्रसाद साहु, अध्यक्ष, जिला सर्वोदय मंडल, श्री बद्री नारायण सिंह, मंत्री, जिला सर्वोदय मंडल; मुजफ्फरपुर श्री रामेश्वर ठाकुर, उपाध्यक्ष, जिला सर्वोदय मंडल, मुजफ्फरपुर अपने साथी कार्यकर्ताओं सहित पूरी मुस्तैदी के साथ लगे हुए हैं, इस विश्वास के साथ कि "राम-काज कीन्हे बिना मोहि कहाँ विश्राम"। —गंगा प्रसाद सहनी

तार से

चम्पारन जिले में दो प्रखण्डदान : मेहसी, ढाका।

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ४७

सोमवार २६ अगस्त, '६८

अन्य पृष्ठों पर

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट वाराणसी-१ उत्तर प्रदेश
फोन ४२८५

नमूने से क्रांति नहीं होती, क्रांति तो एकदम होती है

ग्रामदान पुष्टि यानी क्या ? सरकार मान्य करे, तो वह सारा गाँव पुष्ट, ऐसा ? गाँव में मनुष्य मरा तो वह मरा ही है। लेकिन जब तक सरकार के रजिस्टर में दर्ज नहीं होता, तब तक सरकारमान्य मरा नहीं। बच्चा पैदा हुआ, वह तो हुआ ही है। अब उसकी रजिस्ट्री होती रहेगी। पीछे की क्रिया होने में भले देर लगे। पहली क्रिया, आरम्भिक कार्य गाँव करे, यानी वस्तुस्थिति में पुष्टि हो जाय। फिर कानूनदाँ सोचेंगे और योजना बनायेंगे।

विकास निर्माण आदि की हम (कार्यकर्ता) बातें बहुत करते हैं। पुराना रिवाज था कि बारिश के बाद एक दफा अपने रिश्तेदारों से मिल आना चाहिए, ताकि कौन मरा, कौन जीवित है यह पता चले। जहाँ जीवन इतना अशाश्वत है, वहाँ विकास का विचार करना ग्रामसभा का और सरकार का काम न हो, हम अपना मानें यह अजीब-सी बात है। अहंकार है। हम कौन हैं करनेवाले ?

'अपने खातिर महल बनाया, आप ही जाकर जंगल सोया।'

ऐसी हालत में हम काहे करेंगे ? "वह हम करेंगे" मानना नाहक मिथ्या बोझ उठाना है। अहंकार-मात्र है। वह तो लम्बी 'प्रोसेस' है। आरम्भ में क्या करना है उतना समझकर करवा दें। उसके बाद विकास धीरे-धीरे होता रहेगा। वह अनादि काल से होता आया है। इसलिए हमने कहा कि निर्माण की बात इन्हींको करना है वह हम अपना जिम्मा न मानें।

फिर कुछ लोगों को लगता है कि कोई एक नमूना बनाया जाय। इससे बढ़कर तो बेवकूफी नहीं। नमूने तो कई बनाये जा सकते हैं। लेकिन नमूने बनाकर क्रांति नहीं होती। समझना चाहिए कि इस ढंग से क्रांति नहीं होती। क्रांति एकदम होती है। नमूने देखकर नहीं होती। ऐसा सोचें कि नमूना बनाना है तो हमको और कुछ नहीं करना होगा। यह बात लागू होती है तालीम में, न कि निर्माण की बात में। तालीम में कुछ अच्छे नमूने निर्माण किये स्कूलों के तो वह आवश्यक है, क्योंकि उससे तालीम का 'सायन्स' बनना है। ऐसे ही प्राथेल की सिस्टम बनी। उसने प्रयोग किये नमूने बनाये, तो वहाँ नमूना नहीं बनता है, वह प्राथेल सिस्टम कहलाता है। प्राचीन काल में भारत में भी यह था। ऋषियों के साथ विद्यार्थी रहते थे, और वहाँ तालीम के उत्तम नमूने मिलते थे। उत्कर्ष ऋषि के चार शिष्य थे, उनमें से एक जैमिनी निकले और एक पाणिनी। शिष्यों को 'ट्रेनिंग' देकर शिक्षाशास्त्र बनाया। उत्तम, आदर्श स्कूल चलाया जाय। वहाँ जितना सिखाया जाता है, उसका 'टेक्स्टबुक' बनाया जाय, तो सम्भव है उसका 'सायन्स' बने। उसका अनुकरण हो। लेकिन जहाँ तक निर्माण का सवाल है, नमूना खड़े करने से ही काम होगा, और कुछ करना नहीं पड़ेगा, यह खयाल गलत है। —विनोबा

बलिया उ० प्र० कार्यकर्ताओं की चर्चा से ११-२-६८

गाय के साथ भाव-सम्बन्ध :

मानवीय आकांक्षा-पूर्ति की एक मंजिल

भावना और युक्तिसंगत बौद्धिकता परस्पर-विरोधी नहीं

श्री राजकुमार कपूर का पत्र मैं पढ़ गया। श्री कपूर ने सेंटीमेंट और रैशनेलीटी, अर्थात् भावना और युक्ति-संगत बौद्धिकता, को जो एक-दूसरे के खिलाफ खड़ा किया है वह मेरे खयाल से ठीक नहीं है। दोनों मिलकर ही मनुष्य का चिन्तन पूरा होता है। मानव में शरीर और आत्मा का मेल है, इसी प्रकार भावना और बुद्धि दोनों मिलकर ही मानव-चिन्तन और मानवता पूरी होती है।

गाय वध्य नहीं है, इसके पीछे केवल मांसाहार और शाकाहार का सवाल नहीं है, उसके पीछे एक विशेष भावना कृतज्ञता की है। जिस प्राणी के जरिये हमें बहुत कुछ अंशों में जीवन मिलता है, उसके प्रति कृतज्ञता की भावना है। कहा जा सकता है कि बकरी और भैंस भी इसी प्रकार हमें जीवन देती हैं। लेकिन कुल मिलाकर इनके और गाय के, दोनों के बीच इस बात के अनुपात में बहुत अन्तर है। घी, दूध, बैल; सभी दृष्टियों से कृषि-प्रधान भारतीय जीवन में गाय का जो स्थान है वह अन्य किसी पशु का नहीं है।

मैं कपूरजी के इस विचार से नम्रतापूर्वक असहमति जाहिर करता हूँ कि "पशु की कद्र केवल उसकी शारीरिक क्षमता तथा मनुष्य हेतु उसकी उपादेयता पर निर्भर करती है, परन्तु मनुष्य की कद्र में उसके मानसिक विकास तथा चिन्तन का बहुत बड़ा योग होता है"। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मनुष्य की तरह पशु-पक्षी, पेड़-पौधे आदि सबमें प्राणों का संचार है। इतना ही नहीं, आज तो विज्ञान यहाँ तक पहुँचा है कि वास्तव में जड़-चेतन का भेद भी सही नहीं है, अन्ततोगत्वा जड़ वस्तुएँ भी चेतन तरंगों का समुच्चय ही हैं। अर्थात् सारी चराचर सृष्टि में एक ही शक्ति व्याप्त है। अतः पशु की कद्र केवल उसकी उपादेयता पर निर्भर नहीं है, बल्कि इस अनुभूति पर है कि उसमें भी वही शक्ति काम कर रही है जो हममें। मनुष्य की आकांक्षा है, और उसके जीवन की सफलता भी इसीमें है, कि वह सारी चराचर सृष्टि के साथ में एकरूपता का अनुभव करे। जाना उस मंजिल तक है, लेकिन सब लोग एकदम आखिरी मंजिल तक नहीं पहुँच पाते, इसलिए सबके लिए सुलभ हो ऐसा मार्ग बनाना होता है। गाय के प्रति हजारों वर्षों से हमने जिस भावना का पोषण किया है वह पशु-जगत् के साथ तादात्म्य का प्रतीक या पहली सीढ़ी है।

यह सही है कि विनोबा या बरट्रेण्ड रसेल तथा एक सामान्य मनुष्य के प्रति हमारी भावनाएँ अलग-अलग होती हैं, लेकिन एक मानव के नाते उनके प्राणों का मूल्य समान है। एक सामान्य व्यक्ति के हत्यारे को भी फाँसी होती है और गांधी के हत्यारे को भी फाँसी हुई। व्यक्ति-व्यक्ति के बीच भिन्नता जिस स्तर पर है वह अलग है, लेकिन बुनियादी दृष्टि से अभिन्नता है। यही बात पशु-सृष्टि या अन्य सृष्टि के लिए लागू होती है। व्यक्ति-विशेष भले ही अपने विवेक का उपयोग करके अपने व्यवहार में फर्क कर सकता है, लेकिन सारे समाज को ध्यान में रखते हुए कुछ मान्यताएँ, कुछ मूल्य, कुछ परम्पराएँ स्थिर करने और कायम रखने होते हैं।

कपूरजी से मेरा सानुरोध निवेदन है कि वे 'रैशनेलीटी' और 'सैन्टीमेंट' में इस प्रकार भेद न करें। आखिर हजारों वर्षों की भावना का जीवन में अवश्य एक विशेष स्थान होता है, उसे कोरा या काल्पनिक आदर्शवाद कहकर उसकी अवहेलना करना उचित नहीं है।

—सिद्धराज ढड्ढा

सदाकत आश्रम, पटना-१०

जिलादान के बाद 'विचार-पुष्टि'

आज दुनिया में कोलाहल है। और इसी कोलाहल के बीच हमें जोर-जोर से आवाज लगानी है। दुनिया के इस कोलाहल में ही हमने ग्रामदान की 'हाँक' लगायी है और देश के ५ जिलों ने इसे सुनकर प्रतिउत्तर में 'जी हाँ' कह दिया है, यानी उन्होंने हमारी पुकार सुनी है, लेकिन अभी 'शब्द' फैला है, उसका 'अर्थ' फैलाना बाकी है।

लोगों ने ग्रामदान-समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षर किया है, यह बहुत बड़ी बात है। इसके बाद पहला काम यह करना है कि लोग यह समझें कि आज का संकट क्या है, जिसके समाधान के लिए यह ग्रामदान है। जब तक लोगों के सामने यह स्पष्ट नहीं होगा, तब तक काम आगे नहीं बढ़ेगा। इसलिए लोक-शिक्षण के व्यापक कार्यक्रम चलाने हैं, और यही पुष्टि का कार्य है। जिस तूफानी गति से प्राप्ति का काम किया है, उसी तूफानी रफ्तार से पुष्टि का यह काम करना है।

उत्तर प्रदेश की यह परम्परा रही है कि गैंडो गाधी आश्रम के कार्यकर्ता जेल गये हैं स्वराज्य के आन्दोलन में, लेकिन काम एक दिन कम नहीं हुआ है। आज भी वह परम्परा कायम रखनी है, और ग्राम-स्वराज्य का यह आन्दोलन चलाना है।

बापू (गांधीजी) की सम्पत्ति के वारिस बने हैं, तो उनके विचार का वाहक भी हमें ही बनना पड़ेगा। हर गाँव में कुछ प्रवृत्ति-मूलक नहीं, बल्कि वृत्ति-मूलक कार्यकर्ता खड़े करने के लिए गाँव, पंचायत, प्रखण्ड और तहसील स्तर पर गोष्ठियों का क्रम चलाना है। इस प्रकार पहले विचार-पुष्टि और उसके साथ ग्राम-संगठन का काम करना है। विचार-पुष्टि के लिए हर गाँव में पोस्टर और 'गाँव की बात' पाक्षिक पत्रिका पहुँचाने का काम करना है।

बलिया में इस दिशा में काम होगा तो अवश्य ही ग्राम स्वराज्य का मार्ग प्रशस्त होगा।

—धीरेन्द्र मजूमदार

बलिया, १५ जुलाई '६८

धर्म-विजय

जब मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ जिले के दान की सूचना आयी तो ऐसा लगा जैसे युद्ध के किसी मोर्चे से विजय का संदेश आया हो। और, विजय भी कैसी ? संहार से प्राप्त होनेवाली विजय नहीं, धर्मात्मा सम्राट अशोक के शब्दों में 'धर्म विजय'। यह ग्रामदान ऐसा धर्म-युद्ध है जिसमें किसीको ललकार नहीं है, इसलिए उसमें एक की विजय और दूसरे की हार भी नहीं है। इसमें विजय ही विजय है। जहाँ सबकी विजय और किसीकी हार न हो, वह हृदय परिवर्तन की प्रक्रिया है। यह युद्ध वास्तविक धर्म युद्ध है।

टीकमगढ़ के जिलादान से राज्यदान के 'साम्राज्य' में एक और बड़ा क्षेत्र जुड़ गया। बिहार, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, तमिलनाड, और अब मध्य प्रदेश को मिलाकर देश का एक बड़ा भूभाग हो जाता है, और अगर अगले पन्द्रह-सोलह महीनों में इन बड़े क्षेत्रों का दान हो गया, तो भारतदान दूर नहीं रह जायगा।

लेकिन एक बात है। अब समय आ गया है कि दान से 'स्वराज्य' की जो झाँकी है उसे अच्छी तरह जनता के सामने आना चाहिए। ग्रामस्वराज्य हमारी क्रान्ति का घोष है, दान उसकी प्रक्रिया और सर्वोदय उसका सम्पूर्ण दर्शन। जनता ग्रामस्वराज्य की झाँकी देखना चाहती है, भले ही आज वह कितनी भी धुँधली हो। जनता की भावना उस झाँकी के लिए तैयार है। साधना तो तब शुरू होगी जब राज्यदान के बाद हजारों हजार कदम एक दिशा में एक साथ चल पड़ेंगे। लेकिन मनुष्य के पैर बढ़ें इसके लिए उसकी चेतना को जगानेवाला चित्र चाहिए। हम आज कुछ भी सोचें, कुछ भी कहें, सामान्य मनुष्य यह भरोसा चाहता ही है कि जो कुछ उसके कान सुन रहे हैं वह उसके हाथों की पहुँच के भीतर है। क्या हम अब भी नहीं बता सकते कि ग्रामस्वराज्य के तत्व क्या हैं और राज्यदान देश के जीवन को क्या मोड़ देना चाहता है ? विचार की पूरी शक्ति प्रकट हो, इसके लिए आवश्यक है कि मनुष्य उसके प्रकाश में जरा दूर तक देख सके।

मनुष्य अकेला रह जाता तो कोई प्रश्न नहीं था। विभिन्न स्वभाव, विभिन्न रुचि, विभिन्न सामर्थ्य के मनुष्य एक समूह में कैसे रहेंगे, यह सारे प्रश्नों का प्रश्न है। इस एक प्रश्न में दूसरे सब प्रश्न समाये हुए हैं। इसी प्रश्न को लेकर सारी राजनीति खड़ी है। भय और लोभ की अनेक पद्धतियाँ और प्रक्रियाएँ निकालकर व्यक्ति को समूह के साथ जोड़ने का विफल प्रयत्न सभ्यता के विकास की लम्बी और रोचक कहानी है। अब राज्यदान किस तरह उस लम्बी कहानी में एक अभिनव अध्याय जोड़ना चाहता है, यह बात समाज के सामने सुन्दर ढंग से आनी चाहिए। प्रकृति, पड़ोसी और प्रभु के प्रहारों से संतप्त मानव-मन आश्वस्त होना चाहता है। इसलिए हमारे आन्दोलन में आज तक जितना चिंतन हुआ है उससे कहीं अधिक चिंतन और स्पष्टता की जरूरत है, क्योंकि अब यह प्रश्न चारों ओर से सुनायी देने लगा है कि ग्रामदान के बाद क्या, जिलादान के बाद क्या, और राज्यदान के बाद क्या ? ग्रामस्वराज्य में मनुष्य अपनी मुक्ति का आश्वासन पाने को उत्सुक है। यह आश्वासन टीकमगढ़ की जनता को वहाँ के प्रबुद्ध नागरिकों से, जो इस अभियान के सहयोगी और विचार के वाहन रहे हैं, मिलना चाहिए। और, उन्हें यह आश्वासन देना है इस उत्तरदायित्व का भान उन्हें हमारे कार्यकर्ता साथियों को कराना चाहिए। जो युद्ध के सिपाही हैं उनकी मध्यप्रदेश के दूसरे जिलों में धर्म यात्रा जारी रहे, लेकिन जो नागरिक हैं, गृहस्थ हैं, उन्हें प्राप्त विजय को स्थायी बनाने की ओर तत्काल ध्यान देना चाहिए। इस सलाह के साथ टीकमगढ़ का ग्रामस्वराज्य की बिरादरी में हृदय से स्वागत है।

धर्म-घोष

जिस समय मध्य प्रदेश में धर्म की विजय हुई लगभग उसी समय राजस्थान में धर्म का घोष हुआ। वहाँ के साथियों ने इस संकल्प की घोषणा की कि वे सबसे पहले सिरोही के जिलादान में शक्ति लगायेंगे। सिरोही में आबूरोड है जहाँ पिछला सर्वोदय सम्मेलन हुआ था। बलिया में सर्वोदय-सम्मेलन हुआ तो बलिया का जिलादान हुआ। कोई कारण नहीं कि आबू में सर्वोदय-सम्मेलन हुआ तो सिरोही का जिलादान न हो। सम्मेलन में श्री गोकुल भाई भट्ट के नेतृत्व में सिरोही के मित्रों का जो हार्दिक सहयोग देखने को मिला उससे यह भरोसा होता है कि उस सहयोग में कुछ और शक्ति है जो श्री गोकुल भाई के नेतृत्व में प्रकट हो सकती है।

सिरोही के जिलादान का संकल्प उस आत्म विश्वास में से निकला है जो राजस्थान के साथियों में शराबबन्दी के सत्याग्रह में प्राप्त सफलता के कारण पैदा हुआ है। इसी आशा से विनोबाजी ने सत्याग्रह को आशीर्वाद भी दिया था नहीं तो शराबबन्दी के सत्याग्रह के लिए कुछ दिन और ठहरा जा सकता था, और उस सत्याग्रह का स्वरूप भी दूसरा होता।

शराब एक नशा है। बहुत बुरा नशा है। उसे बंद होना ही चाहिए। लोग शराब न पीयें, यह अभीष्ट है। लेकिन सरकार—जनता के वोट से बननेवाली और जनता के वोट से चलनेवाली सरकार—शराब का व्यापार करे, तथा अपने मतदाताओं और करदाताओं के पतन का कारण बने, यह असह्य है। किंतु शराब के अलावा दूसरे नशे भी हैं। शराब बेहोश बनाकर मनुष्य को बेकार कर देती है, सत्ता और सम्पत्ति का नशा बेहोश कर मनुष्य को भयंकर बना देता है। इसी नशे ने दुनिया को संहार के कगार पर पहुँचा दिया है, इसीने दमन और शोषण का चक्र चलाया है, और मनुष्य को मनुष्य का शत्रु बनाया है। ऐसा लगता है कि सत्ता और सम्पत्ति का यह नशा समाज को ही समाप्त करने पर उतारू है। शराब के नशे का मुकाबिला किया जा सकता है लेकिन इस दूसरे नशे का मुकाबिला कैसे होगा ? कब होगा ? किसके विरुद्ध धरना दिया जायगा ? सत्याग्रह का क्या स्वरूप होगा ? शराब बुरी है, यह→

सभी राजनीतिक दल मूलतः एक ही—'आर्मीस्ट'

प्रश्न : सोशलिस्ट फोर्सेस के एकीकरण के बारे में आपकी क्या राय है ? वह इष्ट होगा या नहीं ?

उत्तर : सोशलिस्ट फोर्सेस कौन हैं, मुझे मालूम नहीं। इसमें इष्ट है नहीं। सारे अनिष्ट हैं। सोशलिज्म अगर करना हो, तो शक्ति खड़ी होनी चाहिए। वे लोक-शक्ति की ओर ध्यान देते नहीं। सत्ता हासिल करके सोशलिज्म स्थापित करेंगे। गरीबों की ओर ध्यान देना उनका मन है। वह सारा सत्ता प्राप्त करके करेंगे।

सत्ता मानी भी क्या ? मान लीजिए आप बन गये एम० पी०, तो क्या आपकी अक्ल बढ़ गयी ? आपकी अक्ल तो आज जो है वही वहाँ होगी। सत्ता मानी क्या है ? आज नहीं है आपकी सत्ता ? आपके विचार आप प्रकट नहीं कर सकते हैं ? यहाँ भी प्रकट कर सकते हैं, वहाँ भी प्रकट कर सकते हैं। लेकिन वहाँ आपके विचार आप आर्मी के द्वारा प्रकट करेंगे। आज आपके विचार लोग मानें न मानें, लेकिन वहाँ आप समझा लेंगे और लोग नहीं मानेंगे, तो आर्मी है ही !

नक्सालवाड़ी में दंगा हुआ था। वहाँ मैं गया था। वहाँ कम्युनिस्टों ने कुछ ऊधम मचाया था। उनको मैंने समझाया कि तुम कैसे बेवकूफ हो ? सरकार को वोट और टैक्स देकर सेना रखने का अधिकार दिया—उनके हाथ में शस्त्रास्त्र दिये, और अब खूनी क्रान्ति की बातें करते हो ! अगर तुम्हारी खूनी क्रान्ति सफल होनेवाली है, तो बाबा उसका विरोध करेगा नहीं। लेकिन वह सफल नहीं होगी। क्योंकि वह सेना के द्वारा दबायी जायेगी। आपके तीर-धनुष, आर्मी के सामने टिकेंगे नहीं।

सार यह है कि यह सारी सत्ता आर्मी की है। नाम है सोशलिस्ट पार्टी, कम्युनिस्ट पार्टी, वगैरह। लेकिन सभी आर्मीस्ट पार्टी हैं। मैंने उसको नाम दिया है 'आर्मीस्ट'। तुम्हारा Final sanction (आखिरी ताकत) क्या है ? लोग नहीं मानें, तो आप क्या करेंगे ? आर्मी की मदद लेंगे। आखिरी शक्ति सेना है।

शंकराचार्य से पूछा था कि आप समझाते हैं, लोग नहीं समझेंगे, तो आप क्या करेंगे ? बोले—दुबारा समझाऊँगा। और दुबारा समझाने पर भी नहीं समझें तो ? तो तिबारा समझाऊँगा। चौथी बार, पाँचवीं बार समझाऊँगा—और समझाता ही जाऊँगा। मेरा एक ही हथियार है समझाना। मुझे दूसरे हथियार चाहिए नहीं। दूसरे हथियारों पर मेरी श्रद्धा नहीं। विचार जिसकी समझ में आ गया, वह प्रभावित हुआ। उसकी श्रद्धा विचार पर है। इनकी किस पर है ? आर्मी पर। चाहे सोशलिस्ट हो, कम्युनिस्ट हो, जनसंघी हो, स्वतंत्र हो, या कांग्रेस हो—इनका Final sanction (आखिरी ताकत) आर्मी है। जब कोई ऐसी पार्टी बनेगी, जो कहेगी कि हम आयेंगे, तो आर्मी हटायेंगे, तब वह 'स्वतंत्र विचार' होगा। आज किसी के पास स्वतंत्र विचार है नहीं। नाम अलग-अलग है। एक है अजगरवादी, एक है हाथीवादी, एक है घोड़ावादी।

मनुष्य की योग्यता तो आन्तरिक शक्ति से बढ़ती है। एक होता है प्राइमरी वैल्यूज और सेकेण्डरी वैल्यूज। प्राइमरी वैल्यूज हैं, प्रामाणिकता, निष्ठा, हिम्मत, निर्भयता। विद्या, कला, सत्ता ये सेकेण्डरी वैल्यूज हैं। इसलिए सोशलिस्ट फोर्सेस के एकीकरण पर मेरी श्रद्धा बैठ सकती है, अगर वे जाहिर करेंगे कि हम सत्ता में आयेंगे, तो जनता पर हमारा पूरा विश्वास है और अपने पीछे हम जनता का बल महसूस करते हैं, हम आर्मी हटायेंगे।

मान लीजिए, आर्मी हटायी, तो क्या होगा ? पाकिस्तान हमला करेगा ? करेगा, तो वर्ल्ड-वार होगी। अमरीका, रूस सब एकदम आयेंगे, शान्त नहीं बैठेंगे। इस वास्ते हमले का डर तो हमारी आर्मी ही की है। हिन्दुस्तान की बात तो फिलहाल छोड़ दें, कमजोर है बेचारा। मान लीजिए इंग्लैंड ने आर्मी हटायी, तो क्या समझते हैं आप ? इतना बड़ा देश, आर्मी हटायी, तो क्या एकदम उस पर रूस का हमला होगा ? इंग्लैंड की आवाज एकदम दुनिया में पहुँचेगी, दुनिया पर असर होगा। लेकिन कोई हिम्मत नहीं करता।

मान लीजिए, सोशलिस्ट फोर्सेस एक हो जाते हैं और जाहिर करते हैं कि हम सोशलिस्ट फोर्सेस हैं, हम आर्मी हटा देते हैं। आर्मी के लोगों को बेकार तो नहीं रहने देंगे, सब को खेती में लगा देंगे। तो कितना चमत्कारिक परिणाम होगा कुल दुनिया की राजनीति पर। इसलिए डर छोड़ना चाहिए। जब तक श्रद्धा आर्मी पर कायम रहेगी, तब तक ऐसा ही चलनेवाला है। इसलिए कोई भी पार्टी कहीं आवे, कोई फरक पड़नेवाला है नहीं। —विनोबा

सीतामढ़ी : २१-७-'६८ : कार्यकर्ताओं के साथ की चर्चा में

→मान्यता बढ़ती हुई शराबखोरी के इस जमाने में भी इस देश में प्रचलित है, लेकिन सत्ता के दमन और सम्पत्ति के शोषण के बारे में मान्यता अभी बन नहीं पायी है। उल्टे, उनके साथ जन-जन की आकांक्षा जुड़ी हुई है। आकांक्षा ही नहीं, बेबसी भी है। सारा मानव समाज सत्ता के भय और सम्पत्ति के लोभ में चूर है। शराब का नशा सुबह होने पर उतर जाता है, पर इनका नशा तो दिन-रात कभी उतरता ही नहीं। शराब के नाम तक से परहेज करनेवाले एक-से-एक सात्त्विक लोग सत्ता के स्वाद के लिए लालायित रहते हैं। तारीफ तो यह है कि इनके 'ठीकेदार' खुद चाहते हैं कि जनता सत्ता और सम्पत्ति के 'नशे' से दूर रहे। सत्याग्रह की जरूरत ही क्यों हो ? यह स्थिति इतनी भयंकर है। अब प्रश्न है कि दूर कैसे हो ? और, अगर यह स्थिति दूर न हुई तो देश का भविष्य क्या होगा ? तब हम उन करोड़ों नर-नारियों से—जिनकी जिन्दगी गम की एक लम्बी कहानी है, क्या कहेंगे कि वे अपना गम गलत कैसे करें ? बेहोशी की हालत में तो किसी तरह रात कट जाती है, लेकिन होश में रहेंगे तो भूख की तड़पन में दिन कैसे कटेगा, रात कैसे कटेगी ? उसके लिए मुक्ति का मार्ग चाहिए। ग्रामदान-जिलादान-राज्यदान के सिवाय और किसी चीज में वह मार्ग दिखायी नहीं देता। इसलिए राजस्थान के मित्रों को उनके संकल्प पर बार-बार बधाई ! ●

[illegible] इस अंक में स्वास्थ्य और [illegible] चित्र का दर्शन है।
[illegible]

इस अंक में पढ़ें

२६ अगस्त, '६८

वर्ष ३, अंक २] [१८ पैसे

भाषणों की मूल मुनिया

बनिराम पांडे जब लखनऊ से लौटे तो मन में बहुत [illegible] मच रही थी। हुआ यह कि इसी साल उनके लड़के मुरारी ने इंटर कालेज की पढ़ाई पूरी की और लखनऊ विश्वविद्यालय में बी० ए० में नाम लिखाया। बनिराम पांडे के एक बहुत पुराने मित्र हरिवंशजी लखनऊ में रहते हैं। पांडेजी का अपने मित्र पर पूरा भरोसा है, इसीलिए उन्होंने मुरारी को खर्च के पैसे देकर हरिवंशजी के पास भेज दिया था, क्योंकि खुद खेती के काम में बहुत फंसे हुए थे। साल भर गृहस्थों को इतनी फुरसत कहाँ मिलती कि वे [illegible] ही [illegible] पाते हैं, इसलिए इस काम में जरा भी लापरवाही उनसे नहीं होती।

हरिवंशजी भरोसे के मित्र तो हैं ही, पहुँचवाले भी हैं। स्वराज नहीं हुआ था, तब से ही लखनऊ में रह रहे हैं। गाँव के लोगों के मामले-मुकदमे में पैरवी करना उनका मुख्य धंधा शुरू से रहा है। स्वराज के बाद उन्होंने यह धंधा छोड़ देने की बात सोची थी। सोचते थे कि स्वराज के बाद यह पैरवीवाला धंधा तो चलेगा नहीं, इसलिए बाल-बच्चों के लिए कोई और काम करना चाहिए। दो-एक साल गाँव जाकर खेती करने की कोशिश की, लेकिन मामला जमा नहीं। इसी बीच उन्होंने यह भी देख लिया कि स्वराज्य के बाद 'पैरवी' का धंधा समाप्त नहीं हुआ है। हाकिम भी करीब-करीब वही हैं, और लोग भी वही हैं। हाँ, 'अंग्रेजी साहबों' की जगह नेता या उनके 'आदमी' जरूर ऊपर के दफ्तरों में आ गये हैं। इसी लिए दो-ढाई साल बाद ही खेती-बारी का खटराग छोड़-छाड़कर हरिवंशजी लखनऊ अपने पुराने धंधे में लौट आये। और जब 'रोजगारी' का [illegible] भी [illegible] दिखाया दिया तो भगवान का नाम लेकर उस बहती गंगा में भी 'नहाने' उतर गये। [illegible] रोजगारीवाली इस बहती गंगा के किनारे जब आ ही गये तो फिर हाथ धोकर लौट जाना तो बेवकूफी ही न कही जायगी? उनकी इस सद्बुद्धि का ही फल है कि हरिवंशजी आज लखनऊ के जाने-माने लोगों में से हैं। हर जगह उनकी पहुँच है, चाहे वह सरकारी दफ्तर हो, स्कूल-कालेज विश्वविद्यालय हो, सरकारी-गैरसरकारी नेता का घर हो, या बड़े-से-बड़े और छोटे-से-छोटे सेठ साहूकार की गद्दी हो।

इसीलिए मुरारी का नाम लिखाने में कोई झंझट नहीं हुई थी। 'हास्टल' में रहने का इंतजाम भी हो गया था और

भारत गाँवों का देश।

१५ अगस्त '४७ को गुलामी की जंजीरें टूटीं !

मुरारी ने चिट्ठी लिख भी दी कि 'हरिवंश चाचा ने सब कुछ ठीक कर दिया है, आपको आने की जरूरत नहीं है।'

लेकिन बाप का दिल ठहरा ! माना नहीं। खेती-बारी का काम सँभलते ही बलिराम पांड़े एक बार सारा इंतजाम अपनी आँखों से देख आने के लिए लखनऊ पहुँच गये थे।

मुरारी के रहने, खाने-पीने और पढ़ने-लिखने का इंतजाम देखकर बलिरामजी को इतमीनान हो गया और उसी दिन रात की गाड़ी से गाँव लौट आने की सोच लिये थे लेकिन जब हरिवंशजी से मिलने गये तो उन्होंने आने ही नहीं दिया। बोले, 'एक तो वर्षों बाद भेंट हुई, और तिसपर आज ही भाग जाना चाहते हो ? दो दिन और ठहरो। परसों पन्द्रह अगस्त है, स्वराज की २१वीं वर्षगांठ। लखनऊ का जलसा देख कर जाना।'

बलिराम के मन में भी लालच हो आयी। सोचा कि गाँव छोड़कर कभी बाहर निकलने का मौका तो मिलता नहीं, यों ही कुएं का मेढक बने रहते हैं। अब यहाँ आ ही गये हैं तो दो दिन रुक ही जायं।

गाँव में रहते हैं तो १५ अगस्त कब आया और कब गया, इसका पता ही नहीं चलता है, लेकिन लखनऊ की तो बात ही निराली है। यहाँ की चहल-पहल और रौनक देखकर तो बलिराम पांडे हैरत में पड़ गये। स्वराज का जलसा मनाने में इतना खर्चा, इतनी दौड़धूप, खेल-तमाशे अब भी शहरों में होते हैं, यह तो बलिराम को मालूम ही नहीं था। वह तो सोचते थे कि अंग्रेज गये तब उनके जाने की खुशी तो मना ही ली अब उसके बाद जो चीजें आयी हैं, क्या उनके आने की खुशी भी मनायी जा सकती है ? भ्रष्टाचार, गरीबी, बेकारी, महंगाई, दुराचार, घूसखोरी, दलबन्दी, दंगे-फसाद, कुर्सी की छीना-झपटी, जाति के झगड़े, धर्म के नाम पर खून-खराबे—क्या इन्हीं के आने पर खुशी मनायी जाती है हर साल ? गाँव में रहनेवाले बलिराम पांडे कभी-कभी जिला कचहरी या ब्लाक आफिस में किसी काम से जाते हैं, तो यही सब देखकर आते हैं; और मन ही मन सोचते हैं, क्या स्वराज इन्हीं सबके लिए आया था ?

१५ अगस्त को बलिराम पांड़े हरिवंश के साथ एक नेताजी का भाषण सुनने गये। हरिवंश ने बताया कि नेताजी बहुत बड़े हैं। देश भर में आजकल इनके नाम का जयजयकार हो रहा है। भाषण बहुत अच्छा देते हैं।

बलिराम पांड़े ने पहली बार इतने बड़े नेता को देखा और भाषण सुना था। बगुले की पांख जैसे सफेद कपड़े पहने हुए 'नेताजी' ने बहुत शान से झण्डा फहराया था। एक ही तरह के कपड़े पहने 'स्कूलिहा' (स्कूल में पढ़नेवाले) लड़कों ने कतार
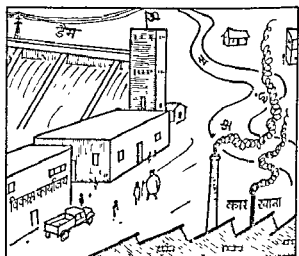
विकास की बड़ी-बड़ी योजनाएँ चालू हुईं !

में खड़े होकर गाना गाया था, सलामी दागी थी। और नारे लगाये थे। उसके बाद नेताजी ने लम्बा भाषण दिया था और हजारों लोग बैठे सुनते रहे थे।

लौटते समय बलिराम पांडे के मन को जो बात मथ रही थी वह यह कि नेताजी ने अपने भाषण में तो कहा था कि 'भारत गाँवों का देश है। देश की तरक्की तभी होगी जब भारत के साढ़े पाँच लाख गाँवों का विकास होगा।...अंग्रेजों ने हमारे देश को, हमारे गाँवों को चूस लिया था, उन्हें चौपट कर दिया था। हमें देश को बनाना है, हर गाँव को बनाना है।...गाँवों के विकास का जितना काम हम करना चाहते थे उसे नहीं कर पाये हैं, उसे करना है। फिर भी पिछले दिनों हमने बहुत

तरक्की की है। वह दिन दूर नही जब हमें अनाज के लिए दूसरे देशो का मुंह नही ताकना पडेगा। और भी सब चीजे धीरे-धीरे अपने देश में बनने लगेंगी। जैसा कि गाधीजो ने कहा था, ।' मन ही मन बलिराम कुढ गये थे। हुंह २१ साल बीत गये। दश का क्या हाल हुआ, गांव कहां और किस हालत मे पहुंचे हैं, यह कोई कहने और भाषण मे समझाने को बाते हैं? आंखों के सामने क्या दिखाई नही देता? विकास की माया देख ली, पचायती जाल देख लिये। नेताओं के वादे और उनके करतब देख लिये। अब क्या देखना बाकी है? गांव असहाय होते जा रहे हैं, हम गांव के लोग टूटते चले जा रहे हैं, लगता है कि गांव का ढांचा भर रह गया है, गांव कही है ही नहीं। और नेताजी जोर-जोर से भाषण दे रहे हैं कि भारत गांवों का देश है। वोट' लेने चले आते हैं नेता और लगान वसूलने चला आता है सरकारी कर्मचारी, इसके बाद कौन पूछता है गांव को?

यों तो बाहर से बलिराम पाडे बहुत शात रहते हैं। गांव में कभी इधर उधर में नही पडते? अपनी घर गृहस्थी मे ही लगे रहते हैं। लेकिन जब स्वराज्य हुआ था तब उनके दिल मे जो अरमान पैदा हुए थे स्वराज्य के बाद वे दिनो दिन मरते गये। आज उस मन में वही कुढन बन गये। और जब उन्होंने नेताजी का भाषण सुना तो मन में हलचल पैदा हो गयी कि 'आखिर यह धोखाधडी का कारोबार कबतक चलता रहेगा?' क्या कभी गांवों की बेसुध जनता चेतेगी भी या नेताओं के भाषणों की भूल भुलैया में ही भटकती रहेगी? (क्रमश)

लेकिन गांव टूटते गये
ठीकेदार सेठ और अफसर की बन आयी।

गॉव गॉव में शान्ति-सेना

(पिछले अंक में चर्चा हुई थी ग्रामसभा के मार्फत गांव में व्यवस्था विकास और न्याय के लिए होनेवाले कामों के बारे में। उसके बाद ग्राम शान्ति-सेना की चर्चा चली थी। प्रश्न था कि इस ग्राम शान्ति सेना के काम क्या होंगे?)

उत्तर—अगर गांव के लोग मिलकर अपने गांव की व्यवस्था नही चला सकते तो फिर ग्रामस्वराज्य का अर्थ क्या होगा? अगर विकास और व्यवस्था की जिम्मेदारी गांव के बाहर की ही किसी सस्था, या सरकारी अधिकारी के हाथ मे रह गयी तो स्वराज्य किस बात का होगा? ग्रामस्वराज्य की मुख्य बात यह है कि सब मिलकर अपने निर्णय से अपना काम चलाय।

प्रश्न—लेकिन, आपको याद होगा, आपने कहा था कि ग्रामसभा इसलिए नहीं है कि गांव पर हुकूमत करे। वह इसलिए है कि गांव की सेवा करे, गांव का सगठन करे, गांव गांव में इतनी ठोस और पक्की एकता कायम करे कि बाहर चाहे जो होता रहे गांव के भीतर की एकता अपनी जगह अडिग रहे।

उत्तर—असली बात यही है। गांव की शान्ति गांव की एकता में ही है। गांव मे शान्ति बनी रहे, एकता कायम रहे, और गांव में जो भी सवाल खडे हो उनका हल गांव के लोग आपस मे बैठकर निकाल ल। बस, इतना होता रहे तो दूसरे सब काम आसानी से होते चले जायगे।

प्रश्न—शान्ति का काम कठिन है। आजकल ऐसा हो गया है कि गांव में हर वक्त तनाव सा बना रहता है। भूमि के, लेन देन के, तथा कुछ दूसरे झगडे पहले भी थे, लकिन राजनीति और चुनाव ने तो गजब ही कर डाला है। पचायत का चुनाव, विधानसभा का चुनाव, ससद का चुनाव, बस चुनाव ही चुनाव की चर्चा रहती है। चुनाव तो अपने समय से आता है और चला जाता है, लेकिन गांव में झगडे का बीज बो जाता है। चुनाव से दुश्मनी की जो आग लग जाती है वह कभी नही बुझती। आपका क्या ख्याल है, क्या यह हवा कभी बदलेगी?

उत्तर—बदलेगी बशर्ते झगडे के कारणों को जड से दूर कर दिया जाय। ग्रामदान से जमीन के झगडे समाप्त हो जायंगे, और राजनैतिक दलबन्दी भी समाप्त हो जायगी। ये दो मूल हैं, जिनसे छुटकारा मिल जाय तो छोटे मोटे झगडों को दूर करना मुश्किल नही रह जायगा। फिर भी दो काम तो करने ही पडेंगे। एक तो गांव की व्यवस्था बदले, दूसरे लोगों का शिक्षण हो। ग्रामदान आन्दोलन में तीन मुख्य चीजें हैं—ग्रामदान, गांव की खादी और ग्राम शान्ति-सेना।

माता और संतान : समाज की बुनियाद

[आमतौर पर शुरू में बच्चों के मन और तन के विकास पर हम ध्यान नहीं देते। क्या गाँव, क्या शहर, सब जगह एक ही सिलसिला चलता है कि बात-बात पर बच्चे को डाँट दो, डरा दो, धमका दो। जरूरत पड़े तो पीट दो या बहलाने के लिए खाने को कुछ थमा दो। इसमें बच्चे का तन-मन दोनों बिगड़ता है। यह होता है अधिकतर लापरवाही और जानकारी की कमी के कारण। जरूरत की चीजों का अभाव भी तन-मन को बहुत बिगाड़ता है। और अभाव तो गाँव में है भरपूर ही। इस अभाव को दूर करने के लिए ही ग्रामदान आन्दोलन चल रहा है। अभाव तो तभी दूर होगा, जब गाँव के सभी लोग मिलकर सबके बारे में सोचेंगे। ग्रामदान से वह सिलसिला शुरु होता है। लेकिन अभाव के साथ ही एक दूसरी बात भी है, वह है अज्ञान। घर के पुरुष और स्त्री, यानी बच्चे की माँ और बाप नहीं जानते कि जो जिम्मेदारी बच्चे की उनके ऊपर है उसे वे कैसे निभायें। इसीलिए "गाँव की बात" के इस अंक में माताओं की जानकारी के लिए जरूरी बातें छाप रहे हैं। इसी तरह हम बाप, भाई, बहन, दादा, दादी, नाना, नानी आदि सब लोगों के जानने लायक बातें छापेंगे कि बच्चों के साथ किस तरह का व्यवहार करना चाहिए।—सं०]

प्रिय बहन राधा,

तुम्हारे जाने के बाद मेरे मन में कई बार यह बात उठी कि तुम सयानी हुई, शादी हुई और एक दिन ससुराल भी चली गयी। वहाँ जाकर तुमने अपनी घर-गृहस्थी संभाली, एक नया वातावरण मिला। अब अपना एक अपना संसार बनाओगी, और संयोग हुआ तो इसी तरह छोटी ही उम्र मे माँ भी बन जाओगी। लेकिन माँ बनने से पहले माँ बनने की शिक्षा तुमको नहीं मिली। एक तुम ही नहीं, अपने देश में अधिक लड़कियाँ ऐसी ही हैं जो माँ बन जाती हैं, लेकिन मातृत्व की जानकारी उनको कुछ नहीं रहती। इस आवश्यक जानकारी के न रहने के कारण ऐसी भूलें हो जाती हैं जिनसे माँ तथा बच्चे, दोनों को जीवन भर अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। मैं चाहती हूँ कि तुम ऐसी भूलों से बचो। समझदार हो, कोशिश करोगी तो जरूर बच जाओगी।

राधा, स्त्री के जीवन में कितने ही परिवर्तन आते हैं। वह छोटी-सी बच्ची से किशोरी और किशोरी से युवती बनती है। युवती होने पर उसमें लाज और संकोच आ जाता है, जिससे उसे अपने तथा अपने सामाजिक जीवन को समझने का मौका नहीं मिल पाता। स्त्री-पुरुष सम्बन्ध तथा मातृत्व की बातें परिवार में लड़की के सामने कोई करता नहीं। इधर-उधर सुनकर, सोचकर, चोरी से देखकर जो जान लेती है, बस उतनी ही उसकी जानकारी होती है। अकसर वह पत्नी बनती है और माँ भी बन जाती है, फिर भी उसे कोई सही जानकारी नहीं रहती है। सोचो, जिस मातृत्व की शिक्षा पर माँ तथा संतान का जीवन टिका हुआ है उसकी आवश्यक जानकारी तुम जैसी लड़कियों को न मिले, यह कितनी बड़ी कमी है।

पुराने जमाने में बड़े परिवार होते थे। हर परिवार की बूढ़ी स्त्रियाँ सयानी लड़कियों को और नयी बहुओं को अपने अनुभव के आधार पर ये बातें समय-समय पर समझाया करती थीं। लेकिन आज नये जमाने में कई कारणों से परिवार छोटा हो गया है; उस छोटे परिवार में स्त्री बिलकुल अकेली पड़ गयी है। कौन उसे बताये, कौन सिखाये ?

शायद तुम्हें मालूम हो, जानकार लोगों ने मातृत्व के विषय पर बड़ा ध्यान दिया है। आज के युग में ही नहीं पुराने जमाने से ही इस विषय पर अनेक ग्रन्थ लिखे गये हैं। जिनमे गर्भाधान एक पूरा संस्कार माना गया है, ठीक उसी तरह जैसे विवाह, श्राद्ध आदि। उन ग्रन्थों में इन संस्कारों की सारी विधियाँ लिखी हुई हैं। यह नहीं माना गया है कि माँ-बाप यों ही बन जाया जाता है। आज का जमाना पहले से कहीं अधिक विज्ञान का है, इसलिए हमारे हर काम में, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, विज्ञान होना चाहिए। विज्ञान का बहुत विकास हो गया है, और आगे कितना होगा इसकी कल्पना हम-तुम आज नहीं कर सकते।

ऐसा मान लिया गया है कि बच्चे का शिक्षण उसी समय से शुरू हो जाता है जब वह माँ के गर्भ में आ जाता है। जन्म लेने के बाद से तो शिक्षण साफ-साफ शुरू हो ही जाता है। माँ बच्चे की प्रथम गुरु मानी गयी है। बच्चा माँ के गर्भ में नौ माह रहता है और जन्म लेने के बाद भी माँ के ही निकट संपर्क में उसका अधिक समय बीतता है। बच्चे के जीवन में माँ की गोद और उसकी देखभाल का बहुत महत्व है। बच्चे के चारों ओर जो लोग रहते हैं उनमें सबसे ऊँचा स्थान माँ का है।

राधा, सोचो स्त्री की कितनी बड़ी जिम्मेदारी है। स्त्री का अपना बच्चा तो है ही, देश में करोड़ों बच्चे हैं उनकी जिम्मेदारी मुख्य रूप से स्त्रियों पर ही है। देखने में लगता है कि हमारे सामने अपनी घर-गृहस्थी और बाल-बच्चों के सिवाय और कुछ नहीं है, लेकिन जब जरा दूर तक सोचो तो लगता है कि

सचमुच कितनी बड़ी जिम्मेदारी हम लोगों पर है। इतनी बड़ी जिम्मेदारी निभाने के लिए हमारी कितनी तैयारी है? जैसे किसान को खेती का और डाक्टर को शरीर का ज्ञान होना चाहिए उसी तरह माँ के लिए मातृत्व तथा बच्चे के पालन-पोषण का पूरा ज्ञान आवश्यक है।

किसी भी देश के लिए यह गौरव की बात है कि वहाँ के नागरिक सभ्य तथा स्वस्थ हों। देश की उन्नति, सुख और समृद्धि इसी पर निर्भर है। आज के बच्चे ही कल देश के सभ्य नागरिक होंगे, उसे बनानेवाले, चलानेवाले होंगे। इन बच्चों को बनाने की जिम्मेदारी किसकी है? हमारी, तुम्हारी, और किसकी?

राधा, किसी छोटे से बच्चे को देखकर कई लोग ऐसा सोच लेते हैं कि यह मांस के एक लोथड़े से अधिक और कुछ नहीं है। लेकिन ऐसा नहीं, बच्चा अपने में पूर्ण होता है। उसके अन्दर भविष्य का क्या अंकुर छिपा हुआ है, इसे कौन जानता है? जिस तरह से छोटे-से बीज में विशाल वृक्ष छिपा रहता है, उसी तरह बच्चे को बड़े का छोटा रूप समझो। बच्चा शुरू में ही समाज में सब कुछ सीखता है। समाज का प्रभाव उस पर पड़ता है, और वह समाज को प्रभावित करता है। मनुष्य समाज में ही जन्म लेता है, बड़ा होता है, सब कुछ सीखता है और समाज में ही मरता है। समाज के बिना मनुष्य रह नहीं सकता और मनुष्य के बिना समाज बन नहीं सकता। मनुष्य और समाज का तन और प्राण का सम्बन्ध है। आज जो बच्चे लोगों की गोद में हैं, वे केवल हमारे नहीं हैं; वे सचमुच हमारी गोद में समाज की धरोहर हैं। इस धरोहर को पालना और पालकर समाज के लिए उपयोगी बनाकर समाज को सौंपना हमारा कर्तव्य है। बहन, हर माँ की यह जिम्मेदारी है कि वह बच्चे को योग्य बनाये। इसीमें माँ तथा बच्चे, दोनों का सुख है।

बच्चे के जीवन के शुरू के दिनों का जितना महत्व माना जाता है उससे कहीं अधिक है। इन दिनों में बच्चा जैसे वातावरण में पलता है, और जैसा शिक्षण उसको मिलता है उसकी अमिट छाप उसके जीवन में रहती है। जन्म से ही नहीं, जन्म से पहले गर्भ से ही शिक्षण शुरू हो जाता है। जन्म से लेकर चौदह साल तक की आयु तक बच्चे को तीन मंजिल पार करनी पड़ती हैं। एक जन्म से ३ साल तक, दूसरी ३ से ६ साल तक, तीसरी ७ से १४ साल तक। इन्हीं दिनों में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। इसी समय के संस्कार आगे के जीवन के मूल आधार बनते हैं। यहीं से आदतें बनने लगती हैं और यहीं से जीवन के सभी महत्त्वपूर्ण पहलुओं का विकास शुरू होता है।

पौधे की तरह बच्चे को उचित खाद पानी, हवा-धूप, प्यार-दुलार कैसे मिले यह सोचने की बात है। तुम सोचना। यों तो मेरी जानकारी भी कुछ बहुत नहीं है, और अनुभव भी नहीं के बराबर है, फिर भी कुछ तो खुद भोगने के कारण इस विषय में रुचि पैदा हुई, और कुछ इसलिए भी हुई कि जो भूलें हम लोगों से हुई वह तुमसे न हों। अगर तुम चाहोगी तो इस विषय में मैं समय समय पर तुम्हें लिखती रहूँगी।

आज इतना ही। तुम प्रसन्न होगी। हम सबको बराबर तुम्हारी याद रहती है।

तुम्हारी बहन,
—विद्या

पम्मी और उसकी मम्मी

पम्मी की मम्मी के बुलावे पर हम उसके घर पहुँचे। घर में पाँव रखते ही सामने दिखाई पड़ी एक छोटी सी मेज, एक छोटी-सी कुर्सी। मेज पर रखी हुई थी पम्मी की चित्रोंवाली एक किताब तथा कुछ खिलौने। समझते देर नहीं लगी कि सारी व्यवस्था नन्ही पम्मी के लिए है।

बहुत दिनों से छोटे बच्चों के शिक्षण का काम मैं कर रही हूँ। अनेकों धनी-गरीब, शिक्षित-अशिक्षित परिवारों से परिचय हुआ है, उनके घरों में गयी हूँ लेकिन बच्चे के लिए इस तरह अलग से व्यवस्था इसके पहले कहीं नहीं देखी थी। गरीब परिवारों में तो *ऐसी व्यवस्था करना बहुत कठिन है, लेकिन धनी परि*वारों में भी बच्चों के लिए ढेर से कपड़े और खिलौने रहते हैं, उनकी देखभाल के लिए नौकरानी भी रहती है, लेकिन बच्चों की रुचि और उमर के हिसाब से कोई चीज नहीं होती। बच्चों की जरूरत क्या है, उनके मन की पसन्द क्या है, इसे कोई समझने की कोशिश नहीं करता। बच्चों के कपड़े खिलौने आदि सब चीजें माँ-बाप अपनी शान शौकत के हिसाब से खरीदते हैं।

लेकिन पम्मी के माँ-बाप बच्चों के मन को समझने की कोशिश करते हैं। इसीलिए उन्होंने पम्मी के लिए पढ़ने-लिखने

की छोटी-छोटी मेज-कुर्सी की व्यवस्था तो रखी ही है, उसके खाने-पीने के छोटे-छोटे बरतन भी अलग से रखे हैं।

मेरे सत्कार के लिए पम्मी की माँ जब नमकीन और शरबत लायी तो पम्मी भी अपनी कुर्सी पर बैठ गयी। माँ सबसे पहले पम्मी के छोटे ग्लास में शरबत ढालने लगी। ग्लास पूरा भर भी नहीं पाया था कि पम्मी ने माँ का हाथ पकड़ कर रोक लिया और मेरे ग्लास की तरफ इशारा करने लगी। शायद उसकी जिद थी कि पहले घर आये मेहमान को शरबत देना चाहिए।

आज तक मैंने इस उमर के बच्चों को अपने लिए कोई चीज माँगने की जिद पकड़े देखा था, पहले न मिलने पर रोते देखा था, लेकिन यह दृश्य पहली बार देखा कि इतनी छोटी-सी बच्ची घर आये मेहमान का ख्याल करे और शरबत पहले मेहमान को देने के लिए जिद करे। मेरा दिल खुशी से भर गया। माँ सचमुच समझदार और काबिल माँ थी। तभी तो उसने बच्चे का पूरा ध्यान रखा था। बच्चे को आदर-सम्मान के साथ व्यवहार करने का ही यह नतीजा था कि पम्मी खुद से पहले मेहमान का ध्यान रख रही थी।

बच्चे के साथ खूब कठोर व्यवहार करने या बिना सोचे-समझे बहुत लाड़-दुलार करने का ही नतीजा होता है कि बच्चे जिद्दी, लालची, स्वार्थी बनते हैं। जब बुनियाद शुरू में बिगड़ जाय, तो जिन्दगी का भवन सुन्दर कैसे बनेगा? इसलिए बच्चों के साथ बराबरी का, आदर का और प्रेम का सही व्यवहार करना हर माँ-बाप का फर्ज है। --क्रान्ति

ग्रामदान की धुन

पृथ्वीपुर के स्थानीय प्राथमिक चिकित्सालय में हिमाचल प्रदेश की एक बहन शांति-सेना विद्यालय की छात्रा कु० उर्वशी अपने तेज बुखार में बेहोशी की स्थिति में भी अपने माता-पिता की याद न करके ग्रामदान की टेर लगाती थी। कहती थी, "उस गाँव में सभा हुई कि नहीं? ग्रामदान हुआ कि नहीं? ग्रामदान करो।" ग्राम मड़वा के सरपंच उसके पैरों के पास खड़े-खड़े कह रहे थे कि बहन, ग्रामदान होगा। कु० उर्वशी गत दिनों ग्राम मड़वा, जिला टीकमगढ़ में ग्रामदान-टोली में घूमते-घूमते बीमार हो गयी थी। जब ग्रामदान कराने के लिए टोलियाँ जा रही थीं, तो उसने कस्तूरबाग्राम की बहनों से कहा कि हमें भी ले चलो। —गायत्री प्रसाद शर्मा

एक आदर्श गाँव की कल्पना

प्रश्न : आपकी राय में आदर्श भारतीय ग्राम की कल्पना क्या है? और हिन्दुस्तान की मौजूदा सामाजिक और राजनीतिक हालत में 'आदर्श ग्राम' के ढंग पर एक गाँव का किस हद तक वास्तविक पुनर्निर्माण किया जा सकता है?

जवाब : आदर्श भारतीय गाँव इस तरह बसाया और बनाया जाना चाहिए, जिससे वह सम्पूर्णतया नीरोग हो सके। उसके झोंपड़ों और मकानों में काफी प्रकाश और वायु आ-जा सके। ये ऐसी चीजों के बने हों, जो पाँच मील की सीमा के अन्दर उपलब्ध हो सकती हैं। हर मकान के आसपास या आगे-पीछे इतना बड़ा आँगन हो, जिसमें गृहस्थ अपने लिए सागभाजी लगा सकें और अपने पशुओं को रख सकें। गलियों और रास्तों पर जहाँ तक हो सके धूल न हो। अपनी जरूरत के अनुसार गाँव में कुएँ हों, जिनसे गाँव के सब आदमी पानी भर सकें। सबके लिए प्रार्थना-घर या मन्दिर हों, सार्वजनिक सभा वगैरा के लिए एक अलग स्थान हो, गाँव की अपनी गोचर-भूमि हो, सहकारी ढंग की एक गोशाला हो, ऐसी प्राथमिक और माध्यमिक शालाएँ हों, जिनमें औद्योगिक शिक्षा सर्वप्रधान वस्तु हो, और गाँव के अपने मामलों का निपटारा करने के लिए एक ग्राम-पंचायत भी हो। अपनी जरूरतों के लिए अनाज, सागभाजी, फल, खादी वगैरा खुद गाँव में ही पैदा हों। एक आदर्श गाँव की मेरी अपनी यह कल्पना है।

मौजूदा परिस्थिति में उसके मकान ज्यों-के-त्यों रहेंगे, सिर्फ यहाँ-वहाँ थोड़ा-सा सुधार कर देना अभी काफी होगा। अगर गाँव के लोगों में सहयोग और प्रेमभाव हो, तो बगैर सरकारी सहायता के खुद ग्रामीण ही अपने बल पर लगभग ये सारी बातें कर सकते हैं। मुझे तो यह निश्चय हो गया है कि अगर उन्हें उचित सलाह और मार्गदर्शन मिलता रहे, तो गाँव की—मैं व्यक्तियों की बात नहीं करता—आय बराबर दूनी हो सकती है। व्यापारी दृष्टि से काम में आने लायक अखूट साधन-सामग्री हर गाँव में भले ही न हो, पर स्थानीय उपयोग और लाभ के लिए तो लगभग हर गाँव में है। पर सबसे बड़ी बद-किस्मती तो यह है कि अपनी दशा सुधारने के लिए गाँव के लोग खुद, कुछ नहीं करना चाहते।

['हरिजन सेवक', १६-१-३७] —महात्मा गांधी

खेत की मिट्टी की जाँच

हम खेती करते हैं। खेत से अधिक-से अधिक उपज लेना चाहते हैं, परन्तु अधिक उपज होगी कैसे, इसकी जानकारी का हमें अभाव है। इस सम्बन्ध में कृषि की प्रयोगशालाओं में जो प्रयोग होते हैं उनका लाभ किसान कम ले पाते हैं या उन्हें कम मिल पाता है। आज खाद और बीज का कुछ लाभ किसानों को मिलने लगा है, तो किसान का इस ओर ध्यान गया है। परन्तु समय समय पर खेत की मिट्टी की भी जांच होनी चाहिए, इस ओर ध्यान अभी नहीं गया है। बीच-बीच में मिट्टी की जांच होती रहे तो किस खेत में कौनसी फसल लगायी जाय, कौनसी खाद कितनी दी जाय, इसे तय करना आसान हो जायगा। जिस मिट्टी में खेती होती है उसमें विभिन्न तत्त्व हैं, जिनका इस्तेमाल उपज के लिए होता रहता है। उत्पादन के लिए ये तत्त्व अत्यन्त उपयोगी हैं। इन तत्त्वों का मिट्टी में भरपूर होना जरूरी है। जब इनमें कमी वेशी होती है तो उपज में अन्तर पड़ जाता है। इसलिए यह बहुत जरूरी है कि मिट्टी की जाँच कर ली जाय। आज तो सारा-का-सारा काम अन्दाज पर ही चलता है। वैज्ञानिक खेती तो तब होगी जब खेत की मिट्टी की जांच हो, मिट्टी के अनुसार फसल का चुनाव हो, उचित मात्रा में पर्याप्त खाद दी जाय, जिस समय जितने की आवश्यकता है उस समय उतना पानी मिले।

भारत की खेती में विज्ञान का प्रवेश होने लगा है, यह अच्छी बात है। खेती के बारे में जितनी नयी-नयी जानकारियाँ मिलती हैं, उन्हें अपनाना चाहिए।

अपने देश में मिट्टी की जाँच की ३६ प्रयोगशालाएँ हैं। इन प्रयोगशालाओं में ५ लाख नमूनों की जाँच की जाती है। इनके अलावा हर राज्य में अनेक छोटी-मोटी प्रयोगशालाएं भी हैं। किसानों को मिट्टी की जाँच का महत्त्व बताने के लिए कुछ चलती-फिरती प्रयोगशालाएं जल्दी ही चालू होनेवाली हैं। सन् १९७० तक देश के विभिन्न भागों में इतनी प्रयोगशालाएं हो जायेंगी, जिनमें लगभग २० लाख नमूनों की जाँच एक वर्ष में हो सकेगी।

मिट्टी की सही जाँच तब हो सकेगी जब खेत से मिट्टी के सही नमूने इकट्ठे किये जायें। अगर खेत की जमीन ऊंची-नीची है, मिट्टी अलग-अलग रंग की है, फसल की बढ़वार कहीं कम, कहीं ज्यादा होती है या फसल अलग अलग ढंग से बोयी जाती है, तो उस हालत में हर खेत का अलग-अलग नमूना भेजना चाहिए। आम तौर पर जांच के लिए आधा किलो मिट्टी चाहिए। एक हेक्टर जमीन से २० २५ जगह से ऊपरी परत की मिट्टी लेकर नमूने इकट्ठे करने चाहिए। उन्हें फिर मिला लिया जाय। इसमें से आधा किलो मिट्टी जाँच के लिए भेजो जाय। नमूने की मिट्टी को साफ कपड़े के थैले में भरकर बन्द कर दें। किसान का नाम तथा पता किसी कागज पर लिखकर थैले पर चिपका दे।

किसानों को इससे सम्बन्धित एक सूचना-फार्म भरना भी जरूरी है। यह फार्म इलाके के ग्रामसेवक, कृषि अधिकारी या प्रयोगशाला से भी मिल सकता है। प्रयोगशालाओं के पते अपने पास के कृषि-अधिकारी से पूछें। •

नीम के घोल से टिड्डियों की रोकथाम

टिड्डियों का आक्रमण किसी समय हो जाता है। इनके आक्रमण से फसल की बहुत बरबादी होती है। पूर्वी अफ्रीका और पश्चिमी तथा दक्षिणी एशिया में फसलों को खतरा पैदा करनेवाली इन टिड्डियों की रोकथाम के लिए अन्तर्राष्ट्रीय प्रयत्न किया जा रहा है।

भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, नयी दिल्ली के कीट-विशेषज्ञों ने टिड्डियों पर काबू पाने के लिए एक प्रभावशाली औषधि खोज निकाली है।

प्रयोगशाला में किये गये प्रयोगों से उन्हें पता चला है कि भूखी टिड्डियाँ भी उन पत्तियों को खाने के बजाय भूखे मर जाना अधिक पसन्द करती हैं, जिन पर निमौली (नीम का फल) का घोल छिड़का जाता है। निमौली को सुखाकर पहले उसका चूर्ण तैयार कर लिया जाता है, फिर उसे पानी में घोल दिया जाता है।

फसल पर १ प्रतिशत घोलवाले जल का छिड़काव कर देने पर टिड्डियाँ २ से लेकर ३ सप्ताह तक फसल को नहीं खायेंगी।

इसका १०० गैलन घोल एक एकड़ के लिए पर्याप्त है तथा लगभग आधा किलोग्राम निमौली से यह तैयार किया जा सकता है। इस पर एक रुपये से भी कम की लागत आयेगी।

—एस० एन० सेठ
'अमेरिकन रिपोर्टर' से

पुरानी काया की करामात

श्री रामनाथ पुरानी परम्परा को माननेवाले आदमी हैं। जाड़ा, गर्मी या बरसात, चाहे जो मौसम हो, वे भोर में ही नींद से जाग जाते हैं। बैलों को खाने के लिए हौदी पर बांधना, लोटा लेकर मैदान जाना, मैदान से लौटकर स्नान, फिर कुछ देर ध्यानवन्दन करना और अन्त मे मुंह में कुछ मीठा रखकर पानी पी लेना, यह श्री रामनाथ का रोज का प्रातः-कर्म है।

साठ वर्ष की आयु हो जाने पर भी श्री रामनाथ के शरीर में गजब की चुस्ती है। नागपंचमी के दिन जब गाँव के युवक कबड्डी खेलने के लिए पाले में उतरे तो रामनाथ ने अपने बचपन के साथी रामदेव को यह कहते हुए उठाया कि उस्ताद साल में एक दिन तो जवानी के दिनों की याद कर ली जाय। गाँव के युवकों में हंसी और खुशी की लहर दौड़ गयी। वाह काका! आप लोग तो साठा में पाठा हैं।

गाँव की युवक-मंडली में लगभग आधे ऐसे लोग हैं, जो ५ या ७ दर्जे तक की पढ़ाई करके खेती-बारी के काम में लग गये हैं। अधिकतर अच्छे युवक कस्बे के माध्यमिक विद्यालय और महाविद्यालय के छात्र हैं।

कबड्डी शुरू होने पर खेल जमते देर नहीं लगी। एक गोल के नायक बने रामनाथ और दूसरी गोल के नायक बने रामदेव। रामदेव की गोल मे वे नवजवान थे, जो गाँव में रहकर खेती बारी करते थे। रामनाथ की गोल में माध्यमिक विद्यालय और महाविद्यालय मे पढ़नेवाले ऐसे युवक थे, जो फुटबाल और हाकी के खिलाड़ी हैं। रामनाथ और रामदेव बचपन के लंगोटिया दोस्त हैं। लेकिन आज वे अपनी-अपनी गोल की अगुवाई करने मे एक-दूसरे के मुकाबले में डट गये। पहले-पहले रामनाथ की गोल के खिलाड़ी कबड्डी में चुस्त दिखायी पड़े, लेकिन पाँच-दस मिनट के बाद ही खेल का रंग-ढंग बदलने लगा। रामदेव के दल के खिलाड़ियों का उत्साह धीरे-धीरे बढ़ता गया, उधर रामनाथ के दल के खिलाड़ी ढीले पड़ने लगे और एक-एक कर हारते गये। देखते-देखते रामनाथ के दल में अकेले वे ही बचे रहे।

रामनाथ पक्के खिलाड़ी हैं। विरोधी दल के पाले में उनके पहुंचते ही हलचल मच जाती है। इस बार के उनके खेल पर हार-जीत का फैसला होनेवाला है। रामनाथ ने अपनी धोती को एक बार और कस लिया, पाले की मेड़ के पास खड़े होकर एक चुटकी धूल उठाकर अपने माथे से छुलाया, फिर लम्बी सांस भरकर—'चल…वड्डी…वड्डी' कहते हुए पाले में पहुंच गये। खेल और जम गया। अधेड़ रामनाथ के शरीर मे न जाने कितनी शक्ति थी! वे चीते जैसी स्फूर्ति से एक छलांग में पाले के एक छोर से दूसरे छोर पर पहुंचकर किसी-न-किसी खिलाड़ी को छू देते। रामनाथ ४ छलांग में ४ खिलाड़ियों को हराकर जब लौटने के लिए मुड़े तो उस ओर के कई खिलाड़ी उन्हें पकड़ने के लिए लपके। रामनाथ सबको झटककर झट अपने पाले में लौट आये।

कबड्डी खेलनेवाले युवकों ने कहा—"काका, आप सच्चे खिलाड़ी हैं। आपने अपने बचपन और जवानी के दिनों में इतना दूध और घी खाया है कि देह आज भी पानीदार बनी हुई है।" रामनाथ ने कहा,"राजू! हम लोगों ने जिन्दगी में कभी आलस नहीं किया। इसीलिए हमारी देह सुकुमार नहीं हुई। तुम लोगों को सोने-जागने और खाने-पीने की आदत ऐसी बन गयी है कि कुछ न पूछो। हमें बचपन में दूध-घी अपने आप मिलता था ऐसा नहीं। हमें उसका शौक था। घर में बराबर दूध मिले, इसके लिए हम भरपूर उपाय करते थे।

"आज के युवकों का शौक शरीर बनाने की ओर उतना नहीं, जितना कि शरीर को सजाने की ओर है। कीमती कपड़े पहनने और सुकुमार बनने में कौन आगे है इसीकी जैसे जवानों में होड़ मची हुई है। आज के जवान यह बात भूल ही गये हैं कि स्वस्थ और बलवान शरीर का होना एक बड़ी सुन्दर बात है। स्वस्थ और बलवान शरीर सिर्फ दूध और घी खाने से नहीं, बल्कि सही जीवन जीने से बनता है।"

खेल खतम हुआ और सब लोग अपने-अपने घर जाने लगे तो पुराने और नये जमाने की जोर-शोर से चर्चा चल पड़ी। शरीर को बनाने की जगह सजानेवाली शौकीनी की बात शहर-बाजार में जाकर पढ़नेवाले युवकों को बहुत खटक रही थी। दिलीप से तो रहा नहीं गया और आखिर-आखिर में उमिर का लिहाज छोड़कर रामनाथ को सुना ही दिया, "हनुमान-छाप आदमी को आज के जमाने में कोई पूछनेवाला नहीं है! बहुत हुआ तो चौकीदारी मिल जायगी! आज की दुनिया मे जीने के लिए दिमाग चाहिए…दिमाग!" •

'गाँव की बात' : वार्षिक चन्दा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए इंडियन प्रेस (प्रा०) लि०, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित।

संघर्ष और समन्वय नहीं, निराकरण

प्रश्न था कि अगर मालिक मजदूर के वर्गभेद का अस्तित्व मान लें तो क्या संघर्ष से बच सकेंगे ? उत्तर प्रस्तुत है :

विनोबा : हम वर्ग-संघर्ष मानते नहीं, वर्ग-समन्वय मानते नहीं, वर्ग-निराकरण मानते हैं। समाज में व्यक्ति हैं, उनमें कुछ भले-बुरे हैं, बलवान-दुर्बल हैं। वर्ग-संघर्ष का अस्तित्व मान लेना युरोपियन समाज के लिए लागू था और मार्क्स के जमाने के लिए लागू था। आज १०० साल के बाद यूरोप में भी वह लागू नहीं होता है। खास कर इटली जैसे देश में पैटन बदल रहा है और लोग कहते हैं कि भूदान की यूरोप में भी आवश्यकता है। इसलिए वर्ग-संघर्ष की थियरी आउट डेटेड (गयी-बीती) हो गयी है। उसमें कैपिटलिस्ट सोसाइटी (पूंजीवादी समाज) इनड्युस्ड (मजबूरी से बद्ध) मान ली गयी है। हमारे यहाँ क्या पूंजीवाद है ? यहाँ तो जातियाँ हैं। जाती के लिए पूंजीवाद क्या करेगा ? यहाँ हर कोई अपनी जातिवाला होगा। इसलिए भारत की परिस्थिति में वर्ग-संघर्ष का काम नहीं है। बाकी सब प्रेरणाओं को छोड़कर सिर्फ एक अर्थ-प्रेरणा को ही माना जाय तो गलत होगा। भारतीय चिन्तन धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चार पुरुषार्थ को मानकर चलता है, केवल अर्थ-प्रेरणा को मानकर नहीं। काम, धर्म वगैरह बाकी सब प्रेरणाएं अर्थ के वश हैं, यह मानना इकॉनामिक इंटरप्रीटेशन ऑफ हिस्ट्री (इतिहास का भाष्य) है। यह इंटरप्रीटेशन भारत में नहीं चलेगा।

भारत में वर्ग एक इकनामिक क्लास (आर्थिक वर्ग) है नहीं, यहाँ व्यक्ति है। लेकिन सरकार अब कैपिटलिज्म (पूंजीवाद) बना रही है। सरकार कैपिटलिस्टस (पूंजीपतियों) को आर्गनाइज (संगठित) करने के लिए प्रेरणा अपने कानून से दे रही है। हमारे यहाँ पंच वर्ण की बात कही गयी है जिसमें पंचायत बनी। चातुर्वर्ण्य माना जाता था। चार वर्ण और वर्ण के बाहर की एक जमात मिलाकर पंचवर्ण की बात कही गयी है। और दुनिया में पांच वर्ण हैं भी—रक्त, पीत, श्वेत, कृष्ण और श्याम। पीत चीनी जापानी, रक्त रेड इंडियन, श्वेत यूरोपवाले, कृष्ण निग्रो, श्याम आप लोग। इस तरह सारी दुनिया की प्रजा पंचवार्णिक मान ली गयी है। भगवान् का पाञ्चजन्य शंख है यानी पंच जनों के लिए है, कुल दुनिया के लिए है। पंच वर्णों के बारे में यह भी माना जाता था कि ब्राह्मण शुक्ल, क्षत्रिय रक्त, वैश्य पीत, शूद्र कृष्ण और इसके अलावा श्याम वर्ण और एक, इस तरह पांच वर्णों के लोग होते थे। और गांव की पंचायत में हर एक का एक-एक प्रतिनिधि होता था और उन प्रतिनिधियों को सामूहिक निर्णय लेना पड़ता था। उन्हीं को पांच बोले परमेश्वर कहते थे। यहाँ मेजारिटी (बहुमत) की बात नहीं थी। पांच बोले परमेश्वर का वेद में भी जिक्र है।

पंच जना मम होत्रं जुषन्ताम् (ऋग्वेद १० ५३ ५) पांच जनों की सम्मति के अनुकूल होकर निर्णय लेना चाहिए। जब तक आप मेजारिटी (बहुमत) में मानते हैं तब तक कोई-न-कोई वर्ग खड़ा होता है। लेकिन यहाँ पर पांचों को इकट्ठा होकर निर्णय लेने की बात मानी गयी है। न्याय से बढ़कर समाधान को माना गया है। भारत की पद्धति यह है कि हम न्याय नहीं दे सकते हैं, न्याय तो भगवान् देगा। न्याय देने में दो गलतियाँ होती हैं— मेजारिटी से जो निर्णय होता है उसमें समाधान नहीं होता। पांच न्यायाधीशों में से तीन ने एक आदमी को सजा देने के पक्ष में निर्णय दिया और दो ने विरोध किया और सजा दी गयी, यह भारतीय पद्धति में नहीं है। यहाँ तो पांचों की एक राय चाहिए और दोनों पक्षों का समाधान होना चाहिए।

राममूर्ति : भारत की पंचायत-व्यवस्था में समन्वय की कोशिश की गयी थी, लेकिन अलग-अलग वर्ग बने हुए और जातियां बन गयीं।

विनोबा : वह पंचायत (काम के अनुसार) है। इकोनामिक (आर्थिक) नहीं है। जमीन की मिलकियत हो नहीं सकती है, यह जैमिनी का सूत्र है। न भूमिः स्यात् सर्वान् प्रति अविशिष्टत्वात्। जमीन भगवान् की है, उस पर न व्यक्ति का दावा हो सकता है, न सरकार का। हमारे यहाँ जमीन की मिलकियत कभी नहीं मानी है, बल्कि उलटा माना है कि जमीन हमारी माँ है, उसकी मिलकियत हो नहीं सकती। आप जिसको स्वामित्व का अधिकार कहते हैं यानी सम्पत्ति का अधिकार, वह तो हमारे यहाँ केवल एक को है और एक ही अवस्था में। हर मनुष्य की चार अवस्थाएं होती हैं—ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम और संन्यासाश्रम, जिनमें से तीन अवस्थाओं में सम्पत्ति का अधिकार नहीं है, केवल गृहस्थ को ही है। और गृहस्थों में भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र को नहीं है, केवल वैश्य का है। उसका मतलब यह है कि सोलह अवस्थाओं में से केवल एक में ही सम्पत्ति का अधिकार है। और यह जो वैश्य को अधिकार दिया गया है, उसमें बाकी पन्द्रह का अधिकार माना गया है। बढ़ई का इतना हक, बुनकर का इतना हक आदि इस प्रकार सब निश्चित था। बढ़ई, चमार, वैद्य, ब्राह्मण, वानप्रस्थी, संन्यासी ये सब सर्विसेज (सेवाएं) हैं और हर घर में उन्हें हिस्सा देना पड़ेगा। वैश्य को भी वानप्रस्थ होना पड़ेगा, उसे संन्यास का अधिकार है और वह उसका कर्तव्य भी है।

वैश्य गृहस्थ को जो सम्पत्ति का अधिकार दिया था, वह ट्रस्टी के नाते दिया गया था। वह जो कमायेगा उसे बाकी पन्द्रह को बांटना पड़ता था।

पन्द्रह को बांटनेवाला यह सोलहवां था, यानी वे पन्द्रह पुत्रवत् थे और यह पितृवत् था। बाकी सब उसके बेटे हैं। गृहस्थाश्रम श्रेष्ठ है, ऐसा वाक्य आता है क्योंकि संन्यासी, ब्रह्मचारी ये सब उसके बेटे हैं। इस तरह गृहस्थ वैश्य के हाथ में मिल्कियत नहीं थी, उसे ट्रस्टी बनाया और सबका पुत्रवत् पालन करने की जिम्मेदारी उस पर डाली।

[क्रमश]

मध्य भारत भूदान यज्ञ पर्षद का संक्षिप्त कार्य-विवरण

अप्रैल '६८ से जून '६८ तक

भूदान-भूमि का वितरण

पिछले तीन महीनों में मुरैना तथा शिवपुरी जिले के ८ ग्रामों में ६४ भूमिहीन परिवारों के बीच ४८७ एकड़ भूमि का वितरण-कार्य पर्षद की देखरेख में सम्पन्न हुआ है। इस वितरण-कार्य में ८ हरिजन २६ आदिवासी, तथा ६० अन्य भूमिहीन परिवारों को क्रमश ४६, १६२, २५६ एकड़ भूमि वितरित की गयी।

भूदान-कृषकों को आर्थिक सहायता

भूमिहीन श्रमिकों को भूमि देकर बसाने सम्बन्धी केन्द्रीय योजना के अन्तर्गत जिला मुरैना में ६५, शिवपुरी में १, तथा गुना में ५० भूदान कृषकों को, प्रति परिवार ७५० रु० के हिसाब से राज्य-शासन द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान की गयी है। यह जानकारी राज्य उपनिवेशन विभाग से प्राप्त हुई है।

ग्रामदान यात्राएँ

मार्च १९६८ में ग्वालियर में हुए सर्वोदय सम्मेलन के अवसर पर स्वीकृत कार्यक्रम के अनुसार गुना तथा भिण्ड-जिले में आयोजित ग्राम-स्वराज्य शिविर और ग्रामदान-यात्राओं में पर्षद के कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया। परिणामस्वरूप गुना में ७, तथा भिण्ड में १०४ ग्रामदान हुए। भिण्ड यात्रा के परिणाम उत्साहवर्द्धक तथा चमत्कारक रहे हैं।

कारावास मुक्त बागी भाइयों को भूमि तथा साधन

विनोबाजी की सलाह और इस सम्बन्ध में कृष्णराजजी की ओर से प्राप्त पत्र के अनुसार श्री लोकमन दीक्षित तथा श्री तेजसिंह को ग्राम वर्धा बुजुर्ग में क्रमश: २०.३, २०.३ भूमि देकर बसाया गया है। रहने के लिए एक एक क्वार्टर तथा जमीन जोतने के लिए फिलहाल २००० रुपये की एक बैल-जोड़ी तात्कालिक सहायता के रूप में उन्हें दी गयी है। राज्य-शासन की ओर से भूदान-कृषकों को मिलनेवाली आर्थिक सहायता के लिए भी पर्षद की ओर से सिफारिश कर दी गयी है। —हेमदेव शर्मा, मंत्री

मध्यप्रदेश का प्रथम जिलादान

टीकमगढ़

इन्दौर, १५ अगस्त। तार से यहाँ प्राप्त जानकारी के अनुसार मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ का जिलादान हो गया है। समूचे जिले में १००३ गाँव हैं, जिनमें से पचहत्तर प्रतिशत से अधिक गाँवों ने अपने गाँवों के ग्रामदान की घोषणा की है।

टीकमगढ़ जिले का क्षेत्रफल १८०१·१७ वर्गमील है। और जिले की कुल जनसंख्या ४,५५,६६२ है; जिसमें २०,४६६ नगरीय आबादी है। शिक्षित जनसंख्या का प्रतिशत ९·७ है।

यह स्मरणीय है कि गत कुछ वर्षों से मध्यप्रदेश सर्वोदय मंडल और प्रदेश गांधी स्मारक निधि के संयोजन में विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता टीकमगढ़ जिलादान के लिए प्रयास कर रहे थे। टीकमगढ़ जिलादान की विधिवत् घोषणा और समारोह बाद में किया जायगा।

टीकमगढ़ मध्यप्रदेश का प्रथम और देश का छठवाँ जिलादान है। (सप्रेस)

गांधी जन्म-शताब्दी की विशेष दैनंदिनी १९६९

गांधी जन्म-शताब्दी के अवसर पर सन् १९६९ की दैनंदिनी शीघ्र प्रकाशित हो रही है। दैनंदिनी आकर्षक प्लास्टिक कवर के दो आकारों में उपलब्ध है। डायरी की कुछ विशेषताएँ :

- पृष्ठ रूलदार।
- प्रत्येक पृष्ठ पर गांधीजी के प्रेरक वचन दिये गये हैं।
- गांधी जन्म-शताब्दी के अवसर पर ईश्वर, प्रार्थना, सत्य, अहिंसा, अस्पृश्यता-निवारण, व्रत, सत्याग्रह आदि विषयों से सम्बन्धित गांधीजी के विचारों के ८-१० पृष्ठ की विशिष्ट स्वाध्याय योग्य अतिरिक्त सामग्री दी गयी है।
- सर्व सेवा संघ और ग्रामस्वराज्य आन्दोलन की समग्र जानकारी दी गयी है।

आपूर्ति के नियम

- विक्रेताओं को २५ प्रतिशत तक कमीशन दिया जा सकेगा।
- कागज, छपाई आदि के भाव बढ़ने पर भी मूल्य में सिर्फ २५ पैसे की वृद्धि की गयी है, जो निम्न है :
  डिमाई ९"×५३" रु० ३-५० प्रति
  क्राउन ७३"×५" रु० ३-०० प्रति
- एकसाथ ५० अथवा अधिक प्रतियाँ माँगने पर ग्राहक के निकटतम स्टेशन तक फ्री डिलीवरी से भिजवायी जायँगी। इससे कम प्रतियाँ माँगने पर पैकिंग, पोस्टेज और रेल-महसूल ग्राहक को वहन करना होगा।
- बिकी हुई दैनंदिनी वापस नहीं ली जाती, अतः उतनी ही मँगायें जितनी आप बेच सकें।
- दैनंदिनी की बिक्री पूर्णतया नकद की जायगी, अतः कीमत अग्रिम भिजवाकर या वी० पी०, बैंक के मार्फत दैनंदिनी की बिल्टी मँगायें।
- अपना नाम, पता, निकटतम रेलवे-स्टेशन का नाम साफ साफ लिखिए और यह स्पष्ट रूप से निर्देश दीजिए कि बिल्टी वी० पी० या बैंक से भेजी जाय या आप दैनंदिनी की कीमत में से २५ प्रतिशत कमीशन बाद कर शेष रकम अग्रिम भिजवा रहे हैं।

— दत्तोबा दास्ताने
संचालक
सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

चेकोस्लोवाकिया

दुनिया ने हिटलर को देखा था। उसने जानसन को वियतनाम में देखा, और अब वह कोसीजिन-ब्रेजनेव को चेकोस्लोवाकिया में देख रही है। अगर कभी प्रमाण की जरूरत रही होगी कि नाजीवाद, पूँजीवाद और साम्यवाद मूलतः एक ही हैं, तो वह प्रमाण अब मिल गया। हिंसा पर खड़ी होनेवाली व्यवस्थाएँ गुण में एक ही होती हैं, नाम उनके चाहे जो हों। जर्मनी हो, अमेरिका हो, रूस या चीन हो, जो भी देश अपने राज्य के हाथ में शस्त्र, यन्त्र, पूँजी और बुद्धि, चारों शक्तियाँ केन्द्रित करेगा वह साम्राज्यवादी होकर रहेगा। रूस ने साम्यवाद के नाम में ऐसा ही किया है। कबतक उसकी निरंकुश व्यवस्था अपनी साम्राज्यवादी लिप्सा को छिपाकर रखती ?

सत्ता—निरंकुश सत्ता—की एक विशेषता यह होती है कि वह बुद्धि से डरती है। इसीके कारण सत्ता साथी से डरती है, जनता से डरती है, स्वयं स्वतंत्रता से डरती है। सत्ता भय में बनती है, और भय में रहती है। चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी बुद्धि का प्रयोग किया और निर्णय किया कि अपने देश में समाजवाद, लोकतान्त्रिक समाजवाद, का एक नया नमूना बनाने का काम करेगी। फौरन रूस के मन में प्रश्न उठा : 'साथी ने यह क्या किया ? जनता कहीं खुद सोचने लग गयी तो हमारा क्या होगा ? और, अगर चेकोस्लोवाकिया विकास के किसी नये रास्ते पर चल पड़ा तो हमारे साम्यवादी साम्राज्य का क्या होगा ?' रूस की शस्त्र-शक्ति आज पहले से कहीं ज्यादा है, लेकिन उसकी बढ़ी हुई हिंसा-शक्ति ही उसके बढ़े हुए भय का कारण बन गयी है। रूस का यह कहना कि वह 'इस बारे में तटस्थ नहीं रह सकता कि दूसरे देशों में समाजवाद का क्या होता है' उसके आत्मनाशी भय का प्रमाण है। वह जानता है कि अगर चेकोस्लोवाकिया का नया प्रयोग सफल हो गया तो आज रूसी नमूने पर संगठित दूसरे राज्य भी दिशा बदलने को प्रोत्साहित होंगे, और तब पूर्वी यूरोप की साम्यवादी व्यवस्थाएँ—स्वयं रूस की भी—खतरे में पड़ जायँगी। अगर चेकोस्लोवाकिया कम्युनिस्ट बिरादरी के बाहर के देशों से भी सम्बन्ध करने लगेगा तो मध्य यूरोप में पश्चिमी जर्मनी तथा उसके द्वारा दूसरों को घुसने का मौका मिल जायेगा। यह भय इसलिए है कि साम्यवाद अब विचार की बिरादरी नहीं रह गया है। वह भी विस्तारवादियों का गुट बन गया है जिसमें हर एक दूसरे के प्रति सशंक है।

चेकोस्लोवाकिया की स्वतंत्रता से साम्यवाद के लिए क्या खतरा पैदा होगा ? क्या साम्यवाद की शक्ति कम हो जायेगी ? आखिर, साम्यवाद की शक्ति के आधार क्या हैं ? पार्टी का सरकार पर एकाधिकार, भिन्न विचारकों का दमन, सेना और पुलिस का आतंक, पत्र-पत्रिकाओं पर सेंसर, स्वतन्त्र बुद्धि का बहिष्कार, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक जीवन का केन्द्रित नियोजन और संचालन—ये हैं वे आधार, जिन पर साम्यवादी सत्ता टिकी हुई है। इस फौलादी ढाँचे को चेकोस्लोवाकिया के कम्युनिस्ट नेता ढीला करना चाहते हैं, तोड़ना चाहते हैं। पार्टी और सरकार अलग रहे, स्वतंत्र विचार की छूट हो, सेंसर न रहे, पुलिस का आतंक उठ जाय, और देश को यह अधिकार हो कि वह अपनी प्रतिभा और परिस्थिति के अनुसार समाजवाद का विकास तथा दूसरे देशों से सम्बन्ध स्थापित कर सके—बस इतनी है उनकी माँग ! वास्तव में ये लोकतन्त्र के सामान्य नागरिक-अधिकार हैं। लेकिन रूस के साम्यवाद के अनुसार तो मनुष्य का यही सबसे बड़ा अधिकार है कि वह खाने-कपड़े की चिन्ता से मुक्त हो, बाकी सब बातों के लिए वह अपने नेतृत्व की बुद्धि पर भरोसा करे। उसकी नजर में नागरिक-अधिकार की बात 'पूँजीवादी धोखा' है। रोटी की चिन्ता से मुक्ति का यह आश्वासन ही तो अफीम की वह घूँटी है जिसे पिलाकर आज के राज्य ने मनुष्य की आत्मा को कुंठित किया है। वह पेट के लिए बिकने को विवश हुआ है, और विवश होकर पशु की तरह किसी भी खूँटे में बँधने को तैयार किया गया है।

लेकिन नहीं, मनुष्य की आत्मा अजेय है। उसे मिथ्या समझने वाले मिट गये, और मिट जायँगे। चेकोस्लोवाकिया का छोटा-सा देश रूस और उसके पिट्ठुओं की शस्त्र-शक्ति का मुकाबिला शस्त्र से नहीं कर सकता। उसमें हार निश्चित है। लेकिन आत्मा की शक्ति में—जिसे गांधीजी ने 'बहादुर की अहिंसा' कहा था, हार है ही नहीं। अहिंसक प्रतिकार में मृत्यु हो सकती है, पराजय नहीं। एक नहीं हजारों वीर मौत के घाट उतारे जा सकते हैं, लेकिन उनकी शहादत दुनिया को चौंका देगी। फिर या तो नृशंस हिंसा समाप्त होगी, या स्वयं मनुष्य-जाति विश्व-संहार में समाप्त हो जायेगी। कुछ भी हो, मनुष्य और अन्याय का सहअस्तित्व खत्म हो जायेगा।

चेकोस्लोवाकिया की लड़ाई नैतिक स्वतंत्रता की लड़ाई है। उसे अधिकार है कि वह रूसी हिंसा द्वारा अपनी स्वतंत्रता को खण्डित न होने दे। और, उसे यह भी अधिकार है कि वह रूस के बनाये रास्ते पर चलने से इनकार कर दे। लेकिन देश के आंतरिक जीवन में स्वतंत्रता एक-एक नागरिक के लिए विधायक तब होगी जब वह लोकतंत्र के साथ जुड़ेगी, और लोकतन्त्र अहिंसा को अपना आधार बनायेगा। अहिंसा जीवन का अंग तब बनेगी जब प्रचलित राजनीति, अर्थनीति और शिक्षानीति, तीनों की बुनियादें बदल जायँगी। मात्र बाहरी हिंसा से मुक्ति का अनिवार्य रूप से यह अर्थ नहीं होगा कि आन्तरिक हिंसाओं और संघर्षों से भी मुक्ति मिल जायेगी। चेकोस्लोवाकिया के प्रबुद्ध समाज को तय करना पड़ेगा कि अगर वह रूस की तरह शस्त्र, बड़े यन्त्र, केन्द्रित

पूंजी, और आर्थिक जीवन के व्यापक नियंत्रण की राह चलता रहा तथा सदा के लिए कम्युनिस्ट पार्टी की क्रान्तिकारिता का कायल बना रहा तो उसकी दिशा का नयापन क्या होगा, और कब तक वह अधिक शक्तिवाले देशों का पिछलग्गू होने से बच सकेगा ? क्या उसकी स्वतन्त्रता का यह अर्थ नहीं होना चाहिए कि एक बार साहस करके साम्यवादी पार्टी के साम्यवाद से आगे बढ़े और साम्य' की एक नयी जीवन पद्धति का विकास करे ?

प्रश्न चेकोस्लोवाकिया का ही नहीं, सभी छोटे देशों का है। आज की दुनिया में छोटे देशों की उनकी छोटी हिंसा में सुरक्षा नहीं है। और, न है बड़े देशों की व्यवस्था और जीवन-पद्धति की नकल करने में शान्ति और स्वतन्त्रता की गारंटी। इसलिए छोटे देशों को अपनी प्रतिरक्षा, अपने लोकतन्त्र, और अपने विकास की कोई स्वतन्त्र पद्धति विकसित करनी चाहिए। अपना राज्य हो या पराया, राज्य की शक्ति में जनता की मुक्ति नहीं है। चेकोस्लोवाकिया की घटना से दुनिया की आँखें खुल जानी चाहिए। कोई भी विचार हो, अगर उसके साथ बन्दूक जुड़ेगी और उसके प्रसार का माध्यम राज्य की शक्ति बनेगी तो जनता को गुलाम हो रहना पड़ेगा। साम्यवाद और समाजवाद अभी समाज के नहीं हैं, सरकार के हैं। वे जनता के बनें और राज्य शक्ति का क्रमशः लोप हो, यही उनके विकास की नयी दिशा है।

चेकोस्लोवाकिया के विद्रोह में मुक्ति की झलक है। हर देश में मुक्ति की प्यासी जनता का हृदय उसके साथ है। •

चेकोस्लोवाकिया की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और घटनाक्रम

सन् १९१८—थामस मेजारिक द्वारा चेकोस्लोवाकिया गणराज्य की स्थापना।

सन् १९३७—मेजारिक की मृत्यु। बेनेस अध्यक्ष निर्वाचित।

सन् १९३८—चेम्बरलेन और हिटलर के बीच म्यूनिख समझौता। जर्मनी का सुडेटन लैंड पर अधिकार।

सन् १९३९—चेकोस्लोवाकिया में नाजी सेना का प्रवेश। बेनस द्वारा लन्दन में शरण लेकर वहीं सरकार की स्थापना।

सन् १९४६—आम चुनाव में बेनस की विजय। कम्युनिस्टों को ३८ प्रतिशत मत की प्राप्ति।

सन् १९४८—रूस की सहायता से कम्युनिस्टों द्वारा सत्ता पर अधिकार।

सन् १९५६—चेक कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा स्तालिनवाद के विघटन का अवरोध।

सन् १९६७—जुलाई—चेकोस्लोवाकिया के लेखकों के संघटन द्वारा स्वतन्त्रता के आन्दोलन की शुरुआत।
नवम्बर—छात्रों द्वारा स्वतन्त्रता के आन्दोलन का समर्थन।

सन् १९६८—जनवरी—कम्युनिस्ट पार्टी के नेता नोवोतनी की जगह दुबचेक कम्युनिस्ट पार्टी के नेता निर्वाचित, सुधारों की घोषणा।

मार्च—लोगों के विचारों का अवरुद्ध करनेवाले कानून की समाप्ति।

अप्रैल—नोवोतनी कम्युनिस्ट पार्टी से निष्कासित।

मई—चेकोस्लोवाकिया की सीमा पर पोलैण्ड और रूस की सेनाओं द्वारा सैनिक अभ्यास का कार्यक्रम। कोसीगिन का प्राग आगमन। वारसा सन्धि के राष्ट्रों द्वारा चेकोस्लोवाकिया में सैनिक अभ्यास होने के बारे में चेकोस्लोवाकिया की स्वीकृति।

जून—चेकोस्लोवाकिया से रूस का अपनी सेनाएँ हटाने से मुकरना। चेकोस्लोवाकिया के ७० लेखकों, विचारकों और बुद्धिवादियों द्वारा दो हजार शब्दों का घोषणा पत्र प्रकाशित।

जुलाई—वारसा में रूस, पूर्वी जर्मनी, पोलैंड हंगेरी, बुल्गेरिया की कम्युनिस्ट पार्टियों द्वारा चेकोस्लोवाकिया में किये जानेवाले सुधारों का विरोध करते हुए धमकी भरी चिट्ठी प्रेषित। दुबचेक द्वारा उनकी आलोचना को अस्वीकार करते हुए उत्तर प्रेषित। रूमानिया तथा युगोस्लाविया की कम्युनिस्ट पार्टियों की चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी के सुधारों से सहमति। इटली, ब्रिटेन फ्रांस, नार्वे, पोर्तुगाल, आइसलैण्ड, स्पेन, आस्ट्रिया, स्वीटजरलैण्ड, फिनलैण्ड, डेनमार्क बेल्जियम, स्वीडन, सनमेरिनो और साइप्रस की कम्युनिस्ट पार्टियों द्वारा चेकोस्लोवाकिया की पार्टी का समर्थन।

अगस्त—सोवियत रूस की सीमा के निकट सोवियत रूस की कम्युनिस्ट पार्टी के पॉलिट ब्यूरो (नीति निर्धारित करने वाली सर्वोच्च समिति) के सदस्यों के साथ चेक कम्युनिस्ट पार्टी के प्रेसीडियम की वार्ता।

३ अगस्त—ब्रातिस्लावा में रूस पूर्वी जर्मनी, पोलैण्ड हंगेरी और बुलगेरिया के नेताओं द्वारा वारसा-सन्धि के प्रति अपनी निष्ठा की पुष्टि तथा चेकोस्लोवाकिया के सुधारों की स्वीकृति।

२१ अगस्त—वारसा-सन्धि के राष्ट्रों की सेनाओं द्वारा रात्रि में चेकोस्लोवाकिया में प्रवेश, सभी मुख्य नगरों पर कब्जा।→

साम्यवाद का मानवीकरण

चेकोस्लोवाकिया में साम्यवादी शासन के परिणामों का विश्लेषण और संशोधन का प्रयास

[२६ जून, १६६८ को चेकोस्लोवाकिया के लेखकों तथा बुद्धिजीवियों द्वारा घोषित घोषणा पत्र का एक अंश—जिसके कारण वर्तमान संघर्ष पैदा हुआ है।]

समाजवाद के कार्यक्रम को चेक राष्ट्र ने एक नयी आशा के साथ स्वीकार किया था। राष्ट्र के नियंत्रण की बागडोर गलत लोगों के हाथों में पहुँची। राजनीतिज्ञ की हैसियत से अगर नेतृत्व वर्ग के लोगों में अनुभव, व्यावहारिक ज्ञान, या दार्शनिक शिक्षण की कमी रही होती तो ऐसा नहीं हुआ होता, बशर्ते वे लोग दूसरों की राय सुनने के काबिल होते और धीरे-धीरे नेतृत्व के लिए अपने से अधिक योग्य लोगों के लिए जगह खाली करते जाते।

द्वितीय महायुद्ध के बाद कम्युनिस्ट पार्टी ने जनता का विश्वास प्राप्त किया। धीरे-धीरे इसने सत्ता पर आसीन होना शुरू किया, और अन्त में सत्ता के सभी पदों पर आरूढ़ हो गयी। सत्ता के सभी पदों पर कब्जा पूरा होते-होते यह जनता का भरोसा पूरी तरह गवाँ बैठी। नेतृत्व की इस भूल के कारण एक राजनैतिक दल और वैचारिक संघ सत्ता-प्राप्ति के *संगठन में रूपान्तरित हो गया।* इसमें ऐसे लोग आकर्षित हुए जो मूलतः सत्तालोलुप, अहंकारी और खराब नीयत वाले थे।

ऐसे लोगों के पार्टी में दाखिल होते रहने से पार्टी के स्वरूप और व्यावहारिक मार्ग में फरक पैदा हुआ। पार्टी-संगठन आसानी से ईमानदार लोगों को न तो महत्व का स्थान प्राप्त करने देता और न आधुनिक दुनिया की आवश्यकताओं के अनुसार स्वरूप-परिवर्तन होने देता था। पार्टी की इस तरह की अवनति से बचाने की बहुत-से कम्युनिस्टों ने कोशिशें की, लेकिन जो कुछ हो रहा था उसे रोकने में वे असफल हुए।

कम्युनिस्ट पार्टी की इस तरह की अन्दरूनी परिस्थिति ने राज्यस्तर पर भी ऐसी ही परिस्थिति का निर्माण किया। चूँकि पार्टी राज्य की सत्ता के साथ जुड़ गयी थी इसलिए सत्ता की शक्ति में अपने को अलग रखने के लाभ से वह वंचित हो गयी। राज्य के कार्यकलापों या उसके आर्थिक संगठन की कोई आलोचना नहीं होती थी। संसद ने संसदीय प्रणाली का परित्याग कर दिया, और सरकार शासन करना भूल गयी। चुनावों का कोई महत्व नहीं रहा और न कानून का।

किसी भी संगठन में हम अपने प्रतिनिधियों का भरोसा नहीं कर सकते थे। *अगर हम उनका विश्वास करते हो तो उनसे* कुछ करने के लिए नहीं कह सकते थे, क्योंकि वे कुछ करने में असमर्थ थे। सबसे गयी-गुजरी हालत यह थी कि हम एक-दूसरे का भरोसा नहीं कर सकते थे। इस प्रकार हमारी व्यक्तिगत और सामूहिक प्रतिष्ठा गिरती गयी।

न ईमानदारी का कोई उपयोग रह गया था और न योग्यता का ही कोई उद्देश्य। *इसका नतीजा यह हुआ कि लोगों को सार्व*जनिक कामों से रुचि समाप्त हो गयी। उनकी सिर्फ अपने आप में और पैसों में दिलचस्पी रह गयी। कुछ समय के बाद ऐसी परिस्थिति बन गयी कि लोगों की पैसों में भी कोई दिलचस्पी नहीं रह गयी।

लोगों के आपसी सम्बन्ध नष्ट हो चुके थे। काम करने में किसी प्रकार का आनन्द नहीं रह गया था। कुल मिलाकर ऐसी हालत पैदा हो गयी कि पूरे राष्ट्र के चारित्र्य और आध्यात्मिक स्वास्थ्य पर खतरा मँडराने लगा। चेक राष्ट्र की इस हालत के लिए वैसे हम सब और खास तौर से हममें से जो कम्युनिस्ट हैं, वे जिम्मेदार हैं किन्तु इसकी असली जिम्मेदारी उन लोगों की है जो इस परिस्थिति में अनियन्त्रित सत्ता के औजार और खास हकदार बन गये थे। यह एक ऐसे गुट की सत्ता थी जो पार्टी के संगठन और शक्ति के बूते पर प्राग से लेकर छोटे-से-छोटे जिले और कम्यून की सत्ता पर कायम था।

पार्टी-मशीन ही यह तय करती थी कि किसे क्या करना है और क्या नहीं करना है। देश में सहकारी समितियाँ थीं और उनके सदस्य थे, कारखाने थे और उनमें काम करनेवाले थे, राष्ट्रीय संगठन थे और नागरिक थे; लेकिन इनमें से कोई भी संगठन उसके सदस्यों के हाथ में नहीं था। यहाँ तक कि कम्युनिस्ट पार्टी भी उसके सदस्यों के हाथ में न थी।

सत्ता पर काबिज इन नेताओं की सबसे बड़ी गलती और दुरंगी नीति यह थी कि वे अपने आपको श्रमिकों की इच्छा का प्रतीक मानते थे। यदि हम इस मिथ्या स्थिति को सही मान लें तो राष्ट्र की अर्थव्यवस्था की गिरावट, निर्दोष नागरिकों के प्रति किये गये अत्याचारों और असलियत को लोगों की जानकारी में न आने देने की दृष्टि से बनायी गयी सेंसरशिप की व्यवस्था के लिए श्रमिकों को ही दोषी मानना पड़ेगा। यह सेंसरशिप इसीलिए लागू थी कि लोगों को असलियत का पता ही न चलने पावे।

कहीं चाहे पूँजी को गलत ढंग से इस्तेमाल करने की गलती हुई हो, या व्यापारिक नुकसान हुआ हो या लोगों को मकान की तंगियाँ हुई हों, इन सबके लिए श्रमिकों को ही दोषी ठहराया जाता था।

वस्तुतः कोई भी समझदार आदमी नहीं मानता कि इस स्थिति के लिए श्रमिक लोग किसी भी प्रकार जिम्मेदार माने जा सकते हैं। सब लोगों को यह बात अच्छी तरह मालूम है कि मजदूर लोगों ने दरअसल

←२७ अगस्त—चेक-नेताओं और वार्ता-सन्धि के राष्ट्रों के नेताओं के बीच समझौता, वार्ता का दौर समाप्त कर चेक-नेताओं की स्वदेश वापसी।

२८ अगस्त—पुनः स्वोदा की सरकार और दुबचेक का नेतृत्व चेकोस्लोवाकिया में प्रस्थापित।

कभी किसी मामले में फैसला किया हो नही। मजदूरो के अधिकारी वर्ग का चुनाव दूसरे लोगो के द्वारा होता था। बहुत से मजदूर यह विश्वास करते थे कि कारखानो पर उन्हीका नियत्रण चल रहा है जब कि उनके नाम पर कारखाने पर ऐसे लोगो का नियत्रण था, जो पार्टी या राज्य के तत्र द्वारा नियुक्त किये गये थे।

इस परिस्थिति का ही एक तथ्य यह भी है कि पार्टी के भीतर कुछ ऐसे लोग भी मौजूद थे जिन्होने एक अरसे तक यह हालत देखकर महसूस किया कि इतिहास के गलत अध्याय लिखे जा रहे हैं। आज हम इस बात को जान सकते हैं क्योंकि वे लोग ही इसका उद्घाटन कर रहे हैं। अब पुरानी गलतियो को सुधारा जाने लगा है श्रमिकों और नागरिको को अपना निर्णय करने का हक वापस मिल रहा है और नौकरशाही के ढाँचे तथा उसकी ताकत को कम किया जा रहा है।

आज भी कम्युनिस्ट पार्टी मे ऐसे लोग मौजूद हैं जो इस तरह के परिवर्तन के खिलाफ हैं और ऐसे लोगों का आज भी असर खत्म नही हुआ है। वे आज भी सत्ता के पदों पर बने हुए है।

इस वर्ष के प्रारभ से लोकतात्रिकता की यह प्रक्रिया शुरू हुई है। यह सबसे पहले कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर शुरू हुई। हमें यह बात जोर देकर कहने की जरूरत है क्योंकि जो लोग पार्टी के बाहर हैं और जो कुछ पहले तक मानते थे कि हमारी कोशिश से कोई तरक्की नहीं हो सकती वे भी इस बात को जानते हैं। हम यह जरूर कहना चाहते हैं कि यह प्रक्रिया किसी और से नहीं शुरू हो सकती थी।

कम्युनिस्ट पार्टी ईमानदारी से इस बात की कोशिश कर रही है कि उसकी और चेक राष्ट्र की प्रतिष्ठा सुरक्षित रहे। पुनरावर्तन की इस प्रक्रिया मे कोई बहुत नयी बात नहीं है। इस सन्दर्भ में जो विचार और सुझाव पेश किये जा रहे हैं वे समाजवाद की गलतियो के पहले से मौजूद रहे हैं। कुछ विचार ऐसे भी हैं जो सतह के नीचे दबे हुए थे। इन्हें बहुत पहले ही जानकारी में आना चाहिए था लेकिन अब तक वे बाहरी अवरोध के कारण जाहिर नहीं हो पाये थे।

हमें इस भ्रम में नही पडना चाहिए कि ये विचार सत्ता की ताकत होने के कारण विजयी हो चुके हैं। दरअसल पुराने नेतृत्व की बीस वर्षों की अनियत्रित सत्ता की कमजोरियो के चलते ये सामने आये। जाहिर है कि इस तत्र की बुनियाद मे जो भी अन चाहे और अनावश्यक तत्व छिपे हुए थे उन्हे भली भाँति प्रकट होने के पहले परिपक्व होना जरूरी था।

आशा के ये क्षण अभी निरापद नहीं हैं अभी कुछ ही महीने बीते हैं कि हमे यह सब कहने का मौका मिला है। हममें से कुछ लोगों को अभी भी यह भरोसा नही है कि हम ऐसा मौका मिला है।

जो कुछ भी हो हमे अपने तत्र का मानवीकरण करने मे देर नहीं करनी चाहिए नही तो पुरानी ताकतें हमसे भारी बदला चुकाने में पीछे नहीं रहेंगी।

अगले अंक में पढें

चेकोस्लोवाकिया की जनता मौजूदा पार्टी का सगठन और सरकार चाहते क्या हैं? चेक कम्युनिस्ट पार्टी की सेन्ट्रल कमेटी ने अपनी अप्रैल ६८ की बैठक में क्या कार्यक्रम तय किया है, और सोवियत रूस के साथ विवाद की क्या बुनियादें है?

आक्रमण वापस लें

सर्वसेवा सघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी का चेकोस्लोवाकिया की स्थिति पर वक्तव्य

सोवियत रूस और अन्य चार देशो की सेनाओ के चेकोस्लोवाकिया मे प्रवेश करने की खबर सुनकर ससार स्तब्ध रह गया है। यह एक छोटे-से बहादुर देश पर अपनी ख्वाहिश लादने का क्रूर प्रयास है और चेकोस्लोवाकिया ने हाल ही मे उदार नीतियो को अपनाने की जो स्वागत योग्य प्रक्रियाएँ शुरू की थी उन्हें उलटने की गभीर कोशिश है। हमारी सहानुभूति चेकोस्लोवाकिया की घिरी हुई जनता के साथ है। अखबारो मे समाचार है कि वहाँ के नेताओं ने जनता से अपील की है कि वे इस आक्रमण का दृढ़ता और शान्ति के साथ सामना करें और निशस्त्र प्रतिकार करें। यह बहुत आशाप्रद समाचार है क्योंकि इस प्रकार का शान्तिपूर्ण प्रतिरोध जनता के नीतिधर्म को दृढ बनाने और अपने हेतु के प्रति दुनिया की सहानुभूति जगाने मे अधिक प्रभावशाली होगा।

हम आशा करते हैं कि विश्व जनमत के प्रभाव से और चेक जनता की सुदृढ और शान्तिपूर्ण प्रतिरोध से पाँचो राष्ट्र शीघ्र ही अपना आक्रमण वापस ले लेंगे और वहाँ की जनता को अपने भविष्य निर्माण के लिए स्वतन्त्र छोड देंगे।

वाराणसी, २२ ८ ६८

भारत में ग्रामदान प्रखंडदान जिलादान

दरभंगा जिलादान में प्रखडदान ४४ ग्रामदान १,७२०
पूर्णिया " " " ३८ " ८,१५७
तिरुनेलवेली " " " ३१ " २८४६
बलिया " " " १८ " १,४६६
उत्तरकाशी " " " ४ " ५६६

बिहार मे जिलादान २ प्रखडदान १७९ ग्रामदान २५,३७९
उत्तर प्रदेश में " २ " ४५ " ७,१३२
तमिलनाडु मे " १ " ५० " ५ ३०२
भारत मे " ५ " ३५२ " ६५,१८१

विनोबा निवास दिनाक ११ अगस्त ६८

—कृष्णराज मेहता

सैलाब से संरक्षण का सरकारी नुस्खा

एक और कानूनी करामात

न होगा बाँस : न बजेगी बाँसुरी

भारत सरकार के सिंचाई और बिजली-मंत्री डा० के० एल० राव ने, जिनके महकमे के अन्तर्गत बाढ़ से सम्बन्धित काम भी आता है, बाढ़-नियंत्रण के लिए लोकसभा में जिस उपाय की घोषणा की है वह नौकरशाही मनोवृत्ति और काम करने के सरकारी पद्धति का एक अच्छा उदाहरण है।

हर साल देश के कई हिस्सों में बाढ़ आती है, जिस तरह कई हिस्सों में अकाल भी पड़ता रहता है, और हर साल संसद में इन विपत्तियों की चर्चा हो जाती है, इनसे पीड़ित गरीब और निरीह जनता के हाल पर थोड़े आँसू बहाये जाते हैं, विपक्षी नेताओं को सरकार की आलोचना का एक और अवसर मिल जाता है और चन्द दिन बाद देश के 'विधाता' (विधायक गण) फिर अपने रोजमर्रा के कामों में व्यस्त हो जाते हैं। आलोचना ने कुछ ज्यादा जोर पकड़ा तो सरकार की तरफ से इन विपत्तियों की आखिरी जिम्मेवारी प्रकृति पर डाल दी जाती है। अकाल पड़ा तो वर्षा न होना उसके लिए जिम्मेदार है, बाढ़ आयी तो वर्षा की अधिकता। इसमें सरकार सुरक्षित है, क्योंकि प्रकृति तो अपने बचाव के लिए संसद में प्रतिनिधि भेज नहीं सकती। विपक्षी नेता भी इस बचाव को मान लेते हैं क्योंकि जनतंत्र के नाम पर जो राजनैतिक खेल आजकल चलता है उसमें कभी उन्हें भी 'सरकार' होने का और ऐसी आलोचना का पात्र बनने का मौका आ सकता है यह वे अच्छी तरह जानते हैं।

कमीशन-नियुक्ति की माया और मूक जनता

जब विपत्ति असाधारण रूप धारण कर लेती है—जैसे, सन् १९६६-६७ में अकाल ने बिहार में और अभी इस वर्ष बाढ़ ने गुजरात में, तो सरकार उसके लिए कुछ कदम उठाती है—जैसे, सब पहलुओं से समस्या के अध्ययन के लिए बड़े-बड़े विशेषज्ञों की कमिटी या कमीशन की नियुक्ति, या सम्बन्धित काम के लिए एक और सरकारी विभाग की स्थापना आदि। इन कदमों की वजह से और जो भी हो कम-से-कम कुछ लोगों की अपनी समस्याओं का हल जरूर हो जाता है। जनता के पास तो सिवाय इन सब बातों के मूक दर्शक बने रहने के और चारा ही क्या है? कुछ भोले लोग इन बातों से यह सन्तोष भी मान लेते हैं कि सरकार कुछ कर रही है।

सरकार की यह सूझ!

गुजरात की असामान्य बाढ़ से प्रेरित संसद की बहस के दौरान सिंचाई-मंत्री ने यह घोषणा की है कि बाढ़ से जान-माल की हानि न हो इसके लिए सरकार जल्दी ही एक कानून बनाकर नदियों के किनारे, जहाँ बाढ़ आने की सम्भावना हो वहाँ, लोगों का बसना रोक देगी। हम समझते हैं कि सरकार की इस सूझ-बूझ के सभी कायल होंगे। बाढ़ की समस्या का आखिरकार कितना कारगर उपाय सरकार ने खोज निकाला है! बाढ़ से होनेवाली हानि को रोकने के लिए इससे बढ़कर और उपाय क्या हो सकता है कि लोगों को बाढ़ के क्षेत्र में बसने ही न दिया जाय? न होगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। जब रोगी ही नहीं रहेगा तो रोग कहाँ से होगा?

पर डा० राव ने यह घोषणा विनोद में नहीं की है। बात यह है कि किसी भी समस्या को हल करने का सबसे आसान उपाय सरकार को यही सूझता है कि उसके लिए कानून बना दिया जाय। कानून से अगर समस्याओं का समाधान हो जाता तो देश अब तक स्वर्ग हो गया होता और उसकी यह परिस्थिति नहीं होती जो आज है। आजादी के बाद पिछले २१ बरसों में कितने कानून हमने बनाये!

कानून की उल्टी मार

सरकार ने कानूनों का एक जंगल ही खड़ा कर दिया। छुआछूत है तो उसे मिटाने के लिए कानून, बचपन की शादियाँ रोकने के लिए कानून, जमीन के न्यायोचित बँटवारे के लिए सीलिंग आदि के कानून, मंदिरों-मठों की सार्वजनिक संपत्ति के दुरुपयोग को रोकने के लिए कानून, गरीब कम-से-कम अपनी झोंपड़ी में सुरक्षित रह सके उसके लिए कानून, जोतनेवाला बेदखल न हो उसके लिए कानून, चोर-बाजारी न हो उसके लिए कानून, चीजों के भाव अनाप-शनाप न बढ़े उसके लिए कानून। हम सब यह भी जानते हैं कि बावजूद इन कानूनों के इनमें से एक भी समस्या का हल नहीं हुआ है। जिस तरह से बहुत-से कानून पास होकर भी बरसों से केवल कानून की किताबों में बन्द हैं, उससे जाहिर है कि कानून बनानेवाले भी जानते हैं कि कानून समस्याओं के समाधान की अपेक्षा इसलिए ज्यादा बनाये जाते हैं कि सरकार के पास यह कहने को हो जाय कि वे समस्याओं से बेखबर नहीं हैं, उनके हल के लिए कदम भी उठाते हैं।

लेकिन इतना ही होता तो बात ज्यादा गंभीर नहीं होती। कानूनों से समस्याओं का समाधान तो दूर रहा, पर उल्टे जनता के लिए नयी समस्याएँ और नयी परेशानियाँ खड़ी हो जाती हैं। नये-नये कानूनों का नतीजा यह हुआ है कि इनसे सम्बन्ध रखनेवाले सरकारी महकमों की अनाप-शनाप वृद्धि हुई है, सरकारी पदों, अफसरों, नौकरियों और नौकरों की संख्या बढ़ी है, जनता के जीवन में सरकार और कानून का दखल बढ़ा है, अदालतों और वकीलों का कारोबार बढ़ा है और नेताओं तथा नौकरशाही की जनता को परेशान करने और अपना स्वार्थ साधने की ताकत बढ़ी है। जनता दिनों-दिन त्रस्त और असहाय होती जा रही है। डा० राव और अन्य मंत्रीगण इतना अनुमान तो अवश्य लगा सकते हैं कि नदियों के किनारे बाढ़ की अपेक्षावाले क्षेत्र में न बसने का कानून नीचे के अधिकारियों, कर्मचारियों तथा उस स्तर के राजनैतिक दलों के

कार्यकर्ताओं के हाथ में देहात की गरीब जनता के उत्पीड़न और शोषण का एक और हथियार बन जायगा।

बाढ़ के खतरे : कारण केवल प्राकृतिक नहीं

बाढ़ के क्षेत्रों में बसना खतरे से खाली नहीं है, यह लोगों को समझाने के लिए कानून की जरूरत नहीं है। खतरा की जगहों में लोग स्वयं भी बसना पसन्द नहीं करते। उत्तर बिहार या आसाम जैसे क्षेत्रों में—जहाँ हर साल बाढ़ आती रहती है, वहाँ लोगों ने उसके उपाय भी कर रखे हैं और हम देखते हैं कि अक्सर वहाँ बाढ़ से जान-माल की उतनी क्षति नहीं होती। लेकिन आजकल कई जगह जो बाढ़ आती रहती है उनमें से अधिकांश का कारण केवल प्राकृतिक नहीं है बल्कि बहुत कुछ मनुष्य कृत है। कई क्षेत्रों के बारे में यह प्रत्यक्ष अनुभव है कि आजादी के आसपास के दिनों में तथा उसके कुछ बाद के बरसों में बिना किसी रोक थाम या मर्यादा के जो जंगल कटे हैं तथा उनकी बरबादी हुई है उसके कारण वहाँ के जल प्रवाह के नीचे के क्षेत्रों में बाढ़ आना शुरू हुआ है। इसी प्रकार पिछले बरसों में रेलों, सड़कों, नहरों इत्यादि के जरिये जहाँ एक ओर सुविधाएं बढ़ी हैं वहाँ दूसरी ओर दूरन्देशी के तथा सुनिश्चित योजना के अभाव में सदियों से चले आ रहे पानी के स्वाभाविक बहाव अवरुद्ध हुए हैं। राजस्थान के उत्तरी हिस्से और हरियाना-पंजाब के दक्षिणी हिस्से में बाढ़ आने का यह एक प्रमुख कारण है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि देश के अन्य बहुत से हिस्सों में भी आजकल बाढ़ का खतरा बढ़ जाने का यह एक मुख्य कारण है।

विभागीय लापरवाही के दुष्परिणाम

बाढ़ का प्रकोप बढ़ जाने का एक और बड़ा कारण सरकार और सरकारी विभागों की लापरवाही है। यह करीब करीब सब जगह का सामान्य अनुभव है कि आजादी के बाद पिछले २० बरसों में पहले से चली आ रही सिंचाई व्यवस्था की अवहेलना हुई है ऐसी उपेक्षा जो अपराध की श्रेणी में आने लायक है। आजादी के पहले तक गाँव-गाँव में तालाब, छोटे-मोटे बाँध, नहर, आहर-पैन इत्यादि की जो व्यवस्था गाँव की या जमींदार की ओर से होती थी वह सब प्रादेशिक सरकार के सिंचाई विभाग के हाथ में चले जाने के बाद उनकी अत्यन्त दुर्गति हुई है। उनकी सफाई, उनकी टूट फूट की मरम्मत आदि न होने के कारण न सिर्फ खेती की हानि हुई है, बल्कि जगह जगह पानी के रुकने, या तेजी से बहने आदि के *कारण विनाश लीला प्रारम्भ हुई है।* राजस्थान के भरतपुर क्षेत्र में पिछले साल जो विनाशकारी बाढ़ आयी थी उसका एक प्रमुख कारण जानकार लोगों ने यह बताया था कि उस क्षेत्र में पिछले ५०-६० बरसों से नहरों आदि की जो व्यवस्था चली आ रही थी उसकी आजादी के बाद पिछले २० बरसों में असम्य उपेक्षा हुई है। पिछले साल अकाल के सिलसिले में और इस साल ग्रामदान के काम से बिहार के गाँवों के भ्रमण में जगह-जगह पुराने सिंचाई-साधनों की यह दुर्व्यवस्था प्रत्यक्ष देखने को मिली है।

आजादी के बाद के बरसों में बाढ़ अकाल आदि प्रकोपों में जो वृद्धि हुई है *उसका कारण कुछ प्राकृतिक भी होगा, लेकिन* अधिकतर वह सरकारी अधिकारियों की कमियों का, दूरन्देशी के अभाव का और सार्वजनिक कार्यों के प्रति अपनी जिम्मेदारी की असम्य लापरवाही का परिणाम है। लेकिन ताज्जुब है कि बाढ़ के उपायों की चर्चा में इन बातों का कहीं जिक्र तक नहीं है क्योंकि इसमें सरकार की अपनी कमजोरी और निकम्मापन साबित होता है। सरकारी तंत्र की कमियों और उसके निकम्मेपन को दूर करने के बजाय बाढ़ को रोकने के लिए जनता को अमुक क्षेत्रों में बसने से कानूनन रोकने की कोशिश केवल हास्यास्पद ही नहीं, बल्कि जनता की परेशानियों में और उसके शोषण में वृद्धि करनेवाली साबित होगी। अतः यह आवश्यक है कि इस कोशिश के पीछे रही हुई मनोवृत्ति और उसके परिणामों का खुलकर विरोध किया जाय।

—सिद्धराज ढड्ढा

उत्तर प्रदेश में ७,४०६ ग्रामदान प्राप्त

प्रदेशभर में अभियानों का तूफानी सिलसिला जारी

उत्तर प्रदेशीय ग्रामदान प्राप्ति समिति के संयोजक श्री कपिल भाई के पत्रानुसार प्रदेश में अब प्राप्त ग्रामदानी गाँवों की संख्या १६ अगस्त '६८ तक की सूचना के अनुसार ७,४०६ हो गयी है। प्रदेशदान के निर्णय के बाद से पूरे प्रदेश में अभियानों का सिलसिला तूफानी गति से शुरू हो गया है।

क्षेत्रीय ग्रामदान ग्रामस्वराज्य समिति, कानपुर के अध्यक्ष ने सूचना दी है कि प्रान्त-दान का संकल्प व्यापक प्रेरणा दे रहा है। कानपुर जिले की देरापुर तहसील के रसूलाबाद, शीसक, मैंदलपुर और देरापुर प्रखण्डों में ३ से १० अगस्त तक ग्रामदान अभियान चला, जिसमें क्रमशः १२६, ४६, ३६ और ५० कुल २६१ ग्रामदान प्राप्त हुए। अभियान में उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाना और हिमाचल प्रदेश के ३०० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। इनमें १५२ शिक्षकों का सक्रिय सहयोग उल्लेखनीय है। गांधी विद्यालय (इण्टर कालेज) शीसक के अध्यापक और छात्र तो विद्यालय बन्द करके प्रचार-कार्य में जुट गये थे।

शिविर और अभियान में सर्वश्री ब्रजमोहन त्रिपाठी, मंत्री, स्वराज्य आश्रम, बजलाल मिश्र, अध्यक्ष, जिला परिषद, स्वामी कृष्ण स्वरूप, कपिल भाई, कामतानाथ गुप्त, राजाराम भाई, रामजी भाई, और डा० दयानिधि पटनायक का प्रत्यक्ष मार्गदर्शन मिला। सर्वश्री राधाकृष्ण बाजार, महामंत्री जिला स्वतंत्र पार्टी, रामकुमार दीक्षित, मंत्री, जिला गांधी-शताब्दी समिति और हरवंशलाल ने अभियानों का संयोजन किया तथा अपने क्षेत्रों में दौरा किया।

शिविर और अभियान के वाहक थे शीसक के सर्वोदय प्रेमी श्री रामचन्द्रजी वर्मा और स्वराज्य आश्रम, कानपुर। •

चेकोस्लोवाकिया

समाजवाद और लोकशाही के समन्वय की तलाश में

[चेकोस्लोवाकिया इस समय विश्व की निगाहों का केन्द्रबिन्दु बना हुआ है। पूँजीवादी 'शोषण' से अपने को मुक्त कर लेनेवाली चेक की समाजवादी जनता अब 'साम्यवादी दमन' से भी मुक्त होकर मार्क्स के सपने को—"समाज मुक्त मानवों का मुक्त भाईचारा"—साकार करना चाहती है। प्रस्तुत लेख में सतीश कुमार ने चेक-नेताओं के चिन्तन और वहाँ की जनता के अन्दर की हलचल का परिचय प्रस्तुत किया है अपनी चेकोस्लोवाकिया की यात्रा के प्रत्यक्ष अनुभव और मुलाकातों के आधार पर।—सं०]

जनवरी '६८, चेकोस्लोवाकिया के इतिहास में मील के पत्थर की तरह दिखाई देनेवाला महीना है। इसे भले ही अहिंसक-क्रान्ति न कहा जाय, पर शान्तिपूर्ण क्रान्ति तो यह थी ही। अब तक ऐसा माना जाता रहा है कि जहाँ समाजवाद है, वहाँ लोकशाही संभव नहीं और जहाँ लोकशाही है, वहाँ पूँजीवाद के बिना चारा नहीं। स्तालिन ने इस मतव्य की स्थापना की और पूर्वी यूरोप के स्टालिनवादी शासकों ने 'बाबा वाक्य प्रमाणम्' कहकर इस मतव्य का अनुसरण किया। चेकोस्लोवाकिया में पिछले १५ वर्षों से श्रीमान् नोवोतनी का इशारा कानून की तरह स्वीकार होता था और लेखक, बुद्धिजीवी एवं स्वतन्त्र विचारकों को मन मसोसकर बैठे रहना पड़ता था। पिछली जनवरी-क्रान्ति ने नोवोतनी साहब को हटाया और अपेक्षाकृत तरुण और समाजवाद व लोकशाही में समन्वय की तलाश करनेवाले नेता अलेक्जेण्डर दुबचेक ने समाजवाद के जनतंत्रीकरण के आश्वासन के साथ कम्युनिस्ट पार्टी के प्रथम-सचिव का कार्यभार संभाला।

जब मैं अप्रैल में प्राग पहुँचा, तो जनवरी-क्रान्ति का दूसरा चरण सम्पन्न होने जा रहा था। किसी भी साम्यवादी देश के इतिहास में शायद पहली बार विद्यार्थी जुलूस निकालकर किसी 'अमुक' व्यक्ति के राष्ट्रपति चुने जाने के लिए आन्दोलन कर रहे थे। श्री स्वोबोदा के राष्ट्रपति चुने जाने के समय मैं चुनाव-स्थल पर एक नये वातावरण की उपस्थिति अनुभव कर रहा था। इसी वातावरण में से राजनैतिक और आर्थिक परिवर्तन का जन्म होनेवाला था और चेकोस्लोवाकिया के भविष्य को नयी दिशा मिलनेवाली थी। समूचे यूरोप के बुद्धिजीवी और विद्यार्थी एक गहरी उथल-पुथल एवं सांस्कृतिक-क्रान्ति के दौर से इस समय गुजर रहे हैं और चेकोस्लोवाकिया की यह क्रान्ति भी उसी व्यापक उथल-पुथल का एक अंग है।

ओरिएटल इन्स्टीट्यूट के हिन्दी प्राध्यापक मिलोस्लाव क्रास ने मुझे कहा कि "गांधी के विचारों में व्यष्टि और समष्टि के बीच संतुलन खोजने की कोशिश है। जहाँ पूँजीवादी व्यष्टि की प्रतिष्ठा के मोह में समष्टि को एकदम भूल गये वहाँ स्टालिन ने समष्टि के सामने व्यष्टि को एकदम तुच्छ और नगण्य बना दिया। गांधी ने दोनों को एक सूत्र में पिरोने की दिशा में अनेक प्रयोग किये। इसलिए हमारा देश इस समय जिस परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है, उसमें गांधी के विचार बहुत सहायक हो सकते हैं।" मुझे ओरिएटल इन्स्टीट्यूट में "गांधी की कल्पना का समाज" विषय पर व्याख्यान देना था। मैंने अपने व्याख्यान में जब कहा कि "समाजवाद और लोकशाही ३६ का अंक नहीं, बल्कि ६३ का अंक है" तो श्रोताओं की ओर से एक विशिष्ट हर्षध्वनि मिली। यह हर्षध्वनि चेकोस्लोवाकिया के बुद्धिजीवियों के रुख की जानकारी देती है। ग्रामदान के आयोजन और संयोजन के बारे में श्रोताओं ने अनेक सवाल पूछे और आन्दोलन के बारे में अधिक जानने के लिए उत्सुकता भी दिखाई। ओरिएटल इन्स्टीट्यूट में हिन्दी, बंगाली, तमिल, मलयालम आदि भाषाओं के अलावा उपनिषद गीता और भारतीय दर्शनों का अध्ययन काफी महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। मैंने इन्स्टीट्यूट के अधिकारियों से निवेदन किया कि भारत में चल रहे वर्तमान सामाजिक एवं राजनैतिक आन्दोलन से भी वे परिचित रहें। गांधी-शताब्दी वर्ष के दौरान ओरिएटल इन्स्टीट्यूट कुछ विशिष्ट अध्ययन-परिसंवादों का आयोजन करेगा, ऐसी आशा है।

चेकोस्लोवाकिया के भविष्य की नयी दिशा···एक गहरी उथल-पुथल···गांधी-विचार में संतुलन···मनुष्य नहीं, पैसा···ग्रन्थों और चर्चों में बंद ईसा की वाणी···मुक्ति का संघर्ष और हिंसा-अहिंसा···वर्तमान समाज-रचना का आधार हिंसा···विज्ञान और सभ्यता के विकास का परिणाम ?···मार्क्सवाद और मौजूदा साम्यवादी रचना के बीच की खाई···

मेरे प्राग-प्रवास के दौरान अन्तर्राष्ट्रीय क्रिश्चियन पीस कान्फरेंस भी चल रही थी। मुझे इस कान्फरेंस में भाग लेने का अवसर मिला। यूरोप की यात्रा करनेवाला यात्री यह अनुमान नहीं लगा सकता कि क्रिश्चियन धर्म वास्तव में किन सिद्धान्तों पर खड़ा है, क्योंकि यहाँ के लोगों के जीवन, आचार और व्यवहार में क्रिश्चियन धर्म का कोई असर दिखाई नहीं देता। शिक्षा, राजनीति और जीवन के दूसरे सभी अंगों का केन्द्र 'मनुष्य' नहीं बल्कि 'पैसा' है। 'सूई के छेद में से ऊँट का निकल जाना शायद संभव है, पर किसी धनी का स्वर्ग के द्वार में प्रविष्ट हो सकना उससे भी ज्यादा असंभव है,' यह ईसा मसीह की वाणी केवल किताबों और चर्च के उपदेशों तक सीमित है। प्राग में आयोजित क्रिश्चियन पीस-कान्फरेंस के वक्ताओं ने इन तथ्यों का महसूस किया और शक्तिशाली शब्दों में एक सामाजिक क्रान्ति के लिए आवाहन किया। पर मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि असंतुलित जोश और आवेश में कान्फरेंस के वक्तागण 'हिंसक' क्रान्ति को भी स्वीकार करने के लिए तैयार थे। मैंने कान्फरेंस के साथियों को ग्रामदान-क्रान्ति की जानकारी देते हुए बताया कि अहिंसा का अर्थ अकर्मण्यता नहीं है और न उसका अर्थ अप्रतिकार है। अहिंसा अन्याय के विरुद्ध लड़ने तथा शोषण के खिलाफ विद्रोह करने का एक व्यावहारिक एवं ताकतवर हथियार है। पर मेरी इस वकालत से अधिकांश क्रिश्चियन

मित्रों को भरोसा नहीं था। दक्षिण अफ्रीका, ग्रीस, वियतनाम आदि के उदाहरण देकर यह साबित किया जा रहा था कि मुक्ति, स्वातन्त्र्य और शान्ति के उद्देश्य से हिंसा का मार्ग अपनाना भी गलत नहीं है। रूस, क्यूबा, चीन और अब वियतनाम में मुक्ति की जो लड़ाई लड़ी जा रही है, वही लड़ाई सारी दुनिया के लिए उपादेय है। संसार में चारों ओर जो विषमता, शोषण और स्थापित स्वार्थ का साम्राज्य है, उस पर विजय पाने का कोई अहिंसक मार्ग इन क्रिश्चियन मित्रों को दिखाई नहीं दे रहा है।

एक सौ से अधिक देशों के प्रतिनिधि तथा लगभग सभी प्रकार की क्रिश्चियन सम्प्रदायों और संस्थाओं की तरफ के लोग इस कान्फरेंस में भाग ले रहे थे। दुनिया की शायद यह सबसे बड़ी क्रिश्चियन कान्फरेंस है जो प्रति-वर्ष अपना अधिवेशन करती है। भारत से आर० वैथान और अन्य १०-१५ प्रतिनिधि आये थे। अमेरिका, ब्रिटेन, जापान, जर्मनी, फ्रांस, रूस आदि सभी प्रमुख देशों के शिष्ट-मण्डल आये हुए थे। किताबों के क्राइस्ट और चर्च की क्रिश्चियनीटी की असफलता के बारे में इन प्रतिनिधियों से बड़ी उग्रतापूर्ण तकरीरें सुनने को मिली। क्रान्तिवादी क्रिश्चियनिटी के इन समर्थकों का कहना था कि अब प्रार्थना के स्थान पर पिकेटिंग का आयोजन करने की जरूरत है। उद्योगवाद और मशीन-वाद पर आधारित पश्चिमी सभ्यता का सादगी, सामुदायिकता और मानवीय सम्बन्धों पर आधारित क्रिश्चियन सभ्यता के साथ एक जबरदस्त संघर्ष है। सम-सामयिक क्रिश्चियन चिंतक भटका हुआ-सा प्रतीत होता है। इस पृष्ठभूमि में क्रिश्चियन कान्फरेंस ने जो प्रस्ताव पास किया उसका निचोड़ दो शब्दों में निकाला जाय तो यही था कि अब एक सम्पूर्ण क्रान्ति के बिना कोई चारा नहीं। *अब फिर यह क्रान्ति हिंसक होगी या अहिंसक।'*

चेक गवर्नमेंट के संस्कृति मंत्री श्री क्रुजेक से मैंने मुलाकात की। उन्होंने एक बड़ी महत्त्वपूर्ण बात कही: 'आज हमारे समाज की सारी रचना हिंसा पर खड़ी है। यदि इस रचना को बदलकर हम अहिंसक समाज बनाना चाहते हैं तो शस्त्र, सेना, संपत्ति के
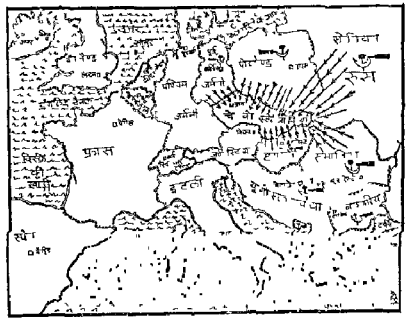
साम्यवादी चेकोस्लोवाकिया पर सोवियत रूस और उसके गुट के देशों का आक्रमण

स्थान पर कला संगीत, साहित्य, नृत्य, आदि नये सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना करनी होगी तभी अहिंसक समाज बनेगा। एक करोड़पति की तुलना में एक चित्रकार को ज्यादा सम्मान, प्रतिष्ठा और महत्त्व दिया जाय, एक सरकारी मंत्री की तुलना में एक कवि को अधिक ऊँचा माना जाय तो प्रति-योगिता का क्षेत्र बदल जायगा। सत्ता और संपत्ति से ज्यादा कला और कविता मूल्यवान होगी। बन्दूक और टैंक का स्थान कलम, ब्रश और गिटार लेंगे। पश्चिमी समाज के बारे में टिप्पणी करते हुए श्री क्रुजेक ने कहा: 'यहाँ लोग मशीन की तरह का जीवन जीते हैं। बँधा बँधाया कार्यक्रम, दफ्तर, टेलिविजन, रेस्तराँ, पीना नाचना, पार्टियाँ और बस इसी के इर्दगिर्द सारा जीवन चलता है। सम्पन्नता और पर्याप्तता ने हमारे समाज को अधिक मानवीय और अधिक सांस्कृतिक नहीं बनाया। *स्कैंडिनेविया और अमेरिका जैसे देश, जहाँ* लोग सम्पन्नता के शिखर पर हैं, वहाँ लोग ज्यादा सभ्य हैं, ऐसा मानना भूल होगी। अमेरिका में प्रतिवर्ष ११ हजार हत्याएँ की जाती हैं। जरा सोचिए, ११ हजार हत्याएँ! एक करोड़ लोग पागलखानों में हैं। ओह, एक करोड़ पागल! क्या यही विज्ञान और सभ्यता के विकास का परिणाम है?' यह स्वाभाविक ही है कि श्री क्रुजेक आर्थिक और औद्योगिक विकास से ज्यादा सांस्कृतिक विकास पर बल देते हैं।

जब मैं बुडापेस्ट से रेल द्वारा प्राग पहुँचा तो स्टेशन पर श्रीमती दुरदिलोवा और जोसेफ खोस्ट ने मुझे रिसीव किया। श्रीमती *दुरदिलोवा के पति भारत में चेक-दूतावास में* 'कल्चरल अटैची' थे। अपने पति के साथ श्रीमती दुरदिलोवा भारत में रह चुकी हैं और उनके एक पुत्र का जन्म भी भारत में हुआ। इसलिए उनका भारत व भारतीयों के प्रति विशेष लगाव स्वाभाविक है। श्री जोसफ खोस्ट चेक यूनेस्को के सचिव हैं और *गांधी शताब्दी के* आयोजन में विशेष दिल-चस्पी ले रहे हैं। इन दोनों का मुझे प्राग प्रवास के दौरान विशेष सहयोग मिला। इन दोनों मित्रों के मन में चेकोस्लोवाकिया के नये *भविष्य के प्रति विशेष आशाएँ हैं। इन्हें* लगता है कि मार्क्स और आज के साम्यवादी संस्करण के बीच एक खाई पैदा हो गयी है। इस खाई को पाटने के लिए मार्क्सवादी शान्ति की नयी आवृत्ति आवश्यक है। इस नये रेनेसाँ आन्दोलन का अगुआ शायद चेको-स्लोवाकिया बनेगा। —सतीशकुमार

खादी और ग्रामोद्योग अशोक मेहता-समिति का प्रतिवेदन

निष्कर्ष और सुझावों का सारांश–२

एक नये नमूने का चरखा

१४—नये नमूने के चरखे का कार्यक्रम इस प्रकार बनाना चाहिए कि सरकारी सहायता की जरूरत घटकर कम-से कम रह जाय और बाजार में खपत की जितनी क्षमता हो उसी सीमा के भीतर उत्पादन किया जाय। नये नमूने के चरखे को चालू करने के लिए किसी बड़े नियमित कार्यक्रम को मंजूरी देने के पहले कमीशन और सरकार द्वारा उसके आर्थिक तथा संगठनात्मक स्वरूप की अच्छी तरह जाँच की जानी चाहिए।

१५—बीस अंकों से नीचे के सूत से कपड़े का उत्पादन केवल खादी के लिए सुरक्षित रखा जाय, तब अतिरिक्त हाथकता सूत सरकार खरीद ले और मिल-सूत के साथ मिलाकर बुनवावे तथा बेचे, एवं मिलों, हाथ-करघों तथा बिजली-करघों द्वारा तैयार कपड़ों के और खादी के मूल्यों को मिलाकर कपड़ों की बिक्री हो, ऐसे अनेक प्रस्ताव और सुझाव पेश किये गये, पर वे सब व्यावहारिक नहीं मालूम होते हैं।

१६—पारंपरिक खादी का कार्यक्रम व्यक्ति-स्वावलम्बन और ग्राम-स्वावलम्बन की ओर अभिमुख होना चाहिए। भविष्य में बिक्री के लिए खादी का उत्पादन नये नमूने के चरखे पर कते सूत की मदद से होनी चाहिए। तकनीकी सुधारों को दाखिल करने तथा बिजली के उपयोग के लिए इसमें व्यापक गुञ्जाइश होनी चाहिए।

१७—खादी के उत्पादन हेतु जो तकनीक अपनायी गयी है उसमें लगातार और तेज गति से सुधार करने की तथा इस प्रयोजन से व्यवस्थित अनुसन्धान के संगठन की आवश्यकता है। अनुसन्धान सुनिश्चित उद्देश्य को सामने रखकर किया जाना चाहिए। अनुसन्धान का साधारण उद्देश्य कारीगर के स्वत अपना काम करने के स्वरूप को बनाये रखना होना चाहिए, पर उसका विशेष उद्देश्य कारीगर की कार्यक्षमता को बढ़ाना होना चाहिए, ताकि वह एक निम्नतम मजदूरी कमा सके और मिल-कपड़ा, हाथकरघा कपड़ा तथा खादी के बीच दाम में जो फर्क है उसे घटाया जा सके। भविष्य के लिए तकनीकी सुधार की कसौटी, नये नमूने के चरखे में जो उत्पादकता प्राप्त हो चुकी है उस स्तर से आगे बढ़ना, होनी चाहिए। निम्न तकनीक में सुधार की किसी ऐसी योजना को सरकार अलग से वित्तीय सहायता न दे, जो उपर्युक्त कसौटी के अनुकूल नहीं हो।

१८—खादी की सुधरी तकनीक में अनुसन्धान करने के लिए इस क्षेत्र में पहले से जो अनेक अनुसन्धान-शालाएँ तथा संस्थाएँ लगी हुई हैं उनमें उपलब्ध विशेषज्ञों और साधनों का लाभ अधिक-से-अधिक उठाना चाहिए। अनुसन्धान-कार्यों का संगठन अधिकाधिक मात्रा में क्षेत्रीय तथा राज्यस्तर पर करना चाहिए।

१९—सभी क्षेत्रों में खादी-कार्यक्रम के भावी विस्तार को उन क्षेत्रों की पूर्ण और आंशिक बेकारी के प्रभाव के साथ जोड़ने का प्रयास करना चाहिए और किसी क्षेत्र में खादी-काम के विकास के लिए किसी योजना को तैयार करने के पहले स्थानीय माँग का सर्वेक्षण करना तथा उत्पादन-खर्च का अन्दाज लगाना चाहिए। राज्य मण्डल किसी निर्णय पर पहुँचने के लिए ऐसे सर्वेक्षण के परिणामों को तथा वहाँ की साधारण आर्थिक स्थिति को देखे कि उन क्षेत्रों में काम देने का सबसे अच्छा तथा सबसे मितव्ययी उपाय खादी का विकास है या नहीं।

२०—खादी-कार्यक्रम का ऐसे ढंग से संगठन करना तथा उसे ऐसी दिशा की ओर मोड़ना चाहिए कि उसका अधिक-से-अधिक लाभ पिछड़े हुए क्षेत्रों के, आदिवासी तथा अगम्य क्षेत्रों के, अकाल तथा सूखा-पीड़ित क्षेत्रों के, और हरिजनों, भूमिहीन खेतिहर मजदूरों, छोटे किसानों आदि के समान पिछड़े हुए तथा अल्प सुविधा-प्राप्त लोगों को मिले। जहाँ तक सम्भव हो, इन प्रयोजनों के लिए खादी कामों का विकास तकनीकी दृष्टि से सुधरे हुए साधनों की मदद से करना चाहिए।

मजदूरी

२१—अभी खादी की मजदूरी का निर्धारण मनमाने रूप से किया गया है, हालांकि यह कहा जाता है कि उसका सम्बन्ध कृषि मौसम के बाद खेतिहर मजदूरों को जो स्थानीय मजदूरी दी जाती है उससे है। चूँकि खादी को ग्रामीण उद्योगों में से एक के रूप में मानना चाहिए, इसलिए खादी के ऐसे विस्तार के कार्यक्रम में, जिसका आधार सुधरे हुए औजार हों, कतवारों की मजदूरी कृषि मौसम के बाद खेतिहर मजदूरों को ही दी जानेवाली मजदूरी के बराबर होनी चाहिए।

२२—संस्थाओं को तकनीकी सेवाएँ देने में कमीशन द्वारा जो खर्च किया जाता है और कमीशन का जो प्रशासकीय खर्च होता है उन्हें इस कार्यक्रम पर होनेवाले खर्च का ही एक हिस्सा मानना होगा, पर उन्हें अनुदान के रूप में समझना होगा। अतः उन्हें खादी के विक्रय मूल्य में शामिल करने की आवश्यकता नहीं है। कमीशन द्वारा जो व्यापारिक कार्य और उत्पादन किया जाता है उसके सम्बन्ध में उपरिव्ययों का कोई मानक निर्धारित किया जाना चाहिए।

२३—अभी रेशमी और ऊनी कपड़े पर जो १० प्रतिशत विक्रय छूट (रिबेट) दी जा रही है उसे, अंडी, मूँगा तथा कते हुए रेशम एवं आम तौर पर उपयोग में आनेवाले ऊनी वस्त्रों को छोड़कर, क्रमशः घटाना चाहिए और अन्त में बन्द कर देना चाहिए।

ग्रामोद्योगों का स्वरूप

२४—ग्रामोद्योगी कार्यक्रमों को खादी-कार्यक्रम से दो महत्वपूर्ण बातें अलग करती हैं: (१) इन कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने का ज्यादातर भार राज्य खादी-ग्रामोद्योग मण्डलों के जिम्मे है और (२) क्षेत्रों में उन्हें अमल में लाने का मुख्य भार (पंजीकृत संस्थाओं की अपेक्षा) सहकारी समितियों पर है। ग्रामोद्योगों में से कुछ, खासकर ताड़गुड़ तथा ताड़-पत्ते के उत्पादन, ग्रामीण चमड़ा, वस्तुओं के उत्पादन, गैर तथा अखाद्य तेल और साबुन के सम्बन्ध में प्रारम्भिक काम करने का श्रेय खादी और ग्रामोद्योग कमीशन को है। ग्रामीण उद्योगों का विस्तृत क्षेत्र और

उनमें लगे बहुत ज्यादा कारीगर खादी और ग्रामोद्योग कमीशन कार्यक्रम से बाहर हैं। अर्थात् कमीशन का कार्यक्रम बहुत सीमित है।

२५—स्थानीय समाधनों और कुशलता पर आधारित ग्रामोद्योगों का बहुत महत्व है। उनको समुचित मार्गदर्शन दिया जाय तथा उनकी तकनीकों में लगातार सुधार हो तो ग्रामोद्योग-कार्यक्रम से ग्राम-समाज के जीवन-स्तर को ऊपर उठाने में मदद मिल सकती है। कच्चे माल की समुचित पूर्ति सुनिश्चित करने, कुशलता तथा तकनीकों के स्तर को ऊँचा उठाने और विक्रय सहायता की व्यवस्था जैसी मुख्य समस्याओं के समाधान के लिए अधिक विस्तृत कार्यक्रम बनाना चाहिए, जिसका उद्देश्य ग्रामीण अर्थतंत्र के लिए एक सुदृढ़ कृषि-औद्योगिक आधार का निर्माण हो।

२६—राज्य ग्रामीण उद्योग मण्डल ग्रामीण उद्योग आयोग के साथ परामर्श करके हर राज्य में ग्रामीण उद्योगों के लिए विकास-कार्यक्रमों को तैयार करें। इन कार्यक्रमों का आधार अपने काम में लगे लोगों द्वारा स्थानीय संसाधनों का अधिकतम उपयोग होना चाहिए। इन लोगों को प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए और सुधरे औजारों तथा तकनीकों के एवं जहाँ सम्भव हो छोटे यंत्रों तथा बिजली के उपयोग के लिए समर्थ बनाया जाना चाहिए। पर पारम्परिक कारीगरों का बड़े पैमाने पर विस्थापन यथासम्भव टालना चाहिए।

अनुसंधान-संस्थान

२७—छोटे उद्योगों के लिए एक औद्योगिक अनुसंधान संस्थान की स्थापना करनी चाहिए, जो ग्रामीण उद्योगों के लिए समुचित प्रौद्योगिकी (टेक्नालाजी) की समस्याओं पर अनुसंधान करे और ग्रामीण उद्योगों के विकास की तकनीकी समस्याओं के समाधान के बारे में ग्रामीण उद्योग आयोग तथा राज्य मण्डलों को परामर्श तथा सहायता दे।

२८—ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे उद्योगों को फैलाने के लिए महत्वपूर्ण उपायों में से एक है उन लोगों को समुचित प्रोत्साहन देना, जो इन उद्योगों की स्थापना में अभिरुचि रखते हैं। प्रोत्साहन उत्पादन या विक्रय के स्तर पर मुख्यतः तकनीकी सहायता सेवाएँ और विशेष सुविधाओं के रूप में दिया जाना चाहिए एवं सरकारी सहायता पर बहुत निर्भर नहीं होना चाहिए। कुछ उद्योगों के लिए आरक्षण, समुच्चयन (पूलिंग) व्यवस्था आदि के रूप में भी उपाय करना आवश्यक समझा जा सकता है। ग्रामीण उद्योग आयोग और राज्य मण्डल उन ग्रामीण उद्योगों तथा उनके उत्पादन के मदों को निर्धारित करें, जिनके सम्बन्ध में अनेक रूपों में, जिनमें उत्पादन के क्षेत्रों का आरक्षण समुच्चयन व्यवस्था आदि भी शामिल हैं, रक्षण तथा सहायता की आवश्यकता है एवं इनके सम्बन्ध में प्रस्तावना बनायें।

क्षेत्रीय अभिकरण

२९—विभिन्न क्षेत्रों में जिन ग्रामीण उद्योगों को विकसित करना है और उन विकास-कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए जिस क्षेत्रीय अभिकरण (एजेन्सी) को काम में लाना है उनके चुनाव के लिए व्यावहारिक दृष्टि अपनानी चाहिए। ग्रामीण उद्योग कार्यक्रम में सफलता का प्रयत्न उन ग्रामीण उद्योगों के विकास पर सकेन्द्रित करना चाहिए, जिनके एक निश्चित समय बाद वर्द्धनक्षम होने की समुचित सम्भावना हो। क्षेत्रीय अभिकरण कोई सहकारी समिति, कोई पंजीकृत संस्था, कोई निजी उपक्रमी या कारीगर कोई ग्राम पंचायत या कोई ऐसा स्वेच्छासेवी हो सकता है जो अच्छा काम कर दिखाये।

३०—ग्रामीण उद्योगों के उत्पादन की योजना ऐसी होनी चाहिए कि उसका उपभोग यथासम्भव उसी गाँव के भीतर या उसके आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों में हो जाय। स्थानीय उपभोग से यदि कुछ बच जाय तो उसकी बिक्री अन्य ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में पंजीकृत संस्थाओं या अन्य मान्यता प्राप्त क्षेत्रीय अभिकरणों द्वारा उनके बिक्री-भण्डारों की मारफत होनी चाहिए। जिन ग्रामीण उद्योगों के उत्पादकों को विदेश भेजा जा सके उन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

३१—वर्तमान भवनों और भण्डारों के कामों को पंजीकृत संस्थाओं और अन्य मान्यता प्राप्त क्षेत्रीय अभिकरणों के हाथ क्रमशः सौंप देने के लिए प्रभावशाली और अविलम्ब कदम उठाया जाना चाहिए।

३२—सहायता का मौजूदा ढाँचा अनेकरूपात्मक और उलझनपूर्ण हो चला है, इसलिए उसे अधिक सरल और अधिक कार्यक्षम तथा युक्तिसंगत बनाने की आवश्यकता है।

(अपूर्ण)

चेक-स्वायत्तता पर प्रहार

सर्व सेवा संघ, प्रधान कार्यालय तथा गांधी विद्या संस्थान, वाराणसी की दिनांक २२-८-'६८ की सम्मिलित सभा में चेकोस्लोवाकिया की स्थिति पर स्वीकृत प्रस्ताव

सर्व सेवा संघ के प्रधान कार्यालय और गांधी विद्या संस्थान की यह सम्मिलित सभा रूस द्वारा चेकोस्लोवाकिया की स्वाधीनता पर किये गये प्रहार को गलत मानती है और रूस के इस कार्य की निन्दा करती है।

हमारी यह मान्यता है कि दुनिया के छोटे-से-छोटे और बड़े-से-बड़े हर मुल्क को अपनी स्वायत्तता कायम रखने और अपनी विचार धारा के साथ जीने का अधिकार है और उसका किसी भी देश के द्वारा किसी प्रकार का अतिक्रमण नहीं होना चाहिए। रूस को चाहिए कि चेकोस्लोवाकिया से अपनी सेनाएँ तत्काल हटा ले।

चेकोस्लोवाकिया की जनता के साथ हम अपनी पूरी हमदर्दी जाहिर करते हैं और प्राप्त समाचारों के अनुसार इस हिंसक और विस्फोटक परिस्थिति में वहाँ की जनता ने दृढ़ता के साथ निःशस्त्र प्रतिकार का जो मार्ग अपनाया है उसका स्वागत करते हैं क्योंकि हम मानते हैं कि प्रतिकार का यही सही मार्ग है और इसी रास्ते दुनिया की समस्याओं का हल सम्भव है।

हमारा विश्वास है कि चेकोस्लोवाकिया की जनता द्वारा किये जा रहे इस प्रतिकार में संसार को एक नयी शक्ति का दर्शन होगा।

बिहार-दान की प्रगति

२ अक्तूबर '६८ तक सम्पूर्ण उत्तर-बिहारदान की सम्भावना
कार्यकर्ता और धन के अभाव के बावजूद तूफानी प्रगति
दक्षिण बिहार में भी प्रयत्न जारी

चंपारण : ग्रामदान-आन्दोलन के समाचार की दृष्टि से बिहार में चम्पारण की ही अभी प्रमुखता है। सिर्फ इसलिए नहीं कि बाबा वहाँ हैं, बल्कि इसलिए भी कि जहाँ पहले से कोई संगठन नहीं था और न कोई इस आन्दोलन की ओर ध्यान दे रहा था, वहाँ पूरे जिले का वातावरण ग्रामदानमय हो गया है। चंपारण पहुँचते ही बाबा ने कहा कि यह जिला उनके जीवन का अन्तिम संघर्ष क्षेत्र हो सकता है या 'वाटरलू' हो सकता है। विनोबाजी का चम्पारण 'वाटरलू' बने यह किसीको कैसे मंजूर होगा? अतः खादी, सर्वोदय एवं अन्य रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्तागण गाँव-गाँव में छा गये हैं। खादी की दुकानें बन्द कर दी गयी हैं। दरभंगा से करीब सौ कार्यकर्ता पहुँच गये हैं। सरकारी अधिकारी, विशेषकर प्रखंड विकास पदाधिकारी, अध्यापक, प्राध्यापक, मुखिया, विभिन्न राजनैतिक पक्षों के कुछ प्रतिष्ठित कार्यकर्ता एवं कई विशिष्ट नागरिक सक्रिय हो गये हैं। वर्षा, बाढ़ और बोआई के बावजूद विचार-प्रचार एवं ग्रामदान प्रपत्रों पर हस्ताक्षर हो रहे हैं। ३६ प्रखंडों में से १५ प्रखंडदान की प्राप्ति की सूचना मिल चुकी है। हौसला तो यह है कि शीघ्र ही जिलादान का काम अवश्य पूरा कर लिया जायगा।

मुजफ्फरपुर : ग्रामदान-आन्दोलन में मुजफ्फरपुर की अपनी गति है। आन्दोलन का उतार-भाटा यहाँ आता ही नहीं है। बराबर एक-सी लहर उठती रहती है। ध्वजा बाबू की तीव्रता और बेचैनी अपनी जगह पर है, किन्तु मुजफ्फरपुर चलेगा तो अपनी चाल से। मकसद पर पहुँचना है, जरूर पहुँचेंगे; किन्तु अगल-बगल की हवा से उद्वेलित नहीं होंगे, शायद ऐसा निर्णय है मुजफ्फरपुर का। ४० प्रखंडों में से ३३ का प्रखंडदान हो गया, बाकी ७ में काम लगा है। जिला के नेता कहते हैं, बाबा के जन्मदिवस तक मुजफ्फरपुर का जिलादान अवश्य संपन्न होना चाहिए। स्वाभाविक गति से काम पूरा हो गया तो अवश्य समर्पित होगा, मुजफ्फरपुर का जिलादान विनोबा-जयन्ती के अवसर पर।

सहरसा : बाबा ने कहा था, सहरसा का तो महर्षदान होना चाहिए। एकमात्र सूत्र जोरों से जून माह में काम लगा और १० प्रखंडदान प्राप्त हुए। फिर ज्वार के बाद भाटा आया। अर्थ के अभाव में कार्यकर्ता लगे नहीं रह सके। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ ने कुछ कार्यकर्ताओं के अलावा कुछ आर्थिक सहायता पहुँचायी है तो काम में गति आयी है। कृष्णराज भाई लिखते हैं कि सर्वश्री राजेन्द्र मिश्र, भूतपूर्व सभापति, बिहार प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी एवं महेन्द्र नारायण का पत्र उन्हें प्राप्त हुआ है कि ११ सितम्बर तक सहरसा का जिलादान प्राप्त हो जायगा।

सारण : "ग्रामदान हो सारण सारा" का नारा सारण में अभी भी गूँज रहा है। बाबा बलिया जाने की राह में और वहाँ से लौटने की राह में १५ दिनों तक सारण के विभिन्न सबडिविजनों में रहे। वातावरण काफी अनुकूल बना है। अब तक ८ प्रखंड दान हो गये और अभी ३२ प्रखंड बाकी हैं। सारण में कुछ बाहर की भी शक्ति लगे तो सम्भव है सारण का जिलादान २ अक्तूबर तक सम्पन्न हो जाय। इस तरह बिहार नहीं तो उत्तर बिहार का दान २ अक्तूबर तक हो सकता है। दरभंगा और पूर्णिया का जिलादान तो हो ही चुका है, तथा मुंगेर और भागलपुर में गंगा के उत्तर के प्रखंड भी प्रखंडदान में आ चुके हैं। उत्तर बिहार में कुल २४१ प्रखंड हैं, जिनमें से १६८ प्रखंडदान में आ चुके हैं।

जहाँ तक दक्षिण बिहार का प्रश्न है, दक्षिण बिहार में ३४६ प्रखंड हैं, जिनमें से सिर्फ २० प्रखंड प्रखंडदान में प्राप्त हुए हैं। पटना एवं राँची ऐसा जिला है, जहाँ एक भी प्रखंडदान नहीं हुआ है। पटना में तो श्री विद्यासागर भाई के नेतृत्व में सघन प्रयास चल भी रहा है, किन्तु सफलता नहीं मिल पा रही है।

मुंगेर : मुंगेर के दो सबडिविजन जो गंगा के उत्तर में हैं, ग्रामदान में आ चुके हैं। दक्षिण के दो सबडिविजनों में योजनापूर्वक काम चालू है। सर्वोदय मंडल, ग्रामदान प्राप्ति समिति, ग्राम-स्वराज्य संघ, पंचायत परिषद, भारत-सेवक-समाज एवं शिक्षक-संघ का सम्मिलित प्रयास जारी है। राजनैतिक पक्षों के कार्यकर्ताओं का भी सहयोग मिल रहा है। प्रयास है कि ११ सितम्बर तक मुंगेर का जिलादान अवश्य हो जाय।

भागलपुर : भागलपुर की प्रगति बहुत दिनों से रुकी हुई है। बिहारदान के संकल्प के पहले ही भागलपुर में प्रखंडदान की आश्चर्यजनक प्रगति हुई थी। अतः आशा यह थी कि बिहारदान के संकल्प के बाद निश्चय ही भागलपुर का बहुत पहले जिलादान सम्पन्न हो जायगा। किन्तु अभी जो प्रगति है उसमें २ अक्तूबर तक जिलादान पूरा होने की कोई आशा नहीं है।

गया, हजारीबाग, संथाल परगना, सिंहभूमि, धनबाद, पलामू एवं शाहाबाद में कार्यकर्ता सक्रिय हैं। छिटपुट प्रखंडदान भी हो रहे हैं। किन्तु आन्दोलन की समाँ इन जिलों में अभी नहीं बन पायी है।

मुख्य रूप से खादी-कार्यकर्ताओं एवं मुट्ठी भर सर्वोदय के कार्यकर्ताओं के द्वारा ही हस्ताक्षर-प्राप्ति-अभियान चल रहा है। शिक्षक, नेता, अधिकारी एवं पंचायतों के पदाधिकारी वातावरण अनुकूल बनाने में अवश्य सक्रिय हैं, जिसका लाभ यह हो रहा है कि पहुँचते पर सुगमता से हस्ताक्षर प्राप्त हो जाते हैं। एक प्रखंडदान में औसतन १०० गाँव होते हैं। जिनमें करीब १०० से लेकर २०० तक परिवार होते हैं। किसी-किसी गाँव में तो पाँच में एक हजार तक परिवार होते हैं। इन परिवारों के मुख्य व्यक्तियों से मिलना, उन्हें ग्रामदान का विचार समझाकर अनुकूल करना, तथा उनका हस्ताक्षर—

प्राप्त करना अपने मे कितना बडा काम है, यह अन्दाज लगाया जा सकता है। यदि विचार लोगो को मान्य है और सिर्फ हस्ताक्षर ही प्राप्त करना है तो भी गाँवो में अपने अपने काम मे बिखरे लोगो के पास पहुँचकर हस्ताक्षर प्राप्त करने मे ही काफी कार्यकर्ता एव समय की आवश्यकना होती है। फिर भी जिस तरह साधारण-से साधारण कार्यकर्ता वर्षा और बाढ की परवाह किये बिना इस काम मे जुटे हैं और सफलता प्राप्त कर रहे हैं यह विस्मयजनक निष्पत्ति प्रतीत होना है। यो तो बराबर अर्थ का अभाव खटकता ही रहा है किन्तु इस अवधि मे तो अर्थ का अभाव भी अपनी चरम सीमा पर है।

— कैलाश प्रसाद शर्मा
सहमत्री
बिहार ग्रामदान प्राप्ति समिति

गांधी जन्म-शताब्दी तक महाराष्ट्रदान का संकल्प

प्रदेशीय सर्वोदय सम्मेलन अभूतपूर्व उत्साह और आशातीत सफलता के साथ सम्पन्न

महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष श्री ठाकुरदास बग ने पत्र द्वारा सूचित किया है कि शिरडी मे आयोजित महाराष्ट्र सर्वोदय सम्मेलन में आगामी गाधी जन्म शताब्दी तक महाराष्ट्र के कार्यकर्ताओं ने महाराष्ट्र के सभी गाँवो को ग्रामदान मे लाने का सकल्प घोषित किया है। आपने अपने पत्र में लिखा है कि दिनाक ६ से १० अगस्त तक अहमदनगर जिले के शिरडी नामक स्थान पर महाराष्ट्र के लगभग १२५ कार्यकर्ताओं का एक अध्ययन शिविर श्री शकरराव देव के मार्गदर्शन मे चला। ११ अगस्त को रचनात्मक कार्यकर्ता सम्मेलन और १२ १३ अगस्त को महाराष्ट्र सर्वोदय सम्मेलन भी श्री जयप्रकाश नारायण की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में श्री जयप्रकाश नारायण के अलावा श्री नारायण देसाई सुश्री निर्मला देशपाडे श्री गोविंदराव देशपाडे का मार्गदर्शन मिला। इस अवसर पर अमरावती का जिलादान प्रखण्डदान और ५७,००० रुपये की थैली श्री जयप्रकाश नारायण को समर्पित की गयी। •

भूमि-समस्या और ग्रामदान

गांधीजी ने १९४५ में लिखा था :

'किसान याने भूमि जोतनेवाला चाहे वह भूमिधारी हो या भूमिहीन श्रमिक सर्वप्रथम आता है। वही भूमि का नमक अथवा प्राण है, अत उसका वास्तविक अधिकारी भी वही है न कि वह जो केवल मालिक है और जोतना नही। लेकिन अहिंसक पद्धति में भूमिहीन श्रमिक न जोतनेवाले मालिक की जबरन बेदखल नही करेगा। उसकी कार्य-पद्धति ही इस प्रकार की होगी कि जमीदार द्वारा उसका शोषण असम्भव हो जाय। इसमे किसानो के परस्पर निकटतम सहकार-सद्भाव की अनिवार्य आवश्यकता है। इसके लिए जहाँ भी जरूरत हो, विशेष सगठन या समितियाँ बनायी जायँ। हमारे ज्यादातर किसान बे पढे लिखे हैं। प्रौढों व स्कूल जाने लायक उम्र के नौजवानो को शिक्षित करना होगा। भूमिहीन श्रमिको का वेतन मान इतना तो ऊँचा उठना ही चाहिए जिससे कि वे एक सामान्य सुखप्रद जीवन बिता सकें। इसका अर्थ है कि उनको सतुलित आहार मिले रहने को मकान तथा पहनने को कपडे हो, और उनकी स्वास्थ्य सम्बधी आवश्यकताओ की पूर्ति हो सके।

आप इन करोडों किसान भाइयों को अपने पाँवों पर खडा होने के लिए समर्थ करने में क्या कर रहे हैं ?

ग्रामदान वह कार्यक्रम है, जिसके जरिए आप अहिसक पद्धति से यह कर सकते हैं।

सन् १९६९ गाधीजी की जन्म-शताब्दी का साल है।

आइए, हम सब तुरन्त इस काम में जुट जायं।

राष्ट्रीय गाधी जन्म शताब्दी समिति की गाधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति द्वारा प्रसारित

सर्वोदय-पर्व मनाने के लिए कुछ व्यावहारिक सुझाव

पिछले कई वर्षों से हम लोग ११ सितम्बर से २ अक्तूबर तक अर्थात् विनोबा-जयन्ती से गांधी-जयन्ती तक की अवधि सर्वोदय-पर्व के रूप में मनाते आये हैं। पू० विनोबाजी ने इस अवधि को 'शारदोपासना' का पर्व कहा है। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर विभिन्न प्रदेशों और स्थानों पर सर्वोदय-पर्व के अनेकविध आयोजन किये जाते हैं, जिसमें साहित्य-प्रचार और भूदान पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाने का कार्यक्रम मुख्य रूप से चलता है।

सर्वोदय-पर्व की इस अवधि में सर्वोदय-विचार को जन-प्रिय बनाने की दृष्टि से स्थानीय लोगों की रुचि, प्रवृत्ति और परिस्थितियों के अनुरूप कार्यक्रम उठाये जाते हैं।

इस वर्ष के सर्वोदय-पर्व के साथ गांधी-जन्म-शताब्दी-वर्ष भी शुरू हो रहा है। उस दृष्टि से कार्यक्रमों की दिशा के संकेत के तौर पर कुछ बातें :

सर्वोदय-पर्व और गांधी-जन्म-शताब्दी की अवधि में कार्यक्रम की रूपरेखा

- गांवों में पदयात्राओं द्वारा सर्वोदय तथा गांधी-साहित्य के प्रचार का आयोजन।
- शहरों में टोलियों द्वारा घर-घर पहुँचकर सर्वोदय-साहित्य और पत्रिकाओं के ग्राहक बनाना।
- स्कूल और कालेजों में अल्पकालीन प्रदर्शनी द्वारा साहित्य-बिक्री का आयोजन तथा पुस्तकालयों के लिए गांधी-साहित्य के सेटों की बिक्री करना।
- प्राथमिक और माध्यमिक पाठशालाओं तथा हाईस्कूलों में गांधी-विचार पर वक्तव्य या निबन्ध-स्पर्धाओं का आयोजन करके पुरस्कार के रूप में साहित्य दिलाने की योजना चलाना।
- गांधीजी के निजी सचिव स्व० श्री महादेव भाई की डायरी के ग्राहक बनाना।
- खादी-भण्डारों पर सर्वोदय-साहित्य और पत्रिकाओं को आकर्षक ढंग से सजाकर बिक्री के लिए प्रोत्साहन देना।
- रेलवे प्लेटफार्म और बस-स्टेशनों पर अस्थायी बिक्री का विशेष आयोजन।
- विभिन्न रुचि के पाठकों को ध्यान में रखकर तैयार किये गये साहित्य के सेटों का प्रचार और बिक्री करना।
- कारखानों एवं औद्योगिक बस्तियों में पर्व की अवधि में साहित्य-प्रदर्शनी और विशेष बिक्री का आयोजन करना।
- व्याख्यान-मालाओं और विचार-गोष्ठियों के द्वारा सर्वोदय तथा गांधी-विचार पर सहचिन्तन और उपयुक्त साहित्य का परिचय देना।
- शहरों, कस्बा तथा सार्वजनिक स्थानों पर छोटी-बड़ी साहित्य-प्रदर्शनियों का आयोजन तथा पोस्टरों द्वारा प्रचार।
- सर्वोदय-साहित्य की जानकारी देनेवाली छोटी पर्चियाँ, फोल्डर्स, और सूचीपत्र वितरित करना।
- स्थानीय समाचार-पत्रों के सहयोग से सर्वोदय-पर्व और गांधी-जन्म-शताब्दी के प्रसंग पर विशिष्ट पुस्तकों की समीक्षाएँ और विज्ञापन प्रकाशित कराना।

आशा है, उक्त कार्यक्रमों के संदर्भ में जगह-जगह सघन रूप से आयोजन किये जायेंगे और सर्वोदय-साहित्य तथा गांधी-साहित्य का अधिकाधिक प्रचार जनता में हो सकेगा।

कुछ प्रतिनिधि पुस्तकें

गांधी-साहित्य

पुस्तक	लेखक	मूल्य
महादेवभाई की डायरी (गांधीजी के साथ पचीस वर्ष) खण्ड १ से ५, प्रत्येक :		८-००
शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति	गांधीजी	१-००
गांधीजी के संस्मरण	शान्ति कुमार	२-५०
	सजिल्द	३-५०
युग-पुरुष गांधी	रा० ना० उपाध्याय	१-००
अफ्रीका में गांधी	जो० जे० डोक	१-००
प्यारे बापू	एलेनी मेमियो	१-००
गांधीजी और विश्वशान्ति	देवदत्त शर्मा	०-६०
गांधी पुण्य-स्मरण	दादा धर्माधिकारी	०-४०
गांधी (एक राजनैतिक अध्ययन)	आचार्य कृपालानी	०-३०
गांधीजी क्या चाहते थे ?	निर्मल कुमार बसु	०-३०
विश्वात्मा महात्मा (नृत्य नाटिका)	नारायण देसाई	०-६०
बापू के जीवन में प्रेम और श्रद्धा	मनुबहन गांधी	०-३५
गांधी : एक सामाजिक क्रान्तिकारी	क्लिफर्ड मैनशर्ट	०-३७

विनोबा साहित्य

धर्म अध्यात्म

- गीता प्रवचन (हिन्दी) २.५०, सजिल्द ३.००
- स्थितप्रज्ञ दर्शन १.२५
- ईशावास्यवृत्ति ०.३०
- आत्मज्ञान और विज्ञान (प्रेस में)
- शुचिता से आत्मदर्शन ०.४०
- सम पंक्तियाँ ०.७५
- ज्ञानदेव-चिन्तनिका १.२५
- उपनिषदों का अध्ययन १.००
- रूहुल कुरान (अरबी) १२.००
- रूहुल कुरान (उर्दू) (प्रेस में)
- रूहुल कुरान (उर्दू भाषा नागरी लिपि) ४.००
- कुरान सार (हिन्दी अनुवाद मूल अरबी नागरी लिपि में) ६.००
- द एसेंस ऑफ कुरान (अंग्रेजी) ४.००
- भागवत धर्म सार १.५०
- नामघोषा सार १.५०
- जपुजी १.२५
- रामनाम (एक चिन्तन) ०.६०
- प्रेरणा प्रवाह (प्रेस में) २.००

समाज शास्त्र

- सर्वोदय विचार और स्वराज्य शास्त्र १.२५
- शिक्षण विचार २.५०
- लोकनीति २.००
- स्त्री शक्ति १.५०
- मोहब्बत का पैगाम २.५०
- साहित्यिकों से १.००
- खादी विचार ४.००
- व्यापारियों से ०.७५
- भाषा का प्रश्न
- संयम और सन्तति ०.३५
- भाव-युग १.०
- सर्वोदय और साम्यवाद (संशोधित) २.००
- ग्रामदान ग्रामस्वराज्य
- सुलभ ग्रामदान (नया संस्करण) १.०
- शांति सेना २.००
- ग्रामाभिमुख खादी १.२५
- ग्रामदान प्रश्नोत्तरी ०.७५
- ग्राम पंचायत ०.७५
- एक बनो नेक बनो ०.५०
- ग्राम पंचायत और ग्रामदान ०.३५
- कार्यकर्ता क्या करें? १.४५
- सर्वोदय-पात्र ०.४०
- जय जगत् ०.५०
- मधुकर १.००
- शान्ति-दर्शन २.००
- जीवन दृष्टि ०.५० १.२५

कृपया ध्यान रखें

इस पत्र में बिके साहित्य की रकम और बचा हुआ साहित्य ३१ अक्तूबर १९६८ तक या देर से देर में १५ नवम्बर १९६८ तक वापस कर दें। पत्र के प्रसंग पर उधार-साहित्य हम उन्हीं को दे सकेंगे जिनका पिछला हिसाब साफ है अतः आपके नाम यदि संस्था की कोई रकम देय है तो उसे भी भिजवा दीजिये। जिनका चालू लेन-देन सर्व सेवा संघ प्रकाशन से नहीं है वे लोग रकम अग्रिम भेजकर अथवा वी० पी० या बैंक द्वारा साहित्य की बिल्टी मंगाकर साहित्य प्राप्त कर सकते हैं।

सर्व सेवा संघ के प्रकाशनों की बिक्री पर हम सामान्यतया २५ प्रतिशत कमीशन देते हैं। इसके अतिरिक्त ५ प्रतिशत नकद छूट देते हैं लेकिन सर्वोदय पर्व के अवसर पर ५ प्रतिशत अतिरिक्त कमीशन भी दिया जायगा। पर्व के प्रसंग पर मंगाये गये साहित्य का हिसाब साफ कर देनेवाले ग्राहकों को नकद छूट और पर्व कमीशन दोनों प्राप्त हो सकेगा। देर से आनेवाली रकम पर नकद छूट देना संभव नहीं होगा इसलिए समय से ही बिक्री की रकम भिजवा दी जाय।

एक बार में एक सौ रुपया से अधिक का साहित्य आपके निकटतम स्टेशन तक फ्री डिलीवरी से भेजा जायगा। इससे कम का साहित्य मंगाने पर पैकिंग पोस्टेज और रेल-महसूल ग्राहक को देना होगा।

पर्व के दौरान मंगाया गया जो साहित्य आप वापस करना चाहें वह काशी रेलवे स्टेशन के लिए बुक करा दें। वापस भेजे गये साहित्य के आने और जाने का रेल महसूल आपको वहन करना होगा अतः उतना ही साहित्य मंगाइये जितने की बिक्री आप कर सकेंगे।

—दत्तोबा दास्ताने संचालक सर्व सेवा संघ प्रकाशन राजघाट वाराणसी—१

चम्पारण (बिहार) के कुछ प्रखण्डदान

प्राप्ति के आँकड़े

विवरण / प्रखण्ड	चनपटिया	चिरैया	मेहसी	ढाका	पकड़ीदयाल	मझौलिया
कुल पंचायत	१९	१८	१३	२२	१७	२५
कुल जनसंख्या	११२०६८	६५५४७	५५८५४	६१४०१	६६३३७	११००००
ग्रामदान में शामिल	८१२२५	७३६६०	४४५५८	६१५०७	५८०८२	८२३८८
प्रतिशत	७ %	७७%	७८%	७६.४%	८७.८%	७६%
कुल भूमि काश्त में	४०६१८.८१	३९६७५	२६७२८.५७	३८६११	३८८२५	५६४३१.१०
ग्रामदान में शामिल	२२४८०.००	२८५१५	१७६००.००	२२०६१	१९१७१	२६६३६.६१
प्रतिशत	५२.०३%	६३%	६०%	५७.२%	५६.१%	४३%
अभियान संयोजक भाग श्री	देवचन्द्र अमन	रामाशीष सिंह	धर्मेन्द्र किशोर	विश्वनाथ सिंह	रामचन्द्र शर्मा	शिलाकान्त मिश्र

रूस ने इतिहास को पीछे ढकेला है

लेकिन सैन्यबल से मानव की शक्ति कुचली नहीं जा सकती

दुर्बल और छोटे देशों को स्वाधीनता की सुरक्षा के नये उपाय खोजने होंगे

चेकोस्लोवाकिया की घटना पर जयप्रकाश नारायण का वक्तव्य

यह अत्यन्त दुःख और उत्कट प्रार्थना का समय है। फिर एक बार न्याय पर बल ने विजय पायी है, और जंगल की नीति हावी हो रही है। रूस ने मानव-सभ्यता की सारी प्रतिष्ठा और शील पर पानी फेर दिया है।

हमारे प्रधान मंत्री और कांग्रेस प्रवक्ताओं ने हृदय की दुर्बलता दिखाई है। कल लोकसभा के अध्यक्ष इस देश के वासियों की भावना को करीब-करीब प्रकट कर सके। आज संसद को रूसी आक्रमण की स्पष्ट शब्दों में निन्दा करनी चाहिए और चेकोस्लोवाकिया की जनता के प्रति तथा वास्तविक चेक नेताओं के प्रति—जो रूसी हिरासत में हैं, अपनी गहरी सहानुभूति और नैतिक समर्थन व्यक्त करना चाहिए।

रूस की कार्रवाई ने इतिहास को चौथाई शताब्दी पीछे ढकेल दिया है। विश्व-शांति तथा छोटे, दुर्बल और विकासशील राष्ट्रों की सुरक्षा गंभीर संकट में पड़ गयी है। इस घटना से एक बार फिर बड़ी शक्तियों को नियंत्रित करने में संयुक्त राष्ट्रसंघ की असमर्थता जाहिर कर दी है। वियतनाम में अमेरिका, तिब्बत में चीन, चेकोस्लोवाकिया में रूस, इस बात का संकेत दे रहे हैं कि राष्ट्रों की सुरक्षा और स्वाधीनता के तथा मानव-स्वातंत्र्य के संरक्षण के अधिक सुनिश्चित उपाय खोजने की आवश्यकता है।

चेक जनता ने जिस बहादुरी और समझदारी के साथ अपने शस्त्र-प्रतिकार का नमूना पेश किया है, वह एक सांकेतिक-सी घटना है। टैंक और हवाई जहाज निःशस्त्र प्रतिकार के सामने बेकार हैं। मनुष्य की आत्मा को कोई भी सैनिक आक्रमण नहीं कुचल सकता और इसमें कोई शक नहीं कि अंत में बात चेकोस्लोवाकिया की ही रहेगी, भले ही उसमें कितना भी समय लगे।

रूस की इस कार्रवाई ने स्वयं साम्यवाद को भी गहरा धक्का पहुँचाया है। पिछले दिनों स्टालिन-युग की बर्बरता उत्तरोत्तर छूटती जा रही थी। साम्यवाद मानवीय बनता जा रहा था, जिसके उत्कृष्ट उदाहरण श्री दुबचेक और उनके साथी रहे हैं। परन्तु रूसी साम्यवाद ने फिर एक बार अपने जहरीले दाँत दिखाये हैं।

विश्व साम्यवाद के लिए अन्धकार की इस घड़ी में यूगोस्लाविया, रूमानिया और इटली तथा फ्रांस की कम्युनिस्ट पार्टियाँ आशा की किरण हैं। यह स्पष्ट कहना कठिन है कि यह भी उत्तरोत्तर बढ़ते इस अन्धकार में विलीन हो जायेंगी या उस अन्धकार को मिटाकर विजयी होंगी।

भारत के साम्यवादियों ने अभी तक कुछ भी स्पष्ट नहीं कहा है। वे इस अवसर पर जो रुख लेंगे उस पर इस देश में उनका भाग्य निर्भर करेगा। इस देश की जनता ने स्वतंत्रता इसलिए प्राप्त नहीं की है कि विचार के नाम पर किसी दूसरे साम्राज्यवाद के अधीन हो जायँ।

रूस ने अपने इस विश्वासघाती कृत्य के समर्थन में जो भी दलीलें दी हैं, वे सब सरासर झूठी हैं और दुनिया में कोई भी इन पर विश्वास करने की नादानी नहीं करेगा, यहाँ तक कि उसके साम्राज्य के अन्दर जिनका दिमाग बन्दी हो चुका है, वे भी नहीं करेंगे। अगर आज उस साम्राज्य पर रूसी साम्यवादी प्रभुत्व नग्न पशुबल और झूठ के अम्बार के बल पर टिकाया जा सकता है तो स्पष्ट है कि उस प्रभुत्व की बुनियादें बिलकुल निकम्मी हैं।

भारत को चेकोस्लोवाकिया की इस घटना से महत्वपूर्ण सबक लेना है। हम भारतवासी लम्बे अरसे से बड़े राष्ट्रों की उदारता पर निर्भर रहते आये हैं। इससे हमारा आत्मसम्मान घटा है और हमारी आजादी खतरे में पड़ी है। अब हमें अपने पैरों पर खड़े होने का निश्चय करना चाहिए। इसके लिए अब हमें आपसी झगड़ों में अपने समय और शक्ति का अपव्यय नहीं होने देना चाहिए और अपने भेद-भाव मिटाकर हममें से हरेक को देश के लिए अपनी पूरी शक्ति लगाने का संकल्प करना चाहिए और उस दिशा में पूरी मेहनत से काम करना चाहिए। यह एक गंभीर समय है, जो देश की एकता और समर्थन का आवाहन कर रहा है।

मद्रास २२-८-'६८

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ४९

सोमवार ९ सितम्बर, '६८

अन्य पृष्ठों पर

आवश्यक सूचना

आगामी २ अक्तूबर '६८ : गांधी जयंती के अवसर पर 'भूदान-यज्ञ' का विशेषांक प्रकाशित होगा। इसलिए १६ सितम्बर के अंक के बाद २३ और ३० सितम्बर के अंक बन्द रहेंगे। दोनों का मिला जुला विशेषांक २ अक्तूबर के अवसर पर प्रकाशित होगा। —सं०

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन : ४२८५

प्रतिक्षण विकासशील व्यक्तित्व

प्रसिद्धि की जिनको कभी परवाह नहीं थी उनको पूज्य गांधीजी के सत्याग्रह ने असाधारण प्रसिद्धि दे दी। यह प्रसिद्धि मिल गयी तो उससे भी जल-कमलवत् निर्लिप्त रहने की शक्ति जितनी श्री विनोबा की है उतनी और किसी की नहीं है। जिन विशेषताओं के लिए पूज्य गांधीजी ने उन्हें प्रथम सत्याग्रही की हैसियत से पसंद किया उन विशेषताओं को सब लोग समझ नहीं सके हैं ऐसी मुझे आशंका है। कई बड़े-बड़े सरकारी अफसरों ने मुझसे कहा कि जवाहरलालजी, भूलाभाई तो बड़े नेता हैं, उनको बड़ी सजा देनी पड़ती है क्योंकि उनका प्रभाव हजारों लोगों पर है। विनोबा तो 'स्माल फ्राई' यानी अल्प जीव हैं। उनको गांधी ने बढ़ाया है, उनके असर का सरकार को डर नहीं है। डर हो या न हो मि० एमरी ने भी जब श्री विनोबा का नाम अपने निवेदन में दिया और उनका एक सच्चे दयाधर्मी के नाम से उल्लेख किया है।

विनोबा का प्रभाव आज नहीं, वर्षों के बाद लोग जानेंगे। उनकी थोड़ी विशेषताओं का निर्देश करना मैं आवश्यक समझता हूँ। वे नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं, शायद वैसे नैष्ठिक ब्रह्मचारी और भी होंगे। वे प्रखर विद्वान् हैं, वैसे प्रखर विद्वान् और भी हैं। उन्होंने सादगी को वरण किया है, उनसे भी अधिक सादगी से रहने वाले गांधीजी के अनुयायियों में कई हैं। वे रचनात्मक कार्य के महान् पुरस्कर्ता और दिन रात उसी में लगे रहने वाले व्यक्ति हैं, ऐसे भी कुछ गांधी-मार्गानुगामी हैं। उनके जैसी तेजस्वी बुद्धि-शक्तिवाले भी कई हैं। परन्तु उनमें कुछ और भी चीजें हैं जो और किसी में नहीं हैं। एक निश्चय किया, एक तत्त्व ग्रहण किया तो उसका उसी क्षण से अमल करना—उनका प्रथम पंक्ति का गुण है। उनका दूसरा गुण निरंतर विकासशीलता का है। शायद ही हममें से कोई ऐसा हो जो कह सके कि मैं प्रतिक्षण विकास कर रहा हूँ। बापू को छोड़कर यदि और किसी में यह गुण मैंने देखा है तो विनोबा में। इसलिए ४६ साल की उम्र में उन्होंने अरबी-जैसी कठिन भाषा का अभ्यास किया, कुरान शरीफ का अनुष्ठान किया और उनके हाफ़िज बन गये हैं। बापू के कई बड़े अनुयायी ऐसे हैं जिनका प्रभाव जनता पर बहुत पड़ता है, पर बापू के शायद ही किसी अनुयायी ने सत्य अहिंसा के पुजारी और कार्य-रत सच्चे सेवक उतने पैदा किये हों जितने कि विनोबा ने पैदा किये हैं। "योग कर्मसु कौशलम्" के अर्थ में विनोबा सच्चे योगी हैं। उनके विचार, वाणी और आचार में जैसा एक राग है वैसा एक राग बहुत कम लोगों में होगा, इसलिए उनका जीवन एक मधुर संगीतमय है। "संचार करो सकल कर्मे शान्त तोमार छंद" कविवर टैगोर की यह प्रार्थना शायद विनोबा पूर्व जन्म से करते आये हैं। ऐसे अनुयायी से गांधीजी और उनके सत्याग्रह की भी शोभा है।

—महादेव देसाई

सेवाग्राम . २१-११-४०

व्रत, जीवन, समाज और स्नेह

[आगामी १० सितम्बर को धीरेन्द्र भाई का जन्म दिन पड़ता है, और ११ को विनोबा का। इस अवसर पर हम धीरेन्द्र भाई की निराली गप्पशैली की गोष्ठी का एक अंश प्रस्तुत कर रहे हैं, जो विनोबा के साथ नादक मिलन की फलश्रुति है।—सं०]

विनोबा (धीरेनदा से): अन्नोत्पादन और ब्रह्मचर्य दोनों दृष्टियों से खुली हवा में काम करना अच्छा है। एकादशव्रत 'गाइड-लाइन्स' है। व्रत स्वेच्छा से ले, तो वे जकड़ते नहीं, बंधनकारी नहीं होते। गृहस्थ होकर भी ब्रह्मचर्य की दिशा में जा सकते हैं। व्रत 'पोलस्टार' की तरह मार्गनिर्देश करते हैं। सूर्यनारायण का तापमान ९८ डिग्री रहे तो हमारे शरीर ठंडे होकर समाप्त हो जायेंगे। हममें सूरज की तीव्रता हो तब समाज में ९८° उष्णता रहेगी।

धीरेन्द्र भाई : विनोबा
क्रान्तिचरण : युगचरण

धीरेन्द्र भाई ऋषि हैं। कमर टूटी है, फिर भी रात-दिन लोगों को समझाते हैं। वे कहते हैं कि उनका बुनियादी धंधा "गप्प" है। अरसठ साल उम्र हो रही है। फिर भी जगह-जगह जाते हैं, कितना काम करते हैं; यह सबके लिए मिशाल है। —विनोबा

रक्सौल : २१ अगस्त '६८

अध्यात्म, नीति, तुलनात्मक समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र के आधुनिक प्रमेय—सब मिलकर जीवनशास्त्र बनता है। हर हफ्ते बापू की प्रश्नोत्तरी छपती थी। मैं प्रश्न पढ़ा करता था, बापू के उत्तर नहीं। मैं उत्तर मन में सोचता, मानो वही प्रश्न मुझसे किया गया हो। बाद में बापू का उत्तर पढ़ता था, दोनों मिलाता था। इससे मेरा लाभ होता था। बापू यद्यपि पर्याप्त अध्ययन नहीं करते थे, फिर भी हर हफ्ते लेख लिखते थे, यह मैं उनसे कहता था।

धीरेनदा : वे पढ़ने से 'डिस्करेज' करते थे, "काम करो" कहते थे।

विनोबा : इससे बुद्धि कुंठित होगी, और समाज को प्रेरणा नहीं दे सकेंगे। आठ घंटे श्रम करके बुद्धि जड़ बन जाती है, पढ़ नहीं पाते, नींद आती है। अध्ययन और लोकसेवा नहीं हो पाती। काम चार घंटे हो, चार घंटे अध्ययन, और एक-दो घंटे समाज से सम्बन्ध रखने के लिए घूमें, लोगों को समझायें।

अन्नोत्पादन, ब्रह्मचर्य आदि व्रतों का पालन, अध्ययन—तीनों बातें आवश्यक हैं। आपके जैसे समाजसहयोगी छोटे आश्रम हर गाँव में रहें। कुछ आश्रम 'ब्रह्म-विद्या-मंदिर' की तरह 'लेबोरेटरी' के अन्दर प्रयोग करें, जिससे नया दर्शन हो सके, वरना नयी खोज नहीं होगी। ब्रह्मविद्या मंदिर समाज-अभिमुख होकर भी अलिप्त रहेगा।

ब्रह्मविद्या मंदिर में चित्तशुद्धि ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि चित्तशुद्धि के ऊपर अतिमानस, चित्त से अलग होना है वहाँ।

धीरेनदा : आप जानते हैं, मैंने जीवन में एक भी किताब नहीं पढ़ी। गाँधी ने कहा, 'स्कूल छोड़ो'। मैंने कहा, 'पढ़ाई छोड़ो'। (बाबा हँसे)

विनोबा : (नामदेव के अभंग गाते हुए) 'तू कृष्ण, मैं रुक्मिणी हूँ' यह कहने में कितना बड़ा अधिकार है। नामदेव वर माँगते हैं, कि 'सब घटों में मैं तुझे देखूँ। क्या मैंने ज्यादा माँग लिया? प्रेमभरी वाणी से भगवान से पूछते हैं। 'मान-सम्मान के लिए घृणा हो, कोई अपमान करे तो मुझे उल्लास आये, निरंतर तेरा ध्यान रहे। मेरी कीर्ति निवृत्ति, तृप्ति तू ही तू है, विठ्ठल। ठीक है, झूठमूठ गाता हूँ, फिर भी तेरा नाम ही तो गाता हूँ। नाम पर मेरा विश्वास सत्य है। हृदय में माधव था तो पाण्डवों को आग ने नहीं जलाया, लंका में हनुमान को, गोकुल को, प्रह्लाद को, सीता को—माधव के स्मरण से संसार रूपी अग्नि की बाधा नहीं छुयेगी। जीव विठ्ठल, आत्मा विठ्ठल, परमात्मा विठ्ठल, विठ्ठल। सर्वत्र श्यामरंग दीखता है। तेरा नाम सुन्दर, रूप सुन्दर, तेरा प्रेम उससे भी सुन्दर है।'

हमारे घर में सब कुछ है, प्रेम की कमी है। प्रेम तो बहुत दीखता है, पर स्वच्छ-निर्मल नहीं। उसमें वासना है, अहंकार है। *मैं इन दिनों प्रेम की बहुत जरूरत महसूस* करता हूँ। दुनिया में प्रेम बहुत है, मगर खालिस नहीं। भोगवासना, आसक्ति, अहंकार इन 'डेडली प्वायजन' (मारक विष) से प्रेम मिश्रित है। ऐसा प्रेम तारक होने के बजाय मारक है, डुबोनेवाला है। महाराष्ट्र के पाँच प्रमुख संतों में नामदेव में प्रेम की महिमा सबसे अधिक है।

प्रस्तुतकर्ता: जगदीश थवानी

'टेन कमेन्डमेंट्स'

चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग नगर में सोवियत दलबलों से पूर्ण निःशस्त्र प्रतिकार के लिए जगह-जगह लगाये गये 'पोस्टर्स' में लिखित 'टेन कमेन्डमेंट्स':

- *हमने कुछ नहीं सीखा है!*
- *हम कुछ नहीं जानते!*
- *हमारे पास कुछ नहीं है!*
- *हम कुछ नहीं देते!*
- *हम कुछ नहीं बेचते!*
- *हम मदद नहीं करते!*
- *हम धोखा नहीं देते!*

(खूब बड़े अक्षरों में)

- हम कुछ भी भूलेंगे नहीं!

तानाशाही

पार्टी के अन्दर नेतृत्व के जो आलोचक हों उन्हें खत्म करो। देश में पार्टी के जो आलोचक हों उन्हें खत्म करो। दुनिया में देश के जो आलोचक हों उन्हें खत्म करो।

किसलिए खत्म करो? कम्युनिस्ट कहेगा सर्वहारा की तानाशाही के लिए। फासिस्ट कहेगा देश और उसकी संस्कृति के लिए।

खत्म करने में दोनों को समान रूप से विश्वास है। स्वतंत्र बुद्धि में दोनों को खतरा ही खतरा दिखाई देता है। कम्युनिस्ट को डर है कि स्वतंत्र बुद्धि के नाम में पूंजीवाद लौट आयेगा, फासिस्ट को डर है कि मनुष्य राष्ट्रवाद के घरौंदे से निकलकर विश्ववादी हो जायेगा।

मनुष्य की निष्ठा और नियत में दोनों को अविश्वास है। इसलिए दोनों मनुष्य को तलवार का भय दिखाकर सही रास्ते पर रखना चाहते हैं। सही रास्ता कौन तय करेगा? कम्युनिस्ट और फासिस्ट तानाशाह स्वयं तय करेंगे। दूसरों को वही सही मानना पड़ेगा जो उन्हें सही लगता है।

कम्युनिस्ट को भय है फासिस्ट के राष्ट्रवाद से, और फासिस्ट को डर है साम्यवाद के श्रमिकवाद से।

चेकोस्लोवाकिया के झगड़े में रूस ने एक बार फिर साफ-साफ जाहिर कर दिया है कि उसके लोकतंत्र का आधार सर्वहारा की तानाशाही ही है। इसमें ढिलाई करने के लिए वह तैयार नहीं है। उसका यह मानना है कि इस तानाशाही की शक्ति से ही प्रतिक्रियावाद और पूंजीवाद का सिर, जो समय समय पर उठने की कोशिश करता है, कुचला जा सकता है, और उनके प्रहारों से समाजवाद की रक्षा की जा सकती है। दुनिया समझ गयी कि चाहे जिसकी हो तानाशाही तानाशाही है। साम्यवाद को बन्दूक से अलग करने की हर कोशिश भी रूस को स्वीकार नहीं है, क्योंकि उसे विचार की शक्ति में भरोसा नहीं है। क्रान्ति बन्दूक की नली से निकलती है, इस विश्वास में रूस और चीन एक हैं। रूस और चीन की प्रतिद्वंद्विता मूल सिद्धान्तों में नहीं है, साम्राज्यवादी-साम्यवादी विस्तारवादी राष्ट्र हित में है।

लेकिन रूस का साम्यवाद हो या चीन का, दोनों के फैलाव में सबसे बड़ी रुकावट है मार्क्सवादी राष्ट्रों की अपनी राष्ट्रीयता। अभी कोई ऐसा नमूना नहीं है, न भविष्य में गुंजाइश ही दिखाई देती है, जिसमें कोई देश राष्ट्रीयता को छोड़कर साम्यवाद को स्वीकार करे। इसलिए रूस जैसे साम्यवाद के मातृदेश को भी मित्र देश की राष्ट्रीयता आँख की किरकिरी बन जाती है। यही कारण है कि रूस की ओर से इस बात का खूब प्रचार किया जा रहा है कि साम्यवाद की प्रेरणा राष्ट्रीयता में नहीं, सर्वहारा की अन्तरराष्ट्रीयता (प्रालितेरियन इंटरनेशनलिज्म) में है। राष्ट्रीय स्वतंत्रता के नाम में मार्क्स-लेनिन के सिद्धान्तों से च्युत होना क्षम्य नहीं हो सकता।

इसी संदर्भ में यह भी कहा जा रहा है कि रूस की कम्युनिस्ट पार्टी अग्रणी है, उसके अनुभव और नेतृत्व की यह कहकर उपेक्षा नहीं की जा सकती कि रूस दूसरा देश है। सर्वहारा की अन्तरराष्ट्रीयता के बिना सर्वहारा की विश्व क्रान्ति संभव नहीं है। इसी सिद्धान्त के नाम में भारत के कुछ साम्यवादी मित्रों ने रूस की सैनिक कारवाई का समर्थन किया है। उनका कहना है कि साम्यवाद के दोनों सिद्धान्त समान महत्व के हैं—वर्ग-संघर्ष और सर्वहारा की तानाशाही। दोनों को मिलाकर साम्यवादी क्रान्ति की व्यूह रचना पूरी होती है।

कुछ दूसरे साम्यवादी मित्रों का, जो रूस की कारवाई का समर्थन नहीं कर रहे हैं, कहना है कि भले ही चेकोस्लोवाकिया को अपने भीतर के दोषों को दूर करने की छूट हो, लेकिन समाजवाद विरोधी तत्वों को समाप्त करने की दृष्टि से उसे सर्वहारा की तानाशाही की शक्ति भरपूर बनाये रखनी चाहिए। उसके बिना वह समाजवाद को कायम नहीं रख सकेगा।

यही तो मुख्य प्रश्न है। साम्यवादी समाजवाद के लिए मांग है तानाशाही की। चेकोस्लोवाकिया की मांग है कि रूस की तानाशाही चेकोस्लोवाकिया पर न हो, और चेक कम्युनिस्ट पार्टी की तानाशाही चेक जनता पर न हो। रूस कहता है कि यह मांग प्रतिक्रियावादी राष्ट्रीयता के कारण है। दुबचेक और उसके साथी कहते हैं कि राष्ट्र की परिस्थिति और प्रतिभा से अलग समाजवाद का स्वरूप क्या होगा?

रूस और उसके मित्रों ने जो कुछ किया है उससे साम्यवाद को गहरा आघात लगा है। आजतक साम्यवाद वर्ग-संघर्ष और सर्वहारा की तानाशाही के दो तत्वों पर खड़ा था। अब रूस ने तीसरा जोड़ा है—रूस का प्रभुत्व। इस तीसरे के कारण साम्यवाद की एकता नहीं कायम रह सकती।

इस बुराई में एक अच्छाई भी निकली है। मनुष्य अपने में स्वतंत्र मूल्य है, शायद यह तत्त्व अब साम्यवाद में दाखिल हो। लेकिन दूसरी ओर यह भी हो सकता है कि जो मनुष्य राष्ट्रवाद से धीरे धीरे ऊपर उठकर विश्व परिवार की भावना की ओर बढ़ रहा था, वह फिर विदेश प्रभुत्व के भय के कारण अपने राष्ट्र के तंग घरौंदे में बन्द होने को मजबूर हो जाय। कहाँ मार्क्स की कल्पना और कहाँ रूस के हाथों साम्यवाद की यह गति? स्वयं मार्क्स की साम्यवाद से रक्षा करनेवाली कोई नयी शक्ति चाहिए।

वह शक्ति क्या होगी? स्वतंत्रता की तो होगी ही, साम्य की भी अवश्य होगी। किन्तु उस नयी स्वतंत्र, साम्यनिष्ठ लोकशक्ति का उदय राज्य की शक्ति का क्रमशः लोप हुए बिना कैसे संभव होगा? उस शक्ति के विकास में अन्तरराष्ट्रीयता बन्दूक की नहीं होगी, जनता के स्तर पर मूल मानव-हृदय की होगी। लेकिन तानाशाही तो मानव हृदय को ही समाप्त करने पर उतारू है। अगर हृदय ही न रहा तो 'जय जगत' किस बात का? हृदय के समाप्त हो जाने पर ये सब सिद्धान्त कोरे नाम रह जायेंगे बर्बरता के विभिन्न स्वरूपों के। •

विनोबा-जयन्ती के अवसर पर विशेष लेख

क्रांतिपथ के प्रकाश-स्तम्भ :

मार्क्स, गांधी और विनोबा

कई वर्ष हुए फिनलैंड का एक युवक खादीग्राम आया था। दर्शन-शास्त्र का विद्यार्थी था। गांधी-विचार का अध्ययन करने भारत आया था। खादीग्राम में एक दिन चर्चा "शासन-मुक्त समाज" पर चल पड़ी। मैंने काफी देर तक उसे गांधी-विचार के सदर्भ में शासन-मुक्ति की बात समझाने की कोशिश की, लेकिन किसी भी तरह शासन से मुक्ति उसके गले के नीचे नहीं उतर सकी। वह बराबर यही कहता रहा कि राज्य (स्टेट) से ही मनुष्य का कल्याण है। अन्त में कहते-कहते वह यहाँ तक कह गया : "मेरी समझ में आप लोगों ने शासन-मुक्ति को इसलिए सिद्धान्त बना रखा है क्योंकि आपकी सरकार इतनी निकम्मी और भ्रष्ट है। हमारे देश में राज्य (स्टेट) का अर्थ है हर व्यक्ति को रोज 'दो सेर दूध'।"

राज्य यानी दो सेर दूध ! जब इसने यहाँ तक कह दिया तो उसके आगे मैं क्या कहता ? जिन लोगों के जीवन में राज्य रोज दूध के रूप में प्रकट होता हो उनको कैसे समझाया जाय कि शासन-मुक्ति का अर्थ है दूध छोड़े बिना मनुष्य की मुक्ति। क्योंकि वे फौरन कह पड़ेंगे कि राज्य नहीं रहेगा तो भूख से, बेकारी से, आपसी हिंसा और बाहरी आक्रमण से सुरक्षित रखनेवाली दूसरी कौन-सी शक्ति होगी ? रोज-रोज के अनुभव से ऊपर उठकर सोचना कठिन होता है।

राज्य का संरक्षण : समाज का अस्तित्व

जो लोग राज्य के बारे में ऐसी धारणा रखते हैं उनका सोचना बहुत गलत भी नहीं है। हम यह नहीं कह सकते कि उनका भय निराधार है। अगर मनुष्य के हजारों वर्षों के इतिहास से राज्य को निकाल दिया जाय तो यह कहना कठिन होगा कि राज्य से मिलनेवाले संरक्षण के बिना समाज का क्या हाल होता ? क्या समाज-जैसी कोई चीज भी बन पाती ? आज के जमाने में तो राज्य कल्याण की शक्ति बनकर इस तरह व्याप्त है कि लगता ही नहीं कि उससे अलग किसी चीज का अस्तित्व भी हो सकता है। मैंने उस दिन देखा कि राज्य का नाम लेते ही जैसे फिनलैंड के उस युवक के मुँह में दूध का स्वाद आ गया। राज्य दूध-जैसा सुस्वादु और पोषक बन गया है।

समाज का नियमन : राज्य के दायरे से बाहर

सामान्य जीवन में सामान्य व्यक्ति चाहे जो सोचता हो, लेकिन दार्शनिकों और विचारकों ने हमेशा राज्य की शक्ति की सीमा मानी है। जब भारत के प्राचीनों ने शिक्षण को, और समाज का नियमन करनेवाली नीतियों और रीतियों को वर्ण-व्यवस्था के रूप में राज्य के दायरे से बाहर ही नहीं, बल्कि उसकी शक्ति से ऊपर रखा तो यह मान लेना चाहिए कि उन्हें राज्य-व्यवस्था की मर्यादा और अपूर्णता का स्पष्ट भान था। तभी तो वे अपनी प्रतीति को व्यावहारिक स्वरूप दे सके।

मार्क्स : राज्य की सीमाओं का शोधक और वर्ग-संघर्ष का आविष्कर्ता

सदियों-सदियों से राज्य की गोद में असहाय बच्चे की तरह सुरक्षा का अनुभव करनेवाली दुनिया चौंकी तो तब, जब १९वीं शताब्दी के मध्य में मार्क्स ने यह कह दिया—कहा ही नहीं बल्कि शास्त्र से सिद्ध कर दिया—कि राज्य का बाहरी स्वरूप चाहे जितना मोहक हो, वह यथार्थ में जिन शक्तियों के हाथ में रहता है वे मालिक-वर्ग के दमन और शोषण की ही होती हैं। मार्क्स वर्ग-संघर्ष का आविष्कर्ता था। राज्य को उसने शोषक वर्ग—उत्पादन के साधनों का स्वामी वर्ग—के हाथों में शोषण और दमन का साधन माना। इसी स्थिति का वह अन्त करना चाहता था। इसका उसके पास एक ही उपाय था—यह कि राज्य पर अधिकार श्रमिक वर्ग का, यानी शोषित का, हो जाय। ऐसा होने से राज्य बदल जायेगा और समाज-परिवर्तन का माध्यम बन जायेगा। वर्ग-संघर्ष सामाजिक क्रान्ति की शक्ति का स्रोत है, और 'सर्वहारा' के हाथों में आकर राज्य उस क्रान्ति का समर्थ माध्यम है : इन दो मुद्दों पर मार्क्स ने अपनी क्रान्ति-योजना बनायी।

कोई भी चिन्तक हो, दार्शनिक हो, ऋषि या क्रान्तिकारी हो, उसकी योजना परिस्थितियों से सीमित होती है। मार्क्स की भी थी। उसने दुनिया को एक विलक्षण सत्य दिया, सत्ता का सही स्वरूप बताया, और वर्गों के संघर्ष द्वारा आगे के विकास का सीधा रास्ता दिखा दिया। उसके जमाने में हिंसा का जवाब हिंसा के सिवाय दूसरा था क्या ?

"अहिंसा"। इसलिए विज्ञान और लोकतंत्र के इस युग के स्वराज्य का सारा शास्त्र और उसकी सारी क्रान्ति-पद्धति सत्य और अहिंसा के ही आधार पर बनी हुई है। इस क्रान्ति में विरोधवादी प्रदर्शन नहीं है, विधायक विद्रोह है, संघर्ष नहीं है, शोषणमुक्ति का आरोहण है।

वर्ग, संघर्ष, मुक्ति और शस्त्र, शास्त्र, धन की सत्ता

मार्क्स का "सत्य" था वर्ग। गांधी के लिए वर्ग था ही नहीं। उनकी दृष्टि में किसी के पास पूँजी हो, बुद्धि हो, या श्रम हो, सब मालिक-ही-मालिक हैं। विनोबा के लिए भी "समाज में स्वाभाविक रूप से वर्ग-जैसी कोई चीज ही नहीं है, कम या अधिक सामर्थ्यवान् व्यक्ति हैं। ये कम या अधिक सामर्थ्यवान् व्यक्ति मिलकर अपनी व्यवस्था कैसे करें यही राजनीति का मूलभूत और स्वाभाविक प्रश्न है।" जाहिर है कि जब वर्ग ही नहीं है तो संघर्ष किस बात का? एक बार वर्गों का अस्तित्व मान लिया गया, और मनुष्य-जाति मालिक-मजदूर में बँट गयी, तो संघर्ष अनिवार्य है, और जब एक बार संघर्ष सिद्धांत बन गया, और आगे बढ़ने की सीढ़ी हो गयी, तो हिंसा—संगठित हिंसा—के लिए रास्ता खुल गया। फिर तो वह हिंसा वर्ग, वर्ग से राज्य, राज्य से विश्व के स्तर पर संगठित होती जायेगी और जागतिक संहार का कारण बनेगी।

इसलिए शोषण से मुक्ति हो, और संघर्ष से भी मुक्ति हो, यह दुहरी खोज गांधी की थी। वर्ग-संघर्ष के कारण ही साम्यवाद में श्रमिक सत्ता के नाम पर शस्त्र, शास्त्र, धन की सम्मिलित सत्ता स्थापित हुई है। इस त्रयी में श्रम की सत्ता कहाँ है? उलटे इस त्रिविध सत्ता का परिणाम यह हुआ है कि जो शक्तियाँ और जो धाराएँ पूँजीवाद में थीं, वस्तुतः वे ही साम्यवाद में भी रह गयीं—वही हिंसा, वही यंत्रवाद, वही एकत्रित पूँजी, वही केन्द्रित योजनाएँ। इसलिए विनोबा का कहना कितना सही है कि "पूँजीवाद, या नाजीवाद (फासिस्टवाद) के केन्द्रीकरण, यंत्रपूजा और शस्त्र-निष्ठा की तीन बुनियादी चीजों को कायम रखते हुए चौथी, यानी शोषण, को टालने की कोशिश निरर्थक है। केन्द्रीकरण से प्राप्त क्षमता, यंत्रपूजा से मिला आराम, शस्त्र से मिलनेवाला रक्षा का आश्वासन, इन तीन के मोह में पड़कर जनता शोषण को स्वीकार कर लेती है।" तभी तो वह किशिदा युवक दूध के मोह में "स्व" को भूल गया था! राज्य की दण्डशक्ति न हो तो पूर्ण अराजकता फैल जायेगी, यह भय और भ्रम मनुष्य के आत्मविश्वास और उसकी सहकार-शक्ति को खा रहा है।

साम्यवाद : क्रान्ति के दर्शन और पद्धति में विसंगति

साम्यवाद के क्रान्ति-दर्शन और उसकी क्रान्ति-पद्धति में दोष और विसंगति होते हुए भी इसका 'ध्येयवाद सर्वोदय के प्रतिकूल नहीं है, किन्तु साम्यवाद का हिंसा-विरोध सर्वोदय के हिंसा-विरोध से सर्वथा भिन्न है।' यह भिन्नता सामान्य नहीं है, बुनियादी है। इस भिन्नता के कारण सारी राजनीति और अर्थनीति में भिन्नता हो जाती है। उस भिन्नता को नाम, गुण और रूप देने के लिए 'ग्राम-स्वराज्य' की बात कहनी पड़ी। ग्राम स्वराज्य का अर्थ है कि हिन्द को मिला स्वराज्य उसके ५।। लाख गाँवों में रहनेवाली जनता को मिले। वह किसी समुदाय विशेष के हाथों में न रहकर हर गाँव में जन-जन तक पहुँचे। वास्तव में गाँव गाँव में स्वराज्य के ही सन्दर्भ में गांधीजी ने हिन्द स्वराज्य की कल्पना की थी। उनकी नजर में हिन्द-स्वराज्य ग्राम-स्वराज्य से भिन्न नहीं था। और, ग्राम-स्वराज्य का अर्थ है प्रभाव केन्द्रित राज्य-शक्ति का लोप। ग्राम-स्वराज्य और केन्द्रित राज्य-शक्ति का सह-अस्तित्व असम्भव है।

ग्राम-स्वराज्य की "राजनीति" की "आइडियालोजी", उसकी अर्थनीति की "टेक्नालोजी" और शिक्षानीति की "मेथ-डालोजी" सभी कुछ भिन्न है। क्रान्ति की "डाइलेक्टिक्स" ही भिन्न है तो! उसके स्वराज्य के निर्माण के चार लक्षण बताये हैं:—

(एक) समर्थों का सामर्थ्य जन-सेवा के लिए समर्पित हो,

(दो) जनता पूरी तरह स्वावलम्बी और पारस्परिक सहयोग करनेवाली हो,

(तीन) विश्व के सहयोग और प्रासंगिक असहयोग या प्रतिकार का अधिष्ठान अहिंसा ही हो,

(चार) सबके प्रामाणिक परिश्रम की कीमत (नैतिक और आर्थिक) समान हो।

राज्य-व्यवस्था परिस्थिति के अनुसार बदल सकती है, लेकिन ये लक्षण स्थायी हैं। इसलिए व्यवस्था की परख संविधान से नहीं गुणों से होनी चाहिए।

स्वराज्य की इमारत का चौखम्भा

आज तक राज्य-व्यवस्था राजा, तानाशाह, या प्रतिनिधियों के द्वारा चलती आयी है। इन सबकी व्यवस्था में सत्ता हमेशा समर्थों के ही हाथ में रही है, सामान्य जनता के हाथ में नहीं। अगर सत्ता और स्वामित्व समर्थों के हाथ से निकाल कर जनता के हाथ में देनी हो तो यह आवश्यक है कि जनता अपने नित्य जीवन का नियमन और संचालन अपनी सहकार शक्ति से करे, सरकार आश्रित हो नहीं। अगर गाँव स्वयं पूर्ण नहीं होंगे, तथा जनता लाचार और दुर्बल बनी रहेगी तो सत्ता "समर्थों" के हाथ में जायेगी ही, पद्धति चाहे जो हो। स्वय-पूर्णता के लिए देश भर में खेती और खेती के पूरक ग्रामोद्योग को प्राधान्य देना ही, पर स्वराज्य की शक्ति तो तब आयेगी जब गाँवों पर 'गाँव का स्वामित्व' और प्रशासन में 'गाँव का नेतृत्व' होगा—न मालिक का स्वामित्व, न दल का नेतृत्व। गाँव के बाहर की व्यवस्था के लिए जो प्रतिनिधि होंगे वे स्वायत्त ग्राम द्वारा चुने होंगे, आज की तरह राजनैतिक दलों से नहीं।

स्वायत्त ग्राम-व्यवस्था और स्वावलंबी अर्थनीति से युक्त ऐसे समाजवाद और साम्य-वाद में अन्तर स्पष्ट है। यह 'स्वराज्य' न ऊपर से, फिर नीचे की व्यवस्था पर [illegible] और केन्द्रित है। ऐसी केन्द्रित व्यवस्था टिकाऊ नहीं हो सकती, विदेशी आक्रमण से सुरक्षित भी नहीं रह सकती। और केन्द्रित होने के कारण यह समाज की शक्ति को भी नष्ट करती है। इसलिए स्वराज्य की इमारत—

छह से आठ सेर अनाज पीसना शुरू किया। आजकल तीन सौ नमस्कार और घूमना मेरी कसरत है। इससे मेरा स्वास्थ्य अच्छा हो गया है।

"भोजन के सम्बन्ध में : पहले छह महीने तक नमक खाता था, मगर बाद में छोड़ दिया। मसाला वगैरह बिलकुल नहीं खाया और आजन्म नमक और मसाला न खाने का व्रत लिया है। दूध शुरू किया। कई प्रयोग करने के बाद साबित हुआ कि दूध के बिना अच्छी तरह काम नहीं चल सकता। लेकिन यह भी छोड़ा जा सके, तो छोड़ने की मेरी इच्छा है। एक महीना सिर्फ केले, नींबू और दूध पर बिताया। ताकत कम हो गयी। आजकल मेरी खुराक इस प्रकार है : दूध डेढ़ सेर (साठ तोले), रोटी दो (बीस तोले ज्वार की), केले चार-पाँच, नींबू एक (जब मिल सके)। अब मैं जब आश्रम में आऊँगा, तब आपसे सलाह लेकर अपना आहार निश्चित करने का विचार है। स्वाद के कारण और कोई पदार्थ खाने की इच्छा नहीं होती। तो भी ऐसा लगता है कि उपयुक्त आहार भी काफी अमीराना है। रोज का खर्च लगभग इस प्रकार है—केले और नींबू चार पैसे, ज्वार दो पैसे, दूध पाँच पैसे, कुल ग्यारह पैसे। आपसे मुझे यह जानना है कि इसमें क्या हेरफेर करना चाहिए। वह आप मुझे पत्र द्वारा लिखिएगा।

"दूसरे काम :

(१) गीताजी का वर्ग चलाया। उसमें छह विद्यार्थियों को सारी गीता अर्थ-सहित पढ़ायी, निःशुल्क।

(२) ज्ञानेश्वरी, छह अध्याय। इस वर्ग में चार विद्यार्थी थे।

(३) उपनिषदें नौ। इस वर्ग में दो छात्र थे।

(४) हिन्दी का प्रचार : मैं खुद ही हिन्दी अच्छी तरह नहीं जानता। फिर भी हिन्दी अखबार विद्यार्थियों को साथ लेकर पढ़ने का कार्यक्रम रखा था।

(५) दो विद्यार्थियों को अंग्रेजी।

(६) प्रवास : लगभग ४०० मील (पैदल)। रायगढ़, सिंहगढ़, तोरण-गढ़ वगैरह इतिहास-प्रसिद्ध किले देखे।

(७) प्रवास करते समय गीताजी पर प्रवचन करने का कार्यक्रम रखा था। आज तक ५० प्रवचन हुए। अब भी मैं आश्रम में आने से पहले प्रवास करता हुआ पैदल बम्बई आऊँगा और वहाँ से रेल द्वारा आश्रम में प्रवेश करूँगा। मेरे साथ एक २६ बरस का विद्यार्थी घूमता है। इसका विचार मुझसे ही गीता पढ़ने का है। यह काम भी आजकल प्रवास में ही हो रहा है। मेरी आश्रम में प्रवेश करने की अधिक से-अधिक मीयाद चैत्र सुदी १ तक है।

(८) वाई में 'विद्यार्थी-मण्डल' नाम की एक संस्था स्थापित की। उसमें एक वाच-नालय कायम किया और वाचनालय की सहायता के लिए पीसने का एक वर्ग रखा। उसमें १५ विद्यार्थी और मैं खुद पीसता था। जो लोग चक्की (मशीन) से पिसवा लाते हैं, उनका काम (२ सेर पर एक पैसा लेकर) करना और पैसे वाचनालय को दे देना। बड़े साहूकारों के बच्चे भी इस वर्ग में भरती हुए थे। वाई पुराने विचार का स्थान होने के कारण और इस वर्ग में हाईस्कूल में पढ़नेवाले सारे ब्राह्मणों के लड़के होने के कारण सभी ने हमारी मूर्खों में गिनती कर ली। फिर भी यह वर्ग दो महीने चला। वाचनालय में ४०० पुस्तकें जमा हो गयी हैं।

(९) सत्याग्रह-आश्रम के सिद्धान्तों का प्रचार करने की मैंने बहुत कोशिश की।

(१०) बड़ौदा में १०-१२ मित्र हैं। उन सबकी लोक-सेवा करने की इच्छा है। इसलिए वहाँ तीन वर्ष पहले मातृभाषा-प्रचार के लिए एक संस्था स्थापित की। जब उस संस्था का वार्षिक उत्सव हुआ, तब मैं वहाँ गया। (उत्सव अर्थात् केवल संस्था के सदस्य मिलकर इस बारे में चर्चा करें कि क्या काम किया है और क्या करना है।) उस समय मैंने यह विचार रखा कि हिन्दी भाषा का प्रचार करना चाहिए। मेरा विश्वास है कि संस्था यह काम अवश्य करेगी। आपने हिन्दी-प्रचार का जो प्रयत्न शुरू किया है, उसमें बड़ौदा की यह संस्था काम करने के लिए तैयार रहेगी।

"अन्त में यह कहना जरूरी है कि मैंने सत्याग्रह-आश्रम के निवासी की हैसियत से क्या आचरण किया।

"अस्वाद व्रत : इस बारे में आहार के विषय में लिख दिया है।

"अपरिग्रह : लकड़ी की थाली, कटोरा, आश्रम का एक लोटा, धोती, कम्बल और पुस्तकें, बस इतना प्रपंच रखा है। कुर्ता, कोट, टोपी वगैरह इस्तेमाल न करने का व्रत लिया है, इसलिए शरीर पर भी धोती। करघे पर बुने हुए कपड़े ही काम में लेता हूँ।"

"स्वदेशी : विदेशी का मेरे साथ कोई वास्ता ही नहीं है। (आपके मद्रास के व्याख्यान के अनुसार व्यापक अर्थ न लिया हो, तभी)

"सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य : मुझे विश्वास है कि अपनी जानकारी के अनुसार मैंने इन व्रतों का परिपालन अच्छी तरह किया है।

"अधिक क्या कहूँ? जब सपने आते हैं, तब भी एक ही विचार मन में आता है। क्या ईश्वर मुझसे सेवा करा लेगा? मैं पूर्ण श्रद्धा से इतना कह सकता हूँ। मैं आश्रम के नियमों के अनुसार (एक को छोड़कर) चलता हूँ। इसलिए मैं आश्रम में ही हूँ। आश्रम ही मेरा साध्य है। जिस एक विषय का उल्लेख किया गया है, वह अपना भोजन (अर्थात् रोटी) खुद बनाना है। इसका भी मैंने प्रयत्न किया, पर प्रवास में चल नहीं पाया।

"सत्याग्रह का या दूसरा (शायद रेलवे के सम्बन्ध में सत्याग्रह करना हो) सवाल उठता हो, तो मैं तुरन्त ही आ पहुँचूँगा। अन्यथा मीयाद ऊपर लिख दी है।

"अभी आश्रम में क्या हेरफेर हुए हैं और कितने विद्यार्थी हैं, राष्ट्रीय शिक्षा की योजना क्या है और मेरे आहार में क्या परिवर्तन करना चाहिए, यह जानने की मेरी प्रबल इच्छा है। आप को मुझे खुद पत्र लिखना चाहिए। यह 'विनोबा' का—आपको पितृतुल्य समझनेवाले आपके पुत्र का आग्रह है।

"मैं दो-चार दिनों में यह गाँव छोड़ूँगा।"

इस पत्र को पढ़ते हुए बापूजी के मुख से इस प्रकार के उद्गार निकले थे :

"गोरख ने मछन्दर को हरा दिया। भीम है भीम।" दूसरे दिन सवेरे उन्हें इस प्रकार उत्तर दिया :

'समझ में नहीं आता तुम्हारे लिए कौन-सा विशेषण लगाऊँ। तुम्हारा प्रेम और तुम्हारा चरित्र मुझे मोह में डाल देता है। तुम्हारी परीक्षा मुझे मोह में डुबा देती है। मैं तुम्हारी परीक्षा करने में असमर्थ हूँ। तुम्हारी की हुई परीक्षा को मैं स्वीकार करता हूँ और तुम्हारे लिए पिता का पद ग्रहण करता हूँ। मालूम पड़ता है मेरा लोभ तुमने लगभग पूरा कर दिया। मेरी मान्यता है कि सच्चा पिता अपने में अधिक चरित्रवान पुत्र को जन्म देता है। सच्चा पुत्र वह है जो पिता के किये हुए में वृद्धि करे। पिता सत्यवादी, दृढ़ और दयामय हो तो स्वयं अपने में यह गुण और अधिक पैदा करे। मालूम होता है तुमने ऐसा ही किया है। मुझे ऐसा तो नहीं दीखता कि यह तुमने मेरे प्रयत्न से किया है। इसलिए तुम मुझे जो पद दे रहे हो उसे तुम्हारे प्रेम की भेंट के रूप में मैं स्वीकार करता हूँ। उस पद के योग्य बनने का प्रयत्न करूँगा और जब मैं हिरण्यकशिपु साबित होऊँ, तब भक्त प्रह्लाद की तरह मेरा सादर निरादर करना।

तुम्हारा यह दावा सही है कि तुमने बाहर रहकर आश्रम के नियमों का बहुत अच्छी तरह पालन किया है। तुम्हारे आने के विषय में मुझे शंका थी ही नहीं। तुम्हारे लिखे हुए मजमून मुझे मामा ने पढ़कर सुना दिए थे। ईश्वर तुम्हें दीर्घायु करे और मैं चाहता हूँ कि तुम्हारा उपयोग भारत की उन्नति के लिए हो।

तुम्हारा खुराक में हेरफेर करने लायक अभी तो कोई बात नजर नहीं आती। फिलहाल दूध नहीं छोड़ना चाहिए। बल्कि जरूरत मालूम हो, तो दूध की मात्रा बढ़ा दी जाय।

खेड़ा के मामले में सत्याग्रह की आवश्यकता नहीं है। लेकिन इस बार मैं शान्तिवाद प्रचारकों की जरूरत है। सम्भव है खेड़ा जिले के मामले में समय आने पर लड़ाई लड़नी पड़े। मैं तो अभी रमना राम है। एक दो दिन में दिल्ली जाना होगा।

'और बातें जब तुम आओगे तब। सब तुमसे मिलने को उत्सुक हैं।

बापू के आशीर्वाद।'

महादेव भाई की डायरी से

दस्तावेज

रूस की नाराजगी : किन बातों पर ?

[पिछले अंक में हमने चेकोस्लोवाकिया में साम्यवाद के मानवीकरण के लिए वहाँ के लेखकों और बुद्धिजीवियों द्वारा घोषित घोषणा-पत्र के कुछ प्रमुख अंश प्रकाशित किये थे। चेकोस्लोवाकिया के जनप्रिय और विश्व में बहुचर्चित नेता श्री दुबचेक इस नयी हलचल के केन्द्रबिन्दु हैं, यह तो जाहिर है ही। इस अंक में लेखकों और बुद्धिजीवियों के संसार-प्रसिद्ध उक्त दो हजार शब्दवाले घोषणा-पत्र की प्रतिक्रिया में सोवियत रूस और उसके समर्थक देशों की ओर से जो पत्र चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी के नाम भेजा गया था उसके प्रमुख अंश, ३ अगस्त को चेकोस्लोवाकिया सहित सभी वारसा-संधि के देशों की जो बैठक ब्रातिस्लावा में हुई थी उसका सर्वसम्मत वक्तव्य, और अंत में चेकोस्लोवाकिया में साम्यवाद के मानवीकरण के लिए प्रस्तावित मुद्दे और रूस की नाराजगी के बुनियादी कारणों को प्रकाशित कर रहे हैं।

यद्यपि इस समय परिस्थिति बदल गयी है और निरन्तर बदलते जाने की सम्भावना वहाँ बनी हुई है, लेकिन बावजूद वर्तमान अस्थिरता के चेकोस्लोवाकिया की घटना से साम्यवादी साम्राज्यवाद से मुक्ति की जो प्रक्रिया तथा उसके लिए होनेवाला संघर्ष दुनिया के सामने प्रकट हुआ है वह इतिहास की वस्तु है और ये दस्तावेज उसके तथ्यों को प्रस्तुत करते हैं।—सं०]

चेकोस्लोवाकिया के परिवर्तन चिंताजनक

१४ और १५ जुलाई को वारसा की बैठक की ओर से चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के नाम संयुक्त पत्र के कुछ प्रमुख अंश

आपके देश के घटनाक्रम ने हमें अत्यधिक चिन्तित किया है। हमारी गहरी मान्यता है कि आपकी पार्टी और चेकोस्लोवाक समाजवादी जनतंत्र में सामाजिक प्रणाली की आधारशिला के खिलाफ प्रतिक्रियावादी शक्तियों का, जिन्हें साम्राज्यवाद का समर्थन प्राप्त है, अभियान आपके देश को समाजवादी राह से परे धकेलने का खतरा पैदा करता है और इस तरह वह पूरी समाजवादी प्रणाली के हितों को खतरे में डालता है।

हमारा कभी भी यह इरादा नहीं था और न अब है कि हम ऐसे मामलों में हस्तक्षेप करें जो विशुद्ध रूप से आपकी पार्टी और आपके राज्य का अंदरूनी मामला है कि हम कम्युनिस्ट पार्टियों और समाजवादी देशों के बीच सम्बन्धों में परस्पर आदर भाव, स्वतंत्रता के सिद्धान्तों का उल्लंघन करें।

साथ ही हम इस बात पर सहमत नहीं हो सकते कि विरोधी शक्तियाँ आपके देश को समाजवादी पथ से दूर धकेलें और चेकोस्लोवाकिया को समाजवादी समुदाय से पृथक् करने का खतरा पैदा करें। यह ऐसी चीज है जो आपके ध्येय तक ही सीमित नहीं है। यह तमाम कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों तथा राज्यों का—जो संधि, समझौते, सहयोग और मैत्री के सूत्रों में ऐक्यबद्ध हैं—समान ध्येय है। यह हमारे देशों का—जो यूरोप में स्वतंत्रता, शान्ति और सुरक्षा सुनिश्चित करने तथा साम्राज्यवादी आक्रामकता और प्रतिशोध की शक्तियों की साजिशों के खिलाफ अलंघ्य चट्टान खड़ी करने के लिए वारसा-संधि में शामिल हुए हैं—समान ध्येय है।

देश पर पार्टी के नेतृत्व के निर्बल होने का लाभ उठाते हुए और 'जनवादीकरण' के नारे का शब्दाडम्बरपूर्ण ढंग से दुरुपयोग करते हुए प्रतिक्रियावाद की शक्तियों ने

चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी के खिलाफ और उसके ईमानदार तथा वफादार कार्यकर्ताओं के खिलाफ एक मुहिम आरम्भ कर दी। इस तरह वे स्पष्ट रूप में यह चाहती है कि पार्टी की अग्रणी भूमिका समाप्त कर दी जाय, समाजवादी प्रणाली को नष्ट कर दिया जाय और चेकोस्लोवाकिया को अन्य समाजवादी देशों के विरोध में खड़ा कर दिया जाय।

इधर राष्ट्रीय मोर्चे के ढाँचे के बाहर जिन राजनीतिक संगठनों और क्लबों का जन्म हुआ है, वे दरअसल प्रतिक्रियावाद की शक्तियों का सदर मुकाम बन गये हैं।

ठीक यही वजह है कि प्रतिक्रियावाद पूरे राष्ट्र को सार्वजनिक रूप में सम्बोधित करने और '*दो हजार शब्द*' शीर्षक के अन्तर्गत अपना वह राजनीतिक मंच प्रकाशित करने में सफल रहा जिसमें कम्युनिस्ट पार्टी और संवैधानिक सत्ता के खिलाफ संघर्ष, हड़तालें और गड़बड़ी पैदा करने के लिए खुला आह्वान किया गया है, यह आह्वान पार्टी, राष्ट्रीय मोर्चे और समाजवादी राज्य के लिए गंभीर खतरा है और अराजकता का पथ प्रशस्त करने की कोशिश है।

हाल के महीनों में आपके देश का पूरा घटनाचक्र यह सिद्ध करता है कि प्रतिक्रान्ति की शक्तियों ने साम्राज्यवादी केन्द्रों के सहारे समाजवादी प्रणाली के खिलाफ एक व्यापक अभियान आगे बढ़ाया है जिसका पार्टी और जनसत्ता समुचित प्रतिरोध के साथ मुकाबिला नहीं कर रही है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अन्तरराष्ट्रीय साम्राज्यवादी प्रतिक्रियावाद के केन्द्र भी चेकोस्लोवाकिया के घटनाचक्र से जुड़े हुए हैं और वे परिस्थिति को भड़काने तथा उग्र बनाने लिए भरसक कोशिश कर रहे हैं, समाजवाद विरोधी शक्तियों को इस दिशा में कार्य करने के लिए उकसा रहे है। पूँजीवादी समाचार-पत्र चेकोस्लोवाक समाजवादी जनतंत्र में "जनवादीकरण" और "उदारीकरण" के गुणगान की आड में बन्धु समाजवादी देशों के खिलाफ उकसावा भरा आन्दोलन चला रहे हैं।

साथियो, क्या आप इन खतरों को नहीं देखते ? ऐसी परिस्थिति में उदासीन बने रहना, समाजवाद के ध्येय के प्रति और अपने साथियों के प्रति कर्तव्यों के बारे में वफादारी की केवल घोषणाएँ करने और आश्वासन देने तक अपने को सीमित रखना क्या सम्भव है ?

हमारे देश संधियों और समझौतों से एक-दूसरे से सूत्रबद्ध है। राज्यों और जनगण के ये महत्वपूर्ण पारस्परिक दायित्व समाजवाद की रक्षा करने तथा समाजवादी देशों की सामूहिक सुरक्षा सुनिश्चित करने की आम आकांक्षा पर आधारित है।

चेकोस्लोवाकिया में मजदूर-वर्ग और समस्त मेहनतकश जनता की सत्ता, समाजवादी उपलब्धियों की रक्षा करने का ध्येय निम्न चीजों का तकाजा करता है :

—दक्षिण पंथी और समाजवाद विरोधी शक्तियों के खिलाफ निर्णायक और साहसपूर्ण अभियान, प्रतिरक्षा के लिए समाजवादी राज्य द्वारा निर्मित तमाम साधनों को गोलबन्द करना,

—समाजवाद का विरोध करनेवाले तमाम राजनीतिक संगठनों की गतिविधि रोकना,

—जन-प्रचार के माध्यमों पत्र-पत्रिकाओं रेडियो, टेलीविजन—पर पार्टी का दृढ़ नियंत्रण तथा मजदूर वर्ग के हिताथ, समस्त मेहनतकश जनता और समाजवाद के हिताथ उनका उपयोग,

—मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तनिष्ठ आधार पर स्वयं पार्टी की पाँतों को एकजुट करना, जनवादी केन्द्रवाद के सिद्धान्तों का अविचल रूप से परिपालन तथा उन सबके विरुद्ध संघर्ष, जो अपनी हरकतों के जरिये शत्रुतापूर्ण शक्तियों की मदद पहुँचाते हैं।

वारसा, १५ जुलाई '६८

चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी की प्रेजीडियम का उत्तर

१—हमने मई में जो कार्यक्रम तय किया उसे अमल में लाने के क्रम में देश में किसी तरह का संघर्ष आदि न हो, इसके लिए हम पूरे तौर पर प्रयत्नशील रहेंगे, साथ ही हम इस बात के लिए अपनी पूरी शक्ति लगायेंगे कि चेकोस्लोवाकिया की समाजवादी व्यवस्था के लिए किसी तरह का खतरा न पैदा हो।

२—हमारी विदेश-नीति शुरू से स्पष्ट रही है। उसकी बुनियादी बात है सोवियत संघ तथा दूसरे समाजवादी देशों के साथ सहयोग। हम कोशिश करेंगे कि समाजवादी राष्ट्रों के साथ हमारे सम्बन्ध परस्पर आदर, समता, सार्वभौमिकता तथा ठोस अन्तराष्ट्रीय भाईचारे के आधार पर गहरे हों। इस तरह हमलोग वारसा-सन्धि और 'कौंसिल आफ म्युचुअल इकनामिक असिस्टेंस' की प्रवृत्तियों मे ज्यादा सार्थक योगदान दे सकेंगे।

यह कहना सही नहीं है कि चेकोस्लोवाकिया में पश्चिमी जर्मनी के पक्ष की शक्तियाँ सिर उठा रही हैं। अगर कभी किन्हीं व्यक्तियों के मुंह से उस तरह की बात निकली होगी तो वह गैर-जिम्मेदारी की बात रही होगी। जर्मन साम्राज्यवाद का हमें जो अनुभव हो चुका है, उसे जानते हुए हम अपने देश का भाग्य खतरे में डालेंगे, इसकी तो कल्पना भी नहीं की जा सकती। पश्चिमी जर्मनी हमारा एक दीवाल का पड़ोसी है, फिर भी हमने, अन्य समाजवादी देशों के बाद, उससे अपने सम्बन्ध स्थिर करने का कदम उठाया। इसके विपरीत हम पूर्वी जर्मनी के हितों की रक्षा और उसकी अन्तरराष्ट्रीय स्थिति को मजबूत करते आये हैं।

३—वारसा सन्धि के मित्र राष्ट्रों की सेनाओं का सैनिक अभ्यास चेकोस्लोवाकिया में हुआ। यह हमारे उत्तरदायित्व का प्रमाण है। *हमारी पार्टी के वरिष्ठ लोगों तथा हमारी* सेना ने उनका स्वागत किया। लेकिन हमारी जनता के मन में सन्देह तब पैदा हुआ जब मित्र राष्ट्रों की सेनाओं के चेकोस्लोवाकिया से जाने के दिन बार-बार टाले गये।

४—अपनी पार्टी के 'ऐक्शन प्रोग्राम' में हमने निम्नलिखित बातें रखी हैं —

(१) देश के समाजवादी विकास में पार्टी का नेतृत्व का स्थान। यह स्थान पार्टी की शासन के कारण नहीं, बल्कि सेवा से मिला है। पार्टी देशवासियों को आदेश देकर अपनी बात नहीं मनवा सकती।

उसका स्थान सदस्यों के लिए सेवा कार्य तथा आदर्शों की शुद्धता पर निर्भर है।

(२) देश में पार्टी की प्रतिष्ठा का नोवो तनी की नीति से गहरा धक्का लगा था। उनके कारण कई संघर्ष भी पैदा हुए, जैसे चेक और स्लोवाकों के बीच, बुद्धिजीवियों और श्रमिकों के बीच, युवा और पुरानी पीढ़ी के बीच। उनकी नीतियों के कारण आर्थिक समस्याएँ भी उलझ गयी, यहाँ तक कि हम श्रमिकों की उचित माँगें नहीं पूरी कर सके, और पूरी आर्थिक व्यवस्था के लिए खतरा पैदा हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि जनता का पार्टी में भरोसा कम हो गया तथा जगह जगह आलोचना होने लगी। इसका उचित हल न निकाल कर उलटे शक्ति

अलेक्जेण्डर दुबचेक मुक्ति के मोर्चे

का प्रदर्शन किया गया। कठिनाइयाँ बढ़ती गयी। आज अगर हम फिर जबरदस्ती के उन तरीकों की नकल करें तो क्या होगा? पार्टी के सदस्य विरुद्ध खड़े होंगे, तथा श्रमिक, अन्य काम करनेवाले, सहकारी किसान, बुद्धिजीवी, सभी प्रतिकार करने लग जायेंगे। कुल मिलाकर पार्टी का नेतृत्व खतरे में पड़ जायेगा, और सत्ता का संघर्ष शुरू हो जायेगा। हमारा साम्राज्यवाद विरोधी मोर्चा भी कमजोर पड़ जायेगा।

(३) इसलिए हमने तय किया है कि पार्टी को पुराने नेतृत्व के दोषों से अलग रखें, और उसके लिए सम्बन्धित व्यक्तियों से बराव तलब करें।

(४) पार्टी की कांग्रेस की चौदहवीं बैठक बुलायें जो पार्टी की दिशा निर्धारित करे, चेकोस्लोवाकिया की संघीय व्यवस्था तय करे, और एक नयी केन्द्रीय समिति चुने, जिसे पार्टी और पूरे समाज का विश्वास प्राप्त हो।

(५) १४वीं बैठक के बाद बुनियादी राजनीतिक प्रश्नों के हल के लिए अभियान चलाया जाय। नेशनल फ्रंट और सामाजिक स्वराज्य के आधार पर राजनीतिक व्यवस्था, संघीय संविधान का प्रबन्ध, राज्य की (संघीय, राष्ट्रीय स्थानीय) प्रतिनिधि संस्थाओं के चुनाव और एक नये संविधान की रचना।

(६) पार्टी की बैठक होने के तुरन्त बाद सितम्बर में दूसरे नियमों पर विचार होगा। नेशनलफ्रण्ट के मंच पर अन्य दलों को मान्यता देनी होगी, ऐच्छिक संगठनों, समुदायों, क्लबों आदि को इकट्ठा होने और अपना काम करने की सुविधा देनी होगी। इस तरह हमलोग गैर कम्युनिस्ट शक्तियों का खुल्लम-खुल्ला मुकाबिला कर सकेंगे।

कम्युनिस्ट लोगों ने श्रम संगठनों और श्रम-समितियों का काम भी देखने का निर्णय किया है। हमने पेंशन और मजदूरी बढ़ाने का प्रश्न हाथ में ले रखा है। हम आर्थिक समस्याओं को इस तरह हल करना चाहते हैं कि जनता का जीवन स्तर ऊँचा उठे।

हमने राज्य की सीमाओं की सुरक्षा के लिए भी उचित कारवाई की है।

हमारे देश के सभी समुदायों के बहुसंख्यक लोग चाहते हैं कि प्रेस का सेंसर उठा लिया जाय और अपने स्वतंत्र विचार व्यक्त करने की छूट दी जाय।

चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी दिखा देना चाहती है कि नौकरशाही और पुलिस के तरीकों से भिन्न नेतृत्व सम्भव है और वास्तविक शक्ति मार्क्सवादी लेनिनवादी विचार में है, उसके कार्यक्रमों में है, उसकी सही नीतियों में है, जिनका समर्थन जनता से प्राप्त है।

आगे का समय हमारी पार्टी के लिए कठिनाइयों का है। इन पर हम तभी विजय पा सकेंगे जब हम मई के और १४वीं कांग्रेस के निर्णयों को अमल में ला सकें। इसलिए हम जानते हैं कि १४वीं कांग्रेस को छोड़कर दूसरी जगह और दूसरे ढंग से प्रश्नों का हल करने का प्रयत्न अत्यन्त अनुचित होगा। इस वक्त समाजवाद का इसीमें हित है कि पार्टी के नेतृत्व में भरोसा किया जाय। हमने व्यवस्था की है कि सभी धाराओं के लोग बैठकर आपस में चर्चा करें।

हमें दुःख है कि हमारी इन बातों पर ध्यान नहीं दिया गया। वारसा की बैठक भी बिना हम लोगों के की गयी। एक पार्टी की नीति रीति पर उसकी अनुपस्थिति में विचार हो यह समाजवाद के लिए हितकर नहीं है। हम मानते हैं कि ३० अक्तूबर १९५६ को सोवियत संघ ने जो घोषणा की थी वह अब भी सही है। उसमें कहा गया है कि

"समाजवादी राष्ट्रों का महान भाईचारा समाजवादी समाज के निर्माण, तथा सर्वहारा के अन्तर्राष्ट्रवाद के आदर्शों के आधार पर बना है। उनके आपसी सम्बन्ध पूर्ण समता, उनकी राष्ट्रीय सीमाओं की मान्यता, राष्ट्रीय स्वतंत्रता सार्वभौमिकता, तथा एक दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने की नीति के आधार पर ही टिक सकते हैं।"

सोवियत संघ रूस, पोलैण्ड, हंगरी, बुलगारिया, पूर्वी जर्मनी और चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टियों की ब्रातिसलावा की ३ अगस्त की बैठक में संयुक्त घोषणा :

१—उलझी हुई अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति और साम्राज्यवादियों की शान्ति, समाजवाद और अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा के विरुद्ध की गयी कारवाइयों के कारण समाजवादी देशों में एकता और दृढ़ता की पहले से अधिक जरूरत है। इसके अलावा समाजवाद के विकास में ऐसी कठिनाइयाँ आती हैं जिन्हें हल करने के लिए शक्ति और साधनों को इकट्ठा करने की जरूरत होती है। इन बातों को ध्यान में रखकर समाजवादी देशों की कम्युनिस्ट

और श्रमिक पार्टियों ने आनिसलावा में यह कान्फरेंस बुलायी।

हर देश की जनता के परिश्रम, त्याग, और उत्सर्ग से हमें जो अवसर मिला है उसकी रक्षा होनी चाहिए। इस दृढ़ संकल्प में सभी शरीक हैं। हर पार्टी ने, जो समाजवादी विकास के प्रश्नों को विधायक रूप से हल कर रही हैं, महसूस किया कि हर राष्ट्र की अपनी विशेषता और परिस्थिति है।

हमारे समान लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आपस में आर्थिक सहयोग आवश्यक है। इसलिए महसूस किया गया कि जल्द-से-जल्द एक उच्च-स्तरीय आर्थिक कान्फरेंस बुलायी जाय।

समाजवादी पार्टियाँ मानती हैं कि भिन्न-भिन्न राष्ट्रों में भिन्न-भिन्न समाज-व्यवस्थाएँ रहेंगी, इसलिए सह-अस्तित्व का सिद्धांत सर्वथा मान्य है।

६ देशों की ये पार्टियाँ वियतनाम की जनता का समर्थन करती हैं, और इजराइल के आक्रमण के कारण मध्य-पूर्व में उत्पन्न स्थिति के सम्बन्ध में चिन्ता प्रकट करती हैं।

ये पार्टियाँ यूरोप में एक सुनिश्चित नीति का समर्थन करेंगी, और दूसरे महा-युद्ध के बाद जो सीमाएँ निर्धारित हुई हैं, उन्हें बदलने के प्रस्ताव का विरोध करेंगी। ये वारसा की सन्धि को पूरे तौर पर मानेंगी और अपनी सगठित शक्ति से साम्राज्य-वादियों का मुकाबिला करेंगी।

ये पार्टियाँ मानती हैं कि समाजवादी राष्ट्रों की एकता के आधार हैं मार्क्स-लेनिन की दृष्टि, समाज में कम्युनिस्ट और श्रमिकों की पार्टियों का नेतृत्व, तथा राष्ट्रीय अर्थनीति की समाजवादी बुनियादें। इनको बनाये रखने में ही समान लक्ष्यों की सिद्धि है।

चेकोस्लोवाकिया में सुधार के मुद्दे

प्रशासनिक

(१) कम्युनिस्ट पार्टी के आन्तरिक चुनावों में गुप्त मतदान।

(२) खुली आलोचना और मतभेद का अधिकार। साथ ही अपनी बात को मनवाने की कोशिश करते रहने का अधिकार।

(३) पार्टी और सरकार में दोनों पदों को एक साथ एक ही व्यक्ति को देने की मनाही। इतना ही नहीं, पार्टी के अन्दर भी एक व्यक्ति को कई ऊँचे पद देने की मनाही।

(४) १२ साल से अधिक पार्टी की केन्द्रीय समिति या कार्य-समिति की सदस्यता की समाप्ति।

(५) गैर-कम्युनिस्ट पत्र-पत्रिकाओं के सेंसर की समाप्ति।

स्वतंत्र आर्थिक सम्बन्ध

(१) चेकोस्लोवाकिया और युगोस्लाविया में बैंकिंग की सम्मिलित व्यवस्था। ईरान से खरीदे तेल के लिए सम्मिलित पाइप लाइन बनाने की योजना।

(२) चेकोस्लोवाकिया में युगोस्लाविया के श्रमिकों को काम देना।

(३) 'तीसरी दुनिया' बनाने में युगोस्लाविया से सहयोग करने का वादा करना।

(४) पश्चिमी जर्मनी से सम्बन्धों को खुला रखना।

(५) कुछ चेक उद्योगों के लिए विश्व-बैंक से ऋण लेने का निर्णय।

रूस के भय

(१) चेकोस्लोवाकिया में कम्युनिस्ट पार्टी की सितम्बर की बैठक रूस के बचे-खुचे समर्थकों को समाप्त कर देगी।

(२) चेकोस्लोवाकिया द्वारा स्वतंत्र अर्थ-नीति अपनाने की कोशिश। अभी चेकोस्लो-वाकिया अपना पूरा तेल, ८० प्रतिशत लोहा, ६३ प्रतिशत रबड़, ४६ प्रतिशत विशेष प्रकार की धातुएँ रूस से लेता है, और रूस चेकोस्लोवाकिया से मशीन और तैयार माल लेता है। बदले में रूस इंजीनियरिंग के सामान, कच्चा माल, तेल, और गेहूँ देता है। रूस को भय हुआ कि चेकोस्लोवाकिया की अर्थनीति उससे अलग कहीं युगोस्लाविया, रूमानिया और पाश्चात्य यूरोप की ओर न मुड़ जाय और धीरे-धीरे रूस और 'कोमिकान' (कम्युनिस्ट देशों का रूस के नेतृत्व में आर्थिक सगठन) को छोड़ दे। अभी चेकोस्लो-वाकिया का ६८% निर्यात 'कोमिकान' के द्वारा होता है।

(३) उदार साम्यवाद। सबसे बड़ा भय इसी का है। साम्यवाद उदार होते-होते कहीं 'बूर्जुआ' न हो जाय? रूसी पत्र 'इजवेस्तिया' ने लिखा कि 'सर्वहारा की तानाशाही आज भी रूसी शासन का आधार है। और, रूसी लोकतंत्र तथा अमरीकी जीवन-पद्धति के बीच में कोई तीसरा रास्ता नहीं है'। 'यह या वह', दूसरा कुछ नहीं। कम्युनिस्ट पार्टी की प्रमुखता, भीतरी मामलों में केन्द्रवाद, प्रेस पर कड़ा अंकुश, पार्टी (कम्युनिस्ट) के आलोचकों का दमन—रूस की नजर में ये चीजें किसी देश को साम्यवाद के रास्ते पर रखने के लिए आवश्यक हैं। रूस को शुबहा है कि चेकोस्लोवाकिया उदारता के नाम में सुधारवादी बन रहा है। यह छूत दूसरे देशों में भी फैल सकती है, और यूरोप में साम्यवादी मोर्चेबन्दी को कमजोर कर सकती है। व्यक्ति के नागरिक अधिकारों की बात पूँजीवादी चोंचला है। आर्थिक सुरक्षा से अधिक मनुष्य को चाहिए क्या? नागरिक के अधिकारों की बात आगे बढ़ेगी तो कई पार्टियाँ बन सकती हैं। इस तरह का बुद्धि-भेद साम्यवाद के लिए घातक है।

(४) वारसा-सन्धि के मित्र राष्ट्रों के सम्मिलित सैनिक कमाण्डर का प्रश्न। चेकोस्लोवाकिया ने प्रश्न उठाया कि सब मुख्य पदों पर रूसी ही अफसर क्यों रहें? उनका कहना था कि ऊँचे-अफसर बारी-बारी हर देश के हों; साथ ही यह बात भी थी कि जब कोई देश चाहता नहीं तो उसमें विदेशी सेना क्यों रखी जाय? •

कार्यालय स्थानान्तरित

उत्तर प्रदेश ग्रामदान प्राप्ति समिति का कार्यालय, जो अभी तक १६।१ सी०-२, महानगर, लखनऊ-६ में था, अब 'प्रदेशदान' की दृष्टि से अधिक उपयुक्त स्थान वाराणसी के लिए स्थानान्तरित हो गया है। भविष्य में इस समिति का पता निम्नांकित ही रहेगा :

उत्तर प्रदेश ग्रामदान प्राप्ति-समिति
सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी –१

—कपिलभाई, संयोजक

खादी और ग्रामोद्योग
अशोक मेहता समिति का प्रतिवेदन
निष्कर्ष और सुझावों का सार—३

संगठनात्मक परिवर्तन

३३—इन पुनर्निमित कार्यक्रमों के लिए एक अच्छे संगठनात्मक ढांचे की आवश्यकता होगी। नीति निर्माण और प्रशासन के स्तर पर संगठन के विभिन्न अंगों के बीच अत्यधिक सुमेल और सुसबद्धता होनी चाहिए ताकि गतिशील तथा उपयोगी ढंग से काम हो सके। इसके अतिरिक्त गाँवों की अत्यधिक गरीबी और पूर्ण तथा आंशिक बेकारी का मुकाबिला करने के लिए भौतिक और मानवीय दोनों प्रकार के ग्रामीण साधनों को संगठित करने के लिए तथा ग्रामीण आमदनी को बढ़ाने के लिए कुछ भिन्न प्रकार के संगठनात्मक ढाँचे की जरूरत होगी जो वर्तमान सीमित अनुसूची के स्थान में सभी ग्रामीण उद्योगों का उनके महत्व को समुचित रूप से बतलाते हुए समावेश कर ले।

ग्रामीण उद्योग आयोग

३४—नये संगठनात्मक ढाँचे में सबसे ऊपर एक ग्रामीण उद्योग आयोग होना चाहिए जो ग्रामीण क्षेत्रों में घरेलू और छोटे उद्योगों के विकास को आगे बढ़ायें। यह निकाय एकमात्र विस्तृत अधिकार सम्पन्न प्राधिकारी हो जिसके पास आवश्यक शक्तियाँ तथा मसाधन एवं ग्रामीण क्षेत्रों को शीघ्रता से उद्योग सम्पन्न बनाने का दायित्व हो। यह एक वैधानिक निकाय हो जिसमें सरकार द्वारा पाँच वर्षों के लिए मनोनीत सात में नौ व्यक्ति हों और उसे ग्रामीण उद्योगों के विकास के लिए परामर्श देने, प्रशिक्षण और अनुसंधान का कार्य करने तथा कराने, एवं साधारण रूप से कार्यक्रम को कार्यान्वित तथा सुसबद्ध करने के अधिकार हों। पाँच वर्षों की एक सीमित अवधि के लिए उसे किन्हीं स्वीकृत प्रयोजनों हेतु वित्तीय सहायता देने का भी अधिकार हो। इस अवधि की समाप्ति के बाद किसी कार्यक्रम के लिए वित्तीय सहायता सीधे भारत सरकार द्वारा सम्बन्धित राज्य सरकारों को दी जाय। जिन संस्थाओं का काम एक से अधिक राज्यों में चलता है वे वित्तीय सहायता के लिए या तो एक राज्य की संस्थाओं के रूप में परिवर्तित हो जायें या विभिन्न राज्यों की सीमाओं के भीतर अपने कामों को अलग-अलग प्रकट करें।

३५—आयोग के अध्यक्ष अधिक अच्छा है कि गैर सरकारी हो और उसके सदस्यों में एक अर्थ शास्त्री, एक तकनीकी विशेषज्ञ एवं वित्त विशेषज्ञ और एक योजना विशेषज्ञ होना चाहिए जिसे ग्रामीण तथा छोटे उद्योगों की योजना बनाने का अच्छा अनुभव हो। आयोग की बैठकों में प्रशासन मंत्रालय का एक प्रतिनिधि स्थायी रूप से निमंत्रित हो।

३६—वर्तमान खादी और ग्रामोद्योग कमीशन ग्रामीण उद्योग आयोग के रूप में परिवर्तित कर दिया जाय और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक कार्यवाही सरकार शीघ्र करे।

३७—ग्रामीण उद्योग आयोग यह तय कर सकता है कि उसे एक परामर्शदाता मंडल का सहायता चाहिए जिसमें अन्यों के अतिरिक्त राज्य ग्रामीण उद्योग मण्डलों के प्रतिनिधि हों, और वह अखिल भारत खादी और ग्रामोद्योग मंडल के पुनर्निर्माण के लिए सरकार से प्रस्ताव कर सकता है।

३८—ग्रामीण उद्योगों के विकास से सम्बन्धित दूसरे संगठन जैसे हाथ करघा मण्डल हस्तशिल्प मण्डल लघु उद्योग मण्डल नारियल जटा मण्डल केन्द्रीय रेशम मण्डल और कृषि-उद्योग आयोग अपने अपने क्षेत्रों में विशेषज्ञ निकायों के रूप में काम करते रहें। इन अनेक संस्थाओं और ग्रामीण उद्योग आयोग के बीच कार्यक्रमों तथा दृष्टिकोण में समन्वय साधना सम्बन्धित प्रशासन और केन्द्रीय मंत्रालय का दायित्व होगा। इस निमित्त एक समन्वय समिति स्थापित की जाय जिसमें आयोग का प्रतिनिधित्व हो। सम्बन्धित प्रशासनीय मंत्रालय ग्रामीण उद्योग विभाग के लिए सम्पूर्ण रूप से सर्वोच्च स्तर पर संसद के प्रति उत्तरदायी होगा।

राज्य मण्डल

३९—खादी और ग्रामोद्योग कमीशन के ग्रामीण उद्योग आयोग के रूप में परिवर्तित हो जाने के बाद राज्य खादी ग्रामोद्योग मण्डल का स्थान वैसे ही राज्य ग्रामीण उद्योग मण्डल ले लेंगे। इन मण्डलों के कार्य और क्षेत्र विस्तृत हो जायेंगे और बढ़ जायेंगे। उनको राज्य के सभी ग्रामीण उद्योगों के विकास से सम्बन्धित कर्तव्यों को पूरा करने के लिए कहा जायेगा, न कि केवल उन्हीं को जो अभी खादी और ग्रामोद्योग कमीशन अधिनियम में शामिल हैं।

४०—राज्य ग्रामीण उद्योग मण्डलों के पुनर्निर्माण में राज्य खादी ग्रामोद्योग मण्डलों की भूतकालीन असमर्थताओं और त्रुटियों को हटाने का विशेष ख्याल रखा जाय। ग्रामीण उद्योग आयोग और राज्य ग्रामीण उद्योग मण्डलों के बीच आन्तरिक सम्बन्धों को स्पष्ट रूप से निर्धारित कर देना चाहिए। प्रस्तावित ग्रामीण उद्योग आयोग द्वारा ग्रामीण उद्योगों के समग्र और समन्वित विकास के लिए निर्धारित नीतियों को राज्य ग्रामीण उद्योग मण्डल क्षेत्रीय अभिकरणों की मारफत यानी पंजीकृत संस्थाओं, सहकारी समितियों और अन्य क्षेत्रीय अभिकरणों के द्वारा विश्वस्त रूप से कार्यान्वित करेंगे। अतः राज्य ग्रामीण उद्योग मण्डल की एक सुसंगठित तथा सुदृढ़ संगठनात्मक इकाई होना चाहिए।

४१—प्रस्तावित राज्य ग्रामीण उद्योग मंडल का अध्यक्ष राज्य का उद्योग मंत्री या कोई गैर सरकारी व्यक्ति हो और उसके सदस्यों में विभिन्न क्षेत्रों, जैसे वित्त, प्रशासन, अर्थशास्त्र, योजना निर्माण आदि, के विशेषज्ञ रहें। राज्य मण्डल राज्य सरकारों और राज्य विधान मण्डलों के प्रति सीधे उत्तरदायी हों, पर ग्रामीण उद्योग आयोग द्वारा स्वीकृत कार्यक्रमों के सफल कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए आयोग द्वारा समुचित मार्गदर्शन तथा पर्यवेक्षण की व्यवस्था की जाय। राज्य खादी मण्डलों द्वारा लेने के लिए जो कानून बनें उनमें इस बात को सुनिश्चित करने के लिए समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए। (सम्पूर्ण)

आन्दोलन के समाचार

उत्तर प्रदेश की चिट्ठी

पूरब से पश्चिम तक तूफान

प्रदेशीय ग्रामदान प्राप्ति-समिति के संयोजक श्री कपिल भाई ने २६ अगस्त को प्रदेशीय ग्रामदान तूफान व अभियानों की जानकारी देते हुए लिखा है

सहारनपुर के रुड़की तहसील के तीनों प्रखण्डों रुड़की, भगवानपुर और नारसेन में डा० पटनायक और श्री रामजी भाई तथा श्री कामतानाथ गुप्त (जज साहब) के मार्गदर्शन में अभियान चला। पूर्व तैयारी के लिए २०-२१ अगस्त को शिविर किया गया था। ४६ टोलियों के अभियानों में कुल ११२ ग्रामदान प्राप्त हुए। शिक्षकों का सक्रिय सहयोग मिला।

आजमगढ़ के जियनपुर प्रखण्ड में २० कार्यकर्ता १० टोलियों में घूमे। कुल ६१ ग्रामदान प्राप्त हुए।

फैजाबाद के पूराबाजार और गाजीपुर के मोहम्मदाबाद प्रखण्डों में अभियान जारी है।

'बस्ती जिले में ३० कार्यकर्ताओं का एक शिविर ३० अगस्त को हुआ। उसके बाद से अभियान चल रहा है। इस प्रकार मगहर क्षेत्र के गोरखपुर, देवरिया और बस्ती इन तीनों जिलों में भी ग्रामदान तूफान की हवा पहुँच गयी है।'

बरेली से प्राप्त सूचनानुसार २२ अगस्त को स्वामी कृष्ण स्वरूप और श्री ओमप्रकाश गौड़ की उपस्थिति में हुई विचार-गोष्ठी में जिले में ग्रामदान-अभियान चलाने की सम्भावना पर विचार हुआ। वहाँ शीघ्र ही तूफान शुरू होने की आशा है।

फर्रुखाबाद जिले में अभियानों और शिविरों का सिलसिला चल रहा है।

मध्य प्रदेश में दो नये प्रखण्डदान

इन्दौर से प्राप्त सूचनानुसार प० निमाड़ में सेगाँव और सरगुजा में सीतापुर प्रखण्डों का दान घोषित हुआ है।

भारत में ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

२६ अगस्त '६८ तक

भारत में				बिहार में			
प्रान्त	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान	जिला	ग्रामदान	प्रखण्डदान	जिलादान
१ बिहार	२५ ६२६	२००	२	पूर्णिया	८,१५७	३८	१
२ उड़ीसा	८ ५०६	३६	—	दरभंगा	३ ७२०	४४	१
३ उत्तर प्रदेश	७ ६०४	४५	२	मुजफ्फरपुर	२ २०६	३४	—
४ तमिलनाड	५ ३०२	५०	१	मुंगेर	२ ०६१	१८	—
५ आंध्र	४ २००	१०	—	हजारीबाग	१,२७३	४	—
६ म० पंजाब	३ ६३३	६	—	गया	१ २१७	२	—
७ महाराष्ट्र	३ १०६	११	—	संथाल परगना	१ ०२४	२	—
८ मध्यप्रदेश	३ २६७	८	१	सारण	८६८	६	—
९ असम	१४ ६	१	—	पलामू	८२२	५	—
१० राजस्थान	१ ०२१	—	—	सहरसा	२ ३२२	१६	—
११ गुजरात	८०३	३	—	भागलपुर	४६५	३	—
१२ बंगाल	६४४	—	—	सिंहभूमि	४११	४	—
१३ कर्नाटक	४१०	—	—	धनबाद	५३४	१	—
१४ केरल	४०६	—	—	शाहाबाद	११४	१	—
१५ दिल्ली	७४	—	—	चम्पारण	२४८	१६	—
१६ हिमाचल प्रदेश	१७	—	—	राँची	८४	—	—
१७ जम्मू-कश्मीर	१	—	—	पटना	४७	—	—

दरभंगा जिलादान में	प्रखण्डदान		४४	ग्रामदान		३,७२०
पूर्णिया	"	"	"	३८	"	८,१५७
तिरुनलवेली	"	"	"	३१	"	२ ८११
बलिया	"	"	"	१८	"	१,४११
उत्तरकाशी	"	"	"	४	"	५६६
टीकमगढ़						(अप्राप्त)

बिहार में जिलादान	२	प्रखण्डदान	२००	ग्रामदान		२५,६२६
उत्तर प्रदेश में "	२	"	४५	"		७,६०४
तमिलनाड में "	१	"	५०	"		५ ३०२
मध्यप्रदेश में "	१		८	"		३,२६७
भारत में "	६	"	३७३	"		६६,१३५

विनोबा निवास बेतिया चम्पारण

—कृष्णराज मेहता

मुजफ्फरपुर जिलादान-समारोह

आगामी ११ सितम्बर '६८ को विनोबा जयन्ती के अवसर पर मुजफ्फरपुर में जिलादान-समारोह आयोजित किया जा रहा है। आशा की जाती है कि इस अवसर पर देश में और भी जिलादानों की घोषणा हो सकेगी।

श्रद्धांजलि

उत्तर प्रदेश रचनात्मक परिवार के वरिष्ठ सदस्य श्री रामस्वरूप गुप्त का कानपुर में दिनांक २०-८-'६८ को देहावसान हो गया। उनकी स्वर्गीय आत्मा को हमारी विनम्र और हार्दिक श्रद्धांजलि।

ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आन्दोलन की कुछ विशिष्ट पुस्तकें

देश की समस्याएँ और ग्रामदान	जयप्रकाश नारायण	०-८०
ग्रामदान : शंका-समाधान	धीरेन्द्र मजूमदार	(प्रेस में)
गाँव का विद्रोह (संशोधित; परिवर्तित)	राममूर्ति	१-२५
जनता का राज	मनमोहन चौधरी	०-२५
ग्रामदान : प्रचार, प्राप्ति और पुष्टि	राममूर्ति	१-००
तूफान यात्रा	सुरेश राम	३-००
ग्रामदान-मार्गदर्शिका	मनमोहन चौधरी	०-५०
ग्रामदान क्यों ?	चारुचन्द्र भण्डारी	१-२५
गाँव-गाँव में अपना राज	श्रीकृष्णदत्त भट्ट	०-५०
लोकस्वराज्य	जयप्रकाश नारायण	०-६०
आजादी खतरे में	"	०-४०
लोकशक्ति का उदय	राममूर्ति	०-३५
चुनाव और लोकतंत्र	संकलन	०-७५
कोरापुट के ग्रामदान (निर्माण-कार्य)	अण्णा सहस्रबुद्धे	०-६०
तमिलनाड के ग्रामदान	वसन्त व्यास	२-००
कोरापुट के ग्रामदान	"	२-००
गुजरात के ग्रामदान	"	२-००
आन्ध्र के ग्रामदान	"	१-००
मध्यप्रदेश का ग्रामदान : मोहकरी	"	१-००
ग्रामसभा : स्वरूप और संगठन	रामचन्द्र राही	०-४०
गाँव बचायें देश बनायें (कहानी)	"	०-६०
गाँव की पुकार (लघु नाटिका)	"	०-५०
सुनो कहानी मनफर की	प्रेमभाई	१-००
शान्ति-सेना क्या है ?	नारायण देसाई	०-५०
भारत में शान्ति-सेना	"	०-२५
किशोर पत्र	"	०-३०
शान्ति-गीत	"	०-३०
स्वाध्याय	"	०-२०
दंगाशमन	"	०-१५
शान्ति-केन्द्र	"	०-१५
मार्गदर्शिका : शान्ति-सैनिकों के लिए	"	०-७५
गाँव की खादी	"	०-२५
अहिंसक शान्ति का नया आयाम : बिहारदान		०-२५
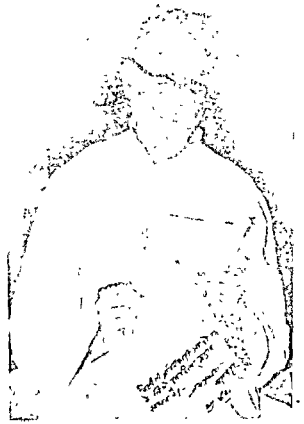
आन्दोलन की पत्र-पत्रिकाएँ

			वा० शुल्क
भूदान-यज्ञ	हिन्दी	साप्ताहिक	१०-००
गाँव की बात	हिन्दी	पाक्षिक	४-००
भूदान तहरीक	उर्दू	पाक्षिक	४-००
नयी तालीम	हिन्दी	मासिक	६-००
सर्वोदय	अंग्रेजी	मासिक	६-००
न्यूज लेटर	अंग्रेजी	मासिक	१०-००
विनोबा-चिन्तन	हिन्दी	मासिक	६-००

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

गांधी-जयन्ती
भूदान-यज्ञ
वर्ष
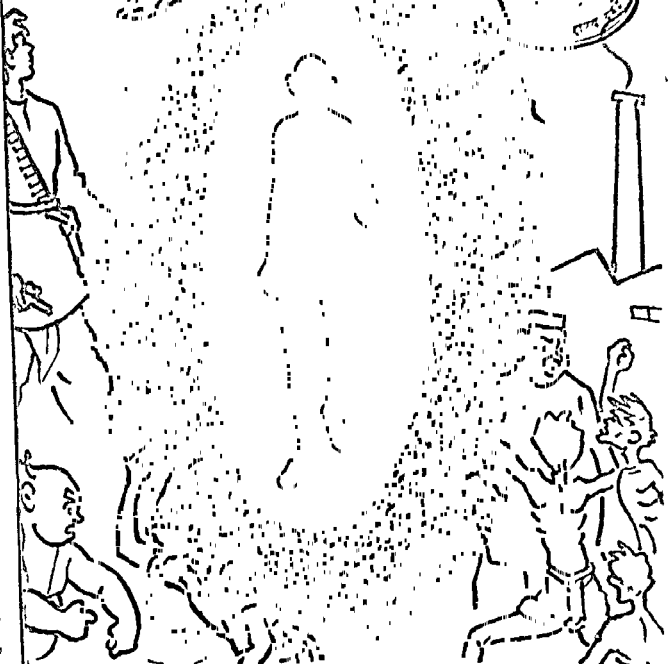
मेरे इस दुनिया से चले जाने के बाद कोई भी एक आदमी पूरी तरह मेरा प्रतिनिधित्व नहीं कर सकेगा। लेकिन मेरा थोड़ा थोड़ा अंश सबमें जीवित रहेगा। अगर हर आदमी ध्येय को पहला स्थान और स्वयं को अंतिम स्थान दे, तो मेरे जाने से पैदा हुई रिक्तता बड़ी हद तक पूरी हो जायेगी।

—मो० क० गांधी

महात्मा गांधी लास्ट फेज—खण्ड २, पृ० ७८२

गांधीजी अपने ग्रन्थों से बड़े थे

गांधीज्म एक इज्म है ऐसा जिस किसी ने माना, वह समझा नहीं है। वे तो ऐसे पुरुष हो गये जो बहुत व्यापक विचार करनेवाले थे और लगभग स्मृतिकारों की कोटि में आते हैं। किसी ने उनकी तुलना ईसा के साथ की है, किसी ने तिलक के साथ की है। मेरी राय में उनकी तुलना स्मृतिकारों के साथ हो सकती है। मनु और याज्ञवल्क्य के साथ हो सकती है, जिनका व्यापक विचार जीवन के सब पहलुओं को स्पर्श करता है। लेकिन उनको आध्यात्मिक प्रतिभा अन्दर से ही मिलती है। इसलिए उनकी तुलना किसी के साथ नहीं हो सकती। गांधीजी बहुत व्यापक समाज शास्त्र थे। फिर भी मनु में और उनमें एक फर्क था। मनु चिन्तन-प्रधान थे और गांधीजी सेवा-प्रधान थे।

जहाँ तक जीवन का सवाल आता है, वहाँ वे व्यापकता के साथ विचार करते हैं। उस हालत में संस्कृति का सवाल आता है। इस बारे में अगर सोचना है, तो टाल्स्टाय और रवीन्द्रनाथ ठाकुर काफी व्यापक विचारक थे, लेकिन गांधीजी ऐक्टिविस्ट (कर्मप्रधान) थे। विवेकानन्द मिस्टिक (रहस्यवादी) थे। गांधीजी का वर्णन करना है तो वे ऐक्टिविस्ट-प्रधान थे, मिस्टिक गौण थे। विवेकानन्द मिस्टिक प्रधान थे, ऐक्टिविस्ट गौण थे।

गांधीजी ने जो प्रभाव डाला, वह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष भी है। उनके इन्स्पिरेशन में संस्कृति का काफी स्थान है। मेरा मानना है कि अगर कल्चरल आस्पेक्ट (सांस्कृतिक दृष्टिकोण) से देखना है तो किसके जीवन का उनके ऊपर प्रभाव रहा यह देखना होगा। इसलिए मैंने कहा था कि गांधीजी की खूबी यह थी कि वे अपने ग्रन्थों से बड़े थे, और कवि शेक्सपियर तथा मिल्टन अपने ग्रन्थों से छोटे थे—जीवन के खयाल से। उन्होंने बहुत प्रतिभावान ग्रन्थ लिखे, लेकिन गांधीजी का जीवन बहुत ऊँचा, अच्छा और उन्नत था, एक्सप्रेशन में—विचार प्रकट करने में, वे कमजोर थे। इसलिए किताब से भी उनके जीवन में अधिक प्रतिभा थी।

मावला, इन्दौर ; ३०-८-'६०

— विनोबा

वर्ष : २ —गांधी के देश में गांधी— अंक : ४

जीवन-स्तर का सवाल और मजदूर नेता

"हाँ, तो मिस्टर राजन्, इस हड़ताल के पीछे आप लोगों की माँग क्या है ?" अपनी नोट बुक संभालता हुआ मैं कुछ इतमीनान से बैठकर, दिल्ली के एक प्रमुख मजदूर नेता से पूछता हूँ।

"जनाब, आप अखबारवाले होकर भी इस हड़ताल के उद्देश्य से परिचित नहीं ? ताज्जुब है।" मिस्टर राजन् तीखी नजरों से मुझे घूरते हैं।

मैं जरा सहम जाता हूँ। लेकिन पत्रकारिता करता हूँ इसलिए नेताओं के इस प्रकार के भावों से अच्छा खासा परिचय है। जवाब देते हुए पूछता हूँ :

"माफ कीजिएगा, बात यह है कि हड़ताल के जाहिर उद्देश्यों से तो मैं भली प्रकार परिचित हूँ, लेकिन अभी मैं विशेष तौर पर आप जैसे चोटी के मजदूर नेताओं से व्यक्तिगत रूप से मिलकर उनके विचार जानने की कोशिश में निकला हूँ और इसीलिए... ...।"

"ओफ्फो ! तो यों कहिए कि आप हड़ताल के बारे में मेरा वक्तव्य चाहते हैं।" मिस्टर राजन् अपनी शानदार मेज के कोने में लगी हुई बिजली की घंटी का बटन दबाते हैं। "लिजिए... सिगरेट पीजिये। आपको कुछ भी कष्ट नहीं करना पड़ेगा। वक्तव्य मेरा पी० ए० (निजी सचिव) तैयार कर रहा है, अभी आ जाता है। मैं तो खुद ही शाम तक उसे प्रेस भेजनेवाला था।...खैर, अच्छा हुआ आप आ गये। आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई।" मिस्टर राजन् एक साथ इतनी बातें सुनाते हुए सिगरेट पेश करते हैं।

कुछ हिचक के साथ मैं दो सिगरेटें सुलगाकर एक मिस्टर राजन् को थमाता हूँ, और एक से खुद ही धुएं का बादल बनाना शुरू कर देता हूँ। सिगरेट के धुएं का बादल बनाना मेरा खास शौक है।

मिस्टर राजन् के छोटे-से लेकिन निहायत खूबसूरत 'फ्लैट' के इस सजे-सजाए 'ड्राइंग-रूम' में मार्कोपोलो की भीनी-भीनी चाकलेटी सुगंध भर जाती है। वैसे मेरी अपनी जेब तो इतनी महँगी विदेशी सिगरेट पीने की इजाजत नहीं देती, लेकिन धंधा मेरा ऐसा है कि बड़ों के यहाँ आना-जाना रहता है, और यह मालूम होते ही कि मैं अमुक प्रमुख दैनिक का विशेष प्रतिनिधि हूँ, मेरे लिए खातिरभाव कुछ विशेष हो जाता है। और तब बसों और सड़कों पर भीड़ में चलते समय बीड़ी और सस्ती सिगरेटों की जी मिचलानेवाली गंध से थोड़ी देर के लिए ही सही, राहत मिल जाती है।

"यस सर् !" मिस्टर राजन् का पी० ए० आता है।

"देखो, हड़तालवाला मेरा वक्तव्य (मेरी ओर इशारा करते हुए) आपको दे दो।... ...और 'बॉय' को कह दो, चाय भेज दे।"

पी० ए० फिर 'यस सर' दुहराता हुआ वापस लौट जाता है; और चंद मिनटों में ही वक्तव्य की एक प्रति मुझे थमा जाता है :

वक्तव्य को सरसरी निगाह से देख जाता हूँ। कुछ पूछने की इच्छा होती है, कि तभी मिस्टर राजन् की आवाज मेरा ध्यान उनकी ओर खींचती है :

"देखो भई, तुम अखबारवाले लोग भी इस देश की समस्याओं को सामने नहीं लाते, सर्वहारा मजदूरों की तकलीफों की ओर सरकार और समाज का ध्यान नहीं दिलाते, तो कभी-कभी यह सोचकर बहुत दुख होता है कि इस देश का भविष्य आखिर किधर जा रहा है ? स्वराज्य हुए २१ साल हो गये। इतने दिनों में बच्चा बालिग हो जाता है, लेकिन यह देश आज भी जहाँ का तहाँ पड़ा है। ऐसा लगता है कि इस स्वराज्य-शिशु के पैदा होते ही इसे लकवा मार गया। अब तक उठ-बैठ पाने की शक्ति शरीर में नहीं आयी, पता नहीं कभी आयेगी भी या . . . ।"

"माफ कीजिएगा मिस्टर राजन्, क्या मैं जान सकता हूँ कि आपकी इस बात से और जरूरत के आधार पर वेतन की केन्द्रीय सरकारी कर्मचारियों की माँग से क्या सम्बन्ध है ? और जिस हड़ताल के कार्यक्रम में आप अपनी पूरी शक्ति लगा रहे हैं, वह देश के हित में कहाँ तक उचित है ?" मैं पूछता हूँ।

"मिस्टर अमरेश, आप सर्वहारा वर्ग के होकर भी अपने वर्ग के हित को नहीं समझ पा रहे हैं ? ताज्जुब है। आखिर, केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों की माँग इतनी ही तो है कि कम से-कम २०० रुपये माहवार हर कर्मचारी को मिले ! इस जमाने में अगर दो सौ रुपये भी न मिले, तो बताइये न कि कोई कैसे अपने परिवार का खर्च चलाये, कैसे अपने जीवन का स्तर ऊंचा उठाये ? आप क्या चाहते हैं कि लोग भूखे मरें ? नंगे रहें ? इसी से देश का हित सधेगा ?" मिस्टर राजन् कुछ रोष के साथ कहते हैं।

"लेकिन भारत की आर्थिक स्थिति को देखते हुए तो...।"

"यह सब बुर्जुवा लोगों की थोथी दलीलें हैं। सरकार की सोआरटब बातें हैं। भारत का आर्थिक विकास नहीं हुआ, यह

सरकार के निकम्मेपन के कारण, इसके लिए सरकारी कर्मचारी क्यों कष्ट झेलें ? उनकी माँगें पूरी होनी ही चाहिए, चाहे सरकार की जो भी मजबूरी हो।" मिस्टर राजन् मेरी बात को बीच में ही काटकर अपना तर्क पेश करते हुए जोर देकर कहते हैं।

मेरा अनुभव है कि नेता जब जोश में आते हैं तो सुनते नही, सिर्फ बोलते हैं। और वही सिलसिला यहाँ शुरू हो रहा है, यह अन्दाज करना कठिन नही था। इसलिए अब में मिस्टर राजन् से विदा लेना ही उचित समझता हूँ।

"अच्छा तो, मिस्टर राजन्, अब आप इजाजत दीजिये, आपका काफी वक्त लिया, बहुत-बहुत शुक्रिया।"

"अजी, ऐसी क्या जल्दी है, बैठो बैठो ! अभी तो तुमे चाय वाय भी नही पी।" मिस्टर राजन् मुझे बैठने को मजबूर करते हैं। इसी बीच 'बॉय' चाय रख जाता है। जापानी डिजाइन की खूबसूरत ट्रे और टी-सेट में चाय का जायका कुछ बढा हुआ ही मालूम होता है।

"अमरेश, यह टी-सेट मेरे एक जापानी मित्र ने भेंट की थी, जब मैं वहाँ के मजदूर सम्मेलन में 'लेक्चर' देने गया था।"

"जी हाँ, काफी खूबसूरत है।"

"यहाँ पूरे सेट की कीमत पाँच सौ से कम नही होगी।"

पाँच सौ ! मैं हैरत में पड जाता हूँ। चाय पीने के लिए मजदूर नेता के पास पाँच सौ का एक टी-सेट ! फिर अपने आप पर कुछ रंज भी होता हूँ। 'क्या उलझ गया मैं भी इस टी-सेट और उसकी कीमत में ? मैं तो 'इंटरव्यू' लेने आया हूँ। अपना काम है नेताओं की बात जनता तक पहुँचा देना, लेकिन !

"क्या सोच रहे हो अमरेश ! भई, तुम लिखनेवालों का कोई ठिकाना नहीं, कि कब कहाँ खो जाओ !" मिस्टर राजन् वातावरण को हलका बनाने के लिए पूछते हैं।

"मिस्टर राजन्, मेरे मन में एक खयाल आ रहा था कि सचमुच हमारे देश का जीवन-स्तर बहुत नीचा है। वह ऊपर उठना ही चाहिए। लेकिन यह तय नही कर पा रहा हूँ कि करोडों की सख्या में देश के देहातों में फैले किसान मजदूर—जिनको दोनों वक्त खाना नही मिलता, तन पर जिनके पूरा कपडा नही रहता, टूटी और गंदी झोपडियों में जिनकी जिन्दगी बीत जाती है, पहले उनका जीवन-स्तर ऊपर उठाने की कोशिश होनी चाहिए, या जिन्हें सौ डेढ सौ रुपये माहवार बंधे बंधाये मिल जाते हैं, उन्हें कम से कम दो सौ रुपये माहवार मिले, इसकी कोशिश होनी चाहिए ? पहले कौन ?'

जान पडता है कि पहले मुझे जाने की जल्दी थी और मिस्टर राजन् रोकना चाहते थे, अब मुझे जाने की जल्दी नही है, मिस्टर राजन् को जल्दी है मुझे टालने की। इसीलिए मेरी बात सुनकर कहते हैं।

'अच्छा, भई अमरेश, माफ करना, जरा मुझे बाहर जाना है, मैं भूल गया था, तीन पैंतीस पर मेरा एक 'इनगेजमेंट' है। फिर कभी मिलेंगे तो इन प्रश्नों पर चर्चा होगी। तुम नवजवान पत्रकार हो, देश दुनिया की बातें समझने की बराबर कोशिश करते रहो। फिलहाल इतना ही मानो, कि हडताल तो देश में काम करनेवालों की सत्ता स्थापित करने की दिशा का एक प्रयास है। अच्छा बाई बाई।" मिस्टर राजन् फुर्ती से उठकर अन्दर चले जाते हैं, और मैं नमस्कार करता हुआ बाहर आ जाता हूँ।

गांधी का प्रचार और भारत के टूटते सपने

छोटी छोटी बातों से भी मेरा मन प्रभावित होता रहता है। कभी-कभी ऐसा लगता है कि मेरे अन्दर उदासी का कुहरा भर गया है, जैसे पहाडों पर बने मकानों में खिडकी खुलने पर भर जाता है। शायद इसीलिए मेरे मित्र मुझे भावुक और अव्यावहारिक बताते हैं, घरवाले तो यहाँ तक कह डालते हैं कि तुमको नाहक भगवान ने इस दुनिया में भेज दिया। तुमको तो किसी और ही लोक में पैदा होना चाहिए था। कुछ समझदार माने जानेवाले लोग मौका मिलने पर सदुपदेश भी मुफ्त ही दे जाते हैं—'सारी दुनिया की चिन्ता करके अपनी जिन्दगी क्यों बरबाद कर रहे हो ? होनहार युवक हो, दुनिया में रुपये-पैसे की कमी नही है, कमी है सिर्फ उसे कमानेवाले बुद्धिमान लोगों की। भगवान की कृपा से अच्छी सेहत के साथ ही तेज बुद्धि भी मिली है, जमकर कमाओ, डटकर खाओ, दुनिया के मजे लूटो। यह जिन्दगी बार बार नही मिलनेवाली है।'

लेकिन इन सदुपदेशों को न जाने क्यों मेरा दिल कबूल नहीं कर पाता। सोचता हूँ, आदमी अपने लिए ही जिया, अपने सुख के लिए किया, तो क्या जिया और क्या किया ? और, सुख भी क्या दुनिया में आज जो दर्द का दरिया उफन रहा है, उससे दबा रह सकेगा ?

अब यही हडतालवाली बात ! मुझे शुरू में बहुत सहानुभूति थी इन हडताल करनेवालों से। लेकिन जब से मिस्टर राजन् के यहाँ से लौटा हूँ, तब से न जाने कहाँ से मन

में यह सवाल कांटे की तरह चुभ गया है कि क्या यह देश उन्हीं का है जो अपनी माँगों के लिए देश की जिन्दगी को छिन्न-भिन्न कर सकते हैं ? अपनी माँग पूरी कराने के लिए हड़तालें करा सकते हैं, ईंट पत्थर चलवा सकते हैं ? उन करोड़ों-करोड़ गूँगे लोगों का भी इस देश में कोई स्थान है या नहीं, जो सदियों से इस धरती को खून का पसीना बनाकर सींचते आये हैं ? शासकों, सैनिकों और सभ्य माने जानेवाले समाज का पेट भरते आये हैं ! जो आज भी गूँगे हैं; और रोज-रोज की बढ़ती हुई इन माँगों का बोझ स्वीकारते और ढोते चले जा रहे हैं। काश ! ये करोड़ों गूँगे लोग भी कभी एक साथ अपनी आवाज लगाते, देश के सामने अपनी माँगें रखते ! तब, शायद उस आवाज से देश का तिनका-तिनका सिहर उठता। लेकिन ऐसा कभी होगा ? कौन इन गूँगे लोगों को वाणी देगा ?

"हेलो ... अमरेश ... कहाँ जा रहे हो यार खोये-खोये से ? दिल्ली की सड़कों पर इस तरह दीवाना बनकर चलना ठीक नहीं मेरे दोस्त ! कहीं टकरा गये तो मुश्किल होगी।" साइकिल की घण्टी की टन ... टन और कृष्णकान्त की बेतकल्लुफ आवाज सुनकर मैं कुछ चौंक-सा जाता हूँ।

"अरे कृष्णकान्त ! कहाँ जा रहे हो इस जर्जर साइकिल को घसीटते हुए ?" मैं कुछ हल्का होकर पूछता हूँ।

"भई, आजकल एक नये हकीमजी के यहाँ चूरन बनाने की नौकरी कर रहा हूँ।"

"हकीम और चूरन ...? पागल तो नहीं हो गये ...? तुम्हें इससे क्या लेना-देना ...? वैसे कलाकार आधा पागल तो ...।" कृष्णकान्त की बात पर मुझे हँसी आती है।

"बात कुछ पागलोंवाली ही है अमरेश; लेकिन यहाँ फुटपाथ पर खड़े होकर नहीं ... चलो, चाय पिलाओ, वहाँ सामने वाले रेस्तराँ में बैठकर बताऊँगा।"

कृष्णकान्त की हमेशा की यही आदत है। जब भी मिलेगा, उसकी एक ही फरमाइश होगी, 'यार, चलो चाय पिलाओ।'

हम रेस्तराँ में बैठ जाते हैं। चाय का आर्डर देने के बाद मैं कृष्णकान्त की ओर रुख करता हूँ।

"हाँ, तो जरा अपने नये हकीम और चूरन चटनीवाली चटपटी बात तो बताओ, यह कौन-सा नया धंधा ढूँढ निकाला है ?" मैं पूछता हूँ।

"बुरा न मानना यार; छोटा आदमी हूँ, बड़ों के बारे में कह रहा हूँ। लेकिन दिल में जो पक रहा है उसे कहीं-न-कहीं तो उगलना ही पड़ेगा न ?" कृष्णकान्त के चेहरे पर कुछ परेशानी के भाव दिखाई देते हैं।

कृष्णकान्त एक लोकप्रिय कलाकार है। उसके बनाये चित्र लोग बहुत पसन्द करते हैं। लेकिन चित्र बनाने के धन्धे से पूरे परिवार का पेट नहीं भरता। इसलिए एक अखबार में कार्टून बनाने की चार घंटेवाली नौकरी के बाद फुटकर काम तलाशता रहता है। बड़ी मिहनत से गृहस्थी की गाड़ी खींच पाता है।

"बात तो सुनाओ, कि पहेली बुझाते रहोगे ?" मूल बात को जानने के लिए मैं जरा उतावला हो आता हूँ।

"तुम जानते हो न; सन् १९६९ में देश-विदेश में गांधी-जन्म-शताब्दी मनाने की तैयारियाँ हो रही हैं।"

"हाँ, हो रही हैं। तो ?"

"मुझे विदेशों का नहीं पता, लेकिन इस देश में तो गांधी की हड्डियों को कूट-पीसकर, घिस-घासकर, भून-भानकर चूरन-चटनी की तरह बेच डालने की ही कोशिश चल रही है, अमरेश। बहुत तकलीफ हो रही है यह सब देखकर !"

"कृष्णकान्त, लगता है तुम अबतक आधे पागल थे, अब पूरे पागल हो गये हो। नहीं तो जो बात तुम कह रहे हो, भला एक सही दिमाग का आदमी उसे सोच भी सकता है ?"

"मुझ पर क्यों बिगड़ रहे हो यार, जानते हो मिस्टर 'क' को ? है कोई वास्ता उनकी जिन्दगी से और गांधी से ? लेकिन आजकल वे गांधी की ही नींद सोते-जागते हैं। उनके लिए गांधी-जन्म-शताब्दी का अर्थ है—सिर्फ एक लाख रुपये। समझे ?"

"और उसमें तुम्हें भी कुछ जूठन चाटने-चूटने को मिल जायेगा, इसीलिए इस धंधे में तुम भी शरीक हो गये हो, है न ?"

"यही तो मेरी बेचैनी है अमरेश, कि पेट के लिए यह भी करना पड़ रहा है।" कृष्णकान्त दुखी होकर कहता है।

"लेकिन किसी एक व्यक्ति को लेकर तुम पूरे जन्म-शताब्दी के काम पर कीचड़ उछालो, यह तो ठीक नहीं है। और, फिर आदमी बदलता भी तो है, कौन जाने मिस्टर 'क' के जीवन में एक नया मोड़ आ रहा हो, और गांधी का प्रभाव उनपर पड़ रहा हो। यह क्यों नहीं सोचते कि एक गलत आदमी सुधर रहा है, गांधीजी के विचारों का प्रचार करने में जुटा है।" मैं कृष्णकान्त को समझाने की कोशिश करता हूँ।

जिन मिस्टर 'क' की बात कृष्णकान्त कर रहा है, उन सज्जन से मैं भी परिचित हूँ। चालू किस्म के आदमी हैं। अवसर कभी चूकते नहीं, हर हालत में कुछ व्यापारिक लाभ उठा ही लेते हैं। उनके लिए यह कठिन नहीं है कि गांधीजी की जन्मशती मनाये जाने वाले अवसर का भी कुछ सदुपयोग कर लें। लेकिन यह कृष्णकान्त भी जरा जल्दी ही किसी के बारे में

राय बना लेता है। और, एक बार जब राय बना लेता है तो नीचे-से-नीचे स्तर तक जाने में उसे देर नहीं लगती, इसलिए मैं उसकी बातों को बहुत महत्व नहीं देता हूँ।

"गाधी के विचार-प्रचार में नहीं जुटा है वह, जुटा है गाधी की भावना का व्यापार करने में। गाधीछाप कैलेण्डर बनाओ और बाँटो, कागज दबानेवाले पत्थर और शीशे (पेपरवेट) पर गाधी का चित्र बनाकर बेचो, कलम और पसिल पर गाधी का नाम लिखवाकर बेचो, गाधीछाप दियासलाई का कारखाना खोलो, यही सब धंधे हैं उसके आजकल। क्या इसीसे गाधी का विचार फैलेगा, गाधी की आत्मा अमर रहेगी? मेरी सिखावन पर कृष्णकान्त भल्ला उठता है।

चाय हमारी धरी धरी ठंडी हो गयी है। बातों की गर्मी कुछ बढ गयी है।

"अमरेश, गुलाम भारत ने आजादी की ओर में एक नयी जिन्दगी का, नये समाज का, नये देश का सपना देखा था। सरल हृदयवाले लोगों ने मान लिया था कि भोर का देखा हुआ सपना सच होता है। लेकिन क्या तुम नहीं देखते कि वह सपना टूट गया सच नहीं हो सका? गुलामी की अधेरी रातों में चाँद बनकर जिस गाधी ने रोशनी दिखायी थी, वह चला गया। अब कौन है जो वह रोशनी दे और उस रोशनी के साथ एक नयी चेतना पैदा करनेवाली शीतलता दे?' कृष्णकान्त बहुत भावुक हो उठा है। उसकी आँखों से उसके दिल का दर्द झाँक रहा है।

"ठीक कहते हो, अमरेश, गाधी ने इस देश का एक बडा आकार सबकी आँखों के सामने सजीव रूप में खडा कर दिया था। देश का एक एक आदमी इस बडे देश की महान आत्मा का अंश बन गया था। लगता था कि सब-के-सब महान हो गये हैं, लेकिन आज ऐसा नहीं रहा। इस देश के नेता और समझदार कहे जानेवाले नागरिक बौने हो गये हैं। देश के बडे और विशाल भवन को छोडकर अपने अपने घरौंदो में सिमट गये हैं। संकुचित स्वार्थों के हमारे ये घरौंदे आपस मे टकरा रहे हैं, और टूट-टूटकर लगातार छोटे होते जा रहे हैं। पूरे देश के जीवन मे टूटने का ही सिलसिला चल रहा है। ऐसा लगता है कि भारतवासी अब आपस मे जुडना सदा सदा के लिए भूल ही जायेंगे। सच है कि ऐसी घडी मे गाधी की प्रतिमा नहीं, गाधी की आत्मा की जरूरत है। उसके विचारों की दिशा में आगे बढकर नये मनुष्य, नये समाज और नये देश को बनाने की बुनियाद डालने की जरूरत है। लेकिन यह कैसे होगा? कौन कर सकता है उसे?

कृष्णकान्त की कडवी बातें ध्यान से उतर जाती हैं। दिमाग में गूँज रही है केन्द्रीय कर्मचारियो की माँग गाधी की याद।

हम बिल के पैसे चुका कर रेस्तराँ से बाहर निकल आते हैं।

चाँदनीचौक का चौराहा और भारत की एक नारी

पत्रकारो की जिन्दगी हवा पर डोलती फिरती है। उसमें कहीं स्थिरता नहीं होती। इस क्षण यहाँ, तो उस क्षण वहाँ। खबरों के पीछे भागते-फिरने में एक विशेष प्रकार का मजा आता है, यह बात सही है, लेकिन कभी-कभी जब तबीयत थक जाती है तो इस जिन्दगी से ऊब भी होने लगती है।

आज सुबह उठते ही दफ्तर से साहब का फोन आया कि बिहार के पूर्णियाँ जिले में नक्सलबाडी-जैसी कुछ हरकत भव भी हो रही हैं। वहाँ जाकर रिपोर्ट लानी है। मुझे जरा भी इच्छा नहीं थी कि यात्रा में निकलूँ, लेकिन नौकरी करता हूँ, तो चाहे मनचाहे साहब का हुक्म मानना फर्ज है। इसलिए निकल पड़ा हूँ। आठ बजे हैं। असम मेल के छूटने में सिर्फ ४५ मिनट की देर है। टैक्सीवाले को और जल्दी, और तेज गाडी चलाने के लिए लगातार कहता जा रहा हूँ। अचानक चाँदनीचौक के एक चौराहे के पास आकर गाडी झटके से रुक जाती है। टैक्सी ड्राइवर सरदारजी रास्ते पर खडी भीड़ को एक भद्दी सी गाली देते हुए उतर पडते हैं। भीड़ में किसी के फूट फूटकर रोने की आवाज सुनाई पडती है। सरदारजी को पुकारना चाहता हूँ। कहीं गाडी न छूट जाय, इसका भय हो रहा है। लेकिन रुलाई की आवाज में इतना दर्द है कि मैं खुद भी उतर पडता हूँ। भीड मे घुसकर देखता हूँ—तीस पैंतीस साल की एक औरत लगभग नगी बैठी है। तन पर एक चिथडा झूल रहा है। लेकिन उसमें तन ढकने की सामर्थ्य बिलकुल नहीं है। दोनों घुटनों को अपनी कमजोर-सी बाहों में कसे हुई है और घुटनों में ही अपना मुँह भी गडाये हुई है। छाती से अलमूनियम का एक अधटूटा जला-काला कटोरा चिपकायी है। धूल सने उलझे बाल बेतरतीबी से बिखरे हुए हैं। जैसा लगता है कि उसके रोम रोम से पसीना नहीं आँसू बह रहा है। रह रहकर उसका पूरा तन काँप उठता है।'

उसकी रुलाई की करुण आवाज और सामने का वह दृश्य मेरे तन-मन में एक सिहरन पैदा कर देते हैं। सोचता हूँ कि इस मामले की कुछ जानकारी लूँ या कम से कम एक फोटो ही...कि तभी सरदारजी की आवाज सुनाई देती है :

"आइए बाबूजी, नहीं तो गाड़ी छूट जायेगी।" और मैं भागकर टैक्सी में बैठ जाता हूँ। टैक्सी तेजी से दौड़ पड़ती है। स्टेशन पहुँचकर भागते-भागते किसी प्रकार असम मेल पकड़ लेता हूँ। गाड़ी का डीजल इंजिन थर्राती आवाज में और कभी-कभी तीखी आवाज में चीखता हुआ बहुत ही तेज गति में भाग रहा है। गाड़ी में सवार होकर मैं महसूस करता हूँ कि दिल्ली पीछे छूट रही है, चाँदनीचौक पहले ही पीछे छूट चुका है, कि तभी उस औरत की रुलाई कानों में गूँज जाती है। ऐसा लगता है कि वह मेरा पीछा कर रही है। टैक्सी की तेज गति उस दर्द-भरी आवाज को पीछे नहीं छोड़ सकी। असम मेल की [illegible] से भी तेज रफ्तार उस रुलाई से अपना पीछा नहीं छुड़ा पा रही है...।

कृष्ण नहीं, राह भटके कौरव

मेरे पूर्णियाँ आने का कारण जानकर अविनाश कहता है :

"*यार, ये नक्सालवाड़ीवाली बातें तो बासी पड़ गयी*, चलो तुम्हें एक नयी चीज दिखाता हूँ।" अविनाश मेरा विद्यार्थी जीवन का साथी है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हम दोनों एक ही साथ पाँच साल तक छात्रावास में रहे हैं। वह पूर्णिया के एक अच्छे जमींदार का लड़का है, एल० एल० बी० करने के बाद पैसा की जगह प्रतिष्ठा कमाने पर तुला हुआ है। इसीलिए उसे समाज-सेवा की धुन लगी है। यह खबर मुझे काफी पहले ही मिल चुकी थी, लेकिन कटिहार में उससे इस तरह अचानक मुलाकात हो जायेगी, यह आशा न थी।

मैं अविनाश के साथ चल पड़ता हूँ। कटिहार से भवानीपुर तक पक्की सड़क है। यहाँ तक जीप से आते हैं। भवानीपुर से पाँच मील बैलगाड़ी पर और उसके बाद तीन-चार मील पैदल।

"यह भी भारत है।" अविनाश कहता है।

"तो मैं कहाँ कहता हूँ कि चीन है। लेकिन इस घोर देहात में मुझे घसीटने से तुम्हें क्या मिला ? मेरी तो पाँव की नसें तन गयी हैं, अब चला नहीं जाता।" मैं थककर और उससे भी अधिक *ऊबकर जवाब देता हूँ। कहाँ दिल्ली की भागती भीड़* और कहाँ इस घोर देहात का जकड़ता हुआ सूनापन !

"इसी बूते पर पत्रकारिता करने चले हो, और ऊपर से नयेपन का दावा भी करते हो ? जनाब, दिल्ली इन्हीं गाँवों से रस खींचकर जी रही है। ये गाँव न रहें तो तुम्हारी दिल्ली भीगी बिल्ली बन जाय।"

अविनाश कुछ मजाक और कुछ व्यंग्य करके थकान को मिटाने की कोशिश करता है।

हम गाँव के करीब पहुँच रहे हैं। एक बुढ़िया माथे पर पटसन का बोझ लिये गाँव की ओर जा रही है। अविनाश को देखते ही कहती है, 'परनाम सरकार'। इधर 'परनाम सरकार' 'परनाम हजूर' 'परनाम मालिक' कहने का रिवाज है। जवाब में लोग 'परनाम-परनाम' दो बार बोलते हैं।

अविनाश बुढ़िया से पूछता है :

"रामउजागर चौधरी गाँव पर हैं ?"

"जी हाँ, मालिक हैं।" बुढ़िया धीमी आवाज में कहती है और हमारे साथ हो लेती है।

हम लोग गाँव के काफी करीब आ गये हैं। 'डग-डग... डम-डम ..डग-डग ... डम-डम'— जैसी आवाज सुनाई पड़ती है।

"क्या गाँव में कोई नाच-तमाशा हो रहा है ? यह बाजा कैसा बज रहा है ?" मैं जिज्ञासा से पूछता हूँ। बुढ़िया हँस पड़ती है।

"नाच-तमाशा नै मालिक, पचैती के डुग्गी बजै छी।" बुढ़िया अपनी बोली में कहती है, जिसे अविनाश मुझे खड़ी बोली में समझाता है—'नाच-तमाशा नहीं मालिक, पंचायत की डुग्गी बज रही है।'

"कैसी पंचायत ?" मेरे इस प्रश्न का जवाब देते हुए अविनाश कहता है :

"*अब जब गाँव में पहुँच ही रहे हो, तो धीरे-धीरे सब* मालूम हो जायेगा। होगी गाँव की सभा किसी समस्या पर विचार करने के लिए। बहुत-सी बड़ी-बड़ी और बड़े-बड़े लोगों की सभाओं में रिपोर्ट लेने गये हो, आज इस छोटे-से गाँव की एक छोटी-सी सभा भी देख लो। भारत की संसद के अधिवेशनों में चोटी के नेताओं के भाषण सुने हो, देश और दुनिया के सवालों पर उनकी बहसें और झड़पें देख-सुन चुके हो, आज इन निपट गँवार लोगों की ग्राम-संसद भी देख लो।"

हम रामउजागर चौधरी के दरवाजे पर पहुँच गये हैं। बाँस और घास-फूस के बने झोपड़ों का ही यह पूरा गाँव है। अविनाश ने ठीक ही बताया था कि पूर्णियाँ के गाँवों में आमतौर

पर घास-फूस के ही मकान बनते हैं।

दरवाजे पर बाँस की बनी एक मचान पर हम जाकर बैठ जाते हैं। हवा में नमी है। थककर चूर हो गया हूँ। इसलिए थोड़ी देर बैठने के बाद लेट जाता हूँ। झपकी-सी आने लगती है।

"भूख न जाने बासी भात, नींद न जाने टूटी खाट।"

अविनाश शायद मुझे झपकी लेते देखकर कहता है।

कुछ देर में झोपड़े से एक अधेड़ सज्जन बाहर आते हैं। 'परनाम परनाम' का अभिवादन होता है। जरा देर बैठकर कुशल समाचार पूछते हैं, और फिर झोपड़े के अन्दर चले जाते हैं।

मचान पर लेटे-लेटे मुझे याद आता है मजदूर नेता मिस्टर राजन् के 'ड्राइङ्ग रूम' का 'सोफासेट', जिसकी मुलायमियत में आदमी बैठते ही धँस जाता है। और, यहाँ मैं एक भूमि के मालिक, वोट के मालिक और नेताओं के भाषणों के अनुसार देश के मालिक किसान के दरवाजे पर लेटा हूँ, जहाँ मचान में लगे बाँस के फट्ठे मेरी पीठ में धँसते जा रहे हैं।

"लीजिये, 'जलखै' कर लीजिये!" रामउजागर चौधरी कासे के एक कटोरे में चूड़ा-गुड़ लाकर रखते हैं, पीतल के चमकते लोटे में जल भी है। अविनाश ने शायद मेरे बारे में बता दिया है कि मैं दिल्ली से आया हूँ।

"इस्स, धन्न भाग, सुदामा के घर सिरी किशुनजी पधारे। हम गरीब लोग का पास अउर का है कि स्वागत् करें श्रीमान् जी का। चाह वाह तो यहाँ मिलती नहीं। थोड़ी देर में भैंस दुहेगी तो थोड़ा गरम गरम दूध..!" बहुत ही संकोच के साथ चौधरीजी अपनी भावना जाहिर करते हैं।

अचानक मैं महसूस करता हूँ कि मेरी आँखें गीली हो गयी हैं। कोई पहले का परिचय नहीं, कोई रिश्ता नाता नहीं, गाँव में आये तो भावना का सागर उमड़ पड़ा। यह भारत के पिछड़े हुए एक गाँव का गँवार है या, भारत की भावना का निर्मल प्रवाह। कहाँ दिल्ली के पैसेवाले रिश्ते नाते और कहाँ यह हृदय का प्रेमभाव!

मेरी इच्छा होती है यह कहने की कि,—'हम कृष्ण नहीं, राह भटके कौरव हैं मेरे भाई।' लेकिन कह नहीं पाता। उठकर हाथ मुँह धोता हूँ, और चूड़ा चबाने लगता हूँ।

गांधी यहाँ हैं, इनकी निगाहों में

रात को कालीथान के नीचे 'पचैती' होती है। थोड़ा सा धान का पुवाल बिखेर दिया गया है। एक लालटेन नीम के पेड़ की निचली टहनी में लटका दी गयी है, जिससे बहुत ही मद्धिम रोशनी फैल रही है।

'पचैती' की चर्चा का विषय है कि हाल ही में विधवा हुई निपूती अभागिन रधिया का दाना पानी कैसे चले? मरद जिन्दा था तो कमाकर खिलाता था, अब उसको सहारा कौन देगा? रधिया के दोनों पाँव में फाइलेरिया है, इसलिए चल फिरकर कमाई नहीं कर सकती।

बहुत देर तक तर्क-वितर्क होता है, और अन्त में सब लोग मिलकर तय करते हैं कि रधिया इस गाँव की 'बेवा' है। अभागिन है तो क्या हुआ, गाँव की 'इज्जत' है। इसलिए गाँव उसकी जिम्मेदारी लेगा। 'ग्रामकोष' से उसे 'खोराकी' दी जायगी। मुझे याद आती है चाँदनीचौक के चौराहेवाली नंगी औरत, उसकी रुलाई, और तमाशा देखनेवाली भीड़।

× × ×

"यह ग्रामकोष क्या है?" मैं अविनाश से पूछता हूँ।

'अभी तक तो तुमको इस गाँव के बारे में कुछ बताया ही नहीं था अमरेश, लेकिन अब वह मौका आ गया है, कि तुम्हें यहाँ लाने का असल मकसद बताऊँ।"

"तो क्या इसके पीछे कोई राज छिपा हुआ है?" मैं पूछता हूँ।

"बात यह है कि यह गाँव ग्रामदानी है। मैं तुझे इसीलिए लाया हूँ कि आँखों से देखो और तब दिमाग से समझो। मैं जानता हूँ कि बुद्धिवालों को सुनकर इस बात पर यकीन नहीं होता कि जो यहाँ चल रहा है, वह वास्तविक है।

"ग्रामदान यानी क्या? तुम्हें इन लोगों ने अपने गाँव का दान कर दिया है?"

"मेरे भोले भाई, यही तुम्हारे लिए राज है। दिल्लीवाले गाँव के दिल को क्या समझेंगे? ग्रामदान एक नया गाँव बनाने का आन्दोलन है, जिसे गांधी के शिष्य विनोबा चला रहे हैं।

"तुम हैरत में पड़ जाओगे अमरेश यह सुनकर कि इस गाँव के सब लोगों ने एक गैर-सरकारी ग्रामसभा बनाकर उसे अपनी अपनी जमीन की मिल्कियत सौंप दी है। हर जमीनवाले ने अपनी जमीन का ५ प्रतिशत भाग बेजमीनवालों को बाँट दिया है। हर किसान अपनी फसल में से चालीसवाँ और, हर मजदूर अपनी मजदूरी में से तीसवाँ हिस्सा निकालकर एक जगह जमा करते हैं, जिसे ग्रामकोष कहते हैं। रधिया को 'खोराकी' देने की जो व्यवस्था हुई, वह इस ग्रामकोष में से।" अविनाश पूरी बात समझाता है।

मुझे बहुत ही कौतूहल हो रहा है। क्या यह सच है? मैं गाँव वालों से तरह-तरह के सवाल पूछता हूँ।

एक नवजवान मेरे एक सवाल का जवाब देते हुए कहता है:

"गाँव की मालिकी न बनायें तो अलग-अलग रहकर भिखारी बनें? अलग अलग मालिकी रखने पर सारी जमीन तो साहूकार हड़प लेता है, कर्ज के सूद में हो। सुना है कि 'कम्युनिस्टों' का राज होगा तो सारी जमीन सरकार छीन लेगी। इस सबसे तो अच्छा है कि जमीन का मालिक गाँव-समाज ही रहे। उसमे तो आखिर हम ही लोग हैं न?"

"सब काम एक राय होकर करोगे? झगडे नही होंगे?"

"होंगे नही तो क्या हम सब देवता बन गये हैं, लेकिन जब साथ-मरना जीना है, तो मिलकर रहने और सबकी राय से काम करने मे ही तो सबकी भलाई है।" एक अधेड़ आदमी मेरे दूसरे सवाल का जवाब देता है।

"आप लोग अपनी जरूरतों को पूरी करने के लिए सरकार के सामने अपनी माँग क्यों नही रखते?"

"सरकार के भरोसे बैठे-बैठे बहुत झख मार लिया गया साहब! नेता लोगों को कहाँ फुर्सत है अपने लडाई-झगडे से। अब तो हमने तय कर लिया है कि: कर बहियाँ बल आपनो, छाडि बीरानी आस।" रामउजागर चौधरी जवाब देते हैं।

समाजवाद के नारे बहुत सुन चुका हूँ, लोकतंत्र की गाथा गाते-गाते मैं खुद ही नहीं अघाता। लेकिन सब हवाई बातें लगती हैं यहाँ आकर।

यह तय है कि जो कुछ आँखों के सामने से गुजर रहा है, वह नही गुजरा होता तो अविनाश की इस बात को मैं गप्प कहकर उड़ा देता, लेकिन बुद्धि जिसे संभव मानने को तैयार नहीं होती, आँखें उसे 'तथ्य' मानने को मजबूर कर रही हैं। लगता है कि भारतीय समाजवाद और वास्तविक लोकतंत्र की शुरुआत तो यही से होगी, गाँवों से...नेताओं से नही, दिल्ली से नही।

× × ×

पंचैती समाप्त हो गयी है। लोग अपने-अपने घर जाकर खा-पीकर शायद सो गये हैं। मैं और अविनाश उसी मचान पर सोये हुए हैं।

मुझे याद आती है दिल्ली की केन्द्रीय कर्मचारियों की हड़-ताल...उनकी कम से कम २०० रुपये माहवारी तनख्वाह की माँग...मजदूर नेता की जीवन-स्तरवाली बात...गांधी की भावना का व्यापार और चाँदनीचौक की रोती-कलपती नंगी देह...। कितने जीवन-स्तर हैं इस देश में? कहाँ से शुरू होगी उसमें तरक्की?...चाँदनीचौक वाली नंगी औरत के स्तर से...इस गाँव की बेवा औरत रधिया के और गरीब ग्रामीणों के स्तर से या केन्द्रीय सरकार के बाबुओं के स्तर से? शायद गांधी ने इसे समझा था। शायद उसकी लंगोटी के पीछे यही राज है कि इस देश के जीवन-स्तर को ऊपर उठाना है तो शुरुआत यहाँ से करनी होगी, भारत के इन गाँवों से।

पंचैती में मैंने एक बूढ़े सज्जन से पूछा था कि आपने गांधी का नाम सुना है?

"दर्शन किया है, भाषण सुना है। दो साल पहले ही तो भवानीपुर आये थे।" उसने जवाब दिया था।

"दो साल पहले!" मैं चौंक उठा था। तब अविनाश ने समझाया था कि 'दो साल पहले विनोबा आये थे' गाँव के अधिक-तर लोग उन्हें ही गाधी समझते हैं।

ये गाँववाले विनोबा को गांधी के रूप में देखते हैं, मै तो इन गाँववालों में ही गांधी का दर्शन कर रहा हूँ।

आकाश में तारे झिलमिला रहे हैं। लगता है कि इस धरती पर बिखरे हुए सत्ता, सम्पत्ति और आज की सभ्यता के पैमाने के अनुसार पिछड़े हुए सीधे-सरल लोगों में गांधी का अंश इन सितारों की तरह चमक रहा है। गांधी के विचारों की बुनियाद पर इन गाँवों में भारत का भविष्य गढ़ा जा रहा है!

... ...

प्रिय सम्पादकजी,

आपने भेजा था मुझे नक्सालबाड़ी जैसी हरकतों की रिपोर्ट लेने के लिए, लेकिन मैं यहाँ से एक दूसरी ही हरकत की तस्वीर भेज रहा हूँ। आशा है कि दिल्ली की रंगीन दुनिया में यह फीकी-सी दीखनेवाली तस्वीर भी काफी महत्त्व की साबित होगी।

आपका,

अमरेश

... ...

प्रिय कृष्णकांत,

तुमने ठीक ही कहा था कि 'कैलेण्डरों' और 'पेपरवेटों' पर गाधी अमर नही होंगे! मेरी इतनी सी बात उसमें और जोड़ लो, गांधी अमर होंगे तो भारत के गाँवों में, गाँववालों की निगाहों में। पत्र के साथ अपने अखबार के लिए तैयार किये गये विवरण की नकल भी है। आशा है, तुम्हें पढ़कर आनन्द आयेगा।

तुम्हारा,

अमरेश

'गाँव की बात': वार्षिक चन्दा: चार रुपये, एक प्रति: अठारह पैसे।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए इंडियन प्रेस (प्रा०) लि०, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित।

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १४ अंक : ५१-५२

बुधवार २ अक्तूबर, '६८

अन्य पृष्ठों पर

आवश्यक सूचना

दशहरे की छुट्टी में प्रेस बन्द रहेगा, इसलिए 'भूदान यज्ञ' का ७ अक्तूबर ६८ का अंक नहीं प्रकाशित होगा। इस अंक के बाद का अंक १४ अक्तूबर को प्रकाशित होगा।

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन : ४१८५

सत्य की शोध

मेरे मन में सत्य ही सर्वोपरि है, और उसमें अगणित वस्तुओं का समावेश हो जाता है। यह सत्य स्थूल—वाचिक—सत्य नहीं है। यह तो वाणी की तरह विचार का भी है। यह सत्य केवल हमारा कल्पित सत्य ही नहीं है, बल्कि स्वतंत्र चिरस्थायी सत्य है, अर्थात् परमेश्वर ही है।

परमेश्वर की व्याख्याएँ अनगिनत हैं, क्योंकि उसकी विभूतियाँ भी अनगिनत हैं। ये विभूतियाँ मुझे आश्चर्यचकित करती हैं। क्षणभर के लिए ये मुझे मुग्ध भी करती हैं। किन्तु मैं पुजारी तो सत्यरूपी परमेश्वर का ही हूँ। वह एक ही सत्य है, और दूसरा सब मिथ्या है। यह सत्य मुझे मिला नहीं है, लेकिन मैं इसका शोधक हूँ। इस शोध के लिए मैं अपनी प्रिय-से प्रिय वस्तु का त्याग करने को तैयार हूँ, और मुझे यह विश्वास है कि इस शोधरूपी यज्ञ में इस शरीर को भी होमने की मेरी तैयारी है, और शक्ति है। लेकिन जब तक मैं इस सत्य का साक्षात्कार न कर लूँ, तब तक मेरी अन्तरात्मा जिसे सत्य समझती है, उस काल्पनिक सत्य को अपना आधार मानकर, अपना दीपस्तम्भ समझकर, उसके सहारे मैं अपना जीवन व्यतीत करता हूँ।

यद्यपि यह मार्ग तलवार की धार पर चलने जैसा है, तो भी मुझे यह सरल से-सरल लगा है। इस मार्ग पर चलते हुए अपनी भयंकर भूलें भी मुझे नगण्य-सी लगी हैं, क्योंकि वैसी भूलें करने पर भी मैं बच गया हूँ और अपनी समझ के अनुसार आगे बढ़ा हूँ। दूर दूर से विशुद्ध सत्य की—ईश्वर की—झाँकी भी कर रहा हूँ। मेरा यह विश्वास दिन प्रतिदिन बढ़ता जाता है कि एक सत्य ही है, उसके अलावा दूसरा कुछ भी इस जगत् में नहीं है। साथ ही मैं यह भी अधिकाधिक मानने लगा हूँ कि जितना कुछ मेरे लिए सम्भव है, उतना एक बालक के लिए भी सम्भव है, और इसके लिए मेरे पास सबल कारण है। सत्य की शोध के साधन जितने कठिन हैं, उतने ही सरल भी हैं। वे अभिमानी को असम्भव मालूम होंगे। और एक निर्दोष बालक को बिलकुल सम्भव लगेंगे। सत्य के शोधक को रजकण से भी नीचे रहना पड़ता है। सारा संसार रजकणों को कुचलता है, पर सत्य का पुजारी तो जब तक इतना अल्प नहीं बनता कि रजकण भी उसे कुचल सकें, तब तक उसके लिए स्वतंत्र सत्य की झाँकी भी दुर्लभ है। यह चीज वशिष्ठ, विश्वामित्र के आख्यान में स्पष्ट रीति से बतायी गयी है। ईसाई-धर्म और इस्लाम भी इसी वस्तु को सिद्ध करते हैं।

मेरी शोध में खामी है, और मेरी झाँकियाँ मृगजल के समान हैं। मेरे समान अनेकों का क्षय चाहे हो, पर सत्य की जय हो। अल्पात्मा को मापने के लिए हम सत्य का गज कभी छोटा न करें।

मैं चाहता हूँ कि मेरे लेखों को कोई प्रमाणभूत न समझे। यही मेरी विनती है। मैं तो सिर्फ यह चाहता हूँ कि उनमें बताये गये प्रयोगों को दृष्टान्तरूप मानकर सब अपने अपने प्रयोग यथाशक्ति और यथामति करें। —मो॰ क॰ गांधी

आश्रम साबरमती मार्गशीर्ष शुक्ल-११.१९८२

भूदान-यज्ञ

वर्ष : १४ | २ अक्तूबर, '६८ | अंक ५१-५२

सौवाँ जन्म-दिन

गांधीजी जीवित थे तो भारत के थे। मरने के बाद दुनिया के हो गये। इसलिए जन्म-शताब्दी-समारोह की जितनी तैयारी हमें भारत में दिखाई देती है उससे कम दूसरे देशों में नहीं है, बल्कि आश्चर्य नहीं कि गुण और गहराई की दृष्टि से कई देश हमसे आगे निकल जायँ।

लेकिन दुनिया उस गांधी की जन्म-शताब्दी नहीं मना रही है जो भारत की आजादी के लिए लड़ा। उसे उस गांधी में भी रुचि नहीं है जिसे हमने 'महात्मा' कहा, और बाद को मार डाला। बाहर की दुनिया ने सचमुच उस गांधी को ढूँढ निकाला है जिसने आज की सभ्यता को उसके अपने अभिशापों से मुक्त करने का रास्ता बताया। आज का मनुष्य अपनी ही सभ्यता से आक्रान्त है उस सभ्यता से जिसको उसने बनाया, सजाया, सँवारा। अपनी ही बनायी हुई सभ्यता का वह इस तरह गुलाम बन जायगा, इसकी उसे कल्पना भी नहीं थी। लेकिन गांधी ने जान लिया था कि जिसे मनुष्य वैभव मान रहा है उसमें कितना विष है।

भारत को गांधी ने 'युद्ध' की एक पद्धति सिखायी। हमने गांधी को बराबर योद्धा के रूप में देखा। जलियाँवालाबाग से लेकर 'क्विट इंडिया' तक गुलाम देश ने गांधी के दूसरे रूपों को पहचाना ही नहीं। यही कारण है कि जो सैनिक सम्मान एक विजयी योद्धा का होना चाहिए वह हमने उसके शव को दी। और, गांधी के बाद हमारी राजनीति ने जो मोड़ लिया उसने गांधी की याद सिर्फ इसी रूप में रखी है कि गांधी एक 'प्रोटेस्टर' थे। वही 'सत्याग्रही' गांधी आज देश के सारे दुराग्रहों और उपद्रवों की प्रेरणा बनाये गये हैं।

अहिंसक प्रतिकार के आविष्कर्ता गांधी, सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा को जीवन धर्म माननेवाले गांधी, की दुनिया को अब जरूरत नहीं रह गयी है, ऐसी बात नहीं है। जबतक अनीति और अन्याय है तब तक प्रतिकार रहेगा। हाँ, यह हो सकता है, और होना चाहिए, कि सभ्यता के विकास के साथ-साथ प्रतिकार की जरूरत कम होती जाय, और प्रतिकार सौम्य से सौम्यतर होता जाय। अगर प्रहार, आक्रमण और हिंसा में निरन्तर कमी न हो तो सभ्यता का क्या अर्थ होगा? गांधी ने अपने जीवन और चिन्तन से यह सिद्ध कर दिया है कि सभ्यता का विकास अहिंसा के साथ जुड़ा हुआ है।

अहिंसा की नींव पर समाज का संगठन हो सकता है, और अहिंसा के आधार पर मनुष्य और मनुष्य के सम्बन्ध विकसित हो सकते हैं। गांधी के इस 'सत्य' को पश्चिम पहचान रहा है, क्योंकि इस सत्य के बिना वह अपनी सभ्यता के अभिशापों और अन्तरविरोधों से मुक्त नहीं हो सकता। आज की सभ्यता की रग रग में भीनी हुई हिंसा मनुष्य के संहार पर उतारू है। त्रस्त मानव मुक्ति के लिए गांधी की ओर देख रहा है। उसे नव-समाज-निर्माता गांधी की जरूरत है। जरूरत तो उससे अधिक हमें है, लेकिन हमारी चेतना पर प्रमाद और राजनीति का पर्दा पड़ा हुआ है।

गांधी जन्म-शताब्दी तो आ गयी लेकिन गांधी ने जिस अहिंसक समाज का 'ब्लू प्रिंट' तैयार किया था उसकी बुनियाद कब डाली जायेगी? प्रसिद्ध शान्तिवादी अंग्रेज विचारक और लेखक पेंश ने एक लेख में सुझाया है कि गांधी की जन्म-शताब्दी के अवसर पर उसकी 'काउंटर सोसाइटी' (नये समाज) की नींव पड़ जानी चाहिए। प्रतिकार जरूरी हो तो जरूर हो, लेकिन उद्देश्य सहकार और रचना का हो। श्रमिक, स्त्री और दलित को मुक्ति चाहिए। मुक्ति दूसरों की घृणा से नहीं मिलेगी, बल्कि ऐसा जीवन जीने से मिलेगी जो अपने में धन्य होगा। अन्यथा आत्मनिर्भरता और अहिंसा से ही मिलेगी। यह काम आज, अभी शुरू होना चाहिए।

जन्म-शताब्दी में क्या हम इससे बढ़कर दूसरे किस ढंग से गांधी का स्मरण करें कि उनके 'सत्य' को नये सिरे से पहचानें और उस सत्य के लिए नये प्रयोग के लिए तैयार हों? गांधीजी की जन्म-शताब्दी में प्रश्न भव्य भवनों, भाषणों, या ईंट-पत्थर के स्मारकों का नहीं है; प्रश्न है नव्य मानव के जीवन-मरण का। उस प्रश्न का उत्तर है गांधी की नयी रचना में जिसमें समाज हिंसा से मुक्त है, क्योंकि 'स्व' की प्रतीति में सतत जागरूक है और बुद्धि सत्य के प्रयोग में सदा सचेष्ट है।

हमारा यह विशेषांक गांधी की नव-समाज-रचना की बुनियाद के लिए एक छोटी ईंट के रूप में प्रस्तुत है। •

गांधीजी ने कहा था…

राजनीतिक सत्ता अपने-आप में साध्य नहीं है, परन्तु जीवन के प्रत्येक विभाग में लोगों के लिए अपनी हालत सुधार सकने का एक साधन है। राजनैतिक सत्ता का अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों द्वारा राष्ट्रीय जीवन का नियमन करने की शक्ति। अगर राष्ट्रीय जीवन इतना पूर्ण हो जाता है कि वह स्वयं अपना नियमन कर ले, तो फिर किसी प्रतिनिधित्व की आवश्यकता नहीं रह जाती। उस समय ज्ञानपूर्ण अराजकता की स्थिति हो जाती है। ऐसी स्थिति में हर एक अपना राजा होता है। वह ऐसे ढंग से अपने पर शासन करता है कि अपने पड़ोसियों के लिए वह कभी बाधक नहीं बनता। इसलिए आदर्श व्यवस्था में कोई राजनैतिक सत्ता नहीं होती। क्योंकि कोई राज्य नहीं होता।

आक्रमण, अवज्ञा और असहकार से सौम्य, सौम्यतर सत्याग्रह तक

[आक्रमण और प्रत्याक्रमण की सशस्त्र और स्वरक्षण पद्धति से भिन्न अवज्ञा, असहकार की मंजिलें पार करता हुआ निःशस्त्र संरक्षण और स्वरक्षण की पद्धति का विकास गांधीयुग से प्रारम्भ हुआ है। निःशस्त्र प्रतिकार और उससे भी आगे सत्याग्रह की पद्धति से समस्याओं को हल करने की एक नयी तकनीक का निरन्तर संशोधन होता आ रहा है। विनोबा ने सत्याग्रह के सौम्य, सौम्यतर, सौम्यतम् स्वरूप का चिंतन और प्रयोग किया है। कहने की आवश्यकता नहीं; कि सत्याग्रह के विज्ञान के शोध का कार्य निरन्तर चलता रहेगा। प्रस्तुत संवाद शोधकर्ताओं और चिंतकों के लिए दस्तावेज सिद्ध होगा, ऐसी आशा है।—सं०]

मनमोहन—गांधीजी के जमाने में सत्याग्रह निगेटिव था। उसके 'पैटर्न्स' मेरे विचार में यह थे कि लोग भयभीत थे और लोगों का भय मिटाने के लिए कुछ करना चाहते थे तो लोगों के मानस में दबा हुआ द्वेष बाहर फूट निकलने का खतरा उठाना पड़ता था। विदेशी कपड़ा जलाने के कार्यक्रम के समर्थन में गांधीजी ने कहा था कि कपड़ा जलाने का कार्यक्रम हम लोगों के सामने नहीं रखेंगे तो लोग विलायती मनुष्यों को ही जला देंगे। गांधीजी के खुद के दिल में तो अंग्रेजों के लिए प्रेम था, लेकिन हम सब लोगों के दिल में ऐसा प्रेम तो था नहीं, इसलिए उनके 'पाजिटिव' सत्याग्रह का परिणाम भी 'निगेटिव' हुआ, या इसके अलावा उनके सत्याग्रह में 'निगेटिव' स्वरूप और कुछ था?

विनोबा—इसमें पांच मुद्दे हैं। उनमें से तुमने दो मुद्दों को इकट्ठा कर दिया। पहली बात, हमारे लोग भयभीत थे और उनको निर्भय बनाने के साथ-साथ उनको परिपूर्ण बहादुरी की अहिंसा तक पहुंचाना संभव नहीं था, इसलिए बीच में निगेटिव सत्याग्रह का एक रास्ता मिल गया, तो अच्छा हुआ। दूसरी बात, देश में सशस्त्रवादी लोग भी थे। वे सच्चे देशभक्त थे। उनको सही रास्ते पर लाने की बात थी। तुमने जो मनुष्यों के जलाने की बात कही, वही बात यह सशस्त्रवादी लोग करते। यह दोनों मुद्दे तुमने मिला दिये।

तीसरी बात, इस सत्याग्रह के साथ उन्होंने पथ्य के तौर पर रचनात्मक कार्यक्रम को जोड़ दिया था और बराबर कहते थे कि अगर इस कार्यक्रम को पूरा किया जाय तो ज्यादा सत्याग्रह करने की आवश्यकता नहीं रहेगी। इसके कारण एक बचाव होता था। चौथी बात, स्वराज्य अवश्य हो, यह बात सर्वमान्य थी और उसकी प्राप्ति के लिए हिंसक सशस्त्र युद्ध भी उचित समझा जाता था। इसलिए सशस्त्र युद्ध के बदले निगेटिव सत्याग्रह का रास्ता मिला तो अवश्य ही उसमें बेहतर था। पांचवीं बात, अंग्रेज राज्यकर्ताओं पर बापू का विश्वास उठ गया था। इन्सान के नाते अंग्रेज जाति पर तो उनका विश्वास था, पर शासकों पर से उठ गया था।

दक्षिण अफ्रीका में तो वे अंग्रेजों के साम्राज्य के गीत भी गाते थे। हिन्दुस्तान लौटने पर वे १९१६-१७ के शासन-सुधार को निराशाजनक कहने के लिए तैयार नहीं थे। उस समय उन्होंने कहा था कि अगर ऐसा कहूंगा तो मुझे फिर पूरा असहकार ही करना पड़ेगा। उन्होंने युद्ध के लिए सिपाही रिक्रूट करने का काम भी किया था। इन तीनों मामलों में लोकमान्य तिलक के साथ उनका मतभेद था। तिलक महाराज ने तो गांधीजी के नाम पर दस हजार रुपये रख दिये थे और बाजी लगायी थी कि अगर तुम एक भी रिक्रूट प्राप्त कर सकोगे तो मैं तुमको यह रुपये खर्च करने के लिए दे दूंगा। पर तुम प्राप्त नहीं कर सकोगे। मेरी बात मानकर शर्त रखकर रिक्रूट संग्रह करने का काम करो। तिलक महाराज की यह शर्त कुछ ज्यादा नहीं थी। इतना ही था कि हमारे देश के सिपाहियों को ऊंचे ओहदे पर भी रखा जाय। पर गांधीजी को यह पसन्द नहीं था। वे कहते थे कि इस प्रकार शर्त रखना ठीक नहीं है। अगर तुम बिना शर्त ही थोड़ी मात्रा में भी सरकार की मदद कर सकोगे तो उसमें से एक ताकत पैदा होगी।

जलियांवाला बाग की घटना के बाद से सरकार पर से उनका विश्वास उठ गया। राज्यकर्ताओं की नीयत पर भी वे अविश्वास करने लगे। इसके पहले तो वे पूर्ण स्वराज्य की बात भी करने के लिए तैयार नहीं थे। अगर राज्यकर्ताओं की नीयत पर से उनका विश्वास उठ गया नहीं होता तो उन्होंने दूसरे प्रकार से काम किया होता। एक बार उन्होंने खुद मुझसे कहा कि अगर ऐसा हुआ होता तो उन्होंने चंपारण जैसे ही छोटे छोटे सत्याग्रह किये होते, जिसमें अन्याय 'मेनीफेस्ट' हो याने स्पष्ट दिखे और जिसको अंग्रेज भी अन्याय मानते, पर ऐसा हुआ नहीं, इसलिए उन्होंने दूसरा रास्ता पकड़ा। इसलिए पहली बात में तो गांधीजी काफी हद तक सफल हुए। लोग बिलकुल डरपोक होने की बजाय 'निगेटिव' प्रतिकार के लिए तैयार हुए। इससे पहले मुहम्मद ने भी लोगों की भीरुता निवारण का प्रयोग करके देखा था। पहले तो वे आक्रमण के खिलाफ हिंसक प्रतिकार की इजाजत नहीं देते थे, पर उन्होंने देखा कि उनके शिष्य मार खाकर भागने लगे, तो उन्होंने आत्मरक्षा के लिए शस्त्र उठाने की इजाजत उनको दी। फिर उसमें से धर्म-प्रचार के लिए 'डिफेन्सिव' और 'आफेन्सिव', और आखिर में राज्य विस्तार के लिए भी लड़ाइयां चलीं। 'निगेटिव' सत्याग्रह में कम-से-कम इस प्रकार कुछ होने की संभावना तो नहीं थी।

दूसरी बात में वे कुछ हद तक सफल हुए। क्योंकि सशस्त्रवादी उनके रास्ते पर आये। बाकी बहुत सारे खुद कुछ कर सकने की हालत में न होते हुए भी यही कह कर

अपने को तसल्ली देते थे कि हम गांधीजी को पास करने के लिए एक मौका दे रहे हैं। बचे हुए सनातनवादी फिर १९४७ के साम्प्रदायिक दंगे के समय निकल पड़े और उनकी 'हिन्दू-मेंटॅलिटी' उस समय प्रकट हुई।

मनमोहन—गांधीजी के दूसरे सत्याग्रहों की बनिस्बत हरिजन-समस्या को लेकर १९३२ में उन्होंने जो उपवास किया, वह अधिक 'पाजिटिव' था, ऐसी मेरी धारणा है। इस उपवास के कारण कुछ हद तक दबाव तो आया, पर कुल मिलाकर हरिजनों के प्रति न्याय करने की दिशा में सवर्णों को आत्म-निरीक्षण करने के लिए इससे प्रेरणा मिली। हरिजनों की बनिस्बत सवर्णों पर इसका परिणाम ज्यादा हुआ। अंग्रेजों पर दूसरे आन्दोलनों का उस प्रकार का 'पाजिटिव' परिणाम नहीं हुआ।

विनोबा—इसमें भी मेरा यह विचार है कि अगर गांधीजी ने आमरण उपवास करने के बदले २० दिन का उपवास किया होता तो वह अधिक सौम्य हुआ होता। इस उपवास के कारण कवि रवीन्द्रनाथ पर भी दबाव आया था। गांधीजी की जीवन-रक्षा के लिए उत्कंठित होकर वे पूना पैक्ट या पूना समझौते को स्वीकार करने के लिए तैयार हो गये। लेकिन कुछ दिनों के बाद उन्होंने अनुभव किया कि यह समझौता ठीक नहीं हुआ। इस समझौते के कारण बंगाल के प्रति अन्याय हुआ, यह बंगालियों ने बराबर माना और उसके कारण उनमें असंतोष रहा। गांधीजी को बचाने की उत्कंठा में रवीन्द्रनाथ का एक गलत समझौते को स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाना, उनकी दुर्बलता भी हम कह सकते हैं। पर जहाँ एक इतने बड़े महान व्यक्ति का जीवन संकट में हो, तब कवि रवीन्द्रनाथ के उद्वेग को दुर्बलता कह कर उनको दोष देना ठीक नहीं होगा, वरन् यह कहना ठीक होगा कि सत्याग्रह में ही दोष था।

इसलिए, यद्यपि २१ दिन का अनशन करने पर शायद वह उतना तुरन्त असर करनेवाला नहीं दीखता, फिर भी अम्बेडकर और रवीन्द्रनाथ पर जो दबाव आया वह दबाव आया नहीं होता। इतना कहने के बाद यह कहा जा सकता है कि फिर भी यह काफी परिशुद्ध सत्याग्रह था और लोगों पर कुल मिलाकर उसका सही परिणाम हुआ।

मनमोहन—आप कहते हैं कि भू-क्रान्ति सारे हिन्दुस्तान में एक ही दिन होगी। अगर इसके लिए दो दिन लगे तो क्रान्ति नहीं हुई। इसका मतलब मैं यही समझता हूँ कि ऐसी परिस्थिति का निर्माण होगा और कोई ऐसा कदम उठाया जायेगा जिससे जमीन के मालिक खुद ही महसूस करने लगेंगे कि आज तक वे जो गलती करते आये हैं अब उसको तुरन्त सुधारना चाहिए। आत्मपरीक्षण और शुद्धि के लिए उनको प्रेरणा मिलेगी और ऐसी भावना सारे देश में एक ही दिन में पैदा होगी। पर कुछ लोगों का विचार, जिसको आप 'निगेटिव' कहेंगे, यह है कि मालिकों पर सख्या का या परिस्थिति का ऐसा दबाव डाला जायेगा, जिससे वे इच्छा न होते हुए भी फिर बाध्य होकर मालकियत छोड़ेंगे, इसी को मैं 'निगेटिव प्रभाव' समझता हूँ।

विनोबा—जी हाँ। गोरा जी तो अब पार्लमेंट शासन के लिए सत्याग्रह करने की बात सोच रहे हैं। ऐसा सोचने में हिंसा का अंश है। गोराजी ने मुझसे कहा—आपने मेरे प्रति बड़ी कठोरता की। पर वास्तव में मैं कठोर नहीं था। इसमें सिर्फ विचार की ही हिंसा नहीं, मूर्खता भी है। अगर ऐसा करने के लिए ताकत भी होती, तो बात थी। पर वैसी ताकत भी आज है कहाँ? कश्मीर में मैंने एक मजे की बात कही थी। वह अखबारों में दूसरी बातों के अन्दर छापा गया। अगर मोटे टाइप में दिया होता, तो लोगों के ध्यान में आता। मैंने कहा था कि कश्मीर में मुझे दो चीजों से प्रसन्नता हो रही है। एक तो इससे कि यहाँ की सरकार ने जमीन पर सीलिंग लागू करने का कानून बना दिया है और उन्होंने बिना मुआवजे की जमीन ले ली है और दूसरी बात, इसमें प्रसन्नता हो रही है कि लोगों ने अपने भाई, बेटा, भतीजा, भांजा आदि के नाम से जमीन आपस में बाँट ली है। सरकार के हाथ में जरा भी जमीन नहीं आयी है। अगर ऐसा नहीं हुआ होता तो मुझे बड़ी निराशा हुई होती कि हिन्दुस्तान के भविष्य में उन्नति की कोई आशा नहीं है, यहाँ के लोग बिलकुल गये हैं। पर यह देख कर खुशी होती है कि लोगों में बुद्धि है। मेरी यह बात सुनकर सभा में तो लोग खूब हँसे। पर ऐसी स्थिति वास्तव में है। दबाव का परिणाम वास्तव में इसी प्रकार का होता है।

मनमोहन—पाजिटिव सत्याग्रह के बारे में दो बातें सूझ रही हैं। एक यह कि सौम्य और सौम्यतर एक सतत् चलनेवाली प्रक्रिया है। आज सौम्यतर हमारे ध्यान में नहीं है, इसलिए हम सौम्य तक ही बढ़े हुए हैं। जब सौम्य से कोई नतीजा नहीं मिलेगा तब हम आत्म निरीक्षण करेंगे और सौम्यतर का दर्शन हमें होगा और वह हमारा साधन होगा। विचार, वाणी और कृति को उसी तरह उत्तरोत्तर क्षोभरहित और परिशुद्ध करते जाने की यह एक सतत् साधना चलेगी। पर समय-समय पर लोगों के विचार को चालना देने के लिए कुछ नैमित्तिक कदम भी उठाने होते हैं। ऐसी बात नहीं कि यह कदम पहले से हमको मालूम नहीं हो। पर अमुक परिस्थिति में वह कदम योग्य है, ऐसा समझकर उसका उपयोग करना पड़ता है। आपने कश्मीर में जो एक शाम का खाना छोड़ दिया, वह उसी प्रकार का था। पर यह तो रोज करने जैसी बात नहीं थी। इसलिए यह सौम्य, सौम्यतर की प्रक्रिया में कैसे बैठेगी?

विनोबा—सौम्यतर आदि कभी नित्य नहीं हो सकता है। क्योंकि मनुष्य कभी भी सौम्यतम तक पहुँच नहीं सकेगा। वह हमेशा सौम्य में ही रहेगा। क्योंकि आज जिसको वह सौम्यतर समझ रहा है, उससे भी अधिक सौम्यतर तो है न? इसलिए मनुष्य को सौम्यतर का विचार एकदम सूझता नहीं है। मैं पहले सिर्फ भूदान की ही बात करता था। पर बाद में मुझे सूझा कि कुछ देनेवाले होंगे और कुछ लेनेवाले होंगे, इस प्रकार का एकांगी धर्म ठीक नहीं। धर्म समान होना चाहिए। तो मेरे ध्यान में आया कि भूमि-हीनों के पास भी कुछ देने लायक है। वह उनकी श्रम-शक्ति ही क्यों न हो। जिनके पास कुछ भी नहीं है, मान लो कि अस्पताल में बिलकुल असहाय, बीमार होकर पड़ा हुआ हो, और अपने लड़कों को देखने पर उसकी आँखों से जैसे प्रेम का आँसू बहने

सकता है, उस प्रकार का प्रेम वह दे सकता है।

जब मैं पहले भूदान माँगता था तो जमीन वाले सभा में आने से डरते थे। हाँ, यह जरूर था कि दूसरी सभाओं से ज्यादा लोग मेरी सभा में आते थे। पर जमीनवाले डरते थे। एक जगह तो एक भाई हमारे पड़ाव के गाँव से ही बाहर चले गये। तो दूसरों ने कहा कि जमीन देना पड़ेगा इसलिए वे भाग गये। पर चार पाँच दिन के बाद उन भाई से मेरी भेंट हुई। तो मैंने उनसे पूछा और उन्होंने बताया कि उनका पहले से ही कोई कार्यक्रम तय था और वह जरूरी काम था इसलिए वह उस दिन गाँव में रह नहीं सके। हो सकता है कि ऐसे बहुत लोग सचमुच किसी काम के कारण पड़ाव के गाँव में रह नहीं पाये हों। पर उनके बारे में बहुत सी ऐसी कल्पनाएँ की जाती थीं जो उनके लिए अन्याय ही था। मैं तो विनोद में कहता था कि जो डर के मारे भाग गये, वह तो पहले से ही हमारे विचार को मान गये। उनकी जमीन मेरी हो गयी। लेकिन मेरे मन में यह विचार चलता था कि ऐसा भय लोगों को क्या होना चाहिए। पर जब सबसे कुछ न कुछ माँगने का विचार आया तो भय परिपूर्ण हुआ और भय का कारण चला गया। इस लिए अनुभव से विचार सूझता है।

पर कश्मीर में भोजन छोड़ने का कदम मैंने दूसरों पर प्रभाव डालने के लिए नहीं बल्कि आत्म शुद्धि के लिए उठाया। कश्मीर में सब लोग मुसलमान हैं और मेरी बातों का उन पर क्या परिणाम होगा इस सम्बन्ध में मेरे दिल में शंका थी। वह अगर बुद्धि को चुभती है तो ठीक। पर हृदय को चुभना ठीक नहीं। हिन्दुस्तान के लोगों की वृत्ति तो मुझे पहले से ही मालूम थी। पर कश्मीर का मुझे पता नहीं था इसलिए मैंने एक शाम का भोजन छोड़ दिया इसीके स्मारक के तौर पर कि यहाँ सावधान रहना है। इससे मुझे लाभ भी हुआ। यह मेरे लिए कोई नयी बात नहीं थी। १९३४ में जब मैंने एक साल अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए लिया तब मैं रोज भोजन पर सिर्फ दो आना ही खर्च करता था। बापू के अनशन के समय जब मैं दिल्ली गया तो वहाँ भी वही चलाया। लेकिन वहाँ महँगाई वर्धा से ज्यादा थी और दो आने में पेट भी नहीं भरता था। अब अर्थशास्त्र के अध्ययन के साथ इसका क्या सम्बन्ध? पर अपने चित्त को एकाग्र करने के लिए ऐसा करता हूँ। वेद का अध्ययन करते समय भी मैं केवल दूध और भात खाता था। इसको सत्याग्रह कहने के लिए आने सत्याग्रह शब्द के उपयोग को इतना दूर तक खींचने के लिए तुम लोग तैयार होगे कि नहीं, पर इसके लिए मैंने सत्यग्राही शब्द ढूंढ निकाला है।

मनमोहन—आपने जो कहा मैं भी वही मानता हूँ कि मनुष्य सौम्य सत्याग्रह करता रहता है। उससे आगे सौम्यतर का दर्शन मिला तो उसको पकड़ता है। पर उससे भी सौम्यतर का दर्शन नहीं मिलने तक वह सौम्यतर का ही आचरण करता है। पर अन्न त्याग एक शाम का भोजन छोड़ना, दो-चार शाम पदयात्राएँ करना या पदयात्राएँ बन्द करना इत्यादि कुछ ऐसे कदम हैं जो हमेशा करने लायक नहीं हैं। वह अमुक परिस्थिति में करने योग्य होते हैं। यह भी स्थायी रूप से चल नहीं सकते। उसी प्रकार के नैमित्तिक कदमों को सौम्य सौम्यतर के ढाँचे में न बिठाकर उनके लिए दूसरी संज्ञा ढूँढनी चाहिए।

विनोबा—जी हाँ। इस प्रकार प्रासंगिक कदम उठाना कभी-कभी आवश्यक होता है, पर वह कदम सौम्य सौम्यतर के चिन्तन की प्रक्रिया में से ही सूझता है। उसको नैमित्तिक तात्कालिक सत्याग्रह कहा जायेगा। पर इसमें लोगों पर असर डालने की दृष्टि से सोचना ठीक नहीं है। सिद्धान्त की दृष्टि से क्या करना योग्य है यही सोचना चाहिए। हमारा काम सही होगा तो उसका असर अवश्य ही होगा।

मनमोहन—अगर अपेक्षित असर नहीं हुआ तो आपको सोचना होगा कि अपने विचार में कुछ दोष है और विचार का परीक्षण करना चाहिए।

विनोबा—मैं हमेशा यह नहीं मानता रहूँगा कि मेरे ही काम में दोष है। अवश्य मेरे काम में दोष हो सकता है और उसका निरीक्षण भी करना चाहिए। पर अपनी सफलता के लिए परिस्थिति भी जिम्मेवार हो सकती है। मेरी ही गलती के कारण सफलता नहीं मिली, ऐसा सोचने में अहंकार होगा। इसलिए असर डालने की दृष्टि से नहीं पर सौम्यतर की दृष्टि से सोचने पर इस प्रकार के तात्कालिक, नैमित्तिक उपाय सूझेंगे। असर की दृष्टि से सोचूँगा तो असर होगा ही नहीं, सिर्फ अहंकार ही बढ़ेगा। कश्मीर से पाकिस्तान जाने की बात उठी थी। उस प्रकार की इजाजत भी पाकिस्तान सरकार से मिल सकती थी। यह आदमी कैसा है, इसको जरा-सा परखने के ख्याल से यह सोच कर वे लोग इजाजत देने के लिए तैयार हो जाते पर वहाँ परिस्थिति ऐसी थी कि मेरे जाने का कोई परिणाम हुआ नहीं होता। सब लोग सिर्फ मुझे यही पूछते कि कश्मीर के बारे में आपकी क्या राय है? और आध्यात्मिक विद्या आदि जो सारी बातें हमारी सुनाने की हैं, वह सब सुनने की मनःस्थिति किसी की नहीं होती। इसलिए मैंने सोचा कि इस तरह पश्चिम पाकिस्तान न जाना ही ठीक है। मौका मिले तो पूर्व पाकिस्तान जाने की इजाजत माँगूंगा।

अगर मैं सोचता कि कश्मीर समस्या के हल करने की जिम्मेवारी मुझ पर है—इधर के दोनों पक्षों की बात तो मैंने सुन ली है और अब मैं जाऊँ पाकिस्तान में और तीसरे पक्ष की बात सुन लूँ और तब मैं कोई फैसला दे सकूँगा। इस तरह समस्या हल करने की जिम्मेवारी आप पर है ऐसा समझकर असर डालने के प्रयत्न करने का अर्थ यही होगा कि उससे अहंकार बढ़ेगा।

मनमोहन—आपने कहा कि सत्याग्रही असर डालने के लिए कोई काम नहीं करेगा वह सही काम करता जायेगा और यह उम्मीद रखेगा कि इस काम का अपेक्षित परिणाम होगा। उसी बात को डाक्टर लोहिया आदि उलटे ढंग से कहते हैं। वे कहते हैं कि बापू जो सत्य समझते थे, वही कहते थे और उसी अनुरूप आचरण करते थे। उनके कहने या करने के कारण सामनेवाले के दिल में गुस्सा पैदा होना या उसको खोलना का अनुभव होना, इसका विचार करके पीछे

हटते नहीं थे, पर विनोबाजी तो कह रहे हैं कि सत्याग्रह के द्वारा दिल को शीतलता का अनुभव होना चाहिए, सुनने वाले में गुस्सा या भय पैदा नहीं होना चाहिए, यह गलत है।

विनोबा—परिणाम का हिसाब और परिणाम के लिए आसक्ति इन दोनों में फरक समझना चाहिए। जब हम कोई काम करना चाहते हैं तो आखिर उसका कोई परिणाम आयेगा, वह सोचकर ही तो काम करते हैं। मगर परिणाम की फिकर हमको बिलकुल ही न हो तो हम कुछ करें ही क्यों? तो कार्य-क्रम का विचार करते समय उसमें परिणाम का विचार और हिसाब आ ही जाता है। उसको हम विचार के अन्तर्गत ही समझें। कार्य का हेतु, स्वरूप और परिणाम, इन तीनों का विचार करना पड़ता है। पहले देखना होता है कि कार्य का हेतु ठीक है या नहीं? अगर हेतु ठीक है तो फिर कार्य का स्वरूप क्या होगा, यह विचार करना पड़ता है और फिर उसमें उस कार्य का परिणाम क्या होगा यह उस विचार के साथ आ ही जाता है। मगर एक बार एक कार्यक्रम तय कर लिया तो फिर उसका परिणाम जैसा चाहिए था, वैसा नहीं आया तो भी उसे छोड़ना नहीं चाहिए। इस प्रकार से परिणाम के लिए आसक्ति नहीं होनी चाहिए। यह सोचना गलत है कि बापू इस प्रकार का विचार नहीं करते थे।

मनमोहन—बापू तो इसका बहुत ख्याल रखते थे। राजकोट के प्रकरण में उनके अनशन का तथा सुप्रीम कोर्ट के प्रधान विचारक से फैसला लेने के सारे सिलसिले का असर वीरावाला वगैरह पर ठीक नहीं हुआ इसलिए बापू ने अपने उस कदम को गलत माना।

मगर कभी ऐसा हो सकता है कि किसी सत्याग्रही कार्यक्रम का असर पहले-पहल सामनेवाले पर कुछ उलटा ही आये। उसका दिमाग दबा हुआ होने के कारण उसमें पहले भय या क्षोभ का उदय हो सकता है जो बाद में निकल जाय?

विनोबा—मैं भय और क्षोभ में फरक करता हूं। भय सर्वथा खराब चीज नहीं है। थोड़ा-सा भय का रहना लाभदायी भी हो सकता है। जैसे मानो हमें जंगल में से होकर जाना पड़े और हमें शेर का थोड़ा-सा भय हो और हम उसका बन्दोबस्त करके निकलें तो यह भय कोई बुरी चीज नहीं है। हां, शेर हमारे सामने आ जाय तो हम निर्भय रहें, यह बड़ी चीज है और शेर को देखते ही हम इतना भयभीत हो जायें कि हमारे हाथ-पांव ठंडे पड़ जायें और हमारा दिमाग ही न चले तो यह एक खतरनाक चीज होगी। मगर थोड़ा-सा भय का होना बुरा नहीं है। उपनिषद् में एक विलक्षण बात आयी है कि ह्रिया देयं, भिया देयं, श्रद्धया देयं, अश्रद्धया अदेयम्। याने शरम से देना चाहिए, भय से देना चाहिए, श्रद्धा से देना चाहिए, मगर अश्रद्धा से नहीं देना चाहिए। तो जहां मनुष्य थोड़ा-सा भय या लज्जा अनुभव करता है और उसके कारण कुछ करता है तो इसका मतलब उसकी बुद्धि काम करती है, वह कुछ सोचकर काम करता है।

मगर क्षोभ अलग चीज है। जहां क्षोभ आया वहां मनुष्य की बुद्धि कुंठित हो जाती है। उसका दिमाग काम नहीं करता। तो सत्याग्रह का उद्देश्य हर हालत में मनुष्य को सोचने के लिए प्रेरित करने का होना चाहिए। अगर उसकी बुद्धि ही कुंठित हो गयी तो सारा मामला बिगड़ता है। किसी भी मानसिक भाव की अत्यतिशयता हो जाने पर क्षोभ उत्पन्न होता है। जैसा थोड़ा-सा भय का होना अच्छा है। मगर शेर को देखते ही इतना भय हो कि हमारे हाथ-पांव ठंडे पड़ जायें तो यह बुरी हालत होगी। वैसे थोड़ी-सी कामवासना का होना एक सौम्य वस्तु है, मगर वह अगर इस हद तक बढ़ जाय कि चित्त में क्षोभ उत्पन्न हो तो बुरी हालत होगी। वैसे थोड़ा-सा क्रोध हो तो ज्यादा नुकसान नहीं, मगर क्रोध यहां तक बढ़ जाय कि चित्त क्षुब्ध हो और दिमाग ही काम न करे तो ठीक नहीं। तो इस तरह से हमें यह ख्याल करना पड़ेगा कि हमारे काम से सामने वाले के दिल में क्षोभ पैदा होने की संभावना तो नहीं है। जहां सामनेवाले के हाथ में बड़े हथियार हों, वहां यह चीज जल्द ख्याल में आती है। क्षोभ में आकर वह अपना दिमाग खो बैठे और कुछ-न-कुछ कर बैठे तो भारी नुकसान हो सकता है। बापू के जमाने में शस्त्रास्त्र छोटे-छोटे थे, अब जमाना बदला है। हमें बड़े-बड़े शस्त्रास्त्र अणुबम आदि का मुकाबिला करना है। क्षोभ में आकर अणुबम चलाकर वह हमारे साथ-साथ अपने को और दुनिया को भी खतम कर सकता है। इस जमाने में तीन फरक हुए हैं—(१) अनियंत्रित राज्य-सत्ता के स्थान पर लोकशाही, (२) परतंत्रता के स्थान पर स्वतंत्रता और (३) विज्ञान का जमाना। तो सत्याग्रह में सामनेवाले के मन में थोड़ा-सा भय उत्पन्न हो सकता है, उसको दुःख भी हो सकता है—अपने कृत्यों के बारे में नहीं, मगर उनके खिलाफ हमें सत्याग्रह करना पड़ रहा है इसका—मगर क्षोभ उत्पन्न न हो इसकी सावधानी रखनी चाहिए।

मनमोहन—हमारा चित्त क्षोभरहित कैसे हो?

विनोबा—एक 'साइंटिफिक ऐटीच्युड', 'वर्ल्डवाइड आउटलुक' और उसके साथ आध्यात्मिक बुनियाद होनी चाहिए। 'वर्ल्ड आउटलुक' के आने से हम व्यापक दृष्टि से सोच सकेंगे और 'साइंटिफिक ऐटीच्युड' के कारण हमारे चिंतन में 'आब्जेक्टिविटी' आयेगी।

१, २ अक्तूबर '५९ को हुई चर्चाओं से।

गांधी की शाश्वत देन : असत्य से इनकार और असत्य को ललकार

[समाज बचेगा और बढ़ेगा अगर वह बराबर असत्य से इनकार करता जाय, और इस क्रम में आवश्यकतानुसार असत्य को ललकारता जाय। लेखक ने इस अस्वीकार और ललकार को गांधीजी की अमर देन माना है। उनकी राय है कि आज के सर्वोदय में—ग्रामदान में भी—वह इनकार और ललकार नहीं है। इसलिए आज के सर्वोदय में वह जान नहीं दिखाई देती जो गांधीजी के जमाने में दिखाई देती थी। लेखक की माँग है कि सर्वोदय के लोगों को इस पहलू पर गम्भीरता के साथ विचार करना चाहिए। जरूर करना चाहिए। प्रश्न इतना ही है कि पहले कौन सत्य का स्वीकार या असत्य से इनकार ? नये सत्य की स्वीकृति के बिना प्रचलित असत्य की अस्वीकृति होगी कैसे ? हमने प्रयत्न करके श्री जैनेन्द्रजी के विचार प्राप्त किये हैं, और उन्हें यहाँ इस आशा से दे रहे हैं कि हमें उनमें अपने और अपने काम को परखने की भरपूर प्रेरणा मिलेगी।—सं०]

(१) प्रश्न गांधीजी के बाद की भारत की परिस्थिति को देखते हुए लोग कहते हैं कि गांधीजी के नाम पर आज बहुत सी संस्थाएँ चल रही हैं बहुत से आन्दोलन चल रहे हैं पर कुल मिलाकर देश की राजनीति और समाजनीति पर उनका प्रभाव न जैसा दीखता है।

गांधीजी के चलाये हुए कार्यक्रम और आन्दोलन एक नयी जीवन पद्धति के द्योतक थे, जिससे नये मानों का सर्जन हुआ था। प्रत्येक व्यक्ति को उस काल की हवा में नयी जिन्दगी मालूम होती थी। आज वह सब नहीं है।

उत्तर हाँ, ऐसा है। यह प्रश्न गांधी के माननेवालों के सामने चुनौती बनकर आना चाहिए। ये कुछ समय के लिए दुनियावी *प्रश्न बन जाने चाहिए। अगर अपनी गोष्ठियाँ* सगोष्ठियाँ कर्म विस्तार और दूसरे तत्त्व विवेचन की जगह कुछ समय के लिए ये प्रश्न ही लिये रहें तो यह अनुचित न होगा।

गांधीजी की साधना शून्यता की थी। उसमें अपने पास कुछ भी नहीं रहने दिया जाता, यहाँ तक कि स्वत्व और मन तक नहीं। "प्राणि-ग्लानि नाशनम्।" प्राणियों की यह ग्लानि ही मानो ऐसे पुरुषों के प्राणों को धधकाने रखती है। उसमें जो रहता है उसका सब स्वाहा हो जाता है, और इसे ही *शून्यता की उपलब्धि होती है।* गांधीजी के साथ सत्य और अहिंसा के युग्म से प्रकट होने वाला धर्म मानव को इसी सिद्धि की ओर वेग से जा रहा था। वह अपने आप में कोई स्वतन्त्र तत्त्ववाद न था। मुझे भय है कि सत्य अहिंसा का एक मतवाद सा बन गया है और गांधी-संस्थाएँ उसमें घिर गयी हैं। प्राणिमात्र से उनका संवेदन का सम्बन्ध टूट नहीं गया तो जीर्ण और शिथिल अवश्य हो गया है।

हम यह या वह करना चाहते हैं। लोक जीवन की यातना वेदना में हावी बनने की भाषा में सोचना हमसे छूट गया है। दूसरे शब्दों में स्वत्व का उपार्जन हमें अभीष्ट है। स्वत्व विसर्जन की राह से कुछ हट आये हैं।

प्रश्न आज की दुनिया के लोग गुणात्मक से *अधिक संख्यात्मक परिणामों से प्रभा*वित होते दीखते हैं। स्वत्व विसर्जन की

जैनेन्द्र कुमार

प्रवृत्ति क्या हमें बन्दपना (आइसोलेशन) की ओर नहीं ले जायेगी ?

उत्तर स्वत्व विसर्जन ही है जिसमें आदमी अपने में सिमटता नहीं बल्कि बाहर आता है और सबमें समाने लगता है। अहिंसा अपरिग्रह के बिना नहीं चलेगी। स्वत्व के विसर्जन के बजाय उपार्जन से परिग्रह और सत्य की निष्ठा और अहिंसा की भावना कमजोर पड़ेगी।

संख्या मजदूरों की एक मिल में कितनी ही हजार हो सकती है राज्य की फौज कई कई लाख। उस सब संख्या को पैसा पहुँचा कर जुगाये रखा जाता है। उस संख्या को ज्यादा पैसेवाला आकर क्या तोड़ नहीं सकता ? अर्थात् संख्या अपने आप में मूल में *किस तत्त्व को लेकर जुटी है उस पर उसका* बल निर्भर करता है। संख्या का गुण से यदि विरोध नहीं है तो वैसी संख्या बाधा नहीं बनती शक्ति बन जाती है। चिन्तापूर्वक जो संख्या बढ़ायी जाती है वह आत्मा पर दबाव लाती है। अन्यथा निरत बनकर आदमी सत्त्वस्थ बनने की पर बढ़ता है, वह समस्त नहीं होता। गांधीजी के उदाहरण में हमने यही देखा। बैरिस्टर गांधी कम स्वत्वशाली न था, पर वास्तव में गांधी होने के लिए सब स्वाहा करना पड़ा। परिणाम क्या आया ? परिणाम आया कि इस तरह शून्य होकर गांधी विराट ही होता चला गया। कहना मुझे यही है। अपने को खोने की तैयारी और वैसी श्रद्धा हममें कम हो गयी है। करने और मरने का प्रश्न गांधी ने हममें जगा दिया था। अब वह करने और धरने पर आ टिका है। कर्म की धूम है। अकर्म गायब हो गया है।

विनोबा बार-बार अकर्म की बात उठाते हैं। लेकिन लगता है कि मरने से जोड़कर *अकर्म को देखा समझा जायगा तो अकर्म* जगेगा। दूसरी चेष्टाओं से वह नहीं सधेगा।

अकर्म अभावात्मक नहीं है। उसका उत्कृष्ट रूप सत्याग्रह है। सत्याग्रह में सब छोड़*कर अपनी व्यथा को परमेश्वर को सौंप दिया* जाता है। करना उसमें पहले हो चुकता है। सत्याग्रह में उसका अंश भी नहीं रहता है। इसीलिए सत्याग्रह प्रचण्डतम धर्म है।

मुझे लगता है कि सत्याग्रह को सकल्प विकल्प रूप भाषा में समाकर सर्वोदय से एक किनारे डाल दिया गया है। आवश्यकता है कि उसमें अकर्म की प्रतिष्ठा हो सर्वोदय के क्षेत्र में वह उदित होता दिखाई दे। अहिंसा यदि प्रबल और सशक्त बनेगी तो सत्याग्रह के बिना नहीं।

*प्रश्न विनोबाजी का कहना है कि ग्राम*दान आन्दोलन के जरिये उनके अखण्ड सत्याग्रह की प्रक्रिया ही चल रही है।

उत्तर वे ठीक कहते हैं। लेकिन देश के करोड़ों-करोड़ लोगों की व्यथा क्या कहती है, वह भी हमें सुनना चाहिए। ग्रामदानवाली सत्याग्रह की प्रक्रिया में अगर उस व्यथा का

जोड़ बैठा नहीं दीखता है तो क्या सोचने की आवश्यकता नहीं है ?

सत्याग्रह कर्म नहीं, अकर्म है, अर्थात् उसमें आकर जो किया जाता है वह प्रक्रिया का अंग नहीं होता है। शक्ति निकलेगी तो वहीं से निकलेगी। अणु टूटा तो अभूतपूर्व शक्ति के स्रोत का आविष्करण हुआ। आत्म से अहं का साथ टूट सकेगा तो चैतन्य क्षेत्र में उससे भी कहीं चमत्कारी शक्ति का प्रादुर्भाव होगा।

गांधी के व्यक्तित्व में यही घटित हुआ और हो रहा था। सर्वोदय के क्षेत्र में यह प्रक्रिया जिस दिन घटेगी अपूर्व चमत्कार दिखाई दे आयेगा और राजनीति उसके प्रकाश में शक्तिहीन प्रकट होगी। राजनीति की शक्ति अहिंसक नहीं होगी। इसलिए वह प्रतिक्रियात्मक होती है। वह शक्ति अहिंसक होगी और हो सकता है कि समूचे विश्व की सभ्यता को और राजनीति की दिशा को उससे नया संकेत और प्रकाश मिले।

सत्याग्रह शब्द का आग्रह किसीको खल भी सकता है किन्तु वही उस शब्द का मूल्य भी है। सत्यग्रही को सत्याग्राही बना देखना अच्छा लगता है, लेकिन ग्रहण में सत्य के प्रति आपका सम्बन्ध समाविष्ट होता है। असत्य के प्रति वह अपरिभाषित ही बना रहता है। आग्रह में मानो इधर सत्य का स्वीकार है तो उधर असत्य का इनकार भी आ जाता है। ये इनकार हैं जिनमें से चैतन्य का तेज प्रस्फुट होता है। याद रखना चाहिए कि परम सत्य अविकल है। उसका न ग्रहण हो सकता है, न उस पर आग्रह ही हो सकता है। वह इतना परम और अखण्ड है कि ग्रहण करनेवाला उससे अलग कहीं बच ही नहीं सकता। सत्याग्रह अथवा सत्य ग्रहण अद्वैत सत्य के क्षेत्र की वास्तविकता नहीं है। द्वैतात्मक भूमिका पर ही वह सम्भव है। अद्वैत में तो अहिंसा के लिए स्थान नहीं है। इसीलिए सत्याग्रह के लिए अहिंसा आवश्यक शर्त हो जाती है।

सारा जीवन द्वैत की भूमिका पर ही स्थिर है। द्वैत शर्त है किन्तु अद्वैत श्रद्धा है। द्वैत में से अद्वैत की ओर हमें बढ़ते ही जाना है। उसी यात्रा में सत्याग्रह अनिवार्य और आवश्यक हो जाता है। आग्रह कहता है—ग्रहण नहीं कहता, क्योंकि आग्रह में प्रतीत होनेवाले असत्य, अन्याय, अनिष्ट का सामना है, उससे बचाव नहीं है।

मेरा मानना है कि जिस सत्य के स्वीकार में से असत्य को इनकार और ललकार नहीं मिलेगी वह स्वीकार मुक्त करनेवाला न होगा, केवल तुष्ट करके रह जायेगा।

प्रश्न : आपने अभी कहा कि परम सत्य अविकल है। उसका न ग्रहण हो सकता है, न उस पर आग्रह ही हो सकता है। फिर आप यह भी कहते हैं कि जिस सत्य के स्वीकार में से असत्य को इनकार और ललकार नहीं मिलेगी वह स्वीकार मुक्त करनेवाला न होगा।

प्रश्न यह उठता है कि सत्याग्रही सत्याग्रह द्वारा किस सत्य का आग्रह करता है ? एक सत्याग्रही व्यथा से सम्पृक्त होकर जिस सत्य का दर्शन करता है वह अन्य एक बुद्धिवादी को काल्पनिक और हठवादी दृष्टिकोण प्रतीत होता है।

उत्तर : अपने आग्रह में सत्याग्रही का यह दावा नहीं है—और नहीं हो सकता कि उसका सत्य सबके लिए उसी रूप में मान्य हो और वही परम सत्य गिना जाय। ऐसा हो तो सत्याग्रह सविनय नहीं रह जाता। विनय अर्थात् अहिंसा की शर्तें सत्याग्रह को अन्य आग्रहों से अलग कर देती हैं। सच्चे सत्याग्रह में उनके लिए भी सम्पूर्ण आदर है जो उसके सत्य को निरा हठीला झूठ मानते हैं और इसलिए उसे उपेक्षणीय ही नहीं, बल्कि दण्डनीय भी मानते हैं। ऐसे दण्ड और कष्ट को सत्याग्रही स्वेच्छा से अपने ऊपर लेता है और दण्डदाता के लिए तनिक भी मलिनता अपने मन में नहीं आने देता।

कष्ट आने लिए आमन्त्रित करने और बाहर सबके प्रति सुरक्षा और सम्मान का भाव रखते हुए जो आग्रह होता है वही क्या उसके लक्ष्य को सत्य प्रमाणित नहीं कर देता ? मान भी लिया जाय कि आग्रहवाला सत्य सत्य है ही नहीं, केवल जिद और हठ है तो अहिंसा की शर्त पूरी होने पर उस सत्याग्रह से समाज का क्या अनिष्ट होता है ? जितना भी अनिष्ट होता है वह उसके व्यक्तित्व तक ही तो सीमित है ? इसलिए यह मानकर भी कि सत्याग्रह शायद ही कोई आदर्श की माप में पूरा उतर सके तो भी उसको जीवन मूल्य और समाज-मूल्य के रूप में स्वीकार कर लेना होगा। उसमें खतरा है और गांधी के बाद एकाध अपवाद को छोड़कर सत्याग्रह के नाम पर शायद सब दुराग्रह ही हुए हैं तो भी उस खतरे को उठाना होगा, और उस मूल्य की निष्ठा को टूटने नहीं देना होगा। अन्यथा गांधी का दान बेकार जायेगा और इतिहास जिस हिंसा के सहारे चलता रहा है उसका कोई विकल्प मिलना असम्भव होगा।

प्रश्न सत्याग्रह को अपनाने का आशय क्या यही न माना जाय कि सत्याग्रही लोकशिक्षण की शक्यता और सम्भावना के सम्बन्ध में अपनी आस्था से विचलित हो गया है ?

उत्तर : हाँ, सत्याग्रही सत्याग्रह के आरम्भ पर आते ही अपने को शिक्षक मानना छोड़ चुका होता है। वह अपने को शून्य मानने लगता है। तभी सत्याग्रह का अधिकार उसे प्राप्त होता या हो सकता है।

लेकिन शिक्षण का माध्यम क्या आप शब्द-पाठ या शब्दोपदेश ही मानते रहेंगे। क्या पदार्थ-पाठ के लिए अवसर नहीं देंगे। 'प्रीसेप्ट' से क्या आप 'एक्जेम्पुल' तक नहीं आना चाहेंगे ? तो सत्याग्रह वो पदार्थपाठ है। वह कहीं ऊँचा शिक्षण है। सुकरात ने शब्द द्वारा ही शिक्षण नहीं दिया था, बल्कि मिले हुए शिक्षण को उतारा ही था। अन्त में फिर उसने अपनी आस्था के लिए मृत्यु का वरण कर लिया। क्या इसके लिए दुनिया ने अब तक उसको महान् नहीं माना है ? और, प्रभु ईशु को क्या कहिएगा ? उनसे बड़े शिक्षक को क्या इतिहास में से ढूँढ़कर निकाल भी सकिएगा ? टनों शब्द से रत्तीभर कृति अधिक शिक्षाप्रद हो सकती है।•

गांधी की नयी खोज

उस दिन अमेरिका के विस्कांसिन विश्वविद्यालय के राजनीति के एक भारतीय प्रोफेसर कहने लगे कि इस वक्त अमेरिका के तरुणों और बुद्धिवादियों में गांधी 'फैशनेबुल' हो रहे हैं। गांधी के नाम से क्लब और स्वाध्याय मण्डल खुल रहे हैं। उनकी बात सुनकर मैंने कहा 'फैशन में भारत भी पीछे नहीं रहेगा। अगर आप सन् ६९ में आयें तो देखेंगे कि भारत गांधीमय हो गया है। लेकिन असलियत क्या है, आप जानते हैं।' उन्होंने अपना सिर हिलाया और कहा 'अमेरिका के जिन लोगों के बारे में मैंने कहा है उनके साथ ऐसी बात नहीं है। वे किसी चीज की खोज में हैं, और सोचते हैं कि शायद गांधी के पास वह चीज मिल जाय।' मैंने पूछा 'किस चीज की खोज में हैं?' वह बोले : 'नये जीवन की। अमेरिका का युवक—अमेरिका का ही नहीं, तमाम पश्चिमी दुनिया का—आज के 'इस्टेब्लिशमेन्ट' (ढाँचे) में ऊब गया है। बड़ों ने जो दुनिया बना रखी है उसमें वह नहीं रहना चाहता। वह नया जीवन जीना चाहता है, नये विचार का प्रकाश चाहता है।'

किसी चीज की खोज

नया जीवन जीने की चाह रखनेवाले पश्चिमी युवक गांधी की ओर देख रहे हैं—वह भी अमेरिका के। दूसरे लोग गांधी की थैली में चाहे जिस हीरे-मोती की तलाश करें, लेकिन खुद गांधी ने कभी यह दावा नहीं किया कि उनका 'सत्य' उनकी या 'अहिंसा' कोई नयी चीज थी। गांधी के खाने, पहनने, और काम करने के ढंग में बहुत नयापन था, लेकिन उस नयेपन को कौन युवक ग्रहण करेगा, और क्यों करेगा? गांधी ने जो कुछ किया, वह सब बीता इतिहास है। उसमें भी कुछ लोगों को रुचि हो सकती है, लेकिन शायद असली नयापन उन सपनों में है जिन्हें गांधी ने देखा, लेकिन वह पूरा नहीं कर सके। आज का चेतन युवक देख रहा है कि उसके अपने सपने कई बातों में गांधी के सपनों से मिलते जुलते हैं, इसलिए वह गांधी के पास जाना चाहता है। युवक आज की राजनीति से ऊबा हुआ है, इस अर्थनीति और शिक्षण पद्धति से ऊबा हुआ है। वह इनके नागफास से निकलना चाहता है। वह देखता है कि गांधी के सिवाय दूसरा कोई ऐसा है नहीं जो निकलने का रास्ता बता सके। रास्ता बता सके, साथ ही उस नये जीवन की झांकी भी दिखा सके जो आधुनिक युवक को लुभाने तो लगा है लेकिन वह जानता नहीं कि वहां पहुंचा कैसे जाय।

स्वतन्त्रता से स्वराज्य

गांधी नहीं भी होते तो भारत स्वतन्त्र होता ही। इतिहास अंग्रेजी साम्राज्यवाद को अमर नहीं होने देता। कोई भी साम्राज्यवाद अमर नहीं हो सकता। मनुष्य की आत्मा (स्पिरिट) अनीति का अन्तिम उत्तर है। लेकिन अगर स्वतन्त्रता तक ही गांधी की विशेषता सीमित होती तो उन्हें आज कोई क्यों याद करता, और अमरिका का युवक तो कदापि न याद करता। गांधी याद तो इस लिए किये जा रहे हैं क्योंकि वह स्वतन्त्रता में एक एक व्यक्ति के स्वराज्य का स्वप्न भर कर गये। उस स्वप्न में मुक्ति की जो झलक है उसे करीब से देखने के लिए, और अपने जीवन में उतारने के लिए, दुनिया में करोड़ों लोग बेचैन हैं।

गांधी ने खुद कभी यह दावा नहीं किया कि उनके सत्य और उनकी अहिंसा में कोई नयापन है। वह सत्य और अहिंसा को जीवन

रामभूर्ति

का सनातन और शाश्वत मूल्य ही मानते रहे, लेकिन कौन नहीं जानता कि गांधी ने जिस सत्य और जिस अहिंसा को जिस प्रकार सर्व सुलभ कर दिया उसमें नयेपन की कमी नहीं थी। सचमुच उसमें इतना नयापन था कि आदमी को लगा जैसे कोई चमत्कार हो रहा हो। नयापन न होता तो भला एक गरीब, गुलाम, निहत्था देश अंग्रेजी साम्राज्यवाद जैसी शक्ति के मुकाबिले खड़ा हो सकता? नयापन न होता तो यह सवाल ही क्यों उठता कि सही साध्य के लिए शुद्ध साधन होने चाहिए? लेकिन सबसे बढ़कर चौंकानेवाली बात तो गांधीजी ने अन्तिम दिन कही। बात इतनी थी कि स्वतन्त्रता प्राप्त करनेवाली कांग्रेस को स्वतन्त्रता के बाद की सत्ता में नहीं जाना चाहिए। सरकार दूसरे चलायें, कांग्रेस जनता में रहे उसकी सेवा करे, उसे संगठित करे, शक्तिशाली बनाये यह गांधी का अंतिम सत्य था।

बात बहुत सीधी थी, सादी थी, लेकिन इस सत्य का आज तक किसी अधिकारी ने इस रूप में जनता के सामने रखा नहीं था। कांग्रेस सत्ता में न जाकर जनता के बीच रहे इस 'सत्य' के लिए न कांग्रेस तैयार थी, और न स्वयं जनता। इसके उलटे जनता चाहती थी कि अंग्रेजों की जगह कांग्रेस उस पर शासन करे, कांग्रेस चाहती थी कि शासन की सारी शक्ति उसके हाथ में आ जाय ताकि वह अपनी दृष्टि के अनुसार देश को बना सके।

गांधी के मन में जो सत्य था उसे न जनता समझ सकी, न कांग्रेस। गांधी को चिन्ता थी कि ऐसी स्थिति न आने पाये जिसमें जनता को अपनी रोटी के लिए, थोड़े सुख के लिए सरकार से सहायता और संरक्षण के लिए अपना स्वराज्य बेचने को मजबूर होना पड़े, और इस मजबूरी का यह नतीजा हो कि सरकार दिनों दिन निरंकुश होती जाय और जनता असहाय बनकर प्रतिकार की शक्ति खोती चली जाय। गांधी के सामने जो सत्य था वह 'मुक्ति' का था। मार्क्स ने मुक्ति का सत्य इस रूप में ढूंढा था कि मालिक-वर्ग मजदूर-वर्ग का शोषण करता है, और सरकार को अपने हाथ में रखकर उसकी शक्ति को दमन और शोषण में लगाता है। इसलिए मजदूर की मुक्ति इसमें है कि वह संगठित होकर सरकार पर कब्जा कर ले, और शोषक वर्ग को अपनी तानाशाही द्वारा हमेशा के लिए समाप्त कर दे। वर्ग संघर्ष द्वारा वर्ग हिंसा से मुक्ति यह सत्य था मार्क्स का। लेकिन पिछले पचास वर्षों में हमने देखा कि वर्ग हिंसा से मुक्ति का नारा देकर वर्ग-संघर्ष ने भयंकर

राज्य-हिंसा का निर्माण किया है। यह राज्य-हिंसा इतनी भयंकर है कि जनता की किसी हिंसा द्वारा उससे मुक्त होने की बात सोचना भी कठिन है। गांधी ने कहा कि मनुष्य को सारी हिंसाओं से मुक्त होना चाहिए—अपने अन्दर की हिंसा, वर्ग की हिंसा राज्य की हिंसा। इस व्यापक हिंसा में कौन है शोषक और कौन है शोषित? क्या दोनों एक ही व्यवस्था की उपज नहीं हैं? क्या दोनों दमन और शोषण की व्यवस्था के शिकार नहीं हैं? और, कौन है मालिक, कौन है मजदूर? क्या दोनों ही मालिक नहीं हैं—एक भूमि और पूँजी का, तथा दूसरा श्रम का? गांधी ने कहा कि वास्तव में मनुष्य एक है, और उसकी समस्या भी एक ही है—हिंसा। मार्क्स ने वर्ग-हिंसा से मुक्ति के लिए मजदूरों को एक होने को कहा। गांधी ने कहा कि राज्य की हिंसा से मुक्त होने के लिए सब मनुष्यों को एक हो जाना चाहिए। मनुष्य-मनुष्य के एक हो जाने का अर्थ है समाज की शक्ति का बनना। राज्य की हिंसा से मुक्ति का अर्थ है सरकार की शक्ति का लोप होना। सरकार की शक्ति का लोप होना तब शुरू होगा जब अधिक-से-अधिक काम जो आज सरकार की दण्ड-शक्ति से हो रहे हैं, वे समाज की सहकार-शक्ति से होने लग जायें। सहकार-शक्ति को दूसरे शब्दों में हम लोक शक्ति भी कह सकते हैं। लोकशक्ति में नेतृत्व—सामूहिक नेतृत्व—लोक का होता है, न कि किसी तानाशाह का, या कुछ विशिष्ट व्यक्तियों का, या किसी संगठित दल का।

समानान्तर समाज

गांधीजी ने अपने जीवन में लोक-नेतृत्व विकसित करने का व्यापक प्रयत्न किया। उनके प्रयत्न के दो पहलू थे। एक पहलू में उन्होंने हिंसा का सीधा मुकाबिला किया। उसे हम प्रतिकारात्मक पहलू मान सकते हैं। दूसरा पहलू रचनात्मक था जिसमें उन्होंने अपने 'रचनात्मक कार्य' (सेवा, संगठन, उत्पादन और शिक्षण) द्वारा नये समाज (काउंटर सोसाइटी) की नयी बुनियादें स्पष्ट रूप से डालने की कोशिश की। दोनों पहलू एक ही समन्वित प्रक्रिया के अभिन्न अंग थे।

उनके सामने हिंसा के चार स्वरूप थे—एक, साम्राज्यवादी हिंसा; दो, साम्प्रदायिक हिंसा; तीन, जातिगत हिंसा; चार, वर्गगत हिंसा। साम्राज्यवादी हिंसा उस समय राज्य की हिंसा थी। उसका मुकाबिला करने के लिए उन्होंने स्वतंत्रता की लड़ाई में असहयोग और सविनय अवज्ञा की जो पद्धति विकसित की उसमें पहले-पहल लोक-शक्ति का प्रारंभिक लेकिन बड़े पैमाने पर दर्शन हुआ। साम्प्रदायिक हिंसा के मुकाबिले में तो उन्होंने अपने प्राणों की ही बाजी लगा दी, लेकिन अन्त में उन्हें इस हिंसा का शिकार होना पड़ा। हरिजनों के ऊपर होनेवाली हिंसा के प्रतिकार में वह सवर्ण हिन्दू की अन्तरात्मा काफी हद तक जगा सके। जहाँ तक वर्ग-हिंसा का सम्बन्ध है वह कोई सक्रिय कार्यक्रम तो नहीं उठा सके, क्योंकि स्वातन्त्र्य-संग्राम के समय उसका अवसर नहीं था, फिर भी शोषण-मुक्ति की स्पष्ट कल्पना और योजना दे गये। मालिक मालिक नहीं ट्रस्टी है, और मजदूर भी अपने श्रम का उसी तरह स्वामी है जैसे कोई अपनी भूमि या पूँजी का, आदि विचार ऐसे हैं जो वर्ग-शोषण, वर्ग-हिंसा, और वर्ग-संघर्ष से मुक्ति का रास्ता साफ दिखाते हैं। उसी छोर को पकड़कर आज विनोबा अपना ग्रामदान-आन्दोलन चला रहे हैं। ग्रामदान संघर्षमुक्त क्रान्ति और ट्रस्टीशिप का क्रियात्मक स्वरूप है। और ग्रामदान, ग्रामाभिमुख खादी, तथा शान्तिसेना के त्रिविध कार्यक्रम में नयी सामाजिक व्यवस्था की रूपरेखा भी स्पष्ट हो जाती है। गांधीजी की 'रचना' अनायास इस त्रिविध-कार्यक्रम में समा गयी है। ग्रामदान-मूलक सारी क्रान्ति-योजना का आधार लोक-निर्णय है। ग्रामदान गाँव के स्तर पर लोक-शक्ति के तीनों मुख्य पहलुओं को पूरा कर देता है—ग्राम-निर्णय, ग्राम-स्वामित्व, और ग्राम-प्रतिनिधित्व। इसमें मालिक का स्वामित्व, सरकार का प्रभुत्व, और दल का नेतृत्व, तीनों एक साथ समाप्त हो जाते हैं, और समाज की शक्ति अपने विकास के लिए बंधन-मुक्त हो जाती है।

कोई भी समाज हो उसके तीन आधार होते हैं—सत्ता, सम्पत्ति, और संस्कार। इनकी शक्ति से समाज चलता है। इसलिए हर क्रान्ति को यह प्रश्न तय करना ही पड़ता है कि उसकी कल्पना के समाज में सत्ता का क्या स्वरूप होगा, सम्पत्ति का स्वामित्व किसके हाथ में रहेगा, और संस्कार-निर्माण के क्या साधन होंगे।

सज्जन और जन

आज की दुनिया में सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है सत्ता का। सत्ता समाज की संगठित शक्ति है। शक्ति के बिना न नया स्वामित्व टिकेगा, और न नये संस्कार टिकेंगे। इस लिए सत्ता का स्वरूप तय हुए बिना नये समाज की कल्पना संभव नहीं है।

सत्ता का महत्व तो है ही, लेकिन उसकी रचना कैसे हो, तथा राजनैतिक सत्ता का समाज की दूसरी सत्ताओं में स्थान क्या हो? आज राजनैतिक सत्ता का जो स्वरूप है वह दंडशक्ति के आधार पर स्थिर है, लोक-शक्ति के आधार पर नहीं। अगर उसे लोकशक्ति के आधार पर संगठित करना हो तो उसका स्वरूप बदलना होगा। अपने जीवन के अंतिम दिन जब गांधीजी ने कांग्रेस को सलाह दी कि वह सरकार में न जाय तो उनके दिमाग में सत्ता का नया चित्र था। वह क्या था?

एक-एक गांव अपनी जगह एक स्वायत्त इकाई हो। उसकी स्वायत्तता इतनी बढ़ी हुई हो कि वह अपने में एक गणराज्य दिखाई दे। भारत ऐसी स्वायत्त, स्वाश्रयी, परस्परावलम्बी इकाइयों का एक महासंघ हो। यह कल्पना थी गांधीजी की। जाहिर है कि ऐसी व्यवस्था में सत्ता बिखरी हुई होगी। उसका मुख्य आधार सैनिक-शक्ति न होकर नागरिक-शक्ति होगी, और वह डंडे के जोर से न चलकर जनता की सम्मति से चलेगी। यही नहीं, अधिकांश सत्ता स्वयं जनता के ही हाथ में रहेगी जिसका वह अपने नित्य के जीवन में इस्तेमाल करेगी। इस प्रकार गांधीजी लोकतन्त्र को एक कदम आगे बढ़ाना चाहते थे। लोकतंत्र दलतंत्र या प्रतिनिधितंत्र होकर क्यों रह जाय? वह साझेदारी की व्यवस्था (डिमाक्रेसी आफ पार्टिसिपेशन) क्यों न बने? वोटर अपने वोट से दूसरों को अपना शासक बनाते हैं, तो वे सब मिलकर खुद अपनी व्यवस्था क्यों न चलायें?

गांधी, खादी, ग्रामदान, शांतिसेना और जगत् का भविष्य

•काका कालेलकर

गांधीजी ने स्वयं कहा था 'मेरी अनेकानेक रचनात्मक प्रवृत्तियों के ग्रहमंडल का सूर्य है खादी।

खादी का अर्थ 'हाथ से कते हुए सूत का हाथ करघा पर से बना हुआ कपड़ा'—इतना ही नहीं है। गांधी चाहते थे कि दुनिया 'खादी मानस' धारण करे। जिस तरह के संपूर्ण, निष्पाप, सर्व कल्याणकारी जीवन की झांकी बापूजी देश को कराना चाहते थे उस जीवन को ही वे खादी जीवन कहते थे। खादी जीवन ही सर्वोदय जीवन का प्रतीक है।

खेती के बाद सबसे विशाल सर्वोपयोगी उद्योग है वस्त्र निर्माण-कला। उसके द्वारा अगर कोई अधिक-से-अधिक मुनाफा करना चाहे और इसलिए उसमें यंत्रोद्योग की पद्धति दाखिल कर समाज में बेकारी फैला देवे तो वह राष्ट्रद्रोह है ऐसा जो समझे हैं उन्हीं के मानस को हम खादी-मानस कहते हैं। गांधीजी का सर्वोदय सिद्धान्त कहता है 'देश के सब लोगों को खाने खिलाने का प्रबन्ध किये बिना जो आदमी खाता है वह चोर है। वह पाप खाता है। उसका जीवन व्यर्थ है। मोघं पार्थ स जीवति। सबको खाना हम तब दे सकते हैं जब सबको राष्ट्रहित का कोई न कोई काम करने का मौका देते हैं। इस तरह करोड़ों को रोजी देने की शक्ति केवल खेती और खादी में है। खेती का काम गांवों में चलता है शहरों में नहीं। खादी का काम दोनों स्थान पर चल सकता है। गांव और शहर का सहयोग घनिष्ठ बनाने की शक्ति खादी में है।

सार्वभौम लोकभोग्य विज्ञान

एक दफा दस तकुवेवाला एक चरखा बनाने की सूचना आयी। इसके लिए लाख रुपए का इनाम भी घोषित किया गया। एक महाराष्ट्री वल्लक ने ऐसा चरखा तैयार किया। इनाम की शर्तों के अनुसार वह काम देता है या नहीं इसकी जांच करनी थी। गांधीजी ने विनोबाजी को और मुझको परीक्षक के तौर पर नियुक्त किया था, क्योंकि चरखे की यंत्र विद्या के हम दोनों माहिर गिने जाते थे। इसी के सिलसिले में जब आगे जाकर अम्बर चरखे का आविष्कार हुआ तब हम गांधीवादियों में बड़ा मतभेद हुआ। विनोबा ने और मैंने अम्बर चरखे का समर्थन किया। उस चरखे का तदरद पूरा विरोध करनेवालों में थे (और आज भी हैं) गांधीजी के भतीजे और आश्रम के किसी समय के व्यवस्थापक श्री नारायणदास गांधी। हम तो तरह-तरह की तकलियां, धनुषतकली, पुराने नये चरखे सबका प्रयोग कर चुके थे। अम्बर चरखे को घरेलू मिल का सांचा कहनेवाले को भी हमने सुना था। हमारा कहना था, जो आज भी सही है कि हम सार्वभौम लोकभोग्य विज्ञान का बहिष्कार नहीं कर सकते। आठ घंटे सूत कातनेवाले को पेट भरने जितनी रोजी मिलनी चाहिए जो अम्बर चरखे से ही मिल सकती है।

उसी सिलसिले में मैंने विरोधियों से सवाल पूछा था कि क्या हम खादी का परिष्कार रोककर देश में आदिवासियों का जीवन फिर से लाना चाहते हैं?

गांधीजी की सलाह नहीं मानी गयी। न मानने से हमारी राजनीति की दिशा बिलकुल दूसरी हो गयी। उस दूसरी दिशा में चलते चलते आज हम कहां से कहां पहुंच गये। नीचे यह बात ज्यादा स्पष्ट की गयी है।

१—उदारवादी राजनीति (गांधी से पहले)	विशिष्ट जन	प्रार्थना (प्रेयर)	बुद्धि शक्ति	तर्क
२—क्रांतिकारी राजनीति (गांधी)	बहुजन	दबाव (प्रेशर)	आत्म शक्ति	संकल्प
३—पार्लियामेंटरी राजनीति (नेहरू)	दल	शब्द प्रहार (पार्लेमिक्स)	वाक् शक्ति	कानून
४—गुटवादी की राजनीति (आज)	गुट	सौदेबाजी (प्राफिट)	क्षोभ शक्ति	स्वार्थ

इस से स्पष्ट हो जाता है कि अगर देश गांधीजी की बतायी हुई राह चलता होता तो 'बहुजन' के बाद 'सर्वजन' की मंजिल पर पहुंचता, लेकिन वह पहुंच गया गुटों के हाथ में। इस लोकतंत्र में कहां गयी लोक की शक्ति और कहां रह गया लोक का हित? इस राजनीति का नतीजा यह हुआ है कि जहां राजनैतिक क्षेत्र में सत्ता को अपने हाथ में रखने की दृष्टि से दलों और गुटों में तरह-तरह के 'कोएलिशन' बन रहे हैं वहां दूसरी ओर आर्थिक क्षेत्र में तरह-तरह के स्वार्थों के काम्बिनेशन हो रहे हैं। इन दोनों के कारण राष्ट्र के जीवन में हर जगह कान्फ्लिक्ट और 'कन्फ्यूजन' दिखाई देता है।

यह बात जानने की है कि गांधी को 'राजनीति' प्रचलित अर्थ में न सचर्य की है, और न संसद की। उसमें प्रमुखता न नेता की है, न सैनिक की। उसका आधार है नागरिक, उसी तरह जैसे गांधी का उपास्य है वह निराधिक मानव जिसे उन्होंने दरिद्रनारायण की उपाधि दी।

गांधी 'महाजन' थे। वह चाहते थे कि देश के सज्जन 'देश के जन' के साथ रहें। लेकिन 'सज्जन' जन से अलग हो गये। अलग होकर सज्जनों ने राजनैतिक सत्ता को लोकशक्ति के विरोध में खड़ा कर दिया, और देश की सम्पत्ति को जनता के शोषण का साधन बना दिया। और, शिक्षण-जैसी तो कोई चीज रह ही नहीं गयी।

लेकिन गांधीजी 'लोक' का जो बीज बो गये थे वह सब ग्रामदान के रूप में अंकुरित हुआ है। लोक अपने को पहचान रहा है। इस प्रतीति में से लोक शक्ति का जन्म होगा। छोटे छोटे समुदायों में सत्ता के बंटने से ही मनुष्य की मुक्ति का दरवाजा खुलेगा। रास्ता गांधीजी ने दिखा दिया है। यह मंजा ही है कि अब हम नयी तालीम करके गांधी तक पहुंच रहे हैं।•

विनोबा की खादी-निष्ठा

श्री विनोबाजी तो इससे एक कदम आगे गये। उन्होंने बाकायदा ईमानदारी से आठ घंटा चरखा चलाकर बाजार के हिसाब से जो कुछ मजदूरी मिल सकती थी उसके अन्दर ही जीने का तय किया था। तब उनका आहार घट गया था। पौष्टिक पदार्थ के अभाव में उनका स्वास्थ्य क्षीण हुआ था। बात गांधीजी के कानों तक पहुँची थी। तब देश भर में खादी का काम फैलाने का ही भार जिनके सिर पर था ऐसे लोगों को गांधीजी ने इकट्ठा किया, और विनोबा का उदाहरण उनके सामने रखकर सबसे अपील की कि सूत कातने-वाली कत्तिनों को जीवन-वेतन मिलना ही चाहिए। इससे खादी महँगी हुई तो वह ईश्वरापत्ति ही है। खादी सस्ती करने के लिए गरीबों का शोषण करने का पाप हमें नहीं करना है।

यह सारा किस्सा मैंने यहाँ पर इसलिए दोहराया है कि आप समझ लें कि श्री विनोबा खादी के साथ कितने एकरूप हो गये हैं। जो निष्ठा जीवन में उतरी नहीं वैसी तत्त्वनिष्ठा केवल तात्विक ही समझनी चाहिए।

आज विनोबाजी ने ग्रामाभिमुख खादी का विचार देश के सामने रखा है। शहर के लोग खादी कम पहनें या अधिक, (आजकल तो खादी का प्रचार शहरों में बिलकुल ही बढ़ नहीं रहा है) शहरों का जीवन खादी-जीवन के विरुद्ध ही है। खादी पहनकर शहर के लोग गाँवों को जिलाने का पुण्य हासिल कर सकते हैं। लेकिन शहरों का जीवन खादी-संस्कृति को बढ़ावा नहीं दे रहा है। 'शहर के लोग खादी पहनकर और खादी को बढ़ावा देकर अपना पाप कुछ हद तक धो डालें' इतनी ही अपेक्षा हम उनसे कर सकते हैं।

आत्मघाती कल-संस्कृति

जब मैं शहरी जीवन और खादी-विचार का चिन्तन करता हूँ तब मेरा खादी पर का विश्वास कहता है कि जिस तरह ऐटमबम ने युद्ध की विफलता ही सिद्ध की है, उसी तरह यंत्रोद्योगी बड़े-बड़े कल कारखाने जब सारी दुनिया में हरएक देश में समान रूप से फैल जायेंगे तब उनकी 'कल-संस्कृति' ही आत्म-घातक साबित होगी। (जब हमारे युगमूर्ति रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा कि सचमुच कल-कारखानों का कलयुग ही कलियुग है, तब उनके खयाल में नहीं आया होगा कि वे किसी दिन हमारी खादी के ही समर्थक होने वाले हैं।)

खादी के भविष्य-काल पर अटल विश्वास रखकर ही हम आज खादी का परिष्कार कर सकते हैं। आजकल का अदूर-दृष्टि जन-मानव खादी को सहन करता है केवल इसी-लिए कि उसके द्वारा हम गांधीजी के प्रति अपनी असीम कृतज्ञता व्यक्त कर सकते हैं। जब खादी युग के दिन सच्चे आयेंगे तब लोग दूसरी तरह से गांधीजी के प्रति कृतज्ञ होंगे कि उन्होंने हमें सत्यानाश से बचाया।

ग्रामदान : साम्यवाद का विकल्प

जिस तरह ग्रामोद्योग में खादी वैसे ही ग्रामदानमूलक सर्वोदय क्रान्ति के लिए ग्राम-दान भूदान है।

इसके बारे में मैंने कुछ विशेष लिखा नहीं है। बात सही है इस प्रवृत्ति के लिए मेरे समर्थन की आवश्यकता नहीं थी। हाँ, जब-जब मौका मिला, परदेश में मैंने भूदान-ग्रामदान के बारे में उत्साहपूर्वक व्याख्यान दिये हैं। पूर्व अफ्रीका में शायद कम कहा था। इजिप्त में, मैं समझता हूँ, मैंने सबसे पहले विस्तृत व्याख्यान दिया था। यूँ तो अमरीका में और जापान में भी कई दफे मैंने ग्रामदान का अर्थ समझाया है, और कहा है कि एक दिन *आयेगा जब ग्रामदान ही* कम्युनिज्म का स्थान लेगा। मैं हमेशा मानता आया हूँ कि ग्रामदान का लाभ जब जनता के अनुभव में आयेगा तब उसका प्रचार आप-ही-आप होने लगेगा। ग्रामदान की बात लोगों को समझाना आसान नहीं है। लेकिन वह काम तो हो सकेगा। असली कठिनाई है ग्रामदानी गाँव चलाने की। ऐसे निष्ठावान और कार्यकुशल सेवक मिलने चाहिए जो एक-एक गाँव को अपनाकर ग्रामदान रूपी सामाजिक क्रान्ति को सिद्ध कर सकेंगे। मेरा दृढ़ अभिप्राय है कि ग्रामदान को चलाने के लिए सरकार की अनुकूलता जरूरी भले ही हो, किन्तु सरकार रूपी संस्था ही जनता को कमोबेश निष्क्रिय बनाती है। "हमें वोट दो, टैक्स दो, बाकी का हम सब देख लेंगे, यही वृत्ति होती है आजकल की सरकारों की।"

और हम तो समाजवाद के नाम पर जनता का सारा जीवन ही सरकार के हाथ में सौंप देते हैं। सर्वोदयरूपी पब्लिक सेक्टर में सरकार की और उसके कानूनों की दखल-*गीरी होनी नहीं चाहिए। पब्लिक सेक्टर के* मानी ही है जनता का क्षेत्र। सरकारी तंत्र को ही हम पब्लिक सेक्टर कहकर विचार-भ्रान्ति कर रहे हैं। सब काम अगर सरकार अपने हाथ में ले ले तो उसे हम सरकारी सेक्टर अथवा गवर्नमेंट सेक्टर कह सकते हैं। पब्लिक सेक्टर का संचालन सार्वजनिक संस्थाओं के हाथ में ही होना चाहिए, न कि सरकार के। सर्वोदय को, ग्रामदान, जिलादान और राज्यदान को आप सरकार-निरपेक्ष सार्वजनिक समाजवाद कह सकते हैं। ग्रामदान इसी की पूर्व तैयारी है।

अहिंसक शान्ति सेना

और इसी का पूरक तीसरा कार्यक्रम है शान्तिसेना। यह नाम गांधीजी का दिया हुआ है। मुझे लगता है कि गांधीजी का विचार और भी स्पष्ट करने के लिए वह नाम बदलना होगा—'अहिंसक शान्तिसेना'। सुनता हूँ कि अमरीका में ऐसे शान्तिसैनिक भी हैं जो कोशिश करते हैं अपने देश में, और दुनिया में भी शान्ति की रक्षा हो। जानमाल सुरक्षित रहे और कोई किसी को परेशान न करे। लेकिन ऐसे लोग स्वयं शस्त्र धारण करके भी शान्ति की रक्षा करने की बात करते हैं। गांधीजी की शान्ति सेना स्वयं शस्त्रग्रहण नहीं करेगी। सशस्त्र फौज का सामना करना पड़े तो भी शस्त्र धारण किये बिना, हिंसा का प्रयोग किये बिना, केवल सत्याग्रह से वे सामना करेंगे। और उनका विश्वास रहता है कि उसमें उनको सफलता अवश्य मिलेगी ही। जिस शान्ति-सेना की हम यहाँ बात करते हैं वह किसी भी हालत में हिंसा के शस्त्र का उपयोग नहीं करेगी।

ऐसी शान्ति-सेना को उतना ही तालीम-बद्ध होना चाहिए, जितना शस्त्र सेना होती

है। लेकिन उसकी तयारी ही मलग किस्म की होगी। माजकल की फौजों के लिए शस्त्र तयार करके देना बडे खच का और विशाल मायोजन का काम होता है और फौज के लोगो को मच्छी तनखाह भी देनी पडती है। रहने के लिए मकान पहनने के लिए उम्दा पोशाक। फौज की सधाई (ट्रेनिंग) भी कम खच की नही होती। यह हो गय फौज के मामूली जवानो का खर्चा। लश्कर के मफसरो की सधाई का तो पूछना ही क्या? बर्षो तक वह चलती है। देश की रक्षा के लिए भाजकल इतनी बडी फौज रखी जाती है कि पुराने लोग स्वाव मे भी इतनी बडी संख्या का खयाल नहीं कर सकते थे।

लश्करी बोझ के बावजूद जनता अरक्षित

यह सारा खर्चा आज की सरकार बडी खुशी से करती हैं। केवल भारत की बात नहीं करता। सारी दुनिया की सरकारें फौज के पीछे अपनी नित्य बढ़ती हुई आमदनी का एक तिहाई अथवा ज्यादा खर्चा तो करती ही है। यह सब दखान्दाजी इतनी बढ़ रही है कि कोई उसके बारे में शिकायत करने का सोचता ही नहीं।

इतनी बडी फौज उसकी इतनी तैयारी उसका इतना खर्चा करने के बावजूद सरकार आश्वासन नहीं द सकतीं कि जनता सौ टका सुरक्षित है। इसलिए हर एक देश में नेशनल कैडेट कोर क मिलीशिया अथवा नेशनल कैडेट कोर क जसी योजनाएँ खडी करनी ही पडती हैं। जमनी में एसी राष्ट्रीय स्वयंसैनिक फौज में देश के लाखो जवान बडे उत्साह स दाखिल होते हैं और प्रशिक्षण लेते हैं।

एसी दुनिया में हम शांतिसेना की बात करने निकले हैं। व्यवहारचतुर और जिसे बाते पहचाननेवाला बडा आदमी गिना जाता है जो एक वाक्य मे गाधीजी की शान्ति-सेना की कल्पना को उडाकर रद्द करके उडा देता है।

जो लोग गाधीजी के प्रति हमसे अधिक वफादार हैं वे शान्तिसेना का नाम लेते हैं प्रयोग भी करते हैं और मानते हैं कि हमने बहुत कुछ किया। आज गाधीजी होते तो कहते कि तुम्हें जो ठीक लगता करते जाओ। लेकिन मेरी शान्तिसेना की कल्पना कुछ अलग ही थी। उसका तो आज खिलवाड हो रहा है।

एक दूसरे सन्दर्भ में जब गाधीजी फौज के लिए रगरूट भर्ती करते थे तब उन्होंने मांगा था मुझे हर एक गाँव से कम-से कम बीस आदमी चाहिए। पूरे आत्मविश्वास के साथ उन्होंने अपनी गुजरात में इसका प्रारम्भ भी किया था। लेकिन उनका जमाना अलग था। गाधीजी के सामने काम भी अलग थे गाधीजी ने शांतिसेना के संगठन का कार्य जब अपने साथियो के सामने तीन दफे रखा तीन दफे उन्होंने देखा कि वहाँ के साथी भी उत्साह नहीं बता रहे हैं तो शांतिसेना के प्रारम्भ का मुहूर्त नहीं आया

हम गांधी से दूर जा रहे हैं

जब गाधीजी स्वराज्य की साधना कर रहे थे तब अंग्रेजों का राज्य था। अंग्रेज देश की रक्षा के लिए बडी फौज रखते थे उनकी राज्य पद्धति बरखास्त किये बिना हमारे लिए कोई चारा नही था। गाधीजी के पुण्य प्रताप से स्वराज्य तो हो गया अंग्रेज यहाँ से चले गये लेकिन हम उन्हीं की राज्य पद्धति केवल बरदाश्त ही नहीं कर रहे हैं पसन्द करके उन्हीं की नौकरशाही के द्वारा स्वराज्य चलाकर भी अपने को राष्ट्रभक्त और गाधीवादी कहने लगे हैं। बीस बरस हुए अपनी सारी शक्ति लगाकर हम गाधीजी के रास्ते से दूर दूर जा रहे हैं और फिर भी गाधीजी का नाम लेते हैं और नयी जन्मशताब्दी का उत्सव करने मे करोडो के लीन रहे हैं।

मैं किसी के खिलाफ शिकायत नहीं कर रहा हूँ। गाधीजी स्वय देख चुके थे कि स्वराज्य तो हम पा चुके इस अर्थ में कि अंग्रेजों का राज्य यहाँ से हट गया। लेकिन जैसा हिन्दस्वराज्य वे चाहते थे उसकी स्थापना तो कोसो दूर है।

एक महत्त्व की चेतावनी

मैंने कहा है कि और देशो में शायद डिक्टेटरशिप आ सकती है। भारत में कभी भी नहीं आयेगी। न भारत की जनता एक जिनसी है न यहाँ फौज भी एकजिनसी है। अगर किसी ने यहाँ डिक्टेटर बनने का प्रयत्न किया तो उसके विरोध मे दो चार हरीफ तुरन्त खडे होगे और उनके पीछे भी फौज का और लोकमत का कमोबेश बल रहेगा जिससे या तो वे आपस मे लड मरेंगे या समझौता करके देश के टुकडे बन यगे। और अगर देश के टुकडे हुए तो देश के राज्याधिकार फौज के हाथ में गये बिना नहीं रहेंगे। यह सब अगर हम टालना चाहते हैं तो देश के चारित्र्य पर आधार रखनेवाली एक बडी शान्तिसेना अभी से हमें संगठित करनी होगी।

यह कोई आदर्श गाधीवाद की बात नहीं है। जो संकट नजर के सामने खडा हुआ है और बढ़ रहा है उसी के इलाज के तौर पर शांतिसेना का संगठन किये बिना चारा ही नहीं।

मैं नहीं मानता कि इस विचार को लोगो के मन मे ठसाने के लिए विशेष विवेचन की जरूरत है सयाना मरीज अपनी दवा तुरन्त पहचान लेता है। और उसे लेने मे देरी नहीं करता।●

गांधीजी ने कहा था :

जब तक मैं एक भी अन्याय को या एक भी दुःख को दीन बनकर चुपचाप देखता रहूँ तब तक मेरी आत्मा सन्तुष्ट होने से इनकार करती है। लेकिन मुझ जैसे एक दुर्बल अशक्त और दुखी प्राणी के लिए हर एक अन्याय को दूर करना या अपनी आँखों के सामने होने वाले सारे अन्यायों के दोष से अपने को मुक्त समझना मुमकिन नहीं है। मेरे भीतर की आत्मा मुझे एक तरफ खींचती है और देह दूसरी तरफ खींचती है। इन दोनो शक्तियों के बन्धन से मनुष्य मुक्त हो सकता है लेकिन वह मुक्ति धीरे धीरे और कष्टप्रद प्रयत्नों द्वारा ही प्राप्त होती है। किसी यंत्र की तरह अपने कर्म को बन्द करके मैं उस मुक्ति को नहीं पा सकता।●

रचनात्मक कार्यक्रम का सौरमण्डल और त्रिविध कार्यक्रम का केन्द्रबिन्दु

[गांधीजी ने चरखे को रचनात्मक कार्यक्रम का सौरमण्डल कहा था, किन्तु वर्तमान समाज चरखे को मान्य नहीं कर पा रहा है; क्योंकि वह स्वतंत्र तथा स्वावलम्बी ग्रामस्वराज्य के विचार को स्वीकार नहीं करता। अगर चरखे को समाज में अधिष्ठित होना है, तो उसके विचार यानी ग्रामस्वराज्य के विचार का उद्बोधन, अधिष्ठान और संगठन करना होगा। चूँकि बिना भावना और संकल्प के सार्वजनिक पैमाने पर कोई भी प्रवृत्ति चल नहीं सकती; अतएव चरखे के अधिष्ठान के लिए भी ग्रामभावना के उद्बोधन और ग्रामस्वराज्य के संगठन की आवश्यकता है। रचनात्मक जगत् के वरिष्ठ सदस्य श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने पूछे गये प्रश्नों के उत्तर में ग्रामदान को उसका प्रारम्भ-बिन्दु और आधार-भूमि माना है। —सं०]

धीरेन्द्र मजूमदार

प्रश्न—गांधीजी ने चरखे को रचनात्मक कार्यक्रम का सौरमण्डल कहा था। विनोबाजी ने त्रिविध कार्यक्रम को रचनात्मक कार्यक्रमों का सार-तत्त्व माना और ग्रामदान को त्रिविध कार्यक्रम का सौरमण्डल। इस प्रकार नये सन्दर्भ में रचनात्मक कार्यक्रम के सौर-मण्डल में चरखे का स्थान ग्रामदान ने ले लिया है, ऐसा दीखता है। कुछ लोग चरखे को गांधी के दरिद्रनारायण का प्रतिनिधि मानते हैं। वे मानते हैं कि रचनात्मक कार्यक्रम के सौर-मण्डल के केन्द्र में ग्रामदान को स्थापित करने पर दरिद्रनारायण का प्रतीक हमारी नजरों से ओझल हो जायेगा और गांधी के सपने का समाज नहीं बन सकेगा।

उत्तर—दरिद्रनारायण नाम से कोई तत्त्व स्थायी रहे, यह चरखे के विचार के विपरीत है। चरखे और दारिद्र्य के सह-अस्तित्व की कल्पना गांधी ने नहीं की थी। अगर उन्होंने कभी-कभी कहा भी है कि चरखा गरीबों का सहारा है तो वह तत्कालिक परिस्थिति के सन्दर्भ में ही कहा है। लेकिन उन्होंने हमेशा यह कहा है कि चरखा अहिंसा का प्रतीक है और स्वराज्य का साधन है। इसी विचार के आधार पर स्वराज्य की अर्थनीति का चित्र प्रस्तुत करते हुए उन्होंने चरखे को सूर्यरूप में केन्द्र में रखकर ग्राम-उद्योग के विचार यानी स्वावलम्बी अर्थव्यवस्था के विचार का प्रतिपादन किया।

गांधीजी की कल्पना के स्वराज्य में ग्राम स्वराज्य प्राथमिक इकाई के रूप में केन्द्र में अवस्थित है। इस स्थिति के अधिष्ठान के लिए आवश्यकता इस बात की है कि समाज इस विचार को माने और गांव के नागरिकों के दिल में ग्राम-भावना पैदा हो। केवल ग्राम-भावना ही नहीं, बल्कि स्वतंत्र ग्राम-स्वराज्य की भावना का विकास हो। वस्तुतः आज समाज चरखे को जो मान्य नहीं कर पा रहा है वह इसलिए कि वह स्वतंत्र तथा स्वावलम्बी ग्राम स्वराज्य के विचार को स्वीकार नहीं कर पा रहा है। जबतक समाज में विचार की स्वीकृति नहीं होगी तबतक विचार के लिए आवश्यक प्रवृत्तियों को कोई भी स्वीकार नहीं करेगा। बिना ग्राम स्वराज्य की भावना पैदा किये अगर हम गांधीजी के नाम से और उनकी स्मृति-रक्षा के लिए चरखे का प्रचार करते रहेंगे तो समाज उसको स्वीकार नहीं करेगा। अतएव अगर चरखे को समाज में अधिष्ठित करना है तो उसका विचार यानी स्वावलम्बी ग्रामस्वराज्य का विचार तथा सैन्य और शस्त्र-निरपेक्ष अहिंसक समाज के विचार का समाज में उद्बोधन, अधिष्ठान और संगठन करना होगा।

ग्रामदान-आन्दोलन इसी भावना के उद्बोधन का आन्दोलन है। इसीलिए विनोबाजी ग्रामदान, ग्राम-खादी और शान्ति-सेना के त्रिविध कार्यक्रम को मुख्य रूप में पेश करते हैं। पहले ग्रामदान से ग्राम-स्वराज्य का संकल्प होता है फिर ग्राम-स्वराज्य के संगठन के लिए चरखा-केन्द्रित स्वावलम्बी अर्थनीति की आवश्यकता होती है। फिर उसे शस्त्र-निरपेक्ष शक्ति से टिकाये रखने के लिए शान्ति-सेना का संगठन अनिवार्य हो जाता है।

इस प्रकार जब आप गहराई में विचार करेंगे तो स्पष्ट हो जायेगा कि ग्रामदान दरिद्रनारायण की सेवा के लिए भी प्राथमिक आवश्यकता है, क्योंकि बिना भावना और संकल्प के सार्वजनिक पैमाने पर कोई भी प्रवृत्ति चल नहीं सकती।

प्रश्न—ग्रामदान द्वारा ग्राम-भावना तथा ग्राम-स्वराज्य के विचार का उद्बोधन होगा यह बात तो समझ में आती है, लेकिन इसका लाभ गांव के दरिद्रनारायण को ही पहले प्राप्त होगा यह अनिवार्य कैसे माना जा सकता है? ग्रामदान की घोषणा के दौरान गांव के संगठित स्वार्थवालों का भरपूर सहयोग लेने की कोशिश की जाती है। ग्राम-भावना का अधिक-से-अधिक लाभ भी वे ही लोग उठायेंगे, यह क्या सम्भव नहीं है?

उत्तर—ऐसा नहीं होगा। जब ग्रामदान होने पर गांव के सब लोग यह संकल्प करते हैं कि सबको रोजी-रोटी देने की जिम्मेदारी हमारी है तो जिसे आप दरिद्रनारायण कहते हैं उनके लिए चरखा-केन्द्रित ग्राम-उद्योग का संगठन करना अनिवार्य हो जाता है। ग्रामदान की शर्त के अनुसार भूमिहीनों को बीसवां हिस्सा जमीन देने का कार्यक्रम चरखे के कार्यक्रम के अलावा होता है।

इस तरह ग्रामदान से दरिद्रनारायण की सेवा समाज की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी होती है। केवल चरखे की संख्या बढ़ाने का काम संस्थाओं का होता है। समाज इसे अपनी जिम्मेदारी तब समझेगा जब वह गांधीजी की कल्पना के अनुसार ग्राम-स्वराज्य के लिए स्वावलम्बी औद्योगिक संगठन के मध्यबिन्दु के रूप में चरखे को मान्य करेगा।

अगर आप तात्कालिक परिस्थिति के सन्दर्भ में भी सोचते हैं और समझते हैं कि चरखा दरिद्रनारायण की सेवा का साधन है तब भी आपको समाज द्वारा इसके विचार को मान्य कराना होगा; नहीं तो केवल किसी अवतार-पुरुष के नाम से उसे चलाना चाहेंगे तो वह अन्ततोगत्वा एक साम्प्रदायिक कर्मकाण्ड के रूप में रहेगा सामाजिक कार्यक्रम के रूप में वह टिक नहीं सकेगा। अतएव चरखे के प्रचार के लिए भी ग्रामदान को प्राथमिकता देनी होगी।●

गांधी ने कहा था एक साल में स्वराज्य
विनोबा ने कहा है गांधी जन्म-शताब्दी तक राज्यदान

[गांधीशताब्दी तक राज्यदान के संकल्प 'एक साल में स्वराज्य' की बापू की संकल्पना की ही आगे की कड़ियाँ हैं। उस समय काल की माँग थी 'स्वराज्य' की। 'स्वराज्य से कम कुछ भी नहीं' चाहिए था। आज कालपुरुष की माँग है ग्रामस्वराज्य की, इससे कम कुछ भी नहीं चाहिए। 'राज्यदान' के संकल्प हमें इस ओर बढ़ने की प्रेरणा, साहस और शक्ति दे रहे हैं। प्रस्तुत है इस भाव को सशक्त बनानेवाला श्री जयप्रकाश नारायण का विचार, जिसे उन्होंने महाराष्ट्र सर्वोदय सम्मेलन में कार्यकर्ताओं के सामने व्यक्त किया था। —सं०]

गोपुरी के अधिवेशन में विनोबाजी ने 'तूफान' की बात कही और बिहारवालों से कहा कि आप तूफान खड़ा करोगे तो मैं बिहार आ सकता हूँ। हम लोगों ने उस माँग को स्वीकार कर तीन महीने में दस हजार ग्रामदान प्राप्त करने का संकल्प किया। मुझे लगता है कि इस तरह का, अपनी शक्ति के बाहर का, ऐसा संकल्प हमने नहीं किया होता तो न बिहार इतनी दूर गया होता जैसा आज गया है और न देश का आन्दोलन इतनी दूर गया होता और न साठ हजार ग्रामदान प्राप्त हुए होते। इसीलिए महाराष्ट्र के कार्यकर्ताओं से मैं कहना चाहता हूँ कि वे प्रदेशदान का संकल्प करें, क्योंकि हम बहुत बड़ा संकल्प करते हैं तो ताकत आती है। आप हिसाब कर रहे हैं कि अपनी शक्ति कितनी है। आप तौल रहे हैं। बिहार में हम इस तरह तौलते नहीं। आप अगर अपनी शक्ति को देखकर ही काम करेंगे तो इस काम के पीछे जो युग का प्रवाह है, उस शक्ति की तरफ आपका ध्यान नहीं जायेगा। बाबा जिसे ईश्वर की शक्ति कहते हैं, वह इसके पीछे नहीं होती तो यह काम नहीं होता। उसी शक्ति से यह सारा काम हो रहा है और हम निमित्त मात्र हैं।

संकल्प का सम्बल

जब बिहारदान का संकल्प हुआ उस वक्त वह कठिन मालूम होता था। मैंने कहा कि मैं भी तीन महीने के लिए विदेश जा रहा हूँ, इसलिए सन् १९६८ की दो अक्तूबर के बजाय १९६९ की दो अक्तूबर तक बिहारदान करने का संकल्प करेंगे तो शायद यह काम पूरा हो जायेगा। बाबा ने एक ही बात कही कि गांधीजी ने एक बरस में स्वराज्य की बात कही थी या दो बरस में? मेरे लिए वह उत्तर काफी था और दो अक्तूबर १९६८ तक बिहारदान का संकल्प करने की बात मुझे जँच गयी। आप सन् १९२१ का जमाना देखिए। उस वक्त अंग्रेजी साम्राज्य चट्टान जैसा दीखता था। लेकिन एक नेता ऐसा निकला जिसे दूर का दर्शन था। उसने कहा कि एक बरस में स्वराज्य हासिल करेंगे। मेरा मानना है कि गांधीजी ने एक बरस में स्वराज्य की बात नहीं कही होती तो सत्ताइस बरस में भी स्वराज्य नहीं होता। अंग्रेजी

जयप्रकाश नारायण

राज्य को हम खत्म कर सकते हैं, इतने जल्दी खत्म कर सकते हैं, यह सोचने की हिम्मत भी नहीं होती।

गांधीवालों का फर्ज

यहाँ पर रचनात्मक संस्थाओं के नेता भी अभी सोच ही रहे हैं। लेकिन मैं मानता हूँ कि सारे रचनात्मक कार्यक्रम में लगे हुए कार्यकर्ताओं का पहले से ही यह कर्तव्य है। वे सब इसी विचार के वाहन हैं और उन्हें आईन्दा इसी विचार का प्रचार करना है। घानी चलाना, तेल बेचना, खादी के जरिए कुछ लोगों को काम देना—ये सारे कल्याण के काम तो राज्यवाले भी करते हैं, वही काम आप करते रहेंगे तो क्या आप अपने कर्तव्य का पालन करेंगे? इसलिए रचनात्मक संस्थावाले गांधी निधिवाले इन सबको अपनी पूरी शक्ति इसमें लगानी चाहिए और संकल्प करना चाहिए कि २ अक्तूबर १९६९ तक महाराष्ट्रदान करेंगे। जब बिहारदान की बात चली और हमने कहा कि २ अक्तूबर १९६८ के बजाय १९६९ की तारीख रखी जाय तो धीरेन्द्रभाई ने कहा कि जैसे हम सारे बने हैं, १९६९ की २ तारीख रखने से, १९६८ तक हम धीरे धीरे चलेंगे और १९६९ जनवरी के बाद याद आयेगा कि अक्तूबर तक काम पूरा करना है, तो फिर जोर लगेगा। इसलिए १९६८ रखेंगे तो अभी से जोर लगेगा।

लक्ष्यांक क्यों?

कभी कभी कुछ लोग कहते हैं कि यह लक्ष्यांक (टारगेट) क्या है, इतने महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए लक्ष्यांक की बात करना खेल लगता है। लेकिन इस तरह लक्ष्यांक की आवश्यकता इसलिए पड़ती है कि हम सब जो गांधी-समाज के लोग हैं हमारे अन्दर वह आग नहीं जल रही है, जो विनोबाजी के अन्दर जल रही है। वह जलती होती तो कोई आवश्यकता नहीं होती यह तय करने की कि फलानी तारीख तक बिहारदान करेंगे। स्वराज्य के बाद, गांधी विचारवालों के सामने कई काम आये और वे कई पक्षों में बँट गये। स्वराज्य की लड़ाई के समय जो एकाग्रता थी एक ही केन्द्र बिन्दु था, स्वराज्य का, वह आज नहीं है इसलिए इस प्रकार के प्रेरणादायी संकल्प की आवश्यकता पड़ती है। अगर आप लोग निर्णय लेते हैं कि हम महाराष्ट्रदान का संकल्प कर रहे हैं तो एकदम उत्साह आयेगा और हम दूसरे ढंग से सोचने लगेंगे।

क्रांति का वाहन

मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि ग्रामदान-क्रांति का प्रवाह तेजी से बढ़ता रहे यह हमारा मुख्य काम है। यह काम हमें कोई दस-बीस साल में नहीं करना है जल्द-से जल्द करना है, अन्यथा इतिहास हमें पीछे छोड़कर आगे बढ़ जायेगा। इसलिए समझने

की बात है, महाराष्ट्रदान का काम दस-बीस बरस में नहीं, दो एक बरस में ही करना है। यह काम हम करते रहें और इसके साथ-साथ थोड़ा पुष्टि वगैरह का काम कर सकते हैं तो करें। हमने कोई 'एलाइज' (मित्र) पैदा किये हों, राजनैतिक दलवाले शिक्षक आदि, तो उन्हें पुष्टि वगैरह का काम सौंपें। क्रांति का महत्त्वपूर्ण लक्ष्य यह है कि परिवर्तन तेजी के साथ हो, तीव्र गति से हो और व्यापक हो। परिवर्तन बीस बरस में भी हो सकता है, लेकिन उसे क्रान्ति नहीं कहते। उसी तरह से हम बीस प्रतिशत गाँवों में क्रान्ति करके बैठें तो देश में क्रान्ति नहीं होगी। देश के साढ़े पाँच लाख गाँवों में क्रान्ति होनी चाहिए, और तीव्र गति से होनी चाहिए। व्यापकता में शक्ति होती है। आज हम थोड़े में लोग दीखते हैं, लेकिन आन्दोलन बनता है तो काम फैलेगा, नये लोग आयेंगे, जैसे गांधीजी के आन्दोलन में आते थे। हम देखते हैं कि कहीं-कहीं नये-नये लोग आते हैं तो अपनी जमात के पुराने लोग घबड़ाते हैं कि हमारा क्या होगा? लेकिन नये लोगों को मौका देना चाहिए। सोचने की बात है कि 'कासोलिडेशन' चाहिए, यह कहकर उसके पीछे पड़े और यह भी न हो और प्राप्ति में भी तीव्रता न आये तो क्या रहा हाथ में? इसलिए समझना चाहिए कि ग्रामदान-प्राप्ति में तीव्रता आनी चाहिए।

राज्यदान के बाद?

आज दिल्ली में क्या हो रहा है? बहुत से महत्त्व के प्रश्नों के उत्तर 'कान्सेन्सस' (सर्वानुमति) के बगैर नहीं हासिल हो सकते हैं। पाकिस्तान, चीन, नागालैण्ड का प्रश्न, भाषा का प्रश्न, इन सब प्रश्नों के उत्तर कोई एक पार्टी नहीं दे सकती है। संसद में सबसे बड़ा पक्ष है कांग्रेस, लेकिन उस पक्ष के अन्दर भी कुछ तय करने के लिए 'कान्सेंसस' (सर्वानुमति) की जरूरत होती है, और वहाँ तय होता है, तो भी कांग्रेस की आज यह शक्ति नहीं है कि वह किसी भी एक प्रश्न को हल कर दे। नागालैंड का छोटा सा प्रश्न भी वह हल नहीं कर सकती है। हर प्रश्न के लिए 'कान्सेन्सस' (सर्वानुमति) की जरूरत है। हमने देखा कि संविद सरकारें बनीं, उनमें क्रान्तिकारी लोग बैठे, लेकिन 'कान्सेन्सस' नहीं बना, इसलिए वे एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सके। आज देश भूखा है, नंगा है, इसलिए सब पार्टियों को मिलकर एक राय बनानी होगी। आज देश की परिस्थिति में यह जरूरी है कि भूमिवान, भूमिहीन और साहूकार, सब मिलकर ग्रामसभा में बैठें और सोचें।

क्रांति का काम : विचार फैलाना

चूँकि मैं साम्यवाद और लोकतांत्रिक समाजवाद में से इस आन्दोलन में आया हूँ, तो क्रांति के लिए मुझमें कोई कम तड़पन नहीं है। लेकिन अगर मुझे चुनाव करना पड़ेगा कि जो ग्रामदान हुए हैं, उनमें बैठकर कुछ काम करना है या जो गाँव ग्रामदान नहीं हुए, उन्हें ग्रामदान कराना है, तो मैं ग्रामदान कराना ही पसन्द करूँगा। हमें खुशी है कि प्राप्ति के बाद वे पुष्टि का काम करें। बाबा ने कहा कि पुष्टि हो गयी यानी ग्राम-निर्माण हो गया। जिला-अधिकारी, पंचायत समितिवाले, शिक्षक आदि सब लोगों को पुष्टि का काम करना चाहिए। वे हमसे कहें कि पंजीकरण वगैरह सब काम हम करेंगे और क्रान्ति का काम, यानी विचार फैलाने का काम आप करें।

आप से निवेदन है कि आप महाराष्ट्रदान के बारे में आज ही निर्णय कीजिए। केवल अपनी शक्ति को देखकर, अपने ही भरोसे यह निर्णय नहीं करना है, कुछ इस विचार के भरोसे पर, कुछ गांधीजी की शताब्दी के भरोसे पर, और कुछ काल-पुरुष के भरोसे पर, निर्णय करें तो मैं मानता हूँ कि अगले साल, २ अक्तूबर तक महाराष्ट्रदान हो सकता है, जो आज कठिन लगता है। रचनात्मक कार्यकर्ताओं को यह काम उठाना चाहिए। गांधीजी आज होते तो इन रचनात्मक कार्यों को कुछ नया रूप देते। 'इंटीग्रेटेड डेवलपमेंट' (क्षेत्रीय विकास) आदि की बात हम कहते हैं, लेकिन अपने को छोटे-से घरौंदे में रखते हैं। वास्तव में निर्माण करना है तो प्रखण्ड-दान, या जिलादान होना चाहिए, तभी आप के काम के लिए व्यापक आधार मिलेगा। स्वावलम्बन करना है तो कम-से-कम प्रखण्ड या क्षेत्र तो मिलना ही चाहिए। नहीं तो व्यक्तिगत स्वावलम्बन करना हो तो कुछ व्रती लोग करते रहेंगे। महाराष्ट्र और गुजरात में ऐसे व्रती ज्यादा हैं। लेकिन अभी हमें समग्र विकास की बात सोचनी चाहिए, 'रूरल डेवलपमेंट' करना चाहिए। 'कम्युनिटी डेवलपमेंट' का उद्देश्य सफल नहीं हुआ, क्योंकि 'कम्युनिटी' ही नहीं बनी तो 'डेवलपमेंट' कैसे होगा? एस० के० डे० ने कहा था कि ग्रामदान के द्वारा 'कम्युनिटी' बनती है, तब 'डेवलपमेंट' होगा। हम सर्वांगीण दृष्टि से विचार करते हैं तो काम करने के लिए कुछ भूमिका चाहिए, जो ग्रामदान से मिलेगी।●

जे० पी० आजकल लंकादहन करते फिर रहे हैं।—विनोबा

वर्तमान जागतिक संदर्भ और गांधी दिशा

[गांधी विचार और पद्धति वर्तमान जागतिक संदर्भ में कितनी प्रबल और प्रभावकारी है यह चेकोस्लोवाकिया की घटनाओं से स्पष्ट होता है। साथ ही चेकोस्लोवाकिया की जनता के निर्भय निःशस्त्र प्रतिकार से इस बात का भी दर्शन होता है कि दुनिया भर के जन हृदय में किस तरह गांधीत्व पल और पुस रहा है। लीजिए प्रस्तुत है श्री सतीशकुमार द्वारा चेकोस्लोवाकिया के पड़ोसी देश जर्मनी से भेजा हुआ यह नोट।—सं०]

चेकोस्लोवाकिया ने पिछले दिनों विश्व के राजनैतिक समीक्षकों को अंधकार और आश्चर्य में डाल दिया। घटनाएं इतनी तेजी से घट रही थीं और परिस्थितियों में इतना विरोधाभास था कि किसी भी स्पष्ट नतीजे पर पहुंचना आसान नहीं है। इस सारी उथल-पुथल के पीछे किसका हाथ है यह शायद कभी नहीं जाना जा सकेगा। पर इस सचाई को झुठलाया नहीं जा सकता कि चेक और स्लोवाक जनता विद्यार्थी बुद्धिजीवी और सामान्य जन स्वातंत्र्य के लिए लालायित है। मुक्ति की इस अदम्य लालसा को यदि थोड़े समय के लिए भी दबाना हो तो टैंकों और मशीनगनों का सहारा लिये बिना वह संभव नहीं है। पर चेकोस्लोवाकिया की घटनाओं ने यह सिद्ध कर दिया है कि अहिंसक प्रतिकार की जनशक्ति के सामने ये टैंक और मशीनगन अव्यावहारिक निकम्मे तथा पुराने फैशन के हो गये हैं।

जब वारसा संधि की लालसेना ने चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग सहित सभी प्रमुख शहरों पर कब्जा कर लिया तब सामान्य जनता के सामने दो ही रास्ते थे या तो संपूर्ण समर्पण या अहिंसक प्रतिकार एवं सेना के साथ संपूर्ण असहयोग! सन् १९५६ में इसी तरह रूसी टैंक हंगरी पहुंचे थे पर हंगरी ने टैंक का जवाब बंदूक से दिया और परिणामस्वरूप एक भयंकर रक्तपात हुआ और स्वतंत्रता की शक्तियों को समाप्त कर दिया गया। पर चेकोस्लोवाकिया की जनता ने टैंक का जवाब फूलों से दिया और इसलिए टैंकों को अपनी ताकत दिखाने का अवसर ही नहीं मिला। हालांकि लालसेना ने पार्लियामेंट हाउस राष्ट्रपति भवन रेडियो-स्टेशन आदि सभी प्रमुख स्थानों पर कब्जा कर लिया था पर स्वातंत्र्यवादियों ने जनशक्ति के अद्भुत समर्थन के साथ आश्चर्यजनक तेजी से एक अंडरग्राउंड आंदोलन संगठित किया। ये स्वातंत्र्यवादी आपस में बराबर संपर्क कायम रखने में सफल हो सके और स्वातंत्र्य-शक्तियां तथा जनता को संगठित रख सकने में कामयाब हो सके। तरुण बुद्धिजीवी और विद्यार्थी सोवियत-सैनिकों को समझाने लगे कि सचमुच चेकोस्लोवाकिया पर कोई खतरा नहीं है और सैनिक नियंत्रण की कोई जरूरत नहीं है। दीवारों पर बड़े बड़े पोस्टर तथा नारे लिखे जाने लगे कि 'दुबचेक जिंदाबाद!' 'रूसी सेना वापस जाओ' इत्यादि। ये तरुण

सतीशकुमार

रूसी टैंकों पर भी नारे लिखने लगे। कुछ तरुण तो टैंकों के सामने लेट गये और टैंकों को आगे बढ़ने से रोक दिया।

यूरोप में पहली बार

अहिंसक प्रतिकार का ऐसा उदाहरण शायद यूरोप ने पहली बार प्रस्तुत किया है। चतुर कम्युनिस्टों ने आशा की थी कि भीमकाय टैंकों को देखते ही सामान्य जन भयभीत होकर घुटने टेक देगा पर दो तीन दिन में ही सोवियत कमाण्डरों और कम्युनिस्ट नेताओं ने देख लिया कि भले ही औपचारिक तौर पर उन्होंने चेक धरती पर कब्जा कर लिया हो किंतु असलियत में चेक-जनता की स्वातंत्र्यलालसा को दबाना और सामान्य जन के दिलों पर कब्जा करना असंभव है। ११०० उदारवादी कम्युनिस्ट प्रतिनिधियों ने सोवियत टैंकों की छाया के बावजूद प्राग में कम्युनिस्ट पार्टी का एक अण्डरग्राउंड अधिवेशन करके पार्टी के नियमों के अनुसार नयी कार्यकारिणी का चुनाव भी कर डाला। इस नयी कार्यकारिणी में अधिकांश स्वातंत्र्यवादी सदस्य चुने गये। भले ही बाद में इस कार्यकारिणी को सोवियत प्रभाव के बीच अस्वीकार कर दिया जाय पर इस साहसिक कदम ने स्वातंत्र्यवादियों की निर्भीकता और निष्ठा की छाप तो इतिहास के पन्नों पर डाल ही दी। दाढ़ी और लम्बे बालोंवाले अनेक हिप्पी और बीटनिक तरुणों ने कर्फ्यु भंग कर के प्राग के प्रमुख बाजारों में प्रदर्शन किये धरने दिये और २४ घंटे का अनशन किया। सामान्य जनता के इन प्रतिनिधियों को यदि लालसेना हटाने की कोशिश करती तो वह अपने ही कृत्य से अपने को झूठी साबित करती कि हम तो सामान्य जनता की मुक्ति के लिए यहां आये हैं।

जनशक्ति की प्रबलता

चेक-जनता ने हिंसा का प्रतिकार हिंसा से नहीं किया उन्होंने अपना साहस नहीं खोया। एकता नहीं टूटने दी। अपनी राजनीतिक गतिविधियों को बंद नहीं किया। उदारवादी नेताओं ने पार्लियामेंट का अधिवेशन पार्टी का अधिवेशन मजदूर संघों का अधिवेशन ऐसे चालू रखा मानो देश में सोवियत सेना है ही नहीं। इन अधिवेशनों में एक स्वर में सबने यही मांग की कि वारसा संधि की सेना वापस जाये और चेक सरकार को अपनी समस्याओं में सुलझाने का निबटने का अवसर दिया जाय। जनशक्ति ने दुनिया के लोकमत पर सोवियत-सेना पर तथा कम्युनिस्ट नेताओं पर एक जबर्दस्त नैतिक प्रभाव डाला।

भले ही सोवियत-टैंकों ने रेडियो-स्टेशन की इमारत पर कब्जा कर लिया था पर फ्री चेकोस्लोवाकिया रेडियो की आवाज यूरोप भर में निरन्तर सुनायी देती रही। सोवियत-सेना इस अंडरग्राउंड रेडियो का पता लगा सकने में पूरी तरह असमर्थ और असफल रही। इस 'फ्री रेडियो' और पश्चिमी यूरोप में चेक-समाचार प्रसारित करनेवाले रेडियो-स्टेशनों की आवाज को जाम करने

के लिए विभिन्न मशीनों तथा अन्य सामानों को लेकर आनेवाली सोवियत ट्रेनों को चेकोस्लोवाकिया में २४ घंटे लेट कर दिया गया। रेल-कर्मचारियों ने छोटे-छोटे ऐक्सीडेंट करके इंजिन में खराबी बता करके अथवा अन्य किसी बहाने से रेलों को धीरे चलाया। सैनिक ट्रकों में भर-भर कर जब चेकोस्लोवाकिया की धरती पर पहुँचने लगे तो लोगों ने सड़कों पर से रास्ते बतानेवाले निशान या तो हटा दिये या उल्टी तरफ लगा दिये। गांवों और नगरों के नामोंवाले साइनबोर्ड भी हटा दिये गये, ताकि सोवियत-सेना के पहुँचने में देर हो जाय और इस सम्बन्ध में जनता को ठीक तरह से आगाह कर दिया जाय।

बड़े और विकसित देशों की छोटी और अविकसित राजनीति

इन घटनाओं के प्रतिकार की यह घटना पूरे यूरोप में अद्भुत मानी जा रही है और कुछ लोग तो इस प्रतिकार की तुलना गांधीवादी या मार्टिन लूथर किंगवादी प्रतिकार के साथ कर रहे हैं। जहाँ चेक जनता इस तरह के अहिंसक प्रतिकार के लिए प्रशंसा और बधाई की पात्र है, वहाँ टैंकों के बल पर राजनीतिक खेल रचनेवाले दया के पात्र हैं। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' के सिद्धान्त पर चलनेवाले ये राजनीतिक लोग अभी भी बार्बरिक युग में जी रहे हैं। कुछ समय पहले डोमिनिक रिपब्लिक में अमेरिका ने ठीक ऐसा ही खेल किया था। वहाँ अमेरिका जनतंत्र की रक्षा के लिए पहुँचा था। इस समय वियतनाम में अमेरिकी दखल भी ऐसा ही भद्दा राजनीतिक खेल है। वियतनाम में जनतंत्र की रक्षा का दायित्व अमेरिका संभाल रहा है, टैंकों और बमों के बल पर तथा हजारों मनुष्यों की मौतों के मूल्य पर। रूस चेकोस्लोवाकिया में 'समाजवाद' की रक्षा का दायित्व पूरा कर रहा है, टैंकों के बल पर। यह है इन 'विकसित' और 'बड़े' देशों की 'विकसित' और 'बड़ी' राजनीति, जिसे छोटा सामान्य आदमी समझ नहीं पाता। न तो विशाल अमरीकी सेना वियतनाम में विजयी हो सकती है और न लाल सेना चेकोस्लोवाकिया को दबा सकती है। पर यह छोटी-सी बात मोटी अक्ल के राजनीतिक समझ नहीं पाते।●

भूमि-समस्या और ग्रामदान

गांधीजी ने १९४५ में लिखा था :

"किसान याने भूमि जोतनेवाला, चाहे वह भूमिधारी हो या भूमिहीन श्रमिक, सर्वप्रथम आता है। वही भूमि का नमक अथवा प्राण है, अतः उसका वास्तविक अधिकारी भी वही है, न कि वह जो केवल मालिक है और जोतता नहीं। लेकिन अहिंसक पद्धति में भूमिहीन श्रमिक न जोतनेवाले मालिक को जबरन् बेदखल नहीं करेगा। उसकी कार्य-पद्धति ही इस प्रकार की होगी कि जमींदार द्वारा उसका शोषण असम्भव हो जाय। इसमें किसानों के परस्पर निकटतम सहकार-सद्भाव की अनिवार्य आवश्यकता है। इसके लिए जहाँ भी जरूरत हो, विशेष संगठन या समितियाँ बनायी जायँ। हमारे ज्यादातर किसान बे-पढ़े-लिखे हैं। प्रौढ़ों व स्कूल जाने लायक उम्र के नौजवानों को शिक्षित करना होगा। भूमिहीन श्रमिकों का वेतन-मान इतना तो ऊँचा उठना ही चाहिए, जिससे कि वे एक सामान्य सुखप्रद जीवन बिता सकें। इसका अर्थ है कि उनको संतुलित आहार मिले, रहने को मकान तथा पहनने को कपड़े हों, और उनकी स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।"

आप इन करोड़ों किसान भाइयों को अपने पाँवों पर खड़ा होने के लिए समर्थ करने में क्या कर रहे हैं?

ग्रामदान वह कार्यक्रम है, जिसके जरिए आप अहिंसक पद्धति से यह कर सकते हैं।

सन् १९६९ गांधीजी की जन्म-शताब्दी का साल है।

आइए, हम सब तुरन्त इस काम में जुट जायँ।

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति द्वारा प्रसारित

चेकोस्लोवाकिया : निःशस्त्र वीरता का उदाहरण

• दादा धर्माधिकारी

[छोटे से देश चेकोस्लोवाकिया के पास ३ लाख की आधुनिकतम शस्त्रों से सुसज्जित सेना है, लेकिन बावजूद इसके २१ अगस्त '६८ को जब सोवियत रूस के नेतृत्व में वारसा-सन्धि के देशों की सेनाओं ने अचानक चेकोस्लोवाकिया पर अधिकार कर लिया, तब एक ओर यह प्रश्न उठा कि इतनी बड़ी सेना और उसके खर्च का इतना भारी बोझ जनता क्यों ढोती है, जब कि सेना बाहरी आक्रमण से सुरक्षा की गारण्टी नहीं दे सकती? और दूसरी ओर चेकोस्लोवाकिया की जनता ने निःशस्त्र प्रतिकार का जो पराक्रम किया उसमें दुनिया ने पहली बार जनता की शक्ति को विदेशी आक्रमण का प्रतिकार करते देखा। गांधीजी ने विदेशी सत्ता से मुक्ति के लिए जनता की निःशस्त्र शक्ति पैदा की थी, कहना न होगा कि चेकोस्लोवाकिया द्वारा किया गया निःशस्त्र प्रतिकार उसी सिलसिले की एक कड़ी है। प्रखर चिंतक आचार्य दादा धर्माधिकारी का प्रस्तुत संवाद इस बात को पुष्ट करता जान पड़ता है।—सं०]

प्रश्न—रूस की सेना के चेकोस्लोवाकिया में प्रवेश करने पर वहाँ की जनता ने जिस अवज्ञा और असहयोग का आयोजन किया था, क्या उसे अहिंसक प्रतिकार माना जायेगा?

उत्तर—गांधीजी ने अहिंसक प्रतिकार की जो मर्यादाएँ और जो लक्षण बतलाये थे, उनकी दृष्टि से शायद हम चेकोस्लोवाकिया के प्रतिकार को शुद्ध अहिंसक प्रतिकार नहीं कह सकेंगे। यों तो गांधीजी के जीते जी हमारे देश में सामूहिक अहिंसक प्रतिकार के जो प्रयोग हुए वे भी इस कसौटी पर कहाँ तक खरे उतरेंगे इसमें शक है, परन्तु चेकोस्लोवाकिया में जो प्रतिकार का प्रयोग हुआ उसे अर्वाचीन समय में शस्त्र निरपेक्ष वीरता का एक अनूठा उदाहरण मानना होगा। इस प्रतिकार की पूरी जानकारी शायद अब तक हमें नहीं मिली है लेकिन जो कुछ सुना और पढ़ा उस पर से इतना तो निस्सन्देह प्रतीत होता है कि इधर २५-३० वर्षों के निःशस्त्र प्रतिकार के प्रयोगों में इतनी विशुद्ध वीरता का परिचय कदाचित् ही मिला होगा। चेकोस्लोवाकिया के प्रयोग में दीनता का सम्पूर्ण रूप से अभाव है। इतना छोटा-सा राष्ट्र होते हुए भी वह परमुखापेक्षी नहीं है। एक क्षण के लिए भी ऐसा नहीं जान पड़ता कि उसने पश्चिम के देशों की तरफ याचना की दृष्टि से देखा हो। यही उस प्रयोग की मधुरता है। अहिंसक प्रतिकार में यह मान लिया जाता है कि हम अपने प्रतिपक्षी की भलाई चाहें, कम-से-कम उसे हानि पहुँचाने की हमारी आकांक्षा न हो। इस कसौटी पर शायद चेकोस्लोवाकिया का यह प्रयोग खरा न उतर सके। परन्तु, फिर सवाल यह होता है कि क्या आज तक संसार में अहिंसक प्रतिकार के जो सामूहिक प्रयोग हुए उनमें से कोई भी प्रयोग इस कसौटी पर खरा उतर सकता है? गांधी की अपनी व्यक्तिगत भूमिका की बात और है। यहाँ तो मतलब सामुदायिक प्रयोग के स्वरूप से है। चेकोस्लोवाकिया कितना छोटा-सा देश है? रूस के मुकाबिले उसकी क्या हस्ती है? ऐसी दशा में वह अविचल निश्चय के साथ अपनी आत्म-मर्यादा के संरक्षण के लिए शस्त्र प्रयोग के बिना सामना करने को सन्नद्ध हो जाता है। इसमें शस्त्र शक्ति या शारीरिक शक्ति का तो प्रश्न ही नहीं है। स्पष्ट है कि जिस शक्ति का प्रयोग चेकोस्लोवाकिया के लोगों ने किया वह शक्ति शरीर शक्ति या शस्त्र शक्ति से भिन्न ही नहीं अपितु श्रेष्ठ होनी चाहिए। आत्म शक्ति के सिवा दूसरी कौन-सी शक्ति इस प्रकार की प्रेरणा जाग्रत कर सकती है? इस लिए चेकोस्लोवाकिया के इस प्रयोग को किसी सैद्धान्तिक पैमाने से नापना व्यर्थ है। यह भी हो सकता है कि चेकोस्लोवाकिया की यह शस्त्र निरपेक्ष वीरता रूस की अजस्र शस्त्र-शक्ति के सामने ठहर भी न सके। परन्तु एक क्षण के लिए ही क्यों न हो विद्युत् की तरह उसने एक छोटे से राष्ट्र की ज्वलन्त आत्म-शक्ति की जो चमक दिखायी है, वह संसार के सभी छोटे बड़े साधनहीन राष्ट्रों को निरन्तर स्फूर्ति देती रहेगी।

प्रश्न—गांधीजी के जमाने के आन्दोलनों में विद्रोह और रचना की प्रक्रियाएं साथ-साथ चलती थीं। ग्रामदान में ये दोनों प्रक्रियाएं

चेकोस्लोवाकिया की घटना पर श्री मनमोहन चौधरी का व्यंग्यचित्र

गांधी की छाया

नहीं है। क्या इसका असर आन्दोलन पर नहीं पड़ेगा ?

उत्तर—गांधीजी के प्रयोग में दो प्रक्रियाएँ साथ-साथ चलती थीं—एक विधायक, दूसरी प्रतिकारात्मक। प्रतिकारात्मक प्रक्रिया का उद्देश्य प्रचलित बुराइयों का अहिंसा की पद्धति से निवारण करना था, और विधायक प्रक्रिया का उद्देश्य नयी समाज-रचना के कुछ नमूने प्रस्तुत करना था। यह तो स्पष्ट ही है कि ये नमूने आदर्श नहीं हो सकते थे, परन्तु नयी समाज-रचना का इंगित अवश्य कर सकते थे। बीजगणित की परिभाषा में इन्हें संकेत कह सकते हैं। गांधी का रचनात्मक कार्यक्रम और उस कार्यक्रम को कार्यान्वित करनेवाली संस्थाएँ गांधी के अभीष्ट समाज का इंगित करती थीं। परन्तु उस परिस्थिति में इतना पर्याप्त नहीं था। जो राज्य-पद्धति इस देश में बद्धमूल हो चुकी थी उसकी जड़ें उखाड़ने के लिए प्रतिकार की भी आवश्यकता थी। गांधी ने ऐसी प्रतिकार-पद्धति का शोध किया जो नयी रचना के लिए अनुकूल ही नहीं वरन् उपकारक हो। रचना प्रतिकार की शक्ति की पोषक हो और प्रतिकार रचना की क्षमता के अनुरूप हो। यह अनोखी विशेषता गांधी की प्रक्रिया में थी। स्मरण रहे कि गांधी ने बल हमेशा रचना और सहयोग पर दिया। उन्होंने प्रतिकार को परिस्थिति-विशेष में अनिवार्यतः प्राप्त कर्तव्य माना। इसलिए वह कह सका कि रचनात्मक कार्यक्रम की परिपूर्ति ही स्वराज्य है। परन्तु परिस्थिति-विषम थी : रचनात्मक कार्यक्रम पूर्णरूप से सम्पन्न नहीं हो सकता था। इसलिए प्रतिकार के प्रयोग भी प्राप्त-कर्तव्य के रूप में करने पड़े। १९१९ में शिमला के नजदीक कोटगढ़ के निवासी श्री एस० ई० स्टोक्स ने गांधी को पत्र लिखकर कहा था—"आपकी भूमिका तो धार्मिक और नैतिक है। आपका साधन 'सिविल रेजिस्टेंस' (शिष्ट प्रतिकार) का नहीं, बल्कि 'सिविल असिस्टेंस' (शिष्ट सहयोग) का होना चाहिए।" गांधी ने उत्तर दिया—"मेरा प्रतिकार शिष्ट तो है ही, इसके अतिरिक्त सहयोगात्मक भी है।" आज आये दिन विनोबा के मुँह से हम 'सिविल असिस्टेंस' की बात सुनते हैं। प्रतिकार की बात सर्वथा ही सुनते हैं। कारण यह है कि आज साधारण नागरिक के हाथ में वोट की अदम्य शक्ति है। यह शक्ति ऐसी है जो देखने में तो अत्यन्त सौम्य मालूम होती है, लेकिन सिंहासनों को उलट सकती है; मंत्रिमण्डलों को बना सकती है, बिगाड़ सकती है। आज वह शक्ति अवान्तर कारणों से कुंठित हो गयी है। उन कारणों का निराकरण भी जागृत नागरिक की मतदान की प्रक्रिया से ही सकता है। इसलिए आज के सन्दर्भ में प्रतिकार उतना प्रासंगिक नहीं है जितना गांधीजी के जमाने में था। मतदान के प्रयोग को भुलाकर प्रतिकार के अन्य साधनों पर नागरिक का ध्यान केन्द्रित करने में हम लोकतंत्र के अधिष्ठान को क्षति पहुँचाते हैं। इसलिए आज की परिस्थिति में जिन अन्य उपायों का प्रयोग हम करें उनका स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिससे नागरिक का विश्वास मतदान की प्रक्रिया में बढ़ता चला जाय। इस विषय में गहराई से विचार करने की आवश्यकता है।

प्रश्न समाज-रचना की बुनियादों को बदलने के लिए यह जरूरी है कि प्रचलित मूल्यों को हम बदलने की कोशिश करें। ग्रामदान की प्रक्रिया में हम देखते हैं कि उन्हीं लोगों का सहयोग पहले प्राप्त करने की कोशिश की जाती है जो प्रचलित मूल्यों के कारण प्रतिष्ठा के पद पर हैं। फिर ग्रामदान द्वारा मूल्य-परिवर्तन कैसे हो पायेगा ?

उत्तर विधायक क्रान्ति की प्रक्रिया में भी हमारा अभिप्राय तो यही है कि समाज में प्रचलित प्रतिष्ठित मूल्यों को हम बदलें। आज समाज में तीन मूल्य प्रतिष्ठित हैं—धन, सत्ता और शस्त्र। आज के साधारण समाज में ये मूल्य पैसा, हुकूमत और डण्डे के रूप में प्रकट होते हैं। सवाल यह है कि क्या हमारी विधायक क्रान्ति की प्रक्रिया में शीघ्र सफलता प्राप्त करने के लोभ से हम उन्हीं मूल्यों को स्थायी बनाते चले जायेंगे ? ग्रामदान, चन्दा, साहित्य-प्रचार, इत्यादि के अभियान में हम पैसेवाला, हुकूमतवाला, और डण्डेवाला, इन तीनों की या इन तीनों में से किसी की शरण लेंगे तो हमारे आन्दोलन से समाज की प्रचलित प्रतिष्ठाओं का निर्मूलन नहीं होगा। तब क्या ऐसे व्यक्तियों का बहिष्कार किया जाय ? कदापि नहीं। हमारा आन्दोलन तो सार्वत्रिक सहयोग का है। उसमें हमें सबका सहयोग और सद्भाव चाहिए। यही हमारा सम्बल है। तो फिर इसमें से कौन-सा रास्ता है ? रास्ता यही है कि हम सबका सहयोग चाहें और खोजें लेकिन किसी के आश्रित न बनें। सहयोग में हमारी अपनी शक्ति चाहे कितनी ही प्रखर क्यों न हो, गृहीत है। हमारी अपनी शक्ति में आत्म-मर्यादा और आत्म-प्रत्यय निहित है। आत्म-प्रत्यय सदैव विनयान्वित रहता है। उसमें अविनय या धृष्टता नहीं होती। सबके सहयोग का समादर है, आश्रय किसी का नहीं। हमारे आन्दोलन के सन्दर्भ में यही योग या कर्म-कौशल है।●

विनोबाजी का कार्यक्रम

१ से ३ अक्तूबर तक सर्व सेवा संघ, वाराणसी
४ अक्तूबर से : समन्वय आश्रम
१० अक्तूबर तक : बोधगया (बिहार)

आन्दोलन के समाचार

उत्तर प्रदेश की चिट्ठी

उत्तरकाशी जिलादान के पश्चात् उत्तराखण्ड क्षेत्र के चमोली जिले में सघन रूप से ग्रामदान अभियान १८ अगस्त से प्रारम्भ हुआ। केदारनाथ और मन्दाकिनी विकास खण्डों में ६ ग्रामदान प्राप्त हुए। चमोली के जिलाधिकारी श्री प्रताप सिंह भी गाँव गाँव ग्रामदान कराने में सहयोग दे रहे हैं। टिहरी जिले के जौनपुर ब्लाक में ३१ ग्रामदान प्राप्त हुए। गढ़वाल में २ अक्तूबर से जिलादान-अभियान चलाने की योजना है। अल्मोड़ा के गरुड़ विकास खण्ड में ४० ग्रामदान हुए। उत्तरकाशी में जिलादान के बाद अब स्थानीय सहयोग से पुष्टि कार्य किया जा रहा है।

बलिया जिलादान के बाद बाँसडीह तहसील में पुष्टि कार्य सबसे पहले लिया गया है। दूबेछपरा इण्टर कालेज और सुखपुरा इण्टर कालेज में तरुण शान्तिसेना के शिविर स्थानीय सहयोग से सम्पन्न हुए। जिले के कोने कोने में ११ सितम्बर को विनोबा-जयन्ती सोल्लास मनायी गयी।

अलीगढ़ से समाचार मिला है कि विनोबा-जयन्ती के अवसर पर सर्वोदय साहित्य प्रदर्शनी

का उद्घाटन जिलाधिकारी श्री भानुरुद्र पाण्डेय ने किया। उन्होंने जिलेभर में गांधी-शताब्दी तक साहित्य-प्रसार एवं ग्रामदान-अभियान में सार्वजनिक सहयोग की अपील की।

प्रतापगढ जिले में जिलादान-अभियान की दृष्टि से १२ सितम्बर को आयोजित तीन वृहद् गोष्ठियों में उ० प्र० शान्ति-सेना समिति के संयोजक श्री सुरेशराम भाई ने जमाने की 'चुनौती का उत्तर ग्रामदान' पर विशेष रूप से प्रकाश डाला। रोटरी-क्लब की गोष्ठी के बाद स्थानीय ५ नेताओं ने ग्रामदान के अभियान में समय देने का निश्चय किया।

फर्रुखाबाद जिला परिषद् के अध्यक्ष ने प्रदेश के समस्त जिला परिषदों के अध्यक्षों के नाम एक परिपत्र प्रसारित कर ग्रामदान ग्राम-स्वराज्य की महत्ता समझाते हुए इस समयानुकूल क्रान्ति के प्रति कर्तव्य-पालन-हेतु सहयोग प्रदान करने की अपील की है। कन्नौज तहसील मे ४ से ११ सितम्बर तक चलाये गये अभियान मे ३६२ ग्रामदान प्राप्त हुए। अब फर्रुखाबाद जिले में ६५९ ग्रामदान हुए।

आजमगढ जिले से प्राप्त सूचना के अनुसार अजमतगढ ब्लाक मे ग्रामदान-अभियान चलाया गया और प्रखण्डदान घोषित हुआ। इस प्रखण्ड में १६४ ग्रामदान हुए हैं। इस जिले में अब कुल ६०६ ग्रामदान हुए।

गोरखपुर से समाचार मिला है कि १८-१९ सितम्बर को श्री गांधी आश्रम मगहर (बस्ती) में क्षेत्रीय ग्रामदान शिविर हुआ, जिसमें श्री दादा धर्माधिकारी का प्रेरणादायी प्रवचन हुआ। श्री दादा ने गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्रोफेसरों एवं शिक्षकों की गोष्ठी में गांधी दर्शन के जागतिक पहलुओं पर प्रकाश डाला।

प्रदेशदान की दृष्टि से ३८ जिलों में चल रहे ग्रामदान-अभियान की २१ सितम्बर तक प्राप्त फलश्रुति के अनुसार ८,५५८ ग्रामदान, ४९ प्रखण्डदान एवं २ जिलादान प्राप्त हुए।

हरदोई जिले से तार द्वारा समाचार मिला है कि बिलग्राम तहसील के मल्लावाँ ब्लाक मे १४१ एवं बिलग्राम ब्लाक में १६५ ग्रामदान प्राप्त हुए।

फैजाबाद जिले के पूरा बाजार ब्लाक में २५ ग्रामदान और हो जाने से प्रखण्डदान पूर्ण हो गया।

इस प्रकार २६ सितम्बर '६८ तक कुल ८,८७१ ग्रामदान, ५० प्रखण्डदान और बलिया-उत्तरकाशी के जिलादान घोषित हुए। शेष जिलों में अभियान चल रहे हैं।

—कपिल भाई
संयोजक,
उ० प्र० ग्रामदान प्राप्ति समिति,
राजघाट, वाराणसी-१

बिहारदान

प्राप्त सूचनाओं के अनुसार बिहार के सारन जिले का जिलादान ३० सितम्बर '६८ तक प्राप्त कर लेने के लिए तूफानी प्रयास जारी है। पूरी आशा है कि इसी अवधि तक उत्तर बिहारदान का काम सम्पूर्ण हो जायगा। यह भी अन्दाज है कि '६८ के अन्त तक बिहारदान का संकल्प सम्पूर्ण करने के लिए अब दक्षिण बिहार में पूरा जोर लगाया जायेगा।

शांति-सेना विद्यालय

कस्तूरबा ग्राम, इन्दौर-स्थित महिला शांति-सेना विद्यालय का नया सत्र २ अक्तूबर '६८ से प्रारम्भ हो रहा है।

जिलादान के बाद

१५ सितम्बर '६८ को पूर्णिया जिला के सभी राजनैतिक एवं सामाजिक संस्थाओं के प्रमुखों तथा रूपौली थाने के सभी राजनैतिक पार्टियों, सामाजिक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं तथा झगड़े से सम्बन्धित किसान-बँटाईदारों की एक विशाल जनसभा सर्वोदय आश्रम रूपौली में हुई। सभा का मार्ग-दर्शन श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी कर रहे थे, अध्यक्षता जिला कांग्रेस कमिटी के अध्यक्ष श्री दारोगा प्रसाद चौधरी ने की।

सर्वोदय नेता श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने बैठक के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए उपस्थित जन-समुदाय से यह निवेदन किया कि कोर्ट में दायर ६५ हजार टायटल-सूट एवं अन्य मुकदमों को आपसी समझौते द्वारा निपटाने का प्रयत्न किया जाय। श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के प्रस्ताव एवं श्री युवराज सिंह के समर्थन पर सर्वसम्मति से 'रूपौली थाना बँटाईदारी विवाद समझौता समिति' गठित करने का निश्चय हुआ। निश्चयानुसार श्री राजेन्द्र प्रसाद सिंह के प्रस्ताव एवं श्री भुवनेश्वर प्रसाद सिंह के समर्थन पर सर्वसम्मति से श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी को सभा की ओर से अधिकार दिया गया कि वे सदस्यों का मनोनयन कर दें।

पुराने रचनात्मक कार्यकर्ता

श्री तुलसीदासजी राठी का निधन

राजस्थान के पुराने रचनात्मक कार्यकर्ता और पश्चिमी राजस्थान के रचनात्मक कार्यों के स्तम्भ श्री तुलसीदासजी राठी का निधन १६-९-'६८ की रात्रि में जोधपुर में हो गया। उनकी उम्र ६५ वर्ष थी और पिछले कुछ दिनों से वे कैंसर के रोग से पीड़ित थे। दिवंगत आत्मा को हमारी विनम्र श्रद्धांजलि।

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। विशेषांक एक प्रति : ५० पैसे
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित

'भूदान-यज्ञ' २ अक्तूबर '६८ : रजिस्टर्ड नं० एल, ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] ला न० ग, ३४

आवरण : खण्डेलवाल प्रेस, वाराणसी-१